Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शुकसागर
श्रीमद् भागवत (भाषा)

१८११

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

1911
1968
1911

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

Shambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ लक्ष्मीवेंकटेश्वराय नमः ॥

शुकसागर

अर्थात

श्रीमद्भागवतभाषा.

श्रीमन्नारायणशास्त्रीजी विरचित.

जिसमें

शंका समाधान, दृष्टांत, माहात्म्यसहित.

श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दकी नवनित्य लीलावतार चरित्र विस्तारपूर्वक वर्णित है.

जिसको

वैश्यकुलोत्पन्न

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास

इनके "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापेखानेमें

रामचंद्र राघो इन्होंने मालिकके लिये

छापकर प्रसिद्ध किया.

संवत् १९६८, शके १८३३.

कल्याण-मुंबई.

इस ग्रंथका सब प्रकारका रजिष्टरी हक्क यंत्राधिकारीने स्वाधीन रक्खा है.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धन्यवादः ।

संतु शतशो धन्यवादाः सकलशास्त्रनिपुणेभ्यो जगत्प्रसिद्धपण्डितमण्डलीमण्डनायमानेभ्यः पाखण्डवेतण्डगण्डमण्डलतुण्डनप्रचण्डपञ्चाननायमानेभ्यो मुरादाबादनगरनिवासिभ्यः पण्डितश्रीज्वालाप्रसादजीमिश्रेभ्यः । यैः किल महता प्रयासेन " श्रीमद्भागवतम् " वृंदावननिवासिपण्डितनारायणशास्त्रिविरचित " पदार्थमुक्तावली " भाषाटीकासमेतं यन्मत्प्रतिष्ठापिते " श्रीवेंकटेश्वर " मुद्रणालये मया मुद्रितमासीत्तद्वितीयावृत्तौ तदपेक्षयाप्यस्यां तृतीयावृत्तौ सम्यक्तया परिशोधितम् । विविधमनोरंजनदृष्टांतैः परिष्कृतं च । एभिरेव विद्वद्भिरन्येऽपि बहवो ग्रंथाः भाषाटीकारूपाः भाषारूपाः शास्त्रीयग्रंथाश्च परिष्कृत्यास्माकं समीपे मुद्रणार्थं प्रेषिताः । तेऽस्माभिः केचन मुद्रिताः मुद्रियंते मुद्रयिष्यन्ते च । एवमादयश्च तेषामस्माकमुपरि बहव उपकाराः संति । इदं च " श्रीमद्भागवतं " प्राकृतभाषात्मकं तैः परमप्रेम्णा संशोधितं । तदिदं " श्रीमद्भागवतभाषा-शुकसागर " इति नाम्नाऽस्माभिः प्रथमावृत्तिद्वितीयावृत्त्यपेक्षया अतिस्थूलातिमनोहराक्षरैः पुष्टचिक्कणपत्रेषु महता धनव्ययेन परमादरेण च तृतीयवारमभिनवप्रतिष्ठापितमदीये कल्याण-मोहमय्यांस्थे " लक्ष्मीवेंकटेश्वर " मुद्रणालये विशदं संमुद्रितम् । अयं ग्रंथः पूर्वावृत्तिद्वयापेक्षया अतीव वर्धितोऽस्ति । तथापि भगवद्भक्तभावुकजनानां सुगमतया लाभाय मूल्यमत्यल्पमेव स्थापितमस्ति । अतो विज्ञापयामो भक्तजनान्सकलरसिकांश्च यदस्यामूल्यस्य ग्रंथस्य संग्रहेण कृतार्थयंतु जन्मनः साफल्यमिति शम् विद्वज्जनचरणसरोजमकरंदाकांक्षी-गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना, कल्याण-मुंबई.

सूचना ।

निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम् । पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः ॥ १ ॥

सर्व विद्वद्वर कृष्णचरणांबुजपरायणसे विनय है कि सम्वत् १९४६ में इस महापुराण कलिकल्पवृक्षका भारतान्तर्गत प्रथमजन्म अत्यंत सरल सुखमय जगत् प्रसिद्ध ब्रजभाषामें पदार्थमुक्तावलीनामक अति शुद्ध भाषाटीका कराई और अत्युत्तम प्राचीन २ कविवरोंके ज्ञान भक्तिमार्गी वचनचातुरी प्रेमप्रवाहके ५०० सुललित दृष्टांतभी सम्मिलित कराये टीका अक्षरार्थ होनेपरभी अनेक श्रुति स्मृति पुराणके दृष्टांत देकर शंकासमाधान किया गया परीक्षासे और मान्यवर पण्डितोंकी विद्वत्तासे इसकी टीका ऐसी अत्युत्तम मनोरंजन दुःखभंजन हुई कि जिसके श्रवणामृत पानसे कदापि इच्छा तृप्त नहीं होती ऐसे अनुपम अमूल्य अलभ्य रत्नके विकाश होतेही ग्राहकगण आनंदपूर्वक अंगीकार कर इस निगमकल्पतरुकी छायामें निमग्न हो भवसेतुरूपी कथामृत पानकर पुनर्वार छापनेका सावकाश दिया । इसकी दूसरी आवृत्ति संवत् १९४८ में छपाया इस अन्तरमें इतर क्षुद्र व्यापारियोंको व्यापारकी सूझी फिर क्या था रुपयाही कमाना अभीष्ट झटपट सावकाश पा काट छांट कागज स्याही पाट नकल गढ यामिनी वामिनीकी गढी बनालिया ग्राहक जानतेही हैं कि असलसे तुच्छ नकलभी मन विकल करदेती है सो महिमाभी लम्बे लम्बे शब्दोंसे गाई गई पर " क्रयविक्रयवेलायां काचः काचो मणिर्मणिः " इससे सावधान ! पुनः सावधान ! ! यह देखिये जिसकी बहुत दिनोंसे चन्द्रचकोरकी समान अपेक्षा करतेथे सो तृतीयावृत्तिभी " श्रीमद्भागवत भाषा-शुकसागर " इस नामसे स्थूलाक्षरमें और इस वार विशेष श्रीयुत विद्वद्वर कृष्णकृपापात्राधिकारी पंडित श्रीज्वालाप्रसादजी मिश्रसे शुद्ध करा पुष्ट कागजमें पहलेकी अपेक्षा बडे २ टाईपमें छापा है यह सब ग्रंथ पहलेकी अपेक्षा बडा अक्षर होनेसे बहुतही बढ गया है सो यह अलभ्य स्वर्ण सुगंध कलिकल्पतरु भवसागरसेतु आनन्दमय सब प्राणीमात्रको एक २ प्रति रखनी परमावश्यक है.

दोहा-एक पंक्तिकी आधिहू, ताहूकी पुनि आध ॥ कृष्णविहारी नित पढै, कटै कोटि अपराध ॥ १ ॥

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास " लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " छापाखाना, कल्याण-मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

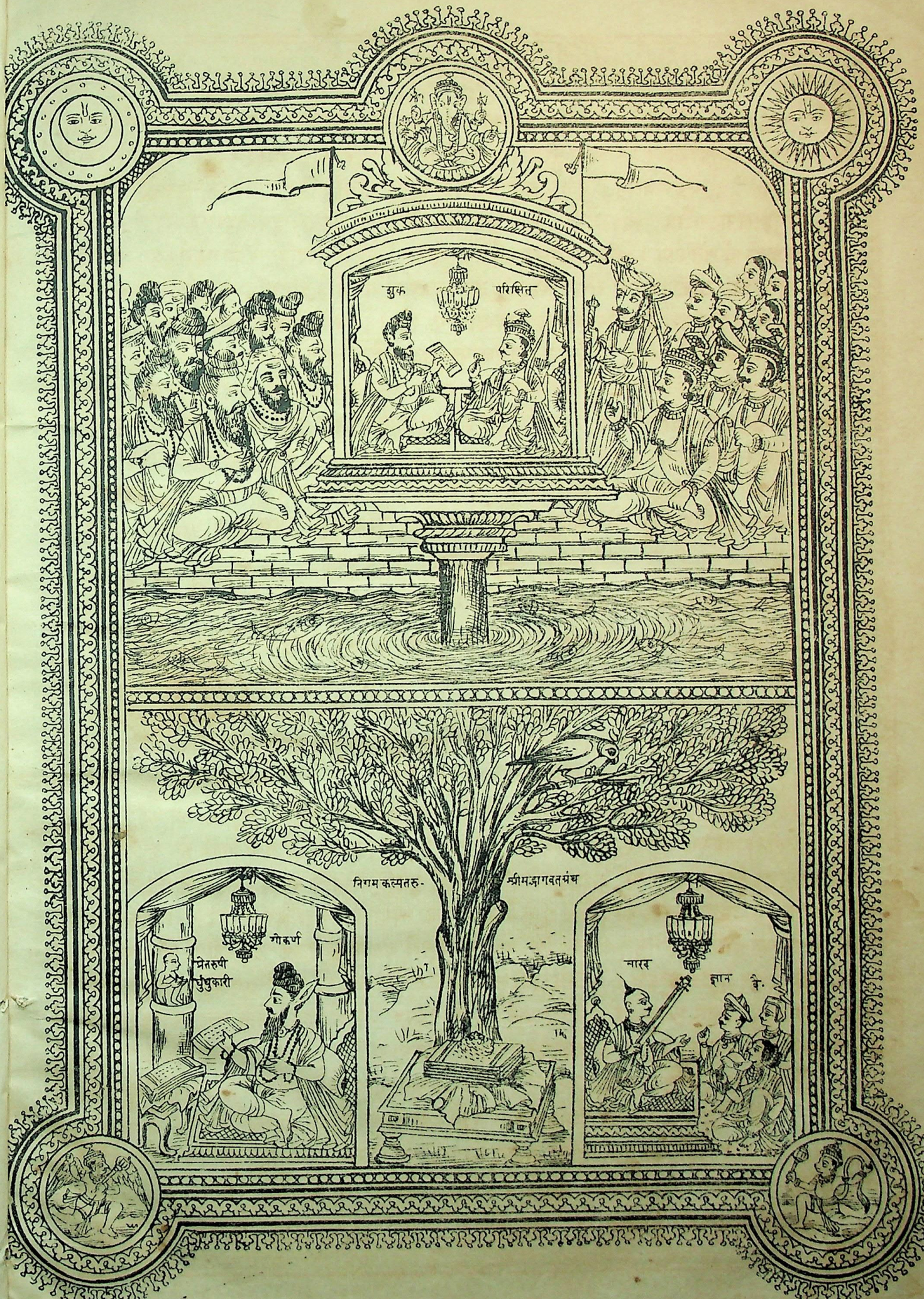

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रथम स्कंध.

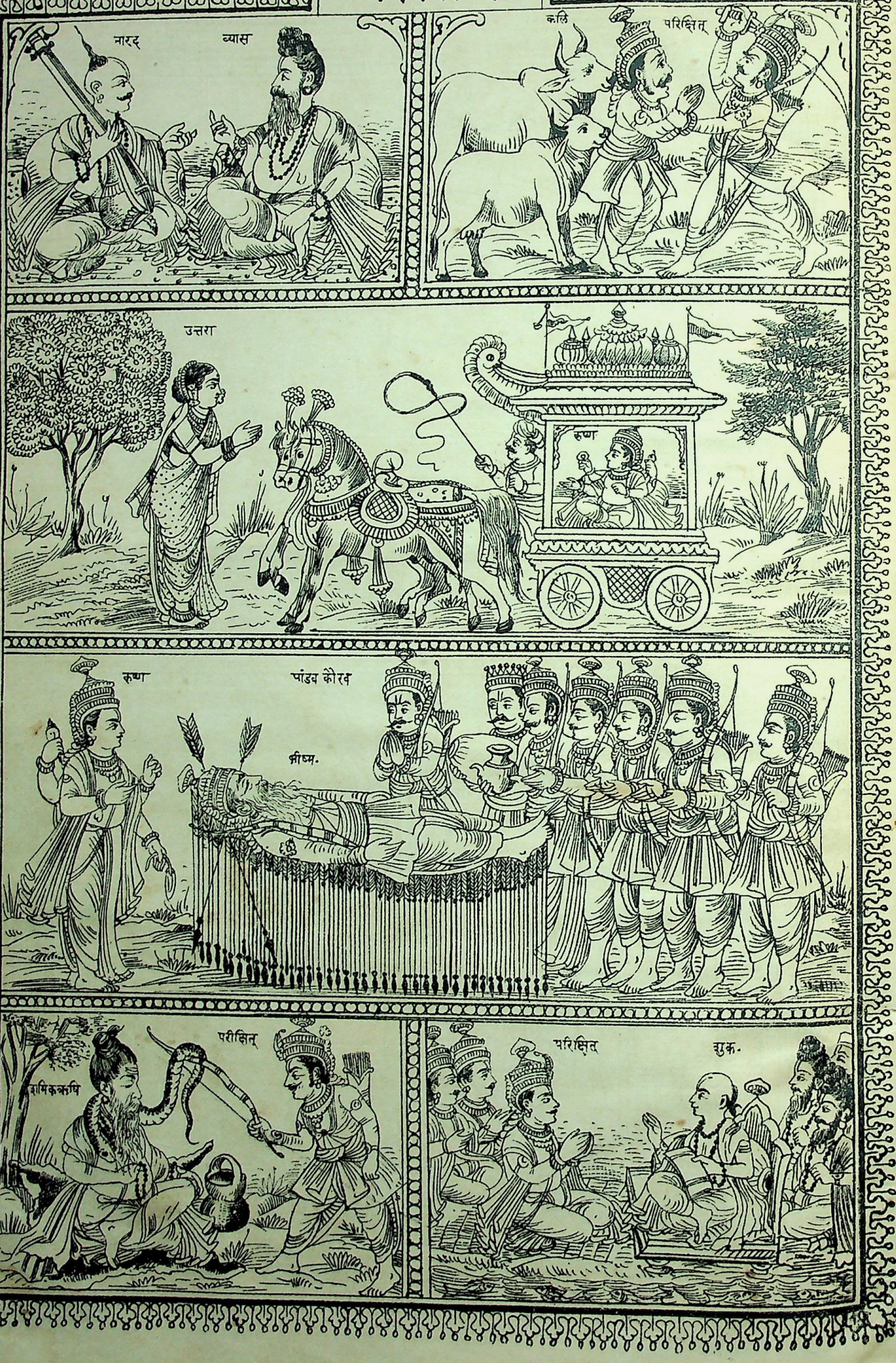

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

द्वितीय स्कंध.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तृतीय स्कन्ध.

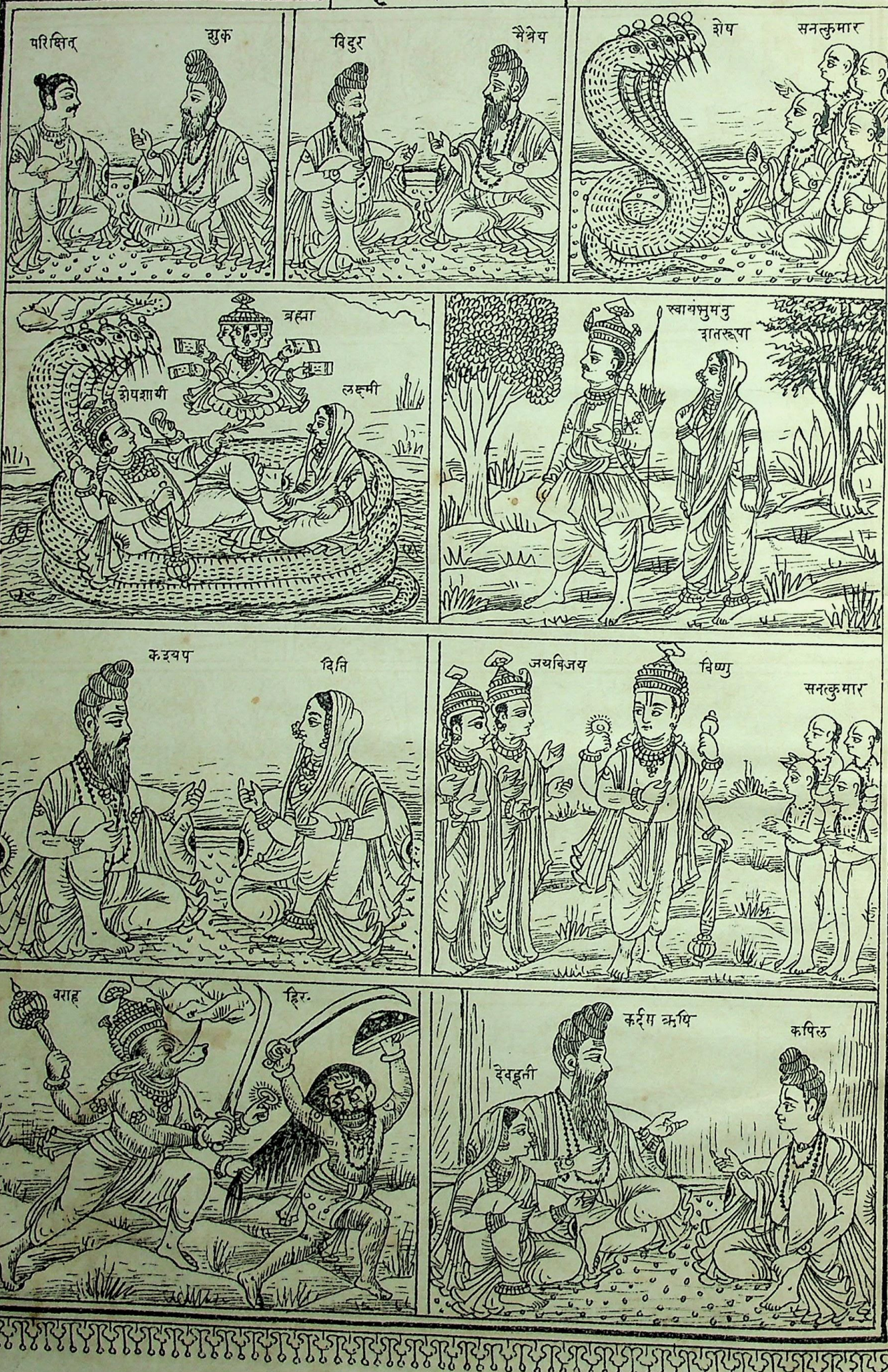

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चतुर्थ स्कन्ध.

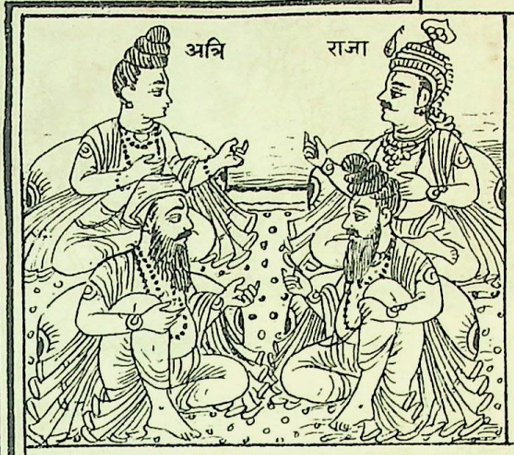

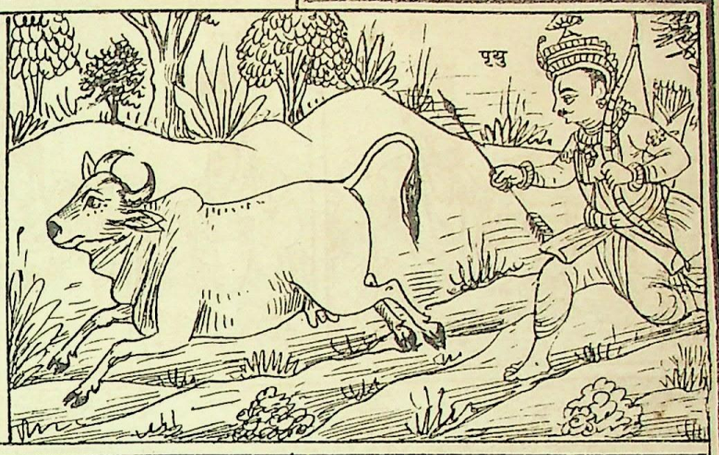

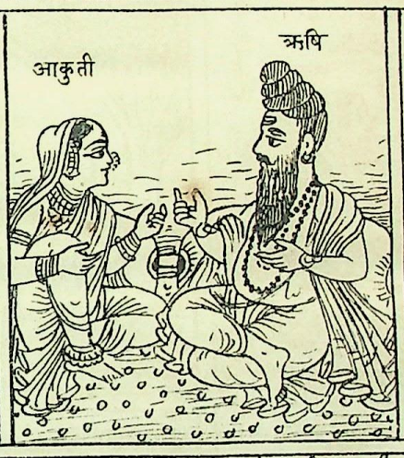

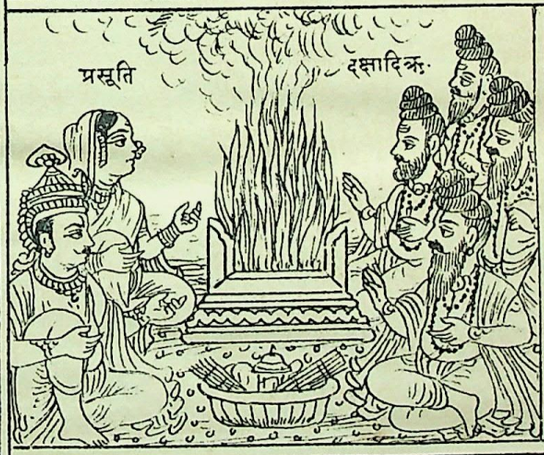

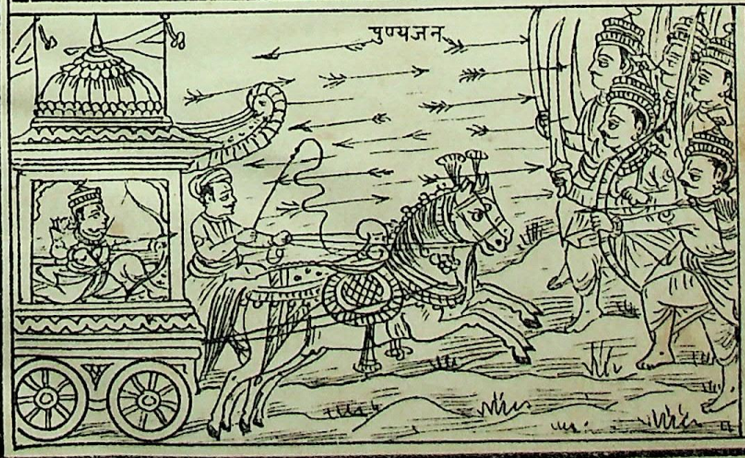

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पंचम स्कन्ध.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नवम स्कन्ध.

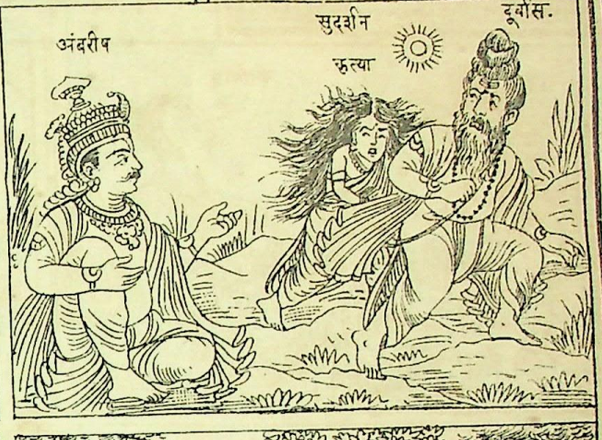

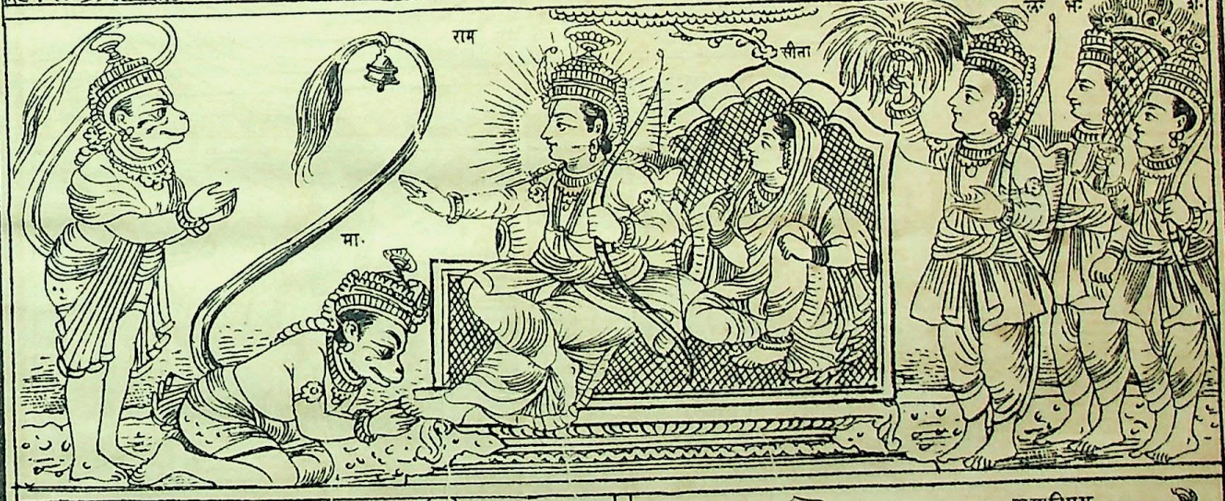

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अष्टम स्कन्ध.

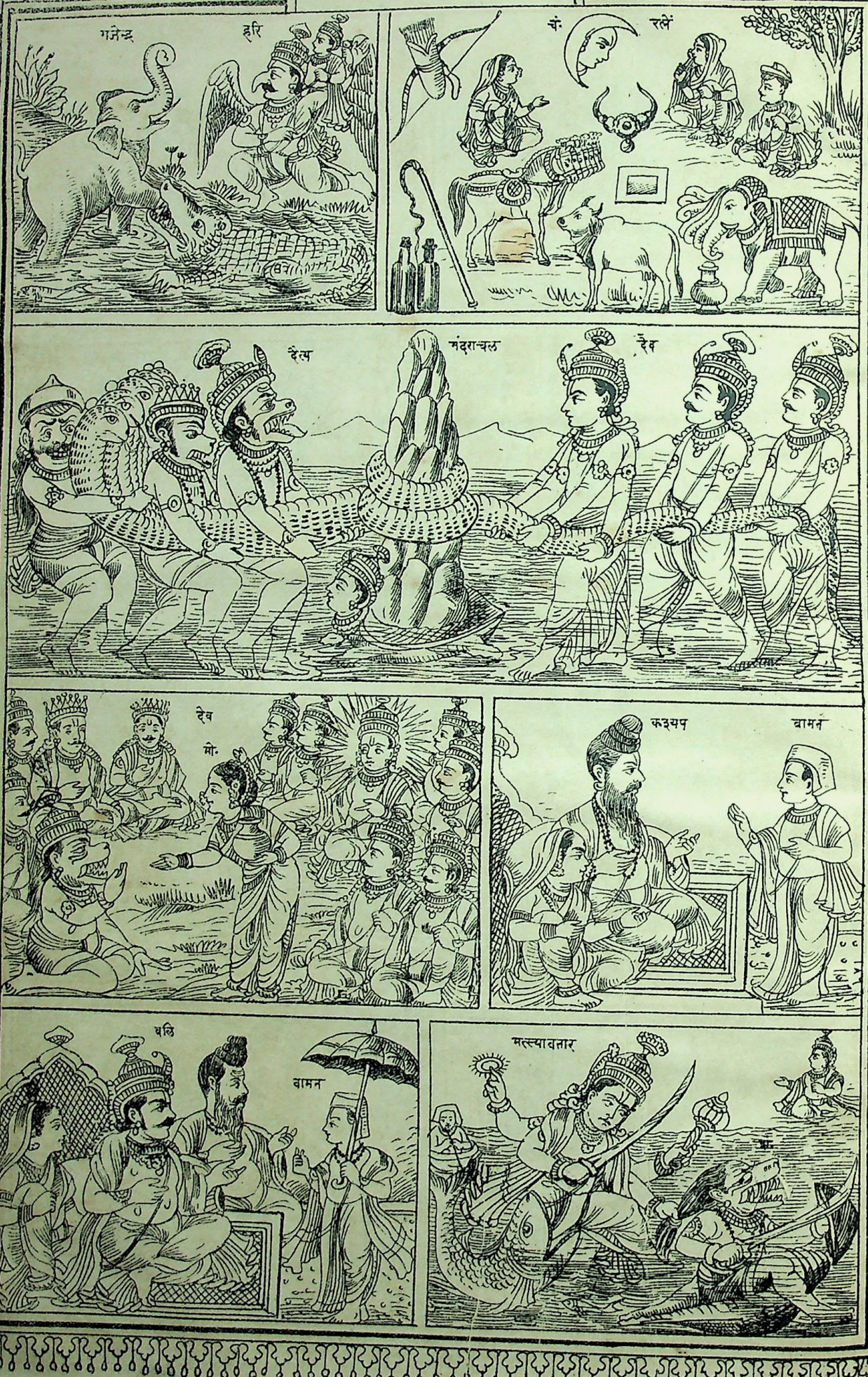

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सप्तम स्कन्ध.

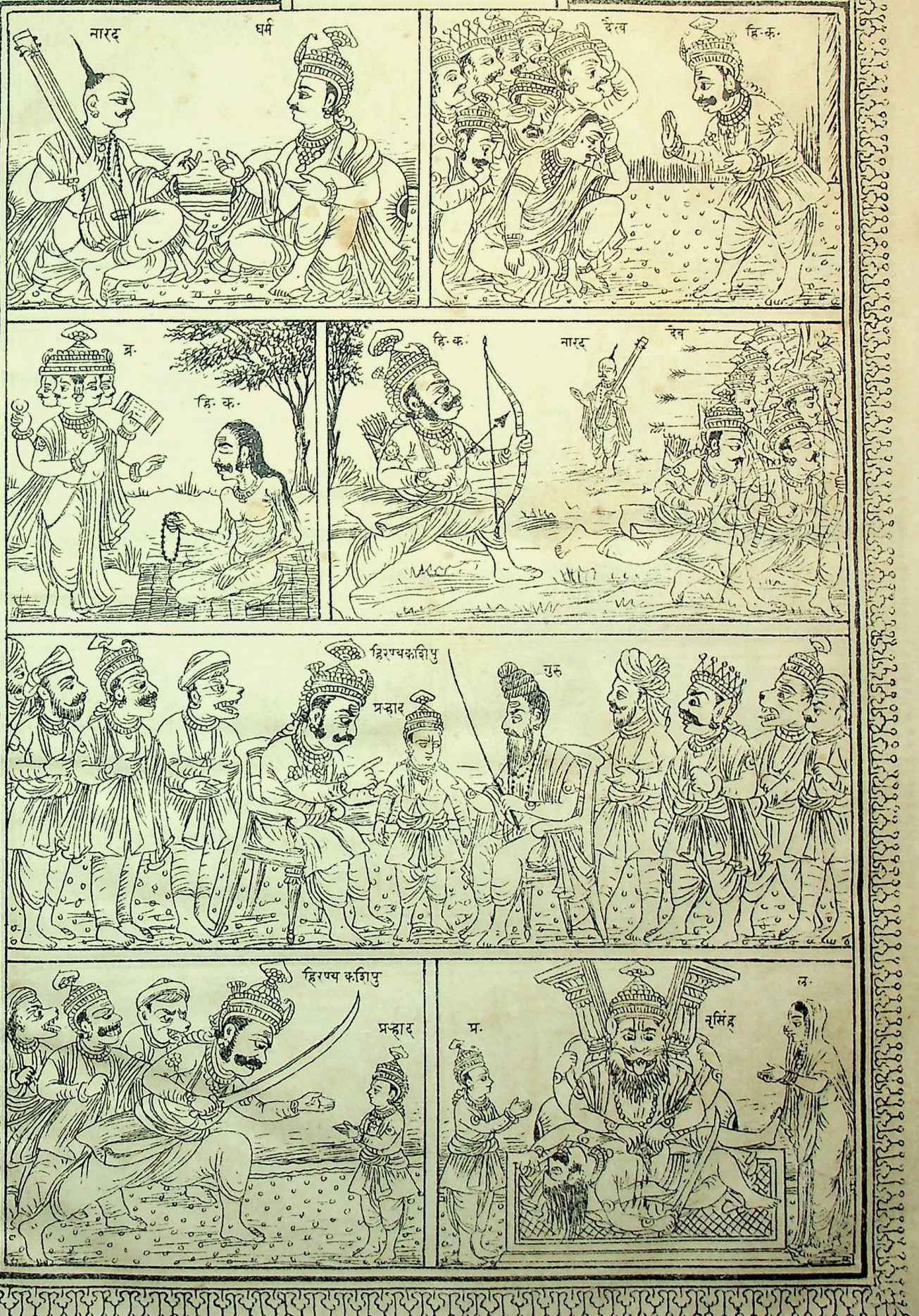

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

षष्ठ स्कन्ध.

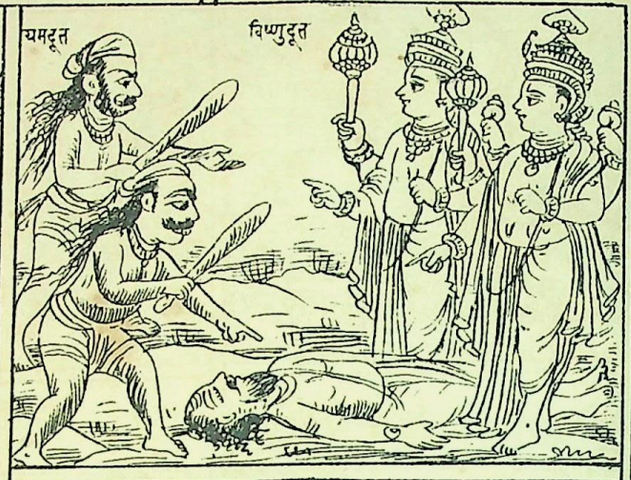

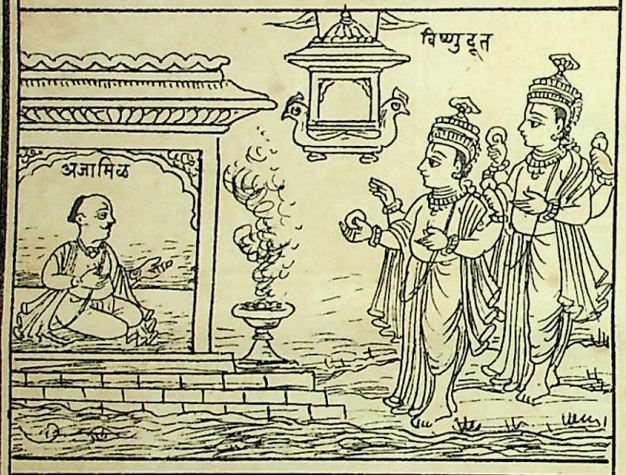

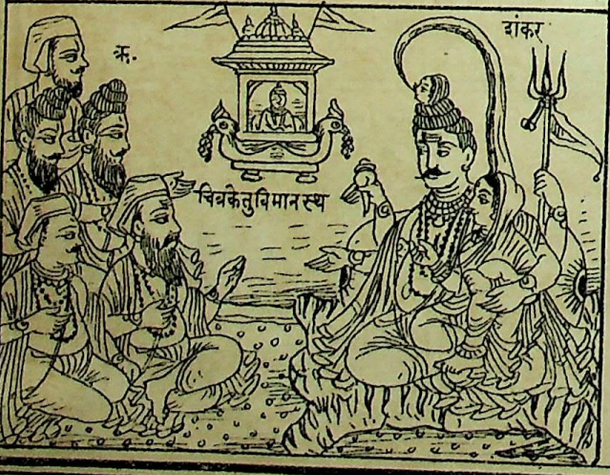

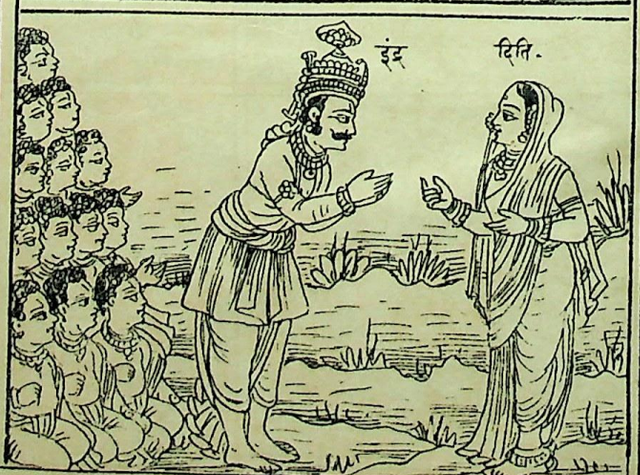

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दशमस्कन्ध-पूर्वार्धे.

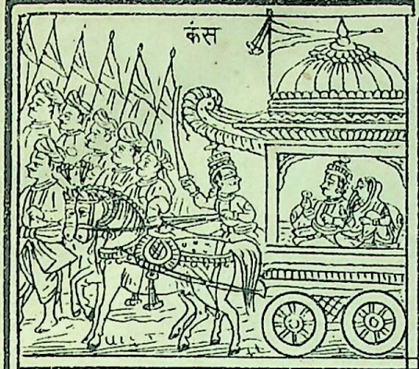

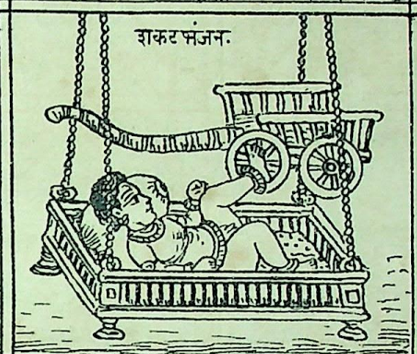

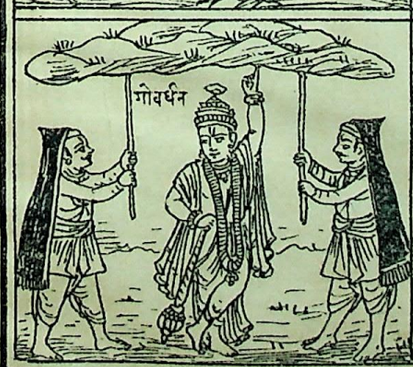

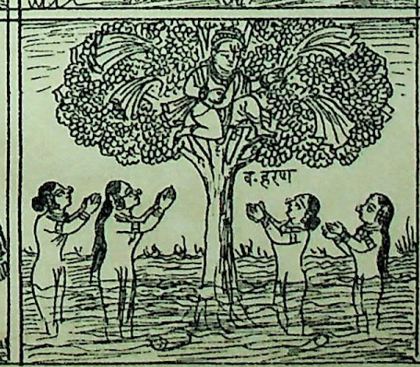

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

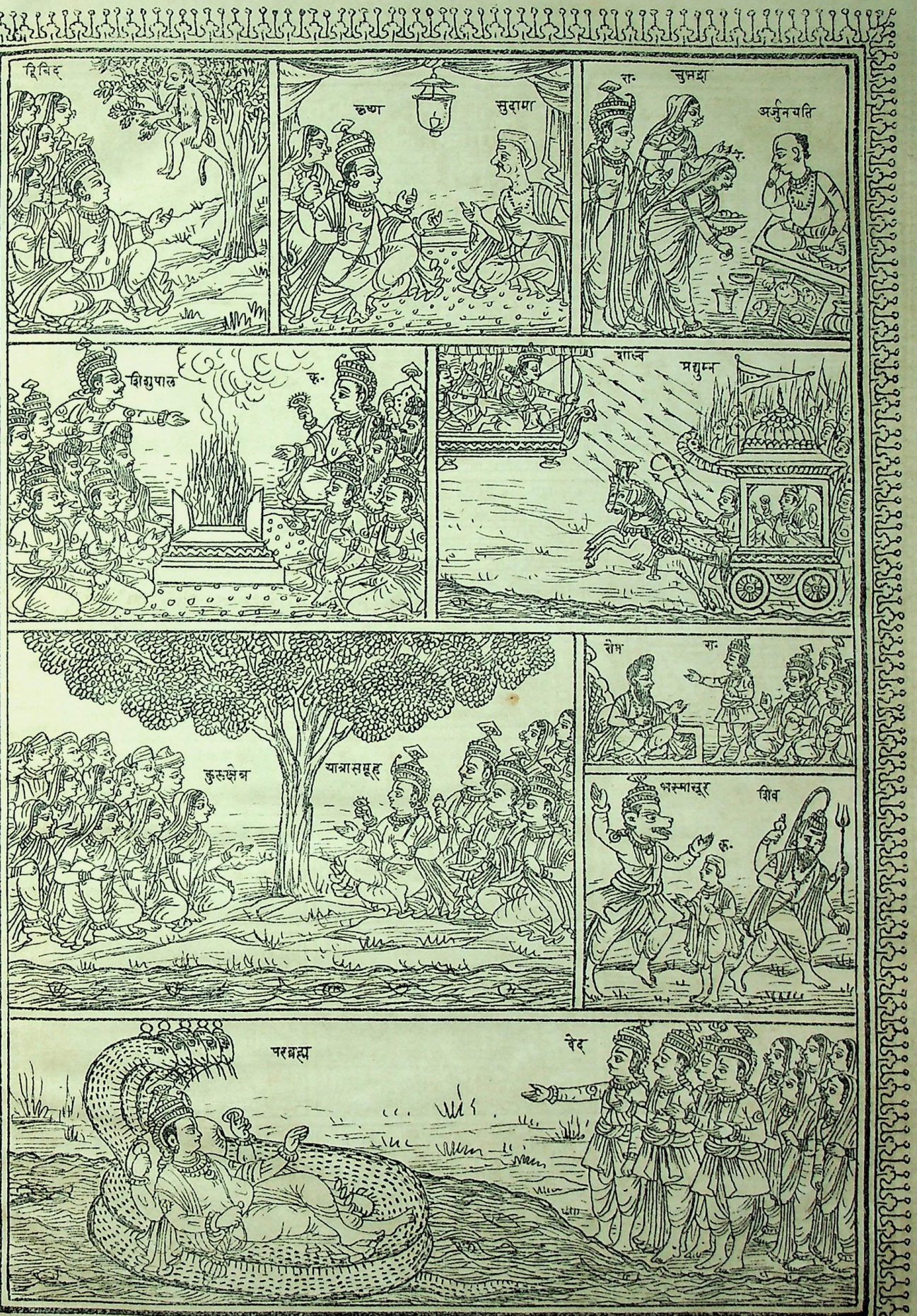

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एकादश स्कन्ध.

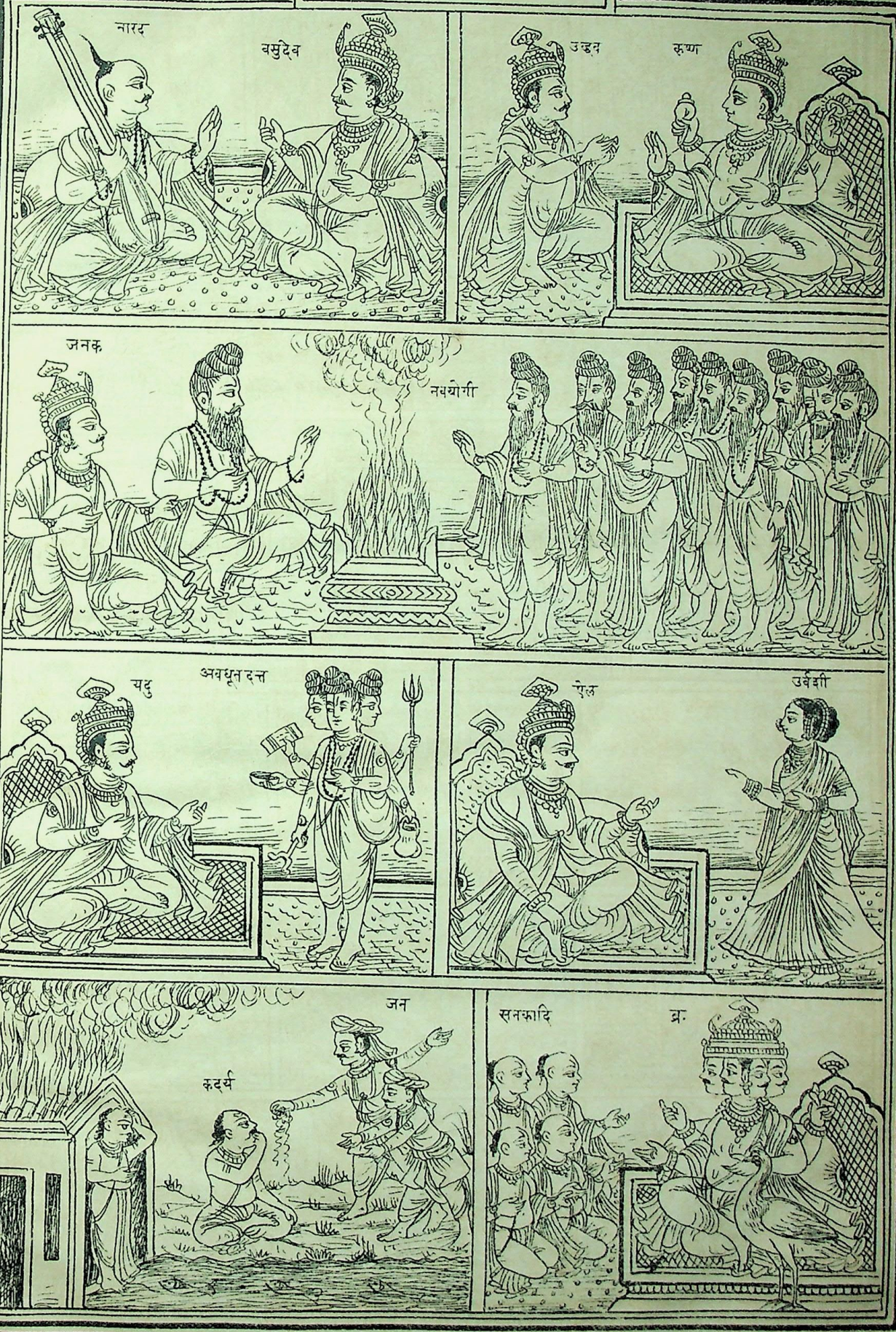

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

द्वादश स्कन्ध.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीः ॥

शुकसागर अर्थात् श्रीमद्भागवतभाषाकी विषयानुक्रमणिका।

अ०	विषयाः	प०
१	श्रीमद्भागवतमाहात्म्य, भक्तिनारदसमागम.	१
२	कुमारनारदसंवाद ...	४
३	भक्तिकष्टनिवर्तन ...	७
४	विप्रमोक्षवर्णन ...	१०
५	गोकर्णवर्णन ...	१३
६	श्रवणविधिकथन ...	१७
७	श्रीभागवतस्थवृत्तलक्षणानि, उवाचपरिगणन, ग्रंथसंख्यागणना च ...	२१

अथ प्रथमस्कंधः ॥ १ ॥

१	मंगलाचरण, नैमिषारण्योपाख्यान, सूतजीका आगमन, शौनकादिकऋषिका प्रश्न ...	१
२	सूतजीका उत्तर, तहां भगवद्गुणानुवर्णनका उपोद्घात ...	८
३	चौविस अवतारनकी कथा ...	९
४	नारदव्याससंगम ...	१२
५	व्यासनारदसंवादवर्णन ...	१४
६	नारदका पूर्वजन्मका वृत्तांत ...	१७
७	भागवतप्रारंभ, अश्वत्थामाका वृत्तांत ...	१९
८	कुंतीकृत कृष्णस्तुति, युधिष्ठिरका पश्चात्तापवर्णन ...	२२
९	भीष्मके पास युधिष्ठिरादिकोंका गमन, भीष्मस्तुति, युधिष्ठिरराज्यप्राप्ति ...	२५
१०	कृष्णका आनर्तदेशमें आगमन ...	२७
११	कृष्णका द्वारकापुरीमें प्रवेश ...	२९
१२	उत्तराके गर्भमें कृष्णकृत परीक्षित्का रक्षण, परीक्षिज्जन्मोत्सव ...	३२
१३	विदुरतीर्थयात्रा, धृतराष्ट्रका मोक्षवर्णन ...	३४
१४	द्वारकाके कुशल वृत्तांतमें युधिष्ठिरका वितर्क.	३७
१५	पांडवस्वर्गारोहण ...	३९
१६	परीक्षित् राजाका दिग्विजय, पृथिवीधर्मसंवाद ...	४२
१७	परीक्षित्राजाकृत कलिनिग्रह ...	४४
१८	धर्मपालन, परीक्षित्राजाको विप्रपुत्रका शापवर्णन ...	४७
१९	गंगाजीमें प्रायोपविष्ट परीक्षित्के पास शुकाचार्यका आगमन, शुकपरीक्षित्संवादका प्रारंभ. ...	४९

इति प्रथमस्कंधः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयस्कंधः ॥ २ ॥

१	शुकाचार्यकृत परीक्षित्राजाके प्रश्नकी प्रशंसा, भगवान्के विराट्स्वरूपका वर्णन ...	१
२	भगवान्के सूक्ष्मरूपका ध्यानवर्णन, पुरुषसंस्थानुवर्णन ...	४
३	ब्रह्माआदि देवनके पूजाका पृथक् २ फलका वर्णन ...	७
४	सृष्टिआदि हरिचेष्टाका वर्णन ...	९
५	विराट्सृष्टि, हरिलीला, विराट्रूपवर्णन ...	१०
६	विराट्विभूति पुरुषसूक्तके अर्थका वर्णन ...	१३
७	भगवान्के चौवीस अवतारका वर्णन ...	१५
८	परीक्षित् राजाकृत भगवत्तत्त्वमें प्रश्नविधि ...	२०
९	भगवत्कृत चतुःश्लोकीभागवतवर्णन, पुराणके दशविधलक्षणका वर्णन ...	२२
१०	पुरुषसंस्थानुवर्णन ...	२४

इति द्वितीयस्कंधः ॥ २ ॥

अथ तृतीयस्कंधः ॥ ३ ॥

१	विदुरउद्धवसंवादवर्णन ...	१
२	उद्धवकथित श्रीकृष्णचरित्रवर्णन ...	५
३	प्रभासक्षेत्रमें श्रीकृष्णादिकोंका आगमन ...	७
४	यदुवंशका क्षय, विदुरोद्धवसंवाद पूर्ण ...	९
५	विदुरमैत्रेयसमागम, विदुरमैत्रेयसंवाद, तहां महदादिसर्गमें सर्वदेवकृतस्तुतिवर्णन	११

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	पृ०
६	विराट्देहमें ईश्वरका प्रवेश	... १५
७	मैत्रेय ऋषिप्रति विदुरजीकृत प्रश्नविधान	... १७
८	ब्रह्मदेवकृत सर्वोत्कृष्टश्रीमन्नारायणका स्वरूपवर्णन	... १९
९	भगवान् और ब्रह्मदेवके संवादके अंतमें भगवान्का अंतर्धानवर्णन	... २२
१०	ब्रह्मदेवकृत दैहिक मानसिक प्रजासृष्टि आदि दशविध प्रजासृष्टिवर्णन	... २५
११	परमाणु आदि द्विपरार्धपर्यंत कलास्वरूपी ईश्वरका वर्णन	... २७
१२	मनुसर्गका वर्णन	... ३१
१३	स्वायंभुवमनुका चरित्र श्रीवाराहप्रादुर्भाववर्णन	... ३३
१४	दितिकश्यपसंवादवर्णन	... ३७
१५	विप्रशापवर्णन, श्रीवैकुंठलोकवर्णन	... ३९
१६	वैकुंठाधिपतिसे वैकुंठलोकमें ब्राह्मणमाहात्म्यवर्णन	... ४३
१७	हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपु इन्होंकी उत्पत्ति	... ४५
१८	हिरण्याक्ष अरु श्रीवराहजीका युद्धवर्णन	... ४७
१९	हिरण्याक्षका वधवर्णन	... ४९
२०	ब्रह्मदेवके शरीरसे सृष्टिवर्णन	... ५१
२१	स्वायंभुव मनुका वंशवर्णन, कर्दमाश्रममें स्वायंभुव मनुका समागम.	५४
२२	बर्हिष्मतीनगरीमें स्वायंभुवमनुका आगमनवर्णन	... ५७
२३	कर्दमको देवहूतीमें नवकन्योत्पत्तिवर्णन	... ५९
२४	कपिलभगवान्का अवतारवर्णन	... ६२
२५	कापिलेय उपाख्यानमें योगविद्याके उपदेशके समय भक्तिलक्षणवर्णन	... ६४
२६	चौवीस तत्त्वोंका लक्षणवर्णन	... ६७
२७	मोक्षरीतिका वर्णन	... ७०
२८	योगका लक्षणवर्णन, ध्यानयोगवर्णन	... ७२
२९	महदादिकोंका लक्षणवर्णन, बहुविधभक्तियोगवर्णन	... ७५
३०	कामी अर्थात् मनोरथकरि मोहितजनोंको नरकादिप्राप्तिवर्णन	... ७८
३१	पुण्य अरु पापनसे इस जगत्में मनुष्ययोनिप्राप्तिमें जीवके गतिका वर्णन	... ८०
३२	गृहस्थाश्रमीनकूं ज्ञानोपदेशयोग्यता, कापिलेयोपाख्यानकी संपूर्णता	... ८४
३३	कपिलऋषिका अंतर्द्धानवर्णन	... ८६
	इति तृतीयस्कंधः ॥ ३ ॥	

अथ चतुर्थस्कंधः ॥ ४ ॥

१	मनुकन्याके पृथक् वंशवर्णन, तहां नरनारायणावतारका वर्णन	... १
२	दक्षशापवर्णन	... ४
३	उमारुद्रसंवादवर्णन	... ६
४	सतीदेहका त्यागवर्णन	... ७
५	वीरभद्रसे दक्षका यज्ञविध्वंसवर्णन	... १०
६	रुद्रशांतवनका वर्णन	... ११
७	दक्षयज्ञमें सर्वदेवकृत स्तोत्रवर्णन	... १४
८	ध्रुवचरित्र, तहां ध्रुवका मधुवनमें समागमवर्णन	... १८
९	ध्रुवको भगवत्कृपासे राज्यप्राप्तिवर्णन	... २३
१०	ध्रुवका यक्षोंके साथ युद्धवर्णन	... २६
११	मनुके तत्त्वोपदेशसे ध्रुवकरि यक्षोंका बंधनिवारणवर्णन	... २८
१२	कुबेरकृत ध्रुवप्रशंसा, ध्रुवचरित्रसंपूर्ण	... ३०
१३	वेननामक पुत्रके दुःखसे अंगराजाका वनमें प्रवेशवर्णन	... ३३
१४	वेनके देहमथनतें निषादकी उत्पत्तिवर्णन	... ३५
१५	पृथुराजाका अरु अर्चिदेवीका अवतारवर्णन.	३७
१६	मुनियोंकरिके कृत पृथुराजाके स्तोत्रवर्णन	... ३९
१७	पृथुराजाको विजय तहां पृथिवीका निग्रहवर्णन	... ४०
१८	दोहवत्सादिभेदकरिके पृथुराजाकृत पृथिवीदोहनका वर्णन	... ४२

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	पृ०
१९	पृथुराजाकृत अश्वमेधयज्ञ, तहां इंद्रकृत पाषंडमार्गवर्णन	... ४४
२०	यज्ञमें पृथुराजाको भगवान्कृत अनुशासनवर्णन	.... ४६
२१	प्रजाओंके अनुशासनमें ब्राह्मणमाहात्म्यवर्णन	४८
२२	पृथुराजाको सनत्कुमारने परम अध्यात्मज्ञानका उपदेशवर्णन	... ५१
२३	पृथुचरित्रकी संपूर्णतावर्णन	... ५४
२४	रुद्रगीत	... ५६
२५	रुद्रका अंतर्द्धान, पुरंजनपुरंजनीचरित्रवर्णन	६०
२६	पुरंजनने अपने अपने अपराधकी क्षमावर्णन	६३
२७	कालकन्याका उपाख्यान	... ६५
२८	स्त्रीके चिंतवनसे स्त्रीपनेको प्राप्त भये पुरंजनकी दैवके वशतें कभी मुक्तिका वर्णन.	६६
२९	अध्यात्मज्ञानका वर्णन	... ७०
३०	प्रचेताके गृहमें दक्षकी उत्पत्तिका वर्णन	... ७५
३१	संपूर्णप्राचेतस उपाख्यानवर्णन	.... ७८

इति चतुर्थस्कंधः ॥ ४ ॥

अथ पंचमस्कंधः ॥ ५ ॥

१	प्रियव्रतराजाकी कथा, तहां प्रियव्रतको प्रथम वैराग्य फिरि गृहस्थाश्रमप्रवेश पुनः वैराग्यसे मोक्षप्राप्तिवर्णन	... १
२	आग्नीध्रके चरित्रका वर्णन	... ५
३	नाभिराजासे मेरुदेवीमें ऋषभावतारवर्णन	... ७
४	ऋषभचरित्र, तहां ऋषभजीको शतपुत्र वर्णन	... १०
५	ऋषभजीका पुत्रनप्रति ज्ञानोपदेश	.... ११
६	ऋषभदेवजीको चरित्रका अवसानवर्णन	... १५
७	भरतने कृत हरिक्षेत्रमें पूजन, शालिग्रामकी उत्पत्ति, गंडकीमाहात्म्यवर्णन	... १७
८	भरतका मनुष्यदेहत्यागपूर्वक मृगत्वशरीरप्राप्तिवर्णन	.... १८
९	जडभरतकी बलिप्रदानसे मुक्तिका वर्णन	... २१
१०	रहूगण जडभरतका संवादवर्णन	... २३
११	रहूगणका मनोविजयवर्णन	.... २६
१२	रहूगणको जडभरत ब्राह्मणने भगवत्कथास्वरूपका निरूपणवर्णन	... २८
१३	रहूगणकूं सूक्ष्म भवाटवीका वर्णन	... ३०
१४	भवाटवीका परोक्षज्ञानवर्णन	... ३२
१५	प्रियव्रतके वंशका कीर्तन	... ३७
१६	भुवनकोशवर्णन	... ३८
१७	इलावृतखंडमें भगवान् संकर्षणका वर्णन	... ४०
१८	रम्यक उत्तर खंडमें सेव्यसेवक भुवनकोशवर्णन	... ४३
१९	जंबूद्वीपवर्णन, तहां भरतखंडका माहात्म्यवर्णन	... ४७
२०	क्षीर आदि समुद्र और प्लक्ष आदि द्वीपोंका प्रमाण लक्षण और संस्थानवर्णन	... ५०
२१	स्वर्गमंडलका प्रमाण, खगोलवर्णन	... ५४
२२	तहां ज्योतिश्चक्र सूर्यरथमंडलवर्णन	... ५६
२३	ज्योतिश्चक्रमें नवग्रहोंका वर्णन	... ५८
२४	शिशुमारचक्रवर्णन	... ५९
२५	पातालादि बिलस्वर्गमें जे रहते हैं तिनकी मर्यादाका वर्णन	... ६३
२६	श्रीशेष महाराजके स्वरूपका वर्णन तथा नरकका वर्णन	... ६४

इति पंचमस्कंधः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठस्कंधः ॥ ६ ॥

१	अजामिलका उपाख्यानप्रारंभ	... १
२	भगवन्नामका माहात्म्यवर्णन	... ४
३	यमराजने अपने भटोंप्रत भगवद्भक्ति नामका माहात्म्यवर्णन	... ८
४	प्रचेतसोंसे दक्षकी उत्पत्ति	... ११
५	नारदके शापका वर्णन	... १४
६	दक्षसे साठ कन्याओंकी उत्पत्ति दक्षकन्याओंका वंशवर्णन	... १७
७	इंद्रादिदेवकृत विश्वरूपका पौरोहित्यवर्णन	... १९
८	श्रीनारायणकवचवर्णन	... २२

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	पृ०
९	इंद्रादिकृत गद्यात्मक श्रीहरिस्तोत्रवर्णन	... २४
१०	वृत्रासुरके पक्षके असुरनका पराजय-वर्णन	... २९
११	वृत्रासुरकृत भगवत्स्तोत्रवर्णन	... ३१
१२	वृत्रासुरवधवर्णन	... ३३
१३	इंद्रकृत अश्वमेधयज्ञवर्णन	... ३५
१४	चित्रकेतुराजाके पुत्रका मृत्युवर्णन	... ३६
१५	पुत्रशोकातुर चित्रकेतु राजाप्रति अंगिरा ऋषिकृत ज्ञानोपदेशवर्णन	... ३९
१६	चित्रकेतु राजाकृत संकर्षणस्तोत्रवर्णन	... ४१
१७	चित्रकेतु राजाको पार्वतीके शापसे वृत्रासुरपनेकी प्राप्तिवर्णन	... ४१
१८	एकोनपचास मरुतोंका जन्मवृत्तांतवर्णन.	... ४७
१९	पुंसवन व्रतका विधानवर्णन	... ५१

इति षष्ठस्कंधः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमस्कंधः ॥ ७ ॥

१	जय विजय हरिदासनको सनकादिकनके शापसे तीन जन्मतक असुरत्वप्राप्तिवर्णन.	१
२	हिरण्यकशिपुने दितिमाताप्रति शांतवनके समय उशीनरराजाकी कथा कहनेके विरिया यमप्रोक्त कुलिंगमिथुनकथावर्णन.	५
३	हिरण्यकशिपुका ब्रह्मदेवसे वरयाचन	... ८
४	हिरण्यकशिपुके विजयमें प्रह्लादका-साधुभाववर्णन	... १०
५	प्रह्लादने हिरण्यकशिपुके आगे नवविधभक्तिवर्णन	... १३
६	प्रह्लादनें दैत्यबालकोंको प्रति ब्रह्मज्ञानवर्णन	... १७
७	प्रह्लादने दैत्यपुत्रोंप्रति ब्रह्मस्वरूपवर्णन	... १९
८	नृसिंहावतार हिरण्यकशिपुका वध सर्वदेवकृत नृसिंहस्तोत्रवर्णन	... २३
९	प्रह्लादकृत श्रीनृसिंहस्तोत्रवर्णन	... २७
१०	त्रिपुरविजयवर्णन	... ३२
११	सदाचारनिर्णयमें वर्णाश्रमधर्मवर्णन	... ३६
१२	चार आश्रमनके धर्मका वर्णन	... ३८
१३	प्रह्लादके अर्थ दत्तात्रेयप्रभुने पारमहंस्यधर्मका वर्णन	... ४०
१४	गृहस्थाश्रमीके धर्मका वर्णन	... ४३
१५	सर्वजनोंके सदाचारका वर्णन	... ४५

इति सप्तमस्कंधः ॥ ७ ॥

अथ अष्टमस्कंधः ॥ ८ ॥

१	मन्वंतरानुचरित्र वर्णन.	... १
२	गजेंद्रोपाख्यानवर्णन	... ३
३	गजेंद्रमोक्षवर्णन.	... ५
४	गजेंद्रकृत हरिस्तोत्रवर्णन	... ७
५	रैवत मन्वंतरवर्णन, तहां अमृतमंथनवर्णन	... ९
६	अमृतमंथनमें मंदराचलका आनयन.	... १२
७	अमृतमंथनमें हलाहल विषका प्रादुर्भाव	... १४
८	कामधेनु आदि रत्नोंका प्रादुर्भाव दैत्योंके मोहनके अर्थ भगवान् धृत मोहिनीरूपवर्णन	... १७
९	सर्वदेवकृत अमृतपानवर्णन	... २०
१०	सुर असुरनका संग्रामवर्णन.	.... २२
११	देवासुरसंग्राममें शुक्राचार्यकृत दैत्यसाहाय्यवर्णन	... २५
१२	भगवान्कृत मोहिनीरूपसे शंकरका मोहवर्णन.	२७
१३	मन्वंतरानुवर्णन.	... ३०
१४	बलिराजाका विजयवृत्तांतवर्णन	... ३१
१५	मन्वंतरमें मन्वंतरके ईशोंका वर्णन	... ३२
१६	अदितिकृतपयोव्रतवर्णन	... ३४
१७	भगवान् वामनजीका अवतारवर्णन	... ३७
१८	बलिराजाका अरु वामनजीका संवादवर्णन	... ३९
१९	वामनजीका चरित्रवर्णन	... ४०
२०	श्रीवामनजीकृत विश्वरूपदर्शन	... ४४
२१	वामनजीकृत बलिनिग्रहवर्णन.	... ४६
२२	वामनजीकृत बलिमोक्षका वर्णन	... ४८
२३	वामनजीप्रतापवर्णन	... ५०
२४	मत्स्यावतारकी कथाका वर्णन	... ५१

इति अष्टमस्कंधः ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	प०
	अथ नवमस्कंधः ॥ ९ ॥	
१	वैवस्वतमनुके पुत्रोंका वंश, सुद्युम्नको स्त्रीभाववर्णन.	... १
२	करूषआदि पांच मनुपुत्रके वंशका वर्णन	.... ३
३	शर्यातिका वंशवर्णन, तहां सुकन्या और रेवतीका आख्यान.	... ५
४	मनुपुत्र नाभागकी कथा, अंबरीषराजाकी कथा	... ६
५	विष्णुके चक्रकरि अंबरीषका रक्षणवर्णन.	१०
६	शशाद आदि मांधातापर्यंत वंशवर्णन, सौभारि ऋषिका चरित्र	... ११
७	पुरुकुत्स अरु हरिश्चंद्रराजाका आख्यान.	... १४
८	रोहितका वंश कपिलदेवजीसे सगरपुत्रनका नाश.	... १६
९	अंशुमान्के वंशका खट्वांगताई वर्णन, पृथिवीमें भगीरथराजकृत गंगानयन	... १७
१०	खट्वांगके वंशमें रामचंद्रजीका जन्म अरु चरित्र.	... २०
११	श्रीरामचंद्रकृत अयोध्यामें वास अरु यज्ञवर्णन	... २३
१२	कुशका वंश, इक्ष्वाकुपुत्र शशादीका वंशवर्णन	.... २५
१३	इक्ष्वाकुपुत्र निमिराजाका वंशवर्णन	... २६
१४	चंद्रवंशवर्णन, बुधकी उत्पत्ति, तहां पुरूरवा आदिका वंश	... २७
१५	पुरूरवाके पुत्रनका वंश, सहस्रबाहु अर्जुनका वध	... ३०
१६	परशुरामजीकृत क्षत्रियवंशनाशवर्णन	... ३२
१७	पुरूरवाके जेठ पुत्र आयुके ४ पुत्रनका वंश.	३४
१८	नहुषका बेटा ययातिराजाकी कथा	... ३५
१९	ययातिकृत शोकवर्णन	... ३७
२०	पुरुके वंशमें भरतका वंशवर्णन	... ३९
२१	भरतवंशवर्णन, रंतिदेव अजमीढ आदिकोंकी कीर्तिवर्णन	... ४१
२२	दिवोदास ऋक्षके वंशमें जरासंधयुधिष्ठिर दुर्योधनादिकोंका वंशवर्णन	... ४३
२३	अनु, द्रुह्यु, तुर्वसु इन्होंके वंशका वर्णन	... ४६
२४	विदर्भके पुत्रोंका रामकृष्णपर्यंत वंशवर्णन	... ४७
	इति नवमस्कंधः ॥ ९ ॥	
	अथ दशमस्कंधः ॥ १० ॥	
१	वसुदेव देवकीका विवाह, कंससे देवकीके छः बालकोंका वधवर्णन	... १
२	ब्रह्मादिकृत गर्भस्तुति	... ६
३	हरिका चतुर्भुज आदिमंडित शरीरमें प्रादुर्भाव, गोकुलमें कृष्णगमनयोगमायावृत्तान्त	.... ९
४	कंसकृत बालकवधादिक उपद्रववर्णन	... १३
५	नंदके गृहमें पुत्रोत्सववर्णन	... १६
६	पूतनावधका वृत्तांतवर्णन	.... १९
७	शकटासुरका वध, तृणावर्तका वध, विश्वरूपदर्शन	... २३
८	कृष्णके जातकर्म नामकर्म संस्कार, मृत्तिकाभक्षणके बहानेसे माताको विश्वरूप दर्शन.	२५
९	यशोदाकृत उलूखलबंधन	... ३०
१०	यमलार्जुनभंजन, नलकूबरमणिग्रीवकृत कृष्णस्तुति	... ३२
११	वत्सासुरवध अरु बकासुरवध	.... ३५
१२	अघासुरवध	.... ३८
१३	ब्रह्मदेवकृत वत्सवत्सपालहरण	.... ४१
१४	ब्रह्मदेवकृत श्रीकृष्णस्तुति	... ४६
१५	धेनुकासुरवध, कालियविषसे मरे हुए वत्सवत्सपालनका उज्जीवन	... ५२
१६	यमुनासे कालियका निर्यापण	.... ५५
१७	कालियका वृत्तांतवर्णन, दावाग्निप्राशन	.... ६१
१८	प्रलंबासुरका वध	... ६३
१९	दावाग्निप्राशन	.... ६५
२०	वर्षाऋतुका अरु शरद्ऋतुका वर्णन	... ६६
२१	गोपीकृतवेणुगीतवर्णन	... ७१

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	प०
२२	कात्यायनीव्रत तहां गोपीवस्त्रहरण	... ७४
२३	द्विजपत्नियों कारिके यज्ञमंडपतें अन्नका ग्रहण यज्ञपत्न्युद्धरण	... ७७
२४	इंद्रयागविध्वंस, गोवर्द्धनपूजा	.... ८०
२५	गोवर्द्धनधारण और पर्जन्यसे गोकुलकी रक्षा	८३
२६	यशोदाके पास गोपियोंकी कृष्णलीलावर्णन	.... ८५
२७	गोपसंशयका दूरीकरण, कामधेनु अरु इंद्रकृत श्रीकृष्णस्तुति अरु श्रीकृष्णके ऊपर गोविंदाभिषेकवर्णन	.... ८६
२८	नंदका वरुणलोकमें आनयन अरु नंदका वैकुंठलोकदर्शन	... ८८
२९	रासक्रीडाका वर्णन	... ९०
३०	गोपियोंका विरहवर्णन	.... ९५
३१	गोपीजनकृत कृष्णस्तुति	... ९९
३२	रासलीलावर्णन	... १०१
३३	पंचाध्यायी रासलीलावर्णन	... १०४
३४	शंखचूडवध	.... ११४
३५	वेणुगीत	... ११६
३६	वृषभासुरका वध, कंसनारदसंवाद, व्रजमें अक्रूरप्रेषण	.... १२०
३७	केशिवध, व्योमासुरवध	.... १२२
३८	अक्रूरका वृंदावनमें गमन	.... १२५
३९	अक्रूरका आतिथ्य सन्मान और श्रीकृष्ण-सहित अक्रूरको मथुरामें प्रत्यागमन.	.... १२८
४०	अक्रूरकृत श्रीकृष्णस्तुति	... १३१
४१	श्रीकृष्णका मथुरामें प्रवेश	... १३३
४२	कुब्जावरप्रदान, मंगलरंगोपवर्णन	.... १३६
४३	कुवलयापीडका वध	... १३९
४४	चाणूरमुष्टिकवध, कंसासुरवध.	... १४१
४५	गुरुकुलवास, विद्याग्रहण, शंखासुरवध	... १४५
४६	उद्धवका वृंदावनमें गमन, नंदशोकापनयन	१४७
४७	उद्धवगोपीसंवाद, उद्धवका मथुरामें प्रत्यागमन	... १५१
४८	श्रीकृष्णकी कुब्जाके साथ लीलाका वर्णन, अक्रूरका हस्तिनापुरमें प्रेषण	... १५६
४९	अक्रूरकृत पांडव आश्वासन, अक्रूरका मथुरामें प्रत्यागमन	... १५९

इति दशमस्कंधपूर्वार्धम् ।

अथोत्तरार्धम् ।

५०	जरासंधका पराजय, दुर्गनिवेशन	... १
५१	कालयवनका वध, मुचुकुंदकी स्तुति	... ५
५२	कृष्णका द्वारकामें गमन, रुक्मिणीका श्रीकृष्णचंद्रप्राप्ति, ब्राह्मणद्वारा संदेश	... १०
५३	रुक्मिणीविवाहसमारंभवर्णन, रुक्मिणीहरण.	१३
५४	रुक्मिणीविवाहोत्सव, चैद्यादिकोंका पराजय.	१७
५५	प्रद्युम्नजन्मवर्णन, शंबरासुरका वध	.... २१
५६	जाम्बवती अरु सत्यभामाका विवाह स्यमंतकमणिहरण	... २३
५७	कृष्णका हस्तिनापुरमें गमन, शतधन्वाका वध, स्यमंतकोपाख्यान	.... २६
५८	श्रीकृष्णका इंद्रप्रस्थमें गमन, अष्ट महा-रानियोंका विवाह	.... २८
५९	भौमासुरका वध, सोलह हजार राजक-न्याओंका विवाह, पारिजातक कल्प-वृक्षका हरण	.... ३२
६०	रुक्मिणीकी मानलीला, कृष्णरुक्मिणी-संवाद	.... ३५
६१	श्रीकृष्णके पुत्रसंतानका वर्णन, अनि-रुद्धका विवाह, रुक्मीका वध	.... ४०
६२	ऊषास्वप्नदर्शन अनिरुद्धका बंधन	.... ४२
६३	ऊषाचरित्रवर्णन, बाणासुरयुद्ध, ऊषा-विवाह	.... ४४
६४	नृगराजाका उपाख्यान, श्रीकृष्णकृत धर्मोपदेश	.... ४७
६५	बलदेवपूजा, वृंदावनमें गमन, गोपीबलदे-वसंवाद, बलदेवविजय, यमुनाकर्षण	.... ५०
६६	मिथ्यावासुदेवपौंड्रकादिकोंका वध	.... ५२
६७	बलरामकृत द्विविदवानरका वध	.... ५५

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	प०
६८	सांबका विवाह, हस्तिनापुरका कर्षण, संकर्षणका विजय	.... ५६
६९	नारदजीका द्वारकामें आगमन, नारदकृत श्रीकृष्णकृत कौतुकदर्शन	.... ५९
७०	श्रीकृष्णका राजसूययज्ञके अर्थ इंद्रप्रस्थमें गमनका विचार	.... ६२
७१	श्रीकृष्णका इंद्रप्रस्थमें गमन, तहां मय-सभानिर्माण	.... ६४
७२	जरासंधका वधवर्णन	.... ६७
७३	राजसूययज्ञसमारंभवर्णन	.... ७१
७४	अग्रपूजासमारंभ, तहां शिशुपालका वध	.... ७३
७५	यज्ञमें आये हुए राजा ब्राह्मणादिकोंका सत्कार, दुर्योधनका मानभंग	.... ७५
७६	शाल्वराजाका वध	.... ७८
७७	द्युमानराजाका वध, सौभराजाका वध	... ७९
७८	दंतवक्त्रका वध, बलदेवजूका नैमिषारण्यमें गमन, सूतवधप्रायश्चित्तका करना, बल्वलदानवका वध	.... ८२
७९	बलदेवजूका तीर्थयात्रार्थ गमन	.... ८४
८०	सुदामजीका श्रीकृष्णदर्शनार्थ द्वारकामें प्रवेश, श्रीकृष्णकृत सुदामाका आदर सत्कार	.... ८५
८१	सुदामाके दारिद्र्यका दूरीकरण	.... ८८
८२	श्रीकृष्णजूका सूर्यग्रहणमें कुरुक्षेत्रमाहीं गमन, तहां नंदादिक गोपगोपीनका समागम	.... ९१
८३	श्रीकृष्णयुधिष्ठिरसंगम, कृष्णपत्नी अरु द्रौपदीका संवाद	.... ९४
८४	श्रीकृष्णप्रभाववर्णन, तीर्थयात्रामहोत्सववर्णन	.... ९७
८५	वसुदेवजूको श्रीकृष्णकृत तत्त्वोपदेश, देवकीकारि प्रार्थित श्रीकृष्णजीसे सुताग्रजानयन	१०३
८६	अर्जुनकृत सुभद्राहरण, श्रुतदेवब्राह्मणके ऊपर श्रीकृष्णानुग्रहवर्णन	.... १०६
८७	नारायणनारदसंवाद वेदकृत श्रीकृष्णस्तुति	.... ११०
८८	वृकासुरका वध, रुद्रमहादेवका संकटमें मोचन	.... ११७
८९	भृगुऋषिकृत विष्णुसत्वपरीक्षण, अर्जुनको श्वेतद्वीपाधिपति नारायणस्वरूपका दर्शन, ब्राह्मणके बालकनका आनयन	.... १२०
९०	श्रीकृष्णचरित्रका वर्णन	.... १२३

इत्युत्तरार्धम्।

इति दशमस्कंधः ॥ १० ॥

एकादशस्कंधः ॥ ११ ॥

१	यदुवंशको विप्रशापवर्णन	.... १
२	वासुदेवके अर्थ नारदमुनिकथित शुद्धवैष्णवधर्मवर्णन	.... ३
३	जायंतेयउपाख्यान, तहां ऋषभपुत्रकथित उत्तरोंका वर्णन	.... ७
४	अवतारकी चेष्टाके प्रश्नका उत्तर	.... ११
५	भक्तिरहितनके गतिका वर्णन, युगयुगमें पूजाविधिका वर्णन	.... १४
६	ब्रह्मदेवकृत कृष्णस्तुति, उद्धवजीकृत कृष्णप्रार्थना	.... १७
७	उद्धवके ज्ञानसिद्धिको अवधूतका इतिहासवर्णन, गुरुके आठ गुण	.... २०
८	अवधूतको अजगर आदि गुरुवर्णन, पिंगला वेश्याको गीत.	.... २५
९	अवधूतके कुररपक्षी आदि गुरुवर्णन, अवधूतगीत.	.... २८
१०	आत्माको संसारकारणका वर्णन.	.... ३१
११	बद्ध, मूल, साधु अरु भक्तिका लक्षण	.... ३४
१२	सत्संगकी महिमा, कर्मका आदान अरु त्यागवर्णन	.... ३७
१३	गुणका बंधन छूटनेका प्रकार, हंसकी कथा.	३९
१४	परमश्रेष्ठ भक्ति और साधनसहित ध्यानवर्णन.	.... ४२

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अ०	विषयाः	प०
१५	धारणासहित सिद्धिको भगवान्‌के प्राप्तिको विघ्नत्व, परमेश्वरतत्परतावर्णन	.... ४५
१६	हरिकी विभूति, ज्ञान, वीर्य, प्रभाववर्णन.	.... ४७
१७	हंसावतारकरिके ब्रह्मचारी और गृहस्थीनके धर्मवर्णन	.... ५०
१८	वानप्रस्थ और संन्यासियोंके धर्मका वर्णन	.... ५३
१९	विरक्तको आत्मानुभववर्णन	.... ५६
२०	भक्ति ज्ञान क्रिया योगवर्णन	.... ५९
२१	भक्ति ज्ञान क्रियारहितनकी निंदावर्णन	.... ६१
२२	तत्वनकी संख्या, प्रकृतिपुरुषका विवेक, जन्ममरणका प्रकारवर्णन	.... ६५
२३	भिक्षुगीतवर्णन	.... ७०
२४	सांख्यज्ञानकरि मोहनिवारण	... ७४
२५	सत्व आदि गुणनकी वृत्तिवर्णन	.... ७६
२६	साधुसंगमें योगसिद्धि, तहां पुरूरवाराजाकी कथा	... ७९
२७	सांख्यकर्मयोगवर्णन	.... ८१
२८	ज्ञानयोगको संक्षेपसे वर्णन	.... ८४
२९	भक्तियोगका संक्षेपसे वर्णन, उद्धवका वनमें गमन	.... ८८
३०	मुशलके युद्धसे यदुकुलका क्षयवर्णन	.... ९१
३१	भगवान्‌का अपने शरीरसे निजधामगमनवर्णन	.... ९३

इति एकादशस्कंधः ॥ ११ ॥

अ०	विषयाः	प०
	अथ द्वादशस्कंधः ॥ १२ ॥	
१	मागधवंशके राजानकी उत्पत्ति, उनके वर्णसंकरताका वर्णन	.... १
२	कलियुगमें मनुष्योंकी स्थितिका वर्णन.	.... ३
३	युगयुगका अनुवर्णन	.... ५
४	परमाणु आदि द्विपरार्धपर्यंत कालका वर्णन, परमात्मनिर्णयवर्णन	.... ८
५	प्रमाणलक्षणका वर्णन, शुकाचार्यकृत परीक्षित् आश्वासन	.... १०
६	व्यासदेवकृत वेदशाखावर्णन	.... ११
७	शिष्य प्रशिष्यनकरि वेदशाखाका विस्तारवर्णन	.... १५
८	मार्कंडेयको मार्कंडेयाख्यान वर्णन	.... १७
९	भगवान्‌के मायाका दर्शन	.... १९
१०	मार्कंडेयऋषिकृत भगवान्‌की स्तुतिवर्णन	.... २१
११	आदित्यव्यूहरचना	.... २३
१२	बारहों स्कंधोंमें कही भई कथाका राजा प्रति पुनः स्मरण	.... २५
१३	पुराणसंख्यावर्णन, ग्रंथांतमंगल, ग्रंथसमाप्ति	२९

इति द्वादशस्कंधः ॥ १२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाकी विषयानुक्रमणिका संपूर्ण ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना.

कल्याण-मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवत-

माहात्म्यभाषाप्रारंभः।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

यं प्रव्रजन्तमनुपेतमपेतकृत्यं द्वैपायनो विरहकातर आजुहाव ॥
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदुस्तं सर्वभूतहृदयं मुनिमानतोऽस्मि ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ दोहा ॥ गणपति गौरि गिरीश, श्रीकृष्णचरण चितलाय । करत माहात्म्यको तिलक, कीजै आय सहाय ॥ १ ॥ व्यासदेव शुकदेव श्रीशौनक सूत प्रणाम ॥ वार वार कर प्रेमसे, कीजै पूरण काम ॥ २ ॥ जिन जाते हुएके पीछे चलते २ श्रीव्यासजी महाराज विरहसे व्याकुल होकर पुत्र २ पुकारने लगे वही वार्ता तन्मय हो जानेके कारण वृक्षोंनेभी उनसे कही उस सर्व प्राणियोंके हृदयमें स्थित मुनिको मैं नमस्कार करताहूं ॥१॥ नैमिषारण्य क्षेत्रमें बैठेहुए महाबुद्धिमान् सूतजी को प्रणाम करके कथारूपी अमृतस्वादके रसिक शौनकजी कहते भये ॥ २ ॥ शौनकजी बोले कि हे सूत ! सर्वथा अज्ञानतिमिरका नाशक कोटिसूर्यसम प्रकाशक हमारे कर्णोंको रसायनरूप कथाओंको सार आप वर्णन कीजिये ॥ ३ ॥ किस प्रकारसे भक्ति ज्ञान वैराग्यकी प्राप्ति होती है और ज्ञान किस प्रकारसे वृद्धिको प्राप्त होता है और महात्मा वैष्णवजन किस प्रकारसे मायामोहका त्याग करते हैं ॥ ४ ॥ इस घोर कलियुगके प्रवृत्त होनेसे जीव असुरभावको प्राप्त होगये हैं उन क्लेशसे दबेहुए जीवोंके शोधनके निमित्त क्या कर्तव्य है ॥ ५ ॥ जो कल्याणोंका कल्याण पवित्रोंका पवित्र और सम्यक् प्रकार कृष्णकी प्राप्ति करनेवाला साधन होय सो आप हमसे अब कहिये ॥ ६ ॥ चिन्तामणि संसार सुखको इन्द्र स्वर्गकी संपदाको देताहै और गुरु प्रसन्न होकर योगी दुर्लभ वैकुंठ गतिको देता है ॥ ७ ॥ सूतजी बोले हे शौनक ! तुम्हारे मनमें बहुत प्रीति है इस कारण मैं विचार कर सर्वसिद्धान्तयुक्त संसारका भयनाशक ॥ ८ ॥ भक्तिके वृद्धि करनेहारा श्रीकृष्णके संतोषका कारण मैं तुमसे वर्णन करताहूं सो तुम सावधान होकर सुनो ॥ ९ ॥ कालसर्पके मुखके ग्रास होनेके त्रासका नाशक श्रीमद्भागवतशास्त्र कलियुगमें शुकदेवजीने कहा है ॥ १० ॥ इससे अधिक मन शुद्ध करनेके निमित्त और कुछ नहीं है जन्मान्तरके पुण्य प्राप्त होनेसे भागवतकी प्राप्ति होती है ॥ ११ ॥ जिस समय परीक्षित सभामें बैठेथे और शुकदेवजी कथा कहनेका प्रारंभ कियो चाहते थे तब तहां देवता अमृतका कलश लेकर आये ॥ १२ ॥ शुकदेवजीको दंडवत् करके सब बोले महाराज कथारूपी अमृत इमें दीजिये इसके बदले यह अमृत लीजिये देवता अपने कार्यमें कुशल होतेही हैं ॥ १३ ॥ इस बदलेके करनेसे राजाको आप अमृत पिलाइये और हम सब देवता भागवतरूपी अमृत पियें ॥ १४ ॥ कहां तो अमृत और कहां संसारमें यह कथा कहां काच कहां मणि यह बात

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विचार परीक्षित देवताओंके ऊपर हँसे ॥ १५ ॥ तिनको अभक्त जानकर कथारूपी अमृत नहीं दिया श्रीमद्भागवतकी कथा देवताओंकोभी दुर्लभ है ॥ १६ ॥ इस प्रकार राजाकी मोक्ष देखकर ब्रह्माजीभी विस्मित हुए सत्यलोकमें तुलाको बांध और साधनोंके संग इसे तोला ॥ १७ ॥ इसके गौरवके सामने और सब साधन हलके भये तिस समय सब ऋषि बडे विस्मित हुए ॥ १८ ॥ पृथ्वीमें भागवतशास्त्रको भगवान्का रूप मानते भये जो पढने सुननेसे शीघ्र वैकुंठका फल देताहै ॥ १९ ॥ सप्ताहमें श्रवण करनेहारेको सर्वथा मुक्तिदायक है यह सनकादिकोंने दया करके नारदजीके अर्थ पूर्व कालमें कहा है ॥ २० ॥ यद्यपि यह कथा नारदजीने ब्रह्माजीसे सुनी है परन्तु इसके सप्ताहमें श्रवण करनेकी विधि सनत्कुमारने तिनसे वर्णन करीहै ॥ २१ ॥ शौनकजी बोले लोकमें कलह करानेवाले दो घडीसे अधिक एक स्थानमें न रहनेवाले नारदजीने यह किस प्रकार स्थिर होकर प्रीतिपूर्वक विधि श्रवण करी और उनके साथ इनका संयोग कहां हुआ ॥ २२ ॥ सूतजी बोले यह भक्तियुक्त कथा मैं आपके प्रति कहूंगा जो कुछ मुझसे शुकदेवजीने अपना अन्तरंगशिष्य विचारकर कहा है ॥ २३ ॥ एक समय बद्रिकाश्रममें वे शुद्ध चारों ऋषि सत्संगके निमित्त नारदजीके देखनेको आये ॥ २४ ॥ कुमार बोले नारदजी तुम दीनमुख कैसे हो रहे हो तुम्हें क्या चिंता है जलदीसे कहांको जाओगे और आप कहांसे आये हो ॥ २५ ॥ इस समय तुम ऐसे शून्यचित्त हो जैसे किसीका धन खो जाय मुक्तसंग तुममें यह बात अनुचित है इस कारण इसका कारण कहो ॥ २६ ॥ नारदजी बोले मैं सब लोकोंमें उत्तम पृथ्वीको जानकर पुष्कर प्रयाग काशी गोदावरीको गया ॥ २७ ॥ हरिक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, श्रीरंग, सेतुबन्ध आदि तीर्थोंमें इधर उधर घूमता फिरा ॥ २८ ॥ परन्तु कहीं मनःसंतोषकारक कोई कल्याणकी बात न देखी अधर्मके मित्र कलियुगने अब यह सब पृथ्वी बाधित कर लीहै ॥ २९ ॥ अब सत्य तप शौच दया नहीं है इस कारण जीव तुच्छ झूठ बोलने और केवल उदर पोषण करनेवाले होगये हैं ॥ ३० ॥ आलसी बुद्धिहीन मंदभाग्य रोगादिसे पीडित पाषंडनिरत लिंगसे विरक्त यतिआदिभी स्त्रीधनसहित है ॥ ३१ ॥ घरमें स्त्रीहीकी प्रभुताई है साले सम्मतिदाता है लोभसे कन्याविक्रय होताहै स्त्रीपुरुषोंमें कलह रहने लगा है ॥ ३२ ॥ आश्रम अर्थात् मठोंमें तीर्थ और नदियोंमें यवनोंका अधिकार हो गयाहै और देवताओंके स्थानभी दुष्टोंने नष्टप्राय कर दिये हैं ॥ ३३ ॥ न योगी न सिद्ध न ज्ञानी न कोई सत्क्रियायुक्त मनुष्य है कलिरूपी दावानलसे सब साधन भस्म होगयेहैं ॥ ३४ ॥ अन्नके बेचनेवाले जनपदके मनुष्य वेद बेचनेहारे ब्राह्मण भग बेचनेवारी स्त्रियें कलियुगमें होती हैं ॥ ३५ ॥ इस प्रकार कलियुगके दोष देखता पृथ्वीमें विचरताहुआ मैं यमुनाके किनारे आया जहां कृष्णचंद्रने अनेक लीला करी थीं ॥ ३६ ॥ वहां जो मैंने आश्चर्य देखा सो हे मुनियो ! श्रवण करो तहां एक युवा स्त्री दुःखी मन बैठीथी ॥ ३७ ॥ उसके धोरे दो बुड्ढे अचेत पडे सांस ले रहेथे वोह उनकी शुश्रूषा करती और समझाती हुई उनके आगे रोतीथी ॥ ३८ ॥ अपने शरीरके रक्षा करनेवालेको दशों दिशामें देखती थी सैकडों स्त्री उसकी पवन करती और वारंवार समझाती थीं ॥ ३९ ॥ उसे दूरसे देखतेही मैं कौतुकसे उसके धोरे गया वोह बाला मुझे देखतेही उठ बैठी और व्याकुल होकर बोली ॥ ४० ॥ हे साधु ! थोडी देर ठहरो मेरी चिन्ताकोभी नाश करो तुम्हारा दर्शन संसारके जीवोंका निश्चय पाप दूर करनेवाला है ॥ ४१ ॥ प्रायः तुम्हारे वाक्यसे दुःखकी शांति होजायगी जब बडा भाग्य होता है तब तुम्हारा दर्शन होता है ॥ ४२ ॥ नारदजी बोले तू कौन है और यह दोनों कौन हैं और यह कमलनयनी स्त्रियें कौन हैं हे देवि !

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अपने दुःखके कारणको विस्तारसहित कहो ॥ ४३ ॥ बाला बोली मैं भक्ति जगत् विख्यात हूं और यह ज्ञान वैराग्य नाम मेरे दोनों पुत्र कालयोगसे वृद्ध हुए पडे हैं ॥ ४४ ॥ यह गंगादि नदियें मेरी सेवा करनेको आगई हैं तौभी देवताओंके सेवा करनेसेभी मेरी शांति नहीं होगी ॥ ४५ ॥ हे तपोधन ! इस समय मन लगाकर मेरी बात सुनो मेरी कथा बडी है उसे सुनकर सुख होगा ॥ ४६ ॥ मैं द्रविडदेशमें उत्पन्न होकर करनाटक देशमें वृद्धिको प्राप्त भई कहीं कहीं महाराष्ट्र देशमें और गुर्जर देशमें वृद्ध होगई ॥ ४७ ॥ तहां घोर कलियोगसे पाखण्डोंसे खंडित शरीर मैं पुत्रोंसहित बडी दुर्बल होगई ॥ ४८ ॥ अब इस समय वृन्दावनमें फिर सुन्दर रूपवती पहलेकी नाईं होगई हूं ॥ ४९ ॥ यह मेरे दोनों पुत्र श्रमसे दुःखित पडे हैं इस स्थानको छोडके मुझसहित परदेशको गये ॥ ५० ॥ सो यह दोनों बूढे होगये इस दुःखसे मैं दुःखी हूं और मैं जवान होगई और दोनों पुत्र कैसे वृद्ध होगये ॥ ५१ ॥ तीनों साथही रहते थे यह विपरीतता कैसे हुई माता वृद्धा पुत्र तरुण यह तौ योग्य है पर यह विपरीत तौ घटताही नहीं ॥ ५२ ॥ इस कारण मैं बडे आश्चर्यपूर्वक अपने आत्माकूं शोचती हूं हे योगी महात्मन् ! आप कहिये इसमें क्या कारण है ॥ ५३ ॥ नारदजी बोले हे निष्पापे ! मैं ज्ञानसे अपनेमें यह सब तेरी वार्ता देखताहूं तू दुःख मत करै परमेश्वर तेरा कल्याण करेंगे ॥ ५४ ॥ सूतजी बोले क्षणमात्रमें सब विचार कर मुनीश्वर कहने लगे हे बाले ! सावधान होकर सुन इस समय दारुण कलियुग वर्त्ततारहै ॥ ५५ ॥ इस कारण सदाचार योगमार्ग तप लुप्त होगये हैं इसी कारणसे मनुष्य पाप करनेके कारण असुरभावको प्राप्त होगये हैं ॥ ५६ ॥ इस युगमें संत दुःख पाते हैं असाधु प्रसन्न रहते हैं जो बुद्धिमान् धैर्य धारण करता है वोही धीर पंडित है अथवा ॥ ५७ ॥ यह शेषजीको भार करानेहारी पृथ्वी अब छूने और देखनेके अयोग्य होगई है और प्रतिवर्ष क्रमसे ऐसीही होती जाती है कि अब कहीं शुभ वार्ता नहीं दीखती ॥ ५८ ॥ तुझेभी पुत्रसहित अब कोई नहीं देखता पुत्र दारा धनादिके अनुरागसे अंधे हुए तेरा आदर कोई नहीं करते इससे तू जर्जर होगई है ॥ ५९ ॥ वृंदावनके संयोगसे अब फिर तू नवीन तरुणी होगई है इससे वृंदावन धन्य है जहां भक्ति विराजती है ॥ ६० ॥ इस वृंदावनमें यह ज्ञान वैराग्य ग्राहकाभावसे वृद्धावस्थाको नहीं त्यागन करैंगे इस स्थानमें इन ज्ञान वैराग्यकी और कुछ तेरीभी कामक्रोधादि दुःखाभावसे सुखपूर्वक स्थिति होगी ऐसा माना जाताहै ॥ ६१ ॥ भक्ति बोली महाराज ! परीक्षितने इस अपवित्र कलियुगको क्यों स्थापित किया जो इसके प्रवृत्त होतेही सब बडा सारबल कहां गया ॥ ६२ ॥ दयायुक्त भगवान् विष्णु इस पापकूं कैसे देखते हैं यह मेरा संदेह दूर करो तुम्हारी वाणीसे मैं प्रसन्न हूं ॥ ६३ ॥ नारदजी बोले हे बाले ! जो तैंने पूछाहै तो प्रेमसे श्रवण कर मैं तेरे अर्थ सम्पूर्ण वर्णन करूंगा जिससे तेरा दुःख दूर होगा ॥ ६४ ॥ जब मुकुंद भगवान् पृथ्वीको त्यागन कर अपने धामको पधारे उसी दिनसे सब साधनका बाधक कलियुग आनकर प्राप्तहुआ ॥ ६५ ॥ जिस समय दिग्विजय करते राजा परीक्षितने कलिको देखा तुरंत यह इसे मारनेको उद्यत हुए तब यह दीनतापूर्वक शरणमें आनकर प्राप्त हुआ तब राजाने विचारा कि यह शरणमें आया है इस कारण मुझे मारना योग्य नहीं राजाकी नाईं सारका भोगनेवाला था ॥ ६६ ॥ क्यों कि जो फल तपस्या और योगसमाधिसेभी नहीं होता है वोह फल कलियुगमें केवल अच्छी प्रकार केशवके नाम लेनेसे प्राप्त होता है ॥ ६७ ॥ जिसमें केवल भक्तिही साधन है और ज्ञान वैराग्यादि जिसविषे निरस हैं ऐसे कलियुगको देख कलिवासी जनोंके सुख करनेको केवल

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भक्ति करनेसेही मनुष्य तर जांयगे राजाने उसका स्थापन किया ॥ ६८ ॥ कुकर्माचरण करनेसे सबका स्थिरांश अब निकलगया है और पृथ्वीमें पदार्थ बीजहीन भूमीकी नाईं उत्पन्न होते हैं ॥ ६९ ॥ ब्राह्मणोंने थोडे धनके लोभसे भगवत्सम्बन्धी वार्ता घरघरमें जिस तिस मनुष्यसे कहनी प्रारम्भ करदीहै इससे कथाका सार अर्थात् फल जाता रहा ॥ ७० ॥ बडे भयंकर कुत्सित कर्म नास्तिक पापी मनुष्य तीर्थोंमें वास करने लगे इस कारण तीर्थोंका सार जाता रहा ॥ ७१ ॥ जिनके चित्त काम क्रोध महा लोभसे व्याकुल हैं वेभी तप करनेलगे इससे तपस्याका सार जातारहा ॥ ७२ ॥ मनके नहीं जीतनेसे लोभ दंभ पाखण्डके आश्रय करनेसे शास्त्रके अनभ्याससे ध्यानयोगका फल जातारहा ॥ ७३ ॥ पंडित महिषकी नाईं स्त्रियोंके साथ रमते पुत्रोत्पादन करनेमें तौ चतुर हैं परंतु मुक्तिसाधनमें मूर्ख हैं ॥ ७४ ॥ कहीं वैष्णवता जो सब संप्रदायोंमें श्रेष्ठ है नहीं पाई जाती इस प्रकार स्थान २ में सब पदार्थोंका सार जातारहा ॥ ७५ ॥ फिर यह तौ युगधर्महीं है इसमें किसीका दोष नहीं इस कारण पुण्डरीकाक्ष निकट स्थित हुएभी सहन करतेहैं ॥ ७६ ॥ सूतजी बोले हे शौनक ! इस प्रकार नारदजीके वचन सुन बडी विस्मयको प्राप्त हो भक्ति फिर बोली सो तुम सुनो ॥ ७७ ॥ भक्ति बोली देवर्षि तुम धन्य हो मेरे भाग्यसेही आनकर प्राप्त हुएहो साधुओंका दर्शन लोकमें सब सिद्धियोंका देनेहारा है ॥ ७८ ॥ जगत्में जिन तुम्हारी केवल अनुपम वचनरचनाको विचार कर कयाधूका पुत्र प्रह्लाद शापको त्यागता भया और जिसकी कृपासे यह ध्रुव अचलपदको प्राप्त हुआ सब क्षेमोंके पात्र ऐसे ब्रह्माके पुत्र नारदको नमस्कार करतीहूं ॥ ७९ ॥

जयति जयति मायां यस्य कायाधवस्ते वचनरचनमेकं केवलं चाकलय्य ॥
ध्रुवपदमपि यातो यत्कृपातो ध्रुवोऽयं सकलकुशलपात्रं ब्रह्मपुत्रं नताऽस्मि ॥ ७९ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखंडे भा० मा० भाषाटीकायां भक्तिनारदसमागमो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

नारद उवाच-वृथा खेदायसे बाले अहो चिन्तातुरा कथम् ॥
श्रीकृष्णचरणाम्भोजं स्मर दुःखं गमिष्यति ॥ १ ॥

नारदजी बोले तू वृथा खेद करतीहै और क्यों चिंतातुर होरहीहै श्रीकृष्णके चरणकमलके स्मरण करते ये सब दुःख जातारहैगा ॥ १ ॥ जिन श्रीकृष्णने कौरवोंके महासंकटसे द्रौपदीकी रक्षा करी गोपकुमारी शंखचूडादिसे बचाई वोह कहीं नहीं गये हैं ॥ २ ॥ और तू तो भक्ति उनको प्राणोंसेभी अधिक प्यारी है तुझसे बुलाये भगवान् तौ नीचोंके घरोंमेंभी आते हैं ॥ ३ ॥ सतयुगादि तीन युगोंमें ज्ञान और वैराग्य मुक्तिके साधक थे कलियुगमें केवल भक्ति ही ब्रह्मसायुज्यकी देनेहारी है ॥ ४ ॥ वोह परमात्मा चिद्रूप परमानन्द चिन्मूर्ति सुन्दरी कृष्णवल्लभा अपना स्वरूपही तुमको उत्पन्न करते हुए ॥ ५ ॥ तब तैंने हाथ जोडकर कहा कि मैं क्या करूं तब कृष्णने आज्ञा करी कि मेरे भक्तोंको पुष्ट कर जब तैंने यह अंगीकार किया तब भगवान् कृष्ण प्रसन्न हुए ॥ ६ ॥ तब तेरे निमित्त यह मुक्ति दासी दी और यह दोनों ज्ञान वैराग्यभी दास दिये ॥ ७ ॥ अपने निजरूपसे तौ तू वैकुंठमें पोषणा करतीहै और पृथ्वीमें भक्तोंके विशेष संतुष्टिके अर्थ तैंने छायारूप किया

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है ॥ ८ ॥ मुक्ति और ज्ञान वैराग्यको साथ लेकर तुम पृथ्वीमें आई और सतयुगसे लेकर द्वापरके अन्ततक तुम बडे आनंदसे पृथ्वीमें रही ॥ ९ ॥ कलियुगमें पाखण्डसे पीडित होनेसे क्षयको प्राप्त होगई तुम्हारी आज्ञासे फिर वोह शीघ्र वैकुंठको गई ॥ १० ॥ और फिर तेरे स्मरणमात्रसेही इस स्थानमें फिर आजाती है और तैंने यह पुत्र करके अपने निकट रक्खे हैं ॥ ११ ॥ कलियुगमें यद्यपि त्यागसे यह मंद बुद्धि तेरे पुत्र होगयेहैं तौभी चिन्ता त्यागन कर इसका मैं उपाय सोचताहूं ॥ १२ ॥ हे सुमुखी ! कलियुगकी समान कोईभी युग नहीं है तिसमें तुझे मैं घर घर प्रत्येक मनुष्यमें स्थापन करूंगा ॥१३॥ और धर्मोंका तिरस्कार कर और महोत्सवोंको आगे करके जो मैं लोकमें तुझे प्रवृत्त न करूं तौ हरिका दास नहीं ॥ १४ ॥ जो इस कलियुगमें तुझसे युक्त जीव होंगे यदि वे पापीभी हों तौभी कृष्णके मंदिरमें जायंगे ॥ १५ ॥ जिनके हृदयमें सर्वदा प्रेमरूपिणी भक्ति वास करैगी वे उज्ज्वलमूर्ति होजायंगे कभी यमका दर्शन नहीं करैंगे ॥ १६ ॥ भक्तियुक्त मनवाले महात्माओंको प्रेत, पिशाच, राक्षस, असुर कोईभी स्पर्श नहीं करसकैंगे ॥ १७॥ तप वेद और ज्ञानभी हरिको ऐसा वशमें नहीं करसके जैसा कि भक्ति वश कर देती है इसमें गोपियें प्रमाण हैं ॥ १८ ॥ हजार जन्मके अनुष्ठानसे मनुष्यकी भक्तिमें प्रीति उत्पन्न होती है कलियुगमें भक्तिसेही कृष्ण आगे स्थित होते हैं ॥ १९ ॥ जो भक्तिद्रोह करते हैं वोह त्रिलोकीमें दुःखी होते हैं आगे भक्तिकी निंदा करनेसे दुर्वासा बडे दुःखी हुएथे ॥२०॥ व्रत, तीर्थ, योग, यज्ञ, ज्ञान, वृथालापसे क्या है एकभक्तिही मुक्ति देनेवाली है ॥२१॥ सूतजी बोले इस प्रकार नारदजीसे कहेहुए अपने माहात्म्यको सुनकर भक्ति सर्वांगपुष्टिसंयुक्त हो नारदजीसे बोली ॥ २२॥ भक्ति बोली अहो नारदजी तुमको धन्य है तुममें मेरी दृढ प्रीति है सो मैं कभी नहीं त्यागन करूंगी सदैव चित्तमें धारण किये रहूंगी ॥ २३ ॥ हे महात्मन् ! तुमने कृपा पूर्वक मेरी सब बाधा क्षणमात्रमें दूर करदी परन्तु अभीतक इन मेरे पुत्रोंको चेतना नहीं हुई सो इन्हें जगाओ जगाओ ॥ २४ ॥ सूतजी बोले दयालु नारदजी भक्तिके वचन सुनकर हाथसे सराहते हुए उन दोनोंको जगाने लगे ॥२५॥ कानके धोरे मुख करके नारदजीने ऊंचे स्वरसे पुकारा ज्ञान शीघ्र जागो रे वैराग्य शीघ्र जागो ॥ २६ ॥ वेदवेदान्तके शब्द और वारंवार गीताके पाठ करके जब नारदजीने जगाया तो बलपूर्वक वे बडी कठिनाईसे उठे ॥ २७ ॥ नेत्र मींचे बडे आलसमें जंभाई लेने लगे बगलेकी नाईं श्वेतबाल हो रहे सूखे काष्ठकी नाईं शरीर था ॥२८॥ भूखके मारे क्षीण होनेके कारण वे फिर सोगये तब नारदजीको बडी चिंता हुई क्या करूं ॥२९॥ अहो इन वृद्धोंकी बडी निद्रा कैसे जायगी इस प्रकार विचार करते करते नारदजी गोविंद भगवान्का स्मरण करनेलगे ॥ ३० ॥ तब आकाशवाणी हुई तपोधन ! खेद मत करो तुम्हारा उद्यम सफल होगा इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥३१॥ इसके निमित्त देवऋषि तुम सत्कर्मका प्रारम्भ करो और साधुओंके भूषण महात्मा वे सत्कर्म तुमसे कहैंगे ॥ ३२ ॥ सत्कर्मके करने मात्रसेही इन दोनोंकी निद्रासहित वृद्धता जाती रहैगी और सब जगह भक्तिका प्रकाश होगा ॥ ३३ ॥ यह आकाशवाणी उन सबोंने स्पष्ट सुनी नारदजीने कही यह क्या बात है मैंने नहीं जानी तब बडे आश्चर्यको प्राप्त हुए ॥ ३४ ॥ नारदजी बोले इस आकाशवाणीनेभी गुप्तरूपसे कहा है सो वोह क्या साधन है जिससे इन दोनोंका कार्य हो ॥३५॥ वोह संत कहा होंगे और साधन किस प्रकार देंगे और जो आकाशवाणीने कहाहै मैं उसे किस प्रकार करूं ॥ ३६ ॥ सूतजी बोले नारदजी भक्ति ज्ञान वैराग्यको तहांही ठहराकर आप वहांसे चले तीर्थोंमें होतेहुए मुनियोंसे पूछते हुए ॥ ३७ ॥ सबने वृत्तान्त सुना परन्तु किसीने निश्चय करके न बताया कोई बोले असाध्य है कोई बोले

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समझमें नहीं आता ॥ ३८॥ कोई चुप होगये कोई सुनतेही चलदिये इस प्रकार त्रिलोकीमें विस्मयदायक बडा हाहाकार हुआ ॥ ३९ ॥ जब कि वेद वेदान्त और वारंवार गीताके पाठसेभी भक्ति ज्ञान वैराग्यका त्रिक (तिगड्डा) न उठा तौ ॥ ४० ॥ और उपाय कछु नहीं है यह वार्ता मनुष्य कानों कानोंमें कहनेलगे भाई योगीराज नारदजीकोभी तौ बुद्धिमें यह बात न आई ॥ ४१ ॥ तौ और इतर मनुष्य इसे किस प्रकार कह सक्ते हैं इस प्रकार ऋषियोंने दुर्गम वार्ता निर्णय करके कही ॥ ४२ ॥ तब नारदजी चिन्तातुर होकर बद्रीवनमें आये और यह निश्चय किया कि यहां तप करूंगा ॥ ४३ ॥ तबतक आगे सनकादि मुनियोंको जिनकी करोड सूर्यकी समान कान्ति है देखकर मुनिश्रेष्ठ नारदजी बोले ॥ ४४ ॥ नारदजी कहने लगे इस समय बडे भाग्यसे आपका दर्शन हुआ है हे कुमारो ! मेरे ऊपर कृपा करकै शीघ्र कहो ॥ ४५ ॥ तुम सब बुद्धिमान् शास्त्रवेत्ता योगी हो सदा पांच वर्षके रहते और सबसे पूर्व उत्पन्न हुये हो ॥ ४६॥ सदा वैकुंठमें रहते भगवान्के गुणानुवाद गाते हो भगवान्की लीलारूपी अमृतरससे मत्त एक कथामात्रसेही जीते हो ॥ ४७ ॥ "हरिः शरणमेवं" अर्थात् परमात्माकी शरण हूं यही जिनके मुखसे नित्य वचन निकलताहै इस कारण कालसे प्राप्त जरा तुमको बाधा नहीं करती ॥ ४८ ॥ पहले नारायणके दो द्वारपाल जिनके भ्रूभंग मात्रसेही पृथ्वीमें गिरे और फिर जिनकी कृपासे शीघ्र वैकुंठको गये ॥ ४९ ॥ वोई बडाही भाग्य है जो आपका दर्शन प्राप्त हुआ है आप दयालुओंको मुझ दीनके ऊपर दया करनी योग्य है ॥ ५० ॥ जो कुछ आकाशवाणीने कहाहै सो क्या साधन है यह आप बताइये और कैसे अनुष्ठान करना चाहिये सो आप विस्तारपूर्वक कहो ॥ ५१ ॥ भक्ति ज्ञान वैराग्यको किस प्रकारसे सुखकी प्राप्ती होगी और सब वर्णोंमें प्रेमपूर्वक यत्नसे उनका कैसे स्थापन होगो ॥ ५२ ॥ कुमार बोले देवर्षे ! चिंता मत करो मनमें प्रसन्न हो इसका उपाय सुख साध्य पूर्वकालसेही है ॥ ५३ ॥ अहो नारदजी ! धन्य हो तुम विरक्तोंके शिरोमणि हो सदा श्रीकृष्णके दासोंमें तुम अग्रणी हो योगके सूर्य हो ॥ ५४ ॥ भक्तिके निमित्त श्रम करना यह तुममें कुछ विचित्र वार्ता नहीं है श्रीकृष्णदासोंको तौ सदा भक्तिकी स्थापना करनी योग्यही है ॥ ५५ ॥ ऋषियोंने लोकमें बहुतसे मार्ग प्रगट किये हैं वे सब श्रमसाध्य हैं और प्रायः सब स्वर्गफलके देनेहारे हैं ॥ ५६ ॥ परन्तु जो वैकुंठसाधक पंथ है वोह गुप्तही है उसके उपदेश करनेवाले पुरुष भाग्यसेही प्राप्त होते हैं ॥ ५७ ॥ जो पूर्व आकाशवाणीने तुमको सत्कर्मका उपदेश दिया है सो स्थिरचित्तसे प्रसन्न होकर सुनो हम कहते हैं ॥ ५८ ॥ द्रव्ययज्ञ तपयज्ञ योगयज्ञ स्वाध्याययज्ञ (वेदका पढना) ज्ञानयज्ञ यह सर्व कर्म फलसे स्वर्गादिके देनेहारे हैं ॥ ५९ ॥ परन्तु सत्कर्मका जतानेहारा पंडितोंने ज्ञानयज्ञ कहा है वोह श्रीमद्भागवतका आलाप जो शुकादि महात्माओंने गाया है ॥ ६० ॥ उसके शब्दसे भक्ति ज्ञान वैराग्यका बडा बल बढैगा दोनोंका कष्ट दूर होगा भक्तिको सुख मिलैगा ॥ ६१ ॥ श्रीमद्भागवतकी ध्वनिसे यह सब कलिके दोष इस प्रकार नाश हो जांयगे जैसे सिंहके शब्दसे भेडिये भाग जाते हैं ॥ ६२ ॥ तब ज्ञान वैराग्यसे संयुक्त प्रेमरस बहानेहारी भक्ति घर घर मनुष्य मनुष्यमें क्रीडा करैगी ॥ ६३ ॥ नारदजी बोले जब कि वेद वेदान्तके शब्द और गीतापाठसेभी भक्ति ज्ञान वैराग्यका त्रिक नहीं उठा तौ ॥ ६४ ॥ श्रीमद्भागवतके आलापसे कैसे चैतन्यकूं प्राप्तहोगा उसकी कथामेंभी तौ श्लोकश्लोकमें पद पदमें वेदार्थही है ॥ ६५ ॥ अमोघदर्शन आप लोग यह मेरा संदेह दूर कीजिये हे शरणागतवत्सलो ! इसमें विलम्ब मत करो ॥ ६६॥ कुमार बोले वेदोपनिषद्के सारसे भागवतकथा हुई है तिससे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पृथक् हुई फलोन्नति औरभी अति उत्तम होगई है ॥ ६७ ॥ जैसे मूलसे लेकर अग्रभागपर्यंत रसवाली चीजमें बाहरसे उतना स्वादिष्ट नहीं लगता जितना कि वोही रस पृथक् फलमें होकर विश्वमनोहर रूप होता है ॥ ६८ ॥ जैसे दूधमें स्थित घी ऐसा स्वादिष्ट नहीं होता जैसा कि पृथक् होकर वोह स्वादिष्ट देवताओंका रसवर्द्धक होता है ॥ ६९ ॥ जैसे बूरा गन्नेमें सर्वत्र व्याप्त रहती है परन्तु वोह पृथक्भूत होकर जैसी मीठी लगती है तैसी भागवतकथा है ॥ ७० ॥ यह सर्व वेदसम्मत भागवत पुराण ज्ञान वैराग्यके स्थापन करनेहीको प्रकाश किया है ॥ ७१ ॥ वेद वेदान्तके पारगामी गीताके कर्ता दुःखकूं प्राप्त होतेहुए अज्ञानसागरमें मोहित व्यासजीसे ॥ ७२ ॥ जो तुमने पहले चतुःश्लोकी भागवत कही जिसके श्रवणमात्रसे तत्काल व्यासजी दुःखरहित होगये ॥ ७३ ॥ फिर तुम्हें इसमें विस्मय कैसे प्राप्त हुआ जो तुम प्रश्न करते हो श्रीमद्भागवत जो शोकदुःखका नाशक है सो सुनाओ ॥ ७४ ॥ नारद बोले दर्शन तत्काल अशुभोंको दूर कर संसारी दुःखसे दुखियोंका कल्याण करताहै संपूर्ण शेषजीके मुखोंसे गाई हुई कथाके पान करनेवालेके प्रेमसे प्रकाश करनेवाले भगवान्को मैं शरण हूं ॥ ७५ ॥ जब बहुत जन्मके भाग्य उदय होनेसे मनुष्योंको सत्संगकी प्राप्ति होती है तब अज्ञानकृत मोह मदके अंधकारका नाश होकर ज्ञान उदय होता है ॥ ७६ ॥

भाग्योदयेन बहु जन्मसमार्जितेन सत्सङ्गमं च लभते पुरुषो यदा वै ॥
अज्ञानहेतुकृतमोहमदान्धकारनाशं विधाय हि तदोदयते विवेकः ॥ ७६ ॥

इति पद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्रीभागवतमाहात्म्ये कुमारनारदसंवादो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

नारद उवाच–ज्ञानयज्ञं करिष्यामि शुकशास्त्रकथोज्ज्वलम् ॥
भक्तिज्ञानविरागाणां स्थापनार्थं प्रयत्नतः ॥ १ ॥

नारदजी बोले यत्नपूर्वक भक्ति ज्ञानके स्थापनके निमित्तमें शुकशास्त्रकी कथाका उज्ज्वल ज्ञानयज्ञ करूंगा ॥ १ ॥ जहां यह महायज्ञ कियाजाय आप उस स्थानको बताइये वेदके जाननेवालोंमें शुकशास्त्रकी महिमा कहने योग्य है ॥ २ ॥ यह श्रीमद्भागवतकी कथा कितने दिनतक सुननी योग्य है और उसमें क्या विधान है सो मुझसे आप कहिये ॥ ३ ॥ कुमार बोले हे नारदजी ! सुनो हम कहते हैं नम्रीभूत ज्ञानयुक्त गंगाद्वारके समीपही आनंद नाम तट है ॥ ४ ॥ अनेक ऋषिगणोंसे युक्त देवता सिद्धोंसे सेवित अनेक वृक्ष वेलोंसे संघटित नवीन कोमल वालुकासे युक्त ॥ ५ ॥ बडा मनोहर एकान्तस्थान सुवर्णके आकारवाले कमलोंकी सुगन्धिसे युक्त जिसके समीपके रहनेवाले जीवोंके मनमें वैर नहीं होता ॥ ६ ॥ उस स्थानमें तुमको अप्रयत्न होकर ज्ञानयज्ञ करना चाहिये और तहांही पूर्व अपूर्व और रसरूपवाली कथा होगी ॥ ७ ॥ और निर्बल जरासे जर्जरित देह वे ज्ञान वैराग्यको भक्तिसहित आगे करके तहां हमभी जांयगे ॥ ८ ॥ जहां भागवतकी कथा होती हैं तहां भक्ति आदिक सब जांय कथा शब्द श्रवणमात्रसे भक्ति ज्ञान वैराग्यका त्रिक करुणायुक्त होता है ॥ ९ ॥ सूतजी बोले कि इस प्रकार कहकर कुमार नारदजीके साथही कथाके पान करनेको शीघ्र गंगातटमें आये ॥ १० ॥ जब वे उस तटपर आये तब बडा कोलाहल हुआ भूलोकमें देवलो-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कर्में और इसी प्रकार ब्रह्मलोकमेंभी कोलाहल हुआ ॥ ११ ॥ श्रीमद्भागवतरूपी अमृतके पान करनेको प्रथम तौ जे वैष्णव थे ते चारों ओरसे दौरे ॥ १२ ॥ भृगु वशिष्ठ च्यवन गौतम मेधातिथि देवल देवरात परशुरामजी विश्वामित्र शाकल मृकंडके पुत्र मार्कण्डेय अत्रिके पुत्र दत्तात्रेय पिप्पलाद ॥ १३ ॥ योगेश्वर याज्ञवल्क्य जैगीषव्य व्यास पराशर छायाशुक जाजलि जह्नु ये मुख्य मुख्य ऋषिगण अपने पुत्र शिष्य स्त्रीसहित प्रणयपूर्वक आये ॥ १४ ॥ वेदान्त वेद मंत्र तंत्र अपनी मूर्ति धारण कर आये इसी प्रकार सत्रह पुराण छः शास्त्रभी आये ॥ १५ ॥ गंगादि नदियें पुष्करादि सरोवर सब क्षेत्र दिशा और दंडकादि वन ॥ १६ ॥ पर्वत आदि सब आये और जो देवता गंधर्व दानव शरीरके गौरवसे नहीं आये उन्हें मानपूर्वक ब्रह्माके पुत्र भृगुजी बुलालाये ॥ १७ ॥ तब नारदसे दीक्षित हो दियेहुए उत्तम आसन पर कृष्णकथामें तत्पर सबसे नमस्कृत हो कुमार बैठे ॥ १८ ॥ वैष्णव विरक्त संन्यासी ब्रह्मचारी यह मुख्य भागमें स्थित हुए सबके आगे नारदजी बैठे ॥ १९ ॥ एक भागमें ऋषिगण एक भागमें देवता एक स्थानमें वेद उपनिषद् एक स्थानमें तीर्थ और एक स्थानमें स्त्रियें बैठीं ॥ २० ॥ तब जयशब्द नमःशब्द और शंखोंका शब्द होनेलगा और चूर्ण खीलें फूलोंकी बडी वर्षा हुई ॥ २१ ॥ कितने तौ देवनायक विमानोंमें चढे आकाशसे फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥ २२ ॥ सूतजी बोले इस प्रकार सबके एकचित होकर बैठनेमें नारदजीके निमित्त कुमारने भागवतमाहात्म्य कहना प्रारंभ किया ॥ २३ ॥ कुमार बोले शुकशास्त्रसे उत्पन्न हुई महिमाको मैं तुमसे कहूंगा जिसके श्रवणमात्रसे हाथमें मुक्ति प्राप्त होती है ॥ २४ ॥ यह श्रीमद्भागवतकी कथा सदा सेवनीय है जिसके श्रवणमात्रसे श्रीकृष्ण चित्तमें प्राप्त होते हैं ॥ २५ ॥ इस ग्रंथमें अठारह सहस्र श्लोक और द्वादश स्कंध हैं यह परीक्षित और शुकदेवजीके संवादवाली भागवत सुनो ॥ २६ ॥ पुरुष अज्ञानसे तबतक इस संसारचक्रमें भ्रमताहै जबतक शुकशास्त्रकी कथा क्षणमात्रको कर्णगोचर नहीं होती ॥ २७ ॥ बहुतसे शास्त्र और भ्रमनेहारे पुराणोंके सुननेसे क्या है एक भागवत शास्त्रही मुक्ति दान करके गर्जता है ॥ २८ ॥ जिस घरमें नित्य भागवतकी कथा होती है वोह घर तीर्थरूप है वहां रहनेहारोंके पाप नाश होजाते हैं ॥ २९ ॥ हजार अश्वमेध सौ वाजपेय शुकशास्त्रकी कथाकी सोलहवीं कलाभी नहीं है ॥ ३० ॥ हे तपोधनो ! जबतकही इस देहमें पाप निवास करते हैं तबतक मनुष्य मन लगाकर भागवतकथा नहीं श्रवण करते ॥ ३१ ॥ शुकशास्त्रके फलकी बराबरी गंगा गया काशी पुष्कर प्रयागभी नहीं कर सकते ॥ ३२ ॥ जो परागति इच्छा रखते हो तौ नित्यही अपने मुखसे आधा श्लोक वा एक चौथाई श्लोकही भागवतका उच्चारण किया करो ॥ ३३ ॥ वेदादि ओंकार वेदमाता गायत्री पुरुषसूक्त ऋक् यजुः साम तीनों वेद भागवत पुराण "ओं नमो भगवते वासुदेवाय" द्वादशाक्षर मंत्र ॥ ३४ ॥ द्वादशात्मा सूर्य प्रयाग संवत्सरात्मक काल ब्राह्मण अग्निहोत्र कामधेनु द्वादशी ॥ ३५ ॥ तुलसी वसन्तऋतु पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण इनको बुद्धिमान् तत्वसे पृथक् पृथक् भाव नहीं देखते हैं ॥ ३६ ॥ जो प्रतिदिन भागवत शास्त्रको अर्थसे वांचते हैं उनके कोटि जन्मके किये पाप नष्ट होजाते हैं इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ ३७ ॥ जो भागवतका आधा वा चौथाई श्लोक प्रतिदिन पढते हैं उन्हें राजसूय और अश्वमेधका फल प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥ नित्य भागवतका कथन नारायणका कीर्तन तुलसीका पोषण और धेनुओंका सेवन समान है ॥ ३९ ॥ अन्तकालमें जिसने शुकशास्त्रकी वार्णी श्रवण करीहै उसे श्रीव्रजराज प्रसन्न हो वैकुंठ देते हैं ॥ ४० ॥ जो कोई सुवर्णसिंहासनसहित वैष्णवके निमित्त इसे प्रदान करते हैं वोह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुरुष निश्चय श्रीकृष्णकी सायुज्यपदवीको प्राप्त होते हैं ॥ ४१ ॥ जिस मूर्खने जन्मसे अंततक मन लगाकर शुकशास्त्रकथा नहीं पान करी उसने चांडाल और खरकी नाईं अपना जन्म वृथा खोया और उत्पन्न होकर माताको दुःख दिया ॥ ४२ ॥ जिसने कभी शुककथाका कोई वचन नहीं सुना वोह पापकर्मा जीवितही मृतक है उस पशुसमान पृथ्वीपर भाररूप मनुष्यको धिक्कार है ऐसा ब्रह्मादि देवता कहते हैं ॥ ४३ ॥ श्रीमद्भागवतकी कथा संसारमें दुर्लभ है कोटिजन्मके प्राप्त हुये पुण्योंसे प्राप्त होती है ॥ ४४ ॥ इस कारण हे योगनिधान बुद्धिमान् ! यह कथा यत्नपूर्वक सुननी योग्य है इसमें कोई दिनोंका नियम नहीं सदा सुनै ॥ ४५ ॥ सत्य और ब्रह्मचर्यसहित सदा सुनै अशक्य होनेसे कलियुगमें शुक आज्ञासे विशेषता कही है ॥ ४६ ॥ मनवृत्तियोंका जीतना नियमाचरण करना दीक्षा करनेमें अशक्य हो तौ सप्ताह सुनना श्रेष्ठ है ॥४७॥ नित्य श्रद्धापूर्वक श्रवण करनेसे माघमासमें जितना फल कहा है वोह फल सप्ताह श्रवण करनेसे होता है ॥ ४८ ॥ मनके अजय होने रोग होने और आयुके क्षय होने और कलियुगके बहुत दोष होनेसे सप्ताहश्रवण श्रेष्ठ है ॥ ४९ ॥ जो फल तप योग समाधिसे नहीं होता सो फल अनायास सप्ताहश्रवणसे होता है ॥ ५० ॥ यज्ञसे सप्ताह गर्जताहै सप्ताह व्रतसे गर्जताहै तपसे तीर्थोंसे नित्य गर्जताहै ॥ ५१ ॥ योग ज्ञान ध्यानसे सप्ताह गर्जता है हम उसके गर्जनेको क्या कहैं अरे रे कहकर गर्जताहै अर्थात् जबतक भागवत नहीं सुना तबतक व्रतादिक हैं इसके श्रवण करनेके अंतरमें सब आ जाते हैं ॥ ५२ ॥ शौनकजी बोले यह बडे आश्चर्यका कथानक सुनाया ज्ञान धर्मादिकोंकू तिरस्कार करके अब परब्रह्मका सूचक भागवतपुराण मोक्षके देनेहारा है सो सुनाओ ॥ ५३ ॥ सूतजी बोले जब श्रीकृष्ण पृथ्वीको त्यागन करके अपने पदकूं जाने लगे तब एकादशमें कहे ज्ञानको सुनकर उद्धवजी बोले ॥ ५४ ॥ हे भगवन् ! आप तौ भक्तिके कार्यको विधान करके जाते हो अब जो मेरे मनमें बडी चिन्ता है उसे सुनकर मुझे समझाकर सुखी करो ॥ ५५ ॥ यह घोर कलियुग आया है इसमें बडे खल उत्पन्न होंगे उनके संगसें संतभी जब उग्रताको प्राप्त होंगे ॥ ५६ ॥ तब यह गोरूपा भूमि भाराक्रांत होकर किसका आश्रय करैगी हे कमललोचन ! तुम्हें छोड कोई इसका दूसरा रक्षक नहीं है ॥ ५७ ॥ इस कारण हे भक्तवत्सल ! सत्पुरुषोंके ऊपर दया करके मत जाओ निराकार चिन्मय आप भक्तोंहीके कारणसे सगुण हुयेहो ॥ ५८ ॥ तुम्हारे वियोगसे तुम्हारे भक्त पृथ्वीमें कैसे रहैंगे निर्गुण उपासनामें कष्ट होगा इससे कुछ विचारिये ॥ ५९ ॥ ऐसे उद्धवजीके वचन सुनकर भगवान् प्रभासक्षेत्रमें विचार करने लगे भक्तोंके अवलम्बनके निमित्त मुझे क्या करना योग्य है ॥ ६० ॥ जो अपना तेज था सो भागवतमें धरदिया अन्तर्धान होकर यह श्रीमद्भागवतरूपी समुद्रमें प्रवेश कर गये ॥ ६१ ॥ इस कारण यह श्रीकृष्णकी वाणीरूप प्रत्यक्ष मूर्ति है सेवन श्रवण पाठ दर्शन करनेसे पाप दूर करती है ॥ ६२ ॥ इस कारण सबसे अधिक सप्ताह श्रवण कहाहै और सब साधनोंका तिरस्कार करके कलियुगमें यह धर्म कहाहै ॥ ६३ ॥ दुःख दरिद्र दुर्भाग और पापके धोनेके निमित्त काम क्रोधके जयके निमित्त कलियुगमें यही धर्म कहाहै ॥ ६४ ॥ अथवा वैष्णवी माया जो देवतोंकोभी दुस्त्यज सो मनुष्योंसे कैसे त्यागन होगी इस कारण सप्ताह विधि कहीहै ॥ ६५ ॥ सूतजी बोले इस प्रकार सप्ताहश्रवणका बडा धर्म जब ऋषिने सभामें कथन किया तब एक बडा आश्चर्य उस समय हुआ हे शौनकजी ! तुम सुनो ॥ ६६ ॥ तब भक्ति अपने दोनों जवान हुए ज्ञान वैराग्योंको लेकर शीघ्र प्रेमके मारे सभामें प्रगट हुई और श्रीकृष्ण गोविंद हरे मुरारे नाथ यह नाम वारंवार उच्चारण करने लगी ॥ ६७ ॥ उस भागवतार्थ भूषण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुन्दर वेष किये सभामें आई हुईकूं देखने लगे और यह कैसे मुनिजनोंके मध्यमें आई इस प्रकार सब कोई तर्कना करने लगे ॥ ६८ ॥ तब कुमार उस समय बोले यह इस समय कथाहीके निमित्त आई इस प्रकार वोह भक्ति ज्ञान वैराग्यसहित सुनकर बडी नम्र हो सनत्कुमारसे बोली ॥ ६९ ॥ भक्ति बोली कि कलियुगसे प्रनष्टभी मुझको आपने कथारस सुनाकर पुष्ट किया है अब मैं कहां रहूं सो बतावो तब वे ब्रह्माके पुत्र इस प्रकार वचन बोले ॥ ७० ॥ गोविंदके समान रूप धारण करनेवाली स्नेह करनेहारी संसाररोगकी हरनेहारी बडे धीरज धरनेहारे वैष्णव भक्तोंके मनमें तू नित्य वास कर ॥ ७१ ॥ तौ यह कलियुगके दोष तुझको देखनेको समर्थ न हों इस प्रकार उनकी आज्ञासे भक्ति नारायणके भक्तोंके चित्तमें प्रवेश करगई ॥ ७२ ॥ सम्पूर्ण संसारके मध्यमें वे निर्धनभी धन्य जिनके हृदयमें भक्ति निवास करती है भक्तिसूत्रसे वशीभूत हो भगवान् अपने लोककूं छोडकर उनके हृदयमें प्रवेश करते हैं ॥ ७३ ॥ इस ब्रह्मरूप भागवतका पृथ्वीमें हम आपसें क्या माहात्म्य कहैं जिसके कहने सुननेसे श्रोता वक्ता कृष्णकी समान विभूतिको प्राप्त करते हैं फिर और धर्मोंसे क्या है ॥७४॥

ब्रूमोऽद्य ते किमधिकं महिमानमेवं ब्रह्मात्मकस्य भुवि भागवताभिधस्य ॥
यत्संश्रयान्निगदिते लभते सुवक्ता श्रोतापि कृष्णसमतामलमन्यधर्मैः ॥ ७४ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्रीभागवतमाहात्म्ये भक्तिकष्टनिवर्तनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

सूत उवाच-अथ वैष्णवचित्तेषु दृष्ट्वा भक्तिमलौकिकीम् ॥
निजलोकं परित्यज्य भगवान्भक्तवत्सलः ॥ १ ॥

सूतजी बोले इनके उपरान्त वैष्णवोंके चित्तमें अलौकिक भक्ति देख भगवान् भक्तवत्सल ॥ १ ॥ वनमाली घनश्याम पीतवस्त्र धारे मनोहर वेश किये कमरमें क्षुद्रघंटिका मोरमुकुट सुंदर कुंडल धारण किये ॥ २ ॥ त्रिभंगी छवि किये सुंदर कौस्तुभमणिसे विराजमान कोटि कामदेवकी समान शोभायमान हरिचंदन लगाये हुए ॥ ३ ॥ परमानंद चिन्मूर्ति मधुरमुरली धारण किये भक्तोंके निर्मल मनोंमें प्रवेश करते हुए ॥४॥ जो वैकुण्ठके रहनेवारे और जो वैष्णव उद्धवादिक हैं वे गुढ रूपसे कथा सुननेको स्थित हुए ॥ ५ ॥ जब जय जय शब्द रसरूप भागवतकी पुष्टिचूर्ण और पुष्पोंकी वृष्टि और वारंवार शंखध्वनि हुई ॥ ६ ॥ उस सभामें स्थित हुओंको देह गेह और आत्माकी सुधि न रही सबकी तन्मय अवस्था देखकर नारदजी वचन बोले ॥ ७ ॥ हे मुनीश्वरो ! आज इस जनसमुदायमें मैंने सप्ताहकी अलौकिक महिमा देख जिससे मूढ शठ पशु पक्षीभी सब निष्पाप होते हैं ॥८॥ इससे इस कलियुगमें चित्तके शुद्ध करनेके निमित्त और कुछ नहीं है पापसमूह विध्वंस करनेको इसकी समान पृथ्वीमें और कुछ नहीं है ॥ ९ ॥ परन्तु यह आप मुझसे कहिये कि कथामय सप्ताह यज्ञसे कौन विशुद्ध होते हैं महात्माओंने लोकका हित विचार कर क्या कोई नवीन मार्ग स्थापित किया है ॥१०॥ कुमार बोले जो मान देनेवाले पापात्मा सदा दुराचारवाले कुत्सित मार्गमें चलनेवाले क्रोधाग्निसे दग्ध कुटिल कामी हैं वेभी कलियुगमें सप्ताहयज्ञसे पवित्र होजाते हैं ॥११ ॥ सत्यसे हीन पिता माताको दोष देनेवाले तृष्णासे व्याकुल आश्रमधर्मसे वर्जित जो पाखण्डी घमंडी हिंसकभी हैं वेभी सप्ताह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यज्ञसे कलियुगमें पवित्र होजाते हैं ॥१२॥ पांच बडे उग्रताप छल छद्मकारी जो क्रूर और पिशाचोंकी नाईं निर्दई हैं जो ब्राह्मणोंके द्रव्य हरण कर पुष्ट होते हैं व्यभिचारी हैं वेभी कलियुगमें सप्ताहयज्ञसे पवित्र होते हैं ॥ १३ ॥ और जो शठ हठपूर्वक मन वचन कर्मसे नित्य पाप करते हैं पराये द्रव्य लेकर पुष्ट होते हैं वे मलीन दुष्ट चित्तवारे कलियुगमें सप्ताहयज्ञसे पवित्र होते हैं ॥ १४ ॥ यहां मैं तुमसे एक पुरातन इतिहास कहूंगा जिसके सुननेसेही पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १५ ॥ तुंगभद्रा नदीके किनारे एक सर्वोत्तम नाम उत्तम पत्तन था जहांके चारों वर्ण अपने धर्मके सत्कर्मोंमें तत्पर थे ॥१६॥ उसी पुरमें सब वेदोंका जाननेवाला आत्मदेव नाम ब्राह्मण श्रौतस्मार्तकर्मोंका पारंगत दूसरे सूर्यकी नाईं निवास करै है ॥ १७ ॥ वो भिक्षुक धनवान् था उसकी स्त्रीका नाम धुन्धुली सुन्दरी सत्कुलोत्पन्ना सदा अपनी टेक रखनेहारी थी ॥ १८ ॥ लोकवार्त्तामें प्रीति करनेहारी क्रूरा और बहुत बोले थी बलवान् घरके कार्योंमें कृपण क्लेशकारिणी थी ॥ १९ ॥ इस प्रकार प्रेमपूर्वक उन दोनोंको रहते विहार करते हे राजन् ! अर्थ काम सम्पन्न गृहादिक उन्हें सुखकारी न हुआ ॥ २० ॥ तब उन्होंने सन्तानके निमित्त दीनोंको गौ भूमि सुवर्ण सदा देकर धर्म करना प्रारम्भ किया ॥ २१ ॥ जब कि उन दोनों स्त्री पुरुषोंने धर्ममार्गमें आधा धन लगादिया और तौभी कोई बेटा बेटी न हुई तब ब्राह्मणकूं बडी चिन्ता हुई ॥ २२ ॥ एक समय वोह ब्राह्मण दुःखी हो घरसे निकल वनको चलागया दुपहरके समय प्याससे व्याकुल हो एक सरोवरके निकट प्राप्त हुआ ॥ २३ ॥ जल पीकर सन्तानके दुःखसे दुःखी वोह तहांही बैठगया कि एक मुहूर्त उपरान्त कोई संन्यासी तहां आया ॥ २४ ॥ जब वोह जल पी चुका तब यह ब्राह्मण उसके धोरे जा चरण वंदन कर श्वास लेता आगे बैठा ॥ २५ ॥ यति बोला ब्राह्मण ! क्यों रोता है तेरे मनमें क्या चिंता है तू शीघ्र मुझसे अपने दुःखका कारण कह ॥ २६ ॥ ब्राह्मण बोला महाराज ! सब पापसे संचित किये दुःखकूं आपसे क्या कहूं मेरे पूर्वज पितर मेरे दिये हुए जलको श्वाससे गरम कर पीते हैं कि आगेको इसके सन्तान न होनेसे हमें जल न मिलैगा ॥ २७ ॥ मेरे दियेहुएकूं प्रीतिसे देवता ब्राह्मणभी नहीं ग्रहण करते मैं सन्तानके दुःखसे जडताको प्राप्त हो प्राण त्यागन करनेकूं यहां आयाहूँ ॥ २८ ॥ संतानके विना जीनेको धिक्कार है विना संतानके घरको धिक्कार है पुत्रहीनके धनको धिक्कार है संतानके विना कुलको धिक्कार है ॥ २९ ॥ जो मैं धेनु पालताहूं वोहभी तौ वंध्या होती है और जो मैं वृक्ष लगाताहूं वोहभी फलरहित हो जाता है ॥ ३० ॥ जो फल मेरे घर आता है वोह शीघ्र सूख जाता है तौ निर्भाग्य पुत्रहीन मेरे जीनेसे क्या है ॥ ३१ ॥ ऐसा कह वोह ब्राह्मण उस यतिके धोरे बैठकर ऊंचे स्वरसे रोने लगा तब उस संन्यासीके चित्तमें बडी दया हुई ॥ ३२ ॥ वोह योगी उसकी माथेकी रेखा अर्थात् प्रारब्धकूं बांचताहुआ सब जानकर फिर ब्राह्मणके प्रति विस्तारपूर्वक वचन बोला ॥ ३३ ॥ यति बोले ब्राह्मण ! संतानरूप अज्ञानकूं त्यागन कर कर्मकी गति बडी बलवान् है ज्ञानके आश्रित हो संसारवासनाकूं त्यागन कर ॥ ३४ ॥ सुन ब्राह्मण इस समय मैंने तेरी प्रारब्ध देखी सात जन्मपर्यन्त तेरो पुत्र नहीं है ॥ ३५ ॥ संतानसे सगर और अंगराजाने पहले बडा दुःख पायाथा अरे कुटुम्बकी आशा त्याग संन्यासमें सर्वथा सुख है ॥ ३६ ॥ ब्राह्मण बोला मुझे ज्ञानसे कुछ न होगा कैसेही हो पुत्र दीजिये नहीं तौ तुम्हारे आगेही मैं प्राणोंको दुःखी हुआ त्यागकर दूंगा ॥ ३७ ॥ पुत्रादि सुखहीन यह संन्यासभी शुष्कही है गृहस्थही जो पुत्र पौत्रयुक्त हैं वो लोकमें प्रसन्न हैं ॥ ३८ ॥ यह ब्राह्मणका आग्रह देख वोह तपस्वी बोला अरे विधिके अंक मिटानेसे चित्रकेतुको बडा दुःख हुआथा इस कारण प्रारब्धका अतिक्र-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मण नहीं करना ॥ ३९ ॥ जैसे दैवहत होनेसे उद्यम वृथा होता है इसी प्रकार पुत्रसे तुझे कुछ सुख नहीं प्राप्त होगा इस कारण तुझे हठी अर्थीसे मैं क्या कहूं ॥ ४० ॥ उस ब्राह्मणका बहुत आग्रह देखकर यतीने उसे एक फल दिया यह कहा इसे तू अपनी स्त्रीको खवा एक पुत्र होगा ॥ ४१ ॥ सत्य शौच दया दानपूर्वक रहने दुपहरके उपरांत अतिथिको भोजन कराकर आप खाना इस प्रकारसे एक वर्षतक स्त्री रहैगी तौ श्रेष्ठ पुत्र होगा ॥ ४२ ॥ यह कहकर योगी चलेगये ब्राह्मण अपने घरमें आया वोह फल स्त्रीको दे उसका विधान बताय ब्राह्मण कहीं चलागया ॥ ४३ ॥ उसकी तरुणी कुटिल तौ थीही सखीके आगे रुदन करनेलगी अरी मुझे बडी चिंता उत्पन्न हुई है मैं इस फलकूं न खाऊंगी ॥ ४४ ॥ फल खानेसे गर्भ रहैगा फिर पेट बढैगा थोडा भोजन करनेसे निर्बलता हो जायगी तौ घरके काम कैसे होंगे ॥ ४५ ॥ कहीं भाग्यसें गांवमें आग लगजाय तौ गर्भिणी कैसे भाजैं शुककी नाईं रहतेहुए गर्भकूं कोखसे कैसे त्यागन करै ॥ ४६ ॥ और जो कहीं गर्भ टेढा पडगया तौ मेरा मरणही होजायगा प्रसूतके समय बडा दुःख होता है उसे सुकुमारी कैसे सहै ॥ ४७ ॥ तब मुझ मंदभागनीके सर्वस्व धनकूं ननन्द हरण कर लेगी और फिर सत्य शौचादि नियमसे मुझे यह दुःसाध्यही दीखै है ॥ ४८ ॥ फिर बालकके लालन पालनमें बडा दुःख होता है यातौ वंध्या या विधवा नारी सुखी है यह मेरी मति है ॥ ४९ ॥ ऐसी कुतर्कना करकै उसने वोह फल नहीं खाया और जब पतिने पूछा कि फल खाया तौ कह दिया कि हां खा लिया ॥ ५० ॥ एक समय उसकी भगिनी निज इच्छासे उसके घर आई उसके आगे इसने सब वृत्तान्त सुनाकर कहा कि मुझै यह बडी चिन्ता है ॥ ५१ ॥ इसी दुःखसे दुर्बल होगई हूं, छोटी बहन ! बता तो क्या करूं तब वोह बोली मुझै गर्भ है उत्पन्न होनेपर तुझै दूंगी ॥ ५२ ॥ तबतक तू सगर्भासी होकर घरमें सुखी रह तू मेरे पतिकू द्रव्य दीजै वोह तुझै बालकको देदैगा ॥ ५३ ॥ मेरा बालक छः महीनेका मरगया ऐसा मैं प्रकट करदूंगी और प्रतिदिन आकर तेरे बालककू मैं दूध पियाया करूंगी ॥ ५४ ॥ और परीक्षाके निमित्त तू यह फल इस समय गायकू देदे यह सुनकर उसने स्त्रीस्वभावसे यह सब कुछ किया ॥ ५५ ॥ कुछ समय उपरान्त उस नारीके बालक हुआ तब उसके पिताने एकान्तमें वोह बालक लाकर धुंधुलीको दिया ॥ ५६ ॥ तब धुन्धुलीने अपने स्वामीसे कहा कि मेरे सुखपूर्वक बालक उत्पन्न होगया आत्मदेवके संतान होनेसे बहुतोंको प्रसन्नता हुई ॥ ५७ ॥ जातकर्म किया ब्राह्मणोंको दान दिया गीत बाजोंके शब्द और सब मंगल उसके द्वारेपर हुए ॥ ५८ ॥ धुन्धुली अपने पतिसे बोली मेरे कुचोंमें दूध नहीं है सो मैं निर्दुग्धा दूसरीके दूध विना बालककू कैसे पालोंगी ॥ ५९ ॥ मेरी बहनका थोडेही दिनोंका उत्पन्न हुआ बालक मरगया है उसे अपने घरमें बुलालो काम धंधाभी करैगी बालककोभी पालन करैगी ॥ ६० ॥ पतिने पुत्ररक्षाके निमित्त यह सब कुछ किया माताने पुत्रका नाम धुंधुकारी रक्खा ॥ ६१ ॥ तीन महीने उपरान्त उस गायकेभी एक बालक उत्पन्न हुआ सर्वांग सुंदर उज्ज्वल दिव्य शरीर सुवर्णकी नाईं ॥ ६२ ॥ ब्राह्मण उसे देख बडा प्रसन्न हो स्वयं उसके संस्कार करता हुआ इसे आश्चर्य मानकर बहुत मनुष्य देखनेको आये ॥ ६३ ॥ देखो अब आत्मदेवका भाग्य उदय हुआ है जो गौनेभी देवरूपी बालक उत्पन्न किया है बडे आश्चर्यकी बात है ॥ ६४ ॥ दैवसे किसीनेभी इस भेदको नहीं जाना सब शरीर मनुष्यका केवल कानही गौके थे इस कारण पिताने इसका गोकर्णही नाम धरा ॥ ६५ ॥ कुछ कालमें वोह दोनों बालक तरुण हुए गोकर्ण ज्ञानी पंडित और धुन्धुकारी बडा दुष्ट हुआ ॥ ६६ ॥ स्नान शौच क्रियासे रहित कुत्सित वस्तु भक्षण करै क्रोधी दुष्ट परिग्रहकर्ता

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चाण्डालोंके हाथ भोजन करै ॥ ६७ ॥ चोर सबसे वैर कर पराये घरोंमें आग लगादे छोटे बालकोंको देखकर कुएमें डालदे ॥ ६८ ॥ हत्यारा शस्त्र धारे दीन और अंधेको दुःख दे चांडालोंके संग प्रीति करै जाललिये फिरै ॥ ६९ ॥ वेश्याके संगसे उसने अपने पिताको सब धन नष्ट करदिया एक समय पिता माताको पीटकर घरके बर्तन लेगया ॥ ७० ॥ उसका पिता कृपण धनहीन होजानेसे ऊंचे स्वरसे रोनेलगा पुत्रका न होनाही भला है क्योंकि कुपुत्र दुःखदायक है ॥ ७१ ॥ कहां रहूं कहां जाऊं कौन मेरे दुःख दूर करै मैं दुःखसे प्राण त्याग दूंगा हा बडा कष्ट है ॥ ७२ ॥ उस समय ज्ञानी गोकर्ण आयकर पिताकू वैराग्य दिखाता हुआ समझाने लगा ॥ ७३ ॥ यह संसार असार है दुःखरूप मोह करानेहारा है सुत किसका धन किसका यह सब मिथ्या है इसमें प्रेम करनेहारा रात दिन दुःखी होता है ॥ ७४ ॥ इंद्रकोभी कुछ सुख नहीं न चक्रवर्तीको कुछ है परन्तु एकान्तसेभी विरक्त मुनिकोभी कुछ सुख है ॥ ७५ ॥ यह संसाररूप अज्ञान छोड, मोहसे नरक होता है यह देह एकदिन गिरजायगा इस कारण सब कुछ त्यागन कर वनको जाओ ॥ ७६ ॥ उसके यह वचन सुन वनके जानेकी इच्छा करते गोकर्णसे इस प्रकार उसके पिता बोले हे पुत्र ! वनमें क्या कर्तव्य है सो तुम विस्तारसे कहो ॥ ७७ ॥ स्नेहपाशसे बँधाहुआ मैं लंगडा हुआ मूर्ख कर्मोंसे इस संसाररूपी अंधकूपमें पडाहूं हे दयालु पुत्र ! मुझे निकाल ॥ ७८ ॥ गोकर्ण बोला इस अस्थि मांस रुधिरसे बनेहुए देहमें अभिमान मत करो स्त्री पुत्रोंकी ममताकू त्यागन करो इस जगत्कूं प्रतिदिन क्षणभंगुर जानो भक्तिमें प्रीति करके वैराग्यका सुख अनुभव करो ॥ ७९ ॥ नित्य भागवतधर्मोंको सेवन करो काम्य कर्मोंका त्यागन करो काम और तृष्णाको छोड साधुओंकी सेवा करो औरोंके दोष गुणोंका चिंतन छोड भगवतकी सेवा और कथारसको नित्य पिओ ॥ ८० ॥ यह पुत्रका उपदेश सुन घर त्यागनकर वोह साठ वर्षकी अवस्था युक्त ब्राह्मण स्थिर मति करके वनको चलागया नित्यप्रति श्रीकृष्णचंद्रकी सेवा करने और दशमके पाठ करनेसे श्रीकृष्णकूं प्राप्त हुआ ॥ ८१ ॥

एवं सुतोक्तिवशतोऽपि गृहं विहाय यातो वनं स्थिरमतिर्गतषष्टिवर्षः ॥
युक्तो हरेरनुदिनं परिचर्ययाऽसौ श्रीकृष्णमाप नियतं दशमस्य पाठात् ॥ ८१ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे भागवतमाहात्म्ये भाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

सूत उवाच-पितर्युपरते तेन जननी ताडिता भृशम् ॥
क्व वित्तं तिष्ठते ब्रूहि हनिष्ये लत्तया न चेत् ॥ १ ॥

सूतजी बोले पिताके मरजानेसे धुन्धुकारने माताको बहुत मारा और कहा बता धन कहां है नहीं तो लातोंसे मारूंगा ॥ १ ॥ इस प्रकार माता उसके वचनसे भयभीत दुःखी हो रातमें कुएमें गिरकर मरगई ॥२॥ गोकर्ण योगमें स्थित हो तीर्थयात्राको चलेगये उसे न दुःख न सुख न कोई वैरी है न बन्धु ॥ ३ ॥ धुंधुकारी उस घरमें पांच वेश्याओंके साथ रहनेलगा बडा कुत्सितकर्मी उनका पालन मूर्खतासे करने लगा ॥ ४ ॥ एक समय उनकू गहनेकी इच्छा हुई तो यह कामान्ध मृत्युका विचार न करके घरसे निकला ॥ ५ ॥ इधर उधरसे द्रव्य संचय करके फिर घरकू आया उन्हें कितने एक भूषण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और वस्त्र दिये ॥ ६ ॥ बहुत धन संचय देखकर वे स्त्री रात्रिमें विचारने लगी यह प्रतिदिन चोरी करताहै कदाचित् राजा पकडलेगा तौ ॥ ७ ॥ यह सब धन फिर लेकर इसे निश्चय मार डालैगा तौ धनकी रक्षाके निमित्त गुप्त रीतिसे हमही इसे क्यों न मारडालैं ॥ ८ ॥ इसे मारके यह सब धन ले इच्छापूर्वक विचरै यह उन्होंने निश्चय करके सोते हुएको रस्सियोंमें बांधा ॥ ९ ॥ इसके गलेमें फांसी डालकर मारने लगीं जब यह जलदी न मरा तौ चिन्तासे विचारने लगीं ॥ १० ॥ बहुतसारे अंगारोंसे उसका मुख जलाया तब अग्नि लगनेके दुःख करके वह मरगया ॥ दोहा ॥ जो गणिकाके संग रमै, तेहिकी यह गति होय । तासे कबहूँ भूलसे, इनसे रमो न कोय ॥ ११ ॥ वे साहसवाली स्त्रियें उसके देहको गड्ढेमें दाबदेतीहुई यह भेद किसीनेभी नहीं जाना ॥ १२ ॥ आदमियोंको पूछनेपर कहा कि हमारा प्यारा दूरगया है वोह द्रव्य कमानेगयाहै इस वर्षके अन्तमें आवैगा ॥ १३ ॥ पंडितोंको योग्य है कि स्त्रियोंका और दुष्टोंका विश्वास न करै जो इनका विश्वास करता है सो दुःखी होता है ॥ १४ ॥ इनके वचन कामियोंके रस बढानेवाले अमृतकी समान हैं हृदय छुरेकी धाराकी नाईं है इससे कहते हैं कि स्त्रियोंको कौन प्यारा है अर्थात् कोईभी नहीं है ॥ १५ ॥ वे कुलटा बहुत भर्त्ता करनेवाली उसका सब धन लेकर चलीगईं और धुंधुकारी कुकर्मसे महाप्रेत हुआ ॥ १६ ॥ वायुरूप धारण किये हुये नित्य दश दिशाओंमें फिरै शीत धूपसे व्याकुल निराहार भूंखा प्यासा ॥ १७ ॥ कहीं शांतिकू न प्राप्त हुआ हा देव ! ऐसा वारंवार कहने लगा कुछ कालमें गोकर्णने लोगोंसे सुना कि धुंधुकारी मरगया ॥ १८ ॥ उसे अनाथ जानकर गयामें श्राद्ध किया और जिस जिस तीर्थमें जाय तहाँ तहाँ श्राद्ध करै ॥ १९ ॥ इस प्रकार भ्रमण करताहुआ अपने नगरमें प्राप्त हुआ रात्रिमें घरके आंगनमें सोनेको आया इसे किसीने न जाना ॥ २० ॥ वोह धुंधुकारी तहां अपने भाईको सोता जानकर अर्द्धरात्रिमें महाभयानक शरीर दिखाता हुआ ॥ २१ ॥ कभी मेढा कभी हाथी कभी भैंसा होजाय कभी इन्द्र कभी अग्नि होजाय फिर पुरुष होगया ॥ २२ ॥ इस विपरीतकूं देखकर धीरज धारण कर गोकर्णने जाना कि यह कोई दुर्गतिको प्राप्त हुआहै ऐसा निश्चय कर बोला ॥ २३ ॥ गोकर्ण बोला भाई ! तू कौन है जो रात्रिमें यहां आया है और इस दशाकू प्राप्त है क्या तू प्रेत पिशाच वा राक्षस है सो हमसे कह ॥ २४ ॥ सूतजी बोले जब इस प्रकारसे गोकर्णने पूछा तौ वोह ऊंचे स्वरसे रोने लगा वचन कहनेमें असमर्थ था केवल संज्ञाही करता हुआ अर्थात् संकेतसे कहा ॥ २५ ॥ तब गोकर्णने अंजलीमें जल ले मंत्र पढकर उच्चारण किया उसके छिडकनेसे पापरहित हो वोह कहने लगा ॥ २६ ॥ प्रेत बोला गोकर्ण ! मैं धुन्धुकारी नाम तुम्हारा भाई हूं अपनेही दोषसे मैंने अपनो ब्राह्मणत्व नाश कर दिया है ॥ २७ ॥ महा अज्ञानमें रहनेवाले मेरे कुकर्मोंकी संख्या नहीं है मैं लोकोंका मारनेवाला मुझे स्त्रियोंने दुःखसे मारडाला ॥ २८ ॥ इससे प्रेतत्वकू प्राप्त हुआहूं अपनी दुर्दशाभी कहताहूं दैवाधीनके फल प्राप्त होनेसे मैं पवन भक्षण कर जीता हूं ॥ २९ ॥ हे कृपासिंधु बंधु ! मुझे इस संकटसे शीघ्र छुटाओ यह वचन सुनकर गोकर्ण उसके प्रति कहने लगा ॥ ३० ॥ गोकर्ण बोला भाई ! मैंने तौ तेरे निमित्त गयामें पिंड दिये थे सो अबभी मुक्ति नहीं हुई यह बडे आश्चर्यकी बात है ॥ ३१ ॥ जो गयामें पिंड देनेसे मुक्ति न होवे तो फिर और उपाय नहीं है हे प्रेत ! अब मैं क्या करूं सो तू विस्तारसे कह ॥ ३२ ॥ प्रेत बोला सौ गयाश्राद्धसेभी मेरी मुक्ति नहीं होगी कोई और उपाय तुम विचारो ॥ ३३ ॥ उसके यह वचन सुनकर गोकर्णकू बडा आश्चर्य हुआ जो सौ श्राद्धसेभी मुक्ति न हो तौ तेरी मुक्ति असाध्य है ॥ ३४ ॥ अब तू प्रेत अपने स्थानमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निर्भय रह तेरी मुक्तिका साधन मैं विचार कर करूंगा ॥ ३५ ॥ यह सुनकर धुन्धुकारी अपने स्थानको गया गोकर्णने सब रात्रिमें विचार किया परन्तु कोई उपाय निश्चित न हुआ ॥ ३६ ॥ प्रातःकालको गोकर्णका आना सुनकर बहुत लोग देखनेको आये तब गोकर्णने रात्रिका वृत्तान्त उनसे सब कहकर सुनाया ॥ ३७ ॥ विद्वान् योगी ब्रह्मवादी बहुत शास्त्र देखनेलगे परन्तु कोई उपाय उसकी मुक्तिका नहीं सिद्ध हुआ ॥ ३८ ॥ तब सबने यही निश्चय किया कि सूर्य भगवान्से इसका उपाय बूझिये जो वोह कहै सो करो तब गोकर्णने मंत्रबलसे सूर्यका वेग रोक दिया ॥ ३९ ॥ हे जगत्के साक्षी ! तुमको नमस्कार है इसकी मुक्तिका उपाय बताओ ॥ ४० ॥ यह वचन सुनकर भगवान् भास्कर दूरसे स्फुट बोले श्रीमद्भागवतका सप्ताहयज्ञ करो मुक्ति हो जायगी ॥ ४१ ॥ यह धर्मरूप सूर्य भगवान्का वचन सबने सुना सब कहने लगे निश्चय यह शुभ कर्म कीजिये ॥ ४२ ॥ गोकर्णभी निश्चय कर कथा वांचनेमें प्रवृत्त हुए तहां श्रवण करनेकू देश और गांवके मनुष्य आये ॥ ४३ ॥ लंगडे अंधे वृद्ध मंदभी पाप दूर करनेके निमित्त आये देवताओंको विस्मयदायक बडा समाज हुआ ॥ ४४ ॥ जब आसनके ऊपर बैठके गोकर्ण कथा कहने लगे तब वोह प्रेतभी आया और इधर उधर स्थान देखने लगा ॥ ४५ ॥ तब तहां एक सात गांठोंका बांस देखकर उसकी मूलमें छिद्रके द्वारा प्रवेश कर सुननेको बैठगया ॥४६॥ वोह पवनरूपी था इस कारण स्थित न रहसका तब बांसमें प्रवेश किया गोकर्णने एक मुख्य वैष्णव ब्राह्मणको श्रोता कल्पना करके ॥ ४७ ॥ प्रथमस्कन्धकी अच्छी प्रकार कथा गोकर्णने सुनाई जब संध्या समय कथा विसर्जन हुई तब तडा आश्चर्य हुआ ॥ ४८ ॥ बांसकी एक गांठ टूटगई और बडा शब्द हुआ इसी प्रकार दूसरे दिन संध्याके समय दूसरी गांठ फटगई ॥ ४९ ॥ तीसरे दिन संध्या समय तीसरी गांठ फटगई इस प्रकार सात दिनमें सात गांठें टूटगईं ॥५०॥ द्वादश स्कंधके श्रवण करनेसे धुंधुकारी प्रेतत्वको त्यागन करता हुआ दिव्यरूप धारण किये हुए तुलसीमाला पहरेहुए ॥ ५१ ॥ पीतवस्त्र धारण किये घनश्याम मुकुटधारे कुंडल पहरे गोकर्ण अपने भाईको नमस्कार करके बोला ॥ ५२ ॥ भाई ! तुमने बडी कृपाकरके प्रेतरूपी पापसे छुटायाहै यह भागवती कथा प्रेतबाधा दूर करनेवाली धन्य है ॥ ५३ ॥ यह सप्ताह धन्य है जो कृष्णलोक फलका देनेहारा है सप्ताह सुननेको बैठतेही मनुष्यके पाप कांपने लगते हैं ॥ ५४ ॥ हम प्रेतोंकी तो यह भागवत प्रलय करदेगी गीला सूखा लघु स्थूल वाणी मन कर्मसे किये ॥ ५५ ॥ पापकू यह सप्ताहयज्ञ नाश कर देताहै जैसे अग्नि समिधाकू, इस भारतवर्षमें देवताओंकी सभामें विद्वानोंने ॥५६॥ कथा नहीं सुननेवालोंका निष्फल जन्म कहाहै मोहसे रक्षा कर करके पुष्ट बलवान् देहसे क्या है ॥ ५७ ॥ जिस शरीरने यह शुकशास्त्र कथा नहीं सुनी वोह अस्थियोंका स्तंभनसोंसे बद्ध मांस रुधिरसे लेपित ॥ ५८ ॥ चर्मसे आच्छादित दुर्गन्धयुक्त मूत्र पुरीषका पात्र है बुढापा, शोकके फलसे युक्त रोगका स्थान दुःखरूप ॥ ५९ ॥ कभी मरता नहीं दुर्धर खोटा दोषसहित क्षणभंगुर कीडे विष्टा और भस्म संज्ञावाला यह शरीर कहाहै ॥ ६० ॥ इस स्थिरसे सदैव रहनेहारा कर्म क्यों न साधन किया जाय जो प्रातःकाल खाया हुआ अन्न सायंकालमें नष्ट होजाता है ॥ ६१॥ सो अन्नादिके रससे पुष्ट इस कायाकी क्या नित्यता है क्षणभंगुर है सप्ताह श्रवण करनेसे लोकमें भगवान् निकटही प्राप्त होते हैं ॥६२॥ इससे दोषनिवृत्तिके निमित्त एक यही साधन है जलोंमें बुद्बुदेकी नाईं जंतुओंमें मशककी नाईं कथाश्रवण रहित जन वृथाही उत्पन्न होते हैं ॥ ६३ ॥ जहां जड और सूखे बांसकीभी गांठें टूट गईं तो फिर चित्तकी ग्रंथि टूट जाय तो क्या आश्चर्य है ॥ ६४ ॥ हृदयकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ग्रंथि टूट जाती सब संदेह नाश हो जाते कर्म क्षय होजाते हैं जो सप्ताह श्रवण करते हैं ॥ ६५ ॥ संसाररूपी कीचडमें फंसे हुओंको धोनेमें यह कथा श्रेष्ठ है जिसका चित्त कथारूपी तीर्थमें है उसकी पंडितोंने मुक्ति कही है ॥ ६६ ॥ यह उसके कहते हुएही वैकुण्ठसे विमान आया जिसके चारों ओर प्रभा फैली हुई वैकुंठवासियोंसे युक्त ॥ ६७ ॥ सबके देखते हुए धुंधुलीका पुत्र विमानमें बैठा और तब विमानमें वैष्णवोंको बैठा देखकर गोकर्ण कहनेलगा ॥ ६८ ॥ गोकर्ण बोले यहां बहुतसे सुननेवाले उज्ज्वलचित्त मेरी कथाके हैं उनके निमित्त विमान क्यों नहीं आये ॥६९॥ जब कि सबका श्रवण बराबरही होताहै तो फलमें भेद क्यो हुआहै हरिके प्यारे यह बात कहो ॥७०॥ हरिदास बोले श्रवणके भेदसे फलकाभी भेद हुआहै सबने सुनाहै परन्तु तिस प्रकारसे मनन नहीं किया ॥ ७१ ॥ इस कारणसे भजनेसेभी फल भेद हुआ सात रात्रिपर्यंत व्रत करके प्रेतने श्रवण किया ॥ ७२ ॥ और उसने स्थिरचित्त होकर मननादिभी किया जिसको दृढ नहीं होता उसका ज्ञान हत है जिसने प्रमादसे सुनाहै वोहभी हत है ॥ ७३॥ संदिग्धका मंत्र हत है व्यग्रचित्तका जप हत अर्थात् निरर्थक है वैष्णव रहित देश हत है अपात्र अर्थात् विद्या सद्गुण रहितको श्राद्धमें देनाभी वृथा है ॥ ७४ ॥ वेदविद्या-रहितकू दान देना निरर्थक है, सदाचाररहित कुल हत है गुरुके वाक्योंमें विश्वास और अपनेमें दीनताकी भावना करनी योग्य है ॥ ७५ ॥ मनके दोषोंको जीतना कथामें निश्चल मति रखनी जब इस प्रकारसे विश्वस्त शुद्ध चित्त हो तब कथा सुननेका फल होताहै ॥ ७६ ॥ फिर कथान्तमें सबका वैकुंठलोकमें वास होताहै हे गोकर्ण ! तुझे तो गोविंद भगवान् स्वयं गोलोक देंगे ॥ ७७ ॥ इस प्रकारसे कहकर वे भगवान्के पार्षद सब वैकुंठलोकको चले गये फिर श्रावणके महीनेमें गोकर्णने कथाका आरंभ किया ॥७८॥ फिर सात रात्रीवाली सप्ताहकी कथाको उन सबने सुना हे नारदजी ! सुनो जब कथा समाप्त हुई तब ॥ ७९ ॥ विमानों और भक्तों सहित भगवान् प्रगट हुए तब चारों ओरसे जयशब्द नमःशब्द होने लगा ॥ ८० ॥ भगवान्ने प्रसन्न होकर तहां पांचजन्य शंखकी ध्वनि करी गोकर्णकू आलिंगन करके अपने रूपकी समान बना लिया ॥ ८१ ॥ और जितने श्रोता थे उनको क्षणमात्रमें भगवान्ने घनश्याम पीतवस्त्र युक्त किरीटकुंडलधारी करदिया ॥ ८२ ॥ और जो उस ग्राममें श्वास लेकर चांडालादि जातिके थे वेभी गोकर्णकी कृपासे विमानमें स्थितहुए ॥८३॥ वे भगवान्ने उस स्थानमें भेजदिये जहां योगी गमन करतेहैं और गोपाल श्रीकृष्णचंद्र गोकर्णसहित गोपवल्लभ गोलोकको गये ॥ ८४ ॥ कथा श्रवणसे प्रसन्न होकर भक्तवत्सल भगवान् गये जैसे पूर्व कालमें श्रीरामचंद्र अयोध्यावासियोंको साकेत लोकको लेगयेथे ॥ ८५ ॥ इसी प्रकार भगवान् कृष्णचंद्रभी योगियोंके दुर्लभ गोलोकको उन्हें लेगये वहां सूर्य चंद्रमा और सिद्धोंकीभी कभी गति नहीं होती ॥ ८६ ॥ जो सप्ताह यज्ञमें इस कथा श्रवणसे फल प्राप्त होताहै हे महात्माओ ! हम कहांतक वर्णन करैं जिन्होंने गोकर्णकथाके अक्षर कर्णद्वारा पान किये हैं वे फिर गर्भमें नहीं आते ॥ ८७ ॥ जिस गतिको सप्ताह श्रवण करनेसे प्राप्त होते हैं तिस गतिको पवन जल पत्ते भक्षण करी तपस्यासे देहके सुखानेवाले बहुत दिनोंसे उग्र तपके संचयवाले तथा योगीभी नहीं प्राप्त होते ॥ ८८ ॥ इस पवित्र इतिहासकोभी शांडिल्य मुनीश्वर चित्रकूटमें पाठ करनेसे ब्रह्मानंदसे व्याप्त हुए ॥ ८९ ॥ यह पवित्र आख्यान है जो इसे एकवारभी पाठ कर लेताहै उसके सब पाप दूर होजाते हैं जो श्राद्धमें पढै तो पितरोंकी तृप्ति होती है नित्य पाठ करनेसे फिर जन्म नहीं होता ॥ ९० ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आख्यानमेतत्परमं पवित्रं श्रुतं सकृद्वै विदहेदघौघम् ॥
श्राद्धे प्रयुक्तं पितृतृप्तिमावहेन्नित्यं सुपाठादपुनर्भवं च ॥ ९० ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्रीभागवतमाहात्म्ये गोकर्णवर्णनं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

कुमारा ऊचुः-अथ ते संप्रवक्ष्यामः सप्ताहश्रवणे विधिम् ॥
सहायैर्वसुभिश्चैव प्रायः साध्यो विधिः स्मृतः ॥ १ ॥

कुमार बोले अब हम तुम्हें सप्ताह श्रवणकी विधि सुनाते हैं जो विधि प्रायः धनसेभी साध्य है ॥ १ ॥ प्रथम तौ ज्योतिषीको बुलाकर मुहूर्त पूछे जैसी विवाहादिमें मंडपरचना होती है तिस प्रकार करै ॥ २ ॥ भाद्रपद आश्विन कार्तिक मार्गशीर्ष आषाढ श्रावण ये महीने कथारंभमें सुननेवालोंको मोक्षसूचक हैं ॥ ३ ॥ जो महीनोंके विग्रह हैं अर्थात् भद्रा दग्ध व्यतीपात वैधृत गंडान्त क्षय मृत्यु उत्पातादि निंदित दिनोंको त्यागदे और सहाय जो अच्छा दिन नक्षत्रादि है सो सर्वथा करणीय है ॥ ४ ॥ देश देशमें यत्नपूर्वक यह वार्ता प्रगट कर देनी हमारे यहां कथा होगी सब कोई कुटुम्बसहित आओ ॥ ५ ॥ कोई हरिकथासें दूर हैं कोई अच्युतके गुण कीर्तनसें दूर हैं स्त्री शूद्रादिकोंको जिस प्रकारसे बोध होजाय सो करना ॥ ६ ॥ देश देशमें जो विरक्त वैष्णव कीर्तन करनेवाले हैं उनके पासभी पत्र भेजने और यह लिखदेना ॥ ७ ॥ महादुर्लभ सात दिनपर्यन्त सत्पुरुषोंका समाज होगा और अपूर्व रसरूपी भगवान्‌की कथा होगी ॥ ८ ॥ श्रीमद्भागवतरूपी अमृतके पानमें रसलंपट आप प्रेमी जन शीघ्र आइये ॥ ९ ॥ यदि अवकाश न हो तौ एक दिनको तौ अवश्य आइये क्यों कि इस समाजका क्षणमात्रकाभी सत्संग दुर्लभ है ॥ १० ॥ इस प्रकारसे उन सबको पत्र भेजकर आये हुओंके निमित्त वास और स्थान कल्पना करै ॥ ११ ॥ चाहै तीर्थ चाहै वनमें चाहै घरमें सुनै कहीं कथास्थान बडी पृथ्वीमें कल्पना करै जहां बहुत स्थान हो ॥ १२ ॥ जलादिकोंसे संमार्जन कर बुहारीसे बुहार गोबरसे लीपदे गेरू आदिकोंसे चित्रित कर घरकी सामग्री उठाकर एक कोनेमें लगादे ॥ १३ ॥ पांच दिन पहले बडे बडे आसन ग्रहण कर रक्खे केलेके वृक्षोंसे मंडित मंडप ऊंचा बनावै ॥ १४ ॥ फल पुष्प पत्ते आदि सहित चारों ओर वंदनवार बांधदे चारों ओर ध्वजा बांधदे वितान अर्थात् चंदोवा तानदे ॥ १५ ॥ वेदिकाके ऊपर भागमें सात लोक अर्थात् सात स्थान बनावै उनमें विरक्त ब्राह्मण बैठावै ॥ १६ ॥ प्रथम तौ तिन्हें यथायोग्य आसन दे पुनः वक्ताकोभी एक दिव्य सुंदर ऊंचा आसन जिसपर बैठकर कथा कहै ॥ १७ ॥ वक्ता उत्तरकी ओर मुख करके बैठे और सुननेहारे पूर्वकी ओर मुख करके बैठें अथवा वक्ता पूर्वको देखकर बैठे श्रोता उत्तरको ॥ १८ ॥ अथवा पूजा करनेहारे और पूज्यके मध्यसे पूर्व दिशामें सब सुननेहारे बैठें ॥ १९ ॥ विरक्त वैष्णव ब्राह्मण वेदशास्त्रानुसार शुद्ध अथवा वेदशास्त्रका जाननेहारा दृष्टान्त देनेमें कुशल धीर लोभरहित ऐसा वक्ता होना चाहिये ॥ २० ॥ जो अनेक धर्मोंमें भ्रमतेहैं अर्थात् जहां जैसा देखा वहां पैसेके निमित्त उसी मतमें होगये स्त्रीलंपट अर्थात् पराई स्त्रियोंको चोरीसे ले भागनेवाले पाखंडवादी यदि वे पंडितभी हो तोभी यह श्रेष्ठशास्त्रकी कथा उससे न कहावे ॥ २१ ॥ कथा कहनेवालेके धोरे एक औरभी पंडित स्थापन करने योग्य है जो संदेहोंको छेदन करनेमें समर्थ हो लोगोंको समझासके ॥ २२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

व्रतके निमित्त वक्ताकू एक दिन पहले क्षौर कराना योग्य है और अरुणोदय होतेही यह शौचादिसे निवृत्त हो स्नान करे ॥ २३ ॥ प्रथम तो नित्य संध्या संक्षेपसे करके कथाके विघ्न नाशके निमित्त गणेशजीका पूजन करे ॥ २४ ॥ पितरोंका तर्पण करके शुद्धिके वास्ते प्रायश्चित्त करै एक मंडल बनाकर हरि भगवान्का पूजन करना चाहिये ॥ २५ ॥ कृष्णके उद्देशसे अर्थात् ' नमः कृष्णाय ' इस मंत्रसे आरंभ कर पूजा सम्पूर्ण करै प्रदक्षिणा नमस्कारादि करके पूजाके अन्तमें स्तुति करै ॥ २६ ॥ कि हे करुणानिधान ! संसारसागरमें मग्न हुए मुझ दीनको जो कि मैं कर्म मोहसे ग्रहीत हो रहा हूं आप संसारसागरसे उद्धार कीजिये ॥ २७ ॥ फिर श्रीमद्भागवतकीभी पूजा यत्नपूर्वक करनी चाहिये प्रीतिसे धूप दीप नैवेद्य करै ॥ २८ ॥ फिर नारियल चढाकर नमस्कार करै फिर प्रसन्नचित्त होकर स्तुति करै ॥ २९ ॥ यह श्रीमद्भागवतकी कथा प्रत्यक्ष श्रीकृष्णरूपीही है हे नाथ ! भवसागरसें मुक्त होनेके निमित्त मैंने यह स्वीकार किया है ॥ ३० ॥ यह मेरा मनोरथ तुम्हींसें सफल होगा सो महाराज ! मैं आपका दास हूं ऐसा हो कि इसको निर्विघ्न समाप्ति होजाय ॥ ३१ ॥ ऐसे नम्र वचन कहकर फिर वक्ताका पूजन करै वस्त्र भूषणसे भूषित कर फिर पूजा करके स्तुति करै ॥ ३२ ॥ आप शुकदेवके रूप ज्ञान देनेहारे सब शास्त्रके ज्ञाता हो इस कथाके प्रकाशसे मेरा अज्ञान दूर करो ॥ ३३ ॥ फिर वक्ताके आगे कल्याणके निमित्त नियम करै प्रसन्न होकर यथाशक्ति सात रात्रितक नियम धारण करे ॥ ३४ ॥ कथाभंग निवृत्तिके निमित्त पांच ब्राह्मणोंको वरण करै वे द्वादशाक्षर (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) इस विद्याका जप करते रहैं ॥ ३५ ॥ और वैष्णव ब्राह्मणोंको तथा हरिचरित्र कीर्तन करनेवालोंको नमस्कार कर पूजन कर उनसे आज्ञा ले आप आसनपर बैठे ॥ ३६ ॥ लोक, धन, स्थान पुत्रादि सबकी चिंता त्यागन करके कथामें शुद्ध बुद्धिसे चित्त लगावै उसे उत्तम फल प्राप्त होताहै ॥३७॥ वक्ताको सूर्योदयसे लेकर साढेतीन पहरतक कथा वाचनी योग्य है और जलदी न करै धीरे कंठसे बांचे ॥३८॥ दुपहरको दो घडीपर्यंत कथाका विराम करै कथान्तमें वैष्णव भगवान्का कीर्तन करे ॥ ३९ ॥ मल मूत्रकी बाधा शान्तिके निमित्त लघु आहार करना योग्य है सो कथा सुननेहारोंको चावल दुग्धादिका भोजन एकवार कर्तव्य है ॥४०॥ यदि शक्ति हो तो सात रात्रिपर्यन्त व्रत करके कथा सुनै अथवा घृतपान दुग्धपान कर सुनै ॥ ४१ ॥ या फलाहार करके सुने वा एकही वार भोजन करै अथवा जिस प्रकारसे श्रवण करनेमें आलस्य न आवै सुख मिले सो करै ॥ ४२ ॥ यदि भोजन करनेसे कथा श्रवण करनेमें आलस्यादि न आवै तो अच्छा है और यदि उपवास करनेसे कथामें विघ्न पडै तो वोह ठीक नहीं ॥ ४३ ॥ नारदजी सप्ताहमें व्रत करनेवालोंके तुम नियम सुनो विष्णुदीक्षाविहीन जो गायत्रीका जप वा जिन्होंने भगवान्का मंत्र गुरुसे नहीं लिया है उनका कथा श्रवण करनेमें अधिकार नहीं है ॥ ४४ ॥ ब्रह्मचर्य पृथ्वीमें शयन पत्तलमें भोजन कथासमाप्तिमें भोजन नित्य व्रती करै ॥ ४५ ॥ कथा सुननेवाले व्रती दो पत्तेवाले अन्न, मद, गरिष्ठ अन्न, स्वाभाविक दुष्ट अन्न और बासी अन्नकू सदा त्यागन करै ॥ ४६ ॥ काम क्रोध मद मान मत्सर लोभ दंभ मोह वैर कथा श्रवण करनेहारा त्यागदे ॥ ४७ ॥ कथाका व्रती वेद वैष्णव ब्राह्मण गुरु गौ व्रतधारी स्त्री राजा कुटुम्बियोंकी निंदा न करै ॥ ४८ ॥ रजस्वला नीच म्लेच्छ पतित चांडाल ब्राह्मणद्वेषी और जे वेदबाह्य हैं उनसे व्रती बात न करै ॥ ४९ ॥ सत्य पवित्रता दया मौन नम्रता विनय मनमें उदारता यह व्रतीको कर्तव्य है ॥ ५० ॥ दरिद्र क्षयरोगी निर्भाग्य पापकर्मा जिसके पुत्र न हो और मुक्तिकी इच्छावाला सदा इस कथाको सुनै ॥ ५१ ॥ जिसको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रजोदर्शन न होता हो काकवंध्या अर्थात् एकवार जिसके बालक हुआ हो अथवा जिसके बालक होकर मरजातेहो जिसका गर्भ गिरने लगे वोह स्त्रीभी कथाको प्रयत्नसे सुनै ॥ ५२ ॥ इन सात दिन पर्यंत जो विधिपूर्वक सुनै तौ अक्षय फल होताहै यह दिव्य कथा अत्युत्तम है करोडों यज्ञ-फलकी देनेहारी है ॥ ५३ ॥ इस प्रकार व्रतका विधान करके फिर उद्यापन करै फलकी इच्छा करनेवालोंको जन्माष्टमीके व्रतकी नाईं यह कर्तव्य है ॥ ५४ ॥ निष्किंचन अर्थात् निष्काम भक्तोंको उद्यापनकी आवश्यकता नहीं है निष्काम वैष्णव श्रवणमात्रसेही पवित्र होजाते हैं ॥ ५५ ॥ इस सप्ताहयज्ञकी समाप्तिमें श्रोताओंको पुस्तककी और वक्ताकी भक्तिपूर्वक पूजा करनी योग्य है ॥५६॥ प्रसाद नैवेद्य तुलसीमाला सुननेवालोंको देनी फिर मृदंग ताल आदि बाजोंसे कीर्तन करना योग्य है ॥ ५७ ॥ फिर जयशब्द नमस्कारशब्द और शंखध्वनि करै ब्राह्मण और याचकोंको धन और अन्न दे ॥ ५८ ॥ जो मुख्य श्रोता विरक्त हो तौ दूसरे दिन गीता वांचनी और जो गृहस्थ होय तौ कर्म शांतिके निमित्त हवन कर्त्तव्य है ॥ ५९ ॥ दशमस्कंधके प्रति श्लोकसे विधिपूर्वक खीर शहद घी तिल अन्नोंसे हवन करे ॥ ६० ॥ अथवा गायत्रीसे सावधान होकर हवन करै क्यों कि यह परम पुराण तत्त्वसे गायत्रीमयही है ॥ ६१ ॥ जो होम करनेमें असमर्थ हो तौ बुद्धिमान् उसकी फलकी सिद्धिके निमित्त होम करने योग्य वस्तु दे अनेक प्रकार छिद्र शांतिके निमित्त और न्यूनता अधिकता ॥ ६२ ॥ दोषोंके शान्त करनेको सहस्र नामका पाठ करै इससे सब सफल होजाता है क्यों कि इससे अधिक और कुछ नहीं है ॥ ६३ ॥ फिर बारह ब्राह्मणोंको बूरा मिश्रित खीरसे भोजन करावे और व्रतपूर्तिके निमित्त सुवर्ण गाय देनी योग्य है ॥ ६४ ॥ और जो समर्थ हो तौ तीन पलका सोनेका सिंहासन बनाकर उसके ऊपर सुंदर अक्षरोंसे लिखीहुई यह पुस्तक स्थापन करै ॥ ६५ ॥ पूजन कर आवाहनादि उपचार दक्षिणासहित वस्त्र भूषण गंधादिसे पूजित जितेन्द्रिय ॥६६॥ आचार्यके निमित्त बुद्धिमान् पुस्तक प्रदान करै तौ भवबंधनसे मुक्त होजाय इस प्रकारके सब पाप हरनेहारे विधानके करनेसे ॥ ६७ ॥ यह श्रीमद्भागवत पुराण फलका देनेहारा होता है यह धर्मार्थकाममोक्षका साधन है इसमें कुछभी संदेह नहीं है ॥ ६८ ॥ कुमार बोले नारदजी ! यह तौ सब कुछ तुमको सुनाया अब क्या सुननेकी इच्छा है श्रीमद्भागवतके श्रवण करनेसेही भुक्ति मुक्ति हाथमें स्थित होती है ॥ ६९ ॥ सूतजी बोले ऐसा कहने उपरान्त वे सनकादिक महात्मा भागवतकी कथा वर्णन करते हुए जो कथा सब पापकी हरनेहारी पुण्यरूप भुक्ति मुक्तिकी देनेहारी है ॥ ७० ॥ इस सप्ताह कथाकू सब जितेन्द्रिय महात्मा और सब प्राणियोंसे यथाविधि श्रवण करनेसे पुरुषोत्तम भगवानकू प्रसन्न किया ॥ ७१ ॥ तिससे अन्तमें ज्ञान वैराग्य और भक्तिकी बडी पुष्टि हुई सब प्राणियोंके मन हरनेहारे ज्ञान वैराग्य तत्काल तरुण होगये ॥७२॥ नारदजी अपना मनोरथ पूर्ण हो जानेसे कृतार्थ होगये शरीर पुलकित सर्वांगमें आनंद भरगया ॥ ७३ ॥ इस प्रकार भगवान्के प्यारे नारदजी कथा श्रवण करके प्रेमसे गद्गदवाणी हो हाथ जोड सनकादिकोंसे बोले ॥७४॥ नारदजी बोले मैं धन्य हूं आप करुणासागरोंने मेरे ऊपर बडी कृपा की आज मुझे सब पाप हरनेहारे हरि भगवान् मिलगये ॥ ७५ ॥ हे तपोधनवारे महात्माओ ! सब धर्मोंसें श्रवणधर्म अधिक है कारण कि जिसके श्रवणसे वैकुंठमें स्थित कृष्ण प्राप्त होते हैं ॥ ७६ ॥ सूतजी बोले कि वैष्णवोत्तम नारदजी जिस समय यह कह रहे थे उसी समय विचरते हुए योगीश्वर शुकदेवजी आगये ॥ ७७ ॥ वोह षोडश वर्षकी अवस्थायुक्त व्यासजीके पुत्र ज्ञान महासागरके चन्द्रमा श्रीमद्भागवतके प्रकाशक कथावसानमें अपनेही लाभसे परिपूर्ण प्रेमपूर्वक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शनैः शनैः श्रीमद्भागवतका पाठ करते हुए आये ॥ ७८ ॥ इन बडे उग्र तेजस्वीको देखतेही सब सभासद उठ खडे हुये और महाआसन दिया और नारदजीने प्रीतिपूर्वक उनका पूजन किया तब सुखसे स्थित हो शुकदेवजी बोले सो वाणी सुनो ॥ ७९ ॥ शुकदेवजी बोले वेद कल्पवृक्ष है उसका यह भागवत फल है सो मुझ शुकदेवके मुखसे पृथिवीमें गिरा है इस कारण अमृतरूपी रससे संयुक्त है जिस फलमें तोतेकी चोंच लगजाती है वोह अधिक मीठा होता है यहां शुकरूपी शुकदेवजीने इसका स्वाद लिया है इस कारण यह अधिक मीठा होगया है यह "भाग्य है" यह भक्तिरूप रससे पूर्ण है रसिको ! भगवच्चरितामृत पान करनेहारे महात्माओ ! इससे मोक्षभी न्यून है इस कारण इसे वारंवार पान करो ॥ ८० ॥ जिस श्रीमद्भागवतमेंसे फलकांक्षारूप कपट धर्म सम्यक् त्याग दिया है केवल ईश्वरसेवारूप धर्म निरूपण किया है मत्सरतारहित सत्पुरुषोंका इसमें अधिकार है महामुनि श्रीनारायणके बनाये हुए इस श्रीमद्भागवतमें वास्तव परमार्थरूप एक परमेश्वरही जानने योग्य है जो कल्याणदायक तीनों तापका नाश करनेहारा है निश्चय श्रीमद्भागवतके सुननेवाले महात्माओंके हृदयमें शीघ्र ईश्वर प्राप्त होजाताहै क्या और शास्त्रोंसे शीघ्र हृदयमें प्राप्त होजाता है अर्थात् नहीं होता ॥ ८१ ॥ यह श्रीमद्भागवत पुराणोंमें श्रेष्ठवैष्णवोंका परमधन है जिसमें भक्तोंके परम प्रिय ज्ञान परब्रह्म श्रीकृष्णही गाये जाते हैं जिस श्रीमद्भागवतमें ज्ञान वैराग्य भक्तिसहित निष्कर्मतारूप ब्रह्म हृदयमें प्राप्त होते हैं इसके श्रवण पठन करने विचार करने भक्ति करनेसे मनुष्य मुक्त होजाता है ॥ ८२ ॥ स्वर्गमें सत्यलोकमें कैलासमें वैकुंठमें यह रस नहीं है इस कारणसे सद्भाग्यवाले इसे पियो कभी त्याग न करो ॥ ८३ ॥ सूतजी बोले शुकदेवजीके ऐसा कहते संते सभाके मध्यमें नारायण प्रगट होगये प्रह्लाद बलि उद्धव अर्जुनादि करकै युक्त भगवान्का नारदजीने पूजन किया और उनकाभी पूजन किया ॥ ८४ ॥ आगे आसनमें बैठे हुए भगवान्के सन्मुख वे सब कीर्तन करने लगे पार्वतीसहित शिव और ब्रह्माजी कीर्तन दर्शन करनेके निमित्त तहां आये ॥ ८५ ॥ प्रह्लादने तालैं धारण करीं तरलगतिसे उद्धवने छैने अर्थात् झांझें धारण करीं नारदजीने वीणा धारण करी स्वरभेदमें कुशल होनेसे अर्जुनने राग गाना प्रारम्भ किया इन्द्रने मृदंग बजाने प्रारम्भ किये कुमार जय जय अथवा धन्य २ कहने लगे और सबके आगे रसकी विरचनतासे भावके बतानेवाले शुकदेवजी हुए ॥ ८६ ॥ उस तेजस्वियोंके स्थानमें भक्ति ज्ञान वैराग्योंका त्रिक नटकी नाईं नाचने लगा यह अलौकिक कीर्तन देखकर नारायण प्रसन्न होकर वचन बोले ॥ ८७ ॥ हे भक्तो ! तुम्हारे कीर्तनसे मैं बहुत प्रसन्न हुआ जो इच्छा हो सो वर मांगो यह सुनकर वे सब हरिभक्त प्रेमसे गद्गद हो बोले ॥ ८८ ॥ महाराज ! सप्ताहकी कथाओंमें इसी प्रकार आपको प्रगट होना होग्य है अथवा भक्तोंके हृदयमें प्रगट हुआ कीजिये यही हमारा मनोरथ पूर्ण करो बहुत अच्छा ऐसा कहकर नारायण अन्तर्धान होगये ॥ ८९ ॥ इसके उपरान्त नारदजी सनकादिकोंके चरणोंको नमस्कार करते हुये और शुकदेवजी तथा अन्यतपस्वियोंकोभी नमस्कार किया वे सब मोहरहित प्रसन्न हो कथामृत पान करके यथास्थानको चले गये ॥ ९० ॥ भक्ति ज्ञान वैराग्यसहित शुकदेवजीने इस भागवतशास्त्रमें स्थापित करी है इस कारण भागवतके सेवन करनेसे भगवान् वैष्णवोंके चित्तमें प्राप्त होते हैं ॥ ९१ ॥ द्वारिद्र्यदुःखज्वरसे दुःखित मायापिशाचिर्नासे मर्दित संसारसमुद्रमें गिरते हुओंको कल्याणके निमित्त यह भागवतकी कथा गर्जतीहै ॥ ९२ ॥ शौनकजी बोले शुकदेवजीने राजा परीक्षितको यह कथा कब सुनाई और गोकर्णने कब सुनाई तथा सनत्कुमारादिकोंने नारदजीको कब सुनाई यह हमारा संदेह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दूर करो ॥ ९३ ॥ सूतजी बोले कृष्णचंद्रके परलोक जानेसे तीस वर्ष उपरान्त भादोके शुक्ल पक्षकी नौमीको शुकदेवजीने कथा राजा परीक्षितको सुनाई ॥ ९४ ॥ परीक्षितको कथा सुनानेके दोसौ वर्ष उपरान्त आषाढके शुक्ल पक्षमें गोकर्णने कथाका आरम्भ कियाथा ॥ ९५ ॥ तिससेभी फिर कलियुगके तीनसौ वर्ष व्यतीत होनेमें कार्तिकके शुक्ल पक्षमें सनकादिकोंने कथा सुनाई ॥ ९६ ॥ हे पापरहित ! जो कुछ तुमने पूछा सो मैंने सुनाया कलियुगमें यह भागवतकी वार्ता संसाररोगकी नाश करनेवाली है ॥ ९७ ॥ कृष्णकी प्यारी सब पापोंकी नाश करनेहारी मुक्तिकी कारण भक्तिकी लीला करनेहारी यह कथा है जो जो महात्मा आदरसे इस कथाको पान करते हैं उनको और तीर्थोंके सेवन करनेकी क्या आवश्यकता है ॥ ९८ ॥ यमराजने पाश हाथमें लिये अपने दूतोंके कानमें यह बात कही कि जो भगवत्कथारसमें मत्त हैं तुम उनके निकट कभी मत जाइयो मैं औरोंका निकर्ता हूं परन्तु वैष्णवोंका नहीं हूं वे प्रतिदिन भागवतकी सेवा करते हैं ॥ ९९ ॥ इस असारसंसारमें विषयरूपी विषके संसर्गसे व्याकुल बुद्धिवालोंको योग्य है कि आधे क्षणको तो अतुल अमृतरूपी शुकदेवजीकी गाथाको कल्याणके निमित्त पान करो अरे कुत्सित कथाके कुमार्गमें क्यों व्यर्थ फिरते हो इसकथाके श्रवण करनेमें निश्चय मुक्ति होती है इस वार्त्तासें महाराज परीक्षित् साक्षी हैं ॥ १०० ॥ रसप्रवाहसे युक्त श्रीशुकदेवजीने यह कथा कही है जो कोई कंठमें धारण करता है इससे वोह वैकुंठका प्रभु होता है ॥ १०१ ॥ हे शौनक ! इस प्रकारसे यह परम गुह्य सब सिद्धान्तोंका सिद्धान्त अनेक शास्त्रोंकी आलोचना कर कहा है जगत्में शुककथासे निर्मल और कुछ नहीं है परम सुखके कारण द्वादश-स्कंधात्मक श्रीमद्भागवत रसको पान कर ॥ १०२ ॥ जो नियमित होकर इस कथाको श्रवण करते और भक्ति प्रीतिसे शुद्ध वैष्णवोंके आगे सुनाते हैं वे वक्ता श्रोता सम्यक् विधान करनेसे सम्पूर्ण फलको प्राप्त होते हैं सत्य वचनसे संसारमें कोई वस्तुभी असाध्य नहीं है ॥ १०३ ॥

एतां यो नियततया शृणोति भक्त्या यश्चैनां कथयति शुद्धवैष्णवाग्रे ॥
तौ सम्यग्विधिकरणात् फलं लभेते याथार्थ्यान्नहि भुवने किमप्यसाध्यम् ॥ १०३ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखंडे श्रीमद्भागवतमाहात्म्ये कान्यकुब्जवंशोद्भवसुखानंदमिश्रसूनुपण्डित-ज्वालाप्रसादकृतभाषाटीकायां श्रवणविधिकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ शुभमस्तु ॥

॥ श्रीमद्भागवतमाहात्म्यभाषा समाप्ता ॥

कवित्त–नित्यप्रति प्रीतिसहित नेम व्रत धारण कर राख विश्वास सुनै कथा मन लगायकै । ताके सब पापके पहारहूं बिलाय जात होय तब पवित्र ब्रह्मतीर्थमें न्हायकै ॥ कैसोहू कार्य अभिलाष हिये माहिं धरो तुरत होय सिद्ध सुख पाइये अघायकै । ज्वालाप्रसाद पाठ कीजिये सदैव जो धर्म अर्थ काम मोक्ष लीजिये बुलायकै ॥ १ ॥

दोहा–श्रीव्रजचन्द्र मुकुन्दको, ध्यान हृदयमें लाय । कियो महातमको तिलक, यदुपति रहै सहाय ॥

एषा श्रीभागवतमाहात्म्यभाषा श्रीकृष्णदासात्मजेन गङ्गाविष्णुना स्वकीये "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" यन्त्रालयेऽकिता. शके १८३०, संवत् १९६५.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण–मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीभागवतस्थवृत्तलक्षणानि उवाचपरिगणनं च ॥

॥ श्रीहरिः ॥ द्रुतविलंबितमाह नभौ भरौ०॥ निगमकल्पतरोः०॥ जयजय जह्यजामजित०॥यह वेदस्तुतिमें नर्दट्क छंद है ॥ ताको लक्षण यदि भवतो नजौ भजजला गुरुर्नर्दट्कं ॥ वामबाहुकृतवामकपोलो० ॥ इहां युगलगीतमें स्वागता छंद है ॥ तस्य लक्षणं ॥ स्वागता रतभगैर्गुरुणा च ॥ जन्माद्यस्य यतो० ॥ यह शार्दूलविक्रीडित छंद है ॥ तस्य ल० ॥ सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितं ॥ नृवाजिकांचनशिविकाभिरच्युतं० ॥ यह रुचिरा छंद है ॥ तस्य लक्षणं ॥ जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्यहैः ॥ चतुर्थमें दक्षयज्ञकी स्तुतिमें ॥ सदस्या ऊचुः ॥ उत्पत्त्यध्वन्यशरण उरुक्लेशदुर्गेऽकोविद ॥ यह मंदाक्रांता छंद है ॥ तस्य लक्षणं ॥ मंदाक्रांतांबुधिरसनगैर्मोभनौ तौगयुग्मं ॥ रुद्र उवाच ॥ तव वरद वराङ्घ्रा ॥ यह मालिनी छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः ॥ पत्न्य ऊचुः ॥ यज्ञोयं तव यजनाय० ॥ यह प्रहर्षिणी छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ आशाभिर्मनजरगाः प्रहर्षणीयं ॥ सिद्धा ऊचुः ॥ अयं त्वत्कथामृष्टपीयूषनद्यां ॥ यह भुजंगप्रयातछंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ भुजंगप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः ॥ यजमान्युवाच ॥ स्वागतं ते प्रसीदेश तुभ्यं नमः ॥ यह स्रग्विणी छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ कीर्तितैषा चतूरेफका स्रग्विणी ॥ लोकपाला ऊचुः ॥ दृष्टः किं नो दृग्भिरसद्ग्रहैस्त्वं ॥ यह वातोर्म्मी छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ वातोर्म्मीयं गदिताम्भोतगोग० ॥ ब्राह्मणा ऊचुः ॥ त्वं क्रतुस्त्वं हवि० ॥ यहभी स्रग्विणीछंद है ॥ योगेश्वरा ऊचुः ॥ जगदुद्भवस्थितिलयेषु ॥ यह मंजुभाषिणी छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ सजसा जगौ च यदि मंजुभाषिणी ॥ गंधर्वाप्सरस ऊचुः ॥ अंशांशास्ते देवमरीच्यादय एते ॥ यह मत्तमयूर छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ वेदैरंध्रैर्मातयसागा मत्तमयूरः ॥ सप्तममें प्रह्लादचरित्र देवतानिकी स्तुतिमें ॥ चारणा ऊचुः ॥ हरे तवांघ्रिपंकजं ॥ यह प्रमाणिका छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ प्रमाणिका जरौलगौ ॥ तीर्थं चक्रे नृपाणां यदजनि यदुषु० ॥ यह स्रग्धरा छंद है ॥ ताको लक्षण ॥ म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयं ॥ इति मतिरुपकल्पिता वितृष्णा ॥ यह भीष्मजीकी स्तुति ॥ पुष्पिताग्रा छंद है ॥ ताको लक्षण ॥ अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि तु नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ॥ नायं देहो देहभाजां नृलोके ॥ यह शालिनी छंद है ॥ तल्लक्षणं ॥ मातोगौचेच्छालिनी वेदलोके ॥ इति छंदांसि ॥ अथ उवाच ॥ प्रथम स्कंधमें वेदव्यास ३ सूत ३२ ऋषय २ शौनक ६ नारद ॥ अर्जुन १ भगवान् २ कुंती उवाच १ भीष्मउवाच १ राजोवाच ३ ब्राह्मणाऊचुः १ युधिष्ठिरउ० ४ संजय० १ धरण्युवा० १ धर्मउ० १ प्रथम स्कंधमें सब उवाच ६३ हैं ॥ अथ द्वितीयस्कंधे शुकउ० ८ राजोवा० ३ शौनकउ० २ सूतउ० ४ नारदउ० १ ब्रह्माउ० भगवान्उ० २ द्वितीयस्कंधमें सब उवाच २४ हैं ॥ अथ तृतीयस्कंधे शुक १४ राजो० २ सूत ५ विदुर ११ उद्धव ३ भगवान् २० मैत्रेय ४२ शौनक २ कुमारा १ देवा २ ऋषिरु ४ ब्रह्मो ८ मनु २ ऋषय २ दिति ३ कश्यप २ मुनय २ देवहूती ७ जीव १ तृतीयस्कंधमें सब उवाच १३४ हैं ॥ अथ चतुर्थस्कंधे मैत्रेय ६६ विदुर ९ शुक ३ अत्रि १ देवा २ सती १ ऋषिरु १ भगवान् ६ देवी १ ब्रह्मा ३ दक्ष २ महादेव १ राजो ५ सूत २ ऋत्विज १ सदस्या १ रुद्र ३ भृगु १ इंद्र १ पत्न्य १ ऋषय २ सिद्धा १ यजमानी १ लोकपाल १ योगेश्वर १ अग्नि १ ब्राह्मण १ पृथ्वी १ देव्य १ राम २ प्रचेतस २ सुरुची १ नारद १ ध्रुव ३ मुनय २ मनु १ धनद १ सुनंदनंदा १ अंग २ सदसस्पतय १ वेन १ पृथु ४ प्रजा १ धरा १ सनत्कुमार १ चतुर्थस्कंधमें सब उवाच १९९ हैं ॥ अथ पंचमस्कंधे राजो ६ शुक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

२२ ब्रह्मो १ भगवान् २ ऋषभदेव ३ ऋषिरु ४ सहो १ ब्राह्मण ३ रहुगण १ भद्रश्रवस १ पंचमस्कंधमें ४२ हैं ॥ अथ षष्टस्कंधे राजो १० शुक ३९ बादरायणि ६ विष्णुदूता २ ऋषिरु ३ ब्रह्मो १ विश्वरूप १ देवा ३ यम १ सूत ३ प्रजापति १ भगवान् ३ दक्ष १ वृत्र १ इंद्र १ परीक्षित १ चित्रकेतु ४ अंगिरा २ पार्वती १ दिति २ कश्यप २ नारद २ जीव १ षष्टस्कंधमें सब ९२ हैं ॥ अथ सप्तमस्कंधे राजो २ शुक ३ नारद २८ युधिष्ठिर ६ ऋषी १ हिरण्यकशिपु ५ यम २ प्रह्लाद ८ ब्रह्मो ४ गुरु १ दैत्यपुत्रा १ इंद्र २ रुद्र १ विद्याधर १ सिद्धा १ पितर १ ऋषय १ नागा १ मनव १ प्रजापतय १ गंधर्वा १ चारणा १ किंपुरुषा १ वैतालिका १ किन्नरा १ विष्णुपार्षदा १ भगवान् ४ ब्राह्मण १ सप्तमस्कंधमें सब ८२ हैं ॥ अथ अष्टमस्कंधमें राजो ७ ऋषि २ मनु १ शुक ४९ सूत ३ गजेंद्र १ गुरु १ भगवान् १२ ब्रह्मो ४ प्रजापति १ शिव २ बलि ६ विंध्यावलि १ नारद १ बादरायणि १ अदिति ३ कश्यप १ प्रह्लाद १ शुक १ अष्टमस्कंधमें ९९ हैं ॥ नवम स्कंधमें राजो ८ शुक ३१ सूत १ ब्रह्मा १ शंकर १ भगवान् २ बादरायणि ४ अंबरीष १ दुर्वासा १ अंशुमान् १ ब्राह्मण १ देवा १ पुरूरवा १ उर्वशी २ ययाति १ यदु १ पुरु १ शकुंतला १ दुष्यंत १ नवमस्कंधमें सब ६१ हैं ॥ अथ दशमस्कंधपूर्वार्द्धे राजो १० शुक ९३ सूत ३ वसुदेव ५ देवकी १ भगवान् १५ नंद ३ नंदादयऊ १ गर्ग २ नारद १ ब्रह्म १ नागपत्न्य १ काली १ ऋषि २ गोपाऊ १ यज्ञपत्न्य १ इंद्र १ सुरभि १ बादरायणि ५ वरुण १ गोप्यऊ ६ सर्प १ अक्रूर ५ सैरंध्री १ चाणूर १ गुरु १ समुद्र १ उद्धव २ धृतराष्ट्र १ पूर्वार्द्धमें सब १६८ हैं ॥ अथ उत्तरार्द्धे शुक ७३ भगवान् २९ राजो १४ मुचुकुंद २ बादरायणि १२ रुक्मिणी ३ ब्राह्मण ३ रति १ युधिष्ठिर ३ कुंति १ वसुदेव ४ द्रौपदी १ सत्यभामा १ जांबवती १ भद्रा १ मित्रविंदा १ लक्ष्मणा १ कालिंदी २ महिष्य २ मुनय १ सूत ३ देवकी १ बलि १ श्रुतदेव १ भूमि १ उषा १ चित्रलेखा १ ज्वर १ रुद्र १ नृग १ नारद ५ ऋषि ४ ऋषय ३ दूत १ उद्धव १ राजन् १ सारथि १ अर्जुन १ परीक्षित १ सनंदन १ श्रुतयऊ १ उत्तरार्द्धमें सब १९० हैं ॥ इति दशमः ॥ अथ एकादशस्कंधे बादरायणि २ राजो ७ शुक १३ वसुदेव १ नारद ३ निमि ४ कवि १ हरि १ अंतरिक्ष १ प्रबुद्ध १ पिप्पलायन १ आविर्होत्र १ द्रुमिल १ चमस १ करभाजन १ देवाऊ १ ब्रह्मा १ भगवान् ४४ उद्धव २३ यदु १ ब्राह्मण ४ पिंगला १ सनकादय १ ऋषि १ द्विज १ ऐल १ एकादशमें सब ११६ हैं ॥ अथ द्वादशस्कंधे शुक ५ राजो २ सूत १८ शौनक ४ याज्ञवल्क्य १ मार्कंडेय ३ भगवान् ३ ऋषि ३ द्वादशमें ३७ हैं ॥ सब १२ स्कंधको जोर १२६७ हैं ॥ अथ स्तुति लिख्यते ॥ प्रथमस्कंधमें अर्जुनस्तुति १ कुंतीस्तुति २ भीष्मस्तुति ३ ॥ द्वितीयमें तृतीयमें महदादिकस्तु० ४ ब्रह्मस्तुति ५ ऋषिस्तुति वराहकी ६ देवस्तुतिब्रह्माकी ७ कुमारस्तुति ८ कर्दमस्तुति ९ जीवस्तुति १० देवहूतिस्तु० ११ ॥ चतुर्थमें नरनारायणस्तुति १२ शिवप्रार्थना १३ दक्षते क्षमाकराई १४ दक्षस्तुति विष्णुकी १५ ऋत्विज १६ सदस्या १७ रुद्र० १८ भृगु १९ ब्रह्मा २० इंद्र २१ पत्नी २२ ऋषि २३ सिद्धा २४ यजमानी २५ लोकपाल २६ योगेश्वर २७ ब्रह्मा २८ अग्नि २९ देवता ३० गंधर्वाप्सरा ३१ विद्याधर ३२ ब्राह्मण ३३ ध्रुवस्तु० ३४ पृथस्तु० ३५ पृथ्वीकृत पृथुस्तु० ३६ पृथुकृतविष्णुस्तव ३७ प्रजाकृत स्तुति पृथुकी ३८ प्रचेताकृत विष्णुस्तुति ३९ ॥ पंचममें ऋत्विग्जनकृत विष्णुस्तु० ४० भवकर्तृक संकर्षणस्तु० ४१ भद्रश्रवःकर्तृक हयग्रीव ४२ प्रह्लादकृत नृसिंहस्तुति ४३ लक्ष्मीकर्तृक भगवत्स्तु० ४४ सत्यव्रतकर्तृक मत्स्यस्तु० ४५ पृथ्वीकर्तृक वराहस्तु० ४६ हनुमत्कर्तृक रामस्तु० ४७ नारदकर्तृक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नरनारायणस्तु० ४८ ॥ षष्ठस्कंधमें हंसगुह्यस्तव ४९ वृत्रदेवकर्तृक विष्णुस्तु० ५० पुनः देवकृत विष्णुस्तव ५१ चित्रकेतुकृतसंकर्षणस्तव ५२ ॥ सप्तमस्कंधमें हिरण्यकशिपुकर्तृक विष्णु० ५३ ब्रह्मकर्तृकनृसिंहस्तव ५४ रुद्रकर्तृकनृ० ५५ इंद्रकर्तृक नृ० ५६ ऋषिक० नृ० ५७ पितृक० नृ० ५८ सिद्धक० नृ० ५९ विद्याधरक० नृ० ६० नागकन्याक० नृ० ६१ मनुक० नृ० ६२ प्रजापतिक० नृ० ६३ गंधर्वक० नृ० ६४ चारणक० नृ० ६५ यमक० नृ० ६६ किंपुरुषक० नृ० ६७ वेतालिकक० नृ० ६८ किन्नर० नृ० ६९ विष्णुपार्ष० नृ० ७० प्रह्लाद० नृ० ७१ पुनर्ब्रह्मक० नृ० ७२ ॥ अष्टममें मनुकृतविष्णुस्तु० ७३ गजेंद्रकृतविष्णुस्तव ७४ देवकृ० वि० स्त० ७५ ब्रह्माकृत वि० स्त० ७६ देवादिकृ० शिवस्त० ७७ शिवकृत० वि० स्त० ७८ अदितिकृत वि० स्त० ७९ ब्रह्मकृत विष्णु० स्त० ८० सत्यव्रतकृ० वि० स्त० ८१ ॥ नवमस्कंधमें अंबरीषकृत सुदर्शनस्तव ८२ अंशुमत्कृतकपिलस्तुति ८३ ॥ दशममें पूर्वार्धमें गर्भस्तुति ८४ वसुदेवकृतस्तव ८५ देवकीक० स्तुति ८६ यमलार्जुन० स्तव ८७ ब्रह्म० स्तुति ८८ नागपत्नी० स्तु० ८९ इंद्रकृ० स्तुति ९० नारदस्तुति ९१ अक्रूरस्तुति ९२ पुनः अक्रूरस्तव ९३ ॥ उत्तरार्द्धमें मुचुकुंदस्तुति ९४ भूमि० स्तव ९५ ज्वर० स्तव ९६ रुद्रस्तुति ९७ कौरवकृत बलदेवस्त० ९८ राजकृतस्तव ९९ बलिराजकृ० स्त० १०० श्रुतदेव० स्त० १०१ बहुलाश्व० स्तव १०२ वेदस्तव० १०३ ॥ एकादशमें देव० स्तव १०४ ॥ द्वादशमें मार्कंडेयस्तव १०५ ॥

जिला मथुरा ग्राम गोवर्द्धननिवासी महाभारती पंडित गोवर्द्धनात्मजस्य आनंदवल्लभस्य कृतिरियं परोपकाराय ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापखाना,

कल्याण—मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

शुकसागर

अर्थात्

श्रीमद्भागवतव्रजभाषा.

प्रथमस्कन्ध।

मङ्गलाचरण।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमद्भागवतभाषा प्रथमस्कन्धप्रारम्भः ॥ श्रीशं वन्दे ॥ कृष्णचरण-पंकज विमल, भक्तन सुखदातार ॥ नित ज्वालाप्रसादके, हृदय बसाहिं दुखदार ॥ १ ॥ जिनकी कृपा-कटाक्षसे, मूक होत वाचाल ॥ सो ज्वालाप्रसादपर, द्रवहु सो दीनदयाल ॥ २ ॥ श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ॥ नमो नलिननेत्राय वेणुवाद्यविनोदिने ॥ राधाधरसुधापान-शालिने वनमालिने ॥ १ ॥ हरिमजरमनाद्यनन्तमध्यं परमसुखद्वयबोधमात्रलभ्यम् ॥ उपरतसकलभ्रमं विशुद्धं निजमहसा स्फुरदात्मतत्त्वमीडे ॥ २ ॥ अथ शुभमनसां विवेकभाजावधिगतसारतयो-दिताशयानम् ॥ अतिविततपुराणभावदीपं शुभतिलकं व्रजभाषया लिखामि ॥ ३ ॥ श्रीधरस्वामी सर्वशास्त्रमुकुटमणि श्रीमद्भागवतशास्त्रके गम्भीरअर्थनकी प्रकाशिका भाषार्थदीपिका टीकाके प्रारम्भमें इष्टदेवस्मरणपूर्वक मंगलाचरण करै हैं जैसे कि मैं श्रीधरस्वामी रघुकुलमण्डन रघुनन्दनकूं प्रणाम करूंहूं, जिनके चरणकमलनके चैतन्यमकरन्दको स्वाद परमहंसनने समाधिकालमें लीनो है, जो भक्तनके मनमें सर्वकाल वास करे हैं ॥ १ ॥ स्वामीजी कहे हैं कि अब मैं श्रीनृसिंहदेवको स्मरण करूंहूं, जिनके मुखकमलमें सरस्वती, वक्षःस्थलमें लक्ष्मी, और जिनके हृदयमें ज्ञान वास करे हैं ॥ २ ॥ विश्वके सर्ग विसर्ग आदि नवलक्षणनकरिके लक्षित, और जगत्के आधार सत्चित् आनन्दघनरूप श्रीकृष्णचन्द्रकूं हम नमस्कार करेहैं ॥ ३ ॥ जगत्के ईश्वर भक्तनको सर्वसिद्धिके दायक परस्पर एकही रूप और परस्पर प्रणामप्रिय माधव (विष्णु) और उमाधव (शिव)कूं प्रणाम करूंहूं ॥ ४ ॥ श्रीभागवतसम्प्रदाय उच्छिन्न न होय और पूर्वापरकी संगतिमें विरोध न होय या निमित्त भावार्थदीपिका नामक भागवतजीकी टीकाकूं रचूंहूं ॥ ५ ॥ स्वामीजी कहे हैं कि, कहां तो मोसों मन्दबुद्धि, और कहां क्षीरसमुद्रके मन्थनके समान टीकाको रचन, यह बात असम्भव है, क्योंकि जा श्रीभागवतके गम्भीर अर्थनके विचाररूपसमुद्रमें बडे बडे विद्वान् मन्दराचलसे डूबेहैं, तहां मोसे परमाणुकी कौन गणना है ॥ ६ ॥ परंतु श्रीस्वामीजी कहे हैं कि धन्य गुरुचरणारविन्दकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कृपा कि जो गूंगेको विद्वान् करे हैं, और पांगुरेको पर्वत लंघावे हैं, यातें मैं परमानन्दमाधवगुरुनकों प्रणाम करूं हूं ॥ ७ ॥ श्रीमद्भागवत नामक कल्पवृक्ष सर्वशास्त्र पुराण आदिके शिरनपर गर्जे है, कैसो श्रीभागवतकल्पवृक्ष है कि प्रणव जाको अंकुर, ब्रह्म जाकी भूमि, द्वादशस्कन्ध जाके गुदे, प्रेम लक्षणाभक्ति जाको थामरो, तीनसौ पैंतीस अध्याय जाकी शाखा, अठारह हजार श्लोक जाके पत्ता, और अखिलमनोरथनकों पूरण करनवारो श्रीमद्भागवतरूप कल्पवृक्ष परमसुलभ जीवनके अनेकपुण्यनके उदयते पृथ्वीमें प्राप्त भयो है ॥ ८ ॥ यहां श्रीधरस्वामीको मंगलाचरण समाप्त भयो ॥

अध्याय १.

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट् तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ॥ तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥ १ ॥

श्रीभगवत्कलावतार श्रीवेदव्यासजी एकसमय अनेक पुराण और अनेक शास्त्र तथा महाभारतादि प्रबंध करके चित्तशांतिको न पावते तथा उन उन शास्त्रनके कहे भये सिद्धान्तनमें अप्रसन्न होते भये, भगवत्के अंशावतार श्रीनारदजीके उपदेशते श्रीमद्भगवद्गुणवर्णन प्रधान श्रीमद्भागवतशास्त्रको रचतभये, तिसके प्रारम्भमें ताके विघ्ननिवृत्तिसिद्धिके अर्थ श्रीभागवतके इष्टदेवको स्मरणरूप मंगलाचरण करेहैं। सब शिष्यवर्गनसहित हम परमेश्वरको ध्यान करेहैं। अब उन परमेश्वरकूं स्वरूपलक्षणा और तटस्थ लक्षणा करिकै लखामें हैं, तहां पहिले स्वरूपलक्षणा कहे हैं। कैसो परमेश्वर है कि तीनों कालमें एकरस सत्यरूप है, जा परमेश्वरमें सत्व रज तम मायाके तीन गुण तिनको कार्य (पंचभूत इन्द्रियदेवतारूप प्रपंच) झूठो भासे है। अथवा जा अधिष्ठानब्रह्मकी सत्यतातें असत्यहू प्रपञ्च सांचोसो प्रतीत होय है, यातें वह परमसत्य है। यहां दृष्टांत है कि जैसे काहूकूं वनमें रात्रिके समय ऊपरभूमिमें जलको भ्रम और जलमें स्थलको भ्रम होय है। तथा दिनमें मरुमरीचिकामें जल भासे है, तथा काचमें जलकी प्रतीति होय है, इत्यादि भ्रमभी अधिष्ठानकी सत्यता करके सत्यसो दीखे है ऐसेही अधिष्ठानब्रह्मकी सत्यतातें झूठोहू प्रपञ्च सत्यसो भासे हैं। अथवा ता ब्रह्मकीही परमार्थिकी सत्यतातें कहनेके हेतु प्रपञ्चको मिथ्याभाव कह्यो है जा ब्रह्ममें वह प्रपञ्च सर्वकाल असत् है वास्तवते कबहू सत् नहीं होय है " जा ब्रह्ममें " या पदके कहनेसों ब्रह्ममें प्रपञ्चरूपी उपाधिको सम्बन्ध भाष्यो ताकी निवृत्ति करे हैं, अपने तेजकरिके सर्वकाल जिसमेंसे माया लक्षणकपट दूर भयो है क्यों जी ! अंधकारमें रस्सी पडी है तामें काहूकूं सर्प प्रतीत भयो, सो वास्तवमें वा प्रतीत सर्पको और रस्सीको कौन संबन्ध है किंतु कोईभी संबंध नहीं तैसे अधिष्ठान ब्रह्ममें अज्ञानकी अवस्थामें जो प्रपञ्चभ्रम भास्यो ताको ज्ञानावस्थामें कोई संबन्ध नहीं। अब तटस्थलक्षणा करिकै लखामें हैं। या विश्वके उत्पत्ति पालन संहार जिस ब्रह्मते होय हैं ताहि हम ध्यान करे हैं। जो घटपटादिक पदार्थमें सत्तारूपकरिकें व्यापक है, और अकार्य खपुष्पादिकनते न्यारो है। अथवा प्रपञ्चको सत्तारूप ब्रह्म कारण है, जैसे घटको कारण मट्टी, कुण्डलादिकनको कारण सुवर्ण अथवा ब्रह्मको कार्य विश्व है, जैसे मट्टीको कार्य घटादिक, और सुवर्णको कार्य कुण्डलादिक, जो जाको कारण है वह कार्य

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अपने कारणसे भिन्न नहीं होय है। अब यामें श्रुतिको प्रमाण देय है "यतो वेति" जाते संपूर्ण जीव पैदा होंय हैं, और पैदा भये जाके जिवाये जीवें हैं, और प्रलयकालमें जामें मिलें हैं, और मुक्तिकालमें प्रविष्ट होय हैं। और स्मृतिहू प्रमाण है "यतः सर्वाणीति" युगकी आदिमें जा ब्रह्मते सब जीव उत्पन्न होय हैं, और युगके अंतमें जामें लय होय हैं, इत्यादिक। कदाचित् कोई व्यासजीते कहै कि ऐसी तौ जगत्की कारण माया है ताको ध्यान कहा करो हो? तापै कहें हैं कि नहीं, माया तो जड है, हम तो सर्वज्ञको ध्यान करें हैं। ब्रह्मकी सर्वज्ञतामें श्रुति प्रमाण है "स ईति" सो ब्रह्म मायाकी ओर दृष्टि करतभयो, कि तू लोकनकूं पैदा करि, तब माया लोकनकूं पैदा करत भई। यहां व्यासजीको सूत्रहू प्रमाण हैं "ईक्षतेरिति" वह द्रष्टा ब्रह्महीं जगत्को कारण है माया नहीं इति। शंका। ऐसो तो जीव है वाको ध्यान करो हो? तापै कहें हैं कि नहीं जीव तो ज्ञान पराधीन है, हम तो स्वतःसिद्धज्ञानवान्को ध्यान करें हैं। शंका। ऐसे तो ब्रह्माजी हैं। क्यों कि श्रुतिमें लिखे है "हिरण्यगर्भेति" जगत्की आदिमें हिरण्यगर्भ ब्रह्माही होत भये, और सब जीवनके पति भये इति। तापै कहे हैं, कि हम वा ब्रह्मको ध्यान करें हैं कि जिनने ब्रह्माकोहू वेद पढायो है, यह श्रुतिमें लिखो है। "यो ब्रह्माणमिति" जाने पूर्वही ब्रह्माकूं पैदा कियो, और फिर ब्रह्माकूं वेद पढाये, उस बुद्धिके प्रकाशक देवकी शरणमें मुमुक्षु प्राप्त भयोहूं। शंका। ब्रह्माजी कोईके पास वेद पढने गये हैं, यह कथा कहीं पुराणादिकमें सुनी नहीं है। याते कहे हैं कि तुम्हारो कहनो ठीक नहीं। ब्रह्माजीको वेद तौ प्रभुने मनके द्वाराही पढाये हैं। या पदते यह प्रतीत भई कि ब्रह्माकी बुद्धिके प्रवर्त्तक प्रभु हैं। यह गायत्रीमंत्रको अर्थ दिखायो। यही बात द्वितीयस्कन्धमें शुकदेवजी अपने मंगलाचरणमें कहेंगे "प्रचोदितेति" शंका जा विद्यावान्को जो विद्या अच्छी अभ्यसिता है वा विद्याकी निद्राकालमें (विस्मृति होजाय है, और जाग्रतमें वा विद्याकी स्मृति स्वतः होय आवे है, ऐसे प्रलयकालमें) ब्रह्माजी सोयगये, तौ वेद विस्मृत होय गये, जब उठे तब फेर स्मृत ह्वै आये। तापै कहे हैं कि नहीं। यह वेद ऐसो सुगम नहीं है, कि जो स्वतःही स्मृत ह्वै आवे या वेदमें महत् विद्वान् मोहकूं प्राप्त होय है, याते ब्रह्माजीकोहू ज्ञान पराधीन है, हम तो स्वतःसिद्ध ज्ञानवान् जगत्के कारण परमेश्वरको ध्यान करे हैं। याहीते वह सत्य है और झूठे जगत्कूं साच्यो दिखाय राख्यो है, याते परमार्थ सत्य है। और सर्वज्ञ है याते मायारूपी कपट बातें दूरिही रहे है, ताहि ध्यान करे हैं, या पदते यह प्रतीति भई कि या पुराणको गायत्रीके मंत्रसे प्रारंभ भयो है यह पुराण ब्रह्मविद्यारूप है, तथा गायत्रीको भाष्यरूप है। यह मत्स्यपुराणमें लिख्यो है। "यत्राधिकृत्येति"। जा पुराणमें गायत्रीके आशयकूं लेके धर्मको विस्तारवर्णन कर्‍यो जाय, और वृत्रासुरके वधकी कथा जामें होय, सो श्रीभागवत है तिनकी पुस्तक ललित अक्षरनमें लिखायकरि सुवर्णके सिंहासनपर स्थापनकरि भाद्रपदशुक्लपूर्णमासीके दिन वैष्णव ब्राह्मणको निवेदन करे वह परमपदकूं प्राप्त होय। या पुराणमें। अठारह हजार श्लोक हैं। और पुराणमें

---

१ यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयंत्यभिसंविशन्ति इति। २ यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे। यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये। ३ स ईक्षते। ४ ईक्षतेर्नाशब्दम्। ५ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् इति। ६ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वम् इत्यादि। ७ प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती इति। ८ यत्राधिकृत्य गायत्रीं वर्ण्यते धर्मविस्तरः। वृत्रासुरवधोपेतं तद्भागवतमिष्यते। लिखित्वा तच्च यो दद्याद्धेमसिंहसमन्वितम्। प्रौष्ठपद्यां पौर्णमास्यां स याति परमं पदम्॥ अष्टादशसहस्राणि पुराणं तत्प्रकीर्तितम्। ९ पुराणान्तरे च। ग्रन्थोऽष्टादशसाहस्रो द्वादशस्कन्धसंमितः। हयग्रीवब्रह्मविद्या यत्र वृत्रवधस्तथा। गायत्र्या च समारम्भस्तद्वै भागवतं विदुः॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लिख्यो है। अठारह हजार श्लोक, बारह स्कंध, नारायणकवचरूप ब्रह्मविद्या वृत्रासुरके वधकी कथा संयुक्त जामें गायत्रीके अर्थ करिके प्रारंभ है तिसको नाम श्रीभागवत है। पद्मपुराणमेंहू अंबरीषके प्रति गौतमऋषिको वचन है। "अम्बरीष शुकंप्रोक्तमिति" हे अम्बरीष! जो संसारकूं तू तर्‍यो चाहै है तो शुकदेवजीने राजापरीक्षितको श्रीमद्भागवत सुनायो है ताको श्रवण करि, और अपने मुखतेहू पाठ करि इत्यादिक प्रमाणनतें यह प्रतीति भई की श्रीमद्भागवत शास्त्र यही है, श्रीभागवत कोऊ दूसरे है यह शंका परास्त भई, अर्थात् देवीभागवत जो नवीन काहूं काशीवासीने बनाई है वह श्रीभागवत नहीं है॥ १॥ अब श्रोतानकी प्रवृत्तिके लिये कर्मकाण्ड और उपासनाकांड और ज्ञानकांड इस त्रिकांडविषयशास्त्रनते श्रीमद्भागवतकी श्रेष्ठता दिखामें हैं। धर्मःप्रोज्झितेति। यहां श्रीमत्सुंदरश्रीभागवतमें वा धर्मको कहैं हैं, कि जामें फलकी चाहना रूप कपटको लेश नहीं, मोक्षपर्यंतकी जामें चाहना नहीं, केवल ईश्वरको आराधनरूपही धर्मको निरूपण करे हैं। अब श्रीमद्भागवतके अधिकारीहूं परम उत्तम हैं, दूसरेकी बढती नहीं सहनेहारो मत्सर जिनके नहीं, ऐसे निर्मत्सर और सर्व जीवनपै कृपा करनेहारे संत याके अधिकारी हैं। इतने कथनतें कर्मकांड-विषयक शास्त्रतें श्रीमद्भागवतकी श्रेष्ठता दिखाई। अब ज्ञानकांडविषयक शास्त्रनते श्रेष्ठता दिखामे हैं, उन निर्मत्सर संतनको परमार्थभूत वस्तु जानने योग्य है, वैशेषिकमतवारे द्रव्य गुणादिरूप जैसे वास्तव वस्तु माने है सो नहीं, अथवा वास्तव शब्दते कहा प्रतीति भई कि वस्तु ब्रह्मके अंश जीव है, और वस्तुकी शक्ति माया है, और वस्तुको कार्य जगत् है, ये तीन ब्रह्मरूपही हैं। ब्रह्मते न्यारे नहीं। यह विना यत्नही जानिवे योग्य है, याके जाननेते कहा होय है कि परम सुख मिलै है, और अध्यात्म, अधिदैव, अधिभूत, इन तीन पापनकूं जडते उखारे है यह ज्ञानकांडविषयक शास्त्रनते श्रेष्ठता दिखाई। अब श्रीमद्भागवतके कर्ताहूकी श्रेष्ठता दिखामे हैं कि महामुनि श्रीनारायणने पहिलेही संक्षेपते रची है। अब देवता कांडकी श्रेष्ठता दिखामें हैं, अन्य शास्त्र और उनके साधनन करिकें कहा ईश्वरकी हृदयमें शीघ्रही स्थिति होय है, नहीं बहुत विलंब करिके स्थिति होय है, और यहां श्रीमद्भागवतके श्रवण करिवेकी इच्छा मात्रते ताही क्षण भगवान्‌की हृदयमें स्थिति होय है। शंका। जो ऐसीही तुमारी श्रीमद्भागवत है तो सब जीव इसहीको श्रवण करिके मोक्षको क्यों न प्राप्त हो जांय? तापै कहैं हैं कि श्रीमद्भागवतकी श्रवणकी रुचि असंख्यात जन्मनके पुण्यन विना नहीं होय है, यहां तीनों कांडनके अर्थनको यथार्थ प्रतिपादन कीनो है, याते ये श्रीमद्भागवतही सर्व शास्त्रशिरोमणि है याते भक्तनकूं नित्यही श्रवण करिवे योग्य है, केवल शास्त्रनते श्रेष्ठ है यातेही इनको श्रवणादिक वर्णन नहीं कियो, किंतु सर्व शास्त्रनको फलरूप यही है याते परमादर करिके सेवनीय है॥ २॥ भागवत परम आदर करिके सेवन करिवे योग्य है, यह कहे हैं। निगमेति। अखिल कामना देनवारे वेदरूपी कल्पवृक्षको फल श्रीमद्भागवत शास्त्र है सो श्रीवैकुंठलोकमें वास करे है, परंतु धन्यदयालु श्रीनारदजी कि जिनने वैकुंठते लायके यह श्रीमद्भागवत मुझ वेदव्यासकू दीनो, मैंने अपने श्रीशुकदेव पुत्रके मुखमें धर्‍यो, फिर वह श्रीमद्भागवत श्रीशुकदेवजीके मुखतें शिष्य और उनके शिष्यरूप पत्तानपै लुडकत भयो, होले होले पृथ्वीमें प्राप्त, अर्थात् इतने ऊंचेतें गिर्‍यो फिर फूट्यो नहीं। अबही श्रीमद्भागवत व्यासजीनें रची नहीं है, पर बुद्धिमें रचो रचायो भासे हैं, याते वहै गएकीसी नाईं कहै है, श्रीमद्भागवतकी शास्त्रप्रवृत्ति अनागताख्यान करिकेही है

१ पद्मपुराणे अंबरीषं प्रति गौतमोक्ति। अम्बरीष शुकप्रोक्तं नित्यं भागवतं शृणु। पठस्व स्वसुतेनापि यदीच्छसि भवक्षयम्॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

(अनागताख्यान कहिये जो बात नहीं भई ताकूं पूर्वही कहिदियोजाय) याते अमृतके रसके समान मीठे रस करिके युक्त है। लोकमें यह बात प्रसिद्ध है, कि तोताकी चोंच जा फलमें लगे सो फल मीठोही होय है। यहां साक्षात् शुकरूप श्रीव्यासनन्दन मुनिकी चोंच लगी यातें परमानन्द अमृतही रस है, यामें श्रुतिकोहूं प्रमाण है रस वंही जा रसकी प्राप्ति होनेते जीव आनन्दी होय है, यातें हे रसिक ! हे रसके जाननेवारो ! हे रस विशेषकी भावनानमें चतुरो ! धन्य तुमारो भाग्य जो ऐसो फल पृथ्वीमें प्राप्त भयो, यह अलभ्य लाभकी उक्ति है, याते या श्रीभागवतफलको वारंवार पियो। शंका। फलको पीनो नहीं बनिसके हैं, क्यों कि छिलका गुठिली त्यागिने परे है। समाधान। यह फल रसरूप है यामें न छिलका न गुठिली, केवल रसरूपही है, जैसे माखनको लोंदा। जो केवल फलही कहते तो वाको पीमनो नहीं बनसके हो, और छिलका गुठिली त्यागने परते ताकी निवृत्तिके लिये रसपद कह्यो। और जो केवल रसही कहते तो गिन्यो रस फैलि जातो, याते पीनो नहीं बनसके हो, याते फल कह्यो। याहीतें श्रीभागवत अमृत रसको पान जीवन्मुक्ति अवस्थामेंहूं त्यागने योग्य नहीं है, किन्तु पान करनेही योग्य है, अर्थात् स्वर्गादिक सुखके समान त्याज्य नहीं है, किन्तु सेवनही करने योग्य है। अगारीहू यह कहेंगे जिनकी अहंकाररूप गाठि खुलिगई, ऐसे आत्मारामभुनिहू भगवच्चरणारविंदनमें निष्काम भक्ति करें हैं, भगवान्के ऐसेही गुण हैं॥ ३ ॥ ऐसे इन तीनी श्लोकनमें कहा कह्यो कि सर्वशास्त्रशिरोमणि श्रीभागवतशास्त्रके इष्टदेवको स्मरणपूर्वक प्रारंभ करनो चाहिये, अब श्रीभागवत शास्त्रके विषय प्रयोजन संबन्ध अधिकारिनकी उत्तमता दिखायके, और इनके सेवनमें कोई क्लेश नहीं है, ऐसे श्रोतानको सन्मुख करिके शास्त्रको प्रारंभ करे है। नैमिषे इति। ब्रह्माजीके मनोमय चक्रकी धार कुंठित होइके जहां चक्र गिन्यो ता तीर्थको नाम नैमिष है। यह कथा वायुपुराणमें लिखी है, कि काहू समय बहुतसे ऋषि ब्रह्माजीके पास आये, और यह बोले कि हे ब्रह्मन् ! हमकों तपके योग्य उत्तम तीर्थ बताओ कौनसो अति पवित्र है, यह ऋषिनको वचन सुनि ब्रह्माजी बोले हे ऋषियो ! मैं मनोमय चक्र बनायके छोडो हों, तुम या चक्रके पीछे पीछे चले जाओ, जा भूमिमें या चक्रकी धार कुंठित होइ गिरि परे वह भूमि तपके योग्य है, ऐसे कहि ब्रह्माजीने मनोमयचक्र छोड्यो, जाको सूर्य सदृश प्रकाश, सो चक्र जहां गिन्यो वह तीर्थ वा दिनते नैमिषारण्य विख्यात भयो। अथवा वाराहपुराणकी कथा यहां समझनी चहिये। काहू समय गौरमुख ऋषिके प्रति भगवान्को वाक्य है। हे गौरमुख ! या वनमें मैंने निमिषमात्र कालमें दानवनकी सेना मारी है; याते या वनको नाम नैमिषारण्य होइगो. ब्राह्मणनकूं तपस्याके योग्य उत्तम होइगो, ऐसो भगवान्के क्षेत्र नैमिषारण्यमें काहू समय ८८००० शौनकादिक ऋषिनने स्वर्गलोकस्थित भगवान्की प्राप्तिके निमित्त १००० सहस्रवर्ष काल पर्यंत यज्ञ करनेको संकल्प कीनो ॥ ४ ॥ वे शौनकादिमुनि एक दिन प्रातःकाल नित्य अग्निहोत्र करिके, जब नैमित्तिक अग्निहोत्र करिचुके, ताही समम व्यासजीके परमकृपापात्र सूतजी आयकर प्राप्त भये, तब ऋषिनने सूतजीकों आयो देखकर ब्रह्मासन बिछाय दीनो। तब सूतजी सर्व ऋषीनको प्रणाम करि उनकी आज्ञासो आसनपर बैठे, जब परस्पर कुशल प्रश्न करिचुके तब ऋषि सूतजीसो बोले ॥ ५ ॥ हे सूतजी ! हे निष्पाप ! सर्व शास्त्र पुराण इतिहास तुमने व्यासजी महाराजते पढेहैं, और वांचे हैं॥६॥

१ रसो वै रसः, यं लब्ध्वा ह्यानन्दी भवति इति श्रुतेः। २ आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्थाश्चाप्युरुक्रमे। कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थंभूतगुणो हरिः ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ज्ञानीनमें शिरोमणि भगवान् व्यासजी जिन जिन शास्त्रनको जाने हैं, और सगुण निर्गुण ब्रह्मके उपासक और मुनिभी जिन जिन शास्त्रनको जाने हैं ॥ ७ ॥ हे सौम्य ! हे सूतजी ! तिन सब शास्त्रनको गुरुनकी कृपाते तुम यथार्थ जानो हो, क्यों कि निष्कपट प्रेमी शिष्यको गुरु गुप्त-हूं पदार्थको प्रगट करिदेय हैं ॥ ८ ॥ हे दीर्घ आयुवारे सूत ! तिन सर्व शास्त्रनको सिद्धांत निश्चय-करिके सरल रीतिसो हमको उपदेश करो । जा सिद्धांतको जानिके मुमुक्षु जीव सुगम साधनको करि मोक्षको प्राप्त होय ॥ ९ ॥ कदाचित् सूतजी शंका करे कि हे ऋषियो ! तुम बहुत काल-ताईं बहुत परिश्रम करिके अपनी समीचीन बुद्धिके बलते सर्व शास्त्रनको सिद्धांतको निश्चय करो, मोतें कहा पूछो, मैं कहा तुमतेहूं अधिक विद्वान् हूं ताहे कहें हैं, हे साधो ! या कलियुगमें प्रथम तौ जीवनकी आयु अल्प है, इतनेपरहूं आलसी, तामेंहूं मंदबुद्धी, तामेंहूं मंदभाग्य, तामेंहूं विघ्ननके हल्ला इतनेपेहू रोगग्रस्त हे सूतजी ! इतने कारणते हमसों सिद्धांत निश्चय नहीं होसकेगो, याते आपही कृपा करि कहो ॥ १० ॥ हे सूतजी ! बहुतसे शास्त्रनके श्रवणमात्रतेहू केवल फलकी सिद्धि नहीं होय सके है, किंतु विभागपूर्वक सुनने योग्य शास्त्र हजारन हैं, फिर एक एक शास्त्रमें कहे साधन हजारन हैं कहांलगि शास्त्र सुने, और कहांलग तदुक्त साधनको करैं ताते हे साधो ! सर्व शास्त्रनमें सारभूत जो सिद्धांत होइ सो अपनी बुद्धिते निश्चय करिके हम श्रद्धालुओंको उपदेश करो, जा सिद्धांततें हमारी बुद्धि शांतिको प्राप्त होइ । यहां शौनकादिकनको प्रथम प्रश्न भयो ॥ ११ ॥ अब दूसरो प्रश्न करे है । और शौनक बहुत उत्कंठाते सूतजीको आशीर्वाद देइ है । हे सूत ! तुमारो कल्याण होय यह तुम जानो हो कि भक्तनके प्रति भगवान् वसुदेवजीकी स्त्री देवकीको पुत्र भये सो कौनसो आवश्यक कार्य करनो हो, जा निमित्त अजन्माने जन्म धारण कीनो ॥ १२ ॥ हे सूत ! साधारणहूं भगवदवतार भक्तनके पालन और समृद्धिके निमित्त होइ है, तिन भगवान्के पूर्ण अवतारके चरित्रनको हम सुन्यो चाहे हैं, याते हमारे अर्थ कहो ॥ १३ ॥ अब शौनक भगवान्के प्रभावको वर्णन करत भगवान्के यशके श्रवणमें अपनी उत्कंठाको प्रकट करिके दिखामें हैं । आपन्न इति । जन्म मृत्यु प्रवाहरूप घोर संसारसमुद्रमें प्राप्त भये पराधीन जीव जिस प्रभुकें नामको उच्चारण कर वाही क्षण या संसारते छूटिकर मोक्षकूं प्राप्त होय है । नामको ऐसो प्रभाव है जा भगवन्नामते काल वा यमराज आप डरे है ॥ १४ ॥ हे सूत ! उन भगवान्के चरणारविंदके आश्रय लेनेवारे और शांतिमार्गमें निष्ठ मुनिनको दर्शनमात्रहू या जीवको ह्वै जाइ तौ वह मुनिनको दर्शन ताही क्षण वा जीवको पवित्र करै हैं, क्योंकि उन मुनिनके हृदयमें सर्वकाल भगवच्चरणारविंद वास करै है । और गंगाजीको जल तो बहुत काल सेवा करो तब पवित्र करै है; क्योंकि गंगाजीके जलकू तौ वामन अवतारमें एक दिन चरणारविंदको स्पर्श भया हो या संबंधते अबतक पवित्र करे है अब वे चरण गंगाजीमें धरे नहीं हैं और मुनिनके हृदयमें तो सर्वदा विराजे हैं यह मुनिनको उत्कर्ष दिखायो ॥ १५ ॥ साधारणहू जीव भगवान्के चरित्रनको गाइगाइकर पुण्यश्लोक कहाये तिन भगवान्के पावन यशको कौन न सुने जो अंतःकरणशुद्धिकी कामना होइ तौ अखिल कलिमलपुंजके नाशक भगवान्के यशको नित्य श्रवण करै यहां दूसरो प्रश्न समाप्त भयो ॥ १६ ॥ अपनी लीलासेही ब्रह्मरुद्रादि अवतार धारण करनेहारे भगवान्के उदार चरित जो नारदादि मुनियोंके गाये हैं वह आप हम श्रद्धा करनेहारोंके निमित्त श्रवण कराओ यहां र्त सरो प्रश्न समाप्त भयो ॥ १७ ॥ अब चौथो प्रश्न करे हैं । हे बुद्धिमाननमें शिरोमणि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सूत ! जगत् पालनके निमित्त हरि भगवान्के मत्स्यादिक अवतारकी शुभ कथा हमारे अर्थ कहो, जो ईश्वर अपनी माया करिके यथेष्ट लीलावतारनको धारण करे है ॥ १८ ॥ श्रीकृष्णके अवतारके प्रयोजनके प्रश्नसेही उनके चरित्रनको प्रश्न ह्वै गयो, तौहू अत्यन्त उत्कण्ठा करिके फिरिभी श्रीकृष्णकेही चरित्रनके सुनवेकी इच्छा करत, तिन चरित्रनके सुननेमें अपनी अतृप्ति दिखामें हैं। हे सूतजी ! अष्टांग योग अश्वमेधादिकयज्ञ इन्हें करत करत तौ हम तृप्त व्है गये परन्तु जिनके यश श्रवणतें हृदयके अंधकारपटल खुलिजाय तिन उत्तमश्लोक भगवान्के पराक्रमनकूं सुनत सुनत हमारी तृप्ति नहीं होय है। क्यों कि हम रसज्ञ सुननेवारोंको भगवान्को यश पद पदपै स्वादते अधिक स्वाद लगे है। अथवा औरनकी चाहै तृप्ति ह्वै जाय परंतु हमारी तृप्ति नहीं होय है। दृष्टान्त। जैसे भोजनमें तृप्ति तीन प्रकारते होय, कै तौ क्षुधा निवृत्त ह्वै जाय, अथवा रसकौ ज्ञान न होय, अथवा भोजनमें एकही रस होय यहां भगवत् यशके श्रवणते तृप्तिमें तीनोनमेंते कोई कारण नहीं है क्यों कि काननके छिद्र खोले हैं, यातें शब्द सुनत सुनत भरे नहीं, और हम रसज्ञ हैं यातें अज्ञानी पशूनकीसी तृप्ति हमारी होय नहीं, भगवान्को यश पदपदपै अनेक स्वादनकरिके भर्यो है, यातै हमारी तृप्ति होय नहीं, जो एकसो रस होय तो ह्वै जाय, जैसे गांडेमें ऊपरते नीचेतक एकसोही रस भरो है, वासो तृप्ति ह्वै जाय है ॥ १९ ॥ पांचमो प्रश्न करे है, श्रीबलराम महाराजको संग लैकै केशव भगवान्ने गोवर्धनोद्धरणादिक जे जे कर्म करे, जे मनुष्यनते नहीं व्हैसके हैं, ते भगवान् कपट करिके मनुष्याकाररूप धरिके व्रजमें गुप्त क्यों रहे ॥ २० ॥ कदाचित् सूतजी कहे कि हे शौनक ! यज्ञ करनो, और विद्या पढामनो, इत्यादिक कर्मनमें तुम व्यग्र हौ तुमको भगवत्के यश श्रवणमें अवकाश कैसे मिल्यो, तापै शौनक कहैं हैं हे सूतजी ! घोरकलिको आयो जानिके, याके डरतें वैकुण्ठके जायवेकी इच्छासे या वैष्णवक्षेत्र नैमिषारण्यमें एक हजार वर्षको मिसकर जो हम बैठे हैं सो भगवान्की कथा सुननेकोही बैठे हैं ॥ २१ ॥ हे सूतजी ! या समयमें तुम्हारो दर्शन भगवत्कृपातेंही भयो है, क्योंकि अतिधीरवाननके धीरजरूपी सेतुको तोरनवारो दुस्तर कलिसमुद्रके तरनेकी इच्छा हमारे भई, सोई आपको दर्शन भयो, यामें दृष्टांत जैसे समुद्रके टापूको जानेवारो मनुष्य समुद्रके तटपै आवे, और वाही समय जहाज लिये मल्लाह आवे, वा मल्लाहको देखिके बडोही आनन्द होयहै तैसे आपके दर्शनतें आनन्द भयो ॥ २२ ॥ प्रश्न छठवो। कहो सूतजी धर्मके कवचवत् रक्षक ब्रह्मण्य योगेश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्ण भगवान् जब अपने निजधामको पधारे तब धर्म कौनकी शरण गयो, यह छठ्यो प्रश्न समाप्त भयो ॥ २३ ॥

ब्रूहि योगेश्वरे कृष्णे ब्रह्मण्ये धर्मवर्मणि ॥
स्वां काष्ठामधुनोपेते धर्मः कं शरणं गतः ॥ २३ ॥

इति श्रीभा० प्रथ० भागवतसारार्थबोधिनीभाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

व्यास उवाच-इति संप्रश्नसंहृष्टो विप्राणां रौमहर्षणिः ॥
प्रतिपूज्य वचस्तेषां प्रवक्तुमुपचक्रमे ॥ १ ॥

श्रीवेदव्यासजी बोले कि ऋषिनको ये प्रश्न सुनकर रोमहर्षणके पुत्र उग्रश्रवा उनके वचनकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रशंसा करके, उनको उत्तर देनेको उद्यतभये ॥ १ ॥ सूतजी बोले कि जो संन्यास लेकर जाते कर्ममार्ग त्याग एकाकी जिन शुकको वेदव्यासजी विरहमें व्याकुल होयके हे पुत्र ! हे पुत्र ! ऐसे पुकारते भए, तब पिताके स्नेह दूर करवेको वृक्षरूप करके उत्तर देतेभये, सब जीवनके हृदयमें योगबल करके प्रवेश करै ऐसे श्रीशुकदेवजीको नमस्कार करै हैं ॥ २ ॥ अपने प्रभावयुक्त सब श्रुतीनको एक सार, अध्यात्मविद्याको साक्षात् दीपक समान प्रकाशक संसार तरवेकी इच्छावारे संसारीनके ऊपर कृपा करके जो शुकदेवजी गोप्य पुराण कहत भए, ऐसे व्यासपुत्र शुकाचार्यकी हम शरण हैं ॥ ३ ॥ नारायण और नरनमें उत्तम नर, तथा देवी सरस्वती और व्यासजी इन सबको नमस्कार करके जय (ग्रंथ) कू वर्णन करै है ॥ ४ ॥ हे मुनिहो ! आपने बहुत सुंदर पूछो, सब लोकको मंगलदायक जो श्रीकृष्णको प्रश्न कीनो, ये सब शास्त्रार्थको सार उद्धार है यासे आत्मा प्रसन्न होवै है ॥ ५ ॥ धर्म दो प्रकारको है स्वर्गादिके अर्थ करोजाय वह धर्म प्रवृत्तिमार्ग है, और श्रवण आदर आदि लक्षणा भक्ति निवृत्तिमार्ग है, वो मोक्षदाता है सोई पुरुषनको परम धर्म है, जाते भगवान्में फलरहित विघ्नरहित भक्ति होय, जा करके जीवात्मा प्रसन्न होय है ॥ ६ ॥ वासुदेव भगवान्में भक्तियोग करचो भयो शीघ्र ज्ञान और वैराग्य उपनिषद्को उत्पन्न होवे है ॥ ७ ॥ सुंदर अनुष्ठान करो भयो धर्म पुरुषनको विष्वक्सेन भगवान्की कथामें जो प्रीति न उत्पन्न करै तो केवल वो परिश्रमही है ॥ ८ ॥ मोक्षपर्यंत धर्मको फल प्राप्त होनो ये प्रयोजन नहीं है, धर्मके योग्य धन खर्च करनो याको फल काम लाभके अर्थ नहीं है, धन धर्मको फल मोक्ष है ॥ ९ ॥ कामको फल इन्द्रियप्रीति नहीं किन्तु केवल जीवनमात्रही फल है और यावज्जीवन कर्म करके धन उपार्जन करनोही जीवनको फल नहीं किन्तु तत्व जाननोही जीवनको फल है ॥ १० ॥ तत्ववेत्ता जा अद्वितीय ज्ञानको तत्व कहते हैं उसेही उपनिषद्, ब्रह्म परमात्मा भगवान् कहैं हैं ॥ ११ ॥ वा ब्रह्मके श्रद्धा करवेवारे, ज्ञान वैराग्ययुक्त वेदांतादिश्रवणसे ग्रहण करी भक्ति जीवात्मामें परमात्माको दर्शन करैं हैं ॥ १२ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ शौनकादिक मुनियो ! यातें वर्ण आश्रमके विभागसे सुंदर अनुष्ठान करे धर्मकी सुंदर सिद्धि हरिको प्रसन्न करनोही पुरुषनको योग्य है ॥ १३ ॥ तातें एकाग्रमनसे भगवान्सात्वतपति श्रवण कीर्तन ध्यान पूजन करने योग्य हैं ॥ १४ ॥ जिनको ध्यानरूप खड्ग लेकर कर्मग्रंथिके बंधनको विद्वान् पंडित छेदन करते हैं, तिनकी कथामें कौन प्रीति नहीं करैं ॥ १५ ॥ हे द्विजहो ! सुनवेकी इच्छावारे श्रद्धालुको वासुदेवकथामें रुचि, महात्माकी और पुण्यतीर्थकी सेवाते होय है ॥ १६ ॥ अपनी कथा सुनवेवारे सज्जननके सुहृत् पुण्यरूप श्रवण कीर्तनवारे कृष्ण उन भक्तनके हृदयमें सब अमंगल नाश कर देयहैं ॥ १७ ॥ जब अमंगल नष्ट होजाय है तब नित्य भागवतसेवासे उत्तम यशवारे भगवान्में फलानुसंधानरहित निष्काम भक्ति होवे है ॥ १८ ॥ तब रज तमसे प्रगट होनेवाले काम लोभादि शत्रुओंसे न पराभव हुआ मन सतोगुणमें स्थित होकर शांत होजाय है ॥ १९ ॥ ऐसे भगवत्की भक्तियोगसे प्रसन्न मन होनेके कारण मुक्तसंग होनेसे भगवत्के तत्त्वको ज्ञान होवे है ॥ २० ॥ जीव अपनेही रूपमें ईश्वरको दर्शन करै हैं, तब हृदयकी ग्रंथि सब टूटे हैं, सब संशय कट जावैं हैं, कर्म सब क्षय होवैं हैं ॥ २१ ॥ याते पंडित परम आनन्दकरके मनके शोधन करवेवारी भक्ति नित्य वासुदेव भगवान्में करैं हैं ॥ २२ ॥ सत्त्व रज तम ये मायाके गुण हैं, इन करके युक्त परमपुरुष एकही या विश्वकी उत्पत्ति पालन नाशके लिये हरि ब्रह्मा हर ये संज्ञा धारे हैं, परन्तु निश्चय है कि इन तीनोंमेंसे कल्याण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शुभफल वासुदेवसेही प्राप्त होय हैं ॥ २३ ॥ पृथिवीके विकार काठसे धूम होवे है, तासे वेदत्रयी-प्रतिपाद्य कर्म अग्नि होय है, तैसेई तमसे रज रजसे सतोगुण बढके ब्रह्मको दर्शन होजावेहै ॥ २४ ॥ या कारणसे पहिलेसेही सत्वमूर्ति इंद्रियोंसे परे भगवान्कोही मुनीश्वर लोग भजतेभए, सो अब जो उनके पीछे या प्रकार भजें हैं, वे जीवभी या संसारमें आनंद पावैं हैं ॥ २५ ॥ यासे मुमुक्षु घोर-रूप भूतपतिनको त्यागकर निंदा न करकै शांत नारायणकी कलानको भजें हैं ॥२६॥ राजसी तामसी स्वभाववारे समान शीलवाले पितर भूत प्रजाके ईशनको लक्ष्मी ऐश्वर्य पुत्रके लिये भजें हैं ॥ २७ ॥ सब शास्त्रको तात्पर्य ये है कि मोक्षदाता वासुदेवको भजै । वेद वासुदेवको वर्णन करें हैं, यज्ञ वासु-देवको कहैं हैं, योग वासुदेवको कहैं हैं, क्रिया सब वासुदेवको प्रतिपादन करै हैं ॥ २८ ॥ ज्ञान वासुदेवको कहै हैं, तप वासुदेवको कहैं हैं, सब धर्म वासुदेवको वर्णन करें हैं, गति सब वासुदेवको कहैं हैं ॥ २९ ॥ सो भगवान् अपनी माया करकै पहले या विश्वको रचतेभये सत् असत् रूप गुणमयी मायाकरकै आप समर्थ हैं वो आप यह गुण प्रत्यनीक अखिल कल्याण गुणपरिपूर्ण है ॥ ३० ॥ वा मायाकरके विलसित जे ये गुण देहादि हैं तिनमें अंतर्यामी रूप सो भीतर प्रवेश कियो प्रकाश करै है परंतु विज्ञानदृष्टिसों देखो तौ देह धर्मनसौ पृथक् है । जराजन्मादि विकाररहित है ॥ ३१ ॥ जैसे अपनी उत्पत्तिस्थान काष्ठनमें सूक्ष्मरूपसों ढको भयो एकही अग्नि लघु महत् वक्र सरलादि नाना रूप प्रकाश करै है ऐसेही विश्वात्मा पुरुष सब भूतनमें नानारूपसो प्रकाश करै है ॥ ३२ ॥ यह हरि गुणमय जे भूतसूक्ष्म इंद्रियादि भाव है तिन करके अपने रचेभये भूत प्राणिनमें अंतर्यामिरूपसौ प्रविष्ट भयो प्रभु विन गुणनको भोगे है ॥ ३३ ॥ यह भगवान् लोककर्ता सतोगुण करके लोकनको पालन करै हैं. देव पक्षी नर आदिमें लीलावतार धारैहै ॥ ३४ ॥

भावयत्येष सत्वेन लोकान्वै लोकभावनः ॥
लीलावतारानुगतो देवतिर्यङ्नरादिषु ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

सूत उवाच–जगृहे पौरुषं रूपं भगवान्महदादिभिः ॥
संभूतं षोडशकलमादौ लोकसिसृक्षया ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि, या अध्यायमें चौवीसअवतारकी कथा हैं । प्रथम पुरुषअवतार भयो भगवान् महत्तत्त्व अहंकार पंचतन्मात्रा आदिसे युक्त पुरुषरूप धारते भए आदिमें लोककी रचनेकी इच्छा करके सोलह कलाका रूप धरते भए ॥ १ ॥ जलशायी योगनिद्राविस्तारी श्रीहरिकी नाभिरूप सरोवरके कमलमेंसे विश्व रचनवारोंको पति ब्रह्मा होतो भयो ॥ २ ॥ जिनके अवयव-स्थानोंसे लोकको विस्तार भयो है, वो भगवान्का विशुद्ध सत्व महाबलिष्ठ रूप है ॥ ३ ॥ जिनके असंख्य चरण जंघा भुजा मुख, असंख्य मस्तक श्रवण नेत्र नासिका, असंख्य शिरभूषण वस्त्र कुंडल शोभित अद्भुत स्वरूपको ज्ञाननेत्रसे योगीश्वर दर्शन करै हैं, सहस्रशब्द वेदमें असंख्यवाचक है ॥ ४ ॥ ये आदिनारायण सब अवतारोंके बीज अव्यय हैं, सब कार्य अंतमें इन्हीमें प्रवेश करैं हैं,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जिनका अंश ब्रह्मा उनके अंश मरीची आदिसे देव पशु पक्षी मनुष्यादि रचे जाय हैं ॥ ५ ॥ प्रथम सनत्कुमार अवतार उनको चरित्र कहे है, सो देव प्रथम कुमार भए, ब्राह्मण होके अति कठिन तप करते भए, जो कभी खंडित न होय, ऐसा ब्रह्मचर्य व्रत करते भये ॥ ६ ॥ दूसरी वार वाराह अवतार भयो रसातल गई पृथ्वीको उठाय लाय, या विश्वकी उत्पत्तिके लिये यज्ञेश वाराहजी भये ॥ ७ ॥ नारदजी भये सो भगवान् तीसरी वेर ऋषियोंमें देवऋषि होकर सब कर्मसे छुटानेकी वैष्णवोंको नारदपंचरात्र तंत्र कहतभये ॥ ८ ॥ नर नारायण भए, चौथी वार धर्मकी कला नाम स्त्रीमें नर नारायण होकर ऋषि भए, आत्मा (मन) के शमकरके युक्त जो काहूपे न कीयो जाय ऐसो अतिकठिन सबको सुखदायक तप करते भए ॥ ९ ॥ कपिल देव अवतार हुओ, पांचमें वार सिद्धेश कपिल नाम होके बहुत कालसे नष्ट तत्वसमूहको निर्णय सांख्यशास्त्र आसुरी ब्राह्मणको उपदेश करते भए ॥ १० ॥ दत्तात्रेय अवतार भयो, छठीवेर अत्रिऋषिके पुत्र भए, अनुसूयाने वरसे प्रसन्न करे, अलर्क प्रह्लाद हैहयादिकोंको आत्मविद्या कहते भए ॥ ११ ॥ यज्ञअवतार भयो, सातवीं वेर रुचिप्रजापतिकी आकूती नाम स्त्रीमें यज्ञ भगवान् भए, यामा नाम देवगणसहित स्वायंभुव मन्वंतरकी रक्षा करते भए ॥ १२ ॥ ऋषभदेवजी भए, आठवीं वार नाभी नाम राजाकी मरुदेवीमें अवतरे, सब आश्रमोंसे नमस्कृत धीरोंको पारमहंस आश्रम दिखावते भये ॥ १३ ॥ पृथु अवतार भयो, नवमींवार ऋषियोंकी चाहनासे पृथु अवतार धारण करके सब औषधीयुक्त पृथ्वीमेंसे सब वस्तु दोहते भए, हे ब्राह्मणो ! वा पृथ्वी दोहनेसे ये अवतार अति श्रेष्ठ भयो ॥ १४ ॥ मत्स्यावतार भयो, दशमीं वार चाक्षुषमन्वंतरमें सब समुद्र एक भए पृथ्वीमय नावसें वैवस्वत मन्वंतरकी रक्षा करते भए, मत्स्यरूप धारते भए ॥ १५ ॥ कच्छप अवतार कहे है, ग्यारवीं वेर सुर असुर समुद्रको मंथते भये तिस समयमें कच्छरूप धार मंदराचल पीठपर विभु धरते भए ॥ १६ ॥ बारवीं वेर धन्वंतरि अवतार भयो, तेरवीं वार मोहनी अवतार धर राक्षस तो मोहे, देवतानकी रक्षा करी उन्हें अमृत प्यायो ॥ १७ ॥ नृसिंहअवतार भयो, चौदहवीं वार बढे हुए दैत्यराज हिरण्यकशिपुको नृसिंहरूप धार नखोंसे चटाई बनानेवारे जैसे तृणको फाडें तैसे दैत्यकी छाती फाडते भए ॥ १८ ॥ वामन अवतार भयो, पंद्रहवीं वार वामनरूप धर बलिराजाके यज्ञमें गए, तीन पग पृथ्वी मांगी, दैत्यनसो छीडके इंद्रको स्वर्ग देवेकी इच्छा करते भए ॥ १९ ॥ परशुरामजी भए, षोडशमें अवतार ब्राह्मणद्रोही राजानको कोपकरके इक्कीसवार मारकर क्षत्रीरहित पृथ्वी करते भए ॥ २० ॥ व्यासजी भए, सत्रहवीं वार पराशरते सत्यवतीमें व्यासजी भए, पुरुषनकी मंदबुद्धि जानके वेदकी शाखाओंका विस्तार करतेभये ॥ २१ ॥ श्रीरघुनाथजी भए, अठारवीं वार देवतानके कार्य करवेकी इच्छा करके समुद्र बांधो, और अधिक आश्चर्यके कर्म करे ॥ २२ ॥ राम कृष्ण अवतार भए, उन्नीसवीं वीसवीं बार यादवोंमें जन्म भयो, राम कृष्ण होकर भगवान् भूमिभारको उतारते भए ॥ २३ ॥ ताके पीछे कलियुग आयो तब असुरनके मोहके लिये बुद्ध नाम अवतारसे जिनसुत कीकटदेश गयाके समीप होयगो ॥ २४ ॥ युगकी संधिमें राजा चौरप्राय जब होंगे तब विष्णुयश नाम ब्राह्मणके यहां यह जगत्पति कल्कि अवतार होंगे ॥ २५ ॥ सतोगुणी हरिके असंख्यात अवतार हैं, जैसे अमित जल भरे सरोवरसे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तुच्छ प्रवाहवारी हजारों नदी वहैं हैं ॥ २६ ॥ ऋषि, मनु, देवता, मनुसुत, महावली, प्रजापति, ये सर्व हरिकी कला हैं ॥ २७ ॥ उस अविनाशी पुरुषके ये सब अंशकला हैं, श्रीकृष्ण आप भगवान् हैं इंद्रके शत्रुओंसे लोक जब व्याकुल होवे है, तब युगयुगमें सबको सुखी करै हैं ॥ २८ ॥ भगवान्के यह छिपे हुए जन्म जो नर पवित्र होके सायंकाल प्रातःकाल पढै सुनै वो दुःखसमूहोंसे छूटै है ॥२९॥ अरूप चिन्मय एकरस व्यापक, ईश्वर भगवान्को यह रूप है, महत्तत्वादि माया गुणोंकरके जीवात्मांतर्यामीमें प्रकट होवे है अर्थात् आत्माकी जगे देह कल्पना कियो है कैसे ॥ ३० ॥ जैसे अज्ञानी आकाशमें नीलेपीले बादलका आरोप करै हैं जैसे पृथ्वीके रेणुओंको धुंधकार आदिक पवनमें अज्ञानी कल्पित करैहैं, तैसे द्रष्टा आत्मामें दृश्यत्व आदि शरीरधर्म अज्ञानियोंने मानोहै ॥ ३१ ॥ जैसे स्थूल शरीरको आत्मामें आरोपण करै हैं याही प्रकार सूक्ष्म शरीरभी आत्मामें आरोपित है वो सूक्ष्म शरीर व्यक्तिकरके रहित है अव्यक्त क्यों है कि वो करचरणादि अवयवनकरके रहित है ऐसो क्यों है तामें हेतु बतामें हैं कि वो वस्तु न कभी काईने देखो है न सुनो है तौ क्यों जी फिर वाके होवेमें कहा प्रमाण है कि जो वो जीव है नाम जीवोपाधि लिंगदेह है जासो वारंवार जन्म होयहै वोहू आत्मामें आरोपितही है ॥ ३२ ॥ यह सत् असत् नाम स्थूलसूक्ष्म रूप मिट जाय तौ ब्रह्मको दर्शन होवै है ॥ ३३ ॥ जो यह क्रीडा करनेवारी ईश्वरकी माया दूर हो जाय, तौ श्रेष्ठ मतिवारो ब्रह्मस्वरूपकों प्राप्त होवै है, अपनी महिमामें आपही पूजित होवे हैं ॥ ३४ ॥ ऐसे अकर्ताके कर्म, अजन्माके जन्म वेदमें छिपे हुए हैं, ये सब अंतर्यामीके जन्मकर्म कविलोग वर्णन करते हैं ॥ ३५ ॥ अमोघलीलाधारी ईश्वर या विश्वको रचे पालै नाश करे है परन्तु यामें आसक्त नहीं होते सब जीवोंमें अंतर्हित स्वतंत्र, छः गुणोंके ईश्वर हैं छओं इंद्रियोंके विषय दूरसे ग्रहण करै है छओं इंद्रियोंको स्वामी हैं ॥ ३६ ॥ मनवचनसे नाम रूपको विस्तार करनेहारे जगदीश्वरकी लीला मूर्ख मनुष्य नहीं जानसक्ते जैसे नटकी लीलाको मूर्ख जन न जाने हैं ॥ ३७ ॥ जो कोई कुटिलभाव त्यागके सदा अनुकूलतासे तिनके चरणकमलकी सुगंधको भजें हैं, सो मनुष्य चक्रधारी महापराक्रमी धाता परम ईश्वरकी पदवीको जाने है ॥ ३८ ॥ यासे सर्वज्ञ तुम सब धन्य हो, जो सब लोकके नाथ हरिमें सर्वात्मा करके आत्मभावना करते हो, जामें फेर जन्ममरणको भाव नहीं होता है ॥३९॥ सब वेदोंके समान भगवत्के चरित्रयुक्त यह भागवतनाम पुराण व्यासजी करते भए ॥ ४० ॥ लोकके सुखके लिये धनदाता मंगलदाता महान् ज्ञानवान् आत्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ शुकपुत्रको पढाते भए ॥ ४१ ॥ सब वेदके इतिहासको सार निकास शुकदेवजी महाराज परीक्षित्को सुनावते भए ॥ ४२ ॥ राजा परीक्षित् महर्षियों सहित गंगातीरपर मृत्युतक बैठते भये, जिस समय धर्मज्ञानादिसहित श्रीकृष्णजी वैकुंठको गये ॥ ४३ ॥ उपरांत कलियुगमें जब नरनकी नष्ट दृष्टि भई तब यह पुराणरूप सूर्यको उदय भयो है हे द्विजो ! शुकदेवजी तेजस्वी राजा परीक्षित्से कहते भए ॥ ४४ ॥ तहां तिनकी कृपासे वहां बैठे हमनेंभी सुनो सो हम तुमको जैसा पढाहै, जैसी बुद्धि है तैसो विस्तारसे सुनावेंगे ॥ ४५ ॥

---

१ एक गुरुके दो चेला हैं विनने ज्योतिषविद्या पढी परदेशको चले मार्गमें काही साहूकारके घर गये आशीर्वाद दियो वाने सत्कार कियो फिर पूछी कि कहा पढे हौ विननें कही ज्योतिष पढे है तब वाने कही बताओ मेरी मुट्ठीमें कहा है

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अहं चाध्यगमं तत्र निविष्टस्तदनुग्रहात् ॥
सोऽहं वः श्रावयिष्यामि यथाऽधीतं यथामति ॥ ४९ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

व्यास उवाच–इति ब्रुवाणं संस्तूय मुनीनां दीर्घसत्रिणाम् ॥
वृद्धः कुलपतिः सूतं बह्वृचः शौनकोऽब्रवीत् ॥ १ ॥

श्रीव्यासजी बोले कि बडे यज्ञ करनेवारे मुनीनके मध्यमें सूतजीके यह वचन सुनकर वृद्ध कुलपति ऋग्वेद पढनेवारे शौनक मुनि बोले ॥ १ ॥ शौनकजी बोले कि । हे सूत ! हे सूत ! हे महाभाग ! हे वक्तानमें श्रेष्ट ! भागवतकी पुण्यदात्री कथा कहो, जो भगवान् शुकदेवजीनें कही है ॥ २ ॥ किस युगमें कौन स्थानमें कौन हेतुसे यह भागवतका प्रवर्तन हुआ व्यासजीको कौनने प्रेरणा करी, तब मुनिने ये संहिता करी ॥ ३ ॥ तिनके पुत्र महायोगी समदर्शी भेदभावरहित एक ब्रह्ममें निष्ठावारे विकल्परहित मायाके प्रपंचसै जाग्रत तथापि गुप्त होनेसे मूढकी समान लक्षित होते थे ॥ ४ ॥ पुत्रके पीछे जाते भये वस्त्र पहिरे व्यासजीकों देखकर लाजसे जलमें न्हाती हुई देवस्त्री वस्त्र पहिरती भई, आगे नग्न पुत्र शुकको देख लाज न करी, यह विचित्र भाव देख व्यासजी उनको पूछवे लगे कि शुकको नग्न देखके तौ वस्त्र न पहिरे, मो बूढेको देखके तुमको लाज क्यों प्राप्त भई ? तब देवस्त्री बोली तुम्हें अभी पुरुष स्त्री भेद भाव है; एकांतमें पवित्र दृष्टिवारे शुकको यह भाव नहीं है ॥ ५ ॥ वह

तब विनने प्रश्नको विचार करके कही कि तुमारे हाथमें कछु गोल २ है फिर वाने कही कि और कहो फिर पंडितनने कही कि कछु सुफेद सुफेद है तब फिर वाने कही कि कछु और कहो तब पंडित बोले कि कुछ चिह्न वामें है तब तौ सेठ बोलौ कि महाराज ठीक है अब तौ नाम बताय देउ तब पंडित बोले कि तुमारे हाथमें चाकीको पाट है तब सेठने कही कि महाराज तुमारी विद्यामें कसर नहीं है तुमारी बुद्धिमें कसर है तुमने ये नहीं समझी कि मुट्ठीमें चाकीको पाट कैसे आवेगो फिर यहांसे ये पंडित अगारी चले तब प्रातःकालही इमलीके पेडपे बैठी एक चील दाहीं तरफ बोली सोई एक बोलो कि ले भाई आज खीरके भोजन मिलेंगे तब दूसरो बोले कि भइया खीरके भोजन तो मिलेंगे पन खट्टी खीर मिलेगी अगारी चले तो तीसरे पहर १ कूआपे पहुंचै प्यास लगी वहां एक डोकरी पानी भर रही ही वासो पानी मांगो वाने पानी पिवायो जब पानी पीके चले तब डोकरी बोली कि मेरे बेटा हो मेरो बेटा परदेश गयो है कब-तक आवेगो पंडित बोलो कि डोकरी बताउहू सो वाको घडा माथे पैते गिरकर फूट गयो सोई पंडितने कही कि डोकरी तेरो बेटा मर गयो सोही डोकरी रोमन लगी तब दूसरो पंडित बोलो कि डोकरी रोवे मती तू घरको जा तेरो बेटा आय गयो है तोकू जात खेम घरमें मिलेगो डोकरी बोले बेटाओ मैं तुमकू खीर खांडसो भोजन कराउंगी तुम कहू चले मत जैयो वे बैठ गये डोकरी गई जायके देखे तौ बेटा आय गयो सोही भाग आई पंडितनको बुलाय ले गई घरमें बेठाके खीर रांधन लगी सोही जलदीमें दूध तो औटायवेको धरो नहीं छाछकू चूलेपै धरके आच बराय चावल गेर खीर रांधके जो जिमायवे बैठावे सोही जो खीर खाय तौ खट्टी, डोकरी बोली बेटाओ मैं तो भूल गई जलदीमें छाछकी खीर रांधी खेर वहांसो चले अब एक चेला बोलो भया गुरुनने मोसो कपट कियो चलो दोउ जने गुरुके पास आये गुरुनको दंडवत् करी और वो चेला बोलो गुरुजी तुमने मोसौ कपट कियो तब गुरुजीने कही कि कहा भयो तब विनने सब वृत्तांत कह्यो तब गुरुने कही कि भैया तेने कैसे कही तब चेला बोले कि महाराज ग्रंथमें लिखौ है कि ऐसे चील बोले तो खीर भोजन मिले दूसरो चेलो बोलौ कि महाराज इमलीके पेडपै बैठी बोली यासौ मैंने खट्टी बताई फिर गुरुनने कही कि भाई तेने वाको बेटा मरो कैसे बतायो महाराज घडा फूट गयो सो अपशकुन भयो यासौ मरो बतायो दूसरो बोलौ महाराज ! जलकौ धरतीको मिलाप भयो यासौ मैंने वाके बेटाकौ मिलाप कह्यौ तब गुरुजी बोले कि बेटाओ हमारो दोष यामें नहीं है तुमारी बुद्धिकोही दोष है सोही यहां सूतजी कहे है जैसी मेरी बुद्धि है तैसो कहोंगो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कुरुजांगलदेशमें कैसे गए और पुरवासीनको कैसे मालूम पडे, वे तो उन्मत्त गूंगे जडकी नांई हस्तिनापुरमें विचरते थे ॥ ६ ॥ राजऋषि राजा परीक्षित्का शुकमुनिसे कैसे संवाद हुआ, जहां यह भागवतकी संहिता भई ॥ ७ ॥ महाभागवत शुकाचार्य तो गौ दोही जाय इतनी देरतक गृहस्थियोंके घरमें रहकर उनके आश्रमको पवित्र करते हैं वह इतने समयतक कैसे ठहरे ॥ ८ ॥ हे सूत ! अभिमन्युके पुत्र परीक्षित्को भागवतोंमें उत्तम कहते हैं, सो वाको जन्मकर्म महा आश्चर्यको है; सोभी कहो ॥ ९ ॥ राज्यलक्ष्मीको अनादर कर पांडुओंके मान बढानेवारे चक्रवर्ती राजा परीक्षित् किस हेतुसे गंगातीरपर अन्न जल त्यागकर मृत्युपर्यंत बैठे सो कहो ॥ १० ॥ हे मित्र ! हे सूत ! शत्रुलोग अपनी रक्षाके निमित्त धन लायकर जिनके चरणको प्रणाम करते हैं; ऐसी लक्ष्मीको वीर तरुण राजा परीक्षित् प्राणसहित त्यागवेकी इच्छा करतो भयो ॥ ११ ॥ लोकके कल्याणके लिये सब जीवनके ऐश्वर्यके अर्थ सुन्दर यशस्वी हरिके परायण जन प्राण धारण करेहैं कुछ अपनी आत्माके अर्थ नहीं, जब ऐसा है तो बहुतोंको जीवदान देनेवारी देहको वैराग्य लेकर कैसे त्यागते भए ॥ १२ ॥ जो पूछी होय और जो कुछ न पूछी होय सोभी सब हमसे कहो, हम वेदको छोडकर शेष सब वाणीके विषयमें तुम्हें पारंगत मानते हैं यह बात है ॥ १३ ॥ सूतजी बोले कि । बहत्तर चतुर्युगियोंमें तीसरी वेर जब द्वापरयुग आयो, तब पराशरऋषिसों उपरिचर वसुके वीर्यसे उत्पन्न सत्यवतीमें योगीश्वर व्यासजी हरिकलासे जन्म लेते भए ॥ १४ ॥ सो व्यासजी कोई समय सरस्वतीमें स्नान कर पवित्र होकर सूर्यउदयके समयमें एकांत स्थान बदरिकाश्रममें बैठे हैं ॥ १५ ॥ भूत भविष्यतके जानवेवारे ऋषि व्यास अप्रकट वेग कालकरके पृथ्वीपर युगयुगमें होनेवारे पृथ्वीपर वर्ण आश्रम धर्मका संकर देखकर ॥ १६ ॥ शरीरधारियोंके भाव और उनकी शक्ति कालकरके घटगई; श्रद्धा नहीं, सतोगुण नहीं, बुद्धि नहीं, आयु नहीं ॥ १७ ॥ ऐसे दुर्भागी जीवनकों देख मुनीश्वर दिव्यज्ञानचक्षुसों सब वर्णोंको आश्रमोंके हित करनेके निमित्त ध्यान करते भए ॥ १८ ॥ ब्रह्मा होता अध्वर्यु आग्नीध्र इन चारों करिके अनुष्ठेय प्रजाओंको शुद्धिकारक वैदिक कर्मको जानकर, यज्ञोंके अविच्छेदके लिये एक वेदको चार भाग करते भये ॥ १९ ॥ ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्वणवेद ये चार पृथक् करे, इतिहास पुराणोंको पंचमवेद कहा है ॥ २० ॥ तहां पैलमुनिने ऋग्वेद पढा जैमिनी पण्डितने सामवेद वैशंपायनजी यजुर्वेदके पारंगत भए ॥ २१ ॥ अंगिरागोत्री सुमंतु मुनिने अथर्ववेद पढा उस वेदके मारण उच्चाटन आदि कर्म करनेसे उन्हें दारुण कहते भए, और इतिहास पुराणोंके जाननेवारे हमारे पिता रोमहर्षणजी भए ॥ २२ ॥ वे ऋषि अपने अपने वेदको अनेक प्रकारसे विभाग करते भए, शिष्य उनके शिष्य तिनके चेलाओं करके वेदकी शाखा भई ॥ २३ ॥ पहिले अतिविशाल बुद्धिवारे वेदको अर्थ जानतेथे, अब वेही वेद दुर्बुद्धिजन पढके उलटे पुलटे अर्थ करवेलगे, तब व्यासजी दयालु उनके कल्याणके निमित्त वेदके विभाग करते भये ॥ २४ ॥ स्त्री शूद्र और सबसे अधमकों वेदत्रय सुननेका अधिकार नहीं है, तो अच्छे कर्ममें मूढोंकों कल्याण किस प्रकार होयगो ॥ २५ ॥ ये विचार भारतका आख्यान कृपा करके करो, वेदका अर्थ लेकर व्यासमुनि भारतमें कहते भए ॥ २६ ॥ हे शौनकआदि मुनियो ! सब जीवनके हितके लिये ऐसे जब प्रवर्त भए, अनेक प्रकारके

१ याको ये अभिप्राय है कि वैवस्वत मन्वंतरमें तीसरे युगपर्ययमें जो व्यास होतो भयो वोही व्यास अब अठाईसवें द्वापरमें जन्म लेते भयो ये तो वैष्णवतोषिणीमें लिखो है और क्रमसंदर्भमेंहू येही लिखो है कि वैवस्वतमन्वतरको तीसरी चौकडीके द्वापरमें जो सारस्वत अंतरतमा नामको व्यास होतो भयो वोही अब अठाईसवीं चौकडीके द्वापरमें आयके जन्म लेते भयो इति क्रमसंदर्भः ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उपकारके कर्मसे जब इनको हृदय प्रसन्न न हुआ तब ॥ २७ ॥ यह महात्मा सरस्वतीतटपर एकांतमें बैठे अनेक तर्क करते करते उदासीन चित्त होके ये बोले ॥ २८ ॥ मैंने व्रत धरके वेद गुरु अग्नि इन सबकी निष्कपट भावसे सेवा की और उनकी आज्ञा मानी ॥ २९ ॥ भारतके बहानेसे वेदको अर्थ सब कह्यो जा भारतमें स्त्री शूद्रादिकोंकोभी धर्म अर्थ काम जानपडे ॥ ३० ॥ तौहू मेरा देहाभिमानी आत्मा वेद पढने और श्रवण करनेसै अति उत्कृष्ट ब्रह्म तेजस्वी पुरुषोंमें उत्तम है तौभी बडे खेदकी बात है कि मेरो जीव समर्थ मन करकै प्रसन्न नहीं है ॥ ३१ ॥ अथवा मैंने भागवत धर्म बहुधा करकै नहीं कहे हैं, वे धर्म परमहंसको प्रिय हैं, वे भागवत परमहंस हरिको प्यारे हैं ॥ ३२ ॥ ऐसे अपनेको न्यून मान, खेदित मन बैठे हुए व्यासजीके पहिले कहे आश्रमपर नारदजी आए ॥ ३३ ॥ देवताओंसे पूजित अज्ञाननाशक नारदमुनिको आए जानिके व्यासजी बडी शीघ्रतासे उठे, और विधिवत् पूजन करते भए ॥ ३४ ॥

तमभिज्ञाय सहसा प्रत्युत्थायागतं मुनिः ॥
पूजयामास विधिवन्नारदं सुरपूजितम् ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नारदव्याससंगमो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

सूत उवाच–अथ तं सुखमासीन उपासीनं बृहच्छ्रवाः ॥
देवर्षिः प्राह विप्रर्षिं वीणापाणिः स्मयन्निव ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि, याके उपरांत सुखसे बैठे व्यासजीसे बडे यशस्वी वीणा लिये मुसुकाते देवर्षि नारदजी बोले ॥ १ ॥ श्रीनारदजी बोले कि हे पराशरपुत्र! हे महाभाग! आपके शरीरके शरीरका अभिमानी आत्मा प्रसन्न है, और मनका अभिमानी मनकरके प्रसन्न है कि नहीं ॥ २ ॥ जो जानवे योग्य है सोभी जान्यो है कारण कि अद्भुत और सब अर्थ भरो महाभारत आप बनाय चुके हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभो! आप सनातन ब्रह्मको जानकर उसै प्राप्त भये हो तौभी जाको प्रयोजन न सिद्ध होय वह जैसे सोचै तैसे तुम सोच करो हो ॥ ४ ॥ व्यासजी बोले कि, तुमने कहो सो ये सब ऐसेही है तथापि मेरो मन प्रसन्न नहीं ताको कारण अप्रगट है तौभी बडे ज्ञानवारे ब्रह्माजीके पुत्र तुमें पूछो हौं ॥ ५ ॥ जो सबसे छिपी बात है सो आप जानो हो क्यों कि पुराणपुरुषकी तुमने उपासना करी है जो गुणोंमें असंग कार्यकारणके नियंता मनसेई सब विश्वको रचै रक्षा करै भक्षण करै हैं ॥ ६ ॥ सूर्यकी नाईं त्रिलोकीमें तुम विचरो हो वायुकी नाईं सबके अंतर्घटकी जानो हो, बुद्धिकी वृत्ति जानो हो परब्रह्ममें और वेदमें धर्मसे व्रतसे परायण मुझमें जो कुछ न्यूनता है सो विचारो ॥ ७ ॥ श्रीनारदजी बोले कि, भगवान्को निर्मल यश आपने कह्यो सही पन वाय नहीं कह्यो समझो क्योंकि जासो मन प्रसन्न नहीं है ये वा ज्ञानकों मैं अतिन्यून मानूंहूं ॥ ८ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ! जैसे प्रधानता करके धर्म अर्थादि आपने कहे हैं, तैसी वासुदेवभगवान्की महिमा प्राधान्यसे नहीं वर्णन करी ॥ ९ ॥ जगत्को पवित्र करवेवारो हरिके यशसै रहित चित्रविचित्र पदकी कविता काकतुल्य कामियोंको

१ या श्लोकमें जो इव शब्द कह्यो है सो यह कह्यो है कि देखो भगवान्की मायाको जोर कि जो ऐसे ऐसे पंडितनकोहू यह व्यामोह होय है यासो हम तैसे बोले ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अच्छी लगे, ऐसी कविताईकों, सतोगुणप्रधान कर मनमें वर्तमान ब्रह्ममें निवास करवेवारे सार असारके ज्ञानी ब्रह्मवादी काकतीर्थ कहैं हैं, अत्यंत वा कविताईको न वांचैं हैं जैसे प्रसिद्ध है कि मानससरोवरवासी हंस मानससरोवरमें विचरते हैं, सुंदर कमलवनको काककी क्रीडाके स्थान जूंठनवारे स्थानमें कभी नहीं जाते ॥ १० ॥ चाहैं उसमें श्लोक श्लोकमें अशुद्धि हो परन्तु जनसमूहोंके पाप नाश करनेहारे भगवत्के यशयुक्त कविताई साधु ब्राह्मण सुने हैं गावै हैं सुनावैं हैं ॥ ११ ॥ कर्मबंधनिवर्तक मायोपाधिरहितहूं जो ज्ञान है यदि वह अच्युतमें भावरहित है तौ वह ज्ञान अतिशय करकें सुशोभित नहीं होय है फिर कहौ जो कर्म ईश्वरमें अर्पण नहीं कियो याहीसों सब समय नाम फल कालपर्यंत जो अकल्याणरूप है ऐसो जो निष्कारण कर्म है वो शोभित न होय तौ कहौ कहा कहनो है ॥१२॥ यासे हे महाभाग ! आप यथार्थद्रष्टा हो, शुद्धयशस्वी सत्यवादी सब व्रत करनेवारे हो; आप सब चित्त एकाग्र करके भगवान्की लीला वर्णन करो, जिसके श्रवण करनेसै मनुष्योंके सब बंधन छूटजांय ॥ १३ ॥ भगवतयशके विना जो और कुछ कहौ चाहे और भगवान्के किये रूपनामनसों पृथक् दर्शी जो कविकी बुद्धि है वो दुःस्थित होके कहींभी एक ठिकाने नहीं रहती, जैसे पवनसे कंपित नाव जलमें एक ठिकाने नहीं रहती ॥ १४ ॥ स्वभावसोही कर्मनमें रंगे मनुष्यनको धर्म समयके जो तुमने जुगुप्सित (निंद्य) शिक्षा कीनी सो तुमारी बडी भूल भई अब जो इतर मनुष्य तुमारे कहेसो धर्म समझके विन कर्मनमें आरूढ भयो वो अब तुमारे किये निषेधको नहीं मानेगो ॥ १५ ॥ जो कोई अतिनिपुण है, वही स्वभावसे अनंतपार प्रभुके सुखरूपको जाननेके योग्य है, इस कारण गुणोंकरके प्रवर्तमान जीवसे भिन्न समर्थ ईश्वरकी लीला आप वर्णन करो अथवा अनात्माके गुणन करके लीलाके लिये प्रवर्तमान जे प्रभु हे विनकी लीलानको वर्णन करो ॥ १६ ॥ स्वधर्म त्यागके हरिके चरणारविंदको भजन करत जो अधम बीचमें मरै या पतित हो जाय तौ क्या वाको स्वधर्मत्यागको दोष होयहै, नहीं जो ऐसा होय तौ ईश्वरके अभक्तोंने अपने धर्मसो हो कौन किस अर्थकी प्राप्ति करी अर्थात् कुछभी नहीं की और स्वधर्मसे भजनेवारे या जीवको जहां कहीं कुयोनिमें जन्म होय तोभी भक्तिसे कल्याणही होय है, सब अर्थकी प्राप्ति होवैहै ॥ १७ ॥ विवेकी पुरुषोंको उसी सुखके लिये यत्न करनो चाहिये कि जो सुख ऊपर ब्रह्मलोकतक हो आवो, नीचे स्थावरपर्यंत हो आवो, तौभी भटकते प्राणियोंको नहीं मिलताहै परंतु विषयसुख तौ प्राचीनकर्मसे सब ठौर नरकादिकमें विना यत्न किये दुःखकेसी नाईं प्राप्त होयहै, ऐसेई सुखभी प्राचीन कर्मसे गंभीर वेगवारे कालकरकै विना चाहैई आयजावै है ॥ १८ ॥ हे व्यासजी ! मुकुंदसेवी जन कदाचित्भी कर्मासक्त पुरुषकी समान संसारमें नहीं आवै है क्यों कि भगवच्चरणारविंदको स्पर्श वारंवार स्मरण करते त्यागवेकी इच्छा न करै है, कारण वानें रस मानकर ग्रहण करो है अथवा ये मनुष्यनको स्वभावही है कि जामें याको एकवेर आनंद मालूम परजाय है फिर वो वाकों कभू नहीं त्यागे है ॥ १९ ॥ ये विश्व भगवानमय है और ईश्वर उससै पृथक् है जासै जगत्की उत्पत्ति पालन नाश होय है, सो आप सब जानोहौ तौहू आपको एक देशमात्र दिखायो है ॥ २० ॥ हे अमोघदृक् ! तुम परपुरुष परमात्माकी कला हो, सो मनसे परमात्माको जानो, जो नहीं जन्मते थे वे ईश्वर जगत्के कल्याणके लिये जन्में, ऐसे महाप्रतापीकी लीला वर्णन करो ॥ २१ ॥ पुरुषके तपका, श्रवणका, सुंदर कूआ बावडी इत्यादि बनानेका, सुंदर उक्तिका, बुद्धिका, दानका यही प्रयोजन कवियोंने कह्योहै कि उत्तम यशवारे हरिके गुण कहनो ॥ २२ ॥ हे व्यास ! हम पहिले जन्ममें कोई वेदवादी ब्राह्मणकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दासीमें जन्मे थे, बालक थे, वर्षाकालमें आयके वास करनेहारे योगियोंकी सेवामें मेरी मांनें मोको राख्यो ॥ २३ ॥ मैं संपूर्ण चंचलता और खेल कूद त्याग जितेन्द्रिय हो उन मुनियोंके अनुकूल वर्तन कर सेवा करनेलगो और कार्यानुसार थोडाही बोलतो यह देख समदर्शी मुनि मोपै प्रसन्नहुए ॥ २४ ॥ उन ब्राह्मणोंके कहिवेसे पात्रोंमें लगी जूंठनके पावनेसे मेरे सब पाप दूर होगये, ऐसे विशुद्धचित्तसे जब मैं रहिवेलगो वाही धर्ममें मेरी रुचि होयगई ॥२५॥ हे मित्र ! वे दिनरात मनोहर कृष्णकथा गावे है उसै दिनरात सुननेसै और उनकी कृपासै प्रिय यशवारे हरिमें मेरी रुचि होतीभई ॥ २६ ॥ हे व्यास! भगवत्में जब मेरी रुचि भई, तो हरिमें अखंडित बुद्धि लगी, जिसके कारण इस स्थूल सूक्ष्म शरीरको प्रपंचसे परे परब्रह्मरूप जिन स्वरूपमें अविद्यासे कल्पित देखने लगो ॥ २७ ॥ या प्रकार शरद्वर्षा ऋतुमें दिन रात निर्मल यश हरिको सुनो जो महात्मा मुनियोंने गायो, वाते आत्माके रज तम नाश करवेवारी भक्ति प्रवृत्त भई ॥ २८ ॥ अनुरागी नम्र पापरहित श्रद्धालु जितेंद्री सेवक मोसरीखे बालकको ॥ २९ ॥ साक्षाद्भगवान्को कह्यो गुह्यतम ज्ञान कृपाकरके वे दीनवत्सल मुनि जाती विरिया मोकों उपदेश करतेभए ॥ ३० ॥ वा ज्ञानसे सर्वव्यापक भगवान् वासुदेवकी मायाको प्रभाव जानतोभयो जिस ज्ञानसै ब्रह्मपदकी प्राप्ति होती है ॥३१॥ हे ब्रह्मन् ! अध्यात्मादि तापत्रयकी औषधि ये है जो बृहत्त्वादिगुणविशिष्ट चैतन्य पूर्णरूप भगवान् ब्रह्मईश्वरमें सब कर्म समर्पण करनो ॥ ३२ ॥ हे सुव्रत ! जो रोग जासे जीवनको होवै, वोही पदार्थसे वो रोग नहीं जाय है चाहै जितनी चिकित्सा करो यदि कोई उत्तम वैद्य काही अनुपान युक्त वाही चीजको देय तो जो चीज जा रोगकी पैदा करनवारी हैवोही वा रोगकी दूर करनवारी होय है ॥ ३३ ॥ ऐसेही जो मनुष्य सब कर्मकांड अपने निमित्त करै तो सदा संसारमें जन्मे मरै है, अपना विनाश होयहै वेही सब परमेश्वरमें समर्पण करै तो अपनी मोक्ष होवै है । प्रथम तो महात्मानकी सेवा, वासे उनकी कृपा, कृपासे धर्ममें श्रद्धा होय तब भगवत्कथा श्रवण वा कथन, ईश्वरमें प्रीति, वा प्रीतिकरके दोनों देहको विवेक होय, वासे आत्मज्ञान होय उससे दृढभक्ति वा भक्तिसे भगवत्तत्वज्ञान, वा तत्वज्ञानसे सर्वज्ञत्व सर्वात्मत्व अपहतपाप्मत्व इत्यादि भगवद्गुण प्रगट होजाय है यह क्रम है ॥ ३४ ॥ जो कर्ममें भगवत्की प्रसन्नता है ये जानके कर्म करैहै वा कर्मके आधीन भक्तियोगसहित ज्ञान होवे है ॥ ३५ ॥ भगवत्की आज्ञा है कि सब शुभ कर्म करो, ये जान जो कर्म करै है उनकी मोक्ष होय है; कृष्णके गुणनामस्मरण करै हैं मुखसे उच्चारण करे हैं ॥ ३६ ॥ भगवान्के अर्थ नमस्कार होय, वासुदेवको ध्यान करै प्रद्युम्न संकर्षण अनिरुद्धको नमस्कार होय ॥ ३७ ॥ जो पुरुष इस प्रकार मूर्तिके नामसे अलौकिक मूर्तिमान् मंत्रमूर्ति यज्ञपुरुषका पूजन करते हैं वेही तत्ववेत्ता ज्ञानी कहाते हैं ॥ ३८ ॥ हे ब्रह्मन् ! ये अपनो ज्ञान जो मैंने अनुष्ठान करो, यासे ईश्वर केशव मोको ज्ञान ऐश्वर्य और अपनेमें भावको देते भए ॥ ३९ ॥ हे बहुश्रुत ! विभुकी लीला तुमभी कहो, जासे सब जानवेकी इच्छा पूरी होय, और दुःखसे पीडित जीवनको सब क्लेश याहीसे शांत होय है, और प्रकारसे नहीं ॥ ४० ॥

त्वमप्यदभ्रश्रुतविश्रुतं विभोः समाप्यते येन विदां बुभुत्सितम् ॥
आख्याहि दुःखैर्मुहुरर्दितात्मनां संक्लेशनिर्वाणमुशन्ति नान्यथा ॥ ४० ॥

इति श्रीभागवतभाषाटीकायां व्यासनारदसंवादवर्णनं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ६.

सूत उवाच-एवं निशम्य भगवान्देवर्षेर्जन्म कर्म च ॥
भूयः पप्रच्छ तं ब्रह्मन्व्यासः सत्यवतीसुतः ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि । सत्यवतीसुत भगवान् व्यासजी देवर्षिनारदके जन्म कर्म सुनके फेर नारदसो पूछते भए ॥ १ ॥ व्यासजी बोले कि जब वे ज्ञानदाता भिक्षु चले गए तो आप प्रथम अवस्थामें कहा करते भए ॥ २ ॥ हे स्वायंभुव ! पिछली अवस्था कैसे व्यतीत करी, जब काल प्राप्त भयो तो ये शरीर कैसे त्यागते भए ॥ ३ ॥ हे सुरसत्तम ! प्रथमकल्पकी ये याद कैसे रही, सबके परलोकदाता या कालसों तुम्हारी स्मृतिभी खंडित न भई सो कहो ॥ ४ ॥ श्रीनारदजी बोले कि, ज्ञानदाता भिक्षु जब चले गए तब आयुके आदिमें हम ये करतेभए ॥ ५ ॥ मेरी माता स्त्रीभावसे मूढ दासी, कोई गति नहीं होनेसे अपने इकलौते मो पुत्रमें बहुत स्नेह करती भई ॥ ६ ॥ मेरी मा सदा मेरी क्षेमकी इच्छा करती परन्तु पराधीन असमर्थ होनेसे कुछ न करसकी कारण कि जिस प्रकार काठकी पुत्तली नटके आधीन रहे है ऐसे यह लोक ईश्वरके वशमें है ॥७॥ माताके स्नेहसे ब्रह्मकुलमें वास करतो भयो मैं यह विचार करनेलगो, कि यह स्नेहपाश कब छुटैगो, वा समय मोको दिशा समयका कुछ ज्ञान नहीं था, कारण कि पांच वर्षका मैं बालक था ॥८॥ एक समय रातको गाय दुहायवेको रस्तामें जाती ही सो मार्गमें वो विचारी माता मेरी कालप्रेरित सर्पने डसलीनी ॥ ९ ॥ मैंने वासमय भक्तोंपर ईश्वर कल्याणही करे है ये मानों अपनें ऊपर ईश्वरकी कृपा जान मैं उत्तर दिशाको चलो ॥ १० ॥ समृद्ध देश, राजधानी, ग्राम, ब्रज, रत्नादि उत्पत्तिस्थान, किसाननके गांव, गिरितटके गांव, सुपारी, पुष्पकी वाटिका जहां स्वतःसिद्ध वृक्षसमूह होय वो वन, रोपे भये वृक्षसमूहोंके उपवन देखतो २ ॥ ११ ॥ चित्रधातुन करके विचित्र पर्वत, हाथिनकी तोडी शाखा जिनके ऐसे वृक्ष, निर्मल जलके तलाव देखतो २ देवताओंसे सेवित बावडी देखतो २ चलो ॥ १२ ॥ चित्र विचित्र शब्दवारे पक्षिनके गुंजार भ्रमनसो शोभित नरसल बांस सैंठेके समूह कुश, कीचक बांसके छिद्रमें पवनके वंशीकी समान स्वरवारे घने वनको उल्लंघन कर ॥ १३ ॥ महाघोर भयंकररूप सर्प उल्लू गीदडोंकी क्रीडासे युक्त वन देखतो भयो मैं एकाएक विचरवे लगो ॥ १४ ॥ जब मेरी इंद्रिय शरीर थकगयो, प्यासो भूखो भयो तब नदीमें न्हायो, जल पीयो आचमन करो तब सब श्रम दूर भयो ॥ १५ ॥ जहां कोई मनुष्य नहीं ऐसे वनमें पीपरके नीचे बैठो, बुद्धिसे हृदयमें स्थित परमात्माको चिंतवन करतो भयो जैसो सुनो तैसो ध्यान करतो भयो ॥ १६ ॥ भावसो मन जीतके चरणकमल ध्यान करवेलगो बडे प्रीतिसो अश्रुपात नेत्रसे गिरते भए, तब धीरे धीरे हृदयमें मेरे हरि दीखते भए ॥ १७ ॥ प्रेमके अति भारसो शरीरमें पुलकावली हुई, तब महासुखी भयो, आनंदके महाप्रवाहमें लीन होगयो, देहकी सुधि नहीं रही परमात्माकीहू सुधि नहीं रही ॥ १८ ॥ मनकों सुखदायक शोकनाशक भगवान्को रूप एकसंग हृदयमें दीखो ताको मैं देखतो भयो तब विवशतासे कछु खेदितकीसी नाईं मैं उठ खडो भयो पुनः वो रूप अंतर्धान होगयो ॥ १९ ॥ वा रूपको फेर देखवेको हृदयमें मन लगायो प्रथम देखोऊ हो तोहू आतुरकी नाईं तृप्त न भयो परंतु वो रूप फिर न दीखो ॥ २० ॥ वा एकांत वनमें ऐसे यत्न करते भएको परमेश्वर गम्भीर मनोहर आकाशवाणीसो शोक दूर करते भये बोले ॥ २१ ॥ बडे खेदकी बात

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है कि या जन्ममें तुम मोको देखनेको योग्य न हो कामादि मल जिनके दग्ध नहीं भए उन कुयोगियोंको मेरो दर्शन नहीं होयहै ॥ २२ ॥ हे पापरहित ! एकवार जो मैंने अपनो स्वरूप दिखायो है, सो मेरेमें अनुराग बढै याके लिये दिखायो है, मेरी चाहवारो साधक सब काम विषयनको त्याग करैं हैं ॥ २३ ॥ थोरीसी सज्जननकी सेवासे मोमें दृढ मति भई, अब या निंद्य देहको त्यागकर मेरे पार्षद होओगे ॥ २४ ॥ मेरेमें लगी मति अब कबहू सृष्टिके आदि अंतमें मेरी कृपासो नष्ट न होवेगी, मेरी कृपासो तुमें स्मृति रहैगी ॥ २५ ॥ या श्लोकमें विलक्षण बात है कि जाकी देह नहीं सबसे बडी जाकी श्वास, आकाशके भीतर जाकी मूर्ति, ऐसे अलिंगमहत्तत्वरूप ईश्वर मोकों कहिकर चुप होगए, मैंभी उनकी कृपासे सब बडोंके बडे परमेश्वरके अर्थ शिरसो प्रणाम करतोभयो ॥ २६ ॥ लाज त्यागकर भगवतके नाम लेतो भयो, जो मंगलीक छिपेहुये चरित्र विनै मैं सुमरूं पृथ्वीपर विचरूं मन प्रसन्न चाह कुछ नहीं, मदरहित ईर्षा त्याग कालकी वाट देखतो भयो ॥ २७ ॥ हे ब्रह्मन् ! या प्रकार श्रीकृष्ण भगवान्में जाकी बुद्धि और निर्मल जाको अंतःकरण और आसक्तिरहित जो में हो ता मोको समयपर काल प्राप्त भयो जैसे सुदामा पर्वतपर रहनवारी अकस्मात् बिजली प्रगट होय है ॥२८॥ प्रारब्धकर्म समाप्त भए तब पंचभूतको ये शरीर गिरपडो, शुद्धभगवत्पार्षदको शरीर जो शुद्धसत्वमय है सो भगवान् मोको देते भये ॥ २९ ॥ कल्पके अंतमें या त्रिलोकीकों संहार कर एक समुद्रमें सोए समर्थ श्रीमन्नारायण जब शयनकी इच्छा करते भए, तब विनके श्वासके संग मैंहू भीतर प्रविष्ट होयगयो ॥ ३० ॥ सहस्रयुगके अंतमें उठकर जब ब्रह्माअंतर्यामी ईश्वरने जगत्के रचवेकी इच्छा करी तब मरीचि आदि ऋषि भए प्राणसो में भयो ॥ ३१ ॥ सब ठौर मेरी जायवेकी गति है बाहर भीतर त्रिलोकीमें अखंडित ब्रह्मचर्य लेकर महाविष्णुके अनुग्रहसे पर्यटन करूंहूं ॥ ३२ ॥ देव जो श्रीश्वर तिनके दिये सो स रि ग म प ध नि ये सप्त स्वर ब्रह्मरूप इनकी मूर्छना या वीणामें बजायके हरिकथा गाय विचरूंहूं ॥ ३३ ॥ भगवान्के चरित्र गाऊंहूं ध्यान करतेही तीर्थपाद प्यारे यशवारे श्रीनारायणको दर्शन हृदयमें तत्काल होयहै जैसे कोई बुलायेसे आय जाय है ऐसेही भगवान् मोको दर्शन देयहै ॥ ३४ ॥ आतुरचित्तवारोंको विषय स्पर्शकी इच्छा करके वारंवार संसारसमुद्रके तरवेकी नाव; हरिचरित्रवर्णन करनो ही हैं ॥ ३५ ॥ कामलोभसे ग्रसित जीवको मन योगके मार्ग यम नियमादिकसे ऐसो शांत नहीं होयहै जैसो मुकुंदकी सेवामात्रसो मन शांत होवै है ॥ ३६ ॥ हे पापरहित! जो तुमने पूछो हो सो हमने सब जन्मकर्मको रहस्य कह्यो आपके मनकी प्रसन्नता होय सो कही ॥ ३७ ॥ सूतजी बोले कि उपरिचरवसुके वीर्यसो उत्पन्न भई वासवीके पुत्र व्याससो यदृच्छासे विचरनवारे भगवान्नारद मुनि ऐसे कहिकै आज्ञा ले वीणा बजाते हरिगुण गाते स्वप्रयोजनसंकल्पशून्य होके जातेभए ॥ ३८ ॥ अहो ये देवर्षि नारद धन्य हैं, जो भगवतकी कीर्ति गावे हैं, हृष्ट होवे हैं, वीणा बजाके सब आतुर जगत्को आनंदित करे हैं ॥ ३९ ॥

अहो देवर्षिर्धन्योयं यत्कीर्तिं शार्ङ्गधन्वनः ॥
गायन्माद्यन्निदं तन्त्र्या रमयत्यातुरं जगत् ॥ ३९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे व्यासनारदसंवादो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ७.

शौनक उवाच–निर्गते नारदे सूत भगवान्बादरायणः ॥
श्रुतवांस्तदभिप्रेतमितः किमकरोद्विभुः ॥ १ ॥

शौनकमुनि बोले कि, हे सूत ! जब नारदजी चले गए तब तिनको सब अभिप्राय सुनके समर्थ विभु व्यासजी कहा करते भये सो कहिये ॥ १ ॥ ब्रह्माकी नदी सरस्वतीके तीर ऋषीनके यज्ञको बढा-मनवारो पश्चिमकी ओर शम्याप्रास नामक आश्रम हो ॥ २ ॥ बेरके समूहनसो शोभित अपने वा आश्रममें व्यासजी बैठे आचमन कर मनसो ध्यान करते भए ॥ ३ ॥ भक्तियोगसों सुंदर निर्मल मन निश्चल कर पूर्ण पुरुषको देखते भए, और तिनके आधीन मायाको देखते भए ॥ ४ ॥ जो मायासो मोहित जीव त्रिगुणसो परे जोहूं आत्मा है ताको त्रिगुणमय अर्थात् देहरूप माने है, और वा देहमें होनेवाले वा मायाके कीने सुखदुःख आदि अनर्थनकूं आत्मामें माने हैं ॥ ५ ॥ अनर्थनाशक साक्षात् भक्तियोग भगवान्में लोग जब न करन लगे तब विद्वान् श्रीव्यासजी श्रीमद्भागवतसंहिता करते भए ॥ ६ ॥ जा श्रीमद्भागवतसंहिताके प्रेमसो सुननेसो श्रीकृष्णपरमपुरुषमें शोक मोह जराकी नाश करनेवारी भक्ति पुरुषको उत्पन्न होयहै ॥ ७ ॥ सो व्यासजी मुनि श्रीभागवतसंहिता करके शोधके अपने शुकदेवपुत्रको पढावते भये जे शुकदेवजी निवृत्तिमार्गमें सदा लगे रहतेहैं ॥ ८ ॥ शौनकजी बोले कि निवृत्तिमार्गमें लगे, सबसो जिनको त्याग आत्मामें रमण करनेवारे शुकदेवजी कौनसे कारणसो ऐसी बडी संहिताको अभ्यास करतेभए ॥ ९ ॥ सूतजी बोले कि आत्माराम, क्रोध अहंकाररूप गांठरहित मुनिजन फल कामनारहित भक्ति हरिमें करेहैं, क्योंकि हरिके ऐसेही गुण हैं ॥ १० ॥ श्रीहरिके गुणनमें मति लगायवेवारे भगवान् शुकाचार्य महाव्याख्यान पढते भए, श्रीशुक-देवजीको विष्णुके जन बडे प्रिय हैं ॥ ११ ॥ याके उपरांत परीक्षितराजऋषिके जन्म कर्म मुक्ति मृत्यु और पांडुके पुत्रनकों स्वर्ग गमन श्रीकृष्ण कथानको हम कहेंगे ॥ १२ ॥ तहां परीक्षितको जन्म कहि-वेको प्रथम गर्भमें जब परीक्षित है, तब अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रसों श्रीकृष्णजीने रक्षा करी ये कहिवेको कथाको प्रारंभ करेहै, जा समय युद्धमें कौरव पांडव धृष्टद्युम्नप्रभृति सब वीरलोक वीरगतिको गए, और भीमसेनकी फेंकी गदाके लगवेसो धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनकी टांग टूटके धरतीमें गिर परी ॥ १३ ॥ वा समय अश्वत्थामा दुर्योधनको प्रिय करवेको द्रौपदीके सोयेभये पुत्रनके शिर काटतो भयो ये बहुत अप्रिय बातहीं या निंदित कर्मकी शास्त्रमें निंदा है ॥ १४ ॥ आंखमेंसो आंसू बहाती महादुःखी पुत्रनकी माता द्रौपदी बालकनको मरनो यह घोरकर्म सुनकर रोयरही ही वा समय अर्जुन वाको रोवनो बन्द कर

---

१ यहां ये समझनो कि जब वेद व्यासजीनें श्रीमद्भागवत बनायके तयार करी तब विचारि कि याको अधिकारी तो पुत्र मेरो शुकदेवही हो सो तो पहलेही संन्यास लेके चलो गयो अब कहा करो तब आपनै अपने दो शिष्य शुकदेवजीके पास भेजे वे दोउ शिष्य वनमें जहां समाधिस्थ शुकदेवजी विराजमान हे वहां गये विनने व्यासजीके कहेके अनुसार जागके पहले द. स्कं. अ. २१ को ' बर्हापीडं नटवरवपु ' ये श्लोक गायो सो शुकदेवने सुनो सुनके समाधि खुलगई और विचारि कि अहो ये रूपमाधुर्य तो आजतक कहीं देखो सुनो नहीं सोही धूनीमें पानी देनो विचारो फिर विचार आयो कि रे शुकदेव जाको ये रूप माधुर्य है वो हम सरीके फकीरनके माउ काहेको देखोगो सोही धूनी समारन लगे सोई दूसरे शिष्यने तृतीयस्कंध अध्याय २ को ये श्लोक ' अहो बकीयं स्तनकालकूटं ' सुनायो यामें प्रभुकी दीनदयालुतापन सुनके विचार आयो कि जाको यह अलौकिकरूप और ये दयालुता है आश्चर्य है शिष्यसो पूंछो कि ये श्लोक कहासो लाये तब विनने वृत्तांत कह्यो तब ब्रह्मानंदको सूखो समझके वेदव्यासजीके पास आयके श्रीभागवत पढो यह समझनो ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सांत्वना करतो ये समझावतो भयो ॥ १५ ॥ हे द्रौपदी ! अग्नि लगायवेवारो, जहर देवेवारो, शस्त्र बांधवेवारो, धनको चोर, खेत लुगाई चुरायवेवारो, ये छै आततायी कहावै हैं सो ब्राह्मणनमें अधम आततायी अश्वत्थामाको सीस गांडीवधनुषसों निकरे बाणनसो काट लाऊं वापै ठाडी होकै तू मृतपुत्रा स्नान करैगी तब मैं अपने जीवेको सफल मानोंगो या प्रकार मैं तुमारो शोच दूर करूंगो ॥ १६ ॥ ऐसे द्रौपदीकों मनोहर विचित्र वाक्यनसो प्रसन्न कर श्रीकृष्ण जाके मित्र सारथि वस्त्तर पहिरे, बडो जाको धनुष हनुमान्‌जीकी ध्वजावारे रथपर चढ अर्जुन गुरुपुत्र अश्वत्थामाके पीछे दौडो ॥ १७ ॥ बालघाती ह्वदै कांपै प्राण बचायवेकी इच्छा करे ऐसो अश्वत्थामा अर्जुनकों दूरसों अपने पीछे आवतो देख रथपर बैठकै जहांलग भागोगयो तहांलग पृथ्वीपर भागो जैसे रुद्रके भयसे सूर्य भागेहै । वामनपुराणमें ऐसेहैं कि विद्युन्माली कोई शिवभक्त राक्षस हो ताको शिवजीने सोनेको विमान दीनों, सो वो सूर्यके पीछे २ डोलै, विमानके प्रकाशसो रात दूर कीनीं, तब सूर्यनें देखो मेरो तेज तो याने नष्ट करो, ये जान वाको विमान पटकों; ये सुन शिवजी कोप कर मारवेको दौडै, सो सूर्य भागै, रुद्रकी क्रूरदृष्टिसे जरकर काशीमें गिरें, सो आजतक लोलार्क नामक तीर्थ काशीमें विख्यात है' ॥ १८ ॥ जब घोडे थकगए, अपने शरीरको रक्षक कोई न देखो जब समझी कि अब मेरे प्राण चले तब विप्रपुत्र अपनी रक्षाकों ब्रह्मास्त्र मानतोभयो ॥ १९ ॥ तब आचमन कर प्राणनको कष्ट जब आयो तब ब्रह्मास्त्र चलायो; परंतु वो अश्वत्थामा ब्रह्मास्त्रको फेंकके फिर संहार करवो नहीं जानतो हो ॥ २० ॥ सोई सब ओरसो प्रचंड तेज ब्रह्मास्त्रसों जब प्रगट भयो तब प्राणनपें संकट आयो जानके अर्जुन श्रीकृष्णजीसों बोलो ॥ २१ ॥ अर्जुन बोले हे कृष्ण ! हे महाभाग ! भक्तनके अभयकारक संसारसे जरे जीवनको सुखदाता तुम हो ॥ २२ ॥ तुम आद्य पुरुष साक्षात् केवल मायासो परेहो अपनी चिच्छक्तिसो मायाको तिरस्कार करके कैवल्य आत्मामें आप स्थित हो ॥ २३ ॥ मायामोहित चित्त जीवलोकको अपने प्रभाव करकै धर्मादिलक्षण कल्याण तुमही विधान करो हो ॥ २४ ॥ तैसे ये अवतार आपको भूमिके भार उतारवेकी इच्छासों हैं, और अपने जातिके और एकांतभक्तनके ध्यानके लिये हैं ॥ २५ ॥ हे देवदेव ! ये कहा है, कहांसे आयो है, सब ओरसो परम दारुण तेज आवैहै, सो हम नहीं जानैहैं ॥ २६ ॥ श्रीभगवान् बोले कि प्राणबाधा हैवेसो द्रोणाचार्यके पुत्रने ब्रह्मास्त्र दिखायोहै, सो ये चलायवो तो जाने है, फेर वाको अपने पास बुलावनो नहीं जाने है ॥ २७ ॥ या अस्त्रको दूर करवेवारो और कोई उपाय नहीं है, तुमहू अपनो ब्रह्मास्त्र चलायके अस्त्रके तेजसे या अस्त्रको नाश करो; क्योंकि तुम दोनों बात जानो हो ॥ २८ ॥ सूतजी बोले कि शत्रुनको नाशक अर्जुन भगवान्‌की बात सुनके जलसो आचमन कर श्रीकृष्णकी परिक्रमा करकै वा ब्राह्मणपै ब्रह्मास्त्र चलावतो भयो ॥ २९ ॥ तब दोनों ब्रह्मास्त्र परस्पर लडे, विनको तेज पृथिवी आकाशकों ढककर महाप्रलयमें जैसे संकर्षणके मुखकी अग्नि ऊपरसो सूर्यको तेज ये दोनों मिलके जैसे बढें ताकी नांई दोनों ब्रह्मास्त्रनको तेज बढो ॥ ३० ॥ विन दोनों ब्रह्मास्त्रनको तेज महाभारी त्रिलोकीको जरावतो देख जरी भई सब प्रजा महाप्रलय आई मानतीभई ॥ ३१ ॥ प्रजाको और लोकको नाश देख और वासुदेवकोहू मत देखके अर्जुनने दोननको शांत कर अपने पास बुलाय लीने ॥ ३२ ॥ अस्त्र शांत भयेपै बडे वेगसो वाकों पकडकै बडे कठोर, गौतमवंशकी गौतमी कृपीके सुत अश्वत्थामाको, क्रोधसो ताम्रके समान लाल

---

१ और कहीं ' यथा कः ' ऐसोहू पाठ पावे है वहां ये अर्थ है कि जैसे ब्रह्माजी महादेवजीके डरसो भागेहे ऐसेही अश्वत्थामा भागो येहू कथा पुराणांतरसो जाननो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नेत्रवारो अर्जुन बांध लेतोभयो जैसे यज्ञ करवेवारे पशुको रस्सीसे बांधेहै ॥ ३३ ॥ शोकरोषयुक्त अर्जुनकी धर्मनिष्ठा देखवेको श्रीकृष्णजी सेनानिवासस्थान कंपूमेंको बलसे रस्सीसो वैरिको बांधकर लिये जाते कुपित अर्जुनसो भगवान् कमलनयन बोले ॥ ३४ ॥ हे पार्थ ! याकी रक्षा करवेको आप योग्य नहीं, या ब्राह्मण अधमको मारो, जो ये निरपराधी सोए भए बालकनको रातमें मारतो भयो ॥ ३५ ॥ धर्मशास्त्रमें ऐसे है कि मद्यादिकसो मत्त १ और कोई तरहसो प्रमत्त २ ग्रहवातादिसो उन्मत्त ३ सोयो भयो जीव ४ बालक ५ स्त्री ६ जो कोईभी उद्यम न करसके वो ७ अपनी शरन आयो होय वो ८ इन आठ जीवनकों धर्मवेत्ता जो अपनो वैरी होय तोहू नहीं मारे हैं ॥ ३६ ॥ पराएके प्राण लेके जो निर्दयी खल अपनें प्राण पुष्ट करें है, वाको वध करनोही श्रेष्ठ है न करवेके दोषते पुरुष नरकमें जाय हैं अथवा जो पापीको दंड न मिलें तो वह पापी वा पापदोषसो नरकमें जाय है ॥ ३७ ॥ मेरे सुनते भये द्रौपदीके आगे आपने प्रतिज्ञा कीनीही, कि हे मानिनि ! जो तेरो पुत्र मारवेवारो है वाको शिर काटके लाऊंगो ॥ ३८ ॥ यासो हे अर्जुन ! आततायी अपने पुत्रनके मारनवारे या पापीको तुम मारो हे वीर ! दुर्योधनहू इन बालकनको देख दुःखित भयो, सो ये कुलमें महागयोवीतो धूरके समान है ॥ ३९ ॥ ऐसे धर्मकी परीक्षा करवेवारे कृष्णजी बहोत अर्जुनसे कहते भए यद्यपि अपने पुत्रको मारवेवारो है तथापि गुरुपुत्र है, ये जान अर्जुन मारवेकी इच्छा नहीं करतो भयो ॥ ४० ॥ गोविंद प्रिय सारथी अर्जुन अपने कंपूमें आयकें मरे पुत्रनकों सोच करती भई द्रौपदीको जाय देतोभयो ॥४१॥ वा बुरी तरहसो लाए भये पशु समान फांसीमें बंधे, निंदितकर्मसो नीचेको मुख किये अपराधी गुरुपुत्र अश्वत्थामाको देखके कृपा करके शोभनस्वभाववारी द्रौपदी नमस्कार करती भई ॥ ४२ ॥ वाके बांधवेको नहीं सहतीभई द्रौपदी बोली छोडो २ ये ब्राह्मण हमारो अत्यंत गुरु है ॥ ४३ ॥ जिनसो गोप्यमंत्रसहित धनुर्वेद सीखे हो ब्रह्मअस्त्रको चलायवो बुलायवो दोनोंबात तुमें याके पिताने सिखाई, जिन द्रोणाचार्यकी कृपासो सब अस्त्र शस्त्र यंत्र मंत्र तंत्र तुम सीखेहो ॥ ४४ ॥ सो ये भगवान्द्रोणाचार्य पुत्ररूप हैकें वर्तरहे है, विन द्रोणाचार्यकी आधी देह कृपी विनकी स्त्री अभी है सो या पुत्रके रहिवेसों वो सती नहीं भई, या एक बालकसो जीवे है, जैसे मैं मरे पुत्रनको सोच करूं हूं तैसे वो सोच मत करो ॥४५॥ ताते हे धर्मज्ञ! हे महाभाग ! आप गुरुकुलकों कष्ट देवे योग्य नहीं हो वारंवार पूज्य और वंदन करवे योग्य ब्राह्मण है ॥ ४६ ॥ पतिव्रता गौतमी याकी मा न रोवे जैसे पुत्रनके मारवेसो वारंवार आंसुनसो दुःखित हैके मैं रोऊं हूं ऐसें याकी माताकृपी मत रोओ ॥ ४७ ॥ ब्राह्मणकुल जापै कोप करै वो राजा होय तोहू वाको परिवार वंश वा ब्राह्मणके शोकके मारे झटपट भस्म है जाय है ॥ ४८ ॥ सूतजी बोले कि। हे ब्राह्मणो ! धर्म न्याय दया निष्कपट समानभाव और बडेप्पनके भरे द्रौपदीके वचन सुन धर्मपुत्र युधिष्ठिर बडी प्रशंसा करतेभए ॥ ४९ ॥ नकुल सहदेव सात्यकी अर्जुन देवकीपुत्र भगवान् और जो स्त्री हीं वे सब प्रसन्न भई ॥ ५० ॥ तहां क्रोध कर भीमसे बोले कि, याको मारवोही श्रेष्ठ है क्योंकी अपने भर्ता दुर्योधन और अपनो दोननको कछु प्रयोजन सिद्ध न भयो, वृथा सोये भए बालक याने मारे ॥ ५१ ॥ भीमसेनकी ये वाणी सुन द्रौपदी और भगवान् श्रीकृष्णजी अर्जुनकी ओर देख हँसके ये बोले ॥५२॥ श्रीभगवान् बोले कि आततायी वधके योग्य है परन्तु ब्राह्मण होय तो नहीं मारनो, ए दोनों बात हमनेंही कहीहै, परंतु ब्राह्मणके लिये शरीरदंड न देनो हमारी आज्ञा है कि रक्षा करो, सदा ब्राह्मणकों धन देउ पूजो, ब्राह्मण कैसोही अपराध करै तोहू न मारो, ये हमारी आज्ञा है ॥५३॥ और द्रौपदीके सामने जो प्रतिज्ञा करी वो पूरी करो, भीमसेनको प्रिय होय सोहू करो,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मेरी औरहू प्रसन्नता करो, द्रौपदीकी प्रसन्नता करो ॥ ५४ ॥ सूतजी बोले कि हरिके हृदयकी अर्जुनने जानके वा अश्वत्थामा ब्राह्मणके मस्तककी मणि तरवारसो मूंड चीरके निकासलीनी मूंड मूडौ ॥ ५५ ॥ रस्सीसो खोलदीनो, बालहत्यासो वाकी कांति न रही, तेज वामें नहीं मणि छीनलीनी, अपने कंपूमेंसो निकासदीनो ॥ ५६ ॥ मुंडन करनों धन लेलेनो, स्थानसो निकास देनो येही ब्राह्मणनको वध है, और कछु शरीरदंड देनो दंड नहीं है ॥ ५७ ॥ पुत्रशोकसो व्याकुल सब पांडव द्रौपदीके समेत अपने मरे सुतनको दाहकर्म करते भए ॥ ५८ ॥

पुत्रशोकातुराः सर्वे पाण्डवाः सह कृष्णया ॥
स्वानां मृतानां यत्कृत्यं चक्रुर्निर्हरणादिकम् ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

सूत उवाच–अथ ते संपरेतानां स्वानामुदकमिच्छताम् ॥
दातुं सकृष्णा गङ्गायां पुरस्कृत्य ययुः स्त्रियः ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि । याके उपरांत मरे भये अपने बंधु जो जल चाहते तिनकों तिलांजली देवेको द्रौपदीकों साथ लेके स्त्रीनको आगे कर गंगातीर जाते भए ॥ १ ॥ वे सब जल देकै वारंवार विलाप कर हरिके चरणकमलकी रजसो पवित्र जलवारी गंगामें न्हाए ॥ २ ॥ तहां युधिष्ठिर धृतराष्ट्र भीमादि सहित बैठे हे, पुत्रशोकातुर गांधारी कुंती द्रौपदीआदिको ॥ ३ ॥ कि जो बंधुजननके मरनेसो शोकसों व्याकुल हे विन्हें श्रीकृष्ण मुनिन सहित जाको कोई कछु न करसकै ऐसे कालकी गति सब जीवनमें दिखावते भए शांत करत भये ॥ ४ ॥ कपटी दुर्योधनादिकन करकै हरे राज्यको युधिष्ठिरको दिवायो द्रौपदीको जूडो पकडवेसो नष्ट भई आयु जिनकी ऐसे खोटें राजनको मरवाय ॥ ५ ॥ उत्तम सामग्रीयुक्त तीन अश्वमेध करवाय विनको पवित्रयश इंद्रकी नांई सब दिशानमें विस्तार करतेभए॥६॥ पांडुपुत्रनसो आज्ञा लेकें सात्यकी उद्धव सहित महापूजनीय द्वैपायन आदि विप्रनसों पूजित हो ॥७॥ हे ब्रह्मन् ! श्रीकृष्णजीकी द्वारका जायवेकी जब इच्छा भई तब रथमें बैठे वा समय भयभीत दौडी आती उत्तराको देखते भये ॥ ८ ॥ उत्तरा बोली हे महायोगिन् ! हे देवनके देव ! हे जगत्पते ! मेरी रक्षा करो २ जहां परस्पर मृत्यु या विश्वमें आपके विना अभयदाता काऊकोंहू नाय देखूहूं ॥ ९ ॥ हे ईश ! तपो भयो लोहसदृश बाण सामनेंसो चलो आवै है हे समर्थ ! हे नाथ ! मेरो दाह यह यथेष्ट करै परंतु मेरो गर्भ न गिरे सो उपाय करो ॥ १० ॥ सूतजी बोले कि भक्तवत्सल भगवान् वाको वचन सुन पांडव एक न रहै ऐसो करवेको अश्वत्थामाने अस्त्र चलायो है ये जानते भए ॥ ११ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! ता समय पांडव सब पांच बाण अपने सामने प्रकाश करते आतेहैं ये देखकर अपने अस्त्र ग्रहण करते भए ॥ १२ ॥ और काऊ विषयमें जिनको मन नहीं ऐसे पांडवनपें कष्ट देखके श्रीकृष्ण अपने भक्त पांडवकी तो सुदर्शन चक्रसो रक्षा करतेभए ॥ १३ ॥ सब जीवमात्रके अंतर्यामी, व्यापक योगिनके ईश्वर, सकल दुःख हरवेवारे, हरी अपनी मायाकरकै कौरवनके संतानकी वृद्धिके लिये विराटकी बेटी उत्तराके गर्भकी रक्षा करतेभए ॥ १४ ॥ यद्यपि जाको कोई सामनो न करसकै विफल नहीं ऐसो ब्रह्मास्त्र है, तथापि विष्णुके सुदर्शन चक्रके सामने सब शांत होय है हे शौनक ! ॥ १५ ॥ सबके आश्चर्य करावनवारे भगवान्में ये कछु आश्चर्य मत मानो, जो भगवान् अपनी प्रकाशनी माया करकै या विश्वको रचे है, रक्षा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करे हैं, नाश करे हैं, आप अजन्मा हैं ॥१६॥ ब्रह्मास्त्रसो छूटे पुत्र और द्रौपदी सहित, सती कुंती जायवेके समय कृष्णसो ये बोली ॥ १७ ॥ कुंती बोली कि आदिपुरुष प्रकृतिसो परे काऊसो लखै न जांय सब जीवमात्रके बाहर भीतर स्थित आप ईश्वरकूं नमस्कार करूं हूं ॥ १८ ॥ मायारूप चिकसे कछु दीखों कछु न दीखो, इंद्रियजन्य ज्ञानसो परे अविनाशी आपको मैं अज्ञानिनी कहा जानों मूढ दृष्टिवारेको आप नहीं लखाईमें आवोहो, जैसे नट अनेक नाट्योंको धारे है, सो कोई नहीं जा[illegible] है ॥ १९ ॥ जीवात्माके द्वारा ईश्वरको देखवेवारे परमहंस मनन करवेवारे मुनि, और रागादिकरहित निर्मल अंतःकरणवारनकोहू जानवेमें नहीं आवो हो, सो भक्तियोग विधानको अवतार धारनेवारे आपको मैं स्त्रीजन कैसे देखसकूं ॥ २० ॥ वासुदेव देवकीनंदन नंदगोपकुमार गोविंद श्रीकृष्णजीको नमस्कार होय ॥ २१ ॥ जिनकी नाभिमें कमल तिनको नमस्कार होय, कमलमालाधारी कमल सदृशनेत्र कमल समान चरणवारे हरिको नमस्कार होय ॥ २२ ॥ हे हृषीकेश ! कंससो बंदी करीहुई चिरकालसो दुःखी शोच करती देवकी एकहीवार आपने कष्टसो छुडाई और मेरी तो आप समर्थने वारंवार विपतनसों पुत्रसहित रक्षा करी, मासों अधिक मोपे दया कीनी ॥ २३ ॥ जिन विपत्तिनमें रक्षा करिवे ये हैं, कि भीमसेनको विषके लड्डुआ दिये वाते, लाक्षागृहमें जराए वातें, पुरुष खानेवारे हिडंबादिकके दीखवेसो, खोटी सभासो वनवासके कष्टसो संग्राममें अनेक महारथिनके अस्त्रतें, अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रते, और सब ओरकी विपतानसो रक्षा कीनी ॥ २४ ॥ हे जगद्गुरो ! अहो प्रभो ! में तो यही वर मांगोहो कि सब जगत्की जितनी विपत्ति है वे मोकों देउ भगवान् बोले कि भूआ ये कहा वरदान मांगेहे भलो भुआ ! विपत्ति क्यों मांगी यामें कहा कारण है तब कुंती कहे है कि लाला ! में तो जानां विपत्तिही भली [illegible] लेलेकर त्तिनमें मोक्षदाता तुम्हारो दर्शन तो होयहै जा तेरे दर्शनसों फेर संसारमें जन्म नहीं होहीं आए जान सत्कुलमें जन्म, ऐश्वर्य, शास्त्र, लक्ष्मीसो पुरुषको मद होयहै, ऐसो पुरुष भक्तनसो करके जिनने विग्रह गोविंद नारायण वासुदेव नाम उच्चारण करवेको योग्य नहीं होयहै ॥ २६ ॥ जिन[illegible]म पितामहजी पूजन अकिंचन पुरुषनके धन गुणनकी वृत्तिरहित आत्माराम शांत मोक्षदाता आप[illegible] नेत्रनमें भरे भीष्मजी ॥ २७ ॥ आपको मैं काल, ईश्वर आदि अंतरहित प्रभु, सबसों समान[illegible] ग धर्म और भगवान्के आश्रित जीवनमें कलह करवेके कारणहू आपही हो ॥ २८ ॥ हे भगवन् ! मनुष्य संतान वधू कुंती तुम्हारे अर्थ बडे करवेवारे तुम्हारी करवेकी इच्छाकू कोई नहीं जाने है, न कोई आपु[illegible] जो तुमको दुःख है सो ये सब समयकी मनुष्यनकी आपमें विषयबुद्धि होयहै कि यापै आप कृपा [illegible] जैसे मेघपंक्ति वायुके वशमें होय है ॥१४॥ नहीं जानेहै ॥ २९ ॥ हे विश्वात्मन् ! सबमें तुम व्यापक [illegible]री अर्जुन, गांडीवसो धनुष श्रीकृष्णसे मित्र आश्चर्यमय है, कभी वाराहरूप, कभी रामचन्द्ररूप, क[illegible] की इच्छा है सो कोईभी पुरुष नहीं जानसके करोहो, ये सब अनुकरण मात्र है ॥ ३० ॥ जा समय द[illegible]वे है ॥ १६ ॥ हे युधिष्ठिर ! तातें ये विश्वके राधको देखके बांधन करवेको रस्सी लेती भई, तब असुअ[illegible]ो हो आप अनाथ प्रजाको पालन करो करे भयके भावसो जो बैठे हे वा समयकी आपकी दशा मो[illegible]याकरके लोकको मोहित करते वृष्णिनमें सो आप डरे ये आश्चर्य है ॥ ३१ ॥ पुण्यश्लोकोंके कीर्तिव[illegible]सो भगवान् महादेवजी जानें हैं, हे राजन् ! जैसे चन्दन उपजै ताकी नाई अजन्मानें जन्म लियो ऐसे को[illegible]ाने हैं ॥ १९ ॥ अज्ञानसो जिनको तुम मामाके देवकीकी चाहनातें अवतरे, आप तो जन्म नहीं लेवे है[illegible]रो करो, दूत बने तुमारे प्यारके मारे सारथी भए

१ कुंतीके वाक्यको ये अभिप्राय है कि लालजी आपके स्व[illegible] नहीं, जिनको अहंकार नहीं रागादिक जिनमें नहीं, वज्रसोहू कठोर कोनने बनाये है जो हमें छोडके द्वारका जा[illegible] है, ये योग्य नहीं है, ये बुद्धिकी विषमता परमेश्वरमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

द्रोहीनके वधके लिये अवतार धारोहै ॥ ३३ ॥ और कोई ऐसे कहै हैं कि भूभार उतारवेको समुद्रमें जैसे नाव डूबै वाकी रक्षाकी नांई बहुत भारसो दुःखी पृथ्वीको देख तुम ब्रह्माकी प्रार्थनासो अवतार लेतेभए ॥ ३४ ॥ जब या संसारके जीव अविद्या काम कर्मसों दुःखी भये, तब आप सब जीवनके श्रवण स्मरण [illegible] चरित्र करवेको अवतार लेतेभए ऐसे कोई आचार्य कहैं हैं ॥ ३५ ॥ तुम्हारी लीलाको सुनैं हैं, गावैहैं, सुनावैहैं, वारंवार स्मरण करैं हैं, आनंदित होयहैं वे मनुष्य थोडेही कालमें संसारके प्रवाहको नाशक तुम्हारो चरणकमल देखैं हैं ॥ ३६ ॥ हे भक्ताभीष्टदायक ! हे प्रभो ! तुम्हारे चरणके सिवाय हमें कुछभी आश्रय नहीं है सब राजा दुःख पायवेके कारण हमसों वैर करैं हैं फिर आप हम सुहृदनको छोडके कैसे जाओहो ॥ ३७ ॥ कुंतीजी कहे है कि लाला ! जा समय तेरो दर्शन नहीं है अर्थात् तेरे विना यादव और पांडव हम कौन है अर्थात् काउ कामके नहीं हैं जैसे इंद्रियेश जीवात्माके विना इंद्री काउ कामकी न होयहै ऐसे ॥ ३८ ॥ हे गदाधर ! जैसी अब पृथ्वी शोभित है, ऐसी फेर नहीं शोभा देयगी, क्योंकि अब तौ आपके वज्र यव अंकुश आदि चिह्नवारे चरणनसों शोभित है, फिर इन चिह्नकी अभाव हो जायगो ॥ ३९ ॥ ये देश सुंदर समृद्धिवान् हैं सुंदर पकी औषधी वेलें हैं वन पर्वत नदी ये सब आपके देखवेसों वृद्धिको प्राप्त है ॥ ४० ॥ यासो हे विश्वेश ! हे विश्वात्मन् ! हे विश्वमूर्ते ! मेरी अपने जननमें पांडवनमें और यादवनमें स्नेहकी जो फांसी है याको तुम काटो ॥ ४१ ॥ हे मधुपते ! तुम्हारेमें मेरी ये [illegible] सदा लगी रहै और कहीं न लगै, जैसे गंगाको प्रवाह निरंतर समुद्रमें मिलोरहै है ॥ ४२ ॥ हे [illegible] हित बैठ हे अर्जुनसखे ! हे यादवश्रेष्ठ ! हे पृथवीद्रोही क्षत्रीवंशनाशक ! हे अक्षीणप्रभाव ! हे गोविंद ! शोकसों व्याकु [illegible] नाकेशनाशक अवतारधारक ! हे योगीश्वर ! हे अखिलगुरो ! हे भगवन् ! तुम्हारे अर्थ जीवनमें दिखावत [illegible] ४३ ॥ सूतजी बोले कि । सब महिमासों उदित श्रीकृष्णजीकी मधुरपदोंसे जब स्तुति दिवायो द्रौपदीको [illegible] मंदमंद हंसे, मानो मायाकरके मोह करायरहेहै, हांसी हरिकी सब जननको उन्माद सामग्रीयुक्त तीन अश्व [illegible] हकरी च माया) ये द्वितीयस्कंधमें लिखो है ॥ ४४ ॥ हे कुंती ! (बाढं) पांडुपुत्रनसो आज्ञा लेके सात्य [illegible] हार किये जो तुम वर मांगो सो संपूर्ण होय, ऐसे कहि हस्तिनापुरमें आय हे ब्रह्मन् ! श्रीकृष्णजीकी द्वारका [illegible] पुरको जातभए, राजा युधिष्ठिरने बहुत कही आप यहांई रहो ॥ ४५ ॥ उत्तराको देखते भये ॥ ८ ॥ उत्तरा बोली और अद्भुतकर्मवारे श्रीकृष्णजीने अनेक इतिहासनसों ज्ञानहू जहां परस्पर मृत्यु या विश्वमें आपके वि [illegible] शांत नहीं भयो ॥ ४६ ॥ हे ब्राह्मणो ! अपने बंधुनके वधको तपो भयो लोहसदृश बाण सामनेंसो चल मेरो गर्भ न गिरे सो उपाय करो ॥ १० ॥ राजा युधिष्ठिर चित्तमें अज्ञान होवेके कारण कहने लगे पांडव एक न रहै ऐसो करवेको अश्वत्थामदेखो कि पराये शरीरके निमित्त जाय सृगालादि खायजाय हे ता समय पांडव सब पांच बाण अपने सा अक्षौहिणीकी ये संख्या है २१८७० जामें हाथी इतनेई भए ॥ १२ ॥ और काऊ विषयमें जिनका ३५० जामें पदाति याकू अक्षौहिणी कहैं हैं ॥ ४८ ॥ बालक, पांडवकी तो सुदर्शन चक्रसो रक्षा करतेभए ॥ [illegible] ही मेरो नरकसो क्रोडहो वर्षमेंहू उद्धार न होयगो ॥ ४९ ॥ सकल दुःख हरवेवारे, हरी अपनी मायाकरके राजाको पाप नहीं होय है ये शिक्षाको वचन मोकों बोध गर्भकी रक्षा करतेभए ॥ १४ ॥ यद्यपि जाको कारण विन स्त्रीनको जो द्रोह मोसें उठो है सो कितनेही गृहस्था- विष्णुके सुदर्शन चक्रके सामने सब शांत होय है है ॥ १५ ॥ जैसे कीचसों कीच धोई नहीं जाय है, मदिरासों नमें ये कछु आश्चर्य मत मानो, जो भगवान् अपनेहू जीवकीहू हिंसा यज्ञनसों नहीं छूटै है ॥ ५२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यद्वो श्रीकृष्ण पङ्काम्भः सुरया वा सुराकृतम् ॥
भूत[illegible] तथैवैकां न यज्ञैर्मार्ष्टुमर्हति ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कंधे कुंतीस्तुतियुधिष्ठिरानुतापो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

सूत उवाच-इति भीतः प्रजाद्रोहात्सर्वधर्मविवित्सया ॥
ततो विनशनं प्रागाद्यत्र देवव्रतोऽपतत् ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि या प्रकार प्रजाके द्रोहसो डरकर युधिष्ठिर सब धर्म जानवेकी इच्छा करके जहां भीष्मपितामह पडे हे वहां कुरुक्षेत्रमें आवते भए ॥ १ ॥ तब सब भाई सुवर्णके साज पडे घोडा जुते रथमें सवार होकर आवतेभए वहां व्यासजी धौम्य कृपादिकहू आवतेभए ॥ २ ॥ हे शौनक ! अर्जुनको साथ लेके रथमें बैठ भगवान्हू विनके साथ चले शोभित हो रहे है जैसे कुबेर अपने यक्षन-सहित शोभे है ॥ ३ ॥ स्वर्गसो गिरे देवताकी नाई भूमिमें पडे भीष्मपितामहको सब सेवक और श्रीकृष्णसहित पांडव प्रणाम करतेभए ॥ ४ ॥ हे सत्तम ! तहां सब देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि भीष्मपिता-महको देखवेको आएहैं ॥ ५ ॥ पर्वत मुनि, नारदऋषि, धौम्य, भगवान् बादरायणजी, बृहदश्व, भर-द्वाज, शिष्य साथ परशुराम ॥ ६ ॥ वसिष्ठ, इंद्रप्रमद, त्रित, गृत्समद, असित, कक्षीवान्, गौतम, अत्रि, कौशिक, सुदर्शन ॥ ७ ॥ और निर्मल शुकाचार्यादिक मुनि हे शौनक ! शिष्यनको लेलेकर कश्यप अंगिरा आदिक आवते भए ॥ ८ ॥ धर्मज्ञ भीष्मपितामह इन सब महात्मानकों आए जान देशकालविभाग जानवेवारे पूजन करतेभए ॥ ९ ॥ जगदीश्वर हृदयनिवासी मायाकरके जिनने विग्रह धारयो सिंहासनपर विराजमान श्रीकृष्णजीको भगवत्के प्रभाव जानवेवारे भीष्म पितामहजी पूजन करतेभए ॥ १० ॥ विनय स्नेहमें मग्न; समीप बैठे पांडुपुत्रनसो अनुरागी, आंसु नेत्रनमें भरे भीष्मजी बोले ॥ ११ ॥ हे धर्मपुत्र ! अहो कष्ट है, बडो अन्याय है, कि तुम ब्राह्मण धर्म और भगवान्के आश्रित हैकेहू क्लेशसो जीओ हो ॥ १२ ॥ महारथी राजा पांडु मेरे पीछे बालसंतान वधू कुंती तुम्हारे अर्थ बडे क्लेश भोगती भई ॥ १३ ॥ जो आपकों प्रिय नहीं है अर्थात् जो तुमको दुःख है सो ये सब समयकी करीभई बात है, सो काल वो है जाके वशमें सब लोग हैं, जैसे मेघपंक्ति वायुके वशमें होय है ॥ १४ ॥ जहां धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर, गदापाणि भीमसेन, शस्त्रधारी अर्जुन, गांडीवसो धनुष श्रीकृष्णसे मित्र तहांहू विपत्ति आई ॥ १५ ॥ इन श्रीकृष्णकी जो करवेकी इच्छा है सो कोईभी पुरुष नहीं जानसके है, जिनकी जानवेकी इच्छा करके कविहू मोहको प्राप्त होवे है ॥ १६ ॥ हे युधिष्ठिर ! तातें ये विश्वके सुखादिक दैवआधीन है, हे नाथ ! हे प्रभो ! तिनके अनुवर्त्ती हो आप अनाथ प्रजाको पालन करो ॥ १७ ॥ ये साक्षात् भगवान् आद्य नारायण पुरुष हैं मायाकरके लोकको मोहित करते वृष्णिनमें छिपकर विचरें हैं ॥ १८ ॥ इनको प्रभाव छिपोभयो है सो भगवान् महादेवजी जानें हैं, हे राजन् ! देवऋषि नारद और साक्षात् भगवान् कपिलदेवजीहू जाने हैं ॥ १९ ॥ अज्ञानसो जिनको तुम मामाके पुत्र प्रियमित्र सुहृत्तम मानो हो, जिनने मंत्रीपनो तुम्हारो करो, दूत बने तुमारे प्यारके मारे सारथी भए ॥ २० ॥ सर्वात्मा समदृष्टिवारे, जाके समान कोई नहीं, जिनको अहंकार नहीं रागादिक जिनमें नहीं, ऐसे ईश्वरकों नीच उच्च कर्म करनो ये हमारे योग्य है, ये योग्य नहीं है, ये बुद्धिकी विषमता परमेश्वरमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं है ॥२१॥ हे राजन् युधिष्ठिर ! यद्यपि परमेश्वरमें ये बात है, तथापि कि भूभा[illegible]ो एकांतमें ध्यान करवेवारे भक्त हैं, विनपें दया करै है, सो देखो तो कि जो मेरे प्राण त्यागत [illegible] श्रीकृष्णजीने आयकर दर्शन दीनो ॥ २२ ॥ भक्तिसो मन लगाय वाणीसो नाम कीर्तन कर देह त्याग करै तो वो योगी काम कर्मसो छूटजाय है ॥ २३ ॥ जबतक हम देहत्याग करैं, तबतक प्रसन्न हांसी और लाल नेत्रसों रुचिर मुखकमल, ध्यानयोग जाको मार्ग, चार भुजावारे देवदेव हमारे सामने दर्शन देतेरहो ॥२४॥ सूतजी बोले कि बाणनके पिंजरेपर सोए भीष्मजीकी ये वाणी सुन युधिष्ठिर सब ऋषिनके सुनते भए अनेक धर्म पूछते भये ॥२५॥ जो धर्म पुरुषके स्वभावके योग्य है वर्णनके धर्म, वैराग्य राग उपाधिके धर्म, वेदोक्त प्रवृत्ति मार्ग, निवृत्तिमार्ग ॥२६॥ दानधर्म, राजधर्म, मोक्षधर्म, स्त्रीनके धर्म, भगवद्धर्म संक्षेप विस्तारसों अलग अलग कहते भए ॥२७॥ हे मुने ! धर्म अर्थ काम मोक्ष कहवेके उपाय नाना प्रकारके इतिहास कथानमें तत्ववेत्ता भीष्मजी वर्णन करते भए ॥ २८ ॥ ऐसे धर्म कहिरहे हे कि वा समय वो काल आय प्राप्त भयो, जाको अपनी इच्छासों मोक्ष जायवेवाले स्वच्छन्द योगी चाहै हैं वही उत्तरायण काल प्राप्त भयो ॥ २९ ॥ युद्धमें समीपवासी हजारनकी रक्षा करवेवारे भीष्मजी सहस्र अर्थ कहिवेवारी वाणीसो आदिपुरुष पीताम्बरशोभित चतुर्भुजावारे सामने बैठे, ऐसे श्रीकृष्णजीमें सब संगरहित मन लगावते भए ॥ ३० ॥ विशुद्ध धारणा करके सब पाप जिनके नष्ट भए और श्रीकृष्णजीके दर्शनसे तत्काल आयुधनके लगवेकी व्यथा दूर भई, सब इंद्रीनकी वृत्तिनको भ्रम दूर भयो, तब भीष्मजी देह त्यागके समय जनार्दनकी स्तुति करतेभए ॥ ३१ ॥ भीष्मजी बोले कि । यादवनमें श्रेष्ठ सबसों महामहिमावारे भूमापुरुष बडे स्वस्वरूपभूत परमानंदको प्राप्त वामें विहार करवेको योगमायाको प्राप्त हैके शरीर धारण करनेवारे सब संसारके उत्पादक भगवान् षड्गुण ऐश्वर्यवान् श्रीकृष्णजीमें निष्काम बुद्धि मैंने समर्पण करी है ॥ ३२ ॥ त्रिलोकीमें सुन्दर तमालवत् नील वर्ण और सूर्यकी किरणसम प्रकाशित गौरवस्त्र धारै[1], अलकसमूहसो शोभायमान मुखकमल देह धारण करनेवारे, अर्जुनके सारथी श्रीकृष्णचंद्रजीमें मेरी फलकी चाहरहित प्रीति होउ ॥ ३३ ॥ युद्धमें घोडानके खुरकी रजसों धूमली भई, इत उतको विखरी भई, अलकनके श्रमसो पसीना जा मुखमें आयरह्यो, और मेरे पैने बाणनसो भिदी भई देहसो शोभायमान कवच धारण करनवारे श्रीकृष्णजीमें मेरो मन लगो ॥ ३४ ॥ शीघ्र अर्जुनको वचन सुन अपनी और कौरवनकी सेनामें रथ ठाडो करके शत्रुनके सेनापतिनकी आयु हरते भए, ये भीष्म, ये द्रोण, ये कर्ण, ऐसे दिखायवेके बहानेकरके अपने नेत्रनसोंही सबकी आयु खैंचके अर्जुनकी जय करावते भए, ऐसे पार्थके सखा श्रीकृष्णजीमें मेरी प्रीति होय ॥ ३५ ॥ दूर खडी सेनानको मुख देख द्वेषबुद्धिके कारण स्वजननके वधसों विमुख भये अर्जुनकी कुमतिको आत्मविद्या गीताशास्त्रको उपदेश करके जे हरते भए ऐसे परमेश्वरमें मेरी प्रीति होय ॥३६॥ शस्त्र विना लिये हम केवल सहायमात्र करेंगे ऐसी अपनी प्रतिज्ञाकों त्यागके रथपर बैठे मेरी करी प्रतिज्ञाको (कि मैं श्रीकृष्णकों शस्त्र ग्रहण कराऊंगो) सत्य करवेको रथसों उतरके रथके पैयाकोही चक्र लेके क्रोधसों मनुष्यनाट्य करने भूलगए, सर्व भुवनभारसों पृथ्वीको चलायमान करते कमरमेंसो खुल गयो लिथरतो आवे धरतीमें पीतांबर जिनको या शोभासों जो कृष्ण हाथीके मारवेको जैसे सिंह तैसे मेरे सामने मारवेको दौडे आवें विन श्रीकृष्णजीमें मेरी प्रीति होउ ॥ ३७ ॥ मो आततायीके पैने बाणनसो भग्न वखतर

१ गौरवस्त्रनाम पीतांबर । पीते गौरो हरिद्राभ इत्यमरः ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैवेसो रुधिरसों लिप्त हो श्रीकृष्ण अर्जुनके वचनकोहू उल्लंघन कर मेरे वधको हठसे सामने आए, सो भगवान् मुकुंद मेरी गति होउ ॥ ३८ ॥ अर्जुनके रथरूप कुटुंबमें कोडा लिये घोडानकी पचरंगी वागडोर पकडे सारथीपनकी शोभा धारे दर्शन योग्य भगवान्में मरनवारे मोसरीखेकी प्रीति होउ जे इन्हें देख युद्धमें मरे वे विनके स्वरूपको प्राप्तभए ॥ ३९ ॥ ललित गति, विलास मनोहर हांसीसहित नम्रतासो देखवेसों बडे मानवती वाही कारण अति मदसों अंधवत् है वाहीं भगवान्के चरित्रनके अनुकरण करती गोपवधू जिनके स्वरूपको प्राप्त होती भई विन श्रीकृष्णमें मेरी प्रीति होउ ॥ ४० ॥ युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें अनेक मुनि और श्रेष्ठ राजानके समागममें जिनकी सबसों पहिले पूजा भई, वही दर्शन योग्य मेरी दृष्टिके सन्मुख प्रगट व्है आएहै मेरो धन्य भाग्य है ॥ ४१ ॥ जैसे संपूर्ण प्राणिनकी प्रत्येक दृष्टिमें सूर्य एक रूप हैवेपैहू अनेक रूपसों प्रतीत होय है ऐसेही अपने निर्माण किये प्राणिनके प्रत्येक हृदयमें एक रूपसों विराजे है तौहू अनेक रूपसों प्रतीत होते हो ऐसे जन्मरहित आप ईश्वरको मं भेद और मोहको त्यागके प्राप्त भयो हूं ॥ ४२ ॥ सूतजी बोले कि। भगवान् कृष्णमें मन वाणी दृष्टिकी वृत्तिनसों शरीरमें जीवात्माको लगायके भीष्मजी अन्तःश्वासी उपरामको प्राप्त होते भए ॥ ४३ ॥ उपाधिरहित ब्रह्ममें लीन भये भीष्मजीको जानके सांझ समयके पक्षिनकी समान सब चुप होतेभए ॥ ४४ ॥ देवता मनुष्यनकी बजाई भई दुंदुभी बजी राजानमें साधु प्रशंसा करतेभए, आकाशसो पुष्पनकी वर्षा होतीभई ॥ ४५ ॥ हे शौनक ! भीष्मजीके दाहादिक सब कर्म कराय युधिष्ठिरजी दो घडी दुःखी होतेभए ॥ ४६ ॥ प्रसन्न मुनि सब श्रीकृष्णजीके छिपे नामनकरके स्तुति करतभये, पीछे कृष्णको हृदयमें धारण कर वे सब फेर अपने अपने आश्रमनको जातेभए ॥ ४७ ॥ तब कृष्णसहित युधिष्ठिर हस्तिनापुरमें जायके धृतराष्ट्र और तपस्विनी गांधारीको शांत करतेभए ॥ ४८ ॥ धृतराष्ट्र करके सराहेभए वासुदेवसो महाप्रसन्न भये राजा युधिष्ठिर धर्म कर्मकरके अपने परदादेनको करो राज्य समर्थ हेके करतेभए ॥ ४९ ॥

पित्रा चानुमतो राजा वासुदेवानुमोदितः ॥
चकार राज्यं धर्मेण पितृपैतामहं विभुः ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे भीष्मस्तुतियुधिष्ठिरराज्यप्रलम्भो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

शौनक उवाच–हत्वा स्वरिक्थस्पृध आततायिनो युधिष्ठिरो धर्मभृतां वरिष्ठः ॥
सहानुजैः प्रत्यवरुद्धभोजनः कथं प्रवृत्तः किमकारषीत्ततः ॥ १ ॥

शौनकजी बोले कि। अपने हिस्साके अर्थ चाहना करवेवारे आततायिनको मारके धर्मधारिनमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर अपने भाइनसहित भोग रागसो संकोचकर कहा करत भए, कैसे अपनो समय व्यतीत करते भए सो कहो ॥ १ ॥ सूतजी बोले कि। कुरुके वंशरूप दावानल अग्निसो जरे भये वंशको संसार उत्पन्न करनेवारे हरि भगवान् फेर अंकुरित करके अपने निज राज्यमें युधिष्ठिरको प्रवेश करवायके बहुतही प्रसन्न होतेभए ॥ २ ॥ भीष्मजी और श्रीकृष्णजीके उपदेश सुनके प्रवृत्त भये विज्ञानते भ्रम दूर होवेसो श्रीकृष्णजीके आश्रयसो सब भाइनसहित युधिष्ठिर समुद्रपर्यंत पृथ्वीको इन्द्रकी नाईं पालन करतेभये ॥ ३ ॥ मेघ जब इच्छा होय तब वर्षे, सब कामदात्री धरती भई, बडे ऐनवारी गौ दूध देके सब व्रजको पूर्ण करती

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भई ॥ ४ ॥ नदी, समुद्र, पर्वत, वनस्पति वेल सहित सब औषधियें सब ऋतुमें इच्छापूर्वक फलती भई ॥ ५ ॥ जब राजा युधिष्ठिर राज्य करते थे तब काउ जीवको किसी समयमें मानसी व्यथा रोग शीत उष्णादिक अध्यात्म आधिदैव अधिभूत दुःख न भयो ॥ ६ ॥ सुहृदनके शोक दूर करवेको भगिनीकी प्रीतिकी इच्छासो कछु महीनातक हस्तिनापुरमें वसके पश्चात् अजातशत्रुसों सलाह कर और विनसो आज्ञाको प्राप्त हैके और मिलके और विनको प्रणाम करके और वहांके पुरुषनसों यथा योग्य मिलके और प्रणामको प्राप्त हैके भगवान् कृष्णचंद्र रथपर बैठतेभये ॥ ७ ॥ ८ ॥ सुभद्रा, द्रौपदी, कुंती, विराटपुत्री उत्तरा, गांधारी, धृतराष्ट्र, युयुत्सु (जो धृतराष्ट्रसो वैश्यामें जन्मो हो) और कृपाचार्य, नकुल, सहदेव ॥ ९ ॥ भीमसेन, धौम्यऋषि और स्त्री मत्स्यसुता (उत्तरा) आदि विमोहके मारे श्रीकृष्णजीके विरहको न सहितेभए, मत्स्यसुता सत्यवतीकोभी कहैं हैं ॥ १० ॥ महात्मा पुरुषनके मुखसों एकवार जा परमात्माके यशको सुनके बुद्धिमान् वाही क्षणसो स्त्रीपुत्रादिकनमें लगे मोहको तजिके वा परमेश्वरके यश गायववेवारनके सत्संगको फिर त्याग करवेको समर्थ नहीं होते हैं तो साक्षात् परस्पर दर्शन स्पर्शन सम्भाषण और एक समयमें शयन बैठनो भोजन नित्य करवेवारे युधिष्ठिर आदिकी कौन कथा है ॥ ११ ॥ श्रीकृष्णमें बुद्धि लगायववेवारे युधिष्ठिरादिक वा विरहको कैसे सहैं कारण कि विनने दर्शन स्पर्शन बोलनो शयन आसन भोजन ये सदा संग करो है ॥ १२ ॥ अतिस्नेहके मारे बंधेभए पलक विसार नेत्रनसे विन्हींको दर्शन करते अपने चित्त श्रीकृष्णमेंही लग जानेके कारण सब कोई श्रीकृष्णजीकी पूजनके लिये जहां तहां चलेगए ॥ १३ ॥ देवकीसुतकी यात्रामें अमंगल न होय यासो बांधवनकी स्त्रियें उत्कंठाके मारे आंखनसों निकसे आसुनकों रोकतीभई ॥ १४ ॥ मृदंग शंख नगारे वीणा भेरी गोमुख धुंधुरी शंख घंटादिक बडे नगारे ये सब बजते भए ॥ १५ ॥ कौरवनकी स्त्रियें छज्जेनपर बैठीभई श्रीकृष्णको प्रेम लज्जा मुसकानकी तिरछी चितवनसो देखती श्रीकृष्णपर पुष्पवर्षा करती भई ॥ १६ ॥ महाहर्षसो प्यारे कृष्णके ऊपर मोतीनकी झालरवारो रतनकी डांडीको श्वेतछत्र अर्जुनने ग्रहण कीनो ॥ १७ ॥ परम अद्भुत पंखा ऊधो और सात्यकीने हाथमें लीने, श्रीकृष्णपें पुष्पनकी वर्षा मार्गमें होतीजायहै, महाशोभा होयरहीहै ॥ १८ ॥ वा समय ब्राह्मणनके अनेक अनेक सत्य आशीर्वाद सुनाइ परै वे आशीर्वाद कैसे है कि निर्गुण मानो हो तब तौ वे आशीर्वाद प्रभुमें नहीं बने है और साकार मानौ हौ तो वे सब आशीर्वाद गतार्थ होय हैं ॥ १९ ॥ श्रीहरिमें चित्त लगाये कौरवेंद्र युधिष्ठिरके पुरकी स्त्रीनके सबको सुनवेमें कर्णमनोहर वचन आपसमें होते भए ॥ २० ॥ वे बोली कि जब गुणनमें क्षोभ नहीं हो तब प्रलयकालमें जीव ईश्वरमें लीन है गये हे और उपाधिभूत सब शक्तिहू वाहीमें लीन ही वा समय सब प्रपंचरहित अपने स्वरूपमें जो पुराण पुरुष स्थित हे सो यही कृष्णचंद्र हैं ॥ २१ ॥ अपने वीर्यसो प्रेरित सबकी जिवायववेवारी रचवेवारी अपनी प्रकृतिको नाम रूपरहित आत्मामें रूप नाम विधान करनेको सब शिक्षाशास्त्र करवेवारे फेर मायामें स्थित होतेभए वह यही कृष्ण हैं ॥ २२ ॥ निश्चयकरके ये ईश्वर हैं, जिनको जितेंद्रिय पवन जीतवेवारे, भक्तिसो उत्कंठित, निर्मल आत्माकरके बडे बडे विवेकी जिनके पदको देखे हैं सो निश्चय करके ये श्रीकृष्ण सब जीवमात्रके शुद्ध करवेवारे हैं; और कोई नहीं है ॥ २३ ॥ हे सखियो ! यह वही ईश्वर है कि जिनकी सत्कथा वेदनमें और रहस्य ग्रंथनमें गुप्त वक्तानने गाई है जो एक ईश्वर अपनी लीलाकरके या जगत्को रचे है रक्षा करै है भक्षण करै हैं परन्तु या विश्वमें आसक्त नहीं होय है ॥ २४ ॥ जब अधर्म करके ये तामसी बुद्धिवारे राजा जीवें हैं, तब ये

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ईश्वर सात्विक रूप धर निश्चयकरके संसारस्थितिके अर्थ युगयुगमें रूप धारेहै, और ऐश्वर्य, सत्यप्रतिज्ञता, यथार्थवार्ता भक्तनपें कृपा ये अद्भुतकर्म धारेहै ॥ २५ ॥ ये यादवनकों कुल अत्यंत श्लाघा करवे योग्य है, ये मधुवन अत्यंत पुण्यतम है, जो सबके स्वामी श्रीपति अपने जन्मकरकै चलवे फिरवे करकै पूजनके योग्य करतेभए ॥२६॥ आश्चर्य है कि स्वर्गके यशकी तिरस्कार करवेवारी पुण्य यश करवेवारी श्रीद्वारकाजी भई कि नित्य अनुग्रह दृष्टिसो स्मित मुसकानसो देखवेवारे अपने प्रति श्रीकृष्णको जिनकी प्रजा दर्शन करेहै ॥ २७ ॥ इनको पाणिग्रहण करवेवारी इनकी स्त्रीनने निश्चयही व्रत स्नान हवनादिसो सूर्यदेवको पूजन कियो होयगो कारण कि जा अधरामृतमें अन्तःकरण लगायकै व्रजकी स्त्री मोहको प्राप्त भई यह वा अधरामृतको वारंवार पान करेहैं ॥ २८ ॥ शिशुपाल आदि मत्त राजानको जीतके अपने पराक्रमरूप वीर्यसो स्वयंवरमें जिन्हें हरलाए, और प्रद्युम्न सांब अम्बुसुतादिक जिनके पुत्र भये और भौमासुर मारके जो हजारन स्त्री लाए विन सबके धन्य भाग्य हैं ॥ २९ ॥ यह सब स्त्री पवित्रता और चतुरताहीन स्त्रीभावहीको शोभित करतीहैं जिनके हृदयको कमलनयन श्रीकृष्णचंद्र अनेक कारणनसो आनंद देते हृदयकी स्पर्श करवेवारी वाणियनसो प्रसन्न करते कभू बाहर नहीं जातेहैं ॥ ३० ॥ हस्तिनापुरकी रहवेवारी स्त्रीनके इस प्रकार वचन सुनके हास्यपूर्वक विनको देखते और आनंद देते श्रीकृष्ण गये ॥ ३१ ॥ राजा युधिष्ठिर भगवान्‌की रक्षाके लिये थोडीसी सेना भेजतेभए, शत्रुनकी शंकाते, स्नेहते हाथी रथ घोडे प्यादे थोडेसे भेजदीने ॥ ३२ ॥ तब दूर आये विरहातुर कौरवनको श्रीकृष्णजी लोटावतेभए, बडे स्नेहीनको हस्तिनापुर पठाय आप अपनी द्वारकाकों चले ॥ ३३ ॥ कुरु जांगल पांचाल शूरसेन यमुना किनारेके देश ब्रह्मावर्त कुरुक्षेत्र मत्स्यदेश सरस्वतीतीरके देश ॥ ३४ ॥ हे शौनक ! मारवाडसे बडे सौविर आभिरदेश, और देश आनर्त देश जो द्वारकाके समीपही हैं वहां घोडे थकगए तो वहांई रहे ॥ ३५ ॥ तहां तहां तहांके वासीनने हरिकी पूजा करि, सांझ भई सूर्य पश्चिममें पहुँचे तब वहांई वास करतेभए ॥ ३६ ॥

तत्र तत्र ह तत्रत्यैर्हरिः प्रत्युद्यतार्हणः ॥
सायं भेजे दिशं पश्चाद्गविष्ठो गां गतस्तदा ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे श्रीकृष्णस्यानर्तदेशागमनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

सूत उवाच–आनर्तान्स उपव्रज्य स्वृद्धाञ्जनपदान्स्वकान् ॥
दध्मौ दरवरं तेषां विषादं शमयन्निव ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि समृद्ध अपनें आनर्त देशमें पहुँचके विनके विषाद शांत करवेको भगवान् अपनो पांचजन्यशंख बजावतेभए ॥१॥ सुपेद उदर जाको श्रीभगवान्‌के अधरकी ललाईसो ललाईकी झलक

१ और भगवान्‌ने कही कि 'यामेच्छेत्पुनरानेतुं नैनं दूरमनुव्रजेत्' जाको फिर जलदी आनो विचारे वाकू यह आयवेको दूर न जाय । २ यहां जे देश हस्तिनापुरसो द्वारकाकी रस्तामें नहीं आवेहै. विन देशनको नाम क्यों लीनो है उत्तर यामें यह समझनो कि प्रभुने मनमें विचारी कि अब जानें कब आमनो होय या न होय सो जहां जहां कोई द्रष्टव्य चीज ही विनके देखवेके लिये सैल करते २ गये अथवा इन २ देशनके निवासी भक्त प्रभुकी द्वारका जायवेकी खबर सुनके सब रस्तामेंसो लिवाय २ के ले गये सो विनके मनोरथ पूर्ण करते गये यासो दोष नहीं है । ३ अथवा 'गविष्ठो गां गतः' गवि भूमौ स्थितः गां जलाशयं गतः सन् सायंकाले पश्चाद्दिशं सध्यां भेजे उपासितवान् वहां प्राप्त हैके भूमिमें बैठके सायंसंध्योपासन जलक समीप करते भये ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जामें लालकमल सदृश हस्तसंपुटमें धरो भयो शब्दायमान वो शंख अत्यन्त शोभित होतोभयो, जैसे लालकमलनके समूहमें राजहंस सोहै है ॥ २ ॥ जगत्के भयको नाशक वा शंखको नाद सुन श्रीकृष्णदर्शनकी लालसासों सब प्रजाहू हरिके सन्मुख आतीभई ॥ ३ ॥ जैसे कोई सूर्यको दीपदान करै तैसे भगवान् आत्माराम पूर्णकाम निज लाभसो नित्य प्रसन्न तिनको प्रजाने भेंटें अर्पण कीनी ॥ ४ ॥ जैसे बालक अपने पितासों वचन कहै हैं या प्रकार प्रीतिसों प्रसन्न हैके प्रजानै सबके सुहृद और पालन करवेवारे श्रीकृष्णचंद्रसों गद्गद वाणी होके कही ॥ ५ ॥ हे नाथ ! ब्रह्मा, सनकादिक देवता, इंद्र करकै वंदित क्षेमकी इच्छा करवेवारेनको परम आश्रयदायक, जहां देवतानको प्रभु कालहू समर्थ नहीं होय ऐसे आपके चरणकमलको सदा हम सब नमस्कार करै हैं ॥ ६ ॥ हे विश्वभावन ! हम सबकी उत्पत्तिके लिये आप हो, तुमही माता हो, सुहृत् पति पिता हो, तुम सद्गुरु हो, हमारे तुम्ही परमदेवता हो, जिन तुम्हारी सेवाकरकै हम सब कृतार्थ होतेभए ॥ ७ ॥ स्वर्गवासी देवतानकोंहू दूर जाको दर्शन सब सुंदरताकी खान प्रेमभरी मुसकान मनोहर चितवनवारे आपके मुखको हम दर्शन करैं हैं यासो आपकरकै हम सब महाऐश्वर्यवान् होतेभए ॥ ८ ॥ हे अंबुजाक्ष ! हे अच्युत ! जब आप हस्तिनापुरको अथवा मथुराको सुहृदनके देखवेको पधारोहो वो समय कोटिवर्षकी समान हमको होयहै, जैसे सूर्यके विना नेत्रनसो कछु नहीं सूझेहै तैसे हमारी गति होयहै ॥ ९ ॥ प्रजानकी कही ऐसी वाणीको भक्तवत्सल सुनते जायहैं, विनपें अनुग्रह दृष्टि विस्तार करत अपनी द्वारकामें प्रवेश करतेभए ॥ १० ॥ जिस पुरीकी अपने समान बली, मधु, भोज, दाशार्ह, अर्ह, कुकुर, अंधक, वृष्णि, यादव रक्षा कररहेहैं जैसे भोगवती पुरीकी नाग रक्षा करैं हैं ॥ ११ ॥ सब ऋतुनमें सब पुष्पादि फलै, पुण्यदायक वृक्ष लताके मंडपनसों शोभित है, फलप्रधान हो उद्यान कहावैं हैं, पुष्पप्रधान उपवन, खेलवेके योग्य वनकों आराम कहेहैं, ये जहां शोभित हैं, कमलनकी शोभा न्यारी होय रहीहैं ॥ १२ ॥ गोपुर द्वार मार्गनमें उत्सव करकै तोरण वंदनवार बांधेहैं, चित्र विचित्र गरुडके चिह्नसों अंकित ध्वजा लगाएहैं, जयदायक यंत्र कढे बडे २ झंडा लगेहैं, जिनके फरराहटेसो कहूंहू बजारमें या गलीमें धूप नहीं लगेहै ॥ १३ ॥ महामार्ग, छोटे मार्ग, दुकानदारनको मार्ग, चौरहै सब छिडके, बुहारेहैं, सुगंधिके जल अतर गुलाबजलके जहां छिडकाव फल पुष्प चामर दूर्वाअंकुर विखेरेहैं ॥ १४ ॥ गृहनके द्वार द्वारमें दही अक्षत फल गंडेरी पूर्णकुंभ बलिदान धूप दीप इनसो अतिशोभित हैरहेहै ऐसी द्वारकाकी शोभा होयरहीहै ॥ १५ ॥ प्यारे श्रीकृष्णजीकों आवते सुनके महामनवारे वसुदेव, अक्रूर, उग्रसेन, बलदाऊ अद्भुत पराक्रमी सब आवतेभए ॥ १६ ॥ प्रद्युम्न चारुदेष्ण जांबवतीसुत सांब अति हर्षके मारे शयन आसन भोजन त्यागके आये ॥ १७ ॥ एक गजेंद्र आगे करो, ब्राह्मण सुमंगल गावैं हैं, शंख तूर्यके शब्द होते आवैहै, आदरसो ब्राह्मण वेदपाठको घोष करते आवैं हैं यादवनमें श्रेष्ठ नम्रतासो महासमोहको प्राप्त हो प्रसन्न हो रथपर बैठ भगवान्के सन्मुख आवतेभये ॥ १८ ॥ श्रीकृष्णजीके दर्शनको सैकडों वेश्या कि जिनके देदीप्यमान कुंडलकी कांतिसों कपोल और मुखकी शोभा प्रकाश हैरही है सवारिनपे बैठके आवती भई ॥ १९ ॥ नवरस जानवेवारे नट, तालके अनुसार नाचवेवारे नर्तक, गायवेहारे गंधर्व, पुराणवक्ता सूत, वंशनके जानवेवारे मागध, जैसो देखे तैसो कहै वे बंदीजन ये सब श्रीकृष्णजीके अद्भुत चरित्र गावैहैं ॥ २० ॥ या समय भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने सन्मुख आये अपने बंधु और पुरवासियनको अनेक प्रकारसों सन्मान कियो ॥ २१ ॥ कोई शिरसो नमै कोई वाणीसो नमः करै कोई मिले, काऊसो हाथ मिलायो, काऊको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुसुकायके देखो, चांडाल पर्यंतको शांत कर सबको यथायोग्य वर देते भए ॥ २२ ॥ और आपहू गुरु, ब्राह्मण तथा स्त्रीनसहित वृद्धानके आशीर्वाद श्रवण करते भये और वंदीजननसों स्तुतिको प्राप्त हो पुरमें प्रवेश करते भये ॥ २३ ॥ हे विप्र ! जब श्रीकृष्णजी राजमार्गमें आये तब द्वारकाकी कुलस्त्री विनको महाउत्सव देखवेको महलनपर जाय बैठतीभई ॥ २४ ॥ यद्यपि द्वारकावासी श्रीकृष्णको नित्य देखतेहैं तथापि अंग अंग शोभित श्रीकृष्णको देख विनकी दृष्टि तृप्त नहीं होतीही ॥२५॥ लक्ष्मी जिनके उरमें निवास करै, जिनको मुख सब प्राणिनकी दृष्टिनकी सौंदर्यामृतपानार्थ पात्र है जिनके बाहु लोकपालनको निवासस्थान है, पदकमल विनके यश गायवेवारे भक्तनको निवासस्थान है ॥२६॥ शुक्लछत्र चमरसों शोभित, मार्गमें पुष्पवृष्टिसो शोभित, पीरे पीतांबर वनमालासो प्रकाश करते भए, जैसे मेघ सूर्य तारा, इंद्रधनुष विजुरी एकसंग सोहैं तद्वत् कृष्णकी शोभा है छत्र तो सूर्यकी उपमा है, पुष्पवृष्टि नक्षत्र है, मंडलाकारक चमर पंखा चंद्रमाकी समान है वनमाला धनुष है, विजुरी पीरो पीताम्बर है, ये अभूतोपमा कहावै है ॥ २७ ॥ अपनी मासे मिले, पिताके घरमें आए, सिरसो सातों देवकी आदि माताननको आनंदित होय वंदना करते भए ॥ २८ ॥ वे पुत्रकों गोदमें बैठाय स्नेहसो स्तननमेंसे दूध चूय हर्षसो विह्वल देह नेत्रनके जलसो सींचती भई ॥ २९ ॥ याके उपरांत सब कामसो उत्तम अपने भवनमें प्रवेश करते भए, जहां सोले हजार एकसौ आठ पत्नीनके रहवेके महल हैं ॥ ३० ॥ श्रीकृष्णपत्नी श्रीकृष्णको परदेशसे आए देखकर महाप्रसन्न भई और लाजभरे नेत्रनसों नीचो मुख किये व्रतनके संग शरीर और अंतःकरणसो सहसा उठ खडी भई क्रीडा, शरीरको मलके धोवनो, समाजमें जानो, उत्सव देखनो, हासी करनी, पराये घर जानो, जाको पति परदेश गयो होय वह इतनी वस्तु न करै ऐसे याज्ञवल्क्यस्मृतिमें लिखो है ॥ ३१ ॥ हे शौनक ! वे श्रीकृष्णकी गंभीर स्वभाववारी स्त्री प्रथम बुद्धि पश्चात् दृष्टि ताके पीछे पुत्रनके द्वारा श्रीकृष्णसो मिलि यद्यपि विनने लज्जासो नेत्रनके आंसू रोक राखे थे तथापि विकलतासो निकसि आये ॥ ३२ ॥ यद्यपि कृष्ण पास है एकांतमें रहिते हैं तथापि विनके दोनों चरणनको नवीन २ संगम क्षण २ में कौन भूलेगो जब चंचल लक्ष्मीजी विनके समीपसो कभू कहीं नहीं जायहै तब कौन स्त्री विनके चरणकी सेवाको त्यागैंगी ॥ ३३ ॥ ऐसे पृथ्वीपे भाररूप जिनके जन्म, अक्षौहिणी करके सब ओर जिनको ते ऐसे राजानको आपसमें वैर कराय, परस्पर वध कराय आप उपरामको प्राप्त भए, जैसे बांसके वनमें आपसमें घसके अग्नि लगके बांसवन जलायके जल शान्त होजायहै ॥ ३४ ॥ ये भगवान् अपनी मायाकरके मनुष्यनाट्य करवेको अवतार लेतेभए, स्त्रीरत्नसमूहमें स्थित हो प्राकृत संसारी जीवनकी नाईं रमण करतेभए ॥३५॥ जिन स्त्रीनके गंभीर अभिप्रायसूचक मनोहर सुंदर लाजसहित हास्यसो ताडित हो महादेव मोहित हैके अपनों पिनाकधनुष त्यागते भए वे ऐसी श्रेष्ठ स्त्री जिन श्रीकृष्णजीकी इंद्रियनको वश करवेको कपटभावसेहू समर्थ न होतीभई ॥३६॥ तिन श्रीकृष्णजीकों ये प्राकृतलोग अपनी समान संगी मनुष्य मानें हैं, वे किसीके संग नहीं है तत्वके न जानवेवारे पुरुष अपने अज्ञानसो विन्हें व्यापार करते देख विषयी मानेहैं ॥३७॥ ईश्वरकी यही ईश्वरता है कि मायामें स्थित होके असत् सुख दुःखादिक मायाके गुणनकरके लिप्त नहीं होयहै जैसे मायाश्रया बुद्धि मायाकी उपाधिमें लिप्त नहीं होयहै ॥ ३८ ॥ अपने भर्ताके प्रमाणकी न जानवेवारी मूर्ख अबला स्त्रियें स्त्री चाहवेवारे एकांतमें क्रीडा करवेवारे श्रीकृष्णको मानती भई, जैसे अहंकारकी वृत्ति मति ईश्वरको स्वाधीन माने है ॥ ३९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तं मेनिरेऽबला मूढाः स्त्रैणं चाऽनुव्रतं रहः ॥
अप्रमाणविदो भर्तुरीश्वरं मतयो यथा ॥ ३९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे श्रीकृष्णद्वारकाप्रवेशो नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

अध्याय १२.

शौनक उवाच-अश्वत्थाम्नोपसृष्टेन ब्रह्मशीर्ष्णोरुतेजसा ॥
उत्तराया हतो गर्भ ईशेनाऽऽजीवितः पुनः ॥ १ ॥

शौनक मुनि बोले कि । अश्वत्थामाके छोडे भए तेजस्वी ब्रह्मास्त्रसो उत्तराको गर्भ नष्ट भयो हो सो फेर ईश्वरने जिवायो ॥१॥ ताको जन्म महाआश्चर्यको और कर्म हमसे कहो जैसे देह त्यागनकर परलोक गयो सो कहो ॥ २ ॥ जो आप कहिवेको योग्य जानो तो कहो, हमारी सुनवेकी इच्छा है जैसे वाको शुकदेवजीने ज्ञान दियो वह सब हमें सुनायो ॥३॥ सूतजी बोले कि । कृष्णचरणकी सेवासो सब कामनकी इच्छारहित राजा युधिष्ठिर बेटा बेटीकीसी नाईं प्रजापालन करते भये ॥ ४ ॥ संपद्, यज्ञ, लोक, स्त्रियें, भाई, धरती, जंबूद्वीपको राज्य और स्वर्गतक पहुँचो यश ॥ ५ ॥ हे द्विजो ! ये सम्पूर्ण पदार्थ देवताहू जिनकी इच्छा करैं वह राजा युधिष्ठिरके विद्यमान है परन्तु युधिष्ठिरको मन श्रीकृष्णमें आसक्त हैवेके कारण वाकों कछु आनंददायक नहीं भये जैसे भूंखे पुरुषको पुष्पमाला चंदन आदि पदार्थ प्रीतिकारक नहीं होयहै ॥ ६ ॥ हे भृगुनंदन ! माताके गर्भमेंहू वो वीर परीक्षित् जब अस्त्रके तेजसों तापित भयो तब कोई एक पुरुषको देखतो भयो ॥ ७ ॥ अंगुष्ठमात्र निर्मल दमकते सुवर्ण समान मस्तक, अतिसुंदर, श्याम, विजुरीसमान पीतांबर पहरे विकाररहित ॥ ८ ॥ शोभायमान लंबी चार भुजा, तप्तसुवर्णके कुंडल पहरे, लालनेत्र, गदा लिये अपने चारों ओर ॥ ९ ॥ सब ओर घूमैं उल्काकी समान अतिश्रेष्ठ भक्तनकी रक्षामें परायण कौमोदकी गदाको वारंवार घुमाते ॥ १० ॥ जैसे सूर्यको कुहरा नाश करै तैसे अपनी गदासो अस्त्रको तेज नाश करते महापुरुषको देख वह बालक गर्भमेंही विचार करनलगो कि यह कौन है ॥ ११ ॥ धर्मरक्षक अप्रमेय विभु, भगवान् वा ब्रह्मास्त्रकों दूर कर दशमासके बालकके देखते २ तहांही अन्तर्ध्यान हैगये ॥ १२ ॥ ताके उपरान्त सब गुणनसों परिपूर्ण सुखदायक अनुकूल ग्रहनके उदयसमयमें वंशधारी पांडुके घरमें जन्म लियो मानों फेर पांडु राजा जन्म लेतभए ॥ १३ ॥ प्रसन्नमन राजा युधिष्ठिर धौम्य कृपादिक विप्रनसो वा बालकके जन्मसमयके सब कर्म करवावते भए, स्वस्तिवाचन मंगल करावते भए ॥ १४ ॥ जबतक नालच्छेदन नहीं होय है तबतक सूतक नहीं लगैहै, नाल कटे पीछे सूतक लगैहै, सो सुवर्ण, गौ, धरती, ग्राम, हाथी और श्रेष्ठ घोडा देतोभयो, सुंदर अन्नसो ब्राह्मण जिमाय पुत्रके उत्पन्न हैवेके समयमें जैसे तीर्थमें दान पुण्य करै तैसे किये ॥१५॥ प्रसन्न भये ब्राह्मण नम्रीभूत राजासो बोले कि हे पुरुवंशिनमें श्रेष्ठ ! ये अतिपवित्र कुरुनकी संततिको तंतु ॥ १६ ॥ अप्रतिहत कालरूपी दैवकरके मृत्युको प्राप्त होतोहो सो तुमारे ऊपर अनुग्रह करवेवारे विष्णुभगवान् प्रभविष्णुने (रातः) रक्षा कियोहो ॥ १७ ॥ याते या तुमारे नातीको नाम विष्णुरात होयगो, ये बडो यशस्वी होयगो, यामें संदेह नाय है महाभागवत होयगो ॥ १८ ॥ श्रीयुधिष्ठिरजी बोले कि । हे द्विजसत्तम ! पुण्यश्लोक महात्मा राजाऋषीनके वंशके अनुसार साधुवाद करके यह विनको अनुवर्ति होयगो कि नहीं सो कहो ॥ १९ ॥ ब्राह्मण बोले कि ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे पार्थ ! प्रजाको रक्षक; साक्षात् इक्ष्वाकुकी नाईं होयगो, ब्रह्मण्य, सत्यतामें दाशरथी रामचंद्रके बराबर होयगो ॥ २० ॥ ये दानको करनवारो और शरणागतको प्रतिपालक शिवि उशीनर देशवासीकी नाईं होयगो, उशीनर देशवासी राजा शिबिने अपनो मांस शिकराको देके शरणागत कपोतकी रक्षा कीनी, अपनेनको यश विस्तार करनवारी और यज्ञकर्तानमें यश फैलानवारी दुष्यन्तपुत्र भरतकी समान होयगो ॥ २१ ॥ धनुषधारीनमें अग्रणी सहस्रार्जुन अर्जुनकी नाईं होयगो, अग्निकी नाईं दुर्धर्ष होयगो, सागरसमान दुस्तर होयगो ॥ २२ ॥ सिंहसदृश पराक्रमी हिमवान्की नाईं सेवायोग्य होयगो, वसुधाकी नाईं सहनशीली होयगो, सहनेवारो मावापकी नाईं होयगो ॥ २३ ॥ ब्रह्मासमान साम्यभावमें रहेगो, महादेवजीकी नाईं शीघ्र प्रसन्न होनवारो होयगो, सब जीवनके आश्रय देवेको भगवान्की नाईं होयगो ॥ २४ ॥ सब सद्गुणको माहात्म्य कृष्णभक्त होयगो, रंतिदेवकी नाईं उदार, ययातिकी नाईं धर्मात्मा होयगो ॥ २५ ॥ धैर्यमें बलिसमान, समतामें श्रीकृष्णजीकी नाईं, प्रह्लादकी नाईं सब सत्पदार्थग्राही होयगो, अश्वमेध करैगो, वृद्धनकी अतिउपासना करैगो ॥ २६ ॥ राजऋषिनको जन्मावैगो, पाखण्डीनको शिक्षक होयगो, भूमिके और धर्मके कारणते ये कलियुगको पकडके दंड देयगो ॥ २७ ॥ ब्राह्मणके पुत्रके शापसो काटवेको आये तक्षक नाम नागके द्वारा अपनी मृत्यु सुनके सब संग त्यागके श्रीमद्भागवत सुन श्रीहरिके वैकुंठको प्राप्त होयगो ॥ २८ ॥ आत्माको याथात्म्य जानके व्याससुत शुकदेवसो ज्ञान सुनके गंगातटपें देह त्यागकर जहां कभीभी भय नहीं वा पदको जायगो ॥ २९ ॥ ज्योतिषी ब्राह्मण ऐसे राजासो कहिके पूजा लेके अपने अपने घरनको जाते भए ॥ ३० ॥ सो ये लोकमें विख्यात परीक्षित गर्भमें देखे भये प्रभु भगवान्को ध्यान कर सब नरनमें परीक्षा करतो भयो डोलेगा कि जो पुरुष मैंने गर्भमें देखोहो वह कहां है यासों परीक्षित नामसों जगत्में विख्यात होयगो ॥ ३१ ॥ जैसे दिन दिन अपनी कलानसों पूर्ण होतो शुक्लपक्षको चंद्रमा वृद्धिको प्राप्त होय है ऐसे यह परीक्षितहू अपने पितामहानसों लालित पालित हो चौंसठ कला करके परिपूर्ण हो प्रतिदिन बढनलगे ॥ ३२ ॥ जातिकेनके द्रोह त्यागकी इच्छा करके अर्थात् भारतसंग्राममें जातिके भाईबंधुनके मारवेमें जो मोकू पाप (हत्या) लगोहै याको कैसे दूर करोगो या इच्छाकरके युधिष्ठिरने अश्वमेध यज्ञ करवेकी इच्छा कीनी परन्तु राजानके ऊपर दंडके विना और प्रजानके ऊपर कर लगायो विना धनप्राप्ति न देखकर मनमें विचार करते भये ॥ ३३ ॥ ये अभिप्राय जानके भगवान्के भेजेभए सब भाई उत्तरकी दिशासो जहां राजा मरुत्के यज्ञको धन पडोहो वहांसों बहुत धन लाये ॥ ३४ ॥ वा धनसो सब सामग्री तैयार कर धर्मनंद राजा युधिष्ठिर तीन अश्वमेध यज्ञ करतो भयो, ज्ञातिके द्रोहसो डरे राजाने यज्ञनसों श्रीकृष्णका पूजन किया ॥ ३५ ॥ राजाके बुलाये भये श्रीकृष्णजी ब्राह्मणनसों राजाको यज्ञ करायके अपने सुहृदनके प्यारकी इच्छा कर कछु मास वहां निवास करते भए ॥ ३६ ॥ हे ब्रह्मन् ! पीछैं राजासो आज्ञा ले द्रौपदीसो पूंछ, भाई बंधुनसो आज्ञा लेके नोकर चाकर और यादवसहित श्रीकृष्ण द्वारकाको जाते भए ॥ ३७ ॥

ततो राज्ञाऽभ्यनुज्ञातः कृष्णया सह बन्धुभिः ॥
ययौ द्वारावतीं ब्रह्मन्सानुगैर्यदुभिर्वृतः ॥ ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे परीक्षिज्जन्मोत्सवो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १३.

सूत उवाच-विदुरस्तीर्थयात्रायां मैत्रेयादात्मनो गतिम् ॥
ज्ञात्वाऽगाद्धास्तिनपुरं तयाऽवाप्तविवित्सितः ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि विदुर तीर्थयात्रामें मैत्रेयजीसो श्रीकृष्णजीकी गति श्रवण करकै हस्तिनापुरमें आए विदुर कैसे हो कि वा आत्मगतिके प्रतापसों प्राप्त कीनी हो विविवित्सित जानवे लायक जाने अर्थात् जानवे लायक जाको कुछ बाकी न रह्यो ॥ १ ॥ विदुरजीने मैत्रेयजीके आगे जितने प्रश्न करे, विनमेंसो तीन चार प्रश्नसोही गोविंदमें भक्ति भई, सो विन प्रश्ननसो उपराम भयो अर्थात् पूछवे लायकेहू जा विदुरको कोई बाकी न रह्यो ॥ २ ॥ हे ब्रह्मन् ! विदुरबंधुको आए देख भाई सहित धर्मपुत्र धृतराष्ट्र युयुत्सु, संजय, कृपाचार्य, कुंती ॥ ३ ॥ गांधारी, द्रौपदी, सुभद्रा, उत्तरा, कृपी द्रोणाचार्यकी स्त्री, जातिकी स्त्रियें पुत्रसहित और स्त्रियें ॥ ४ ॥ येह सब बडी प्रसन्न हैकै श्रीकृष्णचंद्रके सन्मुख आईं जैसे प्राणनके आएपें सब इन्द्रिय उनके सन्मुख जांय है आलिंगन और प्रणाम कर विधिपूर्वक मिलै ॥ ५ ॥ विरहकी उत्कंठासों विवश हो प्रेमके अश्रुपात वहितेभए, युधिष्ठिरने पूजा कीनी, आसनपर बैठाए ॥ ६ ॥ जब भोजन कर विदुरजी सुखसों आसनपर बैठे तब नम्रतासो प्रणाम कर राजा विन सबके सामने बोले ॥ ७ ॥ युधिष्ठिर बोले कि । आपकी पक्षरूप छायासों बढे हमको आप कभू याद करो हो कि नांय, जैसे पक्षीलोग अपने पुत्रनको अतिस्नेहसो पंखनकी छायासो बढावेहै तैसे आपने हमें बढाए हमारी मा सहित हमको सब विपत्तीनसो छुडाए, विपत्तीनसो, जहरसो, अग्निसो और अनेक ठौर विघ्ननसो रक्षा कीनीं ॥ ८ ॥ या क्षितिमण्डलमें विचरतेने आपने कौन वृत्तिसो शरीर निर्वाह कियो, या भारतवर्षमें धरतीपें जितने तीर्थक्षेत्र मुख्य हैं वे सब आपने करे ॥ ९ ॥ आपसरीखे महात्मानको तीर्थाटन तीर्थनके अनुग्रहके अर्थ है, कुछ अपने अर्थ नहीं है । आपसरीखे भागवत आपही तीर्थरूप हैं, तीर्थनकोहू पवित्र करें हैं । अपने अंतःकरणके निवासी गदाधारी भगवान् करकै मलिनजननके संगसो तीर्थ मलिन हैजायहैं, विनको फेर सत्कर्म अनुष्ठानी वेदांती ज्ञानी भगवद्भक्त पवित्र सत्वादिगुणयुक्त ब्राह्मण पवित्र करें हैं, भगवद्भक्तनसो तीर्थहू शुद्ध है जाय है ॥ १० हे तात ! हमारे सुहृत् बांधव कृष्ण जिनके देवता ऐसे यादव आपने देखेसुने हैं, अपनी पुरीमें सुखी है कि नांय सो कहो ॥ ११ ॥ धर्मराजने जब ऐसे कहो तब विदुरजीने जैसो अनुभव कियोहो तैसो सब वर्णन करतेभए परंतु यदुकुलको क्षय वर्णन नहीं करो ॥ १२ ॥ ये निश्चय है कि जो अप्रिय है सहनेयोग्य नहीं है वो तो मनुष्यनको दैवयोगसो आपही आयजायहै, यासो दयालु विदुर अपने सामने विनको दुःखी देख न सके यासो न कह्यो ॥ १३ ॥ याके उपरांत कछुक काल वास करतेभए, सत्कार पाय देवताकी नाईं सुखी रहे, बडे भैयाके कल्याणके अर्थ सबसों प्रीति करतेभए ॥ १४ ॥ मांडव्यके शापसे सौ (१००) वर्षतक यहां यमराज शूद्ररूप होय विदुर नामसो रहे तबतक यथावत् पापिनको अर्यमा यम होय दंड देतेभए याकी कथा ऐसे है कि " चोरनके पीछे दौडते राजदूत मांडव्यऋषि तप करतेहे उनके समीप आयके ऋषिसहित चोरनको बांध लाये राजासो कही तब राजाकी आज्ञासो सबको शूलीपे धरदीने तब राजानें विन्हें ऋषि जान शूलसों उतार प्रसन्न करलिये, पीछे मुनि यमधर्मराजके पास जाय कोपसों बोले कि हमें क्यों शूलपे चढवायो, तब यमराज बोले कि बालकपनमें टीडीको कुशाके अग्रभावसो छेदके तुम खेले हे यासो ऐसे करनो पडो, ये सुन मांडव्यने शाप दीनो कि बालकपनमें अज्ञानसो मैंने कर्म करो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ताको ऐसो बडो दंड दीनो यासों तुम शूद्र होओ" ॥ १५ ॥ राज्य पाय युधिष्ठिर पोतेको कुलधारक देखके लोकपालसम भ्रातृसहित परम लक्ष्मीसो आनंदित होतेभए ॥ १६ ॥ गृहके व्यापारसों गृहमें आसक्तमन जिनको याहीसो अतिशय मतवारेसों भये जे युधिष्ठिरादिक हैं तिन्हें मालूम न पडी परंतु विनको परम दुस्तर काल आय पहुँचो ॥ १७ ॥ ये अभिप्राय जानके विदुरजी धृतराष्ट्रसो बोले हे राजन् ! अब यहांसो शीघ्र निकरो ये भय आयोहै सो देखो ॥ १८ ॥ हे प्रभो ! काहू तरहसों और कभूहू जा कालकी कोई लौटायवेकी क्रिया नहीं है सो यह भगवान् काल हम सबको आयके प्राप्त भयो ॥१९॥ जा कालसो ग्रसोभयो जीव अतिप्रिय प्राणनसोहू शीघ्र छुटायो जाय है, तब फिर धनादि पुत्रादिकनको वियोग होय तो कहा कहनो है ॥ २० ॥ पिता भाई सुहृत् पुत्र ये सब तुम्हारे मारे गए, सब आयु तुम्हारी है चुकी, देहको बुढापेनें घेरो; पराए घरमें वसोहो ॥ २१ ॥ बडो आश्चर्य है कि या जीवको जीवेकी बडी आसा लगीरहै है, सो तुम्हेंहू हैं भीमसेनके दियेभए टूक कुत्ताकी नाईं तुम खाओहो ॥ २२ ॥ जिनको तुमने अग्निमें जराये, जहर दीनो जिनकी स्त्री द्रोपदीकी अवज्ञा करी, क्षेत्र जिनको छीनो धन लेलीनो; तिनको दियोभयो अन्न खायकर प्राणनके पुष्ट करनेसो कछुभी प्रयोजन नहीं होयगो ॥ २३ ॥ कृपण और जीवेकी इच्छा करौं ऐसे जो तुम हो तिन तुम्हारो ये जराजीर्ण शरीर सब तरहसो क्षीण होयगयो है, जैसे वस्त्र पुराणो त्यागवे योग्य होयहै, तैसी या तुम्हारी देहकी गति है, सो अब धीर होओ ॥ २४ ॥ विरक्त और सब बंधनसो मुक्त, अलख गति हैकें स्वार्थरहित या देहको जो त्यागेहै सो धीर कहावेहै ॥ २५ ॥ जो कोई अपने आप अथवा परायके उपदेशते आत्माको जानके हृदयमें हरिको करके घरसो संन्यास लैके चलो जाय वो नरनमें उत्तम है ॥ २६ ॥ अपने कुटुम्बिनको मालूम न पडै, तैसे तुम उत्तरकी दिशाकों चलो, यासो पीछे पुरुषनको गुणनाशक बहुत बुरो काल आवैगो ॥ २७ ॥ आजमीढवंशी जन्मांध राजा धृतराष्ट्रको भाई विदुरने ऐसे ज्ञान दीनो, तब अपनो चित्त दृढकर भाई बंधुनमें स्नेहफास ताय काटके भाईनने जो मार्ग दिखायो वा मार्गमें हैके निकसगयो ॥ २८ ॥ पतिको जातो देखकर सुबलकी बेटी पतिव्रता साध्वी गांधारी पीछे पीछे जातीभई, तब ये तीनों न्यस्तदंड मनुष्यनके आनंद देनवारे हिमालयको गये, मनस्वी शूरनको जैसे युद्धमें सुन्दर प्रहार प्रिय लगैहै तैसे करतेभये ॥ २९ ॥ धर्मराज सन्ध्यावन्दन कर अग्निमें हवन कर तिल गो भूमि सुवर्ण दान कर ब्राह्मणनको नमस्कार कर गुरुवंदनके गृहमें गयो, सो न तौ विदुर धृतराष्ट्र देखे न गांधारी देखी ॥३०॥ उद्विग्न मनसों तहां बैठेभए संजयसों पूछतेभए, हे गावल्गणे ! हे संजय ! हमारो चाचा बढे नेत्रहीन कहां गये सो कहो ॥ ३१ ॥ मृतपुत्रा हमारी सुहृत् चाची कहां गई जो आप जानोहौं तो हमसें कहो, आप व्यासजीकी कृपासो सब जानोंहो ॥ ३२ ॥ बुद्धिहीन मोमें कछू अपराध विचार बंधुनके मरवेसों स्त्रीसहित दुःखित हैकें कहीं गंगामें तौ न जाय पडै ॥ ३३ ॥ हमारो पिता परमपदको गयो, तापीछे सब बाल सुहृद जानके अनेक कष्टनसो रक्षा करतेभए, वे हमारे चाचा चाची यहांते कहां गए ॥३४॥ सूतजी बोले कि कृपाकरके स्नेहसो विरहपीडित संजय अपने ईश्वर युधिष्ठिरको देख अतिपीडित हो कछूहू नहीं कहतो भयो ॥ ३५ ॥ दोनों हाथनसो आंसु पोछकै बुद्धिसो मनको धीरज कर अपने प्रभुके पादको स्मरण करते भए अजातशत्रुसों बोले ॥ ३६ ॥ संजय बोले कि हे कुलनंदन ! तुम्हारे पिताको जो निश्चय है सो हम नहीं जाने हैं, हे महाबाहो ! गांधारीकीहू तो खबर नहीं, इन महात्मानकरके मैं वंचित भयोहूं ॥ ३७ ॥ इतनेमें भगवान् नारद तुंबुरु गंधर्वको लेकर आए, धर्मराज विन्हको देख उठे, प्रणाम कर भाई सहित पूजन करतेसे बोले ॥ ३८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीयुधिष्ठिरजी बोले कि हे भगवन् ! चाचा चाचीकी गति हम नहीं जाने हैं यहांसो कहां गये, पुत्र जाके मरे ऐसी मा दुखियारी तपस्विनी कहां गई ॥ ३९ ॥ मलाहकी नाईं अपार समुद्रमें आप पारदर्शक हो, कारण कि आप सर्वज्ञ सब स्थानमें जायवेवारे महाबुद्धिमान् अज्ञाननाशक हो ॥ ४० ॥ ये सुनके मुनिसत्तम भगवान् नारदजी बोले कि हे राजन् ! शोक मत करो, ये जगत् सब ईश्वरके वशमें है ॥ ४१ ॥ जो सबको ईश्वर है, वाको अपने पालक सहित सब लोक बलि दैय हैं, वोही परमेश्वर सब जीवनको संयोग करे है वोहि वियोग करै है ॥ ४२ ॥ जैसे बली बैल नाथके वश होकर अपने स्वामीको सब कार्य कर बलि देय है, तैसे ये करनो ये न करनो ऐसी वेदकी वाणीरूप डोरमें, वर्णाश्रमधर्मरूप नाथकरकै बंधे सब जीव परमेश्वरको बलि देयहैं ॥ ४३ ॥ खेलवेवारेकी इच्छा करके खेलकी सब सामग्रीनको संयोग वियोग जैसे होयहै, तैसेई ईश्वरकी इच्छा करकै सब जीवनको संयोग वियोग समझो ॥ ४४ ॥ जो लोकको ध्रुव मानों अथवा अध्रुव मानों वा दोनों मत मानों, मोहसो स्नेहसो सब प्रकारसो शोक नहीं करनो चाहिये ॥ ४५ ॥ हे युधिष्ठिर ! तातें अज्ञानको करो जो ये व्याकुलपन ताहि त्यागो, तुम कहो हो कि अनाथ कृपण वनमें मो विन कैसे रहेंगे ये शोक मत करो ॥ ४६ ॥ काल कर्म गुण इनके आधीन पंचतत्त्वको बनो ये देह कौनकी रक्षा करसकै है, जैसे अजगरसर्पग्रसित जीव औरको नहीं बचायसके हो ॥ ४७ ॥ चार पगवारे पशु आदि तृणादिकको खायहैं, हस्तवारे जीव औरहू सूक्ष्मको भक्षण करै हैं ऐसेई सब जीवमात्रको जीव जीवन है, सब कालग्रसित हैं ॥ ४८ ॥ हे राजन् ! सर्वद्रष्टा सब आत्मानमें एक, भीतर बाहर जामें नहीं, मायाकरकै बहुत दीखै, सजातीय विजातीय स्वगतभेदशून्य ये भगवान्ही प्रकाश करैं हैं ॥ ४९ ॥ हे महाराज ! सो ये भगवान् कालरूपने पृथिवीपर सुरद्रोहिनके संहार करवेके निमित्त अवतार लियो है ॥ ५० ॥ देवतानको सब कार्य करचुके हैं, केवल यदुकुलकी और वाट देखे है, तवतक तुमहू यहां रहो जवतक ईश्वर श्रीकृष्णजी यहां रहै पीछे तुमहू जाइयो ॥ ५१ ॥ धृतराष्ट्र विदुरसहित गांधारीको लिये हिमाचलकी दक्षिण ओर ऋषिनके आश्रममें गएहैं ॥ ५२ ॥ जहां गंगाजी सातऋषिनके प्रसन्न करवेके अर्थ सात ओर बहिके आप सातरूप भई हैं, यासों वो सप्तस्रोत विख्यात हैं ॥ ५३ ॥ वहां सदा स्नान कर यथाविधि अग्निमें हवन कर पवनभोजन कर अति शांत मनकरकै सब कुटुम्बसो मन हटायकर वहां विद्यमान है ॥ ५४ ॥ आसन जीति श्वास जीत छओं इंद्रिनको प्रत्याहार करकै हरिभावनासो राजस तामस सात्विक सब मलरहित हैगये हैं ॥ ५५ ॥ अहंकारके स्थान आत्माको स्थूल देहसो पृथक् कर विज्ञानात्मामें चित्त आरोपण कर जीवान्तर्यामी सर्वाधार बृहत्त्वादिगुणविशिष्ट चैतन्य ब्रह्ममें जीवात्माको संयोग कर तद्रूप हैके लीन होयगे, जैसे घट फूटनेसें घटाकाश महाकाशमें लीन होय है ॥ ५६ ॥ माया गुणनकी वासनासो रहित होय इंद्रिय अंतःकरण रोक, सब प्रकारके आहार त्यागे खंभकी नाईं अचल होजायगे ॥ ५७ ॥ वे सब कर्मसो संन्यस्त है तुम वामें कोई विघ्न मत करियो हे राजन् ! सो वे आजसो पांच दिनके उपरांत ॥ ५८ ॥ शरीर त्यागैंगे वो देह आपही भस्म है जायगो, विदुरजीके ज्ञानसौ धृतराष्ट्रको मोक्ष होयगो ॥ ५९ ॥ पर्णशालामें अग्निसो जब देह जरजायगो, तो बाहिर स्थित साध्वी विनकी स्त्री गांधारी वाही अग्निमें प्रवेश करैगी ॥ ६० ॥ हे कुरुनंदन ! विदुर ये आश्चर्य देखकर अतिहर्ष शोकयुक्त तीर्थयात्राको चले जायगे ॥ ६१ ॥ ऐसे कहि तुंबुरुगंधर्वसहित नारदजी स्वर्गको गए, युधिष्ठिरजी विनको वचन हृदयमें कर शोकत्याग करतेभए ॥ ६२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इत्युक्त्वाऽथारुहत्स्वर्गं नारदः सहतुम्बरुः ॥
युधिष्ठिरो वचस्तस्य हृदि कृत्वाऽजहाच्छुचः ॥ ६२ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

सूत उवाच–संप्रस्थिते द्वारकायां जिष्णौ बन्धुदिदृक्षया ॥
ज्ञातुं च पुण्यश्लोकस्य कृष्णस्य च विचेष्टितम् ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि । बंधु देखवेकी इच्छाकरके और पुण्ययशस्वी श्रीकृष्णजीकी चेष्टा जानवेके निमित्त द्वारकामें गये अर्जुनको ॥ १ ॥ हे परीक्षित ! कछु मास व्यतीत भए तोहू अर्जुन न आयो तब युधिष्ठिरजी घोर रूप उत्पात देखते भए ॥ २ ॥ कालकी घोरगति देखी, धर्मको उलटो देखो, क्रोधी लोभी मिथ्यावादी जीव देखे, विनकी पापी बातें देखतेभये ॥ ३ ॥ सब लोग व्यवहारमें कपट करवेलगे, सुहृदताईमेंहू ठगपनो देखो, पिता माता सुहृद भाई लोग लुगाई ये सब कलह करवेलगे ॥ ४ ॥ कालसो अत्यंत अरिष्टकारी शकुन देखे, लोभसो आदि लेके अधर्मकी प्रकृति देखके राजा युधिष्ठिर भीमसेनजीसो बोले ॥ ५ ॥ युधिष्ठिर बोले कि । अर्जुनको बंधुनकी खबर लायवेको द्वारकामें भेजो हैं, और पुण्ययशवारे श्रीकृष्णजीकी कहा करवेकी इच्छा है यालिये भेजो हो ॥ ६ ॥ सो हे भीमसेन ! अब सात मास भये तुम्हारो भैया आयो नहीं, याको कहा कारण है, सो अनायासकरके हम नहीं जानसकै ॥ ७ ॥ ऐसो निश्चय होय है कि श्रीनारदजी जो कहिगए वो समय आयगयो कहा, क्यों कि जा समय सब क्रीडाके साधन अंगको भगवान् त्यागैंगे, वा समय सब अमंगल होयगो ॥ ८ ॥ जिन श्रीकृष्णजीकी कृपासो सब हमारे संपदा राज्य स्त्री प्राण कुल प्रजा वैरीनको विजय सब लोकको धन होतो भयो ॥ ९ ॥ हे नरव्याघ्र ! स्वर्गके भूमिके शरीरके दारुण बुद्धिके मोह करावनेवारे भयदायक उत्पातनको देखो ॥ १० ॥ हे मित्र ! छातीको वामभाग, बांयो नेत्र बांई भुजा ये सब वारंवार फरकें हैं और हृदय वारंवार कांपै है, समीपही कछु अप्रिय बात होयगी ऐसो दीखै है ॥ ११ ॥ सूर्यके सामने खडी होय ये गीदडी रोवै है, मुखसो आग उगले है, हे भीम ! मेरे सामने खडे होयके निःशंक होकर कुत्ता रोवै है ॥ १२ ॥ अच्छे पशु गौ आदिक तो मेरे बांयें होकर निकसे है, और गर्दभ आदिक मेरी परिक्रमा करें हैं, हे पुरुषनमें सिंहसम ! हे भीम ! मेरे रथके घोडे जब सवार होऊं तब रोवतेसे दीखें हैं ॥ १३ ॥ मृत्युके दूत ये कबूतर कौआ घूघू रातको बोलै हैं, विश्वको सूनो करनो चाहैहै ऐसे इन लक्षणनको देख देख मेरो मन कांपै है ॥ १४ ॥ सब दिशा धुंधरी होयरहीं हैं सूर्य चंद्रमाके मंडल बन्धे हैं, पर्वतसहित भूमि कांपै है, मेघके विना वज्रपात होय है, बादर भए विना गर्जनकी अवाज आवै है ॥ १५ ॥ पवन धूर लेकर उडे है, रेतसो अंधकार कररही है, सब ओरसो भयानक मेघ रुधिर वर्षावे है ॥ १६ ॥ स्वर्गमें सब ग्रह आपसमें लडैं हैं, सूर्यकी कछू कांति नाय है, ये देखो भूतगणनसो व्याकुल सब धरती मानो जर रही है ॥ १७ ॥ नदी नद सरोवर सब क्षोभको प्राप्त है; अग्निमें घृत डारवेसो जरती नहीं हैं ऐसो यह काल कहा करैगो ॥ १८ ॥ वत्स स्तन नहीं पीत है, मैया स्तनमेंसो दूध नहीं छोडै है गौ सूर्यसन्मुख ठाडी होय आंशु गेरती रोवै है, गौअनके स्थाननमें बैल प्रसन्न होके बोलते नहीं है ॥ १९ ॥ मंदिरनमें देवतानकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रतिमा रोयरही हैं पसीना आयरहे है हले न्यारी हैं ये देश गांव पुर बाग खान आश्रम इनकी शोभा जातीरही है, आनंदरहित हैवेसो न जाने ये उत्पात हमको कहा दुःख देयगे ॥ २० ॥ इन उत्पातनसे मोकू निश्चय होय है कि अनन्य शोभावारे भगवान् श्रीकृष्णके चरणारविंदनके हीन हैवेसो यह पृथ्वी सौभाग्यहीन भई है ॥ २१ ॥ हे ब्रम्हन् ! इतनेहीमें अरिष्ट देखवेसो मनमें चिंता करते भए राजाके समीप यदुपुरीसो हनुमान् जाकी ध्वजामें ऐसे अर्जुन आवते भए ॥ २२ ॥ अपने पायनमें पडे विवश आतुर, नीचे मुख करे नयनकमलसों आंसू छोडते ॥ २३ ॥ कांतिहीन भाई अर्जुनसों सुहृदनके सामने नारदजीकी कहीको याद कर कंपितहृदय राजा युधिष्ठिर पूछते भए ॥ २४ ॥ राजा युधिष्ठिर बोले कि । मधु, भोज, दशार्ह, सात्वत, अंधक, वृष्णि ये सब राजा सुखी हैं कि नांय ॥ २५ ॥ मान्य शूर नाना वसुदेव तो प्रसन्न हैं, भाईसहित मामा कुशल है ॥ २६ ॥ सांतों बहिनें तिनकी स्त्रियें मामी पुत्रसहित पुत्रवधूसहित देवकी आदिकी क्षेम तो है ॥ २७ ॥ कुत्सित पुत्रवारे उग्रसेन राजा, देवक भाईसहित जीवें हैं, हृदीक पुत्रसहित अक्रूर जयंत गद सारण ॥ २८ ॥ जो शत्रुजित् आदिक हैं वे कुशल हैं, भगवान् सात्वतनके प्रभु बलदेवजी राजी हैं ॥ २९ ॥ सब वृष्णिनमें महारथी प्रद्युम्न तो सुखी है, गंभीर वेगवारे भगवत्समान अनिरुद्ध कछु बडेभए कि छोटेही हैं ॥ ३० ॥ सुषेण चारुदेष्ण जाम्बवतीपुत्र सांब और सब श्रीकृष्णसुत पुत्रसहित ऋषभादिक ॥ ३१ ॥ तैसेई श्रीकृष्णजीके अनुचर श्रुतदेव उद्धवादिक सुनंद नंद मुख्य जो यादवनमें श्रेष्ठ हैं ॥ ३२ ॥ रामकृष्णकी भुजासो रक्षित रहैं वे सब प्रसन्न हैं, जिनने हमसो सौहृद करोहै वे सब कुशल हैं ॥ ३३ ॥ ब्राह्मणनके चहिवेवारे भक्तवत्सल गोरक्षक भगवान् भाईबंधु सहित द्वारकामें सुधर्मासभामें सुखी है ॥ ३४ ॥ सब लोकनके मंगलके अर्थ, सबके क्षेमके अर्थ, सबकी वृद्धिके लिये शेषसखा आद्यपुरुष श्रीकृष्ण यदुकुलरूप समुद्रमें सुखी हैं ॥ ३५ ॥ जिनकी भुजारूप दण्डसो रक्षित द्वारकामें पूजित यादव परम आनंदित वैकुण्ठनाथके पार्षदनकी नाईं क्रीडा करै हैं ॥ ३६ ॥ जिनके चरणारविंदकी सेवारूप मुख्यकर्मसो सत्यभामादिक सोले हजार स्त्रियें संग्राममें देवतानको जीत इंद्रकी रानीके भोग्य कल्पवृक्षादिक सुंदर द्रव्योंका हरण करै हैं ॥ ३७ ॥ जिनकी भुजदंडसो रक्षित उत्साहसो जीवेवारे यादव भय त्यागे सुरश्रेष्ठनके योग्य सुधर्मासभाकों बलात्कारसो लायके वामें चरण धरें हैं वे भगवान् प्रसन्न तो है ॥ ३८ ॥ हे तात ! हे भैया ! तुम तो प्रसन्न हो मोकों ऐसे मालूम पडे है कि तुमारो तेज भ्रष्ट हैगयो है; अथवा बहुत दिनां रहे याते तुम्हारो मान न करो होय अवज्ञा करी है ॥ ३९ ॥ अमंगल प्रेमरहित शब्दसो तो तुम्हें काऊने नहीं पुकारो और जो मांगवेवारो आशाकरकै आयो वाको पैले देन कहिके तो फिर कहू तुमने दीनों न होय ऐसे तो न करो है ॥ ४० ॥ शरणदायक तुमनें ब्राम्हण, बालक, गौ, वृद्ध, रोगी, स्त्री, कोई शरणागत आयो होय वाको तो कहीं त्याग नहीं करो है ॥ ४१ ॥ जो स्त्री गमन करवे योग्य नहीं है वासो तो कहीं भोग नहीं करो है अथवा है तो गमन करवेलायक पन असत्कार करीहै वा स्त्रीसो तो संग नहीं कीनो अथवा आपसो उत्तमनें वा बराबरकेने मार्गमें तुम्हारो पराजय तो न कीनो है ॥ ४२ ॥ अथवा भोजन करायवे योग्य वृद्ध बालकको त्याग एकले तुमने खायो तो नहीं है वा कोई महानिषिद्ध कर्म तो नहीं करो है, जो कर्म नहीं करवेके लायक है ॥ ४३ ॥ अथवा अति प्यारे हमारे हृदयरूप बंधु श्रीकृष्ण करकै रहित तो तुम नहीं भये हो, कारण कि तुम्हें और प्रकारको रोग विदित नहीं होयहै ॥ ४४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कच्चित्प्रेष्ठतमेनाऽथ हृदयेनात्मबन्धुना ॥
शून्योऽस्मि रहितो नित्यं मन्यसे तेऽन्यथा न रुक् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे युधिष्ठिरवितर्को नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

सूत उवाच-एवं कृष्णसखः कृष्णो भ्राता राज्ञा विकल्पितः ॥
नानाशङ्काऽस्पदं रूपं कृष्णविश्लेषकर्शितः ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि। ऐसे श्रीकृष्णके सखा अर्जुनसो जो कि श्रीकृष्णके वियोगसो अत्यन्त कृश है रह्यो हो वासो राजा युधिष्ठिरने अनेक संदेह कर प्रश्न किये ॥ १ ॥ अर्जुनको शोक करके मुख हृदय-कमल सूखगयो, कांति जाती रही, श्रीकृष्ण सर्व समर्थको ध्यान करे हैं, परंतु बोलवेको समर्थ नहीं हो-तोभयो ॥ २ ॥ बडे कष्टसो शोक रोक, हाथसो नेत्रनकों पोछ, श्रीकृष्णके अंतर्द्धान हैवेके अधिक प्रेमसो व्याकुल अर्जुन ॥३॥ सारथ्यादि समय श्रीकृष्णजीको करोभयो सख्यभाव, मैत्री, सुहृदताको याद कर भाई राजा युधिष्ठिरसों रुके कंठ गद्गदवाणीसो ये बोले ॥ ४ ॥ अर्जुन बोले कि। हे महाराज ! बन्धुरूप श्रीहरिकरके मैं ठगोगयो, देवनको विस्मय करावनवारो महातेज मेरो सब हरगयो ॥ ५ ॥ जा प्राणके क्षणमात्र वियोग हेवे करके ये लोग देखवेयोग्य नहीं रहे हैं, मृतक कहावेहे सो वा प्राणरूप श्रीकृष्णके अंतर्द्धान होयवेते मृतकसम हम भए हैं ॥ ६ ॥ जिन श्रीकृष्णके आश्रयसों द्रुपदके घरमें आए कामके मदसों उन्मत्त राजानको तेज मैंनें स्वयंवरमें हरलीनों धनुष सूधो कर मत्स्य वेधो निश्चयही द्रौपदी हमको प्राप्त भई ॥ ७ ॥ जिन श्रीकृष्णजीके समीप रहिवेसो खांडववन अग्निको भोजनको हमनें दीनो, देवगणसहित शीघ्र इंद्रको जीतकर मय नामक दैत्यकी बनाई भई अद्भुत अनेक शिल्पशास्त्रकी कारीगरी भरी सभा मिली, और आपके यज्ञमें सब दिशानसो आयके राजाननें बलि दीनीं ॥ ८ ॥ जिन श्रीकृष्णके तेजसो राजानके शिरपर पग राखनवारे दशसहस्र हाथीनके बलवारे जरासंधको भीमसेनजी यज्ञके लिये मारतेभये भैरवजीके यज्ञके लिये वाने जो २०८०० राजा रोके हैं विन्हें छुडायो वे आपके यज्ञमें भेंटें लाये ॥ ९ ॥ आंखमेंसो आंसू वहैं, श्रीकृष्णजीके चरणनमें गिरी तुम्हारी स्त्री द्रौपदीको राजसूययज्ञमें रचो गुंथोभयो महा अभिषेक करके श्लाघा योग्य श्रेष्ठ रमणीक जूडा कपटी दुर्योधन आदिकननै सभामें छीकै विखेरो ये दशा देख वा जूडाके खोलनवारेनकी स्त्रीनके मालकनको मार विनकी स्त्रीनको जूडा खुलाते भए, क्योंकि वैधव्य होय जब स्त्री माथेको जूडा खोलै सो जन्मभर फिर नहीं बंधे है, तैसेही भगवान्ने विचारी कि मेरे भक्तनकी स्त्रीनको जूडा तो थोडे दिनां खुलो रहैगो, परन्तु तुम्हारी रांडनको जूडा जबतक जीवेंगी तबलग खुलो रहैगो ॥ १० ॥ जो श्रीकृष्णजी वनमें आयकर दशसहस्र शिष्यनको प्रथम भोजन करायके भोजन कर दुर्योधनके भेजे अत्यंत दुरंत कष्टरूप दुर्वासामुनिसो हमारी रक्षा करतेभए, शाकपत्रको पाय त्रिलोकी तृप्त करी जलमें न्हाते सब चेला भाजगए। भारतमें ये कथा ऐसे है कि कोई समय दुर्योधनने दुर्वासाको भोजन करायो, तब या दुर्योधनसो प्रसन्न दुर्वासा बोले कछु वर मांगो तब वानें मनमें विचारो कि दुर्वासाके शापसों पांडव नष्ट होयँ तब दुर्योधन बोलो कि युधिष्ठिर हमारे कुलमें मुख्य हैं तो जब द्रौपदी प्रसाद पायले ताकी उपरांत दशसहस्र चेला लेके वाके घर भोजनकूं जय्यो, ये सुन दुर्वासा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तैसेई पहुँचे, और भोजन मांगो परम आदरसों युधिष्ठिरने मध्याह्नकृत्य कर आइये ऐसे विनति करी, मुनिसमूह पापनाशके अर्थ जलमें स्नानको गए तहां चिंतासो आतुर द्रौपदीके स्मरण करतेही श्रीकृष्ण तत्क्षण आए ,भक्तवत्सलता करके वाने दुर्वासा आगमनकी कथा कही ये सुन श्रीकृष्णजी बोले कि हमहू भूखे हैं प्रथम मोको भोजन करावं, तब बडी लाजसो द्रौपदी बोली हे स्वामिन् ! मेरे भोजनपर्यंत अक्षय अन्न सूर्यदत्त बटलोईमेंसे निकसतो रहै है, मैंने सबको भोजन कराय भोजन कीनो है, यासो अब कछु नहीं है तोऊ भगवान् बोले कि वा बटलोईको लाओ, वो लाई वाके किनारेमें कोई शाकान्न लगोरह्यो, सो पायकर भगवान् बोले कि या शाकपत्रसें विश्वात्मा भगवान् प्रसन्न होय, ये कहि युधिष्ठिरसो कही अब भोजनको मुनिसमूह बुलावो, मुनिनके तो न्हाते २ पेट भरगये वृथा पाक करायो ये भय मान सब चेला लेकै दुर्वासाजी भाग चले गये ॥११॥ जिन श्रीकृष्णजीके तेजसो पार्वतीसहित भगवान् शूलपाणि युद्ध करनेसों विस्मित हो मोको अपनो पाशुपत अस्त्र देते भये, औरोंनेंभी अस्त्र दीने, याही शरीरसों इंद्रलोकमें आधो आसन इंद्रको मिलो ॥ १२ ॥ तहां स्वर्गमें जब हम विहार करते हे तब इंद्रसहित देवता निवातकवचन वैरिनके वधके अर्थ गांडीव धनुष देख मेरे भुजदंडको आश्रय लेतेभए, सो हे युधिष्ठिर ! ऐसो मेरो प्रभाव कीनों, ऐसे निजमहिमावारे श्रीकृष्ण पुरुषने मोकों ठगलियो ॥ १३ ॥ श्रीकृष्णके सखा होनेसों मैं जब मेरे बन्धु हे भीष्म आदि महारथरूप ग्राहन करके दुस्तर कुरूनके सेनारूप अपार समुद्रको अकेलो रथसो मैं पार हैगयो उत्तरको गोधन और शत्रुनके शिरनसो तेजवंत मणिमय मुकुट कुंडल पाग बहुत धन मैं लायो मोहनास्त्रसो मोह करायो सो श्रीकृष्ण अंतर्धान हैगए ॥ १४ ॥ हे युधिष्ठिर ! बडे राजेंद्रके रथनसों शोभित भीष्म, गुरु, कर्ण, शल्यकी सेनामें सारथी होयकर मेरे आगे चले, रथी यूथपालकनकी आयु मन बल सब शस्त्रादिकुशलता दृष्टिसो जो भगवान् हरते भये ॥ १५ ॥ जिनकी भुजानमें स्थित मोय गुरु भीष्म कर्ण द्रौणि त्रिगर्त शल्य सैंधव बाल्हीक इनके अमोघ महिमावारे अस्त्र स्पर्श न करते भए, जैसे भगवद्दासको असुर नहीं छूयसकै है ॥ १६ ॥ जिनके चरणकमलको श्रेष्ठजन मोक्षके लिये भजे है, जब मैं घोडानके थक जायवेसों संग्राममें पृथ्वीपर उतरकर खडाभयो तब श्रीकृष्णके प्रभावसो रथी वैरी मोय न मारसके ऐसे आत्मदाता ईश्वर मैंनें सारथी करे ये मेरी कुमति ही ॥ १७ ॥ हे नरदेव ! श्रीकृष्णकी उदार रुचिर स्मितसे शोभित हांसीकी वह हृदयको स्पर्श करवेवारी हे अर्जुन ! हे पार्थ ! हे सखे ! हे कुरुनंदन ! वह वाणी और वे बातें मैं याद करूंहूं, तब मेरो मन हृदय बडो क्षुभित होय है ॥ १८ ॥ शय्या, अटन, चाहे जैसे बोलनों, भोजन इत्यादिमें, 'हे मित्र ! जो तुम कहो सो सत्य है ऐसे बोलते' जैसे सखाको अपराध सखा सहै पिता पुत्रके अवगुण सहै श्रीकृष्णजी अपनो बडप्पन करकै मोसरीखे कुमतिवारेके सब अपराध सहते भए ॥ १९ ॥ हे नृपेन्द्र ! सो मैं अपने सखा प्यारे सुहृद हृदय स्वरूप पुरुषोत्तमकरके रहित सूनोंहूं हे अंग ! मार्गमें श्रीकृष्णके परिवारकी रक्षा करत आवेहो सो स्त्रीकी नाईं गोपनने मोय जीतलीनों ॥ २० ॥ सोई मैं रथी जाको राजालोग नमस्कार करते हैं, मेरो वोही धनुष, वेही बाण, वोही रथ, वेही घोडे हैं, परन्तु ईश्वर चले गये यासे इन सबमेंसो सामर्थ्य जातीरही, जैसे भस्ममें हवन कियो, कपटीको उपदेश कियो ऊपर धरतीमें बोयोभयो अन्न, ये सब निष्फल होयहैं तैसे मेरे कर्तव्य सब निष्फल भये ॥ २१ ॥ हे राजन् ! सुहृदपुरके सुहृदनकी जो तुमनें कुशल पूछी वे विप्रशापसो मूढ हो मुक्कानसे आपसमें मारते भए ॥ २२ ॥ मदसो चित्त सावधान न रहवेसो वे वारुणी मदिरा पीकर आपसमें अनजानकीसी नाईं कट मरे चार पांच बाकी बचे ॥ २३ ॥ प्रायःकरके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये भगवान् ईश्वरकीही चेष्टा है आपसमें जीवनको मारते हैं, कभी परस्पर पालन करावै है ॥ २४ ॥ हे नृप ! जैसे जलके वासी बडे जीव छोटे जीवनको खायजायहैं, ऐसे बली राजा दुर्बलनको आपसमें जीतले हैं ॥ २५ ॥ ऐसेही विभु श्रीकृष्ण प्रथम तौ बली महान् यादवन करके छोटे जीवनको मरवावते भये, फिर यादवनसो यादवनको परस्पर मरवाए और भूभार उतारतेभए ॥ २६ ॥ देश काल अर्थ योग्य हृदयके तापके नाशक गोविंदके वचन स्मरण करौहौं तो वे मेरो चित्त हरे है ॥ २७ ॥ ऐसे चिंतवन करते अर्जुनकी बुद्धि श्रीकृष्णके चरणकमलको अतिगाढी सौहार्दतासो निर्मल शांत और वैराग्ययुक्त होती भई ॥ २८ ॥ वासुदेवके चरणके अतिध्यानसो अत्यन्त वेगसो भक्ति बढवेसो अर्जुनके सब कामादिमल नष्ट हो गये ॥ २९ ॥ जो गीताको ज्ञान संग्राम आदिमें भगवान्ने गायोहो, वो ज्ञान काल कर्म अंधकारसो भूलगयो हो फेर श्रीकृष्णजीसो प्राप्त होतो भयो ॥ ३० ॥ ब्रह्मज्ञानकरके जब अविद्या लीन भई, तो निर्गुण होय स्थूल शरीर और लिंगशरीरको नाश भयो सब द्वैतभ्रम सब नष्ट होगयो, तासे विशोक होय मुक्तिको अधिकारी भयो ॥ ३१ ॥ भगवन्मार्गकी बात और यदुकुलकी मृत्यु सुन निश्चलचित्त हो युधिष्ठिर स्वर्ग जायवेकी मति करते भए ॥ ३२ ॥ अर्जुनको कथन कुंतीहू सुनती भई यादवनको नाथ भगवत्की गति सुन एकांतभक्ति कर भगवान् ईश्वरमें मन लगाय जीवन्मुक्त होती भई ॥ ३३ ॥ जन्मरहित भगवान् जा शरीरकरके भूभार हरते भए वा देहको ऐसे त्याग करते भए; जैसे कांटेको कांटेसे निकारकर कार्य हैजायवेसो वा कांटेकोहू त्याग देयहैं कारण कि ईश्वरको तौ पृथ्वीको भाररूप शरीर और यादवशरीर दोनों तुल्य हैं ॥३४॥ जैसे मत्स्यादि रूपको अजन्मा ईश्वर धारेहै, त्यागेहै, जैसे नट अनेक रूप त्यागे, ऐसे जा देहसे भूभार नाश कियो वो शरीर त्यागकरते भए ॥ ३५ ॥ श्रवण योग्य जिनकी कथा ऐसे मुकुंद भगवान् शरीरसो जब या पृथ्वीको त्याग करते भए वाही दिनसो अज्ञानीनके चित्तमें अधर्महेतु कलियुग आय वर्ततो भयो ॥ ३६ ॥ बुद्धिमान् युधिष्ठिर पुरमें, राज्यमें, घरमें, अपनपेमें कलियुगको आगमन देखकर लोभ झूठता कपट हिंसा आदि अधर्मको चक्र आयो जान जायवेकी इच्छा करते भए ॥ ३७ ॥ राजा युधिष्ठिर विनयी गुणनमें अपने समान पोतेको जान समुद्रपर्यंतकी भूमिको राज्यतिलक हस्तिनापुरमें करदेते भए ॥ ३८ ॥ तैसेई शूरसेन देशके पति वज्रनामको मथुराको राज्याभिषेक कर राजा प्राजापत्य इष्टिको विधान कर आत्मामें अग्नि आरोपण कर ॥ ३९ ॥ तहां युधिष्ठिर सब वस्त्र कंकण आदिकनको त्यागकर ममता छोड अहंकार त्याग सब उपाधिसौ रहित हो ॥ ४० ॥ वाणीको मनमें लगाय, मनको प्राणमें लीन कर, प्राणको अपानमें लीन कर, अपानको मृत्युमें लीन कर, उत्सर्ग वायुके सहित मृत्युको पंचत्वमें होमते भए ॥ ४१ ॥ पंचभूतनको त्रिगुणमें अविद्यामें, अविद्याको जीवमें लीन करतेभए; जीवको अव्यय ब्रह्ममें लीन करतेभए ॥४२॥ चीर वस्त्र पहिर, भोजन त्याग, चुप होकर मूंडके बार खोल अपनो रूप जड उन्मत्त पिशाचकी नाईं दिखावते भए ॥४३॥ काऊकी ओर देखे नहीं बहेरेसे होके उत्तर दिशाको जाते भये, वा दिशाको बडे महात्मा लोग पहिले गए हैं ॥ ४४ ॥ हृदयमें परब्रह्मको ध्यान करै जहांके गए फेर नहीं आवै है, ब्रह्मको वेत्ता ब्रह्मही होय है पीछे ब्रह्मलोकको जाय है ॥ ४५ ॥ सब भैया निश्चय कर युधिष्ठिरके पीछे जाते भए, अधर्मके मित्र कलियुगमें सब प्रजा भूमिमें स्पर्श करी ये देखते भए ॥ ४६ ॥ वे सब कृत्यनको साधकर आत्माकी अत्यंत क्षेम जानकर वैकुंठ भगवान्के चरणकमलको मनसो ध्यान करते भए ॥ ४७ ॥ तिनके ध्यान और बढीभई भक्ति करके सब इंद्रियें विशुद्ध कर परात्पर नारायणमें एकांत मति कर गतिको प्राप्त होते

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये, विषयी असत लोगनको वो गति नहीं प्राप्त होयहै, सब कल्मष धोयकर निर्मल शरीर कर श्रीवैकुंठस्थानको गए ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ आत्मज्ञानी विदुरजीहू प्रभासक्षेत्रमें देहत्याग कर श्रीकृष्णमें चित्त लगाय युधिष्ठिरादि सहित अपने अधिकारस्थाननको जातेभए ॥ ५० ॥ अपनी ओर न देखैं ऐसे पतीनको जान द्रौपदी वासुदेव भगवान्में एकांत मन लगाय परमपदको प्राप्त भई ॥ ५१ ॥ भगवत्के प्यारे पांडुके पुत्रनको ये स्वर्गारोहण श्रद्धाकरके जो सुनै है, वो पवित्र होय है वाको मंगल होय है श्रीहरिमें भक्ति होयकर सिद्धिको प्राप्त होय है ॥ ५२ ॥

यः श्रद्धयैतद्भगवत्प्रियाणां पाण्डोः सुतानामिति संप्रयाणम् ॥
शृणोत्यलं स्वस्त्ययनं पवित्रं लब्ध्वा हरौ भक्तिमुपैति सिद्धिम् ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे पाण्डवस्वर्गारोहणं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

सूत उवाच-ततः परीक्षिद्द्विजवर्यशिक्षया महीं महाभागवतः शशास ह ॥
यथा हि सूत्यामभिजातकोविदाः समादिशन्विप्र मरुद्गणस्तथा ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि ताके पीछे महाभागवत परीक्षित् ब्राह्मणनकी शिक्षाकरके पृथ्वीकी रक्षा करतो भयो ॥ हे विप्रो ! जन्ममेंही सब विद्वान् आयकर जैसे गुण कहगयेथे वैसेही सब महागुण वामें होतेभए ॥ १ ॥ राजा परीक्षित्, उत्तरकी बेटी इरावतीको व्याहतेभए, वामें जनमेजयसो आदि लेके चार पुत्र उत्पन्न करतेभए ॥ २ ॥ बहुत जामें दक्षिणा दीनी ऐसे तीन अश्वमेध कीने गंगातीरपर कृपाचार्यको गुरु करचो जा यज्ञमें देवता सामने आय आयके अपनो २ भाग लेतेभये ॥ ३ ॥ कोई समय राजानकेसे वेष धारे गौके जोडीको पांवसे मारते शूद्र कलियुगको दिग्विजयमें अपने पराक्रमसो पकडते भए ॥ ४ ॥ शौनकमुनि बोले कि । राजा परीक्षित् दिग्विजयमें कौन हेतुसो कलियुगको पकडते भए, राजानके चिह्न धारनवारो वो शूद्र कौन हो जो पांवसे गौको मारे हो ॥ ५ ॥ हे महाभाग ! जो कृष्णकथाके अधीन बात होय सो, अथवा श्रीकृष्णके पदकमलके मकरंदके स्वाद लेवेवारे संतनकी कथा होय तो कहो ॥ ६ ॥ खोटी कथानसो कहा प्रयोजन है जो आयुको वृथा क्षय करैं हैं, जो लोग आयुको वृथा खोवें हैं वेही नरकमें जाय हैं ॥ ७ ॥ हे अंग ! थोडी आयुवारे मरणधर्मवारे हेकेहू जे मोक्षकी इच्छा करनवारे मनुष्यनको जानके हमने भगवान् मृत्यु देवताको यहां साक्षात् यज्ञमें बुलायलियो है सो जबतक यहां हमारो सत्र है तबतक मृत्यु देवता यहां बैठो है जबतक कोई मरेगो नहीं तबतक नारायणकी कथा सुनै ॥ ८ ॥ जबतक ये मृत्यु यहां रहेगी, तबतक कोई नहीं मरेगो, यालिये भगवान् मृत्युको परमऋषिने बुलायो, कह्यो कि तुमहू यहां बैठके कथा सुनो ॥ ९ ॥ अहो मनुष्यलोकमें हरिलीलाकथामृत पीवो, कलियुगमें हरिलीलाश्रवण करै तो मनुष्य वैकुंठमें जाय है ॥ १० ॥ मंद मंद बुद्धिवारे थोडी आयुके जीव रातकी आयु तो सोयकर खोवे हैं, दिन व्यर्थ कर्मकर खोवे हैं ॥ ११ ॥ सूतजी बोले कि । जब परीक्षित् कुरुजांगलदेशमें वसतेहे तब अपने चक्रसो रक्षित राज्यमें कलियुगको आयो जान, बहुत अमंगलीक बातें सुन संग्राम करवेमें महाचतुर परीक्षित् धनुषबाण लेतेभए ॥ १२ ॥ सुंदर शृंगारभये श्याम घोडा जामें लगे, सिंह ध्वजावारे रथमें बैठ

१ एक गउ और बैलको ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रथ घोडा हाथी सिपाहीनकी सेना लिये दिग्विजयके अर्थ निकसे ॥१३॥ भद्राश्व, केतुमाल, भारतवर्ष, उत्तर कुरु, किंपुरुष, हरिवर्ष, रम्यक, हिरण्मय इत्यादि खंडनको जीतके बलि लेतेभए ॥ १४ ॥ तहां तिन खंडनमें अपने पूर्वके महात्मापुरुषनको श्रीकृष्णके माहात्म्य, जितायवेवारो गायोभयो यश सुनतेभए ॥ १५ ॥ अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रसो अपनी रक्षा, यादवनको पांडवनको स्नेह विनकी केशवमें भक्ति ये सुनी ॥ १६ ॥ विनपें अतिसंतुष्ट हैके प्रीतिसों प्रफुल्लित नयन हैके महामना परीक्षित् महाधन वस्त्र हार देते भए ॥ १७ ॥ अपने प्यारे पांडवनको सारथीपन, पारषद बननो, सेवा करनी, सख्यभाव, दूत बननो, वीरआसन होय रक्षा करनी, विनके पीछे चलनो, प्रणाम करनो, विष्णुकी जगत्कर्तृता सुनते राजा परीक्षित् विष्णुके चरणारविंदमें भक्ति करते भए ॥ १८ ॥ ऐसे दिन रात अपने पूर्वपुरुषनकी नाईं आचरण करते राजा परीक्षितके समीप जो आश्चर्य भयो सो सुनो ॥ १९ ॥ एक पगसों चलते वृषरूपधारी धर्म वत्सहीन माताकी समान व्याकुल कान्तिहीन रुदन करती गोरूपधारी पृथ्वीको देखके पूछने लगे ॥ २० ॥ हे भद्रे ! हे अंब ! तुम्हारो कल्याण तौ है, कछु मलिन मुखसों कांतिहत क्यों है गई है, आपके कछु भीतरकी पीडा है, आपके बंधु दूर है ऐसो सोच करो है ॥ २१ ॥ अथवा मैं एक पदको हूं तुम्हें मेरो शोक है वा तुमपर शूद्र राज्य करै है ये दुःख है, अथवा यज्ञमें भाग नहीं मिलवेसो सुरनको शोक है वा प्रजाको शोक है वा मेघ नहीं वर्षै है ये शोच है ॥ २२ ॥ हे पृथिवि ! पति स्त्रियनकी रक्षा नहीं करते यह शोक है अथवा राक्षसनकी समान पिता बालकनको दुःख देयहै तुमें तिनको शोच है अथवा कुकर्मीनमें सरस्वती जाय बसी, और जो ब्राह्मणनको नहीं मानें तिनमें लक्ष्मी देवी गई, राजा लोग ब्राह्मणनको नहीं मानवे लगे, कुलीन ब्राह्मण सेवकाई करने लगे ये शोक है कहो ॥ २३ ॥ अथवा कलियुगग्रसित क्षत्रिय है गये तिनके राज्य सब कलियुगी हैगए, सब जीव इतमें वितमें भोजनके लिये जल पीवेके वास्ते स्नानके अर्थ मैथुन करवेको ऊंचो मुख उठाये डोलें हैं ॥ २४ ॥ अथवा हे अंब ! हे धरित्रि ! तुम्हारे ऊपरसों बडे भारके उतारवेवारे ईश्वर अवतारधारी अंतर्द्धान हैगये ये शोक है वा मोक्षदायक विनके करेभये कर्मनकी स्मरण करोहो ॥ २५ ॥ हे वसुंधरे ! जाकरके तुम अति कर्शित हो सो तुम्हारो दुःखको कारण कहा है सो मोसों कहो अथवा बलिनके बलि कालने देवतानकरके तेरो सौभाग्य हर लियो यासों तू शोच करै है ॥ २६ ॥ पृथिवी बोली । आप तो सब जानोहो तोहू हे धर्म ! जो तुम मोसो पूंछोहो सो कहूंहूं, लोकके सुखदाता चार पादसो आप वर्तोहो ॥ २७ ॥ यथार्थ बोलनो १ शुद्ध रहिनो २ परायो दुःख सहनो ३ क्रोध आवे वा समय चित्तको रोकनो ४ धन मांगे वाको सदा धन देनो ५ यश सब कुछ है ऐसे रहिनो ६ काऊसे टेढो न होनो ७ मनको निश्चल रखनो ८ बाह्य इंद्रियोंको निश्चल करनो ९ स्वधर्मको त्याग न करनो १० ये अपनो वैरी ये मित्र है ये न विचारनो ११ अपराध सहनो १२ लाभ प्राप्तिमें उदासीन रहनो १३ सत् शास्त्रको विचार करते रहनो १४ ॥ २८ ॥ परमेश्वर है ये ज्ञान माननो १५ तृष्णा त्याग करनो १६ हमारो नियंता है ये माननो १७ संग्राममें उत्साह करनो १८ प्रभाव रखनो १९ चतुराई रखनी २० जो काम करनो है वाकी याद राखनी २१ पराधीन न रहिनो २२ सब क्रिया करवेमें निपुण २३ सुन्दर रहिनो २४ व्याकुल न रहनो २५ कठिन चित्त न राखनो २६ ॥ २९ ॥ बुद्धि प्रकाशित राखनो २७ विजयी रहनो २८ सुंदर स्वभाव राखनो २९ सहनशक्ति ३० पराक्रम ३१ देहमें बल रखनो ३२ सब भोग भोगनो ३३ गंभीर रहिनो ३४ चंचल न रहिनो ३५ सबमें श्रद्धा राखनी ३६ यश होय सो करनो ३७ पूजा होय सो कर्म करनो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

३८ गर्व न करनो ३९ ॥ ३० ॥ हे भगवन् ! ये एक कम चालीस गुण भगवान्में हैं, औरहू महागुण हैं महत्त्वकी इच्छावारिनको ये करने योग्य है, कभूहू हरिमेंसो ये गुण नहीं जांय हैं ॥ ३१ ॥ सब गुणपात्र श्रीनिवास अब या पृथ्वीपे न रहे यासो मैं शोचोंहों, पापी कलिने सब लोक ग्रस लीनें हैं येही मोको शोच है ॥ ३२ ॥ और मैं अपने आपकोहू शोच करों हों और तेरोहू शोच करोहो देवतानको पितरनको ऋषिनको साधूनको सब ब्राह्मण आदि वर्णनको सब आश्रमनको मैं सोचोंहूं ॥३३॥ श्रीलक्ष्मीजीको कटाक्ष हमपर होय ये कामना करके बहुत दिनतक भगवत्प्रपन्न ब्रह्मादिक तप करतेभए सो लक्ष्मी अपनो वासस्थान कमलवनको त्यागके जिनके चरणकी सुंदरताको अत्यंत भजतीभई ॥ ३४ ॥ कमल वज्र अंकुश ध्वजा इत्यादि चिह्नसो अंकित भगवान्के श्रीमच्चरणकमलसो अलंकृत भई मैं भगवद्विभूतिको प्राप्त होके त्रिलोकीमें शोभित भई, ये गर्व जब मोको भयो तो सब लोकसहित मोको त्याग करत भए येही शोच है ॥ ३५ ॥ मोपें अतिभारकारी असुरवंशी राजानकी सैकडान अक्षौहिणीको आप स्वाधीन होके मारते भए, और अपने पुरुषार्थसो चरण टूटवेके कारण पीडित आपको संपूर्ण करवेके लिये जिनने यदुकुलमें सुंदर शरीर धारण कियो ॥ ३६ ॥ प्रेमको अवलोकन मनोहर मुसकान, मनोहर वचन करके सत्यभामादिकनको मानस्थैर्य हरतेभए; विनके चरणस्पर्शसों शोभित मोको रोमांच है आवे है ऐसे पुरुषोत्तमको विरह कौन सहेगो ॥ ३७ ॥ पृथ्वी धर्म ये दोनों ऐसे कहि रहे तहांही परीक्षित् नामके राजऋषि पूर्ववाहिनी सरस्वतीसो युक्त कुरुक्षेत्रमें पहुँचते भए ॥ ३८ ॥

तयोरेवं कथयतोः पृथिवीधर्मयोस्तदा ॥
परीक्षिन्नाम राजर्षिः प्रायः प्राचीं सरस्वतीम् ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे पृथ्वीधर्मसंवादवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

सूत उवाच-तत्र गोमिथुनं राजा हन्यमानमनाथवत् ॥
दण्डहस्तं च वृषलं ददृशे नृपलाञ्छनम् ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि; राजा परीक्षित्ने तहां गौको जोडा अनाथकीसी नाईं पिटतो भयो देखो, और दंड हस्तमें लिये शूद्र नृपनकोसो चिह्नधारे देखतेभये ॥ १ ॥ कमलजडसम सुपेद वर्ण गोवर करते डरते एक पदसो खडे कांपते दुःख पाते शूद्रसो ताडित वृषको देखते भये ॥ २ ॥ सब धर्मकी दुहनवारी, दीन, अत्यंत शूद्रके पदसो मारीभई, वत्सरहित आंसू मुखसो गिरावती दूबरी घासकी इच्छा करती गौरूप धारे पृथ्वीको देखतेभये ॥ ३ ॥ सुवर्णको जामें काम ऐसे रथपर बैठे भए राजा परीक्षित् धनुष बाण चढायके मेघसमान गंभीर वाणीसो पूछते भए ॥ ४ ॥ तू कौन है जो मेरे आधीन लोकमें अपने बलसो निर्बलनको मारे है, तू राजा वेषसो मालूम पडे है; परंतु नटकी नाईं है तेरो कर्म शूद्रनके समान है ॥ ५ ॥ तू कौन है कहा गांडीव धनुषधारी अर्जुन श्रीकृष्ण तेने दूर गए जानें हैं, क्यों तू एकान्तमें निरपराधी गौ बैलको मारे है; यासो तू अपराधी है; सो वधके योग्य है ॥६॥ हे कमलनालसमानधवल ! तुम कौन हो, जो तीन पदरहित एक पगसो चलनो चाहोहो, वृषरूप धरिके कोई देवता हो कहो, जो हमें खेद करोहो ॥ ७ ॥ कौरवेंद्रनकी भुजदंडनसो रक्षित या भूतलपें तुम्हारे विना कोई प्राणीमात्रके शोकके आंसू कभीभी नहीं गिरते हैं ॥ ८ ॥ हे सुरभिनंदन ! या शूद्रसों अब तुम्हें भय नहीं होयगो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे अंब ! तुम्हारोहू कल्याण हो, खलनको दंडदाता मैं वर्तमान हूं ॥९॥ जा राजाके राज्यमें साधु प्रजा दुष्टनसो दुःखित होयहैं, वा मदांध राजाकी कीर्ति आयु ऐश्वर्य परलोक सब नष्ट होजायहैं ॥ १० ॥ राजानको यही परमधर्म है कि आर्तनकी पीडा दूर करनो, या कारणते सब जीवनको द्रोही असत्तम तोको मारूंगा ॥ ११ ॥ हे सुरभिनंदन ! तुम्हारे तीन पांव कौनने काटे हैं तुम तो चार पादवारे हो श्रीकृष्णके सेवक राजनके राज्यमें तुमसरीखो कोई न होयगो ॥ १२ ॥ हे वृष ! तुम्हारो कल्याण होय, निरपराधी साधुनको विरूप करनवारो और पांडुवंशी हम राजानकी कीर्तिको दूषण करवेवारो कौन है वाय बताओ ॥ १३ ॥ निरपराधी जनमें अपराध लगायवेवारेको सब ओरसे मेरो भय रहे है, ब्राह्मण बालक गौ इनको जो दुःख देयहै वो नरकमें जायहै ॥ १४ ॥ निरपराधीमें जो अपराध निरंकुश है के लगावैहै वो देवताहूं होय तो वाकी बाजुसहित भुजा काट डालूंगो ॥ १५ ॥ परमधर्म राजाको येही है कि स्वधर्ममें स्थितनको पालन करनो औरनको शिक्षा करनो, शास्त्रके अनुसार विना विपत्तिमें पाखंडीनको शिक्षा करनो ॥ १६ ॥ धर्म बोलो कि पांडुके कुलकेनको ऐसो अभयदान वचन कहिनो युक्तही है, जिनके गुणनसो श्रीकृष्णने दूत आदि कर्म करे ॥ १७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! जहांसो क्लेशको बीज होय है वाको हम नहीं जानै है, कारण कि अनेकशास्त्रवादिनके भिन्न २ वाक्य हैवेसो हम मोहित हैं ॥ १८ ॥ कोई विकल्पवादी तौ आत्मामें आत्माकोही दुःखसुखको देवेवारो मानैं हैं कोई भाग्यको ईश्वर कहे है, कोई कर्मको, कोई स्वभावको प्रभु मानैं हैं ॥ १९ ॥ कोई लोगनने तर्क करके निर्देशमें न आवे वा परमेश्वरसो सोही सब कछु होयहै ऐसो निश्चय कियो है यामें जो आपको मालूम परै सो अपनी बुद्धिसो विचारो ॥ २० ॥ हे द्विजसत्तम ! धर्म जब ऐसे कहिरहे हे तब वो राजा सावधान मनकरके खेदको त्यागके वा वृषरूप धर्मसों यह बोलो ॥ २१ ॥ हे धर्मज्ञ ! तुम धर्मही बोलते हो, यासो तुम वृषरूपधारी धर्मही हो, जो कोई अधर्मकी बात करै है और जो वाकी सूचना करे विन दोननको वोही पाप बराबर होयहै ॥ २२ ॥ अथवा

---

१ एक राजा हो वो साधुमहात्माकी परीक्षा लेवे करत हो एक दिना वो राजा अपनी कचहरीमें बैठ्यो हो सो एक महात्मा आयो कचहरीमें गयो राजाने कही कहा चाहो साधूने कही कि राजा जो तेरी इच्छा होय राजाने कही बैठो खिदमतदारको बुलाइके कानमें कही या बाबाजीको घोडेकी लीद छानके पिवाइ देउ खिदमतदारने एक लोटाभर लीदकूं छानके राजाके आगे लै आयो राजाने कही पिवाइ देउ साधूके अगारी धरिके कही बाबा पीओ साधूने सब पीलियो जय सीताराम कर चले गये साधूके जातेही राजाके महलमें कचहरीमें चित्रसारीमें और सिगरे शहरमें लीदही लीद पैदा है गई जहां देखो तहां लीदि छाइ गई जितनी लीदि राजा फिकवावे वाते दसगुनी लीद और पैदा है जाइ राजाको बडो संदेह भयो सब जगह ढुंढवायो पर साधूको पतो न पायो कालान्तरमें एक दिन वेई महात्मा वा शहरमें आये राजाको खबर लगी सोई राजा दौडके वा महात्माके पांइनमें जाइ परयो और कही मेरो अपराध क्षमा करो महाराज मैंने आपको प्रभाव नहीं जान्यो एती दया करो जो मेरे यहांसे यह लीद हटै देखि राजाको महात्माकूं दया आई और ये कही भाई ! जो तेने दिया सो तोको मिला हम क्या करें खैर भई सो भई परन्तु जो लीदको हटायो चाहे तौ एक काम कर तू अपनी बडी बेटीकूं अपने संग लैके शहर बाहर अपने बगीचामें जाइके निवास कर थोडे दिनमें तेरे यहांतें लीद जाति रहेगी राजाने वही कीनी जा दिनते राजा बागमें गयो वाई दिनते राजाकी शहरमें निंदा होनलगी कि देखो राजाकी कहा बुद्धि बिगर गई है बडी बेटीके संग राजा रहे है जैसे २ ये निन्दा लोगनने कीनी तैसेई तैसे वो सब लीदि जाती रही परन्तु राजाके मुखकी लीदकी बास न गई तब राजा फिर महात्मानके पांइनमें जाइ परयो और प्रार्थना कीनी महाराज ! मेरे मुखकी बास नहीं जाइ है महात्मा ध्यान कर बोले कि राजा ! तेरे नगरमें एक लुहारने तेरी निन्दा नहीं कीनी है वो निन्दा करै तौ तेरे मुखकी बास जाइ राजाने विचार कियो काऊ तरह वा लुहारसों निंदा करामनी यह विचार राजा रातिमें कारो कम्बर ओढि वाकी दुकानपै गयो लुहारने पूंछी तू कौन है राजा बोल्यो कि भूखा हूं लुहार बोल्यो भाई घंटाभर घन कूटे तौ दो पइसा देउ राजाने मंजूर कीनी घन लैके कूटन लग्यो कूटत २

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देवताकी मायाकी गति निश्चयजीवनकी मन और वाणीसो अगोचर है यह निश्चय है ॥ २३ ॥ तप करनो पवित्र रहनो दया राखनी सत्य बोलनो ये धर्मके चार चरण हैं, सो अधर्मके अंश स्मय स्त्रीप्रसंग मद ये तीन हैं, इनसों धर्मके तीन पग टूट गए एक रह्यो है ॥ २४ ॥ अब हे धर्म! तुम्हारो सत्य एकपाद रह्यो है वाहूको झूठ बोलवेसों वृद्धिको प्राप्त भयो यह कलियुग तोसों चाहैहै ॥ २५ ॥ श्रीभगवान्ने जाको अत्यन्त भार दूर करके अपने चरणनसों शोभित कियो वह यह सती पृथ्वी है ॥ २६ ॥ श्रीकृष्णके किये अपने त्यागकूं एक अभागिनी अबलाकी सदृश द्विजनके द्रोही राजनके वेषधारी शूद्र मेरो भोग करैंगे ऐसो विचारके आंसू बहाती शोक करै है ॥ २७ ॥ महारथी राजा परीक्षित्ने या प्रकार धर्म और पृथिवीको शांत कर अधर्महेतु कलिके मारवेको तीक्ष्ण खड्ग हाथमें लियो ॥ २८ ॥ मारवेको आते राजाको देख नृपचिह्न त्याग विनके पादमूलमें भयभीत हैकै कलियुग गिरपडो ॥ २९ ॥ शरण देवेवारेनमें श्रेष्ठ यशभाजन दीनवत्सल राजा परीक्षित्ने वाकूं चरणनमें पतित देख दया करकै वध नहीं कियो और हँसके या प्रकार कहतेभये ॥ ३० ॥ राजा बोले कि अर्जुनसरीखे यशधारीनके आगे हाथ जोड शरणमें आवेवारेको किंचित् भय नहीं है, परन्तु अधर्मको मित्र तू मेरे राज्यमें कहू मत रहे शीघ्र चलो जा ॥ ३१ ॥ जहां तू रहेगो वहांके राजाके देहमेंहू अधर्मको समूह लोभ अनृत चौर्य अनारीपनो पाप बडी माया क्लेश दंभ अधिक बढैंगे ॥ ३२ ॥ हे अधर्मके मित्र! तुम यहां मत रहियो. सत्य धर्मसो वर्तवे लायक या ब्रह्मावर्त देशमेंसो चलो जा यज्ञके विस्तारमें चतुर ज्ञानी लोग या ब्रह्मावर्त विठूरमें यज्ञेश्वरको यज्ञसों यजन करैं हैं ॥ ३३ ॥ ता यज्ञमें भगवान् हरिकी पूजा होयहै इज्यामूर्ति ईश्वर यज्ञ करवेवारेनको कल्याण करैं हैं अमोघ सब कामना देय है, जैसे स्थावर जंगमनके बाहर भीतर वायु रहै तैसे ईश्वर रहैं हैं ॥ ३४ ॥ सूतजी बोले कि। ऐसे जब परीक्षित्ने कही तब कलियुग कांपवे लगो तरवार मारवेको उठाये दंड हाथमें लिये यमराजकी समान परीक्षित्को देख बोलो ॥ ३५ ॥ हे सार्वभौम! तुमारी आज्ञासे यदि जहां कहीं रहूंगो तोहू तहां तहां धनुष बाण लिये आपही दीखोहो यासों न बसूंगो परंतु ॥ ३६ ॥ हे धर्मभृतां श्रेष्ठ! मेरे रहिवेको स्थान देवेको योग्य हो, जहां मैं निश्चिंत हैकै रहूं; तुम्हारी आज्ञा मानूं सो कहो ॥ ३७ ॥ सूतजी बोले कि। ऐसे जब प्रार्थना करी तो वा कलिके लिये राजा ये स्थान देते भए, जूआ १, मदिरा विकवेको स्थान २, वेश्याको घर ३ और कसाई जहां जीव मारें ४ इन चार जगह तुम रहो, जहां चार प्रकारको अधर्म रहै है ॥ ३८ ॥ कलि बोलो मेरो कुटुंब बहुत है, इतनी जगहमें न समावैगो, तो राजाने सुवर्णमें रहिवेको और स्थान दीनो, फिर परीक्षित्नें झूंठ मद काम रजोगुण वैर ये पांच दिये ॥ ३९ ॥ परीक्षित्के दिये इन पांच स्थाननमें अधर्मी कलि राजा परीक्षित्की आज्ञासों वसतो भयो ॥ ४० ॥ जो पुरुष संसारमें अपनी वृद्धि चाहे तो इन पांचनको न सेवन करै, धर्मात्मा राजा लोकपति गुरु विशेष करकै इनको सेवन न करे ॥ ४१ ॥ वृषके तीन पद तप, शौच, दया ये नष्ट भए देहनको आप पुनः बढावते भए और शांत करके पृथ्वीको समाधान करते भए ॥ ४२ ॥

राजाने चरचा चलाइके वोही बात कही देखो राजाकी कैसी बुद्धि बिगरी है बडी बेटीके संग रहै है ऐसे कई वेर राजाने कही परन्तु वा लुहारने कछु जवाब न दीयो जब बारंबार वही बात राजा कहते हो तब वा लुहारने यह कही कि ऐसे पापीकी चरचा तू मेरे अगारी मत करै वा राजाकी चरचा वो करै जाइ लीद खानी होइ इतनी वाके कहतेही राजाके मुखकी बास चली गई राजा अपने घर चल्यो आयो सोइ परीक्षित राजा धर्मराजसो कहे हैं कि 'यदधर्मकृतस्यानं सूचस्थापि तद्भवेत्' ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो ये राजा परीक्षित् राजनके योग्य आसनपर आजदिन बैठे हैं, जा आसनको वनको जाते वेर या राजाके परदादे जा राज्यको दे गएहो ॥ ४३ ॥ अब वो राजऋषि कौरवनकी श्रीकरके सुशोभित होते महाभागवत आसनपें चक्रवर्ती महायशस्वी हस्तिनापुरमें हैं ॥ ४४ ॥ अभिमन्युके पुत्र राजा परीक्षितको ऐसो प्रताप है, वो पृथ्वीपालन करते संते तुम महायज्ञ करोहो ॥ ४५ ॥

इत्थंभूतानुभावोऽयमभिमन्युसुतो नृपः ॥
यस्य पालयतः क्षोणीं यूयं सत्राय दीक्षिताः ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे कलिनिग्रहो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय १८.

सूत उवाच-यो वै द्रौण्यस्त्रविप्लुष्टो न मातुरुदरे मृतः ॥
अनुग्रहाद्भगवतः कृष्णस्याद्भुतकर्मणः ॥ १ ॥

जो अश्वत्थामाके ब्रम्हास्त्रसों दग्ध हैवेपरहु अद्भुतकर्मवारे श्रीकृष्णजीकी कृपासों अपनी माके पेटमें न मरे ॥ १ ॥ और भगवान्में अविचल भक्ति हैवेके कारण ब्राह्मणके क्रोधसों उत्पन्न हुये प्राणनको संहार करवेवारे तक्षकरूप महाभयसों जिनको मन मोहकूँ प्राप्त न भयो ॥ २ ॥ और सब जो राजा ओरसों संग त्याग भगवत्तत्त्व जान व्यासपुत्र शुकके समीप श्रीगंगातीरपे देहत्याग करतेभए ॥ ३ ॥ श्रीभगवत्की वार्ता सेवन करवेवारे तिनकी कथामृत पान करवेवारे श्रीकृष्णचरणस्मरण करवेवारेनको अंतकालमेंहू संभ्रम नहीं होय है ॥ ४ ॥ कलि प्रविष्ट तो भयो परंतु सब ठौर तवतक कलियुग न प्रवेश करतोभयो जवतक पृथ्वीनरेश परीक्षित् राज्य करते हे ॥ ५ ॥ जा दिन जा समय भगवान् पृथ्वीको त्यागतेभए, तबसोंही यहां अधर्मवर्द्धक कलियुग सब जगह प्रवेश करतो भयो ॥ ६ ॥ राजा परीक्षित् कलिसों वैर न करतभए, भ्रमरवत् सारग्राही भए क्योंकि जा कलियुगमें मानसी पुण्य तो संकल्पमात्र करनेसों सिद्ध होय हैं, और पाप संकल्प करनेसो नहीं होयहै करो तो वाको फल होयहै ॥ ७ ॥ जो धीरसों डरवेवारो और अज्ञ पुरुषमें अपनी शूरवीरता दिखायवेवारो कलियुग है ता करके कहा है क्योंकि जो कलि सदा सावधान होतो असावधान मनुष्यनमेंही अर्थात् जे भगवन्नामको नहीं लेय हैं विनकोही अपनो बल दिखावे हैं तासो कहा है जैसे बालकनमें भेडिया आवे है शूरनमें नहीं ॥ ८ ॥ जो तुमने भगवान्की कथा मिश्रित आख्यान पूछो हो वह पुण्यरूप परीक्षित्को आख्यान हमनें वर्णन कीनो ॥ ९ ॥ कथन योग्य जिनके कर्म हैं, विन भगवान्की जो जो कथा गुणकर्माश्रय हैं वे संसारमें सुखकी इच्छावारेनको सदा सेव्य हैं ॥ १० ॥ सब ऋषि बोले कि हे सूत! हे सौम्य! तुम हजार वर्षतक जीवो, बहुत दिन तुम्हारो यश होय, जो तुम अमृतकी तुल्य श्रीकृष्णके चरित्र मनुष्यनको कहोहो ॥ ११ ॥ जो तुम फलके संशयवारे या यज्ञकर्ममें धुआंसे धुंधरी आत्मावारे हम मनुष्यनको अमृतदायक श्रीकृष्णके पादपद्मको मधु प्याओहो ॥ १२ ॥ भगवत्के संग करवेवारेनके एक लवमात्रके सत्संगकी बराबरी न स्वर्ग करसके न मोक्ष, फिर मनुष्यनके राज्यादिकी कहा कथा है ॥ १३ ॥ महात्मानके एकान्त ध्यानयोग्य विनकी कथामें कौन रसवेत्ता तृप्त होयहैं, कोई नहीं, निर्गुणी ईश्वरके गुणनको अंत योगेश्वर शिव ब्रम्हादिक नहीं जानसके हैं ॥ १४ ॥ हे! विद्वन् महात्मा पुरुषनके परम आश्रय हरिके उदार विशुद्ध चरित्र हम सुनवेवारेनको भगवत्प्रधान आप विस्तार करके कहो ॥ १५ ॥ महाभागवत मोक्षमार्गमें तीव्र बुद्धिमान् राजा परीक्षित् व्यासपुत्र शुकाचार्यके कहे भए ज्ञानसो गरुडध्वजी श्रीहरिके चरणके समीपको प्राप्त होते भए ॥ १६ ॥ वह अतिश्रेष्ठ, पुण्यदायक, सुगम अर्थयुक्त अति

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अद्भुत, योगगम्य, अनंत भगवान्के चरित्रनसो सुशोभित परीक्षित्को कथानक भागवतनको आनंद-दायक बडो आख्यान हमसे कहो ॥ १७ ॥ सूतजी बोले कि बडे आनंदकी बात है कि विलोममें हमारो जन्म है, तोहू वृद्धनकी सेवासो हमारो सफल जन्म भयो, और महात्मानको सत्संग नीच कुल जन्मकी मानसी पीडाको शीघ्र नाश करे है ॥ १८ ॥ जब हरिभक्तनके सत्संगको ऐसो माहात्म्य है तो जो महान् गुणयुक्त हैवेसो अनन्त कहावे ऐसे अपार शक्तिमान् अविनाशी महात्मानके प्रधान आश्रय परमात्माके नामस्मरण करवेसो मनकी व्यथा दूर होय तो यामें कहा कहनो है ॥ १९ ॥ गुणनमें जिनके समान कोई नहीं, विनको महत्त्व सूचन करवेको इतनाही बहुत है कि प्रार्थनाकर्त्ता देवतानको त्यागन कर इच्छारहित विन भगवान्के चरणरजकी लक्ष्मीजी सेवा करे है जिनके चरणनखको धोमन ब्रह्माजीको दियो अर्घ वह गंगाजीको ॥ २० ॥ जल सब जगत्को पवित्र करे है, ऐसो सर्व सामर्थ्यवान् मुकुंदसो अधिक और भगवत्पदार्थ लोकमें कौन है अर्थात् कोई नहीं है ॥ २१ ॥ जहां जिन भगवान्में प्रेम करवेवारे धीर पुरुष देहादिकनमें संगको सब त्यागकर परमहंसनके आश्रय वह परम पदको प्राप्त होय हैं जामें अहिंसा और उपशांति यह स्वाभाविक धर्म हैं ॥ २२ ॥ हे सूर्य-समान ! हे त्रयीमूर्ते ! आपने हमसो जो पूछो है सो जितनो मोको ज्ञान है वितनो हम कहैंगे, जैसे पक्षीलोग आकाशमें अपनी शक्तिके अनुसार उडे है तैसेई विष्णुको यश अपनी बुद्धिके अनुसार विद्वान् लोग कहे हैं ॥ २३ ॥ एक दिन धनुष लेकर वनमें शिकार खेलनेको राजा परीक्षित् मृगनके पीछे चलो गयो, भूख प्याससो अत्यन्त व्याकुल भयो ॥ २४ ॥ जलाशय ढूंढते २ एक आश्रममें प्रवेश करतो भयो, वहां शांत नेत्र मूंदे बैठे एक मुनि देखे ॥ २५ ॥ प्राण मन बुद्धि इंद्रिय सब जीतलीनीं, सबसो उपराम होय, तीनों अवस्थासो तुरीया अवस्थाको प्राप्त क्रियारहित ब्रह्मभूत ब्रह्मरूप है रहे हे ॥ २६ ॥ जटा सब विखर रहीं; रुरुनामक मृगके चर्मपै बैठे, जिने देहको कुछ अनुसंधान नहीं वा शमीक मुनिसो प्याससो शुष्ककंठ राजा जल मांगतो भयो ॥ २७ ॥ तृण भूमि आदि न मिलो, अर्घ्य न दीनो, मीठो कुछ न बोले तब राजाने अपने आपही मानलीनो कि याने मेरी अवज्ञा करीहै ऐसे मानके क्रोध करतो भयो ॥ २८ ॥ हे ब्रह्मन् ! जैसी भूख प्यास कभू न लगीही ऐसी भूखप्याससे व्याकुल भये राजाको ब्राह्मणपर बडो क्रोध और मत्सरता भयी ॥ २९ ॥ राजा परीक्षित् वा ब्रह्मऋषिके कंठमें मरो सर्प क्रोध करके धनुषके अग्रभागसों डारके अपने पुरको आवतो भयो ॥ ३० ॥ मनमें राजाने कही यह मुनि सब इंद्रियें रोके, नेत्र मूंदे, झूठी समाधि लगाये हे, कि क्षत्रिय लोग हमारो कहा करेंगे अथवा सत्य समाधि है यह परीक्षा करवेको राजाने मरो साप तिनके गलेमें डारो हो ॥ ३१ ॥ तिनके पुत्र अतितेजस्वी बालक बालकनके साथ विहरते शृंगीऋषि राजाने पिताके गलेमें सर्प डारो ये सुन तहा बोलो ॥ ३२ ॥ अधर्म है कि पालक पुष्ट दास द्वारपालक राजानको अपने स्वामीमें अपराध करनो नहीं

---

१ तीन ठगा हें विनने कही कि कोई रुजगार करै सो दो तो बने साधक और एकको बनायो सिद्ध वाको बाबाजी बनायो वाके खाक रमाय तिलक लगाय जटा बढाय आसन बिछाय हाथमें माला देके बिठाय दीयो और जो कोई आवे वाय ले जाय और जो भेट आवे वाय तीनों बाट लेय एक दिन एक राजा आयो वाको देख वो तो आसनपे पालती मार झूठी समाधि लगाय बैठ गयो और वे दोनों वा राजाको बात लगायके वाके पास ले गये राजाने दर्शन करे राजी भये २ रुपा भेट किये दंडोत करके चलो गयो विन दोनोनने वे रुपा उठायके परोटमें लगाय लीने तब वाने आख खोलके कही कि लायो भेट कहा तब वे बोले रुपा १ है वो बोलो कि वा खुटका तो दो रुपाको भयो है सो परीक्षित्ने विचारी कि कहू बिसी तो झूठी समाधि तो याने मोय देखके नहीं लगाई है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चाहिये, जैसे कौआ कुत्ता करे है विनको त्याग ऋषिवर्य ! श्रीकृष्णने द्वारपालक करे है सो द्वारवासी तिनके घरमें जाकै वाही पात्रमें है धेश्वरमें भक्तिवारे, आप ग ३४ ॥ पाखण्डिनके शिक्षक भगवान् श्रीकृष्णजी चले गये, तौ कहाहैं इ ंत नियमनमें ाडनेवारेनको हम शिक्षा करै हैं, तुम सब मेरो बल देखो ॥ ३५ ॥ ऐसे कहिके क सा ले दो कर अपने बराबर ऋषि बालकनमें कौशिकीको जल ले वाग्वज्र छोडतो भयो ॥ ३६ ॥ आजसे सातवें दिन मर्यादानाशक कुलमें अंगाररूप मेरे द्रोहीको मेरो भेजो तक्षक सर्प काटेगो ॥ ३७ ॥ पीछे आश्रमपे आय बालक सर्पको शरीर पिताके गलेमें देख दुःखी होय अधिक चिल्लायके रोवतो भयो ॥ ३८ ॥ हे ब्रह्मन् ! सो वे अंगिरागोत्री पुत्रको विलाप सुन धीरेसो नेत्र खोल अपने कंधामें मरो सर्प देखते भए ॥ ३९ ॥ वाकों निकासके पुत्रसो बोले हे पुत्र ! क्यों रोवे है कौनने तेरो अनादर करो ये सुन वानें सब कह्यो ॥ ४० ॥ शापके योग्य नहीं ऐसे राजा परीक्षितको शाप दीनों जान वो ब्राह्मण पुत्रको बुरो कहिते भए, अहो बडे खेदकी बात है कि बडो अपराध कीनों, थोडे अपराध करवेपे ऐसो बडो द्रोह मान बडो दंड दीनो ॥ ४१ ॥ हे कच्ची बुद्धिवारे ! राजा परीक्षित् मनुष्यनके समान नहीं है, वाको पराजय करनो योग्य नहीं है, जिनके महाभारी तेजसों रक्षित प्रजा सदा भयहीन हैकै सब सुखको भोगती है ॥ ४२ ॥ श्रीभगवतको स्वरूप राजा प्रजाकी रक्षा न करै तो ये लोग चोरनके बढनेसों मेंढानके समूहकी नाईं सब नष्ट हैजाय है ॥ ४३ ॥ जब राजा नष्ट हैजायगो तो विनको धन लूट जायगो, या पापसो हमारो वंश सब पाप भोगैगो, आपसमें मारेंगे शाप देंगे, बहुत चोर लुटेहरे बढकर पशु स्त्रियें अनेक पदार्थ हरेजायँगे ॥ ४४ ॥ तब सदाचार, धर्म, वेदोक्त वर्णाश्रम, आचार, सब मनुष्यनके लीन हैं जायँगे, अर्थ काम चाहवेवारे वानर कुत्ताकी नाईं सब वर्णसंकर हैजायंगे ॥ ४५ ॥ धर्मरक्षक नरपति साक्षात् महायशस्वी राजर्षि अश्वमेधकारी राजा परीक्षित् है ॥ ४६ ॥ क्षुधा तृषा परिश्रमसहित अपने यहां आये विनको सत्कार करना उचित हो परन्तु एक तौ वो उलटे हमसे शापित होयवेके योग्य नहीं है इस प्रकार शमीक मुनिने शीघ्र शृंगीऋषिसों कह्यो ॥ ४७ ॥ पापरहित अपने सेवकको निर्बुद्धि बालकने पाप कीनो है, सो सर्वात्मा भगवान् वाको क्षमा करै ॥ ४८ ॥ तिरस्कृत वंचित शापित अवमानित मारे भए भगवान्के भक्त अपने अपराध करवेवालेको शाप देवे नहीं ॥ ४९ ॥ पुत्रके करे अपराधसो महामुनि या प्रकार दुःखित भये परन्तु राजाने जो अपराध कीनों वाको कछु चिंतवन नहीं करते भये ॥ ५० ॥ बाहुल्यकरकै लोकमें परकार्यके साधक ब्राह्मणनको दुःख सुख कुछ नहीं व्यापै है, न विन्हें कोई व्यथा होय, न वे प्रसन्न होय क्योंकि गुणनसे सर्वव्यापक ईश्वरके समान आप हैजाय हैं ॥ ५१ ॥

प्रायशः साधवो लोके परैर्द्वन्द्वेषु योजिताः ॥
न व्यथन्ति न हृष्यन्ति यत आत्माऽगुणाश्रयः ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां प्रथमस्कन्धे विप्रशापवर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

सूत उवाच—महीपतिस्त्वथ तत्कर्म गर्ह्यं विचिन्तयन्नात्मकृतं सुदुर्मनाः ॥
अहो मया नीचमनार्यवत्कृतं निरागसि ब्रह्मणि गूढतेजसि ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सूतजी बोले कि ! याके उपरांत राजा[illegible] चरित्रन[illegible] शोभित परी[illegible] चिंतवन कर बहुत दुःखित मन करतेभए बोले अहो निरअपराध गूढ [illegible] ॥ [illegible] बोले कि ब[illegible] महानीच कर्म मैंने कीनों ॥ १ ॥ निश्चय ईश्वरकी अवज्ञा कीनीं याते थोरेही का[illegible] फल जन्म भय[illegible] दुःख शीघ्र या पापके प्रायश्चित्तके लिये अवश्य होय, ये इच्छा है क्यौंकि अपने अ[illegible] ॥ ८ ॥ फेर न [illegible]रूंगो ॥ २ ॥ मेरो राज्य सेना ऋद्धि खजानों अत्यंत कुपित ब्राह्मणकुलसो उठी अग्नि[illegible] ऐसी सब भस्म करै मोसरीके अमंगलीककी ऐसी पापी बुद्धि ब्राह्मणदेवता गौमें कभी फेर न हो ॥ ३ ॥ ऐसे चिंतवन करते हे वाही विरियां शमीकके भेजेभए एक शिष्यसो ये सुनी कि मुनिके पुत्र शृंगीऋषिने ये शाप दीनोहै कि आजसो सातवें दिन तक्षक राजाको काटैगो वासो वाकी मृत्यु होयगी ये सुन वो तक्षककी अग्निको बहुत अच्छी मानतो भयो क्यौंकि विषयासक्तको यही विरक्तिको कारण होय है ॥ ४ ॥ ये देह ये राज्य दोनों पहिलेहीसो त्यागने योग्य विचारे हे सो सब त्यागनकर श्रीकृष्णके चरणकी सेवा करवेको अधिक मान अनशन व्रत धारण करवेको श्रीगंगातीर जाते भए ॥ ५ ॥ शोभित तुलसीमिश्रित श्रीकृष्णजीके चरणके रेणुसो अत्यंत अधिक पवित्र जल बहिवेवारी गंगाजी दोनों लोकनको ईश सहित सबको पवित्र करै है ऐसी गंगाजीको आसन्नमृत्यु कौन मनुष्य न सेवन करै ॥ ६ ॥ सो पांडुनंदन ऐसे निश्चयकर अनशन व्रत ले गंगातीर जायके सब भाव हरिमें कर मौन व्रत ले सब संग त्याग मुकुंदके चरणको ध्यान करतो भयो ॥ ७ ॥ तहां भुवन पवित्र करवेवारे महानुभाव ज्ञानी शिष्य सहित बहुतसे तीर्थयात्राके आप सब तीर्थनको पवित्र करवेवारे ब्राह्मण मननशीली मुनि आवतेभए ॥ ८ ॥ अत्रि, वसिष्ठ, च्यवन, शरद्वान्, अरिष्टनेमि, भृगु, अंगिरा, पराशर, विश्वामित्र, परशुराम, उतथ्य, इंद्रप्रमद, इध्मवाह ॥ ९ ॥ मेधातिथि, देवल, आर्ष्टिषेण, भारद्वाज, गौतम, पिप्पलाद, मैत्रेय, और्व, कवष, अगस्त्य, द्वैपायन, भगवत् अवतार श्रीनारद है ॥ १० ॥ और देवऋषि, ब्रह्मऋषिनमें श्रेष्ठ राजर्षिवर्य अरुण आदिक, नानाऋषिवर्य आए, इन सब को पूजन कर शिरसो परीक्षित् वंदना करते भए ॥ ११ ॥ जब सुखपूर्वक सब बैठगए, सबको प्रणाम कर एकांतचित्त कुशासन बैठे हाथ जोडकर राजा जो अपनी करवेकी इच्छा ही सो कहिते भए ॥ १२ ॥ राजा बोले कि । बडे आश्चर्यकी वार्ता है कि अत्यंत शीलयुक्त महात्माननें बडो अनुग्रह कीनों हम राजानमें धन्य हैं. क्यों कि निन्दितकर्म करवेवारो यह राजानको कुल ब्राह्मणनके चरणनके जलसौ दूरही रहवेके योग्य है ॥ १३ ॥ गृहमें वारंवार आसक्तचित्त मोसै पापीकों ज्ञानदायक ईश्वरही द्विजशापरूप भये जासों शीघ्र मोको भय होयहै ॥ १४ ॥ हे ब्राह्मणो ! मैं परमात्मामें चित्त धारण करकै तुम्हारी और गंगा देवीके शरण आयोहूं सो जानिये ब्राह्मणको भेजो कपटी तक्षक मोको भलेही काटो परन्तु आप विष्णु भगवान्की कथा गान कीजिये ॥ १५ ॥ फिर भगवान् अनंतमें प्रीति अधिक होय, और तिनके आश्रमी महात्मा ब्राह्मणनके सत्संग सदा प्राप्त रहै जहां जहां मैं जन्म लेऊं तहां तहां महात्मा पुरुषनकी मित्रता बनी रहै आप सबको नमस्कार होय, ब्राह्मणनकी मैं शरण हूं ॥ १६ ॥ महाधीर राजा परीक्षित् ऐसे निश्चय कर पूर्वको मूलवारे कुशानके आसनपें उत्तरको मुख कर समुद्रस्त्री गंगाजीके दक्षिणकी ओर बैठतेभए, और जनमेजयको आप सब राज्यको भार सौंपगए ॥ १७ ॥ ऐसे वह नरदेवदेव अन्न जल त्यागके बैठे, तब देवनके समूह स्वर्गमें प्रशंसा कर भूमिमें पुष्पनको वर्षा करते भए, और वारंवार नगारे बजावते भए ॥ १८ ॥ जो महाऋषि आए है वे प्रशंसा कर बहुत अच्छी वार्ता है ऐसी बडाई करते भए, प्रजाके अनुग्रहके अर्थशील और सारवारे वे मुनि उत्तम

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्लोकके सुंदर गुण कहिते भए [illegible] विनक[illegible]र्षिवर्य ! श्रीकृष्णके अनुवर्ती आपमें ये कुछ विचित्र बात नहीं है क्यों कि भगवत्के स[illegible]श्वरक्ष[illegible]भक्तिवारे, आप राजकिरीट न करकै सेवित राज्य त्यागते भए ॥ २० ॥ जबतक ये शरीरको [illegible]नियमन[illegible]रेगो तबतक हम सब यहांई बैठे रहेंगे ये भागवतनमें प्रधान निर्मल शोकरहित वैकुंठलो[illegible]को जा[illegible]पहै॥ २१ ॥ सब ऋषिगणनके पक्षपातशून्य अमृत भरे गंभीर अर्थ सत्य वचन राजा परीक्षित् सुनके विष्णुके चरित्र सुनवेकी इच्छासो प्रणाम कर इन आए भएनसों ये बोलो ॥ २२ ॥ त्रिलोकको ऊपर सत्यलोकमें जैसे वेद मूर्ति धारकर बैठे है तैसेई आप सब आयकर विराजेहो, पराएके अनुग्रहके अर्थ आपको स्वभाव है, या लोकमें जो कर्तव्य होय अथवा परलोकके लिये जो कुछ होय सो कहो ॥ २३ ॥ हे विप्रहो ! आपपर विश्वास कर जो पूछनें योग्य है सो पूछोंहों कि या समय कहा कर्तव्य है; सब प्रकारसो मृत्यु जाकी आई वाको जो शुद्धकृत्य होय सो विचार एक मत करके कहो ॥ २४ ॥ ये सुन कोई बोले यज्ञ करो, कोई बोले योग करो, कोई बोले तप करो, कोई बोले दान करो, ये विवाद होरहो हे। तहां भगवान् व्यासनंदन अपनी इच्छासो पृथिवीपर विचरतेभए, अपेक्षारहित आश्रमादिकै चिह्ननसों हीन निजलाभसौ संतुष्ट स्त्रीबालकनसौ अनुगम्यमान अवधूतवेषधारे शुकाचार्य आवतेभए ॥ २५ ॥ षोडशवर्षकी अवस्था, सुकुमार चरण, हाथ, हृदय, बाहु, कंधा, गाल, शरीर सुंदर, विशाल नेत्र, उठेभए दोनों बराबर कर्ण, सुंदर भौं मुख शंखसमान कंठ सुंदर ॥ २६ ॥ मांससो छिपी हुई कण्ठके नीचेकी दोनों हड्डी और चौडो ऊंचो वक्षस्थल, कुण्डके समान गोल और गम्भीर नाभिस्थल, तिरछी झुकीहुई रेखानसो मनोहर उदर दिगम्बर वेष अर्थात् नग्न और फैलेहुये केश, बहुत लम्बे भुजदण्ड, और सुरोत्तमकी समान शोभावारे ॥२७॥ श्यामशरीर सदा सुंदर अंगकी लक्ष्मी और सुंदर मुसकानकरकै स्त्रीनके मन हरवेवारे ऐसे गुप्त तेजस्वी शुकदेवजीके लक्षण जानवेवारे मुनि विन्हें देख आसनसो उठ खडेभए ॥ २८ ॥ सो राजा परीक्षित् आएभए अतिथि शुकदेवजीको शिरसो पूजा करतो भयो, अज्ञानी स्त्री बालक सब चलेगए. वे पूजित हो महासिंहासनपर बैठगए ॥ २९ ॥ तहां महापूज्यनमें ब्रह्मर्षि, राजर्षि, देवर्षि समूहनकरकै घिरे शुक भगवान् अत्यंतशोभित भए, जैसे ग्रह नक्षत्र तारानके समूहनकरकै चंद्रमा शोभित होयहै ॥ ३० ॥ अतिशांत बैठे भये सब अर्थमें तीक्ष्ण बुद्धिवारे शुकमुनिको भागवत नृप प्राप्त होके मस्तकसों प्रणाम कर सावधानीसों हाथ जोड नमस्कार कर कोमल वाणीसों पूछतेभए ॥ ३१ ॥ हे ब्रह्मन् ! आज ब्राह्मणनकी सेवा करकै क्षत्रिय लोग सफलजन्मा भए, जो अतिथिरूप आपने कृपा करकै पवित्र कीने ॥ ३२ ॥ जिन ब्राह्मणनके स्मरणसो पुरुषनके शीघ्र गृहादिक शुद्ध होजाय है, दर्शन स्पर्शन कर पाद धोए आसन दान मिष्टान्नसो भोजन करायवेसो तौ अत्यन्तही शुद्ध होय है ॥ ३३ ॥ हे महायोगिन् ! आपकी समीपसो पुरुषनके महापातक नष्ट हैजांय है, जैसे विष्णुकी समीपतासों असुर नष्ट होय है ॥ ३४ ॥ अपनी फूफीके पुत्र पाण्डव पुत्रनके प्यारे तिनके प्रिय करवेके निमित्त भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रनै अपने कुटुम्बको समझके मोपै कृपा करी है ॥ ३५ ॥ नहीं तौ गुप्त गतिवाले सब प्रकारसौ सिद्ध उदारतासौ मन इच्छित देवेवारे आपसौ पुरुषनको मनुष्यनको दर्शन दुर्लभ है और निकट मृत्युवारेनको तौ महाही दुर्लभ है ॥ ३६ ॥ याते योगिनके परमगुरु आपसो पूछूंहूं कि या संसारमें मरणधर्मी पुरुषको सर्वथा मोक्ष साधनमें जो कर्तव्य होय सो कहो ॥ ३७ ॥ हे प्रभो ! मनुष्यको जो श्रवण योग्य होय जो जपके योग्य जो करवे योग्य होय, स्मरणके योग्य भजन योग्य जो होय, वा कछु उलट पलट होय सो कहो ॥ ३८ ॥ हे ब्रह्मन् ! गृहस्थीनके घरमें आपको स्थित

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होनो गोदोहन करवेवारेनको मुक्तिदायक मुकुंदमें बहुत[illegible] १९ परी[illegible] होयहै ॥ १० ॥ हे नृप ! अत्यंत ऐसै प्रश्न कियो[illegible]क्षुजननकों और कहूसो भय जामें न ही बो[illegible] इच्छावारे योगिनको श्रीहरिको सूत[illegible]न करनोही निर्णय करोहै अर्थात् जो [illegible] करके अकुतोभयपरंपदको जायो [illegible]गवान्को नाम कीर्तन करवोही उपा[illegible] सो सिवाय कोउ उपाय नहीं है अथवा इति श्रीभ्यादि तीनौं षष्ठ्यंत पद तृतीयाके अर्थ[illegible] तब ये अर्थ भयो कि अकुतोभयपरंपदकी [illegible]वेवारे बडे बडे योगी राजननें येही संसार तरवेको उपाय निश्चय कियो है कि भगवान्को [illegible]न करनौ ॥ ११ ॥ यदि राजा संदेह करे कि अब थोडी आयु रहवेसों मैं कहा करसकूंहूं दोहा[illegible] हैं कि प्रमत्त जीवनको असावधानीसो परलोक जायवेके कारण वर्षे वीत जायहैं शुभकार्यमें [illegible]रवेवारेनकी दो घडीहू श्रेष्ठ है[1] ॥ १२ ॥ खट्वांग नामके राजर्षि दो घडी अपनी आयु जान [illegible]र्तमें सबको त्यागकर अभयदायक श्रीहरिको प्राप्त होतेभए । राजा खट्वांग देवपक्ष हैंके दैत्यनकों जीततेभए तब प्रसन्न हैकें देवता बोले वर मांगो, ये सुन राजा बोले प्रथम मेरी आयु कहो कितने दिन जीऊंगो, तब देवताननें कही दो घडी जीओगे, ये सुन शीघ्र विमानपर बैठ भूमिमें आय श्रीहरिकी शरणागति कर मोक्ष है गयो ॥ १३ ॥ सो हे राजन् ! तुम तो सात दिन जिओगे सो जो परलोकके साधनकी क्रिया है सो करो ॥ १४ ॥ जब अंतकाल आवै तब मृत्युके भयसों रहित पुरुष असंगरूप शस्त्रकरके या देहमें और देहके पीछे पुत्रकलत्रादिकमेंसों सुखकी इच्छा दूर करे ॥ १५ ॥ गृहसों निकसके धीर पुरुष पुण्यतीर्थनके जलमें तो स्नान करैं, पवित्र एकांतमें विधिवत् आसनपै बैठे ॥ १६ ॥ शुद्ध अ उ म् ये तीन अक्षरयुक्त परब्रह्मस्वरूप ओंकारको मनसों अभ्यास करै, मनकों जीते, श्वास जीते, ब्रह्मको बीजमंत्र प्रणवकों भूलै नहीं ॥ १७ ॥ बुद्धि है सारथी जाको ऐसो पुरुष अपने मनकरके विषयनसों इंद्रिनकों रोकै और अनेक कर्मनकरके व्याप्त जो मन है वाको भगवतके रूपमें बुद्धिसों धारण करै ॥ १८ ॥ तिन ईश्वरके चरणआदि एक एक अवयवनको कभू न भूलै सब रूपकों चित्तकरकै ध्यान करै, मनको सब विषयनसों हटाय परमानन्दको साक्षात् कर फेर कछु स्मरण न करै ॥ १९ ॥ वोही विष्णुको परमपद है जामैं मन प्रसन्न होय, जे मानसी पूजनमें लीन है, वे वैकुंठको जाय हैं ॥ २० ॥ रजोगुणसों प्रेरे तमोगुणसों विमूढ अपने मनको धारणा करकै रोकै, जो धारणा रजतमके करेभये मलको नाश करैहै ॥ २१ ॥ जा धारणाके करते करते अपने कल्याणके करनेवाले आश्रयको देखते भये प्राणीको वाहि कल्याणकारक भगवत्के रूपमें भक्तिरूप योग अर्थात् प्रीति शीघ्र होय है ॥ २२ ॥ राजा परीक्षित् बोले कि । हे ब्रह्मन् ! जैसे जहां जैसे धारणा धारण करी जाय है और जाविषे धारणा श्रेष्ठ है और जा धारणासो पुरुषको मन निर्मल होय सो कहो ॥ २३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि । अतिस्थूल विराट्रूप हम कहे हैं तुम सुनो, पहलै आसनको जीतै अर्थात् दृढासन होय फिर श्वासको जीतै संगरहित जितेंद्रिय हैके भगवान्के स्थूल रूपमें मनको बुद्धि करकै लगावे ॥ २४ ॥ जितनें स्थूल रूप है तिनमें अति स्थूल यह विराट् देह है कि जहां भूत भविष्यत् वर्तमान ये सत् विश्व दीखै है ॥ २५ ॥ पृथिवी जल तेज पवन आकाश अहंकार महत्तत्व ये

१ प्रयोजन या श्लोकको यह है कि जो सौ वर्षहू जियो पन वो जन्मपर्यंत विषयमें नहीं मग्न रह्यौ और अपनो उद्धार न विचारौ तब वाके वे १०० वर्ष जीवो कौन कामकौ और जो चाहै दो घडीही जियो पर अपनो कल्याणमें प्रवृत्त रह्यौ तो वह श्रेष्ठ है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्मृतिं प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ॥
यात्प्राग्व्यवसायबुद्धिः ॥ १ ॥

जो स्थान विना यत्न स्फुरित हैजाय; विनको त्यागकर और जं
जायगी ॥ १३ ॥ पर अवर द्रष्टा विश्वेश्वरमें भक्तियोग जबत
रूप आवश्यक कर्मके अनुष्ठानके उपरांत नियमनमें तत्पर हैरणासो ईश्वरको प्रसन्न कर ब्रह्माजी विनसो
कर्तव्य है ॥ १४ ॥ हे राजन् ! और अपने आप देह त्यागै व जैसो ये विश्व हो तैसाई फेर रचते भए,
और क्रममुक्ति कहैंगे तिनमें पहले क्रममुक्तिको कहैहै जो गासो विश्व रचवेकी सामर्थ्य होय है॥ १ ॥
स्थिर सुखदायक आसनमें बैठ, शुभकाल और पुण्य देश र है यातें वैराग्यके अर्थ सब कर्मफलकी
जीते योगाभ्यासही योगीको मोक्षदायक कहै ॥ १५ ॥ हत स्वर्गादि नाम सुनकरके विनके साधनकी
करके फिर वा बुद्धिको क्षेत्रज्ञमें लगावै फिर वा लोकनमें घूमेहू है परन्तु अपने प्रयोजनको नहीं
शुद्ध चैतन्य ब्रह्ममें एक करके धैर्ययुक्त जो वो सोय रह्योहै यासो अखंडित सुख याको नहीं मिलैहै॥ २ ॥
वासों परे कोई कार्य कर्तव्य नहीं है ॥ १६ ॥ पदार्थनमें जितनेमें देहनिर्वाह होय वितनेहीमें आसक्त होय
है सकैहै जगत्के ईश्वर देवतानकी फिर क्या जब प्रयोजन सिद्ध होजाय तो विनमें परिश्रम समझ यत्न न
तमोगुण न अहंकार न महत्तत्त्व न माय फिर इनके लिये परिश्रम ज्ञानी न करै, पृथिवी शयनके लिये
वस्तुको यहभी नहीं यहभी नहीं या रि, स्वतःसिद्ध तकियाके वास्ते भुजा हैं यासो तकिया न बनावै,
योगी देहादिकनमें आत्मबुद्धिको त्यागर बहुत अन्नके वास्ते पात्रको न मांगै, दिगंबर वा वल्कल पहि-
होते पूज्यतम विष्णु भगवान्के पवित्र हैं है ॥ ४ ॥ मार्गमेंसो चीर लाय उनकी कंथा ओढै, वृक्षनसों
विष्णु भगवान्के परम पदकोही सबसो पोषण करवेवारी नदीनसो जल पीवै, वे सूकी नहीं है. गुफा-
चिंतवन करके या प्रकार मुनि स्थित हैजा करै है जब यह सब विद्यमान हैं तो फिर कवि लोग धनके
नाशकरके अपनी एढीसों गुदाको बंद करै, सब र्थात् न करैं ॥ ५ ॥ ऐसे अपनो चित्त अपने आपही
करै ॥ १९ ॥ जो पवन नाभिमें मणिपूरक चक्रमें हृदयमें प्रिय ईश्वर भगवान् अनंतके निश्चित स्वरूपको
गतिसों कंठमें स्थित विशुद्ध चक्रमें वा पवनको प्र होयहै ॥ ६ ॥ ऐसो कौन है जो परमेश्वरके ध्यानकी
चित्तके जीते अपने तालुके मूलमें धीरेसे वा वायुव रे तो विषयकोही ध्यावैहै, अपने करे कर्मनके क्लेश-
नाक मुख ये सातनको रोकके काउकी जाको चाहन श्वरको सदा स्मरण करै, एक क्षणभर न विसारै॥ ७ ॥
ज्ञाचक्रमें पवनको प्राप्त करै, एक घडी स्थित हैके शु तर हृदयके आकाशमें जहां " तर्जनी अंगुष्टके
देह इंद्रियें सबको त्याग करै ॥ २१ ॥ पूर्वोक्त सद्यो कमल, चक्र, शंख, गदाधारे ईश्व ण करके
ब्रह्माके स्थानमें होकै जानो चाहै जहां आकाशचारी सिद्धनको विहारस्थान है, और अणिमादिक अष्ट-
सिद्धि मिलैहै, फिर वह योगी गुणसमुदायरूप या ब्रह्मांडमें मन इंद्रियोंके साथही चली जायहै, क्योंकि
मरवेके समय जो वासना याके हृदयमें रहैहै, कि सब लोकनके भोग भोगतो भयो जाऊं तो मन इंद्रियें
सहित जीव जायहै ॥ २२ ॥ पवनरूप जिनकी देह, उपासना, भगवद्धर्म अष्टांगयोग, समाधिके करवे-
वारे योगीश्वरनकी त्रिलोकीसों बाहर भीतर सब जगे जायवेकी गति होय है ऐसे कहे हैं, वा गतिको
कर्मनकरकै कोई नहीं प्राप्त होयहैं ॥ २३ ॥ हे नृप ! आकाशमें होयकर ब्रह्मलोक मार्गमें होय ज्योति-
र्मयीसुषुम्ना नाडीकरकै अग्निअभिमानी देवताको प्राप्त होयहै, पीछें सब मल दूर हैवेसो ऊपर वर्तमान
हरिको संबंधी तारारूप जो शिशुमार चक्र ताको प्राप्त होय है प्रयोजन यह है कि शिशुमारचक्रकी
स्थितिके क्रमसो सूर्यादि एक २ ग्रहनको भेदन करके जाय है । शिशुमार चक्रको वर्णन पञ्चम स्कंधमें
करेंगे ॥ २४ ॥ श्रीविष्णुको चक्र सूर्यादिकनको आश्रयभूत विश्वकी नाभिरूप चक्रको उल्लंघन करकै
क्यों कि वहांसों ऊपर स्वर्गिनकी फेर गति नहीं है, यातें एकही निर्मल लिंगशरीर अणुरूप हैकै और-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सप्त आवरणसहित या ब्रह्मांडमें अथ
आश्रय हैं ॥ २६ ॥ विराड्रूपको क
और पावनके अगारीके भागमें रसातल मुकुंदमें बहुत शो। १९ परी
टकुनानमें महातल है। तलातल विराट्य जामें न ही बोपक
लोक है। दोनों ऊरुमें वितल अतलल र्थात् जो कल ज
नभस्तल नाभिमें है ॥ २८ ॥ ज्योतिन ही उपा भ
नमें जनलोक है। आदिपुरुषके तपलोक के अथर्थ
तेजोमय इंद्रादिक देवता बाहुमें हैं। कर्णमे
हैं। घ्राणइंद्रियमें गंध है। देदीप्यमान अग्नि
सूर्य है। विष्णुके दोनों पलक दिनरात है। भौ
इनकी जीभ है ॥ ३१ ॥ वेद अनंतके शिर है। यमर
करायवेवारी माया हासी है अपार विस्तारवारो सर्ग अ
लज्जा ऊपरको होठ है। और नीचेको होठ लोभ है। धर्म
र्मको मार्ग सब इनकी पीठमें है। प्रजापति शिश्न अर्थात्
सप्तसमुद्र हैं। सब पर्वत भगवान्के हाड ॥ ३३ ॥ सब नदी इ
है। हे नृपेंद्र! श्रीभगवान् विश्वरूप हैं अनंतवीर्य हरिको श्
गति है। गुणप्रवाह संसार भगवान्को कर्म है ॥ ३४ ॥ ईश्वर
ईश्वरके वस्त्र संध्या हैं। प्रधान हृदय हैं। सब विकारको नि
विज्ञान शक्ति भगवान्की महिमा अर्थात् महत्तत्त्व है। स
घोडा खिच्चर ऊंट हाथी ये भगवान्के नख हैं। मृग और पश
वान्के विचित्र व्याकरण शब्दशास्त्र पक्षी है चतुराई
बुद्धि है। गन्धर्व विद्याधरचारणादिक षड्ज ऋषभा
स्मृति हैं। असुरनकी सब सेना भगवान्को पराक्र
महात्मा ईश्वरके वैश्य ऊरु चरणके आश्रित वर्ण
प्रकारसो पूजनीय देवगणसहित अनेक द्रव्यसो संपद है जामैं मन प्रसन्न होय, जे मानसी पूजनमें
नको वीर्य है ॥ ३८ ॥ ईश्वरके विग्रह अवयवनकी मोगुणसों विमूढ अपने मनको धारणा करकै रोकै,
शरीरणा रजतमकी बुद्धि [illegible] नाश [illegible] ॥ २१ ॥ जा धारणाके करते करते अपने कल्याणके
करनेवाले आश्रयको देखते भये प्राणीको वाहि कल्याणकारक भगवत्के रूपमें भक्तिरूप योग
अर्थात् प्रीति शीघ्र होय है ॥ २२ ॥ राजा परीक्षित् बोले कि। हे ब्रह्मन्! जैसे जहां जैसे धारणा
धारण करी जाय है और जाविषे धारणा श्रेष्ठ है और जा धारणासो पुरुषको मन निर्मल होय सो
कहो ॥ २३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि। अतिस्थूल विराट्रूप हम कहे हैं तुम सुनो, पहलै आसनको
जीतै अर्थात् दृढासन होय फिर श्वासको जीतै संगरहित जितेंद्रिय हैके भगवान्के स्थूल रूपमें मनको
बुद्धि करकै लगावे ॥ २४ ॥ जितनें स्थूल रूप है तिनमें अति स्थूल यह विराट् देह है कि जहां भूत
भविष्यत् वर्तमान ये सत् विश्व दीखै है ॥ २५ ॥ पृथिवी जल तेज पवन आकाश अहंकार महत्तत्व ये

होयहै ॥ १० ॥ हे नृप! अत्यंत
इच्छावारे योगिनको श्रीहरिको
स करके अकुतोभयपरंपदको जायो
सो सिवाय कोउ उपाय नहीं है अथवा
तब ये अर्थ भयो कि अकुतोभयपरंपदकी
संसार तरवेको उपाय निश्चय कियो है कि भगवान्को
रे कि अब थोडी आयु रहवेसों मैं कहा करसकूंहूं
क जायवेके कारण वर्षे वीत जायहैं शुभकार्यमें
नामके राजर्षि दो घडी अपनी आयु जान
नेभए। राजा खट्वांग देवपक्ष हैंके दैत्य-
सुन राजा बोले प्रथम मेरी आयु कहो
ये सुन शीघ्र विमानपर बैठ भूमिमें
राजन्! तुम तो सात दिन जिओगे
काल आवै तब मृत्युके भयसों रहित
त्रादिकमेंसों सुखकी इच्छा दूर करे
स्नान करैं, पवित्र एकांतमें विधिवत्
स्वरूप ओंकारको मनसों अभ्यास
भूल नहीं ॥ १७ ॥ बुद्धि है सारथी जाको
र अनेक कर्मनकरके व्याप्त जो मन है वाको
श्वरके चरणआदि एक एक अवयवनको कभू न
विषयनसों हटाय परमानन्दको साक्षात् कर फेर

१ प्रयोजन या श्लोकको यह है कि जो सौ वर्षहू जियो पन वो जन्मपर्यंत विषयमें नहीं मग्न रह्यौ और अपनो उद्धार न विचारौ तब वाके वे १०० वर्ष जीवो कौन कामकौ और जो चाहै दो घडीही जियो पर अपनो कल्याणमें प्रवृत्त रह्यौ तो वह श्रेष्ठ है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

1 — ५ पेज इस पुस्तक में नहीं है।

जो स्थान विना यत्न स्फुरित हैजाय; विनको त्यागकर और जंघा आदिको ध्यान करै तैसेई बुद्धि होती जायगी ॥ १३ ॥ पर अवर द्रष्टा विश्वेश्वरमें भक्तियोग जबतक न होय तबतक स्थूल विराट् पुरुषको रूप आवश्यक कर्मके अनुष्ठानके उपरांत नियमनमें तत्पर हैकै स्मरण करै ये तो समीप मृत्यु आयेको कर्तव्य है ॥ १४ ॥ हे राजन् ! और अपने आप देह त्यागै वाको ये कृत्य कर्तव्य है अगारी सद्योमुक्ति और क्रममुक्ति कहैंगे तिनमें पहले क्रममुक्तिको कहैहै जो यति या लोककी त्यागवेकी इच्छा करे, वो स्थिर सुखदायक आसनमें बैठ, शुभकाल और पुण्य देशमें मनको आसक्त न करै मन करकै प्राणनको जीते योगाभ्यासही योगीको मोक्षदायक कहै ॥ १५ ॥ अपनी निर्मल बुद्धि करके अपने मनको काबूमें करके फिर वा बुद्धिकों क्षेत्रज्ञमें लगावै फिर वा क्षेत्रज्ञकों जीवात्मामें लय करै फिर वा जीवात्माको शुद्ध चैतन्य ब्रह्ममें एक करके धैर्ययुक्त जो वो योगी है आनंदको प्राप्त हैकै सब कृत्यसों विराम करै, वासों परे कोई कार्य कर्तव्य नहीं है ॥ १६ ॥ जा आत्मस्वरूपमें देवनको परम प्रभु कालहु समर्थ नहीं है सकैहै जगत्के ईश्वर देवतानकी फिर कहा सामर्थ्य है, न जहां सतोगुणकी चलै; न रजोगुण, न तमोगुण न अहंकार न महत्तत्त्व न माया इन सबकी कुछ सामर्थ्य नहीं है ॥ १७ ॥ सम्पूर्ण अनात्म-वस्तुको यहभी नहीं यहभी नहीं या विचारसों आत्मव्यतिरिक्त वस्तुको त्यागवेकी इच्छा करवेवारी योगी देहादिकनमें आत्मबुद्धिको त्याग नहीं है आत्मा सिवाय काउ और दूसरेमें सुहृदपन जिनके ऐसे होते पूज्यतम विष्णु भगवान्के पवित्र स्वरूपकों हृदयमें प्रतिक्षण आलिंगन कर विन्हींमें प्रीति लगाय विष्णु भगवान्के परम पदकोही सबसों श्रेष्ठ माने हैं वाहीको वैष्णवपरंपद कहे है ॥ १८ ॥ ईश्वरको चिंतवन करके या प्रकार मुनि स्थित हैके सबसो उपराम करै, ब्रह्मज्ञानकी दृष्टिके बलसों विषयवासना नाशकरके अपनी एढीसों गुदाको बंद कर, सब परिश्रम जीत नाभि आदि छैः स्थाननमें पवनको प्राप्त करै ॥ १९ ॥ जो पवन नाभिमें मणिपूरक चक्रमें स्थित है वाको हृदयके अनाहत चक्रमें रोकके उदान गतिसों कंठमें स्थित विशुद्ध चक्रमें वा पवनको प्राप्त करै फिर वो मुनि पीछै बुद्धिसों अनुसंधान कर चित्तके जीते अपने तालुके मूलमें धीरेसे वा वायुको प्राप्त करै ॥ २० ॥ दोनों कान दोनों नेत्र दोनों नाक मुख ये सातनको रोकके काउकी जाको चाहना नहीं ऐसो वो मुनि वहांसो भ्रुकुटीके भीतर आज्ञाचक्रमें पवनको प्राप्त करै, एक घडी स्थित हैकै शुद्ध दृष्टिकर परब्रह्मको प्राप्त होकर ब्रह्मरंध्रको भेदके देह इंद्रियें सबको त्याग करै ॥ २१ ॥ पूर्वोक्त सद्योमुक्ति कही, अब क्रममुक्ति कहै हैं; हे नृप ! जो ब्रह्माके स्थानमें होकै जानो चाहै जहां आकाशचारी सिद्धनको विहारस्थान है, और अणिमादिक अष्ट-सिद्धि मिलैहै, फिर वह योगी गुणसमुदायरूप या ब्रह्मांडमें मन इंद्रियोंके साथही चली जायहै, क्योंकि मरवेके समय जो वासना थाके हृदयमें रहैहै, कि सब लोकनके भोग भोगतो भयो जाऊं तो मन इंद्रियें सहित जीव जायहै ॥ २२ ॥ पवनरूप जिनकी देह, उपासना, भगवद्धर्म अष्टांगयोग, समाधिके करवे-वारे योगीश्वरनकी त्रिलोकीसों बाहर भीतर सब जगे जायवेकी गति होय है ऐसे कहे है, वा गतिकों कर्मनकरकै कोई नहीं प्राप्त होयहैं ॥ २३ ॥ हे नृप ! आकाशमें होयकर ब्रह्मलोक मार्गमें होय ज्योति-र्मयीसुषुम्ना नाडीकरकै अग्निअभिमानी देवताको प्राप्त होयहै, पीछैं सब मल दूर हैवेसो ऊपर वर्तमान हरिको संबंधी तारारूप जो शिशुमार चक्र ताको प्राप्त होय है प्रयोजन यह है कि शिशुमारचक्रकी स्थितिके क्रमसो सूर्यादि एक २ ग्रहनको भेदन करके जाय है । शिशुमार चक्रको वर्णन पञ्चम स्कंधमें करेंगे ॥ २४ ॥ श्रीविष्णुको चक्र सूर्यादिकनको आश्रयभूत विश्वकी नाभिरूप चक्रको उल्लंघन करकै क्यों कि वहांसों ऊपर स्वर्गिनकी फेर गति नहीं है, यातें एकही निर्मल लिंगशरीर अणुरूप हैकै और-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नकरकै नमस्कृत ब्रह्मवेत्तानके स्थान महर्लोकको प्राप्त होय है जहां महाकल्पकी आयुवारे पण्डित भृगु आदिक रमण करैहैं ॥२५॥ याके उपरांत कल्पांतमें श्रीशेषजीके मुखकी अग्निसों भस्म विश्वको देखकै सिद्धेश्वरनकरके सेवित स्थान द्विपरार्द्धमें स्थित रहैहै, वा ब्रह्मलोककों जाय हैं अर्थात् वाहीको ब्रह्मलोक कहैहै ॥२६॥ वा ब्रह्मलोकमें शोक वृद्धापन मृत्यु दुःख भय कहूसों कभू नहीं होय है किंतु केवल या भगवद्ज्ञानको न जानवेवारेनको भगवत्कृपा विना जो अत्यंत दुःख प्राप्त होनो और विनके वारंवार जन्ममरण देखके जो दया आवै है केवल यही दुःख विनको होय है और दुःख विनको नहीं होय है वहां शोकादिक कहींसोहू नहीं है जे ब्रह्मलोकमें गये हैं विनकी तीन प्रकारकी गति है जे पुण्य बहुत करके गए हैं वे कल्पांतरमें पुण्यकी न्यून अधिकता करके अधिकारी होय हैं, जे हिरण्यगर्भादिककी उपासनाके बलकरके गएहैं वे ब्रह्माके संग मुक्त होंयगे, जे भगवत्के उपासक हैं वे अपनी इच्छासों ब्रह्मांडको भेदन कर श्रीवैकुंठ वैष्णवपदको जाय हैं ॥ २७ ॥ पीछै लिंगदेह करके पृथिवीरूपताको प्राप्त होयकर अर्थात् पहलेही जब पृथिवीके आवरणको भेदन करै है तब वह पृथिवीरूप है जाय है ऐसेही सप्तावरण भेदन करनों समझ लेनो भय त्याग पृथिवीरूप होयके जलकों प्राप्त होय, शीघ्रता न करकै ज्योतिर्मय होय वायुको प्राप्त होय वायुरूप होकर बडो भारी ब्रह्मस्वरूप आकाशको प्राप्त होयहैं भगवद्भक्तको ब्रह्मांडके भेदनको प्रकार कहैहैं ईश्वरकी रची प्रकृतिके कोई एक अंशसों महत्तत्व होय है, वाके अंशसों अहंकार होय है, वा अहंकारके अंशसों शब्द, ताकी मात्राके द्वारा आकाश होय है आकाशके अंशसो स्पर्श ताकी मात्राके द्वारा वायु होय है, वायुके अंशसों रूप तन्मात्राके द्वारा तेज होय है, तेजके अंशसों रस तन्मात्राके द्वारा जल होय हैं, जलके अंशसों गंध तन्मात्राद्वारा पृथ्वी होय है; ये सब मिलके चतुर्दश भुवनात्मक विराट्शरीर ब्रह्मांड होय है, सो सो ब्रह्मांडको पंचाशतकोटि योजन विस्तार हैं, पृथिवी शब्दवाच्य विशेष अंडकटाह शतकोटि योजन विस्तार हैं, कोई पंचाशतकोटि योजन विशाल है, ऐसेभी कहैहै, फेर वायु आदिकनके अनगिनती अंश हैं, सो वे उत्तरोत्तर दशगुणे अधिक हैं आठ प्रकृतिके आवरण व्यापक है ॥ २८ ॥ घ्राणसों गंध, रसनासों रस, दृष्टिसों रूप, त्वचासों श्वास, श्रोत्रसों आकाशके गुण शब्दकों प्राप्त होकर योगी प्राण करिकै तिन तिन क्रियाको प्राप्त होय है[1] ॥ २९ ॥ अहंकार तीन प्रकारको है तामस, राजस, सात्विक, तामससों जड भूत सूक्ष्म उत्पन्न होय है राजससों बहिर्मुख दश इंद्रिय, सात्विकसों मन इंद्रिय देवता, इनको लय तिस तिस अहंकारमें होय हैं, सो योगी भूतसूक्ष्म इंद्रियनकों लय मनोमय देवमय अहंकारकों गतिसों प्राप्त होयकर गुणनके लय महत्तत्त्वकों प्राप्त होय है ॥ ३० ॥ हे राजन् ! फिर वा प्रकृतिको उल्लंघन करके शुद्ध आनंदमय जीव उपाधीनके अंतमें प्रधानरूप करकै तिन आत्माको प्राप्त होय, या भगवत्की गतिको जो गयो है सो फेर या संसारमें आसक्त नहीं होय है ॥ ३१ ॥ तुमने वेदमें कहे भये जो सनातन मार्ग पूछे वे दोनों वेदके मार्ग हमने तुमसो

---

१ प्रयोजन या श्लोकको यह है कि वो क्रम मुक्तिके मार्गसों जानेवारो योगी या प्रकार सप्तावरणको जब भेदन कर चुकै है तब घ्राणको गंधमें लय करै है रसना इंद्रियको रसमें लय चक्षु इंद्रियको रूपमें लय त्वचा इंद्रियको स्पर्शमें लय कर्ण इंद्रियको शब्दमें लय हाथ पांव आदि कर्मेंद्रियनकों विन २ की क्रियानमें लय करे है यामें योगीके भूत सूक्ष्मके अतिक्रमण करवेको प्रकार कह्यो है ॥ २ या श्लोकमेंहू यह समझनो कि वह योगी भूत सूक्ष्मनको तामसी अहंकारमें लय करै है और बहिर्मुख इंद्रियनको राजसाहंकारमें लय करै है और सात्विक मन इंद्रिय देवतानको सात्विक अहंकारमें लय करै है ऐसे फिर वह योगी विन अहंकारनको महत्तत्त्वमें लय करै है फिर वा महत्तत्त्वको गुणनको कारण जो प्रधान (प्रकृति) है तामें लय करै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहे पहले भगवान् वासुदेवकी आराधना करकै ब्रह्माजीनै विनसौ यही वार्ता पूछी हौ तौ भगवान् वासुदेवनें ब्रह्माजीसों कहीही ॥ ३२ ॥ जे संसारमें जीव फंस रहे हैं विनको यासो और कल्याणदायक मार्ग नहीं है जाते वासुदेव भगवान्में भक्तियोग होय है ॥ ३३ ॥ भगवान् ब्रह्मा निर्विकार एकाग्र-चित्तकरकै वेदकों तीनवार बुद्धिसों विचारकर आत्मामें प्रीति होनीही जीवको कल्याण है यह निश्चय करते भए ॥ ३४ ॥ भगवान् हरि सब जीवनमें अपने आत्माकरकै अर्थात् अंतर्यामिरूप करके दीखे है बुद्धि आदि ईश्वरके देखवेके उपाय हैं, वो भगवान् द्रष्टा है नाम सबनको देखनवारो है अनुमान करवेके लक्षणसों वे दीखे है जैसे कुहाडा आदि चेतनके आश्रयसों वृक्ष काटे हैं वैसे इन्द्री चेतनके आश्रय कर काम करै है ईश्वरके जाननेमें यही अनुमान है ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! ताते सर्व आत्मा हरि सर्वत्र सब कालमें सुनवे योग्य है, कीर्तन करवे योग्य है और वेई भगवान् सब जीवनकी स्मरण करवे योग्य है ॥ ३६ ॥ जे कोई संतजननके आत्मा भगवान् सर्व व्यापकको कथामृत काननको खूब भरभरके पीवै है अथवा संतनके कानरूप दोनानके भरवेको पदार्थ जो भगवान्को कथामृत ताको जे पीये है वे विषयनसो अति दूषित अंतःकरणकों पवित्र करै हैं और फिर अंतकालमें विन्ही श्रीहरिके चरणकमलके समीप जांय है ॥ ३७ ॥

पिबन्ति ये भगवत आत्मनः सतां कथामृतं श्रवणपुटेषु संभृतम् ॥
पुनन्ति ते विषयविदूषिताशयं व्रजन्ति तच्चरणसरोरुहान्तिकम् ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कन्धे पुरुषसंस्थानुवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

श्रीशुक उवाच-एवमेतन्निगदितं पृष्टवान्यद्भवान्मम ॥
नृणां यन्म्रियमाणानां मनुष्येषु मनीषिणाम् ॥ १ ॥

जो बात आपने हमसो पूछी सो ऐसे हमने कही है, शीघ्र मृत्यु प्राप्त होनेवारे बुद्धिमान्को मनुष्य ये श्रीहरिकी कथाही श्रवण करनो श्रेष्ठ है ॥ १ ॥ परंतु अनेक कामनके फल प्राप्तिके लिये अन्यदेवतानकोहू भजन करनो योग्य है, ब्रह्मतेज बढायवेकी जाको कामना होय वो वेदपति ब्रह्माको पूजन करे इंद्रियनकी पुष्टताकी[1] कामना जाको होय वो इंद्रकी पूजा करै, प्रजा[2] (संतानकी) वृद्धिकी चाहनावारो दक्ष प्रजापतिकी पूजा करै ॥ २ ॥ लक्ष्मी[3]की जाको इच्छा होय वो दुर्गादेवीकी पूजा करै, तेजकी चाहनावारो अग्निकी पूजा करै, धन[4]की कामनावारो अष्ट वसुको पूजन करै, वीर्यकी कामनावारो धनदाता रुद्रकी पूजा करै ॥ ३ ॥ अन्न आदि भोज्यकी चाह जाको होय वो अदितिकी सेवा करे, स्वर्गकी कामनावारो द्वादशादित्यानकी पूजा करे, राज्यकी कामनावारो विश्वेदेवाको भजन करै, देश देशकी प्रजानकी अपने आधीनकी इच्छा करै वो साध्यनामक देवताको पूजन करै ॥ ४ ॥ आयुकी चाहनावारी अश्विनीकुमारको पूजन करै; पुष्टिकी कामनावारो पृथिवीको पूजन करै अपनी प्रतिष्ठाकी कामना होय वो लोकप्राप्त द्यावापृथिवीकी पूजा करै ॥ ५ ॥ रूपकी चाहनावारो गंधर्वनकी पूजा करै, सुंदरस्त्रीकी चाहनावारो

१ चतुराई ॥ २ यहां प्रजा शब्दसों जनमात्रको ग्रहण करनो अर्थात् जो यह चाहै कि मेरे हुकुममें बहुत आदमी रहै यह चाहे तौ दक्ष आदि प्रजापतिनको सेवन करै यहां प्रजाशब्दसों संतानको ग्रहण नहीं है संतान इच्छावारे पुरुषके ताई पितरनको पूजन करनो कहेंगे प्रजा स्यात् संततौ जने इत्यमरः ॥ ३ धनकी ॥ ४ ऐश्वर्य ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उर्वशी अप्सराको पूजन करै, सब देशके राज्यकी कामनावारो परमेष्ठीनामक ईश्वरको पूजन करै ॥ ६ ॥ यशकी चाहनावारो यज्ञपुरुषको पूजन करै खजानेकी चाहनावारो प्रचेता वरुणको पूजन करैं, विद्याकी चाहनावारो महादेवजीको पूजन करै, अपने स्त्री पुरुषनमें प्यारकी इच्छावारो पार्वतीजीको पूजन करै ॥ ७ ॥ धर्मकी चाहनावारो विष्णुकी पूजा करै संतानकी वृद्धिकी चाहनावारो पितरनकी पूजा करै, रक्षा रहै कोई बाधा न होय ये कामनावारो यक्षनको पूजन करै, बलकी कामनावारो मरुद्गणनको पूजन करै ॥ ८ ॥ राज्यकामनावारो मनुको पूजा करै शत्रुमरणकी इच्छा होय वो निर्ऋति मृत्युको पूजन करै भोगकी इच्छा होय वो चंद्रमाको पूजन करै कोई कामकी इच्छा न होय वैराग्यकी चाहना होय वो परमपुरुषको पूजन करै ॥ ९ ॥ जाकू कोई वस्तुकी चाहना न होय अथवा सब वस्तुकी चाहना होय, मोक्षकी कामनावारो उदार बुद्धि तीव्र भक्तियोग करकै परपुरुष विष्णुको पूजन करै ॥ १० ॥ जो भगवान्में अचलभाव होय, भगवत्के जननके संगसो येही सब कर्म करनेवारेको परम पुरुषार्थको लाभ है ॥ ११ ॥ सब ओरसे रागादिकनके समूहकरके रहित ज्ञान जा कथासों होय है आत्मा मन प्रसन्न होयहै विषयनसो मन हटै है. कैवल्य संमतमार्गमें भक्तियोग होय है जामें सब सुख होय है ऐसी नारायणकी कथामें कौन पुरुष प्रीति न करै ॥ १२ ॥ शौनकजी बोले कि भरतवंशीनमें श्रेष्ठ राजा[1] ये कथन सुनके फेर व्यासपुत्र शब्दब्रह्मके ज्ञाता परब्रह्मदर्शी शुकदेवजीसो कहा पूछते भए ॥ १३ ॥ हे सूत ! हे विद्वन् ! हम सुनवेकी इच्छावारेनको आप कहिवेको योग्य हो, संतनकी सभामें श्रीहरिकथाही जिनको फल ऐसी जे कथा है वे निश्चयकरकै होय है ॥ १४ ॥ जे भागवत पांडुनंदन महारथी परीक्षित् बालक्रीडामें खेलती विरियां श्रीकृष्णकी क्रीडाकों करो करते हैं ॥ १५ ॥ और वे व्यासपुत्र भगवान् वासुदेवमें परायण श्रीशुकदेवजीहू ऐसेही है अर्थात् जैसो वे श्रोता हो ऐसेही वे वक्ता है बोहोत गाएजांय ऐसे श्रीहरिके उदार चरित्र संतनकी सभामें सदा भयोही करैहै ॥ १६ ॥ ये सूर्यनारायण उदय अस्त होते जो पुरुषनको आयु हरै है, सो ठीक है पन उत्तम श्लोक भगवान्की चर्चामें जा पुरुषनें समय व्यतीत कियो है वाकी आयुके विना अर्थात् जो आयु या पुरुषकी भजनकीर्तन करवेमें बीती है वो आयु तौ सफल है और सब व्यर्थ है और या श्लोकमें 'यन्' जो पद है सो इण् धातुके लट् लकारके शतृप्रत्ययको है ॥ १७ ॥ वृक्ष कहा नहीं जीवै है; धोकनी कहा श्वास नहीं लेयहै, और ग्रामके पशु कहा नहीं खांयहैं, वा विष्टादि नहीं करैहैं. इनको व्यर्थही आयु है ॥ १८ ॥ कुत्ता. विष्टाखादि शूकर, ऊंट, गधा ये जाकी स्तुति करै ऐसो पुरुष पशु है, जाके कानमें कभू भगवत्कथा नहीं गई हैं वो पुरुष पशुतुल्य है ॥ १९ ॥ हे सूत ! परमेश्वरके चरित्र जो नर काननसों न सुने वे कान सर्पके बिलेके समान है गायवे योग्य हरिकी गाथाकी न गायवेवारी खोटी जीभ मेंडकाकी जीभके समान वृथा बकवाद करै है ॥ २० ॥ रेशमी वस्त्र जामें लिपटो और किरीट पहिने शिरसे जो मुकुंदको न प्रणाम करै वो शिर केवल भार है, कांचनको कंकण शोभित हाथ जो हरिकी सेवा न करै तो वे हाथ मुरदाके हाथके बराबर है ॥ २१ ॥ जिन नेत्रनसों भगवत्के दर्शन न करे वे मनुष्यनके नेत्र मोरपंखके समान है, जिन पांवोंसों भगवत्के क्षेत्रनमें न फिरे, वे मनुष्यनके पांव वृक्षनके समान है ॥ २२ ॥ जाने भागवतके ब्राह्मणनके चरणकी रज कभूहू नहीं स्पर्श करी, वो जीवतो भयो मूर्दाके समान है भगवान्के पदमें चढी भई तुलसीकी सुगंध जाने नहीं सेवन करी वो श्वास लेतो भयो मुरदा है ॥ २३ ॥ बडे खेदकी वार्ता है, कि ग्रहण

१ परीक्षित् ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करवे योग्य श्रीहरिके नाम हैं विनको जा हृदयसों न लेय वो हृदय पत्थरके समान है, हरिका नाम-स्मरण कर जो हृदय द्रवीभूत न होय नेत्रमें जल न आवै शरीरके रोम खडे न होय वो पाषाणको हृदय है ॥ २४ ॥ जो अभक्त हैं वाको सब व्यर्थ होय है, हे अंग ! हमारे मनके अनुकूल तुम कहो भागवतनमें प्रधान व्यासनंदन आत्मविद्याके ज्ञाता राजाके पूछेपै जो कहिते भए सो आप कहो ॥ २५ ॥

अथाभिधेह्यङ्ग मनोनुकूलं प्रभाषसे भागवतप्रधानः ॥
यदाह वैयासकिरात्मविद्याविशारदो नृपतिं साधुपृष्टः ॥ २५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कंधे ब्रह्मादिदेवपूजनफलवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

सूत उवाच–वैयासकेरिति वचस्तत्त्वनिश्चयमात्मनः ॥
उपधार्य मतिं कृष्णे औत्तरेयः सतीं व्यधात् ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि राजा परीक्षित् शुकाचार्यके कहे वचन आत्माके तत्त्व निश्चय करवेवारे सुनके श्रीकृष्णमें अधिक अपनी सती मतिको लगावते भए ॥ १ ॥ शरीर स्त्री पुत्र घर पशु धन भाई बंधु राज्य सबमें लगी ममता त्याग करते भए ॥ २ ॥ हे श्रेष्ठजनो ! जो तुम मोसें पूछतेभए याहीको श्रीकृष्णके अनुभाव सुनवेमें श्रद्धाधारी राजा पूछते भए ॥ ३ ॥ अपनी मृत्यु जान धर्म अर्थ कामको सब प्रकार ईश्वरमें समर्पण कर वासुदेव भगवान्में अपने आत्माको दृढभाव करतेभए ॥ ४ ॥ परीक्षित् बोले कि हे ब्रह्मन् ! हे पापरहित ! श्रीहरिकी कथा कहिवेवारे सर्वज्ञ तुमारो वचन बहुत सुंदर है, जैसे जैसे तुम भगवान्की कथा कहो हो ऐसे २ मेरो सब अंधकार दूर होयहै ॥ ५ ॥ असमर्थ ब्रह्मादिकनकरकै चिंतवन न करोजाय ऐसे या विश्वको भगवान् अपनी माया करकै जैसे रचे है याको औरहू सुनवेकी इच्छा है ॥ ६ ॥ जैसे विश्वकी रक्षा करे हैं जैसे फेर संहार करैहैं जा जा शक्तिको आसरो लेके बहुशक्तिधारी परपुरुष भगवान् आय क्रीडा करतो और अपने आपेको क्रीडा करावतो करै है और विविधसृष्टि रचै है सो कहो ॥ ७ ॥ हे ब्रह्मन् ! अद्भुत कर्म करवेवारे भगवान् हरिकी चेष्टा निश्चय करकै बडे कविनसोहूं नहीं निश्चय करीगई है ऐसी मालूम पडै है ॥ ८ ॥ जन्म धारण कर कर्म कर एक ईश्वर एक कालमें अथवा क्रमक्रमसो प्रकृतिके गुणनको अनेक प्रकारसो धारण करे है ॥ ९ ॥ ये जानवेकी मेरी इच्छा है सो आप कहैं, क्योंकि आप परमेश्वरमें और शब्द ब्रह्ममें अधिक पारंगत हो ॥ १० ॥ सूतजी बोले कि श्रीहरिके गुणानुवाद कहिवेमें राजापरीक्षित्करके ऐसे प्रार्थना करे गए श्रीशुकदेवजी श्रीहृषीकेशको स्मरण कर कहिवेको प्रारंभ करते भए ॥ ११ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि जिनकी महिमाको प्रमाण नहीं, या विश्वकी उत्पत्ति पालन नाशके निमित्त लीला करकै ब्रह्मादि तीन शक्ति धारवेवारे सब देहीनके अंतर्यामी काऊकों जिनको मार्ग दीखे नहीं ऐसे परम पुरुष ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ १२ ॥ धर्मवर्ती संतनके दुःखनाशक, अधर्मी असंतनके नाशक, सब जीवमात्रमें जिनकी मूर्ति, पारमहंस आश्रममें स्थित पुरुषनको आत्मतत्वके देवेवारे परमेश्वरको नमस्कार होय ॥ १३ ॥ भक्तपालक कुत्सित योगियनको दूर अपने बराबर नहीं अपनेसो अधिक नहीं ऐसे ऐश्वर्य करकै अपने स्वस्वरूपमें रमण करवेवारे परब्रह्मको वारंवार नमस्कार होय ॥ १४ ॥ जिनको कीर्तन, जिनको स्मरण, जिनको दर्शन, जिनको वंदन, जिनकी कथाको श्रवण, जिनको पूजन, सब लोकके शीघ्र सब पापनको नाश

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करैहैं, ऐसे सुंदर मंगलरूप यशवारे परमेश्वरको नमस्कार होय सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान् सर्वांतर्यामी सर्वेश्वरको सब ओरसों नमस्कार मात्रही श्रेष्ठ है ॥ १५ ॥ विवेकी लोग जिनके चरणनकी सेवासों आत्माको दोनों ओरसे संग त्याग सब परिश्रमरहित ब्रह्मकी गतिको प्राप्त होयहैं, ऐसे मंगल यशस्वीके अर्थ नमस्कार होय ॥ १६ ॥ तपस्वी लोग महादानी यशस्वीजन मनस्वी लोग मंत्रवेत्ता सुंदर मंगलकारी ये सब अपनो अपनो करो भयो कर्म जिन परमेश्वरमें समर्पण करै विना क्षेमको नहीं प्राप्त होय हैं, ऐसे सुंदर मंगल यशस्वीके अर्थ नमस्कार होय ॥ १७ ॥ किरात हूण आंध्र पुलिंद पुल्कस आभीर कंक यवन खशादिक ये और औरहू पापी जिनके आश्रयसो शुद्ध हैजायहै, ऐसे सबमें होयवेवारे ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ १८ ॥ आत्मज्ञानियोंके आत्मा, सबके ईश्वर वेदत्रयीमय, धर्ममय, तपोमय, निष्कपटी, ब्रह्मा, शंकर आदि करकै अति आश्चर्यसो जिनकी मूर्ति देखवेके योग्य सो भगवान् प्रसन्न होओ ॥ १९ ॥ श्रीभूलीलानायक, यज्ञपति, प्रजापति, बुद्धिनके पति, लोकपति, धरापति, अंधक वृष्णि सात्वत इनके पति, और गति, भगवान् संतनके पति मोपै प्रसन्न होओ ॥ २० ॥ जिनके दोनों चरणनके निरंतर ध्यानरूप समाधिसों धुईभई बुद्धिसों सगुण निर्गुण उपासना करकै ईश्वरके तत्वको दर्शन करैहैं, और पंडित लोग अपनी रुचिके अनुसार या तत्वको वर्णन करै हैं, सो मुकुंद भगवान् मोपर प्रसन्न होओ ॥ २१ ॥ क्योंकि कल्पके आदिमें ब्रह्माके हृदयमें सृष्टिके रचवेवारी स्मृति विस्तारवेवारे करकै प्रेरित सरस्वती ब्रह्माके मुखसो प्रगट भई, जाके असाधारण लक्षण हैं, सो ऋषिनकेहू बडे श्रेष्ठ ईश्वर मोपर प्रसन्न होओ ॥ २२ ॥ जो ईश्वर पंचभूतन करकै इन सबको निर्माण कर इनके भीतर वसै हैं, षोडश कलाधारी समर्थ सोले गुणनको भोगैं हैं, भगवान् मेरे वचननको अलंकार करौं ॥ २३ ॥ ब्रह्माके अंतर्यामी भगवान् वासुदेवको अर्थ नमस्कार होय, भक्त जन जिनके मुखकमलके मादक ज्ञानमय रसको पीतेभए ॥ २४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वेदगर्भमें साक्षात् हरि व्यापक ईश्वरने जो ब्रह्माजीसों कह्यो और ब्रह्माने नारदजीसों कह्यो वो यही प्रश्न है जो तुमने कियो है ॥ २५ ॥

एतदेवात्मभू राजन्नारदाय विपृच्छते ॥
वेदगर्भोऽभ्यधात्साक्षाद्यदाह हरिरात्मनः ॥ २५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कन्धे सृष्ट्यादिश्रीहरिचेष्टावर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

नारद उवाच–देवदेव नमस्तेऽस्तु भूतभावन पूर्वज ॥
तद्विजानीहि यज्ज्ञानमात्मतत्वनिदर्शनम् ॥ १ ॥

[1] श्रीनारदजी बोले कि हे देवनके देव ! हे सब जीवत्सल ! हे पूर्वज ! आपके अर्थ नमस्कार होय आत्माके तत्वको निरंतर दर्शन देवेवारो ज्ञान कहो ॥ १ ॥ हे प्रभो ! जो रूप है, जाके आश्रय ये सब जासो ये सब रचो गयो है, जामें ये सब लीन होय है, जाके आधीन है, जो कुछ है वो तत्व सिद्धांतसो आप कहो ॥ २ ॥ भूत भविष्यत् वर्तमान ये सब आप प्रभु जानों हो, हाथमें जैसे निर्मल जलकी बूंद अथवा आंमलो होय तैसे अत्यंत ज्ञान कर निश्चित या विश्वको तुम जानों हो ॥ ३ ॥

१ श्रीशुकदेवजी कहै है कि हे राजन् ! एक दिन वीणा बजावते नारदजी ब्रह्मादिजीसों ये पूछते भये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जो विशेष ज्ञान है, जो आधार है, जाके तुम परायण हो, जो स्वरूप है, अपनी माया करकै सब जीवनको एक तुमही रचो हो मोको तौ तुम्ही ईश्वर मालूम पडो हो ॥ ४ ॥ विन सबको आपही पालन करो हो, तुमारो तिरस्कार कोई न करै, श्रमरहित मकडी अपनी शक्तिको आश्रय लेकै जे जाले रचै है तद्वत् तुम हो ॥ ५ ॥ हे विभो ! या विश्वमें उत्तम अधम समान मनुष्यादि नाम रूप द्विपदत्वादि गुण शुक्लादिसो साध्य सूक्ष्म स्थूल तुमसो और कोई नहीं है ये सब तुमसोंही होयहै ॥ ६ ॥ फिर बहुत सावधान होयकर आप घोर तप करोहो, यातें हमको बडी शंका उत्पन्न होयहै खेद होवै है ॥ ७ ॥ हे सर्वज्ञ ! हे सकलेश्वर ! ये सब मैं पूंछूंहूं सो आप करकै शिक्षित जैसे मैं जानसकूं तैसे विशेष करकै मोसें तुम कहो ॥ ८ ॥ श्रीब्रह्माजी बोले कि हे पुत्र ! दयावंत तुम्हारो ये संदेह ठीक है हे सौम्य ! भगवत्के वीर्यके प्रकाशवेमें जो तुम मोकों प्रेरणा करते भए ॥ ९ ॥ हे नारद ! जैसे तुम मोसों कहोहौ ये ऐसेही है, तुम्हारो कहिवो मिथ्या नहीं है कारण कि जिनके प्रतापसौ मैं ऐसौ हूं विन्हें तुम नहीं जानो हो ॥ १० ॥ जिनके प्रकाशसों प्रकाशित विश्वकों मैं प्रकाश करूंहूं जैसे सूर्य अग्नि चन्द्रमा नक्षत्र ग्रह तारा ये ईश्वरकी सत्तासो सब प्रकाश करै है श्रुतिः ॥ "न तत्र सूर्यो भाति न चंद्रतारकं नेमा विद्युतो भांति कुतोयमग्निः । तमेव भांतमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥" सूर्य चंद्रमा तारा विजुरी अग्नि ईश्वरके प्रकाशसे प्रकाशित है, उनके तेजसों ये सब प्रकाश करैहै ॥ ११ ॥ तिन भगवान्को नमस्कार होय वासुदेवको ध्यान करै है जिनकी दुर्जय माया करकै जगद्गुरु मोकों सब जीव कहैहैं ॥ १२ ॥ जिन ईश्वरके सन्मुख खडे होते कपटभरि मायाकूं लाज आवै है वा मायासो मोहित दुर्बुद्धिवारे हम सरीके ब्रह्मादिक ये मेरो है हम हैं ऐसे बकवाद करैं हैं ॥ १३ ॥ सबको उत्तर ब्रह्मदेव कहिते भए द्रव्य कर्म काल स्वभाव जीव ये सिद्धांतसो विचारै है तो हे ब्रह्मन् ! वासुदेवसों परै नहीं है कि व्याकरणसो वासुदेव शब्दकी ये व्युत्पति है कि "वसंति भूतान्यस्मिन्निति वासुः दिव्यतीति देवः वासुश्चासौ देवश्च वासुदेव इति" ॥ १४ ॥ वेद नारायणको कहैं है सब देवता नारायणके अंगसों जन्मे है । श्रुति है कि "स आत्मा अंगान्यन्या देवतेति" सब लोक नारायणको वर्णन करैं हैं, सब यज्ञ नारायणको वर्णन करैं हैं ॥ १५ ॥ योगशास्त्र नारायणको वर्णन करैं हैं तप नारायणको कहैं हैं ज्ञान नारायणकों कहैं हैं, सबकी गति नारायण हैं ॥ १६ ॥ जीवके द्रष्टा ईश्वर सर्वांतर्यामी सबमें व्यापक विनके रचेभये पदार्थ मैं रचूंहूं विनने मोको रचो है, विनके कटाक्षसों मैं प्रेरित हूं ॥ १७ ॥ व्यापक निर्गुण ईश्वरके सत्व रज तम ये तीन गुण उत्पत्ति पालन नाशमें माया करकै ग्रहण करैं हैं ॥ १८ ॥ कार्य कारण कर्तापनेमें द्रव्य ज्ञान क्रियाके आश्रयी गुण वास्तवमें जो नित्य मुक्त है फिर जब वोही माया संबंधयुत ये पुरुष होय तब बांधै हैं ॥ १९ ॥ हे ब्रह्मन् ! सो ये अधोक्षज भगवान् इन तीनों गुणनकरकै नहीं लखी गई हो गति जाकी वे सबके मेरे ईश्वर हैं अथवा विनके भक्तनकोही विनकी गति लखवेमें आवे हैं ॥ २० ॥ काल कर्म स्वभाव इनको अपनी माया करके मायाके स्वामी भगवानने आत्मामें अपनी इच्छासो प्राप्त भयेनको विविध प्रकारसो होयवेकी इच्छा करकै ग्रहण करैहैं ॥ २१ ॥ कालसों गुणनको उलट पलट होय है, स्वभावसों औरको और रूप होयजाय है और जीवनके अदृष्टसों महत्तत्व होय है ॥ २२ ॥ रज सत्वसो बढे भये महत्तत्वसों द्रव्य ज्ञान क्रियात्मक

---

१ पंचभूत ॥ २ जन्मको निमित्त ॥ ३ कर्मनको क्षोभ करनवारो ॥ ४ कर्मनको परिणाम करनवारो ॥ ५ कर्मनको भोगनवारो ॥ ६ अधिभूत ॥ ७ अध्यात्म ॥ ८ अधिदेव ॥ ९ महाभूत ॥ १० देवता ॥ ११ इंद्रिय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तम प्रधान अहंकार होय है ॥२३॥ सो अहंकार कह्योहै वो जब विकारको प्राप्त होय हैं तब वैकारिक, तैजस, तामस ये तीन भेद होयहैं हे प्रभो ! वाको क्रमसों द्रव्यशक्ति क्रियाशक्ति ज्ञानशक्ति समझनो तामसमें महाभूत, राजस अहंकारमें इन्द्रिय और सात्विक अहंकारमें देवता उत्पन्न हैवेकी शक्ति है ॥ २४ ॥ सब भूतनको आदि तामस अहंकार जब विकारको प्राप्त भयो तब आकाश भयो ताकी मात्रा शब्दगुण है जो आकाश द्रष्टा और दृश्यको जतायवेवारो है ॥ २५ ॥ आकाश जब विकारको प्राप्त भयो तब स्पर्श गुणवारो पवन भयो वामें आकाशके संबंधसों आकाशको शब्दगुणहू आयो वो पवन शरीरको धारण करैहै ओज अर्थात् इन्द्रियबल, सह अर्थात् मनको बल, और शरीरके बलको कारण है ॥ २६ ॥ काम कर्म और स्वभावसो जब वायु विकारी भयो तब रूप स्पर्श, शब्दगुणवारो तेज उत्पन्न होतो भयो ॥ २७ ॥ तेज जब विकारी भयो तब रस जाको गुण ऐसो जल भयो वो जल परके संबंधसों रूप स्पर्श और शब्दगुणवारोहू भयो ॥२८॥ जलके क्षुभित हैवेसों गंधगुणवारी पृथ्वी भई जामें रस स्पर्श शब्द रूप यह चार गुण पूर्वके और जिनको पांचवो गुण गंध भयो ॥ २९ ॥ सात्विक अहंकारसो चंद्रमा देवता सहित मन और दिशा, विदिशा, पवन, सूर्य, प्रचेता, अश्विनीकुमार, अग्नि, इंद्र, उपेंद्र, मित्र, ब्रह्मा ये दश देवताहू वैकारिक जो सात्विक अहंकार है वाहीसों भए ॥ ३० ॥ तैजस अहंकार जब विकारी भयो तब दश इन्द्रियें भईं, ज्ञानशक्ति बुद्धि क्रियाशक्ति प्राण तैजस अहंकारसे भए ऐसे कान त्वचा नाक नेत्र जीभ वाणी भुजा लिंग चरण गुदा ये दश इंद्रियें भयीं दिशा वायु सूर्य प्रचेता अश्विनीकुमार कान त्वचा नेत्र जीभ नाकके क्रमसों स्वामी हैं और अग्नि इन्द्र उपेंद्र मित्र ब्रह्मा ये वाणी पद लिंग गुदाके देवता हैं ॥ ३१ ॥ हे ब्रह्मवित्तम ! जब ये भूत इन्द्रिय और मन गुण न मिले तब शरीरके रचवेमें समर्थ न होते भए ॥ ३२ ॥ तब भगवत्की शक्तिसों प्रेरित सब आपसमें मिलके दशत्वको (प्रधानगुणभाव) को स्वीकारकरके समष्टि; व्यष्टि शरीरको रचते भये ॥३३॥ असंख्यात सहस्र वर्ष जब है गए तबतक ये अंड जलमें पडो रह्यो, तब काल कर्म स्वभावमें स्थित होकर "जीवयतीति जीवः" सदा जीवनवारो परमात्मा या अचेतनको जिवावतो भयो ॥३४ सो ये पुरुष वा अंडको भेदके निकसो सहस्र ऊरु चरण भुजा नेत्र सहस्र मूंड शिरवारो होतो भयो ॥३५॥ जाके कर चरण आदि अंग अवयवनसों यहां बडे ३ बुद्धिमान् लोकनकी कल्पना करैं है, कमरसे नीचे सात लोक हैं और जंघादिके ऊपर सात लोक हैं ॥ ३६ ॥ परब्रह्म पुरुषको मुख ब्राह्मण क्षत्रिय भुजा भगवान्के ऊरु वैश्य पांवसों शूद्र जन्में हैं ॥ ३७ ॥ भूर्लोक पगमें है भुवर्लोक नाभिमें है हृदयमें स्वर्गलोक है महात्मा ईश्वरके उरमें महर्लोक है ॥३८॥ जनलोक ग्रीवामें तपोलोक दोनों स्तनमें, मस्तकमें सत्यलोक है, ब्रह्मलोक वैकुंठ सनातन है या ब्रह्मांडमें नहीं है ॥३९॥ तिनकी कमरमें अतल लोक है; विभुके ऊरुमें वितललोक है जानुमें शुद्ध सुतललोक है जंघामें तलातल है ॥४०॥ महातल गुल्फमें है और प्रपद (पायनके अग्रभाग) में रसातल है पादके तलमें पाताल है ऐसे लोकमय पुरुष ईश्वर है ॥४१॥ पांवमें भूर्लोक है नाभिमें भुवर्लोक है स्वर्गलोक मस्तकमें है ऐसोहू लोककी कल्पना है ॥ ४२ ॥

भूर्लोकः कल्पितः पद्भ्यां भुवर्लोकोऽस्य नाभितः ॥
स्वर्लोकः कल्पितो मूर्ध्ना इति वा लोककल्पना ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कन्धे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

१ स्थूल सूक्ष्म ॥ २ टकुना ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ६.

ब्रह्मोवाच-वाचां वह्नेर्मुखं क्षेत्रं छन्दसां सप्त धातवः॥
हव्यकव्यामृतान्नानां जिह्वा सर्वरसस्य च ॥ १ ॥

ब्रह्माजी बोले कि अब विराट् पुरुषकी विभूति वर्णन करै है अस्मदादिकनकी वाणीको और अग्नि-देवताको विन ईश्वरको मुख उत्पत्तिस्थान है, इनमें चार बातें हैं वाणी तो इंद्रिय है, वरुण देवता है मुख उत्पत्ति स्थान है रसस्वाद लेनो ये वाको विषय ये बात सब जगे जानलेनी ग्रंथके विस्तारके भयसे ऐसे लिखो है, गायत्री आदि सात छंदको त्वचा आदि उत्पत्ति स्थान है ' देवानामन्नं हव्यम् ' जो देवनके निमित्त करके दियो जाय वो हव्य है 'पितृणामन्नं कव्यम्' जो पितरनके लिये दियो जाय वो अन्न कव्य है, विन दोउ अन्नसो न्यारो अमृत अन्न है और सब रसको जिह्वा स्थान है ॥१॥ हमारे सबके प्राण और वायु इनको नासाको रंध्र उत्पत्तिस्थान है और मोद प्रमोद और अश्विनीकुमार देवता और औषधी इन सबनको विराट्पुरुषकी घ्राण इंद्रिय उत्पत्तिस्थान है ॥ २ ॥ रूप और रूपप्रकाशक तेजको परमेश्वरकी चक्षुइन्द्रिय स्थान है, स्वर्ग और सूर्यको स्थान परमेश्वरके नेत्रगोलक हैं, दिशा और तीर्थको स्थान परमेश्वरके कर्ण अर्थात् श्रोत्र इन्द्रियके अधिष्ठान है, आकाश और वाको सूक्ष्मरूप शब्द ताको स्थान परमेश्वरकी श्रोत्र इन्द्रिय है ॥ ३ ॥ वस्तुनके सारांशको और सुंदरताको स्थान ईश्वरको शरीर है स्पर्शगुणवारो वायु और सब यज्ञनको ईश्वरकी त्वचा स्थान है ॥४॥ जिन करके यज्ञके संभार होते हैं ऐसे सब वृक्षनकों विराट्भगवान्के रोमस्थान है और शिला लोह मेघ विजुरी ए सब परमेश्वरके केश मूंछ नख है ॥ ५ ॥ प्रायकरके क्षेमकर्मकारी लोकपाल हरिकी बाहु है, और क्षेम और शरण और भूर्भुवस्वर्गलोक इनको सबको विराट्भगवान्को विक्रम (चलनो) स्थान है ॥६॥ सब कामवरको हरिके चरणस्थान है, जल, वीर्य, सृष्टि, मेघ, और प्रजापतिको उत्पत्तिस्थान ॥७॥ ईश्वरको शिश्न विषयेन्द्रिय है संभोगसो उत्पन्न भये सुखकों उत्पत्ति स्थान उपस्थ है हे नारद ! मलत्यागको और यमराजको और मित्र देवताकों विराट्की पायु गुदा स्थान है ॥ ८ ॥ हिंसा अलक्ष्मी मृत्यु नरक ईश्वरकी गुदा है तिरस्कार अधर्म अज्ञान ये भगवान्की पीठ है ॥ ९ ॥ नद नदी ईश्वरकी नाडी हैं सब पर्वत ईश्वरके हाड हैं प्रधान रस समुद्र और सब जीवनको जामें नाश है ऐसो प्रलय ॥ १० ॥ वो पुरुषको पेट है, हृदय मनको स्थान है धर्मको मेरो तुमारो सनकादिकनको महादेवजीको ॥ ११ ॥ विशेष ज्ञानको सतोगुणको स्थान परमेश्वरको चित्त है हम तुम शिव ये सब मुनिलोग जो तुमसो पहिले जन्मे हैं ॥ १२ ॥ देवता, असुर, नर, नाग, पक्षी, मृग, सर्प, गंधर्व, अप्सरा, यक्ष, राक्षस, भूतगण, उरग ॥ १३ ॥ पशु, पितर, सिद्ध, विद्याधर, चारण, वृक्ष और अनेक प्रकारके जितने जीव हैं वे जलके जीव स्थलके जीव आकाशवासी जीव ॥ १४ ॥ नवग्रह अश्विन्यादि नक्षत्र, प्रलयके समय जो पूंछके तारे होय वे और विजुरी, गर्जनशब्द, भूत, भविष्यत्, वर्तमान, और जो कुछ है ये सब पुरुष परमेश्वरस्वरूपही है। " पुरीषु शेते इति पुरुषः " जो सब जीवनमात्रके शरीररूप पुरियोंमें वसै वो पुरुष ईश्वर है " पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् " इति ॥ १५ ॥ तिन ईश्वर करके व्याप्त ये विश्व है वह यासो कही अधिक अंशमें विराजते हैं अपने मंगलकों प्रकाश करैहै ये प्राण नाम सूर्य जैसे अपने मंडलको प्रकाश करतो और बाहिरहू प्रकाशसो करै है "असावादित्यः" इति श्रुतेः ॥ १६ ॥ ऐसे या विराट्में बाहर भीतर पुरुष तपते हैं, "उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति " जामें भय नहीं ऐसे मोक्षको ईश्वर है क्योंकि वो कर्मफलको उल्लंघन करके वर्तमान होतो भयो ॥ १७ ॥ " एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे ब्रह्मन् ! ईश्वर पुरुषकी महिमा बडी कठिन है " पादोस्य विश्वा भूतानि " ईश्वर पुरुषके पादमें सब जीवोंकी स्थिति है ऐसे जानो ॥ १८ ॥ " त्रिपादस्यामृतं दिवि " तीन लोकनको मस्तक महलोंक ताके ऊपरके जे लोक जन तप और सत्य है तिनमें क्रमसे अमृत अभय और क्षेम इने स्थापन करतो भयो और अप्रज जे नैष्ठिक ब्रह्मचारी वानप्रस्थ और यति इनके आश्रम (स्थान) त्रिलोकीके बाहर है ॥१९॥ ब्रह्मचर्य व्रतरहित गृहस्थ तौ त्रिलोकीके भीतरही निवास करै हैं ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इनकी घरमेंही सदा मुक्ति होय है ॥ २० ॥ " ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि । " " विविधं सुष्ठु अंचतीति विष्वक् " अनेक प्रकारसे सब ओरसें जिनकी पूजा होय वे ईश्वर शिक्षा शास्त्र और एक वे शिक्षाको शास्त्र जामें ऐसे दो मार्ग प्रगट करते भए विद्या अविद्या रची ईश्वर दोनोंके आश्रित हैं अविद्या बंधन करवेवारी है विद्या मोक्षदात्री है ॥ २१ ॥ "ततो विराडजायत " भूत इंद्रिय गुणात्मक विराट् ब्रह्मांड होतो भयो फिर वा विश्वकों और द्रव्य नाम अंडको उल्लंघन करतो भयो जैसे अपनी प्रकाशक सूर्य ॥ २२ ॥ " यत्पुरुषेण हविषा " ' नाभो भवं नाभ्यम् ' जा समय इन व्यापक ईश्वरकी नाभिके कमलसों हम भए, पुरुषके अवयवके विना यज्ञकी कुछ सामग्री न देखी ॥ २३ ॥ तिनके अवयवनसेही यज्ञके पशु, सब वनस्पति, कुशा और देवतानके यजनके योग्य स्थान अनेक गुणयुक्त समय ॥ २४ ॥ हे सत्तम ! सब पात्र औषधी, घृतादिक द्रव्य, मधुरादि रस, सुवर्णादि धातु, मृत्तिका, जल, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, चार ब्राह्मण जामें हवन करै वो कर्म ॥ २५ ॥ ज्योतिष्टोमादि नाम ' मंतारमनुसंधातारं त्रायंते इति मन्त्राः ' स्वाहाकारादिक मंत्र, सुवर्णादि दक्षिणा, एकादश्यादि सब व्रत, देवतानके नाम सबके निमित्त, बोधायनादि कर्मपद्धति, संकल्प, अनुष्ठानकी क्रियातंत्र ॥२६॥ विष्णुक्रमादि गति, देवताको ध्यानादि मति, प्रायश्चित्त जो करनो वाको भगवान्में समर्पण करनो, पुरुषके अवयवनकरकै मैंने सब सामग्री रची हैं ॥ २७ ॥ " यज्ञेन यज्ञमयजंत देवाः " पुरुषके अवयवनकरके ऐसे सब सामग्रीसों तिन पूजनीय ईश्वर पुरुषको यज्ञ हम करते भए ॥ २८ ॥ तिनके पीछे नौ प्रजापति ये तुमारे भैया सुन्दर सावधान होकर इन्द्रादि रूप करकै अपनेही आप ईश्वर पुरुषको पूजन करतेभए ॥२९॥ ताके उपरांत अपने समयमें सब मनु सब ऋषि और सब पितर विबुध दैत्य मनुष्य यज्ञनकरकै समर्थ ईश्वरको यज्ञ करते भए ॥३०॥ ये सब विश्व भगवान् नारायणमें स्थित है, या सृष्टिके रचवेकी आदिमें बहुत मायाके गुण ग्रहण कीने, आप सब गुणनसों पृथक् हैं ॥३१॥ तिन ईश्वरकी आज्ञासों हम संसार रचे हैं ईश्वरके वश होकर शिव संहार करैहै, पुरुष विष्णुरूप होकर विश्वकी रक्षा करैहै ' त्रिशक्तिर्माया तां धरतीति त्रिशक्तिधृक् ' तीन शक्तिधारी मायाधारी ईश्वर हैं ॥ ३२ ॥ हे नारद ! जैसे तुमनें पूछो तैसे हमनें ये कही, भगवान्के विना सत् असदात्मक या विश्वमें कुछभी नहीं है ॥ ३३ ॥ हे अंग हे नारद ! मेरी वाणी कभी मिथ्या नहीं होय है, और मनकी गति कभी मिथ्या न होय है, मेरी ये इन्द्रियें कभी खोटे मार्गमें न जाय हैं, क्यों कि निश्चय करकै अत्यंत भक्तिकरकै हृदयसो हरिको धारण कियो है ॥ ३४ ॥ सो हम वेदमय तपोमय प्रजापतीनको पति सबसों वन्दित सुन्दर योगमें स्थित हैके तप करैं हैं परन्तु विनको अबतक नहीं जाने हैं जिनसो हम भए हैं ॥ ३५ ॥ शरणागतके रक्षक संसारनाशक स्वस्तिदाता मंगलदायक ईश्वरके चरणके हम आश्रित हैं, जो भगवान् अपनी मायाको विस्तार आपभी न जानते भए, जैसे आकाशको अंत आकाश नहीं जानसके है औरनकी तो कहा

---

१ दक्षिणमार्ग, उत्तरमार्ग ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बात है, जैसे आकाशपुष्पकों न देखनों कुछ सर्वज्ञताको नहीं नाश करैहै। श्रुतिश्च "यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्सो अंग वेद यदि वा न वेद" इति ॥ ३६ ॥ जाकी सत्यगतिको न हम जानें, न तुम सब जानों, न शिव जानें, और देवतानकी तौ कहा बात है, तिनकी माया करके मोहित बुद्धिवारे या मायाके रचे भए विश्वको अपने ज्ञानके अनुसार वर्णन करैं हैं ॥ ३७ ॥ जिन ईश्वरके अवतारनके कर्म अस्मदादिक अर्थात् हम गावै हैं सिद्धांतसो जिनको नहीं जानै हैं तिन भगवान्‌के अर्थ नमस्कार होय ॥ ३८ ॥ सो अजन्मा पुरुष ईश्वर सबसो प्रथम है कल्प कल्पमें विश्व रचे हैं कर्ता अधिकरण साधन कर्म सब रूप आपही हैं संहार करैं हैं रक्षा करैं हैं ॥ ३९ ॥ "विशुद्धं" विषय आकाररहित हैं "कवलं" जलशायी हैं "ज्ञानं" ज्ञानस्वरूप हैं "प्रत्यक्" सबके अंतर्यामी हैं "सम्यक्" संदेहादिरहित हैं "अवस्थित" स्थिर हैं "सत्यं" सत्यस्वरूप हैं "पूर्ण" सबमें पूर्ण हैं "अनाद्यंतं" आदि अंतरहित हैं "निर्गुणं" मायाकृत गुण जिनमें नहीं हैं "नित्यम्" सदा बने रहे हैं "अद्वयम्" ईश्वरके बिना और कोई नहीं है ॥ ४० ॥ जब प्रसन्न आत्मा मन इन्द्रियें अंतःकरण होते हैं. तब मुनि लोग ईश्वरकूं जानते हैं, हे नारद ! जब खोटे लोग खोटी तर्क करैं हैं, तब सब ईश्वरको ज्ञान नष्ट होकर अंतर्ध्यान होजाय है ॥ ४१ ॥ परब्रह्मको प्रथम अवतार पुरुष हैं, काल स्वभाव सत् असत् मन महाभूत अहंकार मन आदि इन्द्रियें विराट् स्वराट् स्थावर जंगम ये सब ईश्वरके अवतार हैं ॥ ४२ ॥ हम महादेव यज्ञ ये प्रजेश्वर दक्षादिक, तुम सब स्वर्लोकपालक, खगलोकपालक, मनुष्यलोकपालक तललोकपालक सब ईश्वरकी विभूति हैं ॥ ४३ ॥ गंधर्व विद्याधर चारण ईश यक्ष राक्षस उरग सर्पोंके मालक जो ऋषीनकेभी बडे हैं, पित्रीश्वर दैत्येंद्र सिद्धेश्वर दानवेंद्र ॥ ४४ ॥ और प्रेत पिशाच भूत कूष्मांड जलजंतु मृग पक्षीनके ईश या ब्रह्मांडकटाहमें जो कुछ है, सो सब परमेश्वरको स्वरूप है ॥ ४५ ॥ जो कुछ या लोकमें भगवत् ऐश्वर्यवारो और महापूजावारो ओजसहवारो बलवारो क्षमावारो और श्रीलज्जा विभूतिवारो जो कछु कोई है और जो रूपवारो और विन रूपको जो कछु है सो सबपर तत्वरूप है ॥ ४६ ॥ प्रधानतासों अर्थात् मुख्य करके जिनै ऋषिलोग नमस्कार करैं है, वे लीलावतार पुरुष ब्रह्मके हैं, वे कर्णनके मैल दूर करवेवारे हैं वे सुन्दर अवतार हम तुमसो अब कहैंगे सो सुनो ॥ ४७ ॥

प्राधान्यतो यानृष आमनंति लीलावतारान्पुरुषस्य भूम्नः ॥
आपीयतां कर्णकषायशोषाननुक्रमिष्ये त इमान्सुपेशान् ॥ ४७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कन्धे विराड्विभूतिपुरुषसूक्तार्थवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः॥६॥

अध्याय ७.

ब्रह्मोवाच-यत्रोद्यतः क्षितितलोद्धरणाय बिभ्रत्कौडीं तनुं सकलयज्ञमयीमनन्तः ॥
अन्तर्महार्णव उपागतमादिदैत्यं तं दंष्ट्रयाऽद्रिमिव वज्रधरो ददार ॥ १ ॥

ब्रह्माजी बोले कि वराह अवतार कहैं हैं कि पृथ्वीतल उद्धारके लिये श्रीवाराहजी अनंत भगवान् वराहरूप धारते भए, महासमुद्रमें आए भए आदिदैत्य हिरण्याक्ष दैत्यको जैसे वज्रधर इन्द्र पर्वतनको विदीर्ण करैं या प्रकार मार डाढपर धरती धरलाए ॥ १ ॥ यज्ञ अवतार कहैं हैं कि रुचिप्रजापतिसों वाकी आकूति नाम स्त्रीमें जो पुत्र पैदा भये सो सुयज्ञनाम भयो, सो सुयज्ञ अपनी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुदक्षिणा नाम स्त्रीमें सुयमनामक देवतानको उत्पन्न करतो भयो, सोही इन्द्र होके जब तीनों लोककी महापीडाको नाश करतो भयो, तब पहले सुयज्ञ ऐसो नाम कह्योहू हो, परन्तु फिर मातामहनें हरि ऐसो नाम राखो, देवनकी उत्पत्ति लोकत्रयकी पीडाहरण तिनको कर्म है, ये सब अवतारमें और अवतारको कर्म सब जगे जानलेनो ॥ २ ॥ कपिल अवतार कहे हैं हे नारद! कर्दमजीके घर देवहूतिमें नौ स्त्रीनकरके सहित कपिलदेवजी भए, अपनी माके अर्थ ब्रह्मविद्या कहते भये जो ब्रह्मविद्यासों जीवको मलिन करवेवारो संसारकीचकों मेल याही जन्ममें धोयके कपिलदेवजीकी गतिकों मैया देवहूति प्राप्त होती भई ॥ ३ ॥ दत्तात्रेयावतार कहे हैं कि अत्रिऋषिने पुत्रकी चाहना करी तब प्रसन्न हो ईश्वर बोले मैंने तो अपनेको दियो यासों दत्तात्रेय भगवान् भए, जिनके चरणकमलकी परागसों पवित्र देहीवारे यदु हैहयादिक ऐहिक आमुष्मिक भुक्ति मुक्तिरूपा योगसिद्धिको प्राप्त होते भए ॥ ४ ॥ सनकादि अवतार कहैं कि पहिले जब मेरी अनेक लोक रचवेकी इच्छा भई तब मैंने तप तपो तब पहिले कल्पके प्रलयमें नष्ट भये आत्मतत्वको सुंदरतासों कहिते भए, जिनके कहिवे मात्रसों मुनि-लोग अपनेमें साक्षात् ईश्वरकों देखते भए ऐसे चार भैया सनक सनंदन सनातन सनत्कुमार नामसो विख्यात चार पुत्र मेरे तपको फलरूप भये ॥ ५ ॥ नरनारायणको अवतार कहैं कि, धर्मकी स्त्री दक्षकी बेटी मूर्तिसों अपने तपके प्रभावसो नरनारायण भए, कामसेना अप्सरा भगवान्के सकाशतें अपने समान उर्वशी आदि स्त्रीनको देखकर ईश्वरके व्रतभंग करवेको न समर्थ होती भई ॥ ६ ॥ महासुकर्मकारी शिवादिक क्रोधदृष्टिसों कामकों भस्म करे है परंतु दुःसह देहकों जरायवेवारे क्रोधकों नहीं भस्म कर सके हैं सो ये रोष जिन ईश्वरके भीतर घुसवेको सामर्थ्य न भयो, फिर काम कैसे विनके मनमें घुसे ॥ ७ ॥ ध्रुवावतार कहे हैं कि उत्तानपाद राजाके समीप सौत सुरुचिके कहे वाक्यबाणनसों विद्ध भए, ध्रुव बालक तपके लिये वनको गए; स्तुति करते भए, ध्रुवको प्रसन्न ईश्वर ध्रुवपद देते भए " दिवि भवा दिव्याः " स्वर्गवासी उत्तानपाद राजाके पुत्रके समीप भृगु आदिक ऊपरसों नीचेसों सप्तऋषि जिनकी स्तुति करे हैं ॥ ८ ॥ पृथु अवतार कहे हैं कि, एक समय राजा वेन पाखंडको प्राप्त हो ब्राह्मणके वाक्यरूप वज्रसो दग्ध पुरुषार्थ ऐश्वर्यहीन हो नरकमें गिरतेको विनकी प्रार्थनासो पृथु पुत्र होय रक्षाकर जगत्में पुत्र नाम विख्यात करते भए पुत्रपदकी व्युत्पत्ति ये है " पुंनाम्नो नरकाद्यस्मात्पितरं त्रायते सुतः । तस्मात्पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा ॥ " और जिन पृथुने गउ बनाय दुहिके पृथ्वीसों सब वस्तु निकासी ॥ ९ ॥ ऋषभ अवतार कहे हैं कि, ये ईश्वर नाभिके आग्नीध्र पुत्रसों सुदेवीपुत्र ऋषभदेवजी भए, समानद्रष्टा जडकी नाईं योगाभ्यास करतेभए, जिनके पारमहंस्य पदको ऋषिननें नमस्कार कीनों, स्वस्थ, शान्त इन्द्रिय सब संग त्यागे ऋषभदेवजी भए, जिनसो जैनमत प्रगट भयो ॥ १० ॥ हयग्रीव अवतार कहे हैं कि मेरे यज्ञमें हयग्रीव भगवान् भए, साक्षात् यज्ञपुरुष सुवर्ण समान वर्ण, वेदमय, यज्ञमय, सब देवता-मय वेदरूप सुंदर वाणी अर्थात् वेदरूपा जिनके नाकके श्वासते भई ॥ ११ ॥ मत्स्यावतार वर्णन करेहैं कि युगके अंतसमयमें वैवस्वत मनुने पृथ्वीमय सब जीवनको आश्रयरूप मत्स्य भगवान् देखे; महा-भयानक जलमें मेरे मुखसो गलित वेदमार्गनको लायकर हर्षसो विहार करतेभए ॥ १२ ॥ कच्छप अवतार कहे हैं, कि क्षीरसमुद्रमें अमृतप्राप्तिके अर्थ देवयूथ और दानवयूथ मथन करतेहे तब आदिदेव पीठपर मंदरगिरिको कच्छपरूप धर धारण करते भए, और वा पर्वतके भ्रमणसो खुजार दूर भई निद्रा आई ॥ १३ ॥ नृसिंह अवतार भयो कि देवतानके महाभयको नाश करवेवारो ऐसो नृसिंहरूप करके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

घूमतीभई भ्रुकुटि डाढसों भयानकमुख जिनको ऐसो श्रीनृसिंह गदा लेके समीप आये प्रकाशित हिरण्यकशिपुके हृदयको नखनसों फाडते भए॥ १४ ॥ हरि अवतार कहैं हैं कि, त्रिकूट पर्वतके सरोवरमें महाबलसो ग्राहने पद पकडो तब यूथपति गजेन्द्र कमल सूंडमें लेके आर्त होय ये बोलो, हे आदिपुरुष ! हे सर्वलोकनाथ ! हे पुण्ययशः ! हे श्रवणमंगलनामधेय ! ॥ १५ ॥ शरणागतेच्छु गजेंद्रको सुनके अप्रमेय श्रीहरि भगवान् चक्र आयुध लिये गरुडपें बैठके चक्रसो मगरको मुख काट सूंड पकडकर कृपाकरके गजको उद्धार करते भए[1]॥ १६ ॥ वामन अवतार कहैं हैं कि, गुणनमें बडे अदितिके द्वादश सुतनमें छोटे वामनजी होय सब लोग पगसे नापे, यज्ञ भगवान् वामनरूप धार पृथिवी राजा बलिसे तीन पदके मिसकरकै लेतेभए, क्यों कि धर्ममार्गमें वर्तमान सत्यवक्ता राजा बलिको समर्थ ईश्वरहू मांगवेकी वृत्तिके विना चलायमान न करते भए॥ १७॥ हे नारद ! श्रीभगवान्के चरणकों धोवन गंगाजल शिखापर धारण करवेवारे बलिकों देवतानको सब राज्य प्राप्त होनों ये अर्थ नहीं है, क्यों कि जो राजा बलिनें प्रतिज्ञा करी वासों अधिक करवेकी इच्छा कर अपनी देह और शिरसों हरिको तीसरो चरण पूरो करवेकों देतेभए और प्रतिज्ञा सिवाय कछु न चाह्यो॥ १८॥ हंसावतार कहैं हैं कि, हे नारद ! भगवान् अत्यंत भक्तिभावसों प्रसन्न होयकर ज्ञानयोग भागवत जो आत्मज्ञानको प्रकाशक तुमारे अर्थ कहिते भए, जाको शरणागत भक्त अनायाससों प्राप्त होते भए॥ १९ ॥ मन्वंतर अवतार कहैं हैं कि दशों दिशानमें जिनकी आज्ञा कोई न रोकै ऐसो अवतार मन्वंतरनमें मनुवंशधारी भगवान् धारण कर, दुष्ट राजानको दंड देतेभए और त्रिलोकीमें अपने चरित्र करके सुंदरकीर्ति विस्तारतेभए॥ २० ॥ धन्वंतरिकों अवतार कहैं हैं, कि धन्वंतरि भगवान् अपनी कीर्तिसों अपने नामसों महारोगी जीवनको रोग शीघ्र नाश करतेभए, और यज्ञमें अमृत असुरनसो लाए, लोकमें वैद्यकशास्त्र आयुर्वेद अवतार लेके सिखावते भए॥ २१ ॥ परशुरामकों अवतार कहैं हैं कि दैवसों प्राप्त ब्राह्मणद्रोही वेदमार्गत्यागी नरकभागी धरतीपें कंटकरूप क्षत्रियनके क्षयके अर्थ परशुराम अवतार ले उग्रवीर्य धारके परसासौं एकविंशतिवार राजनको मारतेभए॥ २२ ॥ श्रीरघुनाथजीको अवतार कहैं हैं, कि हमारे ब्रह्मादिकनके ऊपर प्रसन्न होयके कलाको अवतार धार कलाके ईश्वर इक्ष्वाकुवंशमें अवतार धारकर दशरथ पिताकी आज्ञामें स्थित होते, सीता लक्ष्मणसहित वनको पधारे जिनसो विरोधकर दशशिरवारो रावण विनाशको प्राप्त भयो॥ २३ ॥ भयसों कंपित अंग दूर वर्तमान, सीताके निमित्त क्रोधसों लालनेत्र करके तपायमान मगर सर्प नाकेनके समूहवारो समुद्र त्रिपुर दग्ध करनेवाले शिवकी समान जिन रघुनाथजीके अर्थ मार्ग देतोभयो॥ २४ ॥ युद्धमें रावणके वक्षःस्थलके स्पर्शसो भग्न इंद्रके ऐरावत वारणके दांतनसों सुपेत दिशानतक राज्य करनेवारे अपनी सेनामें विचरते सीताचोर रावणको बढे भये महागर्वको शीघ्र प्राणसहित श्रीरामचंद्रजी विनाश करते भए॥ २५॥ श्रीकृष्णावतार दश श्लोक करकै वर्णन करैहैं कि असुरनके अंशभूत राजानके समूहसों दुःखित भूमिके क्लेशनाशके अर्थ बलदाऊजी सहित शुक्ल कृष्णवारवारे गूढगति श्रीकृष्णजी होय अपनी महिमाके प्रगट करवेवारे कर्म करैंगे, कोई ये तर्क न करै कि केशमात्र अवतार हैं क्यों कि भारको उतारनों कार्य हमारें केशही करसकै हैं,

---

१ राग देस । करुणाकर कुंज टेरो मेरो कैसे कटै डरलेरो । टेर । नाम त्रिकूट सुभग गिरी सरविच गजको ग्राहने घेरो ॥ १ ॥ कमल फूल ले सूंड उठाई हरिरक्षक जग हेरो ॥ २ ॥ अति आतुर होय चक्र चलायो चलत पीत पट गेरो ॥ ३ ॥ हरि आए हैं अर्द्ध नाम सुन री मुखसे न उचेरो ॥ ४ ॥ पुरुषोत्तम प्रभु करसे करिको करलीनो निज चेरो ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये जतायवेके लिये और रामकृष्णके वर्ण सूचनाके लिये ऐसो लिखो है ॥ भारते " स चापि केशो हरिरुच्च जहे शुक्लमेकमपरं चापि कृष्णम् । तौ चापि केशावाविशेतां यदूनां कुले स्त्रियौ रोहिणीं देवकीं च ॥ १ ॥ तयोरेको बलभद्रो बभूव योऽसौ श्वेतस्तस्य देवस्य केशः । कृष्णो द्वितीयः केशवः संबभूव केशो योऽसौ वर्णतः कृष्ण उक्तः ॥ २ ॥ " भारतमें है कि श्रीईश्वरने दो सुपेद कारे वार उखाडे, वे दोनों वार यादवनके कुलमें रोहिणी और देवकी स्त्रीमें प्रवेश करते भये. देवको सुपेद केश हो वासों बलभद्र भए, दूसरो जो वर्णसों कारो हो वासों केशिमारक श्रीकृष्णजी भए ॥ २६ ॥ बालकपनमें पूतनाको मारी तीन मासके हे तब पांवसों शकटासुर मारो, घोटू चलवे करके आकाशतक ऊंचे यमलार्जुनको जडसों उखाडे, ये ईश्वर विना और नहीं करसके है ॥ २७ ॥ जो श्रीकृष्ण ब्रजमें ब्रजके पशु कालीदहके जल पीके गोपालसहित विचेत होगए हे, सो उनको अनुग्रहकी दृष्टिकी वृष्टिसों जिवावते भए, यमुनामें विहार करतेभये यमुनाकी शुद्धिके लिये अतिचंचल जिह्वावारे काली सर्पके उच्चाटन करेंगे ॥ २८ ॥ तिन श्रीकृष्णके दिव्य अलौकिक कर्म हैं, क्यों कि दावाग्निसों पवित्र वन जब जरो, वामें सब सोये निश्चय सबको काल आयो हो तब ब्रजवासिनसों कही सब नेत्र मूंदो, तब बलरामसहित अमित पराक्रम श्रीकृष्ण दावाग्नि पान कर ब्रजको उद्धार करते भए ॥ २९ ॥ इन श्रीकृष्णजीकी माता यशोदा श्रीकृष्णको बांधवेको जो जो जेवरी लाई सो सब कम भई, एक पूरी न भई, श्रीकृष्णने जब जंभाई लीनी तो यशोदा मुखमें सब विश्व देख शंकित भई, पीछे वाको ज्ञान होतो भयो ॥३०॥ वरुणकी फांसीके भयसों नंदको मोक्ष करेंगे. मयके पुत्र व्योमासुरने बिलमें गोपनको बंध करो वहांसो विन्हें छुडाय दिनमें सब काम करवेसो श्रमित हो सोये सब गोकुलवासीनको वैकुंठलोकमें पहुँचावेंगे ॥३१॥ हे नारद ! गोपनने इन्द्रयज्ञ जब न करो, तब ब्रजके विनाशके लिये इंद्रने वर्षा कीनी, तब कृपा करके बैल गौकी रक्षाकी इच्छासों सात वर्षके श्रीकृष्ण सात दिनतक गोवर्धन एक हाथसों लीलाकरके उठावेंगे जैसे कोई बालक छत्राकको उठाय लेवेहो ॥३२॥ चंद्रमाकी किरणनकरके सुपेद रात्रिमें रासकी इच्छा कर क्रीडाकर मधुर पदसो मूर्छना ले राग गाय ब्रजवासिनीनको कामदेव जगाय विनको प्रसन्न करेंगे और गोपस्त्रीनके हरवेवारे कुबेरके सेवक शंखचूडके शिरको रत्न हरेंगे ॥३३॥ प्रलंबासुर, धेनुकासुर, बकासुर, केशी, अरिष्टासुर, मल्ल, कुवलयापीड, कंस, कालयवन, नरकासुर, पौंड्रकादिक, शाल्व, द्विविद, बल्वल, दंतवक्र, सप्तवृषभ, शंबर, विदूरथ, रुक्मैया आदिक ॥३४॥ और संग्राममें श्लाघनीय धनुपधारी कांबोज, मत्स्य, कुरु, कैकय, सृंजय आदिक इन सबको बलदेव भीमसेन अर्जुन इनके वहाने करके इन सबनको नाश करके अपने श्रीहरि वैकुंठस्थानको पहुँचावेंगे ॥३५॥ अब व्यासजीको अवतार वर्णन करे हैं कि काल करके अब मनुष्यनकी बुद्धि संकुचित हैगई, थोडी आयु भई मनुष्यनको वेदके ज्ञानसे दूर देखके युगयुगमें सत्यवतीमें अवतार धार वेदरूप वृक्षको शाखा भेदकरके विस्तार करतेभए ॥३६॥ बौद्धावतार कहे हैं अलक्ष्यगति मय दैत्यके बनाये पुरनमें बैठके लोकनके नाश करते वेदमें निष्ठा करवेवारे दैत्यनकी मतिको मोहित करवेको मोहित करवेवारो वेष धारण कर बहुतसे पाखण्ड धर्म्मको उपदेश करेंगे ॥ ३७ ॥ कल्कि अवतार कहेहैं कि जा समय सज्जननके घरमेंहू श्रीहरिकी कथा न होयगी ब्राह्मण पापंडी हे जायंगे राजा शूद्र होयंगे स्वाहा स्वधा वषट् वेदकी वाणी जब न होयगी, तब या कलियुगके अन्तमें भगवान् शिक्षा करेंगे, कल्कीरूप धारेंगे, जहां ब्रह्मा नारदके संवादसों वराहादिक तो पहिले भए हे मन्वंतरावतार वा समय हो, धन्वंतरी परशुरामहू हे श्रीरामकृष्णादिक आगे होनहार हे यासों भविष्यत् वार्ताहू कहीं कहीं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कही है ॥३८॥ मायागुणावतार भगवान्‌की विभूति है सो कहैहैं कि या संसारके रचवेमें तौ तप हम ऋषि नौ प्रजाके ईश और पालनको धर्म यज्ञ मनु देवता और राजालोग और संहारमें अंतमें अधर्म हर क्रोधी असुर आदिक यह सब अनंत शक्तिधारी ईश्वरकी मायाकी विभूति है ॥ ३९ ॥ ये मैंने संक्षेपसों कहीहै विस्तारसो कोईभी कहिवेको समर्थ नहीं है श्रीविष्णुके चरित्र गिनवेकों कोई समर्थ नहीं है चाहें कोई विद्वान् पृथिवीके रज भलेई गिनलेवै, वेदमें मंत्र है कि " विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि " इति जो ईश्वर अपने अत्यंत वेग करके अत्यंत कंपायमान सत्यलोक और सब त्रिलोकीको धरतो भयो क्यों कि जब आपने वामनरूपसो तीनों लोक नापे हे तब अप्रतिहत अपने पादवेगसो ब्रह्मलोकपर्यंत ये सब ब्रह्मांड कांपन लगोहो यासो ॥ ४० ॥ जिन भगवान्‌के मायाबलको अंत न तौ हम जानै हैं और न यह तुम्हारे अग्रज मुनि जानते हैं ईश्वरके गुण गाते भये सहस्रमुखधारी आदिदेव शेषजीहू अबतक पारको नहीं प्राप्त होयहैं, औरनकी तो कहा सामर्थ्य है ॥४१॥ " ये शंका भई कि कोई न जान सकैहै तो मोक्ष कैसो होयगो " याको उत्तर ये है कि, मोक्ष ईश्वरकी कृपासों होय है, और तरहसे नहीं सो यह अनंत भगवान् जापे दया करैहैं और जो सब प्रकारसो निष्कपट हैके विनके पदको आश्रय लैयहै वोह अति दुस्तर देवताकी मायाको तरैं हैं, जो कुत्ता गीदडके भक्ष या देहमें आस्था नहीं करते, वे तरजाय हैं ॥४२॥ हे नारद! तिनकी कृपासो परमेश्वरकी योगमायाकों मैं जानूंहूं और तुम जानोहो तथा शिव भगवान्, प्रह्लाद, मनुकी स्त्री स्वयंभू मनु, ताके पुत्र, प्राचीनबर्हि, ऋभु, ध्रुवजी ॥ ४३ ॥ इक्ष्वाकु, ऐलराज, मुचकुंद, विदेह, गाधी, रघुराजा, अंबरीष, सगरराजा, नाहुष आदिक, मांधाता, अलर्क, शतधनु, पीछे रंतिदेव, भीष्मपितामह, बलि, अमूर्तरय, दिलीप ॥४४॥ सौभरी, उतंक, शिबि, देवल, पिप्पलाद, उद्धव, पराशर, भूरिषेण और विभीषण, हनुमान्, उपेंद्र, दत्त, श्रीशुकदेवजी, अर्जुन, आर्ष्टिषेण, विदुर, श्रुतदेववर्य यह सब जानैं हैं ॥४५॥ अधिक क्या यदि स्त्री शूद्र हूण शबर और पापी जीव तथा पशु पक्षीहू भगवान्‌के भक्त मनुष्यनके स्वभावकी शिक्षा धारण करैं तौ विनकी मायाकों जानसकै हैं और तरसकै हैं परन्तु जो विनमें प्रेम करैं हैं विनके तो तरवेकी कथाही कहा है ॥४६॥ भगवत्‌को स्वरूप वर्णन करैं हैं, कि सदा प्रशांत भयरहित, ज्ञानघन, शुद्ध, बराबर कार्यकारणसों पर, आत्माको तत्व है, जहां कारकवान् क्रिया कारकशब्द कुछ नहीं कहि सकै हैं, जिनके सामने माया लज्जाके मारे नहीं जाय है, दूर चली जाय हैं ॥ ४७ ॥ परम पुरुष ईश्वरको वहां स्थान है जो ब्रह्म और निरंतर सुखरूप है जैसे धनहीन पुरुष धनी हैकै दरिद्रताके समयके मजूरी करवेके फांवडे कुदालादिकनको त्याग देयहै ऐसेही यतिजन मनको परमात्मामें लय करके अभेद ज्ञानके साधनको त्याग दैयहैं ॥ ४८ ॥ सो भगवान् सब कल्याणकारी कर्मके फलदाता है, याते या विश्वकी भाव स्वभावहित सत् पदार्थकी प्रसिद्धि है जैसे सब धातुनको वियोग होय तब ये देह नाश होय है परन्तु आकाशकी नाईं जा अजन्मा पुरुषको वियोग नहीं होयहै वेई भगवान् सम्पूर्ण फलनके विभु और स्वयं देवेवारे है ॥ ४९ ॥ हे नारद! विश्वके उत्पन्न करवेवारे भगवान्‌की यह कथा मैंने संक्षेपसों सुनाईहै इन ईश्वरसो अलग सत् असत् कछुभी नहीं है ॥५०॥ जो मोको भगवान्‌ने कही, सो ये भागवत नाम पुराण है और इनकी विभूतीनको संग्रह अब तुम विख्यात करो ॥ ५१ ॥ जैसे हरि भगवान्‌में मनुष्यनकी भक्ति होय, सबकी आत्मा सबके आधार ईश्वरको चिंतवन करकै तुम वर्णन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करो ॥ ५२ ॥ इन ईश्वरकी मायाको जो वर्णन करै है जो इनकी प्रशंसा करैहै जो श्रद्धाकरके नित्य सुनेहै वो माया करकै कभूहू मोहको नहीं प्राप्त होय है[1] ॥ ५३ ॥

मायां वर्णयतोऽमुष्य ईश्वरस्यानुमोदितः ॥
शृण्वतः श्रद्धया नित्यं मायया ऽऽत्मा न मुह्यति ॥ ५३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कन्धे ब्रह्मनारदसंवादे चतुर्वि-
शत्यवतारचरित्रवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

राजोवाच-ब्रह्मणा चोदितो ब्रह्मन्गुणाख्यानेऽगुणस्य च ॥
यस्मै यस्मै यथा प्राह नारदो देवदर्शनः ॥ १ ॥

श्रीराजा परीक्षित् बोले कि हे ब्रह्मन् ! ब्रह्मा करके प्रेरित निर्गुण ईश्वरके गुणवर्णन करवेमें देवदर्शन नारदजी जाके जाके अर्थ जैसे कहिते भए सो कहो ॥ १ ॥ हे विदांवर ! ये जानवेकी इच्छा है अद्भुत-पराक्रमी ईश्वरकी कथा लोकमें सुंदर मंगल करवेवारी है ॥ २ ॥ हे महाभाग ! जैसे हम सर्वांतर्यामी श्रीकृष्णमें सबसो मन हटाय मन लगायकै या शरीरको त्याग करैं सो कहो ॥ ३ ॥ जो श्रद्धाकरके विनके चरित्र नित्य श्रवण करै, ईश्वरकी लीलाको मुखसे कहैं; थोडेही कालमें भगवान् विनके हृदयमें प्रवेश करै हैं ॥४॥ कानके छिद्र करकै प्रविष्ट श्रीकृष्ण अपने भक्तनके हृदयकमलको मल नाश करदेयहैं जैसे जलको मल शरद्ऋतुके आयवेमें नष्ट हैजायहै ॥ ५ ॥ सब क्लेश छुट जायवेसों पवित्रात्मा पुरुष श्रीकृष्णके पादमूलको नहीं त्यागैहैं, जैसे रस्ता चलवेवारो अपने घर आय सब दुःखसो छूटेहै और फिर वो अपने घरको नहीं छोडेहै ॥ ६ ॥ हे ब्रह्मन् ! त्वचा मांस रुधिर स्नायु मेद मज्जा हाड इन सप्त धातुनकी देह रहित ईश्वरको पंचभूत देह धारनो अपनी इच्छासों है, अथवा किसी हेतुसों शरीर धारैहैं, सो जैसो आप जानतेहो सो हमसों कहो ॥७॥ सब लोककी रचनारूप कमल जिनके उदरसो होतोभयो, जैसो ये पुरुष है जैसे अवयवनसो पृथक् पृथक् है, इतने हैं, ये सब कहो ॥८॥ हे शुकाचार्य ! उस पुरुषके अवयवस्थिति जो हमसे न जानी जायहै सो सब तुम कहो ॥ ९ ॥ नाभिकमलसो जन्में ब्रह्माजी जिनकी कृपासों प्राणिनको सृजते हैं और विन्हीं अनुग्रहसो विनके स्वरूपको

---

१ एक पंडितजी कथा बांच रहे थे उन्होने कही कि बुरे काममें भी सच बोलनेसै डर नहीं होता एक चोरने कही कि मैं चोरी करने जाताहूं आज सत्यही बोलूंगा, देखूं क्या होता है । यह विचार राजभवनमें चोरी करने गया, जभी द्वारपर द्वारपालोंने कहा कौन ? तब यह बोला चोर हूं, वे विचार करने लगे कि यह चोर होता तौ छिपता यह कोई बडा राजकर्मचारी है, यह विचारकर उसे जाने दिया इसी तरह वह राजाके स्थानपर बराबर चला गया, और उसे किसीने न रोका, राजभवनमें जाय राजाके कपडे पहर हथियार लगाय राजाके अस्तबलमें गया, और घोडा कसकर खाटकी पठीसै बांध सो रहा, प्रातःकाल राजाको तलाश हुई कि हमारे कपडे और हथियार कौन ले गया । एक नौकरने आकर राजासे कहा महाराज कोई आदमी आपका घोडा कसे आपके वस्त्र पहरे हथियार लगाये अस्तबलमें सोता है. राजा जाकर देखने लगे तो अपने वस्त्र हथियार और घोडा औरही प्रकारका देख कहने लगे कि यह हमारे नहीं कोई मतुष्य भूलसे चला आया है इसे जगाकर जाने दो जगाकर यह समाचार देखतेही भगवद्भक्त होगया सत्यकी और कथाकी ऐसी महिमा है ॥

२ शरद्ऋतुको दृष्टांत यासों दियो है यद्यपि जलके मल दूर करवेके उपाय औरहु बहुत है परन्तु वे उपाय ऊपरसेही मल दूर करवेवारे है आंतरीक मलकों दूर नहीं कर सके है यदि तनकहू हलायवे आदिसों वो फिर गदलो है जाय है और शरद्ऋतुके संबंधसो जो जलको मल जाय हैं सो आंतरीक मल चलो जाय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाने हैं ॥ १० ॥ सोई ईश्वर पुरुष विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश करै है मायाके ईश अपनी मायाको त्यागकर सबके अंतर्यामी होय भीतर सोए रहतेहैं ॥ ११ ॥ हमने आपहीसों सुनीहै कि पुरुषके अवयवनसो लोकपालसहित लोकनकी कल्पना भई है तथा लोकपालनसहित लोकनसो इनके अवयवनकी कल्पना भई है ॥ १२ ॥ जैसो कल्प है, जैसो विकल्प है, जैसे कालको अनुमान करो जायहै, भूत भविष्यत् वर्त्तमान आयुको प्रमाण जो है सो कहो ॥ १३ ॥ कालकी जो गति छोटी मोटी है, जितनी कर्मकी गति हैं जैसी गति होयहै सो हे द्विजसत्तम ! हे शुकाचार्य ! आप कहो ॥ १४ ॥ सत्त्वादि गुणनके देवादिरूप शरीरकी इच्छा करवेवारे जीवनके मध्यमें कौन जीव कैसे पुण्य पाप कर्मनको समूहसों कैसे शरीरको प्राप्त होयहैं सो कहो ॥ १५ ॥ भूमि, पाताल, सब दिशा, आकाश, ग्रह, नक्षत्र, पर्वत, नदी, समुद्र, द्वीप इनकी उत्पत्ति और इनके वासी जो होय विनें कहो ॥ १६ ॥ या ब्रह्माण्डको प्रमाण, बाहिरभीतरको भेद, महात्मानके चरित्र, वर्ण आश्रमको निर्णय, तिन तिन स्वभावनसों वर्ण आश्रमको निर्द्धार सो कहो ॥ १७ ॥ अत्यंत आश्चर्यदायक श्रीहरिके अवतारनके चरित्र और युग और युगनके प्रमाण और युगयुगमें जो धर्म होय सो कहो ॥ १८ ॥ मनुष्यनके साधारण धर्म कहो और जो वर्णाश्रमके बंधनसो करने पडे वे धर्म कहो, और व्यवहारिनके धर्म कहो, और प्रजापालनके अधिकारी राजर्षीनके धर्म कहो, सब जीवमात्रको आपदामें करवे योग्य धर्म कहो ॥ १९ ॥ तत्वनकी संख्या विनके लक्षण, अथवा कोई हेतुसो विनके लक्षण जैसे होय सो कहो परम पुरुषनके पूजनकी विधि अष्टांगयोगकी विधि, ब्रह्मविद्या सब कहो ॥ २० ॥ योगीश्वरनके ऐश्वर्यकी गति, अर्चिरादि मार्गके योगिनके लिंगदेहके भंगकी गति, ऋगादिवेद, आयुर्वेदादिक, धर्मशास्त्रनकी गति, इतिहास पुराणनको स्वरूप ये सब कहो ॥ २१ ॥ सब जीवनकी प्रलय स्थिति महाप्रलय वैदिककर्म पूर्तकर्म ये हैं कि " वापीकूपतडागादिदेवतायतनानि च ॥ अन्नप्रदानमारामः पूर्तमित्यभिधीयते ॥ १ ॥ " बावडी कूप तलाव आदि देवमंदिर बनावनो सदा अन्नदान करनो ईश्वरके निमित्त बगीचा लगावनो इनको पूर्त कहेहैं. कामना करके कर्म करनो अर्थ धर्म कामकी विधि ये सब कहो ॥ २२ ॥ उपाधिलीन जीवनके धर्म, विनकी रचना, पाखण्डकी उत्पत्ति, जीवको बंधमोक्ष, स्वस्वरूपमें स्थित होनो कहो ॥ २३ ॥ जैसे स्वाधीन भगवान् अपनी मायाकरकै क्रीडा करै है, कभू मायाको त्याग करै है जैसे साक्षीकी नाईं विभु विराजे हैं सो कहो ॥ २४ ॥ क्रमसो सब ये आप सिद्धांतसो मोसो कहिवेको योग्य हो, हे महामुने ! मैं तुमारे आश्रित हूं ॥ २५ ॥ जैसे नारदहीको ब्रह्माजीको वचन ऐसोही हमें या विषयमें आपको वचन प्रमाण है क्यों कि दूसरे लोग तौ पूर्वजनकेहूं पूर्वजनके किये कर्मको अनुष्ठान करै हैं ॥ २६ ॥ द्विजकोपसो व्याकुल तोको इतने प्रश्नके सुनवेको कहां अवकाश तहां कहैं है हे ब्रह्मन् ! मेरे प्राण भूख प्याससो नहीं निकसेंगे, भगवत्कथामृत पान करवेवारे मोकों कुपित द्विजके सर्पको भय नेकभी नहीं है ॥ २७ ॥ सूतजी बोले कि संतनके पति हरिकी कथामें ऐसे राजाने प्रार्थना कीनी, तब सभामें राजा परीक्षितसो शुकदेवजी बहुत प्रसन्न होतेभए ॥ २८ ॥ वेदके समान भागवत नाम पुराण कहितेभए, जो ब्रह्मकल्पके समयमें ब्रह्मासों भगवान्ने कहीही ॥ २९ ॥ पांडुनमें श्रेष्ठ परीक्षितने जो जो पूछो सो सब संक्षेपविस्तारसों क्रमपूर्वक व्याख्यान करवेको प्रारंभ करते भए ॥ ३० ॥

यद्यत्परीक्षिदृषभः पाण्डूनामनुपृच्छति ॥
आनुपूर्व्येण तत्सर्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥ ३० ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वितीयस्कंधे राजकृतप्रश्नविधिर्नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ९.

श्रीशुक उवाच-आत्ममायामृते राजन्परस्यानुभवात्मनः ॥
न घटेतार्थसंबन्धः स्वप्नद्रष्टुरिवाञ्जसा ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! अनुभव आत्मा परमेश्वरको देहको संबंध अपनी मायाके विना नहीं होयहै जैसे अनायास स्वप्नके द्रष्टाको सुपनेके समयको देहसंबन्ध नहीं होयहै ॥ १ ॥ बहुतरूपवारी मायासो आत्मा अनेक रूप कासो भासे है या मायाके गुणमें रमण करके मेरो है, हम है ऐसे आप माने है ॥ २ ॥ जब अज्ञान और मोह निवृत्त होय हैं तब यह प्रकृति पुरुषसो परे निजानन्दमें जायके रमण करेहैं, तब अहंकार ममकार दोनोंको त्यागकर साक्षीकी नाईं रहे है ॥ ३ ॥ जीवके स्वरूप जाननेके निमित्त ब्रह्माजीने कपटरहित हो भगवान्की सेवा कीनी तब भगवान्ने दर्शन देके जो ब्रह्माजीसो आत्माको स्वरूप वर्णन कियो वह आप सुनिये ॥ ४ ॥ सो आदिदेव जगत्के परम गुरु ब्रह्माजी अपने कमलमें विराजमान होयकर जब जगत् रचवेकी इच्छा करतेभए तब या संसारके रचवेके योग्य दृष्टिको नहीं प्राप्त होते भए, जासों या विश्वके रचवेकी विधि होय ॥ ५ ॥ एक समय ब्रह्माजी चिंतवन करवे लगे तब वा जलमें दो बार तप करो तप करो ये सुनो ककारसों लेके मकारपर्यंत अक्षरनकी स्पर्श संज्ञा है इनमें सोलवों अक्षर तो (त) है और इक्कीसवो (प) है दोनों मिलके (तप) बने है हे राजन् ! जिनको काहू वस्तुकी चाहना नहीं ऐसे मुनीनको वो धन है यासे तपोधन मुनि प्रसिद्ध हैं ॥ ६ ॥ तप करो ये सुन विन वक्ताकी देखवेकी इच्छाकरके ब्रह्माजीने सब दिशानमें देखो तो तहां कोई नहीं देखो तब कमलपर बैठकर अपनो हित विचार तप करवेको मनमें धारण करते भए ॥ ७ ॥ सफल दर्शन पवन मन जीत कर्मइंद्रि और ज्ञानइंद्रि जीत तप करवेवारेनमें अति तपस्वी ब्रह्माजी सब लोकको प्रकाशक तप दिव्य हजार वर्षतक करते भए ॥ ८ ॥ श्रेष्ठ जासो परे और कोई नहीं क्लेश मोह संभ्रम-रहित सत्पुण्यवान् आत्मवेत्ता, अपने दर्शन करवेवारेनकरके स्तुत, प्रसन्न होय भगवान् ब्रह्माके लिये निजवैकुंठ लोक दिखावतेभए ॥ ९ ॥ जा वैकुंठमें राजस तामस नहीं, शुद्ध सत्व जहां वर्तै, रज तम मिलो सत्वगुण जहां नहीं, कालको पराक्रम न चलै, जहां माया नहीं, रागादिककी तो कहा चलाई, जहां देव असुरनसो पूजित भगवत्के पार्षद हैं ॥ १० ॥ पार्षदनको वर्णन करेहै कि, श्यामसुंदर, उज्ज्वलरूप, कमलसमान नेत्र, पीरे पीतांबर धारे, अतिसुंदर, अतिसुकुमार, अतिप्रभावारे उत्तम मणिजटित आभरण धारण करेहैं अति तेजस्वी सब पार्षद हैं ॥ ११ ॥ मूंगा, वैडूर्य, कमलनाल समान तेजस्वी सब ओरसे देदीप्यमान, कुंडल, मुकुट मालाधारी, सामवेद गाय रहे, सर्वेश्वरको सब ओरसे नमस्कार करते, कहीं हरिस्मरण करेहैं, कहीं प्रशंसा करेहै कहीं भगवद्गुण वर्णन करेहै, ऐसे भगवत्पार्षद ॥ १२ ॥ महात्मा-नके प्रकाशमान शोभितविमाननकी पंक्तिन करके श्रीवैकुंठलोक सब ओरसो विशेषकरिके प्रकाशमान होय रह्यो है, उत्तम स्त्रियनकी कांति करके प्रकाशमान हैं, जैसे विजुरी सहित मेघमालासो आकाश सोहै विजुरीकी नाईं तो स्त्रियें हैं मेघपंक्तिकी नाईं विमान हैं, आकाशतुल्य वैकुंठलोक है ॥ १३ ॥ जहां वैकुंठमें रूपवती महालक्ष्मीजी नारायणके चरणको बहुत विभूतिन करके सेवा करेहैं झूलामें झूलती जायहै, वसंतके अनुचर भ्रमर अनेक प्रकारसे गुंजार करेहैं, अपनेको प्रिय हरिके चरित्रनको गाती जांयहैं ॥ १४ ॥ वा वैकुंठमें सब भक्तनके पति श्रीभूलीलानायक यज्ञपति जगत्पति सुनंद नंद प्रबल

१ रूप ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अर्हण आदि अपने मुख्य पार्षदनसों सेवित समर्थ श्रीमन्नारायणको ब्रह्माजी दर्शन करतेभए ॥१५॥ भृत्यनकी ओर प्रसन्नतासों मुख किये मदकी नांई हर्षकारी नेत्र प्रसन्न हांसीसो नेत्र मुख लाल हो रह्यो किरीट कुंडलधारी, चतुर्भुज, पीतांबर पहिरे. हृदयमें श्रीजी शोभायमान होरही हैं ॥ १६ ॥ अत्यंत पूजन योग्य सिंहासनपें विराजमान परब्रह्म प्रकृतिपुरुष महत्तत्व अहंकार ये चार और ग्यारह इंद्रि पंचमहाभूत यह सोलह और पांच तिनकी मात्रा इन शक्तिनकरके युक्त अपने सब स्वाभाविक ऐश्वर्य करके युक्त योगिनको अध्रुव आगामी ऐश्वर्यसहित अपने धाममें सदा रमण करवेवारे ईश्वरके ॥१७॥ दर्शनके आनंदसो प्रसन्न अंतःकरण रोमांचित देह, प्रेमभारसो आसू नेत्रमें भर ब्रह्माजी इन ईश्वरके चरणकमलको नमस्कार करते भए जिनको दर्शन परमहंसनके ज्ञानमार्गसो होयहै ॥ १८ ॥ प्रसन्न हैके प्रजाको रचवेके निमित्त अपने सन्मुख उपस्थित भये आज्ञा करवे योग्य ब्रह्माजीको देखके मंद मुसकानकी वाणीसो प्रसन्नमन है ईश्वर अपने हाथसो विनको हाथ पकडके बोले ॥१९॥ श्रीभगवान् बोले कि हे वेदगर्भ ! हे ब्रह्मन् ! जगत् रचवेकी इच्छा करके तुमने हमें बहुत प्रसन्न कीनो बहुत तप कीनों जो मूर्ख अर्थात् (मूढ) योगी जन हैं विनसों मैं प्रसन्न नहीं होऊंहूं ॥ २० ॥ आपको कल्याण होय, वरदाता मोस जो इच्छा होय वो वर मांगो, हे ब्रह्मन् ! कल्याणकी प्राप्तिमें पुरुषको तबतक श्रम है जबतक हमारो दर्शन न होय, अर्थात् अब मेरो दर्शन तुमको भयो तो अब तुमको कोई श्रम नहीं है, जो इच्छा होय सो मांगो ॥ २१ ॥ मेरे मनकी इच्छाको ये प्रभाव है कि मेरे लोकको तुम्हें दर्शन भयो, ये मनमें मत विचार्यो कि मैंने तपके बलसो ये करो, ऐसे स्वतंत्र मत होइयो, मेरी कृपासो ये दर्शन तुमको भयो, जो सुनके एकांतमें परम तप करो ॥ २२ ॥ जब कर्ममें तुम विशेष करके मोहित भए, तब हमनें तुमसो कही हे पापरहित ! तप मेरो हृदय है, साक्षात् तप मेरो देह है, तप मेरी भीतरकी शक्ति है "यस्य ज्ञानमयं तपः" इति श्रुतेः ॥ २३ ॥ तपसों या विश्वको रचेहै, फेर तपसों संहार करैहैं तपसों विश्वको धारण करैहैं, ये तपरूप बडो भारी पराक्रम है, बडो दुश्चर है तप करनो बडो कठिन है ॥ २४ ॥ ब्रह्माजी बोले कि हे भगवन् ! आप सब जीवमात्रके अधिष्ठाता सबमें स्थित हो अप्रतिहत ज्ञानसों जो या जीवकी करवेको इच्छा है ताहि तुम जानो हो ॥ २५ ॥ यद्यपि ऐसे है तथापि हे नाथ ! आप मांगवेवारे मनुष्यको याचित पदार्थ देओ "नाथ नाथ याच्ञोपतापैश्वर्याशीःषु" कि तुमारे निर्गुण सूक्ष्म स्थूल रूपको जैसे जानूं सो कहो ॥ २६ ॥ जैसे आप मायाके संयोगसों नानाशक्तिनसों वर्णित विश्वको संहार, रचन और पालन ब्रह्मादिरूप धारकर क्रीडा करोहो ॥२७॥ हे अमोघसंकल्प ! जैसे मकडी अपने तंतुनसों आप फैल जायहै, तैसे आप क्रीडा करोहो, हे माधव ! सृष्टिके रचवेकी बुद्धि मोमें तुम धारण करो ॥२८॥ आपसो शिक्षित हम निरालस्य हैके तुमारे अनुग्रहसो प्रजासर्गकी चेष्टा करैंगे तो अहंकारादिके बंधनमें न पडैंगे ॥ २९ ॥ हे ईश ! तुमने लौकिक सखाकी नांई करस्पर्शादिक करके मेरो सन्मान कीनो सो प्रजाके रचवेके रूप कर्ममें अव्याकुल होकर उत्तममध्यमादि भेद करके जीवको विभाग करवेमें अजमानी मोकों ये महामद न होय कि मैं सृष्टिको कर्ता हूं यह वर दीजिये ॥३०॥ श्रीभगवान् बोले कि मेरो शास्त्रोक्त ज्ञान परम गोप्य है, वो अनुभवसहित भक्तिसहित सब साधनसहित है सो हम कहे हैं तुम ग्रहण करो ॥३१॥ जैसो हमारो स्वरूप जैसे हम हैं, और जैसे सत्तावान् हैं, जो रूप गुण कर्म हमारे हैं, तैसेही तत्वनको विशेषकरके ज्ञान मेरी कृपासो तुमको होय ॥ ३२ ॥ या सृष्टिसे पहिले हमही हैं; स्थूल सूक्ष्म इनको परम कारक कछु नहीं हो, पीछे सृष्टिके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उपरांतहूं हमही हैं, जो ये विश्व है सो हमही हैं, जो पीछे बाकी बचेगो सोहू हमही है, यासों ये जानो गयो कि अनादि अनंत अद्वितीय परिपूर्ण हमही हैं ॥३३॥ अर्थके विना जो जो प्रतीत होय है और आत्माके प्रकाश हैवेपै जो प्रतीत नहीं प्रतीत होय है वो ईश्वरकी माया जानो, जैसे दो चंद्रादि प्रतीत होय हैं, जैसे राहु ग्रहमंडलमें स्थित है, परंतु दीखे नहीं है ग्रहणके द्वारा दीखे है, तैसेई ये माया कार्यनके द्वारा दीखे हैं साक्षात् मालुम नहीं पडेहै ॥३४॥ जैसे पंच महाभूत ऊंचे नीचे जीव मात्रमें प्रविष्ट अप्रविष्टकी नाई मालुम पडे हैं, तैसेही हम विनमें मालूम नहीं पडे हैं॥ ३५॥ आत्माके तत्व जानवेवारेको इतनोही अन्वयव्यतिरेक करके जाननो योग्य है जो सब ठौर सदा है वो ईश्वर है "कार्येषु कारणत्वेनानुवृत्तिरन्वयः" अर्थ–कार्यनमें कारणभावकरके जो सदा वर्ते वाको नाम अन्वय है "कारणावस्थायां च तेभ्यो व्यतिरेकः" अर्थ--कारण अवस्थामें विनसो पृथक् रहै वाको नाम व्यतिरेक है ॥ ३६ ॥ परमसमाधिसों या मतमें तुम स्थित रहोगे तो तुम कल्पनमें जो अनेकप्रकारकी सृष्टि है कभूहू हम कर्ता हैं ऐसे अभिमानसो मोहको प्राप्त न होउगे ॥३७॥ शुकदेवजी बोले कि सब जननमें श्रेष्ठ ब्रह्माकों अजन्मा श्रीहरि ईश्वर ऐसे कहिके ब्रह्माके देखते भए अपनो रूप अंतर्द्धान करतेभए॥३८॥ अंतर्द्धान भए अच्युत हरिके अर्थ हाथ जोडकर ब्रह्माजी सब जीवमय या विश्वको पहिले कल्पकी नाईं रचतेभए ॥ ३९ ॥ प्रजापति धर्मपति ब्रह्माजी एकसमय यमनियमनको प्रजाके कल्याणकी इच्छाकरके और अपने स्वार्थकी कामनाकरके रचते भये यमादिकमें आप स्थित होतेभए ॥ ४० ॥ पुत्रनमें अति प्रिय भगवान्के परम भक्त महामति पिताके सेवक आज्ञाकारी शील नम्रता इन्द्रिय दमन कर नारदजी ॥ ४१ ॥ हे राजन् ! मायाके ईश्वर व्यापक विष्णुकी माया जानवेकी इच्छा कर महामुनि महाभागवत नारदजी पिताको प्रसन्न करते भए "वेवेष्टीति विष्णुः" सबमें व्यापै उनको नाम विष्णु है व्याकरणमें 'विष्लृ व्याप्तौ' धातु है यासो विष्णुशब्द व्युत्पादित होय है ॥४२॥ सब लोकके परदादे ब्रह्माको प्रसन्न जानकर नारदजी यही पूछतेभए जो आपने हमसो पूछो ॥४३॥ नारदजीके वचननसो परम प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने दशलक्षणवारो भागवत पुराण जो भगवान्ने विन्हें सुनाया हो नारदजीके प्रति वर्णन कियो ॥ ४४ ॥ हे राजन् ! वही भागवत पुराण सरस्वतीके तटपे बैठे परब्रह्मके ध्यानमें तत्पर महातेजस्वी व्यासजीको नारदजीने सुनायो ॥ ४५ ॥ हे नृप ! जो तुमने पूछी कि विराट् पुरुषसो ये विश्व कैसे होय है, और तुमारे करेभए सब प्रश्न और औरहु बातें जैसी है तैसी कहोंगो ॥ ४६ ॥

यदुताहं त्वया पृष्टो वैराजात्पुरुषादिदम् ॥
यथाऽऽसीत्तदुपाख्यास्ये प्रश्नान्यांश्च कृत्स्नशः ॥ ४६ ॥

इति श्रीभागवते महापुराणे द्वि० स्कं० चतुःश्लोकीभागवतवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

श्रीशुक उवाच–अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणमूतयः ॥
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि या भागवतमें सर्ग विसर्ग स्थान पोषण ऊति मन्वंतर ईशानुकथा निरोधमुक्ति आश्रय ये दशलक्षण कहे हैं ॥ १ ॥ दशमो आश्रय लक्षणकी विशेष शुद्धिके अर्थ ९ नौअनको लक्षण महात्मा लोग सुने भए अर्थ करके अनायाससो वर्णन करैं हैं, अथवा श्रुतिनसों कहे हैं ॥ २ ॥ अब दश

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लक्षणनको व्याख्यान करै है, कि पंच भूतमात्रा और इंद्रियनके जन्मकों सर्ग कहे हैं, ब्रह्मासो गुणकी विषमता हैवेसों विराट् पुरुषसो उत्पन्नको नाम विसर्ग है ॥३॥ वैकुंठको विजय अर्थात् ईश्वरकी रचीभई मर्यादानको पालन करवेको नाम स्थान है, अपने भक्तनपें कृपा करवेको नाम पोषण है, मन्वंतरनके अधिपतीनके सद्धर्मको नाम मन्वंतर है, कर्मकी वासनाको नाम ऊति है, क्यों कि " वेञ् तंतुसंताने " धातुसे व्याकरणमें है " ऊयंते कर्मभिः संतन्यंत इति ऊतयः " ऊति बने है ॥ ४ ॥ श्रीहरिके अवतारनको चरित्र और इनके पीछे जो पुरुष भए विनकी नानाप्रकारके आख्यानन करकै अत्यंत बढीभई वार्ताको नाम ईशकथा है ॥ ५ ॥ या जीवको ईश्वरकी योगनिद्राके पीछे शक्ति और उपाधि करकै सहित लय हैवेको नाम निरोध है, अन्यथा रूपकों त्याग करकै अपने स्वरूपमें स्थिति हैवेको नाम मुक्ति है ॥ ६ ॥ जासों सृष्टि होय है जामें लीन होयहै जासो प्रकाशित होयहै वो परब्रह्म परमात्मा कहे जाय है, वाको नाम आश्रय है ॥ ७ ॥ जो आध्यात्मिक पुरुष है सोई आधिदैविक है, जो इनमें विभाग है सोई आधिभौतिक है अर्थात् वा एकमें दो रूपवारे दो उनको जासो विच्छेद होय है वोही आधिभौतिक है ॥८॥ इनमें एकको अभाव होय तौ जाको दूसरो प्रतीत नहीं होय हैं कारण है कि यह तीनौ परस्पर अपेक्षावारे हैं इन तीनों पदार्थनको साक्षीपनसो देखवेवारे परमात्माहीको नाम आश्रय है जाको काहू दूसरेको आश्रय नहीं है ॥९॥ ये विराट् पुरुष अंडको भेदके जब बाहिर निकसे तब अपने रहिवेको स्थानकी इच्छा करतो भयो तौ पवित्र ईश्वर पवित्र जल रचते भए ॥१०॥ अपने रचे भए जलमें सहस्र वर्षपर्यंत वसते भए, वो पुरुष नर हो वासों जल उत्पन्न भयो, तासों नारायण नाम भयो " नारा अयनं यस्य स नारायणः " नार नाम जलका है वामें जाको स्थान सो नारायण कहावै "आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः । अयनं तस्य ताः प्रोक्तं तेन नारायणः स्मृतः ॥१॥ "॥११॥ द्रव्य कर्म काल स्वभाव जीव जिनकी कृपासो होय है, जिनकी इच्छा न होय तो नहीं होयहै ॥१२॥ एकईश्वर नानाप्रकार होयवेकी इच्छा करते भए, तब योगशय्यासो उठ सुवर्णमय अपनेको मायाकरकै तीन भाग करतेभए॥१३ तब वह प्रभु अधिदैव, अध्यात्म और अधिभूत इनको रचतेभए एक पुरुषको वीर्य तीन प्रकारके भेदको प्राप्त होतो भयो सो तुम सुनो॥१४॥विशेष करके चेष्टा करी तब पुरुषके भीतरसों इंद्रियशक्ति, मनशक्ति, देहशक्ति ये भई, सूक्ष्मरूपसों सूत्रात्मा सबमें मुख्य प्राण भयो ॥१५॥ सब जीवनमें ईश्वर प्राणरूप चेष्टा करै हैं, तो सब इंद्रिय चेष्टा करैहै, जो चेष्टाको त्याग करै तो प्राणहू चेष्टा त्यागे है जैसे राजाको सिपाई, राजा चले तो चले, राजा खडो होजाय तो वेहू खडे हो जाय है ॥ १६ ॥ देहके चलायवेवारे विराट्के प्राणने जब प्रेरणा कीनी तब क्षुधा तृषा भई, जलपानको भोजन करवेको पूर्व मुख निकरो, यहां ये बात जाननी कि तालु अधिष्ठान है जिह्वा इंद्रिय है, नाना रस विषय है, वरुण देवता है ये सर्वत्र जान लेनी ॥१७॥ मुखते तालु भयो तहां जिह्वा भई जीभसो नानाप्रकारके स्वादको ज्ञान होयहै ॥ १८ ॥ विराट्के कछु बोलवेकी जब इच्छा भई तब मुखसों अग्नि देवतात्मक वाणी इन्द्रिय भाषण विषय उत्पन्न भयौ परन्तु विन दोऊको बहुत कालतक जलमें निरोध भयो ॥१९॥ नासिकाकी वायु जब अत्यंत चलायमान भई, तब नाक भई तहां वायु देवता, सुगंध विषय, घ्राण इंद्रिय सूंघवेको भई ॥२०॥ कछु न सूझनेसों विराट् पुरुषको जब देखवेकी इच्छा भई तब नेत्रगोलक उत्पन्न भये जाकी चक्षु इन्द्रिय सूर्य देवता, रूप विषय भयौ ॥ २१ ॥ वेदके दिये ज्ञानके सुनवेकी इच्छा भई तब दिशा देवता श्रोत्र इंद्रिय शब्द गुणको ग्रहण करवेवारे कान निकसे ॥ २२ ॥ वस्तूनकी कोमलता कठिनपण लघु

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गुरु गर्म शीतके ज्ञानकी जब इच्छा भई वामेंसो रोम प्रगट और वृक्ष विनमें देवता भये ॥ २३ ॥ तहां बाहर भीतर पवन जायवेके गुणवारी त्वचा इंद्री भई; वाही त्वचासो स्पर्शको ज्ञान भयो. वामें सब लोककी पालन करवेवारी पवन प्रवेश करती भई ॥ २४ ॥ नानाप्रकारके कर्म करवेकी जब इच्छा भई, तब बल, इंद्रिय, इंद्र देवता, सब पदार्थको धरनो उठावनो कर्मवारे दो हाथ भए ॥ २५ ॥ जब वाको ये इच्छा भई कि मेरो मन होय तहां जाऊं तब भगवान् देवतात्मक चरण कि जिन पांवसों चलके यज्ञादिके लिये समिधादिक लावनों हवन करनों और अनेक कर्म करनों बने ऐसे पांव याके होते भए इनकी चलनशक्ति इन्द्रिय हुत द्रव्य विषय भयो ॥ २६ ॥ पुत्र होय विषय आनंद अमृत सुख होय ये इच्छा जब भई तब उपस्थ इंद्रिय, प्रजापति देवतावारो लिंग भयो इन दोनोंनके आश्रित कामसम्बंधी सुख भयो ॥ २७ ॥ भोजन करके बाकी जब असारांश मल त्यागवेकी इच्छा भई तब पायु इंद्रिय, मित्र देवता मल त्यागवेके कर्मवारी गुदा प्रगट भई इन दोनों-नके आश्रित मलत्याग विषय भयो ॥ २८ ॥ या देहरूप पुरीसों और देहरूप पुरीमें जायवेकी इच्छा भई, तब नाभि भई जिसमें दूसरे शरीरमें जायवेको साधन अपान वायु इन्द्रिय मृत्यु देवता मरण विषय भयो वह मरण विषय मृत्यु देवता और अपान इन्द्रियके आधीन है[1] ॥ २९ ॥ जब अन्न जलकी ग्रहण करवेकी इच्छा भई तब कोख आंतें नाडी हुई, नदी समुद्र कोख नाडीके देवता भए पुष्टि विषय उत्पन्न भयो ॥ ३० ॥ ईश्वरकी मायाके अत्यंत चिंतवनकी इच्छा भई तब हृदय भयो वा हृदयमें मन चंद्र देवतासहित संकल्प काम इत्यादिक विषय होते भये ॥३१॥ त्वक् चर्म मांस रुधिर मेद मज्जा हाड सप्तधातु भूमि जल तेज होयहैं आकाश जल और वायुसों प्राण प्रगट होयहै ॥ ३२ ॥ सब इंद्रि गुणनसो होयहैं, और गुण अहंकारसों मन सब विकारनको स्वरूप है, बुद्धि विशेषज्ञानकी रूपिणी है ॥ ३३ ॥ ये भगवान्को स्थूलरूप तुमसो मैंने कह्यो, जो पृथिवीसों आदि आठ आवर-सों बाहिर व्यापैहैं ॥ ३४ ॥ वह ईश्वर मायासों परे सूक्ष्मतम अप्रगट विशेषणरहित आदि मध्य अंतरहित सदा एकरूप वाणी मनसों परे है यही निर्गुणरूप है ॥ ३५ ॥ ये दो सगुण निर्गुणरूप भग-वान्के मैंने तुमसों वर्णन करे परंतु विद्वान् लोग मायाके रचे इन दोनोंनको ग्रहण नहीं करेहै ॥ ३६ ॥ सो अकर्मा भगवान् ब्रह्मरूपधारी परमेश्वर कर्मकारक वाच्यरूपसों तो नाम धारतेभये और वाचक रूपसौं रूप क्रिया धारैहैं ॥३७॥ जो जो रूप ईश्वर जगत्के कार्यके लिये होयहैं, सो कहेहैं कि प्रजापति, मनु, देवता, पितरनके गण, पृथक् पृथक् सिद्ध, चारण, गंधर्व, विद्याधर, सुर, गुह्यक ॥ ३८ ॥ किन्नर, अप्सरा, नाग सर्प, वानर, उरग, सप्त मातृका, राक्षस, पिशाच, प्रेत, भूत, विनायक ॥३९॥ हे राजन् ! कूष्माण्ड उन्मादकारी ग्रह वेताल, यातुधान, ग्रह, पक्षी, मृग, पशु, वृक्ष, पर्वत रेंगके चलवेवारे जीव सरीसृप ॥ ४० ॥ स्थावर जंगम रूपसों दो प्रकारके जीव जरायुज, अंडज, स्वेदज, उद्भिज्ज ये चार प्रकारके जीव और जल स्थल आकाशवासी जीव उत्तम नीच कुछ दोनों मिले भए ये कर्मकी गतिसो सत रज तम मिश्रित तीन प्रकारके रूप ब्रह्म धारते भये ॥ ४१ ॥ सत्व रज तम इन तीनसे देवता मनुष्य नार-की जीव होयहैं हे राजन् ! तिनमेंहू एक एक गति तीन तीन प्रकारसों भेदको प्राप्त होयहैं ॥ ४२ ॥

---

१ यहां यह समझनो कि नाभिद्वारमें प्राण अपान दोउ वायुनकी एक ग्रंथि है वो आँकठाकी तरहसो है बिन दोउ पव-ननको ऊपर नीचेको परस्पर सब समय खेंच खेंची रहे है जब वो गाठ खुल जाय है तब नीचेकी नीचे ऊपरकी ऊपर पवन निकस जाय है वाहीको मृत्यु कहे है अर्थात् तब ये पुरुष मर जाय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जब एक एक गुण और दो दो गुणकरके और तरेहेको होय है तब स्वभावसे नष्ट होय जायहै, जाको जैसो स्वभाव होयहै तैसी गति वाको होयहै ॥ ४३ ॥ सोई भगवान् धर्मरूपधारी जगत्के धारण करवेवारे या विश्वको तिर्यक् पशुपक्षिनमें अवतार लेके याको स्थापन करते पुष्ट करे हैं ॥ ४४ ॥ ताके उपरांत काल अग्निरूप रुद्रांतर्यामी ईश्वर जासों ये सब रचोभयोहै, काल करके या सब विश्वको संहार करे हैं, जैसे मेघके समूहको पवन उडाय देती है ॥४५॥ "तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः । सोऽकामयत बहु स्यां प्रजायेयेत्यादिश्रुत्या कथितः" या प्रकारसो भगवान् जो भगवत्तम हैं सो कहे या भावके विना और प्रकारसो बडे बडे विवेकी लोग देखवेको योग्य नहीं है अत्यन्त ऐश्वर्यसम्पन्न भगवान्को जगत्के उत्पन्न पालन संहार करता रूपको वर्णन कियो परन्तु विद्वान् लोक केवल याही रूपसो देखवेके योग्य नहीं हैं ॥ ४६ ॥ या जगत्के जन्मआदि कर्मके निमित्त जो या रीतिसो कह्योहै वह परत्माके कर्तापनके प्रतिषेधके निमित्त नहीं हैं कारण कि वह परमात्माकी मायाही शक्तिसो आरोपित है " निष्कलं निष्क्रियं शांतं निरवद्यं निरंजनं । इंद्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते इति श्रुतिः । ॥४७॥ ये ब्रह्माको कल्प विकल्पसहित कह्यो, महाकल्पमें महत्वआदि सृष्टिको प्रकार और अवान्तर कल्पमें स्थावर जंगम सृष्टिको प्रकार समानही है ॥ ४८ ॥ परिणाम, कल्पलक्षण विग्रह, स्थूल सूक्ष्म, कालको आगे तृतीयस्कंधमें कहैंगे अब पाद्म कल्प संपूर्णतासों कहे हैं सो सुनो ॥४९॥ शौनकजी बोले कि हे सूतजी ! जो तुमने हमते कही कि भागवतनमें उत्तम विदुरजी त्यागवेके अयोग्य बंधूनको त्यागके भूमिके सब तीर्थनमें विचरतेभये ॥ ५० ॥ सो मैत्रेयजी और विदुरजीको ब्रह्मविद्यासंबंधी संवाद कहा भयो अथवा तिन मैत्रेयजीने पूछो तो विदुरजीने तिनके लिये कोन तत्वज्ञान कह्यो ॥५१ ॥ हे सौम्य ! सो ये विदुरजीके चरित्र विशेष कर हमसों कहो विनने अपने बंधुनको क्यों त्याग कियो और पीछे क्यों आये सो कहो ॥ ५२ ॥ सूतजी बोले कि राजा परीक्षित् करके पूछेभए भगवान् महामुनि शुकदेवजी जो कहिते भए सो राजाके प्रश्नके अनुसार हम तुमसों कहैहैं तुम सुनो । जिन ईश्वरने श्रीमद्भागवत ब्रह्माजीसों आप कही ब्रह्माजीने नारदसों कही ऐसे ईश्वर गुरुको प्रणाम करे हैं, द्वितीय स्कंधसंबंधी व्याख्या हमने कही, महात्मा विद्वान् हमारो साहस क्षमा करें मैंने अपने बोधके लिये करी है, कुछ सबके वास्ते नहीं, परंतु काल बलीनमें बली है, जो कालसो बचेगो वोही ईश्वरके लोकको जायगो, काल बडो बली है याकी बडी सूक्ष्मगति है तापर ये दृष्टांत है कि गरुडजीको मित्र एक गीध हो सो गरुडजीके घौसलासे दशहजार कोसपर वा गीधको घौसला हो, सो एक समय वैकुंठनाथको वैकुंठ पहुचाय गरुडजी वा गीध मित्रसे मिलवेको वा गीधके घौसलामें गए, गरुडको आयो जान गीध आदर कर प्रणाम कर बैठायके बोले हे गरुडजी ! आज यमधर्मराज या ओर होके निकसे, सो मोको देखकर बडे हंसे ये सुन गरुडजी बोले कि जाको देख यमराज हंसें वाकी मृत्यु आई जानो सो तुम हमारे पीठपर बैठकर हमारे घौसलेमें चलो वहां तुमको बैठाय हम यमराजसे पूछ आवेंगे, ये सुन गीधने वैसेही करी वाको गरुडजी अपने घौसलेमें रखके यमसे पूछवे गए पाछे गरुडजीके घौसलेके नीचे एक बडो भारी बिलाव रहै सो जब गरुडजी चलेजांय तब

---

१ या श्लोकसो यह समझनो कि एक सत्वसत्व गति और एक रजसत्व गति और एक तमसत्व गति ऐसे सत्व गतिके तीन भेद हैं ऐसेही एक तमस्तम गति एक रजस्तमगति एक सत्वतमो गति ऐसेही एक रजोरजो गति एक तमोरजो गति एक सत्वरज गति जब एक एक गुणको दो दो गुण जीत लेय है तब तीन गतिके ९ भेद है जाय हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वो वामें आयके सदा यथासुख विचरै, सो मार्जारने वा दिन वा गीधको वहां बैठो देख झटपट खाय लीनो गरुडजी यमराजसों बोले कि हमारे मित्र गीधको देख आप क्यों हंसे ये सुन यमराज बोले कि कल्ल सबेरे याको काल है, सो याको मारवेवारो यहांसे दशहजार कोसपर है, ये दोनों दशहजार कोस जायसकै नहीं ये कैसे मरैगो यासें मोकों हांसी आई सो जाओ याको वातक मार्जार तुम्हारे घोंसलेके नीचे है सो तुम यहां पूछवे आए वाने वाको मारो ये सुन गरुडजी वहां आए देख बोले काल बडो बली है, जो ब्राह्मणोंकी सेवा करैगो हरिनाम ले वह कालसें बचेगो ॥ ५३ ॥

सूत उवाच–राज्ञा परीक्षिता पृष्टो यदवोचन्महामुनिः ॥
तद्वोऽभिधास्ये शृणुत राज्ञः प्रश्नानुसारतः ॥ ५३ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां द्वितीयस्कंधे महापुरुषसंस्थानुवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ द्वितीयस्कंधः समाप्तः ॥ २ ॥

दोहा–कृष्णनामके जपतही, मिटत सकल जंजाल ॥ शरण उन्हीकी लीजिये, जिनसे डरपत काल ॥ १ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,

कल्याण–मुंबई.

GANGAVISHNUSHRIKRISHNADAS

"LAXMI-VENKATESHWAR" PRESS.

AT KALYAN

Bombay Presidency, G. I. P. Ry. Junction.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

तृतीयस्कन्धप्रारंभः ।

अध्याय १.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

श्रीशुक उवाच-एवमेतत् पुरा पृष्टो मैत्रेयो भगवान् किल ॥
क्षत्रा वनं प्रविष्टेन त्यक्त्वा स्वगृहमृद्धिमत् ॥ १ ॥

श्रीपरमेश्वराय नमः ॥ अब तृतीयस्कंधको प्रारंभ करेहैं ॥ या तृतीयस्कंधमें तेतीस अध्यायसों सर्गवर्णन करोहै ईश्वरकी इच्छासों गुणनके चलायमान होयवेसों ब्रह्मांडको होनो याको नाम सर्ग हैं तहां प्रथम अध्यायमें क्षीण भई आयु जिनकी ऐसे बंधुनको त्याग निकसेहुए विदुरको आदिमें संवाद वर्णन करेंगे पहिले भगवान्को ब्रह्माको संवाद संक्षेपसों कह्यो है फेर शेषजीकी कही भागवत सुंदर विस्तारसों कही हैं दो प्रकारसों श्रीमद्भागवतके संप्रदायकी प्रवृत्ति है एक तो संक्षेपसों श्रीनारायण ब्रह्माके द्वारा और विस्तारसों शेष सनत्कुमार सांख्यायनादि द्वारा भई तहां द्वितीयस्कंधमें श्रीनारायण ब्रह्माके संवादसों संक्षेपसों " अहमेवासमेवाग्रे" इत्यादिकरके चतुःश्लोकी श्रीभागवत कही सोही ब्रह्मा नारदके संवादसों दश लक्षणसों कछु विस्तारसों कही सोही शेषजीकी कही अब अतिविस्तारसों कहिवेको तृतीय आदिको प्रारंभ है तहां तृतीयमें पहिले विदुर मैत्रेयको संगम चार अध्यायसों भयो आठ अध्यायसों विसर्ग सहित सब प्रपंच कह्यो विसर्गके प्रस्तावसो सात अध्यायसों वराह अवतार कह्यो एक अध्यायसों विसर्गकी संपूर्णता कही चार अध्यायसों कपिल अवतार भयो नव अध्यायसों कपिलदेवजीको आख्यान भयो ऐसे तृतीयस्कंधकी तेतीस अध्यायसों प्रवृत्ति है ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि सब संपदासों संपूर्ण घर त्याग वनमें गये विदुर निश्चयसो भगवान् मैत्रेयजीसो पहिले ये चरित्र ऐसे पूछते भए ॥ १ ॥ सबके ईश्वर षड्गुण ऐश्वर्यवान् यह श्रीकृष्ण तुमारे पांडवनके मंत्री भये और दुर्योधनके घरकूं त्याग अपनो जानके विदुरजीके घरको जातेभए ॥ २ ॥ राजा

योगयज्ञजपनेमतप, यह रखिये इकठौर ॥ करहु भक्ति ब्रजचन्द्रकी, चर्चा करहु न और ॥ १ ॥ ज्ञान ध्यान नित दान कर, तीक्षण धारो नेम ॥ अस रीझत ब्रजराज नहिं, जैसे साचे प्रेम ॥ २ ॥

१ या श्लोकमें भारतकी लिखी यह कथा सब कहनी कि जब पांडव बारह वर्ष वनवास करके आये तब श्रीकृष्णको अपनो आमसुकत्यार बनायके हस्तिनापुरको भेजो तब भगवान् गये दुर्योधन मिलवेको आयो भगवान्को घरमें लै गयो सब घर दिखायो और निमंत्रण दियो कि रसोई तयार है चलो भोजन करो तब भगवान्ने कही श्लोक-प्रीतिभोज्यानि चान्नानि आपद्भोज्यानि च पुनः ॥ नच त्वं प्रीयसे राजन्न चैवापद्गता वयम् ॥ सुन दुर्योधन खानो तो दो प्रकारसोही होय है या प्रीतिसो या आपद्सों सो यहा दोनों बातनमेंसो एकहू नहीं है न तो तेरे प्रीति है न हमपैं आपत्ति सो मैं तो ऐसे नहीं तेरे यहा खाऊंगो यह कहिके भगवान् पेसावको बहानो कर बाहर निकस आये विचार कियो कि राजभोगके समय है गयो कहा चलो तब विचार कियो कि भक्त विदुरके चलो सोई आप विदुरके घरको अपनो घर समझके गये वा समय विदुरकी स्त्री दरवाजे किवार लगाये नग्न स्नान कर रहीही भगवान्ने टेर मारी अजी काकाजी विदुरजी ! विदुरानीने कही

In Public Domain. Chambal Archive

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परीक्षित् बोले कि हे समर्थ शुकाचार्य! भगवान् मैत्रेयको विदुरको संगम कहां भयो अरु कब संवाद भयो सो हमसों कहो ॥ ३ ॥ हे मुने! वा शुद्ध मनवारे विदुरको प्रश्न ऐसे महात्मा मैत्रेयजीसों कछु थोरे प्रयोजनको देवेवारो न भयो होयगो किंतु बहुत प्रयोजनको साधक जाननो चाहिये क्योंकि याके प्रश्नकी महात्मा पुरुष सराहना करै है अथवा साधु जो मैत्रेयऋषि तिनके उत्तरसों उपबृंहण कियो हैं ॥ ४ ॥ सूतजी बोले कि राजा परीक्षित् करके पूछेगए सुन्दर बहुत जानवेवारे प्रसन्न जिनको मन ऐसे शुकदेवजी राजासो बोले कि आप सुनो ॥ ५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि जा समयमें राजा धृतराष्ट्र दुष्ट अपने पुत्रनको पुष्ट करतोहो याते अधर्मसो विनष्ट दृष्टि भई सो अपने छोटे भाई पांडुके पुत्रनको लाखके ग्रहमें प्रवेश करवायके जरावतो भयो ॥ ६ ॥ जा समय सभामें अपनी पुत्रवधू अपने आसुनसों कुचनके कुंकुम धोवै ऐसी राजा युधिष्ठिरकी स्त्री द्रौपदीके केशनको खैचवों ये पुत्र दुःशासनके निंदित कर्मको धृतराष्ट्र मने न करतो भयो ॥ ७ ॥ अधर्मसों जूवेमें हारे सूधे सत्यवादी वनसों आए पहिले करेभए समय करके अपने हिस्साकों मांगो जिनको कोई शत्रु नांय ऐसे युधिष्ठिरको, अधर्मसों दुर्योधनको सेवन करवेवारो धृतराष्ट्र जब भाग न देतो भयो ॥ ८ ॥ जा समय युधिष्ठिरके भेजेभए जगत्के गुरु श्रीकृष्णजी पुरुषनको अमृततुल्य जो वचनसो सभामें कहिते भए पुण्यको लेश जाको नष्ट भयो ऐसो राजा धृतराष्ट्र तिन वचनको बहुमान नहीं करतो भयो ॥ ९ ॥ अब विदुरको जो तिरस्कार भयो सो कहैं हैं कि जा समय धृतराष्ट्रने अपने भवनमें विदुरको सलाह पूछवेको बुलायो और बडे भय्या धृतराष्ट्रने सलाहके लिये विदुरसो प्रश्न कियो तब २ बडे सलाह जानवेवारे पुरुषनमें श्रेष्ठ विदुरने जो कही जाको आजतक मंत्रीलोग ये विदुरजीके वाक्य हैं ऐसे कहैहैं अर्थात् जो विदुर प्रजागर नाम कहावे है ॥ १० ॥ जे सहे न जाय ऐसे अपराधनके सहिवेवारे और जाको कोउ शत्रु नहीं ऐसे युधिष्ठिरको दाय अर्थात् हिस्सा सो तुम देउ सब भाई सहित भीमसेनरूप सर्प क्रोधसो जहां श्वास लेयहै जासों तुम अत्यंत डरपौहो ॥ ११ ॥ फिर विदुरने कही कि हे धृतराष्ट्र! तुम भीमसेन और अर्जुनके समान बलवारे बहुतसे मेरे पुत्र हैं ऐसो अभिमान मत करो क्यों कि विन पांडवनको तो श्रीमुकुन्दने यह अपनेही हैं या भावसो ग्रहण कियो है और वह श्रीमुकुन्द कैसोहै कि जिनके संगमें सब विप्र और देवता हैं सो अपनी द्वारकापुरीमें विद्यमान है कहीं गयो नहीं है फिर सो श्रीमुकुन्द यदुवंशीय राजनके पूज्य है यासों विनकी पक्षमें यदुवंशीय बहुतसे बडे बडे वीर है और जा श्रीमुकुन्दने सब बडे बडे राजा लोगनको जीतके स्वाधीन कियेहैं यासों सब राजाहू विनके पक्षमें सहायक हैं यासों केवल अपने पुत्रनकी बलवत्ताके देखवेसों बढे भये अभिमानको छोडके पांडवनको भाग देउ ॥ १२ ॥ सो ये दुर्योधन श्रीकृष्णसो विमुख है याहीसो विनष्टश्री होकर दोषरूपधारी श्रीकृष्णको द्वेष्टा हैके घरमें घुसके रहै है तुम जाको पुत्रबुद्धिसो पुष्ट करोहो " न पतत्यस्मादित्यपत्यम् " जासों कुल गिरै नहीं वो अपत्य है कृष्णविमुख हैवेसो जाकी श्री नष्ट भई ऐसे या एक दुर्योधनको कुलकी कुशलताके अर्थ शीघ्र

कोन है आप बोले में हो कृष्ण सोई विदुरानीने किवार खोल दिये ये खबर न रही कि मैं नग्न हूं भगवान्ने पीतांबर अंगपै गेरके बोले काकी! मैं तो भूखोहो कछु खायवेको होय तौ लाओ सोई बडी लाचार होके केलाकी गहर लायके भगवान्को पट्टापै बेठारके आप खवामन लगी सो प्रेमवशसो छिलका खवामे गुदो धरतीमें गेरे इतनेहीमें विदुरजीने आयके वो लीला देखके कही कम्बखत ये कहा करै है सोई तो ए उठवेठी विदुरजीने खवायो तब भगवान्ने कही कि काकाजी वो स्वाद अब नहीं है सोई दोहा है। जनकनगर और मातकर, भोजन कियं अपार। की सबरीकी विदु घर रुचि मानी दो बार ॥ १ ॥ यह सब वृत्तांत रूपक यहांही कहनो चाहिये इति ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्याग करो " त्यजेदेकं कुलस्यार्थे " कुलके सुखके लिये एकको त्यागे ये राजनीति है ॥ १३ ॥ जिनके शीलकी सज्जन इच्छा करैं ऐसे विदुरजी वा सभामें ऐसे कहिरहेहे तब अत्यंत कोपसों होठ जाके फरकै ऐसे कर्ण दुःशासन शकुनि सहित दुर्योधनने विदुरको तिरस्कार कीनो ॥ १४ ॥ या कपटीको यहां कौनने बुलायोहै ये दासीसुत है जासों पुष्ट भयो है वाहीसों प्रतिकूल हैकै परायेके कृत्यमें वर्तै है यासों जीवते भये अमंगलीकको शीघ्र पुरसे निकासो ॥ १५ ॥ अपने भाई धृतराष्ट्रके सामने दुर्योधनके वचनरूप कठोर बाणनसों मर्मस्थाननमें ताडित कियो हैकै ईश्वरकी मायाको माहात्म्य ऐसोही है ऐसे भगवन्मायाके प्रभावको बडो मानते विदुरजी अपने धनुषको सभाके द्वारपे धरके चले जाते भये ॥ १६ ॥ कौरवनके पुण्यकर्मसो प्राप्त भये जो विदुरजी सो पूर्व कहे है तैसे हस्तिनापुरसों निकस तीर्थरूप हैं चरण जिनके ऐसे हरिके क्षेत्रनको पवित्र करवेकी इच्छासो जाते भये कौरवनके पुण्य कर्मसो प्राप्त या अर्थसो सूचित होय है कि विदुर नहीं गये तात्पर्य यह है कि मानो कौरवनको पुण्यही विदुररूपको धारण करके चलो गयो पृथ्वीपे जहां जहां सहस्रमूर्ति भगवान् आप अपनी श्रीमूर्तिसो विराजमान है तहां २ सब जगे विदुरजी जात भये ॥ १७ ॥ पुरनमें पुण्यदाता जे उपवन तिनमें पर्वतनमें कुंजनमें कीच नहीं ऐसी नदिनमें सरोवरनमें ईश्वरके चिह्नकरकै सुंदर अलंकृत जे तीर्थनके स्थान क्षेत्र है तिनमें सबमें एकले विदुरजी विचरते भये ॥ १८ ॥ पृथिवीपर विचरते भये एकांतकी वृत्ति जिनकी पवित्र सदा सब तीर्थनमें स्नान करते जाय धरित्रीपर शयन करैं शरीरको संस्कार नहीं करै ऐसो अवधूत रहै चीर वल्कल पहिने रहैं अपनेनकोहू जिनको स्वरूप लखो न जाय अवधूत वेष धार हरिके प्रसन्न करवेवारे व्रत करते भये ॥ १९ ॥ ऐसे या भारतवर्षमें विचरते भए विदुर जबताईं कोई कालमें प्रभासक्षेत्रमें गए, तबताईं एक आज्ञारूप चक्र जिनको सब पृथिवीपर श्रीकृष्णजीकी सहायता करकै राजा युधिष्ठिर पृथिवीपर राज्य करते भए ॥ २० ॥ जैसे बांसनके बनमें आपही बांसनके रगडवेसो अग्नि लगके नष्ट है जाय है तैसे प्रभासक्षेत्रमें अपने सुहृद् कौरव पांडवनको विनाश सुनते भए परस्पर ईर्षाकरकै भस्म है गए विनको शोक करते भए फिर चुप होकर पश्चिमवाहिनी सरस्वतीतीर जाते भए ॥ २१ ॥ वा सरस्वती तीरपर एकादश तीर्थ हैं त्रित नामके ऋषिको तीर्थ हैं १ शुक्राचार्यको तीर्थ है २ मनुको स्थान है ३ पृथुको तीर्थ है ४ अग्निको तीर्थ है ५ और असित ऋषिको तीर्थ है ६ वायुको तीर्थ है ७ सुदासराजाको तीर्थ है ८ गौवनकी तीर्थ है ९ स्वामिकार्तिकको तीर्थ है १० श्राद्धदेव मनुको तीर्थ है ११ इन सबनको विदुरजी सेवन करते भए ॥ २२ ॥ " श्रीविष्णोरङ्गमङ्गं प्रति वर्तन्त इति प्रत्यङ्गानि शङ्खचक्रगदापद्मादीनि तेषु मुख्ये शङ्खचक्रे ताभ्यामङ्कितानि मन्दिराणि " श्रीविष्णुके अंग अंगके प्रतिवर्तै ऐसे प्रत्यंग शंख चक्र गदा पद्मादि तिनमें मुख्य शंख चक्र तिनके चिह्नसो अंकित मंदिर हैं वे ऐसे हैं ऋषिनके देवतानके करेभए विष्णुके नानाप्रकारके मंदिर हैं और बहुत सरस्वती तीरपें शंखचक्रांकित स्थान हे जिनके दर्शनसो श्रीकृष्णजीको स्मरण होय है ॥ २३ ॥ तापीछे

१ और कहीं (श्मशानः) ऐसो पाठ है तब यह अर्थ करनो कि जैसे श्मशानको सहरके बाहर अमंगल समझके राखे है ऐसेही याकों जलदी निकास देउ ॥ २ द्रव्यजेपें धनुष क्यों धर गये याको ये अभिप्राय है कि ए तौ अवश्य मेरे गयेपें अवश्य मरेंहीगे फिर मैं धनुष लेके कहा करौंगो अथवा युधिष्ठिरादिकनसों मिलिके कहीं हमसों युद्ध न करै या संदेहके दूर करवेके लिये धनुष आदि शस्त्र धरके विदुरजी गये ॥

In Public Domain. Chambal Archive

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुराष्ट्र ऋद्ध सौविर मत्स्य कुरु जांगल इन सब देशनको यथाक्रम उल्लंघन करके कोई कालमें श्रीय-मुनापर जाय भागवत उद्धवको तहां देखते भए ॥ २४ ॥ श्रीवासुदेवके अनुचर प्रशांत बृहस्पतिके नीतिशास्त्रमें पहिले शिष्य विख्यात उद्धवसो खूब मिले भगवत्के प्रजानकी अपनेनकी कुशल विदुरजी पूछतेभए ॥ २५ ॥ श्रीरामकृष्णको कुशल पूछे हैं, कच्चित् ये अव्यय प्रश्नमें आवे है, पुराणपुरुष अपनी नाभिमेंसो भये ऐसे ब्रह्माकी सेवासों प्रसन्न होय यहां अवतरे पृथिवीको कुशल विधान कर अब या समय अवकाशसों शूरसेनके घरमें श्रीकृष्ण बलदाऊजी है ? ॥ २६ ॥ अब नवश्लोकसों यादवनकी कुशल पूछे हैं कुरुनके परम सुहृद हमारे भगिनीभर्ता पूज्य वसुदेवजी सुखी हैं ? जो अत्युदार वसुदेवजी अपने जो भैननको खूब धन दे तृप्त करिके शूरसेनकी नाईं सदा धन देते रहे ॥ २७ ॥ सब सेनानके मालक यदुनके अधिपति महावीर प्रद्युम्नजी सुखी हैं ? जिनको प्रथम गर्भप्रसवसमयमें विप्रनकी आराधन कर खूब मिष्टान्न दक्षिणा देके कामके अवतार परम भागवत प्रद्युम्नको रुक्मिणी प्राप्त करतीभई ॥ २८ ॥ सात्वत वृष्णि भोज दाशार्हक इनके स्वामी उग्रसेन सुखी हैं ? कमलनयन श्रीकृष्ण आप नृपासनकी आज्ञाको दूरसो त्यागके नृपासनकी आज्ञाको त्यागी ऐसे एग्रसेनको राज्याभिषेक करते भए ॥ २९ ॥ हे सौम्य उद्धव ! रथिनमें आग्रणी कृष्णसमान सूधो सांब श्रीहरिको सुत प्रसन्न है ? पूर्व जन्ममें स्वामिकार्तिकेयको भवानीने गर्भमें धारे तैसेही व्रतकरके जांबवतीजी जिनें उत्पन्न करतीभई ॥ ३० ॥ धनुषको हरस्य अर्जुनसों जिनको लब्ध भयो ऐसो सात्यकी प्रसन्न है ? जो गति यतिनको दुःखसो प्राप्त होय है वो श्रीकृष्णकी सेवासो अनायाससो प्राप्त होतीभई ॥ ३१ ॥ बुद्धिमान् निष्पापी भगवत्के शरणागत इवफल्कपुत्र अक्रूर सुखी है ? प्रेमसों धैर्य जिनको जातो रह्यो ऐसे अक्रूर श्रीकृष्णके चरणकी लगी रजमें लोटते भए ॥ ३२ ॥ देवकनामा भोजकी पुत्री अदितिकी नाईं विष्णु जाके पुत्र ऐसी देवकी प्रसन्न है ? जो कि अपने गर्भमें श्रीकृष्णजीको धारण करतीभई वेदत्रयी जैसे यज्ञके विस्तृत अर्थको धारण करै तद्वत् जानों ॥ ३३ ॥ आपके भगवान् उपासकनके कामनाके दाता अनिरुद्धजी तो सुखी हैं ? जिन अनिरुद्धको शब्दशास्त्रके कारण मनोमय अंतःकरणके चतुर्थ तत्त्व वेदने माने हैं ॥ ३४ ॥ हे सौम्य ! अपने आत्मदेव ऐसे अनन्यवृत्तिसों जो और भगवत्परायण हैं वे सुखी हैं ? हृदीक सत्यभामाके पुत्र चारुदेष्ण गदआदिक सुखी हैं ? ॥ ३५ ॥ अर्जुन श्रीकृष्ण अपनी भुजानसों धर्म करके धर्मके सेतुको धर्म अवतार युधिष्ठिर रक्षा करेहैं ? जिनकी सभामें विशेषकरके जयकी अनुवृत्ति करके और सम्राट्पनेकी लक्ष्मीसों दुर्योधन तपतोभयो ॥ ३६ ॥ अपराधकारी कुरुमें क्रोधी जो सर्पकी नाईं अत्यंत श्वास लेय गदा ले विचित्रमार्गनमें विचरै जाके चरणकी धमक भूमि न सहसकतीभई सो भीमसेन प्रसन्न हैं ? ॥ ३७ ॥ रथयूथपनमें यशधारी शत्रु जासों दूर भए ऐसो गांडीवधनुपधारी अर्जुन प्रसन्न है ? अलक्षित जिनके बाणनसो ढकेभए, मायासो भील बने, ऐसे शिव प्रसन्न भए ॥ ३८ ॥ क्योंजी माद्रीके पुत्र कुंतीनें पुत्रवत् पाले कुन्तीके पुत्रन करके शोभित जैसे पलकें आंखनकी रक्षा करैं तैसे राखै, शत्रु इंद्रके मुखसों जैसे दो गरुड अमृत लावै ताकी नाईं अपने भाग लेकर नकुल सहदेव रमण करेहैं वे सुखी हैं ? ॥ ३९ ॥ बडे आश्चर्यकी वार्ता है कि, पांडु राजर्षिके विना केवल पुत्रनकी रक्षाके लिये कुंती प्राण धारे है जो पांडु एक वीर सबमें महारथी एक दूसरो धनुष लेकर चारों दिशा जीतते भए ॥ ४० ॥ हे सौम्य उद्धव ! नरकमें गिरैगो ऐसो धृतराष्ट्रको मोय बडो शोक है कि मरे भए पांडुसो जाने द्रोह कीनो वा धृतराष्ट्रने अपने पुत्रके आधीन होयके हमको पुरीसों निकास दीनो ॥ ४१ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनुष्यनमें अवतार धार मनुष्यनकी दृष्टिको चलायमान करै सबके धारक श्रीहरिके प्रसादसों तिनकी पदवीकों देखतो भयो कोई न देखे या प्रकार अपने रूपको छिपायके सब विस्मय जाको गयो ऐसो मैं वा पृथिवीमें विचरूंहूं ॥ ४२ ॥ विद्यामदो धनमदस्तथैवाभिजनो मदः । एते मदा मदान्धानां त एव हि सतां दमाः ॥ १ ॥ अर्थ-विद्या धन जाति ये तीन मद हैं सो जो मदांध हैं उनको ये मद होयहैं संतनके येही दम हैं ॥ १ ॥ ये तीन मद जिन्हें सेनासो सब धरतीकों चलायमान करै ऐसे राजानको वध करवेसो शरणागतनकी पीडा हरवेको भगवान् कौरवनके अपराधको त्यागतेभए ॥ ४३ ॥ अजन्मा ईश्वरके जन्म पाषंडिनके नाशके लियेहै और अकर्ताके कर्म पुरुषनके ग्रहण करवेको है याके विना गुणनसो परै जो ईश्वर है सो जीवनानुग्रहके विना कर्माधीन देहके योगको प्राप्त होनो ईश्वरको कभू नहीं बने है ॥ ४४ ॥ हे सखे ! शरणागत सब लोकनके पालनके लिये और अपनी आज्ञामें स्थित जे हैं तिनके अर्थ यादवनमें जन्मे तीर्थरूप जिनकी कीर्ति ऐसे विन श्रीकृष्णजीकी वार्ता कहो ॥ ४५ ॥

तस्य प्रपन्नाखिललोकपानामवस्थितानामनुशासने स्वे ॥
अर्थाय जातस्य यदुष्वजस्य वार्तां सखे कीर्तय तीर्थकीर्तेः ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे विदुरोद्धवसंवादवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच-इति भागवतः पृष्टः क्षत्त्रा वार्तां प्रियाश्रयाम् ॥
प्रतिवक्तुं न चोत्सेह औत्कण्ठ्यात् स्मारितेश्वरः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि ईश्वर जिनको स्मरण करायो ऐसे भागवत उद्धवसो श्रीकृष्ण प्यारेकी ऐसी वार्ता जब विदुरजीने पूछी तब उद्धवजी श्रीकृष्ण विरहमें आवेशित होके कछुभी बोल न सके ॥ १ ॥ जो उद्धव पांच वर्षके हे तब बाललीलामेंहूं श्रीकृष्णजी पूजा करतेहे तो प्रातःसमय मैया खायवेको बुलाती तो नहीं जाते ॥ २ ॥ सो उद्धवजी विनकी सेवा करते २ काल करके वृद्ध है गए फिर कहो श्रीकृष्णभर्ताके चरण स्मरण करत जो पूंछो वाय कहिवेको कैसे समर्थ हैसके ॥ ३ ॥ श्रीकृष्णके चरणामृतसो तीव्रभक्तिसों अत्यंत मग्न होयके अतिसुखमें मग्न होवेसो एक मुहूर्त्त चुप हैगये ॥ ४ ॥ सब अंगमें रोमांच खडे हैगये नेत्र मूंद शोकाश्रु बहावते स्नेहप्रवाहमें निमग्न भये सब अर्थ पूर्ण भयेहै ऐसे दिखायी परै ॥ ५ ॥ धीरैसों भगवत्के ध्यानसों फेर सदा देहानुसंधानमें आय नेत्र पोछ उद्धव विदुरजीसों हंसते २ बोले ॥ ६ ॥ श्रीउद्धवजी बोले कि श्रीकृष्णरूप सूर्य अस्त है गये कालरूप अजगरनें जिनको ग्रसलिये सब संपत्ति जिनकी जाती रही ऐसे यादवनकी और विनके घरनकी विदुरजी ! मैं कहा कुशल कहों ॥ ७ ॥ ये सब लोक भाग्यहीन हैं यादव तो सब बहुतही भाग्यहीन हैं जे हरिके साथ वसतेरहे तोहू हरिको नहीं जानते भए जैसे एक समय काहू शापसों चंद्रमा मीन होय जलमें रह्यो तब जैसे काऊ जलचरने नहीं जानो अथवा जैसे मीन अवतारको जलचर संसारतारक न मानतेभए तद्वत् कहीं ऐसोहू है कि समुद्रमथनसों पहिले चंद्ररूप हरिको संसारतापहारक न माने तैसे जानों ॥ ८ ॥ भगवत्के चित्तके ज्ञाता अतिनिपुण एक

१ यामें प्रयोजन यह है कि जो जाको प्यारो है जब वाकी याद आवे है तब फिर वाको वाकी यादमें बोलवे कहिवेकी सामर्थ्य नहीं होयहै सोही हाल उद्धवजीको हैगयो सोही अगारी के श्लोकमें कहै है ॥

In Public Domain. Chambal Archi...

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्थानमें रहैं ऐसे यादव सर्व जगन्निवास ईश्वरकों फकत येही मानते भये कि ये श्रीकृष्ण यादवनमें कोई श्रेष्ठ है येही मानतेभए ॥ ९ ॥ ईश्वरकी मायामें फँसे ऐसे यादव जे कहतेहैं कि ये कृष्ण हमारो बंधु है और जे शिशुपाल आदिक असद् जो वैर ताकौ आश्रयकरके भगवान्की निंदा करतेहैं विनके वाक्यनकरके आत्मा हरिमें लगो जिनको चित्त ऐसी हमारी बुद्धि नहीं भ्रमी है ॥ १० ॥ जिनने तप न किये और जिनकी दृष्टि तृप्त न भई ऐसे नरनकों लोकको नेत्र अपनों स्वरूपदर्शन कराय आप अन्तर्द्धान होतेभए ॥ ११ ॥ ईश्वर तत्त्ववर्णन करैहै कि, जो मनुष्यलीलाके योग्य अपनी योगमायाके बल दिखायवेको ग्रहण कीनों अपने आपेकोंहू विस्मय करायवेवारो अत्यंत सौभाग्य ऋद्धिको परमस्थान भूषणनकेहू भूषण करनवारे जाके अंग हैं ॥ १२ ॥ धर्मपुत्रयुधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें दृष्टिकों आनंददाता जा ईश्वर श्रीकृष्णको सौंदर्य देख सब तीनों लोक ये मानतेभए कि ब्रह्माकी सृष्टिमें आज श्रीकृष्णजीके श्रीअंगमें ब्रह्माकी सब कारीगरी समाप्त हैगई ॥ १३ ॥ जिन श्रीकृष्णको अनुराग भरो हास और रासलीलामें देखनो तासो प्राप्त भयो मान जिनकौ ऐसी व्रजसुंदरी हैं वे जब श्रीकृष्ण मथुराजीको आमन लगे वा समय आंखिन समेत जिनकी बुद्धि कृष्णके संग चली आई ऐसी वे असमापितकृत होती भई ॥ १४ ॥ जब अपने शांतरूप भक्त अशांतरूप जे दुष्ट है विनकरके पीडित भये देखे तब अपने भक्तनपे दया करवेको पर अवरके ईश महा अंशसो युक्त अजन्मा ईश्वर जन्मतेभए जैसे महाभूतरूप करकै नित्य वसै ऐसी अग्नि काष्ठमें प्रगट होय तद्वत् जानो ॥ १५ ॥ श्रीउद्धवजी बोले कि सुनो विदुरजी ! यह बात देखकै मोकों बहुत खेद होय है कि जो कभू न जन्मे सो वसुदेवके घरमें जन्मे व्रजमें वसे शत्रुभयसो भजे जिनमें अनंत बल सो श्रीकृष्ण जरासंधके डरके मारे पुरसे निकसे ॥ १६ ॥ इन बातनकूं याद करते मेरी चित्त व्यथाकूं प्राप्त होय है जब कंस मारके पिताके पादमें वंदन करके ये बोले हे तात ! हे अंब ! कंससों बहुत शंकित हैवेसों आपकी कुछ सेवा हमसौ न बनी ऐसे हमपे तुम दोनों प्रसन्न होओ ॥ १७ ॥ जो नर इनके चरणकी रजको एक वेर स्वाद लेतो भयो फिर इनको कौन भूल सकैहै जो भगवान् विशेषकरकै फरकै ऐसे भूविटपरूप यमधर्मराजसो भूभारको नाश करतेभए ॥ १८ ॥ राजसूययज्ञमें श्रीकृष्णजीकी निंदा करै ऐसे द्वेषी शिशुपालकों जो सिद्धि प्राप्त भई सो आपने देखी जा सिद्धिको सुंदर योगसों योगिजन चाहैहैं ऐसे विन श्रीकृष्णजीके विरहको कौन सहि सकै ॥ १९ ॥ तैसेही औरहू अनेक मनुष्यलोकके वीर नेत्रनको आनंददायक श्रीकृष्णके मुखारविंदकों नेत्रनसों पीवते अर्जुनके अस्त्रसों पवित्र हैके वाहीके वैकुंठकों जातेभए ॥ २० ॥ ईश्वर आप ऐसे हैं कि जिनके कोई बराबर नहीं जिनसों कोई अधिक नहीं है अपनी राज्यलक्ष्मी करकै सब भोग जिनकों प्राप्त हैं चिरलोकपाल जे ब्रह्मादिक ते बलिदानपूर्वक जिनके चरणारविन्दकी चौकीको अपने किरीटके अग्रभागसो स्तुति करै है अर्थात् प्रणाम करवेवारेनके किरीटके संघर्षणकी जो ध्वनि है सोही मानों स्तुति होयहै ये उत्प्रेक्षा अलंकार है ॥ २१ ॥ हे विदुर ! ऐसे ईश्वरको

---

१ दृष्टांत है कि काहू समय काउ चौबेजीसें काउ नास्तिकने प्रश्न कियो कि चौबेजी महाराज ! तुमारे कृष्ण ऐसे कारे क्यौं भये तब चौबेजीने जवाब दियो कि रे मूर्ख ! करामात सब कारेकीही है कि देख सब शरीरमें आंखमें तनकसी काली पुतली है सो कृष्णही है जो कृष्ण कारे न होते तो कारे तारे विना सारे सब जगत् अंधो होतो यासो कृष्ण कारे भये ॥ २ जिनने वो शोभा देखी विनने कही कि बस यासो सिवाय ब्रह्माकी और कारीगरी नहीं है या मूर्तिमें सब खतम भई गई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उग्रसेनकी कैंकर्य करनो जो है सो हम उनके सेवक तिनको बडो विस्मय करावे है कि जो राज्यसिंहासनपर बैठे उग्रसेनके अगारी हाथ जोर खडे हैके यह कहते भये कि हे देव ! आप हमको निरंतर धारण करो आज्ञा देउ मैं तुमारो नोकर हौं ॥ २२ ॥ बडे आश्चर्यकी वार्ता है कि दुष्ट पूतना स्तनमें विष लगाय मारवेकी इच्छा कर जिन श्रीकृष्णको स्तन प्यावतीभई वाको माता यशोदाके योग्य जो गति ही सो दीनी ऐसे दयालु श्रीकृष्णकों छोडके और कौनकी शरण जाय ॥ २३ ॥ क्रोधसों जिननें श्रीकृष्णमें मन लगायो यासों यह हम असुरनकों भागवत मानेहै जे संग्राममें गरुडजीके कंधापें बैठे अपने ऊपर मारवेको चले आवें ऐसे श्रीकृष्णजीके दर्शन करतेभए ऐसेहू कहेहैं कि "तस्मात्केनाप्युपायेन मनः कृष्णे निवेशयेत् " तातें कोईभी उपायकरके श्रीकृष्णमें मन लगावै ॥ २४ ॥ कंसके बंधनमें वसुदेवकी देवकीमें जन्मे या पृथिवीके सुख करवेकी इच्छा करके ब्रह्मानें प्रार्थना कीनी तब अवतरे ॥ २५ ॥ कंससों डरपे तापीछे पिताने नंदके व्रजमें पहुँचाए ऐसे बलदेवजी सहित ग्यारह वर्ष गुप्ततेज हैके व्रजमें वसे ॥ २६ ॥ गोपालसहित श्रीकृष्ण वत्सा चरावते भए जिन प्रणाम करपक्षिनके समूह शब्द करै ऐसे यमुनाके उपवनमें विहार करतेभए ॥ २७ ॥ [illegible] कौमार अवस्थाको आनंद व्रजवासीनको दिखावते भए कभू रोवे कभू हँसे अनसमझ बालसि[illegible]न जिनको अवलोकन है ॥ २८ ॥ सो श्रीकृष्णजी जब अधिक बडे भए, तब लक्ष्मीको स्थान सु[illegible] बैल गोधनको चरावतेभए वांसुरी बजावत गोपनके साथ रमण करते भए ॥ २९ ॥ कंसने माये[illegible] नानारूपधारी दैत्य भेजे तिन्हे भगवान् लीलाकरके नाश करतेभये जैसे बालक अपने बनाये भ[illegible] मट्टीके खिलोनानको फोरडारे है ॥ ३० ॥ तैसे फिर भगवान् विषजलके पान करवेसों मरे गौ अ[illegible] गोपनको जिवाय और कालिय सर्पको ह्रदसों निकास फिर निर्मल भयो वही जल गोप और गय्या[illegible] पान करवावतेभए ॥ ३१ ॥ फिर बडो भाररूप धनको सन्मार्गमें खरच करवायवेकी इच्छासो अ[illegible] इन्द्रके मानभंग करवायवेकी इच्छासो ब्राह्मणनके द्वारा समर्थ भगवान् नंदजीको गौअनकी पूज[illegible] निमित्त यज्ञ करवावते भये ॥ ३२ ॥ मानभंग हैवेके कारण क्रोधकर जब इंद्रने वर्षा कीनी कि जासो व्रज बडो विह्वल भयो तब मंगलकी इच्छा कर श्रीकृष्णजीने गिरिराज उठाय [illegible] वाहीको छत्र कर सबकी रक्षा कीनी ॥ ३३ ॥ शरदके चंद्रमाकी किरणनसों प्रकाशित रजनीमुखको मान मनोहर पद गाय स्त्रीनके रासमंडलमें शोभित होय रमण करते भए ॥ ३४ ॥

शरच्छशिकरैर्मृष्टं मानयन् रजनीमुखम् ॥
गायन् कलपदं रेमे स्त्रीणां मण्डलमण्डनः ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे श्रीकृष्णबाललीलावर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

उद्धव उवाच-ततः स आगत्य पुरं स्वपित्रोश्चिकीर्षया शं बलदेवसंयुतः ॥
निपात्य तुङ्गाद्रिपुयूथनाथं हतं व्यकर्षद्व्यसुमोजसोर्व्याम् ॥ १ ॥

उद्धवजी बोले कि तापीछे श्रीकृष्णजी मधुपुरमें आय अपने पिताके कल्याणकी इच्छा कर बलदेव सहित ऊंचे मंचानपेसो शत्रुयूथनैके नाथ कंसकों पटकके प्राण नि[illegible]सेपें कंसको पृथिवीमें

In Public Domain. Chambal Archives. Fi[illegible]

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

खेंचतेभए ॥ १ ॥ सांदीपन गुरुको कह्यो भयो वेद एक वेरमें विस्तारसों पढके गुरुके मरे पुत्रको पंचजनको उदरसो लायके देते भए ॥ २ ॥ श्रीमहालक्ष्मीके समान रूपवती रुक्मिणीजीनें गंधर्व-विवाहकी इच्छा करके जो राजालोग बुलायेहे विन राजनके देखते देखते विन नृपनके मस्तकपें पद धर गरुडजी जैसे अमृत हरलाये तैसे अपनो भागरूप रुक्मिणीको हरके लेजाते भए ॥ ३ ॥ नाथ जिनकी विंधी नहीं ऐसे सात वृषभनको जीतकर स्वयंवरमें नाग्नजितीसो व्याह करतेभये बैलनसो मान जिनके भग्न भए नाग्नजितीकूं चाहैं ऐसे अज्ञानी शस्त्रधारीनको अपनें शस्त्रनसो मारतेभये ॥ ४ ॥ जा सत्यभामाके निमित्त प्रियाके प्रियकी इच्छा करकै संसारीकी नाईं कल्पवृक्ष लाये सब गणसहित क्रोधसो अंधो स्त्रीनके खेलवेके खिलोनाके समान इंद्र श्रीकृष्णजीसो लडवेको आयो ॥ ५ ॥ संग्राममें मानो आकाशको अपने शरीरसो ग्रसजायगो ऐसो लंबो चक्रसों मारो भौमासुरको देख वाकी मा पृथिवी प्रार्थना करती भई तब वाके पुत्र भगदत्तको राज्य दे ताके महलनमें प्रवेश करतेभये ॥ ६ ॥ वाके अंतःपुरमें भौमासुरकी हरीभई राजानकी १६१०० कन्या दीनदयाल श्रीकृष्णचंद्रको देख शीघ्र उठी और अतिहर्षकी लाज अनुरागसहित चितवनसों श्रीकृष्णसो व्याह करती भई ॥ समेत स्त्रीनके सब घरघरमें एक मुहूर्तमें अपनी मायासों विनके अनुसार हैकै विवाहयोग्य [illegible] जब अपने णिग्रहण करतेभए ॥ ८ ॥ सब गुणोंमें अपने समान दश दश पुत्रनको एक एक अपने [illegible]में मायाके हेतुसो अपने आपेकी अनेक करवेकी इच्छाकर जन्मावते भए ॥ ९ ॥ कालयवन जैसे मद्ध शाल्वादिकनकी सेनासों अपने पुरको घिरो देख उनको आप मरवावते भए, अपने पुरुषनाले [illegible]व्य तेज जगावते भये ॥ १० ॥ शंबरासुर द्विविद वानर बाणासुर मुर बल्वल और दंतवक्रादिकमें [illegible] कितनेनको आप मारते भए कितनेनको औरसों मरवावते भये ॥ ११ ॥ याके उपरांत तुम्हारे[1]रसे [illegible]ईके पुत्रनकी दोऊ ओर नृप हैं तिनकी सेनानके आयवेसों कुरुक्षेत्रकी भूमि चलायमान होतीभई पिछ १२ ॥ कर्ण दुश्शासन सौबलेकी कुत्सित सलाहसो लक्ष्मी आयुहीनैं सोये भये, सब सेनासमेत [illegible] हम [illegible] जंघा टूटी धरतीमें पडे दुर्योधन-को देख श्रीकृष्णजी कुछ प्रसन्न न भये ॥ १३ ॥ द्रोणाचार्य [illegible] भीष्मपितामह अर्जुन भीमसेनके कारण अष्टादश अक्षौहिणीको भार नाश भयो सो कछु न भयो अ[illegible]भी मेरे अंश असह्य यादवरूप बल भार विद्यमान है ॥ १४ ॥ मीठी वारुणीके मदसों लाल लोचन जिनके ऐसे इन यादवनकों आपसमें विवाद होय येही इनके मारवेको उपाय है और नहीं जब हम या काम करवेको [illegible]रंभ करेंगे तो आपसेंही ये सब नष्ट होय अंतर्धान होंयगे ॥ १५ ॥ ऐसें चिंतवन कर भगवान् अपनें राज्यपे युधिष्ठिरको स्थित कर साधूनको मार्ग दिखावते भये सुहृदसहित आनंदित होतेभये ॥ १६ ॥ साधु अभिमन्युने पुरुको वंश उत्तरामें धारण कीनो जो अश्वत्थामासो नष्ट भयो हो सो भगवान्ने फेर रक्षा कीनी ॥ १७ ॥ समर्थ कृष्णजी तीन अश्वमेध यज्ञ राजा युधिष्ठिरसों करावते भये, वो युधिष्ठि-रहू श्रीकृष्णकी सेवासों भाइनसो धरतीकी रक्षा कराय रमण करतोभयो ॥ १८ ॥ भगवान् विश्वा-त्माहू लोक वेदके मार्गके अनुसार द्वारावतीमें रहिके सांख्यशास्त्रमें मन लगाय सब काम भोग करतेभए ॥ १९ ॥ मनोहर मुसकानकी दृष्टिसो अमृततुल्य मीठी वाणीसो कोई जिनमें दोष नहीं ऐसे चरित्र करके श्रीमहालक्ष्मीके निवास शरीरसों सबको आनंद देतेभए ॥ २० ॥ या लोकको वा लोकको यादवनको अत्यंत रमण करावत जिन्हें रात्रिने क्षणमात्र सुख दीनो है ऐसी स्त्रीनमें

---

१ शकुनिकी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्षणिक प्रीतिवारे भगवान् श्रीकृष्णजी रमण करतेभए ॥ २१ ॥ ऐसे बहुत वर्षपर्यंत रमण करते करते विन श्रीकृष्णजीको गृहस्थाश्रममें वैराग्य होतोभयो॥२२॥ जो कि अपने आधीनहू कामनमें स्वतन्त्र परमेश्वरको विराग भयो तो जिनके काम परके आधीन है और आपहू परके आधीन विनमें कौन ऐसो है कि जो योगेश्वर भगवान्को भजन करतो भयो दैवाधीन कामनामें प्रीति करैगो ॥ २३ ॥ कोई समय द्वारकापुरीमें क्रीडा करते यदुभोजवंशीनके बालकन करके कोप कराये भए भगवत्की इच्छाके अनुकूल मुनिलोग शाप देते भए ॥ २४ ॥ तापीछे कुछेक महीनेमें वृष्णि भोज अंधक आदिक प्रसन्न होय रथपर बैठ दैवसों विमोहित हैके प्रभासक्षेत्रमें गये ॥ २५ ॥ तहां स्नान कर वाही जलसों पितृ देव ऋषिनको तर्पण कर बहुत गुणवारी गौ ब्राह्मणको देते भये ॥ २६ ॥ सुवर्ण चांदी शय्या वस्त्र दुशाला पीतांबर मृगचर्म सवारी रथ हाथी कन्या पृथिवी जीविका चलाय-वेवारी वस्तु दान करते भये ॥ २७ ॥ बहुत जामें रसयुक्त अन्न ब्राह्मणनको दीनो, सब भगवत्के समर्पण करते भये, गौ ब्राह्मणके अर्थ प्राण देवेवारे यादव भूमिमें मस्तकसौं विन ब्राह्मणनको प्रणाम करते भए ॥ २८ ॥

अन्नं चोरुरसं तेभ्यो दत्त्वा भगवदर्पणम् ॥
गोविप्रार्थासवः शूराः प्रणेमुर्भुवि मूर्धभिः ॥ २८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे प्रभासक्षेत्रागमनवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

उद्धव उवाच-अथ ते तदनुज्ञाता भुक्त्वा पीत्वा च वारुणीम् ॥
तया विभ्रंशितज्ञाना दुरुक्तैर्मर्म पस्पृशुः ॥ १ ॥

उद्धवजी बोले कि याके उपरांत ब्राह्मणनसों आज्ञा लैकै भोजन कर वारुणी[1] पीकै वासों सबके ज्ञान नष्ट भये, आपसमें बुरी बुरी बातें कर वज्रसमान वचननसों मर्ममें मारते भये ॥ १ ॥ "मैरेयमासवो मधुरिति कोशे, मैरेयं धातकीपुष्पगुडधानांबुसंहितमिति माधवः । मिरायां देशविशेषे औषधिविशेषे द्राक्षारसविशेषे भवं मैरेयम् नद्यादिभ्यो ढक्" मैरेय मदको नाम है, धतूरेके पुष्प गुडधान जलके संयोगसों बनेहै, ये माधव निदानमें है, मिरानामक देशमें वा औषधिनमें दाखके रसविशेषसों जो होय वो मैरेय कहावै, नद्यादि० या पाणिनीय सूत्रसे ढक् प्रत्यय होयहै । वा मदके दोषसों विनके चित्त विषम है गये, सूर्य अस्तके समय जैसे बांस घिसके नष्ट होय ऐसे यादव नष्ट भये ॥ २ ॥ भगवान् अपनी आत्ममायाकी वा गतिको देख सरस्वतीमें आचमन कर वृक्षके मूलमें बैठतेभए ॥ ३ ॥ शरणागतकी पीडानाशक अपने कुलके संहारकी इच्छा करवेवारे भगवान्ने हमसों कही कि तुम बद्रिकाश्रम जाओ ॥ ४ ॥ यद्यपि ऐसे है तथापि तिनके अभिप्रायको जाने हो तोहू शत्रुनाशक श्रीकृष्णजीके पीछे पीछे मैं जातो भयो, श्रीकृष्णजीके चरणको वियोग मोसों सह्यो न गयो ॥ ५ ॥ तिन थोर परमेश्वरको ढूंढतो २ भयो मैं सरस्वतीके तटपे अकेले

---

१ यहां ये कथा है एक दिन द्वारकावासी बालक सांबको गर्भिणीस्त्रीको स्वांग बनायके लेगये ऋषिनसों कही कि याके बेटी या बेटा कहा होयगो तब विनने यह कही कि याके ऐसो होयगो जासो तुमारे सब कुलको नाश होयगो ॥ २ मदिरा ॥ ३ छप्पन कोटिक यादवा, मद पीकर भये नष्ट । यासें मद मत पीजियो, सदा देयगो कष्ट ॥ १ ॥

In Public Domain. Chambal Archives Fi

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विराजमान प्रिय पति श्रीजीके स्थान अकेतन अनाश्रय, स्वाश्रय स्वतन्त्र परमेश्वरको देखतोभयो ॥६॥ श्यामसुन्दर शुद्ध सत्वमय प्रशांत रक्तलोचन चार भुजा धारे, विख्यात पीतांबर पहिरे है ॥७॥ दहिनो चरणकमल वामें चरणपर राख छोटेसे पीपरके समीप बैठे, पुष्ट शरीर, विषयसुख त्यागे बैठे है ॥ ८ ॥ तहां महाभागवत द्वैपायनके सुहृद् सखा लोकनमें विचरते भये सिद्ध मैत्रेयजी दैवकी इच्छासों आवतेभए ॥ ९ ॥ प्रेम करवेवारे आनन्दके भावसों तीर नीची करे बैठे मेर सामने अनुराग भरी हांसीकी दृष्टिसों मोय विश्राम देते मुनिसों मुकुंदजी बोले ॥ १० ॥ श्रीभगवान् मैत्रेयजीके सुनते यह बोले कि तुम्हारे मनकी हृदयकी जो चाहना है वो हम जाने हैं, सोही तुम्हें देऊंगो जो औरनको प्राप्त नहीं होयहै पहिले विश्व रचवेवारे वसूनके यज्ञमें मेरी सिद्धिकी कामनाकरके तुमने मेरो यजन कीनो हो हे वसुरूप उद्धव ॥ ११ ॥ हे साधो ! मेरी कृपासों ये अंतको जन्म आपको प्राप्त भयोहै, मनुष्यलोकको त्याग वैकुंठको जातीवेर मेरो एकांतमें एकांतभक्तिसों दर्शन करतेभये येही आनंद है ॥ १२ ॥ पहिले पाद्मकल्पमें आदिसर्गमें कमलपे विराजे ब्रह्माजीसों मैंने अपनी लीलाको प्रकाशक ज्ञान परमश्रेष्ठ कह्यो हो जाकों महाचतुर विद्वान् भागवत कहेहैं ॥ १३ ॥ ऐसे आदरसों जब श्रीकृष्णजीनें कह्यो तब परमपुरुषके क्षण क्षणके प्रति अनुग्रहको पात्र जो मैं होता मेरे स्नेहसों रोमांच खडे हैगये अक्षर न बोलो जाय, शोकके आंसुनको डारतो मैं हाथ जोडकर बोलो ॥ १४ ॥ हे ईश ! हे भूमन् ! यद्यपि या संसारमें तुम्हारे चरणकमलके भजन करवेवारेनको चारो अर्थनमें कौनसो पदार्थ दुर्लभ है जो विनको अर्थ प्राप्त न होय तथापि मैं आपके चरणकमलकी सेवा करनेवारो हूं, सो विन्हें नहीं चाहूंहूं ॥ १५ ॥ जो अघटमान हैं सो कहेहै कि जो चेष्टा न करै अकर्त्ताके कर्म अजन्माके जन्म और कालरूपको शत्रुनके भयसों भागनो किलेको आश्रय लेनो अपनी आत्मामें सदा रमण करनहारे षोडश हजार स्त्रीनसों विहार करनो या तुम्हारी लीलायें देखके या संसारमें सर्व वेत्तानकी बुद्धि खेदको प्राप्त होय है ॥ १६ ॥ हे प्रभो ! हे देव ! सब कालमें अखंड सदा आत्मज्ञानवारे तुम मोकों सलाहमें बुलावते भये, सावधान आप मूर्खकी नाईं पूछते भये याते मन मोहै है ॥ १७ ॥ अपने आत्माको एकांतमें प्रकाश करवेवारो संपूर्ण ज्ञान ब्रह्माके लिये तुमनें कह्यो, हे स्वामिन् ! वो ज्ञान जो हमारे जानवेके योग्य होय तो हमारे अगारी कहो; जासो अनायास करके संसारदुःखको हम तरैं ॥ १८ ॥ ऐसे निवेदन कियो अपनो अभिप्राय जा मैंने ता तेरे हृदयकी जानके परमेश्वर भगवान् कमलनयन आत्माकी परमस्थिति कहतेभये ॥ १९ ॥ ऐसे आराधन कियो है चरणतीर्थ जाको वा भगवान्सों पढो है तत्व और आत्माके जाननेको मार्ग जानें ऐसो मैं विनके चरणको प्रणाम और परिक्रमा कर विरहमें आतुर होय यहां आयोहूं ॥ २० ॥ सो मैं विनके दर्शनके आह्लादसों और वियोगकी पीडासों खेदित प्रभुको प्रिय जो बद्रिकाश्रममंडल ताको जाऊंगो ॥ २१ ॥ जहां नारायणदेव और नर ऋषि दूसरेके उपद्रवसों शून्य दुश्चर तप कल्पपर्यंत सब लोकके अनुग्रहके अर्थ करतेभये ॥ २२ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि सुहृदनको दुःसह वध उद्धवजीसों सुनके बुद्धिमान् विदुरजी वा उत्पन्न भए महाशोकको ज्ञानसों नाश करते भये ॥ २३ ॥ श्रीकृष्णजीके परिवारमें मुख्य महाभागवत उद्धवजी जब जाने लगे तब कौरवश्रेष्ठ विदुरजीने विश्वास कर विनसों ये कही ॥ २४ ॥ विदुरजी बोले कि आत्माको एकांतमें प्रकाश करवेवारो परम ज्ञान जो योगीश्वर ईश्वरने आपसों कह्यो है वो हमको आप कहिवेको योग्य हो, क्यों कि श्रीविष्णुके उपासक ब्राह्मण लोग

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अपने दासनके प्रयोजनसाधनको विचरैं हैं जो कृतार्थ हैं विनको कुछ कृत्य करवेको नहीं हैं ॥ २५ ॥ उद्धवजी बोले कि सुनो विदुरजी ! निश्चयसों तत्वनको जो तुम जानो चाहो तौ मैत्रेयजीसों पूछियो वे मैत्रेयजी आपको ज्ञान देयगे मनुष्यलोक त्याग करवेके समय मेरे अगारी तुमे ज्ञान देवेकी आज्ञा भगवान्ने दीनीही कि मैत्रेयजी तुम ये ज्ञान विदुरजीसों कहि दीजो ॥ २६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि या प्रकार विदुरजीके साथ विश्वमूर्तिके गुणनकी कथारूप अमृतसों सब ताप नष्ट हैवेसों उद्धवजी श्रीयमुनाजीके पुलिनमें एक क्षणकी नाईं वसतेभये. वो रात व्यतीत भई ॥२७॥ राजा परीक्षित् बोले कि नष्ट भये वृष्णि भोजनके महारथीनके यूथपालनमें मुख्य उद्धव कैसे बचे कारण कि ब्राह्मणके शापसों त्रिगुणनके अथवा ब्रह्मा विष्णु महेशके स्वामी हरिहू मनुष्यके आकारकों त्यागते भये फिर उद्धव कैसे बचे ॥ २८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि शापकी कछु सामर्थ्य नहीं ही, भगवत्की इच्छा ऐसेही ही ब्राह्मणनके शापको तौ एक बहानो हो, कालकरके अमोघवांछावारे श्रीकृष्णजी अपने कुलको संहार कर देहको त्यागतो बेर ये चिंतवन करतेभये ॥ २९ ॥ मैं या लोकसों चलो जाऊंगो तो मेरो ये ज्ञान आत्मज्ञानिनमें श्रेष्ठ उद्धव या समय जानवेको योग्य है ॥ ३० ॥ उद्धव जो है सो मोसों अणुमात्रहू न्यून नहीं है जो कि ये उद्धव गुण जे विषय हैं तिन करके क्षोभ नहीं करायो है अर्थात् उद्धवने सब विषय जीत लीने हैं याहीसों समर्थ है, याते मेरे संबंधको ज्ञान षड्विध शरणागति लोकको उपदेश करवेको यह यहीं रहौ ॥ ३१ ॥ ऐसे शब्दमात्रके कर्ता वेदकर्ता त्रिलोकगुरुने आज्ञा दियो उद्धव बद्रिकाश्रममें जाय समाधिसों श्रीहरिको पूजतो भयो ॥ ३२ ॥ लीलाके देहधारी जे श्रीकृष्ण परमात्मा हैं तिनके श्लाघा करवे लायक कर्मनको उद्धवसों विदुरजी सुनके ॥ ३३ ॥ और श्रीकृष्णजीको अंतर्द्धान होनो धीरनको धैर्यको बढावनवारो भयो और अधीर चित्तवारेनको अतिदुष्कर मालुम पडो येहू सब उद्धवजीसों विदुरने सुनो ॥ ३४ ॥ और हे कुरुश्रेष्ठ ! येहू सुनी कि परं पद यात्राके समय भगवान्ने मेरी याद कीनीही इन सब बातनको ध्यान करते भागवत उद्धवजी गये, तब प्रेममें विह्वल होय विदुरजी रोवतेभये ॥ ३५ ॥ भरतवंशीनमें श्रेष्ठ विदुरजी कछु दिनतक सिद्ध होय वसते भये, पीछे जहां मैत्रेयजी रहे ऐसी गंगाजीपर ढूंढते २ जातेभये ॥ ३६ ॥

कालिन्द्याः कतिभिः सिद्ध अहोभिर्भरतर्षभः ॥
प्रापद्यत स्वःसरितं यत्र मित्रासुतो मुनिः ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे विदुरोद्धवसंवादे संपूर्णवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

श्रीशुक उवाच–द्वारि द्युनद्या ऋषभः कुरूणां मैत्रेयमासीनमगाधबोधम् ॥
क्षत्तोपसृत्याऽच्युतभावशुद्धः पप्रच्छ सौशील्यगुणाभितृप्तः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि श्रीहरिद्वारमें कुरुनमें श्रेष्ठ अच्युतके भावसों शुद्ध सुशीलता आदिगुण दयासों तृप्त विदुरजी गंभीर ज्ञानी मैत्रेयजीके समीप आयके ये पूछतेभये ॥ १ ॥ विदुरजी बोले कि सब लोग सुखके लिये कर्म करैं हैं, न तो विने सुख मिले है न दुःखनाश होय है किंतु परिणाममें फेर दुःखही होय है, सो यामें जो करवेको योग्य होय सो सर्वज्ञ आप कहो ॥ २ ॥ श्रीकृष्णसों विमुख

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राचीन कर्मसों अधर्मशील, अत्यंत दुःखी जीवनके ऊपर दया करवेकों या विश्वमें जनार्दनके मंगलकारी परोपकारी ब्राह्मण विचरें हैं अर्थात् आपको हे मैत्रेयजी ! परोपकारी स्वभाव हैं ॥ ३ ॥ तातें हे साधुवर्य ! सुखको मार्ग कहो जाकरके पुरुषनके भक्तिसों पवित्र भये हृदयमें स्थित भगवान् अनादि वेदप्रमाणसिद्ध तत्वज्ञानको देय हैं ॥ ४ ॥ त्रिगुणी मायाके नियंता, स्वतंत्र ईश्वर अवतार धार जिन कर्मनकूं करे हैं, निष्क्रिय होयके जा प्रकारसों प्रथम याको रचतेभये, पीछे सुस्थिर करके जगत्की वृत्ति विधान करे हैं ॥ ५ ॥ जैसे फेर अपने हृदयआकाशमें याको स्थित करके सब वृत्तिनसों निवृत्त होयके अंतःकरणमें सोवे है, योगीश्वरनके ईश्वर एक या विश्वमें प्रविष्ट हैके जैसे बहुतसे होतेभये ॥ ६ ॥ ब्राह्मण गौ देवताके क्षेमके अर्थ अवतारनके भेदकरके विहार करते कर्मनको करें हैं सो कहो सुंदर यशस्वीनमें मुकुटमणि श्रीकृष्णके चरित अमृत सुनते हमारो मन तृप्त नहीं होय है ॥ ७ ॥ सब लोकनाथनके अधिपति जिन तत्वनके भेदकरके लोकालोक पर्वतसों बाहिर सब लोकपालसहित लोकनकों कल्पना करतभये, जहां सब जीवनके समूहनको भेद अधिकृत प्रतीत होय हैं ॥ ८ ॥ हे विप्रनमें श्रेष्ठ ! जा प्रकारसों प्रजानके आत्मा, कर्म, रूप, नामभेदनको, विश्व रचवेवारे स्वतःसिद्ध नारायण प्रकट करतेभये सो आप हमसों वर्णन करो ॥ ९ ॥ हे भगवन् ! श्रीकृष्णजीकी कथामृत पानके समूहके विना तुच्छ सुखवारे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रके धर्म व्यासजीके मुखसों वारंवार हमने सुनेहैं परंतु विनके श्रवणसों हम तृप्त नहीं भये है ॥ १० ॥ आपके यज्ञमें नारदादिकनके गाये भगवन्नामसों कोईभी तृप्त नहीं होयहै, जो नाम पुरुषनके कानकी नाडीमें प्राप्त होयके संसारकी देवेवारी घरकी भीतिकूं छेदे है ॥ ११ ॥ श्रीवेद व्यास मुनि मोक्षधर्मके अंतमें नारायणीय उपाख्यानमें भगवत्के गुणनकी कहिवेकी इच्छा भई तब आपके सखा व्यासजीने भारत कह्यो जा भारतमें संसारी सुखके मिस करके हरिकी कथामें मति ग्रहण करीहै सो बात इतिहाससमुच्चयमें है कि " कामिनो वर्णयन्कामं लोभं लुब्धस्य वर्णयन् । नरः किं फलमाप्नोति कूपेऽधमिव पातयन् ॥ ॥ १ ॥ लोकचित्तावतारार्थं वर्णयित्वात्र तेन तौ ॥ इतिहासैः पवित्रार्थैः पुनरत्रैव निंदितौ ॥ २ ॥ अन्यथा घोरसंसारबंधहेतू जनस्य तौ ॥ वर्णयेत्स कथं विद्वान्महाकारुणिको मुनिः ॥ ३ ॥ " (कामीसों कही काम कर लोभीसों कही लोभसों जीवको कहा फल प्राप्त भयो जैसे अंधेको कूपमें पटकनो है ॥ १ ॥ व्यासजीने लोगनको चित्त लगवेको काम लोभ वर्णन कर फेर वहांही पवित्र इतिहासकरके निंदा करीहै ॥ २ ॥ केवल चित्तके प्रवेशरूप प्रयोजनके विना विद्वान् महादयालु मुनि प्राणिनके घोर संसारमें बंधनके हेतु काम और लोभको कैसे वर्णन करते ॥ ३ ॥) ॥ १२ ॥ श्रद्धालु हरिके पदमें मन लगायवेसों सुखी भये पुरुषकों बढी भई भक्ति संसारसुखनसों विरागको करे है, और समस्तदुःखनको नाश करे है ॥ १३ ॥ ऐसी परमेश्वरकी कथामें जे पुरुष पापके फलसों प्रीति नहीं करें हैं विनको सोचते हुवे विदुरजी मैत्रेयजीसों कहेहैं कि, अपने किये पापके कारण परमात्माकी कथासों विमुख शोच करवे योग्य पुरुषनकोहू शोचनीय अज्ञानी पुरुषनको मैं शोच करूं हूं कारण कि जिनकी मन वचनकी क्रिया वृथा है ऐसे पुरुषनकी आयुको जाकी गति एक क्षणकोहू नहीं रुकती वह काल वृथा नाश करे है ॥ १४ ताते हे मैत्रेयजी ! जैसे भ्रमर पुष्पनके साररूप रसको खेंचकर लावे है तैसेही संसारके सुखदाता पवित्र कीर्तिवारे आर्तबंधु ईश्वरकी साररूप कथा कहो ॥ १५ ॥ अनेक शक्तिमान् ईश्वरने विश्वकी उत्पत्ति पालन नाशके अर्थ अवतार धरके जे मनुष्यनसों न हैसके ऐसे कर्म कीने वे कर्म मोसों कहो ॥ १६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि, ऐसे भगवान् मैत्रेय-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुनिसों विदुरने पूछी, तब वे मुनि पुरुषनके मोक्षके लिये विनको बहुमान कर बोले ॥ १७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि, हे साधो ! सब लोकपर अनुग्रह कर ईश्वरमें मन लगाये अपने आत्माकी जगत्में कीर्ति फैलावते आपने यह भलो प्रश्न कियो ॥ १८ ॥ हे विदुर ! व्यासवीर्यसों जन्मे भये आपमें ये कुछ विचित्र नहीं है, जो तुमने सब प्रकारसों भावकरके हरि ईश्वर ग्रहण कीने हैं ॥ १९ ॥ मांडव्यके शापसो सब प्रजाके दंडदाता यमराज विचित्रवीर्य भ्राताके क्षेत्रमें भुजिष्या दासीमें व्यास-जीसो तुम जन्मते भये ॥ २० ॥ भगवज्जनसहित भगवान्को तुम नित्य प्रिय हो जाको ज्ञान उपदेश करवेकी जाती विरियां भगवान् मोको आज्ञा करतेभये ॥ २१ ॥ अब तुमसो हम विश्वके उत्पत्ति पालन नाशके कर्ता भगवान्की लीला विस्तारपूर्वक वर्णन करैं हैं जो योगमायासो बढी भई लीला है ॥ २२ ॥ सृष्टिकी उत्पत्तिके प्रथम एक नारायणही विद्यमान जो जीवनके आत्मा है और विनसों भिन्न कछु नहीं हो न तो आत्माही भिन्न हो और न अनेक बुद्धि करके प्राप्त दृश्यादि भेदभाव विद्यमान हो जब आत्मेच्छा माया ताको अनुगति नाम लय होते संते अर्थात् जब आत्मामेंही मायाहू लय ही ॥ २३ ॥ ता समय ये सर्व द्रष्टा प्रकाशमान ईश्वर सम्पूर्ण शक्तिसों प्रकाशित हैवेपेहू या वैभवको कोई देखवेवारो न हैवेसो और मायादिक शक्ति लीन हैवेसो अपनेको असत्सो मानतो भयो कि हम हैं तो सही परंतु कछु नहीं है वो कैसो है कि सोई है मायादिक शक्ति जाकी और नहीं सोई है चिच्छक्ति जाकी ॥ २४ ॥ हे महाभाग ! तब सर्वद्रष्टा या ईश्वरकी कार्यकारणरूपिणी ये मायानाम्नी महाशक्ति अनुसंधानरूपा उत्पन्न होतीभई; जासो समर्थ ईश्वर या सबको रचतभयो ॥ २५ ॥ गुणमयी कालकी शक्तिसों मायामें पुरुषरूपकरके परमेश्वर वीर्यवान् वीर्यको नाम अपने चिदाभासको धारण करतेभये ॥ २६ ॥ कालप्रेरित अव्यक्त मायासों महत्तत्त्व भयो, तमोगुणको नाशक विज्ञान आत्मा जीवके देहमें स्थित हैके विश्वको प्रकाश करतोभयो ॥ २७ ॥ सो जीव अंश गुण काल आत्मा भगवत्की दृष्टिके सामने या विश्वकी रचवेकी इच्छाकरके जीवात्मा अपने आत्माको रूपांतर करतो भयो ॥ २८ ॥ महत्तत्त्व जब विकारको प्राप्त भयो तब अहंतत्व भयो, कार्य कारण कर्ता जीव पंचभूत इंद्रिय मनोमय होतोभयो ॥ २९ ॥ वो अहंकार वैकारिक तैजस तामस भेदसों तीन प्रकारको भयो अहंकार विकारको प्राप्त भयो तब विकारी अहंकारसों नाम सात्विक अहंकारसों मन भयो ॥ ३० ॥ वैकारिक जो देवता हैं वे भए विनसो शब्दादिक गुण प्रकाशक होय हैं, रजःसत्वमय ब्रह्मा विष्णु शिव हैं ॥ ३१ ॥ तैजस नाम राजस अहंकारसे ज्ञान कर्ममय इंद्रियें भई हैं और तामस अहंकारसों पंचभूत सूक्ष्मकी आदि आकाश भयो जो ब्रह्म व्यापकको चिह्न है " आकाशशरीरं ब्रह्मेति श्रुतेः " ॥ ३२ ॥ कालमायाके अंशयोगसों भगवत्करके देखे भये, आकाशके पीछे स्पर्श भयो वाके विकारसों पवन भई ॥ ३३ ॥ आकाशके बहुत बलसों युक्त पवन जब विकारको प्राप्त भई तब ताकी मात्रासहित सब लोकको लोचनरूप धर्मवारो तेज प्रकाश भयो ॥ ३४ ॥ परमेश्वरकरके देखो भयो पवनसहित ज्योति जब विकारको प्राप्त भयो तब कालमायाके अंशनके योगसो रसमय जल भयो ॥ ३५ ॥ ब्रह्मकी इच्छासों ज्योतिकरके जलसहित कालमायाके अंशनके योगसों गंधगुणवारी पृथिवी भई ॥ ३६ ॥ हे विदुर ! आकाशआदि पंचभूतनके पर अवरके परम संगसे यथाक्रम गुणनको जानो आकाशको शब्द गुण है, वायुको शब्द स्पर्श गुण है, तेजको शब्द स्पर्श रूप गुण है जलको शब्दस्पर्शरूप रस गुण है और पृथिवीके शब्द स्पर्श रूप रस गंध सब गुण होय है ॥ ३७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

काल माया अंशरूपी विष्णुके ये सब देवता कला हैं नानारूप हैवेसो ब्रह्मांड रचना करवेमें सामर्थ्य न भई, तब ये सब तत्त्वाभिमानी देवता हाथ जोडकर परमेश्वरकी स्तुति करते भए ॥ ३८ ॥ सब देवता बोले कि हे देव शरणागततापनाशक छत्ररूप ! आपके चरणकमलकूं हम सब नमस्कार करेहैं, जिनके चरणकमलके नीचै वासी यति लोग संसारदुःखको दूरसों त्याग करेहैं ॥ ३९ ॥ हे धातः ! हे आत्मन् ! हे ईश ! हे भगवन् ! तीन तापसों दुःखी या संसारमें जीव अपने आपेमें सुखको नहीं प्राप्त हो हैं यातें विद्यासहित तुम्हारे चरणकी छायाको आसरो लेय है ॥ ४० ॥ आपके चरण तीर्थरूप है या कारणसों पापनाशक जलवारी उत्तम नदीनमें श्रेष्ठ श्रीगंगाजीके स्थान चरणकमलकी शरणागत होय ऋषिलोग एकांतमें बैठके संसारके विषयनको त्यागवेवारे अपने अन्तःकरणमें तुम्हारो मुखही जिनको घौंसला है ऐसे आपके मुखसों निकसे भए वेद वेदरूपी पक्षिनसों आपको ढूंढे है ॥ ४१ ॥ जा चरणकमलकी श्रद्धासें सुनी भई भक्तिसें शुद्ध भये हृदयमें धारण कर ज्ञान वैराग्यके बलकरके धीर हैके लोग आपके चरणकमलके धरवेके पीढाके पास जाय हैं ॥ ४२ ॥ हे ईश ! विश्वकी उत्पत्ति पालन नाशके लिये अवतार धारण करनवारे तुम्हारे चरणकमलकी हम सब शरण होय हैं क्योंकि जो चरण अपने पुरुषनको स्मरण करवेसों अभय देय है ॥ ४३ ॥ हे भगवन् ! मिथ्यारूप देह गेहमें मैं हूं मेरो है, ऐसे दुराग्रह वा पुरुषनको विनके हृदयमें निवास करनवारेको तेरो जो चरण है सो दुःखसोंहू नहीं प्राप्त होय है हम वा तुम्हारे चरणकमलको भजे हैं ॥ ४४ ॥ खोटे मार्गमें जायवेवारी इंद्रियनसों जिनके मन हरे भये है हे उरुगाय ! वे पुरुष तुम्हारे चरण धरवेके विलासकी शोभाके अनुभव करनवारे जे तुम्हारे भक्तजन है विनको नहीं देखेहै ॥ ४५ ॥ हे देव ! आपके कथामृतपानसों अत्यंत बढी भक्तिसों विशाल अंतःकरणवारे जे पुरुष हैं वे वैराग्यके सार ज्ञानकूं प्राप्त होयके अनायासकरके श्रीवैकुंठलोकको चले जांय हैं ॥ ४६ ॥ तैसे औरहू मनुष्य आत्मयोगबलसों बली प्रकृतिको जीतके धीर लोग पुरुषरूप तुममें प्रवेश करेहैं परन्तु विनको तुमारी प्राप्तिमें बडो श्रम होयहै और जे तुम्हारी सेवा करेहैं विनको परिश्रम नहीं होय है ॥ ४७ ॥ हे आद्य ! लोकके रचवेकी इच्छा करके तीनों गुणनसो तुमने रचे जे हम हैं वे न्यारे २ हैं यासों हम तेरे खेलवेके खिलोना या ब्रह्मांडको रचके आपको समर्पण करवेको हमारी शक्ति नहीं है ॥ ४८ ॥ हे अज ! जबतक हम आपको समयमें बलि देंय जहां हम सब अन्नको जा प्रकारसों भक्षण करें जैसे तुमको हमको ये सब निःसंदेह तर्क छोडकर लोग बलि देदेय अन्नको पावें सो कीजिये ये प्रार्थना है " श्रुति ता एनमब्रुवन्नायतनं नः प्रजानीहि यस्मिन्प्रतिष्ठिता अन्नमदामेति " ॥ ४९ ॥ हे देव ! तुम हमारे अन्वयवंशसहित देवतानके आद्य पुरुष पुराण अविक्रिय अजन्मा हो सत्वादि गुण कर्मकी कारणरूप शक्ति मायामें क्रांतदर्शी वीर्यको धारण करतेभए ॥ ५० ॥ हे आत्मन् ! हे देव ! तातें सत्प्रमुख हम सब महदादि जाके अर्थ भए हैं सो आपको कहा काम करें, सो हम आपके अनुग्रहके पात्र हैं हमको सब संसार रचवेकी सामर्थ्य शक्तिसहित अपना ज्ञान सब ओरसे देउ ॥ ५१ ॥

ततो वयं सत्प्रमुखा यदर्थे बभूविमाऽऽत्मन्करवाम किं ते ॥
त्वं नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या देव क्रियार्थे यदनुग्रहाणाम् ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे महदादिसर्गे सर्वदेवकृतस्तोत्रवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ६.

ऋषिरुवाच–इति तासां स्वशक्तीनां सतीनामसमेत्य सः ॥
प्रसुप्तलोकतन्त्राणां निशाम्य गतिमीश्वरः ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि जिनमें जीवनके भोगके साधन सूक्ष्मरूपसों रहते हैं अथवा लोकसृष्टि करवेको असमर्थ भईहीं और न्यारी न्यारी सब वर्तमान ही ऐसी विन महत्त्वादि शक्तिनकी गति देखके ॥ १ ॥ वा समय ईश्वर कालसंज्ञा देवी शक्तिको धारण कर तेईस तत्वनके गणमें एकसंग प्रवेश करते भए ॥ २ ॥ सो भगवान् चेष्टारूप करके वा तत्त्वात्मक गणको प्रवेश कर फिर सुप्तकर्मको बोधन करते अलग अलग भये सब गणको इकट्ठो करतेभये ॥ ३ ॥ ईश्वरकरके प्रेरित जगोभयो तेईस तत्वनको गण अपने अंशनकरके विराट्देहको उत्पन्न करतभयो ॥ ४ ॥ अपने अंशनसों ईश्वरने जामें प्रवेश कीनो ऐसे विश्व रचवेवारेनको वो गण आपसमें इकट्ठो होय अपनेमेंही चलायमान होतो भयो, जामें चराचर लोक है ॥ ५ ॥ सुवर्णमय सब ब्रह्मांडको जामें खजानो, सब जीव करके बढोभयो वो पुरुष सहस्रवर्षपर्यंत जलमें वास करतोभयो ॥ ६ ॥ देव कर्म आत्मा इन तीन शक्तिवारो वो विश्व रचवेवारेनको गर्भ अपनी आत्माकरके एक दश और तीन विभाग करतो भयो, देवशक्ति ज्ञानशक्तिसो हृदयमें चैतन्यरूपसों विराजे हैं, और कर्मशक्ति क्रियाशक्तिसों प्राणरूपकरके दशरूप होयहैं, आत्मशक्ति भोक्तृशक्तिसो अध्यात्म अधिदैव अधिभूत तीन प्रकार होयहैं ॥ ७ ॥ परमात्माकी आत्माको अंश सब जीवमात्रको अंतर्यामी ये प्रथम अवतार हैं, जामें सब जीवमात्रको जन्म होय हैं ॥ ८ ॥ अध्यात्म अधिदैव अधिभूत ये तीन प्रकारके हैं विराटप्राण दश प्रकारको है, एकरूपसों हृदयमें है ॥ ९ ॥ विश्वके रचवेवारेनकी प्रार्थनाको ईश्वर श्रीहरि ऐसे स्मरण करतो विराटको अपने तेजकरके इन महदादिकनकी वृद्धिके लिये तपयुक्त करते भये "यस्य ज्ञानमयं तपः इति श्रुतेः" ॥ १० ॥ अब ऐसे अभितप वा विराटके मुख आदिक कितने स्थान देवतानके निकसे विनको मैं कहूं तुम सुनो ॥ ११ ॥ वा विराटके प्रथम मुख भयो वामें लोकपालके अग्नि देवता प्रवेश करतो भयो जो अपनी वाणीके अंशकरके ये विराट देह कछु कहिवेके योग्य है वाको प्राप्त होतो भयो मुख अधिष्ठान है १ वाणी इन्द्रिय है २ अग्नि देवता है ३ वचन विषय है ४ ॥ १२ ॥ हरिरूप विराटके तालु निकरो वामें लोकपाल वरुणने प्रवेश कीनो जा जिह्वाके अंशसो ये विराट देह रसस्वाद लेतोभयो यहां तालुअधिष्ठान वरुणदेवता जिह्वा इंद्रिय और रसविषय भयो ॥ १३ ॥ वा व्यापक विष्णुके विराटमें नाक निकसी, तब अश्विनीकुमार देवता प्रवेश करतेभये, घ्राणके अंशसो सुगंधकी सिद्धि होय है नासा अधिष्ठान अश्विनीकुमार देवता घ्राणइंद्रिय और गंध विषय भयो ॥ १४ ॥ विभुके विराट देहमें दो आंख निकसी, तब लोकपालक सूर्य प्रवेश करतेभये, जाते चक्षुके अंशसो रूपकी सिद्धि होय है यहां अक्षि अधिष्ठान सूर्यदेवता चक्षुइंद्रिय और रूप विषय भयो ॥ १५ ॥ वा विराट देहमें चर्म निकसो, तो लोकपालक पवन प्रवेश करतेभए, प्राणके अंशसो याकों स्पर्श होय है चर्म अधिष्ठान पवन देवता प्राण इंद्रिय और स्पर्श विषय भयो ॥ १६ ॥ कान याके निकसे तो दिशानमें अपनो स्थान जान प्रवेश कीनो, श्रोत्रके अंशसो शब्दकी सिद्धि याको होती भई यहां कर्ण अधिष्ठान दिशा देवता श्रोत्र इंद्रिय शब्द विषय भयो ॥ १७ ॥ फेर याके त्वचा निकसी तब सब औषधीनने प्रवेश कीनो जाके अंशसो रोमन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करकै खुजार होती भई ॥ १८ ॥ त्वचा अधिष्ठान औषधी देवता रोमइंद्रिय खुजरी होनौ विषय भयो वा देहके लिंग निकसो तो वामें ब्रह्माने वास कीनौ, वीर्यके अंशसो आनंदसुख होतोभयो लिंग अधिष्ठान ब्रह्मा देवता वीर्य इंद्रिय रति विषय भयौ ॥ १९ ॥ वा पुरुषके गुदा निकसी तो लोकेश मित्र प्रवेश करतेभये जा पायुके अंशसो मलत्याग करतो भयो गुदा अधिष्ठान मित्र देवता वायु इंद्रिय मलत्याग विषय ॥ २० ॥ फेर याके हाथ निकसे तब उनके स्वामी इंद्र प्रवेश करते भये वार्ताके अंशसो जिन हाथनसो सब वृत्ति ये विराटदेह करवेलगो यहां हाथ अधिष्ठान इंद्र देवता वार्ता इंद्रिय करनौ विषय भयौ ॥ २१ ॥ पाछै पांव याके निकसे तब लोकके ईश्वर विष्णु प्रवेश करते भये चलनो ये अंशकरकै जो प्राप्ति योग्य होय वाको प्राप्त होतो भयो यहां पांव अधिष्ठान विष्णु देवता चलनौ इंद्रिय प्राप्यकी प्राप्ति विषय भयो ॥ २२ ॥ पाछै याकौ बुद्धि भई तब सरस्वती प्रवेश करती भई, तब ज्ञानके अंशकरकै संकल्प विकल्प आदि क्रियानको प्राप्त होतो भयो ॥ न्यायशास्त्रमें है कि " सर्वव्यवहारहेतुर्गुणो बुद्धिर्ज्ञानम् " सब व्यवहारको हेतु जो गुण वो ज्ञान बुद्धि है यहां बुद्धि अधिष्ठान सरस्वती देवता ज्ञान इंद्रिय बोद्धव्यको बोध विषय भयो ॥ २३ ॥ या विराट् देहके हृदय भयो ताके चन्द्रमा देवता भए मनके अंश करके ये देह संकल्परूप विकारको प्राप्त होतो भयो हृदय अधिष्ठान चन्द्रमा देवता मन इंद्रिय संकल्प विषय ॥ २४ ॥ फेर अहंकार भयो तामें " अभिमन्यते अनेनेत्यभिमानः " सब ओरसे अभिमान करवेवारे रुद्र हृदयमें प्रवेश करते भए जा कर्मके अंशसो सब करवेयोग्य हो वाकी योग्यताको प्राप्त भयो यहां अहंकार अधिष्ठान रुद्र देवता अभिमान इंद्रिय ममता विषय भयो ॥ २५ ॥ याके सत्व भयो तो ब्रह्माजी प्रवेश करते भए जा चित्तके कारण ये विराट विज्ञानको प्राप्त भयो यहां सत्व अधिष्ठान ब्रह्मा देवता चित्त इंद्रिय विज्ञान विषय भयो ॥ २६ ॥ याके शिरसो स्वर्ग पांवसो धरती नाभीसो आकाश भयो जिनमें गुणनकी वृत्तिनसो देवता आदि प्रतीत होते हैं ॥ २७ ॥ अत्यंत सतोगुण अधिकतर हैवेसो देवता स्वर्गमें वसे रजोगुणके स्वभावसों यागादिकरकै व्यवहार करवे लगे वे मनुष्य और गौ आदिक पृथिवीपर प्राप्त होत भये " पणंते व्यवहरंतीति पणयो मनुष्याः "" पण व्यवहारे स्तुतौ च " या धातुसे ये शब्द सिद्ध है ॥ २८ ॥ तीसरे तमोगुणसो भगवत्की नाभिके आश्रय वसे दोनोंके मध्यमें आकाश भयो जहां रुद्रके पार्षदनके भूत पिशाचगण वसते भये ॥ २९ ॥ हे राजन् ! वा पुरुषके मुखसों वेद ब्रह्म भयो मुखसो हैवेसो वेद मुखसो कहिवेसों सब वर्णनमें मुख्य ब्राह्मण गुरु होते भये ॥ ३० ॥ " क्षताद्त्रायत इति क्षत्रम् " बाहुसों पालनरूप कर्म भयो वासों क्षत्रिय भये चोरादिकनके उपद्रवसों रक्षा कीनी यासो ईश्वरांश भए जाने जन्मतेही वर्णनकी रक्षा कीनी ॥ ३१ ॥ तिनके ऊरुसे कृष्यादि व्यवहार भए, वो लोकके सब व्यवहार करवेवारे भए जिनसों वैश्य भए जो वैश्य मनुष्यनकी सब वार्ता नाम जीविका ताको संपादन करतो भयो ॥ ३२ ॥ शुश्रूषा कर्मसिद्धिके अर्थ भगवान्के पावसों सेवकाई वृत्ति भई पांवसों शूद्र भए जिनकी जीविकासों हरि प्रसन्न भए ॥ ३३ ॥ ये चारों वर्ण अपने धर्मसो अपने गुरु श्रीहरिको पूजते भए श्रद्धाकरके आत्माकी विशुद्धिके अर्थ सब वृत्तिनकरके सहित सब वर्ण होते भए ॥ ३४ ॥ हे क्षत्तः ! देव कर्म आत्मारूपी भगवान्को ये योगमायाको बल कौन कहिवेको योग्य हैं ॥ ३५ ॥ हे विदुर ! जैसी मेरी मति है जैसो मैंने सुनो है तैसी श्रीहरिकी कीर्ति अपनी वाणीको सफल करवेको वर्णन करूंहूं क्यों कि खोटी वाणी और और वर्णन करकै अशुद्ध है गई है ॥ ३६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुरुषनके वचनको एकांत सर्वोत्तम लाभ देवेवारो भगवान्को गुणानुवाद है और विद्वान्ने कह्यो जो कथामृत है सो काननको एकांत लाभ है ऐसो कह्यो है ॥३७॥ हे विदुरजी! श्रीहरिकी महिमा ब्रह्माने योगाभ्याससों पकी भई बुद्धिकरके सहस्रसंवत्सरके अंतमेंहू जानी है कहा किंतु नहीं जानी है ॥ ३८ ॥ या कारणसो भगवान्की माया मायाविनकोहू मोह करायववेवारी है क्यों कि सर्वव्यापक श्रीहरि आपहू अपनी मायाकी गतिको नहीं जानसकैहैं औरनकी तो कहा चलाई है ॥ ३९ ॥ जाके ज्ञानके अर्थ प्रवृत्त भई मनकरके सहित वाणी वर्णन करत करत जिनको नहीं प्राप्त हैके उलटी बगद आवे है; हम और ये सब देवता जिन्हैं नहीं जानसकै हैं विन षड्गुणैश्वर्य संपत्तिमान भगवान्के अर्थ नमस्कार होय। भगवान् शब्दको ये अर्थ है कि " ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ॥ ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इति स्मृतः ॥ १ ॥ " ॥ ४० ॥

यतोऽप्राप्य निवर्तन्ते वाचश्च मनसा सह ॥
अहं चान्य इमे देवास्तस्मै भगवते नमः ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे विराड्देहे ईश्वरप्रवेशवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

श्रीशुक उवाच-एवं ब्रुवाणं मैत्रेयं द्वैपायनसुतो बुधः ॥
प्रीणयन्निव भारत्या विदुरः प्रत्यभाषत ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसे कहते भये मैत्रेयजीसो व्यासपुत्र बुद्धिमान् विदुर वाणीसो प्रसन्न करते बोले ॥ १ ॥ विदुरजी बोले कि हे ब्रह्मन्! षड्गुण ऐश्वर्य संपत्तिमान् चैतन्यमात्र अविकारी निर्गुण बृहत्वादिगुणविशिष्ट चैतन्य ब्रह्मको क्रिया और गुण ए लीला करकेहू कैसे युक्त होय है अर्थात् वास्तवसों ब्रह्ममें गुण क्रियानको संबंध है्ही नहीं जो कोई लीलामात्र करकेहू ब्रह्ममें गुण और क्रियाको संबंध बतावे तौ सोहू कैसे है यह कहो ॥ २ ॥ बालकको क्रीडामें उद्यम करनो और काम है और जो खेल करवेकी इच्छा है सोहू और कोई खिलौना या बालकांतर कोउ और खेलवेवारो होय तौ होय है फिर कहो जो अपने आप तृप्त सदा सब ओरसे निवृत्त ईश्वर है वाकों काम और इच्छा कैसे होयहै सो कहो ॥ ३ ॥ गुणमयी अपनी मायाकरकै वो ईश्वर या विश्वको रचेहै वाहीसें स्थिति करैहै फेर संहार करैं हैं ॥ ४ ॥ देशते कालते अवस्थाते अपनेसों औरसों जाको ज्ञान नष्ट नहीं होय सो ये ईश्वर माया करकै कैसे संयुक्त होय है सो कहो ॥ ५ ॥ भगवान् एक है सबके क्षेत्रनमें स्थित है इनको दुर्भागीपनो क्लेश होनो ये कर्मनसों कैसे होय है सो कहो ॥ ६ ॥ हे विद्वन्! हे विभो! या अज्ञान संकटमें मेरो मन खेदको प्राप्त होय है सो ये मनको महासंकट तुम दूर करो ॥ ७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि, तत्त्व जानवेकी इच्छावारे विदुरने ऐसे मैत्रेयमुनिसों पूछी तब भगवतमें चित्तवारे मुनि कछु मुसकायकै बोले ॥ ८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि यही भगवान्की माया है जो कि तर्ककरकै विरुद्ध होय है देखो विमुक्त ईश्वरको कृपणताको होनो और बंधन होनो येही तर्क है ॥ ९ ॥ जैसे शिरश्छेदनके विनाही स्वप्नके साक्षिद्रष्टा पुरुषको मेरो यह शिर छेद्यो ये आत्माको उलटो पुलटो होनो प्रतीत होय है ॥ १० ॥ और जैसे जलमें प्रतिबिंबित चंद्रमाको जलकी उपाधिको करो भयो कंपादि धर्मगुण दीखै है कछु आकाशमें स्थित चंद्रमामें कंपादिक नहीं है तैसेही आत्माको देहादिधर्म सत नहीं है परंतु तदभिमानी द्रष्टा तदंतर्यामी ईश्वरको दीखै है सो ये केवल

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मिथ्या है ॥ ११ ॥ सो देहके गुणनको जो आत्मामें अज्ञानकृत आभास है सो निश्चयकरके निवृत्ति मार्गके धर्म करके वासुदेवकी कृपासों भगवत्की भक्तियोगसों धीरेधीरेसों अर्थात् साधनके अनुसार सब नष्ट है जाय है तात्पर्य यह है कि जैसे साधनको करेगो वितने कालमें अज्ञान नष्ट होयगो उत्तम साधनसो शीघ्र और निकृष्ट साधनसो विलंब होयगो ॥ १२ ॥ जब ए इंद्रिय शांत हैकै द्रष्टा आत्मा हरिमें स्थिर है जाय है अर्थात् निर्विषय हेके केवल भगवान्मेंही लग जाय है तब याके सब क्लेश विशेष करके लीन होय हैं, जैसे सोए भयेके सब क्लेश दूर होय है ॥ १३ ॥ श्रीमुरारीके गुणानुवादही संपूर्ण क्लेशनके शान्त करवेवारे हैं फिर कहो तैसेई विनके चरणारविंदके परागकी सेवामें जो प्रीति मनमें प्राप्त भई है वो अशेष क्लेशनको नाश करै तब फिर कहा कहनो है ॥ १४ ॥ विदुरजी बोले कि हे विभो ! आपके सुंदर वचनरूप खड्गसो मेरो सब संशय कटगयो परंतु हे भगवन् ! जीव परतंत्र है ईश्वर स्वतंत्र है इन दोनों बातनमें मेरो मन फेर संदिग्ध है सो कहो ॥ १५ ॥ हे ब्रह्मन् ! आपने यह बहुत सुंदर बात कही कि श्रीहरिकी शक्ति जो यह जीवविषया माया है ताके संबंधसोंही ये सब दुर्भगत्वादिक प्रकाश करैहै क्योंकि वास्तवमें यह दुर्भगत्वादि शिरश्छेदकी तरह व्यर्थ है ओर निर्मूल है क्योंकि या विश्वको मूल अपने अज्ञानसो बाहर नहीं है अर्थात् अज्ञानही या विश्वको मूल है जो कि या विश्वकी येही माया कारण है ॥ १६ ॥ लोकमें जो अत्यंत मूर्ख है, वो सुखी है और जो अत्यंत बुद्धिमान् है वो सुखी है, और जो न मूर्ख है न बुद्धिमान् है जो अधबीचको जीव है वो क्लेशको प्राप्त होयहै ॥ १७ ॥ प्रत्यक्ष देखनेमें प्रतीतहू जो ये प्रपंच संसार है तामें कोउ अर्थ नहीं है अर्थात् वास्तवमें मिथ्या है परन्तु सत्य है ऐसी प्रतीति होयहै वा प्रतीतकोहू अब निश्चय कर तुम्हारे चरणकी सेवा करकै मैं त्याग करौहो ॥ १८ ॥ जिनकी सेवा करकै सर्वांतर्यामी मधुद्वेषी भगवान्के चरणनमें सब दुःखको विनाश करवेवारी तीव्र प्रीति होय है ॥ १९ ॥ थोडे तप करवेवारेनको श्रीहरिके मार्गमें वर्तमान होनवारे महात्मा साधुनकी सेवा प्राप्त होनो बहुत कठिन है, जिन साधुनमें देवनके देव जनार्दन नित्य गाये जाय हैं प्रयोजन यह है विन साधुनमें प्रथम हरिकथासेवन तासों भक्ति तासों देहादिकनमें अनुसंधान निवृत्त होय है ॥ २० ॥ क्रमसे विकारसहित महदादिकनको रचके विनसों विराट् देह उत्पन्न कर विभु वामें प्रवेश करते भए ॥ २१ ॥ सहस्र चरण ऊरु बाहु युक्त आद्य पुरुष जिनको कहैहैं, जामें सब विश्व ये लोक अवकाशसहित होयहैं ॥ २२ ॥ इंद्रिय इंद्रियोंके अर्थसहित तीन वृत्तिवारे तुम्हारे कहे दशविध प्राण जामें होते भए जाते सब वर्ण होयहैं तिनकी विभूति हमसे कहो ॥ २३ ॥ जा संसारमें पुत्र पौत्र नाती गोत्रके सहित अनेक प्रकारकी आकृतिकी प्रजा भई जासो ये विश्व विस्तृत भयो सो कहो ॥ २४ ॥ प्रजापतिनके मध्यमें कौनको प्रजापति करतेभए, सर्ग अनुसर्ग मनु मन्वंतरनके मालक कौन भए सो कहो ॥ २५ ॥ हे मैत्रेयजी ! इनके वंश और वंशनमें जो भए विनके चरित्र और भूमिके ऊपर नीचे जो लोक हैं सो हमसें कहो ॥ २६ ॥ तिनकी स्थिति तिनके प्रमाण कहो, भूलोकको प्रमाण, पशु मनुष्य देवता सर्प पक्षी इनको वर्णन करो ॥ २७ ॥ (संप्रदाय कहो, कलियुगके धर्म कहो श्रीवैष्णव मत कहो) सर्गनके विभाग कहो और गर्भसो जे होय पसीनासो जो होय और धरती फोरके जो होय अंडासों जे होय सो कहिये ॥ २८ ॥ गुण अवतार विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश श्रीनिवास जो जो रचैहैं विनके

१ तापै ये दोहा है कि–खर घूघू मूरख पशू, सदा सुखी सब मास । चातुर चकवा सुघड नर, आठों प्रहर उदास ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उदारचरित्र कहो ॥ २९ ॥ वर्ण आश्रमके विभाग न्यारे न्यारे रूप शील स्वभाव कहो ऋषीनके जन्मकर्म आदि कहो वेदको विभाग कहो ॥ ३० ॥ हे प्रभो ! यज्ञनके विस्तार योगको मार्ग, फलकी चाहना न करके कर्म करनो और सांख्यकोहू मार्ग कहो भगवत्को कह्यो नारद पंचरात्रतंत्र कहो ॥ ३१ ॥ पाखंडके मार्गको वैषम्य कहो और प्रतिलोमनिवेशन कहो और गुणकर्मसो जीवकी जितनी गति होयहैं सो कहो ॥ ३२ ॥ कोई तरहसों विरोध न परे ऐसे धर्म अर्थ काम मोक्ष कहो दंडनीति कहो वार्ता कहो सुनवेकी अलग विधि कहो ॥ ३३ ॥ हे ब्रह्मन् ! श्राद्धकी विधि कहो पितरनकी सृष्टि ग्रह नक्षत्र तारा कालके अवयवनकी स्थिति कहो ॥ ३४ ॥ दान तप इष्टापूर्तको फल, परदेशको धर्म जो पुरुषको आपमें करनो वो धर्म कहो ॥ ३५ ॥ हे पापरहित ! धर्मके कारण भगवान् जिनसो प्रसन्न होय सो कहो, जिनके ऊपर भगवान् प्रसन्न भए सो कहो ॥ ३६ ॥ हे द्विजोत्तम ! अनुरागी शिष्यनको, पुत्रनको, दीनवत्सल गुरु लोग विना पूंछी बातहू कहि देतेहैं गुरु कौन कहावे है कि " गुकारस्त्वंधकारः स्याद् रुकारस्तन्निरोधकः ॥ अंधकारविनाशित्वाद्गुरुरित्यभिधीयते ॥ १ ॥ " गु अंधकारको कहे है रु अंधकारका नाश करै वाको कहे अंधकारविनाश करै वाको गुरु कहे हैं ॥ ३७ ॥ हे भगवन् ! तत्वनको कितनी तरहको प्रलय होय है सो कहो वा प्रलयमें कौन इनकी उपासना करैहै और कौन विनके पीछे शयन करैहै ॥ ३८ ॥ पुरुषकी स्थिति परमेश्वरको स्वरूप निगमको ज्ञान गुरु विष्यको प्रयोजन कहो ॥ ३९ ॥ हे पापरहित ! जो महात्मानने कहेहैं वे निमित्त, पुरुषनको अपने आप ज्ञान भक्ति वैराग्य कैसे होय सो कहो ॥ ४० ॥ श्रीहरिके कर्मनकी जानवेकी इच्छाकरके ये जो मैंने प्रश्न पूछेहै सो आप कहो तुम मेरे मित्र हो माया करके मेरी दृष्टि नष्ट हो गई है ॥ ४१ ॥ हे पापरहित ! सब वेद यज्ञ तप दान है पन ए सब जीवके अभय दान देवेकी एक कलाकी बराबर नहीं है अर्थात् जीवको अभयदान देवेमें जो फल होय है सो तप यज्ञ दानके करवेसो फल नहीं होय हैं ॥ ४२ ॥ श्रीशुकाचार्य बोले कि कौरवनमें प्रधान विदुरने मुनिप्रधान पुराणनमें जिनको वर्णन ऐसो मैत्रेयसों जब पूछी तब भगवत्की कथामें अत्यंत हर्ष बढवेके कारण तिनकी प्रेरणासों या प्रकार बोले ॥ ४३ ॥

श्रीशुक उवाच-स इत्थमाकृष्टपुराणकल्पः कुरुप्रधानेन मुनिप्रधानः ॥
प्रवृद्धहर्षो भगवत्कथायां संचोदितस्तं प्रहसन्निवाऽह ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे विदुरोक्तप्रश्नविधिवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

मैत्रेय उवाच-सत्सेवनीयो बत पूरुवंशो यल्लोकपालो भगवत्प्रधानः ॥
बभूविथेहाजितकीर्तिमालां पदे पदे नूतनयस्यऽभीक्ष्णम् ॥ १ ॥

---

१ एक चेलेने गुरुकी बडी भारी सेवा बारह वर्षतक की, परन्तु उन्होंने उसे कछु पढाया नहीं जब बारह वर्षके उपरान्त उसका पिता आया उसने पूछी महाराज ! कुछ मेरा पुत्र पढा गुरुजी बोले लडकेसै पूछो कुछ देरके उपरान्त गुरुजी लघुशंकाको गये और वह चेला गुरुजीके हाथ धुलाने आया गुरुजी हाथ धोतेथे तब उसके पिता बोले बेटा ! बारह वर्षमें तू क्या पढा वह बोला पिताजी ! सब कुछ, वह बोले क्या. लडका, संसारके जन्म मरण छुटानेवाली गुरुकी सेवा और भक्ति सीखी है, गुरुजी शिष्यके यह वचन सुनकर प्रसन्न होगये और दोनों हाथ मट्टी लगे लेटेमें घंघोल दिये चेलासे बोले बेटा ! पीजा चेला वही पीगया और चौदहों विद्यानिधान होगया, शिष्योंको सदा अनुकूल रहना उचित है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मैत्रेयजी बोले कि बहुत आनंद है कि ये पुरुवंश संतनके सेवा करवे योग्य है, जो भगवान्के मंत्री यमधर्मही है प्रधान जिनके अर्थात् भगवान्कोही सर्वोत्कृष्ट माननवारे तुम या कुलमें जन्मे श्रीहरिकी कीर्तिरूप मालाको क्षणमें नवीनसी करौहौ ॥ १ ॥ सो मैं तुच्छ सुखके निमित्त महादुःखको प्राप्त भए मनुष्यनके वा दुःखके दूर हैवेके निमित्त भागवत पुराणको प्रारंभ करूंहूं जो साक्षात् शेष भगवान्ने ऋषिनसो कह्यो है ॥ २ ॥ पातालतलमें विराजमान अप्रतिहत ज्ञानवारे आद्यसंकर्षण भगवान् शेषजीसों वासुदेव भगवान्के तत्वकी जानवेकी इच्छा करके सनत्कुमार आदि मुख्य मुनिलोग पूछते भए ॥ ३ ॥ जो शेषजी अपने आश्रय वासुदेव भगवान्को ध्यानमें अनुभव करकै सबसों अधिक उपचारसों पूजरहेहै और भीतरको मिची भई नैनपंकजकी कलीको सनत्कुमारादि मुनिनके अनुग्रहके अर्थ कछु एक खोल रहे है ॥ ४ ॥ श्रीभागवतश्रवणको सत्यलोकसो पातालमें गंगाद्वार होयकै जाते भए श्रीगंगाजलसों भीजे भए अपने जटासमूहनकरके श्रीशेषजीके चरणकमल धरवेकी कमलकीसी चौकीको स्पर्श करै हैं जिन चरणनके धरवेके कमलको नागराजकन्या महाप्रेमसों नानाप्रकारकी वलिनकरके अपने पतिकी चाहना करती पूजन करै हैं ॥ ५ ॥ अनुरागसों गद्गद वचन करकै शेषजीके चरित्रनको तिनके माहात्म्य जानवेवारे वारंवार स्तुति करैहैं, जिनके हजारन किरीटनके मणिरत्ननसों सहस्र फण अत्यन्त प्रकाशित है रहे हैं ॥ ६ ॥ निवृत्तिमार्गके धर्ममें लगेभए सनत्कुमारके अर्थ निश्चयकर तिन भगवान् शेषजीने भागवत सुनाई हे राजन् ! सर्व व्रतधारी सांख्यायनके पूछनेपे सनत्कुमारने विनसौ कही ॥ ७ ॥ परमहंसनमें मुख्य सांख्यायनजीको भगवत्की विभूति कहिवेकी इच्छा भई तब विननें अपने समीपमें आए पराशर और बृहस्पति हमारे गुरुसो श्रीभागवत पुराण कह्यौ ॥ ८ ॥ पुलस्त्य मुनिकरके तुम पुराणवक्ता होउ या प्रकार कहे गये पराशर मुनि दयालुभावसो मोसो आद्यपुराण भागवतको कहतेभये, हे वत्स ! हम श्रद्धालु नित्य सेवा करवेवारे आपसें कहैं है या प्रसंगमें ऐसे कथा है कि " पिताको राक्षसभक्षित सुन पराशर राक्षसनके मारवेको यज्ञमें प्रवृत्त भए, तब वसिष्ठजीके वचनसो निवृत्त भए, तब पुलस्त्यने अपनी संतानके रक्षासो प्रसन्न होय वर दीनों कि तुम पुराणनके वक्ता होओगे " ॥ ९ ॥ जा समय महाप्रलयमें ये विश्व नष्ट होतो भयो ता समय चिच्छक्तिको नहीं त्यागकरके नेत्र मीचते भये शेषशय्यापें शयन कर एक श्रीमन्नारायण अपनी आत्माकी रतिमें कीनो है अवसर जाने ऐसे प्रभु वा समय चेष्टारहित होते भए ॥ १० ॥ शरीरके भीतर अर्पण कियो भूत सूक्ष्म जाने अर्थात् शब्द स्पर्श रूप रस गंधकी तन्मात्रानके धारण करवेवारे कालरूप शक्तिकी प्रेरणा करते भगवान् अपने स्थानरूप जलमें वसतेभये, जैसे काष्ठमें अग्नि अपने पराक्रमको रोककर निवास करै है जो घिसो तो वाही काष्ठमें अग्नि उत्पन्न होयहै ॥ ११ ॥ चारों युगोंके हजारों वर्षपर्यंत अर्थात् हजार चौकडीताईं वा जलमें सोवतेभये, अपनी प्रेरित अपनी कालरूपा शक्ति करकै सब कर्मको प्राप्त भयो ईश्वर सब लोकनको अपनेमें लीन देखतेभये ॥ १२ ॥ तब सूक्ष्म अर्थमें सब ओरसों जिनकी प्रविष्ट दृष्टि तिन ईश्वरके भीतरको जो अर्थ हो सो रजोगुणसों सूक्ष्म होय कालके अनुसार गुणकरकै चलायमान अंकुरित होतो नाभिसो कमल भयो ॥ १३ ॥ कर्मके प्रतिबोधक कालकरकै एक संग वो अर्थात् कर्म जो जीवके अदृष्ट तिनको प्रबोध करै ऐसो जो काल ताकरके आत्मा जो श्रीविष्णु सो है योनि नाम कारण उत्पत्तिस्थान जाके ऐसो जो कमल सो उत्पन्न भयो अपनी कांतिकरकै वा विशाल जलको प्रकाश करत सूर्यकी नाईं आप

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सबको कारण होतो भयो ॥ १४ ॥ सब गुणनको प्रकाश करवेवारो सो वो लोकको कमल भयो, तामें श्रीविष्णु प्रवेश करते भये तामें अपने आप वेदमय ब्रह्मा भयो जाको स्वयंभू कहे हैं ॥ १५ ॥ वा कमलकी कलीनके मध्यमें ब्रह्माजीको जब लोक न दीखें तो आकाशमें सब ओर नेत्र घुमाये तब चारों दिशा देखवेको चार मुख होते भए ॥ १६ ॥ प्रलयवायुसों कंपित जलकी लहरनसों भंवर पडवेवारे सागरके जलसों उत्पन्न भये सब लोकनको तत्वयुक्त कमलमें विराजमान सबके आदिदेव ब्रह्मा साक्षात् अपनपेको और कमलको न जानतभये ॥ १७ ॥ जो हम कमलके ऊपर हों सो कौन हो, एक ये कमल जलमें कहांसो भयो, नीचेतक है कि यहां है जो ये यहां स्थित है सो कोई नीचे है ताकरके वर्तमान है याके नीचे याको आश्रय कोउ जरूर होनो चाहिये ये निश्चय भावना होय है। तथा च श्रुतिः "सोऽपश्यत्पुष्करपर्णे तिष्ठन्सोऽमन्यत अस्ति वै तद्यस्मिन्निदमधितिष्ठतीति" ॥ १८ ॥ सो ब्रह्माजी ऐसे देख वा कमलकी नालकरके जलके भीतर चलेगए, पीछे कमलकी नालके भीतर हैके वा कमलके आश्रयको ढूंढतो ढूंढतो नालसों बाहर निकसो परंतु वाको ठिकानो न लगो ॥ १९ ॥ हे विदुर ! अपार अंधकारमें अपने रचवेवारेको ढूंढते भए ब्रह्माको बहुत काल होतो भयो जो विष्णुको सुदर्शनरूप कालचक्र देहधारिनको भय देतो ब्रह्माकी आयुको क्षीण करे है अभिप्राय ये है कि शत संवत्सरतक ढूंढो तोहू पार न पायो ॥ २० ॥ तो अपनी कामना पूरी न हैवेसों निवृत्त होय फेर ब्रह्मदेव अपने कमलपर आयकर बैठे, धीरेसो श्वास जीत सबसों निवृत्त चित्त कर समाधियोगमें लगकर बैठतेभये ॥ २१ ॥ सौ वर्षके उपरांत वा योगसों ज्ञान भयो, सो आप अपने हृदयमें प्रकाशक जिन्हें कभी न देखो तिनको देखते भये ॥ २२ ॥ जो ईश्वर ब्रह्माने देखे उनको नव श्लोकसों वर्णन करे हैं कि कमलनालवत् गौर विस्तृत शेषजीकी शरीररूप शय्यापै एक पुरुष सोते हैं जो दश हजार फणनके छत्ररूप मस्तकनके रत्ननकी कांतिकरके महाप्रलयको अंधकारको दूर करेहै ॥ २३ ॥ संध्याकालीन मेघवत् पीतांबर पहिरे अनेक सुवर्ण शिखर युक्तकिरीट रत्न जलधारा औषधि पुष्प वनमालासों शोभायमान बांसरूपभुजा वा वृक्षरूप चरणवाले हरिन्मणिके पर्वतकी कांतिको अपनी आभासे तिरस्कार करते ॥ २४ ॥ अति दीर्घ विस्तृत अपनो मान करवेवारो लोकत्रयके संग्रह देह करकै तथा विचित्र दिव्य आभरण वस्त्रनकी शोभाकरके देहको अलंकार किये ॥ २५ ॥ अपनी अपनी कामनासों वेदगीत मार्गनसो पूजतेभये मनुष्यनको नखरूप चन्द्रनकी किरणनसो सुन्दर पृथक् पृथक् अङ्गुलीरूप पत्रयुक्त सम्पूर्ण कामनाके देवेवारे अपने चरणकमलको कछु ऊपरको उठायके दिखाय रहे है ॥ २६ ॥ लोककी पीडानाशक मुसकान और सब ओरसे दमकवेवारे कुंडलनसो शोभित लाल कुंदरीफलवत् होठनकी कांति करके सुंदर नाक सुंदर भ्रू संयुक्त मुखसों अपने पूजन करवेवारे पुरुषनको सन्मान कररहे है ॥ २७ ॥ कदंबके केसरवत् पीरो पीतांबर और क्षुद्रघंटिका करके कटिपश्चाद्भाग सुंदर अलंकृत किये है वत्स ! बढमोले हारसों श्रीजीको चिह्न भृगुलता वक्षस्थलमें

---

१ यहां ये समझनो संध्याके बादर जामें लिपटे होय और सुवर्णमय शिखर होय रत्न जामें विद्यमान होय और जलकी धारा औषधि जामें विद्यमान होय और पुष्पनको समूह जामें विद्यमान होय और बांसनकी झाडी जामें लगी होय और जाके वृक्ष जामें विद्यमान होय ऐसे जो पन्नाको पहाड होय तब या रूपकी उपमा देवेमें आवे ऐसी मूर्तिको ब्रह्माने दर्शन कियो इनको कमसो पीतांबर किरीट कौस्तुभ मोतीनकी माला तुलसी वनमाला और भुजाबरणनके उपमेय समझने चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शोभित ॥ २८ ॥ महाचंदन वृक्षरूप करकै वर्णन करैं हैं, कि बढमोले बाजूनकी श्रेष्ठ मणिसों भुजदंड सहस्र शाखातुल्य व्याप्त होयरही है, जैसे चंदनवृक्ष केयूरादितुल्य फल पुष्पादिसों व्याप्त होय हैं अप्रगट जाकी मूल सकल भुवनात्मक वृक्षेंद्र शेषजीके फणनसों स्कंधातिशाखायुक्त ईश्वर है जैसी वेदमें श्रुति हैं " वनस्पते शतवल्शो विरोहेति "जैसे चंदन सर्पनसो वेष्टित होय है, ऐसीही महाशेषजी करकै वेष्टित परमेश्वर है ॥ २९ ॥ चर अचरके निवासरूप भगवान् शेषजीके बंधु जलसों आवृत सहस्रकिरीट सुवर्ण शृंगसमान कौस्तुभ रत्न जिनके स्वरूपमें प्रतीत है रही है ऐसे पर्वतकी शोभा धारण करवेवारे ईश्वरको ब्रह्मा देखतो भयो ॥ ३० ॥ वेदरूप भ्रमरनकरकै शोभायमान अपनी कीर्तिरूप वनमाला कंठमें पहिरै, सूर्य चंद्रमा वायु अग्नि जाकों न जानसकै, त्रिलोकीमें स्फूर्तिवारे रक्षाके निमित्त चारों ओर धावमान सुदर्शनादि शस्त्रके प्रभावसों दुष्प्राप श्रीहरिको दर्शन कियो ॥ ३१ ॥ जा समय भगवान्को देखो वाही समयमें नाभिसरोवरमें कमल अपनो देह, प्रलयको जल, पवन, वायु, आकाश, जगत्के विधान करवेवारे ब्रह्माजी देखते भये, यासों परे लोकके विशेष करके रचवेकी दृष्टि न देखते भए ॥ ३२ ॥ सो ब्रह्मा सब कर्मनको बीज रजोगुणकरकै युक्त प्रजा रचवेकी इच्छाकी दृष्टि करकै, विसर्गमें चित्त लगाये श्रीभगवत्के अप्रगट मार्गमें निवेशितचित्त, ब्रह्माजी स्तुतियोग्य भगवान्की स्तुति करते भए ॥ ३३ ॥

स कर्मबीजं रजसोपरक्तः प्रजाः सिसृक्षन्नियदेव दृष्ट्वा ॥
अस्तौद्विसर्गाभिमुखस्तमीड्यमव्यक्तवर्त्मन्यभिवेशितात्मा ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे ब्रह्मणा सर्वोत्कृष्टश्रीमन्नारायणस्वरूपवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

ब्रह्मोवाच–ज्ञातोऽसिमेऽद्यसुचिरान्ननु देहभाजां न ज्ञायते भगवतो गतिरित्यवद्यम् ।
नान्यत्त्वदस्ति भगवन्नपि तन्न शुद्धं मायागुणव्यतिकराद्यदुरुर्विभासि ॥ १ ॥

अब ब्रह्माजी भगवत्स्वरूपके ज्ञान होजायवेसों अपनी कृतार्थताको प्रसिद्ध करते अज्ञ पुरुषनकों शोचते बोले कि बहुत काल तपकरके अब मैंने आपको जानो देहधारियनकरकै भगवान्की गति नहीं जानीजायहै देहधारीनके यह बडे दोष हैं कि भगवत्स्वरूप आपके तत्वको ये नहीं जाने हैं हे भगवन् ! तुमसो परे और कोई शुद्ध नहीं है, क्योंकि मायागुणनके चलायमान होवेसों तुम बहुत रूप प्रकाश करोहो ॥ १ ॥ अब ब्रह्माजी तुमहू अच्छीतरह हमारे स्वरूपको नहीं जानते हो क्योंकि जो यह रूप तुमने देखोहै सोहू गुणात्मक है और सत्य तो निर्गुण ब्रह्मही है या शंकाको उठायके समाधान करेहै कि ज्ञानरससूर्यके उदयसों जामें तमोगुणको लेशहू नहीं है ऐसो यह तुम्हारो सहस्र अवतारनको बीजरूप स्वरूप है जो तुमने भक्तनपें अनुग्रह करवेके निमित्त धारण कियो है जाके नाभिकमलसों मैं उत्पन्न भयोहूं ॥ २ ॥ हे परम ! हे आत्मन् ! हे आनंदमात्र ! संकल्पविकल्परहित और आनंदघन सदा तेजोमय आपको रूप या शरीरसों भिन्न नहीं या कारणसों जगत्के उत्पन्न करवेवारे जगत्सों पृथक् पंचमहाभूत और इंद्रिनके कारणरूप मैं आपके या स्वरूपकी शरण हूं ॥ ३ ॥ हे भुवनमंगल ! ध्यानमें हमसरीखे उपासकनको चतुर्दश भुवननको मंगलदायक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये स्वरूपको दर्शन करायो ऐसे भगवान्‌के अर्थ नमस्कार होय नरकभागी खोटे प्रसंग करवेवारे या सगुणरूपको तिरस्कार करैहैं ॥ ४ ॥ वेदसों प्राप्त तुम्हारे चरणकमलकी सुगंधिको कर्णविवरनकरके जे सूंघे है जिनने परमभक्तिसे चरण ग्रहण कियेहैं हे नाथ ! ऐसे पुरुषनके हृदयकमलसौं आप नहीं जाओ हो ॥ ५ ॥ जबतक ये लोक आपके अभयदायक चरणनको आश्रय नहीं लेयहैं तबतक याको धन घर और सुहृदनके निमित्त भय होयहै और शोक चाहना अनादर बहुत लोभ मोह होयहै, और आर्तिको मूलमें मेरो तू तेरो ये खोटो आग्रह पीडा होय है ॥ ६ ॥ जे पुरुष सब अशुभनाशक तेरी कथातें विमुख हैके लोभसों भ्रष्टचित्त हैवेके कारण कामसुखलेशमात्रके लिये सदा अपने निमित्त अमंगलदायक कर्म करैहैं वे पुरुष दैवकरके हतबुद्धि हैं अर्थात् वेही दैमारे कहामे हैं ॥ ७ ॥ हे उरुक्रम ! भूख प्यास वात पित्त कफसों वारंवार पीडित और शीत गर्मी वात वर्षासों दुःखी, काम अग्निसो भगवत्‌के अत्यंतक्रोधसे दुःखी इन प्रजानको देखतो भयो मेरो मन बहुत दुःखी होय है ॥ ८ ॥ हे देव ! हे ईश्वर ! जबतक यह प्राणी आपकी इंद्रिय विषयरूप मायासों बुद्धिको प्राप्त भये या देहादिके भेद भावको देखेहै तबतक दुःखसमूह संयुक्त जन्म मरणको देवेवारो यह संसार व्यर्थ है तोहू नहीं छूटै है ॥ ९ ॥ हे देव ! दिनमें क्लिष्ट कर्ममें इंद्रियें मन लगावैं, रातको सोतेमें नानामनोरथमें ध्यान लगाये क्षणक्षणमें निद्रासों जाग उठै हैं दैवने जिनके धनके उद्यमको नष्ट कर दियो ऐसे तुम्हारी कथासों विमुख जे ऋषिलोग हैं वेहू या संसारमें जन्मे मरैं हैं ॥ १० ॥ हे उरुगाय ! हे नाथ ! पुरुषनके भावयोग शोधित हृदयकमलमें श्रवण करवेसों जिनको मार्ग विदित होय है ऐसे आप सदा विराजमान हो और वे भक्तजन अपनी इच्छासों जा जा तेरे रूपको ध्यान करै हैं तैसो तैसो स्वरूप भक्तनपर कृपाकर तुम धारण करोहो ॥ ११ ॥ हृदयमें जिनके अनेक कामना लगी ऐसे देवसमूहनके रचे उपचार आराधनसों तैसे आप नहीं प्रसन्न होओहो, जैसे सब जीवमात्रपर दया करवेवारेपें प्रसन्न होउहो जाको मिलनो अभक्त पुरुषनको दुर्घट है कारण कि तुम सब प्राणिनके अन्तर्यामी रूपसों विराजमान सबके सुहृदरूप हो ॥ १२ ॥ याहीसो पुरुषनको अनेक कर्म यज्ञादिक दान तथा उग्रव्रतसों आपको आराधन करनो यही सब कर्मनको श्रेष्ठ फल है कारण कि आपको समर्पण कियो कर्म कभी नष्ट नहीं होय है ॥ १३ ॥ सदा स्वरूपके तेजसो भेद मोहनाशक, ज्ञान बुद्धियुक्त परेसों परे विश्वकी उत्पत्ति पालन नाशके निमित्त लीला करवेवारे ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ १४ ॥ जिनके अवतारकथन देवकीनंदन आदि, गुणकथन सर्वज्ञ भक्तवत्सल इत्यादि, कर्मकथन गोवर्द्धनोद्धरण कंसारांति इत्यादिकनको, प्राण निकसवेके समय विवश होयकै जिनको नाम लेयहै वे अनेक जन्मके पाप नाश कर शीघ्रही आवरणशून्य सत्यस्वरूप ईश्वरको प्राप्त होयहैं ऐसे अज ईश्वरके हम शरणागत हैं ॥ १५ ॥ मैं शिव विष्णु उत्पत्ति पालन नाशके हेतु जाकी जड, ब्रह्मादिक तीन जाके बडे स्कंध, मरीचि मन्वादिरूप जाकी बहुत शाखा होय एक वृक्षरूप होयकर जो बढैहै वा भुवनद्रुम भगवान्‌के अर्थ नमस्कार होय ॥ १६ ॥ यह लोक विरुद्धकर्ममें सदा लगे रहैहैं, और कुशलदाता आपके पूजनरूप कर्म करवेकी जो आपने आज्ञा कीनी कर्ममें चित्त नहीं लगावैं हैं। जो भगवद्गीतामें आपने कहीहै कि " यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् । यत्तपस्यसि कौंतेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥ " याही कारणसों बली काल विनकी जीवेकी आशाको काटैहै वा अकुंठगति कालरूप तुमको नमस्कार होय ॥ १७ ॥ सबके पूजनीय और द्विपरार्द्धकाल पर्यन्त निश्चल रहिवेवारे स्थानमें स्थित मैं हूं जासों सदा डरपो हूं और जा पदकी आरोहणकी इच्छासो मैंने बहुत वर्षनतक तप

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कियो वा यज्ञपति भगवान् आपको मैं प्रणाम करूंहूं ॥ १८ ॥ पक्षी मनुष्य देवता आदि योनिनमें अपनी इच्छाकरके अपने करेभए धर्मसेतुनकी पालनकी इच्छा करके जो रमण करते भए और जो विषयसुखरहित हो तोहू जाने देह धारण कियो है वा पुरुषोत्तम भगवान्के अर्थ नमस्कार होय। पुरुषोत्तम वे है जाको गीतामें श्लोक है "यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः। अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥ १ ॥" ॥ १९ ॥ तम मोह महामोह तामिस्र अंधतामिस्र या पांच प्रकारकी अविद्या करके जो रहितहू है सब लोक जिनके उदरमें हैं सो ईश्वर भयंकर लेहरोंकी मालासों युक्त जलमें शेषशय्यापें शयन करवेसों अनुकूल निद्राको प्राप्त हो संसारीजननको निद्रासुख दिखावतो भयो ॥ २० ॥ हे स्तुतियोग्य ! त्रिलोकीके रचवेको पात्र जिनकी कृपासों नाभिकमलसों हम भये, जाके पेटमें विश्व योगनिद्राके अंतमें प्रफुल्लित कमलके समान नेत्रवारे तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय ॥ २१ ॥ ये समस्त जगत्के सुहृद शरणागतनके प्रिय एक आत्मा जा सत्व ऐश्वर्यसों विश्वको सुख देते हैं वोही दिव्य दृष्टि हमें मिले जैसे पहिलेकी नाईं मैं या विश्वको रचूं ॥ २२ ॥ ये शरणागतके वरदाता श्रीमहालक्ष्मी अपनी शक्तिसों सगुण अवतार होय जो जो करैंगे, अपने प्रभावसूचित या विश्वको रचतेभये मोको या विश्वके रचवेमें प्रवृत्त करो जैसे में आसक्त न हूं और उससे किये भये कर्मनके पापनकों त्याग करौ ॥ २३ ॥ अनंत शक्ति जा पुरुषकी नाभिसरोवरसों जलमें विज्ञानशक्तिरूप में भयो, या भगवान्को विचित्ररूप जो जगत् ताको विस्तार करौ ऐसो जो में हौं ता मेरो वेदकी अवयवभूत अर्थात् वेदार्थरूप वाणीनको जो विसर्ग है नाम उच्चारण है सो लुप्त मत होउ अर्थात् जैसे हलके ग्रहणसो ब्रह्म तेज जातो रहे है ऐसो मेरो कहो मिथ्या मत होउ लुप्त न होय " रिपेर्हिंसार्थकस्य यङ्लुङंतात्कर्मकर्तरि लिङि छांदसं रूपम् " ॥ ॥ २४ ॥ सो महादयालु भगवान् अत्यंत बढेभये प्रेमकी मुसकानसो नयनकमलको प्रकाश करते उठके विश्व विजयके अर्थ हमारे क्लेशको मीठी वाणी करके पुराणपुरुष दूर करै ॥ २५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि, तप विद्या समाधिके प्रभावसों अपने उत्पन्न करवेवारे प्रभुको दर्शन कर ब्रह्माजी जहांतक मन वचन पहुँचो तहांतक स्तुति कर खेदित भएकी तरह चुप्प है गये ॥ २६ ॥ वा कल्पके अंतमें प्रलयके जलसों खेदित ब्रह्माको अभिप्राय मधुसूदन जानके ॥ २७ ॥ आत्मसंबंधी लोककी स्थितिके विज्ञानमें अति खेदित ब्रह्माको मोह दूर करत वा खेदको दूर करनेसे भगवान् गंभीर वाणीसों ब्रह्मासे यह बोले ॥ २८ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे वेदगर्भ ! हे ब्रह्मन् ! आलस्य मत करो विश्व रचवेमें उद्यम करो जो तुमने मोसों प्रार्थना कीनी सो हमने पहिलेहीसों सब करदीनो ॥ २९ ॥ हे ब्रह्मन् ! फेर तुम तप करो और मेरी आश्रय विद्यामें स्थित होउ वा तपसों और मेरी विद्यासों विस्तृत सब लोकनको हृदयमेंही देखोगे ॥ ३० ॥ हे ब्रह्मन् ! ता पीछे आत्मामें लोकमें भक्तियुक्त सावधान होय मोको व्याप्त देखोगे लोकनको मोमें देखोगे और जीवनको देखोगे ॥ ३१ ॥ जैसे काष्ठमें अग्नि स्थित रहै है तैसे सब जीवनमें जब तुम मोको देखोगे तो सब कश्मल वाही समय जातोरहैगो जो कोउ अंतर्यामी मोको सब जगत्में देखेहै तभी वाके सब खेद दूर है जाय हैं ॥ ३२ ॥ भूत इंद्रिय अंतःकरण गुण इनसे रहित आत्माको मेरे स्वरूप करके युक्त जब देखोगे तब अपने स्वाराज्यपदको प्राप्त होओगे ॥ ३३ ॥ नाना कर्मनके विस्तारकरके प्रजा बहुत रचवेवारे तुमारो आत्मा नहीं फसैगो, कभू दुःखी नहीं होयगो यह बडी भारी मेरी कृपा है ॥ ३४ ॥ आद्य ऋषि तुमको ये पापी रजोगुण नहीं बाधेगो, प्रजा रचते समयमेंहू जो तुमने मन मोमें लगायो है ॥ ३५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देहधारिनसो नहीं जानवे योग्य मोको तुमने जानो अब भूत इंद्रिय गुण और अहंकारसो जो तुमने मोको अलिप्त मानो सो ठीक है ॥ ३६ ॥ कमलकी नालके द्वारा जलमें कमलकी जडको ढूंढते तुमको मेरी जानवेकी इच्छा भई, तब मैंने अपनो स्वरूप तुमारे हृदयमें दिखायदीनो ॥ ३७ ॥ हे ब्रह्मन् ! जो मेरी तुमने स्तुति कीनी मेरी कथाको जामें कि उदय है और तेरी जो तपमें निष्ठा है ये मेरो अनुग्रह है ॥ ३८ ॥ हम तुमपर प्रसन्न भए; तुम्हारो कल्याण होय, जो लोकनकी विजयकी इच्छा करके तुमने निर्गुण मोको गुणमय रूपवर्णन करके स्तुति कीनी ॥ ३९ ॥ जो पुरुष या स्तोत्र करके स्तुति करै मोको भजै तापें सब कामवरके दैनवारे ईश्वर हम प्रसन्न होयहैं ॥ ४० ॥ कुआ बावडी बनायवेसो तपसो यज्ञसो दानसो योगसो समाधिसो पुरुषनको ये सिद्धांत है कि मेरी प्रीति होनी ये तत्त्ववेत्तानको मत है ॥ ४१ ॥ हम सबकी आत्मा हैं सब आत्मानके धारण पोषण करवेवारे हैं, प्यारनके प्यारे हैं यासों मेरेमें प्रीति करै मेरेमें प्रीति करवेके निमित्तही देह आदि प्रीतिके पात्र हैं ॥ ४२ ॥ सब वेदमय मेरी आत्मा तुम हो मैंही तुम्हारो आदिकारण हूं, जो प्रथम मेरेमें प्रजा लीन ही वाको जैसे पहिले ही वैसेही रचो ॥ ४३ ॥ मैत्रेयजी बोले कि प्रधानके पुरुष ईश्वर जगत्के रचवेवारे ब्रह्माको ऐसे अपनो रूप दिखाय अंतर्द्धान होते भये ॥ ४४ ॥

मैत्रेय उवाच–तस्मा एवं जगत्स्रष्ट्रे प्रधानपुरुषेश्वरः ॥
व्यज्येदं स्वेन रूपेण कञ्जनाभस्तिरोदधे ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे भगवदंतर्द्धानवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

विदुर उवाच–अंतर्हिते भगवति ब्रह्मा लोकपितामहः ॥
प्रजाः ससर्ज कतिधा दैहिकीर्मानसीर्विभुः ॥ १ ॥

विदुरजी बोले कि लोकपितामह ब्रह्माजीने जब भगवान् अंतर्धान हैगये तब दैहिकी मानसी कितनी प्रजा रची अर्थात् मनसों तो कौनसी प्रजा रची और देहसों कितनी प्रजा रची सो कहो ॥ १ ॥ हे बहुवित्तम ! हे भगवन् ! जे बातें तुमसो पूछी विनको प्रथमसो लेके कहो हमारे सब संशय काटो ॥ २ ॥ सूतजी बोले कि हे शौनक ! विदुरजीने मैत्रेयमुनिको ऐसे प्रेरणा करी तब प्रसन्न होय जो हृदयमें स्थित प्रश्न हैं विनको कहिते भये ॥ ३ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ब्रह्माजी दिव्य सौवर्षतक भगवान्में मन लगाय तप करते भये, जो अजन्मा भगवान्ने कही सो करते भये ॥ ४ ॥ जा कमलपे ब्रह्माजी बैठे हैं वा कमल और जलको प्रलयकालके पराक्रमी वायुसों कंपित देख ॥ ५ ॥ बढेभए तप और आत्मविद्यासों ब्रह्माजी पवनके साथ वा जलको पीगये कारण कि वा समय वाको विज्ञानबल अधिक बढगयो हो ॥ ६ ॥ जा कमलपें बैठे हे वाको आकाशमें व्याप्त देख ये विचारो कि या कमलकरकै पहिले लीन भये लोकनको मैं रचूंगो ॥ ७ ॥ भगवतकरकै अपने कर्ममें प्रेरित वा कमलपें बैठके एक विश्वको त्रिलोकीरूप करके चतुर्दशभुवनरूपसो बहुत प्रकारसो विभाग करतेभए ॥ ८ ॥ यह त्रिलोकीरूप जीव मात्रके कर्म फलकी भोग भूमिकी रचना इतनीही है क्योंकि निष्कामधर्मको फलरूप यह ब्रह्मलोक है जाकी प्रतिदिन उत्पत्ति होय है और जन तप सत्यलोक निष्काम कर्मके फलरूप हैं विनको ब्रह्माजीके प्रतिदिनमें नाश और जन्म नहीं होयहै

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विन लोकनिवासिनकी परान्तमें मुक्ति होय है ॥ ९ ॥ विदुरजी बोले कि हे ब्रह्मन् ! ब्रह्मरूपी अद्भुतकर्मकारी हरिको जो तुमने कालरूप लक्षण कह्यौ सो वो काल कहां है और वा कालको सूक्ष्मरूप कौनसो है और स्थूलरूप कौनसो है सो हमसे वर्णन करो ॥ १० ॥ मैत्रेयजी बोले कि सामान्यसो कालको स्वरूप यहां कहें हैं, आगेकी अध्यायमें विशेष करके कहैंगे ॥ गुणनको औरसो और आकार करनो, जाको कोई विशेषण नहीं, एक जगे रहै नहीं, सबको उपादान कारण, आप ईश्वरको आत्मा ऐसे कालको ईश्वर लीला करकै रचते भये ॥ ११ ॥ निश्चय है कि विश्व ब्रह्मस्वरूपही है, विष्णुकी मायाकरके संहार कियो जाय है और अप्रगट मूर्ति कालस्वरूप ईश्वरसों पृथक् प्रकाशित है ॥ १२ ॥ जैसे अब है ये विश्व तैसोही आगे हो पीछेहू ऐसोही हो, परंतु या संसारके रचनाको प्रकार नवविध है तिनमें एक प्रकृतिसो होयहै, और एक विकारसो होयहै ये दशमसर्ग हैं ॥ १३ ॥ केवल कालसो नित्य प्रलय होय है संकर्षणकी अग्निरूप द्रव्यसो नैमित्तिक प्रलय होय है, अपने अपने कार्यनके ग्रसवेवारे गुणनसो प्राकृतिक प्रलय होयहै ये तीन प्रकारको प्रलय होय है, प्रथम प्रलय ये है कि महत्तत्त्वको सर्ग गुणनकी विषमतासो सर्व व्यापक ईश्वरसों होय है ॥ १४ ॥ द्रव्य ज्ञान क्रियाको उदय दूसरो नाम उत्पत्ति जामें ऐसो जो अहंकारको सर्ग है सो सर्ग है, तिनकी तन्मात्रा युत द्रव्य शक्तिमान् जो भूतसर्ग है सो सर्ग तीसरो है ॥ १५ ॥ ज्ञान और क्रियाकी आत्मा चौथो इंद्रियनको सर्ग है, विकारी देवतानको सर्ग पांचमो है, सो मन है वो सात्विक है ॥ १६ ॥ हे प्रभो ! और छठो अज्ञानिनको करो तमगुणको सर्ग है ये छै प्रकृतिके सर्ग हैं अब जे विकारी सर्ग हैं विने सुनो ॥ १७ ॥ रजोगुणको अंगीकार करनेवारे पापनाशक भगवान् हरि पूजनीयकी ये लीला है, सप्तम मुख्य सर्ग है वो छै प्रकारको है जामें स्थावरनकी रचना है ॥ १८ ॥ षड्विध सर्ग ये हैं कि, जो विना पुष्पके फले हैं वे वनस्पति हैं और फलपाक हैवेसो जिनको अंत होय वे औषधी हैं, सहारेसों बढें वे लता हैं, बांस इत्यादि त्वक्सार हैं बहुत कठनसो कोई आसरेसो बढैं, वे वीरुध हैं, फूल आयके पीछे फल लगे वे द्रुम हैं, इनको आहार संचार ऊपरको होय है तामसी हैं चैतन्य अप्रगट हैं, भीतरसे स्पर्शको जानें हैं, इनके बढने घटनेको प्रमाण नहीं है अनेक भेद होय हैं ॥ १९ ॥ पशुनको सर्ग आठवों अट्ठाईस तरहको है कल्प कहा होयगो ये ज्ञानरहित हैं आहार आदि ज्ञानमात्र जानें हैं, नाकसो अपनेको इष्ट अर्थ जानलैय हैं दीर्घ ज्ञानशून्य हैं । तहां वेदमें श्रुति है कि " अथेतरेषां पशूनामशनापिपासे एवाभिविज्ञानं न विज्ञातं वदंति, न विज्ञातं पश्यंति, न विदुः इवस्तनं, न लोकालोकाविति " ॥ २० ॥ अट्ठाईस भेद कहेहै कि, गौसों आदि ले ऊंटतक द्विशफके दोखुरके नौ है गौ, बकरा, भैंसा, कृष्णसार मृग, सूकर, लीलगाय, रुरुमृग, भेड, ऊंट, हे सत्तम ! इन पशुनके खुर दो तरहसे चिरेहैं ॥ २१ ॥ गधा, घोडा, खिच्चर, गौर मृग, चित्र मृग, चमर जाके होय वो गाय, हे विदुर ! इनके खुर चिरे नहीं हैं अब पांच नखके पशु सुनो ॥ २२ ॥ कुत्ता, गीदड, भिडिया, बघेरा, बिलाव, खगोस, सेहि, सिंह, बंदर, हाथी, कछुआ, गोह, मगरादिक इनके पांच नख हैं ॥ २३ ॥ काग, गीध, बदक, शिकरा, मुर्गा, भालु, मोर, हंस, सारस, चकवा, श्वेत काग, उल्लू ये पक्षी हैं ॥ २४ ॥ हे विदुर ! नीचेको प्रवाह जाको ऐसो ये नवम सर्ग मनुष्यनको है राजस अधिक है, कर्मपरायण हैं दुःखमें सुख माने है ये सर्ग एक प्रकारकोही है ॥ २५ ॥ हे सत्तम ! ए तीनौ सर्ग वैकृत है और देवसर्ग जो है सोउ वैकृत और वैकारिक जो देवसर्ग है सो प्राकृतनमें पहलेही कह्यो है और जो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कौमार सर्ग है सो दोनों तरहको है ॥ २६ ॥ देवसर्ग आठ प्रकारको हैं, विबुध, पितर, सुर, गंधर्व, अप्सरा, सिद्ध, यक्ष, राक्षस, चारण ॥ २७ ॥ भूत, प्रेत, पिशाच, विद्याधर, किन्नरादिक हैं हे विदुर ! विश्वके रचवेवारे ब्रह्माके बनाये ये दश सर्ग मैंने तुमारे अगारी कहे हैं ॥ २८ ॥ यासो परे अब वंश और मन्वंतर कहें हैं, ऐसे रजोगुणावतार ब्रह्मा हरि भगवान् स्वयंभूही अपने स्वरूपसों कल्पके आदिमें जगत्को उत्पन्न करै हैं ॥ २९ ॥ पूर्णसंकल्प है सो आपही आपको रचै है, सदा शुद्ध-स्वरूपी ये ईश्वरही सब होय हैं ॥ ३० ॥ गुणनके उलटे हेवेसो या सर्गमें मायावेत्ता ईश्वरकी पूर्वापार मालूम नहीं पडै है, जैसे नदीमें घूमती नावमें पूर्वापरको भ्रम है जायहै ॥ ३१ ॥ हे विदुर ! या कल्पमें देव असुरादिक जो हमने कहे है सोही और मन्वंतरमें नामरूपते होतेभए ॥ ३२ ॥

देवासुरादयःक्षत्तःकल्पेऽस्मिन्ये च कीर्तिताः ॥
त एव नामरूपाभ्यामासन्मन्वन्तरान्तरे ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे दशविधसर्गवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

मैत्रेय उवाच-चरमः सद्विशेषाणामनेकोऽसंयुतः सदा ॥
परमाणुः स विज्ञेयो नृणामैक्यभ्रमो यतः ॥ १ ॥

अब मैत्रेयजी कालको विशेष लक्षण कहै हैं, सो सुनो । मैत्रेयजी बोले कि सद्वस्तुनके नाम हो ता वस्तुनके विशेषनको जो अंत, जाको विभाग न होयसकै और अनेक काऊमें मिलें नहीं, सदा रहै वो परमाणु जानो, जिन परमाणूनते मनुष्यनको एकको भ्रम होय है अर्थात् अवयवी बुद्धि होय है ॥ १ ॥ जो सत् पदार्थ है वह अपने स्वरूपमें स्थित है वो केवल अत्यंत महा बडा है जाको कोई विशेषण नहीं है निरंतर है वाको परममहान् कहै हैं ॥ २ ॥ हे सत्तम ! सूक्ष्म स्थूल रूप करकै ऐसेही कालकोहू अनुमान कीनो है अर्थात् अव्यक्त स्वरूप विभु काल अपने परमाणु आदि अवस्थानकी व्याप्तिसों व्यक्तपदार्थको परिच्छेद करै है ॥ ३ ॥ सो काल परमाणु है जो परमाणुभावको भोगेहै, और जो वाके विशेषको भोगे वाको परममहान् नाम है सो काल बहुत बडो है " याको ये अर्थ है कि ग्रह नक्षत्र तारा चक्र इत्यादिसों सूर्यको पर्यटन कहैं हैं तहां सूर्य जितने परमाणुके देशको उल्लंघन करै वा कालको नाम परमाणु है जितनी द्वादशराशिरूप होय सब ब्रह्मांडमें विचरैहै वो परम महान् संवत्सर कहावै है. या क्रमसो युग मन्वंतर आदि क्रमकरकै द्विपरार्ध अंतकाल होय है ये कालको विभाग पंचमस्कंधमें कहेंगे " ॥ ४ ॥ दो अणुसे परमाणु होयहै, तीन परमाणुको एक त्रसरेणु होयहै, वो त्रसरेणु झरोखानमें सूर्यकी किरणसो दीखेहैं, जो अतिसूक्ष्मतर है सो नीचे पृथ्वीमें नहीं आवैहैं. आकाशकोही उडके जाते दीखेहै ॥ ५ ॥ वे त्रसरेणु तीन मिलकै चुटकी बजावे इतनो काल होयहै वा कालको नाम त्रुटि है सौवेर चुटकी बजायकर जो काल व्यतीत होयहै वाको वेध कहेहैं, ऐसे तीन वेध इकट्ठे होय तो वा कालको नाम लव होयहै ॥ ६ ॥ तीन लवको एक निमेष होयहै ऐसो जानो तीन निमेषको एक क्षण होयहै, पांच क्षणकी एक काष्ठा होयहै पंद्रह (१५) काष्ठाको एक लघु होयहै ॥ ७ ॥ पञ्चदश (१५) लघुनकी

१ भोग है जैसे हरएक वस्तुके परमाणु है ऐसेही कालकेहू परमाणु जानने ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नाडी कहतेहैं और ऐसी दो नाडिनको मुहूर्त्त कहे हैं, और छह नाडिनको अथवा सात नाडिनको प्रहर बोलतेहैं, और याम ऐसेहू बोलतेहैं, सो याम दिन और रात्रिको चौथो हिस्सा होयहै, घटे दिननमें छह घडीको और बढेनमें सात घडीको ऐसो जानना चाहिये किंवा शब्द या श्लोकमें अनियम अर्थको कहे है क्योंकि नित्य नित्य दिन और रात्रि इनके घटने बढनेको गिननेमें बहुत हैरानी है या लिये छह और सात घटीको स्थूल प्रमाण पकर लियो है ॥ ८ ॥ एक घटीको उन्मान कहतेहैं कि छह ६ पलभर तांबेको पात्र होवे सो पलको प्रमाण भास्कराचार्यने लिखो है कि " दशार्द्धगुञ्जं प्रवदन्ति मापं मापाह्वयैः षोडशभिश्च कर्षम् ॥ कर्षैश्चतुर्भिश्च पलं तुलाज्ञाः " इति । अर्थ–पांच ५ गुञ्जाभरको मापो कहे हैं गुञ्जानाम चिरमठीको है और भास्कराचार्यने तो दो जवभरकी गुञ्जा कही है सोही " तुल्या यवाभ्यां कथिताऽत्र गुञ्जा " इति वचन है और सोलह १६ मासेभरको एक कर्ष होयहै और चार कर्षको एक पल होयहै ऐसे ३२० गुञ्जानको एक पल होय है । ऐसे छह ६ पलभर तांबेको पात्र बनावे और वा पात्रमें चार ४ मासेभर सोनेकी बराबर गोल बनी भई शलाकासों छिद्र करे वा छिद्रसो जितने समयमें प्रस्थभर जलके प्रवेश हैवेसो वह पात्र जलमें डूब जाय वितने समयको घडी कहे हैं, शिरोमणिके अनुसारही प्रस्थको प्रमाण, हातभर ऊंचो चौडो लम्बो और बारह कोणवारो पात्र खारी होय है और याको सोलहवों हिस्सा द्रोण कहावे हैं और द्रोणके चतुर्थ भागको आढक कहे हैं, और आढकके चतुर्थ भागको प्रस्थ कहे हैं, प्रस्थ जल वाको जाननो चाहिये कि जो खारीभर जलके सोलहवें हिस्साको चौथो हिस्सा है ॥ ९ ॥ चार चार प्रहरके मनुष्यनके दिन रात होयहै हे मानद ! पंद्रह २ दिनके शुक्ल और कृष्ण पक्ष होयहै ॥ १० ॥ दोनो इकट्ठे हैवेसो एक मास होयहैं वह पितरनको एक अहोरात्र होयहै ॥ ११ ॥ दो मासकी एक ऋतु, और छह मासको अयन, एक दक्षिण और एक उत्तर और येही दोनों अयन क्रमसो देवतानके दिन और रात्रि होतेहैं और बारह १२ मासको संवत्सर होयहै सो १०० वर्षकी मनुष्यनकी परम आयु होयहै ॥ १२ ॥ या क्रमसों ये सूर्य उदय अस्त हैकै जगत्की आयु क्षीण करेहै यह कहेहैं कि ग्रह चंद्र आदि, ऋक्ष अश्विनी आदि, तारा और नक्षत्र करके उपलक्षित कालचक्रमें स्थित कालात्मा व्यापक समर्थ सूर्यनारायण परमाणु आदि और बारह राशिप्रमाण संवत्सर करके भुवनकोशको पर्यटन करे है ॥ १३ ॥ हे विदुरजी ! संवत्सर, परिवत्सर, इडावत्सर, अनुवत्सर, वत्सर ये वर्षनकी संख्या कही हैं ॥ १४ ॥ " संवत्सरादि भेद सौर बार्हस्पत्य सावन चांद्र नाक्षत्र मासके भेदसों जाननो जब शुक्लपक्षकी पडवाको संक्रांति होयहै तब सौर चांद्रमाससो एक संग वर्ष प्रवृत्त होयहै, और सौर मानसों वर्षमें छै दिन बढे हैं और चांद्रमान करके वर्षमें छै दिन घट जायहै ऐसे बारह दिनके घटवे बढवेसो दोनोंको आगो पीछो होयहै ऐसे विचारसो पांच वर्ष होयहै तिनके बीचमें दो मलमास होयहैं फेर छठो संवत्सर होयहै " ऐसे कालात्मा सूर्यनारायणको अप्रमत्त होके नित्य पूजन करें या बातको कहे हैं यः सृज्य इत्यादि श्लोकसो अंकुर आदि कार्य जाको विषय ऐसे बीज आदिकनकी शक्तिको कालरूपी अपनी शक्तिसो बहुत प्रकारसो कार्यके सन्मुख करतोभयो अन्तरिक्षमें धावन करेहै, महाभूतविशेष तेजोमंडलरूपी सूर्यको दौरेहै कि पुरुषनके मोहके दूर करवेके लिये अर्थात् दिनरात्रिके प्रमाणसों आयुआदिके क्षीण हैवेसों विषयनमें लगीभई प्रीतिको छुडावेहै, और सकाम पुरुषनको तो गुणमय स्वर्गादि फलको यज्ञनसो विस्तार करवावेहै, ऐसे संवत्सरपञ्चकके प्रवर्तककी पूजा करो ॥ १५ ॥

१ एक पक्के टंकाभर तोलको नाम पल है ॥ २ यहां प्रस्थ नाम एक सेरभरको जाननो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विदुरजी बोले कि पितर देव मनुष्यनकी आयु आपने कही, अब जो या कल्पसो बाहिर ज्ञानी लोग हैं विनकी गति कहो ॥ १६ ॥ निश्चय है कि कालरूप ईश्वरकी गति आप जानोहो, जो धीर लोग हैं वे योगाभ्यासकी सिद्धिके नेत्रनसो विश्वको सब जानें हैं ॥ १७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि सतयुग त्रेता द्वापर कलि ये चारयुग सन्ध्या और सन्ध्यांशके सहित दिव्य द्वादशहजार वर्षनसों निरूपण करे हैं ॥ १८ ॥ तहां फिर बारह हजार दिव्यवर्षनकी ऐसी व्यवस्था है कि कृतयुगको प्रमाण तो चार हजार ४००० दिव्य वर्ष, और याके सन्ध्यांशको प्रमाण आठ सौ ८०० दिव्य वर्ष, और त्रेतायुगको तीन हजार ३००० दिव्य वर्ष, और याके सन्ध्या और सन्ध्यांशको प्रमाण छह सौ ६०० दिव्य वर्ष, और द्वापरयुगको प्रमाण दो हजार २००० दिव्य वर्ष, और याके सन्ध्या और सन्ध्यांशको प्रमाण चार सौ ४०० दिव्य वर्ष और कलियुगको प्रमाण एक हजार १००० दिव्य वर्ष, और याके सन्ध्या और सन्ध्यांशको प्रमाण दो सौ २०० दिव्य वर्ष ये कहे हैं, इस सबके जोड देवेसो सन्ध्या और संध्यांशके सहित चारों युगनको प्रमाण बारह हजार १२००० दिव्य वर्ष होयहै, मनुष्यनके एक वर्षको देवतानको एक दिनरात्रि होयहै ऐसे मनुष्यनके तीन सौ साठ ३६० वर्षनको देवतानको एक वर्ष होयहै, या स्थूल मतके मानवेसो १४४०००० मनुष्यनके वर्षनसो कृतयुगको प्रमाण होय है, याके सन्ध्या और संध्यांशको प्रमाण २८८००० मनुष्यवर्ष होय हैं और त्रेतायुगको प्रमाण १०८०००० मनुष्यनके वर्ष होयहैं और त्रेतायुगके सन्ध्या और अंशका प्रमाण २१६००० मनुष्यनके वर्ष होयहैं और द्वापरयुगको प्रमाण ७२०००० मनुष्यनके वर्ष होय हैं और द्वापरयुगके सन्ध्या और अंशको प्रमाण १४४००० मनुष्यनके वर्ष होयहैं और कलियुगको प्रमाण ३६०००० मनुष्यनके वर्ष होय हैं और कलियुगके सन्ध्या और अंशको प्रमाण ७२००० मनुष्यनके वर्ष होय हैं या तरह सन्ध्या और अंशके सहित चारों युगनको प्रमाण ४३२०००, मनुष्यनके वर्ष होय हैं ॥१९॥ दिव्य वर्षनके सैकडानसों जिनको प्रमाण कह्यौ वे सन्ध्या और अंश हैं और विनके बीचमें जो काल है वाकी युगसंज्ञा है कि जामें यज्ञ आदि युगधर्म विशेषको विधान है और साधारण धर्म तो संध्या और अंशमेंहू होयहै युगके आदिमें सन्ध्या और अन्तमें अंश होय है ॥ २० ॥ कृतयुगमें चारों पांवनको सब धर्म मनुष्यनको सेवन करै है, और वही धर्म त्रेता आदि युगनमें एक एक पांवसो रहित होय है, जैसे जैसे एक एक पांवसो अधर्म बढै है, ऐसे २ कलियुगमें तीन पांवनसो रहित धर्म रहै है यह कथन केवल वैराग्यके लिये है कछु धर्मके त्यागके लिये नहीं है ॥ २१ ॥ त्रिलोकीसो बाहर महर्लोकसों आदि ले ब्रह्मलोकपर्यन्तमें हजार १००० चतुर्युगीको अर्थात् एक हजार चौकडीको एक दिन होय है और हे तात ! विन लोकनमें रात्रिहू हजार १००० चतुर्युगी प्रमाण होय हैं, कि जा रात्रिमें विश्वको रचवेवारो ब्रह्मा शयन करै हैं ॥२२॥ निशाके अंतमें लोकनकी रचनाको प्रारंभ होय है, जा ब्रह्माके दिनमें चौदेहो मनु भोगे हैं ॥ २३ ॥ इकहत्तर युगतक नाम चौकडी ताई एक २ मनु अपने अपने कालको भोगे हैं मन्वंतरोंमें मनु उनके वंश ऋषि देवता होवे हैं ॥ २४ ॥ सप्त ऋषि गंधर्व ये सब क्रमकरके होय हैं और इंद्रादिक और जे विनके पीछेके इंद्रादिक वे एक संग होय हैं ॥ २५ ॥ त्रिलोकीको प्रवर्तक ये ब्रह्माजीके दिनदिनकी रचना है जा दिनमें पशु मनुष्य पितर देवता इनको जन्म कर्मनकरके होय है ॥ २६ ॥ मन्वंतरनमें भगवान् अपनी मूर्तिनकरके सत्यगुणको धारण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करै है और अपने पुरुषार्थको उदयकर मन्वादिकनसों विश्वकी रक्षा करै है ॥ २७ ॥ तामस अंशको ग्रहणकर अपनो विक्रम रोकैहै समय पायकर सब अपनेमें लीन देख सायंकालके समयमें चुप्प होकर रहैं हैं ॥ २८ ॥ भू आदि लोक तिनमें लीन हैजांय हैं, निशा प्रवृत्त होवेसो चंद्र सूर्य नहीं रहै है ॥ २९ ॥ संकर्षणकी अग्निसों जब त्रिलोकी भस्म होय है तब वा गर्मीसों पीडित भृगु आदि ऋषीश्वर महर्लोकसों जनलोकको चलेजांय है ॥ ३० ॥ कल्पके अन्तमें बढो भयो और प्रचंड पवनके प्रभावसों चलायमान लहरनवारो क्षुभित समुद्र त्रिलोकी डुबाय देय है ॥ ३१ ॥ शेषजीके आसनपर श्रीहरि वा जलमें योगनिद्रासो नेत्र मूंद जनलोकवासी ऋषियनसों स्तुतिको प्राप्त होके विराजै हैं ॥ ३२ ॥ कालकी गतिसो उपलक्षित दिन रातकरके या प्राणीकी आयु क्षीण करैहैं, परम आयु सौ १०० वर्षकी है और एक हजार चौकडीको जा ब्रह्माको दिन ऐसे तीस दिनरातको एक मास ऐसे मास बारहको एक वर्ष ऐसे सौ वर्षकी ब्रह्माकी आयुष्य है पन कोउ यह न जाने कि यह ब्रह्माकी आयु काहेको पूरी होती होयगी सो संदेह न करनो वहां ये आयु हमें तुमें बडी मालूम परै है पन वहां ऐसे जाननो कि जानो वीतगई याको वीतते नेकहू देर नहीं लगैहै ऐसे जाननो ॥ ३३ ॥ जो ब्रह्माकी आधी आयु है वाको परार्द्ध कहैं हैं पूर्व परार्द्ध है चुको अब अपरार्ध प्रवर्त भयो है ॥ ३४ ॥ पूर्व परार्द्धके आदिमें ब्रह्मनामक कल्प होतो भयो जहां ब्रह्माजी भए वाको शब्दब्रह्म कहैं हैं ॥ ३५ ॥ ताके अंतमें जो कल्प भयो वाको पाद्म नाम है जो श्रीहरिके नाभिसरोवरसों सब लोकको उत्पादक कमल भयो ॥ ३६ ॥ हे भारत ! ये कल्प तो कह्यो दूसरो वाराह कल्प भयो जहां श्रीहरि भगवान् शूकर भए ॥ ३७ ॥ अचिन्त्यशक्ति कार्यनकी उपाधिरहित, अनंत अनादि जगत्की आत्मा ईश्वरको ये द्विपरार्द्ध निमेष काल कह्यो जाय है कछु या क्रमसे आयुकी गणना नहीं जाननी ॥ ३८ ॥ परमाणु आदि द्विपरार्द्धपर्यंत यह ईश्वर काल जो धाम मानी ब्रह्मा इंद्र वरुण कुबेर आदिको अपने वशमें करनवारो है सो यह काल भूमापुरुष श्रीभगवान्को अपने वश करवेको समर्थ नहीं हैसके है अर्थात् जैसे ब्रह्मादिकनकी आयुको पूरी करै है ऐसे प्रभुकी आयुकी इयत्ता नहीं कर सकैहै ॥ ३९ ॥ सब विकारनसों युक्त विशेष आदि पृथिवी आदि आठ आवरणनसों वेष्टित बाहिरसो ये अंडकोश पंचाश कोटि योजनको विस्तृति है ॥ ४० ॥ एक सौ एक दश गुण आठआवरण युक्त यह ब्रह्मांड जिनके विषे एक परमाणुसो प्रतीत होय है ऐसे पृथ्वी आदि एक एकसों दशगुने आवरणनसों ढके करोड ब्रह्माण्ड जाके रोम रोममें पडे गूलरके भुनगानाईं झूलै हैं ॥ ४१ ॥ वा सब कारणनके कारण अक्षर "बृहत्त्वादि गुणविशिष्ट चैतन्यको ब्रह्म कहैं हैं" वो सर्वव्यापक महात्मा पुरुष विष्णुको सर्वोत्तम स्वरूप है ॥ ४२ ॥

तदाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम् ॥
विष्णोर्धाम परं साक्षात् पुरुषस्य महात्मनः ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे परमाण्वादिद्विपरार्द्धपर्यंतकालस्वरूपेश्वरवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

---

१ वो ब्रह्म ऐसे होय है भक्तनके कारण " ब्रह्मैं ढूंढो पुराण न वेद न भेद सुनो चितवौ गुणौ चाय न । देख्यो सुनो न कबहुँ कितहुँ वह कैसो स्वरूप है कैसो सुभायन ॥ हेरत हेरत हार परो रस खान बतायो न लोग लुगायन । देख्यो कहो वह कुंजकुटीतट बैठ्यो पलोटत राधिका पायन ॥ १ ॥"

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १२.

मैत्रेय उवाच–इति ते वर्णितः क्षत्तः कालाख्यः परमात्मनः ॥
महिमा वेदगर्भोऽथ यथाऽस्राक्षीन्निबोध मे ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि हे विदुर ! कालरूप परमात्माकी ये महिमा वर्णन कीनी, और ब्रह्माजी जैसे और सृष्टि रचतेभए सो मोसे सुनो ॥ १ ॥ प्रथम अंधतामिस्र तामिस्र महामोह मोह तम ये ब्रह्माजी रचते भये, ये सर्ग अज्ञानकी वृत्ति हैं याहीको पंचपर्वा अविद्या कहे हैं ॥ २ ॥ अपनी सृष्टिको पापी देख अपनेको बहुमान न करते भए भगवत्के ध्यानसो मन पवित्र कर औरनको रचते भए ॥ ३ ॥ सनक सनंदन सनातन सनत्कुमार चार ब्रह्माने रचे ये क्रियारहित वीर्य ऊपरको चढाय नैष्ठिक ब्रह्मचारी भये ॥ ४ ॥ हे पुत्रो ! प्रचा रचो ऐसे ब्रह्माजीने जब कहि तो वे प्रजा रचवेकी इच्छा न करतेभए, मोक्षधर्ममें परायण और वासुदेवमें परायण है ॥ ५ ॥ हमारी शिक्षा पुत्रनने न मानी तब ध्यान करतेभए ब्रह्माजीको क्रोध भयो क्रोधको ब्रह्माजी रोकनेलगे ॥ ६ ॥ बुद्धिसो क्रोध रोको तो ब्रह्माके भ्रुकुटिमेंते शीघ्र नीलरंगको बालरूप धर वो क्रोध उत्पन्न भयो ॥ ७ ॥ देवतानसो प्रथम उत्पन्न भये भगवान् शिव रोवे ब्रह्मासो बोले हे पितः ! हमारो नामकरण करो हे जगद्गुरो ! स्थान बताओ ॥ ८ ॥ ये वचन सुन ब्रह्माजी वाके कहेको पालन करते ये सुंदरवाणीसों बोले कि मत रोओ जैसो तुमने कह्योहै मैं तैसोई तुमारे लिये करौंगो ॥ ९ ॥ हे सुरश्रेष्ठ ! जो तुम उद्वेगसो बालककी नाईं रोये यासो ये सब प्रजा तुमको रुद्र कहैगी ॥ १० ॥ हृदय, इंद्रिय, प्राण, आकाश, पवन, अग्नि, जल, पृथिवी, सूर्य, चंद्रमा, तप, ये स्थान प्रथमसों हमने तुमारे लिये करेहैं ॥ ११ ॥ मन्यु मनु महिनस महान् शिव ऋतुध्वज उग्ररेता भव काल वामदेव धृतव्रत यह तुम्हारे नाम होंयगे इनमें तुम वसो धी, वृत्ति, उशना, उमा, नियुत्सर्पि, इला, अंबिका, इरावती, सुधा, दीक्षा, रुद्राणी, हे रुद्र ! ये तुमारी ११ स्त्री हैं ॥ १२ ॥ ये नाम और स्थान ग्रहण करो, अपनी स्त्रीन समेत तुम प्रजा रचो, क्योंकि जो तुम प्रजाके पति हो ॥ १३ ॥ जब ब्रह्माने ये आज्ञा कीनी तब नीलकण्ठवारे शिव अपनी आकृति स्वभावसो अपने समान प्रजा रचते भए ॥ १४ ॥ रुद्रके रचे भए रुद्र जब सब ओरसों जगत्को खायवेलगे, ये सुन प्रजापतिको शंका भई ॥ १५ ॥ हे सुरोत्तम ! ऐसी रची भई प्रजासों मैं पूर्ण भयो बस करो यह तेरी प्रजा अपने तीव्र नेत्रनसों मेरे सहित सब प्रजाको जरावैहै ॥ १६ ॥ तेरी कल्याण होय, सब जीवनको सुखदायक तप करो, तपसो जैसी प्रजा पहिले ही तैसी आप रचोगे ॥ १७ ॥ परंज्योतिःस्वरूप भगवान् अधोक्षज सब जीवनके भीतर वास करनवारे ईश्वरको तप करकै अनायाससों प्राप्त होयहैं ॥ १८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे ब्रह्माजीसो आज्ञा लैकै श्रीमहादेवजी ब्रह्माजीकी परिक्रमा कर वोहोत अच्छो ऐसे कहिके तप करवेको वनमें प्रवेश करते भए ॥ १९ ॥ याके उपरांत जब ब्रह्माजीकी इच्छा भई, तब भगवत्की शक्तियुक्त लोकके संतानके हेतु दश पुत्र होते भए ॥ २० ॥ मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, दक्षप्रजापति, दशम नारद ए दश पुत्र भए ॥ २१ ॥ ब्रह्माकी गोदसो नारद भए स्वयंभूके अंगूठासों दक्ष, प्राणसो वशिष्ठ, ब्रह्माके त्वचासों भृगु भए ॥ २२ ॥ पुलह नाभिसो भए, पुलस्त्यऋषि कर्णसो, अंगिरा मुखसो, नेत्रसो अत्रि, मनसों मरीचि भये ॥ २३ ॥ धर्म दहने स्तनसों भयो, जा धर्ममें नारायण विराजै है, अधर्म पीठसो भयो, जासों सब लोककी भयंकर मृत्यु भई ॥ २४ ॥ ब्रह्माके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हृदयसों काम उत्पन्न भयो है, भौंसों क्रोध उत्पन्न भयो है नीचेके होठसो लोभ भयो, मुखसो वाणी नाम सरस्वती लिंगसो समुद्र, और गुदासो पापको आश्रय मृत्यु भयो ॥ २५ ॥ छायासो कर्दमजी भये, जो देवहूतिके पति प्रभु भए, ब्रह्माके देह और मनसों यह जगत् भयो ॥ २६ ॥ हमने ऐसो श्रवण कियोहै कि चित्तकी चुरामनवारी सूक्ष्मांगी अकामा कन्या सरस्वतीको स्वयंभू ब्रह्माजी देखके सकाम हो इच्छा करनेलगे ॥ २७ ॥ अधर्ममें बुद्धि लगाये पिताको देख पुत्र मरीचि-मुख्य मुनि ज्ञानसो उपदेश करते भये ॥ २८ ॥ ऐसी पहिले काहूने नहीं करी, न आगे कोई करैगो जो तुम बेटीमें गमन करोहो, कामको जीतो तुम समर्थ हो ॥ २९ ॥ हे जगद्गुरो ! तेजवंतकोहू योग्य ये नहीं है, जिनके कर्मके अनुसार रहिवेसो लोक क्षेमको प्राप्त होयहै ॥ ३० ॥ तिन भगवान्‌के अर्थ नमस्कार होय, जो या विश्वको अपनी कांति करके आत्मामें स्थित करते भये सो ईश्वर धर्मकी रक्षा करिवेके योग्य है ॥ ३१ ॥ ऐसे प्रजापति पुत्रनको स्तुति करते देख लाजसो प्रजानके पतीनके पति ब्रह्माजी वा समय वा शरीरको त्यागते भये ॥ ३२ ॥ वा घोरदेहको दिशाननें ग्रहण कीनो. जो तम नीहार नामसों अबहू संसारमें कभू अंधकारसो होय कुहरो मनुष्यनको दीखेहै ॥ ३३ ॥ जैसे पूर्व कल्पमें सब लोक हे वैसेही कैसे रचोंगो ऐसे चिन्तन करते भये ब्रह्माके चारों मुखनसो वेद चार भये ॥ ३४ ॥ चार ब्राह्मण मिलके करें वो यज्ञ, यज्ञोंको विस्तार, उपवेद न्यायसहित ये चारभी धर्मके पांव है, तैसेही आश्रम और आश्रमोंकी वृत्तियें ब्रह्माजी रचतेभए ॥ ३५ ॥ विदुरजी बोले कि हे तपोधन ! वो विश्व रचवेवारेनको ईश्वर ब्रह्मा वेदादिकनको मुखनसो रचतेभए, सो जो जो वेद जा जा मुखसो रचते भए सो मोसों कहो ॥ ३६ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऋक् यजु साम अथर्व नामक वेदनको पूर्व आदि चारों मुखनसो क्रमसों रचतेभए; जो गानमें न आवै ऐसे मंत्रको स्तोत्र जो होताको कर्म है ताको और इज्या नाम अध्वर्युको कर्म और स्तुतिनको समूह और प्रायश्चित्त येहू पूर्व आदि मुखसो क्रमसो रचते भए ॥ ३७ ॥ क्रमसे अपने पूर्व आदि मुखसे आयुर्वेद अर्थात् वैद्यकशास्त्र धनुर्वेद अर्थात् धनुष चलायवेको शास्त्र गांधर्ववेद (गायवेको शास्त्र सरिगम इत्यादिक) स्थापत्य (घर बनायवेको शास्त्र विश्वकर्माको बनायो भयो) ये सब रचते भए ॥ ३८ ॥ सब दर्शन नाम सब जगत्‌को देखनवारो ब्रह्मा इतिहास पुराण रूप पंचम वेद सब मुखनसों रचतेभए ॥ ३९ ॥ षोडशी मृतककर्म ये पूर्वकी ओरके मुखसों रचो अग्नि लानो अग्निष्टोम यज्ञ दक्षिण मुखसों रचो यथार्थ वक्तानके शास्त्र रात्रिके अनुष्ठान आप्तार्याम और अतिरात्र जिनको नाम पश्चिम मुखसो रचे, वाजपेय यज्ञ गोमेध यज्ञ उत्तरके मुखसों रचे ॥ ४० ॥ विद्याके द्वारा शौच करनो " क्षेत्रज्ञस्येश्व-ज्ञानाद्विशुद्धिः परमात्मनः ॥ " इति दया तप सत्य ये धर्मके पांव हैं " भूताभयप्रदानस्य कलां नार्हंति षोडशीम् " सब वृत्तिन सहित नाम सब वर्णाश्रमनकी जीविकासहित यथाविधि चारों आश्रम रचतेभए ॥ ४१ ॥ गायत्रीके उपासक सावित्र कहावै है, एक वर्षतक व्रत करै वे प्राजा-पत्य कहावै है, वेदको पाठ करनो ये ब्राह्मणधर्म है, नैष्ठिक ब्रह्मचर्यको बृहद्व्रत कहैं हैं, जाको कोई निषेध न करै वाको वार्ता वृत्ति कहै हैं ऐसी खेती करनी, यज्ञ करावनेकी वृत्ति संचय कहैं हैं, विना मांगे जीविका करनी शालीन वृत्ति कहावै है, गिरेभए कण बीनके निर्वाह करनो ऐसी शिलोंछ वृत्ति घरमें रहिके वृत्ति करनी गृह कहावै ये सब क्रमसों पूर्व आदि मुखसो रचतेभए ॥ ४२ ॥

१ यह अलंकार है यहां सरस्वतीरूप विद्या जाननी ॥ २ यहां जो यह शरीरको त्याग है सो पापयुक्त वा भावको त्याग है ऐसो समझनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वैखानस वे हैं जो सांवांके चांवल खायके तप करैं, वालखिल्य वे हैं जो नयो अन्न मिल जाय तो पहिलेको संचित अन्न त्यागै हैं, औदुंवर ये हैं कि प्रातःकाल उठकर जा दिशाको जांय वितमें पहिले जहां फल मिले वे खाय जीवें हैं, फेनप वे हैं कि अपने आप गिरे फलादि खायके जीवै हैं, ये चार वनवासी ब्राह्मण वानप्रस्थ है एहू क्रमसौ पूर्वादि चारो मुखनसौ रचे अपने आश्रमके कर्ममें प्रधान रहै वे कुटीचक हैं कछु काम करके जीविका करैं ज्ञान सीखें वे वह्वोद है ज्ञानमें अभ्यास करैं वे हंस हैं तत्त्वज्ञानकी प्राप्तिवारे निष्क्रिय है इनमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं ए चारौ संन्यासीनके भेद है एहू क्रमसो पूर्वादि चारौ मुखनसों ब्रह्माजीने रचे ॥ ४३ ॥ वेदविद्या वेदत्रयीकी वार्ता, दंडविद्या नीतिकी वार्ता ये व्याहृति प्रणव ब्रह्माके हृदयसे होती भई। तथा च श्रुतिः "भूर्भुवः सुवरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयस्तासामुह स्मैतां चतुर्थीमाह चमस्य प्रवेदयते" ॥ ४४ ॥ ब्रह्माजीके वारसो उष्णिक् छंद भयो, विभुके त्वचासो गायत्री छंद भयो, त्रिष्टुप् मांससो भयो, स्नायुसो अनुष्टुप् भयो ॥ ४५ ॥ मज्जासों पंक्ति छंद भयो, प्राणसो वृहती छंद होतो भयो, वाके जीवसो स्पर्श नाम (क) सों आदि लेके (म) ताई २५ अक्षर भये देहसें स्वर अइउऋऌएओऐऔ भये ॥ ४६ ॥ श ष स ह ये उष्म ब्रह्माके इंद्रियनसों भये, य र ल व ये अंतःस्थ ब्रह्माके वलसों भए, षड्जादिकसप्तस्वर श्रीब्रह्माजीके विहारसों भए ॥ ४७ ॥ जिन शब्द ब्रह्मरूप व्यक्त अर्थात् वैखरिणी नाम स्वरूपसो अनेक शक्तिनसों उत्पन्न इन्द्रादिरूप और अव्यक्त अर्थात् प्रणवस्वरूपसों परिपूर्ण ब्रह्मरूप प्रकाशित है वाने देह धार सृष्टि रचनेको ध्यान कियो ॥ ४८ ॥ वडे वीर्यवारे ऋषीनके महाविस्तृत सर्ग वर्णन करैं सो वढे नहीं हे राजन् ! ऐसे जान फेर हृदयमें चिंता करतेभए ॥ ४९ ॥ ये वडो आश्चर्य है कि नित्य ऐसे व्यापार करूं हूं तोहू सृष्टि वढै नहीं है निश्चय है कि याको दैव नहीं वढवे देयहै ॥ ५० ॥ प्रजाकी वृद्धि नहीं होय है ऐसे जवै दैवकों दोष देवेलगे तव ब्रह्मामेंसो दो रूप भये जाकों काय कहैं हैं ॥ ५१ ॥ तव विन रूपके विभागमेंसो एक मिथुन जोडा होतोभयो जो विनमें पुरुष हो वो स्वराट् स्वायंभुव मनु भयो ॥ ५२ ॥ जो स्त्री ही वो शतरूपा वा महात्माकी राणी भई तव मैथुनकर्म करवेसो प्रजा वढती भई ॥ ५३ ॥ वानें शतरूपामें पांच संतान उत्पन्न करे प्रियव्रत उत्तानपाद ये दो पुत्र और तीन कन्या ॥ ५४ ॥ आकूति देवहूति प्रसूति हे सत्तम ! ये पांच संतान भए आकूति रुचिप्रजापतिको व्याही देवहूति कर्दमजीको दक्षको प्रसूति दई, जा प्रसूतिसो सब जगत् भरगयो ॥ ५५ ॥

आकूतिर्देवहूतिश्च प्रसूतिरिति सत्तम ॥
आकूतिं रुचये प्रादात्कर्दमाय तु मध्यमाम् ॥
दक्षायाऽदात्प्रसूतिं च यत आपूरितं जगत् ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे मनुसर्गवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

श्रीशुक उवाच—निशम्य वाचं वदतो मुनेः पुण्यतमां नृप ॥
भूयः पप्रच्छ कौरव्यो वासुदेवकथादृतः ॥ १ ॥

१ और आन्वीक्षिकी आत्मविद्या पूर्व मुखसों त्रयी दक्षिणमुखसो वार्ता पश्चिममुखसों और दंडनीति उत्तरमुखसों रचते भये और ऐसेही भूर्भुवः स्वः महः ए चार व्याहृति क्रमसों ब्रह्माजी चारौ मुखनसों रचते भये और हृदयसों ॐकारको रचते भये ॥ २ यहां ऐसो समझनौ कि देखौ चिंता बडी बुरी होयहै जगत्को उत्पन्न करनवारे ब्रह्माहू चिंताके मारे वीचमेंसो शरीर फटके दो टूक है गये जो काउ मनुष्यको शरीर चिंताके मारे नष्ट है जाय तौ आश्चर्य कहा है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकाचार्य बोले कि हे नृप ! ऐसे कहिते भये मुनिकी अत्यंत पुण्यतम वाणी सुनकर वासुदेवकी कथामें आदर कर विदुरजी फिर पूछतेभये ॥ १ ॥ विदुरजी बोले कि हे मुने ! ब्रह्माके प्यारे पुत्र ये स्वायंभुवमनु राजेश्वर प्रियपत्नीको प्राप्त होय कहा करतेभए ॥ २ ॥ हे सत्तम ! वा आदिराजको चरित मोसों कहो मोको श्रद्धा है वो भगवान्के आश्रित हो ॥ ३ ॥ बहुत दिनके सुनेभए पुरुषको श्रवणको यही फल महात्मानने कह्योहै कि मुकुंदके पादारविंद जिनके हृदयमें हैं विनके गुणानुवादको श्रवण करनो शुभफलदायक है ॥ ४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसे कहितेभए विनीत सहस्र शिरवारे भगवान्के चरणमें शिर रखवेवारे विदुरसों भगवत्की कथामें अत्यंत प्रसन्न रोमांचित भये प्रसन्न मुनि मैत्रेयजी कहितेभये ॥ ५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि जब अपनी भार्यासहित स्वायंभुव मनु भए, तब हाथ जोड ब्रह्मासो बोले ॥ ६ ॥ तुम एक सब जीवके जन्म करवेवारे वृत्तिदायक पिता हो, तोहू प्रजा आपकी शुश्रूषा कौन प्रकारसों करै ॥ ७ ॥ हे स्तुतियोग्य ! सो कहो तुम्हें नमस्कार होय, अपनी सामर्थ्य भर जो कर्म करसकै जाके करेसों या लोकमें परलोकमें सब ओरसों सुंदर गति होय सो कहो ॥ ८ ॥ श्रीब्रह्माजी बोले कि हे पुत्र ! हे पृथिवीश्वर ! हम तुमपर प्रसन्न भए तुम्हारो मंगल होय जो निष्कपट हृदयसों मेरी कही आपने कीनी ॥ ९ ॥ हे वीर ! ईर्षा त्याग अपनी सामर्थ्य भर पिताकी आज्ञा पुत्रनको ऐसेही माननी योग्य है कि अपनी शक्तिअनुसार आदरसों पिताकी आज्ञा मानलेउ ॥ १० ॥ हे वीर ! अपने समान गुणवारे संतान या स्त्रीमें उत्पन्न कर धर्मसो पृथिवीको पालन करो, परमेश्वरको पूजन करो ॥ ११ ॥ हे नृप ! प्रजाकी रक्षा करवेसो मेरी अत्यंत शुश्रूषा होयगी भगवान् सब प्रजाके भर्ता हृषीकेश प्रसन्न होयगे ॥ १२ ॥ यज्ञरूप जनार्दन भगवान् जिनके ऊपर नहीं तुष्ट भए, तिनको या देहके अर्थ केवल श्रम भयोहै कारण कि विनने साक्षात् अपने आत्माकोही आदर नहीं कियो ॥ १३ ॥ मनुजी बोले कि हे पापनाशक ! हे प्रभो ! आपकी आज्ञामें हम वर्तेंगे, परंतु प्रजाके वसवेको मोको स्थान बताओ ॥ १४ ॥ हे देव ! सब जीवमात्रकी स्थान पृथिवी तौ महाप्रलयमें जलमें डूबरही या भूदेवीके उद्धारको यत्न विधान करो ॥ १५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ब्रह्माजी जलके मध्यमें डूबी भई पृथ्वीको देख बुद्धिसो बहुत काल ध्यान कर बोले कि कैसे याको निकासैं ॥ १६ ॥ विश्व रचतेमें मेरे सामने जलसो डूबकै पृथिवी रसातलको गई या सृष्टिमें लगेभए हम सब कहा उपायको अनुष्ठान करैं ॥ १७ ॥ जाके हृदयसों हम भए सो ईश्वर मेरो कार्य विधान करै, करुणासिंधु तीर्थरूप कीर्तिवारे भगवान् मेरो मनोरथ पूरो करो ॥ १८ ॥ हे पापरहित ! ऐसे ध्यान करतेभए ब्रह्माके नाकके छिद्रमेंसो अकस्मात् अंगुष्टसमान छोटेसे वराहजी निकसतेभए ॥ १९ ॥ हे राजन् ! ताके देखते २ एक क्षणमें आकाशमें स्थित गजके समान बढे वो महाअद्भुत होतो भयो ॥ २० ॥ मरीचि आदि ब्राह्मण सनत्कुमारादि मनुसहित या सूकररूपको देख अनेक प्रकारकी तर्क करतेभए ॥ २१ ॥ वराहरूप धार कोई स्वर्गवासी तो न आयो है बडे आश्चर्यकी बात है मेरी नासिकामेंसो कैसे निकसो ॥ २२ ॥ पहिले तो अंगुष्टसमान हे एक क्षणमें बडे पर्वतसम स्थूल पाषाणसमान होयगए कहीं यज्ञ भवगान् मेरे मनको खेद करतभये तौ नहीं प्रगटभये ॥ २३ ॥ पुत्रनकरके सहित ऐसे विचारतेभए ब्रह्माके सामने भगवान् यज्ञपुरुष पर्वतके समान गर्जते भये ॥ २४ ॥ उन ब्राह्मण उत्तमनको समर्थ श्रीवराहजी महाहर्ष करावतेभए अपने गर्जवेसों सब दिशानको गर्जावतेभए ॥ २५ ॥ मायामय वराहजीको अपनेनके खेदको नाशक घुर्घुर शब्द सुनकर जनलोक तपलोकके निवासी मुनिलोग पवित्र वेदत्रयीके मंत्रनसों स्तुति करतेभए ॥ २६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तिन सज्जननको वेदविस्तारक स्वरूप ब्रह्म अपने गुणानुवादनको सुनकर वराहजी फेर गर्जकर देवनके उदयके अर्थ गजेंद्रसमान लीला करते जलमें प्रवेश करतेभये ॥ २७ ॥ जिनके छोटीसी पुच्छ ऊपरको उठी भई आकाशमें विचरते कठोर कंधेके वारनकों धरकाते तीक्ष्ण रोम शरीरवारे खुरनसों मेघनको विदीर्ण करते श्वेत दंत प्रकाशक दृष्टि पृथ्वीके उद्धर्ता श्रीवराहजी प्रकाश करतेभए ॥ २८ ॥ यज्ञमूर्ति है तोहू वराहरूप धारवेके व्याजसों घ्राणसों पृथ्वीकी पदवीको सूंघते पानीमें खोजते विकराल डाढनसों युक्त सौम्य दृष्टिसो स्तुति करते मरीची आदिकनकी ओर देखते जलमें प्रवेश कर गये ॥ २९ ॥ हीराके पर्वत समान अंगके गिरवेके वेगसों कोंख फटवेसो समुद्र फैली भई दीर्घ लहररूप भुजानसो आर्त होय हे यज्ञेश्वर ! मेरी रक्षा करो ऐसे पुकारतो भयो ॥ ३० ॥ त्रिपरुनाम यज्ञमूर्ति वाराहजी पाररहित जलनके पार पायवेकी विधिसों वा जलको उस्तराके समान पैने खुरनसो विदारते तहां पृथिवी देखते भये जा सब जीवकी धारवेवारी धरतीको प्रलयके जलमें शयनकी इच्छाके समय आपने उदरमें धारण कियो हो ॥ ३१ ॥ डूबीभई धरतीको अपनी डाढसो उठाय जब रसातलसो उठे, तब बडी शोभा भई, वा समय गदा हाथमें ले आते भये और रोकते भये महापराक्रमी और क्रोधित हिरण्याक्ष दैत्यको ॥ ३२ ॥ जैसे सिंह हाथीको संहार करै ऐसे लीलासोंही महाक्रोधको प्राप्त हैके भगवान्ने रस्ता रोक रह्यो और नहीं सहवे लायक पराक्रम जाको ऐसो वा दैत्यको वध कियो वा समय वाराहजीको गंडस्थल और तुंड वा दैत्यके रुधिरपंकसों लिप्त हैरहेहे यासों वे पृथ्वी भेदन करते गजराजकी समान शोभित भए ॥ ३३ ॥ हे राजन् ! तमालके समान नील सुपेद दांतनके अग्रभागसो गजकी लीलाकी नांई पृथिवीको उछारतेभए वाराहजीको देख हाथ जोड वेदसूक्तनसो श्रीवाराहजीकी ब्रह्मादिक सब स्तुति करतेभये ॥ ३४ ॥ ऋषिलोग बोले कि हे अजित ! हे यज्ञभावन ! आपने सबको जीते हैं वेदत्रयीमय रूप शरीरकों कंपाते आपके अर्थ नमस्कार होय, जिनके रोमके गढेलेमें यज्ञ लीन भए विन कारण सूकरके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३५ ॥ हे देव निश्चय है कि दुष्टकर्म करवेवारेनको या यज्ञस्वरूप आपके रूपको दर्शन दूर रहै है, सब छंद जिनके त्वचामें है, बर्हि (कुश) जिनके रोममें सुन्दर आज्य दृष्टिमें हैं, चरणनमें चातुर्होत्रकर्म है ॥ ३६ ॥ हे ईश ! जुहू नामक स्रुवा आपको तुंड है, द्वितीय स्रुवा नाक हैं, भक्षणकों पात्र उदर है, सोमपात्र चमस कर्णको छिद्र है, ब्रह्मभाग पात्र मुखको छिद्र है, और अग्निहोत्र तुमारो चर्वण है ॥ ३७ ॥ दीक्षा आपको जन्म हैं, तीन इष्टि ग्रीवा हैं, दीक्षाके पीछेकी इष्टि और समाप्तकी इष्टि आपके डाढ हैं, यज्ञमें प्रथम महावीर करो जाय सो जिह्वा है, और सभ्याग्नि और आवसथ्याग्नि ये दोउ तुमारे शिरमें है, इष्टकाचयन तुमारे पंच प्राण है ॥ ३८ ॥ हे देव ! चंद्रमा तो वीर्य है, और प्रातःसवनादि तीनो सवन तेरो आसन है संस्थाविभेद तुम्हारे सप्त धातु है संस्थाविभेद ये हैं कि अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र, आप्तोर्यामा, सब सत्र शरीरकी संधि हैं, तुम सब यज्ञ क्रतु इष्ट बंधन हो ॥ ३९ ॥ सब मंत्र देवता द्रव्यरूप सब क्रियारूप यज्ञरूपके अर्थ नमस्कार होय, वैराग्य भक्ति और आत्मजय नाम चित्तकी स्थिरता इनसों साक्षात् अनुभव किये ज्ञानरूप विद्या गुरुके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४० ॥ हे भगवन् ! हे भूधर ! डाढके अग्रभागपे पर्वत सहित भूमि तुमनें धारण करी है, सो विशेष करकै प्रकाश कर रही है, जैसे जलमेंसे निकसते गजेन्द्रके दांतनपें धरीभई कमलिनी शोभित होय ॥ ४१ ॥ वेदत्रयीमय ये सूकररूप है, सो भूमंडल दांतनपें धारण करवेसो ऐसी शोभा है जैसे कुलाचलके शिखरपें बैठे भये सघन बादलकी शोभा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होय है ॥ ४२ ॥ अब याकों स्थित करो यह स्थावर जंगमकी माता है, लोकके अर्थ तुमारी पत्नी है तुम पिता हो, तुम सहित भूदेवीको प्रणाम करें हैं, जा पृथिवीमें तुम अपनो तेज अग्निको काष्ठमें जैसे ऐसेही धारण करो हो ॥ ४३ ॥ हे प्रभो ! रसातल गई भूमिको लानो याको आपके विना कौन श्रद्धा करैगो विश्वके विस्मय करवेवारे तुमारेमें ये कछु विस्मय नहीं हैं, जो मायासों अति विस्मयकारी या विश्वको रचतेभए ॥ ४४ ॥ हे ईश ! वेदमय शरीरके कंपायवेसों आपके उठे भए वारनके सुंदर जलबिंदुनसो स्नान किये भए जन तप सत्य लोकवासी हम सब पवित्र भए ॥ ४५ ॥ अकर्मा तुमारे अपार कर्मनको जो पार माने है वाकी मति भ्रष्ट है ये निश्चय है हे भगवन् ! योगमायाके गुणयोगसो मोहित सब विश्वको मंगल तुम करौ ॥ ४६ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ब्रह्मवादी मुनिनने जब ऐसे स्तुति कीनी तब भगवान्ने अपनी धारणाशक्तिसो अपने खुरसो मर्दित जलपें पृथिवीको स्थिर कीनी ॥ ४७ ॥ सो भगवान् विष्वक्सेन प्रजापति हरि रसातलसो लीलाकरकै लायी वा धरतीको जलपें धरके चले जाते भये ॥ ४८ ॥ कथनीय मायावारे हरिमेधा श्रीवाराहजीकी सुन्दर कल्याण देवेवारी कथाको जो भक्तिसो सुनेहै सुन्दर लीला सुनावैहै, वाके हृदयमें शीघ्र जनार्दन प्रसन्न होयहै ॥ ४९ ॥ सब आशीर्वादनके प्रभु प्रसन्न भए, तब फेर तुच्छ जीवनकों कहा दुर्लभ है, विन्है सब कछु प्राप्त भयो, अनन्य दृष्टिसो भजवेवारेनके अंतःकरणवासी परमेश्वर अपनी परमगतिको आपही दैयहैं ॥ ५० ॥ या लोकमें पुरुषार्थके सारको जाननवारो ऐसो कोन है जो पुरातनी कथानमें भगवत्कथामृत जो संसारको मिटावनवारो है वाको कर्णरूप अंजलीसों पान कर फिर पशुके विना विरक्त होय है अर्थात् कोई नहीं हरिकी कथा श्रवण कर मनुष्य तौ विरक्त नहीं होते पशु होते हैं परन्तु कथामें कवीश्वरनके देवेमें बडे बडे साहनकेभी तंगी रहैहै उनकी ऐसी गति है ॥ ५१ ॥

को नाम लोके पुरुषार्थसारवित्पुरा कथानां भगवत्कथासुधाम् ॥
आपीय कर्णाञ्जलिभिर्भवापहामहो विरज्येत विना नरेतरम् ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे श्रीवाराहावतारवर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

---

१ उनकी ऐसी गति है । कवित्त—कुटनिनको कर्णसे कजावतनको कल्पवृक्ष भांडनको भोजसे हमेश दान देवेकों । प्रकट परनारीकी पूरी अभिलाषा करैं सैकडन रुपैया तिन दण्डके भरवेकों ॥ कञ्चनिकों कञ्चन अनेक भांत देवेकों वारुदको पैसा रातदिवस लेवेकों । दोय ठौर खर्चीकी तंगी रहै सो हमकू ईश्वरके हेत क्या कछु कथामें देवेकों ॥ १ ॥

२ एक ब्राह्मण और ब्राह्मणी महादरिद्री थे, जब कहीं खानेका ठीक न लगा तब वनमें तप करने गये ऋषियोंने उनसे कही कि तुमसे तपस्या न होगी, जाओ अमुक स्थानमें कथा कहो आजीविका होगी वे सुनकर गये और कथा हुई, उचापत खाते रहे तीन महीनेमें कथा समाप्त हुई, जितने रुपये आये उतनेही उचापतवालेके खागये, सो सब उचापतवालेको दे, अपनो भाग्य फूटो जान फिर तपस्या करने गये, ऋषि बोले अब कैसे आये ? उन्होंने सब कही कि कथा कही और कुछ बच्यौ नहीं, तब ऋषि बोले किसी मनुष्यने कथा नहीं सुनी होगी, वह बोले महाराज थे तो सब मनुष्यही, ऋषि बोले यह ठीक नहीं, अबकै तुम फिर जाओ और कथा बांचौ, हम तुम्हें एक अंजन देते हैं, कथा कहते समय इसै लगाना यदि कोई मनुष्य दीखै तौ कथा कहना, नहीं, और जगह बांचना; ब्राह्मणराज द्वारमें जाकर कथा बांचने लगे, बहुतसे श्रोता आये अंजन जो लगाया तो कोई हाथी, घोडा, ऊंट, गधा, बकरा, भैंसा, सिंह इत्यादि दृष्टि आये पंडितजी घबराकै चारों ओर देखने लगे तौ एक बुढिया राजकुलकी ज्यौंकी त्यौं दृष्टि आई, पंडितजी बोले इनमें एक मनुष्य है तौ अब ठीक लगजायगी और कथा बांचने लगे, समाप्तिके दिन कोई एक कोई दो रुपैया चढा गये बुढियाने मोहरैं थाली भरके चढाई, और पंडितजी निहाल हो गये अहंकारी और जिन्हें धर्म नहीं वे पशुकी समानही हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १४.

श्रीशुक उवाच-निशम्य कौषारविणोपवर्णितां हरेः कथां कारणसूकरात्मनः ॥
पुनः स पप्रच्छ तमुद्यताञ्जलिर्न चातितृप्तो विदुरो धृतव्रतः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि कारणशूकरदेहधारी श्रीहरिकी मैत्रेयकी कही कथा सुन व्रतधारी विदुरजी अत्यन्त तृप्त न हवेसो हाथ जोड फेर पूछतेभए ॥ १ ॥ विदुरजी बोले कि हे मुनिश्रेष्ट ! यज्ञमूर्ति श्रीहरिने आदिदैत्य हिरण्याक्षको मारो ये हमने सुनोहै ॥ २ ॥ हे ब्रह्मन् ! लीलाकरके अपनी दंष्ट्राके अग्रभागसो पृथिवीको लावती विरिया दैत्यराजको संग्राम का हेतुते भयो सो कहो ॥ ३ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि हे वीर ! तुमने श्रीहरिकी अवतार कथा बहुत सुंदर पूछी वो मनुष्यनके मृत्युफांसकी नाश करवेवारी है ॥ ४ ॥ श्रीनारदजीकी गाईभई जा कथाकरके उत्तानपादको पुत्र ध्रुव बालक मृत्युके मूंडपें पाय धरके श्रीहरिके वैकुंठको जातोभयो ॥ ५ ॥ अब यहांहू ये इतिहास मैंनें सुनो है जो देवतानें पूछो तब देवतानके देव ब्रह्माने पहिले वर्णन कीनोहो ॥ ६ ॥ अब हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपुकी उत्पत्ति कहे हैं कि दक्षकी बेटी दिति पुत्रकामना कर सांझको कामसो पीडित हैके मरीचिके पुत्र कश्यपपतिसों संध्याके समय विषय करवेकी इच्छा करतीभई ॥ ७ ॥ अग्नि जीभवारे यजुर्वेदके पति पुरुषको यज्ञ कर सूर्यअस्तके समय यज्ञशालामें सावधान होय बैठे है ॥८॥ विनके निकट जाय दिति बोली हे विद्वन् ! ये कामदेव धनुष बाण बांधके तुमारे अर्थ मो दीनको व्यथा देयहै, जैसे मतवारो हाथी कदलीको व्यथा देयहै ॥ ९ ॥ पुत्रवती सौतनकी समृद्धिसों जलीजाउहों मोपें तुम अनुग्रह करो तुम्हारो कल्याण होय ॥ १० ॥ भर्तासों बहुत सन्मानित स्त्रीनको यश लोकनमें फैलजायहै, जिनके आपसरीके पति तापेंहू हमारे पुत्र नहीं होय " तज्जाया जाया भवति यदस्यां जायते पुनरिति श्रुतेः " ॥ ११ ॥ पहिले पुत्रीनकों बहुत चाहवेवारे दक्षप्रजापति भगवान् हमारे पिता एक समय हमसों बोले, हे पुत्रि ! कौनकों वरोगी ऐसे हमसों पृथक् पूछते भए ॥ १२ ॥ तब संतान भावन मेरे पिता दक्ष हम सब बेटीनको भाव जान विनमेंसो तेरे तुम्हें देतेभए जो तुमारे शीलके अनुसार चलतीभई ॥ १३ ॥ हे कल्याण ! हे कमलनयन ! हमारी इच्छा पूरी करो हे भूमन् ! आपसरीके महात्मानमें आर्तनको आवनों व्यर्थ नहीं होय है ॥ १४ ॥ हे वीर ! ऐसे बहुत दीनवचन कहतो बढेभए कामके वेगसों व्याकुल अपनी स्त्री दितिको वाणीसों समझावते कश्यपजी हँसकर बोले ॥ १५ ॥ हे भीरु ! ये तेरो प्रिय हम विधान करेंगे जो तू इछा करैहै जा स्त्रीसो धर्म अर्थ काम मोक्ष ये चारों पदार्थ प्राप्त होय ताको काम कौन न करैगो स्त्रीके विना चारों वर्णकी महाफजीती हैं यासो गृहस्थ होनो मुख्य धर्म है ॥ १६ ॥ सब आश्रमनको ग्रहण कर जो अपने गृहस्थाश्रममें होयके रहै है वो गृहस्थी सब व्यसननके सागरको तरजायहै जैसे नावमें बैठके समुद्रकों तरजायहै ॥ १७ ॥ हे मानिनि ! श्रेयकामके लिये अपनी अर्द्धांगी जाकूं कहै है जामें अपनो सब भार धर पुरुष विज्वर हैके विचरैं हैं ॥ १८ ॥ और आश्रमनसों न जीते जाय ऐसे दुर्जय इंद्रियरूप शत्रुनको जा स्त्रीको आसरो लेके लीलाकरके हम जीतेहैं, जैसे किलेको पति किलेमें बैठके चोरनकों जीते है ॥ १९ ॥ हे गृहेश्वरि ! तुमारे करे उपकारके प्रत्युपकार करवेकों संपूर्ण आयुसों तुम्हारे समान होयवेकों नहीं समर्थ हैं, और औरहू गुणग्राही जे हैं वेहू समर्थ नहीं होयसके है ॥ २० ॥ यद्यपि ऐसे है तथापि पुत्रउत्पत्तिके लिये तुम्हारी इच्छा पूरी करैंगे, जामें मेरी निंदा कोई न करे एक दो घडी ठैरो ॥ २१ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये समय अत्यंत घोरतम है, घोरनकोहू घोर दिखायवेवारो है या समयमें महादेवजीके भूतगण विचरै हैं ॥ २२ ॥ हे साध्वि ! या सायंकालमें भगवान् भूतभावन भूतराज भूतपार्षदनके गणसहित श्रीमहादेवजी वृषभपर बैठके विचरै हैं ॥ २३ ॥ श्मशानकी पवन मंडलीकी धूरसो धूम्रसमान विथुरी प्रकाशित जटासमूह सुवर्णसमान देहमें भस्म लगाये तुम्हारे देवर महादेवजी चंद्र सूर्य अग्नि इन तीन नेत्रनसो सब समयमें देखै हैं ॥ २४ ॥ या लोकमें जिन शिव शंकरको न कोई स्वजन है, न शत्रु है, न अति आदरणीय है, न निंदायोग्य है हम सब महाव्रत धारण करके जिनके चरणनसो दूर फैंकी भई विनकी भुक्त भोगविभूतिको महाप्रसादकी समान पायवेकी आशा करैहैं ॥ २५ ॥ जिनके विषयासक्तिशून्य अनिंद्य चरितको अविद्याके समूह नाश करवेकी इच्छा करनवारे सुंदर बुद्धिमान् महात्मा लोग वर्णन करैहै, जिनके समान जिनसों बडो कोई नहीं, सज्जननकी गति आप सदाशिव पिशाचनकीसी लीला करै हैं ॥ २६ ॥ अपनी आत्मामें रमण करवेवारे सर्वज्ञ जिन शिवजीके चरित्रनकों देख दुर्भागी हँसे है, वे दुर्भागी वस्त्र माला गहिने पहिने चंदन लगाय कुत्ताके भक्ष्य या शरीरकों ये देह आत्मा है ऐसी बुद्धिकर अत्यंत लालन पालन करैहै ॥ २७ ॥ ब्रह्मादिक जिनके करे सेतुनको पालै हैं, जो या विश्वके कारण हैं जिनने या जगत्को उत्पन्न कियो है माया जिनकी आज्ञा मानवेवारी है विनको पिशाचनके संग फिरनो महा आश्चर्यरूप है विनकी लीला सदा अतर्क्य है (कवित्त–ओढे वाघछाला, दूर करत है कसाला, काटडारे भ्रमजाला, धरे आधे अंग बाला है । सोहै कण्ठकाला, और साजै शशिभाला, जाके मस्तकमें मसाला, एक भस्महीं रसाला है ॥ मूरत विशाला, नैन तीसरेमें ज्वाला, गजचर्मको दुशाला, पिये प्रेमप्याला है । देवनमें आला यह ज्योति है निराला, अब मेरे मनवाला देनेवाला बैलवाला है ॥) ॥ २८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि भर्तानें ऐसे कही तोहू कामदेवके वेगसो विह्वलइन्द्रिया हो वेश्याकी नाईं लाज त्याग ब्रह्मऋषिके वस्त्रको ग्रहण करतीभई ॥ २९ ॥ कश्यपजी निषिद्ध कर्ममें अपनी भार्याको हठ जान ईश्वरको नमस्कार कर वासों मैथुन करते भए ॥ ३० ॥ पीछै स्नान कर प्राणायाम कर वाणी जीत रजोगुणरहित सनातन ब्रह्मज्योतिको ध्यान कर जप करत भए ॥ ३१ ॥ हे परीक्षित् ! वा निंदित कर्मसों दिति लज्जित होय नीचेको मुख कर विप्र ऋषिके समीप आयकर बोली ॥ ३२ ॥ दिति बोली कि हे ब्रह्मन् ! सब जीवमात्रके ईश्वर शिव मेरे या गर्भको न मारेंगे, सब भूतनके पति रुद्र हे, जिनको मैंने अपराध कीनो हैं ॥ ३३ ॥ "रुत् दुःखं द्रावयतीति रुद्रस्तस्मै रुद्राय" दुःखके दूर करवेवारे महादेव उग्र सकाम प्राणिनके मनोरथ पूरण करवेवारे दंडहीन और दंडधारी संहारसमयमें क्रोधमूर्तिधारी श्रीमहादेवको नमस्कार होय ॥ ३४ ॥ सो भगिनी-भर्ता हमारे बहुत अनुग्रहकारी शिव दया करवे योग्य स्त्रीनके देव सतीपति निर्दयीपर दया करवेवारे शिवजी मोपे प्रसन्न होओ ॥ ३५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि अपनी संतानको शुभ आशीर्वाद दोनों लोकनके योग्य चाहवेवारी कांति अपनी भार्यासों संध्याके नियमसों निवृत्त होय कश्यपजी बोले ॥ ३६ ॥ कश्यपजी बोले कि तुम्हारे चित्तके अशुद्ध हैवेसोही संध्याके दोषतें और मेरी आज्ञा न मानवेसों देवतानके अति अनादर करवेसों ॥ ३७ ॥ हे चंडि ! हे मंगलरूपिणि ! तेरे अमंगलरूप अधम दो पुत्र होंयगे जे लोकनकों वारंवार दुःख देंगे ॥ ३८ ॥ स्त्रीनको पकडके लेजायंगे, दीन निरपराधी प्राणिनको मारैंगे तब महात्मा कोप करैंगे ॥ ३९ ॥ तब विश्वेश्वर भगवान् लोकभावन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्रोध कर अवतार धार जैसे इंद्र पर्वतनकों मारे तैसे मारेंगे ॥ ४० ॥ दिति बोली कि हे समर्थ! चक्रसों शोभित उदार बाहुसों साक्षात् भगवान् वध करेंगे, यही में दोनोंनको चाहूंहूं कोई क्रोधी ब्राह्मण न मारे ॥ ४१ ॥ क्यों कि ब्राह्मणनके दंडसों दग्ध सब जीवके भयदातापर नरकवासीहूं दया नहीं करेहैं जो जो योनिमें जाय तहां दुःखही पावे है ॥ ४२ ॥ कश्यपजी बोले कि अपने करे अपराधके पश्चात्ताप करवेसों और अयोग्य योग्य विचार करवेसों तीसरे विष्णु भगवान् महादेव और मेरो सत्कार करवेसों ॥ ४३ ॥ तेरे हिरण्यकशिपुके पुत्रनके मध्यमें एक संतनको संमत सुत होयगो प्रह्लाद नाम जाको शुद्ध यश भगवत्के समान पौराणिक गावेंगे ॥ ४४ ॥ जैसे दुर्वर्ण तपाएसों सुवर्ण हैजायहै, तैसे निर्वैरादिकरकै वाके आत्माके समान बनवेको अपनी देहको साधु जन भावना करेंगे ॥ ४५ ॥ जिनकी कृपासों जिनको स्वरूपभूत ये विश्व प्रसन्न होवेहै, तैसे सर्वांतर्यामी भगवान् अनन्य दृष्टिकरकै जापै संतुष्ट होयगो ॥ ४६ ॥ सो महाभागवत महात्मा महाप्रभाववारो महाजननमेंहू अत्यंत महान् अत्यंत बढी भक्तिसों अनुभव करेभये अंतःकरणमें श्रीवैकुंठवासी भगवान्को प्रवेश कर या शरीरको त्यागेंगे ॥ ४७ ॥ सबसों विरक्त शीलधारी, सब गुणकी खान; पराएकी संपदासों प्रसन्न, दुःखीपर दुःखी शत्रुहीन जगत्को शोकहर्त्ता चन्द्रमाकी समान ताप हरवेवारो होयगो ॥ ४८ ॥ निर्मल कमलनेत्र अपने भक्तनकी इच्छासों अवतार धारवेवारे लक्ष्मीके आभूषणरूप दमकते कुंडलनसों शोभित मुखवारे सबके भीतर बाहर विराजमान ईश्वरको दर्शन करेगो ॥ ४९ ॥ मैत्रेयजी बोले कि अपने पोतेको परमभक्त सुन दिति अति प्रसन्न भई, दोनों पुत्रनको श्रीकृष्णसों वध श्रवण कर महा आनंदित होतीभई ॥ ५० ॥

मैत्रेय उवाच—श्रुत्वा भागवतं पौत्रममोदत दितिर्भृशम् ॥
पुत्रयोश्च वधं कृष्णाद्विदित्वाऽऽसीन्महामनाः ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे दितिकश्यपसंवादवर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

अध्याय १५.

मैत्रेय उवाच—प्राजापत्यं तु तत्तेजः परतेजोहनं दितिः ॥
दधार वर्षाणि शतं शङ्कमाना सुरार्दनात् ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि देवनके पीडाकी शंकाकरकै शत्रुनके तेजको नाश करवेवारो कश्यपको वो तेज शत वर्ष दिति धारण करतीभई ॥ १ ॥ गर्भके तेजसो त्रिलोकीको तेज हत देख सब दिशानमें अंधकार भयो जान सब लोकपाल देवता लोग श्रीब्रह्माजीसो कहते भये ॥ २ ॥ देवता बोले कि हे समर्थ! या अंधकारको तुम जानोहो जासो हम सब अत्यंत डरे भए हैं, जाको मार्ग न जानो जाय ऐसे भगवान्को कालकरकै हम नहीं जानसकै हैं ॥ ३ ॥ हे देवदेव! हे जगत्पितः! हे लोकनाथशिखामणे! पर अपर लोकके जीवनके भाववेत्ता तुम हो ॥ ४ ॥ विज्ञान वीर्य माया करके ये देहधारी सब गुण भेद ग्रहण करवेवारे आदि कारणरहित ब्रह्मान्तर्यामी ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ ५ ॥ जीवनके पालनवारे कारणरूप तथा इनसों परे चेतन अचेतनके कारण तुमको जे अनन्यभावसों ध्यान करै हैं ॥ ६ ॥ तिन सुंदर पके भए योगसाधनको श्वास इंद्रिय आत्मा जीतवेवारेनको तुम्हारे प्रसाद प्राप्त हैवेसों कहीसोंहू तिरस्कार नहीं होयहै ॥ ७ ॥ जैसे रस्सीके वश बैल होय है तैसे जिनकी वाणीरूप रस्सीमें सब प्रजा बंधकर आधीन होकर बलि देवेहै, तिन मुख्य ईश्वर आपके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अर्थ नमस्कार होय ॥ ८ ॥ हे भूमन् ! सो तुम हमारो कल्याण करो अंधकारसो सब कर्म लुप्त भए आपत्तिको प्राप्त हम सबको अत्यंत दयाकी दृष्टिसो देखवेकों योग्य हो ॥ ९ ॥ हे देव ! ये दितिको गर्भ है यामें कश्यप मुनिको पराक्रम धरो है सो सब दिशानको अंधकार करत ईंधनमें जैसे अग्नि बढै तैसे बढै है ॥ १० ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे महाबाहो ! हे विदुर ! यह वचन सुनके सो भगवान् शब्दशास्त्र जानवेवारे ब्रह्मा हँसकर सुंदर वाणीसों प्रसन्न करत देवनके प्रति बोले ॥ ११ ॥ ब्रह्माजी बोले कि मेरे मनसो भए तुमसो पहिले सनकादिक सुत आकाशमार्गमें होकर सब लोकनमें निस्पृह हैंके लोकनमें विचरते भए ॥ १२ ॥ एक समय वे सनकादिक निर्मल आत्मा ईश्वरके सब लोकनसो नमस्कृत वैकुंठलोकमें जातेभए ॥ १३ ॥ अब द्वादश श्लोक करके वैकुंठको वर्णन करै है जा वैकुंठमें निष्काम कर्मसों हरिको आराधन करवेवारे पुरुष श्रीनारायणकी समान चतुर्भुजी मूर्ति धारण कर विराजतेहैं ॥१४॥ जा श्रीवैकुंठलोकमें आद्य पुरुष शब्दमात्रके वक्ता भगवान्नारायण शुद्धसत्त्वमय रूप धारैं शुद्धधर्ममूर्ति अपने पार्षदनको सुखी करते विराजे हैं ॥ १५ ॥ जहां निरंतर सुखदायक नैःश्रेयसनामक वन है सब काम पूरण करवेवारे जहां द्रुम हैं सब ऋतुकी शोभासो प्रकाश होय रह्यो है, मानूं कैवल्य मूर्तिमान् विराजै हैं ॥ १६ ॥ जा वैकुंठमें श्रीमन्नारायणके सब लोकके पापनाशक चरित्र स्त्रीनकरके सहित भगवत्पार्षद विमानपर बैठ बैठ गावै हैं, जहां जलके बीचमें खिलीभई वसन्तऋतुसंबंधी मकरंद संयुक्त चमेलीकी लतानकी सुगंधिसों आकृष्टमन हैवेपरहू नारायणके भजनके अत्यंत आनंदसों वाको तिरस्कार करे हैं ॥ १७ ॥ कबूतर कोकिल सारस चक्रवाक चातक हंस शुक तीतर मयूरनको जो कोलाहल है वो जब भौंरा हरिकथासी गान करतो आवै है तब विरामको प्राप्त है जाय है तो भृंगराज श्रीहरिकथानको गायरहेहैं श्रीवैकुंठमें सब दिव्य है सबके शुद्धसत्त्वमय अप्राकृत देह हैं ॥ १८ ॥ जहां जब श्रीनारायण आभूषणरूपसों तुलसीको अंगीकार कर वाकी बडाई करै हैं तब कल्पवृक्ष, कुंद, तिलवृक्ष, रात्रिमें प्रकाश करवेवारे कमल, चंपक, अर्ण, मोगरा, पुन्नाग, नागकेसर, बकुल, दिनमें प्रकाश करवेवारे कमल, और सुगंधिवाले पुष्पवृक्ष स्वयं सुगंधियुक्त होनेपरभी ईर्षारहित हो तुलसीके तपको बहुत मान करै हैं ॥ १९ ॥ श्रीहरिके पदको नमस्कार मात्र करनवारे जे पुरुष हैं तिनकरकेही देखवेमें आमें ऐसे वैडूर्य मरकत सुवर्णमय विमाननसों वैकुंठ सघन होय रह्यो है, बडे नितम्बनसों युक्त और शोभायमान मुसक्यान युक्त मुखवारी ललना जहां श्रीकृष्णमें मन लगामनवारे पुरुषनके हृदयमें कामादि रजोगुण उत्पन्न नहीं करसकै है ॥ २० ॥ श्रीमहालक्ष्मीजी चरणारविंदमें नूपुरनकी ध्वनिको करतीभई लीलाके लिये कमल हाथमें लिये अपने चंचलताके दोषको त्यागे शोभाके निमित्त सुवर्ण संयुक्त स्फटिककी भीतवारे नारायणके महलमें बुहारी देतीसी प्रतीत होय है जिनके निमित्त ब्रह्मादिक यत्न करै हैं ॥ २१ ॥ जहां अपनी सखिनको संग लिये लक्ष्मी अपने वनमें तुलसीसों श्रीनारायणको अर्चन करती लक्ष्मी मूंगनके तट और अमृत समान जलवारी बावरिनमें सुंदर वार और ऊंचे नासिकावारे अपने मुखके प्रतिबिम्बको निहारके ऐसो मानैहैं कि हमारे या मुखको हरिने स्पर्श अर्थात् चुंबन कियो है लक्ष्मीकों सौभाग्य नारायणके अनुग्रहके आधीन है ॥ २२ ॥ वा वैकुंठकूं वे नहीं जायहै जो पापनाशक श्रीहरिकी सृष्ट्यादि चरित्रके विना और विषयकी मतिकी विनाश करवेवारी कुकथा सुनी हैं बडे खेदकी बात है कि भाग्यहीन पुरुषननें जे कथा सुनी है वे कुत्सित कथा निःसार हैं याहीसो वे कथा कोई रक्षा न करै ऐसे नरकमें विनको पटकैं हैं ॥ २३ ॥ हम ब्रह्मादिकहू जा मनुष्यगतिकी इच्छा राखै हैं वह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनुष्ययोनि कि जामें धर्म और तत्वज्ञान बहुत सुलभ है वा देहको पायके जे नारायणको अर्चन नहीं करे है वे हरिकी विस्तृत मायासों मोहित हैवेके कारण वैकुंठको नहीं प्राप्त होय हैं ॥ २४ ॥ और देवनमें श्रेष्ठ श्रीमन्नारायणकी सेवा करवेसों जिन्हैं यमनियमादिककी आवश्यकता नहीं है अथवा जिनसों यमराज सदा दूर रहैहै और जिनको स्वभाव वांछित है और आपुसमें अपने स्वामी भगवत्के सुयश कथनके अनुरागसों विवश अश्रुपातसो अंगमें पुलकावलीवारे हमसे श्रेष्ठ ब्राह्मण जा वैकुंठको जाय है ॥ २५ ॥ याके उपरांत विश्वके गुरु जहां विराजे सब भुवनमें एक वंदन करवे-योग्य, दिव्य विचित्र देवेंद्रनके विमाननकी कांतिवारे वैकुंठमें और मुनिलोगननें जो पूर्व न देखो वा वैकुंठको सनकादि मुनि अपने योगबलसों प्राप्त हैके अत्यंत आनंदको प्राप्त होते भए ॥ २६ ॥ वा वैकुंठमें मुनिलोग छै ड्योढीनको उलांघके सातवीं ड्योढीपै गदा लिये बढमोले बाजु कुंडल किरीटसो सुंदर वेषधारी दो देव जय विजय नामक पार्षद देखतेभए ॥ २७ ॥ मतवारे भ्रमरनकी गुंजारसो युक्त कंठमें वनमाला पहरे जो कि श्याम चार भुजानके बीचमें शोभित है कुटिलभ्रू और चढी नाक और लाल नेत्रनसों जिनके कछु क्रोध प्रतीत है रह्यो है ॥ २८ ॥ सुवर्णमें जटित हीराके कपाट युक्त पहिले द्वारनकों जैसे उल्लंघन करते आए तैसे इनको देखते या द्वारमेंभी वे ऋषि घुसते भये, क्यों कि सर्वत्र वे अविषम दृष्टिसो अनिवारित भय त्यागे विचरै हैं ॥ २९ ॥ आत्मतत्वके ज्ञाता पवनआहारी चारों कुमार वृद्ध हैवेपैहू पांच वर्षकी अवस्थाके प्रतीत होते रोकनेके अयोग्य भगवत्के तेज उन सनकादिक कुमारनको वे भगवत्सों प्रतिकूल स्वभाववारे द्वारपाल हँसके वेतसो रोकतेभए ॥ ३० ॥ जब पूज्यतम श्रीनारायणके द्वारपालनने देवतानके देखते २ उन्हैं रोक दियो तब अत्यंत सुहृद् श्रीमन्नारायणके देखवेकी चाह भंगसो कछुक कामदेवके भाई क्रोधसों लाल नेत्र-कर सनकादिक बोले ॥३१॥ सनकादिक मुनिलोग बोले कि तुम दोनों कौन हो जो बडी भारी भगवत्की परिचर्या कर या वैकुंठमें आयेहो, जा या वैकुंठमें भगवद्धर्मी नाम दयालु पुरुष निवास करेहै समदृष्टि पुरुषनमेंसो किसीको प्रवेश करने देनो किसीको नहीं यहां आयवेपैहू तुम्हारी यह विषम दृष्टि कैसे भई या वैकुंठमें प्रशांत पुरुष श्रीमन्नारायणके विग्रहके दर्शनको भगवद्भक्तविना और कौन आवैगो, जैसे तुम आप कपटी हो तैसे औरमेंहू शंका करोहो याते तुम धूर्त हो ॥ ३२ ॥ या दिव्य त्रिपाद विभूतिमें सब विश्व जाके कोखमें है सबनके आत्मारूप भगवान्में धीर आत्माको लोग तनक भेद नहीं देखैहैं, जैसे आकाशमें आकाशको भेद नहीं, याते श्रीहरिके सुरवेषधारी तुमको ये भेद कैसे उत्पन्न भयो जैसे पेट भरवेवारेको दूसरे और उदरपोषकको भय होय तैसे तुम्हैं क्यों भयो ॥ ३३ ॥ तातें इन वैकुंठनाथ परमश्रेष्ठ ईश्वरके मंदभागी तुमसरीकेनको जामें कल्याण होय सो करवेको ये विचारो है कि या वैकुंठसो उन लोकनमें तुम जाओ जहां भेदभाव करवेवारनके महाशत्रु काम क्रोध लोभादि विद्यमान हैं ॥ ३४ ॥ यह घोर ब्रह्मशाप जो अस्त्रनके समूहनसोंहू न निवारण कियो जाय वा शापकों वे दोनों पार्षद सुनके महाभयभीत भए और अतिकातर हैके वे दोनों भगवत्के द्वारपाल सनकादिकके चरणनमें गिरपडे ॥ ३५ ॥ और बोले जो आपने दंड दियो सो दंड पापयोनि हमें हो जासो देवकी अवज्ञारूप अपराध हरजाय यहांसे हम नीचेसे नीचेकी योनिमें जाय तोहू आपकी कृपाकरके भगवत्की स्मृतिको नाशक मोह न होय ॥ ३६ ॥ या प्रकार वाही समय बडेनके मन हरवेवारे कमलनाभ भगवान् अपने पार्षदनसों अपनेनको अपराध करचो जान परमहंस महामुनि जिन चरणनको ढूंढै तिन चरणनसो श्रीमहा-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लक्ष्मीजी सहित तहां आप आवतेभये " श्रीमच्चरणदर्शनप्रतिघातजं क्रोधं तौ दर्शयन् शमयिष्यामीति त्वराव्याजेन चरणाभ्यामेव ययौ " ॥ ३७ ॥ पांच श्लोकसों भगवत्स्वरूप वर्णन करेहै कि भगवत्पार्षद श्रीहरिके उपयोगी छत्र चमर लिये भगवत्के संग है नेत्रनको विषय भये है अपनी समाधिके भाग्यरूप है और हंसतुल्य दोउ पंखनके सुखदायक वायुसों चलायमान शुक्ल चंद्रसमान छत्रकी झालरनसों मोती अंबुकनिकाकी समान गिररहे हैं ॥ ३८ ॥ द्वारपाल और सनकादि मुनिनपै कृपा करवेमें जिनको प्रसन्न मुख है जो स्पृहणीय गुणनमें धाम हैं जो प्रेमभरी दृष्टिसों भक्तनके हृदयको सुख देयहैं श्याम और बडे वक्षस्थलके बीच शोभायमान लक्ष्मीके निमित्त सातौ लोकनके ऊपर मुकुटमणिके समान विराजमान अपने धाम वैकुंठको शोभित करे हैं ॥ ३९ ॥ बडे पुष्ट कटिपश्चाद्भागपै पीतांबर धारेहैं दमकतीभई क्षुद्रघंटिकासें शोभित, भ्रमरगुंजारयुक्त वनमाला पहिरे है मनोरम हाथमें कडा पहिरे एक हाथ गरुडपें धरे, दूसरेसों कमलकूं घुमाते ॥ ४० ॥ विजुरीके तेजको दूर करवेवारे मकराकृत कुंडलसों शोभित कपोल ऊंची नाक सुंदर मुख मणिमय किरीट धारे भुजदंडके समूहनके मध्यमें मनोहर बढमोले हार कंठमें कौस्तुभमणि धारे शोभित हैं ॥ ४१ ॥ श्रीमहालक्ष्मीकी सब सुंदरता भगवत्के सौंदर्यमें अस्त होयगई है, अपने भक्तनकी बुद्धिकरकै विशेषकरकै रचेभए बहुत सुंदरताको धारेहै, भक्त जैसी चाहैं तैसी सुंदरता धारें हैं, मेरे अर्थ महादेवके लिये और जो कोई भजन करै उनके वास्ते शरीरधारी श्रीभूलीलानायक श्रीमन्नारायण देख दर्शन कर अतृप्त दृष्टि सनकादिक आनंदसों अपने अपने शिरनसों नमस्कार करतेभए ॥ ४२ ॥ कमलनयनके पदारविंदकी केशरमिश्रित तुलसीके सुगंधकी वायु नासाके छिद्रसो भीतर होकर ब्रह्मानंदसेवा करवेवारेनकेहू चित्त देहको बहुत क्षोभ करती भयी ॥ ४३ ॥ श्रीवैकुंठपतिके अत्यंत सुंदर अधर और कुंदकलीसमान उज्ज्वल हास्ययुक्त मुखकमलको देख सब आशीर्वादनकों प्राप्त हैकै फिर विनके दोनों चरणनके माणिक्यवत् लाल नख सनकादिक ध्यान करते भए ॥ ४४ ॥ या विश्वमें योगमार्गसों पुरुषनकी गतीनकों ढूंढवेवारेनको ध्यानयोग्य तत्त्ववेत्तापुरुषनके सन्मान योग्य नेत्रनको आनन्द देवेवारे स्वाभाविक अणिमादि आठ सिद्धिनसों संयुक्त और अपने पुरुषस्वरूपसों दर्शन देते हरि भगवान्की सनकादिक स्तुति करवे लगे ॥ ४५ ॥ सनकादिक बोले कि हे अनंत ! जो आप अंतर्यामिरूप हृदयमें प्राप्तहू हो तोहू दुरात्मानको दर्शन नहीं देओहो; सो आप हमारे नेत्रके सन्मुख प्राप्त भए, आपसों उत्पन्न एकांतमें उपदेश करो रहस्य पिता ब्रह्माकरके जो समय कर्णके विवरसों प्राप्त होते भए ॥ ४६ ॥ हे भगवन् ! आपकी कृपासों जानेभए भक्तिरूप उपाय द्वारा शुद्ध सतोगुणयुक्त अहंकारविहीन विरक्त मुनिलोग जा आत्मस्वरूपको हृदय अनुभव करेहै जे शुद्ध सत्त्वमूर्ति धारण कर भक्तनपे प्रीति करे हैं हम आपके वा आत्मतत्वस्वरूपको जानै हैं ॥ ४७ ॥ अब तुम्हारे भक्त आपके अत्यन्त प्रसादरूप मुक्तिकीहू इच्छा नहीं करे हैं फिर आपकी भ्रुकुटीसों भय मानवेवारे इन्द्रपदकी कथाही कहाहै हे भगवन् ! जे आपकी कथा कीर्तन तीर्थ यज्ञ कर्ममें कुशल रसज्ञ तुम्हारे चरणकीही शरण होय हैं ॥ ४८ ॥ हे भगवन् ! आपके भक्तनको शाप दीनों सो हमारो भलेई नरकमें जन्म होय, परंतु हमारो चित्त भ्रमरवत् तुम्हारे पदमें सदा रमैं, तुलसीवत् तुम्हारे चरणकी शोभा वाणी कहैं, और कर्णको छिद्र तुम्हारे गुणगणोंसों पूर्ण होय तौ ॥४९॥

१ उवाहने पायन क्यों आये कि ए मेरे चरणदर्शनार्थ आये हैं सो चरणनके दर्शन करतेही इनको सब कोप शांत है जायगो लक्ष्मीको संग क्यों लाये कि लक्ष्मी ऐसी चीज है याके देखतेही सब कोप शांत है जायगो अथवा बालक मचले तब बापके मनायेसों न मने तो मैया वाको तुरत मनाय लेय है यासो लाये अथवा प्रभुने विचारी कि जो काहू तरह न मानेंगे तौ घरवारी लक्ष्मीकोहू दिये सो राजी होयंगे तौ लक्ष्मीकोंहू दै देउगो इत्यादि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे विपुलकीर्ते ! जो ये रूप आपनें प्रगट कीनों यासो हमारी दृष्टिको अत्यंत आनंद भयो, तातें या प्रकार भगवान्‌को नमस्कार होय, जो आप अजितेंद्रियनको अप्रगट हौ तोहू भगवान् सन्मुख भए हो ॥ ५० ॥

प्रादुश्चकर्थ यदिदं पुरुहूतरूपं तेनेश निर्वृतिमवापुरलं दृशो नः ॥
तस्मा इदं भगवते नम इद्विधेम योऽनात्मनां दुरुदयो भगवान् प्रतीतः ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे विप्रशापवर्णनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

ब्रह्मोवाच—इति तद्गृणतां तेषां मुनीनां योगधर्मिणाम् ॥
प्रतिनन्द्य जगादेदं विकुण्ठनिलयो विभुः ॥ १ ॥

ब्रह्माजी बोले कि इस प्रकार स्तुति करते योगाभ्यासी मुनीनकी प्रशंसा कर श्रीवैकुंठवासी प्रभु बोले ॥ १ ॥ श्रीभगवान् बोले कि इन दोनों जय विजय पार्षदनने तुमारो अपराध करो सो मेरोहू अपराध करो है ॥ २ ॥ मेरे अनुवर्ती तुमने जो इनको दंड दीनो सोही हमारेको संमत है कारण कि इन्हने मुनीनको देवतानको अनादर कीनो है ॥ ३ ॥ ब्राह्मण मेरे परम देवता हैं सो मैं तुम्हें अब प्रसन्न करूंगो हमारे पार्षदनने जो अपराध कीनो है सो हमनेही करो है ऐसे हम मानै हैं ॥ ४ ॥ चाकर जाके अपराध करैं तो लोक मालिककोही नाम लेयहैं वो असाधुवाद सब कीर्तिको नाश करै है जैसे श्वेतकुष्ठको रोग सब शरीरको बिगाडै है ॥ ५ ॥ जिन श्रीमन्नारायणको अमृत समान निर्मल यश श्रवणमें स्नान करनो जगत्के श्वपचपर्यंतको तत्काल पवित्र करै है, ये पवित्र कीर्ति मोको तुमसोही मिली है सो पवित्रकीर्ति वैकुंठपतिमें जो तुम्हारी वृत्तिके प्रतिकूल हमारी भुजा होय वाकोहू छेदन करडालूं फिर औरकी तौ बातही कहा है लोकपाल होय तौहू मारडालूं ॥ ६ ॥ जिनकी सेवा करकै मेरे चरणकमलकी रेणु पवित्र मानीजाती है और मैं सब जगत्के पापको तत्काल दूर करसकौहौं तथा शीलवान् हूं और विरक्त रहवेपैहू श्रीमहालक्ष्मी मोय त्याग नहीं करै है जा श्रीलक्ष्मीके लवमात्र अनुग्रहार्थ ब्रह्मादिक नियमनको धारण करै हैं ॥ ७ ॥ यज्ञमें यजमानकी घी चुचावती चरुपुरोडाशादि हवि अग्निमुखसों भोजन करते मैं तैसो भोजन नहीं करूं हूं जैसो मोको अर्पण किये कर्म फलसों संतुष्ट ब्राह्मणके घी चुवावते मोहनभोग आदिसो ग्रास ग्रासमें रसको स्वादपूर्वक भोजन करते भये मुखसों मैं खाऊँहूं ॥ ८ ॥ जिन ब्राह्मणनके चरणकी निर्मल रज अखंड अकुंठित योगमायाके वैभववारे हम कि जिनके चरणको धोमन गंगाजी शिवसहित सबको पवित्र करै है अपने किरीटनसों धारण करैं हैं, ऐसे ब्राह्मणको कौन तिरस्कार करै हैं ॥ ९ ॥ मेरे शरीर ब्राह्मणश्रेष्ठको और गउनको और अनाथप्राणीनकों जे भेदबुद्धिसों देखें हैं विनकी पापसो नष्टदृष्टि हैं ऐसे ब्राह्मणद्रोहीनको मेरे दंडदाता यमके सर्पवत् क्रोधी गीध रोपकरकै चोंचसो छेदै हैं ॥ १० ॥ कठोर बोलवेवारे ब्राह्मणनकों जो ईश्वरबुद्धिसो पूजैहैं हृदयसो तुष्ट हो स्मितसुधासिक्त कमलसरीके मुखकी प्रेमशोभित वाणीसो जो स्तुति करैं हैं मेरी समान संबोधन करै हैं विनने मोकों वश कीनो है ॥ ११ ॥ मो अपने स्वामीके अभिप्रायको नहीं जानकर ये दोनों पार्षद तुम्हारे अपराधकी उचित गतिको शीघ्र प्राप्त हैकै फेर मेरे समीप आवैंगे ये मेरी कृपा है यासो इन मेरे भृत्यनको जो लोकान्तरको जानो है वाकू जल्दीही समाप्त करनो योग्य है अर्थात् ऐसो करो जैसे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जलदीही मेरे पास आय जांय ॥ १२ ॥ ब्रह्माजी बोले कि याके उपरांत सुंदर प्रकाशित ऋषिकुल योग्य वचन भगवान्के सुनके विन क्रोधसर्पसों डसे भएनकेहू आत्मा तृप्त नहीं होते भये ॥ १३ ॥ श्रेष्ठ थोरे अक्षर, बडे अर्थसों अत्यंत गंभीर वाणीको कानसों सुनके, वाको विचार कियो कि भगवत्की क्या इच्छा है परंतु विन ईश्वरकी करवेकी इच्छाको नहीं जानतेभए ॥ १४ ॥ फिर योगमायासों ब्रह्मको महाउदय जान हाथ जोड प्रसन्न रोमांचित हो सनकादिक ब्राह्मण बोले ॥ १५ ॥ ऋषि बोले कि हे भगवन् ! हे देव ! तुम्हारी करवेकी इच्छाको हम नहीं जानें है, हमपै बडो अनुग्रह कीनों जो कि आप जगदीश्वर हैके यह कहोहो कि हे ब्राह्मणनहो ! तुमने मोपै बडो अनुग्रह कियो ॥ १६ ॥ हे प्रभो ! निश्चय करके ब्रह्मण्य आपके परमदेवता ब्राह्मण है देवनके देव ब्राह्मणनके आत्मदेव आप हो ॥ १७ ॥ सनातन धर्म तुमसों हैं तुम शरीर धारकर धर्मकी रक्षा करोहो, परम गुह्य धर्मके निर्विकाररूप तुम हो ॥ १८ ॥ निवृत्तमार्गमें लगेभए योगिजन तुम्हारे अनुग्रहसों मृत्युको अनायाससों तरजाय हैं, विनपे तुम दूसरे जन अनुग्रह करैं कहा यह संभव है अर्थात् यह सर्वथा असंगत है भलो तुमपै कोउ कहा अनुग्रह करैगो ॥ १९ ॥ जिन ईश्वरकी श्रीलक्ष्मी क्षणक्षणमें सेवा करै है, कि धनकी चाहनवारे पुरुष अपने शिरसों जा लक्ष्मीके चरणकी रजको क्षणक्षणमें शिरसों धारण करैहैं सो पुण्यात्मानने अर्पण करी चरणसंबंधी तुलसीकी नवीन मालाही जिनको स्थान है ऐसे भ्रमर राजनके निवास स्थान चरणकमलकी इच्छा करनवारी वो लक्ष्मी आपकी सेवा करै है ॥ २० ॥ एकांतचरितवारन करकै अनुवर्तमान श्रीजीको आप अति आदर नहीं करोहो परम भागवतनमें तुमारो प्रसंग गुणनके आश्रयरूप तुम द्विजनके मार्गकी पुण्यरजसो अथवा श्रीवत्स चिह्नसों और भृगुलतासों पवित्र होउ हो इन दोनौनको धारण करना शोभाके निमित्त है ॥ २१ ॥ आप अपने धर्मको तीनों युगनमें तीनों चरणनसों चराचर या ब्राह्मण देवतानके अर्थ निश्चय कर धारण करोहो, तिनके घातक हमारे रज तमको सतोगुण वरदाता तनुसों तुम दूर करो ॥ २२ ॥ हे देव ! आपके रक्षायोग्य ब्राह्मणोत्तमनके कुलनके जो अत्यंत पूजाकरकै कोमल वाणीसे आप न रक्षा करो तो कल्याणरूप तुम्हारो मार्ग नष्ट है आप श्रेष्ठ हैंजाय जो श्रेष्ठ आदमी करै वाको प्रमाण सब लोग ग्रहण करैहै सो गीतामें है कि, "यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ॥ स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते" ॥ २३ ॥ अत्यंत शुद्धसत्वमय क्षेम विधान करवेकी इच्छा करनवारे तुम जीवनके अर्थ निज शक्तिनसों धर्मप्रतिपक्षीके दूर करनवारो आपको ब्राह्मणनको पूजनो योग्यही है त्रिगुण मायाके स्वामी विश्वभर्ताको तेज ब्राह्मणके अनुग्रहसोंही मेरो सब प्रताप ऐश्वर्य है या कहिवेसो नष्ट नहीं होय है, यह नम्र होनो तो केवल आपका विनोद है ॥ २४ ॥ हे अधीश ! इन दोनोंको और दंड विधान करो, अथवा कोई कपटरहित वृत्ति इनसो करावनी योग्य है, सो करो वाय हम मंजूर करै है अथवा जो उचित दंड होय सो हमको देओ, जो निरपराधीनको हमने शाप दीनोहो ॥ २५ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे ब्राह्मणो ! क्रोधावेशकरके बढी जो समाधिनाम एकाग्रता ता करके दृढ कियो है योग जिननै ऐसे ये दोनों असुरयोनिको प्राप्त हैके शीघ्र फेर मेरे समीप आवेंगे, और ये शाप तो मैंनेही तुम्हारे द्वारा दिवायो है हे ब्राह्मणो ! सो तुम जानो ॥ २६ ॥ श्रीब्रह्माजी बोले कि याके उपरांत नयन आनंदपात्र श्रीवैकुंठलोक स्वयंप्रकाश वा स्थानको और प्रभुको देखके सब मुनि लोग ॥ २७ ॥ भगवान्की परिक्रमा दे प्रणाम कर आज्ञा ले, वैष्णवी श्रीशोभाकी प्रशंसा करते मुदित हो चलेजाते भए ॥ २८ ॥ भगवान् पार्षदनसों जाती वखत बोले मत डरो तुम्हारो कल्याण होयगो, ब्रह्मतेज दूर करवेकों हम समर्थ हैं परंतु ये हमारेको संमत

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं है, " यहां ये सिद्धांत है कि यद्यपि सनकादिकनको क्रोध होनो संभव नहीं हो न भगवत्पार्षद-नको ब्राह्मणनसों प्रतिकूलता होनी योग्य ही न भगवान् भक्तकी उपेक्षाही करै है न वैकुंठ गएनको पुनर्जन्म होयहै तथापि भगवान् सृष्टि रचवेकीसी नाईं कोई समय भगवत्को युद्ध करवेकी इच्छा भई तो औरको थोडो बली जान अपने पार्षदनको अपने तुल्यबल मान ये दोनों हमारे प्रतिपक्षी होयँ, ये विचार दोनोंनकों ब्राह्मणनके निवारण करवेमें प्रवृत्त कराय तिनमें क्रोध उत्पन्न कर तिनको शापरूप बहानो कराय युद्धरूप खेल करनों चाहिये ये भगवान्कोही संकल्प सब हो यासोंही भगवान्ने कह्योहै कि " शापो मयैव निमितस्तदैवत विप्राः " ये जाननो योग्य है यह ग्रंथ विस्तारके भयसों सिद्धांतमात्र कह्यो है, सो सब विद्वान् लोग जान लेवैं ईश्वर सर्वज्ञ सच्चिदानन्द सर्वकर्ता श्रीश्वर हैं ॥ २९ ॥ हम उपरामको प्राप्त भए तब आनंदसो क्रोधित होंकै श्रीलक्ष्मीजीने पहिलेही कहीही कि द्वारमें आवेंगे उन्हे पार्षद रोकैंगे ॥ ३० ॥ मेरेमें क्रोधके योगसो ब्राह्मणनके शापसो ब्राह्मणके अपराधसों तरकै थोरेसे कालमें मेरे समीप आओगे ॥ ३१ ॥ भगवान् द्वारपालकनसो ऐसे कह विमाननकी पंक्तिनसो शोभित सबसो सुंदर लक्ष्मीकरके युक्त अपने वैकुंठस्थानमें प्रवेश करते भए ॥ ३२ ॥ वे दोनों देवनमें श्रेष्ठ दुस्तर हरिलोकसो अथवा बडे दुस्तर ब्राह्मणनके शापसो नीचे गिरे तब वे श्रीविहीन और गर्वरहित हैगये ॥ ३३ ॥ हे पुत्रो ! वैकुंठसों जब वे दोनों गिरे वासमय विमाननके आगे महान् हाहाकार होतोभयो ॥ ३४ ॥ वेही दोनों श्रीहरिके पार्षद अब या समय दितिके पेटमें कश्यपजीके महातेज रूप प्रविष्ट हैं ॥ ३५ ॥ विन दोनों असुरनके तेजसों तुम्हारो तेज तिरस्कृत भयोहै सो भगवान् तुम्हारे तेज बढावेंगे ॥ ३६ ॥ विश्वके उत्पत्ति स्थितिके कारण तथा योगीश्वरहू जिनकी मायाको पार नहीं पायसकेहै सो भगवान् हमारो क्षेम करेंगे, हमारे विचारेसों कहा होयहै वे त्रिगुणनके स्वामी हैं ॥ ३७ ॥

विश्वस्य यः स्थितिलयोद्भवहेतुराद्यो योगेश्वरैरपि दुरत्ययययोगमायः ॥
क्षेमं विधास्यति स नो भगवांस्त्र्यधीशस्तत्रास्मदीयविमृशेन कियानिहार्थः ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे ब्राह्मणमाहात्म्यवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

मैत्रेय उवाच-निशम्यात्मभुवा गीतं कारणं शङ्क्यो ज्झिताः ॥
ततः सर्वे न्यवर्तन्त त्रिदिवाय दिवौकसः ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि ब्रह्माजीको वचन सुन जन्मको कारण सुन शंका त्याग सब देवता स्वर्गको जाते भए ॥ १ ॥ दिति तो भर्ताकी आज्ञासों पुत्रनकी ओरसों शंकित होय पूर्ण वर्षशत भये तब वह साध्वी जोहरले दो पुत्र उत्पन्न करती भई ॥ २ ॥ जब वे जन्मे तब स्वर्गमें भूमिमें आकाशमें सब लोकनको बहुत भयदायक उत्पात होतेभए ॥ ३ ॥ पर्वतसहित भूमि चलायमान भई सब दिशा प्रज्वलित भई, उल्कासहित वज्रपात होतेभए, आर्तिके हेतु धूमकेतुको उदय भयो ॥ ४ ॥ वारंवार फुंकार करती भई अति कठोर झंझावायु चलती भई महावृक्षनको पवनके बबूरे रूप सेनासो रज ध्वजा धार उखाडतीभई ॥ ५ ॥ वारंवार चमकती हुई बिजुरीसों और बादलनसों तारागण लुप्त हैगये और आकाशमें महाअंधकार छायजायवेसों कछुहू आकाशको निशान दिखाई न दियो ॥ ६ ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सागरमें अधिक तरंगे उठनेलगीं जिनसों वाके मकरादि जंतु क्षुभित हैगये सागर अपने शब्दसों चिल्लातोसो दृष्टि आनेलगो बावडी कूप तालावके कमल सूख गये नदियें चलायमान भईं ॥ ७ ॥ राहुग्रस्त सूर्य चंद्रमाके मंडल वारंवार होते भए, बादर विना गर्जे स्थनके खनखनाटके तुल्य शब्द गिरि गुहानसो होतो भयो ॥ ८ ॥ और गीदड उलूक भयंकर शब्द करते भये, और गीदडी गाउनके भीतर आयके मुखसों भयंकर अग्निको उगलती भई, भयंकर शब्दनको करती भई ॥ ९ ॥ संगीतवत् रोदनकी नाईं धरतीसो शिर ऊंचो कर अनेक तरहकी वाणी कुत्ता जहां तहां बोलनेलगे ॥१०॥ हे विदुर ! कठोर खुरनसों गधा धरती खोदन लगे सैकडों गधा चिल्लाते दौडते फिरै हैं ॥ ११ ॥ गधानके रोयवेसों डरे भए पक्षी घोंसलनसो गिरतेभए, घरमें वनमें पशु विष्ठा मूत्र वारंवार करते भये ॥१२॥ त्रासके मारे गैयनके थनसों रुधिर निकलने लगो बादर पीप वर्षावने लगे देवतानकी प्रतिमा रोवन लगी, वृक्ष पवन विना गिरपडे ॥ १३ ॥ पुण्यतम नक्षत्रगण गुरु बुधादिक ग्रह दीपित हो और क्रूर मंगलादि ग्रह वक्रगतिसों चलते भए परस्पर युद्ध करते भए ॥ १४ ॥ वा तत्त्वके न जानवेवारी प्रजा अनेक महाउत्पातनको देखके डरके मारे विश्वको नाश आयो जानतीभई, केवल ब्रह्माके पुत्र सनकादिक नाश न मानते भए ॥ १५ ॥ वे आदि दैत्य हठात्कारसो अपने पुरुषार्थको प्रकट करते भए पाषाण सम शरीरसो पर्वतकी नाईं बढते भए ॥ १६ ॥ सुवर्णके किरीटाग्रभागसों स्वर्गको स्पर्श करते प्रकाशमान भुजानके बाजूनसो दिशानको रोके चरणसो पद पदमें पृथ्वीको कंपावते वे दोनों भ्राता सुंदर कटि मेखलावारी कमलकी कांतिसों सूर्यकोहू उल्लंघन कर स्थितभये ॥ १७ ॥ प्रजापति कश्यप तिन दोनोंनको नामकरण करते भये, जैसे कि जो कश्यपसो पहले पैदा भयो वाको प्रजा हिरण्यकशिपु जानती भयी, और जो दितिसे पहले पैदा भयो वाको हिरण्याक्ष ऐसे कहते भये " यह भाव है कि जिस समयमें योनिके पुष्पको प्रवेश करतो भयो बीज दो भागसो पहले पीछे हैके प्रवेश करै है तब यम (अर्थात् दो गर्भ) होय हैं फिर वे दोनों गर्भ माताके पेटसो दूसरे क्रमसो निकरे है अर्थात् जो बिन्दु गर्भाधान कालमें पहले योनिपुष्पमें गिरै है वा बिन्दुको जो गर्भ है सो माताके गर्भाशयसो पीछे निकसे है, और जो बिन्दु पीछे गिरै है वाको गर्भ पहले निकसे है " सोही पिण्डसिद्धिमें कह्योहै कि " यदा विशेद्द्विधाभूतं बीजं पुष्पं परिक्षरत् ॥ द्वौ तदा भवतो गर्भौ सूतिर्वैशाविपर्य्ययात् ॥ १ ॥ इति " अर्थ यह है कि जा समयमें गिरतो भयो बीज दो भागसों हैके पुष्पमें प्रवेश करै है तो दो गर्भ होय हैं और जन्म दूसरे क्रमसे होयहै ॥ १८ ॥ हिरण्यकशिपु भुजानसों ब्रह्माके वरकरके त्रिलोकीके लोकपालनको वशमें करतो भयो और मृत्युकोहू भय न मानतो भयो कहूसों जाकी मृत्यु नहीं यासों बडो उद्धत भयो ॥ १९ ॥ हिरण्याक्ष नाम वाको छोटो प्रिय भैया दिनरात प्रीति करतो भयो, गदा हाथमें लिये स्वर्गमें गयो, युद्धकी इच्छा कर रणको ढूंढतो ॥ २० ॥ दुःसहवेगी शब्दायमान सुवर्णके नूपुर वैजंयती माला पहिरे कांधेपें महागदा धरे ॥ २१ ॥ बल पराक्रम और वरदानसों गर्वित निरंकुश और भयहीन हिरण्याक्षको देखके देवता भयभीत भये और ऐसे छिपगये जैसे गरुडसों डरके सर्प छिपजायहैं ॥ २२ ॥ अपने तेजसों भगे भए देवतानकों जान दैत्यराज इंद्रसहित देवगणनकों मत्त देख अत्यंत नाद करतो भयो ॥ २३ ॥ वहांसों लौटके क्रीडाकी इच्छा करतो गंभीर भयंकर शब्दवारे समुद्रको महाबली मत्तहाथीकी नाईं विलोय डारतोभयो ॥ २४ ॥ जब जलमें प्रवेश कीनो तब वरुणके सेनापति, जलके गण अधिर बुद्धिवारे भ्रमसहित वाके तेजसों ताडित डरेभए अत्यंत दूर भागजाते भए ॥ २५ ॥ हे तात ! सो महाबली अनेक वर्षतक पवनप्रेरित

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सागरकी लहरनकों वारंवार लोहेकी गदासो मारतोभयो, प्रचेताकी विभावरी नाम्नी पुरीको प्राप्त भयो ॥ २६ ॥ तहां जायके असुरलोकपाल हिरण्याक्ष जलके गणनके ऋषभप्रचेता वरुणकी अवज्ञा कर मुसकायके पास जायके हांसी कर नीच पुरुषनकी नाईं प्रणाम कर बोलो हे अधिराज ! मोसो युद्ध करो ॥ २७ ॥ हे प्रभो ! तुम सब लोकपालनके स्वामी महायशस्वी दुर्मदवीरमानीनके पराक्रमनाशक हो, सो पहिले सब दैत्य दानवको जीतके राजसूय यज्ञ करतेभये ॥ २८ ॥ सो या प्रकार वह अत्यंत मद वैरसो भगवान् जलपतिको उपहास्य करनलगो तब वरुणजी बढे भये रोषको अपनी बुद्धिसों शांत कर बोले हे राजन् ! अब तो हम युद्धादिककी कुशलता सब छोडके भगवत्के भजनमें सदा लीन रहे हैं ॥ २९ ॥ हे असुरश्रेष्ठ ! पुरातन पुरुषसो विना और रणके मार्गमें चतुर आपको संग्राममें संतुष्ट करवे वारे ऐसो कौन है जो तुमें संग्राममें राजी करै अर्थात् कोई नहीं दीखै है, तुम विनके पास जाओ आप सरीके मनस्वी विनकी सदा स्तुति करै है ॥ ३० ॥ तिन वीरके समीप आप जायके नष्टगर्व हो रणभूमिमें कुत्तानके मध्यमें सोओगे जो ईश्वर तुम सरीके असतनके नाशके लिये सज्जननके ऊपर कृपा करकै रूपनको धारण करै हैं ॥ ३१ ॥

तं वीरभावादभिपद्य विस्मयः शयिष्यसे वीरशये श्वभिर्वृतः ॥
यस्त्वद्विधानामसतां प्रशान्तये रूपाणि धत्ते सदनुग्रहेच्छया ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे हिरण्याक्षहिरण्यकशिपूत्पत्तिर्नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय १८.

मैत्रेय उवाच-तदेवमाकर्ण्य जलेशभाषितं महामनास्तद्विगणय्य दुर्मदः ॥
हरेर्विदित्वा गतिमङ्ग नारदाद्रसातलं निर्विविशे त्वरान्वितः ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि हे विदुर ! वरुणकी ऐसी वाणी सुन महामनस्वी दुर्मदी हिरण्याक्ष विनके वचनको कछु नहीं गिनके नारदजीसो श्रीवराह भगवान्की गति जानै महाशीघ्रतासो रसातलमें प्रवेशकर जातो भयो ॥ १ ॥ तहां सब ओरसे जीतवेवारे धराधारी डाढके अग्रभागपें धरतीको धरे ऊपरको उठाए अपनी नेत्रकी रक्तशोभासो हिरण्याक्षके तेजकों दूर करते श्रीवराह भगवान् चले आवैहै तिनकों देखकै हँसो कि अहो यह वनवासी वराह है " हिरण्याक्षेणाधिक्षेपार्थं प्रयुक्तापि

१ हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपु सूर्यके भक्त थे जब वह पूजन करते तब देवता विघ्न करने लगते इस कारण वह पूजाके समय मायासे सूर्यके निकट अपना शरीर बढाते जिसके भयसे देवता भागजाते, घरमें उसी छोटे रूपसे रहते। जब हिरण्यकशिपु हिरण्याक्षने जन्म लियाथा तबतक नीचेके पाताल लोकोंकी रचना न हुई थी स्वर्गादि लोक बनचुकेथे प्राणी जन्मतेही बढजातेथे ऐसेही उत्पन्न होतेही राक्षस बढगये दूसरेके हाथ इनकी मृत्यु नहीं थी यही इनका अदृष्ट था कि पृथ्वीका उद्धार करनेहारा वराह हिरण्याक्षको मारैगा यही वरदान था इसी कारण वाराह शरीर धारण किया और सनकादिकोंका शापभी था और सनकादिकोंने एक समय अहंकारसै कहाथा कि इन्द्रिय प्राणीका क्या करसकती हैं यह कारण था कि उन्हें वैकुंठके द्वारपर क्रोध आया और पीछे समझकर अहंकारहीन हुए ॥

२ ' नारदात् गतिं विदित्वा ' याको यह अभिप्राय है एक दिन हिरण्याक्षको आकाशमें जाते नारदजी मिले तब हिरण्याक्षने नारदसों कही कि रे नारद ! या वीणामें कहा गावे है तब नारदजी बोले कि तेरेही गुण गाऊँहूं तब याने कही कि नारद ! कही विष्णुकीहू तौको खबर है तब नारदने कही कि भाई विष्णु तौ अवही सूकर रूप बनायके रसातलमें गये हैं ऐसे खबर पायके ये चलो गयो ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भारती भगवंतं स्तौति " वनगोचर मृग जलशायी जिन्हें योगिजन ढूंढेहै ॥ २ ॥ वो हिरण्याक्ष बोले कि ब्रह्माने हमको ये पृथ्वी अर्पित कीनी है, सो छोडो तुम अज्ञानी हो, द्वितीय अर्थ अज्ञको ये है " नास्ति ज्ञो यस्मात्सः सर्वज्ञः " हे सर्वज्ञ ! हे सुराधम ! " सुराः अधमाः यस्मात् " हे सुरोत्तम ! हे सूकराकृते ! मेरे सामने या पृथिवीसहित मंगलको नहीं प्राप्त होउगे ॥ ३ ॥ हे परोक्षजित् ! तुम मायासों कपटकरके छिपके असुरनको मारो हो और कहा तुम्ही हमारो नाश करवेको देवतानने पुष्ट किये हो हे निर्बुद्धि ! योगमायाके बलके राखवेवारे अल्प पुरुषार्थवारे तुमको मारके मैं अपने सुहृदनको शोक दूर करूंगो ॥ ४ ॥ हमारी भुजासो चलाई गदासो शिर टूटवेसो तुम जब मृतक होउगे, तो जो तुमें बलि देवेवारे ऋषिलोग और देवता हैं वे आप निर्बल हैके नष्ट होयँगे ॥ ५ ॥ शत्रुकी दुष्ट उक्तिरूप शस्त्रनसों व्यथितशरीर दंष्ट्राके अग्रभागपै धरी पृथिवीको डरी देखके वाके बुरे वचन सहन करते ग्राहसों ताडित भए हथिनीसहित हाथीके समान जलसों बाहर निकले ॥ ६ ॥ सुवर्ण रंगवारे केश और कराल डाढवालो हिरण्याक्ष वज्रके समान शब्द कर जलसो निकसते भये वराहको देखके विनके पीछे दौरो, जैसे हाथीके पीछे मगर दौडै है, और बोले कि निर्लज्ज ! दुष्टनको कहा कर्म निन्दित हैं जाको वे नहीं करैहैं ॥ ७ ॥ वा समय भगवान् कि ब्रह्मा जिनकी स्तुति करतेहैं और सब देवता पुष्पनकी वर्षा कर रहे हे तब श्रीवराहजी जलपै पृथिवीको धरके अपनी आधाररूप शक्तिसों स्थित करतेभए ॥ ८ ॥ पीछे चलो आवे सुवर्णके गहिने पहिरै बडी गदा लिये सुवर्णके विचित्र कवच धारे खोटे वचननसो वारंवार मर्मस्थानमें पीडा देते हिरण्याक्षसो प्रचंडक्रोधी वाराहजी हँसके बोले ॥ ९ ॥ श्रीभगवान् बोले कि । हे हिरण्याक्ष ! तुम सत्य कहोहो हम वनवासी सूकर हैं परंतु तुमसरीके कूकरनको ढूंढते डोलै हैं हे अभद्र ! जो मृत्युरूप फांसीमें बंधेभए तेरे बकवेको धीर लोग कभू नहीं ग्रहण करे है ॥ १० ॥ रसातलवासीनके धरोहरके हरवेवारे लाजरहित हम हैं जो तुम्हारी गदासो भागे फिरे हैं तुमसरीके बलीनसों वैर उत्पन्न कर कहा जायगे सो संग्राममें स्थित होनोही पडेगो याहीसों तुम्हारे सामने खडे हैं ॥ ११ ॥ तुम पदाती रथीनके यूथपनके निश्चय स्वामी हो, तर्क छोड हमारे कल्याणके अर्थ शीघ्र चेष्टा करो, हमें मार अपनैनके आंशु पोछो, जो अपनी प्रतिज्ञा नहीं पूरी करै है सो सभाके योग्य नहीं है ॥ १२ ॥ मैत्रेयजी बोले कि भगवान्नें ऐसे जब आक्षेप कीनो और क्रोधसो वाको बहुत उपहास्य कर वचन कहे तब वा दैत्यने खिलाडी सर्पकी समान महाक्रोध कियो ॥ १३ ॥ क्रोधसों चलायमान इंद्रिय जाकी अमर्षसो श्वास लेतो वह दैत्य शीघ्र आयके गदासो श्रीहरिको मारतोभयो ॥ १४ ॥ वैरीकी वक्षस्थलपें फेकीभई गदाके वेगको बचाय तिरछे हैके भगवान् ऐसे बचावतेभये जैसे योगारूढ योगी मृत्युको बचावै है ॥ १५ ॥ फेर दूसरी गदाको लेके वारंवार घुमाते आते भए असुरपै श्रीहरि दांतनसो होठ पीसके क्रोधसो दौडतेभये ॥ १६ ॥ तापीछे गदासो क्षत्तुके दहिनी भौंमें प्रभु मारतेभए हे विदुर ! गदामें चतुर वाही गदाको फेर भगवान्पें फेंकतोभयो ॥ १७ ॥ ऐसे भारी भारी गदासें हिरण्याक्ष और श्रीवाराहजी जीतवेकी इच्छाकरके आपसमें क्रोधकर वो वाको मारै वो वाको मारै ऐसे दोनों युद्ध करते भए ॥ १८ ॥ दोनों जयकी इच्छासो स्पर्द्धाके वश हो पैनी गदासो प्रहार करते हैं उनके प्रहार लगवेसो अंगके घावमेंसो रुधिर निकल-

१ यहां वन नाम जलको समझनो ' जीवनं भुवनं वनम् ' अर्थात् यामें या दुष्टने आक्षेप कियो है प्रयोजन यह है कि वनके सूकर जंगली तो बहुत देखे हैं पन जलको सूकर आजही देखवेमें आयो है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वेसो दूनो क्रोध बढतो हो पैतरा पलटकर विन दोननको युद्ध ऐसो विदित होतो हो जैसे दो बैल एक गौके निमित्त युद्ध करते होय ॥ १९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! दैत्यको और यज्ञावतार श्रीवाराहजीको जिन महात्माननें वाराहतनु ग्रहण कीनो है और पृथिवीके निमित्त जे परस्पर द्वेष करते हे विनके युद्ध देखवेको ऋषिनको संग लिये ब्रह्माजी आवते भए ॥ २० ॥ चतुरतायुक्त मदमत्त निर्भय बराबर प्रतीकार करवेवारे अघट पराक्रम दैत्यको देख सहस्र ऋषिनके स्वामी भगवान् ब्रह्माजी आदिवाराहरूपधारी श्रीमन्नारायणसों यह बोले ॥ २१ ॥ ब्रह्माजी बोले कि हे देव ! आपके चरणकमलके समीप प्राप्त हैवेवारे देवता ब्राह्मण गौ निरपराधी जीव ॥ २२ ॥ इन सबको वृथाही यह अपराधकारी भयकारी दुष्टकर्मकारी है; हमसों याकों वर मिलोहै हमारे समान कोई नहीं है ऐसे ढूंढतोभयो ये कंटक लोकनमें फिरेहै ॥ २३ ॥ मायावी गर्वी निरंकुश असत्तम या असुरको मत राखो हे देव ! जैसे बालक उठे भए सर्पको पुच्छादि खींच खेलै है तैसे आप याके संग खेल मत करो ॥ २४ ॥ हे अच्युत ! ये दारुण जबतक अपने अधिकारको प्राप्त होय न बढै तबतक अपनी योगमायामें स्थिर हैके या पापीको तुम मारो ॥ २५ ॥ हे सर्वात्मन् ! ये घोरतम संध्याकी वेला लोकके विनाश करवेवारी है सो सन्ध्यासमय चलो आवै है "ये छंवट् अव्यय विनाश अर्थमें है" हे प्रभो, देवनको जय करो ॥ २६ ॥ अब अभिजिन्नाम योग मुहूर्त आयो है, हम सुहृदनको कल्याणके अर्थ शीघ्र या दुःखसों तारो ॥ २७ ॥ आपको मंगल होय, तुम जाके मारवेवारे हो सो ये पापी आपही आपके पास आयो है याको पराक्रमसो संग्राममें मार सब लोकनको सुख देओ ॥ २८ ॥

दिष्ट्या त्वां विहितं मृत्युमयमासादितः स्वयम् ॥
विक्रम्यैनं मृधे हत्वा लोकानाऽधेहि शर्मणि ॥ २८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे श्रीवाराहहिरण्याक्षयुद्धवर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

मैत्रेय उवाच—अवधार्य विरिञ्चस्य निर्व्यलीकामृतं वचः ॥
प्रहस्य प्रेमगर्भेण तदपाङ्गेन सोऽग्रहीत् ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि निष्कपट अमृततुल्य विरिंचिको वचन सुनकें भगवान् हँसके प्रेमसे कटाक्षसो ग्रहण करते भए ॥ १ ॥ तब सामने कहींसो जाको भय नहीं ऐसे विचरते शत्रुकी ठोडीमें उछरके भगवान् गदा मारते भए ॥ २ ॥ तब वा दैत्यने ऐसी गदा मारी कि सोनेकी गदा भगवत्के करसों छूटी भई घूमकर गिरी सो महाद्भुत भई कि जो भगवान्के हाथमेंसों गदा धरतीमें गिरपरी वो गदा धरतीपे गिरी शोभाको प्राप्त भई ॥ ३ ॥ यद्यपि वाय अवसर मिलो तथापि निरायुध भगवान्पें वा समय संग्रामके धर्मको मान विष्वक्सेनको कोप करावतो शस्त्र न चलायो ॥ ४ ॥ गदा छूटगई तब हाहा-

१ राक्षसनको सायंकालमें जोर बढै है सो यहां ये प्रयोजन है जौलों संध्या न होय ताके पहलेही मारगेरौ ये प्रयोजन है ॥ २ सो या ध्रुवपदमें है चौताल राग खंमाचका ध्रुपद है । चक्रके धरनहारे गरुडके असवारे नंदके कुमार मेरी संकट निवारेजू । यमलार्जुन तारे गज ग्राहसें उधारे कालीके नाथनहारे मेरे प्राण अधारेजू ॥ नखपर गिरि धारे गोपी ग्वालको उबारे इंद्रहके गर्व गारे विरद विचारेजू । द्रुपदसुताकी बेर कहीं न लागी देर अब कहा अबेर सूर सेवक तिहारेजू॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कार हैवे लगो तब संग्रामके धर्मको मान वाराह विभु चक्रको स्मरण करते भए ॥ ५ ॥ दितिके अधम पुत्र अपने पार्षदनमें मुख्यके संग चक्र लियौ संग्राममें तत्पर भगवान्‌के पराक्रमके नहीं जानवेवारे देवता कहन लगे कि हे प्रभु ! आपको मंगल होय पापीको मारौ ॥ ६ ॥ चक्र लिये आगे ठाडे कमलनयन श्रीवाराहजीको ऐसे देख क्रोधमें भरके क्रोधसों श्वास लेतौ दैत्य अपने दांत पीसतोभयो ॥ ७ ॥ कराल ढाडा नेत्रसे भस्म करैगो ऐसे हरिकी ओर देख उछलकर " यह मारौ " ऐसौ कह भगवान्‌के ऊपर प्रहार कियो ॥ ८ ॥ हे साधो ! भगवान् यज्ञवाराह लीलाकर शत्रुके देखते देखते पवनवेग समान गदाको बांए पांवसें फेंकते भए ॥ ९ ॥ तब भगवान् बोले जो तू जीतवेकी इच्छा करै है तौ आयुध लेकै प्रहार कर ऐसे कहिवेपें वह फिर ताडन कर अत्यंत दहाडतोभयो ॥ १० ॥ वा गदाको आती देख भगवान् खडेभए जैसे सर्पिणीको गरुडजी पकडै या प्रकार लीलाकर पकड लेतेभए ॥ ११ ॥ अपने पुरुषार्थ नष्ट हैवेपैहू वा महाअसुरनै भगवान्‌के देवेपैहू वह गदा ग्रहण नहीं कीनी ॥ १२ ॥ तब जरतीभई अग्नि समान तीन शिखावारे त्रिशूलको लेकै वराहरूपी यज्ञ भगवान्‌पें फेंकतोभयो, जैसे कोई ब्राह्मणके ऊपर मारण प्रयोग करे तैसे ॥ १३ ॥ तासमय पराक्रमसों दैत्य महाभटको फेंको त्रिशूल उत्कट कांतिमान् आकाशको प्रकाश करतोभयो श्रीवाराहजी अपने पैनी नेमिके चक्रसों त्रिशूल काटते भए जैसे गरुडजीके गिरे भए पंखको इंद्रने काटोहो ॥ १४ ॥ श्रीहरिके चक्रसों अपने त्रिशूलके खंड खंड करदिये देखके विस्तृतवक्षस्थल श्रीमान् ईश्वरके सामने आय अत्यन्त क्रोध कर कठोर मुक्कासो मार नाद कर असुर अन्तर्धान है गयो ॥ १५ ॥ हे विदुर ! भगवान् आदिवाराह ऐसे मुक्का खाय मालाके मारवेसो जैसे हाथी न हटै तैसे नेकहू नहीं कंपायमान भए ॥ १६ ॥ तब वह योगमायाके ईश्वर हरिमें बहुत माया रचतो भयो, जाको देख त्रसित प्रजा विश्वको नाश मानतीभई ॥ १७ ॥ धूलि और अन्धकारको फैलाती हुई प्रचंड वायु चली, सब दिशानसौं पाथरनकी वर्षा भई, जैसे कोई तोपसों फेंके तैसे पाथर वर्षते भए ॥ १८ ॥ आकाशमें नक्षत्रसमूह नष्ट भये बिजुरीगर्जनासहित मेघसमूह पीव केश रुधिर विष्टा मूत्र हाड वर्षतेभए ॥ १९ ॥ हे विदुर ! नाना आयुध फेंकते पर्वत दीखे शूल लिये वार खोले नंगी यातुधानी दीखनलगी ॥ २० ॥ यक्ष राक्षस सिपाई घोडे रथ हाथी आततायी लोग हिंसित वाणी अति भयंकर बोले ॥ २१ ॥ प्रगटी भई आसुरी माया नाश करते तीनपदी भगवान् सुदर्शनास्त्रको प्रयोग कते भए " त्रयो अस्य पादाः " इति श्रुतेः ॥ २२ ॥ तब दितिके हृदयमें महाकंप उठो पतिकी आज्ञाको याद करतेही वाके स्तननसों रुधिर बहिवेलगो ॥ २३ ॥ जब वाकी सब माया नष्ट हैगई फेर केशवके समीप आय क्रोधसों आलिंगन करतो हिरण्याक्ष इनको बाहिर स्थित देखतोभयो ॥ २४ ॥ वज्र समान मुक्कानसौं मारते हिरण्याक्षको भगवान् हाथसों वाके कनपटीमें एक चनकठो मारतेभये, जैसे इंद्र वृत्रासुरकूं मारे ॥ २५ ॥ विश्वके जीतवेवारे भगवान्‌ने जब अवज्ञा कर वाको मारो, तब वाको शरीर सब ओर घूमवे लगो, नेत्र निकस आए भुजा चरण शिर कंधा टूटे जैसे कोई पवनसों उखडोभयो वृक्ष गिरे तैसे हिरण्याक्ष गिरतोभयो ॥ २६ ॥ पृथिवीमें सोये प्रगट तेजस्वी कराल दंष्ट्रासो होठ दांवे पडे भए हिरण्याक्षको वध देख ब्रह्मादिक आय प्रशंसा कर बोले या समान मृत्यु कौनको प्राप्त होयगी ॥ २७ ॥ असत् लिंग शरीरसो मोक्षकी इच्छाकरके योगसमाधिसो एकांतमें योगी लोग जाको ध्यान करैं हैं, सो या दैत्याधमने उन्ही भगवत्‌के पदसों मरके मुख देखते देखते शरीर त्याग कियो ॥ २८ ॥ ये वेही दोनों पार्षद हैं शाप-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सों खोटी गतिको प्राप्त भए हैं, फेर कछु जन्मन करकै वैकुंठस्थानको प्राप्त होंयगे ॥ २९ ॥ देवता बोले कि सब यज्ञनके विस्तारके कारण स्थितिके निमित्त निर्मल सत्यमूर्ति ग्रहण करवेवारे तुम्हारे अर्थ वारंवार नमस्कार होय, भलो भयो सब जगत्को पीडक ये मरचो, हे ईश्वर ! तुम्हारे चरणकी भक्तिसों हम अत्यंत पवित्र भए ॥ ३० ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे असह्यपराक्रमी हिरण्याक्षको श्रीआदिवाराहजी मार सदा जहां सुखयुक्त श्रीवैकुंठलोकको ब्रह्मादि देवनसो स्तुत हो जातेभए ॥ ३१ ॥ हे सुमित्र ! मैंने तुमते तैसे अवतारधारी श्रीहरिकी चेष्टा कही, जैसे उदारपराक्रमी हिरण्याक्षको महासंग्राममें खेलकीसी नाईं तिरस्कार करतेभए ॥ ३२ ॥ सूतजी बोले कि ये मैत्रेयजीकी भगवत्कथाकी कही बात सुन विदुर महाभागवतोत्तम परम आनंदको प्राप्त होते भए ॥ ३३ ॥ और पवित्रयशस्वी विख्यातयशो ब्राह्मणनकी कथा सुनवेसों आनंद होय है, सो श्रीकांतकी कथा सुन पवित्र होय यामें कहा आश्चर्य है ॥ ३४ ॥ जिन श्रीभगवान्ने चरणकमलको ध्यान करवेवारे मगरग्रस्त गजेंद्रको हथनीनके पुकारते कष्टसो शीघ्र छुडायो[1] ॥ ३५ ॥ अन्य शरणागतकोमल मनुष्यनकरकै सुखाराध्य श्रीहरिको कृतज्ञको न सेवन करैगो, जो भगवान् दुष्ट जननसो सदा दुराराध्य हैं ॥ ३६ ॥ जो कोई हिरण्याक्षको वध महाअद्भुत श्रीवाराहजीकी लीलाको सुनैहैं गावै हैं अनुमोदन करैहैं वो हे ब्राह्मणहो ! ब्रह्मवधसेहू विमुक्त हैजायहैं ॥ ३७ ॥ हे महापुण्य ! अत्यंत पवित्र धनयशदाता वैकुंठदाता आयु आशीशदायक प्राण इंद्रियनको युद्धमें शूरता बढायवेवारो है, हे राजन् ! याके सुनवेवारेकी अंतमें श्रीनारायणमें गति होयहै ॥ ३८ ॥

एतन्महापुण्यमलं पवित्रं धन्यं यशस्यं पदमायुराशिषाम् ॥
प्राणेन्द्रियाणां युधि शौर्यवर्धनं नारायणोऽन्ते गतिरङ्ग शृण्वताम् ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे हिरण्याक्षवधवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अध्याय २०.

शौनक उवाच—महीं प्रतिष्ठामध्यस्य सौते स्वायम्भुवो मनुः ॥
कान्यन्वतिष्ठद्द्वाराणि मार्गायावरजन्मनाम् ॥ १ ॥

शौनकजी बोले कि हे सूतपुत्र ! जब ऐसे श्रीवाराहजीने पृथ्वीको लायके स्थापन करी तब वा पृथ्वीको पायके स्वायंभुव मनु पीछे फिर सृष्टि रचना करवेको कौन द्वारनमें स्थित भयो नाम अर्वाचीन प्राणिनको कैसे रचतो भयो सो कहो ॥ १ ॥ विदुर महाभागवत श्रीकृष्णजीके एकांती सुहृद् है जो विदुर श्रीकृष्णसो वैर करते धृतराष्ट्रको पुत्रसहित त्यागते भयो ॥ २ ॥ ये द्वैपायनजीसो महिमामें न्यून नहीं है क्यों कि विनके देहसों उत्पन्न हे सब प्रकारसों श्रीकृष्णमें आसक्त हे और श्रीकृष्णके भक्तनकी अनुवृत्तिमेंभी तत्पर हैं ॥ ३ ॥ तीर्थनको सेवन करवेंसो रजोगुण जिनको नष्ट भयो ऐसे विदुर हरिद्वारमें आयके तत्त्वके अतिशय जाननेवारे मैत्रेयजीसों कहा पूछतेभये ॥ ४ ॥ तिनके संवादमें हे सूत ! जो निर्मल कथा प्रवृत्त भई

१ जिनको या पदमें वर्णन है " राग देस ताल तिताला । धाए गोविंद गजेंद्र उबारो ॥ टेर ॥ फरर फरर फररात पीत पट चरन गवन कियो कुंजर तारो ॥ १ ॥ खैंचत ग्राह ग्रह अपनेकूं कुदिन जान हरिनाम उचारो ॥ २ ॥ श्रवण नासिका डूबन लागी कमल नयन देखत ललकारो ॥ ३ ॥ काट्यो फंद चक्रधारासूं अघमोचन कियो कुंजर तारो ॥ ४ ॥ अग्रदास पंकजपद परसत इंद्रदमन वैकुंठ पधारो ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीहरिके पादकमलाश्रय गंगाजल सब पापनाशक है, तैसे भगवत्कथा सब पापनाशनी है ॥ ५ ॥ सो हमसो कीर्तन करो, तुम्हारो मंगल होय कीर्तन योग्य उदारकर्मवारे हरिकी लीला अमृत पीते २ कौन रसज्ञ तृप्त होय है ॥ ६ ॥ नैमिषारण्यवासी ऋषिनने ऐसे उग्रश्रवासों पूछी तब भगवान्में अर्पितआत्मा सूत जिन कथानको कहितेभए सो सुनो ॥ ७ ॥ सूतजी बोले कि श्रीवाराहरूपधारी हरिने अपनी मायासो रसातलसो पृथिवीको उद्धार कर हिरण्याक्षको अवज्ञासों मारके लीला करी ये सुनके हर्षको प्राप्त हो विदुरजी मुनिसो पूछते भये ॥ ८ ॥ विदुरजी बोले कि प्रजापतिनके स्वामी ब्रह्मा प्रजाके रचनाके निमित्त प्रजापतीनको उत्पन्न करके कहा कर्म करवेको आरम्भ करतेभये, सो हे ब्रह्मन् ! भगवत्के मार्गके जाननेवारे आप वृत्तान्तको कहो ॥ ९ ॥ जो मरीचि आदि विप्र हैं, और जो स्वायंभुव मनु हैं वे श्री ब्रह्माकी आज्ञासो कैसे या विश्वको उत्पन्न करतेभये ॥ १० ॥ अपनी स्त्रीनके सहित वे सब मरीचिआदि ऋषि स्वतंत्र हैके या जगत्को रचतेभये, अथवा सब इकट्ठे हैंके या विश्वकूं रचते भए ॥ ११ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ब्रह्माने कहा कियो या प्रश्नको यक्ष आदिकनको रचतेभये या उत्तरको कहवेके लिये पहिले कही भई सृष्टिको स्मरण करवावे हैं, और मनु आदिकनके प्रश्नको उत्तर अगिले अध्यायमें कहेंगे, काऊको न समझपरै ऐसे जीवनके अदृष्ट और प्रकृतिके अधिष्ठाता अर्थात् महापुरुष और काल इन हेतुनकरके निर्विकार भगवत्सो क्षोभको प्राप्त रजः सत्व तम इन तीनों गुणनसों महत्तत्व उत्पन्न होतोभयो सोही मंत्रमें कह्योहै कि " विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यथो विदुः । प्रथमं महतः सृष्टं द्वितीयं त्वण्डसंस्थितम् ॥ तृतीयं सर्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते ॥ " अर्थ–विष्णुके तीन रूप एक महत्तत्त्वको उत्पादक, एक अंडकोशरूप, एक सब प्राणिनमें रहवेवारो इनको जानके मुक्त होय है ॥ १२ ॥ रजोगुणप्रधान दैवप्रेरित महत्तत्त्वसे सब भूतनकी आदि त्रिगुण अहंकार भयो, वाते पांच मात्रा और पांच महाभूत, और पांच ज्ञानेंद्रिय, और पांच कर्मेन्द्रिय और पांच पांच तिन इन्द्रिनके देवता ये उत्पन्न भये ॥ १३ ॥ वे सब तत्व एक एक अलग २ हैके जब रचवेको समर्थ न भए तब दैवयोगसों सब मिलकै सुवर्णमय अंडको रचते भये ॥ १४ ॥ सो आत्मासो रहित अंडकोश समुद्रके जलमें सहस्र वर्षतक सोतोभयो, वामें ईश्वर वसतोभयो ॥ १५ ॥ वाकी नाभिसों सब जीवनके समूहको आधार सहस्रसूर्य सम कांतिवारो पद्म भयो जासों स्वयंभू ब्रह्मा होतोभयो ॥ १६ ॥ जो जलमें सोवते हैं सो ब्रह्मा भगवान्के आसरेसों सब लोककी रचना जैसी पूर्वमें ही तैसी नाम रूपके विभागसों निर्माण करतो भयो ॥ १७ ॥ सबसों प्रथम पांच पर्ववारी अविद्या छायासों रचते भयो तामिस्र अंधतामिस्र तम मोह महातम ये पांच पर्व हैं ॥ १८ ॥ जब तमोमय सृष्टिसों अप्रसन्न हो ब्रह्माजीने अपने शरीरको त्याग कियो तो वासों रात्रि प्रादुर्भूत भई जासों क्षुधा पिपासा उत्पन्न होय है वाकू यक्षराक्षस ग्रहण करते भए ॥ १९ ॥ वे रचेभए भूखे प्यासे ब्रह्माकूं खायवेको दौरे क्षुधासों पीडित कोई बोले याकी मत रक्षा करो कोई बोले याको खायजाओ " जक्ष भक्ष हसनयोरिति धातुरस्ति" ॥ २० ॥ उद्विग्न ब्रह्माजी विनसों बोले मोको मत खाओ, मेरी रक्षा करो, अहो यक्ष राक्षस ! तुम सब मेरी प्रजा हो जिनने रक्षा मत करो यह कही वे राक्षस और जिनने खाय लेउ कही वे यक्ष भये ॥ २१ ॥ प्रभासों कान्तिमान् जिन जिन देवतानको ब्रह्माजीने प्रमुखतासो उत्पन्न कियो वे ब्रह्माजीके त्यागे प्रभा और दिवसको ग्रहण करतेभये ॥ २२ ॥ " स जघनादसुरानसृजतेति श्रुतेः" ॥ ब्रह्माजी जांघसों असुरनको रचते भए, वेही स्त्रीमें लंपट होय ब्रह्मासो मैथुन करवेको दौडे ॥ २३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निर्लज्ज असुरनकों देख भगवान् ब्रह्माजी हँसके शीघ्र अपने पीछे दौरे आते देख क्रोधकर डरके मारे भाग जातेभए ॥ २४ ॥ वरदायक शरणागतपीडाहारक भक्तनपर अनुग्रहके अर्थ भक्तनकी इच्छानुसार स्वरूप धारण करवेवारे सब दुःखहारक श्रीहरिकी शरण जायकै ब्रह्माजी बोले ॥ २५ ॥ हे परमात्मन् ! हे प्रभो ! मेरी रक्षा करो आपकी आज्ञासों ये मैंने प्रजा रची सो पापी प्रजा मोसो मैथुन करवेकों आवै है " यभ मैथुने " धातु व्याकरणमें है ॥ २६ ॥ निश्चय है कि तुमही एक लोकनके क्लेशनाशक हो जो तुम्हारे चरणको आश्रय नहीं लेयहैं तिनको तुमही एक क्लेश देवेवारे हो ॥ २७ ॥ सो परमेश्वर ब्रह्माको ये कृपणभाव जान एकांतमें ब्रह्मविद्यासे दर्शनदाता भगवान् बोले कि या घोर शरीरको त्यागो, ये सुन विरंचि वा देहको त्यागतेभए[1] ॥ २८ ॥ " सा अहोरात्रयोः संधिरभवदिति " श्रुतेः । जाके नूपुर चरणनमें छमके है मदसो विह्वल नेत्र कांचीकलापसो शोभित वस्त्रसो कटिपश्चाद्भागको ढकै है ॥ २९ ॥ जाके स्तनयुगल परस्पर उपमर्द हैवेके कारण ऊंचे और अंतररहित हैं और सुन्दर नासिका बनी भई, और सुन्दर दांतनकी पांति और प्यारी हांसी और लीलासों देखती ॥ ३० ॥ लाजके मारे कपडेके परदासो अपने शरीरको ढकै है और कारे कारे केशनकी सघनतासों दिपती ऐसी स्त्रीको प्राप्त हैके सब दैत्य मोहको प्राप्त होतेभये ॥ ३१ ॥ और बोले अहो धैर्य अहोरूप, याको नवीन वय, चाहवारनमें अचाहीसी डोलैहै ॥ ३२ ॥ स्त्रीकी आकृति वा संध्याको बहुत वितर्क कर विश्वाससो सत्कार कर वे कुबुद्धिवारे वा स्त्रीसों पूछतेभए ॥ ३३ ॥ तू कौन है और कौनकी है हे रम्भोरु ! हे भामिनि ! यहां क्यों आई तुम्हारो कहा प्रयोजन है रूपधनके व्यवहारसो हमसरीके दुर्भागीनको तुम बाधा करोहो ॥ ३४ ॥ हे अबले ! भद्र होय जो ये तुम्हारो दर्शन है, सो गेंद खेलनकी क्रीडाकरकै हम असमर्थनके मनको मथेहो और जैसे २ तू गेंदको फेंके है सो या तेरी गेंदके संग हमारो मन उडेहै ॥ ३५ ॥ हे शालिनि ! एक जगे तुम्हारो पादपद्म नहीं ठैरै है, वारंवार हाथसों कंदुकको फेंकोहो बडे स्तनभारसों भीत पेट विषादको प्राप्त होयरह्यो है शांतकी नांई तुमारी दृष्टि है और केश तुम्हारे बहुत सुन्दर हैं ॥ ३६ ॥ या प्रकार सायंतनकी संध्या स्त्रीरूपधारिणी प्रलोभ करायवेवारीको स्त्री मान वे मूर्ख असुर ग्रहण करतेभए ॥ ३७ ॥ फिर ब्रह्माजी गंभीर भावसो हँसकै अपने आत्मासो आत्माको सूंघती भई कान्तिसो गंधर्व और अप्सरागणनको रचतेभए ॥ ३८ ॥ वा ज्योत्स्ना कांतिमयी प्रिया तनुको जब त्यागतेभए, तब विश्वावसु गंधर्व मुख्य प्रीतिसों वाको ग्रहण करतेभए ॥ ३९ ॥ ब्रह्माजी अपने आलस्यसो भूत पिशाचनको रचके नंगे वार खोले ठाडे देख नेत्र मूंद लेतेभये ॥ ४० ॥ वे प्रभूके वा छोडे भए जृंभारूप शरीरको ग्रहण करतेभये, वोही निद्रा सबको वश करवेवारी प्राणिनमें दीखै है ॥ ४१ ॥ जा करकै उच्छिष्टको धर्षण करैहै, वाय उन्माद कहैं हैं उन्मादसों सब जीवनको महाक्लेश होयहै ॥ ४२ ॥ भगवान् ब्रह्मा बलवान् अपने आत्माको मान परोक्ष भावसो नाम अदृश्यरूपसों साध्यगण और पितृगण रचतेभए ॥ ४३ ॥ वे पितृगण ब्रह्माजीके वा अंतर्हित शरीरको प्राप्त होते भये जा शरीरके निमित्त कर्ममें चतुर लोग साध्य और पितरनको श्राद्ध करकै हव्यकव्य देयहैं ॥ ४४ ॥ ब्रह्माजी सिद्ध विद्याधरनको तिरोधान करकै रचतेभए, अंतर्धान नामक अद्भुत आत्मा तिनको देतेभए ॥ ४५ ॥ अपने प्रतिबिंबसों

---

१ यहां जो ब्रह्माजीको वारंवार देह त्याग कह्यो है सो यह ब्रह्माजीके मनकी भावना त्याग करनो समझनो सो जो ये भाव ब्रह्माजीने त्याग कियो सो यह एक स्त्रीरूप है गयो वाहीको अगारी कहै है ऐसे अगारी या अध्यायभरमें यही क्रम समझलेनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ब्रह्माजी किन्नर किंपुरुषनको रचते भये, आत्मासो आत्माकों मान आत्माको प्रकाश देखतेभए ॥ ४६ ॥ जो ब्रह्मानै त्यागो वो रूप वे ग्रहण करतेभए, वाहीको मिथुन अर्थात् जोडा होय प्रातःसमय सब गावें है ॥ ४७ ॥ हे विदुर ! जब ऐसो करवेसोहू सृष्टि नहीं बढी तब चिन्तासो व्याकुल है हाथ पसार सोगये और क्रोधसो वह शरीरहू छोड दियो ॥ ४८ ॥ जो या देहसो च्युत वार भए, वे सर्प अहि नामक भए, यह हाथ पांवको संकोच करकै चलवेवारे भये और मोटी गर्दन बडे शरीरवाले नाग भए ॥ ४९ ॥ सो ब्रह्माजी जब आपनपेको कृतकृत्यकी नाईं मानते भए तब अंतमें लोकपालक मनूनको मनसो रचतेभए ॥ ५० ॥ विन्हें ब्रह्माजीने अपनो पुरुषाकर शरीर दियो मनुकी सृष्टिको देख प्रथम उत्पन्न भएने ब्रह्माजीकी बडी प्रशंसा कीनी ॥ ५१ ॥ अहो ये जगत्स्रष्टाने बडो सुकृत कीनो है, जामें स्थित हैकै कर्म करते भए हम सब अन्नको पावैंगे ॥ ५२ ॥ तप विद्यासों युक्त योग सुंदरसमाधिसों हृषीकेश ब्रह्मा अपने सम प्रजा और ऋषिनको रचते भए ॥ ५३ ॥ तिन एक एकको ब्रह्माजी देहको अंश देते भए समाधियोग सिद्धि तप विद्या विरक्ति सब देतेभएं ॥ ५४ ॥

तेभ्यश्चैकैकशः स्वस्य देहस्यांशमदादजः ॥
यद्यत्समाधियोगर्द्धितपोविद्याविरक्तिमत् ॥ ५४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे सर्गवर्णनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय २१.

विदुर उवाच–स्वायम्भुवस्य च मनोर्वंशः परमसंमतः ॥
कथ्यतां भगवन्यत्र मैथुनेनैधिरे प्रजाः ॥ १ ॥

विदुरजी बोले कि हे भगवन् ! स्वायंभुव मनुको परमश्रेष्ठ वंश कहो जहां मैथुनसो प्रजा बढी ॥ १ ॥ प्रियव्रत उत्तानपाद स्वायंभुवके सुत जैसे धर्मकी और सप्तद्वीपवती महीकी रक्षा करते भए सो कहो ॥ २ ॥ हे ब्रह्मन् ! हे पापरहित ! तिनकी विख्यात देवहूति सुता कर्दम प्रजापतिकी पत्नी भई सो कहो ॥ ३ ॥ सो महायोगी योगलक्षणयुक्त कर्दम ऋषि वा देवहूतिमें कितनो वीर्य रचतेभए सो सुनवेवारे मोसे कहो ॥ ४ ॥ हे ब्रह्मन् ! रुचि भगवान् और ब्रह्मा सुत दक्ष ये मनुकी कन्या जो आकूति और प्रसूतिनाम भर्तानको प्राप्त होय सब जीवमात्र रचतेभए सो कहो ॥ ५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि प्रजा रचो ऐसे भगवान् कर्दमको ब्रह्माने कही तब वे दश हजार वर्षतक सरस्वती नदीपै तप करतेभए ॥ ६ ॥ तब समाधियुक्त क्रियायोगसो कर्दमजी प्रपन्नवरदायक हरिको भक्तिसो प्राप्त होतेभए ॥ ७ ॥ हे क्षत्तः ! तब कमलनयन भगवान् सतयुगमें प्रसन्न होय शब्दब्रह्मरूप शरीर धार कर्दमजीको रूप दिखावते भए ॥ ८ ॥ रजोगुणरहित सूर्य समान शुक्लकमलकी माला धारे चिकनी नीली अलकसमूहयुक्त मुखकमल उज्ज्वल वस्त्र पहिरे ईश्वरको कर्दमजी देखतेभए ॥ ९ ॥ किरीट कुंडल धारे शंख चक्र गदा धारे श्वेत उत्पलरूप खिलोना हाथमें लिये मन्द हांसी और दृष्टिसों मनको

१ जाकी खबर पडी कि यामें कौन बोलै है कौनको नाम है । कवित्त–केश शीस मुह भाल भूहणो पलक नैन गोलक कपोल गंड नासा मुख श्रवण है । अधर दशन होठ रशन ममुडा तालू चुंबुका काटिका कंठ कंधर कर मौनहै ॥ कूख कटि भुजा कर नाभि कुच पेट पीठ अंगुली हथेली नख जंघास्थल जौन है । नितंब चरण रोम एते नाम अंगनके तामें तो विचार नर तेरो नाम कौन है ॥ २ एक समय देवहूतीकी तपस्यासे भगवान्ने प्रसन्न हो कहाथा मैं तेरे गर्भमें जन्म लूंगा तब नारदजीने यही बात कर्दमजीको सुनाईथी कर्दमजीने कहा तौ हम उसीसै व्याह करैंगे जो भगवत् हमारे पुत्र होंगे इसी कारण तप किया था ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रसन्न करवेवारे ॥ १० ॥ गरुडजीके कंधेपे चरणकमल धरे, वक्षस्थलमें श्रीजी कौस्तुभ कंठमें धारण करे आकाशमें स्थित भगवान्को देखके ॥ ११ ॥ सब मनोरथ पूर्ण हो हर्षसों मस्तकसों पृथिवीमें साष्टांग दंडवत् करते प्रीतियुक्त वाणीसो धर्मात्मा हाथ जोड स्तुति करतेभए ॥ १२ ॥ कर्दम ऋषि बोले कि हे स्तुतियोग्य ! हमारे नेत्रनको तुम्हारो दर्शन सब सत्वराशि सिद्धिको देतो भयो, जिनको दर्शन शतजन्मसों समाधियोगमें स्थित हो योगीलोग वांछा करे हैं ॥ १३ ॥ जो तुम्हारी मायासे हत बुद्धिवारे जन हैं, वे संसारसमुद्रमें नावरूप तुम्हारे चरणारविंदको कामलेश लवमात्रके लिये उपासना करे हैं, विनको तुम सब काम देओ हो परंतु वे काम नरकमें प्राप्त होय हैं ॥१४॥ मोय अपने समान शीलवारी स्त्रीके व्याहकी चाहना है स्त्रीसों त्रिवर्ग सिद्ध होय है, सब कर्म-पूरक कल्पवृक्षरूप आपके चरणके शरण मैं आयोहूं मेरो अंतःकरण अच्छो नहीं है कि कामसुख आपसो चाह्यो ॥ १५ ॥ हे अधीश ! प्रजापतिरूप जे तुम तिन तुमारे वचनरूप डोरसो कामपी-डित बंधो भयो ये लोक है, हे शुक्ल ! हमहू निश्चय करके या लोकमें प्राप्त भयो कालरूप तुम्हारे अर्थ बलि दैहौं ॥ १६ ॥ लोकनको और लोकके अनुगत पशूनको त्यागके परस्पर तुम्हारे गुणवाद मादक अमृतपानसो लोकधर्म त्यागके जे आपके चरणरूप छत्रके आश्रित होय हैं ॥ १७ ॥ ये कालचक्र विन तुम्हारे भक्तनकी आयुको नहीं काटे है और इन सब जगत्की आयुको काट कालचक्र दौडे है, ब्रह्मरूप अक्षमें तो वो घूमेहै तेरह मास चक्रके आरा हैं, तीन सौ साठ दिन वाके पर्व हैं, छे ऋतु वाको नेमी हैं, पत्र वाके अनंत हैं, शीत उष्ण वर्षा तीन नाभी हैं, कठोर वाको वेग है, ये सात विशेषण कालचक्रके हैं ॥ १८ ॥ एकही आप जगत् रचवेकी इच्छाकरके दूसरी अपनी योगमायाकरके मकडीकी नाईं भगवान् अपनी शक्तिनसो या विश्वको रचोहो रक्षा करोहो फेर ग्रसोहो ॥ १९ ॥ हे अधीश ! "वत खेदे" भजन करनवारेनको हमको (भूतसूक्ष्मपद) शब्दादि विषयसुख जो तुम विस्तार करो हो यह यद्यपि तुमको वांछित नहीं होय है यह जाने हैं तथापि हमारे अनुग्र-हके लिये ऋणत्रय निवृत्त्यनंतर मोक्षप्राप्तिके अर्थ होउ जो आप अपनी माया करके शोभित तुलसीयुत अपनी (तनु) श्रीमूर्ति करके विलक्षित हो ये आपको दर्शन भोग मोक्षको देनवारोहो ॥ २० ॥ अनुभवजन्य ज्ञानसों उपरामको प्राप्त भयेहै क्रियाके अर्थ जामें और अपनी मायासों सब लोकके रचनहारे आपके नमस्कार योग्य चरणकमलको जे चरण थोडेसे भजन सेवा पूजासो संपूर्ण काम देय हैं विनको मैं वारंवार नमस्कार करताहूं ॥ २१ ॥ मैत्रेय ऋषि बोले कि जब या प्रकार ऐसे निष्कपट हैके कर्दमजीने भगवान्की स्तुति कीनी तब वा प्रणाम करवेवारेसे गरुड-जीके ऊपर बैठे प्रेमको स्मितसे चलायमानभ्रू भगवान् कमलनाभ अमृत समान वचनसो बोले ॥ २२ ॥ श्रीभगवान् बोले कि तुम्हारे चित्तकी जानके पहिलेसेंही हमने सब यत्न कर दीनो है, जा अर्थ तुमने आत्माके नियमनसो हमारी पूजा कीनी है ॥ २३ ॥ सब प्रजाके स्वामी मेरो पूजन कभूहू मिथ्या नहीं होय हैं; और मेरेमें आत्मा समर्पण करनवारे तुमसरीकेनमें तो अत्यंत हम वास करे है ॥ २४ ॥ प्रजापति सुत राजा मनु विख्यात मंगलीक है सो ब्रह्मावर्त विठुरमें बसे है, जो सप्त समुद्रतक सब पृथिवीको पालन करेहै ॥ २५ ॥ हे विप्र ! सो धर्मात्मा राजर्षि शतरूपा राणीसमेत परसो तुम्हें देखवेको यहां आवैगो ॥ २६ ॥ हे प्रभो ! सुंदर कटाक्षवारी वय शील गुणवारी पति चाहवारी वा कन्याके तुम अनुरूप हो, सो अपनी बेटीको तुम्हें देनायगो ॥ २७ ॥ हे ब्रह्मन् ! तुमने इतने वर्षनसो जा स्त्रीमें मन लगायो हो वह राजकन्या तुम्हारे कामको शीघ्र पूर्ण करेगी ॥ २८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वो तुम्हारे वीर्यको नव विभागसो उत्पन्न करेगी, तुम्हारे जमाईके कन्यानमें ऋषिलोग अनायाससो अपनी संतान उत्पन्न करेंगे ॥ २९ ॥ तुम सुंदर मेरी आज्ञामें स्थित हैकै मोको तीर्थरूप मान मेरेमें सब कर्मफल समर्पण कर मोको प्राप्त होऊंगे ॥ ३० ॥ सब जीवनमें दया कर आत्मज्ञानी होय सबको अभयदान दैकै मोमें आप सहित सब जगत् देखोगे अपनेमें मोको देखोगे ॥ ३१ ॥ हे महामुने ! हम अंशकलासहित तुमारे वीर्यकरके तुम्हारी देवहूतिमें अवतार धार तत्वसंहिता कहेंगे ॥ ३२ ॥ मैत्रेयजी बोले कि " प्रत्यग्भूतेषु अक्षेषु जायत इति प्रत्यगक्षजः " प्रत्यक्षभूत इंद्रिनके सामने आए भगवान् विनसों कर्दमजी कहिकै सरस्वती परिवेष्टित बिंदुसरसो जाते भये ॥ ३३ ॥ सब सिद्धेश्वर जिनके मार्गकी स्तुति करैं हैं वह भगवान् गरुडके पंखनसो उच्चारण भए मंत्रसमूह सामवेदको सुनते कर्दमजीके देखते तहांसो जातेभये ॥ ३४ ॥ याके उपरांत भगवान् जब चले गये, तब कर्दम भगवान् ऋषि बिंदुसरपर बैठे वा समयको प्रतिपाल करते रहे ॥ ३५ ॥ सुवर्णके सब कामवारे रथपर बैठे मनुजी अपनी बेटीको बैठाय स्त्रीसहित महीपर पर्यटन करतेभए ॥ ३६ ॥ हे सुंदरधनुषधारी ! हे विदुर ! तासो भगवान् जो कहिगए हैं वाही समय शांतव्रत मुनिके वा आश्रममें आतेभए ॥ ३७ ॥ जामें भगवान्के अश्रुबिंदु कृपाकरकै शरणागत कर्दमपर अत्यंत प्रसन्न होय गिरेहैं ॥ ३८ ॥ सो वो बिंदुसरोवर नाम सरस्वती करकै परिवेष्टित है, पुण्य आरोग्यदायक अमृतसमान जल है महर्षिगणनकरकै सेवित है ॥ ३९ ॥ पुण्यदायक वृक्ष लताजालनसो शोभित मनोहर बोलनवारे मृग पक्षिनसो शोभित सब ऋतुनमें फलपुष्पयुक्त वनपंक्तिनसो शोभित है ॥ ४० ॥ जहां मत्त पक्षिगण बोलते, मतवारे भ्रमर गुंजार करते मतवारे मयूर नटनकी नाईं कला करते नृत्य कर रहे हैं जहां मदमत्त कोकिल अपनी बोलीसों बुलायरही है ॥ ४१ ॥ कदंब, चंपक, अशोक, कंजा, बकुल, अशन, कुंद, मंदार, कुटज, आम, पोत, वृक्षनसो शोभित है ॥ ४२ ॥ जलमुर्गावी मेडका हंस कुरर जलमुर्गा सारस चकई चकवा चकोर ये मनोहर जहां कूंजैं हैं ॥ ४३ ॥ तैसेई हिरण वराह श्वान शल्लक गवय हाथी गोपुच्छ वानर सिंह नौला कस्तूरीमृगनसो शोभित हैं ॥ ४४ ॥ आदिराज स्वायंभुवमनु कन्यासहित वा तीर्थश्रेष्टमें प्रवेश कर हवनयोग्य अग्निमें होम कर बैठेभए मुनिको देखते भए ॥४५॥ उग्र योगी तपसों जिनको वपु प्रकाशित है, उन तप करवेसों दुर्बल हैवेपैहू जो भगवान्के स्नेहसहित कटाक्षभरे अवलोकन ॥ ४६ ॥ और भगवान्के भाषणरूप अमृतमय चंद्रमाकी कलासंबंधी अमृतको सेवन करवेसों अति कृश नहीं हैं कारण कि जो उपरोक्त प्रकार प्रिय वचन बोलै है वह मनुष्य मोक्षको प्राप्त होय है ॥ ४७ ॥ ऊचें कंधा कमलनयन जटाधारी चीर वसन पहिरे संस्काररहित रत्नकी समान मलीन प्रतीत होते कर्दमजीके निकट मनु गये ॥ ४८ ॥ याके अनंतर मुनि पर्णशालाके समीप आए आगेसो प्रणाम करते राजाको वाके समान बडाई कर पूजा करकै ग्रहण करते भए ॥४९॥ पूजन ग्रहण कर निश्चिंत राजाको प्रसन्न कर भगवत्की आज्ञा याद करते कोमल वाणीसों मुनि बोले ॥ ५० ॥ हे देव ! तुमारो विचरणो सज्जननकी रक्षाके अर्थ, और असतनके वधके अर्थ है, कारण कि तुम श्रीहरिकी अनपायिनी शक्ति हो ॥ ५१ ॥ जो सूर्य चंद्र अग्नि इंद्र वायु यमधर्म प्रचेतानके रूप धार स्थान स्थानमें सब काम करैं हैं, तिन धर्मरूप तुमको नमस्कार होय ॥ ५२ ॥ जयप्रद मणिगणजटित रथपर बैठ चंडकोदंड ले पापीनको त्रास देते जो तुम न पर्यटन करो तो सब

१ उस स्थानपर भगवान्के शोकसे आंसू गिरा कि कर्दमजीने विवाह संसारी सुखके निमित्त इतनी तपस्या की इसी कारण उस स्थानका नाम विन्दुसरोवर हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धर्म नष्ट हैजाँय ॥ ५३ ॥ अपनी सेनाके चरणनसो भूमंडलपै सब सेना लिये सूर्यसमान तुम विचरोहो ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! यदि ऐसा न हो तो ईश्वरकी स्थापन करीहुई सब वर्ण और आश्रमसंबंधी मर्यादा तत्काल दुष्ट पुरुषोंसे छिन्न भिन्न होजाय ॥ ५५ ॥ जब तुम शयन करजाओहो, तो लोभी निरंकुश जीवनकरके अधर्म बढजायहै, वे लोक चोरनसो ग्रसित हैके सब विनष्ट है जायहै ॥ ५६ ॥ तोहू हे वीर ! हम तुमसो पूछेहैं कि तुम यहां कैसे आये, जो मनोरथ होयगो सो निष्कपट हृदयसों हम पूरण करेंगे । क्योंकि कपटी जीवनसों अधर्म बढै हैं[1] ॥ ५७ ॥

अथापि पृच्छे त्वां वीर यदर्थं त्वमिहागतः ॥
तद्वयं निर्व्यलीकेन प्रतिपद्यामहे हृदा ॥ ५७ ॥

इति श्रीम० भाषाटीकायां तृ० कर्दमाश्रमे स्वायंभुवमनुसमागमनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अध्याय २२.

मैत्रेय उवाच-एवमाविष्कृताशेषगुणकर्मोदयो मुनिम् ॥
सव्रीड इव तं सम्राडुपारतमुवाच ह ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि जब या प्रकार कर्दमजीने विनके गुणकर्मनके उदय प्रगट किये तब लज्जावारेकी नाईं राजा मुनिसो हर्षमें होके बोले ॥ १ ॥ मनु बोले श्रीब्रह्माजी अपने मुखसों अपनी समान वेदमय तप विद्या योगसो युक्त अलंपट तुम ब्राह्मणनको रचतो भयो ॥ २ ॥ सहस्र पदवारे ईश्वर सहस्र भुजानसे ब्राह्मणनको पालनके लिये हमको रचते भए तिनके हृदय ब्राह्मण हैं, क्षत्रिय विनके अंग हैं ॥ ३ ॥ यातें ब्राह्मण क्षत्रियनकी रक्षा करैं, क्षत्रिय ब्राह्मणनकी रक्षा करैं, ऐसे आपसमें रक्षा करते हुवे सबके अविनाशी देव सत् असत्के आत्मा रक्षा करैं हैं ॥ ४ ॥ तुम्हारे दर्शनसो मेरे सब संशय कटकर दूर भए, जो आप भगवान् प्रीति करके रक्षाकी इच्छाकर धर्म कहितेभये ॥ ५ ॥ मंगल भयो जो अजितेन्द्रिय तथा चंचलवारेनको न दीखवेवारे भगवान् दीखे, भद्र है, कि मैंने मंगलीक आपको पादरज स्पर्श कियो ॥ ६ ॥ मंगलकी बात है कि आपने आज्ञा कीनी महा अनुग्रह कीनो खुले कान छिद्रनसों सुंदर तुम्हारी वाणी सुनी ॥ ७ ॥ हे मुने ! सो तुम पुत्रीके स्नेहविवश दीन मोपर कृपा कर मेरी विनती सुनवेको योग्य हो ॥ ८ ॥ प्रियव्रत उत्तानपादकी बहिनी मेरी बेटी है, वय शील गुणसो अपने समान पतियुक्त हैवेकी इच्छा करै है ॥ ९ ॥ जा समय आपके शील रूप उमर गुण नारदसों सुने, तबसो तुममें याने निश्चय कर मन कीनो है ॥ १० ॥ हे द्विजाग्र्य ! श्रद्धासो मैं लायोहूं, सो याय तुम लेउ तुम्हारे गृहस्थके कर्ममें सब प्रकार करके तुम्हारे योग्यही है ॥ ११ ॥ जो आपने आप काम प्राप्त है वाको मने करनो सब संगसो निर्मुक्तनकोहू योग्य नहीं कामासक्तनकी तो कहा बात है ॥ १२ ॥ जो कोई प्राप्तको अनादर करके फिर कृपणतासों मांगै है वाको उज्ज्वल यश क्षीण होय है अवज्ञासों मान नाश होय है[2] ॥ १३ ॥ हे विद्वन् ! हमने सुनी ही कि आप विवाह करवेको उद्यत हैं, याते याको

१ वे कपटी कैसे । कपटी कठोर दूती लम्पटी गुलाम सेती वासी सुत वेईमान कबहू न धीजिये । हाथीवान पीलवान सारवान प्रधानमान कुंजडा भटयारिनसे कबहू न पतीजिये ॥ निपट निगोडे लूले लम्बे ओछे कंधे धूरत चटोरनसे कबहू न लरीजिये । कहैं कवि विश्वनाथ एते जी वागे न राखो काम पडे एतेनसूं चर्चाहूं न कीजिये ॥ १ ॥ २ एक बाबाजीने एक गाउमें सिद्धाई लगाई गांवभरमें विख्यात भये वो गावमें एक साहुकारके बडो एक उत्सव ब्रह्मभोज भयो वामें अनेक तरहकी मिठाई आदि कचोरी भई तब पहिलेही सेठानीने एक थारमें सब सामग्री धरके बाबाजीके पास

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तुम अंगीकार करो, मेरी दीन भई याय ग्रहण करो ॥ १४ ॥ ऋषि बोले कि जो तुमने कही सो हमें अंगीकार है क्योंकि हमें व्याहकी इच्छा है तुम्हारी पुत्री अप्रत्ता अर्थात् अविवाहिता है, हमारे दोनोंके अनुरूप ये आद्य विवाहकी विधि है ॥ १५ ॥ हे नरदेव ! तुम्हारी या पुत्रीको मनोरथ पूरण होय, वेदविधि योंही है, अपनी कांतिको श्रीकी कांतिसो दूर करनवारी तुम्हारी कन्याकों कौन आदर न करेगो ॥ १६ ॥ जा तुम्हारी कन्याको महलके ऊपर गैंद क्रीडा करती देख और चरणनके नूपुरके शब्द सुन मोहसों मोहितचित्त हैकै विश्वावसु गंधर्व अपने विमानसो गिरपरे ॥ १७ ॥ लक्ष्मीके चरणकी सेवासो हीन पुरुषनको जिनको दर्शन अतिदुर्लभ है ऐसी स्त्रियनमें शिरोमणि मनुकी पुत्री उत्तानपादकी भगिनी अपने आप प्राप्त भईको कौन बुद्धिमान् ग्रहण न करेगो ॥ १८ ॥ यातें समय करके साध्वीको भजेंगे, जबतक यह हमारो तेज धारण करैगी तब ताईं घरमें रहोगो फिर परमहंसनके मुख्य भगवत्प्रोक्त हिंसारहित धर्म हम बहुत मानेंगे[1] ॥ १९ ॥ जाते ये विचित्र विश्व भयो, जासो नष्ट होय जासे रक्षित होय है वह प्रजापतिनके पति अनन्त भगवान् मोको परम प्रमाण है ॥ २० ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे उग्रधन्वन् ! हे विदुर ! ऐसे कहिके भगवान् कर्दमजी चुप है गए, बुद्धिसो स्मित शोभित मुखसो देवहूतिके चित्तको लुभावतेभए ग्रहण करतेभए ॥ २१ ॥ या प्रकार मनु विनसो आज्ञा ले राणीको और बेटीको निश्चय जान प्रसन्न होय सम्पूर्ण गुणयुक्त तिन मुनिके अर्थ अपनी कन्या देतेभये ॥ २२ ॥ शतरूपा महाराणी दहेज महाधन भूषण वस्त्र घरकी सब सामग्री स्त्री पुरुषको देतीभई ॥ २३ ॥ राजा सब व्यथासो दूर हो समान वरको दुहिता देके उत्कंठासों विवश हृदय होय बाहुसों मिलतेभए ॥ २४ ॥ वे कन्याके विरहको न सहसकै, बारंबार आंसू त्याग करते हे वत्से ! ऐसे कहि नेत्रनके जलसों दुहिताकी शिखाको सींचतेभए ॥ २५ ॥ फिर मुनिवरसों आज्ञा ले चाकरनसहित रथमें बैठ स्त्रीसहित राजा स्वायंभुवमनु अपने नगरको प्रस्थान करतेभए ॥ २६ ॥ ऋषिकुलसहित सरस्वतीके दोनों ओरके शांत ऋषीनके आश्रमनकी संपदा देखतेभए जाते भये ॥ २७ ॥ ब्रह्मावर्तसो विन प्रजापतिकों आए जान गीत स्तुति बाजे बजायके हर्षसो सब प्रजाजन सामने आए ॥ २८ ॥ विनकी सर्व संपत्सहित बर्हिष्मती नाम पुरी ही कि

अपने नोकरनके हाथ भेजी वे बाबाजीके पास ले गये बाबाजीसो कही लेहु बाबाजी बोले चलवे लंडी हम नहीं लेते विने बहुत खुसामद करी बाबाजीने आखर बामेंसो बासमें जिहके मोरे कुछ नहीं लीनो तब वे चले गये अब रात्रिको जौनार भई और लेउ लड्डू लेउ बरफी लेउ खजला लेउ घेवर लेउ खुरचन लेउ कचोरी ये जब हल्ला बाबाजीने सुनो तब तो बाबाजीको मन चलो और विन चीजनकी याद आई अनेक तरहसो बाबाजीने मन समझायो पन मन मानो नहीं तब एक कमरी ओढके बाई साहूकारके दरवजेपें जहां बंगला ठाढे होयहै वहां गये विचारी कि और नाय तौ दो दो लड्डू चार कचोरी तोहू मिलेंगे जब सब जीम चुके तब दरवजेपे बाटनेको लाये सबको बटने लगे बाबाजीको तो ये नई आफत ही ए वा लूटवेको कहा जानते हैं सो जो वा भीतमें गये एक धक्का जो लगो सोई वाके दरवजेपे चौबच्चा ही बामें बाबाजी जाय परे अब एक संग हल्ला भयो अरे मसाल लैओ कोन गिरो कोन गिरो बाबाजी कहैं कि राम आसरे कोई नहीं आखिर मसाल आई बाबाजीको चौबच्चामेंसो निकासे देखे तौ बाबाजी तब तौ सब बोले महाराज यह कहा हमने तो तुमारे पास पहलेही सब चीज भेजी ही तब बाबाजी बोले कि बच्चे लड्डू वेई है पन हमारे करममें या चौबच्चाके गोता और लिखे है यह दृष्टांत (उद्यतमनादृत्य) यापै है ॥

१ यहां ये अभिप्राय है कि कर्दमजीने कही कि राजन् ! मैं तुमारी बेटीको व्याह तो करौ हौं पन राजन् ! मेरौ यह करार है जबतक तुमारी बेटीके संतान न होयगी तबतकही गृहस्थाश्रम रहोंगो फिर संतान भयेपे मेरे मनकी मरजी रही चाहै गृहस्थाश्रम रहौ चाहे संन्यासी है जाउ ये तुमें मंजूर होय तौ व्याह करो और नहीं मैं व्याह नहीं करौ तुम सब विचार कर लेउ फिर कदाचित् कहौ कि डाढी जारने मेरी बेटी जन मारौ खराब कियो यासौ मैंने पहले कह दीनी है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जहां यज्ञरूप श्रीवाराहजीने आयके अंग कंपायो तब वहां विनके रुएं गिरेहे ॥ २९ ॥ जिनसो निरंतर हरे वर्णके कुश काश होतेभए, जिन कुशानसो यज्ञनाशकको ऋषिलोग तिरस्कार कर यज्ञनको करतेभए ॥ ३० ॥ भगवान् मनुजी पृथ्वीरूप स्थान पाकर कुश काशके आसन विछाय यज्ञपुरुषको यजन करतेभए ॥ ३१ ॥ बर्हिष्मती नाम पुरीमें प्रवेश कर वे समर्थ तीनों ताप दूर करनवारे अपने भवनमें आये पहले जा पुरीमें रहते हैं वाही पुरीमें प्रवेश करके अपने महलमें प्रवेश करत भये भोग जो है तिने भोगते भये ॥ ३२ ॥ धर्मके अनुसार भार्यापुत्रसहित राजा मनु विरोधरहित कामादि भोगतेभये याही कारण विनकी सत्कीर्ति देवतान सहित गावते हे ॥ ३३ ॥ प्रातःसमय सांझको अनुरागि हृदयकरकै हरिकी कथा सुनतेभये, कलिमें तौ जा कथा श्रवणसो संसारसमुद्रको जीव तरजांयगे ॥ ३४ ॥ योगमायामें निमग्न मुनि स्वायंभुवमनु भगवत्परायणकूं भ्रष्ट करवेको भोग न समर्थ होतेभए ॥ ३५ ॥ सदा विष्णुकी कथा सुनते, ध्यान करते और भगवान्की कथा कहते हैं या कारण विनके प्रहर मन्वन्तरके वितायवारे अयातयाम भये अर्थात् वे दिन वाके एक घडी भरेहू खराब नहीं जाते भये ॥ ३६ ॥ सो राजा इकत्तर युग वासुदेवकी कथा करके मन्वंतरकी कथानको सुनते ध्यान करते और कथानकों कहते जाग्रदादि तीन अवस्थाको व्यतीत करतेभए, क्यों कि या देहको येही फल है कि सुकृत कर्मकर आयु व्यतीत करै ॥ ३७ ॥ हे विदुर ! शारीरी मानसी दिव्य मानुषी अरु शीतोष्णादिक ये क्लेश हरिके आश्रयवारेको कैसेहू बाधा नहीं करै हैं ॥ ३८ ॥ यही मनुजी मुनियोंके पूछनेपर वर्णाश्रमके मनुष्योंके और सब जीवनके हित नाना प्रकारके सुन्दर धर्म कहतेभये ॥ ३९ ॥ ये आदिराज मनुको अद्भुत चरित्र वर्णन कीनो, अब उनकी संताननकी कथा सुनो ॥ ४० ॥

एतत्त आदिराजस्य मनोश्चरितमद्भुतम् ॥
वर्णितं वर्णनीयस्य तदपत्योदयं शृणु ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे स्वायंभुवमनोर्बर्हिष्मतीं प्रत्यागमनं नाम द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अध्याय २३.

मैत्रेय उवाच–पितृभ्यां प्रस्थिते साध्वी पतिमिङ्गितकोविदा ॥
नित्यं पर्यचरत् प्रीत्या भवानीव भवं प्रभुम् ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि माता पिता चले गए तब पतिके चित्तकी जाननेवारी साध्वी चतुर देवहूति नित्य प्रीतिकरकै पतिकी सेवा करती भई, जैसे पार्वतीजी शिवकी सेवा करै हैं ॥ १ ॥ विश्वास, शौच, गौरवता, दमसों शुश्रूषाकरकै सुहृदता और मधुरवाणीसों ॥ २ ॥ कपट दंभ द्वेष लोभ पाप मद सबको त्यागकरके महातेजस्वी मुनिको संतुष्ट करतीभई ॥ ३ ॥ देवर्षिनमें श्रेष्ठ वे कर्दमजी वा मानवी सदा सेवा करवेवारी भाग्यसो प्राप्त भए पूज्यतम पतिसों बडे बडे आशीर्वादनकी चाहना करवेवाली ॥ ४ ॥ बहोत कालतक व्रत करवेसो अतिकृश देवहूतिसो प्रेमसहित गद्गदवाणीसो पीडित हो कृपाकर बोले ॥ ५ ॥ कर्दमजी बोले कि हे मानवी ! आज मानदात्री तुमारी परम शुश्रूषा और

१ ताको या भाषा प्रबंधमें वर्णन है "घरिघरि घटत छीजत जात छिन छिन भीजतही गरि जात माटीकोसो ढेल है। मुक्तिके द्वार आय सावधान क्यों न होत बार बार चढत न त्रियाकोसो तेल है ॥ करले सुकृत हरिभजन अखंड नर याहीमैं अंतर पर यामैं ब्रह्ममेल है। मनुष्यजन्ममें अब जीत भावै हार कहा सुंदर कहत यामें जूआकोसो खेल है ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परमभक्तिसो हम तुष्ट हैं, जो देहधारीनको अत्यंत सुहृत् अपनो देह है सो तू मेरे अर्थ नष्ट करवेको उचित जान त्यागती भई. अर्थात् हमारी सेवाके लिये तुमने देहकूं नहीं गिनो यासो मैं बहोत प्रसन्न भयो हूं ॥ ६ ॥ जे स्वधर्ममें निरत हैंकै तप समाधि विद्या आत्मयोगसो विशेष करकै जीते भए भगवत्के दिव्य प्रसाद मोकों प्राप्त भएहैं सो मेरेमें हैं तिनको मेरी सेवा करकै तुमने वश कर लियेहै अब मैं तुमकूं दिव्यदृष्टि देउहूं तासो तू मेरे वैभवको देख जे निर्भय और शोकरहित है ॥ ७ ॥ फेर और भोगनकी कहा गिनती है जे भगवान्की भौंके वक्रीभावसों जिनकी रचना नष्ट है जाय ऐसे और वैभव तो कहा वस्तु है तू सिद्ध है गई है यासो अपने धर्मसौं प्राप्त भए वैभवनको अनुभव कर जिन वैभवनको मिलनो अभिमानी राजानकोहू कठिन है ॥ ८ ॥ ऐसे कहितेभये पतिकी सब योग-माया विद्या पंडितताको अबला देखके सब पीडासों रहित होती भई और विनय प्रेमसो विह्वल गद्गद गिरासो कछु लज्जाके चितवनसो विलसित हसित मुखवारी देवहूति बोली ॥ ९ ॥ देवहूति बोली कि हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! हे विभो ! हे स्वामिन् ! जो अमोघ योगमायाके स्वामी तुममें ये सब है सो मैं जानूंहूं, जो समय तुमने कहोहो सो अंगसंग करौ, बडेनमें सतीनको गुण प्रसव होय है ॥ १० ॥ हे ईश ! तहां अंगसंगम जो करवे योग्य कामशास्त्रानुसार होय सो शिक्षा करो जासो दीन कर्षित मेरी या देहसौ अतिरमणकी इच्छा सिद्ध होय तुम्हारे करे भए कामसो मैं धर्षित हूं सो सदृश भवन बनाओ ॥ ११ ॥ मैत्रेयजी बोले कि प्रियाके प्रियकी इच्छाकर कर्दमजी योगमें स्थित होतेभये, हे विदुर ! अपने मनकी इच्छाके अनुसार चलनवारो विमान वाही समय प्रकट करते भए ॥ १२ ॥ सब कामपूरक दिव्य सब रत्नसहित सब ऋद्धीनके समूह मणिजटित खंभनसो शोभित विमान होतो भयो ॥ १३ ॥ जो विमान दिव्य सामग्रीसहित, सब काल सुखदायक, पट्टी पताकानसो विचित्र अलंकारित होतो भयो ॥ १४ ॥ विचित्र पुष्पवारी कमलमालनसो अलंकृत भौंरानके गुंजारसो शब्दायमान कूजे रेशमी वस्त्र बढके पीतांबर नानावस्त्रनसो विराजित होतोभयो ॥ १५ ॥ ऊपर ऊपर रचे भए स्थाननमें अलग अलग शय्यानमें शोभित पलंग पंखा आसन बडे बडे जहां धरे हैं ॥ १६ ॥ तहां तहां नानाप्रकारकी शिल्पकी कारीगरीसो शोभित महामरकतके स्थलमें मूंगानकी वेदी बनी है ॥ १७ ॥ दरवाजनमें मूंगानकी देहली हैं हीरानके किवाड बने हैं, शिखरनमें इंद्रनील जडीहैं सुवर्णके कलशा लगे हैं ॥ १८ ॥ नेत्रवारेके चमकवेवारी पद्मराग मणि हीराजटित भीतमें जडी हैं, विचित्र चंदोवेवारे बढमोलके सुवर्णके तोरण लगे हैं ॥ १९ ॥ हंस कबूतरनके समूह जहां तहां कूजें हैं, अपनी परछांई मान उड उड वहांके वहांई बैठे हैं ॥ २० ॥ विहारस्थान विश्रामस्थान उपभोगस्थान घरसो बाहरके स्थान प्राकारके बाहरके स्थान यथासुख अपने आत्माके विस्मयजनक हैं ॥ २१ ॥ ऐसे वा घरको देख देहकी मलीनता और सखी आदिको अभाव विचार जब देवहूति अति प्रसन्न न भई तब सब जीवमात्रके अंतरके ज्ञाता आप कर्दमजी बोले ॥ २२ ॥ हे भीरु ! या बिंदुसरोवरमें स्नान कर विमानपर बैठो या आनंदके बिंदु गेरके श्रीहरिको करो तीर्थ है, मनुष्यको सब आशीर्वाद देवेवारो है ॥ २३ ॥ कमलनयनवारी सो देवहूति भर्त्ताको वचन मान मलिन वस्त्र पहिने वेणीभूत वार धारे ही ॥ २४ ॥ और पंक तथा मेलसो लिप्त अंगको धारण करती और मेलसो ढके विस्तीर्ण स्तननको धारण करती देवहूति सरस्वतीके शिवजलाशयमें स्नान करती भई ॥ २५ ॥ वा सरो-

१ अर्थात् हे प्राणनाथ और तो जो कछु होयगो सो देखो जायगो बालमें जा दिनसो व्याही आई वा दिनसो या झोपरी बिनाय मैंने कछु नाय देखो सो पहले एक घर तो बनवाओ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वरके भीतर स्थित एक सहस्र कन्या सर्व किशोर अवस्थाकी कमल समान सुगंधिवाली देखती भई ॥ २६ ॥ देवहूतिको देख एक संग उठकर हाथ जोड सब स्त्री बोली, तुम्हारी हम सब सेवाकर्मकी करवेवारी हैं, हमें आज्ञा करो सो करें ॥ २७ ॥ वा मनस्विनीको खूब स्नान करायके मान देवेवारी नवीन वस्त्र याको देतीभई ॥ २८ ॥ बढमोले श्रेष्ठ प्रकाशक भूषण पहरातीभई सब गुणयुक्त अन्न दीनो, अमृतसमान मीठो मादक जल प्यातीभई ॥ २९ ॥ जब देवहूतिनै दर्पणमें अपनो मुख देखो तौ माला पहिने, शुक्ल वस्त्र धारे निर्मल स्वस्त्ययन करीभई बहुत कन्यानसो अपनेको सन्मानित देखतीभई ॥ ३० ॥ स्नान करीभई शिरसो न्हाई सब आभरणसो शोभित पदक पहिरे कंकण पहिरे शब्द करवेवारे कांचनके नूपुर धारे ॥ ३१ ॥ बहु रत्नकी कौंधनी कमरपर पहिरै, बढमोले रुचक नामक हारसों शोभित " तदुक्तं काव्यप्रकाशे–रुचकं मंगलद्रव्ये ग्रीवाभरणदंतयोरिति " ॥ ३२ ॥ सुन्दर दांत, सुन्दर भौं, मनोहर कटाक्षवारे रसभरे नेत्र और कमलकोशकी स्पर्धा करवेवारे नील अकलनकरके शोभित मुखको देखो ॥ ३३ ॥ ऋषीनमें श्रेष्ठ प्यारे पतिको जब स्मरण कीनो; तब जहां प्रजापति वहांही स्त्रीन सहित अपनेको देखतीभई ॥ ३४ ॥ भर्ताके आगे स्त्रीसहस्र सहित अपनेको देख विनकी योगगतिको विचार संशयको प्राप्त होतीभई ॥ ३५ ॥ मलस्नान कर अपूर्ववत् प्रकाशमान अपने शरीरको रूप धारे छिपेभए सुन्दरस्तनवारी देवहूतिको कर्दमजी देखतेभए ॥३६॥ हे विदुर ! वे ऋषि सहस्र विद्याधरियोंसें सेवित और अपूर्व रूपसों प्रकाशक कर रही ऐसो देवहूतिको देख और सुंदर वस्त्र जाने पहर राखे वाय देखके उपजे भावसों वा विमानपर चढतेभए ॥ ३७ ॥ प्रकाशित महिमावारे प्रियामें आसक्त विद्याधरीनसो शुश्रूषित देहवारे कर्दमजी खिलेभए कमलसमान सुन्दर आकाशस्थित तारनसो शोभित चंद्रमाकी नाईं शोभित होते भए ॥ ३८ ॥ वा विमान करकै अष्टलोकपालकनके विहारको कुलाचलेंद्र सुमेरुकी गुफानमें कामसखा पवनकी सुगंधसो युक्त गंगाके पातसो शिवदायक शब्दवारे कुबेरवत् ललनावरूथमें रमण करते सिद्धनसों स्तुतिको प्राप्त हो रमण करतेभए ॥ ३९ ॥ वैश्रंभक, सुरसन, नंदन, पुष्प, भद्रक, मानस, चैत्ररथ इन सात देवतानके बागनमें स्त्रीसहित रमतेभए ॥ ४० ॥ प्रकाशक तथा मनकी इच्छानुसार चलवेवारे बडे विमानसो लोकनमें पवनकी समान शीघ्र गतिसों सब विमानको उल्लंघन कर स्थित होते भए ॥ ४१ ॥ धीर चित्तवारे पुरुषनको कौन चीज दुष्प्राप है, तीर्थचरण भगवान्के चरणनको जिन्हें आसरो लीनो है वो चरण कैसो है कि सब व्यसननको नाशक है ॥ ४२ ॥ अनेक आश्चर्ययुक्त भूमंडल अपनी पत्नीको दिखाय, फिर महायोगी कर्दमजी अपने आश्रमको आतेभए ॥ ४३ ॥ कर्दमजी नव संतान उत्पन्न कर सुरतकी चाहनेवारी मनुकन्या अपनी स्त्रीको बोहोत वर्षतक एक मुहूर्तकीसी नाईं रमण करतेभए ॥ ४४ ॥ ता विमानमें रतिदायक उत्तम शय्या सुंदर पतिके साथ स्थित हो देवहूति कालको न जानतीभई ॥ ४५ ॥ ऐसे योगके प्रभावकरके स्त्रीपुरुष रमण करते रहे दोनोनको कामलालसासों रमण करते सौ वर्ष बहुत थोडे कालकी समान व्यतीत हैगए ॥ ४६ ॥ देवहूतिको अतिप्रीतिके कारण अपने अर्द्धांगरूपसों भावना करते भए समर्थ और आत्मज्ञानी ऋषिने वाकी बहुत संतान हैवेकी इच्छाको जानकै अपने स्वरूपके नौ विभाग कर वामें वीर्य स्थापन कियो ॥ ४७ ॥ याते शीघ्र देवहूति कन्या उत्पन्न करती भई सब वे श्रेष्ठ अंगवारी हीं, जिनके अंगमें लालकमलकीसी सुगंधि आवतीही ॥ ४८ ॥ फिर कर्दमजी संन्यास ग्रहण करकै जब जायवेकी इच्छा करनलगे तब सती देवहूति ऊपरसो मुसकाती परन्तु दुःखी सन्ताप करती ॥ ४९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नीचेको मुख किये मणिसमानकांतिवारे पांवके नखनसो भूमिको खोदती धीरेसो आंसू पोछ ललित वाणी बोली ॥ ५० ॥ देवहूति बोली कि आपने सब मेरो कहिनो पूरो कीनो, तोहू मैं आपके शरण आईहूं, सो मोको अभय देवेको योग्य हो ॥ ५१ ॥ हे ब्रह्मन् ! इन कन्यानके समान पति ढूंढो कोई एक मेरो शोकनाशक पुत्र होय तब पीछे तुम वनको जैओ ॥ ५२ ॥ हे प्रभो ! इतनेही कालकरके तृप्त भई इंद्रियनके अर्थ प्रसंगकरकै परब्रह्म मैंने त्याग दीने ॥ ५३ ॥ इंद्रियसुखमें आसक्त होय तुममें मैंने प्रसंग कीनो सो तुमारे परम भावको नहीं जानती ही, तथापि मेरे अभयके अर्थ कोई होय ॥ ५४ ॥ संयोग संसारको हेतु है सो अबुद्धिसो असत् पदार्थमें संयोग कीनो वोही संयोग साधुनसो करै तो मोक्ष हैजाय है ॥ ५५ ॥ या संसारमें जो कर्म धर्म वैराग्यके अर्थ न कीनो, न भगवत्की सेवा कीनी वो जीतो ही मरेके समान है ॥ ५६ ॥ निश्चय है कि मैं भगवान्की दृढ मायासे मोहित भई तुम मुक्तिदायकको प्राप्त होकैहू बंधनसो मुक्त न होतीभई कितनी बुद्धि होय पर ईश्वरकी भक्ति विना सब वृथा है[1] ॥ ५७ ॥

साहं भगवतो नूनं वञ्चिता मायया दृढम् ॥
यत्त्वां विमुक्तिदं प्राप्य न मुमुक्षेय बन्धनात् ॥ ५७ ॥

इति श्रीमद्भा० भाषा० तृती० कर्दमस्य नवकन्योत्पत्तिवर्णनं नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

मैत्रेय उवाच-निर्वेदवादिनीमेवं मनोर्दुहितरं मुनिः ॥
दयालुः शालिनीमाह शुक्लाभिव्याहृतं स्मरन् ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि ज्ञानकी वार्ता कहिवेवारी मनुकी सूधी बेटीसो दयालु मुनि श्रीभगवत्की कही बात याद करतेभए बोले ॥ १ ॥ ऋषि बोले कि हे राजपुत्रि ! खेद मत करो; अपनपेकी ऐसी निंदा मत करो, अक्षर भगवान् थोडेही कालमें तुमारे गर्भमें प्राप्त होयगे ॥ २ ॥ तुमने व्रत धारेहै, तुम्हारो मंगल होय, दम, नियम, तप, धन, दान करकै श्रद्धासो ईश्वरको भजन करो ॥ ३ ॥ सो ईश्वर तुमनें आराधन कीनोहै, वो मेरो यश विस्तारेगो तुम्हारे हृदयकी ग्रंथिको छेदैगो उदरसों पुत्र होंके ब्रह्मविचारको उपदेश करनवारो होयगो ॥ ४ ॥ मैत्रेयजी बोले कि देवहूतिहू कर्दम प्रजापतिके वचनको महाश्रद्धाते मान कूटस्थ पुरुष जगद्गुरु ईश्वरको भजती भई ॥ ५ ॥ बहुत दिनके उपरांत देवहूतिमें भगवान् मधुसूदन कर्दमके वीर्यको प्राप्त हैके काष्ठमें जैसे अग्नि उत्पन्न होय तैसे उत्पन्न होते भए ॥ ६ ॥ ता समय आकाशमें घनघोरसो बाजे बजतेभए, गंधर्व गायवेलगे अप्सरा आनंदसो नृत्य करतीभई ॥ ७ ॥ दिव्य आकाशवासीनके छोडेभए पुष्प वर्षते भए सब दिशा और जल और मन प्रसन्न होतेभए ॥ ८ ॥ सरस्वतीसो घिरेभए विन कर्दमके आश्रममें मरीचि आदि ऋषिनके सहित ब्रह्माजी आवते भए ॥ ९ ॥ हे शत्रुहन् विदुर ! भगवान् परब्रह्म सत्त्व अंशकरकै सम्यक् ज्ञानके प्रगट करवेके अर्थ जन्मे हैं यह ब्रह्माजी जानतेभए ॥ १० ॥ ब्रह्माजी विशुद्ध चित्तकरकै विनकी करवेकी इच्छाको सत्कार करते हर्षित चित्तसो कर्दमजीसो बोले ॥ ११ ॥ ब्रह्माजी बोले

१ तहां कवित्त है कि ॥ " बुद्धि बडी चतुराई बडी तनमें ममता अति ना लिपटी है । नाम बडो धन धाम बडो वरतूत बडी जगमें प्रगटी है ॥ गजवाजिय द्वार मनुष्य हजार तो इंद्रसमानसे कौन घटी है । सो सब विष्णुकी भक्ति विना मानो सुंदरनारीकी नाक कटी है ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कि हे पुत्र ! निष्कपट हैकै जो तुमने मेरी पूजा कीनी, हे मानद ! मेरो वाक्य आपने मनसो ग्रहण करचो ॥ १२ ॥ पुत्रनको पिताकी इतनीही शुश्रूषा करवेयोग्य है, कि बहुत अच्छी ऐसे पितृवचन गुरुवचन गौरवतासो मानें ॥ १३ ॥ हे सभ्य ! ये सुंदर तुम्हारी पुत्रियें अपने प्रभावनकरकै अनेक प्रकार सृष्टिको बढावैगी ॥ १४ ॥ यातें जैसे इनके शील जैसी इन रुचि है, तैसे मुख्य ऋषिनके अर्थ इन पुत्रिनको देउ भूमिमें यशको विस्तार करो ॥ १५ ॥ हम जानें हैं कि आद्य पुरुष अपनी मायाकरकै अवतरेहैं, हे मुने ! भूतनकी कल्याणकी अवधि कपिल देहको धारे हैं ॥ १६ ॥ अब ब्रह्माजी देवहूतिके प्रति तीन श्लोकसों कहे हैं कि हे मानवि ! जो यह पुरुष तुम्हारे गर्भमें प्रवेश कियेहै सो ज्ञानशास्त्रको सिद्धान्त और विज्ञान अपरोक्ष्य अर्थात् वे देखे सुने कहे यथार्थ वस्तुको जानके कर्मनके मूल अर्थात् वासनाको उखाडवेके निमित्त यह सुवर्णवर्णकेश कमलकी समान नेत्र और पद्मचिह्नसों युक्त ॥ १७ ॥ हे मानवि ! ऐसे गुणयुक्त तुम्हारे उदरमें कैटभ दैत्यके मारवेवारे भगवान् प्रविष्ट भएहै यह अविद्या और संशयकी ग्रंथीको छेदन करके पृथ्वीमें विचरेंगे ॥ १८ ॥ यह तुम्हारो सुत सिद्धगणनमें मुख्य सांख्यके आचार्यन करकै सुपूजित और लोकमें कपिल नामसो विख्यात हैके तुम्हारी कीर्तिको बढायवेवारो होयगो ॥ १९ ॥ मैत्रेयजी बोले कि विन दोनोनको ऐसे आश्वासन कर जगत्कर्ता ब्रह्माजी सनत्कुमार नारदसहित हंसवाहनपै बैठ सत्यलोकको जाते भए ॥ २० ॥ हे विदुर ! जब ब्रह्माजी चलेगए तब कर्दम तिनकरकै प्रेरित है जैसे कही तैसेही अपनी कन्यानको विश्व रचवेवारेनको देतेभए ॥ २१ ॥ कला कन्या मरीचिको व्याही, अत्रिको अनुसूया, अंगिराके अर्थ श्रद्धा दीनी, हविर्भू पुलस्त्यको व्याही ॥ २२ ॥ योग्य गति नामकी कन्या पुलहको सौंपी, क्रिया सती क्रतुनामके ऋषिके लिये दीनी, ख्याति भृगुको व्याही, अरुंधती वसिष्ठजीको व्याहदेतेभए ॥ २३ ॥ शांति अथर्वके अर्थ दीनी, जासो यज्ञ होय है ऐसे ब्राह्मणश्रेष्ठनको विवाह कर विन्हें प्रसन्न कियो ॥ २४ ॥ हे विदुर ! ता पीछे वे ऋषि व्याह कर कर्दमसो पूछके आनंदित होय अपने अपने आश्रमोंको जातेभए ॥ २५ ॥ कर्दमजी अपनी स्त्रीमें देवश्रेष्ठ विष्णु पैदा भए जान एकांतमें आयके प्रणाम कर ऐसे बोले ॥ २६ ॥ दुःख है कि या जगत्में यह जीव अपने अमंगलीक कर्मनसो अनेक दुःख पाय रहे हैं इनपे देवता तो बहुत समय बीतवेपे अवश्य प्रसन्न होयहैं ॥ २७ ॥ बहुत जन्मके करेभए सुंदर योग समाधिसो एकांत स्थानमें बैठ जिनके पद देखवेको यतिलोग यत्न करै हैं ॥ २८ ॥ सोई भगवान् आज हमारे करे अपराधको नहीं गिनके अपनेनके पक्ष पुष्ट करवेवारे हमसरीके ग्रामवासीनके घरमें जन्में हैं ॥ २९ ॥ अपनो वाक्य सत्य करवेको मेरे घरमें अवतरे भगवान् भक्तनको मान बढावते ज्ञान करवेकी इच्छा करते भए ॥ ३० ॥ हे भगवन् ! यद्यपि चतुर्भुज आदि रूपही तुम्हारे योग्य है, तथापि आपके सुजन भक्तनकों जा जा रूपकी रुचि होयहै विनी विन रूपनकोहू अरूपी तुम धारण करोहो ॥ ३१ ॥ हे भगवन् ! तत्वकी जानवेकी इच्छासो महात्मा लोगनको पूजन योग्य आपके चरणपीठको प्रणाम करै हैं विन ऐश्वर्य वैराग्य यश ज्ञान श्रीसो पूर्ण आपकी मैं शरणमें प्राप्त हूं, अर्थात् सर्वगुणनिधान आपके प्राप्त हैवेसो हमहू निष्काम भये ॥ ३२ ॥ परमेश्वर, प्रधान पुरुष, महत्तत्व, काल कवि अहंकाररूप लोकपालक सर्वज्ञ स्वतंत्र स्वाधीन शक्तिमान् जिनके स्वरूपमें प्रपंच लीन है जाय है विन कपिलदेवजीकी मैं शरण हूं ॥ ३३ ॥ अब प्रजानके पति आपसो हम पूछै हैं तुमारे अवतारही लेवेसों हमें सब काम प्राप्त भए, अबमें संन्यासियोंकी पदवीमें मैं स्थित है

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तुमको हृदयमें धार विशोक होयकै विचरूंगो ॥ ३४ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे मुने ! वेद आरै लोकसंबंधी सब कार्यनमें मेरो वचन सबको प्रमाण है यासो मैंने जो तुम्हें वचन दियो वाके सत्य करवेकों तुम्हारे यहां मैंने जन्म लीनो है ॥ ३५ ॥ या लोकमें लिंगशरीरसो मुमुक्षूनको आत्माके दर्शनके लिये और तत्वनकी संख्याके अर्थ ये मेरो जन्म है ॥ ३६ ॥ बहुत काल करकै ये सूक्ष्मतर ईश्वरसंबंधी ज्ञानमार्ग नष्ट है गयो है ताके प्रवर्त करवेको ये देह पूरन मैंने धारण कीनी है ॥ ३७ ॥ मेरेमें सब कर्मनको संन्यास कर यथासुख जाओ, अत्यंत दुर्जय या मृत्युको जीत मोक्षके अर्थ मेरो भजन करो ॥ ३८ ॥ मैं आत्मा स्वयंज्योति सब जीवनको हृदयमें शयन करूंहूं, बुद्धिसो ईश्वरको दर्शन कर विगतशोक होय अभय पदको प्राप्त होओगे ॥ ३९ ॥ हम सब कर्मकी शमन करवेवारी ब्रह्मविद्या माताके अर्थ विस्तार करेंगे, जासों संसारको तरजायगी ॥ ४० ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे जब कपिदेवजीने कही तब कर्दम प्रजापति कपिलदेवजीकी प्रदक्षिणा करकै वनमें जातेभए ॥ ४१ ॥ सो मुनि मौन व्रतमें स्थित हैकै आत्माके शरणागत हैकै सब संग त्याग फल आहार करतेभए, एक जगे न रहकर पृथ्वीपर विचरतेभए ॥ ४२ ॥ कार्य कारणसों परै गुणनके प्रकाशक अलौकिक गुणयुक्त ब्रह्ममें अनन्य भक्तिसो मन लगाया ॥ ४३ ॥ अहंकार त्याग ममता छोड सुख दुःख समान समझ धीरतायुक्त समदर्शी ज्ञानदर्शी होय शांत बुद्धि कर शांत तरंगयुक्त समुद्रकी समान मुनि होते भए ॥ ४४ ॥ वासुदेव भगवान् सर्वज्ञ सर्वांतर्यामीमें परम भक्तिभावकरकै आत्मज्ञान प्राप्त होय सब बंधनसों मुक्त भए ॥ ४५ ॥ सब जीवनमें आत्मा भगवान्को स्थित देखतेभए, सब जीवनको भगवान्के आत्मामें देखते भए ॥ ४६ ॥ इच्छा द्वेष त्याग सब जगे समान चित्तकर भगवान्की भक्तिमें युक्त होयके भागवती गतिको प्राप्त होतेभये[1] " जैसे भक्तिके वशमें ह्वैकै इन सबकी रक्षा कीनी तैसे कर्दमकी करतेभए " ॥ ४७ ॥

इच्छाद्वेषविहीनेन सर्वत्र समचेतसा ॥
भगवद्भक्तियुक्तेन प्राप्ता भागवती गतिः ॥ ४७ ॥

इति श्रीमद्भा० भाषाटीकायां तृतीयस्कंधे कपिलावतारवर्णनं नाम चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अध्याय २५.

शौनक उवाच-कपिलस्तत्त्वसंख्याता भगवानात्ममायया ॥
जातः स्वयमजः साक्षादात्मप्रज्ञप्तये नृणाम् ॥ १ ॥

श्रीशौनकजी बोले कि कपिलदेवजी तत्त्वसंख्याकारी भगवान् अजन्मा साक्षात् मनुष्यके आत्मज्ञानके अर्थ अपनी मायाकरकै आप जन्मेहै ॥ १ ॥ पुरुषनके मध्यमें बडे और योगिजननके मध्यमें श्रेष्ठ परमेश्वरकी कीर्ति श्रवण करवेसों वारंवार प्रभुके यशको सुनकेहू मेरी इंद्रियें तृप्त नहीं होती हैं ॥ २ ॥ अपने भक्तनकी इच्छा करकै जो जो स्वरूप भगवान् धारण करै हैं, वे श्रद्धालु मेरेको कीर्तन करिये ॥ ३ ॥ सूतजी बोले कि व्यासजीके सखा मैत्रेय भगवान् विदुरसो प्रीतिके

१ सो कवित्तमें है कि ॥ " गिरिको उठाय व्रज गोपको बचाय लीनो अनलते उबारचो पण बालक मांजारीको । गजकी अरज सुन ग्राहते छुडायलीनो राख्यो व्रतनेम धर्म पांडवकी नारीको ॥ राख्यो गज घंटा तलै बालक विहंगमको, राख्यो पण भारतमें भीष्म ब्रह्मचारीको । त्रिविध तापहारी निज संतन सुखकारी मोहिं तो भरोसो एक सांवरे गिरिधारीको ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मारे ब्रह्मविद्यामें प्रेरित ऐसे कहिते भए जैसे तुमने हमसो पूछो सो हम कहेंगे तुम सुनो ॥ ४ ॥ मैत्रेयजी बोले कि पिता जब वनको चले गए, तब माताकी प्रियकी इच्छा करके वा बिंदुसरोवरमें भगवान् कपिलदेवजी वसते भए ॥ ५ ॥ बैठेभए अकर्मी अर्थात् कर्मनको त्याग जिनने कियो और तत्वमार्गके अग्र दिखायवेवारे अपने सुतसो ब्रह्माको वचन याद कर देवहूति बोली ॥ ६ ॥ देवहूति बोली कि, हे भूमन् ! हे प्रभो ! खोटी इंद्रियनकी तृष्णासो अब मोय वैराग्य प्राप्त भयो है जिन विषयनकी भावनासो अंधतममें गिरनो पडोहै ॥ ७ ॥ दुःखसो पार जायवे योग्य अंधतमके पार करवेवारे अनेक जन्मनके अंतमें अपनी कृपासेही तुम प्राप्त भएहो ॥ ८ ॥ जो पुरुषनको आद्य भगवान् ईश्वर है, सो आप हो तमसो अंधलोकनके नेत्रनको सूर्य समान उदित भए हो ॥ ९ ॥ यातें हे देव ! हमारो मोह दूर करवेको तुम योग्य हो, जो असत् आग्रह अहं मम ये तुमने लगायदियो है याके दूर करवेको योग्य हो ॥ १० ॥ शरणागतप्रतिपालक शरण्य अपने भृत्यनके संसारवृक्षके काटवेवारे सद्धर्मके जाननेवारेनमें श्रेष्ठ जे तुम तिन तुमारी प्रकृति पुरुष जानवेकी इच्छा करके मैं शरण आईहूं, यासो तुमें नमस्कार करूंहूं ॥ ११ ॥ मैत्रेयजी बोले कि, या प्रकार पुरुषनके मोक्षकी देवेवारी अपनी माताकी दोषरहित इच्छाको सुनके बुद्धिसो सराहना कर आत्मवान् और संतनकी गति कछुक मुसकानसो शोभित मुख, कपिलदेवजी बोले ॥ १२ ॥ श्रीभगवान् बोले कि, मैंने अध्यात्मयोग पुरुषनके मोक्षके वास्ते मानो है, जामें दुःख सुखकी अत्यंत उपरति होय है ॥ १३ ॥ हे अनघे ! जो पहिले हमने कह्यो हो सो तुमसो कहोंगो सुनवेकी इच्छावारे ऋषिनको ये योग सब अंगसो निपुण ॥ १४ ॥ निश्चयकरके या जीवको मनहीसों बंध और मोक्ष है या मनके गुणनमें आसक्त हैवेसो बंधन होय है, और ईश्वरमें लगे तो मुक्त होय है[1] ॥ १५ ॥ मैं मेरो या अभिमानसो उठेभये काम लोभादि मलनकरके रहित शुद्ध मन होय है तब ये मन दुःख सुखसो रहित और सबमें समान है जाय है । "जैसे एक पंडित सब कुछ पढे हे पर धनीके आगे श्वानसमान लोभसे भए" ॥ १६ ॥ तब पुरुष आत्मा केवल प्रकृतिसों परे निरंतर स्वयंज्योति अणुमात्र अखंडित परब्रह्म ॥ १७ ॥ उदासीन ईश्वरको ज्ञान वैराग्यसो भक्तियुक्त आत्माकरके देखै है वा समय प्रकृति पराक्रमहीन है जाय है वा प्रकृतिकोहू देखे है ॥ १८ ॥ भगवान् अखिलात्मामें लगाई भई भक्तिके समान योगिनकों ब्रह्मसिद्धिके लिये मंगलदायक पंथा और नहीं है ॥ १९ ॥ या जीवको आसक्त होनो ये अजर फांसी है, सो ही आसक्ति जो साधुनमें करै तो मोक्षको खुलो भयो द्वार प्राप्त है जाय है ॥ २० ॥ सबकी सब बातें सहै दयालु सब देहधारीमें सुहृदय जिनके कोई शत्रु नहीं जन्मे शांत ये गुण परकार्यसाधक साधुनके भूषण[2] हैं ॥ २१ ॥ मोमें अनन्यभाव करके जे दृढ भक्ति करैं हैं मेरे अर्थ सब कर्म त्यागे हे मेरे लिये स्वजन बंधु त्यागे हैं ॥ २२ ॥ मेरी ही उज्ज्वल कथा सुनै हैं कहैं हैं वे मेरेमें चित्त लगाये हैं विनको अनेक ताप नहीं तप करै हैं ॥ २३ ॥ हे साध्वि ! वे साधु है जे सब संगसो रहित हैं विनके संगकी चाहना

---

१ प्रयोजन यह है कि जो यह मन विषयनमें फँसगयो तब तौ येही मन बंधन करनवारो है जाय है और जो कहीं ये ही मन गोविंदमें लगगयो तो मोक्षको देनवारो है जाय है ॥ २ सो लिखा है ॥ "पूर्व मीमांसा उत्तर मीमांसा ऐसी कौनसी जो बात है मुझको न आई है ॥ न्यायमें न बोलन देऊं ब्रह्मा क्यों न भावै आवै सांख्य पातंजलीकी पवनसी उडाई है ॥ बारह वर्ष जो कासीजीमें वास कीनो दधि ज्युं वलीयो वेद छोड हूंनराई है । कहत नारायण बली देखे लोभ मोह धनी आगेकू करै ज्युं पूछही हलाई है ॥ १ ॥

२ दोहा ॥ साधू ऐसो चाहिये, दुखै दुखावै नाहि ॥ पान फूल छेडै नहीं, रहै बगीचे मांहि ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करनी वे सब संगनके दोषनके हरवेवारे हैं ॥ २४ ॥ संतनके प्रसंगसो मेरे वीर्यकी जामें वार्ता ऐसी हृदय कर्णकी रसायन कथा होती है विनमें प्रीति करवेसों मोक्षमार्गमें शीघ्र श्रद्धा प्रीति भक्ति क्रम क्रमसों होय है ॥ २५ ॥ भक्तिसों पुरुषकों वैराग्य होय है इंद्रियनसो देखी सुनी मेरी रचनाकी चिंतासो प्रयत्न योगयुक्त होयके चित्तके ग्रहण करवेमें कोमल योगके मार्गनकरकै यत्न करैहै ॥ २६ ॥ प्रकृतिके गुणनकी सेवा नहीं करवेसों और वैराग्यसो अत्यंत विजृंभित जो ज्ञान है ता ज्ञानसो योगसो मेरेमें समर्पण करी भक्तिसों सर्वांतर्यामी मोको प्राप्त होयहैं ॥ २७ ॥ देवहूति बोली कि कैसी भक्ति तुम्हारेमें करनी उचित है और मैं कैसी भक्ति करूं जाके प्रभावसो तुम्हारो मोक्षपद प्राप्त होय है ॥ २८ ॥ भगवत्को लक्ष करवेवारो जो योग तुमने कह्यो है सो कैसो है, कितने वाके अंग हैं जाते तत्वज्ञान होय है ॥ २९ ॥ हे हरे ! ये मोसे कहो, मंदमति स्त्री मैं तुम्हारे अनुग्रहसो अतिकठिन बातको सुखसो जानूंगी ॥ ३० ॥ मैत्रेयजी बोले जाके उदरसों आपने शरीर धारण कर जन्म लियो हो सो कपिलदेवजी माताको ये मनोरथ जान स्नेहसौं " तत्वान्याम्नायन्ते अनुक्रमिष्यन्ते यस्मिन् तत्तत्त्वाम्नायम् " तत्वनकी संख्या युक्त सांख्यशास्त्रको तथा भक्ति विस्तृत योगको कहितेभये ॥ ३१ ॥ श्रीभगवान् बोले कि वेदविहित है कर्म जिनके और गुण जे विषय वे जाने जाय जिनकरके ऐसे देवे नाम इंद्रिय अथवा इंद्रियाधिष्ठातृदेवतां विनकी सत्वमूर्ति भगवान्में स्वाभाविकी जो वृत्तिको होनो वाहीको भक्ति कहै है वो भक्ति मुक्तिसोहू अति श्रेष्ठ है वो भक्ति ॥ ३२ ॥ जैसे शीघ्रही अग्नि खाये भये अन्नको भस्म करै है, तैसे भक्ति सब वासनानके भरे लिंगदेहको जरायदेयहै ॥ ३३ ॥ मेरे चरणकी निरंतर सेवामें तत्पर और मेरेही निमित्त कर्म करवेवारे मुक्तिकी इच्छाहू नहीं करते वे आपसमें इकट्ठे हो मेरे पुरुषार्थनको सत्कार करैं हैं कहैं हैं ॥ ३४ ॥ हे अम्ब ! मेरे रुचिर प्रसन्न मुख लाल नेत्र दिव्य वरप्रद रूपनको वाणीसो स्पृहा करके कहै हैं और देखै हैं ॥ ३५ ॥ जिनके दर्शन योग्य रूप, उदार विलास, हास, ईक्षण मनोहर हैं इनने जिनके मन इंद्रियनको आकर्षण कर लियोहै विन भक्तनको मुक्तिकी इच्छा नहीं होती तथापि भक्ति विन्हैं मुक्ति देय है ॥ ३६ ॥ अविद्याके निवृत्त हैवेपै सातों लोककी संपत्ति तथा अणिमादि आठ सिद्धि और वैकुंठकी सब सम्पत्ति विनकी इच्छा नहीं करने पैहू मेरी इच्छासो विन्हैं सब वैकुंठमें प्राप्त होय है ॥ ३७ ॥ जो मेरेमें परायण हैं, वे हे शांतरूपे ! वे कदी नाश नहीं होय हैं, मेरो कालचक्र विन्हैं नहीं मारे हैं; क्यों कि जिनके हम प्रिय आत्मा सुत सखा गुरु सुहृद् देवतावत् पूज्य हैं ॥ ३८ ॥ या लोक और परलोक और दोनों लोकमें जायवेवारो आत्मा तथा आत्माके पीछे जे यहां धन पशु गृह आदि हैं ॥ ३९ ॥ तिन सबकों त्यागकर और सबको छोड विश्वमुख मोको अनन्य भक्तिसो जे भजै हैं विनको मैं मृत्युसो पार करूंहूं ॥ ४० ॥ भगवत्प्रधान पुरुषेश्वर मेरे विना आत्माको सब जीवनको तीव्र भय नहीं निवृत्त होय है ॥ ४१ ॥ मेरे भयसो पवन चलै है, मेरे भयसो सूर्य तपैहै इंद्र वर्षै है अग्नि दाह करैहै, मेरे भयसो मृत्यु विचरै है " श्रुतिश्च–भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः ॥ भीषास्मादग्निश्चेंद्रश्च मृत्युर्धावति पंचमः " ॥ ४२ ॥ ज्ञानवैराग्य युक्त भक्तियोगसो योगी लोग क्षेमके अर्थ सब ओरसो भयरहित मेरे चरणकमलमें प्रवेश करै है ॥ ४३ ॥ पुरुषनको आनंदको हेतु या लोकमें इतनोही है, कि तीव्रभक्ति योगसो स्थिरमन मेरेमें अर्पित करै ॥ ४४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसां निःश्रेयसोदयः ॥
तीव्रेण भक्तियोगेन मनो मय्यर्पितं स्थिरम् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे कापिलेयोपाख्याने भक्तिलक्षणवर्णनं नाम पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अध्याय २६.

श्रीभगवानुवाच-अथ ते संप्रवक्ष्यामि तत्त्वानां लक्षणं पृथक् ॥
यद्विदित्वा विमुच्येत पुरुषः प्राकृतैर्गुणैः ॥ १ ॥

श्रीभगवान् बोले कि अब तुमसो हम तत्वनको लक्षण वर्णन करें हैं अलग अलग जाके जानवेसो पुरुष प्रकृतिके गुणनसो मुक्त हैजायहै ॥ १ ॥ पुरुषके आत्माको दर्शन जो ज्ञान मोक्षके वास्ते कह्यो है, सो तुमसों वर्णन करें हैं, वो हृदयकी ग्रंथिको भेदन करवेवारो है ॥ २ ॥ अनादि आत्मा पुरुष निर्गुण प्रकृतिसों परे और प्रत्यक् नाम प्रति लोम है धाम नाम स्फूर्ति जाकी तेज आप ज्योतिःस्वरूप है और जाकरके विश्व व्याप्त है ॥ ३ ॥ सो यह प्रभु सूक्ष्म दैवी गुणमयी यदृच्छासो प्राप्त प्रकृतिको लीलाकरके प्राप्त होतभए यहां ये सिद्धांत है कि "आवरणशक्ति और विक्षेपशक्ति भेदकरके प्रकृति दो प्रकारकी है तहां आवरणशक्तिकरके सोई जीवकी उपाधि अविद्या है, विक्षेपशक्तिकरके सोई माया परमेश्वरी है, पुरुष जीव ईश्वररूपसौ दो प्रकारको है जो प्रकृतिके अज्ञानकरके संसारमें आवे सो जीव है, जो प्रकृतिको वश करके विश्वकी सृष्टयादि करे है सो ईश्वर है" ॥ ४ ॥ विचित्र अपने समान प्रजाको गुणन करके रचती मायाको देख वोही जीव ज्ञानचेष्टाकरके वा ज्ञानकी ढकनवारी मायासो ही यहां मोहित है गयो है ॥ ५ ॥ या भांति देहके किये अध्यासके कारण गुणनकरके करेभए कर्मनमें ये जीव कर्ताभावको आत्मामें मानै है ॥ ६ ॥ यद्यपि पुरुष साक्षिमात्र है यासो अकर्त्ता है, तथापि या अकर्त्ताकोही अपनेमें कर्तृत्वधर्मको माननेसेही कर्मनकरके बन्धन होय है और जो काहूके आधीन नहीं है वाकोही भोगनमें पराधीनता होय है, और जो सुखात्मक है वाकोही जन्म अर्थात् मृत्युप्रवाह होय है ॥ ७ ॥ कार्य कारण कर्तृत्वमें कारण प्रकृतिको जानो, सुख दुःखके भोक्तापनमें प्रकृतिसो परे पुरुषको कारण जानो ॥ ८ ॥ देवहूति बोली कि हे पुरुषोत्तम! प्रकृति पुरुषको लक्षण कहो, जे प्रकृति पुरुष या विश्वके कारण है और कार्य कारणरूपहू वेही हैं ॥ ९ ॥ श्रीभगवान् बोले कि जो त्रिगुण अव्यक्त नित्य सद् असदात्मक सब विशेषनको आश्रय और जो प्रधान तत्व है वाकेही प्रकृति कहे हैं ॥ १० ॥ पांच पांच चार और दशकरके ये चौवीस तत्वनको समूह प्रकृतिकी बनावट हैवेसो प्राकृतिक ब्रह्म कहावै है ॥ ११ ॥ पंच महाभूत, पृथिवी, जल, पवन, आकाश, अग्नि, तितनीही गंधादिक शब्द स्पर्श रूप रस गंध ए पांच पाचों तत्वनकी पांच मात्रा मानीजाय हैं ॥ १२ ॥ दश इंद्रिय हे कर्ण, त्वचा, दृष्टि, जीभ, नाक, वाक्, कर, चरण, शिश्न, गुदा, ये दश इंद्रिय हैं ॥ १३ ॥ मन बुद्धि अहंकार चित्त ये आत्माके भीतर हैं लक्षणरूप वृत्तिसो चार तरहको भेद लक्षित होय है ॥ १४ ॥ सगुण ब्रह्मको इतनोही सन्निवेश नाम रचना है, ये संक्षेप मैंने कह्यो, और जो पचीस तत्वरूप हैकै रहे हैं वो काल कहावे है ॥ १५ ॥ अहंकारसों विमूढ कर्ता प्रकृतिको प्राप्त होनवारे पुरुषकोही जीवकों प्रभाव पौरुष कालकों कहैं हैं, जासें जगत्को भय होय है या श्लोकको यह अर्थ कोउ तो यह कहैहै कि पुरुष जो ईश्वर वाको जो प्रभाव है वाहीको काल कहै है अब वाही कालको दो तरहसो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लक्ष करावे है जा कालसों मायाके स्वीकार करनवारेको भय होय है और याहीसौ अहंकारसो विमूढ जो कर्ता नाम जीव है ताकौहू जा कालसोही भय होय है ॥ १६ ॥ हे मानवि ! जाको कोई विशेष नहीं ऐसे गुणसाम्य प्रकृतिकी चेष्टा जासौ होय है वही भगवान् काल कहावे है ॥ १७ ॥ भीतर पुरुषरूप करकै, बाहर कालरूपसो जो भगवान् अपनी मायासो सब जीवमात्रके भीतर प्राप्त होय हैं ॥ १८ ॥ जीवनके अदृष्टसौ जाके गुणनमें क्षोभ होय है ऐसी अपनी प्रकृतिमें परमेश्वरने अपनो चिदाभास रूप वीर्य स्थापन कियो तब वो प्रकृतिने महत्तत्त्व उत्पन्न कियो ॥ १९ ॥ अपनेमें प्राप्त विश्वको प्रकाश करवेको सर्वांतर स्थित जगत्के अंकुर महत्तत्वने अपनपेके सुवायवेवारे तमको अपने तेजसों पीलियो ॥ २० ॥ जो सत्त्वगुण स्वच्छ शांत भगवत्को स्थान है, जो वासुदेव नामसौ प्रसिद्ध चित्त है वह महत्तत्त्वको स्वरूप है आशय यह कि अधिभूत रूपसौ महत्तत्त्व अध्यात्म रूपसौ अधिदैव रूपसो वासुदेव है ॥ २१ ॥ और अविकारी होनौ स्वच्छता लय विक्षेप शून्यता शान्त वृत्तिनसौ महत्तत्त्वको लक्षण कह्यौ है जैसे पृथ्वीको संयोग हैवेके पूर्व जलकी स्थिति मधुर स्वच्छ और शान्त होयहै ऐसेही महत्तत्त्वकीहू स्वच्छ प्रकृति है ॥ २२ ॥ भगवत्के वीर्यसो उत्पन्न महत्तत्त्व जब विकारको प्राप्त भयो तब क्रियाशक्तियुक्त तीन प्रकारको अहंकार भयो ॥ २३ ॥ वा अहंकारके वैकारिक तैजस तामस ये तीन भेद भये विनके क्रमसों सात्विक राजस तामस अहंकार ये दूसरे नाम होते भये जिनसौ मन इन्द्रिय और पंचमहाभूत प्रगट भये ॥ २४ ॥ जो अहंकार पंचमहाभूत इन्द्रिय और मनोमय है और साक्षात् अनंत सहस्र मस्तकवारे संकर्षण नामसौ प्रसिद्ध हैं अहंकारको उपास्य देवता भगवान् शेषजी हैं ॥ २५ ॥ कर्तृत्व करणत्व कार्यत्व शांतत्व घोरत्व विमूढत्व ये अहंकारके लक्षण हैं ॥ २६ ॥ वैकारिक अहंकार विकारको प्राप्त होय है तब मन तत्त्व होयहै, जासो संकल्प विकल्प सब कामना उत्पन्न होय है ॥ २७ ॥ सब इन्द्रियनके अधीश्वर शरद्कालके कमल समान श्याम योगिन करकै सुंदर आराधन करवे योग्य मनमें उपास्य देवताको अनिरुद्ध कहैं हैं ये अनिरुद्ध मनस्तत्वको अधिष्ठातृ देवता है ॥ २८ ॥ हे सति ! तैजसतत्त्व विकारकूं प्राप्त भयो जब बुद्धितत्त्व होतोभयो द्रव्यको स्फुरण विज्ञान इंद्रियनकी सहायताकी प्राप्ति बुद्धिको लक्षण है ॥ २९ ॥ संशय मिथ्याज्ञान निश्चय स्मृति निद्रा यह पृथक् वृत्तिहू बुद्धिको लक्षण है ॥ ३० ॥ क्रिया ज्ञानके विभागसौ तैजस इंद्रियें होय हैं, क्रियाशक्ति प्राणकी है, विज्ञानशक्ति बुद्धिकी है ॥ ३१ ॥ भगवत्के वीर्यसों प्रेरित तामस अहंकार जब विकारकों प्राप्त भयो वासौ शब्दमात्र होतो भयो, जा शब्दसो आकाश उत्पन्न भयो, जा आकाशको गुण शब्द गिनो जाय है और जो शब्द श्रोत्र इंद्रियको धर्म है नाम विषय है ॥ ३२ ॥ शब्दके अर्थको जाननो, देखवेवारेको चिह्नमात्रको ज्ञान होनो और आकाशतत्त्वकी तन्मात्रा जाननी ये शब्दको लक्षण कविनने कह्यो है ॥ ३३ ॥ सब जीवमात्रमें अवकाश छिद्र रखनो बाहिर भीतरको होनौ जामें पायो जाय प्राण इंद्रिय आत्मा इनको स्थान होनो ये आकाशकी वृत्तिको लक्षण है ॥ ३४ ॥ शब्दमात्रावारो कालकी गतिसो जब आकाश विकारी भयो, तब वासौ स्पर्श गुणवारी वायु भई त्वचा इंद्री भई जासो स्पर्शको ज्ञान होनलग्यो ॥ ३५ ॥ कोमलता कठिनता शीतता ग्रीष्मता ये स्पर्शके लक्षण भये और वेही पवनतत्वकी तन्मात्रा होती भई ॥ ३६ ॥ वृक्षकी शाखादिको चालन और व्यूहन नाम मेलन तृणादिको और प्राप्ति नाम संयोग और द्रव्य शब्दको नेतृत्व और सब इंद्रियनको आत्मभाव ये सब पवनके गुण लक्षण हैं ॥ ३७ ॥ स्पर्शगुणवारी वायुसौ देवप्रेरित

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैवेके कारण रूप भयो, वासौं तेज उत्पन्न भयो जो रूपचक्षु इंद्रिसौ जानो जाय है ॥ ३८ ॥ हे साध्वी ! किसी वस्तुकी आकृति बननी, तथा द्रव्यमें गौणरीतिसौ प्रतीत होनी पदार्थनकी रचनाके परिणाम प्रतीत होनी तेजको असाधारण गुण होनो ये रूपको लक्षण है ॥ ३९ ॥ प्रकाश, पचनो, पान, भोजन, शीतमर्दन, क्षुधा, तृषा सुखायवो ये तेजकी वृत्ति हैं ॥ ४० ॥ रूपगुणवारो तेज दैवप्रेरित हो जब विकारी भयो, तब तातें रस तन्मात्रा भयो तातें जल भयो, रसग्रहण करवेवारी जिह्वा भई ॥ ४१ ॥ कषाय मधुर तिक्त कटु अम्ल ये अनेक भेद भौतिक विकारसे एक रसकेही होते भये ॥ ४२ ॥ गीलापन, गोला बंधनो, तृप्ति, जीवन, प्यास मिटानो, कोमल करनो, ताप दूर करनो जल निकासनेपर फिर निकल आनो ये जलकी वृत्ति हैं " आपोमयः प्राणः " इति स्मृतेः ॥ ४३ ॥ रस गुणवारो दैवप्रेरित जल जब विकारको प्राप्त भयो, तातें गंधतन्मात्रा भयी जासों गंधगुणवारी पृथिवी भई ॥ ४४ ॥ मिली गंध, सुगंध, शांत, उग्र, अम्लादि द्रव्यके अवयवनकी विषमतासों पृथक् एक गंध भेदको प्राप्त होती भई ॥ ४५ ॥ प्रतिमादिकमें ब्रह्मभाव करनो, स्थान धारण, सद् विशेषण, सब जीवमात्रके गुणनको भेद करनो; ये पृथिवीकी वृत्तिको लक्षण है ॥ ४६ ॥ आकाशको असाधारण गुण शब्द जाको विषय है वह श्रोत्र इन्द्रिय कहावे है वायुको असाधारण गुण स्पर्श जाको विषय है वह त्वचा इन्द्रिय कहावे है ॥ ४७ ॥ तेजको असाधारण गुण रूप जाको विषय है वह चक्षु इन्द्रिय कहावे है तथा जलको असाधारण गुण रस जाको विषय है वह जिह्वा कहावे है ॥ ४८ ॥ पृथिवीको असाधारण गुण गंध जाको विषय है वह घ्राण इन्द्रिय है पूर्व २ पदार्थनको पिछलेनके संबंध हैवेसो आकाशादिकनको धर्म अगले पदार्थनसों दीखै है आकाशको शब्द गुण एक है पवनके शब्द स्पर्श दो गुण है तेजके शब्द स्पर्श रूप तीन और जलके शब्द स्पर्श रूप रस चार गुण हैं और पृथ्वीमें शब्द स्पर्श रूप रस यह चार पूर्वके और गंध निजको गुण है ॥ ४९ ॥ यातैं विशेषभावनको भूमिमें उपलक्षण होय है ये महदादि सात जब न मिले ॥ ५० ॥ तब काल कर्म गुण करकै युक्त जगदादि ईश्वर वामें प्रवेश करते भए तब तत्व क्षोभको प्राप्त होकै इकट्ठे भये विनसौ अचेतन अंड उत्पन्न भयो ॥ ५१ ॥ जासो यह विराट् पुरुष उत्पन्न भयो, ये अंडविशेष नामको है सो यह अंड क्रमसो एक एकसौ दस गुनै वृद्धिको प्राप्त भये ॥ ५२ ॥ जल आदि आवरणसो वेष्टित है, बाहिरकी ओर यह हरिभगवान्को स्वरूप भूत ब्रह्माण्ड प्रधानसो घिरे जलादिकनसो घिरो है ॥ ५३ ॥ जलमें पडे भये वा हिरण्मय अंडको उठायके महादेव वामें प्रवेश करगये और वामें कई छिद्र किये ॥ ५४ ॥ याके प्रथम मुख निकसो, तामें वाणी भई, वाणीमें वह्निदेवता आये, नासिकामें घ्राण अनुस्यूत भयो इनसो घ्राण इन्द्रिय होती भई ॥ ५५ ॥ घ्राणसो वायु भई इन दोननसो अक्षिणी चक्षु भये, ताते सूर्य भये कान श्रोत्र दिशा होते भये ॥ ५६ ॥ विराट्के त्वचा निकसी, रोम मूछ आदि वामें भए, ताते औषधी भई, शिश्न उत्पन्न भयो ॥ ५७ ॥ जल रूप वीर्य भयो फेर गुदा भई गुदामें अपान रहै है, अपान वायुसों लोक भयंकर मृत्यु होय है ॥ ५८ ॥ दोनों हाथ भए, बल भयो इंद्रदेवता प्रगट भए. पांव निकरे गति हुई हरि वहां वसे ॥ ५९ ॥ नाडियें निकरीं, तिनमें रुधिर भरतोभयो, नदियें हुई उदर

---

१ इन श्लोकनमें एक एकमें चार २ समझने अधिष्ठान इंद्रिय देवता और विषय जैसे मुख अधिष्ठान वाणी इंद्रिय अग्नि देवता बोलनो विषय आंख अधिष्ठान चक्षु इंद्रिय सूर्य देवता रूप विषय कान अधिष्ठान श्रोत्र इंद्रिय दिशा देवता शब्द विषय याही प्रकार सब जगे चार चार निकास लेने ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ ६० ॥ क्षुधा पिपासा भई, देवता समुद्र भयो, याके हृदय भयो हृदयसे मन भयो ॥ ६१ ॥ मनसे चंद्रमा भयो, सब वाणिनकी पति बुद्धि भई अहंकार भयो तासो क्षेत्रज्ञ अधिष्ठाता रुद्र भयो ॥ ६२ ॥ ये सब देवता एक विराट् देहमें घुसे परंतु याके उठायवेकौ समर्थ न भए फेर क्रमसो आकाश आदि उठायवेकों प्रवेश करते भए ॥ ६३ ॥ वाणीको लेकै अग्नि मुखमें घुसो तोहू विराट् न उठो घ्राण इंद्रियसहित नाकमें वायु बैठी तोहू विराट् न उठो ॥ ६४ ॥ चक्षु इंद्रियसहित सूर्य नेत्रमें प्रगट भए, तोहू विराट् न उठो, श्रोत्र करकै सहित दिशा कानमें आई तोहू विराट् न उठो ॥ ६५ ॥ रोम करकै सहित सब औषधी त्वचामें घुसी तोहू विराट् न उठो, वीर्य करकै सहित शिश्नमें जलने प्रवेश करो, तोहू विराट् न उठो ॥ ६६ ॥ अपान करकै मृत्यु गुदामें आई तोभी विराट् न उठो, इंद्र बल करकै सहित हाथमें प्रकट भए तोहू विराट् न उठो ॥ ६७ ॥ गतिकरकै चरणमें विष्णुने प्रवेश कीनो तोहू विराट् न उठो, नदी रुधिर ले नाडीमें घुसीं तोहू विराट् न उठो ॥ ६८ ॥ क्षुधा तृषा करकै सहित समुद्र उदरमें पैठे तोहू विराट् न उठो, मन करकै हृदयमें चंद्रमा घुसे तोहू विराट् न उठो ॥ ६९ ॥ बुद्धि करकै ब्रह्मा हृदयमें पैठे, तबहू विराट् न उठो, रुद्र अभिमान करकै हृदयमें प्रविशे, तोहू विराट् न उठो ॥ ७० ॥ चित्त करकै सहित चित्तके स्वामी क्षेत्रज्ञ ईश्वर जब प्रविष्ट भए तबही विराट् पुरुष जलसो उठतो भयो ॥ ७१ ॥ जैसे सोए पुरुषकों जा चेतनके विना प्राण इंद्रिय मन बुद्धि पराक्रम करकै उठायवेकों नहीं समर्थ होयहैं ॥ ७२ ॥ जो सब जीव जीवके विषे अंतर्यामी रूप करके वर्तमान है वा ईश्वरके योगसो उत्पन्न बुद्धि करकै विरक्ति ज्ञानसो एकांतमें बैठकै आत्मामें चिंतवन करै जो आत्माको चिंतवन करै तो वो ऐसी गतिको प्राप्त होयहैं ॥ ७३ ॥

तस्मिन्प्रत्यगात्मानं धिया योगप्रवृत्तया ॥
भक्त्या विरक्त्या ज्ञानेन विविच्यात्मनि चिन्तयेत् ॥ ७३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीय० चतुर्विंशतितत्त्ववर्णनं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अध्याय २७.

श्रीभगवानुवाच–प्रकृतिस्थोऽपि पुरुषो नाज्यते प्राकृतैर्गुणैः ॥
अविकारादकर्तृत्वान्निर्गुणत्वाज्जलार्कवत् ॥ १ ॥

श्रीभगवान् कपिलदेवजी बोले कि प्रकृतिमें स्थित जो पुरुष है वोहू प्रकृतिके गुणनकरके अविकारी अकर्ता निर्गुणता हैवेसो जलमें सूर्यकी छांईकी नाईं लित नहीं होय हैं ॥ १ ॥ सो ये जब प्रकृतिके गुणनमें सब ओरसो आसक्त होयहै, अहंक्रिया करवेसो विमूढ आत्मा हैवेसो मैं कर्ता हूं ऐसे अभिमान करै है ॥ २ ॥ तब तासो अवश हैकै सुख न पायकर सत् असत् मिश्र योनियनमें प्रकृतिके संगके कर्म दोषनकरकै संसार पदवीकों प्राप्त होय है ॥ ३ ॥ संसारके नहीं होनेपरहू विषयनको ध्यान करवेवारे पुरुषको संसार नहीं छूटै है जैसे स्वप्न मिथ्या है तोहू स्वप्नावस्थावारे पुरुषके अनर्थ वा समय नहीं मिटैहै और भोगनेही पडते हैं ॥ ४ ॥ एक दृष्टांत है कि एक लकडी बेचवेवारो किसी इमली वृक्षके नीचेकू आय लकडीको बोझ धर क्षणमात्र बैठो; तितनेमें एक सिपाई घोडासवार

१ जैसे विषयी एक ब्रह्मचारीकों देख तुलसीदासजी ऐसे बोले धिक्कार है तोहि ॥ " मूंड मुडाय रखाय जटा शिर खाख लगाय भए ब्रह्मचारी । बैठ रहै पट दे मठ भीतर साधके मौन लगायकै तारी ॥ धर्म अधूमके घूंट पिये ममता मद लोभ माया न बिसारी । ऐसे भए तो कहा तुलसी जो पै आस न मारकै आसन मारी ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

घोडा कुदातो जातो देख याके मनमें भई लकडी बेचते चांद घिस गई, मोपै घोडा होतो तो ऐसे मैंभी कुदातो, या मनोरथमें स्वप्न आयो सोवतेही कहा जीवात्मा अनुसंधान करै है, वा बोझको घोडा बनाय आप सुपनेमें सवार भयो जो कूदो सो झट कुवामें गिरपडो, जैसे तैसे निकल बोलो आज मनमें घोडा चढवेको संकल्पमात्र करो सो तो कुआमें गिरो, जो रोज घोडापर चढते होंगे वे न जानै कैसे खाई खंदकमें पडते होंगे, याते मैं अपनी लकडी बेचेमें प्रसन्न हूं, ये स्वप्नमें अनर्थागमन भयो तैसे विषयनके ध्यान करवेसो जीव संसार बंधनसो नहीं छूटै है याते मनुष्य असतनके मार्गमें आसक्त चित्तको तीव्र भक्तियोगसों विरक्तिकरके वश करै॥५॥ श्रद्धायुत योगके मार्ग यमादिकनसो अभ्यास कर मेरेमें सांचो भाव कर मेरी कथा सुने ॥६॥ सब जीवमात्रमें समान भाव करके काऊसें वैर न करै कुसंग न करै, ब्रह्मचर्य धारे मौनव्रत धारे बलवान् अपने धर्ममें बनो रहै ॥ ७ ॥ जो अकस्मात् लाभ होय तासें संतुष्ट रहै, थोडो खाय, मुनिकीसी नांई रहै, एकांतमें वसे, शांत सबसो मैत्री राख, दयालु आत्मज्ञान रहै ॥ ८॥ कुटुंबसहित देहमें आसक्त नहीं होय, प्रकृति पुरुषको जाते ज्ञान होय वा ज्ञानको करै ॥ ९ ॥ बुद्धिकी अवस्था जाग्रदादिसो निवृत्त रहै, सब अमंगलनसो पृथक् रहें, बुद्धिसों परमात्माको प्राप्त होय, जैसे चक्षु इंद्रिय द्वारा सूर्य दीखै है तद्वत् आत्माको दर्शन करै इन सब साधन संपत्तिनसो दुष्टनके मार्गमें फँसे भये मनको अपने वश करै यह पहलेके छठे श्लोकमें अन्वयको संबंध समझनो ॥ १० ॥ जब इन साधनसो मन काबूमें है जाय है तब जो निरुपाधिक और मिथ्याभूत अहंकारमें जो सद्रूप करके प्रकाशमान और प्रकृतिको अधिष्ठान और कार्यको प्रकाशक और कार्यकारणमें सेंहि रह्यो और परिपूर्ण ऐसो साक्षात् ब्रह्म है वाको प्राप्त होय है ॥ ११ ॥ जैसे आकाशके सूर्यको बिम्ब जलमें और जलके प्रतिबिम्बको भीतमें बिम्ब परै तौ मनुष्यकी दृष्टिके अनुसंधान करवेसो क्रमानुसार आकाशस्थ सूर्यपर पहुँचैगी ॥ १२ ॥ ऐसेही देह इन्द्रिय मनादि जो आत्मासौ प्रकाशमान हैं विनपै दृष्टि पडकै फिर विनके प्रकाश करवेवारे आत्मापै आवै है और वाहीके आश्रयसो अपनो आत्मा जामें चेतनको आभास है वा अहंकारात्मक त्रिगुण आत्माको प्रकाशक सत्य चेतनरूप परमात्मा दृष्टिगोचर होय है ॥ १३ ॥ पंच भूत सूक्ष्म इंद्रियें मनबुद्ध्यादिक ये सब या संसारमें निद्रा करके जब असत् तुल्य अव्याकृतमें लीन हैं जाय हैं तब विनिद्र हैकै जो अहंकारको त्याग देहै वा आत्माको प्राप्त होयहै ये अगारीके तीसरे श्लोकमें अन्वय जाननो ॥ १४ ॥ तब आत्मा नष्ट तो नहीं होय है, परंतु झूठेई नष्टवत् मानै है, अहंकारके नष्ट हैवेके कारणसौ जैसे कोई मनुष्य धन नष्ट हैवेसो व्याकुल हैकै नष्टसौ है जाय है॥ १५ ॥ ये जीव ऐसे विचारिकै आत्माको प्राप्त है जाय है वो आत्मा कैसो है कि जो आत्मा साहंकार द्रव्यको नाम कार्यकारण समुदायको अनुग्रह नाम प्रकाश करनवारो है और अवस्थान नाम द्रष्टा है वास्तवसो पृथक् है वा आत्माको प्राप्त होय है ॥ १६ ॥ देवहूति बोली कि हे प्रभो ब्रह्मन् ! कभूहू पुरुषनको प्रकृति नहीं त्यागैहै, वो पुरुष प्रकृतिके आसरै है, और प्रकृति पुरुषको आधीन है ये दोनौ नित्य है यासौ इन दोउनको अन्योन्य संबंध है ॥ १७ ॥ जैसे सुगंध भूमिमेंसों कभू पृथक् नहीं होय है गंधमें भूमि भूमिमें गंध, जलमें रस रसमें जल, तैसेही परमेश्वरमें बुद्धि है और बुद्धिमें

---

१ प्रयोजन यह है कि जब भीतमें कोठेके भीतर सूर्यको बिंबको आभास भीतर बैठे मनुष्यको मालुम पडै है तब जलमें पडे सूर्यके बिंबको मान होय है कि कहीं बाहिर जल भरो है वामें सूर्यको बिंब परे है ताको यह प्रतिबिंब है और फिर वा जलस्थ बिंबके ज्ञानसो आकाशस्थ साक्षात् सूर्यको जैसे ज्ञान होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परमेश्वर है अर्थात् प्रकृतिसो पुरुष और पुरुषसो प्रकृति कभू पृथक् नहीं हो सकै है ॥ १८ ॥ यासो प्रकृतिके गुण देहादिक कि जिनके निमित्त पुरुषको अकर्ता हैवेपैहू कर्म बंधन भयो है विन गुणनके रहवेपैहू यह पुरुष विनसो सर्वथा निर्लेप है सकै है ॥ १९ ॥ कबहू तत्वके विचारवेसो ये अत्यंत तीव्र भय दूर है जाय है परंतु वाको निमित्त नष्ट नहीं होयहै सो फेर ये शंका खडी है जाय है ॥ २० ॥ श्रीभगवान् बोले कि सुन मैया ! फलानुसंधानरहित अपने निष्काम धर्मसो और मन निर्मल करवेसो ताई शास्त्रके श्रवण करवेसो पुष्ट भई नाम दृढ भई जो भक्ति ता करके ॥ २१ ॥ तत्वदर्शन करावेवारे ज्ञानसों अत्यंत वैराग्यसो तपसहित योगाभ्याससो और तीव्र अपनी समाधिकरकै ॥ २२ ॥ या पुरुषकी माया दिन रात जरके धीरेसों सब छिप जाय है, जैसे अग्नि काष्ठकों जरायके लीन होयहै " जैसे अग्निकी आदि कारणभूत लकडी अपनेसो उत्पन्न अग्निसो आप जर भस्म हैजायहै तैसेई साधनदशामें अविद्याके करेभए देहादि अभिमानसो उत्पन्न ज्ञानादि साधनोंसो दह्यमान प्रकृति नष्ट है जाय है " ॥ २३ ॥ भोग भोगकै सदोष दृष्टिसो त्यागी भई प्रकृति अपनी महिमामें स्थित पुरुष ईश्वरको कबीभी अशुभ नहीं करै है ॥ २४ ॥ जैसे सोए भएको सोवनो बहुत अनर्थको करवेवारो है सोई वो सोनो जगेभये ज्ञानीको मोहके अर्थ नहीं समर्थ होयहै ॥ २५ ॥ ऐसे तत्व जाननेवारे आत्मारामको मेरेमें मन लगायवेवारेको प्रकृति कभूहू तिरस्कार नहीं करै है ॥ २६ ॥ बहुत जन्मके काल करकै जब अध्यात्मज्ञानमें याकी रुचि होय है, तब ब्रह्माके लोकपर्यंत सर्वत्रसो याको वैराग्य है जाय है, तब मुनि होयहै ॥ २७ ॥ मेरो भक्त मोक्षभागी मेरी बडी कृपासो मोक्षदायक अपनो स्थान कैवल्य जो मेरे आश्रय है वा वैकुंठकों ॥ २८ ॥ या संसारमें धीर अनायास करकै प्राप्त होयहै, अपनी दृष्टिसों सब संशय नष्ट है जांय है, या शरीरकों त्यागके जहांके गए योगीजन फेर बगदकै नहीं आवैं हैं तहां जाय है ॥ २९ ॥ हे अंग ! हे मातः ! योगसों वृद्धिकों प्राप्त कोई सिद्धि जब हर्षको प्राप्त होय हैं कि जिनके मिलवेको दूसरो कारण नहीं है विनकी मायामें जब या सिद्धको चित्त आसक्त नहीं होयहै तब मेरी अनन्य अत्यंत सुखदायिनी गति होयहै, जहां मृत्युको भय नहीं होयहै ॥ ३० ॥

यदा न योगोपचितासु चेतो मायासु सिद्धस्य विषज्जतेऽङ्ग ॥
अनन्यहेतुष्वथ मे गतिः स्यादात्यन्तिकी यत्र न मृत्युहासः ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृती० मोक्षरीतिवर्णनं नाम सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अध्याय २८.

श्रीभगवानुवाच-योगस्य लक्षणं वक्ष्ये सबीजस्य नृपात्मजे ॥
मनो येनैव विधिना प्रसन्नं याति सत्पथम् ॥ १ ॥

श्रीभगवान् बोले कि हे नृपात्मजे ! बीजसहित योगको लक्षण हम कहैहैं, जा विधिके अनुष्ठानसो प्रसन्न मन सन्मार्गमें प्राप्त होय है ॥ १ ॥ अपनी सामर्थ्यभर स्वधर्मको आचरण करै पापसो निवृत्त रहै, जो अपने भाग्यको अनुसार लाभ होय विनतेमें संतोष करै, आत्मज्ञानीनके चरणको पूजन करै ॥ २ ॥ गंवारोंके धर्मसो निवृत्त रहै, मोक्षधर्ममें प्रीति करै थोडो महाशुद्ध भोजन करै मित याको नाम है कि " द्वौ भागौ पूरयेदन्नैस्तोयेनैकं प्रपूरयेत् ॥ मारुतस्य प्रचारार्थं चतुर्थमव-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शेषयेत् ॥ " पेटके दो भाग अन्नसों भरै, एकमें जल, चौथो पवनके जानेआनेको खाली राखै, क्षेमदायक एकांतमें सदा विराजै ॥ ३ ॥ जीव न मारै, सांच बोले, चोरी न करे, जितनेमें अपनों प्रयोजन होय वितनों संग्रह करै, ब्रह्मचर्य धारे, तप करै, शोच करै, वेदपाठ करै, ईश्वरको पूजन करै ॥ ४ ॥ वृथा न बोलै, आसनपै बैठो रहै, स्थिर रहै धीरेसो प्राण जीते, विषयनसो मनकरकै हृदयमें इंद्रियनकों जीते ॥ ५ ॥ सब प्राणनके स्थान मूलाधार आदि एकदेशमें मनके सहित प्राणकी धारणा करे, और भगवान्‌की लीलाको ध्यान कर, मनकी आत्माकारताको करे ॥ ६ ॥ इन तथा और उपायनसों असन्मार्गमें लगे मनकों धीरे धीरे बुद्धिसो जीते, प्राण जीते, निरालस हैकै रहै ॥७॥ पवित्र देशमें रहै, आसनकों विशेष करकै जीते, तापै मंगलीक आसन बांध बैठे, सूधो शरीर करके अभ्यास करै, ये स्वस्तिकासन हैं कि " ऊरू जंघांतराधाय पादाग्रे जानुमध्यगे ॥ योगिनो यदवस्थानं स्वस्तिकं तद्विदुर्बुधाः ॥ " ॥ ८ ॥ पूरक कुंभक रेचक करकै प्राणके मार्गकूं सोधै अथवा इनके उलटे क्रमसों चित्तको शोधन करे जासों फिर चंचल न होय स्थिर करै, चंचल न रहै ॥ ९ ॥ श्वास जीतनवारे योगीको मन थोडेही दिनमें निर्मल हैजायहै, जैसे पवन अग्निसो तापित हो सुवर्ण मलको त्याग शुद्ध हैजायहै ॥ १० ॥ प्राणायामकरकै तो वात कफ पित्तके मल दूर करै, धारणासों सब पाप दूर करै, प्रत्याहारसों विषयनको दूर करै, ध्यानकरकै रागादिक दूर करै ॥ ११ ॥ जब मन अपनो निर्मल योगसों सुंदर सावधान कर भगवत्‌के स्वरूपको ध्यान करै तब अपनी नासाग्रभागको देखतो रहै ॥ १२ ॥ कमलसमान प्रसन्न मन कमलसदृश रक्त नेत्र, नीलकमलसम श्याम, शंखचक्रगदाधरको ध्यान करै तब ॥ १३ ॥ शोभित कमलके केसरसमान पीतांबर पहिरे, श्रीवत्स वक्षःस्थलमें दीप्तिमान कौस्तुभ मणि मुक्तामय माला कंधामें धारे ॥ १४ ॥ मत्त भ्रमरनकी मधुर ध्वनियुक्त वनमाला पहिरे, अमूल्य हार कंकण किरीट बाजू नूपुर धारेहै ॥ १५ ॥ क्षुद्रघंटिकाकरकै शोभित कटिपश्चाद्भागवारे ब्राह्मण भक्तनके हृदयकमलमें वसवेवारे, दर्शन करवे योग्यनमें दर्शनयोग्य, शांत, मन नयनकों आनंद बढावनेवारेकों ध्यान करै ॥ १६ ॥ बहुत सुंदर दर्शनवारे सब लोकवासिनसों नमस्कृत किशोर अवस्थामें स्थित भृत्यनपें अनुग्रह करवेमें कातर मन ॥ १७ ॥ तीर्थरूप यश, कीर्तनयोग्य, पुण्यश्लोकनमें यश करवेवारे भगवान्‌के सब अंगको ध्यान करै, अपनी नासाग्रभागको देखतो रहै, जबतक मन और ठौर न जायवेपावै ॥ १८ ॥ बैठे चलते फिरते अथवा सोते सर्वज्ञ ईश्वरको शुद्धचित्तके भाव करकै ध्यान करै, जिनकी लीला देखवे योग्य है ॥ १९ ॥ मुनि तिनमें चित्तको स्थान देकर सब अवयव सुंदरमें स्थित ईश्वरकों दर्शन कर भगवान्‌के एक अंगमें मन लगावै ॥ २० ॥ वज्र अंकुश ध्वज कमल चिह्नसो युक्त, उठे भए रक्त शोभित नखमंडलकी किरणनकरकै ध्यान करवेवारे महात्मानके हृदयको अंधकार दूर करवेवारे भगवत्‌के चरणकमलको ध्यान करै ॥ २१ ॥ जिनके चरणक्षालन गंगाजलके तीर्थके मस्तकपै धारवेसो मङ्गलमय शिव औरहू अत्यंत मंगलरूप होते भए, तैसेही ध्यान करवेवारेनको मनके पापपर्वत नाश करवेको वज्रके चिह्नको धारण करनवारे भगवत्‌के चरणारविंदको बहुत दिन

---

१ यामें यह प्रयोजन है कि नाकके तरफ यासो देखतो रहे कि जो आंख मीचके ध्यान करैगो तौ नींद आय जायगी और चार तरफ देखते रहैगो तो मन चलायमान न होयगो यासो नाकके माउ देखतो रहै अथवा नाकके माउ क्यों देखत रहै कि या जगत्‌में केवल नाककी बराबर शरम और काहूकी नाय होय नेक कछु भई और नाक काट जायगी ऐसे कहेहै यासो नाकके माउ देखे कि जो कछु अब भ्रष्ट भयो तो नाक कट जायगी फिर मोडो दिखायवे लायक न रहेगो यासौ नाकके माउ देखे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तक ध्यान करै ॥ २२ ॥ सबको विधान करवेवारे ब्रह्माकी माता कमल समान नेत्रवारी सब सुरनसों वन्दित महालक्ष्मी बडी अपनी जंघानपै रखके करपल्लवकी कांतिसों बडी सावधानीके साथ जिनकी सेवा करैं हैं वन भय दूर करनवारे नारायणके दोनौ घुटनौ पर्यन्त जंघाद्वयकों हृदयमें ध्यान करनो ॥ २३ ॥ गरुडजीके पंखनपै धरीहुई महापराक्रमी अलसीके पुष्पसमान दोनों ऊरुको हृदयमें ध्यान करै, फिर गुल्फपर्यन्त लम्बायमान पीताम्बरसों शोभित कटि कांचीवेष्टित हैवेसों अतिशोभित भगवान्के नितम्बनको ध्यान करै ॥ २४ ॥ सब भुवननको खजानो जिनके उदरमें स्थित है और आत्मयोनि ब्रह्माको स्थान सब लोकात्मक कमल जामें उत्पन्न भयो ऐसे नाभिसरोवरको ध्यान करै, मरकतमणिसों श्रेष्ठ और विशद हारनकी किरणनसो गौर इन भगवान्के दोनों स्तननको ध्यान करैं ॥ २५ ॥ सर्व श्रेष्ठ महाविभूति श्रीलक्ष्मीजीको वासस्थान पुरुषनके मन नयनको अत्यंत सुखदायक वक्षःस्थल मनमें ध्यान करै, सब लोकनसों नमस्कृत विन ईश्वरके कंठको कौस्तुभ मणि भूषण पहिरायवेके लिये मनमें ध्यान करै ॥ २६ ॥ मंदरगिरिके घूमवेसों समुद्रमथनके समय जिन बाहुनके कंकण उज्ज्वल भएहैं जिनमें सब लोकपाल निवास करै हैं ऐसी बाहुनको ध्यान करै, जाको तेज सह्यो न जाय ऐसे सहस्र आरावारे चक्रराज सुदर्शनजीको चिंतवन करै, तिनके हस्तकमलमें राजहंस समान विराजित शंखको चिंतवन करै ॥ २७ ॥ भगवान्को प्यारी शत्रुभटनके रुधिरके कीचमें लिपटी भगवान्की गदाको स्मरण करै, भ्रमरनके समूहनसों गुंजयुक्त मालाको ध्यान करै, जीव तत्व रूप निर्मल कंठमणिको स्मरण करै सो, विष्णुपुराणमें है कि "आत्मानमस्य जगतो निर्लेपमगुणामलम् ॥ बिभर्ति कौस्तुभमणिं स्वरूपं भगवान् हरिः ॥" ॥२८॥ अपने भृत्यनके ऊपर कृपा करकै मूर्ति धारण करवेवारे भगवान्के मुखकमलको ध्यान करै, दमकतेभए चंचल मकरकुंडल सो प्रकाशित निर्मल कपोलनमें उदार नासिका युक्त ॥ २९ ॥ श्रीजीके स्थान भ्रमरनकरकै सेव्यमान, अपने वैभवसो कुटिल कुंतलसमूहयुक्त, दो मीनके आश्रित कमलसे नेत्रयुक्त सुंदर भौंवाले मुखारविंदको कि जाकी शोभासो कमलहू तिरस्कृत है मनमें आविर्भावकर ध्यान करै ॥ ३० ॥ कृपाकरकै अति घोर तापत्रय नाशके लिये नेत्रनसों विकसे मनोहर मुसकान संयुक्त बहुत प्रसन्न होयवेवारे बोहोतसी भावनाकरके हृदयमें बोहोत दिनतक भगवत्के अवलोकनको ध्यान करै ॥ ३१ ॥ प्रणाम करवेवारेनके तीव्रशोकके अश्रुसागर शोषण करवेवारी अतिउदार श्रीहरिकी हांसीको ध्यान करै, और अपनी मायाकरकै कामकेहू मोह करवेको मुनिनके ऊपर अनुग्रह करको मानौ रचो है ऐसे भगवान्के भ्रूमंडलको ध्यान करै ॥ ३२ ॥ ध्यानको स्थान जो प्रहसित अधरहोठकी कांतिकरकै लाल तनुमें कुंदपंक्ति समान दांतनको अपने हृदयाकाशमें ध्यान करै, ध्यान करते समय प्रेमरस भरी भक्तिसो वाहीमें चित्त रखकर वासो पृथक् और किसी पदार्थके देखवेकी इच्छा न करै ॥ ३३ ॥ ऐसे भगवान् हरिमें भाव भक्ति और द्रवीभूत हृदय तथा अत्यंत आनंदसो योग साधते २ रोमांचित होनो और उत्कंठाके कारण अश्रुपातसो वारंवार पीडित हैवेसो जो मन ईश्वरके मिलवेके निमित्त मत्स्य वेधवेके कांटेके समान जो चित्त है वाय धीरे २ ध्येयसों न्यारो करै ॥ ३४ ॥ जब याप्रकार ध्यान छोडते २ मन भगवत्के सगुणरूपरहित होयहै तब वैराग्यके कारण विषय वामें नहीं आवैहै तब योगीको चित्त शान्त भए दीपककी समान लय हैकै ब्रह्माकार हैजायहै, तब यह आत्माको आनंदमय एक देखेहै तब संसारसे निवृत्त है जाय है ॥ ३५ ॥ तब वो योगीहू या अंतकी मनकी निवृत्ति करके सुखदुःखसो बाहर जो ब्रह्म है वा ब्रह्ममें निष्ठा प्राप्त करके योगी प्रथम

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देखेभये सुखदुःखके भोक्तापनको अहंकारमें राखकै अपनेको पृथक् देखै है ॥ ३६ ॥ ऐसी अवस्थावारो सिद्ध अपने देहकोहू नहीं देखै है तब सुखदुःख कहांसे देखै जैसे मदिराके मदसे अंध भए पुरुषको जैसे पहरे वस्त्रकोहू भान नहीं रहैहै चाहैं दैवसे वाको वस्त्र प्राप्त होय चाहै जातो रहै तैसेही भगवत्के चिंतवन करवेवारेको सब अनुसंधान भूल जायं है ॥ ३७ ॥ दैववश भये देह इंद्रियसहित प्रारब्ध कर्मतक जीवै है प्राण बने रहै है मरे नहीं है परन्तु समाधिको प्राप्त आत्मज्ञानी योगी स्वप्न समान वा देहको मेरो है ऐसे नहीं माने है क्योंकि समाधिपर्यंत योगको प्राप्त भयो है याहीसो वा योगीकों पूर्ण आत्मतत्वको ज्ञान भयो मालुम परे है ॥३८॥ जैसे पुत्र धनसें मनुष्य अपनेकों पृथक् प्रतीत करैहै, तैसेही आत्मभाव मानके अभिमत देहादिकसों ईश्वरको पृथक् माने है ॥ ३९ ॥ जैसे जलती लकडीसो और अग्निके पतंगानसो और आप अग्निसो उत्पन्न भये धूमसों ए सब अज्ञानसों अग्नि माने है परंतु विनसो सब सो (उल्मुकाद) नाम काठके जरायवेवारो और प्रकाश करवेवारो अग्नि पृथक् है ॥ ४० ॥ ऐसेही पंचभूत, इंद्रियें, अंतःकरण, प्रधान, जीव संज्ञासें, द्रष्टा आत्मा पृथक् है, जाको ब्रह्म कहै हैं ॥ ४१ ॥ सर्वजीवमात्रमें आत्मा व्यापै हैं और सब जीवमात्र आत्मामें व्यापैं है, ऐसे अनन्यभावकरकै सब जीवनमें तदात्मताकरकै जो देखैहै वो सिद्ध है ॥ ४२ ॥ अपनी योनि काष्ठमें एक अग्निकी ज्योति योनिनकी गुणविषमतासो दीर्घ ह्रस्व भावसो दीखै है, तैसे आत्मा प्रकृतिमें स्थित दीखै है ॥ ४३ ॥ तातें या दैवी माया सदसदात्मिका विचारमें सहजसै नहीं आयवेवारी प्रकृतिको भागवान्की कृपासै जीतकै स्वस्वरूपमें स्थित होय है, कुमति कपट लोभ कुनारी दुष्ट संग हैवेसो जीवको नाश होयं है ॥ ४४ ॥

तस्मादिमां स्वां प्रकृतिं दैवीं सदसदात्मिकाम् ॥
दुर्विभाव्यां पराभाव्य स्वरूपेणावतिष्ठते ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे कापिलेयोपाख्याने अष्टांगयोगे ध्यानयोगवर्णनं नाम अष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८ ॥

अध्याय २९.

देवहूतिरुवाच-लक्षणं महदादीनां प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥
स्वरूपं लक्ष्यतेऽमीषां येन तत् पारमार्थिकम् ॥ १ ॥

देवहूति बोली कि महदादिकोंको लक्षण और प्रकृति पुरुषको स्वरूप, पारमार्थिक जैसो होय, जासे इनको ज्ञान होय सो कहो ॥ १ ॥ हे प्रभो! जैसे सांख्यमें इनकी मूल आपने कही अब तुम भक्तियोगको मार्ग विस्तारसे कहो ॥ २ ॥ हे भगवन् ! जाकरकै पुरुषकों सब ओरसे वैराग्य होय, सो या लोककी अनेक प्रकारकी जन्म मरणकी कथा कहो ॥ ३ ॥ परेसे परे ईश्वररूप कालको

१ प्रयोजन यह है कि जब तीन कोडीकेही अमलमें यह सामर्थ्य है कि मनुष्यको देहानुसंधान नहीं रहै है फिर वा ब्रह्मनसाके मारे देहानुसंधान न रहै तौ कहा बडी बात है ॥ २ सो कवित्तमें है " कुमतिते जस जाय गर्वते लक्षण जाय कुनारीते कुल जाय जोग जाय संगते । भूखते मर्याद जाय लडायेते पुत्र जाय शोचते शरीर जाय शीलता कुसंगते ॥ कपटते धर्म जाय लोभते बडाई जाय मांगेते मान जाय पाप जाय गंगते । क्रोधते तपस्या जाय नियतविना राज्य जाय रजपूताई जाय मुरे संग्रामते ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्वरूप कहो जांके भयसो प्राणी पुण्य कर्मनको अनुष्ठान करै हैं' ॥ ४ ॥ झूठो अभिमान करवेवारे अज्ञानी और आंधरो अंधकारमें बहुत दिनमें सोये कर्म करते करते श्रांत भये लोकके जगायवेको निर्गल बुद्धिकरकै योगरूप सूर्य तुम प्रगट भयेहो ॥ ५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे कुरुश्रेष्ठ विदुर ! ऐसे माताके मधुर वचनकी सराहना कर महामुनि प्रसन्न होकर वापै कृपाकर बोले ॥६॥ श्रीभगवान् बोले कि हे भामिनि मातः ! भक्तियोग बहुत विधिको है, बहुत मारगनसो प्रकाश होय है, सुभाव गुण मार्ग करकै पुरुषनको भाव भेदकों प्राप्त होयहै ॥७॥ संकल्प हिंसा दंभ मत्सरतासो क्रोधकर भिन्न दृष्टिके भावसो मोमें भक्ति करनी तामसी भक्ति है ॥ ८ ॥ विषयनकी चाह कर यश ऐश्वर्यके लिये जो अर्चादिकमें मेरी भावना करै है वो राजसी भक्ति है ॥ ९ ॥ पापक्षयको उद्देश कर वा ईश्वरमें कर्म समर्पण करनेको उद्देशसो भेदभावसो मूर्ति आदिमें पूजा करनी सात्विकी भक्ति है । नवधा भक्ति सात्विकी राजसी तामसी तीन भेद हैवैसो फिर एकभी सत रज तम मिलवेसो तीन तीन प्रकारकी होतीहै ॥ १० ॥ मेरे गुणनके श्रवणमात्रकरकै सर्वांतर्यामी मोमें कभू नहीं ठहरवेवारी मनकी गति लगावै जैसे गंगाजलकी धारा निरन्तर प्रवाहसो समुद्रमें लीन होयहै ॥ ११ ॥ निर्गुण भक्ति योगको ये लक्षण कह्यो है जो पुरुषोत्तममें फलानुसंधान भेदभावरहित भक्ति करै ॥ १२ ॥ मैं यद्यपि अपनें भक्तनको सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य सारूप्य और एकत्व यह पांचौ मुक्ति देउहूं तथापि वे मेरी सेवा विना और कछु नहीं लेयहैं ॥ १३ ॥ सो यही अत्यंत भक्तियोग कह्यो है, जा करके तीनों गुणनको उलांघके मेरे भावकों प्राप्त होयहैं ॥ १४ ॥ सुंदर नित्य नैमित्तिक स्वधर्मके अनुष्ठान करके निष्काम नारदपंचरात्रतंत्रोक्त पूजा करवेसो काऊकी हिंसा नहीं करवेसो अंतःकरण शुद्ध होयहै ॥ १५ ॥ मेरी प्रतिमाके दर्शन स्पर्शन पूजा स्तुति प्रणामादि करके सब जीवमात्रमें मेरी भावना करकै धैर्य करिकै वैराग्य करके हृदय पवित्र होयहै ॥ १६ ॥ बडोंको बहु मान करवेसो दीननपर कृपा करकै अपने बराबरकेनमें मैत्री करवेसो यम नियम करवेसो शरीर शुद्ध होयहै ॥१७॥ ब्रह्मविद्याके सुनवेसो मेरे नामोच्चारण संकीर्तनसो कुटिलता त्यागवेसो अनाडीनके संग न करवेसो और अहंकारके त्याग करके मन शुद्ध होयहै ॥ १८ ॥ मेरे धर्मके आचरण करनवारे पुरुषको इन गुणन करके हृदय शुद्ध होयहै तब केवल मेरे गुणनके सुनवेसो पुरुषको मन अनायास करकै मेरे स्वरूपको प्राप्त होयहै ॥ १९ ॥ जैसे सब स्थाननसो पवनद्वारा गंध घ्राणमें आवै है, ऐसे योगरत चित्त अविकार आत्मामें स्वयं आयकै प्राप्त होयहै ॥ २० ॥ सर्व जीवनमें स्थित भूतात्मा

---

१ काल जाननेपरभी कालसे मुक्त होना कठिन है–एक ब्राह्मणने एक दिन देखा कि एक सर्पने किसीको काट लिया, तब ब्राह्मण उस सर्पके पीछे हुआ, थोडी दूर जाकर वही सर्प मेंडक हो छोटे जीवोंको खाने लगा, तब ब्राह्मणने पूछा आप कौन हो जो इस प्रकारसे प्रजाको कष्ट देते हो, उसने कहा मैं सबका संहारकर्ता काल हूं ब्राह्मण बोले मेरी मृत्यु कैसे होगी; कालने कहा नदीमें तुझे नाका ले जायगा, यह सुन ब्राह्मण वहांसे मारवाड देशको चलागया, और एक राजाके यहां नौकरी करली कुछ दिनोंउपरांत उस राजाके पुत्र हुआ, जब वह बडा हुआ, एक दिन इस ब्राह्मणको संग ले किसी दूर देशको गया मार्गमें कोई नदी आई, राजकुमार स्नानको उतर और ब्राह्मणसे कही आओ संकल्प करादो, ब्राह्मणने जलमें जाना स्वीकार न किया तब राजकुमारने कहा मैं तुम्हारे आगे गहरे जलमें खडा होता हूं, चारों ओर मेरे आदमी तुम्हारी रक्षामें खडे रहैंगे तुम चार पग जलमें आकर दान लो, ब्राह्मण जब विचारकर जलमें गये, तब राजकुमार बोला, भाई कालसे कौन बचाहै, मैं वही मेंडक हूं जो तुम्हें मिलाथा, अब नाका होता हूं यह कह तत्काल नाका बन उन्हें पकड अथाह जलमें लेगया ॥

२ यह श्लोक छः प्रसंग विरुद्ध होनेसे प्रक्षिप्त है परंतु औरोंने लिखा है इस कारण टीकाभी लिखी गई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मोय छोडकै केवल अर्चाही करै है और हमें सर्वज्ञ नहीं जानै वाकी पूजा विडम्बना मात्र है ॥ २१ ॥ सब प्राणिनमें स्थित सबके आत्मामें ईश्वरको त्यागकै केवल मूढतासों अर्चाही करै हैं वे केवल भस्ममें होम करै है ॥ २२ ॥ जो पराए शरीरमें विराजमान मोसों वैर करै हैं अभिमान तथा भेद-भावसों प्राणिमात्रसों द्रोह करवेवारेनको मन शांत नहीं होयहै ॥२३॥ हे अनघे ! छोटे बडे अनेक पदार्थनकी क्रियासों पूजा करवेपैहू मैं वासों प्रसन्न नहीं होउहो जो सब जीवनको निरादर करै है ॥ २४ ॥ बाह्य पूजासों तबतक पूजन करनो चाहिये जबतक सब प्राणिनमें विराजमान मो ईश्वरको हृदयमें अनुभव न होय॥२५॥आपमें और पर नाम दूसरेमें जो कोउ थोरोहू अंतर करै है, वा भिन्न दृष्टिवारेको सदा मैं भय देउ हौं ॥ २६ ॥ याते मोको सब जीवनमें भूतनमें वसवेवारे ईश्वरको दान मानसों पूजै, मित्रता करै, भेदके नेत्रसों न देखै ॥ २७ ॥ हे शुभे ! अचेतन जीवनमें प्राणधारी जीव श्रेष्ठ हैं, तिनमें प्राणवारे श्रेष्ठ हैं, तिनसों चित्तवारे श्रेष्ठ हैं, तिनमेंहू इंद्रियवृत्तिवारे श्रेष्ठ हैं ॥ २८ ॥ तिनमेंहू स्पर्शज्ञानी श्रेष्ठ हैं, तिनमेंहू रसज्ञानी मत्स्यादि श्रेष्ठ हैं, तिनसों गंधज्ञानी भ्रमरादिक श्रेष्ठ हैं, तिनसो शब्दज्ञानी सर्पादिक श्रेष्ठ हैं ॥ २९ ॥ रूपभेदवेत्ता काक आदि श्रेष्ठ हैं तिनमें दोनों ओर दंतवारे श्रेष्ठ हैं, तिनके मध्यमें बहुपादवारे श्रेष्ठ हैं, तिनसो चोपाये श्रेष्ठ हैं तिनते दोपदवारे श्रेष्ठ हैं ॥ ३० ॥ द्विपदनमें चारों वर्ण श्रेष्ठ हैं, तिनमें ब्राह्मण उत्तम है, ब्राह्मणनमेंहू वेदज्ञानी श्रेष्ठ हैं, वेदज्ञानीनमें अर्थ जानवेवारो श्रेष्ठ है ॥ ३१ ॥ अर्थज्ञानीसो संशयच्छेदी श्रेष्ठ हैं, तिनसों स्वकर्मकृत् श्रेष्ठ हैं, तिनसो मुक्तसंगी श्रेष्ठ हैं, तिनसो ईश्वरके अर्थ फलानुसंधानरहित धर्मकर्ता श्रेष्ठ हैं ॥ ३२ ॥ तिनसों मेरेमें सब क्रिया अर्थ आत्मा निरंतर अर्पण करनेवारे श्रेष्ठ हैं, मेरेमें आत्मा जाने अर्पी, मेरेमें सब कर्मको संन्यास करो ॥ ३३ ॥ ऐसे समदर्शीके समान और कोई नहीं है, समदर्शी मनुष्य वैकुंठको जाय हैं मनसों बहुमान कर इन जीवनको प्रणाम करै, ईश्वर जीवरूप होके एक कलामात्रसो जीवमात्रमें प्रविष्ट है ॥ ३४ ॥ हे मनुकन्ये ! भक्तियोग और योग मैंने तुम्हारे आगे कह्यो इन दोउनमेंसों जो पुरुष एककोहूँ आचरण करे तौ वह पुरुष पुरुषभगवान्‌को प्राप्त होय है ॥ ३५ ॥ वे सबको जो नियंता है सो भगवान्‌को रूप है वो कोन है जाको ब्रह्मपरमात्मा कहै है और प्रधानपुरुषात्मकहू वोही है और फिर जो पर है नाम प्रधानपुरुषसो पृथक् है वाहीको देव कहै है नानासंसृतिरूप कर्म जासों होय है ॥ ३६ ॥ और येही भगवान्‌को रूप कालनाम कहावे है जो रूप भेद करवेको स्थान है अर्थात् जितने पंक्तिवारे हैं विनकी रूपांतरापत्ति वोही काल करै है और वो काल दिव्य है नाम अद्भुत जाको प्रभाव है ॥ ३७ ॥ और जासों महदादिभूतनको और जितने भेद दृष्टिवारे है तिनको जाको कियो भय होय है ॥ ३८ ॥ और जो वो कालरूप भगवान् पंचभूतरूपसो भीतर प्रवेश करके अखिलजगत्‌को आश्रय है और वोही संहार करै है वोही अधियज्ञ विष्णुभगवान् है और काल करनवारे है तिनकोहू काल है याहीसो समर्थ है ॥ ३९ ॥ न कोउ वाको प्यारे है न कोउ द्वेष करवे लायक है और न कोउ वाको बांधव है वो सदा सावधान है सो असावधान मनुष्यको मारै है सब प्राणिमात्रको अंत करनवारो वोही है ॥ ४० ॥ ये सूर्य जाके भयसों जगत्‌के अंधकारको दूर करै है और जाके भयसो ये पवन चले है और देव इंद्र जाके भयसो मेह वर्षावे है और अश्विनी आदि २७ नक्षत्रगण जाके भयसो प्रकाश करै है ॥ ४१ ॥ और जाके डरसों डरपे वृक्ष लता वे ओषधिनसहित अपने अपने समयमें पुष्प और फलनकों ग्रहण करै है ॥ ४२ ॥ और जाके डरसों डरपी नदी वहै हैं जाके डरसों समुद्र अपनी मर्यादाको नहीं छोडे है और जाके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

डरसों अग्नि जरावे है और पर्वतनसहित भूमि जाके डरसो जलमें नहीं डूबे है ॥ ४३ ॥ और जाके डरसों ये आकाश श्वास लेनवारे चेतन मात्रको अवकाश देय है और जाके भयसो ये महत्तत्व लोकरूप अपने देहकों सप्तावरणसहित विस्तार करै है ॥ ४४ ॥ और गुणाभिमानी नाम गुणनियंता ब्रह्मा आदि देवता जाके डरसों सृष्टि स्थिति प्रलयकालमें युगयुगप्रति सृष्टि आदि करवेमें प्रवृत्त होय है और ये चराचर सब जगत् जाके वशमें है ॥ ४५ ॥ वो अनंत है और सबको अंत करनवारो है जो अनादि है और सब जगज्जातको आदि करनवारो है और (अव्यय) सदा एकसो है न कभू बढै है न कभू घटे है वोही पितृरूपसों पुत्रको पैदा करै है और कालरूप हैके मृत्युकरके सबको मारै है ॥ ४६ ॥

सोऽनन्तोऽन्तकरः कालो नादिरादिकृदव्ययः ॥
जनं जनेन जनयन्मारयन्मृत्युनान्तकम् ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे एकोनत्रिंशोध्यायः ॥ २९ ॥

अध्याय ३०.

कपिल उवाच–तस्यै तस्य जनो नूनं नायं वेदोरुविक्रमम् ॥
कालयमानोऽपि बलिनो वायोरिव घनावलिः ॥ १ ॥

कपिल देवजी कहै है कि हे मातः ! वा बली कालके बडे भारी पराक्रमको वाही कालकरके चलायो जो ये मनुष्य है सो नहीं जाने है वायुके वशमें जैसे बादर रहै है ऐसेही कालके वशमें ये मनुष्य हैं ॥ १ ॥ बडे क्लेशसो सुखप्राप्तिके लिये जा जा अर्थको उपादानस्वीकार करै है भगवान् काल याके वाही वाहीको नाश करै है जाके निमित्तसों ये पुरुष शोच करै है ॥ २ ॥ ये दुर्मति मनुष्य मोहके वश हैके सानुबंध नाशमान् देहके जे घर खेत धनको निश्चल माने है ॥ ३ ॥ ये जीव या संसारमें जा जा योनिमें जन्म लेय है वाही वाही योनिमें ये आनंद माने है वैराग्य नहीं होयहै ॥ ४ ॥ नरकमें परो जो मोरी कीरा है वोहू नरकके आनंदमें मग्न भयो देव भगवान्की मायामें मोहित हैके वा देहको नहीं त्यागो चाहै है ॥ ५ ॥ देह स्त्री पुत्र घर पशु गाय भैंस आदि धन भाईबंध इनमें फैलो है मनोरथ जाको ऐसो है हृदय अंतःकरण जाको ऐसो ये मनुष्य अपने आपको बडो करके माने है कि मेरी बराबर कोई नहीं है ॥ ६ ॥ और खोटो अंतःकरण जाको ऐसो जो मूढ मनुष्य है सो इन पुत्रादिकनके पोषण पालनकी मानसी व्यथाके मारे कि हाय मैं इनको कैसे पालन करौंगो निरंतर जरो जाय है सर्वांग जाको निरंतर पापनको करै है ॥ ७ ॥ खोटी जो स्त्री है विनकी माया करके वो माया कैसी है कि एकांतमें रचीहै अर्थात् संभोगादिरूपा है ताकरके और तोतली बोली बोलनवारे बालकनकी रोटीसो तोती औरी पानीसो पापा आदि बोलीनसों आक्षिप्त नाम फँसो है हृदय और इंद्रिय जाकी ॥ ८ ॥ ऐसो जो ये मनुष्य है सो केवल दुःखरूप और वित्तशाठ्यादि बहुत जिनमें ऐसो धर्म जिनमें ऐसे जे घर है तिनमें परो निरंतर अनेक दुःखनकी निवृत्तिके उपायनको करतो करतो ये गृहस्थी सुखकी बराबर वा दुःखकै मानै है ॥ ९ ॥ बडी हिंसा करके संपादन किये धननसों इतवितमेंसो विनकोही पालन करै है जिनके पालन करवेसों विन पापनके शेषको भोगनवारो ये मनुष्य अधोगतिको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाय है ॥ १० ॥ फिर याकी जब वारंवार आरंभ करी जीविका लुप्त प्राय होय है अर्थात् अनेक रुजगार करै है तोहू जब नफा नहिं होय है, लोभसो प्राप्त भयो सामर्थ्य जाकी नष्ट भई ऐसो ये जीव पराये धननमें वांछा करै है कि सब जगत्की दोलत मोकू मिल जाय तो अच्छी है ॥ ११ ॥ कुटुंबके पालन करवेमें जब ये असमर्थ होय है और मंदभागीके याके जब उद्यम खाली जाय है संपूर्ण श्री जाकी नष्ट भई बडो कृपण भयो मूढ बुद्धि मनुष्य विनके पालन पोषणको ध्यान करतो कि हाय अब इनको पालन कैसे होयगो कोन करैगो वारंवार लंबी श्वास लेय है ॥१२॥ जब ऐसें अपने आपकेहू भरण करवेको असमर्थ है जाय तब वा मनुष्य कलत्र नाम स्त्री पुत्रक जे है वे पहिले जैसे वाको आदर करते है वैसें वाको आदर नहिं करै है जैसे जिमीदार लोग बूढे भये बैलको आदर नहिं करै है[3] ॥१३॥ तोहू अर्थात् पुत्र पुत्रवधू आदिके कीने तिरस्कारको प्राप्त हैकेहू जिनको पहले आपने पालन कियो है विनको किये अपने भरणको चाह तौ बुढापेंसो अंगनकी कुरूपताको प्राप्त भयो और मरवेके लिये घरमें परो ये मनुष्य ताको कपिलदेवजी कहै है कि मैय्या! निर्वेदनही होय है ॥१४॥ अवज्ञासो जो कछु पुत्रादिकनने दियो है वाकों कुत्ताकीसी नाईं ग्रहण करतो अनेक रोगग्रस्त मंद अग्नि जाकी है गई थोरो जाको आहार चेष्टा डोलनो फिरनो जाको बंद है गयो ऐसो ये मनुष्य है सो वाही अवज्ञात अन्नको खातो घरमें रहै है ॥ १५ ॥ वायुसो तारे जाके बढन लगे कफसो जाकी नाडी रुक गई खाँसी खासके मारे भयो है परिश्रम जाको ऐसो ये जीवके कंठमें घुरघुर होय है ॥ १६ ॥ शोच करते अपने भाईबंदन करके घिरे कालकी फांसीसो बंधो जो ये प्राणी है सो बुलायेसोहू नहिं बोलै है ॥ १७ ॥ ऐसो अपने कुटुंबके पालनमें जाको मन फँस रह्यो है नहिं जीतीही इंद्री जानें ऐसो ये प्राणी मरवेको समयकी वेदनाके मारे बुद्धि जाकी नाश भई सो मर जाय है ॥ १८ ॥ मरते खेम भयंकर नेत्रवारे क्रोधभरे यमराजके दूत आमें हैं तब वह प्राणी विनके देखते हमारे डरके विष्ठा मूत्रको छाडे है अर्थात् विनके डरके मारे हृदय कापने लगे हैं और मलमूत्र निकस जाय है वाहीको कहै कि मल टूट गयोहै ॥ १९ ॥ सब वे यमदूत याके यातनादेहको गलेमें फासी बांध अपने काबूमें करके जबरदस्तीसों दूर जो यममार्ग है तामें ले जाय है जैसे कसूरवारकों यहा सिर्कारके सिपाई लै जाय है ॥ २० ॥ विनके धमकायवेसों थर २ काँपन लगे है हृदय विदीर्ण होय है रस्तेमें कुत्तान करके खायोगयो अपने कीने पापनको याद करतो ॥ २१ ॥ भूखो प्यासो सूर्यकी घाम दावानल और आंधीके मार्गमें हैके और भारकीसी गरम वालूमें चलतो पीठके ऊपर कोरडनसो पिटतो न जहां पानी न जहां पेड और न जहां कछु खायवेकों ऐसे घोर यममार्गमें नहिं चलवेकी सामर्थ्य है तोहू चलै है ॥ २२ ॥ रस्तामें वेर वेर गिरतो थक गयो कभू मूर्छित भयो कभू फिर उठ बैठे है ऐसो घोर अंधकार मार्गमें हैके यमस्थानको प्राप्त कियो होयहै ॥ २३ ॥

---

१ जैसा नारीके संगसे मनुष्य भ्रष्ट होय है ऐसा और संगतिसे नहीं ॥ दोहा—अहिविष तौ काटै चढै, यह चितवत चढजाय । ज्ञान ध्यान और धर्मको, जरा मूलसे खाय ॥ २ धनहीन मूढ बुद्धि ध्यान करत कृपण श्वास लेतो भयो, ऐसे कृपणसे लक्ष्मी बोली खा खर्च तब कृपण बोलो "दाता घर जाती तो कदर नाहिं पाती और मेरे घर आई तो बंधाई बांट बावरी । एक खाने दस खाने तेहखाने छिपाय राखूं होय ना उदास मेरो येही चित्त चाव री ॥ खाऊं न खवाऊं मरजाऊं तो सिखाय जाऊं नाती और पोतानको अपनो सुभाव री । सज्जन संबंधी बहिनि भाईको न देऊं दामके कृपण हेत लक्ष्मी बैठी गीत गाव री ॥१॥" ३ दोहा-सिंग झडे और खुर घिसे, पीठ बोझ नहिं लेय । ऐसे बूढे बैलकों, कान बांध भुस देय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निह्यानमें हजार योजन यमलोकको मार्ग है तामें पापीनको पापनके अनुसार तीन मुहूर्तमें अथवा दो मुहूर्तमें यमलोकको वे दूत या प्राणीको प्राप्तकरै है ॥२४॥ और कपरा लिपेट तेलमें बोरके याके अंगनको जरामें हैं और कभू अपने हाथसो या दूसरेके हाथसौ कटे भये याके मांसको याकोही खवावे है ॥ २५ ॥ जीवतेकी आतें निकासै है और कुत्ता गीध याको चौथे है और सांप बीछू डांसा याको डसे हैं वे जो याने पहले विनको मारो है वाको में याद करे है ॥ २६ ॥ और यमदूत विनके अंग अंगनको काटै है हाथीनसों खुदवामें है पर्वतनपेंसो पटकै है जलमें डुबावे है धरती खोदके गढेलामें गाढे है ॥ २७ ॥ तामिश्र और अंधतामिश्र रौरवसो आदि लेके जे यातना है विने स्त्री अथवा पुरुष चाहे कोउ होउ परस्पर संग करवेसौ निर्मित भईनको भोगे है ॥ २८ ॥ हे मातः! यहांही नरक है और यहांही स्वर्ग है जे नरककी यातना है वे यहांहू उपलक्षित है ॥२९॥ ऐसे अपने पेटको भरनवारो मनुष्य अपने कुटुंबको भरण करतो यहांको यहां दोनोंनको छोडके ऐसे किये भये कर्मके फलको भोगे है ॥ ३० ॥ या शरीरको परित्याग करके पुण्य पापको रस्ताको तासो संग लेके इकेलोही नरकको जाय है प्राणीनके द्रोहसो जो पाप कमायो है वोही याके संग जाय है ॥ ३१ ॥ दैवने फलोन्मुख किये पापके फलको जो कि याने कुटुंबके पोषण करके संपादन कियो है वाकूही भोगे है खोय गयो या लुटगये धनवारो मनुष्य जैसे आतुर होय है ऐसे आतुर होयहै ॥३२॥ केवल अधर्म करवे करके कुटुंबके भरण करवेमें उत्कंठित भयो नरकके पल्लेसिरेके अंधतामिस्रनरकको पावै है ॥ ३३ ॥ मनुष्य लोकमें जबताई नहीं आवे ताके पहिले जितनी यातना है तिने क्रमसो भोगके फिर पवित्र भयो यहांको यहांही आय जाय है ॥ ३४ ॥

अधस्तान्नरलोकस्य यावतीर्यातनादयः ॥
क्रमशः समनुक्रम्य पुनरत्राव्रजेच्छुचिः ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कंधे कपिलावतारवर्णनं नाम त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३० ॥

अध्याय ३१.

कपिल उवाच—कर्मणा दैवनेत्रेण जंतुर्देहोपपत्तये ॥
स्त्रियाः प्रविष्ट उदरे पुंसो रेतःकणाश्रयः ॥ १॥

कपिलदेवजी कहे है कि रे मैया ! दैवके प्रेरे करमन करके देहकी प्राप्तिके लिये पुरुषके वीर्य कणके आश्रयसों स्त्रीके गर्भमें ये जीव प्रवेश करे है ॥ १ ॥ पहले एकरातमें गर्भमैं गदलोसो पानी होय है फिर पंचरातमें बबुलासो है जाय है दशदिनमें बेरकोसो फल है जाय है वाके पीछे मांसपिंड या अंडा होयहै ॥ २ ॥ महीना भरमें शिर दो महीनामें भुज आदि अंग और तीन महीनामें नख रोम हाड मर्म और स्त्री पुरुषकी आकार बने है ॥ ३ ॥ चौथे महीनामें सो तो धातु और पांचे महीनामें भूख प्यास लगे है और छठे महीनामें जारेमें लिपटो ये जीव अपनी मैयाकी दहिनी कोखमें घूमे है ॥ ४ ॥ माके खाएभए अन्न पानसों गर्भकी नाडीमें अन्न जायवेसो याकी धातु बढेहै और वह प्राणी जीवनकी खान विष्टा मूत्रके गर्तमें परो रहै है ॥ मार्कंडेय पुराण " नाडी चाप्यायनी नाम नाभ्यां तस्य निबध्यते ॥ स्त्रीणां तथांत्रसुषिरे सा निबद्धोपजायते ॥१॥ क्रमते भुक्तपीतानि स्त्रीणां गर्भोदरेस्तथा ॥ तैराप्यायितदेहोऽसौ जंतुर्वृद्धिमुपैति वै ॥२॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मार्कंडेयपुराणमें है कि स्त्रीकी नाभिमें एक बालककी वृद्धि करवेवारी आप्यायनी नाडी बंधीहै, स्त्रीनके खाए पीयेसो गर्भ उदरमें विनको पीकै वो जीव बढै है इति " ॥ ५ ॥ सुकुमारतासें सब अंगमें क्षण क्षणमें कृमि काटै है, बहुत क्लेशसों मूर्छा आय जाय है, तहांके वासी क्षुधित हैकै याय सतावै है ॥ ६ ॥ कटु तीक्ष्ण उष्ण लवण रूखो अम्ल आदि उल्वण माताके खायेभएसे सब अंगमें याके वेदना उठे है ॥ ७ ॥ गर्भाशयके भीतर जेरसो वेष्टित बाहर माताकी आंतनमें लिपटो भयो वह प्राणी पीठके वांसे और गर्दनको टेढो करकै कोखके अंदर शिर लगावे पडो रहैहै ॥ ८ ॥ अपनी अंगकी चेष्टा करवेमें असमर्थ जैसे पींजरेमें पक्षी रहै तैसे रहैहै तहां भाग्यसो सौ जन्मके करे कर्मनकी याको स्मृति होय है ॥ ९॥ तब याद करै है, दीर्घ श्वास लेहै, सुख तो नामकोंहू वहां नहीं मिलै है, गर्भवासकी समान दुःख न भयो है न होयगो ॥ १० ॥ सातवें महीनेमें याकों बाधा होय है, कांपेहै एक जगे न रहे है, सूतिकी वातसो विष्ठाके कीडानके भाई बंधुके संग रहैहै ॥ ११ ॥ भगवत्कृपा मोपर होय, ये चाहनवारो जीव सात धातुनसो बंधो हाथ जोडे व्याकुल वाणीसें उदरमें धरवेवारेकी स्तुति करै है ॥ १२ ॥ जीव बोलो कि जगत्की रक्षा करवेको अपनी इच्छासो नानामूर्तिधारी भगवान्के भृमिके चलायमान सब ओरसों भयरहित चरणारविंदकी मैं शरण हूं जिनने मोको पापीनके भोगवेके लायक यह ऐसी महागईबीती गति दिखांई है ॥ १३ ॥ जो या संसारमें कर्ममें बंधे भए भूत इंद्रिय अंतःकरणरूप मायाको पायके एसो है रह्योहूं वाहीमैं अब तपायमान हृदयसो विशुद्ध अविकारी अखंडज्ञानी ईश्वरको नमस्कार करूंहूं ॥ १४ ॥ वास्तवमें शरीरहीन हैवेपैहू असत्यही इंद्रियगुण पंचमहाभूत और चिदाभासरूपमें जो पांचभूतनसो उत्पन्न भए शरीरसों वेष्टित भयो दीखोहूं वह शरीरसों महामहिमायुक्त प्रकृति पुरुषके नियामक सर्वज्ञ परमात्माको मैं प्रणाम करौं हूं ॥ १५ ॥ जिनकी मायासो नष्टस्मृति जीव बहुत गुण कर्म निबंधनवारे संसार मार्गमें दुःखसो विचरतो २ वाके अनुग्रह विना कहा अपने स्वरूपको प्राप्त है सकै है अर्थात् नहीं है सकै यासों हरिको भजन सेवन मुख्य है ॥ १६ ॥ स्थावर जंगममें अंतर्यामिरूपसो रहवेवारे देव ईश्वरके विना ये त्रिकालको ज्ञान मोमें कौन धारतो भयो, जीव कर्म पदवीमें वर्तमान हम तापत्रय नाशके अर्थ विन ईश्वरको भजै है ॥ १७ ॥ ये देही माताके गर्भ छिद्रमें रहतो मैं रुधिर विष्ठामूत्रके गढेलामें परौ जठरानलमें जरौ जाउ अत्यंत तपायमान जाके देह अपने गर्भवासके महीनानको रात दिन गिनतो या गर्भफंदसों निकसवेकी इच्छा करा हौ अत्यंत कृपणपनकी दशाको प्राप्त हो सो न जानें भगवान् मोको या गर्भफंदसो कब निकासैगो ॥ १८ ॥ जा अति दयालु भवत् सदृशनें ये दशमास पर्यंत खोटी गति प्रतिग्रहण करायो हूं अर्थात् या गर्भफंदमें पटकोहूं वह दीनानाथ अपने कीनेतेही आप राजी होउ फकत एक हाथ जोरवो और एक अंजलि भर जल निवेदन करवे सिवाय वा प्रभुको और कोउ कहा सेवा कर सके है ॥ १९ ॥ यह अपर नाम जो पश्वादि सप्त वाध्रि जीव है सो अपने देहमें शरीरके

---

१ या बातपर महात्माननें पद रचो है ॥ गजल ताल तिताला ॥ करुणाकर प्रभुको नहीं गावे क्यों भूला भाई हरीको ॥ अस्ताई ॥ गर्भवासमें रक्षा की वहां कौन रही दाई पेट बीच ॥ १ ॥ पहिलो थनमें दूध कियो फिर जम्मो तू आई, सजन ॥ २ ॥ बडो कियो है सुकृत करनको करत घात घाई; सबनसे ॥ ३ ॥ भीतरको तैं कौल विसारो करता इटलाई, धर्मसें ॥ ४ ॥ हारीहित टूक चने नहीं दे तू मच्यो माल खाई, मूर्ख तू ॥ ५ ॥ करत हरामी कामी बनकर पकरो तू जाई, उसी दिन ॥ ६ ॥ झूट कपट छलसे धन जोरो रिरत देखे खाई मूढ तू ॥ ७ ॥ पुरुषोत्तम कहैं सर्वेश्वर भज अबहू बस जाई, तेरी ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये जे सुखदुःख है केवल विनकोहू देखे है और मैं तौ जाकी रची बुद्धि करके नाम जाके दिये ज्ञान करके शमदम आदियुक्त शरीरवारौ में होतौ भयो वा पुराणपुरुष अनादि पूर्णको में बाहिर और हृदयमें प्रतीत वा चित्ताधिष्ठाताकौ देखो हौ ॥ २० ॥ हे विभो ! अनेक दुःखनको निवास गर्भमें निवास करतो में बाहिर निकसवेकी इच्छा नहीं करौ हौ कारण यामें यह है कि या अंध-कूपके तुल्य संसारमें जन्म लेतेही जीवको यह माया लिपट जाय है जा मायाके लिपटतेही देहमें अहंबुद्धि और जा अहंबुद्धिके निमित्तसो ये संसृति चक्र प्राप्त होय है ॥ २१ ॥ यासौ यहांही या गर्भवासमें निवास करतो में घबराहटको परित्याग करके अपनी सुहृदरूपसों अपने आयेकों या संसृति चक्रसो उद्धार करौंगो जैसे भगवच्चरणके शरण आयवे करके बहुमुख ये संसृतिको जन्म मरणरूप दुःख फिर कभू मोको नहीं होयगो ॥ २२ ॥ ऐसे त्रिकालदर्शी यह ऋषि जीव गर्भमें बढौ दश महीना ताई स्तुति करतौ ऐसे कीनी है बुद्धि जाने ऐसो यह जीव जब वह प्रसूतिको पवन चले है तब जन्म लेवेके लिये झटही उलटो हैकै नीचेको मूड और ऊपरको पाय ऐसें योनिद्वारके स्थानमें आय जाय है ॥ २३ ॥ वो पवन जब याको नीचेको पटक देय है तब यह मूड करके बडो आतुर हैकै बडे कष्टसो बाहर निकसे है तब याकी श्वास बंद है जाय है और सब स्मृति नष्ट है जाय है ॥ २४ ॥ तब यह विष्ठा मूत्रके कीराकी तरह धरतीमें परौ चेष्टा करै है जब याको ज्ञान नष्ट है जाय है तब विपरीत गतिको प्राप्त हैकै नष्ट ज्ञान हैवैसौ अत्यंत रोवे है ॥ २५ ॥ याके मनकी इच्छाको न जानै ऐसें ऊपरके आदमीन करके पोषण कियो गयो जाय यह नहीं चाहै वाय प्राप्त होय है निषेध करवेको समर्थ नहीं होय है ॥ २६ ॥ महा अपवित्र खटमलन करकै दूषित कोई खाट खटोला तापें सुवायो अपने अंगनके खुजायवेको और बैठवे उठवेको कछु चेष्टा करवेको समर्थ नहीं होय है ॥२७॥ और रोवतेको याकौ जैसे कीराको कीरा काटै है ऐसेही मच्छर डास और खटमल याके नरम अंगनको काटे है ॥ २८ ॥ या प्रकार बालकपनके दुःखनको भोगके फिर पौगंड ऊमरके दुःखनको भोगे है वांछित चीजके नहीं मिलवेपें अज्ञानके हेतुसो गुस्सामें मग्न होय है और शोच करै है ॥ २९ ॥ फिर जैसें २ शरीर ठैहै ऐसे २ बढे भये मान और क्रोधके वशमें हैकै अपने मरवेके लिये आप कामी हैकै कामी पुरुषनके संग विग्रह करै है ॥ ३० ॥ पंच भूतके बने देहमें ये अज्ञ देही निरंतर में मेरो ऐसी बुद्धि करै है ॥ ३१ ॥ और जिनसो बंधन हैकै संसृतिमें जाय विनी कर्मनको करै हैं और जो देह जन्मे मरे है वो देह अविद्या कर्मनसो बंधौ भयो याको अनेक दुःख देय है ॥ ३२ ॥ और जो कहू यह विषय और पेटके लिये उद्यम करनवारे खोटेनको संगमें यह जीव रमण करन लगो तो पूर्वकी नाईं फेर नरकमें जाय है ॥ ३३ ॥ सत्य, शौच, दया, मौन, बुद्धि, श्री, लज्जा, यश, क्षमा, शम, दम, ऐश्वर्य, खोटेनके संगसो सब नाश होयहौ ॥ ३४ ॥ अशांत मूढ खंडित आत्मा स्त्रीनके क्रीडामृग (खिलौना) और शोचनीय हीन पुरुषनकी संगति कदापि नहीं करनी ॥ ३५ ॥ और प्रसंगतौं जैसो याकौ बंधन और मोह नहीं होयहै जैसो स्त्रीके संगसों बंधन न होयहै स्त्रीके संग करवेवारे भडुआनके संगसो याको महादुःख होय है ॥ ३६ ॥ प्रजापति अपनी बेटीकों देख वाके रूपके वश होगये तब वह मृगी होय दौडी, सो आपहू लाज छोड मृग बनके वाके पीछे दौरे ॥ ३७ ॥ जब उनकी यह दशा है तौ उन्ही ब्रह्माके रचे मरीच्यादिक तिनके

१ अहिविष तौ काटे चढे, यह चितवत चढजाय । ज्ञान ध्यान और धर्मको, जरा मूलसै खाय ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रचे कश्यपादिक, तिनके रचे देव मनुष्यादिक स्त्रीरूप माया करकै अखंडित बुद्धिवारे नरनारायण ऋषिके विना कोई नहीं है ॥ ३८ ॥ मेरी स्त्रीमयी मायाको बल तो देखो कि दिशानके जीतवेवारे शूरनको भ्रू चलायकर केवल पांवमें लुटाय लेहै ॥ ३९ ॥ योगके पार जायवेवारो जीव कभूहू स्त्रीको संग न करै, मेरी सेवा करकै ईश्वरको लाभ होय है योगिराज स्त्रीको नरकको द्वार कहैं हैं या बातपै एक श्लोक है कि ॥ " आवर्तः संशयानामविनयभवनं पत्तनं साहसानां, दोषाणां सन्निधानं कपटशत-मयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम् ॥ स्वर्गद्वारस्य विघ्नं नरकपुरमुखं सर्वमायाकरण्डं, स्त्रीरत्नं केन सृष्टं विषममृ-तमयं प्राणिनां मोहपाशः ॥ १ ॥ भाषार्थ-सब संदेहनको भँवर, अविनयको घर, साहसनको शहर, दोष भरी, सैकडों कपट युक्त, अविश्वासको खेत, स्वर्गद्वारको विघ्न, नरकपुरको मुख, सब मायाको डब्बा ये स्त्रीरत्न अमृतमय विष है, प्राणिनकी मोहकी फांस है ॥ १ ॥ " ॥ ४० ॥ ईश्वरकी रची यह स्त्रीरूप माया जो धीरे २ निकट आवै तौ घासके ढके कूपकी समान वाको अपनी मृत्यु जानै ॥४१॥ मुमुक्षु स्त्रीकोहू पुरुषरूप मेरी माया जाने जाको मोहसों यह धन संतान और घर देवेवारो जाने है वाकोहू मृत्युरूप समझे जाको कि पूर्वजन्ममें आप पुरुष हो फिर मरणसमयमें स्त्रीके ध्यानसो स्त्रीधर्मको प्राप्त भयो याही तरह फिर जो पुरुषधर्मको प्राप्त होयगो फिर स्त्रीकी इच्छासो स्त्रीही होयगो यह भाव है ॥ ४२ ॥ जैसे व्याधको गानश्रवण कर हरिणको मृत्युही है ऐसेही पतिपुत्ररूप गृहको नारी अपनी मृत्यु जानै ॥ ४३ ॥ जीवरूप करके या देहसों लोकसों और लोकको जातो भयो निरंतर पुरुष कर्मनको भोगतो भयो कर्म करै है ॥ ४४ ॥ जीव जो जीवकी उपाधि लिंगदेह है सो या आत्माके अनुगत है नाम अनुवर्ती है और दूसरो देह भूत इंद्रिय मनोमय है सो यह भोग भोग-वेको स्थान है विन दोउ देहनकी जो अपने अपने कार्य करवेकी अयोग्यता होनी है वाको या जीवको मरण कहैहै और विन दोउ शरीरनको जो संभव है नाम कार्य करवेको योग्य होनो है वाको मृत्यु कहैं हैं ॥ ४५ ॥ अथवा द्रव्यकी प्राप्तिका स्थान जो यह स्थूल शरीर है जब यह द्रव्यके दर्शन करनेमें अयोग्य है जाय है तब कहा जाता है कि जीवका मरण हुआ, औरमें ऐसे अभिमानसो जबसो या स्थूल शरीरको दर्शन होयहै तब जीवकी उत्पत्ति कही जाय है ॥ ४६ ॥ फलित जैसे द्रव्यकी प्राप्तिके स्थान जो नेत्रगोलकादि है वह जब मलादि दोषके कारण रूपादि देखवेमें असमर्थ होयहैं तबही नेत्र इंद्रियनकी अयोग्यता और जीवके द्रष्टत्व विषयमें असमर्थता होती है ऐसेही स्थूल शरीरमें विकलताका होनोही जीवको मरण जाननौ ॥ ४७ ॥ या कारण यदि वास्तवमें जीवको जन्म नहीं है, तब मरण न हैवेसौ मरणको त्रास जीवनकी दीनता तथा जीवनके निमित्त यत्न करनो अनुचित है हे मातः ! बुद्धिमान् पुरुषको त्रास और कृपणता और संभ्रम नहीं करनौ चाहिये किंतु जीवकी गतिको जान संग छोड विचरै ॥ ४८ ॥ सुन्दर देखवेवारी बुद्धि योग वैराग्ययुक्त करकै माया विरचित लोकमैं शरीरकों रखके नाम देहमें अशक्ति छोडके विचरै ॥ ४९ ॥

सम्यग्दर्शनया बुद्ध्या योगवैराग्ययुक्तया ॥
मायाविरचिते लोके चरेन्न्यस्य कलेवरम् ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपा० नाम एकत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ३२.

कपिल उवाच-अथ यो गृहमेधीयान् धर्मानेवावसन् गृहे ॥
काममर्थं च धर्मान् स्वान् दोग्धि भूयः पिपर्ति तान् ॥ १ ॥

कपिलदेवजी बोले कि जो कोई गृहस्थी घरमें रहकै धर्मनको करै है, गृहमें काम और अर्थके लिये अपने धर्मनकों अनुष्ठान करै है; फिरहू विन्ही धर्मनको अनुसार करते रहैहै ॥ १ ॥ सोउ जीव कामनानमें मूढ होयके भगवद्धर्मसो पराङ्मुख हैकै यज्ञनसो देवता पितरनको श्रद्धासौ यजन करै हैं ॥ २ ॥ तिनकी श्रद्धासौ व्याप्त जिनकी बुद्धि पितृ देवतानमें श्रद्धा मतिवारे पितृदेवतानके व्रत कर चन्द्रमाके लोकमें जायके अमृतपान करकै पुनर्जन्मकों प्राप्त होय हैं ॥ ३ ॥ जब शेषशय्यापै अनंतासन हरि शयन करैं हैं, तब गृहस्थी सब लोग लयको प्राप्त हैजाय हैं ॥ ४ ॥ जो धीरलोग काम अर्थके लिये स्वधर्मकों आचरण करैहैं और विन धर्मनके फलकी इच्छा नहीं करैहै वे सब संग, सब कर्म त्याग, अत्यंत शांत शुद्ध चित्तसो भगवल्लोककों जाय है ॥ ५ ॥ जो लोग निवृत्ति धर्ममें लगे हैं, जिनने ममता अहंकार त्यागोहै, वे अपने स्वधर्मको सात्विक भावसों आचरण करकै अत्यंत शुद्ध चित्तसो ईश्वरके लोककों जाय हैं ॥ ६ ॥ सूर्य द्वारकरकै विश्वमुख पुरुषकों प्राप्त होयहैं, जो पुरुष परअवरको स्वामी प्रकृतिको पति या विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश करैं हैं ॥ ७ ॥ द्विपरार्द्धके अंतमें ब्रह्माकी प्रलय होय है परमेश्वर दृष्टि करकै जो ब्रह्माको चिंतवन करै है, वे प्रलयतक ब्रह्मलोकमें निवास करै हैं ॥ ८ ॥ जब द्विपरार्द्ध लक्षण कालको अनुभव कर पृथिवी जल अग्नि पवन आकाश मन इंद्रियनके अर्थ, पंच भूत अहंकार युक्त विश्वके संहारकी इच्छासौ तीन गुणमय शरीरवारे ब्रह्माजी परमेश्वरमें लीन हैजायहै ॥ ९ ॥ तब ऐसे यहांसौ ऊपर ऊपर दूर जायकै ब्रह्मामें प्रवेश किये योगीलोग पवन मन जीत वैराग्य लिये ब्रह्माकेही साथ अमृतस्वरूप पुरुष पुराण प्रधान ब्रह्मको प्राप्त होयहैं तहांतक उनको देहाभिमान निवृत्त नहीं होयहै याहीसो वे ब्रह्मासौ पहले ब्रह्ममें प्रवेश नहीं कर सकेहै ॥ १० ॥ और भगवत्की उपासनावारे तत्काल वाय प्राप्त होयहैं सो हे प्रकाशरूपिणि ! अब सब जीवनके हृदयकमलमें वास करवेवारे सुनोहै प्रभाव जिनको भावकरकै उन्हीकी शरण जा ॥ ११ ॥ स्थावर जंगमनको आद्य जो वेदगर्भ ब्रह्मा है सोहू मरीचि आदि और योगीश्वर सनकादिक सिद्ध योगप्रवर्तकनके संगकै ॥ १२ ॥ भेददृष्टि करके और अभिमानसो और निष्काम कर्म करकै और कर्ताभावके होयवेसों वोहू गुणव्यतिकरके भयेपे पुरुषमें श्रेष्ठ सगुण ब्रह्मको ॥ १३ ॥ प्राप्त होय ईश्वररूप कालकरकै संसारमें फिर पूर्वकालकी समान जन्म लेके निष्काम कर्म करवैसौ जैसे पहले हे वैसेही होतेहैं ॥ १४ ॥ हे सति ! भेदभावसौ उपासना करवेवाले ब्रह्माजीके ऐश्वर्यको सेवन कर प्रलयमें ईश्वरमें लीन हैजायवेपैहू देहाभिमान रहजायवेके कारण गुणनको संक्लेश हैवेसौ फिर जन्मलेते हैं ॥ १५ ॥ और जो लोग या संसारमें आसक्तमन हैं, श्रद्धाकर कर्ममें लगे रहै हैं, सब प्रकार स्वच्छन्दकर्म करैहै ॥ १६ ॥ रजोगुणसों विनके मन हरे भएहै कामनमें आत्मा विनकी लगी है, अजित ऐसे अजितेन्द्रिय कामी पुरुष गृहनकी वासनाके बंधनमें पड सदा पितरोंकाही यजन करते रहैहैं ॥ १७ ॥ अर्थ धर्म कामकी इच्छा करवेवारे मनुष्य कथन योग्य पराक्रमवारे मधुदैत्यके वैरी जन्म मरण हरण करवेवारी बुद्धिवारे नारायणकी कथासों विमुख ॥ १८ ॥ वे निश्चय भाग्यकरकै मारेभए हैं, जो अच्युतकी कथामृतकों त्यागके खोटी कथा सुनैं हैं, जैसे विष्टाभोजी विष्टाखायही सुखी होयहै ॥ १९ ॥ जिनकी गर्भसो लेके श्मशानपर्यंत क्रिया कीनी हैं, वे दक्षिणमार्ग हैकै

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पितृलोकको जायहैं, फेर अपने पुत्रादिकोंमें आयके जन्म लैं हैं ॥ २० ॥ हे सति ! पीछे सुकृतसों क्षीण हैकै फेर या लोकमेंही विवश हो सब भोगके साधन नष्ट हैजायवेके कारण देवतानकरकै गिराये जायहैं ॥ २१ ॥ यासो परमेश्वरके भजनीय चरणारविंदनको सर्वभाव और विनके गुणनको आश्रय करवेवारी भक्तिके द्वारा भजन करो ॥ २२ ॥ भगवान् वासुदेवमें जो भक्तियोग करै तो शीघ्र वैराग्य ज्ञानसों ब्रह्मदर्शन हैजायहै ॥ २३ ॥ जब या भक्तको चित्त इंद्रियनकी वृत्तिकरके समान अर्थनमें प्रिय अप्रियमें विषमभावकों नहीं ग्रहण करै हैं ॥ २४ ॥ तब निःसंग, समदर्शी हो त्याग ग्रहणसों रहित हो यह जीव परमानंद पदको देखै है अर्थात् अपने परमानन्द स्वरूपको प्राप्त हैजाय है ॥ २५ ॥ ज्ञानमात्र परब्रह्म परमात्मा ईश्वर पुरुष मैंही हूं जीव शरीर विषय और इन्द्रिय-रूपसों अनेक प्रकारके प्रतीत होतेहैं ॥ २६ ॥ या विश्वमें समग्र योग करकै योगीजन अपनेको अभिमत अर्थ इतनोंही माने हैं कि सब प्रकारसों सब संगकी निवृत्ति है जाय है ॥ २७ ॥ बहिर्मुख इंद्रियनकरकै अर्थरूपसों भ्रांतिके कारण भिन्न २ शब्दादि धर्मवारे पदार्थसो एक ज्ञानरूप निर्गुण बृहत्त्वादि गुणविशिष्ट चैतन्य ब्रह्मही अनेक प्रकारको प्रतीत होय है ॥ २८ ॥ जिन महत्तत्त्वादि-कनसों जीवको शरीररूप यह संसार उत्पन्न भयोहै वो महत्तत्व और त्रिविध अहंकार पंचमहाभूत ग्यारह इंद्रिय और जीव यह सब परमात्माहीको रूप है जे प्रथम एक रूप हे ॥ २९ ॥ जाको मन श्रद्धा भक्ति विराग और योगाभ्याससो एकाग्र है गयोहै वह सर्वसंगरहित पुरुष या वार्ताको निश्चय जानै है ॥ ३० ॥ हे मातः ! ये ब्रह्मको दर्शन करायवेवारो ज्ञान तुमसें कह्यो, या करके प्रकृतिपुरु-षको तत्त्व जानो जाय है ॥ ३१ ॥ मेरेमें निष्ठा कर निर्गुण ज्ञान योग और भक्ति करनी इन दोनोंको एकही अर्थ है, वो अर्थको न सोहै कि भगवत्शब्द जाको लक्षण नाम रूप है ॥ ३२ ॥ जैसे अलग २ द्वारवारी इंद्रियन करकै रूपरसादि अनेक गुणनवारो एकही पदार्थ अनेक प्रकारको प्रतीत होय है जैसे आम नेत्रद्वारा हरा जिह्वाद्वारा मीठा इत्यादि ॥ ३३ ॥ अनेक शुभ क्रिया यज्ञनके करवेसों तथा दान, तप, वेदपाठ, विचारसो आत्मा इंद्रियनके जीतवेसो और कर्मनके त्याग करवेसों ॥ ३४ ॥ तथा अनेक अंगके योगाभ्यास और भक्तियोगद्वारा सकाम निष्काम धर्मसो प्रवृत्तिनिवृत्ति मार्गमें निष्ठा करकै ॥ ३५ ॥ आत्मज्ञानकी निष्ठाद्वारा दृढ वैराग्य करकै सगुण निर्गुण स्वदृक एक भगवान्ही ज्ञात होयहै ॥ ३६ ॥ भक्तियोगको स्वरूप चार विधको तुमसे कह्यो, अप्रगटगतिवारे कालको वर्णन कियो जो सब जीवनपै दौरै है ॥ ३७ ॥ हे मातः ! जीवकी अविद्याकर्मसो निर्मित बहुत गति है जिन गतियनमें प्रविष्ट हैकै जीव अपने स्वरूपकों यथार्थ नहीं जानै है और ईश्वरकी गतिकोहू नहीं जानै है ॥ ३८ ॥ यह ज्ञान खलको कभी न सुनानो, जो नम्र न होय तथा अहंकारीको न उपदेश करै, दुराचारीको ये ज्ञान न सिखावै, दंभीकों न सुनावै ॥ ३९ ॥ लोभी तथा गृहमें अत्यन्त आरूढ चित्तवारेनकों तथा अभक्त और मेरे भक्तनसो द्रोह करवेवारेनको न सुनावै ॥ ४० ॥ श्रद्धालु भक्त, नम्र, काहूकी निन्दा न करवेवारे सब जीवमात्रसों मैत्री और सबकी शुश्रूषा करवेवारे ॥ ४१ ॥ बाह्य प्रपंचसो सर्वथा वैराग्य युक्त शांताचित्तवारेको ये ज्ञान देय जो पराएके सुखसो प्रसन्न होय, सदा पवित्र रहैं, जिनको प्यारेनसोहू मैं प्रिय विन्हैं यह ज्ञान देय ॥ ४२ ॥ हे अंब ! पुरुष श्रद्धाकरकै वारंवार याकों श्रवण करैं, जो कहैं तथा मोमें चित्त लगावै सो मेरी पदवीको प्राप्त होयहै ॥ ४३ ॥

१ सो लिखा है कि ॥ वेसवाड तिताल " उस ब्रह्मके विन जानेतेही बहुतसी फजीति है ॥ टेर ॥ वर्णाश्रमकी चाल चलनेसे सबसें मेरी प्रीति है ॥ विन पढै पंडित हो बैठे ये मायाकी गति है ॥ १ ॥ नारायणकी भक्ति किये बिन बालूकीसी भीति है ॥ पुरुषोत्तम कहैं हरिकी शरण बिना काहूकी नाहिं जीति है ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

य इदं शृणुयादम्ब श्रद्धया पुरुषः सकृत् ॥
यो वाऽभिदत्ते मच्चितः स ह्येति पदवीं च मे ॥ ४३ ॥
इति श्रीमद्भा० भाषाटी० तृतीयस्कंधे कापिलेयोपाख्याने संपूर्णवर्णनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

अध्याय ३३.

मैत्रेय उवाच–एवं निशम्य कपिलस्य वचो जनित्री सा कर्दमस्य
दयिता किल देवहूतिः ॥ विस्रस्तमोहपटला तमभि-
प्रणम्य तुष्टाव तत्त्वविषयाङ्कितसिद्धिभूमिम् ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि ऐसे कपिलदेवजीके वचनको सुनकै मोहपटल दूर हैवेके कारण कर्दमजीकी स्त्री कपिलदेवकी माता देवहूति तत्वविषयनके प्रवर्तक सिद्धभूमि कपिलदेवजीकों प्रणाम कर स्तुति करती भई ॥ १ ॥ देवहूति बोली कि अजन्मा आपको शरीर पंचमहाभूत इन्द्रियनके विषय गुणनके प्रवाहसौं युक्त अहंकारमय बीजरूप प्रलय कालके जलमें शयन कियो हों वासो उत्पन्न भए कमलसो प्रादुर्भूत एक ब्रह्माजीने आपकौ ध्यान कियो तथापि आपको साक्षात् दर्शन न भयो ॥ २ ॥ सोही आप विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश करोहो, संसारके गुणप्रवाह वीर्यनके रूपसौं विभाग भई शक्तिद्वारा जीवनकों भोग भुगायवेके निमित्त क्रियारहित हैकैहू अनन्त शक्तिमान् हैवेके कारण जगत्को तीनों अवस्थानकूं प्राप्त करो हो ॥३॥ हे नाथ ! जिनके उदरमें ये सब विश्व है सो तुमकों मैंने उदरमें धारण कियो जो तुम युगके अंतमें एक वटपत्रमें मायाके बालक हो ये अपनो चरण पान करते भए शयन करो हो ॥४॥ हे समर्थ ! पापीनके नाशके लिये अपनी आज्ञा पालन करवेवारेनको ऐश्वर्य प्राप्तिके अर्थ तुम शरीर धारते भये जैसे आपके सूकर आदि अवतार भये तैसे आत्मज्ञान प्राप्तिके लिये येहू अवतार धारण करते भये ॥ ५ ॥ जिनके नाम श्रवण कीर्तन प्रणाम स्मरण करवेसो कुत्ताकों खायवेवारो जो चंडाल है वोहू यज्ञ करवेके योग्य होयहै फिर जानें तुम्हारो दर्शन कीनो वाके शुद्ध होयवेमें कहा संदेह है ॥ ६ ॥ याते वह श्वपच श्रेष्ठ है, जाकी जिह्वामें तुम्हारो नाम है, वाने तप होम तीर्थस्नान सब कर लिये वोही बडो है, वाने वेदहू पढ लीनो जो तुम्हारो नाम लेय है वाने सब कीनो हैं ॥ ७ ॥ परब्रह्म पुरुष सावधान हृदयमें चिंतवन करवेयोग्य अपने तेजके प्रभावसौं संसारबंधनकौ काटवेवारे सर्व व्यापक विष्णु, वेदगर्भ तुम कपिलदेवजीकी मैं वंदना करूं हूं ॥ ८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि भगवान् पर पुमान् कपिलदेवजी या प्रकार जब स्तुति करेगए तब माताके प्रिय चाहिवेवारे गंभीरवाणी मतासौ बोले ॥९॥ कपिलदेवजी बोले कि हे मातः ! सुंदरसेवन योग्य था मेरे मार्गमें स्थित हैकै थोरेही कालमें मोको प्राप्त होयगी ॥ १० ॥ या ब्रह्मवादी मुनिसो सेवन किये भये या मेरे मतमें श्रद्धा राखकै सब भयके छुडायवेवारे मोको प्राप्त होयगी याके नहीं जानवेवारे मृत्युग्रासमें पतित होय हैं ॥ ११ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि श्रीभगवान् अपनी गति ऐसे दिखायकै ब्रह्मवादिनी अपनी मातासो सत्कृत वाकी आज्ञा पाय श्रीकपिलदेवजी वहांसो चले जाते भए ॥ १२ ॥ वो देवहूतिहू पुत्रके कहेभए मार्गसो योगाभ्यासमें लगके सब आश्रमनमें मुकुटतुल्य

१ राग कजरी " नारायण नारायण नाम रटोरे निशि दिन गोविंद गोपाल हरी ॥ टेर ॥ वेद पुराण कहत सब ऐसे नाम लियो सोइ सुफल घरी ॥ १ ॥ बाहिर धोए कहा होत है भीतर कुबुद्धकपास भरी ॥ २ ॥ ऐसे दयालु नहीं कोउ जन्मे मक्त हेतु प्रभु देह धरी ॥ ३ ॥ पुरुषोत्तम कहै रामनामकी मेरे शिरपर छाप धरी ॥ ४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वा आश्रममें सरस्वतीके तीरपै सावधान हैकै (ये स्थान गुजरातमें सीधपुरमें है वहां सरस्वतीजी वहै है, बिंदुसरोवर है, कपिलदेवजीको आश्रम इत्यादि सब है) ॥ १३ ॥ तीन बखत स्नान करती भई, पीरी कुटिल अलकनको धारे, कृश शरीर चीर पहिरे अपनपेकों उग्र तप युक्त धारण करतीभयी ॥ १४ ॥ कर्दमप्रजापतिके तप योगसों वर्द्धित अपने उपमारहित देवतानसों प्रार्थनीय गृहस्थाश्रमके घरकों ॥ १५ ॥ कि जामें दूधके फेनके समान श्वेत और कोमल हाथीदांतकी बनी सेज है सुवर्णके औरहू सब पदार्थ और सुवर्णको आसन स्पर्श योग्य कोमल बिछौननसों शोभित है ॥ १६ ॥ स्वच्छ स्फटिकनकौ जिन महलनमें भीत है महामकरत मणी जडे रत्ननके दीपक जहां प्रकाश करै हैं स्त्रीरत्ननसो स्थान भररह्यो है ॥ १७ ॥ घरके बागमें फूलेभए कल्पवृक्षनसो शोभायमान है जिनमें पक्षियनके जोडा कूजते और रमणीक पक्षियनके जोडा मत्तमधुकर गुंजार कररहेहैं ॥ १८ ॥ पहले जहां देवहूतिके जायवेपै देवतानके अनुचर जायकै सदा गावते बावरीमेंसों कमलकी सुगंधि आवतीही कर्दमजी वाकी सदा रक्षा करते ॥ १९ ॥ देवहूतिके गृहस्थसुखकी इच्छा इन्द्रकी स्त्रीहू करतीही वा घरको त्याग करवेके उपरान्त जब देवहूतिको पुत्रको वियोग भयो तब शोकके कारण आतुरतासों वाकौ कुछ सुख मलीन है गयो ॥ २० ॥ पति जब वनको चलेगए तब पुत्रके विरहमें व्याकुल तत्वज्ञान हैवेपैहू बच्छा नष्टवारी गौकी समान वत्सलतासो देवहूति होतीभई ॥ २१ ॥ हे विदुर! तिन पुत्र कपिलदेव हरिको ध्यान करती थोडेही कालमें वा घरमेंसों चाहना त्याग करती भई ॥ २२ ॥ कपिल देवजीके बताये जो ध्यानगोचर भगवत्के रूपको ध्यान करतीभई प्रसन्न वदनवारे सुतमेंसो चिंता त्यागतीभई ॥ २३ ॥ भक्तिके प्रवाह योगसों बली वैराग्यसों युक्त हैवेके कारण अनुष्ठानसो ब्रह्मज्ञान होतो भयो ॥ युक्त अनुष्ठान गीतामें कह्यौ है "युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ॥ युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा" ॥ २४ ॥ ब्रह्मस्वरूपको प्राप्त करवेवारे ज्ञानसों अत्यन्त शुद्ध भए अन्तःकरणसों सम्पूर्णमें व्यापक आत्मा जो कि जो अपने स्वरूपके तेजसों मायाके किये गुणनके परिच्छेदसों रहित हैं ॥ २५ ॥ विन सर्वांतर्यामी भगवान् ब्रह्मको दृढमती लगायकै ध्यान करती भई तब याकी सब आपत्ति दूर भई, क्लेश क्षीण भए, सब सुख प्राप्त होतेभए ॥ २६ ॥ नित्य समाधि लगायेसों गुणनके सब भ्रम दूर भए, ता समय अपने देहको अनुसंधान न रह्यो, जैसे सुपनेमें देखेभएकों उठोभयो नहीं स्मरण करै या प्रकार देहको स्मरण न करती भई ॥ २७ ॥ वाको देह दूसरेनसो पोषित होतोहू मनकी ग्लानि न हैवेके कारण कृश नहीं भयो और मलसों आवृत भयो वाको शरीर धुयें सहित आगकी समान शोभित भयो ॥ २८ ॥ तप, योगमय, केश खुले वस्त्रन पहिरे वासुदेवमें बुद्धि प्रविष्ट करवेके कारण ईश्वरसों रक्षित हो अपने देहको अनुसंधान भूलगई कपिलदेवजीके कहे मार्गसों थोरे कालमें परब्रह्म आत्माके सुखरूप भगवान्को प्राप्त होतीभई ॥ २९ ॥ ३० ॥ हे विदुर! जहां देवहूति सिद्धिको प्राप्त भई वह परम पवित्र स्थान सिद्धपद नामसों तीनों लोकमें विदित भयो ॥ ३१ ॥ देवहूतिको योगसे धुयो मनुष्यदेह सरस्वती नदीरूप होतोभयो हे विदुर! वह सब नदीनमें श्रेष्ठ सिद्धि देवेवारी भई, जहां बहुत सिद्ध रहिते भए वा नदीको नाम सिद्धिदा भयो ॥ ३२ ॥ भगवान् कपिलदेवजी महायोगी पिताके आश्रमते मातासों आज्ञा लेकर पूर्व उत्तरको अर्थात् ईशानको जातेभए ॥ ३३ ॥ सिद्ध चारण गंधर्व मुनि अप्सरागणोंसे स्तुतिको प्राप्त हों सागरसै पूजा और रहनके निमित्त स्थानकी प्राप्ति की ॥ ३४ ॥ तहां सांख्यके आचार्योंसे स्तुतिको प्राप्त हो त्रिलोकीके शांतके अर्थ सावधान हैकै योगमें स्थित होतेभये ॥ ३५ ॥ हे तात! हे पापरहित! जो तुमनें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हमसें पूछो सो कहो, कपिलदेवजीको देवहूतिजीको ये पवित्र संवाद है ॥ ३६ ॥ श्रीकपिल मुनिके कहे आत्मयोगमें गुह्य मतको जो कोई सुनैगो, जो कहैगो, वो गरुडध्वज भगवान्में बुद्धि लगाय भगवत्कै चरणारविंदकों प्राप्त होवैहै ॥ " और जाकी बुद्धि भगवान्में होगी वो संसारमेंहू सुख भोगैगो, निर्बुद्धि क्लेश भोगैगो यापै एक दृष्टांत है एक बुद्धिवान् एक मूर्ख पुरविया चले; सो मैदानमें वृक्षके नीचे एक कुंआं था, वहां रसोई करवेलगे उसने मूर्खकों भेजो कि जल लावो सो जातेही लोटा कुआमें मूर्खने पटक दीनों, वहां घास खोदतेभए लोग खडेथे, उनसे यानें कही कि लोटा निकारो, वे बोले दो रुपा देओ तो लोटा निकसे इस विचारे मूर्खने बगद आयकै वा बुद्धिवान्सें सब वृत्तांत कह्यो, ओ बोलो हम निकसवाय लावैंगे, ऐसे कहि कुआं पर आय कही लोटा तो काढो तो वे घास खोदवेवारे बोले दो रुपा देओ तो निकसे; या बुद्धिवान्ने कही लेओ यूं कहि अंटीमेंसे निकास दोनो २ रूपया धरे कुआके मंडके ऊपर एक घसखुदा घुसगयो लोटा वाने वा डोरमैं फांसो, या लोटा रस्सी खींच ऊपरसे बोले ले भैया हम जायहै, रूपा तुम्हारे ऊपर धरेहै आय कर लेलेओ, वो बोलो मोको निकासो तो सही तुमने तो दोनो रस्सी ऊपर खींच लीनीं; तब बुद्धिवान् बोले कि तीन पावकी लुटियाकी कढाई तो तूनें मांगे २ रूपा; हम तेरी साढे तीन मनकी लाश निकारेंगे तू कहा देगौ, वाने कही ईश्वरके नामपर मोको निकासो जो कढाई लोटाकी शिरस्ता होय सो दीजो। तब काढो दो आने देकर घर आए तासें कहिते हैं कि बुद्धिवान् होयहै सो भगवत्में प्रीति करैहै निर्बुद्धिवानसे कछु न होयहै जैसे उक्त दृष्टांत विचार लीजो, इति । या स्कंधमें जो कछु भ्रम प्रमादसे रहिगयो होय, वाकों सज्जनलोग क्षमा करैं जैसी हमारी बुद्धि ही तैसो व्याख्यान अष्टादश तिलकनके अनुसार ये हमने बनायो है, ये सब वेदके तुल्य है अष्टादश पुराणको सार है याके श्रवणसै धन यश विद्या राज्य ऐश्वर्य बुद्धि प्रताप तेज सब मिलैहै, ये स्कंध अत्युत्तम है अध्यात्मविद्याको सार है वेदांतीनको सुखदायक है तीन तापनाशक है अज्ञानको निवर्तक है ब्रह्मपदको दाता है ईश्वरकी प्राप्तिको उपाय है' ॥ ३७ ॥

य इदमनुशृणोति योऽभिधत्ते कपिलमुनेर्मतमात्मयोगगुह्यम् ॥
भगवति कृतधीः सुपर्णकेतावुपलभते भगवत्पदारविन्दम् ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतस्य वृंदावननिवासिसुप्रसिद्धविद्वद्वरगौडब्राह्मणश्रीनारायणशास्त्रिविरचितपदार्थमुक्तावलीटीकायां श्रीकपिलांतर्धानवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥ ३३ ॥

समाप्तस्तृतीयः स्कंधः ।

---

१ आव तौ श्रीव्रजराज उवारी शरणागत प्रतिपाल दयाकर विरदावली सभारो। पच्यो आय चरणनमें स्वामी करदीजे निस्तारो ॥ १ ॥ महाअधम पातकी कलंकी एकवार उचारो । शरणागत हूं कृपा करो हरी तुरत ताहि उद्धारो ॥ २ ॥ सुध है भूलगयो कहा स्वामी जब गजराज पुकारो । गरुड छोड धाये ताही छिनधीरज नैकन धारो ॥ ३ ॥ नेक स्मरणको जिन जबही संकट तुरतहि टारो । अष्टादश पुराण षट्दर्शन वेद पुकारत चारो ॥ ४ ॥ चरणशरण तज हौं यहां जाऊं संकट दूर निवारो । जन ज्वालाप्रसाद निशिवासर गावत सुयश तिहारो ॥ ५ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

चतुर्थस्कन्धप्रारम्भः।

अध्याय १.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

मैत्रेय उवाच–मनोस्तु शतरूपायां तिस्रः कन्याश्च जज्ञिरे ॥
आकूतिर्देवहूतिश्च प्रसूतिरिति विश्रुताः ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ अब चतुर्थस्कंधको प्रारंभ करै है ॥ परमहंसनकरकै सब ओरसों जिनके चरणकमलके चैतन्यमकरंदको स्वाद लियो जाय है भक्तजननके मनमें निवास करनेवारे श्रीराजाधिराज रामचंद्रजीके अर्थ नमस्कार होय ॥ तहां प्रथम अध्यायमें मनुकन्यानके वंश पृथक् २ वर्णन करै है जहां मूर्तिन करकै हरिको जन्म भयो है; अब या चतुर्थमें इकतीस अध्याय करकै विसर्ग वर्णन करै हैं, विसर्ग ईश्वरके आधीन ब्रह्मा मन्वादिकनकरके होय है ॥ मैत्रेयजी बोले कि मनुजी स्वायंभुव शतरूपा राणीमें जगत्में विख्यात आकूति देवहूति प्रसूति तीन कन्या उत्पन्न करते भए दो पुत्र उत्पन्न करते भए ॥ १ ॥ यद्यपि आकूतिके भाई हो तथापि नृपने आकूति कन्याको शतरूपाकी सम्मतिसों पुत्रिकाधर्मकी रीतिसो रुचि प्रजापतिको व्याह दीनी पुत्रिकाधर्म याको नाम है कि विना भाईकी कन्या सब प्रकार भूषित तुम्हैं देऊं हूं, यामें जो प्रथम पुत्र होयगो सो मेरो पुत्र होयगो ॥ श्लोक है कि॥"अभ्रातृकां प्रदास्यामि तुभ्यं कन्यामलंकृताम्॥ अस्यां यो जायते पुत्रः स मे पुत्रो भवेदिति॥" ॥ २ ॥ ब्रह्मतेजस्वी भगवान् रुचि प्रजापति परम समाधिसों तामें एक जोडा उत्पन्न करते भए ॥३॥ जो विन दोननमें पुरुष हे सो साक्षात् विष्णु यज्ञस्वरूपधारी है, और स्त्री लक्ष्मीकों अंश अनपायिनी दक्षिणा होती भई ॥ ४ ॥ अपनी पुत्रीके पुत्र महाप्रकाशकको प्रसन्न होय स्वायंभुव मनु अपने घर ले आते भए रुचि प्रजापति दक्षिणाको राखते भए ॥ ५ ॥ वा काम चाहवेवारीको भगवान् यज्ञपति विवाहते भए और आनन्दयुक्त प्रसन्न होकै वामें द्वादश पुत्र उत्पन्न करते भए ॥ ६ ॥ तोष, प्रतोष, संतोष, भद्र, शांति, इडस्पति, इध्म, कवि, विभु, स्वह्न, सुदेव, रोचन ये बारहोंनके नाम हैं ॥ ७ ॥ वे स्वायंभुव मन्वंतरमें तुषिता नामके देवता होते भए, मरीचि आदि सप्त ऋषि भये, यज्ञ नामके इंद्र भयो। श्रीहरिके छै प्रकारके अवतार है " मन्वंतरं मनुर्देवा मनुपुत्राः सुरेश्वराः॥ ऋषयोंऽशावतारश्च हरेः षड्विध उच्यते ॥ " ये आगै विस्तृतसें कहैंगे ॥ ८ ॥ राजा मनुके महापराक्रमी प्रियव्रत उत्तानपाद भए, तिनके पुत्र पौत्र नातीनसों मन्वंतर खूब भरगयो ॥ ९ ॥ हे तात ! मनुने देवहूति बेटी कर्दमजीको व्याही, ताके संबंधकी कथा आप हमसों सुनचुकेहैं ॥ १० ॥ ब्रह्मपुत्र दक्षको भगवान् मनुने प्रसूति

दोहा–जिनकी कृपाकटाक्षसे मूक होत वाचाल । श्रीव्रजचन्द्रानंदनिधि मोपर होहु दयाल ॥
करहु दया निज जननपर कृष्ण कमलदलनैन । अब चतुर्थ शोधन करहु रीझहु करुणाऐन ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

व्याही, जाकी संतानसों त्रिलोकीमें महान् सर्ग बढो ॥ ११ ॥ जे कर्दमजीकी पुत्री नौ ब्रह्मऋषिनकी पत्नी भई तिनकी जो संतान भई सो तुम मोसों सुनो ॥ १२ ॥ मरीचिकी पत्नी कर्दमकी बेटी कला कश्यप और पूर्णिमानकों उत्पन्न करतीभई, इन दोनोंसों सब जगत् भरगयो ॥ १३ ॥ हे शत्रुतापन ! पूर्णिमामें विरज विश्वग दो पुत्र उत्पन्न किये, देवकुल्यानाम कन्या भई जो हरिके पादशौचते स्वर्गकी गंगा होती भई ॥ १४ ॥ अत्रिकी स्त्री अनुसूया सुंदर यशकर्ता तीन सुत जन्माती भई, जो विष्णु शिव ब्रह्माके अंशसो दत्तात्रेय दुर्वासा सोम नामवारे भये ॥ १५ ॥ विदुरजी बोले कि हे गुरो ! देवनमें श्रेष्ठ उत्पत्ति पालन नाशकर्ता कहा करवेकों अत्रिके घरमें जन्मे सो मोसों कहो ॥ १६ ॥ मैत्रेयजी बोले कि सृष्टि रचवेकों ब्रह्माकरकै प्रेरित ब्रह्मवेत्तानमें श्रेष्ठ अत्रि स्त्रीसहित कुलाचल ऋक्षनामके पर्वतपें जाय तपमें स्थित होतेभए ॥ १७ ॥ वा कुलाचलपै पुष्पनके गुच्छेवारे पलाश और अशोकके वनकी शोभा हैरही है और निर्विंध्या नाम नदीके पानीके झरनानको शब्द चारोंओर है रह्योहै ॥ १८ ॥ प्राणायाम करकै मनकों मुनि सौ वर्षतक लगावते भए, एक पांवसो खडे रहे, सुखदुःख सहे, पवन आहार करकै रहे ॥ १९ ॥ विनकी शरण हूं जो जगत्के ईश्वर हैं, वो अपनीसी संतान आप समान मोकों देय ऐसो चिंतवन करतेभए ॥ २० ॥ मुनिके मस्तकसों जब प्राणायामकी बढीभई अग्नि निकसी तब सब जगत् तपायमान हैगयो तब तीनौ देवता तहां आये ॥ २१ ॥ अप्सरा मुनि गंधर्व सिद्ध विद्याधर सर्पनकरकै विस्तृत यशवारे वा आश्रममें आये ॥ २२ ॥ तिनके प्रकट हैवेसो विद्योतितमन मुनि एक पांवसो ठाडे हैकै देवश्रेष्ठनकों देखते भए ॥ २३ ॥ पुष्पादिक अंजलिमें लैके भूमिमें दंडवत् प्रणाम कर वृष हंस गरुडपे बैठे अपने अपने त्रिशूल कमंडलु चक्र चिह्नसों चिह्नित तीनों देवनकी पूजा करते भए ॥ २४ ॥ कृपाकी चितवनसों हँसतेभये वदनसों उपलब्ध जे वे तीनों देवता हैं विनकी कांति करकै मिचेभए नेत्रनकों मसलके ॥ २५ ॥ दोनों हाथ जोड तिनमें मन लगाय कोमल मधुर सुन्दर वाणी करकै सर्वलोकपूज्यनकी स्तुति करते भए ॥ २६ ॥ अत्रि मुनि बोले कि युग युगमें विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश करवेको विभाग करे मायागुणनकरकै जिनने देह धारण कीनी हैं, ऐसे ब्रह्मा विष्णु शिव तीनोंनको मैं नमस्कार करूंहूं, तिनमेंसो कौनको मैंने बुलायो हैं, सो आपहीमेंसो कोई जने या बातको कहो ॥ २७ ॥ मैंने एक भगवान्की विविध प्रकारके उपाय पूजाकरकै संतानके लिये चित्तमें धारे, सो यहां शरीरधारिनकै मनसोहू दूर आप तीनों देवता आयके प्राप्त भए हो सो यह आप कृपाकर कहो मोको महाविस्मय है ॥ २८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि वे तीनों देवश्रेष्ठ ऐसें तिनको वचन सुन हे प्रभो ! ऐसे कोमल वाणीसों हँसकै ऋषिसों बोले ॥ २९ ॥ देवता बोले कि जैसो तुमने संकल्प कीनो हो तैसेई हम आए, और प्रकारसे नहीं, तुम्हारो सत्संकल्प हो तुमने हम सबको ध्यान कीनो है ॥ ३० ॥ यातै हे अंग ! तुम्हारो मंगल होय, लोकमें विख्यात हम तीनौ तीन पुत्र तुम्हारे होंयगे तुम्हारो यश विस्तार करेंगे[1] ॥ ३१ ॥ ऐसे मनोवांछित वर देकै वे सुरेश्वर जाते भये इन दोनोंने सत्कार कीनो दोनों स्त्री पुरुषके देखते देखते वहांसे गए ॥ ३२ ॥ ब्रह्माके अंशसों सोम भए योगवेत्ता दत्तात्रेयजी विष्णुके अंशसों भए दुर्वासा शंकरके अंशसों भए अब अंगिराकी प्रजा सुनो ॥ ३३ ॥ अंगिराकी श्रद्धापत्नी सिनीवाली, कुहू

---

१ अत्रि मुनिने ओंकार अक्षरको ब्रह्मा विष्णु शिवरूप जानकर इन्हींको अपना पुत्र होनेको जप किया इसी कारण देवतौने आकर कहा तुम्हारा संकल्प हमने जाना उसीके निमित्त आये हैं इसी कारण तीनोंके अंशसे पुत्र हुए ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राका, और चौथी अनुमती ये चार कन्या उत्पन्न करती भई ॥ ३४ ॥ तिनके पुत्र दो और हैं, जो स्वारोचिष मन्वंतरमें विख्यात भए, एक तो साक्षात् भगवान् उतथ्य भए दूसरे ब्रह्मज्ञानी बृहस्पतिजी भए ॥ ३५ ॥ हविर्भूपत्नीमें पुलस्त्यजी अगस्त्यको उत्पन्न करते भए, वे अगस्त्यजी और जन्ममें जठराग्निरूप भये पुलस्त्यके द्वितीय पुत्र महाशयस्वी महातपस्वी विश्रवाजी भये ॥ ३६ ॥ ता विश्रवासों यक्षपति देवता कुबेर इडविडाके सुत भए, वाही विश्रवाकी केशिनी भार्यामें रावण कुंभकर्ण बिभीषण होते भए ॥ "इन तीनों नामपें एक दृष्टांत है कि कोई थोडे पढे चतुरपंडित किसी बहुत पढे पंडितके यहां गए, उसने कही कहांसे आए तब वे बोले कथामें राभणकी कथा सुन आएहैं, उन्होंने कही पंडित होके राभण अशुद्ध शब्द बोलते हो, तो वे चतुर बोले कि कुंभकर्ण बिभीषण दोनोंके नामको दूसरो अक्षर भ है यासे राभणके नाममेंभी भही बनैहै ताको ये श्लोक है ॥ "भकारः कुंभकर्णेऽस्ति भकारोऽस्ति बिभीषणे । तयोर्भ्रातरि ज्येष्ठे च भकारो न कथं भवेत् ॥१॥" ॥ ३७ ॥ पुलहकी गति भार्या सती तीन पुत्र उत्पन्न करती भई, हे महामते ! कर्मश्रेष्ठ, वरीयांस, सहिष्णु ये तीनके नाम हैं ॥ ३८ ॥ क्रतुकी क्रिया भार्या ब्रह्मतेजसों प्रकाशित साठ हजार वालखिल्य ऋषीनको उत्पन्न करती भई ॥ ३९ ॥ हे परंतप ! वसिष्ठकी ऊर्जा स्त्रीमें चित्रकेतु आदि सात निर्मल ब्रह्मऋषि उत्पन्न होते भए ॥ ४० ॥ चित्रकेतु, सुरोचि, विरज, मित्र, उल्बण, वसुभृद्यान, द्युमान दूसरीमें शक्ति आदि भये ॥४१॥ अथर्वणकी चित्तिपत्नी धृतव्रत दधीच अश्वशिरा पुत्र जन्मातीभई अब मोसो भृगुको वंश सुनो ॥ ४२ ॥ हे महाभाग ! ख्याती स्त्रीमें भृगुजी धाता विधाता पुत्रनकों जन्मावते भए, और भगवत्परायण श्रीजी उत्पन्न करते भए ॥४३॥ आयति नियति दो बेटी मेरुने विन दोनोनको व्याही, विन दोनोनसो विन दोनोंके मृकंड और प्राण भए अर्थात् धाताके आयतिके मृकण्ड पुत्र और विधाताकी नियतिके प्राण पुत्र भयो ॥ ४४ ॥ मृकंडके मार्कंडेय भए, प्राणके वेदशिरा मुनि भए, कवि भार्गवके भगवान् उशना सुत भए ॥ ४५ ॥ हे विदुर ! ये मुनि सृष्टि रचकैं लोकको भरते भए, ये कर्दमजीके दोहितेनकी संतान तुमसों कही ॥ ४६ ॥ श्रद्धासे सुने तो शीघ्र पापहारक है, ईश्वरकी प्राप्ति करायवेवारी है ब्रह्मसुत दक्ष मनुकी प्रसूतिकों व्याहतेभए ॥ ४७ ॥ तामें कमलनयनी सोरह कन्या रचते भए तेरह धर्मको व्याही; एक विभूने अग्निको व्याही ॥४८॥ मिलेभए पितरनको एक दई, संसारमें आवागमन मिटानेवाले शिवको एक व्याही, श्रद्धा, मैत्री, दया, शांति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति ॥ ४९ ॥ बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, ही, मूर्ति ये धर्मकी पत्नी हैं श्रद्धा, शुभपुत्र, उत्पन्न करती भई, मैत्री प्रसाद, दया, अभय सुत जनती भई ॥ ५० ॥ शांतिके सुख, तुष्टिके मुद, पुष्टिके गर्व पुत्र होतोभयो क्रियाके योग्य उन्नतिके दर्प, बुद्धि अर्थ सुत उत्पन्न करतीभई ॥ ५१ ॥ मेधा स्मृतिको, तितिक्षा क्षेमको, हीने प्रश्रय सुत जन्मायो, मूर्तिके यहां सब गुणनके उत्पादक नरनारायण ऋषि भए ॥५२ ॥ जिनके जन्मसों ये विश्व सुंदर सुखी भयो, मन सब दिशा, वायु, सरिता, सब पर्वत, अत्यंत प्रसन्न होतेभए ॥ ५३ ॥ दिव्यनगारे बजे, पुष्पनकी वर्षा भई; प्रसन्न हो मुनि स्तुति करतेभए, गंधर्व किन्नर गायवेलगे ॥ ५४ ॥ देवस्त्री नृत्य करवेलगीं, परममंगल होतो भयो, ब्रह्मादिक देवता स्तोत्रनसों स्तुति करते भए ॥ ५५ ॥ देवता बोले कि जो भगवान् अपनी निज मायाकरके आकाशरूपकी नाईं अपनेमें या विश्वकों प्रकाश करवेके लिये धर्मके मंदिरमें आद्यऋषि मूर्तिरूप होय प्रगट भए तिन परमेश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ ५६ ॥ ये भगवान् जगत्की उत्पत्ति पालन नाशकी मर्यादा राखवेके निमित्त सतोगुणसा निर्माण किये अपने लोगनके सन्मुख विविध करुणायुक्त

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और लक्ष्मीके निवासभूत निर्मल कमलसोहू अधिक शोभावारी दृष्टि करकै देखो कि शास्त्रसो जिनके स्वरूपको केवल विचार मात्र बनसकै है ॥ ५७ ॥ हे तात ! ऐसे देवतानने जब भगवान्की स्तुति कीनी, तब भगवान्ने अपने अवलोकनसो विनपै कृपा कीनी और उनकी पूजा सत्कारको ग्रहण करके गंधमादनपर्वतकों जातेभए ॥ ५८॥ सोई ये भगवान् हरिके अंश भूभार नाशके अर्थ यादवकुरुनमें श्रेष्ठ अर्जुनकृष्णावतार होतेभए ॥ तदुक्तं तंत्रे " अर्जुने तु नरावेशः कृष्णो नारायणः स्वयम् " ॥ ५९ ॥ स्वाहाभिमानी अग्नि तीन पुत्रनकों उत्पन्न करतीभई पावक पवमान और हुतभोजन शुचि ये होते भए ॥६०॥ तिनसों पैंतालीस अग्नि भई वेही पितर पितामहके साथ उनचास भई एक अग्नि तीन बेटा और ४५ नाती ऐसें उनचास समझने ॥६१॥ वैदिक कर्ममैं ब्रह्मवादी जिनको नाम लैकै अग्निदेवता संबंधी इष्टि कियो करै हैं ॥६२ ॥ अग्निष्वात्त बर्हिषद सौम्य और आज्यपा यह जो पितर अग्निसहित और अग्निरहित हैं तिनकी पत्नी दाक्षायणी स्वधा भई ॥६३॥ ता स्वधा पत्नीमें दो कन्या एक वयुना एक धारिणी उत्पन्न करी, दोनों वे ब्रह्मवादिनी ही ज्ञानविज्ञानमें परायण भई यासौ पितरके संतान अगारी न चली ॥६४॥ शिवजीकी पत्नी सती भवकी सेवा करती भई, अपने समान गुण शीलवान् पुत्रको नहीं प्राप्त होतीभई ॥६५॥ कारण कि शिवजीसौं विनाही अपराध दक्ष प्रतिकूल हैगयो सो या कारणसो रोषसो योगधारण करकै कुमारावस्थामेंही सतीने देह त्याग कर दियो ॥ ६६ ॥

पितर्यप्रतिरूपे स्वे भवायानागसे रुषा ॥
अप्रौढैवात्मनात्मानमजहाद्योगसंयुता ॥ ६६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कंधे मनुकन्यान्वये नरनारायणावतारवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

विदुर उवाच–भवे शीलवतां श्रेष्ठे दक्षो दुहितृवत्सलः ॥
विद्वेषमकरोत्कस्मादनादृत्यात्मजां सतीम् ॥ १ ॥

विदुरजी बोले कि शीलवारेनमें श्रेष्ठ शिवमें दुहितृवत्सल दक्षप्रजापति क्यों विद्वेष करतो भयो, अपनी सती बेटीको अनादर क्यों कियो ॥ १ ॥ चराचरके गुरु सबसो वैररहित शांतदेह आत्माराम जगत्के महादेवजीसौं क्यों वैर कियो ॥२॥ हे ब्रह्मन् ! जवांई ससुरको वैर कैसे पडगयो, जासौ दुस्त्यज प्राण सतीजीने त्यागे ये कहिये ॥ ३ ॥ मैत्रेयजी बोले कि पहिले विश्व रचवेवारेनके यज्ञमें वसिष्ठ नारदादि परमऋषि सब देवतानके गण अपने अनुगामीसहित मुनि अग्नि सब मिलकै इकट्ठे होतेभए ॥ ४ ॥ तहां दक्षप्रजापतिकों सूर्यसमान प्रकाशमान कांतिसो अंधकार दूर करते भयेको वा महासभामें आवतो देखौ ॥ ५ ॥ वा दक्षप्रजापतिको आवतौ देख सभासद अपने अपने स्थाननसों अग्निसहित सब उठतेभए कारण कि दक्षके प्रकाशसो चित्तमें आक्षेप होगयो परंतु ब्रह्मा शिव ये दोनों न उंठे ॥ ६ ॥ सब सभासदनने दक्षको बहुत सत्कार कीनौं; लोकगुरु ब्रह्माको प्रणाम कर विनकी आज्ञासों बैठतो भयो ॥ ७ ॥ अपने आयवेसों पहिले शिवको बैठे देखे विनके किये अनादरको न

१ शिवजीने उठकर दक्षको इस कारण प्रणाम नहीं किया कि वह उस समय समाधिमें थे दूसरी बात यह थी कि दक्षनै अभिमानसै सबका निरादर किया तब इन्होंने शिवजीसै प्रार्थना की तब शिवजीने कही हम उसका दर्प चूर्ण करैंगे तब यह विचार आप नहीं उठे कि हमारे न उठनेसै यह द्रोह करैगा तौ इसका अभिमान चूर्ण होजायगा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सहितको सो तिहैं नेत्रकर बोलो मानों सबकों जराय देयगो ॥ ८ ॥ हे ब्रह्मऋषिहो ! हे देवताहो ! हे अग्निसहित सब जनेहो ! सुनो साधुनको जो चालचलन है सो कहूंहूं, कछु अज्ञानपनसो वा ईर्षासो नहीं कहूं हूं ॥ ९ ॥ यह लोकपालनके यशको नाश करनवारो बडे बेशरम है सो या निर्लज्ज शिवनै तौ लोकपालनको यश नाश करदियो कारण कि या अहंकारी अनभ्रने सत्पुरुषनके चलाये मार्गको दूषित करदियो ॥१०॥ ये मेरो जमाई है यासो यह मेरे शिष्यभावकों प्राप्त हैं ब्राह्मण अग्निके सामने गायत्री तुल्य मेरी बेटीको साधुकी नाईं पाणिग्रहण करतो भयो ॥ ११ ॥ या बंदरसम नेत्रवारेनें मृगछोनासम नेत्रवारी मेरी बेटी सतीकों पाणिग्रहण करकै उठ उठकै नमस्कार करवेके योग्य मेरी वाणीसोहू सत्कार न कियो ॥ १२ ॥ सब क्रियाविहीन, अपवित्र, मानी, धर्मसेतु तोरवेवारे अभिमानीको मेरी इच्छा नहींही तौहू मैंने ऐसेको अपनी कन्या व्याहि दीनी जैसे कोई शूद्रको वेदवाणी देदेय याको दूसरो ये अर्थ है कि परब्रह्म शिव है, याते सब क्रिया लोपीहै, इनसो शुचि कोई नहीं है अमानी है, सेतु सब राखेहै, इन परमेश्वरके योग्य मेरी मानुषी कन्या नहीं है परंतु शिवसों संबंध होय या लाभसो व्याही ही जैसे धनलोभसो शूद्रकों कोई वेद सिखावे ॥ १३ ॥ घोर मर्घटमें रहवेवारे प्रेत भूतगणनको संग राखवेवारे उन्मत्तकी नाईं नंगे बार खोले हँसे रोवेहैं ये सब कथा मात्र है ॥१४॥ चिताकी भस्ममें सदा स्नान करै है प्रेतनकी रुंडमाला पहिरे है, हाडनके गहिने पहिरें नामको शिव मंगलदायक हैवैसै अमंगलीक हैं, मतवारे हैं, मत्त जन इन्हें बडे प्रिय हैं ॥ १५ ॥ त्रिपुंड्रधारी त्रिशूल लियो तीन नेत्रवारे सर्प भूषण करै तमोगुणी प्रमथ भूतनके ये पति हैं ॥ १६ ॥ भूतनके नाथ शौचत्यागी दुर्हृदय शिवको ब्रह्माके कहेसो मैंने महासूधी सती व्याह दीनी, सो बडो खेद है ॥ १७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि अपने अप्रतिकूल बैठे शिवको ऐसै निंदाकर क्रोधी दक्ष जलसों आचमन कर शाप देतो भयो ॥ १८॥ ये शिव देवतानके यज्ञमैं इंद्र विष्णु देवतानके संगमें भाग न लेवे पावै, क्यों कि देवगणनमें ये अधम है, अथवा देवगण यासो अधम है यासों इने पहिले भाग मिलै सबकै संग नहीं ॥ १९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! सभासदनमें जे मुख्य है विप्र मनेहू कीनों, तौहू दक्षप्रजापति शिवको शाप देकै वहांसो निकसकै अपने निज घरको चलो आतो भयो ॥ २० ॥ शिवको शाप दियो जान शिवजीके गणनमें अग्रणी नंदीश्वर क्रोधित हो दारुण शाप दक्षकों देते भए, जो ब्राह्मण शाप देती विरिया दक्षकी बडाई करते हैं उनकूहू शाप देते भए ॥ २१ ॥ जो कोई या दक्षकों शाप देतो देख अद्रोही शिवसों द्रोह करेगो, वो अज्ञानी पृथक् दृष्टिवारो तत्वसों विमुख होय ॥२२॥ छलके धर्मवारे गृहनमें संसारी सुखकी इच्छा करकै जो आसक्त है वे वेदवादनमें नष्टबुद्धि हैकै कर्मको केवल मुख्य मानो ॥ २३ ॥ देहकों जीवकों ईश्वर मानवेवारी बुद्धिसो पशुवत् ईश्वरकी गति भूल स्त्रीकामी दक्षको थोरे कालमें बकराको मुख होउ ॥२४॥ विद्या बुद्धि अविद्या कर्ममयीमें ये जड होउ जिन्ने शिवको अपमान कीनो है वे सदा जन्मौ मरौ ॥२५॥ पुष्पकी समान केवल मनकोही प्रसन्न करवेवारे वेदवाणीके मोह करवेवारे रोचक वाक्यनमें मूढ भए महादेवके द्वेषी केवल कर्ममेंही लगे रहौं ॥२६॥ ब्राह्मण भक्षाभक्ष विचाररहित होय सब जगे खांय, जीविकाके अर्थ विद्या तप व्रत करें, धन शरीर सुखके अर्थ या जगत्में सदा मांगते डोलै याचक बनै ॥ २७ ॥ द्विजकुलकों ऐसे शाप देते सुन महाकठोर ब्रह्मशाप श्रीभृगुजी देते भए ॥ २८ ॥ जो कोई शिवके व्रत धारै, जो उनके अनुवर्ती होय चलैं वे पाखंडी होंय सच्छास्त्रसों भ्रष्ट होय ॥ २९ ॥ नष्टशौची मूढमति जटाभस्मधारी हाडनकी माल पहिरे शिवदीक्षामें प्रवेश करैं, जहां मद्य मांसही देवताकी नाईं मानै हैं ॥ ३० ॥ पुरुषनकी मर्यादाके राखवेवार वेद और ब्राह्मणकी जो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तुम निंदा करो हो यासौ पाखंडको आसरो लेओ ॥३१॥ सनातन श्रेष्ठमार्ग लोकनको यही है, यामें पहिलेके लोग स्थित भए यामैं जनार्दन प्रमाण है ॥ ३२॥ सो वो ब्रह्म परम शुद्ध संतानको सनातन-मार्ग है, याकी तुम निंदा करो हो यासो पाखंडी होओ, जहां भूतराज देवता है ॥३३॥ मैत्रेयजी बोले कि जब भृगुको शाप देते सुन शिव विमन हैकै अनुचरनसहित वहांसे चले जातभए ॥३४॥ हे विदुर ! वेहू विश्व रचवेवारे सहस्र वर्षको यज्ञ कर सर्वश्रेष्ठ पूज्य हरिको पूजते भए ॥ ३५ ॥ गंगायमुनाके संग-ममें यज्ञांतस्नान कर निर्मल आत्मा कर अपने अपने धामको जातेभए ॥ ३६ ॥

आप्लुत्यावभृथं यत्र गङ्गा यमुनयाऽन्विता ॥
विरजेनात्मना सर्वे स्वं स्वं धाम ययुस्ततः ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कंधे दक्षशापवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अध्याय ३.

मैत्रेय उवाच–सदा विद्विषतोरेवं कालो वै ध्रियमाणयोः ॥
जामातुः श्वशुरस्यापि सुमहानतिचक्रमे ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि सदा ऐसे वैर करते स्थित रहे श्वशुर जमाईको महाकाल व्यतीत भयो ॥ १ ॥ परमेष्ठी ब्रह्माने जब सब प्रजापतिनके आधिपत्यमें दक्षको अभिषेक कीनो, तो याकों बडो गर्व भयो ॥२॥ सो दक्ष वाजपेय यज्ञ कर ब्रह्मवादिनको तिरस्कार कर सब यज्ञनमें उत्तम बृहस्पतिसव नामको यज्ञ करतोभयो ॥ ३ ॥ वा यज्ञमैं सब ब्रह्मर्षि देवर्षि पितर देवता शृंगार करि अपनी स्त्रियनको संग लैकै आये ॥ ४ ॥ सती दाक्षायणी देवी पिताके यज्ञको महोत्सव परस्पर बातें करते आकाशमार्गमें जाते देवतानके मुखसों सुनतीभई ॥ ५ ॥ सब दिशानसों देववरनकी स्त्रियें विमानपै बैठी प्यारेनको लिये पदक कंठमें पहिरे सुंदर वस्त्र धारे जायरहीहैं ॥६॥ अपने स्थानके समीप उज्ज्वल कुंडल धारण किये चंचलनेत्रवारी विन देवतानकी स्त्रियनको जाते देख सती बडे प्यारसों भूतपति शिवसों बोली ॥७॥ सतीजी बोली कि हे वाम शिव ! आपके प्रजापति ससुरके यहां यज्ञको महाउत्सव प्रारंभ है, हमहू वहां जांयगी, जहां ये सब देवता जांयहैं ॥ ८॥ ता यज्ञमें अपने पतिसहित निश्चय सुहृद देख-वेकी इच्छा कर मेरी बहिनें जांयगी, मैंहू आपसहित वहांकी पूजा लेवेको चलवेकी कामना करूंहूं ॥ ९ ॥ तहां निश्चय है कि भर्ता सहित मेरी बहिन और मौसी स्नेहबुद्धिवारे माको देखैगी, हे मृड ! बहुत कालसों उत्कंठा है सो महाऋषिनकरकै करभये यज्ञध्वजाको देखूंगी ॥ १०॥ यद्यपि ये आश्च-र्यमय आपकी मायासों निर्मित त्रिगुणात्मक जगत् तुम्हारेमैं प्रकाश करैहै तथापि हे अज ! मैं स्त्री दीन तुम्हारे तत्त्वकी न जाननवारी अपनी जन्मभूमि देखूंगी सो तुम चलो ॥ ११ ॥ हे संसारनिवर्तक ! हे शितिकंठ ! औरहू पति सखावारी स्त्रियें जांय हैं उन्हें देखो मनोहर हंसवत् श्वेत विमाननपै बैठकै जाय हैं, जिनके समूहनसो आकाश शोभित है ॥ १२ ॥ हे सुरवर्य ! पिताके घरके कौतुक सुन बेटीको देह कैसे चलायमान न होयहै, पति, गुरु, पिता, सुहृत्संबंधी इनके घरपै विना बुलाएहू जांयहै, तौहू कछु दोष नहीं है ॥ १३ ॥ हे मरणधर्मरहित ! सो मेरे ऊपर प्रसन्न हो मेरी मनोवांछाको आप पूरी करवेको योग्य हो, आपने मोको अपने अर्द्धांगमें दिव्य चक्षुकरके धारण करी है, सो मैं प्रार्थना करूंहूं

१ दोहा–पिताभवन उत्सव परम, जो प्रभु आयसु होय । तो मैं जाउं कृपायतन, सादर देखन सोय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तुम मोपर अनुग्रह करो ॥ १४ ॥ श्रीशुकाचार्य बोले कि ऐसे शिवजीसो प्रिया बोली, तब सुहृद्-प्रिय शिवजी हँसके बोले, और विश्व रचवेवारेनके सामने कहे मर्मभेदी कुत्सित दक्षके वचनरूपी बाण सब स्मरण करतेभए ॥ १५ ॥ श्रीमहादेवजी बोले कि हे शोभने ! तुम्हारी कही ठीक है कि विना बुलायेभी बंधुनके यहां जानो जो वे बली अपने मदके क्रोधसो दोषदृष्टि उत्पन्न न करें तौ जायवो योग्य है अर्थात् भलेई चाहे कोउ क्यों न होय पन जो वे अपनेको देखके राजी न होतो होय तौ वाके यहां विना बुलाये कभू न जावे ॥ १६ ॥ योग्य होय है परंतु कब कि विद्या तप धन शरीर अवस्था कुल ये छै संतनके गुण है एही छः गुण जब कोउ दुष्टको प्राप्त होय है तब एही छः अवगुण है जाय है तब वा पुरुषकी बुद्धि हत है जाय है, अधिकमान बढ जाय है, तब गर्वीलोग बडेनके धामकों नहीं देखेहैं ॥ १७ ॥ ऐसे विन असावधान चित्तवारेनको संबंधी समझके विनके घरकी ओरहू न देखें कारण कि वे लोग घर आएनको टेढी बुद्धि भ्रुकुटी चढी ऐसी क्रोधदृष्टिसो देखे हैं ॥ १८ ॥ तैसो शत्रुकरके मारे बाणनसो पीडितांग दुःखी हो सोयो भयो अर्थात् घायल हैके मर गयो वो व्यथाको नहीं प्राप्त होय है, जैसो अपने कुटुंबकेनकी टेढी बुद्धिनके दुर्वचननसों पीडित मर्ममें ताडित दिनरात तपेहै ॥ १९ ॥ हे सुभ्रु ! ये सत्य है कि दक्षकी प्यारी बेटीनमें तुम बहुत प्यारी मानी हो, तथापि पितासों तुम्हें मान नहीं प्राप्त होयगो, क्यों कि मोसो दक्षप्रजापति दुःख मानेहै ॥ २० ॥ अहंकाररहित पुरुषनकी निर्मल कीर्ति और यश देखके मनमें दाह हैवेसो आतुर चित्तवारे पुरुष विनके उत्तम अधिकारपै तौ पहुंच नहीं सकै केवल द्वेष कियो करें हैं जैसे राक्षस हरिसें वैर करे है ॥ २१ ॥ हे सुमध्यमे ! अपनेसो बडेकूं देख खडो होनो नम्र होनो प्रणाम करनो ये आपसमें जो सब लोग करे हैं सर्वांतर्यामी परपुरुष गुहाशय ईश्वरको मान करे है, कछु देहमानीको नहीं सो हम वासमै ऐसे करते रहै ॥ २२ ॥ विशुद्ध शुद्ध अंतःकरणको नाम है कारण कि ऐसे अन्तःकरणसो नारायणकी स्पष्ट प्रतीति होय हैं या कारण ऐसे अन्तःकरणमेंही इन्द्रिनसो अगोचर भगवान् वासुदेवको मैं नमस्कारद्वारा सेवन करूंहूं ॥ व्युत्पत्ति ये है कि " वसंति भूतान्यस्मिन्निति वासुः दीव्यतीति देवः वासुश्चासौ देवश्च वासुदेवः । अथवा वसुभिः पुण्यैर्दीव्यतीति वासुदेवः " ॥ २३ ॥ हे वरोरु ! तुम्हारो देहकर्त्ता पिता मेरो द्रोही तुम्हें देखवे योग्य नहीं है, ताके अनुचरहू सब मोसो वैर करे हैं जो दक्ष विश्व रचवेवारेनके यज्ञमें निरपराधी मोको दुर्वचनसों तिरस्कार करतोभयो ॥ २४ ॥ जो मेरे वचनको उल्लंघन कर तुम जाओगी तौ तुम्हारो कल्याण न होयगो, क्यों कि अतिप्रशंसितको अपने स्वजननसो तिरस्कार सदा मरणके बराबर होयहै ॥ २५ ॥

यदि व्रजिष्यस्यतिहाय मद्वचो भद्रं भवत्या न ततो भविष्यति ॥
संभावितस्य स्वजनात्पराभवो यदा स सद्यो मरणाय कल्पते ॥ २५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे उमारुद्रसंवादवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

मैत्रेय उवाच-एतावदुक्त्वा विरराम शंकरः पत्न्यंगनाशं ह्युभयत्र चिन्तयन् ॥
सुहृद्दिदृक्षुः परिशङ्किता भवान्निष्क्रामती निर्विशती द्विधाऽऽस सा ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि श्रीमहादेवजी ऐसे अपनी पत्नीके अंगको नाश दोऊ ओरसो चिंतवन कर शिवशंकर ऐसे कहि चुप भए, पिताके देखवेकी इच्छाकर शंकित हो सती कभू शिवके समीपसों बाहर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आवै कभू भीतर चलीजाय ऐसे दुग्धामें परगई ॥ १ ॥ सुहृदनकी देखवेकी इच्छा नाशसौ दुर्मन हो स्नेहसो रोवती आंसू बहाती अति विह्वल कांपतीभई जिनके समान कोई दूसरो नहीं ऐसे शिवको रोषसौ भस्म करवेके समान देखनलगी ॥ २ ॥ तहांते स्वांस लेती निकसकै शिवको त्याग, शोकरोषसों व्यथितहृदय हो स्त्रीस्वभावसों विमूढ बुद्धि, प्रेमसो जिनने अपनो अर्द्धांग दीनो विन संतनके प्यारे शिवसों विदा होय पिताके घरको जाती भई ॥३॥ शीघ्र जायवेवारी एक सतीके पीछे त्रिनेत्रके अनुचर हजारन पार्षद यक्ष मणिममदादिक वृषेंद्रको आगे करे शीघ्रतासो व्यथा दूर कर जाते भए ॥ ४ ॥ मैना गैंद दर्पण कमल सुपेद छत्र पंखा माला आदि लिये गावते भए नगारे शंख बांसुरी लिये सतीको बैलपै बैठाय प्रसन्न हैंकै चले ॥ ५ ॥ सब ओर वेदध्वनिसो जहां पशु यज्ञकी शोभा बढी है और सब ओरसों ब्राह्मण ऋषि देवता साधुनसो परिपूर्ण काष्ठ माटी लोह सुवर्ण कुश चामके बनाए भए भांडे जहां धरेहै वा यज्ञशालामें सती प्रवेश करती भई ॥६॥ वा आई भईको वहां काऊने दक्षके डरसौं आदर न कीनो एक मा बहन तो आदरसो प्रेमके आंशु भर आनंदसो मिली ॥७॥ बहिननकी क्षेम समर्थ वार्तासौ मातासो माकी बहिननसो बडे आदरपूर्वक आसन सत्कार पाई भई सती पिताके सत्कार नहीं करवेसो अतिआनंद न भई और मैया मावसीनने जो आसन सत्कार दियो वाय सतीने नहीं ग्रहण कियो ॥८॥ या यज्ञमें जब रुद्रभाग नहीं देखो तब पितासो समर्थ शिवको अनादर कियो जान सती सभासदनकों क्रोधसो ऐसे देखनलगी मानो भस्म कर देयगी ॥ ९ ॥ वह देवी सती शिवजीके तिरस्कार हैवेसो दक्षके मारवेको उठे भूतगणनकों अपने तेजसौ निवारण कर शिवसौ वैर करनवारे कर्ममार्गके अभ्याससौ अभिमानी दक्षकों सबके सुनते २ रोषकर प्रगटही धिक्कार देनलगी ॥१०॥ श्रीसतीजी बोली कि सब देहधारिनके प्रिय आत्मा शिवजीसों लोकमें न कोई बडो है, न कोई जिनको शत्रु है और न कोई जिनको मित्र है और जो समस्तके आत्मा हैंकै काऊसो वैर नहीं करै है तिनमें तुमारे विना कौन वैर करैगो ॥ ११ ॥ हे द्विज ! तुम समान निन्दक असाधु पुरुष दूसरोंके गुणनमेंसो दोषही लेयहैं और कितने एक मध्यस्थ ज्ञानसौ गुण दोष ग्रहण करै हैं और जो दोष नहीं लेते वे महान् कहे जाय हैं यही साधु है केवल गुणही ग्रहण करवेवारे महत्तम हैं जो दोषनको स्वीकार नहीं करै है और थोडे गुणनको बहुत मानते हैं ऐसे महात्मको तैंने अपराध कियो है ॥१२॥ शरीरकोही आत्माको मानवेवारे असत् पुरुष सदा महात्मानकी निंदा करैं तौ ये आश्चर्य नहीं है, कारण कि ईर्षा करवेसों महापुरुषके चरणनकी रजसो विनके तेज दूर है गये हैं उन्हें यही उचित है ॥ १३ ॥ जो शिव ये दो अक्षरनाम वाणीसे कहै, तो मनुष्यनके सब पापनको नाश करैहै जिनकी आज्ञाको कोई उल्लंघन नहीं कर सकै है विन पवित्रकीर्ति शिवको द्वेष करौ हो यासों तुम अमंगलरूप हो ॥ १४ ॥ " शिव शिव रटत संकट कटत दुख सब हटत वैरी घटत वहां नित माल बटत जब शिवाशिव नटत " जिनके चरणकमलको ब्रह्मरसमदकी चाहवारेनके मनरूप भ्रमर सेवन करैहैं जे लोकके सब अर्थ चाहनवारेनकों आशीर्वाद वर्षायवेवारे है विश्वके बंधुतो आप द्वेष करोहो ॥१५॥ तुमारे सिवाय क्या ब्रह्मादिक शिवको नहीं जानेहै, क्योंकि श्मशानमें जटा फैलाय मसानकी माल्य भस्म और मनुष्यनके कपालनकी माला धारें पिशाचनमें वसें हैं, तौहू उनके चरणकी रज ब्रह्मादिक मस्तकमें धारैं हैं वे

---

१ पिता भवन जब गई भवानी । दक्षत्रास काहु न सन्मानी ॥ सादर भलेहि मिली एक माता । जननी मिली बहुत मुसकाता ॥ २ दक्षने अपने यज्ञके स्तंभमें विज्ञापन लगा दियाथा कि जो कोई शिवका नाम उच्चारण करैगा वह चाहै ब्रह्मभी हो यज्ञसे निकाल दिया जायगा यही देख सतीको क्रोध हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अमंगलरूप है तोहू शिव है ॥ १६ ॥ धर्मरक्षकके सन्मुख निरंकुश हैके जो शिवादिकी निंदा करैं जो वा निंदकको मारवेकौ समर्थ न होय तौ कान मूंदकै वहांसो चलौ जाय समर्थ होय तौ बलपूर्वक विनकी निन्दा करवेवारी कुत्सित जिह्वाको काटै, जो न काट सकै तो प्राणत्याग करै ॥ १७ ॥ याते तोते उत्पन्न ये देह मैं न राखूंगी, कारण कि तू शिवनिंदक है, जो कोई अन्न मोहसों खाय लियो है तो वा अन्नको उच्छार करनो यही विशुद्धि है, वो अन्न निंद्य है ॥ १८ ॥ अपने धर्ममें रहिवेवारे महामुनिकी मति वेदके विधिनिषेध वाक्यनमें नहीं वर्तै है, जैसे देवता मनुष्यनकी गति पृथक् है, ऐसे प्रवृत्ति निवृत्ति लक्षण धर्ममें स्थित जीवको परधर्म वा पर पुरुषकी निंदा करनी उचित नहीं ॥ १९ ॥ प्रवृत्तिकर्म अग्निहोत्रादि निवृत्तिकर्म शमदमादि ये दोनोंही सत्य है याहीसो ये वेदमें दोनोंही बहुत विचारकै कहैहै रागी अधिकारीको प्रीति करवेवारेनको प्रवृत्तिकर्म करनो विरक्तको निवृत्ति कर्म करनो उचित है और इन कर्मनके एक संग करवेसो विरोध परै है परब्रह्म शिवजीमैं तौ दोनों कर्मनको काम नहीं ॥ २० ॥ हे पितः ! जो पदवी हमकों प्राप्त हैं वे तुम्हें न मिलैगी जो पदवी विनके अन्न खायवेवारे प्राणपोषी यज्ञशालामें हवनके धूममार्ग प्रीति करवेवारेनको नहीं प्राप्त होय है किंतु वे धूममार्गी विन पदवीनकी चाह करतेही रही जाय है वे हमारी पदवी ऐसी है कि जिनकी अप्रगट चिह्न अवधूत सेवा करैं हैं अथवा (अव्यक्तलिंगा) ये पदवीनको विशेषण है अर्थात् जे पदवी काउ है प्रेमलूम नहीं परैहै ॥ २१ ॥ शिवापराधी तुमसो उत्पन्न कुत्सितजन्मके या देहसो पूर्ण मोको तुमसरीखे दुर्जनसो लाज आवै है वो जन्म धिक्कार है जो महात्मानकी निंदा करै ॥ २२ ॥ भगवान् शिव वृषध्वजी हांसीमें कभी 'हे दाक्षायिणी' ये गोत्र उचारैंगे तौ मेरो महादुर्मन होगो, सो यह नर्ममुसकान शीघ्र दूर करूंगी, तेरेसे जन्म्यो ये अंग त्याग करूंगी ॥ २३ ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे शत्रुहन ! ऐसे दक्षसे कहि शांत वाणी हो उत्तरको मुख कर बैठ आचमन कर पीताम्बर धारे नेत्र मूंद सती योगमार्गको अनुसंधान करती भई ॥ २४ ॥ आसन जीतकर प्राण अपानको बराबर कर नाभिचक्रमें उदानवायुको उठाय बुद्धिसों हृदयमें स्थित कर अनिंदित होय वा वायुको कंठसो भ्रुकुटिके मध्यमें प्राप्त करती भई ॥ २५ ॥ महावडेनमें बडे शिवजीने जाकों आदरसो गोदीमें राख्यो, ऐसें अपने वा देहको त्यागती दक्ष प्रजापतिपर रोषकर मनस्विनी सती अपने देहमें पवन अग्निको धारण करती भई ॥ २६ ॥ तब जगद्गुरु अपने भर्ताके चरणकमलके मदकोही चिंतवन करती हतकल्मष देहकों देख समाधिकी अग्निसों जरावती भई ॥ २७ ॥ वा समय देखवेवारेनको भूमिमें आकाशमें महा अद्भुत हाहाकार होतो भयो कि खेदसौ पूज्यतम शिवजीकी प्रिया दक्षसौ कोप कराईभई प्राण त्यागती भई ॥ २८ ॥ अहो प्रजा ! या चराचर प्रजापतिकी दुरात्मता देखौ जासौ अनादृता बेटी सती सदा पूज्य प्राणनको त्यागती भई ॥ २९ ॥ सो ये महाक्रोधी हृदयवारो ब्रह्मद्रोही लोकमें महा अपकीर्तिको प्राप्त होयगो शिवद्रोही दक्ष अपने अपराधसो मरती अपनी कन्याको मने नहीं करतो भयो ॥ ३० ॥ सब जन ऐसे कहि रहे है कि सतीको यह अद्भुत देहत्याग देख आयुध उठाय शिवपार्षद दक्षकूं मारवेको उठे ॥ ३१ ॥ उनके आयवेको वेग भगवान् भृगुजी सुनकर यज्ञ नाशकनकों नाशक यजुर्मंत्रकी आहुती दक्षिणकी अग्निमें होमते भए ॥ ३२ ॥ भृगुके हवन करवेसो अपने तपके बलसो अमृत पियेभए हज्जारहों ऋभव नामक देवता उत्पन्न भए ॥ ३३ ॥ अधजरी लकडी हाथमें लिये सुन्दर ब्रह्मतेजसो बढे शिवके गणनको मारते भए जासो वे सब प्रमथ गुह्यक शिवके पार्षद सब दिशानकूं भाग गये ॥ ३४ ॥

१ दोहा- पतिके कारण रतनसी तजी सती निज देह । लाखन गारी देत अब, पतिको छांड सनेह ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तैरलातायुधैः सर्वे प्रमथाः सहगुह्यकाः ॥
हन्यमाना दिशो भेजुरुशद्भिर्ब्रह्मतेजसा ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे सतीदेहत्यागो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

मैत्रेय उवाच–भवो भवान्या निधनं प्रजापतेरसत्कृताया अवगम्य नारदात् ॥
स्वपार्षदसैन्यं च तदध्वरर्भुभिर्विद्रावितं क्रोधमपारमादधे ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि दक्षप्रजापतिकी तिरस्कार करी भवानीको नाश शिवजी नारदसो सुनकै और अपनी पार्षदनकी सेना वा यज्ञके ऋभुनामक देवनसो भगाई सुन शंकरको महाक्रोध आयो ॥ १ ॥ क्रोधकर दांतनसौ होठके पुट दबाय धूर्जटी रुद्र झट उठकर हंसे, और गंभीर नाद कर विजुरीकी अग्नि समान वारनकी उग्र कांतिवारी जटाकों भूमिमें उखाडकर पटकते भये ॥ २ ॥ तब बडो देहधारी शरीरसो स्वर्गतक लंबो, सहस्रबाहु, मेघसमान वर्ण, तीन सूर्यसमान नेत्र, कराल डाढा जलती भई अग्निवत् मूडके वार, कपालनकी माला पहिरे, अनेक उठेभए आयुध लिये खडो भयो ॥ ३ ॥ हे शिव ! कहा करूं ऐसे हाथ जोड खडे भए वासो भगवान् भूतनाथ बोले यज्ञसहित दक्षकों मारो, हे रुद्र ! हे भट ! मेरे सब भटनमें तुम अग्रणी हो, मेरे अंशसों तुम जन्मे हो ॥ ४ ॥ हे विदुर ! कुपित रुद्रने ऐसे आज्ञा कीनी सो वो वीरभद्र देवदेव शिव समर्थकी परिक्रमा करतो भयो, विस्मय और अप्रतिहत वेगसौ वह अपनेको दूसरे महाबलवाननकी शक्ति नाश करवेको पूर्ण जाननलगो ॥ ५ ॥ अत्यन्त नाद करते रुद्रपार्षद जाके साथ चले जाय, भयंकर शब्दकर जगत्की नाशक मृत्युको नाश करवेवारो त्रिशूल लिये दौडो उस समय उसके चरणके नूपुर शब्द करतेथे ॥ ६ ॥ तब ऋत्विज यजमान सभासद उत्तरकी दिशामें उडी रेणुको देख ये अंधकार कहां है ये रज कहांसू आई ऐसे द्विज और ब्राह्मणोंकी स्त्रियें चिंतन करती भई ॥७॥ पवन नहीं चलै है चोरभी नहीं है, कारण कि उग्रदंडदाता प्राचीनबर्हि राजा जीवै है, गौवोंके आगमनको समय नहीं फिर ये उडीभई धूर कहांसे आवे है क्या सब लोककी प्रलय होयगी ॥८॥ प्रसूति आदि स्त्रियें उद्विग्न मनकर बोलीं ये याहीको अपराध है, जो सब बेटीनके देखते देखते निरपराधिनी सुता सतीकी अवज्ञा करतोभयो ॥ ९ ॥ जो शिव अंतकालमें जटासमूह फैलाय अपने त्रिशूलके अग्रसे दिग्गजेंद्रनको छेदे हैं, सब अस्त्रयुक्त भुजारूप ध्वजाको विस्तार कर नाचते और उच्च अट्टहास करतेहैं जिस हास्यके गर्जनसै दिशायें फटजाती हैं ॥ १० ॥ जिनके क्रोधसै तारामंडल विखरगया है क्रोधसै भरी भौं और तीक्ष्ण डाढोंसै दुःसह तथा असह्य तेजस्वी महादेवजीके क्रोध कराकर ब्रह्माकाभी मंगल नहीं होताहै ॥ ११ ॥ महात्मा दक्षके यज्ञमें बहुत जन उद्विग्न दृष्टिकर जब इस प्रकार कहनेलगे उसी समय महाभयदाता हजारों उत्पात स्वर्गमें भूमिमें सब ओरसें होनेलगे ॥१२॥ हे विदुर ! इतनेमेंही अनेक आयुध लिये काले पीले मकरकी समान पेट और मुखवारे वामन आदि अनेक प्रकारके रुद्रानुचरनने वा यज्ञको आयकै घेरलियो ॥१३॥ शिवजीके किन्ही गणनने तो यज्ञशालाके पूर्व पश्चिमस्तंभके पास प्राग्वंश किन्हीने पश्चिम और पत्नीशालाकूं तोडो यज्ञशालाके आगे स्थित सभामंडप किसीने तोडो, सभाके आगे अग्नि धरवेकी शाला काऊने तोडी कोईने यजमानको घर तोडो, कोई पाकभोजनशाला तोड डारी ॥१४॥ कोईने यज्ञके पात्र फोड डाले कोईने अग्नि नाश

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करदीनी, कोईने कुंडमें मूत दीनो, कोईने वेदी परीखाई सब भेदन कीनी ॥ १५ ॥ औरनने मुनीनको बाधा कीनी काऊने स्त्रियनको तर्जन कियो औरनने देवता पकडलीने, जे पास हे विने पकडे जे भाजै विन्हें पकरे ॥ १६ ॥ मणिमान भृगुको बांधते भए, वीरभद्र प्रजापतिको चंडीश पूषाको पकडते भए, नंदीश्वर भगवदेताकों पकडतेभये ॥ १७ ॥ सब ऋत्विज सभासद सब देवता शिवके गणनसों पीडित पत्थरनकी मारसों अत्यन्त पीडित हो भागते भये ॥ १८ ॥ स्रुवा हाथमें लिये हवन करतेभए भृगुको मूंछ भगवान्भवगण वीरभद्र उखाड लेते भये, क्योंकि शिवशापके समय मूछ दिखायके भृगु हंसे हैं ॥ १९ ॥ परे भये भगदेवताके नेत्र क्रोधकर भगवान्गण उखाडते भये, जो सभामें बैठे शाप देती वक्त सूचना करतोभयो ॥ २० ॥ जैसे कलिंग राजाके दांत बलदाऊने झाडे, तैसे पूषाके दांत झाडते भए, जब दक्ष शिवको शाप दै रहेहै वा समय यह दांत दिखायकै बहुत हंसे हे ॥२१॥ दक्षकी छातीपै चढ पेनी धारकी तलवारसो त्र्यंबक वीरभद्र वाको शिर काटवेको उद्यत भए तौहू न सामर्थ्य भई ॥ २२ ॥ मंत्रसहित शस्त्रनसोहू शिवगणद्वारा जब त्वचा वाकी न कट सकी तब बडो विस्मय भयो थोडी देर पशुपतिको ध्यान कीनो ॥ २३ ॥ पशुनके पति वीरभद्र वा यज्ञमें कंठ घोटके दक्षके मारवेको उपाय देखकै यजमान पशुरूप दक्षको शिर पराक्रमपूर्वक देहसो उखाड देते भए ॥ २४ ॥ बहुत अच्छो भयो ये वाके कर्मकी जहां तहां भूतप्रेतपिशाचनमें प्रशंसा भई, औरनको यही बुरी लगी ॥ २५ ॥ रुद्रगण दक्षिणाग्निमें दक्षको शिर हवन करते भए. क्रोधके मारे वो देव यज्ञ स्थान जरायकै कैलासको चले गए ॥ २६ ॥

जुहावैतच्छिरस्तस्मिन्दक्षिणाग्नावमर्षितः ॥
तद्देवयजनं दग्ध्वा प्रातिष्ठद्ह्यकालयम् ॥ २६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कंधे वीरभद्रेण दक्षयज्ञविध्वंसनवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

अध्याय ६.

मैत्रेय उवाच–अथ देवगणाः सर्वे रुद्रानीकैः पराजिताः ॥
शूलपट्टिशनिस्त्रिंशगदापरिघमुद्गरैः ॥ १॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि याके अनंतर रुद्रकी सेनासो पराजित सब देवगण शूल पट्टिश निस्त्रिंश गदा परिघ मुद्गरसों पीडित हो ॥१॥ टूटे कटे सब अंगवारे ऋत्विक् सभासद वहांसो जाय भयभीत ब्रह्माको नमस्कार कर ये सब वृत्तांत कहितेभए ॥ २ ॥ प्रथमसेही ये सब होनहार जान कमलोद्भव ब्रह्मा और विश्वात्मा नारायण दक्षके यज्ञमें नहीं गये हे ॥३॥ तेजस्वीनको अपराध करनो सुन ब्रह्माजी बोले कि ॥ ४ ॥ यद्यपि ऐसे है तथापि तुम सब अपराधी हो जो दूरसो यज्ञमें शिवको भाग न दीनो, शीघ्र प्रसन्न होयवेवारे शिवके चरणकमल पकडकर शीघ्र शुद्ध चित्त कर प्रसन्न करो, तो सब क्षमा करेंगे ॥५॥

---

१ वीरभद्रके आनेपर ऋषियोंने इस कारण वेदमंत्रोंका आवाहन नहीं किया उन्होंने सतीको भस्म देख अशुचि होजानेसे जान लिया था कि अब शीघ्र यज्ञ विनष्ट हो जायगा इसी कारण मंत्रोंका विसर्जन कर दिया था ॥

२ तेजीयांसि कृतागसि सति तत्र तेजीयांसि बुभूषतां प्रतीकारं कर्तुं इच्छतां पुंसां सा बुभूषा प्रायेण क्षेमाय न भूयात् इत्यन्वयः ॥ अर्थ या श्लोकको यह है ब्रह्माजी कहै हैं कि देवताहो जो तेजस्वी पुरुषपे अपराध कोई अनुचित कर्म बन जाय तौ विनसौ कछु न कहे वाय सहि लेय और जो विनके किये अनुचित कर्मके बदलें विनसो बदलो लेवेके लिये कछु करवेकी इच्छा करे तो वो इच्छा करनो बदले लेवेवारेके क्षेम नाम कल्याणके लिये नहीं होय है अर्थात् परिणाममें नुकसानही होय है ये अर्थ है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हम ये चाहैं हैं कि दक्ष जीवे, यज्ञ फिर होय, जिनके कोपसो लोकपालसहित लोक नष्ट है जाय है, तिन प्रियरहित देवको शीघ्र प्रसन्न करो, दुष्ट दक्षके वचननसो इनको हृदय विध रह्यो है ॥ ६ ॥ हम यज्ञ भगवान्, तुम सब और देहधारी मुनिजन जिनके बलके तत्वको नहीं जाने हैं, न प्रमाण, न बलवीर्य जानैहै, उन अपने आधीनवारेको कौन उपायसे जानसकें ॥ ७ ॥ ब्रह्माजी ऐसे देवनसो कहिकै देवता पितृ प्रजाके ईश्वरको संग ले, अपने स्थानसो त्रिपुरद्रोही प्रभुके प्रिय श्रेष्ठ पर्वतोत्तम कैलासको जाते भए ॥८॥ जहां जन्म, औषधि, तप, मंत्र, योग, इन्हसो सिद्ध देवता किन्नर गंधर्व अप्सरा वास करै हैं ॥ ९ ॥ नानाप्रकारकी मणिमय शृंगयुक्त अनेक प्रकारकी धातुसो विचित्रित, जहां अनेक प्रकारसो वृक्ष और लतानसो गुच्छा लटक रहे हैं मृगादि क्रीडा कर रहे हैं ॥१०॥ जहां नानाप्रकारके निर्मल झरना झरते जहां नानागुफानके समीप भूमिमें विहरती भई पतिसहित सिद्धनकी स्त्रियनके विहारस्थान हैं ॥ ११ ॥ जहां मयूर अपनी केका वाणी बोल रहे हैं, मदांध भौंरा गुंजार रहेहैं कोकिला कुहू शब्द कर रही हैं पक्षी कूज रहेहैं ॥१२॥ वृक्ष कामदायक ऊंची शाखानके हलवेसों मानो पक्षीनको बुलावै हैं, और मत्त हाथी जो डोल रहे है सो यह मालूम परै है मानो पर्वत चल रह्यो है झरनानकी ध्वनिसों बातेंसी करते मालूम पडै है ॥१३॥ मंदार पारिजात सालसो शोभित है, तमाल, शाल, ताल, कचनार, असन, अर्जुनसो शोभित कैलास है ॥१४॥ आम, कदम्ब, कल्पवृक्ष, नाग, पुन्नाग, चंपक, पाटल, अशोक, बकुल, कुन्द, कुरबक ॥ १५ ॥ स्वर्ण, अर्ण, शतपत्र श्रेष्ठ वांस और जात नाम चमेली कुब्जक मल्लिका माधवीकी लतानसों शोभित है ॥ १६ ॥ ढाक, गूलर, पीपर, पाकर, न्यग्रोध, हींग, भोजप्रत्र, औषधी, सुपारी, मोटी सुपारी, जामन ॥१७॥ खजूर, आमरे, आम्रातक, प्रियाल, मधूक, इंगुदी और अनेक वृक्ष जात जातके हैं, वेणुकीचकनसो शोभित है ॥ १८ ॥ कुमुद, उत्पल, कल्हार, शतपत्र वनमें शोभित है, कमलिनीमें कूजवेवारे मनोहर पक्षी वृंदनसो शोभित है ॥१९॥ मृग, शाखामृग, वानर, शूकर, सिंह, ऋक्ष, शेही, गवय, टीडी, भिंडिया, रुरु, महिष आदि पशुनसो सघन है ॥ २० ॥ कर्णनमें आंतनवाले पशु, एक पदके जीव, घोडाके समान मुखके जानवर, वृक, ल्यारी, कस्तूरीमृग फिर रहे हैं केराके समूहनसो रुकी भई कमलिनीयुत सरोवरनके पुलिननकी शोभा होय रही है ॥ २१ ॥ नंदानामकी गंगा चारों ओर वहै है, सतीजीके स्नानकी सुगंधसो पुण्यरूप हैरही है, भूतेश शिवजीके पर्वतको देख देवता विस्मय होते भए ॥२२॥ तहां रमणीक अलकानाम्नी पुरी देखते भए, सुगंधिक नामको वन देखतेभए जा वनमें सौगंधिकनामके कमल खिल रहेहै ॥ २३ ॥ नंदा अलकनंदा दोउ पुरसों बाहर सरिता हैं, श्रीहरिके चरणकमलरजसों वे नदी अत्यंत पवित्र हैं ॥ २४ ॥ हे विदुर ! जहां रतिसो कर्षित हो देवतानकी स्त्रियें अपने स्थानसो उतरकर स्नान करै है, अपने पुरुषनपर जल छिरकती भई खेलै हैं ॥ २५ ॥ जिनके स्नानके धोवनके नवीन केसरसम पीरे जलको बिना प्यासहू गज पीवैं हैं, गज गजीनको प्यावै है ॥ २६ ॥ चांदी सुवर्ण महारत्नके विमान सैकडों सघन हैं पुण्यजननकी स्त्रीन करके सेवित है, जैसे बिजुरी मेघमें शोभित होय है ॥ २७ ॥ ऐसी कुबेरकी अलकानाम पुरीको त्याग और सुगंधिक वनमें पहुँचे जहां मनोरथ पूरण करवेवारे वृक्षनसों सघन चित्र विचित्र माला फल पत्र हैं ॥२८॥ लाल कंठनाम कोकिल पक्षीनके स्वरसो शोभित भ्रमरनके मनोहर शब्द होयहै, मधुर हंसकुल प्रिय कमलयुक्त जलाशय है ॥२९॥ वनके हाथिनकरकै घिसे हरित चन्दन वृक्षनकी वायु करकै यक्षनकी स्त्रीनकै मनकों वारंवार मथैं हैं ॥३०॥ मूंगनकी सीढीवारी बावरी कमलनकी मालनसों शोभायमान हैरही है किंपुरुषन करके प्राप्त नाम जाके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नीचे सेकरान किंपुरुष विहार कर रहे हैं ऐसो एक वटको वृक्ष देखो ॥ ३१ ॥ चारसे कोस ऊंचे वट है, तीनसे कोसमें चौडो, सब ओर सघन अचल छायावारो पक्षीनके घोसलें रहित तापसौ वर्जित है ॥ ३२ ॥ ता वटके नीचे महायोगमय मुमुक्षुनके रक्षक क्रोध त्यागे अंतककी समान बैठे शिवको देवता दर्शन करते भये ॥ ३३ ॥ सनंदन आदि शांत शरीरी महासिद्ध शांतस्वरूप शिवकी उपासना करतेहैं तथा राक्षस यक्षनके पति कुबेरहू सेवामें तत्पर हे ॥ ३४ ॥ विद्या तप योग मार्गमें स्थित, सबके ईश्वर विश्वके सुहृद, वात्सल्यतासों सब लोकनको मंगलदायक ॥ ३५ ॥ तपस्विनके प्रार्थनीय चिह्नधारे भस्म लगाए, जटाधारे, गजचर्म ओढे संध्याके मेघपंक्तिकी कांतिके समान देह और चंद्रलेखा धारे हैं ॥३६॥ कुशासनपर बैठे सज्जननके सामने पूछते भए नारदके अर्थ शिवजी वा समय सनातन ब्रह्मको उपदेश करतेहे और बहुतसे संतजन सुन रहे हैं ॥ ३७ ॥ वांए पादपद्मको दहिने ऊरुपर धर जांघपर दहनी बाहु करे दहिने बाहुके प्रकोष्ठपें अक्षमालाकरकै तर्कमुद्रा धारे बैठे हैं, सो तर्कमुद्रा योगशास्त्रमें है "एकपादमथैकस्मिन्विन्यसेदूरुसंस्थितम् । इतरस्मिंस्तथा बाहुं वीरासनमिदं स्मृतम् ॥ १ ॥ तर्कमुद्रा चोक्ता–तर्जन्यंगुष्ठयोरग्रे मिथः संयोज्य चांगुलीः॥ प्रसार्य बंधनं प्राहुस्तर्कमुद्रेति मांत्रिकाः॥२॥" ॥३८॥ ब्रह्मसुखकी समाधिमें स्थित, सबसो विरक्त गिरीश योगज्ञानी सब मनूनके आद्य मनु शिवजीको हाथ जोडकर सब लोकपाल सहित मुनिलोग प्रणाम करते भए ॥ ३९ ॥ सुर असुरनसों वंदित चरणवारे शिवजी ब्रह्माजीको आयो देख उठ खडे होकर सर्व पूज्य विष्णु वामनजी जैसे कश्यपको प्रणाम करै तैसे शिवजी ब्रह्माको प्रणाम करते भये ॥ ४० ॥ तैसेही और सिद्धगण महर्षिनने जे शंकरके निकट बैठे हे ब्रह्माको प्रणाम कियो या प्रकार प्रणामको प्राप्त हो ब्रह्माजीने हास्यपूर्वक चंद्रशेखर महादेवजीसो कह्यो ॥ ४१ ॥ ब्रह्माजी बोले कि हे ईश ! आप जगत्के स्वामी जगत्की शक्ति बीजरूप प्रकृति पुरुषके कारण भेदरहित और निर्विकार हो मैं आपकूं जानो हूं ॥४२॥ हे भगवन् ! स्वरूपधारी शिवशक्तिरूप तुमही हो, विश्वकी रचना पालन संहार ये सब आपही मकडीकी नाईं करै हो ॥ ४३ ॥ वेदकी रक्षा करवेके निमित्त आपनेही दक्षके द्वारा यज्ञ करायो हे जगत्की मर्यादा आपहीकी कीई है जाकों व्रतधारी ब्राह्मण श्रद्धासो धारै हैं ॥४४॥ हे मंगलरूप ! शुभकर्म कर्ताको स्वर्ग परलोक दाता तुमही हो अशुभ कर्म करवेवारेनको भयंकर अंधतामिस्र तुमही देओहो, फिर या नियमसो विपरीत फल कैसे मिल सकहै ॥४५॥ तुम्हारे चरणनमें अर्पित मन आत्मावारे और सब जीवमात्रमें आपको देखवेवारे तथा सब जगत्में अपनो रूप देखवेवारे श्रेष्ठ पुरुषनकोहू बहुधा अज्ञानिनकी समान क्रोधसो तिरस्कार नहीं है सकै है तब आपकी तो कथाही कहा है ॥ ४६ ॥ पृथक् बुद्धिवारे कर्ममें दृष्टि राखनहारे दुष्ट हृदय पराएकी संपदा देख हृदयमें जलनहारे औरनको कटुक वचन तथा मर्मभेदी वचन कहनवाले औरनको दुर्वचननसौ पीडित करै परन्तु इन दैवहतनको आप न मारै वे तो आपही बिचारे मरे परे हैं ॥ ४७ ॥ जा देशमें जा समय दुरंत कमलनाभकी माया करकै पृथग्दृष्टिवारे मोहित है जाय है, तब तहां साधु विनपै कृपा करै है, दैवबलसों उनपै क्रोध नहीं करै है ॥४८॥ आप तो परम पुरुषकी कठिन मायासों लिप्त नहीं हो समस्तके द्रष्टा परन्तु वा मायाकरकै लिप्त सदा कर्ममें लगे पन हे प्रभो! तुम कृपा करवे योग्य हो ॥ ४९ ॥ हे रुद्र ! वह यज्ञ हे मनु यह यज्ञ जामें यज्ञ करनेहारे अज्ञाननने यज्ञफलदाता आपको यज्ञको भाग नहीं दियो याहीसौ आपने जाको विध्वंस कियो ऐसे अपूर्ण प्रजापतिके यज्ञको उद्धार करो ॥ ५० ॥ ये हमारो यजमान जीवे, भगको नेत्र मिले भृगुके मूछ आंवे पूषाके पूर्ववत् दांत निकसै ॥ ५१ ॥ और देवतानके वा ऋत्विजनके जे जे अंग आयुध पाषाणनसों टूटे हैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो हे मन्यो! विनपै अनुग्रह कर तुम सबको आरोग्य करो ॥ ५२ ॥ या यज्ञको जो उच्छिंष्ट है सो आपको यज्ञभाग होय हे यज्ञहन्! रुद्रके भाग करके ये यज्ञ तुम्हारो पूर्ण होय ॥ ५३ ॥

एष ते रुद्र भागोऽस्तु यदुच्छिष्टोऽध्वरस्य वै ॥
यज्ञस्ते रुद्रभागेन कल्पतामद्य यज्ञहन् ॥ ५३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे रुद्रसांत्वनवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

मैत्रेय उवाच–इत्यजेनानुनीतेन भवेन परितुष्यता ॥
अभ्यधायि महाबाहो प्रहस्य श्रूयतामिति ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि हे महाबाहो ! ऐसा ब्रह्माने जब प्रार्थना करी तब प्रसन्न हो शिवने जो कह्यो सो तुम सुनो ॥ १ ॥ श्रीमहादेवजी बोले हे प्रजेश ! बालकनको अपराध न तो हम कहें, न चिंतवन करें देवमायासो तिरस्कृत पुरुषनको मैंने दंड धारण कीनो[२] है ॥ २ ॥ दक्षप्रजापतिको शिर जराय दीनो हैं याते बकराको मुख वाके होय, भग देवता मित्रके नेत्रनसों देखै यज्ञमें भाग लेवै ॥ ३ ॥ पूषा पिसे भएको खाय और यजमानके दांतनसो भक्षण करै जिनने मोको यज्ञोच्छिष्ट दीनो वे देवता सर्वांगसो पूरे होय ॥४॥ अश्विनीकुमारके बाहुसो पूषाके हाथको काम होय और अध्वर्यु जैसे पहिले हे तैसे होय भृगुके बकराकी डाढी होय ॥ ५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे विदुर तब सब भूतमात्र शिवकी वाणी सुन प्रसन्न भए, साधु साधु बोले ॥ ६ ॥ ताके उपरांत शिवसो आज्ञा ले ऋषिसहित इंद्रादिक सब देवता शिव ब्रह्माको साथ ले वा देवयजनस्थानको जाते भये ॥७॥ तहां संपूर्णतासों यज्ञ कराय जो भगवान् शिवने कह्यो सो सब वैसेही कर दियो याज्ञिक पशु बकराकोही शिर दक्षके लगाय दियो कारण कि दक्षको शिर जल गयो हो ॥८॥ शिर जोडके जब शिवजीने दक्षकी ओर देखौ तौ वह दक्ष सोये हुए पुरुषकी समान उठ बैठो आगे शिवजीको देखो ॥९॥ तब शिवके द्वेषसो कलुषी आत्मा प्रजापति दक्ष शिवके दर्शनसो शरदकालके सरोवरकी समान निर्मल होतो भयो ॥१०॥ शिवस्तोत्र करवेमें मन कियो पर अनुरागसो सामर्थ्य न भई, उत्कंठासों आसू वहेहैं, मरी सुताको याद करतेभये॥११॥कष्टसों मनकों जीत, प्रेमविह्वल सुबुद्धिसो कपट त्याग भावनाकरकै शिवजीकी दक्षप्रजापति स्तुति करतो भयो ॥ १२॥ दक्ष बोले कि हे भगवन् ! आहो बडो अनुग्रह आपने मोपे कीनो. मोसे तिरस्कृत हो आपने मोको दंड दीनो आप और नारायण जब अधम ब्राह्मणनकी उपेक्षा नहीं करो होतौ नियमव्रतधारी श्रेष्ठ ब्राह्मणनकी तौ कैसे आप उपेक्षा करो ॥१३॥ विद्या तप व्रतधारी श्रेष्ठ ब्राह्मणनकों अपने वेदमार्गकी रक्षा करवेको पहले मुखसे तुम रचतेभए, ताते हे विभो ! ब्राह्मणनकों सब विपत्तिमें जैसे ग्वारिया गउनकी रक्षा करै है ऐसे पालन करोहो, हे परम ! उनको पशुनकी नाईं दंड देओहो जो तुमारे वेदसो विरुद्ध हैं ॥ १४ ॥ जो तुम्हें मैंने तत्वज्ञान दृष्टि न करकै सभामें दुर्वाक्यरूप बाणनसो मारे हे सो वो बात कछु नहीं गिनकर बडेनकी निंदासो नरकमें पडते भए मोकों कोमल दृष्टिसों रक्षा करतेभए सो भगवान् अपने करे भए उपकारसों आपही संतुष्ट हो ॥ १५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे शिवसो क्षमा

१ उच्छिष्ट शब्द गर्हित नहीं है इसका यह अर्थ है कि चौदह भुवनके नष्ट होनेपरभी जो शेष रहे वा जो सबके ऊपर रहे वह उच्छिष्ट है आनन्दस्वरूप ब्रह्मका नाम उच्छिष्ट है यज्ञ नाम संसारका है संसारके नाश होनेपर जो ब्रह्मानन्द शेष रहता है वह उच्छिष्ट है वही शिवका भाग है ॥ २ दक्षको अभिमानी पापी समझ उसे दंड दे शुद्ध किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कराय ब्रह्माजीसो सलाह करके उपाध्याय ऋत्विज अग्नि सहित सब कर्म सुंदरतासो विस्तार करते भए ॥ १६ ॥ तीन कपालनमें संस्कारकर सिद्ध कियो पुरोडाश विष्णुके निमित्त यज्ञ संपूर्णके अर्थ प्रमथादि वीरनकी शुद्धिके लिये द्विजनमें उत्तम देते भए ॥ १७ ॥ हे विदुर ! अध्वर्यु जब यजमानसो विशुद्ध बुद्धिसो हवन करावते भये तब श्रीहरि प्रगट होतेभये ॥ १८ ॥ ता समय अपनी कांति करकै दशो दिशाको प्रकाश करते गरुडजीके पंखनके शब्दसों सामवेदध्वनि सहित सबके तेजको ग्रहण करते भये श्रीभगवान् यज्ञमें पधारे ॥ १९ ॥ श्यामसुंदर पीत पीतांबर सूर्यसमान किरीटधारी नील अलक रूप भ्रमरनसो शोभित मुखसो शंख कमल चक्र शरचाप गदा खड्ग ढालधारे सुवर्णमय भुजानसो फूले कनेरकी समान शोभित होते श्रीभगवान् प्रगट भये ॥ २० ॥ वक्षस्थलमें श्रीजी विराजे, वनमाली, उदार हासीयुक्त अवलोक कलाकरके विश्वकों रमावते जिनके पार्श्वमें घूमते भये व्यजन, चमर और राजहंसवत्, श्वेतछत्र जिनके ऊपर शशिसम शोभायमान है ॥२१॥ तिनकूं आयो देख सब सुरगणादिक शीघ्र उठके ब्रह्मा इंद्र शिवसहित प्रणाम करतेभये ॥ २२ ॥ तिनके तेजसों सबकी कांति हत भई; गद्गद वाणी भई मोहसो अंजलिनके संपुट शिरपर करके भगवान्की स्तुति करवे लगे ॥ २३ ॥ जिनकी महिमा जानवेको ब्रह्मादिकनकीहू वृत्ति नहीं पोहचे हैं विन ब्रह्मादिकनके अनुग्रहके लिये विग्रह धारण करवेवारे ईश्वरकी यथामति सब स्तुति करतेभये " दक्षऋत्विग्सदस्येशभृगुब्रह्मेंद्रयोषितः ॥ ऋषयश्च तथा सिद्धा यजमानी च लोकपाः ॥१॥ योगिब्रह्माग्निदेवाश्च स्तुवन्ति जगदीश्वरम् ॥ तथा गंधर्वविद्याधरब्राह्मणाश्च पृथङ्मतैः ॥२॥" ॥२४॥ दक्ष बडे आनंदसे पूजनकरवे सब उत्तम उपाय लेके यज्ञके ईश्वर विश्व रचवेवारेनको परम गुरु सुनंद नंद आदि अनुगनकरके युक्त जो भगवान् है तिनें हाथ जोड स्तुति करतो भयो ॥२५॥ दक्ष बोले शुद्ध जाग्रदादि अवस्थानरहित अद्वितीय भयरहित अपने स्वरूपमें अवस्थान करवेवारे चिन्मात्र हो मायाको तिरस्कार कर यद्यपि आप स्वतंत्र हैके वर्तमान होउ हो तथापि जब आप वाही अपनी योगमायासें देह धारण करके वा मायामें स्थित होयके वर्तमान होउहो तब आप ऐसे मालुम परौ हौ मानौ शुद्ध नहीं हो तिनको प्रणाम करो हो ॥ २६ ॥ सब ऋत्विज स्तुति करते बोले कि हे उपाधिविमलरहित ! हे भगवन् ! नंदिके शापसो हम कर्ममें सदा लगे रहे हैं, सो आपके तत्वको हम नहीं जानैहैं धर्मको उपलक्षण वेदत्रयी प्रतिपाद्य यज्ञरूपही आपके स्वरूपको जाने हैं जाके जानवेसो देवताधिकार करके ये सब व्यवस्था है कि या यज्ञमें येही देवता है और कोउ देवता नहीं है ऐसो नियम है अथवा (व्यवस्था) ये पद लुङ्को है तब यहां अटको आगम नहीं कियो जाननो जाकी सिद्धिके लिये इंद्रादिक अधिरूपको विशेकषरके तुम स्थित होते भये ॥२७॥ सभासद बोले कि हे शरणद ! रक्षकहीन अनेक क्लेशको गढ, मृत्युरूप सर्पसो युक्त विषयमृगतृष्णामें लीन सुखदुःखरूप जामें गढेला संपूर्ण खलमृगनके भययुक्त शोक दावानलमें मग्न; उत्पत्तिके मार्ग संसारके जो वर्त्तमान है, वामें गमन करतो तृष्णासो पीडित विषयरूप मृगतृष्णाके मलवाले शरीर और गृहके दुस्तर भारको वहन करतो भयो यह अज्ञानिनको समूह आपके चरणरूप स्थानको कब प्राप्त होयगो ॥ २८ ॥ रुद्र बोले कि हे वरद ! सत् अर्थदायक अनेक मनोरथनकी प्राप्तिकी इच्छाकरके असक्त

---

१ अर्थात् संसार वनीमें परो ये अज्ञजीवनको संग जाने कौनसे दिन तेरे चरणसामीप्यरूप अपने घरको आवेगो वा वनीमें अजगर होय है या वनीमें काल नहीं है सोही अजगर है वहां मृगतृष्णा होय है यहां विषय हैं वहां दावानल होय है यहां शोक दावानल है वहां अनेक ल्यारी आदिकनको भय होय है यहां खलरूप ल्यारीनको भय है इत्यादि सब रूपक समझ लेना ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुनिनकरकै आदरसो पूजनीय तुम्हारे चरणकमलमें अपने मनको लगायेहूं वा मोको यह अज्ञानी संसार यद्यपि आचारभ्रष्ट कहै हैं तथापि आपके अनुग्रहसो मैं विनकी बातनको नहीं गिनौहो ॥२९॥ भृगुजी बोले कि जिनकी गहेरी मायासों शरीरधारी ब्रह्मादिकहू देहधारी तममें सोए भये आत्मज्ञान भूले है, अवहू आत्मामें रहिवेवारे तुम्हारे तत्त्वको नहीं जानै है, सो प्रणतनके आत्मबंधु भगवान् मोपर प्रसन्न होओ ॥३०॥ ब्रह्माजी बोले कि ज्ञान अर्थ गुणाश्रय आप स्वरूप पदार्थभेद ग्रहणवारी इंद्रियों करके ये पुरुष जब देखेहै, तब मायामय पदार्थोंसे पृथक् तुम याको मोक्ष देओहो[1] ॥३१॥ इंद्र बोले कि हे अच्युत हे विश्वभावन ! सुरविद्वेषीनके नाशक ऊंचे उठाये भए शस्त्रनवाली आठ भुजा युक्त यह आपको स्वरूप मन शरीर और दृष्टिको आनंद करवेवारो है ॥ ३२ ॥ सब पत्नियां बोलीं कि ये यज्ञ तुम्हारे यजनके अर्थ दक्षने कीनो हो सो पशुपतिने आज कोपसो विध्वंस कीनो, हे कमलनाभ हे शांतबुद्धिवारे हे यज्ञात्मन् ! कमलसरीकी दृष्टिसों या यज्ञकों और हमें पवित्र करो ॥ ३३ ॥ ऋषि बोले कि हे भगवन् ! आपकी ये विशेष करकै चेष्टा काऊसो नहीं जानी जाय है जो आप कर्मनको करोहो पन विन कर्मनकरके आप लिप्त नहीं होउहो कारण कि दूसरे प्राणी समृद्धिके निमित्त जा लक्ष्मीको भजन करै हैं वो लक्ष्मी आपको अनुसरण करै है तथापि आप वाय आदर नहीं देउहो ॥ ३४ ॥ सिद्धलोग बोले कि क्लेश दावाग्निसो दग्धप्यासो ये मनरूप हाथी तुम्हारी कथारूप उज्ज्वल अमृतनदीमें आय न्हायकै फेर दावाग्निको नहीं स्मरण करैहै और ब्रह्मसंपत्तिको प्राप्त भयेकी तरह फिर आपकी कथारूप नदीमें सो कभूहू नहीं निकसे है॥३५॥ यजमाननी बोली कि हे सुंदर ! प्रसन्न हो, हे ईश ! हे श्रीनिवास ! आप भले पधारे तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय, प्यारी श्रीसहित हमारी रक्षा करो, हे अधीश्वर तुम्हारे विना ये यज्ञ शोभा नहीं देयहै जैसे शिरहीन कबन्ध नाम रुंड शोभा नहीं देयहै ॥ ३६ ॥ लोकपालक बोले कि असत्पदार्थ ग्रहण करवेवारी इंद्रियनसो हमने आपको देखो है कहा अर्थात् नहीं देखो सर्वद्रष्टा आप हो, जा करकै विश्व दीखै है हे भूमन् ! ये आपकी माया है, जो छटे तुम पांच तत्वनसो प्रकाश करो हो ॥ ३७ ॥ योगेश्वर बोले कि हे प्रभो हे ईश हे वत्सल ! जो पुरुष विश्वके आत्मामें तुम अपने आत्माको पृथक्ताको नहीं समझै है वासो प्यारो कोई आपको और नहीं है, यद्यपि ऐसे हो तथापि अनन्यभक्तिकरकै जो आपकी उपासना करै है विनपै अनुग्रह करो हो ॥ ३८ ॥ दैवसो जगत्की उत्पत्ति स्थिति लयमें बहुत भेद करवेवारे गुणवारी आपकी मायाने आप तीन देवके भेद रचे हैं परन्तु स्वरूपकी स्थिति करके जिनने भेदकी भ्रांति निवृत्ति कीनी है ऐसे आप परमेश्वरको नमस्कार होय ॥ ३९ ॥ ब्रह्माजी बोले कि सत्त्वावच्छिन्नधारी धर्मादिकनके उत्पत्तिकर्ता निर्गुणके अर्थ नमस्कार होय, जिनके स्वरूपकों हमहू नहीं जानै हैं न और कोई जान सकै है ॥ ४० ॥ अग्नि बोले कि सुंदर दीप्ततेजवारीमें अग्नि जाके तेज करकै यज्ञनमें चुचाते घृतको हव्य धारण करूं हूं, ऐसे यज्ञरूप पाच प्रकार करके पंच यजुर्मंत्रन करकै सुंदर यजन योग्य यज्ञमूर्ति भगवान्को हम प्रणाम करै है, वे पांचविध ऐतरेय उपनिषदकी श्रुतिमें है। स एष यज्ञः पंचविधो अग्निहोत्रं दर्शपूर्णमासौ चातुर्मास्यानि पशुः सोम इति। तथा च श्रुतिः "आश्रावयेति चतुरक्षरमस्तु श्रौषडिति चतुरक्षरं यजेति द्व्यक्षरं ये यजामह इति पंचाक्षरं द्व्यक्षरो वषट्कारः" ॥ ४१ ॥ देवता बोले कि पहिले महाप्रलयमें अपनो रचो विश्व सब उदरमें कर तुमही पुरुष आद्य

---

१ ये पुरुष जबताईं भेदकी ग्रहण करनवारी इन्द्रियन करके जो कछु देखेहै ये आपको रूप नहीं है क्योंकि ज्ञानके अर्थनके और गुणनके आश्रय तुम हो ऐसे कहेसो हो जो कि तुम मायामय जो कछु है वासो न्यारे हौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वा जलमें शेषशय्यापैसोओ हौ सिद्धनने हृदयमें जिनकी अध्यात्म पदवी विचारीसो ईश्वर अस्मदादिकनके नेत्रगोचर भए, सो अपने दासनकी रक्षा करौ ॥ ४२ ॥ गंधर्व बोले कि हे देव ! मरीचि आदि ब्रह्मादि देवगण रुद्र जामें मुखिया ये सब आपके अंशके अंश भाग हैं, ये विश्व जाकी क्रीडाको भांड है, हे विभूमन् ! हे नाथ ! तिन तुम्हें नित्य हम नमस्कार करै हैं ॥ ४३॥ विद्याधर बोले कि तुम्हारी मायाकरके या देहमें सत्यता मानके मम अहं दुर्मतिको प्राप्त भयो पुरुष उत्पथमें पटकनवारी इंद्रियनने असद्विषय लालसामें पटको है सोहू आत्माको मोहको तुम्हारी कथामृतसेवासो दूर करै है ॥ ४४ ॥ ब्राह्मण बोले कि तुम यज्ञ हवि, तुम अग्नि आपही मंत्ररूप हो तुम समिधा तुम दर्भ पात्र, तुम्ही सभासद तुमही स्त्रीपुरुष तुम्ही ऋत्विक् तुमही देवता तुमही अग्निहोत्र स्वधा सोमवल्ली लता घृत दुग्ध सब रूप आपही हो याते आपको नमस्कार है ॥ ४५ ॥ हे त्रयीगात्र ! तुम पहिले महासूकर होय लीलासो महानाद करते दंष्ट्राकरके रसातलसो पृथ्वीको गजेंद्र जैसे पद्मिनीको लावै तैसे लावते भए, योगिनने स्तुति कीनी, यज्ञरूप क्रतुरूप आपही हो ॥४६॥ सो तुम हमपे प्रसन्न होओ, सत्कर्मसो परिभ्रष्ट अपने दर्शनकी चाहवारेनको दर्शन देओ, हे यज्ञेश ! मनुष्य तुम्हारो नाम रटैं तो सब यज्ञके विघ्नक्षय होय हैं ऐसे आपके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे भद्र विदुर ! या प्रकार दक्ष, कवि, चतुर जो दक्ष प्रजापतिसो रुद्र नाम रुद्रांश वीरभद्र करके विनाशित यज्ञको फेर प्रवर्त करते भए यज्ञभावन हृषीकेशको कीर्तन करतेभए ॥४८॥ हे पापरहित भगवन् ! अपनो भाग ले सर्वात्मा सब भागके भोक्ता प्रसन्न हैके दक्ष प्रजापतिसो बोले ॥ ४९ ॥ श्रीभगवान् बोले कि सुनो प्रजापते ! मैं ब्रह्मा शिव ये तीनों हम जगत्के परम कारण हैं ॥ ५० ॥ और सबके आत्मा ईश्वर देखनवारे स्वयंदृक् और विशेषणरहित साक्षात् ब्रह्मरूप है हे द्विज ! अपनी गुणमयी मायामें स्थित हैकै रचौहौं रक्षा करौ हौ नाश करौ हौ विश्वकी क्रियाके योग्य मेंही ब्रह्मा विष्णु और शिव संज्ञा धारौ हौं ॥ ५१ ॥ वाके बल अद्वितीय परमात्मा ब्रह्ममें ब्रह्मा और रुद्र ये सब जीवमें भेद अज्ञानी देखै हैं ॥ ५२ ॥ जैसे पुरुष अपने शिर हाथ आदि अंगनमें अपने आपसो विरानी बुद्धि नहीं करै है ऐसे सब जीवमात्रमें मत्परायण मनुष्य भेद नहीं माने है ॥ ५३ ॥ हे ब्रह्मन् ! सब प्राणिमात्रके आत्मा एक मूर्ति जे हम तीनों हैं तिनमें जो भेद नहीं देखैहै वो मनुष्य शांतिको प्राप्त होय है॥५४॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे भगवत्की आज्ञा पाए भए प्रजापतिनके पति दक्ष यज्ञसो भगवान्को पूजन करके दोऊ ओरसे देवतानकी पूजा करतेभए ॥ ५५ ॥ सावधान हैके रुद्रजीको रुद्रकै भाग करकै पूजन करते भये और इतर जो अमृतपान करवेवारे देवता हैं तिन्हैं भाग दे पूजनकर विसर्जनमंत्रसो स्तुति करतेभए ॥ ५६ ॥ ऋत्विजन सहित सबको भाग दे विसर्जन करके पीछै दक्षजी यज्ञांतस्नान करते भए, विप्रनके अर्थ दक्षिणा देकै यथासुख विहार करते भए ॥ ५७ ॥ यद्यपि दक्षको अपने प्रतापसो सब सिद्धि प्राप्त हीं तथापि देवता वाको धर्ममें बुद्धि रहिवेको वर दे स्वर्गको गये ॥५८॥ ऐसे दक्षकन्या सती पूर्व देहत्याग हिमाचलकी मेनानाम्नी रानीमें जन्मती भई, ये हम सबने सुनोहै ॥ ५९ ॥ तिन्ही प्यारे देव शिव पतिको अनन्य भाव एकगति मान अंबिका पार्वतीजी भजती भई, जैसे सोई भई शक्ति पुरुषको भजै है ॥ ६० ॥ दक्षके यज्ञके यज्ञविनाशक भगवान् शंभुको ये कर्म भागवत बृहस्पतिके शिष्य उद्धवजीसो मैंने सुनो, तैसो तुम्हैं सुनायो है ॥ ६१ ॥ ये अत्यंत परम शिवचरित्र

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यज्ञ आयुको दायक, अनेक पापसमूहको नाशक है, हे कौरव विदुर! जो नित्य भक्ति भावसो सुने कीर्तन करै वाके सब पापनको नाश करवेवारे होयहैं ॥ ६२ ॥

इदं पवित्रं परमीशचेष्टितं यशस्यमायुष्यमघौघमर्षणम् ॥
यो नित्यदाऽऽकर्ण्य नरोऽनुकीर्तयेद्धुनोत्यघं कौरव भक्तिभावतः ॥ ६२ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे दक्षयज्ञे सर्वदेवकृतस्तुतिवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ७

अध्याय ८.

मैत्रेय उवाच-सनकाद्या नारदश्च ऋभुर्हंसोऽरुणिर्यतिः ॥
नैते गृहान् ब्रह्मसुता ह्यावसन्नूर्ध्वरेतसः ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोलें अब पांच अध्यायमें ध्रुवचरित्र वर्णन करैहैं, कि सनकादिक नारद ऋभु हंस अरुणि यति ये ब्रह्मपुत्र गृहस्थाश्रम नहीं कर ऊर्ध्वरेता नैष्ठिकब्रह्मचारी भए ॥ १ ॥ अधर्महू ब्रह्मको पुत्र है यासो वाको वंशवर्णन करैहै कि अधर्मकी मृषा भार्या होतीभई हे शत्रुहन्! वासों दंभ माया ये एक मिथुन उत्पन्न भयो सो मृत्युके पुत्र नहीं हो वाने दंभको ग्रहण कीनो ॥ २ ॥ दंभसों मायामें लोभ भयो, और निकृति कन्या भई निकृति शठताको नाम है लोभके निकृतिमें पुत्र और हिंसा बेटी भई फिर क्रोधके हिंसा नाम स्त्रीमें कलि पुत्र भयो वाकी बहन दुरुक्ति भई ॥ ३ ॥ ये सत्तम! दुरुक्तिमें कलिने भय मृत्यु उत्पन्न करे, तिनसो यातना निरय जोडा उत्पन्नभयो ॥ "एते ह्यधर्मवृक्षस्य शाखा संसृतिहेतवः ॥ श्रेयस्कामो न सेवेत सुतरामाश्रमोत्तमः" ॥ ४ ॥ हे अनघ! संक्षेपसो मैंने ये आपसो प्रतिसर्गवर्णन करयो जो पुरुष तीन वार याकों सुने तो शरीरको मल सब नाश होय है ॥ ५ ॥ हे परीक्षित! पुण्यकीर्तिवारे श्रीहरिके अंशांशसो जन्मे स्वायंभुव मनुकों वंश कहैं हैं ॥ ६ ॥ शंतरूपा पति

---

१ सो या पदमें है कि एकताला ॥ "हर हर महादेव देव गौरीपति गाओ ॥ टेर ॥ शीश गंग अति उमंग भस्म अंग लगाओ भक्तन शिरताज महाराज वेद ध्याओ ॥ १ ॥ मंगल उर माल व्याल भूषण सब सजाओ नागचर्म वस्त्र शस्त्र त्रिशूलही सुहाओ ॥ २ ॥ नंदीपर बैठ रहे उमा अंग लगाओ मुद्रा कर ग्यान ध्यान हरिमें लौ लगाओ ॥ ३ ॥ पुरुषोत्तम कहत एक शोक सब बहावो जिनको हरिभक्ति चहै उमारमण ध्याओ ॥ ४ ॥" २ क्योंजी ये अधर्मके वंश कहिवेको कहा प्रयोजन है तहां कहै है कि देखो यहां याके कहिवेको यह प्रयोजन है कि जैसें कोई भांग लेय तौ वह जब नसाके मारे अचेत है जाय तब जे उस्ताद आदमी होय है वे तिवरसे नीबूकी खटाई आदि कोई खटाई वाको देय है वाके खायवेसों खाते खेमही वाको वो वाही नसा उतरके वो समय होसमें आयजाय है सोई बात यहां भई जानो पहले तौ शुकदेवजीने मैत्रेयजीसे कही देवहूतिकी कथा और फिर कही सतीनीकी कथा सोई मानो परीक्षित् विदुरको एकसंग नसापें नसा चढो होस न रह्यो मस्त हेकें आपेमें न रहे तब उस्ताद शुकदेव मैत्रेयजीने विचारी कि ध्रुवचरित्रकी कहनी कथा और इनको श्रोतानको नहींते होस ये नसा केसें उतरे खटाई देनी चहिये सो ये अधर्मको वंशन कह्यौ मानो तिवरसे नीबूकी खटाईको डोरा दियो सोई तो जो अधर्मकी वंशावली सुनी सोई तो दोउ श्रोतानकी पट्ट आख खुल गई होसमें आयके बोले कि महाराज है ये कहा कहन लगे तब आप बोले कि भाई सावधान है जाउ लेउ अब में ध्रुवजीकी कथा कहो हो सो सुनौ ये अभिप्राय समझनौ ॥ ३ क्योंजी यहां स्वायंभुव मनुके बडे पुत्र तो प्रियव्रत राजा है विनको चरित्र और विनीको वंश पहले कहनो है सो न कह्यो पहले छोटे पुत्र उत्तानपादको वंशचरित्र क्यों कह्यौ उत्तर कि सुनो शुकदेवजी बडो वाहीको समझे है जाके वंशमें भगवद्भक्त होय सो उत्तानपादराजाके पुत्रको भगवद्भक्त समझके इनने उत्तानपादकोही बडो जानके प्रथम वाहीकोही वंशचरित्र कहन लगे जो कोई कहे कि जो प्रियव्रतके वंशमेंहू तो भगवदवतार ऋषभ देव भये वो कहा कमती हो उत्तर देखो यामें यह बात है एक तो ऋषभदेव खास पुत्र नहीं है दूसरे ये अभिप्राय है कि कछु भगवान् सोहू भक्तनको प्राधान्य दिखायो है जो भगवदवतार कथाको छोडके भक्तमाहात्म्य कह्यौ यासो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनुके प्रियव्रत उत्तानपाद दो पुत्र भए, वासुदेवकी कलाकरकैं जगत्की रक्षामें स्थित होते भए ॥७॥ उत्तानपाद राजाकी सुनीति सुरुचि दो राणी ही सुरुचिरानी पतिको अत्यंत प्यारी भई और छोटी रानी सुनीति पतिकी बहुत प्यारी न भई ॥ ८ ॥ एक दिन राजा सुरुचिके पुत्र उत्तमको गोदमें खिलाय रहेहै, वा समय ध्रुवजी गोदमें चढने लगे, तब राजाने विनको लालन न कियो ॥ ९ ॥ तब सुरुचि रानी अपनी सौतके पुत्र ध्रुवको जो राजाकी गोदमें चढनो चाहते है विन्हैं सुनायके राजाके सामने ईर्ष्या करकै अतिगर्वसों बोली ॥ १० ॥ हे पुत्र! राजाके या राज्यसिंहासनपें आप चढवेकों योग्य नहीं हो नृपपुत्र हो तोहू मेरी कुक्षिमें आपने जन्म नहीं लीनो है ॥ ११ ॥ बालक हैवेके कारणही तुमको या वार्ताकी सुधि नहीं कि मैं अन्य स्त्रीके गर्भसों उत्पन्न भयो हूं कारण तू दुर्लभ मनोरथ करै है ॥ १२ ॥ तपसो परमेश्वर पुरुषको आराधन कर तिनकी कृपा-करके आप जब मेरे गर्भमें जन्म लेओ तौ नृपासनकी इच्छा करो ॥ १३ ॥ मैत्रेयजी बोले कि सौतेली माकी कठिन दुरुक्तिसो विधे, दंडहत सर्पकी समान रोषसों स्वांस लेते मौन बैठे अपने पिताको देख रोतेभए माके समीप जातेभए ॥ १४ ॥ स्वास लेते अधर होठ फरकते बालककों सुनीति गोदमें ले पुरवासीनके[1] मुखसों सौतकी बातें कही भई सुन बहुत व्यथित भई॥१५॥ सो वो बाला धैर्यकों त्याग शोकदावाग्नि करके दावानलकी लताकी नाईं विलाप करती भई, सौतकी बातें याद करती कमलकांतिसमान दृष्टिसों आंसू गेरती भई ॥ १६ ॥ दीर्घ श्वास लेती या कष्टके पारकों न देखती बाला बालकसों बोली हे पुत्र! औरनमें अपराध मत मानो जो पहिले पराएको दुःख दे है सो यहां फल भोगैहै ॥ १७ ॥ सुरुचिने सांच कही कि जो मोसरीकी दुर्भागिनीके उदरमें तुम जन्मे हो, मेरे स्तननके दूधसों तुम बढे हो, राजा माको भार्या कहवेमेंहू लज्जित होय है ॥ १८ ॥ हे तात! ईर्षा छोड निष्कपट होयके जो माताने कह्यो है वामें स्थित होउ भगवत्के पादपद्मको आराधन करो जो उत्तमकी नांई राज्य चाहेहो ॥१९॥ सत्त्वगुणी श्रीश्वरके चरणकमलकी परिचर्या कर विश्वके पालनके लिये निश्चयकरकै आत्मा स्वांस जीतवेवारेनसो नमस्कृत पारमेष्ठ्यपदको ब्रह्माजी प्राप्त होते भए ॥ २० ॥ तैसेई तुम्हारे पितामह मनु एकमतिसों बहु दक्षिणाके यज्ञ करकै जिनको पूजन कर औरको अप्राप्त भूमि, स्वर्ग, मोक्षके सब सुखको प्राप्त होते भए॥ २१ ॥ हे पुत्र! जिनके चरणकम-लकी पदवीको मुमुक्षु ढूंढै है तिनको तुम आसरो लेओ, अनन्यभावसो निजधर्मसो शोधित मनमें पुरुषको स्थितकर श्रीमन्नारायणको भजन करो ॥ २२ ॥ कमलनयनके बिना और तुम्हारो दुःखनाश कर्ता मोय कोई मालूम नहीं पडै है, हे अंग! ब्रह्मादिक जाकू चाहै, हस्तमें कमल लिये श्रीजी जिन्हें नित्य चाहना करै हैं ॥२३॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे माताको कहिनो अर्थागम वचनको सुनकै मनसे ईश्वरकों जान ध्रुवजी पिताके पुरते निकसते भए ॥ २४ ॥ नारदजी या बातकों सुनके वाके करवेकी इच्छा जानकै पापके नाशक हस्तकमलसों वाके मूंड पर हाथ फेर विस्मय करकै बोले ॥२५॥ अहो

---

१ अर्थात् रोते रोते ध्रुव माके पास गये तब सुनीति ध्रुवकी माने संग खेलनवारे पुरवासी बालकनसो पूंछी कि रे बेटाहो मेरे लालाको कौनने मारो धमकायो है साच कहो कही तुमने तौ नहीं मारो है तब विनने सुरुचिको कह्यो सब कह्यौ सो सुनके ॥ २ जब ध्रुवजीने कही कि मा मैं तो वनमें जायवेकी और परमेश्वरको रिझायवेकी रस्ताहू नहीं जानोहू तब मा हाथ पकरके दरवजे ताईं आई और लालासो कही कि बेटा येही सूधी रस्ता है तब ध्रुवजी इकेले वाही मार्ग माके पाससो चले तब माकी छाती भर आई और माने परमेश्वरको सांपे। श्लोक—बालोऽयं नवनीतकोमलरुचिर्दीनो गृहान्निःसृतो अज्ञातस्तव पूजनादिनियमः क्षिप्तस्तवांके मया। पाल्योऽतोऽयमतीव दुःखनिवहात्कांतार ईश त्वया संस्थाने भ्रमणादने च शयने स्नानेऽम्बुपानेऽनिशम् ॥ १ ॥ इत्यादि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्षत्रियनको तेज ऐसोइ है कि मानभंग नहीं सह सक्ते, ये बालकहू है तोहू माके असद्वचन हृदयमें नहीं सहसकौ ॥ २६ ॥ नारदजी बोले कि हे कुमार ! खेलमें आसक्त बालकको कोईने सन्मान कीनो वा अपमान कीनो तौ वामें हम कछु भलै बुरौ नहीं देखे है ॥ २७ ॥ तुम मान अपमानको विवेक है तौ हू असंतोष नहीं रखनो चाहिये क्योंकि जो असंतोषके कारण हैं वे अज्ञानजन्य हैं काहू प्रकार वे अज्ञानसो भिन्न नहीं है या लोकमें सुख दुःख सब अपने करमनसौ होय है ॥ २८ ॥ हे तात ! ईश्वरके अनुकूल हैवेसो उद्यम सफल होय है ऐसो तू विचार कर भाग्यसो जो प्राप्त होय है तितनेही करकै संतोष करै ईश्वरकी गतिको देखके ॥ २९ ॥ माताके कहे उपायसो जाकों तुम प्रसन्न करना चाहते हो वाको प्रसन्न करनो बहुतही कठिन है यह मैं मानू हूं ॥ ३० ॥ मुनि जब सब संग त्याग जाय तीव्र योग समाधिसो ढूंढै है तोहू बहुत जन्म करकै जाकी पदवीको नहीं जानै हैं भलौ कुमर वो कैसो मिलो जाय है ॥३१॥ ये जो हठ है याकूं त्यागो, ये हठ विफल होयगो, जब सुन्दर समय आवै तब फेर यत्न करियो ॥ ३२ ॥ जाके भाग्यमें जो लिखो है सोही सुख दुःख होय है, आत्माको प्रसन्न कर देही तमसों पार मोक्षको प्राप्त होय है ॥ ३३ ॥ जामें गुण अधिक होय वाय देखके आनंद-को चाहै और जो गुणाधम पुरुष होय वापें दया करवेकी इच्छा करे और जाको अपने समान गुण देखें वासो मित्रता करवेकी इच्छा करें वो पुरुष तापनसों तापित नहीं होय है दुःख न मानै ॥ ३४ ॥ ध्रुवजी बोले कि सुखदुःखहत आत्मा पुरुषनको कृपा करके जो तुमने ये उपाय दिखायौ है सो हम सरीकेनको ये दर्शन नहीं होय सकैहै ॥ ३५ ॥ यद्यपि ऐसै है तथापि घोर क्षत्रिय भावकों प्राप्त भये मो दुर्विनीतके मनमें ये वचन नहीं रहसके है कारण कि वह मेरो हृदय सुरुचिके दुर्वचनरूप बाणनसों विंधो भयो है[1] ॥ ३६ ॥ हे ब्रह्मन् ! हमारे पिताआदि करके वा औरनकोहू अशक्य त्रिलोकीमें सुन्दर पद जीतवेकी इच्छावारे मोको श्रेष्ठ मार्गको उपदेश करो ॥ ३७॥ निश्चय है कि आप भगवान् ब्रह्माके पुत्र हो वीणा बजाते जगत्के हितके अर्थ सूर्यवत् विचरो हौ ॥ ३८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि श्रीनारदजी वाको ये कहिनो सुनके प्रसन्न होयकै सांचे वाक्यनसो वापें कृपाकर बालकसो बोले॥३९॥ श्रीनारदजी बोले कि जननीने जो मार्ग तुम्हें कह्यो सो मोक्षसुखदायक है,भगवान् वासुदेवको सावधान मन करकै भजन करो ॥ ४० ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष तथा अपने कल्याणकी जो इच्छा करै, तौ एक श्रीहरिके चरणनकी सेवा करनीही कारण है ॥ ४१ ॥ हे पुत्र ! याते पवित्र यमुनाकिनारेपें जाओ, तुम्हारो कल्याण होय पुण्य मधुवन मथुरामें जहां कि नित्य हरि विराजे हैं वहां जाओ ॥ ४२ ॥ रोज वहां स्नान करके कालिंदीके सुन्दर जलमें सब नित्य कृत्य कर अपनो आसन कल्पना कर॥४३॥ पूरक रेचक कुम्भक तीन वृत्तिवारे प्राणायाम करकै धीरेधीरेसों प्राण इंद्रिय मनके मलको दूर कर महागुरुरूप मन करकै श्रीहरिको ध्यान करै ॥ ४४ ॥ अपने ऊपर प्रसन्न होयवेमें सुमुख निरंतर प्रसन्न वदनसो नेत्र सुन्दर नासिका सुन्दर भ्रुकुटी सुन्दर कपोलवारे देवनमें सुन्दर ईश्वर ॥ ४५ ॥ जिनके तरुण रमणीय अंग, अरुण होठ, देखवे योग्य अधर, नम्रीभूत, आश्रयसुखकारक, शरण्य करुणाके समुद्र ॥ ४६ ॥ श्रीवत्सको चिह्न धारे, मेघवत् श्यामपुरुष, वनमाली शंख चक्र गदा पद्मसो शोभित चतुर्भुज ॥ ४७ ॥ किरीटधारी, कुंडल पहिरे केयूर कंकण धारे ग्रीवामें कौस्तुभ आभूषण पीतांबर पहिरे शोभित ॥ ४८ ॥ क्षुद्र घंटिका पहिरे सुवर्णके नूपुर धारे, अत्यंत दर्शनयोग्य, शांत,

---

१ अर्थात् विन वचननसो मेरे हृदयमें चलनीकेसे छेद है रहेहै फिर कहो तुमारो उपदेश कियो ज्ञानरूप जल कैसें ठैर सकैहै ॥ २ परंतु ये आश्चर्य है कि जाने मोकोही या संसारमें फासो हो तुम कैसें नारद हो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मन नयनको आनंदवर्द्धन ॥ ४९ ॥ नखमणि पंक्तिसो शोभित पूजित चरण हृदयकमलकी कलिनपें विराजमान जीवात्मामें स्थित ॥ ५० ॥ मुसकाते अनुरागसहित देखते भए वरदातानमें श्रेष्ठ पूर्व कही धारणसो नारायणके स्वरूपको स्थिर हो एकाग्र मनसो ध्यान करियो ॥ ५१ ॥ ऐसो मंगलदायक भगवत्को रूप ध्यान करवेवारो परम आनंद करके युक्त होय वासो निवृत्त न हूजिये ॥ ५२ ॥ हे नृपात्मज ! परम गुह्य जपवे योग्य मंत्र सुन, जाको सप्त रात्र पुरुष पढै तौ आकाशके सब देवतानकों देखे है ॥ ५३ ॥ "अं उ म एतत्त्रयं मिलित्वा ओमित्यक्षरं भवति । भगो विद्यतेऽस्यास्तीति भगवान् तस्मै भगवते । वसंति भूतान्यस्मिन्निति वासुः दीव्यतीति देवः वासुश्चासौ देवः वासुदेवस्तस्मै वासुदेवाय नमः ॥ उत्पत्ति पालन नाशकर्ता षड्गुण ऐश्वर्यवान् भगवान् सब जीवमें निवास करनेहारेके अर्थ नमस्कार होय ॥ पात्रत्रये दधि पूरयित्वा नवनीतोद्धारवत् त्रिभ्यो देवेभ्यस्त्रीण्यक्षराण्युद्धृतानि ॥ अव रक्षणगतिहिंसादिषु ।उत्पत्ति पालन नाशकर्ता अकरवाच्य विष्णु हैं । उ निर्द्धारे, उको अर्थ श्रीजीको है । मन प्राणने मन ज्ञाने । मदी हर्षे । मन अवबोधने । प्राणस्वरूप ज्ञानस्वरूप हर्षस्वरूप अवबोधनस्वरूप जीवको है, जीव ईश्वर मायातीत ॐमें है ॥ अकारवाचको विष्णुः श्रीगुरुकारेण कथ्यते । मकारस्तु तयोर्दासः चतुर्विंशाक्षरात्मकः ॥ १ ॥ श्रुतयः अ इति भगवतो नारायणस्य प्रथमाभिधम् ॥ उकारस्तदवाग्निस्तद्वायुरित्यादि ॥ पंचविंशोऽयं पुरुषः पंचविंश आत्मा भवति ॥ ॐ भूरिति ऋग्वेदादजायत, भुव इति यजुर्वेदादजायत, स्वरिति सामवेदादजायत, तानि शुक्राण्यभ्यपतन्, तेभ्यस्त्रयो वर्णा अजायंत अकरो उकार मकार इति, तानेकधा समभवत्तदेतदोमिति ॥ ब्रह्मा विष्णु शिव येभी ॐ को अर्थ है ॥ द्वादशाक्षरमंत्रको ये कूटश्लोक नारायण शास्त्रीजीने बनायो है सो ये है ॥ त्रेय्यादौ किं धनं किं भवति मृगमदे को गुणः कोद्य माया केऽगाधाः किमृषीणां जलमलघु सखं योषितः केनदीनाः ॥ कः के देवारयः किं निमिपुरुरादिति ब्रूहि केषां गतेत्री काकः को वैष्णवास्ये बुध वसति जपो मध्यवर्णः पदानाम् ॥१ ॥" ॥ ५४ ॥ पवित्र जल माला वनके मूल फल आदिक सुंदर अंकुर वस्त्र तुलसी करकै प्रभुकी पूजा करै ॥५५॥ द्रव्यमयी पूजा कर अर्चाकी पृथ्वी जल आदिमें हरिकोही पूजन करै, सब इंद्रियें जीत मुनि शांत हो वाणी जीत वनके कंदमूल फल खायके जीवै ॥ ५६ ॥ उत्तम यशवारे नारायणने अपनी इच्छा और अचिन्त्य मायासो अवतार धारण कर जो चरित्र किये हैं जो करेंगे उन्हें हृदयमें ध्यान करै ॥५७॥ प्राचीन आचार्यनने जा प्रकार भगवान्की सेवा कीनी है वाही प्रकार या मंत्रको उच्चारण कह मंत्रमूर्ति श्रीहरिकी अर्चा करै ॥५८॥ ऐसे शरीर मन वचन करकै मनोगत ईश्वरकी परिचर्या करै तौ ऐसी सेवासो भगवान् भक्ति करवेवारेनको सब कुछ देहैं ॥ ५९ ॥ निष्कपटी सुंदर भजते भए भाववर्द्धन करववारेको ईश्वर जो वाको अभिलषित कल्याण होय है सो दे हैं, देहधारीनको धर्मादिकसो जो होय है सो दयहैं ॥ ६० ॥ विरक्त हैकै विषय भोगसो बहुत भक्तियोग करकै विमुक्तिके अर्थ साक्षात् आप निरंतर भाव करकै भजै ॥ ६१॥ ये कथन सुनके नृपनंदन ध्रुव नारदकी परिक्रमा प्रणाम कर पुण्यरूप हरिचरणसो शोभित मथुराजीको जाते भए ॥ ६२॥ ध्रुवजी तो तपोवनको गये नारदमुनि राजा उत्तानपादके अंतः-

---

१ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय । यह मंत्र है ॥ २ ॐ ॥ ३ कनक ॥ ४ आमोद ॥ ५ शांभवी ॥ ६ सागर ॥ ७ जीवन ॥ ८ कांतेन ॥ ९ प्रवासी ॥ १० असुराः ॥ ११ विदेहे ॥ १२ देवानाम् ॥ १३ वायसः । उनके बीचबीचके अक्षर बांचनेसे द्वादश अक्षर मंत्र बनै है या मंत्रसे देवकी द्रव्यमयी पूजा देशकाल विभाग जानवेवारो अनेक द्रव्यसे करैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुरमें पहुंचे, राजाने अर्घ आदि पूजाके पदार्थ अर्पण कर आसन दियो तब वापै बैठ नारदजी बोले ॥ ६३ ॥ नारदजी बोले कि हे राजन्! तुम्हारो मुख कैसे सूख रह्यो है, भारी चिंता करो हो, कहा काम धर्म अर्थ सहित नष्ट भयो है ॥ ६४ ॥ राजा बोलो कि हे ब्रह्मन्! स्त्रीवश निर्दयी मैंने पांच वर्षके बालक महा चतुरको मासहित निकास दीनों ॥ ६५ ॥ हे नारदजी! भूखे प्यासे मुख कूमलाये सोये भये वा बालकको वनमें भेडिया तौ न खाय जांयगे ॥६६॥ मैं बडो स्त्रीके वशमें हूं सो मेरी दुरात्मा तौ देखौ कि महा नीच मैंने प्रेमसो बालक गोदमें चढै हो वाय गोदमें न लीनो ॥ ६७ ॥ नारदजी बोले कि हे राजन्! देवरक्षित अपने सुतको शोक मत करो, वाको प्रताप तुम नहीं जानों हो, जगत्में वासोही तुम्हारो यश होयगो॥६८॥वह समर्थ लोकपालनकोहू अशक्य महाकठिनतर कर्म करकै थोडेही कालमें आवैगो, और तुम्हारो यश बहुत विस्तार करेगो ॥ ६९ ॥ मैत्रेयजी बोले कि पृथ्वीपति ये नारदको वचन सुन राजलक्ष्मीको अनादर कर पुत्रकी चिंता करतो भयो ॥ ७० ॥ तहां ध्रुवजी मथुरामें आये और जा दिन पहुँचे वाही दिन स्नानकर रात्रीमें उपवास कर सावधान होय पूजा करते भए, ऋषिकी आज्ञासो पुरुषको भजते भए ॥७१॥ तीन तीन रात्रिमें तो कैथ बैर खाय खायके रहै, अपने शरीरकी वृत्तिके अनुसार एक मास व्यतीत करते श्रीहरीको पूजन करते भए ॥ ७२ ॥ दूसरे मासमें ध्रुवजी छटे छटे दिन तृणपत्ता गिरे भए खाय मास बितायो हरिको अर्चन करते भए ॥ ७३॥ तीसरे मासमें नवमें नवमें दिनमैं जलपान मात्र करकै उत्तमश्लोक ईश्वरको समाधिसों पूजन करते भए ॥ ७४ ॥ चतुर्थ मासमें द्वादशमें द्वादशमें दिन श्वास जीतकर वायु भक्षण करते ध्यान करते भए देवकी धारणा करते भए ॥७५॥पांचवों मास जब प्राप्त भयो तो नृपसुत श्वास जीतके एक पदसो ठाडे होके ब्रह्मको ध्यान करवे लगे, खंभ समान स्थित होते भए ॥ ७६ ॥ सब ओरसो मनको खैंचके हृदय पंचभूत इंद्रिय अंतःकरणमें भगवत्के रूपको ध्यान करते भए और कछु न देखते भए ॥ ७७ ॥ तब महदादिकनके आधार प्रधान पुरुषके ईश्वर ब्रह्मके धारण करवेवारेसों त्रिलोकी कांपती भई ॥ ७८ ॥ जा समय एक पांव करकै राजपुत्र स्थित भए तासमय ताके अंगुष्टसो पीडित धरती नमती भई, और गजेंद्रके नावपै एक पद रखनेको समान झुकती भई ॥ ७९ ॥ प्राण और प्राणनके मार्ग रोक आत्माके साथ अभेद दृष्टिसों विश्वके आत्मा भगवान्को जब ध्रुव करन लगे तौ सब लोक तथा लोकपाल अपने स्वांस रुकवेसों पीडित हो नारायणकी शरणको प्राप्त भये ॥ ८० ॥ देवता बोले कि हे भगवन्! सर्वांतरवासी चराचर लोकके प्राण रुकगये सो कारण हम नहीं जानै हैं, या कष्टसो हमे छुडाओ, शरणागत रक्षक आपके हम सब शरण आए हैं ॥८१॥ श्रीभगवान् बोले कि मत डरो उग्र तपसो बालकको हम निवर्त्त करेंगे, तुम अपने अपने स्थाननको जाओ, जासो तुम्हारे प्राण रुकगए हैं उत्तानपादके पुत्रके तप करवेसो मेरेमेंहूं वाकी आत्मा सम्यक् प्रकार करकै प्राप्त भई है ॥ ८२ ॥

श्रीभगवानुवाच–मा भैष्ट बालं तपसो दुरत्ययान्निवर्तयिष्ये प्रतियात स्वधाम ॥
यतो हि वः प्राणनिरोध आसीदौत्तानपादिर्मयि संगतात्मा ॥८२॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे ध्रुवस्य मथुरामंडलसमागमनं नाम अष्टमोऽध्यायः ॥८ ॥

---

१ तब नारदजीने दोउ रानीनके बीचमें बैठे राजा उत्तानपादको देखौ जैसै मार्जारसो भीत मूसो भागके बिलेमें गयो होय वा समय बिलेमें मोडो कारे साप बैठो होय वा समय जो कुछ वा मूसेकी दशा होय जो बाहिर आवे तौ वाय बिलाव खाय जाय और भीतर जाय तो सर्प खाय सो दशा राजाकी देखी । श्लोकः–बिलं गच्छन् यथाखुर्हि शीघ्रं मार्जारत्रासितः । तत्र पश्येत्स्थितं व्यालं नृपं तद्वददर्श सः ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ९.

मैत्रेय उवाच–त एवमुच्छिन्नभया उरुक्रमे कृतावनामाः प्रययुस्त्रिविष्टपम् ॥
सहस्रशीर्षापि ततो गरुत्मता मधोर्वनं भृत्यदिदृक्षया गतः ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि विन देवतानको जब ऐसे भय दूर भयो तब भगवान्‌कों प्रणाम कर स्वर्गको चले जाते भए, सहस्रशिरवारे श्रीभगवान् गरुडपर बैठ अपने भृत्यके देखवेकी इच्छा करकै मधुवनमें आवते भए ॥ १ ॥ सो ध्रुवजी योगसो पकीभई बुद्धि करकै, हृदयकमलमें प्रकाशित, बिजुरीसम कांतिवारे ईश्वरको अंतर्हित देख एक संग नेत्र खोल, बाहिर स्थित भगवान्‌को देखते भए ॥२ ॥ तिनके दर्शन करकै संभ्रमसों अंगको नवायकरकै पृथिवीमें दंडवत् करतेभए, मानूं दृष्टिसो पीवेगो बालक मुखसो मानो चुंबेगो, भुजासो मानो मिलेगो, ये अवस्था ध्रुवजीकी होती भई ॥ ३ ॥ कहिवेकी इच्छा भई परंतु कहिवो न जाने हाथ जोडे खडे रहे सर्व घटवासी भगवान् बालकके हृदयको भाव जान अपनो शंख कपोलमें कृपा करकै छुवावते भए ॥ ४ ॥ सो ध्रुवजी ताही समय दैववाणीको प्राप्त होय सब प्रकारसो परमात्माको निर्णय जाने ध्रुवस्थाननिवासी विख्यात यश भगवान्‌की भक्तिभावसो स्तुति करते भए ॥५॥ ध्रुवजी बोले कि जो ईश्वर मेरे भीतर प्रवेशकर ये मेरी सोही भई वाणीको और हस्त चरण कर्ण त्वचा प्राणादिकनको, अखिलशक्तिधारी अपने तेजसो जिवावै हैं, तिन भगवान् पुरुषके अर्थ नमस्कार होय ॥ ६ ॥ हे भगवन् ! तुमही अपनी मायारूप बहुगुणवारी आत्मशक्ति करकै महदादिक सब विश्व रचकैं ताके पीछै यामें प्रविष्ट होके या मायाके एक असत्‌गुणनमें नानारूप प्रकाशोहो, जैसे काष्ठमें अग्नि नानारूप होकै प्रकाशै है ॥७॥ हे नाथ भगवन् ! तुमारी शरणागत जो ब्रह्मा है वो तुम्हारे दिये भए ज्ञान करकै सुप्त प्रबुद्ध न्यायकरके या विश्वको (अचष्ट) देखतो भयो आर्तबंधो! फिर कहो तुम्हारे उपकारके जानवेवारे मुक्तनकी रक्षा करवेवारे तुम्हारे पादमूल कैसे विस्मरण किये जाय ॥८॥ निश्चयही तुम्हारी मायाकरकै विनकी नष्टमति है जो जन्ममरणके नाशक कल्पवृक्षरूप तुमकों और कामनानके अर्थ पूजै है, क्योंकि या देहके स्पर्शादि विषयजन्य सुख तो मनुष्यनको नरकमेंहू प्राप्त होय हैं ॥ ९ ॥ शरीरधारीनको जो आनंद तुम्हारे चरणकमलके ध्यानसो अथवा आपके भक्तजन ब्राह्मणनके कथा श्रवणसो होय है सो हे नाथ ! वह आनंद अपने स्वरूप ब्रह्ममेंहू नहीं और अन्तकके खड्गस्वरूप कालसों टुकडे होनेवारे विमाननमेंसों गिरवेवारे देवतानको कहा प्राप्त है सकै है ॥१०॥ हे अनन्त ! तुममें सदा भक्ति करवेवारे महान् निर्मल अंतःकरणवारे महात्मानमें मेरो सत्संग होय, जासो तुम्हारे गुणनकी कथारूप अमृतपानसो मत्त में अनायास बडे व्यसनभरे संसारसमुद्रको उल्लंघन करूंगो ॥ ११ ॥ हे ईश ! हे कमलनाभ ! आपके चरणकमलकी सुगंधके लोभी हृदयवारेनमें जे सत्संग करै हैं वे अत्यंत प्रियमनुष्य देहकोहू अनुसंधान नहीं करैहै तथा या देहके पीछै सुत सुहृद घर धन स्त्रीकोहू अनुसंधान नहीं करैहै ॥ १२ ॥ हे ईश ! हे परम ! पशु पक्षी पर्वत द्विज सर्प देव

---

१ यामें यह प्रयोजन है भगवान् ध्रुवजीके अगारी आयके ठाडे रहे पन समाधिस्थ ध्रुवको नेत्र मिचेके कारण ये खबर न भई कि अगारी प्रभु खडे हैं तब भगवान्‌ने विचारी कि या समाधिको कहा ठीक है तब अपनी मूर्ति ध्रुवके हृद्गतको छिपाई सोई तो भडभडायके ध्रुवने आंखें खोलीं सोई अगारी खडी वोही मूर्ति देखी ॥ २ ध्रुवजी भगवान्‌के दर्शन कर इस कारण मूक होगये कि प्रेमसे उनका कंठ रुद्ध होगया और कुछ कहा नहीं गया इससे (अतद्विदः) पद दिया ॥ ३ ये बारह श्लोक ध्रुवजीकी स्तुतिके बारह सूर्यनकी समान अज्ञानांधकारके दूर करवेको है ऐसे जाननो चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दैत्य सत् असत् विशेष युक्त महदादिसहित विराटरूपकों हम जानै हैं याते परै परमेश्वरको नहीं जानै है जहां कोई वाद विवाद नहीं करसकैं है ॥१३॥ महाप्रलयमें या विश्वको पेटमें ग्रहणकर सर्व-द्रष्टा आप शेषजीकी गोदमें एक पुरुषरूप शयन करो हो, जिनकी नाभि समुद्रसो उत्पन्न सुवर्णमय लोकके कमल प्रकाशी ब्रह्मा भए है तिन भगवान्‌के अर्थ नमस्कार होय ॥१४॥ तुम नित्य मुक्त सब ओरसो विशुद्ध सदा ज्ञानवान् व्यापक, सर्वांतर्यामी, आदिपुरुष, भगवान् त्रिगुणनके ईश्वर, बुद्धिकी वा अवस्थाको अखंडित अपनी दृष्टि करकै देखो हो, विश्वकी स्थितिमें अतिपूज्य सबसो पृथक् हैकै तुम रहो हो जीवमें यह सब बाते नहीं है ॥१५॥ जामें विरुद्ध गतिवारी विद्यादिक सर्वशक्ति संक्षेपसो निरंतर उत्पन्न होय है, वा विश्वके उत्पन्न करवेवारे एक अनंत अनाद्य आनंदमात्र अविकारीकी मैं शरण हूं ॥१६॥ हे भगवन्! तुम्हारे चरणकमल भजवेवारेनको पुरुषार्थमूर्तिके सब आशीर्वाद सत्य हैं, हे आर्य! भगवान् ऐसे है तथापि जैसे नवप्रसूता गौ अपने पुत्रकी रक्षा करै है तैसे अनुग्रहमें कायर भये आप हमसरीके दीननकी सब ओरसों रक्षा करोहो ॥ १७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि सांचे संकल्पवारे बुद्धिमान् ध्रुवने जब ऐसे स्तुति कीनी, तब भृत्यनपै अनुरागी भगवान् वाके प्रति आनंदित हैंकै बोले ॥ १८ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे राजपुत्र! तुम्हारो निश्चय हमने जान लीनो, सो हम तुमे दैयेंगे तेरो भद्र होय हे सुव्रत! ज्यो औरको दुःख करकैहू प्राप्त नहीं है वह तोय प्राप्त होयगो ॥ १९ ॥ हे भद्र! जो प्रकाश ध्रुवस्थान है जहां आजताईं और कोई स्थित नहीं भयो है जहां ग्रहनक्षत्र तारानको यह ज्योतिषचक्र पुहि रह्यो है ॥ २० ॥ जामें ये ग्रहनक्षत्र तारे और ज्योतिष चक्र मैढी (दीय) में लगे भए वृषभकी नाईं चारौं ओर फिरै है त्रिलोकी नष्ट हवेपैहू जो नष्ट नहीं होय है धर्म अग्नि कश्यप इंद्र और वनवासी मुनि ॥२१॥ तारामंडलसहित घूमते भए तुम्हारी परिक्रमा करकै विचरते रहैंगे, कहेंगे कि सबमें सिद्ध ध्रुव उत्तानपादको सुत होतो भयो ॥ २२ ॥ पिता जब तुमको राज्य देकै वनको चला जायगै, तब तुम जितेंद्री होकै छत्तीस हजार वर्षपर्यंत भूमंडलकी रक्षा करोगे ॥२३॥ तुमारो भाई उत्तम शिकार खेलवे जायगो, वहां नष्ट होयगो; तब वाकी मा वनमें ढूंढती भई दावाग्निमें प्रवेश करेगी ॥ २४ ॥ यज्ञरूप मोको बहुत दक्षिणाके यज्ञ करकै सब सत्य अपने मनोरथनको यहां भोगके अंतमें मोको स्मरण करोगे ॥ २५ ॥ तब सब लोकनसो नमस्कृत सप्तर्षिनसौ ऊपर और ऋषिनसौ स्तुतिको प्राप्त हो मेरे स्थानको प्राप्त होगे जहांको गयो फेर यहां नहीं आवै है ॥ २६ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे पूजित गरुडध्वज भगवान् अपनो स्थान दिखाय वा बालकके देखते देखते अपने धामकों गए ॥ २७ ॥ सो ध्रुवहू विष्णुकी पादसेवासो लब्ध संकल्प मोक्षरूपकूं प्राप्त हैकैंहू अधिक प्रसन्न नहीं हेके पुरको आवतो भयो ॥ २८ ॥ विदुरजी बोले कि हे मैत्रेय! सब अर्थवेत्ता वो ध्रुव सकाम और मायामें लिप्त पुरुषनको अति दुर्लभ जो भगवत्पद है ताको भगवान्‌के चरणार्चनसों एकही जन्ममें प्राप्त हैकैंहू अपनेको अकृतार्थसो क्यों मानतो भयो ये मोसो कहो ॥ २९ ॥ मत्रेयजी बोले कि सौतेली माके वाग्रूपी बाणनसो विधे भए, हृदयमें विनको स्मरण करते, मुक्तिपति नाम मुक्तिके दैनवारे भगवान् सो जो मुक्तिकी इच्छा न करते भये येही पश्चात्ताप भयो कि हाय मैंने मोक्ष न मांगी ॥ ३० ॥ ध्रुवजी बोले कि अनेक जन्म करकै समाधिसो नैष्ठिक ब्रह्मचारी सनंदादिकहू जा पदको नहीं प्राप्त होय हैं सो मैं छै मासमें इनके पादच्छायाको प्राप्त होयकर पृथक् मतिसो फेर संसारके सुखको प्राप्त भयो ॥३१॥ अहो मंदभागी मेरा दुरात्माभाव तो देखो कि संसार नाशकके चरणकमलकों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राप्त होयकर अंतवान् पदार्थ मांगे ॥ ३२ ॥ गिरते भए असहनशील देवतानने मेरी मति हरलीनी जो नारदके वचनको मूर्ख मैं मिथ्या मानतो भयो ॥ ३३ ॥ जैसे सोवतो पुरुष दैवी मायाके आधीन भेददर्शी होय दूसरेके न होनेपरभी स्वप्नमें अपनेसों पृथक् अनेक वस्तु भ्राता चाचा इत्यादिको शत्रु मानकर वृथा दुःखी हो ऐसे मैं हृदयके शोकसों संतापको प्राप्त होउ हूं ॥३४॥ मैंने दुष्कर तपस्यासो सो जगदात्मा भगवान्को प्रसन्न कर व्यर्थ वस्तुकी प्रार्थना कीनी, जैसे आयु क्षीणकी चिकित्सा वोह व्यर्थ है वैसे मेरी यह याचना व्यर्थ है ॥ ३५ ॥ हतभाग्य मैंने संसारछेदक हरिसों संसारमें वसनो मागो सब जगै भाग्य फलै है विद्या तपको फल नहीं होय है ॥ ३६॥ अपने स्वराज्य देवेवारे ईश्वरसें मूढताते मैंने मान मागो, जैसे पुण्यक्षीण वो निर्धन राजासै जैसै धाननकी तुष मागै ॥ ३७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे तात ! मुकुंदके पदारविंदकी रजकी सेवा करनवारे तुमसरीके जन भगवत्के दास्यभावके विना और अर्थकी चाहना नहीं करैं हैं क्योंकि मनकी समृद्धि तो यदृच्छासोही प्राप्त है जाय है ॥३८॥ जैसे मरो भयो फिर आवै तैसे पुत्रको आवतो सुन राजाने विश्वास नहीं मानो और बोलो मैं अमंगलीक हूं मोको मंगल कहांसे होय ॥ ३९ ॥ तब जो नारदजीने कहीही कि सत्यही तुम्हारो पुत्र आवैगो विन वाक्यनमें श्रद्धा कर हर्षके वेगसो धर्षित ध्रुवजीके आयवेकी वार्ता कहिवेवारेको बहुत धनको हार देतो भयो ॥ ४० ॥ सुवर्णजटित सुंदर घोडे जुते रथपै बैठे कुलवृद्ध ब्राह्मण मंत्रीसहित ॥ ४१ ॥ शंख नगारेके नाद और ब्राह्मणनके वेदपाठ तथा वांसुरीनके बाजेसहित पुत्रदर्शनके हर्षसो राजा शीघ्र पुरसो निकसतो भयो ॥ ४२ ॥ सुनीति सुरुचि राजाकी राणी सुवर्णमय पालकीमें सवार होके उत्तमको लिये आती भई ॥ ४३ ॥ अपने बागके पास आतेभएकों देख राजा रथसो शीघ्र उतरकै प्रेमविह्वल होतोभयो ॥ ४४ ॥ बहुत दिनमें पुत्रमें मन लगाये रहवेके कारण स्वांस लेतो भगवान्के चरण स्पर्शसो कर्म बंधन दूर होनेके कारण स्वच्छ अपने पुत्रसो राजा बांहें फैलाकर मिलो ॥ ४५ ॥ वारंवार शिर सूंघत भयो ठंडे नयनके जलसो पुत्रको स्नान करायो या प्रकार राजा उत्तानपाद पूर्णमणोरथ भयो ॥ ४६ ॥ पिताके चरणनको प्रणाम कर पितासो अशीश पाय दोनों मातानकों माथेसो प्रणाम कर सज्जननके आगे जायवेवारे ध्रुवजी सत्कार करते भये ॥ ४७ ॥ अपने पगमें पडे बालकको सुरुचि उठायकर मिलके गद्गद वणीसो बोली जीओ जीओ ॥ ४८ ॥ जाके ऊपर भगवान् हरि मैत्रीआदि गुणनसों प्रसन्न होयहै ताको सब जीव नमस्कार करैं है जैसै जल नीची ओरको वहै है ॥ ४९ ॥ उत्तम, ध्रुव, दोनों प्रेमविवश आपसमें मिलवेसो अश्रुपातनके समूह छोडते भए ॥ ५० ॥ सुनीति तिनकी जननी प्राणनसोंहू प्रिय सुतको मिलकै तिनको अंगस्पर्श कर सुखी भई ॥ ५१ ॥ स्तननसो दूध चूयवे लगो, पवित्र जल नेत्रनसों गिरो, हे विदुर ! वह अपने वीर पुत्रकों नेत्रनके जलसो स्नान करावती भई ॥ ५२ ॥ वा राजाकी राणीकी मनुष्य प्रशंसा करतेभए, कि तेरो मंगल भयो जो पीडाहारी पुत्र आयो, यह बहुत दिनतक भूमंडलकी रक्षा करैगो ॥ ५३ ॥ निश्चय है कि भगवान् प्रणतनके पीडानाशक तुमने पूजे हैं, जिनके सदा ध्यान करवेवारे वीर लोग महा कठिन मृत्युको जीत जाय है ॥ ५४ ॥

१ चार ज्योतिषी पंडितोंने राजासै मिलनैका मुहूर्त विचारा मुहूर्त आधीरातका था उसी समय राजाके निकट चले परन्तु महलके द्वार बंद थे तब एक चौमासेके पानी आयवेकी मोरीमेंको घुस गये तहां देखै तौ भूसीका ढेर पडाहै पंडितोंने कही भैया जो मिलजाय तौ भैंसकेही काममें आवैगी एकने कही भैया अपवित्र होगये हो शुद्ध होकर राजाके दर्शन करना एकने कही रानीके पैर छूनेसै पवित्र हो जांयगे सो जहां राजा रानी सोते थे तहां गये ज्यौंही रानीके पैर छुए त्यौंही वह जागकर बोले चोर हैं इन्होंने कही चोर नहीं हम पंडित हैं तब राजाने समाचार सुनकर कहा कि जो इच्छा हो सो मांगो वह बोले कि यह जो तुम्हारे यहां यह भूसी पडी है सो हमारे भेज दो राजाने यही करी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनुष्यनकरकै लाड करे भए भ्रातासहित ध्रुवको नृप प्रसन्न हथिनीपर बैठाय सब जन जाकी स्तुतिको प्राप्त हो पुरमें प्रवेश करतो भयो ॥ ५५ ॥ जा पुरीमें जहां तहां मरकतमणिसों रचित तोरणसमूह केलानके खंभ सुपारीके छोटे छोटे वृक्ष शोभित हैं ॥ ५६ ॥ आम्रपल्लव वस्त्र माला मोतीकी माला जहां तहां छायरहे हैं द्वारद्वारपै दीपनकी जगै जोत होयरही है, जलके कुंभ भरे धरे है ॥५७॥ प्राकार गोपुर घर सुंदर कलशानसो शोभित हैं सर्व ओरसों श्रीमत् विमान शिखरनकी कांति करकै शोभित है ॥ ५८॥ उज्ज्वल चौराए वीथी अटारी मार्ग चंदनसो चर्चित है, खील चामर पुष्प फल तंडुल भेट जहां तहां धरी हैं ॥ ५९ ॥ मार्गमें ध्रुवजीको देख जहां तहां पुरकी स्त्रियें ससों अक्षत दही जल दूर्वा पुष्प फल वर्षावती भई ॥६०॥ और वात्सल्यतासो आशीर्वाद देती भई वा प्रकार विनके सुन्दर गीत सुनते पिताके भवनमें प्रवेश करतेभए ॥६१॥ महामणिनके समूह उत्तम भवननमें लगेहै, तहां ध्रुवजी गये और पितासों अनेक सत्कारको प्राप्त हो स्वर्गमें देवतानकी नाईं वसते भए ॥६२॥ दूधके फेनके समान उज्ज्वल और हाथीदांत तथा सोनेकी सामग्रीसों युक्त शय्या बिछी हैं अमूल्य आसन और सब सुवर्णकी सामग्री है ॥६३॥ जहां बिल्लोरके और महामरकतके आले हैं विनमें मणिनके दीपक जगरहे हैं स्त्रीरत्न बहुत इकट्ठे हैं ॥ ६४ ॥ वा रमणीक जहां बाग विचित्र कल्पद्रुम हैं जिनपै जहां पक्षिनके मिथुन कूजते और भौंरा गुंजार करेहैं ॥ ६५॥ मूंगानकी सीढीनकी बावडी हैं, जिनमें कमल खिले हैं हंस सारस बगला चकई चकवा जहां बोल रहेहैं ॥६६॥ उत्तानपाद राजऋषि पुत्रको प्रभाव सुन और देखकर अत्यंत विस्मयकों प्राप्त होतो भयो ॥ ६७ ॥ वृद्धापन आयो देख सब प्रजानकी संमतिसो सबको अनुरागी देख राजा सब राज्यको पति ध्रुवजीकों करतो भयो ॥६८॥ राजा अपनी आत्माको बूढी जानकै सबसो विरक्त हैकै आत्माकी गतिको विचारतो वनकों जातो भयो ॥ ६९ ॥

आत्मानं च प्रवयसमाकलय्य विशांपतिः ॥
वनं विरक्तः प्रातिष्ठद्विमृशन्नात्मनो गतिम् ॥ ६९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां च० ध्रुवस्य भगवत्कृपया पुना राज्यप्राप्तिवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः९॥

अध्याय १०.

मैत्रेय उवाच–प्रजापतेर्दुहितरं शिशुमारस्य वै ध्रुवः ॥
उपयेमे भ्रमिं नाम तत्सुतौ कल्पवत्सरौ ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि शिशुमार प्रजापतिके भ्रमिनाम्नी कन्यासो ध्रुवजी विवाह करते भए, ताके दो सुत कल्प, वत्सर होतेभए ॥१॥ जो वायुकी कन्या इलानामकी स्वभार्यामें महाबली उत्कल नामक पुत्र उत्पन्न करते भए, वो योषितानको रत्न समान भयो ॥ २ ॥ उत्तमने विवाह न कीनो, शिकारको गयो, वहां बली यक्षनने हिमाचलपै मारदीनो, याकी मा समान गतिको पाय मरती भई ॥३॥ ध्रुवजी भाईको वध सुन कोप अमर्ष शोकमें मग्न होयकै जयप्रद रथमें बैठकै पुण्यजननके स्थानको जाते भए ॥४॥ रुद्रके अनुचरनसों सेवित उत्तरदिशाको ध्रुवराजा जायकै हिमाचलपर्वतकी गुफामें गुह्यकनकी सघनपुरी देखते भये ॥ ५ ॥ बडी बाहुवारे ध्रुवजी तहां जाय शंख बजावते भए, तब आकाशदिशा सब नादसों भर गई, हे विदुर ! उद्विग्न मन करकै यक्षनकी स्त्रियें बहुत त्रासित भई ॥६ ॥ तब बली उपदेव महाभट निकसकै वा नादको नहीं सहिकै आयुध उठाए भए आये ॥ ७ ॥ सो महारथी उग्र

१ ध्रुवजी ज्ञानी होकरभी युद्ध करनेको इस कारण चले कि मैं भाईके निमित्त युद्ध न करूंगा तो लोकमें निन्दा होगी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धनुषधारी विनको आये जान एक एकको सबको तीन तीन बाणनसों एक कालमें मारते भए, उनके ललाटमें जब बाण लगे तब सब अपने आत्माको परास्त मान ध्रुवके कर्मकी प्रशंसा करते भये ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ परन्तु वे इनको याप्रकारसौ नहीं सहते भए जैसे सर्प चरणसो ठुकरायवेको नहीं सह सकेहै तब बदले लेनेकी इच्छासौ यक्षनने एक संग छः छः बाण चलाये ॥ १० ॥ पीछे परिघ निस्त्रिंश फरसी शूल प्रास शक्ति ऋष्टि भुशुंडी और विचित्र पांखेंवारे शरसो मारते भए ॥ ११ ॥ सब रथपर बैठे भए कुपित होके वा रथीपें वर्षा करते भए, तिनसो बदलो लेवेको त्रयोदश अयुत यक्षनाम १३००० गिनतीन केत्रे बान चलाये ॥१२॥ ता समय उत्तानपादके पुत्र बहुत शस्त्रनकी वर्षा होयवेसो ढकगए, दीखे नहीं जैसे धारासंपातसो पर्वत नहीं दीखे है ॥ १३॥ जे सिद्धलोग आकाशमेंसों देखते हैं, विनमें हाहाकार मचो, बोले ये मनुवंशीनमें सूर्य पुण्यजनरूप सागरमें मग्न है मरणको प्राप्त भयो ॥१४॥ जय चाहियेवारे यातुधान जब संग्राममें नाद करवेलगे, तब कुहरमेंसो सूर्यकी नाईं विनको रथ पुनः प्रकाशित भयो ॥ १५ ॥ दिव्य धनुष्यकी टंकार करते और द्वेष करवेवारेनको खेद करावते भए अपने बाणनसों अस्त्रसमूहनको दूर करते मेघसमूहको दूर करवेवारी पवनकी समान प्रगट भए ॥ १६ ॥ तिनके धनुषसो निकसे भए पैने बाण राक्षसनके कवचनको भेद शरीरमें घुसजाते भए, जैसे वज्र पर्वतनको तोडके प्रवेश कर जाय हैं ॥ १७ ॥ सुवर्णकुंडलयुक्त शिर भालानसों छिदे, हेमतालवत् ऊरु और कंकण पडे भुजदंड कटते भए ॥ १८॥ हार केयूर मुकुट पाग महाधनसों ढकी भई वो मनोहर रणभूमि वीरनको आनंद देती भई ॥ १९ ॥ क्षत्रिय श्रेष्ठके बाणनसौ संग्रामआंगनमें जब अनेक राक्षसनके शरीर कटगये, तब मरनेसों बचे सिंहके भगाए हाथीकी समान भागते भए ॥ २० ॥ मानवनमें उत्तम ध्रुवजीने जब वा महासंग्राममें काउकोंहू शस्त्रधारिनके मध्यमें न देखो, तब वैरिनकी पुरी देखवेको न घुसे क्यौं कि माया विनकी जाने कहा करवेकी इच्छा होय ये जानते भए ॥ २१ ॥ विचित्र रथी ध्रुव अपने सारथीसो ऐसे कहि वैरिनके पुनः उद्योगकी शंकाकर यत्नवान् हे कि तबतक समुद्रकी गर्जनाकी नाईं शब्द सुनते भए, सब दिशानसों पवनसों रज उडती आती देखते भए ॥ २२ ॥ एक क्षणमें आकाश मेघ सैनाकी नाईं सब ढकजातो भयो, सब ओरसों सब दिशानमें बिजुरी चमकने लगी, गर्जनाके शब्दसो सबसों त्रास देते भए ॥ २३ ॥ हे पापरहित ! रुधिरको समूह पीव विष्टा मूत्र चरबी ये वर्षावते भए, याके आगे आकाशसो कबंध गिरन लगे ॥ २४ ॥ आकाशमें पर्वत दीखवे लगे, सब दिशानसो गदा परिघ निस्त्रिंश मूसल पाषाण गिरते भए ॥ २५ ॥ वज्रपातसो स्वांस लेते सर्प क्रोधसो आंखनसो अग्नि वर्षाते भए, मत्त गज सिंह व्याघ्र समूहके समूह दौडते भये ॥ २६ ॥ समुद्र भयंकर लहरनसों सब भूमिको डुबावते भए महा घोर शब्द भयानक महाप्रलयसदृश करते भये ॥२७॥ क्रूर प्रवृत्तिवाले यक्षनने अपनी राक्षसी मायासौ कायरनको भय देनेवारी अनेक प्रकारकी माया रची ॥ २८ ॥ असुरनने ध्रुवजीपै दुस्तर मायानको जप प्रयोग कीनो, ये सुनके मुनिलोग आयके वाको मंगल[1] करते भए ॥ २९ ॥ मुनि बोले कि हे उत्तानपादके पुत्र ! शार्ङ्गधन्वा देव भगवान् शरणागत प्रतिपालक तुम्हारे शत्रुनको नाश करेंगे, हे ध्रुव ! जिनको नाम लेवेसो सुनवेसो अनायास करके प्राणी साक्षात् मृत्युको तर जाय हैं ॥ ३० ॥

१ हे ध्रुव तेरो मंगल होय तोसम जगमें और न कोय ॥ हरिमें पाप दिये सब खोय, तेरे वैरीने प्रीति होय ॥ १ ॥ राजनमें तू है शिरताज, तोसम कोउ नाहिं जगमैं आज ॥ तुम पायो देवतनको राज, श्रीहरिने कीने सब काज ॥ २ ॥ सो या माहात्म्यके भजन है ॥ २ ठुमरी ॥ नारायण नरसिंह नरोत्तम पुरुषोत्तमको ध्यान धरो रे ॥ टेर ॥ गिरिवरधर गोपाल गदाधर गरुडध्वज पद हृदय धरो रे ॥ १ ॥ दीनानाथ दीनके बंधु दीनदयाल दामोदर नरहरि, जगन्नाथ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुनय ऊचुः—औत्तानपादे भगवांस्तव शार्ङ्गधन्वा
देवः क्षिणोत्ववनतार्तिहरो विपक्षान् ॥
यन्नामधेयमभिधाय निशम्य चाद्धा
लोकोऽञ्जसा तरति दुस्तरमङ्ग मृत्युम् ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे ध्रुवस्य यक्षैः सह युद्धवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अध्याय ११.

मैत्रेय उवाच—निशम्य गदतामेवमृषीणां धनुषि ध्रुवः ॥
संदधेऽस्त्रमुपस्पृश्य यन्नारायणनिर्मितम् ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि, ऋषिनके ऐसे कहे भए वचन सुनके ध्रुवजी आचमन कर नारायणको निर्मित करो भयो अस्त्र धनुषमें संधान करते भए ॥ १ ॥ हे विदुर ! जब धनुषमें नारायणास्त्रको संधान कीनो, तब यक्षनकी करी सब माया शीघ्र नष्ट हो गई, जैसे ज्ञानके उदय होवेसों सब क्लेश दूर होय हैं ॥ २ ॥ जब ध्रुवजीने नारायणास्त्रको प्रयोग कीनो, तब सुवर्णके पंख जिनमें ऐसे मनोहर हंसनके वस्त्रयुक्त बाण निकस वैरिनकी सेनामें घुसगए जैसे भयंकर शब्दकर मोर वनमें घुसैहै ॥ ३ ॥ पैनी धाराके बाणनसो हत होय पुण्यजन भागे संग्राममें कुपित आयुध उठाय गरुडजीके मारवेको फण उठायके सर्पकी समान सन्मुख ध्रुवपै दौडते भए ॥ ४ ॥ सो ध्रुवजी बाणनसो संग्राममें विनके बाहु, ऊरु, शिर, अधर, कंधा, उदर, काट सूर्यमंडलसो परै लोकमें पहुँचावते भए जहां बडे २ ऊर्ध्वरेतानाम बालब्रह्मचर्यके आचरण करवेवारे आकाशको भेद वैकुंठको जांय है ॥ ५ ॥ चित्ररथी ध्रुवसों निरपराधी गुह्यकनकों बहुत मरते देख कृपाकरके मनु पितामह ऋषिसहित आयके उत्तानपादके पुत्र ध्रुवसों बोले ॥ ६ ॥ मनुजी बोले कि हे पुत्र ! तमके द्वार रोषसो बस करो, या क्रोधसो निरपराधी पुण्यजन तुमने मारे है ॥ ७ ॥ हे पुत्र ! हमारे कुलके उचित ये कर्म नहीं है, कि निरपराधी यक्षनको ऐसो वध कीनो ॥ ८ ॥ एकके अपराधसों प्रसंगसों बहुत मार डारे, हे भ्रातृवत्सल ! हे अंग ! भाईके वध हैवेसौ तापित हैकै तुमने ये कर्म कीनो है ॥ ९ ॥ हृषीकेश भगवान्के अनुवर्ती साधनको ये मार्ग नहीं है, जो तुम आत्मज्ञानको प्राप्त हैकै पशुनकी नाईं जीवहिंसा करोहो ॥ १० ॥ सब जीवमात्रमें आपसरीको भावकर, सब भूतमें निवास करवेवारे हरिके आराधन कर दुराराध्य विष्णुके परमपदको प्राप्त होते भए ॥ ११ ॥ सो तुमनें हरिकोहू ध्यान कीनो है, और श्रेष्ठ पुरुषनकेहू माननीय हैकै और सत्पुरुषनके शिक्षक हैकै फिर क्यों ऐसो निन्द्यकर्म करोहो ॥ १२ ॥ सहनशीलता दया मैत्री सब जीवमात्रमें करनी योग्य है, सबमें समताभाव करवेसों भगवान् प्रसन्न होय हैं ॥ १३ ॥ जब भगवान् प्रसन्न होय हैं, तब प्राकृतगुणसों पुरुष मुक्त हैकै जीवन्मुक्त हो ब्रह्मके आनंदको प्राप्त होय है ॥ १४ ॥ पंचभूतसों ये सब स्त्री पुरुष जन्मे हैं, इन दोनोंके मैथुनसों फेर छोरा छोरी होय है ॥ १५ ॥ हे राजन् ! परमात्माकी मायाकरके गुणनके उलटे

जगवंदन गावौ केह सुबुद्ध कुबुद्ध हरो रे ॥ २ ॥ सुखकरण दुखहरण दयानिधि नरहरि नाम निरंजन रघुपति, भवभंजन सब जन मनरंजन कृपासिंधु दारिद्र हरो रे ॥ ३ ॥ परमानंद परमेश्वर स्वामी अंतर्यामी गरुडगजगामी, पांच वर्षके ध्रुवजी जगतमें चरनशरनमें आन परो रे ॥ ४ ॥

१ ध्रुवने नारायण अस्त्रसे यक्षोंको मारा इससे वह परमपदको गये दूसरी बात यहभी थी कि ध्रुव नारायणके अत्यन्त भक्त थे उनके दर्शन कर यक्षोंकी गति हुई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पलटे हैवेसो उत्पत्ति पालन नाश होय है ॥ १६ ॥ वामें निर्गुण और पुरुष श्रेष्ठ ईश्वर निमित्त मात्र हैं, जिस कारणसो यह प्रगट अप्रगट विश्व चम्मक पत्थरसो लोहकी नाईं घूमे हैं ॥ १७ ॥ सो भगवान् कालशक्ति करके गुणनके क्षोभद्वारा सृष्टि आदि विषय शक्तिको विभागकरके जगत्को रचकेहू आप अकर्ता हैके रहे हैं अकर्ता होयके करेहैं, अहंता होयके मारे हैं निश्चय है कि सर्व सामर्थ्यवान् ईश्वरकी चेष्टा जानवेमें नहीं आवे है ॥१८॥ सो अनंत, अंत करवेवारो है, काल अनादि सबकी आदि करवेवारो है, सो जननको जन्मावे हैं, मृत्युकरके कालरूप होय मारे हैं ॥ १९ ॥ प्रजामें समान भावसो प्रवेश करवेवारे मृत्युरूप कालपुरुषके न तो कोई अपने पक्षको है, न शत्रु है, असमर्थ अनाथ होयके यह प्राणिसमूह कालके दौडवेके साथही सब जीवसमूह वाके पीछे धावे है, जैसे पवनके संग रज उडे है ॥ २० ॥ जीवकी आयुको घटनो और बढनो यह दोनों कर्माधीन जीवके स्वामी आप करते हैं तथापि आप सदा स्वस्थ और अपचय उपचयसो रहित हैं॥ २१ ॥ हे नृप ! कोई कर्मको ईश्वर कहे है " वात्स्यायनादिकश्रुतिश्च । कामोऽकार्षीत्कामः करोति कामः कर्ता कामः कारयितेति ॥ " कोई स्वभावको कहे है, एक आचार्य कालको ईश्वर कहे है, कोई भाग्यको ईश्वर कहे है, कोई और आचार्य काम नाम अनेक प्रकारकी कामनानकोही ईश्वर माने है ॥ २२ ॥ हे तात ! अप्रगट, प्रमाणसो दूर; नानाशक्तीनके उदयकारी, परमेश्वरकी जो करवेकी इच्छा है सो कोई नहीं जाने है, न उनके जन्मकी खबर पडे है " तथाच श्रुतिः । को अद्धा वेद क इह प्रावोचत्कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथाको वेद यत आबभूव" इत्यादिः ॥ २३ ॥ हे पुत्र ! इन कुबेरके यक्षनने तुम्हारो भाई नहीं मारो है हे तात ! जन्ममरण पुरुषके भाग्यसो होय है ॥ २४ ॥ सोई विश्वको रचे है, सोई रक्षा करे है, यद्यपि ऐसे है तथापि अहंकार न करवेसो गुणकर्म करके लिप्त नहीं होय है ॥ २५ ॥ ये कालरूप ईश्वर भूतात्मा भूतनके ईश सबके अपनी मायाशक्तिको लेके सब जीवमात्रको रचे रक्षा करे संहार करे है ॥ २६ ॥ हे तात ! मृत्यु, अमृत, भाग्यरूप जगत्परायण सर्वात्माकी शरण जाओ, जाके अर्थ विश्व रचवेवारे बलि दे है, जैसे दामसो बंधे बैल जितकूं वनजारो चाहे तितकूं चले है ॥ २७ ॥ जो पांच वर्षके माकू त्याग, सौतेली माके वचनसो मर्म भिदवेसो वनमें गए, तपसो ईश्वरकों आराधन कर त्रिलोकीके मूडपें स्थानको प्राप्त होते भए ॥ २८ ॥ हे अंग ध्रुव ! विरोधरहित आत्मामें स्थित निर्गुण एक अक्षर आत्माको विमुक्त आत्माको आत्मद्रष्टा हैके ढूंढो जामें यह असद्भेद प्रतीत होय है ॥ २९ ॥ तुम दिव्यदृष्टि करके भगवान् अनंत आनंदमात्र व्यापक सर्वशक्तिमान नारायणमें पराभक्ति करके धीरेसो मन अहंरूप अविद्याकी ग्रंथि काटोगे ॥ ३० ॥ क्रोध दूर करो, तुम्हारो भद्र होय, ये क्रोध सब मंगलको शत्रु है, जैसे दवासो रोग नाश होय हैं या प्रकार शास्त्र सुनवेको क्रोध न करनोही फल है ॥३१॥ क्रोधके वशी हैवेसो या प्राणीसो सब उद्विग्न होय हैं यासो अपने आत्माको अभय चाहैं तो बुद्धिवान् कभू क्रोधके वशमें न होय ॥३२॥ शिवके भ्राता कुबेरकी यह तुमने अवज्ञा कीनी जो क्रोधके मारे भाईके मारवेवारे पुण्यजननको मारो ॥३३॥ हे वत्स ! नम्रता और सुन्दर वचनसो तिन्हें प्रसन्न करो, क्यों कि

१ या वार्तापर एक महात्माको बनायो पद है ॥ रागिनी भैरवी ॥ नारायणकी भक्ति लिये बिन मुक्ति कोई नहीं पावैगा ॥ टेर ॥ तामस राजस देवहि पूजै रजतम पुरमें जावैगा ॥ १ ॥ भैरव भूत प्रेत चंडी हित गंदा भोजन खावैगा ॥ २ ॥ तामस बोली तामसवृत्ति तामस शास्त्र सुहावैगा ॥ ३ ॥ यही जान रजतमको त्यागो हृदयमें पुरुष दिखावैगा ॥ ४ ॥ देख मनुष्य ऋषि दास हरीके सबसे प्रीत सहावैगा ॥ ५ ॥ भक्ति करै सो सबसें उत्तम द्विज मुनि यति कहावैगा ॥ ६ ॥ पुरुषोत्तमको दासदास मिलवे परपद पहुँचावैगा ॥ ७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जबतक महात्मानको तेज हमारे कुलको तिरस्कार न करैं ॥ ३४ ॥ ऐसे स्वायंभुवमनु ध्रुव पोतेकों शिक्षा कर ध्रुवसों वंदित ऋषिनको संग लिये अपनें पुरकूं जातो भयो ॥ ३५ ॥

एवं स्वायंभुवः पौत्रमनुशास्य मनुर्ध्रुवम् ॥
तेनाभिवन्दितः साकमृषिभिः स्वपुरं ययौ ॥ ३५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे मनुना तत्त्वोपदेशेन यक्षवधनिवारणवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

मैत्रेय उवाच-ध्रुवं निवृत्तं प्रतिबुध्य वैशसादपेतमन्युं भगवान् धनेश्वरः ॥
तत्रागतश्चारणयक्षकिन्नरैः संस्तूयमानोऽभ्यवदत्कृताञ्जलिम् ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि ध्रुवजीको हिंसा क्रोधसो निवृत्त भयो जान भगवान् कुबेरने चारण यक्ष किन्नरनके स्तुति करते वहां आयके हाथ जोडे खडे ध्रुवसों कही ॥ १ ॥ कुबेर बोले कि हे क्षत्रियनंदन ! हे पापरहित ! हम तुमपै प्रसन्न भए जो तुम पितामहकी आज्ञासो दुस्त्यज वैरको त्यागते भए ॥ २ ॥ न तो आपने यक्षनको मारोहैं न यक्षनने आपके भाईको मारो, सब जीवनको उत्पत्ति नाशकर्ता प्रभु काल है ॥ ३ ॥ हम है तुम हो ये जो अज्ञानकी बुद्धि पुरुषको होयहै सो स्वप्नकी मायाके समान असत्सों उत्पन्न भए देहके अनुसंधानसों होय है जासें बंध और दुःखादि विपर्यय होय हैं ॥ ४ ॥ हे ध्रुव ! तुम्हारो मंगल होय अब जाओ भगवान् अधोक्षज सर्वभूतात्मविग्रह परमेश्वरकों सर्वभावकरकै प्राप्त होओ ॥ ५ ॥ सेवन करनेयोग्य चरणवारे संसारके नाशक, शक्ति करकै युक्त गुणमयी आत्ममाया करकैं रहित, परमेश्वरको संसारनिवृत्तिके अर्थ तुम भजो ॥ ६ ॥ हे उत्तानपादपुत्र ! निःशंक होकें जो तुम्हारे मनमें काम होय सो वर मांगो तुम वरके योग्य हो, कारण कि हमने सुनीहै कि तुम भगवान्के चरणनके अधिक समीपी हो ॥ ७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि राजा कुबेरने जब वर मांगो ये कही तब महाभागवत ध्रुव हरिमेंसे चलायमान नहीं हैवेवारी भक्ति स्मृति मांगते भये, जा करकै दुरत्यय अंधकारको विना यत्न तरजाय है ॥ ८ ॥ इडविडाके सुत कुबेर प्रसन्न मनसो विन्हैं भक्ति दैके ध्रुवके देखते देखते अंतर्ध्यान है अपने धामकों जाते भए ॥९॥ फिर ध्रुवजी बहुत दक्षिणावारे यज्ञनसों द्रव्यक्रिया और देवतासम्बन्धी कर्मकर फलरूप साध्य कर्मके फलदाता भगवान्को पूजते भये ॥ १० ॥ सबके आत्मा सर्वस्वरूप अच्युतमें तीव्र भक्ति करते आत्मा और सब जीवनमें स्थित एककोंही देखते भए ॥ ११ ॥ शीलमें सम्पन्न ब्रह्मण्य दीनवत्सल धर्मसेतूनके रक्षक तिन ध्रुवकों सब प्रजा पिता मानती भई ॥ १२ ॥ सो छत्तीस सहस्र वर्ष भूमंडलको शिक्षा करते भए, भोगनसो पुण्य और अभोगसो अशुभ क्षय करतेभए ॥१३॥ कि ऐसे बहुत कालपर्यंत जितेंद्रिय होय त्रिवर्गके उपयोगी पदार्थनको व्यतीतकर पुत्रकों नृपासन देते भये ॥१४॥ या विश्वको आत्मामें मायारचित मान जो कि अविद्यारचित स्वप्नवत् गंधर्वनगरसदृश है ॥ १५ ॥ देह स्त्री पुत्र सुहृद् सेना ऋद्धि खजानो अंतःपुर रमणीक विहारकी भूमि समुद्रपर्यंत भूमंडलराज्य ये सब कालकरके नष्टप्राय मानके ध्रुवजी बद्रिकाश्रमको जाते भए ॥ १६ ॥ तामें जाय सब इंद्रिनकी विशुद्धिकर कल्याणरूप जलमें स्नानकर, आसन बांध पवन मन सब इंद्रियनको जीत स्थूलभगवत्प्रतिमामें मनको लगाय ध्यान करते

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निरंतर समाधि लगावते भये ॥ १७ ॥ श्रीहरिभगवान्में निरंतर भक्ति करते आनंदकी बाष्पकलासों वारंवार पीडित, विवशहृदय और पुलकित अंग, सब मोह त्याग अपनपेकोहू स्मरण न करते भये ॥ १८ ॥ तब आकाशसों उतरतो विमान ध्रुवजी देखते भए, जैसे दशों दिशामें प्रकाशै मानू चंद्रको उदय भयोहै ॥ १९ ॥ तहां देवश्रेष्ठ चतुर्भुजी श्यामकिशोर रक्तकमलसमान नेत्र गदा लिये खडे, सुंदर वस्त्र पहिरे किरीट हार बाजू सुंदर मकराकृत कुंडल धारे है ॥ २० ॥ उन्हें नारायणके पार्षद जान ध्रुवजी तत्काल उठके खडेभए और संभ्रमके कारण अर्घ्यादिकी विस्मृति हैगई और विन भगवान्के प्रधान पार्षदनकों नारायणको नाम उच्चारण कर प्रणाम करवे लगे ॥ २१ ॥ श्रीकृष्णके चरणनमें मन लगे रहवेके कारण विनयसों शिर झुकाये कर जोरे खडे ध्रुवके निकट जाय मुसकाते भए भगवान्के परममाननीय सुनंद और नंदनाम पार्षदननै कहा ॥ २२ ॥ सुनंदनंद बोले कि हे महाराज ! तुमारो भद्र होय सावधान हैके हमारी वाणी सुनो पंचवर्षके तुमने जिन देवताको आराधन कर विन्हे तृप्त कियो हो ॥२३॥ वा सब जगत्के धारण पोषण करवेवारे धनुष्यधारी देव श्रीमन्नारायणके हम पार्षद तुम्हें भगवत्के स्थान ले जायवेको यहां आये है ॥२४॥ जो जीतवेमें न आवै सो विष्णुपद तुमनें जीतो है, जाकों सप्तर्षिहू अप्राप्त है दूरसो ठाडे देखे हैं, वहां तुम स्थिर रहो, जहां चंद्रमा सूर्यादिक ग्रह नक्षत्र तारा आपकी प्रदक्षिणा करैंगे ॥ २५ ॥ हे ध्रुव ! तुम्हारे कोई पुरखा वा स्थानमें नहीं गयेहैं जगत्को वंद्य विष्णुको परमपद है तामें स्थित होओ ॥ २६ ॥ ये विमान उत्तम महायशस्वी ईश्वरने तुम्हारे लिये भेजो है यासों हे आयुष्मन् ! यापै चढवेकों योग्य हो ॥ २७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि वैकुंठमें मुख्य अधिकारवारेनकी मधु चुचाती वाणी भगवत्प्रिय ध्रुव सुन अभिषेक कर, नित्य मंगलरूप मुनिनको प्रणाम कर, आशीर्वाद करावतो भयो ॥ २८ ॥ विमानकी परिक्रमा दे पूजनकर पार्षदनको प्रणाम कर वापें चढवेकी जब इच्छा करी तब हिरण्मयरूप धारते भए ॥ २९ ॥ ता समय उत्तानपादको पुत्र मृत्युकों आयो देख मृत्युके मूंडपै पांव देकें अद्भुत विमानपें बैठते भए[1] ॥ ३० ॥ तब मृदंग ढोल इत्यादिक नगाडे बजे गन्धर्व मुखिया गावते भए, आकाशमेंसे पुष्पनकी वर्षा होती भई ॥ ३१ ॥ जब ध्रुवजी स्वर्गको जायवे लगे तब सुनीति जननीको याद करते भए, बोले या दीनाको छोड कैसे मैं स्वर्गको जाऊं ॥ ३२ ॥ ध्रुवजीको यह निश्चय जान पार्षद सवारीपे बैठी आगे जाती माकों दिखावते भए ॥ ३३ ॥ जहां तहां मार्गमें विमानपें बैठे देवता प्रशंसा करै है, क्रमसो सब ग्रह सब देवता पुष्प वर्षाते भए ॥ ३४ ॥ देवयानद्वारा त्रिलोकी उलांघ और मुनिनको उल्लंघन कर ध्रुवजी अचलगतिवारे विष्णुपदको प्राप्त भये ॥ ३५ ॥ जो धाम अपनी कांतिकरकै सदा प्रकाशै है, जाके पीछे तीनों लोक

---

१ यह ऐसो जाननो कि जब विमानमें चढन लगे सोई मूर्तिमान् मृत्यु आयके बोलो कि ध्रुव! तेरो आजतक मेरो मुखमें आये विना भाई सदेह स्वर्गमें कोउ नहीं गयो सो या मर्यादाको मत तोरो सोई ध्रुवजी तनक ठिठके सोई पार्षद बोले कि ध्रुव देखो कहा हो ये तुमारी चरणचौकी बनवेको मृत्यु आये है सो याके मूडपे पाय धरके विमानमें आय बैठो सोही तौ झटदेसीना मृत्युके मूडपें पांय धरके झट विमानमें जाय बैठे ॥ २ ध्रुवने ऐसी महातपस्याभी नहीं की जो महात्माओंकोभी अशक्य कालके शिरपर चरण धर परमपदको गये इसका उत्तर यह है कि ध्रुवकी बहुत तपस्या तौ नहीं है परन्तु भगवान् करुणाके सागर हैं ध्रुवको बालक और पितासे तिरस्कृत देख अपना भक्त जान बालकपर अत्यंत कृपा की ॥ ३ पार्षदनने कही कि ध्रुव कहा है तब ध्रुवजीने कही कि महाराज जा मैयाकी दयासो मोको ये पद मिलो सो मैं तौ चलौ पन जाने मेरी मा जाने कहा होयगी सोई पार्षदनने कही कि ध्रुव भलो बावरे तेरी मा तोते कहू पीछे रहनवारी हैं देख विमानपै बैठी तेरे अगारी देख ये ऊपर जाय रही देख ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रकाश करै हैं, जो मनुष्योंपें दया नहीं करै हैं वे तहां नहीं जाय है. जो लोक दिन रात शुभ कृत्य करते रहे हैं वे वहां जायहैं ॥३६॥ जिनके सुभाव शांत हैं, सबको समान दृष्टिसो देखें हैं, जो सदा पवित्र रहैं हैं सब जीवमात्रमें जो प्रीति करै है अच्युतही जिनके प्रिय बांधव है, वे अनायास करकै अच्युतके पदकों जाय है ॥ ३७ ॥ ऐसे उत्तानपादको पुत्र ध्रुव कृष्णपरायण तीनों लोकनमेंकी चूडामणीकी नाईं निर्मल होतो भयो ॥ ३८ ॥ हे कौरव्य ! गम्भीर वेगवान् यह ज्योतिषचक्र जामें लगो भयो (मेढी) कोलूमें लगे बैलके समान आलस्यरहित भ्रमण करै है वा पदको प्राप्त भयो ॥ ३९ ॥ नारद भगवान् ऋषि ध्रुवकी महिमा देखके वीणा बजावते प्रचेतनके यज्ञमें भगवन्माहात्म्य गाती विरिया ध्रुवचरित्रहू गावते भए ॥ ४० ॥ श्रीनारदजी बोले कि पतिव्रता सुनीतिके पुत्रकों तपके प्रभावसों वह गति प्राप्त भई जा गतिको वेदवादी अनेक उपाय निर्धारित करवेपेंहू नहीं पाय सक्तेहैं फिर और राजानकी तौ बातही कहा है ॥४१॥ जो पंचवर्षके पिताकी स्त्रीके वाणीरूपी शस्त्रसो भिदे भए दुःखी हृदयसो वनको जाय मेरी आज्ञासो भक्तनके गुणनसो पराजित अजित प्रभुको वश करते भए ॥ ४२ ॥ जो क्षत्रबन्धु भूमिमें जिनकी पदवीको अनेक वर्षमेंहू न जाय सके है सो पांच छै वर्षकेसे थोडेसेही दिनमें भगवान्को प्रसन्न कर तिनकी पदवीको प्राप्त होते भए ॥ ४३ ॥ मैत्रेयजी बोले कि जो तुमने हमसो पूंछो सो सब कह्यो ध्रुवजीको सुन्दर यश सन्तनको संमत चरित है ॥ ४४ ॥ ये ध्रुवचरित्र धनको दाता है यश पुण्य आयु मंगल स्वर्ग ध्रुवजीको पद सुन्दर मन करवेवारो प्रशंसाको दायक पापनाशक है ॥ ४५ ॥ भगवद्भक्तकी या लीलाको जो श्रद्धासो सुनें तो भगवान्में भक्ति होय जासो क्लेश नाश होय है ॥४६॥ बडप्पनकी इच्छावारेको साधन तथा शीलादि गुणदाता तेजकी इच्छावारेको तेजदाता है, मनस्वीनको मानको दाता है ॥ ४७ ॥ स्नान करके प्रातःसमय ब्राह्मणनमें बैठ यह कहै वा ध्रुवचरित्र सांझको कहैं वोह महायशस्वी है ॥४८॥ पूर्णमासी अमावस द्वादशीमिश्रित एकादशी, श्रवण, दिनक्षय, व्यतीपात, संक्रांति रविवारको ॥४९॥ श्रद्धा[1]धारण करवेवारेनको सुनावै, तीर्थ ध्रुवको चरित सुनावे तौ कुछ इच्छा बाकी नहीं रहैं हैं, संतुष्ट है जाय है, सिद्ध होय है ॥ ५० ॥ जो ज्ञानहीनको सन्मार्गमें अमृततुल्य ज्ञान देय है वा कृपालु दीननाथके ऊपर सब देवता अनुग्रह करै है ॥५१॥ हे परीक्षित् ! विशुद्ध और विख्यात कर्मवारे ध्रुवको ये चरित्र मैंने कह्यो जो बालकपनेमें सब खेल त्याग माताके घरको त्याग हरिके शरण जाते भए ॥ ५२ ॥

इदं मया तेऽभिहितं कुरूद्वह ध्रुवस्य विख्यातविशुद्धकर्मणः ॥
हित्वार्भकः क्रीडनकानि मातुर्गृहं च विष्णुं शरणं यो जगाम ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे ध्रुवचरिते संपूर्णवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

---

१ श्रद्धासैं श्रवण करना उचित है, ऐसे नहीं कि जैसैं एक बुढिया कथा सुनने रोज जायो करेही, और बडे आंसू बहावैही, पंडितजीने और श्रोताओंने जानी या बुढियाको बडो प्रेम है, यह दक्षिणाभी गहरी चढावैगी, जिस दिन कथा समाप्तिके समय आया, उस दिन बुढिया न आई, पंडितजीने बहुत बाट देखी, अन्तको कथा पूरी होगई पंडितजीने विचारी कि चलो बुढियाके घर तौ होते चलैं, जाने वह कैसे न आई कुछ बीमार तौ न होगई, उसके घर जायकै पुकारे बुढिया चरखा कातेही पंडितजीको बुलायकर प्रणाम करी पंडितजी बोले तू कथामें न आई, बुढियानै कही महाराज घरकाम हैं पंडितजी बोले तुझै तौ बडा प्रेम था, ले हम जांय है कुछ दक्षिणा तौ देदे बुढिया बोली महाराज मेरे पास तौ चरखा पौनीही है मुझे प्रेम तुम्हारी कथाका क्या है मैं तुम्हारी कथामें इस कारण रोवेही कि जैसा तुम्हारी कथाकी पोथी बांधनैका वसना है ऐसा मेरी बेटी चुनियाके लालाका पैजामा था उनकी याद आजायही पंडितजी मौन हुए बोले जब ऐसे है तौ कथा गुण करती ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १३.

सूत उवाच-निशाम्य कौषारविणोपवर्णितं ध्रुवस्य वैकुण्ठपदाधिरोहणम् ॥
प्ररूढभावो भगवत्यधोक्षजे प्रष्टुं पुनस्तं विदुरः प्रचक्रमे ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि पांच अध्यायमें पीछें ध्रुवचरित कहि अब ग्यारह अध्याय करकै राजा पृथुको चरित्र वर्णन करै है कि मैत्रेय करकै वर्णित ध्रुवजीको वैकुंठपदमें जायकै रहिनो सुन भगवान् अधोक्षजमें अधिक भाव उत्पन्न हैवेसो विदुर फेर पूछवेको प्रारंभ करते भए ॥ १ ॥ विदुरजी बोले कि हे सुव्रत ! प्रचेतानको कहा नाम हो, कौनके वे संतान है, कौनके वंशमें विख्यात भए, यज्ञ कहां करते भए सो कहो ॥ २ ॥ महाभागवत देववत् दर्शनवारे नारदजी परमभक्त है यह मैं मानूंहूं कारण कि विन्हें भगवान्की पूजारूप क्रियासंयुक्त पंचरात्र बनायो है ॥ ३ ॥ अपने स्वधर्ममें शीलवारे पुरुष भगवान्को पूजन करै है सो निश्चय करके भक्तिमान् नारदनें पूजै है ॥ ४॥ जो वहां नारदजीने भगवत्कथा वर्णन करी है सो हे ब्रह्मन् ! सुनवेकी इच्छावारे मेरे अर्थ संपूर्णता करकै वर्णन करो ॥ ५ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ध्रुवजीको पुत्र उत्कल जब पिता वनको चले गए तब पिताकी सब भूमिकी लक्ष्मी राज्यकी इच्छा न करतो भयो ॥ ६ ॥ सो जन्मसो शांतात्मा संग त्याग समदर्शी लोकमें अपनी आत्माको विस्तृत मानतो भयो और आत्माको सब लोकमें पूर्ण मानतो भयो ॥ ७ ॥ ब्रह्म सुखमय शांत देह ज्ञानरस निमग्न सब आनन्दमय आत्माको मानतो भयो ॥ ८ ॥ अखण्ड योगअग्निसो सम्पूर्ण वासना भस्म हैवेके कारण अपने स्वस्वरूपको अनुसंधान कर अपनेसो अन्य कछु न देखतो भयो ॥ ९ ॥ जड अंध बधिर उन्मत्त गूंगेकीसी आकृति कर खोटी मतिवारेनके मार्गमें बालकनकी समान देखते प्रशांत अग्नि समान होते भए ॥ १० ॥ कुलवृद्ध और सब मंत्रीनने वाको जड उन्मत्त और बावरो जान छोटे भ्रमिके पुत्र वत्सरको राज्य दियो ॥ ११ ॥ वत्सरकी प्यारी स्वर्वीथी भार्या छै पुत्र रचती भई, पुष्पार्ण १ तिग्मकेतु २ इष ३ ऊर्ज ४ वसु ५ जय ६ ॥ १२ ॥ पुष्पार्णकी प्रभा, दोषा दो भार्या होती भई, प्रातर १ मध्यंदिन २ सायं ३ ए प्रभाके पुत्र भए॥ १३॥ प्रदोष निशीथ व्युष्ट ये तीन दोषाके सुत भए, व्युष्टने पुष्करिणीमें सर्वतेजसनाम सुतको उत्पन्न करो ॥ १४ ॥ चक्षु आकूती पत्नीमें मनुकू उत्पन्न करतो भयो, वो चाक्षुषमनुनाम भयो वो मनु पट्टराणी नड्वलामें ११ सुत उत्पन्न करतो भयो ॥१५॥ पुरु १, कुत्स २, त्रित ३, द्युम्न ४, सत्यवत् ५, धृतव्रत ६, अग्निष्टोम ७, अतीरात्र ८, प्रद्युम्न ९, शिबी १०, उल्मुक ११ ॥ १६ ॥ उल्मुक पुष्पकरिणीमें उत्तम छै पुत्र उत्पन्न करतो भयो, अंग १, सुमनस २, ख्याति ३, क्रतु ४, अंगिरा ५, गय ६॥ १७॥ अंगकी सुनीथा पत्नी महाभयानक वेनको उत्पन्न करती भई, जाके दुःशीलभावसो राजर्षि अंग वैराग्यमान हैकै पुरसो निकस जातो भयो ॥ १८ ॥ हे विदुर ! कोपकर मुनिनने वेनकों ब्रह्मवज्ररूप शाप दीनो, जब वाके प्राण निकस गए तब फेर वाको दक्षिणकर मथन करते भए ॥ १९ ॥ जब लोकमें कोई राजा न रह्यो तब चोरनसों पीडित प्रजा जान नारायणके अंशसो आद्यराज पृथु पृथ्वीश अवतार लेते भए ॥ २० ॥ विदुरजी बोले कि महाशीलवान् साधु ब्रह्मण्य महात्मा अंगराजकी ऐसी दुष्ट प्रजा कैसे भई जासो विमन हैकै राजा जातो भयो ॥ २१ ॥ राजा वेनके कहा पापको देखकै धर्मात्मा मुनि ब्रह्मशापरूप दंड देते भए वह तौ सबको दंडव्रतधारी राजा हो सो औरसो कैसे दंड पावतो भयो ॥ २२ ॥ प्रजापालक पापवान्ही होय तौहू प्रजाकरकै वध

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करवे योग्य नहीं है क्यों कि जो ये अपने तेज करके लोकपालकनके तेजकों धारे है ॥२३॥ हे ब्रह्मन्! सुनीथाके पुत्रकी ये चेष्टा पर अवरवेत्ता तुम श्रद्धालु मोसों कहो मैं तुम्हारो भक्त हूं ॥ २४ ॥ मैत्रेयजी बोले कि राजऋषि अंगराजा महायज्ञ अश्वमेध करतो भयो, सो ब्रह्मवादिनके बुलाये यज्ञमें देवता नहीं आये ॥ २५ ॥ तब विस्मित हैके ऋत्विज यजमानसों बोले कि तुम्हारो हवि हवन करें हैं तोहू देवता नहीं ग्रहण करै है ॥ २६ ॥ हे राजन् ! ये हवनयोग्य सब सामग्री बहुत शुद्ध है, श्रद्धाविधिपूर्वक दियो है, और ए वेदमंत्र अयातयाम है नाम हमारे नित्यके घोके भये है, महाव्रती हम पढकै होमे हैं ॥ २७ ॥ हम देवतानकी अणुमात्रहू अवज्ञा नहीं जानै है फिर क्यों कर्मनके साक्षी देवता अपनो अपनो भाग ग्रहण नहीं करें हैं ॥ २८ ॥ अंग यजमान द्विजनको वचन सुन उदास भयो उनकी आज्ञासो सभासदनसो पूछतो भयो ॥ २९ ॥ हे सभासदहो ! बुलायेहू देवता नहीं आवें हैं न यज्ञभाग ग्रहण करें हैं मैंने कौन पाप कीनो है सो तुम विचारकै कहो ॥ ३० ॥ सभासद बोले कि हे नरदेव ! या जन्मको तो तुमारो कछु पाप नहीं है, कोई पूर्वजन्मको पाप है, जासो तुम गुणवान् हो तोहू पुत्ररहित हो ॥ ३१ ॥ प्रथम पुत्रप्राप्तिके निमित्त यत्न करो और याके निमित्त नारायणको यजन करो तौ वे तुमको पुत्र देंगे आपको मंगल होय पुत्र देवेंगे ॥ ३२ ॥ तब अपने अपने भागहू सब देवता ग्रहण करेंगे, जो यज्ञपुरुष भगवान् साक्षात् हरिको संतानके निमित्त यजन करवेसों विनके आयवेपै देवताहू साथ आवेंगे ॥ ३३॥ भक्तजन जिन जिन कामनानकी चाहना करें हैं तिन तिन कामनानको श्रीहरि देय हैं जैसे पुरुष आराधन करै तैसोही फलको उदय होय है ॥ ३४ ॥ ऐसे निश्चय कर ब्राह्मण सब वा राजाके प्रजा होयवेके अर्थ सर्वांतर्यामी सर्वव्यापक विष्णुके अर्थ पुरोडाश देते भये पुरोडाश याको नाम है कि एक स्रुवामें इमरती सोमलताके अमृतमें भीजी भई देवेसों सर्वेश्वर प्रसन्न होय है ॥ " विश्वकोशमें ह कि ॥ पुरोडाशो हविर्भेदे चमस्यां पिष्टकस्य च । रसे सोमलतायाश्च हुतशेषे प्रकीर्तितः " ॥३५ ॥ जब ऐसो पुरोड़ाश विष्णुनें पायो, तब वा कुंडमेंसो सुवर्णकी माला पहिरे श्वेत वस्त्रधारे एक पुरुष सुवर्णके बडे भारी थारमें सुंदर खीर लिये भये निकसो तिनको सब देखते भए ॥ ३६ ॥ सो राजा ब्राह्मणनकी संमतिसो हाथसों खीर लेके सूंघकै आनंदित होय उदार बुद्धिकर स्त्रीके अर्थ देते भये ॥ ३७ ॥ सो राणी पुत्र होनेकी खीरको पाय पतिके गर्भको धारती भई, जब समय भयो तब पुत्रवारी पुत्र उत्पन्न करती भई ॥ ३८ ॥ सो बालक मृत्यु अपने नाना नानीके अनुसार भयो, अधर्म मृत्युके अंशसो भयो यासो अधार्मिक भयो ॥ ३९ ॥ सो धनुषबाण लेकै शिकारीके समान वनमें विचरै, साधु मृग गरीब मारै, ये वेन है ऐसे सब जन पुकारकै कहिते भए ॥ ४० ॥ खेलवेके स्थानमें अपने बराबरके क्रीडा करते बालकनको अतिदारुण निर्दयी हठ करके पशुमारककी नाईं मारतोभयो ॥४१॥

---

१ राजा अंग कामभोगमें अत्यन्त आसक्त था और परलोकचिन्ता नहीं करता था इस कारण देवताओंने उसे पुत्रहीन समझकर यज्ञभाग नहीं लिया तथा और राजा अधिक धर्मात्मा थे इस कारण पुत्रहीन होनेपरभी देवताओंने उनके यज्ञमें भाग ग्रहण किया था ॥ २ पूर्वजन्मको ये पाप है कि एक समयमें राजा अंग बालकपनमें मानससरोवरकी तैरटांम विहार करवेको गए थे सो वहां एक वृक्षमें कोई राजहंसके बच्चे खेलतेथे हंस हंसनी थे नहीं उनमेंसे एक बच्चेको पकड मुट्ठीमें बालकपनकी चंचलतासे बंद करो सो वो बच्चा मरगयो जब हंस हंसनी आए तब बालकको न देख सब वृत्तांत सुन बोले कि राजा अंगने जैसे हमारो वंशपालक पुत्र हंस मारो हम निर्वंश भए तैसे राजाभी होय ये शाप सुन हंसिनी बोली हम सरीके पशूनकी कौन चलाई राजासे तो अनेक जीवनको पालन होय है तब वर दीनो यज्ञपुरुषको राजा पूजैगो तासे पुत्र होगो ये वर दीनी हो सो सुन राजा अंग तैसेही करते भए ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजा अपने दुष्ट पुत्रको देख अनेक शिक्षा करन लगो जब शिक्षा करवेको न समर्थ भयो तो अत्यंत दुर्मनी भयो ॥४२॥ और सोचन लगो जो गृहस्थी संतानरहित है वाने नारायणको भली प्रकार पूजन कियो है जासो विन्है दुष्ट संतान हैवेके कारण कुत्सित दुःख भोगने नहीं पडते ॥ ४३॥ अपकीर्ति, महाअधर्म, सब मनुष्यनके संग विरोध और अनंत व्याधी जाके कारण होय है ॥ ४४ ॥ पुत्रनामक आत्माको मोह बंधनकारी है जाके निमित्त दुखदाई घरमें रहनो पडै है कौन पंडित याकौ बहुमान करैगो ॥ ४५ ॥ सत् संतान शोकदायकते हम कुत्सित संतानको श्रेष्ठ माने हैं कारण कि कुपुत्रसो मनुष्यको दुखदाई घरमें वैराग्य होय है ॥ ४६ ॥ ऐसे वैराग्ययुक्त होयकर भागनेवाले नृप प्रातःसमयमें पहिले आधी रातको उठकर मनुष्यनसो अलक्षित वेनकी माको सोई छोडकै घर त्याग चले जाते भए ॥ ४७ ॥ वैराग्यसो प्रजापतिको गयो जान पुरोहित अमात्य सुहृद्गण आदिक अति शोकसो कादर होयकै पृथ्वीमें ढूंढते भए जैसे भीतर अंतर्यामी पुरुषको कुत्सित योगी ढूंढकर नहीं पाते न पावैं तद्वत् राजा न पाए ॥ ४८ ॥ हे विदुर ! प्रजापतिकी पदवी जब न लखाई पडी, तब उद्यमसो हार यह सब पुरीमें आय मुनिनकी सभामें प्रणाम कर रोते २ राजाके खोज न मिलनेके समाचार कहे रहे हैं हे विदुर ! राजा न क्यों कि दुष्ट पुत्र सब क्लेशदाता है[1] ॥ ४९ ॥

अलक्षयन्तः पदवीं प्रजापतेर्हतोद्यमाः प्रत्युपसृत्य ते पुरीम् ॥
ऋषीन्समेतानभिवन्द्य साश्रवो न्यवेदयन्पौरवभर्तृविप्लवम् ॥ ४९ ॥

इति श्रीम० भा० टी० चतुर्थस्कन्धे वेनसुतदुःखादङ्गनृपवनप्रवेशो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

मैत्रेय उवाच–भृग्वादयस्ते मुनयो लोकानां क्षेमदर्शिनः ॥
गोप्तर्यसति वै नॄणां पश्यन्तः पशुसाम्यताम् ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि भृगु आदि मुनि पालक विना शिक्षा करनहारेके मनुष्यनकू पशुसमान भए विचारते भए ॥१॥ वे ब्रह्मवादी वीरमाता सुनीथाको बुलाय सब प्रजाकी असंमतिसो भूपति वेनको राजतिलक करतेभए[2] ॥२॥ नृपासनपर प्राप्त अति उग्रशिक्षक वेन राजाको सुन सर्पके डरसो मूसेकी समान सब चोर विलाय गए ॥ ३ ॥ सो नृपस्थानमें बैठो आठ लोकपालनकी विभूतिसों गर्वित, महा अहंकारी अपनेको महाशूरकी भावना कर महात्मानकी अवज्ञा करतो भयो ॥ ४ ॥ या प्रकार निरंकुश गजकी समान मदांध होकर वेन रथमें बैठकर स्वर्ग पृथ्वीको कंपित करते पर्यटन करवे लगो ॥ ५ ॥ यज्ञ मत करो दान मत करो होम कहींभी मत करो ऐसे भेरीका घोष करायके धर्मको निवारण करतो भयो ॥ ६ ॥ दुराचारी वेन नृपकी ये कुचाल देख लोकको कष्ट आयो जान सब मिल मुनि लोग कृपा करके बोले ॥ ७ ॥ अहो कष्ट दोनों ओरसो लोकको प्राप्त भयो जैसे दोनों ओर काठमें अग्नि लगजाय तो बीचकी चेटी मरजाय तद्वत् पालक चोर एकसरीके होय गये ॥ ८ ॥ कोई राजा न हो याके मारे तो यह अयोग्य हमनें राजा कीनो तोहू अब सब देहधारियनकों भय होय है, कैसे मंगल होय ॥ ९ ॥ सर्पकी नाईं दूध पीकर अब यह अपने पोषकहीकौ काटै है, वेन सुभावहीसों खल हो सुनीथाके गर्भसो जन्मो हैं ॥ १० ॥ यद्यपि वाय प्रजापालक कीनो है और यह प्रजाको मारे हैं तथापि

१ दोहा है कि ॥ मिसुरी मेवा कंद रस मूलर बरगद तूत ॥ पेटहिमें पहिचानिये पूत कपूत सपूत ॥ १ ॥ २ राजा वेनको दुष्ट जानकरभी ऋषियोंने इस कारण राज दिया कि कदाचित् राज्यपर बैठ महात्माओंके संगसे सुधर जाय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

याको समझावे तौ हमको पातक न होयगो ॥ ११ ॥ याके पापकों न जान हम सबने याको नृप करो सामदानसो समझावें, जो हमारी वाणी न ग्रहण करैगो तौ ये अधर्मकारी है ॥१२॥ लोगनके धिक्कारीसो दग्ध याको अपने तेजसों जरावेंगे, ऐसे निश्चय कर भीतर क्रोधमें भरे मुनि याके समीप आय बोले ॥ १३ ॥ धर्ममें निरत सद लोकके हितकारी मुनिलोग वेनके निकट आय साम दान इत्यादि उपायनसो समझाते बोले ॥ १४ ॥ सब मुनिलोग बोले कि हे नृपवर्य ! हे पुत्र ! जो हम कहै है, सो तुम्हारी बल कीर्ति बढावनेवारो है, सो तुम सुनो हम कहें हैं ॥ १५ ॥ पुरुषनको चाहिये कि वाणी मन कायासो धर्मको आचरण करै, तो शोकरहित लोकनको जाय, है जहां सर्व त्यागी जाय है ॥१६॥ हे वीर ! सो ये तुमारो धर्म नाश न होय, यासो प्रजाको क्षेम होय है, धर्मनाश हैवेसो राजा धर्म ऐश्वर्यसो गिर पडै है ॥ १७ ॥ हे राजन् ! दुष्ट मंत्री चोरादिकसो नृप प्रजाकी रक्षा यथावत् कर लेय तौ या लोकमें परलोकमें सुखी रहै है ॥ १८ ॥ जा राजाके राज्य पुरमें भगवान् यज्ञपुरुष अपने वर्ण आश्रम धर्म करकै सदा पूजें जाय हैं ॥ १९ ॥ हे महाभाग ! जो राजा अपनी निज शिक्षामें स्थित है, वा राजाके ऊपर भगवान् सर्वपालक विश्वात्मा अत्यंत प्रसन्न होय है ॥२०॥ जगत्के ईश्वरनके ईश्वर जब तुष्ट है जाय तो फेर याको अप्राप्य कुछ नहीं है, पालकसहित सब लोक आदरसो जाके अर्थ बलि देय है ॥ २१॥ हे राजन् ! सब लोक देवता यज्ञनसो जो ग्रहण करै जांय, वेदत्रयीमय तपोमय ईश्वरको विचित्र यज्ञनकरकै यजन करवेवारे अपने देशनकी समृद्धिके लिये यज्ञनमें लगायवेको योग्य हो ॥ २२ ॥ आपके देशमें ब्राह्मणन करकै विस्तृत यज्ञमें श्रीहरिके कला देवता सम्यक् संतुष्ट हैकै सब मनवांछित देयगे, हे वीर ! विन देवनकी अवज्ञा करवेमें तुम मन मत करो ॥२३॥ वेन बोलो तुम सब मूर्ख हो अधर्ममें धर्म धाना है, जो सब वृत्तिदाता पति है ऐसे पतिको त्याग जार पतिकी उपासना करो हो ॥२४॥ जो मूढ, नृपरूपी ईश्वरकी अवज्ञा करैहैं, वे प्रजा या लोकमें परलोकमें कल्याण नहीं भोगै हैं ॥२५॥ यज्ञपुरुष नामको कौन है, जहां तुम्हारी भक्ति है, सो वो तुम्हारी भक्ति ऐसी है जैसे निंदित स्त्री भर्तासो स्नेह तो न करै, और जार पुरुषसों प्यार करै ॥ २६ ॥ विष्णु विरिंचि शिव इंद्र उपेंद्र वायु यम सूर्य मेघ कुबेर चन्द्र पृथिवी अग्नि सागर ॥ २७ ॥ ये और जो वर शापदाता देवता है, राजाकी देहमें होय है सर्व देवतामय नृप होय है ॥ २८ ॥ तातें हे ब्राह्मणहो ! ईर्षा वैर त्याग सब कर्मसो मोको बलि देओ यज्ञरूप मोय पूजो, मोसो और यज्ञभोजन करवेवारे कौन पुरुष है ॥ २९ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि ऐसी उलटी मतिवारे पापी पाषंड मतमें स्थित सब मंगलसों भ्रष्ट वाको मुनिनने समझायो और वाने मानी नहीं ॥३०॥ और अपनेको पंडित माननहारे वा नृपनें सब आए ब्राह्मणनको तिरस्कार कियो हे विदुर ! तब वे अपनी आज्ञाभंग हैवेसो वापै क्रोध करते भये ॥३१॥ याय मारो मारो ये पापीको सुभाव दारुण है, ये निश्चय है कि जो यह जीवैगो, तो जगत् शीघ्र भस्म समान कर डारैगो ॥ ३२ ॥ ये कुमार्गी नरदेवनके योग्य आसनपै बैठवे लायक नहीं है जो सब लाज छोड सब यज्ञनके ईश्वर विष्णुकी निंदा करै है ॥ ३३ ॥ या अशुभ वेनके विना ईश्वरकी कौन निंदा करसकै है जिनके अनुग्रहसो यह ऐसे ऐश्वर्यको पात्र भयो है " भाजनशब्दस्य पुंस्त्वमार्षम् " अर्द्धर्चादिर्वा ॥ ३४ ॥ ऐसे विचार महाक्रोधकर सब ऋषि वाकों मारवेको उद्यत भए या वेन नृपको अच्युतकी निंदा

---

१ ऐसेही वेतालभट्टने कहा ॥ छप्पै ॥ दया चट्ट होगई धर्म धसगयो धरणिमो ॥ पुण्य गयो पाताल पाप छायो वर्णवर्णमो ॥ घरमें विपरीत लडैं सब नर और नागी ॥ राजा करै न न्याय नगरमें मचरही ख्वारी ॥ उलट दान नरपति लियो शील संतोष कहां रह्यो ॥ वैताल कहे सुन विक्रम अब कलियुग प्रगट भयो ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करवेसो हूं शब्द कहि मारते भए (हुं ये शब्द मारण प्रयोगमें आवै है) ॥ ३५ ॥ ऐसे कर सब ऋषि अपने आश्रमनको गए, तब सुनीथा पुत्रके कलेवरकी रक्षा करावती भई, क्योंकि विद्यायोग ऋषिनको शोचती भई कदाचित् फिर जिवाय दें ॥ ३६ ॥ एक समय वे सब मुनिजन सरस्वतीके जलमें स्नान कर अग्निमें हवन कर सरिताके तटपर बैठकर सत् कथा करते हे (श्लोकमें सरस्वतीको जो सरस्वत् पुंवद्भाव आर्ष मानकर शुकाचार्यने कहा है) ॥ ३७ ॥ तब लोगनकों भयंकर महाउत्पातनको उठे देख बोले अनाथ हम लोगनके अर्थ चोरनसों भूमिपे भय न होय ॥ ३८ ॥ ऐसे ऋषि सब विचारते हे कि सबकों मारते भए चोरनकी दौडवेकी सब दिशानसो धूर बहुत उडती भई देखी ॥ ३९ ॥ लोकके धन चुरावनेवारे राजाके मरवेसो आपसमें मारते भए लोकभरको उपद्रव जानकर ॥ ४० ॥ सब जनपद चौरप्राय होजाय, जीव मरने लगे राजा न रहे तब विनके दोष देखकेहू जो समर्थ लोग लोकनकी रक्षा करै तो सब ब्रह्मतप क्षीण होजाय है ॥ ४१ ॥ समदर्शी शांत दीनपर कृपा करवेवारे ब्राह्मण रक्षा न करें तो तिनको ब्रह्मतप सब नष्ट है जायहै जैसे फूटे भांडेमेंसो दूध निकर जाय है ॥ ४२ ॥ राजर्षि अंगको वंश नष्ट होयवेके योग्य नहीं है; या कारण कि या वंशमें सब राजा केशवके आश्रय रहिवेवारे होते आए हैं ॥ ४३ ॥ ऐसे निश्चय कर ऋषिलोग मरे भए महीपतिके ऊरुकूं शीघ्र मथते भए; तामेंसो छोटे बाहुको नर भयो ॥ ४४ ॥ कौआ समान कारो अति छोटो अंग, बाहु ठोडी बडी, छोटे पांव गहरी नाकको अग्रभाग, वा लंबी नाक, लाल नेत्र लाल मूडके वारवारो ॥ ४५ ॥ नम्रीभूत दीन कहा करूं ऐसे कहतो भयो वासो ' हे तात निषीद ' अर्थात् बैठो, वा निषादकृत्य करो, ऋषिनके ऐसे कहवेसो वह निषाद भयो ॥ ४६ ॥ ताके वंशमें निषाद भए, जो गिरिवनमें रहे वाने जन्म लेके सब वेनको कल्मष हर लीनो ॥ ४७ ॥

तस्य वंश्यास्तु नैषादा गिरिकाननगोचराः ॥
येनाहरज्जायमानो वेनकल्मषमुल्बणम् ॥ ४७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे निषादोत्पत्तिर्नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

मैत्रेय उवाच-अथ तस्य पुनर्विप्रपुत्रस्य महीपतेः ॥
बाहुभ्यां मथ्यमानाभ्यां मिथुनं समपद्यत ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि याके उपरांत अपुत्र महीपतिकी बाहु फेर मन्थते भए, तासों एक जोडा उत्पन्न भयो ॥ १ ॥ वा मिथुनकूं जन्मो देख ब्रह्मवादी ऋषि भगवत्कला जान परम सन्तुष्ट हो बोले ॥ २ ॥ ऋषि बोले कि भुवन पालन करवेवारी विष्णु भगवान्की ये कला है, ये महालक्ष्मीजी हैं यह पुरुषकी विश्लेषरहित लक्ष्मीजी हैं[2] ॥ ३ ॥ ये तौ सब राजानमें प्रथम पुमान्, यशस्वी, महाराज सर्वत्र प्रकाशमान यशवाले पृथुराज नामक विख्यात होंगे ॥ ४ ॥ ये सुदती देवी गुण भूषणनसों भूषित हैं,

१ यहां ऐसो समझनो कि जब ये उत्पात देखे तब सब ऋषि राजद्वारमें गये और सुनीथासो पूछी कि राजाके देहको रानी तेने कहा कियो रानीनें कही कि महाराज तेलमें धरो है तब ब्राह्मणनने वाही देहको लेके स्नान वेदमंत्रनसो करायके मयो ॥ २ पापीकी देहसै नारायण क्यों प्रगट हुए उस समय तौ पृथ्वीपर दुःखभी नहीं था । उत्तर यह है कि वेनने बहुत प्रजा नाश करदीथी जीवित प्रजा बहुत दुःखी थी फिर ब्राह्मणोंने मंत्रोंद्वारा वेनकी देह शुद्ध करलीथी इससे अवतार हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अर्चिनाम श्रेष्ठ मुखी पृथुकी सेवा करवेवारी हैं ॥ ५ ॥ लोककी रक्षाकरके ये साक्षात् हरिको अंश जन्म्यो है, विश्लेषरहित इनकी परायण श्रीजीकी नाईं ये राणी रहेगी ॥६॥ मैत्रेयजी बोले कि तिनकी ब्राह्मणलोग प्रशंसा करवे लगे गंधर्वप्रवर गायवे लगे सिद्ध पुष्पनकी धारा वर्षावते भए, सब देवस्त्री नृत्य करती भईं ॥ ७ ॥ शंख तूर्य मृदंगादिक स्वर्गमें बजे, तहां सब देवऋषि पितृगण आवते भए ॥ ८ ॥ देवनके ईश्वरनके संग लैकै जगद्गुरु ब्रह्मा वहां आयके वैन्य 'वेनस्यापत्यं पुमान्वैन्यः श्रीपृथुमहाराजः' के दक्षिण हस्तमें गदाधारीके चिह्न देखते भए ॥९॥ दोनों पांवमें कमलके चिह्न देख तिनकों हरिकी कला मानते भए अप्रतिहत गति परमेष्ठीको अंश चक्र देखते भए ॥ १० ॥ ब्रह्मवादी ब्राह्मण तिनको अभिषेक आरंभ करते भए, सब ओरसे अभिषेकके पदार्थ सब जन लावते भए ॥ ११॥ नदी समुद्र पर्वत नाग गौ खग मृग आकाश पृथिवी सब जीवमात्र सब ओरसो भेंटें लावते भए ॥ १२ ॥ सो स्नान करे भए महाराज सुंदर वस्त्र पहिरे सुंदर अलंकृत, अर्चि पत्नीसों शोभित दूसरे अग्निवत् शोभित होते भय ॥१३॥ हे वीर ! हे विदुर ! वा समय पृथुराजाको एक उत्तम आसन सुवर्णको कुबेर देते भए, जल झरनहारो चंद्रकांति समान छत्र वरुण देते भए ॥१४॥ दो छोटी पंखी[2] वायुने दीनी, धर्म कीर्तिमयी माला देते भए, बहुत उत्तम किरीट इंद्रने दीनो, सबको डरायवेवारो दंड यमराज देतेभए ॥ १५ ॥ ब्रह्ममय बखतर ब्रह्माने दीनो, सरस्वती उत्तम हार देतीभई श्रीहरिने सुदर्शन चक्र दीनो, श्रीमहालक्ष्मीजी अखंडित ऐश्वर्य देती भई ॥ १६ ॥ दशचंद्रसमान गोल चंद्रवारी तरवार रुद्रने दीनी, सौ चंद्रसमान गोल चिह्नवारी ढाल पार्वती देती भई, अमृतमय घोडे चंद्रमा देते भए, महासुंदर रथ त्वष्टाने दीनो ॥ १७ ॥ मेंढा वैलके सींगको बनो धनुष अग्नि देतो भयो, सूर्य किरणमय प्रकाशक बाण देते भये, मन चाहै जहां जायवेवारी खडांऊ भूमी देती भई, स्वर्ग सदा पुष्पवर्षी हार देते रहै ॥ १८ ॥ नाट्य सुंदर गीत वादित्र अंतर्धान होनो आकाशचारी देवता देते भए, सांचे आशीर्वाद ऋषि देते भए, समुद्र अपनो पुत्र शंख देतो भयो ॥ १९ ॥ समुद्र पर्वत नदियें महात्माके रथकों मार्ग देते भए, सूत मागध बंदीजन याकी स्तुति करते भए ॥ २० ॥ विन स्तुति करवेवारेनकों अपनी स्तुति करवेकूं आये देख पृथुवैन्य प्रतापवान् मेघके समान गर्जनकी वाणीसों ये बोले ॥२१॥ पृथुजी बोले कि हे सुत हे मागध हे सौम्य बन्दीजनहो ! अभी लोकमें मेरे गुण प्रगट नहीं हैं, काहेको ये स्तव करो हो, तुम्हारी वाणी मिथ्या मेरेमें न होय ॥ २२ ॥ हे सुंदर बोलवेवारे ! ताते जब कोई गुण हमारेमें प्रगट दीखै तब हमारे पीछै स्तोत्र करते रहो, भगवद्गुणानुवादके सामने और मनुष्यके जुगुप्सितके गुण सभासद नहीं गावैं है ॥ २३ ॥ हम गुणकी संभावनासों स्तुति करै हैं ऐसोहू मत कहो कारण कि जो बडे पुरुषनके गुण अपनेमें संपादन करै है वह अभी विद्यमान नहीं फिर गुणनकी संभावनासो कौन अपनी बडाई करावै जो वे गुण या जीवमें न होय तौ वो जननसे उपहास्यको प्राप्त होय है वाको कुमतिवारो नहीं जानै है ॥ २४ ॥ जो लज्जावंत उदार और विख्यात है वे अपने सामने अपनी स्तुति करवेकी निन्दा करै हैं, जैसे ब्रह्मवध आदि पराक्रमकी निंदा है वैसेही स्तुतिकी है ॥ २५ ॥ हे सूतादिक ! हम श्रेष्ठ कर्म करकै अभी लोकमें विख्यात नहीं भए है, सो बालककी नाईं कैसे अपनी स्तुति करवामै हे सूतादिको ! प्रथम हरिस्मरण करो ॥ २६ ॥

---

१ अर्थात् जामेंसो निरंतर जल झरो करे ऐसो ॥ २ जिनमेंसो विनाही डुलाये वायु निकले ऐसी ॥ ३ अर्थात् जहां कहू सवारी जाय तहां इनके ऊपर फूल बरसते रहै ॥ ४ ताको ये भजन है ॥ खंमाच ॥ हरि न कहै सो जीवत मरो रे ॥ टेर ॥ वेणुभूप हरि उठायो विप्रन नाश करो रे ॥ १ ॥ कंसवंश निर्वंश भयो शठ भक्तन वैर करो रे ॥ २ ॥ दुर्योधन छलबलकर हारो पांडव वैर करो रे ॥ ३ ॥ पुरुषोत्तम कर प्रभु निज दासा चरनन आन परो रे ॥ ४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वयं त्वविदिता लोके सूताद्यापि वरीमभिः ॥
कर्मभिः कथमात्मानं गापयिष्याम बालवत् ॥ २६ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे पृथुअवतारवर्णनं नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

मैत्रेय उवाच–इति ब्रुवाणं नृपतिं गायका मुनिचोदिताः ॥
तुष्टुवुस्तुष्टमनसस्तद्वागमृतसेवया ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि राजा तौ ऐसे कहतेही रहे परन्तु मुनिनसो प्रेरित है किन्तु गायवेवारे स्तुतिपाठक विनकी वाणीरूप अमृतके सेवनसो प्रसन्नमन है स्तुति करते भए ॥ १ ॥ जो देववर्य मायासो अवतार लेते भए, तिन तुम्हारी महिमा वर्णन करवेको हम समर्थ नहीं है, वेनके अंगसो उत्पन्न भए तुमारे पुरुषार्थनके कहिवेमें बृहस्पत्यादिकनहूकी बुद्धि भ्रमै होय है ॥ २ ॥ यद्यपि ऐसै है; तथापि उदार कीर्ति श्रीहरिके कलावतार पृथु मूर्ति आपके कथामृतमें आदृत मुनिनसो प्रेरित है योगबलसो अपने हृदयके प्रकाशानुसार आपको कथनयोग्य चरित्र वर्णन हम करै हैं ॥ ३ ॥ ये धर्मधारिनमें श्रेष्ठ लोककों धर्ममें चलावैगे धर्मसेतूनके रक्षक धर्मनाशकनके शिक्षक होयगे ॥ ४ ॥ एक देहमैं लोकपालके तनू धारै हैं कालकालमें यथाभाग दोनों लोकको हित करै है ॥ ५ ॥ करके लेवेके समय यह धन ग्रहण करैंगे अवर्षण आदिके समय दैगे सब जीवमात्रमें सम सूर्यवत् विभु होयगे ॥ ६ ॥ यह पृथुराजा जे अपने माथेके ऊपर चढके अपराध करैंगे वाकोहू सहिलेगे सब भूतनपै दयालु है पृथ्वीकी समान सहनशील होयगे ॥ ७ ॥ जब कभू इंद्र न वर्षै तौ यह नरदेव देहधारी श्रीहरि देव कृच्छ्रप्राणसों प्रजाकी इंद्रवत् रक्षा करैंगे ॥ ८ ॥ यह राजा अनुरागसहित चितवन और विशद मंद हाससों सुंदर अमृतकी मूर्तिवारे मुखसों संसारको तृप्त करैंगे ॥ ९ ॥ ये अप्रगट मार्गवारे और गुप्तकार्य करवेवारे और गंभीर आशय होयगे इनके धनकों कोउ नहीं जानेगो तथा अनन्तभगवान्के महात्मयुक्त और गुणनके एक धाम होयगे यह जितेन्द्रिय प्रचेताकी समान एक प्रकार होयगे ॥ १० ॥ शत्रुनको मनसोहू प्राप्त होयवेको अशक्य, शत्रुनको असह्य पुरुषार्थसों अजीत इनकी कोई धर्षण न करसकैगो कारण कि यह वेनरूप अरणीसो प्रगट भये हैं ॥ ११ ॥ सब भूतनके बाहिर भीतरके कर्म चारण अर्थात् दूतनसों देखते भए उदासीन वायु जो सब प्राणिनको अध्यक्ष और आत्मा है ताकी समान यह उदासीन रहैगे ॥ १२ ॥ अदंड्यको ये दंड न देगो, चाहैं वह अपने शत्रुकोही पुत्र क्यौं न होय और अपराध करवेवारे यह अपने पुत्रकोहू दंड दैयगे ॥ १३ ॥ या पृथुको अखंड शासन मानस अचलसो लेके जहांतक भगवान् सूर्य अपनी किरणनसों तपे हैं तहांतक वर्तैगो ॥ १४ ॥ यह अपनी चेष्टा करके सब लोकनकों आनंद करावैगो याके उपरांत मनके आनंदकारी वाक्यनकरके सब प्रजा राजी हैवेसो इन्है राजा कहैगी ॥ १५ ॥ तुम दृढव्रत सत्यवादी ब्राह्मणनकी वृद्धनकी सेवा करवेवारे, शरणागतपालक सब जीवमात्रको मानदाता दीनवत्सल होयगो ॥ १६ ॥ परस्त्रीनमें मातासी भक्ति, अपनी पत्नीमें अर्धांगकी नाईं होय जो प्रजामें पिताकी नाईं प्रियकारी, ब्रह्मवादीनको किंकर होयगो ॥ १७ ॥ सब देहधारिनमें आत्माकी नाईं प्यारै सुहृदनको आनंद बढावनेवारे सब प्रसंगनसो संगमुक्त हैके असाधुनको दंड देवेवारे होयगो ॥ १८ ॥ ये तौ साक्षात् भगवान् त्रिगुणी मायाके अधीश, सबमें वसनहारे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आत्माकी कलासो अवतरे हैं जामें अविद्यारचित निरर्थक नानाभावनको पंडितजन निरर्थक देखै हैं ॥ १९ ॥ ये नरदेवनके नाथ उदयाचलसो लेकै भूमंडलके एक रक्षक होयगे जयप्रद रथमें बैठ धनुष बाण लेके दक्षिणसो जैसे सूर्यकी समान पर्यटन करैंगे ॥ २० ॥ लोकपालसहित राजालोग जहां तहां इनके अर्थ बलि दैयगै, और इनकी जे स्त्री हैं वे इनके यशको उच्चारण करती भई आदिराजको इनको चक्रके धारण करनवारे साक्षात् नारायण मानैंगी ॥ २१ ॥ ये सबके राजा धरतीको दुहैंगै प्रजानकी प्रजापतिकी नाईं वृत्ति करैंगे, ये राजा अपने धनुषके अग्रभाग करकै सब पर्वतनको भेदके समान पृथिवी करैंगे, इंद्रकी नाईं पर्वत भेदेगे ॥ २२ ॥ आजगव धनुष टंकारकर आप जब निर्द्वंद्व होयकर संग्राममें पूछ उठाये सिंहकी समान विचरैंगे तब सब दिशानमेंसो दुष्ट लोग भाग जांयगे ॥ २३ ॥ जहां सरस्वतीजी प्रगट भई है तहां शत अश्वमेध सौवें यज्ञके वर्तमान हेवेंपै इन्द्र इनको घोडा हर ले जायगो ॥ २४ ॥ ये अपने स्थानको समीपके उपवनसों जाय सनत्कुमार भगवान्‌को आराधन कर भक्तिसों निर्मल ज्ञानको प्राप्त होयगो जासों परब्रह्मको प्राप्त होय है ॥ २५ ॥ जहां तहां तिन तिन वाणिनसो विख्यात महापराक्रमी अपनी कथा पृथुराज सुनैंगे ॥ २६ ॥ जाकी आज्ञा कोई न रोक सकैं, सो सब दिशानको जीतकें अपने तेजसो सब लोकके शूल निकासवेसों सुर असुरके अधिपनसो इनके चरित्र गाये जायगे या प्रकार यह भूमिके पति होंयगे ॥ २७ ॥

दिशो विजित्याप्रतिरुद्धचक्रः स्वतेजसोत्पाटितलोकशल्यः ॥
सुरासुरेन्द्रैरुपगीयमानमहाऽनुभावो भविता पतिर्भुवः ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटी० चतु० मुनिप्रयुक्तसूतादिकृतस्तोत्रवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

मैत्रेय उवाच–एवं स भगवान्वैन्यः ख्यापितो गुणकर्मभिः ॥
छन्दयामास तान्कामैः प्रतिपूज्याभिनन्द्य च ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि ऐसे भगवान् पृथु गुण कर्मनसो विख्यात तिनको पूजन प्रणाम कर सबको सन्तुष्ट करते भए ॥ १ ॥ ब्राह्मण प्रमुख वर्ण भृत्य अमात्य पुरोहित पुरवासी देशवासी सब प्रकृति प्रजाको राजा पूजते भए ॥ २ ॥ विदुरजी बोले कि धरती बहुरूपधारिणी क्यों गौरूप धारती भई जाको पृथु दोहते भए, कौन दोहवेके पात्र भए वत्स कौन भयो ॥ ३ ॥ सुभावसो टेढी धरती है, सो राजाने समान कैसे करी ताको पवित्र घोडा इंद्रदेवता का हेतुते हरतो भयो ॥४॥ हे ब्रह्मन् ! ब्रह्मवेत्तानमें उत्तम सनत्कुमारसो ज्ञान प्राप्त कर विशेष ज्ञानी होय राजर्षि कौन गतिकों गयो ॥ ५ ॥ जो और श्रीकृष्णभगवान् प्रभुको सुन्दर विख्यात यश पुण्यदायक पूर्वदेवकथाश्रय होय सो आप कहो ॥ ६ ॥ मैं अनुरागी आपको तथा भगवत्‌को भक्त हूं सो मेरे अर्थ, पृथुरूप धार या धरती गौको दुहतो भयो

१ सो ब्रह्म विना जाने या संसारमें जीवो धिक्कार है, पद रागिनी झिंझोटी तिताला ॥ धिकधिक जीवन ब्रह्म न जानो ॥ टेर ॥ हृदयदेशमें सो न उपासो पास दूर कर मानो ॥ १ ॥ ज्यूं भिक्षुक गल पारस बांधो घर घर टूक मँगानो, औरनसे धन ठग ठग लावत सर्वस आप ठगानो ॥ २ ॥ देशविदेशकी बात बतावत स्वर्गपताल बखानो, भीतरकी कछु खबर न राखी हृदयकमल उलटानो ॥ ३ ॥ कर्म कुकर्म किये बहु जगमें स्वर्गलोकलौं तानो, हम हम कर सब भोगकू भोगै साक्षीकू न पिछानो ॥ ४ ॥ तू है जड कछु समरथ नाहीं चमकलो ज्यूं नचानो, तू नहीं करता तू नहीं भोक्ता सबमें ब्रह्म समानो ॥ ५ ॥ कारणकर्ता सब जगहीके सो उरमाहिं समानो, पुरुषोत्तमके सर्वेश्वर विना और न कोई ठिकानो ॥ ६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो कहिवेको योग्य हो ॥ ७ ॥ सूतजी बोले कि विदुरने ऐसे प्रेरणा करी, तब वासुदेव कथाके प्रति प्रशंसा कर प्रसन्न मन हो मैत्रेय बोले ॥ ८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि हे अंग ! जब पृथुको ब्राह्मणनने अभिषेक कीनो जननके पालनको आमंत्रण करो तब पृथ्वी जलमें अन्न न हैवेसो भूंखसो व्याकुल कृश देह प्रजा प्रजापतिके पास आय बोली ॥ ९ ॥ हे राजन् ! हम जठराग्निसो तप्त हैं जैसे वृक्षमध्यस्थित अग्नि वृक्षकों जरावै तैसे हम खेदित हैं शरणागतपालक तुम्हारी हम शरण आए हैं हमारी सब वृत्तिनको साधन करो क्योंकि तुम हमारे जीविका देनवारे पति भगवान्ने बनाये हो ॥ १० ॥ हे नरदेव देवदेव ! क्षुधासो पीडित हमको अन्न देवेके लिये यत्न करो, जबतक हम त्यक्तान्न और बलहीन हैवेसो नाश न होय तबतक हमारी जीविका विधान करो कारण कि सब जीविकाके पति लोकपाल तुम हो ॥ ११ ॥हे कुरुश्रेष्ठ ! पृथु प्रजाकी ऐसी करुणा और दुःख सुनके ध्यान करते भए वाको निमित्त विचार जानते भए ॥ १२ ॥ बुद्धिसों ऐसे निश्चय कर धनुषबाण लेके त्रिपुरासुरपे शिवकी नाईं क्रोध कर भूमिके मारवेको बाण चलावते भए ॥ १३ ॥ धरती कांपवे लगी उठाए आयुध राजाको देख डरी भई गौ होय भागी जैसे शिकारीकी मारी हिरणी भागे तैसे पृथिवी भागती भई ॥ १४ ॥ कोपकर लालनेत्रसो पृथु ताके पीछे दौडते भये, शर धनुषमें लगाय जहां पलायमान होती भई तहांही वाके पीछे गये ॥ १५ ॥ सो देवी धरती दिशा विदिशानके मध्यमें दौडती भई जहां जाय तहां आयुध उठाये पृथुको देखती भई ॥ १६ ॥ लोकमें पृथुके विना औरको रक्षक न देखती भई जैसें प्रजाका मृत्युसो बचायवैवारो कोई नहीं याही प्रकार अपनो बचायवेवारो कोई न देख पृथ्वी दुःखसों तप्त हो पीछेको लौटी ॥ १७ ॥ हे धर्मज्ञ ! हे आपद्रक्षक ! सब भूतनके पालनमें आप स्थित हो सो मेरी रक्षा करो, ऐसे महाभाग पृथुसो धरती बोलती भई ॥ १८ ॥ दीना निरपराधिनी मोको कैसे मारो हो स्त्रीकों कैसे वध करागे कारण कि तुम धर्मज्ञ कहाहो हो ॥ १९ ॥ हे राजन् ! अपराध करीभई स्त्रीपैहू जीव प्रहार नहीं करै हैं, ताहूंपै तुमसरीखे दयालु दीनवत्सल कैसे मारै है ॥ २० ॥ जामें सब विश्व स्थित ऐसी दृढनावरूप मोको तोडकै अपनपेको और या प्रजाकों कैसे जलपर धारोगे ॥ २१ ॥ पृथु बोले कि हे वसुधे ! तू मेरी आज्ञा नहीं माने है सो तेरो वध करूंगो यज्ञमें भाग लेय है और धान्यादि द्रव्य नहीं देय है ॥ २२ ॥ नित्य घास तौ खाय और दूध न देय वा दुष्टको दंड देनो योग्यही है ऐसेही तो दंड दूंगा ॥ २३ ॥ निश्चय है औषधी बीज जो ब्रह्माजी पहिले रचते भए सो तैंने अपने भीतर रोक लीने है, मोको मंदधी जान अवज्ञा कर विन्हें तू नहीं छोडती ॥ २४ ॥ इन क्षुधित आर्तनको दुःख अपने बाणनसो भिदी तेरी वसासो नाम चर्बीसो दूर करूंगो ॥ २५ ॥ पुरुष स्त्री नपुंसक अपनी बडाई आप करवेवारो वो अधम, सब जीवनमें दयारहित इनको मारनो नृपनको न मारवेकी बराबर है ॥ २६ ॥ तुमसरीकी गर्वीली दुर्मदवारी मायागौकों शरनसों तिल तिल सम टुक कर अपने योगबल करकै या प्रजाको हम धारेंगे ॥ २७ ॥ ऐसी क्रोधमयी मूर्ति यमराजकी नाईं धारे तिनसों हाथ जोड नम्र होय धरती कांपती भई बोली ॥ २८ ॥ धरा बोली कि मायासों अनेक प्रकारके शरीर धारण करवेवारे परपुरुषके निमित्त नमस्कार होय जो जो गुणरूपतासों प्रतीयमान होते और अपने स्वरूपके अनुभवसों द्रव्य क्रिया कारक संबंधी अहंकार और राग द्वेषादि उर्मिनको त्याग करवेवारे

---

१ राजा पृथुने पृथ्वीपर इस कारण कोप किया कि दूसरे राजा यह जानकर शांत होजायगे और प्रजा अच्छी तरह पालन करैंगे कि जब पृथुने पृथ्वीकोही क्षमा नहीं किया तौ हमको यदि प्रजाको दुःख दैंगे तौ कदापि क्षमा नहीं करेंगे दूसरे पृथ्वीका यह अपराध था कि पृथुके धर्मराजमेंभी औषधी अन्न नहीं त्यागे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आपको मैं प्रणाम करूं हौं ॥२९॥ जिन उत्पन्न करनवारे ब्रह्माने अपनो स्थानभूत मोको रची है जासो ये विश्व भयो सोही तुम शस्त्र लेकें मोको मारवेको खडे भये अब और कौनकी शरण जाऊं ॥ ३० ॥ आदिमें जो ईश्वर अपने आधीन रहिवेवारी तर्करहित मायाकरकै चराचरकों रचते भये वाही अपनी मायासो मेरी रक्षा करवेको उद्यत भये फिर न जाने कैसें धर्मपरायण तुम मोको मारो हो ॥ ३१ ॥ निश्चय है कि ईश्वरकी चेष्टा, विनकी दुर्जय मायासो विक्षिप्त चित्तवारे जनन करकै जानी नहीं जाय है जो स्वतंत्र और एक है तोहू मायासों अनेकरूपवारे स्वतंत्र ईश्वरनै यह जगत् बनायो है और ब्रह्मा-द्वाराहू चराचर जगत् निर्माण करायो है ॥ ३२ ॥ जो परमात्मा महाभूत इंद्रिय देवता बुद्धि और अहं-काररूप अपनी शक्तिनसा वा विश्वको उत्पत्ति पालन संहार करै हैं वा सम्यक् प्रकार उत्कट निरुद्ध शक्तिवारे विधाता परम पुरुषको मैं प्रणाम करौं हौं ॥ ३३ ॥ हे विभो ! हे अज ! सो आप अपनी आत्मासो रचे भये भूत इन्द्रिय अंतःकरणात्मक या जगत्कों स्थित करवेके लिये आदिवराहरूप हैकै मोको रसातलसो लाये ॥ ३४ ॥ जलपै मोसरीकी नावमें स्थित प्रजारक्षाकों आप अवतरे हो, वोही वीरमूर्ति पृथ्वीके धारण करवेवारे आप केवल दुग्धके निमित्त कठिन बाण चढायकें मोको मारवेकी इच्छा करों हो यह बडे आश्चर्यकी बात है ॥३५॥ जिनके मनरूपी मार्ग आपकी सगुणरूप मायासो मोहित है विन मोसरीके जननको ईश्वरके भक्त जननकीहू चेष्टा जब नहीं जानी जायहै फिर कहो परमात्माकी लीला जानवेकी कौनकी सामर्थ्य है जा कारण ईश्वरके समान जितेंद्रिय पुरुषनके यशदायक वाकों और भक्तनकोहू मेरो प्रणाम है ॥ ३६ ॥

नूनं जनैरीहितमीश्वराणामस्मद्विधैस्तद्वृणसर्गमायया ॥
न ज्ञायते मोहितचित्तवर्त्मभिस्तेभ्यो नमो वीरयशस्करेभ्यः ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे पृथुविजये धरित्रीनिग्रहो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

अध्याय १८.

मैत्रेय उवाच-इत्थं पृथुमभिष्टूय रुषा प्रस्फुरिताधरम् ॥
पुनराहावनिर्भीता संस्तभ्यात्मानमात्मना ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि क्रोधसो होठ फरकते पृथुराजकी स्तुति कर भीत पृथिवी बुद्धिसो मनकों सावधान कर फिर बोली ॥ १ ॥ हे नृप ! क्रोध दूर करो, मेरो कहिनो सुनो, जैसे भौंरा सब ओरसो सार ग्रहण करै है तैसे बुद्धिवान् सार ग्रहण करै है ॥ २ ॥ या लोकमें परलोकमें तत्वदर्शी मुनिनें पुरुषनके कल्याणकी सिद्धिके लिये योग देखे है और प्रयोग करे हैं ॥ ३ ॥ जो पूर्वके लोग उपाय कर गए है, विनको जो कोई करै तौ अबके मनुष्यहू श्रद्धा करवेसो अनायास वा फलको प्राप्त होय है ॥ ४ ॥ विनको अनादर करकें जो विद्वान् अर्थको आप प्रारंभ करै है वाके वे वारंवार प्रारंभ करे फल सब नष्ट होय हैं ॥ ५ ॥ हे विशांपते ! ब्रह्माकी पहिली रची औषधि, व्रतहीन खोटे लोगोंको भोगते मैंने देखी ॥ ६ ॥ जब आपसरीके लोकपालने पालन न करी और अनादर कियो और लोकमें चोरही चोर है गये तब यज्ञके अर्थ मैंनें सब औषधी ग्रस लीनी ॥ ७ ॥ निश्चय है कि अब मोमें वे सब औषधी काल वितीत हैवेके कारणसो क्षीण है गई है सो अब विने योग करकै आप सब निका-सवेको योग्य हो ॥ ८ ॥ हे वीर ! वत्स कल्पना करो, जासो मैं तुम्हारी वत्सला होउ तुम मेरे अनुसार

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दोहनी बनाओ, दुग्धरूप हैकै सब कामना पूरूंगी ॥ ९ ॥ हे महाबाहो ! हे भूतभावन ! जो आप जीवनके मन वांछित और बलदायक अन्न चाहौ हो तौ एक दुहिवेवारौ नियत करो ॥ १० ॥ हे विभो ! हे राजन् ! मोको बराबर करो जैसे जलकी वर्षाऋतु न होय तौहू देवको वर्षायो जल मोमैं सदा बराबर एकसौ फैले ॥ ११ ॥ ये प्रिय हितको वाक्य भूमिको भूपति ग्रहण कर मनुकूं वत्स कर हाथ रूप दोहनीमें सब औषधीरूप दूध दोहते भये ॥ १२ ॥ तैसे और बुधलोग सब ओरसो सार ग्रहण करै है, तापीछै औरहू सब अपनी २ इच्छानुसार पृथु करकै वशीकृत गौको दुहते भये ॥ १३ ॥ हे सत्तम ! ऋषिनने बृहस्पतिको वत्स बनायके इन्द्रियरूप पात्रमें पवित्र वेदमय दूध दुह्यौ ॥ १४ ॥ देवगण इन्द्रको वत्स बनाय अमृत दूध दुहते भये, सुवर्णमय पात्रमें वीर्य ओज बल पय दुहते भये ॥ १५ ॥ दैतेय दानव असुरश्रेष्ठ प्रह्लादको वत्स बनायके लोहके पात्रमें सुधा आसव क्षीर दुहते भये ॥ १६ ॥ गंधर्व अप्सरा कमलके पात्रमें विश्वावसुको वत्स बनाय गांधर्वमधु सौभगरूप दूध दुहते भये ॥ १७ ॥ महाभाग बडभागी श्राद्धदेवता पितर श्रद्धा करकै अर्यमाको वत्स बनायके कच्चे माटीके पात्रमें पितरनके योग्य अन्नरूप क्षीरकों दुहते भये ॥ १८ ॥ कपिलकों बच्छा बनाय सिद्ध लोग संकल्पनामयी सिद्धि विद्यारूपदूधको आकाशरूप दोहन में विद्याधरादिक दुहते भए ॥ १९ ॥ और जो मायावी हे वे छिपजानो इत्यादि अद्भुतात्मानकी धारणामयी मायारूप दूधको मयको बच्छा बनाय दुहते भए ॥ २० ॥ यक्ष राक्षस भूत पिशाच जो रुधिरपान करवेवारे हैं वे रुद्रको बच्छा बनायके कपालमें रुधिररूप दूधको दुहते भए ॥ २१ ॥ तैसेही वृश्चिकादिक सर्प नाग तक्षकको बच्छा बनाय बिलरूप पात्रमें विषजलरूप दूधको दुहते भये ॥ २२ ॥ सब पशु गौके बैलनंदीश्वरको बच्छा बनाय वनरूप पात्रमें घास इत्यादि दुग्ध दुहते भये और दंष्ट्रावारे ॥ २३ ॥ मांसाहारी प्राणी सिंहको बच्छा बनाय अपने देहमें मांसरूप दूधको दुहने भये । गरुडको वत्सा बनाय सब पक्षी चर कीटादि अचर फलादि दोहते भए ॥ २४ ॥ वटको वत्सा करके सब वनस्पति पृथक् रसमय पय दुहते भये, और पर्वत हिमाचलकों वत्सा बनाय अपने भीतर नाना धातुरूप दूधको दुहते भये ॥ २५ ॥ सब जने अपने मुखियानको बच्छा बनायकै अपने अपने पात्रमें पृथक् २ दुग्ध पृथुकी वशी करी सब काम पूरण करनेवारी पृथ्वीकों दुहते भये ॥ २६ ॥ हे कुरूद्वह ! ऐसे अन्न पायवेवारे पृथुआदिक अपनेको अभीष्ट अन्नको दुहते भये, दोह वत्सादि भेदके हैवेसो वा दूधमेंहू भेद है गयो ॥ २७ ॥ तब दुहिताके प्रियकर्ता महीपति पृथु प्रसन्न हो सब कामदात्री धरतीको पुत्रीभावमें करते भये ॥ २८ ॥ राजराजविभु अपने धनुषाग्रभागसों गिरिनका चूर्ण करके या भूमंडलको सब जगेसां समान बराबर करते भये ॥ २९ ॥ या खंडमें भगवान् पृथु प्रजानके जीवके दाता पिता जहां तहां यथायोग्य निवास कल्पना करते भये ॥ ३० ॥ ग्राम, पुर, पत्तन, दुर्ग, अनेक तरहके घोष, व्रज, सेनानिवास, स्थान, खान, करसनके गांव पर्वतकी तरैटीके गांव वसावते भये दुर्ग ये हैं बृहस्पतिजीने कहे है " औदकं पार्वतं वार्क्षमैरीणं धान्वनं तथेति " ॥ ३१ ॥ पृथुसें पहिले ये पुरग्रामादिक कल्पना ऐसी नहीं ही परन्तु प्राणी यथासुख जहां तहां भयरहित हैकै रहते हे[२] ॥ ३२ ॥

---

१ मदिरारूप दूध ॥ २ राजा पृथुसै पहले कभीभी नहीं थे यह शंका न करना किन्तु और प्रकारके वासस्थान थे जो वेनके अत्याचारसौं नष्ट होगये थे राजा पृथुने फिर बसाये । अथवा वा समय मनुष्य अपनी आयुको अनित्य समझके चार दिनकी आयु समझके वृक्षादिकनके नीचें झोंपरी डारके रहते हे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राक् पृथोरिह नैवैषा पुरग्रामादिकल्पना ॥
यथासुखं वसन्ति स्म तत्र तत्राकुतोभयाः ॥ ३२ ॥

इति श्रीमन्महाभागव० चतु० दोहनवत्सादिभेदेन पृथुराज्ञा पृथ्वीदोहनं नाम अष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

अध्याय १९.

मैत्रेय उवाच-अथादीक्षत राजा तु हयमेधशतेन सः ॥
ब्रह्मावर्ते मनोः क्षेत्रे यत्र प्राची सरस्वती ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि अब राजा सौ अश्वमेध यज्ञ करवेकी दीक्षाकर मनुक्षेत्र ब्रह्मावर्त पूर्ववाहिनी सरस्वतीके देशमें बसते भए ब्रह्मावर्त याको नाम है "सरस्वतीदृषद्वत्योर्द्वयोर्नद्योर्यदंतरम् । तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते ॥" ॥१॥ भगवान् इन्द्रने वाके कर्मको अपनेसो अधिक समझके कि यह मेरो इंद्रासन छीन लेयगो सो भगवान् पृथु यज्ञके महोत्सवकों न देखसकों ॥ २ ॥ जहां यज्ञपति साक्षात् भगवान् हरि ईश्वर सर्वात्मा सर्व लोकगुरु प्रभु आवते भए ॥ ३ ॥ जिनके संग ब्रह्मा शिव लोकपाल अपने अनुचरन सहित गंधर्व मुनिगण अप्सरा विनको चरित्र गावते हो ॥ ४ ॥ सिद्ध विद्याधर दैत्य दानव गुह्यक आदिक सुनंदनंद मुखिया श्रीहरिके पार्षद आवते भए ॥ ५ ॥ कपिलदेवजी नारद दत्तात्रेय योगेश्वर सनकादिक और जो भगवत्सेवामें मनवारे सब आवते भए ॥ ६ ॥ हे भारत ! जहां धर्म देवेवारी भूमि, सब कामपूरक पृथिवी गौरूप धार राजा पृथु यजमानको सब मनोरथ पूरण करवेवारे अर्थको देती भई ॥ ७ ॥ क्षीर दधी अन्न गोरस सर्व रसनको नदी वहती भई, विस्तृत देहवारे मधुस्रावि वृक्ष खूब फलतेभए ॥ ८ ॥ रत्नसमूह समुद्र देते भए, पर्वत चारविध अन्नको देते भये, लोकपालसहित सब भेंटें देते भये ॥ ९ ॥ या प्रकार भगवत जाके ईश्वर ऐसे पृथुके परम उदयकी ईर्षा करतो भगवान् इन्द्र विघ्न करतो भयो ॥ १० ॥ अंतके अश्वमेधमें पृथु यज्ञपतिकी पूजा करवे लगे तब इंद्र स्पर्धाकर यज्ञके पशु अश्वकों छिपके हर लेजाते भयो ॥ ११ ॥ आकाशमें हैंके जाते इंद्रको भगवान् अत्रि देखतेभये, अधर्ममें धर्मकी भ्रांति करायवेवारे पाखंड वेशको कवचके समान धरेहो ॥ १२ ॥ अत्रि प्रेरित पृथुपुत्र महारथी क्रोधकर मारवेको वाके पीछे दौडो खडो रहि रहि ऐसो बोलतो भयो ॥१३॥ धर्मशरीरी जयधारी भस्म लगाये भयें इंद्रकी आकृति देख वापें बाण न चलायो ॥ १४ ॥ जब राजा वधसों निवृत्त भयो तब फिर मारवेको अत्रिने कही, हे पुत्र ! यज्ञनाशक देवनमें अधम ये महाइन्द्र है याको मारो ॥ १५ ॥ ऐसे पृथुसुतसो जब कह्यो तो शीघ्र आकाशमार्गमें हैंके वाके पीछे दोडो जैसे जटायु गृध्रराज रावणपें दौडेहो ॥ १६ ॥ वो इंद्र अश्व और अपनो पाषंडरूप त्याग अंतर्द्धान हैगयो, वीर अपनो पशु लेके पिताके यज्ञमें आतो भयो ॥ १७ ॥ वाको अद्भुत कर्म देखके परम ऋषिलोग वाकों विजिताश्व नाम देते भये ॥ १८ ॥ पुनः आयकै अंधेरो कर सुवर्णकी रस्सीसों यज्ञस्तंभसो बंधे अश्वको समर्थ इंद्र फिर हरतो भयो ॥ १९ ॥ शीघ्र आकाशमार्गमें होयके जाते भएको अत्रिने दिखाये तबहू कपालखट्वांगधारी देख वीर याय न मारतो भयो ॥ २० ॥ अत्रिके प्रेरे रोषते फेर बाण मारते भए विजिताश्वकों देखके वो घोडा और अपनो रूप त्याग इंद्र फिर अंतर्ध्यान होतो भयो ॥ २१ ॥ वीर घोडाको लेके फेर पिताके यज्ञमें आयो वा निंदित इंद्रके रूपको ज्ञानहीननर ग्रहण करते भए ॥ २२ ॥ घोडाके हरवेकी विरिया इंद्रने जो रूप

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धारे हे, वेही पापके चिह्न लिंगखंड प्रगट भए ॥ २३ ॥ पृथुके यज्ञनाशकी इच्छा कर जब इंद्रने अश्व हरकें जे २ चिह्न त्यागे विन पाखंडनमें मनुष्यनकी मति लगे है ॥ २४ ॥ जो पाखंडधर्म हैं जामें नंगे लोग रहे है, रक्तवस्त्र भगुआ इत्यादि धारे हैं, बडी सुंदर मनोहर वाणिनसो मन हरें हैं॥२५॥ भगवान्पृथु महापराक्रमी ये अभिप्राय जान इंद्रके अर्थ कोपकर धनुष उठाय बाण उठातो भयो॥२६॥ जिनके सामने देखनो अति कठिन है ऐसे महावेगवान् पृथुको इन्द्रके वधमें अभिप्राय जान ऋत्विज देख बोले अहो महामते ! या यज्ञमें पशुवधके विना औरको वध करनो योग्य नहीं है॥२७॥ तुम्हारे यज्ञकरकै हतकांति अनर्थनाशक इंद्रको हम हवन करेंगे हे राजन् ! सारयुक्त वेदमंत्रनसों हम हठकरकै तेरे वैरीको हवन करेंगे ॥२८॥ हे विदुर ! यज्ञपतिसों ऐसो कह ऋत्विज रोषकर स्रुवा हाथमें ले इंद्रके मारवेकों हवन करन लगो तब ब्रह्माजी मने करते भये ॥ २९ ॥ आप लोगनके वधयोग्य इंद्र नहीं है यज्ञरूप इंद्र भगवत्तनू है तुम जाको मारोहो यज्ञकरके पूजे देवता वाकी प्यारी देह है ॥ ३० ॥ हे ब्राह्मणो ! पृथुके यज्ञके या विध्वंस करवेवारे इन्द्रने यह बडो धर्मको नाश करवेवारो पाखंड चलायो है सोय देखो । अब इन्द्रके साथ मित्रता स्थापन करो ॥ ३१॥ हे पृथो ! एक कम शत यज्ञनसोही तुम्हारी महाकीर्ति होयगी तुम्हें बहुत यज्ञनसो कहा, तुम तो मोक्ष धर्मवेत्ता हो ॥३२॥ अपने अर्थ इंद्रके लिये क्रोध करवेको योग्य नहीं हो दोनोंको मंगल होय तुम दोनों महायशस्वी ईश्वरके विग्रह हो ॥ ३३ ॥ हे महाराज ! या यज्ञमें विघ्नकी चिंता मत करो हमारो वचन आदरसों सुनो जो कार्यको दैव बिगाडनो चाहै है फिर जो क्रोध वा कामके संभारवेको मनमें ध्यान करै है वा पुरुषको मन रोषसों अंधो हैकै मोहमें पडे है शांतिको प्राप्त नहीं होय है ॥ ३४ ॥ या यज्ञको वस करो देवनमें याको दुराग्रह होय है इसमें इंद्रके रचे पाखंडनसो धर्मको नाश होय है ॥ ३५॥ इंद्रके रचेभए चित्तके हरनहारे पाखंडनसो हरेभये जननको देखो जो यज्ञद्रोही अश्वचोरने प्रगट कीने है ॥ ३६ ॥ जीवनके समयके अनुसार जो धर्म है विनके रक्षा करवेको आपने अवतार लियो है, हे वेनवंशोद्भव पृथो ! वेनके अपराधसों जब सब चीजें लुप्त है गई, तब वाकी देहसों विष्णुकला तुम अवतारेहो ॥ ३७ ॥ हे प्रभो ! हे प्रजापते ! या विश्वकी उत्पत्ति विचार विश्व रचवेवारेनको संकल्प तुम पूरो करो, पाषंडधर्मकी इंद्रकी माया प्रबल पाखंड पथ नाश करो ॥३८ ॥ मैत्रेयजी बोले कि या प्रकार लोकगुरुने राजाकूं जब आज्ञा कीनी, तब तैसेई वात्सल्यभावकर इंद्रसो प्यार करते भए ॥ ३९ ॥ यज्ञांत स्नानकर महाकर्मकारी पृथुके अर्थ यज्ञमें तृप्त भए महात्मा वर देतेभए ॥ ४० ॥ हे विदुर ! सत्य आशीर्वादवारे प्रसन्न हो श्रद्धासों दक्षिणा पाय सत्कृत हो ब्राह्मण लोग आदिराज पृथुके अर्थ आशीर्वाद देते भए ॥ ४१ ॥ हे महाबाहो ! हम सब तुम्हारे बुलावे आए दान मानसो पूजित पितृदेव प्रसन्न होते भए ॥ ४२ ॥ वे मनुष्य प्रसन्न पृथुसो पूजित हो आशीर्वाद देते यज्ञकी सराहना करते अपने २ स्थानको गये ॥ ४३ ॥

दत्ताशीर्वचनाः सर्वे पूजिताः पृथुना च ते ॥
स्वं स्वं स्थानं ययुर्हृष्टाः शंसन्तो यज्ञमुत्तमम् ॥ ४३ ॥

इति श्रीम० भाषाटीकायां चतु० पृथुचरित्रे पाषंडमार्गवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

---

१ या प्रसंगपर एक पद रेखता सोरठका है ॥ ताल पश्तो ॥ हरि ना कह्यो मुख गायके तैं कहा कियो जग आयके ॥ अस्ताई ॥ घर त्याग तृष्णा ना मरी कहा करी राख लगायके ॥ लियो भेषते जगठगनको कहा करो चर्म चढायके ॥ १ ॥ नारी निहारी औरकी वहा करी लंगोट लगायके ॥ उपदेश दियो नहीं धर्मको कहा करी घरघर जायके ॥ २ ॥ बहुरंग के टीके दिये कहा भयो भक्त कहायके ॥ चोला मलमलके पहिनके वहा कियो भगवे रंगायके ॥ ३ ॥ प्रभुको प्रसन्नतें नहिं कियो कहा कियो जगत रिझायके ॥ पुरुषोत्तम कहे हरिको भजो फिर रहोगे पछितायके ॥ ४ ॥ २ नग्न (दिगम्बर जैन) रक्तपट (बौद्ध) ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २०.

ऋषिरुवाच-भगवानपि वैकुण्ठः साकं मघवता विभुः ॥
यज्ञैर्यज्ञपतिस्तुष्टो यज्ञभुक्तमभाषत ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि यज्ञभोक्ता भगवान् विभु वैकुंठपति इंद्रके साथ यज्ञनसों प्रसन्न हो पृथुसो बोले ॥१॥ श्रीभगवान् बोले कि हे राजन् ! तुमारो सोंवो अश्वमेध भंग या इंद्रनें कीनो, सो यापें क्षमा करो, आप याके अपराध क्षमा करवे योग्य हो ॥ २ ॥ हे नारद ! सुंदर बुद्धिवारे साधु मनुष्य लोकमें जीवनसों द्रोह नहीं करे हैं क्योंकि ये शरीर आत्मा नहीं है ॥ ३ ॥ तुम्हारे सरीखो पुरुष जो देवमाया-करकै द्रोह करै तौ बहुत दिनकी वृद्धनकी सेवाको करवो श्रमही है ऐसो गिनो जायगो ॥ ४ ॥ याते अविद्या कामकर्मनकरकै ये देह है, सो यामें मोक्षभागी ज्ञानी असक्त नहीं होय है ॥५॥ जो या शरीरमें असक्त नहीं है, या देहसो उत्पादित घरमें पुत्रमें धनमें कोई बुद्धिवान् ममताकूं नहीं करै है ॥ ६ ॥ एक शुद्ध स्वयंज्योति निर्गुण ब्रह्म गुणनके आश्रय सर्वगत काऊसो ढको नहीं साक्षी सबसों निराळो आत्मा व्यापक सब जीवनसो परे है ॥ ७ ॥ सब आत्मानमें स्थित सबमें रहिवेवारे ईश्वरको जो पुरुष जाने है, वो मायामें स्थित है तोहू मायाके गुणनसों लिप्त न होय है वे मेरेमें स्थित हैं॥८॥ हे राजन् ! फलचाह त्याग श्रद्धायुक्त होयकै स्वधर्मसो जो मोको भजे है, वाको धीरेसो मन प्रसन्न होय है ॥ ९ ॥ जब यह प्राणी प्रसन्न चित्त होय है तब गुणनको त्याग कर ज्ञानी होय शान्तिसो उदासीनता मेरी अवस्थिति रूप मुक्तिको प्राप्त होय है ॥ १० ॥ जो उदासीन या आत्माकोही देह ज्ञानेन्द्रिय कर्म इन्द्रिय और मनके स्वामी स्थित कूटस्थ आत्माको जानै है वोही मुक्तिको प्राप्त होय है ॥ ११ ॥ द्रव्य क्रिया कारक चेतनके आत्मक या भिन्न लिंग शरीरको संसार है और जिनने मोसो प्रीति कीनी है वे तत्व-ज्ञानी संपत विपत्को देखके कभू विकारको प्राप्त नहीं होवेहै ॥ १२ ॥ हे वीर ! समसमान, उत्तम, मध्यम, अधम, सुख, दुःखमें जाने अपनी इन्द्रिय जीतलीनी हैं ऐसे तुम मेरे रचे लोकनको सब लोक-युक्त हैंकै सब लोककी रक्षा करो ॥ १३ ॥ राजाको येही श्रेय धर्म है कि प्रजाको पालन करै. यामें वाको कल्याण होय हैं, वो राजा परलोकमें जायके प्रजा जो सुकृत करैं वाको छठो भाग लेयहै और जो ऐसे न करै अन्यथा करै तो राजाको पुण्यनाश होय, प्रजाकी रक्षा न करै कर सदा लेकै जीवे तो सब प्रजाको पाप भोगै है ॥१४॥ ऐसे ब्राह्मणनमें उत्तमनने जे धर्म करै हैं विनमें प्रधान हैके या पृथिवीकी रक्षा करो, तौ थोडेही दिननमें अपने घरपे आये भये सिद्धनको देखोगे सब लोक आपमें अनुरक्त है ॥ १५ ॥ हे मानवेंद्रवर ! मेरे विना और कछु मत चाहो, हम तेरे गुणशीलनसो वशीभूत है रहे हैं, यज्ञसों मैं सुलभ नहीं हौं न तपसों न योगसों हम मिलै हैं परन्तु जा समदर्शी है वासों मैं प्रसन्न होय हौं ॥ १६ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि लोकगुरु भगवान्ने जब ऐसे आज्ञा कीनी सो विश्वविजयी पृथु हरिकी आज्ञाको शिरसो ग्रहण करते भये ॥ १७ ॥ प्रेमसों चरणस्पर्श कर अपने कर्मसो लज्जित इंद्रसों मिलकै वैरका त्याग करते भये ॥ १८ ॥ भगवान् विश्वात्माने पृथुको पूजन ग्रहण कियो तब पृथुने महाभक्तिसो चरणकमल पकडलीने ॥ १९ ॥ भगवान जानेकू उपस्थितहू भये परन्तु अनुग्रहसो विलम्ब करते सज्जननके सुहृद कमलनैन पृथुकों देखनलगे गय नहीं ॥ २० ॥ सो आदिराज पृथु हाथ जोडे खडे रहे श्रीहरिको देखवेको न समर्थ भये, अश्रु नेत्रमेंसो आयगये कछु न बोले, कंठ रुकगयो, बैठके हृदयसो ध्यान कर चिंतवन करतो भयो ॥ २१ ॥ पीछे आसू पोछ आदिपुरुषको देखते २ तृप्त न भये,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और श्रीहरिसों बोल्यो यद्यपि देवता भूमिमें पांव नहीं राखै हैं, परंतु प्रेमसो भगवान् पांवसों धरतीपें खडे श्री गरुडजीके कंधापे हस्तको अग्रभाग धरे है ॥ २२ ॥ पृथु बोले कि हे विभो! सब वर देवेवारे ईश्वरसो बुद्धिवान् कैसे वर मांगेगो, क्यों कि गुणनकी विक्रियाके देहवारे नरकवासी देहधारीनकूंहू वे वर प्राप्त है, यासो केवल्यपते! आपसो वर न मांगूंगो ॥ २३ ॥ और वर तो कहा मोको मुक्तिकी इच्छा नहीं कारण कि तहां श्रेष्ठ पुरुषनके भीतर हृदयसो निकसे आपके चरणकमलके मकरंदको श्रवणादिक सुख नहीं है या कारण आपकी कथा सुनवेको यही कान दशसहस्रकी काननकी समान हैजाय यही वर मांगौहूं ॥२४॥ हे उत्तमश्लोक! महात्मानके मुखसो निकसी, आपके चरणकमल अमृत कणुकाकी पवन तत्वमार्ग भूले भये हमको स्मृति विस्तार करै हैं, और जे कुत्सित योगी हैं विनकी स्मृति भूलजाय है यासो हमकों वरनसों कछु प्रयोजन नहीं है॥ २५॥ हे सुश्रव! आप मंगलरूप यश बडेनके संगममें वारंवार यदृच्छासो सुनै, आपके गुणनसो एक पशुके विना कोई विरामको नहीं प्राप्त होय है, गुणसंग्रहकी इच्छा करकै श्रीमहालक्ष्मी आपको वरती भई ॥ २६ ॥ याते सब पुरुषनमें उत्तम गुणनके स्थान तुमको लालसासों लक्ष्मीकी नाईं हम भजे हैं, एकही समयमें एक स्वामीकी एक प्रकारकी सेवा करवेवारो हममें और लक्ष्मीमें क्लेश होनो सम्भव है तथापि मैं जानेहौं मेरो और लक्ष्मीको मन आपके चरणनमें एकाग्र रहेगो ॥ २७ ॥ हे जगदीश! जगज्जननीके काममें हमारे भाग लेवेकी इच्छा है वाके साथ कदाचित् विरोध होयगो क्योंकि या लक्ष्मी को काम तुमारी चरणसे वाको हम करनो चाहै है तथापि आप दीनवत्सलतासों हमारी थोडी सेवाकोहू बहुत मानोगे कारण कि आप अपने आनंदसों रमण करै हो तुमको वा लक्ष्मीसो कहा है तुम तो भक्तवत्सल हो ॥ २८॥ या कारणसो मायागुण विभ्रमनके उदयरहित तुम्हैं साधु लोग भजे हैं, हे भगवन्! विन सज्जननको आपके चरणकमल अनुस्मरणके विना और कछु निमित्त नहीं है ये हम जाने है ॥२९॥ आपके भजन करवेवारे हमको जो आप कहोहो कि वरदान मांगो ये जगत्को विशेष करके मोह करवेवारी तुम्हारी वाणी हम माने है, आपकी प्रवृत्ति निवृत्तिरूप वाणीरूपी डोरामें जो ये जन बंधो है, जो बंधे न होते तौ मोहित होकै वारंवार कर्ममें मोहित हो कर्म कैसे करते ॥ ३० ॥ हे ईश्वर! साक्षात् तुम्हारीही माया करकै जन खंडित है, सो सत्य आत्मा तुमते मूर्ख जन और फलकी आशा करै है, और मैंहू ऐसोही हो सो मैं आप वररूप अज्ञानमें नहीं डारकै जैस पिता विना प्रार्थना किये बालकपें हित करै है वैसेही आप मेरो हित करो ॥ ३१ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि ऐसे आदिराजने विश्वद्रष्टाकी स्तुति कीनी तब भगवान् बोले कि तुम्हारी भक्ति मेरेमें होय बडो आनन्द भयो जो ऐसी बुद्धि मेरेमें करी या भक्तिसो महादुस्त्यज मेरी मायाकों ये जीव तरै हैं ॥ ३२ ॥ हे प्रजापते! मेरी आज्ञासो मद छोड जो मैंने कही सो करो, मेरी आज्ञा करवेवारो लोक सब जगै आनन्दको प्राप्त होय है ॥ ३३ ॥ या प्रकार वेनवंशमें उत्पन्न पृथुराजऋषिके अर्थवद्वचनको सराहना कर पूजित हो अच्युत भगवान् यापर अनुग्रह कर जायवेकी मति करते भये ॥ ३४ ॥ देवता ऋषि पितृ गन्धर्व सिद्ध चारण पन्नग किन्नर अप्सरा मनुष्य खग भूत अनेक ॥ ३५ ॥ यज्ञेश्वर भगवान्की बुद्धि करकै राजाने वाणी धन और

---

१ यहा धरतीपे चरण धरके ठाडे हैवेसों और गरुडके कंधापे हाथ धरवेसौ यह दिखायो है कि पृथुराजाके प्रेमको देखके भगवान्कों अपने आपको सुधिभूल गई कछु खबर न रही ॥ २ भगवान्नै प्रगट होकर विष्णुरूप पृथुकोभी अपनी भक्तिका वर दिया इसका कारण यह है कि पृथु उनके अंशरूप हैं जो पृथ्वीपर प्रजाका दुःख दूर करनेको अवतार ले आये हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अंजली भक्तिसो सत्कार करे भये भगवत्के पश्चात् सब जाते भये ॥३६॥ भगवान्के अच्युतहू राजऋषि उपाध्यायसहित या राजाको मन हरते भये अपने धामको जाते भये ॥ ३७ ॥ जिन्हे अपनो दर्शन दियो ऐसे मायासो परे, देवनके देव अदृष्टभगवान्को राजा नमस्कार कर अपनें पुरकों जातोभयो॥३८॥

अदृष्टाय नमस्कृत्य नृपः संदर्शितात्मने ॥
अव्यक्ताय च देवानां देवाय स्वपुरं ययौ ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे श्रीविष्णुना पृथोर्यज्ञे अनुशासनवर्णनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय २१.

मैत्रेय उवाच-मौक्तिकैः कुसुमस्रग्भिर्दुकूलैः स्वर्णतोरणैः ॥
महासुरभिभिर्धूपैर्मंडितं तत्र तत्र वै ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि मोती पुष्पमाला वस्त्र सुवर्णके तोरण महा सुगन्धिकी धूपन करकें जहां जहां नगर शोभित हैं ॥ १ ॥ चन्दन अगरके जलसों भीजे भये बडे मार्ग चौरहे, पुष्प अक्षत छोटे छोटे फल खीलें दीपकसो सज्जित है ॥ २ ॥ समूहके समूह केलाके खंभ सुपारी आम्रपत्रसो शोभित है, वृक्षनके पल्लवनकी मालासों सब ओरसो सुन्दर अलंकृत है ॥ ३ ॥ प्रजा राजाको दीप बलि और सब मांगलिक द्रव्यसो पूजते भये, उज्ज्वल कुंडल पहिरे सुन्दर कन्या आवती भई ॥ ४ ॥ शंखदुंदुभीके घोष करकै ऋत्विजनके ब्रह्म घोषसो स्तुतिको प्राप्त हो गर्वरहित, पृथुवीर अपने भवनमें प्रवेश करते भये ॥ ५ ॥ पुरवासीनने देशवासीनने जिनको पूजन कियो ऐसे पृथुराजा प्रसन्न भये प्रियवरनके देनवारे विन पुरवासी देशवासीनको आपहू पूजन करते भये ॥ ६ ॥ सो पृथु ऐसो निंदारहित चेष्टा कर महान् बडे कर्म करतेभये, यासो महत्तम भये, पृथ्वीको शिक्षा कर निर्मल यश यहां विस्तार करकै श्रीहरिके पदकों जाते भये ॥ ७ ॥ सूतजी बोले कि हे शौनकजी ! ता समय सकल गुण हैवेके कारण गुणवान् मनुष्यनकरके सत्कृत आदिराजके यशको विदुर महाभागवत सुनके पृथुराजाके गुणनको वर्णन कर रहे मैत्रेयजीको पूजन कर पूछतेभये ॥ ८ ॥ विदुरजी बोले कि सो पृथु ब्राह्मणनकरकै अभिषिक्त सब देवनसो पूजा लैकै वैष्णवतेज धारण करतेभये, जिनने भुजानसो धरती दुही ॥ ९ ॥ कौन अभिज्ञ इनकी कीर्ति न सुनैगो, सब राजा जिनके पराक्रमके उच्छिष्ट भूत हैं, पालक सहित सब लोकपाल जिनसो अद्यापि जीवे है सो आप विनके शुद्ध कर्म मोसों कहो ॥ १० ॥ मैत्रेयजी बोले कि गंगायमुनानदीके बीचके क्षेत्रमें वसते भये पृथुजी अपने प्रारब्धके भोगनको पुण्यकी त्याग करवेकी इच्छा करकै भोगते भये ॥ ११ ॥ वे अप्रतिहत आज्ञावारे सप्तद्वीपके एक दंडधारी भये एक तौ ब्राह्मणकुल दूसरे अच्युतगोत्री श्रीवैष्णवनको विननै दंड न दीनो ॥ १२ ॥ हे सत्तम ! एक समय राजाने महायज्ञमें दीक्षा लीनी सो देवता ब्रह्मर्षि राजर्षीनको समाज जुडतो भयो ॥ १३ ॥ जा सभामें बडे बडे पुरुष हे विनको जब पूजन और सत्कार है चुको तब वा स्थानमें तारागणनमें चंद्रमाकी समान राजा उठके खडे भये ॥ १४ ॥ कंधा ऊंचे, मोटी विशाल भुजा, गौर कमलनयन, सुंदर नाक, सुमुख, सौम्य, ऊंचौ वक्षःस्थल, सुंदर दांत, सुंदर मुसकान युक्त है ॥ १५ ॥ विशाल

१ इन्द्रियोंके विषयोंसे रहित संतुष्ट सबमें नारायणको देखनेवाले महात्माओंको अच्युतगोत्री कहते हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वक्षःस्थल, बृहत् कटिपश्चाद्भागवारे उदरमें गोल रेखा, गंभीर नाभि, पराक्रमी, सुवर्णवत् ऊजरे ऊरू, अग्रभागसो उठे चरण ॥ १६ ॥ सूक्ष्म मुख, टेढे चिकने मूडके वार, शंखवत् त्रिरेखांकित गदन, महाबढमोले वस्त्र पहिरे, यज्ञोपवीत धारे ॥१७॥ सब देहकी प्रकट श्रीवारे, नियमसो सब भूषण त्यागे, कारे मृगचर्म धारे; श्रीमान् कुशा हाथमें लिये उचित कृत्यकूं करते भये ॥ १८ ॥ शीतल मनोहर तारा सम नेत्रनसों सब ओरकों देखते भए सब सभाकों हर्ष करावते पृथिवीश ये बोले ॥ १९ ॥ श्रेष्ठ विचित्र पदयुक्त मनोहर उज्ज्वल गंभीर सुगमवचन, ता समय सबके उपकारके अर्थ बोले ॥ २० ॥ पृथुराजा बोले कि हे सभासदहो ! तुम्हारो कल्याण होय, जो साधु यहां आए हो तो सुनो मैं सज्जननसो मनोरथ धर्म जानवेकी इच्छाकरके पूछोंहूं ॥ २१ ॥ कर लेवेवारो दंडदाता राजा प्रजानको हमकों करा है, सब धर्मके सुंदर सेतुनमें अलग सबको स्थापन करनवारो रक्षक और जीविका देनवारो ॥ २२ ॥ या अनुष्ठानसों मोको वे लोक कामदायक होंय, जिन्हे ब्रह्मवादी लोग कहैं हैं, जाके ऊपर भाग्यदाता ईश्वर संतुष्ट होय हैं ॥ २३ ॥ जो राजा प्रजासों कर लेय हैं और प्रजाको धर्मसों न शिक्षा करैं तो प्रजाके पापकों भागें हैं, अपने सब ऐश्वर्यको त्यागें हैं ॥ २४ ॥ ताते प्रजा भर्ता मेरे पिंडके अर्थ स्वार्थके लिये असूया छोडके अधोक्षजमें बुद्धि करो येही मोपें महाअनुग्रह करोगे ॥ २५ ॥ हे पितृ देवर्षि ! आप निर्मल हो याको सराहना करो, कर्ता शिक्षक आज्ञा दाताको मरपै बराबर फल होय है ॥ २६ ॥ हे पूजनीयनमें श्रेष्ठ ! काईके मतमें तो यज्ञपति नाम भगवान् पूजा योग्य हे विन्हे या लोकमें परलोकमें कांतिमति भूमिके ऊपर भोगक शरीर होय हैं ॥२७॥ मनु उत्तानपादको महीपति ध्रुवको, प्रियव्रत राजऋषिको, और हमारे पिताके पिता राजा अंगको जो करवे योग्य हो सो करते भए ॥२८॥ ब्रह्मा शिव प्रल्हाद बलि और दूसरे पंडित महात्माननें यह अंगीकार कियो है कि कर्म जड हैवेसो फल देवेको समर्थ नहीं तासो फलदाता ईश्वर अवश्य है ॥ २९ ॥ शोच करवे योग्य धर्मसों विमोचित मृत्युके दोहिते वेनराजाही भये कि जिनने परमेश्वरको न माने धर्म अर्थ और काम मोक्ष स्वर्ग प्राप्तिके सम्पूर्ण एकसै कारणनको विचार करो जाय तो ताकै कर्म जड हैवेसो स्वयं फल नहीं देय है कारण स्वतंत्रतासों ईश्वरही कर्मफल देय है ॥ ३० ॥ जिनके चरणकमलकी सेवाकी प्रीति प्रति दिन वृद्धिको प्राप्त होती तपस्विनके अनेक जन्मके बुद्धिके मलको भगवतके पद अंगुष्ठसों निकसी गंगाकी समान शीघ्र नाश करै है ॥३१॥ सब मनके मल दूर हैवेसो वैराग्यके कारण आत्मज्ञानकी सामर्थ्य युक्त यह प्राणी विनके चरण मूलमें रहकै फिर संसारमें नहीं पतित होय है ॥३२॥ कपट त्याग तुम सब कामपूरण करवेवारेके चरणकमलकों आत्माके वृत्तिनसो मन वचन काया गुण कर्मनकरकै भजो, जसो अधिकार हे तैसो अर्थकी सिद्धि प्राप्त होय है ॥ ३३ ॥ यद्यपि भगवान् स्वरूपसो शुद्ध निर्गुण ज्ञानघन हैं तथापि कर्ममार्गके अनेक पदार्थनसों संभावित होते वोही यज्ञरूप हे कारण कि यज्ञमें पृथक् पृथक् धान्य आदि पदार्थ वर्ण क्रिया मंत्र संकल्प पदार्थनकी शक्ति पृथक् २ नाम और सबसो उत्पन्न होते कर्म सब ईश्वरकेही स्वरूप है ॥ ३४ ॥ माया काल अंतःकरण धर्म संग्रहमें ये शरीर चेतनाको प्राप्त हैकै क्रियाफलके भावकरके यह विभुही प्रकाश करै हैं जैसे अग्नि काष्ठमें वा काष्ठक दीर्घआदि भावमें वाकी आत्मा हैके प्राप्त होय है ॥ ३५ ॥ अहो ये प्रजा ! मोपें बडो अनुग्रह करै हैं कि यज्ञभोक्तानके ईश्वर श्रीहरि गुरुको अपने धर्मके योगसों पृथिवीमें निरंतर

१ प्रयोजन यह है कि करनवारेको और सिखावनवारेको मरे पीछे पुण्यपापकर्मनको एकसोही फल होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दृढव्रतधारी हैके यजन करैं है ॥ ३६ ॥ अब हरिभक्ति दृढताके लिये ब्राह्मणकी भक्ति प्रथम करवेको उपदेश करै हैं कि समृद्धिन करके सुख दुखके सहिवे करके तथा तप और विद्यासों देदीप्यमान श्रीभगवान्के उपासक ब्राह्मणनपैं वृद्धिको प्राप्त भयोहू राजकुलको तेज अपनो प्रभाव न प्रगट करै ॥ ३७ ॥ ब्रह्मण्यदेव पुरुष पुरातन हरि नित्य जिनके चरणनके वंदन करवेसों, अखंडित लक्ष्मी जगत्पवित्र करवेवारो यश बडोंमें अग्रगण्यता प्राप्त करते भये ॥ ३८ ॥ जिन ब्राह्मणनकी सेवा करकै सर्वांतर्यामी स्वराट् ब्राह्मणनपै प्रीति करवेवारे ईश्वर यथेच्छासों सन्तुष्ट होय है याहीते धर्मपरायणनको सब प्रकारसो ब्राह्मणनके कुलकी सेवा करनी योग्य है ॥ ३९ ॥ जिनके नित्यसंबंधनकी (नित्यसम्बन्ध ये है कि ' पिता च रक्षकः शेषो भर्ता ज्ञेयो रमापतिः ॥ स्वाम्याधारो ममात्मा च गोप्ता चेति मनूदितः ॥ ") सेवा करकै अत्यंत प्रसन्न हैवेवारे आत्माको पुरुष शीघ्र प्राप्त होय है, अपनेते सुख शमता प्राप्त है जायहै, यासों परे न देवतानकोहू और सुख कौन है ॥ ४० ॥ ये निश्चय है कि तत्ववेत्तानकरकै श्रद्धासों जा जा देवताके पूज्यनाम करके जिन ब्राह्मणनके मुखमें श्रद्धासों जो भोजन करायो है, वासों अनंत भगवान् भोजन करै है ज्ञानरहित अग्निमें अर्थात् जडरूप अग्निमें हवन करवेसो प्रसन्न नहीं होय है विप्रोंकी सेवावारे, पारमहंसनकी गतिको प्राप्त होयहैं ॥ ४१ ॥ जा नित्य निर्मल सनातन ब्रह्ममें नाम वेदमें यह जगत् दर्पणकी नाईं प्रतीत होय है वा वेदको यह ब्राह्मण श्रद्धा तप मंगल मौन संयमसों समाधिसों निरन्तर धारण कर एकाग्र चित्तसों वाके अर्थको विचारे है। मंगल याको नाम है कि " प्रशस्ताचरणं नित्यमप्रशस्तस्य वर्जनम्। एतद्धि मंगलं प्रोक्तमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः "॥ ४२ ॥ हे श्रेष्ठ! तिन ब्राह्मणनके चरणकमलकी रज सब आयु पर्यंत किरीटपर मैं धारूंहूं यासो सब तुमहू धारो ब्राह्मणनकी चरणनकी कृपासों सब पापनाश होय है सब गुण या जीवकों प्राप्त होय है ॥ ४३ ॥ सब गुणनके स्थान शील धनी वृद्धनके आश्रयीको सब संपदा आप वरण करै है, ब्राह्मणनको कुल गौउनको कुल सब मोपै प्रसन्न होओ, जनार्दन अपने पार्षदसहित मोपै प्रसन्न होओ ॥ ४४ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि ऐसे कहिते भये राजासो पितृदेव द्विजाति प्रसन्न मनसो साधुवादकरकै सब स्तुति करते भये ॥ ४५ ॥ पुत्रसो सबलोककों जीतजाय है ये सत्यवती वेद वाणी है ब्राह्मणनके दण्डसों हनो भयो पापी वेन पृथुके पुत्र होयवेसो नरकसो तरजातोभयो ॥ ४६ ॥ हिरण्यकश्यपहू भगवत्की निंदा करकै नरकमें परो परन्तु प्रल्हादके प्रभावसा अंधतमसो पार भयो ॥ ४७ ॥ हे वीरवर्य पितः! पृथ्वीपति! बहुतवर्षतक जीओ जाकी ऐसी भक्ति सब लोकके एक भर्ता अच्युतमें है ॥ ४८ ॥ हे पवित्रकीर्ते! बडा आनंद है कि तुम सरीके नाथकरके हम सनाथ भये, मुकुन्द हमारे नाथ है, जिन उत्तमश्लोकतम ब्रह्मण्यदेव विष्णुकी कथांकूं तुम करोहो ॥ ४९ ॥ हे नाथ! सब जीव मात्रकों शिक्षा करनी ये तुमकों कुछ अति अद्भुत नहीं है दयालु महात्मानको प्रजापै दया करनो स्वभावही है ॥ ५० ॥ हे प्रभो! नष्टदृष्टि दैवसंज्ञित कर्मसों भ्रमते हमको तमसो पार करवेवारे तुम हो ॥ ५१ ॥ महासत्त्ववान श्रेष्ठ पुरुषके अर्थ नमस्कार होय, जो ब्राह्मण क्षत्रीनमें प्रवेश करके अपने तेजसो या विश्वकूं धारैं हैं ॥ ५२ ॥

नमो विवृद्धसत्त्वाय पुरुषाय महीयसे ॥
यो ब्रह्मक्षत्रमाविश्य बिभर्तीदं स्वतेजसा ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे प्रजानामनुशासने ब्राह्मणमाहात्म्यवर्णनं नाम एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २२.

मैत्रेय उवाच–जनेषु प्रगृणत्स्वेवं पृथुं पृथुलविक्रमम् ॥
तत्रोपजग्मुर्मुनयश्चत्वारः सूर्यवर्चसः ॥ १ ॥

मैत्रेयजी बोले कि सब जन पृथुल पराक्रमवारे या पृथुकी या प्रकार स्तुति कर रहे हे कि वाही समय तहां सूर्यके समान तेजस्वी चार मुनि सनकादिक आये ॥ १ ॥ अपने तेजसो लोकनके पाप नाश करनहारे सिद्धेश्वरनको आकाशसो उतरतें भयेनको राजा पृथु सब प्रजाके सहित देखते भये ॥ २ ॥ तिनके दर्शनसों प्राण ऊपरको आयवेसो महाउत्कण्ठासो सभासद सहित पृथु उठे, जैसे गुणवान् इन्द्रियनके सन्मुख जीवात्मा उत्सुकतासों जाय हे " ऊर्ध्वं प्राणा उत्क्रामंति यूनः स्थविर आयति ॥ प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान्प्रतिपद्यते" इति ॥ ३ ॥ विनयसों शिर झुकाये राजा पृथुनै गौरवके वश हो आसन अर्घ्य स्वीकार करवेके उपरान्त ऋषिनको विधिपूर्वक आदर और सत्कार कियो ॥ ४ ॥ तिनके पादशौच जलको अपने शिरपै चढायो राजाको यह आचरण शीलवाननके आचरणनको मान देवेके निमित्त हो ॥ ५ ॥ जैसे अपने स्थाननमें अग्नि तपै तैसे सुवर्णके सिंहासनमें वे शिवजीके भ्राता बैठे, सब तिनसो राजा पृथु श्रद्धासंयम संयुक्त प्रसन्न होयकै बोले ॥ ६ ॥ पृथु बोले कि हे मंगलायनो ! मैंने कहा मंगल आचरण कीनो हो, जो मोको तुम्हारो दर्शन भयो योगिनकोहू तुम्हारो दर्शन दुर्लभ है ॥ ७ ॥ वाको यालोक परलोकमें कौन बात दुर्लभ है, जापै विप्र प्रसन्न होय है, वापै शिव विष्णु पार्षदसहित सब प्रसन्न होयहै ॥ ८ ॥ लोकनको पर्यटन करते भये तुम लोकनको नहीं दीखै हो, जैसे मनुष्य आत्मा और वाके हेतुनको नहीं देख सकै है ॥ ९ ॥ वे निर्द्धन साधु गृहस्थी धन्य हैं जिनके गृहमें पूज्यनमें श्रेष्ठ लोग जल तृण भूमीसों सत्कार पावे है ॥ १० ॥ जिनके घर तीर्थपादीय श्रीवैष्णवनके पादतीर्थसों वर्जित है वे घर सर्पके घरसमान हैं, घरके वासी वृक्षवत् है, सब संपदारहित है ॥ ११ ॥ हे द्विजश्रेष्ठो ! आपको आगमन भलो भयो जिन व्रतनको धीर मुमुक्षु श्रद्धा करकै करें हैं सो व्रत बालक अवस्थानसो तुम करै हो ॥ १२ ॥ हे समर्थहो ! इंद्रियार्थार्थ जानवेवारे अपने कर्म करकै अनेक व्यसनवारे संसारमें पतित हमहू सब कुशल हैं ॥ १३ ॥ आत्माराम तुममें कुशलको प्रश्न नहीं इष्ट होयहै कुशल होनो न होनो ये सब मतिकी वृत्ति है ॥ १४ ॥ सो हमने तुममें विश्वास कीनो, तुम तपस्वी हमारे सुहृद हो, सो आपसों हम ये पूछे हैं कि या संसारमें अनायास करकै क्षेम कौन प्रकारसों होय है सो कहो ॥ १५ ॥ निश्चय है कि आत्मज्ञानिनकी आत्मा आत्माके भावन करवेवारे अपनेनके अनुग्रहके अर्थ या धरतीपै सिद्धरूप अज भगवान्ही विचरै हो ॥ १६ ॥ मैत्रेयजी बोले कि पृथुकी सुन्दर सारकी बातें सुनके प्रीतिसों मुसकायकै सनत्कुमारजी बोले ॥ १७ ॥ सनत्कुमारजी बोले कि हे महाराज ! सब जीवनके हितकी आत्मावारे तुमने बहुत अच्छी पूछी, आप विद्वान् हैं साधूनकी मति ऐसी होय है ॥१८॥ निश्चय है कि साधूनको संगम दोनों लोकनको सुखकारी है, जिनसो बोलनो जिनसो प्रश्न करनो सबके कल्याणको विस्तार करै है ॥१९॥ हे राजन् ! मधुनामक दैत्यके द्वेषी भगवान्के पादारविंदके गुणानुवादमें महाकठिन रति प्रीति तुम्हारी है वो नैष्ठिकी मति आत्माके भीतरको मल कामवासनानको कषायलौपनो दूर करै है ॥ २० ॥ मनुष्यनके क्षेमकी वार्ता शास्त्रमें येही निश्चय करी है कि सब विचारनको यही हेतु है कि संगरहित सबसों पृथक्, व्यापक, आत्मा निर्गुणब्रह्ममें, खूब दृढ प्रीति होनो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये सब सिद्धांतनकों सिद्धांत है ॥ २१ ॥ भगवच्छ्रद्धाकरके भगवद्धर्मको आचरण करकै भगवत्तत्त्वके जानवेकी इच्छा करकै ब्रह्मविद्या योगमें निष्ठासों योगीश्वरनकी उपासना करकै सदा पुण्य यशवारे श्रीमन्नारायणकी पुण्यरूप कथासो भगवान् प्रसन्न होय हैं ॥२२॥ धन इंद्रियनमें आराम करनवारेनकी गोष्ठीनमें तृष्णा न करै, इनके संमत कामादिकको संग्रह न करै, एकांतमें भगवत्के अनुसंधानमें रुचि करकै अतिसंतुष्ट होय है, श्रीहरिके गुणरूप अमृतपानविना आत्मा नहीं प्रसन्न होय है॥२३॥जीवमात्रकी हिंसा न करै, परमहंसनकीसी नाईं रहै, श्रीमुकुंदके चरितामृत मादक मीठेको सुमरै, यम नियम करै कामवासना न करै काऊकी निंदा न करै, काऊमें चेष्टा न करै, सुखदुःखको सहै शीत उष्ण सहै ॥२४॥ श्रीहरिके सबके कर्णपूरण करवेवारे कर्णाभरणके समान वारंवार गुणनामोच्चारण करै अत्यंत भक्ति करकै सत् असत्में संग न करै, तौ निर्गुण ब्रह्ममें अनायासकरकै प्रीति होय है ॥ २५ ॥ जब गुरुकी सेवा करनहारे पुरुषनकी ब्रह्ममें बहुत निष्ठाकी मति होय है तब सो पुरुष ज्ञान वैराग्यके वेगकरके पंचभूतात्मक जीवके रहिवेको कोश हृदय लिंगदेह अवीर्यको जरावै है, जैसे बडीभई अग्नि काष्ठको जरावैहै २६॥ अंतःकरण दृग्ध होवेसो सबविध गुणनसो मुक्त परसों देहादिकसो और आत्मा परमात्माको व्यवधान नहीं देखके जैसे पुरुष स्वप्नकी बात स्वप्नविनाशमें नहीं देखै है, ऐसेही अन्तर बाहर एक परमात्माको देखै है ॥२७॥ आत्मा इंद्रियनके अर्थ जीव ईश्वरके भेद अंतःकरणरूप उपाधि होवेंसों पुमान् देखे है और तरहसो नहीं ॥ २८ ॥ जैसे संसारमें जल और दर्पणादि पदार्थनमेंही अपनो और प्रतिबिम्बको भेद विदित होय है जब वे दर्पणादि पदार्थ न होय तौ नहीं दीखै है ॥२९॥ विषयनकरके खैंची इंद्रियनकरके विनी विषयनके ध्यान करनवारे पुरुषनको मन विन विषयनमें जब फसजाय है तब वो विषयनको फसो मन बुद्धिकी चेतनाको हरै है जैसे तालावके समीपको वृक्षपुंज नीचेनीचेंही जलकों खैंचे है॥३०॥ तब स्मृति भ्रष्ट है जाय है, स्मृतिके क्षय होवेतों चित्त ज्ञान दोनों भ्रंश होय है, उनके रोकनेहीको कवि जन आत्माका वश करना कहै हैं अथवा फिर जब ज्ञान नष्टहै गयो तब वा ज्ञानके नाश होवेकोही कविजन आत्माको नाश कहै है ॥ ३१ ॥ यासो परै पुरुषकों अपनो स्वार्थनाश और नहीं है कि जा आत्माके निमित्त यह सब प्रिय लगै है वा आत्माकों भूलजानो ॥ ३२ ॥ अर्थ तो धन और इंद्रियार्थ विषय इनको जो अभिध्यान है वोही मनुष्यनके सब अर्थनको नाश करवेवारो है, ज्ञान विज्ञानसो भ्रष्ट भयो ये जीव स्थावरभावको प्राप्त होय है ॥ ३३ ॥ तीव्रअंधकारके तरवेकी इच्छावारो कभू कहीं संग न करै, यही संग धर्म अर्थ काम मोक्षको अत्यन्त नाश करवेवारो है ॥३४॥ इन पदार्थनमें मोक्षही सर्वोत्तम पदार्थ गिनो है कारण कि औरनमें कालको भय बनो रहै है ॥ ३५ ॥ परब्रह्मादिक, अवर अस्मादिक, जे उत्पन्न भए हैं उनके मनोरथनको गुणनके विकारसो काल नष्ट कर देय है या कारण वास्तविक सुखको कोई प्राप्त नहीं होय है ॥ ३६ ॥ हे नरेंद्र! यासों जगत्के स्थावर जंगम जीवनके देह इन्द्रिय प्राण बुद्धि करकै आवृत क्षेत्र जीवके अंतर्यामी हृदयमें सब प्रकारसो प्रकाशमान सब जगै प्रकाशित भगवान्को तुम यह जानो कि वह मैंही हूं ॥ ३७॥ ज्ञानके उत्पन्न होवेपै निवृत्त है जायवेवारो ये संसार सत् असत् भावरूप मालामें सर्पके समान मायारूप प्रतीत होय है वह परमात्मा नित्य मुक्त शुद्ध सत्य ज्ञानघन और कर्मनसो मलीनताकूं प्राप्त भई मायाको जो तिरस्कार करवेवारो है वा ईश्वरकी हम शरण है ॥ ३८ ॥ विनके चरणकमलकी अंगुलिनकी भक्तिकरकै कर्म आशयरूपा हृदयकी ग्रंथिको संत लोग दूर करै हैं; तिनकीसी नाईं जे वा भक्तिसो रहित बुद्धिवारे भलेही चाहे केसेहू यति लोग सब इन्द्रियनकों रोककें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हूं वर्तमान होय है तोहू कर्माशय ग्रंथिकौ दूर नहीं कर सके है वा दीनदयाल भक्तप्रिय वासुदेवकी हम शरणको भजेहै ॥ ३९ ॥ या संसारमें जिनके पास नाव और मलाह नहीं वे संसार-समुद्रको महाकष्टसों तरै है क्योंकि यह संसारसमुद्र कैसो है कि छै इंद्रियरूप जामें बडे भारी मगर है सो तुम भगवान्के भजन करवे योग्य चरणकमलरूप नाव करकै दुस्तर कष्टरूप सागरकों तिरो॥४०॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि सो पृथु ऐसे ब्रह्माके पुत्र आत्मज्ञानी सनत्कुमारसों सुंदर आत्माकी गति देख प्रशंसा कर बोले ॥ ४१ ॥ राजा बोले कि हे भगवन् ! आर्तरक्षक हरिने प्रथमही मोपै अनुग्रह कीनो हो, वाको सिद्ध करवेको आपलोग सब आए ॥ ४२ ॥ दयालु आप लोगनने संपूर्ण कार्य पूर्ण कियो यह मेरो राज्य और शरीरादि सब आपहीको है अब मैं आपको कहा भेट करूं ॥ ४३ ॥ हे ब्रह्मन् ! प्राण स्त्री पुत्र गृह परिवार राज्य मही खजानो ये सब आपको निवेदन कीनो है ॥ ४४ ॥ सैनापत्य राज्य दण्ड सबको प्रात करनो सब लोकको स्वामित्व ये सब वेदशास्त्रज्ञ आप सरीके महात्मानकोही ह ॥ ४५ ॥ अपनो पदार्थही ब्राह्मण भोजन करैहैं, अपनीही वस्तु धरैहैं, अपनोही पदार्थ दैयह, ब्राह्मणनकी कृपाकरकै विनकी जूठनको जो कि ब्राह्मणनने परित्यागकर दीनो ताको हम क्षत्रिय आदिक अन्न भोजन करै हैं वास्तवमें ये सब ब्राह्मणनकोही है ॥४६॥ जिन निगम जाननेवारेनने एकांतते भगवत्की गति अध्यात्म विचारमें वर्णन करीहै वे महादयालु अपने करे उपकारसो आप प्रसन्न होओ, उनके उपकारको प्रत्युपकार केवल हाथ जोडे विना और कछु नहीं है सके है ॥ ४७ ॥ श्री मैत्रेयजी बोले कि वे आत्मयोगके पति आदिराज श्रीपृथुराजा करकै पूजे भए वाको शीलकी प्रशंसा करते सब मनुष्यनके देखते देखते आकाशमार्गमें हैकै जाते भए ॥ ४८ ॥ पृथुमहाराज महात्मानमें बडे अध्यात्मशिक्षामें स्थित हैकै सब पूर्णकामकी नाईं पूर्ण आत्माकों मानतो भयो ॥ ४९ ॥ जैसो काल जैसो उद्देश जैसो बल जैसो उचित जैसो धन हो तैसेही कर्म करते ब्रह्मको साक्षात्कार करते भए ॥ ५० ॥ सब फल ब्रह्ममें समर्पण करकै सबसो आसक्तिको त्याग सावधान हैकै सब कर्मको अध्यक्ष मान करके आत्माको प्रकृतिसों परै मानते भए ॥ ५१ ॥ यद्यपि सम्राट्पनेकी लक्ष्मी गृहनमैं वर्तमान है तोहू इन्द्रियनके अर्थमें आसक्त नहीं होते भए, अहंकार त्याग सूर्यकी नाईं रहते भए ॥ ५२ ॥ ऐसे ब्रह्मज्ञान करकै कर्मनकों करते अर्चिपनाम स्त्रीमें अपने समान पांच पुत्रनको उत्पन्न करत भए ॥ ५३ ॥ विजिताश्व १, धूम्रकेश २, हर्यक्ष ३, द्रविण ४, वृक ५, जिनके नाम हैं सब लोकपालनके गुणनको पृथु इकले धारण करते भए ॥ ५४ ॥ अपने कालमें जगत्सृष्टिकी रक्षाके अर्थ अच्युतमें मन लगाय मन वाणी वृत्ति और सुन्दर गुणनकरकै प्रजाको आनन्द देते भए ॥ ५५ ॥ पृथु राजा दूसरो नाम सोमराजा नाम चन्द्रमाकी समान भयो सूर्यकी नाईं भूमिके धनको त्यागते ग्रहण करते भए ॥ ५६ ॥ तेज करकै अग्निकी नाईं दुर्धर्ष होते भए, महा इंद्रकी नाईं दुर्जय होते भए, सहनशीलतामैं धरतीकी नाईं, और आकाशकी नाईं सब मनुष्यनके मनोवांछित दाता होते भए॥५७॥ विनके राज्यमें इच्छानुसार मेघ वर्षतो हो या प्रकार सबकों तृप्त करते समुद्रकी नाईं गम्भीर सत्व पराक्रममें पर्वतकी नाईं होते भए ॥५८॥ शिक्षामें धर्मराजकी नाईं, आश्चर्यकर्म करवेवारेनमें हिमाचलकी नाईं, कुबेरकी नाईं खजानेनके मालक भए अर्थ गुप्त राखवेमें वरुणकी नाईं भए ॥ ५९ ॥ सब स्थानमैं गमन तथा बल सह पराक्रममें वायुके समान भये और दुस्सहतामें रुद्रके समान भये ॥ ६० ॥ कामदेव समान सुन्दर मनस्वीपनमें मृगराजसमान, मनुष्यनपै वात्सल्यभावमें मनुवत् भए, बडप्पनमें भगवान् ब्रह्माकी नाईं भए ॥ ६१ ॥ ब्रह्मवादमें बृहस्पति समान, आत्मज्ञानीनमें आप

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीहरि समान भक्तिकरकै गौ गुरु ब्राह्मण विष्वक्सेनके अनुवर्तिनमें श्रेष्ठ भए ॥ ६२ ॥ (लज्जा विनय सुशीलता और पराये निमित्त उद्यममें अपनें आत्माके समान भये,) जहां तहां त्रिलोकीमें सत्पुरुष उच्चस्वरसौं विनकी कीर्ति गावते है या कारण विनको यश रामचन्द्रके समान स्त्रीनमेंभी श्रवण-गोचर होता था ॥ ६३ ॥

कीर्त्योर्ध्वगीतया पुंभिस्त्रैलोक्ये तत्र तत्र ह ॥
प्रविष्टः कर्णरन्ध्रेषु स्त्रीणां रामः सतामिव ॥ ६३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे पृथुचरिते सनत्कुमारेण परमाध्यात्मज्ञानोपदेशवर्णनं नाम द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अध्याय २३.

मैत्रेय उवाच-दृष्ट्वाऽऽत्मानं प्रवयसमेकदा वैन्य आत्मवान् ॥
आत्मना वर्धिताशेषस्वानुसर्गः प्रजापतिः ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि एक समय आत्मज्ञानी प्रजापति राजा पृथु अपनी आत्माको बूढो जान अपनी रची भई अन्नादिक उत्पत्ति पुर और गावकी रचनाको वृद्धि करनवारे ॥ १ ॥ स्थावर जंगम जगत्के सब वृत्तिके दाता, सन्तनके धर्मधारी ईश्वरकी आज्ञा माननेवारे जा प्रयोजनसौं जगत्में प्रगट भये है वासौं सिद्ध कर ॥ २ ॥ विरहसो रोवती भई अपनी पुत्री धरतीकौ पुत्रनको सोंप प्रजासों मन हटाय स्त्रीसहित तपोवनको जाते भए ॥ ३ ॥ तहां नियमनकूं धारणकर वैखानस आश्रममें संमत होय उग्रतप करवेको प्रारंभ कीनो जैसे पहिले धरामंडलके विजयमें प्रवृत्त भए ऐसे नियममें तत्पर भये ॥ ४ ॥ कन्द मूल फल आहार कर कभी सूखे पत्ता भोजन कुछ पक्षभर जलपान कर रहे ता पीछें वायु भक्षण करते भए ॥ ५ ॥ वीर ग्रीष्ममें पंचाग्नि तपतेभए वर्षामें मेघधार सहते भए मुनि हो शिशिरऋतुमें कंठपर्यंत जलमें ठाढेरहै जलमें शयन करतेरहे ॥ ६ ॥ सहनशीली भए वाणी जीती इन्द्रियें जीती ऊपरको वीर्य चढायो, पवन जीतलीनी श्रीकृष्णचन्द्रकी आराधन करवेको उत्तम तप करते भए ॥ ७ ॥ ऐसे क्रमकरकै कर्ममल आशय नाशकर प्राणायामनसों छहौं इंद्रिय वश हैवेके कारण सब कर्म बंधन कट गये ॥ ८ ॥ सनत्कुमार भगवान् जो परम अध्यात्मज्ञान देते भए वाही योगसो पुरुष परमेश्वरको पुरुषश्रेष्ठ पृथु भजते भए ॥ ९ ॥ श्रद्धासो भगवद्धर्मको आचरण करते विन महात्मा पृथुकी भगवान् ब्रह्ममें अनन्यविषया मति होती भई ॥ १० ॥ सब कर्मसो शुद्धसत्त्वात्मा भगवान्को वारंवार संस्मरणरूप अनुपूर्वीसों विरक्तिमान ज्ञान होता भयो; जा ज्ञानकरकै संदेहको स्थान निज जीवकोशको काटते भये ॥ ११ ॥ देहमें आत्माको अभिमान दूर है जायवैसो स्वरूपको प्राप्त है उपस्थित सिद्धिनकाहू अभिलाषा त्याग ब्रह्मज्ञानसौं शिथिल यत्न कर शनैः वा ज्ञानके यत्नकोहू त्यागकै शान्त भये यह योगी जबतक नारायणकी कथामें प्रीति नहीं करै है तभीतक विनसौं सिद्धिनमें आसक्तिकी भूल होय है ॥ १२ ॥ या प्रकार वह वीरप्रवर आत्मामें मन लगाय ब्रह्मरूप है दृढताधारण करकै समय पाय कलेवर त्यागते भये ॥ १३ ॥ ब्रह्मोपासना करतेभये पायुकों[1] दृढीसो पीडन करकै धीरसों वायुको बंध करके ऊपरको चढायवेको अभ्यास करत नाभीके कोठामें स्थित करते भये, फिर वहांसो हृदय उर कंठ शिरमें क्रमसो प्राप्त

१ जीवके स्वरूपके ढकनवारे वासनामय लिंगदेहको ॥ २ गुदाइंद्रियको ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करते भये ॥ १४ ॥ सबसो चाहना छोड क्रमकरकै वा वायुको मूडमें पहुचाय वायुकूं वायुमें, पृथिवीमें शरीरको, तेजमें तेजको लीन करते भये ॥१५॥ आकाशमें आकाश, जलअंशको जलमें विभागसो जो जाके स्थान हैं उनमें लय करतेभये, पृथिवीकों जलमें तेजकों वायुमें, वायुकों आकाशमें लीन करते भये॥१६॥ इंद्रियनमें मन, इंद्रियनकूं इंद्रियनकी मात्रामें, जो जासो उत्पन्न होयहै वाहीमें वाकूं लगावते भये, अहंकारकरकै सहित विन तन्मात्रानको महत्तत्त्वमें लगावते भये ॥१७॥ सब गुणनके विन्यासरूप वा महत्तत्वको मायामयजीवमें धार, वा जीवको आत्मामें लगाय, पुरुषको मनसें विचार कर ॥१८॥ ज्ञानवैराग्यवीर्यकरकै स्वरूपमें स्थित हो शरीर त्यागते भये, जब समर्थ है जाय है तब प्रसन्न आत्मा जीव वैकुंठको जायहै ॥ १९ ॥ अर्चिनाम महाराणी स्त्री जो अतिसुकुमारी और चरणसौं पृथ्वीको स्पर्श करवेको अयोग्य हैवेपैहू विनके पीछे वनमें गईही ॥ २० ॥ अत्यंत पतिके व्रतधर्ममें निष्ठा सेवाकरकै ऋषिनकीसी देहयात्रा करकै अतिकर्षितहू ही तोहूं वा पीडाकों न मानती भई, प्यारेके हाथस्पर्शके मानमें महासुख मानती भई ॥ २१ ॥ सब चेष्टा रहित अपने प्यारे पृथिवीके पतिको देह देखकै, सो सती कुछेक विलाप करकै वा पर्वतकी निकटवर्तिभूमिमें चिता बनाय वा देहकों धरती भई ॥ २२ ॥ नदीजलमें स्नान कर, मृतक संस्कार सब करकै उदारकर्मवारे भर्ताको जल देकै स्वर्गमें स्थित देवतानकों नमस्कार कर तीन परिक्रमा करकै अपने भर्तृपादको ध्यान कर वह्निमें प्रवेश करती भई ॥२३॥ वीरवर अपने पति महावीर पृथु राजाके पीछे वा पतिव्रता अर्चीको सती होते देख सहस्रन वरदान देवेवारी देवतानकी स्त्री वाकी प्रशंसा करनलगी ॥ २४ ॥ और वा मंदराचलपर्वतकी भूमिमें पुष्पवृष्टि करती भई, देवता आकाशमें नगारे बजायवे लगे, परस्पर स्तुति करतभये ॥ २५॥ देवियें बोलीं कि अहो ये वधू धन्य है, जो राजानके पति पृथुको सब आत्मभाव करकै भजन करती भई जैसे श्रीमहालक्ष्मी यज्ञेश्वरको भजन करै है॥२६॥सो ये सती निश्चय करके पृथुमहाराजके पीछै जाती भई, देखो विचारमें न आवै ऐसे कर्म करकै अस्मदादिकनको उल्लंघन करगई ॥२७॥ पृथ्वीमें जो प्राणी चंचल आयुको प्राप्त होकै भगवत्पदको प्राप्त करवेवारे आत्मज्ञानको सिद्ध करै है विन्हैं कोउ वस्तुहू दुर्लभ नहीं है ॥ २८ ॥ मोक्ष देवेवारे मनुष्यदेहको प्राप्त होकै जो प्राणी विषयनमें आसक्त होय वाको वंचित भयो आत्मद्रोही समझनो ॥२९॥मैत्रेयजी बोले कि देवस्त्रियनसो स्तुतिको प्राप्त होवोह वधू पतिलोककों जाती भई, जहां आत्मवेत्तानमें धुर्य वैन्य पृथु गये है॥३०॥ महाभगवान् पृथुको ऐसो पराक्रम है, अत्यंत श्रेष्ठ चरित्रवारेको चरित्र हमने कीर्तन करो ॥ ३१ ॥ सावधान होयकर जो कोई या महापुण्यरूपको पाठ करै, सुनावै, सुनै, वो पृथुकी पदवीकों प्राप्त होयगो ॥ ३२ ॥ ब्राह्मण तो ब्रह्मतेजस्वी होयगो, क्षत्री पृथिवीपति होयगो, वैश्य पाठ करैगो तौ व्योपार खूब होयगो, शूद्र पढै तौ सबमें श्रेष्ठ होय ॥ ३३ ॥ नर नारी याको तीन वार आदरते सुनै तौ अपुत्राके पुत्र निर्धनके धन होयगो ॥ ३४ ॥ थोडी कीर्तिवारेकी बहुत कीर्ति फैलेगी, मूर्ख पंडित होयगो, ये चरित्र मंगलदायक है, पुरुषनको अमंगलनाशक है ॥३५॥ धनदायक यश दाता आयु बढावनेवारो स्वर्गदायक कलिमलनाशक है, धर्म अर्थ काम मोक्ष चाहनावारेका सब सिद्धिदायक है ॥३६॥ श्रद्धा करकै सुनवे योग्य है, चारों वरणनको परम कारण है, परमेश्वरके वैकुण्ठलोकको प्राप्त करवेवारो है, मोक्षको दायक है ॥ ३७ ॥ विजयकी चाहवारे राजा या चरित्रको सुनकै जिनके ऊपर चढाई करैगो वाके अर्थ सब राजा बलि देयगे, जैसे पृथुकूं देते है ॥ ३८ ॥ सर्वसंग त्याग भगवत्में निर्मल भक्ति कर पृथुको चरित पुण्यरूप सुनै सुनावै ॥३९॥ हे वैचित्रवीर्य विदुर! यह महामाहात्म्यको सूचक है, सो हमने तुमसे कह्यो, याको जो मनुष्य

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मन करकै सुनै सो राजा पृथुकी गतिको प्राप्त होय हैं ॥४०॥ दिनदिनके प्रति या चरित्रको जो आदरसों सुनै वा पृथुचरितको वाचै वो सब संगसो विमुक्त होयगो, संसाररूपी समुद्रमें नावरूप भगवान्के चरणमें वह मनुष्य बहुत निपुण प्रीतिकों प्राप्त होयगो ॥ ४१ ॥

अनुदिनमिदमादरेण शृण्वन् पृथुचरितं प्रथयन् विमुक्तसङ्गः ॥
भगवति भवसिन्धुपोतपादे स च निपुणां लभते गतिं मनुष्यः ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पृथुचरित्रसंपूर्णवर्णनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

मैत्रेय उवाच–विजिताश्वोऽधिराजाऽऽसीत् पृथुपुत्रः पृथुश्रवाः ॥
यवीयेभ्योऽददात् काष्ठा भ्रातृभ्यो भ्रातृवत्सलः ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि याके उपरान्त महायशस्वी पृथुपुत्र विजिताश्व महाराजा होते भए अत्यन्त प्रीतिके कारण छोटे भाईनको सब दिशानको राज्य देतो भयो ॥१॥ हर्यक्षको पूर्वदिशाको राज्य दीनो धूम्रकेशको दक्षिणको राज्य दियो वृकसंज्ञकको पश्चिमको राज्य दीनो उत्तरको द्रविणको राज्य दीनो ॥२॥ छिप जायवेकी गति विजिताश्वने इंद्रसो सीखी ही या कारणसों याको अन्तर्धानहू कहै हैं याने सुंदर शिखंडिनीमें तीन संतान उत्पन्न करी ॥३॥ पावक, पावमान, शुचि, ये तीन अग्निके नाम है ये तीन अग्नि पहिले वसिष्ठजीके शापसो उत्पन्नभए फिर योगगतिको गए ॥४॥ अंतर्द्धान विद्यावारो विजिताश्व नभस्वतीस्त्रीमें हविर्धान पुत्र उत्पन्न करतो भयो, जो अश्व चुरायवेवारे इंद्रको जानकेहू नहीं मारतो भयो॥ ५ ॥ राजानकी वृत्ति ये है कि कर लेनो, दंड देनो, बेगारपनसो काम करावनो, विजिताश्व यह कर्म दारुण जानके दीर्घ यज्ञके बहाने सब त्याग करतो भयो ॥६॥ तहांहू हंस पुरुष परमात्मा सर्वांतर्यामीको पूजन करते कुशल समाधिसो तिनकी लोकताको प्राप्त भयो अर्थात् भगवान्के लोकको गयो ७॥ हे विदुर! हविर्द्धानसो हविर्धानी छे सुत उत्पन्न करती भई; बर्हिषद, गय, शुक्ल, कृष्ण, सत्य, जितव्रत ये छै सुत हैं ॥ ८ ॥ हे परीक्षित् ! वे हविर्धानके पुत्रमें ज्येष्ठ पुत्र महाभाग बर्हिषद् राजा कर्मकांडमें पारंगत भए, तथा योगक्रिया तो खूबही जानते भए ॥ ९ ॥ या राजानै पृथ्वीके कहू स्थलकोहू यज्ञरहित नहीं राखो और पूर्व दिशाकी ओर अग्रभागवारे कुशानसों सब धरातलको छाय दियो या कारण इनको नाम प्राचीनबर्हि भयो ॥ १० ॥ समुद्रकी बेटी अक्लाकरके दीनी भई शतद्रुतिसों व्याह करते भए, यह कन्या सब अंगसों सुंदर किशोरी सुंदर सिंगारीभई गहिने पहिरे ॥ ११ ॥ जा समय विवाहमें अग्निकी प्रदक्षिणा करती ही वाय देख अग्नि शुकीकी समान यापें आसक्त भयो "पहले सप्तर्षिनके यज्ञमें विनकी भार्याको देख अग्नि कामातुर भये हे तब अग्निकी भार्या स्वाहाने सप्तर्षिकी भार्या रूप धारण करकै अग्निका रमण करायो और रमण करवेके पाछे शुकीरूपिणी हो अग्निको तेज शरपतेमें राख दियो" याप्रकार भ्रांतिसो सप्तर्षिकी भार्या जान रमण कियो हो ॥ १२ ॥ विबुध असुर गंधर्व मुनि सिद्ध नर उरग वा नवोढाने दिशानमें नूपुरनके शब्द करकै जीते ॥ १३ ॥ प्राचीन बर्हिके पुत्र शतद्रुतीमें दश उत्पन्न भए, यह सब एकसे नाम और व्रत धारण करवेवारे धर्ममें निपुण भये सबको प्रचेता नाम भयो ॥ १४॥ प्रजा रचवेके लिये पिताने आज्ञा करी तब तप करवेके लिये समुद्र तीरपे जाते

* ब्राह्मणोंके शरीरका नाम वसुधातल है वसुनाम भगवान्का उन्हें जो प्रीतिसे धारै उस भगवान्की प्रीतिके तल अर्थात् स्थान ब्राह्मणोंका हृदय है सो इसी वसुधातलको अर्थात् सम्पूर्ण देशके ब्राह्मणोंको राजानै कुशके आसनोंपर बैठाये अनेक दान दे तृप्त कर दिया और संकल्पके समय कुशोंका मुख पूर्वकी ओर करना उचित है॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भए, दशहजार वर्ष तप करकै तपनके पति श्रीमन्नारायणको पूजन करतेभये ॥ १५ ॥ विनके मार्गमें जाते समय शिवजीने विन्हैं दर्शन दे प्रीतिसों जा मंत्रको उपदेश दियो और पूजन बतायो वे वाहीके अनुसार जितेन्द्रिय हैके ध्यान तप जप करवे लगे ॥ १६ ॥ विदुरजी बोले कि हे ब्रह्मन् ! प्रचेतानको शिवजीसो जैसे समागम भयो और जो उपदेश करो वह सो सब अर्थवत् वर्णन करो ॥ १७ ॥ हे विप्रर्षे ! शिवजीको और शरीरधारीनको जो संगम है सो दुर्लभ है, वैराग्यवाले मुनि जिन इष्टदेवको केवल ध्यान मात्र करैं हैं परन्तु दर्शन नहीं पावैं हैं ॥ १८ ॥ क्योंकि वे असंग है यासों भगवान् शिव आत्मारामहू हैं तौहू लोकरक्षाके लिये अपनी घोर शक्तिको पास राखकै जे भगवान् शिव विचरैं हैं ॥ १९ ॥ मैत्रेयजी बोले कि साधु प्रचेता पिताके वाक्यकों शिरपर धारणकर तपमें चित्त लगाय पश्चिमकी दिशाकों जाते भए ॥ २० ॥ समुद्रके समीप विस्तृत एक महाभारी सरोवर देखतेभए जामें महात्मानके मनकीसी नाईं स्वच्छ प्रसन्न जल हो मत्स्यादिक बहुत हैं ॥ २१ ॥ नीलकमल रक्तकमल उत्पल अंभोज कह्लार इन्दीवरसों युक्त हंस सारस चक्राह्व कारंडवनके शब्दसो व्याप्त ॥ २२ ॥ मत्त भ्रमरनके सुन्दर स्वरसों लता और वृक्षनके रोम खडेहैं प्रसन्न कमलनके समूहन-की परागसों दिशानमें उठी सुगंधित पवन वहि रही है ॥ २३ ॥ तहां दिव्य मनोहर गन्धर्वनको गायन और मृदंग ढोलको शब्द सुन राजपुत्र विस्मय करते भए ॥ २४ ॥ ताही समय वा सरोवरसों निकसे अपने पार्षद सहित देवगण और सेवकनसो स्तुतिको प्राप्त होते भए ॥ २५ ॥ तपे भए सुवर्ण समूहके समान कांतिमान त्रिनेत्र प्रसन्न होयवेमें संमुख शितिकंठ शिवको देख महाआनन्दसो प्रचेता प्रणाम करते भए ॥ २६ ॥ तब शरणागतकी पीडानाशक धर्मवत्सल शिवजी धर्मज्ञ शीलसं-पन्न विन प्रचेतानसो बोले ॥ २७ ॥ श्रीरुद्र बोलैं कि हे प्राचीनबर्हिके पुत्रो ! तुम्हारी करवेकी जो इच्छा है सो हमने जानी, तुम्हारे कल्याण होय, तुम्हारे अनुग्रहके लिये मैंने तुम्हैं दर्शन दीनो है ॥ २८ ॥ जो कोई पर, साक्षात् त्रिगुणजीवसंज्ञितसो परै भगवान् वासुदेवकी शरणागत है सो मोको प्रिय है ॥ २९ ॥ जो अपने धर्ममें निष्ठा राखै है वो सौ जन्मकरकै ब्रह्माभावको प्राप्त होय है, ता पीछै मोको प्राप्त होय है, और भागवत तौ मायारहित विष्णुके परम पदको प्राप्त होय है जैसे सब देवता हम हमारे या अधिकारीके अंतमें परमेश्वरके लोकको प्राप्त होय हैं, अब हम शिव हैकै अधिकारीकी नाईं वर्त्तमान हैं ॥ ३० ॥ तुम भगवान्के भक्त हैवेके कारण मोको बहुत प्यारे हो मोको भागवतनसो प्यारो और कोईभी नाय है ॥ ३१ ॥ जो मंत्र हम तुमको देय हैं ये एकांतमें जपियो पवित्र परममंगलमय मोक्ष करवेवारो है सो सुनो हम तुझै कहै हैं ॥ ३२ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे दयालु नारायणपरायण भगवान् शिव हाथ जोडे ठाडे राजपुत्रनसों वचन बोले ॥ ३३ ॥ श्रीरुद्र बोले कि आपकी बडाई बडे २ आत्मज्ञानी लोगनको स्वरूपानंद देती है तौ मुझेभी यह आनंद मिलै आप परमानंद और सर्व रूपको मैं प्रणाम करै हूं ॥ ३४ ॥ कमलनाभ भूतसूक्ष्म इंद्रियनके आत्मा, सर्वांतर्यामी अपने आप प्रकाशरूप, वासुदेवके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३५ ॥ सूक्ष्म और जिनको अंत नहीं अनंतमुख अग्निसों लोकदाह करवेवारे अनंत संकर्षणके अर्थ नमस्कार होय, और विश्वके ज्ञानदाता सर्वांतर्यामी प्रद्युम्नके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३६ ॥ सब इंद्रियनके ईश सब इंद्रियनके आत्मा अनिरुद्धके अर्थ वारंवार नमस्कार होय, परमहंस पूर्ण क्षयवृद्धि रहितके अर्थ

१ हे आत्मविद्वर्य ! कल्याणरूप तुम हो अथवा आत्मज्ञानीनके मुख्यनके लिये कल्याण देनवारे तुमारे अर्थ नमस्कार तुम सर्वोत्कर्षकरके वर्तो मेरेहू मंगलके अर्थ होउ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नमस्कार होय ॥ ३७ ॥ स्वर्गमोक्षके द्वार नित्यपवित्रके अर्थ नमस्कार होय हिरण्यसम वीर्यवान् चातुर्होत्रकर्मकारी यज्ञविस्तारके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३८ ॥ पितृनके अन्नदाता देवान्नदाता वेदत्रयी पति यज्ञवीर्यरूपके अर्थ नमस्कार होय, सब जीवनके तृप्तिदायक सब रसके आत्मानके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३९॥ सब जीवमात्रके देहरूप विराट्रूप शरीररूप त्रैलोक्यपालक सह ओज बलरूप ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४० ॥ अपने शब्द गुणसों सबको नाम देवेवारे बाहर भीतर व्यवहारके आश्रयीभूत आकाशरूप पुण्यलोकरूप तेजस्वीके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४१ ॥ प्रवृत्तिनिवृत्ति मार्गरूप पितृदेवरूप कर्मस्वरूप धर्मफलदायक मृत्युरूप दुःख देवेवारेके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४२ ॥ सब आशीर्वादनके ईश्वर, मनुरूप कारणकी आत्मा, बडेधर्मवारे सदा ज्ञानरूप श्रीकृष्णके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४३ ॥ पुराणपुरुष सांख्ययोगके ईश्वर, बृहत्त्वादिगुणविशिष्ट चैतन्यपरिपूर्ण श्रीवैकुंठपतिके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४४ ॥ तीनरूपशक्तिधारी रुद्ररूपधारी अहंकाररूप अर्थ चित्त क्रिया शक्तिरूपवाणीके विभूतिरूपके लिये नमस्कार होय ॥ ४५॥ भक्तनके प्यारे सबकी इन्द्रियनके विषय विषयीरूप भक्तनसों पूजित अपने स्वरूपको हमें दर्शन दीजिये कारण कि सब इन्द्रिय गुण अंजनरूप आपको दर्शन है ॥ ४६ ॥ सघन वर्षाकालके मेघवत् श्याम सब सुंदरताके संग्रह सुंदर विस्तृत चारबाहु सुंदर रुचिर मुख ॥ ४७॥ कमलके समान नेत्र सुंदर भ्रू सुंदर नाक सुंदर दांत सुंदर कपोल युक्त सुशोभित समकर्ण युक्त ॥४८॥ प्रभुकी चितवन मानो प्रीतिसों हंसती हो ऐसी प्रतीत होय है अलकावलीसो शोभायमान प्रकाशमान कमलकी केसरसों पीताम्बर धारे उज्ज्वल कुंडल धारण करे ॥ ४९ ॥ दमकते भये किरीट कंकण हार नूपुर क्षुद्रघंटिकाकरकै मंडित शंख चक्र गदा पद्मधारी माला कौस्तुभमणीकी संपदासों समृद्ध ॥ ५० ॥ सिंहकी समान कन्धकी कांतिसों प्रकाशित सुंदर ग्रीवामें कौस्तुभ मणि धारे विश्लेषरहित लक्ष्मीजी स्वर्णरेखांकित पाषाण कसोटीरूप वक्षस्थलमें शोभित है ॥ ५१ ॥ पीपलके पत्रकी समान उदर श्वास प्रश्वास लैवैसों चलायमान त्रिवलीसों शोभायमान है गम्भीर नाभिमेंसो विश्वकी उत्पत्ति भईहै ॥ ५२ ॥ श्याम कटि पश्चाद्भागपै प्रकाशित वस्त्रपै सुवर्णकी तागडी पहिरे है, समान श्रेष्ठ चरण जंघा ऊरुमें, गम्भीर जानु है ॥ ५३ ॥ नखनकी कांतिकरकै भीतरके पापनाशक शरत्कालीन कमलपत्रकी कांति करकै शोभित चरणकरकै दर्शनीय हैं, तथा प्रह्लादादि भक्तनके भय मिटायवेहारे अपने स्वरूपको दर्शन देऊ हे गुरो ! हमसे अज्ञानी लोगनको मार्ग दिखायवेवारे आपही हो अपनेनको मोह दूर करवेवारे चरण हे गुरो ! तमोगुणके सेवीनके मार्गके दिखायवेवारे ईश्वर हो ॥५४ ॥ अपनी शुद्धिकी चाहनावारेको ये रूप सदा अनुध्येय है अपने स्वधर्ममें जे स्थित हैं, विनको भक्तियोग अभयको दायक है ॥ ५५ ॥ स्वर्गके राज्य करवेवारे जाकी इच्छा करै है और एकांत आत्मज्ञानी पुरुषनके गम्य आप यद्यपि सब देहधारिनको दुष्प्राप्य हो तौहू भक्तनको आपकी प्राप्ति सुलभ है ॥ ५६ ॥ संतोंसों दुराराध्य आपको महाकठिन एकांत भक्तिकरकै आराधन कर आपके चरणकमलके विना बाहिर और काऊकी चाहना न करै है अथवा वे दुराराध्य तुम तिनको आराधन करकै संतनकोहू दुराप तुमारी एकांत भक्तिको प्राप्त हैके ऐसो कौन अज्ञानी होयगो जो तुमारी चरणकमलको छोडके विषयसुख आदिक बाह्य वस्तुनकी चाहना करे ॥ ५७ ॥ जहां प्रताप तथा उत्साहसों अपनी भृकुटी चढायवैसोही जो संसारको विध्वंस करवेवारो काल है वहहू आपके चरणकमलकी शरणमें आये भयेनपै अपनो अधिकार नहीं करै है ॥ ५८ ॥ आपके भक्तनकी संगति अर्धक्षणकी समान स्वर्ग मोक्ष नहीं है और मनुष्यनके रा-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ज्यादिकी तौ वार्ताही कहा है ॥ ५९ ॥ पापहारी तीर्थरूप यशस्वी तुमारे चरणकी गंगाके स्नान करवेसो बाहरभीतर पापरहित होनवारे जीवनमें दया करवेवारे शीलवान् महात्मानको सत्संग सदा होय येही तुम्हारो अनुग्रह होय ॥ ६० ॥ जाके चित्तमें बाहिर अर्थको भ्रम न होय है, हृदयगुहाके तमको विशुद्धि करवेवारे भक्तियोगसौ अनायास प्राप्त आपकी गतिको मुनि ढूंढे है ॥ ६१ ॥ जा ब्रह्ममें ये विश्व प्रकाश करै है, जो ब्रह्म विश्वमें प्रकाश करै है, सो तत्त्व परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप आकाशवत् विस्तृत है ॥ ६२ ॥ जो ईश्वर बहुरूप धारिणी माया करकै रचेहै, धारे है, सब विकार रहित है, जामें भेदबुद्धि नहीं सत्यकी समान प्रकाशमान अचिंत्यमाया स्वाधीन ईश्वरकी हम शरणागत हैं ॥ ६३ ॥ क्रियाके समूहनकरकै श्रद्धासहित योगिजन सिद्धिके लिये येही यजन करै हैं कि पञ्च भूत इन्द्रिय अंतःकरणसौ लक्षित ईश्वरको योगी तथा श्रद्धासौ अनेक क्रियानसौ मुक्तिके निमित्त जे पूजन करै है विन्हींको हम वेदशास्त्रमें चतुर जानै हैं ॥ ६४ ॥ तुम एक आद्य पुरुष हो, सुप्तशक्ति करकै रज सत्व तमको भेद करै हो, महत्तत्त्व अहंकार आकाश पवन अग्नि जल और पृथिवी देवता ऋषि भूतगण ये सब ब्रह्मांड जिनसें होयहै ॥६५॥ अपनी शक्तिकरके रचे भए या विश्वको जीवरूपसौ प्रविष्ट हैकै अपने आत्माके अंशकरके चार प्रकार अर्थात् स्वेदज अंडज जरायुज उद्भिज्ज है वामें प्रवेश करै हो याही कारण यह जीव पुरुष नामसौ प्रसिद्ध है जो अपनी इन्द्रियनसौ क्षुद्र सुख भोगै है ॥ ६६ ॥ अतिप्रचंड वेगवारो कालरूप अनुमान करवेलायक तत्व जाको सब लोकनको कालन करतो लोकवर्ति भूतनको तूही सबनको चलायमान करे है मेघपंक्तिनको वायु जैसें प्रचंड वेगवान्के चलायमान करनैहारे कालकूं तुम वश राखौ हो, पंचभूतोंकरकै भूतनको तत्व अनुमान करो हो, जैसे वायु मेघपंक्तिको न सहकर जहां चाहै तहां खैंचले जाता है ऐसेही दूसरे प्राणियोंसे प्राणियोंको चलायमान कर तुम खैंचतेहो इसै कोई नहीं जानता ॥ ६७ ॥ प्रमत्त महाचिंतासो प्रवृद्ध लोभयुक्त विषयमें लालसावारे जीवकों तुम अप्रमत्त हैके शीघ्र कालरूपसों खाय लेओ हो जैसै भूखो साप मूंसेकूं खाय जायहै॥६८॥ कौन पण्डित तुम्हारे भजन विना जीर्ण होते भये शरीरको देख आपके चरणकमलको त्यागैगो, कि जा मरणकी शंकासौ हमारे गुरु ब्रह्मा और चौदह मनु विश्वासकर भजन करै हैं ॥ ६९ ॥ हे ब्रह्मन्! हे परमात्मन्! रुद्रभयसों ध्वस्त विश्वकी और जानवेवारे विद्वाननकी भयनाशक गति आप हो ॥ ७० ॥ हे नृपनन्दनहो! तुम्हारो भद्र होय तुम याको जपो, स्वधर्ममें बने रहो, अंतःकरण भगवत्में अर्पित करो ॥ ७१ ॥ जो सबकी आत्मामें स्थित आत्मा है, सब जीवमात्रमें स्थित हैं, तिन्हीको पूजन करो, स्तुति करो ध्यान करो वारंवार श्रीहरिको स्मरण करो ॥ ७२ ॥ योग आज्ञाको करकै मुनिव्रत धरो, सावधान बुद्धि कर सबजने याको अभ्यास आदरसो करो ॥ ७३ ॥ भगवान् विश्व रचवेवारेनके पतिनें भृगु आदि पुत्रनको सब विश्वकी रचवेकी इच्छासौ यही उपदेश कियोहो ॥७४॥ सो हम सब प्रजाके ईश्वर प्रजाके रचवेमैं जब प्रेरेगए तब या स्तोत्रपाठसो तमोगुण ध्वस्त भयो, विविध प्रकारकी प्रजा रची ॥ ७५ ॥ अब नित्य सावधान हैकै स्नान कर जो याकों जपै तो वो वासुदेवमें परायण होयगो, थोडेही कालमें कल्याणकूं प्राप्त होयगो ॥ ७६ ॥ सब कल्याणको कल्याणदायक परमश्रेष्ठ ये ज्ञान है, या ज्ञानरूप नावमें बैठ दुष्पार संसारको सुखसें तरैहै ॥७७॥ जो कोई श्रद्धायुक्त मेरे गीत भगवत्को स्तव पाठ करैगो, वो महाकठिनसो आराधन योग्य हरिको शीघ्र प्रसन्न करवेमें

१ जैसें जंगली मूसो धरतीके भीतर बिलेन खोदतो विचारे है कि यामें मैं यामें मेरी भूसी यामें मेरे बच्चा रहेंगे ऐसें विचार करते वा मूसाको साप हप्पा कर जाय है ऐसेही अनेक मनोरथमग्न या जीवको कालरूप तू नाश करौ हौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समर्थ होयगो ॥ ७८ ॥ इन परमेश्वरसों पुरुष सब वस्तुको प्राप्त होय है, वापै सम्पूर्ण मंगलनके प्यारे हरि प्रसन्न होय हैं और विनकी कृपासो विनके मनोभिलषित पूर्ण होय है ॥ ७९ ॥ जो कोई प्रातःकालमें उठ हाथ जोड श्रद्धायुक्त हैकै सुने सुनावै वो सब कर्मके बंधनसो छूटेहै ॥ ८० ॥ हे नरदेवके पुत्रहो ! परपुरुष परमात्माको जो ये मैंने स्तव गायो है, सो जपो, एकाग्रमन करकै महातप करो तो अंतमें सब मनोरथकों प्राप्त होयगो ॥ ८१ ॥

गीतं मयेदं नरदेवनन्दनाः परस्य पुंसः परमात्मनः स्तवम् ॥
जपन्त एकाग्रधियस्तपो महच्चरध्वमन्ते तत आप्स्यथेप्सितम् ॥ ८१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कंधे रुद्रगीतं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अध्याय २५.

मैत्रेय उवाच–इति सन्दिश्य भगवान्बार्हिषदैरभिपूजितः ॥
पश्यतां राजपुत्राणां तत्रैवान्तर्दधे हरः ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि "अब पुरंजन उपाख्यान वर्णन करैहै" ऐसै शिवजी कहिकरकै चुप्प भए तब प्रचेतानने पूजा कीनी तब राजपुत्रनके देखते २ तहांई हर अंतर्द्धान होते भए ॥ १ ॥ रुद्रको गायो भगवत्को स्तोत्र सब प्रचेता जपतेभए जलमें दशहजार वर्षतक तप करते भए ॥ २ ॥ हे विदुर ! कर्ममें आसक्त मन ऐसे प्राचीनबर्हि राजाकों कृपालु वेदांततत्वज्ञाता नारदजी ज्ञान देते भए ॥ ३ ॥ हे राजन् ! कर्मकरकै आत्माकी चेष्टा करवेके अर्थ कितनो कल्याण है दुःखहानि और सुखकी प्राप्तिके लिये यत्न करै हैं पर श्रेय वामेंहू नहीं है ॥ ४ ॥ राजा बोले कि हे महाभाग ! केवल कर्ममेंही मेरी बुद्धि विद्ध रही है, सो मैं मंगल नहीं जानूंहूं निर्मल ज्ञान मोसों कहो जासो कर्मसो मुक्त हैजाऊं ॥ ५ ॥ छल छिद्रवाले धर्ममुक्त घरनमें पुत्र दारा धन अर्थ बुद्धि है मूढहूं सो संसारके मार्गमें घूमूंहूं परमेश्वरकूं नहीं जानूं हूं ॥ ६ ॥ श्रीनारदजी बोले कि हे राजन् ! हे प्रजापते ! तुम्हारे मारे भए हजारहीं जीव जो तुमने दया रहित हैकै मारे हैं विन्है देखो ॥ ७ ॥ यह सब तुम्हारे दिये दुःखको स्मरण करते तुम्हारी वाट देखै हैं सो तुम्हारो शरीर छुट जायगो तब यह लोक यंत्रके संगनसो तुमको छेदन करैगे ॥ ८ ॥ या विषयमें तुमको पुरातन इतिहास कहै है जो पुरंजनको चरित्र है तुम सुनो मैं कहूंहूं ॥ ९ ॥ हे राजन् ! बडो यशस्वी पुरंजननाम राजा होतोभयो, ताको अविज्ञातनामक सखा भयो, जो सब चेष्टानकूं जानै ॥ १० ॥ "या अध्यायको व्याख्यान आगे अध्यायमें विस्तारसो कहैंगे, परंतु कोईकोई कठिनतरशब्दनको व्याख्यान जहां शब्द आवैगो वहांको वहभी करैगे जैसे, "स्वकर्मभिः पुरं शरीरं जनयतीति पुरंजनो जीवः न विज्ञातं चेष्टितं यस्य स ईश्वरस्तस्य सखा" अविज्ञातनामा पुरंजन जीवको नाम है "अविज्ञात चेष्टित नाम ईश्वरको है" सो प्रभु पुरंजन रहिवेके स्थान ढूंढते पृथिवीपर घूमते अपने समान स्थान जब न देखो तब दुर्मनकी नाईं होते भए ॥ ११ ॥ पृथिवीमें जितने पुर हे उनको अच्छे न मानतो भयो तिस २ विषयकी सिद्धिके निमित्त कामनानकी चाहना करतो भयो ॥ १२ ॥ सो एक समय हिमाचलकी दक्षिनी भूमिकै नीचै नौ दरवाजै युक्त सुंदर सब लक्षणसम्पन्न पुरकूं

१ जीव तौ अपने कर्मानुसार जन्म ले लेते हैं फिर यज्ञके राजासै बदला लैनेको पशुरूप कैसे रहे ? उत्तर यह है जीव तौ अपने कर्मानुसार योनियोंमें जातेही हैं जो प्राणी जिस जीवको मारता है यमराजके दूत उस जीवका रूप धार उसै दुःख देते हैं यह जानता है कि जिसै मैंने मारा यह वही है इस कारण वे जीव दीखे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देखतो भयो ॥१३॥ प्रकार उपवन अटारे खाई इन्द्रियरूप तोरण, सुवर्ण, चांदीलोहाके शृंग सब ओर बने गृहनसो संकुल ॥ १४ ॥ नील स्फटिक वैडूर्य मुक्ता मरकत अरुण रत्ननसो रचीभई हर्म्यस्थलीसो प्रकाशित श्रीसो भागवतीकी समान शोभित ॥ १५ ॥ सभा चौराए राजमार्ग ओरसो खेलवेको स्थान जननके विश्रामस्थान ध्वजा पताका और मूंगाकी वेदीकरके युक्त ॥ १६ ॥ पुरीके बाहिरके उपवन दिव्य वृक्षलतासो सघन सरोवरनकें भीतर पक्षी और भौंरनके नादको कोलाहल हो ॥ १७ ॥ शीतल झरनानके कणसों लगीभई वायुसो चलायमान हैवेसो वृक्षनकी शाखा और पत्रनकी शोभा सरोवरिनके तटपै पूर्ण है रही ही ॥ १८ ॥ अनेक वनके मृगसमूह मुनिव्रत धारके किसीको बाधा नहीं देते हे जहां कोकिलानकी कूजितसो पांथनको ये मालुम पडै है कि मानो हमें कोई बुलावै है ॥ १९ ॥ तहां अपनी इच्छासो एक उत्तम स्त्री दश चाकर सहित एक शतनायक लियें आवती भई वाकूं पुरंजननै देखो ॥ २० ॥ पंचशिरके सर्पसो रक्षित हो यह कामरूपधारिणी किशोर अवस्थामें पूर्ण पतिको ढूंढती ही ॥ २१ ॥ सुंदर नाक, सुंदर दांत, सुंदर कपोल, श्रेष्ठ मुख बराबरके दोनों काननमें कुंडलश्रीको धारे ॥ २२ ॥ पीरी फरिया पहिने सुंदरकटिपश्चाद्भागवारी श्याम सुवर्णकी कौंदनी धारै, शब्दायमान नूपुरनसो देवताकी नाईं मालूम पडती भई ॥ २३ ॥ तरुणाईको प्रगट करवेवारे वर्तुलाकार स्तननको लाजके मारे वस्त्रनसो ढक रही[1] ही ॥ २४ ॥ लाज भरे मंद हास्यसौं शोभित या बालेके प्रेमसौं ऊपरकी ओर स्फुरायमान भृकुटीरूप धनुष निर्गत भये स्नेह भरे नैननके पंखवारे कटाक्षरूपी बाणनसौं विद्ध हो पुरंजन वासौं बोले ॥ २५ ॥ हे कमलनैनी! तुम कौन हो? कौनकी हो? हे सति! कहांते आई हो ? उपपुरी पुरीके पास कहा करवेकी इच्छा हैं सो कहो?॥ २६ ॥ ये ग्यारह महाभट कौन हैं? हे सुभ्रु! ये ललना कौन है? और ये तुम्हारे आगे चलवेवारे महासर्प कौन हैं ॥ २७ ॥ तुम या निर्जन वनमें अपने पति धर्मकों ढूंढती लज्जा तौ नहीं हो अथवा शिवको ढूंढती पार्वती वा ब्रह्माको ढूंढती सरस्वती अथवा भगवान्‌को ढूंढती लक्ष्मी हो तुम मुनिनकी भांति नियम धारे एकांतमें इकेली फिर रही हो जो तुम्हारो पति होयगो तुम्हारे चरणनकी कामनासो वाके सब मानोरथ पूरे होयहे जो लक्ष्मी हो तौ तुम्हारे हाथको कमल कहां गिरगयो है ॥२८॥ हे वरोरु! परन्तु इनके मध्यमें तौ तू कोई नहीं है क्योंकि तू भूमिको स्पर्श करै है यासो जो कोई देवपत्नी होती तो भूमिको स्पर्श नहीं करती क्योंकि देवता भूस्पर्श नहीं करे है यासो तू देवता तो नहीं है महाकर्मकारी मो वीरवरके संग या पुरीमें तुम रमण करवेकों योग्य हो, जैसे यज्ञपुरुषके संग श्रीलक्ष्मी रमण करै है ॥ २९ ॥ हे शोभने! लाजभरी मुसकानकी भ्रूकटाक्षसौं खंडित इंद्रियवारे मोको तो करकै रचोभयो भगवान् मनोभव कामदेव बाधा करै है सो तुम कृपा करो ॥ ३० ॥ हे शुचिस्मिते! लाजसो सामने तू नहीं आवै है सो सुंदर भ्रूविशाल नेत्रयुक्त लंबे लंबे नीले अलकसमूहसो सुंदर वाणीवारे मुखकूं खोलके दिखाओ ॥ ३१ ॥ श्रीनारदजी बोले कि ऐसे अधीरवत् याचनाकर रहे पुरंजनके प्रति वो नारी वासो मोहित हो हसती भई वा वीरकी सराहना करती भई॥३२॥ हे पुरुषश्रेष्ठ! मैं अपने बनायवेवारेकों और जाने तुम्हारौ और हमारौ नाम गोत्र कियौहैं वाय में अच्छी तरह नहीं जानौहू ॥ ३३ ॥ याते परे कवसो हमारी आत्मा है और कवसौ या नगरीमें निवास है सोहू नहीं जानू हूं हे वीर! जाने पुरी निर्माण कीनी और जो या पुरीको रक्षक है वाकूहू नहीं जानूं ॥३४॥ हे मानद! यह पुरुष तौ मेरे

[1] कवित्त-" जबसै ह्वै पातभयो विरुलाफलफूल रह्यो अपनी रुचिसौं । कोउ सुंदर नारिके हाथ परो तो कताय बुनाय धरो गजसौं ॥ नितही तिन तांतकी आंच सही धोबियाकी पछार सही रुचिसौं । इतनो दुःख पाय भयो अंचरा तब कौन किलोल करैं कुचसौं ॥ १ ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सखा और स्त्रियें सखी हैं जब मैं सोय जाउं हूं तब यह नाग मेरी रक्षा करै है ॥३५॥ हे शत्रुनाशक ! तुम यहां आये यह बहुत भली भई तुम्हारो मंगल होय जो आप संसारी विषयनके भोगवेकी इच्छा करै हो तौ मैं बंधुन सहित आपकी सेवा करूंगी ॥ ३६॥ हे विभो! या नवमुखकी पुरीमें तुम वसो मो करकै प्राप्त कामभोग सौ १०० वर्षतक ग्रहण करो ॥ ३७ ॥ रतिज्ञानहीन मूर्ख चिंता और या लोकसो वंचित पशुतुल्य पुरुषनको त्याग आपके सिवाय और किनसो विहार करूंगी ॥ ३८ ॥ या गृहस्थाश्रममें धर्म अर्थ काम पुत्रसुख अमृत सम यश, शोक और रजोगुणरहित लोक सब मिलै हैं वाय यति नहीं जानै है ॥३९॥ पितर देवता ऋषि मनुष्य सब जीवमात्रको और आत्माको ये गृहाश्रम आश्रय है और या संसारमें क्षेमको देवेवारो है ऐसे कहैं हैं ॥ ४० ॥ वीरनमें विख्यात उदार प्रियदर्शनदायक तुम सरीखेकूं प्राप्त हैकै मोसरीकी ऐसी कौन है जो आपको न वरैगी ॥ ४१ ॥ हे महाभुज ! सर्पकी देह समान भुजावारे तो पुरुषमें कौनको मन आसक्त न होयगो जो तुम अनाथसमूहनके सब दुःखनको दयायुक्त लज्जाके अवलोकन करकै दूर करवेको विचरो हो ॥ ४२ ॥ नारदजी बोले कि हे राजन् ! ऐसे वे स्त्रीपुरुष वा समयमें उद्यत हो वा पुरीमें प्रवेश कर शतवर्षतक आनंद करते भए॥४३॥ तहां तहां गायक ललितराग गायरहे हैं, क्रीडा करै हैं स्त्रीसहित हैं, पवित्र पुष्करिणीमें स्नान करतेभए ॥ ४४ ॥ यामें सात तो ऊपरके द्वार हैं और दो नीचेके द्वार हैं (या शरीरमें अलग अलग विषयनके गत्यर्थ) जिनमें जग निवास करैहैं (सोई शरीरमें सात नेत्रादि ऊपर है गुदाआदि नीचे दो है)॥४५॥ हे राजन् ! वा पुरीके पूर्व दिशामें पांच द्वार हैं एक दक्षिणदिशाको द्वार है, एक उत्तर दिशाको द्वार है पश्चिम दिशाके दो द्वार हैं, इन द्वारनके नाम अब कहूहूं ॥४६ ॥ पूर्वकी ओर खद्योत और आविर्मुखी नाम दो द्वार हैं (जो दाहिने बाये नेत्र हैं) यह एक सीधमें है इनमें पुरंजन राजा विभ्राजित देशमें (रूप) द्युमान नामक मित्र (नेत्र इन्द्रिय) के साथ जायं है ॥ ४७ ॥ ऐसेही नलिनी नलिनी नामके दो दरवज्जे पूरवमेंही हैं विनमें हैके जब पुरंजन सेल करवेको निकसे है तब अवधूत मित्रको संग लेके निकसे है तब सौरभ नामके देशकी शैर करै है ॥४८॥ ऐसेही मुख्या नामके पूर्वके दरवज्जेमें हैकै शैर करवेको निकसे है तब ये पुरंजन आपण और बहूदन नामके दो देशनकी शैर करे है तब रसज्ञ और विपण मित्रनको संग लेके निकसे है (मुखमें दो इंद्रिय है यासो दो देश और मित्र कहै है यह समझ लेनो) ॥ ४९ ॥ ऐसेही पितृहू नामको दखिनको दरवज्जो है वामें हैकै जब पुरंजन शैर करवेको जाय है तब श्रुतधर मित्रको संग लेके निकसे है दक्षिण पंचालदेशकी शैर करै है ॥ ५० ॥ और जब देवहू नामके उत्तरके दरवज्जेकी रस्ता हैके शैर करवेको जाय है तब श्रुतधर मित्रको संग लेके निकसे है और उत्तर पञ्चालकी शैर करै है ॥ ५१ ॥ ऐसेही आसुरी नामको पश्चिमको एक दरवज्जो है वामें हैकै जब पुरंजन शैर करवेको निकसे है तब दुर्मद नामके मित्रको संग लेके निकसे है और ग्रामक नामके देशकी शैर करै है ॥ ५२ ॥ ऐसेही पश्चिमके निर्ऋति नामके दरवज्जेकी रस्ता हैकै पुरंजन जब शैर करवेको निकसे है तब लुब्धक नाम मित्रको संग लेके निकसे है तब वैशस नामके देशकी शैर करै है ॥ ५३ ॥ या पुरीके दरवज्जेनमें निर्वाक् और पेशस्कृत दो चिने भये बन्द दरवज्जे हैं विनमें हैकै जब शैर करवेको जाय है तब आंखवारेनको पति पुरंजन जायहै और करै है ॥ ५४ ॥ और जब

१ अर्थात् ऐसे तौ बहुत आये जे केवल नवीन अवस्थाके ग्राहक पन परिणामतक निर्वाह करनवारो कोउ नहीं मिलो सो जो तू १०० वर्षतक मेरो निर्वाह करै तो या पुरीमें हम तुम निवास करै ॥ २ यहां कथाभाग ऐसे कहनो चाहिये कि जब पुरंजन इन दोउ दरवज्जेनमें हैके शैर करवेको निकसे है तब द्युमान मित्रको संग लेके निकसे है और विभ्राजित देशनकी शैर करै यही कथाभाग अगारी सब श्लोकनमें समझनो चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुरंजन भीतर महलमें चित्रसारीमें जाय हैं तब विषूचीन मन्त्रीको संग लेके जाय है वा समय मोह अथवा प्रसन्नता जो कछु याको होय सो स्त्री पुरंजनी और आत्मज पुत्रनके निमित्त पावे है ॥ ५५ ॥ ऐसे कर्ममें आसक्त कामी आत्मा ठगो भयो बुद्धिहीन नृप बुद्धिरूप पटराणीकी आज्ञा मानतो भयो जो वह कहै सो करतो भयो ॥ ५६ ॥ पुरंजन मदमें विह्वल होकर जो पुरंजनी मदिरा पीयेहै तो आप-भी पीवै वो खाय तो वोही खावै वो भक्षण करै तो वोहू भक्षण करै है ॥ ५७ ॥ वो गावै तौ वोहू गावै है वो रोवै तौ पुरंजनहू रोवै वो हंसै तो वोहू हंसैहै, वो बोले तो वोहू बोलै है ॥ ५८ ॥ पुरंजनी धावै तो पुरंजनहू दौडे है, वो बैठे तो वोहू बैठे है वो सोय जाय तो वोहू सोजाय है वो बैठी होजाय तो वोहू बैठो हैजाय है ॥ ५९ ॥ वो सुनै है तो वोहू सुनै है, वो देखै है तो वोहू देखेहै वो सूंघै तो वोहू सूंघै है वो छुवै तो येहू छुवैहै ॥ ६० ॥ जो अपनी स्त्रीको शोच करती देखैहै तो आपहू दीनकी नाईं शोक करैहै, वो हर्षित होयहै, तौ वोहू हर्षित होयहै, वो मुदित होय है तो वोहू मुदित होयहै ॥६१॥ सब प्रकारसो वाकी स्त्रीने जब वाकूं वशकरलियो, तब वह अपने असंगत्वादि स्वभावको दूर कर अपनी अभिलाषा न हैवेपैहू क्रीडामृगके समान भार्याके वचन अनुसार चलतो भयो ॥ ६२ ॥

विप्रलब्धो महिष्यैवं सर्वप्रकृतिवञ्चितः ॥
नेच्छन्ननुकरोत्यज्ञः क्लैब्यात्क्रीडामृगो यथा ॥ ६२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटी० चतुर्थस्कन्धे पुरंजनपुरंजनीरमणचरित्रवर्णनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

अध्याय २६.

नारद उवाच–स एकदा महेष्वासो रथं पञ्चाश्वमाशुगम् ॥
द्वीषं द्विचक्रमेकाक्षं त्रिवेणुं पञ्चबन्धुरम् ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि एक समय वह पुरंजन जीव बडोंसे एक धनुषको लिये (मैंही कर्ता भोक्ता हूं ऐसो अहंकार) धारण कर पञ्चज्ञानेंद्रियरूप शीघ्र जायवेवारे पांच अश्वनसो युक्त अहंता ममतारूप दो डंडनसो युक्त पुण्यपापरूप दो पैया लगे मायारूप धरी त्रिगुणरूप तीन वेणु पांचप्राणरूपी पांच

---

१ इस समय तौ स्त्रीकेही वशीभूत बहुत है एक पंडितजीने कथा बांचनेमें कही कि जो गुरुदीक्षा ले है उसै फिर कुछ कार्य करना शेष नहीं रहता, एक लाला जो बडे धनी है, उनके पुत्रने कही पंडितजी कंठी देदो, पंडितजीनै माला कंठी दे दी, तब उस दिनसै वह कथा सुननेभी नहीं आया, एक दिन पंडितजीको कहीं मार्गमें मिला तब उन्होंने कही कि कथामें नहीं आते ? यह बोले महाराज ! अब कृतार्थ होगये कंठी लेली अब सुननेकी क्या आवश्यकता है, और कलकू हम दूसरे देशको जायगे कभी दर्शन दीजो, पंडितजी दो तीन वर्षके पीछे उसके घर गये, उसने ठहराया, भोजनकी तौ बडी पूछगछ करी, जब तीन चार दिनके पीछे बिदा मांगी, तब लालाजी बोले ठहरो, इसी प्रकार बहुत वार कहतेही रहे, परन्तु दिया कुछ नहीं एक दिन उनकी स्त्रीने उन्हें देखकर पुछवाया तुम कौन हो कहां रहो हो पंडितजी बोले यह लाला हमारा चेला है, कुछ लेनेको आये हैं, पर यह रोज ठहरनेको कहता है कुछ देता नहीं, स्त्रीने सुनतेही कही महाराज ! तुमारो चेला है तौ तुमारा कहना नहीं मानता. अच्छा यह लो, ऐसा कह अपनी पहुंची पंडितजीको उतार दी और बोली भयरहित इन्हें लो पंडितजीनै डरते २ लेली, इधर वह मुख लपेटकर पडरही, लालाजी घर आकर बोले कैसे पडी हो वह बोली कि पहुंची खोगई लाला बोले और बनजायगी, वह बोली जब आजायगी जमी भोजन करूंगी, लालाजीनै तुरत बनवादी और बोले अब तौ भोजनादि करो वह उठी और दूसरे दिन पंडित-जीको बुलाय नई पहुंची दिखाकर कही अब बताओ तुम्हारा चेला है कि मेरा । पंडितजी चुप हुए उसने कही कलकी पहुंची बिदाईमें ले घर जाओ, यह कुछ न देगा, पंडितजी वह ले घर आये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बन्धनसों बंधे रथपै बैठ विहार करवेको गयो ॥ १ ॥ मनरूप रस्सी बुद्धिरूप सारथी एक हृदयरूप स्थान रथीके बैठवेकी ठौर है, दो शोकमोहरूप रथके धुराके बन्धन है, पंचकर्मेंद्रिय विक्रम जाकी गति है, सप्त त्वचारूप जामें वरूथ पांच शब्दादि विषय प्रक्षेपकारी हैं ॥ २ ॥ सुवर्णके आभरण सुवर्णको वखतर रजोगुणरूपी पहरे अक्षय बाणभरो तर्कस (अनंत वासना), दश सिपाही (दश इन्द्रिय) एक विनको अधिपति (मन) ग्यारह जननको संग ले पांचप्रकार (पंचेन्द्रिय) की गतिवारे वनको गयो ॥ ३ ॥ धनुषमें राग द्वेषादि बाण चढाय भोगादिरूप स्थानधारी मृगसमानविषयनके मारवेकी (भोगनेकी) जाकी लालसा सो पुरंजनजीव त्यागके अयोग्य बुद्धिकूं त्यागकर शिकार खेलवेकों जातो भयो ॥ ४ ॥ आसुरी वृत्तिमें स्थित होयकै घोरात्मा निर्दयी पैने बाणनसो वनमें वनके जीवनकों हनतो भयो ॥ ५ ॥ तीर्थश्राद्धादिको राजा पवित्र पशूनकों वनमें लुब्धककी नाईं मार लावै, ये नियम है ॥ ६ ॥ जो मनुष्य विद्वान् ऐसे निश्चय कर कर्मनकों करै हैं; हे राजेंद्र ! वा कर्म करकै ज्ञानसो वो लिप्त न होयगो ॥ ७ ॥ यासों अन्यथा कर्म करै तौ मानमें आरूढ हैकै बंधनको प्राप्त होय है, या संसारमें गिर बुद्धि नष्ट हैवेसो नर्कमैं जाय हैं ॥ ८ ॥ वा वनमें विचित्र पंखवारे बाणनसो भग्न शरीर हो दुःखी मृगनको नाश होन लगो जाको दयालु पुरुष सहन नहीं करसके है ॥ ९ ॥ खर्गोश शूकर महिष लीलगाय रुरु सेही पवित्र अपवित्र अनेक पशूनको मारतो अपने स्थानको आवतो भयो ॥ १० ॥ तब भूखप्याससो थकोभयो बगदके घरपै आयो स्नान भोजन कर सब परिश्रम दूर हैवेपै शय्यापै आयो ॥ ११ ॥ धूप चन्दन मालासो शरीरको शोभित करे सब अंगमें सुन्दर गहिने पहिरे स्त्रीमें मनको लगायो ॥ १२ ॥ तृप्त भये हृष्ट और महा- गर्वसो कामविवशचित्त हो राजा महलनमें गयो परन्तु तहां घरको कार्य संपादन करनहारी रानीको न देखी ॥ १३ ॥ तब अंतःपुरकी स्त्रीनसो पुरंजन पूछतो भयो हे स्त्रियो ! तुम्हारी कुशल तौ है अपनी स्वामिनी सहित जैसे पहिले विचरती ही तैसे या समय क्यौं नहीं विचरो हो ॥ १४ ॥ गृहमें गृहकी सम्पदा तैसी अब नहीं रुचै है, याको कहा कारण है जा गृहमें माता वा पतिव्रता स्त्री नहीं होय वह घर विना पहियाके रथकी समान है ऐसे घरमें दुःखी हो कौन पुरुष रहै ॥ १५॥१६ ॥ वो ललना कहां है, जो या व्यसनरूप सागरमें डूबते भये मोकों उबारतीही और पदपदमें मेरी बुद्धिको प्रकाश करती रहतीही, सो कहां गई ॥ १७ ॥ स्त्रियें बोली कि हे नरनाथ ! हे शत्रुनाशक ! तुमारी प्रियाको जो निश्चय है सो हम नहीं जानै है, परन्तु बिन बिछाये धरतीपै सोय रही है ॥ १८॥ श्रीनारदजी बोले कि पुरंजन अपनी स्त्रीको धरतीमें सोई देखके ताके संगसो ज्ञान नष्ट हो बडी भारी विवशताको प्राप्त होतो भयो ॥ १९ ॥ मधुर वाणीसों सांत्वना कर दुःखी हृदयसौ प्यारीके स्नेहके क्रोधको कोई चिह्नहू न देखो तासौ जानी कि प्यारीने यह प्रणयकोप कियो है ॥ २० ॥ नीतिमें चतुर वीर धीरेसो वाके पास जाय गोदमें चरण राख ललित प्रियाके दोनों चरणनको छूयकै बोलो ॥ २१ ॥ पुरंजन बोले कि हे शुभे ! दास अपराध करैं और वाकूं दंड न होय तौ वो मन्दभागी जाननो स्वामिनको धर्म है कि अपराधी दासनको शिक्षा करवेके निमित्त दण्ड देय ॥ २२ ॥ अपने नौकरनमें जो प्रभु दंड देय है, वो परम अनुग्रह है, हे तन्वि ! बालक या बातको नहीं जाने है और जो सेवक दण्डसो मनमें दुःख मान क्रोध

१ शास्त्रमें मांस खानेका मृगयाका विधान नहीं है किन्तु जिनके चित्त हिंसामें आसक्त हैं उनको उस कार्यसे पृथक् करनेहीके निमित्त उपदेश है कि सर्वथा हिंसा न करनी, केवल श्राद्धमें सोभी सब पशु नहीं किन्तु जिसकी आज्ञा है सोभी अधिक नहीं जितनी आवश्यकता हो इत्यादि वाक्य हिंसानिवृत्तिकेही निमित्त हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करै वाकूं मूर्ख जाननो उचित है ॥ २३ ॥ हे सुदति ! हे सुभ्रु ! हे मनस्विनि ! अनुराग भरे लाजसो शोभित, हसितयुक्त चितवन, नीली अलकपंक्ति उच्च नासिका मनोहर वचनयुक्त मुखकों अपनेको दिखाओ ॥ २४ ॥ हे मोसरीके वीरकी पत्नि ! एक ब्राह्मण और भगवद्दासके बिना और जो कोई तेरो अपराध करवेवारो है, वामें दण्ड धारैंगे, कारण कि त्रिलोकमें वा त्रिलोकीसो अन्यत्र मेरो डर न मानकै आनन्दसो रहवेवारो कोई मुझको नहीं दिखै है ॥ २५ ॥ तिलकशून्य, मलिन, हर्षरहित, कोपसो भयंकर तेरो मुख कभू हमने न देखो, शोकसो लचे सुन्दर स्तनहू ऐसे कभी न देखे, कुंकुमकीसी कांतिरहित कन्दूरीके फल समान अधर शोकग्रस्त न देखे ॥ २६ ॥ ताते मोपै आप प्रसन्न हो मैं तेरी आज्ञा विना व्यसनमें आतुर होय शिकारको गयो अब कामवेगसो धैर्यरहित, तथा अपने आधीन मित्र रूप अपने भर्ताकी कामनावाली कौन नारी उचित कृत्यमें न भजै ॥ २७ ॥

तन्मे प्रसीद सुहृदः कृतकिल्बिषस्य स्वैरं गतस्य मृगयां व्यसनातुरस्य ॥
का देवरं वशगतं कुसुमास्त्रवेगविस्रस्तपौंस्नमुशती न भजेत कृत्ये ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषा० चतुर्थस्कन्धे पुरंजनेन स्वापराधक्षमावर्णनं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः॥२६॥

अध्याय २७.

नारद उवाच–इत्थं पुरंजनं सम्यग् वशमानीय विभ्रमैः ॥
पुरंजनी महाराज रेमे रमयती पतिम् ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि हे महाराज ! या प्रकार पुरंजनी पुरंजनको अपने सुंदर कटाक्षनसों मोहित करकै वश कर रमण करावती भई आपहू रमण करती भई ॥१॥ हे राजन् ! सो राजा सुंदर स्नान करी भई; सुंदर मुखवारी स्वस्त्ययनयुक्त तृप्त अपने निकट रानीको आयी देख राजाने वाकों बहुत सत्कार कियो ॥२॥ तासो लिपटे मिलै कन्धासो बासौ आलिंगन कर कण्ठ लगाय एकांतमें गुप्त भाषणसो चित्त वशीभूत ह्वैवेके कारण दिनरात दुरत्यय कालवेगको न जानतो भयो, स्त्रीके संगमें दिनरात व्यतीत भयौ ॥३॥ महामदांध महामनस्वी महासेजपै स्त्रीकी भुजाको तकिया लगाये सोवतो वाहीकों श्रेष्ठ मानतो भयो, और तमसो तिरस्कृत हो वह वीर अपनो परायोहू न मानतो भयो ॥ ४ ॥ हे राजेन्द्र ! कामासक्त हो वा प्रकार वाके संग विहार करते करते वाकी नवीन अवस्था क्षणार्द्धकी नाईं व्यतीत होती भई ॥५॥ पुरंजन पुरंजनीमें इंद्रियनके परिणामरूप एकादशसहस्र पुत्र रचतो भयो, आधी आयु सम्राटकी व्यतीत होती भई ॥ ६ ॥ हे प्रजापते ! एकसौ दस बेटी भई, वे पितृमातृयश करवेवारी भई शीलउदारगुणयुक्त पौरंजन्यवंश भयो ॥ ७ ॥ सो पंचालपति पिताके वंश बढायवेवारे पुत्रनको विवाह करतो भयो, समान वरनको बेटी व्याही ॥ ८ ॥ विन पुत्रनके एक एकके शत २ पुत्र भए जिन करके पौरंजनवंश पंचालदेशमें बढो ॥ ९ ॥ विनके दायभागी गृहखजानेके मालक विन सबनमें महाममताके वश ह्वैकै विषयनमें फँस जातो भयो ॥१०॥ यह राजाहू तेरी समान दीक्षा लैकै विविध प्रकारकी अभिलाषानके भयंकर पशु हिंसावारे यज्ञनसो देवता पितृ और भूतपतियनको यजन कियो ॥ ११ ॥ ऐसे योग्य प्रमत्त कुटुंबमें आसक्त चित्तकू वो काल आयकें प्राप्त भयो जो योषितानको अप्रिय है,

१ "तापै एक पद है ॥ बिहाग ॥ तिताला ॥ तिरिया जो न होत हरिदासी ॥ टेर ॥ सो तिरिया गनिकासम जानो दुखरावति जगहांसी ॥ १ ॥ परमारथ कबहूं नहिं जानति आपन परी गलफांसी ॥ २ ॥ कहा भयो रूपगुण सुंदर नाहिंन श्याम उपासी ॥ ३ ॥ व्यासदास यह संगत तजिये मिटत है जमकी फांसी ॥ ४ ॥"

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वाको नाम जरापन है ॥ १२ ॥ हे नृप ! चंडवेग (वर्ष) नाम एक गंधर्वनको अधिपति हो, वाके बली गंधर्व ३६० (दिन) होते भए ॥ १३ ॥ विनकी वितनीही स्त्रियें (रात्रि) होती भई जो सित असित नामवारी कथा पक्षमें आधी कारी आधी गोरी है वे सब अपने घूमवेसों सब कामकरके बनाई पुरीको लूटन लगे ॥ १४ ॥ जब चंडवेगके अनुचर पुरंजनके पुरके हरवेको प्रारंभ करते भये, तब प्राणरूप प्रजागर नाहीं करतो भयो ॥ १५ ॥ सातसो वीस ७२० बली गंधर्वनसो पुरंजन पुरको अध्यक्ष बलवान् इकेलो वो नाग सौ वर्ष युद्ध करतो भयो ॥ १६॥ जब बहुत जननके संग इकेलो युद्ध करवेसों यह नाग क्षीणबल होन लगे है तब पुरंजन देश नगर और कुटुम्बसहित व्याकुल हो चिन्तामें प्राप्त होय है ॥ १७ ॥ परन्तु मधुभोजी स्वपार्षदन सहित पंचाल देशमें प्राप्त बलिको ग्रहण करतो स्त्रीजित हवेसो भयकों नहीं प्राप्त होतो भयो ॥ १८ ॥ हे राजन् ! वा अवसरमें कालकी कोई दुहिता त्रिलोकीमें वरकी इच्छा करती डोलती भई परन्तु कोई वाकी सराहना न करतो भयो और काहूने वाके वरणकी इच्छा नहीं कीनी ॥ १९ ॥ अपनी आत्माकी दुर्भागता करकै लोकमें वह दुर्भगा विख्यात ही याको प्रथम पुरु राजाने वरण कियो होय सो याने प्रसन्न है राजाको वर लियो यही वृद्धावस्था है ॥२०॥ नारदजी कहे है कि हे राजन् प्राचीनबर्हि ! काहू समय पर्यटन करती कामसो मोहित हो वह कालकन्या ब्रह्मलोकसो महीपै प्राप्त हो महाव्रती हमसो बोली कि तुम मोय वरण करो ॥२१॥ जब मैंने वाको स्वीकार न कियो तब मोकों निवृत्त जान क्रोधकरके दुःसह शाप देती भई बोली, हे मुनि! मेरी याचनासो तुम विमुख भये सो तुम एकजगे स्थित न रह सकोगे (सो प्रगट है युवा पुरुष एक स्थानपें स्थित नहीं रहते जराग्रस्त पडे रहे हैं) ॥ २२ ॥ जब वाको अभिलाष पूर्ण न भयो तब वह मेरी आज्ञासों यवनके अधिपति भयको वरण करवे गई और बोली ॥ २३ ॥ हे वीर ! मनवांछित पति यवननके ऋषभ तुमकूं मैं वरूंगी, तुमारेमें जीवनके संकल्प नाश न होयगे ॥ २४ ॥ लोक और शास्त्रकी रीतिके अनुसार जो देवे योग्य वस्तुको नहीं देय है और लेवे योग्य वस्तुको नहीं लेय है यह दोनौ मूर्ख और असद्ग्राही शोच करे हैं ॥ २५ ॥ अब मोको भजो हे मंगलरूप ! भजती भई मोपै दया करो, पुरुषको येही धर्म है जो आर्तपै कृपा करै ॥ २६ ॥ कालकन्याको कह्यो वचन सुन यवनेश्वर देवतानसोहू गुप्त बात करवेकी इच्छासों मुसकाय कर बातें बोलो ॥ २७ ॥ आत्मज्ञानसो मैं तुमको पति निरूपण कर चुकोहूं तू अमंगलरूप लोकनको अमाननीय है यासो प्रार्थना करे पैहू तोको कोउ स्वीकार नहीं करैगो ॥ २८ ॥ कर्मसो विनिर्मित लोककों तू अप्रगट गतिसो भोग मेरी सेनाको लैजाय तौ प्रजानाशकों प्राप्त होयगी ॥ २९ ॥ ये प्रज्वार गन्धर्व मेरो भाई है, तू मेरी बहन है जा और भयंकर सेना लेकै जाओ मैंहू तुम्हारे पीछे अप्रगट गति हैकै विचरूंगो ॥३०॥

प्रज्वारोऽयं मम भ्राता त्वं च मे भगिनी भव ॥
चराम्युभाभ्यां लोकेऽस्मिन्नव्यक्तो भीमसैनिकः ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे कालकन्योपाख्यानवर्णनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः॥२७॥

अध्याय २८.

नारद उवाच–सैनिका भयनाम्नो ये बर्हिष्मन् दिष्टकारिणः ॥
प्रज्वारकालकन्याभ्यां विचेरुरवनीमिमाम् ॥ १ ॥

१ सब समय मद्य पीमनवारो पुरंजन ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीनारदजी बोले कि, हे बर्हिष्मन् ! भयनाम यवनके सेनाके लोग रोगप्रज्वार और कालकन्याकें सहित या धरतीपर विचरते भए ॥ १ ॥ हे नृप ! वे एक समय वेगसो भूमिके भोगयुक्त, जीर्ण प्राणरूप सर्पसों पालित पुरंजनकी पुरीको रोकते भये ॥ २ ॥ कालकन्याहू पुरंजनकी पुरीको बलसो भोगती भई, जासो तिरस्कृत पुरुष शीघ्र निस्सारताको प्राप्त होय है ॥ ३ ॥ ता करके भोगे भये यवन द्वारनमें सब ओरसों प्रविष्ट हैके सब पुरीको पीडा देते भये ॥ ४ ॥ जब वा पुरीमें पीडा भई, तब अभिमानी पुरंजन कुटुंबी ममतामें व्याकुल बहुत तापनकों प्राप्त होतो भयो ॥ ५ ॥ वा कन्यासों आलिंगन करवेके कारण कृपण तथा कांतिहीन हो पुरंजन अपनो ऐश्वर्य गंवाय सामर्थहीन है गयो और वे गंधर्व और यवन वाकी पुरीका विध्वंस करन लगे ॥ ६ ॥ अपनी पुरीको टूटी देख आदरहीन अपनेसो प्रतिकूल चलनवारे पुत्र पौत्र चाकर मंत्री और स्त्रीकोभी सुहृदता त्यागे देखतो भयो (जरा अवस्थामें बुद्धि मलीन हो है) ॥ ७ ॥ अपनी देहको जरा कन्यासों ग्रसित देख और पंचाल देशनको वैरिनसो पीडित देख, पुरंजन महाचिन्तामें मग्न भयो जाके दूर करवेको उपाय न मिलो ॥ ८ ॥ यद्यपि कालकी कन्याके भोगवेसों वाके सब विषय सारहीन हैगये है तथापि दीन पुरंजन विन्हीकी इच्छा करतो परलोक कृत्य और यालोक पुत्रादि स्नेहसो शून्य हैकैहू पुत्र स्त्रीको लालन करतो हो ॥ ९ ॥ गंधर्व यवननसो घिरी कालकी कन्या जरासों मर्दित वा पुरीको इच्छा न हैवेपै हू पुरंजनरूप जीवराजा त्यागकी इच्छा करतो भयो ॥ १० ॥ तब भय मृत्युको भ्राता प्रज्वार कालज्वर आय उपस्थित भयो, सो भाईके प्रियकी इच्छा करकै सब यवन वा पुरीकों जरावतो भयो ॥ ११ ॥ पुरवासी सब परिवासी सहित जब वो पुरी जरगई, तब कुटुंबी वा कुटुंबिनीके संग राजा वंशसहित संतापको प्राप्त होतो भयो ॥ १२ ॥ यवननकरकै सब स्थान जब रुक गए कालकन्याने पुरी सब ग्रसी, प्रज्वारसों पुरी सब घिरी देख पुरपाल नाग अति ताप करतो भयो ॥ १३ ॥ यह नाग जब महादुःखसों कंपित हैकै जब वा पुरीकी रक्षामें समर्थ न भयो तब जरते वृक्षमेंसों जैसे सर्प निकसवेकी अभिलाषा करे ऐसेही वा नगरीसों निकसवेकी इच्छा कीनी ॥ १४ ॥ हे राजन् ! जब सब अवयव याके शिथिल भए; गंधर्वननें सब बल हरलीनो और शत्रुरूप यवननें जब पुरीको रोकी तब पुरंजन रोवतोभयो ॥ १५ ॥ दुहिता पुत्र पौत्र जमाई पार्षद गृह खजानो सब परिवार यामें एक स्वत्वमात्र बाकी रहिगयो, ये मेरे है ये स्वत्वभाव भयो ॥ १६ ॥ अहंता ममतासों अपनो मानें कुमतिसों घरके भीतर बंधो भयो गृहस्थी पुरंजन स्त्रीके वियोगके समय विचारन लगो ॥ १७ ॥ मैं जब और लोकांतरकों जाऊंगो, तो अनाथा कुटुंबिनी ये बालकनको सोच करतीभई कैसे वर्तैंगी ॥ १८ ॥ जो मेरे बिना खाए खाय नहीं मेरे बिना न्हाये न्हाय नहीं, मेरी भक्त जो मेरे रोष करवेपै त्रसित होती, मेरे झिडकवेपै भयके मारे मौन है बैठ जाय है ॥ १९ ॥ मेरे व्याकुल हैवेपै मोय बोध करै है मेरे परदेशमें जायवेपै शोकसो कर्षित होती गृहस्थनको येही मार्ग है पुत्रवती ही तोहू मेरे बिना मरीसी है जायही ॥ २० ॥ ये दीन बालिकी बालक मेरे परायण हैं, मैं जब जाऊंगो तो कैसे वर्तैंगी, जैसे सागरमें नाव टूटवेसो वाके बैठनवारे व्याकुल होतेहैं ऐसे विन सबकी दशा हो है ॥ २१ ॥ ऐसे कृपणबुद्धिसों अयोग्य शोच करते भएकूं पकरवेकी बुद्धिकर भयनामक यवनराज आयकै प्राप्त भयो ॥ २२ ॥ पशुकी नाई यवन याको अपने घर ले जाते भए विनके अनुयायी अत्यंत आतुर हो शोकके मारे विनके कुटुम्बी वाके संग दौरै ॥ २३ ॥ जो सर्प वाकूं रोक रह्यो हो वोहू पुरीको त्यागकै जब गयो ताके पछि सब पुरी विशीर्ण हैके अपने आप नाश

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है अपनी प्रकृतिकों गई ॥ २४ ॥ हठसों बली यवनने जब वाकों खैंची, तो तमोगुणसो आविष्ट हैवेके कारण पुरंजनको अपने पूर्व मित्रको स्मरण नहीं आयो ॥ २५ ॥ या दयारहितने जो यज्ञके पशु मारे है सो वे याकें अपराधको स्मरण कर क्रोधित है कुहाडनसो वाको छेदन लगे ॥ २६ ॥ अपार तममें स्मृति नष्ट हैवेके कारण डूब गयो वा प्रमदाके संगसो दूषित हैके बहुत वर्षपर्यंत पीडाकूं भोगकै ॥ २७ ॥ वो पुरंजन वा पुरंजनी स्त्रीकोंही मनमें स्मरण करतो रह्यो यासो राजानमें श्रेष्ठ विदर्भ राजके घरमें जायकै स्त्रीको जन्म पावतो भयो या प्रसंगमें यें जाननों कि स्त्रीध्यानसो स्त्री होय है ॥ २८ ॥ युद्धमें शत्रुनको मारकै पांडय देशके राजा मलयध्वज वैदर्भीकों व्याहते भए "मलय उपलक्षित दक्षिणदेशध्वज इव दर्शनीयः" वो देश विष्णुकी भक्तिको प्रधानदेश है "पण्डा निश्चयबुद्धिस्तामर्हतीति पांडयः" अर्थात् पुरंजनको भागवतको संग भयो ॥ २९ ॥ वो मलयध्वज वामें श्रीकृष्णमें रुचिवारी श्रीकृष्णसेवारूप कन्या उत्पन्न करतो भयो द्रविडदेशको राजा श्रवण, कीर्तन, विष्णोः स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्यरूप सप्त तरुण सुतनकों उत्पन्न करतोभयो ॥ ३० ॥ हे राजन् ! विन पूर्वोक्त सप्त श्रवण आदिनके अर्बुद अर्बुद सुत भए, जे या पृथ्वीको मन्वन्तरसोहू अधिक पालन करन लगे ॥ ३१ ॥ "अंगानि निष्क्रियाणि स्त्यायति संघातयतीति अगस्त्यो मनः" अगस्त्य मनको नाम है सो मन व्रत धारवेवारी पहिली कृष्णसेवारुचिरूप दुहिताकूं व्याहतो भयो, जामें इध्मवाहात्मज मुनि दृढच्युत श्रीकृष्णप्रीतिरूप विराग भयो (इध्मवाह आत्मजो यस्य सः ॥ तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठमिति) ॥ ३२ ॥ राजर्षि मलयध्वज पुत्रनके अर्थ पृथ्वीकों विभागकरकें श्रीकृष्णके आराधन करवेकों कुलाचल पर्वतपै जातो भयो ॥३३॥ मदभरे नेत्रवारी वैदर्भी गृह सुत भोजनकों त्यागकै जैसे चन्द्रप्रभा चन्द्रके पीछे दौडे तैसे पांडयेशके पीछे जाती भई ॥ ३४ ॥ तहां चंद्रवसा नाम ताम्रपर्णी वटोदका नदिनके पवित्र जल करकै अंतःकरण और अपनपेको स्नानकर शुद्ध करती भई ॥ ३५ ॥ कंद कोय मूल फल पुष्प पर्ण तृण जलसो धीरे धीरे पायकै शरीर कृशकर तप करती भई ॥ ३६ ॥ शीत ग्रीष्म पवन वर्षा क्षुधा प्यास प्रिय अप्रिय सुख दुःखकों जीतते भए समदर्शी होते भए ॥ ३७ ॥ तप विद्या यम नियमसो सब कषाय पक गए, इंद्रियें पवन अंतःकरण जीत ब्रह्ममें आत्माकों लगावते भए ॥ ३८ ॥ खंभकी समान एक जगह दिव्यशतवर्ष स्थित रहै, वासुदेव भगवान्में प्रीति करते और कुछ न जानते भए ॥ ३९ ॥ देहादिकनमें प्रकाश करवेसो आत्मा भिन्न है तथा जड वृत्तिवारे अन्तःकरणसोहू शुद्ध है, जैसे स्वप्नमें अपनो अनिष्ट देखवैसो जागृत अवस्थामें विन अन्तःकरणकी वृत्तिनको प्रकाशक आत्मा पृथक् है, या प्रकार मनमें सम्यक् ज्ञानकर पांडयराजा सब पदार्थनसो उपशमको प्राप्त हुआ ॥ ४० ॥ हे नृप ! साक्षात् गुरु भगवान् हरिके कहे भये विशुद्ध ज्ञानदीप करकै विश्वमुख ईश्वरकी स्फूर्ति होय आई ॥ ४१ ॥ परब्रह्ममें तो सब जीवनको मानते भये, परब्रह्मकों सब जीवनमें देखनहारी दृष्टिसों देखकै या शरीरको त्यागतो भयो ॥ ४२ ॥ परमधर्मज्ञ पति मलयध्वजकी प्रेमसों सेवा करती भई वैदर्भी सब भोग त्याग पतिको देवताके समान मानती भई ॥ ४३ ॥ चीर वस्त्र पहिरे व्रतसो कर्षित एकवेणी युक्त वार लिये धूमरहित अग्नीकी ज्वाला

१ पतिव्रताके ध्यानसै पूर्वजन्मके धर्मके कारण श्रेष्ठाचार विदर्भके घर जन्म हुआ उस धर्मात्मा राजाके संगसै मलयध्वज वैष्णवका संग हुआ उस भक्तिसै वैराग्य हुआ तथा पतिरूप गुरुकी सेवा करनेसै भगवान्की कृपासै ज्ञान प्राप्त होनेके कारण मुक्तिको प्राप्त हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अग्निके शान्त हैवेपै स्वयमेव जैसें शान्त होजाय है ऐसे वह पतिके समीपमें पतिहीकी नाईं शान्त हैगई ॥ ४४ ॥ अपने प्रीतमको उपरामको प्राप्त भयो नहीं जानकै स्थिर ह्वैके आसनपर बैठ पहिलेकी समान सेवन करती भई ॥ ४५ ॥ पतिकी सेवा करवेमें जब चरणनमें गरमपन न मालूम पडो तब संविग्नहृदय भई यूथभ्रष्ट मृगीकी समान शोक करती भई ॥ ४६ ॥ अनाथ और दीन अपने आत्माको शोच करती व्याकुलताके आंसुनसौं स्तननको भिजोवती ऊंचे स्वरसौं रोवती भई ॥४७॥ हे राजर्षे ! उठो उठो समुद्रपर्यंतकी डरती भई पृथिवीको क्षत्रीनसो चोरनसौं रक्षा करवे योग्य हो ॥ ४८ ॥ ऐसे विलाप करती भई बाला वनमें पतिके पीछे जाती भई, भर्ताके चरणनमें पतित है रोवती आंसूं डारती भई ॥ ४९ ॥ काष्ठकी चिता बनाय वामें पतिको देह धर जराय विलाप करती भई, और आपहू मरणमें मन धारती भई ॥ ५० ॥ हे प्रभो ! तहां प्राचीन कोई वेदान्ती ब्राह्मण वाके सखा (ईश्वर) आयकै मनोहरवाणीसो सांत्वनाकर रोवती भईसो बोल्यो ॥ ५१ ॥ ब्राह्मण बोल्यो कि, तुम कौन हो कौनकी हो ये कौन सोयो है जाको तुम सोच करो हो, मैं तुम्हारो सखा हूं मोकों जानोहो कि नहीं जो पहले तुम हमारे संग विचरतेहे ॥ ५२ ॥ हे सखे ! मैं अविज्ञातनामक तुम्हारो सखा हूं सो मेरी और अपने शरीरकी तुम्हें कुछ स्मृति है तुम मोको त्यागकै स्थानकी इच्छाकर भूमिके भोगमें रत होगये ॥ ५३ ॥ हे आर्य ! हम तुम दोनों शुद्ध सखा मानसवासी हंस हैं, सो हजार वर्षोंको अंतर पडगयो, स्थानके विना तुम जीव हो मैं ईश्वर हूं ॥ ५४ ॥ हे बन्धो ! गांवके विषयमें तुम्हारी मति ही सो मोको त्याग करके तुम गए, और कहू स्त्रीकी रचीभई पुरीमें विचरते रहे, ऐसे पृथ्वीपे मैंने तुम्हें देखो ॥ ५५ ॥ वा पुरीमें पांच (शब्दादि विषय) बाग हे नौ (छिद्ररूप) द्वार हे एक पुरीको पालक (प्राण) हो तीन (पृथ्वी जल तेज) किले हे छः (पांच ज्ञानेन्द्रिय और मन) व्यौपारी हे पांच (कर्मेंद्रिय) दुकाने ही पांचही (पंच-भूतनकी प्रकृति) मूल कारण हे स्त्री (बुद्धि) स्वामी ही ऐसी वह पुरी ही ॥ ५६ ॥ हे प्रभो ! पांच इन्द्रियनके अर्थ जामें आरामस्थान हे नव प्राणरूप जामें दर्वाजे हैं, तेज जल अन्न ये कोठे हैं इन्द्रियनके संग्रह वामें कुल है ॥ ५७ ॥ क्रियाशक्तिरूप व्यवहार होतो हो वा पुरीमें जाको नाश नहीं वो भूत प्रकृति है यामें जो पुरुष है वो शक्तिको अधीश है वो या पुरमें प्रविष्ट है पर जाने नहीं जाते हैं॥५८॥ हे प्रभो ! वा पुरीमें तुम वा स्त्रीसो रमण करते रहे अब सुनकेहू तुम्हें वाकी स्मृति नहीं आवे है वाईके संगसो ऐसी पापीयसी दशाको आप प्राप्त होते भये ॥५९॥ न तुम विदर्भकी बेटी हो न ये वीर तुम्हारो सुहृद है, न पुरंजनीके तुम पति हो, या नवमुखके पुरमें तुम रुक रहेहो ॥ ६० ॥ ये माया मैंने रची है, कभू पुरुष कभू स्त्री करै है सिद्धांतसों दोनों बात नहीं हैं, हम तुम दोनों शुद्ध हंस है जो अब हम आगे कहैं हैं सो सुनो हमारी गति देखो ॥ ६१ ॥ हे जीव ! हम तुम दोनों एक हैं, अन्य नहीं जो पंडित हैं वे कभू हमारे तुम्हारेमें भेद नहीं देखै है ॥ ६२ ॥ जो ऐसें है भेद तौ कैसे माने है ताको उत्तर है कि जैसे पुरुष अपने एक आत्माको दर्पणमें चक्षुसो दो रूप देखै है, तैसेई हमारो तुम्हारो विद्या अविद्या उपाधिकृत भेद है, परन्तु वास्तवसे भेद नहीं है ॥ ६३ ॥ ऐसें वो मानस हंस जीवको मानसहंसवासी ईश्वरने ज्ञान करायो, तब स्वस्थ भयो, और ईश्वरकरके वियोगकी बुद्धिरूपस्मृति नष्ट भई ही सो फेर प्राप्त होती भई ॥ ६४ ॥ हे बर्हिष्मन् ! ये अध्यात्मज्ञान परोक्ष करकै हमने तुमे

१ पहले पुरंजनको अहंकार था इस कारण भगवान्ने दर्शन नहीं दिया अब अभिमानशून्य हो धर्मयुक्त हो बैठनेपर भगवान्ने दर्शन देकर उपदेश किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दिखायो जो परोक्षविधिसौ वर्णन करवेको यह कारण है कि जगत्पालक नारायण परोक्षरीतिसौ बहुत प्रसन्न होय हैं[1] ॥ ६५ ॥

बर्हिष्मन्नेतदध्यात्मं पारोक्ष्येण प्रदर्शितम् ॥
यत् परोक्षप्रियो देवो भगवान् विश्वभावनः ॥ ६५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे पुरंजनोपाख्याने स्त्रीविचिंतया स्त्रीत्वं प्राप्तस्य पुरंजनस्य दैवेन कदाचिन्मुक्तिवर्णनं नाम अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

अध्याय २९.

प्राचीनबर्हिरुवाच–भगवंस्ते वचोऽस्माभिर्न सम्यगवगम्यते ॥
कवयस्तद्विजानन्ति न वयं कर्ममोहिताः ॥ १ ॥

प्राचीनबर्हि नृप बोले कि, हे भगवन् ! तुम्हारे वचन हमकौ सुन्दरतासो समझमैं न आयो, हम सब कर्मकांडनसो मोहित हैं, वेदांती अध्यात्म ज्ञानी कवि हैं, वेही याको जाने है यासो फिर सो कहो ॥ १ ॥ श्रीनारदजी बोले कि " पुरं जनयतीति पुरंजनो जीवः " या देहमें पुरंजन पुरुष जीवकूं जानो, जो अपने आत्माके पुरनको प्रगट करै हे, जो जीव एक दो तीन चार पांवके होय हैं कहू बहुत पगके होय है, कभू विना पगको होय है ॥ २ ॥ जो अविज्ञातनामक पुरुष जीवको सखा कह्यो है, वो ईश्वर है, जो ईश्वर नाम क्रियागुणनसों पुरुषन करकै नहीं जानो जाय है ॥ ३ ॥ जब संपूर्णता करकै पुरुष प्रकृतिके गुणनकी ग्रहण करवेकी इच्छा करै है, तब नव द्वारयुक्त दो हाथ पगवारे देहको बहुत सुन्दर मानके वसे है ॥ ४ ॥ या देहमें बुद्धिरूप स्त्री वसे है, वासे मेरो मैं ये जीव करन लगे हैं, याके आश्रित हैके या देहमैं पुरुष इन्द्रियनके द्वारा गुणनकूं भोगे है ॥ ५ ॥ ज्ञान कर्म करवेवारे इन्द्रियनके गण याके सखा है, और इन्द्रियनकी वृत्ति सखी हैं, पंचवृत्तिरूप पंचशिरको प्राणरूप यामें सर्प है ॥ ६ ॥ जो बलवान् सैनापति कह्यो गयो है वह मन है कारण कि यह मन ज्ञानेंद्रिय और कर्मेंद्रियनको स्वामी है पंचेंद्रियनके विषय सोई पंचालदेश है, जामें नवद्वारको पुर शरीर है ॥ ७ ॥ नेत्र नाक मुख कान शिश्न गुदा ये दो दो द्वार बाहिरको निकसे भए है, सो इन इन मार्गनसो जीव इन्द्रियनको साथ लेके बाहर जाय है ॥ ८ ॥ अक्षिणी २ नाक २ मुख १ ये पांच पूर्वकी ओरके द्वार है दक्षिणकी ओरको दक्षिण कर्ण है उत्तरको उत्तर कर्ण है ॥ ९ ॥ पश्चिम और नीचेके दो द्वार गुदा शिश्न देहमें है, खद्योत आविमुखी द्वार बराबर निर्माण नेत्र है ॥ १० ॥ जिनसो यह जीव चक्षु इन्द्रियकी सहायतासौ इन द्वारनसौ विभ्राजित नाम देशमें जातो अर्थात् रूप देखै है नलिनी नालिनी नाक है, जामें सुसंघज्ञानगंध कह्योहै ॥ ११ ॥ सौरभ देशगंध है अवधूतमित्र घ्राण इन्द्रिय है मुख्य द्वार मुख है विपण अर्थात् वाणी रसज्ञ अर्थात् रसना इन्द्रिय ये दोनों सखा है ॥ १२ ॥ पितरनको बुलायवेवारो दहिनो कान है, देवनको बुलायवेवारो वांयो कान है, प्रवृत्तिमार्गको शास्त्र निवृत्तिमार्गको शास्त्र पंचाल देश है ॥ १३ ॥ पितृयान देवयान सुनवेसो श्रोत्रसो प्राप्त होय

---

१ याको ये पद है ॥ कालंगडा तिताल ॥ भूलोमनठगियनके संग अटको ॥ टेर ॥ बहुतठगोरे भएइठोरे काहेकूं इनसंग भटको ॥ १ ॥ जीभ बटोरीबहुतठगोरीखातपानबहुगटको ॥ नयन निपूतेनेनारिखाईरूपदेखकरभटको ॥ २ ॥ कौनबातनके छांनकरतहेवेदवचनसबपटको ॥ नाकठगैयानेताकलगाई अतरचाहतहैंटटको ॥ ३ ॥ कौडीमिलनकी आसा ताकतजायकरतनितलटको ॥ चोरनकेसंगचोरभयो तूकालफांसमैंपटको ॥ ४ ॥ बहुतजन्मभएकरतठगाईवेदगुरुजीनेह ठको ॥ सतसंगतऔधर्मकाममैंकबजावनाफिटको ॥ ५ ॥ पुरुषोत्तमकहैसर्वेश्वरभजपापपुण्यसबपटको ॥ ६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है, आसुरी मेढ्र इंद्रिय नीचेके द्वारसों मैथुन होय है, जामें गामवारेकी रति होय है ॥ १४ ॥ दुर्मद उपस्थ है निर्ऋति गुदा है लुब्धक पायु इन्द्रिय है वैशसदेश नरक है, अब अंधद्वार वर्णन करै है सौ तुम सुनो ॥ १५ ॥ हाथ पांवसो युक्त पुरुष चलै है और कर्म करे है, अंतःपुर हृदय है, पदार्थनको अनुवाद करवेवारो मन है ॥ १६ ॥ जाके सत्व रज तम गुणसो हृदयमें प्रमाद हर्ष और मोह होय हैं गुणनसो आवृत होके दर्शन स्पर्शनादि जो कार्य बुद्धि संपादन करै है ॥ १७ ॥ विन सब कर्मनको अपनो कियो मानके स्वप्नमें वाहीके अनुसार अधिकारको प्राप्त है स्वयं साक्षी हैकेहू जीवात्मा जाग्रत्में वाहीके अनुसार परिवर्तित होयहै देह रथ है इंद्रिय रूप घोडे यामें लगे है, संवत्सरको वेग याकी गति है ॥ १८ ॥ पुण्यपापरूप दो पैया है, सत्वादि तीनों गुणनकी ध्वजा है, पंचप्राणरूप बंधनकी डोरहै, मनरूप रस्सी है, बुद्धिरूप हांकनवारो है, हृदयरूप रथके मध्यको स्थान है, सुखदुःखरूप दोनों ओरके जूआ है ॥ १९ ॥ पांच इंद्रियनके अर्थरूप धुराके वांस है, सप्तधातु रथके ऊपरकी बैठक है, आकूति प्राणनकी शक्ति रथको पराक्रम है, मृगतृष्णामें ये दौरे है ॥ २० ॥ एकादश इंद्रियरूप सेना है, पंचसूना नाम हत्या करनोही याकी क्रीडा करनो है, जे पांच हत्या लिखीहै "कंडनी पेषणी चुल्ली उदकुंभी च मार्जनी। पंचसूना गृहस्थस्य पंचयज्ञस्तदर्थकः ॥" चंडवेग कालरूप संवत्सर है, जासों काल उपलक्षित होय है ॥ २१ ॥ दिनरूप गंधर्व हैं रात्री गंधर्विनी कही हैं, जो दिनरात व्यतीत होके तीनसो साठ दिनको व्यतीत करै हैं ॥ २२ ॥ कालकी कन्या साक्षात् जरा है जाकी कोईहू इच्छा नहीं करै यवननको राजा मृत्यु है वानें लोकनाशके निमित्त जराको अपनी भगिनी बनाया ॥ २३ ॥ आधी व्याधी वा यवनके सेनाके लोग हैं, सब जीवनके पीडामें शीघ्र वेगवारो प्रज्वारनामक विविधप्रकारको ज्वर है ॥ २४ ॥ ऐसे बहुत प्रकारके अध्यात्मादि त्रितापसो क्लिश्यमान देहमें देही तमोगुणमें हैके वर्ततोभयो ॥ २५ ॥ प्राण इंद्रियमनके मनके धर्म आत्मामें निश्चयकरके यह निर्गुण जीव कामके लवमात्र सुखकूं ध्यान करतो सो जाय है मम अहं कर्म करेहै ॥ २६ ॥ जा समय भगवान् परमगुरुकी आत्मा नहीं जानकै पुरुष स्वप्रकाशक प्रकृतिके गुणनमें आसक्त होय है ॥ २७ ॥ तब गुणनको अभिमानसो जीव अवश हैके सात्विक राजस तामस कर्म करै है, जैसो कर्म करै तैसो जन्मै है ॥ २८ ॥ सात्विक कर्म करवेसो महाप्रकाशयुक्त लोकनमें जाय है, राजस कर्म करवेसो महादुःखदायक लोकनमें जाय है, क्रियाकरके विन राजसकर्ममें बडो परिश्रम होय है, तामसकर्म करवेसो महाशोकभरे लोकनमें जाय है ॥ २९ ॥ कभू तो पुरुष कभू स्त्री कभू नपुंसक ऐसी अंधी बुद्धि है जाय है, देव मनुष्य पक्षी पशु होय है, जैसो कर्म गुण होय वैसो जन्म होय है ॥ ३० ॥ भूंखे दीन और घर २ डोलते कुत्ताकी समान भाग्यसों कही मार खाय आवै है कहीं लड्डू भात खाय आवै है ॥ ३१ ॥ तैसेही कामासक्त हृदयवारो जीव ऊंचे नीचे मार्गमें घूमतो ऊपर नीचे मध्यमें जाय हैं, भाग्यसो प्रिय अप्रियको प्राप्त होय है ॥ ३२ ॥ दुःख दूर करवेको सत्य उपाय तो दुर्लभ है जो करैं तौभी प्रारब्धसै जीवोंसै शरीरसै होते हुए क्लेशोंमें किसी संकट यह यथार्थ रीतिसे नहीं छुट सक्तां ॥ ३३ ॥ जैसे बहुत भारको पुरुष शिरपर लेचलो जब बोझ लगो तब वाने वो बोझ कंधापें धरलीनो तोहू वो बोझ

---

१ उत्तम निकृष्ट कर्मनको करतो प्रारब्धानुसार स्वग नरक मनुष्यको प्राप्त होय है ॥ २ याको अभिप्राय यह है कि आधिदैविक आधिभौतिक आध्यात्मिक दुःखनमेंसो एक प्रकारकेहू दुःखसो या जीवकी निवृत्ति नहीं है कोई न कोई दुःख तो अगारी वर्ततहीरहै हे और जो प्रतिकार हैहू सोहू नाममात्रकोही है क्योंकि सर्वथा दुःख निवृत्ति कभूहू नहीं दीखे यासो जो दुःखकी प्रतिक्रिया है सोहू प्रतिक्रिया नहीं है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रह्योही ऐसेही दुःखके प्रतिकार करनेहू व्यर्थ है क्योंकि एक दुःखकी प्रतिक्रियाकरके अनंतर और दुःख दीखे है ॥ ३४ ॥ हे अनघ ! वास्तवसो कर्मसो कर्मको केवल प्रतीकार नहीं है सके है क्योंकि वे दोनों अविद्यासो है जैसे स्वप्नमें स्वप्न जागेसो मालुम परे है ॥ ३५ ॥ संसार असत्य है तथापि मनमें जबतक विषयनको ध्यान रहै तबतक नहीं मिट सकेहै जैसे स्वप्न असत्य है परंतु उपाधिरूप मनकी स्वप्नावस्था न गयेतक वह नहीं मिटै है ॥ ३६ ॥ या कारणसो अज्ञान कि जिसके हेतु परम पुरुषार्थ-रूप आत्माके अखंड प्रवाहवाला जगत् हुआ है उस अज्ञानकी नष्टता गुरुरूप भगवान्की मतिसैं होती है[1] ॥ ३७ ॥ वासुदेव भगवान्में करो भयो भक्तियोग सुन्दरता करके वैराग्य और ज्ञान दोनों-नको उत्पन्न करे है ॥ ३८ ॥ हे राजर्षे ! सो भक्तियोग थोरेसेमें अच्युतकी कथा सुनवेसो श्रद्धासो नित्य याके पढवेसो होय है ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! भागवत साधु निर्मल अंतःकरणवारे भगवत्के गुण कथाश्रवणमें जिनके चित्त सदा लगे हैं वे जहां हैं ॥ ४० ॥ तहां मधुनामा दैत्यके मारवेवारे श्रीकृष्णके चरित्रामृतकी नदी सब ओरसो वहैं हैं, सो हे नृप ! जो गंभीर कर्ण-नसो अत्यन्त पान करै है तिनको क्षुधा पिपासा भय शोक मोह नहीं स्पर्श करैं हैं ॥ ४१ ॥ कारण कि सत्संग विना स्वयं विचारसै ऊपर कहे उपद्रवोंसै आलसके कारण रसकी प्राप्ति कठिन है विना इसके भगवत्कथारूप अमृतसागरमें प्रीति होनी कठिन है[2] ॥ ४२ ॥ प्रजाके पतिनके पति साक्षात् भगवान् शिव मनु दक्षादिक प्रजाके अध्यक्ष नैष्ठिक सनकादिक ॥ ४३ ॥ मरीचि अत्रि अंगिरा पुल-स्त्य पुलह ऋतु भृगु वसिष्ठ ये मोपर्यंत ब्रह्मवादी भगवत्कथामें प्रीति करै है ॥ ४४ ॥ परन्तु अबतक-हू वाणिनके पति तप विद्या समाधि करके सबके देखवेवारे परमेश्वरकों देखते भयेहू नहीं देखै है ॥ ४५ ॥ अनन्त महाविस्तृत शब्दब्रह्ममें विचार करतेहू मंत्ररूप चिह्नकरके ढके भए सबमें वासी परमेश्वरको भजन करते भएहू नहीं जाने है ॥ ४६ ॥ जा समय भगवान् आत्मासे भावित हो जापै अनुग्रह करै है, तब वह मनुष्यलोक और वेदमें सदा लगनहारी बुद्धिको त्याग करै है ॥ ४७ ॥ हे बर्हिष्मन् ! ताते अज्ञानसो सत्यकी नाईं विहित होते कर्ममें परमार्थ दृष्टि मत करो वे कर्म श्रोत्रइंद्रियस्पर्शी हैं सिद्धान्त वस्तुके स्पर्श करवेवारे नहीं है ॥ ४८ ॥ वेदके अभिप्रायको न जानकै जे कहै हैं कि वेदको तात्पर्य केवल कर्मपर है वे यज्ञके धूमसो अपनी बुद्धि मलीन हेवेके कारण आत्मतत्त्वके तात्पर्यवाले ईश्वरहीको कथन करवेवारे वेदके यथार्थ अभिप्रायको नहीं जानै है ॥ ४९ ॥ पूर्वको अग्रभागवारे कुश बिछायके सब भूमंडलपर यज्ञ कर तैनें महागर्व कीनो पशुवधसो मानी हेकै परम कर्मकूं न जानो ॥ ५० ॥ वोही कर्म है जासो हरि प्रसन्न होय, सोई विद्या है जो ईश्वरमें बुद्धि लगै, वो वर्ण वो कुल वो आश्रम शुभ होय है ॥ ५१ ॥ श्रीहरि सब देहधारीनके आत्मा है, आप प्रकृतिके ईश्वर है, तिनके चरणकमलकी शरणागति छे प्रकारकी करनेसो या संसारमें मनुष्यनको क्षेम होय है ॥ ५२ ॥ विनके प्रसन्न करवेमें कुछ कठिनता नहीं है कारण कि वे सबके प्रियतम आत्मा हैं विनके भजनमें किंचित्-हू भय नहीं है जो ऐसो जाने हैं वही पंडित है पंडितही गुरु और भगवान् है ॥ ५३ ॥ श्रीनारदजी बोले कि हे पुरुषश्रेष्ठ ! तुम्हारो प्रश्न निश्चय भयो अब मैं इसमें गुह्य गोपनीय निश्चय सो कहूं हूं तुम सुनो ॥ ५४ ॥ " जीवको एक और प्रकारसों वर्णन करै हैं क्षुद्र पदार्थनको चरवेवारो एक मृग फूल

---

१ पुरुषार्थभूत आत्माको जा अज्ञानकी वा मनकी कीनी ये अनर्थपरंपरारूप संसृति है वा अज्ञानकी निवृत्ति गुरु-चरणसेवनसोही होय है अन्यथा नहीं होय है ॥ २ देखो राजन् ! यह जीवलोक स्वाभाविक भय शोकादिकनकरके उपद्रुत भयो ये तुम निश्चय करके ही मानो कि भगवत्कथामृतसमुद्रमें प्रीति नहीं ही करै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वाडीमें स्त्रीके संग क्रीडा करै है भौंरानके शब्दनसौं वाके कर्ण लुब्ध हैं मुखके सन्मुख भक्षण करवेवारे वृक खडे हैं तथापि यह मृग कुछ चिन्ता न कर आगे बढो चलो जाय है पीठ व्याधके बाणसौं विद्ध है हे राजन् ! तुम याको मर्म विचारो और देखौ ये कोन है ॥ ५५ ॥ जो श्लोक पीछे कह्यो है वाकोही या दण्डकमें व्यासजीने व्याख्यान करो है ॥ पुष्पनके समान धर्मवारी स्त्रीनके शरणरूप बागमें पुष्पनके मधुगन्धकी नाईं अत्यन्त तुच्छ, काम्यकर्मके फलसों उत्पन्न, कामसुख लवमात्र जीभके स्वाद, शिश्नके विषयभोग आदिकनको ढूंढतो स्त्रीके विन विषयनमें मन लगायके भ्रमरगणके सुन्दर गीतकी नाईं अति मनोहर वनिता आदि जननके सम्भाषण करवेमें अत्यन्त लोभित मन, कर्णवारो ये जीव आगे भेडियानके यूथवत् अपनी आयूके हरवेवारे दिनरात कालके लवको न गिनके घरमें विहार कर रह्योहै और गुप्तरूपसौं तेरे पीछे लगो भयो काल भीतरही गुप्त बाणसौं तेरो हृदय विदीर्ण करै है सो तुम्हे अब अपनी आत्माको विचार करनो उचित है सो ॥ ५६ ॥ सो तुम वा मृगकीसी चेष्टा अपने आत्माकी विचारो, और हृदयमें चित्तको आकर्षण कर चित्तमें बहिर्वृत्तिकूं रोध करो परं च असत्तमनके यूथकी गाथावारे या संसारको त्यागके जीवनके रक्षक ईश्वरकों प्रसन्न करो, क्रमकरके सबसे विरामको प्राप्त होउ ॥ ५७ ॥ प्राचीनबर्हि बोले कि हे ब्रह्मन् ! हे नारदजी ! जो आपने कह्यो सो हमने सुनो विचारो परन्तु या ज्ञानको ये उपाध्याय जो मोको कर्मको उपदेश करै है वे कहा नहीं जानै है जो जानते हैं तो मोसो कह्यो क्यों नहीं ॥ ५८ ॥ या विषयमें उपाध्यानने बडो संदेहमें डारदियो हो परंतु वह आपने सब दूर कियो परन्तु यह एक और संदेह है कि जासों ऋषिहू मोहको प्राप्त होय है और इंद्रियनकी वृत्तिहू नहीं जायसकेहै ॥ ५९ ॥ जा देह करके पुरुष या जगमें कर्मनको प्रारंभ करै है, वा देहकों यहां छोडके परलोकमें और देहसो सेवित कर्मनको ये जीव प्राप्त होय है ॥ ६० ॥ ये वेदवेत्तानको वाद जहां तहां सुनवेमें आवै है तथा आपनेहू कह्यो कि पुरंजननें कर्मकरके दूसरे शरीरसौं भोगे मेरे प्रश्न यह है जो करै वाकोही कर्मको फल मिलनो उचित है एक देहके लिये कर्मको फल दूसरो देहू कैसे भोगैहै जो करै वाको भोगनो उचित है, दूसरो प्रश्न यह है कि मनुष्य जो कर्म करैहै वह कर्म थोरे समय पीछे अदृश्य है जाय है जो कर्म अदृश्य है गयो वाको फल पीछे मिलनो कैसे संभव है[1] ॥ ६१ ॥ श्रीनारदजी बोले कि कर्तृत्व भोक्तृत्व स्थूल देहको नहीं है परन्तु जा लिंगाभिमानी मनकरके करमनको आरंभ करै है वोही भोगै है क्योंकि ऐसो कहैहै कि जो कर्ता सो भोक्ता फिर कहो अंतःकरणरूप लिंग स्थूल देहके संग नाशको प्राप्त नहीं होय है, या कारण जा मनने वह कर्म कियो है वही वाय भोगै है ॥ ६२ ॥ जैसे सोवते समय श्वास लेते भए या पुरुषको जाग्रत अवस्थाको अहंकार दूर है जाय है और वामेंहू स्वप्न अवस्थामें वही अनेक सुख दुःख भोगै है परन्तु जो मन जाग्रत अवस्थामें हो वही स्वप्नमें है जब जीवित अवस्थामेंहू अनेक देह प्राप्त होयहैं परन्तु भोक्ता मन एकही है या प्रकारही दूसरे जन्ममेंहू यही भोगै है जो यहां करै है ॥ ६३ ॥ ये पुत्रादिक मेरे हैं ये हम हैं ऐसे कहतो भयो पुरुष महा अभिमान करै है तौ यासौं यह जानिये कि मन अंतःकरणके अभिमानको स्थान स्थूल शरीर है परन्तु यासौं यह कर्ता नहीं है सकै है अन्तःकरणही कर्ता हैकै दूसरी देहमेंहू जायके वही भोगै है ॥ ६४ ॥ सम्पूर्ण इंद्रियनको अपने विषयनके संग एक कालमें सम्बंध हैवेपेहू विन विषयको ज्ञान एकसंग नहीं होय है यासौं इन्द्रियनपें अधिकार करवेवारो कोउ दूसरो प्रतीत होय है वही चित्त है वाको जब जा इन्द्रियसौं संयोग होय है वह वाहीको

१ अर्थात् जब स्वतः कर्म नाशवान् है और क्षणिक है तब लोकांतरमें फिर वो कर्म कैसे दे सके है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ग्रहण करै है याही प्रकार चित्तकी वृत्तिहू एक समय उत्पन्न न हके क्रमानुसार होय हैं यासों विदित होय है कि चित्तवृत्तिको उत्पादक पूर्व देहको कर्म है जा समय जो कर्म भोगवेको होय है चित्तकी वृत्ति वैसेही प्रकारकी उत्पन्न होय है यासों पूर्व देहके कर्म माननो युक्तियुक्त है[1] ॥ ६५ ॥ या देहमें कोउ समय ऐसी वस्तु स्वप्नमें दीखै है जो न कभी देखी न सुनी न अनुभव कीनी होय है तौ यासों यही मानो जाय है कि अवश्य यह अनुभव पूर्वदेहमें भयो होयगो ॥ ६६ ॥ कारण कि विना अनुभवकी वस्तु चित्तमें कदाचित् नहीं आवे है यासों पूर्व देहको और या देहको लिंग मन एकही हैं और पूर्व-जन्मके संस्कार मनमें लगे हैं यह निश्चय और अनुभव है हे राजन् ! या वाक्यमें आप श्रद्धा कीजिये कि जो अननुभूत अर्थ हैं नाम जा विषयको मनने कभू अनुभव नहीं कियो है वा विषयको मन कभू नहीं स्पर्श करै है ॥ ६७ ॥ यासों मनसोही भूत भविष्य योनिनको जन्म इस वर्तमानकालके प्राणीको जानो जाय है वाके चित्तकी वृत्ति देखके शुभ अशुभ देखके नीच योनिको जन्म प्रतीत होय है आगेको जन्महू वाके कृत्य देखके युक्तिसो जान लियो जाय हैं ॥ ६८ ॥ किन्हीका प्रश्न है कि यदि पूर्वजन्मकी अनुभव वार्ताही दीखै है तौ कटो शिर तथा दिनमें नक्षत्र इत्यादि असम्भव वस्तु क्यों देखै है याको उत्तर यह है कि शिरको कटनो प्रतिबिम्बमेंहू दीखै है और तारानको प्रतिबिम्ब जलमें दीखै है यही वार्ता देशकाल और क्रिया (युद्ध आदि) को निद्राके दोषसों अन्तर दिखाती है यासों शंकाकी आवश्यकता नहीं पूर्वजन्म न मानवेवारेकोहू तौ स्वप्ननिद्राको दोष माननो पैंडैगो ॥ ६९ ॥ सम्पूर्णविषय जिनको पुरुष अनुभव करतो ध्यान करै है क्रमसैं मनमें आवे जाय हैं हां मनरहित ३ को कुछ भान नहीं हो सकै है । कारण विना अनुभवको कछूहू पदार्थ नहीं है कोउ सब पदार्थ एक संगहो मनमें उदय होय है या सों सब लोकनके सब पदार्थ कभू न कभू देखवेसों अनुभव कियो स्वप्नमें आव हैं ॥ ७० ॥ केवल सतोगुणी निष्ठावारो मन भगवान्के ध्यानमें होय है वा समय यह सम्पूर्ण विश्व मनमें लगो प्रतीत होय है जैसे राहु दीखै तो नहीं परन्तु चन्द्रसंयोगसों दीखै हैं ऐसेही मन शुद्ध हैवेपै सिद्ध योगिनको एक कालमें सब जगत् दीखै है ॥ ७१ ॥ बुद्धि मन इंद्रिय और विषयनके समूह यह अनादि सम्बन्ध जबतक लिंगशरीर है तबतक या जीवके स्थूल देहकों सम्बन्ध नहीं मिटै यासों स्थूलके न हैवेसों लिंग देहमें कर्तृत्व और भोक्तापन रहवेसों वाकी मुक्ति नहीं हो सके है क्यों कि लिंगदेहको बुद्धि मनसों सम्बन्ध है ॥ ७२ ॥ सुषुप्ति मूर्छा अत्यंत दुःख मृत्यु ज्वरादिमें इंद्रियनके व्यग्र हैवेसो स्थूल देहको अहंकार जातो रहै है पर सूक्ष्मतासो रहै है वा समय वाको लिंगदेहसों विच्छेद नहीं होय है ॥ ७३ ॥ गर्भमें बालकपनमें ऐसो स्थूलदेहको अभिमान प्रतीत नहीं होय है जैसो तरुणाईमें एकादश इन्द्रियनसो प्रतीत होय है जैसे अमावस्यामें चन्द्रमाको चिह्न होय है तोहू नहीं दीखै है ऐसेही बाल और गर्भ अवस्थामें स्थूलदेहको अभिमान विद्यमान होतेहू नहीं दीखै है क्योंकि गर्भावस्थामें प्राणायतननकी पुष्कलतनही होय है यासों यह सिद्ध है जबतक लिंगशरीर है तबतक स्थूल-

---

१ या श्लोकको अर्थ हमारी राहसो यह है कि जैसे ज्ञानेंद्रिय और कर्मेंद्रियनके चेष्टितनसों चित्त अनुमान कियो जाय है क्योंकि चित्तवृत्तिकोही प्राधान्य दीखै है सब विषयनके विद्यमान होतेहू एक संग सब विषयनकी प्रतीति नहीं होय है जामें चित्त प्रवृत्त है वाही विषयकी प्रतीति प्रत्यक्षमें होय है यासों ऐसेही चित्तकी वृत्तिन करके पूर्वदेहको कर्म लक्ष कियो जाय है ॥ २ जो नहीं देखो और नहीं सुनोहू है वोहू जो मनमें दिखाई परे है सो देश काल क्रियाके आश्रयसो जैसै दीखे है ऐसेही समझनो चाहिये जैसे भूमिस्थसमुद्रको पर्वतप और रात्रिकालीन नक्षत्रादिकनको दिनमें और विद्यमान शिरको कटनो निद्रादि दोषसो प्रतीत होय है याको यह प्रयोजन है कि स्वप्नमें स्मृति और अनुभव दो होय है सो यहां अनुभवपक्षमेंहू विन समुद्रादिकनको पर्वतादिकपें अनुपपन्न समझ लेनो चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देहको अभिमान नहीं मिटैहै ॥ ७४ ॥ अर्थको अविद्यमान होतेहूं संसारकी निवृत्ति नहीं होयहै क्यों कि विषयनके ध्यान करवेसो स्वप्नमें जैसे अनर्थको आगमन है जाय है विना जागे वह नहीं छूटै है ऐसे विषयनके ध्यान छोडे विना संसार नहीं जाय है ॥ ७५ ॥ ऐसे पंचभूतात्मक त्रिगुणमय एकादश इंद्रिय पंचतन्मात्राको विकारात्मक यह लिंगदेह बुद्धिकरके जब चेतनसो युक्त होय है तब जीव कह्यो जायहै लिंगशरीरके त्यागेंपै अपने रूपको प्राप्त होय है ॥ ७६ ॥ याही जीव नाम लिंगदेहकरकहो करके पुरुष देहनकूं प्राप्त होय है त्यागै है हर्ष शोक भय दुःख सुख लिंगदेहके निमित्तही प्राप्त होय है ॥ ७७ ॥ यदि कोई कहै कि स्थूल छोडके जब दूसरे शरीरमें यह प्रवेश करै है तब याकी मुक्ति है जाय है सो नहीं जैसे जोंक जबतक दूसरी घासको नहीं पकडै है तबतक पहलीको नहीं छोडै ऐसेही मरणसमयमेंहूं जबतक दूसरे देहको प्राप्ति नहीं है जाय है तबतक यह पूर्वदेहके अभिमानको नहीं त्यागन करै या कारण हे राजन् ! यह मनही प्राणिनको इस संसारको हेतु है ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ जा समय इंद्रियनके आचरण किये कर्मनको यह मनुष्य वारंवार ध्यान करतो कर्म करै है विन्ही कर्मनके संबंधसों मन संसारको कारण होय है यद्यपि आत्मा असंग है तथापि अज्ञानके कारण जड पदार्थनके संगमें बंधोसो प्रतीत होय है ॥ ८० ॥ याते इन सबके दूर करवेके लिये सर्वात्मभाव करके श्रीहरिको भजन करो विश्वको भगवद्रूप देखो जाते उत्पत्ति पालन नाश होय हैं ॥ ८१ ॥ मैत्रेयजी बोले कि भागवतनमें मुख्य भगवान्नारदजी जीव ईश्वरकी गति दिखायके यासों आज्ञा ले सिद्ध सत्यलोकको जाते भए ॥ ८२ ॥ प्राचीनबर्हि राजर्षि प्रजासर्गकी रक्षा करवेमें सब पुत्रनको लगायके तपके अर्थ गंगासागरपै कपिलाश्रममें जाते भये और सब संग त्याग करते भये ॥ ८३ ॥ तहां जाय वह वीर एकाग्र मन कर गोविंदचरणांबुजको भजतो भयो भक्ति करके भगवत्की समान भावको प्राप्त भयो ॥८४॥ हे अनघ ! ये अध्यात्म पारोक्ष्य देवर्षिने गायो है, जो याकों सुनै सुनावै वो लिंगदेहसो विमुक्त होय है ॥ ८५ ॥ मुकुन्दयशयुक्त भुवनको पवित्र करवेवारो देवर्षिवर्यके मुखसो निकरो भयो मनके शोधक या ज्ञानको जो कीर्तन करै है, वो ब्रह्मलोकको जाय है, समस्तबन्धसो मुक्त हैके या संसारमें कभूहू नहीं भ्रमैगो ॥ ८६ ॥ ये अद्भुत अध्यात्म परोक्ष ज्ञान मैंने तुमसो कह्यो, यासों देहाभिमान दूर है जाय है तथा परलोकमें कर्मफल भोगवेके सन्देहकी निवृत्ति होय है "जबतक याके संशय मोह दूर नहीं होय है तबतक मोक्ष नहीं होय है क्योंकि ऐसो लिखो है श्लोकोयम् ॥ मोहं ब्रह्म विना न याति सततं दुःखं च मित्रं विना मार्तंडेन विना न नश्यति तमः शत्रुश्च भेदं विना ॥ संतोषेण विना न लोभ-लहरी व्याधिश्च पथ्यं विना दारिद्र्यं च तथा न याति सततं श्रीकृष्णतुष्टिं विना ॥ " ॥ ८७ ॥

अध्यात्मपारोक्ष्यमिदं मयाऽधिगतमद्भुतम् ॥
एवं स्त्रियाऽऽश्रमः पुंसश्छिन्नोऽमुत्र च संशयः ॥ ८७ ॥

इति श्रीमद्भागवत० चतुर्थस्कन्धे पुरंजनोपाख्याने अध्यात्मज्ञानसंपूर्णं नाम एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥

अध्याय ३०.

विदुर उवाच-ये त्वयाऽऽभिहिता ब्रह्मन्सुताः प्राचीनबर्हिषः ॥
ते रुद्रगीतेन हरिं सिद्धिमापुः प्रतोष्य काम् ॥ १ ॥

१ राजाको नारदजीने गूढ वचनसे इस कारण उपदेश किया कि दृष्टांत दार्शांतसे राजा शीघ्र ज्ञानी होजायगा और सहजमें समझ जायगा इसी कारण राजाको शीघ्र ज्ञान हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विदुरजी बोले कि हे ब्रह्मन् ! प्राचीनबर्हिके पुत्र जे तुमने कहे हे सो वे रुद्रगीत करकै श्रीहरिको प्रसन्न कर कौनसी सिद्धिको प्राप्त होते भये ॥ १ ॥ हे बार्हस्पत्य श्रीबृहस्पतिके शिष्य ! कैवल्य-नाथके प्रिय, विनके पासके वासी श्रीशिव शंकर देवको यहच्छासो प्राप्त होयकै निश्चय करके सब प्रचेता वैकुंठकूं गये होयगे ॥ २ ॥ मैत्रेयजी बोले कि समुद्रके मध्यमें पिताकी आज्ञा करवेवारे प्रचेता जपरूप यज्ञसो सब पुरके जनमायवेवारे श्रीहरिको प्रसन्न करते भये ॥ ३ ॥ दशसहस्र वर्षके अंतमें सनातन पुरुष विनके तपके कष्टको शांत रुचिसो शमन करते तिनके मध्यमें प्रगट होते भए ॥ ४ ॥ सुमेरुके शृंगपे मेघके समान गरुडजीके ऊपर बैठे होय पीतवसन पहिरे, कौस्तुभ मणि गलेमें धारे सब दिशानके अंधकारको नाश करते भये ॥ ५ ॥ प्रकाशक कनकवर्ण समान भूषणकरके कपोल और मुख प्रकाशमान है । दीप्तिमान किरीट आठ आयुध भुजानमें धारे पार्षद मुनि देवतानसो सेवित और गरुडजी अपने पंखनके शब्दसो किन्नरनके संग विनकी कीर्ति गाय रहेहे ॥६॥ पुष्ट और विशाल आठ भुजानको बीचमें वनमालाकी शोभा हो रही है या प्रकार बर्हिष्मान राजाके शरणागत पुत्रनसो मेघकी गम्भीर शब्दसम वाणीसो दयायुक्त अवलोकनसो बोले ॥ ७ ॥ भगवान् बोले कि हे नृपनन्द-नहो ! वर मांगो, तुम्हारो भद्र होय तुम अपने सुहृदतासो सब एक हो तुम्हारी सुहृदतासों हम तुमपे प्रसन्न भये ॥८॥ जो कोई सन्ध्यामें दिनरात तुम्हारो स्मरण करै विनको भैयानमें प्यार रहैगो, और सब जीवमात्रमें सुहृदभाव होयगो ॥ ९॥ जो कोई सावधान होयके रुद्रगीतसो सायंकाल प्रातःकाल स्तुति करैंगे, विनकों सब मनोरथ हम देयगे और सुन्दर विनको बुद्धि दैंगे ॥१०॥ जो तुम आनंदमें युक्त होयकर पिताकी आज्ञा करते भये, यातैं महासुन्दर कीर्ति तुम्हारी सब लोकनमें होयगी ॥११॥ गुणनमें ब्रह्माके समान विख्यात पुत्र तुम्हारो होयगो जो अपने वीर्यकरकै या त्रिलोकीको पूरण करैगो ॥ १२ ॥ हे नृपनन्दनो ! कंडुऋषिके सकासते प्रम्लोचा अप्सराको कमललोचना कन्या प्राप्त भई ही सो वो वाको वनमें त्याग गई, सो वृक्षनने ग्रहणकर लीनी "याकी कथा ऐसी है कि एकसमय कंडुऋषि तप करते हे, सो उनके तप नाशके अर्थ इन्द्रकी भेजी प्रम्लोचा अप्सरा कंडुनामक ऋषिको रमण करावती भई, जब वो स्वर्गकूं जायवेलगी तो कंडुसो भई बेटीको वृक्षनमें त्याग चली गई" ॥ १३ ॥ क्षुधासो व्याकुल रोवती कन्याके दुखसों दयालु वृक्षनके राजा चन्द्रमाने अमृतभरी कन्नी उगारिया वाय प्याई ॥ १४ ॥ प्रजाके रचवेमें मेरी सेवा करवेवारे तुम्हारे पिताने तुम्हें प्रजाकी सृष्टिके निमित्त आज्ञा कीनीहै वा आज्ञाको पूर्ण करनेके निमित्त वा कन्याको विवाहो शीघ्रता करो ॥ १५ ॥ एकसे धर्मशीली तुम सबके मध्यमें वो एकही सुमध्यमा तुम्हारे समानशील करवेवारी और तुममें मन लगामनेवारी होयगी वाकोहू धर्म स्वभाव तुमहीसो होयगो ॥१६॥ मेरी कृपासो दिव्यसहस्रवर्षतक महाबली भूमिके और स्वर्गके भोग भोगोगे और तुम्हारी सामर्थ्य अप्रतिहत रहैगी ॥ १७ ॥ पीछे मोमें अखंड भक्ति करके काम क्रोधादि वासनानको त्याग या नरकरूप संसारसों वैराग्यको प्राप्त हैके मेरे लोककों प्राप्त होगे ॥ १८ ॥ जो प्राणी गृहस्थाश्रममें स्थित होंकै ईश्वरार्पण कर्म करै और मेरी कथामें समय व्यतीत करै विन्हें घर बंधन रूप नहीं होयहै ॥ १९ ॥ जहां ब्रह्मवेत्ता कथा कहै हैं वहां कथाश्रवणसो विन श्रेतान-के अन्तःकरणमें मैं सर्वज्ञ ईश्वर ब्रह्मके विचार करनवारे वक्तानके द्वारा क्षण क्षणमें नवीनकी समान प्रगट होउहो क्यों जी आपके कथाश्रवणमें ब्रह्मसाक्षात्कार कैसे है जाय है ताको उत्तर है कि (एतत्ब्रह्म जो मैंहूँ सोही ब्रह्म है) यामें हेतु यह है जा मेरी प्राप्ति हैवेसो विन्हें मोह शोक और हर्ष नहीं रहै है॥२०॥ मैत्रेयजी बोले कि सब पुरुषार्थके देवेवारे परम उपकारी सुहृद भगवान्को यह वचन सुन भगवान्के

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दर्शनसो रज तमके मल दूर है जायवेसो शुद्ध मनवारे वे प्रचेता गदगद वाणीसो हाथ जोड स्तुति करन लगे ॥ २१ ॥ प्रचेता बोले, कि सब क्लेश विनाश करनवारे जिनके (उदय) गुण वेदमें गाये जायहै विन ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय, मन वचनके वेगसो अधिक वेगवारे, सब इन्द्रियनके मार्गसो जिनको मार्ग नहीं जानो जायहै विनके अर्थ नमस्कार होय ॥ २२ ॥ अपनी निष्ठाकरकै शुद्ध शांत और मनसे यह मिथ्यारूप संसार भासै है विनके अर्थ नमस्कार होय, जगत्की उत्पत्ति पालन नाशमें मायागुणकरकै विग्रह जिनने धारे तिनके अर्थ नमस्कार होय ॥ २३ ॥ विशेष करके शुद्ध सत्वकी देहवारे सब दुःखहारी संसारहारी ज्ञानवारे वासुदेव श्रीकृष्ण सब यादवनके उत्पत्तिकारीके अर्थ नमस्कार होय ॥ २४ ॥ हे कमलेक्षण ! कमलनाभ कमलमाली कमलसम चरणवारे तुम ईश्वरीके अर्थ नमस्कार होय ॥२५॥ कमलके केसरसमान पीरे निर्मल वस्त्रवारेके अर्थ नमस्कार होय, सब जीवनमें निवास करवेवारे सबके साक्षीके अर्थ नमस्कारको संयोग होय ॥ २६ ॥ हमसरीके क्लेशीनको जो आपने सब क्लेशके क्षय करवेवारो रूप प्रगट करचो सो बडी कृपा करी अब यासे सिवाय और कहा कृपा करोगे ॥२७॥ हे अभद्रनाशन ! समर्थनको दीनके ऊपर ऐसे ईतनोही करनो योग्य है, जो कि विनाही समयमें अपने भक्तके प्रार्थना करे ही समय देखके अपने विचारसो भक्तकी हरेक तरहकी बातकी याद राखनो ॥ २८ ॥ प्रभुनके स्मरण करवेसो दीन पुरुषनकी शांति हैजायहै और जब आप क्षुद्र प्राणिनकेहू हृदयमें विराजे हो तौ हमारे मनोरथोंका क्यों न जानोगे ॥ २९ ॥ हे जगतः पते ! येही वर हमको वांछित है कि हमारे ऊपर अपवर्गदाता गुरु गतिरूप प्रसन्न भए ॥ ३० ॥ हे नाथ ! परेसो परे जो आप हो तिनसो ये वर मांगों है कारण कि भक्तनको देवे योग्य आपकी विभूतिनको अंत नहीं है या कारण आप आनंद नाम प्रसिद्ध हो ॥ ३१ ॥ अनायाससो भ्रमरको जब कल्पवृक्ष मिलजाय तौ वो औरकी सेवा नहीं करै है, तैसेई तुम्हारे चरणकमलकों प्राप्त हैकै जीव साक्षात् कहां कहा वर मांगो ॥ ३२ ॥ जबतक तुम्हारी मायाकरकै व्याप्त या संसारमें कर्म करक हम घूमें तबतक आपके प्रसंग करवेवारेनको हमको जन्म जन्ममें श्रीवैष्णवनको संग प्राप्त होय ॥ ३३ ॥ श्रीभगवत्के संग करवेवारेनके लवमात्रसंगकी समान न स्वर्ग है न मोक्ष है तब मनुष्यनके राज्यकी तौ बातही कहाहै ॥ ३४ ॥ जा सत्संगमें सुंदर कथानकी स्तुति करी जाय हैं जिनसो तृष्णाको नाश होय है, तथा सब जीवमात्रसो निर्वैरता होती है और काउ प्रकारको उद्वेग नहीं रहै है ॥ ३५ ॥ सब संन्यासीनकी गति देवेवारे साक्षात् श्रीमन्नारायण भगवान्की सत्कथानमें मुक्तसंग प्राणी वारंवार भगवान्की स्तुति करै हैं ॥ ३६ ॥ विन तुम्हारे भक्तनको विचरनो तीर्थनके पवित्र करवेकी इच्छासौ है संसारसौ भय पाये पुरुषनको विनको समागम क्यों न अच्छो लगैगो ॥ ३७ ॥ हे आद्य ! आपके साक्षात् प्रिय सखा शिवजीके क्षणमात्र समागमसौ जन्ममरणरूप असाध्य दुःखनके रोगनके दूर करवेवारे वैद्यरूप आपकी हम शरणको प्राप्त भये हैं ॥ ३८ ॥ जो हमने पढो गुरुप्रसन्न करे विप्र बूढेनकी सदा सेवा कीनी बडेनको नमस्कार कीनो, सुहृद भ्राता सब जीवमात्रनसो वैर न करो या सबको और ॥ ३९ ॥ हे ईश्वर ! जो हमने सुंदर तप कीनो, अन्न विन खाये रहैं, जलमें सोये, या सबको यही फल मांगे है कि भूमा पुरुषके तुमारे परितुष्ट करवेके लिये होउ अर्थात् जो आप प्रसन्न हो तब तो ये हमारो स्वधीत आदि सब सफल है नहीं तौ वो सब निष्फल हैं ॥ ४० ॥ मनु स्वयंभू भगवान् पितामह शिव और जे इनसो न्यारे तप ज्ञानसो विशुद्ध अंतःकरणवारे दत्तात्रेय सनकादिक है वेहू जिनके पारकों न देखकै केवल स्तुति मात्रही करै है तैसेई अपनी बुद्धिके अनुसार हमहू स्तुति करै

१ याको दोहा है कि " तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिये तुला एक संग ॥ तुलाहि न ताहि सकल मिल, सौ सुख लव सत्संग ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं ॥ ४१ ॥ सम शुद्ध पुरुषपर वासुदेव सत्वगुणमय भगवान् श्रीमन्नारायणके अर्थ नमस्कार होउ ॥ ४२ ॥ मैत्रेयजी बोले कि ऐसे प्रचेतानसो स्तुतिको प्राप्त हो शरणागतवत्सल वीर्यवान् हरि प्रसन्न हो बहुत अच्छो तुम्हारे सब मनोरथ पूरे होय ऐसे कहि अपने धाम श्रीवैकुंठको पधारे जायवेके समय प्रचेता विन्हे अतृप्त दृष्टिसो देखते हे विनकी यह इच्छा नहीं ही कि भगवान् यहांसो जांय ॥ ४३ ॥ अब प्रचेता समुद्रके जलसों निकसके आकाशके रुद्ध करवेको मानो ऊंचे बढेहै ऐसे विदित होते वृक्षनसो पृथ्वी ढकी देख विनपै क्रोध करते भये ॥ ४४ ॥ हे राजन् ! तब क्रोध करके अग्निको और पवनको मुखसो उगलते भए, यह प्रतीत भई धरतीको निर्वीरुध करवेकों मानो महाप्रलय आई है ॥ ४५ ॥ भस्म समान वृक्षनकूं करते भए देख ब्रह्माजी आयकै बर्हिष्मानके पुत्रनको नीतिसो शांत करतेभए ॥ ४६ ॥ तहां जरवेसो जो वृक्ष बाकी बचे वेहू डरकै ब्रह्माजीके उपदेशतें अपनी कन्या प्रचेतानकों दे देते भए ॥ ४७ ॥ वे ब्रह्माजीकी आज्ञासो वृक्षकन्यासो व्याह करते भए जा कन्यामें पूर्व जन्मके ब्रह्मके पुत्र दक्षजी महादेवके अपमानसो जन्म लेते भए ॥ ४८ ॥ जो दक्षको शरीर ब्रह्माको पुत्र हो वो कालगतिसो नष्ट हैकै प्रचेतानके यहां जन्मो या दक्षने हरि इच्छासो चाक्षुष मन्वन्तरमें यथायोग्य प्रजा उत्पन्न कीनी ॥ ४९ ॥ सब तेजस्वीनके मध्यमें जन्मतेही अपनी कांतिसो अधिक भयो औरनकी कांति हरलीनी दक्षता अर्थात् चतुरतासो सब कर्मनमें सुघड रहे याते सब दक्ष दक्ष कहिते भए ॥ ५० ॥ प्रजाके सर्गकी रक्षामें ब्रह्माजी वाको अभिषेक करतेभए, वो दक्ष और मरीचि आदि प्रजापतीनको अपने अपने काममें लगावते भए ॥ ५१ ॥

तं प्रजासर्गरक्षायामनादिरभिषिच्य च ॥
युयोज युयुजेऽन्यांश्च स वै सर्वप्रजापतीन् ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे दक्षोत्पत्तिवर्णनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

अध्याय ३१.

मैत्रेय उवाच-तत उत्पन्नविज्ञाना आश्वधोक्षजभाषितम् ॥
स्मरन्त आत्मजे भार्यां विसृज्य प्राव्रजन्गृहात् ॥ १ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले कि जब प्रचेतानको सुख भोगते सहस्रन वर्ष बीत गये तब वे सब भगवद्वचनको स्मरण कर ज्ञानको प्राप्त हो पुत्रनपै स्त्रीकों छोड घरसों संन्यास लेकै चले जाते भए ॥ १ ॥ सब जीवमात्रमें आत्मज्ञानकी दृष्टि कर ब्रह्मयज्ञमें दीक्षित हैकै पश्चिमकी दिशामें समुद्रतीर पर जाजलि नामक ऋषिसिद्धके स्थलमें जाते भए ॥ २ ॥ प्राण मन वचन जीत दृष्टि आसन जीत, शांत समानविग्रह होय निर्मल परब्रह्ममें आत्माकूं लगायकै बैठे हे वा समय सुर असुरनसो स्तुतिको प्राप्त नारदजी विन्हैं दिखाई दिये ॥ ३ ॥ तिनकूं आए देख उठ प्रणाम कर सराहनासो यथाविधि पूजन करकै सुखसो बैठे नारदजीसो प्रचेता बोले ॥ ४ ॥ प्रचेता बोले कि हे सुरर्षे ! आज

१ प्रचेतौंने वृक्षोंपर इस कारण कोप किया कि इस समय वे राजको जाते हैं इन्होंने पृथ्वीको घेर लिया मार्ग नहीं देते इस कारण तेजमें स्थित हो क्रोध किया ॥ २ " और सब श्रीकृष्ण गुण ऐसे गाते भए ॥ सोरठ तिताला ॥ सब तज भजिले नंदकुमार ॥ टेर ॥ और भजे तेरो काम न सरि है मिटे न भवजंजार ॥ जहां जहां जन्म लियो वह विधिते जुरे सघनके भार ॥ जोहि काटनकू सामृथ हरिको तीक्षण नामकुठार ॥ वेद पुराण भागवत गीता सबको यहै व्रतसार ॥ भवसमुद्र हरिपदनौका बिन कौन उतारै पार ॥ यह जिय जान येही क्षण भजले बीत जाय महासार ॥ सूरदास यह समोमायवो दुर्लभ यह संसार ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भले आए, आपको मंगलमय दर्शन भयो, हे ब्रह्मन् ! जैसे सूर्यको आगमन अभयके लिये है, तैसे आपको पर्यटन है ॥ ५ ॥ हे प्रभो ! शिवजी भगवान्ने जो ज्ञान हमको दीनो हो, सो हमरो घरमें आसक्त हैवेके करण प्राय करके भूल गयो ॥ ६ ॥ सो अध्यात्मज्ञान हमको कहो, जासो तत्त्व अर्थको दर्शन होय जा ज्ञानसों दुस्तर भवसागर अनायास करकै हम तरैं वो ज्ञान कहो ॥ ७ ॥ मैत्रेयजी बोले कि भगवान्नारदमुनि प्रचेतानतें ऐसै पूछवेपै भगवान् उत्तमश्लोकमें आवेशित आत्मावारे नारदजी विन नृप प्रचेतानसो बोलै॥८॥नारदजी बोले कि या विश्वमें जा जन्मादिकसो विश्वात्मा हरि ईश्वर सेवा करै जाय, वोही जन्म, वेही कर्म, वोही आयु, वोही मन, वोही वचन मनुष्यनके श्रेष्ठ है ॥ ९ ॥ शौक्ल[1] सावित्र याज्ञिक इन तीन जन्मसो कहा है, वेदत्रयीके कर्मसों अथवा देवतानके समान आयु है जाय तोहू कहा है जो अपने स्वरूप दैनेवारे भगवानको सेवन न कियो ॥ १० ॥ श्रीकृष्णजी भक्तिके विना बहुत सुनवेसो तपसो वाणीसो चित्तकी वृत्ति वश करवैसो बहुत निपुण बुद्धिसो बलसो जितेंद्रियनसो कुछ नहीं होय है ॥ ११ ॥ योग सांख्य संन्यास वेदपाठ और श्रेय मंगलीक कृत्य करवेसो कुछ नहीं होय है जो आत्माके प्रसन्न करवेवारो हरि न प्रसन्न भये तो इनसो कुछ नहीं होय हैं ॥ १२॥ सिद्धांत ये है कि शुभ कृत्यनसो भगवान् प्रसन्न होय सो श्रेष्ठ है जितने कि कर्म कल्याणकारक है विनकी सबकी अवधि प्रभुही है सब जीवमात्रके हरि आत्मा आत्मानके दाता प्रिय ईश्वर है ॥१३॥ जैसे वृक्षकी जडमें जल डारवेसों वा वृक्षके सब बडे बडे डुग्गा शाखा उपशाखा तृप्त होय है, जैसे मुखके द्वारा भोजन करवेसो प्राणरूप होय सब इंद्रियनकी तृप्ति होय है, तैसेई जहां अच्युत भगवान्की पूजा करी, तौ सब देवतामात्रकी पूजा है जायहै ॥ १४ ॥ जैसे जल सूर्यसो उत्पन्न होय है, फेर काल पायकर वो जल सूर्यमेंही प्रवेश कर जाय है, तैसेई भूमिमें जितने जीवमात्र है वे और स्थावर जंगमसे सब संसार श्रीहरिमें लीन होय है ॥ १५ ॥ जगदात्मा श्रीमन्नारायणको अत्यंत श्रेष्ठ श्रीवैकुंठ लोक सदा प्रकाश करैहै, जैसे सूर्यकी प्रभा सदा प्रकाशै है जैसे जाग्रत अवस्थामें सब प्राण इंद्रियै जागैहैं. सुषुप्ति अवस्थामें सबकी शक्ति सुप्त होय जाय है, तैसेई द्रव्य, क्रिया, ज्ञान, भेद, भ्रम, इन सबको दिव्य ज्ञान भयेसो नाश है जाय है ॥१६॥ हे प्रचेतो ! आकाशमें जैसे मेघमंडल, तम प्रकाश कभू होय है कभी नहीं होय है ऐसेही परब्रह्ममें ये रज सत्व तममय शक्ति होय है, संसार होय है कभू लीन होय है ॥ १७ ॥ या कारण सबके एक आत्मा, जो काल प्रधान पुरुष परेश हैवेसो सबके कारण है तथा जिनके स्वरूपको ज्ञान हैवेपैहू फिर संसार देखनेमें नहीं आवे है लय है जाय है वा परमात्माको अपनेमें जानकै अपरोक्ष रीतिसो भजन करो ॥१८॥ संकल्प विकल्प अद्वयसो दूर द्वैत आत्मवादसो उपराम भयो, संकल्प विकल्परहित अद्वैत स्वरूप द्वैतात्मवादसो रहित अनादि मध्य अंत निरंतर आनंद मात्र ज्ञानघन ईश्वरको या दिव्यदृष्टिसो भजन करो ॥ १९ ॥ सब जीवमात्रमें तो दया करो, जो कुछ मिलै वामें संतोष करो, इंद्रियनकी उपशांतिसो जनार्दन भगवान् शीघ्र प्रसन्न होय हैं ॥ २० ॥ लोक धन और पुत्रकी इच्छा निवृत्त हैवेसो उज्ज्वल अन्तःकरणमें निरन्तर वृद्धिको प्राप्त भई भक्ति भावसों बुलाये भए भगवान् अपनी भक्तनकी आधीनता प्रगट करते भए अपने दासनके हृदयमेंसो आकाशकी समान क्षर कभू दूर नहीं होय है ॥२१॥ जिनकी बुद्धि निंदित हैं विनकी करी पूजाकूंहू कभू नहीं ग्रहण करैहै, वे श्रीहरि निर्धनके धन रूप है गिरिवरधारी हैं, प्यारे हैं, रसज्ञ हैं, श्रुत धन कुल कर्मके मदसो जे महानिष्किंचन भगवद्भक्तनको तिरस्कार करैहैं, विनको त्यागे है "जैसे

[1] शौक्ल शुद्ध माता पितासै जन्म ॥ सावित्र यज्ञोपवीतद्वारा दूसरा जन्म ॥ याज्ञिक–यज्ञकी दीक्षा लैनेका तीसरा जन्म ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एक समय दुर्योधन श्रीकृष्णको निमंत्रण कर आए, घरपर रसोईदारनसे बोले कि श्रीकृष्णके कभी न खाए होंय ऐसे पदार्थ करो, श्रीकृष्ण यह सुनतेहै सो तनक देरमें विदुर आय निमंत्रण करगए सो श्रीकृष्ण विदुरके घरपर पहुँचे, विदुराणी घरमें बैठाय केलानको छिलका तो खवावतीगई, गैल नीचे पटकतीगई, श्रीकृष्णके श्याम सुंदर रूपमें मग्न होरही ही विदुरजी देख बोले अरी पापिके ! क्या करेहै भगवान्‌को छिलका खवावै है यह कह भगवान्‌को केला खवावन लगे तब भगवान् बोले विदुर! जोस्वाद छिलकानमें आवतो हो सो इन गैलनमें नाय आवत है, क्योंकि तुम तो उपायांतर बुद्धिकरके मोको गैल खवावोहो, विदुराणीके उपायांतर बुद्धि नहीं. ये कहि आचमनकर बाहिर निकसे सो देखें तो सामनेसे दुर्योधन बोले हे पुंडरीकाक्ष! भीष्म द्रोण मोको परित्याग कर विदुरशूद्रके घर जायके फलाहार कीनो धन्य तुम्हें ॥ श्लोक ॥ भीष्मं द्रोणं परित्यज्य मां चैव मधुसूदन । किमर्थं पुंडरीकाक्ष कृतं वृषलिभोजनम्॥ १॥ये सुन भगवान् बोले भगवद्भक्त शूद्र नहीं है विप्र हैं भागवत कहावै है, सब वर्णोंमें वे शूद्र है जो जनार्दनके भक्त नहीं हैं ॥ न शूद्रा भगवद्भक्ता विप्रा भागवताः स्मृताः । सर्ववर्णेषु ते शूद्रा ये ह्यभक्ता जनार्दने ॥ २२ ॥ अपनी सेवा करवेवारी श्रीमहालक्ष्मी, और लक्ष्मीके चाहवारे ब्रह्मादिकनको, राजानको देवनको अपने भक्तनके निमित्त सबको त्यागे है, आप अपनेहीसो पूर्ण है, निजभृत्य समूहमें प्रसन्न रहेहैं, ऐसे परमेश्वरको कौन कृतज्ञ पुरुष त्यागै, अर्थात् कोई नहीं त्यागेहै ॥ २३ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले कि हे राजन् ! ऐसे प्रचेतानसों औरहू अनेक कथा सुनायके स्वयंभूके पुत्र मुनि नारदजी ब्रह्मलोकको जाते भए ॥ २४ ॥ वे प्रचेताहू श्रीनारदजीके मुखसो निकसो लोकपापनाशक श्रीहरिको यश सुनके तिनके चरणको ध्यान करत तिनकी गतिको जातेभए ॥ २५ ॥ हे विदुरजी ! जो तुमने हमसों पूछो सो प्रचेतानको श्रीनारदजीको संवाद जामें श्रीहरिको कीर्तन है सो तुमसों वर्णन कियो॥ २६॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ये उत्तानपाद मनुके पुत्रको वंश वर्णन करो, हे नृपसत्तम ! अब प्रियव्रतको वंश सुनो ॥ २७ ॥ जो प्रियव्रत नारदजीसों आत्मविद्या सीख फेर महीपर आए सब राज्य भोग पीछे पुत्रनको सब राज विभाग कर ईश्वरके वैकुंठको जातो भयो ॥ २८ ॥ श्रीमैत्रेयजी करके वर्णित श्रीकृष्णकी ये सत्कथा विदुरजी सुनके अत्यन्त भक्तिसों नेत्रनमें आंसूभर श्रीमैत्रेयजीके चरणनको हृदयसों शिरपर धारण करते भए ॥ २९ ॥ विदुरजी बोले कि हे महायोगिन् ! दयालु ! आपने ये आज तमको पर करवेवारो मार्ग दिखायो कि जासों विरक्त महात्मानको प्राप्त हैवे योग्य नारायणके स्वरूपको मोको ज्ञान भयो ॥ ३० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसे नमस्कार कर विनसो आज्ञा ले शान्त अन्तःकरणयुक्त विदुरजी अपने कुटुम्बी जननके दर्शनकी इच्छासों हस्तिनापुरको गये ॥ ३१ ॥ हे राजन् ! हरिमें आत्मा मन लगायवेवारे राजानको जो चरित्र सुने है वो आयु यश धन मंगल कल्याण गति ऐश्वर्यको प्राप्त होय हैं ॥ ३२ ॥

एतद्यः शृणुयाद्राजन्राज्ञां हर्यर्पितात्मनाम् ॥
आयुर्धनं यशः स्वस्ति गतिमैश्वर्यमाप्नुयात् ॥ ३२ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां चतुर्थस्कन्धे श्रीवृंदावननिवासिसुप्रसिद्धविद्वद्वरगौडब्राह्मणश्रीनारायणशास्त्रिविरचितपदार्थमुक्तावलीटीकायां प्राचेतसोपाख्यानवर्णनं नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

॥ समाप्तश्चतुर्थस्कन्धः ॥ ४ ॥

---

१ नारदजीने प्रचेतौको ज्ञान अभ्यास दृढ होनेके निमित्त दिया ॥

२ दोहा—दयादृष्टि व्रजचंद्रसे, द्विज ज्वालाप्रसाद । शुद्ध कियो स्कंध यह, जन पावहिं अहलाद ॥ १ ॥
भ्रम संदह मिटाकर, पद और अर्थ मिलाय । आशय सबको प्रगटकर, शुद्ध कियो मन लाय ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

पंचमस्कन्धप्रारम्भः ।

अध्याय १.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

राजोवाच–प्रियव्रतो भागवत आत्मारामः कथं मुने ॥
गृहेऽरमत यन्मूलः कर्मबन्धः पराभवः ॥ १ ॥

दोहा–गोपीजन मन भय हरन, करन सकल आनंद । करहु कृपा सुखदान प्रभु, कृष्णचन्द्र जग बंद ॥

श्रीमान् परमहंसनसों जिनके चरणकमलको चैतन्य मकरंदरस पान कियो गयो भक्तजननके मनमें निवास करवेवारे श्रीरामचंद्रके अर्थ नमस्कार होय ॥ अब पंचमस्कंधकी व्याख्या करैं है, यामें अनेक विषय हैं, या स्कंधमें प्रियव्रतको वंश प्रसंग सहित वर्णन करैंगे ॥ १ ॥ छब्बीस अध्यायसो पंचममें स्थान लक्षण कहे हैं, लोक द्वीप आदि मर्यादा पालित अनेक प्रकारसो वर्णन करी है ॥ २ ॥ पृथिवीके ऊपर नीचेकी लोक मर्यादा तीन तरहसो कहीहै, फिर एकएकसो मर्यादा बहुधा कही ॥ ३ ॥ भूमिमें द्वीपादि मर्यादा राजनसो पालित है और भूमिके ऊपर देवादिकनसो रक्षित है, नीचे असुरादिसों रक्षित है ॥ ४ ॥ तहां वीस अध्यायसो प्रियव्रतके आगे जो भये विन करके भूमिमें द्वीप आदि मर्यादा पालित है, ऐसे वर्णन करैंगे ॥ ५ ॥ तीन अध्यायसो सूर्यादि ज्योतिश्चक्र कह्यौ अतलादिकनमें दैत्यादिकनकी पालित पुरी तीन अध्यायसो वर्णित है ॥ ६ ॥ तहां प्रथम अध्यायमें ज्ञानीको राज्यसो निवृत्ति, और ज्ञानमें निष्ठा, ये प्रियव्रतकी अद्भुत कथा है ॥ ७ ॥ प्रियव्रतको प्रथम वैराग्य भयो, फेर गृहस्थी करी, फिर सब संग त्याग मोक्ष भई, यामें विस्मयकर परीक्षित पूछै हैं ॥ राजा परीक्षित बोले कि हे मुने ! महात्मा प्रियव्रत तौ परमभक्त हे यासों विनकी प्रीति आत्मामेंही है सकै है ये क्यों गृहाश्रममें रत भये यह आश्रम दोषरहित नहीं है कारण कि यह कर्मसो बंधो भयो है और अपने रूपके तिरस्कारको कारण है ॥ १ ॥ और गृहस्थाश्रममें प्रीति हे द्विजर्षभ ! प्रियव्रतसरीके मुक्तसंगी भागवत पुरुषनको तो कभू घरमें अभिनिवेशही नहीं है सकैहै ॥ २ ॥ हे विप्रर्षे ! उत्तमश्लोकके चरणकी छायाके सुखसो आनंदित चित्त महात्मानको कुटुंबमें चाहनाकी बुद्धि नहीं होयहै ॥ ३ ॥ हे ब्रह्मन् ! स्त्री घर पुत्रादिमें आसक्तकी श्रीकृष्णमें फलानुसंधानरहित मति भई तथा सिद्धि प्राप्त भई ये मोको महा संदेह है सो कहो ॥ ४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! आपने सत्य कह्यो परंतु भगवान् उत्तमश्लोकके श्रीमान् चरणारविंदके मकरंद रसमें आवेशित चित्तवारे भागवत श्रीवैष्णवजन हैं वे कोई विघ्नसो तिरस्कृत होयहैं, तौहू बहुधाकरके अपनी अत्यंत कल्याणरूप देवेवारी पदवी परमहंसनको प्रिय श्रीकृष्णचंद्रकी कथाको त्याग नहीं करैं हैं ॥ ५ ॥ हे राजन् ! जा समय देवर्षि नारदजीके चरणको आराधन करके विनको आत्मतत्व भली भांति ज्ञात है गयोहो यासों विनने मनमें विचारोहो कि अध्यात्मरूप कार्यके द्वारा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नियम ग्रहण करैंगे और याही कारण विनने चित्तको एकाग्र कर भगवान् वासुदेवमें सब इन्द्रियनके क्रिया कलाप अर्पण करदिये है वा समय मनुजीने अपने पुत्र प्रियव्रतको राजनीतिमें कहे सब प्रधान प्रधान गुणनको आश्रय जानके पृथ्वीके राज्य पालनमें नियुक्त करनो चाह्यो परन्तु इनने यह विचारकर कि पिताकी आज्ञाको उल्लंघन करनो अनुचित्त जानकेहू विनने यह विचार कियोहो कि राज्याधिकार मिथ्या है और यासों पराभव हैवेकी संभावना है यासों विनने प्रथम राज्यको लैनो नहीं चाह्यो ॥ ६ ॥ याके उपरांत भगवान् आदिदेव या विश्वके बढायवेके अर्थ वारंवार ध्यानके निश्चयसो सब जगत्को अभिप्राय जानके सब मूर्तिधारी वेद संग लिये मरीच्यादि निजगणनसो शोभित श्रीब्रह्माजी सत्यलोकसो उतरे ॥७॥ सो ब्रह्माजी जहां तहां आकाशमें चंद्रमाकी नाईं शोभायमान मार्ग मार्गमें विमाननकी पंक्तिनसो शोभित मार्गमें देवसमूहनसो पूजित होते मार्ग मार्गमें यूथके यूथ सिद्ध गंधर्व साध्य चारण मुनिगणनकरके गाये गये यशको श्रवण करते गंधमादन पर्वतकी गुफाको प्रकाशमान करते प्रियव्रतके निकट आये ॥ ८ ॥ तहां हंसवाहन पर विराजमान, इन पिता भगवान् हिरण्यगर्भको आए जान शीघ्र उठकर प्रियव्रत मनुसहित हाथ जोड श्रीनारदजी खडे भये गंधमादन पर्वतकी गुफामें बैठे नारदजी प्रियव्रतको उपदेश दैरहे हे वाही समय ब्रह्माजी विन्हैं लैवेको आये ॥ श्लोकोयम् ॥ " नारदो मंदरद्रोण्यां प्रियव्रतमुपादिशत् ॥ मनुस्तं नेतुमायातो ज्ञातव्यमिति कथ्यते " ॥ ९ ॥ हे भारत ! भगवान् स्वयंभू तिनसो पूजा ले विनके मीठे वचन और वेदनके सूक्तनसो अपने पुण्ययश और सर्वोत्कृष्टताको वर्णन सुन आदिपुरुष, दयायुक्त, हांसीके कटाक्षनसो देखते भए प्रियव्रतसो ये बोले ॥ १० ॥ भगवान् ब्रह्माजी बोले कि हे पुत्र ! सुनो हम सत्य कहै है, वा परमेश्वरकूं दोषारोपण करके देखवेकों योग्य नहीं हो अप्रमेय देवकी आज्ञा हम सब विवश हैंके धारै है शिव, तुम्हारे पिता और ये नारदजीहू तथा सब हम विनकी आज्ञा पालैं हैं ॥ ११ ॥ तिन ईश्वरके करेभएकों तपसो, विद्यासो, योगवीर्य करकै, बुद्धिसो, धनसो, धर्मादि चारोंनसो औरसो अपनेसो कोई शरीरधारी जीवमात्र दूर करवेकों समर्थ नहीं होय है ॥ १२ ॥ हे प्रियव्रत ! सब लोकनमें उत्पत्ति नाश शोक मोह भय सुख दुःख इन सबके निमित्त कर्म करवेको परमश्वरको दियो यह देह सबही जीव धारण करैं हैं वाको अन्यथा करवेकी कोई सामर्थ्य नहीं राखैहै ॥ १३ ॥ हे पुत्र ! जिनकी वेदलक्षण वाणीरूप डोरमें अति दुस्तर गुणकर्मनकरकै बंधेभए हम सब ईश्वरके अर्थ ऐसे बलि देयहैं जैसे नाथमें नथेभए चौपाये बैल आदिक दो पदवारे पुरुषके अर्थ काम देतेहैं ॥ १४ ॥ हे अंग प्रियव्रत ! गुणकर्मनके संगसो ईश्वरसों दिये भए सुख वा दुःखकू हम भोगैहै, ईश्वर जो युक्त वा अयुक्त योनि दैहै, वामें स्थित हैके हमारी गति ऐसी है जैसे नेत्रवारो पुरुष अंधेको धूप छाया जहां चाहै तहां लेजाय है ॥ १५ ॥ अभिमान त्यागकर अपने प्रारब्धपर्यंत मुक्तहू देहकूं धारे हैं, जैसे सुपनेमें जो अनुमान कियो भयो है वाको जागो भयो अभिमान त्याग कर स्मरण करैहै, परंतु और देहांतरके देवेवारे कर्मवासनानको नहीं भजैहै ॥ १६ ॥ मन बुद्धि चित्त अहंकार आदि छै वैरीके समीपवर्ती प्रमत्तको वनमेंहू भय होय है और जितेंद्री आत्मज्ञानी बुद्धिमान्को गृहस्थाश्रमहू कुछ दोष नहीं करसकै है ॥ १७ ॥ जो कोई छै इंद्रियरूप वैरीनको जीतो चाहैं, तो गृहस्थाश्रममें हैंकै विनके जीतवेके निमित्त यत्न करनो उचित है क्योंकि किलेमें बैठो पुरुष शत्रुनको जीतलेय है जब सब काम याके क्षीण हैजाय तब यह विद्वान् चाहै जहां विचरै क्योंकि गृहस्थाश्रम किलेकी लडाई है और संन्यास आश्रम मैदानकी लडाई है ॥ १८ ॥ तुमने

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तौ कमलनाभके चरणकमलरूप किलेके आश्रित हैकै छै वैरी जीतेहैं ईश्वरके दियेभये भोग भोगो सब संगसो मुक्त हैकै आपनो स्वरूप रूपभूत परमेश्वरको भजन करो ॥ १९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि जब त्रिभुवनगुरु ब्रह्माजीने वा महाभागवतसौ ऐसे कह्यो तब वह भगवान् विरिंचिकी आज्ञाकों बहुमानसौ नीचेकूं शिर कर बहुत अच्छो ऐसे बहुमानसौ अंगीकार करतोभयो ॥ २० ॥ ऐसो हैवेसो मनुजीको बहुत संतोष भयो विनने आनंदित चित्तसौ ब्रह्माजीकी पूजा कीनी ब्रह्माजी वाय ग्रहण कर प्रियव्रत और नारदजीके सन्मुख अपने लोकको जो मन और वाणीके अगोचर हैवेसो व्यवहारशून्य है जायवेको अंतर्ध्यान भये मेरे द्वारा प्रियव्रतको योगभ्रष्ट होनो और नारदजीको एक शिष्य निकस जायवेसौ यह दोनौ जायवेके समय हमें कुटिल दृष्टिसो देखेंगे यह ब्रह्माजीने विचाराहो परंतु ऐसो नहीं भयो परंतु प्रियव्रत और नारदजी विन्हैं एकटक लोचनसौ देखत रहे ॥ २१ ॥ श्रीमनुजीहू ब्रह्माके उपदेशसो अपनो मनोरथ पूरो कर श्रीनारदजीकी संमतिसो अपने पुत्रको सकल धरामंडलकी रक्षाके लिये स्थित करकै, आप अतिकठिन विषयरूप विषके जलाशयकी आशाते निवृत्त होते भए ॥ २२ ॥ ऐसे प्रियव्रत पृथिवीपति, ईश्वरकी इच्छा करकै सब कर्मको अधिकार कर, सब जगत्के बंधन नाशकके प्रभावयुक्त भगवान् आदिपुरुषके दोनों चरणकमलको निरंतर ध्यान करकै, सब अंतःकरणके कषाय जिनके दूर कर अति उदार महात्मानको मान बढावनेवारे पृथिवीकी रक्षा करते भये ॥ २३ ॥ याके उपरांत विश्वकर्मा प्रजापतिकी बेटी बर्हिष्मतीको व्याहते भए, तामें अपने समान शील गुण कर्म रूप वीर्य औदार्यादि गुणयुक्त दश पुत्र उत्पन्न करते भए, और ऊर्जस्वती नाम एक छोटी कन्या उत्पन्न करते भए ॥ २४ ॥ आग्नीध्र, इध्मजिह्व, यज्ञबाहु, महावीर, हिरण्यरेता, घृतपृष्ठ, सवन, मेधातिथि, वीतिहोत्र, कवि अग्निके नामपैही इनके नाम भये ॥ २५ ॥ इन सबमें कवि महावीर सवन ये तीनों ऊर्ध्वरेता भए, ये ब्रह्मविद्यामें बालकपनसोही निष्ठा कर अत्यंत परिश्रम परमहंसनके आश्रमको धारण करते भए ॥ २६ ॥ वा परमहंस आश्रममें महाशीलवारे महाश्रेष्ठ वे ऋषि सब जीवसमूहके निवासभूत और भयभीत दासनके शरणदाता श्रीमान् वासुदेवके चरणारविंदके निरन्तर स्मरण और अखंडित भक्तियोगके प्रभावसो शोधित अंतःकरणमें प्राप्त भगवान् सब जीवमात्रके आत्मभूत, सर्वांतर्यामी, व्यापक आत्मामें विशेष करकै अपनो ईश्वरको एक भावकर अर्थात् जीव ब्रह्मरूप समझकर भगवत्के रूपको प्राप्त होते भए ॥ २७ ॥ और स्त्रीमेंहू तीन पुत्र होते भए, उत्तम, तामस, रैवत, येही मन्वन्तरनके पति होते भए ॥ २८ ॥ ऐसे जब पुत्र परमहंस गतिको प्राप्त भये तब यह महात्मा ग्यारह अरब वर्षतक पृथ्वीको पालन करते रहे इनमें अखंड बलपूर्ण हो जब यह पूर्ण बलसौ धनुषकी टंकार करते तौ विना युद्धकेही धर्मके द्रोही पुरुषनको नाश है जातो भोगविलासहू इनको थोडो नहीं हो परम प्यारी माहिष्मती नारीके संग नित्य प्रति बढते आमोद प्रमोद करतो वाके स्त्रीपन लज्जासो और मंद मुसक्यान पूर्व अवलोकन और मनोहर क्रीडानसौ जाको मानो विज्ञान और विवेकको पराजित कर दियो है या कारण वह विषयनमें आसक्ति करवेके समय ऐसो प्रतीत होतो हो मानो आत्माको भूल गयोहो ॥ २९ ॥ जबतक भगवान् सूर्यनारायण सुमेरुपर्वतकी परिक्रमा करते दिनमें तपते और रातमें अस्त होकर आधे आधे समय प्रकाश और अंधकार करते है, सो दिनमें भगवत आराधनसो वृद्धित प्रभाग पुरुषनको रात्रिमें अंधकार हैवेसो दुःखित जान सूर्य समानवेग ज्योतिर्मयरथमें चढके रात्रिकोभी दिन करवेकी इच्छासो तबतक सूर्यकी सात बार परिक्रमाते दूसरे सूर्यकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नाईं उदय भये भगवतकी कृपासों असंभवहू संभव होयहै ॥ ३० ॥ जो वे उनके रथके पैयान करके करीभई लकीरकी खाई भई वेही सप्त समुद्र भए उनके बीचकी जे भूमी वे सप्तद्वीप भये ॥ ३१ ॥ विन द्वीपनके, जंबू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक, पुष्कर नाम भये, एकसो एक यथाक्रम दुगुने सागरसों बाहर चारों ओर बनाये गये हैं ॥ ३२ ॥ खारी समुद्र, गन्नेके रसको अब्धि, मदिराको सिंधु, घृतको अर्णव, क्षीरसागर, मंठेको पारावार, शुद्ध जलको सरित्पति, ये सात समुद्र भये सातों द्वीपनकी खाईकी नाईं यह सब द्वीप जे कि समुद्रनसो घिरे है इनको प्रमाण ऐसो है कि वाकेही तुल्य यथाक्रमसो पहले एक समुद्र फिर समुद्रसो आगे एक द्वीप समुद्रके प्रमाणकी बराबर यह सब द्वीप पृथक् पृथक् असंकीर्ण रूपसों बाहरी भागमेंही व्याप्त हो रहे हैं भीतर नहीं फैले है तिन जंबू आदि द्वीपनमें बर्हिष्मतीके पतिने अनुवर्ति आग्नीध्र इध्मजिह्व यज्ञबाहु हिरण्यरेता घृतपृष्ठ मेधातिथि वीतिहोत्र इन नामनके पुत्रनको क्रमके अनुसार एक एक द्वीपमें राजा करते भये ॥ ३३ ॥ ऊर्जस्वतीनाम बेटीको शुक्राचार्यको दीनी जामें देवयानी नाम शुक्राचार्यकी बेटी भई ॥ ३४ ॥ श्लोक—जे पुरुष श्रीमन्नारायणके भक्त हैं और विनने भगवान्‌की चरणरेणु द्वारा अपनी इन्द्रियनको जीत लियो है विनमें ऐसो पौरुष होनो असंभव नहीं कारण कि अत्यंत चांडाल पुरुषहू भगवान्‌को नाम एक वार उच्चारण कर पवित्र है जायहै और संसार बंधनसों छूट जाय है ॥ ३५ ॥ ऐसे अपरिमित बलपराक्रम वो राजा प्रियव्रत देवर्षि नारदजीके श्रीचरण आश्रय करवेके समय जो राज्यादि प्रपंच आयपरो वाके संबन्धमें अपने आत्माको अनिष्ट समान मानतो मनमें वैराग्यको प्राप्त होय यह वचन बोली ॥ ३६ ॥ हाय मैंने

---

१ शंका—राजा प्रियव्रतका एक रथ, जिसमें बैठकर रात्रिके नाश करनेके लिये और आठ प्रहरका दिन करनेके लिये सूर्यके पीछे पीछे राजा प्रियव्रत क्यों घूमता फिरा ? राजा प्रियव्रतने रात्रिका नाश किया तथा दिनका क्यों नहीं किया ? फिर रात क्यों की ? राजा प्रियव्रत रथमें बैठकर आकाशमें घूमा करताथा फिर रथके पहियोंसे पृथ्वीमें सात समुद्र कैसे होगये ? जो पृथ्वीपर रथ घूमता तो निःसंदेह पहियोंके चिह्नसे समुद्र हो जाते और कुछ शंका न होती, परन्तु आकाशमें रथ चलनेसे पृथ्वीमें पहियोंसे सात समुद्र, सात द्वीप होगये यह बडे आश्चर्यकी बात है, तथा रथ तो एक और चौडाई लम्बाई एक प्रकारकी फिर क्या कारण कि एकसे दूना दूसरा, दूसरेसे दूना तीसरा, तीसरेसे दूना चौथा, चौथेसे दूना पांचवां, पांचवेंसे दूना छठा, छठेसे दूना सातवां समुद्र और सातवां द्वीप हुआ, यह बडी भारी शंका है।

उत्तर—पहिले तो प्रियव्रतने अपने तपके अभिमानसे विचार किया, कि रात्रिका मैं नाश करूंगा केवल अकेला दिनही रक्खूंगा क्योंकि यह रात्रिका अन्धकार महादुःखदायक है, ऐसा मनमें विचार किया, और अपने तपके तेज प्रकाशसे अन्धकार न होने दिया और सूर्यनारायणके रथके पीछे पीछे अपना रथ कर लिया, परन्तु फिर पीछे राजाको ज्ञान हुआ, समझा कि दिन रातकी मर्यादा भगवान्‌की की हुई है जो मैं रात्रिको नष्ट करूंगा तो भगवान् मेरे ऊपर अत्यन्त कोप करके मुझको दण्ड देंगे, इस प्रकार अपने मनमें भय मान रात्रिका नाश नहीं किया, दूसरी शंका—राजा प्रियव्रत तपके बलसे आकाशमें घूमता फिरे करेथा, तथा कभी कभी भूमिपरभी घूमताथा कुम्हारके चक्रकी समान रथको फिराता था, जब भूमिमें रथको फेरने लगा तब बडे वेगसे जो रथ घूमताथा उसके पहियोंके चिह्न पृथ्वीसे सात समुद्र होगये, और सात द्वीप होगये, सात चक्र पृथ्वीके राजाने दियेथे, श्रीलक्ष्मीपति भगवान्‌ने पृथ्वीपर अपनी बनाई सनातनकी जो मर्यादा सात समुद्र सात द्वीप एकसे एक दूना उनको नष्ट देखकर जो पृथ्वीपर सदासे चले आये हैं वह सात समुद्र और सात द्वीप पृथ्वीपर क्यों नहीं मैं जानताहूं कि ब्रह्मा, स्वायंभू मनुसे जो सृष्टिकी रचना कराई तब उन्होंने सात समुद्र और द्वीप नहीं बनाये, इसलिये अपनी माया करके वासुदेव भगवान् राजा प्रियव्रतके सारथी हुए और राजाने नहीं जाना कि मेरे सारथीको उठाकर दूसरे स्थानपर बैठाय दिया और आप सारथी बनकर अपनी इच्छासे रथकी लम्बाई चौडाई तथा रथके पहियोंको जितना बडा करना चाहतेथे उतनाही बडा कर लेतेथे और घोडोंको अपनी इच्छानुसार चलाकर एक वारमें दूना, दूसरी वारमें तिगुणा, तीसरी वारमें चौगुणा, इसी प्रकार समुद्र और द्वीप एकसे एक दुगुणा दुगुणा जैसे पृथक् थे वैसेही बनाकर वैकुण्ठ धामको चले गये, इसी कारण समुद्र अथवा द्वीप दूने दूने हुए ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अच्छा नहीं कियो जो अविद्यारचित विषयरूप विषम अंधकूपमें इन्द्रियनके वश हैकै गिरो सबही वृथा है अहो मैं अपनी स्त्रीको क्रीडामृग बनो मोको धिक्कार है यह कह राजा अपनी बहुत निन्दा करनलगो ॥ ३७ ॥ श्रीमन्नारायणकी कृपासों ब्रह्मज्ञानको प्राप्त हो प्रियव्रत वा समय आज्ञाकारी समीप आये पुत्रनको या पृथिवीको विभाग कर सब भोग भुक्त पटराणीको मृतककी नाईं त्याग, महा विभूतिकों छोड हृदयको वैराग्यसों पूर्ण कर श्रीहरिकी लीलाके प्रभावसो हृदयमें निश्चय ग्रहणकर भगवान्नारदके उपदेशके अनुसार वर्तन लगो ॥ ३८ ॥ ताके ये श्लोक हैं, ईश्वरके विना प्रियव्रतके करे कर्मको कौन करसकैगो, रात्रीको दूर करतो जो प्रियव्रत अपने रथकी नेमिसो सप्त समुद्र करतो भयो ॥ ३९ ॥ जाने नदी पर्वत वन आदि करके भूमीकी स्थिति कीनी और जीवनके सुखके अर्थ द्वीपद्वीपमें विभागसो सीमा बांधी है ॥ ४० ॥ हरिभक्तोंके प्यारे प्रियव्रतने भूमिको स्वर्गको मनुष्यको और योगकर्मसों उत्पन्न भए ऐश्वर्य्यको नरककी समान समझा हो वा परम भक्तकी समता कौन कर सके है कोनकी सामर्थ्य है ॥ ४१ ॥

भौमं दिव्यं मानुषं च महित्वं कर्मयोगजम् ॥
यश्चक्रे निरयौपम्यं पुरुषानुजनप्रियः ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे प्रियव्रतस्य प्रथमवैराग्यपश्चाद्गृहस्थाश्रमः पुनर्वैराग्येण मोक्षप्राप्तिवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच–एवं पितरि संप्रवृत्ते तदनु शासने वर्तमान आग्नीध्रो जम्बूद्वीपौकसः प्रजा औरसवद्धर्मावेक्षमाणः पर्यगोपायत् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि जब पिता ऐसे वैराग्यवान् भए तब तिनकी आज्ञामें वर्तमान जंबूद्वीपवासी प्रजाको आग्नीध्र सद्धर्म आचरण कर रक्षा करते भए १ ॥ सो वह आग्नीध्र तपस्वी कोई समय पितृलोककी पुत्रकी कामना कर देवांगनाके क्रीडापर्वत मंदराचलकी गुफामें विश्व रचवेवारेनके पति भगवान्के पूजा करवेकी सामग्री संग्रह कर आप एकाग्र मन करके आराधन करतो भयो ॥ २ ॥ या बातको देखके भगवान् आदिपुरुष श्रीब्रह्माजी सभामें गावती भई पूर्वचित्ति नामनी अप्सराको भेजते भए ॥ ३ ॥ ता समय वा आग्नीध्रके आश्रमके समीपके अति रमणीय अनेक प्रकारके सघन वृक्षसमूहपै चढी भई सुवर्णलता जिनपै मोरनके जोडा बैठे है और विनके षड्जादिस्वर और जलमृग कारंडव हंसनके मनोहर स्वरसों विचित्र शब्दायमान, तथा जलाशयमें कमलनके समूह शोभायमान है रहेहै तहां वा उपवनमें वह अप्सरा आई विचरती भई ॥ ४ ॥ सुंदर ललित चलवेके समय चरण धरवेकी गतिसों वाके चरणके आभूषणनको क्षण क्षणमें खनखनाहट सुनके राजकुमार समाधियोगसों मूंदे भये नयनकमलरूप कलिनको तनक खोल देखतो भयो ५ ॥ समीपमें भँवरी

---

१ सो भक्तजन ब्रह्मके उपासक हैं जिनको एक ये भजन है ॥ सोरठ ॥ धन धन ब्रह्मउपासक प्राणी ॥ टेर ॥ श्रवण मनन निदिध्यास सब किये आत्मज्योति पहिचानी ॥ १ ॥ नित्य निरीह अखंड स्वरूप लखि मगन भयो सहलानी ॥ २ ॥ सविशेषीके गुणगुण गिनते भूल्यो सब कर्मकहानी ॥ ३ ॥ वात्सल्याश्रित सौशील्यादिक सौलभ्य और स्वामी ॥ ४ ॥ शक्तिपूरण प्राप्त सदा गुण करुणा गांठ घुलानी ॥ ५ ॥ ब्रह्मादिक सुख तृणसम लागत मूलकृति लौ नादानी ॥ ६ ॥ पुरुषोत्तम सांची यही नवनिधि नवगुण ज्ञान अभिमानी ॥ ७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

की नाईं पुष्पकों सूंघवेवारी, देवता मनुष्यके मन नयनको आनंदसो भरे भये, गमन, विहार, लज्जा विनययुक्त चितवन और सुंदर स्वरीले अक्षरनके मुखसो निकसे वचननसो मनुष्यनके मनमें कामदेवके अवसरको प्रगट करती भई, निज मुखसो हांसी सहित वचन बोलवेके समय निकसी अमृत सम मादककी सुगंधिके मदसो अंधे मधुकरनके समूहके रोकवेसो शीघ्र शीघ्र पग धरवेसो किंचित् स्तनकलश चलवेसो जूडाके भारसो नम्र महाप्रकाशित पूर्वचित्ति अप्सराको देखतेही भगवान् कामदेवके वशमें हैके जडकीसी नाईं राजा आग्नीध्र यों बोले ॥ ६ ॥ हे मुनिवर्य ! तुम कौन हो या पर्वतपै कहा करवेकी तुम्हारी इच्छा है क्या तुम परमेश्वकी माया हो हे सुहृत्सखे ! तुम निर्गुणधनुषधारें हो सो या वनमें हम सरीके प्रमत्त मृगनको अपने लिये ढूंढोहो ॥ ७ ॥ वाके कटाक्ष देख बोले कि तुम्हारे दोनौ कमल नेत्रही जिनके पिच्छ है और दोनौही विभ्रमके कारण शान्त है तथापि पंखनके विनाही अतिशय कठिन दृष्टि आते हैं विना फोंकके रुचिर, अति पैने दोनो ये बाण कौनपै छोडोगी, या वनमें विचरत हमसरीके जड बुद्धिवारेनपै तुम्हारो पराक्रम क्षेमके अर्थ होय ॥ ८ ॥ ताके अंगकी सुगंधसो लोभी पीछै आवते गूंजते भौंरानको देख बोले कि आप भगवत्सरीके हो सो तुम्हारे ये शिष्य सब ओरसो रहस्यसहित निरंतर श्रीश्वरप्रतिपादक सामवेद पढै हैं, गावै हैं, तुम्हारे शिरसो गिरी सुमनवृष्टिको यह सब भ्रमर ऐसे सेवन करें हैं जैसे ऋषि लोग वेदनकी शाखानको सेवन करै हैं ॥ ९ ॥ हे ब्रह्मन् ! आपके चरणरूप पींजरनके तीतरनकी अतिप्रगट रूपरहित वाणी हम सुनै हैं, कदंबसमान रुचिर (उत्तम पीले वर्णके पहरनैके वस्त्रको नितम्बकी कांति समझकर कहता है कि) तुमने अपने सुन्दर नितम्बमें यह कदम्बके फूलनकी कान्ति कहां पाई (फिर मेखलाको देखके कहैहै) कि ऋषे ! ये बिजली स्थिर करके तुमने अपनी कटिमें कैसे लपेट राखी है यह कौनसो सिद्धाईको लटका है और तुम्हारा वल्कल कहां गयो ॥ १० ॥ हे द्विज ! रुचिरस्तनरूप शृंगनमें कहा भरोहै मैं या कारणसो देखैहूं कि तुम मध्य भागमें दुर्बल हैके कष्टसो जिनको धारण करै हो या भावको देखके मोकू या बातको अनुमान होयहै और हमारी दृष्टि केवल इन्ही दौननके ऊपर लग रही है (फिर दोनोनपै कुमकुम लगो देख बोले) कि तुमने अपने दोनौ शृंगनपै यह अति सुंदर लाल लाल पंक कहा लगायो है जासो मेरे या आश्रमको पवित्र करै हो ॥ ११ ॥ हे सुहृत्तम ! आप अपनो लोक हमकों दिखाओ, जहांके जन अपने हृदयपै ऐसे अद्भुत अवयवनको धारण करै हैं तुम इनके दिखायवैसो हमसरीकेनके मनको महा चाह चढाओहो, और केवल यही नहीं किन्तु तुम्हारे मुखमें मधुर आलाप और विलाससहित अद्भुत अधरामृतहू है ॥ १२ ॥ हे अंग मित्र ! तुम्हारे लोकमें खायवेकी कहा वस्तु है, जाके खायवेसो ऐसी मुखसें सुगंधि आवे है, कहा तुम विष्णुकी कला हो जासो विना भोजन ऐसी कान्ति है तुम्हारे दोनौ काननमें विष्णुजीकी नाईं दो मकराकृत कुंडल दीप्तिमान है रहेहैं तिनके निकटही निमेषशून्य दो नेत्र शोभा विस्तार कर रहे हैं तुम्हारो मुख मानो सरोवर है यामें दो चंचल नेत्र मीनकी समान क्रीडा करै हैं और मुखके भीतर दांतनकी पंक्ति राजहंसनकी पंक्तिकी समान शोभा विस्तार

१ प्रयोजन यह है कि वीर पुरुषहू एकही धनुष धारण करे है सो तुम दो धनुष धारण करो हौ और दिग्विजय करे पीछे वीर प्रत्यंचा उतार देय है सो तुमहू विना प्रत्यंचाके धनुष धारणसो अपनेको जगत् दिग्विजयीपनो द्योतन करो हो ॥ २ यहां यह भाव है कि मस्तकपै सींग तौ बहुतनके देखे पन तुमारी छातीपै सींग उपजे है या अथवा कोई अति प्रिय धनवस्तु अपनी निगाहके अगारी रहवेके कारण छातीमें गाढी है सो कहा कारण है इत्यादि कथाभाग है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करैहै और यह केशकलाप अलिकुलकी नाईं शोभा विस्तार कर रहे हैं ॥ १३ ॥ जो ये गेंद तुम्हारे हस्तकमलसों फेंको गयोहै ये दिशानमें घूमें है, सो देखकै मेरी दृष्टिको चंचल करै है तुम्हारे यह वेणीबंधन खसै पडै हैं सो कहा तुम्हैं इनकी सुधि नहीं है अरी ! यह धूर्त लंपट पवन तेरी नीवीको हरण करै है कहा याकोहू नहीं संभारती ॥ १४ ॥ हे तपोधन ! तप करवेवारेनके तपको नाश करवेवारो ये रूप तुमको कौन तपकरकै मिलो है, हे मित्र ! मेरे संग तप करो, जो हमारे ऊपर प्रसन्न हैकै भगवान् ब्रह्माजी तुम्हैं हमारी स्त्री करैंय ॥ १५ ॥ हमें समझ परै है कि भगवान् ब्रह्माजीनें तुमको हमारे निमित्त भेजोहै सो या कारण हम तुह्मे अब नहीं छोडैंगे मेरी दृष्टि और मन तुममें लगो है सो जुदो नहीं होयहै या कारण हे श्रेष्ठ शृंगवारी ! जहां तुम्हारो मन चाहै तहां हमें लेचलो हम तुम्हारे आधीन हैं राजा कहैहै कि आहा अब मेंने जानी ये मनोरथ तो मेरो अवश्यही सफल होयगो क्योंकि याकी सूचन करनवारो ए शिवा मेरे वामभागसों दक्षिणको आय रहीहै या शकुनसो मालूम होयहै ॥ १६ ॥ श्रीशुकाचार्य बोले कि या प्रकार ललनानके फुसलायवेमें चतुर देवतानके समान बुद्धिमान् आग्नीध्रमें ग्राम्य जननके भीतर चतुरवारी परिपूर्ण भाषाके द्वारा वा अप्सराको भली भांति आदर कर वाको मनायो ॥ १७ ॥ वह अप्सरा वा वीर यूथपति राजाके बुद्धि, शील, रूप, अवस्था, श्री, उदारतासों मोहित हो दस हज्जार वर्ष पर्यंत वा जंबूद्वीपपति आग्नीध्रके संग भूमि स्वर्गके भोगनको भोगती भई ॥१८॥ सो राजवर तामें आग्नीध्र, नाभि, किंपुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्यक, हिरण्मय, कुरु, भद्राश्व, केतुमाल नामक नौ पुत्र उत्पन्न करते भये " पुन्नाम्नो नरकात् त्रायंत इति व्युत्पत्तिरस्ति " ॥ १९ ॥ वो अप्सरा एक एक वर्षमें एक एक ऐसे नव पुत्रनकों उत्पन्न कर घरमें छोड फिर ब्रह्माजीके पास चली जाती भई ॥ २० ॥ वे आग्नीध्रके पुत्र माताकी कृपासो अपने स्वाभाविक सुभावसो दृढअंग बलयुक्त भए, पिताको विभाग कियो भयो सब राज अपने समान नाम विस्तार कर सब जंबुद्वीपके खंडनको भोगते भए ॥ २१ ॥ राजा आग्नीध्रकी कामसो तृप्ति न भई यासो दिनरात अप्सराकी चिंता करकै वाको अधिक मान श्रुतिनसो निर्दिष्ट यज्ञ करके वाही लोककों प्राप्त भए, जहां पितर आनंद करै है विजयध्वजीमें है कि अप्सरालोकही पितृलोक है ॥ २२ ॥ जब पिता वैकुंठको गए तब नव भाई मेरुदुहितृ सुमेरु पर्वतकी पुत्री मेरुदेवी, प्रतिरूपा उग्रदंष्ट्री, लता, रम्या, श्यामा, नारी, भद्रा, देववीति इन नवनको व्याहते भए ॥ २३ ॥

संपरेते पितरि नव भ्रातरो मेरुदुहितृर्मेरुदेवीं प्रतिरूपामुग्रदंष्ट्रीं लतां
रम्यां श्यामां नारीं भद्रां देववीतिमिति संज्ञा नवोदवहन् ॥ २३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे आग्नीध्रचरित्रवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

श्रीशुक उवाच–नाभिरपत्यकामोऽप्रजया मेरुदेव्या
भगवन्तं यज्ञपुरुषमवहितात्माऽयजत् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि सन्तानरहित राजा नाभि पुत्रकी चाहना करकै मेरुदेवीसहित श्रीभगवान् यज्ञपुरुषको सावधान होयकर यज्ञ करतो भयो ॥ १ ॥ " या अध्यायमें सबके शिरोमणि

१ अर्थात् या जंबूद्वीपके नव खंड भये जे आग्नीध्रके पुत्रनके नाम हैं वेही विन खंडनके नाम भये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सर्वज्ञ श्रीजैनमतप्रवर्तक भगवान् ऋषभदेवजी भए जाको चौवीस अवतारोंमें वर्णन हैं " नाभि राजा श्रद्धाकरकै विशुद्धभावसौ यजन कर प्रवर्ग्य नामक कर्म कर रहे हे वा समय यद्यपि भगवान् द्रव्य देश काल मंत्र ऋत्विक् दक्षिणा और विधि इन उपायनसौहू प्राप्त नहीं होते तौहू भक्तनके ऊपर दया करवेको स्वयं सुंदर शरीर धारण कर वाके सामने अपने रूपको प्रगट कियो । स्वरूप धारणको यही कारण है कि भक्तजननकी मनोकामना है जाय जब भक्तने वासना कीनी कि विनका चित्त आकर्षित हैगयो नारायण जा मूर्तिसौ प्रगट भये वह स्वतंत्र ही सब अंग मन और नेत्रनके आनंददायक हे वह मूर्ति सुन्दर और सुखदायक ही ॥ २ ॥ याके उपरांत चतुर्भुजधारी सुवर्णमय पुरुषरूप, पीतांबर धारी, वक्षस्थलमें श्रीमहालक्ष्मीको चिह्न शोभित, शंख शमल वनमाला चक्र कौस्तुभमणि गदादिसौं शोभित और श्रेष्ठ मुकुट कुंडल कडा कटिसूत्र हार केयूर नूपुर आदि अंगभूषणनसो की मनोहर किरणनकी झलक वा मूर्तिको सब शरीर जगमगाय रहौ हो वा समय ऋत्विक् सभासद और यजमान सबनै ऐसो मनोहर अद्भुत शृंगार किये विष्णु भगवान्को सुन्दर स्वरूप देख विनको बहुत आराधन करके शिर झुकाय विविध भांतिके उपहारद्वारा पूजन कर जैसे दरिद्री संपदाको देख प्रसन्न हैके वाको सन्मान करै है वैसेही ऋत्विक् प्रसन्न हैके बोले ॥ ३ ॥ ऋत्विक् बोले कि हे पूज्यतम ! तुम परिपूर्ण हो तौहू हम सरीखे भृत्यजननकी पूजा वारंवार ग्रहण करवेके योग्य हो हे प्रभो ! हममें इतनी सामर्थ नहीं है जो आपकी स्तुति करसकै आपको स्वरूप जाननो महा दुर्लभ है यासो हमने सत्पुरुष साधु महात्मानके निकट केवल ' नमस्कार ' ' नमस्कार ' इतनीही स्तुति करनी सीखी है क्योंकि प्रपंचकी बुद्धिवारो असमर्थ पुरुष प्रपंचके अन्तर्भूत नाम-रूप आकार प्रकृतिसो परे आपके स्वरूपको निरूपण कोन कर सकैहै ॥ ४ ॥ सब जीवसमूहनके पापनाशक, अत्यंत कल्याणदायक तुमारे श्रेष्ठ गुणगणनके कहिवेके विना और प्रकारसो कोई नहीं जानसके है ॥ ५ ॥ हे परम ! आपके भक्त लोक प्रीतिपूर्वक गद्गदाक्षर उच्चारण कर जो आपकी स्तुति करैहैं और शुद्ध जल पल्लव तुलसी दूर्वाके अंकुर आदि तयार करकै पूजन करैहैं आप वाहीसो प्रसन्न होजाउहौं ॥ ६ ॥ और प्रीतिके विना तौ अनेक सामग्री युक्त अंगसो पूर्णहू यज्ञ कियो जाय सो यासो मन चाह्यो कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होयहै ॥ ७ ॥ आप सदा स्वतंत्र साक्षात् स्वयंही प्रगट भयेहो संपूर्ण पराक्रम स्वरूपभूत परमानंद ब्रह्मस्वरूप हो परन्तु हम कामनावारे भक्तनपे तो केवल आपकी उपासना मात्रही बन सकै है ॥ ८ ॥ हे प्रभो ! मूर्ख पुरुष स्वयं आपकी श्रेष्ठताको नहीं जाने है सो विनके निकट अत्यन्त गुणवारी दया द्वारा मोक्ष नाम अपनी महिमा तथा उनकी अभिलाषा सिद्ध करवेको तुम पूजित नहीं हैकैहू और दूसरे सापेक्ष पुरुषकी समान दर्शन दियो है या कारण हमारी पूजासो आपको

१ शंका—राजा नाभिने अपने यज्ञमें प्रगट भगवान् वासुदेवको देखा, फिर उनके नमस्कार और स्तुति क्यों नहीं की ' इसका क्या कारण ' और जो यज्ञमें ऋषीश्वर मुनीश्वर थे उन्होंने भगवान्को अनेक अनेक प्रकारसे नमस्कार और स्तुति की, और राजा नाभि दूसरे मनुष्यकी समान सन्मुख खडे रहे जैसे यज्ञमें इनका कुछ नहीं यह बडी भारी शंका है ।

उत्तर—राजा नाभि अपने यज्ञमें भगवान्को देखके स्त्रीसहित अपने नेत्रोंमें जल भरलाया और भगवान्के दर्शन करकै ध्यानमग्न होगये, जब राजा नाभि स्त्रीसमेत बोल नहीं सके, पृथ्वीपर गिर पडे प्रेमके वशीभूत हो शरीरके रोमांच खडे होगये, इस प्रकार राजाको प्रेमातुर देखकर ऋषियोंने राजा नाभिकी ओरसे भगवान् वासुदेवकी स्तुति की, इसलिये नाभि राजाने भगवान्को नमस्कार तथा स्तुति नहीं की ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कछु उपकार नहीं होयगो अपने दास जान हमको दर्शन दियो है ॥ ९ ॥ यद्यपि तुम वर देवेकूं आविर्भूत भए हो, तथापि हे पूजनीय ! यही वर है कि या राजर्षिके यज्ञमें वरदाता आप अपने भक्तनके नेत्रनको सन्मुख भये ॥ १० ॥ सब संगरहित हैवेके कारण तीक्ष्णज्ञानरूप अग्निसो जिनके सब मल धुए गए हैं आपमें स्वभाव धारनेहारे आत्माराम, मुनिजन आपके गुणगणनको सदा अभ्यास करते रहै हैं ऐसे महात्माहू आपके मंगलदायक गुणनको वर्णन करते आपकी स्तुति करै हैं परन्तु दर्शन तौ बहुतही दुर्लभ है ॥ ११ ॥ हे प्रभो ! हम यही वर मांगै है कि भूख लगवेमें गिरवेमें जंभाई लैवेमें और दुरवस्थाके समय जब कि हम आपको स्मरण करवेमें असमर्थ होय वा कालमें तथा ज्वर और मृत्युके समयमेंहू आपको गुणसहित नाम हमारी वाणीसो निकसतो रहै जो आपके नाम संपूर्ण पापनके दूर करवेवारे है ॥ " हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम् ॥ कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा " ॥ १२ ॥ हे देव ! हमारी औरहू प्रार्थना है आप स्वर्ग और अपवर्गके स्वामी हो आपके निकट पुत्र चाहनवारो यह राजर्षि आपकी समान पुत्रकी इच्छा करै हैं जैसे कोई मनुष्य धनवान्सो नाजके ऊपरकी भुस्सी मांगे ऐसे या लोकके फल आप समान पुत्रकी प्रार्थना करै है कारण कि यह संतानकोही पुरुषार्थ समझै है यासौ आपसो प्रार्थना कीनी है ॥ १३ ॥ याकी यह प्रार्थना असंगतहू नहीं है क्योंकि या संसारमें सबके पराजय करवेवारी तुम्हारी मायासो सब पराजित होयहै, वाकी पदवी नहीं जानी जाय है महापुरुषके चरणकी उपासना नहीं करवेसो कौनकी बुद्धि विषयरूप विषके वेगसो नहीं घिर जाय है ॥ १४ ॥ हे बहुकार्यकारिन् ! जो आपकों थोडेसे कार्यके लिये हमने बुलायो यह हमने बडी मूर्खता कीनी हम पुत्रकोही परम पुरुषार्थ मानेहैं हे देवदेव ! आपके प्रति जो यह हमने अपनो खेलसो प्रकाश कियो सो या अवज्ञाको आप सहवेके योग्य हैं कारण कि आप सबपर समान भाव राखै हो ॥ १५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि या गद्यात्मक स्तुतिको सुन, भारतवर्षपति नाभी करकै वंदित चरण, ऐसे ऋत्विजनसो स्तुति किये भये भगवान् दयालु हो बोले ॥ १६ ॥ श्रीभगवान् बोले कि अहो बडे आश्चर्यकी वार्ता है कि हे ऋषिहो ! आपने सत्यवाणीसों अति कठिणतर वर मांगो कि याके पुत्र मेरे समान होय, (कैवल्यात्) नाम मेरे समान तो मैं एकही हूं, तथापि ब्राह्मणनकी वाणी मिथ्या होयवेकों योग्य नहीं है, कारण कि उत्तम ब्राह्मणनको कुल मेरोही मुख है, ऐसे वेदमें है ॥ १७ ॥ ताते या नाभी राजाके यहां अंश कला करकै अवतार लेउंगो, क्यों कि अपनी आत्माके तुल्य और कोई नहीं है सो मैंही प्रगट होउंगो ॥ १८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसे सुनती भई मेरुदेवीके सामने वाके पतिसौ ऐसे कहि भगवान् अंतर्धान होते भए ॥ १९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वा यज्ञमें परमऋषिन करके प्रसन्न हो भगवान् नाभीके प्रिय करवेकी इच्छासौ वाके अंतःपुरमें मेरुदेवीमें धर्म दिखायवेकी कामना करकै दिगंबर रहिवेवारे तपस्वी ज्ञानी नैष्ठिक ब्रह्मचारी, ऊर्ध्वरेता ऋषिनको उपदेश दैवेको शुक्ल वर्णकी देह धार श्रीऋषभदेव नामक अवतार लियो ॥ २० ॥

बर्हिषि तस्मिन्नेव विष्णुदत्तभगवान् परमर्षिभिः प्रसादितो नाभेः प्रियचिकीर्षया तदवरोधायने मेरुदेव्यां धर्मान् दर्शयितुकामो वातरशनानां श्रमणानामृषीणामूर्ध्वमन्थिनां शुक्लया तनुवाऽवततार ॥ २० ॥

इति श्री० भा० पंचमस्कन्धे नाभीनृपस्य मेरुदेव्यां ऋषभावतारवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ४.

श्रीशुक उवाच-अथ ह तमुत्पत्त्यैवाभिव्यज्यमानभगवल्लक्षणं साम्योपशमवैराग्यैश्वर्यमहाविभूतिभिरनुदिनमेधमानानुभावं प्रकृतयः प्रजा ब्राह्मणा देवताश्चावनितलसमवनायातितरां जगृधुः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि श्रीऋषभदेवजीके उत्पन्न होतेही उनके अंगमें भगवान्के सब लक्षण है और समभाग वैराग्य शांति ऐश्वर्य और महासंपत्तिनसो विनको प्रभाव प्रतिदिन दीखवे लगो विनको पृथ्वीतलको पालन करवेके लिये प्रजा राजमंत्री और ब्रह्मण सबकी इच्छा भई ॥ १ ॥ अतिश्रेष्ठतम विपुल, ओज, बल, लक्ष्मी, यश, वीर्य, शौर्य देखकर तिनके पिता ऋषभ नाम करते भये ॥ २ ॥ तिनके ऊपर इंद्र भगवान् स्पर्धा कर वा खंडमें वर्षा नहीं करते भए ये जान योगीश्वर भगवान् ऋषभदेवजी हँसकै अपनी आत्मयोगकी मायासों अपने अजनाभ खंडमें वर्षा कीनी ॥ ३ ॥ नाभि तो अपने मनोरथ और सुंदर प्रजाको प्राप्त हैकै अति आनंदसो विह्वल अक्षर गद्गद वाणीसों अपनी इच्छासों मनुष्य लोक समान धर्मग्रहण करवेहारे भगवान् पुराणपुरुषको मायाविलसितमति राजा 'हे पुत्र हे प्यारे' ऐसे अनुरागसों अतिलालन करते परम आनंदको प्राप्त होतेभये ॥ ४ ॥ सब पुरकी प्रजा देशको अनुराग जान राजा नाभी अपने पुत्रकी धर्ममर्यादारक्षाके अर्थ अभिषेक कर ब्राह्मणनके ऊपर छोडकै मेरुदेवीकों संग ले बदरिकाश्रममें जाय प्रसन्नमनसों सुंदर तप समाधियोगकरकै नरनारायणभगवान् वासुदेवकी उपासना कर कालकरकै जीवन्मुक्त होय तिनकी महिमाको प्राप्त होते भए ॥ ५ ॥ हे परीक्षित् ! जा नाभिराजाके दो श्लोक हैं ॥ कौन पुरुष नाभिके समान कर्म करैगो, क्योंकि जाके शुद्धकर्मकरकै श्रीहरिभगवान् पुत्रभावकों प्राप्त होते भए ॥ ६ ॥ नाभिसो और ब्रह्मण्य कौन है जाने विप्रनकी मंगलमें पूजा कीनी जाके यज्ञमें जिन ब्राह्मणनने पराक्रम करकै यज्ञेशको दर्शन दिवायो ॥ ७ ॥ अब भगवान् ऋषभदेव अपने खंडको कर्मक्षेत्र मानके गुरुकुलमें वासकर गुरुसों वर और आज्ञा लेकै गृहस्थीनके धर्मनकी शिक्षा करते इंद्रकी दीनी भई जयंतीभार्यामें अपने समान शतपुत्रनकों उत्पन्न करतेभये, श्रुतिस्मृतिविहित दो प्रकारके कर्म कहिके वेदकी शिक्षा करते भए ॥ ८ ॥ जिनमें महायोगी भरतजी ज्येष्ठ श्रेष्ठगुणी होते भए जिनके नामसों ये भारतवर्ष कहावैहै ॥९॥ तिनके पीछे कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलयकेतु, भद्रसेन, इंद्रस्पृक्, विदर्भ, कीकट ये नौ पुत्र जे भए ये नव्वेमें प्रधान भये ॥ १० ॥ उनसे छोटे कवि हरि अंतरिक्ष प्रबुध पिप्पलायन आविर्होत्र और द्रुमिल चमस करभाजन ॥ ११ ॥ ये नौ योगेश्वर भये जे परम भक्त हे तिनको सुंदर चरित्र भगवत्की महिमाकरकै बढो भयो, वसुदेव नारदजीके संवादसों सबकी शांति करवेवारो आगे एकादशस्कन्धमें वर्णन करैंगे ॥ १२ ॥ छोटे इक्यासी जयंतीके पुत्र, पिताकी आज्ञा करवेवारे, महाशीलवान् महाश्रोत्रिय यज्ञशील सदा विशुद्धकर्म कर ब्राह्मण होते भये ॥ १३ ॥ भगवान् ऋषभ

---

१ शंका-हमने शास्त्र और पुराणोंमें ऐसा लिखा देखा है कि क्षत्रिय कुलमें जो बालक जन्म लेताहै तो उसका नाम ब्राह्मण रखते हैं, वेदकी रीतिसे, परन्तु राजानाभिने अपने पुत्रोंका नाम आप क्यों रक्खा ॥

उत्तर-सतयुग, त्रेता, द्वापरमें सब प्राणी अपने बालकोंके दो नाम रखतेथे वेदकी रीतिसे तो ब्राह्मणोंसे नाम रखवाते थे और बालकोंके कर्म देखकर उनका नाम आप रखते थे, ब्राह्मणोंकी आज्ञा लेकर, अपने पुत्रोंके कर्म देखकर दान करके, ब्राह्मणोंको प्रसन्न करके तब राजा नाभिने अपने पुत्रोंका नाम आप रक्खा कुछ अभिमान करके वेदकी रीति नहीं त्यागी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आप स्वतंत्र सब अनर्थनकी परंपरा निवृत्ति करवेवारे केवल आनंद अनुभवी ईश्वरही हे तथापि अनीश्वरकी भांति कर्मको प्रारंभ कर जे वा बातकूं नहीं जानेहे, तिनको कालके अनुसार धर्माचरण शिक्षा करते समभावमें रहे, महाशांत मैत्र दयालु ऋषभदेवजी धर्म अर्थ यश संतान और मोक्ष संग्रहके सहित लोगनको घरमें चलाये ॥ १४ ॥ जे महाश्रेष्ठ लोग आचरण करेहै वाके समान और-हू सब लोग करे हैं ॥ १५ ॥ अपनेको विदित सकलधर्म जो ब्रह्मसंबंधी हो, सो ब्राह्मणनके दिखाएभए मार्गसो साम आदि उपायनसो सब जनसमूहनको शिक्षा करतेभए ॥ १६ ॥ द्रव्य, देश, काल, अवस्था, श्रद्धा, ऋत्विजन करकै अनेक प्रकारसो सब यज्ञनकरकै बढे भए कर्मसो जैसो उपदेश हो तैसो शत वार अश्वमेधयज्ञ करते भए ॥ १७ ॥ भगवान् ऋषभदेवजी या भारतवर्षके स्वामी हैके सब प्रकारसो या देशकी रक्षा करन लगे वा समय काऊ पुरुषही दूसरे काऊ पुरुषसो अपने लिये आकाशपुष्पकी नाईं कुछभी प्रार्थना करवेकी इच्छा नहीं भई कोई पुरुष किसी दूसरेकी वस्तुपै दृष्टि नहीं करतो हो अधिक कहा कहैं ऋषभदेवजीके राज्यके समय प्रजानकी अपने स्वामीके लिये क्षण क्षण वृद्धि-शील स्नेह उद्रेकके सिवाय और कछु इच्छा नहीं ही अर्थात् सब प्रजा येही चाहती ही कि ऋषभदेव-मेंही स्नेह बढे ॥ १८ ॥ सो कोई समय विचरते भए ऋषभदेवजी ब्रह्मावर्तमें आए, तहां ब्रह्मऋषि प्रवरनकी सभामें प्रवेश करकै देखो कि हमारे पुत्रगणहु बैठे हैं यद्यपि वे समचित्त हे विनयनम्र और प्रणयद्वारा वशीभूत चित्त हे तौहू प्रजाके उपदेशके निमित्त विन सबके सन्मुख शिक्षा प्रदान करके यह वक्ष्यमाण वचन बोले ॥ १९ ॥

स कदाचिदटमानो भगवानृषभो ब्रह्मावर्तगतो ब्रह्मर्षिप्रवरसभायां प्रजानां निशामयन्तीनामात्मज्ञानवहितात्मनः प्रश्रयप्रणयभरसु-यन्त्रितानप्युपशिक्षयन्निति होवाच ॥ १९ ॥

इति श्रीमद्भा० भाषा० पञ्चमस्कन्धे ऋषभदेवस्य शतसंतानवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

ऋषय ऊचुः ॥ नायं देहो देहभाजां नृलोके कष्टान्कामानर्हते विड्भुजां ये ॥
तपो दिव्यं पुत्रका येन सत्वं शुध्येद्यस्माद्ब्रह्मसौख्यं त्वनन्तम् ॥ १ ॥

श्रीऋषभदेवजी बोले कि हे पुत्रहो ! या मनुष्यलोकमें देहधारिनके बीचमें ये देह कष्टदायक कामनानके भोगवेके योग्य नहीं हैं वे कष्टकाम विष्ठा खानवारे कीडेहू कर सकेहै यासो दिव्य तप करो, जासो सत्वशुद्धि होय वाहीसो अनंत ब्रह्मसौख्य होयहै ॥ १ ॥ विमुक्तिद्वार तो महात्मानकी सेवा है, तमोगुणको द्वार स्त्रीनके सङ्गी कामी पुरुषनको संग है वे महात्मा हैं, जे समदर्शी प्रशांत क्रोधत्यागी, सुहृद् साधु है ॥ २ ॥ जे कोई सबमें व्यापक मो ईश्वरमें सौहृदता करें हैं और जे देहके भरवेवारे विषयीजन घर स्त्री पुत्र मित्रमें जे आसक्त हैं तिनमें जे प्रीतियुक्त नहीं होयहैं, और जे लो-कमें देहयात्रा निर्वाह करवेके व्यतिरिक्त अधिक धनमें इच्छा नहीं करे है वही मनुष्य महात्मा है॥३॥

---

१ भैरवी ॥ " प्रभु मोहि अपनी ओर लगावो ॥ टेर ॥ गर्भवासमें रक्षा कीनी अति दुःखसे ले बचावो ॥ १ ॥ लखचौरासी भटकत हार्‌यो नर्कस्वर्ग थकआवो ॥ २ ॥ पलक एक विश्राम न पायो विषयसंग बहु धावो ॥ ३ ॥ काम क्रोध मोहि मारे पछार्‌यो अब मैं बहुत डरावो ॥ ४ ॥ पुरुषोत्तम कहै समुझो प्रभुको अब मत नाम धरावो ॥ ६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे पुत्रो ! यह मनुष्य चतुर हैंके जब इन्द्रियनकी प्रीतिके लिये परिश्रम करैहै तब निश्चय मतवारोसो हैके पापकर्म करै है एकबारके विरुद्धकर्म करवेसौ तौ आत्माको दुःखदायक यह देह उत्पन्न भयो है भलो फिरहू वा विरुद्ध कर्मको वारंवार करनो कहा अच्छो है हम तौ याकौ अच्छौ नहीं समझै है ॥ ४ ॥ जबतक आत्मतत्त्व नहीं जानै है; तबतक अज्ञानसों तिरस्कार होयहै जबतक ये जीव कर्मकांड करैहै, तब याको मन कर्मनमें लगो होय है जा मनको कियो शरीर बंध होय है ॥ ५ ॥ जबतक क्रिया रहै है तबतक यह मन कर्ममें लगो रहै है और वह कर्म स्वभावसैही शरीरके बंधनको कारण हैं यासौ पहलो कियो भयो कर्महीं मनको फिरहू कर्ममें लगावैहै जबतक अविद्यासौ उपाधि-युक्त आत्मस्वरूप मो वासुदेवमें प्रीति नहीं करैहै तबतक देहके या संबन्धसौ जीव नहीं छूटै है ॥ ६ ॥ जब यह मनुष्य इन विषयनके लियें कीनी चेष्टाको अन्यथा नहीं देखे है, तब अपने स्वार्थमें प्रमत्त होय सहसा विद्वान् सब स्मृति भूल अज्ञानी होय मैथुन्य सुख प्रधान घरको प्राप्त होयकर तहां अनेक तापनको प्राप्त हाय है ॥ ७ ॥ इन दोनों स्त्रीपुरुषको आपसमें पुरुषको स्त्री करके जो ये मैथुनभाव है सोई हृदयकी ग्रंथि है; याते घर, क्षेत्र, पुत्र, कुटुंब, धनकरके जीवको हम मम ये सब मोह होयहै ॥ ८ ॥ जब कर्मद्वारा बंधी भई यह मनरूपी दृढ हृदयकी ग्रंथी शिथिल है जाय है तब सो जीव संसारसो छूटे है मुक्त हैंके सब हेतुनको त्यागके परमेश्वरके लोकको प्राप्त होय है ॥ ९ ॥ अहंकार त्याग करवेके साधन कहे हैं ईश्वरकी भक्ति गुरुकी सेवा करनी तृष्णाको त्याग दुःख सुखको सहनो लोकान्तरमेंहू दुःख है यह जाननो तत्वजिज्ञासा काम्यकर्मको सर्वथा त्याग तप करनो ॥ १० ॥ हे पुत्रो ! मेरे अर्थ कर्म करनो, नित्य मेरी कथा करनो, मेरे भक्तनको संगति करनो, मेरे गुणकीर्तन करनो, किसीसो वैर न करनो, अपने सरीर सबको समझनो, इन्द्रियनकी चाहको त्यागनो, देहगेहसों आत्माकी बुद्धिको त्याग करनो ॥ ११ ॥ वेदांतशास्त्रको विचार करनो, एकांतमें सदा रहनो, सदा प्राण इंन्द्रियें आत्माको जीतनो, सच्छास्त्रमें श्रद्धा कर ब्रह्मचर्य धारनो, कर्तव्य कर्मको न त्यागनो, वाणीको नियम धारण करनो ॥ १२ ॥ सब जगै मेरी भावनासो दृढ भए अनुभवपर्यन्त ज्ञान और समाधि योगाभ्यास धैर्य उद्यमसो युक्त कुशल होयके अहंकाररूप लिंगको त्याग करै ॥ १३ ॥ अविद्या करकै प्राप्त कर्माशय हृदयकी ग्रंथिको जो बंध है, सो योगकरकै जैसे हमने उपदेश कीनो है अच्छे प्रकारसो, विचार सर्व त्याग, योगसों उपराम करै ॥ १४ ॥ पिता पुत्रनको, गुरु शिष्यको, नृप प्रजाको, बडे छोटेनको मेरे लोककी कामनासो क्रोध त्याग मेरे अनुग्रहरूप अर्थकी शिक्षा करैं, जो कर्ममें मूढ है, उन अज्ञानिनको कर्ममेंही न लगायदेनो चाहिये ॥ १५ ॥ जाके नेत्र नहीं है ऐसे अंधेको गढेमें पटकवेसो मनुष्य कौन अर्थकूं प्राप्त होयगो, ऐसेही सब जीवनको विषयनमें जो चाहना है वोही अंधकूप समान नर्कमें या जीवकूं पटकैहै ऐसेही सकामकर्म करवेवारेनको कर्ममें छोडनो उचित नहीं ॥ १६ ॥ यह प्राणी सकाम कर्मसो नष्टदृष्टि होतो अपने कल्याणको कछुहू नहीं जाने कारण कि यही धनादिके लोभसौ मूर्खतासौ परस्पर वैर करै हैं फिर तुच्छ सुखकें निमित्त उद्यम करै हैं कि अपर दुःख आयपरै है ॥ १७ ॥ जो अविद्यामें वर्तमान कुबुद्धि रस्ता छोड और रस्ता चलै ऐसे अंधेको सब ओरकी जानवेवारे दयालु विद्वान् वाको कुमार्गमें कभू नहीं चलन देयहैं ॥ १८ ॥ वो गुरु नहीं है, वो पिता नहीं है, वो सुजन नहीं है, वो स्वजन नहीं है, वो माता नहीं है, वो देवता नहीं है, वो पति नहीं है जो आईभई मृत्युको न छुडावै वो कछु नहीं है ॥ १९ ॥ ये मनुष्यकैसे आकारको ये शरीर तर्क करवेयोग्य नहीं हैं, अपनी इच्छासो मैंने धारो है, कुछ हम प्राकृत मनुष्य नहीं है, सत्व मेरे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हृदयमें है, जहां धर्म है, और अधर्म मैंने दूरसेही पीठपर करलियो है, यासो जे आर्यलोग या आर्यावर्तमें भए हैं वो मोको श्रेष्ठ कहे हैं शास्त्रमें ऋषभको अर्थ श्रेष्ठ है ॥ २० ॥ तातैं तुम सब मेरे हृदयसो जन्मे हो सो सब मिलके क्लेशरहित बुद्धि करके मत्सरता छोड अपने बडे सहोदर भाई श्रीभरतजीको भजन करो सब प्रजाको भरण पोषण करो येही मेरी शुश्रूषा है ॥२१॥ अब ब्राह्मणनकी सेवा करनी यासो वैकुंठ होय है सो पंचश्लोकसो कहे है ॥ चेतन अचेतननमें तो सब स्थान वृक्ष श्रेष्ठ हैं, विनसो सर्प श्रेष्ठ हैं, विनसो ज्ञानवान् जीव श्रेष्ठ हैं, तिनमें मनुष्य असुरनसो देवता श्रेष्ठ हैं, विनमें भूतादिक श्रेष्ठ हैं, विनसो गंधर्व विनसो सिद्ध श्रेष्ठ हैं, विनसो किन्नरादिक श्रेष्ठ हैं ॥ २२ ॥ तिनते असुर श्रेष्ठ हैं, असुरसो देवता श्रेष्ठ हैं, देवतानमें इंद्रादिक श्रेष्ठ हैं, विनते दक्षादिक श्रेष्ठ है, तिनमें ब्रह्माके सुत श्रेष्ठ है, विनमें शिव श्रेष्ठ हैं, वो भव ब्रह्माके वीर्यसो है विनसो ब्रह्मा श्रेष्ठ हैं ब्रह्मा मेरो भजन करेहै, मेरे सब ब्राह्मण देवनकी नाईं पूज्य हैं ॥ २३ ॥ ब्राह्मणके बराबर कोई जीवमात्र नहीं है, ऐसो हम देखे है हे विप्रहो ! याते परे और कहा है, जिन ब्राह्मणनमें श्रद्धाकरके सुंदर मुखरूप अग्निमें मिष्टान्न हवन करे है, अर्थात् जाने ब्राह्मणभोजन कराए हैं विनमें हम भोजन करेहै, ऐसो हम अग्निहोत्रमें होमेको नहीं पावे है, जैसो ब्राह्मणनको भोजन करायवेसो प्रसन्न होय हैं इन ब्राह्मणनकी वेदमें ऐसी प्रशंसा लिखीहै कि " येषां मूर्ध्नि परं पदं श्रुतिपुटे तीर्थानि भालेऽथवा वाणी वाचि करेऽनलो हृदि हरिः कुक्षौ तु वेदास्त्रयः ॥ नाभ्यां पंकजसंभवः सुरगणा यद्रोमकूपे स्थितास्तेऽमी भूमिसुराः शिरोभिरनिशं वंद्या न निंद्याः क्वचित् ॥ १ " ॥ २४ ॥ इन ब्राह्मणनने बहुत सुंदर वेदरूप मेरो पुरातन शरीर धारयो है जिनमें ये आठ गुण हैं पहिलो तो परम पवित्र सत्वगुण चाहिये, शम दम, सत्य, अनुग्रह, तप, सहनशीलता, अनुभवजन्यज्ञान, ये सब ब्राह्मणनमें रहेहै इनसो और कोई बडो नहीं है ॥ २५ ॥ मोमें भक्ति करवेवारे काऊ वस्तुकी जिने चाह नहीं ऐसे ब्राह्मणनको, स्वर्ग अपवर्गके स्वामी अनंत, परेसे परे मेरे बिन औरसो बिनको कछूहू चाहवे योग्य नहीं है ॥ २६ ॥ हे पुत्रहो ! सब स्थावरजंगम जीवमात्रनको मेरो निवास समझके मत्सररहित दृष्टिसो क्षण क्षणमें बिनको सन्मान करो प्राणिनको सत्कार करनो येही मेरो पूजन है ॥ २७ ॥ मन वचन दृष्टि और जितनी इंद्रिनकी चेष्टा है, बिनकरके मेरोही आराधन करनो यही साक्षात्फल है मेरे आराधनके बिना मोहसो यमधर्मराजकी फांसीसों छूटवेको समर्थ नहीं है ॥ २८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसी पुत्रनकों शिक्षा कर जो अपनेसो शिक्षित लोग है बिनके शिक्षाके अर्थ महाभारी प्रभाववारे परमसुहृत् भगवान् ऋषभदेवजी महाशीलवारे सब कर्मसो विरक्त महामुनीनको भक्तिज्ञान वैराग्यलक्षणयुक्त परमहंसनके धर्मकी शिक्षा कर, अपने सौ पुत्रनमें बडे परमभागवत भगवज्जनमें परायण श्रीभरतजी महाराजको पृथिवीकी रक्षाके लिये अभिषेक कर, घरके अग्निहोत्रकू आत्मामें आरोपण कर उन्मत्तकी नाईं दिगंबर वेष सब केश खोले कुछ कर्तव्यको अपनी आत्मामें आरोपण कर ब्रह्मवेत्ता विठूरदेशसो संन्यस्त हैके चले जाते भए ॥ २९ ॥ जडवत् अंधे गूंगे बहिरे पिशाचवत् उन्मादीकी समान अवधूतवेष धारे कोई पुकारे तोहू जीवनके मध्यमें मौनव्रतकूं ग्रहणकर चुप्प होजाते भए ॥ ३० ॥ जहां तहां पुर, गांव, खान, किसाननके गांव, पुष्पादिवाटिका पर्वतके नीचके ग्राम, सेनानिवासस्थान, गोवनके स्थान, गोपनके स्थान, जात्रियोंके समूह, जहां गिरि, वन, ऋषीनके आश्रम इत्यादिकनमें, मार्गमार्गमें दुर्जनन करके तिरस्कृत होते जैस वनको हाथी मक्खिनको कछु नहीं गिनेहै तैसे वाय कछु न गिनते दुर्जन करते भये कोई डरावे, ताडे, कोई

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ऊपर मूतजाय, थूकै, पत्थर फेकै, धूर पटकै, पादजाय, बुरो कहजाय इन सबको कछु न गिनते भए ये देह असत्पदार्थनको स्थान है सत् नाममात्र है यामें सत् असत्को अनुभव करके अपनी महिमाकी स्थिति देख अहंकार, ममकार, अभिमान न करके मनको खंडित न करके एकले पृथिवीपरिभ्रमण करते भए ॥ ३१ ॥ अति सुकुमार हाथ पांव हृदयस्थल, विशाल भुजा, कन्धा, गलो, वदन आदि अवयव स्वभावहीसो सुंदर स्वभावकी हास सुन्दरमुख, नवीन कमलदल समान शीतल तापहारक सुन्दर अरुणनेत्र, बराबर सुन्दर कपोल, कर्ण, कंठ, नासिका अत्यंत मुसकानयुक्त मुखके महोत्सवको देखके चतुर वनितानके मनमें काम उद्दीपन करते तथापि आगेसो लंबे कुटिल जटा पीरे केशनके बहुभारसो शोभित अवधूत मलिन अपने शरीरसो जाके मन विन्हैं संभाल नहीं ही ग्रह ग्रसे भएकी समान दृष्टि आवतेहे ॥ ३२ ॥ जा समय भगवान् ऋषभदेवजी लोकको आप साक्षात् विपरीतकी नाईं योग करतेभए, तिनकी जो कुछ क्रिया कर्म हो सो बडो भयानक भयो, ऐसे अजगरनकेसे व्रतमें स्थित होते भए, शयन करते भोजन करलैं, जल पीवैं, खावैं, सोए सोए मूत दैं, विष्ठाकरके विष्ठामैं पडे पडे चेष्टा करैं, लोटैं वा विष्ठा करके सब देहके अवयव लिप्त होते भए ॥ श्लोकः "स्थित्वैकत्रैव यो धीरो भुक्त्वा प्रारब्धकर्म तत् ॥ देहादिकं सुखं त्यक्त्वा व्रतमाजगरे स्थितः ॥ १ ॥ अर्थ–आजगरव्रत याको कहै है कि जो धीर एक जगै स्थित होयकर प्रारब्धकर्म भोग सब देहादिकके सुखको त्याग आजगरव्रतमें स्थित रहैं" ॥३३॥ बडे आश्चर्यकी और हर्षकी बात है कि तिन ऋषभदेवजीके विष्ठाकी सुरभी सुंगधताकी वायु वा देशकों ४० कोशतक सुगंधित करती भई ॥३४॥ या प्रकार ऋषभदेवजी गौ मृग काककी समान चेष्टा करते बैठते स्थित होते सोते पीते खाते मूत्र करतेहे ॥ ३५ ॥ हे परीक्षित ! या प्रकार नानाप्रकारकी योगचर्या कर आचरण कर भगवान् कैवल्य पति ऋषभदेवजी निरंतर परम महाआनंदको अनुभवकर सर्वव्यापक सब जीवनके आत्मा भग-

---

१ शंका–आजतक हमने शास्त्र और पुराण बहुत सुने परन्तु किसी मनुष्यके पुरीषकी प्रशंसाका वर्णन किसी कविने नहीं किया, भगवान्के अनेक अवतारभी हुए उनकेभी पुरीषकी प्रशंसा किसीने नहीं की और यहां लिखा है कि ऋषभदेवजीके पुरीषकी सुंगधी पवनके प्रसंगसें दशयोजन अर्थात् ४० चालीस कोसके घेरेमें चारों ओर सदृश सब दिशाओंको महकाती रहतीथी, यह आश्चर्यमें आश्चर्य होता है कि मलमें सुगन्ध किस प्रकार हुई । जैसे कि कीडा अपनी पीठपर पर्वतको धरकर चलै, मच्छर, माखी, डांस यह सब समुद्रके जलको सोख जाँय, यह आश्चर्यमय बातें हैं, परन्तु यह सबसे बढकर आश्चर्ययुक्त बात है कि पुरुषके पुरीषमें सुगन्धि कभी नहीं होसक्ती, यह सब शंकाओंसे बढकर शंका है ॥

उत्तर–जैसे बालकोंके लिये रोग दूर करनेको माता, पिता, भाई, भौजाई प्रभृति अनेक उपाय करते हैं कि किसी प्रकार औषधि खा ले. परन्तु जब वह औषधि नहीं खाता तो उसको प्यार करके मीठी मीठी वस्तुका लोभ दिखाते हैं कि ले बेटा यह अमृती हैं, यह बतासे हैं, यह हम अपने बेटेको पेडा देते हैं , परन्तु वह कडवी दवाई होती है, और मीठे पदार्थोंका नाम इसलिये लिया जाता है कि किसी प्रकार पुत्रका रोग जातारहै, तैसेही सब संसारके जीव भ्रष्ट हो रहे हैं, उन प्राणियोंको मोक्ष देनेके लिये भगवान् लोभ दिखाते हैं ऋषभ देव भगवान् मोक्ष मार्गको नष्ट देखकर जीवोंको लोभ दिखानेके लिये विचार किया कि हमको तौ बहुत दिन मृत्युलोकमें रहनाही नहीं, और विना बहुत दिनके सत्संगसे मोक्ष मार्ग प्रगट नहीं होसक्ता ऐसा विचार कर जीवोंको लोभ दिखानेके लिये विष्ठामें सुगंधि उत्पत्ति करके जगत्को दिखाया कि सत्संगमें ऐसा चमत्कार है; ऐसे अद्भुत चमत्कारको देखकर सब संसारके लोग इस लोभमें फँस जायँगे और इससे अधिक और कोई उत्तम उपाय नहीं है, यह लालच दिखाय लोगोंसे कहने लगे कि हे भाइयो ! मोक्षमार्गका सेवन करो, देखो ऋषभ देव मोक्षमार्गका सेवन करते हैं तो जिनके मलमें चालीस कोसतक अतर फुलेलकेसी सुगन्धि आने लगी तो उनको यमका भय क्यों होगा । आप लोकभी मोक्षमार्गका सेवन करेंगे तो आपकीभी ऐसीही कीर्ति होगी ऐसा विचार कर सब लोग मोक्षमें आनन्द करने लगे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वान् वासुदेवमें अपने आत्माको एकभावकरकै सिद्धि अर्थसें परिपूर्ण आकाशमें विचरते मनकी नाईं देहको वेग होनो दूरको देख लेनो, छिप जानो, औरके कायामें प्रवेश करनो दूर वस्तुको ग्रहण करनो; अपनी इच्छासों चाहै जहां चले जानो ये योगिनके ऐश्वर्य आप साक्षात्प्राप्त हैवेपैहू विनकी सराहना नहीं करते भए ॥ ३६ ॥

इति नानायोगचर्याचरणो भगवान्कैवल्यपतिर्ऋषभोऽविरतपरम-
महानन्दानुभव आत्मनि सर्वेषां भूतानामात्मभूते भगवति वासु-
देव आत्मनोऽव्यवधानान्तरोदरभावेन सिद्धसमस्तार्थपरिपूर्णो
योगैश्वर्याणि वैहायसमनोजवान्तर्धानपरकायप्रवेशदूरग्रहणा-
दीनि यदृच्छयोपगतानि नाऽऽसा हृदयेनाभ्यनन्दत् ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भा० भा० टी० पञ्चमस्कन्धे श्रीऋषभदेवानुचरित्रवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

राजोवाच—न नूनं भगवत आत्मारामाणां योगसमीरितज्ञानावभर्जितकर्मबी-
जानामैश्वर्याणि पुनः क्लेशदानि भवितुमर्हन्ति यदृच्छयोपगतानि ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि हे भगवन् ! आत्माराम मुनिजन कि जिनके रागद्वेषादि कर्मबीज योगसमाधिसों प्रदीप्त ज्ञानरूप अग्निमें भस्म हैगये हैं विन्हे अपनी इच्छासों प्राप्त भईहू सिद्धि अहंकारादि उत्पन्न नहीं करैहै फिर ऋषभ देवजीने विनको अनादर क्यों कियो ॥ १ ॥ श्रीशुक ऋषि बाले कि आपने सत्य कह्यो, क्योंकि कोई एक बुद्धिमान् साक्षात् चंचल मनकौ विश्वास नहीं करे हैं, जैसे शठ किरात भील विश्वास कराय जीव हनै है, तद्वत् मनको विश्वास करवेसो मारो जाय है ॥ २ ॥ तैसेई कह्यौ है कि ये मन सावधान नहीं है, यासो कभूहू काउको संग न करै, या मनको विश्वास करवेसो बहुत दिनको करोभयो तप स्खलित है जाय है ॥ ३ ॥ कामको नित्य अवकाश देयहै, जो वाके पीछे रहै विनकोंहू अवकाश देय है, संग करवेवाले योगिनको मन बिगार देय है जैसे पुंश्चली छिनार स्त्री जारनको सावकाश बताय पतिकों मरवाय देय है तैसे मनहू काम आदि कर योगिनको भ्रष्ट करदेयहै ॥४॥ काम क्रोध मद लोभ शोक मोह भयादिक सब कर्म बंधको मूल मनको कौन बुद्धिवान् वश न करैगो ॥ ५ ॥ याक उपरांत सकल लोकपालनमें मंडन जडवत् अवधूत वेष भाषा और आचरणनसो जिनको भगवत्प्रभाव लखाई नहीं परतो हो योगिनको देह त्याग विधिकी शिक्षा करते अपने शरीरके त्यागकी इच्छासों आत्मामें आत्माको ध्यातृध्येय-भाव त्याग अभेदबुद्धि करकै देखते सब वृत्तिनसो उपरामकों प्राप्त भए ॥ ६ ॥ यद्यपि विनको देहाभिमान निवृत्त है गयोहो तथापि योगमाया और वासनाद्वारा विनकौं देह जैसे कुम्हारको चाक एकवेर चलायवैसौं देरतक घूमो करै है वैसेही संस्कारके वश हो वारंवार भ्रमण करते कोंक वेंकट और कुटक तथा दक्षिण कर्णाटक देशनमें अपनी इच्छासो पहुँच कुटकाचल पर्वतके उपवनमें मुखमें पाषाण कवलकी नाईं दिये उन्मत्तसी नाईं वार खोले नग्न विचरते भए ॥ ७ ॥ याके उपरांत पवनके वेगसों कंपित, वांसनके घिसवेसो उत्पन्न उग्रदावानल, वांसके वनको ग्रसती भई, वाहीमें अग्निके संग वा देहकों भस्म करते भए, आप अग्निमें प्रवेश कर गए, अग्निसंस्कारसो शुभगति होयहै ॥८॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जिनको चरित्र सुनके कोंक वेंक कुटक देशनको राजा श्रीअर्हन् नामक विनकी शिक्षा लेके पूर्व कर्मसौ कलियुगमें अधर्म जब बहुत है जायगो तब स्वधर्मको भयरहित मार्ग त्यागकरके कुपथ पाषंड सबके विरुद्ध पंथको अपनी बुद्धि करकै ये मंद प्रवर्तन करैगो ॥ ९ ॥ जो वे पथ प्रवर्त करैगो वा करकै कलियुगमें तुच्छ मनुष्य देवमायासो विमोहित अपने मनमुखी विधियोगसो शौच आचारविहीन ईश्वरकी अवज्ञावारे व्रत अपनी इच्छासो ग्रहण कर न स्नान न आचमन न शौच करैंगे केशको नोच नोचके उखारैंगे औरहू कुत्सितव्रत करैंगे अधर्मसौ पूर्ण कलियुगके प्रभावसौ बुद्धि नष्ट हैवेके कारण बृहत्त्वादि गुणविशिष्ट चैतन्य ब्रह्मवेदब्राह्मण और यज्ञपुरुषभगवान् लोक इन सबके निंदक प्रायकरकै होयगे ॥ १० ॥ यह लोग अंधपरंपराके तुल्य अवेदमूलक या प्रकार अपनी इच्छानुसार प्रवृत्तिमें विश्वास करनवारे आपही घोर अंधतम नरकमें गिरेंगे ॥ ११ ॥ ये जो अवतार हैं जे पुरुष रजोगुणमें व्याप्त है विनके शिक्षाके निमित्त है या अवतारको गुणनको श्लोकनमें गामे है ॥ १२ ॥ सप्तसमुद्रवती भूमीपें सब द्वीपनमें ये भरतखंड अधिक पुण्यदायक है क्योंकि या भारतवर्षके जन श्रीमुरारिके मंगलदायक कर्मनकों गावें हैं और जे जे अवतारचरित्र हैं तिन्हें गावे है ॥ १३ ॥ ये प्रियव्रतको वंश यशसो उज्ज्वल है जा प्रियव्रतके वंशमें पुराण पुरुष अवतार लेतेभए, वे आद्यपुरुष भगवान् कर्मनाशक धर्मकूं करतेभए ॥ १४ ॥ संसारनिवर्तक श्रीऋषभदेवजीकी दशाको मनके मनोरथ करके और कौन पुरुष पहुँचैगो, जे उन योगमायाकी ऋद्धि सिद्धिनकोहू असत समझकै त्यागतेभए, जाके लिये आजकालके योगी यत्न करैं हैं ॥ १५ ॥ ये सकल वेद लोग देव ब्राह्मण गौके परमगुरु श्रीभगवान् ऋषभदेवको चरित्र अत्यंत विशुद्ध कह्योहै, सो पुरुषनके सब दुष्टचरितनको हरवेवारो है, परम महामंगलदायक है या चरितको अत्यंत श्रद्धाकरकै जो कोई सावधान हैकै सुनै सुनावै वो भगवान् वासुदेवमें एकांत भक्तिको प्राप्त होयहै ॥ १६ ॥ जा भक्तिमें कविजन निरन्तर अनेक प्रकारके संसारके पापतापनसो तापित जो अपनी आत्मा है ताको स्नान करावते जो विनको आनंद होवेहैं वाही आनंदकरके अपने आप प्राप्त भये परम पुरुषार्थरूप परमानंददायक कैवल्य अपवर्गकोहू नहीं आदर करेहैं सर्वभावसो सब पुरुषार्थ भगवतमेंही समाप्त करके सब कछु भगवतकोही माने है ॥ १७ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे यादवनके पति गुरु देवता प्यारे कुलपति किंकर श्रीकृष्ण हैं, तिनमें हमारी भक्ति होय हे अंग ! भजन करवेवारेनकों भगवान् मुकुन्द मुक्ति दैयहै परन्तु भक्तियोग काउको नहीं दैयहै ॥ १८ ॥ नित्य अनुभव करे भये निज लाभसो निवृत्ततृष्णावारे ऋषभदेवजी देहादि नित्य मनोरथ हेतु कल्याणके विषयमें जिन पुरुषनकी बुद्धि सदा सोई रहतीही विन लोकके जीवनके ऊपर करुणा करकै निर्भय आत्मा स्वरूप कहिते भए तिन भगवान् ऋषभदेवजी महाजनके अर्थ नमस्कार होय "या मतमें कोई मनुष्य तो महाश्रेष्ठ भए कोई जो मूर्ख भए उन्होंने ऐसे आचरण करै यासे लोकमें प्रशंसा करते भएं" ॥ १९ ॥

नित्यानुभूतनिजलाभनिवृत्ततृष्णः श्रेयस्यतद्रचनया चिरसुप्तबुद्धेः ॥
लोकस्य यः करुणयाभयमात्मलोकमाख्यान्नमो भगवते ऋषभाय तस्मै ॥ १९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे श्रीऋषभदेवतानुचरित्रवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

१ कवित्त ॥ "दया अति ढूंढ मत उलट नरकी भए स्थान जप दान सब दयाने खाए । उठै दुर्गंध मुख दन्तधावन विना देह विकराल ज्यूं प्रेत आए ॥ मलिन जलपान अरु जूंठ भक्षण करै दयाने मारके कुते बनाए । कहेते मुकुन्द विचार विन क्या दया जीवते जीनकमें दयाने पठाये" ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ७.

श्रीशुक उवाच-भरतस्तु महाभागवतो यदा भगवताऽवनितलपरिपालनाय सञ्चिन्तितस्तदनुशासनपरः पञ्चजनीं विश्वरूपदुहितरमुपयेमे ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि भरतजी महाराज महाभागवतको जब भगवान् ऋषभदेवजीने पृथिवीकी रक्षाके लिये कह्यो तब विनकी आज्ञामें परायण होय विश्वरूपकी बेटी पञ्चजनीसो व्याह करतेभए ॥ १ ॥ तामें सम्पूर्णता करकै अपने समान पांच पुत्र उत्पन्न करतेभए जैसे अहंकार पंचभूत सूक्ष्मनकूं रचै है ॥ २ ॥ सुमति राष्ट्रभृत् सुदर्शन आवरण धूम्रकेतु ये पांच पुत्रनके नाम हैं, हे राजन्! पहले या वर्षको नाम अजनाभ हो परन्तु जबसो भरत भए तबसो याकों नाम भारतवर्ष प्रसिद्ध भयो ॥ ३ ॥ सो राजा बहुत बातनको जानवेवारो अपने पिता दादेके समान बहुत दयालुताकरकै अपने अपने कर्ममें वर्तमान प्रजाको अपने स्वधर्मसो वर्त्तमान करते सब ओरसो रक्षा करते भए ॥ ४ ॥ यज्ञरूप भगवान्को यजन करतेभए, ऊंचे नीचे यज्ञकरकै श्रद्धासे कै अग्निहोत्र, दर्श अमावास्याको इष्टि तर्पण, पूर्णमासीको इष्टिआदि व्रत करते, चातुर्मास्यव्रत, पशु, सोमयाग, चातुर्होत्र, विधिकरकै अनेक प्रकृतिनकी विकृति (सर्वांग और विकलांग) करकै यज्ञ करते भए ॥ ५ ॥ नानाप्रकारके यागविरचित अंग क्रिया जामें ऐसे याग सुन्दर प्रचार करतेभए, अपूर्व जो क्रियाफलरूप धर्म सो परब्रह्म यज्ञपुरुषमें सब देवतानके चिह्न मंत्र अर्थ इनकी नियामकतासो साक्षात्परदेवता भगवान्वासुदेवमें भावना करते, अपनी निपुणतासो सब कषाय दूर कर अध्वर्यु लोगनके हवि ग्रहण करवेके समय वो यजमान यज्ञकर्ता विन सब देवतानको परमेश्वरके अवयवनमें मान भाग देतो भयो, ध्यान करतोभयो ॥ ६ ॥ ऐसे विशुद्धकर्मसो जब अन्तःकरण शुद्ध भयो तो वासो हृदयके बीचमें स्थित आकाश अपने पहँचाने भए स्थानमे परब्रह्म भगवान् वासुदेवको महापुरुषरूपसो दर्शन होतो हो जो महापुरुषके आकार श्रीवत्स कौस्तुभ वनमाला शंख चक्र, और गदा इत्यादि धारण करकै विराजमान हो रह्यो हैं और अपने भक्त नारदादिकनके हृदयमें चित्रित तुल्य पुरुष रूपसो अपने आपही देदीप्यमान हैं विन परब्रह्म भगवान् वासुदेवमें राजा भरतकी बडी भक्ति उत्पन्न भई भक्तिको वेग दिन दिन बढनलगो ॥७॥ ऐसे दसहज्जार वर्षपर्यंत कर्मके करवेको समय निश्चय कर अयुत सहस्र वर्ष राज्य भोगो जब वह समय बीत गयो और अन्तसमय प्राप्त भयो तब पितृपितामहको हिस्सा अपने सब पुत्रनको यथायोग्य विभाग कर सकलसंपदनसो भरे पुरे घरको छोड पुलस्त्यऋषिके आश्रमको जातेभए हरिक्षेत्रमें वो आश्रम है ॥ ८ ॥ जहां भगवान्हरि आजतक तहांके होनवारे निज जननकी वात्सल्यताकरके अपनी इच्छारूपधार सुंदरतासो रहैं हैं ॥९॥ वा आश्रममें गंडकी नाम परम उत्तम नदी है जाको नाम चक्रनदीहू कहै हैं वहां विद्याधरकुंड है जामें शिलानके ऊपर नीचे हिरण्यगर्भ, नाभिवारे चक्र उत्पन्न होयहै विनको नाम शालिग्राम है जो अपने चक्रनसो आश्रमके ग्राम और प्रदेशको चारों ओर पवित्र करै हैं[1] ॥१०॥ तामें निश्चयकरकै इकेले पुलहाश्रमके उपवनमें अनेक प्रकारके

---

१ राग भैरव " शालिग्राम कृपाकै सागर मन तू क्यों नहिं ध्यावत है ॥ टेर ॥ सतयुग द्वापर त्रेता कलिमें एकहिं रूप पुजावत है ॥ शुद्ध हिमालय पर्वत भीतर मुक्तिक्षेत्र कहावत है ॥ १ ॥ एकवार चरणामृत ले कोई सो फिर जन्म न पावत है ॥ भक्त होयकर भोग लगावे पाय स्वर्गमें आवत है ॥ २ ॥ हरिप्रसाद देवनको दुर्लभ शुद्ध देह हुइ जावत है ॥ जन्मजन्मके पाप कटत है पार्षद होय सुख पावत है ॥ ३ ॥ चार कोशलों शुद्धि करै भू शालिग्राम रहावत है ॥ धूपदीपनैवेद्य शंखधुनि सुनि राक्षस गति पावत है ॥ ४ ॥ भोग लगाये बिन कोई खावै सो नर नर्कमें जावत है ॥ तुलसीपत्र चढाय स्वर्ग चढ पुरुषोत्तम गुण गावत है ॥ ५ ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुष्प पत्र तुलसी जल कंद मूल फलसों पूजन कर भगवान्‌को आराधन एकांतमें करते, सब विषयनकी अभिलाषा निवृत्त कर शमताकूं प्राप्त हो अत्यन्त आनंद सुखकूं प्राप्त होते भए ॥ ११ ॥ या प्रकार नित्य पुरुषकी परिचर्या भक्ति करकै भगवान्‌में अत्यन्त वर्द्धमान अनुरागके भारसो शीघ्र हृदयकी शिथिलता भई, प्रहर्षके वेग करकै देहमें रोमांचकी पुलकावली हो आई उत्कंठताके हेतु वारंवार आतेभए स्नेहके आंसुन करकै नेत्रकी दर्शनशक्ति बंध गई अपनेको प्रीतिदायक भगवान्‌के अरुण चरणारविंदके ध्यानसो बडे भये भक्तियोगसों सब ओर व्याप्त होतेभये परम आनंदरूप गंभीर हृदयरूप तलावमें बुद्धि मग्न हैजायवेसों प्रतिदिन करवेमें आवती भगवान्‌की पूजाकोहू विन्है स्मरण नहीं रहतो हो ॥ १२ ॥ ऐसे भगवद्व्रतमें तत्पर हो मृगचर्म धारे, " एण्या हरिण्या अजिनं ऐणेयम् " नित्यके स्नानसो गीले पीरे कुटिलजटानके समूहसो प्रकाशमान भरतजी प्रातःकाल जब सूर्यमंडल पृथ्वीसो बाहर हैकै दिखाते हो वा समय वाके सन्मुख खडे हैकै वामें विद्यमान सुवर्णसों तेजवान नारायण भगवान्‌को आगे लिखे मंत्रसो उपस्थान प्रार्थना करते ये बोले ॥ १३ ॥ " षूञ प्राणिप्रसवे " धातुको ये प्रयोग है यह " सवितुः " सब जगत्‌के उत्पत्ति कर्ता प्रकाशात्मक परमेश्वरको रजोगुणसों परे सब कर्म फलदायक जो तेज है, सो मनसों या विश्वकों उत्पन्न करतो भयो, फेर या विश्वमें अपनी चिच्छक्तिसों प्रवेश कर रक्षाकी चाहना करवेवारे जीवकों पालनवारे और मनुष्यनमें रहनेवाली बुद्धि वृत्तके उपजायवेवारे सूर्यनारायणके आत्मरूपवारे तेजकी हम शरण हैं " नृषद्विगिराम् याकी ऐसी व्युत्पति है—नृषु सीदति उपाधितया तिष्ठतीति नृषद्बुद्धिस्तस्या रिंगि रिंगणं राति ददातीति नृषद्विगिराम् " ॥ १४ ॥

परोरजः सवितुर्जातवेदो देवस्य भर्गो मनसेदं जजान ॥
सुरेतसाऽदः पुनराविश्य चष्टे हंसं गृध्राणं नृषद्विङ्गिरामिमः ॥ १४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे श्रीभरतकृतहरिक्षेत्रपूजनशालिग्रामोत्पत्तिगण्डकीमाहात्म्यवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

श्रीशुक उवाच—एकदा तु महानद्यां कृताभिषेकनैयमिकावश्यको ब्रह्म
क्षरमभिगृणानो मुहूर्तत्रयमुदकान्त उपविवेश ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि एक समय गंडकीमहानदीमें स्नान कर नित्य नैमित्तिक आवश्यक कृत्य करकै ओंकारकों जपते तीन मुहूर्त वा नदीके तीरपर बैठते भए ॥ १ ॥ हे राजन्! तहां वासमय एक प्यासी हिरणी जलाशयके समीप इकेली आवती भई ॥ २ ॥ जब वो जल पीरही हो, तब समीपमें नाद करतेभए सिंहकों दहाडवेको लोकभयंकर शब्द होतो भयो ॥ ३ ॥ वा शब्दको सुनकै वो मृगवधू हिरणी स्वभावसो व्याकुल नेत्रवारी इत उत देखकै अत्यन्त सिंहके भयतों उद्विग्नहृदया हो प्यास जाकी निवृत्त नहीं भई चकित दृष्टिसों देखती और भयसों एक संग नदीको उलांघती भई ॥ ४ ॥ जब वो गर्भवती हिरणी कूदी, तब वा गर्भवतीकों महाभयसो निकसो भयो गर्भ योनिमार्गसे वा नदीप्रवाहमें गिरतो भयो ॥ ५ ॥ वा गर्भ गिरवेसो वा नाहरके दहाडवेसों खेदमें आतुर, अपने

१ मनसेही सब पूजन करतेथे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गणसो बिछडीभई, कोई गुफामें कृष्णसारहिरणी गिरपरी, और मर गई ॥ ६ ॥ वो हिरणीको बालक सूधो नदीमें बह्यो, बंधुनसो त्यक्त, वाय.देख पिताकी नाईं कृपाकर राजऋषि भरतजी वाय लेके विचारतेभए, याकी मा मरगई तब अपने आश्रमको ले आते भए ॥ ७ ॥ वा मृगके बच्चामें महा-अभिमान स्नेह कर दिनरात पोषण पालन लालन प्रीणन इत्यादि करकै वाके दिन रात ध्यान कर अपने स्नानादि सब नियम और अहिंसादिक श्रीश्वरपुरुषकी परिचर्यादिक ये सब एक एक कुछेक दिनमैं थोडे थोडे त्यागकर कोई कालमें सब त्याग देतेभए ॥ ८॥ बडे आश्चर्यकी बात है कि ये हिरणको छोना महासूधो ईश्वरके कालचक्रके वेगसों अपने गणसो बिछुरो मेरी शरण आयो मोहीको माता पिता भ्राता जातको यौथिक मानकर और काहूको नहीं जानै है मोमें अत्यंत विश्वास करै है यासो मोय अपने परायणको पोषण पालन प्रीणन लालन असूया त्यागकै शरणागतकी उपेक्षामें दोष जान याकी रक्षा करनी योग्य है ॥ ९ ॥ ये निश्चय है कि जो आर्यसाधु शांत स्वभाव दीनबंधु होय हैं वे ऐसे कार्यमें अपने बडे स्वार्थकीहू बहुत परवाह नहीं करै हैं ॥ १० ॥ ऐसे वामें आसक्ति कर आसन शयन अटन स्थान भोजन आदिमें वा मृगबालकके संग अत्यंत स्नेहसो हृदयकों लगावते भए ॥ ११ ॥ कुशा पुष्प समिधा पलाश फल मूल जल ये लेवेकों जाय तब भिडिया कुत्ताके भयकी शंका कर वा हिरणके बालककौं संग लेकै वनमैं जाते भए ॥ १२॥ मार्गमें जब वह बच्चा इत उत आसक्त होता महामोहके मारे हरबखत वामें मतिकों लगायकै अत्यंत प्यारके भारके हृदयसो वाय बहुत कृपण समझकै स्कंधापै उठायकै ले चलै हैं, कभू गोदीमें ले लैयहैं कभू छातीसो लगावें, बहुत लाड करते अत्यंत आनंदको प्राप्त होतेभए ॥ १३ ॥ पूजा करते २ बीचमें वाकू उठकै देखै हैं और देखकै स्वस्थ मनसो भरतखण्डके पति वा बालकको आशीर्वाद देय हैं, हे पुत्र! तुम्हारी सब प्रकार स्वस्ति होय ॥ १४ ॥ कोई समय वो हरिणबालक अलक्षित हैजाय है, तो अत्यंत उद्विग्नमनकर जैसे काऊको द्रव्य नष्ट हैजाय. तैसे कृपण होकै महादयासो अतिहर्षसों हरिणबालकके विरहमें विह्वल हृदयसों संताप हो वाहीको शोच करते मोहमें प्राप्त हैकै ऐसे बोलते भये ॥१५॥ अहह यह विचारो जीव मृतक माताको बच्चा मृग है यद्यपि मैं अनार्य भाग्यहीन और शठ हूं और किरातकी समान मेरी मति चलनवारी और अति टेढी है तौहू वा हरिणके बच्चेने मेरो विश्वास कियो यासो सुजनकी समान अपनो चित्त निर्मल हैवेसो वह हमारे अपराध न गिनकै कहा आवैगो ॥ १६ ॥ निश्चय है कि क्षेमसे आश्रमके उपवनमें घास चरते भए देवरक्षित मृगबालकको मैं कोनसे दिन देखौंगो ॥ १७ ॥ कोई भिडिया कुत्ता कोई और पशु व्याघ्रादिक न खाय जाय ॥ १८ ॥ सकल जगत्के क्षेमके अर्थ जिनको उदय, ऐसे भगवान् वेदत्रयीरूप सूर्य अस्त भए, परन्तु अभी-

---

१ शंका-राजा भरतने जिन भगवान्की पूजा भक्ति करनेक लिये अपने राज्यको त्याग दिया, और बनको चले गये, सो ऐसा श्रेष्ठ पूजन और हरिभक्ति और अपना क्रिया कर्म मृगीके बच्चेके लिये क्यों छोड दिया ? कोई कहै कि मृगीके बच्चेके मोहसे व्याकुल होकरके हीन पुरुषोंकी नाईं भगवान्का पूजन त्याग दिया, तोभी बडा भारी आश्चर्य होता है, क्यों कि राज्य और कुटुम्बका मोह छोड दिया और पशुके मोहमें व्याकुल होना जान पडता है जैसे पुरुषका पर्वतपर चढ जाना कदापि नहीं होसक्ता यह हमको बडा भारी आश्चर्य विदित होता है ॥

उत्तर—जब राजा भरत एक दिन वनको गये तो वनमें जाकर क्या देखते हैं कि धवलमुनि संभारकी लज्जासे आप मृगस्वरूप धारण करके और अपनी सुन्दर स्त्रीको मृगी बनाकर रमण कर रहे हैं उनको देखकर राजा भरत हँसे, तब उसी राजा भरतको धवल मुनिनें शाप दिया, कि हे दुष्ट ! मृगीके बालककी तू रक्षा करेगा; उस मृगीके बच्चेके रक्षासे तेरी एक जन्ममें मोक्ष नहीं होगी, तीन जन्म बीत जायगे तब मुक्ति होगी, इस शापसे भरतने कौतूहल समान मृगछौनामें मन लगाकर उसीके मोहमें भगवान्का पूजन आदि त्याग दिया था ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तक मृगवधूकी धरोहर स्वरूप वह मृगको बच्चा यहां न आयो ॥ १९ ॥ अथवा असुकृतकारी मोको हरिणराजकुमार सुख देवैगो, अनेक रुचिर दर्शनीय अपने मृगबालकपनके आनंदसो अपनेनको संतोष करेगो ॥ २० ॥ अहो खेलवैके समय झूठ स्नेहके कोपके मिससों जब मैं दोनों नेत्र मूंद लेतो तब वह मृगछौना मेरे चारौं ओर फिरतो और चकित हैकै कोमल सींगनके अग्रभागसों मोकौ स्पर्श करतो ॥ २१ ॥ कुशानके ऊपर जो मैं होम करवैकी सामग्री धरदेतो तब वह हरिणीसुत खेलत २ चपलताके वश है दाँतनसों कुश पकर यद्यपि विनें दूषित कर देतो परन्तु जैसेही मैं क्रोध प्रकाश करतो कि वा क्रोधसों वह अत्यन्त भयभीत हैकै वाही समय ऋषिकुमारकी समान क्रीडा कर निश्चल हो नीचो मुख कर लेतो ॥ २२ ॥ या तपस्विनी पृथिवीनै कहा तप कीनो है जो ये धरती विनयसहित कृष्णसार मृगसुतकी अतिसूक्ष्मतर सुंदर मंगलदायक खरखरे पदपंक्तिनसों मृगरहित दुःखित मोको मृगकी पदवीकी सूचना करती है और अपनेकोहू विन चरणचिह्नसों भूषित कर ब्राह्मणनके यज्ञ करवेको स्थान बतावै है हम वाके विना बहुत दुःखित हे सो अब इन खुरनके चिह्नकों पृथ्वीमें अंकित भयो देख कुछ धैर्य भयो ॥ २३ ॥ चंद्रमाको उदय भयो देख बोलो अथवा ये भगवान् तारानके पति चंद्रमा सिंहके भयसो मृतकमावारे अपने आश्रमसों परिभ्रष्ट मृगबालकको कृपाकरके कृपणजन वत्सल रक्षा करैं हैं ॥ २४ ॥ चंद्रमाकी किरणनके स्पर्शको सुख देख बोले कि, मृगसुतके वियोगजन्म ज्वरदावदहनरूप अग्निकी शिखासों तपे भये मेरे हृदय स्थलकमलको वो मृगीसुत मेरे पास आयके शीतल शांत अनुरागवर्धित निजमुखजल अमृतमय किरणनसो अमृततुल्य सुख देवैगो, लोकमैं ये प्रसिद्ध है कि मुखकमलके जलसों तापकी शांति होयहै ॥ २५ ॥ ऐसे चेष्टा करते, मनोरथमें व्याकुल हृदय, मृगबालकके बहाने प्रारब्धकर्म तथा भगवान्की आराधना रूप कर्म और योग आरंभसो विभ्रंशित हैगये महाराज अपने कर्ममेंही विनकी आराधना और योग नष्ट भयो जो ऐसा न होतो तौ जा पुरुषनै पहले मुक्तिमें विघ्न जानके अमात्य पुत्रनकोहू त्यागकर दियो हो वाय फिर दूसरी जातके मृगके बच्चामें सहसा अपने पुत्रकी समान आसक्ति क्यों होती सो या प्रकारके विघ्न हैवेसों योगभ्रष्ट भये आत्माकी चिन्ताको त्याग राजर्षि भरतजी मृगके लालन पालनमें नियुक्त हैगये तौ वाही अवसरमें सर्प जैसे चूहेके भिट्टेको प्राप्त होयहै वैसेही तीक्ष्ण वेगवारे टारवेसों न टरनवारे मृत्युने आक्रमण कियो ॥ २६ ॥ वा समयहू वह ध्यान योगमें देख रहे हे कि मानो वह मृगका बच्चा पुत्रकी नाईं बगलमें बैठके शोक करै है या कारण मृगमेंही अनुरागी और आसक्त चित्त हैवेसो वा मृगशावककोही देखते भए अपनी देह त्यागकै साधारण पुरुषकी समान मृगशरीरको प्राप्त भये परन्तु विनको पहिले जन्मकी स्मृति देहके संग नाशको नहीं प्राप्त भई ॥ २७ ॥ वा मृगदेहमेंहू अपनेको मृग हैवेको कारण और भगवदाराधनको सुंदर भाव याद कर अत्यंत तपित होयके बोले ॥ २८ ॥ अहो कष्ट भयो मैं आत्मज्ञानिनके मार्गते भ्रष्ट भयो जो सब संग त्यागकेहू एकांतमें पुण्यरूप वनमें वसकै आत्मज्ञानिनके आत्मा, भगवान् वासुदेवमें मनको स्थापित कर धीर भावसों सदा विनके श्रवण मनन संकीर्तन आराधन स्मरणमें लगो रहतो हो एकक्षणहू वृथा नहीं खोवतो हो सो अपने अज्ञानपनसों वा मृगके संगतो एक साथही वा विषयसों निकस गयो मैं बडो मूर्ख हूं याही कारणसो फिर मृग होनो परो ॥ २९ ॥ या प्रकार गूढ ज्ञान हैवेके कारण

१ बोले कि श्रीमन्नारायणसें विमुखनको संग न करै याते हमारीसी गति होयगी सत्संगको पद ॥ सोरठ ॥ तजो मन हरिविमुखनको संग ॥ टेर ॥ जाकी संगतिसे कुमति बढत है परत भजनमें भंग ॥ १ ॥ कहा भयो पयपान पिलायो विष नहिं तजत भुजंग ॥ २ ॥ निंबबीज कहिं मिष्ट न होवैगो परखो मधुढंग ॥ ३ ॥ कहा भयो काग कपूर चुगायो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निर्वेदको प्राप्त हैके मृगीमाताकों त्याग कालिंजर स्थानसों फेर भगवत्को क्षेत्र अत्यंत शमशीलस्वभाववारे मुनिगणनके प्यारे शालिग्रामतीर्थपुलस्त्यपुलाहाश्रमको जातेभये ॥ ३० ॥ वा तीर्थमें काल प्राप्त हैवेकी चाह करतेरहे, संगसों अत्यंत उद्विग्न मनकर अपने मृगशरीरसहित सूखे पत्ती तृण वेल खायकै रहै, मृगभावके निमित्तको अंत गिनते रहे कछु समयपै कालके आयवेसों गंडकीनदीके प्रवाहमें खडे हैकै मृगशरीरको त्याग कियो ॥ ३१ ॥

तस्मिन्नपि कालं प्रतीक्षमाणः सङ्गाच्च भृशमुद्विग्न आत्मसहचरः शुष्कपर्णतृणवीरुधा वर्तमानो मृगत्वनिमित्तावसानमेव गणयन्मृगशरीरं तीर्थोदकक्लिन्नमुत्ससर्ज ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पंचमस्कन्धे भरतेन मनुष्यदेहत्यागपूर्वकमृगत्वशरीरप्राप्तिवर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

श्रीशुक उवाच—अथ कस्यचिद्द्विजवरस्याङ्गिरःप्रवरस्य शमदमतपःस्वाध्यायाध्ययनत्यागसंतोषतितिक्षाप्रश्रयविद्याऽनसूयात्मज्ञानानन्दयुक्तस्यात्मसदृशश्रुतशीलाचारूपौदार्यगुणा नव सोदर्या अङ्गजा बभूवुः ॥ मिथुनं च यवीयस्यां भार्यायाम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि कोई ब्राह्मण उत्तम अंगिरागोत्रीनमें श्रेष्ट शम दम स्वाध्याय अध्ययन त्याग संतोष सहनशीलता नम्रता विद्या अनसूया आत्मज्ञान आनंदसहित हो ताके अपने समान श्रुतशील आचाररूप उदारता गुण भरे नव पुत्र होतेभये यह तौ एक स्त्रीमें जन्मे और छोटी भार्यामें एक जोडा स्त्रीपुरुषको उत्पन्न भयो ॥ १ ॥ जो वहां वा मिथुनमें पुरुष है वे परमभागवत राजर्षिश्रेष्ट भरतजी भए, जो मृगशरीर त्याग अंतमें विप्रभावकों प्राप्त भए, ऐसो सब कहैहैं ॥ २ ॥ राजर्षि भरत ब्राह्मणकुलमें जन्म ग्रहण करकैहू यह विचार करो कि कहीं संगदोषसों फिर अपनों पतन है जाय या कारण भगवान्के युगल चरणारविंदको स्मरण और गुणवर्णन करवेमें कर्मबंधननको नाश होय है यह भली भांतिसों मनमें विचार सब लोगनको अपनेकों उन्मत्त मूर्ख अंधो बहरोसो जतावतो विनके मनमें आत्मभ्रंशभय उत्पन्न हैवेके कारण यह हो कि भगवान्के अनुग्रहसो और देह पायकैहू इनकों अपने पूर्व जन्मनकी याद आवती ही ॥ ३ ॥ महाहर्षसों वा पुत्रकों पुत्रस्नेहके मारे विप्र यज्ञोपवीतसो लेकै सब संस्कारनको यथा उपदेश विधान करते भए, जब जनेऊ है गयो तब फिर शौच आचमन आदि कर्मनियम जो यावे योग्य हैं विनकी शिक्षा करतो भयो, क्योंकि शिक्षायोग्य पुत्रके प्रति पिताको शिक्षा दैनी योग्यही है ॥ ४ ॥ सो जडभरत पिताके समीपमें सुंदर कर्म न करते भए, पितानें वेद व्रतादिकी आदिमें श्रावणादि मासमें इनको प्रणवसहित त्रिपदा गायत्री मंत्र पढावेंगे ऐसो विचार कियो तथा वसन्त और ग्रीष्म ऋतुमें ओंकार तथा व्याहृतिसहित गायत्री मंत्र सिखायवेकी चेष्टा कीनी तथापि वाके मनोरथ सिद्ध न

श्वान न्हवाये गंग ॥ ४ ॥ खरकू कहा अरगजा लेपन मर्कट भूषण अंग ॥ ५ ॥ पतित पाषाण बाण नहिं भेदन खाली भए निखंग ॥ ६ ॥ ऐसी पतितनको शोभा कहा कैं सत्संग ॥ ७ ॥ सूरदासप्रभु कारी कमरिया चढत न दूजो रंग ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भए अर्थात् यह न पढे' ॥ ५ ॥ पवित्रता वेद पढनो व्रतनियम गुरु और अग्निसेवा आदि ब्रह्मचारीके कर्म यद्यपि जडभरतको प्रिय नहीं हे तौहू संतानको प्रेमसो पढावनो चाहिये या दुराग्रहसो विनको पिता पढावतो रह्यो तौहू पुत्रको विद्वान् बनायवेकी आशा पूर्ण न भई घरमें असावधानीसो रहनवारो यह ब्राह्मण सदा सावधान रहनहारो कालधर्मको प्राप्त भयो ॥ ६ ॥ वो बडी द्विजकी स्त्री अपने गर्भसो जन्मो भयो जोडा सौतको सोंपकै आप पतिके संग सती होती भई पतिके संग जरगई ॥ ७ ॥ जब पिता मरगए, तब वेदत्रयीकी विद्या पढे भये याके प्रभावको न जानवेवारे सब भैया पर विद्याकूं न जान याकी जडमति देख वाको अच्छी शिक्षा करवमें मन न लगावते भये ॥ ८ ॥ सो वो जडभरतजी प्राकृत दोपदके मूर्खजीवन करकै उन्मत्त जड बहिरे पुकारे जाते जैसे वे बोले, तैसे ये बोले कोई जो काम करावै सोई करवे लगै, परमेश्वरकी बुद्धिकरके सबके काम करै, वेगारसो काम करै, पैसा लेकै करै अथवा कोई खुसामद कर काम करावै तोहू करदै, भगवतकी इच्छासो जो मिलै थोरो बहुत मीठो कुत्सित अन्न ताहि खायलेय परंतु कछु इन्द्रियनके स्वादसो नहीं खांय, जैसो मिले तैसोई खाय ले, ये जाको कोउ उत्पन्न तथा प्रगट करनवारो नहीं ऐसे शुद्ध अनुभवरूप परमानंद आत्माकी वाकूं प्राप्ति है गईही यासों सन्मान अपमान आदिके हेतु सुखदुःखसो देहाभिमानकी भावना सब दूर भई, ऐसे जडभरत ब्राह्मण रहते भये ॥ ९ ॥ शीत उष्ण वात वर्षामें वृषकी नाईं नग्न रहै, स्थूल पुष्ट कठिन सब शरीर रहै धरतीमें सोवै; शरीर मसलके न धोवै स्नान न करै रजमें लिपटे रहै मलीन महामणिकी नाईं विनको ब्रह्मतेज प्रगट नहीं दीखतो हो फटो वस्त्र कमरमें लपेटे अतिशय मैले यज्ञोपवीतको देखकै मूर्ख मनुष्य विन्हे ब्राह्मणनमें अधम और जातिब्राह्मण कहते और विन अज्ञनसो अपमानित हैकै वह विचरते हैं ॥ १० ॥ जब या प्रकारसो भरतने वेगार और मूल्य लेकै काम करनो प्रारंभ कियो तब वाके भ्रातानने वाय भोजनको लोभ देकै धानके खेतोंमें क्यारी बनायवेको काम सोंपो वाय ये करन लगे परन्तु यह क्यारी बनायवो न जानकै मनमानी मट्टी डालते कहीं अधिक कर देते भाईनकी बहुके दिये भए चूर्ण तंडुल खल पेना तुष कुथ्थी बटलोईमें लगो भयो जरो अन्न इन सबको अमृतसम मान भोजन करते भए ॥ ११ ॥ याके उपरांत कोई समय कोई सामंत नामक शूद्रनको राजा भद्रकालीके अर्थ पुत्र प्राप्तिकी इच्छासो एक पुरुषके चढायवेकी तयारी करनलगो ॥ १२ ॥ जा नरपशुको वानै बंधकै रक्खो हो वह दैववश बंधनसो छूट भागगयो तो या पशुकी पदवीको पाके वाके अनुचर शिपाईलोग दौडतेभए, रातमें अर्द्धरात्रिके समय अंधकारसो व्याप्त सब हैरह्यो सो वो पशु तो न मिलो, अकस्मात् विधिसो धाननमें वीरासनसों बैठे मृगशूकरादिकनसो रक्षा करते अंगिरागोत्री ब्राह्मणके सुतको देखतेभए ॥ १३ ॥ याके उपरांत वामें अच्छे लक्षण जान अपने भर्ताके कर्मकी सिद्धि मानकै रस्सीसो बांध चंडिकाके घरमें वाकूं लावतेभए आनंदसो विनके मन बहुत प्रसन्न भए ॥ १४ ॥ फेर वे चोर अपनी विधिसे विनको अभिषेक कर सुपेद कपडानसो वाय ढककै गहिने चंदन माला तिलकादिसो शोभित कर भोजन कराय धूप दीप माल्य खील कोमलपत्ता अंकूर फल अनेक भेट लिये बलिदानकी क्रियामें स्थित कर महागीत स्तुति मृदंग ढोलके घोषकरकै वा पुरुषपशुको भद्रकालीके आगे ठाडे

---

१ या गद्यको यह प्रयोजन है कि जडभरतजीको इनके पिताने छै महीना ताईं बराबर पढायो कि कैसेउ गायत्रीमात्र तो आयजाय पन इनपै गायत्रीके २४ अक्षरहू यथावत् नहीं आये (ग्रीष्मवासंतिकान् मासान् अधीयानः) यह जो ये द्वितीया है सो (कालाध्वनोरत्यंतसंयोगे) या सूत्रसो है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करते भए ॥ १५ ॥ शूद्रराज चोर वा पुरुषपशुके रुधिररूप मादक रसकरके भद्रकालीदेवीकी पूजन करवेकी इच्छा कर भद्रकालीके मंत्रनसो अभिमंत्रित अतिकराल पैनो खड्ग हाथमें लेतेभए ॥ १६ ॥ इन सब तस्करनको स्वभाव रजोगुण तमोगुणसो पूर्ण हो और विनको मनहू धनमदके कारण मर्यादाहीन हैगयो हो यासो वह भगवान्की कलायुक्त ब्राह्मणकुलको अपमानकर अपनी इच्छासो उलटे मार्गपे चले जब यह भयंकर कार्यमें लगे परन्तु कहा भद्रकाली देवी विनकी पूजा ग्रहण करसक्तीही कारण कि ब्रह्मर्षिकी संतान काऊसों वैरभाव न रखवेवारे सब प्राणिनके मित्र आपद् कालके समय लौकिकी हिंसामेंहू जिनके मारवेकी आज्ञा नहीं हैसकैहै विनको शिर काट बलिदान दैनो देवीजी सामने हैकै नहीं देखसकी सो बातकी तयारी देख महाब्रह्मतेजसो देवीजीको हृदय जरनलगो या कारण भद्रकाली प्रतिमा त्याग कर बाहर चली आई ॥ १७ ॥ अत्यंत भगवद्भक्तके अपराधके असहनसो क्रोधावेशसो उठीभई भ्रुकुटीशाखा कुटिल दंष्ट्रा कराल लालदृष्टिके संभ्रमसों अतिभयानक मुख भगवती, मारवेकी कामनासो महाअट्टहासको त्याग करती भई वा स्थानसो उछरकै पापी दुष्टनके शिर विनहीके वाही खड्गसो काटे विनसों गिरो गर्म गर्म रुधिर अपने गणसहित पीकै अति पानमदसों विह्वल अत्यंत ऊंचे स्वरसो अपने पार्षदनकरकै सहित गावती नृत्य करती शिर काटतीभई, और गेंदकी समान विन्हैं उछारकै लीला करती भई ॥ १८ ॥ बडे पुरुषनसों अत्याचार करवेसो वह ऐसेही बहुधा अपने आपही बुरे पुरुषनको बुरा है जायोकरै है यह निश्चय जानो ॥ १९ ॥ हे विष्णुदत्त परीक्षित ! परमहंस महावैष्णवनको अपने शिरछेदन हैवेके समयहू मोह नहीं होयहै यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कारण कि देहादि जड पदार्थनको आत्मा मानवो रूप अतःकरणकी दृढ ग्रंथीको वे त्याग देय हैं तथा प्राणीमात्रके मित्र आत्मस्वरूप वैरहीन भगवान्के भयरहित चरणारविंदके मूलमें निवास करनवारे इन लोकनकी स्वयं भगवान् नारायणही अपने जाग्रत कालरूपी चक्रद्वारा तथा औरहू वस्तुनसों रक्षा करै हैं ॥ २० ॥

न वा एतद्विष्णुदत्त महदद्भुतं यदसंभ्रमः स्वशिरश्छेदन आपतितेऽपि विमुक्तदेहाद्यात्मभावसुदृढहृदयग्रन्थीनां सर्वसत्त्वसुहृदात्मनां निर्वैराणां साक्षाद्भगवता अनिमिषारिवरायुधेनाप्रमत्तेन तैस्तैर्भावैः परिरक्ष्यमाणानां तत्पादमूलमकुतश्चिद्भयमुपसृतानां भागवतपरमहंसानाम् ॥ २० ॥

इति श्रीम० भा० टी० पञ्चमस्कन्धे जडभरतस्य बलिप्रदानान्मुक्तत्ववर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

श्रीशुक उवाच—अथ सिन्धुसौवीरपते रहूगणस्य व्रजत इक्षुमत्यास्तटे तत्कुलपतिना शिबिकावाहपुरुषान्वेषणसमये दैवेनोपसादितः सद्विजवर उपलब्ध एष पीवा युवा संहननाङ्गो गोखरवद्धुरं वोढुमलमिति पूर्वविष्टिगृहीतैः सह गृहीतः प्रसभमतदर्ह उवाह शिबिकां स ह महानुभावः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि अब सिंधुसौवीरपति रहूगण कपिल देवजीके आश्रमपे जातो हो मार्गमें

१ अर्थात् जो इनके मूड काटवेकी तयारी देखी सोई देवीकी प्रतिमा फटगई और मूर्तिमान् प्रत्यक्ष देवी मइया तरवार लेके निकसपरी ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इक्षुमती नदीतीरपै सब कहारनको मालक शिबिका लेजानवारे कहार ढूंढनेके समयमें भाग्यसों प्राप्त ब्राह्मणश्रेष्ठको पुष्ट तरुण और समर्थ देखके बैल और गधेके समान भार उठायवेमें समर्थ है ऐसो सोचके दूसरे विगारी कहारनके संग इन्हेंहू पकरलियो यद्यपि यह कार्य इनके उचित नहीं हो तथापि महाज्ञानी हेवेसों विनके साथ पालकी लेचले ॥ १ ॥ पैरके नीचे कोई जीव न आयजाय ऐसो विचारकर जब यह एकबाणकी जगह देखके चलते हे यासो दूसरे कहारनकी चाल बराबर न हैवेसों राजाकी पालकी टेढी भई तो रहूगण पालकी उठायवेवारे पुरुषनसो बोले कि हे कहारहो ! मेरी अवज्ञा करोहो, क्यों ये पालकी टेढी मेढी चलै है ॥ २ ॥ ये आक्षेपको नृपको वचन सुन वे कहार दंडसो शंकित हैके वा राजाकी विनती करतेभए ॥ ३॥ हे नरदेव ! हम मत्त नहीं हैं, आपकी आज्ञा-रूप नियममें हैं, बहुत अच्छी तरह पालकी लेचलैहैं, ये जो अभी कहार लगायो है, सो न तो ये शीघ्र चलै है न याके संग हम ले चलवेको समरथ होय हैं ॥ ४ ॥ ये संगको दोष है, क्योंकि एकके करवेसो सब संगकेनको हैवेको योग्य है ये निश्चय करके विन गरीबनको वचन सुनकै वृद्धनकी सेवा करवेवारो राजा रहूगण राजसी और राज्यके स्वभावके कारण कछुक क्रोधकर बलात्कारसों पालकीमें लगाये जडभरतसों कि जिनको तेज राखसों ढकी भई अग्निकी समान दीखतो नहीं हो या प्रकार हास्यके वचन बोलो ॥ ५ ॥ हे भैया ! बडे कष्टकी बात है कि तुम बहुत थके हो बहुत दूरसों लंबो रस्तामें तुम्ही एकले पालकी लिये आयेहो, न तो तुम अति मोटे हो, न पुष्ट हो, बूढापेसों तुम ग्रसित हो हे सखे ! ये और तुम्हारे साथके ऐसे नहीं है, ऐसे बहुत टेढी बोलीसो हास्य कीनो तोहू जडभरतके अपने अन्त कलेवररूप कि जो अवस्तु संस्थान विशेष पंचमहाभूत इन्द्रिय कर्म और अन्तःकरणरूप मायाहीके पदार्थनसो निर्मित है वामें अहं मम युक्त मिथ्या प्रतीत नहीं ही या कारण ब्रह्मस्वरूपभूत जडभरत तूष्णीं होयकर पहिलेकीसी नाईं पालकी लेचले ॥ ६ ॥ याके उपरांत जब फेर पालकी टेढी भई, तब अत्यंत कोप करके रहूगण बोलो, क्यों रे तू तो जीवतोही मरेके समान है मेरो तिरस्कार करै है मो स्वामीकी आज्ञा उल्लंघन करवेवारे मदांधकी मैं शिक्षा करूंगा तो तू सूधों है जायगो जैसें जीवसमूहनको यमराज शिक्षा करै है ॥ ७ ॥ ऐसे बहुत असंगत बोलकै राजापनेके अभिमानीने राजस तामस मदसो जब तिरस्कार कीनो तब ब्रह्मभूत अहंकाररहित सम्पूर्ण जीवनके सखा सबके आत्मरूप योगीश्वरनकी गतिमें परिपूर्ण ज्ञानवारे जडभरतजीने

---

१ शंका—राजा रहूगण पालकीके ले चलनेवाले आठही कहार क्यों लिया क्या और पालकी ले चलनेवाले नहीं थे जो राजा होकर एक आदमी अधिक नहीं रक्खा, जो गूंगा कुछ बात कहै तो लोगोंको आश्चर्य ज्ञान होताहै, ऐसे यहभी आश्चर्य है, क्योंकि बडाही दरिद्री और जो लोभीभी राजा होगा उसके यहांभी पालकी ले चलनेवाले कहार बहुत होंगे, फिर क्या कारण जो रहूगणके यहां कहार एकभी अधिक नहीं था कि जो एक कहारके हार जानेसे पालकी जंगलमें पडी रही ? जब दूसरे मनुष्यको पकडकर मँगाया तो पालकी चली यह बडे आश्चर्यकी बात है ?

समाधान—राजा रहूगणके यहां सहस्रों कहार पालकी ले चलनेवाले थे, एक हारगया तो दूसरा उपस्थित था, और वहभी हारा तो तीसरा उपस्थित था, इसी प्रकार अनेक कहार पालकीमें लगाये परन्तु भरतके मुखारविन्दसे राजाको ज्ञान प्राप्त होना लिखाथा, इसलिये जिसको पालकी ले चलनेकी आज्ञा दीजाय वही दुःखी होजाय सात आदमी तो अच्छे रहैं उनमेंसे एक मनुष्य दुःखी होजाय, राजाने अनेक उपाय किये परन्तु सात कहार तो सुखी रहैं आठवां दुःखी होजाय, पालकीमें कन्धा दिया और कहारको रोगने ग्रसित किया, और राजाको तीर्थके जानेकी अत्यंत शीघ्रता थी इसलिये जब पालकी चलानेके लिये कोई कहार शेष नहीं रहा, तब और मनुष्यका अनुसरण किया दैवयोगसे जडभरत मिलगये इसीलिये विघ्न होता था सो काम होगया, इसीलिये दूसरे पुरुषका अनुसरण कियाथा, राजा रहूगण कुछ दरिद्री और कङ्गाल नहीं था ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हँसके पंडितमानी राजासों यह वचन कहे ॥ ८ ॥ जडभरत ब्राह्मण बोले कि हे रहूगणवीर ! तुम्हारो कहिनो सत्य है, झूठो नहीं है क्योंकि ये भार देहको है, सो भार मारगी चलवेवारेको नहीं है, स्थूल होनो सब जीवनमें ये वेदवेत्तानकी बात नहीं है, देह मोटो छोटो होय है कुछ हम घटै बढै नहीं है[1] ॥९॥ क्योंकि देख राजन् स्थूलता, कृशता, व्याधी, मानसी व्यथा, भूख, प्यास, भय, क्लेश, इच्छा, बुढापो, निद्रा, मैथुन, क्रोध, अहंकार, शोक ये देहके जन्मेसो देहको होय हैं, कुछ मोको नहीं होय हैं ॥ १० ॥ हे राजन् ! मेरोही नहीं किन्तु सम्पूर्ण आदिअंतवान् विकारी शरीरको जीवनो मरनो होय है, हे स्तुतियोग्य ! जो[2] स्वामी और दासभाव अचल होयँ तो तेरी आज्ञाको मुझे सपादन करनो बन सकै है परन्तु यह अविचल नहीं यदि याक विपरीत[3] है जाय तो मेरी आज्ञा तुम्हें माननी परै ॥ ११ ॥ और विशषबुद्धिको जो ये एक छिद्र थोडोसो हम देखैहैं, सो व्यवहारके विना नहीं है कौन तो ईश्वर, कौन नृप है कौन भृत्य है ताभी हे राजन् ! जो कहोगे सो करैंगे ॥ १२ ॥ उन्मत्त मत्त जडवत् ब्रह्मभावको प्राप्त गर्वीले मदांध हमसरीकेनकी चिकित्सा करकै[4] तुम्हारी शिक्षासो कौन प्रयोजन है पिसे भएको कहा पीसनो है, जिनको जडस्वभाव है वाको शिक्षा करकै कभूहू चतुर करवेको कोई समर्थ नहीं है ॥ १३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोल कि ऐसो शास्त्रार्थ करकै, वह मुनिवर महाशीलवान् देहात्मबुद्धिसों रहित भाग्य करकै प्रारब्ध कर्मको व्यतीत करते राजाकी पालकी पहिलेकीसी नाईं लेचलै ॥ १४ ॥ हे पांडवेय परीक्षित् ! सो सिंधुसौवीरपति जाकों तत्त्व जानवेकी इच्छासो सुंदर श्रद्धाको अधिकार मिलँचुको है हृदयकी ग्रंथिमोचन वे ब्राह्मणके वचन जे योगग्रथोंके संमत हे विनके सुनतेही शीघ्र पालकीसो उतर, शिरसो चरणकमलमें परकै अपराध क्षमा करावतो राजपनेको गर्व दूर कर रहूगण बोलो ॥ १५ ॥ तुम कौन हो, ब्राह्मणनमें छिपे भए विचरो हो, यज्ञोपवीत धारे हो कौन अवधूत हो, कौनके हो, कहांके वासी हो, यहां कहांसो आएहो, कहा हमारे क्षेमके लिये कपिलमुनि हैंके आएहो ॥१६॥ "हे राजन् ये चिंता क्यों करोहो पालकी तो तुम्हारी हम लेई चलै है ये सुन रहूगण नृप बोलै" इंद्रके वज्रसो हम नही डरै हैं तीननेत्रवारे शिवके त्रिशूलसो न डरै है, न यमके दंडसो, न अग्निसो, न सोमसो, न सूर्यसो, न पवनसो, न कुबेरके पाशसो डरै है परन्तु एक ब्राह्मणकुलके अपमानसो हम बहुत डरै है ॥ १७ ॥ असंग जडवत् विज्ञानवीर्य छिपाये तुम अनंतमहिमासो विचरो हो, हे साधो ! योगसो ग्रसे भए तुम्हारे वचन हमारेको मनकरकैहू भेदन करवेको समर्थ नहीं हैं ॥ १८ ॥ योगीश्वर आत्मतत्त्वज्ञानी मुनीनके परमगुरु साक्षात् ज्ञानकलासो अवतरे कपिलदेवजीसे यह पूछवेको जाऊहूं सो वेई कपिलदेवजी तो कहु आप अवतार लेके नहीं आये हो वेही मेरी शरण है ॥१९॥ सो आप लोककी रक्षाके अर्थ अप्रगट चिह्नसो विचरोहो, सो कपिलदेवजी तौ नहीं हो गृहमें फँसो भयो अंधीबुद्धिवारो मैं योगेश्वरनकी गतिको कैसे जानूं ॥ २० ॥ आपने कह्यो हमें श्रम कछु नहीं सो यह बात मेरे

---

१ या श्लोकको अर्थ यह है कि वीर रहूगण जो कि ये भार होय तो यदि में बोझको उठायवेवारो होउ तो मोकूं यह भार होय सो ये बोझको उठायवेवारो नहीं हौ और यदि थकनो होय तो चलनेवारेको होय सो में चलवेवारो नहीं हौ। और जो तेने मोको मोटौ बतायो सो पंचतत्वकी राशि समुदाय देहमें ये मोटो है ये विद्वत्पुरुषनको कहनो नहीं है अर्थात् मूर्ख पुरुषनको कथन है ॥ २ और जो तेने जीवतो मुरदा मोको बतायो सो ॥ ३ और जे तेने आपको स्वामी बतायो सो ॥ ४ स्वस्वामिभाव वास्तवमें अनित्य है ॥ ५ मैं स्वामी और तू सेवक है जाय ॥ ६ और जो तेने कही कि मैं तेरी चिकित्सा करौंगो सो ॥ ७ राजा रहूगण कैसा है कि तत्वकी जिज्ञासामें सम्यक् भली भांति श्रद्धा करके कीनो है अधिकार जाने ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विचारमें नहीं आवै है क्यों कि जब मैं कोई कार्य करौं हूं तौ श्रमित है जाउ हूं याई अनुमानसो तुम्हैं श्रमित मानो हूं परन्तु तुम व्यवहारको मिथ्या कहते हो जैसे असत् घटसो जलके लायवे आदिको कोई कार्य नहीं होय है ऐसेही यदि व्यवहार मिथ्या होय तौ यासो कछुभी कार्य न होनो चाहिये और व्यवहारसो अनेक पदार्थ होतेह तौ वह असत् कैसे ॥ २१ ॥ और जो सुख दुःख धर्म आत्माके न मानैके देहके कहतेहो तौ यामेंहू यह संदेह है कि जैसे बटलोईमें अग्निसो तापसों जल गर्म होय है. वाके तापसो चावलनके गर्भ रंधजाय है, ऐसेही देह इंद्रिय प्राण अंतःकरणकी समीपता है वैसो पुरुषके अनुरोधते संसारके धर्म जीवविशिष्ट ईश्वरमेंहू होत हैं अर्थात् वही दुःख क्रमसो आत्माकोभी प्राप्त होयहै ॥ २२ ॥ आपने कहा कि शिक्षक रक्षक अचल नहीं है परन्तु जा कालमें जो राजा होय है तब वह प्रजाकी शिक्षाकर रक्षा करै है यह सत्यही है जो नरपति अच्युत भगवान्को पूजन करतो योग्यतासो राज्यको प्राप्त हो असावधानीसो प्रजाकी रक्षा करै तौ वह पिष्टपेषण कैसे है मेरी संमतिमें तौ जो नारायणकी भक्तिसो प्रजाको पालन करै तौ वाके पापसमूह नष्ट हो जाय है ॥ २३ ॥ हे दीनबंधु ! ताते राजापनके अभिमानसो अत्यंत सज्जननको तुच्छ समझवारे मोपै कृपाकी दृष्टि करो जासो श्रेष्ठ पुरुषनके अपमान करवेके पापसो छूट जाऊं ॥ २४ ॥ विश्वके सुहृत् सखा सबमें समानभावसो अभिमानरहित हो यासो तुमको कुछ विक्रिया नहीं है, तुमसे महात्मानके अपमानसो शूलपाणिकी समान सामर्थ्यवारो पुरुषहू नाश हुये विना नहीं रह सके नष्ट है जांय हैं ॥ २५ ॥

न विक्रिया विश्वसुहृत्सखस्य साम्येन वीताभिमतेस्तवापि ॥
महद्विमानात् स्वकृताद्धि मादृक् नङ्क्ष्यत्यदूरादपि शूलपाणिः ॥ २५ ॥

इति श्रीम० भाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे रहूगणजडभरतसंवादो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

ब्राह्मण उवाच—अकोविदः कोविदवादवादान्वदस्यथो नातिविदां वरिष्ठः ॥
न सूरयो हि व्यवहारमेतं तत्त्वावमर्शेन सहामनन्ति ॥ १ ॥

श्रीब्राह्मण जडभरतजी बोले कि तुम विद्वान् नहींहो, परंतु विद्वाननकेसे वाद बोलो हो, अति विद्वाननमें वरिष्ठ नहीं हो, जो महाविद्वान् है, वे या व्यवहारको तत्वनके विचार करकै नहीं माने हैं ॥ १ ॥ हे राजन् ! तैसेई बहुत गृहस्थाश्रमके यज्ञविस्तारके विषयकी विद्यामें अधिक विलसित वेदवादमें तत्त्ववाद प्रायः करकै सुंदर शुद्ध नहीं प्रकाश करैहै ॥ २ ॥ तथापि वेदांत सुनकै काउ काउ पुरुषकी कर्ममें प्रवृत्ति देखी जाय है यह कछु वैदिक धमकी सत्यताको प्रमाण नहीं है कारण कि जैसे स्वप्नको सुख दिखायो अनित्य हैवेसो त्याग करवे योग्य है एसही गृहस्थीको सुखहू दृश्य और अनित्य हैवेसो ग्रहणके योग्य नहीं ऐसो जाने मनमें निश्चय कियो वाय वेदान्त वाक्य यद्यपि तत्वज्ञानके अर्थ बहुत श्रेष्ठ हैं तौहू वाको तत्वज्ञान नहीं देसकेहै ॥ ३ ॥ जबतक पुरुषको मन राजस तामस सात्विकसो वश होय है, तबतक ज्ञानइन्द्रिय कर्मइंद्रियनकरके अंकुशरहित वो मन पुण्य वा

१ यासे ये प्रभुको चोर है ॥ भैरवी " प्रभुजी मैं सब विध चोर तुम्हारो ॥ टेर ॥ जो कोई निंदित कर्म जगतमें करत करत नाहिं हारो ॥ १ ॥ जन्म अनेक पापही कीन्हे जप्यो न नाम तिहारो ॥ २ ॥ आज्ञाभंग करी अनगिनती वेद विचारो हारो ॥ ३ ॥ पुरुषोत्तमकी एकहि विनती माफ करो तो उधारो ॥ ४ ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पापकूं करै है ॥ ४ ॥ यह मनही पापपुण्यकी वासनायुक्त है और यही आत्माके शरीर धारणको हेतु आत्मस्वरूप है यासों यह सब विषयनमें रंग जायहै विन्हीसों चलायमान है कामादि परिणाम युक्त है जाय है परंतु यह मन पंचमहाभूत और इन्द्रियनकी सोलह कलानके बीचमें मुख्य है वही पृथक् २ नाम सहित पशु पक्षी आदि विशेष २ देह धारण करै है और विन देहनके कारणनसों आत्माकी श्रेष्ठता या नीचता प्रगट होय है ॥ ५ ॥ यह मनही संसारचक्रमें छलनवारो है मायासे शरीरनकी रचना करतो अपनी आत्मलिंगाभिमानीको आलिंगन करतो सुख दुःख जो अपने कर्मकी काल प्राप्तिको अनिवार्य समय है वाको सब प्रकार सृजतो यह मनही जीवको अनेक उपाधि करे है यासों यही जीवकों अपने भीतर मिथ्या अध्यात्म करायके मैंही मनहूं या प्रकार दरसायके भवसागरकी लहरनमें ग्राम कंटककी नाईं छलके इत उत घूमें है ॥ ६ ॥ जबतक मन है तबतक ये व्यवहार सदा प्रकाशमान है, क्षेत्रज्ञको साक्षी स्थूल सूक्ष्म होयहै, ताते निर्गुण सगुण और पर अवर नाम ईश्वरको और जीवको मनही कारण कह्यो है ॥ ७ ॥ या जीवको मन गुणमें अनुरक्त होय तो अनेक दुःखको कारण होय है, और निर्गुणमें मन लगै तो याको क्षेमके लिये होयहै, जैसे दीपक घृतवर्तिके द्वारा जरतोभयो धूमसहित शिखाको प्रकाशित करे है, जब दोनो न रहै तो अपने स्वस्वरूपमें लीन होयहै ॥ ८ ॥ ऐसे जबतक मन विषय कर्मनकी ओर लगो रहै है तभीतक वामें ग्यारह वृत्ति दृष्टिगोचर होय हैं जब विषय और कर्मनसों छूट जायहै तब ब्रह्माकार होय है मनकी एकादश वृत्तिनमें पांच तो क्रियाके आकार पांच ज्ञाताके आकार और एक अभिमान है ॥ ९ ॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंध यह पांच ज्ञानेन्द्रियद्वारा ज्ञानाकार सबकी वृत्तिके विषय होते हैं और कभी ग्रहण गमन मलत्याग रमण यह पांच विषय कर्मेन्द्रिय द्वारा कर्माकार वृत्तिनके विषय होय हैं ॥ १० ॥ यह शरीर ग्यारह वृत्तिनकी भूमि है यही मेरो है या प्रकारके भोगायतनरूपमें अभिमानको विषय है जायहै कोई कहै हैं कि अहंकार नामक मनकी बारहवीं वृत्तिभी हैं विनमेंहू यह शरीर शय्या नाम करकै विषय है जाय है शरीरको नाम पुर है वामें जीवके अहंकारद्वारा शयन करवेसों पुरुष कह्यो जाय है पंचज्ञानेन्द्रियनके विषयरूप शब्द विसर्गआदिक पंचकर्मेंद्रियद्वारा कर्माकारवृत्तीनके विषय भोग गति बोलनो शिल्प ग्यारवो स्वीकार करनो कि यह ममकार है, और शय्या अहंकार बारहवों है ये एक आचार्यनने कह्यो है ॥ ११ ॥ द्रव्य स्वभाव अंतःकरण कर्म काल ये सब मिलके ग्यारह ११ मनके विकार हैं हजारों सैकडों कोटनकोट जीवसे विकार होंय हैं न आपसो होय न अपनेसो होय हैं ॥ १२ ॥ जीवके क्षेत्रज्ञमें ये मायासो रचीभई मनकी वृत्ति नित्य है, कभू प्रकाश है जायहै कभू ढकजांयहै, जो विशुद्धकर्ता नहीं है वो शुद्ध होय चेष्टा करैहै ❀ ॥ १३ ॥ क्षेत्रज्ञ दो प्रकारको है एक जीव दूसरो ईश्वर जीवको स्वरूप कही चुकै हैं ईश्वरको सुनो

---

* शंका—राजा रहूगणसे जडभरतने कहा कि मायासे जो बनाया हुवा जीव उसको जितने मनके पदार्थ हैं सो सब होते हैं, उनहीं पदार्थोंको जीव भोगता है, परन्तु भरतने जीवको मायासे बनाया क्यों कहा ? जीव माया करके रचित नहीं है, जीव भगवान्का अंश है, परन्तु मायाके वशीभूत होरहा है, भरतने जीवको मायारचित क्यों कहा ?

उत्तर—जो प्राणी जिससे भय मानता है वह प्राणी अपना त्रास देनेवाला छोटाभी होगा तोभी उसको सबसे बडा करके मानेगा, ज्ञानी पुरुषोंके सन्मुख माया सबसे छोटी है, परन्तु जडभरतको बारम्बार माया दुःख देती है, जब मायासे भरत डरगये तब सब पदार्थोंको भरतने बडा माना, जडभरतने अपने आपको मायासे दुःखी देखकर मायासे बहुत डरे इसी डरसे जीवको माया करके बनाया कहा है, क्योंकि उस समय भरत ऐसा मायासे डरे थे कि अपने मनमें विचारते थे कि ब्रह्मा, विष्णु और महादेव मायासे बडे नहीं हैं, माया सबसे बडी है ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आत्मा पुरुष पुराण साक्षात्स्वयंज्योति रजोगुणसो परे ईश्वर है वो श्रीमन्नारायण भगवान्वासुदेव है अपनी मायाकरक जीवमें स्थित है ॥ १४ ॥ जैसे पवन स्थावरजंगमनमें प्रवेश करके अपने स्वरूपसो विचरेहै, ऐसे परभगवान्वासुदेव क्षेत्रज्ञमें व्यापक हैके सबमें प्रविष्ट रहै है ॥ १५ ॥ हे नरेंद्र ! जबतक ये शरीरधारी ज्ञानके उदय करकै या मायाको विशेषकरकै दूर कर सब संग त्याग छ वैरीनको जीत आत्मतत्त्वको नहीं जानैहै, तबतक या संसारमें घूमैहै ॥ १६ ॥ एक आचार्य ऐसै कहै है कि जबतक आत्माको उपाधि करवेवारे संसारतापको जन्मायवेवारो जीवको मनही शोक मोह रोग राग लोभ वैर ममता उत्पन्न करै है तबतक परमेश्वरकों नहीं जाने है ॥ १७ ॥ या कारण तुम अपने गुरुरूप हरिके चरणनकी उपासनारूप शस्त्र चलायके सावधान हो या मनरूप शत्रुको मारो हे राजन् ! यह मन महापराक्रमी और प्रबल शत्रु है उपेक्षा करवेसो यह बढगयो है यद्यपि वास्तवमें यह मिथ्या स्वरूप है तौहू स्वरूपज्ञानको नाश कर देय है यासो याको नाश करो ॥ १८ ॥

भ्रातृव्यमेनं तददभ्रवीर्यमुपेक्षयाऽध्येधितमप्रमत्तः ॥
गुरोर्हरेश्चरणोपासनास्त्रो जहि व्यलीकं स्वयमात्ममोषम् ॥ १८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पं० रहूगणाय मनोविजयवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

रहूगण उवाच—नमो नमः कारणविग्रहाय स्वरूपतुच्छीकृतविग्रहाय ॥
नमोऽवधूतद्विजबन्धुलिङ्गनिगूढनित्यानुभवाय तुभ्यम् ॥ १ ॥

राजा रहूगण बोले कि कारण करके जिसने स्वरूप धारण कियो है । और अपने निजानंद स्वरूपसो जिनने देहको तुच्छ करके मानो है तिनके अर्थ नमस्कार होय और अवधूत ब्राह्मणाधम चिह्नसो छिपायो है नित्य अनुभव जिनने तिन तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय ॥ १ ॥ ज्वररूप रोगसों ग्रसे भएको जैसे अच्छी औषधी सुखदायक होय है ग्रीष्मसे दग्धको जैसे हिम शीतल जल शुभदायक होय है, ऐसेही हे ब्रह्मन् ! बुरे देहमें मानरूपसर्पसो डसे भयेको मोको अमृत औषध रूप तुम्हारो वचन है ॥ २ ॥ तातै आपसो ये पूंछूहू कि मेरे संशयनाशकके अर्थ जैसे मोको बोध होय तैसे कहो, क्योंकि आपको वचन वेदांत अध्यात्मज्ञानमें ग्रथित है, यासों मेरे मनको आनंदसो समझमें आवै तैसे कहो मोको बडो कौतूहल है ॥ ३ ॥ हे योगीश्वर ! आपने जो कह्यो कि वहनादि क्रिया और वाको फल श्रम होनो आदि प्रत्यक्ष देखवेपैहू कछु नहीं है अर्थात् कारण हैवेपैहू यथार्थ रूपसों तत्त्व विचारमें कछु नहीं है सो मेरे मनमें बहुत भ्रांति है सो आप कहिये क्योंकि या विषयम मेरो मन भ्रम है अच्छी तरहसो यथार्थ समझमें नहीं आवे है ॥ ४ ॥ ब्राह्मण बोले कि हे पार्थिव पृथ्वीनिर्मित्त पदार्थ जो कहू कारणसो पृथ्वीपै गति करै है वा आप कहारादि नामनसो पुकारो हौं जो नहीं चलै है वे स्थावर हैं वास्तवमें विनमें कुछ भेद नहीं पाषाण जड हैवेसो परिश्रम वा भार

---

१ तापर एक महात्माकी वाणी है ॥ राग पर्ज ॥ " मेरो मन पाजी राजी मैं कैसे कै करूं ॥ टेर ॥ मैं कहूं चल सत संग शीतल यो कहै आगी मैं जरूं ॥ १ ॥ मैं कहूं आज राम मुख कहिरे यो कहै कहूंगा परूं ॥ २ ॥ मैं कहूं धन हरि हित कछु देरे यो कहै औरोंको हरूं ॥ ३ ॥ मैं कहूं पापकोश खाली कर यो कहै अटूट भरूं ॥ ४ ॥ मैं कहूं सबसें प्रीति रीत कर यो कहै हरिसें लरूं ॥ ५ ॥ या मनने बहुजन्म बिगारे तातें बहुत डरूं ॥ ६ ॥ मैं कहुं कथा कीर्तनमें चलेरे यो कहै कोश न टरूं ॥ ७ ॥ पुरुषोत्तम कहै और न उपाय हरिके चरण लेधरूं ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं उठावै है ऐसेही कहारको भार उठानो वा परिश्रम समझनो वृथा है याकोहू जड जानो कारण कि जाय परिश्रम होय है वाको यथार्थ निरूपण है सकतो होतो तो निश्चय अपनेको वा औरको परिश्रम होनो सत्यहू मानलेतो परन्तु वाको सत्य होनो असंभव है कारण कि अंगनके अतिरिक्त अंगनको निरूपणही कहू प्रकार नहीं है सकै है प्रथम यह तो निश्चय करो कि इन कहारनकी देहमें क्या अंग है देखो जो यह पृथ्वीसो उत्पन्न भयो कहार है वाके पृथ्वीपैही पाव है पावो पर गुल्फ गुल्फपर जंघा जंघापर जानू जानूपर साथल साथलोपर कमरमध्यदेशपर छाती छातीपर ग्रीवा वापै शिर है इत उत कंधे है ॥५॥ हमारे कंधेपे काष्ठकी पालकी धरी है. जामें मट्टीके विकारतो वीर-राजा रहूगण बैठे हैं, जामें बैठेभये आपको महा अभिमान है कि सिंधुदेशके हम राजा हैं या दुर्मदसो अंध हौं ॥ ६ ॥ शोक योग्य ये कहार जो बेगारसो पकडे हैं, कष्टसो चले हैं, यासो तुम निर्दयी मालूम पडोहो, जो तुम कहो कि मैं जीवनकी रक्षा करवेवारो हूं सो महाधृष्ट वृद्धनकी सभामें तुम शोभा नहीं पाओगे ॥ ७ ॥ जब स्थावर जंगम सबकी उत्पत्ति नाश नित्य पृथिवीमेंसो हैं ये जाने है तो फिर व्यवहार मूलनाम मात्रसो सिवाय साचो कहा है जैसे घट शराव नाम मात्रके सत् है वाकी सत् तो मृत्तिकाही है ऐसे देव दनुज मनुष्य गौ अश्व हस्ती आदि नाममात्रकेही सत्य है अर्थात् वास्तवमें तो असत्ही है और नाम केवल व्यवहारमें कहिवेमात्र हैं, जो साची क्रियासो अनुमान करो होय सो हमसे कहो क्योंकि श्रुति है " वाचारंभणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यमिति" ॥ ८॥ ऐसे पृथिवीशब्दकी व्याख्या है इनके न होवेसो जे परमाणु हैं वे अविद्यासो मनसो कल्पना करेभए हैं, जिनके समूहसों ये सब विशेष विश्व रचो है ॥९॥ ऐसेही दुर्बल पुष्ट सूक्ष्म, बृहत्, असत्, कभू कार्य कभू कारण यह सब मायानेही द्वैत कर दियोहै और द्रव्य स्वभाव अंतःकरण काल कर्म यह सब मायाहीके नामान्तर जानो यासो सब मिथ्या है तो फिर सत्य कहा है सो अगारीके श्लोकमें सद्वस्तुको निर्णय करके कहै है ॥१०॥ हे राजन् ! विशुद्ध जो बाहर भीतर दूसरो कुछ नहीं है परिपूर्ण परिच्छिन्न निर्विकार जो ज्ञान है वही परमार्थ सत्य है वाही ज्ञानको भगवान् कहै है वही ज्ञान पंडितनने वासुदेवरूप कह्यो है ॥ ११ ॥ हे रहूगण ! तप यज्ञ संन्यास गृहत्याग वेदपाठ जल अग्नि सूर्य पूजनसो ये ज्ञान प्राप्त नहीं होयहै, महात्मानके पादरजके अभिषेकसो प्राप्त होय हैं ॥ १२ ॥ जिन महात्मानमें संसारकी कथाको नाशक भगवद्गुणानुवाद कह्यो जायहै, जो सदा कथा सुने तो मुमुक्षुकी सुन्दर बुद्धि वासुदेवमें होय है ॥ १३ ॥ हम पहिले भरत नामके राजा हे प्रथमही देखवे सुननेसों संगकी बंधनसो अलग है गयो हे और भगवत्को आराधन करतो हे परंतु मृगके संगसो सब अर्थ हमारे नष्ट हे गये मृग हैंकै फिर ब्राह्मण भये यासो विषयको संग योगको भ्रष्ट करवेवारो है यह

---

१ प्रयोजन यह है कि हे राजन् ! ये पृथ्वीको विकार माटीको डेलो कोउ कोउ हेतुसो जब वो चलन लगो तब वोही आदमी कहाय गयो वास्तवमें विचारके देखो तो माटीमें और आदमी सिवाय चेतनाके और कछु फरक नहीं है पायसों लेके शिरताईं राजा येही समझो कि जैसे डेलाके ऊपर डेला चिनके एक माटीको पूतरा बनाय दियोजाय ऐसीही या जंगम माटीको नाम आदमी है वास्तवमें तो माटीही है यामें सत्य माननो सो अज्ञान है क्योंकि जितनो दृश्य पदार्थ है सो सब मृत्तिकाही है याहीसों सब मिथ्या है ॥ (हम कहांताईं सुधारें बहोतही मूर्खताके इनने यहां अर्थके अनर्थ किये हैं) ॥ २ तब फिर पृथ्वीको सत्यता आई सो कहै है कि नहीं पृथ्वीहू सत्य नहीं क्योंकि वो पृथ्वीहूं एक दिन परमाणुरूप है जाय है यहभी नाशवती है यासो मिथ्या है तो फिर परमाणु सत्य ठेरे सो कहै है कि नहीं वे परमाणुहू जिनकी समुदाय रूप पृथ्वी है वेहूं उठे है क्योंकि माया करके वे परमाणुहू मन कल्पित है यासो वेहू झूठे है सत्य नहीं है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जानो ॥ १४ ॥ हे वीर ! सो वो श्रीकृष्णचन्द्रके पूजनसो उत्पन्न भई बुद्धि स्मृति मृगदेहमेंहू मोको न त्यागती भई, याते हम सब जननके संगसो शंकित हैके छिपे भये विचरेहैं ॥ १५ ॥ यासों मनुष्य कोऊसों संग न करै श्रेष्ठ सत्संगसो भये ज्ञानखड्गसों मोहको काटके श्रीहरिकी लीला कथन श्रवणसों सुन्दर स्मृतिको प्राप्त हैके श्रीहरिको प्राप्त होय या संसारमार्गसो पार जाय है ॥ १६ ॥

तस्मान्नरोऽसङ्गसुसङ्गजातज्ञानासिनैहैव विवृक्णमोहः ॥
हरिं तदीहाकथनस्मृतिभ्यां लब्धस्मृतिर्यात्यतिपारमध्वनः ॥१६॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पंचमस्कन्धे रहूगणाय जडभरतब्राह्मणेन
श्रीभगवत्कथास्वरूपवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

ब्राह्मण उवाच–दुरत्ययेऽध्वन्यजया निवेशितो रजस्तमःसत्त्वविभक्तकर्मदृक् ॥
स एष सार्थोऽर्थपरः परिभ्रमन् भवाटवीं याति न शर्म विन्दति ॥ १ ॥

श्रीब्राह्मण बोले कि संसारमार्ग बडो दुर्गम है वामें प्रविष्ट हैके सत् रज तम गुणमें विभाग करी भई जाकी दृष्टि और कर्म हैं विन सबकोही कार्य समझके देखते हुये वैश्यकी समान धनके बटोरवेकी चाहनासों चारों ओर घूमै है और जंगलमें चलो जाय है और काउ प्रकार सुखको नहीं प्राप्त होय है ॥ १ ॥ हे राजन् ! जा संसाररूप अटवीमें छः चोर हैं सो बलसो कुत्सित नायक मनरूप संघको छेदन करे है गीदडके तुल्य स्त्री पुत्रादिक या जीवकूं हरै है, जैसे मेंढाको भेडिया पकडै है या अध्यायको व्याख्यान आगेकी अध्यायमें विस्तारसों करेंगे परंतु जो जो कठिन शब्द हैं विनको कहीं कहीं यहांभी कहेंगे ॥ २ ॥ या अटवीमें अनेक वृक्ष लता घास और गुच्छानसों गंभीर स्थलमें विश्राम करवेवारो वणिक भयंकर डांस और मच्छरनको बडो उपद्रव पावें हैं कहू यह आश्चर्यसों गंधर्वपुरीको देखै है कहीं उल्मुकके आकार घर देख वामें सोना जान लेवेकी इच्छा करै हैं ॥ ३ ॥ निवास स्थान जल धनमें आत्मबुद्धि कर इत उतको संसाराटवीमें धावै है, कहीं पवनसो उठी भई धूरसो धूम्र समान भई दिशानको धूरसो धूंधरी दृष्टिसो नहीं जानै है ॥ ४ ॥ कहीं झींगुर बोल रहे हैं परन्तु देखवेमें नहीं आवें विनकी झनकारसों विनके काननमें दर्द होय है कहीं उलूनके शब्दसो मन व्याकुल होय है हे वीर ! यह सब वणिक जब खिन्न हैके भूंखो होय हैं तब जिनकी छाया-हू पापको कारण हैं विन वृक्षनको आश्रय करै हैं कहीं मृगमरीचिकाके जलको दौडै हैं ॥ ५ ॥ कभू जलहीन नदीनमें जाय है, कहीं परस्पर अन्नकी चाहना करै है कभू [दावानलके निकट पहुँचकर अग्निसों तप्त होय हैं कहीं यक्षलोग उसके प्राण हरण करवेको उद्यत होयहैं तब यह महादुःखी होय

---

१ याको पद है ॥ जंगला ॥ तू काहेको करत अवार नदियां पार जाना है ॥ टेर ॥ यह संसार धार अनपारी टूटी नाव जल भरत बिमारी ॥ पाप प्रवाह बढत नित प्रतिक्षण वर्षों दिनको चढाना है ॥ १ ॥ लोभ मोह दोउ ओर किनारा तृष्णा जल सुख दुख तिरारा ॥ मत्सर मगर मगर सब रोकत अघका थाना है ॥ २ ॥ जन्म मरन अति भ्रमर जालमें फिर फिर आवत बहु कालमें ॥ वेद वचन पतवारा न बांधा सही पाल न ताना है ॥ ३ ॥ शोक उजार अपार अनीति घर सुख बहु दुम फूल फजीती ॥ भाई भिल्ल वचन शर मारै पीना न खाना है ॥ ४ ॥ हरि जनम लहा उपदेश मलहरि त्याग वैराग्य दई ॥ उतराई नाव नावपर बैठनि घरकी जग झूठा जाना है ॥ ५ ॥ मन एतवारा सूध विचारा शीलपाल हरि कृपा बधारा ॥ पुरुषोत्तम कहैं पार उतरकै हरिहरि २ गाना है ॥ ६ ॥ २ अर्थात् कभू छिलायेकी अग्निको देखै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं ॥ ६ ॥ कहीं शूरलोग वाको धन हरलेयहैं, तो चित्त वैराग्यमान होय है, शोच करते मोह करते कष्टको प्राप्त होय है, कभी गंधर्वपुरमें प्रविष्ट होय आनंदकी नाईं मुहूर्तमात्र आनंदित होय है ॥ ७ ॥ जब चलै है तौ कंटक धूर पगमें लगै है कभी दुःखी मनकर पर्वतपर चढैं है, क्षण क्षणमें भीतरकी जठराग्निसों पीडित कुटुंबी जीवमात्रपै क्रोध करै हैं ॥ ८ ॥ कभू अजगररूप सर्पसो ग्रसो भयो डसोभयो कोई जीव वनमें सोवै है, कहीं दंदशूकनकरके क्लेशित अंधतामिस्रवत् कूपमें गिरपडै है ॥ ९ ॥ कभी क्षुद्ररसनकी चिंता करतो मक्खिनके काटवेसों दुःखी और विमन होयहै और जो कहीं बडे कष्टसों मान पायो अर्थात् शहत मिलगयी तो वाको भोग नहीं कर सके दूसरे बलवान् वासों छीन लेय हैं ॥ १० ॥ कभी शीत धूप वात वर्षाके क्लेश दूर करवेको असमर्थ हैके रहै है, कभी आपसमें व्यवहार करके फिर शठतासों वैर करै हैं ॥ ११ ॥ जब कभू याको धन क्षीण हैजाय है. तो सेज आसनके विहारसों हीन होयहै औरसो फेर अनेक वस्तु चाहै है जब कामना पूरी नहीं होय है तब पराई वस्तु लेवेकी इच्छासो अपमानको प्राप्त होय है ॥ १२ ॥ कोई आपसमें लेन देन करवेसो परस्पर वैरभी बढायलेय हैं कोई विनके साथ विवाहादिसंबंध करै है, कोई या संसाररूप मार्गमें बडे कष्टसो धन जोडकै वाकी बाधा करवेवारेनसों द्वेष करके मृतक-समान है जाय है ॥ १३ ॥ जो जो मरे भये हैं विनको तो तहां तहां त्याग अपने अर्थ जो जन्मे हैं विनको ग्रहण करे है, परंतु आजतकहू कोई लौटकै नहीं आये या प्रकार जहांसो इनको आरंभ भयो वहांतक कोई नहीं जायहै या मार्गको पार जो योग है वाय कोई नहीं पहुँचेहै ॥ १४ ॥ बडे मनस्वी शूरलोग जे सब दिशानके दिग्गजेंद्रतक जीतके ये सब भूमी मेरी है ऐसो मान वैर बांध मरके संग्राममें सोये पन वेहू वा स्थानको नहीं जायहै जा स्थानको निर्वैर संन्यासी जायहै ॥ १५ ॥ कहीं स्त्रीकी लतारूप भुजाके आश्रय हैकै आसक्त होय है, विन स्त्रीनके कोमल संभाषण छोरानके तोतरे वचनमें फसे है, कभी कोई समय श्रीहरिके कालचक्रसो त्रसित हो कौआ बक और गृद्धनकी समान पाषंडिनसों मैत्री करेहै ॥ १६ ॥ परन्तु विनसों ठगे जायवेके कारण पीछे आपही हंसरूपी ब्राह्मणनके कुलमें प्रवेश करैहै पीछे विनकोहू आचार व्योहार प्रिय न समझकै वानरनमें मेल करैहै और विनकी जातिके खेल कूदमें अपनी सब इन्द्रियनको प्रसन्न कर परस्पर एक दूसरेको मुख देखवेसो मोहित हैकै अपने जीवन समयको भूल जाय है ॥ १७ ॥ कभू वृक्षवत् घरमें पुत्रस्त्रीमें आसक्त होय है, विवश मैथुनमें दीन हैकै आप बंधनमें आय जाय है, कभू प्रमादसो गिरिकी गुंफातुल्य रोगादिकमें गिरोभयो, गुंफाके पासके गजतुल्य मृत्युसे भीत हैके प्राचीनकर्मनके आश्रयरूप वेलकों पकड स्थितरहै हैं ॥ १८ ॥ हे शत्रुनाशक ! याते कभू आपदमें मुक्त होय तौ फेर प्रवृत्तिमार्गमें लगै है, या संसारमार्गमें मायामें प्रविष्ट हो घूमतो भयो प्राणी आजतक कछुहू नहीं जानैहै ॥ १९ ॥ हे रहूगण ! तुम सब त्याग सबसों मैत्री कर सर्वसंग त्याग श्रीहरिकी सेवाकरके तीक्ष्णज्ञानरूप खड्ग लेके या मार्गके पार होउ ये हमारो उपदेश है ॥ २० ॥ राजा बोले कि अहो ये मनुष्यको जन्म सब जन्मसों उत्तम ह, और जन्मनसों कहा है ? स्वर्गमें यदि आप सरीके महात्मानको सत्संग न मिलै तो कछु नहीं है हे भगवन् ! हृषीकेशके यशसों शुभ

---

१ कवित्त—दाताको मान्धाता और दिलीप ऐसे जिनके यश अजहूंलो दीपदीप छाये हैं । बलि ऐसो बलवानको भयो जहांन बीच रावन समान को प्रतापी जग जाये हैं ॥ बानकी कलानमें सुजान द्रोण पारथसे जाके गुन दीन दयाल भारतमें गाये हैं । कैस कैसे शूर रचे चातुरी विरंचिजू फेर चकचूर कर धूरमें मिलाये हैं ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आत्मावारे आप महात्मानको सदा समागम परम मंगलरूप है, जो सत्संग न करे तो मनुष्यजन्म वृथा है ॥ २१ ॥ जो तुम्हारे चरणकमलकी रेणुसों पाप नाश हैके प्राणिनकी भगवान्में निर्मल भक्ति होयहै ये कुछ अद्भुत नहीं है आपके तौ एक मुहूर्तमात्रके समागमसों मेरो दुष्टतर्कको मूल अज्ञान सब नाश भयो ॥ २२ ॥ सबसें बडेनको नमस्कार होय सब बालकनको नमस्कार होय सब जवान ब्राह्मणनकों नमस्कार होय जो क्रीडामें परायण बटुक द्विजके अर्थ नमस्कार होय जो ब्राह्मणलोग अवधूतकेसे चिह्न धारण कर पृथिवीपर विचरै हैं उनको मंगल होय और सब राजानको कल्याण होय ॥ २३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे उत्तरामाके सुत ! सिंधुदेशपति रहूगण राजाने अपमान कियो तौहू ब्रह्मर्षि पुत्र महानुभाव जडभरतजी परम करुणा और दयासों वाय ब्रह्मज्ञानको उपदेश दियो, जब राजा रहूगणने उनके चरणनकी वंदना कीनी तब फिर जडभरत कि जिनके अन्तःकरणकी तरंग स्थिर और भरपूर सागरके समान शान्त ही पृथ्वीमें पूर्वकी नाईं विचरन लगे ॥ २४ ॥ हे नृप ! सुवीरदेशपति रहूगणहू सब परमात्मतत्व जान आत्मामें अविद्यासो आरोपण करी देहात्मबुद्धिको त्यागतेभए, भगवत्के आश्रितनके आश्रितनको ऐसो प्रभाव है ॥ २५ ॥ राजा परीक्षित् बोले कि हे महाभागवत ! बहुवेत्ता जो आपने परोक्ष वचननसों वणिकसार्थ सहित रूपके संसार अटवीमार्गको वर्णन कियो ज्ञानी पुरुषनकी बुद्धिसों याको विषय कल्पित हो सकै है परन्तु थोडी बुद्धिवाले याय नहीं समझ सके है या कारण या विषयको संसारके विषयके साथ अनुरूप कल्पना करकै समझाओ जासो हम स्पष्ट रीतिसों समझ जांय ॥ २६ ॥

राजोवाच—यो ह वा इह बहुविदा महाभागवत त्वयाऽभिहितः पारोक्ष्येण वचसा जीवलोकभवाध्वा स ह्यार्यमनीषया कल्पितविषयो नाञ्जसाऽव्युत्पन्नलोकसमधिगमः ॥ अथ तदेवैतदुरवगमं समवेतानुकूल्येन निर्दिश्यतामिति ॥ २६ ॥

इति श्रीमद्भा० भा० पं० रहूगणाय सूक्ष्मभवाटवीवर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

स होवाच ॥ य एष देहात्ममानिनां सत्त्वादिगुणविशेषविकल्पितकुशलाकुशलसमवहारविनिर्मितविविधदेहावलिभिर्वियोगसंयोगाद्यनादिसंसारानुभवस्य द्वारभूतेन षडिन्द्रियवर्गेण तस्मिन् दुर्गाध्वंवदसुगमेऽध्वन्यापतित ईश्वरस्य भगवतो विष्णोर्वशवर्तिन्या मायया जीवलोकोऽयं यथा वणिक्सार्थोऽर्थपरः स्वदेहनिष्पादितकर्मानुभवः श्मशानवदशिवतमायां संसाराटव्यां गतो नाद्यापि विफलबहुप्रतियोगेहस्तत्तापोपशमनीं हरिगुरुचरणारविन्दमधुकरानुपदवीमवरुन्धे ॥ यस्यामु ह वा एते षडिन्द्रियनामानः कर्मणा दस्यव एव ते ॥ १ ॥

१ शंका—श्रीशुकदेवजी महाराजने श्रीमद्भागवतके चार स्कन्ध वर्णन किये तथा राजाभी चारों स्कन्धोंको सुनतागया परन्तु शुकदेवजीने राजाको ऐसा दुलार वचन क्यों कहा ? और दुलारनाम लेकर चारों स्कन्धमें क्यों वर्णन किया ! हे राजन् ! हे राजशार्दूल ! हे नृपशिरोमणे ! हे कौरवोत्तम ! हे कुरुकुलभूषण ! ऐसा आदि लेकर अनेक प्रकारके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जो परीक्षितने पूछा साई शौनकने पूछा यासों शुकदेवजी और सूतजी दोनों संग उत्तर देते भए ये सहोवाचको अर्थ है ॥ शुकदेवजी बोले कि या संसारमें जीवगण धन उपार्जनमें तत्पर वणिकनके तुल्य हैं, यह भगवान्‌की मायासों संसारी मार्गमें गिरे हैं, या कारण गुरु भगवान् हरिके चरणकमल सेवा करनहारनकी पदवीको अबतक प्राप्त नहीं होय है, संसारी मार्ग सुगम नहीं है, जे पुरुष देहमें आत्माभिमान करे हैं विनके सत्वादि विशेष गुणसों विभक्त सब कर्म मंगल अमंगल दोनोनमेंही मिल जाय हैं विनके द्वारा अनेक देह रची जायवेसों विनसों संयोग वियोगादिरूप संसार होय है, संसार अनुभवके छः द्वाररूप इन्द्रिय हैं विनसों यह संसार दुर्गम मार्गकी तुल्य बहुत कठिन है गयो है, या दुर्गम मार्गमें पाय धरवेकी किउकी प्रवृत्ति नहीं होय है ऐसो हम नहीं कह सके हैं भगवान् विष्णुकी मायासों अवश हैके सबही वामें वास करे हैं और अपनी देहसों रचे कार्यनको फल वामें भोगे हैं, विनकी चेष्टा कभू सफल और कभी विघ्ननसों विफल होय है, सो या संसार अटवीमें अनेक ताप हैं विनको नारायणके भक्तनके चरणकी पदवीही शान्त कर सके है, परन्तु भगवान्‌की मायासों वह पदवी जीवनको सहजमें प्राप्त नहीं होय है या संसार अटवीमें छः इन्द्रिय हैं वेही कर्मनके द्वारा महाप्रबल छः चोर हैं ॥ १ ॥ कष्टसे उपार्जन कियो पुरुषका परलोकके निमित्त नारायणके आराधन करनो रूप धर्ममें लगायवेके योग्य है वाको यह दर्शन स्पर्शन श्रवण आस्वादन सूंघना संकल्प विकल्प इत्यादि गृहसंबंधी तुच्छ पदार्थनमें लगायके यह इन्द्रियरूपी चोर हरलेय हैं वह पुरुष अजितेन्द्रिय और घरमें ग्राम्यवस्तुनके भोग्य करवेमें आसक्त रहे यासों अपनो गुन ले जायवेवारी इन्द्रियनको नहीं जानते है और याकी असावधानीमें याके संगी याका धनहरण करलेयहैं ॥ २ ॥ और प्रकारसो कहे हैं कि, जा भवाटवीमें कुटुंबके स्त्री पुत्रादिक नाम कर्मकरके भेडिया गीदड समान है विना इच्छावारे अतिलोभी कुटुंबीको मेंढाके समान सुंदर रक्षा करोभयो धन याके देखते २ सब हरलेय हैं ॥३॥ जैसे खेतमें प्रति वर्ष हल चलायो जाय तो वा खेतको बीज जर नहीं जाय परन्तु फिर वह जायवेके समय तृण लता गुण उपजनेसों गढकी समान है जाय है ऐसेही ये गृहस्थाश्रम कर्मक्षेत्र है, यामें यहां कर्म ऊगे हैं जो ये सब कामको डब्बा है, सब आश्रमरूप है, कपूरके जैसे पात्रमें कपूर क्षय होय है तोहू सुगंधि क्षीण न होय हैं, ऐसे यहां वासना क्षीण न हवेसों सदा कर्म ऊगते रहे हैं ॥ ४ ॥ या गृहस्थाश्रममें जो प्रीति करे हैं वाको प्राण धन संपत्ति डांस मच्छरतुल्य नीच मनुष्य टीढी पक्षी चोर चूहोंके तुल्य तस्कर लोक पीडा देके छीनलेय हैं तोहू यह गृहाश्रम मार्गमें घूमवेसों शान्त नहीं होय है वरन मिथ्यादृष्टि है वैसो अविद्या काम कर्मनसों रंगे भए मनके कारण गन्धर्वनगरतुल्य अघटमान नर लोकको सत्यरूप देखे ॥ ५ ॥ वा गन्धर्वपुरमें कभी धूपके जलसमान विषनको धावे है, पान भोजन मैथुनआदि व्यसननमें लोलुप होय है ॥ ६ ॥ कभी सब दोषनको स्थान अग्निकी विष्ठाके समान वर्णगुणमें मति

सम्बोधनोंसे दुलार करके कथा कही परन्तु पंचम स्कन्धके १३ तेरहवें अध्याय और चौवीसवें श्लोकमें परीक्षित्‌को उत्तरामात क्यों कहा ? उत्तरामाताका अर्थ यह है कि उत्तरा है तुम्हारी माता, ऐसे हे परीक्षित ! यह बडी शंका होती है कि जो और कभी परीक्षित्‌की माताका नाम लेकर राजाका दुलार शुकदेवजी करते तो शंका नहीं होती ॥

उत्तर–शुकदेवजीने परीक्षित्‌को भगवान्‌के कीर्तनमें अत्यन्त लोभी जानकर तथा देहनाश होनेकी चिन्ताको त्यागकर बारम्बार भगवान्‌के चरित्रोंको बूझरहे हैं, वासुदेव भगवान्‌में परीक्षित्‌को ऐसा प्रीतिवान् जानके श्रीशुकदेवजीने विचार किया कि परीक्षित्‌की माता जो उत्तरा है उसको धन्य है, जिस उत्तराने परीक्षित्‌को उत्पन्न किया सो धन्य है, ऐसा हर्ष करके राजाको उत्तरामात इस पदसे दुलार भरके श्रीशुकदेवजीने कथा वर्णन की ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लगायकर सुवर्णकूं चाहैहैं, जैसे शीत निवारण करवेको अग्निकी चाहना करनेवारे लोग वनमें अग्निकी समान चमकते हुए पिशाचविशेषको देखके वाके पीछे २ दौंडे है ऐसेही सुवर्णको दौंडैहैं ॥७॥ याके उपरांत कभी निवास स्थान जल द्रव्य आदि अनेक आत्माके उपजीवनके सदृशनकों संसाररूप अटवीमें ग्रहणको इत उत डोलैहैं ॥८॥ कहीं यह पुरुष पवनकी समान स्त्रीकी गोदीमें चढ बैठे है गोदीमें बैठवेसो जो अनुराग होयहै वा राजसी धूल पडेभए नेत्रोंकी समान हैके मर्यादाको छोड देय है और रात्रिकालके भूतकी समान दिशानके देवता जो अच्छे बुरे कर्मके साक्षी है विन्हें जानै है ॥ ९ ॥ कोई समय एकवार विषयकी चाह भई तो आपने पराएको ध्यान न करके स्मृतिभ्रष्ट हैवेके कारण वा भ्रष्टमतिसो मृगमरीचिकाके जलप्राय विषयनको धावै है ॥ १० ॥ कही उलूक झींवरके शब्दकी समान कठोर विषयनमें उत्साहके निमित्त प्रत्यक्ष और परोक्ष शत्रुपक्षकी और राजकुलकी फटकारसो याके कर्णमें शूल और हृदयमें व्यथा होय है ॥११॥ संसारमें जब पुरुषको पहले किये सुकृत क्षीण हैजाय हैं तब विपतिन्दुक इत्यादि अपुण्य वृक्षलता और विषकूप समान या लोक और परलोकके प्रयोजनके निमित्त धन खोयके स्वयं मृतककी तुल्य है जाय हैं और जीवनमृत मनुष्यनके निकट दौडते फिरै हैं ॥ १२ ॥ किसी समय खोटेनके प्रसंगसो जब याकी मति वंचित होयहै तब जलहीन स्रोतमें गिरवेके समान दोनों ओरसो दुःखदायक पाखंडमार्गको प्राप्त होय है, जैसे जलरहित गढेमें गिरवेसो शिर फटजाय है पीछे वाकी वेदना होयहै ऐसेई विषयसो पीछे दुःख होयहै ॥ १३ ॥ जब परबाधासो अन्न अपने अर्थ न मिलै है, तब पिता पुत्र बर्हिष्मत प्राचीनबर्हिके पिताको पुत्र जैसे दुःखित करते भये तैसेई या जीवको ये सब कुटुंबके खायवेवारे हैं ॥१४॥ कभू दावानलकी नाईं प्रियअर्थ दुःखसो प्राप्त हैवेयोग्य महादुःखदायक घरको प्राप्त हैके शोकरूप अग्निसों जरोभयो अत्यंत वैराग्यकों प्राप्त होय है ॥ १५॥ कभू राजा लोग कालके वशमें पडे प्रतिकूल हो राक्षसनकी समान व्यवहार करैं हैं प्रियतम धनरूप प्राण हरण करलैय हैं यासो पुरुषनको मृतककी तुल्य जीवन लक्षणरहित हैके रहनो पडै है ॥ १६ ॥ यह पुरुष कभू बाप दादे जीवतेहू भयेनकी चिन्ताको प्राप्त हैके विनको और विनके असत धनको सन्मान कर कि वह लोग मानो वर्तमान हैं ऐसे मनमें समझतो भयो क्षणभरके लिये स्वप्नकोसो सुख प्राप्त करलेयहै यही गन्धर्वनगर है ॥१७॥ कभू गृहस्थाश्रममें कर्म करवेकी अज्ञानरूप अतिभारी पर्वतपर चढनेकी इच्छावारो लोकके व्यसनसों कर्शित मन है कांटे, रेतयुक्त खेतमें प्रवेश कर कष्टकों प्राप्त होय है[1] ॥१८॥ कभू दुःसह शरीरके भीतर रहिवेवारी जठराग्निसों पीडित हैवेके कारण निस्सार हैके अपने कुटुंबके लोग शरीरके कियो करै है ॥ १९ ॥ सोई वो जीव निद्रारूपी अजगरसो ग्रसित अंधतममें मग्न हो शून्यवनकी नाईं सोवै हैं और कछु नहीं जाने है मुर्दाकी नाईं पडो रहै है ॥ २० ॥ कभू मानरूप दंष्ट्रा भग्न हैवेसों दुर्जनरूप दंदशूक वाय निद्रा नहीं लैन देयहै यासो हृदय व्यथित हैवेसो वाके ज्ञानको क्षय है जायहै तब वह अंधेकी नाईं अंधकूपमें गिर पडे है ॥ २१ ॥ कभू काम मधुको लवमात्र चिंतवन

---

१ यहां मतलब यह है आंधीके बभूरेमें आयवेसो नेत्रनके धूर भरवेसों अंधेके समान है जायवेसो दिग्ज्ञान नष्ट हैके आंख बंद करके बैठजाय है ऐसेही यहां स्त्रीरूप आंधीमें जब है जाय है तब यह अंधवत् हैके माता पिता देवता और धर्मको भूलके अंधप्राय है जाय है इति ॥ २ पितृपुत्रने कुशवारेनको अथवा पिता पुत्रनके कुशमात्र तृणकोहू जिनमें देखै है तिने भक्षण नाम बाधा करै है (जो कछु पूर्व लिखो है सो अति असंगत है) ॥ ३ पैसा पास नहीं है और हजार पांचसो रुपाको कोउ काम आय गयो तब ये मालूम होय है जैसें बडी भारी घांटी चढनी होय और वो घबराय है कि हाय कैसे चढोंगो ताके समान होय है अर्थात् पैसा विना कोउ बडा काम करनोही यहां घांटी पर्वतके समान है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करतो पराई स्त्री परायो धनकूं रोकै है, तब राजा करकै अथवा स्त्रीके स्वामीकरकै मारो भयो अपार निरयमें गिरै है[1] ॥ २२ ॥ यासों पंडित कहे हैं, कि प्रवृत्तिमार्गमें अपनो कर्महीं या काल और परकालमें संसार जन्म हेवेको क्षेत्र है ॥ २३ ॥ यदि धन काउ एकके कपटसो बचै तौ तब दूसरो पुरुष बलसों वाय छीन लेयहै वासों बचै तौ विष्णुमित्र हर लेयहै ऐसै धारावाहिक होतो रहै है यासों अव्यवस्था हो जाय है ॥ २४ ॥ कभू शीत पवन आदि अनेक आधिदैविक आधिभौतिक आदि अपने कुटुम्बकेनकी दशा निवारणमें असमर्थ महाचिंताकरकै विरागयुक्त होय है ॥ २५ ॥ कभू आपसमें व्यवहार करतो कछु धन औरसों अथवा वणियासो लेते देतेमें धनकी शठतासो वीस क्रोडीमात्र धनपै कछुक वैरको प्राप्त होयहै ॥२६॥ सो या जगत्में और तौ कष्ट रहितेही हैं परन्तु ये महादुःखदायी है, सुख, दुःख, राग, द्वेष, भय, अभिमान, प्रमाद, उन्माद, शोक, मोह, लोभ, मत्सरता, ईर्षा, अपमान, क्षुधा, पिपासा, व्याधि, जन्म, बुढापो मरणादिक ये जीवके बाधक हैं ॥ २७ ॥ नहीं जीतोहै मन जाने ऐसो ये जीव कहू देवताकी मायारूप स्त्रीकी भुजालतामें सोएभए विवेक विज्ञान नष्ट हेवेसो विहारके घर बनायवेमें हृदय लगो रहै है वा घरके वासी पुत्र पुत्री स्त्रीकी बोली और देखवेसौ हृदय हरजायवेसौ अपने आत्माको अपार अंधतममें पटक देय है ॥ २८ ॥ कोई समय भगवान् ईश्वर विष्णुके परमाणु आदि द्विपरार्ध अपवर्गकालके उपलक्षणवारे कालचक्रके फिरवेसौ जो कि तृणस्तंभसौ लेकै ब्रह्मादि समस्त प्राणियनकों अपने वेगसौ हरण करै है परन्तु कोउ वा चक्रको प्रतिकार करवेको समर्थ नहीं होयहै कारण कि वह चक्र सब प्रकार अप्रमत्त है या कारण पुरुष कारणपुरुष कालस्वरूप हरिके चक्रसौ उठकै यह कालचक्रही जिनको आयुध है वह ईश्वर साक्षात् भगवान् यज्ञपुरुष हैं विनको अनादर करतो भयो कि जो पाखण्डीदेवता काक गिद्ध बक बटेर पक्षीके समान श्रेष्ठजननके आचारनसौ वर्जित है विनकोंही पाखण्डशास्त्रकी रीतिके अनुसार भजन लगै है ॥ २९ ॥ जब पाषण्डी अपनेको ठगवेवारों करकै बहुत ठगोभयो ब्रह्मकुलमें प्रवेशकर तिनके शील यज्ञोपवीतादि श्रौतस्मार्त कर्मके अनुष्ठान करके भगवान् यज्ञपुरुषके आराधनमें रुचि न करतो भयो तो शूद्रकुल हैजाय है, और वेदोक्त आचारसों अशुद्ध हैजाय हैं, तब यह वानर जातिकी समान केवल स्त्रीसंग और कुटुम्बको लालन पालन करै है ॥ ३० ॥ तहांहू प्रतिबंधरहित हो अपनी इच्छानुसार विहार करतो अतिकृपण बुद्धिसौ आपसमें सुख देखवेसौ गंवारनकी नाईं कर्म करकै कालके आयवेकी समय भूलजाय है ॥ ३१ ॥ कभू वृक्षकी नाईं या लोकके प्रयोजनको साधक घरमें रमण करतो जैसे वानर पुत्र स्त्रीपरायण केवल मैथुनमें लगोरहै तैसे ये जीव रहै ॥ ३२ ॥ ऐसे संसाररूप मार्गमें रुकोभयो मृत्युरूप गजके भयसो पर्वतनकी कंदरानमें गिरै है ॥ ३३ ॥ कभू शीत, वातादि अनेक दैविक, भौतिक, शारीरिकदुःखसो पीडित हैके इनके निवारण करवेको यत्न करवेमें अतिशय दुरंत विषयसो खिन्न रहे है ॥ ३४ ॥ कभू परस्पर व्यवहार करतो कृपणतासो धनको प्राप्त करै है कभू याको धन क्षीण हेजाय है तो शय्या आसन आदि उपभोगसों विहीन हैकै मनोरथके द्वारा वांछितको सदुपायसौ विनको नहीं पायके फिर विनको बुरे कर्मनसौ लाभ करवेकों मनमें विचार करै है तब बुद्धिसों निश्चय कर जहां तहां आदमिनसों अपमानआदिक लाभ होय हैं ॥ ३५ ॥ परन्तु आश्चर्यकी बात है कि धनकी आसक्तिसौ परस्पर वैरहू बढावे हैं पर तौहू पुरुष एक दूसरेसौ लैन दैन करतोही रहै है ॥ ३६ ॥ या संसार मार्गमें नाना-

१ परस्त्रीसंगही सहत है वाय लेवेको जाय है तब विनके अन्य प्रिय याको मारे है वेई मुहारकी माखीके समान याको मारे है॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्लेशसों पीडित दुःखको प्राप्त नष्ट हैकै जहां तहां मरेनकों त्याग, जन्मे जन्मेनको राखके शोच माह विवाद करते कभू कोलाहल करते कभी भय कभी सिंहनाद कभी विवाह कभी हर्ष करते कभी गाते कभी चिल्लाते हैं ऐसे संसारमें अधिक बंध जायवैसों साधु पुरुषके सिवाय कोई अचतक जा संसारमार्गसों नहीं लौटो जा मार्गमैं यह नरलोकसमूह बंधो भयो है पंडितजन वा मार्गसों पार हैवेको सदाही उपदेश कियो करै हैं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ योगानुष्ठानसोंहू यह मार्ग नहीं रुक सकै है शांतिशील और मनको वशमें राखवेवारे जिन मुनिनने दंडवत् छांड दियो है वह या मार्गको जानै वरन विनमेंहू अनेक या मार्गके रोकवेमें असमर्थ भए हैं ॥ ३९ ॥ दिग्विजयी राजा यज्ञ कियो करै हैं वहू या मार्गमें रोकवेमें समर्थ नहीं भये याही पृथ्वीके मोहमें फँसके प्रत्येक मनुष्यनसों अनेक प्रकार वैर कर (यह भूमि हमारी है) ऐसो समझके संग्रामके स्थलमें प्राण दे रणसेजपै सोये और छोड गये ॥ ४० ॥ कर्मरूप वेलको आसरो लेकै फेर आपत्ति भोगै है, कभू नरकसों मुक्त हो फिरहू ऐसेई या संसाररूप मार्गमें वर्तमान नरलोकमें जन्मैं हैं ऐसेई ऊपरके लोगनकी वार्ता हैं ॥ ४१ ॥ तिनके ये श्लोक गावै हैं, ऋषभावतारके वंशके राजर्षिमहात्मानके अनुसार कोई राजा न चल सको, जैसे कोई मक्खी गरुडजीकी बराबरी नहीं करसकै है ॥ ४२ ॥ जो ऋषभदेवजी दुस्त्यजस्त्री पुत्र सुहृद राज्य हृदयके स्पर्श करवेवारेनको जवानपनमेंही उत्तमश्लोकमें लालसा कर त्यागते भये ॥ ४३ ॥ विनके चित्तकी भक्ति भगवद्भक्तिके निमित्त प्रबल ही यासों विन्हों जो अत्याज्य राज्य पुत्र कलत्र और धन जन इत्यादिमें और श्रेष्ठ देवतानकी प्रार्थनीय लक्ष्मी जो दयाभाजन हैवेके निमित्त विनको ओर दीनतासों देखतीही वामेंहू अनिच्छा प्रगट करते भये यह कर्म उनके योग्यही भयो कारण कि जिन महात्मानको मन भगवान्की सेवामें लगो है विनके निकट परम पुरुषार्थवारी मुक्तिहू तुच्छ है ॥ ४४ ॥ जिनने यज्ञरूप धर्मपति विधिमें निपुण योगशास्त्रज्ञानी सांख्यके शिर प्रकृतिके ईश्वर नित्यवस्तुके निवास नारायणरूप सर्वदुःखहारक श्रीहरिके अर्थ नमस्कार होय, ये शब्द मृग-शरीर त्यागनके समय उच्चारण किये हे विनके मार्गको अनुसरण करवेको कौन समर्थ होयगो ॥ ४५ ॥ जो कोई ये भागवतन करकै सत्कृत उज्ज्वल राजर्षि भरतजीको मंगलदाता आयु धन यश स्वर्ग मोक्षदायक चरित्र सुनै कहै सराहना करै है, वाको सब मनोरथ अपनी आत्मासों प्राप्त होय है और काउसो नहीं ॥ " सबमें ब्रह्म देखै तब आत्मज्ञान होय है एक गुरु दो चेलाको ब्रह्मविद्या पढाई एक तो ज्ञान ले बद्रिकाश्रममें गयो, दूसरो घर घर डोलै, सो सबमें ब्रह्म माने, एक गांवमें कहीते मस्त हाथी चलो आयो सो काऊ गृहस्थीके कही बाबा ऊपर आय जाओ वो बोलो यामें का ब्रह्म नहीं है ठाढे रहै हाथीने फाड फेंकदीने मरकै ब्रह्मराक्षस हो गुरुकी छातीपर चढ बोले, तब गुरुने कही तोसरीके मैं तो तैंने ब्रह्म न माने पशुमें ब्रह्म मानो, मनमें ज्ञान नहीं कियो यासे देरमें मुक्त होओगे " ॥ ४६ ॥

इदं भागवतसभाजितावदातगुणकर्मणो राजर्षेर्भरतस्यानुचरितं स्वस्त्ययनमायुष्यं धन्यं यशस्यं स्वर्ग्यापवर्ग्यं वाऽनुशृणोत्याख्यास्यति अभिनन्दति च सर्वा एवाशिष आत्मन आशास्ते न कांचन परत इति ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे भरतोपाख्याने भवाटवीपारोक्ष्यविवरणवर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १५.

श्रीशुक उवाच-भरतस्यात्मजः सुमतिर्नामाभिजितो यमु ह वाव केचित्पाखण्डिन ऋषभपदवीमनुवर्तमानं चानार्या अवेदसमाम्नातां देवतां स्वमनीषया पापीयस्या कलौ कल्पयिष्यन्ति ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि श्रीभरतजीके सुमतिनामके पुत्र होते भए, जिनकों कोई पाखंडी ऋषभपदवीमें वर्तमान साक्षात् ऋषभवत् मानते भए, जो देवता वेदमें नहीं उनको अपनी बुद्धिकरके पापी कलियुगमें देवता कल्पना करेंगे ॥ १ ॥ ताते वृद्धसेनामें देवताजित् नाम पुत्र वृद्ध होतो भयो ॥ २ ॥ याके उपरांत आसुरीमें ताको तनय देवद्युम्न, ताते धेनुमतीमें परमेष्ठिसुत, तिनकी सुवर्चलामें प्रतीह उत्पन्न होतेभए ॥३॥ जो प्रतीह आत्मविद्या कहिके आप शुद्ध हंके महापुरुषको स्मरण करतो भयो ॥ ४ ॥ प्रतीहसे सुवर्चलामें प्रतिहर्त्रादिक तीन पुत्र होतेभए वे यज्ञ करायवेमें बडे पंडित भए, प्रतिहर्ताकी स्तुति स्त्रीमें अज भूमा दो पुत्र भए ॥ ५ ॥ ऋषिकुल्यामें उद्गीथ ताते देवकुल्यामें प्रस्ताव, प्रस्तावसो नियुत्सामें हृदयज सुत भयो, विभुकी रती स्त्रीमें पृथुषेण ताते आकूतीमें नक्त भयो, नक्तसो द्रुतिको पुत्र गय राजर्षिनमें श्रेष्ट महाशयस्वी होते भए, जो कि जगत्की रक्षा करवेको वासनासो सत्वगुण धारण कियेहैं साक्षात् विन भगवान् विष्णुकी कलासो उत्पन्न हवेके कारण यह राजा ज्ञानापन आदि लक्षणनमें महापुरुषताको प्राप्त भये ॥ ६ ॥ सो वो गय स्वधर्मसों प्रजाको पालन पोषण प्रीणन अतिलालन आज्ञालक्षणनसों यज्ञादिक करकै भगवान् महापुरुष परअवरब्रह्ममें सब प्रकारसो आत्मद्वारा परमार्थसो सब कर्म समर्पण कर ब्रह्मवेत्तानके चरणनकी सेवा करके भगवत्की भक्तियोगकरके वारंवार अतिशुद्धमति आत्मा अनात्माकों विचार कर अपने आप ब्रह्मके आत्माको अनुभव कर सब प्रकारको अभिमान त्याग पृथ्वीकी रक्षा करतो भयो ॥ ७ ॥ हे पांडुनंदन ! ताकी ये कथा पुरातन मनुष्य गावते चले आवे हैं ॥ ८ ॥ महात्मा गय यज्ञस्वरूप मनस्वी धर्मरक्षक श्रीमान् साधु जननकी सभाके पति और साधुनके सेवक है यासो भगवान्के अंशविना और कौन राजा कर्मादिकसो विनकी बराबरी करसकैगो वह भगवान्के अंश हवैसो आपही अपनी समता करसकें हैं ॥ ९ ॥ परम आनंदकरके सती दक्षकन्या सत्य आशीर्वाद दे जलसो जिनको अभिषेक करती भई, जिनके कल्याण विषयनें निराकांक्षी हवेपैहू गुणरूप वत्सद्वारा स्तन पसाय आयवेसों धरणीने जिनकी प्रजागणनके लिये अनेक कल्याण स्वयंही दोहन कर दिये हे भलो कर्मनमें विनकी बराबरी कौन करसकैगो ॥१०॥ निष्काम राजाको वेद सब कामना देतेभए, सब नृप बलि देतेभए, धर्मयुद्धमें सब राजानको जीततो भयो, ब्राह्मण लोग पालन और दक्षिणादिक पायकै पूजा अपने धर्म और पुण्यके छठे भागको जाय देय है आशीर्वाद देते हैं वाकी बराबर कौन होयगो " पुण्यषड्भागमादत्ते न्यायेन परिपालयन् "॥११॥ जाके यज्ञमें भगवान् यज्ञात्मा इंद्र सोमपान करके अत्यन्त मत्त हैगयेहै और वाकी श्रद्धा विशुद्ध अचलभक्तियोगसों करीभई पूजा फलको भगवान् ग्रहण करते भये ॥ १२ ॥ जिन भगवान्के

---

१ शंका-शास्त्रमें तथा लोकमें मुनियोंने शुकदेवजीको समदृष्टि कहाहै, कि शुकदेवजी अच्छे बुरेको एक सम देखते हैं, ऐसे परमहंस होकर श्रीशुकदेवजीने दूसरे प्राणीको पाखण्डी क्यों कहा ?

उत्तर-शुकदेवजीने अपने मनमें विचार किया कि सतयुग, त्रेता, द्वापरमें चारों वेदोंका राक्षस नाश करते हैं, परंतु कलियुगमें पाखण्डी लोग निश्चय चारों वेदोंका नाश करेंगे, कलियुगमें जो प्राणी उत्पन्न होंगे उन प्राणियोंको सिखानेके लिये तथा चतुर करनेके लिये कलिकालके प्राणी विद्वान् होंगे तो वेदकी रक्षा होगी, इसलिये दूसरेको पाखण्डी कहा क्योंकि अपने धर्मकी रक्षा करनेके लिये थोडा भेद करते ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रसन्न हैवेसो यज्ञमें देवता मनुष्य वेल तृण ब्रह्मापर्यंत प्रसन्न होयहैं सो विश्वके अंतर्यामी आप साक्षात् गयराजासो प्रसन्न हैकै बोले कि हम तुम्हारे यज्ञमें प्रसन्न भये ॥१३॥ गयसों गयंतीमें चित्र, सुगति, अवरोधन ये तीन पुत्र भए, चित्ररथसों ऊर्णामें सम्राट् उत्पन्न होतोभयो ॥ १४ ॥ ताते उत्कलामें मरीचिसो बिंदुमतीमें बिंदुमान् पुत्र भयो, ताते सरघामें मधुनामक भयो, मधुते सुमनास्त्रीमें वीरव्रत ताते भोजनास्त्रीमें मंथू प्रमंथू दो संतान भये, मंथूसों सत्यामें भौवन, ताते दूषणामें त्वष्टा भयो त्वष्टाकी विरोचनामें विरज विरजके विषूचीमें शतजित्सो आदि ले शत पुत्र भए, एक कन्या होती भई ॥१५॥ तहां ये श्लोक हैं ये कि प्रियव्रतके वंशमें सबसों पीछे विरज भयो सो अपनी कीर्तिकरकै सबको शोभित करतो भयो जैसे विष्णु देवतानके गणनकों कीर्तिसो शोभित करै है॥१६॥

प्रैयव्रतं वंशमिमं विरजश्चरमोद्भवः ॥
अकरोदत्यलं कीर्त्या विष्णुः सुरगणं यथा ॥ १६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पं० प्रियव्रतवंशवर्णनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

राजोवाच-उक्तस्त्वया भूमण्डलायामविशेषो यावदादित्यस्तपति
यत्र चासौ ज्योतिषां गणैश्चन्द्रमा वा सह दृश्यते ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि आपने भूमंडलको विस्तार कह्यो सो विशेष जानवेकी इच्छा है, जहांतक सूर्य तपते हैं जहां तारामंडलसहित चद्रमा दीखेहैं सो कहो ॥ १ ॥ हे भगवन् ! तहांहू प्रियव्रतके रथके पैयाके खुदवेसो सात समुद्र भए, तिसके मध्यमें सप्तद्वीप विशेष तुमने सूचना कराए, येही बातमें सब प्रमाण लक्षणसो विस्तारपूर्वक जानवेकी इच्छा करूंहूं सो कृपाकरकै कहिये ॥ २ ॥ गुणमय भगवान्के स्थूलरूप ब्रह्मांडमें जाको मन लगो है, वोही मन निर्गुण सूक्ष्मतम ज्योतिरूप परब्रह्म भगवान् वासुदेवमेंहू लगवेकों समर्थ है सो हे गुरो ! ये वर्णन करवेकूं योग्य हो ॥ ३ ॥ श्रीशुकऋषि बोले कि हे महाराज ! मायागुणविभूतिवारे भगवान्की विभूतिके देवनकीसी आयु है जाय तौ मन वचनसो अंत जानवेकूं मनुष्य समर्थ नहीं है तातें प्रधानता करकै भूगोलको विशेष नाम रूप मान लक्षणसो व्याख्या करै है ॥ ४ ॥ जो ये जंबूद्वीप है सो भूमंडलमें कमलसमान एकलक्ष योजनको विस्तार है, समानगोल कमलपत्रकी समान है ॥५॥ या जंबूद्वीपमें नौ २ सहस्र योजनके विस्तारके नवखंड है आठ मर्यादाके पर्वत विभागके हैं ॥ ६ ॥ इनके मध्यमें इलावृतनाम खंड याकी नाभीमें स्थित है, सब ओरसो सुवर्णको सुमेरु पर्वतनको राजा है, यह एक लाख योजन ऊंचो है याकी कलिरूप चोंच ऊपरसो बत्तीस हजार योजन विस्तृत है, मूलमें सोलै सहस्र योजन विस्तृत है उतनोंही भूमिमें प्रविष्ट है, चौरासी योजन प्रमाणनको बाहिर दीखै है ऐसै लाख योजन ऊंचो है ॥ ७ ॥ इलावृतके उत्तरकी ओर नील श्वेत, शृंगवान् ये तीन रम्यक हिरण्मय कुरु खंडनके मर्यादापर्वत है, पूर्वकी ओरसो दीर्घ है दोनों ओरसो खारीसमुद्रतक हैं दो हजार योजन लंबे हैं एक-एक पूर्वसों पूर्व उत्तरोत्तर दशगुणे अधिक दीर्घ है लम्बाईमें दशांशसै कुछ अधिक भागमें कम है[1] ॥ ८ ॥ ऐसे इलावृतके दक्षिणकी ओर निषध, हेमकूट, हिमालय ये पर्वत पश्चिम पूर्वसो लंबे हैं जैसे नीलआदि पर्वत दस हजार योजन ऊंचे हैं, हरिवर्ष, किंपुरुष, भारतके यथासंख्या मर्यादागिरि

१ गोलाके भीतर आवेके कारण सो लंबाईमेंही एकसो एक दशांश कमती होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं ॥ ९ ॥ तैसेई इलावृत खंडके पूर्व पश्चिममें माल्यवत्, गन्धमादन, नीलपर्वत, निषधतक दोहज्जार योजन विस्तृत हैं, केतुमाल भद्राश्वकी सीमाकों विधान करैहैं ॥ १० ॥ मंदर, मेरुमंदर, सुपार्श्व, कुमुद ये दशहजार योजन विस्तृत और ऊंचे हैं मेरुके चारों दिशानमें वाके सहारेके पर्वत रचैहै ॥ ११ ॥ इन चारोंमें आम, जामुन, कदंब, वट ये चार वृक्ष श्रेष्ठ पर्वतकी ध्वजाके समान है ग्यारह हजार योजन ऊंचे है, तितनोही उन वृक्षनकी शाखानकों विस्तार है ॥ १२ ॥ हे भरतवंशमें श्रेष्ठ! तहां चार तलाव हैं दूध शहत गन्नेको रस शुद्धजलसों भरे हैं, इनमें स्नान करवेसो यक्षलोक स्वाभाविक योगके ऐश्वर्य धारतेहैं ॥ १३ ॥ तहां चार देवतानके बाग है नंदन, चैत्ररथ, वैभ्राजक सर्वतोभद्र ये नाम हैं ॥ १४ ॥ इन उद्याननमें प्रधान देवता और देवांगनानमें रत्न स्त्रियनके पति अपनी अपनी स्त्रियनके संग मिलके विहार करै हैं और वा समय गंधर्व विनकी महिमा गाते हैं ॥ १५ ॥ मंदराचलके मध्यमें ग्यारह हज्जार योजन ऊंचो देवतानको एक आमको वृक्ष है वामेंसो वाही पर्वतके शिखरसमान मोटे अमृतसमान मीठे फल गिरै हैं विन फलनको प्रमाण वायुपुराणमें आठसौ इकसठ हाथ लंबो है श्लोकोयं ॥ "अरत्नीनां शतान्यष्टावेकषष्ट्यधिकानि च ॥ फलप्रमाणमाख्यातमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥" ॥१६॥ तिनके टूटवेसों अतिमधुर सुरभी सुगंध बहुत फैलै है वाके लालूसके जलसे अरुणोदानाम नदी मंदराचलके ऊपरके शिखरसो गिरतीभई इलावृतके पूर्व ओर वहै है ॥ १७ ॥ जामें स्नान पान करवेसो भवानीकी अनुचरी यक्षनकी स्त्रीनके शरीरके स्पर्शसो सुगंधकी वायु चालीस कोसतक सब ओरसों सुगंधित करै है ॥१८॥ ऐसेई गुठलीरहित हाथीके देहके समान मोटे जामुनके फलनको अतिऊंचेसौं गिरकै टूटवेसो विनके रससो जंबूनाम नदी मेरुमंदरके शिखरसो दसहज्जार योजनसों धरतीमें गिरतीभई दक्षिणकी ओर अपने आत्माको इलावृतके तरफ वहै है[२] ॥ १९ ॥ या नदीके दोनों किनारेनकी मृत्तिका वाके रससो मिली पवन, ओर सूर्यके संयोगसो पकके देवलोकके आभरण योग्य जांबूनद नाम सुवर्ण होयहै ॥ २० ॥ सब देवता आदिक अपनी स्त्रीन सहित जा सोनेके मुकुट, कडा, कौंदनी इत्यादिक आभरण बनायकै धारण करैहैं ॥ २१ ॥ सुपार्श्व पर्वतकी कक्षामें महा कदम्बकं नामकै जो बडा भारी कदम्बको पेड है वाके समस्त कोटरनसौ पांच पांच मधुकी धारा वा पर्वतसौ निकरके पश्चिमकी ओरमें इलावृत वर्षको अपनी सुगंधिसौ चारौं ओर सौ १०० योजनतक सुवासित करै है ॥ २२ ॥ जो या पर्वतकी मधुधारानकी सेवा करैहै विनके वदनकी सुगंधिके स्पर्शसौ वायु सुगंधित हैकै अपनी सुगंधीसों सौ १०० योजनतक महकाय देय है ॥ २३ ॥ ऐसैं कुमुद पर्वतपै शतवल्शनामको वट है, वाके स्कंधसौ नीचे दूध दधि सहत गुड

---

१ ये चारों बाग क्रमसौ सुमेरुके पूर्व आदि दिशाके मंदर आदि चारों टेउकीके पर्वतनके ऊपर है मंदरपे नंदन मेरुमंदरपे चैत्ररथ आदि जानौ ॥

२ शंका—कदम्ब, आम्र, जामुन, वड इन वृक्षोंका चरित्र सुनके तथा इन वृक्षोंसे उत्पन्न हुये जो नदी तथा कुण्ड सब पदार्थोंको देनेवाले सुनिके हमारा चित्त अत्यन्त चकित हो रहा है, और कांपता है, शंका करके शंकासे डरके शंकाके भयसे छिपगया, क्योंकि आजतक ऐसी बात सुननेमें नहीं आई, कि नदीमें और कुण्डमें सब पदार्थ भर रहे हैं॥

उत्तर—जब ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सब अपने अपने धर्ममें और वेदके मार्गमें दृढ और स्थित थे तब नदियोंका, कुण्डोंका, वृक्षोंका जो जो प्रभाव श्रीमद्भागवतमें लिखा है सो सब सत्य था, जब चारों वर्णोंने कलियुगमें अपने अपने धर्मको और वेदमार्गको त्याग दिया और पाखण्डी बन पाखण्डमतको ग्रहण किया, तब भगवान्ने समझा कि यह दुष्ट इन स्थानोंकोभी भ्रष्ट करेंगे यह विचार कर उन कुण्ड और वृक्षोंको गुप्त कर दिया और किसी किसीका प्रभाव हर लिया ॥

३ खौतरनसों ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अन्नादिक श्रेष्ठ शय्या आसन आभरण आदिक सब मनोवांछित फलदायक जे नद या कुमुदके अग्रभागसो निकले उत्तरके इलावृतमें हैके समुद्रमें मिले हैं ॥ २४ ॥ जिन नदनदीनमें स्नान करवेवारी वहांकी प्रजाको बुढापो परिश्रम पशीना दुर्गंध जरा मृत्यु शीत उष्ण विवर्णता और विघ्नादिक ताप-विशेष कभू नहीं होयहैं जबतक जीव हैं तबतक अत्यंत सुख भोगेहैं ॥ २५ ॥ कुरंग कुरर कुसुंभ वैकंक त्रिकूट शिशिर पतंग रुचक निषध शिनिवास कपिल शंख वैडूर्य जारुधि हंस ऋषभ नाग कालंजर नारद आदि बीस पर्वत सुमेरुपर्वतके मकरंद रूप हैं, केसरभूत सुमेरु है, मूलदेशमें सब ओरसो रचे भए हैं ॥ २६ ॥ जरठ, देवकूट दो पर्वत सुमेरुके पूर्वकी ओर अठारह हजार योजन ऊंचे दो हजार योजन चौडे हैं, और पवन पारियात्र दक्षिणकी ओर है कैलास करवीर पश्चिमकी ओरसो विस्तृत है, उत्तरकी ओर त्रिशृंग मकर इन आंठ पर्वतनसो घिरो भयो अग्निकी नाईं सुमेरुपर्वत सब ओरसो प्रकाश कर रह्यो है ॥ २७ ॥ सुमेरुके मूढपै भगवान् ब्रह्माजीकी बीचमें रची भई दसहजार योजन लंबी चौडी पुरी सोनेकी बनी है जाके चारों कोने बराबर हैं ऐसो पंडित कहे हैं ॥ २८ ॥ या पुरीके चारों ओरमें पूर्वादि सब दिशानमें क्रमसो इन्द्रादि आठों लोकपालनकी आठ पुरी बनी हैं इनके वर्ण विनमें रहते भये लोकपालनके समान हैं और ढाई २ हजार योजनको प्रत्येकको विस्तार है ॥ इन पुरीनके नाम पुराणांतरसो जान लेनेसो लिखे है ॥ यथोक्तम् "मेरौ नव पुराणि स्युर्मनोवत्यमरावती ॥ तेजोवती संयमनी तथा कृष्णांगनापरा ॥ १ ॥ श्रद्धावती गंधवती तथा चान्या महोदया ॥ यशोवती च ब्रह्मेंद्रवह्न्यादीनां यथाक्रममिति" ॥ २ ॥ ये यह अग्नि आदि लोकपाल हैं, एक समय यह सब अपनी २ बढाई करते थे तब भगवान्ने यक्षका रूप धार एक तृण स्थापन किया और कहा इसै जलाओ तब अग्निनें जाय वा ब्रह्मतेजसै प्रार्थना कीनी कि तुममें कहा पराक्रम है, तब यज्ञरूपधारी ब्रह्मतेजने कही हमारा तौ पराक्रम है ही परन्तु हम एक तृण स्थापन करते हैं तुम इसको जलाओ सो वोहो तृण अग्निसें नहीं जला, वायुसै नहीं उडा वज्रसे नहीं टूटा, तब देवताओंका अभिमान गया और जाना कि ब्रह्मतेजसेही सब दीप्तिमान है वोह सब कुछ करताहै, हमारा करा कुछ नहीं हो सक्ता, यासे ब्रह्मतेज बडो है, अग्नि आदिको तेज छोटो है ॥ २९ ॥

तामनु परितो लोकपालानामष्टानां यथादिशं
यथारूपं तुरीयभागेन पुरोऽष्टावुपकल्पिताः ॥ २९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे भुवनकोशवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

श्रीशुक उवाच-तत्र भगवतः साक्षाद् यज्ञलिङ्गस्य विष्णोर्विक्रमतो वामपादाङ्गुष्ठनखनिर्भिन्नोर्ध्वाण्डकटाहविवरेणान्तः प्रविष्टा या बाह्यजलधारा तच्चरणपङ्कजावनेजनारुणकिञ्जल्कोपरञ्जिताखिलजगदघमलापहोपस्पर्शनाऽमला साक्षाद् भगवत्पदीत्यनुपलक्षितवचोऽभिधीयमानाऽतिमहता कालेन युगसहस्रोपलक्षणेन दिवोमूर्ध्न्यवततार ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि या अध्यायमें गंगामाहात्म्यकी कथा है, साक्षात् भगवान् यज्ञपुरुषने जब वामन अवतार लियो तब विनके बलिसौ पृथ्वी मांगवेपै बडो रूप धारणकर जब दक्षिण चरणसो

१ ये आठौ पर्वत १८००० योजन ऊंचे और २००० योजनके मोटे हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पृथ्वीको दबायके वामचरण ऊंचो कियो तब वा चरण अंगुष्टके नखसों ब्रह्माण्डको उपरिभाग विदीर्ण हैवेसो वा छिद्रमें बाहरके आवरणकी नीरधारा जो भीतर आई वह सहस्र युग पर्यंतके महासमयसों स्वर्गके ऊपर उतरी वामनजीके चरण धुयवेके कारण चरणसम्बन्धी लालकेसरसों वह धारा रंग गई यासों वा धाराको स्पर्श जगत्को पापनाशक हो स्वयं महापवित्र ही प्रथम तो यह विष्णुपदी नामसों विख्यात भई वही स्वर्गको मस्तक है[1] ॥ १ ॥ जहां वीरव्रत कर्त्ता उत्तानपादके पुत्र परम भागवत ध्रुवजी यह हमारे कुलदेवता श्रीमन्नारायणके चरणारविंदको जल है ऐसे विचार परम आदरसों शिरपे धारण करे हैं और क्षण क्षणमें बढीभई भगवद्भक्तियोगसों दृढ और द्रवीभूत हृदय हो अति उत्कंठतासों विवश हो नेत्र मूंदे मग्न होयहै तब विनके नेत्रनमेंसों आनन्दाश्रुकी वर्षा होयहै शरीरमें रोमांच होजाय हैं ॥ २ ॥ वाके प्रभावको जानवेवारे ध्रुवजीसो नीचे रहनवारे सप्तऋषि निश्चयकरकै तपकी अत्यंत सिद्धि देवेवारी यही है ऐसो निश्चय कर अपनी जटासमूहमें इनको धारण करे हैं वह जाने हैं कि सबके आत्मस्वरूप भगवान् वासुदेवमें एकान्तिक भक्तियोग प्राप्त करवेसों और दूसरे पुरुषार्थ और ज्ञानमें आस्थारहित हैकें निर्लोभी मनुष्य मुमुक्षु जैसे मुक्तिको धारण करे हैं विन्हीकी समान परम यत्न और आदर सत्कारसों गंगाको धारण करे हैं ॥ ३ ॥ तहांसों अनेक सहस्रकोटि विमानसमूहनसों सघन देवमार्गसो उतरती भई चंद्रमंडलकों भिजोयकै ब्रह्माके स्थानमें गिरती भई ॥ ४ ॥ तहां चार प्रकारसों धार भई हुई, चार नामसो चारों दिशामें वहती भई तलाव नदीनके पति समुद्रमें प्रवेश करती भई, सीता, अलकनंदा, चक्षु, भद्रा भई ॥ ५ ॥ सीतानाम्नी जो श्रीगंगाजीकी धार ही सो ब्रह्माके स्थानसों केसराचल आदि पर्वतशिखरनसो नीचेको वहतीभई गन्धमादनके मूंडपे गिरकै भद्राश्वखंडके पास होती भई पूर्वकी दिशाके क्षारसमुद्रमें प्रवेश होय है ॥ ६ ॥ ऐसें माल्यवान् पर्वतके शिखरसो गिरतीभई महावेगवती केतुमालखंडके सामने होती भई चक्षुसंज्ञा श्रीगंगाजीकी धारा पश्चिम दिशाके समुद्रमें प्रवेश करे है ॥ ७ ॥ भद्रा उत्तरसों सुमेरुके ऊपरसों गिरी भई पर्वतके शिखरनसो पर्वतके शिखरनको उल्लंघन करती भई शृंगवानपर्वतके शृंगनसो वहतीभई कुरुखंडके उत्तरकी ओर होतीभई उत्तर दिशाके समुद्रमें प्रवेश करे है ॥ ८ ॥ तैसेई अलकनंदा दक्षिणकी ओरसो आवतीभई ब्रह्माजीके स्थानसो बहुतसे पर्वतनके समूहनको उल्लंघन करती भई सुवर्णनके पर्वतनको अतिवेगसों बहावती भई भरतखंडके समीप होती भई दक्षिण दिशाके समुद्रमें प्रवेश करती भई जाके स्नानार्थ पानार्थ आयवेवारे पुरुषको पदपदमें अश्वमेध राजसूय यज्ञको फल प्राप्त होय है ॥ ९ ॥ औरहू तलाव नदी खंडखंडमें बहुत हैं,

---

१ "श्रीगंगाजीकी ठुमरी ॥ जगतरणि हरणि सुखकरणि सकलसुखधरणि शरणि भई रे श्रीगंगे ॥ टेर ॥ बलिबलदलन छलन वामन भए खलन मलन प्रभुचलन वचन भए अचल भवन पदसचल कियो विधि जल ले शरणि भई रे ॥ १ ॥ अंडकटाहकू हटाके झटाकर चरणपरधार सटाकर दिनकर ब्रह्मकमंडल निकस परी शिवशिरको सींचत भई रे ॥ २ ॥ तुंगौ छरणि कराणे करणे रणि वेदोच्चरणि धरणि सुरमणि गणि; कणि कणि क्षणि क्षणि पदज जणि भवजजाणे अजणि भई रे ॥ ३ ॥ टराणि पापत्रयतापहराणि भई जन्ममराणि गई तराणि सुभग भई पारकराणि जमडराणि गई हरशिराणि महत भई रे॥ ४ ॥ अगणित अघगणि गणिनगणणि भई भणाणि वेदजाणिजणिकी सुमणि दई, पुरुषोत्तम जेही पदसरणी सब भवकी डराणि गई रे ॥ ५ ॥

२ परन्तु विश्वासपूर्वक गंगाही स्नान करने जाय तो पद पदपर सो अश्वमेधका फल होताहै, एक समय महादेवजी पार्वतीजीको लेकर मकरकी संक्रान्तिमें प्रयागराजमें स्नान करनेको जातेथे, तब मार्गमें बहुतसे मनुष्योंको पार्वतीजीने स्नान करनेको जाते देख शिवजीसे गंगास्नानका माहात्म्य पूछा, तब शिवजी बोले जो गंगास्नानको आते हैं, उनको एक एक पगपर सौ अश्वमेधकी बराबर फल होता है, करोडों जन्मके पाप दूर होजाते हैं, वोह देवतासमान होजाताहै,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुमेरु आदि पर्वतनकी सैकडों नदी पुत्रीरूप है ॥ १० ॥ तहांहू ये भारतखंड कर्मक्षेत्र है, और जो आठ खंड है, सो स्वर्गवासिनके पुण्यभोगस्थान है वेहू भूमिके विकार हैं, स्वर्ग नामकरके विदित हैं ॥ ११ ॥ इन खंडनमें दसहजार वर्षकी आयुके देवतानकी समान पुरुष रहै हैं जिनमें दसहजार हाथीको बल है वज्रसो शरीर है बल अवस्था और प्रसन्नतासहित स्त्रीपुरुष भोग भोगते रहै हैं मैथुनके अन्तमें जब आयुको एक वर्ष रहजायहै तब विनकी स्त्री गर्भ धारण करै हैं त्रेतायुगके समान वहांके वासी होयहैं वैसोही समय रहै है ॥ १२ ॥ इन खण्डोंके रहनवारे देवपति अपने अपने योग्य स्थाननमें अपने २ मुख्य सेवकनसो पूजित हो अपनी २ इच्छानुसार बडे २ महात्मा पुरुष आश्रमनमें पर्वतनमें कन्दरानमें निर्मल जलाशयनमें अनेक प्रकारके जलविहार करते रहैं हैं और छहौ ऋतुनमें वहां वृक्षनकी शाखानमें फूल फूलते हरे पत्तानके समीप कोमल कौंपलनसो अत्यंत झुकीभई शाखा और वेगवारे वृक्षनसो शोभा छायरही है खिले भये नवीन कमलनकी सुगंधिसो प्रसन्न हो राजहंस जलमुर्गावि कारंडव सारस और चक्रवाक आदि अनेक प्रकारके पक्षी और भौंरा सरोवरनमें शब्द करै हैं सुंदर अंगनानको कामदेवसो क्षुभित विलास हास और लीलापूर्वक चितवनसो वहां विहरनेवारेनके मन और नेत्रनकी खैंचा खैंची होतीरहै है ॥ १३ ॥ नवखंडनमें भगवान्नारायण महापुरुष विन खंडवासी पुरुषनके अनुग्रहके लिये अपने आत्माके तत्वकी मूर्तिके समूहकरकै अद्यापि सम्यक् प्रकार करकै निवास करै है ॥ १४ ॥ इलावृतखंडमें तो भगवान् श्रीमहादेवजी एकही पुरुष है, और कोई पुरुष वहां नहीं है जो प्रवेश करै है, वाको स्त्रीभाव है जायहै यह कथा नवमस्कंधमें कहेंगे, भवानीके शापको निमित्त जहां प्रवेश करतेही पुरुष स्त्री हैजाय है ॥ १५ ॥ असंख्यातसहस्र अर्बुद स्त्रीगणसहित भवानीनाथ शिवासो सेवित रहै हैं तहां शिवजी शेष भगवान्की आराधना करै हैं वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध नामकी चार मूर्तिवाले महापुरुष भगवान्की तमोगुणी चौथी संकर्षण नाम मूर्तिकी कि जासो स्वयं उत्पन्न भएहै आराधना करते और स्वरूपको समीपमें स्थापित कर यह मंत्र जपै हैं ॥ १६ ॥ श्रीशंकरजी बोले उत्पत्ति पालन नाशकर्ता षड्गुण ऐश्वर्यवान् महापुरुष सर्व गुणप्रकाशक अनंत अव्यक्त श्रीसंकर्षण भगवान्के अर्थ नमस्कार होय ॥ १७ ॥ हे भजनीय ! संपूर्ण ऐश्वर्यके दायक परमस्थान भक्तनमें स्वरूप

यह सुन पार्वतीजी बोली लाखों मनुष्य ब्राह्मण शूद्रादिक स्नान कर चले आते हैं. इनकी कुरूपताभी न गई, देवता तौ कहांसे होंगे. तुम कहते हैं ऐसा फल होगा. सो मैं सत्य कैसे जानूं, महादेवजी बोले हम प्रत्यक्ष दिखाते हैं, यह कह शिवजी कुष्ठीका रूप बना यात्रियोंके मार्गमें बैठगये, पार्वतीसे कहा तुम इसी सुंदर शरीर धारे मेरी मक्खी उडावो, जो कोई वृत्तान्त बूझै तौ कह दीजो कि कर्मविपाकमें इनकूं बताया है, जिसने सौ अश्वमेध यज्ञ किये हैं, उसके छूनेसे शरीर अच्छा होगा; सो यहां लक्षों मनुष्य हैं, किसीने तौ यज्ञ किये होंगे, पार्वतीने वैसाही किया, उनको दिव्यरूप देखकर सैकडों मनुष्य इकट्ठे होगये, कोई तौ उनमें मोहित हो कोई अपने संग चलनेको कहने लगे, कोई हँसी करने, कोई द्रव्यका लोभ देने लगे, ज्ञानी लोगोंने सराहना करी कि स्त्रीको धन्य है जो ऐसी दशामेंभी पतिकी सेवा करती है उसी समय एक कंगाल ब्राह्मणने आनकर पूछा, माता तुम यहां किस कारण बैठीहो, कहीं एकान्तमें लेजाकर बैठो, पार्वतीने अपने बैठनेका कारण कह सुनाया, यह सुनकर ब्राह्मण बोला तुम १०० अश्वमेधको कहती हो मैंने लाखो किये हैं यह कहकर महादेवजीके अंगसे हाथ लगाया, और शरीर अच्छा होगया मनुष्य बडे आश्चर्यमें हुए, कि प्रतिवर्ष एक अश्वमेधयज्ञ होताहै, इस कंगालने लाखौं कहांसे किये, तब वोह बोले कि जो एक पग गंगाकूं चलता है, सो एक यज्ञका फल प्राप्त होताहै, मैं बीसियों बार स्नान करने पैरोंही आयाहूं, इस कारण सहस्रों यज्ञ किये हैं यह सुनकर महादेवजीने कहा कि पार्वती इतनोंमें यह स्नान करने आया है, जो ऐसा विश्वासी है इससे जो ऐसे विश्वाससे स्नान करता है वोही फललाभ करता है ॥ १ ये विनको मालामंत्र है अगारी श्लोकमें स्तुति की है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रगट करनवारे संसारनाशक सब संसारसो भावना करे भए ईश्वरके शरणागत रक्षक चरणकों हम भजे हैं ॥ १८ ॥ मायाके गुण चित्तकी वृत्तिसो देखतेहू जिनकी अणुमात्र दृष्टि लिप्त नहीं होय है, जैसे हम लोग क्रोधके वेगको जीतवेकी सामर्थ्य नहीं राखते याही कारणसो हमको या संसारसागरसो बचनो कठिन है आपही अपनी आत्माको जीतके वशमें राखे हौं यासो जो अपनी आत्माको जीतके मोक्षकी इच्छा करै तौ वह कौन पुरुष आपको भजन करै अर्थात् आपहीको करैं ॥ १९ ॥ क्रूर दृष्टिवारे पुरुषनको आप मदमत्तके समान भयदायक मदिरा और आसवसो लाल नेत्र किये मायाद्वारा प्रतीत होउहो कारण कि आपके चरणस्पर्शसो कामातुर हैके नागनकी वधू लज्जाके मारे आपको पूजनहू संपूर्णतासो नहीं करसकै है डरपती तौसो है कि कहीं भस्म न करदेय और कहू फूलकी पखरी चरणनमें न लगजाय यासो पूजा करवेमें डरपैहैं ॥ २० ॥ ऋषि और वेदमंत्र या विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश करनवारे आपको अनंत और उत्पत्ति पालन प्रलयसो रहित कहै हैं सहस्रन मस्तकनमेंसो काउ एक मस्तकपै सरसाकी समान आप भूमंडल धारण करै हो और वाके बोझको कछु नहीं जानै हो ऐसे आपके निमित्त नमस्कार हो ॥ २१ ॥ जिनके आद्य सत्त्वगुणी महा-विज्ञानरूपसो वासुदेव होते भये, विनसो भगवान् ब्रह्मा भये जिनसों हम रुद्र भयेमैं त्रिगुणात्मक अहं-कारसो देवता पंचमहाभूत और इन्द्रियवर्गको प्रगट करै हूं ॥ २२ ॥ जैसे कीट विहंग रस्सीसो बंधके पराये वशमें है जायहैं सोही आपके वशमें होके यह हम सब महत्तत्व देवता भूत और इन्द्रियगण हैरहे हैं जिनके अनुग्रहसो हम सब ब्रह्माण्डको सृजे हैं और आपको सृजनहारो कहैहै ॥२३॥ जिनकी रचीभई कर्मनकी पर्वरूपधारिणी मायाके गुणसर्गनसो मोहित होय ये जन अनायाससो निस्तारणके योगको नहीं जानैहै ऐसे उत्पत्ति पालन नाशकर्ता भगवान्के अर्थ नमस्कार होय ॥ २४ ॥

यन्निर्मितां कर्ह्यपि कर्मपर्वणीं मायां जनोऽयं गुणसर्गमोहितः ॥
न वेद निस्तारणयोगमञ्जसा तस्मै नमस्ते विलयोदयात्मने ॥ २४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटी० पञ्चम० इलावृतखण्डे भगवत्संकर्षणवर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय १८.

श्रीशुक उवाच–तथा भद्रश्रवा नाम धर्मसुतस्तत्कुलपतयः पुरुषा भद्राश्ववर्षे साक्षाद् भगवतो वासुदेवस्य प्रियां तनूं धर्ममयीं हयशीर्षाभि-धानीं परमेण समाधिना सन्निधाप्येदमभिगृणन्त उपधावन्ति ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि तैसेई भद्रश्रवानामको धर्मको पुत्र कुलके पतिलोग पुरुष सब भद्रा-श्वखंडमें साक्षाद्भगवान्वासुदेवकी धर्ममयी प्रियदेह श्रीहयग्रीवजी महाराजको परमसमाधिसो ध्यान कर ये कहते स्तुति करै हैं ॥ १ ॥ भद्रश्रवा बोले कि उत्पत्तिपालननाशकर्ता षड्गुणैश्वर्यवान् आत्माके शोधन करवेवारे धर्मके अर्थ वारंवार नमस्कार होय ॥ २ ॥ श्रीभगवान्की चेष्टा बडी विचित्र है; कि या जनकों काल मारे है तोभी वह ईश्वरकों नहीं देखै है, असत् कुकर्मनके सेवन करवेकों ध्यान करै हैं पिता पुत्र इत्यादिकनको जरायकै फेरहू आप जीवेकी इच्छा करै है ॥ ३ ॥ कविलोक वा विश्वको मिथ्या कहै हैं, और अध्यात्मवेत्ता विद्वान् याको समाधिसो प्रत्यक्ष नाश-

१ ये तो विनके जपवेको मालामन्त्र है और अगारीके श्लोक स्तुतिके हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वान् देखे हैं तोहू हे अज ! तुम्हारी माया करके मोहित हैं ये आपको बडो विस्मय करायवेवारो कृत्य है, याते जन्मरहित अजन्मा तुमको हम नमस्कार करे हैं ॥ ४ ॥ आवरणरहित अकर्ता तुमनें विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश अंगीकार करे हैं; सबकी आत्मा, सब वस्तुसों व्यतिरिक्त कार्य कारणरूप तुममें यह कुछ विचित्र नहीं है, ये युक्तही है ॥ ५ ॥ प्रलयसमयमें तमरूप दैत्यसों हरण किये वेदनको देख आप हयग्रीवरूप धारके रसातलसों लावतेभए, ब्रह्माके प्रार्थना करवेपें विनको दिये ऐसे सत्यसंकल्प सबके हितकारी तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय ॥ ६ ॥ हरिवर्षखंडमें भगवान् नृसिंहरूप धारके रहेहैं, तिनके रूपग्रहणको निमित्त सप्तम स्कंधमें कहेंगे तिनको प्रियरूप महापुरुषगुणको पात्र महाभागवत दैत्यदानवकुलको पवित्र करवेवारो शील आचरणवान् प्रह्लादजी फलसंकल्परहित अनन्यभक्तियोगकरके वा खंडके सब पुरुषसहित उपासना कर ये उच्चारण करें है[1] ॥७॥ ॐकारसहित भगवान् नरसिंहके अर्थ नमस्कार होय, आप तेजकेहू तेजरूप हो प्रगट होउ २ वज्रसमान नख वज्रसदृश डाढसो कर्मनकी वासनाको भस्म करो अंधकारको ग्रसो २ ॐके अर्थ स्वाहा है; आत्मामें अभय करो २ ॐ क्ष्रौं ये बीजमंत्र हैं[2] ॥ ८ ॥ संसारको मंगल होय दुष्ट अपनी क्रूरता छोडैं और सब जीव आपसमें बुद्धिसो मंगलको ध्यान करो मन कल्याणको भजै, भगवान्में हमारी फलानुसंधानरहित बुद्धि लगै ॥ ९ ॥ घर स्त्री पुत्र धन बंधुमें हमारो संग न होय, जो संग होय तो भगवत्प्रियनमें होय क्योंकि जो प्राणकी वृत्तिसो परितुष्ट होनवारे आत्मवान् ज्ञानी जैसे तत्काल सिद्ध होजाय हैं ऐसे इन्द्रियनके प्रसन्न रखवेवारो कभू नहीं होयहै ॥ १० ॥ भगवद्भक्तनके सत्संगसों पुरुष मुकुंद भगवान्के चरित्र और पराक्रमको जान जायहै विनके प्रभावको सुनकै जो पुरुष विनकी सेवा करे हैं भगवान् श्रवणद्वारा उनके हृदयमें प्रवेश करके विनके हृदयकों मल हरलेयहैं ऐसे गंगादि तीर्थ तो शरीरको मल हरे हैं यासो भक्तनकी संगति कौन न करै याते मुकुंदके चरित्रको सब कोई श्रवण करे हैं ॥ ११ ॥ जाकी भक्ति फलकी चाह रहित भगवान्में है, वहां सब गुणसहित सब देवता आवे हैं, जो हरिमें भक्तिरहित है वामें बडे गुण नहीं आवे हैं, वह मनोरथकर असत्पदार्थनमें बाहिर दौडतो फिरे है ॥ १२ ॥ श्रीहरि भगवान् साक्षात् शरीरधारीनके आत्मा है जैसे मत्स्यनको जल सदा अभिलषित है, यासो बडे लोग भक्ति त्याग जो घरमें आसक्त होजाय तो वाको बडप्पन ऐसो है कि जैसे साधारण स्त्री पुरुषनको बडप्पन अवस्थासों

---

१ प्रहलादजीने भगवान्से वरदान मांगा कि महाराज मैं चाहता हूं मेरी सब प्रजा सुमार्गमें चले, वैकुंठको जाय, नृसिंहजी बोले सब जीवोंको वैकुंठकी इच्छा नहीं होती, और वर मांगो, अथवा वैकुंठ जो चले उसे संग लिवालाओ, प्रहलाद तथास्तु कहकर ढूंढने चले, सोचने लगे बालक तो अज्ञानी, युवा विषयी, वृद्धोंकी स्वर्गकी इच्छा होती है, एक महावृद्धसे पूछा स्वर्ग चलोगे, उसने कहा चलेंगे, यह बोले तो चलो वह बोला जी अभी नहीं, अभी तो पोती और पोतेका विवाह देखेंल प्रहलाद बोले तुम बडे मूर्ख हो, जो स्वर्ग जानेमें टालबाल करतेहो वृद्धने कही चलो जाओ अपने घरकूं, बस तुम्हारे कहेसे अभी प्राणत्याग न कर दैं, जाओ नहीं तो हमारे पुत्र सुनगे तो दंड दैंगे, प्रहलाद वहांसे चले, और विचारने लगे मनुष्य कोई नहीं जायगा, किसी महानिकृष्ट पशुके पास चले, सो शूकरके पास जा उसे स्वर्ग चलनेको कहा, और स्वर्गके पदार्थोंका वर्णन किया उसने कहा मैं स्त्रीसे सम्मति करलूं यह खडे रहे, और वोह शूकरीसे पूछकर आ इनसे कहने लगा कि महाराज वहां विष्ठाभी है ? प्रहलाद बोले बडे मूर्ख हो, वहां यह वस्तु नहीं; और सब कुछ है वह सुन वोह घुरघुराकै इन्हैं देखने लगा, तब प्रहलादने निराश हो भगवान्से कहा महाराज ! आपकी माया बडी प्रबल है सब जगत्को मोह रखा है अपने खेलमें सब प्रसन्न हैं विना सत्संग और तुम्हारी कृपाके किसीको वैकुंठकी प्राप्ति नहीं होती तुम्हारी माया बडी प्रबल है इस प्रकार स्तुति करते हैं ॥

२ ये तो विनको मालामंत्र है और अगाडी स्तुति है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गिनो जायहै भगवान्‌की भक्ति करनोही बडप्पन है ॥ १३ ॥ ताते रजोगुण राग विषाद क्रोध चाहना भय दीनताको मूल संसार और सबको डुबायवेवारो भंवररूप घरको त्याग भयरहित नृसिंहजीके पादको भजो ॥ १४ ॥ केतुमालखडमें भगवान् कामदेवके स्वरूपकरके श्रीमहालक्ष्मीजीके प्रियकी इच्छाकर सदा विराजे हैं सम्वत्सर विनकी कन्या रात्रिके अभिमानीदेवता और विनके पुत्र दिनके अभिमानी देवता जो कि या खण्डके पति हैं वह प्रजापतिके पुत्र हैं सो वर्षके जितने दिन रात होयहैं वितनीही इन प्रजापतिके पुत्रनकी संख्या है अर्थात् ३६००० है यापैहू वह परमहित करै है या संवत्सरके विशेष हित करवेके कारण यह है कि महापुरुष भगवान्‌के चक्रके तेजसों विन कन्यानके अन्तःकरण अतिशय निर्बल और कंपायमान हैजाय हैं और विनके गर्भ वर्षके अन्तमें पतित हैके निष्प्राण है जायहैं या कारण वा खण्डमें पुरुषनकी संख्या अधिक नहीं होन पावैहै ॥ १५ ॥ तहां भगवान् कामदेव अत्यंत सुंदर ललित गतिविलाससो शोभित रुचिरहास्यके लेशमात्रके चितवनकी लीलाकरकै कुछेक उठी भई सुंदर भ्रूमंडल श्रेष्टमुखकमलकी शोभा करके महालक्ष्मीजीको रमण करत अपनी इन्द्रियनको रमावैं हैं ॥ १६ ॥ वह रमा देवजी सम्वत्सरकी रात्रि समय विनकी कन्या अर्थात् रात्रिकी अधिष्ठाता देवियनके संग और दिनमें इन कन्यानके स्वामी अर्थात् दिनके अधिष्ठाता देवतानके संग मिलकै भगवान्‌के या मायामय रूपकी उपासना कर सदा या मंत्रको जप कियो करै हैं ॥ १७ ॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ॐ इन पांच बीजमंत्रनको नमस्कार है; भगवान् इंद्रियनके ईश सब गुण विशेषनसो विलक्षण देहयुक्त, क्रिया ज्ञान चित्त विशेषण स्वामी सोलह कलारूप वेदमय अन्नमय अमृतमय सर्वरसमय सह ओज बलके पति सब कामनानके पति तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय दोनों लोकमें हमको मंगल होय ॥ १८ ॥ सब इंद्रीनके ईश्वर तुमको अपने व्रतसों स्त्रियें आराधन कर लोकमें आपके विना अन्यपतिको नहीं चाहैहैं, तिनके संतान धन आयुकी तुम रक्षा करौहौ, क्योंकि वे तो स्वतंत्र नहीं हैं, तुम्हारे आधीन हैं ॥ १९ ॥ या कारणसो वह सब पति पतिही नहीं है पति तौ ऐसो होनो चाहिये जो स्वयं निर्भय होय और भयातुरकी सब प्रकारसो रक्षा करसकै ऐसे पति तौ केवल आपही हो कारण कि आप अपने स्वपरूके लाभकी अपेक्षा दूसरे काउको अधिक नहीं मानोहो जाय दूसरेसो सुख मिलै वह स्वतंत्र नहीं है और जो परतंत्र हैं वाय अवश्य दूसरेनसो भय होयहैं ॥ २० ॥ हे भगवन् ! जो स्त्री निष्काम हैके तुम्हारे चरणकमलनकी पूजा करै है वही अति चतुर है कारण कि वाकी सब कामना प्राप्त होय हैं और जो फलकी कामनासो आपकी पूजा करै है वासो अधिक मूर्ख कोउ नहीं कारण कि तुम वाको मनोवांछितही फल देउहो वासो अधिक नहीं देउ फिर जब भोग चुकवेपे वह फल नष्ट हैजायहै तब पीछे वा स्त्रीको कष्ट भोगनो परै है ॥ २१ ॥ हे अज ! हे ईश ! हे अजित ! मेरी प्राप्तिके अर्थ सुख असुर आदिक इंद्रियसुखमें बुद्धि करनवारे उग्र तप करैं है आपके चरणके विना मोको नहीं पावैं हैं मैं आपमें परायण हूं, सो और काउकी चाहना नहीं करूं हूं ॥ २२ ॥

---

१ लक्ष्मीजीने भगवान्‌से बूझा कि हे भगवन् ! जो मनुष्य त्रिलोकीमें आपका पूजन, सेवन, भजन नहीं करते, वह मनुष्य मुझको कभीभी प्राप्त नहीं होंगे, ऐसे वाक्य लक्ष्मीजीने क्यों कहे ? क्योंकि दुष्टजीव जैसे कि दैत्य, दानव, अत्याचारी मनुष्य यह सब चारों युगमें विष्णु भगवान्‌को नहीं जानते कि विष्णु भगवान् क्या वस्तु हैं, और सेवन पूजनका तो कहनाही क्या है ? परन्तु उनके घरमें लक्ष्मी अचल होकर रहती है, इस बातसें तौ लक्ष्मीका वाक्य झूठ हुआ, तो फिर क्यों झूठ हुआ ?

उत्तर—दैत्य, दानव, म्लेच्छादि और जो कोई दुष्ट मनुष्य भगवान्‌को नहीं जानते, और लक्ष्मीका सुख भोगते हैं, वह मनुष्य पूर्व जन्ममें लक्ष्मीके सेवक थे मृत्युलोकमें आनकर अपने अपने कर्मसे होगये हैं और भगवान्‌को भूलगये हैं,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे अच्युत ! सो तुम हस्तकमल मेरे मस्तकपर धारो सुरवंदित हस्तकमल आप यादवनपै भक्तनपै धारो हो हे वरेण्य ! मोको चिह्नरूपसों वक्षस्थलमें धारोहो ईश्वरकी चेष्टाकों कहिवेको कौन समर्थ है ॥ २३ ॥ रम्यकखंडमें भगवान् मत्स्यरूपसों विराजे हैं कि जो स्वरूप या खंडके अधिपति मनुजीको पहले दिखायो गयो हो श्राद्धदेव मनु आजतक अत्यन्त भाव भक्तिसों जिनको आराधन कर या प्रकारकी स्तुति करै हैं ॥ २४ ॥ मुख्यतम भगवान्के अर्थ नमस्कार होय, सत्व प्राण ओज सह बलरूप महामत्स्यावतारके अर्थ नमस्कार होयं ॥ २५ ॥ आप सबके भीतर बाहर घूमो हो लोकपाल तुम्हारे रूपको नहीं जानेहै आपको वेद रूपी बडा शब्द है जैसे मनुष्य कठपुतलीको अपने वशमें कर राखै है ऐसेही आपनेहू विधिनिषेध वाक्यनसों जगत्को अपने वशमें कर राखै है आपही ईश्वर हो ॥ २६ ॥ ईर्षाके मारे लोकपाल जहां तहां तुमकों त्यागकै यत्न कर करकै अलग और मिलकेहू या जगत्की रक्षा करवेको यत्न करन लगे परन्तु मनुष्य चौपाये सर्प स्थावरादिकी रक्षा करवेकूं समर्थ न भए ॥ २७ ॥ हे उरुक्रम ! महातरंगनसों व्याप्त महाप्रलयके समुद्रमें सब औषधी और वेलयुक्त पृथिवीको मेरे सहित धारते भए, तेज पराक्रम जगत्के प्राणिगणकी आत्मारूप आपके अर्थ नमस्कार होय ॥ २८ ॥ हिरण्मयखंडमें भगवान् कच्छपरूप धार निवास करै हैं तिनकों तिनके प्रियतम शरीरकों वा खंडके पुरुषनके सहित अर्यमा पितृगणको स्वामी स्तुति करते या मंत्रकों जपै हैं ॥ २९ ॥ कच्छपरूपधारी भगवान्के अर्थ नमस्कार होय, सब सत्वगुणी विशेषणरूप जिनको स्थान जाननेमें नहीं आवैहै तिनके अर्थ नमस्कार होय सब मनोरथ वर्षावनेवारे बडे सबके आधाररूप तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय नमस्कार होयं ॥ ३० ॥ आपकी मायासों बनोभयो अर्थरूप बहुरूपधारी यह पृथ्वी आदि सकल दृश्य आपको रूपही है तुमसो पृथक् नहीं है तथा असत् हैवेपैहू दीखवेसों मृगतृष्णाके जलकी नाईं याकी काउ प्रकार संख्या नहीं है सकैहै यासों अनिर्वाच्य जगद्रूप आपको नमस्कार है ॥ ३१ ॥ जरायुज स्वेदज अंडज उद्भिज्ज चर अचर देवता ऋषि पितर इंद्रियनको सुख द्यावापृथिवी आकाश धरती पर्वत नदी समुद्र द्वीप ग्रह नक्षत्र ये सब नामरूपधारी एक आपही हो ॥ ३२ ॥ असंख्यात विशेषण नामरूप आकृति जिन ईश्वरमें कविनसों कल्पित करी भई संख्या जा तत्वदृष्टिसो दूर करी जाय है, तिन सांख्यदर्शक आपके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३३ ॥ उत्तर कुरुखंडमें भगवान् यज्ञपुरुष वाराह रूप धारे बैठे हैं, तिनको भूदेवी अखंड भक्तियोगसों सब कुरुवासिनकरके सहित आराधन करै है, ये परम उपनिषदनके मंत्र जपै है ॥ ३४ ॥ ओंकारविशिष्ट भगवान् मंत्रतत्वचिह्नधारीके अर्थ नमस्कार हो यज्ञरूप महाअध्वरनके अवयव महापुरुषके अर्थ नमस्कार होय, शुद्ध कर्म करवेवारे तीनों युगरूपके अर्थ नमस्कार होयं ॥ ३५ ॥ जिनके स्वरूपकों विद्वान् कविलोग गुणनमें ज्ञानयुक्त मनसो ढूंढे है, जैसे काष्ठमेंसो साधनद्वारा अग्नि प्रगट होय तैसे आपको ज्ञान साधनरूप मनसों ढूंढकै पावे है जिनको भगवत्के रूप देखवेकी इच्छा है वे छिपे ईश्वरको कर्मनकरकै देखेहै, तिन सर्वप्रेरित आत्माके अर्थ

तपसै भ्रष्ट होकर, दुष्ट बुद्धि मनुष्य कोई सुन्दर योनिको प्राप्त होता है कोई नीचयोनिको प्राप्त होता है परन्तु भगवान्के सेवनरूप तपस्याके द्वारा अचल लक्ष्मीका सुख भोगता रहता है, जबतक भगवान्की सेवाका पुण्य उनका बनारहेगा तबतक अचल लक्ष्मीका सुख भोगते रहैंगे, जब सेवाका पुण्य नष्ट हो जायगा, और इस जन्ममें भगवान्का पूजन जो पुरुष नहीं करे हैं वह वहां न पावेंगे खानेको अन्नभी पेट भरकर नहीं मिलेगा, इसलिये लक्ष्मीने भगवान्से कहाथा कि जो मनुष्य आपको सेवन नहीं करते वह मुझको कभीभी प्राप्त नहीं होंगे ॥

१ यह मालामंत्र है अगारी स्तुति करै है ॥ २ ये मालामंत्र है ॥ ३ ये मालामंत्र है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नमस्कार होय ॥ ३६ ॥ मायाकार्यके विषय इन्द्रियादि व्यापार देवता देह काल अहंकार इन सब उपलक्षणसो विनको यथार्थ रूप देखवेमें आवै है और यमनियमादिकनसो जो महात्मा निश्चयात्मक बुद्धियुक्त है विनके निकट जाकी मायासो बनी आकृति दूर है जाय है विन्ही भगवान्को हमारो प्रणाम है ॥३७॥ देखवेवारे जीवके गुणनकरकै वांछित अवांछित विश्वकी उत्पत्ति पालन नाश करनवारी माया यद्यपि जड है तथापि जैसै लोहा चुंबकपाषाणके आश्रय हैकै घूमै है ऐसे हो आपके समीप हैवेसो माया सब क्रिया करै है ऐसे गुणकर्मके साक्षी तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय ॥ ३८॥ जो जगत्के आदि वाराहजी मो पृथ्वीको दाढाके अग्रभागमें करकै रसातलसो लेके प्रलयके समुद्रमेंसो गजसमान निकारते भए, और गजतुल्य दैत्य हिरण्याक्षकों क्रीडा कर मारतेभए ऐसे प्रभुकूं मैं पणाम करूंहूं परंतु मायाने सब संसार वश कर राखो है ॥" चार शिपाई तीरकमठा लिये जाय है, सो एक विद्वान् बोले या गैलमें होय मत जाओ डाकनी बैठी है, या रस्तासो फेर है इतमें नाय है, यूं जाओ विनको कह्यो नहीं मानके वाही मार्गमें गए, सो चारहजारके ४ चार तोडा पडे, सब लेकें खुश है बोले ल्यो रुपे खानेकों लाओ, सो दोजने बाजारकों गए, सो जहर डार लड्डू लाए इतनमें इन दोनोंने कही कि आतेही उनको मारो जो द्रव्य है सो हमी दोजने ले लेवे सो वे आए, उनने मारे वे दो मरगये जो वे खायवेको लाए, वे लड्डू उन दोनोंने खाए वे यों मरगए चारों ज्वानोंको ढेर भयो रूपा वहांई पडे रहे, यासो भैया ये धन महादुखदाई है, सो जानो याय त्यागो " ॥ ३९ ॥

प्रमथ्य दैत्यं प्रतिवारणं मृधे यो मां रसाया जयदादिसूकरः ॥
कृत्वाऽग्रदंष्ट्रे निरगादुदन्वतः क्रीडन्निवेभः प्रणताऽस्मि तं विभुमिति ॥ ३९ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां पञ्चम० रम्यकउत्तरखण्डे सेव्यसेवकभुवनकोशवर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

श्रीशुक उवाच-किंपुरुषे वर्षे भगवन्तमादिपुरुषं लक्ष्मणाग्रजं सीताऽभिरामं श्रीरामं तच्चरणसन्निकर्षाभिरतः परमभागवतो हनुमान् सह किंपुरुषैरविरतभक्तिरुपास्ते ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि किंपुरुषखंडमें भगवान् आदिपुरुष लक्ष्मणजीके भैया सीताजीके आनंददाता श्रीरामचंद्रजीके चरणमें परायण परमभागवत हनुमान्जी किंपुरुषवासिन करकै सहित अत्यंत भक्तिसो रामचंद्रकी उपासना करै है ॥ १ ॥ आर्ष्टिषेणसहित गंधर्वन करके गाई भई परमकल्याणदायिनी अपने भर्ता भगवान्की कथाकों सुनैहैं, आप ये गावै है ॥ २ ॥ उत्पत्ति पालन नाशकर्ता भगवान् उत्तमश्लोकके अर्थ नमस्कार होय बडेनके लक्षणकेसे शील व्रतधारीके अर्थ नमस्कार होय, सबके शिक्षाके आत्मा सब लोककरकै उपासितके अर्थ नमस्कार होय, साधुवादमें कसोटीके समान ब्रह्मण्यदेव महापुरुष महाराजके अर्थ नमस्कार होय[1] ॥ ३ ॥ विशुद्धअनुभवमात्र, एक अपने तेजसो गुणनकी व्यवस्थाके मिटायवेवारे सबमें प्रशांत सुंदर बुद्धिवारेन करकै प्राप्त; नामरूपरहित श्रीरामचंद्रजीके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४ ॥ इन विभुके मनुष्यनमें अवतार

१ ये मालामंत्र है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राक्षसनके वधके लिये नहीं है, केवल मनुष्यनके शिक्षाके लिये है, कि स्त्रीके संगसों हम ईश्वरको इतने क्लेश सहने पडे, मनुष्यनकी कहा चलाई, अपनी आत्मामें रमण करनवारे ईश्वरको सीताके करे व्यसन कहां हैं कछु नहीं है ॥ ५ ॥ सो रामजी आत्मा, आत्मज्ञानके सुहृत्तम भगवान् वासुदेव हैं, सो त्रिलोकीमें कहू आसक्ति न भये, और स्त्रीके करे कष्टनको न प्राप्त होतेभये श्रीलक्ष्मणजीकोंहू त्याग करवेको योग्य नहीं है परन्तु यह सब कछु लोककी शिक्षा करवेको भयो ॥ ६ ॥ ये निश्चय है कि बडेनकी प्रसन्नताको कारण न जन्म है, न सुन्दर वाणी, न बुद्धि, न आकार, क्योंकि तिन करके त्यागे भएहू हमसरीके वनवासी वानरनसों लक्ष्मणजीके भैया सख्यभाव करते भये ॥ ७ ॥ सुर असुर अथवा वानर मनुष्य चाहैं जो हो वाकों उचित है थोडे भजनसोहू बहुत प्रसन्न हैवेवाले सर्वात्मा अयोध्यावासीनको स्वर्गमें ले जायवेवारे मनुष्यको अवतारधारी श्रीरामचंद्रजीको भजन करै सब प्रकार विन्हीकी शरण होय ॥ ८ ॥ या भरतखंडमें भगवान् नरनारायण या कल्पसों लेकैं बढे भये धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य उपशम (इंद्रियनको जीतनो) निरहंकारता आत्मज्ञानदाता आत्मवेत्तोंके ऊपर कृपा अनुग्रहसों अप्रगट हैकै तप करै हैं ॥ ९ ॥ तिनकों भगवान्नारद वर्ण आश्रमवारी भारतकी प्रजाकरके भगवान्के कहेभये सांख्ययोगोंसो भगवत्के अनुभावको वर्णन करते सावर्णिकों उपदेश देते परम भक्तिभावसों स्तुति कर ये मंत्र उच्चारण करैं हैं ॥ १० ॥ शांत स्वरूप अहंकाररहित वैराग्यवान् निर्धनके धन, ऋषिनमें बडे ऋषि नरनारायण परमहंस परमगुरु आत्मज्ञानिनके स्वामीके अर्थ वारंवार नमस्कार होय ॥ ११ ॥ या मंत्रको जप करते या प्रकार प्रार्थना करै हैं जो ईश्वर या विश्वके कर्ता हैं, परन्तु सर्ग आदिमें बंधे नहीं है, और देहमें प्राप्त हैं तोहू देहके धर्मनसों मारे नहीं जाय है, द्रष्टाकेहू द्रष्टा हैं गुणनसो दूषित नहीं होयहै, एकांतके साक्षी काऊमें आसक्त न होय तिनके अर्थ नमस्कार होय ॥ १२ ॥ ब्रह्माजीकी कही भई योगसंबन्धी यही बडी विचक्षणता है कि अंतकालमें निर्गुण आपमें भक्तिसों जो मन लगावै तौ ये दुष्ट कलेवर त्याग वैकुंठको जाय है ॥ १३ ॥ जैसे या लोकके परलोकके काममें लंपट मूर्ख पुत्र स्त्री धनकी चिंतासो देहके नाशसों डरै हैं वैसेही विद्वान् पुरुषभी देहके नाशसों डरै तो विनको विद्याआदिको यत्न परिश्रम मात्र है ॥ १४ ॥ तातै हे प्रभो ! कुत्सित शरीरमें करीभई अहंता ममताको हम शीघ्र भेदन करे है, हे अधोक्षज ! ये कठिनसों भेदी जाय है हमें अपनेमें स्वाभाविक वासनारूप योग दीउ ॥ १५ ॥ या भरतखंडमें नदियें पर्वत बहुत हैं मलय, मंगलप्रस्थ, मैनाक, त्रिकूट, ऋषभ, कूटक, कोल्लक, सह्य, देवगिरि, ऋष्यमूक, श्रीशैल, वेङ्कटाचल, महेंद्र, वारिधार, विंध्याचल, शक्तिमान्, ऋक्षगिरि, पारियात्र, द्रोणाचल, चित्रकूट, गोवर्द्धन, रैवतक, ककुभ, नीलाचल, गोकामुख, इंद्रकील, कामगिरि औरहू सैकरन हज्जारन पर्वत तिनके नीचेसों निकसे नद नदी तौ असंख्यात हैं ग्रंथके विस्तार भयसो नहीं कहे ॥ १६ ॥ इनको जल भरतखंडकी प्रजाको नामकरकै और जो शरीरसो स्पर्श करै है तिन्हैहू पवित्र करै हैं ॥ १७ ॥ चंद्रवशा, ताम्रपर्णी, अवटोदा, कृतमाला, वैहायसी, कावेरी, वेणी, पयस्विनी, शर्करावर्ता, तुंगभद्रा, कृष्णा, वेणी, भीमरथी, गोदावरी, निर्विंध्या, पयोष्णी, तापी, रेवा, सुरसा, नर्मदा, चर्मण्वती, सिंधु, अंध, शोणभद्र ये दो महाभारी नद हैं, महानदी, वेदस्मृति, ऋषिकुल्या, त्रिसामा, कौशिकी, मंदाकिनी, यमुना, सरस्वती, दृषद्वती, गोमती, सरयू, रोधस्वती, सप्तवती, सुषोमा, शतद्रू, चंद्र-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भागा, मरुद्वृधा, वितस्ता, असिक्नी, विश्वा ये महानदी हैं' ॥ १८ ॥ या भरतखंडमें जिन पुरुषननें जन्म लीनो है सो सात्विक राजस तामस कर्मकरके प्रारब्ध कर्मसो देवता मनुष्य नरकवासिनकी गतिनको अपने आत्माको कर्म अनुसार सबकों होय हैं वर्णाश्रमके धर्म मोक्षके पृथक् पृथक् साधन तथा विन साधननसों होनवारो मोक्ष याही खण्डमें होय है ॥ १९ ॥ मोक्ष जा प्रकारसों होय है सो सुनो जब भगवान्के भक्त महात्मानको संग होयहै तब भगवान् वासुदेव जो सब प्राणीनके आत्मा रागादिरहित वाक्यके अगोचर परमात्मस्वरूप अनाधारमें निष्काम भक्ति होय है वही मोक्षको स्वरूप है कारण कि शरीरकी अनेक प्रकारकी गति और अविद्यारूपी ग्रन्थि भक्तिसों टूट जाय है ॥ २० ॥ याही बातको देवता गावे है बडे आश्चर्यकी वार्ता है कि इन भरतखंडवासी जीवनने कहा पुण्य कीनोहै जो या भरतखंडके आंगनमें जन्म लीनो है न जानै इनके ऊपर आप श्रीहरि प्रसन्न हैगएहैं ये मनुष्यको जन्म मुकुंदकी सेवा करवेको उपायरूप है, या जन्मकी हमकोहू चाहना रहैहै[२] ॥ २१ ॥ अतिकठिन साधनवारे हमारे करे यज्ञनसो कछु नहीं होयहै, तप व्रत दान आदिसो कछू नहीं होय है, स्वर्ग जीतवेवारे ये सब तुच्छ साधन है अत्यंत इंद्रिनकी विषयचाहरूप उत्सवसो सब या जीवके करे कर्म नाश हैजाय हैं जहां नारायणकी चरणकमलकी स्मृति नष्ट भई है वा कर्मसो कछु नहीं होय है ॥ २२ ॥ हे भारत! कल्पभरकी आयुवारेनके स्थान जयते पुनर्जन्मसो क्षणकी आयुवारेनको भारतभूमीमें जन्म होनो श्रेष्ठ है कि जहां कोई कर्म मनुष्यने एक क्षणमात्रहू करचो तो वो मनस्वी सबको संन्यासकर अभयदाता हरिके पदको प्राप्त होय है ॥ २३ ॥ जहां वैकुंठभगवान्की कथारूप अमृतनदी नहीं वहै हैं, और तिनके आश्रय साधुभागवत जहां नहीं है जहा यज्ञेशके महायज्ञनके महोत्सव नहीं हैं, चाहै इंद्रलोक होय तोहू वाकी सेवा न करे ॥ २४ ॥ जो जीव या भरतखंडमें ज्ञान क्रिया द्रव्यकलाप करके भरीभई मनुष्य जातीको प्राप्त हैकै मोक्षके लिये यत्न न करै तौ फिर वो वनके पशुपक्षीकी नाईं बंधनको प्राप्त होय है ॥ २५ ॥ भारतवासी मनुष्यगण अतिशय भाग्यवान् है कारण कि यह श्रद्धा भक्तिसहित पुरोडाशादिभेदसो विन देवतानके उद्देश्यसो जो हवि छोडै हैं सो एकही भगवान् इन्द्रादि पृथक् २ नामनसो आह्वान कियो जायके वा सबको ग्रहण करै हैं यद्यपि वे सब कल्या-

---

१ शंका—मृत्युलोकमें जो छोटी छोटी नदी हैं, जिनका नामभी कोई नहीं जानता, उनका तो वर्णन व्यासजीने श्रीमद्भागवतमें किया और उज्जैनिके सन्मुख बहनेवाली क्षिप्रा नदी जिसका शास्त्रमें नाम विख्यात है और लोकमें और पुराणोंमें प्रजागणभी क्षिप्राको भली भांति जानते हैं ऐसी उत्तम क्षिप्रा नदीका भगवान् व्यासजीने श्रीमद्भागवतमें वर्णन क्यों नहीं किया ?

उत्तर—एक दिन शिवरात्रिके समय बहुतसे मुनिजन शंकरमहादेवके पूजन करनेके लिये पश्चिम दिशाकी ओर गये उसी दिन दैवयोगसे क्षिप्रा नदीभी जलसे परिपूर्ण होरहीथी मुनिजन उतरने लगे तो क्षिप्राने मार्ग नहीं दिया, मुनि लोग पश्चिम दिशाके तटपर बैठेही रहगये, जब शिवरात्रिको शिवका पूजन न हुवा सब रात्रि मुनियोंको नदीके निकटही बैठे बीतगई, तब सबने मिलकर शाप दिया कि हे दुष्टा नदी ! भागवतमें जिसका वर्णन हुआ सो धन्य है, परन्तु तेरा आदर भागवत पुराणमें नहीं होगा इसलिये मुनियोंकी शापित जानकर व्यासजीने श्रीमद्भागवतमें क्षिप्राका वर्णन नहीं किया॥

२ या भरत खंडको ये पद महात्मानको बनायो भयो है " भरतखंडमाहि आय कृष्ण क्यों न गायों तै ॥ टेर ॥ भरतखंड कर्मभूमि घूमि बहुत आयो ताहूमें मनुष जन्म उत्तम तन पायो ॥ १ ॥ ब्रह्मादिक तरसत रहे सरस बखत पायो धरषत नहीं वेद सुनत विषय झूठ खायो ॥ २ ॥ धिक धिक तोही वेर वेर कृष्ण नहिं रिझायो आयो कहाकर करार नारमें लुभायो ॥ ३ ॥ कैसी तेरी देह रही खेहमें मिलायो नेह कियो जगत बीच जन्म्यो जनमायो ॥ ४ ॥ दामचाम देख देख भेख बहु सजायो पुरुषोत्तम कहे रे मूढ कृष्ण क्यों खिजायो ॥ ५ ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

णके प्रभु है और स्वयंहू परिपूर्ण स्वरूप हैं तथापि वा हविको त्याग नहीं सके हैं ॥ २६ ॥ मनुष्यनकरकै प्रार्थित मनोवांछित सब ईश्वर देहैं, जाते फेर मांगवे योग्य न रहै है, जो भजनवारे है जो विना इच्छा भजेहै, विनकी सब इच्छाको पूरण करवेवारो अपने चरणकमल आप वाकों देयहैं ॥ २७ ॥ जो कछु यहां हमको स्वर्गसुखको शेष है, जो सुंदर यज्ञ कीने हैं, जो वेदपाठ करो है, और कछु कर्म करे हैं, तो या भारत खण्डमें हमारो जन्म होय जासो कि भगवान् हरिही सेवा करवेके योग्य है यह स्मरण रहैगो, अधिक करकै श्रीभगवान् भारतखण्डमें भजनकारिनको कल्याण विस्तार करे हैं और वहांके वासिनको परम सुख देय हैं ॥ २८ ॥ (आगेके आठ श्लोक किसी २ पुस्तकमें नहीं है ॥ हे परीक्षित ! यातें देवता भरतखंडमें जन्म लेवेकी इच्छा करें हैं यहां जो महापुण्यसंचय करवेसो अक्षय शुभफल होय है ॥ १ ॥ हे भारत ! या भूतलमें कब हम जन्म लैयगे कब महापुण्यसो परमपदकों प्राप्त होयंगे ॥ २ ॥ दान अनेक प्रकारके यज्ञ तप इन करकै क्षीरशायी भगवान्की पूजा कर जाकों बडे महात्मा देखै है वा पदकों हम कब जायगे ॥ ३ ॥ श्रीहरिकीर्तनमें शील करनो, तिनके भक्तनसो प्यार करनो, महात्मानकी सेवा करनी, मनुष्य महात्मानको वंदन करनो हमें कौनसे जन्ममें प्राप्त होयगो ॥ ४ ॥ वेदके अर्थ सुनवेमें बुद्धि हमारी कब लगैगी, पुराण श्रवणमें जाको मन है, सत्संगमें जाको मन है, वो हम सबसो वंदनीय है ॥ ५ ॥ श्रेष्ठ भरतखंडमें जन्म पायकै जे सत्कर्मसो अलग है वे अमृतको घटकों त्याग विषके वासनाकी चाहना करेहै ॥६॥ जो वासुदेवके पूजनको त्याग बुरे कर्म लोग करे है, वो कामधेनुके दूधकों त्याग आकके दूधकी चाहना करे है ॥ ७ ॥ हे राजन् ! ऐसे देवते या भरतखंडकी प्रशंसा करे हैं, या खंडमें जन्म लेके जो विषयमें आसक्त होय वाको जानो कि याकों भगवान्की मायाने हरलीनो है ॥ ८ ॥) श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! जंबूद्वीपके उपद्वीप आठ हैं ऐसे एक आचार्य कहैं हैं, सगरके बेटानने घोडाके खोजवेके समय या भूमीको सब ओरसो खोदी तब ये बनेहै ॥ २९ ॥ सो ये है स्वर्णप्रस्थ, चंद्रशुक्ल, आवर्तन, रमणक, मंदरहरिण, पांचजन्य, सिंहल और लंका ॥ ३० ॥ हे भारतोत्तम ! ऐसे जंबूद्वीपके खंडनको विभाग जैसो हो तैसो वर्णन कीनो है ॥ ३१ ॥

एवं तव भारतोत्तम जम्बूद्वीपवर्षविभागो यथोपदेशमुपवर्णित इति ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कंधे जम्बूद्वीपे भरतखण्डमाहात्म्यवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अध्याय २०.

श्रीशुक उवाच-अतः परं प्लक्षादीनां प्रमाणलक्षणसंस्थानतो वर्षविभाग उपवर्ण्यते ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि याके उपरांत प्लक्षआदि छै द्वीपनको प्रमाण लक्षणस्थितिसों खंडको वि-

१ देखो याको ये अभिप्राय है कि भक्त दो प्रकारके होय है एक सकाम और एक निष्काम तिनमेंसो जो सकाम भक्त भगवान्को भजन करे है वाको तो जा कामनासो भजन कियो है केवल वाकी वोही कामना पूरण करके अपने आपको माने है कि जो याने चाह्यो हो सो मैंने दे दियो ये बात सत्य है पन इतनेसो कहा होय है क्योंकि वाकी फिरहू कामना बनी रहे है जब कछु और चाह भई तब वाको फिर अर्थात् करनी परे है और जे निष्काम भजन करे है विनके लिये देवेको प्रभुको बडे विचार होय है कि याको अब में कहा देउ आखिरमें आप वाको अपने साक्षात् श्रीचरणकमलको साक्षात्कार देय है जासो फिर वा भक्तकी प्रभुको साक्षात्कार पायके फिर काहू वस्तुकी चाहनाही उत्पन्न नहीं होय है और वाकी सब तरहकी खबर राखनी परे है यासों निष्कामही भजन करनो मुख्य है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भाग वर्णन करे है ॥ १ ॥ ये जंबुद्वीपको जितना विस्तार है वितनेही प्रमाणके अर्थात् लाख योजनके क्षार समुद्रसो यह जंबुद्वीप घिरो भयो है जैसे कि जम्बूद्वीपसो सुमेरु पर्वत घिरो भयो है ऐसही दोलाख योजनके पुष्करद्वीपसों क्षारसमुद्रभी आवृत्त है वो पुष्करद्वीप बाहरके उपवनकी खाईकी समान है पुष्करद्वीपमें लक्ष योजन ऊंचो सुवर्णसदृश पुष्करको वृक्ष है वाके नाम सो द्वीपको प्लक्षद्वीप नाम भयो है यामें सात जिह्वावारो अग्नि रहेहै या द्वीपको अधिपति प्रियव्रतको पुत्र इध्मजिह्व अपने द्वीपको सात विभाग कर सातखंडके नामवारे अपने पुत्रनको देके आप आत्मज्ञानी होय सबसों विरक्त भयो ॥ २ ॥ शिव यवस सुभद्र शांत क्षेम अमृत अभय ये खंड है पुत्रनको और खंडनको नाम एकही है और पर्वत नदीहू सात २ ही हैं ॥ ३ ॥ मणिकूट, वज्रकूट, इंद्रसेन, ज्योतिष्मान्, सुवर्ण, हिरण्यष्ठीव, मेघमाल, ये ७ पर्वत हैं अरुणा, नृम्णा, आंगिरसी, सावित्री, सुप्रभाता, ऋतंभरा, सत्यंभरा ये ७ महानदी हैं जिनके जलमें स्नान करवेसो रजोगुण तमोगुण दूर भये जिनके ऐसे, हंस पतंग ऊर्ध्वायन सत्यांग इन संज्ञाके चारवर्ण हजारवर्षकी आयुके देवसमान सुंदर होय स्वर्गके द्वारभूत भगवान् त्रयीमय सूर्यांतर्यामी आत्माको वेदत्रयी विद्यासो पूजन करे है ॥ ४ ॥ पुराणपुरुष सत्यरूप धर्मरूप बृहत्त्वादिगुणविशिष्ट चैतन्य अमृतरूप मृत्युरूप श्रीविष्णुके रूप सूर्यनारायणकी हम शरण हैं ॥ ५ ॥ पुष्कआदि पांच द्वीपनमें पुरुषनकी आयु इंद्रिय ओज सह बल बुद्ध विक्रम ये सबकी सब औरनसों विशेष हैं ॥ ६ ॥ जैसे पुष्क अपने समान गन्नेके रसके समुद्रसो लिपटो भयो है तैसेही शाल्मलीद्वीपहू द्विगुणविशाल मदिराके रससो चारों ओरसो घिरोभयो है ॥ ७ ॥ या द्वीपको शाल्मली सेंमरको वृक्ष पुष्ककी समान विस्तारवारो है, जहां भगवान् वेद करके स्तुति पक्षीनके राजा श्रीगरुडजीको स्थान है गरुडजीको वहां बहुत आराधन होयहै ॥ ८ ॥ वा द्वीपके मालक प्रियव्रतके पुत्र यज्ञबाहु अपने सात पुत्रके नामसों सात खंडनको विभाग करतेभए, सुरोचन, सौमनस्य, रमणक, देववर्ष, पारिभद्र, आप्यायन, अविज्ञात ॥ ९ ॥ तिन खंडनमें खंडपर्वत नदी सात सात वर्णन करेहैं, स्वरस , शतशृंग, वामदेव, कुंद, कुमुद, पुष्पवर्ष, सहस्रश्रुति, ये पर्वत हैं, अनुमति, सिनीवाली, सरस्वती, कुहू, रजनी, नंदा, राका ये सात नदी हैं ॥ १० ॥ या खंडके पुरुष श्रुतधर, वीर्यधर, वसुंधर, और इषंधर नाम चार वर्णके रहे हैं और भगवान् वेदमय चंद्रमा अंतर्यामी परमात्माको वेदसो पूजन करे हैं ॥ ११ ॥ अपनी किरणनसों शुक्ल कृष्ण पक्षरूप करके पितर देवनके दिनरातकी विभाग करके और अन्न देवेवारे चंद्रमा हमारे और प्रजाजनके राजा होउ ॥ १२ ॥ ऐसे मदिराके समुद्रसो बाहिर वासों दूने प्रमाणके घीके समुद्रसो घिरोभयो कुशद्वीप है जामें देवतानको करोभयो कुशको स्तंभ है याहीसों वाको नाम कुशद्वीप है वो अग्निसमान देदीप्यमान

---

१ शंका-द्वीपान्तरोंमें आपसे कुशके वृक्षकी, सेमलके तरुकी, पाकरके पेडकी, जामुनके रुखकी, और कमलकी इस प्रकारकी लम्बाई और चौडाई सुनके हम सब लोगोंके मनमें दिन दिन प्रति अत्यन्त शंका बढती है, क्यों कि यह वृक्ष हैं कि आश्चर्यका रूप हैं ।

उत्तर-राजा प्रियव्रतके किये जो कर्म हैं, उन कर्मोंमें शंका कभी नहीं करनी चाहिये क्यों कि जो आश्चर्य करने योग्य कर्म राजा प्रियव्रतने किये हैं, वह सब कर्म भगवान्ने किये हैं, राजा प्रियव्रतका तो एक निमित्त नियत करराखा है, क्यों कि पंचमस्कन्धके प्रथम अध्याय १ श्लो० ३९ व्यासजीने कहा है कि राजा प्रियव्रत करके किये जो कर्म हैं उन कर्मोंको करनेके लिये ईश्वरकी सामर्थ्य है और दूसरे पुरुषकी सामर्थ्य नहीं है । ऐसा व्यासजीके वाक्यसे जान पडता है कि जो आश्चर्यरूप काम राजा प्रियव्रतने किये सो वह सब काम भगवान्ने किये हैं इसलिये राजा प्रियव्रतके किये हुए कर्मोंमें शंका करनी नहीं चाहिये, क्योंकि भगवान् क्या नहीं करसक्ते ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है, अपनी कांति करकै सब दिशानमें विराजै है ॥ १३ ॥ हे राजन् ! वा द्वीपके पति प्रियव्रतके सुत हिरण्यरेतानामके अपने द्वीपको, सात अपने पुत्रनको यथाभाग विभाग कर आप तप करते भए, वसु, वसुदान, दृढरुचि, नाभिगुप्त, स्तुत्यव्रतविविक्त, वामदेव, ये सातों पुत्रनके और कुश द्वीपखंडनके नाम हैं ॥ १४ ॥ तिन खंडनमें सीमाके पर्वत नदी सात सातही करते भए, चक्र, चतुःशृंग, कपिल, चित्रकूट, देवानीक, ऊर्ध्वरोमा, द्रविण ये ७ पर्वत हैं रसकुल्या, मधुकुल्या, मित्रविंदा, श्रुतविंदा, देवगर्भा, घृतच्युता, मंत्रमाला ये ७ नदी हैं ॥ १५ ॥ जिन नदिनके जल करकै कुशद्वीपवासी कुशल, कोविद, अभियुक्त कुलकसंज्ञक चारवर्ण भगवान् अग्निरूपको कुशल कर्म करकै पूजन करै है ॥ १६ ॥ हे अग्ने ! आप साक्षात् परब्रह्मनारायणको हवि पहुंचाओ हो या निमित्त देवतानके यज्ञद्वारा परम पुरुष भगवान्की अर्चना करते भये विनके सब अंगनके नामोंसों दियो भयो हव्य हम या अग्निमें समर्पण करै हैं ॥ १७ ॥ तैसेई घृतके सागरसो बाहिर क्रौंचद्वीप दूनै अपने प्रमाण करकै क्षीरसमुद्रसें सब ओरते सघन है, जैसे कुशद्वीप घृतके समुद्रसें परिवृत है, जामें क्रौंचनाम पर्वतनको राजा षष्ठ द्वीपको नामको करनवारो हैकै स्थित है ॥ १८ ॥ यद्यपि स्वामिकार्तिकेयने शस्त्रप्रहारसो याके किनारे और कुंज तोड दिये हे तथापि यह पर्वत चारौं ओरवारे क्षीरसागरके जलसों सींचे जायवैसो पूर्ण हैगयोहै और वरुणसों रक्षित हैवेसो निर्भय भयोहै ॥ १९ ॥ वामें प्रियव्रतसुत घृतपृष्ठ नाम राजा अपने द्वीपमें खंडनको सात विभाग कर वे खंड पुत्रनके नामसो प्रगट भए, सातों दाय लेवेवारेनको खंडपालक करके आप परमकल्याण यशस्वी भगवान् सर्वांतर्यामी श्रीहरिके चरणारविंदकी शरणमें जाते भए ॥ २० ॥ आम, मधुरुह, मेघपृष्ठ, सुधाम, भ्राजिष्ठ, लोहितार्ण वनस्पति ये घृतपृष्ठके पुत्र हैं, तिन खंडनके पर्वत सात सात हैं नदीहू सात है, शुक्ल, वर्द्धमान, भोजन, उपबर्हिण, नंद, नंदन, सर्वतोभद्र ये ७ पर्वत हैं, अभया, अमृतौघा, आर्यका, तीर्थवती, वृत्तिरूपवती, पवित्ररती, शुक्ला ये ७ नदी हैं ॥ २१ ॥ जिनको जल निर्मल पवित्र है वाके सेवन करनवारे पुरुष, ऋषभ, द्रविण, देवनामक चार वर्ण वा खंडमें जलमय श्रीवरुणदेव महाराजकों अंजलिमें जलभरकै पूजन करै हैं ॥ "आपो वै ब्रह्म" जल ब्रह्मको स्वरूप है, दृष्टांत है कि एकने ग्रीष्ममें प्याऊ लगाई, वहां अनेक मनुष्य जलपान करै, कोई ब्राह्मण महा प्यासो वहां आय जल पी तृप्त होय बोले जानो ये प्याऊ लगाई वाके सात पुत्र होय थोडे दिनपें तैसेई भयो, धनसंतान बढै याते जलदान अन्नदान वस्त्रदान विद्यादान औषधिदान अभयदान गृहदान अश्वदान गजदान राज्यदान देवालयदानसो महापुण्य होय है, इन सबसे जलकी पूजा विशेष है[1] ॥ २२ ॥ हे जलहो ! ईश्वरके वीर्यसो आप स्थित हो, भूर्भुवःस्वर इन सबनको पवित्र करवेवारे हो, सब पापनाशक जलरूप ईश्वर आप हो सो हम अपने शरीरकरकै तुम्हें स्पर्श करैहैं, यासो हमारे जे भू नाम शरीर है तिनको पवित्र करो ॥ २३ ॥ ऐसे क्षीरसमुद्रसो आगै सब ओरसों स्थित शाकद्वीप है, बत्तीसलक्ष योजन लंबो है, अपने समान दधिके मट्ठेके समुद्रसो परिवेष्टित है, जामें शाकनामक वृक्ष है, अपने क्षेत्रको विस्तारक जाकी महासुगंध वा द्वीपभरको सुगंधित कर रही है ॥ २४ ॥ वा खंडको

---

१ कवित्त–पर अब तौ यह दान रहे हैं ॥ दानी कोउ नाहिने गुलाबदानी पीकदानी गोंददानी घनी शोभा इनहीमें लहे हैं । मानत न गुणीको गुणीहीमें प्रगट देखो, यातें गुणी जन मन सावधानी गहे हैं ॥ हयदान, हेमदान, गजदान, भूमिदान, सुकवि सुनाये और पुराणनमें कहे हैं । अब तो कलमदान जुजदान जामदान खानदान पानदान कहिवेकौं रहे हैं ॥ १ ॥ २ वधुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रियव्रतको सुत राजा मेधातिथि नाम हो, वो अपने पुत्रनके नामसों खंडविस्तृत कर सातोनको कि जिनके नाम पुरोजव, मनोजव, पवमान, धूम्रानीक, चित्ररेफ, बहुरूप, विश्वधार विनको राज्य दे आप भगवान् अनंतमें मति लगाय तपोवनकों जातोभयो ॥ २५ ॥ इन खंडनके सीमाके पर्वत नदियें सात सात है, ईशान, उरुशृंग, बलभद्र, शतकेसर, सहस्रस्रोत, देवपाल, महानस ये ७ पर्वत हैं, अनघा, आयुर्दा, उभयस्पृष्टि, अपराजिता, पंचपदी, सहस्रस्रुति, निजधृति, ये ७ नदी हैं ॥ २६ ॥ वा खंडको पुरुष ऋतव्रत सत्यव्रत दानव्रत अनुव्रत इन नामकै चारवर्ण भगवान् वायुके अंतर्यामीको प्राणायामसो राजस तामस दूर कर परमसमाधिसो यजन करैं हैं ॥ २७ ॥ जो पवन आप प्राणरूप हैकै सब जीवनमें प्रवेश कर जीवमात्रकूं धारती है, वो अंतर्यामी ईश्वर साक्षात् हमारी रक्षा करो जाके वशमें ये सब जगत् है ॥ २८ ॥ ऐसेई मट्ठेके समुद्रसो आगै दूनो विस्तृत पुष्करद्वीप है. सब ओरसों अपने समान शुद्ध स्वादू जलके समुद्रसो बाहिर आवृत है, जामैं बडो कमल अग्निकी निर्मलशिखासम सुवर्णके दस हज्जारपत्रयुक्त भगवान् ब्रह्माजीको आसन कल्पना करो है ॥ २९ ॥ वा द्वीपके मध्यमें मानसोत्तरनामैकपर्वत अगलबगलके मर्यादाके पर्वत है, दस हज्जार योजनको विस्तार है, जहां चारों दिशानमें इंद्रादिलोकपालकनके चार पुर हैं, सूर्यको रथ जो सुमेरुके चारों ओर फिरै है वाको वर्षरूप चक्र दक्षिणायन और उत्तरायणसो मानसोत्तर पर्वतके ऊपर भ्रमण करै है ॥ ३० ॥ वा द्वीपके राजा प्रियव्रतके पुत्र वीतिहोत्र नामक भये, तिनके पुत्र रमणक धातकी नामक दो पुत्रनको खंडके पति कर आप अपने पूर्वके पुरुषनकी नांई भगवत्कर्ममें परायण होते भए ॥ ३१ ॥ वा खंडके पुरुष भगवान् ब्रह्मरूपीको सकामिक कर्म करकै आराधना करते ये उच्चारण करैं हैं ॥ ३२ ॥ जो प्रसिद्ध कर्मफलनके चिह्नरूप हैं जिनमें ब्रह्मको प्रकाश है और परमेश्वरमेंही जिनकी निष्ठा है या कारणसो जो अद्वितीय हैं और सब जिनको भक्तियोगसो पूजन करै हैं सो शांत स्वभाववारे षडैश्वर्यवान् भगवान्को हम प्रणाम करै हैं ॥ ३३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ताते परे लोकालोकपर्वतनाम लोकअलोकके मध्यमैं रचोहै तहां सूर्यको प्रकाश नहीं है ॥ ३४ ॥ मानसोत्तर और सुवर्ण पर्वतसुमेरु बीचमें जितनी भूमी है उतनेही प्रमाणकी एक करोड साडेसत्तामन लाख योजन दूसरी भूमि स्वादिष्ठ जलके सागरके आगे है वामें प्राणी रहै है वासो परे सुवर्णमय भूमि आठ करोड उन्तालिस लाख योजनमें है; वो सुवर्णमयी है, और शीशेके समान है, जापै गिरो पदार्थ फेर हाथ नहीं आवै है या कारण वहां प्राणी नहीं रहैहै " शिवतंत्रमें कह्यो है कि दो क्रोड त्रेपन लाख पच्चास हजारके प्रमाणमें सप्तद्वीप सातों समुद्र है हे पार्वतीजी ! दशकोटमें सुवर्णमयी भूमी है, ताते परै देवनके क्रीडाके अर्थ लोकालोक पर्वत है " ॥३५॥ याको लोकालोक पर्वत नाम पडवैको यह कारण है कि लोक जहां सूर्यको प्रकाश है अलोक जहां सूर्यकी स्थिति नहीं वाके बीचमें वाकी स्थिति है ॥३६॥ सो लोकत्रयके अंतमें सब ओरसो ईश्वरने रचो है, जाते सूर्य आदि ध्रुव पर्यंत ज्योतिर्गणनकी किरणे नीचेके तीन लोकनको विस्तार करती कभू अलग नहीं होयहै तितनो ऊंचो विस्तार है ॥ ३७ ॥ इतनो लोकको विस्तार प्रमाण लक्षण स्थितिसो पंडितनने लिखो है विशेष करकै चिंतवन करी है, सो पंचाशत्कोटि योजन है वा भूगोलको चौथो भाग ये लोकालोकाचल है यह मेरुके चारों ओर बारह करोड पचास लाख योजन दूर है ॥ ३८ ॥

---

१ प्रकाश अंधकारके ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो या भूमंडलके ऊपर चारों दिशानमें सब जगत्के गुरु श्रीब्रह्माजीने चार हाथीनके पति स्थित करे हैं ऋषभ, पुष्करचूड, वामन, अपराजित ये सकललोकके स्थितिके लिये हैं ॥ ३९ ॥ अपनी विभूती लोकपालनके अनेक प्रकारके पराक्रम वृद्धिके अर्थ श्रीभगवान्महापुरुष सब विभूतीनके पति अंतर्यामी अपनो विशुद्ध सत्व धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य आदि अष्टमहासिद्धिन करकै लक्षित विष्वक्सेन आदि अपने पार्षदमुख्यन करकै परिवेष्टित अपने श्रेष्ठ आयुधनको सुन्दर भुजानमें धारण किये वा पर्वतउत्तमपै सब ओरसो सकललोकके आनंदके लिये निवास करते स्थित हैं ॥ ४० ॥ ये भगवान् अपनी आत्ममायाके योगसो जो अनेक लोकनकी रचना कीनीगई है इनकी रक्षाके निमित्त अपनी लीलानसो वेषकी रचना स्वीकार करते एक कल्पतक विराजै हैं ॥ ४१ ॥ जो भीतरको विस्तार है, उतनोही लोकाचल पर्वतके बाहिरको विस्तार कह्यो है ताते परे योगेश्वरनकी शुद्धगति है इनके सिवाय वहां और कोई नहीं जायसकैहै ॥ ४२ ॥ स्वर्ग और भूमिके बीचमें जितनो अंतर है वही ब्रह्माण्डको मध्य स्थल है सूर्य और अण्डकटाह दोनोनकै मध्य स्थलको परिमाण २५ पचीस करोड योजन है[1] ॥ ४३ ॥ सूर्यको मार्तण्ड यासो कहै हैं कि मृत अर्थात् अचेतन अण्डमें वैराजरूपसो प्रवृत्त भए यासो कारणविन्है हिरण्यगर्भहू कहै है ॥ ४४ ॥ सब कालमें, दिशा, आकाश, स्वर्ग, भूमी, वैकुंठ, मोक्ष, नरक, रसातल, इत्यादिक सूर्य करकै विभाग करे जायहै ॥ ४५ ॥ देवता, पशु, पक्षी, मनुष्य, सर्प, वेल, सब जीवमात्रके समूहके सूर्यातर्यामी ईश्वर द्रष्टा हैं ॥ ४६ ॥

देवतिर्यङ्मनुष्याणां सरीसृपसवीरुधाम् ॥
सर्वजीवनिकायानां सूर्य आत्मा दृगीश्वरः ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे भुवनकोशवर्णने समुद्रद्वीपखण्डानां परिमाणलक्षणवर्णनं नाम विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय २१.

श्रीशुक उवाच–एतावानेव भूवलयस्य सन्निवेशः प्रमाणलक्षणतो व्याख्यातः ॥
एतेन हि दिवो मण्डलमानं तद्विद उपदिशन्ति ॥ १ ॥

" इन वीसअध्यायनसो पृथिवीकी मर्यादा कही तीन अध्यायकरकै स्वर्गकी मर्यादा कहैं हैं " ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि भूमंडलकी रचना प्रमाण लक्षणनसो शास्त्रकारनने इतनी वर्णन कीनी है इतनेही प्रमाणको खगोलको प्रमाणहू पंडित जन कहै ॥ १ ॥ जैसे चनाकी दालरी जाय तो वे दोनौ टुकडे परस्पर बरोबर होयहैं ऐसेही भूमंडल और खगोलको प्रमाण समान है मध्यको आकाश दोनौनसो मिला भयो है ॥ २ ॥ जाके मध्यगत भगवान् तेजोमयपदार्थनके पति सूर्य त्रिलोकीको अपने प्रकाशसो तपावे हैं, सो ये सूर्य उत्तरायण दक्षिणायन वैषुवतसंज्ञासो मंद शीघ्र समान

१ अर्थात् जब सूर्य मध्याह्न कालके समय ब्रह्मांडके मध्यवर्ती होय है तब सूर्यसो सब ओर पचीस किरोड योजन प्रमाणपोल होय है ॥

२ शंका–सूर्यनारायण आकाशमें वास करते हैं. पृथ्वीके नीचे सूर्य नहीं रहते, फिर व्यासजी महाराजने कैसे कहा कि सूर्य तीन लोकमें प्रकाश करते हैं ?

उत्तर–भूमिके नीचे जो सात लोक हैं उन लोकोंकी कथा श्रीशुकदेवजीने नहीं कहीथी, मृत्युलोकके ऊपर जो लोक हैं उन लोकोंके बीचमें जो लोक हैं उनको त्रिलोकी कहा था, उनही तीन लोकमें सूर्यनारायण प्रकाश करते हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गतिकरकै बढनो उतरनो इन समानस्थाननमें यथाकाल प्राप्त हैकै मकर आदि राशिमें दिनरात बडे छोटे समान करै है ॥ ३ ॥ जब मेष तुलामें सूर्य वर्तेहै, तब दिनरात बराबर होयहै, जब वृष-आदि पांच राशिमें सूर्य विचरै है तब दिन बढै है, और महीना महीनामें एक एक घडी रातमें कमती होयहै ॥ ४ ॥ जब वृश्चिक आदि पांचराशिपै सूर्य वर्तेहैं तब दिनरात उलटपलटे होय हैं ॥ ५ ॥ दक्षिणायन आयवेतक दिन बढै हैं, उत्तरायण आयवेतक रात्रि बढैहैं अर्थात् उत्तरायणमें दिन दक्षिणायनमें रात्रि बढै हैं ॥ ६ ॥ ऐसे नौ क्रोड इक्यावन लाख योजनको मानसोत्तर पर्वतको सूर्यको पर्यटन वर्णन करो है, वा पर्वतमें सुमेरुके पूर्व इंद्रकी देवधानी नाम्नी पुरी है, दक्षिणमें संयमनीनामक यमराजकी पुरी है, पश्चिममें निम्लोचनीनाम वरुणकी पुरी है, उत्तरकी ओर विभावरीनाम्नी चंद्रमाकी पुरी है, इन चारोनमें उदय मध्याह्न अस्त अर्द्धरात्र होयहै जीवमात्रके प्रवृत्तिनिवृत्तिके यहि कारण है सुमेरुके दक्षिणकी ओर बसनवारेनको इंद्रपुरीतौ पश्चिमके निवासिनको यमपुरीसो उत्तरदिशानिवासिनको वरुणपुरीसो पूर्वके रहनवारेनको चंद्रपुरीसो सूर्यको उदय दिखाई देय है ॥ ७ ॥ सुमेरुके रहनवारे प्राणिनको सूर्य मध्याह्नमें सदैवही ताप देयहै अर्थात् सुमेरुके शिरपे सदैवही मध्याह्नरहै है यद्यपि सूर्य बाई ओरको चलै है अर्थात् नक्षत्रनके सन्मुख हैकै जायवेसो सुमेरुको बाई ओर राखकै गमन करै है तथापि प्रवह पवनसो ज्योतिश्चक्रके भ्रमण करवेसो मेरु सूर्यके दक्षिण है जायहै सो यह मालुम पडैहै कि मानो सूर्यनारायण सूधि परकम्मा देय है " चक्रकी गतिके वशतै अतिदूर भूमंडलसंलग्नको दर्शन सूर्यको उदय ॥ आकाशको ऊंचे हैजाय तब मध्याह्न ॥ भूमिप्रविष्टको दर्शन अस्त कहावै है, अतिदूर सूर्य जाय हैं तो अर्द्धरात्र कहावै है ये विष्णुपुराणमें है ॥ " ॥ ८ ॥ जहां उदय होय है ताके बराबर सूत्र निपातमें अस्त होय हैं, जहां कही किंचित् चलकै तपे है ताके समान सूत्रके निपातसो अर्धरात्र कहैं है तब वहांके प्राणी सोवे है यासो जो विनको अस्त देखै हैं वह या (सन्मुख सूत्र पडवेके स्थानपै) स्थानमें आयवेकी जगह सूर्यको नहीं देख सकै है ॥ ९ ॥ जब सूर्य इंद्रकी पुरीसो चलै हैं, दो २०००००० क्रोड ३७००००० सैंतीस लाख पच्चीस हजार योजन पंद्रह घडीमें चलकै दक्षिणकी पुरीको जायहैं ॥ १० ॥ ऐसे[1] वारुणी सौम्या ऐंद्री पुरीनको जाते हैं और सोम आदि ग्रह ऐसेही ज्योतिश्चक्रमें नक्षत्रनके साथ उदय हैकै चलते और अस्त होते हैं ॥ ११ ॥ ऐसै दो घडीमें चौंतीसलाख आठसै योजन कोश वेदत्रयीमय सूर्यको रथ चारों पुरीमें डोल आवै है ॥ १२ ॥ जिनको एक चक्र, बारहमासरूप आरे छै ऋतुरूप नेमियुक्त चातुर्मास ग्रीष्म शीत तीन नाभिको संवत्सररूप चक्र कह्यो हैं, ताको अक्ष मेरुके मूंडपै धरो है, मानसके उत्तरमें दूसरो भाग है, जामें पुरो भयो सूर्यको रथचक्र तैलयंत्र चक्रकी नाई घूमतो मानसोत्तर गिरिको परिभ्रमण करै है ॥ १३ ॥ सूर्यके रथमें दो धुरा है प्रथम तौ सुमेरु और मानसोत्तरतक फैलौभयो है वाको परिमाण एक करोड सत्तावन लाख पचास हजार योजन है दूसरो धुरा यासो चौथाई अर्थात् उन्तालीस लाख साढे तैंतीस हजार योजन है पहलो धुरा दूसरे धुराके पूर्व भागमें बंधो है और कोलूके धुराकी समान ध्रुव लोकके वायुपाशसो वाको ऊपर भाग बंधो भयो है ॥ १४ ॥ सूर्यके बैठवेके रथको स्थान छत्तीस लक्ष योजन

---

१ अर्थात् फिर पुरीसो १५ घडीमें २ किरोड ३७ लाख २५ हजार योजन पश्चिममें वरुणकी पुरीमें पोहचे है वहांसो १५ घडीमें वितनीही दूर उत्तरमें चंद्रमाकी पुरीमें पोहचे है फिर वहांसो १५ घडीमें उतनीही दूर पूर्वमें इंद्रकी पुरीमें आय जाय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विस्तृत है, और वाको चौथाई अंश नौलाख योजन ऊंचो है और नौलाख योजनको याको जुआ है यामें गायत्री आदि नामधारी सात अपूर्व घोडे अरुण सारथीसों जोडे भए भगवान् सूर्यके रथको ले चलै हैं ॥ १५ ॥ सूर्यके आगे अरुणसारथी है, यद्यपि वह सूर्यके आगे बैठै है तथापि वाको मुख सूर्यकी ओरको रहै है वायुपुराणमें कह्यौ है कि ॥ "सप्ताश्वरूपच्छंदांसि वहंते वामतो रविम् ॥ चक्रपक्षनिबद्धानि चक्रे चाक्षः समाहितः ॥" इति ॥ १६ ॥ तैसे वालखिल्यऋषि अंगुष्ठके समान साठहजार सूर्यके आगे चलते सत्य सत्य कहितेभए सुंदर बोलवेके लिये सूर्यकी स्तुति करैं हैं ॥ १७ ॥ तैसेई और ऋषि गंधर्व अप्सरा नाग ग्रामणी यातुधान देवता इनके एक एक गण सात सात नानानाम पृथक् २ मासमासमें सूर्यात्माको नानानामके पृथक् २ कर्मकरके उपासना करै हैं ॥ १८ ॥ नवक्रोड इक्यामन लाख योजन परिमित भूमंडलके फिरवेके निमित्त एक क्षणमात्रमें दोहजार योजन और दो कोस चलै हैं "सूर्य ईश्वर है" एक पीपरपै उल्लू रहै, नीचे सब आय सूर्यको रोज जल दै, तब उल्लू मासै बोलो मा ! सूर्य तौ मैने कभी देखो नाय, ये सब मूर्ख है, तब वाकी मा बोली बेटा ! सूर्ज तेरे दादेने न देखो तेरे बापने न देखो तूं कहासो देखेगौ, क्यौंकि सूर्यके अतितेजसे उल्लूके नेत्र मूंदजांय है जैसेई मूर्ख लोगनकों परमेश्वर नाय दीखै है, जैसे उल्लूके वंशनको सूर्य नांय दीखै है. ऐसेही वह नारायण पूर्ण रूपसों इनमें स्थित हैं ॥ १९ ॥

लक्षोत्तरं सार्धनवकोटियोजनपरिमण्डलं भूवलयस्य
क्षणेन सगव्यूत्युत्तरं द्विसहस्रयोजनानि स भुङ्क्ते ॥ १९ ॥

इति श्रीम० भा० पञ्चमस्कन्धे सूर्यरथमण्डलवर्णनं नाम एकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अध्याय २२.

राजोवाच—यदेतद्भगवत आदित्यस्य मेरुं ध्रुवं च प्रदक्षिणेन परिक्रामतो राशीनामभिमुखं च प्रचलितं चाप्रदक्षिणं भगवतोपवर्णितममुष्य वयं कथमनुमीमहीति ॥ १ ॥

राजा परीक्षित बोले कि ये भगवान् सूर्य मेरु ध्रुवको प्रदक्षिण करके चले हैं, और राशीनके सन्मुख वाए हैंके चलैहैं, ये आपने वर्णन करो है याको हम कैसे अनुमान करैं, ये विरुद्ध बात है यासो कहिये ॥ १ ॥ सो शुकाचार्य हर्षसो बोले कि जैसे घूमते भये कुह्मारके चाकके साथ वाके ऊपर घूमती भई चींटि आदिनकी गति औरही प्रकारकी मालूम पडै है, ऐसेई नक्षत्रराशिन करके उपलक्षित कालचक्रकरकै ध्रुव और मेरुको प्रदक्षिण करकै शीघ्र साथ चलवेसो विनके आश्रय सूर्य आदि ग्रहनकी गति औरही प्रकार करकै नक्षत्रराशिके मध्यमें मालूम परे है[1] ॥ २ ॥ सो ये भगवान् आदि पुरुषही साक्षात् नारायण लोकनके मंगलके अर्थ अपने आत्माको त्रयीमय कर्म विशुद्धि निमित्तक द्वादश सूर्यरूप विभागकर छै वसंतादि ऋतुनमें यथासुख ऋतुके गुणनको भोगै है परम पुरुषके या व्यापारमें आत्मतत्वके जाननेवारे विद्वानहू तर्क वितर्क कियो करै हैं ॥ ३ ॥ तिन सूर्यको वर्ण आश्रम आचारवान् पुरुष वेदत्रयीकी विद्याकरकै छोटे मोटे वेदके योगविस्तारके कर्म

१ ये उत्तर है कि जैसे खूब वेगसो घूमते कुम्हारके चाकपे अपनी गतिसो उलट चलती चेंटी वा चाककी गतिमें गति लुप्त हैवेके कारण चाककी गतिसो सूधी चलती दीखै है ऐसेही शिशुमारकी गति सूर्यसो ३६० गुनी हैवेके कारण सूर्यकी गति लुप्त है जाय है यासो सूर्यकी गति सूधीसी दीखै है ये जानौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रद्धाकरकै यजन करते अनायासकरकै आनन्दको प्राप्त होय हैं ॥ ४ ॥ यह सूर्यही सब लोकनको आत्मा है स्वर्ग और पृथ्वीके मध्यमें जो आकाशमंडल है वाके मध्यमें कालचक्रमें स्थित हैकै यही सूर्य बारह महिननकी राशि भोग करै है मेषादि राशिनके नामही इन सब मासनके नाम है यह मास संवत्सरके अंग है महीनामें पृथक् २ भांतिके होय हैं चन्द्रमाकी गतिसौ दो पक्षको महिना होय है सूयकी गतिके हिसाबसे सूर्यके सवादो नक्षत्र भोग करवेके कालको एक मास कहै हैं यह एक महिना पितरनको दिन रात होय है यह सूर्य जितने कालमें संवत्सरको छठवों भाग अर्थात् दो राशिनको भोग करै हैं वह काल ऋतु कह्यौ जाय है सो एक अंग ऋतु संवत्सरको एक अंग है ॥ ५ ॥ यासौ सूर्यदेव जितने समयमें पृथ्वीके आधे भागमें घूमजाय हैं वितनै समयको अयन कहै हैं ॥ ६ ॥ जितने आकाशमंडलको द्यावापृथ्वीके मंडलों करकै सहित सम्पूर्णतासो भोगे हैं, वा कालकी संवत्सर परिवत्सर इडावत्सर अनुवत्सर संज्ञा है, सूर्यके मंद शीघ्र समान गतिनसो होय है ॥ " ऐसो लिखो है कि शुक्लपक्षकी पडवाकों संक्रांति जब होय हैं तब सौर चांद्रमासमें एकसंग वर्ष होय है, सौरमानसो वर्षमैं छैः दिन बढै हैं चांद्रमासमें छैः दिन घटै है ऐसे बारह दिनके घटने बढनेसो दोनों आगे पीछे हो जांय है तो पांच वर्षके मध्यमें दो मलमास होय हैं पीछे छठो वर्ष होय है ॥ ७ ॥ ऐसै चन्द्रमा सूर्यकी किरणनसो लाखयोजन ऊपर है सूर्यके वर्षकी भुक्तिको चन्द्रमा दो पक्षमें भोगै है और चन्द्रमा २। दो दिनमें सूर्यके एक मासकी बराबर चलै है और एक दिनमें सूर्यके एक पक्ष चलनेकी बराबर चलैहै कभू २ चन्द्रमाकी गति अतिशीघ्र हैवेके कारण यह ग्रह सूर्यकी बाराबरीसोहू आगे है जायहैं ॥ ८ ॥ और पूर्ण कलासो देवनके और क्षीणकलानसों पितरनके दिनरात्र शुक्लकृष्णपक्षके विस्तारसो हैं सब जीवमात्रको निर्वाह करवेवारे प्राणदाता जीवरूप एक एक नक्षत्रको तीस मुहूर्तनसो भोगै है ॥ ९ ॥ ये षोडशकलाधारी पुरुष भगवान्ही मनोमय अन्नमय अमृतमय देवता पितर मनुष्य भूत पशु पक्षी सर्प वेल इत्यादिकनको प्राणदाता वृद्धिकारी शीलयुक्त सर्वमय चंद्रमा है ॥ १० ॥ ताते ऊपर तीनलाख योजनपै सब नक्षत्र है, सुमेरुकी दक्षिणकी ओर होते भये कालरूप ईश्वर करकै लगाए भये अभिजितसहित अट्ठाईस नक्षत्र हैं अश्विनी भरणी कृत्तिका रोहिणी मृगशिर आर्द्रा पुनर्वसु पुष्य आश्लेषा मघा पूर्वाफल्गुनी उत्तराफाल्गुनी हस्त चित्रा स्वाती विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा मूल पूर्वाषाढा उत्तराषाढा अभिजित् श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पूर्वाभाद्रपदा उत्तराभाद्रपदा रेवती यह नक्षत्र हैं ॥ ११ ॥ तिनसो ऊपर दोलाख योजनपै शुक्र है, आगेसौ पीछेसौ सूर्यके संगही शीघ्र मंद समान गतिनकरकै सूर्यकी नांई चलै है लोकनको नित्य अनुकूल रहैं है यह प्रायकरकै वर्सते हैं ॥ क्रममें स्थित नक्षत्रनकों छोडकै चलै हैं, सो ये वृष्टिके रोकवेवारे ग्रहको शांतकारी अनुमान करौहै ॥ १२ ॥ शुक्रके उपरांत बुध तिनसो दोलाख योजनपै कहैहैं, वो चंद्रमाको पुत्र हैं बहुधा करके शुभकारी है जब सूर्यसो अलग होय तब पवन बहुत चलावै है मेघ वर्षै नहीं, बादरमात्र बनेरहै वर्षा न होय ये भयकी शंका रहैहै ॥ १३ ॥ याते ऊपर मंगलभी दोलक्ष योजनपै है तीनतीन पक्षन करकै एक एक राशीनको द्वादश राशीनको भोगै हैं जो यह वक्री न होय तौ तब यह बहुधा अशुभ ग्रहसौ अमंगलसूचक है जाय है ॥ १४ ॥ तातें ऊपर दोलक्षयोजनपै भगवान् बृहस्पति एक एकराशिपै वर्षवर्षतक रहैहै, जो वक्री न होय तो प्रायकरकै ब्राह्मणकुलकों सदा सुख देवहैं ॥ १५ ॥ ताते ऊपर दो लक्षयोजनपर शनैश्चर प्रतीत होय है, एक एक राशिको तीसमासतक हौले हौले भोगै हैं उतने वर्षमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सबको दुःख देवै है " एक समय रावण सब आठ ग्रह जहां कैद थे वहां देख बोले कि शनैश्चर कैदमें न आयो तो मंत्री बोले वह दुःखदायक है यासे वाको घरमें आनो योग्य नहीं तोहू कालवश रावण बोलो नहीं वाहूंको कैद करो, सो बुलाओगयो सो शनैश्चरने दृष्टि उठाय लंकाकी ओर देखो सो आधीलंका गिरपडी रावणने कही ये कहा मंत्री बोले शनैश्चरकी दृष्टि आई है रावणने स्तोत्र करो कह्यो वहाई रहो, शनि बोलो अब तौ हम घरसे चले सो लंकामें साढेसात वर्ष वास करेंगे उसी शनिकी दशामें रावणकी बुद्धि बिगडी सीतामैया चुराई कुटुम्बसहित मरकर वैकुंठ गए यासे लिखा है कि ' सर्वेषामशांतिकरः ' ये मूलगद्यमें पाठ है " ॥ १६ ॥ ताते ग्यारह लाखयोजन ऊपर ऋषिलोग हैं वे सबलोग सब लोकमात्रको मंगल अनुभव करते भए भगवान् विष्णुके परमपद प्रदक्षिणा करते भए विचरै हैं' ॥ १७ ॥

तत उत्तरस्मादृषय एकादशलक्षयोजनान्तर उपलक्ष्यन्ते ॥ य एव
लोकानां शमनुभावयन्तो भगवतो विष्णोर्यत् परमं पदं प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति॥ १७॥

इति श्रीमद्भागवतभा० टी० पञ्चमस्कन्धे ज्योतिश्चक्रे नवग्रहाणां वर्णनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः॥२२॥

अध्याय २३.

श्रीशुक उवाच-अथ तस्मात्परतस्त्रयोदशलक्षयोजनान्तरतो यत् तद् विष्णोः परमं पदमभिवदन्ति यत्र ह महाभागवतो ध्रुव औत्तानपादिरग्निनेन्द्रेण प्रजापतिना कश्यपेन धर्मेण च समकालयुग्भिः सबहुमानं दक्षिणतः क्रियमाण इदानीमपि कल्पजीविनामाजीव्य उपास्ते ॥ तस्येहानुभाव उपवर्णितः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि ॥ याके उपरांत तेरह लक्षयोजनके ऊपर जाको विष्णुपरमपद महात्मा लोग वर्णन करै हैं जहां महाभागवत ध्रुवजी उत्तानपादके पुत्र अग्नि इंद्र प्रजापति कश्यप और धर्म सहित जब नक्षत्ररूपी भये हे वाही दिनसो आजतक प्रदक्षिणा किया करते हैं और एक कल्पतक जीववारेनके आधार हैके भगवान्की आराधना करै हैं जिनकी महिमा पीछे कही आये हैं ॥ १ ॥ सो ध्रुव सब ज्योतिर्गणनके नक्षत्रादिकनके ऊपर महावेगवारे भगवान्के कालसो जो घूमेहै, विनके मध्यमें स्तंभकी नाईं स्थित हैं, ईश्वरकरके स्थित करेभए प्रकासे है ॥ २ ॥ जैसे कोलूके बीचके स्तंभमें खीचनेवारे पशु जोडे भए तीनतीन सवनसों जैसे अपने स्थानमंडलकों चलै हैं ऐसे भगण ग्रहादिक इन ध्रुवमें बाहिर भीतर योगसो कालचक्रमें बन्धेभए ध्रुवरूप स्तंभको आश्रय लेके वायुकरके घुमाए भए कल्पपर्यंत परिक्रमा करै हैं, आकाशमें जैसें वायुक विवश हो मेघ शिकरा इत्यादिकमें सारथी उडै हैं ऐसे ज्योतिर्गण प्रकृति पुरुषके संयोगसो ग्रहण करतेभए कर्मनिर्मित गतिवारे भूमिमें नहीं गिरै हैं ॥ ३ ॥ कोई यह ज्योतिश्चक्र शिशुमारकी स्थितिकरके भगवान्

---

१ शंका-हमने सब शास्त्र और पुराणोंमें ऐसा सुना है कि सब ऋषि लोग भूमिमें तप करते हैं परन्तु मुनिजन फिर ऋषि लोकमेंभी निवास करके तप करते रहते हैं वही मुनि भूमिमें पृथ्वीपर तप करनेवाले हैं कि और दूसरे कोई हैं ?

उत्तर-पृथ्वीपर तो तपस्या करनेवाले मुनि लोग हैं वह अपने तपकी सिद्धिको समाप्त करके पृथ्वीको तजकर ऋषिलोकको चले जाते हैं और ऋषिलोकमें बैठे भगवान्का ध्यान करते रहते हैं, और कठिन कठिन तपोंको छोड देते हैं परन्तु उनहीं ऋषियोंके शिष्य पृथ्वीपर निवास करते रहते हैं और अपने अपने गुरुओंके आश्रमोंपर तप करते हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वासुदेवकी योगधारणामें स्थित है ऐसे वर्णन करैं हैं ॥ ४ ॥ जाके पुच्छाग्रमें नीचेको शिर करे कुंडलीभूतदेहके बीचमें ध्रुव है, ताके लांगूलके अग्रभागमें प्रजापति, अग्नि इंद्र धर्म ये पुच्छ-मूलमें हैं धाता विधाता सप्तऋषि कमरमें हैं, दक्षिणावर्त कुंडलीभूत शरीरके अभिजित्सो आदिले पुनर्वसुतक चौदह नक्षत्र दहिने कूखमें हैं, और वाएमें पुष्यादि उत्तराषाढ पर्यंत चौदह नक्षत्र हैं या कारण कुंडलके विस्तारानुसार शिशुमारके सब अवयव दोनों पार्श्वमें समान संख्यावाले हैं पीठमें अजवीथी है आकाशगंगा उदरमें है ॥ ५ ॥ पुनर्वसु पुष्य दहिने वाए चूतडमें है, आर्द्रा आश्लेषा दहिने वाए पादमें है, अभिजित् उत्तराषाढ दहिनीवाई नाकमें है, यथासंख्य जानने, श्रवण पूर्वाषाढ दहिनेवाए नेत्रमें हैं, धनिष्ठा मूल दहिनेवाए कानमें हैं, मघादि आठ नक्षत्र दक्षिणायन वांये पसवा-डेमें हैं मृगशीर्षा आदि उत्तरायण दहिने पसवाडेमें हैं यथाक्रमसो शतभिषा ज्येष्ठा दहिनेवांए कंधापै हैं ॥ ६ ॥ ऊपरकी ठोडीमें अगस्ति नीचेके ठोडीमें यम मुखमें मंगल है, शनि उपस्थमें है, बृहस्पति कंधामें हैं, वक्षस्थलमें सूर्य हैं, हृदयमें नारायण हैं, मनमें चंद्रमा है, नाभिमें शुक्राचार्य है, दोनों स्तनमें अश्विनीकुमार है; बुध प्राण अपानमें है, राहु गलेमें, केतु सब अंगमें है, रोममें तारागण है ॥ ७ ॥ सर्वदेवतामय भगवान् विष्णुको ये रूप दिनरातसंध्यामें जितेंद्रिय हैकै वाणी जीतकै दर्शन करै, पाठ करै तो सब पापसो छूटैंगे ज्योतिश्चक्र सब कालको निवासस्थान सब निमिषको पति महापुरुषको हम ध्यान करै है यह शिशुमार भगवान् ग्रह नक्षत्रादिकनके स्वरूप सब देवतानके अधिपति है सो जो लोग त्रिकालमें विनको प्रथम कह्यो भयो मंत्र जपैंगे शिशुमार भगवान् विनके पापनको नष्ट करेंगे और जो तीन कालकी संध्यामें विनको प्रणाम करै स्मरण करै वाके तत्काल सब पाप नाश होयगे " ये ज्योतिःशास्त्र ऐसो है कि सब बात यासों दीखै है एक-समय बृहस्पति शुक्र दोनों महाज्योतिषी पार्वतीकी महा बडाई ज्योतिषमें सुन कैलासको गए मार्गमें बृहस्पति शुक्रसों बोले कि या समय लग्न धरो पार्वती कहा करै है, तो शुक्रने लग्नमें देखो नग्न हो पार्वती स्नान करै हैं, थोडी देर बाद भीतर चलैगै, वो काल लग्न व्यतीत हुए पर वस्त्र धार जब पार्वती पूजास्थानमें आय बैठी तो गए, दोनोंने एक ग्रंथ बनायो वो निवेदन कियो वाय देख पार्वती बोले तुमने या ग्रंथसे मोय नग्न देखो, यासो मैं शाप देतीहूं कि ज्योतिषको फलादेश कभू फलै कभी न फल देय (क्वचित्फलति कश्चन) ये लिखा है" ॥ ८ ॥

एतदु हैव भगवतो विष्णोः सर्वदेवतामयं रूपमहरहः संध्यायां प्रयतो वाग्यतो निरीक्षमाण उपतिष्ठेत ॥ नमो ज्योतिर्लोकाय कालायनायानिमिषां पतये महापुरुषाय धीमहीति ॥ ग्रहर्क्षतारामयमाधिदैविकं पापापहं मन्त्रकृतां त्रिकालम् ॥ नमस्यतः स्मरतो वा त्रिकालं नश्येत तत्कालजमाशु पापम् ॥ ८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पं० शिशुमारचक्रवर्णनं नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

श्रीशुक उवाच-अधस्तात् सवितुर्योजनायुते स्वर्भानुर्नक्षत्रवच्चरतीत्येके ॥ योऽसावमरत्वं ग्रहत्वं चालभत भगवदनुकम्पया स्वयमसुरापसदः सैंहिकेयो ह्यतदर्हः तस्य तात जन्मकर्माणि चोपरिष्टाद् वक्ष्यामः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी बोले कि अब तीन अध्यायकरकै नीचे भुवनवर्णन करैहैं, कोई आचार्य ऐसै कहै हैं कि सूर्यसो दशहजार योजन नीचै राहू नक्षत्रकी नाईं विचरै है, जो वो देवभाव और ग्रहपनको प्राप्त होतो भयो ये सब भगवत्की कृपाकी बात है, परंतु वैसें वो आप सब असुरनमें नीचे है, सिंहिकाराक्षसीको सुत है अयोग्य है, हे परीक्षित् ! वाको जन्मकर्म अष्टमस्कन्धमें कहैंगे ॥ १ ॥ जो यह सूर्यनारायणको मंडल तपै हैं वा सूर्यमंडलको विस्तार दशसहस्र योजनको है और चंद्रमण्डल द्वादशसहस्र योजन है परन्तु राहुमंडल इन दोनोंनसो बडो है तेरहसहस्र योजन है पर्वमें सूर्यचंद्रमापै धावमान होयहै विनके किये वैरकूं याद करैहै ॥ २ ॥ या बातको सुनकै विन दोनोंनकी रक्षाके लिये भगवान् सुदर्शननाम भागवतनके प्यारे भगवान् अपने अस्त्रको प्रयोग करैहैं जाको तेज असह्य है और वह सदा घूमतो रहैहै वा चक्रको घूमतो देखकै राहू सूर्यचंद्रमाके पकडवेको एक मुहूर्तमात्रतक खडो होयहै और पीछेसो डरकै दूरसो पीछेको लौट जायहै या प्रकार सूर्यचंद्रमाके अन्तरमें जितनी देर राहु खडो रहैहै वितनेही कालकों लोग ग्रहण कहैहैं' ॥ ३ ॥ तिनते नीचै सिद्ध चारण विद्याधर लोगनके स्थान वितनेही प्रमाण अर्थात् दशहजार योजन नीचे हैं ॥ ४ ॥ तिनते नीचे यक्ष राक्षस पिशाच प्रेत भूतगणको विहारको आंगण आंतरिक्ष है, जहांतक भास शिकरा गरुड आदि पक्षिराज उडैं है ॥ ५ ॥ ६ ॥ भूमिके ऊपरको जो कुछ हो सो हमने वर्णन करो, अब धरतीसो नीचै सात भूविवर हैं, एकएक दसहज्जार योजनके अंतरसों रचे हैं, अतल वितल सुतल तलातल महातल रसातल पाताल ये हैं, (इनके मार्ग हैकै भूमिके भीतर जायवेकी ठौर है) ॥ ७ ॥ इन बिलनमें स्वर्गसोहू अधिक कामभोग ऐश्वर्य आनंद विभूतिन करकै सुंदर समृद्ध भवन उद्यान बागविहार स्थाननमें दैत्य दानव कद्रुसुत नित्य प्रसन्न हो अनुरक्त स्त्री पुत्र बंधु सुहृद नौकर सेवकन सहित रहते आनंद करैहैं अधिकाईसो ईश्वरसो विनको कोई अभिलाष कभू अधूरो नहीं जायहै वह सदाही मायासो आनंद उत्सव करै हैं ॥८॥ हे महाराज ! इन सब पातालनमें मायासो मयदानवकी बनाई भई श्री अनेक पुरियें सदा दीप्तिमान रहे हैं वहांके भवन प्राकार गोपुर चित्रसारी अटारी सुचित स्थान सभा चौराहे और बडे बडे स्थान मणिनसो बने शोभित हैरहे हैं वहां विवरेश्वर गणनके बडेबडे गृहनके भूभाग नाग असुर कपोतनके जोडा तोता मैना आदि पक्षिनसों परिपूर्ण हैं यासों यह सब पाताल मानों इन सब पाताल वस्तुनसो सजकै विराज रहे ह ॥ ९ ॥ वहांकी वाटिनमें अनेक प्रकारके पुष्प लताये पुष्पनसो पूरित ऊंचे ऊंचे वृक्षनसो आलिंगन कर रही है विन वृक्षनकी शाखा कोमल हरि लाल कोपलन और फल फूलनके भारसो नीचेको झुकी जायहै निर्मल जलसो भरे सरोवरनके बीचमें अनेक प्रकारके पक्षिनके जोडानकी शोभा है रही है मछलिनके उछलवैसो विनके जलनमें महाशोभा और हलचली

---

१ शंका—राहु और केतु, सूर्य चन्द्रमाको अत्यंत पीडा देते हैं और इन दोनों सूर्य चन्द्रमाकी रक्षा करनेके लिये भगवान् चक्र सुदर्शनको लेकर आते हैं, वारंवारके आने जानेमें चक्र सुदर्शनकोभी महाकष्ट होताहै, फिर ऐसे दुःख देनेवाले राहु केतुको भगवान् वासुदेव क्यों नहीं मारकर विध्वंस करते जो फिर किसीको दुःख न हो। इसका उत्तर जो कोई दे कि राहु केतु अमृत पी गयेथे, इसलिये यह किसीके मारनेसे नहीं मरसक्ते तो सत्य है, परन्तु अमृतभी तो भगवान्हीका बनाया है जिसको भगवान् मारना चाहते हैं तो उसकी रक्षा भगवान्भी नहीं कर सक्ते ॥

उत्तर—भगवान्ने सुदर्शन चक्रसे केतुको माराथा, तबसे राहु केतु सुदर्शनचक्रको स्पर्श करनेसे पवित्र होगया, इसलिये भगवान् सुदर्शन चक्रसे पवित्र राहु केतुको नहीं मार सक्ते, दोनोंके शरीरमें सुदर्शन चक्रका जो चिह्न उपस्थित है उसको देखकर भगवान् राहुके ऊपर प्रसन्न होगये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैरही है विन जलाशयनमें कमल कुमुद कुवलय कह्लार नील उत्पल लालकमलादिके वननमें विहार करनहारे पक्षिनसो आकूल मनोहर अनेक प्रकारके शब्दनसौ इन्द्रियनको महासुख मिलै है ॥ १० ॥ जहां दिनरातके काल विभागको भय नहीं है ॥ ११ ॥ जहां महासर्पराज शिरकी मणिनकरकै सब अंधकार दूर करै हैं ॥ १२ ॥ इनमें वसनवारेनको दिव्य औषधिरस अन्नपान स्नान आदि करकै मानसी व्यथा ऊपरके दुःख देहविवर्ण बुढापन शरीर शिथिल दुर्गंधि पसीना परिश्रम ग्लानि अवस्थाविशेष नहीं होय है ॥१३॥ भगवत्तेज सुदर्शनचक्रके विना वहांके कल्याणरूप वासिनको और कहांसोहू भय नहीं होय है ॥ १४ ॥ जा सुदर्शनचक्रके प्रविष्ट हैवेसो प्रायकरकै असुरनकी वधूनके गर्भ भयके मारे चार पाच छै महीनाके गिर जायहैं " आचतुर्थाद्भवेत्स्रावः पातः पञ्चमषष्ठयोरिति " ॥ १५ ॥ याके १०००० योजन नीचे अतललोकमें मयको पुत्र असुर बलराजा निवास करै हैं, जा मयदैत्यकी रचीभई छियानवे ९६ माया कोई एक मायावी लोग अबहू धारण करै हैं जाके जंभाई लेवेसो मुखते तीन स्त्रीके गण उत्पन्नभए, स्वैरिणी, कामिनी, पुंश्चली, ये स्त्री अपने बिलमें प्रविष्ट पुरुषको हाटक नामक सुवर्णके रससो सिद्धकर अपने विलासके योग्य अवलोकन मुसकान बोलन शरीरसों मिलनो इत्यादिक करकै अपने मनके अनुसार रमण करावै हैं जिन स्त्रीनके सुखसौ युक्त पुरुष ये मानेहैं कि हम सिद्ध है, ईश्वर है दशहज्जार महागजनके बलके समान अपने आत्माको मान मदांधकी नांई हैके कथन करै है, उन्मत्त हैजाय है ॥ १६ ॥ ताते नीचे वितललोकमें हाटकेश्वर शिव हर भगवान् ईश्वर अपने भूतगणपार्षदनकरकै सहित प्रजापतिकी सृष्टि बढायवेको भव भवानी सहित मिथुनीभावको प्राप्त होय रहे हैं, जहांते सरिताश्रेष्ठ प्रवृत्त भई हैं हाटकी नाम है, शिवके वीर्यसौ भई है, जहां चित्रभानु नामको अग्नि पवनके उत्तेजनसो या वीर्यको पराक्रम द्वारा पीजाय है और पीकै जब उगलैथूके है वासो हाटक नामको सुवर्ण होयहै असुरनमें इंद्र पुरुष अपनी स्त्रियनकरकै अपने मेहेलनमें वा सुवर्णके भूषण धारै हैं ॥ १७ ॥ ताते नीचे सुतललोकमें उदार यशवारे महायशस्वी विरोचनको पुत्र बलि रहे है भगवान् इंद्रके प्रिय करवेकी इच्छा करकै अदितिमें वामनरूप धारके वाके सब लोक हरलीने फिर भगवत्कृपा करके वा लोकमें प्रवेश कर इंद्रादिकनहू दुर्लभ लक्ष्मीसहित स्वधर्मसो पूजा योग्य तिन भगवान् वामनजीको आराधन करतो भयो स्वधर्मसो आजतक वहां निवास करै है ॥ १८ ॥ सब जीवसमूहनके जीवभूत रूप परमात्मा वासुदेव अत्यंत तीर्थतम सुपात्र जब प्राप्त भए तब परमश्रद्धा परम आदरसो सावधान मन कर सम्यक् प्रकारसो पृथ्वीको दान कर दियो जो साक्षात् मोक्षको द्वार है जो भूमिदान करवेको यही फल नहीं है कि या बिलके स्थानको ऐश्वर्य प्राप्त होय याको औरहू अधिक फल है यासो भूमिदान समान और दान नहीं है ॥ १९ ॥ जिन श्रीमन्नारायणको नाम छीकते गिरते पडते इत्यादि दुःखस्थानमें विवश हैकै एकवेरहू ग्रहण करै तौ पुरुष कर्मबंधनको नाश करै है जाक तोडवेको मनुष्य और उपाय कर अनेक दुःख उठावे हैं ॥ २० ॥ वे प्रभु आत्मज्ञानी भक्तनको आत्माको स्वरूप देय है विवेकिनको विवेक तथा अत्यन्त प्रिय भक्तनको पृथ्वीदान करवेको फल मुक्ति होनोही उचित है ॥ २१ ॥ यथार्थमें बलिराजापै भगवान्ने अनुग्रह नहीं कियो कारण कि मायामय राज्यको ऐश्वर्य जो आत्माके स्वरूपको ध्वंस करनहारो है वह बलिको दिया " वासुदेवे मनो यस्य जपहोमार्चनादिषु ॥ तस्यान्तरायो मैत्रेय देवेन्द्रत्वादिकं फलमिति " ॥ २२ ॥ श्रीभगवान्के मनमें ये आई कि मांगवेके विना और उपायसो राजा बलि वशमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

न होयगो मांगवेको ये एक उपाय करकै सब लैके शरीरमात्र याको वाकी छोड वरुणकी पाशीसौ छुडायकर पर्वतकी गुफामेंसो निकासो या लोकमें बसायो, तब वो ये कहतो भयो ॥ २३ ॥ इन्द्रने यद्यपि अपने विचारके निमित्त गुरुको स्थापित कियो है तथापि वह अपने सत्य स्वार्थमें चतुर नहीं है कारण कि भगवान्हीको मांगलेतो वाके बदले त्रिलोकीनाथको मेरे पास भेजकै भगवान्सो राज्य सुखकी प्रार्थना की, एक मन्वंतरमें जात रहनवारो राज्य इन्द्रको इतने परिश्रमसौ प्राप्त भयो वह महावेगवान् कालचक्रके सामने कहा पदार्थ है ॥ २४ ॥ यासौ हमारे दादा प्रह्लादने भगवान्सौ दासपनहीकी भिक्षा मांगीही जब प्रह्लादके पिता हिरण्यकश्यप मरे तब भगवान् विन्हे विनके पिताको कंटकहीन राज दैन लगे वाके लैवेमें कछु भयकी संभावना नहीं ही तौहू यह भगवान्सौ अलग है ऐसो विचार कर हमारे दादाने वाय ग्रहण न कियो ॥ २५ ॥ परंतु हम सरीके पुरुष कि जिनके रागादि क्षीण नहीं भये ऐसे लोग जिनपै भगवान्की कृपा नहीं ऐसे वे कोनसे है जे प्रह्लादजीके मार्गपै चलवेकी इच्छा करैं ॥ २६ ॥ वा बलिको चरित्र आगै अष्टमस्कंधमें विस्तार करैंगे, जा राजाबलिके द्वारपै अखिल जगद्गुरु भगवान् नारायण गदा लिये आप बैठे हैं अपने निज जननपै अनुकंपित हृदयवारे जिन श्रीहरिने पांवके अंगुष्ठसो दिग्विजयको आएभए रावणको दशहज्जार योजन फैक दियो ॥ २७ ॥ तिनसो नीचे तलातलमें त्रिपुराधिपति मयनामक दानवेंद्र रहे है जब भगवान् त्रिपुरारिने त्रिलोकीके मंगल करवेकी इच्छाकरकै वाके त्रिपुर जराय दिये पीछै कृपाकरकै वाय यह स्थान दे दियो जहां वह सब मायावीनको आचार्य महादेव करकै रक्षित सुदर्शनचक्रको भय न करकै आनन्दसो वसे है ॥ २८ ॥ ताके नीचे महातलमें कद्रूके पुत्र अनेक शिरके सर्व क्रोधवशनामक गण कुहक तक्षक कालिय सुषेण आदि प्रधान महाफणवारे श्रीभगवत्के वाहन गरुडजीसो सदा उद्विजमान रहे हैं तौहू समय अपनी स्त्री पुत्र सुहृद कुटुम्बके संग करकै प्रमत्त होय विहार करै हैं ॥ २९ ॥ ताते नीचें रसातलमें दैतेय दानव पणि नामक निवातकवच कालेय और हिरण्यपुरवासी रहे हैं ये देवनके वैरी स्वभावसो महापराक्रमी महासाहसी है परन्तु सब लोकमें प्रभाववारे भगवान् श्रीहरिके तेजसोई इनको तेज और अभिमान हृत होजायहै वह बिलमें शयन करवेवारेकीसी नांई वसेहै, इंद्रकी दूती सरमाके वाणीरूप मंत्र वर्णनसो इंद्रते डरै है ॥ ऐसै वैदिक आख्यान है पणिनाम दैत्यननें जब गाय छिपायलीनी तब इन्द्रने एक सरमा नाम देवशुनी विनके ढूंढवेको भेजी सन्धि करवेकी इच्छासौ दैत्यनने वासौ कही तेरी कहा इच्छा है तब संधिकी इच्छा नहीं करके सरमा इन्द्रकी स्तुति करती असुरनसो कठोर वचनसो बोली कि हे पणियो ! इन्द्रके मारे भए तुम सोओगे वे यह वचन सुन डरते भए, वो वा समयको वाणीरूप मंत्र ये है कि ॥ "हता इन्द्रेण पणयः शयध्वमित्यादिमंत्रोस्तीति" ॥ ३० ॥ ताते नीचे पातालमें नागलोकके पति वासुकी आदि शंख कुलिक महाशंख श्वेत धनंजय धृतराष्ट्र शंखचूड कंबलाश्वतर देवदत्तादिक महाभोगवारे महाक्रोधी वसैं हैं जिनके पांच सात दश शत सहस्र शिरके फणनमें महामणि जटित हैं, महाप्रकाश हैं, पातालके छिद्रके अंधकारसमूहको अपनी कांति करकै नाश करैं हैं इन "सर्पनकी जातको एक महाधनी नाग या मनुष्य लोकमें रहै सो एक ब्राह्मण रोज वाय दूध प्याय आवै, मोहर ले आवै, ऐसे बहुत दिन हैंगए वो जगन्नाथयात्राको गयो, छोरासो कहिगयो सर्पको दूध प्याय आइयो, छोरा रोज ऐसै करैं एक दिन बोले कि या सांपकों मार सब मोहर लेचलूं, रोज रोज वृथा आनो पडै हैं, वाही दिन तो याने सांपके मूडमें डंडा मारो वाई समय सांपने छोराको काट्यो वाही विरिया

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पिता आय छोरा लेकर सांपकी बांबीपै जाय स्तुति करी, तो वो सर्पराज बोलो ॥ दोहा ॥ चित्त फटै जा मीतसों, जुरै न कोटि उपाव ॥ तुम्हैं पुत्रको शोक है, हमैं शीसको घाव ॥ ये सुन विप्र घर गए" ॥ ३१ ॥

ततोऽधस्तात् पाताले नागलोकपतयो वासुकिप्रमुखाः शङ्खकुलिकमहाशङ्खश्वेतधनंजयधृतराष्ट्रशङ्खचूडकम्बलाश्वतरदेवदत्तादयो महाभोगिनो महामर्षा निवसन्ति तेषामु ह वै पञ्चसप्तदशशतसहस्रशीर्षाणां फणासु विरचिता महामणयो रोचिष्णवः पातालविवरनिकरं स्वरोचिषा विधमन्ति ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे अतलादिस्वर्गे बिले ये निवसन्ति तेषां वर्णनं मर्यादानिरूपणं नाम चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अध्याय २५.

श्रीशुक उवाच–तस्य मूलदेशे त्रिंशद्योजनसहस्रान्तर आस्ते या वै कला भगवतस्तामसी समाख्याताऽनन्त इति सात्वतीयाद्रष्टृदृश्ययोः संकर्षणमहमित्यभिमानलक्षणं यं संकर्षणमित्याचक्षते ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि पातालके मूलदेशमें तीसहज्जार योजन नीचे भगवान्‌की तामसी कला स्थित है वाय अनंत कहैहैं यह अहंकारके अधिष्ठाता देवता हैं तंत्रवेत्ता इनको तथा भगवद्भक्त चतुर्व्यूह उपासनामें इनको संकर्षण कह्यो करै हैं याको कारण यह है कि अहं ये जो अभिमान है सो है लक्षण नाम चिह्न जा अधिष्ठाताको वा अहंकारके द्वारा वह द्रष्टा और दृश्यको खेंचाहै अर्थात् एकमें मिलावे हैं यासों इनको नाम अनंत कहैहै ॥ १ ॥ जिन भगवान् अनंतमूर्ति सहस्रशिरवारे शेषजीके एक शिरके ऊपर धरोभयो ये सब भूमंडल एक सरसौंकी समान मालूम पडै है ॥ २ ॥ कालकरकै जब या सब विश्वके संहार करवेकी इच्छा करैहै, तो क्रोधसों कुटिल रुचिर घूमतीभई भ्रूसो संकर्षणनाम रुद्रके एकादशव्यूह जिनके तीन नेत्र तीनशिखा त्रिशूल उठाएभये उत्पन्न होय है जैसे भगवान्‌के चतुर्व्यूह अवतार हैं तैसे शेषजीके एकादश रुद्र व्यूह अवतार हैं ॥ ३ ॥ जिनके चरणकमलयुग लाल विशाल नखमणि खंडमण्डलमें सर्पनके पति एकांतभक्तियोगसो प्रणाम कर दमकतेभय कुंडलप्रभासो शोभित गंडस्थलसो मनोहर अपने मुखके प्रतिबिम्बको महाआनंदित मनसो विनकी मणियनमें देखे हैं ॥ ४ ॥ नागकन्या विविध सुखकी इच्छासों जिन शेष भगवान्‌के कंकणसों शोभित स्वच्छ सुंदर विशाल उज्ज्वल रुचिर भुजारूपी चांदीके स्तंभनमैं अगर लालचंदन केशरपंक लगायवेके समय विनके छीवतेही हृदयमें विकार उत्पादक कामदेवके उत्पन्न हैवेसों परम लज्जातो मंदमंद हास्य करती भई विनके मुखको देखे हैं जो कि विनको मुख प्रेम और मदसों आनंदित तथा मदघूर्णित रक्ततायुक्त करुणामय दृष्टिवारो है ॥ ५ ॥ सोई भगवान् अनंतानंतगुणार्णव आदिदेव शेषजी क्रोध दूर कर लोकनके मंगलके अर्थ स्थित हैं ॥ ६ ॥ सुर असुर सर्प सिद्ध गंधर्व विद्याधर मुनिगणनकरकै सदा ध्यान योग्य है सदा मदसो मुदित विकारको प्राप्त विह्वल आनन्दभरे नेत्र हैं सुंदर ललितमुखके अमृतसमान वचनसों अपने पार्षददेवतानके यूथनके पतीनको भगवत्तत्वको उपदेश करै हैं नीलवर्णके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वस्त्र धारण किये कानमें एक कुंडल विराजमान सुभग और सुन्दर अपनो हाथ हलके ऊपर धरे क्षुद्रघंटिका पहरे हैं यह महानुभाव शेषजी इन्द्रको हाथी जैसे सुवर्णकी वरत धारण करके शोभित होयहै ऐसेही जिनकी कांति कभू न्यून नहीं होयहै और नई तुलसीके सुगन्धभरे मकरंदसो मदविह्वल होते भए भौंरानके मधुर गानसो शोभायुक्त वैजयन्ती मालाको धारण करे हैं ॥ ७ ॥ जो कोई याको सुनै ध्यान करै तो मुमुक्षुनको अनादि कालकी कर्मवासनासो ग्रसीभई अविद्यामय हृदयकी गांठ सतोगुण रजोगुण तमोगुणको हृदयके भीतर प्राप्त हैके शीघ्र नाश करै है, तिन शेषजीको प्रभाव भगवान् स्वयंभूपुत्र श्रीनारदजी तुंबरु गंधर्वसहित ब्रह्माकी सभामें श्लोकनसो गावतेभये ॥ ८ ॥ उत्पत्ति पालन नाशके कारण सत्वादिक गुण जिनके कटाक्षसो अपने कार्य करवेको समर्थ भये जिनको स्वरूप (अकृतं) स्वतः सिद्ध अनादि और अनंत है क्योंकि जो एक मात्र वस्तु स्वरूप होतो आत्मामें अनेक प्रकारके प्रपंचको स्थापन करतोभयो वापर ब्रह्म शेष भगवान्के तत्वको यह लोग कैसे जान सकै है ॥ ९ ॥ जिनसो यह सत् असत् प्रगट होयहै और जो हमसे भक्तजननके ऊपर प्रसन्न हैके विशुद्ध सत्वमूर्ति धारण करै हैं अपने भक्तजननको मन वश करवेके लिये जिनकी करीभई लीलानसो महाबलवान् पराक्रमी सिंह शिक्षा पावेहै ऐसे परम उदार अनंत बलवान् सहस्रशिरवारे शेषभगवान्को त्यागकर और कोनकी आशा करैं ॥ १० ॥ जिनको मान औरके मुखसो सुनके आरत अथवा पतित मनुष्य अकस्मात् अथवा हँसीसो एकवारहू उच्चारण कर लेयहै तो वाके और सुनवेवारे पुरुषनके सब पाप नाशकर देयहै विन शेषभगवान्को छोडके मुमुक्षु जन और कोनकी शरण जाय ॥ ११ ॥ जिन सहस्रशिरवारेके मूंडपे पर्वत नदी समुद्र जीवसहित भूगोल अणुवत् मालुम पडे है, जो अनंत है जिनके पराक्रमको कोई नहीं गिन सकेहै जो समर्थ है सहस्रजिह्वायुक्त है विनके वीर्यनकी गिनती कौन करसके है ॥ १२ ॥ भगवान् अनंतको ऐसो प्रभाव है जिनको कोई नहीं जाने है वह अनन्त बलवान् स्वतंत्र और अनेक गुण प्रभावयुक्त है पातालमूलमें विराजमान हो लोकनके हितके निमित्त लीलासो पृथ्वीको धारण करै हैं विनको आधार कोई नहीं यह आपहीं अपने आधार हैं ॥ १३ ॥ इतनीही मनुष्यनके जायवे योग्य गति है, सो जैसे कर्म करैं है तैसी निर्माण करी है, सो जैसे ही, तैसी हमने कही, जैसी कामना चाहै विन्है तैसी मिलै है ॥ १४ ॥ हे राजन् ! प्रवृत्ति मार्गमें लगेभए पुरुषनकों धर्मके विपाककी ऊंची नीची समान गति इतनीही है तुमनें जो प्रश्न कीनो तैसो हमने कह्यो अब और कहा कहै " परंतु या प्रवृत्ति मार्गमें लक्ष्मीमदमें सब अंध हैं जांय हैं दृष्टांत एक बनिया रोटी खायवे बैठे तब मूसो थारीपे हैके रोज कूदै, तब वो बोले कि याके बिलमें धन है, यासो ये कूदै है बिल खोद्यो तो २०००० हजार रुपा निकरै, यासो मूसो कूदे है ऐसेही धनसो सब संसार कूदे है निर्धनसो चलोहू नहीं जायहै " ॥ १५ ॥

एतावतीर्हि राजन् पुंसः प्रवृत्तिलक्षणस्य धर्मस्य विपाकगतय
उच्चावचा विसदृशा यथाप्रश्नं व्याचख्ये किमन्यत् कथयाम इति ॥ १५ ॥

इति श्रीम० भाषाटीकायां पञ्चमस्कन्धे श्रीशेषस्वरूपवर्णनं नाम पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अध्याय २६.

राजोवाच-महर्षे एतद्वैचित्र्यं लोकस्य कथमिति ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजा परीक्षित बोलै कि हे महर्षे ! लोकनकी यह विचित्र गति क्यों है ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि कर्ताको त्रिगुण हैवेसो और श्रद्धाकी विभिन्नतासो कर्मकी गति अलग अलग सबको न्यूनाधिकभावकरकै होय हैं, सात्विक श्रद्धा सात्विककर्मसो सुख होय है, राजससो दुःख होयहै तामससो मूढपन होयहै ॥ २ ॥ यासों अधर्म होय (कि जिसका निषेध है) करनेवालेके तमोगुणमें भेद और श्रद्धाका विपरीताचरण कर्म फल होताहै इस कारण अनादि अविद्याकृत सब वासनानके परिणाम स्वरूप वह सहस्र २ प्रकारके नरककी गति होयहै विनमेंसो प्रधान २ नरकनको वर्णन करै हैं[1] ॥ ३ ॥ राजा परीक्षित बोले कि हे भगवन् ! नरक जिनको नाम है, सो कोई देशविशेष हैं, अथवा त्रिलोकीसो बाहिर हैं वा बीचमें है सो कहिये ॥ ४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि नरक त्रिलोकीके भीतर दक्षिणकी ओर भूमिके नीचे जलके ऊपर हैं अग्निष्वात्तादि पितृगण वाही दिशामें वास करकै परम योग समाधिसों अपने वंशवारे पुरुषनकी मंगलकामना कियो करै हैं ॥ ५ ॥ जहां भगवान् पितृराजा वैवस्वत यमधर्मराज अपने यहां आए पुरुषनको दूतनके द्वारा लाये भये मरे जीवनको विनके कर्मानुसार दोषादोषको विचारकर भगवत्की आज्ञा उल्लंघन नहीं करते विन जीवनको अपने गणसहित दंड धारण करैहैं ॥ ६ ॥ हे राजन् ! कोई आचार्य नरक इक्कीसही गिनै हैं नाम रूप लक्षणसो विन नरकनको हम वर्णन करैं है; तामिस्र, अंधतामिस्र, रौरव, महारौरव, कुंभीपाक, कालसूत्र, असिपत्रवन, सूकरमुख, अंधकूप, कृमिभोजन, संदंश, तप्तसूर्मि, वज्रकंटक, शाल्मली, वैतरणी, पूयोद, प्राणरोध, विशसन, लालाभक्ष, सारमेयादन, अवीचि, अयःपान ये हैं शेष क्षारकर्दम, रक्षोगणभोजन, शूलप्रोत, दंदशूक, अवटनिरोधन, पर्यावर्तन, सूचीमुख ये सब मिलके अट्ठाईस नरक अनेक यातना देवेके स्थान हैं ॥ ७ ॥ तहां जो कोई परायो धन पुत्र स्त्री चुरावै है सो कालकी पाशसें बंधोभयो अति भयानक यमके पुरुषनकरकै बंधोभयो बलसो तामिस्रनामक नरकमें पटको जायहै, जहां कछु खायवेको नहीं मिलैहै, न पीवेको जल दैहैं, दंडसो ताडन करै है डरावैहैं इत्यादि पीडा करकै पीडित जीव तहां महाकष्टको प्राप्त होयहै वा तामिस्र नरकमें एक संग मूर्छित है जाय है ॥ ८ ॥ ऐसेई दुःख अंधतामिस्रमें है, कि जो कोई स्त्रीके पुरुषसो छलकर वाकी स्त्रीकूं भोगै है, वो तहां नरकमें पटको जायहै सब दुःख भोगैहैं दुःखसो सब याद भूल जायहै दृष्टि नष्ट होय है जैसें कोई वनस्पतिको जडसें काटै तैसेई वहां जीव चीरे फाडे जायहैं यासों वाको नाम अन्धतामिस्र कहैं हैं ॥ ९ ॥ जो कोई ये कहै है कि ये सब मेरो है, हम है, ऐसे जीवनसे द्रोहकर केवल अपने कुटुंबकोही दिनरात पालैहै, सो वो सब यहांई छोडकर महा अपवित्र रौरव नामक नरकमें गिरायो जाय है ॥ १० ॥ जे कोई यहां जीवकूं मारे हैं, वे परलोकमें यमके यहां मारे जायहैं वेही आप एक रुरुनामक जीव भनकै आप सब आपसमें आपको खाय जाय है रुरुजीव सर्पसोहू महाक्रूर महाभारी एक जीवविशेष है, याते या नरकको नाम रौरवनरक है ॥ ११ ॥ ऐसेई महारौरवमें पटके जाय हैं, जहांके पडे जीव मांसभोजन करवेवारे हैं, विनीको रुरु कहैं हैं वे मांसके निमित्त विन्हैं मारैहै जो केवल अपने शरीरको पुष्ट करैहै वाकों यमपुरीमें मांस खवावै हैं ॥ १२ ॥

---

१ शुकदेवजी कहै है कि राजन्! याको उत्तर यह है कि जाको शास्त्रमें निषेध कियो है वोही अधर्म कहावे है तो अर्थात् यह पायो कि जाकी शास्त्रमें विधि पावे वोही धर्म है विन धर्माधर्मके करनवारेकी श्रद्धाके विसदृश हैवेसो कर्मनको फलहू विसदृश होयहै नाम अच्छे कर्मनमें श्रद्धा हैवेसो अच्छी गति और बुरे कर्मनकी श्रद्धा हैवेसो निकृष्टगति होय है यह समझनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जो कोई महा उग्र मनुष्य जीते पक्षीनको प्राणसो रांधे हैं, उन अपराधीनको मांस खायवेवारे राक्षस, यमके नौकर कुंभीपाक नरकमें जहां कि तेल उबले है इन निन्दित कर्म करनवारेनको उबलते तेलमें डारदेय हैं ॥ १३ ॥ जो कोई यहां पिता माता ब्राह्मण परब्रह्मसों द्रोह करे हैं, वो दस हज्जार योजनके विस्तार युक्त ताम्रकी धरती महा गरममें जहां ऊपरसो सूर्य तपै नीचे अग्निसो तपै ऐसे कालसूत्रनाम नरकमें पडे है, इसमें पडे भए प्राणीको भूख प्यास शरीरको वाहर भीतर दग्ध करते कभी चेष्टा करते खडे रहते बैठते लौटते दौडते रहे हैं घोडा बकरा हरिण आदि पशूनको मारे है वह पशुके जितने रोम होय हैं उतने सहस्रवर्ष पर्यंत वह कालसूत्र नरकमें पडे है ॥ १४ ॥ जो कोई निज वेदमार्ग छोड आपत विना आये पाखंडमार्गमें लगे है, वाको तरवारकेसे पैने पत्रवारे वृक्षनके वनमें प्रवेश करायके कोडा मारे हैं, तहां ये इत उतकों डोले है दुधारा धारके ताडपत्रनसो सब अंग छिद्यमान है जाय हैं हाय मैं मरो हाय मैं मरो या प्रकार कहतो महा पीडासो मूर्छित हो एक एक पैडमें गिरे है, जो अपने धर्मको नाश करनवारो है, वो महापापंडके अनुकूल प्रात दुःख भोगे है ॥ १५ ॥ जो कोई जीवमात्र अथवा राजा वा राजाके नौकर जो दंडयोग्य नहीं है वाकों प्राणदंड देय हैं, वा ब्राह्मणको शरीरदंड देय है, वे पापी सूकरमुख नरकमें पडे हैं, परलोकमें अतिबली दूत याकी देहके सब अवयव निचोड डारेहै जैसे यहां गन्ने पेरे जाय है तैसे वा जीवकू पेरे है, आर्तस्वरसो चिल्हावे है, कभू मूर्च्छा होय है, महाकष्ट भोगे है, जिन निरपराधिनको यहां कैद कर जो दुःख देय हैं विन्हें वैसोही वहां दुःख मिले है ॥ १६ ॥ जो प्राणी परमात्माके नियत किये भए धर्मवारो जिनको दूसरेनके दुःखका ज्ञान नहीं है ऐसे जीवनके दुःखको जानकेहू खटमलादि जन्तु जिनको रुधिर पीवेको स्वभाव ईश्वरसो कल्पित है विन्हें व्यथा देय है वा जाकी आजीविका कही लगी है वाको जो छुडावे है और दुःख देय है वह मरे पीछे विन सबके द्रोहसो अंधकूप नामके नरकमें गिरे है और वहां पशु मृग पक्षी सर्पादि मच्छर जूंआ खटमल मक्खी इनके मारवेवारेको सब ओरसो यही खांय है, अंधेरेमें नींद नहीं आवे है, तनक सुख नहीं पावे है, घूमे है जैसे कुत्सित शरीरमें जीव दुःख पावे, तैसी गति वा जीवकी होय है ॥ १७ ॥ जो कोई विना बांटे इकेलोई चीज खाय लेयहै, जो प्राप्तपदार्थनकूं पंचमहायज्ञविधि बलि वैश्वदेव कृत्य विना करे खायहै, वो जीव कौआके समान है, वाकी काक स्तुति करें है, वो मरके कृमिभोजन जामें कराए जाय ऐसे नरकअधममें गिरेहै, वहा सोहज्जार योजनको कृमीनकों कुंड है, आपहू वो जीव कृमि है के कृमिनको भोजन होयहै जितने योजनमें कृमिकुंड है उतने हज्जार वर्षतक विना बांटके खानवारो इकलखुरो जीव अनेक दुःखनको भोगे है ॥ १८ ॥ जो कोई चोरी करके अथवा बलात्कारसो ब्राह्मणको सुवर्ण ग्रहण करे अथवा विना आपदाके औरको चुरावे है वह मरण उपरान्त संदंशन नरकमें पडे हैं वहां वाकी त्वचाको यमराजके दूत अग्निमें गरम किये चीमटानसो खेंचें हैं ॥ १९ ॥ जो कोई यहां संसारमें जो स्त्री गमन करवे लायक नहीं है वासो मैथुन करे हैं, वो और जो पुरुष गमनके योग्य नहीं है वासो स्त्री मैथुन करेहैं ये दोनों मरे पीछे कोडेनसो मारे जाय हैं, पीछे महाअग्निसो तपी लोहेकी गर्म प्रतिमा स्त्रीकी है वासो पुरुषको चिपटावे हैं, एक गर्म पुरुषकी लोहेकी अग्नितपी प्रतिमा है वासो

---

१ कवित्त—धरीही रहै गोधन धरनी और धवलधाम वृथा है लगानो नेह गेह देह धरनीसे । ऊंचे २ अटा और अटारी सारी न्यारी होत धरनीमें समाय और प्रगट होत धरनीसे ॥ क्षणको भरोसो नांय वरसौं की सामा करै कोउ न अघात इस माया मनहरनीसे । काम नहीं आवत कोउ अन्त समय शालिग्राम गैयाही तारत वन तरनी वैतरनीसे ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्त्रीको चिपटावें है दोनो मरे हैं ॥ २० ॥ जो कोई सबसो मैथुन करै है, वा पशुसो मैथुन करै हैं वाको मरे पीछे नरकमें वर्त्तमान वज्रकंटक शाल्मलीके वृक्षपै धरकें घसीटै हैं ॥ २१ ॥ जा राजालोग वा राजा जो पाषंडी नहीं है विन्हें मारै हैं, धर्मके सेतुनको भेदै है, वे मरकै यमद्वारकी नदी वैतरणीमें पडै है, मर्यादाके तोडनवारे वा नरककी परिखाभूत नदीमें जलके जीवनसों भक्षण करेभये इतउत डोलैहै एक स्थानमें नहीं ठहरैहै प्राण नहीं निकसै और वे प्राणी जीवनके निमित्त या नदीमें वारंवार इत उत आकर्षित होयहैं वहां अपने किये पाप कर्मको स्मरणकर विष्ठा, मूत्र, केश, पीप, रुधिर, नख, हाड, मेदा, मांस, चर्बी भरी नदीमें तपैहै ॥ २२ ॥ जो कोई शूद्रीके पति है जायहैं वे शौच आचार नियम नष्ट कर लाज छोड पशुकी नांई विचरै हैं, वेहू मरकै विष्ठा मूत्र थूंक मलसों पूर्ण समुद्रमें गिरके वोही भयानक वस्तु फेर खांय हैं ॥ २३ ॥ जो लोग ब्राह्मणादि कुत्ता पालै हैं गधापै चढै हैं मृगकी शिकार करै हैं यज्ञ विना मृगनकूं मारै हैं विनकों मरे पीछे विन्हीको निशानो कर यमके दूत बाणनसो वेधै हैं ॥ २४ ॥ जो लोग दंभी हैं दंभयज्ञमें पशुनकूं मारैं हैं विन्हें पीछे वैशसनरकमें पटककै यमदूत महापीडा देकै मारै हैं या नरकमें गडासीनसो जीव कूटे जाय है ॥ २५ ॥ जो काममोहित हेकै अपनी वर्णकी विना आपसो व्याही स्त्रीनमें वीर्य पटकै हैं वा पाप करवेवारेको पापी यमदूत वीर्यको नदीमें पटककै वीर्यही पियावै हैं ॥२६॥ जो चोर अग्नि लगावनवारे, जहर देनवारे, ग्रामनको शहरनको नाश करै है राजा होय वा राजाके भट होय इन सबनको सारमेयादन नरकमें वज्रकेसे डाढनवारे ७२० कुत्ता वाको बडे वेगसो फारकै खाय जायहैं ॥ २७ ॥ जो कोई या संसारमें गवाहीमें अनेक द्रव्यनके बेचवे खरीदवेमें दान करवेमें अथवा किसी बातमें झूठ बोलै है, वे मरके अवीचिमति नामक नर्कमें नीचेकूं मूढकरकै गिरै है जहां कछुभी आश्रय नहीं है वा नरकमें चारसो कोस ऊंचे पर्वतके मूडपैसो उलटो शिर कर नीचेको पटकै हैं या नरकमें पत्थरकी बनी पृथ्वी जलसी दीखै है याहीसो या नरकको नाम अवीचि है यहां गिरवैसो शरीरके तिलकी समान खंड हैजायहैं मरै तोउ नहीं है फेर वाको ऊंचो लेजाय है फिर पटक देहै ऐसे असंख्यात वार जीवकूं दुःख दैहै ॥ २८ ॥ जो कोई ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य मद्य पीवै है अथवा जो स्त्री मद्यपान करैहै, व्रतको त्यागैं प्रमादसो जो मद्य पीवै है अथवा जो सोमरस यज्ञके सिवाय और अवस्थामें पीवैं विनको नरकमें लेजायकै छातीपै रखकै अग्नितो तपोभयो लोहो मुखमें प्यावे हैं ॥ २९ ॥ अथवा जो या संसारमें अधम पुरुष गर्व अहंकारसो अपनेको बडो कहै है और जन्म तप विद्या आचार वर्ण आश्रमवारे अपनेसो उच्चवर्णनकी निंदा करैं हैं बडेनको बहुमान नहीं करै हैं, वे मरेके समान है; पीछे मरके क्षारकी कीचवाले नरकमें नीचेकूं शिर कर गिरैहै और अपार यातनाको प्राप्त होयहैं ॥ ३० ॥ जो पुरुष पुरुषके हवनको यज्ञ करै है, जो स्त्री मनुष्यको मांस वा और

---

१ शंका—हम सबने ऐसा कभी नहीं सुना कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, श्वान, गर्दभ आदि लेकर और जो पशु हैं, उनके पति होते हैं शुकदेवजीने ऐसे वचन क्यों कहे ?

उत्तर—श्वानका पति होना तो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यके लिये प्रगटही है, क्यों कि उस श्वानको तीन वर्ण पालते हैं, और गर्दभका पति होना तीनों वर्णोंको नहीं चाहिये किसी किसी देशमें बकरेकोभी गर्दभ कहते हैं, और बकरेका पालना ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यका चारों युगमें चला आया है, कोई यज्ञके लिये, कोई जीवकी दया मानके, इन आदि कारणोंसे बकरेको पालते थे; इसलिये व्यासनन्दन श्रीशुकदेवजीने तीनों वर्णोंके श्वान गर्दभका पति कहा, क्योंकि तीन वर्णोंको कुत्ता, बकरा पालना धर्मशास्त्रमें अत्यन्त बुरा लिखा है, परंतु जो प्राणी प्रमादमें उनको पालन करते हैं वह अत्यन्त दुःख भोगते हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कोई पशुको मांस खायहै वे रक्षोगणभोजन नरकमें परै हैं विनको वेही पशु यमलोकमें मारके पीडा देय हैं, वे राक्षसनके गण कसाईकी नाईं अपनी छुरीसो काटकै वा जीवके रुधिरको पीवेहैं, नाचै हैं, गावै हैं, प्रसन्न होय हैं जैसे राक्षस तैसे वे हैं ॥ ३१ ॥ जो लोग निरपराध बनके ग्रामके जीवनकी इच्छा करवेवारे जीवमात्रको विश्वासके उपायनसो विश्वास कराय शूलसो छेदै हैं, पोवै है खेल समझके किसी जीवकूं पीडा देय हैं, विनके मरेपै यमकी यातनानमें यमके दूत शूलादिमें विनको पोवेहै भूखे प्यासे मरेहै कौआ बटेर इत्यादिकनसो इतउत पैनी चौंचनसो मरेभये अपने पापको याद करै हैं ॥ ३२ ॥ जो तीक्ष्ण स्वभाववारे मनुष्य सर्पकी समान जीवनको दुःख देय हैं डरावेहैं वे मरकै दंदशूकनामक नरकमें पडे हैं, हे राजन् ! जहां सर्प पंचमुख सप्तमुखके आयकै या जीवको खाय हैं जैसे मूसानको सर्प खाय ऐसे भक्षण करजायहै ॥ ३३ ॥ जो लोग अंधावटमें कुशूलनमें गुफामें जीवनको रोकै हैं, तैसे वेहू अवटनिरोधन नरकमें पडकै विषैली अग्निके धूमसो रोके जाय हैं ॥ ३४ ॥ जो कोई अतिथि अभ्यागतनको गृहस्थी वारंवार क्रोधदृष्टिसो मानो खायजायगे ऐसे देखै है, नरकमें पापदृष्टिसो वज्रकेसे तुण्डवारे गीध कंक कौवा बटेर इत्यादिक उनके नेत्रनको बलसो उखाडै हैं ॥ ३५ ॥ जो लोग महागर्वी अहंकारी तिर्छी दृष्टिवारे सबसे अनेकशंका रखवेवारे, धनके व्यय और नाशकी चिंतासो जिनको हृदय और मुख सूख रह्यो है ऐसे मनुष्य शांतिको नहीं पायकै यक्षनकी सदृश धनरक्षा करै हैं वे मरकै महादुःखदायक सूचीमुखनरकमें गिरैं हैं, जहां धन ग्रहण करवेवारे पापी पुरुषके धर्मराजके दूत दर्जी जैसे कपडाको सीवै है तैसे सूत्र लेकै सब अंगमें पोवैं हैं और कहै है कि रे दुष्ट ! तेने बडे थैलीनके मोडे सीके धरे है कभू इक पईसा नहीं दियो ताको ये फल है ॥ ३६ ॥ हे पृथ्वीपते ! ऐसे सैंकडो हजारों नरक यमके स्थानमें हैं, विन सबमें जो हमने कहे है जो नहीं कहे हैं वे सब अधर्मकारी जाय हैं तैसेई धर्मात्मालोग स्वर्गादिमें जाय हैं परन्तु जिन पुरुषनके भोगद्वारा धर्म अधर्मको अन्त होय है वह फिर जन्म ग्रहण करवेको मनुष्यलोकमें आयकै प्रवेश करै हैं ॥ ३७ ॥ जो निवृत्तिलक्षणमार्ग है सो आपसो आगेही द्वितीयस्कन्धमें कहि आए हैं, ये ब्रह्मांड इतनो है जो पुराणोंमें चौदह प्रकारके कल्पना कियो है सो हमने वर्णन कियो यही महापुरुष भगवान् वासुदेवकी मायाके गुणनको स्थूलरूप है याको आदरसो सुनै सुनावै श्रद्धा भक्तिसो विनकी बुद्धि शुद्ध है जाय है और वह भगवान् परमात्माके गूढ उपनिषदसम्बन्धी विषयको जान जाँय हैं ॥ ३८ ॥ भगवान्को स्थूल सूक्ष्म रूप जैसो है तैसो यति सुनकै प्रथम स्थूल रूपमें मन लावै फिर वासो धीरे धीरे सूक्ष्मरूपको बुद्धिसों प्राप्त होयगो ॥ ३९ ॥ हे नृप ! भूमी, द्वीप, खंड, नदी, पर्वत, आकाश, समुद्र, पाताल, दिशा, नरक नक्षत्रनको गण, इत्यादि लोककी रचना जैसे भई है वह सब हमनै तुमसों वर्णन कीनी यह सम्पूर्ण लोकरचना भगवान्को स्थूल रूप है, जो सब जीवसमूहनको आश्रय हैं ॥४०॥ "परन्तु श्रीहरिगुण गावनवारेनको सब पदार्थ प्राप्त होय हैं" ॥

---

१ याके ऊपर एक पद है ॥ देख कचेहेरी अंधे बेहेरी हरिगुण क्यों नहीं गाते हैं ॥ टेर ॥ नजर बचाकर परधन छीनत सोइ सोइ चार कहाते हैं ॥ करज कर कुतवाली पहुँच वेत पीठपर खाते हैं ॥ १ ॥ ऐलेही जानो धर्मराजको दूत पकर ले जाते हैं ॥ जो जो कर्म करै छिपछिपकर सो सो फल वहां पाते हैं ॥ २ ॥ सबमें कटुक वचन यहां बोले शीशे गर्म पिलाते हैं ॥ झूठ गवाइयां दी बहुतेरी गोला लाल लगिटाते हैं ॥ ३ ॥ झूठे सांच होनको मूरख गंगाजली उठाते हैं ॥ तात तेल तुरतके औटे उनसे वहीं न्हवाते हैं ॥ ४ ॥ झूठे कागज लिखकै नामा परघर तुरत छिनाते हैं ॥ दीन दरिद्री कोडी अंधे घर घर धक्के खाते हैं ॥ ५ ॥ जहर खवावै मार बहावै सो यहां फांसी पाते हैं ॥ जाल करै पर माल हरै सो सडक खोद घर आते हैं ॥६॥ कर बदमन्सी शोदे बनकर हाकमसे इठलाते हैं ॥ गध बल बन भूख मरे नित जंगलमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भूद्वीपवर्षसरिदद्रिनभःसमुद्रपातालदिङ्नरकभागणलोकसंस्था ॥
गीता मया तव नृपाद्भुतमीश्वरस्य स्थूलं वपुः सकलजीवनिकायधाम॥४०॥
इति श्रीवृन्दावननिवासिसुप्रसिद्धविद्वद्वरगौडब्राह्मणश्रीनारायणशास्त्रिविरचितायां श्रीमद्भागवतस्य पदार्थमुक्तावलीटीकायां अष्टाविंशतिनरकानुवर्णनं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥
पञ्चमः स्कन्धः समाप्तः ॥ ५ ॥

दोहा–प्रतिपद अक्षर ध्यान दे, शोध्यो भली प्रकार । भूल चूल भ्रम दूर कर, निजमतिके अनुसार ॥
देखहिं सज्जन कृपाकर, भक्ति करैं भगवान । सोई ज्वालाप्रसादके, कृष्णचंद्र सुखदान ॥ १ ॥

लठ लाते हैं ॥ ७ ॥ मतकर सेवी करलेनेकी सज हाकमको भाते हैं ॥ झूठ कपट छल छिद्र बुराइया ये सबही उतपाते हैं ॥ ८ ॥ शिरपर धरत हुकम हाकमको हक्क अपनो लेखाते हैं ॥ हरदम हाजर नेकी करते वे फिर माफी पाते हैं ॥ ९ ॥ हक्क औरको छीन लेत हैं परधन ठगठग लाते हैं ॥ उनके घरके बाग बगीचे आंम औरही खाते हैं ॥ १० ॥ जोइ जोइ बागी भए हाकमके सोई खतरे खाते हैं ॥ बहुत माल घर बार खजाना खैर खाह सब पाते हैं ॥ ११ ॥ सबके शिरपर चढत रातदिन वेदपुराण हटाते हैं ॥ वे चिडिया मुरगे बकरे बन अपनो शीश कटाते हैं ॥ १२ ॥ पुरुषोत्तमकी कही निसानी सुन चितमें कोई लाते हैं ॥ ब्रह्मानंद पाय सुखपूरण जन्ममरण मिटजाते हैं ॥ १३ ॥

दोहा–जो चाहो निस्तार निज, तौ भजिये ब्रजचंद ॥ निकट न फिर यमयातना, दूर सकल दुखदंद ॥
विष्णुरात शुकदेवको, यह अद्भुत संवाद ॥ चारों पदारथ देत है, लो ज्वालाप्रसाद ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

षष्ठस्कंधप्रारम्भः।

अध्याय १.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

राजोवाच–निवृत्तिमार्गः कथित आदौ भगवता यथा ॥
क्रमयोगोपलब्धेन ब्रह्मणा यदसंसृतिः ॥ १ ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ षष्ठस्कंधस्य पदार्थमुक्तावली टीका लिख्यते ॥ पुण्यरूप वनमैं श्रीलक्ष्मी नृसिंहजीको नामरूप सिंह विराजे है, जिनके नाम उच्चारणसो महापापरूप हाथी भाग जाय हैं या षष्ठस्कंधकी उन्नीस अध्याय हैं ॥ यामैं पोषण लक्षण वर्णन है ॥ और सब मर्यादा उल्लंघन करवेवारे भक्तकी यामैं रक्षा है ॥ मनुष्यनमें महापापी अजामेलकी कथा है ॥ पुत्रके स्नेहके संकेतसों भगवान्को नाम लीनो यासों उद्धार भयो, तहां या स्कंधमें तीन अध्यायमें अजामेलकी कथा है ॥ छै अध्यायमें विश्वरूपकी कथा है ॥ आठ अध्यायमैं वृत्रासुरकी कथा है ॥ दो अध्यायमें मरुतनकी कथा है ॥ महानरकनके भयानक दुःख देख नरक दूर होवेको सुगम और सबको करवे योग्य उपाय राजाने पूछो है ॥ नरकभयसे डरे भये राजाके नेत्र देख शुकाचार्य अजामेलके उपाख्यानके मिसकरके नाममाहात्म्य वर्णन करते भये ॥ श्रीराजा परीक्षित पूछै हैं कि पहिले आपने यथावत् निवृत्तिमार्ग कह्यो जाके क्रमसों अर्चिरादि लोककी प्राप्ति होके फिर वासों ब्रह्मलोककी प्राप्ति होय है और वासों ब्रह्माजीके संग मुक्ति है जाय है ॥ १ ॥ हे मुने ! नहीं लीन भई है प्रकृति जाकी ऐसे पुरुषके लिये स्वर्गादि सुख है विषय नाम प्राप्य जाको भोगनेके लिये देहारंभरूप जो प्रवृत्तिमार्ग है सोहू आपने मेरे अगारी कह्यो ॥ २ ॥ अधर्म करवेके लक्षणसो नानाप्रकारके नरक होय हैं ये वर्णन करो और मन्वंतरनको चरित्र वर्णन कियो जिनमें स्वयंभू मनु प्रथम भये ॥ ३ ॥ प्रियव्रत उत्तानपादको वंश, विनके चरित्र, द्वीप, खंड, समुद्र, पर्वत आदि नदी बाग वनस्पतिकी स्थिति आपने कही ॥ ४ ॥ धरामंडलकी स्थिति भाग लक्षण प्रमाण, ज्योतिषको चक्र, भूमीके विवर, जैसे परमेश्वरने रचे हैं सो आपने कहेहैं ॥ ५ ॥ हे महाभाग ! अब ये जीव जैसें नरककी नानाप्रकारकी उग्र यातनाको नहीं प्राप्त होय सा आप मोसे कहिवेकूं योग्य हो ॥६॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि मनुष्य मन वाणी शरीर करके करभये पापको मनु आदिको कह्यो भयो प्रायश्चित्त नहीं करैं है, तो ये निश्चय है कि वो मनुष्य मरके नरककूं प्राप्त होय है, जिन नरकनमें महा तीक्ष्ण पीडा है, सो हमने आपसो कही है ॥ ७ ॥ तातें विपत्ति जबतक न आवै मृत्यु न होय तबतक सावधान मन करके शीघ्र पापनको प्रायश्चित्त करवेमें यत्न करै छोटे मोटे पापको दोष देख वाके अनुसार प्रायश्चित्त करै, जैसे रोग-

दोहा–व्रजवासिनको प्राण धन, माथे मुकुट विशाल । रत्ननकी माला हिये, हिये बसहु नँदलाल ॥ १ ॥ अर्थ धर्म और काम सुख, मुक्तिहु चाहत नाहिं । यह मूरति मनमोहिनी, नित्त बसे हियमाहिं ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नकी चिकित्सा जानवेवारो वैद्यराज जैसो रोग होय है तैसी औषधी देय है, तैसे जैसो पाप करै तैसो प्रायश्चित्त करै ॥ ८ ॥ राजा परीक्षित् बोले कि पाप करवेसो राजा दंड देय है यह देखो है पाप करनवारे नरकमें जाय हैं यह शास्त्रनसो सुनो है यासो जानो जाय है कि पाप अवश्यही अनिष्टकारी है फिर क्यों जान बूझके प्रायश्चित्त करवेके उपरान्त पुरुष विवश हैके पाप करै हैं तो द्वादश वर्षके व्रत कैसे प्रायश्चित्त मानै जाय, कारण कि इनसो समूल दोष निवृत्त नहीं होय है ॥ ९ ॥ कभू प्रायश्चित्त कर अभद्रसो निवृत्त होय है, कभू फेर वाको करै है, फेर प्रायश्चित्त तो ऐसे हैं जैसे हाथीकों महावतने न्हवायो और वाने फेर सूंडसो धूर ऊपर डारलीनी तौ जैसे वाको न्हवायवो व्यर्थ है ऐसेंही जब याने प्रायश्चित्तहू कियो फिर वोहीका प्रायश्चित्त व्यर्थ हैं यह मैं जानै हूं ॥ १० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि प्रायश्चित्त रूप कर्मको नाश होनो ये बात कछु आत्यंतिक नहीं हैं अर्थात् प्रायश्चित्त कर्म करवेसो पाप कर्मनको समूल नाश नहीं होय है क्योंकि अधिकारी विद्वान् नहीं हैं, यातें यासो ये कर्म पाप है बुरो है याके करवेसो बुरी गति होयहै यासो ये कभू न करनो या विचारको जो होनो है वोही प्रायश्चित्त है ॥ ११ ॥ हे राजन् ! जैसे पथ्य अन्न खायवेवारेकों व्याधि नहीं होय हैं ऐसेही सदा नियम करनहारेनकों धीरे २ क्षेमकी प्राप्ति है जाय है ॥ १२ ॥ तपसा "मनसश्चेंद्रियाणां च ऐकाग्र्यं परमं तपः" अष्टांग योगमें ये कहा है "स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् ॥ संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृतिरेव च ॥ एतन्मैथुनमष्टांगं प्रवदंति मनीषिणः ॥ विपरीतं ब्रह्मचर्यमेतदेवाष्टलक्षणमिति ॥" शम दम दान अहिंसा त्याग सत्य शौच यम नियम ॥ १३ ॥ इन सबसों देह वाणी बुद्धिसों करे पापको धर्मज्ञ धीर पुरुष श्रद्धायुक्त है वे महापापकोभी नाश करै हैं, जैसे तनकसी आंच वांसनके समूहनको नाश कर देय है ॥ १४ ॥ कोई वासुदेवमें परायण जन केवल भक्तिसों सब पाप शांत करै हैं, जैसे सूर्य कुहराके अंधकारको दूर करै है ॥ १५ ॥ हे राजन् ! पापकारी तप आदि करवेसो तैसो नहीं पवित्र होय है, जैसो श्रीकृष्णसों मन लगायवेसो, और विनके भक्तनकी सेवासों पवित्र होय है ॥ १६ ॥ यह भक्तिमार्गसोहू अधिक श्रेष्ठ है यह भक्तिमार्गही परम उत्तम है परम कल्याणदायक है मार्गमें विघ्नादि नहीं होय है सुशील दयालु निष्काम और नारायण परायण साधु मार्गमें नित्य वर्तमान है ॥ १७ ॥ हे राजन् ! जे श्रीमन्नारायणसों विमुख हैं उनको कोई प्रायश्चित्त पवित्र नहीं करसकै है जैसे मदिराके घटको कोई नदी पवित्र नहीं करसकै ॥ १८ ॥ या संसारमें श्रीभगवत्के गुणानुरागकरकै एकवारहू श्रीकृष्णके चरणकमलमें जिनने मन लगायो है वे यमराजाकूं और यमराजाके दूतनको जो हाथमें फाँसी लिये रहै हैं विने स्वप्नमेंहू नहीं देखै है वे सब पापके प्रायश्चित कर चुकै हैं ॥ १९ ॥ इस विषयमें एक पुरातन इतिहास तुमको कहै हैं श्रीविष्णुके पार्षदनको और यमके दूतनको संवाद है सो मोसों तुम सुनो ॥ २० ॥ कान्यकुब्ज देशमें एक ब्राह्मण दासीरति सब आचार नष्ट कर, दासीके संगसो महादूषित अजामिल नामक भयो (अजायां मायायां मेलनं यस्य अजामेलः) ॥ २१ ॥ यह ब्राह्मण बंधुकानको पकडै जूआ खेलै, ठगाई चोरी करै, निंदित वृत्ति करकै जीवे, अपवित्र रहे, कुटुंब पोषै सब जीवमात्रको पीडा देतो भयो सदा दासीमें आसक्त रहै ॥ २२ ॥ एक दिन अजामिल तो वनको

---

१ मतलब यह है कि जो प्रायश्चित्त करनवारो अधिकारी विद्वान् होय तब तो वाको वो प्रायश्चित्त है सकै है क्योंकि वो जानेगो ये पाप है तौ फिर वो पाप न करेगो और जो अधिकारी अज्ञानी भयो तो वो अज्ञानके बने रहिवेसों वा पाप संस्कारके बने रहिवेसों अनधिकारिकोटीके हैवेसों वो फिर वाही पापको करेगो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जीव मारवेकों गयो पीछे वैष्णव आए शहरमें पूछन लगे यहां कोई सदावर्त है ? कोई हँसीसे बोले अजामेलके यहां जाओ, वे वैष्णव आए, स्त्रीसों पूछी सदावर्त है, वा स्त्रीनै विनको बडो स्वागत कियो और चलते समय विन महात्मानसो बोली कि हम पापिनके उद्धारकीहू कुछ विधि है जो होय सो कृपाकर कहो साधु वासों गर्भवती देख बोले अब जो तेरे पुत्र होय तू वाको नाम नारायण धरियो याहीसो तुम दोनों तरोगे यह कह साधु चले गये काल पायके वाके सुत भयो नारायण नाम धर्‌यो, दिनरात नारायण नारायण चलते फिरते बैठते खाते पीते स्नेहसो पुकारै याहीसो भगवान् प्रसन्न भए, ये कथा और ठौर लिखी है ॥" हे राजन् ! ऐसे निवास करते भए पुत्रनकी लालना करते, बहुत काल व्यतीत भयो, अठासीवर्ष व्यतीत है गए ॥ २३ ॥ ताके वृद्धावस्थातक दश पुत्र भए तिनमें जो छोटो बालक हो सो पिताको बहुतही प्यारो हो वाको नारायण नाम हो ॥ २४ ॥ मधुर बोलवेवारे बालकमें मन लगायो स्नेहसो वाकी लीलाको देख आनन्दित होतो भयो ॥ २५ ॥ भोजन करते, जल पीती वखत, फलादि खाते समय बालकके स्नेहसो वशीभूत भोजन करते प्यावते लाड लडावते वह मूढ कालको पास आयो न जानतो भयो ॥ २६ ॥ ऐसै वो अज्ञानी रहितो हो सो मृत्युको आय कर प्राप्तभयो, तब नारायण नामक बालक पुत्रमें बुद्धि करतो भयो ॥ २७ ॥ फाँसी हाथमें लिये महाभयानक टेढे मुखवारे ऊपरको वार खडे अपनेको लेवेकों आए तीन यमके दूत भूतसे देख बोलो ॥ २८ ॥ दूर खेलमें लगोभयो नारायण नामक पुत्रको महा ऊंचे स्वरसो व्याकुल इंद्रिय हो पुकारतो भयो हे नारायण ! जल्दी आओ मेरी रक्षा करो ॥ २९ ॥ मरती समय श्रीमन्नारायण हरिको कीर्तन करवेको नाम सुनकै भगवतपार्षदनने जानी कि हमारे श्रीमन्नारायणको पुकारै है तब पार्षद शीघ्र आए ॥ ३० ॥ अजामेलकी आत्माको भीतर हृदयसों खैंचते भए यमदूतनको भगवत्पार्षद बलसों रोकते भये ॥ ३१ ॥ तब वे यमके दूत पार्षदनसों बोले कि धर्मराजकी आज्ञाको मने करवेवारे आप कौन हैं ॥ ३२ ॥ तुम कौनके हो कहासों आए हो, याके ले जायवेसो क्यों निषेध करोहो, कि देव हो कि उपदेव हो अथवा आप सिद्धनमेंसो कोई अतिश्रेष्ठ हो ॥ ३३ ॥ सब कमलनेत्र हो पीतांबर धारेहो किरीटी कुंडल धारे कमलमाला पहिरेहो ॥ ३४ ॥ सब नवीन अवस्थावारे, सब चार भुजावारे, धनुष तर्कस गदा शंख चक्र कमलकी शोभासो शोभित हो ॥ ३५ ॥ अपनी कांति करकै सब लोककी दिशाको अंधकार दूर करते धर्मराजके चाकरनको क्यों निषेध करो हो ॥ ३६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि यमदूतनने पार्षदनसो जब ऐसे कहीं तब ये सुन मेघवत् गंभीरवाणीसों भगवत्पार्षद यमके दूतनसो बोले ॥ ३७ ॥ श्रीविष्णुके पार्षद बोले कि जो तुम धर्मराजकी आज्ञाके करवेवारे हो तो धर्मको तत्व और अधर्मको लक्षण कहो ॥ ३८ ॥ दंड प्राणिनको कैसे दियो जायहै दंडनको वांछित विषय कहा है दंडनीयलोगनके कैसे कर्म है कारण कि मनुष्यही कर्म करै है पशु आदि नहीं करैहै फिर कर्म करनवारेनमें कोनको दंड मिलै है[1] ॥ ३९ ॥ यमदूत बोले कि वेदमें जो कह्यो है वो तो धर्म है और वेदविरुद्ध है वो अधर्म है वेद साक्षान्नारायणस्वरूप है आप भयो है याते स्वयंभू है ॥ ४० ॥ जिन ईश्वरकरकै अपने धाममें राजस तामस सात्विक भाव गुण नाम क्रियारूपसों जैसेके तैसे प्रकाश करैहैं ॥ ४१ ॥ सूर्य अग्नि आकाश पवन देवता चंद्रमा संध्या दिनरात दिशा उदय पृथ्वी काल धर्म ये सब १२ जीव करै है वाको साक्षी हैं ॥ ४२ ॥ इन सबनसो जो कोई धर्म करै है वो जानो जाय है स्थानहू दंडको

[1] प्रश्नार्थ यह है कि जितने कर्म करनवारे हैं वे सबही दंडनीय है या कोउ दंडनीय हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मालूम पडजायहै, पाप पुण्यके करवेवारे जीव स्वकर्मके अनुसार दंडके योग्य होयहैं ॥ ४३ ॥ हे पुण्यरूप ! पाप पुण्य सर्वदा होते रहै है कभू विपरीतहू है जाय हैं पुण्यपापके करवेवारेनको गुणनको संग है, देहधारी हैं वो सदा कर्म करै है कर्म करे विना तो शरीर नहीं बनै है देहवारो ऐसो कोउ नहीं है जो कर्म न करतो होय ॥ ४४ ॥ जा करके जितनो जैसो अधर्म धर्म वेदमें कह्यो है तितनोही या लोकमें और वा लोकमें तैसो वाके फलकू भोगैगो ॥४५॥ जैसे यहां है देवतानमें श्रेष्ठहो तीन प्रकारके कर्म मालूम परै है, तैसेई सब जीवमात्रमें गुणनकी विचित्रता हैवैसो और जन्मजन्मान्तरमेंहू अनुमान करेजाय हैं ॥ ४६ ॥ जैसे वर्तमान वसन्तादि काल जैसे अतीत अनागत वसन्तादि कालके सम्पूर्ण गुणनके जतायवेवारो होय है वैसेही विद्यमान जन्महू भूत भविष्य जन्मके धर्माधर्मको बतलायवेवारो होय है ॥ ४७ ॥ श्रीयमधर्मराज रूपधारी श्रीमन्नारायण देव यमपुरीमें बैठे भए मन करके इन जीव मात्रके धर्म अधर्मको पूर्वरूप देखे हैं मनसो अजन्मा भगवान् सब अपूर्व बात या जीवकी अनुमानसे जानेहै ॥४८॥ जन्म लेवेसो नष्ट भई स्मृति जाकी ऐसो अज्ञ ये जीव जो प्रत्यक्ष है वाही देहको उपासन करै है कि में फलानो हौं किंतु अपने भूतभविष्य देहको नहीं जानै है जैसे नींदके वश भयो जीव स्वप्नगतकोही जाने है और जागृदादिको नहीं जाने है ॥ ४९ ॥ पंच ज्ञानेंद्री पंचकर्मेंद्री पंचतन्मात्रा सोलहवो मन इन करके सहित एकवो सत्रवों जीव तीन जे ज्ञानेन्द्रिय कर्मेन्द्रिय और मनके जे विषय है तिने प्राप्त होय है कर्मेन्द्रियनसों कर्म करतो और ज्ञानेन्द्रियनसों विषयनको जानै है ॥ ५० ॥ सो ये सोलै कलाको लिंग तीन शक्तिसों युक्त हैके हर्ष शोक भय पीडाके देवेवारी संसृतिको पुरुषमें धारै है ॥ ५१ ॥ देही अज्ञानी है, काम क्रोध लोभ मोह मद ईर्षा ये अथवा मनसहित ज्ञानेन्द्रिय छैवर्ग नहीं जीतेहै ऐसो ये जो यह चाहे कि कछु न करो तोहू ये अपनी विना इच्छा कर्म करायो जायहै, जैसे रेशमको कीडा आप रेशमकी कुप्पी लपेटलपेट निकसवेको उपाय नहीं राख मरै है तैसे ये जीव कर्म करते २ मरै है ईश्वरके आराधन रूप समझ धर्म करेसो मोक्ष है, अपने सुखके अर्थ करेसे जन्मै मरे हैं ॥ ५२ ॥ कभूहू कोई जीव क्षण मात्र विना कछु कर्म करै नहीं रहै है बेवश हैके स्वाभाविक गुणकरके बलसों कर्म करनोही परै है ॥ ५३ ॥ भाग्यको निमित्त मानके वाके अनुसार सूक्ष्म अथवा स्थूल देह प्राप्त हैके जैसी माकी योनी होय जैसो पिताको वीर्य होय तैसो देह या बलवान् स्वभावसो याको प्राप्त होयहै ॥ ५४ ॥ ये प्रकृतिके संगसो पुरुषको उलटो पलटो भाव अर्थात् देहमें आत्माध्यास होय है, वोही भाव ईश्वरमें याको होय तो माया विलाय जाय है ॥५५॥ ये अजामेल सब सुनवेमें संपन्न हो शील वृत्तांत सब गुणको घर व्रतधारी कोमल जितेंद्री सत्यवादी मंत्रवेत्ता पवित्र हो ॥ ५६ ॥ गुरु अग्नि वृद्धको सेवक, अहंकारहीन सब जीवमात्रको सुहृद साधु, थोडो बोलनेवालो, काऊकी निंदा न करै, ऐसो ये पहिले होतो भयो ॥ ५७ ॥ एक समय पिताको आज्ञासो ये ब्राह्मण वनकूं गयो, वहांसो फल पुष्प समिधा कुश लेके आवतोहो ॥ ५८॥ किसी कामी शूद्रको मीठी मांदरा पिये मदसो घूर्णित नेत्र किये दासीके संगमें रमण करतो देखतो भयो ॥ ५९ ॥ वाके लहंगाकी नीवी खसी जातीहो मतवारी हो वाके संग लाज त्याग क्रीडा करै हो वह शूद्रहू या ब्राह्मणके सन्मुखही दासीके संग हास्य और गान करन लगो ॥ ६० ॥ कामासक्त कामीको भुजासो चिपटी भई वा शूद्रीकूं देख यहहू कामके वश हो एक संग मोहित हैगयो ॥ ६१ ॥ मन बुद्धिसों धैर्य धारण कर शास्त्र अनुसार मनको रोको तोहू कामसो पीडित मनको जीतवेको समर्थ नहीं होतो

१ दोहा ॥ " वो दुख को दुख देत है, देत कर्म झकझोर ॥ उरझत सुरझत आपही, ध्वजा पवनके जोर ॥ "

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ ६२ ॥ वा शूद्रीके निमित्तसो कामरूप महाग्रहके बहानेसो ग्रसो भयो चंचल चित्त हो वा शूद्रीको मनसो ध्यान करतो अपने धर्मको त्याग करतो भयो ॥ ६३ ॥ जितनो पिताको धन हो तासो वाकूं प्रसन्न करतोभयो, जितने मनके आनंददायक काम है तिनसो जैसे वो प्रसन्न होय सो करै ॥ ६४ ॥ महाकुलकी अपनी ब्राह्मणी तरुण स्त्रीको यह पापी त्यागतो भयो, वा वेश्याके कटाक्षनसों विधत भयो ॥ ६५ ॥ न्यायसो अन्यायसो जहां तहांसो धन लाय या वेश्या कुटुंबिनीके कुटुंबकू मंदबुद्धिवारो पोषण करतोभयो ॥ ६६ ॥ जो ये शास्त्रको उल्लंघन कर अपने मनकी इच्छासो बडेनके धर्मसो निंदित हैगयो पापरूप आयुको अपवित्र मलसो काल व्यतीत करतो भयो ॥ ६७ ॥ ताते याको दंडपाणि यमराजके पास लेजांयगे याने बडे पाप करै हैं विन पापनको प्रायश्चित्त नहीं करो अब यह यमराजसो दंड पाकै शुद्ध होयगो ॥ ६८ ॥

अत एनं दण्डपाणेः सकाशं कृतकिल्बिषम् ॥
नेष्यामोऽकृतनिर्वेशं यत्र दण्डेन शुध्यति ॥ ६८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे अजामिलोपाख्यानवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच–एवं ते भगवद्दूता यमदूताभिभाषितम् ॥
उपधार्याथ ताब्राजन्प्रत्याहुर्नयकोविदाः ॥ १ ॥

श्रीशुकाचार्य बोले कि हे राजन् ! ऐसे वे न्यायमार्गमें महाविद्वान् भगवत्पार्षद यमदूतनकी वाणी सुनकरकै बोले ॥ १ ॥ श्रीविष्णुके पार्षद बोले कि कष्टकी बात है कि धर्म दृष्टिवारेकी सभामें अधर्म स्पर्श होय रह्यो है क्योंकि जहां जो पापी दंडके योग्य नहीं वाके वृथा दंड देयहै ॥ २ ॥ प्रजाके पिता शिक्षा करवेवारे साधु समान भाववारेनमें जो विषम भाव होय तो कहो प्रजा कौनकी शरण जाय ॥ ३ ॥ जो बात श्रेष्ठ लोग आचरण करै हैं, वोही बातको और इतर जनहू वैसेई करै हैं, वे वाको प्रमाण करे है, लोक सब विन्हींके अनुसार वर्तै हैं ॥ ४ ॥ जाके गोदमें शिर धरके लोग निडर होयके सोवै हैं; आप धर्मअधर्म पशुकी समान नहीं जानेहै तो निश्चय विश्वासघातकताको दोष लगैगो ॥ ५ ॥ जाते अपनो आत्मा विश्वाससों अर्पण कर दियो है और मित्रता सबसों कर रक्खी है जो अचेत है वाको जगत्के विश्वास योग्य और दयालु पुरुषको कहा द्रोह करनो उचित है ॥ ६ ॥ कोटानकोट जन्मके पापको याने प्रायश्चित्त कीनो है, जो विवश हैके मंगलनायक श्रीहरिको नाम उच्चारण करतो भयो ॥ ७ ॥ या पापकारीके पापको इतनेहीमें प्रायश्चित्त है गयो जब

---

१ शंका–अजामिल बडा पंण्डित था और ज्ञानीभी था, गुरुकी, महात्माओंकी, अग्निकी सेवा करनेवालाभी था ऐसा अजामिल शूद्रीके देखतेही क्षण अपने धर्म कर्मसे भ्रष्ट होगया ? यह बडे आश्चर्यकी बात है क्यों कि कोई मूर्खभी भ्रष्ट होता है तोभी एक क्षणमात्रमें नहीं होता यह इतना चतुर होकर एक क्षणमात्रमें भ्रष्ट हुवा ॥

उत्तर–गंगाकी बीच धारोंमें पराशर मुनि कामकी पीडासे महा दुःखी होगये, तब भीलकी कन्याके संग रमण किया उन पराशर मुनिको देखकर अजामिल बहुत हँसा अजामिल हँसता देखकर पराशरजीने शाप दिया कि हे दुष्ट ! हमारी नाईं तूभी किसी समय शूद्रीको देखकर कामसे व्याकुल होकर ब्रह्मकर्मसे भ्रष्ट होजायगा हम तो एक वार भ्रष्ट होकर अपने शरीरको शुद्ध कर लेवेंगे, परन्तु तू किसी प्रकारभी ब्राह्मण न रहैगा एक क्षणमात्रमें चाण्डाल होजायगा, इस शापके कारण अजामिल एक क्षणमात्रमें भ्रष्ट होगया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नारायण ये चार अक्षर कहे तब सबको प्रायश्चित्त है गयो ॥ "हे नारायण ! आय हे नारायण ! आओ ऐसे व्याकरणमें व्युत्पत्ति होयहैं ॥"॥ श्लोक ॥ "सकृदुच्चरितं येन हरिरित्यक्षरद्वयम् ॥ बद्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति॥ १ ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ॥ न्यूनं संपूर्णतां याति सद्यो वंदे तमच्युतम् ॥ २॥ नाम्नोऽस्य यावती शक्तिः पापनिर्हरणाय वै ॥ तावत्कर्तुं न शक्नोति पातकं पातकी जनः ॥ ३ ॥" भगवन्नामसो सब प्रायश्चित्त है जाय हैं सबसों बडो होय है, तप यज्ञ सब क्रिया विनके नामसों संपूर्ण होय है ॥ ८॥ चोर, मद्य पीवेवारो, मित्रद्रोही, विप्रको मारवेवारो ब्रह्मद्रोही, वेदद्रोही, ईश्वरनिंदक, गुरुकी शय्यापर सोवनेवारो स्त्री राजा पिता गौको मारवेवारो और जितने पातकी हैं[2] ॥ ९ ॥ सब पानको यही प्रायश्चित्त है कि श्रीविष्णुको नाम उच्चारण करनो, भगवान्में सदा बुद्धि रहै, अथवा भगवद्विषयमें मति[3] होयहै॥ १० ॥ ब्रह्मवादिनने कह्यो है कि पापी व्रत आदि प्रायश्चित्त करकै तैसो शुद्ध नहीं होयहै जैसो श्रीहरिके नामपद उच्चारणसो शुद्ध होयहै विन श्रीउत्तमश्लोकके गुणनको जो एक कथन मात्र है सोही उत्तम यशवारे भगवान्के गुणनको उपलंभक नाम ज्ञापक जतामनवारो होय है॥११॥ वो प्रायश्चित्त अत्यंत शोधक नहीं गिननो चाहिये जो प्रायश्चित्त करे पीछेहू यदि खोटे मार्गमें मन फेर दौडजाय, पापनके अत्यंत नाशकी इच्छा करवेवारेको श्रीहरिके गुणानुवाद निश्चय करकै जीवमात्रकी शुद्धि करवेवारे है क्यों कि जो ये गुणानुवादही सब प्राणीमात्रके अतःकरणकी शुद्धि करनवारो है॥ १२ ॥ याते सब पापको प्रायश्चित्त याने कीनो है यासो याको मत लेजाओ, जो ये मरतीविरिया भगवन्नाम लेतो भयो॥१३॥पुत्रादि लालनके संकेतसो हांसीमें गीतालाप पूरे करवेके अर्थ वैकुंठभगवान्को नाम सब पापको हरवेवारो जाननों[4] ॥ १४ ॥ गिरते,

---

१ नामका प्रताप ऐसा है एक लालाके यहां व्याह भयो; उनकी काहू वेश्यासे प्रीति ही, जब सब बिरादरीको जिमायो तौ एक परोसा वेश्याहूके घर छिपायके ले चले, जब वाके जीनापै चढे तौ पैर फिसलो, कहन लागे 'अरी ले' मुंहसौं निकरी हरी ले, सौ जैसे गिरे कि वोह प्रसाद भगवतने अंगीकार कन्यो, और वे गिरकर मरे तौ वैकुंठमें वा नामके प्रतापसों गये यासे नाम जैसे लियो जाय वैसेही ठीक है ॥

२ एक चार चोर हे वे जंगलमें गये विनने अपने मनमें संकेत कर लियो कि वृन्दावनेश्वर दामोदर लक्ष्मीनारायण हरीहर पहलेई एक जनो कहे कि लक्ष्मीनारायण कहा कि याके पास लक्ष्मी है दूसरो कहे वृन्दावनेश्वर अर्थात् वनमें आवन देउ तब तीसरो कहे कि दामोदर अर्थात् याके कमरमें नौली बंधी है। तब चौथौ कहे हरीहर सोई चारौ अरराय परै और लूट लेंय एक साहूकर आयो सोही देखके एक जनौ पहलेई बोलो कि लक्ष्मीनारायण दूसरौ बोल्यो कि दामोदर तीसरौ बोलौ वृन्दावनेश्वर सोई चौथौ बोलौ हरीहर चारौ तरफसौ अरराय परे लूटन लगे इतनेमेंही एक सवार आय गयो वाने मारों जो एक कडावीन सोई चारौ चोर मरके गिरपडे और विमान आयो वामें चारों बैठके चले सोई या बनियेने विचारी कि रे अब कहा करौ सो बनिया होय चतुर सो झट याने या विमानको पायो पकर लियो पार्षदनने कही कि बनिया तू कहां चले है बनिया बोलो जहां ये चले है तहां मेंहू चलै है इनने नाम लीनो है और मेने सुनो है या बातको न्याउ होउगो पहलेई यमराजके पास गये यमराजने कही कि सुननवारे कहनवारेनको बराबर पुण्य है चलौ फिर ब्रह्मलोकमें गये ब्रह्मानेहू कही बराबर इन्द्र चन्द्र सूर्य जहां २ गये तहां २ सबनने यही कही बराबर आखिर बनियाने जीती और चारौ चोर और पांचवो बनिया भगवन्नामके प्रतापसो पांच जने वैकुंठको गये ॥

३ जा नामोच्चारण करवेसों भगवान्की ये मति होय है कि ये मेरो भक्त है मोकरके रक्षा करवेके लायक है सब तरहसौं ॥

४ एक जातको चंडाल कहीं जंगलमें नदीके किनारे शौचको बैठो इतनेहीमें एक जंगली सूअर आयो वाते पिछारीसो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पग खिसकते, भग्न शरीर, सर्पादि काटेमैं, ज्वरादिसो तप्त, दंडादिसो मारते समयहू श्रीहरि ये नाम विवश होयके लेय तोहू पुरुष सब पीडासो छुटे है ॥ १५ ॥ बडे वा छोटे पापनके प्रायश्चित्त महर्षिनने विचारके पापके अनुसार बडे पापनके बडे प्रायश्चित्त छोटे पापनके छोटे प्रायश्चित्त लिखे हैं ॥ १६ ॥ तिन तप दान जप आदि करवेसो वे सब पाप छूट जाय है परंतु विन पापनको जो सूक्ष्मसंस्कार है सो शुद्ध नहीं होयहै यदि भगवन्नामकीर्तन करै तो विन पापनको संस्कारहू समूल नाश है जाय है ॥ १७ ॥ अनजानमें अथवा जानमें जो उत्तमश्लोकको नाम संकीर्तन करै तो जैसे अग्नि ईंधनको जरावै है तैसैं पुरुषके सब पापकौ नामसंकीर्तन नाश करै है ॥ १८ ॥ जैसे अति पराक्रमवारी औषधीको चाहै तौ अपनी इच्छासों खाई अथवा अनइच्छासो सेवन करो तोहू वो अपनो जो गुण कछु भलो बुरो है वाकू करैहीहै तैसैई मंत्रको जानके जपै वा अनजानके जपै अपनो गुण करैई है तैसैही नाम रूप मंत्रको चाहै जानके लेउ कि ये भगवन्नाम हमारो कल्याण करैगो और चाहै विनजाने लेउ पन वो पापनको नाश करनवारो होय ही है "हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः ॥ अनिच्छन्नपि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः" ॥ १९ ॥ हे भटो ! या धर्ममें जो संदेह होय तो तुम अपने स्वामी यमकूं पूछो, धर्मकी परम छिपी बात भगवान् यम जानैहै ॥ २० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे नृप ! भगवद्धर्मको ऐसे पार्षद निर्णयकर वा विप्रको यमके दूतोंकी फासीसो छुडायकै मृत्युसो बचावतेभए ॥ २१ ॥ हे शत्रुनाशक ! ऐसे कहे भए यमके दूत यमके पास जायके यमराजासों सब वृत्तांत कहिते भए ॥ २२ ॥ वो ब्राह्मण पाशसे छूटो भयो भयरहित हो अपने स्वभावको प्राप्त हो महा आनंदसो शिर झुकाय विष्णुके पार्षदनकी वंदना करतो भयो ॥ २३ ॥ हे अनघ ! वाको कछु कहितो देख भगवत्पार्षद वाके देखते देखते शीघ्र अंतर्धान है गए ॥ २४ ॥ अजामेलहू

आयके वा चंडालकी गांडमें अपनी काय लगाय उठायके मारो कांयके मारै वाको अंग घायल भयो जब वो गिरो तब वाके मुखसों मरती वेर निकसी होय हरामनें मारो गिरते गिरते मरगयो सोही आकाशमेंसो विमान आयो जो वाने कही कि हरामने मारो सो यामें जो राम नाम निकसो वाके मुखसो सोही विमानमें बैठ चलो गयो कछु वाने रामनाम नहीं लियो हो परंतु जो हरामशब्दके एकदेसी रामनामसो सद्गति है गयी तब फिर याने तो साक्षात् नारायणनाम लीनो है ये अजामिल मोक्षाधिकारी क्यों नहीं है ॥ दूसरो दृष्टांत ॥ एक उठाईगीरा वो बाजारमें चलो जातोहो सो वाने एक सराफकी दुकानपे सो एक रुपानकी थैली आख बचाय उठाय लीनी लेके चलो सोई एक सामनेवारे दुकानदारने पुकारके कही कि रे तेरी थैली ये लिये जाय है सोई लिये जाय है २ ऐसे कहते वे दोउ आगे पीछे भागे अगारी उठाईगीरा पिछारी मालिक । वाकी एक रंडी मित्र हौ वाके घरको वो उठाईगीरा भागके गयो दरवजेपै पहुँचै दरवजेके किंवार लगे पाये सोही पुकारो सो ये कहन लगो कि लीजियो री सो घबराहटके मारे मोडेमेंसो निकसी की लीजियो हरी पिछारीसो तरवार लगी मूड कट गयो मरके गिरो सोई हरिनामके प्रतापसो विमानमें बैठ स्वर्गको चलो गयो फिर याकी मुक्ति क्यों न होय ॥

१ ताको ये कवित्त है कि ॥ नामके प्रताप नन्दलाल भये आप प्रभुनामके प्रताप सुत दशरथको कहायो है । नामके प्रताप टेक राखी प्रहलादजूकी नामके प्रताप दौरो द्वारकासे धायो है ॥ नामके प्रताप अजामेलसे उधरो शीघ्र नामके प्रताप सब संत वहिधायो है । सोइ नाम पास अब आय लगो चरणदास सोई नाम चार वेद विमल विमल गायो है ॥

२ शंका—नारायणका नाम मरते समय अजामिलने लिया तो उसका पातक सब नष्ट होगया, अजामिल शुद्ध होगया तब भगवान्के दूतोंसे कुछ बात करनेकी इच्छा अजामिलने की तो दूतोंने विचार किया यह हमसे बोलेगा तो हम सबको पाप लगेगा ऐसा समझकर क्यों चले गये क्यों कि अजामिल तो सब पापसे छूट गयाथा ॥

उत्तर—नारायणके नामको अजामिलने जब लिया तब उसी नामके प्रभावसे यमराजकी त्राससे अजामिल छूटगया, परन्तु सब पापोंसे नहीं छूटा, क्यों कि जो सब पापोंसे छूट गया होता तो भगवान्के दूत अजामिलको वैकुण्ठधामको लेजाते, पृथ्वीपर तपस्या करनेका फिर क्या काम था दूतोंने अपने मनमें विचार किया कि पापीके साथ बात करनेवाले प्राणीको ब्रह्महत्याका पाप लगता है, ऐसा समझकर भगवान्के पार्षद अजामिलको छोडकर चले गये तब अजामिल पापका नाश करनेके लिये तप करवेको गया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यमदूत और भगवत्पार्षदनको धर्म भागवत शुद्ध वेदत्रयीप्रतिपाद्य सब गुणाश्रय सुनतो भयो ॥२५॥ श्रीहरिके माहात्म्य श्रवण करवेसों भगवान्में शीघ्र भक्ति करतो भयो, अपनो पाप याद कर महा पश्चात्ताप करतो भयो ॥ २६ ॥ हाय मैंने बडी बुरी कीनी जो अपनो मन नहीं जीतो, मोको परम कष्ट प्राप्त होतोभयो जो मैंने वा शूद्रीको संग कर वा शूद्रीमें अपनो आपो पैदा करके अपनो ब्रह्मतेज नाश कीनो ॥ २७ ॥ सज्जननने मोको धिक्कार दीनी, दुष्ट कर्म करो मैं कुलमें कज्जलरूप हूं अपनी सती बालाकों त्याग मदिरा पीवेवारी असतीमें गमन करो याते मोको धिक्कार है ॥ २८ ॥ वृद्ध अनाथ तपस्वी और जाको बंधु नहीं ऐसे माता पिताको मैंने कृतघ्नीनै नीचकी नांई त्यागें ॥ २९ ॥ सो मैं निश्चय महादारुण नरकमें पडूंगो जहां धर्मके नाशक कामी यमकी पीडाको भोगैहैं ॥ ३० ॥ कहा ये स्वप्न है, अथवा साक्षात् अद्भुत मैंने पार्षद देखे,वे कहां गए जो फासी हाथमें लिये मोकों खींचें लिये जातेहे ॥ ३१ ॥ और श्रेष्ठ दर्शनवारे चार सिद्ध वे कहां गए, जो पाशसों बांधके मोको भूमीसो नीचे लेजातेहैं विनसो छुडावतेभए ॥३२॥ यद्यपि ऐसी बात है तथापि दुर्भागी मोको उत्तम देवनको दर्शन हैगयो, सो अवश्य कछु न कछु मंगल होनवारो है जासो मेरो आत्मा प्रसन्न होगयो ॥ ३३ ॥ जो कोउ मंगल होनवारो न होतो तो मरती समय अशुद्ध शूद्रीके पति मोको वैकुण्ठ भगवान्को नाम ग्रहण जिह्वासों कहिवेको योग्य नहीं हो ॥ ३४ ॥ कपटी पापी ब्रह्मद्रोही निर्लज्ज मैं कहां, नारायण ये भगतको नाम मोको लेनो कहा हो ॥ ३५ ॥ सो मैं चित्त पवन इंद्रियनको जीत ऐसो यत्न करूंगो जो फिर अन्धतममें आत्माको न गिरनो पडै ॥ ३६ ॥ अविद्या काम कर्मके बन्धको छोडकर सब जीवमात्रमें सुहृद्भाव कर मैत्री दया आत्मज्ञान करूंगो ॥ ३७ ॥ स्त्रीरूपधारिणी मायाकरकै ग्रसित देहको छुडाऊंगो ॥ मैं क्रीडामृगकी नाईं स्त्रीके वशमें पडो रह्यो ॥ ३८ ॥ मेरो है हम है या मिथ्यापदार्थमें जो यह बुद्धिही ताहि त्याग शुद्धमनको तिन नारायणके कीर्तनमें लगाऊंगो ॥ ३९ ॥ ऐसै वाको ज्ञान प्राप्तभयो, साधुनके क्षणमात्रके संगको ये प्रताप है, श्रीगंगाद्वार हरिद्वार पर जाय सब बन्धनसो छूटतो भयो ॥ ४० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि सो वो वा देवस्थानमें योगाभ्यासमें स्थित हैकै बैठो, सब इन्द्रियनके ग्रामको जीत मन जीवमें लगावतो भयो ॥ ४१ ॥ तब गुणनते आत्माको आत्मामें जो समाधि है ता समाधिकरकै जीवको वियोगकर भगवद्धाम ब्रह्म अनुभव आत्मामें जीवात्माकों लगावतो भयो ॥४२॥ सबसो जब निचन्त भयो, तब भगवान्के पार्षदनको आगे खडे देखे और शिर झुकाय प्रणाम कियो ॥ ४३ ॥ महापुरुषनके दर्शन कर गंगातीर्थमें देह त्याग भगवत्के पासके पार्षदनको सो रूप शीघ्र धारण करतो भयो ॥ ४४ ॥ महापुरुषके पार्षदनके संग विप्र आकाशमार्गमें हैके सुवर्णके विमानपर बैठकर जहां श्रियःपति श्रीलक्ष्मीनारायण हैं तहां गयो ॥ ४५ ॥ ऐसै सब धर्मरहित दासीपति निंदित कर्मसो गिरोभयो, नरकमें गिरवेयोग्य, सब व्रतहीन अजामेल भगवन्नाम लेवेसो शीघ्र मुक्त हैगयो ॥ ४६ ॥ यासों परे कर्मबन्धननाशक और कोई नहीं है, मोक्षको देवेवारो श्रीमन्नारायणको कीर्तन है नामसो शुद्ध भयो मन फिर कर्ममें आसक्त नहीं होय है और प्रायश्चित्तनसों रजतमसो मलीन भयो मन मलीनही रहै है ॥ ४७ ॥ जो कोई या परम गुह्य पापनाशक इतिहासको श्रद्धाकरकै सुनै सुनावै जो भक्तिसे याको पाठ करै ॥४८॥ वो नरककूं नहीं प्राप्त होयगो,यमके दूत वाकी तरफ न देखैगे,चाहै भलेई अमंगली मनुष्य होय पन वो श्रीविष्णुलोकमेंही जायगो ॥ ४९॥ मरतीविरिया श्रीहरिको श्रीमन्नारायण नाम पुत्रके बहानेसों लेवेसो अजामेल

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वैकुंठ गयो, और जो लोग श्रद्धाकरके नित्य हरे कृष्ण गोविंदनारायणनाम लेवेंगे विनकी बडाई कहांतक कहैं ये वैकुण्ठको जायगे तो यामें कहा कहनो है[1] ॥ ५० ॥

म्रियमाणो हरेर्नाम गृणन्पुत्रोपचारितम् ॥
अजामिलोऽप्यगाद्धाम किं पुनः श्रद्धया गृणन् ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे भगवन्नाममाहात्म्यवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

राजोवाच-निशम्य देवः स्वभटोपवर्णितं प्रत्याह किं तान्प्रति धर्मराजः ॥
एवं हताज्ञो विहतान्मुरारेर्नैर्देशिकैर्यस्य वशे जनोऽयम् ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि यमदेव धर्मराज अपने भटनसों यह कथा सुन, दूतनके प्रति कहा कहिते भए, जाकी आज्ञा मुरारीके दूतनने न मानी जाके वशमें ये सब जन है ॥ १ ॥ हे मुने ! यमदेवकी आज्ञा कभू काऊने भंग करी ये हमने पहिले कभू नहीं सुनो हे ऋषे ! ये लोकको संशय मेरे तुमारे विना दूर करवेकों और कोई समर्थ नहीं है ॥ २ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! भगवत्के पार्षदनकरके यमके दूतनके सब उद्यम नष्ट भए तब वे संयमिनीपति यमसो जायकै सब कहितेभए ॥ ३ ॥ यमदूत बोले कि हे प्रभो ! या जीवलोकके शिक्षा करवेवारे कितने हैं, फलकी चाहकरकैं तीन प्रकारके कर्म करवेवारेनके फल देनहारे कितने हैं ॥ ४ ॥ जब इन लोकनमें दंडधारी बहोत है तो यामें कौनको मृत्यु होयहै. और कौनको मोक्ष होय है[2] ॥ ५ ॥ बहुत कर्म करनेवारेनके शिक्षक जब बहुत हैं, तो यामें अखंड मंडलेश्वरकी शिक्षाके सामने छोटे राजनकी आज्ञा न्यून है ऐसे तुम्हारी शिक्षा मालूम पडे है[3] ॥ ६ ॥ याते ईश्वरसहित जीनवके ईश्वर तुम एक हो मनुष्यनको शुभ अशुभके विचार करवेवारे दंडदाता शिक्षक आप हो ॥ ७ ॥ सो तुम्हारी आज्ञा संसारमें नहीं वर्ती चार अद्भुतसिद्धनने तुम्हारी आज्ञा भंग करी ॥८॥ हम तुम्हारी आज्ञासो एक जीवको यातनागृहकों लावते हे सो हठसो सब फासिनको काटकैं वे वा पापीको छुडावते भए ॥ ९ ॥ सो आपसो कहिवेकूं आए हैं, जो आप सुनो तो वाने नारायण ये कह्यो, शीघ्र आयके बोले मत डरो ॥ १० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि प्रजाके दंडदाता यमदेव ऐसे जब पूछे गए तब प्रसन्न हैके यम राजा अपने दूतनसो श्रीहरिके चरणकमलनको स्मरण करते बोले ॥ ११ ॥ यमराज

---

१ याको यह अर्थ है कि मोक्षकी चाहना करनवारे मनुष्यनको भगवन्नामकीर्तन सिवाय कर्मबंधन काटनवारो और कोउ उपाय नहीं है जा भगवन्नाम कीर्तनसो ये मन कभू कर्मनमें आसक्त नहीं होय है और और प्रायश्चित्तनके करवेसो ये मन रजोगुण तमोगुण करके मैलोही रहे है जा कारणसो ये मन फिर कर्मनमें आसक्त होय है ॥

२ ये अर्थ है कि जा लोकमें दण्ड देनवारे बहुत होय तब फिर ये निर्णय नहीं है सकै है कि कोनको दंड देनो चाहिये और कौन दंड देवे लायक नहीं है और कोन तो नरकके लायक है और स्वर्गके लायक कौन है ॥

३ प्रयोजन यह है कि देखो बहुतसे कर्म करनवारेनके बहुत दंड देनवारे हे सके है परंतु मुख्य शास्तृत्व नहीं है सकै है क्योंकि यदि वो कछु योग्यायोग्य दंड देय तो वाके ऊपरके हाकिम वाकी आज्ञाको फेरके वरती कमती दंड कर सके है यासो परतंत्र हाकिमको कियो दंड उपचार गिनो जाय है मुख्य नहीं गिनो जाय है जैसे खडमंडलेश्वरके दंडको चक्रवर्ती फेर सकै है चक्रवर्तीके दंडको कोई नहीं फेर सकै है । अलम् ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बोले कि हम तो जंगम पापी जीवनके केवल दंडदाता है, परंतु हमसो परे स्थावर जंगमको स्वामी और है, वस्त्रकी नांई जामैं ये विश्व पिरोयो भयो है, जाके अंशते उत्पत्ति पालन नाश होयहै. जैसे बैल नाथके वशमें रहे तैसे ये लोक सब ईश्वरके वशमें है ॥ १२ ॥ जो ईश्वर अपनी वाणीरूपी डोरेमें बैलकी समान सबकों बांधे है. जिनके अर्थ नाम कर्मरूप बंधनमें बंधे सब चकित होयकै बलि देय हैं ॥ १३ ॥ हम, महेंद्र, निर्ऋति, प्रचेता, सोम, अग्नि, ईश, पवन, ब्रह्मा, आदित्य, विश्वेदेव, वसु, साध्य मरुद्गण रुद्रगण सब सिद्ध विनके वशमें हैं ॥ १४ ॥ और जे विश्वके रचवेवारे भृगुआदिक देवनके ईश हैं इनको राजस तामस नहीं स्पर्श करे हैं, मायासो स्पर्श करे हैं वेहू विनकी चेष्टाको नहीं जाने है जो सत्वप्रधान है विन्हेहू तौ खबर नहीं है औरनकी कहा चलाई है ॥ १५ ॥ जिनको इन्द्रियनसो मनसो प्राणसो हृदयसो वाणीसो प्राणधारी नहीं जानसके है वह सब व्यापकनके अंतरहृदयमें हैं जैसे नेत्र आकृतिनको नहीं जानसकै है, तैसे हम विन परमेश्वरकी करवेकी इच्छाकों नहीं जानसकैहै ॥ १६ ॥ आप स्वाधीन सबके ईश्वर परमेश्वर मायाके स्वामी महात्मा श्रीहरिके या संसारमें मनोहर भगवतकेसे रूपवारे वैसेही गुणस्वभाववारे पार्षद विचारै हैं ॥ १७ ॥ देवता जिन्हैं पूजै है जिनको दर्शन कठिनसो होय है महाअद्भुत श्रीविष्णुके पार्षद अपने श्रीहरिके भक्ति करवेवारेनको रक्षाके लिये मोसो और शत्रुनसो रक्षार्थ आयकै रक्षा करै हैं ॥ १८ ॥ जो साक्षात् भगवत्को कह्यो भयो धर्म है, वाको ऋषिलोग देवता कोई नहीं जाने है सिद्धमुखिया असुर मनु कोई नहीं जाने हैं, विद्याधर चारणादिकनकी कहा चलाई है ॥ १९ ॥ स्वयम्भु, नारद, शम्भु, कुमार, कपिल, मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्मजी, बलिराज, शुकाचार्य और हम ॥ २० ॥ हे भटहो ! ये द्वादशजने हम भागवत धर्मको जाने हैं छिपोभयो विशुद्ध परिश्रमसो जानवे योग्य वा धर्मके जानवेसों मोक्ष होय है ॥ २१ ॥ या लोकमें पुरुषनको परमधर्म परमज्ञान परमप्राप्ति बस इतनी है, कि यह भगवान्के नाम लैवेसो विनमें भक्तियोगकी प्राप्ति होय ॥ २२ ॥ हे पुत्रहो ! श्रीहरिके नाम उच्चारणको माहात्म्य देखो, अजामेल जिनके नामसो मृत्युकी फांसीसो छूटतो भयो ॥ २३ ॥ पुरुषनके पापनके नाशके अर्थ भगवतके गुणनामनके कीर्तनही मुख्य है; पुत्रके नाम पुकारवेके मिसकरके पापी अजामेल मरती समय नारायण उच्चारण करवेसों मुक्तिको प्राप्त होतो भयो ॥ २४ ॥ जो माहात्म्य नामको ऐसो है तो द्वादशाब्दादिव्रत व्यर्थ है तापै कहै हैं या नामके माहात्म्यको बहुधाकरकै ये महाजन मनुआदि नहीं जानते भये " क्योंकि महाभारी मायादेवीके बलसो अत्यंत विमोहितमतिसो मीठी खिली भई वेदत्रयीकी वाणीमें जडबुद्धि होय रही है याते महाभारी यज्ञादि कर्ममें सदा लगेरहे हैं जो सब नामको माहात्म्य जानलेयगे तो सर्व मुक्ति प्रसंग हैजायगो, जैसे अमृतसंजीवनी औषधीको नहीं जाननवारे वैद्य रोगनाशके अर्थ निंब आदि दवा बतावै है, तैसे स्वयंभु आदि द्वादशाब्दके व्रतकों अतिगुह्य माने हैं, लौकिकमें है कि

---

१ शंका—यमराजने अपने दूतोंसे कहा कि हे दूतो ! भागवत रूप धर्मको ऋषि लोगभी नहीं जानते प्रह्लाद और जनकजीको आदि लेकर हम बारह जन भागवत रूप धर्मको जानते हैं, यह बडे आश्चर्यकी बात है कि जिन मुनियोंको भगवान्का दास कहते हैं सो मुनिजन भगवान्के धर्म जाननेमें प्रह्लादसेभी मूर्ख होगये यह भारी सन्देह है ?

उत्तर—मुनिजन भगवान्सेभी बडे हैं, दूसरे प्राणीसे किसी काममें छोटे क्यों होंगे ! भक्त त्रिलोकीमें सबसे बडे हैं, परन्तु तपस्याके अभिमानसे भागवत रूप धर्मको नहीं देखते और विचारते हैं क्या हमारे तपसे भागवत धर्म बडा है, ऋषिजन तपस्या करके अभिमानी हो रहे हैं इसलिये भागवत धर्मको नहीं जानते और प्रह्लाद जनक आदि सीधे साधु हैं इनको भगवान्के सिवाय और कोई दूसरा आधारही नहीं, इसलिये भागवतधर्म जाननेको यमराज अपने दूतोंसे कहतेथे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बडे मन्त्रमें तो श्रद्धा, छोटेमें श्रद्धा नहीं याते याके ग्राहक नहीं है, जैसे अपने आधीन सिंहसो कुत्ता गीदडनके दूर करवेको इच्छा नहीं करते तैसे अतितुच्छ पापको जान वाके नाशको परममंगलिक श्रीहरिनाम लैनो उचित नहीं जाने है ॥२५॥ ऐसै विचारकरके बहुत सुन्दर बुद्धिवारेनने सब प्रकारकै निश्चयसो भगवान्में केवल भाव योग करैं हैं, वे मेरे दण्ड देवेके योग्य नहीं और जो इनमें कदाचित् पापकी संभावना होयहू है, तो विनको सब पाप भगवान्को नाम उच्चारणही नाश करै है ॥ २६ ॥ जो साधु समदर्शी नारायणको प्राप्त है उनको पवित्र कथाको देवता और सिद्ध गाते हैं वे साधुलोक समानदर्शी होय हैं. भगवत्के प्रपन्न है शरणागति धर्म जानै है " व्याकरणमें है प्र उपसर्ग सो पत्लृ पतने धातुको ये अर्थ है कि सब संबंध देशकाल इत्यादि नियम त्याग हरिके (चरण शरण) अर्थात् चरण रक्षक है ऐसै मानै " विन्हे मेरे यहां मत लाओ, वे श्रीहरिकी गदासों रक्षित हैं, विनके ऊपर कालकी सामर्थ्य नहीं है कि मारसकैं, न हम सब लोग द्वादश देवता दंड देवेको समर्थ हैं ॥ २७ ॥ दंडके योग्य ये हैं इनकों लायो करो जो श्रीमुकुन्दके चरणकमलमकरंदरससो सदा विमुख हैं, विन्हे लाओ, जो खोटे जीव हैं विन्हैं लाओ, जिनकूं काऊकी चाहना नहीं परमहंसकुल रस जानवेवारेनके निंदकनको लाओ नरकदायक घरमें जिनने तृष्णा लगाय राखीहै विन्हें लाओ ॥२८॥ फांसी हाथमें लिये अपने पुरुषनके कानमें यमराज धीरैसौ बोले कि जो भगवत्की कथामें सदा प्रमत्त हैं विनको मैं प्रभु नहीं हूं वैष्णवनको मैं दंडदाता नहीं हूं और मनुष्यनको दंडदाता मैं हूं, याते भक्तकों मेरे यहां मत लाओ ॥ २९ ॥ जिनकी जीभ भगवतके नाम नहीं लेहै, चित्त जिनको भगवत्के चरणारविंदको नहीं स्मरण करै है, जो शिर श्रीकृष्णको एकवारहू नहीं नमैं हैं जिनने कुछभी विष्णुके कृत्य नहीं करे हैं, विन दुष्टनकों लाओ ॥ ३० ॥ सो पुराणपुरुष नारायण भगवान् मेरो अपराध क्षमा करैं, क्योंकि मेरे दूतनने भक्तको तिरस्कार कीनो, जो बडे हैं वे अपनेनके हाथ जोडवेमात्रहीसौ अपराध क्षमा करै हैं, यासो सबसो बडे भूमा पुरुषके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३१ ॥ हे कौरव्य ! तातैं जगत्के मंगलको करवेवारो सब बडेसो बडे पापको नाशक श्रीविष्णुकों संकीर्त्तनही केवल समूल नाश करनवारो है एकांती भक्तनको सब सुखदाता है यही निश्चय जानो ॥ ३२ ॥ जो श्रीहरिके सुन्दर चरित्रको सुनैहै, सुन्दर भक्ति करै हैं, तिनकों नाम लैयहै, व्रत आदि करेहै, इनसो शुद्ध है जायहै ॥ ३३ ॥ श्रीकृष्णके

---

१ दृष्टांत ॥ एक मुनीश्वर तप कररहे थे इतनेमें कोई (कुष्ठी) उनकी शरणमें आया और कहा कि हे दीनदयालु ! मेरे कुष्ठका आप कुछ उपाय बताइये ॥ परन्तु वह तो ध्यानमें थे, कुछ उन्होंने न सुना. उसने फिर कहा, फिर मुनिने न सुना, उसने तीसरी वार कहा, फिर मुनिने ध्यान न किया, जब वह चौथी वार कहनेको हुआ, तब मुनिके चेलेने अपने मनमें विचारा कि जो इसके गंभीर शब्दसे गुरुजीकी समाधि छूटगई तो मेरे ऊपर बडा भारी क्रोध करैंगे । इसलिये उसने गुरुसे भय मान कुष्ठीसे कहा कि तीन वार रामका नाम ले तेरा कुष्ठ सब जातारहेगा और शरीर शुद्ध होजायगा । उसने जो तीन वार राम राम कहा तो सब कुष्ठ जाता रहा, और शरीर कुन्दन लालकी समान होगया । मुनीश्वर जब समाधिसे जागे तो चेलेकी ओरसे मुँह फेर लिया, और न बोले, तब तो चेलेने अपने मनमें बडा दुःख माना, और मनमें कहने लगा कि ऐसा मुझसे क्या अपराध हुआ जो गुरुजी क्रोधित होगये फिर चरणोंमें शिर झुका विनती कर बोला कि हे स्वामिन् ! मुझ दीनसे ऐसे क्या अपराध हुआ जो मेरी ओरसे आपने मुख फेर लिया, कृपा करके मुझसे कहिये जो मेरे मनका संदेह जाय, तब मुनि बोले कि अरे मूर्ख ! तैंने रामनामकी महिमाको कुछ न जाना। जिस रामनामके एक वार कहनेसे करोडों कुष्ठी अच्छे हो सकते हैं ऐसे रामनामको तीन वार कहलाकर एक कुष्ठी तैंने अच्छा किया, तैंने रामनामके प्रभावको तुच्छ समझा, अच्छा अब जो किया सो किया फिर कभी ऐसा मत करना, सो रामनामकी महिमाको शेष, शारदा और ब्रह्मा नारदभी नहीं जानते ॥

२ पद् गतौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चरणकमलके मधुको स्वाद लेवेवारो फेर मायाके गुण पापदायकनमें नहीं रमण करैहै और अभक्त तो कामकरके हन्यो भयो अपनी शुद्धिकी इच्छाकर प्रायश्चित्तमें लगैं हैं जासौ फिरहू विषयनमें लग जायहैं ॥ ३४ ॥ हे राजन् ! ऐसे अपने भर्ताकी वाणी सुन भगवत्की महिमा सुन वारंवार याद कर विस्मित बुद्धिसौ यमके किंकर श्रीअच्युतके आश्रित जननसो महा भय शंका मानते वा दिनसो भगवदासकी ओर देखवेसोहू डरते भए ॥ ३५ ॥ ये पुण्यदायक इतिहास भगवान् अगस्त्यजी महाराज मलयाचलपर बैठे भए श्रीहरिको पूजन कर कथा वांच सबको नाममाहात्म्य सुनाय उद्धार करतेभएं ॥ ३६ ॥

इतिहासमिमं गुह्यं भगवान्कुम्भसंभवः ॥
कथयामास मलय आसीनो हरिमर्चयन् ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे अजामिलोपाख्याने स्वभटान्प्रति यमेन भगवन्नाममाहात्म्यवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

राजोवाच-देवासुरनृणां सर्गो नागानां मृगपक्षिणाम् ॥
सामासिकस्त्वया प्रोक्तो यस्तु स्वायंभुवेऽन्तरे ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि देवता असुर मनुष्य नाग मृग पक्षीकी सृष्टि स्वायंभुवमन्वतरमें आपने संक्षेपसों कही ॥ १ ॥ हे भगवन् ! याकी विस्तारपूर्वक सुनवेकी इच्छा है जैसे जा शक्ति करकै भगवान् परमेश्वर फेर सर्ग रचतेभए सो कहो ॥ २ ॥ सूतजी बोले कि हे शौनकादिक ! राजऋषिको ये प्रश्न सुनकरकै बादरायणि महायोगी राजाकी प्रशंसा कर बोलै ॥ ३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि जब दक्ष प्राचीनबर्हीके पुत्र प्रचेता समुद्रसौं बाहर निकसे तब वृक्षनसौं (वृत) ढकी पृथ्वी देखते भए ॥ ४ ॥ तपसो प्रकाशित वे प्रचेता वृक्षनपै क्रोध करतेभए, अपने मुखसों पवन अग्नि विनके जरायवेकी इच्छा करकै त्यागते भये ॥ ५ ॥ हे कुरूद्वह ! इनसौं दह्यमान विन वृक्षनको देख राजा महाचंद्रमा क्रोध शांत कर बोलै ॥ ६ ॥ हे महाभागीहो ! दीनवृक्षनके अर्थ द्रोह करवेकूं योग्य नहीं हो तुम तो प्रजाके पति कहे गए हो, प्रजाके बढावनेवारे हो ॥ ७ ॥ अहो प्रजापतिके पति ! भगवान् हरि अविनाशी विभुने वनस्पति औषधी प्रजाके भक्ष्य अन्न रचेहैं ॥ ८ ॥ चलनेहारे जीवनको तौ स्थावर अन्न है परसौ चलनवालेनके बेपैरवारे हाथवारेनको हाथरहित जीव अन्न हैं दो पैरवारेनको चतुष्पद अन्न है ॥ ९ ॥ हे पापरहितहो ! देवनके देव पिताने तुम्हें आज्ञा कीनी है कि प्रजाके

---

१ यापर एक पद है ॥ टुमरी ॥ हरे राम कहो हरे राम कहो राम राम कहो हरे हरे ॥ हरे कृष्ण कहो हरे कृष्ण कहो कृष्ण कृष्ण कहो हरे हरे ॥ टेर ॥ मीन वराह हरी और कच्छप रामचन्द्र अवतार धरे ॥ परशुराम नरसिंह कृष्ण बल सनकादिक चारौ विचरे ॥ १ ॥ नर नारायण यज्ञपुरुष होय कपिल देव हयग्रीव तरे ॥ दत्तात्रेय ऋषभ मन्वंतर पृथु मोहिनी अति सुधरे ॥ २ ॥ नारद वामन हंस व्यास प्रभु बौद्ध होयकर ज्ञान करे ॥ कल्की कलियुग अंत माहि भए यह चौवीसौं रूप धरे ॥ ३ ॥ रंगनाथजी जगन्नाथजी पुरी द्वारकानाथ वरे ॥ गोवर्द्धनके नाथ नाथ जग बद्रीनाथ नरनाथ खरे ॥ ४ ॥ जगदीश्वर परमेश्वर स्वामी सर्वेश्वर सब ठौर सरे ॥ कमलनयन कमलापति केशव कंस केशकर काल करे ॥ ५ ॥ मदनमोहन मथुरामनमज्जन मन्मथ मुरली मुकुट मुरे ॥ मुरमर्दन मुनिमनमतिमज्जन पुरुषोत्तमके नाथ खरे ॥ ६ ॥

२ शंका-चन्द्रमाने प्रचेतसक पुत्रोंसे कहा कि मनुष्यका आहार पशु है, यह बडे आश्चर्यकी बात है !

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रचवेके लिये तुम हो, सो वृक्षनको जरायवे योग्य नहीं हो ॥ १० ॥ संतनके मार्गमें स्थित रहो; महाप्रकाशी क्रोधको दूर करो पिता पितामह इत्यादि तुम्हारो पुरखाननें ऐसो नहीं करो है ॥ ११ ॥ छोटे बालकनको पिता माता बंधु होय है, जैसे पलक नेत्रनके रक्षक हैं, स्त्रीको पति बंधु है, प्रजाको राजा बंधु है भिक्षुकके गृहस्थी बंधु है अज्ञानीके बुद्धिवान् सुहृद है ॥ १२ ॥ सब जीवमात्रके अंतर्देहमें भूतात्मा श्रीहरि ईश्वर हैं सबमें भगवान्‌कोही देखो, ऐसो करवेसो आपके ऊपर भगवान् प्रसन्न होयगे ॥ १३ ॥ जो कोई देहरूप आकाशमेंसो उत्पन्न महाक्रोधको परमेश्वरको डर मानकै जीतै है वो सब गुण-नसो उद्धार हैजायहै ॥ १४ ॥ जो वृक्ष जरगएहैं सो खैर, परंतु अब जो बाकी बचे हैं विनकों मत जराओ, वृक्षकी ये श्रेष्ठ कन्या हैं, याको तुम अपनी स्त्री करो ॥ १५ ॥ हे नृप ! वा अप्सराकी श्रेष्ठ कन्याको चंद्रमा राजा प्रचेतानको व्याहके जातेभये, वे धर्मसो विवाह करतेभये ॥ १६ ॥ तिनसो वा वृक्षकी कन्यामें दक्षप्रजापति प्रचेतानसो होते भये, जिन दक्षप्रजापतिकी रची भई प्रजाकी बुद्धिकरकै तीनों लोक सब भर गये ॥ १७ ॥ पुत्रीनको प्रीतिसो चाहवेवारे दक्ष जैसे वीर्यसों मनसों सब जीवनकूं रचतो भयो सो सावधान हेकै मोतो तुम सुनो ॥ १८ ॥ प्रजापति पहले देव असुर मनुष्य आदिक नभवासी स्थलवासी जलवासी प्रजाको मनसो रचतेभये ॥ १९ ॥ वा मानसी सृष्टको नहीं बढो भयो देखके प्रजापति विंध्याचलपर्वतपै जायके दुष्कर तप करते भये ॥ २० ॥ तहां अघमर्षण नामको तीर्थ है, सो पापको हरनवारो है, तामें नित्य स्नान करकै तपसो श्रीहरिको तुष्ट करतेभये ॥ २१ ॥ भगवान् अधोक्षजकी हंसगुह्यनामक स्तोत्रसो स्तुति करते भये जातैं श्रीहरि भगवान् दक्षप्रजापतिपै प्रसन्न भयो ॥ २२ ॥ वो हंसगुह्यस्तोत्र यह है दक्षप्रजापति बोले कि जिन परमेश्वरकी चिच्छक्ति सत्य हैं जो जीव और माया दोनोंके नियामक हैं ऐसे हैवेसोहू जिन समस्त जीवनके गुणनमें तत्व बुद्धि है वह विनको स्वरूप नहीं देख सकै कारण कि विनको परिमाण और सीमा नहीं है वह स्वयं प्रकाश है यासो सिद्ध वस्तु है ऐसे सर्वोत्तम देव ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ २३ ॥ गुण अर्थात् विषय जैसे गुणीके अर्थात् इन्द्रियादि विषयनके सख्य अर्थात् प्रकाशत्वको नहीं जाने है वैसेही सख्य जीवहू या देहरूप पुरमें वास करकै या स्थानमें वास करनवारे सखाको विनकी इन्द्रियप्रवर्तकत्वादिरूप सख्यको नहीं जानसकैहै कारण कि जीवकी दृष्टि प्रपंचमें बंधी रहै है ऐसे महाऐश्वर्यवारे ईश्वरके अर्थ नमस्कार होय ॥ २४ ॥ देह प्राण इन्द्रिय अन्तःकरण पंचभूत पंचतन्मात्रा यह सब आत्माको अर्थात् अपने स्वरूपको और इन्द्रियवर्गको और इन दोनोनमें श्रेष्ठ देवतावर्गको नहीं जानसकैहै यद्यपि जीव इन और इन तीनके मूलभूत समस्त गुणनकोहू जाने हैं तो वह ऐसे ज्ञात हैकैहू सर्वज्ञ भगवान्‌को नहीं जान सकैहै ऐसे अनन्त भगवान्‌की मैं स्तुति करूंहूं ॥ २५ ॥ देखवेकी स्मृतिके चुरायवेंसों जब नामरूपको मनसो त्याग हैजायहै तब केवल अपनी स्थिति करकै जो चेष्टा करे जांय हैं तिन पवित्र स्थानवारेके अर्थ नमस्कार होय ॥ २६ ॥ महामनस्वी लोग हृदयके भीतर प्रकृति पुरुष महत्तत्व अहंकार पंचतन्मात्रारूप नवशक्तिन करकै सताईस तत्वन करकै अपनी शक्तिद्वारा हृदयमें निश्चल है और जो लोग यज्ञ करनवारे पन्द्रह सामधेनी मंत्रनसै

उत्तर—द्विपदानां चतुष्पदाः इस श्लोकका अर्थ चन्द्रमाने चतुष्पद अर्थात् चार पदवाले पशुको नहीं कहा, यहां ऐसा अर्थ किया है, कि चार प्रकारके भोजन हैं, भक्ष्य, भोज्य, चोष्य, लेह्य, इन चार प्रकारके भोजनोंको चतुष्पद कहा सो चार प्रकारके स्वाद हैं, सोई पुरुषोंको प्रसन्न करनेवाले आहार हैं चार प्रकारके भोजन कहे, यहां चतुष्पद चार पांव-वाले पशुको चन्द्रमाने नहीं कहा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रकाशित होय हैं यासों कारण अलौकिक अग्निकी समान अतिशय गूढ हैवेके कारण विवेकी पुरुष बुद्धिसों विचार और खैंचकै जिनको ध्यान करै है ॥ २७ ॥ सो ईश्वर बडे हैं, जिनके असंख्यात विशेषण हैं जिनके मोक्षसुखको अनुभव मायाके द्वारा निषेध नहीं होय है सोई भगवान् सब नामधारी होयहैं, सोई ईश्वर है विश्वरूप हैं जिनके आत्माकी शक्तिको वर्णन कोई नहीं करसकैहैं सो परमेश्वर मोपै प्रसन्न होउ ॥२८॥ जो जो वाणीसों कह्यो है और बुद्धिसों निश्चय कियो गयो है इंद्रियनसों ग्रहण कियो गयो है और मनसों संकल्प कियो गयो है वह सब ईश्वरको स्वरूप नहीं है कारण कि वह गुणनकोही स्वरूप है ईश्वर तौ गुणनकी प्रलय और उत्पत्तिसों जानो जाय है जो चैतन्यरूप अधिष्ठान न होय तौ सृष्टि और प्रलय हैवेको संभव नहीं होय ॥ २९ ॥ जा अधिकरणमें जा अपादानसों जा कारणसों जाके सम्प्रदान और जा कर्मसों जासों जैसे जो कर्म कृत अथवा कारित होय है वही सबको ब्रह्म है वही सबको कारण है कारण कि वह सबके प्रथम स्वयंसिद्ध हैं वह पर अवर सबको परम कारण हैं तथा विजातीय शून्य हैं ॥ ३० ॥ जिनकी शक्तियें वादविवाद करवेवारे वादिनके विवादसंवादकी भूमि होंय हैं इन सबके वारंवार आत्माकों मोह करै हैं ऐसे अनंतगुण रूप भूमा पुरुषके अर्थ नमस्कार होय ॥३१॥ योग उपासना शास्त्रमें कह्यो है वाके पदादि है सांख्यमें कह्यो है वह अवयवरहित है यह विरुद्ध विवाद ईश्वरके अवयवमें है ईश्वरमें तौ नहीं विन शास्त्रनके द्वारा जो कछु प्रतीत होयहै वह बृहद् वस्तु ब्रह्मविवादमें और अविवादमें आस्पद है याको विवाद भगवान्तक न पहुँचके अवयवमें रहै है भगवान्को स्वरूप विवादको विषय नहीं किंतु विषयको अधिष्ठान है यह न होय तौ पदादि कल्पना और निषेध नहीं हौ सके हैं यासों कारण जो स्वरूप इन विवादनको आश्रय देय हैं दौननके अनुकूल और दौननसों भिन्न है और दौननके समान है वही ब्रह्म है ॥ ३२ ॥ जो अनामरूपी भगवान् अनंत हैं जो भजवेवारेनके अनुग्रहके अर्थ जन्मकर्म करकै नामरूपधारै हैं उन्हें हम भजै हैं सो मेरे अर्थ परमेश्वर प्रसन्न होय ॥ ३३ ॥ जैसे पवन कमल आदि विशेष २ पुष्पनकी गन्धको आश्रय लेकै अनेक गन्धयुक्त हो प्रकाश करै है वही पृथ्वीकी रेणुको आश्रय कर काली पीली धुन्धली अनेक रूपकी होती है वैसेही भगवान् पुरातन उपासनाके मार्गसों मनुष्यनकी वासनाके अनुसार विन विन देवतानके रूपसों विविध प्रकारसों प्रकाश पावे है वे ईश्वर हमारे मनोरथको पूर्ण करो ॥ ३४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि, हे राजन् ! या अघमर्षणमें स्तुति योग्य जब स्तुति करेगए तब भगवान् भक्तवत्सल प्रसन्न भए और दक्षके दर्शन देवेको भगवान् प्रादुर्भाव भये ॥ ३५ ॥ गरुडपर विराजमान लंबी अष्टभुजा धारै, चक्र शंख तरवार ढाल बाण धनुष पाश गदा लिये ॥ ३६ ॥ पीतांबर पहिरे, घनश्याम, प्रसन्न मुख, नेत्र, वनमाला लंबी धारै, श्रीवत्स कौस्तुभ भृगुलत्तासों शोभित ॥ ३७ ॥ महा किरीट कडुआ धारे दमकते भए मकराकृतकुंडल धारे कांची अंगूठी कंकण नूपुर बाजू पहिने ॥ ३८ ॥ त्रैलोक्यको मोह करायवेवारो रूप त्रिभुवनके ईश्वर धारे नारद नन्द सुनंद आदि पार्षद देवनके यूथनसों वेष्टित ॥ ३९ ॥ सिद्ध गन्धर्व चारण दोनों ओर खडे स्तुति कर रहेहे ऐसे वो महाआश्चर्यको रूप देखे महाप्रीति होती भई और दर्शन करवेसो घबरायोसो है गयो ॥ ४० ॥ अतिप्रसन्न आत्मा प्रजापति भूमिमें दंडवत् नमस्कार करते भए, तीव्र आनंदके

---

१ देखो या श्लोकको यह अर्थ है योगशास्त्र तौ कहै है कि है और सांख्य कहै है कि नहीं है परंतु वे दोनौं कैसे है कि एकमेंही जिनकी स्थिति है पन भिन्न और विरुद्ध जिनके धर्म है विन दोनो शास्त्रनने जाकी प्रतीत कीनी है और वास्तवमें जो सम है और जामें सब अनुकूल है और जो पर है वोही ब्रह्म है वाकू में नमस्कार करौहो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मारे कछू बोलवेको समर्थ नहीं होतेभए ॥ ४१ ॥ मनके द्वारा सब पूर्ण हैगए, जैसे हृदिनी झरनासों भरे तद्वत् पूर्ण हैगये स्तोत्रको फल आयगयो; पुरुषोत्तमको वंदना करते भये ॥ ४२ ॥ सबके मनकी जानवेवारे भगवान्ने प्रजाकी इच्छा करनवाले नम्रभूत अपने भक्त दक्षको ऐसे वचन कहे ॥ ४३ ॥ श्रीभगवान् बोलै कि हे प्राचेतस ! हे महाभाग ! तपसों आप सिद्ध भये जो परमश्रद्धा मोमें करकै मेरेमैं परमभाव भयो ॥ ४४ ॥ हे प्रजानाथ ! हम तुमपै प्रसन्न भये, जो या विश्वके वृद्धिके अर्थ तुमने तप करो है, सब जीव याही लिये मैंने उत्पन्न करेहै, कि मेरी येही कामना है कि सब विभूति अधिक बढै ॥ ४५ ॥ ब्रह्मा शिव आप मनु देवनके ईश्वर ये सब मेरी विभूति हैं, ये सब बराबर है सब जीवमात्रके वृद्धिके हेतु हैं, जो जगत्कों बढावै वो मेरे प्यारो है, बढवेसो सब बात पूर्ण होय है ॥ ४६ ॥ हे ब्रह्मन् ! तप मेरे हृदय है विद्या मेरो अंग है क्रिया जो है सो मेरी आकृति है क्रतु मेरे अंग है धर्म मेरो आत्मा है और देवता मेरे प्राण है ॥ ४७ ॥ अनंत गुण अनंत जो मैं हूं तामें माया संबंधसों ये ब्रह्मांड भयो वा समय सबके पहले अज स्वयंभू ब्रह्मा होतो भयो ॥ ४८ ॥ कुछभी बाहरभीतर नहीं हो तब आगै हमही होतेभए चैतन्य मात्र इन्द्रियनसों जानवेसो अयोग्य सब ओरसो मानो सोय रह्योहो वा समय ऐसो हमारो स्वरूप हो ॥ ४९ ॥ ब्रह्माजी हमारे वीर्यसो वर्द्धित हैवेके कारण सृष्टि उत्पन्न करवेको उद्यत भए परन्तु विनने या कार्यमें जब अपनेको असमर्थ मानो ॥५०॥ फिर मैंने देवसो कही कि तुम दारुण तप करो, तब वाने कठिन तपस्या करी जा तपके प्रभावसो विश्वके रचनवारे तुमको उत्पन्न कियो ॥ ५१ ॥ हे अंग ! पंचजन प्रजापतिकी ये बेटी है असिक्नी याको नाम है, तुम याको स्त्रीकरकै राखो ॥ ५२ ॥ स्त्रीपुरुषके मैथुन धर्म आश्रय लेके या रूपवान् धर्मवती स्त्रीमें तुम अनेक प्रजा उत्पन्न करोगे ॥ ५३ ॥ तुमसों पीछै सब प्रजा ऐसेई मैथुनरूप मायाकरकै मेरी इच्छासो होंयगी, मोको भेट देयगी ॥ ५४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसै कहिके विनके देखते देखते भगवान् विश्वभावन जैसै सुपनेमें काऊको धन मिलै और जागेसों नहीं दीखे तैसे अंतर्धान हैगए ॥ ५५ ॥

श्रीशुक उवाच–इत्युक्त्वा मिषतस्तस्य भगवान्विश्वभावनः ॥
स्वप्नोपलब्धार्थ इव तत्रैवान्तर्दधे हरिः ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे प्रचेतसां दक्षोत्पत्तिवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

श्रीशुक उवाच–तस्यां स पाञ्चजन्यां वै विष्णुमायोपबृंहितः ॥
हर्यश्वसंज्ञानयुतं पुत्रानजनयद्विभुः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि समर्थ दक्षजी श्रीविष्णुकी माया करकै वृद्धित पंचजनीमें हर्यश्व संज्ञाके दशहजार पुत्र रचते भए ॥ १ ॥ हे नृप ! वे धर्मशील सब एकसे हे सब दाक्षायण कहाये जब प्रजा रचवेको पिताने कही तब पिताकी आज्ञासो पश्चिमकी दिशाकूं जाते भए ॥ २ ॥ तहां सिंधुसमुद्रके बीच नारायणसरतीर्थ संगम है, जहां बडे २ मुनि और सिद्ध रहै हैं ॥ ३ ॥ वामें स्नान पान करवेसो मल अंतःकरणके सब धुयगए, पारमहंस धर्ममें विनकी बुद्धि लगीही ॥४॥ पिताकी आज्ञा मान उग्रतप करते भए, प्रजा बढावनेमें उद्युक्त तिन्है देवर्षि नारदजी देखते भए ॥ ५ ॥ श्रीनारदजी बोले

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कि बडे कष्टकी बात है, कि ये मोक्ष मार्गके अधिकारी हैं सो प्रवृत्तिमार्गमें लगके नष्ट हैजायगे सो कृपा करके गूढ अर्थके वाक्यनसों उपदेश करते भए, हे हर्यश्वहो ! भूमिको अंत देखे विना तुम प्रजा कैसे रचोगे तुम प्रजापालक हैंकैहू अज्ञानी हो[1] ॥ ६ ॥ तथा एक पुरुषवारो देश और जामें प्रवेश करके न निकसो जाय ऐसो बिलो बहुरूपधारिणी नारी पुंश्चलीको पति पुरुष[2] ॥ ७ ॥ दोउ ओरसे वहवेवारी ऐसी एक नदी है पच्चीस कारीगरनको रचो १ अद्भुत घर है चित्रविचित्र कथावारो हंस स्वयं भ्रमण करनहारो छुरा और वज्रसों निर्मित तीक्ष्ण चक्र ॥ ८ ॥ तुम विद्वान् पिताकी आज्ञाको विना विचारे जो अपने योग्य है वाकूं विना जानेसों कैसे सृष्टि रचोगे ॥ ९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि वे हर्यश्व वा बातकों सुनके अपनी स्वाभाविकबुद्धि करकै नारदजीके कहेभए वाणीके कूटकू बुद्धिसों विचारते भए ॥ १० ॥ नारदजीके कहे दश वाक्य हैं, अनादि आत्माको जन्म दैनवारो लिंगशरीर है वही भूक्षेत्र हैं वा जीव संज्ञावारे लिंगशरीरके नाशक और मोक्षदायक कर्मनके विना जाने असत्कर्मसो कहा होय है ॥ ११ ॥ सर्वसाक्षी एकही ईश्वर भगवान् स्वाश्रय परायण हैं, संसारनिवर्तक हैं, जो पुरुष है वाके विना देखे मरजाय तो असत्कर्म करवेसों कहा होय है ॥ १२ ॥ जैसे पाताल रूप गुहामें गयो भयो प्राणी फिर लौटके नहीं आवे है ऐसेही ज्योतिरूप परमात्माकोहू प्राप्त हैके कोई नहीं लौटे है वा ब्रह्मरूप गुहाके विना जाने नाशवान् स्वर्गादिके साधनवारे कर्मनके करवेसों कहा होयहै ॥ १३ ॥ नानारूप धारवेवारी अपनी बुद्धि स्वैरिणी स्त्रीकी नाईं अनेक गुण धारे है वाके विना जाने असत्कर्मसो कछू नहीं होयगो ॥ १४ ॥ ताके संगसो याको ऐश्वर्य भ्रष्ट होय है बुरी भार्याकी नाईं जीव बुद्धिके संगसो संसारको प्राप्त होय है, बुद्धिकी जो गति है वाको न जानवेवारो अज्ञानीकों असत्कर्मनसो कछू नहीं होयगो ॥ १५ ॥ उत्पत्ति नाश दोनों कार्य करनवारी दोनों ओरसो किनारेनको उलांघके वहवेवारी नदी माया है तपस्या और विद्या आदि या नदीके कूल अर्थात् निर्गम स्थान है तथापि जो पुरुष वाके तेजके विना विचारे कर्मनको करैं वासो कहा फल होयगो ॥ १६ ॥ पच्चीस तत्त्वनको जो यह गृह बतायो याको तात्पर्य यह है कि अन्तर्यामी पुरुष पच्चीस तत्त्वके आश्चर्यवाले आश्रय है वह कार्य कारण और संघातके अधिष्ठाता हैं विनकों जो पुरुष नहीं जाने है वाको मिथ्या और स्वतंत्रतासों किये कर्मनसों कहा है ॥ १७ ॥ विचित्र कथा रूप हंस यह है कि ईश्वरके प्रतिपादक शास्त्रनमें चित्त और जडरूप वस्तु विशेष रूपसों विचारी जाय है यासों वह हंस स्वरूप है जैसे दूध जलको अलग करे है ऐसेही शास्त्र अचेतन और

---

१ यहां इन ३॥ श्लोकनको शुद्ध कथाभाग यह है कि नारदजी कहे कि हे प्रजापतिपुत्रहो ! भूके अंतके विना देखें तुम प्रजापाल बनो चाहोहो सो तुम बडे मूर्खहो ॥ ६ ॥ और कहो तुम एक देश ऐसो है जामें एकही पुरुष है एक बिल ऐसो है जामें जायवेकीही रस्ता है पन जामें निकसवेकी रस्ता नहीं है ॥ ७ ॥ एक स्त्री ऐसी है जो अनेकरूप धरे है एक पुरुष ऐसो है जो पुंश्चलीपति है ॥८॥ एक नदी ऐसी है जो उलटी सुधी दोउ तरह वहै है. एक मेहल ऐसो है जो २५ कारीगरनने बनायो है. एक हंस ऐसो है जाकी विचित्र कथा है एक चक्र ऐसो है जो उस्तराके समान पैनो अपने आप घूमे है. और अपने पिताकी आज्ञाके जाने विना और इन सब बातनके सिद्धांतके विना जानें कहो तुम सृष्टि रचना करो चाहो हो सो कहा कैसें करोगे ॥ ९ ॥

२ शंका—हर्यश्व जो दक्षके पुत्र हैं सो सब भाई मिलकर सृष्टि रचनेके लिये तपस्या करने लगे तब उन सबको नारदजीने सृष्टि बनानेके लिये निषेध करके योग करनेको क्यों आज्ञा दी ? सृष्टिके उत्पन्न होनेमें नारदजीकी क्या हानि थी ?

उत्तर—दक्षके पुत्रोंकी इच्छा सृष्टिके रचनेकी नहीं थी, योग करनेकी इच्छा थी परन्तु पिताकी आज्ञा मानकर सृष्टि रचनेके मिष तप करनेके लिये गये, तब नारदजी उनके हृदयकी बातको जानकर सृष्टि रचनेका निषेध किया, और योग करनेका उपदेश दिया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चैतन्य वस्तुको भिन्न भिन्न करदेय है कोन कर्मसों बंधन और कोनसों मुक्ति है यासों दिखै है सो वाकी सब कथा विचित्र है या शास्त्रका नहीं जानकै केवल बहिर्मुख कर्मसों कहा होयगो ॥१८॥ और तीक्ष्ण चक्रको तात्पर्य यह है कि यह तीक्ष्ण कालचक्र है अपने आप रातदिन घूमतो रहै है और सब संसारको संहार करै है यासो स्वतंत्र है वा कालचक्रकी गतिको विना जानै असत्कर्मनसों कहा है॥१९॥ अपने पिताकीसी आज्ञा जो शास्त्रकी है जासों मोक्ष होयहै वाको विना जानै गुणनमें विश्वास करवेवारो कैसे सृष्टि रचैगो ॥ दशकूट ॥"मोक्षेशब्रह्मबुद्धीनां जीवमायांतरात्मनाम् ॥ शास्त्रकालोपदेशानामज्ञाने किमु कर्मभिरिति " ॥ २० ॥ एक चित्तकर वे हर्यश्व ऐसे निश्चय कर श्रीनारदजीकी परिक्रमा कर जहांको गयो फेर यहां नहीं आवैहै ऐसे श्रीवैकुंठको जाते भये ॥ २१ ॥ स्वररूप ब्रह्म प्रकाशमान भगवत्के चरणकमलमें अखंड चित्त लगाय नारदजी लोकनमें विचरते भये ॥ २२ ॥ महाशीलवारे पुत्रनको नारदजीसों नाश सुन दक्ष बडो शोक करतो भयो अच्छे पुत्रवारोही शोकको स्थान है फिर भले सर्वश्रेष्ठ सन्तानके निमित्त दक्षको क्यों न शोक हो ॥ २३ ॥ फेर ब्रह्माजीके शांत करवेपै पञ्चजनीमें दक्ष शबलाश्वसंज्ञक हजार पुत्र रचै ॥ २४ ॥ वे पिताकी आज्ञा ले प्रजाके रचवेमैं व्रत धार नारायणसरपर तप करवेको जाते भये जहां इनकै पहिलै भैया तपकर सिद्ध भए ॥ २५ ॥ वामें स्नान करवेसो सब मल दूर हो अन्तःकरण शुद्ध है गये, परब्रह्मको जप करते महातप करते भये ॥ २६ ॥ कुछ महीना जलपान कर रहै कुछ मास पवन आहार करके रहें, या मंत्रको आराधन करते भये, श्रीविष्णुको आराधन करते भये ॥ २७ ॥ ॐकाररूप परब्रह्म महात्मा पुरुष श्रीमन्नारायणके अर्थ नमस्कार होय विशुद्ध सत्वस्थानमें रहिवेवारे महाहंसरूपको हम ध्यान करै हैं ॥ २८ ॥ हे राजेंद्र ! सर्ग बढायवेकी इच्छावारे दक्षके बेटानके पास जायकै नारदमुनि पहिलेकी नाईं विनसोहू वाणीके कूट आयकर पहिलेकेसीही तरह कहिते भये ॥ २९ ॥ हे दाक्षायणहो ! मेरा कह्यो भयो उपदेश सुनो हे भैयानके चाहवेवारे, भाई जा पदवीको गए वाको तुमहू जाओ ॥ ३० ॥ जो भैयाकी गतिको भैया जाय वोही धर्मवेत्ता है, वो पुण्यबंधु है, वे मरुतनके संग आनन्दसों वसै है ॥ ३१ ॥ अमोघदर्शनवारे नारदजी ऐसें कहिकै चलेगए हे परिक्षित् ! जैसे भैयानने नारदके कूटनको निश्चय कियो हो वैसेही वेहू भैयानकी पदवी ढूंढ वा वैकुंठकों वेहू जातेभये ॥ ३२ ॥ बहुत सुंदर प्राचीन परमेश्वरके मार्गको जातेभये, जैसें पश्चिमकी गई रात बगदके न आवैं तैसे आजतक वे नहीं लौटते भये ॥ ३३ ॥ इतनेमें प्रजापति बहुत उत्पात देखते भये पहिलेकी नाईं नारदने पुत्र नाश करै ये सुनते भये ॥ ३४ ॥ पुत्रशोकसों मूर्छित वो प्रजापति दक्ष नारदको क्रोधसों कोसतो भयो, रोषसो होंठ फरकन लगे सो सामने आये नारदको देख बोलो "श्रीनारदजीने विचारो कि जाके पुत्रनको नैक उपदेशसो ज्ञान लगजाय है सो याके पिताकूं तो शीघ्र ज्ञान है जायगो यह विचार कर नारदजी आये तब दक्ष कोप कर बोलै " ॥३५॥ दक्ष बोले कि हे असाधो ! साधूनके चिह्न करकै तुमनै बहुत असाधुपन करो, मेरे छोटे बालकनको भिक्षुनको मार्ग दिखाय दीनो ॥ ३६ ॥ तीन ऋणनसो विना छूटे कर्मनकी मीमांसा करे विना हे पापरूप ! तैंनें कल्याणको विघात करो, लोक परलोक दोनों बिगाडे " मनुस्मृतिमें है॥ ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत् ॥ अनपा-

---

१ वो स्वरब्रह्मको ये सरगम भैरवीकी है ॥ तिताल धीमा ॥ टप्पा ॥ " सोरेगमधमपगधधपमगमपधमपग ॥ अस्ताई ॥ धधनी साधनिसागरेसानिधरेसानिधपमगरेसासोरेगमरेगमपगमप धमप धनिप धनिसा सानिधप निधपम धपमगपमगरे मगरेसा ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कृत्य मोक्षं तु सेवमानो व्रजत्यधः॥श्रुतिः॥ जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवान् जायते ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः।एष वा अनृणो यः पुत्री यज्वा ब्रह्मचारी वासीति श्रुतेः" ॥ ३७ ॥ ऐसे तुम निर्दयी हो, बालकनकी मति बिगाडवेवारे श्रीहरिके पार्षदनके मध्यमें विचरो हो, तुम यज्ञनाशी निर्दयी हो ॥ ३८ ॥ निश्चय है कि तुम्हारे सिवाय भागवत नित्य सब जीवनपै अनुग्रह करें हैं, परंतु तुम मित्रनसौं द्रोह करै हो, जो काऊसो वैर न करै विनकै वैर करवेवारे तुम हो ॥ ३९ ॥ जो तुम ऐसे मनमें समझौ हो कि स्नेहरूपी पाशको छेदन करनवारौ वैराग्य है तौहू तुमसरीखे झूंठे वैरागिनको भेष बनाये फिरनवारेनको उपदेशसौं जामें ठगई भरी है पुरुषनकौं वैराग्य नहीं होयहै ॥ ४० ॥ जबतक ये काऊ बातको आप अनुभव करैहै तबतक विषयनकी तीक्ष्णतासो जो आप वैराग्यवान् होय तो ठीक है औरनके सिखायवेसौं जो बुद्धिभिन्न कारणसो ज्ञान होय है वह कछु नहीं है ॥ ४१ ॥ कर्मकांड करवेवारे साधु गृहस्थीनको तैंने बडो बुरो कीनो यासे मैं तोपै बडो कुपित हूं ॥ ४२ ॥ हे पुत्रनाशक ! तैंने बडो अमंगल आचरण करो याते हे मूढ ! तुम एक जगै जो बैठोगे तो शिरमें दर्द होयगो और लोकमें भ्रमण करते २ तुम्हैं कहीं ठिकाना न लगैगो ॥ ४३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि साधुनमें संमत नारद बहुत अच्छो ऐसें कहि शाप अंगीकार करते भये, साधुनकी येही बात है कि ईश्वर समर्थ हैकै आप सहनशील करै वोही धन्य हैं ॥ ४४ ॥

श्रीशुक उवाच–प्रतिजग्राह तद्वाढं नारदः साधुसंमतः ॥
एतावान् साधुवादो हि तितिक्षेतेश्वरः स्वयम् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे नारदशापो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

श्रीशुक उवाच–ततः प्राचेतसोऽसिक्न्यामनुनीतः स्वयंभुवा ॥
षष्टिं संजनयामास दुहितॄः पितृवत्सलाः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि ताके उपरांत दक्षने ब्रह्माजीकी आज्ञासौं असिक्नीस्त्रीमैं पिताकूं प्यारी साठ कन्या जन्माई, क्यों कि स्त्रीको एकाएकी ज्ञान नहीं होय है, बहकाईमें कम आवै हैं स्त्री मायाको विकार है ॥ १ ॥ दश धर्मकों व्याही कश्यपको १३ दई, चंद्रमाको २७ दीनी, भूतांगिरकृशाश्वकौं दो दो दीनी बाकी ४ तार्क्ष्य नामांतर कश्यपकोही व्याही ॥ २ ॥ मोसो पुत्रसहित इनके नाम सुनो जिनकी संतानोंसो त्रिलोकी भरगई ॥३॥ भानु, लंबा, ककुभ, जामि, विश्वा, साध्या, मरुत्वती, वसु, मुहूर्ता, संकल्पा ये धर्मकी स्त्री हैं इनके पुत्र सुनो ॥ ४ ॥ भानुको देवऋषभ, वाको इंद्रसेन भयो हे नृप ! लंबाको विद्योत भयो, वाको स्तनयित्नु भयो ॥ ५ ॥ ककुभके संकट वाको कीकट पुत्र भयो जामिके भुव दुर्ग भयो वाके स्वर्ग नंदि भयो ॥ ६ ॥ विश्वाके विश्वेदेवा भये, इनके संतान न भई, साध्याके साध्यगण भए अर्थसिद्धि वाको पुत्र होतो भयो ॥ ७ ॥ मरुत्वान् और जयंत मरुत्वतीमें भये, जयंत वासुदेवको अंश है वाको उपेंद्रहू कहै है ॥ ८ ॥ मुहूर्तमात्र जितने देवगण हैं ये मुहूर्तके पुत्र भए, जो वे सब जीवनको अपने अपने कालको फल देय हैं ॥९॥ संकल्पाके संकल्प पुत्र भयो वा संकल्पके कामदेव पुत्र भयो असलमें काम संकल्पसोही होय हैं, अष्टवसु वसुके पुत्र हैं, तिनके नाम सुनो ॥ १० ॥ द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष, वसु, विभावसु, द्रोणकी अभिमती भार्यामें हर्ष

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शोक भय आदि पुत्र होतेभये ॥ ११ ॥ प्राणकी ऊर्जस्वती भार्या, सह, आयु, पुरोजव जन्मातीभई ध्रुवकी धरणी भार्या अनेक पुत्र रचती भई ॥ १२ ॥ अर्कको वासना भार्या तर्षादिक पुत्र रचती भई, अग्नि वसुकी धारा स्त्री द्रविण आदि पुत्र रचतीभई ॥ १३ ॥ कृत्तिकाके पुत्र स्कंद भये स्कंदके विशाखा आदि पुत्र भये दोषके शर्वरी नाम भार्यामें भगवान्को अंशकला शिशुमार पुत्र भयो ॥ १४ ॥ वसुके अंगिरा गोत्री पुत्र विश्वकर्मा शिल्पशास्त्रके आचार्य होते भए ॥ १५ ॥ विभावसुकी उषा स्त्री व्युष्ट रोचिष आतप रचतीभई आतपने पंच याम भूत जाग्रत कर्ममें साक्षी रचे ॥ १६ ॥ भूतकी सरूपा भार्या कोटानकोट भूत रचती भई, रैवत अज भव वाम उग्र वृषाकपि ॥ १७ ॥ अजैकपात् अहिर्बुध्न्य बहुरूप महान् ये एकादश रुद्र भए रुद्रके और बहुतपार्षद दूसरी स्त्रीमें घोर विनायक आदिक होते भए ॥ १८ ॥ अंगिरा गोत्री प्रजापतिकी स्वधापत्नी पितरनको रचतीभई ताकी स्त्री अथर्वा अंगिरसवेदको पुत्रभावमें करतीभई ॥ १९ ॥ कृशाश्वकी अर्चिभार्या धूम्रकेशको उत्पन्न करतीभई, वेदशिरा धिषणामें देवल वयुन मनु उत्पन्न करतीभई ॥ २० ॥ तार्क्ष्य मुनिकी विनता कद्रू पतंगी यामिनी ४ स्त्री ही पतंगी पक्षीनको रचतीभई, यामिनी (शलभ) टीडी रचती भई ॥ २१ ॥ सुपर्णा साक्षात् यज्ञ ईश्वर वैकुंठनाथके वाहन गरुडजीको रचती भई " एक समय गरुडजीके गर्व भयो कि सबसो हम शीघ्र चले हैं यासो भगवत्के वाहन भए हमसो जल्दी चलवेवारो कोई जीव विश्वमें नहीं है ये बात श्रीहरिने सुन कही कि हे गरुड ! केतुमालखंडके समुद्रसों परे एक टापूपर एक ब्राह्मण हमारो भक्त शरीर त्यागेगो वाय यहां शरीर न त्यागे तासो पहिले देहसहित जल्दी जायके लाओ, सो मनसोहू लक्षगुण अधिक एक पलमें गरुड भगो सो पहिले सूर्य अस्त भयो वा दिन टिके दूसरे दिन टिके तीसरे दीन वा टापूमें मच्छके मुखपर टिके तब वोह मच्छ इन्हें देख बोले तुम कौन ? वो बोले गरुड है मच्छ बोलो कितो वेग है उननें कही बहुत है, मच्छ बोले कुछभी नहीं, तुम पहिले दिन पूंछपर दिनभर चले दूसरे दिन कंधेपे सोए तीसरे दिन मुखपर सांझ भई वो ब्राह्मण तौ वैकुंठमें गयौं तुझमें कुछ शीघ्र चलना नहीं मोको देख तब गरुडजी हार मान गर्व शांत कर भगवत्के चरणोंमें गिरपडे भगवान् बोले भाई अनेक बडे जीव हैं वे तोसों कोडगुणे भागसकै हैं खैर हमारी कृपासो तुम्हेंभी यह शक्ति मिली है" वा गरुडको सुपर्णा उत्पन्न करती भई, और दूसरो सूर्यको सारथी अरुण भयो कद्रूने अनेक नाग रचे हे ॥२२॥ हे भारत कृत्तिकादि नक्षत्र चंद्रमाकी स्त्री भई दक्षके शापसो चन्द्रमा सन्तानहीन रहे, राजयक्ष्माको रोगभयो ॥२३॥ फेर चंद्रमा क्षय होय बढै, ऐसी कलानको प्राप्त होतेभये अब उन मातृनके नाम सुनो जो लोकनकी कल्याण करवेवारी भई ॥२४॥ कश्यपकी स्त्रीनकरकै ये सब जगत् भयो अदिति, दिति, दनु, काष्ठा, अरिष्टा, सुरसा, इला ॥ २५ ॥ मुनि, क्रोधवशा, ताम्रा, सुरभि, सरमा, तिमि, तिमिके सब जलमात्रके जीव भए पशुमात्र सरमाके भए ॥ २६ ॥ हे नृप ! सुरभीके भैंसा बैल और जो दो खुर चिरे जीव

१ शंका—कश्यपमुनिकी तिमि, सरमा, इला, सुरसा आदि स्त्रीयें थीं, जिनके तृण, सर्प, गीध, जलचर, कुत्ते इत्यादि ऐसे ऐसे पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके ऐसे ऐसे पुत्र हुए सो सब स्त्री जातिकी ब्राह्मणी थी उन्होंने श्वानादिक जो पुत्र उत्पन्न किये, सो उनका स्वरूप उनकी माताओंकासा था अथवा और किसी प्रकारका था ? यह मुझको बडा भारी सन्देह है कि ब्राह्मणियोंके उदरसे ऐसी कुत्सित सन्तान क्यों उत्पन्न हुई ?

उत्तर—जैसा सीपमें मोती होताहै, वैसाही हाथीके मस्तकमें गजमोती होता है, जैसे मृगकी नाभीमें कस्तूरी होती है वैसाही गायके कानमें गोरोचन होता है, जैसे बांसमें वंशलोचन होता है वैसेही ब्रह्माकी इच्छासे तिमि सुरसा इला आदि लेकर कश्यप मुनिकी स्त्री थी, और जातिकी ब्राह्मणीभी थी कुछ पशु, पक्षीरूप नहीं थी, परन्तु विधाताकी गति बडी अपरम्पार है, इसलिये ब्राह्मणियोंके पेटसे सब जीव, जन्तु, पशु, पक्षी उत्पन्न हुए ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये सब भये, ताम्राके शिक्रा गीध आदि भए, मुनिस्त्रीके अप्सरानके गण भये ॥ २७ ॥ हे राजन् ! दन्दशूकआदि सर्प क्रोधवशाके भए, इलाके सब वृक्ष जन्मे, सुरसाके सब यातुधान राक्षस भए ॥ २८ ॥ अरिष्टाके गन्धर्व भए काष्ठाके एकशफके जीव भए दनुके पुत्र इकषट भये, तिनमें प्रधान-नके नाम सुनो ॥ २९ ॥ द्विमूर्द्धा, शंवराशुर, अरिष्ट, हयग्रीव, विभावसु, अयोमुख, शंकुशिरा, स्वर्भानु, कपिल, अरुण ॥ ३० ॥ पुलोमा, वृषपर्वा, एकचक्र, अनुतापन, धूमकेश, विरूपाक्ष, विप्रचित्ति, दुर्जय ॥ ३१ ॥ स्वर्भानुकी सुप्रभा कन्या नमुचिने व्याही, वृषपर्वाकी शर्मिष्ठा ययाती नाहुषबलीने व्याही ॥ ३२ ॥ वैश्वानरकी सुन्दर चार सुता भई उपदानवी हयशिरा पुलोमा कालका ॥ ३३ ॥ हिरण्याक्ष उपदानवीको व्याहतो भयो हे नृप ! क्रतु हयशिरको व्याहते भए पुलोमा का-लका ये दोनों वैश्वानरकी कन्या कश्यपने व्याही ॥ ३४ ॥ भगवान् कश्यप ब्रह्माकरकै प्रेरित व्याह करते भए, पौलोम कालकेय दानव युद्धशाली महायुद्ध करवेवारे भए ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे पिताके अर्जुन पिता इन्द्रके प्रिय करवेवारे जब स्वर्गमें गए तब वे अर्जुन तिन यज्ञके नाशक साठ हजारनकों मारते भए ॥ ३६ ॥ दितिके सुत हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपु भए, हे पुत्रसत्तम ! सिंहिका नाम एक कन्या भई ॥ ३७ ॥ विप्रचित्ति सिंहिकामें एक ऊपर सौ पुत्र उत्पन्न करतो भयो, राहु ज्येष्ठ हो, केतु शतवो जो ग्रहभावकों प्राप्त भयो ॥ ३८ ॥ अब अदितिको वंश प्रारंभसो सुनो जहां नारा-यणदेव विभु अपने अंशसों अवतार लेते भए ॥ ३९ ॥ विवस्वान् अर्यमा पूषा त्वष्टा सविता भग धाता विधाता वरुण मित्र शक्र उरुक्रम ये द्वादश सूर्य हैं अदितिसों उत्पन्न भये ॥ ४० ॥ विवस्वा-नूकी संज्ञा स्त्री श्राद्धदेवमनुकों उत्पन्न करती भई, फिर वाही महाभागने एक जोडा जन्मायो यमदेव यमी कन्या वोही संज्ञा वडवा घोडी बनके भूमिमें अश्विनीकुमारको रचती भई ॥ ४१ ॥ छायाके शनैश्चर होतो भयो, पीछे सावर्णि मनु भए,और तपती नामनी कन्या भई जो संवरण पतिको व्याहती भई ॥ ४२ ॥ अर्यमाकी मातृका पत्नी तिनमें चर्षणी नाम पुत्र उत्पन्न भए जिनमें मनुष्यकी जात ब्रह्माजीने कल्पना करी मनुष्य जाति सबसों उत्तम है ज्ञानके योग्य है मनुष्यसोही सब और जात होय है ॥ ४३ ॥ पूषाके पुत्र नहीं भयो पिष्टको खातो हो पहिलेही याके दांत तोड दिये हैं, यह दक्षके वचननसों ब्रह्मसमाजमें दांत दिखायकै हंसो हो ॥ ४४ ॥ त्वष्टाकी भार्या रचना नामवाली दैत्यनकी छोटी बहन ही वाके संनिवेश, वीर्यवान् विश्वरूप दो पुत्र भये ॥ ४५ ॥ वो द्वेष करतो हो तोहूं वा दोहितेकों देवतानने एक समय वर्ण बांध पुरोहित करयो, जब कि विमन होयके अंगिरा गोत्री बृह-स्पतिने सब देवतानकी पुरोहिताई छोड दीनीही ॥ ४६ ॥

तं वव्रिरे सुरगणा दौहित्रं द्विषतामपि ॥
विमतेन परित्यक्ता गुरुणाङ्गिरसेन यत् ॥ ४६ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे दक्षकन्यावंशवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

राजोवाच-कस्य हेतोः परित्यक्ता आचार्येणात्मनः सुराः ॥
एतदाचक्ष्व भगवन् शिष्याणामक्रमं गुरौ ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि हे भगवन् ! बृहस्पतिने अपने प्यारे देवता किस हेतुसो त्यागे सो कहो, शिष्यनको कहा अपराध गुरुमें भयो ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे नृप ! इंद्र त्रिभुवनके ऐश्वर्य

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैवेसो मदांध होयके संतनके मार्गकी अवज्ञा करतो भयो, मरुत् अष्टवसु १२ आदित्य ऋभु इनके बीचमें ऊचेपर बैठो ॥ २ ॥ विश्वेदेवा साध्य अश्विनीकुमार ये बैठे हे सिद्ध चारण गंधर्व मुनि ब्रह्मवादी बैठे हे ॥ ३ ॥ विद्याधर अप्सरा किन्नर पक्षी उरग ये सब इंद्रकी सेवा करते हे हे राजन् ! चारों ओरसो स्तुति होती ही ॥ ४ ॥ सुंदर ललित राग गायो जातो हो, अपने आसनपर बैठो ध्यानमें मग्न हो श्वेतच्छत्र लगो जो चंद्रमंडल समान सुंदर हो ॥ ५ ॥ औरहू महाराजनके चामर व्यजन आदिक सुख तिन करकै युक्त हो, आधे आसनपें पौलोमीके शचीके साथ आनन्दसों विराजमान हो ॥ ६ ॥ सो एक समय देवनके और अपने परम आचार्य बृहस्पतिजीकों आए देख उठनो आसन देनो ये सत्कार न करतो भयो ॥ ७ ॥ वाणिनके पति सुर असुर सब जाकूं नमस्कार करैं ऐसे बृहस्पतिको देखके इंद्र आसनसो नहीं चलायमान होतोभयो, सभामें आए देखे तोहू बैठो रह्यो ॥ ८ ॥ तब कवि अंगिरागोत्री प्रभु श्रीमदकी विक्रियाकों जान शीघ्र चुप्प हैकै घर चले आए ॥ ९ ॥ थोडी देरमें जब इंद्र सावधान भयो विचारो कि मोसो गुरुकी अवज्ञा भई अपने मनसो अपनपेकी सभामें बडी निंदा करतो भयो ॥ १० ॥ अरे थोडी बुद्धिवारे मैंनें बडो बुरो कर्म करो बडे खेदकी बात है कि ऐश्वर्यमें मतवारो हैकै सभामें मैंने गुरुजीको तिरस्कार कीनो ॥ ११ ॥ स्वर्गके पतिकी लक्ष्मीको अब कौन पंडित चाहै जा लक्ष्मी करकै देवतानको ईश्वर असुरनकेसे भावकों प्राप्त है गयो ॥ १२ ॥ जो कोई ब्रह्म ऐश्वर्यके स्थानमेंहू बैठकै कोई बडो आवै वाको खडे होयकै सत्कार करनो आसनादिक दैनो नहीं जानै है वो श्रेष्ठ धर्मको नहीं जानै है ॥ १३ ॥ कुत्सित मार्गकी आज्ञा करवेवारे नरकके अंधकारमें गिरनवारेनके वचनकी श्रद्धा करै है वे पाषाणकी नावकी नाई डूबै हैं ॥ १४ ॥ अब मैं देवनके आचार्य ब्राह्मण गुरुको जिनकी अगाध बुद्धि है विनें शठभाव छोडकर शिरसो विनके चरण-नकों स्पर्श कर प्रसन्न करूंगो ॥ १५ ॥ इंद्र ऐसे चिंतवन कर रह्यो हो सो बृहस्पति अपने घरसो कोई न जान सकै ऐसे अलक्षित स्थानमें अध्यात्मविद्यासों जाते भये ॥ १६ ॥ जब गुरुजीको पतो न लगो तो इंद्र बुद्धिकरकै देवसहित ध्यान करत अपने कल्याणकूं नहीं प्राप्त होतो भयो ॥ १७ ॥ ये बात सुनके सब असुर शुक्राचार्यको आसरो लेकर दुर्मदी महा आततायी, देवनसो इंद्रलोक छीनवेको उद्यम करते भये ॥ १८ ॥ तिनके मारे भये तीक्ष्ण बाणनसो अंगके ऊरु बाहु सब कटने लगे, तब देवता इंद्रसहित नीचो कंधा करकै ब्रह्माजीकी शरण जाते भये ॥ १९ ॥ विन देवतानकों भगवान् आत्मभू ब्रह्म पीडित देखकर विनको सांत्वन करते विनपै परम कृपा कर बोले ॥ २० ॥ श्रीब्रह्माजी बोले कि हे देवनमें श्रेष्ठहो ! बडे कष्टकी खेदकी वार्ता है कि महा अमंगल तुमने करो, ब्रह्मिष्ठ ब्राह्मण जितेंद्री गुरुको ऐश्वर्यके मदसो सत्कार न कीनो ॥ २१ ॥ हे देवताहो ! जो तुमने गुरुको अपमान कियो वाही पापको यह फल है कि जो समृद्ध तुम तिन तुमारो क्षीणभये वैरीनसो पराभव भयो ॥ २२ ॥ हे इंद्र ! वैरीनको

१ शंका—तीन लोकका राज्य करते करते इन्द्रको बहुत युग बीत गये और बृहस्पति जो उनके गुरु थे सो नित्य प्रति इन्द्रकी सभामें आतेथे, कभीभी गुरुका निरादर नहीं किया परन्तु उस दिन इन्द्रने गुरुका निरादर क्यों किया ? क्या बुद्धि भ्रष्ट होगई ? यह बडी भारी शंका है ?

उत्तर—राजा बलिको दुःखी देखकर शुक्राचार्यने शत्रुको जीतनेके लिये राजा बलिसे यज्ञ कराया और उस यज्ञकी समाप्तिके लिये जो सामग्री इकट्ठी की थी उससे यह आनन्दपूर्वक यज्ञ समाप्त होगया उसी दिन इन्द्रका पुण्य नष्ट होगया, तब बलीके यज्ञके पुण्यसे इन्द्र उन्मत्त अर्थात् पागल होगया, तब बलीकी यज्ञशाला शुक्राचार्यने विचार किया कि जब इन्द्र अपने गुरुका निरादर करेगा तब इन्द्रको राजा बलि पराजय करेंगे, सिवाय इस उपायके इन्द्रको जीतनेका और कोई दूसरा उपाय नहीं पाया जाता, ऐसा विचार कर बलिके शत्रु इन्द्रको मोहित करके इन्द्रसे बृहस्पतिजीका निरादर कराया, इसलिये उस दिन इन्द्रने गुरु बृहस्पतिजीका निरादर किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देखो जो पहले गुरुकी अवज्ञासो क्षीण भए फिर भक्तिसों शुक्राचार्यको आराधन कर या समय वर्तमानमें फेर राक्षस बढगए ॥ २३ ॥ भृगुको देवता जाननेवारे असुर मेरेहू स्थानको लियो चाहैं हैं, गुरुकी प्रसन्नताकरकै मनुष्यकों कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं हैं सब सुलभ हैं ॥ २४ ॥ भेदनमैं न आवै ऐसै स्वर्गको शिक्षा करे भए भृगुके मंत्र कुछ नहीं गिनै है जहां विप्र गोविंद गौ ये ईश्वरके समान पूजे जांय ऐसे नरेश्वरनको कभू अमंगल नहीं होय है ॥ २५ ॥ ताते शीघ्र विश्वरूप विप्रकों तुम आसरों लेओ, वो तपस्वी त्वष्टाको सुत आत्मज्ञानी है, जो वाकों सत्कार करकै राखोगे तो तुम्हारे सब अर्थ पूरे करैगो परंतु वो असुरनको दोहितो है सो वो कोई कर्म तुमसों छिपायके करै तौ वाको क्षमा करियो ॥ २६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! ब्रह्माकरकै ऐसे कहेभए देवनको सब दुःख जातो रह्यो तब त्वष्टाके पुत्र विश्वरूप ऋषिके पास जाय वासों मिलके ये बोले ॥ २७ ॥ देवता बोले कि हम सब तुम्हारे आश्रममें अतिथि प्राप्त हैं, तुम्हारो मंगल होय हे पितः ! हमारो मनोरथ पूरो करो, जो पिता हैं बडे हैं वे कोई समय गाढी आवै तब वेही रक्षा करै हैं ॥ २८ ॥ माता पिताकी सेवा करनो यही सत्पुत्रनको परमश्रेष्ठ धर्म है पुत्रवालेकूंही पिताकी सेवा करनो अवश्य है, तौ ब्रह्मचारीके विषयमें कहा कहै ॥ २९ ॥ आचार्य ब्रह्माकी मूर्ति है, पिता प्रजापतिकी मूर्ति है, भ्राता मरुत्पतिकी मूर्ति है, माता साक्षात् पृथिवीकी मूर्ति है ॥ ३० ॥ दया बहनकी मूर्ति है, धर्मकी मूर्ति अतिथि है, अग्निकी मूर्ति अभ्यागत है, सब जीवमात्रमें परमेश्वर बुद्धि करनी वो ईश्वररूप है ॥ ३१ ॥ तातें आर्त पितरनको शत्रुनसें तिरस्कार होनो येही परमपीडा है, हे तात ! तपसो याको दूर करो ये हमारो सन्देशो करवेको योग्य हो ॥ ३२ ॥ ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण गुरु आपको उपाध्याय हम वरै हैं तुम्हारे तेजसो वैरीनको अनायास करकै विजय करैंगे ॥ ३३ ॥ प्रयोजन पडवेपै छोटेके चरणको प्रणाम करनो निंदित नहीं है और कार्यनमें तौ अवस्था बडेपनको कारण मानी जाय है परन्तु वेदविद्याके विषयमें अवस्थासौ बडप्पन नहीं गिनो जाय ॥ ३४ ॥ शुकदेवजी बोले कि तुम पुरोहित हमारे होओ ऐसे जब देवनने प्रार्थना कीनी, तब वो महातपस्वी विश्वरूप प्रसन्न हो मधुरवाणीसो देवनसों बोलो ॥ ३५ ॥ विश्वरूप बोले कि हे नाथहो ! धर्मात्माननें ब्रह्मतेजको नाशक ये पौरोहित्यपन निंद्यो है, परन्तु हे नाथहो ! मोसरीको लोकपालनके कहे भएको कैसै न करैगो क्योंकि मैं तुमारो शिष्य हो नाम तुम मेरे बडे हो मैं तुमकरके शिक्षा देवेलायक हो सो हमसरीनके तो तुमारी आज्ञा मानवोही स्वार्थ है याहीमें हमारो भलो है ॥ ३६ ॥ जिनकों कुछ चाह नहीं उनको धन शिलोंछनवृत्ति है, वासोंही वे सब क्रिया करै है तुम लोकके ईश्वर हो यह निंदित पुरोहितपन कैसे मैं अंगीकार करूं, जासौ दुर्बुद्धि पुरुष प्रसन्न होय हैं ॥ ३७ ॥ यद्यपि ऐसै है तथापि बडनने मोसों प्रार्थना कीनी है सो मैं मने नहीं करूंहूं, जो आपने चाह्यो है सो प्राण अर्थनसो साधूंगो ॥ ३८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि विश्वरूप महातपस्वी देवनसों ऐसे कहिके परम समाधिसों पुरोहितपनेकों वरण करतो भयो ॥३९॥ देवद्रोहीनकी शुक्राचार्यकी विद्यासों जो रक्षित लक्ष्मी ही वाय इन्द्रके अर्थ श्रीनारायणकवच विद्या करकै छिडायके विश्वरूप देतो भयो ॥ ४० ॥ जा करकै गुप्त हैके सहस्राक्ष समर्थ असुरनकी सेनानकों जीततो भयो विश्वरूप उदार बुद्धिवारो वाही नारायणकवचको इन्द्रसों कहितो भयो "इन्द्रको सहस्राक्षनाम ऐसो भयो कि गौतमजीकी नारी अहिल्या महारूपवती हो वासों विहार करवेको एक समय इंद्रको मन चलो, सो चंद्रमा तो मुर्गा बन आयो गौतमके आश्रमपे बोलो इन्द्र गौतमको रूप धर आए ऋषि सवेरो भयो

१ गुरुके वचन प्रतीति न जेही । सपनेहु सुलभ न सुखसिधि तेही ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जान स्नानको गए गंगाजी बोली अभी अर्धरात्र है घर जाओ, कोई छल है ये सुन गौतम घर आय देखै तो इन्द्र चन्द्र सो चंद्रमाके धोतीको छीटा मारो सो आजतक लांछन बनो है, इंद्रको शाप दीनो कि भगके निमित्त तुम आए सो सहस्र भग तेरे शरीरमैं होय सो होगई इंद्रनें प्रार्थना कीनी ऋषि बोले रामावतारमें तुम दर्शनकों जाओगे सो सहस्रनेत्र हो जांयगें यासे तैसेई फेर भयो सहस्राक्ष याको नाम ऐसो भयो " ॥ ४१ ॥

यया गुप्तः सहस्राक्षो जिग्येऽसुरचमूर्विभुः ॥
तां प्राह स महेन्द्राय विश्वरूप उदारधीः ॥४१॥

इति श्रीमद्भागवत० षष्ठस्कन्धे इन्द्रादिदेवैर्विश्वरूपस्य पौरोहित्याय वरणं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

राजोवाच-यया गुप्तः सहस्राक्षः सवाहान् रिपुसैनिकान् ॥
क्रीडन्निव विनिर्जित्य त्रिलोक्या बुभुजे श्रियम् ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि जाकरकै गुप्त रक्षितहो इंद्र वाहनसहित वैरिनकों क्रीडा करत जीततो भयो और त्रिलोकीकी लक्ष्मी भोगतो भयो ॥१॥ हे भगवन्! वो नारायणकवच मोसो कहो जासौ महाआततताई शत्रुनको कवचसो रक्षित हो इंद्र संग्राममें जीततो भयो[1] ॥ २ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि त्वष्टाको पुत्र पुरोहित जब वर्‌यो तब पूछतें भए इंद्रसो नारायणकवच कह्यो हो सो एकमन सावधान कर तुम सुनो ॥ ३ ॥ विश्वरूप बोले कि जब भय प्राप्त होय तब पांव हाथ धोयकर आचमन कर पवित्री धार उत्तर मुख कर अंगन्यास करन्यास द्वादशाक्षर तथा अष्टाक्षरमंत्रसो करै वाणी जीतै पवित्र रहैं ॥ ४ ॥ जब भय आयकर प्राप्त होय तब नारायणकवचको धारण करै, दोनों पांव जानु ऊरु उदर हृदय वक्षस्थलमें ॥ ५ ॥ मुख शिर आदिसों लेकै ओंकार आदिको विन्यास करै ॐ नमो नारायणाय या मंत्रको विपर्यय अर्थात् उलटी तरहसो पांवसै प्रारंभ करैं सो उलटे क्रमसौ इन अक्षरनसो उलटे क्रमके अनुसार इन अंगनमें न्यास करै ॥ ६ ॥ द्वादश अक्षरके मंत्रसो करन्यास करै प्रणवसो आदि लेकै यकार पर्यंत अंगुली अंगुष्टपर्वमें करै ॥ ७ ॥ हृदयमें ओंकार धारै विकारको मूडपर, पकार भ्रूमें णकार शिखामें धारे ॥ ८ ॥ वेकार नेत्रमें योग करै नकार सब संधिनमें मकार अस्त्रको उदेशकर बुद्धिमान् मंत्रमूर्ति होय ॥ ९ ॥ विसर्गसहित फट् अंततक सब दिशामें जल फैंके ॐ विष्णवे नमः ये मंत्र है ॥ १० ॥ छः शक्ति सहित व्यापक परमेश्वरको ध्यान करै, विद्या तेज तप मूर्ति होय या मंत्रकों उच्चारण करै ॥ ११ ॥ गरुडजीके ऊपर विराजमान भगवान् हरि सब

---

१ शंका-राजा परीक्षित्की मृत्यु जब समीप आगई तब राजाने भगवान्की कथा तो बूझना छोडदी, नारायणवर्म क्यों मुनिसे पूछा ? नारायणवर्म तो शरीरकी रक्षा है, सो शरीर राजाका छूटनेवाला, फिर नारायणवर्मसे क्या प्रयोजन निकला ?

उत्तर-सज्जन पुरुष अपने सुखके लिये कुछभी कर्म नहीं करते; दूसरेके सुखके लिये अनेक कर्म करते हैं, राजा परीक्षित नदीको, पर्वतको वृक्षको, दूसरेका भला होना अच्छा जान पडता है वही स्वभाव राजाने ग्रहण कर रक्खा है जैसे नदी रात दिन जलसे भरी रहती है परन्तु अपने लिये नहीं भरी रहती दूसरे जीवोंके सुख देनेके लिये जलसे भरी रहती है यथा पर्वत चारा, लकडी औषधि इत्यादि अनेक वस्तु अपने ऊपर रखता है परन्तु अपने लिये नहीं, दूसरे प्राणियोंके सुख देनेके लिये जैसे वृक्ष दूसरेके सुखके लिये फल, फूल, पत्र आदि रखते हैं और दूसरेका कार्य सिद्ध करते हैं ऐसेही राजा परीक्षित्भी आप तो मरनेके योग्य होगया परन्तु और प्राणियोंके सुखके लिये नारायणवर्म्म बूझा है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ओरसों मेरी रक्षा करैं, शंख चक्र गदा ढाल तल्वार बाण पाश कमल धारे अष्टबाहु अष्टगुणी रक्षा करैं ॥ १२ ॥ वरुणकी फांसीसो जलके जीवनसों जलमें मत्स्य भगवान् मेरी रक्षा करैं स्थलभूमिमें मायासों शरीरधारी वामनजी रक्षा करै, विश्वरूपधारी त्रिविक्रम भगवान् आकाशमें रक्षा करै ॥ १३ ॥ असुरयूथपति हिरण्यकशिपुके नाशक प्रभु नृसिंहजी दुर्गममार्गमें संग्राम आदिमें रक्षा करै जिनके महाअट्टहाससो दिशा गजीं और गर्भ गिरते भए ॥ १४ ॥ अपनी दंष्ट्राकरकै धराको वाराहरूपसो लाय-वेवारे यज्ञकल्पभगवान् यज्ञमें मेरी रक्षा करैं, रामचंद्र पर्वतनमें रक्षा करैं प्रदेशमें श्रीलक्ष्मणजी भरताग्रज समेत रक्षा करै ॥ १५ ॥ उग्रधर्मके प्रमादसो श्रीमन्नारायण मेरी रक्षा करै, हांसीसो नरभगवान् रक्षा करै, सब योगीनके नाथ दत्तात्रेय अयोगते रक्षा करैं गुणनके ईश्वर कपिलभगवान् सब कर्मबंधनसों रक्षा करैं ॥ १६ ॥ कामदेवसों सनत्कुमार रक्षा करै श्रीहयग्रीवजी मार्गमें देवताकी अव-ज्ञासों रक्षा करैं श्रीनारदजी भगवान्की पूजाके विघ्नसों रक्षा करै, सब नरकसों कच्छपहरि रक्षा करै ॥ १७ ॥ खायवेको कुपथ्यसें धन्वंतरि रक्षा करै सुखदुःखके भयसो ऋषभदेवजी रक्षा करै इननेही आत्मा जीतीही लोकनकी निंदासों यज्ञभगवान् रक्षा करैं मनुष्यके मारवेसो बलभद्र रक्षा करै, क्रोधवश सर्पनके गणसों शेषजी रक्षा करै ॥१८॥ अज्ञानसो वेदव्यासजी रक्षा करै प्रमादसो पाखंडगणसो बौद्धभगवान् रक्षा करै, कालके मलरूप कलिसो कल्किभगवान् रक्षा करैं, जो धर्मकी रक्षाके लिये बहुत अवतार धारे है ॥ १९ ॥ केशव भगवान् प्रातःसमय गदासों मेरी रक्षा करै, वेणु बजाते गोविंद सबसो रक्षा करै, शक्ति धारनहारे नारायण मध्याह्नसो पहिले रक्षा करैं, मध्याह्नदिनमें चक्रपाणि भगवान् रक्षा करैं ॥ २० ॥ उग्रधनुषधारी मधुहा देव दुपहरपीछैं रक्षा करै त्रिधामा माधव सांझको मेरी रक्षा करै, प्रदोषमें हृषीकेश रक्षा करै, अर्धरात्रकी निशीथमें एक पद्मनाभ रक्षा करैं ॥ २१ ॥ श्रीवत्सधाम पिछली रातमें रक्षा करै प्रत्यूषसमयमें तरवारधारी जनार्दन ईश्वर रक्षा करैं सब संधिनमें दामोदर रक्षा करै प्रभातमें विश्वेश्वर भगवान् कालमूर्ति रक्षा करैं ॥ २२ ॥ युगांतकी अनलसम तीक्ष्णनेमियुक्त सब ओरसे भ्रमण करनहारो भगवत्को प्रयोग करो चक्र हमारे वैरिनकी सेनाको शीघ्र नाश करो नाश करो, पवन सखा अग्नि जैसे सूखे तृणकों जरावै तैसे जराओ ॥ २३ ॥ वज्रके स्पर्शसों जामेंसे अग्निकेसो कणुका झरै ऐसी हे गदे ! भगवत्को प्यारी हो सो कूष्मांड विघ्नकर्ता यक्ष राक्षस भूत ग्रह इनको पीसो २ वैरीनको चूर्ण करो २ ॥ २४ ॥ हे शंख ! भगवान्के बजायवेसों भयंकर शब्द करकै शत्रुनके हृदयको कम्पायमान करतो यातुधान प्रमथ प्रेत मातृ पिशाच विप्रके नाशक घोर ग्रह घोर डाढावारेनको भगायदेउ ॥ २५ ॥ हे तिग्मधार ! हे असिवर ! शत्रुनकी सेनानके ऊपर परमेश्वरके छूटे भए तुम मेरे शत्रुनको छेदो छेदो, हे ढाल ! हे शतचंद्रसमान ! मेरे अपराध करवेवारे पापीनके नेत्रनकों ढाको २ ॥ २६ ॥ तुम ग्रहनसो केतुसो मनुष्यनसो सर्पनसो डाढाके जीवनसो भूतनसो पापसो सबसो हमको अभय करो ॥ २७ ॥ हे भगवन् ! ये सब आपके नामरूप अस्त्रके कीर्तनसो जो हमारे आनंद हैवेम विघ्न करवेवारे हैं वे शीघ्र नाश होंय ॥२८॥ स्तोत्रसे स्तुति करै जांय वेदमय प्रभु गरुड भगवान् सब कष्टसों रक्षा करै, विष्वक्सेनजी अपने नामसों रक्षा करैं ॥ "स्तोत्रैस्तोभ्यत इति स्तोत्रस्तोभः" ॥ २९ ॥ श्रीहरिको नाम सब संकटसों रक्षा करै, रूप यान आयुध बुद्धि इन्द्रिय मन प्राण हमारेनको भगवान्के और पार्षदभूषण रक्षा करैं ॥३०॥ जब कि यथार्थमें यह सब जगत् नारायणहीको रूप हैं तौ या सत्यसों हमारे सब उपद्रव नाश है ॥ ३१ ॥ एक आत्माके अनुभव करवेवारेनको भगवान् भेदरहित हैं तथापि अपनी मायासों वे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भूषण आयुस्वरूप शक्ति धारण करैं हैं ॥ ३२ ॥ या सत्यप्रमाणसों सर्वज्ञ सर्वगत सर्वत्रनिवासी भगवान् हरि सब स्वरूपसो सदा हमारी रक्षा करो ॥ ३३ ॥ दिशा विदिशा ऊपर नीचे सब ओरसो बाहिर भीतर भगवान् नारसिंहजी लोकके भयकों अपने शब्दकरकै दूर करैं हैं, अपने तेजकरकै सब तेज ग्रस लीनै है ॥ ३४ ॥ हे इंद्र ! ये नारायणकवचरूप वखतर आपसों हमने कह्यो अनायास धारि याको असुरनके यूथपतीनको विजय करोगे ॥ ३५ ॥ याके धारवेवारो जा जा मनुष्यकों नेत्रसो देखै पांवसे छूयदे तोहू शीघ्र भले बुरे छूटजाय ॥ ३६ ॥ वाको कहींसो भय न होयगो, जो या विद्याकों धारैगो, वाको राजा चोर ग्रह आदि व्याघ्रादिकसों कभू भय न होयगो॥३७॥ या विद्याकूं पहिले कौशिक मुनिने धारण कीनीही, सो वो ब्राह्मण योग धारण करकै मारवाडमें अपने अंगको त्यगतो भयो ॥ ३८ ॥ ताके ऊपर विमानपैं बैठे जाते भए एक समय गंधरवनके पति चित्ररथ स्त्रिनकों लिये जहां वो द्विज क्षय भयो वाको देखते भये ॥ ३९ ॥ सो विमानसहित नीचेको शिरकर आकाशसो गिरै, सो वालखिल्यके वचनसो सब हाड ले विस्मय करकै ॥ ४० ॥ पश्चिमवाहिनी सरस्वतीमैं डाल स्नान कर अपने धामकूं जातोभयो ॥ ४१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि जो कोई याकों सुनै जंत्रमें लिखै आदरसो धारे वाकों सब जीवमात्र नमस्कार करैं हैं और सब भ्रमसो छूटजाय है ॥ ४२ ॥ विश्वरूपसो इंद्र या विद्याकों सीखके संग्राममें असुरनकों जीत त्रिलोकीकी लक्ष्मीकों भोगतो भयो' ॥ ४३ ॥

एतां विद्यामधिगतो विश्वरूपाच्छतक्रतुः ॥
त्रैलोक्यलक्ष्मीं बुभुजे विनिर्जित्य मृधेऽसुरान् ॥ ४३ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे नारायणकवचवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

श्रीशुक उवाच–तस्यासन्विश्वरूपस्य शिरांसि त्रीणि भारत ॥
सोमपीथं सुरापीथमन्नादमिति शुश्रुम ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि ॥ हे भारत ! वा विश्वरूपके तीन शिर हैं एकसो सोमदान करैं, दूसरेसो मद्य, तीसरेसो अन्न खाय, ये हमने सुनो है ॥ १ ॥ हे नृप ! सो वो नम्रतासो यज्ञमें देवतानकूं भाग प्रत्यक्ष ऊंचेसो नाम लेलेके देवै कारण कि देवता लोक विनके पितृपक्षमें हे ॥ २ ॥ परन्तु माताके स्नेहके वश हो यज्ञ करते २ असुर लोगनकोहू भाग छिपकर दियो करतोहो ॥ ३ ॥ वाको ये देवनको अनादर करनो देख इन्द्रने डरकर शीघ्र क्रोधके मारे वाके तीनों शिर काट डारे ॥ ४ ॥ सोम पीनवारो शिर कपिंजल पक्षी भयो, सुरा पीवनवारो शिरसो कलविंक, अन्न खानवारो शिरसो तीतर भयो ॥ ५ ॥ यद्यपि इन्द्र समर्थ हो तथापि ब्रह्महत्या अंजलीसो ग्रहण करतो भयो, एक वर्ष उपरान्त वो पाप सब जीवनके शुद्धिके अर्थ वांट देतो भयो इंद्रनें भूमि जल वृक्ष स्त्री इनको चार

१ जाके सामने एक अप्सरा या ठूमरीको गावति भई " आनंदकंद व्रजकुमुदचंद नंदनंदनही ह्यानै हटको ॥ टेर ॥ वो निडर छैल करै फिरत शैल ताके गैल रहै उतही अटको ॥ १ ॥ एकदेस अली मैं जात चली उन गली आय गहकर झटको ॥ २ ॥ होंगई डराय अंग थरहराय झट धाय खोय घुंघट पटको ॥ ३ ॥ जब दई अवाज आई सखिसमाज गए भाज तुरत जमुनातटको ॥ ४ ॥ पनघट न जाय तोहूं बनत नांहि हियमाहि रहै गुरु जन खटको ॥ ५ ॥ संकेत अली छवि देख भली लख चली सुघर नटको ॥ ६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भागकर ब्रह्महत्या वांटी ॥ ६ ॥ भूमिने कही कि मेरेमें गड्ढा अपने आप भरजाय तो ब्रह्महत्या लेऊं वाको वरदान दीनो कि आप भरजायगो ब्रह्महत्याको चिह्न भूमिमें उपरपन दीखै है ॥ ७ ॥ कोई वृक्ष काटे आप भरजाय फेर शाखा आवै या वरदान लेकै वृक्षनने ब्रह्महत्या लीनी तिनमें जो गोंद मद निकरै है ये ब्रह्महत्याको रूप दीखै है ॥ ८ ॥ निरंतर काम रहै, या वरकरके चौथो भाग ब्रह्महत्याकों स्त्रिनने ग्रहण करलीनो स्त्रीधर्मरूप पाप स्त्रीनमें रजोवतीरूप होयकै महिने महिने दीखै है ॥ ९ ॥ दुग्धादिमें जल मिलवेसों फेर वो द्रव्य बढजाय ये वर लैके जलने ब्रह्महत्या लीनी, जलनमें बुद्बुदफेनसों इंद्रको पाप दीखै हैं, जो फेन फेक दो तो वो जल शुद्ध होय है अर्थात् वो वा जलके पापको दूर करैहै जो जलसो वा फेनको दूर करैहै अथवा जो व्यर्थ जलको (क्षिपन्) नाम फेकैहै वो पापको भागी होय है (तस्मादापो न परिचक्ष्याः) ये श्रुति प्रमाण है ॥ १० ॥ जब त्वष्टाके पुत्र मरगयो तब वाने क्रोधकर इंद्रको मार डालवेके लिये वाके शत्रुकी उत्पत्ति हैवेकी कामनासो होम करनो प्रारम्भ कियो ॥ ११ ॥ हे इंद्रशत्रो ! तुम बढो शीघ्र वैरीकों मारो, ये सुन हवनकुंडसों घोरदर्शन पुरुष निकसो ॥ " इंद्रशत्रो विवर्द्धस्व " या मंत्रमें आदि उदात्तकर बोले इकार देरतक बोलवेमें देर हैगई सोई उलटो अर्थ हैगयो कि (इंद्र है शत्रु जाको) ऐसो पुत्र होय त्वष्टाको मन हो कि इंद्रको मारनवारो पुत्र होय, अंत्य उदात्त शत्रुपै स्वर देकै उच्चारण होतो तो इंद्रको शत्रु बढतो, ईश्वरकी इच्छा यहां प्रकृतियुत पूर्वपद होनो लिखो है, मंत्र " यदब्रवीत्स्वाहेंद्रशत्रुर्वर्धस्वेति तस्मादस्येंद्रः शत्रुरभवत् ॥ " शिक्षामें है कि मंत्र स्वर वर्णसो बोलवेमें हीन हैवेसो मिथ्याप्रयोग हैजाय है वो उलटो वाणीरूप वज्र यजमानकूं मारैहै जैसे इंद्रशत्रुमें स्वरके अपराध हैवेसो उलटो भयो ॥ श्लोक ॥ " मंत्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह ॥ स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेंद्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् " ॥ १२ ॥ युगके अंतमें लोकनको यमराजकी समान वो दीखै दिन दिन एक बाण जितनी दूर जाय इतनों बढै[२] ॥ १३ ॥ दग्धपर्वतसमान शरीर, संध्याके बादलकी समान कान्तिमान् और तपेभए तांमेके समान

---

१ यहां यह अभिप्राय है कि प्रथम तो (समासस्य) ये सूत्र है याको यह अर्थ है कि समासमात्रको स्वर अंतोदात्त होय नाम अंतमें जो अइउ आदि स्वर होय वो उदात्त बोलो जाय ऊंचे स्वरसो बोलो जाय तो यदि त्वष्टा इंद्र शत्रु शब्दमें शत्रुको उदात्त बोलतो तब तो वो अवश्य इंद्रको मारनवारोही होतो पन वाने इन्द्रशत्रुशब्दमें आदिको (इ) उदात्त बोलो तब वहां (बहुव्रीहौ प्रकृत्यापूर्वपदम्) या सूत्रकी प्रवृत्ति है गई याको यह अर्थ है कि बहुव्रीहि समासमें पूर्वपदप्रकृतिसो रहै कहा अंतोदात्त होनो जो (समासस्य) सूत्रसो पावे है सो न होय सो त्वष्टाके आदि (इ) के उदात्त बोलवेसों बहुव्रीहि समास है गयो तब ये अर्थ है गयो कि इंद्र है मारनवारो जाको क्योंकि इदी परमैश्वर्ये धातुसो औणादि रन् प्रत्यय करवेसो इंद्र शब्द (ऋियादिनित्यं) या सूत्रसो आद्युदात्त है सोई उदात्त बोले यासो बहुव्रीह्यर्थ हैवेसो इंद्र मारनवारो भयो परंतु यहां इंद्रशत्रुर्विवर्द्धस्व यहां ऐसो पाठ जाननो (त्रो) ऐसो संबोधन पदांत पाठ नहीं है ऐसो समझ लेनो यामें लेख बहुत है यासो हमने नहीं लिखो है सो समझनो सूत्रको अर्थ। ऋ नये दोनो जाके इत गये होय ऐसो प्रत्यय परे होय तो वो शब्द आदि उदात्त होय ॥

२ शंका–पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर इन चारों दिशाओंकी ओर नित्य प्रति चार चार हाथ अर्थात् सोलह हाथ चारों ओरको वृत्रासुरका शरीर दिन दिन बढताथा, यह बात बडे आश्चर्यकी है, वरन् एक प्रकारका कौतुक है, क्योंकि वर्ष वर्ष, लेखा लगाया जाय तो कितना मोटा शरीर होसक्ता है, और वृत्रासुर लाखों वर्षतक जीतारहा, तब कैसा शरीर होगया होगा उसकी लम्बाई चौडाईका जोड आपने लगाया हो तो मुझको बताओ, जिससे मेरे मनका सन्देह जाय ?

उत्तर–इषुमात्र इस श्लोकमें विद्वान लोग इषुको बाण नहीं कहते क्योंकि विश्वकोश, कमण्डलुकोश आदि कोशोंमें इषुको सीकभी कहते हैं मात्रको मोटाभी कहते हैं, इस प्रमाणसे इषुमात्र कहिये सीखसरीख जानना, वृत्रासुरकी देह नित्य चारों ओर बढती थी, चार हाथप्रमाण एक धनुषका है, सो धनुष प्रमाण अर्थात् चार हाथ नहीं नित्य देह बढतीथी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शिखा मूछ मध्याह्नके सूर्यसमान उग्रलोचन ॥ १४ ॥ महाप्रकाश त्रिशूलपै मानो द्यावापृथिवीको धरकै नाच रह्यो है और पैरनके आघातसों पृथ्वीको कम्पायमान कर गर्ज रह्यो हो ॥ १५ ॥ गंभीर गुफाकी समान मानो मुखसों आकाशको पीजायगो जीभसों सब नक्षत्रको मानो चाटैगो, मानो सब त्रिलोकीको ग्रस लेयगो ऐसो वृत्रासुर भयो ॥ १६ ॥ महाभयानक डाढैं वारंवार जंभाई लेतो वाको देख भयसो डरेभए लोक सब भाग गए ॥ १७ ॥ जा त्वष्टाके सुतकी अंधकाररूप मूर्तिसे सब लोक घिरे गये, याते वा पापीको परम दारुण वृत्रासुर नाम पडो श्रुति है कि, " स इमांल्लोकानावृणोत्तद्वृत्रस्य वृत्रत्वम् " ॥ १८ ॥ सब गणसहित देवनके सिरदार अपने दिव्य शस्त्रनके समूहनसो वाकों मारवेको आये, पर वो तो विन सबको ग्रस गयो[२] ॥ १९ ॥ तब सब विस्मित और दुःखी हो तेज नाश हैवेसो सबको पूजनीय आदि पुरुषकी सब देवता सावधानीसो स्तुति करने लगे सब जाको पूजे ऐसे आदिपुरुषकी सब देवता स्तुति करते भए " महाभये परित्राणमन्यतो न भवेदिति ॥ हरिमेव प्रपद्यन्ते सुराः शरणमातुराः " ॥ २० ॥ देवता बोले कि पवन आकाश अग्नि जल पृथिवी और इनके रचे त्रिलोक, इनके स्वामी ब्रह्मादिक और विनसो अर्वाचीन हम भयभीत हैकै जा कालकी पूजा करै है वह कालहू जिनसो डरै है वह भगवान् हमारी रक्षा करो ॥ २१ ॥ विस्मयरहित परिपूर्णकाम, अपने लाभसो समान, शांत ईश्वरको छोड कौन मूर्ख औरकी शरण जायगो, जैसे कोई कुत्ताकी पूंछको पकरके समुद्र तरो चाहै, तो नहीं तरैगो ॥ २२ ॥ जिन मत्स्यावतारके बडे शृंगमें पृथिवीमयी अपनी नावरूपको सत्यव्रत बांधके सब दुःखको तर गए, सोई हमको वृत्रासुरके भयसो रक्षा करो ये निश्चय है कि जलचर भगवान् मत्स्य है परन्तु जो आसरो लेय है वाकी रक्षा करै है ॥ २३ ॥ उछलती पवनकी लेहेरसो भयंकर प्रलयके जलमें कमलसो गिरते समयमें भयसों स्वयंभू ब्रह्माजी जाकी कृपासो अभय हुए सोई परमेश्वर हमारी रक्षा करै, वोही पार करै ॥ २४ ॥ जो एक ईश्वर अपनी मायासो हम सबको रचतेभए, जा मायासो हम विश्व रचैं हैं जो हमसों प्रथम अन्तर्यामी रूपसो चेष्टा करै हैं तौ हम विनको रूप नहीं देख सके है क्योंकि हम पृथक् २ ईश्वरमानी है ॥ २५ ॥ शत्रुनसों अति पीडित हम सबको देवता ऋषि पशुमनुष्यमें नित्यशरीर धारणकर अवतार ले अपनी मायाकरकै अपने वशमें कर युग युगमें रक्षा करै है ॥ २६ ॥ विन्ह देवकी हम शरण जांयहै, आत्माके देवता परम प्रधान पुरुष विश्वरूप अनन्य रक्षक शरणागत पालक है सो अपनेको वेही महात्मा कल्याण सुख दैयगे ॥ २७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे महाराज ! सुर ऐसे जब उपस्थान करते भए तब पश्चिमकी दिशामें शंख चक्र गदा पद्म लिये योगीश्वर साक्षान्नारायण वासुदेव प्रगट होते भए ॥ २८ ॥ अपने समान षोडशपार्षदसहित श्रीवत्स कौस्तुभ विना लिये शरत्कालके कमल समान नेत्रवारे उपासना करते भए ॥ २९ ॥ हे राजन् ! तिन ईश्वरको देख सब आनन्दसो विह्वल हो दंडकी नाईं भूमिपैं साष्टांग करते भए, धीरे धीरे स्तुति करन लगे ॥ ३० ॥ देवता बोले कि यज्ञवीर्य कालरूप आपके अर्थ नमस्कार होय, चक्र चलायवेवारे बहुत नामवारेके अर्थ नमस्कार होय ॥ ३१ ॥ हे धातः ! तुम्हारी तीन गतीनके इशके परमपदको या संसारको अर्वाचीन जीव जानवे योग्य नहीं है ॥ ३२ ॥ ओंकारसहित तुम्हें नमस्कार होय हे भगवन् ! हे नारायण ! हे वासुदेव ! हे आदिपुरुष ! हे महापुरुष ! हे महानुभाव ! हे परममंगल ! हे परमकल्याण ! हे परमका-

---

१ वृत्र आच्छादने जो वृ धातु आच्छादन अर्थमें है वाको (वृणोति आच्छादयति इति वृत्रः) वृणोति नाम आच्छादन करै वाको नाम वृत्र है ऐसो समझनो ॥ २ अर्थात् जितने देवतानने शस्त्र अस्त्र चलाये विने सबनको निगल गयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रुणिक ! हे केवल जगदाधार ! हे लोकनाथ ! हे सर्वेश्वर ! हे लक्ष्मीनाथ ! परमहंस संन्यासी परमआत्मयोग समाधिसो भावना और स्फुटभजन तथा परमहंसधर्मसो अज्ञानरूप कपाट खुलवेके कारण चित्तरूप द्वारमें प्रत्यक्ष प्रतीत होते भये स्वरूप प्रकाशमें आप प्रतीत होउ हो वा सुखके अनुभवरूप आपही हो ॥ ३३ ॥ आपको ये विहारयोग काऊसो जानो नहीं जाय है कारण कि आश्रयरहित शरीररहित और निर्गुण आप हो हमारी सहायताकी अपेक्षा न करते अपने निर्विकार स्वरूपसों सगुण निर्गुण रचो हो पालोहो नाश करो हो ॥ ३४ ॥ कहा आप देवदत्तकी नाईं संसारमें लिप्त हो, परतंत्र हैकै अपनो करो भयो कुशल अकुशल ग्रहण करो हो, अथवा आत्माराम हो महाशांतशील हो, समानदर्शी उदासीनकी नाईं रहो हो येहू हम नहीं जानै हैं ॥ ३५ ॥ भगवान्में सगुण निर्गुण दो प्रकारको भेद नहीं है क्योंकि अनगिनती गुणगण ईश्वरमें है, जिनको माहात्म्य जानो नहीं जाय है, यासो जिन शास्त्रनमें विकल्प अर्थात् यामें कहा उक्ति है या प्रकारको विचार है विवाद और वाके अनुकूल प्रमाणाभास और कुतर्क यह सब दीप्यमान है परन्तु यह सब काउ प्रकारसोहू वस्तुस्वरूपके स्पर्श करवेको समर्थ नहीं है इन ग्रंथनमें जिन दुराग्रहनको आश्रय व्याकुलित होय है ऐसे दुराग्रहनको आश्रय लेकै जे पुरुष विवाद करै हैं आप विन लोगनके विवाद स्थानसों परे है आप समस्त मायामें संसारसों अलग और केवल स्वरूप है मायाको मध्यमें राखकै आपमें कौनसो विषय दुर्घट है या कारण वास्तवमें यदि आपमें कर्तृत्वादि होय तबही विरोधकी संभावना है सो कदापि नहीं क्यों कि आपके स्वरूप दोउ नहीं देखे जाय ॥ ३६ ॥ यद्यपि आपको निग्रह अनुग्रह नहीं है परन्तु जैसे एकही रस्सीको टुकटा पृथक् २ देखवेवालेनकी दृष्टिमें सर्पादि भिन्न २ प्रकारसो प्रतीत होय है ऐसेही एकही आप सम विषम बुद्धिवालेनको अनेक प्रकारकै प्रतीत होउ हो ॥ ३७ ॥ सोई आप ईश्वर सब वस्तु है, सर्वेश्वर सकल जगत्के कारणनके कारणरूप सर्वांतर्यामी सगुणनमें प्रकाशक हो श्रुति आपको एकरूपसै अवशेषित राखे हैं ॥ ३८ ॥ हे मधुमथन ! महिमारूप अमृत रस समुद्रके एक कणुकाके एकवार स्वाद लेवेसो भक्तजन अपने मनमें अत्यन्त सुखकी प्राप्ति करकै देखे सुने विषयसुखको भूल जाय हैं जो या लोक परलोकसंबंधी है ऐसे स्वार्थमें कुशल और केवल आपकोही प्रियबंधु माननेवारे आपके भक्तसाधु कि जिनको मन सब प्राणीमात्रके प्रियामित्र और सबके आत्मरूप आपमेंही निरन्तर लगो रहवेसों जो परमसुखके पात्र हैगये हैं वे आपके चरणनकी सेवाको कैसे छोड सकै जा सेवासो संसारको आवागमन मिट जाय है ॥ ३९ ॥ हे दंडधर ! त्रिलोकीके आत्मा आश्रयरूप त्रिविक्रम त्रिनयन ! त्रिलोकीके मन हरवेवारो तुम्हारो प्रभाव है यद्यपि देवता असुर दोनों तुम्हारी विभूति हैं तथापि यह समय विनकै उद्यमको नहीं है यह जानकै अपनी मायाकरकै सुर नर मृगमें मिलेभए जलजीवनसी आकृतिको अवतार धारण कर अपराधानुसार विन्हे जैसे अपने पहले दंड दियाहो वाही प्रकार अबहू त्वष्टाके पुत्र वृत्रासुरको मारो ॥४०॥ हे पितः ! हे पितामह ! हे पापरहित ! हे परमेश्वर ! तुमको नमस्कार करवेवारे तुम्हारे दोनों चरणकमलके ध्यानसो हृदयमें बंधी साकलवाले जिन्हे अपनी मूर्ति प्रगट कर अपने अपनो लियो है विनके अन्तःकरणके तापको दयासहित स्वच्छ सुन्दर और शीतल हास्ययुक्त देखवेसो तथा मुखसों निकली मधुर रसयुक्त वाणीरूप अमृतकी कलासों शमन करो ॥ ४१ ॥ हे भगवन् ! आप सब जगत्की उत्पत्ति पालन नाश निमित्तवाली दिव्य मायाके द्वारा क्रीडा करो हो सब जीवनके अन्तःकरणनमें ब्रह्म और अन्तर्यामी स्वरूपसो और बाहर प्रधानरूपसों सबके प्रधान कारणके निमित्त देश काल और देहकी अवस्थानको निश्चय

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करवेवारो हो सबके विश्वासके साक्षी आकाश शरीर साक्षात् परब्रह्म परमात्मा हो आपके निकट हम किन २ वस्तुनकी प्रार्थना करैं जैसे अग्निके निकट स्फुलिंगनको प्रकाश करवैकी आवश्यकता नहीं ऐसेही हमें आपके प्रति अपनो कार्य प्रगट करवेकी आवश्यकता नहीं कारण कि आप अन्तर्यामी हो ॥ ४२ ॥ याहीसो आप हमपै अपने चरणकमलकी छाया करो, भगवान् परमगुरुके अनेक कष्ट और संसार परिश्रमनके नाश करवेवारी छायाको हम जा कामकरके प्राप्त हैं सो मनोरथ पूरो करो ॥ ४३ ॥ हे ईश ! त्रिलोकी ग्रसवेवारे वृत्रासुरकों मारो हे कृष्ण ! याने हमारे तेज अस्त्र आयुध सब ग्रसे है ॥ ४४ ॥ हंसरूप हृदयाकाशवासी बुद्ध्यादिके साक्षी उज्ज्वल यशवारे आदिशून्य सब दुःखहारक संतजन जाको ग्रहण करैं संसारमार्गमें वर्तमान जीवको अपनी पूरण भये ये सर्वोत्तम फल रूपगतिके देनवारे श्रीकृष्णचंद्रके अर्थ नमस्कार होय " कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्च निर्वृतिवाचकः ॥ तयोरैक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते ॥ " ऐसे निरुक्त है ॥ ४५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! महा-आदरसैं ऐसे जब देवतानने स्तुति कीनी भगवान् विनकी स्तुतिसौं महाप्रसन्न हैकै देवतानसों बोले ॥ ४६ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे देवनमें श्रेष्ठहो ! तुम्हारी स्तुतिसौं हम प्रसन्न है मेरेमें पुरुषनकी भक्ति होनी येही आत्माके ऐश्वर्यकी स्मृति करवेवारी है ॥ ४७ ॥ हे देवश्रेष्ठहो ! मेरे प्रसन्न हैवेसौं कौनसी चीज नहीं प्राप्त है, विन्हैं सब प्राप्त है जो तत्ववेत्ता है मेरेमैं एकांत मतिवारेनको और कछु चाहना नहीं ॥ ४८ ॥ कृपण गुणवस्तुको द्रष्टा अपने श्रेयको नहीं जानै है वाकों वा विषय-की इच्छाको देनवारोहू वैसोई है यासो गुणनके विषयनमें आसक्त मत होउ ॥ ४९ ॥ कर्मको जानवेवारे विद्वान् अज्ञानीको कल्याणकी बात नहीं कहै है, जो सद्वैद्य है वो रोगीको कुपथ्य नहीं दैय हैं रोगी कुपथ्यकी इच्छा करै हैं ॥ ५० ॥ हे इंद्र ! जाओ तुम्हारो कल्याण होय, दधीचऋषिके पास जायकै विद्यातपव्रतको सार विनको शरीर मांगो देर मत करो ॥ ५१ ॥ दधीच मुनि ब्रह्मविद्याको जानते हैं वा मुनिसौं अश्विनीकुमार निष्कल्मषब्रह्मको प्राप्त भए है वाको अश्वशिरा नाम ब्रह्मविद्या है, वासो वे दोनों जीवन्मुक्त भावकों प्राप्त होते भय " या प्रसंगकी एक कथा है ये है कि एक समय ब्रह्मविद्यामें निपुण अथर्ववक्ता चतुर दधीचमुनिके समीप आयकर अश्विनीकुमार बोले हे भगवन् ! हमको ब्रह्मविद्या देओ ये सुन दधीच बोले कि या समय हम भगवत्के कर्ममें स्थित हैं पीछै आइयो तुम्हारेको सिखावैंगे, अब तुम जाओ जब वे दोनों चले गये तब इंद्र आयके बोले हे मुने ! ये अश्विनीकुमार वैद्य है, इन्हैं ब्रह्म-विद्या मत देओ जो हमारो कहो उल्लंघोगे तौ शीघ्र तुम्हारो मूंड काट देऊंगो यामें सन्देह नहीं है ऐसै कहि इन्द्र चलोगयो शक्र चलोगयो तौ अश्विनीकुमार आय दधीचसे जो इन्द्र कहि गयो वो सुन वे दोनौ बोले कि ये मनुष्यको शिर तुम्हारो काटकर हम पहिले घोडेको शिर तुम्हारे लगावैं या अश्वशिरसों हे द्विज ! ब्रह्मविद्या हमैं शिखाओ फेर इंद्र या घोडेको शिर तुम्हारो काटकर चलो जायगो उपरांत मनुष्य शिर हम लगावैंगे, अपनी दक्षिणामें ये काम कर जैसै आए हैं तैसे जायंगे, ये सुन उन दोनोंसो अथर्व-वक्ता दधीच बोले बहुत अच्छा है ऐसेई दधीचने करी सब उक्त कथा जैसे कही तैसे होती भई" ॥ ५२ ॥ दधीच अथर्ववेत्ताने मेरी आत्माको श्रीनारायणवर्म त्वष्टाको दीनो त्वष्टाने विश्वरूपको पढायो, विश्व-रूपने तुम्हैं मन्त्र द्वारसे नारायणकवच पहिनायो ॥ ५३ ॥ अश्विनीकुमार आदि तुम सब देवता उनके अंगके हाड मांगोगे तो वो धर्मज्ञ तुम्हैं देदेयगो, फेर विश्वकर्मासो श्रेष्ठ आयुध बनवायो जायगो ॥ ५४ ॥ मेरे तेजसौं बढे दधीचके हाडके बने वज्रसों वृत्रासुरको शिर कटैगो, वो जब मरजायगो तब तुम तेज

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अस्त्र आयुध सम्पदाको फेर प्राप्त होओगे मेरेमें जो परायण हैं उनको कोई मार नहीं सकैहै हे राजन्! मेरे परायण नर चन्द्रमाकी नाईं प्रकाश करै है ॥ ५५ ॥

येन वृत्रशिरो हर्तां मत्तेजउपबृंहितः ॥
तस्मिन्विनिहते यूयं तेजोस्त्रायुधसम्पदः ॥
भूयः प्राप्स्यथ भद्रं वो न हिंसन्ति च मत्परान् ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषा० षष्ठस्कन्धे इन्द्रादिदेवकृतगद्यपद्यात्मकस्तोत्रवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः॥९॥

अध्याय १०.

श्रीशुक उवाच–इन्द्रमेवं समादिश्य भगवान्विश्वभावनः ॥
पश्यतामनिमेषाणां तत्रैवान्तर्दधे हरिः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि इन्द्रसों ऐसें कहि भगवान् विश्वभावन देवतानके देखते देखते अन्तर्द्धान हैगए ॥ १ ॥ हे राजन्! अथर्वण ऋषि दधीचि तैसें देवन करकै मांगे गए प्रसन्न हैंकै इनसो ये बोले ॥ २ ॥ हे देवताहो! तुम जानो हो कि शरीरधारीनको मृत्युमें जो दुःख है वो बडो दुःखदायक मूर्च्छाकारण है ॥ ३ ॥ या संसारमें जीववारे जीवनको शरीर बडो प्यारो है जो विष्णुहू एकवेर आय भिक्षा करकै मांगे तो कोई देवेको योग्य नहीं है ॥ ४ ॥ देवता बोले कि हे ब्रह्मन्! सब जीवमात्रपर दया करवेवारे आपसरीखे पुरुषनको बडेनको जो पुण्यश्लोक श्रीहरिके कर्ममें लगे है विनको कोई बात दुस्त्यज नहीं है ॥ ५ ॥ ये सब लोक अपने स्वार्थके गरजी हैं, पराएके दुःखको नहीं जाने हैं, जो ये जानै तो फेर मांगे नहीं, परन्तु गुरुजी यामें ऐसो है कि यदि देवेको समर्थ होय तो फिर वाको यह चाहिये जो मांगवे आयो है वाकू नाहीं न करै क्योंकि महा बेसरमाई तो वानें कीनी जाने मांगो यदि वाको समर्थ हैके न देय तो वो वाहूसो सिवाय बेसरम है ॥ ६ ॥ दधीच बोले कि तुमसों कछु धर्म सुनवेकी इच्छा करकै मैंनै तुम्हैं पहिलै नहीं करी, परंतु अतिप्रिय या शरीरको तुम्हारे उपकारके अर्थ त्याग करूंगो ॥ ७ ॥ हे नाथ! जो कोई सदा न रहनवारे या देहसों धर्म यश नहीं करै जो जीवपर दया नहीं करै हैं, वो स्थावरनकरकैहू शोच करवेयोग्य है ॥ ८ ॥ यही अव्यय-धर्म महायशस्वीनने करयो है जो जीवके शोकमें शोक करै हर्षमें हर्ष करै ॥ ९ ॥ अहो दीनताकी बात है कि अहो कष्टकी बात है कि कुत्ता शृगालआदिके भक्षण क्षणभंगुर स्वार्थरहित ऐसे जे धन जातिके और अपने देह तिनसो जो मनुष्य परोपकार धर्म न करै अर्थात् परोपकार करनोही मुख्य है ॥ १० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसे निश्चय कर आथर्वणदधीच परेसो परे भगवान् ब्रह्ममें मनको लगायकर शरीरकों त्याग करते भए ॥ ११ ॥ इंद्री मन प्राण सब जीतकर बुद्धिसों तत्व देख सब बंधन नाशकर परमयोगाभ्यासमें स्थित हैंकै शरीर त्यागकी बातहू न जानतेभए ईश्वरमें तदाकारवृत्ति कर लीन हैगए देहानुसंधान न रह्यो ॥ १२ ॥ याके उपरांत विश्वकर्माको रचोभयो दधीचके हाडको बनो भगवत्तेजसों युक्त व्रज इंद्र उठावतो भयो ॥ १३ ॥ सब देवगणसहित गजेंद्रपर बैठोभयो मुनिगणनसों स्तुतिको प्राप्त हो त्रिलोकीको हर्ष करत शोभित होतो भयो ॥ १४ ॥ हे राजन्! असुरनके यूथप-तिनकरकै युक्त क्रुद्ध रुद्र यमकी नाईं स्थित वृत्रासुरके छेदवेको देवता दौडे ॥ १५ ॥ सुर असुरनको

१ अर्थात् देहत्याग कर दियो और ऋषिको मालूमहू न भयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परमदारुण संग्राम त्रेताके आदि प्रथमयुगमें नर्मदाके तीरपर होतोभयो ॥ १६ ॥ ग्यारह रुद्र आठ वसु बारह सूर्य दो अश्विनीकुमार वैद्य सब पितर तीनों अग्नि उनपचास मरुत्, ऋभु साध्य विश्वेदेवा इंद्रके संग हो ॥ १७ ॥ हे राजन् ! वज्रधारी अपनी लक्ष्मीसों प्रकाशमान इंद्रको देख वृत्रासुर आदि असुर कुछ गणना न करतेभए ॥ १८ ॥ नमुचि शंबर अनर्वा द्विमूर्धा ऋषभ अंबर हयग्रीव शंकुशिरा विप्रचित्ति अयोमुख ॥ १९ ॥ पुलोमा वृषपर्वा प्रहेति हेति उत्कल दैतेय दानव यक्ष राक्षस सैकडान खडे हैं ॥ २० ॥ इल्वल पल्वल दंदशूक वृषध्वज कालनाभ महानाभ भूतसंतापन वृक ॥ २१ ॥ सुमाली माली आदि सुवर्णके सब कारवार पहिरे मृत्युसोहू दुरासद इंद्रकी सेनाके आगे चलवेवारेकों मनै करतेभए ॥ २२ ॥ मोह त्याग सिंहनाद कर महामदवारे गदा परिघ बाण फरसा मुद्गर तोमर ॥ २३ ॥ शूल परशा खड्ग शतघ्नी भुशुंडी शस्त्र अस्त्रनसो जो देवनमें श्रेष्ठ हैं वे सब ओरसो लडतेभए ॥ २४ ॥ बाणनके जालनसो सब ओरसो ढकेभए देवता नहीं दीखतेभए, बाणनपै बाण पडन लगे, जैसे आकाशमें मेघनसो नक्षत्र सब ढकै तैसें सब देवता राक्षसनके फेंके बाणनसो ढकजातेभए ॥ २५ ॥ जितने दैत्यनने अस्त्र शस्त्र चलाये वे शीघ्र हस्तवारे देवतानने आकाशमें बीचके बीचमेंही काटके गेर दिये यासों देवतानके अंगमें एकहू अस्त्र शस्त्र न लगे ॥ २६ ॥ जब शस्त्र अस्त्रनके समूह क्षीण भए, तब पर्वत शृंग वृक्ष पाषाणसो देवनकी फौजपै वर्षा करतेभए पहिलेकीसी नाईं देवता विनकों काटतेभए ॥ २७ ॥ वृत्र हे नाथ जिनको ऐसे दैत्य हैं वे शस्त्र अस्त्रनके समूह और वृक्ष पाषाण अनेक पर्वतनके शिखरनसो घायल न भये और (स्वस्ति) मंगलयुत इंद्रके सेनापतिनको देखके त्रासयुक्त भये अर्थात् घबराये ॥ २८ ॥ देवतानके गणनमें दैत्यनने जितनी मेहेनत करी वो सब निष्फल भई जैसे श्रीकृष्ण जिनपर अनुकूल हैं ऐसे महात्मानपै तुच्छनकी वाणी कही निष्फल होय है ॥ २९ ॥ श्रीहरिसों विमुख युद्धमें गर्वनाशके कारण अपने परिश्रम झूठे देख सब दैत्य नष्ट भये पुरुषार्थ जिनके वे संग्रामके सामनेसो वृत्रासुरकूं छोड भागवेकी इच्छा करते भए ॥ ३० ॥ महामनस्वी वृत्रासुर असुरनको तीव्रभयसों भग्न भागेभए बलनको देख वह वीर हंसकर बोलो ॥ ३१ ॥ पुरुषनमें वीर वृत्र समयके अनुसार मनस्वीनकी प्यारी वाणी बोलो हे विप्रचित्ते ! हे नमुचे ! हे पुलोमन् ! हे मय ! हे अनर्वन् ! हे शंबर ! मेरी वाणी सुनो ॥ ३२ ॥ जो जन्मो है वाकी मृत्यु सब तरहसों निश्चय होयगी, याके दूर करवेको कोई उपाय आजतक काऊने रचो नहीं जासो लोकमें सुंदर यश होय, स्वर्ग होय ऐसी युद्धमें मरवेकी योग्य मृत्युकों कौन न चाहै सब चाहैं हैं ॥ ३३ ॥ दो प्रकारकी मृत्यु संमत है, दुःखसो प्राप्त होय है, एक तो ब्रह्मज्ञानसो प्राण त्यागनो. दूसरो सबसो आगे पिछारी पाव नहीं दिये विना संग्राममें मरनो वीरशय्याको आनंद देखनो " स्मृतिः ॥ द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमंडलभेदिनौ ॥ परिव्राड्योगयुक्तस्तु रणे चाभिमुखे हतः ॥ " इति ॥ ३४ ॥

द्वौ संमतावि[1]ह मृत्यू दुरापौ यद्ब्रह्मसंधारणया जितासुः ॥
कलेवरं योगरतो विजह्याद्यदग्रणीर्वीरशयेऽनिवृत्तः ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे वृत्रयुद्धे असुरपराजयवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

---

१ पीलू ॥ हरिबिन बनी बात सब बिगरी ॥ टेर ॥ मानुषजन्म भयो उत्तम घरमैं आई चतुराई सगरी ॥ १ ॥ लक्ष चौरासी भटकत हारो भली चांद तेरी रगरी ॥ २ ॥ वेद गुरु कहि पंडित हारे बुद्धि तेरी नहीं डिगरी ॥ ३ ॥ पुरुषोत्तम सर्वेश्वर गायो होगई हमारी डिगरी ॥ ४ ॥ वृत्रासुर मरती वेर भगवत्को अनुसंधान करतो भयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ११.

श्रीशुक उवाच–त एवं शंसतो धर्मं वचः पत्युरचेतसः ॥
नैवागृह्णन्भयत्रस्ताः पलायनपरा नृप ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि ॥ सावधान चित्त नहीं हैवेसों वे असुर सब वृत्रासुरको वचन धर्मको कहिनो नहीं ग्रहण करते भए, हे नृप ! भयके मारे भागवेमें परायण भए ॥१॥ कालको अनुसरण करनवाले देवतानने दैत्यनकी सेना जब अनाथकीसी नाईं भगायदीनी तब अपनी सेनाको छिन्न भिन्न देख ॥ २ ॥ हे राजन् ! इंद्रको शत्रु क्रोधकर बडो तापितभयो विनको भागते देख पराक्रमसों नाहीं कर और धमकायके ये बोलो ॥ ३ ॥ हे देवताहो ! मरवेके पीछे दौरनेवारे तुमसे कहा होय गोमाताके तुम विष्ठा हो डरपेके मारवेकी श्लाघा नहीं होय है, और शूरमानी जे हैं विनको स्वर्ग नहीं होय है ॥ ४ ॥ जो तुम्हारी संग्राममें श्रद्धा सार हृदयमें हो तो हे छोटेहो ! मेरे सन्मुख ठाडे होओ जो तुमें संसारी विषयसुखकी इच्छा न होय तो ॥ ५ ॥ क्रोधी भयो वृत्र वैरी सुरगणनको शरीरसों डरावतो महाप्राणधारी वृत्रासुरनै जब शब्द कियो तौ लोक मूर्छित हैगये[1] ॥ ६ ॥ वृत्रासुरके नाद करकै सब देवगण वज्रसो हत भएके समान मूर्छित हो भूमिमें गिरे ॥ ७ ॥ आतुर देवनकी सेनानको पांवसो मर्दन करतो भयो आंख मीच रणरूप रंगमें महामदांध उठे भए शूलके पराक्रमसो धरतीको महामदवारो गजराज जैसै नरसलनके वनको मर्दन करै तैसै करतो भयो ॥ ८ ॥ अतिक्रोधी वज्रधारी इन्द्र अपने सन्मुख भागे चले आवते शत्रुके ऊपर महाभारी गदाकूं चलावतो भयो, तब वृत्र आती भई महादुःसह गदाको देख वांए हांथसो पकडतो भयो ॥ ९ ॥ हे नृप ! सो इन्द्रको शत्रु कुपित वा गदाको गजराजके कुम्भस्थलमें चिल्हायके युद्धमें महापराक्रमसो मारतो भयो, वाके या धर्मको सब पूजन करते भए ॥ १० ॥ वृत्रासुरकी गदासो तपित घूमतो भयो वज्रके मारे पर्वतकी नाईं मुख टूटवैसो इन्द्रसहित रुधिर मुखसे वमन करतो अतिआर्त है ऐरावत हाथी सात धनुष पीछै हट गयो ॥ ११ ॥ खिन्न वाहनवाले इन्द्रपै महात्मा वृत्रासुरनै दूसरी वार गदाको प्रहार नहीं कियो तब इन्द्र अमृत चुअनहारे अपने हाथके स्पर्शसो घायल ऐरावतको वेदनारहित कर फिर वृत्रासुरके सन्मुख भयो ॥ १२ ॥ हे नृपेंद्र ! तब वो वृत्र संग्रामकी इच्छा करके शत्रुको वज्रायुध लिये भ्राताके मारनवारेको देख वाको निंदित पापरूपकर्म याद कर शोक मोहसों हंसतो भयो बोल्यो ॥ १३ ॥ वृत्रासर बोलै कि बडे भाग्यसों वेही आप मेरे सामने ठाडे हो हे असत्तम ! ब्राह्मणके मारवेवारे, गुरु हननवारे, भाईकी हिंसा करनवारे तेरे पाषाण हृदयको अपने शूलसो तोड थोडेही कालमें भाईके ऋणसो छूटूंगो ॥ १४ ॥ जा तेने हमारे भाई आत्मज्ञानी ब्राह्मण गुरु अपापी यज्ञमें दीक्षितको विश्वास देकै खड्गसो शिर काटचो जैसे स्वर्गकी चाहनावारो दया छोड पशुको मारै तैसे ॥ १५ ॥

---

१ शंका–श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित्से कहा कि हे राजन् ! वृत्रासुरके गम्भीर शब्दसे सब लोक व्याकुल होगये, यह बात सुनकर बडा सन्देह होताहै क्योंकि लोक तो बहुत हैं, वृत्रासुरने ऐसा कैसा शब्द किया कि जिससे सब लोक व्याकुल होगये, यह बडी भारी शंका है, जो सब लोक शब्दसे व्याकुल होगये तो किसीमें विष्णु, किसीमें ब्रह्मा, किसीमें शिव, किसीमें सूर्य, किसीमें चन्द्रमा, किसीमें इंद्रादिक देवता और बडे बडे ऋषि, मुनि महात्मा पुरुष रहते हैं, तो यह सब लोक व्याकुल होगये होंगे ?

उत्तर–लोक शब्द मुनियोंने लोकोंके लिये नहीं कहा है, प्रजा लोगकोभी मुनिलोग लोक कहते हैं तब लोकको व्यासजीभी ऐसा कहते हैं कि इन्द्र और वृत्रासुर युद्धके समय जो चारों ओर लोक बढे सो प्रजाके लोक सब व्याकुल होगये, सब लोकोंके लिये व्याकुल होनेका व्यासजी महाराजने नहीं कहा है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यासो लक्ष्मी लज्जा दया कीर्तिसो रहित अपने कर्मनसों राक्षसनकेहू धिक्कार योग्य तेरी देहको मेरे शूलसों कटे अग्निसंस्कारहीनको गिद्ध खांयगे ॥ १६ ॥ तुम्हारे पीछे और जे ये क्रूर अज्ञानी शस्त्र उठाए देवता मेरे ऊपर प्रहार करैं हैं इनको सबको त्रिशूलसों भिदेभये गलेनकों गणसहित भूतनाथ शिवको यज्ञ करूंगो ॥ १७ ॥ अथवा हे इन्द्र ! या संग्राममें जो तुम वज्रसे मेरे शिरको हठकरके हरोगे तो सब ऋणसो छूट भूतबलि देके मनस्वीनके पादरजकों प्राप्त होऊंगो ॥ १८ ॥ हे देवनके ईश ! आगे ठाढे मो वैरीपे सफल वज्र क्यों नहीं मारो हो ये मत सन्देह करो कि गदाकीसी नाईं वज्रको प्रहारहू विफल जायगो सो नहीं होयगो, जैसे कृपणसे धन चाहनो व्यर्थ होय है ऐसें यह विफल नहीं होयगो "एक कृपणकी नाव गंगामें डूबनलगी सो वाने कही गंगा मैया पार लगावै तो सौ ब्राह्मण खवाऊं, नाव चक्रमेंसे निकसी ज्यूं ज्यूं किनारेपे आयो त्यूं त्यूं एक ब्राह्मण रहिगयो, सो आय हरेकसे पूछै कितो खाओहो, तो कोई कहे पांच शेर कोई दो सेर कोई मोहनभोग चाहे, ये सब नाटै, ईश्वरने कही भला कोई चतुर ब्राह्मण पहुँचे याने कही कहा खाओगे, ये बोलो येही आधसेर चून आधपाव दार दो काकरी सामरकी वाय घर ले जाय कहि आयो लुगाईसे कि जो ये मांगे सो देदै, आप दुकानपर आय बैठो, वाने दससेरको मोहनभोग करनेको बोलो, तेरी सास एक एक ग्रास खाते जब एक एक मोहर देती बहू बोली दोदो लेजाओ ऐसे खाय पी एक सहस्र मोहर दक्षणा ले घर आय सोये, बहूसू कही तू रोय जो कोई आवै तो कहियो कि काऊ निपूतेके जैवै गए सो जहर खवाय दीनो मरो परो है तितनेमें कृपण घर आय सब खबर ले वा ब्राह्मणके घर आयो लुगाई रोती देख सब हाल सुन दोसे रूपा दे घर आयो कृपणसे यूं भगवान् लै है" ॥ १९ ॥ हे इंद्र ! ये वज्र तेरो श्रीहरिके तेजसों बडो है दधीचिके तपके हाडनसो तेजित है श्रीविष्णुके वशीभूत हैके याही वज्रसो शत्रुकों मारो जहां हरि हैं तहां विजय लक्ष्मी गुण सब होंय है ॥ २० ॥ मैं तो श्रीसंकर्षणके चरणारविंदमें मन लगायके तब जो मोसो शेषजीने कह्यो है सो याद है, तुम्हारे वज्रके वेगसो ग्राम्यके सुखकी पाश कटवेसों या लोककों त्याग मुनिनकी गतिकों प्राप्त होऊंगो ॥ २१ ॥ और यहहू निश्चय है कि वो प्रभु एकांत बुद्धिवारे जे आपके भक्त हैं तिनकों स्वर्ग भूमि रसातलकी संपदानको नहीं देयहैं, क्योंकि जिन संपादनसों वैर उद्वेग व्याधि मद क्लेश व्यसन प्रयास होंय हैं ॥ २२ ॥ हे इंद्र ! हमारे स्वामी अपने भक्तनके धर्म अर्थ और कामसंबंधी क्लेशनको दूर करै हैं इनके निवृत्त हैवेसोंही भगवान्की कृपाको अनुमान होयहै ऐश्वर्य प्राप्त होनो भगवान्की कृपा नहीं विनकी दया अभिमान शून्य पुरुषनपै होय है औरनपे नहीं वो प्रसाद अथवा प्रभु निष्किंचन पुरुषनकेही गोचर है ॥२३॥ हे भगवन् ! हम तुम्हारें चरणकमलके दासानुदास होंयहैं हे प्राणनाथ ! मेरो मन आपको स्मरण करै वाणी आपको नाम लेय शरीर आपके धर्म करै ॥ २४ ॥ स्वर्ग पारमेष्ठ्य सार्वभौम रसतालको राजयोग सिद्धि अपुनर्भवमोक्ष हे सौभाग्यनिधे ! तुम्हारे विरहमें विवश होयकै इनकी काऊकी चाहना नहीं करौं हौं ॥ २५ ॥ जिन पक्षीनके पंख नहीं आए वे जैसे माको चाहै भूखे छोटे बछरा जैसै स्तनके दूधको चाहै परदेश गये प्यारेकू विषादयुक्त भई प्यारी जैसें चाहै तैसै हे अरविंदाक्ष ! हमारो मन तुम्हैं देखवेकूं चाहै है ॥ २६ ॥ अपने कर्मोंकरकै, संसाररूप चक्रमें भ्रमूंहूं सो उत्तमश्लोक भगवान्के भक्तजननमें सख्यता होय हे नाथ ! तुम्हारी मायाकरकै पुत्र स्त्री घरमें आसक्त चित्तवारेनको योग मोको कभूहू मत होउ ॥ २७ ॥

---

१ यहां ' वर्तमान सामीप्ये वर्तमानवद्वा ' या सूत्रसो भविष्यत् कालमें वर्तमानको प्रयोग समझ लेनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ममोत्तमश्लोकजनेषु सख्यं संसारचक्रे भ्रमतः स्वकर्मभिः ॥
त्वन्माययात्मात्मजदारगेहेष्वासक्तचित्तस्य न नाथ भूयात् ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे वृत्रस्तोत्रवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

ऋषिरुवाच–एवं जिहासुर्नृप देहमाजौ मृत्युं वरं विजयान्मन्यमानः ॥
शूलं प्रगृह्याभ्यपतत् सुरेन्द्रं यथा महापुरुषं कैटभोऽप्सु ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे नृप ! संग्राममें ऐसे देहके त्यागकी इच्छा करतो विजयसों मृत्युको श्रेष्ठ मानतो शूल लेकै इंद्रपै वृत्र दौडो, जैसे महाप्रलयके जलमें मधुकैटभ श्रीविष्णुके पीछे दौडो हो॥१॥ तब युगके अंतकी अग्निकी नाईं कठोर जीभसी चमकवारे शूलकों शीघ्र घुमाय इंद्रपै फेंक नादकर हे पापी! तू मरो ऐसे क्रोधसों बोलो ॥२॥ आकाशसो आवतो भयो उल्कापातके ग्रहकी नाईं चलायमान दुष्प्रेक्ष्य शूलको लिये आवतो देख इन्द्रने धैर्यतासों तीक्ष्ण शतपेलू वज्रको उठायके वाके त्रिशूलको और सर्पराजके अंगसमान वाकी भुजा काट डारी ॥३॥ जब वज्रसो एक बाहु छिन्न भई तब वृत्रासुरने क्रोधसें परिघ ले वज्रधारी इन्द्रकी ठोडीमें मारो और हाथीकोहू ताडन कियो तब इन्द्रके हाथसो वज्र गिर पडो ॥ ४ ॥ वृत्रासुरके अति महाअद्भुत कर्मकी सुर असुर सिद्ध चारणके समूह बडी सराहना करते भए, इन्द्रको ये संकट देख हाहाकार करवे लगे ॥५॥ फेर इन्द्र वैरीकी सभीपतामें अपने हाथसो गिरेभए वज्रको लज्जासों नहीं ग्रहण करतो भयो तब वृत्र वासो बोलो हे इन्द्र ! अपने शत्रुकों मारो ये समय विषादको नहीं है ॥ ६ ॥ आततायी युद्धकी इच्छा करवेवारे देहको आत्मा माननवारेनको सदा जय नहीं होती सदा जय तौ ईश्वरकोही होय हैं जो उत्पत्ति विनाश पालन करवेवारे सर्वज्ञ आद्य सनातन पुरुष हैं ॥ ७ ॥ श्वास लेते भए सब लोकपाल जिनके वशमें हैंके पक्षीकी नाईं बन्धे हैं, सो कालही यहां कारण है ॥ ८ ॥ ओज सह बल प्राण अमृत मृत्यु इन सबको कारण काल है वाय नहीं जानके प्राणी जड देहको इनको कारण मानैं है ॥ ९ ॥ हे इन्द्र ! जैसे काठकी पुतरी, जैसे यन्त्रमय मृग, नचायवेवारेके वशमें होय है ऐसे ये सब जीव परमेश्वरमें हैं ॥ १० ॥ पुरुष प्रकृति अव्यक्त आत्मा पंचभूतइन्द्रियें अंतःकरण ये सब सृष्टिके आदिमें जाकी कृपाके विना कछु कर नहीं सकै है ॥ ११ ॥ अज्ञानी अनीश आपेको ये मानै हैं कि कोई ईश्वर नहीं मेंही ईश्वर हो ईश्वरही पंचभूतनसो सब भूतनको रचैहैं फिर विन्हींसो सबको ग्रसेहैं ॥१२॥ आयु कीर्ति ऐश्वर्य आशीर्वाद ये सब समय पाय विनकी इच्छासों कालके कीनेही होय हैं जैसे नहीं इच्छा करते पुरुषको अपकीर्ति अनैश्वर्य कालके कीने स्वतः ॥ १३ ॥ तातें अकीर्ति यश जीत पराजय सुख दुःख मरनो जीवनो इनमें समान भावसों वर्तै ॥ १४ ॥ सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये मायाके गुण हैं आत्माके गुण नहीं है, जो इन सबके साक्षी आत्माकों माने है सो बन्धनमें नहीं आवैहै ॥ १५ ॥ हे इन्द्र ! आयुध और भुजा कटेपैंहू और अपनी हार हैवेपैहू मैं तेरे प्राण हरवेको उपाय कर रह्योहूं सो तू देख जैसी तेरी शक्ति होय तैसी चेष्टा कर जासो तेरे प्राण नहीं हरे जाय ॥ १६ ॥ या संग्राममें प्राणनको दाव है बाणरूप पासे हैं वाहनरूप गोट हैं या चौपरमेंहू पुरुषनकी जय पराजय नहीं मालूम परै है ॥ १७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि इन्द्र वृत्रको वचन सुन लज्जा त्याग सत्कार करतो भयो ॥ वज्र लिये हँसकै विस्मय त्याग बोलो ॥ १८ ॥ इन्द्र बोलो कि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे दानव ! सिद्ध तुम्हारी ऐसी बुद्धि है, सब प्रकारसों सुहृद जगदीश्वरके तुम भक्त हो ॥ १९ ॥ सब जननकी मोहन करवेवारी वैष्णवी मायाकों तुम तरगये जो असुरपन त्यागकै महापुरुषभावको प्राप्त भएहो ॥ २० ॥ परंतु एक बडो आश्चर्य है कि राजसी स्वभाववारे तुम्हारी सतोगुणी भगवान् वासुदेवमें ऐसी दृढमति कैसी भई ॥ २१ ॥ सबके मोक्षदायक ईश्वर श्रीहरिभगवान्में जाकी भक्ति है वाकौ फिर और सामान्य वस्तुनसों कहा हैं जैसे अमृतके सागरमें क्रीडा करनवारेनको तुच्छ गढेलानके जलसों कहा काम है ॥ २२ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे नृप ! धर्मकी जानवेकी इच्छा कर आपसमैं ऐसे कहि महापराक्रमी इंद्र और वृत्र योधानके पति दोनों युद्ध करते भए ॥२३॥ हे राजन् ! शत्रुदमनकारी वृत्रासुर लोहेको परिघ इंद्रके ऊपर वायें हाथसों फैकतो भयो ॥ २४ ॥ वृत्रके परिघ और हाथीके सूंड समान हाथकौं सौपर्ववारे वज्रसों इंद्र एक संग काटतो भयो ॥ २५ ॥ जडसों दोनो भुजा कटी विनमेंसों रक्त वहतो शोभित भयो तब वह असुर ऐसो मालूम परो जैसें इंद्रके वज्रसौं पाख कटौ आकाशसों गिरो पर्वत मालूम होय तैसो ॥ २६ ॥ नीचेकी ठोडी भूमिमैं करकै दैत्य ऊपरकी ठोडी आकाशमें कर गंभीरमुख करकै भयानक जीभसो आकाशको मानौ चाट जायगो ॥ २७ ॥ कालके समान डाढनसो तीनों जगत्कों ग्रसतोसो अत्यन्त बडे शरीरके वेगसो पर्वतनको आक्षेप करतो ॥ २८ ॥ पांवनसो चलनवारे पर्वतराजकी नांई पादचारी होय पांवसों पृथिवीको विदारतो वृत्रासुर गजराजसहित इंद्रको ग्रसलेतो भयो ॥ २९ ॥ महाप्राणधारी महापराक्रमी महासर्प अजगरकीसी नांई हाथीको वृत्रासुरकरकै ग्रस्त देख प्रजापतिसहित सब देवता महाकष्टकों प्राप्त होते भये ॥ ३० ॥ सब महर्षि हाय बडो कष्ट भयो ऐसै वैराग्यसो बोलै वृत्रासुरने निगिर लीनो तोहू उदरमें इन्द्र नहीं मरतो भयो क्योंकि योगमायाके बलकरकै श्रीनारायणकवचसो रक्षित हो ॥ ३१ ॥ तब समर्थ इन्द्र वज्रसों वाकी कुक्षिको काटकै निकस आयो और शत्रुके शिरकों काटतो भयो पर्वतको शृंग जैसे गिरै तैसे पराक्रमसों गिरतो भयो ॥३२॥ वज्र बडे वेगसो वाके कंधाको काटतो २ सब ओर घूमवे लगो जो ज्योतिषिनको निर्धारित समय वृत्रासुरके मरवेको हो वा अहर्गणमें वो गिरतो भयो ॥ ३३ ॥ तब आकाशमें नगारे बजनलगे गंधर्व सिद्ध महर्षिनके समूह वृत्रासुरके मारे जायवेके समयके स्तोत्रन करकै स्तुति करते भए मंत्रनसो आनंदसो पुष्पनकी वर्षा करवे लगे ॥ ३४ ॥ हे शत्रुनाशक ! वृत्रासुरके देहसो निकसी भई ज्योति सब लोकनके देखते देखते श्रीभगवान्के लोकको प्राप्त होती भई क्योंकि सबके वैकुंठलोक जायवेकी मनमें रहै है " एक बनिया मरवेलगो सो कुछ दान कभी करही नहीं पर छोरानने जबरदस्तीकी ५ रूपाकी एक गाय लाय वासू पुण्य कराई पर वो गाय एक घडीबाद मरगई लालाजीभी मर यमपुरी पहुँचे गाय बोली कि पुण्य करे पाछे एक घडी ब्राह्मणके यहां मैं जीतीरही सो घडी भर जो चाहो सो काम लेलेओ तब वणिया बोले कि यमराजाकी थौंदमें सींग करदे गौ भागी यमराजभी भयसे सब लोकनमेंसें भगते भगते वैकुंठ पहुँचे भगवान्से कही ये गाय मारे है बचाओ सो भगवत्के पार्षदनने बचायो बनियाको धक्का दीनो निकासवे लगे तब बोलो भला वैकुंठको आयो फेर संसारमें जाय है भलो न्याय है तब भगवान्के लोकमेंही रह्यो बनिये बडे चतुर होय है " ॥ ३५ ॥

---

१ वृत्रासुरके शिर काटवेकों वो इंद्रको वज्र चारों ओरसो वृत्रासुरकी नारपे रगडा लगावतौ इतने दिनमें काटतौ भयो जो ज्योतिषशास्त्रमें सूर्यआदि ज्योतिर्गणने फिरवेसों दो अयन काल प्रमाणको अहर्गण ३६० कह्यो है अर्थात् उक्त दिन प्रमाणतक जब बराबर रातदिन वज्रने करोचकी तरह नार रगडी तब वृत्रासुरकी नार कटी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वृत्रस्य देहान्निष्क्रान्तमात्मज्योतिररिंदम ॥
पश्यतां सर्वलोकानामलोकं समपद्यत ॥ ३९ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे वृत्रासुरवधो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

श्रीशुक उवाच-वृत्रे हते त्रयो लोका विना शक्रेण भूरिद ॥
सपाला ह्यभवन् सद्यो विज्वरा निर्वृतेन्द्रियाः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे परीक्षित् ! वृत्रासुरके मरे उपरांत त्रिलोकीमें इंद्रके विना लोकपालसहित ब्रह्मादिक सब ज्वरनसो मुक्त होते भये ॥ १ ॥ देवता ऋषि पितर भूत दैत्य देवनके नौकर आप ब्रह्मा शिव इंद्रादिक सब अपने अपने घरको जाते भए ॥ २ ॥ राजा परीक्षित् बोले कि हे मुने ! इंद्रके नहीं आनंद होवेको कारण सुनवेकी इच्छा है, जासो सब देवता सुखी भए इंद्रको दुःख कैसे भयो ॥ ३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि पहले वृत्रासुरके पराक्रमसों डरेभए सब ऋषिसहित देवता वृत्रासुरके मारवेके लिये जब इंद्रसो कहते भये तब इंद्र ब्रह्महत्याके डरके मारे वृत्रके मारवेकी इच्छा नहीं करतो भयो ॥ ४ ॥ इंद्र बोले कि ॥ स्त्री भूमी जल वृक्ष इनमें विश्वरूपके वधको पाप बांटो विनने कृपा करी, परंतु अब या वृत्रासुरकी हत्याको कहां जायके शुद्धि करूंगो ॥ ५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऋषिलोग या बातको सुनके इंद्रसो ये बोले कि तेरो कल्याण होयगो, अश्वमेध यज्ञ करायके ब्रह्महत्या छुडावेंगे तुम डरो मत ॥ ६ ॥ अश्वमेध यज्ञसों परमात्मा पुरुष ईश्वर श्रीमन्नारायणदेवको यजन करके जगत्के बंधसो तुम मोक्ष हैजाओगे ॥ ७ ॥ ब्राह्मणको मारवेवारो पिताको मारवेवारो गौको मारवेवारो आचारीको मारवेवारो कुत्ताको खायवेवारो शूद्र होय तोहू जिनके कीर्तनसो शुद्ध होय है ॥ ८ ॥ हमारे कराये महाअश्वमेधयज्ञसो परमेश्वरको पूजन करो, तो ब्राह्मणनसहित चराचरकोहू मारकर तुम पापमें नहीं लिप्त होओगे या खलके मारवेसो कहा होय है ॥ ९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसे विप्रनकी प्रेरणासों इंद्र रिपुकूं मारतो भयो आखिर वो ब्रह्महत्या इंद्रको आयके लगीही ॥ १० ॥ ब्रह्महत्याके संतापसों इन्द्रको सुख नहीं भयो कारण कि लज्जावान् निंदाको प्राप्त होय तो वाय कोई गुण सुख नहीं देयहै ॥ ११ ॥ रूपधारिणी चांडालनीकी नाईं भागती आती भई बुढापेसो कंपित अंगवारी खई राजरोगसो ग्रसित लोहु जाके वस्त्रनमें लिपटरह्यो ऐसी ब्रह्महत्याको देखते भए ॥ १२ ॥ वृद्धापनके वारनकों बिखेरे खडे रहो खडे रहो ऐसे बोलती भई मीन खायवेका दुर्गंधीकी गंधसों मार्गको दूषण करती भई ॥ १३ ॥ इंद्र सब दिशानमें भागतो भयो हे परीक्षित् ! आकाशमें गयो, फेर पूर्वसों उत्तरकों होय शीघ्र मानससरोवरमें घुस गयो ॥ १४ ॥ सो कमलको नालमें अलक्षित होके हजारवर्षपर्यन्त वसते भए, ब्रह्मवधसों कैसे मोक्ष होय ये चिंतवन करतो भयो अग्नि जलमें नहीं जाय सकेहै यासो कारण यज्ञको भागहू नहीं मिल सको ॥ १५ ॥ विद्या तप योग बलके प्रभावसो तबतक राजा नहुष स्वर्गमें इन्द्र होते भए सम्पदा ऐश्वर्यसों मदांध बुद्धि भई तब इंद्रकी स्त्रीद्वारा तिर्छी चलनहारी पशुयोनिको प्राप्त भये " ऐसे कथा लिखी है कि एक समय राजा नहुष इंद्र भए तब इंद्राणीसो बोले कि अब हम इन्द्र हैं याते तुम मेरी स्त्री हो मोको भजो ये वृत्तांत सुन वाने बृहस्पतिजीसो कह्यो बृहस्पतिजी बोले कि तुम नहुषसों ये कहो कि ब्राह्मणनको पालकीमें कहारनकी नाईं लगाय मेरे यहां तुम आओ तो मैं तुम्हें भजोंगी ऐसे कहि तो ये ब्राह्मणनके शापसों गिरजायगो जब ऐसे बृहस्पतिकी बात मान नहुषसो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इन्द्राणीने कही तब नहुष अगस्त्य आदि ऋषीनको पालकीमें लगावतो भयो कामसो अन्धो नहुष ता समय शीघ्र सर्प सर्प ऐसे कहिवेलगो, सर्प याको एक अर्थ तो है चलो दूसरो सांपकोंभी अर्थ होय है व्याकरणमें सृप्लृगतौ धातु गमन अर्थमें हैं, तब अगस्त्यादि कुपित होयकर शाप देते भए कि तूही सर्प अजगर होय सो वो अजगर होतो भयो " ॥ १६ ॥ भगवान्के ध्यानसों पापको निवारण कर ब्राह्मणनके आह्वानसों इन्द्र फिर स्वर्गको प्राप्त भयो और जबतक मानससरमें रहे तबतक तहां ईशान देवता श्रीरुद्र और विष्णुपत्नी लक्ष्मीने इन्द्रकी रक्षा की जबतक इंद्र जलमें रह्यो तबतक इन्द्रको अपनो जोर नहीं करतो भयो ॥ १७ ॥ हे भारत ! इंद्रके पास सब ब्रह्मऋषि आयकै अश्वमेध यज्ञ करायवेकी दीक्षा कर परमेश्वरको पूजन आराधन करते भए ॥ १८ ॥ सर्व देवमय आत्मा पुरुषकी जब पूजा कीनी तब ब्रह्मवादिनकरकै इन्द्रने महाअश्वमेध कीनो ॥ १९ ॥ हे नृप ! येही वृत्रासुरके वधको बडो उपाय है, जैसे सूर्यकरकै कुहरा नाश होय तैसे इन्द्रको पाप वा यज्ञसो शून्य है गयो ॥ २० ॥ जब विधिपूर्वक मरीचि आदि ऋषिनने अश्वमेध करायो तब यज्ञके स्वामी पुराणपुरुषको यज्ञ कर सब पापरहित हो इंद्र महाप्रसन्न भयो ॥ २१ ॥ सब पापनको धोयवेवारो ये आख्यान है, जामें भगवान्को कीर्तन है, भक्तिको बढावनवारो है, भक्तजननको यामें वर्णन है इंद्रको यामें मोक्ष है मरुत्वानइंद्रको यामें विजय है ॥ २२ ॥ सदा बुद्धिवान् या आख्यानको पाठ करै, पर्वपर्वमें याको श्रवण करै तो इंद्रियोंकी शक्ति बढै यश बढै सब पाप मोचन होयहै शत्रुसों जीत होय है मंगलको दाता है आयुको बढावनवारो है ॥ २३ ॥

पठेयुराख्यानमिदं सदा बुधाः शृण्वन्त्यथो पर्वणि पर्वणीन्द्रियम् ॥
धन्यं यशस्यं निखिलाघमोचनं रिपुंजयं स्वस्त्ययनं तथाऽऽयुषम् ॥ २३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे इन्द्राश्वमेधयज्ञवर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

परीक्षिदुवाच-रजस्तमःस्वभावस्य ब्रह्मन् वृत्रस्य पाप्मनः ॥
नारायणे भगवति कथमासीद् दृढा मतिः ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले कि हे ब्रह्मन् ! राजसी तामसी स्वभाववारे पापी वृत्रासुरकी नारायणभगवान्में ऐसी दृढ बुद्धि कैसे भई सो याको पूर्व जन्म कहो ॥ १ ॥ शुद्ध सतोगुणी देवतानकी ओर निर्मल आत्मावारे ऋषीनकी प्रायकरकै मुकुन्दके चरणमें भक्ति नहीं होय है तामसीकी कहा चलाई ॥ २ ॥ जीवनकी पृथ्वीके रजके कणिकानकी बराबर जीवनकी गिनती है अर्थात् जीव असंख्य हैं, तिनमेंसे कोई मनुष्यादिक कल्याणके अर्थ चेष्टा करै है वे मुनि मनुष्य है ॥ ३ ॥ हे द्विजोत्तम ! प्रायकरकै तिनमेंहू कोईही मुमुक्षु होयहै मुमुक्षुसहस्रनमेंहू कोई एक मुक्त होय है, और सिद्ध होयहै ॥ ४ ॥ हे महामुने ! सिद्ध मुक्तनमेंहू नारायणपरायण महाशांत स्वभाववारे कोटानकोटमें अत्यन्तही दुर्लभ हैं ॥ ५ ॥ सब लोकको ताप देवेवारो तापी वृत्रासुरकी महाघोर संग्राममें ऐसी दृढ मति कैसे होती भई सो कहो ॥ ६ ॥ हे प्रभो ! यामें मोको महासन्देह है, श्रवण करवेकी महाइच्छा है, जो वृत्र अपने पुरुषार्थसो सहस्राक्ष इंद्रको प्रसन्न करतोभयो ॥ ७ ॥ सूतजी बोले कि व्यासनंदन परीक्षित्के या प्रश्नको सुनके महाश्रद्धावारेपे प्रसन्न होय वाकी श्लाघा कर वचन बोले ॥ ८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! सावधान होयकर या इतिहासको सुनो जैसो ये मैंने द्वैपायन नारद देवलसों सुनो है सो हम कहैं हैं ॥ ९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे नृप ! शूरसेन देशमें सार्वभौम चित्रकेतु नामक राजा होतो भयो, जाकी धरती सब कामनानकी देवेवारी होती भई ॥ १० ॥ ताके एक क्रोड स्त्री होती भई, परंतु संतानको सुख न भयो काऊमें पुत्र न भयो[1] ॥ ११ ॥ रूप उदार अवस्था जन्म विद्या ऐश्वर्य लक्ष्मी इत्यादिकरके युक्त सब गुणसहित वंध्यापति चित्रकेतुको चिंता भई ॥ १२ ॥ सब संपदा मनोहर नेत्रवारी स्त्रियें और सार्वभौम नाम सब भूमिको चक्रवर्तीराज्य ये सब चित्रकेतुको प्रीतिके कारण नहीं होते भए ॥ १३ ॥ एक समय अंगिरा भगवान् ऋषि सब लोकमें विचरते भए अपनी इच्छासो राजाके भवनमें आए ॥ १४ ॥ विधिवत् उठके पूजासो विनको पूजन कर भोजन कराय सावधान सुखपूर्वक राजाके समीप बैठे ॥ १५ ॥ हे महाराज ! महर्षि पासमें बैठे नम्रतासों पृथ्वीमें नमें राजाकी प्रशंसा कर ये बोले ॥ १६ ॥ अंगिरा बोले कि तुम्हारे सब आरोग्य है, प्रजामें और तुम्हारे देहमें मंगल है, सप्तप्रकृतिनसों रक्षित जीव होय तैसे राजाहू स्वामी अमात्य जनपद दुर्ग धन-संचय दंड मित्र इन सप्तसे रक्षित रहै है ॥ १७ ॥ राजा आत्माको साक्षात् प्रजाके ऊपर छोडै तो आनन्दको प्राप्त होय है, हे राजन् ! तैसेई तव प्रजाको दुःख राजाके आधीन रहै है ॥ १८ ॥ स्त्री प्रजा मन्त्री भृत्यश्रेणी अमात्य पुरवासी जनपद भूपलोक अपने वशवर्ती पुत्र ये सब तो तुम्हारे वश है ॥ १९ ॥ जाको आत्मा वशमें होयहै वाके सब वशमें होय है निरालस हैकै लोकपालक सहित सब लोक वाको भेट देय हैं ॥ २० ॥ या समय आप अपने चित्तसों प्रसन्न नहीं हौ कछु दुःखी-से हौं अथवा आप काउ दूसरेके निमित्त अप्रसन्न हौं अथवा स्वयंही हैं ऐसो विदित होय है कि आपको कोई तृष्णा है कारण कि आपको मुख चिन्तासों श्याम और मलीन है ॥ २१ ॥ हे राजन् ! विद्वान् मुनिसो पूछे गए पुत्रकी चाहवारे राजा नम्रतासे प्रणाम कर मुनिसो बोले ॥ २२ ॥ चित्रकेतु बोले कि हे भगवन् ! तप ज्ञान समाधिसो आप सब जानो हो जिन योगिनके पाप नाश भए है वे शरीरधारीनके बाहर भीतरकी सब जाने है ॥ २३ ॥ यद्यपि ऐसे है तथापि हे ब्रह्मन् ! जो मैंने

---

१ शंका—राजा चित्रकेतुके दशलाख १००००० स्त्री थीं सोई शुकदेवजीने राजा परीक्षित्से कहा था कि राजा चित्रकेतुकी दशलाख भार्या थीं, उन स्त्रियोंको रति आदि लेकर पोषण भरण किस प्रकार होताथा यह बडे आश्चर्यकी बात है ?

उत्तर—राजा चित्रकेतु चित्र बनानेमें बडा चतुर था इसलिये उसका नाम चित्रकेतु था, उसने दशलाख शयनभवन अत्यन्त मनोहर बना रक्खेथे, और उन्हीं मन्दिरोमें एक एक स्त्रीका चित्रभी बना रक्खाथा प्रत्येक मन्दिरमें एक स्त्रीका चित्रभी ऐसा मनहरण था मानो साक्षात् स्त्री विराजमान है, राजा चित्रविद्या तो जानताही था परन्तु उसमें एक बात अद्भुत थी चित्रको सजीवन करनेकी विद्याभी जानताथा जब चित्रकेतुकी इच्छा होतीथी अब इसको सजीवन करना चाहिये उसी समय उसको सजीवन करलेताथा, और उनके संग हास्यविलास करके फिर तुरन्त विसर्जन कर देताथा जब राजाका विवाह होताथा उसी समय उस स्त्रीको चित्रकी मूर्ति बना देताथा, विवाहसे प्रथम चित्र नहीं बनताथा, जब राजा चित्रकेतुके पुत्र नहीं हुवा तब तो नित्य स्त्रियोंको सजीवन करताथा, पुत्रके हुए पीछे पुत्रका मुख देखकर आनन्दमें मग्न होगया तब नित्य स्त्रियोंको सजीवन नहीं करताथा जब कभी स्मरण होजाय तब पांचवें सातवें दिन किसी स्त्रीको सजीवन करलेताथा, एक दिन चित्रकेतु सब स्त्रियोंको सजीवन करके पहिलेकी सदृश सब काम करने लगा परन्तु दैवयोगसे विसर्जन करना भूल गया, तब सो स्त्रियोंसे उन स्त्रियोंकी झारनेवाली जो दासी थी वह सब कहने लगी कि जबसे राजाके पुत्र हुआ तबसे हमारा तुम्हारा निरादर कर दिया निरादर क्या नित्य तुमको सजीवन करताथा तो अब पांचवें सातवें दिन सजीवन करताहै हम तुम सबको नित्य झारती हैं और शुद्ध करती हैं, इस प्रकार दासियोंके वचन सुनकर सब स्त्रियोंने मिल उस बालकको विष देदिया बालक नष्ट होगया तब राजाने शोक संतापसे दुःखी होकर उन स्त्रियोंको विसर्जन नहीं किया इसलिये वह सब जीती रहगई ब्राह्मणोंने बालहत्याके शान्त करनेके लिये जो उपाय बताये सो किया, इस प्रकार चित्रकेतुकी दशलाख स्त्री थीं, परन्तु चित्ररूप थीं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विचारो है सो कहो आप तो सब जानो हो तोहूं आपकी आज्ञासो मैं कहूंहूं ॥ २४ ॥ लोकपन करके प्रार्थनीय राज्य ऐश्वर्यकी संपदा विना पुत्र मोको नहीं आनन्द देय है, जैसे भूखेको माला चन्दन सुख नहीं देय है ॥ २५ ॥ याते हे महाभाग ! पुरखानके सहित मैं नरकमें गयो, जैसे नरकसो मैं तर जाऊं मेरे पुत्र होय सो करो ॥ २६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि सो भगवान् कृपालु ब्रह्माके पुत्र समर्थ मुनि ऐसे सुन त्वाष्ट्रनामक चरु लेके सिद्धकर त्वष्टाकी पूजा करतेभए ॥२७॥ हे भारत ! राजाकी पट्टराणीनमें जो बडी महाराणी कृतद्युति नाम ही ताके लिये यज्ञको उच्छिष्ट वे ब्राह्मण देते भए ॥ २८ ॥ और राजासो बोले कि हे राजन् ! तुम्हारे एक पुत्र हर्षशोकको देवेवारो होयगो, ऐसे कहि दोनों ब्रह्माके पुत्र चलेगये ॥ २९ ॥ सो कृतद्युति राणी वा खीरके खायवेसें चित्रकेतुके सकाशते गर्भवती भई जैसे कृत्तिका अग्निके सकाशते पुत्र धारती भई ॥ ३० ॥ हे नृप ! ताको गर्भ दिन दिन शुक्लपक्षके चंद्रमाकीसी नाईं बढो शूरसेन देशके राजाके तेजसो वो बढो ॥ ३१ ॥ समय पायके कुमार भयो, शूरसेनवासीनको पुत्रजन्म सुनवेसो परम आनंद देतोभयो ॥ ३२ ॥ राजा कुमारके जन्मसों प्रसन्न हो पवित्र होयके गहिने पहिन विप्रनसो आशिष लेतोभयो, स्वस्त्ययन वचाय जातकर्म करावतोभयो ॥ ३३ ॥ विप्रनके अर्थ सुवर्ण चांदी वस्त्र आभरण गांम घोडे गज दान करतो भयो, और साठकोड गोदान करतो भयो ॥ ३४ ॥ मेघकी नाईं जो जा चाहसो आयो वाको सब कुछ दीनो, धन यश आयु बढे ये आशीर्वाद लेकर महा-प्रसन्नमन भयो ॥ ३५ ॥ कष्टसो राजर्षिको पुत्र मिलो यासो दिन दिन पिताकी बहुत प्रीति बढी, जैसे काउको महाकष्टसो धन मिलै तो वामें स्नेह बढै है ॥ ३६ ॥ मा कृतद्युतिकों तो पुत्रमें मोहस्नेह बहुतही भयो, परंतु सौतनकों पुत्र देख बडी डाह भई ॥ ३७ ॥ दिनरात बालकके लालन पालनसो चित्रकेतुको पुत्रवारी राणीमें तो बहुत प्रीति बढी, और राणिनमें इतनी न बढी ॥ ३८ ॥ वे ईर्षा और पुत्र न हेवेको दुःखसो तथा राजाके अनादर करवेके कारण दूसरी रानी अपनेको धिक्कार देती दुःख प्रकाश करन लगी ॥ ३९ ॥ पापिनी पुत्रहीन और वाके निमित्त पतिके गृहमें तिरस्कृत स्त्रीको धिक्कार है श्रेष्ठ संतानवारी सौत वंध्या सौतको दासीकी समान निरादर करै है ॥ ४० ॥ सदा मान पायवेवारी स्त्री अपने पतिकी सेवा और दास्यपन करवेमेंहू कोई दुःख नहीं मानैहै पर हमारो तो दासीनकी दासीके समान दुर्भाग्य है ॥ ४१ ॥ ऐसे सौतकी पुत्रकी संपदा देख सब जर मरी, राजाके समानभाव न हो यासो महावैर हैगयो ॥ ४२ ॥ वैर करवेसो बुद्धि नष्ट हैजायहै, दूसरे स्त्रीनके वैसेई महाकठोर चित्त होय है, क्रोधके मारे राजपुत्रकों सबनें मिल जहर देदीनो ॥ ४३ ॥ सौतनको ये पापकर्म कृतद्युतिनें न जान्यो, विचारो कि राजकुमार सोवै है, ऐसे देखके घरमें विचरती भई ॥ ४४ ॥ बुद्धिमान् बडी महारानी बहुत देरसों घोरनिद्रामें सोये बालककी चिन्ताकरके अपनी धायसें बोली हे कल्याणकारिणी ! मेरो पुत्र लावो ॥ ४५ ॥ वो धाय शयन करे पुत्रके समीप जाय वाको देखो कि प्राण इन्द्रिय और चैतन्यता-रहित है आंखनकी पुतली ऊपर उठ गई हैं यह देख वाको मरो जान " हाय मैं मरी " यह कह चिल्लावती भई वह पृथ्वीमें गिरी ॥ ४६ ॥ हाथनसो छातीको कूटती ऊंचे स्वरसो रोवन लगी वाकों शब्द सुन राणी शीघ्र पुत्रके पास जाय मरेभये पुत्रको देखतीभई ॥ ४७ ॥ महाशोचके मारे भूमिमें गिर पडी, मूंडके वार विखरे मोहको प्राप्त होती भई ॥ ४८ ॥ तब राजाके अंतःपुरवर्ती नरनारी रोव-नेकी अवाज सुनके आयकै बराबर व्यसन करवेवारी दुःखी है रोवन लगीं और अपराधिनी कपटसों मुख बनाय रोयवे लगी ॥ ४९ ॥ पुत्रकी अकस्मात् मृत्यु सुन शोकसों अंधो हो मार्गमें गिरतो पडतो राजा स्नेहके कारण मूर्छित होतो सब मंत्री प्रजा ब्राह्मणसहित आयो ॥ ५० ॥ वार और वस्त्र खुले बेसुध

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजा मरे बालकके पैरोंमें आय पडो बडी श्वास लेवे, आसूनके मारे कंठ रुकरह्यो, बोलवेकीहू सामर्थ्य न भई ॥ ५१ ॥ महाशोकग्रस्त पतिको देख और एकलौते पुत्र बालकको मरो देख जननकी महाराजेश्वरी सती प्रजाको हृदयको संतापदायक चित्र विचित्रतासों विलाप करती भई ॥ ५२ ॥ कुंकुम सुगंधीसो शोभित अंजन सहित आंसूनकी बूंदनतें दोनों स्तननको भिजोती भई, वार विखेरे सब माला खुलगई कुररीकी नांई ऊंचे स्वरसो पुत्रको शोच करती भई ॥ ५३ ॥ हे विधातः ! तुम अत्यंत मूर्ख हो, अपनी सृष्टिमें उलटी बात करोहो, पिताके जीवते पुत्रकी मृत्यु हैजाय ये उलटी बात करोहो, यासे तुम निश्चय मूर्ख हो ॥ ५४ ॥ शरीरधारीनकी मृत्युको मरवे जन्मवेको जो कछु क्रम नहीं है, सब बात कर्मसों होय है, तो होउ फिर ये स्नेहकी फांसी अपनी सृष्टि बढायवेको तुमने कीनी है याको तुम्ही कांटोहो ॥५५॥ हे पुत्र ! मो कृपण अनाथको शोकतप्त पिताको त्यागवेको योग्य नहीं हो, निपूतेपनको दुःख तुमसो अनायास तरगयेहे सो निर्दयी यमराजने हमें यह नरक दिखायो अब छोडके हमें या निर्दय यमराजके संग दूर मत जाय ॥५६॥ हे पुत्र! उठो ये तुम्हारी बराबरके बालक तुमसों खेलवेको आएहैं तुमें पुकारेहैं बहुत देर भई भूखे सोए हो, सो खाओ स्तन पीयो, अपनेनको शोक हरो ॥ ५७ ॥ सब मंगल मेरे नष्ट भए, मोहयुक्त तुम्हारो आनंदित मुखकमल न देखूंगी, अब मैं तुम्हारी वाणी नहीं सुनती हे पुत्र ! कहा तुम परलोकको चले गये जहांसों जायके फिर लौटनो नहीं होय है कहा निर्दयी यमराज तुझे लेगयो ॥५८॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि मरे पुत्रके ऐसे गुण गाय २ माता विलाप करती भई, और चित्रकेतु अत्यंत दुःखी होय चिल्लायके रोवतोभयो ॥ ५९ ॥ स्त्रीपुरुषके विलाप देख विनके चाकर नर नारी सब रोवते २ मरेसे हैगए ॥ ६० ॥ ऐसे दुःखको प्राप्त चैतन्यताहीन राजाको जान नारदके साथ ले अंगिरा मुनि आए ॥ जब या जीवपर भगवान् कोपे तो ऐसेई शोक होयहै ॥ ६१ ॥

एवं कश्मलमापन्नं नष्टसंज्ञमनायकम् ॥
ज्ञात्वांऽगिरा नाम मुनिराजगाम सनारदः ॥ ६१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे चित्रकेतुपुत्रमृत्युवर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

श्रीशुक उवाच–ऊचतुर्मृतकोपान्ते पतितं मृतकोपमम् ॥
शोकाभिभूतं राजानं बोधयन्तौ सदुक्तिभिः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि मृतकके समीप मरेके समान बैठे भए शोकव्याप्त राजाको सदुक्तिनसों वे दोनों ऋषि बोध करते भए ॥१॥ हे राजेंद्र ! ये तुमारो कौन है, जाको तुम शोक करो है, या सृष्टिमें तुम याके कौन है, पहिले कौन हे, अब कौन हो आगे कहा होओगे ॥ २ ॥ जैसे प्रवाहके वेग करके वालु वहे है रुकेहै, तैसे कालके वेग करके सब देहधारीनको संयोग वियोग होय है ॥ ३ ॥ जैसे धानसें धान होय है कभू नहींभी होयहै ऐसेई जीवनमें जीव ईश्वरकी माया करके प्रेरित होय है, कभू नहीं होय हैं जैसे बीजमें कोई पिता पुत्रको सम्बन्ध नहीं ऐसेही प्राणीमेंहू नहीं मायासो यह सब कछु दीखे है यथार्थमें कछु नहीं है ॥ ४ ॥ हे राजन् ! हम तुम चर अचर जो या समय दीखेहै यह पहले नहीं हे आगेहू न रहेंगे ऐसोही जानो या वर्तमानमेंहू नहीं हैं मरनो सबके निमित्त साधारण है फिर शोक करनो वृथा है ॥ ५ ॥ स्वतः अपेक्षारहित है तोहू बालकके खेलकी तरह भूतनको भूतनके द्वारा रचे है

१ अर्थात् जो मरवेको क्रम नहीं हो फिर तुममें स्नेह फंदा क्यों बनायो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पालन करै है और मारै है क्योंकि ये जीव सब पराधीन है यासों ॥ ६ ॥ हे राजन् ! यह सब मायामयी रचना है जैसे एक बीजसो दूसरो बीज होय है ऐसेही मातापिताके शरीर संयोगसो पुत्रको देह होय है जैसे बीजमें पृथ्वी आदि तत्व वही है ऐसेही देहमें वही तत्व और वही आत्मा है देहसो देहधारी, देहते देह सब प्रकारसों जन्मै है, जैसे बीजसो बीज तैसे ये जीव सदा कालवर्ती है ॥ ७ ॥ शरीर शरीरिपनको विभाग पहिलेईसों अज्ञानसो करो है, जैसे जाति व्यक्तिको विभाग वस्तुके अनुसार कल्पना करो है ईश्वरही सत्य है शेष कल्पना है ॥ ८ ॥ नाना भाव जन्म नाश क्षय वृद्धि क्रियाफल ये असत्पनेसे द्रष्टामें भासे है, जैसे अग्निकी विक्रिया काष्ठमें भासे है ॥ ९ ॥ असत्पनसो ये जीव देहके संयोगसो आत्मामें भासें हैं जैसे स्वप्नमें सब भय अभय विदित होय है वास्तवमें नहीं ॥ १० ॥ सो या अहंकारके न हैवेसो घोर संसारहू प्रकाशमान नहीं होय है ऐसेही जीवतेभये निरहंकारी विमुक्तकों जन्मनाश नहीं है ॥ ११ ॥ ताते मनके विलासमात्र अहंममतारूप अंधकारको त्यागो, आत्मा ईश्वर वासुदेव भगवान्में मन लगाओ ॥ १२ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा चित्रकेतु ऐसे जब आश्वासन कराएगए तब व्याधिसो मलीन मुखकों पौंछके बोले ॥ १३ ॥ राजा चित्रकेतु बोले आप ज्ञानसंपन्न कौन हो, बडेनमेंहू बडे हो, अवधूतनकेसे भेष धारकर छिपेभए यहां आएहो ॥ १४ ॥ हमसरीके गृहस्थीनके बोधके लिये उन्मत्तवेषधारी भक्तप्रिय ब्राह्मण पृथिवीमें यथेच्छ विचरो है ॥ १५ ॥ आप सनत्कुमार हो, कि श्रीनारद ऋभु अंगिरा देवल असित अपांतरतम व्यास मार्कंडेय गौतम ॥ १६ ॥ वसिष्ठ भगवान् राम कपिल बादरायणि दुर्वासा याज्ञवल्क्य जातूकर्ण्य अरुणि ॥ १७ ॥ रोमश च्यवन दत्तात्रेय आसुरि पतंजलि ऋषि वेदशिरा बोध्यमुनि पंचशिरा ॥ १८ ॥ हिरण्यनाभ कौशल्य श्रुतदेव ऋतध्वज ये सब सिद्धेश हैं ज्ञानके हेतुतें विचरै हैं ॥ १९ ॥ सो तुम दोनो समर्थ मो ग्रामीण मूढ बुद्धिवारेनको जो कि अज्ञानके अंधकारमें मग्न होताहूं ज्ञानदीप दिखायके उद्धार करो ॥ २० ॥ अंगिरा बोले कि हे नृप ! पुत्रकी चाहवारेकों पुत्र देवेवारे हम अंगिरा हैं ये साक्षात् ब्रह्माके सुत भगवान् नारदऋषि हैं ॥ २१ ॥ पुत्रशोकमें ऐसे मग्न दुस्तर अंधेरेमें पडे भए तुमकों ये शोक अयोग्य है याद करो कहा ये महापुरुषनके ध्यान योग्य है ॥ २२ ॥ हे प्रभो ! आपके ऊपर कृपा करके हम यहां आए हैं जो ब्रह्मण्य है भगवान्के भक्त हैं वो कष्ट पायवेकों योग्य नहीं हैं "क्योंकि एक ब्रह्मण्य भगवद्भक्त वैश्यके घर आयो जा समयमें ब्राह्मण आयो वाही विरियां वाको सारो आयो सो याकी बहूने सुन्दर पकवान पुरी लडुवा अपने भैयाके लिये कर दो थार परोसे एक थारमें तो नगदमाल दूसरेमें परामठे साग अपने मालकसें कही कि या थारको तो सारेकों परोसियो, याय ब्राह्मणके आगे वाने उलटके थार परामठेको तो सारेको परोसो, और ब्राह्मण भगवद्भक्तको मालको थार, तब बहू बोली कि यहा नाक कटैगी तब बनियां बोलो यहांकी कटी तो जुर सकैगी पर जहांको ये ब्राह्मण भगवत्को भक्त हैं वहां भगवान्के यहांकी कटी फिर न जुरैगी याते ऐसो कीनो " ॥ २३ ॥ जब हम प्रथम तुम्हारे घर आये हे वाही समय तुमको ज्ञान देवेकी हमारी अभिलाषा ही वा समय तुम्हारो चित्त और विषयमें लगो होय यह जानके वा समय हम तुमको पुत्र दे गये हे ॥ २४ ॥ पुत्रवाननको कैसे २ संताप होय हैं वह अब तुम जान चुके स्त्री भवन धन ऐश्वर्य संपदा यह सब ऐसेही संतापकी देनहारी हैं ॥ २५ ॥ शब्दादिक विषय राज्य विभूतिमें पृथिवीको राज्य फौज खजानों चाकर मंत्री सुहृद सब अपने मतलबके साथी हैं ॥ २६ ॥

१ यह श्लोक क्षेपक है ॥ २ एहू तीनों श्लोक क्षेपक हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे चित्रकेतु ! सब यह शोक मोह भयके देवेवारे हैं गंधर्वनगरके समान स्वप्नमें जैसे मायासो मनोरथ होय तैसे यह सब मिथ्या हैं ॥ २७ ॥ हे राजन् ! यह सबही पदार्थ मनसौं उपजे हैं कारण कि सात्विक स्वरूपके विना एकक्षणभर दीखकर फिर अदृश्य है जायहैं यथार्थ जो होते तौ विनको आनो जानो कैसेहू संभव नहीं है सकै है यासौं मनसोही कल्पना किये सब पदार्थ स्वप्नकी तुल्य मिथ्या हैं कर्मकी वासनाको ध्यान करवेहीसौं पुरुषके मनसौं कर्म भयो करै है यासौं कर्महू मनसो उत्पन्न है याहीसौं कर्मसाध्य विषय मनसोही उत्पन्न कहे जायहै ॥ २८ ॥ ये जीवको देह द्रव्य ज्ञान क्रिया करनेसो होय है, सो यही देहीको अनेक क्लेश महासंतापके देवेवारे हैं, ऐसै कह्यो है ॥ २९ ॥ तातै स्वच्छ मनसों व्यापक आत्माकी गति विचारो ये पुत्र और हैं, मै और हूं, ये या निश्चय करे विश्वासको त्याग शांतभावकू प्राप्त होउ ॥ ३० ॥ श्रीनारदजी बोले कि ये मंत्रणको उपदेशरूप उपनिषद् है याको सावधान हैकै धारो, याके सात रात धारवेसों पुरुष संकर्षण प्रभुको देखै है ॥ ३१ ॥ हे नरेंद्र ! जिनके चरणारविंदकी शरणको त्यागकै पूर्व ब्रह्मा और शिव आदिकहू द्वैत भ्रमको त्यागकै तत्काल तिनके महाऐश्वर्ययुक्त सबसौं अधिकस्थानको प्राप्त होतेभये, उन्ही परमेश्वर परमात्मा परात्पर पद्मापति पुरुष श्रीकांत सर्वेश्वरकौ थोडेही कालमैं तुमहू प्राप्त है जाउगे ॥ ३२ ॥

यत्पादमूलमुपसृत्य नरेन्द्र पूर्वे शर्वादयो भ्रममिमं द्वितयं विसृज्य ॥
सद्यस्तदीयमतुलानधिकं महित्वं प्रापुर्भवानपि परं न चिरादुपैति ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे पुत्रशोकातुरचित्रकेतोः अंगिरोज्ञानदानवर्णनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

श्रीशुक उवाच–अथ देवऋषी राजन् संपरेतं नृपात्मजम् ॥
दर्शयित्वेति होवाच ज्ञातीनामनुशोचताम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! जब राजाको शोक शान्त न भयो तब वे दोनौ ऋषि वा मृतकराजपुत्रको शोच करते जातिजननके बीचमें दिखायकै बोले ॥ १ ॥ श्रीनारदजी बोले कि हे जीवात्मन् ! देखो तुम्हारो भद्र होय यह देखो तुम्हारे माता पिता सुहृद् भाई बंधु तुम्हारे शोकके कारण महासन्ताप पायरहे है ॥ २ ॥ तुम अपने शरीरमें आयके सुहृदबंधुनमें शेष आयुको भोगो, और अपने पिताके रक्षित भोगनको नृपासनपे बैठकै भोगो ॥ ३ ॥ जीव बोलो कि ये कौन जन्ममें मेरे पिता माता होते भए, जीव अपने कर्मन करके देव पशु पक्षी मनुष्यकी योनिनमें घूमें हैं ॥ ४ ॥ बंधु जाति शत्रु मध्यम मित्र उदासीन विद्वेषी ये क्रमसो आपसमें जीवमात्रको होय है ॥ ५ ॥ जैसे खरीदवे बेचवे योग्य सुवर्ण आदि वस्तु मनुष्यनमें घूमै हैं, ऐसै जीव कर्तापनसो योनिनमें जन्मै मरै है ॥ ६ ॥ जा देहमें यह जीव आवै है जबतक वा देहमें रहै है तबतक वाको ममत्व रहै है उपरान्त कछु नहीं रहै है जन्मान्तरको संबंध सदा नहीं रहै है और एकही जन्ममें वाको अनित्यपन जानो जाय है जीवित पशु आदिको संबंधहू बेचवेसों निवृत्त है जाय है तब शरीर छुटवेपै तौ संबंधकी बातही कहा है ॥ ७ ॥ ऐसै योनिनमें प्राप्त हैके जीव वहको वोही बनो रहै है पित्रादि संबन्ध हैवेपैहू आप नित्य बनो रहै है वास्तवमें यह अहंकारशून्य अर्थात् मैं याको पुत्र हूं या वाक्यसौं रहित हैं कर्मवश जबतक पितादिकसो संबन्ध है तभीतक विनको अधिकार है क्यों कि जबतक ये जीव जहां उपलब्ध होय है वाको तबतकही वासों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

संबन्ध रहैहै फिर नहीं ॥ ८ ॥ नित्य अविनाशी सूक्ष्म सबको आश्रयभूत स्वप्रकाश समर्थ ये जीव आत्माकी मायाके गुणनकरकै अपनो अपनेकोही विश्वरूपकरके रचे है ॥ ९ ॥ याको कोई अतिप्रिय नहीं है, न शत्रु है, न अपनो परायो है, एक सबकी बुद्धिनको देखवेवारो गुणदोषको कर्ता जीव है॥ १० ॥ आत्मा न तो गुणग्रहण करैहै, न दोष न क्रियाफल उदासीनकी नाईं परअवरके देखवेवारो ईश्वर स्थित है ॥ ११ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ऐसै कहिकै वो जीव चलोगयो वासमय वाके सब जातके विस्मित हैकै अपनी स्नेहरूप शृंखलाकूं काटके शोक त्याग करते भए ॥ १२ ॥ वाकी जातके बालकके उचित मृतकसंस्कार करकै शोकमोहभयकी पीडाको देवेवारो दुस्त्यज स्नेहको त्यागते भए ॥ १३ ॥ तब बालककी मारवेवारी लज्जित भई, बालहत्यासो विनकी सब प्रभा नाशभई, हे राजन् ! ब्राह्मणनके बताये बालहत्याको व्रतको करती भई, यमुनापै जो ब्राह्मणने कह्यो हो वाको स्मरण करती भई "वो ये कथा है कि चित्रकेतुकी ये सब रानी पूर्वजन्ममें गिजाई होय एक कंडाके नीचै बैठीहीं, चित्रकेतुको सुत हाथी हो, सो इनपे पग पडगयो वे मरगई, सोई या जन्ममें स्त्रीनने मिलके या पुत्रको एकसंग जहर दैकै मारो अपने पूर्वजन्मको बदलो है गयो, चित्रकेतुके भाग्यमें इतनोही पुत्रसुख लिखो सो याके भयो" ॥ १४ ॥ चित्रकेतु ब्राह्मणनके कहेसे ज्ञानी होय घररूप अंधकूपसों निकसो, जैसे कीचमेंसो हाथी निकसै ॥ १५ ॥ यमुनामें विधिवत् स्नान कर पुण्यजलक्रिया कर मौनव्रतसो प्राण जीत ब्रह्माके दोनो पुत्रनकों वंदना करते भए ॥ १६ ॥ शरणागत, भक्त, प्रसन्न वशीभूतचित्त राजाके अर्थ भगवान्नारद प्रसन्न हैके या विद्याको कहिते भए ॥ १७ ॥ भगवान् वासुदेवको हम ध्यान करै हैं, तिनको नमस्कार होय, प्रद्युम्न अनिरुद्धके अर्थ नमस्कार होय, संकर्षणके अर्थ नमस्कार होय ॥ १८ ॥ विज्ञानमात्र परमानंदमूर्ती आत्माराम शांत द्वैतभावरहितके अर्थ नमस्कार होय ॥ १९ ॥ आत्माके आनंदके अनुभवसों मायासंबन्धी राग द्वेषादिके नाश करनवारे इंद्रियनके स्वामी महात्मा विश्वमूर्तिके अर्थ नमस्कार है ॥ २० ॥ मनके सहित वाणी जाको नहीं प्राप्त हैकै उपराम प्राप्त भये सन्ते जो एकही प्रकाश करै है और जो नामरूपरहित चैतन्यरूप है वो सत् असत्से परै संकर्षणजी हमारी रक्षा करै ॥ २१ ॥ यह जगत् जिनसों उत्पन्न हैकै जिनमें लय है जाय है और जिनमें रहै है तथा घटादिक पदार्थनमें मृत्तिकाके समान जो सबमें व्याप्त हैं उन परब्रह्म परमात्माको हम प्रणाम करै है ॥ २२ ॥ मन बुद्धिइंद्रिय जिन्है नहीं जान सकैहै प्राण जिनको स्पर्श नहीं करसकै है आकाशकी नाईं बाहिर भीतर जो विस्तृत है ताहि हम नमस्कार करे है ॥ २३ ॥ देह इंद्रिय प्राण मन बुद्धि ये जिनके चेतन अंशसो विंधेभए कर्ममें विचरैं हैं जैसै अग्निके विना लोहो जराय नहीं सकै है ऐसैही सुषुप्ति दशा तथा मूर्छादि अवस्थामें जिनके चैतन्य अंशके विना इन्द्रियसमूह अपनो कार्य नहीं कर सके है और जाग्रत् आदिमें द्रष्टा कहायवेवारो यह जीवहू जिन्है नहीं जान सकै है वा परमात्मा प्रभुको नमस्कार है ॥ २४ ॥ हे प्रभो ! तुम्हारे चरणारविंद युगल प्रधान प्रधान भक्तसमूहके करकमलकुड्मल द्वारा सदा उपलालित होय हैं हे परम ! हे परमेष्ठिन् ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय, भगवान् महापुरुष महानुभाव महाविभूतिपतिके अर्थ नमस्कार होय ॥ २५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे प्रभो ! प्रसन्न भक्तको या विद्याको कहिके अंगिरासहित नारद अपने धामको जातेभए ॥ २६ ॥ नारदजीकी कही विद्याको जलपान कर सावधान होय चित्रकेतु सात दिनपर्यंत धारण करतेभए ॥ २७ ॥ हे नृप ! तापीछे सप्तरात्रके अंतमें वा विद्याके धारण करवेसों राजा चित्रकेतु विद्याधरनके निष्कंटक राज्यको प्राप्त होतोभयो ॥ २८ ॥ तब कछुक दिननमें विद्यासो जब मनकीसी गति है गई, तब देवनके देव शेषजीके चरणनके समीप जातो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ २९ ॥ श्रीशेषजीको वर्णन करे हैं कमलनालसमान शुक्लवर्ण नीलांबर धारे, दमकते भए किरीट केयूर कडा कंकण धारे, प्रसन्न मुख लालनेत्र महासिद्धेश्वरन करकै शोभित, महासमर्थ शेषजीकों देखतो भयो ॥ ३० ॥ जिनके दर्शन करवेसो सब पाप नाश भए, स्वच्छ निर्मल अंतःकरण भयो, अत्यंत भक्ति प्रणयसो नेत्रनसो अश्रुपात होन लगो रोम रोममें प्रसन्नता भई निकट जायके आदिपुरुष श्रीसंकर्षणजीकों नमस्कार करतो भयो ॥ ३१ ॥ सो विद्याधर उत्तमश्लोक शेषजीके चरणकमलके धरवेके स्थानको वारंवार दर्शन कर प्रेमके अश्रुपातकी धारको वारंवार छोडतो भयो प्रेमके मारे सब अक्षरमात्रको मुखसो निकसनो बंध है गयो, सो बहुत देरतक दर्शन करतो कछु कहिवेकी सामर्थ न भई ॥ ३२ ॥ ताके उपरांत बुद्धिसों मनको सावधान कर जब कुछ बोलवे योग्य भयो तब बाह्यकी वर्त्तवेवारी सब इंद्रीनकों जीतके नारद पंचरात्र अथवा भक्तिशास्त्रमें जिनकी मूर्तिका वर्णन है उन जगद्गुरु भगवान्के प्रति राजा ऐसे स्तुति करन लगो ॥ ३३ ॥ चित्रकेतु बोले कि हे अजित! समान बुद्धिवारे साधु आत्माके जीतवेवारे आपको जीते हैं, जो निष्कामसो आपको भजवेवारे है, उनको आपने विजय करे हैं क्योंकि जो तू अकाम भक्तनको आत्मदाता आप अतिदयालु हैं ॥ ३४ ॥ हे भगवन् ! जगत्की उत्पत्ति पालन नाश इत्यादिक तुम्हारो वैभव हैं, ये विश्वके रचवेवारे मिथ्या अभिमान करकै स्पर्धा करे हैं ये सब आपके अंश हैं ॥ ३५ ॥ परमाणु रूप और सब बंडेके आदि अंत मध्यमें रहवेवारे आपही हो आप आदि अंत मध्य रहित हो जो यथार्थ तत्व कार्यके आदिमें होता है वही मध्यमें है और अंतमेंहू होगा वही अविनाशी तत्व है ॥ ३६ ॥ और येहू निश्चय है पृथिवी आदि सप्त आवरणनसो दशगुणो उत्तरोत्तर ये अंडकोश परिवेष्टित है, जहां कोटानकोट ब्रह्मांडन करके अनंत ब्रह्मांड जिनके मूंडपै एक सूक्ष्म अणुकी समान मालूम पडें हैं ॥ ३७ ॥ विषयनकी तृष्णावारे नराकार पशु इंद्रादि विभूतिकी उपासना करे है परंतु आपकी जो कि सबके कारण रूप हो उपासना नहीं करे है राजाके नाश हैवेसो जैसे वाके सेवकनके सुख नष्ट है जायहैं ऐसेंही विनके सुख देवतानके नहीं रहवेपें नष्ट है जाय हैं ॥ ३८ ॥ हे विभु परमेश्वर ! जिनके चित्त कामवासनामें आसक्त हैं वह प्राणी यदि आपमें अपनी २ कामनाकी रचना करे अर्थात् आपकी सेवामें प्रीति करे तौ भुने बीजकी समान फिर विनके कोई कामना उत्पन्न नहीं होय है यासों फिर देहान्तर उत्पत्तिको प्रभाव है सकै है क्योंकि जीवके गुणगण हैं विनसोंही सुख दुःखादि द्वंद्वनके समूह उत्पन्न होय हैं आप निर्गुण हैं आपकी पूजा कामनारहित करवेसोहू धीरे २ निर्गुण है जाय है ॥ ३९ ॥ हे अजित ! जा समय आपने अनिंद्य भागवत धर्म कह्यो वा समयही सबसों उत्कृष्टता वा धर्मकी भई

---

१ शंका—जब सब राजा जिस लोकको गये हैं तब उन सब राजाओंकी स्त्रीभी उनके साथ उसी लोकको गई हैं ऐसा हमने सब शास्त्रमेंसे सुना है, परन्तु चित्रकेतु तो विद्याधरोंका राजा हुआ तब उसकी स्त्री किस लोकको गई हैं ?

उत्तर—जैसे सबके देहकी छाया देहके संगको नहीं छोडती ऐसेही पतिव्रता स्त्री अपने पतिके संगको नहीं छोडती जहां पति जाताहै उसी स्थानको स्त्रीभी जाती है इस विचारसे चित्रकेतु विद्याधरोंका राजा हुआ तो वह विद्याधरोंकी रानी हुई, ग्रन्थ बहुत बडा होजायगा इसलिये व्यासजीने रानियोंकी कथा वर्णन नहीं करी, विचार लिया कि पंडित लोग आप जान जायगे ॥

२ ए दोउ कालके विशेषण है । परमाणु और परममहान् ए दोउ कालकेही नाम है ॥ ३ देखौ या श्लोकको अर्थ ये है कि हे प्रभो ! आपके विषयमें समर्पण कीनी जे कामबुद्धि हैं फिर वे कभूहू भुजे बीजकी तरह नहीं उपजें है अर्थात् भगवदर्पण किये कर्म अपने फलको शुभाशुभको नहीं देयहै तुम ज्ञानघन गुणसंबंधरहित हो जिन गुणनके सम्बन्धते या जीवको सुखदुःख जन्ममरण आदि द्वंद्वनके जाल होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आपहू सर्व श्रेष्ठमें वर्तमान हैं निष्किंचन आत्मारामलोग आपकी उपासनामोक्षके अर्थ करैं हैं ॥ ४० ॥ हे प्रभो ! और काम्य धर्ममें जैसे तुम हम तुम्हारो हमारो या भांतिकी विषयबुद्धि है भागवत धर्ममें ऐसी नहीं है यद्यपि काम्य कर्महू वेदोक्त है तौहू विषय बुद्धिसों शत्रुमारणादि कामनासों जो विधान है राग द्वेषकी मूलकता हैवेसों वह अशुद्ध है वाको फल नाशमान है यासों इन धर्मनको क्षय है जाय है और हिंसादिककी अधिकता हैवेसों अधर्ममूलक है ॥ ४१ ॥ अपने परायेके द्रोह करवेवारे धर्मसों अपनो परायो कहा क्षेम होयहै और कहा अर्थ सिद्ध होयहै, अपनो परायो कहा कुशल होय है, कछु नहीं होय है, क्योंकि याके अनुसार अपने कायाके अत्यंत क्लेश देवेसों आत्मारूप आप परमात्माको क्रोध होय है पराएको पीडा देनोही अधर्म है " सो गीतामें है कि—कर्षयंतः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ॥ मां चैवांतःशरीरस्थं तान् विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥ " ॥४२॥ आपकी ईक्षा नाम दृष्टि कभू व्यभिचारको प्राप्त नहीं होय है जा ईक्षासों आपने भागवतनको धर्म कह्यो है, स्थावर जंगम सबमें समान बुद्धिवारे आर्य-लोग जा भागवत धर्मकी उपासना करैं हैं ॥ ४३ ॥ हे भगवन् ! तुम्हारे दर्शनसों मनुष्यनके सब पाप क्षय होय है ये बात विचित्र नहीं है जिनके एकवार नाम लेवेसो संसारमें जो महानीच चंडाल जातिहू मुक्त है जाय है ॥ ४४ ॥ अब हे भगवन् ! आज आपके दर्शनमात्र करवेसो हमारे हृदयके सब मल नाश है गए, आपके भक्त श्रीनारदऋषिने जो कही सो अन्यथा नहीं होय है ॥ ४५ ॥ हे अनंत महाराज ! या संसारमें जो जीव करे है सो समस्तजगत्के आत्मारूप आपकों सब विदित है, जैसे सूर्यके निकट पटवीजनेके प्रकाशकी आवश्यकता नहीं ऐसे आपके निकट जो कि परम गुरु हो हमें कुछभी विज्ञापनकी आवश्यकता नहीं ॥ ४६ ॥ सब जगत्के उत्पत्ति पालन नाशकर्ता कुत्सितयोगि-नको भेदभावसों अलक्षित गति परमहंसनकी गति भगवान् संकर्षणजीके अर्थ नमस्कार होय ॥४७॥ जिन शेषजीके श्वास लेवेमें सब विश्वके रचवेवारे श्वास लेयहैं, जिनके देखवेसो सब ज्ञानेन्द्रियादि स्वारूढ हैकै देखै हैं हे सहस्रमस्तकवारे भगवन् ! तुम्हैं नमस्कार है, जाके मूडपै भूमंडल सर्षोंके समान मालूम परै है ॥ ४८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! जब ऐसे चित्रके-तुने स्तुति कही तौ अनंत भगवान् वा विद्याधरनके अधिपति चित्रकेतुसों प्रसन्न हैके बोले ॥ ४९ ॥ श्रीसंकर्षण भगवान् बोले कि हे राजन् ! जो नारद अंगिराने मेरी आज्ञा तुमसों कही वा विद्यासों मेरे दर्शनसों तुम अब सिद्धपुरुष है गए ॥ ५० ॥ हमहीं सब जीवरूप हैं, जीवमात्रके अंतरात्मा है, सब जीव आप हमारी भावना करै है, वेद और परब्रह्म ये दोनों हमारेही नित्य स्वरूप है ॥ ५१ ॥ सब लोकमें हम विस्तृत है सब लोक हमारेमें विस्तृत हैं, दोनोमें व्यापकरूप हम हैं, ये दोनों हमनेही करे है ॥ ५२ ॥ जैसे सोयो भयो पुरुष सब विश्वको अपनी आत्मामें देखेहै, और जब सोयके उठे है तब अपने आपेको एक जगे स्थित देखे है एक देशमें स्थित है, स्वप्नमें अनेक प्रकार प्रतीत होय है ॥ ५३ ॥ ऐसेही, जागरणआदिक वृत्तियें जीवमें स्थित है आत्मामें नहीं है इनको मायामात्र जानके वाके परमेश्वरको स्मरण करै ॥ ५४ ॥ सोयो भयो प्राणी जीव जा रूपसों वा समयमें अपने आपको और निर्गुण सुखको जानेहैं वह ब्रह्म आत्मामेंही हूं यह तुम जानो ॥ ५५ ॥ यदि कहो कि निद्रा अवस्थाके साक्षीके देखेको जाग्रत अवस्थावारो कैसे स्मरण करैसकै है एकके देखो भयेको कभू दूसरो स्मरण नहीं कर सकै है (उत्तर) निद्रा और जागरण इन दोनों अवस्थानको अनुसंधान करते निद्रा और जागरणके प्रकाशकत्व रूपमें जो कुछ अन्वित हो और एक दूसरेके अपाय सोहू अपाय नहीं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैवेपे कुछ इन दोनोनसो अलग है वाही ज्ञानके प्रभावसो ऐसा स्मरण हैयो करतो वह ज्ञान नहीं परब्रह्म है यासो बाल्यावस्थामें दृष्टि विषय जैसे यौवनमें दृष्टि गोचर होय है वैसोही जागवेमें दूसरी अवस्थाके हैवेपेहू निद्रा और आनन्दको स्मरण कर सकैहै जो कुछभी हो आशय यही है कि ब्रह्मकोही आत्मा जानो ॥५६॥ जा कारणसो प्राणी मरे ब्रह्मरूपको भूल जाय है तब वह अपने स्वरूपको पृथक् हैवेसो वारंवार जन्म मरणको प्राप्त होय है ॥५७॥ या संसारमें जो मनुष्यनकी योनिको प्राप्त हैके परमात्माकों जो नहीं जानै है, वाको कभू सुख नहीं प्राप्त होय है ये ज्ञान विज्ञान मनुष्ययोनिमें होय है औरमें नहीं ॥५८॥ प्रवृत्ति मार्गमें क्लेश और फलकी विपरीततादू होय है और निवृत्तिमें अभय तथा मोक्ष होय है ऐसो स्मरण राख ज्ञानीको संकल्पसो निवृत्त होना चाहिये ॥ ५९ ॥ सुखके अर्थ मोक्षके लिये दुःख नाशवेको स्त्रीपुरुष अनेक क्रिया करै हैं, परंतु विन कर्मनकी चेष्टा करवेसो दुःखनकी निवृत्ति नहीं होय है और सुखनकी प्राप्ति नहीं होय है किंतु उलटो और दुःखही प्राप्त होय है ॥६०॥ जिनको ज्ञानको अभिमान है विन पुरुषनके विपरीत फलको देखके और आत्माके सूक्ष्म स्वरूपको जो तीनों अवस्थानसो विलक्षण है ऐसे जानकै ॥ ६१ ॥ अपने ज्ञानके बलसो या लोक और परलोककी कामनानको त्यागकै ज्ञान विज्ञानमें संतुष्ट हैकै पुरुषको मेरी भक्ति करनी उचित है ॥ ६२ ॥ जो योगमें निपुण मनुष्य है उनको यही सर्वात्माकरकै स्वार्थ है कि परमेश्वरको जीवात्माको एकभावसो दर्शन करना ॥ ६३ ॥ हे राजन् ! सावधान होयकर ये मेरो वचन ज्ञानविज्ञानमें निपुण होयकर धारण करो, यासो शीघ्र शुद्ध हैजाओगे ॥ ६४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि जगत्के गुरु श्रीशेषजी चित्रकेतुकों ऐसे ज्ञान देकै वाके देखते देखते विश्वात्मा श्रीहरि संकर्षण भगवान् अंतर्द्धान हैगए ॥ ६५ ॥

आश्वास्य भगवानित्थं चित्रकेतुं जगद्गुरुः ॥
पश्यतस्तस्य विश्वात्मा ततश्चान्तर्दधे हरिः ॥ ६५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कन्धे चित्रकेतुकृतसंकर्षणस्तोत्रवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः १६॥

अध्याय १७.

श्रीशुक उवाच-यतश्चान्तर्हितोऽनन्तस्तस्यै कृत्वा दिशे नमः ॥
विद्याधरश्चित्रकेतुश्चचार गगनेचरः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि जा दिशामें अनंतभगवान् अंतर्द्धान भए वा दिशाको नमस्कार कर विद्याधरनको अतिश्रेष्ठ आधिपत्य करतो विद्याधर चित्रकेतु गगनमें विचरतो भयो ॥ १ ॥ अव्याहत है बल और इन्द्रिय जाके ऐसो वह महायोगी चित्रकेतु लक्षवर्षपर्यन्त मुनि और सिद्ध चारणनसे स्तुतिको प्राप्त होतो भयो ॥२॥ अनेक संकल्प सिद्ध कुलाचलपर्वतकी गुफामें श्रीहरिईश्वरके गुण गावतो भयो विद्याधर स्त्रीनके साथ रमण करतो भयो ॥ ३ ॥ श्रीविष्णुके दियेभए प्रकाशक विमानपर बैठकर एक समय सिद्धचारणनके मध्यमें बैठेभए शिवशंकरको देखतो भयो ॥ ४ ॥ मुनिनकी सभाके बीच शिवकी गोदीमें बैठी और बाहुसो आलिंगन करी भगवतीको देख विनके निकटही पार्वतीके सुनते ऊंचेसो हँसकर बोलो ॥ ५ ॥ चित्रकेतु बोलो कि ये लोकगुरु साक्षात् शरीरधारीनके धर्मके वक्ता सबमें मुख्य

१ शंका-राजा चित्रकेतु अनेक जन्मका ज्ञानी था, और सब देवताओंका पूजन करनेवाला था नारदजीका चेलाभी था, शेषजीकी कृपा चित्रकेतुके ऊपर बहुत थी, सो सर्व सुलक्षणयुक्त होकर राजा चित्रके जगत्के माता पिता शिव पार्वतीको देखकर क्यों हंसा ?

उत्तर-जैसे राजा बलिने यज्ञ करके इन्द्रका राज्य छुडा लिया और आप इन्द्र होगया, तब जिस पुण्यके प्रभावसे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैके स्त्रीको गोदमें लेके सभामें बैठे है ॥ ६ ॥ जटाधारी तीव्रतप करवेवारे ब्रह्मवादी सभाके पति गोदमें स्त्रीको लेकर बैठे है जैसे संसारी जीव लज्जा त्याग बैठे तैसेही यह है ॥ ७॥ बहुधाकरकै संसारी जीवहू स्त्रीको एकांतमें धारै है, ये महाव्रतधारी होयकै सभामें स्त्रीको लिये बैठे है ॥ ८॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे नृप ! अगाधबुद्धिवारे भगवान् शिवजी सभाके बीच वाके वचन सुन हँसकर चुप होरहे और उनके अनुवर्तीहू चुप्प रहे ॥ ९ ॥ उनके पराक्रमको न जान चित्रकेतु बहुत अमंगल शब्द बोलो, तब महाधृष्टात्मा आत्माके जीतवेको अभिमान करनवारे चित्रकेतु विद्याधरसो क्रोधकर पार्वतीजी बोली ॥ १० ॥ पार्वती बोली कि कहा आज लोकमें दंडधारी समर्थ, हमसरीखे दुष्ट, निर्लज्जनको दंड दैनवारो यही है ॥ ११ ॥ ब्रह्मा ब्रह्माके पुत्र भृगु नारदादिक सनत्कुमार कपिल मनु कहा यह धर्मके तत्वको यथार्थ नहीं जाने है जो शास्त्रविरुद्ध कार्य करनवारे शंकरको निषेध नहीं करै है ॥ १२ ॥ इन सबके ध्यानयोग्य शिवके चरणकमल है जगद्गुरु मंगलके मंगल शिवको यह क्षत्रीनमें अधम शिक्षा करै हैं बडो धूर्त है, याते ये अब दंड देवेयोग्य है ॥ १३ ॥ साधुनसो सेवित श्रीवैकुंठभगवान्के चरणकमलके पास जायवेको ये योग्य नहीं है याकी बुद्धि अच्छी नहीं है, गर्वी है ॥ १४ ॥ हे दुर्मते पुत्र ! याते आसुरीयोनिकों प्राप्त होओ, जो फिर तुम बडेनको ऐसे अपमान न करोगे ॥ १५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे भारत ! चित्रकेतुको जब ऐसे शाप है गयो, तब विमानसो उतरके नम्रमस्तकसों पार्वतीजीकों प्रसन्न करतोभयो ॥ १६ ॥ चित्रकेतु बोलो कि हे अंबिके ! दोनों हाथसो मैंने आपको शाप मस्तकपर लीनो मनुष्यको जो कुछ देवता कहै है, सब प्रारब्धानुसारही होयहै ॥ १७ ॥ या संसारचक्रमें घूमतोभयो ये जीव अज्ञानसो मोहित हो घूमै है सदा सुख दुःख सब योनिनमें कर्मके अनुसार भाग्यसो विवश हैकै भोगे है ॥ १८ ॥ सुखदुःखको कर्ता आप या और कोई नहीं है, जो मूर्ख हैं सो आत्माको वा दूसरेको कर्ता मानै हैं ॥ १९ ॥ या संसारमें न तो कुछ हम शापकों गिनै हैं, न कृपाको गिनै है, स्वर्ग नरक सुख दुःख कछुहू नहीं है ॥ २० ॥ भगवान् अपनी मायाकरके इकेले सब जीवनकूं रचै है, इनको बंधमोक्ष सुखदुःखकोहू सृजे है पन वो आप सुख दुःखादि संबंधसो रहित है ॥२१॥ जो समानभावमैं वर्तै है, ऐसे निरंजन पुरुषको न कोई प्यारो है न कोई शत्रु है, जाति बंधु अपनो या परायो कोई नहीं है न सुखसो राग होय न वाकों रोष होय है ॥ २२ ॥ यद्यपि ऐसे है तथापि तिनकी शक्तिकी रचनाको प्रकार इन सबके सुख दुःख हित अहित बंध मोक्ष मृत्यु जन्म शरीरिनके संसारके लिये कल्पना करो है ॥२३॥ हे भामिनि ! पार्वती ! शाप छुडायवेकों मैं तुम्हें नहीं प्रसन्न करूं हूं, हे सति ! जो कुछ मोसो आपको असाधुपनकी बात निकसगई ताको क्षमा करो ॥ २४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे शत्रुनाशक ! चित्रकेतु ऐसे गिरीश और गिरिजाको प्रसन्न कर विन दोनेनके विस्मयपूर्वक देखते देखते अपने विमानपें बैठकै जातोभयो ॥ २५ ॥ तब भगवान् रुद्र देवर्षि, दैत्य, सिद्ध, पार्षद सबके सुनते पार्वतीसों बोले ॥२६॥ श्रीरुद्र बोले कि हे सुश्रोणि ! अद्भुतकर्मा श्रीहरिके निस्पृहवारे महात्मा भगवद्दासनके दासनको माहात्म्य देख्यो ॥ २७ ॥ स्वर्ग मोक्ष नरक सबको बराबर मानवेवारे श्रीमन्नारायणके परायण भगव-

---

इंद्रासन पाया था वह पुण्य नष्ट नहीं हुआ था थोडा रहगया था इसलिये भगवान्ने वामनरूप धरके इन्द्रके राज्य दिया, वैसाही कर्म चित्रकेतुनेभी किया विद्याधरोंके राज्यका पुण्य नष्ट नहीं हुआ था परन्तु चित्रकेतु मन्त्र जपकर विद्याधरोंका राजा हुआ इसीलिये भगवान् अपनी मायाको आज्ञा देकर मायासे चित्रकेतुको मोहित करके महादेवजीसे द्रोह कराके राजा चित्रकेतुको नष्ट किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भक्त काहूसो नहीं डरै हैं ॥ २८ ॥ देहधारीनको देहके संयोगसो सुख दुःख ईश्वरकी लीलासो होय है, सुख दुःख मृत्यु जन्म शाप कृपा ये सब और इनमें गुणदोषको भेद ईश्वरेच्छानुकूल हैं ॥ २९ ॥ अज्ञानसो पुरुषके अर्थको भेद गुण दोष विकल्प आत्मामें होय है, जैसे सर्पकी भ्रांति मालामें होय है ॥ ३० ॥ वासुदेव भगवान्में भक्ति करवेवारे मनुष्यनको और ज्ञान वैराग्य पराक्रम राखवेवारेनको काईके आश्रयकी इच्छा नहीं है ॥ ३१ ॥ हम ब्रह्मा सनत्कुमार नारद ब्रह्माके पुत्र मुनि सब देवनके ईश विनके अंशके अंशसो उत्पन्न हैं तोहू ईश्वरकी कहा करवेकी इच्छा है वाकूं नहीं जाने है, अपनेको पृथक् ईश्वरपन हमने मान राखो है ॥३२॥ इनको न कोई प्यारो है न शत्रु है न अपनो परायो है सब जीवमात्रके व्यापक ईश्वर हैं, सब जीव श्रीहरिको प्यारे हैं ॥ ३३ ॥ तिन ईश्वरको महाभागवत चित्रकेतु प्यारो भगवद्दास है सब ठौर समान दृष्टि है, शांतस्वभाव श्रीअच्युतको प्यारो है और मेंहू अच्युतको प्यारो हूं यासो मोको यापें क्रोध नहीं आयोहै ॥ ३४ ॥ ताते महापुरुषके भक्त शांत समदर्शी महात्मा पुरुषनमें तुमको विस्मय करनो योग्य नहीं है भगवद्भक्त बडे महात्मा होयहैं ॥ ३५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजन् ! भगवान् शिवजीकी वाणी सुनके उमा बुद्धि शांत करती भई, सब विस्मय वाके दूर भए, "शिवजी ऐसे दयालु हैं कि एक शिवालयमें काऊने पांच हजारकी सोनेकी घंटा चढाई, सो एक चोरने देख शिवालयमें रातको घंटा उतारनेकी तजवीज करी, सो एक हाथ ऊंचो रह्यो तब चोर वा शिवकी पिंडीपर चढकर घंटा उतारने लगो, तब वरं ब्रूहि आवाज भई, चोर बोलो कौन हो तब सदाशिव बोले हम हैं, क्यों घंटा उतारै हैं, जा उत्तरमें थोरी दूरपर एक शिवको वट है, वाके नीचे वीस हजार गडे रुपा तूं निकास मैं प्रसन्न भयो जो कोई नेक पुष्पजल चढावै वाय सब कुछ दे हैं सो तू तो मोपर सबको सब चढ बैठो धन्य तोकूं है यासे भगवान् शिव बडे दयालु है" ॥ ३६ ॥ वो भागवत वा पार्वतीको पुनः शाप देवेकों समर्थ हो, परंतु वा शापको मृडसो ग्रहण कीनो यही साधुनको लक्षण है ॥ ३७ ॥ त्वष्टाकी दक्षिण अग्निमें वाने जन्म लीनो दानवकी योनिमें वृत्रासुर वाको नाम भयो, ज्ञान विज्ञानमें निपुण भयो, राजा चित्रकेतु पार्वतीके शापसो वृत्रासुर भए ॥ ३८ ॥ हमने तुमसो सब कथा कही जो तुमने हमसो पूछी कि वृत्रासुर असुर जातीको भगवान्में मन लगो याकों ये कारण हैं ॥ ३९ ॥ ये पुण्यदायक महात्मा चित्रकेतुकौ इतिहास और विष्णुके भक्तनको माहात्म्य सुनवेसो सब बंधसों जीव मुक्त है जाय है ॥ ४० ॥ श्रद्धासो वाणी जीतकै प्रातःसमय जो या इतिहासको पाठ करैं वो श्रीहरिको स्मरण कर परमगतिकों प्राप्त होय है ॥ ४१ ॥

य एतत्प्रातरुत्थाय श्रद्धया वाग्यतः पठेत् ॥
इतिहासं हरिं स्मृत्वा स याति परमां गतिम् ॥ ४१ ॥

इति श्रीम० भाषाटी० षष्ठस्कन्धे पार्वतीशापेन चित्रकेतोरसुरभाववर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

अध्याय १८.

श्रीशुक उवाच–प्रश्निस्तु पत्नी सवितुः सावित्रीं व्याहृतीं त्रयीम् ॥
अग्निहोत्रं पशुं सोमं चातुर्मास्यं महामखान् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि सविताकी पत्नी प्रश्नि सावित्री व्याहृति त्रयी, अग्निहोत्र, पशु, सोम, चातुर्मास्य, महामख इनकों उत्पन्न करतीभई ॥ १ ॥ हे राजन् ! भगकी सिद्धि भार्या महिमा, विभु, प्रभु, पुत्रनको उत्पन्न करतीभई और आशिष नामकी वरारोहा सुव्रता कन्या उत्पन्न कीनी॥२॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धाताकी कुहू सिनीवाली राका अनुमति ये ४ पत्नी होवे क्रमसो सायं दर्श प्रात पूर्णमास ये चारों पुत्र चारौं जन्माती भई ॥ ३ ॥ समनंतर नाम धातासो छोटो पुत्र जो विधाता है वो पुरीष्यनामके अग्निनको क्रिया पत्नीमें उत्पन्न करतो भयो चर्षणी वरुणकी स्त्री ही जामें भृगुजी उत्पन्न भए ॥४॥ और ववईमैंसो महायोगी वाल्मीकजी जन्मते भए, यहहू वरुणके पुत्र कहाये अगस्त्य वशिष्ठ ऋषिकोहू मित्रावरुण उत्पन्न करते भये उर्वशीके समीप घडामें वीर्य डारके शीघ्र जन्माते भये ॥ ५ ॥ रेवतीमें मित्रके उत्सर्ग अरिष्ट पिप्पल तीन पुत्र भए ॥ ६ ॥ पौलोमीमें इंद्र तीन पुत्र उत्पन्न करते भए, यह सुनो है जिनके नाम जयंत, ऋषभ, मीढुष भए ॥ ७ ॥ उरुक्रम देवमायासो वामनजी भए, उनके कीर्तिपत्नीमें महायश भयो, तिनके सौभगादिक उत्पन्न भए ॥ ८ ॥ श्रीवामनजी महाराज जें अदितिमें अवतार लेते भए विनके गुण कर्म पराक्रम आगे अष्टमस्कन्धमें कहैंगे ॥ ९ ॥ अब कश्यपजीके पुत्र जो दैत्य हैं उन्हैं तुम्हारे सामने कहै है जा दैत्यवंशमें भागवत श्रीमान् प्रह्लाद बलिराजा होते भए ॥ १० ॥ दितिके दो पुत्र भए दैत्य दानव जिन दोनौनकी वंदना करते हैं एक हिरण्यकशिपु नामक भयो दूसरो हिरण्याक्ष भयो ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुकी भार्या कयाधूनाम दानवी जंभकी बेटी ही सो चार पुत्र उत्पन्न करती भई ॥ १२ ॥ संह्राद पहिले भए, अनुह्राद ह्राद प्रह्लाद, तिनकी बहनको नाम सिंहिका हो, तामें विप्रचित्त भर्तासौं राहु भयो ॥ १३ ॥ अमृत पीतेसमय जाको शिर चक्रसौ श्रीहरिने काट्यो, संह्रादकी कृति स्त्री पंचजनको जन्माती भई ॥ १४ ॥ ह्रादकी धमनीभार्या इल्वल वातापीको उत्पन्न करती भई जिनके अतिथी हैंकै अगस्त्यजी इल्वल वातापीकों पचाय गये " श्रीवाल्मीकिमें है कि ये इल्वल वातापी दोनों भैया ऋषि बनके बैठें, एक जनो मार्गसो ऋषिनकों बुलाय लावें एक भैयाको मार रांध उन्हैं खवाय पीछै पुकारै भैया आवो सो सबके पेटमेंसो फटफटके वो निकस आवै, ऋषि मरजाय, उनके मांस ये खाते रहैं एक समय अगस्त्यजी आए, वा मार्गमें विनसोहू ऐसेई करो सो वे तो पचायगए दोनोनको मारो ऐसे अगस्त्यमुनि है तब यो श्लोक भयो " अगस्त्यं कुंभकर्णं च शनिं च वडवानलम् ॥ आहारपरिपाकार्थं स्मरेद्भीमं च पंचमम् ॥ १ ॥ आतापी मारितो येन वातापी येन भक्षितः ॥ समुद्रः शोषितो येन स मेऽगस्त्यः प्रसीदतु ॥ २ ॥ " भोजनकरके ये श्लोक बोल पेटपै हाथ फेरे तो सब खायो पीयो पचजाय है ॥ १५ ॥ अनुह्रादकी सूर्म्या स्त्रीमें बाष्कल महिष उत्पन्न भए, विरोचनकी देवीनाम स्त्रीसो बलि भए ॥ १६ ॥ बलिसो अशनास्त्रीमें बाणासुर जामैं बडे ऐसे पुत्रशत उत्पन्न भए, ताको प्रभाव महापुण्यरूप है सो पीछै कहैंगे ॥ १७ ॥ बाणासुर शिवजीको आराधन कर विनके गणनमें मुख्यताकों प्राप्त होतो भयो, जाके पास आजतक पुरके पालक शिवजी होते भए ॥ १८ ॥ दितिके पुत्र मरुत उनंचास भए उनके संतान नहीं भए, वे सब इंद्रके भाई बन साथ चलेगए ॥ १९ ॥ राजा बोले कि वे दितिके पुत्र मरुत अपने स्वाभाविक सुभावसों असुरभावकों छोडकै कैसें इंद्रकी बराबरीकों पहुँचे विनने कहा साधुपन कीनो हो ॥ २० ॥ हे ब्रह्मन् ! हे सब ऋषिनकरकै सहित हम सुनवेकी इच्छासो श्रद्धा करै है, हे भगवन् ! याके ज्ञानके लिये हमसो आप कहिवेकूं योग्य हो ॥ २१ ॥ सूतजी बोले कि हे शौनक ! राजा परीक्षितको आदरपूर्वक अर्थयुक्त वचन सुन शुकाचार्य सावधान चित्तसों वाको सत्कार करते सबके आनंददायक वचन बोले ॥ २२ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि इंद्रके पक्षमें हैकै विष्णुने जब दितिके पुत्रनकों वध कियो तब शोकसो बढे भये क्रोधके कारण जलतीभई दिति विचार करन लगी ॥ २३ ॥ भाईके मारवेवारे इंद्रियनमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रमण करवेवारे उल्बण निर्दयी हृदयवारे घोर पापी इंद्रको मरवायकै मैं कब सुखसो सोऊंगी ॥ २४ ॥ कृमि विष्ठा भस्म ये जाकी संज्ञा है ऐसे या देहकों पाप भूतसो द्रोह करवेवारो स्वार्थकों नहीं प्राप्त होय है, यासो नरक होय है ॥२५॥ जो इंद्र या देहको नित्य माने है और अत्यंत उच्छृंखल जाको स्वभाव है ता इंद्रके मदके नाश करनवारो मेरो पुत्र होय ॥ २६ ॥ या भावसो अपने भर्ताकी सेवा करती भई, शुश्रूषा और अनुरागके नम्रभावसो इंद्रियनको दमन करकै सेवा करतीभई ॥ २७ ॥ हे राजन् ! परमभक्तिसो मनोहर वचनसों सुंदर मुसकानसो तिर्छी चितवनसो सब भाव जानवेवारी कश्यपको मन वश करतीभई ॥ २८ ॥ ऐसें विद्वान् हैकैहू कश्यपजी जडवत् स्त्रीके वशमें हैगये और वाकों मनोरथ पूर्ण करनो स्वीकार कियो स्त्रीमें कछु विचित्र नहीं है ॥ २९ ॥ आदिमें ब्रह्माजी एकांतमें मैथुन योग्य सब जीवके बढवारके लिये अपने देहकी अर्धांगी स्त्रीकू करते भए, जासो पुरुषनकी बुद्धि हरी जाय है ॥ ३० ॥ हे तात ! भगवान्कश्यपजी स्त्रीसो ऐसें जब शुश्रूषित भये, तब हँसके वाकी प्रशंसा कर दितिसों बोले ॥ ३१ ॥ कश्यपजी बोले कि वामोरु वर मांगो जो तुम्हारे मनमें होय जा स्त्रीसो पति प्रसन्न है जाय है, वाकों सब पदार्थ या संसारमें प्राप्त है जाय है ॥ ३२ ॥ नारीनको पतिही परम देवता है, मानसीक पति सब जीवनके वासुदेव रमापति हैं ॥ ३३ ॥ इन्ही भगवान्के पृथक् २ नामरूपसों कल्पना कीनी भई इंद्रादि देवतानकी मूर्ति पूजी जाय हैं और इन्हैंही स्त्री पतिरूपसों पूजै हैं ॥ ३४ ॥ ताते हे सुमध्यमे ! पतिव्रता नारीनके सब काम अच्छे होय है अनन्यभावसों पतिरूप परमेश्वर पूजे जाय हैं "एक पतिव्रता पतिकी सेवा करै, और कोई तपस्वी जिसने अस्सी हजार वर्षकी तपस्या कर ऊपर पेडपर चिडियानकी ओर देखो सो सब मर गिरपरी, याने जानी तपस्या सिद्ध भई, इतनेमें शहरमें भिक्षाकूं आए बोले जल्दी लावो, पतिव्रता बोली कि मैं चिडिया नाय हूं, ये सुन गर्व गयो वाको पतिधर्मसो अधिक जानो" ॥ ३५ ॥ हे भद्रे ! सो हम तुमसो भावभक्तिसो पूजित हैवैके कारण तेरो मनोरथ पूरो करैंगे, ये बात छोटी और खोटी स्त्रीनकों दुर्लभ है ॥ ३६ ॥ दिति बोली कि हे ब्रह्मन् ! जो तुम वर देनवारे हो तो इंद्रको मारवेवारो पुत्र होय ये मैं वर मांगूंहूं, देवतानने मेरे दोनों सुत मारे, यासो मैं मृतपुत्रा हूं ॥ ३७ ॥ ये वचन वाको सुनकै विमन हैकै कश्यप ब्राह्मण दुःखित भए, और बोले अहो महान् अधर्म आज मोको आय प्राप्त भयो, क्योंकि इंद्र भगवतरूप है, सुर और असुर मेरे जान एकसे है ॥ ३८ ॥ अहो आज इंद्रियनमें मैंनें बडो सुख भोग्यो, स्त्रीरूप मायासो चित्त मेरो वश भयो, मैं महाकृपण नरकमें गिरूंगो ॥ ३९ ॥ अपने स्वभावमें अनुवर्तमान स्त्रीनको कहा अपराध है, बडे खेदकी बात है, मे अज्ञानीको धिक्कार है, जो मैं अजितेंद्री भयो ॥ ४० ॥ जिनको शरत्कालके कमल समान मुख काननकों अमृत समान वचन परंतु जिनको छुराकी धारासमान हृदय है ऐसी स्त्रीनकी चेष्टाकूं कौन जानै है ॥ ४१ ॥ अनायास अपने स्वार्थप्रवीण स्त्रीनकों कोई प्यारो नहीं है, पति पुत्र भैयाकोंहू स्वार्थसो मारडाले है मरवाय देय है ॥ ४२ ॥ परन्तु जो मैंने प्रतिज्ञा करी है सो पूरी करूंगो, मेरो वचन झूठो न होयगो, इंद्रहू मारवेयोग्य तो नहीं है, तोहू यह उपाय करैंगो ॥ ४३ ॥ हे कुरुनंदन ! मरीचिपुत्र भगवान् ये विचार कर अपने आत्माकी निंदा करते किंचित् कोपकर बोले ॥ ४४ ॥ कश्यपजी बोले कि हे भद्रे ! इंद्रको मारवेवारो तेरो पुत्र होयगो पर देवता वाके बंधु होंयगे परंतु एक वर्षपर्यंत तू व्रत करै तो तैसो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होयगो ॥ ४५ ॥ दिति बोली कि हे ब्रह्मन्! वा व्रतकों मैं धारण करूंगी, जो कार्य वामें करवे लायक होय सो कहो जो निषिद्ध हैं जिनसो व्रत नाश होय है वे नियम कहो मैं न करूंगी ॥ ४६ ॥ कश्यपजी बोले कि इकतीस बातें ये न करे इनके करवेसो सब व्रत मात्र नष्ट हैजांय है जीवमात्रकी हिंसा न करै, न शाप देय, न झूठ बोले, नख रोम न काटै, जो अमंगली वस्तु हैं विन्हे न छूवै ॥४७॥ नग्न होयकै जलमें स्नान न करै, न कोप करै, दुर्जननसो बोले नहीं, विन धुये मैले वस्त्र न पहिरै, पहिली पहिरी माला फेर न पहिरे ॥४८॥ काऊकी जूंठन न खाय, चंडिकाको अन्न न खाय, मांस न खाय, शूद्रको लायो न खाय, रजस्वला स्त्रीकी जा अन्नपे दृष्टि परगई होय वा अन्नको न खाय दोनों अंजलीसो जल न पीवे ॥ ४९ ॥ जूंठे मुख न सोवे, विना कुल्ला करैं न सोवै, सांझको मूंडके वार बिखेर न सोवै, विना सिंगार करे देहकों न रहै, वाणी जीतै, नंगी न डोलें[2] ॥ ५० ॥ पग विना धोए और असावधान गीले पगनसों, उत्तरको शिर करकै, गेरनके संग, पश्चिमको शिर करके सबेरे सांझ और नग्न हैके कभू सोवे नहीं[3] ॥ ५१ ॥ ऐसै रहै और ये करवेयोग्य है शुक्लवस्त्र पहिरे, सदा पवित्र रहे, सब मंगलीक वस्तुनकी पूजा करै, प्रातःसमय गौ, ब्राह्मण, अग्नि, लक्ष्मी भगवान्की पूजा करै ॥ ५२ ॥ सुहागननकी पूजा करै, सुहागपिटारी दै, माला पहिरावै, चंदन लगावै, मिष्टान्नसो भोजन करावै, पतिकी पूजा करै और ये जाने कि मेरो साक्षात् पतिही मेरे गर्भमें विराज रह्योहै ॥ ५३ ॥ या व्रतको नाम पुंसवनव्रत है, एक वर्षमें होय है, निरालस हैकै करै जो तुम याकों धारोगी तो इंद्रको मारवेवारो पुत्र तुम्हारे होयगो ॥ ५४ ॥ हे राजन्! महामनस्विनी दिति बहुत अच्छो ऐसे कहिके कश्यपजीको गर्भ धारण करतीभई, और या पुंसवनव्रतको करती भई, ब्राह्मण ब्राह्मणीनको नित्य जिमावै, तीयल पहिरावै, शय्यादान करै एक दूध देतीभई गौ दान करै मिष्टान्नभोजन करावै, रेशमीवस्त्र दान करै, तो निश्चय दिग्विजयी वीर आयुवान् धनी पुत्र होय है ॥ ५५ ॥ हे मानद! माताको असुरनके बढवेको अभिप्राय जान महाचतुर इंद्र वाके निकट एक कोई अन्य वेष बनायके गये और वाके आश्रममें रहिके दितिकी सेवा करनलगे ॥५६॥ नित्य वनसै पुष्प फल कंद मूल समिधा कुशा पत्ते अंकुर माटी जल समयसमयमें लावतो भयो ॥ ५७ ॥ हे नृप! ऐसे व्रतमें स्थित दितिको व्रतमें कोई छिद्र पडजाय तो मैं भंग करूं ये चाहना करतो भयो कपटी होयकर इन्द्र परिचर्या करनेलगो जैसे मृगको मारवेवारो चिडीमार समय देखै है ऐसे इन्द्र समय देखन लगो ॥ ५८ ॥ सदा सेवामें तत्पर रह्यो पर कभू व्रतमें छिद्र न देखो हे राजन्! तब इन्हे बडी चिंता भई कि कोन प्रकारसो अब मेरो कल्याण होय ॥५९॥ एक समय भाग्यसो विधाता करकै मोहित सांझको जूठे मुख व्रतसो कर्षित विना कुल्ला करे विना पग धोये दिति सोय गई ॥६०॥

---

१ प्रयोजन ये है कि यदि एक वर्ष मेरे अनुसार तू नियम यथावत् करेगी तब तौ तेरे इन्द्रको मारनवारो होयगो यदि एक दिनहू जो एकहू नियममें कसर है जायगी तौ फिर इन्द्रको भैया होयगो ॥ २ घरके बाहर निकलवेमें सात नियम है जूठे मोडे विना कुल्ला करे सन्ध्या समय मुडके वार खोले शृंगार करे बिन बकवाद करती मुख छाती आदि अंगनको खोलें घरके बाहर कभू न निकसे ॥ ३ सोयवेमें आठ नियम है ॥

४ शंका—दितिने इन्द्रके नाश करनेके लिये गर्भको धारण किया, तब इन्द्रने दितिके गर्भके नाश करनेके लिये कपट करके दितिका सेवन करने लगा, परन्तु दितिको क्यों नहीं जान पडा कि यह इन्द्र है क्योंकि दिति कुछ मूर्ख नहीं थी बडी चतुर थी, यह सन्देह है ?

उत्तर—जब दितिने इन्द्रके नाश करनेका उपाय किया तब भगवान्ने दितिसे निषेध किया कि अंबाजी अभी इन्द्रका पुण्य बहुत है अभी इंद्रका नाश किसी प्रकार न होगा, वृथा परिश्रम मत करो दितिने भगवान्की आज्ञाको नहीं माना इन्द्रके नाश होनेके लिये गर्भ धारण किया, भगवान्के वचनोंको नहीं माना इस कारणसे इन्द्रके कपटको नहीं पहिचाना मूर्ख होगई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

या अंतरमें इंद्र सोई भई दितिको पेटमें सूक्ष्मरूपसो प्रवेश करतो भयो, योगमाया करकै वो योग जानवेमें महाकुशल हो ॥ ६१ ॥ सुवर्णकी समान कांतिवारे गर्भके सात टुक वज्रसो करतो भयो जब वो रोयवे लगो तो सात टुक करे विनसो बोलो मत रोओ, वे रोए तौ फेर एकएककै सात सात टुक कर डारैं; सातो सत्ता उनंचास वेही उनंचास पवन भए ॥ ६२ ॥ हे नृप ! हाथ जोड मारे भए वे इंद्रसो बोले हे इंद्र ! हम मरुत तुम्हारे भैया हैं हमें मत मारो ॥ ६३ ॥ मत डरो भैया तुम मेरेही हो, तुम्हारे साथ हमारो अन्यभाव नहीं है तुम हमारे पार्षद होगे ऐसे जब शक्रने कह्यो ॥ ६४ ॥ हे राजन् ! यद्यपि इन्द्रने गर्भके ४९ खंड किये परन्तु नारायणकी कृपासो वो मरो नहीं जैसे अश्वत्थामाके अस्त्रसो तुम नहीं मरे ॥ ६५ ॥ एक बेर आदिपुरुषकी पुरुष पूजा करें तो विनकी समान भावको प्राप्त होय हैं दितिने तौ संवत्सरमें कुछेक कमती श्रीहरिकी पूजा कीनीहीं ॥ ६६ ॥ इंद्रके सहित पचास देवता मरुत भए माताके दोषभावकों त्याग श्रीइंद्रने सोम प्याय देवता करलिए ॥ ६७ ॥ जब अनिंदित दिति जागी तब अग्निसमान इंद्र सहित सब कुमारनको देख प्रसन्न भई ॥ ६८ ॥ इंद्रसो बोली हे तात ! कहो आदित्यनके भय देवेवारे पुत्रकी इच्छाकरके महाकठिनतर व्रत ये मैं करती भई ॥ ६९ ॥ पुत्र एकको संकल्प हो उनंचास कैसें भए, जो तुम जानौ हौ तो हे पुत्र ! सांच कहो झूठ मत बोलियो ॥ ७० ॥ इंद्र बोले कि हे माता ! तुम्हारो निश्चय जान हम तुम्हारे समीप आए हम अपने प्रयोजनमें मन राखै है धर्म नहीं जानै है सो तुम्हारे व्रतमें छिद्र देख तेरो गर्भ काटडारो ॥ ७१ ॥ प्रथम सात टुक करे सो सात पुत्र भये वेहू एकएकके सात सात कीने वे उनंचास मरे नहीं ॥ ७२ ॥ ये परम आश्चर्य देख निश्चय भयो कि कोई महापुरुषकी पूजाकी ये सिद्धि है जासो मरे नहीं हैं ॥ ७३ ॥ निष्काम होय जे भगवतको आराधन करे हैं वे और वाके सामने मोक्षकों कछु नहीं समझे है वही स्वार्थमें कुशल हैं ॥ ७४ ॥ आत्माके दाता अपने आत्मा जगदीश्वर देवको आराधन कर कौन बुद्धिमान् संसारके सुख चाहैगे क्योंकि संसारी सुख तो नरकमेंहू मिल जाय हैं ॥ ७५ ॥ सो ये मेरी दुर्जनता है मोसौ महामूढपन भयो, सो तुम क्षमा करो, हे मातः ! बडो भाग्य है कि तुम्हारो मरो भयो गर्भ फेर जीउठो बडो मंगल भयो ॥ ७६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि इंद्र वासो आज्ञा लेके शुद्धभावसो प्रसन्न होय मरुतनके साथ दितिको नमस्कार कर स्वर्गको चल्योजातो भयो ॥ ७७ ॥ जो तुमने हमसे पूछो सो हमने तुमसो आख्यान कह्यो, मरुतनको जन्म मंगलदायक है और अब कहा सुनवेकी इच्छा है ॥ ७८ ॥

एवं ते सर्वमाख्यातं यन्मां त्वं परिपृच्छसि ॥
मङ्गलं मरुतां जन्म किं भूयः कथयामि ते ॥ ७८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां षष्ठस्कंधे एकोनपञ्चाशन्मरुज्जन्मवर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः॥१८॥

अध्याय १९.

राजोवाच-व्रतं पुंसवनं ब्रह्मन्भवता यदुदीरितम् ॥
तस्य वेदितुमिच्छामि येन विष्णुः सप्रीदति ॥ १ ॥

या अध्यायमें पुंसवन व्रतको वर्णन है ॥ राजा परीक्षित् बोले कि हे ब्रह्मन् ! पुंसवनव्रत जो आपने कह्यो वाको फेर सुनवेकी इच्छा है, जासों विष्णु प्रसन्न होय है वाकी विधि कहो ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बोले कि अगहनके महीनामें शुक्लपक्षकी प्रतिपदासो पतिकी आज्ञासों स्त्री आदिसों सब कामको दाता ये व्रत प्रारंभ करै ॥ २ ॥ मरुतको जन्म सुन ब्राह्मणनसों आज्ञा लेके दंतधावन कर शुक्ल कपडे पहिरे, गहिने धारे, प्रातःसमय श्रीमन्नारायणको पूजन करै ॥ ३ ॥ हे निरपेक्ष ! आपको कहा देऊं तुम पूर्णकामवारे हो, तुम्हैं नमस्कार होय महाविभूतिके पति सब काम सिद्धिदायकके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४ ॥ हे ईश्वर ! आप दया धैर्य तेज सामर्थ्य और महिमा इत्यादिसों और दूसरे संपूर्ण गुणनसों यथावत् संतत सेवित हैं यासों आप भगवान् कहा हो सो हम आपको नमस्कार करैं हैं ॥ ५ ॥ फिर लक्ष्मीकी प्रार्थना करै हे विष्णुपत्नि, हे महामाये, हे महापुरुषलक्षणे, हे महाभागे ! मोपर प्रसन्न होवो, हे लोकमातः ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय ॥ ६ ॥ या मंत्रसो षोडशोपचार पूजा करै, भगवान् महापुरुष महानुभाव महाविभूतिपतिके अर्थ नमस्कार होय, महाविभूतिसहित उन महाविभूतिपति भगवान्के निमित्त हम पूजा उपहार देय है या मंत्रसों दिनरात श्रीविष्णुको आवाहन अर्घ्य पाद्य उपस्पर्श स्नान वस्त्र यज्ञोपवीत भूषण चंदन पुष्प धूप दीप उपहार मिष्टान्न भोग ये सब सावधान हैके करै ॥ ७ ॥ विन उपहारनके बचे द्रव्यसों घृत सहित हवन करै या मंत्रसै अग्निमें बारह आहुति देय उन भगवान् महापुरुष महाविभूतिनके स्वामीके अर्थ ये आहुति है स्वाहा, ऐसे होम करै ॥ ८ ॥ श्रीजी श्रीविष्णु दोनों वरदाता है, सब आशिषनके देवैमैं समर्थ हैं, जो सब संपदा चाहै तो भक्तिसों पूजन नित्य करै ॥ ९ ॥ भक्तिसहित चित्तसों भूमिमें दंडवत् प्रणाम करै, दशवार मंत्र जपैं तापीछे यह स्तोत्र उच्चारण करै ॥ १० ॥ तुम दोनों विश्वके समर्थ जगत्के परम कारण परमेश्वर हो, ये श्रीजी सूक्ष्म प्रकृति मायाकी कठिन शक्ति है ॥ ११ ॥ ताके ईश्वर साक्षात् तुम्ही पर पुरुष हो, सब यजनके यज्ञनमें पूजारूप महालक्ष्मी है सबके फल भोक्ता तुम हो ॥ १२ ॥ सब गुणनकी व्यक्ति श्रीजी हैं सबके प्रकाशक आप हो तुम सर्व शरीरी अत्मा हो, श्रीजी शरीरकी इंद्रियें अंतःकरणरूप हैं नाम रूप सब भगवती हैं, सबके विश्वास करायवेवारे आसरोरूप आप हो ॥ १३ ॥ जैसै तुम दोनों त्रिलोकीके वरदाता ब्रह्मांतर्यामी हो तैसे उत्तम यशवारे मेरे सब मनोरथ सत्य करौ ॥ १४ ॥ वरदाता श्रीनिवासको श्रीजीसहित ऐसे स्तुति कर आचमन कराय निवेदन कीनी भई सब उपहारकी वस्तुको वहांसै हटाय देय ॥ १५ ॥ तापीछै स्तोत्रनसो स्तुति कर सावधान चित्तकरकै यज्ञकी शेष सामग्रीको सूंघै फेर श्रीहरिको पूजन करै ॥ १६ ॥ फिर व्रतग्रहण करनवारी स्त्री अपने पतिको ईश्वर समझकै वाकी प्यारी वस्तु वाको दैके पतिकी सेवा करै विनसो प्रेम करै और पतिकोंहू यह चाहिये कि जबतक स्त्री व्रत करै तबतक स्त्रीमें अत्यंत प्रेम करै और जो पत्नी आज्ञा देय सोही करै ॥ १७ ॥ और स्त्रीकेहू ऊंचे नीचे सब काम पति करै दोनों स्त्री पुरुष एक होय प्रेमसों करैगे तो शीघ्र भगवान् प्रसन्न होय है ॥ १८ ॥ जो कदाचित् कोई प्रकारसो स्त्री व्रत करवे योग्य न होय तौ सावधान होय सब कर्म पतिही करै श्रीविष्णुको ये व्रत कभू नाश न करै ॥ १९ ॥ ब्राह्मणनको पुत्रवारी सुहागवती स्त्रीनको माला चंदन मिष्टान्नसो पूजन करै, विन्हैं मनइच्छा भोजन करावै, सब नियममें स्थित हैके दिन रात श्रीहरिकी पूजा करै ॥ २० ॥ देवको विसर्जन करै अपने धामको, जो आगे निवेदित मिष्टान्न भोग लगायो होय वाको आप पावै शरीर शुद्धिके अर्थ और सब काम प्राप्तिके अर्थ कछु भोजन करै ॥ २१ ॥ ऐसै पूजाविधिसौ बारह मासतक साध्वी स्त्री पूजा करै, ऐसो वर्ष व्यतीत करके पीछै कार्तिकमें देव ऊठनी एकादशीसो पूर्णमासीतक ब्राह्मणादि जिमाय विसर्जन करै और कार्तिक मासकी समाप्तिके दिन उपवास

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करै ॥ २२ ॥ प्रातःसमयमें स्नान आचमन कर पूर्ववत् श्रीकृष्णको पूजन करै, गर्म दूधमें घृत मिष्टान्न मिलाय स्रुवासै हवन करै ॥ २३ ॥ फिर पति पाक यज्ञके विधानसौं बारह बारह आहुति देदीप्यमान अग्निमें विशेष हवन करै ॥ २४ ॥ प्रसन्न हैंकै ब्राह्मणनते जो आशीर्वाद दियै होंय विनको शिरपै ग्रहण करै, विनको जिमाय प्रमाण कर विनकी आज्ञासो फेर आप भोजन करै ॥ २५ ॥ आचार्य गुरुकों आगे कर वाणी जीतकै भाई बंधुसहित स्त्रीके अर्थ चरुको शेष हवन करोभयो खवावै, ये कहै कि सुंदर पुत्रवती तुम होओ, सुहागन होओ ॥ २६ ॥ या संसारमें ये समर्थ ईश्वरको व्रत करै तौ पुरुष मनोवांछित फलको प्राप्त होय स्त्री या व्रतके करवेसौं सुहाग लक्ष्मी पुत्र पति और गृहको प्राप्त होय है ॥ २७ ॥ कन्यका करै तो लक्षणवारो पति मिलै, जवान स्त्री व्रत करै तो वर मिलै, विधवा करै तो मोक्ष होय जा स्त्रीके सन्तान मरें वो करै तो पुत्र जीवै, धनकी चाहसौं करै तो धन मिलै, दरिद्री करै तो धन मिलै, दुर्भगाकरै तो सौभाग्यवती होय कुरूपा करै तो सुंदर रूपवती होय ॥ २८ ॥ रोगी स्त्रीपुरुषको रोग जाय, मुक्ति चाहै तो मोक्ष होय सब रोग यासो नाश होंय है, शरीरकी सामर्थ्य होय है, कोई घरमें शुभकृत्य होय वामें जो याको पढै सुनै तो सब सुख होय, पितृ देवता या व्रत करेसौं प्रसन्न होय है ॥ २९ ॥ होमके अंतमें अग्नि महालक्ष्मीजी श्रीहरि ये संतुष्ट होय सब काम पूर्ण करैंगे हे राजन् ! ये मरुतनको जन्म महापुण्यदायक दितिके यहां भयो सो हमने तुमसों कह्यो ये बहुतके करवेयोग्य व्रत हैं[1] ॥ ३० ॥

तुष्टाः प्रयच्छन्ति समस्तकामान्होमावसाने हुतभुक् श्रीर्हरिश्च ॥
राजन् महन्मरुतां जन्म पुण्यं दितेर्व्रतं चाभिहितं महत्ते ॥ ३० ॥

इति श्रीवृंदावननिवासिगौडब्राह्मणविद्वद्वरश्रीनारायणशास्त्रिविरचितश्रीमद्भागवतषष्टस्कन्धपदार्थमुक्तावलीटीकायां पुंसवनव्रतवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

---

१ पाछै या कीर्तनको गावै ॥ कालंगडा ॥ " धनधनराम भजै सो बहुरिया ॥ टेर ॥ पती सासकी सेवा करती और कछू न सहुरिया ॥ १ ॥ सबकी सहै यहै नहिं उत्तर चलती हे बहुत निहुरिया ॥ २ ॥ पतिके भीतर हरिकों पूजति नित करती जप हरिया ॥ ३ ॥ पहिले ऊठति पीछै सोवति कबहु न देखति पिहुरिया ॥ ४ ॥ पढत पढावत हरिगुण गावति शील धर्मकी लहुरिया ॥ ५ ॥ घरको धंधो करत थकति नाहिं याद न करति पिहुरिया ॥ ६ ॥ पुरुषोत्तम कहै सोई कुल तारति हरिके चरनमें रहुरिया ॥ ७ ॥ " वसनचोर चितचोर नित, हे प्रभु माखनचोर । व्रजतियवल्लभ सांवरे, लखो हमारी ओर ॥ महाविघ्न संकटहरन, भक्तनकै उर चन्द । नित ज्वालाप्रसादपर, कृपा करहु नँदनंद ॥

दोहा—अक्षर अक्षर सोधकर, श्रीहरिके गुण गाय ॥ पूर्ण कियो यह स्कन्ध, यदुपति रहैं सहाय ॥ १ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना,
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " छापाखाना,
कल्याण.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अनर्घनलचरित्र.

महानाटक.

महाशय ! इस अनर्घनलचरित्रनाटकमें महाभारतोक्त नलदमयंतीकी समग्र कथा लिखीगई है. नलदमयंतीकी कथा जैसी कुछ सारगर्भित तथा अनेक प्रकारसे शिक्षाप्रद है उसको समग्र संसार जानता है और सभी लोग इस कथाके जानने तथा सुननेमें रुचि रखते हैं। ऐसा किसका हृदय पत्थर होगा जो नलदमयंतीकी करुणकथाको पढसुनकर पिघल न जाय। और भाषामें आजतक महानाटक नहीं बना यह महा नाटक है। और आजकलहके नाटकोंमें मनमाने गर्भांक दिये जातेहैं इसमें संस्कृतके नाटचशास्त्रकी रीतिसे गर्भांक दियागयाहै। संस्कृतनाटचशास्त्रसे अनभिज्ञलोग इस अनर्घनलचरित्रनाटकको पढकर संस्कृतके नाटचशास्त्रकी मर्यादाको तथा गर्भांककी मर्यादाको भलीभांति जानसकतेहैं, क्योंकि यह नाटक संस्कृतनाटचशास्त्रकी मर्यादासे बतायागयाहै। और इस ग्रंथके पढनेसे संस्कृतभाषाका बोधभीबहुत कुछ होसकताहै।

महाशय ! आजदिन साहित्यशास्त्रके परमाचार्य काशीके महामहोपाध्याय सी. आई. ई. विद्वद्वरश्री ७ श्रीगंगाधरशास्त्रीजी महाराजही हैं ऐसा कौन पुरुष है जो उक्त श्रीशास्त्रीजीमहाराजको विद्यासमुद्र न जानताहो यह नाटक उक्त श्रीशास्त्रीजी महाराजके एकवात्सल्यपात्र छात्र पंजाबी पंडितसुदर्शनाचार्यशास्त्रीने बनाया है और क्या लिखें आप एक वेर देखिये तभी आप कविके चातुर्यको जानसकते हैं। कविने औरभी अनेक ग्रंथ संस्कृतमें तथा भाषामें लिखकर विद्वत्समाजमें नाम पाया है। कविने भूमिकामें नलदमयंतीकी मूलकथाभी समग्र लिखदी है। सभकी सुलभताके कारण इसका दाम केवल १ एकही मुद्रा नियत कियाहै। जिसके हाथमें यह ग्रंथ गया उसने फिर छोडा नहीं।

श्रीवाल्मीकीयरामायणातर्गत—

सुंदरकांडभाषा.

पाठक महाशय ! भारतवर्षमें ऐसा पुरुष मिलना दुर्घट है जो कि भगवान् रामचंद्रजीको न जानता हो। और यहभी सबको मालूमही है कि सबोंसे पहिले रामायणरूपी कथा महर्षि वाल्मीकिजीने गाई है। अतएव उसको श्रीवाल्मीकीयरामायण कहते हैं। वह रामायण पाठकोंको चतुर्विध पुरुषार्थ देनेवाला है। यह किसीसे नहीं छिपा। उसमेंभी विशेषकर परम पुरुषार्थको देनेवाला सुंदरकांड है। जैसे भारतमें गीता। ब्रह्मांडपुराणके एकसौ सैंतालीसवें अध्यायमें लिखा है कि. " कांडस्य सुंदराख्यस्य श्रवणात् पठनादपि। मां प्राप्नुयाज्जगद्धेतुं नात्र संदेह इष्यते॥ " भावार्थ—भगवान् कहते हैं कि, सुंदरकांडके पढने तथा सुननेसे जन जगत्कारणरूप मुझकोही प्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं। उसका पाठ अर्थज्ञान पूर्वकही होना उचित है। क्यों कि विना अर्थज्ञान पाठका फल अत्यल्पसेअत्यल्प शास्त्रमें कहा है। यह सोच मैंने ढाढोलि ग्रामस्थ श्रीयुत पं० काशीरामजीके द्वारा सरल सुबोध मूलार्थ भाषामें बनवायकर ग्लेज कागदपर बडे अक्षरोंमें शुद्ध छाप दिया है। जिसको आबालवृद्ध पाठ कर सकें। और प्रति श्लोकमें गुप्तार्थभी गोविंदराजीय भूषणके अनुसार भावार्थरूपसे खोल दिया है। प्रति अध्यायके आद्यंत श्लोक लिखकर सब श्लोकांकभी लगा दिये हैं। ऐसे इस सर्वांगसुंदर पुस्तकको ले परमार्थ लाभ साध लेवें। की. २ रु. डाकमहसूलसहित।

स्मृतिरत्नाकर।

इसमें केवल आह्निक प्रकरणही नहीं, द्विजाति मात्रके नित्य पालनीय आचार वर्णित हैं। शौचाशौच, वृत्ति, भक्षाभक्षविचार आदिका सम्पूर्ण वर्णन है। इसमें अनेक श्रुति, स्मृति, पुराण आदिसे संग्रह करके अनेक सदाचार दर्शाया गया है। अनेक इतिहास-ग्रन्थोंसे बहु मन्त्र आदिका विस्तृत निरूपण है। ग्रन्थ वैष्णवोंके लिये विशेष उपकारी है। साथही यहभी जान लेना उचित है, कि केवल वैष्णव धर्मही इस पुस्तकका लक्ष्य नहीं है। इसमें किसी विशेष सम्प्रदायका पक्ष नहीं और दूसरे उपासकोंकी निन्दा नहीं। एक इस गुणसे भारतवर्षके स्मार्त्तमात्रके उपकारी है। द्विजगण इसे सादर ग्रहण करें। ग्रन्थ संस्कृतमें है। जिल्द समेत पूरे २२५ पृष्ठकी पोथी है। की० २ रु.

अनेकसंग्रह।

यच्च गीतरसैर्भिन्नं तन्मुखं विवरं विदुः।

प्यारे पाठको ! गाने बजानेके अनेकों राग रागिनी छन्द कवित्त और भजनोंका संग्रह देखो तौ इसे पढो इस पोथीमें अनेकों स्तोत्र व गानेकी चीजें एकत्रित करी गई हैं। यदि आशिकोंकी चुटाइल आहभरी बातें और बेवफाओंकी बेवफाईकी पूरी बहार देखनी हो तौ इसमें मिलेगी। एक २ गजल व ठुमरी ऐसी दिलचस्प लिखी गई है पढनेवाले लाहालोट हो जाते हैं। और यदि भक्तिमार्गपर चलना हो, संसारके सुखोंसे मुख मोड नारीसे नाता तोड मुमुक्षु बनना चाहो तो इसी ग्रन्थका दूसरा खण्ड पढो। विशेष प्रशंसा करना मानो सूर्यको दीपकसे दिखाना है। यह ग्रन्थ दो खण्डोंमें परिपूर्ण हुआ है। मू० २॥ रु०।

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना, कल्याण.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

सप्तमस्कन्धप्रारम्भः।

अध्याय १.

दोहा—जन भय टारन सुख करन, हरन सकल भय शूल। सो ज्वालापरसादपर, सदा रहहिं अनुकूल ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

राजोवाच—समः प्रियः सुहृद्ब्रह्मन् भूतानां भगवान् स्वयम् ॥
इन्द्रस्यार्थे कथं दैत्यानवधीद्विषमो यथा ॥ १ ॥

श्रीश्वराय नमः ॥ "अपने भक्तिकी पक्ष करैहैं उनके अभक्तनकों मारै है ऐसे परम आनंदरूप श्रीश्वरको प्रणाम है ॥ अब या सप्तममें पंद्रह अध्यायमें ऊति नामक लक्षण कहैं हैं, ऊति वासनाको नाम है, जैसो कर्म होय है वाकें अनुसार लीला करनी वाको नाम ऊति है। सो लीला दो प्रकारकी है एक शुभ एक अशुभ ये हेतुभेदसों है महात्मानकों कोपरूप तो अशुभ लीला है महात्मानकी कृपा भई वो शुभ लीला है ॥ श्रीहरिके पार्षद वैकुंठमें वसतेहू हे तोहू सनत्कुमारादिकनके द्वेषसो वो लीला भई सो अशुभवासना कहाई ॥ और दैत्यके गर्भमें स्थित प्रह्लादजीको श्रीनारदजीकी कृपासों विष्णुमें सांची भक्तिकी वासना भई ये लीला शुभवासना कहाई ॥ अपने भक्त वैर करै तोहू ईश्वर रक्षा करै हैं वैर करवेसों तो तीन जन्ममें उद्धार करै है, प्यार करवेसों सात जन्ममें उद्धार होय है ॥ याते बुद्धिमान् महात्मानपर कृपा कर अनुग्रह करैहैं यालिये यह ऊतिको लक्षण कह्यो है तहां प्रथम सप्तममें दश अध्यायसों दैत्य तथा विनके पुत्र महात्मानको कोप सदंसदुर्वासनाभेद कह्यो है ॥ शुद्धचित्तवारे कामसों शुद्ध वासना करै है, सो पांच अध्यायमें धर्मको निर्णय है ॥ तहां प्रथम अध्यायमें हिरण्यकशिपुको विष्णुभक्तपुत्रसों विप्रशापसो विरोध भयो यह कथा कहैंगे" ॥ इति ॥ श्रीराजा परीक्षित बोले कि हे श्रीभगवन् ब्रह्मन्! भगवान् सब जीवमात्रपें सम प्रिय सुहृदभावसों वर्तै हैं, तोहू इंद्रके अर्थ दैत्यनको क्यों मारते भए यासों विषम भाव ईश्वरमेंहू मालूम पडै है ॥ १ ॥ साक्षात् आनंदरूप आत्मा विनको न देवतानसों कछू प्रयोजन है न असुरनसों वैर है; उद्वेगहू नहीं है ईश्वर निर्गुण है ॥ २ ॥ हे सुमहाभाग! श्रीमन्नारायणके गुणनमें ये महासंशय हमको उत्पन्न भयोहै, सो आप याको दूर करवेकू योग्य हो ॥ ३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि हे महाराज! श्रीहरिको अद्भुत चरित्र बहुत सुंदर तुमने पूछो जहां भागवतको माहात्म्य है, वो भगवान्की भक्तिको बढावनवारो है ॥ ४ ॥ यह परम पुण्यमय गाथा श्रीनारद आदि ऋषिनने गायी है सो श्रीवेदाचार्य वेदप्रवर्तक व्यासजीको नमस्कार कर श्रीहरिकी कथा कहौंगो ॥ ५ ॥

---

१ शंका—राजा परीक्षितसे श्रीशुकदेवजीने कहा कि व्यासजीको नमस्कार करके हरिकी कथा अब मैं कहूंगा, इस बातके कहनेसे यह विदित होताहै कि सात स्कन्धसे पाहिले जो छैः स्कन्ध वर्णन किये उनमें हरि भगवान्की कथा नहीं है?

उत्तर—श्रीशुकदेवजीने ऐसा विचार करके राजा परीक्षितसे नहीं कहाथा, कि छैः स्कन्धमें भगवान् हरिकी कथा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जो कोई जीभ प्राप्त हैकै कीर्तनयोग्य श्रीविष्णुको कीर्तन नहीं करै, वो मोक्षकी सीढीको पायकैहू वापै नांय चढै, वो दुष्टबुद्धिवारो है ॥ ६ ॥ ताते श्रीगोविंदको माहात्म्य आनंदरससहित सुंदर है जो याको सुने कीर्तन करै वो कृतार्थ है, यामें संदेह नहीं है ॥ ७ ॥ तातैं बुद्धिवान् श्रीगोविंदके चरित्रनसौं भरी भई पुण्यदायक कथाको सुनै हे नृपसत्तम ! वो महापुण्यकी देवेवारी है ॥ ८ ॥ अजन्मा निर्गुण अप्रकट प्रकृतीसौं परैहू भगवान् है तोहू अपनी मायाके गुणमें प्रवेश कर बाध्यबाधकभावको प्राप्त होय है ॥ ९ ॥ हे राजन् ! सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये प्रकृतिके गुण हैं कछु आत्माके नांय हैं, तिनमें हे राजन् ! विन गुणनकी बढवार एक संग नहीं होय है और न एक संग विनको घटनो होय है किंतु कभू कोई गुण बढजाय है कभू कोई घट जाय है ॥ १० ॥ सत्वगुण जयके समय सतोगुण बढकर देवऋषीनकों बढावै है, पराजयके समय रजोगुण बढकरकै असुरनको बढावै है तामसगुण बढकर यक्षराक्षस बढै हैं, जो जो काल जैसौ होय है तैसे आप होय है' ॥ ११ ॥ जैसे अग्नि एक रूप है परन्तु काष्ठादि भेदसौं अनेक प्रकारको प्रतीत होयहै ऐसेही परमात्मा एक है परन्तु देव दैत्य राक्षसादिमें अनेक रूपसौं दीखै हैं तथापि देवतादिकनके विग्रहसौं प्रत्यक्ष पृथक् नहीं प्रतीत होयहै आत्मामें स्थित आत्माकों मथन कर कविलोग हृदयमें दर्शन करै हैं ॥ १२ ॥ जैसे भूमिके भागनके संयोगसो मीठो खारी मैलो जल है जाय तैसे मायाके संगसों सतोगुण आदि भेदत्रयभावयुक्त परमेश्वर पुरुष होय हैं ॥ १३ ॥ जो समय परमेश्वर जीवके भोग भोगवेको शरीरनको रचे चाहै है तब रजोगुणको रचे है और जब विचित्र विनमें क्रीडा करवेकी इच्छा करे है तब सत्वगुणको रचे है और जब संहार करवेकी इच्छा करे है तब तमोगुणको रचे है ॥ १४ ॥ हे नरदेव ! निमित्तभूत प्रधानपुरुषसो सत्य कर्त्ता ईश्वर सबके आश्रय कालकूं रचे है, हे राजन् ! जो ये काल सतोगुणके वृद्धिके समय देवनको रचकर बढावै हैं ॥ १५ ॥ देवप्रिय महायशस्वी ईश्वर देवनके शत्रु असुरनको रजोगुणके समय बढायके मारते हैं, यही ईश्वर निश्चयकरकै बढावै है याही हेतुसो वो नियंता है तोहू सत्वप्रधान जो देवसमुदाय है ताय बढावतोसो होय है वा समय देवशत्रु दैत्य असुरनकों नाश करै है बढो है यश जाको अर्थात् शक्तिक्षुभित जो गुणगत वैषम्य गुणाधिष्ठाता ईश्वरमें फुरै है ये सब प्रकरणको अर्थ है ॥ १६ ॥ हे राजन् ! एक समय राजसूयमें अजातशत्रु राजा युधिष्ठिरने ऐसेई प्रश्न कीनो तब प्रीति करकै श्रीनारदजीने ये इतिहास कह्यो हो ॥ १७ ॥ राजसूय यज्ञमैं महाअद्भुत राजा युधिष्ठिरने देखो कि वासुदेव भगवान्में शिशुपाल सायुज्य मोक्षको प्राप्त होतो भयो ॥ १८ ॥ वा समय सब मुनीनके सुनते भए राजा पांडुसुत विस्मय मनकर बैठे भए नारद ऋषिसों पूछते भए ॥ १९ ॥ श्रीयुधिष्ठिर बोले कि परमतत्त्व श्रीवासुदेवमें विद्वेषी शिशुपालकी प्राप्ति जो कि परम एकांतिभक्तनकोहू अतिदुर्लभ है सो प्राप्ति शिशुपालको भई ये बात अत्यंत अद्भुत है ॥ २० ॥ हे मुने ! सब हम या बातकी सुनवेकी

नहीं है, अब हरि भगवान्की कथा मैं कहताहूं, श्रीशुकदेवजीने जान लिया कि प्रह्लादकी रक्षा करनेके लिये हरिभगवान् नृसिंहका रूप धरके प्रगट होंगे, शास्त्रमें सिंहका नाम हरि है इसलिये शुकदेवजीने कहाथा, कि हे राजन् ! हरि जो सिंहरूप भगवान् है उन हरि भगवान्की कथा अब मैं कहताहूं, श्रीशुकदेवजी महाराजने ऐसा कहाथा ॥

१ जब सत्वगुणके जयको समय होय है तब देवतानकी ऋषीनकी वृद्धि होय तब भगवान्हूं विनके अनुगुण होय है और जब रजोगुणके जयको समय होय है तब असुरनकी वृद्धि होय है और भगवान्हूं विनके अनुगुण होय है और जब तमोगुणको जय समय होय है तब यक्ष राजसनकी वृद्धि होय है तब भगवान् विनके अनुगुण होय है वास्तवमें हे राजन् ! प्रभुमें कोई वैर प्रीति नहीं है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इच्छा करै हैं कि भगवान्‌की निंदासों राजा वेनको ब्राह्मणननें नरकमें पटक दीनो ॥ २१ ॥ और अभीकी वार्ता है कि दमघोषको सुत पापी शिशुपाल बालकपनसों लेकै गोविंदसों क्रोध वैर राखतो हो और दुर्मति दंतवक्रहू निंदा करतोहो ॥ २२ ॥ वारंवार साक्षात् अविनाशी परब्रह्म विष्णुको गारी देतो हो, वाकी जीभमें कोढ्हू तो नाय भई, और नरकमेंहू नहीं गयो ॥ २३ ॥ जाको स्वरूप जानौ न जाय तिन भगवान्‌में सबके देखते देखते वे पापी कृष्णको बालकपनसो गारी देनवारो शिशुपाल कैसे लीन है गयो ॥ २४ ॥ या प्रसंगमें हमारी बुद्धि बहुत घूमै हैं जैसे दीपकी लोय पवनसो घूमें सो याको जो कछु कारण होय सो मोसो कहौ ये बात अत्यंत अद्भुत है या बातकों आपही जानौ हो ॥ २५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि श्रीनारद ऋषि राजा युधिष्ठिरको ये वचन सुनके प्रसन्न होयकर वा सब सभाके सभासदनको सुनावते भए सुंदर कथा कहिते भए ॥ २६ ॥ श्रीनारदजी बोले कि हे राजन् ! निंदा स्तुति सत्कार तिरस्कार इत्यादि जाके कियेभए माने जायहैं वह देह प्रकृति पुरुषके अज्ञानसों कल्पित है ॥ २७ ॥ हे पार्थिव ! वाही देहके अभिमान करके भूतनको जैसें मेरो मैं ये वैषम्य होयहै तैसें जाको नहीं होय है और दंडनाम ताडन और पारुष्य नाम निंदा इनके हेतुसो पीडाहू होय है और जा देहमें बँधो ये अभिमान है वा देहके वधसो वधहू जैसे होय है तेसेही जाकों अभिमान नहीं है फिर कहो या परमेश्वरकी हिंसा कोनसे हेतुसो कल्पना करी जाय है अर्थात् वाकी हिंसा कैसेहू नहीं कल्पना करी जाय हैं क्योंकि वो एकही है और सबको आत्मा है क्योंजी तब फिर दैत्यनको क्यों मारै है कि विनके हितके लिये वो विनको दंड देय है "यापें एक दृष्टांत है कि कोई गरीब ब्राह्मण निर्धन एक मंदिरमें बैठ रामायणकी कथा रामजीको सुनातो हो, वहां राम लक्ष्मण हनुमान् तीन प्रतिमा हतीं, सो कोई सुनवेको न आवै, महा अभिमानी क्रोधी मदांध एक वैश्य कदी कदी दर्शनको आवै सो एक दिन वा बनियाके सामने रामचंद्र हनुमान्‌सें बोले कि याकी कथा पूरी ह्वै चली कितनी भेट चढैगी, तब हनुमान बोले एक हजार रूप चढैगो बनिया व्योपारी ये सुन शीघ्र वा ब्राह्मणसे कही तुम्हारी कथा कोई सुने तो है नाय रूपा कौन चढावैगो, मैं तुम्हारी भेटको ठेको पांचसो रूपा लाऊं, ब्राह्मण बोले बहुत अच्छी जिजमान यूं कहि समाप्तिके दिन पांचसो रूपा भेट चढाय कहीं हजार तों आए नाय बडी देर भई सो क्रोधके मारे हनुमान्‌के पास जाय बोलो देवताभी झूठ बोलै हे यह कह लात मारी सो हनुमान्‌जीने टांग पकडलीनी फेर तीन प्रहर पीछे रामजी बोले कथा पूरी भई तभ वो हनुमान् बोले कि पाचसो तो आय गए है पांचसोमें बनियाकी टांग पकडराखी है, रूपा दैगो तो छोडोंगो नाय तौ नाय तो बनियां बोलो जी कहा उनने कही कि हम देवता तो भावके भूखे है धन तुम्ही लोग देवो हो, बनियां पांचसो और भेट चढाय घर गयो कथा पूरीभई यासे अभिमान धनमें न करै यूं नारदजी बोले" ॥ २८ ॥ २९ ॥ जो सबके दमन करवेवारे है वे परमेश्वर काऊकी निंदा नहीं करै न मारै हैं ताते वैरसो निर्वैरसों भयसों श्रीहरिकों भजे शुभ होय है ॥ ३० ॥ चाहै स्नेहसों कामसों भजै कोई उपायसों भजे तोहू ईश्वर शुभगति दैयहैं जैसो कछु वैरभावसो शीघ्र जीव विनमें लीन हैजाय है ॥ ३१ ॥ तैसो भक्ति योगसो नहीं ये हमारी निश्चय मति है, जैसे एक कीडाको पकडकर भृंगी जीव लै जावै हैं सो डरके मारे वाहीको स्मरण करै है वाहीको रूप हैजाय है ॥ ३२ ॥ ऐसेही क्रोधसो भयसो चाहै प्रकारमेसों कैसेंहू भगवान्‌को भजन करै वो विनकी समान भावको जीव प्राप्त है जाय है, ऐसे श्रीकृष्ण भगवान् मायाकरकै जिनने मनुष्यको अवतार

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लीनों है तिनमें ॥ ३३ ॥ वैर करकै पापी पवित्र भए विनकी चिंता करकै विनमें लीन होते भए, कामसों वैरसो भयसों स्नेहसों जैसे भक्तिसों ईश्वरमें मन लगावै ॥ ३४ ॥ ऐसेंही कामादिकसो श्रीकृष्णमें मन लगायकर बहुत प्राणी विनकी गतिको गए गोपी तो कामसों ईश्वरमें पहुँची कंस भयसो मुक्त हैगयो शिशुपाल आदि नृप वैर करवेसो ईश्वरमें लीन भए ॥ ३५ ॥ श्रीकृष्णसें संबंध व्याह आदिसो यादव भगवल्लोकको गये हे युधिष्ठिरादिकहो ! आप स्नेहसो मुक्त भए विभुकी भक्तिसों हम मुक्त भए, इन सब पांचनमें राजा वेनु तो कछुहू नहीं हो, वाकी का बात हैं ॥ ३६ ॥ हे पांडव ! तातें कोई उपाय करकै श्रीकृष्णमें मन लगावै तुम्हारो फूफीको पुत्र शिशुपाल और दंतवक्त्र ॥ ३७ ॥ ये दोनों विष्णुके पार्षदनमें श्रेष्ठ हे, सो विप्रनके शापसों अपनें स्थानसो गिरपडे, युधिष्ठिरजी बोले कि श्रीभगवान्‌के दासनको वो शाप कैसे भयो ॥ ३८ ॥ या बातमें हमको कछु विश्वास नहीं आवै है कि श्रीहरिके एकांती भक्तनको जन्म कैसे, वैकुंठपुरके वासी तो देह इंद्रिय प्राणरहित है, वे सब अप्राकृत हैं ॥ ३९ ॥ विनके देह मायाके नहीं है, सो मायाके देहसंबंध कैसे भए, ये तुम कहो, श्रीनारदजी बोले कि एक समय ब्रह्माके पुत्र सनकादिक अपनी इच्छासों विष्णुलोकको जाते भए ॥ ४० ॥ त्रिलोकीमें विचरते भए सनन्दनआदि मुनि वैकुंठमें गए, पांच छै वर्षके बालक है, जो पहिलेसो जन्मे हें वे विन सबसो पहिलेके है ॥ ४१ ॥ दिगंबर वेषधारी नग्न विन बालकनको भगवान्‌के द्वारवासी जय विजय पार्षद मने करते भए, तौ विनने कुपित हैकै शाप दीनो कि तुम वैकुंठके वसवे लायक नहीं हो ॥ ४२ ॥ भगवान्‌के चरणकमल रज तमसों रहित हैं तुम महा पार्षदनको तमोगुण आयो, हे मूर्खो ! याते शीघ्र आसुरीयोनिनकों प्राप्त होओ ॥ ४३ ॥ जब विननें ऐसें शाप दीनो सो दोनो वे गिरे, तब विन दयालुनने ये कही कि जाओ अब तो तुम जाओ पन फिर तीन जन्म बीते पीछे तुम यहांके यहां फिर आय जाउगे वे दोउ ॥ ४४ ॥ दैत्य दानवनसों वंदित दितिके पुत्र हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपु भए, इनमें हिरण्यकशिपु बडे है हिरण्याक्ष छोटो ॥ ४५ ॥ सो नरसिंहरूप श्रीहरिने धारण कर हिरण्यकशिपुकों मार्‌यो, और या धरतीके उद्धारती विरिया श्रीवाराहरूप धार हिरण्याक्षको मारचो ॥ ४६ ॥ हिरण्यकशिपु केशवको प्यारे प्रह्लाद पुत्रके मारवेको मृत्युके हेतु नाना प्रकारकी पीडा देतो भयो ॥ ४७ ॥ सम्पूर्ण प्राणिमात्रके आत्मस्वरूप शांत सब ठौर ब्रह्म दृष्टि राखनवारे भगवान्‌के तेजयुक्त प्रह्लादके वध करवेके वाने अनेक उपाय किये परन्तु मार न सको ॥ ४८ ॥ वेभी दोनों केशिनीमें राक्षस होय जन्मे विश्रवाके पुत्र रावण कुंभकर्ण भए सर्व लोकके ताप देवेवारे होते भए ॥ ४९ ॥ तहांहू श्रीराघव रूप हैकै शाप छुडायवेको विन्हे मारते भए हे प्रभो ! मार्कंडेयजीके मुखसो आप रामचरित्र सुनोगे ॥ ५० ॥ वेही दोनो तुम्हारे फूफीके पुत्र होयकर क्षत्री भये है; अबकी समय शापसो छूटवेके लिये श्रीकृष्णजीके चक्रसो मरके पापरहित भए हैं ॥ ५१ ॥ तीव्र वैर करवेसो ध्यानसो भगवत्‌की समानताको प्राप्त भए, फेर विष्णु पार्षद श्रीहरिके पास जायपहुँचे ॥ ५२ ॥ श्रीयुधिष्ठिरजी बोले कि हे भगवन् ! हिरण्यकशिपुने प्यारे पुत्र महात्मामें कैसे विद्वेष कीनो प्रहादजी तो श्रीअच्युतमें चित्त राखते हे सो मोसो प्रह्लादचरित्र कहो ॥ ५३ ॥

युधिष्ठिर उवाच–विद्वेषो दयिते पुत्रे कथमासीन्महात्मनि ॥
ब्रूहि मे भगवन् येन प्रह्लादस्याच्युतात्मता ॥ ५३ ॥

इति श्रीम० भाषाटी० सप्तमस्कन्धे जयविजयत्रिजन्मवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २.

नारद उवाच-भ्रातर्येवं विनिहते हरिणा क्रोडमूर्तिना ॥
हिरण्यकशिपू राजन् पर्यतप्यद रुषा शुचा ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि हे राजन् ! श्रीवाराहरूपधारी श्रीहरिने मेरे भाईकों मारयो ये सुन क्रोध कर हिरण्यकशिपु शोक करतो भयो ॥ १ ॥ क्रोधसों जाके नेत्र घूमें, दांतनसों होठनकों पीस, कोपसो जरते भए नेत्रनसो धूंधरे आकाशकों देखते ये बोलै ॥ २ ॥ वाकी कराल डाढासो उग्र दृष्टियुक्त भ्रुकुटीयुक्त मुखके सामने कोई नहीं देख सकतो हो वह सभामें शूल उठायकै दानवनसो ये बोलै ॥३॥ हे दानव दैतेयहो ! हे दो मूडवारे हे द्विमूर्द्धा तीन आंखवारे त्र्यक्ष हे शंबर हे शतबाहो हे हयग्रीव हे नमुचे हे पाक हे इल्वल ॥ ४ ॥ हे विप्रचित्ते हे पुलोमन् हे शकुनादिकहो ! मेरो वचन सुनो जो मैं कहूं सो करो देर मत करो ॥ ५ ॥ मेरे शत्रुनने युद्धमें मेरो प्यारो भैया मरवायडारो एक विष्णुको आसरो लेके इंद्रने सब करो कछु थोरोसो वाको भजन कीनो ॥ ६ ॥ बुरे सुभाववारे निर्दयी वनशूकर है, जो वाको भजै है वाको वोभी भजैहै, बालककी नाई वाको आत्मा चंचल है ॥ ७ ॥ अपने शूलसो वाकी गर्दन काटके वाके रुधिरसमूहसों रुधिरप्रिय भ्राताको तर्पणकर सब व्यथासो निचंत होऊंगो ॥ ८ ॥ कपटी विष्णु जब नष्ट है जायगो, तो जैसे वनस्पतिके मूल कटेसों वृक्ष सूखजाय तैसे विष्णुके प्राण वे देवताहू आप नष्ट है जायगे ॥ ९ ॥ तबतक तुम सब ब्राह्मण क्षत्रियनसो बढी भई भूमिपे जाओ, तप यज्ञ वेदपाठ व्रत दान करवेवारेनको मारो ॥ १० ॥ विष्णु ब्राह्मणनकी क्रियामें है, अर्थात् ब्राह्मणनकी क्रिया विष्णुकी जड है, यज्ञधर्ममयपुरुष है, देवता ऋषि पितर भूत धर्म इन सबको परायण विष्णु है ॥ ११ ॥ जहां जहां ब्राह्मण गौ वेद वर्णाश्रमके धर्मके कर्ता कर्मकांडी होंय विन विन देशनको जराओ और सबनको मारो ॥ १२ ॥ ऐसें भर्ताकी आज्ञा शिरसो आदरते मान तैसेई प्रजानको नाश करवेवारे नाश करते भए ॥ १३ ॥ पुर ग्राम व्रज वन क्षेत्र बाग आश्रम खान किसाननके गांव पर्वत तटके ग्राम शहर सबको जरावते भए ॥ १४ ॥ कोई तो कुदारनसो सेतु प्राकार गोपुर तोडते भए, कोई फरसा लिये आजीविकावारे वृक्षनको काटते भए ॥ १५ ॥ असुर सब प्रजानके घरनको जरी भई लकडियानसो जरावते भए, वेही राक्षस कलियुगमें मनुष्यनके जन्म लेकै सद्वैदिक धर्मनकी निंदा करै है ॥ १६ ॥ दैत्येंद्रके राक्षसनने जब ऐसे सब लोकनको तिरस्कार कीनो तब अलक्षित हैकै देवता स्वर्गको त्याग भूमिमें विचरते भए ॥ १७ ॥ हिरण्यकशिपु मेरे भाईकी दाहादि क्रिया तर्पणकर भाईके पुत्रनको सांत्वना करते भए, तापें ये दृष्टांत है कि जैसे एक बनिया अपनी बनेनीको सांत्वना करत भयो, एक बनिया बनैनीके छोरी भई वाको नाम फजीती धरते भए, कोई समय दैवयोगसों वो छोरी मरगई तब लुगाई रोयवे लगी हाय फजीती मरगई, हाय फजीती, हाय फजीती, ये रोवनो सुन बनिया आयो, रोती लुगाईसो बोलो कि रोवे मत हम तू जीते रहैंगे तो बहुतेरी फजीती होयगी, ऐसे कहि सांत्वना करतो भयो ॥१८॥ शकुनि शंबरासुर धृष्ट भूतसंतापन वृक कालनाभ हरिश्मश्रु महानाभ और उत्कच ॥१९॥ नाम अपने भाईके पुत्रनसो तथा उनकी माता रुषाभानु और अपनी माता दितिको मनोहर वाणीसो समझायकै देशकालके जानवेवारे सब असुरजननके ईश्वर ये बोले ॥ २० ॥ हिरण्यकशिपु बोले कि हे अंब वधू हे पुत्रो ! वा वीरके शोक करवेको आप योग्य नहीं हो, शत्रुके सामनही

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शूरनको वध श्लाघनीय है, या बातकों हम बहुत चाहे हैं ॥ २१ ॥ हे सुव्रत ! दैवने जिनको इकट्ठे कीने अथवा कर्मवशसो अलग कीने भूतनको जो या संसारमें संग है, ऐसो है जैसे प्याऊपै जल पीके सब चले जाय तैसें सब जांय है ॥ २२ ॥ नित्य अविनाशी अव्यय शुद्ध सर्वगत सबको वेत्ता परेसों परे परमेश्वर है वो अपनी अविद्याकरके लिंग जे मूर्ति है तिने धारणकरे अथ गुण उत्कृष्ट निकृष्ट देहनको धारण करेहै अर्थात् लिंगोपाधिही संसार है ॥ २३ ॥ जैसे कोई जलमें नावपर बैठके चले, वाको तीरके सब वृक्ष चलते मालूम पडे है जैसे कोई घूमै है वाके नेत्र घूमवेसो भूमी घूमती चलती दीखे है ॥ २४ ॥ हे भद्रे ! मनमें ऐसे गुणनके घूमवेसो अविकल पुमान् अलिंग है पन लिंगवान्की तरह तिनकी समान भावकों प्राप्त होय है स्वतः ईश्वर शरीररहित है ॥ २५ ॥ ये आत्माको उलटपलटो होना अशरीरीमें शरीरकी भावना करनो ये प्रिय अप्रियपनेको योग वियोग कर्म और संसृति ॥ २६ ॥ उत्पन्न होनो नाश होनो अनेक प्रकारके शोक है अज्ञान चिंता और स्वरूपको न जाननो विवेक स्मृति यह देहाभिमानहीसो होय है ॥ २७ ॥ या प्रसंगमें एक पुरातन इतिहास यमको और प्रेतके पास बैठे भए बंधूनको है वाकों तुम सुनो ॥ २८ ॥ उशीनर देशमें सुयज्ञ नामक राजा होतो भयो शत्रुनने वाको युद्धमें मार्यो, जातके वाके सब चारों ओर आय रोवते भए ॥ २९ ॥ रत्नको कवच टूटो, आभरण माला विखरी, बाणनसो हृदय भिदो शयन करे रुधिर सब शरीरमें लगरह्योहो ॥ ३० ॥ वार विखरे, आंखें निकसी, क्रोधसो दांतसों होठ दाबे, रेतसे मुखकमल ढक रह्यो संग्राममें आयुध भुजा कटी ॥ ३१ ॥ विधाताको मार्यो उशीनरेंद्र अपने पतिको ताकी महाराणियें देख दुःखी हो हे नाथ ! हम मरी ऐसे हाथसों छाती कूटती भई, तिनके पदमें पडती भई ॥ ३२ ॥ प्यारेके चरणकमलकों कुचकी कुंकुमसो लगते भए आंसुनसो सीचती भई ऊचेसों रोवतीभई केश गहिने विखरे, मनुष्यनकों शोक करतीभई रोवती २ बहुत विलाप करतीभई ॥ ३३ ॥ अहो विधाता निर्दयी आपने हमारे प्रभुको दृष्टिसें अलग करे है पहिले जिन उशीनरनके तुम जीवका देनवारे हे या समय तिनके शोकको बढाओहो ॥ ३४ ॥ हे महीपते ! तुमसरीके कृतज्ञ सुहृद विना हम कहा करेगी हे वीर ! अपने चरणकी समीपता बताओ जहा तुम गये हो ॥ ३५ ॥ ऐसें विलाप करती भई मरे पतिको ग्रहण करे बैठी, वाको संस्कार न करन दियो रोते रोते सूर्य अस्त होगये ॥ ३६ ॥ तब वा मुरदाके पासके बैठनेको रोवनो सुन यमधर्मराज बालक बनकर आयके विनसों बोले ॥ ३७ ॥ यमराज बोले हे मनुष्यहो ! ये वृद्धनको मोह देखो, सब लोकको येही हाल है, जहांसों ये मनुष्य आयो हों वहां गयो, वृथा तुम शोक करोहो ॥ ३८ ॥ हमही तुमसो अत्यंत धन्य हैं, जो मातापिताको त्याग वनमें डोले है, परंतु काऊकी चिंता नहीं करे है भेडिया इत्यादि हमें कोई नहीं खाय है जाने गर्भमें रक्षा कीनी ही वोही अब रक्षा करे है ॥ ३९ ॥ जो अविनाशी पुरुष अपनी इच्छा करके या विश्वकूं रचे है, वेही रक्षा करे है, वेही नाश करे है हे स्त्रियो ! वा ईश्वरके जीव सब

---

१ शंका—प्राणी दुःखी हो चाहे सुखी होय परन्तु तीन लोकमें प्राणियोंको सुख होनेके लिये मुनि लोग उपदेश किया करते थे, ऐसा शास्त्रमें सुना है, परन्तु यमराजने किसीको उपदेश नहीं किया ऐसाभी सुना है, सो यमराजने सुयज्ञकी स्त्रियोंको उपदेश क्यों किया ?

उत्तर—सुयज्ञ राजाकी स्त्री बालावस्थामें यमराजका सेवन करतीथी, इसीलिये रानीको दुःखी देखकर यमराजने रानीके सन्मुख आनकर ज्ञान दिया और सब शोक दूर किया अन्तसमय पतिके लोकको भेज दिया रानी ज्ञान पाकर अपने पतिके पास गई इसलिये यमराजने उसको उपदेश किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

खिलोना है चर अचरके सबके ग्रहण करवेवारे प्रभु ईश्वर है ॥ ४० ॥ जो मार्गमें पडोहै भाग्यसो रक्षित हैं विन्हें कोई मारै नहीं है और जिनकी महारक्षा होय है घरमें स्थित वे मरजाय हैं जाको कोई मालक नहीं है वो वनमें सदा आनंद करै है, जाकी घरमें सब रक्षा करै है वो मरजाय है, जीवै नही है' ॥ ४१ ॥ तैसेई सब जीव अपने निजकामन करकै समय पायके जन्मै है, काल पाय विनसे है, तहा मायामें स्थित आत्मा है, तोहू मायाके गुणन करकै ईश्वर नहीं बंधे है, जीव बंधनमें आय नष्ट होय है ॥ ४२ ॥ ये शरीर अज्ञानसो आत्मारूप मानो है वास्तवमें आत्मासो न्यारो है क्योंकि जो ये दीखैहै कैसे जैसे घरसो घरको रहनवारो न्यारो है जैसे जलसो जन्मे जलके बबूले पृथिवीसो उत्पन्न घटादि सुवर्णसो उत्पन्न कडा इत्यादि कोई कालमें होय गए है जब विनके विकार न रहे तो सब नाश भए मानै है तैसे जीवकूं जानो ॥ ४३ ॥ जैसे अग्नि काष्ठमें अलग मालूम पडे हैं, जैसे देहगत पवन पृथक् स्थितसी लगै है, जैसे आकाश सर्वगत है काउमें आसक्त नहीं होयहै, तैसे ये परमेश्वर पुरुष सब गुणनकै आश्रय होय परेसों परै दीखै है ॥ ४४ ॥ ये राजा सुयज्ञही सोवै है, हे मूर्खहो ! जाके पास तुम बैठे रोवो हो जो श्रोता या देहमें है जो याको बोलवेवारो है सो कदीभी तुमको अब नहीं दीखोगो ॥ ४५ ॥ न श्रोता है न वक्ता है यामें मुख्य महाप्राण है, जो इंद्रियनके द्वारा वासना ग्राहक आत्मा है सो तो प्राण देहसो और है ॥ ४६ ॥ यद्यपि आत्मा पृथक् है तथापि प्राण इन्द्रिय और मनके कारण होते हुए भिन्न २ शरीरनको (मैं हूं) ऐसो जान-लेय है जब ज्ञान होय है तब वाके प्रभावसों मिथ्या अभिमानको त्यागहू देयहै ॥ ४७ ॥ जबतक आत्मामें लिंगशरीरको अभिमान वर्तमान है तबतक वाके कर्म बंधनके हेतु हैं वाही निमित्त शरी-रके अधर्म आत्मामें प्रतीत होयहैं सदा क्लेश रहै हैं परन्तु यह विपरीत तो मायामें कल्पित है वास्तवमें नहीं ॥ ४८ ॥ सुखदुःखादि आत्माके धर्म माननो असत्य भाव है कारण कि आत्मामें जो इन्द्रियसम्बन्धी पदार्थ प्रतीत होतेहैं वे सब मनोरथ स्वप्नकी समान मिथ्या हैं ॥ ४९ ॥ जो नित्य अनित्यके विचार करवेवारे है वे नित्यअनित्यको शोच नहीं करै हैं, और शोच करवेवारेनके स्वभावको और तरहसें करवेकों कोई समर्थ नहीं है ॥ ५० ॥ पक्षीनको नाशक कोई एक लुब्धक नामक जीवघाती ईश्वरने रचो हो, सो जाल फैलाय तंडुलोंसो जीवनकी लोभ कराय मारतो भयो ॥ ५१ ॥ सो जिमीकंद खायवेवारो कुलिंगको एक जोडा विचरतो भयो आयो तिनकी कुलिंगी शीघ्र लुब्धकने लुभाई ॥ ५२ ॥ कालविवश वा जालमें वो कुलिंगनी आय फसी वाकूं फसी देख कुलिंग बहुत दुःखी भयो ॥ ५३ ॥ स्नेहसो छुटायवेमें असमर्थ कृपण वाको दुःख करतो भयो, अहो देव बडे निर्दयी है जो प्रीतिवारी स्त्रीसो वियोग भयो ॥ ५४ ॥ मो कृपण शोक करवेवारेको ये गरीब-नी कहा करैगी मोकोहू ईश्वर मारै अब आधे शरीरसो कहा करूंगो ॥ ५५ ॥ या दीनपनके दुखप-नेके जीवेसे कहा होयगो, पंखरहित माताहीन इन बच्चानकों कैसे राखूंगो ॥ ५६ ॥ वे मंदभागी बालक घुसलेमेंसो माकी आयवेकी वाट देख रहेहैं, मैं महादुःखसो जीऊंगो मेरो गृहस्थाश्रम सब नष्ट भयो ॥ ५७ ॥ ऐसे प्रियाके वियोगसो आतुर विलाप करते आंसु भरे कुलिंगको काल प्रेरित बाणसो वाधिकने झट मारगिरायो ॥ ५८ ॥ ऐसेई हे मूर्खहो ! तुमभी मरोगे या देहको क्यों

१ प्रयोजन यामें यही है कि अपनी प्रारब्धसो रक्षित है वो मार्गमें कभू जाय है और जो प्रारब्धसो गई है वो घरमें बडे बंदोबस्तसोहू धरी होय है तोहू नहीं जाय है ॥

२ याको दार्ष्टांत ये है कि वहां वन यहां संसार वन है वहां वृक्ष यहां गृहस्थाश्रम वहां वधिक यहां काल वधिक है वहां जाल बिछायो यहां मोहजाल है वहां कुलिंगको जोडा यहां गृहस्थी प्राणी है मोहजालमें फँसे नको कालमारे है यह समझ लेनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शोचो हो, ज्ञानी बनो या पतिको सौ वर्ष शोक करवेसोहू नहीं प्राप्त होओगे ॥ ५९ ॥ हिरण्यकश्यप बोले कि ये बात वा बालककी सुन वे सब बडे विस्मय भए, सब जातके ये मानते भये, कि ये सब मिथ्या है मत रोवो ॥ ६० ॥ ये कथा सुनाय यमराज अंतर्ध्यान है गए, वा सुयज्ञकी जातके सब वाको मृतक संस्कार करते भये ॥ ६१ ॥ याते तुम सब मत शोक करो आत्मा सबसो परे है, अपनो परायो कछु नायहै ॥ ६२ ॥ अज्ञानसे अपनो परायो या जीवने मान राख्यो है, जो तत्वदर्शी ज्ञानी हैं वे ज्ञानसे आत्माको करै है ॥ ६३ ॥ श्रीनारदजी बोले कि पुत्र बंधुसहित दैत्यपतिको ये वाक्य दिति सुन पुत्रशोक क्षणमें त्याग चित्तकों परमेश्वर तत्वमें धारती भई ॥ ६४ ॥

नारद उवाच–इति दैत्यपतेर्वाक्यं दितिराकर्ण्य सस्नुषा ॥
पुत्रशोकं क्षणात् त्यक्त्वा तत्त्वे चित्तमधारयत् ॥ ६४ ॥

इति श्रीम० सप्त० उशीनराख्याने कुलिङ्गकथया दितिशोकनाशवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

नारद उवाच–हिरण्यकशिपू राजन्नजेयमजरामरम् ॥
आत्मानमप्रतिद्वन्द्वमेकराजं व्यधित्सत ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि हे राजन् ! हिरण्यकशिपुनें अपने शरीरको अजर अमर अजेय सबसे अधिक शत्रुरहित चक्रवर्ती बनायवेकी इच्छा कीनी ॥ १ ॥ वो हिरण्यकश्यप मंदराचलकी गुफामें परम दारुण तप करतो भयो, ऊपरको हाथ कीने, आकाशको देखे, पांवके अंगुष्ठसो धरतीपै खडोहो ॥ २ ॥ जटानकी कांतिसो प्रलयके सूर्यकी नाईं शोभित हो जब वो तप करवेलगो तब देवता अपने स्थाननकों जाते भए ॥ ३ ॥ धूमसहित तपकी अग्नि वाके मूडसूं उत्पन्न होती भई, तिर्छे ऊपर नीचे सब ओर लोक तपते भए ॥ ४ ॥ नदी समुद्र चलायमान भए सात द्वीपसहित भूमि चली ग्रहसहित तारा गिरे, दशों दिशा ज्वलितभई ॥ ५ ॥ तासो तपित हो देवता स्वर्ग त्याग ब्रह्मके लोकमें गए, हे देवनके देव हे जगत्पते ! ऐसैं ब्रह्माजीसों विनती करते भए ॥ ६ ॥ दैत्येंद्रके तपसो तप्त स्वर्गमें स्थित होयवेकी हमें सामर्थ्य नहीं है हे समर्थ ! जो आप मानो तो वाकी शांति करो ॥ ७ ॥ जबतक बलि देवेवारे लोक वासों नष्ट होंय तबतक पहलेही वाके तपको शान्त करो वाको संकल्प दुश्चर तप करवेको है ॥ ८ ॥ यद्यपि आप सब जानो हो तथापि वाने जो संकल्प कर तप करनो प्रारंभ कियो है वह आप हमसो सुनिये ॥ ९ ॥ जैसे सब स्थानसो ऊंचो परमेष्ठी निज आसनपें बैठे है सो मैं हूं बढी भई तप योग समाधिसों तप योगमें अधिक निष्ठा राखकै ब्रह्माजीकी समान अपने आत्माको करूंगो ॥ १० ॥ यद्यपि थोडी आयु हैवेसों शरीर छुटवेको संभव है तथापि काल और आत्मा नित्य है तौ अनेक जन्मनमें या कार्यको साधेगो अपने सामर्थसों देवतानको दैत्य दैत्यनकों देवता बनाय देउगो भक्तनको अभक्त अभक्तनको भक्त ऐसे उलट पुलट कर देउगो ॥ ११ ॥ कल्पांतमें वैष्णवादिक कालके खाजे मेरो कहा करैंगे ये वाको हठ हमने सुनो है सो घोर तपमें स्थित है ॥ १२ ॥ हे त्रिभुवनेश्वर ! जो करो सो या कामके उपरांत करियो हे जगत्पते ! ये तुमारो परमेष्ठ्यस्थान ब्राह्मण गउनके समृद्धि कल्याण भूमि क्षेम और विजयके लिये है ॥ १३ ॥ हे नृप ! भगवान्स्वयंभू ऐसे जब देवनसो विनति करे गए ॥ १४ ॥ तब भृगु दक्षादिकनको ब्रह्माजी संग ले दैत्येश्वरके आश्रमपें गए ववई तृण कीचकनसो ढको भयो अलक्षित ॥ १५ ॥ चैटी जाकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्वचा मांस रुधिर सब खाय गई, तपसों लोकनको तपावे मेघसो ढके सूर्यकी समान वाको देखो ॥ १६ ॥ देखकै विस्मयसो हँसते भए हंसवाहन बोले ॥ ब्रह्माजी बोले कि हे कश्यपपुत्र ! तेरो मंगल होय उठ उठ ॥ १७ ॥ वरदाता हम आए जो मनवांछित वर होय सो मांगो तेरे हृदयको जो सार है सो हमने देखलीनो ॥ १८ ॥ डासनने सब देह खाय लई प्राण हाडमात्रमें रहिगये, ये तप पूर्वके ऋषिनने आजताईं नहीं कियो और न आगे ऐसो कोई करैगो ॥ १९ ॥ विना जल पीये दिव्य सौ वर्ष कौन प्राण धारैगो ये तुम्हारो निश्चय बडे मनस्वीनकोसो है सो बडो दुष्कर है ॥ २० ॥ हे दिति-नंदन ! तपमें तूनें निष्ठा राखी यासो मोको जीत लीनो, हे असुनरमें श्रेष्ठ ! तुम्हें सांच आशीर्वाद देऊंगो ॥ २१ ॥ जो कि तेरो शरीर मरणधर्मा है वाय मुझ मरणधर्मरहितको मेरो दर्शन भयो सो वह दर्शन निष्फल न होयगो ॥ श्रीनारदजी बोले कि सबते आदि जन्मधारी ब्रह्माजी ऐसे कहिकर चेटीनके खाये वापै ॥ २२ ॥ दिव्य अमोघ जा तेजवारे कमंडलके जलको छिडकते भए सो वो वा कीचक वल्मीकतै सहतेज बलसहित उठतो भयो ॥ २३ ॥ सब अवयवनसों संपन्न वज्रसमान अंग तरुण तपे सुवर्णसम कांति बढीभई अग्निकी नाईं उठ खडो भयो ॥ २४ ॥ आकाशमें देवनमें देव हंसवाहनपर विराजे देवको देखकर शिरसों भूमि नमस्कार करतो भयो तिनकै दर्शनसो महा आनंद भयो " जैसे एक बनियाको एक ब्राह्मणकी कृपासो दर्शनकर चित्त खुश भयो तैसें जानो एक वणिया शिव प्रसन्न कर वर मांगो कि ऐसो मनुष्यभूत देओ जो सब धंधो सदा करतो रहै तब शिवनो एक भूत दीनो वाने कही लालाजी जो कछु काम न बताओगे तो तुम्हें खा जाऊंगो वणिया बोले भला घर आय कोठीमें बैठो चिट्ठी देआव वासे वही दे आयो पानी भर भर आयो साग लाव ले आयो चून पीस पीस आयो ऐसे ऐसे करत करत सब मोहोल्ला भरको काम एक घडीमें निपटावै खाली होय वासूं कहै खाऊं तब वणिया सूख जाय, काल पाय दुर्बल हो गयो एक ब्राह्मणसे कही भूतसे ऐसे फस गयो, ब्राह्मण बोलै हे बावरे ! एक बांस चौकमें गाड राख चढ उतर चढ उतर ऐसो काम बतायदे, जब वो खाली हो वो तो ऐसो काम ले सो आप भागजायगो वाने वैसेई कीनो वणिया सुखी भयो तैसे वाके दर्शन सर्व सुखदायक भए" तैसे ब्रह्माको दर्शन हिरण्यकश्यपको भयो ॥ २५ ॥ उठकै हाथ जोड स्तुति कर दर्शन करै नेत्रसो ब्रह्माजीको देख हर्षके आंसूनसो पुलकावली हो गद्गदवा-णीसो स्तुति करतो भयो ॥ २६ ॥ हिरण्यकश्यप बोले कि कल्पके अंतमें कालके रचे भए अंध तमसो ढके या जगत्को आप अपनी ज्योतिकरके प्रकाश करौ हो आपके अर्थ नमस्कार होय ॥ २७ ॥ तीन तीन प्रकारकी आत्मा कर जो या विश्वको रचे है; पालै है, नाश करै हैं, रज सत्त्व तम तेज रूपपर महानके अर्थ नमस्कार होय ॥ २८ ॥ आद्य बीज ज्ञान विज्ञान मूर्ति प्राण इंद्रिय मन बुद्धि विकारिक व्यक्तिकूं धारवेवारेकी हम स्तुति करैहैं ॥ २९ ॥ स्थावर जंगम जगत्के ईश तुम हो प्रजाके मुख्य प्राण तुम हो, चित्तके चित्त मन इंद्रियनके पति महाभूत गुण इनकै ईश गुण-

---

१ शंका—जिस जिस प्राणीने ब्रह्माजीकी तपस्याकी उन सबको ब्रह्माजीने अपनी इच्छानुसार वर दिया, परन्तु देवताओंने ब्रह्माजीकी प्रार्थना नहीं की कि तुम हमको वर दो, परंतु इस हिरण्यकशिपुको देवताओंके कहनेसे वर क्यों दिया ? यह बडा आश्चर्य है ।

उत्तर—हिरण्यकशिपुने अपने अपने मनमें यह विचार कर तप कियाथा कि पहिले वरदान लेकर पीछे भगवान्को बन्धनमें डालूंगा, हिरण्यकशिपुके मनकी बात जानकर ब्रह्माजीने हिरण्यकशिपुको वरदान नहीं दियाथा परंतु जब देवताओंने ब्रह्माजीसे कहा हम सब लोग दुष्टके तपके तेजसे जले जाते हैं, जब देवताओंको ऐसा दुःखी देखा तब ब्रह्माने हिरण्यकशिपुको वरदान दिया, इसलिये देवताओंकी प्रार्थनासे ब्रह्माने वर नहीं दियाथा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नके अंतःकरणके ईश हो ॥ ३० ॥ वेदत्रयीकी चार होता करकै सात यज्ञनके कर्ता तुम हो तुमही एक आत्मज्ञानिनके अनादि अनंतपारपंडित सर्वांतर्यामी हो ॥ ३१ ॥ अनिमिष काल-रूप तुम्ही हो लव पलक इत्यादि करकै जीवमात्रकी आयुक्षय करोहो कूटस्थ नाम निर्विकार आत्मा ब्रह्मांतर्यामी अजन्मा बडे सब जीव लोकके आत्मा तुम हौ ॥३२॥ तुमसो परे कछुहू चलायमान नहीं है और जो चलायमान है सोहू तुमसो अलग नहीं है, चतुर्दशविद्या षोडश कला ये सब आपके शरीर हैं कारण कि त्रिगुणात्मक संसारसौं परे ब्रह्मांडको गर्भमें राखनवारे आप हौ ॥ ३३ ॥ हे समर्थ ! जो ये कार्यरूप विश्व है सो ये सब तेरो शरीर है जा शरीरसो इन्द्रिय प्राण मन इनके गुणनकूं नाम विषयनकूं भोगो हो परन्तु प्रगट आत्मा पुरुष पुराण ब्रह्मधाममें आप स्थित हैकै भोगो हो ॥ ३४ ॥ अनंत अव्यक्त रूपसो जासो ये सब विश्व विस्तृत है चित् अचित् शक्तियुक्त तिन भगवान्के अर्थ नमस्कार हो ॥ ३५ ॥ हे वरदोत्तम ! जो हमारे मन वांछित वर देउ तो ये मांगूं हूं हे प्रभो ! आपकी सृष्टिके रचे भये जीवमात्रसो मेरी मृत्यु न होय ॥ ३६ ॥ बाहिर, भीतर, दिनमें, रातमें और किसी शस्त्रसें, भूमिमें, आकाशमें, मनुष्यसों मृगसो मैं न मरूं ये वर देवो ॥ ३७ ॥ प्राणधारी, विना प्राणधारी, सुर असुर महासर्प इत्यादिसो युद्धमें काऊसों न हारु सबमें एक राज्य मेरोही होय ॥ ३८ ॥ सब लोकपालनकी महिमा मेरी होय, तप योग प्रभाव मेरो कभी नाश न होने पावै ॥ ३९ ॥

सर्वेषां लोकपालानां महिमानं यथात्मनः ॥
तपोयोगप्रभावानां यन्न रिष्यति कर्हिचित् ॥ ३९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे हिरण्यकशिपोर्वरयाचनवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

अध्याय ४.

नारद उवाच-एवं वृतः शतधृतिर्हिरण्यकशिपोरथ ॥
प्रादात् तत्तपसा प्रीतो वरांस्तस्य सुदुर्लभान् ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि याके उपरांत ब्रह्माजीसो जब ऐसे वर मांगे तब वाके तपसों प्रसन्न होयकर पितामह वाकौ महा दुर्लभ वर देते भये ॥ १ ॥ श्रीब्रह्माजी बोले कि हे तात ! ये वर पुरुषनको महादुर्लभ हैं जिनको तुम मोसो मांगो हो तथापि हे प्यारे ! महादुर्लभ वर हम तुम्हें देयहै ॥ २ ॥ तापीछै हिरण्यकश्यपसौं पूजित सफल कृपावारे समर्थ जिनकी प्रजापति स्तुति करते हैं ऐसे ब्रह्माजी वाको वर देके अपने धामको पधारे ॥ ३ ॥ ऐसै जब दैत्यको वर मिलचुके तौ सुवर्णमय शरीर धारतो भयो भाईके वधको स्मरण कर भगवान्सो द्वेष करतो भयो ॥ ४ ॥ सो महासुर सब लोक सब दिशा जीतके देवता असुर मनुष्यनके इंद्रनको गंधर्व गरुड उरग इन्हैं जीततो भयो ॥ ५ ॥ सिद्ध चारण विद्याधर ऋषि पितर पति मनु यक्ष राक्षस पिशाच इनके ईशनको प्रेत भूतपति इन सबको जीततो भयो ॥६॥ विश्वके जीतवेवारो सब जीवमात्रके पतीनकों जीत वश कर लोकपालनके स्थान तेज स-

१ कि मैं अजरअमर हो जाउ तब ब्रह्मा बोले कि बेटा ! एक माताका भगत हो वापे माता राजी है बोली कि वर मांग तब वो बोल्यो कि मैया मेरे बैठवेको बहुत उमदा एक घोडा दे तब माताने कही कि रे बेटा भगत ! जो घोडाही बैठवेको होतो तौ मैं आपही गधापें चढी क्यों डोलती सो ब्रह्माजीने कही कि बेटा ! जब मेही मरजाउ हूं तब तोको अमरोती कहासो देउ तब हिरण्यकशिपुने विचारी कि अब ऐसी तजवीज करनी जासो मरवेकी रस्ताही न रहे तब ये सब वर मागे ये समझनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हित हरतो भयो ॥७॥ देवनके बागनकी शोभायुक्त स्वर्गमें जायके बैठो, जो महेंद्रको भवन साक्षात् विश्वकर्माने निर्माण कीनो हो ॥८॥ विश्वकर्माके बनाये त्रिलोककी शोभाके आश्रयरूप सब समृद्धिनसो परिपूर्ण साक्षात् इन्द्रके भवनमें रहन लगो ऐसे हिरण्यकश्यप सब संपदा जापै दानवेंद्र महाबली होतो भयो ॥९॥ जहां मूंगनकी सीढी, महा मरकतकी भूमी, स्फटिकके आरे और वैडूर्यमणिनके खंभनकी जहां पंगत हैं ॥१०॥ जहां विचित्र चंदोवा टंगे पद्मराग मणीके आसन बिछे दूधफेन सम शय्या बिछी मोतीनकी माला लटक रही हैं ॥११॥ जिनके नूपुर झनकार करै ऐसी देवी इत उत डोलै हैं, रत्नकी स्थलीनमें सुदति सुन्दर मुखको देखै ॥ १२ ॥ वा इंद्रके महाभवनमें महाबली महामनस्वी सब लोकको जीतनवारो एकछत्र राज्यकी पदवी धारण करनहारो जाके चरणको देवता नमस्कार करतेहे प्रतापके कारण जाकी तीक्ष्ण आज्ञा वर्ततीही बडे सुखसों रमण करन लगो ॥ १३ ॥ हे राजन् ! मधु सुगंधिसो मत्त विकराल ताम्रसमान नेत्रवारे तप योगबल पराक्रमयुक्त वा दैत्यकी सब स्थाननके रक्षक हाथमें अनेक भेट ले लेके उपासना करते भए, केवल ब्रह्मा विष्णु शिव ये तीन उपासना न करते भए ॥ १४ ॥ हे पांडव! महेंद्रके आसनपर पराक्रमसों स्थित वाके सन्मुख विश्वावसु तुंबुरु अस्मदादिक गाते भए गंधर्व सिद्ध ऋषि विद्याधर अप्सरा वारंवार स्तुति करती भई ॥ १५ ॥ वो हिरण्यकश्यप वर्ण आश्रमी महादक्षिणावारे यज्ञभागको अपनो तेजसों ग्रहण करतो भयो ॥ १६ ॥ सप्तद्वीपकी पृथिवी विना बोए बीज उत्पन्न करती भई, सबको दाता आकाश भयो, नानाप्रकारकी आश्चर्यकी संपदा आवती भई ॥१७॥ रत्नाकर जे समुद्र है वे जितने अपने रत्न हे तिने अपनी हिलोरनसों अपने बाहिर गेरदेते भये और हिरण्यकशिपुके राज्यमें याके हुकमसों क्षार मद्य घी सहत दही दूध और मिष्टजल इनको वहनवारी सब नदी होतीभई अर्थात् नदीनको बुलायके हिरण्यकशिपुने कही कि री तुम सब जलकीही क्यों वहो हो मेरी प्रजाको यथेच्छ सब वस्तु मिले सो तुम सर्व रसनकी वहो सो कोई नदी दूध कोई दही कोई घी कोई सहत कोई सरबत इत्यादिक रसनकी वहीं ॥१८॥ और पर्वत अपनी शिखरनके ऊपर क्रीडा करवेको बगीचानको धारण करते भये सब ऋतुनमें सब फल वृक्ष देते भये, सब लोकपालनके पृथक् गुण यह इकेलो धारतो भयो ॥ १९ ॥ सो वो ऐसे सब दिशा जीत एकछत्र राज्य करतो अनेक प्रकारके विषय भोगन लगो परन्तु अजितेन्द्रिय हैवेके कारण तृप्त न भयो ॥ २० ॥ ऐसे ऐश्वर्यमें मत्त, गर्वीले पाषंडी और ब्रह्माके शापको प्राप्त होनवारे हिरण्यकश्यपको छः मन्वंतर काल व्यतीत होतो भयो "जब ऐश्वर्यसें मदांध होयहै तब सब वाते जीव भूलजायहै ब्रह्माको पाय असुर न सुधरो वरसै मदान्ध हो गयो, जैसे एकजगे पंडित कथा वांचै, एक खजुहाई कुतिया वहां बैठे, राजा कथा सुनवे आवै कुतियाको देख राजा कथा सुनने न आये, तो पंडितजी बोले कथा सुनवेको न आओ हो, तो राजा बोलो कुतिया खुरखुर करै याते न आवै है कछु कुतिया न आवैगी, पंडितजीने वाय तपबलसे इंद्रकीसी अप्सरा करबैठाई, राजा वाय सुन्दर देख पास जाय बैठो कथा सुन पंडितजीसे वा अप्सराकू मांग घर आय रातकूं सेजपर ले पौढो राजा सो गयो वो कुतिया सब राजमंदिरके दीवा रातको चाटै राजने एक दिन देखी डरकै पंडितजीके पास पहुँचाई, कही कि महाराज यह तौ डाकन है हम नाय राखै तौ पंडित बोले है बिच्चोद कुतिया कहा करूं तेरो करम, मैंने तोई राजासे मिलायदई, तैन आपनो तेल चाटवेको सुभाव न छोडो तैसेइ तपकर विधातासें हिरण्यकश्यप मिलो तौहूं वाको राक्षसपनेको सुभाव छूटो नाय, ऐसै हिरण्यकश्यप मदमातो भयो पाषंड रचे" ॥ याकी पाषंडकी कथा कहै तो ग्रंथ बढी जाय ॥ २१ ॥ वाके उग्रदंडसों डरे भए

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देवता सब लोकपालसहित कोई रक्षक न देख श्रीअच्युत भगवान्‌की शरण जाते भए ॥ २२ ॥ जहां आत्मा हरि ईश्वर है वा दिशाकू नमस्कार होय, जहांके गए शांत निर्मल संन्यासी फेर विश्वमें नहीं आवै हैं ॥ २३ ॥ ऐसे वे सावधान मनकर बुद्धि निर्मल कर निद्रा त्याग वायुभोजन करनवारे हृषीकेशकी स्तुति करते भए ॥ २४ ॥ तब रूपरहित मेघसमान सब दिशानमें गर्जती साधूनकी अभय करवेवारी आकाशवाणी तिनके मध्यमैं होती भई ॥ २५ ॥ हे देवनमें श्रेष्ठहो ! मत डरो, सबको मंगल होय, तुमकों जो मेरी वाणीको वा मेरो जो दर्शन है सो सब मंगलको दायक है ॥२६ ॥ दैत्य नीचको दुष्टपन मैंने जान लीनो है, मैं याकी शांति करूंगो, कछु काल तुम धीरज करो ॥ २७॥ जा समय देवता वेद गौ ब्राह्मण साधु धर्म और मोमें वैर होय है तौ वो शीघ्र नष्ट है जाय है ॥ २८ ॥ जब यह निर्वैर प्रशांत अपने सुत महात्मा प्रह्लादसों द्रोह करैगो यद्यपि यह वर पायै है तौहू याको मारूंगो ॥ २९ ॥ श्रीनारदजी बोले कि श्रीलोकगुरुकी ये वाणी सुन विनको प्रणाम कर उद्वेग दूर कर वे देवता अपने अपने धामकों गए और असुरको मानते भए ॥ ३० ॥ वा दैत्यपतिके चार परम अद्भुत पुत्र भए, तिन सबमें प्रह्लाद गुणनमें बडे और महात्मानके उपासक भये ॥ ३१ ॥ यह प्रह्लाद ब्रह्मण्यशीलवारे सत्यवादी जितेंद्री सबमें ईश्वरको माननेवारे अपनी समान आत्माको सब प्राणिनमें माननेवारे अनन्य मित्र भये ॥ ३२ ॥ दासकी नाईं सब बडेनके चरणनको प्रणाम करते पिताकी समान दुखिनपै दया करते बराबरवारेनसों भ्राताकी समान स्नेह राखते गुरुको ईश्वरको रूप समझते हे ॥ ३३ ॥ विद्या धन रूप और कुलसों सम्पन्न हे अभिमान और उद्धतताको लेश नहीं हो ॥ ३४ ॥ दुःखसै व्याकुल नहीं होते हे या लोक और परलोकके सुखको मिथ्या जानते हे याहीसों इनमें प्रह्लादकी कछु इच्छा न भई इन्द्रिय प्राण शरीर और बुद्धिको वशमें किये सम्पूर्ण कामनानको शांत राखते हे ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! इनके महागुणनको कविलोगहू वारंवार ग्रहण करै है, जैसे भगवान् ईश्वरके गुण नहीं विस्मृत होते ऐसेही या समयतकहू प्रह्लादके गुण प्रकाशित हैं ॥ ३६ ॥ हे नृप ! जाकी सुंदर गाथा वैरी देवताहू सभामें गावे है साधु गाथा सभामें जब ये चर्चा होय है कि देवासुर मनुष्यनमें साधु कोन है ऐसे प्रसंगवारी सभामें प्रह्लादकी उपमा देय है कि वो कैसो है कि जैसे प्रह्लाद है जब शत्रुहू ऐसे कहें तब फिर तुमसरीके प्रह्लादको बडाई करै यामें कहा कहना है ॥ ३७ ॥ वामें असंख्य गुण हैं जाकी वासुदेव भगवान्‌में स्वाभाविकी भक्ति है, वाहीको माहात्म्य बढे है ॥ ३८ ॥ बालकपनसोंही सम्पूर्ण खेल त्यागकै नारायणके चरणनमें अपनो मन लगायो वाको चित्त कृष्णरूप ग्रहसों ग्रसित है गयो होगा यासों जडकी समान जगत्‌को कछु नहीं जानतो हो ॥३९॥ बैठते चलते खाते सोते पीते बोलतेमें गोविंदको अनुसंधान करै संसारकी कछु वाय खबर न होती भई ॥ ४० ॥ श्रीवैकुंठपतिकी याद कर कभू रोवै कभू तिनकी याद कर हँसे है, कभू कभू आह्लादसों गावे है ॥ ४१ ॥ कभू उत्कंठासों पुकारै है लाज छोड नाचे हैं, कभू तिनकी भावना कर तन्मय है जाय है ॥ ४२ ॥ कभू चुप्प है जाय है सबसों अलग होय चुप्प बैठे है स्थिर प्रणय आनंदके जल आयवेसों नेत्र मूंदे है ॥४३॥ कछु इच्छा न करनवारे साधुनके संगसों प्राप्त भई भगवच्चरणकी सेवाके प्रभावसो अपने चित्तको शांत करते कुसंगसों दुःखी भये पुरुषनके मनकोहू शांति देते भये ॥ ४४ ॥ हे राजन् ! ऐसे महाभागवत महात्मा बडभागी सुतमें हिरण्यकश्यप पाप करतो भयो ॥ ४५ ॥ युधिष्ठिरजी बोले कि हे नारद हे सुव्रत ! या बातकी सुनवेकी इच्छा है, कि शुद्ध पुत्र साधुसो पिता कैसे पापभाव करतो भयो ॥ ४६ ॥ चाहै पुत्र अपने अनुकूल न होय तोहूं पिता सूधे वत्सलभाव

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राखैं हैं शिक्षा करैं पाप बुद्धि वामें नहीं करैं हैं ॥ ४७ ॥ और जो कहू अपने वंशको गुरुभक्त साधु-पुत्र होय तो कोई वैर न करै है हे ब्रह्मन् ! हे प्रभो ! यह हमारो संदेह दूर करो ॥ ४८ ॥ जो पिता पुत्रको द्वेष ऐसो भयो जो मरवेके लिये प्रयोग कियो गयो अर्थात् जा वैरमें हिरण्यकशिपु मारो गयो हे नारद ! या बातके संकटमें मेरो मन भ्रमे है सो आप कहो[1] ॥ ४९ ॥

पितुः पुत्राय यद्द्वेषो मरणाय प्रयोजितः ॥
मनो भ्रमति मे विद्वन्नेतस्मिन्संकटे द्विज ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां हिरण्यकशिपुदिग्विजयप्रह्लादसाधुभाववर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

नारद उवाच-पौरोहित्याय भगवन्वृतः काव्यः किलासुरैः ॥
शण्डामर्कौ सुतौ तस्य दैत्यराजगृहान्तिके ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि एक समय असुरनने भगवान् शुक्राचार्य पुरोहित कीने तिनके सुत शंडामर्का दो है वे दैत्यराजगृहके समीप रहते हे ॥ १ ॥ वे दोनों राजाके भेजे भये बालक नीतिकुशल प्रह्लाद और पढायवेके योग्य असुरनके बालकनकों पढावते भये ॥ २ ॥ जो कछु गुरु कहते वह प्रह्लाद श्रवण करते और वेसोही सुनाय देते परन्तु या पढाये भयेको अच्छो नहीं समझते हे कारण कि वे विषय संवाद अपनो परायो ऐसो उपदेश करतेहैं ॥ ३ ॥ हे पांडव ! एक समय असुरराज लालन करते पुत्रको अंकमें बैठाय बोले हे पुत्र ! जो तुम्हें अच्छो लगै सो कहो ॥ ४ ॥ प्रह्लाद बोले कि हे असुरश्रेष्ठ पितः ! संसारसो सदा बुद्धिवारे देहधारी आत्माको नाश करवेवारे गृहरूप अंधकूपको त्याग वनमें जाय श्रीहरिकी शरणागति करे यही सबसो साधु है, अति उत्तम हैं यही हमें अच्छो लगैहै ॥ ५ ॥ श्रीनारदजी बोले कि वो दैत्य शत्रुके पक्षकी आसरो लेवेवारी पुत्रकी वाणी सुनकै हँसकर बोले कि बालकनकी बुद्धि गेरनकी बुद्धिसों भेदको प्राप्त है जाय ॥ ६ ॥ यासों गुरुके घरमें द्विजातिनसो बालकको बहुत सावधानीसों शिक्षा कराओ जासों विष्णुके भक्त कोई कपट वेष बनाय वहां आय याकी बुद्धि न बिगाड देय ॥ ७ ॥ यह वचन सुन दैत्यनके पढायवेवाले वे दोनों प्रह्लादकों घर लाय अत्यन्त मधुरवाणीसों वाकी बडाई कर साम वचननसों पूछन लगे ॥ ८ ॥ हे वत्स प्रहाद ! तुम्हारो मंगल होय सत्य कहो झूठ मत कहियो इन और बालकनकी बुद्धिमें तौ कछु भेद न पडो परन्तु तेरी बुद्धि यह नारायणके नाममें कैसे लगी सो बताय ॥ ९ ॥ हे कुलनंदन ! ये बुद्धिको भेद औरके करवेसों भयो है अथवा अपने आप है गयो है, सो सुनवेकी कामनावारे गुरुनको हमको कहो ॥ १० ॥ प्रह्लादजी बोले कि अपनो परायो असतपनको पुरुषनको मोह जाकी माया करकै भयो है और वह मायासै मोहित बुद्धिवारे तुमसेही पुरुषनमें दीखै है तिन मायापति भगवान्को मेरो प्रणाम है ॥ ११ ॥ सो परमेश्वर जब पुरुषनके अनुकूल होय है, तब पशुसमान बुद्धि जामें मेरो ऐसो भेद है यह संसारके विषयवारी निवृत्त है जाय है " ऐसे लिखा

---

१ या बातपर एक कुंडलिया है कि ॥ सांई बेटा बापके बिगरे होत अकाज ॥ हिरण्यकशिपु अरु कंसको गयो दोउनको राज ॥ गयो दोउनको राज बाप बेटाके बिगरे । दुश्मन दावेदार भये महिमंडल सगरे ॥ कहि गिरिधर कविराय उन्हें काऊ न बताई ॥ पिता पुत्रकी रार लाभ एको नाहिं सांई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है-अंधकः कुब्जकश्चैव त्रिस्तनी राजकन्यका ॥ त्रयोऽप्यन्यायतः सिद्धाः सन्मुखे च विधातरि ॥ १ ॥ याकी कथा ऐसै है कि जब धाता ईश्वर सन्मुख होय तो अन्याय करनेसे सिद्धि हो जायहै, जैसै एक अंधो कुबडो तीन स्तनकी राजकन्या ये सब सिद्ध भये ॥ एक अंधो क्षत्री, कुबडो ब्राह्मण दोनों मिल एक राजाके बागमें जाय मालीकी खुशामद कर डेरा लगाते भये सो कुबडो तो सवारहोय, अंधो घोडा बने रातको खूब फूलफल खाय पेट भरले, राजानै कही फल अबके कम क्यों आये, माली बोलो महाराज एक अंधो कूबडो रहै हैं, ये सुन नृप जानगयो कि वेही चोर है छिपके देखो सो फल खाय छिलका वहां जिमीनमें गाडदै पकडकर राजापै लाए, उन्होंने कही विधाताकों दंड तौ इन्हैं पहिलेसे मिले है, हम कहा दंड दै, क्षमा करो जात पूंछ तीन स्तनकी बेटी अंधेको व्याहदी राज्यसै बाहर करदिये अंधा तौ आनन्द करै कुबडो देखकै जरै सौ विचारो कि या अंधेकू मारो कहींसें साप लाय हंडियामें वाने रांधो अंधो बोलो कछु साग है, कुबडाने कही हांडीमें होयगयो लैलै, सो जो लेवे गयो सो हांडी खोलत सर्पकी वाफसें आंख खुलगई, देखै तो वाकी स्त्री लिये कूबडो विहार करैहो, वाय देख कूबडाके लात दीनी सो कूबडा जातीरही, लुगाईकी छातीमें लात मारी सो तीसरो स्तन छिपगयो, सो प्रह्लाद बोले कि भैया बालगोपालहो ! तुमहू भजो परमेश्वरको, पाछे अंधो राजा भयो, वो राणी भई कूबडो मंत्री भयो सब आनंद करते भये" ॥ १२ ॥ जा ईश्वरके वादमें वेदवादी ब्रह्मादिकहू मोहकू प्राप्त होयहै वोही ईश्वर मेरी बुद्धिकी प्रेरणा करै है जिनको वर्णन करनो महा कठिन है विन्हीको अज्ञानी पुरुष अपनो और परायो कहैं हैं ॥ १३ ॥ हे ब्रह्मन् ! जैसै चुम्बकपत्थरकी आकर्षणशक्तिसो लोहो स्वयं घूमै है, तैसे चक्रपाणिकी इच्छासो मेरो चित्त घूमै है यह वार्ता क्यौं भई सो मैं नहीं जानौहौं ॥ १४ ॥ श्रीनारदजी बोले कि ऐसें ब्राह्मणसो कहि महामति प्रह्लाद चुप्प है गए तब क्रोधकर वह दीन राजाको सेवक ब्राह्मण प्रह्लादकी भर्त्सना करतो बोलो ॥ १५ ॥ अरे वेत्र लाओ यह तौ हमारो यज्ञनाश करनवारो है कुलमें अंगाररूप उत्पन्न भयो है यासौं तौ उपायनमें चौथो दंडही देनो उचित है ॥ १६ ॥ चंदन समान दैत्यकुलके वनमें यह तौ कांटे युक्त बबूलको वृक्ष उत्पन्न भयो है और चंदनरूपी दैत्यकुलके वनको यह बालक मूलसौ काटनवारे विष्णुरूप कुन्हाडेको साक्षात् दंड है " यापर दृष्टान्त है काऊ वनमें होयके पंचास गाडे कुहाडियें भरी कहीं जातीथी सो सब वृक्ष चिल्लाकर बोले मौत आई, एक कुन्हाडीसे लाखो वृक्ष कटजांय है सो ये तौ हजारो हैं, तब एक पीपर बोलो कि कोई हमारो घरभेदी तौ नांय जायमिलो वे बोले कि बैंटा तो नाय है, तब वोह बोलो विना काठके बैंटा लगें यह कुन्हाडी कुछ न कर सकैहै, मौज करो "॥ १७॥ ऐसै अनेक उपायनसौ डरायके और तर्जनादिकर प्रह्लादको अर्थ धर्म कामके उपायवारे शास्त्र सिखावते भए ॥ १८ ॥ ता पीछै गुरुने जानी कि ये चारों बातें सीखगयो तब प्रह्लादकी माताके द्वारा वाको स्नान कराय वस्त्रादिक भूषणनसो अलंकृत कराय हिरण्यकश्यपके निकट अपनो पढायो भयो शास्त्र सुनवायवेको ले गयो ॥ १९ ॥ अपने पावमें पतित बालकको असुर आशीश दे बाहुसौ मिलके अत्यन्त प्रसन्न भयो ॥ २० ॥ हे युधिष्ठिर ! पुत्रको गोदमें बैठाय हिरण्यकश्यप अपने नेत्रनके जलसौ प्रह्लादको मस्तक सींचते भये और विकाशमान मुखसो ये बोलो ॥ २१ ॥ हिरण्यकश्यप बोलो कि हे प्रह्लाद ! हे महाआयुवारे ! हे पुत्र ! इतने समयमें तुमने कहा कहा पढोहै हे पुत्र ! जो कछु तुमने गुरुसौ पढोहै सो सुनाओ ॥ २२ ॥ श्रीप्रह्लादजी बोलो कि श्रीविष्णुकी कथा सुनै, विष्णुको नाम लेय, हरिको स्मरण करै, परिचर्या पूजा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करै; अर्चन वंदन दास्य सख्य अपनपो सौंपनो ये नव प्रकारकी भक्ति करै ॥ नौ भक्तिके नौ भक्त या श्लोकमें हैं " श्रीविष्णोः स्मरणे परीक्षिदभवद्वैयासकिः कीर्तने प्रह्लादः स्मरणे तदंघ्रिभजने लक्ष्मीः पृथुः पूजने ॥ अक्रूरस्त्वभिवंदने कपिपतिर्दास्येऽथ सख्येऽर्जुनः सर्वस्वात्मनिवेदने बलिरभूत्कृष्णाप्तिरेषां परा " ॥ २३ ॥ ये पुरुषनकरकै करी नव प्रकारकी भक्ति भगवत्में करनी यही उत्तम पढवेको सार हम मानै है और पढनो तो कोई श्रेष्ठ विषय नहीं हैं ॥ २४ ॥ प्रह्लादके यह वचन सुनतेही हिरण्यकश्यपको क्रोध आयगयो होठ फडकन लगे और गुरुपुत्रसों कहन लगो ॥ २५ ॥ हे दुर्मते ब्राह्मणाधम ! तेंने ये कहा कीनो जो शत्रुके पक्षको ग्रहण करनवारेने तेंने मेरे पुत्रको ये असार असार बात सिखायदीनी मेरो तेंनै अनादर कीनो हे दुर्मते ! तेंने यह नहीं समझी कि ये कोनको पुत्र है ॥ २६ ॥ जगत्में छलसों वेष बनायके मित्रता करनवारे जे विचरैहै विन दुष्ट पुरुषनको पाप समयपर प्रगट है जायहै जैसे गुप्त पाप रोग हैवेसों प्रगट है जायहै लिखोहै, " ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात्सुरापः श्यावदंतकः ॥ स्वर्णहारी तु कुनखी दुश्चर्मा गुरुतल्पगः ॥ " ब्रह्मघाती क्षय रोग मदिरा पीनेनवारैके कारे दांत, सुवर्ण चुरामनवारो कुनखी, गुरुस्त्रीगामी दुश्चर्मरोगवारो होयहै' ॥ २७ ॥ गुरुपुत्र बोले हे इंद्रशत्रो ! न मैंनें पढायो न औरने सिखाया जो ये बोलै हैं सो याकी स्वाभाविकी बुद्धिही ऐसी है, हे राजन् ! क्रोध दूर करो हमारेमें दोष मत लगावो, यामें आटको आगम वेदमानके भयो है, कत् कुत्सितं मास्म अदाः लु ॥ २८ ॥ श्रीनारदजी बोले कि गुरुने जब ऐसें कही तब फेर वो असुर पुत्रसों बोलो कि हे अभद्र ! जो ये बातें तेंने गुरुसो नहीं सीखी तो ये खोटी बुद्धि तोकूं कहांसो भई ॥ २९ ॥ श्रीप्रह्लादजी बोले कि जिनने इंद्रियें नहीं जीती केवल घरकी चिन्ता राखवेवारे भोग्य विषयनको भोगनवारे जन्म मरणको प्राप्त होते पुरुषनकी बुद्धि न तो स्वयं न किसी अन्यके उपदेशसों न परस्परकी बातनसों भगवान्की प्राप्तिवारी होय है ॥ ३० ॥

---

१ एक रतोंधी था साहूकार हो वाने व्याह कीनो तब तो बडो आदमी हो सो वाने अपनी तलवार भेज व्याह कराय लियो फिर जब गोनो हेवेको समय आयो तब वानें विचारी कि रे अब तो ससुरार चलनो परैगो और मोको आवे है रतोंध कोई ऐसो तजबीज होनी चाहिये जो कोई मेरे या रोगको न पहचानें सो वाने अपने नाईसे बुलायके कही कि रे नाई के हमें सुसरार चलनो है पन हमारो ये रोग मालूम न परन पावें तब नाईने कही कि अन्नदाताजी दोसें रुपा इनाम लेउगो आपके रोगको जाहिर नहीं होन देउगो साहूकारने मंजूर किये दोउ चले ऐन गौनेके ससुरारमें पोहचे सासु आदिकनकों खबर भई जासमेसों नाई गयो वाही समेसो विदा करायवेकी जलदी मचाई पन होतहि बावत दिन मुदही तो गयो अब विदाको बुलायो आयो साहूकारने नाईसो कही कि भाई तेरे अखत्यार है नाई बोलो कि बेफिकिर रहो दोउ गये तो लाला तो अंधे है गये जो घरमें गये सोई सासू हाथ पकरके भीतर लेगई कोठेको दरवजो छोटो हो सोई नाई बोलो कि जो न जाने क्योंजी या गाउकी कहा रीत है सो सब मकाननके दरवज्जे छोटे होय हैं सोही साहूकारने कही वारे नाईके झट देसी निहुरके घरके कोठेमें चले गये वहां भीतर जायके साहूकार जितमें थारी धरी ही तितमें पीठ करके बैठ गयो सोही साहूकारको नाई बोलो कि जी हमारे सिरकार वैपरवानीके अगारी कुछ कभू नहीं खाय है सोही सासू बाहिर निकस आई साहूकारने मनमें कही कि रे बाहरे नाई तब फिर वे पीठ फेर थारी सरकायके जेमन लगे इतनेहीमें बकरी ढीली बंधी ही आंगनमें सो जायकर थालीमें खान लगी सोई नाई बोलो कि हमारे सेठजीके नेम है कि घरमें जब जेमे हैं तब पहलें गोग्रास काढके जेमेहै सो यहां सुसरालमें बकरिया ही गउ सही सो भलो ये बकरियाको नाहीं कैसें करै सोही सासुने बकरी हटायकर बांध दीनी साहूकारने कही कि वारे नाई तेरे दोसे रुपा पक्के भये फिर जेमन लगे सोई सासु पंखा लेके अगारी जाय बैठी धीरे धीरे पंखा करन लगी सो कह तनक पंखाको कोनो दूलहजीके गस्सामोडेमें देतेसमें हाथमें लग गयो सो विनने जानी कहा कि रे बकरी फेर आई सोई एक तमाचों जोरसों मारो सोई सामने सासू बैठी ही सो वाके मोडेमें फट्ट देसीना जायके लगो सोई सासूको मोडो फिर गयो और रोमन लगी देखो प्रयोजन यह है कि नाईनें अपने जान रोग छिपायवेमें कसर न राखी परंतु रोग छिपायेसो न छिपो इति ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विषयनकी वासनावारे सकाम कर्मवारी वेदवाणीरूप ईश्वरकी डोरीमें बंधे भए और इन्ही बातनसों युक्त पुरुषनको गुरु माननेवारे प्राणी भगवान्‌को नहीं जाने है वे अंधेको लेजायवेवारे अंधेकी समान गर्तमें गिरे हैं ॥ ३१ ॥ जबतक सब प्रकारके अहंकाररहित होके यह प्राणी बडेनके चरणरजकी सेवा नहीं करे है तबतक याको अनर्थ दूर नहीं होय है याके मनोरथनकीहू प्राप्ति नहीं होयहै न याकी बुद्धि श्रीभगवान्‌के चरणारविंदमें लगेहै ॥ ३२ ॥ हे नृप ! ऐसें कहि जब पुत्र चुप रह्यो तब हिरण्यकश्यप क्रोधके मारे गोदीमेंसो धरतीपै छोराकूं पटक देतोभयो ॥ ३३ ॥ क्रोध रोषावेश होय विकराल नेत्रकर बोले हे राक्षसहो ! यह मारवे योग्य है याय मारो शीघ्र याको निकास देउ ॥३४॥ येही मेरे भाईको मारवेवारो है, यह अधम अपने सुहृदनकों त्याग चाचाके मारनेवारे विष्णुके पादको दासकी नाईं पूजे ॥ ३५ ॥ ये निंद्य विष्णुको कहा भलो करैगो जाने पांच वर्षकी अवस्थामेंही दुस्त्यज माता पिताको प्यार त्याग दियो आगे न जाने कहा करैगो ॥ ३६ ॥ दूसरेको पुत्र हितकारी होय तौ वो औषधीकी नाईं श्रेष्ठ होयहै, अपनी देहसों उत्पन्न भयो पुत्र अहितकारी होय तो वह शत्रु है रोगकी समान है जो हस्तपादादि अपने अंग दुखदाई हों तौ विन्हे काटकें बचो शरीर सुखपूर्वक रहे है[1] ॥ ३७ ॥ सब उपायनसों विषादि खवायकै शयन करायकै आसन करकै या सुहृदचिह्नधारी पुत्रकूं मारो, जैसे मुनि दुष्ट इंद्रियको मारेहै तैसें करो ॥ ३८ ॥ दैत्येन्द्रकी या प्रकार आज्ञा पायकै भयंकर डाढावारे विकराल मुख और ताम्रकी समान डाढी मूछवारे शूल हाथमें उठाये वे राक्षस ॥ ३९ ॥ भैरवसमान नादकर मारडालो ऐसो कह बैठे भये प्रह्लादजीके सब मर्मस्थलनमें शूल मारते भए ॥ ४० ॥ परब्रह्म सबके अगोचर भगवान् सर्वांतर्यामी जिनको मन लगो है तिन प्रह्लादजीमें सब असुरनके करे प्रहार निष्फल होते भये जैसे अपुण्यकी सब सत्क्रिया नाश होयहै[2] तैसे राक्षसनके प्रहार नष्ट भए ॥ ४१ ॥ हे युद्धिष्ठिर ! जब सब परिश्रम व्यर्थ भये तब दैत्येंद्रकों बडी शंका भई हठ करकै वाके मारवेके उपाय करतो भयो ॥ ४२ ॥ हाथीसो खुंदवायो, सांपसो कटायो, मारण प्रयोग करायो, पर्वतसो पटको, कोठेनमें सात (७) तालेनके भीतर बंद करायके राखो, अनेक माया करी, जहर दीनो महीनन खायवेकों न दीनो ॥ ४३ ॥ जलमें डुबायो, जाडेन मारचो, अग्निसो जरायो, पर्वतनपे पछाडो तौहू न मरै तब असुरको महाचिंता भई ॥ ४४ ॥ तासमय ढूंढा वाकी बहन मारवेकूं न समर्थ भई तब अत्यंतही चिंता भई, वाकों दूर न करसकी " याकी एक आख्यायिका है कि ढूंढाको एक मंत्रसिद्धि अग्निकी ऐसी याद ही कि जाको गोदमें लेके लाखो मण ईंधनके भीतर लेजाय बैठे जरतेमें तो मरे नहीं यही उपाय प्रह्लादजीपे कीनो सो ढूंढा मरी प्रह्लाद न मरे पीछे होली नाम वाको विख्यात भयो नृसिंहजीने वर दीनो कि याकी देह मेरे भक्त निमित्त गई सो याय सब विश्व पूजेंगे " वा समय प्रह्लादनें पितासो कही कि " रामनाम जपतां कुतो भयं सर्वतापशमनैकभेषजम् ॥ पश्य तात मम गात्रसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना " ॥४५॥ मेने याको अनेक गारी देके कही और याके मैंने बहुत उपाय मरेवेके करे पर यह मरो नहीं तिन तिन द्रोहनसो असद्धर्मनसो अपने तेजसों आप मुक्त भयो है ॥ ४६ ॥ यह मेरे निकट रहे है बालक है तथापि

---

१ प्रयोजन यह है कि जैसें सर्पने अंगुली काटी या और कोउ विकार काउ अंगमें भयो तब पुरुषको चाहिये कि वा अंगको काटके और सब अंगकी रक्षा करलेय यदि एक अंगुलीको नहीं काटेगो तौ वह मर जायगो यासो याको मारगेरो नहीं तौ ये मेरे प्राणको ग्राहक होयगो ॥

२ अथवा अपुण्य नाम प्रारब्धहीन पुरुषके सब उद्यम जैसें व्यर्थ जाय है ऐसेंही विनके प्रयास खाली गये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये जड बुद्धि नहीं है किंतु बडो चतुर है कुत्तेकी पूंछकी नाईं अपने स्वभावको नहीं त्यागेहै मेरे अनारीपनको मैं जानौ हौं कि कभू नहीं विस्मरण करै है[2] ॥ ४७ ॥ अप्रमेय याको प्रभाव है, कहा यह देवता है याकों कहींसो भय नहीं है निश्चय है कि याके विरोधसों कहू मेरी मृत्यु न है जाय मोको यह बडी चिंता है ॥ ४८ ॥ या चिंतासे जाके मुखकी शोभा मलीन है गई और नीचेको मुख करे बैठे हिरण्यकश्यपसों शुक्राचार्यके पुत्र शंडामर्का एकांतमें आयके ये बोलै ॥ ४९ ॥ हे नाथ ! आपके भ्रुकुटिके चलवेसों सब तीनों जगत् जीतेगए, सब लोकपाल जीते आपको कछु चिंता करनो योग्य नहीं है बालकनके गुण दोषनकी याद मत करो[3] ॥ ५० ॥ याको वरुणकी फांसीसो बांधके घरमें राखो, जामें ये भाग न जाय यह निश्चय है कि पुरुषकी बुद्धि अवस्थासें और बडेनकी सेवासो सुधरजाय है जबतक शुक्राचार्यहू आय जायगे ॥ ५१ ॥ बहुत अच्छो ऐसे कहि हिरण्यकश्यप यह बोलै कि जी अच्छी अब तुम जे गृहस्थी राजानके धर्म हैं सो याको उपदेश करो ॥ ५२ ॥ हे राजन्! यह श्रवण कर वह ब्राह्मण नम्रीभूत प्रह्लादको यथाक्रमसो धर्म अर्थ काम विषय सिखावन लगो ॥ ५३ ॥ गुरुने श्रम करके जे वे विषय प्रह्लादको पढाये पर वाने विन्हें अच्छौ न मानो याको यह कारण है कि संसारसुखमें रागद्वेषादिसों क्रीडा करनवारे पुरुषनको यह विषय कथन कियो भयो है[4] ॥ ५४ ॥ जबै आचार्य गृहस्थीपनके कर्ममें लगजांय कहीं बाहर जांय तब वो अवकाशमें अपने पास बराबरके बालकनकों बुलाय लैय ॥ ५५ ॥ महाबुद्धिमान् कोमलवाणीसों उनकों बुलायके कृपा करके हँसते भए विद्वान् प्रह्लादजी उनकूं ज्ञानकी शिक्षा कहिते भए ॥ ५६ ॥ वे सब बालक कैसे है कि विषयी प्राणिनके वचन तथा चेष्टासो जिनकी बुद्धि कुत्सित नहीं भई ही प्रह्लादजीके गौरवसो कि ये राजाको बेटा है सब खेल त्यागके ॥ ५७ ॥ हे राजेंद्र ! प्रह्लादजीमें हृदय दृष्टि सब लगाय राखी वे बालक सब ओरसों आयके उपासना करते भए और वह महादयालु परम भक्त प्रह्लाद विन बालकनसो ये कहते भये ॥ ५८ ॥

पर्युपासत राजेन्द्र तन्यस्तहृदयेक्षणाः ॥
तानाह करुणो मैत्रो महाभागवतोऽसुरः ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे प्रह्लादेन नवधाभक्तिवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

प्रह्लाद उवाच–कौमार आचरेत् प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह ॥
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम् ॥ १ ॥

---

१ जहां (शुनः शेफ) ऐसो पाठ है तहां तो शेफ पूछको नाम है ही वहां ये समझनो कि काउने १२ वर्षताई कुत्ताकी पूछको धरतीमें गाडके राखी ये काउ तरह सूधी न भई जब निकासी तब टेढीकी टेढी रही ऐसेही यहहू स्वभावको नाय छोडेगो ॥ २ अथवा जैसे अजीगर्तको बेटा शुनःशेप वाको वाके मातापितानें बेच दियो हो बलिदान करवेको फिर वो विश्वामित्रने बचायो हो पन वाने अपने पिताको कर्म विस्मरण नहीं कियो हो ऐसेही येहू मेरे कृत्यनको नहीं भूलेगो (शुनःशेप) ऐसो जहां पाठ है वहांतो येही अर्थ है ॥ ३ बालकनके गुणदोष नियत नहीं होय हैं बडे भये ये सब अपने कुलाम्नायको ग्रहण करलेय है यासो तुम चिंता मत करो ॥ ४ जब ये आपही राग द्वेषमें फसे हे तब मोको कहा उपदेश कर सकै है ॥ ५ यहां यह जाननो कि काही दिन गुरु काउ गूढ कार्य व्यापृत हैं गये चटसार न आये एकांत देखके प्रह्लादने सब बालकनको अपने पास बुलायके बैठारे विचार यह कियो कि हाय मेरे संग पढनवारे का सब ऐसेही रहेगे नहीं इनको सबनको उद्धार करौंगो इत्यादि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीप्रह्लादजी बोले कि जो कुमारअवस्थासों भागवतधर्म या लोकमें आचरण करे है, वोही महापंडित हैं, क्योंकि ये मनुष्यको जन्म महादुर्लभ है, सोभी ये स्थिर नाय है, परंतु अर्थको दायक ये जन्म है ॥ १ ॥ या संसारमें श्रीविष्णुके चरणारविंदकी शरणागति करनी येही पुरुषको सब बातको सार है, षड्विध शरणागति करे ये ईश्वर सब जीवमात्रके व्यापक आत्मा प्रिय सुहृद हैं ॥ २ ॥ हे दैत्यपुत्रहो ! इन्द्रियनको जो सुख है, सो तो देहयोगसो देहधारीनको भाग्यसो सब योनिमें प्राप्त होयहै, जैसे दुःख विना यत्नसों आयजाय है, परंतु भगवत्की भक्ति प्रपत्ति याही देहसो होयहै औरसों नहीं ॥ ३ ॥ जासों व्यर्थ आयु क्षय होय, वामें परिश्रम न करै, जैसो मुकुंदके चरणकमलके भजनसो क्षेम होय है तैसो और साधनसों नहीं होयहै ॥ ४ ॥ जबतक पुरुषार्थ बनोरहै जबतक यापै कोई विपत्ति न आवै, तबतक डरकर शीघ्र मोक्षके अर्थ यत्न करे ॥ ५ ॥ पुरुषकी शतवर्षकी आयु है, सो आधी अजितात्मानकी ये आयु रात्रिमें जाय है, तमरूप अंधकारमें पडके सोयके वितावे है ॥ ६ ॥ मोहयुक्त बालपनमें खेलमें बीस वर्ष जायहै असमर्थ जराग्रसित देह है जाय तब बीस वर्ष जांयहै ॥ ७ ॥ कदी पूरो न होय ऐसे कामसो बली मोहसो आयु व्यर्थ जायहै, शेष प्रमत्त हैकै घरमें आसक्त रहै है वामें आयु खोवै है ॥ ८ ॥ कौन पुरुष घरमें आसक्त होय अजितेंद्री आत्माकों जो दृढ स्नेहरूप फांसीसो बंधी भई है वाके खोलवेको समर्थ है कोई नहीं ॥ ९ ॥ प्राणसोंहू प्यारी धनकी तृष्णा है वो काऊसों नहीं त्यागी जाय है, जाको चोर सेवक और व्यापार करनवारे अपनो जीवन खोसनो स्वीकार कर उपार्जन करै है ॥ १० ॥ दया पात्र प्यारी स्त्रीके संगकी रहस्य सुन्दर सलाह सुहृदनके मोहमें बंधो भयो और बालकनकी मनोहर वाणी इन सबमें चित्त अनुरक्त है सो पुरुष स्नेहमें फँसके त्याग नहीं कर सकै है ॥ ११ ॥ पुत्रनकी याद, बेटीनकी याद, भाई बहिन दीन मा बाप घर मनोहर घरकी चीजै, कुलपरंपरामें प्राप्त जीवका पशु, नौकर, इनै कोऊ काऊ प्रकार नहीं त्याग सकै है ॥ १२ ॥ रेशमके कीडाकीसी नाईं चेष्टा करते लोभसो कर्म करै है, सो काम तृप्त नहीं होयहै, याते नहीं त्याग सकैहै, शिश्न जीभ इनके विषयनको बहुमान करते अंतहीन या मोहकों कभी नहीं त्याग सकैहै ॥ १३ ॥ कुटुंबपोषणके लिये अपनी आयुकों व्यर्थ करतो प्रमत्त हैकै नहीं जानै है, सर्वथा तीन तापसों याकी आत्मा दुःखी रहै है अपने कुटुंबमें रमण करै है, याते वैराग्य याकों कभू नहीं प्राप्त होयहै ॥ १४ ॥ अजितेन्द्रिय हैवैसो याको नित्य चित्त धनमें लगो रहै है, और परायेके वित्त हरवेके दोषकूंभी जानै है ऐसो कुटुम्बी मनुष्य तृष्णा शांत नहीं हैवेसो परायो धन हरेही तो है ॥ १५ ॥ हे दनुजपुत्रहो ! ये बात जानै है तोहू कुटुंबको पुष्ट करतो वैकुंठ जायवेकी कुछ चाहना नहीं करैहै, ये अपनो ये परायो ऐसो भेद भीतर जाके निश्चय है वे विमूढ मनुष्य मूर्खकीसी नांई नरकमें जाय है ॥ १६ ॥ यह मनुष्य कभू काउ तरहसोंहू अपने आत्माके छुडायवेको सामर्थ नहीं होयहै कारण कि कामदेवकी दृष्टिवाली स्त्रियनकी और पुत्रपौत्रादिकी कठिन बेडीमें बंधो है विनके निकट यह क्रीडामृगके समान रहै है ॥ १७ ॥ हे दैत्यबालकहो ! शीघ्र विषयनकी चाहवारे दैत्यनकों संग त्याग करो, सब देवनके आदिदेव श्रीमन्नारायणके चरणारविंदकी शरणागति करो कारण कि संग त्यागनवारे पुरुषनने नारायणके भजनहीको नाम मोक्ष कह्यो है ॥ १८ ॥ हे असुरबालकहो ! अच्युतके प्रसन्न करवेमें कुछ बहुत परिश्रम नहीं होयहै, वो तो सर्व जीवमात्रके व्यापक आत्मा है सब तरहसो सिद्ध है ॥ १९ ॥ पर अवर जीवमें ब्रह्मातें स्थावर आदिमें पांचभौतिक विकारमें महात्माजीवमात्रनमें प्रीत करो ॥ २० ॥ तिन गुणनमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रकृति आदि महत्तत्त्वादि विकारनमें एक पर अवर आत्मा भगवान् ईश्वरही अविनाशी है उन्हें भजो "गधा पच्चीसीकी मनुष्यकी आयु है यामें सम्हारों जैसे एक मनुष्य गधा कुत्ती मुर्गा चारोंने तप करो ब्रह्माजी आये बोले वर मांगो ये बोले उमर देओ उन्होंने कही लाखवर्षकी आयु देऊ कि दशलाखकी ये चारों बोले नांय ४० वर्षकी देओ मनुष्य तौ उग्र लै प्रसन्न भये ये तीनो जहां गए तहां दुःख भोग हैरान होय बोले कोई याय लेलै वोही मनुष्य अकस्मात् फेर मिलो वासें कही वानें कही बीस बीस वर्षकी आयु देओ लेलीनी, सो पहिले तो ये जीव गधाकी नांई के वह वह मरै है, पाछे कुत्ताकी आयु लीनी है सो कुत्ताकी नाई भौंकभौंक मरै है, कोई याको कह्यो न मानै है वृद्धापनमें मुर्गाकी नाई गर्दन डुलावै है यूंही चारो पण याके व्यतीत होयहै, यासे चलते देहसें खूब तो श्रीहरिस्मरण करो दान करो तीर्थ करो ब्राह्मणोंकों जिमाओ नवधा भक्ति करो सुवर्ण-दान करो वेद पढो पढावों विद्याभ्यास करो ब्रह्मविद्या सीखो क्रोध लोभ मोह ईर्षा निंदा छल बुराई मारना दुष्टता मान मद दर्प हिंसा चोरी इत्यादि त्यागो तो मोक्ष होऔगे ॥ २१ ॥ प्रत्यगात्मा नाम भोक्ता द्रष्टाके रूपकरके और दृश्य नाम भोग्य देहादितारूपकरके वास्तवसो जो अनिर्देश्य हे वोहू व्याप्य व्यापकरूप करके निर्देश करवेको विकल्प कियो निश्चय कियो गयो है ॥ २२ ॥ केवल अनुभवसों आनंदस्वरूप परमेश्वर मायासो सब ऐश्वर्य छिपाय राखे है, गुणनकी रचवेवारी मायासौ जाने जांय हैं ॥ २३ ॥ ताते सब जीवमात्रमें दया करो, सुहृदता करो असुरभावको त्यागो, जासौ भगवान् प्रसन्न होय है ॥ २४ ॥ अनंत आद्य प्रसन्न है जाय तौ सब वस्तु प्राप्त होयहै, जो अपने आप प्राप्त भए लोकनकें सिद्धधर्मादिक हैं उनकी हमें इच्छा नहीं तथा मोक्षकी इच्छा नहीं भगवा-न्की चरणसेवा करवेवारे गुण गायवेवारे हमको काऊसौ कुछ प्रयोजन नहीं है ॥ २५ ॥ धर्म अर्थ काम ये त्रिवर्ग आत्मविद्या, वेदत्रयी दंडनीति और अनेक तरहकी वार्ता सो ये सब वेदके सार है, परंतु इनसोंहू सार यह है कि परम पुरुष ईश्वरकों अपनो आत्मा समर्पण करनो ये श्रेष्ठतम है ॥ २६ ॥ महाकठिन ये निर्मल ज्ञान नरके सखा श्रीमन्नारायणने श्रीनारदजीसो कह्यो है जो निस्पृह और जो एकांत भक्त देहाभिमानसौ रहित है और नारायणकी चरणरजमें न्हाये भये हैं उन्हें यह ज्ञान प्राप्त होयहै ॥ २७ ॥ देवसमान जिनके दर्शन ऐसे श्रीनारदजीसो विज्ञानसहित ये ज्ञान और शुद्ध भागवत धर्म पहिले मैंने सुने है ॥ २८ ॥ दैत्यपुत्र बोले कि हे प्रह्लाद ! हम और तुम इन दोउ गुरुपुत्रसंडामर्काके सिवाय और दूसरेको गुरु नहीं जाने हैं हमारे यहां तौ बालकपनसो सर्व बालक-मात्रनके यही गुरु हैं ॥ २९ ॥ तुम बालक सदा अंतःपुरमें रहिते है तुमको महात्मानको संग दुः-खनाशक कहां भयो, हे सौम्य ! ये संदेह हमारो छेदो, जासो हमारो तुममें घनो विश्वास होय ॥३०॥

बालस्यान्तःपुरस्थस्य महत्सङ्गो दुरन्वयः ॥
छिन्धि नः संशयं सौम्य स्याच्चेद् विश्रम्भकारणम् ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे प्रह्लादेन ब्रह्मज्ञानवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

नारद उवाच-एवं दैत्यसुतैः पृष्टो महाभागवतोऽसुरः ॥
उवाच स्मयमानांस्तान् स्मरन् मदनुभाषितम् ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीनारदजी बोले कि ऐसे दैत्यसुतनने पूछे जे महाभागवत प्रह्लाद वे मेरी कही वार्ताको यादकर मुसकायके विन बालकनसो बोलै ॥ १ ॥ श्रीप्रह्लादजी बोले कि हमारे पिता जब मंदराचलकों तपके अर्थ गये, तब दानवनसो युद्धको उद्यम देवता करते भये ॥ २ ॥ तब इंद्रादिक देवता बोले जैसे सर्पकों चेटी खाय जांय ऐसेही सब लोकके ताप देवेवारे पापीको पाप भक्षण कर गयो ये बडो मंगल भयो ॥ ३ ॥ तिनके अति बलको उद्योग देख सुन असुरयूथपति देवतानके मारेभये डरसो सब दिशानको भागगये ॥ ४ ॥ स्त्री पुत्र मित्र कुटुंबी घर पशु सब सामग्रीनकी ओर नहीं देखते सब प्राण बचायवेको भाजगए ॥ ५ ॥ जयकी चाहवारे देवता राजाके सेनानिवासस्थानको नाश करते भए, राजाकी स्त्री मेरी मा कयाधुदानवीको इंद्र पकडके लेचलो ॥ ६ ॥ भयभीत टटीरीकी नांई रोवै ताहि लेजाते भए मार्गमें अनायास नारदजी आय लूटलेते देखते भए ॥ ७ ॥ नारदजी बोले हे इंद्र ! याय मत लेजाओ हे महाभाग ! ये सती है, परायकी स्त्री निरपराधिनी है, याय छोड छोड याको पति आवैगो जब तुम सब भाजते डोलोगे ॥ ८ ॥ इंद्र बोले कि याके पेटमें असह्य देवद्रोहीको तेज है सो जबतक याको गर्भ बाहर न आवैगो हमारो मनोरथ नहीं पूर्ण होयगो तबतक छोडैगो नहीं ॥ ९ ॥ श्रीनारदजी बोले कि याके पेटमें निस्पृह महाभागवत है, सो तुमसो नहीं मरैगो अनंतके दास बली होते हैं ॥ १० ॥ ये सुन नारदको वचन मान वाय छोड देतो भयो, भगवत्प्रिय याके भीतर हैं ये जान वाकी परिक्रमा कर इंद्र स्वर्गको चलो गयो ॥ ११ ॥ ता पीछे हमारी माको ऋषि अपने आश्रममें लाय वाको दम दिलासा देके बोले हे वत्से ! जबतक तेरो भर्ता आवै तबतक तुम यहां वास करो ॥ १२ ॥ जबतक दैत्यपति घोर तपसो न निवर्त भयो तबतक भयरहित हो बहुत अच्छो ऐसें कहि देवऋषिके पास मेरी मा वसतीभई ॥ १३ ॥ गर्भवती सती अपने गर्भकी कुशलता और इच्छापूर्वक पुत्र जन्मके लिये परमभक्तिसो ऋषिकी परिचर्या करती भई ॥ १४ ॥ दयालु ऋषि मो भक्तकों जान निर्मल दो प्रकारको धर्मको तत्व नाम भक्ति और ज्ञान नाम आत्मा-नात्मविवेक देतेभए ॥ १५ ॥ वो ज्ञान काल पायकर बहुत दिन हैवेसो वह तौ स्त्रीपनसो भूल गई, ऋषिकी कृपासो अबतक मोको वो ज्ञान याद है भूलो नहीं है ॥ १६ ॥ जो मेरे वचनको श्रद्धा करोगे तो आपकोहू श्रद्धा करवेसो मो सरीके बालक और स्त्रियनकोहू स्त्रीबालकनकोहू श्रद्धासों ये विशारद बुद्धि है जायगी ॥ १७ ॥ जन्म होनो बढनो रूपान्तर होनो क्षय नाश ये छै भाव देहकेही देखेहै देहके व्यापक आत्माकों नहीं होय हैं, परन्तु जैसे वृक्ष होते हू वाके पत्रादि विकार होय है ऐसेही आत्माके हैवेसो यह छः देहमें भासै हैं ॥ १८ ॥ आत्मा नित्य है " अविनाशी वा रे अयमात्मेति श्रुतेः " ॥ अव्यय है " ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्निति श्रुतेः " शुद्ध है " निरवद्यं निरंजनमिति श्रुतेः " ॥ एक है " एकमेवाद्वितीयमिति श्रुतेः " ॥ क्षेत्रज्ञ है " विज्ञातारमरे केन विजानीयादिति श्रुतेः " आश्रय है " यस्मिन्द्यौः पृथिवी चांतरिक्षमिति श्रुतेः " अविक्रिय है " निष्क्रियं निष्कलं शांतमिति श्रुतेः " ॥ स्वदृक् है " आत्मज्योतिः सम्राडिति होवाचेति श्रुतेः ॥ " सबके हेतु हैं " स

१ राक्षसोंके बालकोंसे प्रह्लादने कहा कि नारद मुनि मेरी माताको अपने आश्रमपर लेगये, जब मेरी माता नारदजीके आश्रममें विश्राम करती रही जबतक मेरा पिता हिरण्यकशिपु ब्रह्माजीसे वरदान लेकर घरपर न आया, हम लोगोंने ऐसा सुना है शास्त्र और पुराणोंमें कि नारद मुनिका कोई आश्रमही नहीं था और नारद मुनि किसी स्थानपर दो चार घडीसे अधिक ठहरही नहीं सक्ते थे, फिर नारदजीके आश्रमपर प्रह्लादकी माता कैसे बहुत दिनतक ठहरी ? यह सन्देह है !

उत्तर—भगवान्‌के भजन करनेके लिये बद्रिकाश्रममें नारदजीका गुप्त आश्रम है, तीन लोकमें घूमघामकर नारदजी अपने उसी गुप्त आश्रमपर आनकर भगवान्‌का भजन करते हैं नारदजीके आश्रमपर जो जीव वसते हैं, उनको किसीका भय नहीं होता, इसलिये प्रह्लाद दैत्योंके बालकोंसे कहते थे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इमांल्लोकानसृजतति श्रुतेः ॥" व्यापक है " सत्यं ज्ञानमनंतमिति श्रुतेः " ॥ असंगी है " असंगो ह्ययं पुरुष इति श्रुतेः " अनावृत है " पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यत इति श्रुतेः " ॥ उक्त द्वादश विशेषण विशिष्ट बृहत्वादि गुण विशिष्ट चैतन्य ब्रह्म है यासों विपरीत शरीरके लक्षण हैं॥ १९॥ आत्माके परेसो परे ये द्वादशलक्षणको विद्वान् अहं मम ये असद्भाव देह आदिमें मोहसो लगाय राखो है सो इन्हैं त्याग करै ॥ २० ॥ जैसे सुवर्णको सब प्रकारसों जानवेवारो सुवर्णकार कसोटीमें लगेभए सुवर्णको तपाय तपायके निकास लेय है तैसे अध्यात्मज्ञानको जानवेवारो शरीरमध्यवर्ती जीवके द्वारा हैके आत्माको लक्षरूपयोग करके ब्रह्मकी गतिकों जानैहै ॥ २१ ॥ मूलप्रकृति महत् अहंकार पांच तन्मात्रा ये आठ प्रकृति हैं तीन वाके गुण हैं, ग्यारह इंद्रियें पंच महाभूत सोलवो जीव ये षोडश विकारनके हैवेसो कपिलाचार्यनने जीव ब्रह्म एक कह्यो है ॥ २२ ॥ इन चौवीस तत्वनको संघात शरीर है स्थावर जंगम ये दो वाके भेद हैं याहीमें आत्माको ढूंढनो और वाको पानो सुलभ है कारण कि यह आत्मा नहीं यह आत्मा नहीं ऐसे जड पदार्थनको पृथक् करवेसो चैतन्य आत्मा शेष रहै है ॥ २३ ॥ जैसें मणिनमें सबमें सूत पुयोहै याको नाम अन्वय है, और मणिनकी सूतसो पृथकता है याको नाम व्यतिरेक है वा अन्वय व्यतिरेककरके और पूर्वोक्त विवेक करके और शुद्ध मन करके और उत्पत्ति पालन नाश निरूपण करवेवारे वेदवाक्यनके विचारसों आत्माको जानते हैं ॥ २४ ॥ जागृत स्वप्न सुषुप्ति ये तीन बुद्धिकी वृत्ति हैं इनको जो जाननेवारो है सो सबको साक्षी परपुरुष ईश्वर है ॥ २५ ॥ यासों बुद्धिके परिणामरूप याहीसों अनात्मधर्म मानके जिनको निरास कियो त्रिगुणात्मक कर्मजन्य है तिन करके आत्माके स्वरूपको जानै जैसे सबमें व्याप्त होयवेतें गंधगुणसो वायु जानी जायहैं ॥ २६ ॥ गुण कर्म इनसो बंधन होयहै, यही संसारको द्वार है, अज्ञान मूल मिथ्या है पुरुषकों स्वप्नकी नाईं मालूम पडै है ॥ २७ ॥ तातैं त्रिगुणात्मक कर्मनके बीजके नाश करवेको तुम योग करो जासों तीन अवस्था रूप बुद्धिको प्रवाह नष्ट है जाय है ॥२८॥ तहां सहस्र उपायनमें ये उपाय भगवान्ने कह्यो है भगवान् ईश्वरमें जैसै होय तैसै प्रीति करे ॥ २९ ॥ गुरुकी शुश्रूषा करके भक्तिसो लाभ होय सो भगवत्के समर्पण करै तासो सत्संगसो साधुनकी भक्तिसो ईश्वरके आराधन करवेसों श्रीईश्वर प्रसन्न होयहैं ॥ ३० ॥ भगवत्की कथामें श्रद्धा करवेसो ईश्वरके गुणकर्मनके कीर्तन करवेसो उनके चरणकमलके ध्यान करवेसो उन्हींके स्वरूप प्रतिमाकी पूजा दर्शन करवेसो इन सब साधननसों जो भगवान्में रति होनो येही उपाय भगवान्ने कह्यो है ये पूर्व श्लोकमें अन्वय है ॥ ३१ ॥ श्रीहरि ईश्वर सब जीवमात्रमें विराजे है ये जान तिन तिन मनकामसो उनकों मान पूजा करै ॥ ३२ ॥ ऐसै कामक्रोधादि छै शत्रुनकों जीतकर भगवान् वासुदेव ईश्वरमें भक्ति करै, जासों प्रीति है जाय है ॥ ३३ ॥ अतुल गुणकर्म वीर्ययुक्त लीला जो तनु धारकर करै है, उन्है सुनैं, जब अत्यन्त आनन्द प्राप्त हो जाय रोमांच होय नेत्रनमें जल भरि आवै वाणी गद्गद हो मुक्त कंठसों कभी गावे कभी नाचै कभी रोवन लगे ॥३४॥ जब ग्रहग्रसेकी नाईं कभी हँसे पुकारे ध्यान करै जीवनको प्रणाम करै वारंवार श्वास ले जब बोले तौ हे हरे ! हे जगत्पते ! हे नारायण ! ये आत्माकी गति होय जाय सब लाज जाती रहैहै ॥३५॥ तब पुरुष सब बंधननसो छूटकर तिनको भावरूप भावना कर वैसेही करवे लगै है, महाभक्तिप्रयोग करकै सब कामकर्म अंतरसो जरायकर भगवत्को प्राप्त होय है ॥ ३६ ॥ अधोक्षज भगवान्को जो स्पर्श होनो है वो शरीरनके सब अशुभनको नाशक है, संसारचक्रको नाशक है, वोही ब्रह्माको मह।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आनन्द सुख बुद्धिमान् जानैहै, तातै हृदयमें श्रीहरि ईश्वरको तुम सब भजो ॥ ३७ ॥ अपने हृदय छिद्रमें सदा वसनहारे हरिकी उपासना करवेमें कोई परिश्रम नहीं है वह अपने आत्मा और सब प्राणीमात्रके सखा है सर्व साधारण जीवनकी नाईं विषय प्राप्त करवेसों कहा फल है विषयनके सेवनसो कछु नहीं है ॥ ३८ ॥ स्त्री धन पशुपुत्रादिक घर धरती हाथी खजाना विभूती यह सब काम क्षणभंगुर आयुवत् है, मनुष्यकों कछु प्यार नहीं करसकै है, ये सब चलायमान है ॥ ३९ ॥ ऐसेही यज्ञनसो प्राप्त करे भए लोक सब नाशमान हैं, पुण्यकी न्यूनाधिकता है, निर्मल नहीं है तातै सब दोषरहित ईश्वर परमेश्वरको आत्माकी प्राप्तिके अर्थ केवल एकांत भक्तिकरके तुम सब भजन करो ॥ ४० ॥ विद्वन्मानी विद्वत्ताके अभिमानसों जो कर्म करैं हैं वाको विन्हैं उलटो फल मिलै है यह अवश्य है कि ॥ ४१ ॥ दुःख दूर करवेको सुखके लिये संकल्प कर या संसारमें सब कर्मकारी सदा चेष्टा करैहै, सोई दुःख प्राप्त होयहै चेष्टा न करै तो सुख होय है ॥ ४२ ॥ सकामिक कर्म करकै जाके अर्थ यहां पुरुष कामनकी चाहना करैहै, सो ये देह परायो है क्षणभंगुर है कभू प्राप्त है जाय है कभू नाश है जाय है ॥ ४३ ॥ पुत्र स्त्री घर धनादिक राज्य कोश जग मंत्री भृत्य कुटुम्ब सब ममताके स्थान हैं, इनसों कछु नहीं होयहै ॥ ४४ ॥ जो आत्मा आनन्दस्वरूप और अविनाशी है सुखसागर है वाको तुच्छ और देहके साथ नाश होनवाले तथा अनर्थकारक हैवेपैहू भ्रमसों पुरुषार्थकी सदृश विदित होतेभये प्रजा संतानादि अनिष्टनसो प्रयोजन कहा है ॥ ४५ ॥ हे असुरहो ! देहधारीनको कहो यहां कहा स्वार्थ है, जन्मसो लेके मरणपर्यंत अपने कर्मनसों क्लिश्यमान रहै है ॥ ४६ ॥ अपने आत्माके अनुसार देहसों जीवकर्मनको आरंभ करै है, कर्मनसो देह होयहै, पर ये दोनों अज्ञानपनकी बात हैं ॥ ४७ ॥ तातैं धर्म अर्थ काम जिनके आधीन है विन चेष्टारहित भगवान्को क्रियारहित हैकै भजो ॥ ४८ ॥ सब जीवमात्रके श्रीहरि आत्मा प्रिय ईश्वर हैं पंचमहाभूतनसो विनके करेभये ये सब जीव हैं ॥ ४९ ॥ देवता असुर मनुष्य यक्ष गंधर्व इत्यादि श्रीमुकुंदके चरणनको भजते भये स्वस्तिमान भये ॥ ५० ॥ हे असुरबालकहो ! ब्राह्मणपन देवतापन ऋषिभाववृत बहुज्ञता ये मुकुंदके प्रसन्न करवेवारे नहीं हैं[1] ॥ ५१ ॥ न दान न तप न पूजा न शौच न व्रत इनसे प्रसन्न नहीं होयहै श्रीहरि तो केवल निर्मल भक्तिसें प्रसन्न होयहैं, और सब कथनमात्र है ॥ ५२ ॥ हे दानवहो ! याते सब प्राणिनके आत्मा ईश्वर श्रीहरिमें भक्ति तुम सब मिल करो सब जगै अपनीसी नांई समझो सब दुःखसुखमें और सब जीवनकों ईश्वरमें समझो ॥ ५३ ॥ दैत्य यक्ष राक्षस स्त्रियें शूद्र व्रजवासी खग मृग पापजीवी ये सबभक्ति करकै श्रीअच्युतके भावको प्राप्त होते भए ॥ ५४ ॥ या लोकमें पुरुषको परमस्वार्थ इतनोही है कि श्रीभक्तिमहाराणीको श्रीगोविंदमें सदा और उन्हैही सर्वत्र देखै ॥ ५५ ॥

---

१ भगवान् काहूसो राजी नहीं होय है केवल भक्तिसोही राजी होय हैं यापें ये श्लोकहै व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च वयो विद्या गजेंद्रस्य का कुब्जायाः किमु नामरूपमधिकं किं किं सुदाम्नो धनं ॥ वंशः को विदुरस्य यादवपतेरुग्रस्य किं पौरुषं भक्त्या तुष्यति केवलं नतु गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः ॥

२ जैसे लिखा है एक जगै वेश्या नाच २ हाथ उठाय गाय रिझाय रहीथी काऊने पंडितजीसे कही कि या सभामें कहा होय रह्यो है तबको कवित्त कही उत्तर देतेभए ॥ पट ऊजरे बैठे सभा बहुरंग न पाग वंसी जितको ॥ सो मृदंग कहै हरिभक्ती विना धिक् है धिक् है धिक् है तिनको ॥ मंजीराने पूछ लई विधिसें किनको किनको किनको किनको ॥ उठ नायका पाणि पसार कहै इनको इनको इनको इनको ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसः स्वार्थः परः स्मृतः ॥
एकान्तभक्तिर्गोविंदे यत् सर्वत्र परीक्षणम् ॥ ५५ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे प्रह्लादेन दैत्यपुत्रानुशासने ब्रह्मस्वरूप-
वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

नारद उवाच–अथ दैत्यसुताः सर्वे श्रुत्वा तदनुवर्णितम् ॥
जगृहुर्निरवद्यत्वात् नैव गुर्वनुशिक्षितम् ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि अष्टम या अध्यायमें नृसिंहजीको अवतार वर्णन करेहैं याके उपरांत सब दैत्यनके पुत्र प्रह्लादजीको वर्णन करे भयेको सुनकै दोषरहित समझके प्रह्लादके कहेकोही ग्रहण करते भये और जो गुरुनने कह्यो वा शिक्षाको नहीं ग्रहण करते भएं ॥ १ ॥ पीछै शुक्राचार्यसुत एकांतमें स्थित विन सबकी बुद्धि देख डरोभयो शीघ्र राजासों निवेदन करतो भयो ॥ २ ॥ पुत्रको असह्य अप्रिय अन्याय सुनकर दैत्य कोपावेशते चलायमान शरीर हो पुत्रके मारवेकी इच्छा मनमें धारतो भयो ॥ ३ ॥ वह दैत्य तिरस्कारके अयोग्य प्रह्लादको कठोर वाणीसो तिरस्कार कर क्रोध-भर टेढी आखनसौं तिरछो निहारके बोलो ॥ ४ ॥ जितेन्द्री और नम्रताके कारण हाथ जोडे खडे प्रह्लादसो तीक्ष्ण पैरसो कुचले सर्पकी समान फुंकार कर बोलो ॥ ५ ॥ हे दुर्विनीत हे मंदात्मन् हे कुलभेदकर हे अधम गर्वित ! तैंने मेरी आज्ञा उल्लांघी, तोको अब यमलोकको पहुँचाऊंगो ॥ ६ ॥ जब मोको क्रोध आवै है, तब त्रिलोकी ईश्वरसहित कांपै है, हे मूढ ! तू मेरी आज्ञाको डर छोड नेक नहीं मानै है सो तोको कोनको बल है सो तू वा अपने हिमायतीको तो मोय बताय आज पेले तेरे हिमायतीकोही देखोगो ॥ ७ ॥ प्रह्लादजी बोले कि हे राजन् ! जा परमात्माने पहले और पिछले सब स्थावर और जंगमनको तथा ब्रह्मादिकनकोहू अपने वश कर लियो है वही परमात्मा मेरे और तुम्हारे बलस्वरूप हैं और आपहीको और मेरे नहीं किन्तु और बलियनकोहू बलरूप है ॥ ८ ॥ काल उरुक्रम ओज सह बल इंद्रिय आत्मा सत्व वोही ईश्वर हैं, सो परमेश्वर अपनी शक्तिनसों रचै है, रक्षा करै है विश्वकों संहार करै है तीन गुणनको ईश है ॥ ९ ॥ ये तुम्हारेमें जो असुरपणो है, याको त्यागो, मनकों समान करो, कोई काऊको वैरी नाय है, नहीं जीते भए और उलटे मार्ग

---

१ शंका–राक्षसोंके लडकोंने प्रह्लादसे ज्ञान सीखा, परन्तु ज्ञानियोंका नाम लोकमें और शास्त्रमें सब प्राणियोंको विदित हो जाताहै, परन्तु उनको नाम शास्त्रमें और लोकमें हमनें नहीं सुना कि वह लडके सुधर गये, छोटे तपस्वियोंका बडे तपस्वियोंका और जो जो नामी तपस्वी हैं अथवा ब्रह्मज्ञानी हैं उन सबका नाम हमने सुना परन्तु प्रह्लादके शिष्योंका नाम हमने कहीं नहीं सुना यह भ्रम है कि प्रह्लादसे ज्ञान सीखकर वह लडके किस लोकमें गये ॥

उत्तर–जब प्रह्लादका और हिरण्यकशिपुका उत्पात होना आरम्भ हुआ तब शुक्राचार्य उनके पास नहीं थे, पीछे शुक्राचार्यने आनकर सब उत्पात और राक्षसोंके बालकोंको श्रेष्ठ कर्म करता देखकर लडकोंसे शुक्राचार्य बोले, यह कर्म तुम सब जने त्यागदो और जो नहीं त्यागोगे तो हम तुम सबको भस्म करदेंगे, ऐसा डर मानकर वह लडके फिर राक्षसकर्म सीखने लगे, वह लडके तपस्या करनेमें कच्चे थे इसलिये उन्होंने डरके मारे श्रेष्ठ कर्म करने छोड दिये और राक्षसकर्म करने लगे, इस कारणसे वह लडके तपस्वी नहीं हुए, विना तप किये उनका नाम प्रसिद्ध कैसे होता ॥

२ कि महाराज लेउ महाराज अब मे कहा करौ तुम एक बेटाकोही रोवते हे ये कैसो कीनौ आप देखो तो सही मेरी सब चटसारकी चटसारको नाशकर दियो अब में कैसी करौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चलनवारे मनके सिवाय और अपनो शत्रु नहीं है वो अजित मनको जीत वोही श्रीअनंत भगवान्‌को महापूजन है ॥ १० ॥ एक आपसरीके ऐसेहू लोग भए है कि अपनेको लूटनवारे छै वैरिनको विना जीते दशों दिशा जीत आए, ऐसो मानते हैं परन्तु जाने अपनी आत्मा जीत राखीहै, ऐसे ज्ञानी सब देहधारी मात्रमें समान भावसों वर्तै है, ऐसे साधुको अपने मोहसों भए दुःख नहीं होयहैं, औरनकी तो कहा है ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपु बोले कि निश्चय मोको भयो कि तू मरवेकी चाहमें है, जो ऐसो निर्द्वंद्व बोलै है हे मंदात्मन् ! जिनकी मृत्यु नजीक आयजाय है उनकी ऐसी अयोग्य वाणी निकसै है ॥ १२ ॥ हे मंदभागी ! जो तू मोसो पृथक् ईश्वरको बतावै है तौ वह कौन है प्रह्लाद बोले सर्वत्र है हिरण्यकशिपु बोलो जो सर्वत्र है तो या खंभमें क्यों नहीं है तब तौ प्रह्लादजी खंभके माउ देख प्रणाम करके बोले कि पिताजी ! अंधेको कहा बताउ मोय तो खंभमेंहू दीसे है ॥ १३ ॥ ते अलीक बोलवेवारेको शिर कायासो हरूंगो जो तेरो रक्षक हरि है सो कैसे तेरी रक्षा करैगो, जाकी तू बडी शरण चाहै है ॥ १४ ॥ ऐसे दुष्टवचन कह वारंवार क्रोधसो महाभागवत पुत्रको पीडा देत महा असुर तल्वार लैकै श्रेष्ठ आसनसो उछलकै अतिबली अपनी मुष्टीसो खंभको मारतो भयो ॥ १५ ॥ हे राजन् ! वाही समय अतिभीषण शब्द भयो, जो सब ब्रह्मांडकटाहमें भरपूर है गयो, जा खंभके शब्दको सुनके ब्रह्मादिक मानते भये कि आज हमारे धामको नाश आय पहुँचो ॥ १६ ॥ महापराक्रमसो विक्रम करते पुत्रवधकी इच्छा किये दैत्यने यह अपूर्व और अद्भुत शब्द जिससे कि सभाके सब दैत्य भय खायगये हे वो सुनो परन्तु यह शब्द कहांसो भयो या बातको निश्चय कोउ नहीं करसको ॥ १७ ॥ अपने निजभृत्य प्रह्लादकी कही भईको सत्य करवेको कि " भौतिकेषु च भावेषु भूतेष्वथ महत्सु चेति प्रह्लादोक्तिः " कि नारायण सर्वत्र व्यापक हैं ॥ २ ॥ और निज भृत्य सनकादिकके कहिवेको सत्य करवेको " त्रिभिर्जन्मभिः शापमोक्षो भवत्विति " तीन जन्ममें यह शापसों मुक्त होयगे ॥ ३ ॥ और निजभृत्य हिरण्यकशिपनें ब्रह्मासो जो कही वाके सांच करवेको " भूतेभ्यस्त्वद्विसृष्टेभ्यो मृत्युर्मा भून्मम प्रभो " इति " नांतर्बहिर्न नरैर्न मृगैरपि " कि मैं तुम्हारे बनाये जीवनसों न मरूं ॥ ४ ॥ निजभृत्य नारदजीने कह्यो वाके सांच करवेको " अयं महांस्त्वया संस्थां न प्राप्स्यति " कि यह कयाधूको गर्भ इन्द्रसो नहीं मरैगो अपने भक्तको पक्षपात करै है कि " कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥ तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरादिति " मैं अपने भक्तनकी रक्षा करौं हूं यह दिखायवेको निजभृत्यनके वचन सत्य करवेकों, और सब स्थावरजंगममें अपनी व्याप्ति है ये दिखायवेको अद्भुत रूप धार सभाके खंभमें सर्वव्यापक ईश्वर नृसिंहरूप धार दर्शन देते भए ॥ १८ ॥ स्तंभके चारों ओरसो देखे तो एक जीवविशेष है खंभके मध्यमें गर्जरह्यो है, न ये सिंह है न मनुष्य है, अहो विचित्र नृसिंहरूप है ॥ १९ ॥ अत्यंतभयानक नृसिंहरूपको ऐसे विचार करतो हो तबतक तपे सुवर्णकी समान भयंकर नेत्र फडकते भए कंधेके केशरयुक्त जंभाई लेते भए बडे मुखवारे नृसिंहजीको आगे देखो ॥ २० ॥ जिनकी कराल डाढे मुखमें तरवारवत् चंचल क्षुरा समान जिह्वा भ्रुकुटी सहित भयंकर मुख है गर्वी कीलवत् उठे कान, गिरिकी कंदरावत् विस्तृत मुख नाक कपोलप्रांतके विदारणसो भीषण ठोडी ॥ २१ ॥ स्वर्गतक व्याप्त शरीर ह्रस्व मोठी ग्रीवा, विशाल वक्षःस्थल, पतली कमर चंद्रमाकी किरण समान शरीरके श्वेत वारनसों व्याप्त सहस्रों[1] हाथ सब दिशानमें व्याप रहे है जो नखायुधके

---

१ हजारों ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समान शोभित है ॥ २२ ॥ सबको अप्राप्त सब चक्र वज्र आयुध समूहसो दैत्य दानवनको दूर भगायदियो महामायावी श्रीहरिने मेरे मारवेको ये उपाय कीनो है, वा स्वरूपको देखके हिरण्यकश्यप यह विचारन लगो ॥ २३ ॥ यह कहके वह दैत्य महागर्जना कर गदा हाथमें ले नृसिंहजीके ऊपर चलो जैसे अग्निमें पडकर पतंग अलक्षित है जाय है ऐसे वह नृसिंहके तेजमें अलक्षित है गयो ॥ २४ ॥ यह बात सत्वधाम श्रीनृसिंहजीमें कछु विचित्र नहीं है, जिनन प्रथम अपने तेजसो अंधकार पीलियो हो ता पीछे पास आय अहाअसुर क्रोधसो महावेगकी गदासो नृसिंहजीको मारतो भयो ॥ २५ ॥ पराक्रम करते भए गदा लिये वा हिरण्यकश्यपको गदाधारी नृसिंहजी जैसे गरुड सर्पकों पकडै तैसे पकडते भए तासमय वो असुर उनके हाथमेंसो ऐसे निकल गयो जैसे खेल करते गरुडके मुखसो सर्प निकस जाय ॥ २६ ॥ जिनके स्थान या दैत्यने हरलिये हे वे देवता मेघकी ओरमें खडे नृसिंहजीके हाथसो राक्षसको छुटनो देख यह असाधु वार्ता मानते भये और भगवान्के हाथसो छुटवेके कारण भगवान्को अपने पराक्रमसो डरायमान वह दैत्य श्रम त्याग असिचर्म ले युद्ध करवेको आयो ॥ २७ ॥ ढाल तलवार लेके फेर वेगसो सब परिश्रम जीत संग्राममें आय खडो भयो, पर्वत समान उंचो भयभीत लोचन हाथीकी समान शब्दकर चिल्हातो भयो ॥ २८ ॥ शिकराकोसो वेग ढाल तलवार लिये भ्रमण करतो दैदीप्यमान भगवान्के चारों ओर सावकाश देखतो भयो, तब नृसिंहजी महा अट्टाट्टहास करके और खरखरो उत्कर्ष उल्वण शब्दकर अपने तेजसो वाकी आंखें मूंद कपटकर पकडते भए ॥ २९ ॥ सर्पके पकडे मूसेकी समान चारों ओर आतुरतासों तडफडाते वज्रसेहू अभेद्य त्वचावाले हिरण्यकश्यपको भगवान् देहलीके बीच अपनी जंघानपै पटकके गरुड जैसे विषैले सर्पको चीर डालै ऐसे लीलासो भगवान्नै वाय दिनरातकी संध्यामें चीर डारो[1] ॥ ३० ॥ क्रोधको कारण काउसो जिनके सामने नहीं देखो जातो ऐसो महाविकराल नेत्रवारे फटे मुखके होठनको जीभसों चाटते भए गलेमें आतनकी माला[2] पहरे हाथीको मारनवारे सिंह समान सटा और मुख रुधिरके बिंदुनसों लिपो भयो लाल है रह्यो हो ऐसे भगवान्नै वा दैत्यको जाके हृदयकमलको नखनसों चीर डालो हो फेंककै ॥ ३१ ॥ वाके सहस्रन अनुचरनको जे कि वाको पक्षपातकर शस्त्रग्रहण कर लडवे आये हे नखशस्त्र और एडिनसो मारके भगायदिये वा समय भगवान्के हाथही सैनाके लोग हे ॥ ३२ ॥ नृसिंहजीकी सघन जटासों कंपित हो मेघ सब हटगये, तिनकी दृष्टिसो ग्रहनकी प्रभा नष्ट है गई समुद्र विनके श्वाससो चलायमान भए तिनके दहाडवेके शब्दसो भीत हो दिग्गानके गज चिल्हाते भए ॥ ३३ ॥ द्यावापृथिवी तिन नृसिंहजीकी जटानसो उडाये विमानसो व्याप्तभई, तिनके पदसें पीडित हो पृथिवी चलायमान भई, इनके तेजके वेगसो शैल उखड गए, और आकाश दिशा शोभाकों प्राप्त नहीं होती भई ॥ ३४ ॥ ता पीछे उत्तम नृपं[3] आसनपर विराजमान भये सब तेजधारे जिनके सामने कोई युद्ध करवेवारो नहीं अति

१ यहां ब्रह्माजीके कहे सब वाक्य सत्यकर दिये जो याने कही कि दिनमें न मरू और रातमें न मरौ सो संध्याकाल न रात है न दिन है जो कही कि धरतीमें न मरौ आकाशमें न मरौ सो घोटूनपें जो याने कही कि बाहर न मरौ भीतर न मरौ सो देहरीपें जो याने कही कि अस्त्रसो न शस्त्रसो मनुष्यसो न पशुसो सो नोहनसो और नृसिंह बनके इत्यादि सब समझलेनो ॥

२ यहां आंतें पहरवेको यह अभिप्राय है कि यह कहन है कि ऐसी मनमें आवे है कि आत्मानको ओढलेउ सोही मानौ क्रोधको दृश्य आपने दिखायो है अथवा (आत्मा वै जायते पुत्रः) ये श्रुति है सो आपने विचारी कि कहू प्रहलादसो भक्त कही एक एकादी पुत्र याकी आतनमें न इरझो होय यासो याकी आंतनकी माला अपने गलेमें पहरी इत्यादि ॥

३ गद्दीपें क्यों विराजे आप जानते हैं कि मोको ये राज्यासन प्रहलादको देनो है और भागवत मेरी प्रसादी विन काहू वस्तुको नहीं लेय है आप ये विचार प्रसादी करवेके लिये हिरण्यकशिपुकी गद्दीपे विराजे प्रसादी करवेके लिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्रोधी प्रचंडमुख तिन नृसिंहजीके सामने कोईहू जायवेको समर्थ न भयो ॥ ३५ ॥ लोकत्रयके दुख दैनवारे शिरके शूल समान आदिदैत्यको श्रीहरि नृसिंहजी करके संग्राममें मरो भयो सुनके प्रहर्ष वेगसो प्रफुल्लित मुख हो वारंवार देवतानकी स्त्री पुष्पनकी वर्षा करतीभई ॥ ३६ ॥ ता समय देखवेको आये स्वर्गवासीके विमाननकी पंक्तिन करके आकाशस्थल संकुल होतो भयो, देवता नगारे बजावते भये, गंधर्व मुख्या स्त्रियें गावती नाचती भई ॥ ३७ ॥ तहां ब्रह्मा इंद्र शिवादिक आए, ऋषि पितर सिद्ध विद्याधर महोरग ॥ ३८ ॥ हे परीक्षित् ! मनु प्रजानके पति गंधर्व अप्सरा चारण यक्ष किंपुरुष वेताल सिद्ध किन्नर आवते भए ॥ ३९ ॥ सब भगवत्पार्षद सुनंद नंदादिक कुमुद कुमुदाक्षादिक अंजलिनके संपुट मूंडपै कर तीव्रतेजधारे सिंहासनपै बैठे नृसिंहजीके ॥४०॥ सब देवता समीप आयके पृथक् पृथक् भावसों संसारी जीवनके उपकारके लिये यंत्र मंत्र स्तोत्र अष्टक कवचसो श्रीनरशादूलेकी स्तुति करतेभए ॥ ४१ ॥ श्रीब्रह्माजी बोले कि अनंत दुरंत शक्तिधारी विचित्र-वीर्यकारी पवित्रकर्मकारी विश्वके उत्पत्ति पालन नाशकों अपनें गुणनसों लीलाकरके सुंदर तन धारवेवारे अविनाशी आत्मा श्रीनृसिंहजीके अर्थ हम नमस्कार करैं हैं ॥ ४२ ॥ श्रीमहादेवजी बोले कि आपके कोपको समय तौ जगतको प्रलयही है या कारण अभी तौ आपने यह क्षुद्र दैत्य मारो है यह कोप क्षमा करो हे भक्तवत्सल ! याके भक्त प्रह्लाद पुत्रकी तुम रक्षा करो ॥ ४३ ॥ इंद्र बोले कि हे परमश्रेष्ठ नृसिंहजी महाराज, हे नाथ रक्षक ! हमारी रक्षा करनवारे आपने हिरण्यकशिपुको पेट फा-रके हमारे भाग जिने कि यह खाय गयो हो वे बगदवाये, तुम्हारे वसवेको स्थान हमारो हृदयकमल जो दैत्यके भयसौं प्राप्त हो वाको भय दूर कर विकसित कियो जाको कालसो नाश होयहै ऐसो यह राज्य तुम्हारे सेवकनको कहा है हे नाथ ! तुम्हारे भक्त तौ मुक्तिहू नहीं चाहै है फिर राज्य तौ कहा है ॥ ४४ ॥ सब ऋषि बोले कि हे आदिपुरुष ! अपने आत्माके तेजरूप तप करवेकी जो आपने आज्ञा दीनीही जासौं कि आप अपनेमें रहे हुए विश्वको रचो हो, हे शरणागतपालक ! वह तप या असुरनें सब लोप कीनो सो रक्षाके लिये शरीर धार आपनें फेर तपरूप आज्ञा हमको दीनी ॥ ४५ ॥ सब पितर बोले कि हमारे पुत्रादिकनके दिये भए श्राद्ध पिंडहू येही खायगयो और तीर्थनमें जायके कहू कभू तिलांजली दीनी वाकोहू यह बलकर पीगयो सौ या दैत्यके पेटको नखनसौं विदीर्ण कर वह आपने हमें फिर दिये ऐसे सब धर्मके रक्षक श्रीलक्ष्मीनृसिंहजीके अर्थ नमस्कार होय ॥ ४६ ॥ सब सिद्ध बोले कि जो हमने योगसो सिद्धि प्राप्त करी वह हमारे, अणिमादि सिद्धियोग तपबलसो ये दुष्ट राक्षस हरलेतो भयो सो याको नाना प्रकारको गर्व आप नखनसो विदारते भए, हे नृसिंह ! यासो आपको प्रणाम करैहैं ॥ ४७ ॥ विद्याधर बोले कि पृथक् धारणासो प्राप्त अंतर्द्धानादि विद्या बलवीर्यसों गर्वित या अज्ञानीने न हमें करन दीनी, सो आपने संग्राममें याको पशुवत् मार्यो ऐसे मायासै श्रीनृसिंहरूप धारनेहार आपको हम नित्य प्रणाम करैहै ॥ ४८ ॥ सब नाग बोले कि जा पापीने हमारे सब स्त्रीरत्न हर लीने हे सो याके वक्षस्थलके फाडवेसो इन सब स्त्रीनको आनंद देनहारे तुम्हारे अर्थ नमस्कार होय ॥ ४९ ॥ सब मनु बोले कि हे नृसिंहदेव ! हम सब आपकी आज्ञा करवेवारे मनु हैं या हिरण्यकश्यपने सब वर्णाश्रम नाश करदीने सो यह खल आपने मारो हे प्रभो ! हम आपके किंकर हैं हमें शिक्षा करो कि कहा करैं ॥ ५० ॥ सब प्रजापति बोले कि हे परेश ! हम प्रजेश हैं हमको आपने या कारण रचे है कि प्रजा रचैं सो या कार्यको हम जाके प्रतिषेध करवेसो छोड बैठेहे वा दैत्यको पेट फाडके आपने संहार कियो अब हम आनंदसो प्रजा रचैंगे हे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सत्वमूर्ते ! आपको अवतार जगत्के मंगलके अर्थ है ॥ ५१ ॥ सब गंधर्व बोले कि हे समर्थ ! हम तो आपके नट नाट्य गायक हैं, जा करके अपने समान वीर्य बल पराक्रम आपने हममें करेहै सो हमें याने सताये सो या दशाको आपसों प्राप्त भयो जो पाषंडसो स्थित होयहै वाको कुशल कभी न होयहै ॥ ५२ ॥ सब चारण बोले कि हे नृसिंहजी महाराजा ! संसारसो मोक्ष देवेवारे इन आपके चरणकमलके हम आश्रित हैं, ये बहुत अच्छो भयो कि ये सदा साधुनके हृदयमें रहतो हौ अर्थात् याकी यादको वे कभू नहीं भूलते हे सो असुर आपने मारो ॥ ५३ ॥ सब यक्ष बोले कि आपके मनके अनुसार कर्म करवेमें हम मुख्य आपके अनुचर हैं सो दितिसुतने हमकों अपनो कहार बनायो वो सब जननको परिताप देवेवारो हो वाके करे ताप आप जानोहो हे नृसिंह ! पच्चीस तत्वके स्वामी आपने याय मारो ॥ ५४ ॥ किंपुरुष बोले कि हम किंपुरुष हैं, तुम महापुरुष ईश्वर हो ये कुपुरुष नष्ट भयो, साधुने याकों बडो धिक्कार कीनो ॥ ५५ ॥ सब वेताल बोले कि सभानमें यज्ञनमें आपके निर्मल यशकूं गायकर बडीपूजा हमको प्राप्त भई, ये दुर्जन वा यशको अत्यंत नाश करतो भयो, बडो मंगल भयो जो याय आपने मारो जैसे औषधी रोगको नाश करै तैसो आपने याय मारो ॥ ५६ ॥ सब किन्नर बोले कि हे ईश ! हम सब किन्नरगण आपके चाकर हैं, या असुरने हमते बेगार कराई, हे हरे ! सो महानष्टरूप आपने मारो हे नराकारसिंह ! हे नाथ ! आप हमारी समृद्धिके कारण हूजिये ॥ ५७ ॥ श्रीविष्णुके सब पार्षद बोले कि ये शरणद ! आज ये नरहरिरूप आपने हमें दिखायो जो सब लोकको मंगलकारी है हे विधिकर ! यह विप्रनसों शापित हो याको मरण हम अपने अनुग्रहके अर्थ माने हैं ॥ ५८ ॥

विष्णुपार्षदा ऊचुः—अद्येतद्धरिनररूपमद्भुतं ते दृष्टं नः शरणद सर्वलोकशर्म ॥
सोऽयं ते विधिकर ईश विप्रशप्तस्तस्येदं निधनमनुग्रहाय विद्मः ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे प्रह्लादचरिते हिरण्यकशिपुवधनृसिंहावतारसर्व-देवकृतस्तोत्रवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

नारद उवाच—एवं सुरादयः सर्वे ब्रह्मरुद्रपुरःसराः ॥
नोपेतुमशकन् मन्युसंरम्भं सुदुरासदम् ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि ऐसे ब्रह्मरुद्रादि मुख्य देवतानने स्तुति करी परन्तु क्रोधके आवेशसों भयंकर दृष्टिवारे नृसिंहजीके समीप कोईहू जायवेको समर्थ न भयो ॥ १ ॥ तब देवतानने विनको क्रोध शान्त करवेके निमित्त लक्ष्मीको भेजो जब लक्ष्मीजी विनके निकट जायवे लगीं तब विनको अद्भुत और डरावनो रूप देख, भयसों विनके निकट जायवेको समर्थ न भई ॥ २ ॥ तब समीप बैठे प्रह्लादजीको ब्रह्माजी भेजते भए और बोले हे तात ! आपके पिताके ऊपर कुपित प्रभुके समीप

१ यहां यहहू कहनो चहिये कि जब नृसिंहजीको क्रोध शांत न भयो तब देवतानने गणेशजीसो कही कि या तो तुम क्रोध शांति करायवेको चलो देवतानके संग नहीं तो आजते तुमारी प्रथम पूजा मारी जायगी सोही तो गणेशजी बोले कि मैं अभी क्रोध शांत कराउहो ये कहिके मूसेपें बेठके जो चले गये सो तुम जानो हाथीको और सिंघको होयहै वैर सोही देखके इनको जो ए डंक मारी और गणेशने देखो वो विकराल सिंघको रूप सोही मोडेमें सूंड देके देवतानको गारी देते गणेश भाजे अरे तुमारो बुरो होय मोय कहा सिंघके सामने मरवायको लाये हो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जायके तुम क्रोधकी शांति करो ॥ ३ ॥ हे राजन् ! बहुत अच्छो ऐसे कहिके महाभागवत बालक धीरसो समीप जायके सांष्टांग दंडवत् कर हाथ जोड नमस्कार करते भए ॥ ४ ॥ अपने चरणकमलमें पतित वा बालकको देख श्रीनृसिंहदेव कृपासो परिपूर्ण ह्वैकै वाय उठाय वाके सीसपे कालरूप सर्पके भयसो डरी बुद्धिवारेनको अभयदायक हस्तकमल धारते भये ॥ ५ ॥ श्रीनृसिंहजीके हस्तस्पर्शसो सब अशुभ मिटवेसो शीघ्र ब्रह्मज्ञानकों प्राप्त हो हर्षित शरीर गीलो हृदय आंसू वहाते प्रह्लाद तिनके चरणकमलको अतिआनंदित हृदयमें धारतो भयो ॥ ६ ॥ एकाग्रमनसो सुंदर सावधान ह्वैकै प्रेमकी गद्गदवाणीसो श्रीहरिके हृदयमें दृष्टि लगाय स्तुति करतो भयो ॥ ७ ॥ श्रीप्रह्लादजी बोले कि ब्रह्मादिक देवतानके गण मुनि सिद्ध कि जिनकी मति सतोगुणी है वह सब वाणिनके प्रवाहसो महागुणन करकै आजतक जिनके आराधन स्तुति करवेको समर्थ नहीं होते भए, वह उग्ररूपधारी श्रीनृसिंह हरि मोसों कैसै स्तुति करें जायगे, तोहू विनकी कृपासों स्तोत्र करूंहूं ॥ ८ ॥ धन, जाति, रूप, तप, व्रत, ओज, तेज, प्रभाव, बल, पौरुष, बुद्धि, योग ये सब परमेश्वरके आराधनके अर्थ कछु नहीं करसके हैं, श्रीभगवान् भक्तिसों संतुष्ट होयहैं जैसे गजेन्द्रके ऊपर प्रसन्न भए तैसे मेरे ऊपर प्रसन्न होउ ॥ ९ ॥ ये प्रभु अज्ञानी जीवसो अपने लिये कछु नहीं मांगे क्यौं कि वे तो अपने लाभसो पूर्ण हैं दयालु हैं याते सब पदार्थ सबसे चाहे है प्राणी जो जो भगवत्के अर्थ सत्कार मनसो देय है सो वासों याकोही भलो होय है जैसे मुखकी तिलकादिककी शोभा करै है तैसे जो भगवत्को समर्पै है यासो या जीवकीही शोभा होय है ॥ १० ॥ ताते में जो नीच और मायाके बंधन संसारमें पडोहूं सब उदासीनता दूर कर मैं सब आत्मा ईश्वरकी महिमा जैसी मेरी बुद्धि है तैसो स्तुति करूंगो, भगवान्के स्तोत्र वर्णन करवेसो मनुष्य पवित्र है जाय है यासो मैं स्तुति करूंहूं ॥ ११ ॥ हे ईश ! हमारीसी नाईं सब ये ब्रह्मादिक सत्वधामा आप भगवान्के रुचिर अवतारनको क्रीडा क्षेमके अर्थ और आत्माके सुखके लिये वर्णन करते उद्वेगको नहीं प्राप्त होयहै ॥ १२ ॥ अब आप क्रोध शांत करो, अब असुर तो आपने मारही लीनो, वृश्चिक सर्पकी हत्यासें साधुहू आनंदित होंय है, सब लोक अत्यंत आनंदको प्राप्त होते भए, सब आपके समीप आवै हैं, हे नृसिंह ! आपके रूपको जन संसारताप दूर करवेके अर्थ स्मरण करें हैं ॥ १३ ॥ हे अजित ! तुम्हारे अतिभयानक मुख जीभ सूर्य समान नेत्र भ्रुकुटीके चढायवेसो उग्रदाढासों आंतनकी माला पहिरवेसो रुधिरसो भिजे भये वारसो कीला समान कानसो शब्दकै भयसो दिशानके गजनको चलायमान करनवारो तासों शत्रुके पेटके फारनवारे नखाग्र जामें ऐसे तेरे रूपसो हम नहीं डरे हैं ॥ १४ ॥ परन्तु हे कृपणवत्सल ! दुःसह संसारचक्रके दुःसह दुःखसो डरोहू हिंसक जीवनने घेर राखो है हे उशत्तम ! अपने कर्मनसों बंधोभयो आपके चरणको चाहूंहूं सो चरणकी शरणतारूप मोको मोक्ष कब देओगे, कब समीप बुलाओगे ॥ १५ ॥ हे भगवन् ! प्रिय अप्रिय वियोग संयोग जन्म शोक अग्निसो सब योनिनमें जरो करोहूं और संसारके दुःख दूर करवेके उपाय है वेभी दुःखस्वरूप हैं तोहू मैं देहादि अभिमानमें भटक रहोहूं हे प्रभु ! अब अपने दासको निस्तारको उपाय बताओ ॥ १६ ॥ प्यारे सुहृद परम देवता आपकी ब्रह्मादिकनकी सभामें गाई भई लीला कथाको उच्चारण कर अनायाससों तर जाऊंगो, हे

१ शंका—प्रह्लादके ऊपर तो नृसिंह भगवान्का परम अनुग्रह था, फिर शीघ्र क्रोधको त्यागकर वरदान क्यों नहीं दिया ? ऐसी प्रीति करके फिर वर देनेमें विलम्ब क्यों किया ?

उत्तर—नृसिंहजीने शीघ्र क्रोध त्याग नहीं किया, और प्रह्लादको शीघ्र वरदानभी नहीं दिया उसका कारण यह है कि लोकमें प्रह्लादकी भक्तिकी प्रशंसा करानेके लिये; क्रोध त्यागनेमें और वरदान देनेमें विलम्ब किया लोकमें सब

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नृसिंह गुणनसो छूटो भयो तुम्हारे चरणयुगालयमें वास करवेवारे भक्त हंसनके संगसो कठिन दुःखनको तरजाऊंगो ॥ १७ ॥ हे नृसिंह ! बालकके रक्षक पिता माता नहीं है, रोगीको दवा बचायवेवारी नहीं है क्योंकि दवाके होतेहू रोगी मरजाय है समुद्रमें डुबते भएकी नाव रक्षक नहीं होय है क्योंकि डूबनहार होय तौ नाव समेत डूबै है दुःखसै तप्तकी दवा यहां नहीं है परंतु हे विभो ! शरीरधारी तुम्हारी उपेक्षा करै तौ याको दुःख है, तुम्हारी चाह करै तौ सुख है दुःखिनको दुःख मिटायवेको जगत्में जितने साधन हैं जबतक आप वाकी उपेक्षा नहीं करै हौ वो तभीतक काम आवे हैं आपकी उपेक्षामें फिर औषधी नौका माता पितादि कोई काम नहीं आते क्योंकि मातापिताके होतेहू बालक मरे है ॥ १८ ॥ जामैं जातै जा कालमें जा हेतुकरके जाके संबंधसो जाके अर्थ जा प्रकारसो जाय उत्पन्न करै है तथा दूसरे रूपको प्राप्त होय हे पृथक् २ स्वभाववाले ब्रह्मादिक और पिता आदि जाको उत्पन्न करै हैं यह आपको स्वरूप है ॥ १९ ॥ कर्मकारी बलवान् वेदोक्त कर्मनको मुख्य मानवेवारो अविद्याके करे षोडश विकारके अरे युक्त यह मन हे जो कि कालसौं प्रेरणा करी भई मायाके गुणनसौं उत्पन्न होय है यासो संसारचक्ररूपी मनको आपकी भक्ति विना कौन तर सकै है ॥ २० ॥ सो तुमने अपने स्वधामसो नित्य आत्मस्वभाव जीतो है कालकों वशी कीनोहै रचवेकी सृष्टिकी शक्ति वश कीनी है हे ईश्वर ! मै मायाके सोलह विकारवारे संसारचक्रमें पडोहूं और महापीडित हूं सो आपमें शरणागत भक्तके मनको मार अपने निकट खैंचो ॥ २१ ॥ हे विभो ! जा संपदाको ये जीव इच्छा करैहैं वह और सब स्थानपालकनकी आयु लक्ष्मी वैभव स्वर्गमें मैंने देखेहै सो हमारे पिताके कुपित हांसके भ्रूभंगमात्रसों नष्टभए सो पिता आपने मारो ॥ २२ ॥ ताते इन देहधारीनके आशिषनको जाननवारो मैं इन जीवनके आशीर्वाद आयु श्री विभव ब्रह्मापर्यंतके इंद्रिनके सुखकी इच्छा नहीं करौ हौ कालरूप आपके पराक्रमसो वे सब सुख खंडित है, हे प्रभो ! मोको तौ आप अपने दासनके निकट राखो ॥ २३ ॥ काननको सुख देवेवारे अंतमें मृगतृष्णारूप इन संसारसंबंधी सुखनमें कहा सार है ऐसेही सब रोगनके अगार या देहमें कहा सार है प्राणी ऐसो जाने हैं तौहू श्रमसों प्राप्त होते भए अल्प सुखनसौं कामनारूप अग्निको शान्त करते रहे हैं यासों विन्हैं वैराग्य नहीं होय है हे प्रभु ! आपकी मायाकी चेष्टा अपार है ॥ २४ ॥ हे नृसिंहजी महाराज ! रजोगुणसो उत्पन्न तामसी दैत्यकुलमें जन्म लैनवारो मैं कहा तुम्हारी कृपा कहां और ब्रह्मा शिव लक्ष्मीपै जो कृपा न करी सो कृपा मोपै करी, जो अपनो अभयहस्तकमल मेरे मस्तकमें धरोहै ॥ २५ ॥ यद्यपि अपनी पराई ये बुद्धि जगत्के जीवनकी होयहै सबके प्यारे जो आप हो तिनको नहीं है; तथापि सुंदर सेवा करवेसो कल्पवृक्षकी नाईं आपकी कृपा है, सेवाके अनुसार फल देओहो, पर अवर बुद्धि आपमें नहीं है ॥ २६ ॥ संसाररूप सर्पके कूपमें ये जीव पडैं हैं, खोटे संगसों कामनको सदा चाहैहै तासों तपै है हे भगवन् ! अपनो जान हमपै श्रीनारदजीने कृपा करी सो हम आपके भृत्यनकी सेवा कैसे त्यागैं ॥ २७ ॥

ऐसे वचन कहेंगे कि सब देवताओंने नृसिंहजीकी स्तुति की परन्तु क्रोध शांत नहीं हुवा, जब प्रह्लादने स्तुति की तब उसी समय क्रोधको त्याग दिया ऐसा नृसिंह भगवान्को प्रह्लाद प्यारा था, इसलिये क्रोधके त्यागनेमें विलम्ब किया, और इसीलिये तुरंत वरदानभी नहीं दिया ॥

१ एक न्यारिया एक राजाकी खिरकीके नीचेसो नित्य कूरो झारके लावतो हो बहुत दिन बीते राजाने एक दिन लाख रुपाकी मूदरी फेक दीनी वो वा मूदरीको समेट लायो निकास लीनी दूसरे दिन फिर घूर समेटवे गयो तब राजाने कही कि रे कल कछु मिलो वाने कही कि लाख रुपाकी मूदरी मिली तब राजाने कही कि रे तो तू फिर घूर समेटवे क्यों आयो है तब वो बोल्यो कि महाराज ! जा खिरकीकी घूर समेटवेमें लाख रुपाकी चीज मिली कहो सिरकार ! वा घूर समेटवेको कैसै छोड देउंगो सोई प्रहलादजी कहे है कि हे प्रभो ! जा साधुसेवासो ये फल मिलो वा साधुसेवाको कैसे छोडौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे अनंत ! जो आपने मेरे प्राणकी रक्षा करी, और मेरे पिताकों मारो सो अपने भृत्य ऋषि नारदको वाक्य सत्य करवेको अवतार धारो अयोग्य कर्म करनो विचार हाथमें तलवार ले बोलो कि मोसों परे कौन ईश्वर है वो तेरी रक्षा करवेवारो है वाय बताओ अभी मारूं नहीं बतावेगो तो तेरो शिर हरूंगो[1] ॥ २८ ॥ या जगत्के एक तुम्हीं हो, कारण कि जगत्के आदि अन्तमें आपही अवशेष रहो हो यासो मध्यमेंहू आपही हो अपनी मायाद्वारा गुणनके परिणाम रूप जगत्को रचके अंतरयामी रूपसों वामें प्रविष्ट हो और गुणनके कारण नाना रूपसों प्रतीत होउ हो ॥ २९ ॥ हे ईश्वर ! कार्य कारण रूप जगत् आपही हो यासो पृथक्हू हो अपने परायेकी बुद्धि मायासों होय है जो मिथ्या है या विश्वको जन्म नाश स्थिति ये आपकी चेष्टा है, जैसो सद् वस्तुनके होयवेके समय बीजसों वृक्ष वृक्षसों बीज होयहैं तैसे आपसो संसार होयहै सब आपही हो[2] ॥३०॥ महाप्रलयके जलमें या विश्वको राखके आप निजसुखको अनुभव करते अचेष्टा होयके योगसो दृष्टिको मीचकर आत्माकी चतुर्थ तुर्या अवस्थामें स्थित होयके तम और सब गुणनको संयोग त्याग शयन करतेहो ॥३१॥ जब शेषनागकी शय्यापै शयन करवेके उपरान्त उठे हो वा समय जैसे सूक्ष्म बीजसो वटवृक्ष उत्पन्न होय है ऐसेही आपकी नाभिसो कमल उत्पन्न होयहै और वह कमल कालशक्तिसो प्रेरणा किये मायामें तुम्हारे शरीरमें प्रलयके समय गुप्त रहै है जामें जगत् है ॥ ३२ ॥ ताते भये ब्रह्माजीने कमल विना और कुछ नहीं देखो, तब ब्रह्माजीने बीजरूप आपको अपनेसो बाहर जानके सौ वर्ष जलमें ढूंढो तोहू पतो न पायो यह सत्य है अंकुर उगवेसो बीज नहीं मिलसके है ॥ ३३ ॥ सो ब्रह्मा अति-विस्मित होय कमलपर बैठ तप करते भये जब बहुत समय बीतनेपर तपसों शुद्धभाव भयो तब पृथ्वीमें जैसे गंध रहै है तैसे अपने आत्माहीमें अतिसूक्ष्म भूत इंद्रिय अंतःकरणमें ईश्वरको दर्शन करतो भयो ॥ ३४ ॥ ऐसे सहस्र वदन चरण शिर हाथ ऊरु नाक मुख कर्ण नयन आभरण आयुधयुक्त मायामय साधुनके देखवे योग्य रूप देख ब्रह्माजीकों महाआनंद प्राप्तभयो ॥ ३५ ॥ श्रीब्रह्मापै अनुग्रह कीनो कि हयग्रीव अवतार धार वेदद्रोही अतिबली मधुकैटभ दोनोनको मार श्रुतिगण लाए, रज तम सत्व प्रिय तुम्हारे शरीरको सब प्रणाम करतेभये ॥ ३६ ॥ तुम मनुष्य पशु ऋषि देवता मगरमें अवतार धार लोकनकी रक्षा करोहो, जगत्के नाशकनकों मारोहो हे महापुरुष ! सनातन धर्म जब लुप्त होयहै तब वाय उद्धार करोहो परन्तु कलियुगमें आप गुप्त रहै हो तीन युगमें प्रगट है या कारण त्रियुग कहाओहो ॥ ३७ ॥ हे वैकुंठनाथ ! पापी दुष्ट असाधु मन आपकी कथामें कभू नहीं लगैहै कामातुर हर्ष शोक भय दृष्टिसो दुःखी है फिर ऐसे मनमें मैं दीन आपकी गति कैसे विचारूं ॥ ३८ ॥ हे अच्युत ! रससों तृप्त न होती जीभ एक ओरकूं खींच लेजायहै, शिश्न विषयको खींचेहै, त्वचा कितकों लेजावै है, पेट भोजन लेजायहै, कान शब्दकी ओर जायहै, नाक विषयकी ओर जायहै, दृष्टि रूपकूं धावेहै, सब कर्म शक्तियें या जीवकों छेदे है जैसे बहुत लुगाई-वारेकों सब ओरसो सब सौंतें सतावै तैसी या जीवकी गति है ॥ ३९ ॥ ऐसे अपने कर्मनसो संसाररूप वैतरणी नदीमें पडो भयो अनेक जन्म लेते मरते खाते डरते डराते अपने पराएसों वैर मैत्री देखते करते मो मूढकों आप पार करो तब उद्धार होय ॥ ४० ॥ हे भगवन् ! उत्पत्ति पालन

---

१ यहां प्रयोजन यह है कि जो आपने यह कीनो है सो मोपे कछु आपने ऐसान नहीं कीनो है मोपे तो जो कछु अनुग्रह करौगो सो सब मालूम परैगो ये तौ सब अपने भृत्यके वाक्य सत्य करवेको कीनो है ॥

२ प्रयोजन यह है कि जासों जाकी उत्पत्ति है और जामें जाको लय है वो वोही है जैसे वृक्षको और बीजको दोनोनको कारण भूमिही है ऐसेही समझनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नाशके हेतु आपकों या जीवके उद्धार करवेमें कछु परिश्रम न पडैगो, हे आर्तबंधो ! आप मूढनपै अतिभोले जीवपै महाकृपा करो हो तो जो तुम्हारी सेवा सदा करैं विन हमसरीकेनपै कृपा करनो यामैं कहा आश्चर्य है ॥ ४१ ॥ तुम्हारे चरित्र गान महाअमृतमें मेरो चित्त मग्न है हे परमेश्वर ! मैं दुरत्यय वैतरणीसो नहीं डरूंहूं परन्तु विमुख चित्तवारे इंद्रियनके सुखमें लगे मायासुखके लिये भार उठायवेवारे मूढनको मैं शोच करूंहूं ॥ ४२ ॥ हे देव ! परमार्थमों मन लगायवेवारे मुनि अपनी मुक्तिकी कामना करकै एकांतमें मौनव्रत करै है, परन्तु दूसरेनके निमित्त कछु नहीं यासों मैं इन दोनोंनको छोडकै इकलो मुक्ति नहीं चाहूंहूं संसारमें इन लोगनको जो कि भटक रहे हैं छुडायवेवारो आपके सिवाय और कोई नहीं है यासों मैं आपसों आग्रहसों कहूंहूं कि इनपै कृपा करो ॥ ४३ ॥ जैसे हाथमें खाज चली वाय दूसरे हाथसो खुजावैं तो और बढे है तैसे ये मैथुनादि सुख गृहस्थीनको तुच्छ है, तासो बहुदुःखभागी कृपण नहीं तृप्त होय है खूजारकी नाईं कामके वेगको सहनवारो कोई धीर पुरुष आपको दासही होयगो ॥ ४४ ॥ मौन व्रत श्रुत तप अध्ययन स्वधर्म धर्म व्याख्या एकांतमें ध्यान जप समाधी ये सब मोक्षसाधन हैं इनके करवेवारेनको देखकर अजितेंद्री उनकी हांसी करै है, दंभी उनकी नकल करै हैं, महात्मा उनै सराहैं हैं ए सब अजितेंद्रिय मनुष्यनकी जीविकाके निमित्त होय है और दंभी पुरुषनकी जीविका होयहू है नहीं होय है ॥ ४५ ॥ बीजमें अंकुर और अंकुरमें बीजकी नाईं प्रवाहवत् प्रवृत्त होते हुए कार्य और कारण प्रकृतिरूपसै रहित आपहीके रूप हैं पृथक् नहीं ऐसो वेद निरूपण करै है काष्ठमें अग्नि तैसे मथवेसों प्रगट होय है तैसे इंद्रियनके जीतनवारे पुरुषनके कार्य कारणमें भक्ति योगसों आप देखवेमें आयो हो आपके विना सत् असत्की उत्पत्ति नहीं ॥ ४६ ॥ वायु अग्नि धरती आकाश जल मात्रा प्राण इंद्रियें हृदय चित्त अनुग्रह नाम अहंकार ये सब तुम्हीं हो हे भूमन् ! सगुण निर्गुण तुम्हीं हो, मन वचन करकै जो कछु कह्यो जायहैं सो सब आपही हो ॥ ४७ ॥ ये सब गुण अवगुण महदादिक मनसो आदि ले देव मनुष्य आद्यंतवान हैं आदिअंतरहित आपके स्वरूपकों नहीं जानते हैं हे उरुगाय ! ये विचार बुद्धिमान् शब्दमात्रके उच्चारणसो विराम कर आपकी उपासना करै हैं ॥ ४८ ॥ तातैं हे अत्यंत पूजनीय ! नमस्कार स्तुति पूजाकर्म चरणमें स्मृति, कथाको श्रवण षडंगभक्तिकी सेवा विना आप जो परमहंसनकी गति हैं तिनकी भक्ति लोकनको कैसै प्राप्त है सकै भक्ति विना मोक्ष और सेवा विना भक्ति नहीं मिलै है यासों कृपाकर मोय अपनो दास बनाय लेउ ॥ ४९ ॥ बारह गुणसे युक्त ब्राह्मण भगवच्चरणारविंदसो विमुख होय तो वासे चांडाल श्रेष्ठ है, भगवत्में अर्पण किये मन वचन चेष्टा प्राण कुल सबको पवित्र करैहै, बडो मान गर्ववारे हरिसों वो आपहू पवित्र नहीं है सकै हैं " या श्लोकको दूसरो अर्थ बारह गुणयुक्त ब्राह्मण श्रीमन्नारायणके चरणकमलमें विशेष सुख माननेहारे चांडालसै श्रेष्ठ नहीं है जा ब्राह्मणने भगवान्में मन वचन चेष्टा अर्थ प्राण सब लगाए है वो प्रियकुलसहित प्राणोंकों पवित्र करै हैं बडो मानी चांडाल कुछ नहीं है " ॥ ५० ॥ श्रीनारदजी बोले कि भक्तने भक्तसे जब ऐसे गुण वर्णन करैं, तब क्रोध शांत कर नम्र प्रह्लादपै प्रसन्न होय नृसिंहजी बोले ॥ ५१ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे प्रह्लाद हे भद्र हे असुरोत्तम ! तुम्हारो मंगल होय, हम तुमपै प्रसन्न भए जो इच्छा होय सो वर मांगो मैं सब मनुष्यनकी कामना पूरी करवेवारो हूं ॥ ५२ ॥ हे आयुष्मन् ! मोको विना प्रसन्न करै मेरो दर्शन नहीं होय है, मोको देखके जीव कछु करवे योग्य नहीं रहै है ॥ ५३ ॥ धीर साधु सब भावसो मोको प्रसन्न करै हैं मंगल चाहवेवारे बडभा-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गीनको सब कामदाता पति मैं हूं ॥ ५५ ॥ सब लोगके लुभायवेवारे वरनसों ऐसे जब प्रह्लादजीकों लोभ दिवायो तोहू भगवान्‌में एकांत भक्ति करनहारे असुरोत्तम वर नहीं चाहते भएं ॥ ५५ ॥

एवं प्रलोभ्यमानोऽपि वरैर्लोकप्रलोभनैः ॥
एकान्तित्वाद् भगवति नैच्छत् तानसुरोत्तमः ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कंधे प्रह्लादकृतभगवत्स्तववर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

नारद उवाच-भक्तियोगस्य तत् सर्वमन्तरायतयाऽर्भकः ॥
मन्यमानो हृषीकेशं स्मयमान उवाच च ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि भक्तियोगके ये कामादिक विघ्न जान वो बालक प्रह्लाद मुसकायकर हृषीकेशसों बोले ॥ १ ॥ प्रह्लादजी बोले कि हम तौ जन्मसोंही काम वरनमें आसक्त होय रहे हैं, हमें आप मत लुभाओ, तिनके संगसों मुक्तिकी इच्छा कर मैं तुम्हारे शरणागत आयोहूं ॥ २ ॥ हे प्रभो ! दासके लक्षण जानवेकी इच्छा कर आप संसारके बीज हृदयकी गांठरूप कामनमें प्रेरणा करोहो ॥ ३ ॥ अन्यथा सबके गुरु दयालुमें ये बात नहीं घटै, जो तुमसो कामना चाहैहै वोह दास नहीं वणियां है ॥ ४ ॥ जो दास अपने वास्ते वर चाहैहैं, वो दास कुछ नहीं हैं, जो स्वामीसो दासको सेवाके लालचसों काम वर दे वह सत्य स्वामी नहीं ॥ ५ ॥ हम तो निष्कामी तुम्हारे भक्त हैं तुम निष्काम स्वामी राजा और नौकरनमें जो स्वार्थ सम्बन्ध है वह आपमें नहीं हम तौ आपके और अपने बीचमें निष्कामता चाहैं[२] ॥ ६ ॥ हे वरदर्षभ ! जो कामना तुम सब मोको देओहो सो ठीक है परंतु मेरे हृदयमें

---

१ प्रह्लादजी भजन गावते भए ॥ " ठुमरी ॥ अवतार लिये भक्तन काजा जय जय श्रीनृसिंहराजा ॥ टेर ॥ प्रल्हाद टेक कही राम कहौं, सब छोडरहो कुलकी लाजा ॥ १ ॥ चटशालनमें चटपटियां लिखदई श्रीराम राम मुख कहो भ्राजा ॥ २ ॥ बालक सबनकों सिखाय दियो पढाय दियो लिख लिख ताजा ॥ ३ ॥ गुरुजीने जाय कही नृपसें सुनतेई कर शस्त्र लियो भाजा ॥ ४ ॥ जल अग्नि पहाडसे डार दियो सब ठौर राख लियो महाराजा ॥ ५ ॥ जब हार हाथ तरवार लई तेरो राखनवारो कहो आजा ॥ ६ ॥ प्रल्हाद कहै सब ठौर रहै तिहुँ पुरमें सजाय सजो साजा ॥ ७ ॥ मोमैं तोमैं खड्ग खंभमैं इतनों कहि खंभ फटो गाजा ॥ ८ ॥ झट कूद हरि हरिणाक्ष धरो वो मरो देख राक्षस भाजा ॥ ९ ॥ पुरषोत्तम जय जयकार कियो तिहुँ लोक दियो सुख सुरकाजा ॥ १० ॥ "

२ एक पंडितजी परदेशको चले विनने एक नौकर संग लियो चले एक दो दिन तो विनने घरमेंसो कछु लियो हो सो खायो फिर एक दिन एक मजलपें ठेहरे वहां पंडितजीने कही कि भाई ! आज रसोई करैगे लाओ सामान लाओ नोकर बोलो कहा लाओ पंडितजीने कही पावभर बूरो पावभर घी चून दार साग मसाले हमारे लिये ले आओ और तू अपने लिये सेर चून और दार एक पईसाको घी ले आओ नौकर गयो सब समान ले आओ पंडितजीके लिये चौका लगायो पासही विनके विनने चौका लगायो आच बराय चून उसन तैयार कर रोटी करन लगे पंडितजी तो पावसेर चूनकी रोटी करके झट तैयार कीनी भोग लगाय पातर परोस जो परोसके खायवेको तैयार भये सोई बरावर दूसरे चोकोंमेंते नोकरने विचारी कि रे ए तो खायगे पावभर घी खांड और मोको रूखो चून सोई याने झट एक अंगा अपने चोकोंमेंसो लेके पंडितजीके चोकोंमें गेर दियो और कही कि ये महाराज ! देखियो ये कहू कच्चो तो नहीं है सोई पंडितजी उठ बैठे और कही कि रे धीके बाप चंडाल ये तेने कहा कियो हमारी रोटी छी लीनी ए महाराज रोटीको कहा छी कियो आखिर वो सब रोटी आपनेई खाई पंडित विचारे भूखे रहे दूसरे दिन फिर मजलपें पोहँचे पहले दिनकीसी नाईं सब तयारी कीनी फिर रसोई कीनी जो पंडितजी भोग लगायके जेमन लगे सोई या दुष्ट नोकरने कहा कियो अपने चोकोंमेंसो कूद पंडितजीके चोकोंमें कूद पंडितजीके दोउ पांयनमें अपनो मूड देके बोलो ये पंडितजी महाराज कलको मेरो कसूर माफ करो अब तो पंडितजी देखतके देखत रहि गये और कही कि रे दुष्ट कलको अपराध माफ करै कि आजको अपराध माफ करें ॥ सो प्रह्लादजी कहै है कि महाराज में ऐसो नोकर नहीं हौ और न आप और स्वामीसें स्वामी हौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कामके बीज उत्पन्न न होय ये वर आपसों मांगूंहूं ॥७॥ इंद्रियें मन प्राण आत्मा धर्म धैर्य मति लाज श्री तेज स्मृति सत्य ये सब कामनाके जन्मसो नाश है जायहैं ॥ ८ ॥ मनुष्य मनके कामनानकों जब त्याग करैहै तब हे पुंडरीकाक्ष ! भगवत्के भावकों प्राप्त हैजायहै ॥ ९ ॥ पुरुष महात्मा भगवान् हरि अद्भुत नृसिंह ब्रह्म परमात्माके अर्थ नमस्कार होय ॥ १० ॥ श्रीनृसिंहजी बोले कि आपसरीके मेरे जो एकांती भक्त हैं वे कभूहू कोई प्रकारके वर नहीं चाहते हैं तथापि या मन्वंतरतक दैत्येश्वरनको राज्य तुम भोगो ॥ ११ ॥ मेरी प्यारी कथा सेवो, सर्वजीवमात्रमें रहिवेवारो एक मोको स्मरण करो सबके ईशको यजन करो, योगसों कर्मको त्याग करो ॥ १२ ॥ ऐसे करवेसो सुख भोगसो पुण्यको पुण्यसो पापको कालके वेगसो देहको त्याग कर देवतानके गायवे योग्य विशुद्ध कीर्ति विस्तारकरके सब बंधनसो मुक्त हैकै मोको प्राप्त होगे ॥ १३ ॥ तुम्हारो गायो भयो मेरो स्तोत्र जो कोई कीर्तन करैगो, जो मृत्युके समयमें तुमकूं अथवा मोको स्मरण करै तो कर्मबंधसों छुट जाय है ॥ १४ ॥ प्रह्लादजी बोले कि हे महेश्वर ! वर देनेवारेनके ईश्वर आपसो में यह वर मांगो हूं कि आपके ईश्वरसंबन्धी ऐश्वर्यके विना जानै जो मेरे पिताने आपकी निन्दा कीनी है ॥ १५ ॥ तथा क्रोधावेशचित्तसो साक्षात्सर्वलोकके गुरु प्रभु तुम्हे भैयाको मारनवारो जान तुम्हारे भक्तमें मृषा दृष्टि कर पाप विचारो ॥ १६ ॥ हे कृपणवत्सल ! यह हमारो पिता वा दुरंत कठिन पापसो जैसे तरजाय सो कृपा करो यद्यपि वह पवित्र तौ आपकी दृष्टि पडतेही है गयो पर आपहू कृपा करो ॥ १७ ॥ श्रीभगवान् बोले कि हे पापरहित ! तुम्हारो पिता इक्कीसकुल सहित पवित्र भयो जो तुम सरीके साधु कुलपावन याके घरमें जन्मै ॥ १८ ॥ जहां जहां मेरे भक्त प्रशांत समदर्शी साधु सुंदर आचार करवेवारे हैं, वे कीकटदेशकूंहू पवित्र करैहैं ॥ १९ ॥ मेरी भक्तिसो जिनकी कामना क्षीण है गई है वे भक्त जन छोटे जीवनकीहू हिंसा नहीं करै है ॥ २० ॥ जो लोकमें तुम्हारे अनुवर्ती लोग होयगे, वे जैसे तुम मेरे सब भक्तनमें प्यारे हो तैसेही वे सब होंयगे ॥ २१ ॥ सब तरहसो पवित्र पिताके मृतक संस्कार करो हे अंग ! मेरे अंगके स्पर्श करकै सपूत पुत्रवारे जिन लोकनको जाय है विन लोकनको जायगो ॥ २२ ॥ हे पुत्र ! पिताके स्थानमें स्थित होउ जो ब्रह्मवादी लोग कहिगएहैं

---

१ प्रह्लादजी बोलै और तौ वर नहीं यह वर चाहता हूं कि मेरी सब प्रजा स्वर्गमें जाय भगवान् बोले सबकी इच्छा स्वर्ग जानेकी नहीं होती इस कारण जो जो स्वर्ग चलैं उन्हैं तुम बुलालाओ, यह सुनकर प्रह्लाद चले; और मनमें विचारी कि बालक तौ स्वर्गादिकको जानते नहीं युवा स्त्रियोंमें आसक्त है इस कारण वृद्धोंसे कहै, मार्गमें एक महावृद्धसै बोले तुम स्वर्ग चलोगे, वह बोला अवश्य चलैंगे, प्रह्लाद बोले चलो बुड्ढा अभी नहीं जब हम पोतेका व्याह करलेंगे तब चलैंगे प्रह्लादने कही तुम महामूर्ख हो, तब वृद्धने कहा जाओ जो अबके स्वर्गका नाम लोगे, तौ लकडीसै खबर लूंगा, प्रह्लादजीने शोचा मनुष्योंमें कोई जीव नहीं चलैगा, तब वहांसैं चल शूकरके पास आये, और स्वर्गके सुख सुनाकर चलनेको कहा तब उसने कहा हम अपनी शूकरीसैभी पूछले तब सम्मति कर प्रह्लादसै पूछा वहां यह हमारा भोजनभी है प्रह्लाद बोले, अरे अज्ञानी ! ऐसी निषिद्ध वस्तुका वहां क्या काम तब वह बोला तो हम नहीं जांयगे, प्रह्लादने फिर कहा तब वे घुरघुराके दौडे तब प्रह्लादने भगवान्सै कहा आपकी माया बडी प्रबल है, कोई स्वर्गमें नहीं जाता एक डोकरी चरखा कात रही ही वाके पास प्रह्लाद जायके बोले कि री डोकरी वैकुंठ चले है वो बोली कि बेटा चल पन ये तो बताओ वैकुंठमें चरखा मिलेगो कि नहीं ऐसेही एक मोरीकी गिराडते कही तब वो बोली कि वैकुंठमें मोरी होयगी कि नहीं इत्यादि जानने ॥

२ शंका—प्रह्लादसे नृसिंहजीने कहा कि तेरा बाप इक्कीस पीढीको संग लेकर वैकुण्ठधामको गया, यह बडे सन्देहकी बात है क्योंकि हिरण्यकशिपु सहित गिनो तो चारी पीढी होती हैं ब्रह्मा १ मरीची २ कश्यप ३ हिरण्यक-शिपु ४ फिर भगवान्ने इक्कीस पीढी क्यों कहा ?

उत्तर—चार पीढी तो बीती हुई और सत्तरह पीढी अगाडीकी लेकर इस प्रकारसे इक्कीस पीढी भगवान्ने कही ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वह मेरेमें मन लगायकर मेरेमें परायण होयकर सब कर्म करो ॥ २३ ॥ श्रीनारदजी बोले कि भगवान्की आज्ञासों पिताकी मृतकक्रिया प्रह्लादजीने करी पीछे द्विजोत्तमननै अभिषेक करो ॥ २४ ॥ अपने ऊपर प्रसन्न सुमुख श्रीनृसिंहजीकों देखकै ब्रह्माजी पवित्रवाणीसों स्तुतिकर देवादिकनको साथ ले बोले ॥२५॥ ब्रह्माजी बोलै कि हे देवदेव हे अखिलाध्यक्ष हे भूतभावन हे पूर्वज ! लोकसंतापी पापी असुर आपने मारो ये बडो मंगल भयो ॥२६ ॥ जो ये वरकों मोसों प्राप्त भयो कि मेरी सृष्टिके रचे भएसों न मरै तपयोगबलसों बढकै सब वेदनकों नाश करतोभयो ॥ २७॥ मंगल भयो कि याको पुत्र साधु महाभागवत बालक है, मृत्युसों आपने छुडायो और अब वाकूं बढायो ॥ २८ ॥ हे भगवन् ! ये आपके अवतारको सावधान होयकर ध्यान करै तो मृत्युसों सब प्रकारके त्राससो रक्षा करैहै ॥ २९॥ श्रीनृसिंहजी बोले कि हे ब्रह्माजी ! ऐसे वर राक्षसनकों मत दियो करो क्रूरस्वभाववारैनको वर सब उलटे हैजाय हैं जैसे सर्पकों दूध प्याओ सब विषही हैजाय है॥३०॥श्रीनारदजी बोले कि हे युधिष्ठिर ! ऐसै कहिकर भगवान् नृसिंहजी अंतर्द्धान हैगए सब जीवको अदृश्य हैगये श्रीब्रह्माजीने पूजा करी " श्रीब्रह्माजी नृसिंहजीसो जाती बखत बोले कि सबको मोक्ष क्यों न दियो तब नृसिंहजी बोले कि कोई मोक्ष नाय चाहै जो चाहै तो लाओ सो एक बडो साहुकार जाके चारों ओर असामी हाथ जोडे बैठे ब्रह्माजी बोले वैकुंठ चल मोक्ष होगी भगवान्कूं हाथ जोडे खडो रहियो, ये सुन बोलो मैं नांय जाऊं वैकुंठ पराई गुलामी करूं मेरे तो यहांई वैकुंठ ह्वै रह्यो है ये सुन सब कथा ब्रह्माजीने नृसिंहजीसो कही तब भगवान् बोले भैया या जीवने जामें जन्म लियो है वाहीमें सुख मान राख्यो है यूं कहि भगवान् वैकुंठकूं पधारे " ॥ ३१ ॥ ता पीछें ब्रह्माजीको प्रह्लाद शिरसो वंदना करतेभए और फिर शिव प्रजापति सबकूं भगवत्कला जान पूजते भए ॥ ३२ ॥ उपरांत शुक्राचार्यादिसहित मुनिसहित कमलासन प्रह्लादकूं दैत्य दानवनको पति करते भए ॥ ३३ ॥ हे राजन् ! सब ब्रह्मादिक देवता सराहना कर परम आशीर्वाद दे पूजा लेकर अपने अपने धामकूं जातेभए ॥ ३४ ॥ ऐसे ये विष्णुके पार्षद दितिके पुत्र भए हृदयवासी हरिनै वैरभाव करके दोनोनकों मारो ॥ ३५ ॥ फेर ब्राह्मणनके शापसो वे दोनो कुंभकर्ण दशग्रीव राक्षस भए तब रामचंद्रजीके पराक्रमसों मारे गए ॥ ३६ ॥ युद्धमें सोए रामके बाणनसो निर्भिन्न राममें देह लगाय पूर्व जन्मकी नाईं रामचंद्रको चिंतवन विनके हृदयमें रह्यो ॥ ३७ ॥ फिर वे दोनों दंतवक्त्र और शिशुपाल भए श्रीहरिमें वैर करकै आपके देखते देखते सायुज्य मोक्षको गए ॥ ३८ ॥ जे श्रीकृष्णके वैरी राजा हे जिनने पूर्व अपराध करे हे वे सब विनमें मन लगायवेसूं लीनभए जैसे भृंगी कीडेकों कसारी लेयजायहै वाके ध्यानसों वैसोई रूप हैजाय है ॥ ३९ ॥ भगवान्सो अभेद करकै जैसी जैसी परमभक्ति शिशुपालादिने भगवान्में कीनी सो श्रीहरिके चिंतवन करवेसो ईश्वरमें लीन हैगए ॥ ४० ॥ जो मोसों तुमनें पूछो सो कह्यो वैरी दमघोषके पुत्रादिक श्रीहरिमें ऐसे लीन भए ॥ ४१ ॥ ये ब्रह्मण्यदेव श्रीकृष्णचंद्र महात्माकी पुण्यरूप अवतार कथा है यामें आदिदैत्यको वध कह्यो ॥ ४२ ॥ भगवान्के परमभक्त श्रीप्रह्लादको चरित कह्यो श्रीहरिकी भक्ति ज्ञान विरक्ति जैसी ही तैसी कही ॥ ४३ ॥ सर्गस्थिति निरोधके स्वामी भगवान्को तत्व और विनके गुणकर्मको वर्णन कालके कारण देवता दैत्यनके स्थाननको बदलनो ॥ ४४ ॥ भागवतनको धर्म जासों भगवान्की प्राप्ति होय, या आख्यानमें हमने संपूर्णतासों अध्यात्म ज्ञान कह्यो है ॥ ४५ ॥ जो कोई ये पुण्यरूप कथा जो श्रीविष्णुके वीर्यसों संवर्द्धित है कीर्तन करै श्रद्धासो सुनै तो सब कर्मकी फांसीसो छुटै है ॥ ४६ ॥ जो कोई आदि पुरुषकी नृसिंहलीलाको और हिरण्यकशिपुके वधके चरित्रको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सावधान हैकें पाठ करै सब सज्जननमें श्रेष्ठ श्रीप्रह्लादके चरित्र पुण्यरूपको सुनै तो भयरहित वैकुंठ-लोककों जायहै ॥ ४७ ॥ या लोकमें आप बडे बडभागी हैं, कि लोकनके पवित्र करवेवारे मुनिजन आपके यहां आवैंहैं जिन आपके घरमें साक्षान्नराकाररूप धार श्रीकृष्ण परब्रह्म निवास करै हैं, श्रीकृष्ण परमतत्व हैं ईश्वर हैं परात्पर हैं श्रीमन्नारायण हैं येही सर्वेश्वर हैं अविनाशी है निरंजन है, निराकार हैं गोपीजनमनमोहन हैं सर्व अवतारमें आप परिपूर्णतम हैं भक्तवत्सल हैं सर्वोपास्य हैं जगदीश्वर हैं प्रभु हैं परब्रह्म हैं निरीह हैं अदृश्य हैं अभक्तनको अदृश्य भक्तनको दृश्य हैं ॥ ४८ ॥ सो ये ब्रह्म महात्मानके ढूंढवेयोग्य कैवल्य मोक्षके सुखके अनुभव करवेवारे प्यारे सुहृद मामाके पुत्र सबके आत्मा पूजनीय तुम्हारे आज्ञानुवर्ती गुरु श्रीकृष्ण हैं ॥ ४९ ॥ जाको रूप साक्षात् शिव ब्रह्मा-दिकन करके सिद्धांतसों नहीं कह्यो जायहै मौनसो भक्तिसो इंद्रिय जीतकै पूजित ये यादवनके पति मोपै प्रसन्न होओ ॥ ५० ॥ हे राजन् ! जब मय दैत्यने अपनी मायासों एक समय महादेवकी कीर्तिको नष्ट कियो वा समय इन्ही भगवान्नै विनके यशको फैलायो ॥ ५१ ॥ राजा बोले कि जगदीश देवकी कीर्ति मयनै कैसे नष्ट कीनी और भगवान् कृष्णने वो कैसे विस्तृत कियो सो कहो ॥ ५२ ॥ श्रीनारदजी बोले कि एक समय देवतानने युद्धके उपाय करकै सब असुर जीते, तब सब असुर मायीनके परम आचार्य मयदैत्यकी शरण गए ॥ ५३ ॥ सो समर्थ सुवर्ण चांदी लोहेके तीन प्रकारके पुर बनावतो भयो वाके भीतर जायवेको उपाय कोऊको मालूम न भई और वाकी सामग्री काउको विदित न भई कि यामें कहा है ॥ ५४ ॥ हे नृप ! विन पुरनसों असुरसेनापति ईश्वरसहित सब पुरनके नाशकी इच्छासों अलक्षित हैकै पहिले वैरकों याद कर लोकनकों संहार करन लगे ॥ ५५ ॥ हे विभो ! तब लोकपालनके सहित प्रजाने जायके महादेवजीकी प्रार्थना करी कि हमारी रक्षा करो त्रिपुरमें रहनवारे दैत्य हमारो संहार करे है ॥ ५६ ॥ याके उपरांत देवनपै अनुग्रह कर समर्थ परमेश्वर बोले मत डरो हमनें तुम्हें अभयदान दीनो है, धनुषमें शर लगाय तीनों पुरनपै अस्त्र छोडे ॥ ५७ ॥ तब अग्निसमानवर्णके बाणनसो सूर्यमंडलकी समान प्रभा निकसी विनकी किरणनके समूहके मारै वो पुर दीखे नहीं ॥ ५८ ॥ विन बाणनके लगवेसो सब पुरकेनके प्राण निकसगए तब विन राक्षसनकूं महायोगी मय कूपके अमृतमय रसमें पटकतो भयो ॥ ५९ ॥ वा कूपके रसके लगवेंसो वे सिद्ध हो फिर जीवित हुए वज्रवत् शरीर महापराक्रमी है गए, मेघदलकी नाईं उठैं, विजुरीकी नाईं अग्निकी समान सब असुर स्थित भए ॥ ६० ॥ तब भगवान् शिवजीको भग्नसंकल्प और विमन देख एक उपाय रचते भए ॥ ६१ ॥ ब्रह्मा तो बच्चा बनै, भगवान् आप गौ भए, काई समय त्रिपुरमें धसगए, रसकूपमें जो अमृत हो सो पीजाते भये ॥ ६२ ॥ वे असुर देखतेहे सो विमोहित होयकै मनै नहीं करते भये या बातकों जानकै वाके रक्षक शोक करन लगे तब वर महायोगी विन रसपालकनसो बोलो ॥ ६३ ॥ भाई शोक मत करो, हे शोकपीडितहो ! दैवगतिकों याद करो देवता असुर नर और कोई क्यों न होउ ॥ ६४ ॥ अपने या दूसरे अथवा दोनोंनके मन इच्छित कार्यको जो प्रारब्धमें हे मिटायवेको कोई समर्थ नहीं है तब वा समय शंभुकी अपनी शक्तिनसो प्रधानताई प्रगट करतभए ॥ ६५ ॥ धर्म ज्ञान विरक्ति ऋद्धि सिद्धि तप विद्या क्रियादिकसो रथ सूत ध्वज वाहन धनुष बखतर शरआदि सब सामग्री भगवान्ने निर्माण कीनी ॥ ६६ ॥ तब महादेवजी बखतर पहर रथमें बैठ, धनुषमें बाण लगाय हे नृप ! अभिजित् नक्षत्रमें ॥ ६७ ॥ दुर्भेद्य त्रिपुरको शिवजीने भस्म कीनो स्वर्गमें नगारे बजे, सैकडों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विमान सघन हैगये ॥ ६८ ॥ देवता ऋषि पितर सिद्धेश जयजय करते भए फूलनकी वर्षा करतेभए गातेभए प्रसन्न हो अप्सरा नाचतीभई ॥ ६९ ॥ हे नृप ! त्रिपुरारि ऐसे तीनो पुर जराय ब्रह्मादिकन करकै स्तूयमान अपने धामको जातेभए ॥ ७० ॥ अपनी मायाके अनुकरण करवेवारे मनुष्य लोकमें अवतार धारण करनवारे भगवान्के चरित्र जगत्को पवित्र करनवारे हैं विनके पराक्रमकी कथा ऋषिनने गाई है अब तुम्हें और कहा सुनावैं ॥ ७१ ॥

एवंविधान्यस्य हरेः स्वमायया विडम्बमानस्य नृलोकमात्मनः ॥
वीर्याणि गीतान्यृषिभिर्जगद्गुरोर्लोकान्पुनानान्यपरं वदामि किम् ॥७१॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे त्रिपुरविजयवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

श्रीशुक उवाच–श्रुत्वेहितं साधुसभासभाजितं महत्तमाग्रण्य उरुक्रमात्मनः ॥
युधिष्ठिरो दैत्यपतेर्मुदा युतः पप्रच्छ भूयस्तनयं स्वयंभुवः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि साधु सभामें प्रशंसायुक्त बात सुनकै महत्तमनमें अग्रगण्य भगवत्में आत्मावारे युधिष्ठिर प्रह्लादचरित्र सुनकै बडे आनंदित हैकै फेर ब्रह्मपुत्र नारदजीसों पूछतेभए ॥ १ ॥ युधिष्ठिरजी बोले कि हे भगवन् ! मनुष्यनके सतातन धर्मनकी सुनवेकी इच्छा है, वर्ण आश्रमके आचार कहो, जासो पुरुष परमेश्वरकों प्राप्त होय है ॥ २ ॥ हे ब्रह्मन् ! साक्षात् प्रजापतिके आप सब पुत्रनमें तप योग समाधि करकै बडे पुत्र हो ॥ ३ ॥ जो ब्राह्मण नारायणपरायण हैं, परम छिपेभए धर्मकों जानै हैं वे दयालु साधु शांत तुम्हारे समान होयहैं, तैसे और नहीं होयहैं ॥ ४ ॥ श्रीनारदजी बोले कि सब लोकनके धर्मके लिये भगवान् श्रीमन्नारायणकों नमस्कार कर जो श्रीमन्नारायणके मुखसो धर्म सुनो है सो कहै है ॥ ५ ॥ जो आपने आत्माके अंशसो दक्षकी पुत्री मूर्तिमें जन्म लेकै धर्मसों सब लोकनके कल्याणके अर्थ तप करवेकों बद्रिकाश्रममें विराजे है " याज्ञवल्क्यमैं है कि ॥ श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ॥ सम्यक्संकल्पजः कामो धर्ममूलमिदं स्मृतम् ॥ मनुजीने कह्यो है कि ॥ वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् ॥ आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव चेति" ॥६॥ धर्मकी मूल भगवान् है, सर्व देवमय हरि है, हे राजन् जो श्रीहरिके जानवेवारे हैं उन्होंने सब स्मरण करो है जासों आत्मा प्रसन्न होयहै ॥ ७ ॥ सत्य बोलनो, दया राखनी, तप करनो, उपवास आदि शौच करनो सहनशीलता योग्यायोग्यको ज्ञान, मनको जीतें, बाह्य इंद्रियें जीते, हिंसा न करै, ब्रह्मचर्य धारे, दान करै यथोचित वेद पढै, सबसो सूधो रहै ॥ ८ ॥ जो दैवसों मिलै वामें संतोष करै, बडेनकी सेवा करे, ग्राम्यधर्मकी चेष्टा त्यागै, शनैः शनैः निष्फल क्रिया न करै मौन रहै वृथा बकवाद न करै परमेश्वरकी चिंता करै ॥ ९ ॥ हे पांडव ! यथायोग्य अन्नादिक जीवमात्रको दान करतो रहे, तिन जीवनमें परमेश्वर व्यापक है और विशेष कर मनुष्यनको आत्मा और देवता जाननो अन्न वस्त्र घर हाथी घोडा शय्या गौ बासन पुस्तक औषध अभय पृथिवी इत्यादि दान करतो रहै ॥१०॥ श्रीकृष्णजीकी श्रवणादि नवधा भक्ति करै, नामसंकीर्तन करै, स्मरण करै, महात्मानकी सेवा करै, देवपूजा करकै नम्र रहै; दास्यभाव करै सो सख्यता परमेश्वरको करै, अपनपेको परमेश्वरको समर्पण करै ॥ ११ ॥ सब मनुष्यमात्रकों ये परमधर्म है हे राजन् ! यह तीस लक्षणको धर्म है सर्वसाधारण धर्म है यासों सर्वात्मा भगवान् संतुष्ट होय हैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ १२ ॥ श्रीब्रह्माजीने कह्यो है कि जिनके संस्कार करे जाय उनको द्विज कहे है, इज्या अध्ययन दान द्विजन्माके वास्ते विहित हैं; जन्म कर्मसो जो शुद्ध हैं विनको जो आश्रम होय वो क्रिया करै "श्रुतिश्च ॥ गायत्र्या ब्राह्मणमसृजत् त्रिष्टुभा राजन्यं जगत्या वैश्यं न केनचिच्छूद्रम् ॥ तथाच स्मृतिः ॥ विवाहमात्रं संस्कारं शूद्रोऽपि लभतां सदा ॥ न केनचित्समसृजच्छंदसा तं प्रजापतिः ॥ " ॥ १३ ॥ विद्या पढनी विद्या पढामनी यज्ञ करनो यज्ञ करावनो दान लेनो दान देनो ये छै कर्म ब्राह्मणके है और एही छै कर्म क्षत्रिय करें एक केवल प्रतिग्रह न लेय क्षत्री प्रजाकी रक्षा करै ब्राह्मणसों कर न लेय ॥ १४ ॥ वैश्य वार्ता वृत्ति व्यौपार करै नित्य ब्राह्मणकुलकी सेवा करैं शूद्र ब्राह्मणकी सेवा करै स्वामीकी वृत्ति कर जीवै ॥ १५ ॥ खेती करै, डराए विना वस्तु लावै, दिन रात भिक्षा मांगे खेतमें पडो क्षेत्रस्वामित्यक्त अन्न लावे बजारमें पडैं विखरे नाजको उठाय लावै ये चार वृत्तिहू ब्राह्मण करै इनमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठतर हैं ॥ १६ ॥ जघन्य जो वैश्यादि है वो विना विपत्तिके ब्राह्मण आदि उत्तम वर्णकी जीविका न करै केवल क्षत्रियको छोडके अर्थात् क्षत्रियको आपद्विनाहू ब्राह्मण आदि उत्तमवर्ण वृत्ति करवेको अधिकार है और आपत्कालमें तौ सबनकी सब वृत्ति हैं ॥ १७ ॥ ऋतअमृत वृत्तिसो जीवै मृत अमृतसों जीवै, सत्य अनृतसों जीवै पन श्ववृत्तिसों कभू न जीवै ऋत आदि शब्दनके अर्थ अगारीके श्लोकमें कहे है ॥ १८ ॥ ऋत उंच्छशिलको नाम है, विना मांगे मिलै वो अमृत है, नित्य मांगके लावै वो मरे बराबर है, यासौ वाकौ मृतनाम है किसानी वृत्ति करै वो प्रमृत है ॥ १९॥ सत्य अनृत ये वाणिज्य वृत्ति है, नीचसेवा श्ववृत्ति है ब्राह्मण या वृत्तिको त्यागै, क्षत्रीकोंहू ये निंदित है, सब देवमय विप्र है, और सर्व देवमय क्षत्रिय राजा है ॥ २० ॥ शम दम तप शौच संतोष क्षांति कोमलता ज्ञान दया ईश्वरमें भक्ति सत्य बोलनो ये ब्राह्मणके लक्षण हैं ॥ २१ ॥ शौर्य वीर्य धीरता तेज दान मनको जीतनो, क्षमा राखनी विप्रमें भक्ति राखै सदा प्रसन्न रहे रक्षा करै ये क्षत्रियके लक्षण हैं ॥ २२ ॥ देवता गुरु ईश्वरमें भक्ति करै, अर्थ धर्म काममें लगो रहै, सबसो आस्तिक रहै नित्य उद्यम करै नित्य चतुर रहै ये वैश्यके लक्षण हैं ॥ २३ ॥ शूद्र सबसो सदा नमता रहै, शौच करै कपट छोडकै स्वामीकी सेवा करै, विना मंत्र यज्ञ करै चोरी न करै सांच बोलै, गौ विप्रकी सेवा करै, ये शूद्रके लक्षण हैं ॥ २४ ॥ स्त्रीनके पति देवता है वे पतिकी सेवा करैं, अनुकूल रहै देवर जेठकी सेवा करै, इतनेही धर्म है कि नित्य विनकी आज्ञा मानै ॥ २५ ॥ घरके सब पदार्थनकों शुद्ध राखै सदा लीपपोत घर सफा राखै, देहरी सदा लीपै चोख पूरै, आपहू सुंदर सिंगरी भई रहै सब घरकी सामग्री पवित्र राखै, वासन वस्त्र गृह शरीर शुद्ध राखै पुत्र पति सास ससुर देवर जेठ सबकी आज्ञा करै सहनशील रहै ॥ २६ ॥ साध्वी स्त्री छोटे मोटे ऊंचे नीचे सब काम करे, नम्र रहै इंद्रियें जीततीरहै, सांचे प्यारे वचननसो प्रेम करकै समय समयमें पतिकी सेवा करै ॥ २७ ॥ जो लाभ होय वामें संतोष करैं, भोगनमें लोलुप न रहै, आलस न राखै, धर्म जानती रहै, प्रिय सत्य बोलै मदांध न रहै, पवित्र रहै, मधुर रहे, अपतित पतिकी सेवा करै ॥ २८ ॥ जो स्त्री पतिकी हरिभावसौ श्रीकी नाईं सेवामें तत्पर रहे वह या भावके करवेसौ हरिके लोकमें पतिसहित श्रीजीकी नाईं आनंद करैहै ॥ २९ ॥ संकरजातिके यह धर्म है कि चोरी और पाप न करकै अपने कुलपरंपराकी आजीविकासौ निर्वाह करैं चांडाल धोबी आदि या प्रकार रहै " रजकश्चर्मकारश्च नटो बुरुड एव च ॥ कैवर्तमेंदभिल्लाश्च सप्तैते अंत्यजाः स्मृताः ॥ "॥३०॥ हे राजन्! प्रायः युगयुगमें मनुष्यनके स्वभावके समान धर्म होयहै, ये वेदपुरुष भगवान्नें कह्यो है वा धर्मके करवेसो या लोकमेंहू सुख

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है और मरे पीछेहू सुख होय ॥ ३१ ॥ स्वभाव करकै करीभई वृत्तिसों जो वर्तमान है, वो स्वकर्म-कर्त्ता स्वभावजन्य कर्मकों त्याग धीरे धीरे निर्गुणताकूं प्राप्त होयहै ॥ ३२ ॥ वारंवार क्षेत्रमें ऊगो भयो बीज आप निर्वीर्यताकूं प्राप्त होयहै फेर ऊग नहीं सकै है, ऊगो बीज फेर नष्ट है जायहै ॥ ३३ ॥ हे राजन् ! ऐसे कामनमें लगो भयो चित्त मनकी अतिसेवासो तृप्त हैकै वैराग्यको प्राप्त है जायहै जैसे जलती अग्नि थोडो घी डालवेसो शान्त नहीं होती बहुत डालवेसो शांत है जायहै ॥ ३४ ॥ जा पुरुषके वर्णको बतायवेवालो जो लक्षण कह्यो है वह दूसरे वर्णके मनुष्यनमें विदित होय तौ वह वाही वर्णको जाननो ॥ ३५ ॥

यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ॥
यदन्यत्रापि दृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥ ३५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे सदाचारनिर्णये वर्णाश्रमधर्मवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

नारद उवाच-ब्रह्मचारी गुरुकुले वसन्दान्तो गुरोर्हितम् ॥
आचरन्दासवन्नीचो गुरौ सुदृढसौहृदः ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले कि ब्रह्मचारी गुरुके कुलमैं वस इंद्री जीत गुरुको हितआचरण कर दासकी नाईं नीचो रहै, गुरुमें अत्यंत दृढ सौहृद करै ॥ १ ॥ सायंकाल प्रातःकाल गुरु अग्नि सूर्य सब देवतानकी उपासना करै सबेरे सांझ वाणी जीतकै सनातन ब्रह्मको जाप करै गायत्री जपै ॥ २ ॥ जब गुरु बुलावै तब वेद पढै, पढनेके आदि अंतमें शिरसो गुरुके चरणनको नमस्कार करै ॥ ३ ॥ मेखला, मृगचर्म, वस्त्र, जटा, दंड, कमंडलु धारै उपवीत धारै, कुशा हाथमैं लै शास्त्रानुसार वर्तै ॥ ४ ॥ सायंकाल प्रातःकाल जो भीख लावै वो गुरुको निवेदन करै, उनकी आज्ञा लेके पावै, न देवै तो उपवास करै ॥ ५ ॥ सुशील रहै थोडो खाय, चतुर रहै श्रद्धा राखै, जितेंद्री रहै, स्त्रियनमें और स्त्रीसंग करवेवारनमें जितनो प्रयोजन होय तितनो व्यवहार राखै ॥ ६ ॥ बृहद्व्रत नाम नैष्ठिक ब्रह्मचारी जबतक गृहस्थ न होय तबतक स्त्रीनकी कथा न सुनै, न करे, क्यों कि ये इन्द्रिये बडी बलवान् है बडे बडे यतीनके मनको हरैहै ॥ ७ ॥ बाल बहुत मलके न धोवे उबटनो न लगावै, खूब मल नहीं न्हावे अंजनादिक न लगावै, जो गुरुकी स्त्री जवान होय तो वाके संग बात न करै ॥८ ॥ ये निश्चय है कि स्त्री अग्निरूप है, पुरुष घृतकुंभसमान है, याते एकांतमें अपनी बेटीके साथहू न बैठै प्रयोजन मात्र एकांत बैठै[२] ॥ ९ ॥ जबतक या जीवको ईश्वरको साक्षात्कार नहीं होय है तबतक द्वैतकी

१ क्योंकि ऐसे लिखा है कि एक जगै सदावर्त एक जनो बांटै नीचैकूं निगाह करकै सो ये बात कोई महात्मा देखता रहे सो वाके पास जायकर बोले कि तुम्हारे यूं नीचे नैन कैसे रहैं सदाधर्मवालो तब बोलो कि ॥ दोहा ॥ देनेवाला देतहै, भेजत है दिन रैन ॥ लोग भर्म मोपर धरै, तासै नीचे नैन ॥ उदाहरण ॥ जैसे जातिको शूद्र है और यदि वामें ब्राह्मणके धर्म दिखाई परे तो वाय कहनो कि ये ब्राह्मणके वीर्यसो उत्पन्न है यदि ब्राह्मणमें शूद्रधर्म दिखाई परे तो कहनो कि यह ब्राह्मण शूद्रके वीर्यसो उत्पन्न भयो है इत्यादि ॥

२ इस बातपर एक दृष्टांत है एक साधु थे बडे जितेन्द्रिय, आठ प्रहर भगवान्के भजनमें लवलीन रहैं किसीकी ओरको दृष्टि उठाकर न देखैं, कण्ठाग्र जिनको भगवद्गीताके अठारह अध्यायका पाठ आठ आठ दिनतक भोजन न करैं जलही पीपीकर रहजांय, एक दिन उनके पास पाखण्डी पण्डित आये और गीताका गुटका उनके हाथमें सुनहरी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भावना नहीं मिटती जबतक वह भावना न मिटै तबतक विषयनमें प्रवृत्त होनो असंभव है यासो स्त्रीआदिसो दूर रहवेको कह्यो गयो है ॥ १० ॥ यह सब धर्म जो ब्रह्मचारीके कहे हैं गृहस्थी और यतीकोभी करने चाहिये परन्तु गृहस्थीको ऋतुकालमें स्त्रीसंग करनो और गुरुकी सेवाभी करनी उचित है ॥ ११ ॥ अंजन, शिर धोनो, उवटन लगामनो, स्त्रीको चित्र देखनो, मांस खानो, सहत माला चंदनलेप अलंकार ये सब व्रतधारी त्याग करै ॥ १२ ॥ द्विजगुरुके यहां ऐसै वसके और पढकै ज्ञान लेकै वेदत्रयी सांग उपनिषद बल और प्रयोजनके अनुसार अर्थ-सहित पढै ॥ १३ ॥ जो समर्थ होय तो गुरुदक्षिणा दे वर लेकै अपनी इच्छानुसार घरमें रहै, वा वनमें प्रवेश करै, वा संन्यास लेलैय वा गुरुके घरही वसे ॥ १४ ॥ अग्नि गुरु आत्मा सब जीवमात्रमें अपने अंशरूप जीवनके संग विनके नियंता हैकै प्रवेश कियेहैं ऐसे विदित हैवेपैहू वास्तवमें अप्रवेशित भगवान्को विचार ध्यान करनो सर्वरूप परमात्मा हैवेसो प्रवेश होनो संभव नहीं ॥ १५ ॥ ऐसै ब्रह्मचारी वानप्रस्थ यति गृही विज्ञानको प्राप्त हो विचरै तो परब्रह्मको प्राप्त होय है ॥ १६ ॥ मुनिनके संमत वानप्रस्थके नियम कहै हैं या संसारमें जा वानप्रस्थ धर्ममें स्थित हैकै ऋषिलोकको अनायाससों प्राप्त होय है ॥ १७ ॥ जो अकृष्टपच्य है अर्थात् खेतीसो पको है जो अकालसो पकोहै, ये न खाय, अग्निपक्व कच्चो सूर्यसो जो पको होय इनको खाय ॥ १८ ॥ वनके उत्पन्न भए नीवारादिसो शास्त्रानुसार समय २ पै चरुपुरोडाशादि होमनो जब नवीन अन्नादि वस्तु मिलजाय तब पुरानेको छोड दैनो ॥ १९ ॥ अग्निकी रक्षाहीके निमित्त पर्णशाला वा पर्वतकी कंदरामें वसै, हिम वायु अग्नि वर्षा सूर्य धूप ये सब आप सहै ॥ २० ॥ बाल, रोम, नख, मूंछ, जटा, कमंडलु, मृगचर्म, दंड, छालके वस्त्र, और अग्निहोत्रकी सब सामग्री रखनी उचित है ॥ २१ ॥ मुनि हो वनमें बारह वर्ष वा आठवर्ष चारवर्ष वा दो वर्ष वा एक वर्ष वास करै तपके क्लेशसो बुद्धि विपरीत न होय यासो इनमेंसो कोई पक्ष ग्रहण करै ॥ २२ ॥ जब वानप्रस्थ व्याधिसो वा जरासो अपनी क्रिया करवेमें असमर्थ हैजाय और ज्ञानको अभ्यास न करसकै तो अनशन व्रत करै ॥ २३ ॥ अहंकार ममत्व त्याग आत्मामें अग्निको धारण कर वाकी उत्पत्तिके कारणनको सम्यक् प्रकार देहको लय करै ॥ २४ ॥ महाकाशमें आकाश लीन करे वायुमें श्वासको तेजमें गर्मीको आत्मज्ञानी लीन करे जलमें रुधिर थूक पीव आदि लीन करे जो विकार पृथिवीसो

अक्षर चारों ओर रंगीन जदबल खिची हुई, अध्याय अध्यायपर कृष्णभगवान् अर्जुनादिककी मनोहर मूर्ति बनी हुई, वह गुटका साधुकी भेट किया, साधु उस पुस्तकको देखकर मोहित होगये और अपने मनही मनमें कहने लगे कि यह भली सुन्दर पुस्तक मिली बडे यत्नसे एक रेशमी वस्त्रमें बांधकर रक्खी, दैवयोगसे रातको मूसेने उसके तीन चार पत्रे काटडाले तब तो साधु पुस्तकको देखकर बडे दुःखी हुये क्रोध करके बोले कि उस दुष्ट मूसेको मैं आजही मारडालूंगा, यह कह वह उसी समय एक गांवमें गये और वहांसे एक बिल्ली लाये तब तो मूसेका निकलना बन्द होगया, परन्तु बिल्ली भूखकी मारी म्यांव म्यांव करनेलगी, साधुने कहा यह बडी मारी हत्या लगी, पाठके रहे न पूजनके उसके लिये गावमें नित्य जाते और दूध लाते, कभी मिलता कभी न मिलता हारकर साधुने एक गाय पाली, तब तो दूधकी एक नदी घरमें बहने लगी आप पियें और उस बिल्लीको पिलावें जो बचरहें वह औरोंको पिलादे जब गायकी सानी पानी करनी भारी पडगई, वहां गावमें एक गोपकी कन्या बाल्यावस्थाकी रांड रहा करतीथी बाबाजीने उससे कहा हमारी तू गायकी सानी कर जायाकर और गोबर पाथ जायाकर बचा हुआ दूध तुझको देदिया करेंगे, जब वह नवयौवना, चन्द्रमुखी, कोकिलकण्ठी, गजगामिनी बाबाजीके पास आने लगी तब तो बाबाजी कामान्ध होगये, उधर वह बाला मदान्ध थीही उसका घर जानाभी बंद कर दिया निदान उस स्त्रीके आधीन रहा, कुछ दिन पीछे उसके एक सन्तान हुई, तब तो बाबाजीको ज्ञान हुआ, देखो स्त्रीका संग भूलकर न करना थोडेही दिनमें एक साधुके दो साधु होगये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उत्पन्न है विन्हे पृथिवीमें लीन करै ॥ २५ ॥ वाणीको अग्निमें वक्तृतासहित लीन करै शिल्पता-सहित हाथ इंद्रियनको सौंपै गतिसहित पदको अवस्थामें लीन करै, रति उपस्थ प्रजापतिमें लीन करै ॥ २६ ॥ मृत्युमें पायु इंद्रिय और विसर्गको यथास्थान लीन करै, नादसहित दिशानमें श्रोत्र इंद्रीकों लीन करै, स्पर्शसहित त्वचाको वायुमें लीन करै ॥ २७ ॥ हे राजन् ! रूपको चक्षुइंद्रिय-सहित ज्योतिमें लीन करै, प्रचेतासहित जिह्वाको जलमें लीन करै, नाककों घ्राणसहित पृथिवीमें लीन करै ॥ २८ ॥ मनोरथसहित मनको चंद्रमामें लीन करै, ज्ञानसों बुद्धिको परब्रह्ममें लगावें अहं ममताक्रियासै कर्मको अध्यात्मज्ञानसहित रुद्रमें लीन करै, सत्व करकै चित्तको क्षेत्रज्ञमें लीन करै, गुणनसो वैकारिकको परब्रह्ममें लीन करै ॥ २९ ॥ पृथिवीको जलमें, जलकों अग्निमें, अग्निको वायुमें, वायुको आकाशमें आकाशकों महत्तत्त्वमें महत्तत्त्वको मायामें मायाको ब्रह्ममें लीन करै ॥३०॥ ऐसै अवशेष रहे अक्षर आत्माको परब्रह्म जान अद्वैतभावसौं स्थित हो काष्ठको भस्मकर शांत भए अग्निकी समान विरामको प्राप्त होय ॥ ३१ ॥

इत्यक्षरतयात्मानं चिन्मात्रमवशेषितम् ॥
ज्ञात्वाऽद्वयोऽथ विरमेद् दग्धयोनिरिवानलः ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे आश्रमधर्मवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

नारद उवाच–कल्पस्त्वेवं परिव्रज्य देहमात्रावशेषितः ॥
ग्रामैकरात्रविधिना निरपेक्षश्चरेन्महीम् ॥ १ ॥

श्रीनारदजी बोले जब या संन्यासकी इच्छा होय तब सब वस्तुको त्यागकर देहमात्र साथ रख सब इच्छा त्याग पृथ्वीमें विचरै एकरात्रि गांवमें वसे अधिक नहीं ॥ १ ॥ जो वस्त्रकी इच्छा होय तौ कौपीन ढकने योग्य अधो वस्त्र धारे परन्तु दंडादि चिह्नके अतिरिक्त आपत्तिके विना और कछु पास न राखै ॥ २ ॥ इकलो भिक्षुक होयके विचरै आत्मामें रमै, लोकके आसरै न रहै, सब जीवमात्रसों सुहृदता राखै, शांत स्वभावसो सदा श्रीमन्नारायणपरायण रहै ॥ ३ ॥ पर सत् असत् अव्ययमें या विश्वको और आत्माकों देखै आत्मा परब्रह्मको सब जगे सत् असत् ब्रह्ममेंही है ऐसो माने ॥ ४ ॥ जैसे तमोगुणसो सुषुप्तिमें आत्मस्वरूप आच्छादित रहे है और जाग्रत स्वप्नमें विक्षेप हैवेसो नहीं विदित होयहै परन्तु अवस्थाकी संधिमें तमोगुणको विक्षेप नहीं हैवेसो वा समय आत्माको लक्ष्यकर आत्मस्वरूपको विचारनो बंध मोक्षको मायामात्र मिथ्या जानके आत्माको सर्वत्र विचारनो ॥ ५ ॥ मृत्युकी चाह न करे न जीनेकी चाह करे, सब जीवनके नाशक पालक कालकी प्रतीक्षा करतो रहे ॥ ६ ॥ ये संन्यासीके धर्म हैं, असत् शास्त्रमें आसक्त न होय, किसीकी जीविका करके न रहै, वाद विवाद न करै, कोईसो तर्क न करै, किसीके पक्षको आसरो न लेय ॥ ७ ॥ बहुत शिष्य न इकट्ठे करै बहुत ग्रंथनको अभ्यास न करै, व्याख्या आदिको कार्य नहीं करनो, कोई भारी आरंभ न करनो ॥ ८ ॥ जबतक ज्ञान उत्पन्न होय तबतक संन्यासके चिह्न धारणकरके अन्तःकरणकी शुद्धिके निमित्त नियम धारणकर ज्ञानप्राप्तिको उद्योग करनो ज्ञान प्राप्त हैवेपै फिर कोउ नियमकी आवश्यकता नहीं शान्त समचित्तवाले संन्यासीके चिह्नकी आवश्यकता नहीं, रखनो न रखनो वाके आधीन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है चाहै राखे न चाहैं न राखै ॥ ९ ॥ विद्वानता युक्त आत्माको विचार करतो भयो बाहरके चिह्न नहीं राखकै लोकनकी दृष्टिमें उन्मत्त बालककी नाईं रहै और चतुर हैवेपैंहू अपनेको मूककी समान दिखावे ॥ १० ॥ या विषयमें अजगर वृत्तिवाले मुनि दत्तात्रेय और प्रह्लादको इतिहास कहै है तुम विनको संवादरूप इतिहास सुनो ॥ ११ ॥ कावेरी नदीके तटपै पर्वतकी भूमिपै सोए रजसो शरीरके अवयव व्याप्त हैवेके कारण जिनको निर्मल तेज नहीं दीखतो हो ॥ १२ ॥ विनको लोकमें लोकके तत्वकी जानवेकी इच्छासो विचरते भए कुछेक मंत्रीनकूं संग लिये भगवत्प्रिय प्रह्लादजी देखते भए ॥ १३ ॥ कर्म, आकृति, वाणी, चिह्न, वर्ण आश्रमकरके जिनको कोई नहीं जानसकतो कि ये दत्तात्रेयजी हैं ॥ १४ ॥ तिन्हैं नमस्कार कर विधिवत्पूजन कर शिरसो पांवको स्पर्शकर कछु ज्ञान जानवेकी इच्छासो महाभागवत असुरवंशजन्य प्रह्लादजी ये पूछते भये ॥ १५ ॥ जो उद्यम करनवारे भोगी हैं उनकी नाईं आपको शरीर पुष्ट है, धन उद्यमवालेनके होयहैं भोग वित्तवालेनके होयहै, जो भोगी हैं उनकी देह ऐसी पुष्ट रहेहैं, और प्रकारसो नहीं ॥ १६ ॥ हे भगवन् ! कुछ उद्यम नहीं करनवारे और लोटनेवाले आपको धन मिलना संभव नहीं धनके विना भोग प्राप्त नहीं होते सो यह विना भोगके आपको शरीर कैसे पुष्ट भयो सो यदि हमारे सुनने योग्य होय तौ कहो ॥ १७ ॥ आप तौ विद्वान् चतुर समर्थ निपुणदृष्टि और कथा वार्तासौं लोकनको प्रसन्न करनवारे हो तौहू शयन करतेहो लोकनके कर्मको देखते हो और समान दृष्टि हैकै किसीसौं प्रयोजन नहीं राखते सो कारण कहाहै ॥ १८ ॥ श्रीनारदजी बोले कि दैत्यपतिने महामुनिसों जब ऐसे पूछो तब वे महामुनि मुसकायकै वाकी अमृतसमान वाणीसो वशीभूत हो बोले ॥ १९ ॥ ब्राह्मण बोले कि हे असुरश्रेष्ठ ! जो बडेनके संमत हैं सो आप सब जानोहो, ज्ञानचक्षुसो मनुष्यकी चेष्टाको उपराम होनोही श्रेष्ठ है ॥ २० ॥ नारायणदेव भगवान् सदा तुम्हारे हृदयगत हैं वह जैसे सूर्य अंधकारको दूर करे या प्रकार आपके अज्ञानको दूर करै हैं ॥ २१ ॥ हे राजन् ! तथापि तुम्हारे प्रश्नको उत्तर देयहैं आत्माकी शुद्धि करवेवारेनमें आप प्रशंसा करवेयोग्य हौ ॥ २२ ॥ या संसारमें भ्रमायवेवारी तृष्णा है, जो योग्य कार्यसोहू पूरी नहीं होयहै कर्म करैहैं परंतु नानायोनिनमें तृष्णाहीके प्रतापसों जन्मेहै ॥ २३ ॥ अपने कर्मनसो भ्रमतोभयो यदृच्छासों या लोकमें जन्म लेयहै, ये लोक स्वर्ग अपवर्गको द्वार है कभी यह प्राणी कर्मनसौ पशुपक्षीहू हैजायहै ॥ २४ ॥ या संसारमें स्त्री पुरुष सुखके लिये पुत्रके लिये अनेक कर्म करै हैं परन्तु वाको फल विपरीत देखवेमें आवेहै यासो मैंने सब कर्म त्याग दिये है ॥ २५ ॥ याको आत्माको अनुरूप सुख जब प्राप्त होयहै जब यह सब उद्यमको त्याग देय है सब प्रकारके भोगनको मनके कल्पना किये विचार करवेमें उद्यमको छोड बैठोहूं ॥ २६ ॥ अपने आत्माको स्वार्थ अपनेहीमें है सो ये पुरुष भूलके चित्र विचित्र असत् द्वैतभ्रमवारे घोर संसारकों प्राप्त होयहै ॥ २७ ॥ जैसे कोई अज्ञानी जलकी कामना करकै जहां जल उत्पन्न हो वाकू त्याग मृग-तृष्णाकूं दौडैहै ऐसे यह और जगह अर्थकी दृष्टि करकै दौडैहै, परमेश्वरको भजै नहीं है ॥ २८ ॥ परमेश्वरको आधीन ये देहादिक है, इनसो आत्माके सुखकी इच्छा करवेवारे मूर्ख है, दुःखको नाश समझकर निष्फल क्रिया करतो रहैहै, परमेश्वरको नहीं भजे हैं याहीसो सदा दुःख पावै है यासो ईश्वरको भजो सब त्यागो यही हमारी आज्ञा है, षड्विध शरणागति करौ, पारमहंस्य वृत्ति करौ क्रोध लोभ मोह निंदा छल ईर्षा बुराई तृष्णा बेशर्मी दुष्टता क्लेश इनकों त्यागैगो वो वैकुंठ जायगो और नहीं यह निश्चय जानो ॥ २९ ॥ अध्यात्मिकादिदुःखनसो जो नहीं छुटो है जाके शिरपें मृत्यु

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राप्त है ऐसो ये प्राणी यदि कठिनतासों धनकामना प्राप्त करै तोहू वासों कहा है कछु नहीं ॥ ३० ॥ मैं धनी लोभी और अजितेन्द्री पुरुषनके क्लेशको देखो हूं कि उन्है राजा चोर शत्रु आदिसों सदा भय बनो रहै है यासों नींद नहीं आवै है ॥ ३१ ॥ राजासो चोरसो शत्रुसो स्वजननसो पशुपक्षीसो मंगतनसो कालसो अपनेसो नित्यप्राणको धनको भय है ॥ ३२ ॥ शोक मोह भय क्रोध राग क्लैब्य श्रमादिक यह सब धन है और प्राणकी तृष्णाके कारण मनुष्यनको होयहै यासों बुद्धिमान् इन्हैं त्याग देय ॥ ३३ ॥ मधुमाखी और अजगर, लोकमें हमारे उत्तम गुरु हैं इनसों वैराग्य और परितोष हमें प्राप्त भयो है ॥ ३४ ॥ सब कामसो विराग होनो ये भौंरासो सीखो है सहतकी नाईं महा कष्टसों प्राप्त भए धनवालै जीवकों मारके औरही कोई हरके ले जाय है ॥ ३५ ॥ कहीं चेष्टा न करै सदा प्रसन्न रहे भाग्यसों जो कछु प्राप्त होय वामें प्रसन्न रहे जो भागसों कछु न मिलै तो कछु न चाहैं यह अजगरसों सीखो है यासों महा अजगरकी नाईं रहै हैं ॥ ३६ ॥ कभी थोडो कभी बहुत अन्न स्वादु वा बहुगुणयुक्त होय अथवा गुणहीन होय तो वाहीकूं खायके रहूंहूं ॥ ३७ ॥ कहीं कोई श्रद्धासो खवाय देय है, कदी मानवर्जित होय दिनमें मिलै वा रातमें मिलै कोई समय मिलजाय तोहूं खायलेय है ॥ ३८ ॥ रेशमीवस्त्र वा मृगचर्म चीर वल्कल अथवा और जैसो हमें प्राप्त होय भाग्यसो तैसोंई संतुष्ट बुद्धिकरके पहिन लैय हैं ॥ ३९ ॥ कभी तौ पृथ्वीमें सोवैहैं कभी तृण पत्ता पाषाण राखमेंही सो जायहै कभी किसी कोईकी इच्छासो चौबारेमें पलंगपर महलोंपै सोवै हैं ॥ ४० ॥ हे समर्थ ! कभी न्हावैहै कभी माटी लगी रहैहै सुंदर वस्त्र पहिरलैहैं कभी माला कभी गहिने पहिरे हैं रथ हाथी घोडानपै बैठे हैं कभी नंगे ग्रहके नाईं विचरैं है ॥ ४१ ॥ न तो हम निंदा करैं न किसीकी स्तुति करै है ये जीव स्वभावसोही विषम वर्तै है महात्मामें इनको मंगल सदा इच्छा करूं हूं और सबकी एकता चाहूहूं ॥ ४२ ॥ भेदको चित्तवृत्तिमें और वृत्तिनको भ्रमयुक्त चित्तमें हवन करै, मनको सब अर्थनसों हटाय वैकारिकमें होमै वैकारिककों मायामें होमै ॥ ४३ ॥ सत्यस्वरूपको देखनवारो मुनि स्वरूपके अनुभवमें मायाको हवन करै फिर निश्चेष्ट होयकर अपने अनुभव स्वरूपको प्राप्त होके विराम करै ॥ ४४ ॥ जो हमारो गुप्त सिद्धांत हो सो हमने तुमसों वर्णन करदीनो, यह यद्यपि सब लोक शास्त्रसो असंमत है तथापि तुम भगवान्के भक्त हो यासों वर्णन कियो है ॥ ४५ ॥ श्रीनारदजी बोले कि या प्रकार श्रीप्रह्लाद पारमहंस्य धर्म सुनकै प्रसन्न हैकै पूजन कर आज्ञा ले घरको जाते भए ॥ ४६ ॥

नारद उवाच–धर्म पारमहंस्यं वै मुनेः श्रुत्वाऽसुरेश्वरः ॥
पूजयित्वा ततः प्रीत आमन्त्र्य प्रययौ गृहम् ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां सप्तमस्कन्धे युधिष्ठिरनारदसंवादे प्रह्लादाय दत्तात्रेयेण पारमहंस्यधर्मवर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

---

१ तब फेर दत्तात्रेयजी बोले कि इन बातनकोभी त्याग करना जो या कवित्तमें लिखे है ॥ कवित्त ॥ दाविने वकार पांच, पांचपुन चूके मति छांडिदे चकार चार चारनमें रसियै ॥ १ ॥ अर्थ–वैर बुराई विसन विकलता वेशर्म । विद्या विनय बडप्पन विवेक विचार ॥ चिंता चूक चुगली चपलता ॥ चतुराई चेतनता चरित चलन ॥ १ ॥ कवित्त ॥ छांड मत दो दकार, छांडे दकार सात दीननमें मिले मिल अति हीन ग्रसियै ॥ हाहा चार परिहर तीन हाहा मानिले, भूलि छै मकारमैं कबहूं न रहियै ॥ २ ॥ अर्थ–दया दान दुर्वासना दरिद्र दीनता दोष दुर्वचन दुष्टता दुर्बुद्धि, हार हीनता हठ हराम, हेत हर्ष हिंमत, मद मांस मद्यपान मत्सरता मान मंदता ॥ २ ॥ कवित्त ॥ गोविंददास दो उकार, मानिलै भकार तीन एकहू नकारमाहिं सबार गुन नसियै ॥ ३ ॥ अर्थ–उद्यम उपदेश, भलेपन भलाइ भक्ति; नाहि ॥ ३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १४.

युधिष्ठिर उवाच–गृहस्थ एतां पदवीं विधिना येन चाञ्जसा ॥
याति देवऋषे ब्रूहि मादृशो गृहमूढधीः ॥ १ ॥

अब गृहस्थको परम धर्म कहै है श्रीयुधिष्ठिरजी बोले कि हे देवऋषे ! मोसरीके मूढबुद्धिवारे गृहस्थ या पदवीको अनायासकरकै जा विधिसो प्राप्त हो मोक्षकों जाय सो कहो ॥ १ ॥ श्रीनारदजी बोले कि हे राजन् ! प्राणी गृहमें स्थित गृहके योग्य क्रिया कर, वासुदेवके अर्पण करै, साक्षान्महामुनीनकी उपासना करै ॥ २ ॥ भगवत्के अवतारकथामृतको वारंवार सुनै, श्रद्धा करै, यथाकाल महाशांत जननमें रहै ॥ ३ ॥ स्त्री पुत्रादि जो एक दिन छुटवेवारे हैं इनमेंसों संग धीरे धीरे त्यागै आप ऐसो समझै कि मानूं स्वप्नमेंसो उठोहूं ॥ ४ ॥ देहगेहमें जितनो प्रयोजन होय तितनो पंडित आसक्त रहै मनमें वैराग्य धारणकर ऊपरसै आसक्त पुरुषकी नाईं पुरुषार्थ करै ॥ ५ ॥ जातके पिता माता पुत्र भैया और सुहृत जो ये कहै जो ये इच्छा चाहै सो करै ॥ ६ ॥ स्वर्गकी भूमिको आकाशको जो भगवत्को दियो भयो धन है वाको सबको भोगै बुद्धिवान् आप ऐसे करै ॥ ७ ॥ जितनेमें पेट भरजाय उतनोही देहधारीनको अपनोपन है जो यासो अधिक चाहै अभिमान करै वो चोर है दंडके योग्य है[1] ॥ ८ ॥ मृग, ऊंट, गधा, उंदर, मूसा, साप, पक्षी, मक्खी इनमें और अपने पुत्रमें कुछ अंतर न समझै ॥ ९ ॥ घरमें वासकर अत्यन्त कष्टसों धर्म अर्थ कामको नहीं करनो जैसो देश होय जैसो समय जैसो भाग्यसों प्राप्त होय तैसेईमें निर्वाह करै ॥ १० ॥ श्वपच भंगीपर्यंतको यथायोग्य अन्नादि देतो रहै, एक अपनी स्त्रीको जो सेवाके लिये है भोजन बनायवेके अतिथि सत्कारमें लगानो ॥ ११ ॥ जा स्त्रीके अर्थ प्राणी अपने प्राणत्याग दैहै, पिता गुरुकू मारै है वा स्त्रीमें ममता त्याग करनेवारे भगवान्कोभी अपने वशमें करलेय है ॥ १२ ॥ कृमि, विष्टा भस्म या तुच्छ कलेवरकी होयहै ऐसो तो यह शरीर कहां और देह सुखके निमित्त जामें प्रीति कीनी है ऐसी स्त्री कहां तथा सर्वव्यापक संगरहित परमात्माको सच्चिदानंद स्वरूप कहा ॥ १३ ॥ पंचमहायज्ञ करवेपें जो उच्छिष्ट है वासो अपनी वृत्ति करे वासो जो शेष बचे तो वामें ममता न राखे पंडित ऐसें रहे तो बडेनकी पदवीको प्राप्त होयहै ॥ १४ ॥ देवता, ऋषि, मनुष्य, भूत पितर आपकों, दिनरात अपनी वृत्तिके प्राप्त धनसों पृथक् २ पूजन करै तो यह नारायणकी पूजा है ॥ १५ ॥ आत्माके अधिकारादिक है वे सब यज्ञ संपदा प्राप्त होय तो वैतानिकविधिकरकै अग्निहोत्रादिसों यजन करै ॥ १६ ॥ भगवान् सर्वयज्ञभोक्ता हैं सो अग्निमुखसों सब पावै है, घृतसो खूब हवन करै, हे राजन् ! परंतु ब्राह्मणनके मुखके द्वारा हवन करवेसों अर्थात् ब्राह्मणनको खूब मिष्टान्न मोहनभोग वर्फि मिठाई पेडा लड्डूसो भोजन करायवेसो भगवान् बहुत प्रसन्न होयहैं ॥ १७ ॥ तातें मनुष्यमें ब्राह्मण देवता हैं इनको यथायोग्य पूजन करै अनेक कामना चाहै तोहू इन्हकोही पूजन करै सब जीवमात्रके क्षेत्रनके जानवेवारे ब्राह्मण हैं ॥ १८ ॥ ब्राह्मण भाद्रपदमें श्राद्ध करै, माता पिताकों यथायोग्य जैसो धन होय तैसो करै, जो जो भाई बंधु याद होंय उनकोभी श्राद्ध करै ॥ १९ ॥ दक्षिणायन उत्तरायणमें श्राद्ध तर्पण करै, व्यतीपातमें श्राद्धादि करै अमावास्याकों श्राद्ध तर्पण करै, चंद्र सूर्यके ग्रहणमें करै एकादशी द्वादशीयुक्त श्रवणमें श्राद्ध करै ॥ २० ॥ वैशाखके शुक्लपक्षकी अक्षयतृतीयामें, कार्तिकमें

---

१ अर्थात् जितनो खाय पहर लियो वितनोही अपनो जाने बरती जो कछु है वाय अपनो न जाने ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नवमीको, हेमंत शिशिर मार्गशीर्ष कार्तिक इन चारों मासनमें पितृसेवा करै ॥ २१ ॥ माघके शुक्लपक्षकी सप्तमीको मघायुक्त पौर्णमासीकों संपूर्णचंद्रा पौर्णमासीको राकानाम है न्यूनचंद्राको अनुमति कहैहै मास नक्षत्रयुत पौर्णिमामें पितृयजन करै ॥ २२ ॥ विजयध्वजीमें है कि द्वादशीकों श्रवण होय तो महापुण्य है, अनुराधा तीनों उत्तरा तीन एकादशी जन्मनक्षत्र वामनद्वादशीको श्राद्ध करे ॥ २३ ॥ ये सब श्रेयके काल है; मनुष्यकों कल्याण बढावनेवाले हैं, सब प्रकारसों इनमें शुभकार्य करै, जो अपनो शुभ चाहै बहुत आयुवृद्धि चाहै तौ ॥ २४ ॥ इनमें स्नान जप होम व्रत देवद्विजपूजन करै पितर देव मनुष्य भूतमात्रको दियो भयो सब अक्षय होय है ॥ २५ ॥ स्त्रीके संस्कारको काल पुत्रके और अपने जन्मदिन मंगल करै हे नृप ! और प्रेतदाहादिमें संवत्सरश्राद्ध और पुण्य करै ॥ २६ ॥ धर्मादि मंगलके देवेवारे अब हम देश कहैं हैं पुण्यतम देश वो है जहां सुपात्र मिलै ॥ २७ ॥ सब चराचरके निवासभूत भगवान्की जहां मूर्ति है वे अत्यंत पवित्र देश है तप विद्या दयायुक्त जहां ब्राह्मण है वोहू अत्यंत पुण्यदेश है ॥ २८ ॥ जहां जहां श्रीहरिकी अर्चाविग्रह है वो देश सब कल्याणको स्थान है जो पुराणमें विख्यात हैं जहां गंगादिक नदी है वो पुण्यतम देश है ॥ २९ ॥ पुष्करादि सरोवर जहां उत्तम मनुष्य वसै है कुरुक्षेत्र गया प्रयाग पुलहाश्रम ॥ ३० ॥ नैमिषारण्य अर्जुनक्षेत्र सेतुबंधरामेश्वर प्रभास द्वारका काशी मथुरापुरी पंपा बिंदुसरोवर ॥ ३१ ॥ नारायणाश्रम नंदा सीतारामाश्रमादिक हे राजन् ! सब कुलाचल महेंद्र मलयगिरि आदि ॥ ३२ ॥ ये पुण्यतम देश हैं, श्रीहरिकी अर्चा विग्रहरूप हैंकै वसे जो मंगलकी कामनावारो होय वो इन देशनको सेवन करै वारंवार पुरुषनको धर्मदायक हैं यह सहस्रगुणों अधिक फलदायक हैं ॥ ३३ ॥ अच्छे पात्रवेत्ता पंडितनने पात्र यहां कहे हैं हे युधिष्ठिर ! सबसे अधिक श्रीनारायणही एक पात्र है कारण कि चराचरमय वासुदेव भगवान् हैं ॥ ३४ ॥ हे राजन् ! अंतःपुरमें देवता ऋषि महात्मा ब्रह्माजीके पुत्रादिक सब हे परन्तु वहां अग्रपूजनीय श्रीकृष्णचंद्र महाराजको समझके पहले पूजा इन्हीकी भई ॥ ३५ ॥ सब जीवराशिनसों भरो यह ब्रह्माण्ड एक महान् वृक्ष है भगवान् याके मूल हैं यासो श्रीकृष्णजीके पूजनसो सब जीवात्मानकी तृप्ति और पूजन होयहै ॥ ३६ ॥ सब पुर इनने रचे हैं, मनुष्य पशु देवता येही श्रीकृष्णजी जीवरूप धार सब जीवनके शरीररूप पुरमें शयन करै है या कारण इनको नाम पुरुष है ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! तिनमें भगवान् न्यूनाधिक भावकरके वर्तै है, तातै पात्र परमेश्वर श्रीकृष्ण हैं जैसी जाकी आत्मा हैं वैसेही वर्तमान हैं यासो तप पूजा प्रार्थनासों जामें भगवान्को अंश अधिक पायो जाय वही उत्तम पात्र हैं ॥ ३८ ॥ हे राजन् जब मनुष्य पात्र और भगवद्भक्त हे तब मनुष्यनके शरीरमें भगवान्की पूजा होतीही जब मनुष्यनके मनमें विकार भयो तब भेद छायो और एककी एक अवज्ञा करन लगे तब त्रेतायुगके आदिमें विद्वाननने भगवान्की अर्चा मूर्तिनमें करनी प्रारम्भ कर दीनी यद्यपि यह चारौं युगसिद्ध है ॥ ३९ ॥ प्रतिमामें श्रीहरिको श्रद्धा करकै पूजासो उपासक उपासना करै हैं, विनके सब अर्थ पूरै होय हैं और जो पुरुषनमें द्वेष करै हैं विनको फलप्राप्ति नहीं होय है ॥ ४० ॥ हे राजेंद्र ! पुरुषनमें सुपात्र ब्राह्मणको जानो कारण कि यह तपसों विद्यासो संतोषसो श्रीहरिको शरीररूप वेदकूं धारण करै हैं ॥ ४१ ॥ हे राजन् ! यह ब्राह्मणनको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सामर्थ्य है जो अपने चरणकी रजसो त्रिलोकीको पवित्र करै है यह ब्राह्मण जगत्के आत्मा श्रीकृष्णके परम प्रिय देवता है' ॥ ४२ ॥

नन्वस्य ब्राह्मणा राजन्कृष्णस्य जगदात्मनः ॥
पुनन्तः पादरजसा त्रिलोकीं दैवतं महत् ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषा० सप्तमस्कन्धे गृहस्थाश्रमधर्मवर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

नारद उवाच-कर्मनिष्ठा द्विजाः केचित् तपोनिष्ठा नृपापरे ॥
स्वाध्यायेऽन्ये प्रवचने ये केचिज्ज्ञानयोगयोः ॥ १ ॥

या पंद्रहवी अध्यायमें सब वर्ण आश्रमके धर्म सार संग्रह कर वर्णन करै हैं श्रीनारदजी बोले कि हे नृप ! कोई ब्राह्मणकी तो कर्ममें निष्ठा है, कोई तपमें निष्ठा करवेवारे हैं, कोईको मन वेद पढनेमें है कोईको वेद पढावनेमें है, कोईको ज्ञानमें मन है कोई योग साधे है ॥ १ ॥ जो अनंत फलकी इच्छा करै तो ज्ञाननिष्ठावारे ब्राह्मणको श्राद्धान्न देवै, जो इनको अभाव होय तो और कोई ब्राह्मण होय वाको यथायोग्य पूजन करै ॥ २ ॥ देवकार्यमें दो ब्राह्मण जिमावै, पितृकार्यमें तीन द्विज जिमावै, अथवा एक जिमावै जो बहुत समृद्धि धन होय तोहू श्राद्धमें विस्तार न करै ॥ ३ ॥ देश, काल, और योग्य श्रद्धा, द्रव्य, पात्र, पूजन इनके बहुत विस्तार श्राद्धमें करवेसो और स्वजननके अर्पणकी इच्छासो श्राद्ध सुंदर नहीं होयहै ॥ ४ ॥ देशकालमें सत्पात्र प्राप्त होय तौ जो शामाक आदि मुनि अन्न भगवान्को निवेदन कर श्रद्धासौ विधिसहित ब्राह्मणको भोजन करावै तो वह अन्न अक्षय और कामनाको पूरण करनहारो होयहै ॥ ५ ॥ देवता, ऋषि, पितृजीवमात्र और स्वजननको अन्नको विभाग करकै देय और फिर अपने निमित्त लेय और इन सबको ईश्वररूपही जाननो ॥ ६ ॥ धर्मके तत्वको जानवेवारो मांससो श्राद्ध न करें न खाय, मुनियनके अन्नसो जैसे नारायण प्रसन्न होंयहै तैसे कुछ पशुकी हिंसासों नहीं प्रसन्न होयहै ॥ ७ ॥ सद्धर्मकी इच्छा करनवारे मनुष्यनको याते परै धर्म नहीं है कि मन वाक् शरीरसो काहू जीवकों दंड न दैनो ॥ ८ ॥ आचार्य यज्ञवेत्ता ज्ञानी कर्ममय यज्ञनको आत्माके संयम करवेवारे ज्ञानदीपित मनमें सब चेष्टा होम देहै ॥ ९ ॥ द्रव्ययज्ञनसो जब यज्ञ कियो जायहै तब वाको देखकै सब जीव डरैहैं कि निर्दयी प्राणपोषक अज्ञानी इन सब जीवनकूं मारैगे ॥ १० ॥ ताते दैवसौ प्राप्त नाम जो अकस्मात् अन्न मिलगयो है वासो और मुनि अन्नसोंही अपने मनमें संतोष राखतोही नित्य नैमित्तिकी क्रिया करतो रहै ॥ ११ ॥ विधर्म परधर्म आभास उपमा छल ये पांच अधर्मकी शाखा है, सो धर्म जानवेवारो अधर्मकी नाईं त्यागै ॥ १२ ॥ धर्मकी बाधाको विधर्म कहैहै, औरको कह्यो परमधर्म है, उपधर्म पाषंड है दंभ अथवा धर्मशास्त्रनके वाक्यनको उलटो अर्थ करवेको नाम छल है ॥ १३ ॥ जो पुरुषनने अपनी इच्छासों करो

---

१ " चौपाई ॥ विप्र महात्म सुनहु नरेषा ॥ द्विज सेवा सब सुखकी देशा ॥ द्विजनिंदक नर्कनमें जाई ॥ द्विजपूजक वैकुंठ पठाई ॥ विप्र शरीर बसें सब देवा ॥ विप्र सेइ पावैं सब मेवा ॥ जो कोइ द्विजकी निंदा करि है ॥ कल्पकोटिशत नरकमें परि हैं ॥ सदा पूजो विप्रनको भाई ॥ सफल सिद्धि इनहीसे पाई ॥ विप्रविष्णु समवेताई ॥ सफल पुराणे विप्रकों गाई ॥ द्विजनिंदासें सब दुःख पाई ॥ द्विजनिंदक पशु पक्षी कहाई ॥ द्विज पूजै मिष्टान्न आदिसे ॥ वाकों सब सुख मिलै आदिसे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है वो आभास है, ये सब आश्रमनसों पृथक् है जो स्वभावविहितधर्म है वो शांतिके अर्थ सबको योग्य है ॥ १४ ॥ निर्धनमनुष्य धर्मके अर्थ, यात्राके अर्थ धनकी अपेक्षा न करै कारण कि जो पुरुष सब चेष्टामात्रको छोड देय है वा पुरुषके लिये वो चेष्टाको त्यागही वृत्तिको दैनवारो होय है जैसे कि अजगर सब चेष्टा करनो छोड देय है तथापि वाकोहू कहींसो न कहींसो खायवेको मिलेही है वोहू भूखो नहीं रहै है ऐसेही ॥ १५ ॥ संतोषी अचेष्टावान् आत्मारामको जो सुख है, सो काम लोभसो धनकी चेष्टा करके सब दिशानमें दौडनवालेको वो आनंद नहीं है ॥ १६ ॥ जाको सदा संतुष्ट मनमें वाकूं सब दिशानमें सुख है, जैसे रेत कांटे आदि बचायवेको पगमें जोडा सुखदायक है ॥ १७ ॥ वह कौनसी वस्तु है जासो सन्तोषी पुरुष अपनो कार्य सिद्ध नहीं करसकै है किंतु सदा संतोष करनवारेको सब दिशा सुखरूप होय है और तौ कहा केवल जलपात्र लेके वाके सामने उपस्थित होय तौ वो वाहीसों अपनो कार्य सिद्धकर लेयहै और असन्तोषी उपस्थ इन्द्रिय और जिह्वाके भोगार्थ श्वानकी समान घर घर अपमान करावतो फिरै है ॥ १८ ॥ जो ब्राह्मण संतोष नहीं करैं वाकी इंद्रियनकी चपलताके मारे तेज, विद्या तप यश सब नाश होजाय हैं और ज्ञान सब जातो रहे है ॥ १९ ॥ कामको अंत भूखे प्यासे मरनेसें होय है क्रोधको अन्त क्रोधको फलके उदय हैवेसों होय है जैसे क्रोध आयो जाको क्रोध आयो वाको गारी दीनि या दो तमाचे मार देवेसो वो क्रोध शांत है जाय है परन्तु लोभको अन्त काहू प्रकारसों नहीं होयहै चाहै कुबेरको धन और सब पूर्ण पृथ्वी जीतकै जय मिलजाय ॥ २० ॥ हे राजन् ! बहुज्ञानी संशय काटनवारे सभाके पति बहुत पंडितलोग संतोष नहीं करवेसो नरकमें चले गए ॥ २१ ॥ संकल्प न करवेसो तो कामकों जीते कामत्यागसो क्रोध जीते, अनर्थ समझके धनकी चाह न करै, ईश्वरतत्त्व याद करके लोभ भय जीते ॥ २२ ॥ ब्रह्मविद्यासो शोक मोह जीते, महात्मानकी उपासनासो दंभ जीते योगके विघ्नको मौन करके जीते शरीरमें न चेष्टा करके हिंसाकों जीतै ॥ २३ ॥ कृपा करके सब जीवनको दुःख दूर करै समाधि करके भाग्य छोडै, योग वीर्यसो जीवात्माको दुःख त्यागै, निद्राको सात्विक आहारसो जीतै ॥ २४ ॥ सतोगुणसो रज तम जीतै, शांतिसो सतोगुण जीतै, ये सब पुरुष गुरुकी भक्ति करके आनायाससों जीतै ॥ २५ ॥ जाको साक्षात् भगवान् ज्ञानदीपदाता गुरुमें ये भाव है कि ये मनुष्य है वाको सब पढो लिखो हाथीके स्नानकी समान है जैसे हाथी स्नानकर बाहर निकरो फेर मूडपर धूर डारी ॥ २६ ॥ गुरुरूप साक्षात् भगवान् प्रधान पुरुष ईश्वर है, योगेश्वरनसो जिनको चरण ढूंढो जांय है, गुरुकों लोग संसारी मनुष्य मानै हैं ॥ २७ ॥ षड्वर्ग अर्थात् छः इंद्रियके जीतवेकोही सब नियम और सब आज्ञा हैं, अर्थात् सब नियम और सब विधिवाक्यनको येही मुख्य फल है कि इंद्रिय न भयो काबूमें होंय विनके नाशके लिये जो ये योग न करै तो सब परिश्रम है अर्थात् यदि विन नियमादिके करवेसों इंद्रियजय न भयो होय तब वे सब योगादि निष्फल है ॥ २८ ॥ जैसे कृषि व्यापार आदिक मोक्ष जो कि योगको फल है वाय नहीं देसकेहै किन्तु वासों विपरीत फल जन्म मरणादि देयहैं ऐसोही बहिर्मुख प्राणीके निमित्त वापी कूपादि निर्माणरूप कर्म जन्म मरण देय हैं ॥ २९ ॥ चित्तके जीतवेमें मन करै तो सब परिग्रहसो संग त्यागै इकलो रहै एकांतमें बैठे भिक्षान्न खाय थोडो खाय ॥ ३० ॥ हे राजन् ! पवित्र देशमें समान आसनपे बैठे, स्थिर समान सुखदायक आसनपै सूधो अंग कर बैठै ॐकारको जप करे ॥ ३१ ॥ प्राण अपान वायुको जीतै, पूरक कुंभक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रेचक करके जबतक मन सब कामनको त्यागै तबतक अपनी नाकके अग्रभागको देखके जप करतो रहे "जपतो नास्ति पातकम्" ॥ ३२ ॥ अनेक कामहत घूमतो भयो मन जहा जहां जाय वहांसो रोकके हृदयमें धीरे धीरे बुद्धिवान् रोकै ॥ ३३ ॥ ऐसे अभ्यास करवेवारे यतिको चित्त थोडेसे कालमें निरंतर सुखको प्राप्त है जाय है, जैसे सब काष्ट भस्म है जाय तब अग्नि शांत हो जायहै ॥ ३४ ॥ कामबन्धनसो अविद्ध सब वृतिनसो शांत हैके जो ब्रह्मानन्दको प्राप्त है गयो फिर ऐसो चित्त कभूहू ईश्वरसो पृथक् नहीं होयहै ॥ ३५ ॥ त्रिवर्ग विना साधे जो पहिलेई संन्यासी है जाय और फिर त्रिवर्गको सेवन करन लगै तौ वह उगलेहुएको खानवारो है[1] ॥ ३६ ॥ क्योंकि जिनने या देवको विष्टा कीडा तथा भस्मरूप अनात्मा और मरणधर्मा मानो है वेही पीछे अभिमानमें आयके अज्ञानी हैके या देहको आत्माकी बराबर मानके या शरीरकी प्रशंसा करावे हैं ॥ ३७ ॥ गृहस्थ क्रिया कर्मकों न छोडे, संन्यासी व्रत न छोडे तपस्वी गांवमें न वसै, भिखारी इंद्रिये चपल न राखै ॥ ३८ ॥ यदि ये इन कामनको करै तौ ऐसे लोग आश्रमनके नाशक हैं और सत्य है कि वे आश्रमनको अनुकरण करै हैं देवमायासो मोहित इन मूर्खनपैहू कृपा करनी चाहिये ॥ ३९ ॥ परम ज्ञानसो विषय वासना दूर कर जो आत्माको जानते हैं फिर वह कोन कारणसो लोलुप लंपट बनके शरीरको पालन करैं हैं ॥ ४० ॥ मुनि लोग शरीररूं रथ इंद्रियनको घोडे मनको रश्मी शब्दादि मात्र रथके चलवेके मार्ग विषय वाके पहुँचवेके देश बुद्धिको सारथी चित्तको सबको बंधन कहै हैं यह अद्भुत रथ ईश्वरको बनायो हैं ॥ ४१ ॥ दश प्राण अक्ष, अधर्म धर्म दो पैया जीव अभिमानी रथमें बैठो है, धनुष प्रणव बाणरूप जीव है परमेश्वर लक्ष्य है ॥ ४२ ॥ राग द्वेष लोभ शोक मोह भय मद मान अपमान निंदा माया हिंसा मत्सरता ॥ ४३ ॥ रजोगुण प्रमाद भूख नींद रजतमयुक्त प्रकृति ये सब शत्रु हैं परन्तु काहू समय सतोगुणी प्रकृतिहू शत्रु है जाय है ॥ ४४ ॥ जा समयतक या नरशरीररथके इन्द्रियादिक अंग और आत्मा अपने वशमें है तबतक गुरु महात्माके चरणारविंदकी कृपासो तीक्ष्ण ज्ञानरूप खड्ग लैके भगवान्के बलसो शत्रुनको मार प्रसन्न और शान्त हो परमात्माकी शरण ले मोक्षरूप यशका प्रकाश कर या देहको त्याग देय ॥ ४५ ॥ जो ऐसे न करैगो तो प्रमत्त या शरीररूप रथको खोटी इंद्रिय घोडे गाडीवान विषयरूप चोरनके कुमार्गमें पटक दैंगे, वेही चोर घोडा और गाडीवानसमेत याकूं अंधतम संसाररूप कूपमें जहां महामृत्युभय है वहां पटक देय हैं ॥४६॥ वैदिक दो कर्म है एक तौ प्रवृत्तिमार्ग और दूसरो निवृत्तिमार्ग प्रवृत्तिमार्गसों तो संसारमें आनो जानो होयहै और निवृत्तिमार्गसो मोक्ष प्राप्त होयहै ॥ ४७ ॥

---

१ नाकके अग्रको क्यों देखतो रहै यामें दो प्रयोजन है एक तो आंख मीचवेसो नींदको भय है यदि सब ओर देखेगो तो चित्त विक्षेप होयगो यासो अग्र देखतो रहै अथवा लोकमें सबसों सिवाय शरम नाककी है नेकमेंही कहै कि हाय नाक कटि जायगी यासों ये विचार राखे यदि अब भ्रष्ट है जाउ तो फिर नाक कट जायगी यासो नाकके माउ देखतो रहै ये कह्यो है ॥ २ चौपाई ॥ "जपसे नारद सिद्ध कहाए ॥ जपसे देव विदित हुइ गाए ॥ जपसे शुक मुनि संत कहाए ॥ जपसे सनकादिक सब पाए ॥१॥ जपसे व्यास योग सब जानो ॥ जपसे वालमीक सब मानो ॥ सब फल जपसे मिली है भाई ॥ चार वेदमें यह सब गाई ॥ २ ॥" ३ असली अर्थ यह है जो कि पहले तो गृहस्थधर्मको छोडके संन्यासी है जाय फिर यदि वो गृहस्थ बनके इंद्रिय प्रीति करवेके लिये विन विषयकों सेवन करनलगी तब वा संन्यासीको शास्त्रमें वांताशी कहे है इति ॥ ४ चौपाई ॥ "मोक्ष उपाय यज्ञ है भाई ॥ मोक्ष उपाय तपस्या गाई ॥ मोक्ष मिलनकी यहै उपाई ॥ दान मान पूजा कर भाई ॥ प्रतिमापूजक मोक्षकौ जावै ॥ प्रतिमानिंदक सब दुख पावै ॥ मोक्षके दाता सब संप्रदाया ॥ वेद शास्त्रमें यह सब गाया ॥ संध्यावंदन मोक्ष उपाई ॥ पंच महायज्ञ मोक्ष कराई ॥ यह तब शारीरक भाष्यमें पाई ॥ मन मानें तहां देखो भाई ॥ अष्टादश पुराणमें गाई ॥ सबकों सार सकलहित भाई ॥"

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हिंसा प्रधान श्येनादिकर्म यज्ञ, द्रव्यमय यज्ञ, काम्य यज्ञ, अग्निहोत्रादि ये सब अशांतिदम् नाम जो अत्यासक्तियुक्त कर्म अमावस पूर्णिमा चातुर्मास्य व्रत पशुयाग सुत नाम सोमयाग ॥ ४८ ॥ वैश्वदेव बलिदानादि कर्म जो पदार्थनके उपयोगसे होयहैं वे इष्ट कहावे है और देवालय वापी कूप तडागादि कर्मनको पूर्त कहे हैं यही सकाम किये जाय तौ प्रवृत्त कहावे हैं ॥ ४९ ॥ द्रव्य जो चरुपुरोडाशादि ताको जो सूक्ष्म विपाक वोही दूसरे देहके बनवेको निमित्त है करनवालो पुरुष चरुपुरोडाशादिके किंचित् मात्र उत्पन्न भए शरीरको धारण करकै धूमके समीप प्राप्त होय है वहांसो रात्रि दिवसके सन्मुख हो कृष्ण पक्षके दिवसके निकट जाय है वहांसौ दक्षिणायनके पास होकर सोमके निकट जाय है जब वहां पुण्य क्षीण है जाय है तब वृष्टिरूप चन्द्रकी किरणनके द्वारा औषधि लता और अन्नमें आवै है ॥ ५० ॥ हे नृप ! अन्नसो वीर्यमें आवै है फिर जन्म लेय है या क्रमसों जीव भूलोकमें आवै है याको नाम पितृयान मार्ग हैं ॥ ५१ ॥ जन्मसों लेकै मरण पर्यंत संस्कारसो संस्कृत क्षत्रि वैश्यको यह प्रवृत्ति मार्गको फल है अब निवृत्ति मार्गकौ कहे हैं महात्मा लोक इन्द्रियोंके व्यापाररूप इष्ट पूर्तादि कर्मनको विज्ञानसो दीप्तिवाली इन्द्रियनमें हवन कर देय हैं यह धर्म इन्द्रियनसो भिन्न नहीं है ऐसो समझे हैं ॥५२॥ मनके वेगमें इन्द्रियें लीन करै है वाणीमें वैकारिक मनको लगावेहै वाणीकों वर्णनके समूहमें वर्णसमूहको ॐकारस्वरमें लगावै ॐकारको बिंदुमें बिंदुको नादमें नादकूं प्राणमें प्राणकूं ब्रह्ममें लगावै ॥ ५३ ॥ याप्रकार ज्ञाननिष्ठावारो प्राणी प्रथम अग्निके निकट फिर सूर्यके पास वहांसे दिवसके पास फिर मध्याह्नाभिमानी देवतामें फिर शुक्लपक्षाभिमानी देवतामें फिर पूर्णमास्यभिमानी देवतामें फिर उत्तरायणाभिमानी देवतामें लय होय है फिर ब्रह्माजीके सामनें जाय है वहां कुछ समयतक भोग भोग स्थूल देहके उपाधिवारे विश्वमें जाय है फिर स्थूल देहको सूक्ष्ममें लीन कर तेजमें जाता है फिर सूक्ष्मको कारणमें लयकर वाकी उपाधिवारे प्राज्ञमें कारण शरीरको तीनों शरीरनको व्यापके साक्षीस्वरूपमें लीन करकै चौथा सबसे अलग तूर्य है जाय है सब दृश्य पदार्थनके लय हैवेसो शुद्ध चित्त हैकै मोक्ष है जाय है ॥ ५४ ॥ याकों देवयान कहैं है क्रमसो है हैकै आत्मज्ञानी महाशांत ईश्वरमें स्थित हो वहांसो फिर नहीं आवै है ॥ ५५ ॥ वेदके कहे भए ये देवयान पितृयान है वेदके कहे है शास्त्रके द्वारा जाने ये जायहैं, जो ये जानेहै सो देहमें स्थित हैकैहू मोहकों प्राप्त नहीं होयहै ॥ ५६ ॥ जो जननके नाम देहनके आदिमें कारण रूपसों और अंतमें अवधिरूपसो जो सत् है तथा वही भोग्य अंतर भोक्ता उच्चनीच तम अप्रकाश और ज्योतिःप्रकाश ज्ञान ज्ञेय वचन वाच्य तमरूप ज्योति ये सब ज्ञानी पुरुषही है वो अपनेसो भिन्न नहीं समझे है जासो मोह हो ॥ ५७ ॥ जैसे वृक्षकी छाया कुछ वृक्ष नहीं है ऐसे तर्कना करवेसों आभास जो प्रतिबिंब है वो जैसे सब प्रकारसो अवास्तविक पायो जाय है तौहू जैसें कोउ पदार्थ रूपसो मानो जाय है ऐसेही जितनो यह ऐंद्रियक नाम इंद्रियन करके ज्ञातव्य जो कछु दृश्य वस्तु है वो सब मिथ्या है जैसे वृक्षकी छाया देखनेमें आती परन्तु वह कुछ है नहीं केवल मनका विकार है क्योंकि कभी वृक्षके नीचे होती है कभी दूर होती है ऐसा संसारभी किसी प्रकार निश्चय नहीं होसक्ता तौभी कोई एक

---

१ अर्थात् जब ये योगी यहांसो जाय है तब प्रथमही धूमाभिमानी देवताको प्राप्त होयहै फिर रात्रिअभिमानी देवताको प्राप्त होयहै ऐसेही जितने यहां अपक्षय आदि जितने शब्द हैं वे सब विनके देवतानको ग्रहण समझ लेनो चाहिये ॥ २ अर्थात् ये निवृत्ति मार्गको जाननवारो प्रथम अग्न्यभिमानी देवतामें लय होयहै फिर सूर्याभिमानी देवतामें लय होयहै फिर दिवसाभिमानी देवतामें लय होयहै फिर ऐसेही ब्राह्मण शुक्ल इत्यादि शब्दनसोहू तत्तदभिमानी देवता जाननें तिनमें लय क्रमसो होयहै ऐसे कहनो चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पदार्थ है ऐसी कल्पना की जायगी ॥ ५८ ॥ पृथ्वीआदि पंचभूतोंकी छाया (ऐक्यावलंबन) देहादिक संघात आरम्भ परिणामोंसे इनमें एकभी नहीं होसक्ता जैसे वृक्षोंके संघातसे वन होताहै वैसे पंचभूतोंके संघातसे नहीं है कारण कि एक देशके आकर्षणसे सब देह आकर्षित नहीं हो सक्ते एक वृक्ष आकर्षणसे सब वन नहीं खिचसक्ता ऐसा विकार अर्थात् प्रारब्ध अवयवभी अथवा परिणामभी नहीं है कारण कि वह अवयवसे अतिशय पृथक् नहीं और किसीसे मिलकरभी नहीं इससे देहादि सब पदार्थ मिथ्या जानो ॥ ५९ ॥ देहादिक जैसे मिथ्या है ऐसेही विनके हेतु पृथ्वी आदिहू मिथ्या है कारण कि सब पंचभूत अवयवी है वे अपने पांच तन्मात्रा शब्द स्पर्शादिक अवयनके विना विनको होनो संभव नहीं है सकै है यासो यह अवयवी कारणसो कछु पृथक् नहीं है ऐसे अवयवीके असत् और मिथ्या हेवेपै अवयवहू असत् और मिथ्या है गये काहू प्रकार सिद्ध नहीं है सके है यद्यपि सत्य रीतिसो जो विचार कियो जाय तौ परम कारणरूप परमात्माके और कोई पदार्थ सत् नहीं और जब सब पदार्थ असत् भए तौ विनमें भेद माननो वृथा है अविद्याकी निवृत्तिनके भेद रहै है ॥ ६० ॥ और अवयवीकी सत्ता स्वीकार कर आगमापायी बाल्यादि अवस्थामें यह वही यज्ञदत्त है ऐसो प्रत्यभिमान क्यों होयहै तौ यह समझो कि अविद्याको विकल्प रहवेसो पहले तौ आरोप सादृश्यताके हेतु यह वह नहीं है ऐसो ऐसो भ्रम होय है अविद्यातक यह भ्रम है पश्चात् नहीं जब सब मिथ्या है तौ शास्त्रकी विधि निषेधता कैसे रह सकै है यहहू संदेह मत करो जैसे स्वप्नमें कभू जाग्रत और निद्राकी व्यवस्था होय है वैसीही शास्त्रकी विधि निषेधता है[2] ॥ ६१ ॥ भावाद्वैत क्रियाद्वैत द्रव्याद्वैत विचार करकै मननशील योगी आत्मतत्वके अनुभवसो जाग्रदादि तीन अवस्थानको निवारण कियो करैहै ॥ ६२ ॥ कार्य कारण वस्तुकी एकताको जो विचार है जैसे वस्त्र कोई पदार्थ नहीं पदार्थ सूत है ऐसेही जाग्रत कोई पदार्थ नहीं ब्रह्म मुख्य पदार्थ

---

१ अब यह कहै कि यह सब इंद्रियन करके दृश्य मिथ्या कैसे है कि पृथिवी आदि जे पंचभूत हैं तिनकी छाया नाम ऐक्यबुद्धिको आलंबनरूप जो देहादि है सो न तो ये संघात है और न ये पंचभूतनको आरंभ नाम अवयवी है और न परिणाम है अर्थात् या दृश्य देहादिको जो पंचभूतनको संघात मानो है तो संघात नहीं है सकै है जैसे वृक्षनको संघात वन एक देशके खेचवेमें सब नहीं खिचे है यदि संघात होतो तो एक देश खेचवेमें सब खिचनो चहिअतो हो। और जो पंचतत्वको आरंभ नाम अवयवी मानो हो तो वो अवयवी परिणत अपने अवयवनसों अलग है अथवा युत है तहां कहै है कि अत्यंत अलग नहीं है क्योंकि अलगकी तो काहू समय प्रतीति नहीं होयहै तो फिर वो युत होयगो तहां कहै है कि युत हैवेमें हमारो प्रश्न है कि यदि युत है तो ये बताओ कि वो अवयव अवयवमें समग्र अवयवी युत है अथवा वो अवयवी अवयवअवयवमें अपने अंशमात्रसों युत है उत्तर कि सब अवयव २ में अवयवी समग्ररूपसो है जो ऐसो मानोगे तब तौ एक अंगुलि एक पौरुआमेंहू देह माननो परैगो क्यों कि एक पोरुआहू एक अवयव है वामें समग्र रूपसौ अवयवी वर्तमान है ऐसे जब मानौ तब वो पौरुआही देह है गयो ॥ तब फिर अंशमात्रसौ अवयवनमें अवयवीको समन्वय माननो परैगो तहां कहै है कि यदि अंशमात्रसो अवयवनमें अवयवीको समन्वय (व्याप्ति) मानोगे तौहू अंशसो समन्वय फिर वाको अंश ये तुमको अंगीकार करनो परैगो तब अंशको अंश वाको अंश फिर वाको अंश ऐसे करते करते शून्यावस्था प्राप्तिमें अनवस्था दोष आय जायगो यासौ सर्वथा जितनौ कछु दृश्य है वो सब मिथ्याही है जब अवयवीको तुम मिथ्या बताय चुके हो तब फिर ये वोही देवदत्त है ये कहनो तुम्हारो कभू नहीं बन सके है क्योंकि बाल्यादि अवस्था आगमापायि होय है ये जो हमने बालक देखो हो सोही अब ये जवान है ये बात अवयवको मिथ्या पक्षमें नहीं बनेगो याको उत्तर (स्यात्सादृश्य०) या श्लोकमें है ॥

२ वस्तु जो परमात्मा ताके भेद नहीं होते संते अथवा वस्तु जो अविद्या है ताको भेद विद्यमान होते सादृश्यको भ्रमही यही है वो जो सादृश्य है सो पूर्वपूर्वके आरोपसों है सो वो भ्रममात्रही सोऽयं देवदत्तः ये जे सादृश्य भ्रम है सो वास्तविक नहीं है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है यही भावना अद्वैताभाव है ॥ ६३ ॥ हे पार्थ! जो मन वाणी शरीरसो परब्रह्ममें साक्षात्सर्व कर्मको समर्पण करवेको क्रियाद्वैत कहैं हैं ॥ ६४ ॥ पुत्र स्त्री आप और सब देहधारीनमें जो अपने वह सब पंचभूतात्मकतासो एकरूप है और सबको भोक्ता एक परमेश्वर है विन सबको एक देखनो द्रव्याद्वैत है ॥ ६५ ॥ जा यत्नसो जाके पाससो जा स्थानपें जा द्रव्यको जा मनुष्यको शास्त्रने निषेध नहीं कियो वा यत्नसो वाके पाससो वा स्थानपें वा द्रव्यसो वह मनुष्य यह यह कर्म करै जबतक आपत्तिकाल न हो तबतक इन कर्मनको न छोडै ॥ ६६ ॥ हे राजन्! इन कर्मनसो और वेदोक्त कर्ममें वर्तमान मनुष्य अपने कर्म करकै घरमें बैठो भयोहू मोक्ष है जायहै भक्तजननके कार्य भक्ति सिद्ध करै है ॥ ६७ ॥ हे राजन् आप कैसी २ महाविपत्तिनसो बचे यह सब श्रीकृष्णचंद्रकी कृपा ही और यहभी विन्हीके चरणकमलको प्रताप हो जो आपने अनेक दिग्विजय किये और अपनी जय विख्यात करकै अनेक यज्ञ किये ॥ ६८ ॥ हम पहिले महाकल्पमें उपबर्हण नामक गंधर्व हे और गंधर्वनमें मेरो आदर बहुत हो ॥ ६९ ॥ रूप सुंदरता माधुर्य प्रियदर्शन और सुगन्धिके कारण सबमें मेरे दर्शनकी अभिलाषाही स्त्रियनको परम प्रिय और कामोद्दीपन करनेवारे हो और मोसो अधिक कोई लम्पट नहीं हो ॥ ७० ॥ एक समय देवयज्ञमें गंधर्व अप्सरानके गण सब श्रीहरिगाथा गायवेको विश्वके रचवेवारनने बुलाये ॥ ७१ ॥ हमहू स्त्रियनकों लिये वा बातको जान वहां गए, तब विश्वरचकनने मेरी अवज्ञा देख शाप दीनो तुमने हमारे बीचमें ऐसी निर्लज्जता और अवज्ञा करी यासों तुमारी श्री नष्ट होय और तुम शूद्र होओ ॥ ७२ ॥ सोई हम एक ब्रह्मवादीकी दासीमें जन्म ले महात्मानके सत्संग और विनकी सेवा करकै श्रीब्रह्माके पुत्र भए ॥ ७३ ॥ पापनाश गृहस्थीनको धर्म तुमसो हमने वर्णन कीनो याके करवेसों अनायास गृहस्थ वा पदवीको पहुँचैहै जा पदवीको संन्यासी जायहै ॥ ७४ ॥ मनुष्यलोकमें तुम बडे बडभागी हो क्योंकि लोकनके पवित्र करवेवारे मुनि सब ओरसो तुम्हारे यहां आवैं है, और जिनके घरमें साक्षात् छिपेभए मनुष्यरूप धार परब्रह्म वसैहै ॥ ७५ ॥ सो ये परब्रह्म महात्मान करकै ढूंढे जायहै मोक्षके आनंदके सुखको अनुभवरूप हैं, सो तुम्हारे प्यारे सुहृद् हैं मामाके पुत्र कहावैहै, निश्चय यह परमात्मा हैं पूजनीय है सो धन्य हो तुम कि तुमारे हुकममें कृष्ण है सबके गुरु यही हैं ॥ ७६ ॥ जिनको साक्षात् स्वरूप शिव और ब्रह्मा इत्यादि अपनी बुद्धिके प्रभावसो ऐसोही है यह वर्णन नहीं करसके है उन प्रभुकी हमहू मौनी हो उपशमादि साधन और भक्तिसों पूजा अर्चा करै है सो ये यादवनके पति अथवा भक्तनके पति श्रीकृष्णचंद्र हमपै प्रसन्न होओ ॥ ७७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले कि ये श्रीनारदजीको कह्यो वचन सुन राजा युधिष्ठिर बहुत प्रसन्न होय प्रेममें विह्वल होयकै श्रीकृष्णजी महाराजकी सब मिलके पूजन करते भए ॥ ७८ ॥ श्रीकृष्णचंद्र और युधिष्ठिरसें आज्ञा पूजा ले नारदमुनि चलेजाते भये, श्रीकृष्णजी परब्रह्म हैं ये सुन राजा युधिष्ठिर बडे विस्मित भये ॥ ७९ ॥ ये दाक्षायणीको वंश पृथक् वर्णन करे जा वंशमें देव असुर मनुष्य आदि सब चराचर लोक होतेभये ॥ ८० ॥

इति दाक्षायणीनां ते पृथग्वंशाः प्रकीर्तिताः ॥
देवासुरमनुष्याद्या लोका यत्र चराचराः ॥ ८० ॥

इति श्रीवृन्दावनवासिनारायणशास्त्रिविरचितायां श्री० भा० स० स्कन्धे प्रह्लादानुचरिते युधिष्ठिरनारदसंवादे सदाचारनिर्णयो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ सप्तमस्कन्धः सम्पूर्णः ॥

द्विज ज्वालाप्रसादने निजमतिके अनुसार । शोध्यो सप्तम भागवत अभिमत फल दातार ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अनर्घनलचरित्र.

महानाटक.

महाशय ! इस अनर्घनलचरित्रनाटकमें महाभारतोक्त नलदमयंतीकी समग्र कथा लिखीगई है. नलदमयंतीकी कथा जैसी कुछ सारगर्भित तथा अनेक प्रकारसे शिक्षाप्रद है उसको समग्र संसार जानता है और सभी लोग इस कथाके जानने तथा सुननेमें रुचि रखते हैं। ऐसा किसका हृदय पत्थर होगा जो नलदमयंतीकी करुणकथाको पढसुनकर पिघल न जाय। और भाषामें आजतक महानाटक नहीं बना यह महा नाटक है। और आजकलहके नाटकोंमें मनमाने गर्भांक दिये जातेहैं इसमें संस्कृतके नाट्यशास्त्रकी रीतिसे गर्भांक दियागयाहै। संस्कृतनाट्यशास्त्रसे अनभिज्ञलोग इस अनर्घनलचरित्रनाटकको पढकर संस्कृतके नाट्यशास्त्रकी मर्यादाको तथा गर्भांककी मर्यादाको भलीभांति जानसकतेहैं, क्योंकि यह नाटक संस्कृतनाट्यशास्त्रकी मर्यादासे बतायागयाहै। और इस ग्रंथके पढनेसे संस्कृतभाषाका बोधभीबहुत कुछ होसकताहै।

महाशय ! आजदिन साहित्यशास्त्रके परमाचार्य काशीके महामहोपाध्याय सी. आई. ई. विद्वद्वरश्री ७ श्रीगंगाधरशास्त्रीजी महाराजही हैं ऐसा कौन पुरुष है जो उक्त श्रीशास्त्रीजीमहाराजको विद्यासमुद्र न जानताहो यह नाटक उक्त श्रीशास्त्रीजी महाराजके एकवात्सल्यपात्र छात्र पंजाबी पंडितसुदर्शनाचार्यशास्त्रीने बनाया है और क्या लिखें आप एक वेर देखिये तभी आप कविके चातुर्यको जानसकते हैं। कविने औरभी अनेक ग्रंथ संस्कृतमें तथा भाषामें लिखकर विद्वत्समाजमें नाम पाया है। कविने भूमिकामें नलदमयंतीकी मूलकथाभी समग्र लिखदी है। सभकी सुलभताके कारण इसका दाम केवल १ एकही मुद्रा नियत कियाहै। जिसके हाथमें यह ग्रंथ गया उसने फिर छोडा नहीं।

प्रणयिमाधवउपन्यास.

इस सर्वोपयोगी उपन्यासकी प्रशंसा हम स्वयं न लिख इसके विषयमें गतवर्षकी सरस्वतीकी बारहवीं संख्याके ३९३ पृष्ठमें जो कुछ लिखा गया है उसेही नीचे अविकल रूपसे प्रकाशित कर इस ग्रन्थकी उपयोगिताके निर्णयका भार हम अपने विद्याविलासी एवं पटन पाठन प्रिय पाठकोंहीपर अर्पित करते हैं।

" * * हिन्दीमें आजकल उपन्यास विशेषरूपसे निकल रहे हैं, परंतु यह उनमेंका नहीं है। आजकलके साधारण उपन्यासोंमें तिलस्मकीही भरमार रहती है, और वे इस प्रकारकी भाषामें लिखे जाते हैं कि कोई पढालिखा विचारवान् मनुष्य उन्हें अपनी माता, स्त्री, अथवा कन्याके हाथतक पहुंचानेमेंभी पाप समझेगा। + + मालतीका चरित्र जैसा इस उपन्यासमें लिखागया है, वह आदर्श बनाने योग्य है। सुअवसर मिलनेपरभी अपनी इच्छा होनेपर सहवर्गियोंकी सम्मति होनेपर जिस कन्याने अपने माता पिताकी आज्ञा विना अपना परिणय नहीं किया, और उसके बदले असह्य मानसिक व्यथा सहन की, वह कन्या यदि आदर्श स्वरूप न मानी जायगी तो और कौन ऐसी हो सकती है जिसे हम ऐसा समझ सकते हैं। हमारी सम्मतिमें यह पुस्तक बालिकाओंके पढने योग्य है।"

ऐसेही प्रशंसा पत्र बहुत हैं, पर उनके छापनेकी कोई तादृश आवश्यकता बोध नहीं होती। सुन्दर सुथरे कागजपर सुपाठ्य, अक्षरोंमें छपेहुए इस २३० पृष्ठवाले पुस्तकका मूल्य केवल १ रु० है। डाकव्यय अलग देना पडता है।

रामरसोदधि.

(सुन्दरकांड)

अर्थात्

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणका हिन्दीपद्यमें भावानुवाद।

श्रीमद्वाल्मीकीयरामायणके अमृतमयी कथाका रसास्वादन संस्कृतज्ञ विद्वानोंहीको सुगम और सुखसाध्य था। परन्तु केवल हिन्दी जाननेवाले कथाप्रेमी सज्जनगण उससे तरसतेही रहे अतएव हमने सुन्दरकांडका भावानुवाद पद्योंमें निर्माण कर कथारसिक सज्जनोंकी सेवामें उपस्थित किया है, यदि हमारा यह निबन्ध उन्हें रुचिकर जँचेगा तो शीघ्रही अन्यान्य कांडोंकाभी भावानुवाद पद्योंमें निर्माण कर पाठकोंको दृष्टिगोचर करानेका प्रयत्न करेंगे। कीमत १ रु०

रामलीला नाटक.

अंक १-१३ तक.

यह ग्रंथ रामलीला करनेवालोंके बडेही कामका है. इसके अनुसार पात्र सिखाये जांय तो रामलीलाकी शोभा विशेष होगी. इसमें रामलीलाकी विधि, शृंगारकी विधि, और जानने योग्य भजनभी हैं. चिकना कागज विलायती जिल्द मूल्य २ रु०.

बालोद्वाहमीमांसा भाषाटीका.

इसमें स्त्रीपुरुषोंकी बाल्यावस्था, उस अवस्थाके कार्य, सदाचार और ब्रह्मचर्याश्रमका वर्णन तथा विवाहका समय और अयोग्य विवाहवर्णन, बाल्यविवाह होनेका कारण और तरुणावस्थाके विवाहके अनेक लाभ तथा वृद्धविवाहसे हानियें और उसका कारण आदि अनेक विषय सप्रमाण और दृष्टान्तोंसाहित उत्तम रीतिसे दिखाया है. की. ४ आना.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अकाराद्यनुक्रमसे

संस्कृतधातुकोष.

भाषार्थसहित.

इसमें सब संस्कृत धातुओंका अर्थ सरल हिंदीभाषामें लिखा है. प्रत्येक धातुके आगे गणबोधक अंक, पदबोधक अक्षर तथा वर्तमानकालिक तृतीयपुरुषका एकवचनी रूप लिखके उसके आगे आजकल उस धातुके जितने अर्थ प्रसिद्ध हैं वे सब लिखे हैं. जिन धातुओंके अर्थ उपसर्ग जोडनेसे भिन्न २ होते हैं उनको वैसेही उपसर्गसहित लिखके उनके सब भिन्न २ अर्थ लिखे हैं. आखिर परिशिष्टमें प्रत्येक गणके तीन २ परस्मैपदी आत्मनेपदी तथा उभयपदी धातुओंके दशों लकारोंके रूप लिखे हैं. की० १॥ रु.

पतिव्रतामाहात्म्य तथा मातापितृसेवामाहात्म्य.

भाषाटीका.

इस पुस्तकमें ऐसा कथानक है कि कोई एक ब्राह्मण अपने वृद्ध माता पिताको छोडके वेदाध्ययन करनेके लिये दूसरे गांवमें गया था. वह एक दिन अध्ययन करते एक वृक्षके नीचे बैठा था तब उसके ऊपर एक पक्षिणीने वीट कर दी जब उसने उसकी ओर क्रोधदृष्टिसे देखा तो तत्कालही वह पक्षिणी मृत होकर गिर पडी. ऐसेही एक दिन वह ब्राह्मण किसी पतिव्रता स्त्रीके घर भिक्षा मांगने गया था परंतु वह स्त्री पतिशुश्रूषामें लगी रही थी इसलिये उसको जल्दी भिक्षा न दे सकी जब वह ब्राह्मण उसकी ओरभी क्रोधदृष्टिसे देखने लगा तब उस स्त्रीने उससे कहा कि मैं वह पक्षिणी नहीं हूं जो कि आपके क्रोधसे भस्म हो गई उस समय वह ब्राह्मण बहुत विस्मित हो गया और उस स्त्रीसे पूछने लगा कि यह तुझे कैसे मालूम हो गया तब उस स्त्रीने कहा कि यह सब माहात्म्य पतिकी सेवाका है और ऐसाभी कहा कि तुम शुद्ध ब्राह्मण हो तौभी धर्म अच्छी तरह नहीं जानते हो इसलिये आप मिथिलापुरको जाओ वहां धर्मव्याध रहता है वह तुमको धर्म बतावेगा तब वह ब्राह्मण धर्मव्याधके पास गया और उस धर्मव्याधनेभी उस ब्राह्मणको बहुत तरहसे धर्मका विषय कह सुनाके वृद्ध मातापिताकी सेवा करनेके बारते कह दिया. तदनंतर वह ब्राह्मण अपने घर लौट आकर मातापिताकी सेवा भक्तिभावसे करने लगा. की० १२ आना.

मालविकाग्निमित्रं (नाटकम्)

बालबोधिनीटीकायुतम्।

विदितचरमेव सर्वविदुषामरिमन् किल भारतवर्षे विविधसंस्कृतविद्यापारावारपारीणस्य निखिलपण्डितमण्डलीमण्डनायमानस्य कविवरस्य श्रीकालिदासस्य तन्निष्ठस्वाभाविकौपम्यादिगुणगणितं सुजनमान्यं सुप्रसिद्धं मालविकाग्निमित्रं नाम नाटकम् । अस्य रचनासौन्दर्यादि वर्णनं तु एतत्कर्तुः कविचक्रवर्तिनः कालिदासस्य " पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे " इत्यादिना जेगीयमानकीर्तित्वेन सर्वेज्ञायमानत्वात्पौनरुक्त्यायैव। एवं निसर्गरमणीयस्यास्य नाटकस्य रूपकत्वाद्यनेकव्यवहारैरुपलक्षितत्वेन एतद्रसज्ञान् सरलव्याख्यामन्तराऽस्य यथार्थज्ञाने प्रांशुलभ्यार्थमनुधावतो वामनानिव चेखिद्यमानानवबुध्य विद्वद्वरैर्लब्धविद्यावाचस्पत्युपाधिभी राशिवडेकरोपाह्वैः श्रीयुतआपाशास्त्रिभिरियं बालबोधिनी नाम व्याख्याऽकारि । अस्यां च व्याकरणच्छन्दोऽलंकारादिविषयाणां यथायथं प्रतिपादनादस्यार्थज्ञाने व्याख्येयमतीवोपयोगिनीति सर्वे रसज्ञा विद्वांसोऽस्याः संग्रहेण कृतार्थीकुर्वन्तु व्याख्याकारानलमातिविस्तरेणेति शुभम् । विदांकुर्वन्तु पुस्तकमिदं मोहमयीसमीपवर्तिकल्याणनगरस्थसुप्रसिद्ध " लक्ष्मीवेंकटेश्वर " नामक मुद्रायन्त्रतो लभ्यमतः पत्रादिप्रेषणं तत्रैव कर्तव्यमिति जिघृक्षव इति॥मूल्यमस्य ग्राहकसौकर्यार्थं केवलं सपादो रूप्यकः १।

श्रीवाल्मीकीयरामायणांतर्गत—

सुंदरकांडभाषा.

पाठक महाशय ! भारतवर्षमें ऐसा पुरुष मिलना दुर्घट है जो कि भगवान् रामचंद्रजीको न जानता हो । और यहभी सबको मालूमही है कि सबोंसे पहिले रामायणरूपी कथा महर्षि वाल्मीकिजीने गाई है । अतएव उसको श्रीवाल्मीकीयरामायण कहते हैं। वह रामायण पाठकोंको चतुर्विध पुरुषार्थ देनेवाला है। यह किसीसे नहीं छिपा। उसमेंभी विशेषकर परम पुरुषार्थको देनेवाला सुंदरकांड है । जैसे भारतमें गीता । ब्रह्मांडपुराणके एकसौ सैंतालीसवें अध्यायमें लिखा है कि " कांडस्य सुंदराख्यस्य श्रवणात् पठनादपि । मां प्राप्नुयाज्जगद्धेतुं नात्र संदेह इष्यते ॥ " भावार्थ—भगवान् कहते हैं कि, सुंदरकांडके पढने तथा सुननेसे जन जगत्कारणरूप मुझकोही प्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं। उसका पाठ अर्थज्ञान पूर्वकही होना उचित है । क्यों कि विना अर्थज्ञान पाठका फल अत्यल्पसेअत्यल्प शास्त्रमें कहा है। यह सोच मैंने ढाढोलि ग्रामस्थ श्रीयुत पं० काशीरामजीके द्वारा सरल सुबोध मूलार्थ भाषामें बनवायकर ग्लेज कागदपर बडे अक्षरोंमें शुद्ध छाप दिया है । जिसको आबालवृद्ध पाठ कर सकें । और प्रति श्लोकमें गुप्तार्थभी गोविंदराजीय भूषणके अनुसार भावार्थरूपसे खोल दिया है । प्रति अध्यायके आद्यंत श्लोक लिखकर सब श्लोकांकभी लगा दिये हैं । ऐसे इस सर्वांगसुंदर पुस्तकको ले परमार्थ लाभ साध लेवें । की. २ रु. डाकमहसूलसहित ।

विवाहवृंदावन ।

भाषाटीकासहित.

इस पुस्तकमें नक्षत्रशुद्धि, कालमीमांसा, मेलक, नवांश, लग्नबल, चंद्रबल राहुसत्ता, षड्वर्ग, ग्रहयोग, ग्रहभाव आदि विवाहसंबंधी सब वार्तोका वर्णन विशेष रीतिसे किया है हिंदी टीकासमेत यह ग्रंथ आजतक कहींभी नहीं छपा कीमत १ रु.

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना, कल्याण.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

अष्टमस्कन्धप्रारम्भः।

अध्याय १.

भक्तजनहि रंजन सदा, संकट हरन विशाल ॥ द्विज ज्वालापरसादपर, द्रवहु नन्दके लाल ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

राजोवाच-स्वायम्भुवस्येह गुरो वंशोऽयं विस्तराच्छ्रुतः ॥
यत्र विश्वसृजां सर्गो मनून्यान्वदस्व नः ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ अब याके अनंतर चौवीस अध्याययुक्त अष्टमस्कंधविषे मनुके पुत्र ऋषि, देवता, इंद्र, हरिके अवतारोंकरिके सहित मनुको वंश वर्णन करैंगे, मन्वंतर मन्वंतर प्रति मन्वादिक छे ६ न्यारे न्यारे श्रेष्ठ धर्म प्रवृत्त करते पालन करे हैं, आचरण करेहैं, याते मन्वंतरको सद्धर्म लक्षण कह्यो है, जा धर्मके कियेतें मनुष्य नरकमें नहीं जाते हैं, तहां पहले अध्यायके विषे स्वायंभुव स्वारोचिष उत्तम तामस ४ मनुवोंको वर्णन करैंगे स्वायंभुव मन्वंतरके विषे अत्यंत दुस्तर गुणवर्णन सुन आनंदित हो राजा सब मन्वंतरनकी स्थिति पूछेहैं महाराज परीक्षित् श्रीशुकदेवजीसें पूछे है ॥ हे परमज्ञानी श्रीशुकदेवजी महाराज ! अब मैंने स्वायंभुवमनुको वंश विस्तारतें सुन्यो, जामें मरीचितें आदि लेके विश्वके सृजनवारेनको सर्ग होत भयो, अब मनुकी कथा हमारे आगे कहो ॥१॥ हे ब्रह्मन्! जा जा मन्वंतरमें हरिके अनेकन जन्मकर्मनको कवि गान करते हैं तिन कर्मनकी सुनिवेकी इच्छा करनवाले जे हम हैं तिन हमारे आगे तुम कहो ॥ २ ॥ हे महाराज ! जा मन्वंतरमें विश्वके पालक भगवान् जो करतभये और जो मन्वंतर नहीं आयो तामें जो करैंगे, वर्तमानमें जो जो करै हैं सो सब कहो ॥३॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् ! या कल्पमें स्वायंभुव मन्वंतरतें आदि लेके छे मनु व्यतीत होतभये तिनमें आद्य मनुको चरित्र तौ कह्यो, जामें देवतादिकनकी उत्पत्ति होती भई ॥ ४ ॥ स्वायंभुव मनुकी बेटी आकूती और देवहूती हीं तिनमें धर्मज्ञानके उपदेशके अर्थ भगवान् पुत्र होत भये ॥ ५ ॥ पहिले भगवान् जो कपिलदेवजीने कियो सो तो कह्यो और हे कुरूद्वह ! जो भगवान् यज्ञावतार करत भये सो हम कहैंगे ॥ ६ ॥ कामभोग विलासनमें विरक्त शतरूपाके पति समर्थ स्वायंभुव मनु राज्य छोडिके तप करिवेके लिये स्त्रीसहित वनमें प्रवेश करत भये ॥७॥ सुनंदानाम नदीके किनारे एक पैरकरिके भूमिको स्पर्श करते हे भरतवंशमें भये राजन् परीक्षित्! स्वायंभुवमनु तप करत यह कहतभये॥८॥ जाकरिके विश्व चैतन्य होय है, और विश्व जाको चैतन्य नहीं करसकै है, या विश्व (संसारके) सोये

दोहा ॥ मोरमुकुट शिरपर धरे, कर मुरली गुणखान ॥ इमि ज्वालापरसाद नित, धरत कृष्णको ध्यान ॥ १ ॥ जैसे ब्रजवासीनकी, नितप्रति करी सहाय ॥ तैसे कृपाकटाक्ष करि, दीजै मार्ग बताय ॥ २ ॥ प्यारे यह यश आपको, वरणो है शुकदेव ॥ ताकी भाषा शुद्धि की, मोहि बतावहु भेव ॥ ३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

संते जो जागेहै, यह मनुष्य जा ईश्वरको नहीं जाने है, सो संसारको जाने है ॥ ९ ॥ या लोकमें जो कछु जगत् भयो है सो विश्वात्मा ईश्वरसो व्याप्त है वही ईश्वरके दिये पदार्थ भोगने उचित है काऊ औरके धनकी इच्छा मति करो ॥ १० ॥ जो या जगत्को देख रहा है और यह जगत् जाको नहीं अवलोकन करे है जाकों ज्ञान सदा बनो रहे है वा संगरहित सब प्राणिनके आत्मा ईश्वरको भजन करो ॥ ११ ॥ जाको आदि अंत मध्य नहीं, अपनों विरानों नहीं, भीतर बाहिर नहीं जासों जगत्में यह सब वार्ता होय विश्व जाको रूप है, सोई सत्य है परिपूर्ण ब्रह्म है ॥ १२ ॥ यह परब्रह्म सत्य स्वयंप्रकाश जन्मरहित ईश्वर पुराणपुरुष अनन्त संसारके स्वरूप हैं सो अपनी मायासे संसारकी उत्पत्ति आदि करते हैं जो अपनी ज्ञानशक्तिसे मायाको दूर कर आप सदा निर्विकार स्वरूप रहतेहैं और कर्म करकेभी निष्क्रिय रहते हैं ॥ १३ ॥ आगे ऋषिलोकहू कर्म त्यागनेको कर्मनको करते हे कि जिन कर्मनके करनेसो कर्मनकी निवृत्ति होजाय कारण कि जो कर्म करतो रहे हैं वह निष्क्रिय होजाय है ॥ १४ ॥ ईश्वर भगवान् सब करे हैं, परंतु तामें आसक्त नहीं होय है अपने लाभकरिके पूर्णार्थ है, जो परमेश्वरकों अनुवर्ती है वोह खेदयुत नहीं होय हैं ॥ १५ ॥ जो सृष्टि आदि चेष्टा करे है मन अहंकाररहित है संकल्पशून्य है अर्थको आचरण कर निर्विकार निराश्रय पूर्ण दूसरेकी प्रेरणासो रहित मनुष्यको साक्षी निजमार्गमें स्थित सम्पूर्ण धर्मको पालक है वा प्रभुके मैं शरण प्राप्त भयोहूं ॥ १६ ॥ शुकदेवजी बोले कि मनुजी या प्रकार उपनिषदके मंत्रनको सावधान व्हैके कह रहेथे ताय देखिके असुर और यातुधान भूखसों खायवेकों दौरते भये ॥ १७ ॥ असुरनकों ऐसो निश्चय देख सर्वगत हरि यज्ञरूप अपने पुत्र याम नाम देवतानकरके सहित दैत्यनको मारिके स्वर्गकूं पालन करते भये ॥ १८ ॥ अग्निको बेटा स्वारोचिष नाम दूसरो मनु होतो भयो ताके द्युमान् सुषेण रोचिष्मान्सों आदि पुत्र होते भये ॥ १९ ॥ वा स्वारोचिष मनुमें रोचननाम इंद्र होतो भयो तुषितादिक देवता भये, ऊर्जस्तंभादिक वेदके वक्ता ऋषि होते भये ॥ २० ॥ वेदशिरा सप्त ऋषिकी तुषिता नामकी स्त्री होती भई ताके विभु नाम भगवान् जन्म लेत भये ॥ २१ ॥ अट्ठासी हजार ८८००० जे मुनि व्रतके धारण करनवारे कौमार अवस्थातें ब्रह्मचारी ब्राह्मण हे वा विभुसों व्रत सीखते भये ॥ २२ ॥ तीसरो प्रियव्रतको बेटा उत्तमनाम मनु होतो भयो, ताके बेटा पवन सृंजय यज्ञहोत्रादिक होते भये ॥ २३ ॥ वसिष्ठके बेटा प्रमदादिक सप्तऋषि होते भये, सत्या, वेदश्रुता, भद्रा ये देवता सत्यजित् इंद्र भयो ॥ २४ ॥ धर्मकी सूनृता स्त्रीमें भगवान् पुरुषोत्तम सत्यव्रतनकरिके सहित जन्म लेत भये, सो सत्यसेन नाम करिके विख्यात होत भये ॥ २५ ॥ वे असत्यव्रती दुःशील असाधु यक्ष राक्षस भूतद्रोही भूतगणनको मारते भये सत्यजित्के सखा भये ॥ २६ ॥ चौथो मनु तामस नाम उत्तमको भैया होत भयो पृथु ख्याति नर केतुको आदि लेके तिनके दश पुत्र होत भये ॥ २७ ॥ सत्यक नामके हरिनामके और वीरनामके देवता भये त्रिशिखनाम इंद्र भयो, ज्योतिर्धामादिक सप्तऋषि होते भये ॥ २८ ॥ विधृतिके पुत्र वैधृतनाम देवता होत भये जो कालसों नष्ट भये वेदनको अपने तेजकरिके उद्धार करते भये ॥ २९ ॥ वा मन्वंतरमें भगवान् हरिमेधाकी स्त्री हारिणीनाममें हरिनामसों प्रकट भये विनने गजराजको ग्राहतें छुडायो ॥ ३० ॥ तहां राजा पूछे हैं हे बादरायण ! यह तुमते हम सुनिवेकी इच्छा करेहै जैसे ग्राहनें गजराजको पकऱ्यो भगवान् वाय छुडावते भये ॥ ३१ ॥ सो कथा बडी पुण्यफल देनवारी है धन्य है मंगलकी स्थान है शुभ है जिन जिनमें उत्तमश्लोक नारायणको यश गायो जाय हैं ॥ ३२ ॥ सूतजी शौनकनते कहें हैं कि, हे विप्राः ! अनशनव्रत धारण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कर बैठे ऐसे परीक्षित्ने जब ऐसे कही तब श्रीशुकदेवजी महाराज राजाकों सन्मान करिके सभामें मुनिनके सुनते २ कहत भये ॥ ३३ ॥

सूत उवाच-परीक्षितैवं स तु बादरायणिः प्रायोपविष्टेन कथासु चोदितः ॥
उवाच विप्राः प्रतिनन्द्य पार्थिवं मुदा मुनीनां सदसि स्म शृण्वताम् ॥३३॥

इति श्रीमद्भागवते भाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच-आसीद्गिरिवरो राजंस्त्रिकूट इति विश्रुतः ॥
क्षीरोदेनावृतः श्रीमान्योजनायुतमुच्छ्रितः ॥ १ ॥

चौथे मन्वंतरमें भये गजेंद्रमोक्षणकूं दूसरे अध्यायते आदि लेके तीनि अध्यायनकरिके विस्तारसूं वर्णन करे हैं ॥ दूसरे अध्यायमें हथिनीनकरिके सहित क्रीडा करते गजराजकू दैवयोगतें ग्राहने पकरचो तब हरिको स्मरण कियो सो वर्णन करेंगे ॥ श्रीशुकदेवजी कहेहैं हे राजन् ! एक त्रिकूट नाम पर्वत पर्वतोंमें श्रेष्ठ क्षीरसमुद्रकरिके वेष्टित लक्ष्मीवान् दश हजार योजन ऊंचो होतो भयो ॥ १ ॥ और दशी हजार योजनको जाको विस्तार है रूपे लोहे सोनेके तीनि शिखरनसों समुद्र और दिशानको प्रकाश करतो वर्तमान है ॥ २ ॥ वाके औरहू शिखर रत्न धातु विचित्र, नाना द्रुमलता, गुल्म, झरनानके जल, शब्द करिके सब दिशानको प्रकाश करें हैं ॥ ३ ॥ जाके चारों ओर क्षीरसमुद्रकी लहरें लहराय रही हैं और जाकी हरित वर्ण मणिमय कांतिसों और शिलानसों पृथ्वी श्यामवर्ण होरही है ॥ ४ ॥ जाकी गुफानमें सिद्ध, चारण, गंधर्व, विद्याधर बडे बडे सर्प किंनर अप्सरा क्रीडा करे है ॥ ५ ॥ जहां संगीतके नादसों शब्दायमान गुफानके शब्दको सुनिके विनमें रहनवारे स्तुति योग्य सिंह दूसरे सिंहके गर्जनाकी शंकासों घोर गर्जना करे हैं ॥ ६ ॥ और नाना प्रकारके वनके पशुनके समूहनसो संकुलित गुफानसों अलंकृत विचित्र वृक्षवारे मणि और देवतानके बागनमें कोकिल आदि सुंदरपक्षी बोलरहे हैं ॥ ७ ॥ स्वच्छ पवित्र जलवान् नदी सरोवरनसों युक्त और सुंदर स्वच्छ पवित्रमणिवालुका-युक्त पुलिनसों और देवतानकी स्त्रीनके स्नानसो सुगंधित जल पवनकरिके युक्त हैं ॥ ८ ॥ ता पर्वतकी गुफामें भगवान् वरुणको ऋतुमान नाम एक बाग है, सो बाग देवतानकी स्त्रीनके खेलवेको स्थान है ॥ ९ ॥ जो नित्य फल फूलयुक्त दिव्य वृक्षसो सब ओरतें अलंकृत शोभायमान है, मंदारके वृक्ष पारिजात पाटल अशोक चंपा ॥ १० ॥ आंम चिरौंजी कटहर आमरे सुपारी नरियर खजूर बिजोरा ॥ ११ ॥ महुवा साल ताल तमाल पीतसाल अर्जुन साल रीठा गुलरि पिलखन वर ढाक चंदन ॥१२॥ नीम कचनार स्वरूपा सीसों देवदारु दाख ईख केरा जामुनि बेरी बहेरा हरड आमला ॥ १३ ॥ बेल कैथ जंभीरी भिलाये आदि वृक्षन करिके शोभित है ता पर्वतमें बडे विशाल एक सरोवरमें पीत कमल फूल रहे हैं ॥ १४ ॥ कुमुद उत्पल कह्लार शतपत्रकी शोभाकरिके युक्त हैं, सुंदर मतवारे भौंरानकर वामें शब्द व्है रहे हैं और मनोहर शब्द करते अनेक पक्षी जहां वर्तमान है ॥ १५ ॥ सुंदर बोलनहारे पक्षी हंस कारंडवसो आकीर्ण हैं चकई, चकवा, सारस, जलमुरगा, कोयल, पपीहा, दादुरके समूह कूजितेहैं ॥ १६ ॥ मच्छ कच्छके डोलवेसे वाके कमल चलायमान हे रहे हैं तिनके परागरससों युक्त जल और कदंब वेत नरसल लोटनकदंब धूलिकदंब बिजोरे बेलके वृक्षनसों वेष्टित है ॥ १७ ॥ कुंद कुरवक अशोक शिरस गुडहर गोंदी कुन्जक स्वर्णजुही नागकेशरि पुन्नाग जातिके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वृक्षनसो शोभित है ॥१८॥ जुही, जाई, चमेली, कमल, माधवी, जालक इन करिके नित्य सुशोभित है फल फूल समृद्धियुक्त किनारेनपै शोभित वृक्षनसो सुशोभित हैं ॥ १९ ॥ तहां एक दिन वाही वनपर्वतके आश्रित कोई हाथीनके यूथको पालक हथिनीकरिके सहित विचरतो प्यासके मारे पीडित अपने यूथको संग लेके जल पीवेको सरोवरिके निकट आवत भयो, कांटेनकरिके सहित पोले वांस और ठोसवांस वेतके समूह और सब वृक्षनको तोरतो विचरतो हो ॥ २० ॥ जा हाथीकी गंधमात्रसों सिंह और थोकके हाथी, व्याघ्र, सर्प, मृग, गेंडे, अजगर, गऊ, करसारीथर हरिण, सेह, सुरैगो यह संपूर्ण भयतें भाजि जाते हैं ॥ २१ ॥ ल्यारी, शूकर, भैंसा, रीछ, सेह, लंगूर, कुत्ता, वंदरा, हरिण, शशनसो आदि लेके क्षुद्र जीव वाकी दृष्टि बचाय जाके अनुग्रहसो निर्भय वनमें विचरते ॥ २२ ॥ सो गजराज घामकरिकै तप्त हथिनीनकरिके सहित अंगसों मद चुचावतो अपने लहुरे लहुरे बच्चानके सहित अपनी देहके बोझकरिके पर्वतकों कंपावतो मदके पान करनेवारे भोंरानके कुल करिके सेवित ॥ २३ ॥ कमलनके परागसैं सुगंधित वा सरोवरके पवनकूं पासतें सूंघतो, मदसों विह्वल नेत्र किये जलके प्यासे अपने यूथको संग लिये बडे वेगसे दौडके वा सरोवरके पास आयो ॥ २४ ॥ ता सरोवरमें स्नान करिके सुवर्णके अरविंद उत्पलके परागसो सुगंधित अमृतवत् मीठो निर्मल जल अपनी सूंडिमें लेलेके खूब पीवत भयो और जलकरिके अपनी देहकूं न्हवावत भयो ॥ २५ ॥ खेदरहित भयो अपनी सूंडिमें धारण किये जलसे गृहस्थीकी तरह अपनी हथिनी बच्चानको न्हवावतो जल पिवावतो कृपण मदयुक्त दयालु ये गजराज ईश्वरकी मायाकरिके आयो जो कष्ट है वाको नहीं जानत भयो ॥२६॥ हे परीक्षित् ! वा सरोवरमें दैवको प्रेरचो बडो बली कोई एक ग्राह गजराजके चरणकूं क्रोधकरिके पकरत भयो, ऐसे अकस्मात् गजराज कष्टकूं प्राप्त भयो तब और अतिबली ग्राह जितो अपनो बल है ता करिके छलसूं तितनो पैर खेंचत भयो ॥ २७ ॥ अपने बलवान् यूथपतिको ग्राहके खैंचवेसो आतुर देख वे दीन हथिनी पुकारने लगीं, जे सहायके करनवारे हाथी तेऊ छुडायवेकों समर्थ न होत भये ॥ २८ ॥ ऐसे हाथी और ग्राहको युद्ध होते होते परस्पर भीतर बाहिर खेंचते खेंचते, हे पृथ्वीपति राजा परीक्षित् ! तिनको १ हजार वर्ष युद्ध करते व्यतीत होत भये, दोऊ प्राणसहित हैं यह देखिकै देवता आश्चर्य मानते भये ॥ २९ ॥ ताके अनंतर जलमें खिचने और दुःख पायवेसो गजराजको मन बल पराक्रम बहुत कालकरिके परम ह्रास भयो, और खेचनेवारे जलवासी ग्राहको बल आदि सब विपरीत भयो अर्थात् बढत भयो ॥ ३० ॥ ऐसे देहको धारण करनवारो विवश गजराजको अकस्मात् प्राणनको संकट प्राप्त होवेसैं अपनेकूं छुडाइवेको समर्थ न होत भयो, सो बडी देरताई चिंतवन करत भयो तापीछे या बुद्धिकूं प्राप्त होत भयो ॥ ३१ ॥ जे मेरी जातिके हाथी वे सब आतुरको मोय छुडायवेके लिये समर्थ न होत भये तो ये मेरी हथिनी भला कहांते होइंगी, देखो विधाताके ग्राहरूप पासमें मैं विध्यो हूं यातें ब्रह्मादिकनके आश्रय परमेश्वरकी मैं शरण जाऊहूं ॥ ३२ ॥ प्रचंडवेग बली

---

१ शंका—हाथियोंका अभिमान भंग करनेवाले जो सिंह हैं सो सब सिंहोंने उस गजकी देहकी सुगंधिको सूंघकर वनको छोड इधर उधर भाग गये, बडे आश्चर्यकी बात है, एक सिंहको देखकर हाथियोंके यूथके यूथ भाग जाते हैं फिर एक हाथीकी गन्धको सूंघकर सब वनके सिंह क्यों भाग गये ?

उत्तर—आपका कहना बहुत सत्य है सिंहके सामने हाथी नहीं ठहर सक्ते, वरन् सिंहके वनमें हाथी जाताभी नहीं यह बात जो प्राकृत हाथी होता है उसकी है, और यह हाथी तो तपस्वी था, शापसे हाथी हो गयाथा परन्तु इसको रात दिन इसका पूर्व जन्मका तप रक्षा करता था, उस तपकी अग्निके गन्धसे सब सिंह भाग गये। अथवा इस मत्त गजराजके अगाडी किसी व्याघ्रादिकका पराक्रम कुछ नहीं चल सकता है ये सामान्य हाथी नहीं हैं इसमें संदेह नहीं करना ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सन्मुख दौरते कालरूपी सर्पतें डरपे शरण आयेकी ईश्वर रक्षा करें हैं, तिनकी शरण मैं जाऊं जाके भयते मृत्युहू भाजे है ॥ ३३ ॥

यः कश्चनेशो बलिनोऽन्तकोरगात्प्रचण्डवेगादभिधावतो भृशम् ॥
भीतं प्रपन्नं परिपाति यद्भयान्मृत्युः प्रधावत्यरणं तमीमहि ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

श्रीशुक उवाच–एवं व्यवसितो बुद्ध्या समाधाय मनो हृदि ॥
जजाप परमं जाप्यं प्राग्जन्मन्यनुशिक्षितम् ॥ १ ॥

तीसरे अध्यायमें गजेंद्रने स्तुति की तब हरि भगवान् आयके ग्राहतें गजराजको उद्धार करते भये, और ग्राहको देवल ऋषिके शापतें उद्धार करत भये यह वर्णन करेंगे ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् ! ऐसी बुद्धिसो गजराज निश्चय कर अपने अंतःकरणमें मनकूं सावधान करि पहिले जन्ममें सीखे जप करिवेकों योग्य जो स्तोत्र है वाकूं जप करत भयो ॥ १ ॥ गजेंद्र बोलो ॥ तिन भगवान्के अर्थ नमस्कार है, जाते यह देह चैतन्य और सब चेतन जीव जात उत्पन्न होय हैं जो पुरुषरूप सबको आदिकारण परमेश्वर हैं और जो ब्रह्मरुद्रादिकनकोहू नियंता है तिनको हम ध्यान करें है ॥२॥ जामें जाते जाकरिकें विश्व होवे है, जो आपु विश्वरूप होवेहैं, जो कार्य कारणतें परे स्वतःसिद्ध हैं विन स्वयंभूकी शरणमें मैं प्राप्त भयो हूं ॥३॥ जो आपेमें अपनी मायाकरिके या विश्वको धारण कर कभी प्रकाश कभी लीन करते हैं जिनकी दृष्टि कभी लीन नहीं होती सो साक्षी होकर कार्य कारणको देखते हैं वह स्वयंप्रकाशक आत्मशब्दवाच्य जीवतत्वको कारण परेसें परे भगवान् मेरी रक्षा करो ॥४॥ जा समय कालके प्रतापसो सह सम्पूर्ण पंचतत्वसहित महदादिक लोक और लोकपाल सब नाश होजाते हैं वा समय एक महागहन गंभीर अधकारही रहे है और कुछ नहीं वा तमसोही परे विराजनेहारे नारायण हैं ॥५॥ जाके स्वरूपकों देवते ऋषि नहीं जानते तौ और कौन प्राणी जानवेकूं और कहिवेकूं योग्य हैं जैसे मायासो चेष्टा करनवारे नटके चरित्र जानिवेमें नहीं आतेहैं, तैसे दुरत्यय चरित्रवारे भगवान् मेरी रक्षा करो ॥६॥ जाके मंगलमय पद देखिवेकी इच्छासो सब संग त्यागी संपूर्ण प्राणिमात्रमें समदृष्टिवारे सबके सुहृद साधु मुनि अच्छिद्र ब्रह्मचर्यादिक व्रतकों एकांत वनमें जायकें करे हैं, सो मोकूं गति प्राप्त होहु ॥ ७ ॥ जाको जन्म कर्म नाम रूप गुण दोष नहीं तथापि लोकनके प्रलय जन्मके लिये जो अपनी माया करिके जन्मादिक धारण करे है, ताके अर्थ नमस्कार हैं ॥ ८ ॥ अनंत शक्ति, बहुरूपधारी, ब्रह्म, परेश, स्वरूपरहित, आश्चर्यकर्मा परमेश्वरके अर्थ नमस्कार हो ॥ ९ ॥ आत्मतत्वको प्रकाशक, साक्षी, परमात्मा है वाणी चित्त मनसो दूर है ताके अर्थ नमस्कार हैं ॥ १० ॥ जो शुद्ध संन्यास ताकरिकें प्राप्त होते मोक्ष देनेवारे मोक्षानंदके जाननेहारेके अर्थ नमस्कार है ११ ॥

१ गजराज बोलो । तोरी गति जानी ना परै ॥ टेक ॥ सुर मुनि अगम अगाध अगोचर केहि विधि बुल सचरै ॥ गागरमें सागर कर राखै चहुं दिशि नीर ढरै ॥ १ ॥ कबहुंक तृण बूडै पानीमें कबहुंक शिला तरै ॥ २ ॥ कबहुंक रंक रंकते राजा नरशिर छत्र धरै ॥ कबहुंक विविध समस्त विमल उर राजै रंक करै ॥ ३ ॥ नरअलीह उद्यम विन आशा अजगर उदर भरै ॥ अतिप्रचंड पौरुष बलपावन केहरि भूंक मरै ॥ ४ ॥ कृपानिधान देत छिनहीमें बलसे दानि छरै ॥ कबहुंक जूंठ मूठ सिंहनतें बलकर अजा लरै ॥ ५ ॥ हस्ती मार गरदकर डारै तनहाके छत्र धरै ॥ रीते भरै भरे ढरकावै जब चाहे तब फेर भरै ॥६॥ ऐसे ख्याल गोपाललाल के को करि सोच मरै ॥ सूर पतित तरजाय छिनकमें जो हरि कृपा करै ॥ ७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शांत, घोर अर्थात् जो गुणवृत्तिरूप है मूढ गुणधर्मके अनुकरण करनेहारे निर्विशेष, सौम्य, ज्ञानघन-के अर्थ नमस्कार करूं हूं, परब्रह्म परमेश्वर पूर्ण सच्चिदानंदको नमस्कार करूं हूं ॥ १२ ॥ क्षेत्रज्ञ सबनके अध्यक्ष साक्षी पुरुषरूप क्षेत्रजननके मूल कारण प्रकृतिकेहू मूलकारणके अर्थ नमस्कार है ॥ १३ ॥ सब इंद्रियगुणनके द्रष्टा इंद्रियनकी वृत्तिनमें व्यापक जैसे प्रतिबिंब बिंबको प्रगट करे है तद्वत् असत् अहंकारादिके प्रगट करनेहारे सद्रूपतासों प्रकाशमानके अर्थ नमस्कार है ॥ १४ ॥ सर्वके कारणरूप स्वयं निष्कारण, अद्भुत कारण सब आगम वेदके महासमुद्र मोक्षरूप सबसो उत्तम आश्रयके अर्थ नमस्कार है ॥ १५ ॥ गुणही (जे (अरणि) आग मथनेको काष्ठ) सो जिनकी ज्ञानरूप अग्नि ढकी है जिनको मन सृष्टिके आरंभमें गुणनके क्षोभसों बहिर्वृत्तिवारो होय है आत्म-तत्वके भावसों विधिनिषेधको दूर करनवारे स्वयंप्रकाशके अर्थ नमस्कार है ॥१६॥ मोसरीखे शरण आये पशुके त्रासको छुडामनवारे आप मुक्त है हे करुणासागर ! आप आलस्यरहित अपने अंश करिके सब देहधारिनके मनमें प्रतीत होते हो सब प्राणीनमें अन्तर्यामी रूपसों व्यापक अपरिच्छिन्न भगवान्के अर्थ नमस्कार हैं ॥ १७ ॥ देह पुत्र प्यारे घर धन मनुष्यमें आसक्तनकों मिलवेकों अशक्य हैं, गुणसंगकरिकें रहित है, मुक्त आत्मावारेनने अपने हृदयमें भावना किये है ऐसे ज्ञानरूप ईश्वरके अर्थ मैं नमस्कार करूं हूं ॥ १८ ॥ धर्म, काम, अर्थ, मुक्ति, कामनावारे जाको भजनकरिके श्रेष्ठ गतिको प्राप्त होय है और कामनावारोनको कामनाके देनवारे दयासागर मोको मोक्ष करो॥१९॥ भगवान्के शरणागत एकांत भक्त काहू अर्थकी चाहना नहीं करें हैं, अतिअद्भुत मंगलरूप आपके चरित्र गावे हैं, आनंदसमुद्रमें मग्न हैं ॥ २० ॥ सो अक्षर परब्रह्म परमेश्वर अव्यक्त अध्यात्मिक योगकरिके गम्य हैं, इंद्रियनकरिके नहीं देखे जाते हैं जो सूक्ष्म अतिदुरत्यय, अनंत, आद्य, परिपूर्ण है तिनकी मैं स्तुति करूं हूं ॥ २१ ॥ ब्रह्मादिक देवता वेद और चराचरलोक ये सब नामरूप भेदसो जाकी तुच्छ कलाकरिके रचे गये हैं ॥ २२ ॥ जैसे अग्नितें ज्वाला होवे हैं, सूर्यतें किरण होवे है, फिर तिनहीमें निरंतर प्रवेश करें हैं याही प्रकार बुद्धि मन इंद्रिय शरीरयुक्त प्राणिसमूहवारो यह संसार वासो उत्पन्न होके वाहीमें लय हो जाय है ॥ २३ ॥ सो परमेश्वर देवता असुर मनुष्य पशु पक्षी स्त्री पुरुष नपुंसक प्राणीमात्र गुण कर्म कार्य कारण इनमेंसों जो कोई नहीं है निषेधही है परन्तु निषेध करवेमें जो शेष रहे है जो मायाकरिके सर्वरूप है सो मेरे छुडायवेकूं प्रगट होउ ॥ २४ ॥ भीतर बाहर अज्ञानकरिके व्याप्त हाथीकी जाति करिके कहा है, मैं जीवेकी कछु इच्छा नहीं करूं हूं, कालकरिके नाशरहित आत्मलोकके आवरणके मोक्षकी इच्छा करूं हूं ॥ २५ ॥ विश्वको सृजनवारो विश्वरूप विश्वके धनी विश्वके आत्मा अजन्मा ब्रह्मरूप परमपदको मैं प्रणाम करूं हूं ॥ २६ ॥ जिनके कर्मयोग करके दूर भयेहै ऐसे योगी योगकरके शुद्ध हृदयमें जाय देखें है वा योगेश्वरको मैं नमस्कार करूं हूं ॥ २७ ॥ जो सम्पूर्ण इंद्रियनके विषय रूपसों प्रतीत होते है शरणमें प्राप्त हुए पुरुषनकी रक्षा करते हैं खोटी इंद्रियवारे जिनके मार्गको नहीं पाय सके हैं वेगवारी तीन शक्तिनके नियन्ता महाशक्तिमान् ईश्वरको मैं प्रणाम करूं हूं ॥ २८ ॥ जाकी मायासो अहंकार करके आवृत यह जीव अपने आत्माकूं नहीं जानें हैं ऐसे दुरंत महात्मवारे भगवान्के मैं आश्रय भयो हो ॥ २९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! जब यह नाम लेके भगवान्की निर्विशेष स्तुति कीनी और नाना प्रकार मूर्तिभेदके अभिमानवारे ब्रह्मादिक न आवत भये, तब सबनके आत्मा सर्वदेवमय हरि भगवान् प्रगट होते भये ॥ ३० ॥ या प्रकार आर्त (दुःखित) गजराजकूं जानिके जगन्निवास भगवान्

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अपनो स्तोत्र सुनिके स्तुति करते देवतनकरिके सहित वेदमय गरुडपै चढिके चक्र हाथमें लै जहां गजराज हे तहां शीघ्रही भगवान् आवते भये ॥ ३१ ॥ बडे बली ग्राहसो सरोवरिके भीतर पकरो आर्त गजराज, चक्र लिये गरुडपैं बैठे आकाशमें हरिकों देखिके, शुण्डिसूं कमलको फूल ऊंचों उठाइके कष्टतें नारायणके कमनकी बडाई करतो हे नारायण, हे अखिलगुरु, हे भगवन् ! तुमको नमस्कार है ॥ ३२ ॥ भगवान् पीडित गजराजकूं देखिके गरुड मंदगति है यह जानि गरुडपेंसे उतारि निकट आई कृपा करिके ग्राहसहित गजकूं निकासि लेत भये, तबहू ग्राहने नहीं छोडो तब चक्र करिकै ग्राहको मुख चीरिकै सम्पूर्ण देवतानके देखत हरि भगवान् गजराजकूं छुडावते भये ॥ ३३ ॥

तं वीक्ष्य पीडितमजः सहसाऽवतीर्य सग्राहमाशु सरसः कृपयोज्जहार ॥
ग्राहाद्विपाटितमुखादरिणा गजेन्द्रं संपश्यतां हरिरमूमुचदुस्रियाणाम् ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

श्रीशुक उवाच–तदा देवर्षिगन्धर्वा ब्रह्मेशानपुरोगमाः ॥
मुमुचुः कुसुमासारं शंसन्तः कर्म तद्धरेः ॥ १ ॥

चौथे अध्यायके विषे ग्राह जो हैं वह गंधर्वताको फेरि प्राप्त भयो गजराजकों अपनो पार्षदकरि हरि अपने लोकमें लै जात भये यह वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी राजा परीक्षित्सों कहें हैं ता समय ब्रह्मा महादेव मुख्य देवता ऋषीश्वर गंधर्व ए सब भगवान्के वा गजराजके उद्धार करनेरूप कर्मकी बडाई करते फूलनकी वर्षा करत भये ॥ १ ॥ देवतानके नगाडे बाजत भये, गंधर्व नाचत और गावत भये, ऋषि चारण सिद्ध पुरुषोत्तम भगवान्की स्तुति करत भये ॥ २ ॥ ग्राह तत्काल परम आश्चर्यरूपको धारण करनवारो होत भयो, देवलऋषिके शापतें छूटत भयो, यह गंधर्वनमें मुख्य उत्तम पहले हूहूनाम गंधर्व हो सो यह हूहू स्त्रीनकूं संग सरोवरमें क्रीडा करे हो, तब स्नानके लिये जलमें प्रवेशकर देवलको पांव पकरिके खेंचत भयो, तब मुनिने क्रोधकर शाप दियो कि अरे दुष्टात्मा दुर्मति बिन अपराध तैंने मोकूं खेंच्यो, तातें तू ग्राह हो; तब हूहू बडी स्तुति करत भयो ताकी स्तुतिकूं सुनिके देवल प्रसन्न होतभयो, तब वरदान देतभयो जब तूं गजराजकूं पकरेगो तब वाके छुटाइवेके लिये भगवान् आवेंगे सो तेरो उद्धार करेंगे ॥ ३ ॥ सोई सबनके ईश्वर उत्तम यशी अव्यय यशके धामकूं गुणानुवाद कीर्तन करिवे लायक हैं; जिनके गुण श्रेष्ठ हैं, जिनकी अमृतरूपी

---

१ कवित्त–गेरिके ग्रस्यो है गजराज गोडगाडचो ग्राहगालिम गंभीर नीर चाहें सो गिरायो है । रह्यो नाहिं जोर थोर चितयोसो चारौं ओर काहूको निहारे नाहिं जीवन दिखायो है ॥ कहै रघुराजसो गिरीन्द्र तजि फंद सब कर अरविंद ले गोविंद गुहरायो है । कैधों हरि कंठहीतैं करिकरहीतें किधों कमलतें कमलको कंत कढि आयो है ॥

२ नारायण उसी स्थानपर प्रगट हो जाते परन्तु गजने वैकुंठनाथ कहकर पुकारा इस कारण भक्त हृदयकी भक्तिके अनुसार वैकुंठसे आये ॥

३ अलक्षितपतत्पटी गलितमालिकोरस्तटी निवृत्तखगवाहना चकितदृष्टिपद्मासना ॥ अलक्ष्यसुरसंनुतिर्विदितचंडचेतो गतिर्गजोद्धरणतत्परा भगवतस्त्वरा पातु वः॥१॥ नहीं लखो है गिरतो पीतांबर जामें और टूटकर कंठसे गिर पडी है माला जिससे ऐसा है वक्षस्थल जिनका और अरे गरुड ! तोको वहा भयो ऐसे धमकायकर निवृत्त किया है गरुड जिसमें और चकित होकर देखने लगे ब्रह्मा जिसमें और नहीं देखी है देवताओंकी प्रणाम जिसमें ऐसी भगवान्की त्वरा पालन करो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कथाको महात्मा कर्णपुटद्वारा पान करते हैं विन भगवान्‌कों शिरसों प्रणाम कर विनको यश गायवे लगो ॥ ४ ॥ ईश्वर परब्रह्मकी कृपासो जाके पाप दूर है गये वह हरिकूं प्रणाम करिके परिक्रमा देके संपूर्ण लोकके देखते अपने गंधर्वलोकको जात भयो ॥ ५ ॥ गजेंद्र भगवान्‌के स्पर्शतें अज्ञान बंधनते मुक्त होत भयो पीताम्बर पहरे चार भुजा धारे साक्षात् भगवान्‌के रूपकों प्राप्त भयो ॥ ६ ॥ सो पहले पांडुदेशको द्राविड देशमें उत्तम इंद्रद्युम्न नाम विष्णुव्रतधारी राजा होत भयो ॥ ७ ॥ सो इंद्रद्युम्न नाम राजा आराधनके समय एकदिन मौनव्रत ले मनकूं वश करि तपस्वी हो जटानकों धारण करि त्रिकाल स्नान करिकें मलयाचलमें आश्रम कर ईश्वर हरि अच्युतकी पूजा करतभयो ॥ ८ ॥ तहां बडे यशस्वी शिष्यनकरिके सहित अकस्मात् अगस्त्यजी आये, तिनें देखिकें चुप होतभयो पूजा न करत भयो एकांतमें बैठ्यो रह्यो ताय देखिकें ऋषि क्रोधायमान होतेभये ॥ ९ ॥ तब वाके अर्थ अगस्त्यजी यह शाप देतेभये यह राजा असाधु दुष्टात्मा अकृतबुद्धि है, ब्राह्मणनकी अवज्ञाकरै है, अनम्रमति है, जैसै हाथी बैठ्यो होय तैसे बैठ्यो रह्यो, यातें यही शाप है कि यह हाथी है जाओ॥ १० ॥ शुकदेवजी परीक्षित्‌सै बोले ॥ ऐसै शाप देकै शिष्यनसहित भगवान् अगस्त्यजी चलेगये तब इंद्रद्युम्न राजा अपने अदृष्टको धारणकर हाथीकी योनिकों प्राप्त होतभयो, जो योनि आत्माके धारणाकी नाश करनवारी है वाकें पीछे हाथीकी योनिमें जो स्मरण होतभयो सो हरिकी सेवाके प्रभावकरिकें अर्थात् याको पूर्व जन्मकी सब खबर बनी रही ॥ ११ ॥ १२ ॥ कमलनाभि भगवान् चक्र धारण कर गजराजकों छुडायकें पार्षद गति देतभये, अपनोसो रूप सुंदर शंख चक्र धारणकरें पीतांबर जरीके वस्त्र पहरे ताय संग लेकें गंधर्व देवता सिद्धोंसैं गाये कर्मको सुनते गरुडपर बैठ अपने लोककों जाते भये ॥ १३ ॥ हे महाराज ! यह गजराजमोक्ष श्रीकृष्णको प्रभाव मैंने तुम्हारे आगे कह्यो, हे कुरुवंशीनमें श्रेष्ठ हे राजन् ! जो याको सुनेंगे तिनको दुःस्वप्ननाश होता है, स्वर्गकों प्राप्ति करे हैं, यशकों देयहै कलिके पापनकों नाश करैहैं ॥ १४ ॥ श्रेय कल्याणकी इच्छा करनवारे जे ब्राह्मण प्रातःकाल उठ पवित्र हैकै गजेंद्रमोक्षको पाठ दुःस्वप्ननाश हेके निमित्त पवित्र हैके यथायोग्य कीर्तन करैंगे उनके दुःस्वप्न नाश होयगे ॥ १५ ॥ हे कौरवनमें श्रेष्ठ ! सब प्राणिनके सुनते २ भगवान् हरि समर्थ जिनको सब प्राणिनमें निवास है वे प्रसन्न हेकै गजराजसूं यह कहत भये ॥ १६ ॥ जो हमको तुमको या सरोवरकूं पर्वत कंदरा बनके वेत बांसनके समूह देवतानके वृक्षनको स्मरण करैंगे ॥ १७ ॥ ब्रह्मा महादेव और मेरे रहनेके धाम वा पर्वतके शिखर प्रिय क्षीरसमुद्र और मेरे प्यारे श्वेतद्वीपको स्मरण करेंगे वे संपूर्ण पापनतें छुटि जायंगे ॥ १८ ॥ श्रीवत्स कौस्तुभ माला मेरी कौमोदकी गदा सुदर्शन चक्र पांचजन्य शंख पक्षीनको राजा गरुड ॥ १९ ॥ मेरी कला शेष, मेरे आश्रय देवी लक्ष्मी, ब्रह्मा, नारदऋषि, शिव, प्रह्लाद ॥ २० ॥ मत्स्य, कच्छप, वराह आदि अवतारनके चरित्र जे महापुण्यदायक हैं और सूर्य चंद्रमा अग्नि ॥ २१ ॥ ओंकार सत्य प्रधान गौ

---

१ परन्तु जिमीदार ठाकुरकेसी कथा सुनवेतें कछु फल नहीं मिले है, एक जिमीदारने रामायणकी कथा कहाई, पंडितजी बडे प्रेमसों वाची पूरि व्हैगई जब पण्डितजी दक्षिणा ले बिदा भये तब एक ठाकुरने आनकै कही कि पंडितजीने कथा तौ खूब कही, पर जीमें एक संदेह रह गयो, जिमीदार बोले कहो, तब ठाकुरने कही कि यह समझमें न आई, कि राक्षस कौन हो, रावण कि राम, जिमीदारने कही यही संदेह हमे है, सो पंडितजी अभी दूर नांयगये हैं, आवाज दे लो तब उन्होंने पंडितजीको पुकारे, उन्होंने जानी कोई दक्षिणावारो पुकारै है सो जलदीसे लौटे सन्देह पूछने पर पंडितजी बोले, राम, रावण दोऊ राक्षस नाय या मैं या तू राक्षस है जो मोपै समझ आई तेरी समझमें न आई, ऐसे कथा ना सुनै जो समझमेंहू न आवे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ब्राह्मण अव्यय धर्म और दक्षकी बेटी धर्मकी स्त्री और चंद्रमा कश्यपकी स्त्री ॥ २२ ॥ गंगा सरस्वती नंदा कालिंदी ऐरावत ध्रुव सप्तऋषि और पूर्ण यशवारे मनुष्यनको ॥ २३ ॥ पिछिली रातिके अंतमें उठिके पवित्र सावधान होकै इन मेरे स्वरूपोंको स्मरण करेंगे ते सिगरे पापनते छूटिके मुक्त होइंगे ॥ २४ ॥ हे गजराज ! तेरे किये स्तोत्रसों प्रातःकाल उठिकरिके जे मेरी स्तुति करेंगे तिनको मैं मृत्युके समय निर्मल मन बुद्धि देऊंगो ॥ २५ ॥ शुकदेवजी कहे हैं हे राजन् ! ऐसे भगवान् आज्ञा देके शंख बजाय देवतानके समूहको आनंद देत गरुडपैं चढिकें अपने लोककों जाते भए ॥ २६ ॥

श्रीशुक उवाच–इत्यादिश्य हृषीकेशः प्रध्माय जलजोत्तमम् ॥
हर्षयन्विबुधानीकमारुरोह खगाधिपम् ॥ २६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

श्रीशुक उवाच–राजन्नुदितमेतत्ते हरेः कर्माघनाशनम् ॥
गजेन्द्रमोक्षणं पुण्यं रैवतं त्वन्तरं शृणु ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी याके आगे आठ अध्यायनकरिके अमृतको आख्यान वर्णन करेंगे, जा आख्यान विषे हरि अपने भक्तनको पक्षपातकरिकै स्त्रीको रूप धारण करतेभये शुकदेवजी राजा परीक्षित्सों कहें हैं कि हे राजन् ! हरि भगवान्को चरित्र गजेंद्रमोक्षको माहात्म्य पापको नाश करनवारो तुमते कह्यो अब रैवतमनुको तुम सुनो ॥ १ ॥ पांचवे रैवतनामक मन्वन्तर तामस मनुको भ्राता होत भयो, ताके बलिविंध्यादिक और अर्जुनपूर्वक पुत्र होते भये ॥ २ ॥ विभु इंद्र भयो, भूतरय आदि लेकै देव भये हिरण्यरोमा वेदशिरा ऊर्ध्वबाह्वादिक सप्तऋषि भये ॥ ३ ॥ शुभ्रकी विकुंठानाम स्त्रीके विषे अपनी कलासौं पूर्ण वैकुंठनाम देवतनको संग लेके वैकुंठ नाम भगवान् आप जन्म लेतेभये ॥ ४ ॥ लक्ष्मीने प्रार्थना कीनी, तब लक्ष्मीके प्रिय करिवेके लिये लोकनकरिकैं नमस्कार योग्य वैकुंठलोक रचते भये ॥ ५ ॥ विन वैकुंठनाथको प्रभाव कह्यो और परमोदार गुणनको तौ जो सब पृथ्वीकी रेणु गिने सोहू वर्णन करवेको समर्थ नहीं होसके हैं ॥ ६ ॥ छठ्यो चाक्षुकको बेटा चाक्षुष नामकरिके मनु होतभयो पुरुपुरुष सुद्युम्नतें आदि लेकें तिनके पुत्र होत भये ॥ ७ ॥ ता समय मंत्रद्रुम नाम इंद्र होतभयो, आप्यादिक देव होतभये, हविष्मत् वीरकतें आदि लेके मुनि होतेभये ॥ ८ ॥ ता मन्वन्तरमें वैराजकी स्त्री संभूतिके अजितनाम भगवान् जगत्के पति अंशनकरिके युक्त पुत्र होतेभये ॥ ९ ॥ जिनने समुद्र मथिकें देवतानको अमृत प्यायो, जिनने कच्छपरूप धरिके जलके भीतर जायके भ्रमण करते मंदराचलको धारण कियो ॥ १० ॥ राजा पूछै है हे ब्रह्मन् ! जैसे भगवान्ने क्षीरसागर मथ्यो और जा हेतुसों कच्छपरूप धरिके मंदराचलपर्वतको धारण कियो, और जैसे देवतानको अमृत प्यायो, सो कहो अथवा वासो विषयमें जो कछु औरहू कथा होय सो कहौ क्योंकि यह भगवान्को चरित्र परम अद्भुत है सो कहौ ॥ ११ ॥ भक्तनके पति हरि भगवान्की महिमा तुमनें कही वासो चित्त अति तृप्त नहीं होय है, ताते हे मुने ! यह भगवान्को चरित्र परम अद्भुत कहो ॥ १२ ॥ यादवनके पति भगवान्की महिमा जो तुमने कही है सो महिमा त्रिविध तापनको नाश करिवेवारी है, वा भगवान्की कथातें मेरो चित्त नहीं तृप्त होय है ॥ १३ ॥ सूतजी शौनकादिकनसों कहें हैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे ब्राह्मणहो ! ऐसे राजाने पूछे तब व्यासपुत्र भगवान् शुकदेवजी राजाको सन्मान करिके हरिके पराक्रमकूं कहिवेकूं प्रारंभ करतेभये ॥ १४ ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज कहैं हैं कि जा समय असुरनने अपने आयुधनसों देवतानपे प्रहार किये तब वे देवता प्राणनसो रहित होके गिरपडे फिर न उठे ॥ १५ ॥ वा समय दुर्वासाके शापकरिकें इंद्रसहित तीनों लोक नष्टश्री होतभए, तब यज्ञादि क्रिया नष्ट होती भई "ताकी यह कथा है कि दुर्वासाने काहूसमय मार्गमें चले जाते इंद्रकूं देखिके अपने कंठकी माला इंद्रकूं दीनी इंद्रनें वह श्रीमदसो अनादर करिके ऐरावतहाथीके माथेपे डारिदीनी, उन्मत्त हाथीने वा मालाकों पांयनसों चूर्ण करिडारी तब दुर्वासा शाप देत भए तीनों लोकसहित संपत्तिहीन होउ" ॥ १६ ॥ नष्ट भई लक्ष्मीको देखके इंद्र वरुणतें आदि लेके देवतानके गण आपु मंत्रणकरिकें विचार करे है तोऊ निश्चयकूं प्राप्त न भए तब देवता संपूर्ण सुमेरुके ऊपर ब्रह्माकी सभामें जातेभए, और ब्रह्माकों प्रणाम करिकै संपूर्ण वृत्तांतकों जनावतेभए ॥ १७ ॥ १८ ॥ सो ब्रह्मा और इंद्र वायु आदि सब देवतानकूं निःसत्व और कांतिहीन देख और असंगलयुक्त प्राय सब लोकनकों देखिके असुरनकों बलपुष्टतादिकयुक्त देखि एकाग्रमनसो परमपुरुष नारायणको स्मरण कर प्रफुल्लित है मुखकमल जिनकों ऐसे भगवान् ब्रह्माजी बोलतेभये ॥ १९ ॥ २० ॥ मैं महादेव और तुम असुरादिक मनुष्य पशु पक्षी वृक्ष जरायुज अंडज उद्भिज्ज स्वेदज जाके अवतारकी अंशकलाकरिके सृजेहैं, सो वा अव्यय भगवान्की हम शरण जाइंगे ॥ २१ ॥ जाको कोई वध करिवेकों योग्य नहीं, रक्षा करिवेकूं योग्य नहीं, और उपेक्षाके योग्य नहीं, आदरकों योग्य नहीं पक्षपात नहीं तोउ सर्ग स्थिति संयमके लिये रज सत्वतमगुणनको समयके विषें धारण करें है ॥ २२ ॥ सतोगुणके धारण करनेवारे हरि भगवान्को देहधारिनके कल्याणके निमित्त अभी यह स्थिति और पालन करवेको समय है तातें जगत्के गुरु हरिकी शरण जाइंगे, देवतानके प्यारे हम अपनेको वे सुखप्राप्ति करेंगे ॥ २३ ॥ शुकदेवजी परीक्षित्सों बोले कि या प्रकार देवतानसे ब्रह्माजी कहिके शत्रुनके मारनेवारे देवतानको संग लेके तमतें परे अजित भगवान्के साक्षात् स्थानको जातेभये ॥ २४ ॥ वहां जायके अदृष्टस्वरूप केवल वाणीसो सुनेभए व्यापक ईश्वरकी इन्द्रियनकों सावधानकरकै दैवी वाणीसों ब्रह्माजी स्तुति करतेभये ॥ २५ ॥ ब्रह्माजी स्तुति करैं हैं हे देव ! तुम विकाररहित सत्य हो, अनंत हो, आद्य हो, अंतर्यामी हो, निरुपाधि हो, कहिवेमें नहीं आओहो, वाणी मनतें बडे वेगवारे, सब देवतामें श्रेष्ठ वरण करवे लायक आपको हम नमस्कार करें हैं ॥ २६ ॥ प्राण मन बुद्धि आत्माके जाननवारे अर्थ, इंद्रियनके प्रकाश करनवारे, निद्रारहित, प्राकृतदेहरहित जीवकी पक्षपात विद्या अविद्यातें हीन, अजर आकाशकीसी नांई व्यापक तीनों गुणनमें प्रगट भगवान्की हम शरण आये हैं ॥ २७ ॥ मायासों प्रेरणा कियो सो ए मनोमय दश इन्द्रिय और पांच प्राण ए पन्द्रह जाके आरे और शीघ्रगामी त्रिगुणरूपी तीन जाके नाभि बिजलीके समान चंचल आठ प्रकृति पुट्ठिवारो जो यह जीवको देहादिक रूप चक्र है वाके धुरीरूप सत्व आपकी मैं शरणको प्राप्त हूं ॥ २८ ॥ जो एकवर्ण हैं, मायातें परे हैं, अदृश्य हैं, भेदरहित हैं अंत पाररहित नियंता होकै जीवके समीप रत हैं जाकों योगरूपरथकरिकें धीरपुरुष उपासना करें हैं ॥ २९ ॥ जाकी मायाकों कोई नहीं तरें, जा मायाकरिकें जन मोहित होय हैं, जाके स्वरूपकों नहीं जानते माया और मायाके गुण जीतनहारे संपूर्ण प्राणीनमें समान रहवेहारे परमेश्वरकूं हम नमस्कार करैं हैं ॥ ३० ॥ यह हम देवता और ऋषि जाके प्रिय देहरूप सतो गुणसै प्रगट भए हैं तोहू जो बाहर भीतर प्रगट रहे है वाके स्वरूपको नहीं जाने है फिर कहो वाकों रजोगुणी तमोगुणी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दैत्यादिक कोई कैसें जाने ॥ ३१ ॥ यह पृथ्वी जाके चरण हैं जा पृथ्वीमें चारि प्रकारके प्राणीनको सर्ग होयहै सो स्वतंत्र है महापुरुष है ब्रह्मरूप है बडी विभूतिवारे हरि हमपै प्रसन्न होउ ॥ ३२ ॥ जिनको जल उदार पराक्रमरूपी वीर्य है जासों संपूर्ण लोक जीवे हैं जाते तीनों लोक और संपूर्ण लोकपाल उत्पन्न होंकें बढते रहते सो महाविभूतिनके पति हमपै प्रसन्न होउ ॥ ३३ ॥ देवतानको अन्नरूप बल और आयुरूप वृक्षनको स्वामी प्रजाकी वृद्धि करनवारो है यह चंद्रमा जाको मन है वे महाविभूति भगवान् हमपै प्रसन्न होउ ॥ ३४ ॥ जो यागादि कर्मकी प्रवृत्तिके निमित्त उत्पन्न भयो है धनको उत्पन्न करनवारो और उदरमें जाठराग्नि रूपसों खाये पिये पदार्थनको पचामनवारो अग्नि जाको मुख है वे महाविभूति भगवान् हमपर प्रसन्न होउ ॥ ३५ ॥ देवतानको मार्ग तीनवेदरूप ब्रह्मकी उपासनाको स्थान मुक्तिको द्वार, अमृतरूप मृत्युरूप सूर्य जाको नेत्र है, सो महाविभूति हमपै प्रसन्न होउ ॥ ३६ ॥ जा वायुरूप प्राणसों चराचरनके प्राण सह बल ओज वायु होत हैं जा प्राणकों हम देवता सेवन करें हैं, जैसे दास राजाको सेवन करेहैं सो महाविभूति हमपै प्रसन्न होउ ॥ ३७ ॥ जाके श्रोत्रनमें दिशा भई, हृदयसो छिद्र, नाभितें आकाश होतभयो, जो आकाश प्राण इंद्रिय मन और नागकूर्मादिक प्राण शरीरकों आश्रय है, सो महाविभूति हमपै प्रसन्न होउ ॥ ३८ ॥ जाके बलतें इंद्रिय भई हैं जाके प्रसादतें देवता भये, जाके क्रोधतें रुद्र भयो जाकी बुद्धितें ब्रह्मा भयो जाकी इंद्रियनते छंद ऋषि होतभये, मेढ्रतें प्रजापति भयो, सो महाविभूति हमपै प्रसन्न होहु ॥३९॥ जाके वक्षस्थलतें लक्ष्मी होति भई, छायाकरिकें पितर भये, स्तनतें धर्म भयो, पीठितें इतर (अधर्म) भयो, शिरतें स्वर्ग भयो, जाके उदरतैं आकाश भयो, विहारतें अप्सरा भई, सो महाविभूति हमपर प्रसन्न होउ ॥ ४० ॥ जाके मुखतें ब्राह्मण और वेद भये, जाकी भुजानतें बल क्षत्री भये, जंघानतें वैश्य होतभये, और जाके पांइनतें शूद्र होतभये; ऐसे महाविभूतिनके पति हमपै प्रसन्न होउ ॥ ४१ ॥ जाके अधर (नीचेके) होठतें लोभ होतभयो, जाके ऊपरके होठतें प्रीति और शील भयो सो महाविभूति हमपै प्रसन्न होउ ॥ ४२ ॥ जाकी योगमायाकरिकें द्रव्य काल कर्म गुण भौतिक प्रपंच ये भये, और यही काल कर्म गुण लौकिक प्रपंच जिनको निरूपण करनो अशक्य जानके विद्वान् लोग तेज देवे हैं सो महाविभूतिनको पति हमपै प्रसन्न होउ ॥४३॥ जिनकी नासिकातें कांति भई स्पर्शकरिकें पशुनकों काम होतभयो, भ्रुकुटीनतें यमराज भयो, पलकनके लगिवेतें काल भयो ऐसे उपशांत शक्ति और स्वाराज्यके लाभसै पूर्ण आत्मा मायाके गुणमें दर्शनादिसों आसक्तिरहित पवनकीसी लीलावारेके अर्थ नमस्कार है ॥४४॥ सो तुम हमारी इंद्रियनकें गोचर हो, अपने स्वरूपको दिखाओ, हम मुसिक्यानिसहित तुमारो मुख देखिवेकी इच्छा करें हैं, तुमारी शरण आये हैं ॥४५॥ जो भगवान् अपने भक्तनकी इच्छासों समय २ में विन विन रूपनको धारे हैं और हमसों न बनसकें ऐसे ऐसे कर्मनको करे हैं ॥४६॥ विषयलंपट पुरुष जो कर्म करें हैं वे बहुत क्लेशदायक थोडे सारवारे वास्तवमें मिथ्याही हैं परन्तु आपमें अर्पण किये कर्म ऐसे नहीं होय हैं ॥ ४७ ॥ थोरो और कर्मके आशारूप कर्महू ईश्वर अर्पण कियो निष्फल नहीं होयहै कारण कि ईश्वर सर्वभूतको आत्मा और हितकारक है ॥४८॥ जैसे वृक्षके गुहे शाखासहित जरके सींचेते तृप्ति होयहैं, ऐसे विष्णुको आराधन करे तो सबके आत्माको आराधन होय है ॥ ४९ ॥ दुर्वितर्क्य स्वभावयुक्त निर्गुण गुणनको ईश्वर सत्वमें स्थित भगवान्के अर्थ नमकार है ॥ ५० ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नमस्तुभ्यमनन्ताय दुर्वितर्क्यात्मकर्मणे ॥
निर्गुणाय गुणेशाय सत्त्वस्थाय च साम्प्रतम् ॥ ५० ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

श्रीशुक उवाच–एवं स्तुतः सुरगणैर्भगवान्हरिरीश्वरः ॥
तेषामाविरभूद्राजन्सहस्रार्कोदयद्युतिः ॥ १ ॥

अब छठे अध्यायके विषें भगवान् प्रगट होयगे तब फेरि देवता स्तुति करेंगे, भगवान्के मंत्रते असुरनके संग अमृतके लिये बडो उद्यम वर्णन करते हैं ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित् प्रति कहैं हैं हे राजन् ! ऐसे देवतानके गण (समूहन) करिके स्तुति किये भगवान् हरि ईश्वर विन देवतानमें प्रगट होत भये, जिनको तेज और कांति सहस्रसूर्यके उदयसमान ही ॥ १ ॥ सहसा विनके तेजसों सब देवतानके नेत्र झपगये आकाश दिशा पृथ्वी आत्माकूं न देखतभये, तौ भगवान्कूं कहांते देखे ॥ २ ॥ भगवान् ब्रह्मा महादेवसहित भगवान्की वा मनोहरमूर्ति देखके स्तुति करत भये कैसी है वो मूर्ति जाकी स्वच्छ मरकतमणिकीसी श्यामकांति है और कमलके गर्भकीसी नाई अरुण नेत्र हैं ॥३॥ तप्त सुवर्णसम उज्ज्वल पीतांबर पहरे प्रसन्न सुंदर सब अंग, सुंदर मुख, सुंदर भ्रुकुटी ॥ ४ ॥ महामणिनकरकैं जटित मुकुट धारे बाजूबंदनकरिकैं भूषित कुंडलनकरिकैं प्रकाशित कपोलनसौं शोभायमान मुख ॥ ५ ॥ कांचीके कलाप और कंकणकरिकै शोभायमान देदीप्यमान हार, नूपुर सुंदर घुंघुरवारे केशपाशसों शोभायमान देदीप्यमान प्रकाशित कौस्तुभमणिसौं शोभित कंठ, वक्षस्थलमें लक्ष्मी सुंदर वनमाला पहिरे ताकरिकें शोभायमान अंग ॥ ६ ॥ मूर्तिमान् अपने सुदर्शनादि अस्त्रन करिकें सेवित हैं देवतानमें श्रेष्ठ महादेव और सब देवतान सहित ब्रह्मा सब अंगनको पृथ्वीमें डारिके प्रणाम करत भये, प्रणाम करिकें पीछे सावधान होयकें अंजली जोरिकें ब्रह्मा यह स्तुति करतो भयो ॥ ७ ॥ सो अब ब्रह्मा कहेहै जन्मस्थिति संयमरहित निर्गुण निर्वाणसुखके समुद्र अति सूक्ष्म, अपरिमित मूर्ति महाप्रभावयुक्त परमात्माके अर्थ नमस्कार हैं ॥८॥ हे पुरुषनमें श्रेष्ठ ! श्रेयकी इच्छावाले पुरुष वैदिक तांत्रिक उपायन करिकैं या तुम्हारे रूपको पूजन करै हैं हे धातः ! मैं अपने सहित तीन लोकनको या विश्वमूर्तिमें देखूंहूं ॥ ९ ॥ आगे तुममें विश्व होत भयो, और मध्यमें तुममेंही हो और अंतमें तुममेंही हो तुम स्वतंत्र हो या तुम संपूर्ण जगत्के आदि अंत मध्य तुमही हौ, जैसे घडेके आदि अंत मध्यमें माटी है ऐसे प्रकृतिते तुम परे हो ॥ १० ॥ अपने आश्रय जो अपनी माया है तासौ या विश्वको रचिकै तामें भीतर तुम प्रविष्ट भये, जे आप हो तिन तुमको बडे बुद्धिमान् मनुष्य शास्त्रके जाननवारे जे पंडित हैं ते गुणनके परिणाममें निर्गुण तुमको मन करिकें देखेंहै ॥ ११ ॥ जैसे काष्ठके विषें अग्नि है गउनके विषें अमृत घृत प्राप्त होयहै पृथ्वीमें अन्न है जल है उद्यममें जीविका है परन्तु मनुष्य उपायकरिकैं प्राप्त होयहैं, तैसे कवि तुमको बुद्धिकरिकैं गुणनमें प्राप्त करते हैं ॥ १२ ॥ हे नाथ ! हे कमलनाभ ! जिनको आपको हम बहुत दिनसों चाहते हैं कि हमको दर्शन काहु प्रकारसो

---

१ शंका–भगवान्ने हार, नूपुर, कंकण, कुण्डल, भुजबन्द आदिक गहने बालक और स्त्रीके क्यों पहिने ?
उत्तर–ब्रह्मादिक देवताओंको बालकरूप भगवान्की उपासना बडी प्यारी है, इसलिये शीघ्र बालकरूप बनकर अथवा बालकको सब गहना धारण करके ब्रह्मादिकको दर्शन देते हैं, इसलिये बालकको गहना धारण करते हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होय विन आपको प्रगट भयो देखकर हम सब ऐसे आनन्दको प्राप्त भए हैं जैसे दावाग्नि करिकें जरे हाथी श्रीगंगाजीको जलपान करिकें आनंदित होते हैं ॥ १३ ॥ सम्पूर्ण लोकपाल जाके अर्थ तुम्हारे चरणकमलकूं प्राप्त भये हैं, सो तुम करो, हे अंतरात्मन् ! सबके साक्षी बाहर भीतरके जाननेहारे तुमको क्या विज्ञापन कियो जाय तुम तो सब जाननवारे हो ॥ १४ ॥ हे ईश्वर ! मैं, महादेव, देवता और दक्षादिक अग्निकी चिनगारीके समान आपसों पृथक् प्रतीत होयहै और अपने कल्याणको नहीं जानते यातें ब्राह्मण देवतानकों मंत्ररूपकल्याण तुम करो ॥ १५ ॥ शुकदेवजी परीक्षित्सूं कहे हैं ऐसे ब्रह्मादिकनसो स्तुति किये भगवान् तिनके हृदयको अभिप्राय जानिकें, हाथ जोरे ठाढे सब इंद्रिय रोके जे देवता है तिनसों मेघसी गंभीर वाणीसों बोलते भये ॥ १६ ॥ एकही ईश्वर देवतानकी कार्यतामें समर्थ हैं, सो समुद्रके मथनादिक करिके विहार करिवेकी इच्छा कर ॥ १७ ॥ तिन देवतानसों बोलत भये भगवान् कहे है, हे ब्रह्मा हे महादेव हे देवताओ ! तुम मेरो वचन सावधान ह्वैके सुनो जातें तुम्हारा श्रेय होई ॥ १८ ॥ तुम संपूर्ण दैत्यनकें पास जाउ, कालकरिके अनुग्रह किये दानव दैत्यनसों पहले मिलाप करिलेउ, जबताईं तुम्हारी वृद्धि होई ॥ १९ ॥ अपनो कार्य सिद्ध करवेके लिये शत्रुसोहू मिलनो उचित है हे देवताओ ! प्रयोजन सिद्ध करकै फिर सर्प मूसेकेसो व्यवहार करनो जैसे पिटारीमें बंद सर्प निकरवेकूं मूसेसों मित्रता करै है और जब मूसो वामें छिद्र कर देय है तब निकसके समयपर वाकू खाय लेय है ॥ २० ॥ अमृतके उत्पत्ति करिवेमें यत्न करो, ढील मति करो, जाके पीयेतें मृत्युकरिकें ग्रस्यो प्राणी अमर होय है ॥ २१ ॥ क्षीरसमुद्रमें सगरी वीरुध तृण लता औषधी डारिकें मंदराचल पर्वतकी रई करि वासुकि सर्पकी नेती करिकै ॥ २२ ॥ मेरी सहायकरिकें आलस्य छोडिकें मथो, हे देवताओ ! दैत्य क्लेशके भोक्ता होइगे, और फलके ग्रहण करिवेवारे तुम होउगो ॥ २३ ॥ हे देवताओ ! असुर जो इच्छा करै सो अनुमोदन करो, ऐसे क्रोध करिकें सबरे अर्थ नहीं सिद्धि होयहैं जैसें शांति करिकें होयहैं ॥ २४ ॥ समुद्रते भये कालकूट विषतें भय मति करियो, और जे वस्तु निकरे तिनमें लोभ मति करियो, मथवेतैं क्रोध मति करियो और ईर्षा मति करियो ॥ २५ ॥ शुकदेवजी कहैहै, हे राजन् ! ऐसे देवतानकों आज्ञा देकें स्वच्छंदगति भगवान् पुरुषोत्तम तिन देवतानके मध्यमें अंतर्हित होत भये ॥ २६ ॥ ब्रह्मा तिन भगवान्के अर्थ नमस्कार करिकें महादेव सहित अपने अपने धामकों जातभते, देवता बलिके पास जातभये ॥ २७ ॥ सहज आये वैरी देवतानको देखिकें क्षोभ करनवारे अपने दैत्यनसों दैत्यनके राजा बलि मने करतभयो, जो बलि कीर्तिके योग्य है मिलापको और लराईको समय जानेहै ॥ २८ ॥ वे देवता असुरनके यूथपालकनसों रक्षित, परमशोभायुक्त त्रिलोकविजयी विरोचनके बेटा बलिके निकट जातेभये ॥ २९ ॥ बडो बुद्धिमान् इंद्र सुंदर वाणीसो सावधान हो पुरुषनमें उत्तम भगवान्ते जो सीख्यो है सब कहत भयो ॥ ३० ॥ सो बात बलि इंद्रकी मानत भयो, और जे असुरनके पालक

---

१ एक सर्प टिपालमें बंद होगयो कई दिनतक भूखो मरो एक मूसो टिपालपे कूदतो आयो तब सर्प बोले कि रे भैया मूसे ! हम तुम एक घरके रहनेवारे हैं मोसे यारी करले मेही तू या घरमें रहेंगे तोकूं कभी नहीं खाऊंगो मेरे तेरे बीचमें गंगाजमुना है तनक टिपालमें छेद करदे इत्यादि सुनके मूसेने मित्रता कीनी टिपाल काट दियो साँप निकस आयो मूसेने समझी कि मित्रता कर लीनी है यासे भागो नहीं साँपने वा मूसेको वाही समय पकरके खान लगो तब मूसो बोलो कि रे यार ! यह कहा करे है तेने तो गंगाजमुना बीचमें देके यारी कीनी ही तब सांप बोलो कि जा सारे वो बात तबकी तब गई जो तोते यारी करूंगो तो खाऊंगो कहा ये कहिके वा मूसेको हप्पा कर गयो भगवान् कहे है देवताहो ! ऐसेही तुमहू अपने काम निकासवेको दैत्यनसो यारी करलेउ इति ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे तेहू और शंबरासुर अरिष्टनेमि और त्रिपुरके रहनवारे सबही मानते भये ॥ ३१ ॥ ताके अनंतर मिलापकर देवता और असुर वे सब समानभाव करिकैं अमृतके लिये परम उद्यम करत भये ॥३२॥ महामदयुक्त हो देवता दैत्य बलसहित मंदराचल पर्वतको जातभये ता मंदराचलपवर्तकूं बडे बडे वज्रसे हाथनसो बलि आदि उखारिकरिकैं शब्द करते भए समुद्रपै लावतभये ॥ ३३ ॥ बडे दुरत्यय भारके ले जाइवेमें इंद्र और बलि आदिक वे वा पर्वतके ले जाइवेकूं असमर्थ भये तो मार्गमें छोडि देते भये ॥ ३४ ॥ सो सोनेको पर्वत देवता दानव तिन्हें बडे भारकरिकैं चूरण करि डारतभयो भार-करिकैं कणिका मात्रहू न चले ॥३५॥ हाथ जांघ नारि टूटवेसों भग्नमन देवता और दैत्यनकों आर्त दुःखित जानिकैं भगवान् गरुडध्वज आपु प्रगट होतभये ॥३६॥ पर्वतके पटकवेकरिकैं पिचे देवता और दानवनको देख सब दुःख और घाव दूर करनेहारी अपनी दृष्टिकरकै जिवाय देतभये ॥ ३७ ॥ लीलाकरिके सहज सुभाव एक हाथकारिकैं पर्वतको गरुडपै धारिकैं आपु चढिकै देवता असुर सहित समुद्रपै जातभये ॥ ३८ ॥ पक्षीनमें श्रेष्ठ गरुड कंधापेतें पर्वतको उतारि जलकें निकटमें धरिकैं हरि भगवान्से विदा ले जातभयो ॥ ३९ ॥

अवरोप्य गिरिं स्कन्धात्सुपर्णः पततां वरः ॥
ययौ जलान्त उत्सृज्य हरिणा स विसर्जितः ॥ ३९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

श्रीशुक उवाच-ते नागराजमामन्त्र्य फलभागेन वासुकिम् ॥
परिवीय गिरौ तस्मिन्नेत्रमाब्धिं मुदान्विताः ॥ १ ॥

सप्तमेऽध्याये इति वर्ण्यते ॥ समुद्रके मथनतें उत्पन्न भये विषके भयकरिकैं सिगरे जननें स्तुति कीनी सो तब वा विषको महादेवजी कृपाकरिकैं पीवतभए यह वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी राजा परी-क्षित्सों कहैं हैं वे देवता और दैत्य वासुकि नागके पास गये कही कि तुम चलो तुमारी नेती बनावेंगे नागने कही कि में क्यों अपने शरीरको छिलवाउ देवतानने कही कि तोकोहू अमृतको भाग देंगे ऐसें कहिकें नागनके राजा वासुकिको पर्वतके आसपास लपेटिकें आनंदयुक्त होइके समुद्रकों मथत भये ॥ १ ॥ हे राजन् ! सब सावधान हो हरि भगवान् अमृतके अर्थ पहिले सर्पको मुख पकरतभये तहीं सब देवता होत भये ॥ २ ॥ महापुरुष भगवान्की चेष्टाकी दैत्यपति नहीं इच्छा करत भये यह कहते भये कि हम का ऐसो छोटे बापका बेटा हैं यासो सर्पकी अमंगल पूंछ तो हम नहीं ग्रहण करंगे ॥ ३ ॥ हम स्वाध्याय श्रुत करिकैं संपन्न हैं जन्म कर्मकरिकैं विख्यात हैं ऐसे चुप होकैं स्थित भये दैत्यनको देखिके पुरुषोत्तम भगवान् ॥ ४ ॥ हंसिकै मोडेकूं छोडिकै देवतान करिकै सहित पूछकूं पकरतभये ऐसे स्थान विभागकरकें कश्यपके बेटा देवता दैत्य ॥ ५ ॥ सावधान होकैं अमृतके लिये समुद्र मथते भये समुद्र मथतसंते वो पर्वत विना आधार हैवेसो बलि देवता दैत्यनने धारण कियो तोहू बोझते जलमें प्रवेश करतोभयो ॥६॥ बलवान् दैवके प्रभावसो जब विन देवदैत्यको पराक्रम नष्टभयो तब ते देवता दैत्य खेद मान मनमें दुःख मानते भये उनके मुखकी कान्ति नष्ट हो गई ॥७॥ दुरंतपरा-

१ गरुडको विदा क्यों कियो भगवानन्ने विचारी कि यहां वासुकिनाग बुलामनो है गरुडको है वैर जो गरुड रहेंगे तो वासुकि नहीं आवेगो तो वासुकिके विना काम चलेगो नहीं सो पेलेही विदा करदियो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्रम सत्य संकल्प ईश्वर विघ्नेश्वरको कियो विघ्न देख वासमय अद्भुत बडो कछुवेको रूप धारिकरिके जलमें प्रवेश करते भये और पर्वतकूं उठावतेभये ॥ ८ ॥ उठ्यो पर्वत देखिकै देवता दैत्य फेरि मथिवेकूं उठतेभये, लाख योजनके विस्तारकी पीठि करिकै भगवान् पर्वत धारण करतभये सो पीठि मानो द्वितीय द्वीप है ॥ ९ ॥ देवता असुरनके श्रेष्ठनके हाथनके बलकरिकै कंपायो पीठिपै भ्रमते पर्वतकूं धारण करते, प्रमाणरहित आदिकच्छप पर्वतके भ्रमणकूं पीठकी खुजरीसी मानते भये ॥ १० ॥ तैसेई भगवान् असुररूप करिके असुरनमें प्रवेशकर विनको बल वीर्य्य बढावतभये, और देवतारूप करिके देवतानमें प्रवेशकर इनको बल बढावतभये, सर्पमें अबोधरूप करिके प्रवेश होत भये ॥ ११ ॥ हजार भुजा भगवान् पर्वतके ऊपर दूसरे पर्वतके समान बैठकर भुजनसों दाबिके वाको स्थित करते भये आकाशमें ब्रह्मा महादेव इंद्र मुख्य देवता स्तुति करतभये और फूलनकी वर्षा करत भये ॥ १२ ॥ ऊपर नीचे देवता दैत्यके मध्यमें, पर्वतमें, नेतीमें प्रवेश कीयें भगवान् तिनके बढाये बल मदकरिकैं उत्कंठित बडे पर्वत करिकैं व्याकुल ग्राहनके समूह युक्त समुद्रको वा पर्वतकरिकैं मथतेभये ॥ १३ ॥ पर्वतनके राजा और सर्पनके राजा वासुकिके हजारन कठोर नेत्र और मुखसों निकरे अग्निके धुआंसे नष्ट कांति हैके असुर पुलोम काल बल इल्वल आदि सब कारे होतभये, जैसे दावाग्निसो जरो सरकंडो कारो होयहै ॥ १४ ॥ ता सर्पके श्वासनकी अग्निसो देवतानकी कांति नष्ट हैगई विनके वस्त्र, माला, जामा, पाग, मुखकी शोभा धूमली हैगई तब भगवान्के वशवर्ती मेघ वर्षतभये, समुद्रकी लहरै निकरिकैं पवन चलतभई ॥ १५ ॥ देवता असुरनके समूहके मथनेसों समुद्रते जब अमृत न निकसत भयो, तब अजित भगवान् आपही समुद्र मथत भये ॥ १६ ॥ मेघवत् श्याम अंग, सुवर्णसो पीतांबर, काननमें बिजरीके समान प्रकाशमान कुंडल मस्तकपर केशपाश बिखर रहे माला पहिरें, लाल नेत्र, जीतके देनवारे भुजादंड जगत्को अभय देनेहारे हस्तकमलसू सर्पकूं पकरिकै पर्वतकी रईसों समुद्रको मथते धारण कियो पर्वत जिनने ऐसे भगवान् ऐसे शोभाकों प्राप्त होते भये जैसे दूसरो पर्वत पर्वतकूं मथै है ॥ १७ ॥ मथन करवैसो जामें मछली मगर कच्छपादि जलजंतु व्याकुल होरहेहै तिमि जलके हाथी ग्राह तिमिंगल दुःखी होरहे हैं ऐसे सागरको मथते २ प्रथम महाउल्बण विष उत्पन्न भयो जाको कुछ उपाय नहीं ॥ १८ ॥ प्रतिकाररहित वा उग्रवेगवारे विषको चारों ओरसों सब दिशानमें फैलतो देख वाकी वृद्धिसों लोकपालन सहित प्रजा कहीं शरण नहीं पायके भयभीत है सदाशिवकी शरण गई ॥ १९ ॥ देवतानमें श्रेष्ठ त्रिलोकीके भव (समृद्धि अथवा कल्याण) के लिये देवी सहित कैलासमें बैठे जे मुनि हैं तिनकूं संमत मोक्षके हेतु तपको सेवन करनवारे सदाशिवको देखिके स्तुतिनकरिकैं प्रणाम करत भये ॥ २० ॥ प्रजापति ब्रह्माजीसों आदि लेकै जितने हैं वे सब हरिके पराक्रमनकरिकै सगुण निर्गुण शिवकी स्तुति करें हैं, हे देवनके देव महादेव ! हे संपूर्ण भूतनके आत्मा हे भूतभावन ! त्रिलोकीकूं जरानेवारे या विषसो भयातुर हैकें हम शरण आये हैं सो तुम रक्षा करो ॥ २१ ॥ सगरे जगत्के तुमही एक ईश्वर हो, बंधमोक्षके देनवारे हो, शरण आये जे हम तिनकी आर्त्तिके दूर करनवारे जे तुम हो तिनकूं जो कुशल मनुष्य हैं वे गुरु

---

१ अर्थात् भगवान्ने कही कि देवताओ कहा भयो कि महाराज भयो कहा ये मंदराचलपर्वत समुद्रमें बूडो जाय है अब कहा करै भगवान् बोले कि रे मूर्खहो ! गणपतिकोहू पूजन कियो कि नहीं कि महाराज हमतो नहीं कियो कि रे कम्बखत ही जाओ जलदी एक दशमन लड्डू भोग लगायो देवतानसो यह कही गणेशजीकी महिमा बढायवेकें लिये और वाई समय कच्छप बनके झटही पर्वतको पीठपे धर ऊंचो उठाय दियो ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आपकी पूजा करते हैं ॥ २२ ॥ हे विभो ! गुणमयी अपनी शक्ति करिके जगत्के सर्ग स्थिति नाशकों जब धारण करोहो तब हे भूमन् ! स्वतःसिद्ध ज्ञानवारे तुम ब्रह्मा विष्णु शिव यह नाम धारण करोहो ॥ २३ ॥ तुमहीं परम गुह्य ब्रह्म हो, देवतिर्यगादिरूप धारण करोहो, नानाशक्तिनकरिकैं प्रकाशमान तुमही हो आत्मा हो जगत्के ईश्वर हो ॥२४॥ तुम वेदके कारण हो जगत्के कारण महत्तत्त्व अहंकार तुमही हो, प्राण इंद्रिय द्रव्य गुण स्वभाव काल संकल्प सत्य ऋत धर्म तुमही हो, त्रिगुणरूप प्रधान तुम्हारे आश्रय हैं ऐसे कहैं हैं अथवा ओंकार तुम हो ॥२५॥ सब देवतानको आत्मा अग्नि तुम्हारो मुख है हे देवलोकभव ! पृथ्वी तुम्हारो चरण है, काल तुम्हारी चेष्टा है, सब देवतानके आत्मा दिशा तुम्हारे कान हैं और वरुण जीभ है आपकी हम शरण प्राप्त भये हैं ॥ २६ ॥ आकाश तुम्हारी नाभि हैं, पवन तुम्हारो श्वास है, सूर्य तुम्हारो नेत्र है, जल तुम्हारो वीर्य रेत है, पर अपर जीवकौ आश्रय तुम्हारो आत्मा अहंकार है, चंद्रमा मन है, हे भगवन् ! स्वर्ग तुम्हारो शिर है ॥ २७ ॥ समुद्र तुम्हारी कोख है पर्वत हाडनकें समूह हैं, सब औषधी तुम्हारे रोमांच हैं, छंद (वेद) तुम्हारी सात धातु है हे वेदत्रयी मूर्ते ! धर्म तुम्हारो हृदय है ॥२८॥ पांच उपनिषद् तुम्हारे मुख है, तिन मुखन करिकै एकसौ अडतीस मंत्रनको समूह भयो है सो जीव नाम परमात्माको तत्व है, स्वप्रकाश तुम्हारी अवस्था है ॥ २९ ॥ अधर्मकी ऊर्मी (लहरै) आपकी छाया है जिनकरिकें संहार होताहै सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये तुम्हारे नेत्र हैं, सांख्यरूप शास्त्रके करनवारे साक्षात् मनु तुम्हारी ईक्षा (दृष्टि) है छंदमय वेद विचार है आप वेद कर्ता वेदमय पुरातन ऋषि हो ॥ ३० ॥ हे गिरीश ! तुम्हारी परम ज्योति सब लोकपाल ब्रह्मा विष्णु इंद्रकोभी गम्य नहीं है जा ज्योतिमें रज तम सत्व नहीं है निरस्त भेदवारे ब्रह्म तुम हो ॥ ३१ ॥ काम यज्ञ त्रिपुर काल विषयनतें आदि लेके भूतनके द्रोहीनको नाश करनवारे हो यह तुम्हारी स्तुति नहीं है, तुम अंतकालमें अपने नेत्रकी अग्निसों भस्म भए या जगत्कों नहीं जानते सर्व सामर्थ युक्त आपसों विष भक्षण करनेकी स्तुति करनो कहा हैं ॥ ३२ ॥ आत्मारामनके गुरुजन तुम्हारे चरणारविंदनको हृदयमें ध्यान करते हैं, आप उमासहित तप करोहो और स्मशानमें वास करोहो, या लिये जे तुमको कामी उग्र हिंसक बोलते हैं वे मूर्ख निर्लज्ज तुम्हारी लीलाकूं नहीं जाने हैं ऐसे परमगुरु तुम्हारी हम शरणकों प्राप्त भये हैं ॥ ३३ ॥ ताते सत् असत्ते परे ताहूसों परे सबमें श्रेष्ठ तुम्हारी स्वरूप जानिवेमें अनायाससों ब्रह्मादिकहू नहीं समर्थ होते हैं, तिनते स्वर्गमें अत्यंत पीछे भये हम तुम्हारी स्तुति करिवेमें समर्थ नहीं होय यामें कहा कहनो है तोहू यह स्तुति अपनी सामर्थ्यमात्र है ॥ ३४ ॥ हे परमेश्वर ! हम आपके स्वरूपको इतनीहीं जाने हैं तेरे परमस्वरूपसों अवगत नहीं तथापि हम केवल इननेहीसों अपनेको कृतार्थ माने हैं कि आपको चरित्र जो प्रगट है सो लोकनके सुखके लिये हैं और तुम्हारे कर्तव्यको कोई नहीं जाने है ॥ ३५ ॥ श्रीशुकदेवजी परीक्षित् प्रति कहें हैं हे राजन् ! तिनको दुःख देखिकैं कृपा करिकैं अतिपीडित सबरे भूतनके सुहृद महादेवजी अपनी प्यारी सतीसें यह कहते भए ॥३६॥ शिवजी कहे हैं अहो भवानि ! यह प्रजानको दुःख देखो, क्षीरसमुद्रके मथनेसो निकसे विषसों यह दुःख उठ्यो हैं ॥ ३७ ॥ प्राणरक्षाकी इच्छा करनहारी प्रजाकूं अभय देवेको विधान मोकूं योग्य है, जो दीननको पालन करिवोहै समर्थनको इतनेही अर्थ हैं जो क्षणभंगुर अपने प्राण करिके प्राणीनकी रक्षा करैं हैं ॥३८॥ हे भद्रे ! हरिकी मायासों मोहित भये और आपसमें वैर जिनने बांधो ऐसे प्राणियोंमें कृपा करवेसों सर्वात्मा हरि प्रसन्न होवे हैं ॥३९॥ हरिके प्रसन्न भयेतें चराचर लोक करिके सहित मैं प्रसन्न होहूं, तातें सो या विषको मैं खाऊंगो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रजानको मोसों कल्याण होउ ॥ ४० ॥ ऐसे भवानीसों कहिकैं विश्वके पालक भगवान् महादेवजी आज्ञा मांगिकें विषके खायवेको आरंभ करत भये, प्रभावकी जाननवारी भवानी अनुमोदन करत भई ॥ ४१ ॥ वाके अनंतर सब ठौर फैले हालाहल विषकूं करतलमें करिकै भूतनके पालक महादेवजी कृपा करिकै खाईजात भये ॥ ४२ ॥ जलको दोष विष महादेवको बडो पराक्रम दिखावत भयो गरेमें नील झलकत भयो सो कृपालु महादेवजीको भूषण होत भयो ॥ ४३ ॥ साधुजन बहुधा लोकनको ताप करिकें तापकों प्राप्त होते हैं प्राणियोंके दुःखसे दुःखी होते हैं यही सबनके आत्मा भगवान्को परम आराधन है ॥ ४४ ॥ देवनके देव श्रीमहादेव तिनको यह कर्म देखिकै प्रजापति (दक्ष) की बेटी सती और भगवान् सब बडाई करते भये ॥ ४५ ॥ विष पीवतेमें जो महादेवजीके हाथतें कुछ विष विखरि पर्‍यो ताको विछू सर्प विषकी औषधी दंदशूक और जे अन्य हैं वेऊ ग्रहण करते भये ॥ ४६ ॥

प्रस्कन्नं पिबतः पाणेर्यत्किञ्चिज्जगृहुः स्म तत् ॥
वृश्चिकाहिविषौषध्यो दन्दशूकाश्च ये परे ॥ ४६ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामष्टमस्कन्धे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

श्रीशुक उवाच–पीते गरे वृषाङ्केण प्रीतास्तेऽमरदानवाः ॥
ममन्थुस्तरसा सिन्धुं हविर्धानी ततोऽभवत् ॥ १ ॥

या अष्टमाध्यायमें समुद्र मथवैसों लक्ष्मी प्रगट भई वाने भगवान्को वरण कियो और असुरनने धन्वंतरिसों अमृत हर्‍यो तब मोहनीजी प्रगट भई सो वर्णन करेंगे ॥ सो शुकदेवजी कहे हैं हे राजन्

---

१ यहां ये भाव है कि मानपूर्वक तो जहर पीवोहू अच्छो और विना मानके अमृतहू कछु कामको नहीं । या विषयमें सम्मन कविने २ सोरठा कहे हैं । सोरठा–सम्मन मोहिन सुहाय, अमी पिवावें मान विन । जो विष देय बुलाय, मान सहित मरवो भलो ॥ ईश भये जगदीश, मानसहित विषके पियें । राहु कटायो सीस, विना मान अमृत पियें ॥ २ देखादेखी काम करवेसूं दुःख उटानो परे है, जो करन लगे कि शंकरने विष खायो हमहूं खांय, कोऊ एक मनुष्यके पास एक नौकर रहे वोह कछु हकीमी कोऊ लटका जाने, एक समय एक ऊंट सावत वेल निगल गयो और वोह बाकी गरदनमें अटकि गयो, याने पांच रुपैया ठहरायके कही कि एक मूंगरी आयो सो मूंगरी लेकर ऊंटकी गरदनमें मारी सो वो टूट गयो और ऊंटका गला साफ ह्वैगयो या नौकरने देखतेही सोची कि अब नौकरी करनेसे कहाहै, मूंगरी मार दई और रोगीको अच्छो करदियो ५ रुपया मिलगये ना काहूकी नौकरी चौकरी करनी पडै, बस एक मूंगरी केरीमें डाल चलदये, एक बुढिया बीमार मिली बुलायवे पर ५ मांगे, घरवारेनने कही आराम कर देउ पांच रुपैया दैंगे, सो सुनतेही इन्हौंने मूंगरी निकर बुढियाके नारमें मारी, वोह लगत प्रमाणही मरी, यह पकरे गये और दंड मिलो यासों रीस करके काम करनो भलो नहीं ॥ ३ यहां यह भाव समझनो कि तुलसीदासने कही है कि ॥ नाम प्रताप जान शिव नीके । कालकूट फल भयो अमीके ॥ और रामायणशतकोटि मेलियो महेस जिय जान ॥ सिद्धांत यह है कि जब सो कोटि रामायण महादेवजीने तीनों लोकनमें बांटी तब ३३।३३ किरोड फिर ३३।३३ लाख फिर ३३।३३ हजार फिर ३००।३०० सौ फिर ३३।३३ बांटी तब फिर सौ कोटिमें १ श्लोक बचौ तब १०।१० अक्षर बांटे तब फिर (राम) ए दो अक्षर बचे वे तीन जगे जब न बँटसके तब तीनों लोकवासीनसों मांगके बांटे करवेकी मेहनतमें महादेवजीने लेके कहा कियो (रा) अक्षरकूं तो जहरके मारे कंठ फुको जातो हो सो जहरके नीचे लगायो और (म) अक्षरको ऊपर संपुट लगायो तब जो विषाग्नि अनेकन उपायसों शांति न भई ही सो विषाग्नि तत्काल शांत ह्वे गई यह भाव समझनो हो तो विषपन वह भूषण ह्वै गयो वा दिनसों नीलकंठ नाम भयो इति ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परीक्षित् ! जब महादेवजीने विष पियो तब प्रसन्न भये देवता और दानव फेर समुद्र मथत भये तातें सुरभी गऊ निकसत भई ॥ १ ॥ अग्निहोत्रकी सिद्धि करनवारी गउको ब्रह्मवादी ऋषीश्वर ग्रहण करत भये, ब्रह्मलोककों प्राप्त करनेहारे यज्ञसंबंधी पवित्र हविके लिये ग्रहण कीनी ॥ २ ॥ ता पीछे उच्चैःश्रवा नाम घोडा होत भयो, चंद्रमासे श्वेत वा घोडेको राजा बलि चाहना करत भयो ईश्वरकी शिक्षाकरकैं इंद्रने वाकी अभिलाषा नहीं कीनी ॥ ३ ॥ ता पीछें ऐरावत नाम हाथी हाथीनको इंद्र निकस्यो, सो चारि दांतनकरिकै शोभायमान महादेवके पर्वत कैलासके समान शोभायमान हो ॥४॥ हे राजन् ! ताके पीछे कौस्तुभनाम मणि निकरी वा रत्नको हरि भगवान् ले लेते भये, ता मणिकूं आप कंठमें धारण करत भये, फिर पद्मराग मणि निकसत भई ता मणिको भगवान् वक्षस्थलमें धारण करत भये विनसौं भगवान्को वक्षस्थल अलंकृत भयो ॥५॥ ताके पीछे कल्पवृक्ष होतभयो जो देवतानके लोककूं शोभित करत भयो, जो कछु मनोरथ मांगो तिन सबनको पूर्ण करै है, जैसे पृथ्वीतलपै तुम सबनको मनोरथ पूर्ण करोहो ॥ ६ ॥ ताके अनंतर अप्सरा होत भई, मणिनकूं कंठमें पहरे सुंदर वस्त्र सुंदर गति लीला चितवनिसौं देवतानको रमण करानेवारी भई ॥ ७ ॥ ताके पीछे साक्षात् भगवत्परायण रमा नाम लक्ष्मी प्रगट भई जो अपनी कांति करिकै दिशानको प्रकाश करती सुदामा पर्वतमें बिजुरीकी समान प्रकाशित भई ॥ ८ ॥ लक्ष्मीकी देवता असुर मनुष्य सब चाह करत भये, वाके रूप उदारता वय शोभा महिमासौं सबके चित्त मोहित है गये ॥ ९ ॥ वा लक्ष्मीको इंद्र बडो अद्भुत आसन लावत भयो, मूर्तिमान् नदी श्रेष्ठ सोनेनके कलसान करिके पवित्र जल लावति भई ॥ १० ॥ पृथ्वी अभिषेकके योग्य सगरी औषधी लावति भई, वसंत चैत्र वैशाखमें भये फूल लावत भयो ॥ ११ ॥ ऋषि यथाविधि अभिषेक करावत भये, गंधर्व मंगलगीत गावत भये, नटिनी नृत्य करत गावति भई ॥ १२ ॥ मेघ देवता बडे शब्दवारे मृदंग ढोल मुरज नगाडे सहनाई शंख अलगोजा वीणा बजावत भये ॥ १३ ॥ कमल हाथमें लिये श्रेष्ठ देवी लक्ष्मीको दिशानके हाथी पूर्ण कलश लावत भये और ब्राह्मणने कहे वेदनके मंत्रनसों स्नान करायो ॥ १४ ॥ समुद्र लक्ष्मीको पीले रेसमी वस्त्र देतभयो, वरुण मदसौं मतवारे भौंरासे युक्त वैजयंती माला देतभयो ॥ १५ ॥ चित्रविचित्र अनेक प्रकारके आभूषण विश्वकर्मा देतभयो, सरस्वतीजी हार देतिभई, ब्रह्मा कमल देतभयो, नाग कुंडल देतभये ॥ १६ ॥ ता पीछे स्वस्तिवाचन होनेपर लक्ष्मीजी भौंरेनसो शब्दायमान कमलकी माला हाथमें लेके चलतभई, सुन्दर कपोल और कुंडलनसो शोभित लज्जासहित हास्यसौं शोभायमान मुख धारण करे ॥ १७ ॥ निरंतर समान चंदन कुंकुमसो चर्चित स्तननसो शोभित कृशोदरी, लक्ष्मी जा समय चली तब वाके चरणनूपुर बजन लगे और यह सुवर्णलताकी समान शोभित हुई ॥ १८ ॥ नित्य श्रेष्ठ गुणनके स्थान दोषरहित अपने योग्य आश्रयको ढूंढने लगी परन्तु गंधर्व यक्ष असुर सिद्ध चारण देवतानमें अपने योग्य वरको नहीं प्राप्त भई ॥ १९ ॥ लक्ष्मीने विचार कियो कि दुर्वासा आदि तपस्वी तप करकैहू क्रोध करै हैं गुरुशुक्रादि ज्ञानी है करकेहू आसक्त हैं ब्रह्मा और चंद्रमा बडे होकरकेहू कामके वशमें हैं और इन्द्र ईश है तोहूं दूसरेकी सहायताकी इच्छा राखे हैं ॥ २० ॥ कहूं परशुरामादिकनमें धर्म है परंतु प्राणिनसूं सुहृदता नहीं, कहूं त्याग है परंतु मुक्तिको कारण नहीं पराक्रमी तौ हैं परन्तु विनकी मृत्युको ठिकानो नहीं और सनकादिक समाधिनिष्ठ हैं यातें यह वरण योग्य नहीं ॥ २१ ॥ कहूं मार्कंडेयादिकनमें बडी आयु है, परंतु स्वभाव मांगलिक नहीं कहूं भोगकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इच्छाभी है परंतु आयुको ज्ञान नहीं, जहां रुद्रादिकनमें दोनों हैं परन्तु वह अमंगल रूप हैं और जो सुन्दर मंगलरूप दोषरहित हैं वे मुकुन्द भगवान् मेरी इच्छा नहीं करे हैं ॥ २२ ॥ ऐसो विचार करिकै अव्यभिचारि धर्मज्ञानादि उत्तम गुणनसों और निरपेक्ष हैवेसो सर्वोत्तम प्रकृतिके गुणनसों परे अणिमादि सम्पूर्ण सिद्धिनसों संयुक्त निरपेक्ष मन वांछित मुकुंदकूं लक्ष्मी वरण करतीभई ॥ २३ ॥ जाके ऊपर मनोहर स्वरसों मतवारे भौंरे गुंजार रहे हैं ऐसी श्रेष्ठ मनोहर कमलनकी माला भगवान्के गलेमें डार हास्य और लाजसहित विकसित नेत्र हो अपने धाम भगवान्के वक्षस्थलकी इच्छा करती भगवान्के निकट मौन हो खडी रही ॥२४॥ तीनों लोककी माता उत्तम ऐश्वर्यवारी लक्ष्मीकूं जगत्के पिता भगवान् अपनो वक्षस्थल स्थान देत भये, जा वक्षस्थलमें स्थित लक्ष्मी करुणासहित चितवनीसों प्रजा और लोकपालनकरिके सहित तीनों लोकनको बढावत भई ॥ २५ ॥ शंख तुरही मृंदगनके शब्द पृथक् २ होने लगे और स्त्रीसहित देवतानके अनुचर न्यारे न्यारे नाचवे गायवे लगे ॥ २६ ॥ ब्रह्मा रुद्र बृहस्पति ये मुख्य विश्वस्रष्टा हरिके प्रतिपादक सत्य मंत्रनसों हरिकी स्तुति करत भये और पुष्पनकी वर्षा करत भये ॥ २७ ॥ लक्ष्मीने देखे ऐसे जे देवता और प्रजापतिन सहित प्रजा हैं वे सत्यादिक गुणसंपन्न हैके परम आनंदको प्राप्त होतभये ॥ २८ ॥ ता समय लक्ष्मीसें उपेक्षा किये दैत्य दानव सत्वरहित चंचलताहीन निरुद्योगी और लज्जाहीन होगये ॥ २९ ॥ ताकै अनंतर कमलनेत्र कन्या वारुणी देवी प्रगट भई, हरिकी अनुमतिसो वाको असुर ग्रहण करत भये ॥ ३० ॥ हे राजन् ! अमृतकी चाहना करनहारे देवता दैत्यनके मथवेसो समुद्रते परम अद्भुत पुरुष प्रगट भयो ॥ ३१ ॥ जाके लंबे पुष्ट भुजदंड शंखसी ग्रीवा, अरुण नेत्र श्यामवर्ण तरुण माला पहिरे, संपूर्ण आभरणसों भूषित ॥ ३२ ॥ पीतवस्त्र पहरे, ऊंच वक्षस्थलसों शोभित उज्ज्वलमणिनके कुंडल, चीकने घुंघरारे वार केशपाश, सुंदर भाग्य, सिंहके समान पराक्रमी ॥३३॥ अमृतसों पूर्ण कलश धारण करे, कंकणनकरिकैं भूषित पुरुष साक्षात् भगवान् विष्णुके अंशते प्रगट भयो ॥ ३४ ॥ धन्वंतरि नाम, वैद्यकशास्त्रको करनवारो, यज्ञमार्गको भोक्ता वा महापुरुषकों और अमृतके भरे कलशकों दैत्य देखके ॥ ३५ ॥ सबकी सब वस्तु चाहते बलसों अमृतके कलशाकूं छीनके भागगये जब अमृतको पात्र कलश असुरनने लेलियो ॥ ३६ ॥ तब सब देवता दुःखी हो हरि भगवान्की शरणागत जातभये ऐसे देवतानको दीन देखिके भगवान् भक्तवत्सल भक्तनके कार्य करनवारे बोले, तुम खेद मति करो मैं अपनी मायासों दैत्यनमें क्लेश उपजायके तुम्हारो अर्थ सिद्ध करूंगो ॥ ३७ ॥ अमृतके लिये खेदित चित्त जे दैत्य तिनमें परस्पर कलह होत भयो यह तो कहे मैं पहेले पीऊं वह कहे मैं पहेले पीऊं तूं नहीं मैं पहेले पीऊंगो, ऐसे कलह होतो भयो ॥ ३८ ॥ तब दुर्बल दैत्य बोले देवताहू अपने भागको योग्य हैं क्योंकि या कार्यमें इनकोहू तुल्य प्रयास है या यज्ञमें सबको समान फल होय यह सनातन धर्म है ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! या प्रकार मत्सरताको प्राप्त हो दैत्य अपनेनको निषेध करन लगे और दुर्बलनसों सबल वारंवार कलशको छीननलगे ॥ ४० ॥ ताही समयमें सर्वात्मा सबके जाननवारे ईश्वर विष्णु भगवान् अनिर्वचनीय परम अद्भुत स्त्रीको स्वरूप धारण करते भये ॥ ४१ ॥ देखिवेलायक कमलकी नाईं श्याम सब अंगनमें सुंदर समान काननमें आभरण पहरे सुंदर कपोल ऊंची नासिका, सुंदर मुख ॥ ४२ ॥ नवीन यौवनसों परिपूर्ण स्तननके भारसों कृश उदर और मुखकी सुगंधिसों अनुरक्त भौंरानके शब्दते उद्विग्न नेत्रवारी ॥४३॥ फूली चमेलीकी माला चोटीमें धारण करे, सुंदर ग्रीवा और सुंदर कंठमें आभरण पहिरे, सुंदर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बाजूबंदसो भुजा भूषित हैं ॥ ४४ ॥ द्वीपके समान शोभित पृथु नितम्बनपें निर्मल वस्त्र पहरे कौंध-नीसो प्रकाशमान चलते चरणनमें सुन्दर नूपुरनके शब्द युक्त ॥ ४५ ॥ लज्जा सहित हास्य और चंचल भृकुटीके विलाससहित चितवनीसो दैत्यनके यूथपालकनके चित्तमें वेर वेर कामकों उत्पन्न करन लगी ॥ ४६ ॥

सव्रीडस्मितविक्षिप्तभ्रूविलासावलोकनैः ॥
दैत्ययूथपचेतस्सु काममुद्दीपयन्मुहुः ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामष्टमस्कन्धेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

श्रीशुक उवाच–तेऽन्योन्यतोऽसुराः पात्रं हरन्तस्त्यक्तसौहृदाः ॥
क्षिपन्तो दस्युधर्माण आयान्तीं ददृशुः स्त्रियम् ॥ १ ॥

नवम अध्यायमें मोहित भये जे दैत्य हैं तिन्हें अमृतको पात्र दियो तब इनको वंचना करिकै मोहनीजीनें देवतानको अमृत दियो यह वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी बोले या प्रकार वे दैत्य परस्पर पात्र छीडते धक्काधक्की करते स्नेह त्यागे चोरके साधर्म्य करते वा आती भई स्त्रीको देखते भये ॥ १ ॥ अहो अहो देखो तो याको सुंदर रूप, बडो तेज नवीन यौवन है, ऐसे परस्परमें कहतभये कामको प्राप्त है दैत्य पास आइके तासूं पूछत भये ॥ २ ॥ हे कमलनैनी ! तुम कौन हो, कहातें आई हो, कहा करिवेकी इच्छा करोहो, कौनकी हो सो कहो, हे सुंदरि ! सुंदर जंघावरी तुम हमारे मनकों मोहित करोहो ॥ ३ ॥ देवता दैत्य सिद्ध गंधर्व चारणनने आजतक तुम्हारो स्पर्श नहीं कियो है, लोकपालननेहू नहीं कियो है, तो मनुष्य कहांते करेंगे, यह हम जाने हैं ॥ ४ ॥ हे सुभ्रु ! सुन्दर शरीर धारण करनेवारी तुमको कहा विधातानै शरीर धारियनकी मन और संपूर्ण इन्द्रियनकी प्रीतिके देवैको कृपा करकै भेजी है ॥ ५ ॥ हे भामिनी ! सो तुम एक वस्तुमें स्पर्द्धा करिकै वैर करते भए हम ज्ञातिकेनकी सुखशांतिको करो ॥ ६ ॥ जो तुम हमसों पूछो तौ हम कश्यपके बेटा हैं, परस्परमें भैया हैं, हमने पराक्रम करकै अमृतकी प्राप्ति कीनी हैं अब जैसे हममें भेद न होय ऐसें न्याय करकै हमकों अमृत बाटो करदेउ तो बडी अच्छी है ॥ ७ ॥ जब ऐसे दैत्यनने कह्यो तब मायास्त्रीरूप हरि मुसिक्याइ करिकै रुचिर कटाक्ष भौंहकी मरोरौनिसो देखते यह बोले ॥ ८ ॥ कश्यपके पुत्र तुममो व्यभिचारिणीमें कैसें समताको प्राप्त भये पंडित जन कामिनीके विश्वासकूं नहीं प्राप्त होते हैं, सो तुमने कैसे विश्वास धारण कियो ॥ ९ ॥ हे दैत्यहो ! कुत्तानकी अथवा ल्यारीनकी और व्यभिचारिणी स्त्रीनकी सख्यता नित्य नहीं है, हमारे विषें विश्वास धारण न करिये व्यभिचारिणी स्त्री नित्य नये पुरुषनको ढूंढती हैं ॥ १० ॥ श्रीशुकदेवजी राजापरीक्षित्प्रति कहे हैं, ऐसे श्रीमोहनी-

---

१ शंका–दैत्योंके छलनेके लिये भगवान्ने सब रूपको त्यागकर संसारमें अत्यन्त निन्दा योग्य वेश्याको रूप क्यों धारण किया ? जो कोई कहै कि राक्षसोंको मोहनेके लिये माया करके वेश्याका रूप धारण किया तोभी अन्याय है क्यों कि क्या और किसी दूसरे रूपसे राक्षसोंको नहीं मोह सक्ते थे ? भगवान् बडे बडे महात्माओंको मोह उत्पन्न कर देते हैं सो राक्षसोंको मोह उत्पन्न कर देना क्या बडी बात थी ?

उत्तर–सतयुगमें भगवान् नारदमुनिको माया करकै स्त्री बना दिया, देवीभागवतमें लिखा है कि जब नारदजीको स्त्री बने सहस्रों वर्ष व्यतीत होगये, तब नारद मायासे छुट पुरुषरूप हुये तब भगवान्को शाप दिया कि हे भगवन् ! तुमभी कभी हम सरीखे स्त्रीरूप हो जाओगे इसलिये भगवान्ने वेश्याका रूप धारण किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जीके परिहाससों विश्वासयुक्त चित्तसों असुर गंभीर भावसों हंसतभये, और अमृतको पात्र देतभये ॥ ११ ॥ हरि भगवान् अमृतको पात्र ग्रहण करिकै कछुक हास्यसों शोभायमान वाणीसों बोले हे दैत्यो ! जो तुम मोकू यह अमृत बांटवेको देउ हो तो जो कछु मैं भलो बुरो करूं वाय तुम अंगीकार करो तो मैं अमृतको बांट करूं ॥१२॥ असुरनमें श्रेष्ठ मोहिनीजीको ऐसे कह्यो वचन सुनिकै तिनके करिवेकी इच्छाकूं नहीं जान वैसेई विनके वचनकों मानि लेतभये ॥ १३ ॥ तब भगवान् बोले कि अमृत ऐसो नहीं पीमनो चाहिये पहिले स्नान करें फिर चंदन लगायके शृंगार करके अमृत पिओ तब तौ भगवान्के कहेके अनुसार सब दैत्य ताकै अनंतर उपवास करी स्नान करि अग्निको होम करि गो ब्राह्मण सम्पूर्ण प्राणीनकूं देकै ब्राह्मणनसों स्वस्ति वाचन कराय ॥ १४ ॥ यथा रुचि नये नये वस्त्र पहिरि पूर्वकूं अग्रभागवारे कुशनपे भूषित होयकें बैठतभये ॥ १५ ॥ धूपसे सुगंधित माला दीपकसो युक्त सभामें पूर्वको मुख कर देवता और दैत्य बैठत भये ॥१६॥ हे नरेन्द्र राजा परीक्षित् ! तब सभाके विषे, केलाकी समान जंघावारी सुन्दर दुकूलसो श्रोणीतट आच्छादन किये मंदगति मदकारिकै विह्वलनेत्र शब्दायमान सुवर्णके नूपुर पहरे कलशसे स्तनवारी अमृतको कलश हाथमें लेके मोहिनीजी प्रवेश करत भई ॥ १७ ॥ परदेवतानाम लक्ष्मीकी सखीकी समान काननमें सुवर्णके सुंदर कुंडल धारण किये सुंदर कपोल सुंदर मुख सुंदरनासिकायुक्त मोहिनीजीको कि जिनके स्तननकौ वस्त्र वारंवार खिसतो पडतो हो देखकर मंद मुसकान सहित तिरछी चितवनसों सब देवता और दैत्य मोहित हो गये ॥ १८ ॥ असुरनको अमृतको दान देनो सर्पको दूध प्यावनेकी समान है या प्रकार भगवान् दैत्यनको स्वभावसों क्रूर जानकें विन्हे अमृत नहीं देते भये ॥ १९ ॥ जगत्के पति भगवान् देवता दैत्यनकी न्यारी न्यारी पंगति करत भये, पंगति करैकै अपनी अपनी पंगतिमें बैठावत भये ॥ २० ॥ कलश उठाये भगवान् बहुत सन्मान प्रियवचननसों दैत्यनको वंचित करिकै दूरिमें स्थित देवतानको जरा मृत्युको हरनवारो अमृत पिवावत भये ॥ २१ ॥ वे असुर अपनी प्रतिज्ञा पालन करते स्नेहके कारण स्त्रीके संग विवाद करनो अच्छा नहीं जो हम तनहू बोलेंगे तौ ये अभी हमें छोडके चली जायगी तौ फिर ऐसी लुगाई नहीं मिलेगी यह विचार चुप है रहे ॥२२॥ तिन मोहिनीजीमें स्नेह कियो स्नेहके नाशसो भयातुर मोहिनीजीके आदरभावसो बंधे भए (कि ये कृपण देवतानको नैक अमृत प्यायदेउ पीछे तुम्हें सब प्याऊंगी नाई कहू तुमे इन कंगलानकी नजर लग जायगी यासों तुम क्षणमात्र ठहरो ऐसे स्नेहके वचन सुन) दैत्य कछुहु न कहत भये ॥ २३ ॥ देवतानके स्वरूप करिकै ढक्यों राहु देवसभामें प्रवेश करिकै अमृत पीवत भयो, तब चन्द्रमा और सूर्यने बताय दीनो ॥ २४ ॥ अमृत पीवते राहुके शिरको भगवान् छुराकीसी धारयुक्त चक्रकरिकें काटि लेत भये अमृतसो स्पर्शरहित धर गिरि परत भयो ॥ २५ ॥ शिर अमर होत भयो, जाकू ब्रह्माजीने ग्रह बनायो सो आजताई पर्वमें चन्द्रमा और सूर्यके सामुहे वैरबुद्धिसो दौरै है ॥ २६ ॥ देवतानने जब अमृत पी लीनो तब लोकनकै पालक भगवान् सिगरे असुरनके देखते २ अपनो पुरुषरूप प्रगट करत भये ॥ २७ ॥ यद्यपि देश, काल, हेतु, अर्थ, कर्म, मंत्र ए सब देवता और असुरनके समान है परन्तु फलमें भेदको प्राप्त भये भगवान्के चरणारविंदकी रजके आश्रय देवतानने अनायास फल अमृत पायो दैत्यननें न पायो ॥ २८ ॥ प्राण धन मन कर्म वचनसों देह पुत्रादिकके अर्थ भेद दृष्टिसों जो कियो जाय है सो सो व्यर्थ होय है और विन प्राणादिकनकरिकै हरिके निमित्त

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जो करनो है सो बडे फलको देनवारो होय है, भगवान् सबमें व्यापक हैं, जैसे वृक्षकी जरको सींचे सो गुद्दे शाखा पत्ता इनको सब सींचनो होय है ॥ २९ ॥

यद्युज्यतेऽसुवसुकर्ममनोवचोभिर्देहात्मजादिषु नृभिस्तदसत्पृथक्त्वात् ॥
तैरेव सद्भवति यत्क्रियतेऽपृथक्त्वात्सर्वस्य तद्भवति मूलनिषेचनं यत् ॥ २९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

श्रीशुक उवाच–इति दानवदैतेया नाविन्दन्नमृतं नृप ॥
युक्ताः कर्मणि यत्ताश्च वासुदेवपराङ्मुखाः ॥ १ ॥

दशवें अध्यायके विषे मत्सरता करिके दैत्यननें देवतानके संग संग्रामको आरंभ कियो, तब दैत्यनकी मायाकरिकैं देवता दुःखको प्राप्त भये तब भगवान् प्रगट होत भये अभक्तनको अमृतकी प्राप्ति न भई यह कही अब फिर भक्तनसों मत्सरता करैं तो प्राणनकी हानि होय यह वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् ! दैत्य और दानवनने महा परिश्रम कियो कार्यमें लगे रहे परन्तु नारायणसो विमुख हैवेके कारण विन्हें अमृत न मिलो ॥ १ ॥ हे राजन् ! अमृतकूं सिद्धिकरि अपने देवतानकूं प्याइके सिगरे प्राणीनके देखत गरुडवाहन हरि जात भये ॥ २ ॥ दैत्य वैरीनकी परम ऋद्धि देखकै न सहारते भये और आयुधनको ले लेके देवतानके प्रति युद्धके लिये आवत भये ॥ ३ ॥ ताके अनंतर अमृत पीकरिकै बैठे नारायणके चरणके आश्रयी देवतानके गण सिगरे शस्त्रनकरिकै युद्ध करतभये ॥ ४ ॥ हे राजन् ! तहां महाभयंकर दैवासुर नाम समुद्रके तीरपै घोर युद्ध होत भयो, जा युद्धकों देखिकै रोमांच ठाढे होतेहैं ॥ ५ ॥ क्रोधयुक्तमन रणमें परस्पर मिलिकै खड्ग बाण अनेक प्रकारके आयुधनकरिकै मारत भये ॥ ६ ॥ शंख तुरही मृदंग भेरी डोरूकों हाथमें लेके बडो घोरशब्द करत भये, ऐसेही हाथी घोडा रथ प्यादेनको बडो शब्द होतभयो ॥ ७ ॥ रथी रथीनसों प्यादे प्यादेनसो, घोडानके संग घोडा, हाथीनके संग हाथी मिलिकै संग्राममें लरत भये ॥ ८ ॥ कोई ऊंटनपै बैठिकै प्रहार करै हैं, कोई हाथीनपै बैठके प्रहार करै है, कोई गधानपै बैठिकै आये कोई एक गौरमृगनपै बैठिकै आये, कोई द्वीपनपै बैठिके आये, कोई सिंहनपै बैठिके आये ॥ ९ ॥ कोऊ गिद्धनपै, कोई बगुलानपै, कोई सिकरानपै, कोई एक भैसानपै, कोई ग्राहनपै, कोई मत्स्यनपै, कोई शरभनपै, कोई एक गैंडेनपै, कोई बैलनपै, याप्रकार चढिकै आवतभये ॥ १० ॥

---

१ जब प्रारब्धसे द्रव्य नांय होत तब पारसहू फल नाय देत, और कृपण पुरुष मुफ्तके धन मिलेहू कृपणता नांय छोडे, एक बाबाजी सारी वस्तीमें फिरे काहूने बात न बूझी, एक बनियांकी दुकानपर गये, वासें चबैना मांगो, वाने कही मेरी दुकान नहीं हैं, बाबाजी चल दिये, बनियेने सोचा कि वृथा झूठ बोला, मुट्ठी मुट्ठीमें कुछ मेरा बिगडा थोडेही जाय है, बाबाजीको बुलाकर चबैना दिया, बाबाजी खा चुके तौ बनिया बोला और कुछ आज्ञा होय तौ कहो, बाबाजीने कही यह सब साधुओंको चबैना बाट दो, वैश्यने सब बांट दिये, साधूजीने एक पारस पत्थर दियो, और कही इससे सोना बनाओ, और हम पंद्रह दिनमें इसे ले जायगे, लालाजी पारस ले बजारमें लोहेका भाव पूंछने गये, सो पूछा क्या भाव है लुहार बोला पांच शेर, सोचा भाव तेज है, फिर देखैंगे; दो तीन दिन पीछे गया, पूछा अब क्या भाव है, दुकानदार बोले चार सेर, फिर दो तीन दिन पीछे गये, तीन शेर इसी रीतिसे महीनाभर बीचि गया, साधु आकर अपने पत्थर ले गये, और कही कि जब प्रारब्धमें नाय तौ कहांसे धन मिलै, जब दिन सूधै होय तौ वैसेही प्राप्त होयजाय, ऐसेही दैत्योंने अमृत खोयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कोई रोजनपै, कोई स्यारनपै चढिकै आवत भये मूसेनपै बैठिकरिकै गैडनपै चढिकै आवत भये, शशनपै, मनुष्यनपै, बकरानपै, कर्भारीपै, हरिणनपै, हंसनपै, शूकरनपै या प्रकार चढिचढिकै आवत भये ॥ ११ ॥ और हैं ते जलके स्थलके पक्षीनपै बैठिकै आवत भये हे राजन् ! दोऊ सेनानमें आगे आगे प्रवेश करत भये ॥ १२ ॥ हे राजन् ! चित्रविचित्र जो ध्वजा पताका श्वेत निर्मल स्वच्छ वस्त्र और बहुमौल्य हीरानकी डांडीके व्यजन और चंवर ॥ १३ ॥ पवनने कंपाये उपरना पाग जामा पटुका कवच और तेजसो प्रकाशित और सूर्यकी किरणनिसों अतिशय प्रकाशित निर्मल शस्त्रनसों ॥ १४ ॥ देवता दानवनके वीरनकी सेना मालानकरिकै ऐसे शोभित भई, जैसे ग्राहमत्स्यनकरिकै समुद्र शोभित होय है ॥ १५ ॥ विरोचनको बेटा असुरकी सेनानको पालक बली संग्राममें वैहायस नाम विमानपर " जहां मन करे तहां चल्यो जाई " जो मयदैत्यको बनायो हो ॥ १६ ॥ संपूर्ण युद्धकी समानकरिकै युक्त सब आश्चर्यरूप; तर्क करिवेमें न आवे कभी दीखे और कभी न दीखे ॥ १७ ॥ ऐसे विमाननमें श्रेष्ठ विमानमें बैठिकै सब सेनानके पालकानकरके सहित छत्र चमरसो शोभाको प्राप्त होत भयो, जैसे उदयाचलपै चंद्रमा शोभित होय है ॥ १८ ॥ ता राजा बलिकी और यूथनके पालक असुर सब ओरते अपने वाहननपै बैठिके सेनाकूं संग लेके आवत भये ॥ १९ ॥ नमुचि शंबर बाण विप्रचित्ति अयोमुख द्विमूर्द्धा कालनाभ प्रहेति इल्वल शकुनि भूतसंतापन वज्रदंष्ट्र विरोचन ॥ २० ॥ हयग्रीव शंकुशिरा कपिल मेघदुंदुभि तारक चक्रदृक् शुंभ निशुंभ जंभ उत्कल ॥ २१ ॥ अरिष्टनेमि मय त्रिपुरको पालक, और पौलोम कालयवन निवातकवच इनते आदि लेके वे ॥ २२ ॥ अमृतको भाग न पायवेवारे केवल कृशके भजनेवारे बहुत वेर देवतानके जीतनवारे दैत्य ॥ २३ ॥ सिंहनादकों करतभये सिगरे शंख बजावत भये, या प्रकार वैरिनको उद्धत देख महा क्रोधकर ॥ २४ ॥ स्वर्गको राजा इंद्र दिशानके हाथी ऐरावतपै चढिकै आकाशमें शोभित होतभयो, जैसे झरना झरनवारे उदयाचल पर्वतपै बैठिकै सूर्य सुंदर लगे है ऐसे इंद्र शोभाको प्राप्त होतभयो ॥ २५ ॥ ता इंद्रके सब ओरको नाना प्रकारके वाहन, ध्वजा आयुध ले सब देवता लोकपाल वायु अग्नि वरुण अपने गुणनको संग ले शोभित भये ॥ २६ ॥ वे देवता दैत्य मिलिकै परस्पर नामको लेकै पुकारते आगे प्रवेश करिकै दो दो मिलिकै युद्ध करतभये ॥ २७ ॥ बलि इंद्रके संग युद्ध करतभयो, स्वामिकार्तिक तारकके संग लडतभयो, हेतिके संग वरुण युद्ध करत भयो, प्रहेतिके संग मित्र लडतभयो ॥ २८ ॥ कालनाभिसो यम युद्ध करतभयो, मयके संग विश्वकर्मा युद्ध करतभयो, त्वष्टाके संग शंबर युद्ध करत भयो, सूर्यके संग विरोचन लडत भयो ॥ २९ ॥ अपराजितके संग नमुचि लडतभयो वृषपर्वाके संग अश्विनीकुमार लडत भये, बाणासुर आदि बलिके पुत्रनके संग एक सूर्य लडत भयो ॥ ३० ॥ राहुके संग चंद्रमा लडत भयो, पुलोमाके संग पवन लडतभयो, निशुंभशुंभके संग बडी वेगवान् देवी भद्रकाली लडति भई ॥ ३१ ॥ जंभके संग वृषाकपि महिषासुरके संग अग्निदेवता लडतभयो, प्रजापतिनके संग वातापीसहित इल्वल लडत भयो ॥ ३२ ॥ कामदेवके संग दुर्मर्ष लडतभयो, ब्राह्म्यादि मातृनके संग उत्कल लडत भयो बृहस्पतिके संग शुक्र लडत भयो, नरकासुरके संग शनैश्चर लडत भयो ॥ ३३ ॥ निवातकवचनके संग मरुतगण लडत भये कालयवनके संग वास्तुदेवता लडत भये, पुलोमाके संग विश्वेदेवता लडत भये, क्रोधवशनके संग रुद्र लडत भये ॥ ३४ ॥ संग्राममें वे देवता असुर मिलिकै या प्रकार दोदो युद्ध करत भये, परस्पर मिलिकै जीतिवेकी चाहना करै हैं बलपूर्वक पैने बाण खड्ग तोमर मारत

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये ॥ ३५ ॥ और भुशंडी चक्र गदा ऋष्टि पट्टे शक्ति लूहर पाश फरसा खड्ग भाले गेंडा मुद्गर भिंडिपालनसों शिरनको काटत भये ॥ ३६ ॥ हाथी घोडा रथ प्यादे असवार नाना प्रकार खंडित होत भये, भुजा नारि जंघा चरण कट कटकर गिरन लगे ध्वजा धनुष कवच गहने टूट गये ॥ ३७ ॥ तिनके पांयनको आघात, और रथनके पैया करिकै चूर्ण भई रणकी भूमिसो उडी धूरि दिशा सूर्य आकाशको ढकि लेतिभई, फेरि लोहूकी धारासों भीजे आकाशादिकतें निवृत्त होतभई ॥ ३८ ॥ किरीट मुकुट कुंडल सहित क्रोधयुक्त दृष्टि, दांतनसूं होठ चावते कटे शिर, आभरण और आयुधनसहित बडी भुजाकी राशि और जंघानसों ढकी रणभूमि महा शोभाको प्राप्त होतीभई ॥ ३९ ॥ रुंड अपनें शिरनके नेत्रसो देखते आयुधनकूं हाथनमें लेले योद्धानके सांमुही दौरत युद्ध करतभये ॥ ४० ॥ बलि दश बाणनकरिकै इंद्रको मारत भयो, तीनि बाणनकरिकै ऐरावतकूं मारचो चारि बाणनकरिकै चारि ऐरावतके रखवारे मार गेरे, एक बाणकरिकै महावतको मारतो भयो ॥ ४१ ॥ इन्द्र विन आयेभये बाणनको देख विनके आयवेसो पहलेही हंसते हंसते अपने तीक्ष्ण बाणनसो विन्हैं काटतभये ॥ ४२ ॥ इंद्रको उत्तम कर्म देखिकै असह्य हो तब बलि उल्काकीसी कांतिवालि शक्ति लेतभयो, इन्द्र हाथमें स्थित शक्तिकूं देखिकै शीघ्र काटत भयो ॥ ४३ ॥ तापीछे त्रिशूल लियो, फेरि पाश लीनी तोमर यष्टिको आदिलेकै जो जो अस्त्र लिये सोई सोई इंद्रने सब काटि डारे ॥ ४४ ॥ तब बलि अंतर्द्धान हैकै असुरनकी माया सृजतभयो ता मायाकरिकै देवतानकी सेनाके ऊपर पर्वत प्रकट होतभये ॥ ४५ ॥ वा पर्वतसों दावाग्निके जरे वृक्ष गिरत भये, टांकीसी पैनी शिला वैरीकी सेनाको चूर्ण करतभई ॥ ४६ ॥ बडे बडे सर्प दंदशूक वीछू दौरत भये सिंह व्याघ्र वराह हाथीनकों मारत भये ॥ ४७ ॥ सैकरान राक्षस त्रिशूल हाथमें लैके आवत भये, और नंगी यक्षणी और राक्षसनके गण इकठौरे हैकै मारो मारो कहत भये ॥ ४८ ॥ तापीछे बडी घंटासम गंभीर शब्द पवनके प्रेरे गर्जते मेघ आकाशते अंगारनकी वर्षा करतभये ॥ ४९ ॥ दैत्यनकों सूज्यो पवन जाको सहायक, बडो उग्र प्रलयकीसी नाईं अग्नि देवतानकी सेनाकूं जरावतभयो ॥ ५० ॥ तापीछें सब ओरते मर्यादा छोडि समुद्र प्रचंड भयो पवन करिकै तरंग उठने लगी और भयंकर भंवर पड़नेलगे ॥ ५१ ॥ जब ऐसी बडी माया रची, तब अलक्षित गति भयंकर दैत्यनकी सृजी मायासो देवता दुःखकूं प्राप्त होतभये ॥ ५२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! इंद्रादिक देवता ता मायाको उपाय न जानत भये, तब भगवान्‌कों ध्यान कियो, ध्यानके करतेही विश्वके पालक हरि भगवान् प्रकट होतेभये ॥ ५३ ॥ गरुडते कंधापै असवार पीतांबर पहरे कमल नेत्र, आठ आयुध भुजानमें लिये लक्ष्मी कौस्तुभमणि धारे बहुत मोलके किरीट मुकुट कुंडल सुंदर दुकूल वस्त्र पहरे हरि भगवान् दीखते भये ॥ ५४ ॥ भगवान्‌के प्रवेश करतसंते असुरनके कपटते भई माया हरिकी मायाकरिकै नष्ट होतीभई जैसें जागतेमें स्वप्न जातो रहै है कारण कि हरि भगवान्‌को स्मरण संपूर्ण विपत्तिनकूं दूरि करैहै ॥ ५५ ॥ हे नृप ! ता संग्राममें गरुडवाहन भगवान्‌को देखिकें सिंहवाहन कालनेमि असुर फिरायकै त्रिशूल फेंकतभयो गरुडके माथेंपै आते त्रिशूलकू पकड़ भगवान् लीलाहीसो वही त्रिशूलकरिकै कालनेमिको मारतभये ॥ ५६ ॥ ताके पीछें अतिबली माली सुमाली युद्धमें आवतभये, तब भगवान्‌नें चक्र करिकै दोनोंनके शिर काटिलिये तब माल्यवान् पैनी गदा गरुडके मारिवेकूं आयो तब ताईं भगवान्‌ने चक्र लेकै वैरीको माथो काटिलियो ॥ ५७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

माली सुमाल्यतिबलौ युधि पेततुर्यच्चक्रेण कृत्तशिरसावथ माल्यवांस्तम् ॥
आहत्य तिग्मगदयाऽहनदण्डजेन्द्रं तावच्छिरोऽच्छिनदरेर्नदतोऽरिणाद्यः ॥ ५७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

श्रीशुक उवाच–अथो सुराः प्रत्युपलब्धचेतसः परस्य पुंसः परयाऽनुकम्पया ॥
जघ्नुर्भृशं शक्रसमीरणादयस्तांस्तान्रणे यैरभिसंहताः पुरा ॥ १ ॥

ग्यारहवें अध्यायके विषे नारदजी दैत्यनके मारनवारे देवताको मनें करते भये, और शुक्र मृतकनको जिवाइ लेत भयो यह वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी परीक्षित्सों कहैं हैं परमपुरुष भगवान्की परमकृपासो सावधान चित्त हो देवता इंद्र पवनते आदि लेके रणमें जिनसों पहले युद्ध करेहै तिनें मारते भये ॥ १ ॥ विरोचनके बेटा बलिके अर्थ क्रोध कर भगवान् इंद्र जब वज्र उठावत भयो तब प्रजा हाहाकार करिकै पुकारत भई ॥ २ ॥ वज्र हाथमें लिये इंद्र आगे ठाढे संग्राममें विचरते बडो संपन्न धीर बलिकूं तिरस्कार करिके यह कहत भयो ॥ ३ ॥ हे मूढ ! नटकीसी नाईं मायानकरिकै मायेश्वर जे हम हैं तिने, हमारी तू जीतवेकी इच्छा करैहै जैसे नट मूर्खनकी आंखि बांधिके तिने जीतिकैं तिनके धनको हरैहै ॥ ४ ॥ जे स्वर्गमें चढिवेकी इच्छा करैं है, और मायाकरिकैं स्वर्गको उल्लंघन करिवेकी इच्छा करैं हैं, विन मूर्ख चोरनकों में पहिले स्थानतेहू नीचेकूं पटकि देहौं ॥५॥ सो मैं तीक्ष्णपर्व वज्रसे दुष्ट मायावी तेरे शिरको हरूंगो हे मंदबुद्धे ! अपनी जातिनकरिकैं सहित युद्धके लिये यत्न कर ॥ ६ ॥ तब बलि बोल्यो हे देव ! जिनके कर्मनको कालने प्रेरण करैहै ऐसे संग्राममें स्थित जे वीर है विनकी हार जीत मृत्यु क्रमसों होती रहतीहै ॥ ७ ॥ विवेकी जन कालकी डोरीतें बंध्यो जगत्को देखिकैं यातें आनंदको नहीं प्राप्त होतेहैं, शोचको नहीं धारण करैं है, ऐसे विवेकमें तुम मूर्ख हो ॥ ८ ॥ तुम कीर्ति जयादिकमें आपको साधन मानतेहो इस कारण तुम साधुपुरुषनकरके शोचनीय हो तुम्हारी मर्ममें पीडा देनेहारी वाणी हम स्वीकार नहीं करैहै ॥ ९ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं है हे राजन् ! ऐसे वीरनको मारनवारो बलि तिरस्कार करिकै कान ताईं खेंचे बाणनसों इंद्रको मारत भयो जा इंद्रकूं पहले तिरस्कार वाक्यनकरिकै मारचुकोहै ॥ १० ॥ सत्यवादी बलीनें ऐसे जब इंद्रको तिरस्कार कियो, तब सो ताके तिरस्कारकूं नहीं सहारत भयो, जैसें अंकुशकरिकै मारचो हाथी नहीं सहारे है ॥ ११ ॥ वैरीनको मारनवारो इंद्र बलीके अर्थ सफल (जो कभी खाली न जाय ऐसो) अपनो वज्रप्रहार करत भयो, तासो विमानसहित बली पृथ्वीमें गिरि परत भयो जैसे पंख कटवेसो पर्वत गिरि परैहै ॥ १२ ॥ बलीको सखा जंभ अपने सखा बलीकों गिरो देखिकैं गिरे भये मित्रको सुहृद्धर्मपालन करकै इन्द्रके सन्मुख आयो ॥ १३ ॥ सिंहवाहन बडो बली जंभ पास आइ गदा उठाइकै इंद्रके हाथीकैं मारत भयो ॥ १४ ॥ गदाके प्रहारकरिकै दुःखी अतिशयकरिकैं विह्वल हाथी घोटुनकै बल पृथिवीमें गिरिकैं बडे मोहकूं प्राप्त भयो ॥ १५ ॥ ताके अनंतर मातलीसारथीनें हजार घोडानकरिकै युक्त रथ लाइकैं प्राप्तकर दीयो, इंद्र हाथीकों छोडिकै रथमें चढत भयो ॥ १६ ॥ दानवनमें श्रेष्ठ जंभ सारथीके कर्मकी बडाई करत भयो, और इसके संग्राममें प्रकाशित त्रिशूलसो मातलीकों मारत भयो ॥ १७ ॥ मातलि अपने बलको आश्रयकरिकैं

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दुस्सह पीडा सहत भयो, तब इंद्र क्रोधकरिकैं वज्रते जंभको माथो काटि लेत भयो ॥ १८ ॥ वाकी जातिके नमुचि शंभल पाक नारदजीसो जंभको मारयो सुनिकैं बडे वेगसौं आवत भये ॥ १९ ॥ और इंद्रके प्रतिमर्मके पीडा देवेवारे बडे कठोर वाक्य कहते या प्रकार बाणनकी वर्षा करन लगे जैसे मेघ पर्वतपर जल वरसावें हैं ॥ २० ॥ बलनामा दैत्य लघु हस्ततासो संग्राममें हजार बाणनकरिकैं इंद्रके हजार घोडा एक संग मारत भयो ॥ २१ ॥ पाक दैत्य दोसौ २०० बाणनकरिकैं मातलिकूं मारत भयो, और न्यारे न्यारे रथके अंगनमें बाण मारत भयो एक संग बाण लगायवे और चलायवैसौ बडो अद्भुत चरित्र होत भयो ॥ २२ ॥ नमुचि सोनेके पंख लगे पंद्रह बाणनसौं वाय मारिकैं फेरि संग्राममें जलभरे मेघके गर्जवेकी समान बडी गर्जना करत भयो ॥ २३ ॥ असुर सब ओरतें बाणनके समूहसौं रथ सारथी सहित इंद्रको ढांकि देत भये जैसे मेघ वर्षाकालके विषें सूर्यकूं ढाकि देते हैं ॥ २४ ॥ अनुगनकरिकैं सहित देवतानके गण इंद्रको न देखिकै अति विह्वल होतभये, और पुकारत भये नायक न हैवैसौ शत्रुकी सैनासौ हारनेके कारण ऐसें पुकारन लगे जैसे समुद्रमें जहाज डूबवेसौं वणियां पुकारे है ॥ २५ ॥ ताकें अनंतर इंद्र बाणनके विंध्ये पींजरातें घोडे रथ ध्वजा सारथी सहित निकरत भयो, दिशा आकाश पृथ्वीको अपने तेजसौं प्रकाश करतो शोभित होत भयो जैसे रात्रिके अंतमें सूर्य निकरे है ॥ २६ ॥ संग्राममें वैरीनसो पीडित अपनी सेनाकूँ देखिकै इंद्र वैरीके मारिवेकूं वज्र उठावत भयो ॥ २७ ॥ इंद्रने आठ धारा युक्त वज्रसौं असुरनके देखते २ और विनकी जातिवालेनकों भय उपजावते भये इन्द्रने बल और पाक दैत्यको शिर काट लियो ॥ २८ ॥ हे नृप ! नमुचि तिनको वध देखिकै शोक अमर्ष क्रोधसौं युक्त इंद्रके मारिवेकी इच्छा कर परम उद्यम करत भयो ॥ २९ ॥ लोहेके सारको बनो और जामें पंदरह घंटा बंधे ऐसे सुवर्णकरिकैं भूषित त्रिशूल धारण करिकैं दौरतो यह कहत भयो कि अरे इंद्र ! मारि लियो, ऐसें गर्जना करत भयो ॥ ३० ॥ इंद्रके ऊपर चलावत भयो सिंहकीसी नाईं डुकारत भयो, सांमुहे आकाशमें बडे वेगसौं आवते त्रिशूलके इंद्र बाणनकरिकैं हजार टूक करत भयो, क्रोधयुक्त स्वर्गको राजा इंद्र शिर काटिवेके लिये नमुचिकी नारिमें वज्र मारत भयो ॥ ३१ ॥ इंद्रसे बलकरिकैं चलायों वज्र नमुचिकी त्वचा (खाल) हूको न काटत भयो यह अद्भुत होत भयो, बडो पराक्रमी वृत्रासुरको मारनवारो वज्र नमुचिकी नारिकी त्वचानें तिरस्कार करि दियो ॥ ३२ ॥ तब इंद्र वा वैरितें डरपत भयो, जानें वज्रको तिरस्कार करि दियो, यह दैवयोगकरिकैं कहा भयो, यह संपूर्ण लोकनको मोहित करै है ॥ ३३ ॥ देखो जा वज्र करिकैं मैंने पहले विन पर्वतनके पंख काटे जो पर्वत परनसौं उड़ पृथ्वीपै गिरकें अपने भारसौं प्रजाको नाश करते हैं ॥ ३४ ॥ तपको सार त्वष्टासौं उत्पन्न हुए वृत्रासुरको याही वज्रसौं मैंने मारो औरहूँ बडे बली दैत्य याही वज्रसौं मारे जो और अस्त्रनसौं नहीं मरेहै ॥ ३५ ॥ तौ अब मैं दंडकी तुल्य वज्रको लेके कहा करूँगा आश्चर्यकी वार्ता है कि दधीचिकी तपसामर्थनेहू कछु कार्य न कियो ॥ ३६ ॥ ऐसे खेदको प्राप्त भये इंद्रसो आकाशवाणी संबोधन देकैं यह कहती भई यह दैत्य सूखे और गीलेकरिकैं वधकूं योग्य नहीं है ॥ ३७ ॥ मैंनें याकूं वर दियोहै कि सूखे गीले करिके मृत्यु न होइगी यातें वैरीको और उपाय विचारिवेकूं योग्य हो ॥ ३८ ॥ सावधान इंद्र यह देववाणी सुनिकैं ध्यान करत भयो सूखो नहीं गीलो नहीं ऐसो उपाय न देखत भयो ॥ ३९ ॥ फेरि अपने मनमें विचारिकै जलको फेन बबूला जो न सूखो न गीलो ताकरिकै नमुचिको शिर हरि लेतभयो तब वा इंद्रकी मुनिगण स्तुति करत भये पुष्पनकी इंद्रके ऊपर वर्षा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करत भये ॥ ४० ॥ गंधर्वनमें मुरुय विश्वावसु परावसु गावत भये, देवतानके नगाडे बाजत भये अप्सरा नाचती भई बडे आनंदकरिकैं संयुक्त ॥ ४१ ॥ सिगरे जे देवताहैं वायु अग्नि वरुणते आदि लेके अपने प्रतिद्वंद्वी शत्रुनको शस्त्रनके समूहन करिकै ऐसे मारते भये जैसे सिंह मृगनकूं मारे हैं ॥ ४२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ब्रह्माके पढाये देवतानमें " ऋषीश्वर नारद " दानवनको नाश देखिकें देवतानको मनें करत भये ॥ ४३ ॥ नारद बोले कि नारायणकी भुजानके आश्रयी तुम अमृत पी करिकें संपत्तिन करिके बढे हो, अब लराईते सिगरे निवृत्त होउ ॥ ४४ ॥ मुनिको वचन मान और क्रोधके वेगको दूरिकरिकें अनुचर सहित सिगरे देवता स्वर्गकों जात भये ॥ ४५ ॥ रणमें बचे दैत्यनकूँ नारदके अनुग्रहतें मरेभये बली दैत्यको लेकें सब दैत्य अस्ताचलपर्वतकूं जात भये ॥ ४६ ॥ तिन दैत्यनमें जिनके अंग नहीं नष्ट भये और जिनकी नार विद्यमान ही विन दैत्यनकूं शुक्र अपनी संजीवनी अद्भुतविद्यासो जिवावते भये ॥ ४७ ॥ शुक्राचार्यसो देहस्पर्श हैवेके कारण बलि दैत्यको फिर स्मृति आयगई वह बली दैत्य हारेहू हौ परंतु खेदकूं प्राप्त न होत भयो, क्यों कि लोकतत्वमें चतुर हैं ॥ ४८ ॥

बलिश्चोशनसा स्पृष्टः प्रत्यापन्नेन्द्रियस्मृतिः ॥
पराजितोऽपि नाखिद्यल्लोकतत्त्वविचक्षणः ॥ ४८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

बादरायणिरुवाच–वृषध्वजो निशाम्येदं योषिद्रूपेण दानवान् ॥
मोहयित्वाऽसुरगणान्हरिः सोममपायत् ॥ १ ॥

मोहनीजीके रूपके विभ्रम देखिवेकी उत्कंठावारे श्रीमहादेवजीकूं हरि भगवान् मोहित कर फेरि सावधान करत भये सो वर्णन करेंगे ॥ असुर विष्णुमायाकरिकें मोहित होत भये यह कछु बात अद्भुत नहीं है, यह कहिवेके लिये महादेवजीको मोहन वर्णन करेंगे ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे प्यारे परीक्षित् ! स्त्रीरूप करिकैं दानवनको मोहित करिकै हरि देवतानकों अमृत प्यावत भये यह सुनिके महादेव ॥ १ ॥ बैलपै चढिकें सिगरे भूतगणनकों संग ले देवी पार्वती करिके सहित तहां देखिवेकों जात भये जहां मधुसूदन भगवान् हे ॥ २ ॥ भगवान् श्रीकृष्णने पार्वतीसहित आदरपूर्वक सन्मान करो तब सुन्दर आसनपै बैठ श्रीमहादेवजी हरिकों पूजन करिकैं हंसिकरिके यह बोलते भये ॥ ३ ॥ श्रीमहादेवजी बोले हे देवनके देव ! हे जगद्व्यापक ! हे जगत्के ईश्वर ! हे जगत्स्वरूप ! सबरे भावनके तुम कारण हो, आत्मा हो, याते ईश्वर हो ॥ ४ ॥ या सम्पूर्ण जगत्को आदि अंत मध्य तुमतें होय है आपको आदि अंत और मध्य कुछभी नहीं हैं जो दृश्य द्रष्टा भोक्ता मोक्ष है सो सत्य चिद्रूप ब्रह्म अव्यय संपूर्ण तुमही हो ॥ ५ ॥ श्रेयकी कामनावारे निष्काम मुनि या लोक परलोकको संग छोडिकें तुम्हारे चरणारविंदनकी उपासना करें है ॥ ६ ॥ तुम ब्रह्म हो, पूर्ण हो, अमृत हो निर्गुण हो, शोकरहित हो, आनंदमात्र हो, निर्विकार हो, सबतें न्यारे हो तथापि विश्वके उदय स्थिति संयमके कारण हो, जीवोंको पृथक् २ फल देतेहो आप काहूकी अपेक्षा नहीं करेहो आपकी सब जीव अपेक्षा करते हैं ॥ ७ ॥ एक तौ कुण्डलादिके आकारको सुवर्ण एक आकृतिरहित सुवर्ण यह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दोनो जैसे एकही हैं ऐसे कार्य कारण द्वैत और अद्वैतके परम कारण आपही हो तुममें कोई भेद नहीं लोकनने अज्ञानसो आपमें भेद कल्पित कियोहै आपके उपाधिरहित स्वरूपमें गुण कल्पित भेद प्रतीत होयहै यथार्थमें नहीं ॥ ८ ॥ कोई तुम्हें ब्रह्म कहैं हैं, कोई एक धर्म कहै हैं, कोई प्रकृति-पुरुषतें परे कहैं हैं, कोई पुरुष मानै हैं और कोई तुमें नौ ९ शक्तिनकरिकैं युक्त कहै हैं, कोई अव्यय स्वतंत्र महापुरुष जाने हैं ॥ ९ ॥ में ब्रह्मा मरीच्यादिक ऋषि सतोगुणकरिकैं रचे हुए तुममें रचे विश्वकूं तत्त्वते नहीं जानें हैं, फिर तुमको और कोई कहांते जाने हे ईश ! तुम्हारी माया करिकैं जिनके चित्त हरेहै ऐसे राजसी तामसी उत्पत्ति और वृत्तिवारे दैत्य मनुष्यादिक न जाने तौ यामें कहा कहनो हैं ॥ १० ॥ सो तुम अपनों कियो जगत् स्थिति नाश प्राणीनकी चेष्टा और जगत्को बंधन मोक्ष जानोहो, जैसे चरअचररूप भये आकाशमें पवन प्रवेश करैहै तैसे सबके आत्मा हो ज्ञानरूप तुम सबमें प्रवेश करोहो ॥ ११ ॥ गुणनकरिकैं रमण करो हो, तुम्हारे अवतार मैंनें देखे, अब तुमने स्त्रीरूप धरयो वाकू देखिवेकी इच्छा करूंहूं ॥ १२ ॥ जाकरिकैं दैत्य मोहित किये, और देवतानकूं अमृत प्यायो सो देखिवेकी इच्छा कर हम आये हैं हमकूं बडो आश्चर्य है सो दिखाओ ॥ १३ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! शूलपाणि महादेवने जब ऐसें प्रार्थना किये भगवान् विष्णु हँसिकैं महादेवजीसों यह बोलत भये ॥ १४ ॥ भगवान् महादेवजीसों कहैं हैं देवतानको कार्य देखके मैंनें अमृतको पात्र जब गयो देखौ तब दैत्यनकी वंचनाकों स्त्रीको भेष धारण कियो ॥ १५ ॥ हे देवतानमें श्रेष्ठ ! तुम वा रूपके देखवेकी इच्छा करतेहो सो रूप दिखाऊंगो, जो कामिनको बहुत संमत है, कामको उदय करनवारो है ॥ १६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! ऐसे भगवान् कहिकैं तहां अंतर्धान होत भये, पार्वती सहित महादेवजी सब ओरकों नेत्र चलावत हेरत रहे ॥ १७ ॥ तापीछें विचित्र फूल अरुण पल्लव वृक्ष युक्त उपवनमें श्रेष्ठ स्त्रीको देखते भये जो गेंदकी लीला करिकैं क्रीडा करती सुंदर दुकूलसो ढके नितंब और मेखलासो शोभित हैं ॥ १८ ॥ गेंदके फेकिवेकरिके ऊंचे नीचे कांपते स्तननमें सुंदर हारके भारसो पगपगमें चलवेसो मानौ कटिभंग हैजायगी या प्रकार यह स्त्री चारों ओर अपने सुकुमार चरण रखतीही ॥ १९ ॥ दिशानमें गेंद फेंकती चंचलभावसो अति उद्विग्न, तारेनसो विशाल चंचल नेत्र अपने काननके प्रकाशित कुंडलनसो शोभायमान कपोलमें श्याम अलकसो मुख मंडित है ॥ २० ॥ शिथिल दुकूल और खुलीहुई चोटीकूं सुंदर बांये हाथसो बांधती दूसरे हाथकरिकै गेंदको फेंकती, अपनी मायाकरिकै जगत्कों मोहित करैहैं ॥ २१ ॥ संपूर्ण दिशानमें महादेवजीनें देखिकै या प्रकार गेंदकी लीलासो और तनक लज्जायुक्त मंद मुसिक्यानि चलाये कटाक्षनसो वंचित स्त्रीकों अपनेमांहीं देखनेसो विह्वल मन हैकै अपने निकटमें ठाढी पार्वतीजी और अपने गणनकू नहीं जानतभये ॥ २२ ॥ विन मोहनीजीके हाथतें जब गेंद दूरि गई तब ताके लेवेके लिये दौरी तब श्रीमहादेवजीके देखते पवन वाकी कांचरीसहित सूक्ष्म वस्त्र हरि लेतभयो ॥ २३ ॥ वाके देखि वेलायक और मनोरम रुचिर कटाक्षनको देखिके महादेवजी वामें मन करतेभये, और वह मोहनीजी अपने कटाक्षकरिकें उन्हे देखती चली ॥ २४ ॥ मोहनीजीकरकें ज्ञान हरलेवेके कारण मोहनीजीकें किये कामसो विह्वल लज्जारहित महादेवजी भवानीके देखत तिनके पास जातभये ॥ २५ ॥ वो श्रीमहादेवजीको आवतो देखिके वस्त्र खिसकजायवेके कारण सो बहुत लज्जित भई और वृक्षनमें छिपके हंसती भई ठाढी नहीं होती भई ॥ २६ ॥ मन हरजानेसे श्रीमहादेवजी तिनके पीछें दौरतभये जैसे कामके वश

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयेसे हाथी हथिनीके पीछै दौरै है ॥ २७ ॥ सो महादेवजी बडे वेगतें पास जाइकें अपनेको नहीं इच्छा करती वा स्त्रीकी चोटी पकरिकैं भुजानकरिकैं आलिंगन करतभये ॥ २८ ॥ जैसें हाथी हथिनीते आलिंगन करैहै तैसे महादेवजीनें आलिंगन वह कीनी तब वह इत उत छूटिवेके लियें चेष्टा करन लगीं या अवसरमें वाकों केशपाश खुलगयो ॥ २९ ॥ हे राजन् परीक्षित्! देवतानमें श्रेष्ठ श्रीमहादेवजीके भुजानके मध्य वह पृथुनितम्बवाली भगवान्की रची माया अपनेको छुटाइके भाजतभई॥३०॥ जो महादेवजी अद्भुतकर्मा विष्णु भगवान्की पदवी (मार्ग) को प्राप्त भयेहै, तिन्हैं वैरी कामदेवनें जीतिलियो ॥ ३१ ॥ ताके पीछें दौरते महादेवजीको अमोघ वीर्य (रेत) वहतभयो, जैसे ऋतुमती हथिनीके पीछें हाथी दौरै है और वाको वीर्य गिरे हैं ॥ ३२ ॥ महात्मा महादेवजीको वीर्य जहां जहां पृथ्वीमें परतभयो तहां तहां हे पृथ्वीके पति परीक्षित् ! सोने रूपेकी खानि होती भई ॥ ३३ ॥ तिनके पीछें दौरे श्रीमहादेवजी नदी सरोवर पर्वत वन उपवन जहां कहूं ऋषी हैं तहां तहां प्राप्त होत भये ॥ ३४ ॥ वीर्य (रेत) गिरे पीछें श्रीमहादेवजी हरि भगवान्की मायासों जड बुद्धि भए अपनेको देखतभये हे राजानमें श्रेष्ठ परीक्षित् ! तबही श्रीमहादेवजी मोहतें निवृत्त होत भये ॥ ३५ ॥ जगत्के आत्मा, नहीं जानिवेमें आवें है पराक्रम जिनको ऐसे भगवान्के माहात्म्यको जाननेहारे श्रीमहादेवजी अपनेको जडबुद्धि करनेको आश्चर्य न मानतभये ॥ ३६ ॥ भगवान् व्याकुलता और लज्जारहित महादेवजीकूं देखिकै अपनो पुरुषरूप धरिकै परम प्रसन्न व्हैकै बोलत भये ॥ ३७ ॥ भगवान् कहैहै ॥ हे श्रीमहादेवजी महाराज ! हे संपूर्ण देवतानमें श्रेष्ठ ! यद्यपि आप मेरी मायासों मोहित भये परन्तु यह बडी बधाई भई जों तुम अपनी निष्ठाको प्राप्तभये ॥ ३८ ॥ तुम विना कौनसो पुरुष मेरी मायाकूं तरसकैहै जो माया अनेक प्रकारके भावनको प्रगट करतीहै जिनको मन वशमें नहीं है वे या मायाको नहीं तरसक्तेहैं ॥ ३९ ॥ सृष्टिआदि कारण रूप और कालरूप मेरे प्रभावसों घटते और वृद्धिको प्राप्त होते रजोगुण आदि अंशसों मेरे वशमें रहनेहारी मेरी माया तुम्हारो पराभव करनेको समर्थ नहीं होयगी ॥ ४० ॥ शुकदेवजी बोलें हे राजन् ! श्रीवत्सचिह्न भगवान्सों ऐसे सत्कार किये गणनसहित महादेवजी भगवान्सूं आज्ञा मांगिकै परिक्रमा देकै अपने स्थानको जातभये ॥ ४१ ॥ हे राजन् ! भगवान् श्रीमहादेवजी ऋषिनमें मुख्यनके सुनते अपने अंशभूत माया भवानी श्रीपार्वतीजीसूं प्रीतिसै या प्रकार बोलत भये ॥ ४२ ॥ हे भवानी ! अजन्मा परमपुरुष परमदेवता हरि भगवान्की माया तुमनें देखी जा मायाकरिकै कलानमें श्रेष्ठ मैं परवश हैके मोहित भयो, और जे प्राणी पराधीन है वो मोहित होंइ यामें कहा कहनोहै ॥ ४३ ॥ हजार वर्षको योग तातें निवृत्त भयो जो मेरे निकट आइकै तुम मोसूं पूछतभयी सो यह साक्षात् पुराणपुरुष है जामें काल और वेद प्रवेश नहीं करै है ॥ ४४ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्सों कहैं हैं, हे तात ! शार्ङ्गधनुष हरि भगवान्को पराक्रम तेरे आगें कह्यो जिननें समुद्रके मथिवेमें पीठिपै पर्वत धारणकियो ॥ ४५ ॥ जो पुरुष या चरित्रकों कीर्तन करैंगे,

१ शंका—महादेवजी कामके नाश करनेवाले हैं फिर भगवान्का स्त्रीरूप देखकर कामके वशीभूत भूतनाथ क्यों हो गये ? यह बडे आश्चर्यकी बात है !

उत्तर—अनेक युग " नमः शिवाय नमः शिवाय " इस मंत्रको जपके माया तप करने लगी तब एक दिन शिवजी बोले कि हे माया ! जिस वरकी तुझको इच्छा है वह वर मांग तब माया बोली कि हे शम्भो ! तीन लोकमें जो देहधारी प्राणी ब्रह्मा, विष्णु, देवता, मनुष्य असुरादिक हैं, सो सब मेरे वश होंय एक आपको छोडकर परन्तु आधी घडीके लिये आपभी मेरे वशमें होंय शिवजीने मायासे कहा कि हम एक क्षण मात्रकोभी तेरे वश होंगे सो इसलिये महादेव कामके वश हुए कुछ कामी होकर कामके वश नहीं हुए ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ताकों उद्यम कबहूं नष्ट नहीं होइगो, उत्तमश्लोक (कीर्ति) वारे भगवान्के गुणनको वर्णन समस्त संसारको परिश्रम नाश करै है ॥ ४६ ॥ भगवान्को भक्तपक्षपात स्मरण करते नमस्कार करैहै जो असाधुनकों नहीं प्राप्त होनेवाले भक्तनकरिकै सेवनीय चरणकमलमें शरण आये देवतानको समुद्रके मथिवेसों भये अमृतकूं प्यावत भये, और जिनने कपटकरिकै स्त्रीवेष धरि दैत्यनकूं मोहित कियो विन शरण आयेनके कामपूरण करनवारे भगवान्कूं मैं नमस्कार करूंहूं ॥ ४७ ॥

असदविषयमङ्गिं भावगम्यं प्रपन्नानमृतममरवर्यानाशयत्सिन्धुमथ्यम् ॥
कपटयुवतिवेषो मोहयन्यः सुरारींस्तमहमुपसृतानां कामपूरं नतोऽस्मि ॥४७॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

श्रीशुक उवाच-मनुर्विवस्वतः पुत्रः श्राद्धदेव इति श्रुतः ॥
सप्तमो वर्तमानो यस्तदपत्यानि मे शृणु ॥ १ ॥

अब सात मनुसो आदि लेकै जे सिगरे मन्वंतर छे प्रकारके हैं विनै न्यारे २ क्रमते वर्णन करैंगे ॥ शुकदेवजी परीक्षित्प्रति कहेहैं हे राजन् ! सूर्यको पुत्र श्राद्धदेवनाम सातयों मनु जो वर्तमान हैं ताके पुत्रनके नाम मोते सुनो ॥ १ ॥ इक्ष्वाकु, नभग, धृष्ट, शर्याति, नरिष्यंत, नाभाग, सातयों दिष्ट ॥ २ ॥ करूष पृषध्र वसुमान ये दश पुत्र हैं, हे राजन् ! ये वैवस्वतमनुके पुत्र होतभये ॥ ३ ॥ आदित्य वसव रुद्र विश्वेदेवा देवता मरुद्गण अश्विनीकुमार और ऋभु ये देवता भये, हे राजन् तिनको इंद्र पुरंदरनाम होतभयो ॥ ४ ॥ कश्यप अत्रि वसिष्ठ विश्वामित्र गौतम जमदग्नि भरद्वाज ये सप्तऋषि होतभये ॥ ५ ॥ या मन्वंतरकों कश्यपतें अदितिके विषें भगवान्कों जन्म होतभयो, बारह आदित्यनमें छोटे भगवान् वामनजीको रूप धारण करत भये ॥ ६ ॥ ये संक्षेपतें मैंने तुम्हारे आगें सात मन्वंतर कहे, भगवान्के अवतारनकरिकैं युक्त और सात होंइगें तिने अब कहूंगो सो तुम सावधान व्हैकै सुनो ॥ ७ ॥ विवस्वत (सूर्य) के दो स्त्री भई ते दोऊ विश्वकर्माकी बेटी हैं संज्ञा और छाया, हे राजेंद्र ! यह मैंनें पहिलें तुमसों कही ॥ ८ ॥ कोई एक तीसरी वडवा नामकरिकैं भई ऐसो कहेहैं ता संज्ञाके तीनि पुत्र भये, यम यमी श्राद्धदेव एक कन्या यमुना होतिभई, याके पीछे छायाके पुत्र सुनो ॥ ९ ॥ हे राजन् ! सावर्णिनाम पुत्र और संवरणकी स्त्री तपति नाम कन्या और तीसरो शनैश्चर यह तीन संतान छायाकें भई और वडवाके पुत्र अश्विनीकुमार भये ॥ १० ॥ आठयो मन्वंतर आवेगो तब सावर्णि मनु होइगो हे राजन् ! निर्मोक विरजस्क इत्यादिक सावर्णिके पुत्र होइगे ॥ ११ ॥ तहां सुतपा विरजा अमृतप्रभा ये देवता होइगे, तिनको इंद्र विरोचनको बेटा बलि होंइगो ॥ १२ ॥ जो राजा बलि तीनि पेड पृथ्वी मांगिवेको आये विष्णु भगवान्के अर्थ या संपूर्ण पृथ्वीकूं देकें हरिकी कृपाकरिकैं मिले इंद्रपदको छोडिकें सिद्धिकों प्राप्त होइगें ॥ १३ ॥ जो राजा बलि भगवान्नें बांध्यो, फेरि स्वर्गतें अधिक सुतलमें प्रवेश कराइकें तहां अबतक इंद्रकीसी नाई रहैहै ॥ १४ ॥ गालवऋषि दीप्तिमान् परशुराम अश्वत्थामा कृप शृंगीऋषि हमारे पिता भगवान् श्रीव्यासदेवजी महाराज ॥ १५ ॥ ये वा समय सप्तऋषी होइगें हे राजन् ये सब महात्मा अपने योगते या समय अपने अपने आश्रममंडलमें स्थित रहैं है ॥ १६ ॥ देवगुह्य सरस्वतीके विषे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सार्वभौम भगवान् होइगे, सो इंद्रसो स्थानकूं छिडाइकैं बलिराजाको दैइगे ॥ १७ ॥ नौंयों वरुणको पुत्र दक्षसावर्णिनाम मनु होयगो, ताकें भूतकेतु दीप्तकेतु इत्यादिक पुत्र होइगे ॥ १८ ॥ पारा मरीचिगर्भादिक देवता होंइगे, अद्भुत इंद्र होइगो, द्युतिमानते आदि लेकें ऋषि होंइगे ॥ १९ ॥ आयुष्मानकी अंबुधारा स्त्रीमें ऋषभ देवनाम भगवान् प्रगट होइगे, जाकरिकैं त्रिलोकीको अद्भुत इंद्र भोग करेगो ॥ २० ॥ दशयों उपश्लोकको बेटा ब्रह्मसावर्णिनाम मनु होइगो ये ताके पुत्र भूरिसेनादिक होंइगे, हविष्मानतें आदि लेके ऋषि होंइगे ॥ २१ ॥ तहां विश्वसृष्टानके घरमें हरिको जन्म होंइगो, आपूर्ति नाम होयगो जिनसौं संपूर्ण जगत् सुखको प्राप्त होइगो ॥ २२ ॥ हविष्मान सुकृति सत्य, जय, मूर्ति, मनुके पुत्र होंयगे सुवासन विरुद्धादिक देवता होइगे और शंभुनाम इंद्र होयगो ॥ २३ ॥ विष्वक्सेन विषूचीके विषें प्रगट ह्वैके शंभू इंद्रको पक्ष करेंगे, अपने अंशकरिकैं विश्वसृष्टानके घरमें जन्म लैयगे ॥ २४ ॥ ग्यारयों मनु धर्मसावर्णिनाम होइगो सत्यधर्म आदि लेके दश ताके पुत्र होंइगे ॥ २५ ॥ विहंगम, कामगमनिर्वाण, रुचि, ये देवता होंइगे, तिनको इंद्र वैधृति होइगो, अरुणादिक ऋषि होइगे ॥ २६ ॥ आर्यकको पुत्र धर्मश्वेत नाम हरिके अंशते वैधृताके विषे जन्म लेके त्रिलोकीको धारण करैंगे ॥ २७ ॥ हे राजन् ! बारहों मनु रुद्रसावर्णि होइगो, देववान् उपदेव देवश्रेष्ठादिक ताकें पुत्र होंइगे ॥ २८ ॥ ता समय ऋतधामा इंद्र होयगो, हरितादिक देवता होंइगे, तपोमूर्ति तपस्वी आग्नीध्रते आदि लेके ऋषि होंइगे ॥ २९ ॥ सुधामा नाम हरिको अंश सत्यसहकी सूनृता स्त्रीमें ह्वैके वा मन्वंतरको पालन करैंगे ॥ ३० ॥ तेरहो मनु देवसावर्णि होंइगो, चित्रसेन विचित्रादिक ताके पुत्र होंइगे ॥ ३१ ॥ सुकर्म सुत्रामादि देवता होंइगे निर्मोक तत्त्वदर्शादिक ऋषि होंयगे ॥ ३२ ॥ देवहोत्रके पुत्र योगेश्वर हरिके अंश बृहतीके विषें जन्म लेके दिवस्पति इंद्र संपादक होंइगे ॥ ३३ ॥ चौदहवो मनु इंद्रसावर्णि नाम आवेगो, उरु गंभीरबुद्धि आदि ताके पुत्र होइगे ॥ ३४ ॥ पवित्र चाक्षुष देवता होंइगे, शुचिनाम इंद्र होइगो, अग्नि बाहु शुचि शुद्ध मागध इत्यादिक ऋषि होयगे ॥ ३५ ॥ सत्रायणकी विनता स्त्रीमें बृहद्भानुनाम भगवान्को अवतार होयगो जो कर्मनकों विस्तार करेंगे ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! त्रिकालमें भये यह चौदह मनु तेरे आगे कहे युगनकी हजार चौकडीमें चौदह मन्वन्तर बीत जाते हैं चौदह मन्वन्तरके कालको कल्प कहते हैं ॥३७॥

राजंश्चतुर्दशैतानि त्रिकालानुगतानि ते ॥
प्रोक्तान्येभिर्मितः कल्पो युगसाहस्रपर्ययः ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

राजोवाच-मन्वन्तरेषु भगवान् यथा मन्वादयस्त्विमे ॥
यस्मिन्कर्मणि ये येन नियुक्तास्तद्ब्रूहि मे ॥ १ ॥

या अध्यायमें सम्पूर्ण मन्वादिकके यथायोग्य न्यारे न्यारे कर्म वर्णन करैंगे ॥ राजा परीक्षित् पूछे हैं हे भगवन् ! मन्वन्तरनमें ये मन्वादिक जा जा कार्यमें जैसे २ प्रकार नियुक्त किये जातेहैं वह आप मोसौं कहो ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! मनु और मनुके पुत्र ऋषि इंद्र देवता वे सब हरि भगवान्के आधीन हैं ॥ २ ॥ यज्ञते आदि लेकरिकें भगवान्के अवतार कहे तिनक-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रिकैं प्रेरे मन्वादिक जगत्के जन्मादिक व्यतीत करैं हैं ॥ ३ ॥ ऋषीश्वर चारों युगनके अंतमें कालसों नष्ट भये वेदनके गणनको तपस्या करिकैं प्रगट करैं हैं, तिनतें सनातन धर्म होय हैं ॥ ४ ॥ हरि भगवान्के प्रेरे मुनिजन चारचो पांवके धर्मकूं साक्षात् अपने अपने समयमें पृथ्वी प्रवृत्त करैहैं ॥ ५ ॥ जहां ताईं मन्वंतरको अंत होय है तबताईं प्रजापालक राजा पुत्रपौत्रादिकनके कर्मकरिकैं प्रजानको पालन करैं हैं, देवता यज्ञभाग करैं हैं ॥ ६ ॥ भगवान्की दीनी त्रिलोकीकी बडी संपत्तिको भोग करतो इंद्र तीनों लोकनको पालन करैहै वर्षा करै है ॥ ७ ॥ हरि भगवान् युगयुगके विषे सनकादिक सिद्धनके स्वरूप धारण करनवारे ज्ञानकों कहैं हैं और याज्ञवल्क्यादि ऋषिनके रूपको धारण करकै कर्मनकों कहै हैं, और दत्तात्रेयादि योगेश्वरके रूपकूं धरिकैं योगकों कहैं हैं ॥ ८ ॥ प्रजेश्वरनके रूपको धारण करिकैं सर्गको करैं हैं, राजाकी मूर्तिकरकैं चोरनकों मारे हैं, और कालरूपकरिकैं सबनको नाश करैं हैं, जिनके नानाप्रकारके गुण हैं ॥ ९ ॥ नाम रूप मायासो मोहित आत्मावारेनको, नाना शास्त्रनकरिकैं स्तुति कियेपर भगवान् नहीं देखिवेमें आवैहै ॥ १० ॥ महाकल्पके अंतर्गत यह तुमसों अवान्तर कल्पकी कथा कही जा कल्पमें चौदह मनु होते हैं ऐसे विद्वान् कहै है ॥ ११ ॥

एतत्कल्पविकल्पस्य प्रमाणं परिकीर्तितम् ॥
यत्र मन्वन्तराण्याहुश्चतुर्दश पुराविदः ॥ ११ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

राजोवाच-बलेः पदत्रयं भूमेः कस्माद्धरिरयाचत ॥
भूत्वेश्वरः कृपणवल्लब्ध्वार्थोऽपि बबन्ध तम् ॥ १ ॥

पंद्रही अध्यायके विषे शुक्राचार्य राजाबलि विश्वको जीतनवारो यज्ञ करिकैं पूजन करावत भयो तातें बलि स्वर्गकों जीतत भयो, जाके भयतें देवता दबकतभये यह वर्णन करेंगे ॥ तहां अब नौ अध्यायनकरिकैं सुंदर वामनजीको चरित्र कहैंगे तामें विग्रहके छलते बलिराजापै बडो अनुग्रह करत भये ॥ राजा परीक्षित् शुकदेवजी प्रति पूछे है हरि भगवान् बलितें भूमि पृथ्वीके तीनि पैड काहेतें ईश्वर हैकै कृपणकीसी नाईं मांगतभये, अर्थकूं प्राप्त हैकै फिर वा बलिकूं काहेतें बांधतेभये ॥ १ ॥ हे श्रीशुकदेवजी महाराज ! यह संपूर्ण हम जानिवेकी इच्छा करै है, हमारे बडो संदेह है, ईश्वर भगवान्परब्रह्मको मांगनो और निरपराधी बलिको बांधनो कैसे कियो ताइ विस्तारतें कहो ॥ २ ॥ या प्रकार राजा परीक्षित्को वचन श्रद्धायुक्त सुनिकै श्रीशुकदेवजी महाराज कहतेभये ॥ हे राजन् ! युद्धके विषें इंद्रनें जब राजाबलीकी लक्ष्मी और प्राण हरलिये तब फिर शुक्राचार्यने वाय जिवाय लियो तब सब प्रकारसों बलि शुक्रादिकनकें अर्थ द्रव्य निवेदन करिकैं शिष्य व्हैके सेवन करत भयो ॥ ३ ॥ भृगुवंशीनमें श्रेष्ठ महाप्रभाववारे ब्राह्मण शुक्राचार्य प्रसन्न व्हैकें स्वर्गके जीतिवेकी इच्छावाले बलिसो विश्व जीतनवारो यज्ञ, विधिपूर्वक पूजासो करावत भये, बडे अभिषेककरिकैं अभिषेक करत भये ॥ ४ ॥ ताके अनंतर हवनकरिकैं इष्ट कियो, तब अग्निकी समान सोनेके पटसे बंध्यो रथ इन्द्रके घोडनकी समान घोडानसो युक्त और सिंहके चिह्नसों विराजमान ध्वजायुक्त रथ प्रगट

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ ५ ॥ सोने करिकै बंध्यो दिव्य धनुष्य अक्षय तरकस, दिव्य कवच ये अग्नि देवता देत भयो, प्रह्लाद फूलनकी नहीं कुम्हिलावेवारी कोमल माला देत भयो शुक्र शंख देत भये ॥ ६ ॥ या प्रकार ब्राह्मणननें वाके युद्धकी सब सामग्री संपादन कीनी तब ब्राह्मणनसों स्वस्तिवाचन कराया बलि शुक्रादिकनकी परिक्रमा देकैं प्रणाम करिकैं आज्ञा मांगिकैं प्रह्लादजीकूं नमस्कार करतो भयो ॥ ७ ॥ भृगुके दिये दिव्य रथपै चढिकैं महारथी माला कवच पहिरै धनुष खड्ग तर्कस बांधिकैं ॥ ८ ॥ सोनेनके बाजूबंदनकरिकैं शोभित भुजा, प्रकाशित काननमें मकराकृत कुंडल पहरे रथमें बैठ्यो बडी शोभाकूं प्राप्त भयो, जैसें कुंडमें स्थित अग्नि शोभाको प्राप्त होय है ॥ ९ ॥ तुल्य ऐश्वर्य बलवारे दैत्यनके यूथपालक नेत्रनसो आकाशको पीवै और दृष्टिसो दिशानको जलामन लगे ॥ १० ॥ ऐसे दैत्यनकरिकैं सहित असुरनकी सेना संग लेकैं समर्थ बलि अति समृद्धित इंद्रकी पुरीमें जातभयो, स्वर्ग पृथ्वीकों कंपावत भयो ॥ ११ ॥ जो पुरी उपवन उद्यान करिकैं शोभायमान और नंदनादिक वन करिकैं शोभायमान तथा कूजित पक्षीनके जोडासों शोभित हैं जिनमें मत्त भौंरा गुंजारकरै है ॥ १२ ॥ फल फूल और अंकुरनके भारसो कल्पवृक्षकी शाखा झुक रही हैं और हंस सारस चकवा कारंडवनके समूह व्याप्त है रहे हैं ऐसे सरोवरनमें देवतानसहित देवांगना क्रीडा कर रहीहैं ॥ १३ ॥ जा पुरीको परिखाकी नाईं आकाशगंगा वेष्टितकर रही है और ऊंचे शिखरनसों युक्त सुवर्णको परिकोटा वाय वेष्टन कियेहो ॥ १४ ॥ सुवर्णके पत्र जडे कपाटयुक्त द्वार, और स्फटिकमणीनके पुरद्वार करिकै युक्त न्यारे न्यारे राजमार्गनसों युक्त वह पुरी विश्वकर्माकी रची है ॥ १५ ॥ जो पुरी सभा चौक वीथिनसों संपन्न है, दश करोर गंधर्व अप्सरा युक्त और अनंत विमानन करिकै संयुक्त हीरा मूंगाकी वेदीवारे बाजारसों युक्त है ॥ १६ ॥ जा पुरीमें नित्य यौवनरूपवारी निर्मल वस्त्र सुंदर अलंकृत गहनेन करिकै युक्त स्त्री या प्रकार प्रकाश करती है जैसे ज्वालान करिकै अग्नि प्रकाशे है ॥ १७ ॥ देवतानकी स्त्रीनके केशनतें गिरी नवीन सुगंधकी मालानकी सुगंधको लेकै पवन मार्गमें चले है ॥ १८ ॥ सुवर्णकी जारी झरोखनसों निकसे श्वेत अगरके धुआसों ढकै मार्गमें देवतानकी प्यारी अप्सरा चली जायहै ॥ १९ ॥ मोतीनके चंदोवा करिकै संयुक्त, और मणिमय सुवर्णमय ध्वजा नानाप्रकारकी पताकानकरिकै युक्त गोख छज्जानसो आवृत और मोर परेवा भौरानसों शब्दायमान है, देवतानकी स्त्रीनके मनोहर गीत और मंगल जहां है रहेहै ॥ २० ॥ मृदंग शंख ढोल नगाडेनकै शब्द और तालसहित वीणा मुरज ऋष्टि वेणु और बाजेनसहित गंधर्वादिकनके गीत नृत्यनसों तथा अपनी मनोहर कांतिसों या पुरीनै और पुरीनकी प्रभा हरलीनी है ॥ २१ ॥ जा पुरीमें अधर्मी दुष्ट भूत प्राणीनके द्रोही ठग अभिमानी कामी लोभी नहीं वसें है, और गुणनकरिकै हीनहू जाके विषें नहीं है ॥ २२ ॥ ऐसी देवधानी पुरीको सेनापति बलिराजा सेनासौं बाहर चारों ओरतें रोकि लेत भयो, आचार्यकों दियो बडे शब्दवारो शंख बजावत भयो इंद्रकी स्त्रीको भय देतभयो ॥ २३ ॥ इंद्र राजा बलिको परम उद्यम देखिकैं सब देवतानको संग लेके गुरुनके पास जाइके यह कहत भयो ॥ २४ ॥ हे भगवन् ! हमारे पहले वैरी बलिको बडो उद्यम भयो है, मैं याको बडो आश्चर्य मानूंहूं कौन कारण करिकै ऐसे तेज करिकै बढ्यो है ॥ २५ ॥ याको कोई कैसेहूं दूर करिवेकों समर्थ नहीं है, मुखसों या जगत्को मानो पीई जाईगो दशो दिशानकों मानो जराई देयगो ॥ २६ ॥ और नेत्रनकरिकै मानो दिशानको जरावतो प्रलयकी अग्निको नाईं बढी है मेरे वैरीके दुर्धर्ष हैवेको कारण कहो जा कारणसों याके ओज सह बल तेजकी वृद्धि भई ॥ २७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बृहस्पतिजी बोले हे इंद्र ! वैरीके वृद्धि होनेको कारण मैं जानूहूं, ब्रह्मवादी शुक्रादिकने वाकूं तेज दियो है ॥ २८ ॥ भगवान्‌को विना तुमसरीके या ईश्वर बलिके आगें ठाढे व्हैवेको समर्थ नहीं हो जैसें जन कालके आगें ठाढे व्हेवेको समर्थ नहीं होवेहै ॥ २९ ॥ ताते तुम संपूर्ण स्वर्गको छोडकै अदर्शनकों प्राप्त होउ, कालको पैडो देखो, जा कालते वैरीको विपर्यय होइ ॥ ३० ॥ यह अपने बलकरिकै भले प्रकार जिन ब्राह्मणनके प्रतापसों बढ्यो है, तिन ब्राह्मणनके अपमानकरिके अपने बंधुनसहित नष्ट होईगो ॥ ३१ ॥ ऐसें अर्थ कामके देखनवारे गुरुके बताये कार्यसों देवता स्वर्गको छोडिकै अनेक रूप धारण करिकै छिपत भये ॥ ३२ ॥ जब देव स्वर्गलोक छोडिके गये, तब वो विरोचनपुत्र बलि देवधानी (अमरावती) में रहिकै तीनों लोकनकों वश करत भयो ॥ ३३ ॥ विश्वको जीतनवारो अपने आज्ञाकारी शिष्यकों वात्सल्यताकरिकै शुक्रादिक सौ १०० अश्वमेध यज्ञ करावतभये ॥ ३४ ॥ ताके अनंतर शुक्रके प्रभाव करिकै तीनों लोकनमें विख्यात कीर्तिकूं दिशानमें विस्तार करत चंद्रमाकी समान बलि शोभित होतभयो ॥ ३५ ॥ ब्राह्मणकी दीनी बडी समृद्धिको भोग करत भयो बलिराजा बडे मनसे आपुको कृतार्थ मानतभयो ॥ ३६ ॥

बुभुजे च श्रियं स्वृद्धां द्विजदेवोपलम्भिताम् ॥
कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यमानो महामनाः ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

श्रीशुक उवाच–एवं पुत्रेषु नष्टेषु देवमाताऽदितिस्तदा ॥
हृते त्रिविष्टपे दैत्यैः पर्यतप्यदनाथवत् ॥ १ ॥

या अध्यायमें पुत्रनके नाशकरिकै शोच करती अदितिके प्रार्थना करवेसों पति कश्यपजी महाराज पयोव्रत कहतभये यह प्रसंग वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् ! ऐसे पुत्रनके दुःख पायवेसों देवमाता अदिति दैत्यनकें स्वर्ग हरलैवेसो अनाथकीसी नाईं तापको प्राप्त भई ॥ १ ॥ एक दिन उत्सव आनंदरहित अदितिके आश्रममें बहुतकालमें समाधितें उपरामकों प्राप्त हैकै भगवान् कश्यपजी आवत भये ॥ २ ॥ आसनकों ग्रहण कर सन्मान पायेपरहू कश्यपजी दीनमुखी अपनी स्त्रीसूं यह बोलते भये ॥ ३ ॥ हे भद्रे ! कहीं या लोकमें ब्राह्मणनको अमंगल तौ नहीं आयोहै, और अधर्म तौ नहीं प्राप्त भयोहै, ये लोक मृत्युके इच्छानुसार वर्तमान रहे है ॥ ४ ॥ हे गृहमेधिनी ! तेरे घरमें धर्म अर्थ कामको कछु बिगाड तौ नहीं भयो कि जिन घरमें अयोगिनकूंहू स्वधर्मादिकनते योगके योग्य फल होयहैं ॥ ५ ॥ अथवा कुटुंबमें आसक्त तैनें घर आये अतिथिको कछु पूजन नहीं

---

१ शंका–जो मनुष्य और दैत्य अश्वमेध यज्ञ नहीं करते सो प्राणी कभी इन्द्र नहीं होते, फिर विना इन्द्र हुये इन्द्रासनपर नहीं बैठ सक्ता, ऐसा हमनें सब शास्त्रोंमें सुना है, और ऐसाभी हमने सुनाहै कि अनेक वार राक्षसोंको अपने आधीन करलिया है परन्तु यह बडी भारी शंका है कि एक शुक्रकोही पूजकर राजा बलीने इन्द्रका राज्य छीन लिया और विनाही अश्वमेध यज्ञ किये इन्द्रासनपर जा बैठा ? उत्तर–जिस दिन अहल्याके संग इन्द्रने खोटा कर्म किया उसी समय ६० साठ अश्वमेध यज्ञका पुण्य नष्ट होगया केवल ४० चालीस अश्वमेध यज्ञका पुण्य शेष रहगया तब हिरण्यकशिपु इन्द्रासनपर बैठाया, उसके पीछे राजा बलि इन्द्रासनपर बैठा, फिर जितना पुण्य इन्द्रका अवशेष रहगयाथा उतनीही भगवान्‌ने इन्द्रकी रक्षा की, इसलिये अश्वमेध यज्ञ किये राजा बलिने इन्द्रका इंद्रासन छीन लिया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करचो ऐसे अतिथि अभ्यागत तेरे घरतें ऊठिकै चलेगये कहा ॥६॥ जिन घरनमें अतिथिनको जल-द्वाराहू सत्कार नहीं होयहै अतिथिविना सत्कार पाये चले जाँयहै वे घर स्यारनके बिले समान हैं ॥ ७ ॥ हे सती ! मेरे विदेश जायवेमें कहीं तैने होमके समय अग्निमें हविकरिकै उद्विग्न बुद्धिसौं क्या कभी होम नहीं करचो ॥ ८ ॥ या अग्निकी पूजा करिकै गृहस्थ कामनानके पूर्ण करनवारे लोकनको जाहैं संपूर्ण देवरूप भगवान्‌कों ब्राह्मण और अग्निही मुख है ॥ ९ ॥ हे मनस्विनि ! तेरे सब पुत्र कुशल तौ हैं लक्षणनसौं तेरौ चित्त स्वस्थ नहीं विदित होयहै ॥ १० ॥ तब अदिति बोली हे ब्रह्मन् ! ब्राह्मणनको गउनको धर्मको मंगल है हे गृहमेधिन् ! घरमें धर्म अर्थ कामको पोषण यथायोग्य है रह्यो है ॥ ११ ॥ हे ब्रह्मन् ! में जो आपकौ चिन्तवन करौ हौं यह सब वाहीको प्रभाव है कि अग्नि अतिथि सेवक भृत्य याचक जो जा इच्छासौं आवे हैं वामें काहीं प्रकारकी न्यूनता नहीं होय है सब संपादन करौ हौं ॥ १२ ॥ हे भगवन् ! मेरे मनको कौनसो मनोरथ सिद्ध नहीं होय है, जाको आप प्रजानके अध्यक्ष धर्मको उपदेश करो हो ॥ १३ ॥ हे मरीचिपुत्र ! तुम्हारे मन शरीरते भई यह प्रजा सत्व रज तमको सेवन करै है, तिन देवतादिकनमें तुम समान दृष्टिवारे हो हे प्रभो ! तोहू बडे लोग भक्तनको पक्ष करैं है ॥ १४ ॥ हे ईश्वर ! हे सुव्रत ! भजन करनेहारी मेरे कल्याणको विचार करो, हे प्रभो ! वैरीनसें हमारी श्री स्थान हरगयोहे सो हमारी रक्षा करो ॥ १५ ॥ वैरिनने मोको निकारि दीनी है, दुःखरूपी समुद्रमैं मग्न हूं, बली वैरीनने मेरो ऐश्वर्य श्री यश स्थान संपूर्ण हरिलियो है ॥ १६ ॥ हे साधो ! जैसें मेरे पुत्रनको फेरि स्थानकी प्राप्ति होई तैसे हे कल्याण करन-वारेनमें श्रेष्ठ ! अपनी बुद्धिकरिकैं मेरो कल्याण करौ ॥ १७ ॥ या प्रकार जब अदितिने प्रार्थना की तब श्रीकश्यपजी महाराज हंसकर अदितिसों बोलतभये, अहो विष्णुकी मायाके बलसौं यह संपूर्ण जगत् स्नेहसूं बंध्यो है ॥ १८ ॥ पंचमहाभूतकों बन्यो देह कहा, प्रकृतितें परें आत्मा कहा, कौनके पति पुत्रादिक हैं, केवल मोहही कारण है ॥ १९ ॥ संपूर्ण प्राणीनके अंतर्यामी जगत्‌के गुरु वासुदेव भगवान् जनार्दनकी उपासना कर ॥ २० ॥ सो हरि भगवान् दीननपै कृपा करन-वारे है तेरे संपूर्ण मनोरथ देंइगे, भगवान्‌की भक्तिही सफल है, और कछू नहीं है, यही मेरी बुद्धि है ॥ २१ ॥ तब अदिति बोली हे ब्रह्मन् ! जगत्‌के पति भगवान्‌की कौनसी विधिकरिकैं उपासना करूं जातें सत्यसंकल्प हरि मेरे मनोरथनको पूर्ण करैं ॥ २२ ॥ हे ब्राह्मणनमें श्रेष्ठ ! हरिकी सेवाकी विधिको उपदेश करो, पुत्रनसहित दुःखितको वेगिहीं भगवान् प्रसन्न होइ तैसें कहो ॥ २३ ॥ तब कश्यपजी बोले एक समय पुत्रकी इच्छा कर मैंने भगवान् ब्रह्माजीसों पूछोहो तब जो व्रत विनने मोसो कह्यो है, सो व्रत हरि भगवान्‌को प्रसन्न करनवारो है वाय मैं कहौं हौं तू सावधान हैकै सुन ॥ २४ ॥ फाल्गुनके शुक्लपक्षके विषें, प्रतिपत्सौं बारह दिनतक पयोव्रत धारण करै और परमभक्ति करिकै युक्त पुरुष कमलसे नेत्रवारै भगवान्‌की पूजा करे ॥ २५ ॥ प्रथमहीं अमावास्याके दिन वनके शूकरनकी खोदी माटी शरीरमें लगाइकै नदीमें स्नान करे, और या मंत्रकों उच्चारण करै ॥ २६ ॥ हे देवि ! आदिवाराहजीने स्थानकी इच्छा करिकैं रसातलतें तुम्हारो उद्धार कियोहै तोकूं नमस्कार है, मेरे संपूर्ण पापनकूं नाश करि, ऐसे पृथ्वीतें प्रार्थना करे ॥ २७ ॥ नित्य नैमित्तिक कर्मसो निवृत्त हैकै सावधान व्हैके हरिकी पूजा कर पृथ्वी सूर्य अग्नि जल गुरुनमें जहां इच्छा होइ तहां पूजा करे ॥ २८ ॥ पुरुषरूप सबतें बडे सब प्राणीनमें निवासी वासुदेव साक्षी भगवान्‌के अर्थ नमस्कार है ॥ २९ ॥ अव्यक्त सूक्ष्म प्रधान पुरुष चौविस गुणनके जाननेवारे सांख्यशास्त्रके प्रवर्तक आपको नम-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्कार है ॥ ३० ॥ यज्ञरूप दो शिर तीन पांव चारशृंगवारे अग्निरूप भगवान्के अर्थ नमस्कार है, फलके विस्तार करनवारे सात हाथवारे त्रयी विद्यामें आत्मारूप तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ३१ ॥ शिवरूप तुम हो तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, रुद्ररूप तुम तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, शक्ति धारण कर्ता तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, संपूर्ण प्राणीनके अधिपति तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥३२॥ हिरण्यगर्भरूप सम्पूर्ण जगत्के प्राणरूप जगत्के आत्मा योगैश्वर्य शरीर योगके कारणके अर्थ नमस्कार है ॥३३॥ आदिदेव साक्षीभूतके अर्थ नमस्कार है नारायणऋषिरूपी हरिके अर्थ नमस्कार है ॥३४॥ मरकतमणिकीसी नाईं श्याम स्वरूप, लक्ष्मीवान् पीतवस्त्र धारण करनहारेके अर्थ नमस्कार है ॥ ३५ ॥ हे वर देवेवारेनमें श्रेष्ठ ! तुम सबनको वरके देवेवारे हो यातें अपने कल्याणके लिये धीर तुम्हारे चरणरेणुकी उपासना करैं हैं ॥ ३६ ॥ जाकूं संपूर्ण देवता और लक्ष्मी सेवन करे हैं, मानो तिनके चरणारविंदकी सुगंधिकी चाहना करतेहैं, सो भगवान् मोपै प्रसन्न होउ ॥ ३७ ॥ इन मंत्रनसों आवाहन करिकैं सन्मान करे; इंद्रीनके ईश्वर भगवान्को श्रद्धायुक्त ह्वैकैं पाद्य आचमनादिकन करिकैं पूजन करै ॥ ३८ ॥ गंधमाल्यादि करिकैं पूजन करिकै स्नान करावे, वस्त्र यज्ञोपवीत आभरण पाद्य आचमनमें गंध धूपादिकनकरिकैं " ॐ नमो भगवते वासुदेवाय " या द्वादशाक्षर विद्याकरिकैं पूजन करै ॥ ३९ ॥ दूधमें पक्व खीरके भोगसो भक्ति करिकैं सहित पक्वान्न भोग धरे, घृत सहित गुडसहित देकैं द्वादशाक्षरमंत्र करिकै होम करे ॥ ४० ॥ निवेदन कियो प्रसाद भक्तके अर्थ देइ, अथवा आपु भोजन करे, आचमन पूजन करके तांबूलको भगवान्के अर्थ निवेदन करे ॥ ४१ ॥ द्वादशाक्षरमंत्रको एकसो आठवार जप करै, स्तोत्रनसों प्रभुकी स्तुति करैं परिक्रमा करिकै दंडकीसी नाईं भूमिमें गिरिकै प्रणाम करै ॥ ४२ ॥ आनंदसहित भगवान्को प्रसाद माथेपै धारण करि भगवान्के पदकी वासना करै, यथा योग्य खीरसे दोसें ऊपर ब्राह्मण भोजन करावे दो ब्राह्मणनसों कमती न जिमावें ॥४३॥ सन्मान कियें ब्राह्मणनसो आज्ञा लेकें कुटुंबके बंधुन सहित शेष अन्न आप भोजन करे ता रात्रीमें ब्रह्मचारि हैकै प्रभातके समय पहले दिनमें ॥ ४४ ॥ जैसी विधि कही तैसें स्नान करे, पवित्र रहै, सावधान रहै जबताईं व्रतसमाप्ति होई तबताईं गऊके दूधमें भगवान्कों स्नान करावे पूजनको विष्णुकी पूजामें आदर राखें ॥ ४५ ॥ पयोभक्ष यह व्रत करे, पहिलेकी नाईं नित्य होम करे, ब्राह्मणनकों भोजन करावे ॥ ४६ ॥ या प्रकार बारह दिवसको पयोव्रत करे, भगवान्को आराधन होम पूजन करे, ब्राह्मणनकों भोजन करावे, तर्पण करे या प्रकार व्रत करे ॥ ४७ ॥ परिवाते आदि लेकें जहांताईं शुक्लपक्षकी तेरसि आवे तबतांईं ब्रह्मचर्य धारण करे पृथ्वीमें शयन करे, त्रिकाल स्नान करे, या प्रकार आचरण करे ॥ ४८ ॥ असाधुनसों संभाषण न करे, संपूर्ण प्राणिमात्रनसों हिंसा द्वेष न करे सबकों वासुदेवपरायण देखे ॥ ४९ ॥ त्रयोदशीके दिवस पंचामृतसो विष्णु भगवान्कों स्नान करावे, विधिके जाननवारे ब्राह्मणनकी शास्त्रतें बताई विधिसों पूजे ॥ ५० ॥ पूजा करै, धनकी वंचना न करे दूधमें चरुकरिके भगवान्के अर्थ निरूपण करे ॥ ५१ ॥ पक्वखीरसो सावधान हो होम करे अतिसावधान हैके हरिकों प्रसन्न करै भगवान्की प्रसन्नताके अर्थ गुणवत् नैवेद्य देय ॥ ५२ ॥ ज्ञानसंपन्न आचार्यको वस्त्र आभरण गौसो प्रसन्न करै ऋत्विक्जनकों दक्षिणा देई, या प्रकार भगवान् हरिकों आराधन करै ॥ ५३ ॥ श्रेष्ठ गुणवान् ब्राह्मणनकूं सुंदर अन्न भोजन करावै, तहां और आये ब्राह्मणनकोहू यथाशक्ति देई ॥ ५४ ॥ गुरुके अर्थ बडीसी दक्षिणा देई ऋत्विक्जननकों यथा योग्य देई अन्नसो आये चांडालादिकौंकोहू प्रसन्न करै ॥ ५५ ॥ दीन अंधे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कृपणके भोजन करायवेसो भगवान् प्रसन्न होय हैं यह जाने पीछें सब बंधुनकरिकै सहित आपुहू भोजन करे ॥ ५६ ॥ नृत्य वादित्र गीत स्वस्तिवाचन और भगवान्की कथासों नित्य हरि भगवान्की पूजा करावे ॥ ५७ ॥ यह हरिके आराधनयुक्त पयोव्रत नाम व्रत मैंने कह्यो, जो पहिले ब्रह्मानें कह्योहो ॥ ५८ ॥ हे महाभागे ! तू या कहे व्रतसों शुद्ध भाव करि अविनाशी केशव भगवान्को भजन कर ॥ ५९ ॥ हे कल्याणि ! यह व्रत सकल यज्ञरूप सब व्रतरूप और तपको सार है यही दानरूप यही ईश्वरको प्रसन्न करै है ॥ ६० ॥ वेई साक्षात् उत्तम नेम है तप, दान, व्रत, यज्ञ सोई है जाकरिकै भगवान् प्रसन्न होय ॥ ६१ ॥ हे मंगलरूप ! तुम या व्रतकूं श्रद्धाकरिकै करो तासो प्रसन्न भये भगवान् शीघ्रही तोकूं वर देयगे ॥ ६२ ॥

तस्मादेतद्व्रतं भद्रे प्रयता श्रद्धयाऽऽचर ॥
भगवान् परितुष्टस्ते वरानाशु विधास्यति ॥ ६२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायामष्टमस्कन्धे पयोव्रतकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

श्रीशुक उवाच–इत्युक्त्वा साऽदिती राजन् स्वभर्त्रा कश्यपेन वै ॥
अन्वतिष्ठद्व्रतमिदं द्वादशाहमतन्द्रिता ॥ १ ॥

सत्रवें अध्यायके विषें सो व्रत अदितिनें जब कियो तब हरि भगवान् कामपूर्ण करिवेके लिये ताके पुत्र होतभये यह वर्णन करैंगे ॥ शुकदेवजी कहे हैं हे राजन् ! अपने भर्ता कश्यपजीके ऐसे कहेपर अदितिने आलस्य त्यागकर बारह दिवस पर्यन्त पयोव्रत कियो ॥ १ ॥ एकाग्र बुद्धिसो महापुरुष ईश्वरको ध्यान करिकैं बुद्धिरूप सारथीद्वारा इन्द्रियरूपी अश्व वशकर लिये ॥ २ ॥ सो एकाग्रबुद्धिसो सबके आत्मा भगवान् वासुदेवमें मन राखिकै पयोव्रत करतिभई ॥ ३ ॥ हे तात ! वा अदितिके प्रत्यक्ष आदिपुरुष भगवान् प्रगट होतभये, पीतांबर पहिरें, चारि भुजामें शंख चक्र गदा पद्म धारण करें ॥ ४ ॥ नेत्रनके अगोचर भगवान्कों देखिकैं आदरसों वेगी उठिकै पृथ्वीमें दंडकीसी नाईं गिरिकैं प्रणाम करती भई ॥ ५ ॥ सो अदिति प्रीतिसहित उठिकैं हाथ जोरि केवल स्तुति करिवेको न समर्थ होती भई, आनंदके जलसों नेत्र आकुल है गये देह पुलकायमान होगई हरिके दर्शनके उत्सवसो शरीरके विषें कंप भई, यासो चुप होती भई ॥ ६ ॥ हे कुरुवंशीनमें श्रेष्ठ राजन् ! सो देवी अदिति प्रीतिसो गद्गदवाणी हो हरिकी स्तुति करति भई नेत्रनसों लक्ष्मीके पति यज्ञके पति जगत्के पतिको ऐसे देखन लगी मानो पी जायगी ॥ ७ ॥ अदिति बोली दे यज्ञेश्वर हे यज्ञ पुरुष हे अच्युत हे तीर्थपालक हे पुण्यतीर्थकीर्ति हे श्रवणमंगल नामवारे शरण आये जननके दुःख दूर करवेको अवतार लेनेवाले हे ईश्वर हे भगवन् ! हमकूं सुख करो, तुम दीननके नाथ हो ॥ ८ ॥ विश्वरूप विश्वके उत्पन्न पालन संहार करनवारे अपनी इच्छासों मायाके अनेक गुण धारण करनवारे व्यापक अच्युत स्वरूप सदा वृद्धिकों प्राप्त पूर्ण ज्ञान स्वरूपसों मायासों निर्मित आत्माके अज्ञान दूर करनवारे हरि ईशको मेरो प्रणाम है ॥ ९ ॥ जब आप प्रसन्न होउहो तब ब्रह्माकीसी आयु सुंदर रूप, अतुल लक्ष्मी, स्वर्ग पृथ्वी सब योगके गुण धर्म अर्थ काम ज्ञान ये मनुष्यनकों देउहो हे अनंत ! फिर वैरीनके विजय करवेकी तुच्छ कामनानकी सिद्धि होवेकी तो बातही कहा है॥ १० ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी कहेहैं हे राजन् ! अदितिने स्तुति किये कमलसे हैं नेत्र, संपूर्ण प्राणीनके अंतर्यामी भगवान् यह कहत भये ॥ ११ ॥ भगवान् बोले हे देवतानकी माता ! वैरीनने जिनकी श्री हरि लीनी है ऐसे अपने धामतें भ्रष्ट तुम्हारी पुत्रसंबंधी इच्छा मैंने जान लीनी कि दैत्यनको राज्य भ्रष्ट होय देवता अपने स्थानको प्राप्त होय ॥ १२ ॥ दुर्मद असुरनकों संग्राममें जीतिकै जयश्री पाय पुत्रनसहित एक ठौर रहिवेकी तुम्हारी इच्छा है ॥ १३ ॥ ज्येष्ठ इन्द्रसहित अपने पुत्रनके हाथसो संग्राममें मरे भए शत्रुनको और विनकी स्त्रिनके रोयवेके दुःख देखवेकी तू इच्छा करै है ॥ १४ ॥ सुंदर समृद्धियुक्त अपनी यशश्री ग्रहणकर स्वर्गमें बैठिकै क्रीडा करते अपने पुत्रनकें देखिवेकी इच्छा करैहै ॥ १५ ॥ असुरनायकनको जीतनो अभी बहुत कठिन है अभी विनपै देव और ब्राह्मण दोनों अनुकूल है याहीसो वे रक्षित हैं या समय विनमें पराक्रम करवैसो कछु फल नहीं होयगो ॥ १६ ॥ हे देवि ! तोऊ तेरे व्रत करिवे करिकैं मैं प्रसन्न हूं, मैं उपाय विचारूंगो मेरो अर्चन वृथा नहीं जायहै, श्रद्धाके अनुरूप फल दैउहौं ॥ १७ ॥ तुमनें पयोव्रत करिकै पुत्रनकी रक्षा करिवेके लिये मेरी पूजा करी है, ताहीके अनुरूप जैसें होय तैसें स्तुति कियो हू यासो मैं अपने अंशसो तेरो पुत्र ह्वैकैं कश्यपके तपमें स्थित है तेरे पुत्रनकी रक्षा करूंगो ॥ १८ ॥ हे भद्रे ! पाप करिकैं रहित अपने पति कश्यपको भजन करि जैसे स्वरूपसों मैं अब स्थित हूं ऐसेही स्वरूपसों तुम्हारे पतिके बीचमें स्थित रहौं हौं ऐसेही रूप करिकैं मेरी पतिमें भावना कर ॥ १९ ॥ यह बात कोई तोसों पूछै तौ काउ औरतें मति कहियो, हे देवि ! देवतानको रहस्य गुप्तही सिद्ध होय हैं ॥ २० ॥ शुकदेवजी बोले इतनो कहिकै भगवान् अंतर्हित होतभये अदिति दुर्लभ हरिको जन्म आपमें पायके परम भक्तिसो कृतकृत्यकीसी नाईं पतिकी सेवा करत भई ॥ २१ ॥ सो सत्यदृष्टि कश्यपजी समाधियोग करिकै आपमैं प्रविष्ट भये हरिके अंशको जानते भये ॥ २२ ॥ हे राजन् ! श्रीकश्यपजी तप करिकै चिरकाल धारण किये वीर्य पराक्रमकूं अतितेज करिके अदितिके विषें सावधानमने हेकैं धारण करते भये जैसे पवन काष्ठके विषैं अग्निको धारण करैं है ॥ २३ ॥ हिरण्यगर्भ ब्रह्मा अदितिके गर्भविषें स्थित भगवान् सनातनको जानिकैं गुह्य नाम करिकैं स्तुति करत भये ॥ २४ ॥ ब्रह्मा बोले हे उरुगाय ! सर्वोत्कर्ष आपकी जय हो हे भगवन् हे उरुक्रम ! तुमकों नमस्कार है ब्रह्मण्य देव और तीनि गुणनमें प्रगट तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २५ ॥ पृश्निगर्भके अर्थ वेद है गर्भमें जाके अथवा वेदमय प्रकाशमान सर्वज्ञ तीनों लोक है नाभिमें जाके तीनों लोकमें उपस्थित जीवनके अंतर्यामी विष्णुके अर्थ नमस्कार है ॥ २६ ॥ भुवनके आदि मध्य अंत तुमही हो अनंत शक्ति पुरुष तुमही हो, जैसे भीतर गिरे तृणादिकनकूं गंभीर नदीकों प्रवाह आकर्षण करे है तैसे कालरूपी तुम जगत्को आकर्षण करो हो ॥ २७ ॥ स्थावर जंगम प्रजाके और प्रजापतिनके तुमही उपजावनहारे हो, हे देव ! स्वर्गते भ्रष्ट भये देवतानको तुम ऐसे आश्रय हो, जैसे जलमें बूडनवारेनको नावको आश्रय होय है ॥ २८ ॥

त्वं वै प्रजानां स्थिरजंगमानां प्रजापतीनामसि संभविष्णुः ॥
दिवौकसां देव दिवश्च्युतानां परायणं नौरिव मज्जतोऽप्सु ॥ २८ ॥

इति श्रीभागवते भाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १८.

श्रीशुक उवाच-इत्थं विरिञ्चस्तुतकर्मवीर्यः प्रादुर्बभूवामृतभूरदित्याम् ॥
चतुर्भुजः शङ्खगदाब्जचक्रः पिशङ्गवासा नलिनायतेक्षणः॥ १॥

अठारहवें अध्यायमें सबसों सत्कारकों प्राप्त हो वामन भगवान् बलिके यज्ञमें गये और सत्कारको कर राजानें वर मांगवेको कह्यो यह वर्णन करेंगे ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! या प्रकार ब्रह्मानें जब प्रभाव कथन कियो तब मृत्युजन्मरहित हरि अदितिके विषें प्रकट होत भये चारि भुजा शंख चक्र गदा पद्म आयुध धारे दीप्तिमान् पीतांबर वस्त्र पहरे कमलसे विशाल नेत्र ॥ १ ॥ श्यामसुंदर, उज्ज्वल देह मकराकृत कुंडलकी श्रीसो सुंदरमुख, श्रीवत्स वक्षस्थलमें शोभित, बाजूबंदसो शोभायमान, किरीटमुकुट, कांची क्षुद्रघंटिका सुंदर नूपुर धारे ॥ २ ॥ भौंरानके समूह करिकै शब्दित वनमालासो विराजमान हरि अपनी कांतिसो श्रीकश्यपजीके घरको अंधकार नाश करते भये, कंठमें कौस्तुभमणि पहरे प्रगट भये ॥ ३ ॥ वा समय संपूर्ण दिशा प्रसन्न होती भई, नदी सरोवर निर्मल होते भयें, संपूर्ण प्रजा प्रसन्न होति भई, ऋतु गुणयुक्त होती भई, स्वर्ग आकाश पृथ्वी देवता गऊ ब्राह्मण और हरिभक्तजन संपूर्ण अति प्रसन्न होते भये ॥ ४ ॥ भादोंके शुक्ल पक्षकी द्वादशी श्रवण नक्षत्रके योगमें अभिजित् मुहूर्तमें प्रभु वामनजी प्रकट भये, जिनके जन्मकी सब नक्षत्र तारागण ग्रह उदारता करते भये ॥ ५ ॥ द्वादशीके दिन मध्याह्न समयमें भगवान्को अवतार भयो यासों वह द्वादशी विजयानामसों प्रसिद्ध भई ॥ ६ ॥ ता समय शंख नगाडे भेरी मृदंग ढोल आनक और विचित्र बाजे तुरहीनको बडो शब्द होत भयो ॥ ७ ॥ ऐसेही प्रसन्न हो अप्सरा नाचती भई, गंधर्वमें श्रेष्ठ गावत भये, मुनिजन स्तुति करतभये, देवता मनुष्य पितर अग्नि ॥८॥ सिद्ध विद्याधर किंपुरुष किन्नर चारण यक्ष राक्षस गरुड सर्प गावत भये ॥९॥ और प्रशंसा करत भये देवतानके अनुचरगण नाचतभये, और अदितिके आश्रममें फूलनकी वर्षा करते भये ॥ १० ॥ अदिति अपने गर्भतें भये परमपुरुषकूं देखिके आनंदको प्राप्त होती भई, अपनी योगमायासो देह ग्रहण करनवारे नारायणको देख प्रजापति कश्यप विस्मित हैकै जयजय कहतभये ॥ ११ ॥ अव्यक्त चैतन्य स्वरूप अद्भुत चरित्रवारे भगवान् शोभा आभूषण और आयुधनसों युक्त जा स्वरूपकों धारणकर प्रकट भए हे माता पिताके देखते वाही स्वरूपसों आप वामन रूप है गये जैसे कोई नटवेष धारणकर स्वांग बदलै है ॥ १२ ॥ ब्रह्मचारी छोटेसें वामनरूपकू देखिकै प्रसन्न भये ऋषि कश्यपको आगे करिके जातकर्मादि संस्कारनकूं कराते भये ॥ १३ ॥ जब यज्ञोपवीत भयो तब वामनजीकूं सूर्य गायत्री उपदेश करत भयो, बृहस्पति जनेऊ देतभयो, कश्यप मेखला देतभयो ॥ १४ ॥ भूमि मृगचर्म देति भई, वननको पति चंद्रमा दंड देतभयो, हाथमेंकूं माता कोपीन देतभई स्वर्ग जगत्पति श्रीवामनजीकूं छत्र देतभयो ॥ १५ ॥ वेदगर्भ ब्रह्म कमंडलु देतभयो, सप्त ऋषि कुशदाम देतभये हे महाराज ! सरस्वती अव्यक्त आत्मा हरिकूं अक्षमाला देतीभई ॥ १६ ॥ ऐसे यज्ञोपवीती वामनजीके अर्थ कुबेर भिक्षापात्र देतभये, साक्षात् भगवती उमा अंबिका भिक्षा देतीभई ॥ १७ ॥ ऐसे सत्कार किये ब्रह्मचारी श्रेष्ठ वामनजी अपने ब्रह्मतेजसो ब्रह्मऋषीन करिकैं सहित सभाकू अतिक्रमण करिकैं शोभित भये ॥ १८ ॥ अग्न्याधानकर अग्निको प्रदीतकर परिसमूहन करिकैं कुशनसूं परिस्तरण पूजनकरि समिधानकरिकैं होम करतभये ॥ १९ ॥ शुक्राचार्यके द्वारा अश्वमेधन करिकै पूजन करते राजा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बलिकूं कि वह यज्ञद्वारा बहुत वृद्धिको प्राप्त है रह्यो है सुनके सम्पूर्ण बल और सारसो परिपूर्ण पग-पगमें पृथ्वीको भारसो कंपाते वहांको गये ॥ २० ॥ नर्मदाके उत्तरतट भृगुकच्छ नाम स्थानमें उ-त्तम यज्ञ प्रवर्त करते शुक्रादिक ऋत्विज श्रीवामनजीको देखतभये, जैसे समयमें उदय भये सूर्यको देखे हैं ॥ २१ ॥ हे राजन् ! वामनजीके तेजसे नष्टकांति हो ऋत्विज, यजमान, सभासद, यह कहते भये यह सूर्य आवे है कि अग्नि आवे है, अथवा यज्ञके देखिवेकी इच्छाकरिकै सनत्कुमार आवेहैं, ऐसे तर्कना करतभये ॥ २२ ॥ शिष्यनकरिके सहित शुक्रादिक अनेक प्रकार तर्कना करते हे कि वाही समय भगवान् श्रीवामनजी दंडसहित छत्र जलसहित कमंडलु धारण करते अश्वमेधके मंड-पमें प्रवेश करतेभये ॥ २३ ॥ मूंजकी मेखला पहिरे, यज्ञोपवीत और मृगचर्मरूप उत्तरीय धारण किये, जटाधारे विप्ररूप वौंना माया करिकैं मनुष्यरूपमें प्रविष्ट भये हरि भगवान्को ॥ २४ ॥ देखिकै शिष्यन सहित शुक्रादिक अग्निसहित उठिकै ग्रहण करत भये, वामनजीके तेजसो सब पराभवको प्राप्त हैगये ॥ २५ ॥ देखिवे लायक मनोहररूपके अनुकूल अंगवारे श्रीवामनजी महा-राजको देखिकैं प्रसन्न हो, यजमान राजा बलि विनके अर्थ आसन देतोभयो ॥ २६ ॥ और भले आये महाराज, ऐसे सन्मान करिकै भगवान्के चरणकमल धोइकैं मुक्तिसंगीनके मनकूं रमावनवारे श्रीवामनजीको पूजन करत भयो ॥ २७ ॥ कुलके पापनको नाश करनहारे, सुंदर मंगलरूप श्री-वामनजीके चरणको जल धर्मके जाननेवारो राजा बलि माथेपै धारण करत भयो जा जलकूं देव-नके देव चंद्रमौलि श्रीमहादेवजी महाराज परम भक्तिपूर्वक माथेमें धारण करतभये ॥ २८ ॥ बलि बोले हे ब्राह्मण ! तुम भले आये तुमको नमस्कार है आज्ञा करिये तुमारी कहा सेवा करों ब्रह्मऋ-षीनकी साक्षात् मूर्ति धरें केवल तपस्वीसेही हो यह मैं तुमें मानूहूं आज मैं अति धन्य भयो ॥२९॥ आज हमारे पितर तृप्त भये, आज हमारो कुल पवित्र भयो, आज यह यज्ञ सफल भयो जाते तुम घरमें आये ॥ ३० ॥ यथाविधि मेरे अग्नि आज सुंदर होम किये भये हैं हे ब्राह्मणके बालक ! तु-म्हारे चरणनके धोवनके जलसे मैं निष्पाप होगयो मेरी यह भूमि पृथ्वी तुम्हारे छोटे छोटे चरणकमल करिकैं पवित्र भई ॥ ३१ ॥ हे ब्रह्मचारी ! जो वांछा होइ सो तुम मोतें मांगो, हे ब्राह्मणके बालक ! मैं जानूहूं तुम कछु मांगिवेको आये हो, पृथ्वी सुवर्ण गुणवत् स्थान मीठो अन्न अथवा ब्राह्मणकी कन्या समृद्धित ग्राम घोडा हाथी रथ हे पूज्यनमें श्रेष्ठ ! जो इच्छा होय सो मोते मांगो ॥ ३२ ॥

यद्यद्वटो वाञ्छसि तत् प्रतीच्छ मे त्वामर्थिनं विप्रसुतानुतर्कये ॥
गां काञ्चनं गुणवद्धाम मृष्टं तथान्नपेयमुत वा विप्रकन्याम् ॥
ग्रामान् समृद्धान् तुरगान् गजान् वा रथांस्तथाऽर्हत्तम संप्रतीच्छ ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामष्टमस्कन्धेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

श्रीशुक उवाच-इति वैरोचनेर्वाक्यं धर्मयुक्तं समूनृतम् ॥
निशम्य भगवान् प्रीतः प्रतिनन्द्येदमब्रवीत् ॥ १ ॥

उन्नीसवें अध्यायमें वासो हरिनें तीन पैड पृथ्वी मांगी, तब बलिने प्रतिज्ञा कीनी और शुक्रा-चार्य जानिकैं मनें करते भये, यह वर्णन करेंगे ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! ऐसे धर्मयुक्त और

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुंदर राजा बलिको वाक्य सुनिके भगवान् प्रसन्न हैकैं सन्मान करिकैं यह वचन कहत भये ॥ १ ॥ भगवान् (दाताकी स्तुति करनी आपुकों संतोष करनो जैसे देखो है तैसो कहनो यह भिखारीनको सिखावत बोलते भये) हे राजन् ! हे देव ! तुम्हारो यह वचन सुंदर और कुलके उचित है, धर्म कारिकैं युक्त है, यशकूं करै है जाके परलोकके धर्ममें शुक्र और पितामह प्रह्लाद कुलमें वृद्ध प्रशांत प्रमाण है ॥ २ ॥ या कुलके विषें कोई निःसत्व कृपण पुरुष नहीं भयो, जो ब्राह्मणके अर्थ हां कहिके फिर वाय कछु न देय ॥ ३ ॥ दानके समय मांगिवेकूं आवे अथवा युद्धमें युद्ध मांगिवेकू आवे तिनसों बहिर्मुख राजा या कुलमें नहीं भये है, तुम्हारे कुलमें निर्मल यश कारिकैं प्रह्लाद प्रकाशे है, जैसें आकाशमें चंद्रमा प्रकाशे हैं ॥ ४ ॥ जा कुलमें हिरण्याक्ष होतभयो, सो अकेलोई गदा हाथमें लिये या पृथ्वीपै विचरचो, दिग्विजयमें ताके सन्मुख दूसरो वीरत्वको नहीं प्राप्त होत भयो ॥ ५ ॥ पृथ्वीके उद्धारके समय आये हिरण्याक्षको विष्णु कष्टकरिकै जीति आपुको जीत्यो न मानते भये, ताके बडे पराक्रमको स्मरण करें है' ॥ ६ ॥ भैया हिरण्यकश्यप भैयाको वध सुनिकै भैयाके मारनवारेके मारिवेकूं हरिकै स्थानको जातभयो ॥ ७ ॥ त्रिशूल हाथमें लिये कालकीसी नाईं आते दैत्यकू देखिकैं कालको जाननवारो विष्णु मायावीनमें श्रेष्ठ विचार करतभयो ॥८॥ जहां जहां मैं जाउंगो तहां तहां यह जाइगो जैसे प्राणीनके संग मृत्यु जाइहै तातें बहिर्दृष्टि या दैत्यके हृदयमें प्रवेश करूंगो ॥ ९ ॥ ऐसो निश्चय करिकै विष्णु दौरे आवते वैरीके शरीरमें थरथर कापते छोटोसो स्वरूप कर श्वास लैवेके संग प्राणके छिद्रद्वारा प्रवेश करगये ॥ १० ॥ वोह स्थानकूं शून्य देखि विचारिके कुपित ह्वै शब्द करतभयो शब्द करवेके उपरान्त वाने पृथ्वी स्वर्ग दिशा आकाश विवर समुद्रके विषें विष्णुको ढूंढत न देखत भयो ॥ ११ ॥ जब कहीं न देखो तब या प्रकार कहन लगो मैंने यह सब जगत् ढूंढो परन्तु वाको कहीं पतो न लगो यासों विदित होय है कि मेरे भाईको मारनवारो वहां गयो जहांको गयो फिर कोई नहीं लौटे हैं अर्थात् मरगयो ॥ १२ ॥ देहधारिनको वैरको बांधनो मृत्युपर्यंत होयहै अज्ञान निवृत्तिसों पहले पुरुषार्थको त्याग करनाहू निष्फलताही है कारण कि क्रोध अज्ञानसों प्रगट होय है ॥ १३ ॥ तुम्हारे पिता प्रह्लादके बेटा विरोचनको ब्राह्मणनमें ऐसी प्रीति ही कि ब्राह्मण वेष धारण करकै आये देवतानको जानकरहू तिनके मांगेसों अपनो आयु दै दीनी ॥ १४ ॥ आपहू अपने शूरवीर पूर्व पुरुष ब्राह्मण और उदारकीर्ति महर्षिनके अवलम्बन किये धर्मनको आचरण करेहो ॥ १५ ॥ तातें वर देनवारेनमें श्रेष्ठ तुमते यारीसों पृथ्वी मैं मागू हूं, हे दैत्यनके इंद्र ! मेरे पाइनकरिकै समान बरोबरि तीनों पैंड पृथ्वी देउ ॥ १६ ॥ हे राजन् जगत्के

---

१ आगे प्रह्लाद बाबा तेरो नृप ऐसो हतो जाके हित राम नृसिंह रूप धारचो है ॥ जाको यश परम पुनीत तीनों लोक बीच छायो गायो सो भयो भल प्रभूको प्यारो है ॥ तैसेई सपूत भये वैरोचन ताके आप छायो यश जगमें कुल ऐसो तिहारो है ॥ पूजो मनकाम मेरी सुनियेहो राजा बलि यातें ये आशिर्वाद तुमको हमारो है ॥ १ ॥

२ विश्वाससे दान करै तो कबहूं घाटो नायहोय, एक सेठजीके हुंडी पुरजेका काम होता था, सो बिगडगये परदेश जातेमें एक दूसरे सेठ मिले, बोले कहा हाल है इन कही हमारो काम बिगडगयो उन कही हमारी कोठीपर आइयो, यह गये तौ सेठजी बोले कछु रुजगार करोगे इन कही मथुरामें करेंगे, सेठने १०००० दशहजारकी हुंडी लिखकर एक कहार और ब्राह्मण संग करादियो जब मथुरामें पहुंचे और स्नानको गये तौ चोबेने ध्यानकर कही जे यमुनामैयाकी एकगुनो दे हजारगुणो पावै इनने वोह परचा तुरत संकल्प करादियो कहार और ब्राह्मणने कही अब खाओगे कहा अपनो मूंड और छोडकर चलेगये सेठजीने कही कैसे आये, इन्होने कही वे रुपइया तौ उनकी आसतरे न आये जातेही संकल्प करदीने सेठजी बोले अब कै ५०००० पुरचा ले जाओ, यह फिर लेगये सेठजीको दियो वे जैसे न्हायवेकू जानेलगे कि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ईश्वर ! तुमते और इच्छा नहीं करूं हूं, इतनोई प्रयोजन है, प्रयोजनमात्र प्रतिग्रहण लेवेवारो विद्वान् पापको नहीं प्राप्त होय है ॥ १७ ॥ बलि बोल्यो हे ब्राह्मणके बालक ! तुम्हारी वाणी वृद्धनके संमत है परंतु तुम बालकही हो, मूर्खनकीसी मतिवारे तुम अपने स्वार्थमें अज्ञानी हो ॥ १८ ॥ लोकनको ईश्वर मैंसो वचनसो आराधन करि तीनी पैग मांगोहो, मैं द्वीपको देनवारो हूं यातें तुम बुद्धिमान् नहीं हो ॥१९॥ मेरे पास आइकै पुरुष फेरि मांगिवेकों योग्य नहीं हैं, तातें हे ब्रह्मचारिन्! जीविकाकी करनवारी भूमि जितनी इच्छा होइ तितनें पांइ पसारिकैं मोतें लेउ, या प्रकार बलिको वचन सुनिकैं भगवान् बोलते भये ॥२०॥ हे राजन् ! जितने त्रिलोकीके विषें प्रिय विषयादिक हैं वे एक पुरुषको मिल जांय तौहू अजितेन्द्रिय पुरुषकी कामना पूरी नहीं होती ॥ २१ ॥ अजी देखो तीनि पैंडनकरिकै जो संतुष्ट नहीं सो नवखंडनसहित सप्तद्वीप करिकै पूर्ण नहीं होयहै सात द्वीपनके वरकी इच्छा करिकै कहाहै ॥ २२ ॥ सातो द्वीपनके अधिपति राजा पुरूरवा पृथु गयतें आदि लेकें अर्थनके कामनासौं तृष्णाके अंतको नहीं प्राप्त होतभये यह हमने सुनी है ॥ २३ ॥ संतोषी पुरुष यदृच्छासौं प्राप्त भये द्रव्यमें सुखी रहे हैं और अजितेन्द्रिय पुरुषको चाहैं त्रिलोकी मिल जाय पर वे संतुष्ट नहीं होते ॥ २४ ॥ अर्थ काममें संतोषको न होनो संसारको हेतु है और यदृच्छासौं मिलकरिके जो संतुष्टता है सो मुक्तिके लिये कह्यो है ॥२५॥ यदृच्छलाभकरिकै संतुष्ट ब्राह्मणको तेज बढै है, असंतोषते तेज नष्ट होयहै जैसे अग्नि जलकरिकैं बुझे है और घृतकरिकैं प्रकाशो है ॥ २६ ॥ ताईं कारणतें वरदातानमें श्रेष्ठ तुमते तीनि पैंड पृथ्वी मांगोहो, इतनेंई करिकै हम कृतार्थ हैं अजी जितनो प्रयोजन तितनोहीं वित्त सुख दे है अधिक नहीं देयहै ॥ २७ ॥ शुकदेवजी बोले राजा बलि हंसिकै बोल्यो जो तुम्हारी वांछा है इच्छापूर्वक सोई ग्रहण करो, ऐसे कहिकै वामनजीके अर्थ पृथ्वी देवेकै अर्थ जलको पात्र ग्रहण करत भयो ॥ २८ ॥ इतनेहीके विषें असुरनके ईश्वर अपने शिष्यसौं वेदवेत्तानमें श्रेष्ठ शुक्राचार्य विष्णुको अभिप्राय जानकै यह बोलत भयो ॥ २९ ॥ हे विरोचनके पुत्र ! यह साक्षात् विष्णु भगवान् अविनाशी हैं, कश्यपतें अदितिके विषे जन्म लेकै यहां आइकै प्राप्त

चौवननें कही जै यमुनामैयाकी और लालाजी एकगुणा दोगे तौ दसगुणो मिलेगो, इन्होंने वोही संकल्प करदियो, नौकर चिल्लायकर चलेगये, सेठजी फिर पूछे अब कैसे चले आयें, उन्होंने कही वोऊ परचा पुण्यकर दियो, सेठजी हरि इच्छा कहकर बैठरहे, यहां सेठजीने यमुना किनारे चौवेसे मूली मांगी सो चक्कूसे कतरकर वाय खाने लगे, तब चक्कू पानीमें गिर पर्‍यो और सोनेको व्हैगयो सेठजीने जानी यहां पारस है सो टटोलकर पानीसे निकाल लीनो और लोहा खरीदकर सोना बनाय सेठजीके पास एकलाख रुपयेको भेजदीनो कि यह तो ब्याज है, मूल पीछे भेजेंगे यासो कहत है कि धर्म किये धन नहीं घटत है ॥

१ शंका—वामनजी भगवान् होकर और ब्रह्मचारी होकर थोडेसे कामके लिये इतना झूठ क्यों बोला क्या बलिको दण्ड देनेका कोई दूसरा उपाय नहीं था !

उत्तर—धर्मशास्त्रमें ऐसा लिखाहै कि दुष्टके संग जो दुष्टता करते हैं उनको किसी प्रकारका दोष नहीं होता राजा बलि कैसा दुष्ट है कि वह अपनें मनमें जानताथा कि इन्द्रका पुण्य अभी है हम राज्य लेंगे किसी प्रभावसे तब भगवान्को दुःख भोगना पडैगा ऐसा जानताथा तोभी शुक्राचार्यका पूजन करके इन्द्रका राज्य लेलिया, तब राज्यसे भ्रष्ट इन्द्र भगवान्से कहने लगा कि महाराज मैंने १०० सौ अश्वमेध यज्ञ किये हैं तब आपने मुझको इन्द्र बनाया है; कुछ ले देकर इन्द्र नहीं बना दियाहै सौ १०० यज्ञमें मैंने जो राज्य किया सो तो भोग लिया अब जो मेरा शेष पुण्य हो उस पुण्यसे मेरा राज्य दो, और राज्य न दो तो मेरा पुण्य दो, इस प्रकार इन्द्रके वचन सुनकर भगवान् लज्जित हुये और दुःखको प्राप्त होकर विचार किया कि विना छल किये हुये बलिसे इन्द्रको राज्य नहीं मिलेगा, ऐसा विचारकर झूठ बोलकर भगवान्ने इन्द्रको इन्द्रासन दिया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो है, यह देवतानके कार्यको सिद्धि करेगो ॥ ३० ॥ प्रयोजनकों विना जाने तैंने याके अर्थ प्रतिज्ञा कीनी है सो दैत्यनको भलो नहीं मानूहूं यह बडो अन्याय प्राप्तभयो ॥ ३१ ॥ यह तेरो स्थान ऐश्वर्य संपत्ति तेज यश इन्हें इंद्रके अर्थ देइगो, इनने मायाकरिकै मनुष्यरूप धारण कियोहै ॥ ३२ ॥ हे राजन् बले ! मैंनें यह निश्चय कियो है कि यह विश्वरूप तीनि पैडकरिकै तीनों लोकनको नापेगो, सो सर्वस्व विष्णुको देकै मूर्ख तू कैसें वर्तेंगो ॥ ३३ ॥ और तेरी प्रतिज्ञाहू पूरी नहीं होयगी क्योंकि यह एक पांव करिकै तो सम्पूर्ण पृथ्वीको नापेगो, दूसरे पैडकरिकै स्वर्गको नापैगो, आकाशकों बढे शरीरसो ग्रहण करैगो फिर तीसरो पग कहांसै दियो जायगो सो बताय ॥ ३४ ॥ अजी जो प्रतिज्ञा करिकै न देइगो तो अंतसमयमें नरककी निष्ठा होयगी तो सुन रे बली ! प्रतिज्ञा जो तैंनें कीनी है ताकी सिद्धि करिवेको तू समर्थ नहीं है ॥ ३५ ॥ अजी जगत्में वा दानकी प्रशंसा नहीं है जा करिकैं जीविका नष्ट होयहै वृत्तियुक्त पुरुष दान यज्ञ तप कर्म सब कछु करसकै हैं ॥ ३६ ॥ धर्म अर्थ यश काम सुजन इन पांचोंनके अर्थ धनको विभाग करे तो या लोक और परलोकमें आनन्दको प्राप्त होयहै ॥ ३७ ॥ झुठ सांचकी व्यवस्थामें जो श्रुतिननैं गायो है सो तू सुनु हे असुरनमें श्रेष्ठ ! जो स्वीकार कियो होय वाकों पालन करना यह तौ सत्य है और अंगीकार कर पालन न करनो यह असत्य है ॥ ३८ ॥ देहरूप वृक्षके सत्य फल फूल है, सो देहरूपी वृक्ष वेदनकरिकैं गायो है जब यह देहरूपी वृक्ष न रहै तौ फूल फल नहीं होसके है या कारण देहको असत्य बोलकरहू बचानो चाहिये कारण कि असत्य देहको मूल है ॥ ३९ ॥ जड उखाडवेसो जैसे वृक्ष सूखि जाइ है, फेरी गिरि परै है, तैसे न जीवतसंतें फूल फल नहीं होवे हैं, याही प्रकार असत्य सम्पूर्णता न रहै तौ शरीर सम्पूर्ण सूख जाय यामें संदेह नहीं ॥ ४० ॥ हां यह अक्षर धनको दूर ले जावेवारो और धनवान्को खाली करनवारो है कारण कि जो देवैको हां कियो जायहै वा पदार्थसो देनवारेको शून्य होनो पड़ै है ॥ ४१ ॥ भिक्षुकके अर्थ जो सब देनो अंगीकार करै है वह अपनेको सुख देवेको समर्थ नहीं होय यातें नहीं यह झूठ वचन पूर्ण है औरके द्रव्यकों खेंचे है, धनीको पूर्ण राखे है तौ सर्वत्र झूठही बोले तहां कहे हैं सबही ठौर झूठ न बोले यामें कीर्ति विगरे है अजी जा पुरुषकी कीर्ति नष्ट भई वह श्वास लेत मर्योही है ॥ ४२ ॥ स्त्रीनमें, हास्यमें, विवाहमें, जीविकाके लियें प्राणसंकटमें गौ ब्राह्मणके अर्थमें जहां सत्य बोलवेसो काउको वध होतो होय वा हिंसाके विषे झूठ बोले तौ निंदित नहीं है यह श्रुतिके विषें कही है ॥ ४३ ॥

स्त्रीषु नर्मविवाहे च वृत्त्यर्थे प्राणसङ्कटे ॥
गोब्राह्मणार्थे हिंसायां नानृतं स्याज्जुगुप्सितम् ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायां अष्टमस्कन्धे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

---

१ शुक्र बोले–मति दे दान जिमींको, याकूं मत तू ब्राह्मण जानै छालिया पुरीको ॥ १ ॥ राजा बोले–दूंगा दान जिमींको जो वामन खाली फिरजैहै विगरे नाम वलीको ॥ २ ॥ वामन बोले–लूंगो दान जिमींको धर्म नीक सुनि आयो राजा लेले नाम हरीको ॥३॥ शुक्र बोले–याहीने हिरणाकुश मारो वनगयो सिंह वनीको राजा बालि मति दे दान० ॥४॥ याहीने हरिचंद्र छलो है धरकै भेष मुनीको राजा बालि० ॥ ५ ॥ राजा बोले–द्वारे ठाढो झगरत वामन यह फल है करनीको गुरुजी ॥ ६ ॥ वामन बोले–तीन पैड पृथ्वी दे राजा जीतैंगो इन्द्रपुरीको ॥ ७ ॥ शुक्र बोले–याहीने हिरणाकुश मारो धरकै भेष जतीको राजा बालि मत दे दान जिमींको ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २०.

श्रीशुक उवाच–बलिरेवं गृहपतिः कुलाचार्येण भाषितः ॥
तूष्णींभूत्वा क्षणं राजन्नुवाचावहितो गुरुम् ॥ १ ॥

वीसके अध्यायके विषें यह वर्णन करेंगे झूठ करिकै डरप्यो बलि राजा हरिके कपटको जानके-हू पृथ्वी देतभयो ता पीछें भगवान् अद्भुतरूप बढावते भये ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार कुलके आचार्य शुक्रको कह्यो वचन सुनिकरिकैं पृथ्वीको पति बलिराजा एक क्षणभरि चुप व्हैकै फेरि सावधान व्हैकें गुरुसूं बोलत भयो ॥ १ ॥ अब बलि कहे हैं, हे गुरो ! तुमने गृहस्थनको यह धर्म सांच कह्यो जासों अर्थ काम यश जीविकामें बाधा होय वह कार्य न करै ॥ २ ॥ सो मैं धनके लोभ करिकै ब्राह्मणनकूं कैसें नाहीं करूं, मैं तौ देउंगो महाराज प्रतिज्ञा करकै जैसै धूर्त्त बनियां नाहीं करै है, ऐसें मैं नाहीं न करूंगो प्रह्लादके वंशमें भयो हूं ॥ ३ ॥ सुनो सुनो गुरुदयाल ! झूठते परें और अधर्म नहीं है यह पृथ्वीहू कहै है कि सबको बोझ मैं सहूंहूं, परन्तु मोपे झूठेको बोझ नहीं सहारयो जाइहै ॥ ४ ॥ बलि कहे है मैं नरकतें नहीं डरपूहूं, और दुःखते नहीं डरपूं, स्थानभ्रष्टतें नहीं डरपूंहूं, और दरिद्रताते नहीं डरपूंहूं मृत्युते नहीं डरपूंहूं जैसो ब्राह्मणसो झूंठ बोलेसो डरूंहूं ॥ ५ ॥ अजी यह धनादिक पदार्थ या लोकके विषें मरे पुरुष त्याग दैय है फिर अपने हाथसों इनको दान क्यों न करदियो जाय और जो दैवेसों ब्राह्मण प्रसन्न होय तौ वह दियो भयो दान कछु नहीं निष्फल है यातें जितनो मांगे तितनोही देउंगो ॥ ६ ॥ हे शुक्राचार्य महाराज ! वे साधु हैं जो दुस्त्यज प्राणोंको त्यागकर प्राणीनको भलो करै है, देखो दधीचि शिबिमहाराजने अपने प्राण देकर जीवनको उपकार कियो है फिर पृथ्वी धनादिके दैवेमें कहा विचार है ॥ ७ ॥ हे ब्रह्मन् ! संग्राममें नहीं फिरनेहारे जिन दैत्येंद्रने यह पृथ्वी भोग कीनी है, तिनकों और तिनके लोकनकों काल संहार करत भयो, परन्तु भूमिमें प्राप्तभये यशकूं नहीं नाश करतभयो ॥ ८ ॥ हे ब्राह्मणनमें श्रेष्ठ ! युद्धमें निवृत्ति न होकर शरीरको छोडनेवाले सुलभ हैं परन्तु सुपात्रमें श्रद्धाकरिकैं धनको त्याग करनवारे बहुत थोडे हैं ॥ ९ ॥ जो अर्थिनके कामको पूर्ण करिकैं दुर्गति होय यह दयालु और उदार पुरुषनके लिये मंगल है वामेहू तुम सरीखे ब्रह्मज्ञानी महात्मानके मनोरथ पूर्ण करवेमें जो हीन अवस्था होय तो वा इसमें बातही कहा है यासों मैं या ब्रह्मचारीको मन इच्छित पदार्थ देगो ॥ १० ॥ वेदकी विधिमें चतुर तुमसे महात्माहू आदरतें जाको यज्ञन करिकैं पूजन करै है, सो यह वैरको करनवारो विष्णुही है और वैरीहू है परंतु हे मुने ! मैं तो याके अर्थ मनवांछित पृथ्वी देऊंगो ॥ ११ ॥ जो यह अधर्मकरिकैं निरपराधीको मोय बांधेगो, तौहू मैं याकी हिंसा नहीं करूंगो कारण कि शत्रु होकर डरके मारे यानें ब्राह्मणको रूप धर लियो है ॥ १२ ॥ उत्तम यश यह विष्णु अपने यशको त्यागनो नहीं चाहै तौ युद्धमें मोय मारिकै या भूमिकों लेजातो अथवा मैं इन्हें मारके पृथ्वीमें सुवायदेतो ॥ १३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले या प्रकार जब राजाने अपने गुरुको वचन नहीं मानो तब वह सत्य प्रतिज्ञा उदारमन अपने शिष्य बलिकूं दैवको प्रेरयो शुक्र शाप देतभयो ॥ १४ ॥ शुक्र बोले हे मूर्ख ! तूं दृढ आपेकूं मानेहैं आपनपेकूं श्रेष्ठ माने है और पंडितपनों माने है तू बडो मूर्ख है हमारी उपेक्षा करिकैं अनम्र मेरी आज्ञाकों अतिक्रमण करैहै सो तू वेगिही संपत्तितें भ्रष्ट हो ॥ १५ ॥ या प्रकार गुरु शुक्राचार्यनें शाप दियो तोहू मूर्ख बलि अपनी स-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्यता नहीं त्यागन करतभयो, वामनजीके अर्थ पूजनकरिकैं जल हाथमें लेकैं पृथ्वी देतभयो ॥ १६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वाही समय मोतिनके हार पहरे विंध्यावलीरानी बलिराजाकी स्त्री चरणके धोइवेके लिये जलको भरयो सोनेको कलश लावती भई ॥ १७ ॥ यजमान राजा बलि आपु आनंदकरिकैं शोभायमान श्रीवामनजी महाराजके चरणयुगल धोइके संपूर्ण विश्वको पवित्र करनवारो जल माथेपे धारण करत भयो ॥ १८ ॥ अरे प्यारे परीक्षित् ! ताहि समयके विषे स्वर्गमें देवतानके गण और गंधर्व विद्याधर सिद्ध चारण संपूर्ण असुरनके इंद्र बलिराजाके ऊपर फूलनकी वर्षा करतभये, और संपूर्ण इनके कर्मकी बडाई करतभये ॥ १९ ॥ परम आनंदयुक्त होत भये दुन्दुभी नगाडे बाजे बाजत भए, गन्धर्व किंपुरुष किंनर देवतागण गाते भए, देखो राजा बलि जानिकरिकै वैरीके अर्थ तीनों लोक देत भयो ॥ २० ॥ तब अनंत हरि भगवान्को वामनरूप त्रिगुण आत्मावारो अद्भुत प्रकारसै बढतभयो, भूमि आकाश दिशा स्वर्ग पाताल समुद्र पशु पक्षी नर देवता ऋषि जा रूपमें स्थित होतेभये ॥ २१ ॥ और ऋत्विज आचार्य सभासद सहित बलिराजा महाविभूतिनके पति भगवान् हरिके गुणात्मक देहमें त्रिगुण संपूर्ण भूत प्राणी इंद्रिय अर्थ और सब जीवयुक्त यह विश्व देखत भयो (संपूर्ण विश्वरूप भगवान्के अंगमें है, ऐसो रूप वामनजी महाराजको देखत भयो) ॥ २२ ॥ जैसो रूप देख्यो ताहि कहै हैं चरणतलमें रसातल देख्यो, चरणनमें पृथ्वी देखी, भगवान्की जंघानमें पर्वत देखे, घोटुनमें सब पक्षी देखे, विश्वमूर्ति भगवान्की ऊरूनमें पवनके गुण देखे ॥ २३ ॥ भगवान्के चक्षु नेत्रमें संध्या देखी, गुह्यमें प्रजापति देख्यो, जंघानमें आपुही जिनमें मुख्य देखे, नाभिमें आकाश, कुक्षिमें सातो समुद्र देखे, वामनजीकी छातीमें नक्षत्रमाला देखी हे राजन् ! या प्रकार वामनजीके शरीरमें राजा बलि संपूर्ण विश्व देखतभयो ॥ २४ ॥ और हृदयमें धर्म देख्यो, हरिके स्तननमें ऋत सत्य देख्यो, मनमें चंद्रमा, वक्षस्थलमें कमल लिये लक्ष्मी देखी, कंठमें समस्त शब्द देखे ॥ २५ ॥ इंद्रादि देवता भुजानमें देखे, काननके विषे दिशा देखी, माथेमें स्वर्ग देख्यो, केशनमें मेघ देखे, नासिकामें पवन देख्यो, नेत्रनमें सूर्य देख्यो, मुखमें अग्नि देख्यो ॥ २६ ॥ वाणीमें छंद वेद देखे, जिह्वामें वरुण देख्यो, भ्रुकुटीनमें निषेध विधि देखी, पलकनमें दिन राति देखे, ललाटमें क्रोध देख्यो, अधरमें लोभ देख्यो ॥ २७ ॥ हे राजन् ! स्पर्शमें काम देख्यो, वीर्य पराक्रममें जल देख्यो, पीठमें अधर्म देख्यो, चरन धरिवेमें यज्ञ देख्यो, छायामें मृत्यु देख्यो, हास्यमें माया देखी, रोमनमें औषधीनकी जाति देखी ॥ २८ ॥ नाडीनमें नदी देखी, नखनमें शिला देखी, श्रीवामनजीकी बुद्धिमें ब्रह्मा देख्यो, प्राणनमें देवगण देखे, ऋषीश्वर गात्रमें देखे, और सबरे स्थावर जंगम सब प्राणीनको विनके अंगनमें राजा बलि देखतो भयो ॥ २९ ॥ हे राजन् ! सर्वात्मा भगवान्में संपूर्ण भवन देखिकै सगरे असुर मोहको प्राप्त होत भये, असह्य तेजयुक्त सुदर्शनचक्र मेघवत् शब्दवारो शार्ङ्गधनुष ॥ ३० ॥ पांचजन्य शंख बडी वेगवारी कौमोदकी गदा, शतचन्द्रयुक्त विद्याधर खड्ग, अक्षय बाणवारे उत्तम दो तर्कस ॥ ३१ ॥ पार्षदनमें श्रेष्ठ लोकपालन करिकै सहित सुनंदादि हरिके निकट आइ ठाढे होतभये प्रकाशमान किरीट मुकुट बाजूबंद और मकराकृत कुंडल श्रीवत्स कौस्तुभ मणि मेघमाला पीतांबर वस्त्र धारण करें श्रीवामनजी शोभते हैं ॥ ३२ ॥ हे राजन् ! मतवारे भौंरा जामें गुंजार रहे हैं ऐसी वनमाला धारे भगवान् वामनजी शोभित भये हे राजन् परीक्षित ! राजा बलिकी संपूर्ण पृथ्वी है श्रीवामनजी एक पैडकरिकै नापत भये शरीर करिकै आकाश नापतभये, भुजान करिकै दिशा ग्रहण करत भये ॥ ३३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दूसरे पैडकरिकै स्वर्गकूं नापत भये हे राजन् परीक्षित् ! तीसरे पैडकूं कछु बाकी न रह्यो श्रीवामनजीको तीसरो चरण महर्लोक जनलोक तपलोक सत्यलोकके ऊपर जातभयो ॥ ३४ ॥

पदं द्वितीयं क्रमतस्त्रिविष्टपं न वै तृतीयाय तदीयमण्वपि ॥
उरुक्रमस्याङ्घ्रिरुपर्युपर्यथो महर्जनाभ्यां तपसः परं गतः ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायां अष्टमस्कन्धे विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय २१.

श्रीशुक उवाच ॥ सत्यं समीक्ष्याब्जभवो नखेन्दुभिर्हतस्वधामद्युतिरावृतोऽभ्यगात् ॥ मरीचिमिश्रा ऋषयो बृहद्व्रताः सनन्दनाद्या नरदेव योगिनः ॥ १ ॥

तीसरो पैड पूरी करिवेके मिस करिकै भगवान्नै बलि राजाको उत्कर्ष लोकमें विख्यात करायवेके लिये बंधन किये सो सब एकवीसवें अध्यायमें वर्णन करेंगे ॥ शुकदेवजी कहेहैं हे राजन् ! सत्यलोकमें प्राप्त श्रीवामनजीको चरण देखिके, कि जिनके भवनकी कांति भगवान्के चरणके नखरूप चंद्रकी कांतिसों फीकी पड़गईही तथा आपहू नख चंद्रकी कांतिसों ढक गये तत्काल मरीचि आदि मुख्य ऋषिसहित अर्चत भये पूजन करतभये, और बडे व्रतधारी सनंदनते आदि लैकें योगिजन पूजन करत भये ॥ १ ॥ हे राजन् ! वेद उपवेद यम नियमसहित इतिहास अंग पुराण संहिता आदिके जाननवारे आवत भये पूजन करत भये, तथा औरहू जिनके कर्मदोष योगरूपी वायुसों प्रज्वलित भई ज्ञान अग्निद्वारा भस्म होगयेहैं तथा औरहू निर्मल अन्तःकरणवारे आवते भये और इन सबने कर्मसों प्राप्त न होवेवारे ब्रह्मलोककों जिनके स्मरणके प्रतापसों प्राप्त कियो है विन भगवान्के चरणको सबनने प्रणाम कियो ॥ २ ॥ अति ऊंचे भगवान्के चरणके अर्थ ब्रह्मा पूजाको जल देतभयो, पवित्र यश जिनके नाभिकमलते आपु भयोहै सो ब्रह्मा भक्तिकरिकै तिन भगवान्के चरणकी पूजा करिकै स्तुति करतभयो ॥ ३ ॥ ब्रह्माके कमलकों जल वामनजीके चरण धोइवेकरिकै पवित्र भयो सो स्वर्गकी नदी होती भई, जो आकाशतें गिरयो चरणोदक तीनों लोकनकों पवित्र करैहै, सो भगवान् श्रीवामनजीकी उज्ज्वल कीर्ति है ॥ ४ ॥ ब्रह्माते आदि लैकै लोकनाथ अनुचरनसहित आदरपूर्वक अपने नाथ भगवान्के अर्थ भेट देते भये, जिन भगवान्ने अपनो विस्तार समेटकें पहलेकी समान वामनरूप कर लियो है ॥५॥ और जल उत्तम द्रव्य माला दिव्यगंधको अनुलेपन धूप दीप सुगंध धानकी खील अक्षत फल अंकुरनसो हरिकी पूजा करत भये ॥ ६ ॥ भगवान्के चरित्रनकी महिमावारे दिव्यस्तोत्र जयशब्द नमस्कारशब्द नृत्यवादित्र गीत शंख भेरी नगाडेके शब्दनसो जय जय शब्दकरिकै पूजा करत भये ॥ ७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! रीछनके राजा मनकी समान वेगवारे जाम्बवान्ने भेरी शब्द करिकै दिशानमें बडो आनंदकर विजयकी डौंडी पीटदीनी संपूर्ण दिशानमें श्रीवामनजीके यशको प्रकाश कर दियो ॥ ८ ॥ तीनि पैडके मिससो मांगकर स्वामीकी सिगरी पृथ्वी हरिलीनी यह देखिके दीक्षा लिये अपने बलिपे क्रोधकर दैत्य बोलते भये ॥ ९ ॥ यह ब्राह्मण नहीं है मायावीनमें श्रेष्ठ विष्णु है, ब्राह्मणके रूपकरिकै ढक्यो है, यह देवतानके कार्य करिवेकी इच्छा करैहै ॥ १० ॥ ब्रह्मचारीरूप वैरीरूप मांगिकै स्वामीको सर्वस्व हरिलियो, जाने कि यज्ञमें सब प्रकारके दंडको त्याग कर दियोहै ॥ ११ ॥ सत्यव्रत निरं-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तर दीक्षित ब्रह्मण्य दयासागर यह हमारे स्वामी झूंठ नहीं बोल सकेंहैं ॥ १२ ॥ तातें याके वध करिवेमें हमारो धर्म है, हमारे स्वामीकी टहल है गई, ऐसे कहिकै बलिके अनुचर असुर आयुधनकों ग्रहण करत भये ॥ १३ ॥ त्रिशूल पट्टे बाण धनुष शक्ति असि चर्म खड्ग अनेक आयुध लेलेकै दौरत भये, ते सिगरे श्रीवामनजीके ऊपर मारिवेको बलिराजाकी विना राजी क्रोधकर चले ॥ १४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! विन दैत्यपतिनकों दौडा आतो देखकर भगवान्के पार्षदनने हंसते २ अपने आयुधनको उठायके विन्हको रोक दियो ॥ १५ ॥ नंद सुनंद जय विजय प्रबल बल कुमुद कुमुदाक्ष विष्वक्सेन गरुड ॥ १६ ॥ जयंत श्रुतदेव पुष्पदंत सात्वत दशहजार हाथीनके बलवारे वे असुरनकी सेनाकूं मारतभये ॥ १७ ॥ हरिके पार्षदनसों तिरस्कृत, क्रोधकरिके युक्त अपने दैत्यकू देखिकै शुक्रके शापकों स्मरण करतो राजा बलि मनें करत भयो ॥ १८ ॥ हे विप्रचित्ति हे राहु हे नेमे ! मेरो वचन तुम सुनो युद्ध मति करो, निवृत्ति होउ यह काल हमकूं अनुकूल नहीं है ॥ १९ ॥ हे दैत्यो ! जो काल सम्पूर्ण प्राणिनके दुःखसुख देवेमें समर्थ है वा कालको पराक्रमकरिकै दूरि करिवेकों पुरुष समर्थ नहीं होय है ॥ २० ॥ जो काल पहिले हमारे भले करिवेके लिये भयो, देवतानके बुरे करिवेके लिये भयो, सोई भगवान् आजु विपरीति वर्तै है ॥ २१ ॥ बल मंत्रीनकी बुद्धि महामंत्र औषधी साम भेदके उपायनकरिकै जन कालको अतिक्रमण नहीं करसक्ते हैं ॥ २२ ॥ ये हरिके अनुचर तुमने बहुत वेर जीते हैं, परंतु दैवसों बढाये भये आज युद्धमें जीतिकै अति शोर करें हैं ॥ २३ ॥ अरे जब दैव प्रसन्न होइगो, तब हम इनें जीतेंगे, तातें हे दैत्य ! कालको पैडो देखो, जब हमारे अनुकूल समय होइगो तब फेरि हम इनें जीतेंगे राज्य करेंगे ॥ २४ ॥ शुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! आपने स्वामीको वचन सुनिकै दैत्य दानवनके यूथपालक विष्णुपार्षदनके मारे संपूर्ण रसातलमें प्रवेश करत भये ॥ २५ ॥ ताके अनंतर पक्षीनके राजा गरुडजी प्रभुकी इच्छा जानिकै यज्ञमें सोमाभिषेकके दिनमें वरुणकी पाशनकरिकै बलिकों बांधत भये ॥ २६ ॥ विष्णुने असुरनके पति बलिको जब बांध्यो तब स्वर्गमें पृथ्वीमें बडो हाहाकार शब्द भयो ॥ २७ ॥ वरुणकी फांसीन करिकै बंधे नष्टश्री स्थिरबुद्धि उदारयश राजाबलिसो भगवान् श्रीवामनजी यह बोलत भये ॥ २८ ॥ हे असुर ! तैनें मोकूं तीनि पैंड दिये सो दो पैंडकरिकै तो सिगरी पृथ्वी नापी अब तीसरो पैंड बताय ॥ २९ ॥ जहांताईं सूर्य अपनी किरणनकरिकै सहित तपैहै और जहांताईं चन्द्रमा तारागणनकरिकै सहित अपने तेजकी किरणिनकरिकै प्रकाशेहै और जहांताईं मेघमाला वर्षै हैं, तहांताईं तेरी सम्पूर्ण पृथ्वी है ॥ ३० ॥ भगवान् वामनजी कहे हैं सुन रे राजा बली ! अब तोकूं क्रम बताऊं, मैंने एक पैंडकरिकै तो भूलोक नाप्यो दूसरी पैंड करिकै आकाश दिशा ग्रहण करिकै तेरे देखते मैंनें स्वर्गलोकको नाप्यो ॥ ३१ ॥ तीसरे पगकी पृथ्वी प्रतिज्ञा करिकै जो तू न देयगो तो तेरो वास नरकमें होयगो ताते गुरुनकरिकै अनुमोदन कियो नरकमें तू प्रवेश कर ॥ ३२ ॥ तेरो मनोरथ वृथा है, स्वर्ग दूरि है,

---

१ बडो कर्म है कि पुरुषार्थ, याके निर्णय करनेको दो पुरुष एक राजापै गये, राजासे पूछी कि महाराज हमारो न्याय कर दीजिये, कर्म बडो है कि पुरुषार्थ, राजाने दौनोंको अपने किलामें बंद करवाय दियो, और पाछेतें दो दूधके लोटाहू एक कोठडीमें धरवादिये, जब दोनौंको भूख लगी तौ कर्मवारो तौ हरिइच्छा कहकर बैठरह्यो, और पुरुषार्थीने कही कि पुरुषार्थ करकै ढूंढनो चाहिये, सो वह ढूंढने लगो तौ कोनेमें दो दूधके भरे लोटा देख कहने लगो कि अहो पुरुषार्थ बडो है, जो न ढूंढतो तौ यह दूध कहांसें मिलतो, यह विचार वे दोनौ लोटे लेकर कर्मप्रधानवारेके पास आनकर कही लो यह दूध पियो, देखो पुरुषार्थही बडो हौ कि नांय जो दूध मिलो, वाने कही भय्या कर्महीं प्रधान है, जो भागमें होय है वोह घर बैठेही आय जाय है, यासों कर्महीं बडो है, तब दोनौंने राजासे कही हमारो न्याय हो गयो और चले गये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नीचो गिरैगो जो प्रतिज्ञाकरिकै नहीं देइ सो नीचे नरकमें गिरै है, धनके अभिमानी तैने कही कि देउंगा ऐसें कहिकें मोसूं प्रतिज्ञा कीनी है ॥ ३३ ॥ तातें कोई एकवर्षतांई तू झूठ बोलनेको फल नरकभोग कर या प्रकार श्रीवामनजी बलिते कहत भये ॥ ३४ ॥

विप्रलब्धो ददामीति त्वयाऽहं चाढ्यमानिना ॥
तद्वचलीकफलं भुङ्क्ष्व निरयं कतिचित्समाः ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायां अष्टमस्कन्धे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अध्याय २२.

श्रीशुक उवाच–एवं विप्रकृतो राजन्बलिर्भगवताऽसुरः ॥
भिद्यमानोऽप्यभिन्नात्मा प्रत्याहाविक्लवं वचः ॥ १ ॥

बाईसवें अध्यायमें प्रसन्न हैकें राजा बलिको वरदान दे सुतललोकको पठायो परन्तु अपने अनुग्रहको तुच्छ मान आप वाके द्वारपर रहे यह वर्णन करैंगे ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् ! ऐसे भगवान्ने बलिको तिरस्कृत कियो और सत्यप्रतिज्ञातें चलायमान कियो परंतु वह धीरज धारण कर दृढतासों यह वचन बोलो ॥ १ ॥ बलिराजा बोल्यो हे उत्तमश्लोक ! हे देवतानमें श्रेष्ठ ! मेरे वचनकों जो तुम झूठ मानोहो तौ मैं सांचो करूं हूं, मेरो वचन झूठ नहीं है हे महाराज ! जो यह संपूर्ण पृथ्वी राज्य मेरे शरीर बल भुजानको कीनो सो तुम्हारे द्वै पैडभयो, कहा यह मेरो देह तुम्हारे एक तीसरे पैडकीऊ बरोबरि नहीं है, यातें हे स्वामिन् ! अपनो चरण मेरे मस्तकपै धरो जातें तुम्हारो तीसरो पैड पूरो है जाइ ॥ २ ॥ यह तुम्हारी कहनि रहै, कछु मैं नरकके पुरिवेतें नहीं डरपूंहूं स्थानभ्रष्टते नहीं डरपूंहूं, वरुणकी फांसीके बांधिवेतें नहीं डरपूंहूं, अतिदुःखते नहीं डरपूं हूं, धनके कष्टतें नहीं डरपूंहूं, तुम्हारे डरते कछु नहीं डरपूंहूं, जैसो कछु अपकीर्तितें डरपूंहूं ॥ ३ ॥ महत् पुरुषनको दियो दंड मैं अतिशय श्रेष्ठ मानूहूं जा अनुग्रहको माता पिता भैया सुहृद कोऊ नहीं करसकेहै ॥ ४ ॥ तुम निश्चयकरिकै असुरनके परमगुरु हो जो अनेक मदकरिकै आंधरे हमकों ज्ञान रूप नेत्र देत भये ॥५॥ बडो वैरानुबंध करिकै बहुत दैत्य सिद्धिकों प्राप्त भये, हे प्रभो ! जा सिद्धिकों एकांतमें योगीजन प्राप्त होय है, ताकूं हम दैत्य तुम्हारे प्रसादकरिकै प्राप्त भये ॥ ६ ॥ बडे कर्मवारे तुमने मोकू वरुणकी फांसीनकरिकै बांधो सो मैं लज्जा नहीं करूंहूं, व्यथानको नहीं करूंहूं ॥ ७ ॥ आपने मोकू अपने भक्त प्रह्लादको पोतो जानकें यह कृपारूप दंड दियो है वैसे तो मैं अनुग्रहको पात्र नहीं हूं मेरे पितामह प्रह्लाद आपके भक्तोंमें मान्य और कीर्तिमान हे विन्हे आपको भक्त जान हिरण्यकश्यपने अनेक दुःख दिये तथापि विनने यह निश्चय कियो कि ॥८॥ या देहसों कहा है जाको अन्तमें छोड जायगे फिर यासों कहा प्रयोजन है सम्बंधी रूप चोर जो अन्तमें सब कछु हरलेयहैं विनसों कहा है जन्म मरणकी दैनवारी स्त्रीमें कोन सार है और केवल मनुष्यनकी आयु हरनवारे घरमें कहा सुख है ॥ ९ ॥ या प्रकार महाज्ञानी हमारे पितामह प्रह्लाद निश्चय करिकैं दैत्यनके मारनवारे आपके निर्भय और अविचल चरणारविंदकी शरणको प्राप्त भये ॥ १० यातें मोको दैवने बलपूर्वक श्रीरहित करकै तुम वैरीके निकट प्राप्त करादियो, पूजा सम्पत्तिसों पुरुष स्तब्धमति हैकै मृत्युके निकटभये या जीवनको अनित्य नहीं जानेहै ॥ ११ ॥ शुकदेवजी बोले हे कौरवनके वंशमें श्रेष्ठ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परीक्षित् ! ऐसे राजा बलि कह रहे हे कि वाही समय भगवान्के प्यारे प्रह्लादजी उदयभये पूर्ण चंद्रमाकी समान आये ॥ १२ ॥ इंद्रकीसी सेनावारे राजा बलि अपने पितामह शोभाकरिकै विराजमान कमलसे विशाल नेत्र, ऊंचो वक्षस्थल, पीरे वस्त्र, श्याम, लंबी भुजावारे भाग्यवाननमें श्रेष्ठ प्रह्लादजीको देखत भये ॥ १३ ॥ वरुणकी फांसीते बंधे बलि प्रह्लादके अर्थ पहिलेकीसी नाई पूजा नहीं करतभये, केवल माथोई नवाइकै नमस्कार करतभये, लज्जा करिकै नीचो मुख करतभये ॥ १४ ॥ प्रह्लादजी तहां बैठे भये साधुनके पति सुनंद नंदादिक पार्षद करिकै उपासना किये भगवान्को देखिकै शिरसो प्रणाम करतभये, वा समय विनकी देहमें रोमांच और नेत्रनमें प्रेमको जल भर रह्योहो ॥ १५ ॥ प्रह्लाद बोले हे प्रभो ! तुम्हीने बलिको समृद्धियुक्त इन्द्रको यह उत्कृष्टस्थान दिया हो और आज लेलियो सो अच्छो कियो और लक्ष्मीरूप बन्धनसों आपने मेरे पौत्रको छुडायो यह यापै बड़ो अनुग्रह कियो ॥ १६ ॥ जाकरिकै विद्वान्हू मोहित होयहै ता संपत्तिमें कौन पुरुष आत्माको तत्त्व यथायोग्य देखैहै जगत्के ईश्वर अखिललोकनके साक्षी नारायणके अर्थ नमस्कार हैं ॥ १७ ॥ शुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! हाथ जोरें प्रह्लादजीके सुनते हिरण्यगर्भ ब्रह्मा मधुसूदन भगवान्के प्रति बोलतभये ॥ १८ ॥ हे राजन् ! वाही समय पतिको बंधो देख बलिराजाकी पतिव्रता स्त्री विंध्यावली भयविह्वल हो नीचो मुख कर हाथ जोरें नम्र ह्वैकै श्रीवामनजीप्रति बोलतीभई ॥ १९ ॥ रानी विंध्यावली बोली, हे ईश ! अपने क्रीडाके अर्थ तुमनें यह जगत् कियो हैं, हे ईश्वर ! वा जगत्में यह दूसरे कुबुद्धि लज्जाहीन पुरुष वृथा अपनो स्वामीपन मानैहैं त्रिलोकीके उत्पत्ति पालन नाश करनवारे तुम्ही हो औरनको हम स्वतंत्र हैं ऐसे कहनेको अधिकार आपहीसों प्राप्त है आपको कछु देनो संभव नहीं हो सकैहै कारण कि सब कछु आपहीको दियोहै ॥ २० ॥ अब ब्रह्मा कहैहै, हे भूतभावन हे संपूर्ण भूतप्राणीनके ईश्वर हे देव हे संपूर्ण देवतानके देव हे जगन्मय ! हृतसर्वस्व बलिको छोडिदेउ, यह दंडके योग्य नहीं है ॥ २१ ॥ यानें संपूर्ण पृथ्वीको दान कियो है, कर्म करिकैं जीते लोक दिये हे महाराज ! याने सर्वस्व निवेदन कीनोहै और अपनों देहभीहू तुम्हारे चरणनमें शुद्ध बुद्धिसै निवेदन कियोहै ॥२२॥ शठ बुद्धि रहित पुरुष तुम्हारे चरणमें जलदूर्वा अंकूर समर्पण कर उत्तमगतिकूं प्राप्त होते हैं, तिन तुमको यह बलि प्रसन्न ह्वैकै त्रिलोकी देतभयो सो फिर दुःखकों कैसे प्राप्त होइगो ॥२३॥ या प्रकार ब्रह्माको वाक्य सुनिकै भगवान् बोले हे ब्रह्मन् ! मैं जापै अनुग्रह करूंहूं ताके धनको नाश करूंहूं, क्योंकि धनको मदवारो पुरुष मेरे लोककों नहीं प्राप्त होय है, और मेरे भक्तनकी वह अवज्ञा करै है ॥ २४ ॥ काहूं समय यह जीवात्मा निजकर्मकरिकैं नानाप्रकारकी योनिनमें पुरुषकी गतिकूं प्राप्ति होय है ॥ २५ ॥ जन्म कर्म वय रूप विद्या ऐश्वर्य धन करिकै जो या पुरुषके गर्व न होइ, तहांहीं मेरो अनुग्रह है ॥ २६ ॥ जो मेरे भक्त हैं वे मानस्तंभके कारण जन्मादिकको प्राप्त ह्वैकेंहू विन्हे मोहके कारण शत्रुरूप जान विनमें मोहित नहीं होयहै ॥ २७ ॥ यह बलि दैत्य दानवनमें श्रेष्ठ है, कीर्तिको बढामनवारो है, आज मेरी मायाकूं जीतत भयोहै, खेदको प्राप्त होनेपरहू मोहित नहीं भयोहै ॥२८॥ क्षीण धन, स्थानतें भ्रष्ट भयो, तिरस्कार कियो, वैरीननें बांध्यो, जातिने त्यागन कियो यातनाको प्राप्त कियो ॥२९॥ गुरुननें झिझकारचो, और शापहू दियो तोहू यह सत्यव्रत अपनी सत्यता नहीं छोडत भयो मैनें छलिवे करि धर्म कह्यो, तोऊ वा धर्मको यह न छोडतभयो ॥ ३० ॥ या कारण यह देवतानके दुर्लभ स्थानमें प्राप्त होयगो सावर्णि मन्वंतरमें यही इंद्र होइगो मेरे आश्रित रहैगो ॥ ३१ ॥ तवताई विश्वकर्मके रचे सुतललोकमें रहो, जा सुतलमें आधि व्याधि खेद निद्रा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पराभव मेरी इच्छाकरिकै वास करनवारेनको नहीं होयहै ॥ ३२ ॥ हे इंद्रसेन हे महाराज ! तुम्हारो कल्याण होउ, अपने ज्ञातिनको संग लेकें देवतानकरिकै प्रार्थना करे सुतललोकमें प्राप्त होउ ॥ ३३ ॥ लोकपाल तुम्हें पराभव न करेंगे तो और कहांते करेंगे, और जे दैत्य तुम्हारी आज्ञाको न करेंगे तिने मेरो चक्र मारेगो ॥ ३४ ॥ अनुगण भृत्यन करिकै सहित संपूर्ण सामग्रीन सहित सबते मैं तुम्हारी रक्षा करूंगो, हे वीर ! तहां सदा अपने निकट मोय तुम देखोगे ॥ ३५ ॥ तहां दैत्य दानवनके संगनतें तुम्हारो असुरभाव है मेरे प्रभावको देखिकै तत्कालही नष्ट होइगो ॥ ३६ ॥

तत्र दानवदैत्यानां संगात्ते भाव आसुरः ॥
दृष्ट्वा मदनुभावं वै सद्यः कुण्ठो विनङ्क्ष्यति ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामष्टमस्कन्धे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अध्याय २३.

श्रीशुक उवाच-इत्युक्तवन्तं पुरुषं पुरातनं महानुभावोऽखिलसाधुसंमतः ॥
बद्धाञ्जलिर्बाष्पकलाकुलेक्षणो भक्त्युद्गलो गद्गदया गिराऽब्रवीत् ॥ १ ॥

तेईसके अध्यायके विषें प्रह्लादसहित राजा बलिको सुतलमें भेज्यो, तब बलिको सुतलमें गये संते इंद्र श्रीवामनजी करिकै स्वर्गमें पहलेईसो आनंदको प्राप्त होतभयो यह वर्णन करेंगे ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित् प्रति वर्णन करैं हैं हे राजन् ! महानुभाव सब साधूनके संमत योग्य आंसूनकी कलानकरिकै आकुल नेत्र, भक्तिकरिकै उत्कंठित हाथ जोरे राजा बलि ऐसे कहते पुरातन पुरुषसो गद्गद वाणी करिके बोलतो भयो ॥ १ ॥ अब राजा बलि कहैहैं, अहो तुमको प्रणामके लिये जो उद्यम कियो जायहै वही शरण आये भक्तनके मनोरथ पूर्ण करवेमें सावधान है जो अनुग्रह लोकपालननें देवतानने पहिले न पायो सो अनुग्रह नीच असुर मैंनें पायो जापैं आपने पद अर्पण कियो ॥ २ ॥ शुकदेवजी कहै हैं हे राजन् ! ऐसे कहिके हरिकूं महादेवसहित ब्रह्माको प्रणाम करिकै असुरनसहित छूट बलि प्रसन्न ह्वैके सुतललोकमें प्रवेश करत भयो ॥ ३ ॥ या प्रकार भगवान् इंद्रके अर्थ स्वर्ग दिवाइकै अदितिकी कामना पूर्ण करते सब जगत्को पालन करत भये ॥ ४ ॥ प्रसाद पाय बंधनतें छूट्यो, वंशको उद्धार करनवारो नाती बलिकूं देखि भक्ति करिकै नम्र प्रह्लाद या प्रकार बोलत भयो ॥ ५ ॥ प्रह्लादजी बोले या प्रसादकों ब्रह्मानें न पायो लक्ष्मीनें न पायो, महादेवनें न पायो, तब और कहांते पावेंगे, जा कारण कि विश्वके पूजित ब्रह्मादिकहू तुम्हारे चरणको पूजे हैं वे तुम हमारे द्वारपाल भये ॥ ६ ॥ हे शरणद हे शरणके आश्रय देनवारे ! आपके चरणारविंदको मकरंद सेवन करिकै ब्रह्मादिक विभूति भोग करैं है, दुष्ट मति हम तुम्हारी कृपादृष्टिकी पदवीको कौन हेतुतें प्राप्त भये ॥ ७ ॥ अनन्त योगमायाकी लीलासों सम्पूर्ण ब्रह्माण्डके रचनवारे सर्व व्यापक आपको चरित्र बडो अद्भुत है कारण कि आप संपूर्णके आत्मा और समान दृष्टिवारे हो यद्यपि आपको भक्त प्यारे हैं तथापि आपको स्वभाव विषम नहीं है आपको स्वभाव कल्पवृक्ष सदृश है ॥ ८ ॥ तब भगवान् बोले हे पुत्र प्रह्लाद ! तोको कल्याण होउ, सुतलस्थानको तुम जाओ आपनें नातीकरिकै सहित जातिकेनको सुख देउ ॥ ९ ॥ तहां गदा हाथमें लिये मोय नित्यप्रति ठाढो देखोंगे, मेरे दर्शनके आनंद करिकै कर्मबंधन दूर होंयगे ॥ १० ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! भगवान्की आज्ञा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

माथेपै धारण करिके निर्मल बुद्धि हाथ जोरें बलिसहित ॥ ११ ॥ आदिपुरुष हरिकी परिक्रमा देकें आज्ञा ले सुतलमें प्रवेश करत भये ॥ १२ ॥ हे राजन् ! पीछे निकटमें बैठे ऋत्विजनके मध्यमें ब्रह्मवादीनकी सभामें बैठे शुक्राचार्यसूं नारायण हरि बोलत भये ॥ १३ ॥ हे ब्रह्मन् ! यज्ञ कर्मको विस्तार करनवारे तुम्हारे शिष्य बलिको जो छिद्र भयो ताई परिपूर्ण करो जो कर्ममें वैषम्य है सो ब्राह्मणनके देखेंइते समान होयहै ॥ १४ ॥ शुक्राचार्य बोले ताके कर्ममें वैषम्यता कहां जाके कर्ममें ईश्वर तुम हो यज्ञके ईश्वर हो, यज्ञपुरुष सो साम्यभावकरिकै पूजित हो ॥१५॥ मंत्र तंत्र देश काल-मात्र वस्तुमें जो छिद्र होयहै ताय तुम्हारो संकीर्तन निश्छिद्र करे है ॥ १६ ॥ हे भूमन् ! तोऊ तुम्हारी आज्ञा करूंगो पुरुषनके यही परम धर्म श्रेष्ठ है जो तुम्हारी आज्ञाको पालन करना है ॥ १७ ॥ शुक-देवजी राजा परीक्षित्सो कहे हैं या प्रकार हरिकी आज्ञाकों सन्मान करिकै ज्ञानवान् शुक्र ब्राह्मणन-करिकै सहित बलिके यज्ञके छिद्रका अनुसंधान करत भये ॥ १८ ॥ हे महाराज ! या प्रकार बलिसों भीख मांगिकै वैरीकें हरे स्वर्गको भैया इंद्रके अर्थ देत भये ॥ १९ ॥ प्रजापतिनको पति ब्रह्मा देव ऋषि पितर राजा दक्ष भृगु अंगिरा सनत्कुमार महादेवजी करिके सहित ॥ २० ॥ कश्यप अदितिकी प्रीतिके लिये, और संपूर्ण प्राणीनके कल्याणके लिये संपूर्ण लोकनके पति श्रीवामनजी महाराजकूं करत भये ॥ २१ ॥ वेद संपूर्ण देवता धर्म यश श्री मंगलकी वृत्ति और स्वर्ग मोक्षके पालन करिवेके अर्थ ॥ २२ ॥ सम्पूर्ण विभूतिनके पति श्रीवामनजीको उपेन्द्रपदवी इंद्रके ऊपर करत भये हे राजन् ! तासमय संपूर्ण प्राणी आनंदकों प्राप्त होतभये ॥ २३ ॥ ताके अनंतर इंद्रको ब्रह्माने आज्ञा दीनी सो श्रीवामनजीको आगे करिकै आकाशमार्ग है कै लोकपालन सहित स्वर्गको जातभयो ॥ २४ ॥ उपेंद्रकी भुजानकरिकै पालित, भयरहित परम संपत्तिनकरिकै युक्त इंद्र त्रिभुवनकों पाइकै प्रसन्न होतभयो ॥ २५ ॥ ब्रह्मा रुद्र सनत्कुमार भृग्वादिकमुनि पितर सिगरे प्राणी सिद्ध ॥ २६ ॥ देवता विष्णुको परम अद्भुत चरित्र गावत भये, और अपने अपने स्थानोंको जातभये अदितिकी बडाई करत भये ॥ २७ ॥ हे कुरुनंदन ! मैंनें वामनजीको चरित्र सब तेरे आगें कह्यो जे कोउ नर मनुष्य याको सुनेंगे तिनके पापनाश तुरत होयगे ॥ २८ ॥ मनुष्य पृथ्वीके रज चाहें गिनिलेई परन्तु भगवा-नूकी महिमाको पार पानो कठिन है मंत्रद्रष्टा वसिष्ठजीने कहोहै कि जन्मो भयो अथवा जन्म लेतो भयो क्या कोई पुरुष श्रीवामनकी महिमाको पार पाय सक्ते हैं ॥ २९ ॥ देवनके देव अद्भुतकर्मा हरि भगवान्के अवतारको चरित्र जो मनुष्य सुनेंगे सो परमश्रेष्ठगतिकूं प्राप्त होंइगे ॥ ३० ॥ देवता पितर मनुष्यसम्बन्धी कर्ममें जो पुरुष या चरित्रको सुनेंगे वे कर्म परिपूर्ण होयगे विनमें विघ्न न होयगे॥३१॥

क्रियमाणे कर्मणीदं दैवे पित्र्येऽथ मानुषे ॥
यत्र यत्रानुकीर्त्येत तत्तेषां सुकृतं विदुः ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां अष्टमस्कन्धे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

अध्याय २४.

राजोवाच-भगवन् श्रोतुमिच्छामि हरेरद्भुतकर्मणः ॥
अवतारकथामाद्यां मायामत्स्यविडम्बनम् ॥ १ ॥

चौविसवें अध्यायमें मत्स्यरूप भगवान्की लीला कहेंगे जा लीलाई करिकें समुद्रके विषें सत्यव्र-तकी रक्षा करत भये, पहिले छोटोसो शरीर दिखाइकैं फिरि निज ऐश्वर्यको दिखावतभये, याते

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीवामनजीकीसी उपमावारे मत्स्यको राजा पूछेहैं यह प्रसंग वर्णन करेंगे ॥ राजा परीक्षित् प्रश्न करेहै हे भगवन् ! अद्भुतकर्मा हरिकी मत्स्यावतारकी कथा मैं सुनिवेकी इच्छा करूंहूं ॥ १ ॥ संपूर्ण लोकनके विषे निंदित दुस्सह मत्स्यरूप जाके अर्थ धारण करतभये जैसो मानो परमेश्वर कर्ममें बंधे भयेसे प्रतीत होतेहैं ॥ २ ॥ हे भगवन् ! यह सब हमारे आगे कहो यथायोग्य कहिवेकूं योग्य हो उत्तमश्लोककों चरित्र सब लोकनको सुख देइहैं ॥ ३ ॥ सूतजी नैमिषारण्यमें शौनकनते कहै है या प्रकार राजा परीक्षितसों पूछे जो भगवान् शुकदेवजीसो मत्स्यरूपकरिकै कियो विष्णुको चरित्र कहत भये ॥४॥ शुकदेवजी परीक्षित्सों कहैं हैं हे राजन् गौ ब्राह्मण देवता साधु वेदके ईश्वर हरि धर्म अर्थके हेतु रक्षाकी इच्छा करते निंदितरूपहू धारण करैं हैं ॥ ५ ॥ बुद्धिके गुण करिकैं ऊंच नीच प्राणीनमें पवनकीसी नाईं विचरते, ईश्वर निर्गुण हैवेसों ऊंचनीचको नहीं भजें हैं ॥ ६ ॥ कालसों वीते कल्पके अंतमें ब्रह्माकी निद्राके निमित्तकरिकै प्रलय होतीभई तासमयमें भूतादिक समुद्रमें डूबतभयो ॥ ७ ॥ कालकरिकै निद्रित ब्रह्माके मुखते निकरे वेदनकों हयग्रीव नाम दैत्य हरिलेत भयो ॥ ८ ॥ दानवेंद्र हयग्रीवकी चेष्टा जानिकैं ईश्वर हरि मछरीको रूप धारण करत भये ॥ ९ ॥ तहां कोई एक ऋषि नारायणपरायण सत्यव्रत नाम राजा जलके विषें भजन करत भयो ॥ १० ॥ जो राजा या कल्पके विषें सूर्यको पुत्र श्राद्धदेव नामकरिकै विख्यात भयोहै जाको प्रभुने मनुकी पदवी दीनी ॥ ११ ॥ सो राजा एक दिन कृतमालानदीमें जलसों तर्पण करतो था तहां ताकी अंजुलीके जलमें कोई एक मच्छी प्राप्त होती भई ॥ १२ ॥ हे राजन् ! सो राजा सत्यव्रत अपने हातकी अंजुलीमें आई मच्छीकूं जलसहित नदीके जलमें डारिदेत भयो ॥ १३ ॥ महाकरुणावान् सत्यव्रतकें प्रति मछरी बोलति भई हे दीनवत्सल ! जातिकेनके मारणवारे ग्राहनतें डरपी दीन कोर मोको जलके विषें कैसें त्यागोहो ॥ १४ ॥ मेरे पर अनुग्रहके लिये प्रीतिसों भगवान्ने मत्स्यरूप धरयोहै, या प्रकार भगवान्को न जानकर राजा मछरीकी रक्षाके लियें मन करतभयो ॥१५॥ ता मछरीको अति दीनतर वाक्य सुनिकरिकै कलशके जलमें धरिकै दयालु राजा अपने आश्रमके विषें ले आवतभयो ॥ १६ ॥ वह मछली एक रात्रिमेंही कमंडलुमें इतनी बढी कि वासे रहिवेको अवकाश न रह्यो तब सत्यव्रतसों बोली ॥ १७ ॥ हे राजन् ! या कमंडलुमें वसिवेकी नहीं इच्छा करूंहूं कोई बडो स्थान बताओ जामें मैं सुखसों वास करों ॥ १८ ॥ सो राजा तहांते मछरीकों लेकैं कमंडलके जलमें डुबावतभयो तहां डारी मछरी दो घडीकरिकैं तीनि हात बढति भई और बोली ॥ १९ ॥ हे राजन् ! यह स्थान सुखपूर्वक मेरे वसिवेकों नहीं मेरे अर्थ बडो स्थान तू दै मैं तेरी शरण आईहूं ॥ २० ॥ तहांते लेकै राजाने सरोवरमें डारी, सो अपने देहके फिरिवेइ करिकै संध्याताई बहुत बढतिभई और बोली हे राजन् ! यह जल जलवासी मेरे कल्याणके अर्थ नहीं होयहै ॥ २१ ॥ हे राजन् ! ताते मेरे कल्याणके अर्थ मेरी रक्षाके निमित्त जल जाको न घटे ऐसे स्थानमें मोकों राख ॥ २२ ॥ जब या प्रकार कह्यो तो राजा ता मत्स्यको बडे जलके स्थानमें प्राप्त करत भयो जब सब स्थान भरे पाये तब समुद्रमें डारतभयो ॥ २३ ॥ जब समुद्रमें डार्यो तब वह मत्स्य राजासूं यह कहतभयो हे राजन् ! या समुद्रके विषें अतिबलात्कारी मकरादिक मोकों भक्षण करी लेंइगे, हे वीर ! याते या स्थानमें मोकूं छोडिवेकों नहीं योग्य हो ॥ २४ ॥ या प्रकार सुंदर वाणीनकरिकै कहते मत्स्यने मोहित कियो राजा वा मत्स्यसो बोलतभयो, अब राजा सत्यव्रत बोले हे महाराज ! तुम कौन हो सो मत्स्यरूपकरिकै मोको मोह उत्पादन करोहो । सो मोपै यह बडोई हित करोहो ॥ २५ ॥ हे प्रभु ! या प्रकारको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तौ पराक्रमी मत्स्य हमनें नहीं देख्योहै, जलचर विषें ऐसो न कोई सुन्यो जो तुम एक दिनमें सौ योजनके विस्तारके शरीरकूं प्राप्त होतभये जा तुमारे शरीरसों सौ योजनको शरीर भरलियो ॥२६॥ हे महाराज ! निश्चयकरिकैं तुम सक्षात् श्रीमन्नारायण भगवान् हो, सो संपूर्ण प्राणीनके लिये अनुग्रह जलवासीनको रूप तुम धारण करत भये हो ॥ २७ ॥ हे पुरुषनमें श्रेष्ट हे स्थिति उत्पत्तिके ईश्वर शरण आये भक्तनके तुम सांचे आत्मा हो आश्रयदाता हो तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २८ ॥ तुम्हारे सिगरे लीलावतार प्राणीनकी विभूतिके कारण हैं, यह रूप जाके अर्थ तुमने धारण कीनो हैं ताय मैं जानवेकी इच्छा करूंहूं ॥ २९ ॥ हे अरविंदाक्ष ! हे कमलदललोचन सबके सुहृद प्यारे आत्मा तुम्हारे चरणकी शरणमें आनो कभी वृथा नहीं होयहै जैसे देहाभिमानी इतर लोकनकी शरणमें जानो मिथ्या होयहै, जाते हम भक्तनको या प्रकारको अद्भुत रूप आप दिखावतभये हैं ॥ ३० ॥ शुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! या प्रकार कहते सत्यव्रतसों जगत्के पालक मत्स्यरूपी भगवान् प्रलयके समुद्रमें विहार करिवेकी इच्छा करिकै एकांत भक्तनके प्यारे प्रभु समर्थ अपनें चित्तकी करिवेकी इच्छा राजासे कहत भये ॥ ३१ ॥ मत्स्यरूपी भगवान् बोले हे वैरीनके नाश करनवारे ! आजतें सातवें दिवस प्रलय होइगी समुद्रके विषें यह संपूर्ण त्रिलोकी डूबेगी ॥ ३२ ॥ हे राजन् ! प्रलयके जलमें त्रिलोकी लीनभये संते वाही समयके विषें मेरी प्रेरणा करी कोई एक बडी विशाल नौका तुमें प्राप्त होइगी ॥ ३३ ॥ सो तुम तबतांई सिगरी औषधीनके छोटे बडे बीज लेके सप्तऋषि और सब प्राणीनकरिकैं सहित ॥ ३४ ॥ चली आउती वा बडी नावपै चढिकरिकैं विना खेद निरालोक एक समुद्रमें ऋषिनके तेजकरिकैं तू विचरेगो ॥ ३५ ॥ बलवान् पवन करिकैं प्रेरणा कीनी नावकूं ताके निकट प्राप्त भये मेरे सींगमें वासुकिसर्प करिकैं बांधि दीजो ॥ ३६ ॥ सो मैं ऋषिन सहित तोको नावसहित समुद्रमें खेचत विचरूंगो जबतांई ब्रह्माकी रात्रि रहेंगी ॥ ३७ ॥ मेरी महिमा जो ब्रह्मनामसै विख्यात है उसके विषे तुम प्रश्न करेगा पीछे मेरे उत्तर दैनेसे तेरे संदेह दूर होंगे और मेरे अनुग्रहसै वह ज्ञान तेरे हृदयमें प्रकाश करेगो ॥ ३८ ॥ या प्रकार राजासों कहिकरि भगवान् अंतर्हित होतभये; जा समयकों भगवान् कहि गये हैं ताईको राजा पैडो देखत भयो ॥३९॥ पूर्वको अग्रभागवारे कुछ बिछाइकैं पूर्वउत्तरको मुख कर राजऋषि सत्यव्रत मत्स्यरूपी भगवान्के चरणनको चिंतवन करत भयो और एकाग्रचित्त करिकैं बैठत भयो ॥४०॥ ताके अनन्तर मर्यादा छोड वर्षते बडे मेघनसों बढायो समुद्र सब ओरतें पृथ्वीकों डुबावतो दीखत भयो ॥४१॥ भगवान्की आज्ञाको ध्यान कर एक नाव आती देखतभयो, सो संपूर्ण औषधी वीरुध वनस्पती लेकैं सप्तऋषिन करिकैं सहित वा नावपै चढत भयो ॥ ४२ ॥ प्रसन्न हो मुनीश्वर राजासों बोलतभये हे राजन् ! तुम केशव नारायणको ध्यान करो सोई या संकटतें सहाय करेंगे और सुख देंइगे ॥ ४३ ॥ सो राजा सत्यव्रत जब ध्यान करत भयो तब मत्स्यदेव भगवान् एक शृंगको धारण करें सोनेकोसो देह एक लाख योजन लंबे समुद्रमें प्रगट होते भये ॥४४॥ पहले जैसें हरिने कह्यो है तैसेई सत्यव्रत राजा तिन भगवान् मत्स्यरूपके सींगमें वासुकि सर्पकी रस्सी करिकैं नावमें बांधिकैं मधुसूदन भगवान्की स्तुति करतभयो ॥ ४५ ॥ समुद्रकों तारनहारे भगवान्की सत्यव्रत राजा संसाररूपी सागर तरिवेकी इच्छासों गुरुभावकरिकैं मधुसूदन भगवान्की आठ श्लोकनकरिके स्तुति करेहै ॥ राजा सत्यव्रत बोले अनादि अविद्याकरिकै नष्ट ज्ञान तममूल संसारके परिश्रममें खेदकरिकै आतुर मनुष्य अकस्मात आश्रयकर जाय प्राप्त होय है, सो तुम हमारे परमगुरु मुक्तिके देनेवारे हो ॥ ४६ ॥ यह अज्ञानीजन संग्रहरूपी निजकर्मनकरिकै बंधेहै, सुखकी इच्छाकरिकै कर्म करेहै और सुखको नहीं पावै है जाकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सेवासों दुःखकी वांछा रूप दुर्बुद्धि नष्ट है जायहै वे भगवान् हमारे गुरु हैंकै हृदयकी अज्ञानरूपी ग्रंथीकूं काटिडारो ॥ ४७ ॥ जिन भगवान्‌की सेवाकरिकै पुरुष अज्ञानतें भये मलकूं त्याग करैहै जैसें अग्निके सेवनतें सुवर्ण अपने मैलको त्याग करै है, अपने वर्णको भजै है, सो तुम अव्यय ईश्वर हो तुम हमारे गुरूनके गुरु हो ॥ ४८ ॥ जिनकी कृपाके दशहजार भागके लेशकूंहू देवता गुरु जन तुम्हारी कृपाविना समर्थ करनेको समर्थ नहीं होयहै उन ईश्वरकी शरणमें प्राप्त भयो हूं ॥ ४९ ॥ अज्ञानीको अज्ञानी गुरु करनो अंधेकों अंधेके मार्ग बतानेकी समान है और आप सूर्यरूपी दृष्टिसों सब दिशानको देखनवारे हैं या कारण अपने स्वरूप जानवेकी इच्छा करकै हमने आपको गुरु कियो है कारण कि आप सब इन्द्रियनके प्रकाशक हो ॥ ५० ॥ मनुष्य मनुष्यनको खोटी मति दैयहै ताकरिकै दुरत्यय संसारमें यह प्राणी परैहै और आप अव्यय हो सफल ज्ञान देहो जा ज्ञान करिकै जन तुमारे पदकूं प्राप्त होतेहैं ॥ ५१ ॥ तुम सगरे लोकनके सुहृद प्यारे ईश्वर आत्मा गुरु ज्ञान वांछित सिद्ध हो तोभी अंध बुद्धिवारे मनुष्य हृदयमें वर्तमान तुम्हें नहीं जानें हैं ॥ ५२ ॥ देवतानमें श्रेष्ठ उत्तम ईश्वर तुम्हारी ज्ञानके लिये मैं शरण प्राप्त भयोहूं, हे भगवन्! परमार्थप्रकाश करनवारे वचन करिकै हृदयकी गांठि खोलो अहंकारादिक काटो अपनो स्वरूप प्रकाश करो ॥ ५३ ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन्! मत्स्यरूपी भगवान् आदिपुरुष प्रलयके जलमें विहार करते या प्रकार कहत राजा सत्यव्रतकूं तत्वको उपदेश करतभये ॥ ५४ ॥ सांख्ययोगकी क्रियासों युक्त दिव्य मत्स्यपुराण सत्यव्रत राजाके प्रति कहतभये ॥ ५५ ॥ ऋषिनकरिकै सहित राजा भगवान्‌को कह्यो संदेहरहित सनातन ब्रह्म आत्माको तत्व सुनत भयो ॥ ५६ ॥ पहले भई प्रलयके अंतमें उठे ब्रह्माके अर्थ हरि हयग्रीव असुरको मारिकै वेद लाइ देतभये ॥ ५७ ॥ सत्यव्रत राजा ज्ञानविज्ञान करिकै युक्त विष्णु भगवान्‌की कृपासो या कल्पके विषें वैवस्वत मनु होतभयो ॥ ५८ ॥ राजऋषिनके विषें योग्य सत्यव्रत बडे महात्मा राजाकों और माया करिकै मत्स्यावतारधारी भगवान्‌को संवाद कह्यो, या बडे आख्यानके सुनवेसों मनुष्य सब पापनसों छूट जाय हैं ॥ ५९ ॥ हरि भगवान्‌के मत्स्यरूपी अवतारके चरित्रको नित्यही जो मनुष्य कीर्तन करेंगे या माहात्म्यकरिकै तिनके मनके संपूर्ण संकल्प सिद्ध होंइगे, और परम श्रेष्ठ गतिकूं प्राप्त होंइगे ॥ ६० ॥ प्रलयके जलमें सुप्तशक्ति ब्रह्माके मुखतें निकरे वेदके गण दैत्यको मारिकरिकै लायके देते भये और सत्यव्रतराजाकों ज्ञान उपदेश करतेभये, सबके कारण मायासों मत्स्यरूप धारण करवेवारे हरि भगवान्‌कों मैं नमस्कार करोंहों ॥ ६१ ॥

प्रलयपयसि धातुः सुप्तशक्तेर्मुखेभ्यः श्रुतिगणमुपनीतं प्रत्युपादत्त हत्वा ॥
दितिजमकथयद्यो ब्रह्म सत्यव्रतानां तमहमखिलहेतुं जिह्ममीनं नतोऽस्मि ॥ ६१ ॥

इति श्रीमद्भागवते भाषाटीकायां पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रेण संशोधितायामष्टमस्कन्धे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

---

१ परन्तु पलेझाड कथा न सुनै कि जैसे एक लाला कथा सुनने जायाकरतेथे, सो एक दिन उनको छोराहु कथा सुनवे चलोगयो, वा दिन कथामें यह प्रसंग आयो कि गो ब्राह्मण अपराधहू करै तौहू इन्है दंड देवो उचित नहीं, छोरा सुनकर दुकानपर आय बैठो, हलवाईकी दुकान थी जलेबीके थालमें गौनि मुँह डारिदियो, वा छोराने कही कथामें गऊके मारनेको बडो पाप लिखो है, यासे वा गैयासों कछु न कही, पाछेसे लाला आये, और गैयाको जलेबी खाते देख बडे क्रोधसे पुत्रसे बोले मनै नाय करचो जात, गैया जलेबी खाये जाय है वाने कही कथामें तौ गऊको हाथ छुआनोभी मने लिखो है, यह बोले मूर्ख! पलेझाड कथा सुन्योकर, उसने कही लालाजी पलेझाड कथा कैसी होय है? तब यह बोले पण्डितके सामने अंगरखेको दामन बिछा कर बैठगये और जो कुछ पंडितजीके मुखसें निकारी सो अब अंगोंके पल्लाहीपर लई जब हो चुके तौ पल्लाझाड चलदिये बेटाने कही अब ऐसेही करूंगा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

नवमस्कन्धप्रारम्भः।

अध्याय १.

जगदाधार महान प्रभु, कृष्णचंद्र सुखदान। द्विज ज्वालाप्रसादपर, कृपा करहु भगवान ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

राजोवाच-मन्वंतराणि सर्वाणि त्वयोक्तानि श्रुतानि मे ॥
वीर्याण्यनन्तवीर्यस्य हरेस्तत्र कृतानि च ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ गुण जे हैं वे गुणकी प्राप्तिके लिये जाको वर्णन करैं है वा करुणानिधि परमानंद माधवकी मैं शरण हूं ॥ १ ॥ नवम स्कंधमें चौवीस अध्यायन करिकै वैवस्वत मनुके बेटानको वंश श्रीकृष्णकी सत्कीर्तिके प्रसंगके लिये वर्णन करे हैं ॥ २ ॥ ऐसे अष्टमस्कंधमें सत्व सोपाधि सद्धर्म कर्त्ता पालक वक्तातें आदि लेके मन्वादिकनको निरूपण करिकै कह्यो ॥ ३ ॥ सद्धर्मसै शुद्ध सत्वको अंतरंग ईश्वरकी सत् कथाते सूर्य चन्द्रमा वंशसै संगति भई सो अब कहे हैं ॥ ४ ॥ तहां तेरह अध्याय करिकै सूर्यवंश वर्णन करैंगे, ताते परे ग्यारह अध्यायन करिकै चंद्रमाको वंश कहैंगे ॥ ५ ॥ तहां पहिले अध्यायमें वैवस्वतमनुके पुत्रनको वंश कह्यो अब चन्द्रमाके वंशके प्रवेशके कहिवेके लिये सुद्युम्नको स्त्रीभाव कहैं है ॥ ६ ॥ राजा परीक्षित् बोले हे भगवन्! तुम्हनें कहे जे सब मन्वंतर हैं वे मैंने सुने, और अनन्तर हरिनें मन्वंतरनमें जो पराक्रम किये ते सुने ॥ १ ॥ और राजर्षि द्रविड देशको राजा सत्यव्रत नाम कह्यो सो वीतभये कल्पके अंतमें हरिकी सेवाकरिके ज्ञानको प्राप्त भयो यह हमने तुमसें सुनी ॥ २ ॥ वही सूर्यको पुत्र मनु होत भयो, और जाके इक्ष्वाकु आदि पुत्र होत भए सोहू तुमसो सुने ॥ ३ ॥ अब हे ब्रह्मन्! ताके पुत्र इक्ष्वाकुते आदि लेकें राजनको न्यारो न्यारो वंश और वंशमें भयेनको चरित्र हमारे आगे कहो, हे महाभाग! हम नित्य सुनिवेकी इच्छा करैं है ॥ ४ ॥ जे राजा ह्वैगये और जे जे होंइगे तथा जे वर्तमान हैं ऐसे पुण्यकीर्ति राजानके पराक्रमनको कहो ॥५॥ सूतजी कहै हैं हे शौनक! ऐसें ब्रह्मवादीनकी सभामें राजा परीक्षित्ने पूंछे तब परमधर्मके जाननवारे भगवान् शुकदेवजी या प्रकार बोले ॥ ६ ॥ शुकदेवजी कहै हैं हे परंतप! मनुको वंश संक्षेपतें सुनो, विस्तारतें सौ वर्षहू करिकैं कहिवेको शक्य नहीं है ॥ ७ ॥ पर अवर भूतनके आत्मा परमपुरुष जो श्रीनारायणसोंही कल्पान्तमें यह विश्व रूप होतभयो, ताके शिवाय और कछु नहीं होतभयो ॥८॥ ता नारायणकी नाभिते हिरण्मय कमलकोश होत भयो तामें हे महाराज! चारि मुखको ब्रह्मा होत भयो ॥ ९ ॥ ब्रह्माके मनते मरीचि होत भयो, मरीचिके कश्यप भयो, कश्यपते दक्षकी बेटी अदि-

दोहा-मोरमुकुटकी लटक शुभ, चटकसुवसनसुरंग। तिरछी नैननकी मटक, लाजत लखतअनंग ॥ १ ॥
परम मनोहर सांवरे, व्रजवासिनआधार। नितज्वालाप्रसादपर, द्रवहु सुकृपाअगार ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तिमें सूर्य नाम पुत्र होत भयो ॥ १० ॥ हे भारत ! सूर्यते संज्ञा नामकी पत्नीमें श्राद्धदेव नामको मनु भयो, मनुके श्रद्धा नाम रानीमें दशपुत्र भये ॥ ११ ॥ उन दशोनके नाम कहे हैं इक्ष्वाकु, नृग, शर्याति, दिष्ट, धृष्ट, करूषक, नरिष्यंत, पृषध्र, नभग, कवि ये दश पुत्र भये ॥ १२ ॥ पहले अपुत्र मनुकूं वसिष्ठ भगवान् पुत्रके लिये मित्रावरुणकी इष्टी करावते भये ॥ १३ ॥ तब दूधको आहार करनवारी मनुकी स्त्री श्रद्धा होताके निकट आइके प्रणाम करिकें मेरे बेटी होई ऐसें याचना करत भई ॥ १४ ॥ अध्वर्युनें जाको प्रेरण कियो और फिर रानीने कन्याके लिये आज्ञा दीनी ऐसो जो वह होता हें सो सावधान हैके वषट्कारको उच्चारण करतो वा शाकल्यके होम करवेके समयमें व्यभिचार करतो भयो अर्थात् पुत्र हेवेके मंत्र पढवेकी जगह कन्या हैवेके मंत्रनको पढतो भयो ॥ १५ ॥ होताके व्यभिचारसे वह इलानाम कन्या होती भई, ताइ देखिकैं अप्रसन्न मन हो मनु गुरुनसों बोल्यो ॥ १६ ॥ हे भगवन् ! यह कहा भयो ब्रह्मवादीनको कर्म विपरीत होत भयो, वेदके मंत्रमें ऐसे विकार मति होउ बडो कष्ट है ॥ १७ ॥ तुम मंत्रके जाननवारे योग्य हो तप करिकें पापरहित हो यह तुम्हारे संकल्पको विषमभाव कैसे भयो, कहा देवतानमेंहू झूंठ प्रवृत्त ह्वै गयो ॥ १८ ॥ ता राजाको वचन सुनिकै ज्ञानवान् वसिष्ठजी होताको व्यतिक्रम जानिकै सूर्यके पुत्रते बोलते भये ॥ १९ ॥ हे राजन् ! तेरे होताके व्यभिचारते यह संकल्पको विषमभाव भयो है तोऊ अपने तेज-करिके सुंदरपुत्र सिद्ध करेंगे ॥ २० ॥ ऐसे विचारकर यशस्वी भगवान् वसिष्ठ इलाके पुरुष करिवेके लिये आदि पुरुष भगवान्की स्तुति करते भये ॥ २१ ॥ ईश्वर हरि प्रसन्न ह्वैके वसिष्ठजीको काम-वर देतभये, ता वरके प्रभावसे इला पुरुषनमें श्रेष्ठ सुद्युम्न नाम होत भयो ॥ २२ ॥ हे महाराज ! एक दिन वह सुद्युम्न वनमें शिकार खेलिवेके लिये, कितनेक मंत्रीनकूं संग लेकें सिंधुदेशके घोडापर चढिके ॥ २३ ॥ रुचिर धनुष और परमअद्भुत बाणनको लेकैं कवच पहिरिके मृगके पीछे उत्तर दिशाको जात भयो ॥ २४ ॥ सो राजकुमार सुमेरुके नीचे वनमें प्रवेश करत भयो जा वनमें महादेव पार्वतीके संग रमण करते विराजमान रहें हैं ॥ २५ ॥ शत्रुनको मारनवारे सुद्युम्न ता वनमें प्रवेश करतही आपेकूं स्त्रीरूप देखतभयो और हे नृप ! घोडाकूं घोडा देखत भयो ॥ २६ ॥ तैसेंई ताके संगके सिपाही मनुष्य आपकूं स्त्रीरूप देखके परस्पर देखते विमन उदास होते भये ॥ २७ ॥ यह सुनके राजा पूछेहै हे भगवन् ! ऐसो गुण देशको कैसे है और कौननें कियो हें यह प्रश्न कहो हमारे मनमें बडो कौतूहल है ॥ २८ ॥ शुकदेवजी कहे हैं एक समय कितनेइ ऋषीश्वर व्रतधारी अपनी कान्तिसो दिशानके अन्धकारकों दूर करते भये महादेवजीको देखिवेको आवतेभये ॥ २९ ॥ विना वस्त्र अंबिकादेवी उन्हें देखिकैं लज्जित हो भर्ताके गोदतें उठिकैं वेगिही नीवि (वस्त्रको) पहरतभई ॥ ३० ॥ ऋषीहू उमाशिवको रमण प्रसंग देखिकै वा स्थानसों वगदके बद्रिकाश्रम नाम नरनारायण-के आश्रमको जातेभये ॥ ३१ ॥ या वृत्तातकों देखकें प्यारीको प्रिय कामना करिकै श्रीशिव यह कहतभये कि जो या स्थानमें प्रवेश करेगो, सो निश्चय स्त्रीरूप ह्वै जाइगो, वा दिनतें वा वनमें कोई पुरुष नहीं जायहै ॥ ३२ ॥ फिर पूर्वोक्त सुद्युम्नको चरित्र कहे हैं अनुचरन करिकै सहित सो स्त्री वा वनते दूसरे वनमें विचरति भई ॥ ३३ ॥ ताके अनंतर आश्रमके समीप सखिनके संगमें विच-रती वा उत्तम स्त्रीको देखिकैं बुध चाहना करतभयो ॥ ३४ ॥ सोभी सुधु चंद्रमाके बेटा बुधकूं अपनो पति करनेको इच्छा करतभई सो बुध वा इलामें पुरूरवानाम पुत्र उपजावत भयो ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! ऐसें मनुको बेटा सुद्युम्न स्त्रीभावकूं प्राप्त भयो अपने कुलके आचार्य वसिष्ठको स्मरण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करत भयो यह हमने सुनी हैं ॥ ३६ ॥ वसिष्ठजी ताकी यह दशा देखिकै दयाके मारे पीडित भये सुद्युम्नकूं पुरुष करिवेकी इच्छा करते महादेवको तप करते भये ॥ ३७ ॥ सो महादेवजी तिन ऋषिके अर्थ प्रसन्न ह्वैके प्रिय करिवेके लिये और अपनी वाणी सांच करिवेके लिये यह कहते भये हे विशांपते परीक्षित् ! ॥ ३८ ॥ तुम्हारो शिष्य यह एक महीना पुरुष होयगो और एक महीना स्त्री होइगो, या व्यवस्था करिकै सुद्युम्न पृथ्वीको पालन करो ॥ ३९ ॥ आचार्यके अनुग्रहतें पुरुषपनो पाइकै या व्यवस्थासे पृथ्वीको पालन करते महीनाकी महीना स्त्रीरूपतै महलमें छिप्यो रहै है यही कारणते प्रजा प्रसन्न न भई ताको आदर न करत भई ॥ ४० ॥ हे राजन् ! वा सुद्युम्नके उत्कल, गय, विमल ये तीन पुत्र भये, वे दक्षिण देशके राजा बडे धर्मात्मा भये ॥ ४१ ॥ प्रतिष्ठानको पति सुद्युम्न वृद्धावस्थामें पुत्र पुरूरवाकूं राज देकै वनमें जातो भयो ॥ ४२ ॥

ततः परिणते काले प्रतिष्ठानपतिः प्रभुः ॥
पुरूरवस उत्सृज्य गां पुत्राय गतो वनम् ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच-एवं गतेऽथ सुद्युम्ने मनुर्वैवस्वतः सुते ॥
पुत्रकामस्तपस्तेपे यमुनायां शतं समाः ॥ १ ॥

दूसरे अध्यायमें मनुके पुत्रनमें दो पुत्र वैराग्यते अपुत्र होते भये, करुषते आदि लेके पांच पुत्रनके वंशको संक्षेपते कहै है ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहें हैं कि हे राजन् ! ऐसे पुत्र सुद्युम्नके जायवेके उपरान्त वैवस्वत मनु यमुनाके तीर पुत्रकी इच्छा करते सौ वर्ष तप करतभये ॥ १ ॥ और पुत्रके अर्थ हरिकी पूजा करतभये ता तपके प्रभावसो इक्ष्वाकु आदि अपने समान दश पुत्र प्राप्त करते भये ॥२॥ मनुके एक पुत्र पृषध्रको गुरुननें गायनको पालक कियो, सो सावधान ह्वैके रात्रिमें जागतो खड्ग हाथमें लेकैं वीरासन बैठवेको नियम लेकैं गायनको पालन करतभयो ॥ ३ ॥ एक दिन रातिमें वर्षाके समय एक सिंह आखिरकयो, सो गौ सोवतते उठिके डरपी खिरकमें भाजतभई ॥४॥ बलवान् सिंहनें एक गायको पकारि लीनी, सो गाय भय करिकै आतुर है पुकारतीभई, ताको शब्द सुनिकैं पृषध्र दौरत भयो ॥ ५ ॥ बादरके मारे कोई तारागण जामें न दीखें ऐसी रातिमें खड्ग लेकैं शीघ्र पृषध्र सिंहकी शंकाकरिकै विना जानें गायको शिर काटतभयो ॥ ६ ॥ खड्गके अग्र करिकें कान जाको कटे सो सिंह बहुत डरप्यो, मार्गमें लोहूकूं डारतो भाजगयो ॥ ७ ॥ पृषध्र जो है सो अपने मनमें सिंहको मारचो मानतो, सवेरेके समय आप हाथ करिकै मारी गायको देखिकै दुःखी भयो ॥ ८ ॥ कुलके आचार्य वसिष्ठ विना इच्छासें पाप करनेवाले पृषध्रकूं शाप देतेभये तू क्षत्रीनमें नीचहू न होइगो, या कर्म करिकैं शूद्र होइगो ॥ ९ ॥ ऐसें गुरुने शाप दियो सो हाथ जोरिकें ता शापको ग्रहण करतभयो ब्रह्मचारी ह्वैकै मुनिनके प्यारे व्रतको धारण करतभयो ॥ १० ॥ सबनके आत्मा सबनसे पर निर्मल भगवान् वासुदेवमें भक्ति करिकै एकांतभावकूं प्राप्त होतभयो और सब भूतनको सुहृद और सबनमें समान भयो ॥ ११ ॥ संग त्याग कर शांत आत्मा, इन्द्रीनको जीत संग्रहरहित अकस्मात् जो मिल्यो पदार्थ है ता करिकै अपनी जीविका करतभयो ॥ १२ ॥

१ वही झूसी या नामकरिके प्रसिद्ध गाम प्रयागमें गंगापार अब प्रसिद्ध है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परमात्मामें आत्मा राखिकै ज्ञान करिकै तृप्त सावधान जड आंधरे बहरेकोसो आकार ह्वैकें या पृथ्वीमें विचरत भयो ॥ १३ ॥ ऐसो व्रत ले सो वनमें जाइके उठो दावानल देखिकैं तामें जरिगयो सो ब्रह्मकूं प्राप्त होतभयो ॥ १४ ॥ सबनमें छोटो कवि नाम जो मनुको पुत्र हो सोहू विषयनमें निस्पृह भयो बंधुनसहित राज्य छोडिकै चित्तमें स्वप्रकाश हरिको राखिकैं किशोरअवस्थाहीमें वनमें प्रवेश कर परमेश्वरकूं प्राप्त भयो ॥ १५ ॥ मनुके बेटा करूषकै कारूषनाम क्षत्रीनकी जाति भई, उत्तर देशके राजा ब्रह्मनिष्ट धर्मवत्सल होतेभये ॥ १६ ॥ धृष्टके धार्ष्टनाम क्षत्रीनको कुल होतो भयो, सो पृथ्वीमें ब्राह्मणपनेको प्राप्तभयो, नृगराजाकों वंश चलो सो कहे हैं कि नृगको बेटा सुमति भयो ताके भूतज्योति, ताकें वसु भयो ॥ १७ ॥ वसुतें प्रतीक ताके ओघवान ताकों बेटाऊ ओघवान भयो, ओघवती कन्या भई ताय सुदर्शन व्याहतभयो ॥ १८ ॥ (तीन श्लोकनकरके करूष धृष्ट और नृगराजाके वंशको कहिके अब मनुके सातवें पुत्र नरिष्यंतकी वंशावली कहेहैं) नरिष्यंतते चित्रसेन भयो, ताके ऋक्षपुत्र होत भयो ताके मीढ्वान् ताके कूर्च ताके इंद्रसेन पुत्र भयो ॥ १९ ॥ इंद्रसेनके वीतिहोत्र भयो, ताके सत्यश्रवा भयो, ताको पुत्र उरुश्रवा भयो, तार्कें देवदत्त भयो ॥ २० ॥ तातें अग्निवेश्य पुत्र भयो वो आप भगवान् अग्निही भयो वो कन्यामें जन्मे सो कानीन कहायो इन्ही अग्निवेश्यको नाम महात्मा जातुकर्ण हो ॥ २१ ॥ तातें आग्निवेश्यायन नाम ब्रह्मकुल होत भयो, नरिष्यंतको वंश कह्यो याते परे मनुके चतुर्थ पुत्र दिष्टको वंश सुनो ॥ २२ ॥ दिष्टको पुत्र नाभाग भयो, सो नाभाग कर्म कारिकै वैश्य होत भयो परंतु ये नाभाग दूसरो है ताको पुत्र भलंदन भयो तातें वत्सप्रीति भयो ॥ २३ ॥ वत्सप्रीतिके प्रांशु पुत्र भयो, ताको पुत्र प्रमिति भयो; ताके खनित्र भयो, तातें चाक्षुष, ताकें विविंशति भयो ॥ २४ ॥ विविंशतिको पुत्र रंभ भयो, याके धर्मात्मा खनिनेत्र भयो, हे महाराज ! ताको पुत्र करंधम राजा होतभयो ॥ २५ ॥ ताके अवीक्षित पुत्र भयो जाके चक्रवर्ती मरुत होतभयो, अंगिराके पुत्र महायोगी संवर्त्तनाम ऋषि भयो वो मरुतको यज्ञ करावत भयो ॥२६॥ जैसो मरुतको यज्ञ भयो, तैसो और कोऊ राजाको न भयो, जा कछु लोटा थाली आदि पात्र हे सो सब सुंदर सोनेईकै भए ॥ २७ ॥ जाके यज्ञमें सोम करिकै इंद्र प्रमत्त भयो दक्षिणानकरिकै ब्राह्मण प्रसन्न किये, मरुतगण परोशनवारे भये विश्वेदेवा सभासद भये ॥ २८ ॥ मरुतको पुत्र दम, ताके राज्यवर्द्धन, ताके सुधृति, ताको बेटा नर भयो ॥ २९ ॥ ताको बेटा केवल भयो ताके बंधुमान्, ताके बेटा वेगवान् ताके बंधु, बंधुके राजा तृणबिंदु भयो ॥ ३० ॥ भजनीय गुणनको स्थान तृणबिंदुकू अलंबुषादेवी अप्सरा भजत भई, जा अप्सरातें पुत्र भये इडविडा कन्या भई ॥ ३१ ॥ जा इडविडामें विश्रवा कुबेर पुत्र उपजावत भयो, योगेश्वर पितासो परम विद्या लैकै वो कुबेर ऋषि गणनामें होतभयो ॥३२॥ विशाल, शून्यबंधु, धूम्रकेतु ये तृणबिंदुके बेटा भये, विशको वंशको करनवारो राजा भयो जाने विशाला नाम पुरी रची ॥३३॥ ताके हेमचंद्र पुत्र भयो, ताके धूम्राक्ष पुत्र भयो ताके संयम भयो, ताके सहदेव भयो ताके कृशाश्व भयो ॥ ३४ ॥ कृशाश्वते सोमदत्त भयो, जो सोमदत्त अश्वमेधन करिकैं भगवान्की पूजा करिकै योगीश्वरनकी शरण ले उत्तम गतिकूं प्राप्त होतभयो ॥ ३५ ॥ सोमदत्तको बेटा सुमति भयो, ताके जनमेजय भयो, ये विशालके वंशके राजा भये, तृणबिंदुके यशके करनवारे हैं ॥ ३६ ॥

सौमदत्तिस्तु सुमतिस्ततसुतो जनमेजयः ॥
एते वैशालभूपालास्तृणबिन्दोर्यशोधराः ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ३.

श्रीशुक उवाच–शर्यातिर्मानवो राजा ब्रह्मिष्ठः स बभूव ह ॥
यो वा अङ्गिरसां सत्र द्वितीयमह ऊचिवान् ॥ १ ॥

तीसरे अध्यायमें मनुके तीसरे पुत्र शर्यातिको वंश कहैं हैं जा वंशमें सुकन्याको और रेवतीको बडो अद्भुत आख्यान है ॥ तहां शुकदेवजी कहैं हैं मनुको जो बेटा शर्याती हो वो राजा वेदके अर्थको जानतेहो जो शर्याति अंगिरागोत्रके ऋषिनको यज्ञमें दूसरे दिन करिवे योग्य कर्म कहत भयो ॥ १ ॥ ताकें सुकन्यानाम कमलनेत्रा कन्या भई वो ताके सहित वनमें च्यवनऋषिके आश्रमकूं जातो भयो ॥ २ ॥ सो कन्या सखीनके सहित वनमें वृक्षनको देखत डोलती वामीके छेदमें पटवी-जनासी दो ज्योति देखति भई ॥ ३ ॥ दैवकी प्रेरी कन्या कांटेते भोरे भाव करिके विन दोनों ज्योति-नकूं छेदत भई तिनतें बहुत रुधिर वहतभयो ॥ ४ ॥ सेनाके लोकनकों ताई क्षणमें विष्ठा मूत्र बंद होतभयो ताई देखिकैं शर्याति राजा विस्मित हो पुरुषनसो पूछतभये ॥ ५ ॥ तुमनें भृगुकु-लमें भये च्यवन ऋषिको अपराध तो नहीं कियो जरूर हममेंसो काऊने विनके आश्रमकों दूषन कियोहै ॥ ६ ॥ पीछें वो कन्या डरपती पितासों बोली कि हे पिता ! यह अपराध मैंने कियोहै, विना जानें दो ज्योति कांटेनकरिकैं छेदी हैं ॥ ७ ॥ बेटीको वो वचन सुनिकैं बडो भय मान शर्याति वामीके भीतर अंतरहित मुनिकूं हौलें हौलें प्रसन्न करतभयो ॥ ८ ॥ मुनिको अभिप्राय जानिकैं तिनकूं कन्या देतभयो, कष्टतें छूट, तिनसूं आज्ञा मांगिके अपनें घरको जात भयो ॥ ९ ॥ सुकन्या परमक्रोधी च्यवन पतिकूं पाइकैं चित्तकी जाननवारी सावधान ह्वैकैं सेवा करिके तिनें प्रसन्न करतभई ॥ १० ॥ कोई एक समयमें अश्विनीकुमार आश्रममैं आये, तिने पूजि करिकैं बोले हे सद्वैद्यहो ! मोको तरुण वय कर देउ तुम समर्थ हौ ॥ ११ ॥ यज्ञमें सोमपान करिकैं रहित तुमको सोम पात्र देउंगो, स्त्रीनके वांछित रूप और अवस्था मेरी करिदेउ ॥ १२ ॥ वैद्योंमें श्रेष्ठ अश्विनीकु-मार ऐसेंई करेंगे ऐसे कहते भये सिद्धन करिके रचे या सरोवरमें तुम स्नान करो ॥ १३ ॥ एसे कहिके जरासों ग्रस्यो देह जिनकी नस दिखाई दे हैं, गुजलट श्वेत केशनसों विप्रिय च्यवनको अश्विनीकुमारनें उठाइकै सरोवरमें प्रवेश करायो ॥ १४ ॥ स्त्रीनकूं प्यारे, सुंदर कमलकी माला धारे, सुंदर वस्त्र पहरे तुल्य रूप तीन्यो पुरुष सरोवरतै निकरतभये ॥ १५ ॥ सुकन्या समान रूप सूर्यकोसो तेज तीनो-नको पेखिकैं अपने पतिकूं न जानत अश्विनीकुमारके शरण जातिभई ॥ १६ ॥ ताके पातिव्रत धर्म करिकै प्रसन्न भये अश्विनीकुमार ताके अर्थ पतिकूं दिखाइके ऋषिश्वरसूं आज्ञा मांगि प्रणाम करिकें स्वर्गकूं जातभये ॥ १७ ॥ इतनेंहीमें यज्ञ करवेकी इच्छा कर शर्याति राजा च्यवनऋषिके आश्रममें आय बेटीके पास सूर्यसो तेजवान् पुरुष देखत भयो ॥ १८ ॥ राजा चरणमें प्रणाम करती अपनी बेटीकू आशीर्वाद न देतभयो अति अप्रसन्न मन भयो यह बोलो[1] ॥ १९ ॥ हे असति ! तैंने यह कहा कियो लोकन करिकैं नमस्कृत मुनि तैंनें वंचित कियो, हे असति ! जो तू जरा करिकैं ग्रस्यो असंमत मुनिकूं छोडिकै मार्गमें चल्यो आयो जार पुरुषकू सेवन करैहै ॥ २० ॥ हे सतांकुल-

---

१ जब राजा च्यवन ऋषिके समीप जायके बोल्यो कि महाराज मेरी भोरी कन्याने यह अपराध आपको विना जाने करयौ है, सो क्षमा करो तब तो च्यवन ऋषि बोले कि राजा तेरी कन्याकी कितनी अवस्था है और अभी विवाह भयो है या नहीं इत्यादि वाक्यनसों राजा जानगयो कि विवाहकी इच्छा है ॥ २ अर्थात् अश्विनीकुमारने कही हम वैद्य हैं लिये विना इलाज नहीं करें सो तुम हमें कहा देउगे तब ऋषिने कही ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रसूते ! तेरी मति और प्रकारकी कैसे भई, यह कुलको दूषण है, निर्लज्ज जो तू जार पुरुषको सेवन करैहै, भर्ताको और पिताको कुल तू नरकमें डारेगी ॥ २१ ॥ ऐसें कहते पितासूं हँसती सुंदर मुसिक्यानि युक्त सुकन्या बोली हे पिता ! अच्छे भृगुकुलमें जन्म्यो यही तुमारो जमाई है ॥ २२ ॥ पतिके रूप यौवनकी प्राप्ति सब पितासों कहति भई, तब राजा विस्मित व्हैकै प्रसन्न व्है बेटीसो मिलत भयो ॥ २३ ॥ वीर राजाकूं सोम करिकै यज्ञ करावत सोमको पूर्णपात्र अपने तेज करिकै च्यवन ऋषि सोमरहित अश्विनीकुमारको देतभयो ॥ २४ ॥ तत्काल क्रोधसो अधीर है इंद्र ऋषिके मारिवेको वज्र लेतभयो, तब च्यवन ऋषि वज्रसहित इंद्रको हाथ स्तंभन करत भये ॥ २५ ॥ ताके अनंतर सिगरे देवगण अश्विनीकुमारकों सोमको पात्र जानतभये, पहले ये वैद्य हैं यह जानिके सोमकी आहुति करिकैं बाहिर किये हैं ॥ २६ ॥ उत्तानबर्हि आनर्त्त भूरिषेण ये तीनि पुत्र शर्याति राजाके भये, आनर्त्तके रैवत होतभयो ॥ २७ ॥ सो रैवतराजा समुद्रके मध्यमें कुशस्थली नामक नगरी वसाइकै तामें बैठिकै आनर्त्तादिक देशनको भोग करत भयो ॥ २८ ॥ ता रैवतके ककुद्मी आदि सौ पुत्र भये ककुद्मी अपनी रेवती नाम कन्याको लेकै ॥ २९ ॥ ब्रह्मासूं बेटीको वर पूछिवेके लिये ब्रह्मलोकमें जातभये, तहां रागरंग देखिकैं पूछिवेको अवसर न पाय एक क्षण बैठत भयो ॥ ३० ॥ रागके अंतमें ब्रह्माके निकट जाइकैं नमस्कार करिकैं अपनो अभिप्राय कहतभयो, अर्थात् यह रेवती बेटीको कौनकूं व्याह करूं भगवान् ब्रह्मा यह श्रवणकर हँसिकैं तासूं कहतभये ॥ ३१ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे हृदयमें विचारे सिगरे राजा कालनें नाश किये, तिनके बेटा नाती पांतीके गोत्रजहू सुनवेमें नहीं आवैहैं ॥ ३२ ॥ सत्ताईस चौकडी अर्थात् चारचो युगन करिकैं रच्यो काल व्यतीत भयो, तातें हे राजन् ! तू पृथ्वीमें जायके देवनके देव श्रीकृष्णके अंश महाबली ॥ ३३ ॥ नरनमें रत्न बलदेवके अर्थ यह कन्या रत्न देउ, भूमिके भार उतारिवेके लिये भूतनके पालक भगवान् ॥ ३४ ॥ पवित्र श्रवण और कीर्तनवारे भगवान् निज अंश करिकैं अवतार ले आये हैं ऐसें आज्ञा दियो ककुद्मी राजा ब्रह्माको नमस्कार करिकै अपने पुरमें आवतभयो ॥ ३५ ॥ जा पुरको यक्षनके डरतें वाके भैया त्यागके दिशानमें चले गये है वो निर्दूषित अंग अपनी बेटीकों बलीनमें श्रेष्ठ बलदेवजीके अर्थ देकें आप तप करिवेके लिये नारायणके आश्रम बदरिका आश्रममें जातभयो ॥ ३६ ॥

त्यक्तं पुण्यजनत्रासाद्भ्रातृभिर्दिक्ष्ववस्थितैः ॥
सुतां दत्त्वाऽनवद्याङ्गीं बलाय बलशालिने ॥
बदर्याख्यं गतो राजा तपसे नारायणाश्रमम् ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायां नवमस्कन्धे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

श्रीशुक उवाच—नाभागो नभगापत्यं यततं भ्रातरः कविम् ॥
यविष्ठं व्यभजन् दायं ब्रह्मचारिणमागतम् ॥ १ ॥

चौथे अध्यायमें मनुके पुत्र नभगकी कथा कहैं ता नभगके बेटा नाभाग और अंबरीषकी कथा

१ अर्थात् जो इंद्रने वज्र मारिवेको उठायो सोई ऋषिने एक हुंकारी मारी सोई इंद्रको वज्रसमेत हाथ ऊंचेके ऊंचो रहि गयो तब इंद्रने बडी स्तुति कीनी तब हाथ छोडो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहे हैं, जाने कृत्याको नाश कीनो ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! नभगके बेटा नाभाग भये यह गुरुके घर विद्या पढवे गये तब दूसरे भैयानने यह जानी कि यह ब्रह्मचारी होयगो या कारण वाकों कछु नहीं राखके पिताकों धन आपसमें सब बाँटलियो ॥ १ ॥ जब नाभाग गुरुके पासते पढके आयो तो कहा देखे है कि जितनो पिताको द्रव्य है सो भैयानने बाँटलियो है तब नाभाग भैयानसो बोल्यो कि हे भैयाओ ! मेरे अर्थ कहा भाग राख्यो है, भैया बोले तू पिताको ग्रहण कर तब वह पितापै जाइके बोल्यो हे तात ! मेरे बडे भैया तुमें भाग करत भये, तब पिता बोले तिनके कहेको आदर मति करं ॥ २ ॥ जों मैं भागमें दियोहू तो तोकूं जीविकाको उपाय बताऊं ये अंगिराके गोत्रके यज्ञ करैं हैं, सो हे कवे ! वे ऋषि छठा दिन पाइकैं कर्ममें मोहित होयहै ॥ ३ ॥ तहां जाइके तू विश्वेदेवतानकी दो ये सूक्ति मेरी बताई कह दै स्वर्गकू जाईंगे तब अपने यज्ञकों बाकी रह्यो धन तोकूं देजाइगे ॥ ४ ॥ ताते तिनके पास जा, यह सुन नाभाग तैसेंई करत भयो वे यज्ञमें शेष रह्ये धनको वाहि देकै स्वर्गको जातो भयो ॥ ५ ॥ ता द्रव्यके लेते समय कोई एक कारे शरीरको पुरुष उत्तर दिशातें आइकैं बोल्यो यज्ञको द्रव्य मेरो है ॥ ६ ॥ मनुको बेटा नाभाग तासमय बोल्यो यह ऋषिननें मोकूं दियो है, तब वह पुरुष बोल्यो हमारे तेरे या विवादमें तेरे पिताकूंही पूछ, तब नाभाग पितासूं पूछतभयो ॥ ७ ॥ पिता बोल्यो ऋषिननें यज्ञकी भूमिमें शेष द्रव्य महादेवजीके अर्थ भाग कियोहै, तातें यह सर्व द्रव्य वाही शिवको भाग है ॥ ८ ॥ तब नाभाग शिवके समीप आय तिनें दंडवत् करिकैं बोल्यो हे ईश ! यह सब तुम्हारोई है, यह मेरे पिता कहतभये हैं हे ब्रह्मन् ! मैं शिरकरिकैं तुमें प्रसन्न करूं हूं ॥ ९ ॥ रुद्र बोले तेरो पिता धर्म कहतभयो तूंहू सांच बोल्यो तातें मंत्रद्रष्टा तोकूं ज्ञानरूप सनातन ब्रह्म देउंगो ॥ १० ॥ और यज्ञमें शेष रह्यो द्रव्य मैंनें दियो तू ग्रहण करि ऐसें कहिकै भगवान् भक्तवत्सल रुद्र अंतरध्यान होतभये ॥ ११ ॥ अब या कथा पढवे सुनवेको फल कहै है कि जो पुरुष सावधान ह्वैकें सबेरे सांझ या चरित्रकों स्मरण करैगे सो कवि मंत्रज्ञ होइगो आत्माकी गतिको प्राप्त होइगो ॥ १२ ॥ नाभागकें महाभाग सुकृती अंबरीष होतभयो, जा अम्बरीषको कहीं नष्ट नहीं होवेवारो ब्राह्मणनको शापहू स्पर्श नहीं करतो भयो ॥ १३ ॥ यह सुनके राजा बोल्यो हे भगवन् ! बुद्धिमान् राजऋषि अंबरीषको चरित्र मैं सुनिवेकी इच्छा करूंहूं जा अंबरीषपें चलायो दुरत्यय ब्रह्मदंड समर्थ नहीं होतो भयो ॥ १४ ॥ शुकदेवजी कहैं हैं महाभाग अंबरीष सातों दीपनकरिकैं युक्त पृथ्वी और नाशरहित संपत्ति अतुल वैभव पाइकैं ॥ १५ ॥ जो दूसरे पुरुषनको मिलनो दुर्लभ है ऐसे वैभवको प्राप्त होकेहू वाकै नाशवान् और स्वप्नकी समान जानतो भयो कारण कि वैभवसों मनुष्य मोहमें प्राप्त होयहै ॥ १६ ॥ भगवान् वासुदेवमें और विनके भक्त साधुनमें परमभावकों प्राप्तभये अंबरीष जा भावकरिकैं या विश्वको मृत्तिकाकी समान जानत भये ॥ १७ ॥ सो अंबरीष कृष्णचरणारविंदनमें मन करत भये भगवान्के गुण वर्णन करिवेमें वचन वाणी करतभये, हाथनकों हरिके मंदिरके मार्जनादिकनमें करतभये, कान हरिकी कथाके सुनिवेमें करतभये ॥ १८ ॥ मुकुंदके स्वरूप और स्थानके दर्शनमें नेत्र करतभये, विनके भक्तनके गात्र स्पर्शनमें अंगसंग करतभये, तिनके चरणनमें चढी तुलसीकी सुगंधमें नासिका करतभये, हरिके अर्पण किये प्रसादमें जीभ करतभये ॥ १९ ॥

---

१ मेरे पास तौ अब कछु नहीं है तू विनसोंही जायके लै तब नाभाग संतोषसो बोल्यो कि जान देउ मैं तो भाइनसो भागके अर्थ तकरार नहीं करूं तब पिता बोलो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हरिके क्षेत्र जायवेके लिये अपने चरण करतभये, हरिके चरणनके प्रणाममें अपनो शिर करतभये, माला चंदनादिक सेवा और दासभावमेंही अपनी कामना करतभये, विषयनकी इच्छा करिकैं कामना नहीं करतभये, वह सब कार्य ऐसे करते जैसे हरिभक्तनके संग प्रीति बढै ॥ २० ॥ ऐसे अपने कर्मनको समूह पर अधिकयज्ञ भगवान्में अर्पण करते सब प्रकारसों अपनो भाव विधान करते तन्निष्ठ ब्राह्मणनते शिक्षा लेते यह पृथ्वी पालन करतभये ॥ २१ ॥ या नृपतिनें वसिष्ठ गौतम और असित ऋषिनसौं प्रयोग करायके निर्जल देशमें सरस्वतीके तटपें बहुतसे अश्वमेधनसौं यज्ञेश्वर भगवान्को पूजन कियो और ऐश्वर्यशाली हैवेके कारण विन यज्ञनमें अंग और दक्षिणाको बहुत विस्तार कियो ॥२२॥ जाके यज्ञनमें सदस्य और ऋत्विजादि जनन देवतानकै समान रूप दिखाई परै और आश्चर्यसौं देखवेके कारण विनके नेत्रहू निमेषरहित विदित होते हे ॥ २३ ॥ जा अंबरीष राजाकी प्रजाने देवतानको प्यारो स्वर्ग प्रार्थना न कियो, भगवान्की कथा सुनै गामै मुकुंदको हृदयमें देखेहैं[1] ॥ २४ ॥ जो हृदयमें नारायणको देखे हैं विन्हे विन्ह सिद्धनके दुर्लभ विषयहू प्रसन्न नहीं कर सके हैं जिन्हे स्वरूपको लाभ है गयो हैं विन्हे विषयसुख कहा हैं ॥ २५ ॥ ऐसे तपकरिकै युक्त भक्तियोग स्वधर्मसों हरिको प्रसन्न करत अंबरीष हौले हौले संपूर्ण संग त्यागत भयो ॥ २६ ॥ घर, स्त्री, पुत्र, बंधु, हाथी, रथ, उत्तम घोडा और वस्तु, अक्षयरत्न, आभरण, आयुधादिक, अनंत खजाने इनमें असद्बुद्धिमानसों इनको सबको झूंठो जानत भयो ॥ २७ ॥ एकांत भक्तिभाव करिकै प्रसन्न भये हरि वैरीनको भयदायक भक्तनकी रक्षा करनवारो चक्र अंबरीषके अर्थ देतभये ॥ २८ ॥ तुल्य शील रानी सहित कृष्णके आराधनकी इच्छासो वीर अंबरीष एकवर्षताईं अखंड एकादशीव्रत धारण करतभये ॥ २९ ॥ तदनंतर मथुरा पधारे और व्रतके अंतमें कार्तिक महीनामें तीन दिन उपवास कियो और कालिंदीमें स्नान करके काहू समय मधुवनमें हरिकी पूजा करतभये ॥ ३० ॥ महाभिषेककी विधि करिकै सब सामग्रीनकी संपत्ति करिकै वस्त्र भूषण गंध फूलमालासौं भगवान्को अभिषेक करिकें ॥ ३१ ॥ तिनहीमें चित्त लगाये केशव भगवान्को पूजन करत भयो और बडो भाग्यवान् सिद्ध अर्थ जे ब्राह्मण हैं तिनको पूजन भक्तिभाव करिके करत भयो ॥ ३२ ॥ सोनेके सींग रुपेके खुर सुंदर वस्त्र दूधकी दुधार रूप अवस्था बछरा दौहनी संपत्ति सहित ॥ ३३ ॥ साठि किरोड गौनको ब्राह्मणनके अर्थ घरनमें पठावतभयो पहेले गुणवान् स्वादपूर्वक अन्न ब्राह्मणनकूं भोजन करावतभयो ॥ ३४ ॥ प्राप्तकाम ब्राह्मणनकी आज्ञा पाय राजा पारणो करिवेकूं आरंभ करतभयो ताईं समय दुर्वासा भगवान् अतिथि आवतेभये ॥ ३५ ॥ राजा दुर्वासाऋषि अतिथिको उठिकै आसन अर्घसौं पूजा करतभयो चरणमूलमें गिरिकैं भोजनके लिये प्रार्थना करतभयो ॥ ३६ ॥ तब दुर्वासा राजाकी प्रार्थना मानिकैं मध्याह्नसंध्या करिवेके लिये गये; कालिंदीके पवित्र जलमें स्नान करतभये, ब्रह्मको ध्यान करतभयो ॥ ३७ ॥ घडीभरी बाकी रही द्वादशीमें पारनो करिवेकूं राजा धर्मको जाननवारो ब्राह्मणन करिकैं सहित धर्म संकटमें चिंता करतभये ॥ ३८ ॥ ब्राह्मणके अतिक्रममें दोष है, वा द्वादशीमें पारनो न करे तो दोष है, ज्या करिकैं मेरो भलो होई अधर्म मोकूं स्पर्श न करे सो हे ब्राह्मणहो कहो ॥ ३९ ॥ ब्राह्मणनके संग विचारिकै निश्चय कर बोले हे ब्राह्मणहो !

---

१ सब कोई कथामें प्रेमसों अश्रुपात करैहैं, परन्तु वक्ताके नहीं निकरै हैं, एक पंडितजी बडी सुन्दर कथा वांचे हे सब श्रोता प्रेमके मारे रोवनलगे, पर पंडितजीके आंसू न निकरै एक बोल उठ्यो पंडितजी तुम कथामें कबहूं नाय रोवत कहां तुम्हें प्रेम नहीं आवै है, तब पंडितजी बोले भैया मैं वा दिन रोऊंगो जा दिन या कथामें कछु नाई चढैगो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

केवल जल करिकै पारनो करूंगो, जलके भक्षणको भोजन कहैंहू और नहींहू कहैं है ॥ ४० ॥ हे कुरुश्रेष्ठ ! ऐसे अंबरीष जल पीकै मनसो हरिको चिंतवन करते ब्राह्मणके आइवेको पैंडो देखत भयो ॥ ४१ ॥ आवश्यक कर्म कर दुर्वासा यमुनाकूलतें आये, राजाने आदर कियो, राजाकी चेष्टा बुद्धिसो जानत भये अर्थात् याने कछु पारनो करलियो है अतएव याकी चेष्टा डहडही है ॥ ४२ ॥ तब क्रोध करिकैं कापत शरीर भ्रुकुटी कुटिल मुख, अति भूखो दुर्वासा हाथ जोरे खडे राजासूं बोलत भयो ॥ ४३ ॥ यह क्रूर संपत्तिकरिकैं मतवारो विष्णुको अभक्त आपको ईश्वर मानवेहारे यह राजाके धर्मको व्यतिक्रम तौ देखो ॥ ४४ ॥ यह राजा आये मो अतिथिको भोजनके लिये न्योतिके विना भोजन दिये आप भोजन करतभयो, ताको फल तोकूं तत्काल दिखाऊंगो ॥ ४५ ॥ ऐसे कहि क्रोधसैं जरते दुर्वासा एक जटा उखारिके तासो राजाके अर्थ काल अग्निकीसी उपमा कृत्यानल अग्नि रचत भयो ॥ ४६ ॥ खड्ग हाथमें लिये अपने पायेसो भूमिको कंपाती प्रकाश करती चली आउती वा राक्षसीको देखिके राजा स्थानते चलायमान न भये ॥ ४७ ॥ महात्मा भगवान्ने भक्तकी रक्षाके लिये पहिलेई आज्ञा दियो चक्र ता कृत्यानल अग्निको जराई देत भयो, जैसें क्रोधी सर्पको दावाग्नि जराइ दे है ॥४८॥ अपनो प्रयास निष्फल गयो देखिकैं और चक्रकू पीछे आवतो देख भयातुर प्राण बचाइवेके लिये दुर्वासा दिशानमें भाजतभयो ॥ ४९ ॥ भगवान्को चक्र ताके पीछेई दौरत भयो जैसे उन्नत ज्वाला दावाग्नि सापके पीछे दौरै है, जैसे पीछेते आवत चक्रको देखिकै दुर्वासा सुमेरुकी गुफामें प्रवेश करिवेके लिये जातभयो ॥ ५० ॥ दिशा आकाश पृथ्वी विवर समुद्र पालकनसहित लोक स्वर्ग आदि जहां गयो जहां जहां दौरचो तहां तहां भगवान्के सुदर्शनको देखत भयो ॥ ५१ ॥ जब कहूं नहीं रक्षा करवेवारो पायो तब भयभीत चित्त शरणको ढूंढतो ब्रह्माके पास जातभयो, और ब्रह्मलोकमें जायके ब्रह्माते बोल्यो हे विधातः ! हे आत्मयोने ! हरिके चक्रतें मेरी रक्षा करो ॥ ५२ ॥ तब ब्रह्मा बोले विश्वकारिकैं सहित यह मेरो स्थान नाश करिवेकी इच्छा करते कालरूपी भगवान्के क्रीडा करते जब दो परार्द्धको अन्त होगो तब भ्रुकुटीके भंगमात्र करिकै नष्ट ह्वै जाइगो ॥ ५३ ॥ मैं रुद्र दक्ष भृगु आदि प्रजानके ईश भूतनके ईश देवतानके ईश मुख्य २ सब हम जा भगवान्की माथेपै अर्पण करी आज्ञाकूं प्राप्त ह्वैकै लोकनको हित जैसें होई तैसें आज्ञाकूं धारण करेहै तिनके चक्रसो कौन बचावै ॥ ५४ ॥ ब्रह्मानें नाहीं कियो तब विष्णुचक्रसो तापित दुर्वासा ऋषि कैलासवासी महादेवकी शरण जात भयो ॥ ५५ ॥ महादेव बोले हे तात ! हम सबनतें बडो परमेश्वर है तामें हम नहीं प्रभाव करि सकैं हैं जिन व्यापकरूप ईश्वरमें यह ब्रह्माण्ड और ब्रह्मारूप जीवनके शरीररूप सहस्रन ब्रह्माण्ड उत्पन्न होयहैं जिनकी समयपर उत्पत्ति और लीनता होतीहै लोकपालनको अभिमान करनवारेभी हू जिनकी मायासों मोहित होय हैं विनके कार्यमें हम कछु नहीं करसके है ॥ ५६ ॥ मैं सनत्कुमार नारद ब्रह्मा कपिल अपांतरतम देवल धर्म आसुरी ॥ ५७ ॥ मरीचि आदि मुख्य और सिद्धनके ईश्वर पारके देखनेवारे सब हम जाकी मायाकूं नहीं जानें है मायानें घेरे हैं ॥५८॥ सो विश्वेश्वर भगवान्के या शस्त्रको हमहू नहीं सह सकेंहै यासो तुम विन्हीके शरण जाओ हरि तोकूं सुख करैंगे ॥ ५९ ॥ तब निराश हो दुर्वासा भगवान्को स्थान वैकुंठको जात भयो जहां श्रीनिवास लक्ष्मीसहित रहैं है ॥ ६० ॥ भगवान्के शस्त्रकी अग्निसो जरो कंपित शरीर हरिके चरणमूलमें गिरतभयो, और वह कहत भयो, हे अच्युत हे अनंत हे साधुनको वांच्छित हे प्रभो हे विश्वभावन भगवन् ! अपराधी जो में वा मेरी क्षमा करो ॥ ६१ ॥ मैं तुम्हारे प्रभावको नहीं जानूंहूं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मैंने तुम्हारे प्यारेनको अपराध कीनो, सो अब याको प्रायश्चित्त करो, तुम्हारे नाम लियेते नरकमें स्थितहू मुक्त होयहैं ॥ ६२ ॥ अब भगवान् बोले मैं भक्तनके पराधीन हूं, स्वतंत्र नहीं हूं मेरो हृदय भक्तननें ग्रहण कर लियोहै मैं विनको प्रिय हूं ॥ ६३ ॥ हे दुर्वासः ! जिन साधु जननकी मेंही परमगति हूं विन अपने भक्तनको छोडकें न तौ मैं अपने शरीरकू और न अत्यन्त समीप रहनवारी लक्ष्मीकी इच्छा करूंहूं ॥ ६४ ॥ जे भक्त स्त्री घर पुत्र प्यारे प्राण धन यह लोक परलोक छौंडिकैं मेरे शरण आये तिनें मैं कैसे छोडूं ॥ ६५ ॥ मोमें मन लगामनवारे समदर्शी साधु भक्ति करिकैं मोहि वश करैं हैं, जैसे उत्तम स्त्री अपने पतिकूं वश करैं हैं ॥ ६६ ॥ वे मेरी सेवा करिकैं प्राप्त भई सालोक्यादिक चारि प्रकार मुक्तिकोहू नहीं इच्छा करैं हैं, फिर कालसौं नाश हैवेवारे दूसरे पदार्थनकी तौ बातही कहा है ॥ ६७ ॥ साधु मेरे हृदय हैं, मैं साधुनको हृदय हूं मोतें औरकों वे नहीं जानें, मैं विनतें औरको नहीं जानूं हूं ॥ ६८ ॥ हे विप्र ! मैं उपाय तोकू बताऊं सो तू सुन जापै तैंने अभिचार कियो वाई राजाके शरण जा साधुनपे चलायों तेज प्रहार करनवारेकों अमंगल करै है ॥ ६९ ॥ तप विद्या ब्राह्मणनको श्रेय करैहै, पन वेइ तपविद्या अनम्र ब्राह्मणको अमंगल करै है ॥ ७० ॥ हे ब्राह्मण ! तातें जा तेरो कल्याण होउ नाभागके बेटासे क्षमा कराओ तातें शांति होइगी ॥ ७१ ॥

ब्रह्मंस्तद्गच्छ भद्रं ते नाभागतनयं नृपम् ॥
क्षमापय महाभागं ततः शान्तिर्भविष्यति ॥ ७१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायां नवमस्कन्धे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

श्रीशुक उवाच-एवं भगवतादिष्टो दुर्वासाश्चक्रतापितः ॥
अम्बरीषमुपावृत्य तत्पादौ दुःखितोऽग्रहीत् ॥ १ ॥

पांचवें अध्यायमें विष्णुचक्रको प्रसन्न करिकैं प्राण संकटतें दुर्वासाको अंबरीषनें रक्षा कियो यह वर्णन करैंगे ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं ऐसे भगवान्ते आज्ञा दियो, चक्रने तपायो दुर्वासा अंबरीषके निकट जाइके दुःखित ह्वैके ताके चरणनको ग्रहण करतभयो ॥ १ ॥ ताको उद्यम देखिकै चरणके स्पर्श करिकै लज्जित और पीडित भयो अंबरीष हरिके वा अस्त्रकी स्तुति करतभयो ॥ २ ॥ अम्बरीष बोले हे सुदर्शन चक्र ! तुम अग्नि हो, तुमहीं भगवान् सूर्य हो, ज्योतिनकों पति चंद्रमा हो, जल हो, पृथ्वी तुम हो, आकाश पवन तुम हो, मात्रा इंद्रिय तुम हो ॥ ३ ॥ हे सुदर्शन हजार धारायुक्त ! हे हरिके प्यारे ! हे सब अस्त्रनके नाश करनवारे ! हे पृथ्वीके पति ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, ब्राह्मणको शरण होउ और स्वस्ति करौ ॥४॥ धर्म तुम हो, ऋत तुम हो, सत्य तुम हो, यज्ञ तुम हो, सब यज्ञके भोक्ता तुम हो, लोकपाल तुम हो, सर्वात्मा तुम हो, ईश्वरको परम तेज तुम हो ॥ ५ ॥ हे सुनाभ ! तुमको नमस्कार है, अखिल धर्मकी मर्यादा अधर्मशील असुरनके जरावनवारे अग्निरूप त्रिलोकीके पालक विशुद्ध तेज मनसे वेगवान् अद्भुत कर्मवारे तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, मैं तुम्हारी स्तुति करौहो ॥ ६ ॥ धर्ममय तुम्हारे तेजसो अंधकार दूर होय है, सूर्यादिकनको प्रकाश तुम्हारे तेजसो होयहै, तुम्हारी महिमा दुरत्यय है, हे वाणीनके पति ! स्थूल सूक्ष्म पर अवर यह जगत् तुम्हारोही रूप है तुमनेई प्रकाश कियो है ॥ ७ ॥ हे अजित ! हरिने जब तुम्हें चलाये, तब दैत्य दानवनकी सेनामें प्रविष्ट ह्वैके तिनकी भुजा उदर ऊरू चरण ग्रीवा काटते विराजोहो ॥ ८ ॥ जगत्के

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रक्षक ! गदाधारी भगवान्ने तुमें दुष्टनके नाशके लिये प्रेरेहो, तुम सर्वसह हो हमारे कुलके ब्राह्मण देवता हे सो भाग्यके लिये ब्राह्मणको मंगल करो सोई हमपै अनुग्रह है ॥ ९ ॥ जो हमारो दान है, इष्ट है, सुधर्म कियो है, जो ब्राह्मण हमारे देवता है ब्राह्मणपरायण हमारो कुल है तो यह ब्राह्मण ताप करिकैं रहित होउ ॥ १० ॥ सब गुणनको आश्रय एक भगवान् सिगरे भूतप्राणीनमें आत्मभाव करिकैं हमपे प्रसन्न भयें तो ब्राह्मणको ताप जाई ॥ ११ ॥ शुकदेवजी परीक्षित्सौं कहैं हैं ऐसें राजाके स्तुति करत संते विष्णुचक्र सुदर्शन ब्राह्मणको जरावतो हो पर राजाकी प्रार्थना करिकैं शांत होत भयो ॥ १२ ॥ अस्त्रकी अग्निके ताप करिकैं छूट्यो कल्याणयुक्त दुर्वासा परम आशीर्वाद देकैं राजा अम्बरीषकी बडाई करत भयो ॥ १३ ॥ दुर्वासा कहैहैं हरिके दासनको महत्व मैंने आज देख्यो, जिन दासनते अपराध करनवारोऊ मंगलकूं प्राप्त होय है ॥ १४ ॥ साधुनको दुष्कर कहा है महात्मानको दुस्त्यज कहा है, जिननें सात्वतनमें श्रेष्ट भगवान् हरि वश किये हैं ॥ १५ ॥ जाके नामके श्रवणमात्रकरिकैं पुरुष निर्मल होंय है, ऐसे तीर्थपाद भगवान्के दासनको कहा बाकी रहै है ॥ १६ ॥ हे राजन् ! अति करुणात्मा तुमने हमपें अनुग्रह कियो जो मेरे अपराधको पीछैं करिकैं मेरे प्राण रक्षा किये ॥ १७ ॥ ब्राह्मणके आइवेकी इच्छा करिकैं जाने १ वर्ष आहार त्यागो वो राजा अम्बरीष चरणनमें गिरि प्रसन्न करायकैं भोजन करावत भये ॥ १८ ॥ सोई दुर्वासा आदरतें सब काम प्राप्त आतिथ्यपूर्वक भोजन करिकैं तृप्त आत्मा राजासो आदरसहित बोलो तुमहूं भोजन करो ॥ १९ ॥ तुम भागवतके दर्शन स्पर्शन आलाप करिकैं मैं प्रसन्न भयोहूं देह पवित्र करनवारी आत्मविषयसो और अन्नसो मैं प्रसन्न भयों और मोपे अनुग्रह कियो ॥ २० ॥ तुम्हारे यह उज्ज्वल कर्म स्वर्गकी स्त्री वेरवेर गावेंगी, भूमि तुम्हारी परमपुण्य कीर्ति गावेंगी ॥ २१ ॥ शुकदेवजी कहैहैं ऐसे प्रसन्न हो दुर्वासा राजाकी स्तुति करिकैं आज्ञा मांग आकाशमार्गकरिकैं ब्रह्मलोकको जातभयो ॥ २२ ॥ चक्रके भयसे भागतो मुनि जबतक न आयो तितनेमें एक वर्ष जातभयो, राजा दर्शनकी इच्छा करत जलपानकरिकैं वर्ष दिनताईं रहतभयो ॥ २३ ॥ सो अम्बरीष दुर्वासाके गये पीछैं ब्राह्मणनको भोजन करायकैं अतिपवित्र ब्राह्मणको बचो अन्न आपु भोजन करतभयो, ऋषिको दुःख छूट्यो ताइ देखिकैं और ऋषिको व्यसन अपनी वीर्यादिको भगवान्को प्रभाव मानत भयो ॥ २४ ॥ ऐसे अनेक गुणयुक्त राजा अम्बरीष परमात्मा ब्रह्म वासुदेवमें क्रियाकलापनकरिकैं भक्ति करतभयो. जा भक्तिकरिकैं ब्रह्माके लोकताईं भोग नरकतुल्य देखत भयो ॥ २५ ॥ पीछे समान शीलवारे पुत्रनको राज्य देकैं धीर अंबरीष वनमें प्रवेश करतभयो, आत्मा वासुदेवमें मन धारण करते, संसारसौं रहित है गयो ॥ २६ ॥ जो अंबरीष राजाको यह पुण्यचरित्र कहैगो, स्मरण करेगो सो भगवान्को भक्त होइगो ॥ २७ ॥

इत्येतत्पुण्यमाख्यानमम्बरीषस्य भूपतेः ॥
संकीर्तयन्ननुध्यायन् भक्तो भगवतो भवेत् ॥ २७ ॥

इति श्रीभागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

श्रीशुक उवाच–विरूपः केतुमान् शंभुरम्बरीषसुतास्त्रयः ॥
विरूपात्पृषदश्वोऽभूत्तत्पुत्रस्तु रथीतरः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

छठवें अध्यायके आरंभमें अंबरीषको वंश कहिके ताते परे छःते आदि लेकें आठ अध्याय करिकै इक्ष्याकूको वंश कहैंगे इनमें छठे अध्यायमें शशादतें आदि लेकें मांधातापर्यंत वंश कहैंगे प्रसंगतें मांधाताकी बेटीनको पति सौभरिऋषिको चरित्र कहैंगे ॥ शुकदेवजी कहै हैं विरूप केतुमान शंभु ये तीनि अंबरीषके बेटा भये, विरूपतें पृषदश्व भयो, ताको पुत्र रथीतर भयो ॥ १ ॥ अपुत्र रथीतरके संतानके लिये प्रार्थना किये अंगिरा ऋषि ब्रह्मतेजकरिकै युक्त पुत्र उपजावतभयो ॥ २ ॥ जे रथीतरके क्षेत्रमें उपजे अंगिराते भये यातें आंगिरस कहाये, रथीतरके गोत्रमें मुख्य भये वे क्षत्रधर्म युक्त ब्राह्मण होतभये ॥ ३ ॥ छींक लेते मनुके घ्राणते इक्ष्वाकु पुत्र होतभयो, ताके सौ बेटानमें जेठे विकुक्षि निमि दंडक होतभये ॥ ४ ॥ तिन सौनमें आर्यावर्तमें पूर्व ओरको समुद्रपर्यंत पच्चीस राजा होतभये, पच्चीस पश्चिममें भये, तीनि मध्यमें और बाकीके उत्तर दक्षिणके राजा होतभये ॥ ५ ॥ सो इक्ष्वाकु एक दिन अष्टकाश्राद्धमें पुत्रकूं आज्ञा देतभयो हे विकुक्षे ! जा ढील मत करे पवित्र मांस लेआ ॥ ६ ॥ सो विकुक्षी वनमें जाइकै श्राद्धके योग्य मृग मारिकैं श्रमकूं प्राप्तभयो, और भूख लगनेसे सो वीर एक शशेको खाईगयो, पहिलें मोकूं नहीं खानो योग्य है, यह सुधि भूलिगई ॥ ७ ॥ बाकी मांस पिताके अर्थ देतभयो, पितासे श्राद्धके लिये प्रेरण किये गुरु कि महाराज ! याको प्रोक्षण करो तब गुरुने मांस प्रोक्षण कियो और फिर गुरु बोले, यह मांस दुष्ट है, कर्मके लायक नहीं है ॥ ८ ॥ पुत्रको गुरुनें कह्यो कर्म जानिके क्रोध करिकै शास्त्रकी आज्ञा उल्लंघन करनवारे अपने पुत्रको देशते निकारि देतभयो ॥ ९ ॥ सो इक्ष्वाकू ब्राह्मण वसिष्ठसो संवाद करतो व्हैकैं योगसो शरीर छोडि परतत्त्वकूं प्राप्त भयो ॥ १० ॥ पिताके वनमें गये पीछे विकुक्षि अपने घर आइके पृथ्वीकों पालन करतभयो, यज्ञकरिकै हरिकी पूजा करत, शशाद नामकरिकै विख्यात भयो ॥ ११ ॥ ता शशादको बेटा पुरंजय भयो वाकें इंद्रवाह और ककुत्स्थ कर्म न करिकैं ये नाम भये तिनै सुनो ॥ १२ ॥ विश्वको नाशक दानवनके संग देवतानको संग्राम होत भयो, दैत्यनसो हारे देवतानने राजाते सहाय मांगी ॥ १३ ॥ याते कही इंद्र मेरो वाहन होई तो दैत्यनको मारूं, तब इंद्र लाज करिकैं अंगीकार न करतभयो, तब देवनके देव विश्वके आत्मा विष्णुके वचनते वा राजाके लिये इंद्र बडो बैल होतभयो ॥ १४ ॥ सो राजा कवच पहरिके, दिव्य धनुष्य पैनें बाण लेकैं देवतानसो स्तुतिको प्राप्त हो युद्ध करिवेके लिये वा बैलकी टांटपै बैठतभयो ॥ १५ ॥ परब्रह्मादिकको आत्मा जो पुरुष विष्णु है ताके तेजकरिकै युक्त राजा पश्चिम दिशामें दैत्यनकी पुरीको देवतानकरिकै सहित घेरतभयो ॥ १६ ॥ दैत्यनके संग ताको भयंकर संग्राम होतभयो, जे अपने सन्मुख आये तिन दैत्यनकों बाणनकरिकैं देहसहितही यमके लोकमें पहुँचावत भयो ॥ १७ ॥ प्रलयकी अग्निकी समान उल्बण ताके बाणनके पातकू देखिकै रण छोडिकै मारे डरकै बाकीके दैत्य ताडना किये पातालको भाजतभये ॥ १८ ॥ पुर जीतिकै संपूर्ण धन इंद्रको देतभयो, सो राजा इत्यादि कर्मसो इन नामन करिकै विख्यात भयो पुरकू जीतो यासें पुरंजय इन्द्र वाहन हैवेसो इन्द्रवाह ककुदपर बैठनेके कारण ककुत्स्थ नामभयो ॥ १९ ॥ पुरंजयको पुत्र अनेना भयो, ताके पृथु भयो, ताके विश्वरंधी भयो, ताकें चंद्र भयो ताकें युवनाश्व भयो ॥ २० ॥ ताकें शावस्त भयो, जानें शावस्ती नाम पुरी रची, ताकें बृहदश्व भयो, ताकें कुवलयाश्व भयो ॥ २१ ॥ जो कुवलयाश्व उतंक ऋषिके प्रिय करिवेके लिये इक्कीस हजार बेटानको संग लेके धुंधुनाम असुरकूं मारत भयो ॥ २२ ॥ यातें धुंधुमार नाम होत भयो, ता कुवलयाश्वके बेटा धुंधुके मुखकी अग्नि करिकै सगरे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जरिगये तीनि बाकी रहिगये ॥ २३ ॥ दृढाश्व, कपिलाश्व, भद्राश्व; दृढाश्वको पुत्र हर्यश्व भयो ताके निकुंभ भयो ॥ २४ ॥ ताकें बर्हिणाश्व भयो ताकें कृशाश्व; ताकें सेनजित ताकें युवनाश्व भयो सो अपुत्र हो याते दुःखित व्हैकें सौ रानीनको संग लेकें वनमें गयो ॥ २५ ॥ तब याकें पुत्रके लियें कृपालु ऋषि अच्छी तरह सावधान हैकें इंद्रकी इष्टि करते भये ॥ २६ ॥ राजा रातिमें प्यासके मारे जल ढूंढिवेको यज्ञके स्थानमें प्रविष्ट भयो, सो ब्राह्मणनको सोवत देखिकें स्त्रीके पीनेकों मंत्रित जल आपु पी गयो ॥ २७ ॥ मुनि जब उठे तब कलश खाली देख पूंछत भये कि कौनको यह कर्म है पुत्रको उपजावनवारो जल कोनने पीलियो है ॥ २८ ॥ ईश्वरको प्रेर्‌यो राजा तानें पियो जानि करिकें ईश्वरके अर्थ नमस्कार करत भये, अहो ईश्वरको बलही मुख्य बल है, पुरुषको कछु नहीं ॥ २९ ॥ ता पीछें समय प्राप्ति भये संतें युवनाश्वकी दाहिनी कूंखि फारिकें चक्रवर्ती पुत्र होत भयो ॥ ३० ॥ यह बालक कहा पीवेगो कोनकू धाय बनावेगो स्तन्यके लिये रोवे है, ऐसे ब्राह्मणनने कही तब इंद्र बोल्यो मोहिं पीवेगो, अर्थात् मोकू धाय बनावेगो हे पुत्र ! रोवे मती ऐसें कहिकें अपनी तर्जनी अंगुरिया ताके मुखमें देत भयो ॥ ३१ ॥ विप्र देवतानकी कृपातें ताको पिता मर्‌यो नहीं, युवनाश्वहू तबही तप करिकें सिद्धिको प्राप्तभयो ॥ ३२ ॥ अब मांधाताकी महिमाको कहे हैं, हे राजेन्द्र ! इंद्रने वाको नाम त्रसद्दस्यु धर्‌यो वो मांधाता बडो प्रतापी भयो, जाते चोर रावणादिक कांपते और भयभीत रहते हे ॥ ३३ ॥ युवनाश्वको बेटा चक्रवर्ती मांधाता सातों द्वीपन सहित पृथ्वीकों हरिके तेज करिकें एकही पालन करत भयो ॥ ३४ ॥ आत्माको जाननवारो मांधाता बहुत दक्षिणायुक्त यज्ञनकरिकें सर्व देवमय सर्वात्मा इंद्रीनकरिकें न दीखनवारे विष्णुको पूजत भयो ॥ ३५ ॥ द्रव्य, मंत्र, विधि, यज्ञ, यजमान, ऋत्विज, धर्म, देश, काल यह सब तदात्मक हैं ॥ ३६ ॥ जहांताईं सूर्य उदय होय हैं जहांताईं अस्त होयहैं सो सब युवनाश्वके पुत्र मांधाताको क्षेत्र कहैं हैं ॥ ३७ ॥ वो मांधाता शशाबिंदुकी बेटी बिंदुमतीमें पुरुकुत्स अंबरीष योगी मुचुकुंद ये तीन पुत्र उपजावत भयो ॥ ३८ ॥ तिनकें पचास बहनि भईं ते सौभरी ऋषिको व्याहती भईं ॥ ३९ ॥ कदाचित् राजा प्रश्न करे कि हे महाराज ! महातपस्वीको कैसें विवाह भयो, और अंत्यत जर्जरीभूत देह बूढेको वो मांधाताकी बेटी कैसें वरत भई तहां कहे है हे राजन् ! यमुनाजीके भीतर बैठिकै बडो तप करते हे मैथुनधर्मी मत्स्यराज मत्स्यको सुख देखिकें सौभरीऋषिकें व्याह करवेकी चाहना भई, तब मांधातासूं एक कन्या मांगतभयो कि हे राजन् ! हम व्याह करौ चाहे है तू हमें एक कन्या दे ॥ ४० ॥ सो मांधाता बोलो हे ब्रह्मन् ! स्वयंवरमें जो कन्या तुम्हें वरे ताइ यथेच्छ ग्रहण करो ॥ ४१ ॥ तब सौभरी ऋषि जानगये कि स्त्रीनको कुप्यारो मेरो रूप है, वृद्ध और सुपेद वार हलती नार जानके या राजाने मोको ढकी नाहीं करीहै, याते अब में ऐसो रूप करोंगो जो देवतानकी स्त्रीनको वांछित होई, राजानकी स्त्रीनको वांछित होई, यामें कहा कहनो हैं, ऐसें विचार सोई करत भये ॥ ४२ ॥ द्वारपालकने मुनिको कन्यानके अंतःपुरमें प्रवेश करायो, पचास कन्याननें कही कि इनेही वर हम करेंगी ॥ ४३ ॥ ता सौभरी ऋषिके अर्थ तिन कन्यानमें बडो कलेश होतभयो, सौहृदको छोडिकै यह मेरे अनुरूप हैं तेरे नहीं है ऐसें लरतिभईं, तितहींमें चित्तकर सौभरी ऋषि बोले कि तुम क्यों लडो हो, तब सब बोली कि तुम्हारे हेत हम लडे हैं, तब ऋषि बोलें

१ स्तननमें भये दूधके लिये ॥ २ मां धाता मोहि पीयोगो याकी धाय में बनोगो ये जो इन्द्रने कही याहीसो या राजाको नाम मांधाता भयो है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आवो तुम सब चली आवो, ऐसें पचासनहूसा विवाह करतभये ॥ ४४ ॥ सो सौभरी ऋषि ऋग्वेदके पढनवारे अपार तपकी समृद्धिकारिकें बहुमोल्य सामग्रीयुक्त नानाप्रकारके उपवन निर्मल जल सुगंधके कमल ॥ ४५ ॥ बहुमोल्य शय्या आसन भूषण वस्त्र स्नान चंदन भोजन मालासें युक्त अलंकृत स्त्री पुरुषोंके सुन्दर गानसें मनोहर पक्षी भौंरा बंदीजन युक्त घरनमें तिन कन्यानकरिकें सहित रमण करतभये ॥ ४६ ॥ तब एक दिन मांधाता राजा बेटीनकी खबरके लिये गये कि मेरी बेटी कैसें है खबर तो लेउ सो सप्तद्वीपवती पृथ्वीको पति मांधाता सौभरीको गृहस्थाश्रम देखिकें विस्मित हेकें चक्रवर्ती संपत्तिकारिकें युक्त गर्व त्याग करत भयो ॥ ४७ ॥ ऐसें घरनमें रति मान सौभरीऋषि नानासुखन करिकें विषयनको सेवन करत तृप्त न होत भयो, जैसें अग्नि घीकी बूंदनकरिकें नहीं तृप्त होय है ॥ ४८ ॥ सो मुनि काहू समय बैठो मीनसंगतें उठे रागके कारणतें अपने तपको नाश देख पश्चात्ताप करतभयो सौभरी ऋग्वेदीनके आचार्य हैं ॥ ४९ ॥ अहो तपस्वी सुंदर व्रतयुक्त जो में ता मेरो विनाश देखो जलके भीतर मत्स्यकें प्रसंगतें बहुत कालसूं धारण कियो तप भ्रष्ट होतभयो ॥ ५० ॥ मुक्त ह्वेवेकी इच्छा करनवारो दांपत्य धर्मवारेनके संगको सर्वथा त्याग करें इन्द्रियनको विषयनमें न छोडे, एकही विचरे, एकांतमें रहे ईश्वरमें चित्त लगावे और जो संग करै तौ ईश्वरमें मनवारे साधुनमें प्रसंग करे ॥ ५१ ॥ में जलमें एक समयमें तपस्या करतोहो, सो मत्स्यके संगते पंचास स्त्री होतीभई, फेरि पांच हजार बेटा भये या लोक परलोकके मनोरथके अंतको नहीं प्राप्त होऊहूं मायाके गुणनमें मति हरगई विषयनकोही पुरुषार्थ मानो ॥ ५२ ॥ ऐसें घरमें बसते कोई समय विरक्त व्हैकें संन्यास लेकें संग छोडि वनमें जात भये, पतिदेवता ताकी स्त्री ताकें पीछें जातीभई ॥ ५३ ॥ वनमें देहको सुखायवेवारो तीक्ष्ण तप करिकें अग्निसहित आत्माकों परमात्मामें मिलावत भये ॥ ५४ ॥ हे महाराज ! वे स्त्री अपने पतिकी अध्यात्मकी गति देखिके तत्प्रभाव करिकें पीछेंही जाती भई अर्थात् वे पचास सती हे गई जैसें अग्नि शान्त हेवेपें वाकी ज्वाला वाके संग जाय हैं ॥ ५५ ॥

ताः स्वपत्युर्महाराज निरीक्ष्याध्यात्मिकीं गतिम् ॥
अन्वीयुस्तत्प्रभावेण अग्निं शान्तमिवार्चिषः ॥ ५५ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

श्रीशुक उवाच–मांधातुः पुत्रप्रवरो योऽम्बरीषः प्रकीर्तितः ॥
पितामहेन प्रवृत्तो यौवनाश्वश्च तत्सुतः ॥ १ ॥

सातवें अध्यायमें मांधाताको वंश कहैंगे जा वंशमें पुरुकुत्सको और हरिश्चंद्रराजाको उत्तम आख्यान गायो गयोहै शुकदेवजी कहै हैं हे राजन् ! मांधाताको श्रेष्ठ पुत्र जो अंबरीष हो वो बाबा युवनाश्वने पुत्रभावकरिकें गोद लिये ॥ १ ॥ अंबरीषको बेटा हारीत भयो, सो मांधाताके गोत्रमें प्रवर होतभयो ये तीनौ मांधातृगोत्रके प्रवर भये अर्थात् अवांतर भेद भये पुरुकुत्सके अर्थ सर्पननें जो भैन नर्मदा दीनी ॥ २ ॥ वासुकीकी आज्ञासौं वो नर्मदा अपने पति पुरुकुत्सको रसातलमें लेगई विष्णुशक्तिके धारण करनवारे पुरुकुत्सने वहां वधके योग्य गंधर्वनकौ मारो ॥ ३ ॥ नागनतें वर पायो कि जो कोऊ या चरित्रकों स्मरण करेगो ताको सर्पनते भय नहीं होइगो, पुरुकुत्सको बेटा त्रसदस्यु भयो, ताके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अनरण्य भयो ॥ ४ ॥ ताके हर्यश्व भयो, ताके अरुण ताके निबंधन भयो, ताके सत्यव्रत भयो, सो त्रिशंकुनामसें विख्यात भयो ॥ ५ ॥ वो त्रिशंकु गुरु वसिष्ठके शापते चांडालभावको प्राप्त भयो, गुरु विश्वामित्रकें तेजकरिकै शरीरसहित स्वर्गमें गयो सो अबहू स्वर्गमें दीखैहैं ॥ ६ ॥ देवतानने नीचेको मूंड करिकैं पटक्यो, पर विश्वामित्रनें बलकरिकै वहीं थामिदियो, त्रिशंकुको बेटा हरिश्चंद्र भयो, जाके निमित्त विश्वामित्र और वसिष्ठमें युद्ध होत भयो, विश्वामित्रनें राजसूययज्ञकी दक्षिणाके छलकरिकैं हरिश्चन्द्रराजाको सर्वस्व लेलियो, सो सुनिकैं क्रोध भये वसिष्ठ विश्वामित्रको शाप देतभये तू आडी होउ तब विश्वामित्रने वसिष्ठको शाप दियो तू बगुला हो ऐसे पक्षी व्हैकै बहुत वर्ष लडे ॥ ७ ॥ सो हरिश्चंद्र अपुत्र भया तब बडे विषादसो युक्त भयो तब नारदको उपदेशते वरुणके शरण गयो हे प्रभो ! मेरे जो पुत्र होइगो तो ताही पुत्रकरिकैं तुम्हारी पूजा करूंगो, ऐसे शरण गयो ॥ ८ ॥ वरुणनें कही तेरे पुत्र होउ तब याके रोहित नाम पुत्र भयो ॥ ९ ॥ तब वरुण बोल्यो तेरे बेटा भयो है, राजा या करिकैं मेरी पूजा कर, तब हरिश्चंद्र बोल्यो जब यह पशु दश दिनाको होई तब पवित्र होइगो ॥ १० ॥ दश दिना गये पीछें वरुण आइकैं कहत भयो अब पूजा करि, तब राजा हरिश्चंद्र बोले याकें दांत निकरें जब पवित्र होइगो ॥ ११ ॥ जब दांत भये, तब वरुण बोल्यो अब पूजा कर, तब राजा हरिश्चंद्र बोल्यो भगवन् ! जब याके ये दूधके दांत गिरेंगे तब यह अति पवित्र होइगो ॥ १२ ॥ जब पशुके दांत गिरे तब वरुण बोल्यो पूजा कर, तब राजा बोल्यो या पशुकें फेरि दांत आवेंगे तब पवित्र होइगो ॥ १३ ॥ फेरि दांत जब भये तब वरुण बोल्यो अब पूजा कर तब राजा बोल्यो हे वरुण ! जब कवच बखतर पहरिवेके योग्य होइगो तब यह पशु पवित्र होइगो ॥ १४ ॥ ऐसेई पुत्रमें अनुराग स्नेहकरिकै वशीभूतचित्त राजा ता ता कालकी वंचना करतो रह्यो राजासे छल्यो वरुण ताई २ कालको पैंडो देखत भयो ॥ १५ ॥ रोहितहू मोकरिकै वरुणकी पूजा करैगो यह पिताको कर्म जानिकैं प्राण बचाइवेके लिये धनुष्य हाथमें लैकैं वनमें जातभयो ॥ १६ ॥ तब क्रोध कर वरुणने राजाके जलोदरको रोग करदियो पिताकूं रोगी सुनिकैं रोहित ग्राममें आवन लग्यो तभी इंद्र मनें करतभयो ॥ १७ ॥ तीर्थ क्षेत्रके सेवन करिकैं भूमिमें पुण्य करत डोल ऐसे इंद्र रोहितके अर्थ उपदेश करत भयो, सो रोहित वनमें एक वर्ष वसत भयो ॥ १८ ॥ ऐसेई दूसरे वर्ष तीसरे चौथे पांचवे वर्ष बूढो ब्राह्मण बनिकै इंद्र आइके मने करत भये ॥ १९ ॥ रोहित छठो वर्ष वनमें व्यतीत करिकै अजीगर्तते मध्यम पुत्रको मोल लेकै पुरीमें आवत भयो ॥ २० ॥ शुनःशेप नाम पशु पिताके अर्थ देकैं नमस्कार करत भयो, तब हरिश्चंद्र पुरुषमेध यज्ञ करिकैं वरुणादिक देवताको पूजत भयो ॥ २१ ॥ तब वरुणनें उदर छोड्यो, रोग दूर होतभयो, ता समयमें विश्वामित्र होता भयो, जमदग्नि अध्वर्यु भये ॥ २२ ॥ वसिष्ठ ब्रह्मा होतभये अयास्य मुनि सामग होतभये इंद्र प्रसन्न ह्वैकै हरिश्चंद्र राजाको सोनेको रथ देतभयो ॥ २३ ॥ शुनःशेपको माहात्म्य आगे कहैंगे भार्यासहित राजाको सत्यसार धैर्ययुक्त देखिकैं विश्वामित्र बहुत प्रसन्न होकैं ॥ २४ ॥ ब्रह्मज्ञान देतभये, राजाने वाके प्रभावसो मन पृथ्वीमें धारण कियो, पृथ्वीको जलमें मिलाइ जलको तेजमें तेजको पवनमें ॥ २५ ॥ पवनको आकाशमें, आकाशको अहंकारमें, अहंकारको महत्तत्त्वमें मिलाइकैं तामें ज्ञान कलाको ध्यान करिकैं ताकरिकै

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अज्ञानकूं नाशकरके ॥ २६ ॥ ता ज्ञानकलाको छांडिकै निर्वाणसुखकी संपत्ति करिकैं मुक्तबंधन ह्वैकै अनिर्देश्य अप्रतर्क्य स्वरूपसो स्थित होतभयो ॥ २७ ॥

हित्वा तां स्वेन भावेन निर्वाणसुखसंविदा ॥
अनिर्देश्याप्रतर्क्येण तस्थौ विध्वस्तबन्धनः ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

श्रीशुक उवाच–हरितो रोहितसुतश्चम्पस्तस्माद्विनिर्मिता ॥
चम्पापुरी सुदेवोऽतो विजयो यस्य चात्मजः ॥ १ ॥

आठवें अध्यायमें रोहितको वंश कहैं हैं, जा वंशमें सगर राजा भयो, जाके बेटा कपिलदेवजीके अपराधते जरिगये ॥ शुकदेवजी कहैं हैं रोहितको बेटा हरित भयो, तातें चंप भयो जाने चंपापुरी वसाई ता चंपकतें विजय भयो ॥ १ ॥ ताके भरुक भयो, तातें वृक भयो ताके बाहुक भयो, सो बाहुककी वैरीनने भूमि हरिलीनी, तब भार्यानकों संग लैकैं वनमें प्रवेश करतभयो ॥ २ ॥ वृद्ध ह्वैकैं मृत्युको प्राप्त भयो, तब रानी पीछैं मरन लगी तब और्वऋषिने जाइके गर्भवती जानिकैं मनें करी ॥ ३ ॥ जो कि सौतिननें गर्भ जानिकैं अन्नमें मिलाइकैं विष दियो, सो बालक विषें करिकैं सहित जन्म लेतभयो, याते वाको नाम सगर होत भयो, बडो यशस्वी भयो ॥ ४ ॥ सगर चक्रवर्ती होत भयो जाके बेटानने सागर कियो, जो सगर तालजंघ व म्लेच्छ शक हैहय बरबर ॥ ५ ॥ इनें गुरुके वचनकरिकैं न मारतभयो कितनेनको मारिकैं विकृत वेष करतभयो, कोई तो मुंडित किये कोई डाढीमूछनके धरनवारे किये, कोईएक खुले केश कोई एक अर्द्धमुंडित किये ॥ ६ ॥ कोई एक नहीं भीतर हैं वस्त्र जिनकें ऐसे किये, नहीं बाहिर हैं वस्त्र जिनके ऐसे किये ॥ ७ ॥ सो सगर और्वके उपदेश किये योगसो अश्वमेधन करिकैं सब देवतारूप आत्मा हरिकी पूजा करत भयो. ताके यज्ञमें छोड्यो घोडेको इंद्र हरतभयो ॥ ८ ॥ सुमतीके बेटा पिताकी आज्ञाके करनवारे गर्वयुक्त घोडा ढूंढिवेको गये, चारों ओर शस्त्रनकरिकैं पृथ्वीको खोदतभये ॥ ९ ॥ पूर्व उत्तर दिशाके कोनेमें कपिलदेवजीके निकटमें घोडा देखत भये, यह घोडाको हरनवारे चौर है आंखि मूदिकैं बैठ्यो है ॥ १० ॥ याको मारो मारो ऐसें कहत साठि हजार आयुध लैकैं दौरतभये, ता समय मुनि कपिलदेव आखैं खोलतभये ॥ ११ ॥ इंद्रनें विनको चित्त हरलियोहो बडेनके अपराधसो नष्ट सगरके बेटा अपने शरीरते निकरी अग्निसो क्षणमात्रमें भस्म होत भये ॥ १२ ॥ हे राजन्! सगरके बेटा कपिल देवजीके कोप करिकै जरे यह साधुवाद नहीं है, शुद्धत्व मूर्ति जगत्को पवित्रकारी आत्मा कपिलमें रोषमय तम होनों संभव नहीं जैसे आकाशमें भूमिकी रज होनों संभव नहीं ॥ १३ ॥ जिनने सांख्यमय दृढ नौका रची है, जाकरिकैं मुमुक्षु पुरुष दुरत्यय मृत्युको मार्ग संसार समुद्रको तरैं सो सर्वज्ञ सबनके आत्माके वैरी मित्र यह भेद दृष्टि कैसे है सके हैं ॥ १४ ॥ सगरकी दूसरी रानी केशनीके असमंजस भयो असमंजसके अंशुमान भयो जो सगरके हितमें सदा रहतो हो ॥ १५ ॥ असमंजस आत्माकूं दिखावे है याते असमंजस है, वह पहिले जन्ममें योगी हो संगते भ्रष्ट ह्वै गयो अब पहिलो स्मरण कर संग दूरि करिवेके लिये ॥ १६ ॥ प्राणीनकों उद्वेग देतो लोकनमें निंदित ज्ञातिनको विप्रिय कर्म आचरण करतो खेलते बालकनको लेकरिकैं सरयूमें फेंकत भयो ॥ १७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ऐसो आचरण देख स्नेह त्यागके असमंजसकों पितानें त्याग कियो तब योगैश्वर्य्य करिकै जे बालक डुबाये तिनें दिखाइके जातभयो ॥ १८ ॥ सगरे अयोध्यावासी फेरि आये बालकनको देखिकै विस्मयको प्राप्तभये, राजा दुःखको प्राप्त भयो ॥ १९ ॥ घोडा ढूंढिवेके लियें प्रेरचो अंशुमान काकानके खोदे गढेलाके मार्गसो जात भयो, भस्मके समीपमें घोडा देखत भयो ॥ २० ॥ तहां बैठे कपिलमुनि भगवान्‌को देखिकैं सावधान मन ह्वैके हाथ जोरिकै नम्र ह्वैकैं स्तुति करत भयो ॥ २१ ॥ अंशुमान बोले ब्रह्माहू समाधिकी युक्ति करिकैं आपुतें परे परमेश्वर तुमको अबतकहू नहीं देखें हैं, और कहांतें तुमको देखेंगे, जे ब्रह्माके मन शरीर बुद्धि करिकैं नानासर्गमें सृजे हैं तिनमें मूर्ख हम कहांते देखेंगे ॥ २२ ॥ जे प्राणी बुद्धि परतन्त्र और बाहरके ज्ञानवारे हैं वे तुम्हारी मायासो मोहित हो जाग्रत स्वप्नावस्थामें केवल विषयनकोही देखते हैं सुषुप्तिमें विन्हे अज्ञान रहे है परन्तु अपने स्वरूपमें विराजमान आपको वे नहीं जाने है ॥ २३ ॥ स्वभावसो मायागुणनिमित्तके भेद, तथा मोहके नाश करनवारे सनंदनादिक मुनि जिनको ध्यान करै हैं ऐसे शुद्ध ज्ञानमूर्ति तुमको मैं मूर्ख कैसें विचार करसकै हैं ॥ २४ ॥ हे प्रशांत ! आप मायाके गुण और कर्मनसो जानने योग्य नाम रूपरहित पुण्य पापसो हीन हो आप ज्ञानके उपदेशके लियें देह धारनवारे पुराणपुरुष तुमकूं हम नमस्कार करैं है ॥ २५ ॥ तुम्हारी मायाकरिकैं रचे लोकमें काम लोभ ईर्षा मोहसो भ्रांत चित्त प्राणी घर आदिकनमें तत्व बुद्धि करकै भ्रमते रहते हैं ॥ २६ ॥ हे सर्वभूतात्मन् हे सब प्राणीनके आत्मा हे भगवन् ! काम कर्म इंद्रियके आश्रय दृढ हमारो मोहपाश तुम्हारे दर्शनतें कटिगयो ॥ २७ ॥ अब श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित्‌सों कहे हैं, हे राजन् ! विख्यात प्रभाव भगवान् कपिलमुनि बुद्धिकरिकैं अंशुमानपै अनुग्रहकरि यह बोलत भये ॥ २८ ॥ हे बेटा ! यह घोडा लेजा तेरो दादा सगरको है, जे तेरे पितर जरे हैं वे गंगाजलके योग्य हैं और जलके योग्य नहीं वासों तरैंगे ॥ २९ ॥ अंशुमान कपिलदेवजीकी परिक्रमा देकैं शिरसो प्रसन्न करिकै घोडा ले आवत भये, सगर ता घोडा करिकै यज्ञको शेष समाप्त करत भयो ॥ ३० ॥ मुक्तबंधन निःस्पृह सगर अंशुमानको राज्य देकैं और्वऋषिके उपदेश किये मार्गसो उत्तम गतिकूं प्राप्त भये ॥ ३१ ॥

राज्यमंशुमति न्यस्य निःस्पृहो मुक्तबन्धनः ॥
और्वोपदिष्टमार्गेण लेभे गतिमनुत्तमाम् ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

श्रीशुक उवाच–अंशुमांश्च तपस्तेपे गङ्गानयनकाम्यया ॥
कालं महान्तं नाशक्नोत् ततः कालेन संस्थितः ॥ १ ॥

अब नौवें अध्यायमें अंशुमानको वंश खट्वांग राजा ताई वर्णन करे हैं, जाको नाती भगीरथ भूतलमें गंगा लावतभयो ॥ शुकदेवजी कहे हैं अंशुमान गंगा लाइवेके लिये बहुत वर्षताईं तप करत भयो, परि गंगाके लाइवेको समर्थ न भयो काल करिकै मरयो ॥ १ ॥ तैसेंई वाको बेटा दिलीप असमर्थ भयो कालकों प्राप्त भयो, ताको पुत्र भगीरथ भयो, सो बडो तप करत भयो ॥ २ ॥ ता भगीरथ प्रति देवी गंगा प्रसन्न ह्वैके दर्शन देति भई तू वर मांग ऐसे गंगानें कह्यो तब राजा भगीरथ अपनो अभिप्राय कहत भये ॥ ३ ॥ तब गंगा बोली आकाशते मेरे वेगको पृथ्वीतलमें कौन धारण करेगो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अन्यथा हे राजन् ! भूतलकों फोरिकै रसातलको जाऊंगी ॥ ४ ॥ और मैं भूमिमें न जाऊंगी पापी लोक मोमें पाप धोमेंगे ता पापको मैं कैसें धोऊंगी तामें उपाई विचारो ॥ ५ ॥ तब भगीरथ बोले सर्व त्यागके करनवारे शांत ब्रह्मनिष्ठ लोकनकौ पवित्र करनवारे साधु अंगसंगतें तेरो पापताप हरेंगे, तिन साधुनमें पापके नाश करनवारे हरि हैं ॥ ६ ॥ शरीरधारिनके आत्मा रुद्र तेरे वेगको धारण करेंगे जिनमें विश्व ओतप्रोत है, जैसे तंतुनमें वस्त्र ओतप्रोत है ॥ ७ ॥ ऐसें कहिके राजा भगीरथ तप करिकै महादेवको प्रसन्न करत भयो ता भगीरथपै थोरेई कालमें शिवजी प्रसन्न होत भये ॥ ८ ॥ राजाने कह्यो ताई अंगीकार करिकैं सब लोकनके हितकारी शिवजी सावधान ह्वैकै हरिके चरण करिकै पवित्र जल श्रीगंगाजीको माथेपै धारण करत भये ॥ ९ ॥ राजऋषि भगीरथ भुवनपावनी गंगाकूं लावत भयो जहां पितरनके देह भस्म भये परे है ॥ १० ॥ पवनकेसे वेगवारे रथपैं जाते भये भगीरथके पीछे दौरी जाति गंगा देशनको पवित्र करती जरे भये सगरके बेटानको सींचति भई ॥ ११ ॥ जा गंगाजलके स्पर्शमात्रसों ब्रह्ममें अपराध करनवारे मरे सगरके बेटा केवल देहकी भस्म करिकेई स्वर्गको जात भये ॥ १२ ॥ भस्मीभूत अंगके संग करिकैं सगरके बेटा स्वर्गको गये, जे कोऊ श्रद्धाकरि व्रत धारण करिकैं श्रीगंगादेवीको सेवन करैं हैं ते स्वर्गको जाई तौ यामें कहा कहनो है ॥ १३ ॥ गंगाजीके माहात्म्यमें यह आश्चर्य नहीं है क्योंकि यह गंगा विन हरिके चरणारविंदते भई है हरि साक्षात् संसारके काटनवारे हैं ॥ १४ ॥ जिन भगवान्में श्रद्धाकरिकै मन प्रवेश करिकैं निर्मल मुनि दुस्त्यज देहसम्बन्ध छोडिकै तत्काल तिनके रूपको प्राप्त होत भये ॥ १५ ॥ भगीरथते श्रुत होत भयो ताके दूसरे नाम होत भयो, ताके सिंधुद्वीप होत भयो, तातें अयुतायु भयो ॥ १६ ॥ ताकें नलको सखा ऋतुपर्ण भयो, जो नलते घोडानकी विद्या सीखत भयो, नलके अर्थ चौपरि खेलिवेकी विद्या देतभयो, ता ऋतुपर्णको बेटा सर्वकाम भयो ॥ १७ ॥ ताते सुदास भयो, हे राजन् ! ताको बेटा सौदास भयो, सो मदयंतीको पति है, जाको मित्रसह कहें हैं, कोउ एक वाकूं कल्माषांघ्रि कहैहैं, वसिष्ठके शापतें राक्षस होत भयो, अपनें कर्म करिकैं अपुत्र भयो ॥ १८ ॥ राजा पूंछे हैं हे महाराज श्रीशुकदेवजी ! महात्मा सौदासको कौन निमित्त गुरुको शाप भयो यह हम जानिवेकी इच्छा करैं हैं जो रहस्य न होई तौ कहो ॥ १९ ॥ शुकदेवजी कहैं हैं सौदास शिकार खेलत कोई एक राक्षसको मारतभयो, ताके भैयाको पकरिकै छोडि देतभयो सो भैया राजासूं अपने भैयाको पलटो लेवेकी इच्छा करिकें गयो ॥ २० ॥ सो राजाके बुरे करिवेके लिये रसोईयाको रूप धरिकै घरमें रहतभयो, एक समय भोजनकी इच्छा करनवारे गुरुके अर्थ मनुष्यको मांस पकाइकै लावत भयो ॥ २१ ॥ खाईवेके अयोग्य वह मनुष्यमांस परोस्यो देखिकैं क्रोधकर वशिष्ठ राजाको शाप देतभये, तू मनुष्यमांस खवावे है यातें राक्षस होईगो ॥ २२ ॥ फिर वह कर्म राक्षसको किया जानिकै ता शापकों बारह वर्षकों करतभयो सोऊ राजा हाथमें जल लैकैं गुरुकूं शाप देवेको उद्यत होत भयो ॥ २३ ॥ तब मदयंती रानीनें मने कियो शापको जल अपनें पायनमें डारतभयो दिशा आकाश पृथ्वी सब जीवमय है यातें और ठौर न डारचो वा जलके गिरवैसौ वाके पैर काले होगये ॥ २४ ॥ राक्षसभावको प्राप्त भयो और चरणनमें कल्माषताकू प्राप्त भयो, एक समय मैथुनके समयमें वनमें वसे ब्राह्मण ब्राह्मणीको देखतभयो ॥ २५ ॥ भूखो राजा ब्राह्मणको पकरि लेत भयो ब्राह्मणी दीन ह्वैकैं बोलतिभई ॥ २६ ॥ तुम राक्षस नहीं हो, साक्षात् इक्ष्वाकुकुलमें महारथी हो, मदयंतीके पति हो हे वीर ! अधर्म करिवेको योग्य नहीं हो, पुत्रकी इच्छासो मेरी रति समाप्त नहीं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भई, सो तुम मेरे पति ब्राह्मणको देउ ॥ २७ ॥ हे वीर हे राजन् ! यह मनुष्यदेह पुरुषके सब अर्थको देनवारो है तातें याको वध सर्वार्थको वध करनो है ॥ २८ ॥ यह ब्राह्मण विद्वान् है तपशील गुणयुक्त है महा पुरुष ब्रह्मके आराधन करिवेकी इच्छा करै है जो ब्राह्मण सगरे प्राणीनमें आत्म-भाव करिकै गुणकरके अंतर्हित है ॥ २९ ॥ सो यह ब्रह्मऋषिमें श्रेष्ठ राजऋषिमें उत्तम तुमसो कैसें वधकूं योग्य है हे धर्मज्ञ ! जैसे पुत्र पिताके वध करिवेको योग्य नहीं होय है ऐसे यह वधयोग्य नहीं है ॥ ३० ॥ सो या साधु निष्पाप तीनि वेदनके वक्ताके वधको आप कैसे संमत मानें हैं, जैसे गायके वधको संभव नहीं हो सकै है ॥ ३१ ॥ जो याके भक्षण करोहो तौ पहिले मोकूं खाइलेय मेरे प्राणको प्यारो है या विना मैं एक क्षण नहीं जीऊंगी ॥ ३२ ॥ ऐसे करुणामय वचन कहती अनाथसी विलाप करतीको देखते शापसूं मोहित सौदास वाकू खाइजात भयो जैसे वाघ पशुको खाइ जाइहै ॥ ३३ ॥ ब्राह्मणी गर्भाधानके करनवारे पतिकूं राक्षससो भक्षण कियो देखिके अपनो सोच करते क्रोध करिकै राजाको शाप देतिभई ॥ ३४ ॥ हे पापी ! कामकरिके आर्त मेरो पति तैंने खाइ लियो या कारण हे मूर्ख ! स्त्रीप्रसंग करतेही तेरी मृत्यु होयगी ॥ ३५ ॥ ऐसे मित्रसहको शाप देकै पतिलोक आश्रयवती ब्राह्मणी ब्राह्मणकी अस्थि एकट्ठि कर जराई अग्निमें डारिकै भर्ताकी गतिकूं प्राप्तभई ॥ ३६ ॥ बारह वर्ष पीछे गतशाप राजा मैथुन करवेको उद्यतभयो, तब रानीनें ब्राह्मणीको शाप जानिकै मनें कियो ॥ ३७ ॥ तातें पीछें राजा स्त्रीसुखको त्याग करतभयो ऐसे कर्म करिकैं अपुत्र भयो, तब राजासों आज्ञा दिये वसिष्ठ मदयंतीमें गर्भ राखतभये ॥ ३८ ॥ सो राणी सातवर्ष तांई गर्भको धारण करती भई, बालक नहीं भयो तब वसिष्ठजी रानीके उदरको पत्थरसो मारतभयो, तब लरिका भयो, सो अश्मक नाम कहायो ॥ ३९ ॥ अश्मकके मूलक होत भयो, जो स्त्रीननें दबकाइकें रक्षा कियो यातें नारीकवच नाम होतभयो, निक्षत्री पृथ्वीमें क्षत्रीनको मूल भयो यातें मूलक कह्यो ॥ ४० ॥ ताते दशरथ भयो, तातें ऐडविड पुत्र भयो, ताकें राजा विश्वसह भयो, जाके चक्रवर्ती खट्वांग भयो ॥ ४१ ॥ जो खट्वांग देवतानकी प्रार्थनासों दैत्यनको मारत भयो, युद्धमें दुर्जय भयो, दो घडी अपनी आयु जानिके पुरमें आईकैं परमेश्वरमें मन धारण करतभयो ॥ ४२ ॥ राजानें विचारो कि मोको कुलदेव ब्राह्मणतें अपने प्राण प्यारे नहीं, पुत्र प्यारे नहीं संपत्ति पृथ्वी राज्य स्त्री ये प्यारी नहीं ॥ ४३ ॥ बालक अवस्थामेंहू अधर्ममें मेरी मति कबहूं नहीं भई हैं, उत्तम यश हरि परें और कछु वस्तु नहीं देखौहूं ॥ ४४ ॥ त्रिलोकीके ईश्वर देवतनने मोको काम-वर देवेको कही पर मेरो मन वरदानकी इच्छा नहीं करैं कारण कि मेरे मनमें नारायणको प्रेम जागेहै ॥ ४५ ॥ विक्षिप्त इंद्रिय बुद्धिवारे देवता अपनें हृदयमें स्थित प्यारे आत्मा हरिकूं नहीं जानेहैं, और कहांते जानेगो ॥ ४६ ॥ ईश्वरकी मायाके रचे गंधर्वपुरकीसी उपमावारे विषयनमें स्वभावकरिकैं बढते संगको ईश्वरके भावकरिकैं छोडिकैं परमेश्वरके शरण प्राप्त होऊंगो ॥ ४७ ॥ ऐसे नारायणमें बुद्धि लगाय निश्चयकर खट्वांगराजा देहादिकमें अभिमानरूप अज्ञान छोडिकैं अपने

---

१ जब खट्वांगराजाने देवशत्रुनको सबनको नाश कियो तब देवता प्रसन्न भये राजासो बोले कि हे राजन् ! तुमने बडो काम कीन्हो तुमे कहा चाहिये जो चाहिये सोई मांगलेउ राजाने कही कि पहले यह कहो कि मेरी आयु कितनी और है यह बताओ तब और कछु वर मांगोगो तब विचारके देवतानने उत्तर दियो कि राजन् ! आयुष तौ तुमारी दो घडी मात्रही बाकी है तब तो राजाने कही कि जब आयुही समाप्त भई तब फिर वरदान और कहा मांगौं अब येही वरदान देउ कि इन दो घडीनमेंसौ न घटन पावै मोकू जलदी कर्मभूमिमें पहुँचाय देउ मनुष्यलोकमें आये और ये विचार कियो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भावको आश्रित होतभयो ॥ ४८ ॥ जा स्वरूपकों भक्तजन वासुदेव नामसो पुकारें हैं वह रूप परम सूक्ष्म और शून्य न होइ तोहू शून्यके समान प्रतीत होयहै जाय ब्रह्म कहें हैं वाकू प्राप्त भयो ॥४९॥

यत्तद्ब्रह्म परं सूक्ष्ममशून्यं शून्यकल्पितम् ॥
भगवान्वासुदेवेति यं गृणन्ति हि सात्वताः ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

श्रीशुक उवाच-खट्वाङ्गाद्दीर्घबाहुश्च रघुस्तस्मात्पृथुश्रवाः ॥
अजस्ततो महाराज तस्माद्दशरथोऽभवत् ॥ १ ॥

दशवें अध्यायमें खट्वांगके वंशमें श्रीरामचंद्रजीको जन्म और रावण मारिके अयोध्यामें आये तहां ताई चरित्र कहें है ॥ श्रीशुकदेवजी कहें हैं खट्वांगते दीर्घबाहु भयो, तातें बडो भारी जाको यश ऐसो रघु भयो, तातें अज भयो तातें हे महाराज ! दशरथ होतभये ॥ १ ॥ देवतानकी प्रार्थना करैसों तिन दशरथके साक्षात् ब्रह्ममय हरिसों अंशांशकरिकैं चारि भागकरके ४ पुत्र होत भये राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न जिनके नाम भये ॥ २ ॥ तिनको चरित्र ऋषि वाल्मीकादिकनने बहुत वर्णन कियो हैं, जो तैंने बेर बेर सुन्यो तोऊ संक्षेपते कहौंहौ ताइ सुनो ॥ ३ ॥ दशरथके अर्थ राज्य छोड सीताजीके हाथके स्पर्शको नहीं सहारनवारे कमलसे कोमल चरणनसो जो श्रीराम वनवनमें डोलतभये हनूमान् लक्ष्मणने जिनके मार्गको श्रम दूर कियो विरूपकरी शूर्पणखाके हेतुसो लोभित भये रावणके द्वारा हरी सीताके विरहसो क्रोध करिकैं भ्रुकुटी चढायके सागरको डरपाय वापें सेतु बांध, दुष्ट रावणरूपी वनके जरावनवारे अयोध्याके राजा हमारी रक्षा करे ॥ ४ ॥ ऐसे संक्षेपसो एक श्लोकमें रामचरित्र कहिके अब दो अध्यायमें विस्तारपूर्वक कहे हैं, जिन श्रीरामचंद्रने विश्वामित्रके यज्ञमें मारीचतें आदि लेके राक्षस लक्ष्मणके देखते मारे ॥ ५ ॥ जो राम लोकके वीरनके समाजमें सीताके स्वयंवर घरमें धरचो जाकू तीनसों मनुष्य उठाइके लाये बडो कठोर जो महादेवको धनुष वाकौ देख बालक हाथीकी समान लीला करकै ईखकी लठियाकीसी नाईं उठाइकैं चढाइकै खैंचिकैं जिनने तोर डारो वे कोशलेंद्र श्रीराम हमारी रक्षा करौ ॥ ६ ॥ अपने अनुरूप गुण शील वय अंगरूप युक्त जानकी जो कि अपने वक्षस्थलमें रहकें सन्मान कीनी गई लक्ष्मीको अवतारही वाको विवाह करके जब चले तब धनुषको भंग सुनिकैं क्रोध भए परशुरामको बडो गर्वनाश करत भये जिन परशुरामनें इक्कीस वेर राजानके बीजकरिकै शून्य पृथ्वी कर दीनीही ॥ ७ ॥ सत्यपाशकरिकैं बंधे, कैकेईके आधीन पिताकी आज्ञा शिरपै ग्रहण कर राज्य, संपत्ति, प्यारे, सुहृद, घर छोडिकैं सीतासहित वनको जातभये, जैसें मुक्तसंग योगी अपनें प्राणनकूं छोडिकै जाइहै ॥ ८ ॥ रावणकी बहिनी अशुद्धबुद्धिके कान नाक काटिके विरूप करतभये शूर्पणखाके बंधु खर त्रिशिरा दूषणादि चौदह हजार राक्षसनको मारतभये, अपारणीय धनुष हाथमें ले वनमें डोलते कष्टकरिकैं वसतभये ॥ ९ ॥ सीताकी कथा सुन कामातुर रावणके पठाये अद्भुत हरिणको रूप धरवेवारे और आश्रमतें अपनेको दूरि ले जानेवारे मारीचकूं एक विशिख बाण करके रामचंद्र मारतभये जैसें महादेव दक्षकूं मारतभये ॥१०॥ राक्षसनमें नीच रावणनें ल्यारीकीसी नाईं सूनेमें विदेह राजाकी बेटी सीता हरी, तब भैया सहित वनमें कृपणकी समान प्यारीसो वियुक्त स्त्रीसंगीनको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दुःखकी गति विख्यात करते डोलत भये ॥ ११ ॥ अपने लिये रावणसूं युद्ध करिकैं मरे जटायुकूं पुत्र जैसे पिताको दाह करे तैसें जराईकैं, आगें अपने पकरिवेकों हाथ फैलाये आये राक्षस कबंधकूं मारत भयो, फेरि सुग्रीवसूं मित्रता करिकैं वालिको मारिकैं, बंदरानसो सीताजीकी गति जानिकैं बंदरनकी सेना संग लेकें लक्ष्मण सहित समुद्रके तीर आवतभये, जिनके चरणनको ब्रह्मा महादेव पूजे हैं ॥ १२ ॥ तहां तीनि राति उपवास करिकैं पैडो देख्यो तोऊ समुद्र जब न आयो, तब रामचंद्रके क्रोधकी लीला करिकैं चलाये कटाक्षसों संभ्रांत ग्राह, मकर भयके मारें निश्शब्द हो समुद्र मनुष्यरूप धरिकैं पूजाको पात्र शिरपै धरिकैं चरणनमें गिरिकैं यह कहत भयो ॥ १३ ॥ हे भूमन् ! जडबुद्धिवारे हम निर्विकार आदिपुरुष जगत्के ईश्वर तुम्हें नहीं जानें हैं, यातें सतोगुणतें देवतानके गण होय हैं, रजोगुणतें प्रजापति होयहै, क्रोधतें भूतपति होय हैं, सो तुम गुणनके ईश्वर हो ॥ १४ ॥ तुम यथेच्छ जाउ, विश्रवाको विष्ठातुल्य त्रिलोकीके रुवावनवारे रावणको मारो सीताको प्राप्त होउ, हे वीर ! तुमकों जल रोकनवारो नहीं है, तोऊ यशविस्तार करिवेके लिये यहां सेतु बांधो जा सेतुपै आइकैं राजा तुम्हारे यशको गावेंगे, यह कहिके समुद्र श्रीरघुनाथते बिदा होत भयो ॥ १५ ॥ रघुनाथ बंदरानके इंद्रनके हाथनसों कंपित वृक्षनके शिखरवारे अनेक पर्वतनके शिखरनसों सेतु बांधिकै, सुग्रीव नील हनुमानादि सेनासहित लंकामें प्रवेश करत भये, जो लंका आगेही बिभीषणकी दृष्टिसों जर गईही ॥ १६ ॥ वानरेन्द्रनकी सेनासों विहार, कोठे, खजाने, द्वार, पुरके द्वार, सभा, गोख, छज्जानके रुकनेसों और स्थान ध्वजा सोनेनके कलश चौहटी टूटनेसो लंका घूमति भई, जैसें हाथी करिकैं सरोवर घूमें हैं ॥ १७ ॥ राक्षसनको पति रावण ऐसी लंका देखिके निकुम्भ कुंभ धूम्राक्ष दुर्मुख सुरांतक नरांतक इंद्रजीत प्रहस्त अतिकाय विकंपनतें आदि लेकें और राक्षस पठावत भयो तापीछे कुंभकर्णकूं भेजत भयो ॥ १८ ॥ खड्ग त्रिशूल धनुष प्रास ऋष्टि शक्ति बाण तोमर खड्गसों दुर्ग राक्षसनकी सेनाके सन्मुख सुग्रीव लक्ष्मण हनूमान् गंधमादन नील अंगद जांबवान् पनस इन सहित रामचंद्र जात भये ॥ १९ ॥ हे राजन् ! रघुनाथकी सेनाके पालक अंगदादिक सगरे रावणके हाथी घोडा प्यादे रथनसों सेनामें द्वंद्व होंकें वृक्ष, पर्वत, गदा, बाण करिकैं सीताके अभिमर्ष करिकैं नष्टमंगल रावणके राक्षसनको मारत भये ॥ २० ॥ रावण अपनी सेनाको नाश देखिकै क्रोधकर पुष्पकविमानपै बैठिकै श्रीरामचंद्र महाराजके सन्मुख आवत भयो, मातली सारथीके लाये प्रकाशित इंद्रके रथमें विराजे श्रीरामचंद्रजीपर तीक्ष्ण बाणनसों प्रहार करत भयो ॥ २१ ॥ श्रीरामचंद्र रावणसूं बोले हे राक्षसनके विष्ठातुल्य! तैंने मेरे पीछें हमारी कांता हरि लीनी, जैसे सूनें घरमें जाइकें कुत्ता कछु ले भजे, तातें निंदित कर्मके करनवारे तोकूं आज कालसों अलंघ्यपराक्रम में फल देउंगो ॥ २२ ॥ ऐसे तिरस्कार करि राम धनुषमें बाण लगाइकै

---

१ सवैया—दीन मलीन अधीन है अंगविहंग परयो क्षिति खिन्न दुखारी । राघव दीनदयाल कृपालको देख दुखी करुणा भइ भारी ॥ गीधको गोदमें राखि कृपानिधि नैनसरोजनमें भरि वारी । बारहि बार सुधारत पंख जटायुकी धूरि जटानसो झारी ॥ २ जटायुने रामचंद्रजीसो कही श्लोक—न मैत्री निर्व्यूढा दशरथनृपे राज्यविषया न वैदेही त्राता हठहरणतो राक्षसपतेः । न रामस्यास्येंदुर्नयनपथगोभूत्सुकृतिनो जटायोर्जन्मेदं विफलमभवद्भाग्यरहितम् ॥ १ ॥ न तो मैंने दशरथकी मित्रता पूरी और न रावणके हठ हरणसो जानकी बचाई और न सुकृती रामचंद्रको मुखही अच्छी तरह इन आंखिनसो देखौ हाय जटायुको मेरो जन्म योंही गयो ॥ ३ सीताकपींद्रक्षणदाचराणां राजीवहेमज्वलनोपमानि ॥ सुग्रीवरामप्रणयप्रसंगे वामानि नेत्राणि समस्फुरंति ॥ १ ॥ सुग्रीवकी रामचंद्रकी मित्रता करवेके समय सीताजी वाली और रावणके शुभाशुभ वामनेत्र फडके ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

छोडत भए, सो बाणवज्र रावणके हृदयको वेधत भयो, सो रावण दश मुखनकरिकै लोहको डारत विमानतें गिरत भयो, तासमें लोक हाहाकार करत भये, क्षीणपुण्य सुकृती जैसें स्वर्गते गिरे तैसें गिरयो ॥ २३ ॥ ताके अनंतर हजारन राक्षसी मंदोदरी करिकै सहित लंकासों निकरिकै रोवत ता स्थानमें आवती भई ॥ २४ ॥ लक्ष्मणजीके बाणन करिकै मारे अपने अपने बंधुनसो मिलिकै बडे स्वरसूं रोवत भई हाथनसूं माथेकू पीटन लगीं ॥ २५ ॥ हे नाथ हे लोकनके रुवावनवारे हे रावण ! हम मरी वैरीननें मारी तुम करिकै हीन यह लंका अब कौनके शरण जायगी ॥ २६ ॥ हे महाभाग ! तुम कामके वश भये, सीताके तेजको प्रभाव न जान्यो, तानें या दशाको प्राप्त किये ॥ २७ ॥ हे कुलनंदन ! यह लंका और हम विधवा कीनी देह गीधनको अन्न कियो, आत्मा नरक भोगिवेके लिये कियो ॥२८॥ शुकदेवजी कहे हैं अयोध्याके राजा रामचंद्रसों प्रेरयो बिभीषण पितृश्राद्धविधि करिकै अपनेनकी परलोककी क्रिया करत भयो ॥ २९ ॥ तापीछै भगवान् अशोकवनमें आश्रममें शीसोंके वृक्षके नीचे बैठी विरहके दुःखसे सूखिरही सीताको देखत भये ॥ ३० ॥ रामचन्द्र दीन अतिप्यारी अपनी भार्याकू देखिके अनुकंपा करत भये. अपने दर्शनके आनंदसो प्रसन्नमुखकमल सीताकों ॥ ३१ ॥ पुष्पक विमानमें बैठारिके लक्ष्मण सुग्रीव सहित हनुमान्करिकै युक्त आप चढत भये, भगवान् बिभीषणके अर्थ राक्षसनको राज्य ॥ ३२ ॥ लंका और कल्पताई आयु देकैं वनवासकी अवधि पूर्ण हैवेसो श्रीरामचंद्रजी अपनी पुरीको आवते भये, तब लोकपालनने मार्गमें फूलनकी वर्षा करी ॥ ३३ ॥ ब्रह्मादिक आनंद करके विनको चरित्र गाय रहे हैं और गोमूत्रमें रांधकै यव खाते वल्कल वस्त्र पहरे जटाधारे ॥ ३४ ॥ पृथ्वीमें सोवे भैया भरतकूं सुनिके रामचंद्रजी बहुत दुःखी भए भरतजी रामचंद्रजीको आगमन सुनिकैं पुरलोक मंत्री पुरोहित सहित रामचंद्रजी पादुका शिरपै धरिकैं भ्राताके सन्मुख जात भये ॥ ३५ ॥ अपनो डेरा नंदिग्रामतें गीत वादित्रके शब्द सहित भरतजी चले वा समय ब्राह्मण वेद पाठ करते हे ॥ ३६ ॥ सोनेकी पताका सोनेके रथनमें सुंदर घोडे जुते जिनपर विचित्र ध्वजा फहरातीही सोनेके कवच पहिरे योद्धा ॥ ३७ ॥ भृत्य परिचर सेवक राजाके योग्य छत्र चमरादि पदार्थ औरहू छोटी बडी सामग्री ले चले वा समय वेश्या नृत्य करती ही ॥ ३८ ॥ या प्रकार प्रेमसों द्रवीभूत हृदय और नेत्रनमें जल भरे भरतजी जायकर रामचन्द्रके चरणनमें गिरत भये और पादुका आगे धरिकैं हाथ जोरकैं नेत्रनमेंतें आंसूनको डारत भये ॥३९॥ रामचंद्र दोऊ भुजानकरिकैं भरतजीसूं बहुत वेरताई मिलिके नेत्रनतें निकरे जलसे विन्हे न्हवावत भये लक्ष्मणजीसों मिले जानकीनै स्पर्श कियो तथा वा समय जो ब्राह्मण और दूसरे योग्य पुरुष हे ॥४०॥ और कुलवृद्ध हे तिनके अर्थ आप नमस्कार करत भये, प्रजानने आपु नमस्कार किये, अयोध्यावासी बहुत कालमें आये अपने पतिकूं देखिके अपने उपरनानको फिरावत ॥ ४१ ॥ नाचत भये, फूलनकी वर्षा करत भये, भरत पादुका लेत भये, चमर और वीजना ॥ ४२ ॥ बिभीषण सुग्रीव लेत भये, पवनको पुत्र हनूमान् श्वेत छत्र लेत भयो धनुष और तरकस शत्रुघ्न लेत भये, सीताजीनें तीर्थ कमंडलु लियो ॥ ४३ ॥ अंगदनें खड्ग लेलियो, सोनेके फूलवारी ढाल जांबवान् उठाइ लेत भयो; पुष्पकपै स्त्रीनकरिकैं सहित बंदीजननसों स्तुति किये ॥ ४४ ॥ भगवान् राम

१ अर्थात् जब रामचंद्रजीने बिभीषणसो कही कि बिभीषण तू अब क्रियाकर्म कर तब विभीषणने कही कि महाराज में तो या पापीके शरीरसों हाथ नहीं लगाउंगो तब रामचंद्रजीने बिभीषणसो कही कि । भई तू नहीं करे है अच्छी मत कर डर कहा है मैं याकी क्रिया करोंगो जैसो तेरो भइया है तैसोइ मेरो भैया है वैर तो जीवता जिंदगीके होय है मरेपें वैर काहेको जीवितान्तानि वैराणि यथा तव तथा मम ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुंदर लगत भये, जैसे ग्रहनकरिकैं सहित उदय भयो चंद्रमा सुंदर लगै है, भैयासों सनमान किये राम उत्सवसहित पुरीमें प्रवेश करत भये ॥ ४५ ॥ राजभवनमें प्रवेश करिकै कैकेयीते आदि लेके पिताकी स्त्री अपनी मैया गुरु सखा आपुते छोटे सबको सत्कार करत भये ॥ ४६ ॥ सीता लक्ष्मण सबसूं यथायोग्य मिलत भये, माता पुत्रनको देखिके उठति भई जैसे प्राणनको आयें देखिकै शरीर उठै हैं, गोदमें बैठारिकैं आंसूनके समूह करिकैं सींचती, आनंदके अश्रुपात बहावते भये ॥ ४७ ॥ जटानको त्यागिकै गुरु वसिष्ठ कुलवृद्धनको संग लेकै विधिसूं चाऱ्यो समुद्रनके जल करिकैं अभिषेक करत भये, जैसे आगे बृहस्पतिजीनें इंद्रको कियो ॥ ४८ ॥ ऐसे शिरसूं स्नानकर सुन्दर वस्त्र माला पहिरें अलंकृत राम सुंदर अलंकृत भैया भार्यासहित शोभाको प्राप्त भये ॥ ४९ ॥ भरतने प्रणाम कर रामको प्रसन्न कियो तब रामचंद्र राज्यसिंहासनको ग्रहण करत भये, अपने धर्ममें रत वर्णआश्रमके गुणयुक्त प्रजा भई ॥ ५० ॥ विन प्रजानको श्रीराम पिताकीसी नाईं पालन करत भये विनको सब पिता मानत भये वर्त्तमान त्रेतामें धर्मज्ञ सर्व भूतनको सुखके देनवारे राम राजा भये तब सत्ययुगके समान समय होत भयो ॥ ५१ ॥ हे भरतवंशीनमें श्रेष्ठ ! सर्व प्राणिनके सुख देनेवारे धर्मज्ञ ऐसे श्रीरामचंद्रजीके राज्यमें वन नदी पर्वत खंड द्वीप समुद्र ॥ ५२ ॥ ये सब प्रजानके मनोरथके पूरण करनवारे होत भये आधि व्याधि जरा ग्लानि दुःख शोक भय खेद कहीं प्रजाको न भये ॥५३॥ और विना इच्छा किये मृत्यु न होत भई, एक स्त्रीको व्रत धारण करत भये, राजऋषिनकेसो पवित्र आचरण करत भये ॥ ५४ ॥ गृहस्थनको धर्म आप आचरण करते औरनकूं शिखावत भये, प्रेम सेवा शील बुद्धि लज्जासौ भावकों जाननवारी अति नम्रतायुक्त सीता भर्ता रामके मनकूं हरतीभई ॥ ५५ ॥

स्वधर्मं गृहमेधीयं शिक्षयन् स्वयमाचरन् ॥
प्रेम्णानुवृत्त्या शीलेन प्रश्रयावनता सती ॥
धिया ह्रिया च भावज्ञा भर्तुः सीताऽहरन्मनः ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभावाटीकायां नवमस्कन्धे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

श्रीशुक उवाच—भगवानात्मनात्मानं राम उत्तमकल्पकैः ॥
सर्वदेवमयं देवमीज आचार्यवान्मखैः ॥ १ ॥

ग्यारहवें अध्यायमें राम भैयान सहित अयोध्यामें वसत यज्ञादिक करत भये सो वर्णन करैं हैं ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं भगवान् राम उत्तम सामग्रीयुक्त करिकैं सर्वदेवमय आत्माको पूजन करतभये आचार्य्य करिकै युक्त ॥ १ ॥ पूर्वदिशा होताके अर्थ देत भये, दक्षिणदिशा ब्रह्माको देत भये, पश्चिमदिशा अध्वर्युको देत भये, उत्तरदिशा उद्गाताको दीनी ॥ २ ॥ दिशानके मध्यकी शेष भूमि आचार्यके अर्थ देत भये कारण यह कि रामचन्द्र यह जानते हे कि यह सब राज्य ब्राह्मणनकोंही योग्य है ॥ ३ ॥ ऐसें निस्पृह होकें रामचन्द्रजीने केवल आभूषण और वस्त्र मात्रही शेष राखे और सब दान करते भये और जानकीजीनेहु अपने सौभाग्यके भूषण वस्त्रनके सिवाय अपने पास कछु न राखो ॥ ४ ॥ ब्रह्मण्यदेव श्रीरामचन्द्रजी महाराजको वात्सल्य देखिकै प्रसन्न भये, वे ब्राह्मण कोमल बुद्धिसो यह सब राज्य रामहीकूं देके बोलतभये ॥ ५ ॥ हे भगवन् हे भुवनके ईश्वर ! आज आपने हमें कहा नहीं दियो आपने अपने स्वरूपसों हमारे अन्तःकरणमें प्रवेश करकै हमारे अज्ञा-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नरूपी अंधकारको अपनी कांतिसो दूर कियो ॥ ६ ॥ ब्रह्मण्यदेव अकुंठबुद्धि, उत्तमश्लोकनमें श्रेष्ठ, ब्राह्मणनके अभय दैनवारे पुरुषनके मनमें चरण रखनेवारे दंडत्याग करनवारेनको अपने चरण अर्पण करनवारे श्रीरामके अर्थ नमस्कार है ॥ ७ ॥ काऊ समय रामचंद्र लोकवृत्तांतके जानिवेकी इच्छासो गूढगति रातमें विचरते स्त्रीसो द्वेषकर कहते काहूकी कही वाणी सुनतभये ॥८॥ तू दुष्ट असती है पराये घरमें वसीहै मैं तोकूं नहीं राखूंगो स्त्रीको लोभी तो राम है, वह चाहैं जानकीको राखैं परन्तु मैं अब तोकूं नहीं राखूंगो ॥ ९ ॥ ऐसें बहुत लोकनके मुखसो सुन दुराराध्य अपवादसो डरके रामने सीता त्यागकरी, सो वाल्मीकिके आश्रममें प्राप्तभई ॥ १० ॥ गर्भिणी सीता समय प्राप्तभये संते दो पुत्र उपजावत भई जो कुश लव विख्यात भये, वाल्मीकि तिनकी जातकर्मादिक क्रिया करतभये ॥ ११ ॥ अंगद चित्रकेतु दो लक्ष्मणके बेटा होतभये, तक्ष पुष्कल भरतके भये ॥ १२ ॥ सुबाहु और श्रुतसेन शत्रुघ्नके होतभये भरत दिग्विजयमें किरोरन गन्धर्वनको मारतभये, तिनको धन लाइकै सब राजा श्रीरामचंद्रजीके अर्थ देत भये ॥ १३ ॥ शत्रुघ्न मधुको बेटा लवण नाम राक्षसको मधुवनमें मारिकै मथुरा नाम पुरी करतभये ॥ १४ ॥ भर्त्तानें निकारी सीताजी वाल्मीकि मुनिकूं दोऊ बेटा सौंपिकै रामचंद्रजीके चरणनको ध्यान करत नखसूं पृथ्वी लिखति ताके छिद्रमें प्रवेश करतभई ॥ १५ ॥ भगवान् रामचंद्र सीताजीको प्रवेश सुनि बुद्धिकरिकै शोक रोको परन्तु विनके विन गुणनको स्मरण करते रोकिवेको समर्थ न होतभये ॥ १६ ॥ स्त्री पुरुषनको प्रसंग ऐसोई है, ईश्वरहूको त्रास देयहै घरमें चित्तवारे गृहस्थीनको दुःख देई यामें कहा कहनो हैं ॥ १७॥ जानकीके विवरमें प्रवेश करेपें प्रभु राम ब्रह्मचर्यको धारणकरते एक हजार तेरह वर्ष ताईं अखंडित अग्निहोत्र होमतभये ॥ १८ ॥ दंडकवनके कांटेनकरिकै विध्यो अपनो चरणपल्लव स्मरण करनवारेनके हृदयमें राखिकै अपने निजधामकूं जातभये ॥ १९ ॥ देवतानकी प्रार्थनासों लीलातनु धारणकरनवारे रामचंद्रको जिनके समान कोई दूसरेको प्रभाव नहीं है विन्हें शस्त्रकरिके राक्षसनको मारो, समुद्रमें सेतु बांधो यह कोई बडी बात नहीं हैं और शत्रु संहारके निमित्त वानरनकी सहायता लीनी यहहू लीलामात्र है कछु यश नहीं है ॥ २० ॥ जिनको पापको नाश करनवारो निर्मल यश राजानकी सभामें ऋषि अबताईहू गावे हैं, जो यह यश दिशानकें हाथीनको आभरण है स्वर्गकें पालक देवता पृथ्वीके पालक राजा अपने मुकुटनसों जिनके चरण सेवन करि हैं विन रघुनाथकी मैं शरण हूं ॥ २१ ॥ जिन्हें विनकी स्पर्श कियो जिन्हें अग्निहोत्र देखें जे विनके संग बैठे जे पीछे चले वे सब अयोध्यावासी वा स्थानको प्राप्त भये जहां योगी जाय हैं॥ २२ ॥ हे राजन् ! कृरता धर्म रहित जो कोई पुरुष रामचरित्रकूं काननकरिकै धारण करैं वो कर्मबंधनकरिकैं मुक्त होय है ॥ २३ ॥ राजा पूछेहै सो रामचंद्रजी वनते आयकै सर्व भैयानप्रति कैसें वर्ते

---

१ देखौ ये जो अर्थ कियो है कि १०१३ वर्ष रामचंद्रने राज्य कियो ये अर्थ सर्वथा असंगत है निर्मूल है यहां तो मूलके लेखसो १३००० वर्ष राज्य कियो ऐसो अर्थ दीखे है पन वोहू वाल्मीकीय आदि रामायणनसों विरुद्ध है यासों यहां ऐसो करनो (त्रयः लक्ष्मणसीतारामा दशाब्दसाहस्रं अग्निहोत्रं अजुहुवुः वचनव्यत्ययेनात्वयः कर्त्तव्यः) कि लक्ष्मण सीता रघुनाथजी तीनों दशहजार वर्ष पर्यंत राज्य करते भये अर्थात् (भूस्यंतर्गतसीतया विरहितो रामो महीं केवलां वर्षाणामयुतं ततो समभुनक् चैकातपत्रेण वै) या महारामायणके वाक्यसो जानकीजीके सहित राज्य करवेकी मर्यादा यहां लिखी है जानकीजीके भूमि प्रवेश करे पीछे १०००० वर्ष राज्य कियो ताकी गिनती नहीं करी ॥

२ दंडकवनके कांटेनसो विधे चरणनको भक्तनके हृदयमें स्थापन करिके रामचंद्र अपने धामको गये यह सुनके शोकांत रामचरित्रकी समाप्तिको अयोग्य समझके परीक्षित्को असह्य मालूम परी यासों प्रश्न करे है कि महाराज ! ऐसे स्थानमें रामचरित्र पूरो न करो यह अभिप्राय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ता ईश्वरमें भैया प्रजा पुरके लोक कैसे वर्त्तें सो कहो ॥ २४ ॥ शुकदेवजी कहैं हैं राजसिंहासनपै बैठे पीछै त्रिलोकीके ईश्वर राम भैयानको दिग्विजयमें भेजत भये अपनी जातकेनको अपनो दर्शन देवेके लियें अनुगणन सहित पुरी देखते भये ॥ २५ ॥ गंधके जल और हाथीनके मदकी बुंदनसों जाके मारगमें छिडकाव है रह्यो है जैसे स्वामीकों देखके गौ मदमत्त होय हैं ऐसे वह पुरी रामचंद्रको देख मदमत्त ही ॥ २६ ॥ महल पुरके द्वार सभा चैत्य देवतानके घरपै राखे सोनेनके कलस और पताकानसों मंडित ॥ २७ ॥ सुपारिनके गुच्छा करिके सहित वृक्ष और केलाके वृक्षनसों शोभित सुन्दर वस्त्र बिछाये गये हैं काच माला और तोरण वंदनवारानसों महाशोभा ही ॥ २८ ॥ जहां जहां पुरके लोग हाथनमें भेट लेकें रामचंद्रजीके पास आवत भये, हे देव ! पहिले तुमनें वाराहरूप धरिकै यह पृथ्वी उद्धार कीनीही अबहू या पृथ्वीकों पालन करो ऐसे आशीर्वाद देत भये ॥ २९ ॥ प्रजा बहुत दिननमें आये अपने पति रामको देखिकैं देखिवेकी इच्छा करिकैं घर छोड नर नारी महलनपैं चढिकैं अतृप्त नेत्र वे फूलनकरिकैं श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर वर्षा करतभये ॥ ३० ॥ याके उपरांत रामचन्द्र अपने पुरुषनसों सेवित घरमें आये जिनमें अनन्त खजानें रत्न और बहुमूल्यकी सामग्री धरी हैं ॥ ३१ ॥ मूंगानकी देहरी युक्त द्वार वैडूर्य्यमणिके स्तम्भनकी पंक्ति मरकतमणिके स्वच्छ स्थल, प्रकाशित स्फटिकमणिकी भीति ॥ ३२ ॥ चित्रमाला पट्टिका वस्त्र और मणिगणकी किरिनि चैतन्यसो उज्ज्वल मुक्ताफल कमनीय भोगके साधन मालादिक ॥ ३३ ॥ धूप दीप सुंगधिफूलनके मंडलनसों मंडित देवतानकीसी कांतिवारे भूषणनके भूषणयुक्त स्त्री पुरुष करिकै मंडित है ॥ ३४ ॥ जिनके चरणारविंदको भक्तजन ध्यान करते हैं वह आत्माराम धीरनमें श्रेष्ठ भगवान् रामचंद्र अपनी प्यारी सीता सहित रमण करते भये ॥ ३५ ॥ और जा प्रकार धर्ममें बाधा न होइ या प्रकार बहुत समयतक राज्य कर मनुष्यनकरके ध्यान किये चरणकमल जिनके ऐसे श्रीराम सुख पावते रहे ॥ ३६ ॥

बुभुजे च यथाकालं कामान्धर्मंमपीडयन् ॥
वर्षपूगान्बहून् नृणामभिध्याताङ्घ्रिपल्लवः ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

श्रीशुक उवाच–कुशस्य चातिथिस्तस्मान्निषधस्तत्सुतो नभः ॥
पुण्डरीकोऽथ तत्पुत्रः क्षेमधन्वाऽभवत् ततः ॥ १ ॥

बारहवें अध्यायमें रामके पुत्र कुशको वंश कहैंगे या प्रकार इक्ष्वाकुपुत्र शशादिको वंश पूर्ण कहैंगे ॥ शुकदेवजी कहें हैं कुशको बेटा अतिथि भयो, तातें निषध भयो, ताको पुत्र नभ भयो, ताके पुंडरीक, ताके क्षेमधन्वा भयो ॥ १ ॥ तातें देवानीक ताकें अनीहताको बेटा वारियात्र तातें बल तातें स्थल ताके वज्रनाभ सूर्यके अंशते भयो ॥ २ ॥ ताको बेटा सुगण तातें विधृति भयो तातें हिरण्यनाभ भयो, सो जैमिनिको शिष्य योगको आचार्य भयो ॥ ३ ॥ जा हिरण्यनाभसों

१ अकर्णमकरोच्छेषं विधिर्ब्रह्मांडभंगधीः । गुणानाकर्ण्य रामस्य शिरःकंपभयादिव ॥ ब्रह्माने शेषके कान न बनाये कि रामके गुणनको सुनके मूड हलावेगौ तौ मूड हलायवेसौ ब्रह्मांड गिरके फूट जायगो । २ दोहा–प्रजापाल श्रीराम सम, पतिव्रत धर्मसी सीय । भयो न है कोइ होयगो, कीरति अतिकमनीय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कोशलदेशको रहनवारो याज्ञवल्क्यनामको ऋषि बडे फल देवेवारे हृदयकी गांठिके छेदन करनवारे अध्यात्मयोगको पढो ॥ ४ ॥ हिरण्यनाभको पुत्र पुष्य भयो, जाके ध्रुवसंधि भयो, ताके सुदर्शन, ताके अग्निवरण ताके शीघ्र ताके मरु भयो ॥ ५ ॥ जो मरु योग कर सिद्धिको प्राप्त हो कलापग्राममें बैठ्योहै कलियुगके अंतमें नष्ट भये सूर्यवंशको फेरि प्रवृत्त करैगो ॥ ६ ॥ ताते प्रसुश्रुत भयो ताकें संधि ताके अमर्षण ताके सहस्वान् ताकें विश्वसाह्व होतोभयो, तातें प्रसेनजित् तातें तक्षक ॥ ७ ॥ तातें बृहद्बल भयो, जो बृहद्बल तेरे पिता अभिमन्युनें युद्धमें मारचो ये इक्ष्वाकुके वंशमें भये राजा तो व्हैगये जे होइगे तिनें सुन ॥ ८ ॥ बृहद्बलको बेटा बृहद्रण होइगो तातें उद्क्रिय ताकें वत्सवृद्ध होइगो ॥ ९ ॥ तातें प्रतिव्योम, तातें भानु, तातें दिवाक ताकें वाहिनीपति ताकें सहदेव ताकें वीर ताकें बृहदश्व ताकें भानुमान् ॥ १० ॥ ताकें प्रतीकाश्व ताकें सुप्रतीक ताकें मरुदेव ताके सुनक्षत्र ताकें पुष्कर होइगो ॥ ११ ॥ ताकें अंतरिक्ष ताको बेटा सुतपा ताकें अमित्रजित् ताकें बृहद्भानु ताके बर्हि होइगो ताके कृतंजय ॥ १२ ॥ ताकें रणजंय, ताको बेटा संजय होइगो, ताके शक्य ताकें शुद्धोद ताको बेटा लांगल होयगो ॥ १३ ॥ ताते प्रसेनजित तातें क्षुद्रक होइगो ताकें रणक होइगो ॥ १४ ॥ ताकें सुरथ होइगो, ताके सुमित्र होइगो सो या वंशकी स्थितिको अंत सुमित्रसे होयगो यह बृहद्बलके वंशके राजा कहे यह इक्ष्वाकुको वंश सुमित्रांत होइगो सुमित्रको पाइके कलियुगमें नाशको प्राप्त होइगो ॥ १५ ॥

सुमित्रो नाम निष्ठान्त एते बार्हद्बलान्वयाः ॥
इक्ष्वाकूणामयं वंशः सुमित्रान्तो भविष्यति ॥
यतस्तं प्राप्य राजानं संस्थां प्राप्स्यति वै कलौ ॥ १५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

श्रीशुक उवाच-निमिरिक्ष्वाकुतनयो वसिष्ठमवृतर्त्विजम् ॥
आरभ्य सत्रं सोऽप्याह शक्रेण प्राग् वृतोऽस्मि भोः ॥ १ ॥

तेरहके अध्यायमें इक्ष्वाकुपुत्र निमिको वंश वर्णन करैहै, जा वंशमें ब्रह्मज्ञानी जनकादिक राजा होतभये ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हैं इक्ष्वाकुको पुत्र निमि यज्ञको आरंभ करिकै वसिष्ठको ऋत्विज वरण करतभये, सो वसिष्ठ बोले हे राजन् ! इंद्रने मोको पहिले वर्ण कियोहै ॥ १ ॥ ता यज्ञकूं निवर्त्त करिकैं मैं आऊं तब ताईं पैडों देख निमि सुनिकैं चुप होतभयो, वसिष्ठजी इंद्रको यज्ञ करायवेको चलेगये ॥ २ ॥ विद्वान् निमि जीवनको चंचल मानिकै, और ऋत्विजनको बुलाइको जबताईं गुरु न आये तबताईं यज्ञको आरंभ करत भये ॥ ३ ॥ इंद्रको यज्ञकरिकैं आये गुरु शिष्यको अन्याय देखिकै यह पंडितमानी निमिको देह गिरै ऐसे शाप देतभये ॥ ४ ॥ निमिहू अधर्ममें वर्तित गुरुके अर्थ शाप देतो भयो तुम्हारोहू देह गिरो जो लोभतें धर्मको नहीं जान्यो कि यजमानको छोड इन्द्रके यज्ञ करायवेकू चले गये ॥ ५ ॥ ज्ञानमें चतुर निमि अपने देहको त्याग करत भयो वसिष्ठ मित्रावरुणतें उर्वशीमें जन्म लेतभयो ॥ ६ ॥ मुनिनमें उत्तम ऋषि निमिको देह सुगंधकी वस्तुनमें धरिकैं यज्ञ समाप्त करिकै यज्ञमें आये देवतानसूं बोले ॥ ७ ॥ जो तुम प्रसन्न भये हो और समर्थ हो तो यह राजाको देह जिवाओ देवता बोले तथास्तु तब निमि बोल्यो मोकूं देहबंधन मति होउ ॥ ८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देहीके वियोगके भयके कारण लोक या देहके योगकी नहीं वांछा करै है हरिमें बुद्धिवारे मुनि मोक्षके लिये हरिके चरणारविंदको भजन करे है ॥ ९ ॥ दुःखशोक भयको देनवारे देहकी मैं नहीं इच्छा करूंहूं, या देहको सर्वत्र मृत्यु है जैसे जलमें मछरीनकों मृत्यु है ॥ १० ॥ देवता बोले तू विना देही शरीरधारीनके नेत्रनमें यथेच्छ वस, पलकनकै लगाइवै उघारिवेमें लखोगे ॥ ११ ॥ मनुष्यनको विना राजा भय होयगो ऐसो विचार वे ऋषि निमिको देह मथतभये तातें बालक होतभयो ॥ १२ ॥ सो जन्म करिकै जनकनाम भयो, मरे देहते भयो याते विदेह भयो, मथिवेतें भयो यासूं मिथिल नाम भयो, जानें मिथिलापुरी वसाई ॥ १३ ॥ जा मिथिलते उदावसु भयो, ताकें पुत्र नंदिवर्द्धन भयो तातें सुकेतु, ताके देवरात ॥ १४ ॥ तातें बृहद्रथ भयो, ताके महावीर्य, ताके सुधृत ताकें धृष्टकेतु, तातें हर्यश्व तातें मरु भयो ॥ १५ ॥ मरुते प्रतीप, तातें कृतिरथ, ताकें देवमीढ ताकें विश्रुत ताकें महाधृति भयो ॥ १६ ॥ ताकें कृतिरात, तातें महारोमा, ताकें स्वर्णरोमा, ताकें ह्रस्वरोमा होत भये ॥ १७ ॥ तातें सीरध्वज भयो, जिनके यज्ञके अर्थ पृथ्वी खोदतेमें हलके अग्रतें सीता कन्या होतिभई अत एव सीरध्वज नाम भयो ॥ १८ ॥ ताके पुत्र कुशध्वज भये, ताकें धर्मध्वज भयो धर्मध्वजके दो बेटा भये, कृतध्वज मितध्वज ॥ १९ ॥ कृतध्वजतें केशिध्वज भयो, मितध्वजतें खांडिक्य भयो, हे राजन् ! कृतध्वजको बेटा आत्मविद्यामें पारंगत भयो ॥ २० ॥ खांडिक्य कर्मतत्वको जाननवारो भयो, सो केशिध्वजके डरते भाजिगयो, केशिध्वजको भानुमान् भयो, ताको पुत्र शतद्युम्न भयो ॥ २१ ॥ ताके शुचि, ताकें सनद्वाज भयो, ताकें ऊर्ध्वकेतु, ताके पुरुजित पुत्र भयो ॥ २२ ॥ ताकें अरिष्टनेमि ताकें श्रुतायु, ताकें सुपार्श्वक भयो, ताकें चित्ररथ, ताकें क्षेमधी ए सबहू मिथिला नगरीके राजा भये ॥ २३ ॥ तातें समरथ, तातें सत्यरथ भयो, तातें उपगुरु भयो, तातें अग्निके अंशते उपगुप्त भयो ॥ २४ ॥ ताकें वस्वनंत, ताकें युयुधान, तातें सुभाषण, ताकें श्रुत, तातें जय, तातें विजय, तातें ऋत भयो ॥ २५ ॥ ताको बेटा शुनक भयो, ताकें वीतहव्य, तातें धृत भयो, धृतके बहुलाश्व भयो ताकें कृति भयो यह बडो जितेंद्रिय भयो ॥ २६ ॥ ये मिथिलके वंशके राजा कहे, यह सब आत्मविद्यामें चतुर भये, योगेश्वरनके प्रसादकरिकें सुखदुःखादिसौं रहित होते घरनमेंही मुक्त होतभये ॥ २७ ॥

एते वै मिथिला राजन्नात्मविद्याविशारदाः ॥
योगेश्वरप्रसादेन द्वन्द्वैर्मुक्ता गृहेष्वपि ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

श्रीशुक उवाच-अथातः श्रूयतां राजन् वंशः सोमस्य पावनः ॥
यस्मिन्नैलादयो भूपाः कीर्त्यन्ते पुण्यकीर्तयः ॥ १ ॥

चौदहते आदि ले समाप्तताई चंद्रमाको वंश कहैं हैं, जा वंशमें पुरूरवाते आदि लेके पुण्यकीर्ति राजा कहेहैं चौदहके अध्यायमें गुरुकी स्त्री तारामें चंद्रमातें बुध भयो तातें पुरूरवा भयो, ताके उर्वशीमें छै बेटा होतभये, सो वर्णन करै हैं शुकदेवजी कहैं है हे राजन् ! यातें आगे चंद्रमाको पवित्र वंश सुनो, जा वंशमें पुरूरवाते आदि लेके पुण्यकीर्ति राजा कीर्तन करे जायंगे ॥ १ ॥ सहस्र शिरवारे नारायणकी नाभिकमलते ब्रह्मा होतभयो, ताकें पुत्र अत्रि होतभयो, जे गुणन करिकें ब्रह्माके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समान हैं ॥ २ ॥ अत्रिके नेत्रनते अमृतमय चंद्रमा पुत्र होत भयो, सो ब्रह्मानें ब्राह्मण औषधी तारागणको पति कियो ॥ ३ ॥ सो चंद्रमा तीनों भुवन जीतिकें राजसूययज्ञ करिकें पूजा करतभयो, और घमंडके वश हेकें बृहस्पतिकी स्त्री ताराकूं जोरावरी हरिलेत भयो ॥ ४ ॥ देवतानके गुरु बृहस्पतिने बेरबेर चंद्रमासो याचनाहू करी पर मदतें ताराको न देतभयो, ताके निमित्त देवता दानवको युद्ध भयो ॥ ५ ॥ देवासुर संग्रामको कारण कहे हैं बृहस्पतिसों वैर हैवेके कारण असुरनसहित शुक्र चंद्रमाको ग्रहण करतभये, संपूर्ण भूतगणको संग लेके महादेव स्नेहतें गुरुपुत्र बृहस्पतिको पक्ष ग्रहण करतभये ॥ ६ ॥ सब देवतागणनकों संग लेके इंद्र गुरुकी ओर जात भयो, तब देवता असुरनको नाशकारक तारकासुरसंग्राम होतभयो ॥ ७ ॥ तब अंगिराके पुत्र बृहस्पतिने ब्रह्मासूं कही, तब ब्रह्माजी चंद्रमाको झिझकारिकैं ताराको बृहस्पतिके अर्थ दिवाइ देतभये ॥ ८ ॥ बृहस्पति ताराको गर्भिणी जानके बोले, हे दुष्टबुद्धिवारी ! औरनें मेरे क्षेत्रमें गर्भ राख्यो ताइ वेगि डारिदे, हे असति ! संतानकी इच्छावारो मैं तोको भस्म नहीं करौंहूं अन्यथा तोको भस्म करदेउंगो ॥ ९ ॥ लज्जितभई तारा सोनेकीसी कांतिवारे बालककूं त्याग करति भई, ता बालककी बृहस्पति और चंद्रमा दोऊ चाहना करत भये ॥ १० ॥ यह मेरो बालक तेरो नहीं है ऐसे दोऊ झगरनलगे, तब ऋषि देवता पूछतभये, लज्जित तारा न बोलती भई ॥ ११ ॥ बालक क्रोध करिकैं मातासूं बोल्यो हे अशुभे ! झूठी लज्जासो अपनो दोष क्यों नहीं कहैहै मैं कौनको पुत्र हौं अपने दोषको शीघ्र कहिदे ॥ १२ ॥ ब्रह्मा ताराकौ एकांतमें बुलायके सावधान करके धीरेसे पूछतभये तब तारा कहति भई कि चंद्रमाको पुत्र है, तब चंद्रमा वाहि ग्रहण करतभयो ॥ १३ ॥ ब्रह्मा ता बालकको बुध नाम करत भये गंभीर बुद्धि देखिकै बुधकरिकै चंद्रमा आनंदकों प्राप्त होतभयो ॥ १४ ॥ तातें इलामें पुरूरवा भयो, जो पहिले कहि आये हैं ताको रूप गुण उदारता शील द्रव्य पराक्रम ॥ १५ ॥ इंद्रके घरमें नारदने गाये, तिने सुनिकै उर्वशी कामबाणकरिकै पीडित हो ताके पास आवतिभई ॥ १६ ॥ कदाचित् कोऊ प्रश्न करे कि उर्वशी अप्सरा मनुष्यके पास कैसै आवतभई, तहां कहेहै कि मित्रावरुणके शापसों मनुष्यलोकको प्राप्त हो पुरुषनमें श्रेष्ठ कंदर्पसो रूपवान् पुरूरवाकूं देखिकै धैर्यसो ताके निकट ठाढी होतीभई ॥ १७ ॥ आनंदकरिकै प्रफुल्लित नेत्र राजा ता देवीकों देखकैं सुंदर वाणी करिकै बोलतभयो ॥ १८ ॥ सुंदर आइवो भयो, बैठि, मैं कहा करूं मेरे संग रमण करि, हमारी तुम्हारी रति बहुत वर्षन ताइ होयगी ॥ १९ ॥ उर्वशी बोली हे सुंदर ! कोनसी ऐसी स्त्री है जाको मन दृष्टि तुममें आसक्त नहीं होयहै, तेरे अंगको मध्य पाइकै रमिवेकी इच्छाकरिकैं स्त्रीनको वीर्यपतन होय है ॥ २० ॥ हे राजा ! ये दो मेंढा तेरे ह्यां राखूं हूं इनकी रक्षा कर, हे मानके देनवारे ! मैं तेरे संग रमूंगी स्त्रीनकूं जो श्लाघ्य है सोई वर कह्यो हैं ॥ २१ ॥ हे वीर ! मैं घृत खाऊंगी, और मैथुनते और समय तोको नंगो न देखूंगी पुरूरवा सब बात तैसेंही अंगीकार करत भयो ॥ २२ ॥ बडो सुंदररूप बडो भाव नरलोकको मोहित करेहै कौन मनुष्य आपते आई देवी तोको सेवन न करे ॥ २३ ॥ पुरुषनमें श्रेष्ठ पुरूरवा रमनके योग्य उर्वशी करिकैं यथेष्ट देवतानके विहार करिवेके चैत्ररथादिक वनके योग्य वनमें विहार करतभये ॥ २४ ॥ कमलके केशरसी गंधवारी देवीके संग रमण करतो राजा वाके मुखकी सुगन्धिसों ऐसे प्रसन्न भयो कि बहुत दिन बीतेपेंहू वासै राजाको अपने आपकी कुछ सुध न रही ॥ २५ ॥ इंद्र उर्वशीको न देखतो गंधर्वनको पठावत भयो, उर्वशी करिकैं रहित मेरो स्थान अति शोभा नहीं देय है ॥ २६ ॥ ते गंधर्व आधी रातिके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समय अंधेरेमें आइके राजाके पास राखे उर्वशीके मेंढा हरत भये ॥ २७ ॥ लिये जात पुत्रनको पुकारियो सुनिकै उर्वशी बोली कुनाथ नपुंसक आपको वीर माननवारे ॥ २८ ॥ या राजाने मेरो नाश कियो, याके विश्वासते मैं नष्ट भई, चोरननें मेरे पुत्र हरि लिये, दिनमें यह पुरुष है रातिमें स्त्रीसो डरप्यो भयो सोवेहै ॥ २९ ॥ ऐसे उर्वशीके वचनबाणसै अंकुशसै हाथीकी समान विद्ध हो राजा रातिमें खड्ग लेके नंगोई क्रोध करिकै दौरत भयो ॥ ३० ॥ ते गंधर्व याको देखिकै मेढानको छोडिकै बिजुरीकोसो प्रकाश करत भये, मेढानकों लेकैं आवते नंगो अपनो पति देख उर्वशी छोडिकै चलीगई ॥ ३१ ॥ तब पुरूरवा वाकूं शय्यापै न देखतो विमन होतभयो, ताहीमें चित्त लगाय विह्वल व्हैकै शोच करतो उन्मत्तसो पृथ्वीमें डोलत भयो ॥३२॥ सो कुरुक्षेत्रमें न्हाइवेको उर्वशी और ताकी पांच सखीनको देखिकैं सुंदर वचन कहत भयो ॥ ३३ ॥ हे जाये ! ठाढी हों ठाढी हों हे घोररूप ! मोको छोडिवेकूं तू योग्य नहीं है, मोको सुख दिये विना मत जा अब तू मेरे संग रह, हम तुम गोष्टी करेंगे ॥ ३४ ॥ हे ' देवि ! मेरो यह सुंदर देह जो तेरे निमित्त इतनी दूर प्राप्तभयो है यही छूट जायगो या देहको ल्यारी गीध खाइगे कारण कि तेरो कृपापात्र नहीं है ॥ ३५ ॥ यह राजाके वचन सुन उर्वशी बोली तू मरें मति तू पुरुष हैं; धैर्य्य कर, यह ल्यारी तोकूं मति खाऊ, स्त्रीनको सख्य कहू नहीं जैसो ल्यारीनको हृदय है तैसो स्त्रीनको हृदय है ॥ ३६ ॥ स्त्री निर्दयी क्रूर हैं और इनको अमर्ष बडो बुरो होय है और विना विचारे काम करनो इनको अच्छो लगे है थोरेसे द्रव्यपै अर्थ विश्वास देकैं पतिको भैयाको मरवाय गेरै हैं ॥ ३७ ॥ अज्ञ मनुष्यनके झूठो विश्वास देकै मूर्खनको सुहृदपनको त्यागकरें हैं यथेच्छ मतिवारी व्यभिचारिणी नये नये पुरुषनकी इच्छा करै हैं ॥ ३८ ॥ जब राजा बहुत दीनता दिखामन लग्यो तब उर्वशी बोली कि वर्ष दिना पीछे एक राति मेरे संग तू वसेगो, तेरे औरहू श्रेष्ठ पुत्र होंयगे ॥ ३९ ॥ सो पुरूरवा उर्वशीकों गर्भिणी देखिकै घरको जातभयो, फेरि वर्ष दिनाके अंतमें उर्वशी राजाके पास आवतभई, वीरनकी माता उर्वशीको ॥ ४० ॥ पायकै आनंदयुक्त व्हैकै ताके संग एक राति वसतभयो, ता पीछे उर्वशी कृपण और विरहसै आतुर राजाको देखिकै बोली कि ॥४१॥ इन गंधर्वकी सेवा करि ये तोको मोहि दे जांइगे, तब हे परीक्षित् ! राजाने गंधर्वकी स्तुति कीनी, तब वे प्रसन्न व्हैकैं अग्निस्थाली टोकनी देतभये, यह राजा उर्वशीको मानिकैं वाय बगलमें दबायके वनमें विचरत भयो ॥ ४२ ॥ जब वह टोकनी बगलमें चुभनलगी, तब राजाने जानी कि यह उर्वशी नहीं टोकनी है तब मनमें वा टोकनीको फैंककर घरमें आइकैं रातिमें उर्वशीको ध्यान करनलगो तब पुरूरवाके मनमें त्रेतायुगके विषें कर्मकाण्डयुक्त तीनि वेद प्रगट होतभये ॥ ४३ ॥ तब जहां टोकनी गिरी तहां गयो, जायके कहा देखे है कि वा टोकनीमें छौकर और पीपर उपजरहे हैं विन पीपर छोकरकू देखिकैं ताकी दो अरणी करिकैं उर्वशीके लोककी इच्छासे ॥४४॥ मंत्रते नीचेकी अरणीमें उर्वशीको ध्यान करत ऊपरकी अरणीमें अपनो ध्यान करत दोनोंनके मध्यमें काष्ठकूं पुत्रको ध्यान करत मथत भयो ॥ ४५ ॥ ताके मथेतें अग्नि होतभयो, कर्मफलको देनवारो सो अग्नि त्रैविद्याकरिकै तीनि प्रकारको आहवनीय गार्हपत्य दक्षिणाग्नि नामसो प्रगटभयो वाको पुरूरवाने अपनो पुत्र मानो॥४६॥ ता अग्निसै यज्ञके ईश्वर भगवान् सर्व देवमयको उर्वशीके लोक जाइवेके लिये राजा पूजा करत

---

१ पद–निबाही प्रीति न तुमने नारि । पहले तौ अपनाय लियो मन अब यों दियो बिसारि । जो ऐसी करनी थी प्यारी तौ क्यों मिली अगारि । तन मन धन जीवन सब तुमको अर्पन दियो विचारि। हाय प्रिये तज जात कहां तज नैक लाज जिय धारि । व्याकुल वन वन फिरत अकेलो मेरी दिशा निहारि । प्रीति निभानी मिश्र कठिन है होत अन्तको खारि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ ४७ ॥ पहिले सतयुगमें सब वाणीनको बीजरूप ओंकार एकही वेद नारायणही एक देवता हो, अग्नि एकही हो, वर्ण एकही हो ॥ ४८ ॥ हे राजन् ! त्रेताके आरंभमें पुरूरवातें वेदत्रयी होत भई पुरूरवा अग्निहोत्रकोंही पुत्र करिकें गंधर्वनके लोकको प्राप्त भयो ॥ ४९ ॥

पुरूरवस एवासीत् त्रयी त्रेतामुखे नृप ॥
अग्निना प्रजया राजा लोकं गान्धर्वमेयिवान् ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

श्रीशुक उवाच–ऐलस्य चोर्वशीगर्भात् षडासन्नात्मजा नृप ॥
आयुः श्रुतायुः सत्यायू रयोऽथ विजयो जयः ॥ १ ॥

पंद्रहवें अध्यायमें पुरूरवाके पुत्रनके वंशमें गाधि होत भयो जाकी बेटीके बेटा परशुराम भये सो क्रोध करिकें सहस्रबाहुको मारत भये ॥ पुरूरवाके उर्वशीके गर्भतें आयु श्रुतायु सत्यायु रय विजय और जय ये छै पुत्र होत भए ॥ १॥ श्रुतायुके वसुमान भयो, सत्यायुके श्रुतंजय भयो रयको बेटा एक नाम भयो, जयको पुत्र अमित भयो ॥ २ ॥ विजयके भीम भयो, ताकें कांचन भयो, ताकें होत्रक, ताकें जह्नु भयो जो जह्नु गंगाजीको चुलु करिकें पीगयो, जह्नुको पुत्र पुरू भयो ताके बलाहक ताकें अज भयो ॥ ३ ॥ ताकें कुश, कुशकें कुशांबु मूर्त्तय वसु कुशनाभ चारि पुत्र भये, कुशांबको बेटा गाधि भयो ॥ ४ ॥ ता गाधिकी कन्या सत्यवती भई वाय ऋचीक ब्राह्मण मांगत भये, गाधि अनुरूप वर न जानिकें भृगुकुलमें भये ऋचीकसूं बोलत भये ॥५॥ एक कान जिनके कारे चन्द्रमासे उज्ज्वल ऐसे हजार श्यामकर्ण घोडा कन्याको मोल देउ, तो हम कन्या देय, क्यों कि हम कुशके वंशके हैं, हमारे वंशमें यही परंपरा चली आवे है; कि कन्याको मोल लेके देनी ॥६॥ ऐसे कहे ऋचीक राजाको मत जानिकै वरुणके पास गये, वरुणते हजार घोडा लाइकै गाधिको दैकें ता कन्याको व्याहत भये ॥ ७ ॥ विन ऋषिसों स्त्रीनें और सासुनें पुत्रकी इच्छा करिकें प्रार्थना कीनी सो ब्राह्मणके मंत्र करिकें स्त्रीके लिये और क्षत्रीके मंत्र करिकै सासुके लिये चरु करिकै न्हाइवेको जात भये ॥ ८ ॥ जब ताई न्हाइकें मुनि न आये तब ताई सत्यव्रतको चरु श्रेष्ठ मानिकें मातानें मांग्यो, वाने सो चरु माताको दियो, माताको चरु आपु खाइ गई ॥ ९ ॥ मुनि वा वृत्तान्तको जानिकैं स्त्रीसों बोले, तैनें बडो निंदित कर्म कियो, तेरे घोर दंडको धारन करनवारो पुत्र होइगो तेरो भैया ब्रह्मवेत्तानमें श्रेष्ठ होइगो ॥१०॥ सत्यवतीनें ऋचीक ऋषिको प्रसन्न करिकै कही ऐसें मति होउ, तब ऋषि बोले तो तेरो नाती घोर होइगो, तातें जमदग्नि पुत्र भये ॥ ११ ॥ सो सत्यवती बडी पुण्यलोकनकी पवित्र करनवारी कौशिकी नाम नदी होति भई. जमदग्नि रेणुकी बेटी रेणुकाको व्याहत भये ॥ १२ ॥ तामें जमदग्नितें वसुभानतें आदि लेकें पुत्र होत भये. इनमें छोटे परशुराम होत भये ॥ १३ ॥ जिनको वासुदेवको अंश कहैं हैं हैहयनके नाश करनवारे परशुराम इक्कीस वेर निःक्षत्री पृथ्वी करत भये ॥ १४ ॥ जिनने अब्रह्मण्य अधर्मी रज तम करिकैं युक्त पृथ्वीको भाररूप क्षत्रीकुल थोरेई अपराधपै नाश कियो ॥ १५॥ राजा पूछे है तिनने परशुराम भगवान्को कहा अपराध कियो, जो विननें क्षत्रीनके कुलको बार बार नाश कियो ॥ १६ ॥ शुकदेवजी कहैं हैं हैहयनको अधिपति क्षत्रीनमें श्रेष्ठ अर्जुन नारायणके अंश दत्तात्रेयकी सेवा करिकें ॥ १७ ॥ हजार भुजा प्राप्त भई वैरिनमें दुर्धर भयो नष्ट नहीं होनवारी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इंद्रिय और श्री तेज वीर्य यश ताय प्राप्त भयो जामें ॥ १८ ॥ अणिमादिक गुणयुक्त ऐश्वर्य और योगेश्वरत्वकूं विन्हीकी कृपासो प्राप्त भयो पवनके समान अप्रतिहत गति जाकी ऐसो सहस्रार्जुन लोकनमें विचरत भयो ॥ १९ ॥ स्त्रीरत्नन कोरकें युक्त नर्मदाके जलमें क्रीडा करतो वैजयंती माला धारण करे मदसो उत्कट सहस्रबाहु अपनी भुजानसो नर्मदाके जलको रोकत भयो ॥ २० ॥ तब उलटकर चलनवारे नदीके जलसो रावणको डेरा बहगयो तब वीरताको अभिमानी रावण वा राजाके पराक्रमको न सहारत युद्ध करत भयो ॥ २१ ॥ अपराधकारी रावणको स्त्रीनके समक्ष लीला कोरकें पकर लियो. माहिष्मतीपुरीमें बंदरकीसी नाईं रोकि दियो फोर अवज्ञा कोरकें यानें छोडि दियो ॥ २२ ॥ सो अर्जुन एक दिन निर्जन वनमें शिकार खेलत अकस्मात् जमदग्निके आश्रममें प्रवेश करत भयो ॥ २३ ॥ तपोधन मुनि सेना मंत्री वाहन कोरकें सहित सहस्रबाहु राजाके अर्थ कामधेनु द्वारा भोजनादिक सन्मान करत भये ॥ २४ ॥ अपने ऐश्वर्य्यतें अधिक ऋषीनको प्रभाव देखकें वीर अर्जुन वा मिजवानीको आदर नहीं करत भयो, किन्तु हैहयनकों राजा वो कामधेनुकी इच्छा करत भयो ॥ २५ ॥ गर्वते ऋषिकी गो हारिवेके लियें लोगनको प्रेरत भयो वे जोरावरी बछरा सहित रह्मातो गौको माहिष्मती पुरीमें ले गयो ॥ २६ ॥ राजाके गये पीछें राम आश्रममें आये राजाको दुष्टपनो सुनिकें क्रोध करत भये, जैसे ठोकरसू मारचो सांप क्रोध करे है ॥ २७ ॥ घोर फरसा लेकें तर्कससहित धनुष लेकें ढाल तलवार लेकें राजाके पीछे दौरत भयो जैसें हाथीके मारिवेको सिंह दौरे है ॥ २८ ॥ भृगुकुलमें श्रेष्ठ बलसों धावमान धनुष धारे बाण फरसा आयुध लियें मृगचर्म वस्त्र धारे सूर्यकी समान तेजवान् जटा कोरकें युक्त परशुरामजीको पुरीमें प्रवेश करत राजा देखत भयो ॥ २९ ॥ हाथी रथ घोडा प्यादेसों गदा खड्ग बाण ऋष्टि शतघ्नी शक्ति कोरकें अतिभयंकर सत्रह अक्षौहिणी भेजत भयो, एकही भगवान् परशुरामजी विन अक्षौहिणी सैन्य दलको नाश करत भये ॥ ३० ॥ फरशासो प्रहार करते पवनकी समान पराक्रमी वैरीकी सेनाके नाश करनवारे परशुराम जहां जहां जात भये, तहां तहां भुजा ऊरु कटवेसो मरकें सारथी वाहनसहित वीर भूमिमें गिर परतभये ॥ ३१ ॥ रुधिरके समूहकी कीचयुक्त रणके आंगनमें परशुरामके कुठारबाणसो ढाल ध्वजा धनुष शरीर कटवेसो अपनी सैन्य गिरी देखिकें क्रोधकरिकें सहस्रबाहु आवत भयो॥३२॥ अर्जुन पांचसो धनुषनमें एक संग बाण लगाइके परशुरामके ऊपर एक संग चलावतभयो, शस्त्रधारीनमें श्रेष्ठ एकही धनुषधारी राम बाणनकरिकें एक संग विन धनुषनको काटत भये ॥ ३३ ॥ फेरि अपनें हाथनकरिकें पर्वत वृक्ष उखारिकें युद्धमें दौरते अर्जुनकी भुजानको राम कठोर धारवारे फरसासों काटत भये जैसें सांपके फणनको काटेहै ॥ ३४ ॥ और भुज काटे पीछे परशुरामजी फिर अर्जुनके शिरको काटि लेतभये, जैसें पर्वतके शिखरको काटे है, पिताके मरेसंते वाके दश हजार पुत्र भयते भाजिगये ॥ ३५ ॥ वैरीनके मारनवारे परशुराम बछरासहित क्रेशित गौ लाईकें आश्रममें आईकें पिताको देतभये ॥ ३६ ॥ अपनो कियो कर्म पिता भैयासूं कहत भये, ताय सुनिकें जमदग्नि बोलतभये ॥ ३७ ॥ हे राम हे राम हे महाबाहो ! तुम पाप करत भये जो तुमने सर्वदेवमय राजाको वृथा मारचो ॥ ३८ ॥ हे पुत्र ! हम ब्राह्मण क्षमा करिकें पूज्य भयेहैं, जा क्षमाकरिकें लोकनको गुरु ब्रह्मा पारमेष्ठ्यपदको प्राप्तभयो ॥ ३९ ॥ क्षमा करिकें ब्राह्मणकी लक्ष्मी सूर्यकी कान्तिसमान शोभित होयहैं, क्षमा करनवारेपै भगवान् ईश्वर हरि जलदी प्रसन्न होयहैं ॥ ४० ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चक्रवर्त्ती राजाको वध ब्राह्मणके वधतें बडो है, यातें तीर्थसेवन करिकें हरिमें चित्त लगाइकें हे पुत्र! या पापको नाश करो ॥ ४१ ॥

राज्ञो मूर्धाऽवसिक्तस्य वधो ब्रह्मवधाद् गुरुः ॥
तीर्थसंसेवया चांहो जह्यङ्गाच्युतचेतनः ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

श्रीशुक उवाच–पित्रोपशिक्षितो रामस्तथेति कुरुनन्दन ॥
संवत्सरं तीर्थयात्रां चरित्वाश्रममाव्रजत् ॥ १ ॥

सोलहमें अध्यायमें अर्जुनके पुत्रनें जमदग्नि जब मारयो तब रामनें वेर वेर क्षत्रीनको नाश कियो सो वर्णन करेहै और विश्वामित्रको वंश कहे हैं ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन्! पिताकी आज्ञा पाय परशुराम वर्षदिना ताईं तीर्थसेवन करिकें आश्रममें आवतभये ॥ १ ॥ काऊ समय रेणुका इनकी मा गंगामें जल लेवेको गई सो वहां कमलकी माला पहिरे अप्सरानके संग क्रीडा करते गंधर्वनके राजाकूं देखत भई ॥ २ ॥ जलके लिये नदीको गई रेणुका वाकी क्रीडा देखिकें होमकी वेरको भूल गई खबर न रही कछु चित्ररथमें चाह करतीभई ॥ ३ ॥ कालको नाश देखिकें मुनिके शापकरिकें शंकित आइकें कलश आगें धरिकें हाथ जोरिकें ठाडी होतीभई ॥ ४ ॥ मुनि स्त्रीको मानसिक व्यभिचार जानिकें कुपित हैकें बोले हे पुत्राः! या पापिनी अपनी माताको मारो ऐसें कहेपेंहू वे न करतेभये ॥५॥ पिताके प्रेरे राम मातासहित भैयानको मारतभये, अर्थात् पीछेसे परशुरामजी जब आये तब जमदग्निजीने कही कि रे पुत्र परशुराम! इन मेया भैयानको मूढ काटगेर इनने झट सबनको मूढ काटगेरो कारण कि मुनिके तप समाधिको प्रभाव जानतेहैं ॥ ६ ॥ सत्यवतीके बेटा जमदग्नि प्रसन्न हैकें कहतभये वर मांग तब परशुराम मरेनको जीवन, वधको विस्मरण मांगतभये कि ये सब जीआमें और इनके यह खबर न होय कि हम परशुरामने मार गेरेहै ॥ ७ ॥ वे सब कुशलसो अनायास उठते भये, जैसे निद्राके गये पीछे उठेहै, परशुराम पिताके तपको पराक्रम जानते हैं कि पिताकी ये सामर्थ्य है कि ये जिवाय दैयगे यातें सुहृदनको वध कियो ॥८॥ अर्जुनके बेटा अपने पिताको वध स्मरण कर परशुरामके पराक्रमकरिकै पराभव किये वे कहूं सुखको नहीं प्राप्त होतभये ॥ ९ ॥ एक दिन परशुराम भैयानसहित वनको गये तब अपनो वैर लेवेकी इच्छाकर समय पायके सहस्रार्जुनके बेटा आवत भये ॥ १० ॥ अग्न्यागारमें बैठे उत्तमश्लोक भगवान्में बुद्धि लगाये मुनिको देखिकै निश्चयवारे वे सहस्रार्जुनके बेटा ऋषिको मारतभये ॥ ११ ॥ कृपण रामकी माताके याचना करनेपरभी अति भयंकर क्षत्रीनमें नीच वे जोरावरी शिर काटिकैं लेजात भये ॥ १२ ॥ दुःख शोक करिकैं आर्त्त अपनो शिर छाती कूटती रेणुका हे राम हे राम हे तात! ऐसें ऊंचे स्वर करिकैं पुकारतभई ॥ १३ ॥ दूरमें स्थित परशुराम हा राम यह दुःखयुक्त माताको शब्द सुनिकै आश्रममें शीघ्र आइकैं मरे पिता देखतभये ॥ १४ ॥ दुःख रोष अमर्ष आर्ति शोकके मोह करिकैं मोहित होतभये, हा तात हे साधो हे धर्मिष्ट! तुम हमें छोडिकैं स्वर्गको गये ॥ १५ ॥ ऐसे विलाप करिकै पिताको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देह भैयानके निकट धरिकै आप फरशा लैकै परशुराम क्षत्रीनके नाश करिवेको मन करतभये ॥ १६ ॥ परशुराम ब्रह्महत्या करिकै नष्ट शोभावारी माहिष्मतीपुरीमें जाइकरिके हे राजन्! माहिष्मतीके मध्यमें तिनके शिरन करिकैं बडो पर्वत करत भये ॥ १७ ॥ तिनके रक्त करिकैं अब्रह्मण्यनकों भयकी देनवारी घोर नदी करतभये अन्यायको करनवारो क्षत्रीनको कुल पिताको वधके हेतु करिकै ॥ १८ ॥ इक्कीस वेर निक्षत्र पृथ्वी करिकै स्यमंतपंचक क्षेत्रमें रुधिरके नौ दह करत भये ॥ १९ ॥ पिताको शिर लाइकै शरीरसों लगाइकै यज्ञमें यजन करिकै सर्व देवमय आत्मा हरिकी पूजा करतभये ॥ २० ॥ पूर्व दिशा होताके अर्थ देत भये, दक्षिण दिशा ब्रह्माके अर्थ दीनी अध्वर्युके अर्थ पश्चिम दिशा दीनी उद्गाताके अर्थ उत्तर दिशा दीनी ॥ २१ ॥ औरके अर्थ अवांतर दिशा दीनी, कश्यपके अर्थ मध्यम दिशा देतभये आर्य्यावर्त्त उपद्रष्टाको देतभये, ताते परें और बाकी रही पृथ्वी सभासदनको देत भये ॥ २२ ॥ ताके अनंतर यज्ञांत स्नान करिकै अशेष पाप दूर कर परशुराम ब्रह्मनदी सरस्वतीमें स्नान करिकैं शोभाको प्राप्त होतभये, विना बादरके आकाशमें सूर्यसमान शोभित हो सुंदर लगत भये ॥ २३ ॥ जमदग्नि संज्ञालक्षण अपनो देह पाइकै सप्तऋषिनके मंडलमें राम करिकै पूजित एक सातवें ऋषि होतभये ॥२४॥ कमलदलनेत्र जमदग्निके बेटा परशुराम आगे आमनवारे मन्वंतरमें सप्तऋषिनमें हैके वेदको विस्तार करैंगे ॥२५॥ या समय दंड त्यागके प्रशांत बुद्धि सिद्ध गंधर्व चारणके वा जिनको चरित्र गायो ऐसे परशुराम महेंद्रनाम पर्वतमें रहे हैं ॥ २६ ॥ ऐसें विश्वके आत्मा भगवान् हरि ईश्वर भृगुकुलमें अवतार लेके पृथिवीकै भारभूत बहुतसे राजानको मारते भये ॥ २७ ॥ गाधिके बडे तेजस्वी विश्वामित्र नाम पुत्र होतभये, जैसे काठतें बडो अग्नि होय है ऐसे जो विश्वामित्र तप करिकैं क्षत्रीपनको छोडिके ब्रह्मतेजको प्राप्त होतभये ॥ २८ ॥ हे राजन्! विश्वामित्रके एक ऊपर सौ पुत्र होतभये विनमें मध्यम पुत्र मधुछंद भयो, ताके संगते ते संपूर्ण मधुछंदा कहाये ॥ २९ ॥ विश्वामित्र देवताननें जाकी रक्षा कीनीही भृगुकुलमें भये अर्जागर्त्तके बेटा शुनःशेपको अपनो पुत्र करिकै पुत्रनसों बोले याको अपनो जेठो भैया करो ॥ ३० ॥ जो शुनःशेपको हरिश्चंद्रके यज्ञमें विककर पुरुषरूप पशु हो वरुणादि देवतानकी स्तुति करिकै पाश बंधनते मुक्त होतभयो ॥ ३१ ॥ जो शुनःशेप देवताननें रक्षा करयो यातें गाधिकें वंशमें देवरात नाम विख्यात भयो, जो शुनःशेप पहिले भृगुकुलमें भयो हो ॥ ३२ ॥ मधुछंदाते आदि ले जो पचास जेठें हैं ताको ज्येष्ठत्व नहीं मानत भये, तब क्रोध भयो मुनि विश्वामित्र तिने शाप देत भयो हे दुर्जनो! तुम म्लेच्छ होउ ॥३३॥ तब जो मधुछंदा पचासते बडो हो वो अपनेसे छोटे पचासनको संग लेके बोल्यो पिता जो तुम मानोहो हम ताही वचनसे स्थित होंइगे ॥ ३४ ॥ हम तो मंत्रके देखनवारे देवरातको जेठो करैं है हम सब तुमारी आज्ञानुयायी हैं यह कहत भये हम सगरे तातें छोटे होइगे तब प्रसन्न भये विश्वामित्र पुत्रनसूं कहतभये तुम पुत्रवान् होउगे जो तुम मेरे मानको ग्रहण कर, मोकूं पुत्रवान् करतभये ॥ ३५ ॥ हे कुशिकाः! यह वीर देवरात तुम्हारो भैयाही है, जाते मेरो श्रेष्ठ पुत्र है याके पीछें तुम संपूर्ण वर्त्तो, ऐसें कहत भये औरहू अष्टक हारीत जय क्रतुमदादितें आदि लेके विश्वामित्रके पुत्र होतभये ॥ ३६ ॥ ऐसे कुशिकको गोत्र विश्वामित्रके बेटाननें नाना प्रकार प्रवरांतरको प्राप्त कियो देवरातको ज्येष्ठ करिकैं रच्यो ॥ ३७ ॥

---

१ और मातासो कही कि री मा जो तोमें अरे हाय बेटा परशुराम ये कहीहै मैया तौ मेरो नाम परशुराम जो सातवी इक्कीसवें वार भूमी निक्षत्र करौ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एवं कौशिकगोत्रं तु वैश्वामित्रैः पृथग्विधम् ॥
प्रवरान्तरमापन्नं तद्धि चैत्रं प्रकल्पितम् ॥ ३७ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

श्रीशुक उवाच-यः पुरूरवसः पुत्र आयुस्तस्याभवन्सुताः ॥
नहुषः क्षत्रवृद्धश्च रजी रम्भश्च वीर्यवान् ॥ १ ॥

सत्रेके अध्यायमें पुरूरवाको जेठो पुत्र आयुके पांच पुत्र तिनमें चारिनको वंश वर्णन करै हैं ॥ तहां श्रीशुकदेवजी कहै है हे राजन् ! पुरूरवाको पुत्र जो आयु ताकें नहुष, क्षत्रवृद्ध, रजी, रंभ, अनेना ये ५ पुत्र होतभये ॥ १ ॥ हे राजेंद्र ! क्षत्रवृद्धको वंश सुनो क्षत्रवृद्धको पुत्र सुहोत्र ताके काश्य, कुश, गृत्समद ए तीनि पुत्र होतभये, गृत्समदते शुनकपुत्र भयो जाकें ऋग्वेदीनमें श्रेष्ठ शौनक मुनि होत भये ॥ २ ॥ ३ ॥ काश्यकें काशीनाम पुत्र भयो ताको पुत्र राष्ट्र भयो ताकें दीर्घतमा भयो दीर्घतमकें धन्वंतर भयो सो आयुर्वेदके प्रवर्त्त करनवारे हैं ॥ ४ ॥ यज्ञके भोक्ता वासुदेवको अंश है स्मरणमात्र करिकै रोगको नाश करै है, ताको पुत्र केतुमान् भयो ताकें भीमरथ भयो ॥ ५ ॥ ताकें दिवोदास ताकें द्युमान् भयो जो प्रतर्दन, शत्रुजित्, वत्स, ऋतध्वज, कुवलयाश्व इन नामनसों विख्यात भयो ताकें अलर्कादिक पुत्र भये ॥ ६ ॥ अलर्क साठि हजार साठिसों वर्ष पृथ्वीको भोग करतभयो हे राजन् ! अलर्कके सिवाय युवा अवस्थामें हेकें और काहूने राज्य नहीं कियो ॥ ७ ॥ अलर्कते संतति भयो, तातें सुनीथ भयो, ताके सुकेतन ताकें धर्मकेतु ताकें सत्यकेतु होत भयो ॥ ८ ॥ तातें धृष्टकेतु भयो, ताते सुकुमार भयो, ताकें वीतहोत्र भयो, ताकें भार्गभूमि भयो ॥ ९ ॥ हे राजन् ! ये काशि देशनके राजा क्षत्रवृद्धके वंशके राजा कहे अब आयुके पुत्र रंभको वंश कहे है रंभको बेटा रभस भयो, ताकें गंभीर ताकें अक्रीय भयो ॥ १० ॥ ताके वंशमें ब्राह्मण होतभये अनेनसको वंश सुनो अनेनसकें शुद्ध भयो ताकें शुचि भयो ताकें त्रिककुत् ताके धर्मसारथी ॥ ११ ॥ ताकें शांतरय सो कृतकृत्य भयो ज्ञानी भयो यातें पुत्र न उपजायो रजिके बडे बली पांचसौ पुत्र होतभये ॥ १२ ॥ देवतानने प्रार्थना कियो रजि दैत्यनको मारिकें इंद्रके अर्थ स्वर्गको देतभयो इंद्र रजिकै चरणनकौ ग्रहण करिकें ॥ १३ ॥ प्रह्लादादि वैरिनके डरसों वाईके अर्थ फेरि स्वर्ग देकें अपनपेको अर्पण करतभयो रजिके बेटा पिताके मरे पीछें स्वर्गको मांगनेपर इंद्रके अर्थ नहीं देतभये ॥ १४ ॥ यज्ञके भाग ग्रहण करतभये तिनकी मति भ्रष्ट करिवेके लिये बृहस्पतिने अग्निमें होम कियो ॥ १५ ॥ तब धर्ममार्गते भ्रष्ट भये रजिके बेटानको इंद्र मारत भयो, तिनमें कोई बाकी न रह्यो क्षत्रवृद्धको नाती कुश तातें प्रति भयो, ताकें संजय भयो ताकें जय भयो ॥ १६ ॥ ताकें कृत भयो, ताकें हर्यवन होतभयो, ताते सहदेव भयो, ताकें अनीह ताकें जयसेन ॥ १७ ॥ ताकें संस्कृति ताकें जय ताके क्षत्रधर्मा ताके महारथ भयो, ये राजा क्षत्रवृद्धके वंशके कहे, अब नहुषवंशके राजानको सुनो ॥ १८ ॥

संस्कृतिस्तस्य च जयः क्षत्रधर्मा महारथः ॥
क्षत्रवृद्धान्वया भूपाः शृणु वंशं च नाहुषात् ॥ १८ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

१ अर्थात् जब रजि मरगये तब इंद्रादिकनने रजिको बेटानसों कही कि स्वर्ग हमें दीउ तब वे बोले कि स्वर्ग हमारोही है पिता दे गयेहै ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १८.

श्रीशुक उवाच-यतिर्ययातिः संयातिरायतिर्वियतिः कृतिः ॥
षडिमे नहुषस्यासन्निन्द्रियाणीव देहिनाम् ॥ १ ॥

अठारवें अध्यायमें नहुषके बेटा ययातिकी कथा कहेहैं. जाकी पांच बेटानमें छोटेनें जरा अवस्थाको ग्रहण करी ॥ शुकदेवजी कहैहैं नहुषके यति, ययाति, संयाति, आयति, वियति, कृति ये छै पुत्र होतभये, जैसे जीवके इंद्री होंयहै ॥ १ ॥ यति पिताके दिये राज्यकी नहीं इच्छा करतभयो, राज्यको परिणाम जानेहो कि ये राज्य अनित्य है और जा राज्यमें प्रविष्ट पुरुष आत्माको नहीं जानैहै ॥ २ ॥ पिता नहुष स्वर्गतें भ्रष्ट भये संते इंद्राणीकी धर्षणतें ब्राह्मणने अजगर योनिको प्राप्त किये, तब ययाति राजा होतभयो ॥ ३ ॥ छोटे चारों भैयानको चारों दिशानको राज्य देत भयो शुक्र और वृषपर्वाकी कन्यानको स्त्री कर ययाति पृथ्वीको पालन करत भयो ॥ ४ ॥ राजा पूछेहै हे भगवन् ! शुक्र तो ब्राह्मण ऋषि हैं ययाति क्षत्री है क्षत्री और ब्राह्मणमें उलटो व्याह कैसें भयो ॥ ५ ॥ तहां श्रीशुकदेवजी कहैं हैं एक दिन दानवके इंद्र वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठा हजार सखीनको संग लेके गुरुकी बेटी ॥ ६ ॥ देवयानीसहित फूले वृक्षनसो पूर्ण जहां गान करती भईं भोरीं डोलरहीं ऐसे सुन्दर सरोवरनकी पुलिनयुक्त पुरके बागमें विचरति भईं ॥ ७ ॥ कमलसे नेत्रवारी कन्या, वे तीरपै अपनें वस्त्र धरिकैं परस्पर सींचित विहार करत भईं ॥ ८ ॥ पार्वती सहित बैलपै बैठे महादेव चले जाई हैं तिनें देखिकैं शीघ्रही जलभेंतें निकरिकैं लज्जित भईं कन्या वस्त्रनको पहरती भईं ॥ ९ ॥ शर्मिष्ठा विना जाने गुरुकी बेटी देवयानीके वस्त्र अपनें मानिकैं पहरत लेत भई, तब क्रोध भई देवयानी यह वचन बोली ॥ १० ॥ अहो या दासीको अन्याय कर्म देखो, हमारे धारण करिवेको वस्त्र आप पहरत भई, जैसें यज्ञमें कुतिया घीको लेलै है ॥ ११ ॥ जिन ब्राह्मणतें तपकरिकैं यह जगत् सृज्यो है, जे ब्राह्मण परमपुरुष भगवान्के मुख हैं, जिननें ब्रह्मको धारण कियो है, कल्याणरूप वेदमार्ग दिखायो है ॥ १२ ॥ लोकनाथ देवतानके ईश्वर जिन ब्राह्मणनकों नमस्कार करैं हैं उपासना करैं हैं विश्वके आत्मा सबके पवित्र करनवारे लक्ष्मीके स्थान भगवान्हू जिनकी पूजा करै है ॥ १३ ॥ तिन ब्राह्मणनमें हम हैं सो भृगुवंशी हैं याको पिता असुर हमारो शिष्य है हमारे धारण करिवेको वस्त्र परहत भई जैसे शूद्र वेदको धारण करे ॥ १४ ॥ ऐसें तिरस्कार करी शर्मिष्ठा गुरुकी बेटीसो क्रोधकरिकैं सर्पिनीकीसी नाईं श्वास लेती होठ चबाती बोली ॥ १५ ॥ हे भिखारिनी ! अपनी वृत्ति न जानिकै तू बहुत बके है, हमारे घरमें क्या तू कुत्तेकी समान टूककी इच्छा नहीं करैहै ॥ १६ ॥ ऐसे या प्रकारके कठोर वचन करिकैं आचार्यकी बेटीको तिरस्कार करिकै शर्मिष्ठा क्रोध करिकै वस्त्र ले कूआमें ढकेलि देतिभई ॥ १७ ॥ शर्मिष्ठा अपने घर गई, तब ययाति राजा शिकार खेलत अकस्मात् जल पीवेके लिये प्राप्त होतभये, कुआमें देवयानीको देखत भये॥१८॥ राजा दयासो विना वस्त्र देवयानीके अर्थ अपनो उपरना देकै हाथसों हाथ पकरिकैं कूपसें निकारि लेत भये ॥ १९ ॥ शुक्रकी बेटी प्रेम करिकैं युक्त वाणीसो वीर राजासूं कहतभई हे वैरीनके पुर जीतनवारे हे राजन् ! तुमने मेरे हाथको ग्रहण कियो है ॥ २० ॥ तुमने ग्रहण करी जो मैं ता मेरो दूसरो पति मति होउ, हे वीर ! हमारो तुम्हारो संबंध ईश्वरको कियो है पुरुषको कियो नहीं है ॥२१॥ जातें कुआमें परी मोकू तुम्हारे दर्शन होतभये, कदाचित् राजा कहे कि तू ब्राह्मणके बालकको वर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मैं क्षत्री हो तहां देवयानी कहैहै हे महाभुज ! ब्राह्मण मेरे पति नहीं होयगो, वृहस्पतिको बेटा कच शुक्रतें मृतसंजीवनी विद्या पढते सो मैंने कही मेरो पति होउ, सो बोल्यो तूं मेरे गुरुको बेटी है, पूज्य है मैं तोकूं नहीं व्याहूं तब मैनें क्रोध करिकै शाप दियो तेरी विद्या निष्फल होउ, तब वानें मोकूं शाप दियो तेरो ब्राह्मण पति नहीं होईगो ॥ २२ ॥ ययाति राजाको अभिप्राय वास्तवसों ब्राह्मण कन्या-के पाणिग्रहणमें नहीं हो पन ईश्वरने प्राप्त कियो संबंध आपसूं जानिकै तामें सकाम भयो, अपनो मन जानिकै ताके वचनको ग्रहण करतभयो ॥ २३ ॥ वीर राजाके गये संतें देवयानी रोवत घरमें आइकै शर्मिष्ठाने जो वचन कह्यो जो कर्म कियो सो सब पिताके आगें कहतभई ॥ २४ ॥ तब रुष्ट होकर शुक्र पुरोहिताइकी निंदा करत अपनी भिक्षावृत्तिकी स्तुति करते बेटीको संग लेके पुरसूं निकरि जातभये ॥ २५ ॥ वृषपर्वा रूठिकैं गये गुरुको जानिकैं देवतानको जय करैंगे यह अभिप्राय जानिकैं मार्गमें गुरुके चरणनमें गिरिकैं प्रसन्न करतभयो ॥ २६ ॥ अर्द्धक्षण क्रोधवारे भगवान् शुक्र अपने शिष्यसो बोले हे राजन् ! देवयानीकी इच्छा पूरी करो मैं याकूं छोडिवेकूं उत्साह नहीं करूंहूं ॥ २७ ॥ वृषपर्वानें वचनको अंगीकार कियो तब देवयानी अपने मनको अभिप्राय कहत भई, पिताकी दीनी जहां मैं जाऊं, तहां तेरी बेटी सखीनको संग लैकैं शर्मिष्ठा मेरी दासी ह्वैकैं संग चले ॥ २८ ॥ हे राजन् ! अपनेनको शुक्रके निकरेते संकट देख और शुक्रके रहेंते गौरव देख १००० स्त्रीनकूं संग लेकैं शर्मिष्ठा दासीकीसी नाईं देवयानीकी सेवा करतभई ॥ २९ ॥ शुक्र शर्मिष्ठासहित अपनी बेटी देवयानीको ययातिके अर्थ देकें तासूं कहतभये हे राजन् ! शर्मिष्ठाकूं अपनी सेजपै कबहू धारण मति करियो ॥३०॥ हे राजन् ! काहू समय सुंदर पुत्रवारी शुक्रकी बेटीको देखिकै शर्मिष्ठा एकां-तमें ऋतुके समय सखीके पति राजाकी इच्छा करतभई ॥३१॥ पुत्रकी चाहके लियें प्रार्थना कियो धर्म देखिकै शुक्रके वचनको स्मरण करत समयमें दैवकें वश राजा ताके संगको प्राप्त होतभयो ॥३२॥ देवयानी यदु तुर्वसु दो पुत्रको उपजावत भई और शर्मिष्ठा द्रुह्यु अनु पूरु तीन पुत्रनको उपजावत भई ॥ ३३ ॥ असुरकी बेटीमें अपनें भर्त्तातें गर्भको संभव जानिकैं देवयानी क्रोधकरिकै मूर्छित भई पिताके घरको जातभई ॥३४॥ कामी राजा वचनकरिकैं प्रार्थना करत प्यारीके पीछें जात भयो, पाव-नकूं दावें अनेक यत्न किये परंतु प्रसन्न करिवेको समर्थ न भयो ॥३५॥ क्रोधकर शुक्र राजासूं बोले हे स्त्रीकामी झूठा पराक्रमी हे मंद ! मनुष्यनको विरूप करनवारी जरावस्था तोमें प्रवेश करौ अर्थात् तू अभी अतिवृद्ध हेंजा ॥ ३६ ॥ ययाति बोले हे ब्रह्मन् ! तुम्हारी बेटीमें मैं कामनकरिकैं तृप्त नहीं भयो तब शुक्र बोले जो तेरी जराअवस्था लेकैं तोय तरुण अवस्था देय ताको बदलो करिले॥३७॥ ऐसे व्यवस्था पाय पुत्रसों बोल्यो कि हे तात यदु ! या जराको ग्रहण कर अपनो निज वय मोको दे ॥ ३८ ॥ हे बेटा ! तेरे नानाने यह अवस्था कीनी हैं विषयमें मैं तृप्त नहीं भयो हूं तेरे वय क्रमक-रिकै कुछ वर्षन ताईं रमूंगो ॥ ३९ ॥ यदु बोले बीचमें प्राप्त भई जरा करिकैं स्थिति होवेकी मैं इच्छा नहीं करूं विषयको सुख न जानिकैं पुरुष वैराग्यको नहीं प्राप्त होय है ॥ ४० ॥ पिताके प्रेरे तुर्वसु द्रुह्यु अनुहू नाहीं करत भये धर्मको नहीं जान अनित्य देहमें नित्य बुद्धि कर पिताको तरुणाई न दीनी ॥ ४१ ॥ तब ययाति वय करिकै छोटो गुणकरिकै अधिक बेटा पूरुसे पूछत भये हे पुत्र ! बडे भैयानकीसी नाईं मोसूं नाहीं करिवेकूं तू योग्य नहीं है ॥ ४२ ॥ पूरु बोल्यो हे मनुष्यके इंद्र ! देहको करनवारे पिताके प्रत्युपकार करिवेके लिये कौन पुरुष समर्थ है, जाके प्रसादते परमेश्वरको प्राप्त होय ॥ ४३ ॥ पिताको विचार करे सो तो उत्तम जो कहेते करे सो मध्यम जो विना श्रद्धा करे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो अधम जो पिताकी इच्छा न करे सो महानीच अधम जानिये ॥ ४४ ॥ ऐसें कहिकै प्रसन्न भयो पूरु पिताकी जरा अवस्थाको ग्रहण करत भयो हे राजन् ! ययातिहू ताके वयकरिकैं यथायोग्य विषयनको सेवन करत भयो ॥ ४५ ॥ सप्तद्वीपको राजा ययाति पिताकीसी नाईं प्रजाको पालन करत जैसी प्रीति तैसें विषयनको सेवन करत भये वाकी सब इन्द्रियैं प्रबल बनी रही ॥ ४६ ॥ देवयानी नित्य नित्य मन वचन देह वस्तुसौं एकांतमें प्यारेको परम प्रीति देत भई ॥ ४७ ॥ तब राजा ययाति बहुत दक्षिणावारे यज्ञन करिकैं यज्ञपुरुषकी पूजा करत भये, जो यज्ञपुरुष सर्व देवमय है सर्ववेदमय है ॥ ४८ ॥ जिन भगवान्के स्वरूपमें आकाशमें मेघके समान रचो भयो और स्वप्नमें मायाके संकल्पके समान यह विश्व पृथक्सौं भासे है और इन्द्रियनके शांत हैवेपै नहीं भासै है ॥ ४९ ॥ वा अंतर्यामी नारायण सूक्ष्मरूप वासुदेवकू हृदयमें राखिकै निष्काम ह्वैकें पूजा करत भयो ॥ ५० ॥ ऐसे हजार वर्ष ताईं चक्रवर्ती ययाति इन्द्री और छठे मनसौं काम भोगनको सेवन करतौहू तृप्त नहीं होतो भयो ॥ ५१ ॥

एवं वर्षसहस्राणि मनःषष्ठैर्मनः सुखम् ॥
विदधानोऽपि नातृप्यत् सार्वभौमः कदिन्द्रियैः ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कंधे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

श्रीशुक उवाच–स इत्थमाचरन् कामान् स्त्रैणोपह्लवमात्मनः ॥
बुद्ध्वा प्रियायै निर्विण्णो गाथामेतामगायत ॥ १ ॥

उन्नीसके अध्यायमें ययाति बकराकीसी उपमावारी अपनी चेष्टा करिके देवयानीको सुनाईकै विरक्त ह्वैकै मुक्तिको प्राप्तभयो सो वर्णन करै है ॥ १ ॥ भोगभोगी बकरियाको त्यागन करते बकराकी समान अपनो वृत्तांत विडंबन करतो प्यारीकौ निर्वेद कराइवेके लिये कहत भयो ॥ २ ॥ वो राजा ययाति शुकदेवजी कहै हैं राजन् ! ऐसै विषयनको सेवन करतो स्त्रीमें फंसो भयो अपने आत्माको नुकसान समझके निर्वेद जाके मनमें आय गयो सो अपनी पत्नीके अगारी यह गावतभयो ॥ १ ॥ हे भृगुकी बेटी ! मोसारिखे आचरण करनेवाले कामी ग्रामीणको वनमें रहिवेवारे धीर पुरुष शोच कियो करे हैं वाके आचरणके विषयमें यह गाथा सुनो ॥ २ ॥ कोई एक बकरा वनमें अपने प्रियनको ढूंढत २ अपने कर्मके वशसो कूआमें परी एक बकरियाकू देखत भयो ॥ ३ ॥ कामी बकरा ताके निकारिवेको उपाय विचारत सींगनके अग्रकरिकै माटी खोदि २ कै निकरिवेको मार्ग करतभयो ॥ ४ ॥ सो बकरिया कुंआते निकरिकैं ताहीकी चाह करतभई वाके संग वाय देखकै पतिकी इच्छावारी बहुतसी बकरिया चाह करतभई, जो बकरा बडो पुष्ट डाढी मूछन करिकै युक्त मैथुन करिवेमें चतुर वीर्यको सींचनवारो हो ॥ ५ ॥ बकरानमें श्रेष्ठ एकही वह बहुत बकरियानकी रतिकौ बढावनवारो कामसो

१ सबै दिन एकसे नहिं जात सुमिरन भजन करो कि न हरिको जबलग तनक सिरात ॥ १ ॥ यादमयेको गर्व गर्वधन जोबनके मतमात, हमही बडे करे ब्रह्माने सूधे कहत न बात ॥ २ ॥ कबहूं कभी कछुहौं रस विलसत तन मनमें न अघात, कबहूंक आनपरो सरभोजन कौंकौंकर बिलात ॥ ३ ॥ बाल विनोद जुवा जोति रति बोलत खेलत खात, नासत तनक ध्यान जनपूजा वृद्ध भये पछितात ॥ ४ ॥ तातै कहत सभारो रे मन काहेको इतरात, सूरदास भगवंत भजन बिन कबहूं नहीं अघ जात ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ग्रस्यो रमतभयो, अपनी आत्माको न जानत भयो ॥ ६ ॥ कुआते निकरी बकरिया और बकरियानके संग रमतै बकराको देखिकै ता बकराके कर्मको न सहारतभई ॥ ७ ॥ दुष्ट हृदय सुहृदरूप कामी क्षणमात्र सौहृद करनेवारें इन्द्रीनमें आराम मानवेवारे बकराको छोडिकै दुखित भई अपने स्वामीके पास जाती भई ॥८॥ सोऊ स्त्रीलंपट कृपण वाय प्रसन्न करिवेके लिये पीछे जातभयो, और अपनी जातिके समान वैवै शब्द करतभयो परन्तु मार्गमें प्रसन्न करिवेको नहीं समर्थ भयो ॥ ९ ॥ ता बकरियाको कोई एक स्वामी ब्राह्मण क्रोधकरिकै बकराको लंबो वृषण काटत भयो फेरी कामभोगके लिये उपायको जाननेवारो वो ब्राह्मण फिर वा बकराके काटे वृषणको जोरि देत भयो ॥१०॥ वृषण प्राप्त होनेसै बकरा कुआंते मिलि बकरीके संग बहुत वरषनतक रमण करत भयो परन्तु कामभोगसौ संतुष्ट न भयो ॥ ११॥ हे शुकदेवकी बेटी ! तैसेंही कृपण मैं तेरे प्रेमके आधीन भयो हूं तेरी मायाकरिके मोहित भयो आत्माको न जानत भयो ॥ १२ ॥ जा पृथ्वीमें धान यव सुवर्ण पशु स्त्री काम करिके नष्ट पुरुषके मनको प्रीति नहीं देहै ॥ १३ ॥ यह काम कामनके भोगसे कबहूं शांत नहीं होयहै परंतु वृद्धिकोही प्राप्त होय है जैसे घी डारवैसै अग्नि वृद्धिकोही प्राप्त होयहै ॥ १४ ॥ जा समय यह प्राणी समान दृष्टिसौ सम्पूर्ण प्राणियनसौ अमंगल भाव त्याग देय है वा समय वाको सम्पूर्ण दिशा सुखदायक होती हैं ॥ १५ ॥ दुष्टमति दुस्त्यज पुरुषके जीर्ण हैवैपैहू जो जीर्ण नहीं होती ऐसी या दुःखकी देनवारी तृष्णाकू सुखकी इच्छा करवेवारो शीघ्रही त्याग करै ॥ १६ ॥ माता बहिनि बेटीके सहितहू एकांतमें नहीं बैठे, इंद्रियनको समूह बलवान् है पंडितकोहूं आकर्षण करे है ॥ १७ ॥ पूर्ण हजार वर्ष मैंनें निरंतर विषयको सेवन कियो तोऊ तिनमें नित्य नित्य तृष्णाही उपजे है ॥ १८ ॥ ताते मैं तृष्णाको छोडिके ब्रह्ममें मन लगाईके निर्द्वंद्व निरहंकार हैकै मृगनके संग विचरूंगो ॥ १९ ॥ जो विषय देख्यो सुन्यो है सो झूठो है, यह जानिके इनको ध्यान न करे भोग न करे संसारको आवागमन और यामें अपनो नाश देखकें विद्वानकों चाहिये कि आत्माको विचार करै ॥ २० ॥ ययाति ऐसे स्त्रीसूं कहिके पूरुकी वय पूरुके अर्थ देकै विषयनकी चाहको छोडके अपनी जरा अवस्था ग्रहण करत भयो ॥ २१ ॥ हे चतुर राजन् परीक्षित् ! पूर्व दिशामें द्रुह्युको राज्य दियो दक्षिणदिशामें यदुको दियो पश्चिममें तुर्वसुको दियो उत्तरमें अनुकू राज्य दियो ॥ २२ ॥ संपूर्ण भूमंडलको राजाको पूरुकू अभिषेक करिकें ताके बडे भैयानकूं ताहीके वश करिकें आपु वनकूं जात भयो ॥ २३ ॥ बहुत वर्षन तांई विषयनमें सेवन कियो; छः इंद्रीनको सुख राजा एक क्षणमें त्याग करत भयो जैसे पंखवारे पक्षी घोसुआको त्याग करें हैं ॥ २४ ॥ समस्त संगत्याग आत्माके अनुभव करिके त्रिगुणरूप लिंगदेहको निरस्त कर विख्यात ययाति निर्मल परब्रह्म वासुदेवमें भाग-

---

१ जीर्यंति जीर्यतः केशा दंता जीर्यंति जीर्यतः ॥ जीर्यन्ति जीर्यतोऽगानि तृष्णैका तु न जीर्यति ॥१॥ जीर्ण भयेपर वार जीर्ण होय है और जीर्ण भयेपें दंतहू जीर्ण है जायहै और जीर्ण भयेपें सब अंगमात्र जीर्ण होय हैं । परंतु ये एक तृष्णा राण्ड जीर्ण नहीं होय है ॥ २ काहो पंडितने (विद्वांसमपकर्षति) या पदमें हरताल लगाय दीनी तब एक दिन वेदव्यासजी आप लुगाई बनके वाके आश्रममें आये वाने बहुत नाहीं करी पन वेदव्यासजी बहुत खुसामद करकें एक कोठरीमें रातमें वहीं रहे जब आधीरात भई तब वो आयके बोलो कि री हाहा तू नेक कोठरीके किवार खोल वाने न खोले तब वो पंडितजी ऊपर जायके छत फोरके कूदो और विषय करवेकी जबरदस्ती चेष्टा करन लगो सोई वेदव्यासजीने लहंगा उतार ओढनी फेक दीनी और वाकी नाक पकरके कही कि रे मूर्ख तेने (विद्वांसमपकर्षति) या मेरे लिखेपें हरताल कैसें लगाई तब वो पायनमें गिरो अपराध माफ करायो सोही ए कहा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वती गतिको प्राप्त होतेभये ॥ २५ ॥ स्त्री पुरुष सम्बन्धी प्रेमके कारण कृपणताके वचन जान देवयानी या गाथाको सुनिकै अपनो परिहास मानत भई परन्तु पीछें अभिप्राय जान ज्ञानको प्राप्त हुई ॥ २६ ॥ जैसे पथिकजन प्याऊपै इकट्ठे है जाय है ऐसेही ईश्वरके आधीन हैकै सब सम्बन्धी कुटुम्बी मायाकी रचनासों सम्मिलित होय हैं ऐसो निश्चय करकै वह देवयानी ॥ २७ ॥ स्वप्नकी समान यह मायाजाल जान सबसों स्नेह त्याग श्रीकृष्णचंद्रमें अपने मनको लगायकै देवयानीनेहू अपनो लिंगदेह त्याग कियो ॥ २८ ॥ वा सर्वव्यापक भगवान्, सर्वज्ञ, सब भूतनमें वास करनवारे शांत ब्रह्मरूप वासुदेवके अर्थ नमस्कार है ॥ २९ ॥

नमस्तुभ्यं भगवते वासुदेवाय वेधसे ॥
सर्वभूताधिवासाय शान्ताय बृहते नमः ॥ २९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अध्याय २०.

श्रीशुक उवाच–पूरोर्वंशं प्रवक्ष्यामि यत्र जातोऽसि भारत ॥
यत्र राजर्षयो वंश्या ब्रह्मवंश्याश्च जज्ञिरे ॥ १ ॥

वीसके अध्यायमें पिताके प्रसादते राज्यासनको बडो वैभव पाय पूरुके वंशमें दुष्यंतके बेटा भरतको यश वर्णन करैं हैं ॥ शुकदेवजी कहैं हे हे भारत ! पूरुको वंश मैं कहूं हूं, जामें तुम भयेहो जा वंशमें राषऋषिनके वंश और ब्राह्मणके वंश होते भये ॥ १ ॥ पूरुको बेटा जनमेजय भयो, ताके प्रचिन्वान भयो ताके प्रवीर भयो, ताके नमस्यु भयो, ताके चारुपाद होतभयो ॥२॥ ताके सुद्यु पुत्र भयो, ताके बहुगव पुत्र भयो ताके संयति भयो. ताके अहंयाति भयो, ताके रौद्राश्व भयो ॥३॥ वा रौद्राश्वके ऋतेयु, कुक्षेयु, स्थंडिलेयु, कृतेयु, जलेयु, संततेयु, धर्मेयु, सत्येयु, व्रतेयु ॥ ४ ॥ छोटो वनेयु ये दश पुत्र घृताची अप्सरामें भए, जैसे जगतके प्राणके दश इंद्रिय होय हैं ॥ ५ ॥ ऋतेयुके रंतिभार भयो, ताके सुमति, ध्रुव, प्रतिरथ तीनि पुत्र होतभये, प्रतिरथको बेटा कण्व भयो ॥ ६ ॥ ताके मेधातिथि भयो, तातें प्रस्कण्वादिक ब्राह्मण होत भये सुमतिको बेटा रैभ्य भयो, ताको बेटा दुष्यंत भयो ॥ ७ ॥ एक दिन दुष्यंत शिकार खेलिवेको कण्वके आश्रममें गयो, तहां आश्रमको अपनी कांतिसों शोभित करती लक्ष्मीकीसी नाईं शकुंतला नामकी कन्याको देखिके तत्काल मोहित होत भयो, देवमायाकी समान या स्त्रीको देख ॥ ८ ॥ कछु योधान सहित वाकें दर्शन मात्रसो प्रसन्न और गतश्रम हैकै आनंदपूर्वक राजा वा शोभनकटिपश्चाद्भागजंघायुक्त स्त्रीसों बोलो ॥ ९ ॥ काम करिकै तप्त हसतो २ राजा कोमल वाणीसै पूछतभयो, हे कमलपत्राक्षि हे हृदयको आनंद देनवारी ! तू कौन है, कौनकी बेटी है ॥ १० ॥ कहा करिवेकी इच्छा है या निर्जन वनमें क्यों रहै है, सुंदर कटियुक्त तू निश्चय क्षत्रीकी बेटी है यह मैं जानूं हूं कारण कि पूरुके वंशमें भयेनके चित्त कबहूं अधर्ममें नहीं रमें हैं ॥ ११ ॥ तब शकुंतला बोली मैं विश्वामित्रकी बेटी हूं, मेनका अप्सरामें भई हूं मेरी मा जब स्वर्गको चली तब मोको यहां डारि गई, या बातको ये कण्वऋषि जाने हैं हे वीर ! तुम्हारो कहा प्रिय करूं ॥ १२ ॥ हे कमलनेत्र ! ह्यां बैठो, हमारी पूजाको ग्रहण करो नीवार[1] समा

१ नीवृधान्ये इति सूत्रेण घञ् प्रत्ययः ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आदि वनके अन्न मेरे हैं, तिनें भोजन करो, जो तुमें रुचे तो या रात्रि ह्यांई रहो ॥ १३ ॥ दुष्यंत बोले सुंदर भ्रुकुटीवारी कुशिकके वंशमें भई तोको यही योग्य है, राजानकी कन्या अपनें समान वर आपुही वरें हैं ॥ १४ ॥ अवश्य मैं वरूंगो या प्रकार कहिकें राजा धर्मपूर्वक गांधर्व विवाहसों शकुंतलाको व्याहत भयो, कारण कि यह राजा देशकालके विधानको जाने हैं ॥ १५ ॥ सफलवीर्य राजऋषि रानीमें वीर्य धारण करत भयो, सबेरेही अपने पुरकूं जात भयो, शकुंतलाहू समयकरिकें गर्भके नवममासमें पुत्रको उपजावत भई ॥ १६ ॥ कण्व बालककी जातकर्मादिक क्रिया करत भये सो बालक सिंहनको बांधिकें विनके संग बलकरिकें खेलतभयो ॥ १७ ॥ दुरत्यय पराक्रम हरिके अंशके अंशतें भये पुत्रको लेकें स्त्रीनमें उत्तम शकुंतला भर्त्ताके निकट जातिभई ॥ १८ ॥ राजा अनिंदिता अपनी स्त्री और पुत्रको जब नहीं ग्रहण करत भयो, तब शरीररहित आकाशवाणी सब प्राणिनकें सुनते यह कहत भई ॥ १९ ॥ माता तो आधारमात्र है, यथार्थमें पुत्र तौ पिताकोही है जो जासो उत्पन्न भयो है वह वाहीको रूप है या कारण हे दुष्यंत ! यह तेरो पुत्र है, याको भरण पालन करि, शकुंतलाकी अवज्ञा मत करे ॥ २० ॥ वंशको बढावनवारो पुत्र यमके लोकतें पिताको तारे है, तू याको पिता है गर्भको धरनवारो है, शकुंतला सांच कहे है ॥ २१ ॥ तब राजा स्त्री पुत्रको ग्रहण करत भयो, पिताके मरे पीछें सोई बालक बडो यशस्वी चक्रवर्ती भयो वा नारायणके अंशसों भये राजाकी महिमा पृथ्वीमें गाई जाय है ॥ २२ ॥ जाके दाहिनें हाथमें चक्रके चिह्न पावनमें कमलको चिह्न है, सो महाभिषेककरिकें अभिषेक कियो राजाधिराज होत भयो, गंगापें पचपन अश्वमेध यज्ञकरिकें हरिकी पूजा करतभयो ॥ २३ ॥ मामतेय ममताका बेटा ऋषिकूं पुरोहितकरिकें यमुनाके तीर अठत्तरि यज्ञके लियें घोडा बांधत भयो और बहुत धन देत भयो ॥ २४ ॥ दुष्यंतके पुत्र भरतके सुंदर देशमें अग्निचयन करिकें सहस्र ब्राह्मणनको एक एकको एक एक बद्ध संख्याके गोदान कीने एक बद्ध १३०८४ को होय है ॥ २५ ॥ वा भरतनें ३३०० सौ घोडा यज्ञके लिये बांधिके राजनको आश्चर्य्य दियो, देवतानके वैभवको अतिक्रमण करत भयो, कारण कि यह हरि भगवान्‌को प्राप्त भयो हे ॥ २६ ॥ सुपेद दांतवारे कारे कृष्णवर्ण सोनेसों अलंकृत मृग जातिके चौदह लाख हाथी मस्नार नाम कर्ममें दान किये ॥ २७ ॥ भरतके किये या बडे कर्मकी बराबरीको पहिलेभये राजा नहीं प्राप्त भये, और आगे होइगे वे नहीं पावेंगे, जैसें हाथन करिके स्वर्गको न तो आज ताई कोउ गयो न जायगो ॥ २८ ॥ किरात हूण यवन मद्र कंक खश शक अब्रह्मण्य राजा और म्लेच्छानको दिग्विजयमें मारत भयो ॥ २९ ॥ पहिले देवतानको जीतिकें जे बली दैत्य देवतानकी स्त्रीनको रसातलमें लेगये हे विन्हे राजा भरत अपने प्राणिनके द्वारा फिर लाइ देत भयो ॥ ३० ॥ ताकी प्रजानको संपूर्ण काम ये आकाश पृथ्वी पूरण करत भये, सत्ताईस हजार वर्षतक दिशानमें वा चक्रवर्ती राजाकी आज्ञा प्रचलित रही ॥ ३१ ॥ सो चक्रवर्ती भरत लोकपालनके ऐश्वर्य राजाधिराजकी सम्पत्ति अस्खलन आज्ञा और प्राण ये सब झूठे विचारिकें विनसों उपरामको प्राप्त होत भयो ॥ ३२ ॥ हे राजन् ! वा भरतके विदर्भदेशके राजाकी बेटी वाकी आज्ञाकारिणी तीनि स्त्री होत भई विनसों राजाने कही यदि तुमारे मेरी बराबर पराक्रम आदि गुणयुक्त पुत्र न भये

---

१ पुत्रं भरस्व ऐसे जो देववाणीने कही याहीसों या बालकको नाम भरत भयो ॥ २ पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मात्पितरं त्रायते सुतः । तस्मात्पुत्र इति प्रोक्तो भगवान् मनुरब्रवीत् ॥ पुंनाम नरकसों उद्धार करै है यासों पुत्र नाम है ये भगवान् मनुने कही है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तो अवश्य तुमे व्यभिचारिणी समझके मरवाय देउंगो यह सुनिकै कहूं राजा व्यभिचारकी शंका-सौ हमें त्यागन करदेय या भयते पुत्रनको जे जे भये तिनको सबनको मारती भई ॥ ३३ ॥ याहीसो वाको वंश व्यर्थ भयो, तब पुत्रके लिये मरुत सोमयज्ञ करिकै पूजा करतो भयो, तब मरुत भरद्वाज नाम पुत्र देत भये ॥ ३४ ॥ भरद्वाजके जन्मकी कथा कहै है, एक समय उतथ्य भाईकी गर्भिणी स्त्रीमें बृहस्पति मैथुन करवेकों चौरीसौ प्रवृत्त भये तब गर्भके बालकनै कही यहां दूसरेके रहवेको ठौर नहीं है तुम ऐसो मत करो तब क्रोधकर बृहस्पतिने शाप दियो तू अंधो हो ऐसै कहके अपनो वीर्य वामें धारण कियो ॥ ३५ ॥ तब वानै गर्भस्थ बालकने बृहस्पतिके वीर्यको एडीके प्रहारसौ बाहर निकाऱ्यो, वह भूमिमें गिऱ्यो और तत्काल बालक है गयो, तब अपनें स्वामीके त्यागवैके भयसौं ममता वाके त्याग करवेकी इच्छा करनलगी तब देवता बालकके नामकरणको श्लोक कर गावत भये ॥ ३६ ॥ पुत्र छोडिकैं चली ममता तासूं बृहस्पति बोले हे मूढे ! या पुत्रको (तू भर) पोषण कर क्योंकि (द्वाज) हमतें और तोतें भयो है तब ममता बोली हे बृहस्पते ! तुमही याको पालन करो मोतें तोतें दोनोंनतें अन्यायसौं भयो है, मैं अकेली नहीं करोंगी ऐसें कहिकैं दोनों पुत्रको छोडिकैं चले गये यातें वाको नाम भरद्वाज भयो ॥ ३७ ॥ ऐसे देवतानने प्रार्थना की तथापि वह पुत्रको वृथा समझ छोड गई तब मरुतननै वाय पालकें बडो कियो और भरतवंशको नष्ट होतो देख वा भरद्वाजको भरतको दिया ॥ ३८ ॥

चोद्यमाना सुरैरेवं मत्वा वितथमात्मजम् ॥
व्यसृजन्मरुतोऽबिभ्रन् दत्तोऽयं वितथेऽन्वये ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय २१.

श्रीशुक उवाच–वितथस्य सुतो मन्युर्बृहत्क्षत्रो जयस्ततः ॥
महावीर्यो नरो गर्गः संकृतिस्तु नरात्मजः ॥ १ ॥

इकीसके अध्यायमें दुष्यंतके पुत्र भरतको वंश कहैं हैं, जा वंशमें रंतिदेव अजमीढादिककी कीर्ति विस्तारतें कहैंगे ॥ श्रीशुकदेवजी कहै है वंश व्यर्थ हैवेपे दियो गयो या कारण वाको नाम वितथ भयो वितथको बेटा मन्यु ताते बृहत्क्षत्र जय महावीर्य नर गर्ग ये पांच पुत्र होते भये ॥ १ ॥ हे पांडुनंदन ! नरके बेटा संकृतिके गुरु और रंतिदेव दो पुत्र भये रंतिदेवको यश या लोक और परलोकमें गायो जाय है ॥ २ ॥ अकस्मात् जो द्रव्य मिलजाय वाहीसों यह राजा निर्वाह करतो जो पास होतो वाय दान करदेतो जो नवीन प्राप्त होतो वाय भोगतो तथापि धीरजको त्याग नहीं करतो एक समय कुटुम्बसहित महादुःखी भयो ॥ ३ ॥ एक समय राजाको विना अन्न जल खाये पिये अडतालीस दिन व्यतीत होत भये अगले दिन प्रातःकाल घृत खीर लपसी जल यह अकस्मात् प्राप्त भये ॥ ४ ॥ याको कुटुम्ब वा समय भूंख प्याससों व्याकुल महाकष्ट भोग रह्यो हो कांप रह्यो हो कुटुम्बसहित रंतिदेवनै जो उनचासमें दिन आयो हो वाकू पुत्र पुत्रवधूभार्या और आप चारों प्राणी वा अन्नके चार विभाग कर भोजनकी इच्छा करतेहै भोजनके समय एक अतिथि ब्राह्मण

१ बृहस्पतिने कही " इमं द्वाजं त्वं भर " ममताने कही " इमं द्वाजं त्वं भर " ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आवत भयो ॥ ५ ॥ सो राजा श्रद्धा करिकैं युक्त आदरसौं वा ब्राह्मणके अर्थ अपनो अन्न देत भयो कारण कि यह राजा सबमें भगवद्दृष्टि राखतो हो जब ब्राह्मण भोजनकर चलो गयो ॥ ६ ॥ ता पीछें भोजनकी इच्छाकर कुटुंबके अर्थ अन्नादिकको भाग कर भोजन करौ चाहतो हौं तब और एक शूद्र अतिथि आवतभयो, तब राजा बांट कियें अन्नकौं शूद्रके अर्थ हरिको स्मरण करत देतभयो ॥ ७ ॥ शूद्रके गये संते और अतिथि कुत्तानकरिकै सहित आवत भयौ और बोलो हे राजन्! कुत्तान सहित मैं भूखो हूं मोकूं अन्न दे ॥ ८ ॥ सो राजा आदरकरिकै बहुत सन्मानसूं वाकौंको अन्न ताइ दे करिकै कुत्तानके अर्थ और कुत्तानके पतिके अर्थ नमस्कार करत भयो ॥ ९ ॥ एक प्राणी जासूं तृप्त होई इतनों पानीमात्र बाकी रह्यो ताइ पीवेकी इच्छा करते समय एक चांडाल आवत भयो हे राजन्! मैं प्यासो हूं मेरे अर्थ जल देउ ॥ १० ॥ ताकी अतिश्रमभरी करुणा वाणी सुनिकै कृपाकरिकै संतप्त राजा यह अमृतसो वचन कहत भयो ॥ ११ ॥ ईश्वरते मैं अणिमादिक अष्टसिद्धि युक्त सिद्धि और मोक्ष नहीं इच्छा करूं हूं केवल यही प्रार्थना है कि मैं सब प्राणीके उदरमें रहिके सबको दुःखभोग करूं जासों सब सुखी होंय जीवनकी दुःख निवृत्तिमेंही मोकौं सुख है ॥ १२ ॥ भूख प्यास श्रम शरीरको परिश्रम दैन्य क्लम शोक खेद मोह वे सिगरे कृपण जीवेकी इच्छा करनवारे प्राणीको जीवन दाता मेरे जल अर्पणते निवृत्त होत भये ॥ १३ ॥ ऐसें कहिकै प्यासके मारें मरतो स्वभावकरिकै धीर और दयावान् राजा चांडालके अर्थ जल देतभयो ॥ १४ ॥ त्रिलोकीके ईश्वर फल चाहनवारेनको फलके देनवारे ब्रह्मा विष्णु रुद्र जिन्हने मायासों ब्राह्मणादिको रूप धारण कियो हो वे राजाको अपनें स्वरूपको दिखावते भये ॥ १५ ॥ राजा तिनके अर्थ नमस्कार करिकैं निःसंग निस्पृह व्हैकैं भक्तिकरिकैं केवल वासुदेवमें मन करत भयो ॥ १६ ॥ हे राजन्! ईश्वरालंबन चित्त करते ईश्वर विना और फलकी इच्छा नहीं करनवारे राजाकी गुणमयी माया स्वप्नकीसी नाई लीन होति भई ॥ १७ ॥ ताके प्रसंगके प्रभाव करिकैं रंतिदेवकें अनुवर्ती सब लोग योगी और नारायण अश्रय होतभये ॥ १८ ॥ गर्गतें शिनिपुत्र होत भयो, शिनितें गार्ग्यनाम ब्रह्मकुल प्रवर्त्त होत भयो, यह क्षत्रियद्वारा ब्रह्मकुल भयो, महावीर्य्यतें दुरतिक्षय भयो, तातें त्रय्यारुण कवि पुष्करारुण ये तीनि होत भये, तेऊ ब्राह्मण गतिको प्राप्त भये, बृहत्क्षत्रको पुत्र हस्ति भयो जाने हस्तिनापुर कियो ॥ १९ ॥ २० ॥ अजमीढ द्विमीढ पुरुमीढ ये ३ हस्तीके पुत्र होते भये, अजमीढके वंशमें भये प्रियमेधते आदि लेके ब्राह्मण होतभये ॥ २१ ॥ अजमीढते बृहदिषुनाम पुत्र होतभयो, ताके पुत्र बृहद्धनु भयो ताके बृहत्काय भयो ताकें पुत्र जयद्रथ भयो ॥ २२ ॥ ताको पुत्र विशद भयो ताकै सेनजित् भयौ, ताके रुचिराश्व दृढहनु काश्य वत्स ४ पुत्र भये ॥ २३ ॥ रुचिराश्वको पुत्र पार भयो, पारको पुत्र पृथुसेन भयो पारको दूसरो पुत्र नीप भयो ताके सौ पुत्र भये ॥ २४ ॥ सोई नीप कृत्वी नामकी शुककी कन्यामें ब्रह्मदत्त नाम पुत्र उपजावत भयो, योगी ब्रह्मदत्त सरस्वती भार्य्यामें विष्वक्सेन नाम पुत्र उपजावत भयो ॥ २५ ॥ सोई जैगीषव्यको उपदेश करिकैं योगतन्त्र करत भयो ताको पुत्र उदक्स्वन भयो, तातें भल्लाद होत भयो ये बृहदिषुके वंशके भये ॥ २६ ॥ द्विमीढकों बेटा यवीनर होतभयो, ताकें कृतिमान भयो, ताके सत्यधृत भयो, ताकें दृढनेमि भयो ताकें सुपार्श्व भयो ॥ २७ ॥ तातें सुमति भयो, तातें संनतिमान भयो, तातें कृती भयो जो कृती हिरण्यनाभिते योग पाइके प्राच्यसामवेदकी छै संहिता पढावत भयो ताको बेटा नीप भयो, ताकें उग्रायुध भयो ताके क्षेम्य भयो ताके सुवीर, ताके रिपुंजय ॥ २८ ॥ २९ ॥ ताकें बहुरथ होत भयो, पुरुमीढके पुत्र न भयो अजमीढकी स्त्री नलिनीमें नील

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ताको बेटा शांति भयो ॥ ३० ॥ शांतिके सुशांति भयो, ताको पुत्र पुरुज भयो, ताके अर्क भयो ता अर्कके भर्म्याश्व पुत्र भयो, भर्म्याश्वके बेटा पांच मुद्गलते आदि लेकें भये ॥ ३१ ॥ यवीनर बृहदिषु काम्पिल्य संजय ये पांच भये, भर्म्याश्व पुत्रनते कहत भयो कि तुम मेरे पांचों पुत्र पांच देशनकी रक्षा करवेमें समर्थ हो ॥ ३२ ॥ वे विन पांचों देशनके पालनमें समर्थ भये यातें विन देशनकी और विन राजनकी संज्ञा पांचाल होती भई मुद्गलतें ब्राह्मकुल होत भये मौद्गल्य संज्ञाको गोत्र भयो ॥ ३३ ॥ भर्म्याश्वको बेटा मुद्गल, तातें मिथुन होत भयो दिवोदास नाम पुत्र होत भयो, अहल्या कन्या भई, जामें गौतमके पुत्र शतानंद होत भये ॥ ३४ ॥ ताके सत्यधृत भयो, सो धनुषविद्यामें पारंगत भयो, ताको बेटा शरद्वान भयो जाको वीर्य उर्वशीके दर्शनते सरकंडेनके समूहमें गिरत भयो, ताते शुभ मिथुन होतभयो ॥ ३५ ॥ शंतनु राजा शिकार खेलते वनमेंते वा मिथुनको देखिकें कृपा करिके ग्रहण करतभये, तामें बालक भयो सो कृपाचार्य भयो कन्या भई सो द्रोणकी स्त्री कृपी भई ॥ ३६ ॥

शरस्तम्बेऽपतद्रेतो मिथुनं तदभूच्छुभम् ॥
तद् दृष्ट्वा कृपयाऽगृह्णाच्छन्तनुर्मृगयां चरन् ॥
कृपः कुमारः कन्या च द्रोणपत्न्यभवत् कृपी ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अध्याय २२.

श्रीशुक उवाच-मित्रेयुश्च दिवोदासाच्यवनस्तत्सुतो नृप ॥
सुदासः सहदेवोऽथ सोमको जन्तुजन्मकृत् ॥ १ ॥

बाईसके अध्यायमें दिवोदासको वंश कहिकें ऋक्षके वंशमें जरासंध युधिष्ठिरादिक दुर्योधनादिकके वंश वर्णन करें है ॥ शुकदेवजी कहैं हैं दिवोदासते मित्रेयु भयो, ताको पुत्र च्यवन भयो ताकें सुदास भयो ताको सहदेव, ताके सोमक, ताकें जंतु भयो ॥ १ ॥ ताकें सौ पुत्र भये, तिनमें छोटो पृषत भयो, पृषतके द्रुपद भयो, ताकें द्रौपदी कन्या भई धृष्टद्युम्नादिक पुत्र भये ॥ २ ॥ धृष्टद्युम्नके धृष्टकेतु भयो, ये भर्म्याश्वके वंशके कहे ये पंजाबके राजा भये, अजमीढको बेटा ऋक्ष कह्यो ताकें संवरण भयो ॥ ३ ॥ तातें सूर्यकी कन्या तपतीमें कुरुक्षेत्रको पति कुरु होतो भयो, कुरुके परीक्षित् सुधनु जह्नु निषध ये चार पुत्र होत भये ॥ ४ ॥ सुधनुके सुहोत्र भयो, ताकें च्यवन भयो ताकें कृती भयो, ताकें उपरिचर नाम वसु भयो, ताकें बृहद्रथादि ॥ ५ ॥ कुशांब, मत्स्य प्रत्यग्र चेदिप ये पुत्र भये वे चंदेलीके राजा भये, बृहद्रथतें कुशाग्र भयो, ताकें ऋषभ भयो ॥ ६ ॥ ताके पुत्र सत्यहित भयो, ताकें पुष्पवान् भयो ताको बेटा जहु भयो, और एक स्त्रीमें बृहद्रथतै बालककी दो फांक होती भई अर्थात् बृहद्रथकी दूसरी रानीके एक गर्भमेंसो दो टूक बराबर सर्वांग भये ॥ ७ ॥ वे दोउ खंड मातानें बाहर डारि दिये, जरा राक्षसी उसै मिलाई जीव जीव ऐसें क्रीडा करत भई, तब सो जरासंध नाम पुत्र होत भयो अर्थात् कहींसे जरा राक्षसी डोलही आई वाने बाहिर धूरेपे परे दोउ खंड देख विनको बराबर करके जोरके धरके जीव जीव ऐसें कही सो वो बालक जी उठो वाको जरासंध नाम भयो ॥ ८ ॥ ताते सहदेव भयो, ताके सोमापि, ताके श्रुतश्रवा भयो, परी-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

क्षित् अपुत्र भयो, जहुको बेटा सुरथ होत भयो ॥ ९ ॥ तातें विदूरथ भयो, तातें सार्वभौम भयो, ताको बेटा जयसेन भयो, तातें राधिक भयो, तातें अयुतायु भयो ॥ १० ॥ तातें क्रोधन भयो, तातें देवातिथि भयो, ताकें ऋष्य ताकें दिलीप, ताकें प्रतीप भयो ॥ ११ ॥ ता प्रतीपके देवापि शंतनु बाह्लीक ये तीनि होत भये देवापि पिताकों राज्य छोडिकै वनमें गयो ॥ १२ ॥ तब शंतनु राजा होत भये, जो शंतनु पहिले जन्ममें महाभिष नाम होत भये, जाकू हाथ करिकै छिवैसो बूढोहू मनुष्य नवीन यौवनको प्राप्त होय ॥ १३ ॥ जा कारण कि विनसौ मनुष्यनको शांति प्राप्त होतीही या कर्मसौ वो शंतनु नाम होतो भयो तिनके राज्यमें बारह वर्ष ताई इंद्रने वर्षा न करी ॥ १४ ॥ ब्राह्मणनने शंतनुसूं कही तुम बडे भैयाके विद्यमान होते राज्यभोग करो हो याते तुम परिवेत्ता हो याही दोषसों राज्यमें मेह नहीं वर्षे है सो तुम पुर देशके बढाइवेके लिये बडेको राज्य देउ तब तुमारे राज्यमें मेह वर्षे जो ॥ १५ ॥ ब्राह्मणसो ऐसे सुन शंतनु वनमें जायकें राजाको प्रजा पालिवो बडो धर्म है राज्यको स्वीकार करो ऐसें प्रार्थना करी यासौ पहलेही शंतनुके मंत्रिननै यह वार्ता अच्छी नहीं समझकें कछुक धन दे ब्राह्मणनको भेजकें वाको पाखण्ड मतको उपदेश करायकें नास्तिक कराय दियो जासौ वह राज्यके योग्य न रहो और वेदकी निंदा करवेसौ बडपन जातो रह्यो ॥ १६ ॥ वेदकी निंदा करी तब शंतनुको दोष गयो, इंद्रने वर्षा करी देवापि योगमें स्थित ह्वैकें कलापग्राममें वसत भयों सो अबताईं कलापग्राममें निवास करै है ॥ १७ ॥ कलियुगमें चंद्रवंश नष्ट होइगो तब सत्ययुगकी आदिमें फेरि यही देवापि चंद्रवंश चलावेगो बाह्लीकतैं सोमदत्त भयो, तातें भूरि, भूरिश्रवा ॥ १८ ॥ शल ३ पुत्र होते भये, शंतनुके गंगामें ज्ञानवान् भीष्म होतभयो, जो सब धर्मवेत्तानमें श्रेष्ठ महाभागवत कवि भये ॥ १९ ॥ वीरनके यूथमें श्रेष्ठ जिनने युद्धमें परशुरामको प्रसन्न कियो, शंतनुकैं दाशकन्यामें चित्रांगद पुत्र होत भयो ॥ २० ॥ छोटो विचित्रवीर्य्य होत भयो, चित्रांगदको चित्रांगद नाम गंधर्वनें मारचो, जा सत्यवतीमें साक्षात् हरिकी कला ॥ २१ ॥ वेदके रक्षक मुनिकृष्णनाम श्रीव्यासजी महाराज होत भयो, जिनते मैं भयो हूं, और यह श्रीभागवत पठत भयो, भगवान् व्यासजी अपनें शिष्य पैलादिकको छोडिकै ॥ २२ ॥ में शांत पुत्रके अर्थ परम गोप्य यह श्रीमद्भागवत पुराण गावत भये, अर्थात् सिखावत भये, स्वयंवरतें भीष्मजीने बलते हरी काशीराजकी बेटी अंबा अंबिका अंबालिकाको विचित्रवीर्य्य व्याहत भयो, तिनमें अंबाको तो शल्यमें आसक्त जानके परित्याग किये जो आयके शिखंडी भयो और अंबिका अंबालिका विचित्र वीर्यको व्याही सो विचित्रवीर्य विनमें आसक्त हृदय भयो क्षयरोगमें ग्रस्यो वाही रोग करिकै मरचो ॥ २३ ॥ २४ ॥ तब अपुत्र भैयाके क्षेत्रमें माताकी आज्ञासों व्यासदेवजी धृतराष्ट्र पांडु विदुर ये ३ पुत्र उपजावत भये ॥ २५ ॥ धृतराष्ट्रके गांधारीमें सौ पुत्र होत भये तिनमें दुर्योधन जेठो भयो दुःशला कन्या भई ॥ २६ ॥ वनमें मृगके शापतें मैथुनते रुके पांडुकी स्त्री कुंतीमें धर्म पवन इंद्रतें युधिष्ठिरादि तीनि पुत्र भये ॥ २७ ॥ माद्रीमें अश्विनीकुमारतें नकुल, सहदेव होते भये, पांचों

---

१ एक दिन पांडु सिकारको गये वहां एक ऋषि मृगरूपसो अपनी मृगीरूप पत्नीसौ मैथुन करते देखे पांडुने अनजाने मृगको मार गेरो मृगीरूप पत्नीने शाप दियो कि जो तू आज पीछे स्त्रीसंग करैगो तो मरजायगो ॥ २ शाप भये पर संतत्यभाव देख पांडुने कुंतीते कही तब कुंतीने दैवहूतीविद्याके बलसौ पांडुकी आज्ञासो देवांशसो देवतानकूं बुलायकें तीन पुत्र उत्पन्न किये ॥ ३ जब ऐसें पांडुकों स्त्रीसंगनिवृत्ति भयो एक दिन माद्रीको शृंगार करै देख कामवश पांडुने जबरदस्ती मैथुन कियो सोई पांडुके मरवेको निमित्त भयो ये सब कथा भारतसो जाननी चहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

युधिष्ठिरादिकनतें द्रौपदीमें पांच पुत्र होत भये जो तुम्हारे पितर थे ॥ २८ ॥ युधिष्ठिरतैं प्रतिविंध्य भयो, भीमसेनतें श्रुतसेन भयो, अर्जुनतें श्रुतकीर्ति भयो, नकुलके शतानीक भयो ॥ २९ ॥ सहदेवको बेटा श्रुतिकर्मा भयो, ऐसेंई पांचोंनकी और स्त्री हैं तिनमें और पुत्र भये युधिष्ठिरतें पौरवीमें देवक भयो भीमसेनतें हिडंबामें घटोत्कच भयो, भीमसेनतें कालीमें सर्वगत भयो, सहदेवतें सुहोत्रकू या पर्वतकी बेटी विजया उपजावत भई ॥ ३० ॥ ३१ ॥ करेणुमतीमें नकुल निरमित्र उपजावत भयो, ऐसें अर्जुन उलूपीमें इरावंत उपजावत भयो, तैसेई मणिपूरपतिकी बेटीमें बभ्रुवाहनको उपजावत भयो, सो बभ्रुवाहन अर्जुनको बेटा है, पर नानाने गोद लियो यातें मणिपूरपतिको पुत्र कहायो ॥ ३२ ॥ तेरो पिता अभिमन्यु अर्जुनके सुभद्रामें होत भयो, संपूर्ण अतिरथीनको जीतनवारो भयो, तातें हे राजन् परीक्षित ! उत्तरामें तुम भये ॥ ३३ ॥ कौरवन नष्ट भये संते अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रके तेज करिकैं श्रीकृष्णके प्रभाव करिकैं जीवसहित मृत्युतें तुम छूटे ॥३४॥ हे तात ! तेरे ये पुत्र हैं जनमेजय जिनमें बडो और श्रुतसेन और भीमसेन और पराक्रमी उग्रसेन ॥३५॥ जनमेजय तक्षकतें तुम्हारी मृत्यु भई सुनिकैं क्रोधयुक्त सर्पयज्ञकी अग्निमें सर्पनको होम करैगो ॥३६॥ कवषको बेटा तुर नाम पुरोहित करिकैं सब पृथ्वी जीतिकैं यज्ञन करिकैं पूजन करैगो अश्वमेध यज्ञ करेगो ॥ ३७ ॥ ताको पुत्र शतानीक होइगो, सो याज्ञवल्क्यतें तीनों वेद पढेगो, वे शातानीक अस्त्रज्ञान और क्रियाज्ञान शौनकतें प्राप्त होइगो ॥३८॥ ताको बेटा सहस्रनीक होइगो ताकें अश्वमेधज होइगो ताके असीमकृष्ण होइगो ताकें निमिचक्र होइगो ॥ ३९ ॥ गंगासों हस्तिनापुर जब वहि जायगो तब यह निमिचक्र कौशांबी पुरीमें वसेगो, तातें चित्ररथ होइगो तातें कविरथ होइगो ॥ ४० ॥ तातें वृष्टिमान् तातें सुषेण ताको सुनीथ राजा होइगो, ताकें नृचक्षु ताकें सुखीनल होयगो ॥ ४१ ॥ तातें पुत्र पारिप्लव होइगो, ताकें सुनय, ताकें मेधावी, ताकें नृपंजय ताकें दूर्व तातें तिमि होइगो, तिमिके बृहद्रथ तातें सुदास ताकें शतानीक ॥ ४२ ॥ तातें दुर्दमन ताको बेटा वहीनर, ताकें दंडपाणि ताकें निमि ताकें क्षेमक होइगो ॥ ४३ ॥ ब्रह्मक्षत्रको यह वंश कह्यो याको देवता ऋषिननें सत्कार कियो, यह क्षेमक राजाको पाइकैं कलियुगमें वंश समाप्तिको प्राप्त होइगो ॥ ४४ ॥ याके अनंतर होनहार मगधके राजानको तेरे अर्थ कहूं हूं सहदेवकें मार्जारि होइगो, ताकें श्रुतश्रवा होइगो ॥ ४५ ॥ तातें अयुतायु ताकें निरमित्र, ताकें सुनक्षत्र, तातें बृहत्सेन, ताकें कर्मजित् ॥ ४६ ॥ तातें सृतंजय, ताकें विप्र, ताकें शुचि ताकें क्षेम, ताकें सुव्रत, ताकें धर्मसूत्र, ताकें शम होइगो ॥ ४७ ॥ ताकें द्युमत्सेन, ताकें सुमति, ताकें सुबल ताकें सुनीथ ताकें सत्यजित, ताकें विश्वजित, ताकें रिपुंजय ये बृहद्रथके वंशके राजा कहे कलियुगके हजार वर्षमें होनहार हैं ये वंश जरासंधको फिर समाप्त है जायगो ॥ ४८ ॥

द्युमत्सेनोऽथ सुमतिः सुबलो जनिता ततः ॥
सुनीथः सत्यजिदथ विश्वजिद् यद्रिपुंजयः ॥
बार्हद्रथाश्च भूपाला भाव्याः साहस्रवत्सरम् ॥ ४८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २३.

श्रीशुक उवाच-अनोः सभानरश्चक्षुः परोक्षश्च सुतास्त्रयः ॥
सभानरात् कालनरः सृंजयस्तत्सुतस्ततः ॥ १ ॥

तेईसके अध्यायमें ययातिके पुत्र अनु, द्रुह्यु, तुर्वसुको वंश क्रमसों वर्णन करैं हैं और यदुको वंश ज्यामघकी उत्पत्तितक कहे हैं ॥ पूरुको वंश तौ कह्यौ अब चौथे अनुको वंश शुकदेवजी कहैं हैं अनुकें सभानर चक्षु परोक्ष ये तीनि पुत्र होत भये, सभानरतें, कालनर भयो, ताको पुत्र सृंजय भयो ॥ १ ॥ ताकें जनमेजय, ताकें महाशील ताकें महामना भयो, उशीनर तितिक्षु ये महामनाके पुत्र होतभये, शिवि वन शमी दक्ष ये चारि उशीनरकें पुत्र भये ॥ २ ॥ वृषादर्भ सुवीर भद्र कैकेयी ये चारि शिबिके बेटा भये तितिक्षुके उशद्रथ भयो ॥ ३ ॥ तातें हेम भयो, ताकें सुतपा भयो सुतपाकें बलि भयो, अंग वंग कलिंग इनतें आदि लैकें सुह्म पुंड्र अंध्र ये संज्ञाके राजा बलिके क्षेत्रमें दीर्घतमातें होतभये, वे राजा पूर्वमें अपने अपने नामके छै देश करत भये ॥ ४ ॥ ५ ॥ अंगतें खनपान, तातें दिविरथ, ताको बेटा धर्मरथ भयो, ताकें चित्ररथ भयो, सो संतानकरिकैं हीन भयो ॥ ६ ॥ वही चित्ररथ राजा रोमपाद विख्यात भयो, ताके अर्थ, दशरथ सखा अपनी कन्या शांता देत भयो, ताय शृंगीऋषि व्याहत भये ॥ ७ ॥ इंद्रके न वर्षेते हिरनीके बेटा शृंगीऋषिकू स्त्री नाट्य संगीत वादित्र विभ्रम आलिंगन पूजन करिकैं लावत भई ॥ ८ ॥ सो शृंगीऋषि अपुत्र राजाको इंद्रकी इष्टिकरिकैं पुत्र देत भये जाकरिकैं अपुत्र दशरथ पुत्रनको प्राप्त होत भयो ॥ ९ ॥ रोमपादतें चतुरंग भयो, ताके पृथुलाक्ष भयो ताके बृहद्रथ, बृहत्कर्मा, बृहद्भानु ये ३ पुत्र भये ॥ १० ॥ बृहद्रथतें बृहन्मना भयो, ताकें जयद्रथ भयो, ताके विजय भयो ताकें संभूतीमें धृत होत भयो ॥ ११ ॥ तातें धृतव्रत भयो ताकें सत्कर्मा, ताकें अधिरथ भयो वो क्रीडा करतो अधिरथ एक दिन गंगातीरमें संदूकके भीतर एक बालक देखतभयो जा कुंतीनै कन्यापनेमें हैवेके कारण त्याग कियो हो अपुत्र अधिरथ वाकू पुत्र करत भयो वाको नाम कर्ण भयो वा कर्णकें वृषसेन भयो ॥ १२ ॥ १३ ॥ ययातिके पुत्र द्रुह्युके बभ्रु होत भयो, ताकें सेतु भयो, ताकें आरब्ध ताकें गांधार ताकें धर्म ताके धृत पुत्र भयो ॥ १४ ॥ धृतके दुर्मना भयो, ताकें प्रचेता भयो, प्रचेताकें पुत्र १०० भये वे म्लेच्छनके राजा उत्तर दिशामें वसत भये अब अगारी ययातिके पुत्र तुर्वसुको वंश कहे हैं ॥ १५ ॥ तुर्वसुको बेटा वह्नी भये, ताके भर्ग भयो ताकें भानुमान ताकें त्रिभानु ताको पुत्र करंधम उदारबुद्धि भयो ॥ १६ ॥ ताको बेटा मरुत भयो सो अपुत्र भयो या कारण वंशमें भये दुष्यंतकूं पुत्र मानत भयो सो दुष्यंत राज्यकी कामनासों पीछे अपने वंशकूं प्राप्त होत भयो ॥ १७ ॥ हे राजन् ! अब ययातिके जेठे बेटा यदुको वंश वर्णन करूं हूं, हे नरनमें श्रेष्ठ ! जो ॥ १८ ॥ मनुष्य यदुके वंशको सुने ते संपूर्ण पापनकरिकैं मुक्त होय है, जा वंशमें भगवान् परमात्मा नराकृति अवतार लेत भये ॥ १९ ॥ यदुके सहस्रजित, क्रोष्टा, अनल, रिपु ये चारि बेटा भये तिनमें सहस्रजित्को बेटा शतजित् भयो ॥ २० ॥ ताकें महाहय वेणुहय हैहय ३ होते भये हैहयको बेटा धर्म भयो, ताके नेत्र भयो, ताकें कुंत ताकें सोहंजी, ताकें महिष्मान् ताके भद्रसेन ॥ २१ ॥ ताकें दुर्मद ताकें धनक भयो, कृतवीर्य कृताग्नि कृतवर्मा कृतौजा ये धनकके बेटा भये ॥ २२ ॥ कृतवीर्यको बेटा अर्जुन भयो, सो सातों द्वीपको पति भयो, जाने हरिके अंश दत्तात्रेयतें योग और महागुण पाये ॥ २३ ॥ कृतवीर्यके बेटा अर्जुनकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गतिको कोईभी राजा यज्ञ दान तप योग श्रुत वीर्य जयादिक इन करिकैं नहीं प्राप्त भये ॥२४॥ नहीं नष्ट भयो बल जाको ऐसो सहस्रबाहु पिच्चासी हजार वर्षताईं अक्षय छै इंद्रीनको विषयभोग करत भयो और जाने याको स्मरण कियो ताके धनको नाश न भयो ॥ २५ ॥ ताकें हजार पुत्र भये, तिनमें संग्राममें जयध्वज सूरसेन वृषभ मधु ऊर्जित पांच बचे ॥ २६ ॥ जयध्वजते तालजंघ भयो, ताके सौ पुत्र भये वो तालजंघ नाम क्षत्रीनको कुल और्वऋषिके तेजनकरिकै सागरने संग्राममें नाश कियो ॥ २७ ॥ तिनमें बडो वीतिहोत्र ताकें मधु भयो ताकें वृष्णी भयो ताके सौ पुत्र भये तिनमें तृष्णी जेठो भयो जातें यह कुल चल्यो ॥ २८ ॥ हे राजन् ! यदु मधु और वृष्णीके नामसे विनके वंशके यादव माधव और वृष्णी कहाये यदुके पुत्र क्रोष्टाकें वृजिनवान पुत्र होतो भयो ॥ २९ ॥ ताके स्वाहित ताकें रुशेकु, ताकें चित्ररथ ताकें शशिबिंदु सो बडो योगी भयो ताकें महाभोज होतभयो ॥ ३० ॥ याके पास चौदह महारत्न हे यह चक्रवर्ती सबको जीतनवारो भयो, ताकें दश-हजार स्त्री भई ॥ ३१ ॥ तिनमें दश लाख हजार बेटा भये तिनमें छः उत्तम भये तिनमें पृथु-श्रवाकें ॥ ३२ ॥ धर्म नामक पुत्र भयो, ताके सौ अश्वमेध यज्ञ करनवारो उशना नामपुत्र भयो ताको बेटा रुचक भयो, ताके पांच पुत्र भये तिनें सुनो पुरुजित रुक्म रुक्मेषु पृथु ज्यामघ ॥ ३३ ॥ ज्यामघ अपुत्र भयो अपनी शैव्या रानीके भयते और भार्य्याके संग विवाह न करसक्यो एक दिन स्वयंवरमें शत्रुको तिरस्कार करके घरते भोज्या नाम कन्या हरतभयो ॥३४॥ रथमें बैठी कन्याको देखिकै क्रोधकरिकैं शैव्या पतिसो बोली, हे कपटी ! यह कौन है, मेरे बैठिवेके रथमें बैठी है ॥ ३५ ॥ तब ज्यामघ बोल्यो यह तेरे बेटाकी बहू है, तब शैव्या हँसिकै पतिसों बोली मैं बांझ हूं मेरे सौति नहीं जाको बेटा होई यह बेटाकी बहू कैसे हैसकेहै ॥ ३६ ॥ ज्यामघ बोल्यो हे राज्ञि ! जा पुत्रको तू उपजावेगी, ताकी यह बहू होयगी ऐसें स्त्रीके भयके मारे कंपित अंग राजाको प्राण संकट देखिकै पहिलै पूजे विश्वेदेवता पितर राजाके पुत्र होइ ऐसें अनुमोदन करतभये ॥३७॥ शैव्या गर्भको धारण करत भई समयमें पुत्र उपजायो सो विदर्भ नाम कह्यो सो वा भोज्याको व्याहत भयो सो पुत्रवधूही भई ॥ ३८ ॥

शैव्या गर्भमधात् काले कुमारं सुषुवे शुभम् ॥
स विदर्भ इति प्रोक्त उपयेमे स्नुषां सतीम् ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां नवमस्कन्धे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

श्रीशुक उवाच-तस्यां विदर्भोऽजनयत् पुत्रौ नाम्ना कुशक्रथौ ॥
तृतीयं रोमपादं च विदर्भकुलनन्दनम् ॥ १ ॥

चौविसके अध्यायमें विदर्भके तीनि पुत्र होतभये तिनके नाना प्रकारके वंश रामकृष्णके जन्म ताई वर्णन करैं हैं ॥ शुकदेवजी कहै हे विदर्भ भोज्यामें कुश और क्रथ ये दो पुत्र उपजावतभयो तीसरो रोमपाद भयो, सो विदर्भ कुलको आनंद देनवारो भयो ॥ १ ॥ रोमपादको बेटा बभ्रु भयो, बभ्रुके कृत भयो कृतके उशीक भयो, ताके चेदिनाम पुत्र भयो ताके दमघोषादिक राजा भये वे सब चैद्य कहाये ॥ २ ॥ क्रथके कुंत भयो, ताके धृष्टी भयो ताके निर्वृति भयो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ताते दशार्ह नाम भयो ताके व्योम भयो ॥ ३ ॥ ताके जीमूत भयो, ताके विकृति भयो, ताके भीमरथ भयो, ताते नवरथ भयो ताके दशरथ भयो ॥ ४ ॥ ताके शकुनि भयो, ताकें करंभी, ताको बेटा देवरात भयो, ताकें देवक्षत्र भयो, ताके मधु, ताके कुरुवश, ताके अनु भयो ॥ ५ ॥ अनुके पुरुहोत्र भयो, ताके आयु, ताके सात्वत सात्वतके भजमान, भजि, दिव्य, वृष्णी, देवावृध, अंधक और महाभोज ये सात पुत्र भये, भजमानके निम्लोची भयो, किंकिण वृष्णी ये एक स्त्रीमें भये ॥ ६ ॥ ७ ॥ दूसरीमें शताजित सहस्राजित अयुताजित ये तीनि भये ॥ ८ ॥ देवावृद्धको बेटा बभ्रु भयो, तिन दोनोंनके ये श्लोक गाये हैं, जैसे दूरितें हम देवावृत और बभ्रुको सुनते हैं वैसेही निकटमें देखते हैं ॥ ९ ॥ बभ्रु मनुष्यनमें श्रेष्ठ है देवावृध देवतानके समान है छः हजार और तिहत्तर ॥ १० ॥ बभ्रु और देवावृधके उपदेशसों मोक्षकों प्राप्त भये सात्वतका सप्तम पुत्र महाभोज महाधर्मात्मा भयो जाके वंशमें भोजनामक कुल भयो ॥ ११ ॥ वृष्णीको बेटा एक सुमित्र नाम दूसरो भयो ताके युधाजित भयो, हे वैरिनके नाश करनवारे राजा। ताकें सिनि भयो ताके अनमित्र भयो, ताकें निम्न भयो ॥ १२ ॥ निम्नकें सत्राजित और प्रसेन भए, अनमित्रको बेटा दूसरो सिनि भयो, तातें सत्यक भयो ॥ १३ ॥ सत्यकको बेटा युयुधान, ताकें जय, ताके कुणी, ताकें युगंधर, अनमित्रको तीसरे पुत्र वृष्णी भयो ॥ १४ ॥ श्वफल्क चित्ररथ भये श्वफल्कतें गांदिनीमें एक अक्रूर विख्यात और बारह पुत्र और होत भये ॥ १५ ॥ तिनके नाम ये हैं आसंग, सारमेय, मृदुर, मृदवित्, गिरि, धर्मवृद्ध, सुकर्मा, क्षेमोपेक्ष, अरिमर्दन ॥ १६ ॥ शत्रुघ्न, गंधमाद, प्रतिबाहु ये बारह भये, तिनकी बहनि सुचीरा भई और अक्रूरके दो बेटा भये ॥ १७ ॥ देववान उपदेव पृथु विदूरथते आदि लैकें चित्ररथके बेटा भये ऐसें बहुत वृष्णीके पुत्र होतभये ॥ १८ ॥ कुकुर, भजमान, शुचि, कंबल, बर्हिष ये अंधकके पुत्र भये, कुकुरके पुत्र वृष्णी भयो, ताके विलोमा भयो ॥ १९ ॥ ताके कपोतरोमा भयो ताके अनु भयो जाको तुंबरु नाम गंधर्व सखा होतभयो अंधकते दुंदुभी भयो ताके अरिद्योत भयो ताके पुनर्वसु भयो ॥ २० ॥ ताके आहुक पुत्र भयो आहुकी कन्या भई आहुकके देवक उग्रसेन दो पुत्र भये देवककें देववान उपदेव सुदेव देववर्द्धन ये चारि पुत्र भये तिनके सात बहिनी भई ॥२१॥ २२ ॥ धृतदेवा शांतदेवा उपदेवा देवरक्षिता सहदेवा देवकी सो वसुदेवजीने व्याही ॥ २३ ॥ कंस सुनामा न्यग्रोध कंक शंकु सुहु राष्ट्रपाल सृष्टी तुष्टिमान ये उग्रसेनके बेटा भये ॥ २४ ॥ कंसा कंसवती, कंका, सुरभू, राष्ट्रपालिका ये उग्रसेनकी बेटी भई ते वसुदेवके छोटे भैयानकी स्त्री भई ॥ २५॥ भजमानके पुत्र विदूरथ भयो तातें सूर भयो ताकें शिनि भयो ताकें स्वयंभोज भयो ताको पुत्र हृदीक भयो ॥ २६ ॥ हृदीकके देवबाहु शतधनु कृतवर्मा ये पुत्र भये हृदीककें देवमीढ भयो ताके सूर भयो तिनकी मारिषानाम स्त्री भई ॥ २७ ॥ तामें निर्दोष दशपुत्र उपजाये वसुदेव, देवभाग, देवश्रव, आनक ॥ २८ ॥ सृंजय, श्यामक, कंक, शमीक, वत्सक, वृक १० भये जा वसुदेवके जन्ममें देवता नगारे ढोल बजावते भये ॥ २९ ॥ जो वसुदेव साक्षात् हरिभगवान्के स्थान है याते इनको नाम आनकदुंदुभी कहे है पृथा, श्रुतदेवा, श्रुतकीर्ति, श्रुतश्रवा ॥ ३० ॥ राजाधिदेवी ये पांच कन्या वसुदेवादिकनकी बहिन भई इनके पिता सूर, अपुत्र अपने सखा कुंतको पृथा नाम अपनी बेटी देत भये ॥ ३१ ॥ सो पृथा सेवा करके प्रसन्न किये दुर्वासाते देवतानके बुलाइवेकी विद्याकूं प्राप्त भई ता विद्याके पराक्रम परीक्षाके लिये पवित्र हैकें सूर्यकूं बुलावती भई ॥ ३२ ॥ ताई समय आये सूर्यकूं देखिकें विस्मित मन कुंती बोली मैंने विद्याकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परीक्षाके लिये विद्याप्रयोग कीनीही तुमसूं कछु काम नहीं अपने स्थानको जाउ मेरे अपराधको क्षमा करो ॥ ३३ ॥ तब सूर्य बोले देवतानको दर्शन सफल है मैं तोमें पुत्र धारण करूंगो तब कुंती बोली मैं कन्या हूं सूर्य बोलो जैसे तेरी योनि दूषित न होइ तैसे हम करेंगे हे सुमध्यमे ! ॥३४॥ ऐसे कहिकैं सूर्य वामें गर्भस्थापन करके स्वर्गको गये तब तत्काल बालक भयो मानो दूसरो सूर्यही भयो ॥ ३५ ॥ सो कुंती लोकापवादते डरपि बालकको संदूकमें धरिकैं नदीमें वहाइ देति भई सत्य पराक्रमी तेरो परदादो पांडु ता कुंतीको व्याहतो भयो ॥ ३६ ॥ करूषदेशको राजा वृद्धशर्मा श्रुतदेवाको व्याहत भयो जामें सनकादिकके शापसों दितिको पुत्र जन्म लैकै दंतवक्र होत भयो ॥ ३७ ॥ कैकयदेशको राजा धृष्टकेतु श्रुतकीर्तिकूं प्राप्त भयो ताके संतर्दनतें आदि लेकैं पांच पुत्र भये ॥ ३८ ॥ उज्जैनके राजा जयसेन अधिदेवीमें विंद अनुविंद दो पुत्र उपजावत भयो, चेदीको राजा दमघोष श्रुतिश्रवाकूं ग्रहण करत भयो ॥ ३९ ॥ ताकें बेटा शिशुपाल भयो ताको जन्म पहिले कहि आये है दैवभागकी कंसा स्त्रीमें चित्रकेतु बृहद्बल भये ॥ ४० ॥ देवश्रवाकें कंसवतीमें सुवीर इषुमान् पुत्र भये आनकते कंकामें सत्यजित् पुरुजित पुत्र भये ॥ ४१ ॥ सृंजय राष्ट्रपालीमें वृष दुर्मर्षणादिक पुत्र उपजावत भयो श्यामक शूरभूमिमें हरिकेश हिरण्याक्ष पुत्र उपजावत भयो ॥ ४२ ॥ वत्सक मिश्रकेशी अप्सरामें वृकादिक पुत्र उपजावत भयो वृक दुर्वाक्षीमें तक्ष पुष्कर शालादिक पुत्र धारण करत भयो ॥ ४३ ॥ शमीकते सुदामिनी सुमित्र अर्जुन पालादिक पुत्र उपजावतभई, कंक कर्णिकामें ऋतधाम जय पुत्र उपजावत भयो ॥ ४४ ॥ पौरवी रोहिणी भद्रा मदिरा रोचना इला और देवकीतें आदि लेकें वसुदेवजीकी स्त्री होत भई ॥ ४५ ॥ बलदेव गद सारण दुर्मद विपुल ध्रुव कृत इतनें आदि लेके पुत्र वसुदेव रोहिणीमें उपजावत भये ॥ ४६ ॥ सुभद्र भद्रबाहु दुर्मद भद्र भूततें आदि लेकें बारह वसुदेवके पौरवीके पुत्र भये ॥ ४७ ॥ नंद उपनंद कृतक सूरतें आदि लेकें वसुदेवके मदिराके पुत्र भये; कौशल्या कुलको आनंद देनवारो केशीनाम एक पुत्र वसुदेवसों उपजावतभई ॥ ४८ ॥ और वसुदेवकें हरत हेमांगदते आदि लेकें रोचनामें होतभये, वसुदेवके यदु उरुवल्क आदि इलामें होतभये ॥ ४९ ॥ आनकदुंदुभी वसुदेवतें धृतदेवामें विपृष्ट नाम एक पुत्र होत भयो, हे राजन् ! श्रम प्रतिश्रुततें आदि लेकें शांतदेवाके पुत्र भये वसुदेवके ॥ ५० ॥ कल्प और वर्ष आदि उपदेवाके दश पुत्र वसुदेवके भये वसु हंस सुवंश्यते आदि लेके छै पुत्र वसुदेव श्रीदेवाके भये ॥ ५१ ॥ गदतें आदि लेकें नौ देवरक्षिताके बेटा भये, वसुदेवके सहदेवा स्त्रीमें पुरविश्रुत आदि आठ पुत्र भये वसुदेवके ॥ ५२ ॥ जैसें धर्म साक्षात् वसुनको उपजावतभयो ऐसे वसुदेव देवकीमें आठ पुत्र उपजावतभये, कीर्तिमान् सुषेण भद्रसेन ऋजु संमर्दन भद्र और सर्पनके ईश्वर संकर्षण ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ और आठमें स्वयं हरि आपुही पुत्र होतभये, हे राजन् तेरी दादी बडी भाग्यवती सुभद्रा जिनकी कन्या भई ॥ ५५ ॥ जब जब धर्मको नाश होयहै पापकी वृद्धि होयहै तब तब भगवान् ईश्वर हरि आत्माकूं प्रगट करे हैं ॥ ५६ ॥ हे पृथ्वीके पति राजन् ! सबके द्रष्टा असंग आत्मा परमेश्वरको जन्मकर्मको कारण अपनी माया विना नहीं है ॥ ५७ ॥ जाकी मायाकी चेष्टा पुरुषकें स्थिति उत्पत्तिनाशके अर्थ है विन भगवान्को अनुग्रह मायाकों दूर करकें मोक्षके लिये होयहै ॥ ५८ ॥ अक्षौहिणीनके पति राजानको चिह्न धारे अतकर्य असुरनकरिकैं दबी भूमिके भार दूरि करिवेके लिये उद्यम कर भगवान् मधुसूदन देवतानके ईश्वरने बलदेवजीको साथ ले देवतानके मनसोहू अतर्क्य ऐसे २ कार्य किये ॥ ५९ ॥ ६० ॥ होनहारे कलियुगके जीवनके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दुःख शोक तम नाश करनवारो अतिपवित्र अपनो यश भक्तनपै अनुग्रह करिवेके लिये विस्तार करत भये ॥ ६१ ॥ साधुनके काननको अमृततुल्य श्रेष्ठ यशरूप कीर्तिके तीर्थमें जो पुरुष एक वारहू कर्णरूप अंजलीसो आचमन मात्र करै तो कर्मवासना नाश होय ॥ ६२ ॥ भोज वृष्णि अंधक मधु शूरसेन दशार्ह जिनके चरित्रनकी श्लाघा करै हैं कुरु सृंजय पांडु निरन्तर जिनकी लीला गामें हैं ॥ ६३ ॥ ऐसे श्रीकृष्ण स्नेहयुक्त मुसिकानि पूर्वक चितवनी और उदार वचन पराक्रम लीलासो और सब अंगनसो सुंदर मूर्ति धारणकर मनुष्यलोकक्कूं रमावतभये ॥ ६४ ॥ प्रकाशित कपोल, सुंदर मकराकृत कुंडल, मनोहर विलाससहित हास्य और नित्य उत्सव युक्त श्रीकृष्णको मुख नैननसो पान करते नर नारी तृप्त न होतभये, आनंदको प्राप्तभये; पलकनको लगिवो देखिकैं विनके लगामनवारे निमिराजापे क्रोध करतभये ॥ ६५ ॥ यह भगवान् प्रथम अपने निजरूपसो प्रगट हो पीछे मनुष्यरूप धार पिताके घरसै व्रजमें गये तहां व्रजवासीनके मनोरथ पूर्ण कर शत्रुनको मार सहस्रन स्त्रीनकों व्याहत भये उनमें असंख्य पुत्र उपजाय पुरुषनमें अपनो वेद-मार्ग प्रचार करवेके निमित्त बहुत यज्ञनसो अपने स्वरूपको पूजन करत भये ॥ ६६ ॥ कौरवनमें कलह उपजायकें ताके मिषसो पृथ्वीको बडो भार नाश कर युद्धमें दृष्टिसो राजानकी सेना नाश करिकैं अर्जुनको विजय देकै उद्धवके अर्थ परमतत्वको उपदेशकरि वही स्वरूपसो अपने धामकूं जात भये ॥ ६७ ॥ नौ लक्षण करिके लक्ष नौ प्रकारकी भक्ति करिकै लक्षित परमानंदस्वरूप पर-ब्रह्मकूं हम नमस्कार करैं है ॥ १ ॥

पृथ्व्याः स वै गुरुभरं क्षपयन्कुरूणामन्तःसमुत्थकलिना युधि भूपचम्वः ॥
दृष्ट्या विधूय विजये जयमुद्विघोष्य प्रोच्योद्धवाय च परं समगात्स्वधाम ॥ ६७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रसंशोधितायां नवमस्कन्धे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ नवमस्कन्धः समाप्तः ॥

दोहा—वासुदेवको ध्यान धर, श्रीगुरुदेव मनाय । द्विजज्वालाप्रसादने शोध्यो अति मन लाय ॥

इदं पुस्तकं कल्याणनगर्यां श्रीकृष्णदासात्मजेन गंगाविष्णुना स्वकीये "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" मुद्रणयन्त्रालयेऽङ्कित्वा प्रकाशितम् । संवत् १९६७ शकाब्दाः १८३२ ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

दशमस्कन्धप्रारम्भः ।

अध्याय १.

राजोवाच-कथितो वंशविस्तारो भवता सोमसूर्ययोः ॥
राज्ञां चोभयवंश्यानां चरितं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥

श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥ अथ दशमस्कन्धो लिख्यते ॥ श्रीशुकदेवजीते राजा परीक्षित् प्रश्न करे हैं कि हे महाराज ! आपने पूर्व नवमस्कन्धमें सूर्यवंश और चन्द्रवंश विस्तारपूर्वक कह्यो और दोनों वंशके राजानको आश्चर्ययुक्त चरित्र कह्यो ॥ १ ॥ हे मुनिनमें श्रेष्ठ ! धर्मशील महाराज यदुको वंश निरन्तर अच्छी तरहते कह्यो तिन महाराज यदुके वंशमें परिपूर्णरूपते अवतार लेकें श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने जो लीलाचरित्र करे सो हमारे अगारी वर्णन कीजिये ॥ २ ॥ संपूर्ण प्राणिनके रक्षा करनवारे भगवान्ने यदुवंशमें अवतार लेकें जो जो लीला करी तिनको हमारे आगे विस्तार-पूर्वक कथन कीजिये ॥ ३ ॥ संसारमें तीन प्रकारके मनुष्य हैं एक तो ज्ञानी, द्वितीय मुमुक्षु, तृतीय विषयी इन तीनों प्रकारके मनुष्यनको उत्तम श्लोक भगवान्के चरित्र प्रिय हैं, ज्ञानीनको परमेश्वरके चरित्र श्रवण करनेते संसारकी वासना दूर भई, और मोक्षकी इच्छावारे नारद उद्धवादिकनको संसाररूपी रोगके दूर करवेको औषधी, और विषयमें चित्तवारे मनुष्यनके चित्तको और काननको आनंदके देनवारे हैं ऐसो आत्मघाती कौनसो मनुष्य है जो परमेश्वरके गुणानुवाद सुनकें उपरामको प्राप्त होय ॥ ४ ॥ संग्राममें देवतानको पराजय करवेवारे भीष्म सदृश ग्राहनसों अति दुस्तर कौरवनकी सेनारूपी सागरको मेरे पितामह युधिष्ठिरादिक जैसे बछराके खुरके जलको मनुष्य उल्लंघन करि जायहै तैसें श्रीकृष्णरूपी नौकाको आश्रयकरिके पार उतरिगये ॥ ५ ॥ कौरव और पाण्डवनकी संतानको बीजरूप मेरो अंग अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रके तेजते दग्ध देखकें मेरी माता उत्तरा अतिकष्टको प्राप्त ह्वैकें श्रीकृष्णकी शरण प्राप्तभई, ता समय श्रीकृष्ण चक्र ग्रहण करकें मेरी माताकी कुक्षिमें प्रविष्ट हैकें रक्षा करतेभये ॥६॥ हे विद्वन् ! संपूर्ण प्राणिनको पुरुष कालरूपसो संसारमोक्षके देनवारे अतिकृपाकरिके मनुष्यरूप धारण किये श्रीकृष्णचंद्रकी लीला हमारे आगे कहो ॥ ७ ॥ और राम संकर्षण तुमने नवमस्कंधमें रोहिणीके पुत्र कहे, फिर तिनको देवकीके पुत्र कहे यामें संदेह होय है कि एक देहते दोउनके पुत्र कैसे भए ॥ ८ ॥ अपने पिता वसुदेवके

---

१ कहो कृष्णके चरित्र उदारा ॥ कौन भांति अवतार लियो प्रभु कौन भाति कंसासुर मारा ॥१॥ कौने भांति नंदगृह गमने दैत्य मार ब्रज यश विस्तारा ॥ २ ॥ जिनके चरित पवित्र गानकर बिनु श्रम पार होत संसारा ॥ ३ ॥ मिश्र कहो तिनके गुण हमसों शरण सुखद जेहि वेद पुकारा ॥ ४ ॥ २ (अपगतो शुक्र यस्मात्) दूर भयो शोच जासों वा आनंद घन आत्माको जो नाश करै वाकों अपशुभ्र कहे है ॥ ३ बाहर कालरूपसो मृत्यु देनवारे और भीतर पुरुषरूपसो अमृत (मोक्ष) देनवारे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धरते मुक्तिके देनवारे भगवान् ब्रजमें क्यों गये और भक्तनके रक्षक भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अपनी ज्ञातिके मनुष्यनको संग लेकें वसते भये ॥ ९ ॥ ब्रजमें वसिकै भगवान् कहा करतभये, और मथुरामें वसिके कहा करतभए, और माताके सगे भैया कंसको जो मारवेके लायक नहीं हों वाको चुटिया पकर घसीटके हाथसों कैसे मारते भये ॥ १० ॥ हे प्रभो ! मनुष्यदेह धारण करिके श्रीकृष्णचंद्र यादवनसहित मथुरापुरीमें कितने वर्षपर्यंत वसे, और विनके कितनी स्त्री भई सो मेरे आगे कहो ॥ ११ ॥ जो प्रथम मैंने प्रश्न कऱ्यो है सो और जो श्रीकृष्णजीको चरित्र प्रश्न करवेमें बाकी रह्यो है, सो सब श्रद्धावान् मेरे आगे विस्तारते कहो, काहेसों कि हे मुनि ! आप संपूर्णके जानिवेवारे हो ॥ १२ ॥ तुम्हारे चंद्ररूपी मुखसों निकसे हरिकथारूपी अमृतके पान करवेसों मैंने जलपानादि सब त्यागदियो है और यह न सहवेके योग्य क्षुधाहू मोको अब बाधा नहीं करै है ॥ १३ ॥ सूतजी महाराज कहतेभए कि हे भृगुनंदन शौनक ! या प्रकार व्यासपुत्र श्रीशुकदेवजीमहाराज राजाको पूजनकरिके कलियुगके पापनके नाश करनवारे श्रीकृष्णचंद्रके चरित्रको कहिवेको प्रारम्भ करतेभए ॥ १४ ॥ हे राजऋषिनमें श्रेष्ट राजा परीक्षित् ! तुम्हारी बुद्धिने भले प्रकार निश्चय कियो है जा बुद्धिते तुम्हारी कृष्णकथानमें अति उत्कृष्ट प्रीति भई ॥ १५ ॥ वासुदेव भगवान्की कथाको प्रश्न तीन मनुष्यनको पवित्र करैहै, कहनवारेको, प्रश्न करनवारेको, और सुननवारेको, जैसे श्रीगंगाजीको जल पुरोहित यजमान और ग्रहण करनवारेको पवित्र करै है[2] ॥ १६ ॥ गर्ववंत दैत्यराजनकी सेनाके समूह सेकरान हजारनके भारसो दुःखित भई पृथ्वी ब्रह्माजीकी शरण जातीभई ॥ १७ ॥ पृथ्वी गौको रूप धारण करिके और रुदन करतभई और करुणा उपजायवेवारे वाक्यनको कहती पुकारती ब्रह्माके पास जायके अपनो संपूर्ण दुःख कहतभई ॥ १८ ॥ ब्रह्माजी तब पृथ्वीको दुःख श्रवण करिके देवतानकों, पृथ्वीकों लेके और शिवजीको संग ले क्षीरसागरके तटके निकट जातेभए ॥ १९ ॥ क्षीरसमुद्रके समीप जायके जगत्के नाथ संपूर्ण मनोरथ पूर्ण करनवारे देवनके देव भगवान् नारायण तिनकी "सहस्रशीर्षा पुरुषः" इन षोडश ऋचानते स्तुति करतेभए ॥ २० ॥ ब्रह्माजीने समाधि लगाई तासमय आकाशवाणी भई ता वाणीको श्रवण करि ब्रह्माजी देवतानसों बोले कि हे देवताओ ! जो समाधिमें मोकों ईश्वरकी आज्ञा भई है, ताहि तुम श्रवण करो और श्रवणकरि बैठे मत रहो, शीघ्र वैसेही करो ॥ २१ ॥ हमारी प्रार्थनासों प्रथमही परमेश्वरने या पृथ्वीको दुःख दूरि करनो विचारो है, सो तुम अपने अंशनकरिके यादवनके कुलमें जायके जन्म धारण करो । यावत्पर्यंत ब्रह्मादिकनके ईश्वर अपनी कालशक्ति करि पृथ्वीको भार उतारैं, और पृथ्वीमें विचरैं तावत् पर्यंत पृथ्वीमें रहो ॥ २२ ॥ या पृथ्वीमें वसुदेवके घरमें साक्षात् परम पुरुष भगवान् आयके प्रगट होइँगे, तिनके संग विहार करिवेके लिये देवतानकी स्त्री जायके ब्रजमें जन्म धारण करो ॥ २३ ॥ हजार मुखयुक्त वासुदेवकी अंशकला शेषजी बलभद्र श्रीकृ-

---

१ जो परमात्माकी कथामें जन्मसों अभ्यास न होयगो तौ अन्तसमय स्मरण कहांसों होयगो जो कार्य करत रहैगो वाहीमें चित्त रहैगो यामें दृष्टांत है कि एक लाला नाजकी दुकान करत रहे, एक दिन उनके मित्रने कही कि चलो जी कथा सुनि आवै लाल बोले कथामें कहा होहै, मित्रने कही भगवान्की लीला होहै लाला बोले कछु देनो तो नहीं परेगो, मित्र बोल्यो नहीं लाला बोले तौ दुकानको हिसाबकिताब करकै चलेंगे, तब हिसाब करकै कथा सुनने चले, लठिया हाथमें ले कथामें जाय बैठे, पंडितजीने जानी यह आज लाला नये आयेहै कछु तौ मिलेहीगो लालाजीको बैठतेही नींद आयगई सपनो देखन लगे कि दुकान खुलरही है नाजकी ढेरी लगीहै इतनेहीमें एक गैया आयके नाज खान लगी, लालाने क्रोध करकै जो लठिया मारी सोई वह लठिया पंडितजीके माथेमें लगी, पंडितजी हायरे हायरे करनलगे, और लालाजीने अचकदेसी उठकर घरकी राह लीनी फिर दो चार दिन कथासों बैठरहे, याते कहैं है कि जहां ऐसे अभ्यासी हैं वहां कहां ठीक है ॥

२ अथवा जो न्हाय ताको और जो जलपान करै ताको और जो गंगा गंगा कहे ताको इन तीनौनको पवित्र करै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ष्णके संग क्रीडा करिवेके लिये प्रथम प्रगट होयंगे ॥ २४ ॥ विष्णुकी माया भगवती जाने सब जगत् मोहि राखौहै सो देवकीके गर्भ खींचिवेके लिये और यशोदाको मोह करिवेके लिये जाको आज्ञा देत भये, वह माया अंश करिके सहित यशोदाके प्रगट होयगी ॥ २५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले या प्रकार प्रजापतिनके पति श्रीब्रह्माजी देवतानके गणनको आज्ञा देके और पृथ्वीको अच्छी वाणीसों समाधान करिके कि भूमि तू घबराय मती आप अपने सत्यलोकको जातभये ॥ २६ ॥ यादवनके राजा शूरसेन मथुरापुरीमें वसिके माथुरदेश और शूरसेन देशनको राज्य करत भये ॥ २७ ॥ जा मंथुरापुरमें भगवान् हरि नित्य विराजमान रहे हैं सो संपूर्ण पृथ्वीके भोग करनवारे यादवनकी राजधानी होती भई ॥ २८ ॥ एक समय मथुरापुरीमें शूरसेनके पुत्र वसुदेवजी विवाह करिके नववधू देवकीको संग लिये रथमें बैठतभए ॥ २९ ॥ उग्रसेनको पुत्र कंस अपनी बहिन देवकीको प्यार करिवेके लिये सैकरान सुवर्णसों जटित रथनको संग लेके बहिनके रथके घोडनकी वागडोरी पकरिके हांकिवेको बैठि गयो ॥ ३० ॥ अपनी कन्यापैं अधिक प्रीति करनवारे राजा देवकने विदाके समय सुवर्णकी माला पहिरेभये चारसौ हाथी और पंद्रहजार घोडा अठारहसौ रथ दाइजेमें दिये ॥ ३१ ॥ और सुकुमार अंगवारी दासी दोसौ शृंगार करिके देतभयो ॥ ३२ ॥ यात्राके समय वरवधूके मंगलके लिये शंख भेरी नगारे यह सब वरातके संग बाजे बजतभए ॥ ३३ ॥ मार्गमें देवकीके रथके घोडानकी वागडोर पकरे कंस जायहो ताको आकाशवाणी सम्बोधन करके बोली अरे मूर्ख ! याको तू पहुँचाइवेकूं जाय है याही तेरी बहिन देवकीको आठवों बालक तोको मारैगो ॥ ३४ ॥ याविधि आकाशवाणीके वचन श्रवण करतेही भोजवंशीनके कुलको कलंक लगावनवारो दुष्ट पापी कंस बहिनको मारिवेको हाथमें तरवार लेकें केश पकरतभयो ॥ ३५ ॥ निंदाके योग्य कर्म करनवारे मूर्ख निर्लज्ज कंसकों बडे ऐश्वर्यवान् वसुदेवजी समझावतभए ॥ ३६ ॥ वसुदेवजी बोले तुम बडे गुणवान् और शूर वीर भोजवंशीनके यशके करनवारे हो, विवाहके उत्साहमें एक तो स्त्रीजाति दूसरे तुम्हारी बहिन ताय कैसें मारोहो ॥ ३७ ॥ और मृत्युके डरते मारैहो तो मृत्यु तो जन्मधारी मनुष्यनकों जा दिन मनुष्य जन्में है वाही दिन संग मृत्युको जन्म है जायहै आज अथवा सौ (१००) वर्ष पीछे देहधारीको मरण निश्चय है ॥ ३८ ॥ जा समय या देहको अंतकाल आवे है ता समय देहमें जो जीवात्मा है सो अपने कर्मानुसार अवश हो दूसरे देहको प्राप्त हैकै अपने पूर्वदेहको त्यागे है ॥ ३९ ॥ जैसे चलती वेर मनुष्य अगले पांवको धरिलेय है, तब पिछले पांवको उठावै है और जैसे जोंक चलते समय पहिले अगले तृणको पकरि लेईहै तब पिछिलै तृणको छोडै है ऐसेंही देहस्थ जीवात्मा कर्मनके वशते और देहको प्रथम ग्रहण करिके

---

१ श्रीमन्मथुरा नगरी नगरी यस्याऽस्ति मानसे पुंसः । तस्याप्यमुत्र नगरी याम्येहा भवति नगरीति ॥ १ ॥ अद्यावन्ति पतद्ग्रहं कुरु करे माये शनैर्वीजय च्छत्रं काश्चि गृहाण काशि पुरतः पादूयुगं धारय ॥ मायोध्ये भज संभ्रमं स्तुतिकथां नोद्गारय द्वारिके किं त्वेषा भवतीषु हन्त मथुरा दृष्टिप्रसादं दधे ॥ २ ॥ काश्यादिपुर्या यदि सन्ति लोके तासां तु मध्ये मथुरैव धन्या ॥ या जन्ममौञ्जीव्रतमृत्युदौर्हैर्नृणां चतुर्धा विदधाति मुक्तिम् ॥ द० रा० मा० । २ मृत्युतैं को पावत निस्तार ॥ टेक ॥ स्थावर जंगम युत जो कुछ यह दीसत संसार ॥ १ ॥ एक दिन अवशि नष्ट व्है जै है कियो वेद निर्धार ॥ २ ॥ राजा रंक सबै इक सारे सबको एक विचार ॥ ३ ॥ हरिगुण गान करेते निश्चय चौरासीतैं पार ॥ ४ ॥ ताते मिश्र उपाय यही है भजिये कृपाअगार ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तब या देहको त्यागे करै है ॥ ४० ॥ स्वप्नमें मनुष्य जैसै देखे सुनेको संस्कारके वशसों मनके चिंतवनतें संसारमें सोवत देहको भूलिके अपनेको राजा और इंद्रादिकरूपके अभिमानको मान लेय और जैसे मनोरथ करवेके समयमेंहूं देखे सुनेको याद करतो मनुष्य अपने वा मनोरथ देहकूं भूलिके देखे सुने राजा आदि देवता आदि देहमें अभिमान बांधले है कि मानौ मैं वोही हौं तब फिर वसुदेवजी कहै है कि हे कंस ! जब या देहके विद्यमान होतेही स्वप्न मनोरथमें दूसरो देह मिल जाय है तब फिर या देहके मरेपें दूसरो देह मिलजाय है यामें तौ कछु संदेहही नहीं है ॥ ४१ ॥ फलके देनवारे कर्म्मनकरि प्रेरित विकारनको भरो मन मायारचित पंचभूतनके बने शरीरनमें जा जा शरीरमें दौरे है और अभिमानको बांधे है, वाही शरीरमें जीवको संग लेके जन्मेहै ॥ ४२ ॥ जैसे सूर्य चन्द्रमादिकनकी ज्योति जलके भरे घटादि पात्रनमें प्रतिबिंबित होयके पवनके वेगते जलमें कंपित प्रतीत होय है, ऐसेही यह पुरुष अपनी अविद्यारचित देहमें अभिमान करि मोहको प्राप्त होइहै ॥ ४३ ॥ ता कारणते अपने आत्माको कल्याण करनवारो पुरुष काहूसों वैरभावको न करै, कारण कि द्रोह करनवारे पुरुषको दूसरे (शत्रु) ते भय होय है ॥ ४४ ॥ हे राजन् ! यह तेरी छोटी बहिन है और बालक है, और कृपण है काष्ठकी पुतरीकी नाईं तेरे सन्मुख ठाडी है तुम तौ दीननके हितकारी हो या मंगलरूपीकूं मारिवे योग्य नहीं हो ॥ ४५ ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज कहितेभए कि हे कुरुवंशी राजा परीक्षित् ! ऐसे प्रिय वचन कहिके वसुदेवजीने समझायो, तथापि एक तो आपही दुष्ट दूसरे असुरनको संग याते एकहू वचन मान्यो नहीं ॥ ४६ ॥ वसुदेवजी कंसके हठको विचारिके देवकीकी प्राप्त भई मृत्युके दूरि करिवेके लिये तासमय यह विचार करतभये ॥ ४७ ॥ जहांतक बुद्धिबल होय तहांतक मृत्यु दूर करवेको यत्न करे, याहूसों मृत्यु निवृत्त न होय तो या पुरुषको दोष नहीं है ॥ ४८ ॥ मृत्युरूप कंसको पुत्र देन कहिके या कृपण देवकीके प्राण बचाऊंगो, कदाचित् कहो कि पुत्र देके देवकीके प्राण बचावने यह तो नीति नहीं है, तहां वसुदेवजी विचार करै हैं कि जा समय देवकीके पुत्र होयंगे, ता समय जो होनहार होयगी सो होय रहैगी तब ताईं तो याके प्राण बचेंगे क्योंकि खबर कहा है तबताईं मृत्यु जो कंस है सोही मरजाय तो कछु ॥ ४९ ॥ पुत्र उत्पन्न होनेते पहिले यही कंस मरजाय तो कछुभी अनीति नहीं है, और जो मेरे पुत्र होई वाको कंस न मारे तौ मेरो पुत्रही या कंसकूं मारेगो, ऐसे उलटी बात तो न होय, कदाचित् कहो कि तुम्हारे पुत्र बालक या तरुण बलवान् कंसकूं कैसे मारेंगे तहां वसुदेवजी कहै है कि विधाताकी गति काहूके जानिवेमें नहीं आवे है, जे पुरुष

---

१ यापें सेकसिल्लीको दृष्टांत है कि एक कोई मस्त सेकसिल्ली हो वो बजारमें चलो जातो हो एक सिरकारी आदमीने वाको बेगारमें पकर एक तेलको घडा वाके मूडपे धर दियो दो पइसा दैन कहे ये वा घडाको मूडपें धरके चलो तब वानें मनमें मनोरथ किये के दो पइसाकी मुरगी लेके पालोंगो वाके बच्ची बच्चानको बेचकें एक बकरी खरीदोंगो वाके बच्ची बच्चानको बेचके एक घोडी खरीदोंगो वाके बच्चानको बेचकें एक हथनी खरीदोंगो वाके कई बच्चा होयगे जिने एकेक हजारमें बेचौंगो तब मोपे कई हजार रुपा होयगे जिनमेंसो एक हजार रुपा तो घरमें लगाउंगो एक हजारको गहनो बनाउंगो फिर एक हजार लगायके व्याह करौंगो तब मेरे बेटाबेटी होयगे तब मैं तो दरवजेपें मूढा बिछायकें बैठो करोंगो और मेरे बेटाबेटी मोसो आयके कहेंगे कि चाचा चाचा हमें पईसो कोडी देउ तब मैं जिनसो कहौंगो कि है बिरचोद हौ ! यह काहिके जो याने मूड हलायो सोही माथेपेंसो भडाक तेलको घडा गिर फूट गयो पिछारीसो मालबारेने एक लात मारी और कही कि रे बिरचोद मेरे पचीस रुपाके तेलको नुकसान कर तेने धूरमें मिलाय दियो तब वो बोलो कि जी तुम अपने तेलके नुकसानके मोरेही मरे जाउ हो मेरो बनो बनायो सब घरही बिगर गयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मरिवे योग्य है ते नहीं मरे हैं, और जो मरिवे योग्य नहीं हैं तिनकी मृत्यु होजाय है' ॥ ५० ॥ जैसे अग्निको काष्टनमें वियोगयोगको केवल अदृष्टके विना और कोई कारण प्रतीत नहीं होयहैं जैसे वनमें अग्नि लगे तौ जो वृक्ष जरनहार नहीं हैं ते दूरिके जरि जांय हैं, और जो जरनहार है ते समीपके बचिजाय हैं और जैसे गांममें पासके घर बचिजांय हैं दूरके जरिजाय हैं ऐसेही प्राणिनके जन्म मृत्युको कारणहू विचारिवेमें नहीं आवे है ॥ ५१ ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित्सो कहैं हैं कि या प्रकार जहां ताईं अपनी बुद्धि चली तहां ताईं वसुदेवजीने विचार करके बहुत सत्कारपूर्वक जैसे होय तैसे कंसको पूजन करचो ॥ ५२ ॥ कंसके विश्वासके कारण ऊपरतें प्रफुल्लित मुखकमलवारे वसुदेवजी क्रूर निर्लज्ज कंसते दुःखितमन मुसिकायके यह बोले ॥ ५३ ॥ हे सौम्य ! जैसे आकाशवाणीने कही तैसे निश्चय या देवकीते तुमकूं भय नहीं है जिन पुत्रनते तुम्हैं भय भयो है सो याके पुत्र लायके तुम्हारे अर्पण करिदेउंगो ॥ ५४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! वसुदेवजीके वाक्यको सत्य मानिके कंस अपनी बहिनके मारिवेते निवृत्त[1] भयो वसुदेवजीहू प्रसन्न होय कंसकी बडाई करिके अपने घर जात भये ॥ ५५ ॥ समस्त प्राणीनके आत्मा भगवान्को देवता माननैवारी देवकीके जब पुत्रजन्मको समय आयो तब वर्षवर्षप्रति एक एक पुत्र और पीछे एक कन्या ऐसे नौ बालक उत्पन्न किये ॥ ५६ ॥ प्रथम कीर्तिमान पुत्र भयो ताको वसुदेवजी बडे कष्टते कंसके समीप लेगये कारण कि मिथ्या बोलिवेते वसुदेवजी डरपेहैं ॥ ५७ ॥ कदाचित् कहो कि कंस मंगावतो तब लेजाते, वसुदेवजी आपहीते कंसपै क्यों लैगये तहां कहैं हैं कि साधु महात्मा कौनसी बात न सहिसकें हैं, और पुत्रके लाड करिवेको आनंद वसुदेवजीपै कैसे त्यागो गयो, तहां कहैं हैं विद्वाननको कौन बात अपेक्षित है, कदाचित् कहो कि वसुदेवजी या कारण आप लेगये कि मैं लेजाउंगो तो दया विचार कंस न मारेगो, तहां कहैं हैं कि दुष्टजन कहा नहीं करैं हैं, कंससदृश दुष्टनकूं दया कब आवै, वसुदेवजी पुत्रकूं लेगये परंतु देवकीपै पुत्र कैसे दियोगयो तहां कहै हैं कि देवकीने मनमें विचार करिराखो है कि ऐसे पुत्र तो बहुत होंयगे मेरे सांचे पुत्र तो श्रीकृष्णचंद्र है, यह जानिके दियो धीरपुरुष कहा नहीं त्यागे है ॥ ५८ ॥ वसुदेवजीकी समता देखिके हे राजन् परीक्षित् ! संतुष्ट मन होय कंस मुसिकायके यह वचन बोल्यो ॥ ५९ ॥ या पुत्रको घरको फेर लेजाउ यातें मोकूं भय नहीं है आपके आठमे पुत्रमें मेरी मृत्यु निश्चय रचीहै ॥ ६० ॥ तथास्तु ऐसे कहिके वसुदेवजी पुत्रकूं लेके घरको आवतभये परंतु कंसके वचनको विश्वास न करचो, अब फेरि दियोहै पश्चात् फेरि चाहैं जब मंगाइ लेइगो; असाधु है याके वचनको कछु विश्वास नहीं, कंसने वसुदेवजीको पुत्र फेरि दियो यह बात श्रवण करि नारदजीने आयके कंसते कही ॥ ६१ ॥ ब्रजमें नंदजीते आदि लेके जे गोप हैं और जिन गोपनकी स्त्री हैं और वसुदेवजीते आदि लेके वृष्णि यादव और देवकीते आदि लेके यादवनकी स्त्री ये तुम्हारे समीपवर्त्ती हैं ते संपूर्ण हे कंस ! वसुदेवजी और नंदजी कुलमें ज्ञाति बंधु

---

१ यापें यह श्लोक है । कांतं वक्ति कपोतिकाकुलतया नाद्यांतकालोऽधुना व्याधोऽधो धृतचापसज्जितशरः श्येनः परिभ्राम्यति ॥ इत्थं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनस्तु तेनाहतस्तौ तूर्णं तु गतौ यमालयमहो दैवी विचित्रा गतिः ॥ बात यह है कि एक कबूतर एक कबूतरी एक पेडकी डारीपें बैठे है नीचेसें वितके मारवेको कपानमें तीर लगाये एक वधिक आयो और ऊपरसो मारवेको एक कुही आई तब कबूतरीने कही कि स्वामी ! अब हम तुम दोनों मरें क्यों कि नीचे तौ यह वधिक मारवेको तीर ताने चलो आवे है और यदि ऊपर उडके चले है तौ यह कुही मारे है इतनेहीमें वधिकको अंगूठा सर्पने काटो सोइ कमानमेंसो तीर निकसो तासो वो कुही मर गई देखो दैवकी गति ऐसी विचित्र है जे मारवेको आये वे वधिक और सिकरा सो मरगये और मरनहार कबूतर कबूतरी बचगये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुहृद् ये समस्त देवता प्रगट भएहैं, पृथिवीमें दैत्यनको भार बढ्यो है ताके उद्धारके निमित्त भगवान्ने यह उपाय रच्यो है, सो तुम जानि लीजो आठ लकीर खैंचके दिखाई, गिन्तीमें सब आठो आईं, तब नारदजी बोले आठवें गर्भको निश्चय नहीं कौनसो होय ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ऐसे उपदेश करी नारदजी तो जातेभये अब कंसने यादवनकूं देवता मानिके और देवकीके गर्भतें विष्णुभगवान् प्रगट होयके मोकूं मारेंगे यह मानिके ॥ ६५ ॥ देवकी और वसुदेवकूं बंदीघरमें रोक पांवनमें बेडी डारिदई और जो जो इनके पुत्र भये ताईकूं विष्णुभगवान्की शंका मानिके मारतभयो ॥ ६६ ॥ अपने प्राणनके लोभी मनुष्य पृथ्वीमें माता पिता भैया और संपूर्ण मित्रनको मारिडारैं हैं राजा जे होय है विनको विशेष करके जाननो ॥६७॥ पहले जन्ममें मैं कालनेमी दैत्य हो मोको विष्णुने मारयो हो, सोही मैं कंस भयो हूं यह जानके यादवनसों वैर करतभयो ॥ ६८ ॥ यदुवंशी भोजवंशी अंधक-वंशीनके राजा उग्रसेन अपने पिताके पांवनमें बेडी डारिके बडो बलवान् कंस आपही शूरसेन देशनको राज्य करत भयो ॥ ६९ ॥

उग्रसेनं च पितरं यदुभोजान्धकाधिपम् ॥
स्वयं निगृह्य बुभुजे शूरसेनान्महाबलः ॥ ६९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच–प्रलम्बबकचाणूरतृणावर्तमहाशनैः ॥
मुष्टिकारिष्टद्विविदपूतनाकेशिधेनुकैः ॥ १ ॥

प्रलम्बासुर-बकासुर-चाणूर-तृणावर्त-अघासुर-मुष्टिक-अरिष्ट-द्विविदबंदर-पूतना-केशी-धेनुकासुर ॥१॥ और असुरनके राजा बाणासुर भौमासुर इनको संग लेके और मगधदेशको राजा जरासंध ससुरके बलसों बली कंस यादवनकूं कष्ट देत भयो ॥ २ ॥ वे यादव दुःखित होयके कंसके भयतें कुरुदेश-पंजाब-कैकय-शाल्व-विदर्भ-निषध-कौशल इन देशनमें जायके वास करतभये ॥ ३ ॥ कोऊ एक अक्रूरादिक यादव जे कंसके आज्ञाकारी कंसकी चुटकी बजावते रहे वे मथुरामें रहे जब उग्रसेनके बेटा कंसने देवकीके छै बालक मारे ॥ ४ ॥ तब विष्णु भगवान्की कला अनन्तरूप सातमों गर्भ देवकीके भयो तब आनन्दरूपको अवतार होईगो यातें तो मनमें हर्ष भयो और पहलेकीसी नाईं याहूको कंस मारैगो यातें कछु शोकहू भयो ॥५॥ तब विश्वके आत्मा भगवान्ने जानी कि मेरे यादवनकूं कंस दुःख देयहै तासमय अपनी योगमायाकूं आज्ञा देतभए ॥ ६ ॥ हे देवी मंगलरूपिणी ! जो गोप और गौअनकरि शोभायमान व्रज है तहां तुम जायके नंदरायजीके गोकुलमें जहां वसुदेवजीकी स्त्री रोहिणी कंसके डरतें औरहू स्त्री गुप्त स्थानमें वास करैं हैं ॥ ७ ॥ सो देवकीके उदरमें मेरी कला शेषजी स्वरूप हैं, तिन्हैं निकासके रोहिणीके उदरमें प्रापितकरि ॥८॥ जब तू गर्भकूं खैंचेगी याके पीछें हे मङ्गलरूपिणी ! अपने परिपूर्ण रूपकरिके मैं देवकीके पुत्रभावकूं प्राप्त होउंगो, और तुम नंदरायजीकी पत्नी यशोदाके प्रगट होयगी ॥ ९ ॥ हे मंगलरूपिणी ! सम्पूर्ण पुत्रादिकनकी कामना करवेवारे पुरुषनकी ईश्वरी सर्व कामनानकूं देनवारी तू होयगी, और सम्पूर्ण मनुष्य धूप दीप सामग्री बलिप्रदान भेटकरि तेरो पूजन करैंगे, तू उनके सम्पूर्ण मनोरथ पूरण करेगी ॥ १० ॥ पृथ्वीमें मनुष्य तुम्हारे स्थान करैंगे और

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दुर्गा-भद्रकाली-विजया-वैष्णवी ॥ ११ ॥ कुमुदा-चण्डिका-कृष्णा-माधवी-कन्यका-माया-नारायणी-ईशानी-शारदा-अंबिका ये नाम धरैंगे ॥ १२ ॥ गर्भमेंतें खैंचके निकासैगी याते पृथ्वीमें मनुष्य या बालकको सङ्कर्षण कहैंगे, लोकनकूं रमावैंगे यातें राम कहैंगे बल अधिक है याते बलभद्र कहैंगे ॥ १३ ॥ या प्रकार योगमायाकूं भगवान्‌ने आज्ञा दीनी, तब कही ऐसेही करूंगी या प्रकार भगवान्‌की परिक्रमा करि वचनकूं ग्रहणकरि पृथ्वीमें आयकै तैसेई करतभई ॥ १४ ॥ वह योगमाया देवकीके उदरमेंते बालकको रोहिणीके उदरमें लेगई, तासमय समस्त पुरवासी मनुष्य यों पुकार उठे कि अबके कंसने अपनी बहिनको ऐसी धमकाई याते याको गर्भ गिरि पर्‍यो ॥१५॥ विश्वके आत्मा भगवान् भक्तनके भयके दूर करनवारे अपने परिपूर्ण रूपकरिके वसुदेवजीके मनमें आयके प्रकट होत भये ॥ १६ ॥ जब वसुदेवजीके मनमें भगवान् आये, तब सूर्यके तेजके तुल्य तेज होत भयो, कोई मनुष्य तेजके प्रकाशके मारे सन्मुख न आवै ऐसे वसुदेवजी होते भये ॥ १७ ॥ ताके अनंतर जगत्‌को मूर्तिमान मंगलरूप भगवान्‌को स्वरूप वसुदेवजीने मनतें अर्पण करयो, तब देवकीने भले प्रकार धारण करयो जैसे पूर्वदिशा चंद्रमाकूं धारण करैहै ॥ १८ ॥ जैसे ढके दीपकको प्रकाश नहीं होय है और जैसे ज्ञानवंचककूं विद्या सुन्दर नहीं लगे है, तैसे सब ब्रह्मांडको उदरमें रखनेवारे भगवान् अपनी कान्तिसंयुक्त देवकीके उदरमें आये, तथापि भोजेन्द्रकंसके घरमें रुद्ध हुई देवकी शोभाको प्राप्त न होती भई ॥ १९ ॥ अजित भगवान् कुक्षिके विषे अपनी कांति करि बंदीघरकूं प्रकाशमान करते देख तथा सुन्दर मुसकानि युक्त देवकीकूं देखि कंस यह बोल्यो कि मेरे प्राणनको हरनवारो हरिरूपी सिंह निश्चय या देवकीके उदररूपी गुफामें आय बैठ्योहै, क्योंकि प्रथम याको तेज ऐसो नहीं हो ॥ २० ॥ कंसराय अपने मनमें विचार करैहैं कि अब मैं जल्दी याके लिये कहा उपाय करूं, यह तो देवतानके कार्य करिवेको आयो है, याते निश्चय मोकूं मारैगो अब या देवकीकूं मैं मारूं तो एक तो स्त्रीजाति दूसरे मेरी बहिन, तीसरे गर्भिणी याके मारेते हमारो यश लक्ष्मी आयुर्बल ये सब हीनताको प्राप्त होयँगे ॥ २१ ॥ जो मनुष्य संसारमें दुष्टता करै सो मनुष्य जीवतोही मरयो है, देह धर पीछे समस्त मनुष्य वाहीको शापे हैं, कि या पापीको धिक्कार है निश्चय घोर नरकमें परेगो ॥ २२ ॥ ऐसे विचार करिके घोर पापरूप देवकीके वधते सामर्थ्यमान कंस आपही निवृत्त होत भयो, भगवान्‌के जन्म होयवेकी वाट देखैहै ॥ २३ ॥ तब बैठते सोवते ठाढे भोजन करते पृथ्वीमें विचरते इन्द्रियनके ईश्वर भगवान्‌हीकी चिंता करतो संपूर्ण जगत्‌में हरिरूपही देखत भयो ॥ २४ ॥ इतनेहीमें नारदादिक मुनीश्वरनकूं संग ले और गंधर्वादिक सहित देवतानकूं संग लेके ब्रह्माजी और महादेवजी आयके गर्भहीमें स्थित नारायणकी स्तुति करते भये ॥ २५ ॥ देवता बोले सत्य संकल्प सत्यपरायण, भूत भविष्यत् वर्तमान तीनों कालमें सत्य पृथ्वी जल तेज वायु आकाश इन पंच भूतनके कारणरूप आप हो, और पंचभूतनको नाशमें आपही बाकी रहो हो, और मनोहर वाणीयुक्त ज्ञानीनके प्रेरणा करनवारे सत्यरूप आपकी हम शरण प्राप्त भए हैं ॥ २६ ॥ एक मायाही जाको थामरो, सुख दुःख जामें फल, सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण जाकी जड धर्म्म अर्थ काम मोक्ष जामें रस हैं; पांच इन्द्रियनते जामें ज्ञान होय है, क्षुधा पिपासा शोक मोह मृत्यु बुढापो ये सब स्वभाव हैं, त्वचा लोहित मेद मांस स्नाव अस्थि मज्जा रेत ये जाके वल्कल, पृथ्वी जल तेज पवन आकाश

१ रोटी खातेमें जब कभू कारो छोकको जीरोहू दारमें दिखाई पर जाय सो थार फेंकके ठाडो है जाय और कहे कि परमेश्वर आयो ऐसे जगत्‌को तन्मय देखतो भयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मन बुद्धि अहंकार ये जाकी शाखा, नौ इन्द्रियनके दरवाजे जामें कोटर अर्थात् खोतरि, प्राण अपान व्यान उदान समान नाग कूर्म कृकल देवदत्त धनंजय ये दश प्राण जामें पत्ता और जीव ईश्वर ये दोनों पक्षिनको घोसुला ऐसो यह देह आदिवृक्ष है, काटिवेसो कटैहै, ऐसे देहहू मरै है जन्मै है ॥ २७ ॥ या संसारके उत्पत्ति पालन संहार करनवारे तुमही हो तुम्हारी मायामें भूले चित्तवाले पुरुष तुम्हें नानाप्रकार जानैहैं, और जे विवेकी पुरुष हैं ते एकरूप करि जानैहैं ॥ २८ ॥ एक स्वरूप भगवान् तुम ब्रह्मारूप होयके उत्पन्न, और विष्णुरूप करि पालन, शिवरूप करि संहार करो हो, सत्वगुणकरिके संयुक्त सत्य पुरुषनकूं सुख देनवारे दुष्टनको दण्ड देनवारे रूप धारण करोहो ॥२९॥ हे कमलदललोचन ! समस्त जीवनके आश्रय तुमही हो, तातैं तुम्हारे विवेकी महात्मा समाधिद्वारा चित्तकूं लगायके, महत पुरुषनकी सिद्ध करी तुम्हारे चरणारविंदरूपी नौका आश्रय करिके यह संसाररूप समुद्रको अवगाहन करि बछराके खुरकी समान तरिजायंगे ॥ ३० ॥ हे स्वयंप्रकाश ! करुणावान् पुरुष अतिशय दुस्तर महाभयंकर संसारसमुद्रके पार उतरिके और भजनभावना संप्रदायरूप तुम्हारे चरणारविंदरूपी नावकू औरनके पार उतरिवेके निमित्त या संसारमें राखिके आप पार लगि जायहैं, हे ईश्वर ! आप संतनके ऊपर कृपा करनवारेहो ॥ ३१ ॥ हे कमलदललोचन ! जे ज्ञानी पुरुष अपनेकूं मुक्त मानैहैं, और तुम्हारे विषे भाव नहीं करैहैं, यातें अविशुद्धबुद्धिहू हैं और बडे कष्टतें ऊंचे पदकूं प्राप्त हुएहैं, अर्थात् सुंदरकुलमें जन्म और तप करिके शास्त्रकूं पायकैं तुम्हारे चरणकमलको आदर नहीं करैहैं, वे नीचे पदको गिरैहैं, और नीचो पद कहा कि विघ्ननकरिके कष्टकूं प्राप्तहोय है[1] ॥३२॥ हे माधव ! जैसे ज्ञानीको विघ्न होय हैं, तैसे आपके भक्तनको विघ्न नहीं होय हैं, काहेते कि तुमसों जिनने स्नेह बांध्यो है तिनकी तुम रक्षा करोहो, हे प्रभो ! यातें तुम्हारे भक्त निर्भय होइकै विघ्न करनवारेनके जे पालन करनवारे हैं तिनके माथेपर पांव धरिकै आनंदपूर्वक विचरैहैं ॥ ३३ ॥ हे प्रभो ! पालन समय समस्त देहधारीनको पालन करनवारो रूप धारण करोहो, या स्वरूपसो ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी ये चारों आश्रमी वेद कर्म्म योग तप समाधि इन उपायनतें आपकोही पूजन करैहैं ॥ ३४ ॥ हे विधाता ! तुम्हारो सत्त्वगुणयुक्त श्याम सुंदररूप प्रगट न होतो अज्ञानके करे भेदको नाशक विज्ञान कैसे प्रकाश करतो सोऊ ईश्वरको प्रेर्यो भयो बुद्ध्यादिक गुणनको प्रकाशै है और जो ईश्वर गुणनको साक्षी है ऐसे इन्द्रीनके प्रकाश करके तुम अनुमान करिवेमें आवो हो ॥ ३५ ॥ हे प्रकाशमान ! या विश्वके साक्षी तुमही हो, और तुम्हारे नाम रूप गुण कर्म्म जन्म कहिवेमें नहीं आवे हैं, मन वाणीद्वारा अनुमान करिवेमें जिनको स्वरूप नहीं आवै तौहू तुम्हारे जे भक्त हैं वे ध्यान और उपासनामें तुम्हारे रूपको साक्षात् दर्शन करैहैं ॥३६॥ हे ईश्वर ! तुम्हारे जो मंगलरूपी नाम रूप हैं तिनकूं कानतें श्रवण करैहैं, जिह्वातें उच्चारण करैं और मनुष्यनकूं श्रवण करावें आप स्मरण करैहैं और पूजनादिककियानमें तुम्हारे चरणारविंदमें जिन पुरुषनको मन लग्यो है ते जन्म मरणकूं नहीं प्राप्तहोयहैं ॥ ३७ ॥ हे ईश्वर ! तुम्हारे अवतारतें तुम्हारे चरणारविंद करिके पृथ्वीको भार दूर होयगो, यह बडो मंगल भयो और तुम्हारे सुन्दर चरणारविंद करिके या पृथ्वीपै चिह्न परैंगे तिनके हम दर्शन करेंगे, अपने वैकुंठधा-

---

१ अर्थ यह है कि जे बहिर्मुख मनुष्य जिनको ये अभिमान है कि हम विमुक्त हैं वे तेरे विषयमें अस्तभाव है वेके कारण जिनकी बुद्धि पवित्र नहीं है वे बडे कष्टसो नाम चांद्रायणादि व्रत यज्ञादि करके परंपदको जाँय है पन फिरहू वे नरकमें जायके परै है क्योंकि विनते तुम्हारे चरणनको आदर नहीं कियो यासो ॥ २ जय गोद्विजहित नरतनुधारी । जय सन्तनपति गति अपहारी ॥ जो मुनिजन मन ध्यान न आवैं । भक्ताधीन वेद अस गावैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मकूं जानि पृथ्वी और स्वर्गपै कल्पवृक्षादि लायवे आदिके समय कृपा करोगे ताकूं हम देखेंगे, यह बडो मंगल होयगो ॥ ३८ ॥ हे ईश्वर ! जन्मरहित तुम्हारे जन्मको कारण लीलाविनोदके विना और कोई समझमें नहीं आवै है, हे नित्यमुक्त ! तुम्हारे स्वरूपको ज्ञान नहीं हैं, यातें अविद्या करिके जीवनको जन्म मृत्यु पालन होय है ॥ ३९ ॥ मत्स्य, हयग्रीव, कच्छप, वराह, नृसिंह, रामचन्द्र, परशुराम, वामनरूप धरिके तुम जैसे त्रिलोकीकी रक्षा करोहो, तैसेही अब समस्त पृथ्वीको भार उतारो हे यादवनमें उत्तम तुमको नमस्कार करेहै ॥ ४० ॥ अब देवकीके प्रति कहैं हैं कि हे मातः ! हमारे कल्याण करिवेके लिये साक्षात् परमपुरुष भगवान् अपने परिपूर्णरूप करि तुम्हारी कोखिमें आये यह बडो मङ्गल भयो अब यह कंस मरैगो यातें तुम डरपो मति तुम्हारो पुत्र संपूर्ण यादवनकी रक्षा करनवारो होयगो ॥ ४१ ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित्तें कहैहैं कि हे राजन् ! जिनको रूप इदन्तत कहिवेमें नहीं आवै है ऐसे जो परम पुरुष भगवान् तिनकी या प्रकार यथायोग्य स्तुति करके ब्रह्माजी महादेवजीकूं आगे करि देवता स्वर्गकूं जाते भये ॥ ४२ ॥

श्रीशुक उवाच–इत्यभिष्टूय पुरुषं यद्रूपमनिदं यथा ॥
ब्रह्मेशानौ पुरोधाय देवाः प्रतिययुर्दिवम् ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

श्रीशुक उवाच–अथ सर्वगुणोपेतः कालः परमशोभनः ॥
यर्ह्येवाजन जन्मर्क्षं शान्तर्क्षग्रहतारकम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी महाराज परीक्षित्तें कहे हैं हे राजन् ! जा समय देवकीके साक्षात् भगवान् प्रगट होत भये ता समय सर्व शुभगुणयुक्त परम शोभायमान काल होत भयो, और ता समय ब्रह्माजीको नक्षत्र रोहिणी आवतो भयो, और शांतियुक्त शुभ ग्रह तारका होते भये ॥ १ ॥ ता समय सम्पूर्ण दिशा प्रसन्न होती भई, और आकाश निर्मल तारागण उदय होते भये, पृथ्वी मंगलरूपिणी होती भई, पुर ग्राम व्रज आकर वनवाटिका श्रीकृष्णचन्द्रके जन्मसमयमें अत्यंत शोभायमान होते भये ॥ २ ॥ जा समय श्रीकृष्णचन्द्रको जन्म भयो ता समय नदीनके जल निर्मल होते भए, सरोवरनमें कमल

---

१ भक्तोंके हेतु नारायणही क्यों अवतार करते हैं किसी देवताकूं आज्ञा देदें वोह उनका कार्य संपादन कर दुःख दूर करदे यह शंका एक राजाने पंडितजीसे करी; तब पण्डितजी बोले महाराज ! एक वर्षमें इसका उत्तर दूंगा. यह कह कछु दिनोपरान्त पण्डितजीने राजाके पुत्रकी सूरतकी एक मूर्ति बनवाई, और जो दासी राजकुमारको खिलाया करै थी, उसे देकर बोले कि जब हम राजाके साथ नौकामें जलविहारको बैठे तब यह मूर्ति गोदीमें लाना, जबही पण्डितजी राजाके संग सरोवरमें जलविहारकूं नौकामें बैठे तबही दासी पुत्रकी मूर्ति लेकर आई, पण्डितजी उसको गोदीमें लेने लगे, सो दासीने उसे बीचमेंही छोड दिया, वोह ज्योंही जलमें गिरी राजाभी पुत्रकी भ्रांतिसे जलमें कूदा; जब मूर्ति निकली तब राजासो पण्डितजी बोले महाराज ! सैकडों मल्लाह थे उन्हैं आज्ञा कर देते, आप स्वयं क्यों कूदपडे, राजाने कही पुत्रके स्नेहकी प्रबलतासे मुझे कुछ न सूझा, मैं आपही कूदपडा, तब पण्डितजी बोले हे राजन् ! ऐसेही वोह ईश्वर भक्तोंके दुःख दूर करनेको स्वयंही अवतार लेताहै, प्रेमसे भक्तोंके वशमें है ॥ २ कदाचित् ब्रह्माजी और शिवजी फिर प्रभुकी स्तुति दर्शन आदि कछु न करै यासो ॥

३ दोहा–अलख अरूप अनीह अज, प्रभु अद्वैत अनादि । गर्भवाससो देवकी, कौतुकनिधि सर्वादि ॥
सोरठा–किनहु न पायो भेव, शेष महेश गणेश विधि । नमो नमो तेहि देव, परम विचित्र चरित्र शुभ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रफुल्लित भए, संपूर्ण पक्षी मनोहर शब्द करते भए और भ्रमर बहुत सुन्दर पुष्पनकी सुगन्धि सूंघिके गुंजार करने लगे ॥ ३ ॥ और वा समय सुखदायक शीतल मन्द सुगंधियुक्त पवन चलत भई, और ब्राह्मणकी शांतिहोमकी अग्नि प्रज्वलित होती भई ॥ ४ ॥ और ता समय कंसादिकनके विना संपूर्ण महात्मानके मन प्रसन्न होते भए प्रभुके प्रगट हैवेके समय आपहीते स्वर्गमें नगारे बाजते भए ॥ ५ ॥ किन्नर गंधर्व गान करते भए, सिद्ध चारण स्तुति करनलगे, अप्सरानकूं संग लेके विद्याधर नृत्य करन लगे ॥ ६ ॥ बडे आनन्दपूर्वक देवता मुनीश्वर पुष्पनकी वर्षा करतेभए मेघ मंद मंद गर्जन लगे ॥ ७ ॥ अर्द्धरात्रिके समय सबकी प्रार्थना भई, तब तो देवरूपिणी देवकीके कोखिमेंसों सबके अंतर्यामी भगवान् प्रकट होतेभये, जैसे पूर्वदिशामें चंद्रमा उदय होय है ॥ ८ ॥ कमलसे नेत्र, चारि भुजा और शंख चक्र गदापद्मकूं धारण करे, हृदयमें भृगुपदको चिह्न धारे कण्ठविषें शोभायमान कौस्तुभमणि बांधे पीताम्बरकी धोती उपरना पहिरे, वर्षती घटाकी तुल्य श्याम सुन्दर अंग ॥ ९ ॥ बहुत श्रेष्ठ वैडूर्य मणिजटित किरीट मस्तकपै शोभायमान, उज्ज्वल कुंडलनकी कांतिकरि शोभायमान केश, भुजानमें सुन्दर बाजूबन्द पहिरे और उत्तम कंकण धारण करे अनेक प्रकारके आभूषणनसों परम शोभायमान अद्भुत बालक वसुदेवजी देखते भये ॥ १० ॥ हरिभगवान्कूं अपने पुत्र भये देखिके आश्चर्यते वसुदेवजीके नेत्र प्रफुल्लित है गये, श्रीकृष्णचन्द्रके प्रगट हैवेके समय हरबराय गये; वाही स्थानमें दश हजार गौअनको संकल्प मनसेही कर्‌यो ॥ ११ ॥ पुत्रकूं परब्रह्म नारायण जानिके नम्र अंग, शुद्ध बुद्धि भयरहित प्रभावके जाननवारे वसुदेवजी सूतिकागृहकूं शोभायमान करनवारे श्रीकृष्णचंद्रको हाथ जोरिके स्तुति करतेभए ॥ १२ ॥ तुमकूं मैंने जाने आप मायाते परे साक्षात् परमपुरुष हो केवल अनुभव आनंदस्वरूप हो संपूर्ण प्राणीनकी बुद्धिके साक्षी हो ॥ १३ ॥ अपनी मायाते सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण रूपवारे विश्वकूं पहिले रचो हो, तामें प्रविष्ट नहीं हो और प्रविष्टसे देखिवेमें आवो हो ॥ १४ ॥ तामें दृष्टांत है जैसे विकारकूं प्राप्त न भये महत्तत्त्वादिक भाव महत्तत्त्व अहंकार पंच तन्मात्रा ये सातों पदार्थ पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय और मन पंच महाभूत अर्थात् पृथ्वी आप तेज वायु आकाश इन सोलहै विकारनके संग मिलके समस्त ब्रह्मांडकूं उत्पन्न करे है पृथक् पृथक् ब्रह्मांड बनाइवेमें असमर्थ हैं ॥ १५ ॥ और उत्पन्न भए पीछे ब्रह्माण्डमें प्रविष्ट हैके जैसे जाननमें आवे हैं तौहू यथार्थरीतिसों प्रथम कारणरूपसे प्रविष्टही हे यासो कारण उत्पन्न भए कार्यमें विनको पीछेसो प्रवेश होनो संभव नहीं है सके है तैसेही आपको प्रवेश पीछेसों संभव नहीं ॥ १६ ॥ ऐसेही तुम्हारे स्वरूप बुद्ध्यादिक इन्द्रियन

---

१ चौपाई–शीश मुकुट कल कुंडल कानन । शरद मयंक सरस शुभ आनन ॥ पीत वसन तन श्याम तमाला । उर श्रीवत्स चारु मणिमाला ॥ भुजा विशाल मनोहर चारी । शंख चक्र गद अम्बुजधारी ॥ अंग अंग सब भूषण नीके । परम विचित्र भावते जीके ॥

दोहा–देख अमित छवि चकित मति, पति दिग लिये बुलाय । दम्पति परमानन्द मन, परे हर्षयुत पाय ॥

२ बाले बाले कानि ब्रह्मांडानि यस्य यद्वा बालः को यस्य यद्वा बालेर कं सुखं यस्य यद्वा बालानां कं शिरोमणिः यद्वा बाले २ कं सुखं यस्य इत्यादि रोमरोममें जाके ब्रह्मांड अथवा बालक है ब्रह्मा जाके अथवा रोमरोममें है सुख जाके अथवा बालकनको मुकुटमणि अथवा रोमरोममें जाके सुख इत्यादिक अर्थ जानने और अद्भुत कहा है कि और बालक आख मीचे होय है ये बालक कमलदलनेत्र भयो इत्यादि सब विशेषणनमें यथायोग्य कल्पना करलेने ॥ ३ वसुदेवजीने मनमें कही कि हाय जो आज मैं बंदीमें न होतौ तौ जान कहा करतौ पन अब मैं लाचार हूं सो जा दिन बंदी छुटेगी ता दिन १०००० गोदान करौगौ ॥

४ चौपाई–सहसानन जाके गुण गावै । नेति २ कहि निगम बतावै ॥ जाकी भृविलास अतयासा । अखिल लोक उपजै अरु नासा ॥ जो सबतें पर अज अविनाशी । सो किमि कहिये उदर मम वासी ॥ परम विचित्र चरित्र तुम्हारे । मोहत है प्रभु मनहिं हमारे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करिके जानिवेमें आवैहै, विषयनमें अपार हो परंतु विषयनके संग तुम ग्रहण करिवेमें नहीं आवो हो जैसे एक दूधमें शब्द स्पर्श रूप रस गंध ये पांचों वस्तु हैं नेत्रनतेई रूप जानिवेमें आवे है रसको ज्ञान नहीं होइ है, ऐसेई विषयनके ग्रहणमें तुम्हारो ग्रहण नहीं होय है, परिछिन्न पक्षीको घोसुलामें प्रवेश होय है तुम अपरिच्छिन्न हो याते बाहिर भीतर भेद नहीं है, गर्भमें प्रवेश कहांते होय आवरण करिके रहित कहांते हो सर्वस्वरूप हो संपूर्णमें व्यापक हो सत्य वस्तुरूप हो ॥ १७ ॥ आत्माके दृश्यगुण देहादिकनकूं आत्माके विना जो पुरुष सत्य माने है वह अज्ञानी है, विचारिके देखो तो कथनमात्र विना देहादिके सब झूंठेही हैं, यातें झूंठे देहादिकनकूं जो पुरुष सत्य माने है सो अज्ञानी है ॥ १८ ॥ हे विभो ! निरीह निर्गुण निर्विकार तुम हो, तुमहींते या विश्वको जन्म पालन संहार होय है तुम ईश्वर ब्रह्म इनमें कछु विरोध नहीं है, तुम्हारो आश्रय लेके तीनों गुण सृष्टि करे हैं, यातें तुम कर्ता कहिवेमें आवो हो ॥ १९ ॥ जैसे कार्य तो करे सेवक राजामें उसको आरोप कियो जाय है, इसी प्रकार आपमें कर्तापनको आरोप कियो जायहै, त्रिलोकीके पालन करिवेके लिये अपनी मायाकरिके सतोगुणी शुक्लवर्ण विष्णुरूप तुम धारण करो हो, और सृष्टिकी उत्पत्तिके समय रजोगुणी रक्तवर्ण ब्रह्मारूप धारण करोहो, संहारके समय तमोगुणी कृष्णवर्ण रुद्ररूप धारण करो हो ॥ २० ॥ हे समर्थ श्रीकृष्ण हे ब्रह्मादिकनके ईश्वर ! तुम या लोककी रक्षा करिवेके कारण हमारे गृहमें प्रगट भयेहो, और क्षत्री नामधारी असुरनकी सेनाके किरोडों यूथ जित तित चलायमान होते हुओंको मारोगे ॥ २१ ॥ हे देवतानके ईश्वर ! या दुष्टकंसने तुम्हारे जन्मकूं हमारे घरमें श्रवण करि तुम्हारे बहुत भ्राता मारे हैं, अब जो कोई तुम्हारो अवतार भयो यह वार्ता कहि दयगो तो सुनिकै शस्त्र लेके सन्मुख चल्यो आवेगा ॥ २२ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्तें कहे हैं कि, हे राजन् ! या प्रकार वसुदेवजी स्तुति करिचुके पश्चात् देवकी पुत्रमें महापुरुष भगवान्के लक्षण देखि सुन्दर मुसिकानिसों प्रेममग्न होय कंसके भयते स्तुति करनलगी ॥ २३ ॥ अनादिव्यापक ज्योतिःस्वरूप निर्गुण निर्विकार सत्तामात्र चरणादिकनकरि रहित चेष्टारहित तुम काहू प्रकार जानिवेमें नहीं आवोहो, वेद तुम्हारे स्वरूपको वर्णन करेहै, सो तुम ज्ञानके प्रकाश करनवारे साक्षात् विष्णु हो ॥ २४ ॥ जा समय ब्रह्माजीकी सौ वर्षकी अवस्था होय है तब प्रलयकालमें सम्पूर्ण लोक नष्ट होयहै, पृथ्वी जल तेज वायु आकाश ये पंचतत्त्व अपने कारणमें मिलि जायहैं तासमय प्रधानके जाननहारे केवल एक आपही अजन्मा शेष रहो हो ॥२५॥ हे मायाके प्रेरक ! काल तुमारी लीला वर्णन करेहै, या कालते विश्व होय है, पलते आदि लेके वर्षपर्यंत जाकी गिनती होयहै यह परार्द्धरूप करिके बडो है, ऐसे निर्भय कालरूपकी मैं शरणागत हूं ॥ २६ ॥ अब ये सम्पूर्ण मनुष्य मृत्युरूपी सर्पके भयते समस्तलोकनमें भाजे फिरे हैं, जिनकूं निर्भय स्थान कहूं प्राप्त नहीं होय है, कोई एक पुण्यके फलतें आपके चरणारविंदकूं प्राप्त होइ जायहै, तब निर्भय होयके शयन करेहै, मृत्यु याको पीछो छोडिदेयहै ॥ २७ ॥ और हे महाराज ! अतिभयंकर स्वरूपवारे उग्रसेनके पुत्र कंसतें हम डरपेहैं, सो आप हमारी रक्षा करो, भक्तनके भयके दूरि करनवारे ध्यान करिवे योग्य

---

१ जो कछु दृश्य है सो सब नाममात्रही सत्य है जैसे घट सराव आदि नाममात्रही सत्य है वास्तवसो तो सत्य मृत्तिकाही है याहीसो ये सब मिथ्या है ये समझके जाने पहले त्याग दियो और फिर जो कोई याको अंगीकार करे है वोहू अबुध है यानी वांताशी है ॥ २ यामें अनीह आदि तीनों पदनको क्रमसो जन्मादिकमें संबन्ध लगामनो अनीहसो जन्म, अगुणसो स्थिति और अविक्रयसो प्रलय कहे है पन वो विरोध नहीं होय है जैसे नोकरको कियो मालिकको नाम होय है ऐसेही सत्त्वादि गुणनके किये पालनादि आपको लगे है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हो, यह जो आपको श्यामसुन्दर स्वरूप ताको चर्मचक्षुवारेनकूं मति दिखावो ॥ २८ ॥ हे मधुसूदन ! तुम्हारो जन्म मेरे यहां भयो है यह बात न जानै, तुम्हारे लिये अधीर चित्तवाली स्त्री मैं हूं या कंसके भयते डरपूंहूं ॥ २९ ॥ हे विश्वके आत्मा ! शंखचक्रगदापद्मकारि शोभायमान यह आपको चतुर्भुज स्वरूप है याकूं आप छिपाइलेउ ॥ ३० ॥ जो तुम पहिले परमपुरुष भगवान् प्रलयसमय विना परिश्रमही समस्त विश्वको अपने उदरमें राखो हो सो तुम मेरे गर्भमें प्राप्त भये हो यासों या संसारमें बडी हांसी होयगी[1] ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्णचंद्र भगवान् कहैं हे अहो मातः ! तुम अपने पूर्वजन्मकी कथा सुनो, तुम तो पहले जन्ममें पृश्नि हीं और ये वसुदेवजी ता समय पापनकरि रहित सुतपा नाम प्रजापति भए ॥ ३२ ॥ सो तुम दोउनकूं सृष्टि उत्पन्न करिवेके निमित्त जब ब्रह्माजीने आज्ञा करी, तब तुमने इंद्रीनको रोकिके बडो तप कियो ॥ ३३ ॥ वर्षा, पवन, धूप, जाडो, गरमी ये कालके गुण हैं तिनकूं तुमने सह्ये, और श्वासको रोकिके मनके मैल दूरि किये ॥ ३४ ॥ शुष्क पत्र और पवनको भोजन करिके मोसों कामनाकूं चाहिके तुमने चित्त शांतिकरि मेरो आराधन करयो ॥३५॥ हे मातः ! मोमें चित्त लगाय करि तुम दोउनने बडे तीव्र तप कर्‌यो, तप करत करत बारह हजार वर्ष देवतानके व्यतीत है गये ॥ ३६ ॥ हे निष्पापो ! ताही समय याही देहते तुम्हारे ऊपर प्रसन्न भयो, कारण कि तुमने तप श्रद्धा भक्ति करि नित्य हृदयमें मेरो ध्यान करयो हो ॥ ३७ ॥ तुम दोनोंनकी कामना पूरी करिवेके लिये मैं प्रकट होतो भयो, जब मैंने कही कि वर मांगो, तब तुमने यह वर मांग्यो हे महाराज ! जो वर देवेकी इच्छा है तौ तुम सदृश हमारे पुत्र होय ❀ ॥ ३८ ॥ विषय तुमने भोगे नहीं; और कोऊ पुत्र भयो नहीं सो तुमने मेरी मायामें मोहित हैके मोते मुक्ति नहीं मांगी ॥ ३९ ॥ ता समय मैंने तुमकूं वर दियो कि तुम्हारे मोसरीखो पुत्र होयगो, ऐसे कहिके मैं जातभयो, और तुम मनोरथको प्राप्त होयके विषयनको भोग करतभए ॥ ४०॥ जब मैंने शील उदारता इन गुणनसों युक्त अपनी सदृश दूसरो पुरुष या लोकमें न देख्यो, तब मैं पृश्निगर्भ नामकरि विख्यात तुम्हारे आयके पुत्र भयो ॥ ४१ ॥ दूसरे जन्ममें तुम कश्यप अदितिरूप भए मैं फिरि अदिति माता विषैं उपेन्द्र नाम करिके विख्यात भयो, और तब जो मेरो वामनरूप भयो यासों मेरो वामन नाम विख्यात भयो ॥४२॥ तीसरे जन्ममें ताही रूप करिके फिर तुम्हारे जन्म लियो है हे मातः ! मेरो वचन सत्य जानो, देखो तुमने एक वेर पुत्रको वर मांग्यो मैं तुम्हारे तीन वेर पुत्र भयो ॥४३॥ पहले जन्मको स्मरण करायवेके लिये यह स्वरूप तुमैं दिखायो है, और प्रकार मनुष्यके बालकको रूप धारण करि प्रकट होतो तौ तुम कहा जानते कि ये परमेश्वर वेर वेर जन्म लेइ है जो तुमने मेरो दर्शन कियो है सो यह मेरो पूर्ण अनुग्रह जानो विना मेरे अनुग्रह विना मनुष्य देहसो मेरो साक्षात्कार होनो कठिन है ॥ ४४ ॥ अब तुम चाहो पुत्रभाव करि मेरो ध्यान करो चाहो परमेश्वर जानिके ध्यान करो, मोमें स्नेह करोगे तो मेरी परमगतिकूं प्राप्त होउगे ॥ ४५ ॥ (और जो तुमको कंसते भय है कि याकूं मारेगो, तो तुम

---

१ कि देखो साक्षात् परब्रह्म देवकीको बेटा भयो है ॥

❀ दोहा—दानि शिरोमणि कृपानिधि, नाथ कहैं सतभाव । चाहत तुमहिं समान सुत, प्रभु सन कवन दुराव ॥

चौपाई—जनहित विरद मोर श्रुति गायो । सो कैसे करि जात लगायो ॥ तातैं मैं वर तुमको दीन्हो । सो हम आय सत्य अब कीन्हों ॥

दोहा—शिव ब्रह्मा सनकादि मुनि, ध्यान सकत नहिं पाय । सो मैं तुम्हार प्रेमवश, दियो दरश निज आय ॥

२ तीन वेर यह शब्द उच्चारण किया था कि तुमसमान पुत्र होय इस कारण भगवान्‌ने तीन वेर इन्हीके जन्म लिये इस कारण तीसरे जन्ममें मुक्ति हुई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मोकूं गोकुलमें नंदरायजीके घर प्राप्त करो, और यशोदाके गर्भते प्रगट भई मेरी मायाकूं शीघ्र अपने घरकूं लै आवो ॥ १ ॥) श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षितते कहैं हैं कि, हे राजन् ! इतनी वार्ता कहिके भगवान् चुप ह्वै गए, अपनी माया करिके माता पिताके देखतेही शीघ्रही साधारण बालक होइगये ॥ ४६ ॥ जब भगवान्ने वसुदेवजीते कही तब वसुदेवजी सूतिकाघरते श्रीकृष्णचंद्रकूं बाहिर निकारिवेकी इच्छा करतभए, ताही समय श्रीनंदरानी यशोदाके घर योगमाया जन्म लेत भई ॥४७॥ ता समय योगमायाने संपूर्ण द्वारपालनके पुरवासीनके ज्ञान हरि लीने, और सबकूं सुवायदीने, जब श्रीकृष्णचंद्रकूं लेके चले तब द्वारनके बडे बडे किवारनकी लोहकी सांकल आपसू आप खुलिगई, जैसे सूर्यके उदय होते अंधकार दूरि होय है, और मंदमंद गर्जना करि मेघजल वर्षतभए, पीछे शेषजी फणकी छायातें बूंदनकूं निवारण करतभये ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ निरंतर इंद्रके वर्षतें तासमय अतिगंभीर जलतरंगसों युक्त असंख्यात भँवरनसों पूर्ण श्रीयमुनाजी भगवान्के चरण छूइके श्रीवसुदेवजीकूं मार्ग देतीभई जैसे जानकीके पति श्रीरामचंद्रजीकूं समुद्र मार्ग देतोभयो ॥ ५० ॥ वसुदेवजी गोकुल जाय संपूर्ण गोप गोपीनकूं सोवते देखिके श्रीकृष्णकूं यशोदाजीकी शय्यापर सुवाय, और विनकी कन्याकूं लैके फिरि श्रीमथुराजीकूं आवतभये ॥ ५१ ॥ वा कन्याकूं देवकीजीकी शय्यापै सुवायकै वसुदेवजीने वाही स्थानमें जाय पांवनमें बेडी पहिरिलीनी मानों यहांते गएही नहीं हैं ॥ ५२ ॥ अब नंदरानी श्रीयशोदाजीने जानो कि कछु मेरे बालक भयो, और होते समय कछु दुःख न भयो, यातें पुत्र भयो कि पुत्री यह न जानी, निद्रामें मग्न ही यातें कछु सुधि न रही ॥ ५३ ॥

यशोदा नन्दपत्नी च जातं परमबुद्ध्यत ॥
न तल्लिङ्गं परिश्रान्तानिद्रयाऽपगतस्मृतिः ॥ ५३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे तृतीयोध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

श्रीशुक उवाच-बहिरन्तः पुरद्वारः सर्वाः पूर्ववदावृताः ॥
ततो बालध्वनिं श्रुत्वा गृहपालाः समुत्थिताः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितते कहैं हैं कि हे राजन् ! तासमय बाहिर भीतरके संपूर्ण पुरके दरवाजे पहिलेकीसी नाईं बंद ह्वैगए, तापीछे बालकको रुदन श्रवण करिके ड्योढीवान उठे ॥ १ ॥ उठिके शीघ्र देवकीके आठमें गर्भको जन्म जायके कंसते कह्यो, उद्विग्न मन कंस याही गर्भको पैंडो देखे हो ॥ २ ॥ श्रवण करिके वाही समय शय्यातें जलदी उठिके कंस येही मेरो काल है २ ऐसें कहतो शीघ्र सूतिकागृहमें आवतो भयो, घबडायके जल्दीसें मार्गमें गिरिपड्यो मस्तकके बाल खुल गए ॥ ३ ॥ देवकी कंसकूं देखिके दीन होयगई और करुणासो भरे वचन कंसते बोली हे मंगलरूप ! या कन्याकूं मति मारो जो कदाचित् जीवैगी तो तेरेही पुत्रकूं व्याही दूंगी ॥ ४ ॥ हे भैया ! अग्निकेसे तेज तैंने मेरे बहुत पुत्र मारे परन्तु तू कहा करै दैवने तेरी ऐसीही बुद्धि करि दीनी अब या एक कन्याकूं मांगो

१ करहु तात सो वेग उपाई । हमहिं कंसतै लेहु बचाई ॥ गोकुल हमाहिं देहु पहुँचाई । तहां यशोदा कन्या जाई ॥ मोहि राखिकै यशुदा पासा । कन्या ले आवहु अनयासा ॥ ऐसहि मात पिता समुझाई । भये तुरत शिशु यदुकुलराई ॥ सुत उठाय उरसों लिपटायो । प्रेमविवश लोचन जल छायो ॥ कहत देवकी पति सुन लीजे । गमन वेग गोकुलकौं कीजे ॥ बनै नाथ उर धीरज धारे । नाहिन इतने भाग्य हमारे ॥ सो यह सुख नयनन पुनि पीजे । ऐसे सुतको दर्शन लीजे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दै मति मारे ॥ ५ ॥ हे सामर्थ्यवान् ! मैं दीन तेरी छोटी बहिन मंदभागिनी हूं, और मेरे सब पुत्र मारे गये हैं सो हे भइया ! यह अंतिम पेटपौछनी कन्या तौ तू मोय दै ॥ ६ ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित्तें कहैहैं कि हे राजन् ! या प्रकार देवकी कंसतें कहिके कन्याकूं छातीतें लगाइके अति दीनकी नाईं रुदन करनलगी कछु दीन तौ नहीं है किंतु मनमें प्रसन्न है जाने है कि मेरो पुत्र तौ और स्थानपै पहुँचगयो है, और यह कन्या योगमाया है, याके हाथ लगैगी नहीं याते रुदन करै है तथापि देवकीके हाथमेंते दुष्टने बुडककै हठते कन्या झटकि लीनी अत्यंत नम्र होइके कह्यो तोऊ दुष्टने न मानी ॥ ७ ॥ तुरतकी उत्पन्न भई बहिनकी कन्याके चरण पकरिके जोरसों शिलाके ऊपर दे मारी अपनें प्रयोजनके लिये प्रीतिको न गिनी ॥ ८ ॥ वह कन्या कंसके हाथतें उछिटिके कंसके माथेमें लात देके तत्कालही देवीको रूप धरिके आकाशकूं जाती भई, शस्त्रनसहित आठ महाभुजायुक्त विष्णुकी छोटी बहिन देखिवेमें आई ॥ ९ ॥ दिव्यमाला पहिरे चर्चित शरीर दिव्य रत्नजडित आभूषणकरि शोभायमान धनुष त्रिशूल ढाल तरवार शंख चक्र गदा पद्मकूं धारण करे दृष्टि आई ॥ १० ॥ सिद्ध चारण गंधर्व अप्सरा किन्नर नागनमें बडी बडी भेंटें दीनी और स्तुति करी तब वह बोली ॥ ११ ॥ अरे मूर्ख ! मेरे मारेते तेरे हाथ कहा लगैगो, तेरो मारिवेवारो पहलेई कहूं जहां तहां प्रगट व्है चुक्यो है अरे कृपण ! बालनकूं वृथा क्यों मारै है[2] ॥ १२ ॥ या प्रकार भगवान्की देवी योगमाया कंसतै कहती भई, और बहुत स्थाननपर दुर्गा भद्रकाली इत्यादिक नामनकरि प्रकाशित होती भई ॥ १३ ॥ या प्रकार योगमायाको वचन श्रवण करि कंसको बडो विस्मय भयो, देवकी वसुदेवके पाइनमेंते बेडी खुलवाय डारी. हाथ जोरिकरके यह वचन कहत भयो ॥ १४ ॥ अहो बहिन ! अहो बहनेऊ ! हाय मो पापीने तुम्हारे बहोत बालक मारे, जैसे कोऊ राक्षस अपने पुत्रनकूं मारे है ॥ १५ ॥ और देखो करुणा मैंने छोडदीनी जातिके हितकारी सम्पूर्ण छोडिदिये, अहो मैं दुष्ट कौन लोकनमें जाऊंगो ब्रह्महत्यारेकी नांई जीवतोही मैं मरे बराबर हौं ॥ १६ ॥ और केवल मनुष्य मिथ्या बोलै यह बात नहीं, किंतु देवताहू मिथ्या बोलै हैं, देखो आकाशवाणीके कहेतें विश्वासमें आय मो पापीने बहिनके पुत्र मारे ॥ १७ ॥ अहो बडभागियो ! तुम पुत्रनको शोक मति करो ये जीव अपने करे कर्मको भोगैहैं जीव दैवके आधीन हैं सर्वदा एकत्र नहीं रहसकै हैं ॥ १८ ॥ जैसे पृथ्वीके विकार घट पट इत्यादिक उत्पन्न होइ हैं और फूटिजाई हैं, इनके हैवेमें पृथ्वीको विकार नहीं आवै है तैसेही देह ही जन्मै है और मरे है देहनके संग आत्मा नहीं मरै है[3] ॥ १९ ॥ जे पुरुष ऐसे नहीं जानैं हैं वे देहकूं आत्मा मानैं हैं, और देहकूं आत्मातें अहं त्वं ये नाना बुद्धि भेद उदय होइ है, या भेदतें पुत्रादिकके देहनसूं योग्य वियोग होइहै, यातें उनके अज्ञानकी निवृत्ति नहीं होइ है ॥ २० ॥ हे मंगलरूपिणि ! मैंने तुम्हारे पुत्र मारे है तोऊ तुम उनको शोच मति करो, संपूर्ण जीव विवश होयके अपने कर्मके फलको भोगैं हैं ॥ २१ ॥ यावत्पर्यंत अज्ञानी पुरुष अपनेकूं मानैं हैं, कि मरूं हूं मारूं हूं तावत् पर्यंत देहाभिमानी अज्ञानी पुरुष बाध्यबाधक धर्मको प्राप्त होयहै ॥ २२ ॥ अब तुम मो दुष्टपर क्षमा करो, साधु मनुष्य दीनपर दयाही करैं है. यह कहिके अश्रु नेत्रमें भरे कंस देवकी वसुदेवके चरणनमें गिर परयो ॥ २३ ॥ तेरो मारनवारो कहूं उत्पन्न होय चुक्यो है, यह वाक्य आकाशवाणीको श्रवण करि विश्वास पाय कंसने देवकी वसुदेवजीके पांवनमेंसो बेडी काटिदीनी, और अपनी सुहृदता स्नेह जतावतो भयो ॥ २४ ॥ देवकी भैया कंसकूं अतिव्याकुल

१ दोहा—कन्या ले ठाडी भई, देवी अंचल जोड । भैया तेरे शरण है, चाहे मार कि छोड ॥
२ चौपाई—मम हत्या तैं लई वृथाहीं । तेरो रिपु प्रगट्यो व्रजमाहीं ॥
३ जैसे घटके फूटवेमें मृत्तिका नहीं नाश होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देखिके क्षमा करि अपने रोषकू त्यागती भई, और वसुदेवजी मुसिकायके कंसते यह बोले ॥ २५ ॥ हे महाभाग कंस ! जैसे तुम कहो हो यह बात तैसेही है देहधारीनकूं अज्ञानते अहंकार होयहै, या अहंकारनेही मेरो तेरो भेद कराय दियो है ॥ २६ ॥ शोक हर्ष भय द्वेष लोभ मोह जिनकूं लगि रहे हैं, वे मदोन्मत्त पुरुष ईश्वरही पदार्थनसों पदार्थनको परस्पर नाश करै है या वार्ताको नहीं जाने है ईश्वर परमात्माकूं नहीं देखें हैं, यातें मैं मरूं हूं मारूं हूं ऐसे मानें हैं ॥ २७ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितते बोले कि हे राजन् ! या प्रकार प्रसन्न भए तथा श्रद्धायुक्त देवकी वसुदेवजीतें कंस आज्ञा ग्रहण करि अपने स्थानकूं गयो ॥ २८ ॥ जैसे तैसे वह रात्रि व्यतीत भई पश्चात् प्रातःकाल भयो ता समय कंसने मंत्री बुलाये और योगमायाने जो कह्यो कि तेरो मारनवारो उत्पन्न ह्वै चुक्यो है सो यह वार्ता संपूर्ण मंत्रीन प्रति कही ॥ २९ ॥ कंसको वचन श्रवण करि देवनके शत्रु क्षुद्रदर्शी देवनके ऊपर क्रोध करनवारे मंत्री बोले ॥ ३० ॥ कि हे भोजवंशीनके इंद्र! तुम्हारो मारनवारो कहूं ह्वै चुक्यो है तौ कहा चिंता है; पुरग्राम खिरक इत्यादिक जितने स्थानमें सबमें दश दश पांच पांच दिनके बालकनकूं हम मारि आवेंगे, इनहीमें तुम्हारो मारनवारोहू आय जायगो ॥ ३१ ॥ रणके विषैं डरपनहारे ये देवता कहा पराक्रम करैंगे तुमारे धनुषकी टंकार सुनिकेही उनके मन कंपायमान रहे हैं ॥ ३२ ॥ आप जा समय धनुषमें लगायके बाणनकी चारों ओरते मार देउ हौ ता समय देवता अपनो जीव लैके मार्ग छोडके भाजि जायहैं भाजनोही जिनके श्रेष्ठ है ॥ ३३ ॥ कोई देवता रणमें शस्त्र त्याग करि अपनेको दीन जानिके हाथ जोरिलेहै, और कोई कोई देवता धोतीकी कांछ खोल और चुटिया खोल हम डरें ऐसे कहेहैं ॥ ३४ ॥ आपके सन्मुख शस्त्र दीने रथ टूटवेके कारण भयकरिके भाजनेमें मन लगाये संग्रामते विमुख, धनुष टूटे युद्ध न करनेवारे देवतानकूं तुम नहीं मारो हौ ॥ ३५ ॥ संग्रामके विना निर्भय स्थानमें बैठिके बकवाद करनवारे देवता कहा पराक्रम करैंगे, तुम्हारे डरके मारे एकांतमें छिपे गुप्त रहनवारे हरि कहां पराक्रम करैंगे जहां पुरुष जायके स्त्रीरूप होयजांय ऐसे इलावृतखण्डके रहनवारे वनवासी महादेव कहा करैंगे ॥ ३६ ॥ थोरो पराक्रमी और यत्किंचित् विपत्ति परतेंही भगवान्के पास भाजनवारो इंद्र कहा करैगो, वेदनको वांचनवारो ब्रह्मा कहा करैगो, तोहू देवता वैरी हैं छांडिवे लायक नहीं हैं यह जानिके देवतानकी जर उखारिवेके लिये आज्ञाकारी हमकूं आप आज्ञा करो, या प्रकार समस्त मंत्रीनने कही ॥ ३७ ॥ जैसें शरीरमें रोग विना उपाय करे जड पकर जाय है, पश्चात् मनुष्यते वाको उपाय नहीं होय सकैहै, और जैसें योगिजन प्रथम इंद्रियनकरि विषयभोग करिके पश्चात् विषयनको इंद्रियनको रोको चाहै तो नहीं रुकिसकै है, ऐसेही शत्रु छोटे जानि छोडे पीछे प्रबल होनेते जीतिवेमें नहीं आवै है ॥ ३८ ॥ समस्त देवतानके मूल अर्थात् जड विष्णु हैं और विष्णुको मूल सनातन धर्म है और वेद गौ ब्राह्मण तप तथा

---

१ (असंयुगविकत्थनैः) या पदपै दृष्टांत एक मेवाती नौकरी करवेको निकसो एक गांवमें गयो वा गांवमें एक सेर लगतो हो वा मेवातीते लोगनने पूछो कि कहा नौकरी लेउगे कहा नाम है वो बोले मेरो नाम सेरमारखा है तब तो ए सब राजी भये और एक रुपा रोज और खुराकमें नोकर राखी रहन लगो महीना एक बीतो एक दिन सेर आयो सोइ हल्ला भयो तब लोगन्ने कही कि रे सेरमारखा कहा है लाओ आदमी सेरमारखाको ढूंढवे गये तब सेरमारखाने देखी रे सेर आयो सो अब कहा करौं सो ये भागो सो एक अन्न भरवेके कोठेकी एक अन्न निकासवेकी मोरीके मोडेमें छिपकमें धसो सो धड फँस गयो पिछारीसें लोग बाग ढूंढते आये याको वो हाल देखके पाय पकर खेचौ और कही कि रे हरामखोर ! यह कहा तब ये बोल्यो भइया ! सेरमारखां मेरो नाम नहीं है असली नाम घुसरूखां है यदृच्छासे बढायके कहनौ ॥ २ सब देवतानकी जड विष्णु है, यह राक्षस और दैत्यहू जानें हैं जो मनुष्य व्है के न जाने वह राक्षस और दैत्यनहूंसो बीत्यो गयो है ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दक्षिणासहित यज्ञ ये समस्त धर्मके मूल हैं ॥३९॥ हे राजन् कंस ! याही कारणते सर्व प्रकारकरके वेद पढनवारे तपस्वी यज्ञ करनवारे ब्राह्मणनको और होमको द्रव्यकी पूरण करनवारी गऊनको हम मारेंगे ॥ ४० ॥ विप्र-गऊ-वेद-तप-सत्य दम-शम-श्रद्धा-दया-तितिक्षा-यज्ञ ये समस्त हरि भगवानके शरीर हैं ॥ ४१ ॥ सो हरि संपूर्ण देवतानमें मुख्य असुरनके द्रोही सबके अंतःकरणमें विराजमान हैं और समस्त देवता महादेव ब्रह्मा इन सबके यही मूल हैं ऋषीश्वरनको वह करिवो यही विष्णुवध करिवेको उपाय है ॥ ४२ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्‌ते कहैं हैं कि हे राजन् ! दुष्ट बुद्धि काल-फांसमें बंध्यो असुर कंस दुष्ट मंत्रीनसहित ऐसे विचार करिके ब्राह्मणनके मारिवेते अपनो कल्याण मानतो भयो ॥ ४३ ॥ साधुनके कष्टमें भलो माननवारे इच्छापूर्वक रूपकूं धारण करनवारे दानवनकूं जहां तहां भेजके कंस अपने घरकूं आवतो भयो ॥ ४४ ॥ रजोगुणी तमोगुणी जिनके स्वभाव अज्ञान करिके मूढ जिनके चित्त याहीसों समीप आय पोहची मृत्यु जिनकी ऐसे असुरनने साधुनते वैर कियो ॥ ४५ ॥ साधुनते द्वेष करवेते पुरुषकी आयु-बल-धन-धर्म-यश और स्वर्गादिकनको आशीर्वाद सब प्रकारके कल्याण इन संपूर्णको नाश होय है ॥ ४६ ॥

आयुः श्रियं यशो धर्मं लोकानाशिष एव च ॥
हन्ति श्रेयांसि सर्वाणि पुंसो महदतिक्रमः ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

श्रीशुक उवाच-नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः ॥
आहूय विप्रान्वेदज्ञान्स्नातः शुचिरलंकृतः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्‌ते कहैं हैं कि हे राजन् ! उदार चित्त नंदरायजी पुत्रजन्मके समयमें बडे आनंदको प्राप्त होते भये, स्नानकरि पवित्र होइके सुंदर वस्त्र आभूषण पहिरिके ज्योतिषी ब्राह्मणनकूं बुलाय ॥ १ ॥ पुत्रको जातकर्म संस्कार स्वस्तिवाचन पढवायके विधिपूर्वक पितृ और देवतानको पूजन करंत भये ॥ २ ॥ ब्राह्मणनकूं दो लाख गौ शृंगार करिके दान करतभये, भीतर अनेक प्रकारके रत्ननकूं धरिके सातं तिलके पर्वतनको दान करत भए ॥ ३ ॥ कालकरिके पृथिव्यादिकनकी

१ कदाचित् कंस कहै कि वेदपाठी ब्राह्मणको मारोगे और विना पढेनको क्यों नहीं मारोगे तहां राक्षस बोले महाराज ! विना पढे ब्राह्मण जो मूर्ख है वह तो हमारीही जातिके हैं याते वेद पढे ब्राह्मणकोंही हम मारेंगे यह आशय है ॥

२ तुशब्दसों भादोंशुदी छट्टके दिन श्रीबलदेवको जन्मचरित्र जान लेनो चाहिये ॥

३ चौपाई-यशुदा जब सोवतते जागी । सुतमुख देखतही अनुरागी ॥ गद २ कंठ न कछु कहि आयो । हर्षवंत होइ नन्द बुलायो ॥ आवहु कन्त पुत्रमुख देखो । बडो भाग्य अपनो करि लेखो ॥ सुनि हर्षित व्है आतुर धायो । यशुमति सुतको वदन दिखायो ॥ आनँद मगन नन्द मनमाहीं । जानत नहिं हमको केहि ठाहीं ॥ रोय उठे तब नंदके लाला । जाग परे सब ग्वालिन ग्वाला ॥ ४ (कारयामास) ऐसें क्यों कह्यो कि नंद बाबाकों जब आनंदवैवश्यसों जब देहानुसंधान न रह्यो ब्राह्मण कछु कहैं और आप कछु करैं तब अपनी प्रतिनिधिद्वारा जातकर्म करायो यासों श्रीशुकदेवजीने (कारयामास) ऐसो प्रयोग दियो ॥ ५ सात तिलके पर्वत दान करनेको हेतु यह है कि आगे यही मेरो पुत्र गिरि गोवर्धनको सात दिन पर्यंत धारण करेगो याते नंदरायने सात पर्वत दान करे ॥ ६ तिलाद्रिको परिमाण भविष्यपुराणमें कह्यो है ॥ उत्तमो दशभिर्द्रोणैर्मध्यमः पंचभिर्मतः । त्रिभिः कनिष्ठो राजेन्द्र तिलतैलः प्रकीर्तितः ॥ १ ॥ दोणसंख्या च तत्रैव । खारी द्रोणाढकप्रस्था कुडवं च पलं त्रिषु । शाणको माशकश्चेति यथापूर्वं चतुर्गुणाः ॥ इति अर्थः- चार माषेकों शाण तोल कहै है चार शाणकों पिचु चार पिचुको पल चार पलको कुडव चार कुडवको प्रस्थ चार प्रस्थको आढक चार आढकको द्रोण और चार द्रोणको खारी कहै है ॥ ऐसें दश द्रोणकों नाम २॥ मनको एक पर्वत होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शुद्धि होइहै, और स्थानते देहादिकनकी शुद्धि होइहै धोयेते वस्त्रादिक शुद्ध होइहै संस्कारतें गर्भादिक शुद्ध होइहै और तप करेते इंद्रियनकी शुद्धि होइहै यज्ञ करेते ब्राह्मणादिक शुद्ध होइहैं, दानके करेते द्रव्य शुद्ध होइहै, और संतोषते मन शुद्ध होइ है, और ज्ञानते आत्मा शुद्ध होइ है ॥ ४ ॥ ब्राह्मण स्वस्तिवाचन पढत भए, पुराणवक्ता पुराण कहत भए, गायक वंशावली कहत भए, भाट बंदीजन बडाई करतभए, गवैया गान करतभए, भेरि नगारेवारे बाजे बजावते भए ॥ ५ ॥ व्रजके दरवाजे आंगन घर बुहारि झारि छिरकाव होइगए, और उत्तम चित्रविचित्र ध्वजा पताका माला जहां तहां टांगिदीनी वस्त्रनकी पल्लवनकी बंदनवार दरवाजेपै बंधिगई ॥ ६ ॥ गौ बैल बछरानके हरदी तेल लगाय दियो, और शृंगनते खरिया गेरु लगाय दीनी, और मोरछल टकी सुंदर झूलैं उढाइदीनी, और सुवर्णकी माला पहिरायदीनी हैं ॥ ७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! संपूर्ण गोप सुंदर वस्त्र आभूषण पाग पहिरिके भेंटनकूं हाथनमें लैकै नंदरायजीके घर आवतभए ॥ ८ ॥ यशोदाजीके पुत्र भयो है यह सुनिके गोपीनके बडो आनंद भयो है, वे सुंदर वस्त्र आभूषण पहिरिके काजरटीकी लगायके अपने शृंगार करतभई ॥ ९ ॥ नवीन केशरिकी खौरि मुखारविंदनपै लगाये, पतली कमरि, चलायमान कुचवारी गोपिका हाथनमें भेंटैं लैलैके शीघ्रही नंदरायजीके घर जातभई ॥ १० ॥ उज्ज्वल मणिनके जडाऊ कुंडल काननमें पहिरे अति सुंदर मोतिनके हार हृदयके ऊपर विराजमान, जिनकी चोटीनमेंसों फूल वरसते जाय चित्रविचित्र अनेक रंगरंगनके दामन साडी ओढे पहरे भेंटनकों हाथनमें लिये तिन करिके परम शोभायमान स्तनवारी गोपिनकी भीर नंदरायजीके मंदिरकूं जातीभई तासमय मार्गमें अतिशोभा प्राप्त होत भई ॥ ११ ॥ तब गोपिका नंदरायजीके घर आइके श्रीकृष्णचंद्रकूं आशीर्वाद देतभई अहो कृष्ण ! तुम चिरंजीव चिरंजीव रहो और हे लाला ! तुम बहुत दिनपर्यंत हमारी रक्षा करो, या प्रकार बालककूं आशीर्वाद देतभई हरदीचूर्ण तेल जल आपुसमें छिरकत श्रीकृष्णचंद्रके चरित्रकूं गावत भई ॥ १२ ॥ विश्वके ईश्वर भगवान्, अनन्तगुण श्रीकृष्णचंद्र जासमय व्रजमें आये तासमय मनुष्यनके बडे उत्सवमें मन भये याते नाना प्रकारके विचित्र बाजे बजावतभए ॥ १३ ॥ व्रजवासी प्रसन्न होइके दही दूध घृत जलकूं आपुसमें छिरकत (अर्थात् दधिकादो मचावत) गावत भये और माखनके लोंदा फेंकतभए ॥ १४ ॥ अतिउदार चित्त

---

१ (मेयों नेदुः) भेरी बजती भई ऐसे क्यों कही कि श्रीकृष्ण जन्मके आनंदसों सब जगत्में विपरीत रीति है गई जे जड हे वे चेतन है गये और चेतन है वे जड है गये यासों जे बजायवेवारे हे वे जड है गये सो बैठके बैठे रह गये और जड जे वे डंका है वे चेतन है गये सो अपने आप डंका उछल उछलके नगाडनपें परन लगे यासों नगारे बजते भये कह्यो ॥ २ केशबंधनमालेपो माला चित्रविशेषकः तांबूलं केलिपद्मादिरुक्तकल्पः परिकीर्तितः ॥ १ ॥ चूडा गुहनो चंदन माला चीतनो पान हाथमें कमल बस इतनो हलको शृंगारको आकल्प कह्यो है ॥ ३ नवीन केसरके अरगजाकीसी है मुखपंकजमें भूति (शोभा) जिनके ऐसी गोपी ॥ ४ स्वर्णमुद्रा मोहर रत्नहार बहुमोल वस्त्र नारियल फल अक्षत दूब चंदन फूल माला इने सोनेके थारनमें धरके केसरिया कपरासे ढकिके बाये हाथपै धरिके गीत गावत चली ॥ ५ पूत सपूत जन्यो यशुदा इतनी सुनिकै वसुधा सब दौरी । देवनको आनंद भयो सुनि धावत गावत मंगल गौरी ॥ नंद कह्यो इतनो जु दियो घनश्याम कुबेरहुकी मति बौरी । मोहि देखत व्रजहि लुटाय दियो न बची बछिया छछिया न पिछौरी ॥ गौरी—आज बनकउएजनि जाई । सब गौअन बछरनि समेत ले आवहु चित्र बनाई ॥ बालक है व्रज भयो नंदके कहत सुनाय सुनाई । सब मिल ग्वाल कुलाहल करते उर आनँद न समाई ॥ कतहो गहर करत बेकाजहि बेग चली उठि धाई । अपने अपने मनके चीते नैननि देखो आई ॥ एक फिरति दधि दूब देत सुनि एक रहे गहि पाई । एक वसन वसु देत बधाई एक उठे हँसि गाई ॥ बाल वृद्ध नर नारिनके मन भये चौगुने चाई । सूरदास प्रभु प्रेम मगन मन गिरत न राजा राई ॥ ६ ये क्यों कह्यो श्रीशुकदेवजी कहै है कि हे राजन् ! ये प्रेमगर्भित आशीर्वाद है जो बूढो बडो होयगो तौ व्रजको राजा होयगो तब हमारो पालन करैगो ॥ ७ नंदके आनंद भये जे कन्हैया लालकी हाथी दिये घोडा दिये और दीनी पालकी इत्यादि गावत भये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नंदरायजी सूत जगा वंदीजनकूं तथा और जे कोई गुणिजन गवैया हैं तिनको वस्त्र आभूषण गऊनको दान करतभए ॥ १५ ॥ विष्णुभगवान् मोपै प्रसन्न होइ, और यह मेरो पुत्र चिरंजीव रहे या कारणते अतिउदारचित्त नंदरायजीके समीप ये मनुष्य गुणिजन जा जा वस्तुकी कामना करके आये उनकूं वही वही वस्तु देके यथायोग्य सबको पूजन करतभए ॥ १६ ॥ नंदरायजीके घर संपूर्ण व्रजवधू आई, परंतु रोहिणीजी नहीं आई कहा कारणतें कि इनके पति मथुरामें हैं, जा स्त्रीको पति परदेशमें होय सो स्त्री अपनो शृंगार न करै पराये घर न जाय यह शास्त्रकी आज्ञा है ता समय नंदरायजीने जायके रोहिणी-जीते कही कि तुम तो बडभागिनी हो चलो क्यो न आज हमारे बधाई भई है, ऐसे नंदरायजीकी आज्ञा मानिके अच्छे सुंदर वस्त्र और मोतिनके हार सुंदर धुकधुकी पहिरे शृंगार कर बनिठनिके आवती भई ॥१७॥ जबते या व्रजमें श्रीकृष्णचंद्र प्रगट भये तबते नंदरायजीको व्रज संपूर्ण संपत्तिनकरिके परिपूर्ण होतोभयो हे राजन् परीक्षित् ! जहां हरि नारायण प्रगट भये ता व्रजमें लक्ष्मी आय क्रीडा करत भई ॥ १८ ॥ अहो राजन् परीक्षित् ! नंदरायजी गोपनको सर्व प्रकार गोकुलकी रक्षा करिवेमें नियुक्त करिके आप कंसकूं वर्ष दिनको कर देवेके लिये मथुराजीकूं जात भए ॥१९॥ जब नंदरायजी आय कंसकूं कर दै चुके यह वार्ता श्रवणकरिके नंदरायजीके स्थानपै वसुदेवजी मिलिवेकूं आवत भये ॥२०॥ तब जैसे देहमें प्राण आएते देह उठे है, ऐसे बडे प्यारे वसुदेवजीकूं आये देखिके नंदरायजी शीघ्र उठिके आप हाथनते पकरिके प्रेममें विह्वल होइके अपनी छातीसों लगायके मिले ॥२१॥ नंदरायजीने वसुदेवकी पूजा करी और सुखपूर्वक आसनपै बैठिके कुशल क्षेम पूछत भये, सो हे राजन् परीक्षित् ! पुत्रनमें मन लगाये वसुदेवजी नंदजीते यह बोले ॥ २२ ॥ अहो भैया नंदजी ! तुम्हारे पुत्र नहीं हो, पुत्र होइवेको आसरो नहीं हो, सो अब बहुत अवस्थामें तुम्हारे पुत्र भयो यह बडो मंगल भयो ॥ २३ ॥ या संसारचक्रमें रहिके पुनर्भवकी नाईं तुम्हारो मिलाप भयो, यह बडो मंगल भयो, अपने प्यारेनको

---

१ अहो नंद मैं हौं सूत तेरे भयो है पूत जाको ध्यावै जोगी अवधूत ब्रह्मादिकनकोहू जाकी परै नाहीं कूत सो आज व्रजको पुरुहूत होयगो इत्यादि ॥ २ (जगा) में हो जगा लेउगो बडे मोलको झगा पहरवेको लेउगो घोडा और पहरवेको लेउगो तोडा मैयाको लेउगो गैया और लेउगो मोहर रुपैया और घरवारीको सारी जामें लगी गोटा किनारी नहीं नंद वोहै बडी लडिहारी सो मोय देयगी गारी और तेरी करैगी ख्वारी इत्यादि ॥ ३ तुम्हारे लाला भली घडीमें भयो जो यह सुख हमनेहू देख्यो याते नंदरायने रोहिणीजीको महाभागा कह्यो । दोहा—देहिं बधाई नंदको, पैरे यशोदा पाय । कहै पियारे लालको, नैक हमें दिखराय ॥ सोरठा—अति हर्षित नँदराय, कह्यो बजावन सोहिलो । नारि उठीं सब गाय, लग्यो बजन बधावनो ॥ दोहा—ध्वज पताक तोरण कलश, वंदनवार दुवार । गोपिनके घर घर बँधे, तोरन मंगल चार ॥ बंदी मागध सूतगण, भरे भवन बहु आय । ले ले नाम बुलाय सब, परितोषे नँदराय ॥ ४ ये जो नंदोत्सवकी समाप्तिमें शुकदेवजीने (ये नृप) हे संबोधन दियो है याको यह अभिप्राय है कि शुकदेवजीको वा समय ये अनुभव भयो कि नंदमेहलमें जो दधिकादो भयो सो दधिकारेकी जो नदी बही सो वा नदीमें मेंहू वहि चलो सोई पुकारे कि हे नृप ! में या नदीमें वहि चलो जो तुमें अगारी कथा सुननी होय तौ निकास ॥ ५ यह नंदोत्सव श्रीशुकदेजीने राजापरीक्षित्के आगे अठारहही श्लोकमें क्यों कह्यो तहां कहै हैं कि अठारह श्लोक कहनेमें श्रीशुकदेवजीको यह तात्पर्य है कि चहिये १८ पुरान सुनो चहिये ये नंदोत्सवके अठारह श्लोक सुनो अथवा महाभारतके अठारह पर्वको पाठ करो चहिये ये नंदोत्सवको पाठ करो अथवा गीताके अठारह अध्यायका पाठ करो चहिये यह नंदोत्सवके अठारह श्लोक सुनो ऐसे अनेक भाव हैं सो जान लेने तौ सबकी बराबर फल होय ॥ ६ यहां मूलमें (प्रजा) शब्द जो कह्यो है सो अभिप्राय यह है कि जो बेटाको नाम लेउहो तो बेटा तो मेरो है और जो बेटीको नाम लेउ हौ तो नंद बुरो मानेगो ये समझके वसुदेवजीने संततिवाचक सामान्य प्रजा शब्द कह्यो ॥ ७ प्र०—वसुदेवजीने नन्दरायसे कृष्णको अपना पुत्र क्यों न कहा ? उ०—प्राणी जितनी अपने पुत्रपर प्रेम करता है दूसरेपर उतना नहीं होता है दूसरे नन्दरायजी अपना पुत्र कह चुके हैं उनका उत्साह भंग करना उचित नहीं तीसरे भगवान्की इच्छा उनके पुण्यानुसार वहां रहनेकी थी इस कारण न कहा पश्चात् हमारे पास तौ आवैहींगे इस कारणभी न कहा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दर्शन या समयमें बडो दुर्लभ है ॥ २४ ॥ अहो प्यारे ! प्यारे कर्मवारे अपने प्यारे मित्रनको एक ठौर वास नहीं होयहै, जैसे नदीके प्रवाहमें बहिते तृण एकत्र इक ठौर नहीं रहैं हैं कदाचित् संयोग कदाचित् वियोग होय है ॥ २५ ॥ हे नंद ! बहुत जल तृण लतानयुक्त और पशूनके हितकारी महावनमें अपने सुहृदनसहित आप वास करो हौ ! या धुनिते अपने पुत्रनकी कुशल वसुदेवजीने पूछी, अर्थात् बहुत जलतृण होंइगे तो उनकूं गऊ चरैंगी उन गऊनको निरोग लघु दूध होइगो ताकूं यशोदा रोहिणी पान करैंगी, तिनको निरोग दूध मेरे पुत्र पीवेंगे ॥ २६ ॥ वसुदेवजी कहैं हैं कि अहो भैया नंदजी ! मेरो पुत्र बलदेव अपनी माता रोहिणीकूं संग लेके तुम्हारे व्रजमें रहे हैं, और तुमकूं पिता मानै है, तुमहीं उनको पालन करौहौ सो वे तो प्रसन्न हैं ॥ २७ ॥ और जे पुरुष अपने स्नेही प्यारेनकूं संग लैकै धर्म अर्थ काम इन तीनों पदार्थनकूं करै तौही वे सफल हैं, और जो प्यारे स्नेहीनकूं छोडिके अथवा उन्हैं क्लेश देकै अकेलो धर्म करैं अथवा द्रव्य भोगे कामविषयनको भोग करै तौ ये त्रिवर्ग याकूं सुखदाई नहीं होय है, अर्थात् वे त्रिवर्ग किसी कामके नहीं ॥ २८ ॥ अब नंदरायजी वसुदेवजीते कहैं हैं कि, अहो भैया वसुदेवजी ! देखो तौ देवकीसो उत्पन्न तुम्हारे बहुतसे पुत्र कंसने मारे एक पिछली कन्या ही सोहू उडिके आकाशमें चलीगई ॥ २९ ॥ और जा जीवकी प्रारब्धहीमें समाप्ति है जा समय पुत्रादिकनको देनहारो प्रारब्धहीन होइजाय है ता समय वे पुत्रादिक नहीं होइहै, यामें प्रारब्धही परम कारण है, और भये पुत्रादिकहू बिछडजांय है और जो कभू अच्छो प्रारब्ध होय तो फेरि आइमिलैहैं, ऐसे भैया प्रारब्धहीते सुख और दुःख होइहैं, जो पुरुष या प्रकार जाने है वह कभू मोहको प्राप्त नहीं होइहै याते ऐसो सूचित करचो कि अहो वसुदेवजी ! अपने मनमें पुत्रादिकनको शोच मति करो तेरे बिछुरे पुत्रनको कोई समय संयोगसे दर्शन होइ जायगो, हमते वियोग होइ जायगो ॥ ३० ॥ अब वसुदेवजी नंदरायजीते कहैं हैं कि, अब तुम कंसरायकूं वर्षदिनको कर देचुके और हमहूंते मिलिचुके अब यहां बहुत दिन मतिरहौ गोकुलमें उत्पात आवै है ॥ ३१ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्ते कहैं हैं, कि हे राजन् ! या प्रकार वसुदेवजीके कहेते नंजरायसौं आदि लैकै संपूर्ण गोप गाडानमें बैल जोरिके और वसुदेवजीते आज्ञा मांगिके आप मथुरातें गोकुलकूं गमन करतभए ॥ ३२ ॥

श्रीशुक उवाच-इति नन्दादयो गोपाः प्रोक्तास्ते शौरिणा ययुः ॥
अनोभिरनडुद्युक्तैस्तमनुज्ञाप्य गोकुलम् ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

श्रीशुक उवाच-नन्दः पथि वचः शौरेर्न मृषेति विचिन्तयन् ॥
हरिं जगाम शरणमुत्पातागमशङ्कितः ॥ १ ॥

---

१ चौ०-तुम अति कष्ट कंसतैं पायो । सुनि २ भयो बहुत पछितायो ॥ आजु देखिके चरण तिहारे । भये हमारे नैन सुखारे ॥ कर्म रेख नहिं जात मिटाई । विधिकी गति कछु जात न पाई ॥

२ अर्थात् कंसकी भेजी पूतना गोकुलमें गई है सो तुम जल्दी जाऊ यह ढकी भई बात वसुदेवजीने नंदरायको जताय दीनी । सो०-गई पूतना आज, व्रजको बालकघातिनी । करि है कछू अकाज, वेग धाम सुधि लीजिये ॥ दोहा-जित तित भेजे कंसके, करत असुर अनरीति । प्रजा लोकके बालकन, तातें है अति भीति ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी राजापरीक्षितते कहे हैं कि ॥ हे राजन् ! अब नंदजी मार्गमें यह विचार करत भए भाई वसुदेवजीको वचन मिथ्या तो नहीं होइहै उत्पातके आइवेते डरपिके नारायणकी शरण होतभए कि महाराज ! यह तुमने पुत्र दियौ तौ तुमही याकी रक्षा करोगे ॥ १ ॥ घोर रूपवारी बालकनकी मारनवारी पूतना कंसकी पठाई पुरग्रामनमें बालकनकूं मारत डोले है ॥ २ ॥ यह बात श्रवणकरिके राजा परीक्षित्के मनमें शंका भई कि महाराज ! वह पूतना नंदजीके महलमें गई होइगी यापर शुकदेवजी कहे हैं कि राजा ! चिंता मति करो उहां जायगी तौ मरेगी जा स्थानमें राक्षसनके नाश करनवारे यज्ञादिक कर्म और परमेश्वरकी कथा स्मरण कीर्तनादिक नहीं होइ हैं तहां राक्षसनी प्रवृत्त होइके अपनो पराक्रम करेहैं जो भगवान्के नाम स्मरणको तौ यह प्रभाव है और जहां साक्षात् आपही हैं तहां पूतनाकी कहां समार्थ्य जो उनको मारे ॥ ३ ॥ आकाशकी विचरनेवारी इच्छापूर्वक रूप धरनवारी वह पूतना मायाते अपनो स्त्रीरूप बनायके श्रीनंदरायजीके गोकुलमें जात भई ॥ ४ ॥ वाकी चोटीमें चमेलीके पुष्प गुंथरहेथे बडे नितम्ब और कुचनके भारसे कमर लचरही थी सुन्दर वस्त्र धारे हिलते हुए कुंडलकी कांतिसे झलकते बालोंसे मुख शोभित हो रहाथा ॥ ५ ॥ ब्रजवासीनके मनकूं मोहनवारी मुसिकानयुक्त सुन्दर चितवनिवारी उसकी चितवनसे ब्रजवासिनी मोहित होइके वा पूतनाकूं मने न करत भई और हाथमें कमल फिरावत आई याते गोपीनने जानी कि अपने पति नारायणके देखिवेकूं लक्ष्मी आई हैं यातें यशोदा रोहिणी और गोपीनने मने न करी ॥ ६ ॥ बालककूं ग्रहरूप पूतना छोटे छोटे बालकनकूं ढूंढती अकस्मात् गोकुलमें श्रीनन्दरायजीके आवत भई दुष्टनके मारनवारे भगवान्ने भस्ममें ढकी अग्निकीसी नाईं बालकरूपमें अपनो तेज छिपाय राख्योंहै वे श्रीकृष्णचन्द्र शय्या ऊपर सोवे है तिन्हें देखत भई ॥ ७ ॥ स्थावर जंगम जीवनके अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्रने पूतनाकूं बालकनके मारनवारी ग्रहरूपी जानिके नेत्र मूंदि लिये भगवान्के नेत्र मूंदिवेको कारण कहा कि मेरी शुद्ध दृष्टि जाके ऊपर परैगी तो ताको शुद्ध मन होइजायगो स्तननमें विष लगायके मारिवेकूं आईहै यह याको मनोरथ सिद्ध न होइगो याते नेत्र मूंदि लिये, आप अनंत औरनके अंत करनवारे उन श्रीकृष्णचंद्रकूं गोदमें उठाय लेतभई जैसे पुरुष जेवरी जानि सोते सांपकूं उठाय लेइहै ॥ ८ ॥ जैसे मखमलके म्यानकी तरवार होइहै तैसे भीतरमें चित्तवारी ऊपरते मनोहर चेष्टावारी सुन्दर स्त्री पूतनाको नंदरायजीके घरके भीतर आई देखि वाके तेजसों रोहिणी यशोदा चकित होयके ठाढी देखत रहीं कछु न कहसकीं ॥ ९ ॥ तहां घोररूप पूतना श्रीकृष्णचंद्रकूं गोदमें लैके भयानक विष लग्यौ स्तन मुखमें देतभई, श्रीकृष्णहू क्रोधं करिके दोनों हाथनतें

---

१ चौपाई—एक कहै कोउ रानी । यशुमतिके आई हम जानी ॥ एक कहै यह कमलाबाई । श्रीकमलापति देखन आई ॥ पद- रूपमोहिनी धरि ब्रज आई । अद्भुत साज शृंगार मनोहर असुर कंस दे पान पठाई ॥ कुच विष वांटि लगाय कपट करि बालघातनी परम सुहाई ॥ बैठी हुती जसोदा मंदिर दुलरावति सुतश्याम कन्हाई ॥ प्रकटी तहां पूतना आकर प्रेरित काल अवाध नियराई ॥ आवत देखि बैठिका दीन्ही कुशल बूझि अतिनिकट बुलाई ॥ पौढाये हरि सुभग पालने नंदघरनि कछु काज सिधाई ॥ बालक लियो उछंग दुष्टमति हर्षाति अस्तन पान कराई ॥ वदन पसारि प्राण हर लीन्हौं परी राक्षसी योजन ताई ॥ सूर दई जननी गति ताको कृपा करी निज धाम पठाई ॥

२ अथवा बाल्यभावसों अथवा बालकपनके कारणभी रूप न दिखायवेको अथवा तादृश अमंगलके नहीं देखवेकों अथवा माताभावसों आइ पूतनाके मारवेकी लज्जासों अथवा याके मरवेकी विकलताके न देखवेको इत्यादि चक्रवर्ती ॥ ३ अनंतको गोदमें धरती भई यासों अद्भुत रस दिखायो है ॥ ४ मेरे ब्रजवासी भक्तनके बालकनकों या रांडने मारे है या क्रोधसो युक्त है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कसिके पकरिके प्राणसहित स्तनकूं औषधिरूप मानिके पीवत भए॥ १० ॥ पूतना यह कहत भई अरे लाल छोडिदे, बस करि बस करि, ऐसे पुकारन लगी मर्मस्थलनपै पीडा होती भई, नेत्र फटि गए हाथ पांव बेर बेर पटकते २ देहमें पसीना आय गयो पुकारिके रुदन करत भई ॥ ११ ॥ पूतनाके रुदनको बडो शब्द भयो, ता शब्दतें पर्वतनसहित पृथ्वी कांपन लगी, ग्रह तारागण रसातल ये सम्पूर्ण हलन लगे और दिशानमें गर्जना भई, तब इंद्रके वज्र गिरिवेकी शंका करिके मनुष्य पृथ्वीमें गिरत भए ॥ १२ ॥ हे परीक्षित! या प्रकारसो वह राक्षसी स्तनकी व्यथासों प्राणरहित हैगई और मरण समय वाको मुख फट गयो हाथ पैर फैलाय दिये कपट त्यागकरकें अपनो राक्षसीरूप प्रगटकर वज्रसो मारे भये वृत्रासुरकी समान पृथ्वीमें गिरि गई ॥१३॥ हे राजन् परीक्षित! जा समय पूतनाको देह गिर्यो तासमय छः कोशके बीचमें जो वृक्ष हैं तिनको चूर्ण होतभयो यह बडो आश्चर्य भयो ॥ १४ ॥ पूतनाके भयंकर मुखमें हलकी दंडीके समान लम्बी तीक्ष्ण डाढे हैं और पर्वतकी गुफासी नाक, घोर पर्वतके समान स्तन और भयानक अरुण बिखरेभये केश हैं ॥ १५ ॥ अंधेरे कूआकी नांई बैठीहुई गंभीर आखें नदीके तटके तुल्य भयंकर नितम्ब पुल बंधोहोइ तैसे हाथ पांव जंघा और शुष्क सरोवरके समान उदर है ॥१६॥ ऐसी भयंकर पूतनाको देह देखिके गोपीनको बडो भय होत भयो पहलेही वाके रुदनके शब्दते गोप गोपीनके हृदय कान मस्तक विदीर्ण होइ गयेहैं ॥ १७ ॥ ता पूतनाकी छातीपें निर्भय श्रीकृष्णचन्द्र क्रीडा करैं हैं तिनकूं हरबरायके शीघ्र जायके गोपिनने उठाय लियो ॥१८॥ संपूर्ण गोपी और यशोदा रोहिणी श्रीकृष्णचंद्रको गोपुच्छको झारो देकैं फूंक मारि रक्षा करत भई ॥ १९ ॥ श्रीकृष्णचंद्रको गोमूत्रसूं स्नान करायके गोरजमें लुटाय गोबर लगाय करि द्वादश अंगनमें केशवादि द्वादश नामकरि रक्षा करत भई ॥ २० ॥ गोपी हाथ पांव धोइके आचमन करिके अपने अंगनमें तथा करनमें न्यारो न्यारो न्यास करिके बालकको बीजन्यास करत भई ॥ २१ ॥ हे श्रीकृष्णचंद्र ! अजन्मा भगवान् तुम्हारे चरणकी रक्षा करैं, मणिमान् भगवान् तुम्हारे ऊरुनकी रक्षा करैं यज्ञ भगवान् तुम्हारी जंघानकी रक्षा करैं अच्युत भगवान् तुम्हारे करकी रक्षा करैं हयग्रीव भगवान् तुम्हारे उदरकी रक्षा करैं केशव भगवान् तुम्हारे हृदयकी रक्षा करैं, विष्णु भगवान् तुम्हारी भुजानकी रक्षा करैं, उरुक्रम भगवान् तुम्हारे मुखारविंदकी रक्षा करैं, ईश्वर भगवान् तुम्हारे मस्तककी रक्षा करैं ॥२२॥ चक्रधारी भगवान् तुम्हारे अग्रभागकी रक्षा करैं, गदा धारण करिवेवारे भगवान् तुम्हारे पीछेतें रक्षा करैं धनुषकूं धारण करिकै मधुनामा दैत्यके मारनवारे भगवान् और खड्ग धारण करनवारे अजन्मा भगवान् यह दोनों तुम्हारे दाहिने और बांएतें रक्षा करैं, और शंखकूं धारण करनवारे उरुगाय भगवान् चारों कोणनते रक्षा करैं, उपेंद्र भगवान् तिहारे ऊपर रहो, तार्क्ष्य भगवान् पृथ्वीमें रक्षा करैं, हलधर भगवान् सर्वत्र रक्षा

---

१ दोहा–तबहि राक्षसी दुष्टमति, पलनाके ढिग जाय । निरखि वदन मुख चूमिके, लीन्ह उछंग उठाय ॥ सोरठा–दियो कमलमुखमाहि, विष लपटयो अस्तन तुरत । पकर दुहूं करमांहि, लगे करन पय पान हरि ॥ चौपाई–पयसँग प्राण खिंचे जब वाके । ह्वै गये अंग शिथिल तब ताके ॥

२ (पतमानः) गिरतो वो पूतनाको देह छै कोशके वृक्षनको चूर्ण करतो भयो ॥ ये वृक्ष कंसके बगीचाके हे ये वैष्णवतोषणीको मत है ॥ ३ प्रश्न–छः कोशके वृक्ष चूर्ण हो गये तौ क्या उसका शरीर छः कोशका होगा ? उत्तर–नहीं जिस समय व्याकुल हो इधर उधर झपटने लगी तब उसके आघातसे वृक्ष चूर्ण हो गये, जैसे एक हाथी एक कोश तक वनके वृक्ष चूर्ण कर डाले तौ क्या इससे उसका शरीर कोशभरका होगा ? कभी नहीं इसी प्रकार पूतनाके झपटनेसे छः कोशके वृक्ष घरेके चूर्ण हुए शरीर छः कोशका न था ॥ ४ आदिशब्दके कहिवेसों राई नोन उतारनो सरसों ऊपर उतारनो सूपके कोनेको झारो देनो जाननो ॥ ५ अं नमः अजस्तवांघ्री अव्यात् इत्यादिक जानिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करें ॥ २३ ॥ हृषीकेश भगवान् तुम्हारी इंद्रीनकी रक्षा करैं, और नारायण भगवान् प्राणकी रक्षा करैं श्वेतद्वीपके पति भगवान् तुम्हारे चित्तकी रक्षा करैं, और योगेश्वर भगवान् तुम्हारे मनकी रक्षा करै ॥ २४ ॥ पृश्निगर्भ भगवान् तुम्हारी बुद्धिकी रक्षा करैं, परम भगवान् तुम्हारी आत्माकी रक्षा करैं क्रीडा करते समय गोविंद भगवान् तुम्हारी रक्षा करैं, सोवतसमय माधव भगवान् तुम्हारी रक्षा करै ॥२५॥ वैकुंठ भगवान् तुम्हारी चलती बेर रक्षा करैं, लक्ष्मीपति भगवान् बैठते रक्षा करै समस्त ग्रहनके भयके करनहारे यज्ञभोक्ता भगवान् भोजनसमय रक्षा करैं ॥ २६ ॥ डाकिनी यातुधान और जे बालकनके ग्रह भूत प्रेत पिशाच यक्ष राक्षस विनायक गण हैं ते ॥ २७ ॥ और कोटरा, रेवती, ज्येष्ठा, पूतना और मातृकानकूं आदि लेके राक्षसी हैं और उन्माद और जे जे अपस्मार रोगके करनवारे देह प्राण इंद्रिनके द्रोही ॥ २८ ॥ और जे स्वप्नमें देखे उत्पात हैं और वृद्धग्रह बालग्रह हैं ते समस्त नाशकूं प्राप्त होऊ विष्णुभगवान्के नाम लियेते संपूर्ण नष्ट होइजाय है ॥ २९ ॥ या प्रकार हाथ जोरि गोपिनने विष्णु भगवान्की प्रार्थना करी और रक्षा करिके श्रीकृष्णचंद्रकूं माताकूं सौंपिदियो तब यशोदाजीने स्तनपान करायके श्रीकृष्णचंद्रको शय्यापर पौढाय दीनो ॥ ३० ॥ तब ताई नंदादिक व्रजवासी मथुरातें गोकुलमें आये, तब मार्गमें मृत्युकूं प्राप्त भई पूतनाकूं देखिके बडो आश्चर्य मान्यो ॥ ३१ ॥ नंदजी कहैहैं कि वसुदेवजी निश्चय कोई ऋषि है, वसुदेवजीने कही भैया तुम शीघ्र मथुरातें गोकुलको जावो गोकुलमें उत्पात होयगो सोई नेत्रनते देखो ॥ ३२ ॥ ता पीछे संपूर्ण गोकुलके मनुष्य पूतनाके शरीरकूं फरसानते काटि काटि घरनसो दूर लकरियामें धरिके दाँह करतभये ॥ ३३ ॥ जासमय पूतनाको देह जरायो तो जरते देहमेंते अगरकीसी सुगंधिकेसो धुंवा उठत भये श्रीकृष्णचंद्रने याके स्तनपान किये याते संपूर्ण पाप तत्काल दूरि होइगए ॥ ३४ ॥ संसारके बालकनकी मारनवारी रुधिरकी पीवनवारी राक्षसी भगवान्कूं मारिवेकूं आई सोहू स्तनपान करायके सुंदर गतिकूं प्राप्त भई ॥ ३५ ॥ फिर श्रद्धाभक्ति करिके श्रीकृष्णचंद्र परात्माकूं माता अति प्यारी वस्तु दैकै बहुत सुंदर गतिकू पावैहै यामें कहां कहिनोहै ॥ ३६ ॥ भक्तनके हृदयमें विराजनेवारे लोकन करिके वंदित ब्रह्मादि देवताओंसे पूजित चरणारविंदनसूं पूतनाको अंग दाविके भगवान् श्रीकृष्णचंद्र स्तनपान करत भये ॥ ३७ ॥ माताकी गति स्वर्ग है ताय वह पूतना राक्षसी पावतभई और जिन गउनको गोपिनके स्तनको श्रीकृष्णचंद्रने उत्तम दुग्ध पान करो वे सुन्दर गतिकूं प्राप्त हों यामें कहा कहिनो है ॥ ३८ ॥ मोक्षकूं आदि लैकै समस्त पदार्थनके दैनवारे देवकीके पुत्र भगवान् स्नेहते वहै ऐसे गऊ गोपिनके दुग्धको परिपूर्ण होयके पीवते भये ॥ ३९ ॥ हे राजा परीक्षित् ! श्रीकृष्णचंद्रमें पुत्रभाव माननहारी विनकी माता और गोपिनको अज्ञानते उत्पन्न होनेहारो संसार न होइगो ॥ ४० ॥ व्रजवासी मनुष्य श्मशानके धूआंकी सुगंधि सूंघिके यह कहत भये, कि यह कहा है कहांते आवै है ऐसे कहत २ गोकुलकूं आवत भये ॥ ४१ ॥ गोकुलमें व्रजवासीनतें पूतनाको आयवो और आयके मृत्यु होइवो श्रवण करिके और कृष्णको कल्याण श्रवण

---

१ यह सब नारायणहीके नाम हैं ॥ २ माताके स्तनको पीवनोही वेध ये बालककी स्वस्थता लक्षण है जो बालक वो वो दाबे तो नैरुज्य समझनो ॥ ३ सोरठा—कहत यशोदा माय, फिर फिर सबके पांय परि । उबरचो आज कन्हाय, तुम पंचनके पुण्यतें ॥ ४ ये कहीं इंद्रने भ्रमसों विना पंख कटी पर्वत भ्रमसों पटको है अथवा हमही काही भ्रांतिसों काई योगिनीने रस्ता भुलायके काही देशांतरमें लाय पटक है या ये काहू इंद्रजालवारेने तमासो कियो है ॥ ५ जलायो क्यों कि कही फिर न जो उठे और दूसरो प्रयोजन यह है कि जितने विषधर जीव हैं तिनकी जलायवेहीसों शांति होय है यासों ॥ ६ यहां जननी शब्दसों धाय समझनी (लेभे गतिं धाय्युचितां) या तृतीयस्कंधके वाक्यसों यशोदाकी गतिको या रांडको अधिकार नहीं है । वैष्णवतोषिणी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करिके नंदते आदि लेके व्रजवासी बडो आश्चर्य्य मानतभए ॥ ४२ ॥ हे कौरवनके कुलकूं आनंद देनवारे राजन् परीक्षित् ! उदारबुद्धि नंदरायजी मथुरातें गोकुलकूं प्राप्त होइके पुत्रकूं गोदमें लैके बडे आनंदकूं प्राप्त होत भये ॥ ४३ ॥ यह जो श्रीकृष्णचंद्रको परम अद्भुत चरित्र पूतनाकी मोक्ष जो कोई श्रद्धा करिके श्रवण करै तो वा पुरुषकी गोविंद भगवान्में प्रीति होईहै ॥ ४४ ॥

य एतत्पूतनामोक्षं कृष्णस्यार्भकमद्भुतम् ॥
शृणुयाच्छ्रद्धया मर्त्यो गोविन्दे लभते रतिम् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कंधे पू० पूतनामोक्षो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

राजोवाच–येन येनावतारेण भगवान् हरिरीश्वरः ॥
करोति कर्णरम्याणि मनोज्ञानि च नः प्रभो ॥ १ ॥

महाराज परीक्षित् कहेहैं कि ॥ हे प्रभो ! छः प्रकारके ऐश्वर्य करिके परिपूर्ण समस्त प्राणिनके कष्टनके हरनवारे श्रीकृष्णचंद्रने जिन २ अवतारनकूं लैके जो जो लीला करी ते ते हमारे काननकूं रमणीय मनोहर हैं ॥ १ ॥ जो पुरुष श्रीकृष्णचंद्रके चरित्र श्रवण करैं हैं तिनके मनकी ग्लानि जायहैं, और अनेक प्रकारकी तृष्णा दूरि होइ जायहै, शीघ्र संपूर्ण अंतःकरण शुद्ध होइहै, हरिमें भक्ति होइहै और हरिभक्तनतें मित्रता होइहै यातें आपकी इच्छामें आवै तौ श्रीकृष्णको मनोहर चरित्र कहो ॥२॥ याके अनंतर मनुष्य देह धारण करि मनुष्यनकीसी लीला धारण करनहारे श्रीकृष्णचंद्रको मनोहर अद्भुत बालचरित्र हमारे आगे वर्णन करो ॥ ३ ॥ श्रीशुकदेवजी महाराज राजा परीक्षित्तें कहैं हैं कि हे राजन् ! एक समय श्रीकृष्णचंद्रकी वर्षग्रंथिके उत्सवको दिन प्राप्त भयो, और वाही दिन जन्मनक्षत्रको आइवो भयो, यातें अति मंगल भयो ता दिन संपूर्ण गोपिका आवत भई और बाजे बजावत भई, गीत गाये, ब्राह्मणनपै स्वस्तिवाचन पढवायके श्रीयशोदाजी श्रीकृष्णचंद्रको अभिषेक स्नान करावती भई ॥ ४ ॥ अब नंदरानी यशोदाजीने अन्नादिक वस्त्र मोतिनके हार सुंदर शृंगार करिके गौ पूजन करि ब्राह्मणनकूं दीनी और ब्राह्मणनतें स्वस्तिवाचन पढवाय स्नान करवायो, ता समय पुत्रके नेत्रनमें निद्रा आई जान श्रीकृष्णचंद्रकूं होलेते गाडाके नीचे पालनेमें नंदरानी सुवावत भई ॥५॥ करवट लेवेकी बधाईमें हर्ष जिनके मनमें भयो, और उदार मनवारी यशोदा रानी घर आई गोपिनकी शुश्रूषा कररहीं वही समय पुत्र श्रीकृष्णचंद्रके रोइवेको शब्द न सुनत भई भगवान्की स्तन दीवेकी इच्छा भई, तब रोवत २ चरण ऊपरकूं उठावतभए ॥ ६ ॥ गाडाके नीचे पालनेमें कृष्णचंद्रके छोटे अति कोमल मूंगाकीसी कांतिवारे चरणारविंदकी ठोकरते गाडा गिरतभयो, अनेक प्रकारके रसनके भरे ताम्बेपीतरके बासन गिरि परे, पहिया न्यारे न्यारे गिरिपरे, धुरि निकसि गई जुआ टूटिगयो ॥७॥ यशोदाते आदि लेके व्रजकी स्त्री जो करवट देवेके उत्सवमैं आई ही ते और नंदजीते आदि लैके व्रजवासी आश्चर्यकूं देखिके व्याकुल भये कि आपहीते गाडा कैसे उलटि पर्‍यो ॥ ८ ॥ (कोई कुछ कोई कुछ विवाद करके कहन लगे और व्याकुल होगये परन्तु कोईको कुछ निश्चय नहीं भयो) तब विन गोप गोपीनतें श्रीकृष्णचंद्रके समीपके बालक कहन लगे कि तुम क्यों संदेह करौ हो रोवत २ या श्रीकृष्णने पांवकी ठोकर मारी यातें यह गाडा उलटिके गिरिपर्‍यो यामें कछु संदेह मति जानौ ॥ ९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वा बालक श्रीकृष्णचंद्रके अनंतबलकूं ब्रजवासी नहीं जाने है यातें बालकनकी बातको विश्वास नहीं करते भए कि ये बालक हैं कहा जानैं कहो बालककी ठोकरते गाडा कैसे गिरिपड्यो ॥ १० ॥ पालनेमेंसो रोवत श्रीकृष्णचंद्रकूं गोदमें लेकै यशोदाजीने जानी कि आज या घरी कोई खोटो ग्रह आयो यह शंका मानिके ब्राह्मणनकूं बुलाय स्वस्तिवाचन कराय स्तन आछे पीयै तो जानिये डरो नहीं है ये समझके स्तन पिवावत भई ॥ ११ ॥ श्रीकृष्णचंद्र भगवान्के प्रभावको न जानिके बली ब्रजवासीनने ब्राह्मणनके कहेते आठ दिशानमें बलिदानकूं करिके संपूर्ण वस्तु धरिके गाडा धरिदियो ब्राह्मणने नवग्रहादिकनको होम कियो और दही अक्षत कुश जलते गाडाकी पूजा करी, प्रेमी ब्रजवासीनको अन्न खायके ब्राह्मण प्रेमी है गयो जो संपूर्ण गाडाकी पूजा करी ॥१२॥ निंदा झूंठ पाखंड ईर्ष्या अर्थात् दूसरेको न सहारिवो और हिंसा गर्व जिनके नहीं हैं विन सत्यवादी ब्राह्मणके आशीर्वाद निष्फल नहीं होयहैं ॥१३॥ या प्रकार मनमें विचार नंदरायजी श्रीकृष्णचंद्रकूं गोदमें लेके जलमें पवित्र औषधि डरवायके सामवेद ऋग्वेद यजुर्वेदके मंत्र उत्तम ब्राह्मणते पढवायके अभिषेक करावत भए ॥ १४ ॥ स्वस्तिवाचन कराय और अग्निमें होम करायके नंदरायजी और संपूर्ण गोप गोपी सावधान होइके बडे गुणकारी अन्नको दान ब्राह्मणको करतभए ॥ १५ ॥ बहुत सुंदर गुणवारी बहुत गौ वस्त्रनकूं उढाय फूलनकी माला तथा सुवर्णते शृंग मढाय सोनेकी माला पहिराय पुत्रके कल्याणको निमित्त देतभये ब्राह्मण आशीर्वाद देतभये ॥ १६ ॥ मंत्रनके जानिवेवारे योग्य ब्राह्मणनने जो जो आशीर्वाद दिये ते ताही प्रकार होतभये ब्रह्मवाक्य कहू समय निष्फल नहीं होइहैं यह बात प्रगट है ॥ १७ ॥ एक दिन नंदरानी श्रीकृष्णचंद्रको लाड कररही ही तासमय श्रीकृष्णचंद्रने पर्वतकी समान अपने शरीरको बोझ बढायो सो यशोदाजीपै सहारचो न गयो बोझ बढायवेको कारण यह है कि श्रीकृष्णचंद्रने जानी कि जो मैं माताकी गोदमें रहूंगो यह उपस्थित तृणावर्त मेरी माता सहित उठायके लेजायगो, याते मोकूं कष्ट होउ तो होउ मेरे कारण मेरी माताकूं कष्ट न होय ॥१८॥ तब तो यशोदाजी अति आश्चर्यको प्राप्त हैकै और बोझते अति पीडित हैकै श्रीकृष्णचंद्रकूं पृथिवीमें बैठायके नारायणको ध्यान करत भई, और कहत भई कि आज कृष्णमें बोझ क्यो भयो ऐसे विचारके घरके काममें लगिगई ॥ १९ ॥ इतनेहीमें कंसको टहलुवा पठायो तृणावर्त नाम दैत्य पवनके बवूरेको रूप धरिके अंगणमें बैठे श्रीकृष्णचंद्रकूं उडायके लैगयो ॥ २० ॥ संपूर्ण गोकुल धूरिते ढकिदियो मनुष्यनके धूरिते नेत्र मूंदि गए, और वाके घोर शब्दते दिशा विदिशा भर गई ॥२१॥ दो घडी ताईं उडीभई धूरिके अंधकारते संपूर्ण गोकुल ढकिगयो, अब जहां श्रीयशोदाजी श्रीकृष्णकूं बैठारि गई ही तहां आयके देखै तो दैई नहीं ॥ २२ ॥ तृणावर्तने कंकरी ठीकरीनकी वर्षा करी तासूं पीडित हो गोकुलवासी मोहकूं प्राप्त होइके अपने आत्माकूं न देखते भए न किसी दूसरेको देखसके ॥२३॥ या प्रकार महाकठोर धूलीकी वर्षा दैवेसो और आंधीके चलवेसो यशोदाने ढूंढते २ श्रीकृष्णको न पायो तब अत्यंत निर्बल हो मरे बछरावारी गौकी समान पृथ्वीपें गिरपडी, और करुणाभरे वचन कहकर शोच करनलगी ॥२४॥ ता समय यशोदाजीको रुदन श्रवण करिके अतिपीडित बहुत व्याकुल होय नेत्रनमें आंसू भरे गोपिकाये श्रीकृष्णचंद्रके देखे विना रुदन करत भई, इतनेहीमें धूरि वर्षतो पवन थंभिगयो ॥ २५ ॥ बवूलेको रूप धरनहारे तृणावर्त दैत्यको वेग सब जगत्के

१ प्रश्न–श्रीकृष्णने पहलेही अपना शरीर भारी क्यों न किया जब वह ऊपर ले गया तब भारी हुए। उत्तर–यदि पहलेही न उठते तौ दैत्यको किस प्रकार मारते, दूसरे यशोदाके आंसू पृथ्वीपर गिरनेपर उसकी मृत्यु थी। यह पाण्डुरदेशका राजा था स्त्रियोंको लिये जलविहार करता था, दुर्वासाजीको देख प्रणाममी न किया इसपर उन्होंने कहा तू राक्षस होगा। प्रार्थना करनेपर कहा श्रीकृष्णके हाथसे मरकर मुक्त होगा॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धारण करनहारे भगवान्‌के उठाय ले जायवेसो शान्त हैगयो याहीसो ऊपरको अधिक ऊंचो न उठसको ॥ २६ ॥ जब तृणावर्तको बहुत बोझ लगो तब यह जानो कि मैं काहू बडे पत्थरको ग्रहण किये हूं और कृष्णसों छूटवेकी चेष्टा करन लगो, परन्तु भगवान्‌ने वाको कंठ ऐसो पकड लियो हो कि वह काहू प्रकार न छुडायसको ॥ २७ ॥ कंठके घुटेते वाकी चेष्टा हत भई, नेत्र निकसि परे बोल बंद होयगयो प्राण जात रहे ऐसो वह तृणावर्त दैत्य श्रीकृष्णचंद्रसहित गोकुलमें गिरतभयो ॥ २८ ॥ जैसे शिवजीके बाणको मारयो त्रिपुर दैत्य गिरयो तैसे आकाशतें शिलाके ऊपर वह दैत्य गिरपरयो, वाके सब अंग टूटि गये महाभयंकररूप तृणावर्त रोती और इकट्ठी भई व्रजगोपिनने देखो ॥ २९ ॥ ता तृणावर्तके ऊपर छातीपै श्रीकृष्णचंद्र निर्भय खेलेहैं तिनकूं उठायके गोपिका यशोदाजीकूं देतभई, और बडे आश्चर्य मानिके यह कहत भई कि या बालककूं उठायके राक्षस आकाशमें लैगयो हो सो यह बालक मृत्युके मुखमेंते फिरि निकसि आयो है ॥ ३० ॥ नंदरायजी मुख्य गोप और गोपिका संपूर्ण फिरि श्रीकृष्णचंद्रकूं प्राप्ति होइके निश्चय बडे आनंदकूं प्राप्त होत भये, और बोले अहो बडो आश्चर्य है देखो या राक्षसने या बालकके मारिवेमें कछु कसरि नहीं राखी, परंतु भगवान्‌ने याकूं बचायो और यह दुष्ट आपही अपनें पापसों मरिगयो और यह बालक साधुतुल्य है, याते या दुष्टते छूटि आयो, अथवा साधुपुरुष अपनी समतासों भयसों छूटजाय है ॥ ३१ ॥ देखो हमने कहा कौन तप कियो है, कि भगवान्‌की पूजा करी है, अथवा कुआ बावरी तालाव खुदवाये हैं, कि यज्ञ करे हैं, कि दान करे हैं अथवा प्राणीनते स्नेह करयोहै जिन पुण्यनके प्रतापसे मृत्युको प्राप्त भयो श्रीकृष्ण अपने बंधुनकूं आनंद देवेके कारण फिरि आयगयो ॥ ३२ ॥ नंदरायजीने गोकुलमें बहुतसे उत्पातनकूं देखिके मनमें बडो आश्चर्य मानो, कि वसुदेवजीने प्रथम कही ही गोकुलमें बडे उत्पात आवैहै, वसुदेवजीके वचनकी सुधि करतभये ॥ ३३ ॥ एक समय यशोदाजी श्रीकृष्णचंद्रकूं अपनी गोदमें बैठारिके मोहमें अति निमग्न होइके दुग्धतें स्रवे स्तन पायरही ही ॥ ३४ ॥ कछु एक स्तन पियो पीछे माता यशोदाजी अपनी मंद मुकसान सहित श्रीकृष्णचंद्रके मुखके ऊपर अंगुरिया धारिके प्यावनलगी इतनेहीमें हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्णचंद्रने जम्भुआई लीनी तासमय मुखारविंदमें यह संसार देखत भई ॥ ३५ ॥ आकाश, द्यावापृथिवी, तारागण, दिशा, सूर्य, चंद्रमा, अग्नि, पवन, समुद्र, द्वीप, पर्वत, नदी, वन, स्थावर, जंगम, संपूर्ण प्राणी देखत भई ॥ ३६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! सम्पूर्ण विश्वकूं तत्काल श्रीकृष्णचंद्रके मुखमें देखिके डरके मारे कंपायमान होइके यशोदाने अपने मृगकेसे नेत्र मूंदलिये और बडो आश्चर्य मानत भई कि यह बालक श्रीकृष्णचंद्रके मुखमें मैंने कहा आज जंजाल देख्यो ॥३७॥

सा वीक्ष्य विश्वं सहसा राजन्संजातवेपथुः ॥
संमील्य मृगशावाक्षी नेत्रे आसीत्सुविस्मिता ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे तृणावर्तमोक्षो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

श्रीशुक उवाच-गर्गः पुरोहितो राजन्यदूनां सुमहातपाः ॥
व्रजं जगाम नन्दस्य वसुदेवप्रचोदितः ॥ १ ॥

१ दोहा-ना जाने केहि पुण्यतें, को कर लेत सहाय । कियो काम बोह पूतना, तृणावर्त फिर आय ॥ २ दोहा-हलरावत गावत मधुर, हरिके बालविनोद । जो सुख सुरमुनिको अगम, सो सुख लेत यशोद ॥ १ ॥ कबहुँ झुलावत पालने, कबहुँ खिलावत गोद । कबहुँ सुलावत पलँगपर, यशुदा सहितविनोद ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी कहेहैं कि हे राजन् परीक्षित ! बडे तपस्वी यादवनके पुरोहित श्रीगर्गाचार्य वसुदेवजीके पठाये मथुराजीते नंदके गोकुलमें जात भए ॥ १ ॥ नंदरायजी श्रीगर्गाचार्यकूं देखिके प्रसन्न होत भए, और उठिके हाथ जोरि प्रथम प्रणाम करिके भगवान्की तुल्य जानिके पूजन करत भए ॥ २ ॥ गर्गाचार्यजीकूं सुन्दर आसनपै बैठारिके भोजन कराये, और मधुर मधुर वाक्य सुनाये आनंद देके नंदरायजी यह बोले अहो ब्रह्मन् ! आप तौ परिपूर्ण हौ, अहो आपको कहा पूजन करैं ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! दीन गृहस्थ पुरुषनके कल्याण करिवेके निमित्त तुमसरीखे महान् अपने आश्रमते गृहस्थोंके घर जाय हैं और विनकूं अपनो कछु प्रयोजन नहीं हैं ॥ ४ ॥ देखिवे सुनिवेमें न आयवेवारे ज्ञानको जनावनवारो सूर्य चन्द्रमा नक्षत्रादिकनको प्रतिपादन करनवारो ज्योतिषशास्त्र तुमनें कह्यो है जाके पढेते पुरुष अगिले जन्मकी बात जानि लेय है ॥ ५ ॥ ब्रह्मवेत्तानमें श्रेष्ठ तुम हमारे पुत्रनको नामकरणादि संस्कार करो, तब गर्गाचार्यजीनें कही तुम्हारे गुरु आचार्य होइ तिनते क्यों न कराय लेउ तब नन्दजी बोले कि महाराज ! ये ब्राह्मण मनुष्यनके जन्मतेही गुरु कहेहैं ॥ ६ ॥ अब श्रीगर्गाचार्य कहे हैं कि मैं यादवनको पुरोहित समस्त पृथ्वीपै विख्यात हूं, मैं जो तुम्हारे पुत्रनकौं नाम धरूंगो तौ दुष्टबुद्धि कंस इन बालकनकूं देवकीके पुत्र मानेगो ॥ ७ ॥ और तुम्हारी वसुदेवजीकी परस्पर मित्रता हैही या कारणते औरहू एक बात है, देवकीके आठमें गर्भमें कन्या न होनी चाहिये यही विचार रात दिन कंस कियो करैहैं ॥ ८ ॥ और देवकीकी कन्याकी बात सुनी है दूसरी यह वार्त्ता सुनेनो कि गर्गाचार्यने नाम धर्‌यो है, याते निश्चय वसुदेवको पुत्र है शंका मानिके जो वह कंस या बालककूं आय मारेगो तो बडो अनर्थ होयगो ॥ ९ ॥ नंदजी बोले हे गर्गाचार्यजी ! जैसे हमारे साथी ब्रजवासीहू न जानैं वैसेही एकांत गऊनके खिरकमें बैठिके स्वस्तिवाचन पढिके पुत्रको संस्कार करो जो ब्राह्मण क्षत्री वैश्यनको करवे योग्य है ॥ १० ॥ अब शुकदेवजी राजा परीक्षित्तै कहे हैं कि हे राजन् ! या प्रकार नंदजीने प्रार्थना करी तौ एकांतमें गर्गाचार्यजी छिपके नामकरण करतभए कारण कि नामकरण करनेकी इच्छासै गर्गजी आयेथे ॥ ११ ॥ गर्गजी बोले यह रोहिणीको पुत्र अपने गुणनकरि सुहृदनकूं रमावैगो, याते याको राम नाम होइगो बल अधिक होइगो याते बलदेव नाम होइगो, बिछुरे यादवनकूं मिलावैगो याते संकर्षण कहैगे ॥ १२ ॥ और या तुम्हारे बालकके तीन रंग होत भए याने युगयुगमें रूप धरे हैं सत्ययुगमें याको शुक्लरूप हो, त्रेतामें लालवर्ण हो द्वापरमें अतसीके पुष्पकेसो रंग है. अब इंद्रनीकमणिकी नाईं श्याम सुन्दर रूप धारण करयौ है यासौ कृष्ण नाम होयगो ॥ १३ ॥ काहू समय नन्दरायजी यह तुम्हारे पुत्र पहले वसुदेवजीकेहू जन्म लेत भयो है याते ज्ञानी पुरुष इनको नाम वासुदेव कहैं हैं ॥ १४ ॥ तुम्हारे पुत्रके गुण कर्मनके अनुसार बहुत नाम है और रूपहू बहुत है तिनकूं मैं जानूंहूं और पुरुष नहीं जानैं हैं ॥ १५ ॥ गौअनकूं और गोपीनकूं और तुमकूं आनंद देनवारो तुम्हारो पुत्र होयगो, और नन्दरायजी तुम्हारे ऊपर बडे बडे कष्ट आयके प्राप्त होइंगे तिनकूं याकी कृपाते सहजमें तरिजावोगे ॥ १६ ॥ हे ब्रजराज ! पहले जब कोई राजा नहीं हो तब बालकने पृथ्वीपै दुष्ट चोरनकरि पीडित महात्मानकी रक्षा करी और चोरनको जीतो ॥ १७ ॥ और जो कोई महाभागी पुरुष तुम्हारे पुत्रमें प्रीति करैं हैं विनको शत्रु कुछ तिरस्कार नहीं कर सके है

खिरकमें करौ या कहिवेसौ स्थानको संस्कारहू जरूर नहीं है क्योंकि खिरक वैसेही सदा पवित्र है ॥ २ नामकरणको दिन श्रीकृष्णखंडमें लिखो है माघशुदी १४ को गर्गाचार्यने नामकरण कियो (श्रूयतां सांप्रतं कर्म यदर्थं गमनं मम । माघशुक्लचतुर्दश्यां कुरु कर्म शुभेक्षणे) ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जैसे विष्णुके सहायक रहवैसो देवतानको दैत्य कछु नहीं कर सकेहैं ॥ १८ ॥ हे नन्द ! तुम्हारो यह पुत्र गुण कीर्ति लक्ष्मी और प्रभावमें नारायणकी समान है सावधान होइके याकी तुम रक्षा करौ ॥ १९ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णके गुणनकूं गर्गाचार्यजी नन्दरायजीसे वर्णन करिके अपने घरकूं जातभये, उनके गये पीछे नन्दजी आनंदयुक्त होयके मनोरथनसो अपने आत्माकूं परिपूर्ण मानते भये ॥ २० ॥ अब कछु थोरे दिन व्यतीत भये तब श्रीगोकुलमें श्रीकृष्णचंद्र तथा बलदेवजी दोऊ भैया हाथ टेकके घुटवन चलिवेकी लीला करते भए ॥ २१ ॥ जा समय श्रीकृष्ण बलदेव दोनों भैया व्रजकी कीचमें विचरे हैं, ता समय विनके पावनकी पैंजनीकी झनकारको सुन्दर शब्दके सुनिके श्रीयशोदाजी और रोहिणीजी बडे आनंदकूं प्राप्त होत भई, और जो कोई रस्तागीर पुरुष निकसे है तो ताहीके पीछे घोंटुनतें चले निकसे हैं जब वह पुरुष इनके साहूं देखें हैं तब डरपिके अपनी मातानके पास भाजि जायहैं ॥ २२ ॥ माता यशोदा रोहिणी श्रीकृष्ण बलदेवकूं देखें हैं कि कहीं तो व्रजकी कीचमें लिपटि रहे हैं, और कहीं प्रसादकी केशरी अंगमें लगी रही है तिन पुत्रनकूं पुकारत भई, और स्नेहते स्तनतें दूध खसि आये दोनों माता हाथनमें उठाय छातीते लगाय स्तन देके खिलावती भई, स्तन पीवतमें श्रीकृष्ण बलदेवके मुखमें भोरी मुसिकानी और छोटी २ दतुरिया युक्त ता मुखारविंदकूं देखिके अति आनंदकूं प्राप्त होत भई ॥ २३ ॥ जा समयं व्रजके मध्य गोपीनके देखिवे योग्य श्रीकृष्ण बलदेव बाललीलानकूं करत भये तब घुटवन चलते बछरानकूं आयके पकरि लैहैं, तब बछरा उठिकें भजें हैं, तब उनकी पूंछकूं पकरे लौटत चले जायहैं, या प्रकारकी लीला वे गोपी देखिके घरके कामनकूं छोडि छोडि हँसती भई आनंदकूं प्राप्त होत भई ॥ २४ ॥ माता यशोदा रोहिणी अति चंचल खेलमें लगे श्रीकृष्ण बलदेव पुत्रनकूं गऊ बैल डाढवाले जीव बंदर कुत्ता तरवार जल सांप पक्षी कांटेनते रोकि रोकि बचावति फिरें और घरके काम काज न करिसकै वा समय विनको चित्त अति चंचल और चलायमान होतभयो ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! व्रजमें राम कृष्ण दोऊ भैया थोरेही दिनमें घोटू घिसे नहीं परंतु चरणनते अनायासपूर्वक चलते भये ॥ २६ ॥ पावनते चलै पीछे श्रीकृष्ण बलदेवजी अपनी बराबरीके व्रजवासीनके बालकनकूं संग लैके क्रीडा करि गोपिनकूं आनंद देतभये ॥ २७ ॥ गोपी श्रीकृष्णचंद्रकी बाललीलाकी

कृष्णचंद्रकी जन्मपत्री.

१ स्वस्ति श्रीसौख्यदात्री सुतधनजननी पुष्टितुष्टिप्रदात्री मांगल्योत्साहकर्त्री गतभवसदसत्कर्मणां व्यंजयित्री ॥ नानासम्पद्विधात्री धनकुलयशसामायुषो वर्द्धयित्री सर्वापद्विघ्नहर्त्री गुणगणसहिता लिख्यते जन्मपत्री ॥ १ ॥

श्रीशुभसंवत्सरेऽस्मिन् भगवत्पूजनविशिष्टधर्मयुक्ते श्रीद्वापराख्ये युगे गमिताब्दाः । ८६३८८० तदनन्तरगतसंध्यांशसमये भोजवंशावतंसस्य राज्ये दक्षिणायने रवौ वर्षासंज्ञकर्तौ भाद्रमासे कृष्णपक्षे शुभतिथावष्टम्यां बुधवासरे रोहिणीभे, आयुष्मान्योगे, कौलवकरणे, एवं पञ्चांगशुद्धौ सिंहार्कगतांशाः ७ । ३ दिनम् ३२ तत्रेष्टम् ४६ तत्समये वृषलग्नोदये शुक्रक्षेत्रे सूर्यहोरायां बुधद्रेष्काणे शुक्रनवांशे भौमद्वादशांशे गुरुत्रिंशांशे षड्वर्गवेलोपपन्ने लग्ने शुभग्रहांकितवेलायां यदुकुलावतंसस्य वरीयसो गोपस्य पंचप्राणतुल्येषु पंचसुतेषु मुख्यतमस्य नन्दरायाभिधस्योढा इंद्रनीलमणिमरकत इव मौक्तिकमणिशुक्तपुट इव परमानन्दजनकव्रजजननयनचन्द्रचकोरसमं पुत्रं स्वकुक्षेर्जनयामास ॥

२ सिखवत चलनि यशोदा मैया । अरबरायकर पान गहावत डगमगात धरनीपर पैया ॥ कबहुँक ठाडी मुख तन हेरत आनंद करि हरि लेत बलैया ॥ कबहूं कुलदेवता मनावत चिरजीवहु मम बाल कन्हैया ॥ कबहूं बलको टेर बुलावत इहि आंगन खेलो दोउ भैया ॥ सूरदास प्रभु सुखनिधि दाता अति प्रताप बालक भदरैया ॥ ३ (निजसुतौ) ये जो कह्यो है सो ये बात दिखाई परेहै कि विन यशोदा रोहिणीकी दोनों लालनमें पुत्रबुद्धि और दोनों लालनकी दोनों मैयानमें माता बुद्धि ही यह जाननौ ॥ ४ कवित्त—डगमग पगनते अलख अलेख जोति नन्दके हैं जाहरके योगिनके जपके । रुनझुन पैंजनिया खेलत है रज भरे गभुआरे घुंघरवारे सोहैं वार झपके ॥ मोहन बलैया लेउँ आवो धूरि झार डारों सुनि बात मात गले लागनको लपके । शारदा गणेश शेष विधिसों ना गने जात भक्तनके हितके अहीरनके तपके ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चपलता देखिके संपूर्ण मिलि जुरी आई श्रीकृष्णकी माता यशोदाजीकूं उराहने देती सुनायके यह कहनलगी॥२८॥ अहो यशोदाजी! तुम अपने पुत्रकूं बरज लीजो हमारे घरनमें आइके गऊ दुहन नहीं पावैं हैं, तासू पहलेही बछरानकूं छोडि देइहै बछरा दूध पीजायहैं दुहनवारे मूंड मारिके चले जायहैं तहां यशोदाजी कहैं अरी तुम्हारे घर जाय तब यह याकूं तुम डाट दीजौ, यशोदाजीके वचनकूं गोपिका श्रवण करिके कहती भई कि जब हम याहि डाटैं हैं, तब यह हँसि देइहै, याकी हांसि देखिके हमहूंकूं हांसी आय जाय है और ये बालक चोरीके उपायते दूध दही स्वादते खायजायहै, और आप खाइके बंदरनकूं खवावैहै और बंदर न खांय तो जानिकै दूध दही घीके चीकने बासननकूं फोरिडारै और कदाचित् याके हाथमें दही माखन न लगैहै तब क्रोध करि यह कहैहै कि याके घरमें आग लगि जावो, फिरि पलिकानपैं सोवते हमारे बालनकूं नोचिके रुवायके चल्योजायहै॥ २९॥ और जो ऊंचे छीकेनपैं धरैं जहां याके हाथ नहीं आवैं, तब पीढा मूढा ऊखरी इत्यादिकनकूं धरिके चुरावनेके उपाय रचैहै, और छीकेनपै धरे बासननमें छेद करि देइहै, और जा बासनमें मीठो दधि जानैहै तामें छेदहू माफिकको करैहै बडो छोटो नहीं करै है और जो जो हम अंधेरे घरमें दही माखन धरें, तो याके गहनेनमें हीरा मणि लगैहैं, तिनको चांदनो होइ जाय है यशोदाजी कहनलगीं कि गहने मैं उतारि लेऊंगी तहां कहैं हैं कि याके अंगको प्रकाश कैसो है, यावत् पर्यंत हम घरमें बैठी रहैहैं तावत् पर्यंत आवै तो देखिके भाजि जाय, जब हम घरके काममें लगै तब आइ घुसे है' ॥३०॥ कबहुँ हम आयके कहैं कि घरमें चौर है, तब कहैहै कि तुमहीं चोर हो मैं तो घरको मालिक हूं ऐसे हँसिके बात करे है, और हमारे लिपे पुते घरनमें हंगि जायहैं, मूति जायहै सब दिन चोरीके उपायमें फिऱ्यो करैहै, अब देख्यो तुम्हारे आगे गरीबसो ठाढोहै या प्रकार गोपीनने डरपायो ता समय भयसंयुक्त नेत्र किये श्रीमुखकी शोभा देखिवेके निमित्त श्रीयशोदाजीते आयके गोपी उलाहनो देत भई, तब श्रीयशोदाजीने हँसिके श्रीकृष्णकूं डाट्यो नहीं॥३१॥ एक समय बदलेवजीते आदि लैके गोपिनके बालक क्रीडा करते हैं तहां जाय श्रीकृष्णचंद्र मृत्तिका खात भये, तब संपूर्ण बालकनने कही कि आज कृष्णकूं मैयापै पिटवावेंगे, और यह कहैंगे मैयाजी! आज श्रीकृष्णचंद्रने माटी खाई है, यह विचार करत २ सम्पूर्ण बालक बलदेवजी सहित श्रीकृष्णचंद्रकी मातासे कहत भए॥ ३२ ॥ तब हितकी चाहनवारी श्रीकृष्णकी माता यशोदाने श्रीकृष्णचंद्रकूं हाथ पकरिके डरपायो, तब भययुक्त चंचल नेत्र श्रीकृष्णते यह बोली॥ ३३ ॥ हे चपलगात्र चंचल अरे बेटा! तैंने अकेलेने जायके माटी क्यों खाई, ये तेरे संगके बालक कहैहैं, और तेरो भैया बलदेवजी कहै है॥३४॥ हे मैया! मैंने माटी

---

१ राग रामकली–गारी मत दीजो मो गरीबनीको जायो है॥ टेक॥ तेरो जो बिगाऱ्यो सो तौ मोसो आन कहो बीर मैं तौ काहू बातको नहीं तरसायो है॥ दधिकी मथनिया भरी आंगनमें आन धरी तोलातोल लीजो बीर जाको जेतो खायो है॥ सूरदास प्रभु प्यारे नेकहू न हूजे न्यारे कान्हासो पूत मैंने बडे पुण्य पायो है॥ २ राग रामकली–मैया मैं नहिं माखन खायो॥ भोर भयो गौअनके पाछे मधुबन मोहिं पठायो। चार पहर बंशीवट भट्क्यो सांझ परी घर आयो। मैं बालक बैयनको छोटो छींका किस विध पायो। ग्वालबाल सब बैर पडे हैं बरबस मुख लपटायो। तू जननी मनकी है भोरी इनके कहे पतिआयो। तेरे जिया कछु भेद उपज है जान परायो जायो॥ ये ले आपनी लकुट कमरिया बहुतही नाच नचायो। सूरदास तब हँसी जसोदा ले उर कण्ठ लगायो॥ ३ क्योंजी गोपीनने इतने ऊधम कृष्णके कहे पन यशोदाने कृष्णको न धमकायो और माटी खायवेकी सुनतेही मैयाने कृष्णको धमकायो इन बातनमें प्रेमही कारण है सोही कहै है (दध्नः स्तेयेऽनुपालंभं प्रोच्य मातुर्मृदोऽशने। उपालंभं जनन्योति द्वये प्रेमैति हेतुताम्) माखन चोरीकी सुनके तो मैयाने विचारी कि जो माखन खायगो तो लाला मोटो है जायगो बडे भयेपें चोरीको रपत छूट जायगो जब माटी खायवेकी सुनी तब मैयाने विचारी कि माटी खायवो सीख जायगो तौ लालाके शरीरमें रोग है जायगो यासो धमकायो इत्यादि चक्रवर्ती॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं खाई है और जो तुम खाई इनकी बात मानो हो तो तेरे आगे मेरो मुख है ताकूं तू देखिले ॥३५॥ यह सुनिकरि मैया बोली तैंने माटी नहीं खाई है तो अपनो मुख दिखायदै, या प्रकार जब माताने कही तब सब प्रकारके दुःखके दूर करनवारे अखंड ऐश्वर्यमान परमेश्वर क्रीडा करिवेके लिये मनुष्य बालकरूप श्रीकृष्णचंद्रने अपनो मुखारविंद उघारकै माताकूं दिखायो ॥ ३६ ॥ तब यशोदाजीने श्रीकृष्णके मुखमें स्थावर जंगम सम्पूर्ण विश्व देख्यो, ताहीको आगे विस्तार है अंतरिक्षलोक, दिशा, पर्वत, द्वीप, समुद्रसहित भूलोक देख्यो, और पवन, अग्नि, चन्द्रमा तारागणसहित समस्त देख्यो ॥ ३७ ॥ ज्योतिश्चक्र देख्यो, पवन, तेज, आकाश ये समस्त देखे, इंद्रियनके अधिष्ठाता देवता, इंद्रिय मन और इनके विषय शब्द स्पर्श रूप रस गंध ये पांचों सत्वगुण रजोगुण तमोगुण ये समस्त देखतभई ॥ ३८ ॥ जीव काल स्वभाव कर्म अंतःकरण इनसहित स्थावर जंगम और सम्पूर्ण प्राणीनकें भेदसहित चित्रविचित्र विश्वकूं श्रीकृष्णचंद्रके उघारे मुखमें देखतभई, सम्पूर्ण व्रज देख्यो और अपने आत्माकूं देख्यो, यह समस्त देखि भारिके यशोदाजीके मनमें शंका भई ॥ ३९ ॥ अब यशोदाजी कहैं हैं कि ये देख्यो सो कहा कछु स्वप्नो तौ न देख्यो फिरि कहन लगी कि स्वप्नो तो सोवतमें आवै है मैं तौ जागूं हूं, अथवा कोई ईश्वरकी माया है अथवा कोई मेरी बुद्धि मोहित है गई है, अथवा मेरे पुत्र कृष्णको यह स्वाभाविक ऐश्वर्य है अथवा बेरबेर दिखायवेकौ स्वभाव पडिगयो है ॥ ४० ॥ चित्त मन वाणी इन करिके अनायासपूर्वक भले प्रकार विचारमें नहीं आवैहै, जाके आश्रय करिके संसार प्रतीत होइ है स्नेहकरिके भावनामें नहीं आयवेवारे अचिंतनीय स्वरूपकूं मैं नमस्कार करूं हूं ॥ ४१ ॥ मैं यशोदा और यह व्रजराज मेरो पति है यह कृष्ण मेरो पुत्र है और यह पुत्र राजके संपूर्ण उनकी मैं रक्षा करनवारी हूं और ये समस्त गोप गोपिका मेरे ये संपूर्ण जाकी माया करिके कुबुद्धि लगिरही है सो अब भगवान् तुम्हारी शरण हूं ॥ ४२ ॥ या प्रकार यशोदाजीकूं कृष्णमें ईश्वरकी बुद्धि होइगई तब कृष्णने विचार कियो कि मेरो लाड कौन करैगो. तब पुत्रस्नेहरूपी अपनी वैष्णवी माया यशोदापै फैलाय दीनी ॥ ४३ ॥ तासमय यशोदाजीकी श्रीकृष्णचंद्रमेंते ईश्वरत्व बुद्धि हटि गई और पुत्रभाव मानिकै गोदमें बैठारिके अतिस्नेहमें मग्न होइके पहिलेकीसी नाईं वात्सल्यभाव करतभई ॥ ४४ ॥ ऋग् यजुः साम यह तीनों वेद सांख्ययोग समस्त निरंतर जिन भगवान्की महिमाकूं गावै हैं तिनकूं यशोदाजी अपने पुत्र मानैं हैं ॥ ४५ ॥ अब श्रीराजा परीक्षित् विस्मित होयके श्रीशुकदेवजीते प्रश्न करै है कि हे ब्रह्मन् ! नंदरायजीने ऐसे कहा पुण्य कऱ्यौ हो याते इनको ऐसो उदय भयो, और यशोदाजीने कौन पुण्य कऱ्यौ हो याते श्रीकृष्णचंद्र भगवान्ने स्तनपान कियो ॥ ४६ ॥ और समस्त लोकनके पापके दूरि करनवारो श्रीकृष्णचंद्रको बालचरित्र अब पर्यंत कवीश्वर वर्णन करै है सो वह बाललीलाको सुख माता देवकी और वसुदेवको प्राप्त न होतभयो याको कारण कहाहै ॥ ४७ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं आठ वसुनमें श्रेष्ठ द्रोण नाम वसु अपनी धरा स्त्रीकूं संग लैके ब्रह्माजीकी आज्ञा करिवेके लिये ब्रह्माजीते बोले ॥ ४८ ॥ हमारे जन्म पृथ्वीमें होय परन्तु विश्वके ईश्वर देवनके

---

१ यशोदाजीने लालाके मुखमें पहले तौ जगत् देखो फिर मुखमेंही व्रजमंडल देखो व्रजमंडलमें गोकुलरमणरेती जमनाकी धार देखी ताके किनारेपें कृष्ण खडे है और एक जसोदाने हाथ पकर राखो है और कहि रही है क्योंरे ऊधमी तैंने माटी कैसे खाई । ये सब देखके ॥ २ नंदरायसौं कहत जसोदारानी ॥ टेक ॥ माटीके मिस मुख दिखरायौ तिहूं लोक रजधानी ॥ स्वर्ग पताल धरनि वन पर्वत वदन मांझ रहे आनी ॥ नदी सुमेरु देखि चकित भई याकी अकथ कहानी ॥ चितै रहै तब नंद युवति मुख मन मन करत विनानी ॥ सूरदास तब कहत यशोदा गर्ग कही यह बानी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देव भगवान् हरिमें हमारी भक्ति होइ जा भक्तिके प्रभावतें यह जीव संसारके पार लगिजाई है ॥४९॥ ता समय ब्रह्माजीने कही कि जावो तुम्हारे भक्ति होयगी, तब तौ बडे यशस्वी भाग्यवान् द्रोण व्रजमें जन्म धारण करि नंदनामते विख्यात होतभये और वह धरा यशोदानामसों विख्यात होतभई ॥५०॥ हे भारत ! याके अनंतर पुत्ररूप जनार्दन भगवान्के विषे नंद यशोदाजीकी गोप गोपिकानहूतें अतिशयकरिके भक्ति होतिभई ॥ ५१ ॥ अब विष्णुभगवान् श्रीकृष्णचंद्र ब्रह्माजीकी आज्ञा करिवेके कारण बलदेवजी सहित नंद यशोदाजीके वास करत अपनी लीला करिके परम आनंद देत भये ॥५२॥

कृष्णो ब्रह्मण आदेशं सत्यं कर्तुं व्रजे विभुः ॥
सहरामो वसंश्चक्रे तेषां प्रीतिं स्वलीलया ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे विश्वरूपदर्शनो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

श्रीशुक उवाच–एकदा गृहदासीषु यशोदा नन्दगेहिनी ॥
कर्मान्तरनियुक्तासु निर्ममन्थ स्वयं दधि ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्तें कहैं कि हे राजन् ! एक दिवस संपूर्ण घरकी दासी तौ और कामनमें लगि रही हैं तासमय नंदरानी यशोदाजी अपनेही हाथ दधिमंथन करतभई ॥ १ ॥ दधि मंथनके समय जो जो लीला बालचरित्र या संसारमें श्रीकृष्णके हैं तिनकूं स्मरण करिके गावतिभई ॥ २ ॥ सूत्रते बंधी रेशमी सारी पुष्ट कमरिमें धारण करे पुत्रके स्नेहते स्तननमें दुग्ध भरिआयो और नेती खेंचिवेको अतिश्रम भयो और भुजानमें चुरियानको शब्द होत जाय है कंकण हाथनमें और काननमें कर्णफूल हलतजाय हैं और मुखपै पसीनानके बिंदु आयगए हैं मस्तकके केशनमेंते चमेलीके पुष्प गिरतजाय हैं और सुंदर जिनकी भ्रुकुटि या प्रकार बडी शोभायमान श्रीयशोदाजी दधि मंथन करतीभई ॥३॥ इतनेहीमें श्रीकृष्णचंद्रको स्तन पीवेकी इच्छा भई तब मैयाके पास आयके रइकूं पकरिके कहन लगे कि अरी मैया ! दही मत विलोवे पहले मोकूं स्तन प्यायदे ॥४॥ यशोदा दुग्धते भरा स्तन श्रीकृष्णचंद्रकूं गोदमें बिठारिके प्यावन लगी मंद मुसिकान भऱ्यो मुख देखति जाय है, इतनेहीमें चूल्हेके ऊपर औटिवेकूं धऱ्यो दूध बहुत आंच लगवेसों उफनि चल्यो तब यशोदा श्रीकृष्णचंद्रको पेट तो भऱ्यो नहीं परंतु गोदमेंते पृथ्वीपै उतारि दूध उतारवेकूं शीघ्रतासो चली गई ॥ ५ ॥ पूततें दूध प्यारो लग्यो याते श्रीकृष्णचंद्रकू क्रोध भयो ता क्रोधमें अरुण ओठकूं दांतनमें काटते २ दार पीसवेको पत्थरको लोढा परो हो वाय उठायके मा दही विलोयवेकेमें छोड दियो वासो वो बासन मठा विलोवनको फोरि डाऱ्यो नेत्रनमें झूंठे आसू लगाय माखनको एक लौंदा लेके भीतर घटके कोनेमें बैठिके खानलगे ॥ ६ ॥ यशोदाजी बहुत औटे दूधकूं चूल्हेते नीचे उतारिके फेर दही मथवेकी जगह आयके दही मथिवेके बासनकूं फूट्यो देखिके नाकपे तर्जनी अंगुली धर देखतकी देखत रहगई और विचार करत भई, कि

१ ये कोनसे दिनकी बात है तहा कहे है कि यह दिवालीके दिनकी बात है जा दिन दहीको माठ कोरो वो दिन दिवालीको हो यह वैष्णवतोषिणीमें सप्रमाण लिखो है ॥ २ सोइ तो नंदनंदनकी निद्रा खुली है सोइ उठे है अपने मैयाको पास नहीं देखी है सोही उलटी हथेरीसो आंखनको मसलते सामने दही विलोय रही माके पासको उनीदे भगवान् पायनमें हगलाते आय पधारे है सो यह ध्यान कहे है । श्लो०–दीर्घश्वासं गात्रमोटप्रयुक्तं नेत्रे मार्जन् जाग्रदंवेति जल्पन् । क्रंदन्मंथध्वानमाकर्ण्य बालः श्रीगोपालः प्रस्खलंस्तां जगामेति ॥ ३ अतिचिक्कणत्वेनातिदृढत्वेनानुकम्पायां कन् अतिचीकनो बडो मजबूत हो यासों बडो प्यारो हो याते अनुकम्पामें कन् प्रत्यय भयो है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यह कृष्णकोही कौतुक है वाके विना और कौन फोरे उहां देखे तो श्रीकृष्ण नहीं है तब तो हँसिके कहनलगी कि एक तो काम बिगार्‌यो दूसरे भागि गयो ॥ ७ ॥ देखे तो घरके भीतर उलूखल ओंधो करिके वाके ऊपर बैठिके छीकेपर धर्‌यो माखन निकासिके बंदरानकूं खवावे हैं और मैया तो न आयजावे या भयते इत उत देखत जायहै, इतनेहीमें पुत्रकूं ढूंढत ढूंढत श्रीयशोदाजी आवतभई ॥ ८ ॥ लकरिया हाथमें लिये माताकूं आवति देखिके शीघ्रही उलूखलते कूदते डरेकीसी नाईं भाजतभए, एकाग्र ध्यान करिके योगिराज जिनकी गतिकूं नहीं जाने हैं तप करिके जिनमें मन नहीं पहुँचे है, ऐसे श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे यशोदाजी भागति भई तथापि हाथ नहीं आवत भए ॥ ९ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे जाती यशोदाजीकी गति नितम्बके बोझते शिथिल हो गई, दौरिवेते केशनके बंधन खुलिगये तिनमेंते गिरे पुष्पनके ऊपर पांव धरती जाय हैं याप्रकार श्रीकृष्णचंद्रकूं जायके पकरि लियो ॥ १० ॥ अपराध कर श्रीकृष्णचंद्र रोवते जाय हैं और काजर लगे नेत्रनकूं उलटे हाथते मींडत जायहैं, और वारंवार यशोदाजीकूं देखते जाय हैं डरके मारे चंचलनेत्र श्रीकृष्णचंद्रको हाथ पकरि यशोदाजी डरपावति भई ॥ ११ ॥ पुत्रमें हित करनेहारी यशोदाजी श्रीकृष्णचंद्रकूं अति भयभीत देखिके लकरी हाथते डारंत भई पुत्रके पराक्रमकूं नहीं जानिके रस्सीते मारवेके लिये उद्यम करतीभई उद्यममें और रस्सीसे बांधिवेकी इच्छा करति भई ॥ १२ ॥ जा परमेश्वरके अन्तर बाहर आगे वा पीछे कुछभी नहीं है जो पूर्ण अवतार हैं, और जो जगत्‌के भीतर बाहर तथा आगे पीछे रहे हैं और जो जगद्रूप हैं ॥ १३ ॥ इन्द्रियनकी जिनमें पहुँच नहीं ऐसे अव्यक्त भगवान्‌कूं पुत्र मानिके यशोदाजी डोरी लैके उलूखलते बांधन लगी जैसे कोई साधारण मनुष्य बालककूं बांधे हैं ॥ १४ ॥ अपराध करनहारे जब यशोदा अपने पुत्र श्रीकृष्णकूं बांधने लगी, ता समय वह रस्सी दो अंगुल ओछी भई ता समय और दूसरी जोरी ॥ १५ ॥ जो और रस्सी जोरी सोभी ओछी भई, या प्रकार रस्सी जोरी सो सम्पूर्ण दो २ अंगुल ओछी होत भई ॥ १६ ॥ ऐसे यशोदाजीने सम्पूर्ण घरकी रस्सी लायके जोरी, परन्तु श्रीकृष्णकूं न बंधे देखिके गोपी हँसत भई और मुसिकायके आप यशोदाजी विस्मित होत भई ॥ १७ ॥ अंगमें पसीना आय गयो और माला कंठते टूटिके गिरत भई तब यशोदामाताकूं श्रमित देखिके करुणामय श्रीकृष्णचन्द्र आपही कृपा करिके बन्धनमें आगये ॥ १८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ऐसे कष्टके हरनवारे भगवान्‌की ब्रह्मासहित विश्व जिनके आधीन है विन श्रीकृष्णचन्द्रने अपने भक्तनके वश होइवो दिखायो, कि भक्तनके वश हूं कि जो मेरे भक्त मोकूं बांधिवो चाहैं तो बंधिभी जाऊंहूं, ऐसो आधीन हूं ॥ १९ ॥ हे राजन् ! भक्तिके

१ यशोदाने अपने पायनकी गेहनो बजनो ऊंचो चढायके धीरे धीरे भीतर गई सोई भगवान्‌ने देखी सोई माको गुसा देख खिरकीमेंसो फिरकीसे गलीमें कूद परै अब माने विचारी कि जो में फिरकर दरवाजेकी रस्ता चलोगी तब तौ फिर मेरे हाथ आवेगो नहीं सो माताहूं खिरकीकी रस्ता गलीमें कूदके अगारी २ लाला पिछारी मा दौरी ॥ २ अवागुरत् अरे अशांतप्रकृते ! अरे वानरमित्र मथानीके फोरनवारे ! अब माखन कहासों खायगो आज तोको ऐसे बांधो जो बालकके संग खेलवेको और माखन चुरायवेकोहू समर्थ नहीं होयगो ऐसे धमकाउती भई ॥ ३ ताडने यदि तवातिशया भीस्तत्किमद्य दधिभांडमभांक्षीः । मातरेवमद्य नैव करिष्ये पातय स्वकरतो बत यष्टिम् ॥ अर्थः—जो पिटवेको डर हो तो आज तेने दहीको माट क्यों फोरो ? अरी मा ! मैं ऐसो नहीं करीगो तू हाथमेंसो लकडी फेंक दे तब माने छडी गेर दई ॥ ४ विस्मित कहा भई कि दे मुठीभर लालाकी कमर या रस्सीसो नहीं लिपटे है और उदरहू तिलबरावर बडो नहीं दीखे है और रस्सीहू एक अंगुल तीन अंगुल चार अंगुल कमती नहीं होय है और इतना रस्सी लपेटी वे जाने जाय कहां है ये एक लपेटाहू पूरो नहीं होय है ये बात कहा है इत्यादि ॥ ५ दो अंगुलही कमती क्यों होती ही कि आपके तो ये बातहीमें काईके बंधनमें आउ नहीं मैयाके येही कि में बांधकेही रहू सोही दो अंगुल कमती होती ही आखिर माता हैरान है गई और कहन लगी कि नाथ बँधे तो भारमें जाउ ये कहिके दोउ हाथ पटकके बैठ गई तब प्रभुनेउ अपनो अभिमान छोडो तब वा पहली रस्सीमेंही बँध गये ॥ ६ दोहा—आप बंधावत प्रेमवश, भक्तन छोरत फन्द । वदत वेद वाणी विदित, भक्तवछल नँदनन्द ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देनवारे श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्‌ने पुत्रके संबन्धते जो प्रसाद गोपी यशोदाने पायो सो कृपा ब्रह्मापै न भई और शिवजी आत्मा हैं तिनपै न भई, लक्ष्मी सर्वदा अंगमें प्राप्त रही है और पत्नी है तथापि न भई कि जो कृपा यशोदाजीपै भई ॥ २० ॥ यशोदानंद श्रीकृष्ण भगवान् जैसे भक्तनको सहजमें प्राप्त है जायहैं तैसे देहाभिमानी तपस्वी आदिकनको और देहाभिमानरहित आत्मज्ञानिनको सहजमें नहीं प्राप्त होयं है ॥२१॥ मैया यशोदाजी तौ घरके काममें लगी रहीही कि इतनेमें समर्थ श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् कुबेरके बेटा जो प्रथम जन्ममें गुह्यक हे और अब आयके यमलार्जुन वृक्ष होतभए, तिनके पास जातभए ॥ २२ ॥ सुन्दर शोभायमान नलकूबर मणिग्रीव नाम करिके प्रसिद्ध कुबेरके पुत्र प्रथम जन्मके मदते नारदजीके शापते वृक्षयोनि पावतभये ॥ २३ ॥

पुरा नारदशापेन वृक्षतां प्रापितौ मदात् ॥
नलकूबरमणिग्रीवाविति ख्यातौ श्रियान्वितौ ॥ २३॥

इति श्रीभागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० गोपीप्रसादो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

राजोवाच–कथ्यतां भगवन्नैतत्तयोः शापस्य कारणम् ॥
यत्तद्विगर्हितं कर्म येन वा देवर्षेस्तमः ॥ १ ॥

अब राजापरीक्षित् श्रीशुकदेवजीते प्रश्न करैं हैं कि हे भगवन्! नलकूबर मणिग्रीवके शापको कारण कहो विनने ऐसे कहा निन्दित कर्म करचो जाते नारदजीकूं क्रोध भयो ॥ १ ॥ शुकदेवजी बोले कि ॥ शिवजीके अनुचर अति गर्ववंत मद पीवेसौ मतवारे कुबेरके पुत्र मंदाकिनीके तटपै रमणीय कैलासके बगिचामें ॥ २ ॥ वारुणी मदिराकूं पान करवेसौं चंचल मदसौं नेत्र चलायमान हैरहे और पुष्पवाटिकामें विचर रहेहे कि विनके पीछे पीछे सुन्दर स्त्रियेंहू फिरतीहीं ॥ ३ ॥ फिर वे फूले कमलनसौं युक्त श्रीगंगाजीके[1] मध्यमें जायके स्त्रीनकूं संग लैके विहार करत भये, जैसे हथिनीनके संगमें हाथी विहार करेहैं ॥ ४ ॥ हे कौरववंशमें भये राजा परीक्षित् ! अनायासपूर्वक देवर्षि भगवान् नारदजी तहां आये, और इनकूं देखिके मतवारो जानत भये ॥ ५ ॥ श्रीनारदजीकूं देखिके नग्न देवांगना लज्जित होयके शापके डरते शीघ्र वस्त्रनकूं पहिरि लेतभईं, और नलकूबर माणिग्रीवने वस्त्र न पहिरे नग्नही ठाडेरहे ॥६॥ तब नारदजी कुबेरके बेटानकूं मतवारो देखिके मद दूरि करिवेके और विनके ऊपर अनुग्रह करवेके लिये और श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शनके निमित्त शाप देते यह गान करन लगे ॥७॥ अब नारदजी कहैं हैं कि प्रिय विषयनके भोग करनवारे पुरुषकी बुद्धिको धनमदके विना हास्य-हर्षादिक कुलीनता पंडिताई आदिसो भयो मद रूप रजोगुण नाश नहीं करैहैं जैसों धनको मद बुद्धि नष्ट करेहै क्योंकि धनमद जाके होइहै तब वह स्त्रीनको संग करेहै जुआ खेलेहै मदिराको पान करेहैं ॥८॥

---

१ या श्लोकमें नकार ३ हैं सो चक्रवर्तीने ऐसे लगायो है कि यत्प्रसादं विमुक्तिदात् गोपी प्राप्त प्रसादं विरंच्यो भवः अंगसंश्रया श्रीरपि न लेभिरे न लेभिरे न लेभिरे यद्वा प्रसादं विमुक्तिदात् विरंच्यः भवः अंगसंश्रया श्रीरपि लेभिरे इति न किंतु लेभिरे एव किंतु या प्रसादं गोपी प्राप तमिमं न लेभिरे इत्यन्वयः ॥ २ चौ०–तेहि अवसर हलधर तँह आये । हरिहि देखि लोचन भरि आये ॥ दोउ कर जोर कहत री मैया । काहेको बांधो मेरो भैया ॥ श्यामहिं छोडि बांधि वरु मोहीं । और कहा कहिये अब तोहीं । मेरे प्राण अधार कन्हाई । ताकी भुज मोहिं बंध दिखाई ॥ ३ प्र०–कहीं नदियोंमें कमल नहीं होते गंगाजीमें कमल कहांसे हुए ? उ०–भूलोकमें नदियोंमें कमल वर्णन करना साहित्यकी पूर्तिके लिये है तथा नदियोंके निकट कुण्डोंमें कमल हो जाते हैं उस लक्षणसे नदी कमलवाली कही जाती है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

या क्षणभंगुर शरीरको लक्ष्मीके मदसों अजर और अमर माननहारे अजितेन्द्रिय मनुष्य निर्दई होके पशुनको मारेहै ॥९॥ राजाकेहू देहकी मृत्यु भये पीछे तीन गति होयहैं, कृमि होजाय अथवा पश्वादिजीव खाय तौ विष्ठा हैजाय अग्नि दग्ध करे तो भस्म होयहै या कारण देहके निमित्त प्राणीनते विरोध करिवो अपनो श्रेयस्कर नहीं होयहै किंतु जीवनके द्रोहनतें याकूं नरक होइहै ॥ १० ॥ जो अन्न देकर या देहकूं पालन करेहैं वह पुरुष कहैहै कि यह मेरोही है और माता पिता कहै है कि हमारे है नाना कहै कि मेरो है मोल लेनवारो कहै कि हमारो है बलवान् दास व नौकर कहैं कि हमाराही है, अग्नि कहै कि मेरो है कुत्ता कहै कि मेरोही है॥११॥ या प्रकार ये साधारण देह मायाते हैके मायाहीमें लीन है जायहै पांच तथा सातनको जामें विवाद है ऐसे देहकूं पायके एक अज्ञानीके विना ऐसो विवेकी पुरुष कौन है जो जीवनको वध करै ॥ १२ ॥ द्रव्यके मदसो अंधे पुरुषकूं दरिद्रही श्रेष्ठ अंजन है दरिद्री पुरुष समस्त प्राणीनकूं सुख दुःखमें अपने समान देखे क्योंकि अपने मनमें विचार करि लेइहै कि या प्रकार मोकूं दुःख बाधा करेहै ऐसेही और पुरुषनकूंहू बाधा करत होइगो, जैसे आपकूं सुख होइहै तैसे औरनकूंहू सुख होइहै ॥१३॥ जा पुरुषके पांवमें कांटो लगैहै वह पुरुष दूसरेके कांटे लगिवेकी इच्छा नहीं करैहै, अपने मनमें विचार करैहै कि जैसे मोकूं कांटे लागवेको दुःख भयो ऐसेही सबको दुःख होइहै, और जाके कांटो लागो नहीं वह कांटेके दुःखकू कहा जानेगो, कि कांटेके कहा दुःख होइहै ॥ १४ ॥ दरिद्री पुरुषको अहंकार मद संपूर्ण गर्व नष्ट है जायहै और जो कष्ट आयके प्राप्त होइहै तो वह वाकूं तपस्या समान है जायहै, तपमें व्रत होइहै अन्नके विना भूखो प्यासो रहै हैं ऐसे दरिद्रीकूं अन्न न मिलै तौ वही व्रत है जायहै ॥ १५ ॥ अन्नकी आकांक्षा करनवारे दरिद्रीके नित्य कडाके होयहै; याते देह सूखिजाय है इंद्रियां शिथिल हैजायहैं, ताते हिंसा नहीं करैहै, जो आपुही मरेहै वह कौनकूं मारेगो॥१६॥ दरिद्री पुरुष सबकूं समान देखे है और दरिद्री पुरुषकूं साधु महात्माहू मिलि जाइहैं, जा समय दरिद्री क्षुधित होइके अन्न अन्न पुकारैहै तब साधु महात्मा कहै हैं अरे कृष्ण २ पुकारो करि या प्रकार वे महात्मा याकी अन्नकी तृष्णा दूरि करिदेइहैं, तब शीघ्र संताप छूटि जाइ हैं ॥ १७ ॥ समान चित्त साधु महात्मानको श्रीकृष्ण चंद्रके चरणारविंदमें चित्त लगो रहै है, उन्हैं धनके मदसों उन्मत्त दुष्ट पुरुषनते प्रयोजन कहाहै॥१८॥ सो या कारण मैं इन दोनोंनको जो वारुणी मदिरासो मतवाले, धनके मदसों अंधे स्त्रियनसें लम्पट और अजितेन्द्रिय हैं अज्ञानसों उत्पन्न भये मदको मैं दूर करूंगो ॥ १९ ॥ ये कुबेरके पुत्र होयके अज्ञानमें बूडिगये हैं यह नहीं जानैं हैं कि हम नंगे हैं इनकूं कछु खबरि न रही अतिमद होयगयो है ॥ २० ॥ यातें ये दोनों वृक्षयोनि होजाँय जो फिर इनकूं मद न होय, और वृक्षयोनिमेंहू मेरी कृपासों सुधि बनी रहै ॥ २१ ॥ और वासुदेव भगवान्की समीपताकूं प्राप्त होयकर ता पीछे फिर स्वर्गमें जाय देवता होय जायगे और भगवान्में इनकी भक्ति होयगी ॥ २२ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्तें कहैं हैं कि हे राजन्! देवतानमें ऋषि नारदजी या प्रकार कहिके बद्रिकाश्रमकूं जात भए अब नलकूबर मणिग्रीव दोनों यमलार्जुनके वृक्ष होतभये ॥२३॥ अपने भक्तनमें मुख्य श्रीनारदजीको वचन सत्य करिवेके निमित्त श्रीकृष्णचंद्र महाराज यमलार्जुनवृक्षनके निकट हौले हौले जात भए ॥२४॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने विचार कियो कि श्रीनारदजी मेरे प्यारे भक्त हैं, और ये कुबेरके दोनों पुत्र हैं, सो नारद महात्माने जो कुछ इनके विषयमें कह्योहै सो सत्य करूंगो ॥ २५ ॥ ऐसे विचार करिके यमलार्जुन वृक्षनके बीचमें होयके निकसे, और वृक्षके बीचमें आयके उलूखलकौं तिरछो करदियो ॥ २६ ॥ रस्सीते कमरिमें बंधे उलूखलकूं बालक श्रीकृष्णचंद्रने झटोका मारिके खींचो, ता समय

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जडते उखरिके वृक्ष पृथ्वीपैं गिरत भये, श्रीकृष्णके पराक्रमते गुह्य डार पतौवा सब हलत भये बडो शब्द भयो ॥ २७ ॥ जैसे संघर्षण भयेतैं वृक्षनमेंतें अग्नि निकसे तैसे अति शोभायमान और दिशानकूं प्रकाश करत दोनों पुरुष निकसत भये, तब भगवान् त्रिलोकीके नाथ श्रीकृष्णचंद्रकूं शिरते प्रणाम करत भये, और मदको त्याग हाथ जोरिके यह बोले ॥ २८ ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे महायोगिन् ! तुम बालक नहीं हौ, किंतु परम कारणरूप हौ, और स्थूल सूक्ष्म रूप तुमकूं ब्रह्मवेत्ता जानेहैं ॥ २९ ॥ समस्त प्राणीनके देह प्राण अहंकार इंद्रियनके तुमही एक ईश्वर हौ, संपूर्णमें व्यापक भगवान् कालरूप तुम हो ॥ ३० ॥ तुमही महानुरूप हो रजोगुण सत्वगुण तमोगुण और सूक्ष्म मायारूप समस्त तुमही हौ, देहनके विकारके जाननवारे साक्षी पुरुष तुमही हो ॥ ३१ ॥ प्रकृतिके गुण बुद्धि अहंकार इंद्रियादिकसौ ग्रहण करिवेमें नहीं आवोहो, उत्पत्तिते पहिले स्वयंप्रकाशता करिके वर्तमान हो, कारणगुण आच्छादित जीव तुमकौ कैसे जानिवेकूं समर्थ होय ॥ ३२ ॥ आप वासुदेव सर्वके कर्ता और स्वयं प्रकाशित भए गुणनसों जिनकी महिमा ढकरहीहै आप ज्ञानस्वरूप परब्रह्म हो तुमकूं नमस्कार है ॥ ३३ ॥ हे भगवन् ! आप संपूर्णके शरीरमें रहिकेहू शरीरके संबंधसों रहित हो यद्यपि आपको शरीर नहीं परन्तु जब आप अवतार धारण करै हौ तब और जीवनसो न होनवारे जिनकी तुल्य वा अधिक कोई न करसकै ऐसे चरित्रसों आपके अवतार जाने जायहैं ॥ ३४ ॥ समस्त लोकनके ऐश्वर्य्य और विभव अर्थात् मोक्षके निमित्त निरंतर परिपूर्णरूप हैके अंशनसहित प्रगट भएहो ॥ ३५ ॥ हे परमकल्याणरूप ! मंगलरूप ! तुमकूं नमस्कार है, शांतिरूपकूं नमस्कार है, यादवनके रक्षा करनवारे तुमकूं नमस्कार है ॥ ३६ ॥ हे परिपूर्ण भगवन् ! हम तुम्हारे अनुचर दास है हमने भगवान् नारद महाराजकी कृपाकरके आपको दर्शन पायौ; और आपकूं जान्यौं अब आज्ञा दीजै ॥ ३७ ॥ हमारी वाणी तुम्हारे गुणानुवादकूं कह्यो करै, कान आपकी कथानकूं श्रवण करैं, और हाथ आपके सेवा पूजनमें लगे रहैं हमारो मन आपके चरणारविंदमें लग्यो है, हमारो मस्तक आपके निवास रूप जगत्कूं प्रणाम करै, हमारी दृष्टि तुम्हारी साधुमूर्तिनको दर्शन करचो करै, हे महाराज ! आपते यह वर मांगे हैं ॥ ३८ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्ते कहेहैं कि हे राजन् ! या प्रकार नलकूबर मणिग्रीवने गोकुलनाथ भगवान्की स्तुति करी, तब रस्सीते उलूखल जिनकी कमरिमें बंध्यो ऐसे श्रीकृष्णचंद्र मुसिकायके यह बोले ॥ ३९ ॥ करुणामय श्रीनारदजीने लक्ष्मीके मदसो अंध तुमको देखिके शाप देके लक्ष्मीते भ्रष्ट करिके तुमपै यह अनुग्रह कियो यह बात हमने पहिलेही जानीहै[1] ॥ ४० ॥ समान चित्तवारे और निरंतर मोमें मन लगाये साधुनके दर्शनतें या पुरुषको बंधन कटजाय है, जैसे सूर्यके दर्शनते नेत्रको अंधकार जायहै ॥ ४१ ॥ हे नलकूबर मणिग्रीव ! तुम मेरे भक्त हैके अपने स्थानकूं जावो, तुम्हारी मेरे विषै सर्वदा भावना रहेगी, और जन्ममरण रूप संसार मोमें प्रेम करवेसों छूटगयो ॥ ४२ ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षिततें कहैं हैं कि हे राजन् ! या प्रकार भगवान्के वाक्य श्रवण करि नलकूबर मणिग्रीव वारंवार परिक्रमा प्रणाम करतभये और उलूखलते बंधे श्रीकृष्णचंद्रते आज्ञा मांगिके उत्तरदिशाकूं जातेभये[2] ॥ ४३ ॥

---

१ या लीलामें आपने यह दिखायो है कि मैं बंधो भयोहू दूसरेके बंधन छुडायवेमें समर्थ हूं ॥

२ यह जिय जान गोपाल बंधाये ॥ टेक ॥ शापदग्ध दोऊ सुत कुबेरके आय भये तरु जुगल सुहाये ॥ श्याम रुदन लोचन जल डारत ऊखलदाम सहित चलि आये ॥ विटप भंज यमलार्जुन तारे करि अस्तुति गोविंद रिझाये ॥ तुम विन कौन दीन खल तारै गुन अरु सगुनरूप दिखराये ॥ सूरदास श्याम गुन गावत हरषि संत निजपुरी सिधाये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुक उवाच–इत्युक्तो तौ परिक्रम्य प्रणम्य च पुनः पुनः ॥
बद्धोलूखलमामन्त्र्य जग्मतुर्दिशमुत्तराम् ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० नारदशापो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

श्रीशुक उवाच–गोपा नन्दादयः श्रुत्वा द्रुमयोः पततो रवम् ॥
तत्राजग्मुः कुरुश्रेष्ठ निर्घातभयशङ्किताः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहे हैं कि ॥ हे कुरुवंशीनमें श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ! नंदरायजीसूं आदि लेकै समस्त गोप वृक्ष गिरेको शब्द सुनिके कहन लगे कि कोई वज्र गिऱ्यो कहा या भयते जहां वृक्ष गिरे तहां आवत भये ॥ १ ॥ पृथ्वीमें यमलार्जुन वृक्षकूं उखारिके गिरायवेके कारण विद्यमान हैं परन्तु तिनके विना गोपनकूं भ्रम भयो, आंधी व्यारी विना ये वृक्ष आपसूं आप कौन कारणतें उखरि परे ॥२॥ रस्सीते बंधे बालक श्रीकृष्णचंद्रकूं उलूखल खेंचते देखो तौहू व्रजवासीनने न जानो और कहन लगे कि यह कौन राक्षसको कर्म है कहांते आश्चर्यरूप उत्पात भयो ऐसे कह व्रजवासी डरपे ॥ ३ ॥ ता स्थानपै जो छोटे २ बालक खेलते हैं ते बोले कि यह श्रीकृष्णचंद्र उलूखलकूं खेंचे २ वृक्षनके बीचमें आये तब उलूखल तिरछो होइके अडिगयो तब याने झटका मारिके खेंच्यो तासूं यह वृक्ष गिरिपरे इनमेंते दो पुरुष निकसे तेऊ हमने देखे ॥४॥ बालकनकी बात व्रजवासीनने न मानी और कहन लगे तनकसो बालक इतने बडे वृक्षनकौं कैसे उखारेगौ, कोई व्रजवासीनकूं या प्रकार संदेह भयो और कोई कहत भये कि या बालकने जन्मतेही ऐसे औठपाय किये हैं बालकसेने पूतना मारी, और तृणावर्त मार्‌यो गाडा पटकि दियो, ये वृक्षहू पटकि दिये होइंगे ॥ ५ ॥ कमरमें बंधे उलूखलको खेंचते अपने पुत्र श्रीकृष्णचन्द्रकूं देखकै नंदरायजी हँसिके यह बोले, तेरे उलूखल कौनने बांधो है, तब श्रीकृष्णने कही मैयाने बांध्यो है चल तेरी मैयाकूं कैसो डाटोहों यों कहिके उलूखल खोलै दियो ॥ ६ ॥ गोपी कहैं हैं कि हम तारी बजामें तुम नाचौ तब श्रीकृष्णचंद्र भगवान् कबहू बालककीसी नाई नाचन लगेहैं, कबहू भोरे बनिकर गावैं जैसे काष्ठकी पुतरी बाजीगरके वश जितमें कर फेरे तितमें सुरिजाय ऐसे गोपीनके प्रेमके वश हैं ॥ ७ ॥ कबहू यशोदाजी कहे हैं लाला पीढा लेआऊ बाबाकी खडाऊ लेआऊ, तब पीढा लामें हैं, खडाऊं लामें हैं कबहू वस्तु न उठेहै तब हाथ नचावे हैं, या प्रकार अपने व्रजवासीनकूं लीला करिके आनंद देते भये ॥ ८ ॥ संसारमें पंडित पुरुषनकूं यह दिखायवेकूं कि मैं इस प्रकार भक्तनके वशमें हूं जैसे नचावैं तैसेही नाचूंहूं, या प्रकार बाललीला करिकै व्रजवासीनकूं आनंद दियो सबनके मनमें आनंद होत भयो ॥ ९ ॥ (एक समय फल लो ऐसे मालनको शब्द श्रवण करकै सम्पूर्ण फलनके दाता श्रीकृष्णभगवान् धान्य लैकें फल लैनेको चले ॥ १ ॥ मालनने उनके धान्य डाल देवेके उपरान्त श्रीकृष्णके दोनों हाथ फलनसौं भर दिये तब भगवान्‌ने बाकी डलिया रत्ननसों परिपूर्ण करदीनी ॥२॥) यमलार्जुन वृक्षनकूं उखारिके श्रीकृष्ण यमुनातीरपै बालकनके संग बलदेवजीसहित खेलैं है तिनकूं रोहिणीजी बुलावतीभई ॥ १० ॥ रोहिणीजीके बुलायेते पुत्र कृष्ण और बलदेव खेलमें लगिरहेहैं

१ दोहा–व्रजवासी प्रभु भक्तहित, आप बँधायो दाम । ताही दिनतें प्रगट भयो, दामोदर अस नाम ॥ २ सवैया–शंकरसे सुर जाहि जपैं चतुरानन ध्यानन धर्म बढावैं । नेक हियेमें जो आवतही रसखान महा जड मूढ कहावैं ॥ जापर सुंदर देववधू नहिं वारत प्राण अबार लगावैं । ताहि अहीरकी छोहरिया छछियाभर छाछपै नाच नचावैं ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तासों न आये तब पुत्रमें प्रेम करनहारी यशोदाजीको बुलायवेको रोहिणीने भेजो ॥ ११ ॥ बालकनके संग भैया बलदेवसहित खेलत खेलत दिन बहुत आय गयो ता समय पुत्रके स्नेहतैं स्तननमें दूध चुवन लागो तब यशोदाजी श्रीकृष्णचंद्रकूं बुलावन लगीं ॥ १२ ॥ हे कृष्ण ! हे कमलदललोचन ! तू आउ स्तन पीले क्षुधाके मारे पेट तेरो लगि रह्यो है हे पुत्र ! खेलत २ हारिगयो होयगो अब तो खेलिवो रहनदे ॥ १३ ॥ या प्रकार यशोदाजीके बुलाये श्रीकृष्ण न आये तब कहे हैं कि श्रीकृष्ण न आवे तो याकूं जानदै हे राम ! हे पुत्र ! हे कुलकूं आनंद देनवारे ! तू शीघ्र आऊ और छोटे भैयानकूंभी हाथ पकरिके लेआऊ प्रातःकालही कलेवा करो है अब आयके भोजन करिलेऊं ॥ १४ ॥ व्रजराज भोजन करवेकूं बैठे हैं तेरे आयवेकी पैंडो देखें हैं तोकों बूढे बाबाकी दया नहीं आवे है, तू आउ हमको प्रसन्न करि या प्रकार कहते श्रीकृष्ण आवन लगे, तब बालक बोले जैसे तैसे करिके तौ खेल जम्यो है, अब श्रीकृष्ण जायहैं, याकौ कबहूं न खिलावेंगे, ऐसे श्रवण करिके फिरि खेलन लगे तब यशोदाजी बोली बालकहो तुम्हारे घरबार है कि नहीं ? जावो अपने घरकूं ॥ १५ ॥ हे पुत्र ! तुम्हारो अङ्ग धूलिसो लिप्त होरह्यो है यासो तुम स्नान करो और तुम्हारो जन्मको नक्षत्र है इससो स्नान करिके ब्राह्मणनको गउनके दान करो ॥ १६ ॥ बुलायवेते न आये तब कहे है तेरी बराबरके बालकनकूं विनकी मातानने स्नान करायो है सुन्दर कपरा गहने पहिरायेहैं तू देख तौ सही इनके आगे बुरोही लगैहै याते तूभी स्नान करिके भोग लगायके सुन्दर गहने पहिरके अच्छे सुखपूर्वक खोरि लगायके खेलोकरि ॥ १७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! स्नेहते बुद्धि बढी हुई यशोदाजी ब्रह्मादिकनके मुकुटमणि श्रीकृष्णकूं अपनो पुत्र मानिके बलदेवसहित श्रीकृष्णचंद्रको हाथ पकरिके घरमें लैआई उबटन करि स्नान करायो गौनको दान करायो ब्राह्मणभोजन करायो गहने वस्त्र पहिराय या प्रकार उत्सव करो ॥ १८ ॥ नंदजीते आदि लैकै वृद्ध व्रजवासीनने जब महावनमें बडे बडे उत्पात देखे तब संपूर्ण जुरि मिलिके गोकुलके हितको विचार करन लगे ॥ १९ ॥ ज्ञान और अवस्थाकरिके अधिक देशकालकी बातके जाननवारो, बलदेव और कृष्णचंद्रसै अति स्नेह करनहारो उपनंद नाम गोप बोल्यो ॥ २० ॥ गोकुलके हितकी इच्छाकरकै उपनंद कहन लगे कि हम यहांते उठिके और जगह वास करेंगे, यहां बालकनके मरिवेके कारण बडे बडे उत्पात आवै हैं ॥ २१ ॥ बालकनकी मारनवारी पूतना राक्षसीपै तौ जैसें तैसें यह बालक बच्योहै, और एक बखत गाडा याके ऊपर गिऱ्यो सो हरिके अनुग्रहतैं बचि गयो ॥ २२ ॥ और एक समय तृणावर्त बबूरेको स्वरूप धरिके या बालककूं आकाशमें उडायके लैगयो तब शिलाके ऊपर गिऱ्यो वहांहू देवतानने याकी रक्षा करी ॥ २३ ॥ यह बालक तथा और कोई बालक वृक्षनके बीचमें आयके मरचो नहीं वहांभी अच्युत भगवान्ने रक्षा करी ॥ २४ ॥ यावत् पर्यंत अब और कोउ उत्पातको करनवारो अरिष्ट व्रजमें न आवै तावत् पर्यंत बालकनकूं लेके और जगह जायकरि बसैंगे ॥ २५ ॥ पशुनको हितकारी और नये बाग बगीचावारो वृंदावन नाम वन है, गोप गोपी गउनके रहिवे लायक ठिकानो है, पवित्र जहां गोवर्द्धन पर्वत है, सुंदर घास जल और लता है ॥ २६ ॥ ता वृंदावनमें अबही चलि बसैं तुमकूं अच्छी लगे तो गाडानकूं जोतो, गायनको आगे हांकिलेऊ ढील मति करो ॥ २७ ॥ या प्रकार उपनंद गोपको वचन सुनिके एक बुद्धिवारे गोप भले भले ऐसे बडाईकरके अपने अपने गाडानको जोरि चीज वस्तु लादिके जातभये ॥ २८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वृद्ध बालक स्त्रीनकूं और सब वस्तूनकूं गाडानमें लादके धनुषकूं हाथमें लेके समस्त व्रजवासी सावधान होयके गउनकूं

१ दो०—सुख यशुमति और नंदको, को करि सकै बखान । सकल सुखनकी खानि हरि, जहां रहे सुख मान ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आगे करिके बडी बडी तुरही बजायकै पुरोहितनकूं संग लैके संपूर्ण गोकुलते वृन्दावनकूं जातभये ॥ २९ ॥ ३० ॥ गोपी नवीन केशरि कुचनमें लगायके धुकधुकीनकूं कंठमें पहिरके सुन्दर वस्त्रनकूं पहिरके रथनमें बैठिके श्रीकृष्णकी लीला गावत भई ॥ ३१ ॥ ताही प्रकार रोहिणी यशोदा एक गाडामें बैठिके श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजीकूं साथ लैके तिनके लीला चरित्र श्रवण करत शोभाकूं प्राप्त होत भई ॥ ३२ ॥ समस्त ऋतुनमें सुखके देनवारे वृंदावनमें आयके गाडानकूं बराबर ठाढो करिके आधे चंद्रमाकी तुल्य गौनके रहिवेकूं खिरक बनावत भये वो वृंदावन २० कोशमें वसायो और विश्वकर्माके हाथन बनवायो एक रातमें ये कृष्णखण्डमें लिखो है ॥ ३३ ॥ वृंदावनकूं देखिके गोवर्द्धन पर्वतकूं देखके यमुनाजीको सुन्दर तट देखिके हे राजन् परीक्षित् ! कृष्णबलरामकूं बडो आनंद होत भयो ॥ ३४ ॥ या प्रकार बाललीलानसूं और तोतली बातनसूं व्रजवासीनकूं आनन्द देई हैं आप जा समय बछरा चरावन लायक भयो तब बछरानके पालक भये ॥३५॥ व्रजभूमिके निकटही गोपालने लडकानकूं संग लैके श्रीकृष्ण बलदेव दोनों भैया बछरानकूं चरावतभये, और नाना प्रकारकी क्रीडानकूं करत भये ॥ ३६ ॥ काहू समय बांसुरीकूं बजामें हैं और कभऊं आमरेनकूं फेंके हैं कभऊं पांवनमें घुंघुरू बांधिके नाचे हैं और कभऊं व्रजवासीननें बाकलनकूं कंबल उढायके कृष्ण बलदेव दोनों भैया बैल बनामें हैं ॥ ३७ ॥ और उनके संग आपहू बैल बनिके शब्द करै हैं कबऊं परस्पर युद्ध करे हैं कबऊं पक्षीनकी बोलीकी नकल करै हैं या प्रकार बालक खेले हैं ता प्रकार जायके वनमें खेलै हैं ॥ ३८ ॥ एक समय यमुनाजीके किनारेपर श्रीकृष्ण बलदेवजी अपनी बराबरके मित्रनकूं संग लैके बछारनकूं चरावते हैं तहां इनके मारवेकी इच्छा करके वत्सासुर दैत्य आवत भयो ॥ ३९ ॥ बछराको रूप धरिके बछरानके समूहमें आयके मिल्यो, तासमय श्रीकृष्ण बलदेवजीको दिखायके होले होले वाके पास जातभए ॥ ४० ॥ सोई तो वा दुष्टने एक दुलत्ती भगवान्के मारी तब श्रीकृष्णचंद्रने पुच्छसहित वा दैत्यके पांव पकरिके खूब घुमायके कैथके पेडके ऊपर फैंक दियो, घुमायवेमें प्राण निकासि गये, बडो देहवारो वत्सासुर दैत्य कैथके वृक्षनको संग लैके पृथ्वीमें गिरत भयो ॥४१॥ ताको गिऱ्यो देखिके सम्पूर्ण बालक आश्चर्य मानिके भली करी भली करी ऐसे बडाई करत भये देवता संतुष्ट होयके पुष्प वरषावत भये ॥ ४२ ॥ समस्त लोकनके पालन करनवारे श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजी महाराज बछराके ग्वाल हैके प्रातःकालको कलेवा लेके वनमें जायके बछरानकूं चरावत लीलाविहार करत भये ॥४३॥ एक दिन समस्त बालक अपने २ बछरानके समूहनको श्रीयमुनाजीके तटपै जल पिवाइवेके निमित्त गये तहां बछरानको जल प्यायके आप जल पीवत भये ॥४४॥ते बालक यमुनाजीके तीरपै वज्रसे टूटे भये पर्वतकी शिलाके सदृश बडो मुखवारो जनावर देखत भये वाकूं देखिके बडो त्रास मानते भये ॥ ४५ ॥ बडो बली तीक्ष्ण चोंचवारो बकासुर दैत्य बगुलाको रूप धरिके श्रीकृष्णचंद्रकूं आयके शीघ्रही निगल गयो ॥४६॥ श्रीकृष्णचंद्रकूं बकासुर निगलगयो तासमय बलदेवजीसूं आदि लैके समस्त बालक प्राणनके विना इंद्रियकी समान अचेत हैगये ॥४७॥ गउनको पालन करनवारे नंदरायजीके पुत्र जगत्के गुरु ब्रह्माके पिता श्रीकृष्णचंद्र अग्निके अंगारकी तुल्य वाके तालुवेकूं जरावतभये, तासमय बकासुर कृष्णको तुरत उगिलत भयो जिनके अंगमें तनकभी घाउ न आयो तब तो अतिक्रोध करि श्रीकृष्णचंद्रकूं फिर बकासुर मारिवेकूं आवत भयो ॥ ४८ ॥ साधुनके

---

१ दोहा—कबहूं गावत सखन सँग, कबहुँ बजावत बेनु । धौरी धूमरि नाम ले, कबहुँ बुलावत धेनु ॥
सोरठा—कबहुँ नचावत मोर, सुन्दर श्यामलजलदजन । गरज मुरलि घनघोर, बरषत परमानन्द तन ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पालन करनवारे देवतानकूं आनंद देनवारे श्रीकृष्णचंद्र धावते भये कंसके सखा बकासुरकी दोनों हाथनते चोंच पकरिके बालकनके देखत २ ही विना गाठकेही तृणकी समान ताको चीर डारत भये ॥ ४९ ॥ ता समय सुरलोकके देवता बकासुरके वैरी श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर नंदनवनके चंबेलीके पुष्पनकी वर्षा करत भये, और नगारे शंख बजायके स्तुति करत भये, श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर पुष्पनकी वर्षा स्तुति देखिके व्रजवासीनके बालक आश्चर्य मानत भये ॥ ५० ॥ जैसे इंद्रिय प्राण आयेते सुखी होय हैं तैसे बलदेवजीते आदि लैके समस्त बालक बकासुरके मुखमेंते निकसिके श्रीकृष्णचंद्र अपने पास आये तिनतें छाती लगायके सम्पूर्ण बालक मिलिके सुखी भये बछरानको इक ठौरो करिके व्रजमें लेके आये और आज या श्रीकृष्णकूं बगला निगलि गयो यह बात कहत भये ॥ ५१ ॥ यह सुनतेही गोप और गोपी बडे विस्मयको प्राप्त भये और गोपियें बडे आदर और प्रेमसों श्रीकृष्णचंद्रको ऐसे देखन लगीं जैसे कोई मृतक होयके पुरुष आय जाय और कुटुम्बके लोग वाय देखतेही रहे हैं तृप्त नहीं होय हैं ॥ ५२ ॥ और सम्पूर्ण गोप कहन लगे बडो आश्चर्य है यह बडो कष्ट है या बालकके बहुत मृत्युके उपाय भये, परन्तु जो मारिवेको आये तिनकोही बुरो हैगयो क्यों पहिले विननें औरकूं भय दियोहो ॥ ५३ ॥ घोर रूप असुर राक्षस या कृष्णको कछु विगार न करिसके आप मरिवेके कारण याके पास आमें हैं, जैसे आगिमें पतंग जरि जाय तैसे आपही मरिजाय हैं ॥ ५४ ॥ अहो वेदके पढनवारे ब्राह्मणकी वाणी कबऊ मिथ्या नहीं होयहै, जो बात गर्गाचार्य कहिगये हैं सो वैसेही देखिपरैं हैं ॥ ५५ ॥ नंदजीसूं आदि लैके समस्त व्रजवासी श्रीकृष्ण बलदेवजीकी बातनको कहि कहिके आनंदित होयके सुख माने है, और संसारके क्लेश कछु नहीं जाने है ॥ ५६ ॥ या प्रकार आंखि मिचोनी, पुल बांधने, बंदरानकी नाईं कूदनो, यह कौमारअवस्थाके खेल करि करिके श्रीकृष्णचंद्र बलदेवने कौमार अवस्था व्यतीत करी ॥ ५७ ॥

एवं विहारैः कौमारैः कौमारं जहतुर्व्रजे ॥
निलायनैः सेतुबन्धैर्मर्कटोत्प्लवनादिभिः ॥ ५७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

श्रीशुक उवाच–क्वचिद्वनाशाय मनो दधद्व्रजात्प्रातः समुत्थाय वयस्यवत्सपान् ॥
प्रबोधयन् शृङ्गरवेण चारुणा विनिर्गतो वत्सपुरःसरो हरिः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्तें कहे हैं कि हे राजन्! कबऊ एक वनमें जायके प्रथम कलेवा करेंगे यह मनमें विचारके व्रजतें प्रातःकाल उठिके सुंदर सींगी बजायके बराबरके मित्रनकूं जगाय बछरानकूं आगे करिके श्रीकृष्णचन्द्र निकसत भये ॥ १ ॥ तिन श्रीकृष्णचन्द्रके संग सोही हजारन बालक छीके और बेतकी छडी बांसुरी लैके अपने अपने बछरानकूं आगे करिके आनंदसों चलै ॥ २ ॥ असंख्यात श्रीकृष्णचंद्रके बछरानमें मिलायके चरावते चरावते बाललीला करिके तहां तहां विहार करत भये ॥ ३ ॥ मणिनके जडाऊ सुवर्णके गहने पहिरे हैं, तोहू वनमें जायके फलनके पत्तानके चौंटलीन गुच्छनके आभूषण बनायके पहिरे हैं खरिया माटीके तिलक लगायके अपनो शृंगार करे हैं ॥ ४ ॥ आपुसमें छांछके छीकेनकूं चुरावें जब जानिलेय हैं तब दूरि बालकनके पास फेंकि दैय हैं, वे बालक फिरि फेंकि

१ दोहा–बक विदारि हरि सखनको, टेरत आवहु धाय । चोंच फारि मारयो असुर, तुमहू आवहु धाय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देय हैं, तब वे छीकनवारे बालक रोमनीमें आयजाय हैं, तब श्रीकृष्णचंद्र हँसिके फेरि दै दैयँ हैं ॥ ५ ॥ वृन्दावनकी शोभा देखिवे निमित्त श्रीकृष्णचन्द्र दूरि चलेजाय हैं तब बालक आपुसमें होड बद बदके दौरे हैं कि पहले मैं छुऊं या प्रकार श्रीकृष्णचन्द्रकूं छुयकें खेलत भये ॥ ६ ॥ कोई बालक बासुरीकूं बजावें हैं और कोई सींगीनकों बजावें हैं कोई बालक भौरानकें संग गामें हैं और कोई कोकिलानकें संग बोले हैं ॥ ७ ॥ और कोई आकाशमें उडते हुए पक्षिनकी छाया दाबके दौरे हैं, कोई बालक हंसनके संग होले होले चले हैं, कोई बालक बगलानके पास चुपकेसे जाय बैठे हैं और कोई बालक मोरनके संग नाचत हैं ॥ ८ ॥ और बालक बंदरानकी पूछ पकरि पकरिके खैंचे हैं, और पूछ पकरिके वृक्षनपै चढिजाय है, और कोई बालक अपने कान चपटे करिके आंखै घुन्नायके बंदरानके सन्मुख घुडके हैं, कोई वृक्षनपेते कूदे हैं ॥ ९ ॥ और कोई मेंडुकानके संग फुदकै हैं जब वे गोता मारै तब आपभी यमुनाजीमैं गोता मारे हैं और कोई बालक अपनी परछाहीकी हँसि करैं हैं कोई बालक कूआ बावडीमें जो शब्द होय हैं तिनकूं गारी दैय हैं ॥ १० ॥ जो ब्रह्मज्ञानीनकूं ब्रह्मस्वरूप करिके जानिवेमें आवे है, दासभावके कारणवारे भक्त जिनको पर देवता स्वामी जानै हैं और मायामें पडे भए पुरुष जिनको मनुष्यको बालक जानै हैं माया जिनकूं लगि रही है, वे जाकी जैसी भावना ताकौं तैसेही दिखाई देय हैं ऐसे श्रीकृष्णचंद्र भगवान्के संग बडे बडे पुण्यनके समूह करनवारे ब्रजवासीनके बालक खेले हैं ॥ ११ ॥ जिनके चरणारविंदकी धूरि बहुत जन्म तपस्या करके मनकूं रोकनहारे योगीश्वरनकूंहूं नहीं प्राप्त होय है सो श्रीकृष्णचन्द्र आप इनके सन्मुख ठाडे रहे है, अहो इन ब्रजवासिनके भाग्य कहा वर्णन करै ॥ १२ ॥ बालक वनमें खेले हैं इतनेमें एक दिन अघासुर दैत्य आवत भयौ, तिन बालकनकूं सुखपूर्वक खेलत देखिके कुढ मरचो, अमृतपान करनवारे देवताहू अपने जीवेकी इच्छासों सदा जाके मरणकी प्रतीक्षा करे हैं ॥ १३ ॥ पूतना और बकासुरको छोटो भैया कंसको पठायो अघासुर जब आयो तब कृष्णादि बालकनकूं देखिके मनमें विचार करत भयो कि या कृष्णने मेरे भैया और बहिन मारे हैं तिन दोनोनको बदलो लेवेको बालक बछरानसहित और बलदेवसहित आज या कृष्णकूं मारूंगो ॥ १४ ॥ और अपने भैया बहिनीकूं संगही इन बालकनकी तिलांजली देऊंगो तब सब ब्रजवासी नष्ट होइ जांयगे प्राण गये पीछे देहनकी कहां चिंता है प्राणधारी पुरुषनके तौ पुत्रही प्राण हैं ॥ १५ ॥ ऐसो मनमें निश्चय करिके चार कोशको लंबो बडे पर्वतकीसी नाईं मोटो अजगर सर्पको अद्भुत बडो देह धारण करिके गुफाकी तुल्य मुख पसारिकै बछरा बालकनके निगलिवेके लिये वह दुष्ट मार्गमें सोवत भयो ॥ १६ ॥ धरतीमें नीचलो ओष्ठ और बादलमें ऊपरको ओष्ठ फैलाय दियो है पर्वतकी गुफाकी तुल्य जाके मुखको अंत पर्वतकी शिखरके समान डाढ, घरके अंधेरैसो मुखमें अंधकार बडे रस्ताकीसी नाईं जीभ; कठोर पवनकी तुल्य श्वास अग्निकी तुल्य जाकी दृष्टि ही[1] ॥ १७ ॥ समस्त बालक अघासुरको देखिके वृंदावनकी शोभा मानिके फैले भए अजगरके मुखकी लीलासोही उत्प्रेक्षा करन लगे ॥ १८ ॥ आपुसमें कहत भये अहो मित्र ! तुम कहौ आगे यह जनावरसो ठाढो है कि नहीं हमारे निगलिवेके लिये सर्पकीसी नाईं मुख पसारै है कि नहीं ॥ १९ ॥ सत्य है सूर्यकी किरणनसूं लाल बादर हे ऐसो लगै हैं मानों सर्पको ऊपरलो ओष्ठ है और सूर्यकी परछांईते लाल भई धरती ऐसी लगै है मानों सर्पके नीचेकी ठोडी है ॥ २० ॥ वामें दाहिने पर्वतकी गुफा ऐसी लगे हैं मानौं या सर्पके मुखको अंत है

---

१ प्र०—अघासुरके होठ तौ बडे चमत्कारिक थे । उ०—यह राक्षसीमाया है उससे अनेक प्रकारके शरीर धारण कर लेते हैं इसमें शंका नहीं करनी ॥

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ऊंचे ऊंचे पर्वतकी शिखर हमें ऐसी मानो सर्पकी डाढ हैं यह तुम देखो ॥ २१ ॥ चौडो लंबो रस्ता यह हमकूं ऐसो लगै है मानो या सर्पकी जीभ है, और शिखरनके भीतर अंधकार हमको ऐसो लगै मानो सर्पके मुखके भीतर अंधकार है ॥ २२ ॥ दावानलसो उष्ण तीक्ष्ण पवन ऐसो लगे है मानो सर्पको श्वास है दवमें जीव जरे हैं तिनकी दुर्गंध ऐसी लगे हैं मानों सर्पके मुखके मांसकी दुर्गंध है ॥ २३ ॥ सर्पके मुखमें धसेंगे तौ कहा हमको निगलि जायगो और जो निगलैगो तो यह श्रीकृष्ण याहि छिनभरमें बकासुरकीसी नाईं मारि डारैगो, या प्रकार कहिके बकासुरके वैरी श्रीकृष्ण-चंद्रको सुंदर मुख देखिके हँसिके तारी बजायके बालक आगेको जातभये तारी बजायवेको कारण यह है कि जो सर्प होयगो तो सरकि जायगो और जो वृन्दावनकी शोभा होयगी तो खेलेंगे ॥ २४ ॥ वास्तवमें तौ यह सर्पको शरीर धारण किये भये राक्षसही है और हमारे साथी बालकनने याको वृन्दावनकी शोभा कहिके फिर सर्पके समान वर्णन कीनी है सम्पूर्ण प्राणिनके हृदयमें विराजमान भगवान् जबतक विनके वचन सुनके वामें प्रवेश करवेके निमित्त विनके निषेध करवेको विचार करैं कि ॥ २५ ॥ तबताईं बछरानकूं लैके बालक सर्पके मुखमें चलेगये, परंतु सर्पने मरे भये भैया और बहनकी सुधिकर वे बालक निगले नहीं काहेते कि मनमें विचार कर्‌यो बकासुरको मारनवारो मेरो दावादार कृष्ण तो अभी आयो नहीं ॥ २६ ॥ सबके अभयके देनवारे श्रीकृष्णचंद्र अनाथकी समान अपने हाथसो छूटे भए दीन बालकनको मृत्युरूप अघासुरके पेटमें घासकी समान देखके दयासो पीडित भए और आश्चर्यसो कहन लगे दैवकी क्या गति है ॥ २७ ॥ अब श्रीकृष्णचंद्र मनमें विचार करैं है कि दुष्टको जीवन न होय और साधु मेरे मित्रको नाश न होय ये दोनों बातें कैसे होय यह विचार करिके तिन दोनोंनकूं जानिके संपूर्णके देखनवारे भगवान् अघासुरके मुखमें धसे, क्यों कि मित्रताको यह धर्म नहीं है कि मित्र मुखमें गये आप बाहिर ठाढे रहैं जो होयगी सो मित्रनके संग होयगी याते आपुहू धसे ॥ २८ ॥ ता समय बादरनकी ओटनमें देवता ठाढे होयके हाय हाय करन लगे, और नैर्ऋतके वंशके अघासुरके भैया बंधु कंसकूं आदि लैके राक्षसनकूं आनंद भयो[1] ॥ २९ ॥ अविनाशी श्रीकृष्णचंद्र भगवान् देवतानको हाहाकार शब्द सुनिकै बालक बछरान सहित अपने आत्माकूं चूर्ण करवेकी इच्छा करनवारे अघासुरके गलेमें पैठते भए ॥ ३० ॥ तब बडे देहवारे राक्षसको कंठ रुकि गयो, आंखि निकसि आई, इत उतमें भ्रमण करन लगो देहमें श्वास रुकि गयो बाहिर निकसिवेको रस्ता न पायो तब ब्रह्मरंध्रको फोरिके बाहिर निकरचो ॥ ३१ ॥ अघासुरके श्वासके संग समस्तके प्राण बाहिर निकसि गये तब बछरा बालक मरे देखिके अपनी दृष्टिमेंते अमृ-तकी वृष्टि करिके सबको जिवायो तिनको संग लैके फेरि मुकुंद भगवान् अघासुरके मुखमेंते बाहिर निकसत भये ॥ ३२ ॥ दुष्ट सर्पके देहमेंते बडी अद्भुत ज्योति निकसिकै अपने तेजते दश दिशानमें प्रकाश करिके आकाशमें स्थित हो श्रीकृष्णचंद्रके निकसिवेकी राह पेखन लगी जा समय श्रीकृष्ण बाहिर निकसे तब सब देवतानके देखते देखते श्रीकृष्णके शरीरमें प्रवेश कर गयी ॥ ३३ ॥ ता समय समस्त देवतानके आनंद भयो, और फूलनसों श्रीकृष्णचंद्रकी पूजा करी, अप्सरा नृत्य करत भईं सुर गंधर्व गावत भये बाजेवारे बाजे बजावत भये, ब्राह्मण स्तुति करिके जय जय शब्द करत भये ॥ ३४ ॥ वह अद्भुत स्तुति और सुंदर बाजे गीत जय आदि लेके अनेक उत्सव मंगल शब्दनकूं ब्रह्माजी अपने ब्रह्मलोकमें श्रवण करिके शीघ्रही चले आये, श्रीकृष्णचंद्रकी महिमा देखिके आश्चर्य

१ उनके अंग फडके इस कारण उन्होंने प्रसन्नता मानी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मानत भये ॥ ३५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वा अजगरको शुष्क अद्भुत चर्म वृन्दावनमें बहुत दिन पर्यंत व्रजवासीनके बालकनके खेलिवेकूं बडी गुफासी होती भई, मुखकी रस्ता घुसें आंखिनकी रस्ता निकसे आंखिनकी रस्तामें घुसे मुखकी रस्तामें निकसआवे या प्रकार क्रीडा करतभये ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्णचंद्र भगवान्ने बालक और अपनेकूं मृत्युसे छुडावनो और अघासुरको मोक्ष यह काम पांच वर्षकी अवस्थामें करो है, परन्तु याकूं आश्चर्य मानिके समस्त बालक व्रजमें छठे वर्ष कहत भये और व्रजवासीनकूं आनंद भयो ॥ ३७ ॥ मायासो मनुष्य बालकरूप धारण किये भए सम्पूर्ण स्थावर जंगमके आदिकारण परमात्मा श्रीकृष्णके स्पर्शसो महापापी अघासुर पवित्र हो असत्पुरुषनको दुर्लभ श्रीकृष्णचंद्रमें लय हैगयो यह कोई अश्चर्यकी बात नहीं है ॥ ३८ ॥ कारण जाकी मनोहर मूर्ति प्रह्लादादिक भक्तनने केवल एक वारही बलात्कारसे मनमें धारण कीनी, और वाहीके प्रतापसो विनकी मुक्ति भई तो सदैव अपने आत्मानंदके अनुभवसो मायासो रहित भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके अघासुरके शरीरमें प्रवेश करवेसों वाकी मुक्ति भई तो यामें कहा आश्चर्य है ॥ ३९ ॥ अब श्रीसूतजी महाराज शौनकादिक ऋषीश्वरनते कहैं हैं कि हे ऋषियो ! या प्रकार यादवनके देव श्रीकृष्णचन्द्रसो रक्षित भये गर्भमें राजा परीक्षित् अपने रक्षा करनवारे श्रीकृष्णचन्द्रके विचित्र पवित्र चरित्र श्रवण करिके व्यासनंदन श्रीशुकदेवजीतें फिरहूं प्रश्न करत भये कारण कि तिन चरित्रनके श्रवण करेते परीक्षित्को मन वश है गयो ॥ ४० ॥ अब राजा परीक्षित् कहै हैं कि हे शुकदेवजी महाराज ! जो और कालमें कन्यो सो तत्कालमें कन्यो कैसे होय गयो पांच वर्षकी अवस्थामें श्रीकृष्णचन्द्रने अघासुरको मान्यो छठे वर्षमें बालकनने व्रजवासिनते कह्यो यह वर्ष दिनको बीच कैसे पन्यो ॥ ४१ ॥ हे बडे योगेश्वर ! हे गुरु ! यह बात मोते कहो, मेरे बडो आश्चर्य है निश्चय भगवान्कीही माया है और कुछ नहीं है ॥ ४२ ॥ हे गुरु ! हे तो हम क्षत्रीनमें गये बीते, परंतु अब संसारमें अतिशय करिके धन्य हैं कारण कि जा दिन ब्राह्मणको शाप भयो ता दिन धन्य भये, जब तुम्हारे दर्शन करे तब धन्यतर भये अब तुमते वारंवार कृष्णकथारूप अमृत पान करूं हूं याते अतिशय करिके धन्य हूं ॥४३॥ श्रीसूतजी शौनकादिकनसों कहैहैं कि या प्रकार राजाने प्रश्न करिके श्रद्धा दिखाई तब श्रीकृष्णचन्द्रकी कथा अमृतमें शुकदेवजीकी सम्पूर्ण इंद्रियें जायलगीं तब व्यासनन्दन श्रीशुकदेवजी बडे कष्टते फिरि आंखि खोलिके भक्तनमें श्रेष्ठ श्रोता राजा परीक्षित्से कहते भये ॥ ४४ ॥

सूत उवाच-इत्थं स्म पृष्टः स तु बादरायणिस्तत्स्मारितानन्तहृताखिलेन्द्रियः ॥
कृच्छ्रात्पुनर्लब्धबहिर्दृशिः शनैः प्रत्याह तं भागवतोत्तमोत्तमम् ॥४४॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे अघासुरवधो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

श्रीशुक उवाच-साधु पृष्टं महाभाग त्वया भागवतोत्तम ॥
यन्नूतनयसीशस्य शृण्वन्नपि कथां मुहुः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्तें कहैं हैं कि हे बडभागी भक्तनमें अति उत्तम राजा परीक्षित् ! तुमने बहुत श्रेष्ठ प्रश्न पूछ्यो है, ईश्वरकी कथाकूं वारंवार श्रवण करोहो याते तुम श्रेष्ठ हो ॥१॥ सार वस्तुके ग्रहण करनवारे साधुनको यही स्वभाव है, कारण कि श्रीकृष्णचन्द्रमें जिन पुरुषनकी वाणी श्रवण चित्त लगि रहैहैं वे वाणीते कृष्णगुण वर्णन करैं, श्रवणनते कथा सुनैं, चित्तते स्वरूपको ध्यान करैं, या प्रकार

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अच्युत भगवान्‌की वार्तामें क्षण क्षण प्रति ध्यान लगाये रहैं, और ऐसी प्रिय लगै मानों कभऊ सुनी नहीं है, जैसे विषयी मनुष्यनकों स्त्रीनकी बात प्यारी लगै है ॥२॥ हे राजन् परीक्षित् ! मैं तुम्हारे आगे गोप्य कथा कहूंहूं, तुम सावधान हैके श्रवण करो गुरु अपने प्यारे शिष्यकूं गोप्य वार्ताकूभी कहि देइ है ॥ ३ ॥ अघासुरके मुखमेंते मरे बछरा और बालकनकूं जिवायके और यमुनाजीकी रेतिमें लायके भगवान् यह बोले ॥ ४ ॥ हे बराबरीके मित्रो ! यह बडी रमणीक रेती है अपने खेलिवेके योग्य ठौर है कोमल स्वच्छ बारूके बिछौना बिछ रहे हैं कमल फूले हैं, तिनमें सुगन्धिके लोभसे भौंरा शब्द कररहे हैं, और जलपक्षिनके शब्दनकी प्रतिध्वनिसो यहांके वृक्ष शब्दायमान है रहे हैं ॥५॥ यहां बैठिके कलेवा करेंगे, दिन बहुत चढि आयोहै भूंख लगी है बछरानको जल प्यायके चरिवेको छोडि देऊ येऊ हौले हौले घास चरेंगे ॥ ६ ॥ बालक तथास्तु ऐसे कहि बछरानकों जल प्याय हरी घासमें चरिवेको छोडके छीकेनकों खोलि खोलिके श्रीकृष्णचंद्रके संग भोजन करिवेको बैठत भये ॥ ७ ॥ व्रजके बालक श्रीकृष्णचंद्रके चारों ओर बहुतसी पंक्तिनके मंडल बनायके एक संग बैठे श्रीकृष्णचन्द्रके सन्मुख मुख करवेसो जिनकी दृष्टि प्रफुल्लित है रही है या प्रकार यमुनाजीकी रेतीमें शोभाको प्राप्त होत भये जैसे कमलकी कलीके चारों ओर पखुरि सुंदर लगे हैं श्रीकृष्णचन्द्र बीचके मकरंदके समान हैं बालक पखुरीनके समान हैं ॥ ८ ॥ कोई बालक फूलनकी पातर बनायके भोजनको बैठे कोई बालक पखरीनकी पातर बनायके बैठे, और कोई बालकनने पत्ताकी पातर बनाई, और कोई बालकनने अंकुरानकी पातर बनाई कोईने फलनकी पातर और कोई बालक छीकेनमें भोजन करिवेको बैठे, कोई बालकनने बहुत सुन्दर वृक्षनके बकुलानकी पातर बनाई, कोई बालक शिलानपै परोसिकै भोजन करन लगे ॥ ९ ॥ समस्त बालक अपनी अपनी सामग्रीनकूं न्यारे न्यारे चखावत जाय हैं, और आपुसमैं हँसें हैं हँसावत जाय हैं, या प्रकार श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्‌के संग सुखपूर्वक भोजन करत भये ॥ १० ॥ फेंटमें बासुरी उरझलीनी सींग वेतकी छरीको कांखमें धरलीनी, दही भातसों लपिटो ग्रास बाये हाथमें धरिलियो और बेर आमरे नींबू इत्यादिक फल अंगुलीनमें धरिलिये, चारों ओर अपने मित्र बैठे हैं तिनकूं हँसीकी बात कहि कहिके हँसावत जाय हैं स्वर्गमें देवता आश्चर्यसो ठाढे होयकरि तमासो देखेंहैं कि भगवान् व्रजवासीनके बालकनकी जूंठनि छिनाय छिनायके खाय है, या प्रकार यज्ञके भोग करनवारे भगवान् बालकनके खेल करिके भोजन करत भये ॥ ११ ॥ हे भारतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् ! श्रीकृष्णचन्द्रमें मनको लगाये ग्वाल बाल भोजन करिवेको बैठे, तब बछरा हरी हरी घासके लोभते दूर वनके भीतर चले गये ॥ १२ ॥ बछरानकों दूर गये देखिके बालक डरपे तब तिनको भय दूर करते श्रीकृष्णचन्द्र बोलत भये हे मित्रो ! तुम बैठे भोजन करो उठो मति क्योंकि ऐसी मण्डली फिर न बन्धेगी मैं सबके बीचमें बैठो हूं अलगते शीघ्र उठके बछरा ले आऊंगो ॥ १३ ॥ या प्रकार बालकनतें कहि श्रीकृष्णचन्द्र पर्वतकी गुफा गह्वर वनमें अपने बछरानकूं ढूंढते हाथमें दही भातको कौर लिये चलेगये ॥ १४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! याही अवसरमें कमलोत्पन्न ब्रह्माजी जो कि प्रथम मायाके द्वारा बालकरूप श्रीकृष्णसों अघासुरकी गति देख आकाशमें स्थित भए परम आश्चर्यको

१ दो०—तहां छाक सब धरनतैं, आई भरि भरि भार । यशुमति पठयो श्यामको, व्यञ्जन बहुत प्रकार ॥

२ दोहना मोहना सोहना ही ओ ऐसे कहते आप चले ॥ ३ प्र०—ब्रह्माजीको मोह क्यों हुआ ? उ०—ईश्वरकी माया बडी दुस्तर है इससे कोईभी नहीं बच सकता तथा एक समय नारदजीको मोह हुआ तब ब्रह्माजीने कहा तुमसे महात्माकोभी मोह हुआ ज्ञानी तो मोहमें नहीं पडते नारदजीने कहा एक २ समय सब मोहमें पडते हैं इससे ब्रह्माजीको अहंकार हुआ उसीसे मोह हुआ और यह मोह ब्रह्माकी सृष्टिमें नहीं ईश्वरकी महिमामें है इस कारण " भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कश्चन " यह वाक्य वहां नहीं लगता ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राप्त भये, अब वे श्रीकृष्णकी यह दूसरी माया देखेवेके निमित्त यहांसो बालककूं और वनमेंसो बछडनको हरण कर दूसरे स्थानमें लेजाय अन्तर्ध्यान हैगये ॥१५॥ ताके पीछे बछरानको न देखो तब बगदके यमुनातीरपै आये यहां ग्वालबालहू न देखे ता समय बछरा बालकनकूं चारों ओर ढूंढत भये ॥ १६ ॥ वनमें कहूं बछराहू न देखे बालकहू न देखे तब विश्वकी बातके जाननवारे श्रीकृष्णचंद्र भगवान् तत्काल संपूर्ण ब्रह्माके कर्तव जानत भये ॥ १७ ॥ ताके पीछे श्रीकृष्णचंद्रने विचार कियो कि चुप बैठि रहेंगे तो बालकनकी माता रोवेंगी, ब्रह्माके पासते ले आओगे तो वाको मोह न होयगो बालकनकी मातानकूं आनन्द देवेके लिये और ब्रह्माकूं मोह करिवेके लिये विश्वके उत्पन्न करनवारे श्रीकृष्णचंद्र भगवान् अपने रूप अनेक करत भये बछराहू आप भये और ग्वालबालहू आप भये ॥१८॥ जाके जा बछराको जैसो छोटो देह हो, और जैसे जा बालकके हाथ पांव है काहूके छः अंगुरी ही जैसी जा बालककी छडी सींगी बांसुरी छीको हो, जैसे जा बालकके गहने कपरा है, काहूके जडाऊ गहने काहूके सादा है, काहूकी कसूमी पाग ही काहूकी हरी पीरी गुलाबी ही जैसो जा बालकको सुभाव हो कोई सतोगुणी कोई रजोगुणी कोई तमोगुणी जैसो जा बालकमें गुण हो और जो जो जा बालकको नाम हो जैसो जा बालकको रूप हो कोई गोरो कोई सामरो और जैसो जा बालकको खेल हो श्रीकृष्ण सब रूप होयके सब रूप धरिके सुन्दर लगत भये ॥ १९ ॥ आप आत्मा श्रीकृष्णचन्द्र आपुही बछरा बने तिनको घेरि घेरिके अपने खेलसूं खेलत भये, पीछेतैं सर्वात्मा भगवान् व्रजमें पधारे ॥ २० ॥ तिन तिन व्रजवासीनके बछरा समूहमेंते न्यारे करिके तिन तिनके खरक पवारिके तिन व्रजवासीनके बालक होयके हे राजन् परीक्षित् ! व्रजवासीनके घरनमें जाते भये ॥ २१ ॥ तिन बालकनकी माता बासुरी बजी श्रवण करिके शीघ्रतासो उठिके घरनते बाहर निकसिके बालकनको उठाय हाथनते उठाय छातीते लगामें हैं, स्नेहते स्तननमें दूध भरी आवे है वही अमृतकी तुल्य स्वादको दूध परब्रह्म श्रीकृष्णचन्द्रकूं अपनो पुत्र मानिके प्यावत भई ॥ २२ ॥ आये पीछे उबटनो करै हैं, मज्जन स्नान करावे हैं, चन्दन केशर लगामें हैं गहने पहरामें हैं तिलक लगामें हैं, भोजन करामें हैं या प्रकार समस्त गोपी श्रीकृष्णचन्द्रको लाड लडामें हैं तब अपने सुन्दर चरित्रनसूं उनको आनन्द देय है, ता समयके खेलको नेम साधके सन्ध्याकाल व्रजमें आमें हैं ॥ २३ ॥ ऐसे गोपीनको मोह करिके गोपनको मोह करिहै, गौ दौरि दौरिके रम्भाय रम्भायके व्रजमें आमें है, बछरानको बुलामें हैं बछरा आमें हैं, तब अपने बछरानको स्नेहते ऐनमें संचित दूधकूं पिवामें है, वारंवार हित मानिके चाटती जाय हैं ॥ २४ ॥ या श्रीकृष्णचन्द्रमें सम्पूर्ण गोपगोपिनको मैत्रीभाव पहलेकीसी नाईं भयो, परन्तु इतनो हित नहीं हो, अब हित अधिक बढो, गाय गोपिनमेंहू श्रीकृष्णकी बालभावना पहिलेकीसी नाईं भई परन्तु मैं याको पुत्र हौं और यह मेरी माता है यह मोह न भयो ॥ २५ ॥ व्रजवासीनकी अपने बालकनमें स्नेहरूपी लता वर्षदिनपर्यंत होले होले ऐसी वृद्धिको प्राप्त भई कि जाको पारावार नहीं जैसे पहले कृष्णमें बढीही ॥ २६ ॥ या प्रकार सबके आत्मा श्रीकृष्णचन्द्र बछरा ग्वालनके मिस करिके आपरूप बछरानकूं आपरूप ग्वालनकूं कर बछरा चरायके वनमें व्रजमें वर्षदिनपर्यंत क्रीडा करत भये ॥ २७ ॥ और एक दिन बछरा चरायवेको पांच छः रात्रि दिन वर्षमें बाकी रह गई तब अजन्मा श्रीकृष्णचन्द्र भैया बलरामको संग लेकै वनमें आवत भये ॥ २८ ॥ ताके पीछे गोवर्द्धन पर्वतके ऊपर गऊ घास चरेही तिनने बहुत दूरते व्रजकै पास बछरा चरत देखे ॥ २९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बछरानको देखतेही, विनके प्रेमके मारे गऊ अपने आपकी सुधि भूल गई, विनके थननसों दूध टपकन लगो, गोपनके निवारण करवेकों और विषम मार्गको कुछभी ध्यान न करकै ऐसे वेगसो चलीं मानों दोही पावसे चलरही है मुख और पूंछकूं ऊंचे करे बडे वेगसो हुंकार शब्द करती बछरानके पास पहुँची ॥ ३० ॥ यद्यपि इनके दूसरी व्याहतिके बछरा है, तथापि वे गऊ गोवर्द्धन पर्वतते नीचे आयके पहली व्याहतिके जो बडे बडे बछरा हैं तिनकूं अपने ऐननको दूध प्यावत भई, उनके अंगनकों ऐसे चाटें मानों निगल जांयगी ॥ ३१ ॥ अब गोपनको मोह कहें हैं जब गोपनने गऊनकों घेरो तब गऊ न फिरी, तब लज्जित हो कहन लगे, हम वानेत गोप कहामें हैं, आज हमपै गऊहू नहीं रुकी, तब मनमें बडो क्रोध आवत भयो, कठिन मार्गमेंते बडे कष्टते नीचे आय बछरानकूं लिये ठाढे अपने बालकनको देखत भये ॥ ३२ ॥ गोप आये तो बालकनके मारिवेको हे परंतु बालकनकूं देखिके प्रेम उदय भयो तामें अंतःकरण डूबि गयो, ताते क्रोध जात रह्यो, बालकनकूं हाथते उठायके हृदयसों लगाय उनके माथे सूंघिके व्रजवासी बडो आनंद पावत भये ॥ ३३ ॥ ताके पीछे वृद्ध वृद्ध गोप बालकनकूं छातीते लगाय बडे सुखी भये कष्टते हौले हौले बालकनकों छोडकै बाहर निकसे बालकनकी सुधिसों विनके नेत्रनमें जल भरि आये ॥ ३४ ॥ यद्यपि ये बालक दूध नहीं पीवते हैं बडे हैगये हैं तौहू विनमें व्रजवासिनके प्रेमकी ऐसी वृद्धि देख वाके कारणको नहीं जानके बलदेवजी मनमें विचारते भये ॥ ३५ ॥ संपूर्णके आत्मा श्रीकृष्णचन्द्रके ऊपर व्रजवासिनको जैसो प्रेम है वैसो अपूर्व प्रेम अब बालकनपैहू वृद्धिको प्राप्त होय है और यही नहीं मेरे हृदयमेंहू वत्स और बालकनपै अधिक प्रेम बढै है, सो यह बडी अद्भुत बात है याको कारण कहा है ॥ ३६ ॥ यह कहा है, कहांते आये हैं देवतानकी माया है, अथवा मनुष्यकी माया है, या मेरे स्वामी श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्‌की माया है कारण कि औरकी माया मोको मोह करनवारी नहीं है ॥ ३७ ॥ दाशार्हवंशोत्पन्न श्रीबलदेवजी या प्रकार विचार करिके संपूर्ण ग्वाल बछरान सहितनकूं ज्ञान दृष्टिते श्रीकृष्णरूप देखतभये ॥ ३८ ॥ संपूर्ण देवता ग्वाल बाल भये हैं और ऋषीश्वर बछरा भये हैं यह मैं जानूं हूं, परन्तु अब तो देवता नहीं है, और ये बछरा ऋषि नहीं है, हे ईश्वर ! या भेदकों प्रकाशो यह भेद कैसे है सो तुम संपूर्ण न्यारो न्यारो संक्षेपते विचारिके कहो, या प्रकार श्रीबलदेवजीने श्रीकृष्णचन्द्रते कही ता समय श्रीकृष्णने समस्त वृत्तांत कह्यो कि दाऊ ! तुमको आज खबर भई है ब्रह्मा बछरा और बालकनको चुरायके लैगयो मैं बछरा बालक भयो हों या प्रकार श्रीकृष्णके कहेतें श्रीबलदेवजी जानत भये ॥ ३९ ॥ ऐसे यहां तौ एक वर्ष बीत गयो और ब्रह्माजीको एक पलही बीतो तब आयके देखे तौ पहलेकीसी नाईं बछरा बालकनको लिये श्रीकृष्ण खेलेहै तिनकूं ब्रह्मा देखत भयो ॥ ४० ॥ तब ब्रह्माजी विचार करन लगे कि जितने गोकुलमें बछरा बालक है ते सम्पूर्ण मेरी मायारूपी शय्यामें सोवत हैं अब ताईं फेरि जगे नहीं हैं ॥ ४१ ॥ यहां यह बछरा बालक कहांते आये जितने मैं हरकै लैगयो हों तिनते यह न्यारे हैं क्योंकि वे तौ मेरी मायासो मोहित पडे हैं, जितने मैं हरलैगयो तितनेही वर्ष दिन पर्यंत श्रीकृष्णचंद्रके संग खेलें है ॥ ४२ ॥ आपही मोहित हो ब्रह्माजी मनमें बहुत बेरताईं विचार करते रहे, कि कौनसे बछरा बालक सत्य हैं और कौनसे मिथ्या हैं मैं लैगयो ते सत्य हैं, अथवा ये श्रीकृष्णके संग खेले हैं ये सत्य हैं, या प्रकार जानिवेकूं समर्थ न होत भयो ॥ ४३ ॥ ऐसे ब्रह्माजी जगत्‌के मोह करनेवाले और आप मोहरहित भगवान्‌को अपनी मायासो मोहित करते स्वयंही मोहित हैगये ॥ ४४ ॥ जैसे अंधेरी रात्रिमें कुहर पृथक् आवरण नहीं करसकै परन्तु वा अंधकारमें लीन है

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाय है और जैसें दिनमें पटवीजना पृथक् प्रकाश नहीं करसकै है तैसेही ऐश्वर्यमान् पुरुषपै कोई छोटो पुरुष माया करै तो वाकी माया बडे पुरुषको कछु नहीं करसकै है किन्तु चलायवेवारेनकाही सामर्थ्य-को नाश करै है ॥ ४५ ॥ ब्रह्माके देखत क्षणभरमें तब ताई समस्त बछरा ग्वाल मेहकीसी नाईं सामरे पीरे रेशमी वस्त्रनकूं पहिरे ॥ ४६ ॥ चार चार भुजानमें शंख चक्र गदा पद्म लिये माथेपै किरीट पहरे काननमें कुण्डल मोतीनके हार वनमाला पहरे दिखाई देतभये ॥ ४७ ॥ श्रीवत्सकी कांतिसों शोभाय-मान हाथनमें बाजुबन्द पहरे रत्ननसे जडे भए शंखकी समान तीन २ रेखावाले कंकण हाथमें पहरे कटक कमरमें तगडी और मुंदरिनके धारण करवेसो शोभायमान ॥ ४८ ॥ बडे पुण्यवान् महात्मा पुरुषनसो अर्पण कीनी भई तुलसीकी नवीन और कोमल मालासों शिरसो चरणतक परिपूर्ण ॥ ४९ ॥ चन्द्रकी समान उज्ज्वल मन्द हँसनसो मानो अपने दासनको सतोगुणसो पालन करते और करुणाई युक्त कटाक्ष भरी चितवनसो अपने भक्तनके मनोरथको मानो रजोगुणसो उत्पन्न करते विदित होते है ॥५०॥ ब्रह्माते आदि लेके तृणपर्यंत स्थावर जंगम समस्त प्राणी मूर्तिमान् होयके एक एक बछराके सन्मुख नाचे गावें हैं, अनेक प्रकारकी पूजा करै हैं ॥ ५१ ॥ अणिमाते आदि लेके महिमादिक विभूति मायाते आदि लेके महदादिक विभूति चौवीस तत्त्व हैं ते चारों ओर ठाढे हैं ॥ ५२ ॥ काल स्वभाव संस्कार काम कर्म सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण ये रूप धरिके प्रत्येककी सेवा करते हे इन सबकी स्वतंत्रता श्रीकृष्णचंद्रकी महिमाके सामने नष्ट है गई ही ॥५३॥ सत्यज्ञानरूप आनन्द मात्र एकरस ब्रह्म मूर्तिवाले आत्मज्ञान रूपनेत्रवाले हैं पुरुषहू जिनकी महिमाको नहीं जानसकेहै ऐसे रूप ब्रह्मा-जीने सबको देखो ॥५४॥ या प्रकार ब्रह्माजी एक संग समस्त बछरा बालकनकूं परब्रह्म देखत भये, जा परब्रह्मकी कांति करि संपूर्ण स्थावर जंगम विश्व प्रकाशे हैं ॥ ५५ ॥ ताके पीछे बडे आश्चर्यसों ब्रह्मा-जीकी सब इंद्री शिथिल हैगई और विनके तेजते ब्रह्मा चुप हैगयो जैसे ग्रामकी रक्षा करनवारी पूतरीके आगे चार मुखकी सोनेकी प्रतिमा ठाढी होय या प्रकार ठाढो भयो ॥ ५६ ॥ या प्रकार सरस्वतीके स्वामी तर्कनारहित, स्वप्रकाश सुखनिधान प्रकृतिसो परे और जिनको ज्ञान ब्रह्मसो भिन्न वस्तुको मिथ्या प्रतिपादन करनहारे उपनिषदनसो हैसकैहै वा अलौकिक रूपको देखके और वा महिमाको विचार ' यह क्या है ' सोचते भए ब्रह्माजी मोहित हे गये, और वाके अवलोकन करवेकीहू सामर्थ्य न रही तब भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने ब्रह्माजीकी यह दशा देखके मायाको आवरण विनके हृदयसो दूर करदियो अथवा दूसरो अर्थ यह ब्रह्मा लोकाभिमानी हैं याते मेरी माया देखिवेको अधिकारी नहीं, यह जानिके ताते ऊपर मायारूपी परदा फैलायदियो ॥ ५७ ॥ ताते पीछे ब्रह्माजीकी इंद्रिय चेतन भई तब जैसे मृतक उठे है ऐसे उठिके कष्टते नेत्रनकूं खोलिके अपने सहित ब्रह्माजी यह जगत् देखत भये ॥ ५८ ॥ जब ब्रह्माजीने चारों ओरकूं दृष्टि करी तौ सन्मुखही चहूं ओर प्रिय पदार्थनसों परिपूर्ण और मनुष्यनकी जीविकाके कारण वृक्षनसो भरो पूरो वृन्दावन देखो ॥ ५९ ॥ जा वृन्दावनमें स्वाभाविक वैर करनहारे सिंह मृग और मनुष्य परस्पर मित्रकी समान रहते हैं, श्रीकृष्णचंद्रके संग रहवेसों सम्पूर्ण प्राणिनको क्रोध और तृष्णा दूर है गई ॥ ६० ॥ ता वृन्दावनमें गोपालवंशमें बालकप-नेको आचरण करनहारे अनंत अगाध ज्ञानस्वरूप बछरा और ग्वालबालकनकूं पहलेकीसी नाईं चरावते और ढूंढते फिरते हाथमें दही भातको ग्रास लिये अद्वितीय परब्रह्म श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शन ब्रह्माजी करत भए ॥६१॥ दर्शन करिकै ब्रह्मा अपने वाहन हंसपैते शीघ्रताते उतरिके अपने देहको सुवर्ण लठियाकी तुल्य डालके चारों मुकुटनको अग्रभाग चरणारविंदमें लगाय दंडवत् करिके आनंदके आंसुओंके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुन्दर जलसों श्रीकृष्णको अभिषेक करतभये ॥ ६२ ॥ प्रथम जो महिमा देखी ताकी वारंवार सुधि करिके श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविंदपैसो उठेफेरि गिरि परे, ऐसी बडी देर ताईं ब्रह्मा पर्‍यो रह्यौ ॥६३॥ याके पीछे उठिके आंखीनकूं पोंछिके श्रीकृष्णचन्द्रको दर्शन करि लज्जाके मारे नीची दृष्टि करिके हाथ जोरि थर थर कांपते कछु अक्षर निकसैं कछु नहीं निकसैं गद्गद वाणीसूं ब्रह्माजी स्तुति करत भये ॥ ६४ ॥

शनैरथोत्थाय विमृज्य लोचने मुकुन्दमुद्वीक्ष विनम्रकंधरः ॥
कृताञ्जलिः प्रश्रयवान्समाहितः सवेपथुर्गद्गदयैलतेलया ॥ ६४ ॥

इति श्रीद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

ब्रह्मोवाच-नौमीड्य तेऽभ्रवपुषे तडिदम्बराय गुञ्जावतंसपरिपिच्छलसन्मुखाय ॥
वन्यस्रजे कवलवेत्रविषाणवेणुलक्ष्मश्रिये मृदुपदे पशुपांगजाय ॥ १ ॥

ब्रह्माजी कहैहैं हे स्तुति करिवे योग्य ! श्यामघटाकी समान तुम्हारो शरीर है बिजुरीसे चटकीले पीतांबरकूं पहिरे हो, गुंजानके कुंडल, मयूरपुच्छके मुकुटसो शोभायमान मुखारविंद है वनमालाकूं पहिरे, दहीभातको ग्रास, वेतकी छडी, सींग वांसुरीको लिये, अति सुन्दर कोमल चरणसों विचरते गोपाल नंदजीके लाल आपको नमस्कार है ॥ १ ॥ हे देव सच्चिदानंद ! मेरे ऊपर कृपा करनहारी और भक्तनकी इच्छानुसार रूप धारनहारी पंचभूतरहित यह आपकी मूर्ति शुद्ध सत्वयुक्त है या तुम्हारे अवतारकीहू महिमाको मैं क्या कोईहू जानवेको समर्थ नहीं है, तुम साक्षात् आत्मसुखके अनुभवरूप अवतारधारी हो तुम्हारी महिमाको मन रोककेहू कौन जान सकैहै, अथवा पंचभूतमय विराट्रूपकीही कोई महिमा जाननेमें समर्थ नहीं होय है मेरे ऊपर आपने कृपा करिकै दर्शन दियो है ॥ २ ॥ तौ अज्ञानी कैसे संसारके पार होंगे उसपे कहैं हे अजित ! आप किसीके जीतनेमें नहीं आते परन्तु जो मनुष्य ज्ञानप्राप्ति करनेके परिश्रमको त्यागकर महात्माओंके मुखसे निकली तुम्हारी कथाकूं श्रवणद्वारा पान करकै मनवाणी देहसों अपने स्थानमें बैठे २ तुम्हारा अर्चन वन्दन करकै जीते उन्हैं कोई दुःख नहीं होसक्ता, और वे आपको अपने वशमें करलेते हैं ॥ ३ ॥ हे विभो ! भुक्तिमुक्तिकी देनवारी तुम्हारी भक्तिकूं त्यागिकै जे पुरुष अकेले ज्ञानी होयवेके लिये खेद करे हैं, तिन पुरुषको खेदही शेष रहि जायहै, और कछु नहीं मिलैहै जैसे जो पुरुष थोथे तुषनकूं कूटै उनको दुःखही मिलैहै, और कछु हाथ नहीं लगैहै ॥ ४ ॥ हे व्यापक ! या संसारमें पहिले बहुतसे योगीश्वरोंको जब योगसैं ज्ञानकी प्राप्ति न हुई तौ अपनी संपूर्ण किया और कर्म आपको समर्पण करनेसे और कथा श्रवण करनेसैं भक्तिको प्राप्त हो उस द्वारा आत्मज्ञानकी प्राप्ति कर फिर अनायासही आपके पदको प्राप्त हुए ॥ ५ ॥ हे परिच्छेदरहित ! इस प्रकार आपके सगुण निर्गुण दोनों रूपका ज्ञान होना कठिन है, और भक्तिसेही आप जाने जाते हो तोभी निर्मल अंतःकरणवाले जितेंद्रिय महात्मा पुरुष आत्माकार अंतःकरणके साक्षात्कारसे निर्विकारतासैं अरूपतासैं अनन्य बोधसे आपकी महिमाको जानसक्तेहैं और किसी प्रकारसैं आप जाननेमें नहीं आते हो ॥ ६ ॥ आप गुणोंके आधार हो इस विश्वके कल्याण करिवेके लिये आपने अवतार लिया है सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुणके तुम साक्षी हो आपके इतने गुण हैं जिनके गिनिवेके लिये कौन पुरुष सामर्थ्यमान होयगो, पुरुष बहुत दिनमें बहुतसे जन्म धरिके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पृथ्वीकी रेणुकी गिनती करिलेय आकाशके हिमके मणिकानकी गिनती करिलेय स्वर्गकी तारनकी गिनती करिसके परन्तु तुम्हारे गुण गिनिवेमें नहीं आमेहैं ॥ ७ ॥ आप किस समय कृपा करैंगे इसकी वाट जोहते आसक्तिरहित हो अपने किये कर्मफल दुःखसुखको भोगते हृदयवाणी मनसै आपको प्रणाम करतेहुए प्राणीभी मुक्तिको प्राप्त होते हैं ॥ ८ ॥ हे ईश्वर! मेरी दुष्टता तौ देखो कि तुम संपूर्ण मायावियोंके मोहित करनेहारे अनन्तरूप परमात्मा हो तुमपरभी मैंने अपनी माया फैलायकर अपना वैभव देखनेकी इच्छा की सो इससै क्या होयसकैहै जैसे अग्निके सामने स्फुलिंग तुच्छ है वैसे तुम्हारे सामने मैं तुच्छ हूं ॥ ९ ॥ हे अच्युत! हे अखंडरूप ! मैंने रजोगुणसे उत्पन्न होनेके कारण आपके स्वरूपको न जाना तुमसे पृथक्ही ईश्वरकूं जाना, और मैं जगत्का कर्ता हूं इस मदसे अंधा हो रहाहूं आप स्वामी हो मुझे अपना दास जानकर कृपा करिये क्योंकि मैं आपकी कृपाके योग्य हूं ॥ १० ॥ यदि तुम मुझे ब्रह्माण्डका नायक कहो तौ हे भगवन्! माया, महत्तत्त्व, अहंकार, आकाश, पवन, अग्नि, जल, पृथ्वी इनके बने ब्रह्मांडमें सात बिलादिकी देहवाला मैं कहां और आपके रोमकूपोंमें अनेक ब्रह्मांड विराजतेहैं ऐसी आपकी महा महिमा कहां इस कारण मोमें और आपमें बडो अन्तर है ॥ ११ ॥ हे अधोक्षज! अर्थात् इंद्रनकरि जानिवेमें न आनेहारे! बालक गोदीमें बैठिके पांव उछारे अथवा लात मारे तौ कहा माता वाको अपराध माने है, " तब श्रीकृष्णचन्द्रने कही ब्रह्मा जो तेरी मा होय ताते जायके कहो मोते कहा कहै है " इसपर ब्रह्माजी बोले कि स्थूल सूक्ष्म कार्य कारणरूप सब विश्व तुम्हारे उदरमें विद्यमान है जो शब्दसे कहनेमें नहीं आता, जब जगत् आपके उदरमें है तौ जगत्में रहनेसे मैंभी आपके उदरमें हुआ इस कारण मुझे अपना पुत्र जान मेरा अपराध क्षमा करो ॥ १२ ॥ भूर्लोक भुवर्लोक स्वर्गलोग इन तीनोंका नाश होय जाय है तब चारों ओरते समुद्र उमडे हैं, तिसके भीतर नारायणकी नाभिसें कमल उत्पन्न होकर उससे ब्रह्मा उत्पन्न होतेहैं क्या यह देववाणी मिथ्या है अर्थात् मिथ्या नहीं सत्य है जब कि मैं आपसे उत्पन्न हुआ हूं तौ तुम्हारा पुत्रही हूं मेरे ऊपर कृपा करो ॥ १३ ॥ तब श्रीकृष्णचंद्र कहैं हैं ब्रह्मा तू अपने बापहीको भूलिजाय है नारायणको पुत्र होगयो मोकों कहा तहां कहै हैं, तुम कहा नारायण नहीं हो किंतु तुमही नारायण हो समस्त देहधारिनके आत्मा हो हे अधीश! अर्थात् सबके प्रेरणा करनवारे समस्त लोकनकूं साक्षात् देखो हो, नरते भयो जो जल तिसमें तुम्हारो वास है, तिस कारण नारायण नाम प्रसिद्ध है सो तुम्हारी मूर्ति है और जलमें वासहू सत्य नहीं है किंतु तुम्हारी माया है ॥ १४ ॥ जगत्को आश्रयभूत तुम्हारो रूप जलके भीतर सत्य है तो जा समय मैंने कमलके भीतर साधिकर ढूंढो तब क्यों नहीं दिखाई दिये, हृदयमेंभी नहीं दीखे और तपस्या करने पर तुरतही क्यों दृष्टिमें आयी इस कारण यह सब तुम्हारी मायाही है तुम्हारी मूर्तिमें किसी देशकालका परिच्छेद नहीं बनता ॥ १५ ॥ हे मायाके करनवारे! बाहिर भीतर समस्त विश्वके प्रकाश करनवारे यदि यह जलादिका प्रपंच तुमसे पृथक् होय तो उससे तुम्हारा परिच्छेद होना संभव है परन्तु यह मायासे उत्पन्न है यह बात आपने इस कृष्णावतारमेंही यशोदा मैयाको अपने उदरमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड दिखाकर प्रत्यक्ष करदी इससे यह प्रपंच मायाहीका किया हुआ है ॥ १६ ॥ जिस तुम्हारे उदरके भीतर तुमसहित यह विश्व प्रकाशै है तैसैही बाहिर प्रकाशै है और तुम्हारे साथ इसका प्रकाश होना मायाके विनाही बनसक्ता जो बाहरके जगत्का तुममें प्रतिबिंब पडे तो वह बाहरकी वस्तु उलटी दीखनी चाहिये और यदि आपको दर्पणस्थानमें माना जाय तौ तुम्हारा दर्शन इसमें न होना चाहिये इस कारण यह सब मायाही है ॥ १७ ॥ तुम्हारे विना यह सब जगत् मायारूप है क्या यह मायाही दिखाई है अब मायाको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहैं हैं प्रथम तुम अकेले हे पीछे सम्पूर्ण व्रजके बछरारूप भये तिनमेंही समस्त चतुर्भुजरूप भये ता पीछे मैंने समस्त तत्वनको लेके एक एक बछरा बालककी स्तुति करी तिनमेंही तुम ब्रह्माण्डरूप होयगये ता पीछे प्रमाण करिवेमें नहीं आये ऐसे अद्वितीय ब्रह्मरूप शेष रहे ॥ १८ ॥ सर्व व्यापक तुम्हारे स्वरूपको मायामें स्थित होयके जो नहीं जानेहैं तिन पुरुषके ऊपर माया फैलायके स्वतंत्रतासे आप प्रकाशो हो, जगत्के उत्पन्न करिवेके समय ब्रह्मा हो जाते हो और पालनसमय विष्णु होते हो ओर संहारसमयमें तीन नेत्रवाले रुद्र होजाते हो ॥ १९ ॥ हे ईश ! हे प्रभु ! हे जन्मरहित ! विधाता देवतानमें, ऋषीश्वरनमें, मनुष्यनमें पशुपक्षिनमें जलके जीवनमें तुम साधुनके ऊपर कृपा करिवेके लिये, दुष्टनके मद दूर करिवेके लिये जन्म लेउहो ॥ २० ॥ हे व्यापक ! हे भगवन् ! हे परमात्मन् ! हे योगेश्वर ! आप जो योगमायाको विस्तार करिके जिस समय क्रीडा करते हो उन लीलाओंको त्रिलोकीमें कौन जाननेको समर्थ है कि वे कहां है कैसे हैं कितने हैं और समयमें हैं ॥ २१ ॥ इस कारणसे यह मिथ्यास्वरूप स्वप्नकी तुल्य प्रकाशमान दुःखरूप यह समस्त जगत् केवल तुम्हारे नित्य सुख चैतन्यमय अनंत स्वरूपमें मायासें उत्पन्न होने और पश्चात् लय होनेके कारण नित्य सुख और चैतन्यसा विदित होताहै ॥ २२ ॥ एक आत्मा व्यापक तुम एकही सत्यस्वरूप हो, कारण कि आत्मा हो जो कछु दृष्टिगोचर होताहै जहांतक मन जाताहै, वह सब माया है, आत्मा दृश्य नहीं इस कारण सत्य है आपमें कोई विचार नहीं इस कारण सत्यरूप हो, तुम सबके कारणस्वरूप हो सबमें व्यापक पुरुष कहलाते हो तुम सनातन पूर्ण हो, सदा सुखस्वरूप हो अक्षर हो अमृत हो इससे तुम्हारा कभी विनाश नहीं होता, तुम अनंत और अद्वैत हो इस कारण तुम्हें देश कालका परिच्छेद नहीं तुम स्वयंप्रकाश उपाधिरहित असंग हो सदा मुक्तस्वरूप हो अमृत हो ॥ २३ ॥ इस प्रकार तुम समस्त जीवोंके आत्मा हो जिन पुरुषोंने सूर्यरूप गुरुसे उपनिषदके ज्ञानरूप नेत्र प्राप्त किये हैं वह महात्मा आत्मद्वाराही तुम्हारा दर्शन करकै संसारसागरके पार हो जाते हैं ॥ २४ ॥ यावत् पर्यंत और प्राणी तुम आत्मस्वरूपको आत्मरूप नहीं जानते तब उनकूं अज्ञानसै यह सम्पूर्ण प्रपंच प्रगट भासता है और

---

१ विना जाने झूंठभी सत्य मालूम पडै है, जैसे एक राजाको एक पाखण्डीने "शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥" इस श्लोकके अर्थ दही बडेके बतादिये, कि दही सफेद उसमें लिपटाहो है वोही शुक्लवस्त्र है और वेवेष्टीति विष्णु विशेष लिपटा होनेसे विष्णु है, गोलगोल चंद्रमाकेसा मुख है, और चतुर्भुजम् अर्थात् चतुरपुरुषोंके भोजन योग्य है ध्यान करतेही प्रसन्नमुख होजाताहै, सब गरमीके विघ्न शान्त होजाते हैं, यह अर्थ राजाकूं बतादिया, राजाने उसकूं महात्मा जानकै मानसे रक्खा, जो विद्वान् आवै राजा उसीसे अर्थ पूछै, सब विष्णु भगवान्काही अर्थ करैं, अनेक पंडितोंका तिरस्कार हुआ एक महात्माने विचारा कि यह राजा किसीका बहकायाहै, फिर विचारा कि यहां किसका अधिक मान है, उस पाखण्डीका सत्कार अधिक देखकै उसीके यहां जा रहे, और स्त्रीकी सेवा प्रेमसे करनलगे एक दिन उसने प्रसन्न होकै कहा कि पुत्र ! क्या इच्छा है मांग तब इसने कहा (शुक्लाम्बर) इस श्लोकके अर्थ अपने पतिसे पूछदो, वोह बोली आजहीलो जैसे वे आये तुरंत पूछा इस श्लोकका क्या अर्थ है; बस 'नारिविवश नर सकल गुसाईं । नाचहिं नटमर्कटकी नाईं ॥' तुरत बतादिया उसने उन महात्माजीको बतादिया, वे राजाको सुनानेगये, राजा सुनतेही बोले तुम बडे विद्वान् हो, हमारे पास रहो, पंडितजी रहे और मनमें कहनेलगे मूर्खके निकट रहना अच्छा नहीं, इसे यातौ कुछ पढावै, या कहीं चलै, जब राजासे पढनेको कहै तौ वोह पढनेलगा, व्याकरण पढनेसे थोडे दिनमें जब पदपदान्तक बोध होगया तौ राजा उस श्लोकको विचारने लगा, तौ कहांभी दही बडेका अर्थ न पाया, चकित हो पंडितजी और दूसरे महात्माको बुलाभेजा, आतेही राजाने उनसें क्रोधकर कहा तुमने बडा मुझे धोकादिया बताओ इसमें वह अर्थ कहां है, पाखण्डीके तौ छकै छूट गये पंडितजी बोले मैंने क्या सबही महात्माओंने शुद्ध अर्थ किया था राजा जब क्यों न माना, तब राजा बोला उस समयमें अज्ञानी था पंडितजी बोले विना पढाये यह ज्ञान कभी नहीं होता, अब ज्ञान होनेसे समझै, ऐसेही मायाके वश हो यह उलटाही समझ रहाहै ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यही प्रपंच आत्मस्वरूपको जाननेसे लय होताहै जबतक अज्ञान है तबतक रस्सी सर्प विदित होताहै जब ज्ञान होताहै तब रस्सी जाननेमें आती है अज्ञानसे रज्जुमें सर्प जानना अध्यास है और ज्ञानसे रस्सीही जाननी अपवाद है ॥ २५ ॥ संसारमें बंधन और मोक्ष दोनों अज्ञानसों हैं सत्य ज्ञानरूप आत्मासे पृथक् नहीं हैं, निरंतर चैतन्यरूप आत्मा परमेश्वर तुम हो ऐसा विचार करनेसे आत्मामें अज्ञान वा बन्धन कुछभी नहीं है जैसे सूर्यके निकट रात दिन नहीं है सदा प्रकाशही है ॥ २६ ॥ आत्मस्वरूप परब्रह्म आपको देह मानके और देहादिकूं आत्मा मानकर यही खोये हुये आत्मरूपी पदार्थको बाहर खोजना अहो यह मूर्खोंकी मूर्खता है कारण कि घरकी खोई वस्तु कोई वनमें ढूंढने नहीं जाता ॥ २७ ॥ हे अनंत ! साधु महात्मा तौ यहभी आत्मा नहीं ऐसे जड पदार्थको निषेध करिके देहके भीतर तुमहीको ढूंढे हैं कारण कि अपने निकट यद्यपि सर्प नहीं है परन्तु उसका निषेध किये विना सत्य रज्जु जाननेमें नहीं आती सर्पके निषेध होनेके उपरान्त रस्सी जाननेमें आतीहै ॥२८॥ ज्ञानसे मुक्ति होय जाय है मुक्तिकी क्यों बडाई करी तहां ब्रह्मा कहेहैं यद्यपि ज्ञान हाथमें प्राप्त है सुगम है तथापि आपके चरणारविंदनके प्रसादके कणिकानके कणिकानको अनुग्रह जापे भयो है वही तुम्हारी महिमाके स्वरूपको जानै है, जापै तुम्हारे चरणारविंदनकी कृपाही नहीं है वह और कोई पुरुष बहुत दिनपर्यंत ढूंढोकरे तौभी तुम्हारी महिमाको नहीं जान सकै है ॥ २९ ॥ हे नाथ ! या ब्रह्माके जन्ममें अथवा और कोई जन्म होय तामें अथवा पशुपच्छीनमें जन्म होय तौ मैं अपनो बडा भाग्य मानूंगो जो तुम्हारे ब्रजवासीनमें कोई एक होयके तुम्हारे चरणारविंदको सेवन करौं ॥ ३० ॥ देवताके जन्मते जा काहूके जन्मते तुम्हारी भक्ति होय वह जन्म श्रेष्ठ है या प्रकार उत्कंठापूर्वक सात श्लोककरि स्तुति करे है अहो आश्चर्य, ब्रजकी गऊ गोपी धन्य है हे प्रभु ! जिन गोपीनके स्तननको दूधरूप अमृत बछरा होयके तुमने आनंदसूं पेटभरिके पियो तुम्हारी तृप्तिके लिये अब ताईं यज्ञहू पूर्ण नहीं होयहैं कहा यज्ञनमेंहू तुम्हारो पेट नहीं भरे है, भगवान्के सखानकी महिमा कहिवेमें जानिवेमें नहीं आवै है॥३१॥ ब्रह्माजी कहै हैं नंदरायजीके ब्रजवासीनको आश्चर्यरूप बडो भाग्य है परमानंद पूर्ण ब्रह्म सनातन जिन ब्रजवासीको सर्वदा मित्र होयरहो है॥३२॥इनब्रजवासीनके भाग्यकी महीमा कहिवेकी कौनकी सामर्थ्य है इंद्रियनके अधिष्ठाता यज्ञदेवता महादेवता महादेव बुद्धिके अधिष्ठाता मैं ब्रह्मा ऐसे ग्यारह देवता महादेवते आदि लेके हम बडभागी हैं, कोई ब्रजवासी इंद्रियरूप दोनोंनसूं तुम्हारे चरणारविंदको मकरंद अमृतकी तुल्य मधुर पीमें हैं जा समय ब्रजवासी तुम्हारे दर्शन नेत्रनते करे तासमय नेत्रनको अधिष्ठाता सूर्य कृतार्थ है जायहै काननते तुम्हारी बात सुने हैं तब काननके देवता दिशा कृतार्थ है जाय हैं

---

१ शुद्धभक्तिसैही मिलोहो एक राजानै दिवानसैं कही कोई ऐसी दवा है जाके खायसे परमेश्वर मिले मंत्रीने कही हमारे परदादा परदेशसै साढे तीन लाखकी ऐसीही पुडिया लाये है सो घर धरी हैं राजा बोला मैं खाऊंगो तुम लाओ दिवान अपने घर जाय चूल्हेकी राखकी पुडिया बांधलाये राजासैं कही इलायची वंशलोचन सहतमें खाइयो पर याको पथ्य जरूर करना और जो पथ्य ना करोगे तौ औषधि कहा पराक्रम करैगी तीन लाखकी दवाई वृथा जायगी विचार देखो । जो रोगी पथ्यको करौ तौ रोगको जीतलेयहै और कुपथ्य करै तौ रोग औषधिको जीत लेइहै यातै पथ्यकी पुडिया खाय मनमें झूंठ मत लैइयो और झूंठ मनमें आयो तौ भगवान् ना मिलैंगे यह कह दिवानजी घर गये भोर भये स्नान कर राजा पुडिया खानै लग्यो सो मनमें झूंठी दवा मालूम परी सो दवा धर मन बहलाय दो घडीके पीछे फिर खानै लगै सो फिर आंखोंके सामनै झूंठ आयगयो दवा फिर धरदई ऐसेही तीन पहर बीतगये अब कल खायगे संध्याकूं दिवान आयो पूछी आपनै दवा खाई कि नहीं राजा बोले झूंठ तौ मनमेंसे निकसैही नहीं खांय कैसे दिवाननै कही यही इलाज भगवान्के मिलनेको है जो मनमेंसै सब वासना निकरै शुद्ध मन होय तौ भगवान् मिलै तनकभी अंतर होय तौ नहीं मिलते ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नाकते तुम्हारी प्रसादि तुलसी सुंघे है, तब नाकके देवता अश्विनीकुमार कृतार्थ है हैजायहै हाथते तुम्हारी सेवा करें तब हाथके देवता इंद्र कृतार्थ होयजाय हैं, याही प्रकार समस्त इंद्रियनके जानि लैने इंद्रियनके सम्पूर्ण पदार्थनके सेवन करनहारे ब्रजवासिनके भाग्यकी महिमा कैसी कही जाय ॥ ३३ ॥ या मनुष्यलोकमें कदाचित् जन्म होय तो वृंदावनमें होय, ताहूंमें गोकुलमें जन्म होय यह मेरो भाग्य होय तब श्रीकृष्णचंद्र कहेहैं हे ब्रह्मा! सत्यलोकको छोडिके यहां जन्मभयेते तोको कहा लाभ होयगो, तब ब्रह्मा कहेहैं जा जन्ममें ब्रजवासीनके चरणकी रज मेरे माथेपै परेगी वही मोको एक बडो लाभ होयगो, तब श्रीकृष्णचंद्र कहेहैं ब्रजवासी काहेतें धन्य हैं, तब ब्रह्मा कहेहैं इन ब्रजवासीनको पूर्ण जीवन है काहेते कि मुकुन्दपरायण हैं, जिनके चरणारविंदकी रजकूं वेद ढूंढोकरै वाको मिलनो अहो भाग्य है ॥ ३४ ॥ इन ब्रजवासिनकी कृतार्थता कहा वर्णन करूं जिनकी भक्तिते तुमहूं ऋणीसे होय रहेहो तब श्रीकृष्णचंद्र कहेहैं मैं कहां देवेको असमर्थ हौं जो ऋणी रहूं तहां ब्रह्मा कहे हैं हे देव ! अर्थात् प्रकाशमान समस्त फलरूप तुम हो ताते और फल इन ब्रजवासीनको कहा देउगे यह जब विचार करैहैं तब हमारो चित्त मोहित होवे है तब श्रीकृष्णचंद्र कहेहैं मैं अपनेको ऋणी होय जाउंगो तहां ब्रह्मा कहेहैं नहीं माताको स्वरूप धारिके पापिनी पूतना आईही ताकों अपनपो दीनो, तब कहे हैं ब्रजवासीनको कुटुंबसहित अपनपो दूंगो तब ब्रह्मा कहे है पूतनाको कुटुंब अघासुर बकासुरको अपनपो दियो. तब कृष्ण कहे हैं मेरे पास तो यही देवेकूं हैं तहां ब्रह्मा कहैं है जिन ब्रजवासीनने घर धनहितकारी प्यारे देह पुत्र प्राण अंतःकरण तुममें अर्पण करि राखे हैं तिन ब्रजवासीनको और वैरिनको कहा बरोबरिही राखोगे तुम परमेश्वर हो तो कहा भयो तुम्हारे यहां भलो न्याय है ॥ ३५ ॥ तबताईं रागादिक चोर है, तबताईं घर बन्दिखानो हैं, तबही ताईं मोह पांवकी बेडी है, हे कृष्ण ! जबताईं जन तुम्हारी शरण नहीं लेइहैं तुम्हारे शरण लिये पीछे रागादिकहू चोरते साह है जायहै और घर है सो तुम्हारो मंदिर होय है और मोह छुडावनवारो है जाय है ॥ ३६ ॥ हे प्रभो ! पृथिवीमें शरणागत भक्तनकूं आनंद देवेकूं, संसारकरिके रहित हैंकै संसारके अनुकरण करो हो अर्थात् अवतार धारण करो हो ॥ ३७ ॥ जे पुरुष कहेहैं हम जाने है तेही जाने है हे प्रभो ! मैं बहुत कहा कहौं देहते मनते वचनते तुम्हारो वैभव जानिवेमें नहीं आवे हैं ॥ ३८ ॥ हे कृष्ण ! मोको आज्ञा देउ तुम संपूर्ण जानौ हौ अर्थात् अपनी महिमा हमारो ज्ञान बल पराक्रम समस्तके देखनवारे हो तुमहीं जगत्के नाथ हो मैंने ब्रह्मापनो छोडो तुमहीको जगत् दियो ॥ ३९ ॥ हे कृष्ण ! हे यदुकुल कमलकूं प्रीतिके देनवारे ! यामें सूर्यकी उपमा दीनी है पृथिवीके देवता ब्राह्मण पशु समुद्र इनके वृद्धि करनवारे यामें चन्द्रमाकी उपमा आई है, पाखंड धर्मस्वरूप अंधकारके नाश करनवारे यामें सूर्य चंद्रमा दोनोंनकी उपमा आई है, पृथ्वीपै कंसादिक राक्षसनके मारनवारे यामें फिरि सूर्यकी उपमा आई हे सूर्य ! हे अर्हन् ! सबके पूज्य भगवान् अर्थ छः प्रकारके ऐश्वर्य करि परिपूर्ण तुमको दंडवत् है ॥ ४० ॥ अब श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्ते कहे हैं कि हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार व्यापक श्रीकृष्णचंद्रकी स्तुति करि तीन परिक्रमाकर चरणारविंदको नमस्कार करिके जगत्को विधाता ब्रह्मा श्रीकृष्णको पूजन करिके अपने ब्रह्मलोकको जात भयो ॥ ४१ ॥ ता पीछे भगवान्की आज्ञासों ब्रह्माने बछरा लायके आगे ठाडे करदिये, प्रथमकीसी नाईं

---

१ कवित्त—मानुस हौं तौ यही रसखान बसौं नित गोकुलगांवके ग्वारन । जो पशु हौं तौ कहा बस मेरो बसौं नित नन्दकी गायन ग्वारन ॥ पाहन हौं तौ वही गिरिको जो कियो ब्रजछत्र पुरन्दर धारन । जो खग हौं तौ बसेरो करौं वह कालिन्दीकूल कदम्बकी डारन ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ग्वालमंडली बैठी, वह यमुनाजीकी रेतीमें लावत भये, इतने दिनपर्यंत बालककेसे यमुनातीरपै बैठे रहे, भूख प्यास सब भूलिगये, याप्रकार राजाने शंका करी तहां शुकदेवजी कहे हैं ॥ ४२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! अपने प्राणनाथ श्रीकृष्णचंद्र विना एक वर्ष बीतिगयो तथापि श्रीकृष्णचंद्रकी मायाकरि मोहित भये बालक आधे क्षणको व्यतीत होनौ मानतभये ॥ ४३ ॥ मायाकरि मोहित चित्त या संसारमें कहा कहा नहीं भूले हैं सो समस्त जगत् मायासो मोहित हैके वारंवार अपने आत्माकूं भूलि रह्यो है ॥ ४४ ॥ अब संपूर्ण ग्वाल बाल श्रीकृष्णचंद्रते बोले भैया ! भलो जलदी आयो, हमने तो तेरे विना एक ग्रासहू नहीं खायो है अब आओ हम भोजन करैं ॥ ४५ ॥ ऐसे बालकनने कही ताके पीछे इंद्रियनके प्रेरणा करनवारे श्रीकृष्णचंद्र श्रवण करिके हँसे, वर्षदिनको ग्रास करिगये और कहे हैं एक ग्रासहू नहीं खायो, बालकनके संग भोजन करिके रस्तामें जो शुष्क अघासुरको देह परोहो ताकूं दिखावत व्रजमें बगदिके आवत भए ॥ ४६ ॥ मोर मुकुटको पहिरे, पुष्पनके गुच्छनको धारण करै नवीन धातु खरिया गेरू मनशिलकी विचित्र खोरि लगाये बडी सुन्दर बांसुरी सींगीको शब्द करते उत्सव मनाउते श्रीकृष्णचंद्र बछरानकूं नाम लैलैके बुलावत व्रजमें आवत भये तासमय ग्वालबाल कृष्णके यश गावते चले और गोपियोंकी दृष्टिको विनका दर्शन उत्सवरूप भयो ॥४७॥ कोई कहे यशोदाको बेटा है कोई कहै नंदरायजीको बेटा है एक तो यह अर्थ है यशोदाको आनन्दके देनेवारे पुत्र श्रीकृष्णचंद्रने आज बडो सर्प मारोहै हमारी रक्षा वाते करी याप्रकार समस्त ग्वालबाल व्रजमें कहत भये ॥ ४८ ॥ अब राजा परीक्षित् प्रश्न करे हैं कि हे ब्रह्मन् शुकदेवजी ! पराये पुत्र श्रीकृष्णचंद्रमें इतनो प्रेम व्रजवासीनको कैसे भयो, अपने पुत्रनमेंहू इतनो प्रेम न भयो, यह मेरे आगे कहो ॥ ४९ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! समस्त प्राणीनके साक्षात् आत्मा हैं याते श्रीकृष्णचंद्रमें प्रेम भयोही चाहै और जो स्त्री पुत्र वित्तादिक हैं ते आत्माके सुखदाई है याते प्रिय है ॥५०॥ ता कारणते हे राजेंद्र परीक्षित् ! देहधारीनको जैसो अपने आत्मामें प्यार है तैसो ममताके स्थान अपने पुत्र वित्त घर इनसूं आदि लैके वस्तुनमें नहीं है ॥ ५१ ॥ हे क्षत्रीनमें श्रेष्ठ राजन् परीक्षित् ! देहको आत्मा कहनवारे ऐसे पुरुषनकूंहू देह अतिप्रिय है और देहके अनुवर्त्ती जो स्त्री पुत्रादिक देहकी अपेक्षा प्यारे नहीं लगे हैं ॥ ५२ ॥ और देहकूंहू मेरो देह है या प्रकार मानिले अर्थात् यह देह जब ममताको स्थान हो जाय तब यह देह आत्माकी तुल्य प्यारे नहीं लगे हैं, जा समय यह देह जीर्ण हो जाय है तब निश्चय करिलेय है कि यह देह न रहैगो तथापि जीवनेकी आशा बलवान् रहेहै ॥५३॥ ता प्रकार समस्त देहधारीनको अपनो आत्माही प्यारो लगै है ता आत्माहीके लिये समस्त स्थावर जंगम प्यारो लगै हैं ॥ ५४ ॥ तुमने पूछी राजा परीक्षित् व्रजवासीको विराने पुत्र श्रीकृष्णचंद्रमें इतनो प्रेम क्यों भयो ताको उत्तर दियो अब आगेको प्रसंग कहेहैं, समस्त देहधारीनके आत्मा जगत्के कल्याण करिवेके लिये देह धारण कर अपनी माया करिके प्रकाश करनेहारे

---

१ दृष्टांत—एक डोकरी ही सो अपने घरमें नित्य दुःखी हैके कह्यो करती ही क्यों परमेश्वर मैं कब मरूंगी मेरी मौत कहां खोय गई है एक ठग वाके घरके पास रहतो हो वाने विचारी कि याते कछु ठगनौ चाहिये । वो गयो डोकरीते बोलो कि री डोकरी तेरी मौतको ढूंढ लाउ तौ कहा देय डोकरीने कही १०० रुपा वाने कही अच्छी वाने आठ दश दिन भुलायो दैके एक मूसरीको एक कोथलीमें बन्द करके ले गया औ बोलो कि डोकरी तेरी मौतकूं ढूंढ लायो हो तब डोकरी बोली कि ए भैया अभी तू दो चार महीना ठेर जा मेरे नाती होनवारो है वाको मोडो और देख लेउ फिर आयो तनकही दशठो न है जाय तब ऐसेही कई बेर करार किये आखर ये कही भैया सोवै और ५ रुपा दंडके ले पन मौतको जहांसो लायो है वहीं छोड आउ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीकृष्णही हैं इस कारण उनपर प्रेम होना संभव हैं मायासे प्रकाश करै है ॥ ५५ ॥ या विश्वके कारण श्रीकृष्णचंद्र है या प्रकार ये पुरुष माने है तिनकूं स्थावर वृक्षादिक जंगम मनुष्यादिक संपूर्ण भगवान्कोही रूप है, कछु या संसारमें न्यारो नहीं है यह विदित होजाय है ॥ ५६ ॥ समस्त वस्तुनको परमार्थरूप कारणमें रहे है जैसे घटको रूप माटीमें रहे हैं वा कारणहूको कारण श्रीकृष्णभगवान् आप है, श्रीकृष्णचंद्रते न्यारी वस्तु कहा है राजा तुमही कहो ॥ ५७ ॥ पवित्र वंश निर्मलकीर्ति मुरनामा दैत्यके शत्रु श्रीकृष्णचंद्रके महत् पुरुषनकूं आश्रय करिवेको योग्य चरणारविंदरूपी नौकाको जिन पुरुषने आश्रय लियो है उनकूं संसाररूपी समुद्र बछराके खुरके जलकी समान होय है और वैकुंठधाममें वास होय है कभऊ विपत्ति नहीं होय है वे पुरुष बगदिके संसारमें नहीं आवै हैं ॥ ५८ ॥ पांच वर्षकी उमरिमें जो श्रीकृष्णचंद्रने लीला करी सो छठे वर्षमें आयके बालकननें कही जो राजा तुमनें पूछी सो संपूर्ण हमनें तुम्हारे आगे कही ॥ ५९ ॥ मुरनामा दैत्यके शत्रु श्रीकृष्णचंद्रने मित्रनके संग यह चरित्र कियेहैं अघासुरको मारो, यमुनातीरपै ग्वालबालनके संग भोजन करो, जड प्रपंचते न्यारो शुद्ध सतोगुणीरूप बछरा और ग्वालबालनको रूप धरा, ब्रह्माने बडी स्तुति करी, या चरित्रको जो कोई पुरुष कहै अथवा श्रवण करै, वा पुरुषको सर्वथा अर्थकी प्राप्ति होय श्रीकृष्णचंद्रमें भक्ति होय ॥ ६० ॥ आंखि मिचौनीमें छिपि जानो नदीनके पुल बांधने बंदरनकीसी नाईं कूदनो या प्रकार कौमार अवस्थाके खेल करिके ब्रजमें श्रीकृष्ण बलदेव कौमार अवस्था बितावत भये ॥ ६१ ॥

एवं विहारैः कौमारैः कौमारं जहतुर्व्रजे ॥
निलायनैः सेतुबन्धैर्मर्कटोत्प्लवनादिभिः ॥ ६१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० ब्रह्मस्तुतिर्नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

श्रीशुक उवाच–ततश्च पौगंण्डवयः श्रितौ व्रजे बभूवतुस्तौ पशुपालसंमतौ ॥
गाश्चारयन्तौ सखिभिः समं पदैर्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्ते कहे हैं कि हे राजन्! कौमार अवस्था बीती ताके पीछे पौगण्ड अवस्था लगी अर्थात् छठो वर्ष जब लगो तब व्रजमें गाय चरायवे लायक कृष्ण बलदेव दोनों भैया भये, तब ग्वालनकूं संग लैके गऊनकूं चरावत अपनें चरणनसूं वृंदावनकूं अत्यंत पवित्र करत भये ॥ १ ॥ मधुवंशमें प्रकट भये श्रीकृष्णचंद्र अपनें यश गानेहारे ग्वालबालनको संग लैके और बलदेव भैयाको संग लैके, बांसुरीको बजावत गऊनको आगे करिके गऊनकी हितकारी पुष्पवाटिका जामें फूलि रही वा वृन्दावनमें विहार करिवेको जातभये ॥ २ ॥ मधुर बोलीवारे भौंरा पशु पक्षिनसों सेवित महत पुरुषनके मनकी तुल्य निर्मल जल भरे सरोवरते स्पर्श करिके कमलकी सुगन्धियुक्त पवन वहाते वृन्दावनको देखिके श्रीकृष्णचंद्रके मनमें खेलवेकी इच्छा

१ कौमारं पंचमाब्दांतं पौगंडं दशमावधि । कैशोरमापंचदशं यौवनं तु ततः परम् ॥ १ ॥ ये प्रमाण है कि जन्मसों पांच वर्षकी आयुतक कुमार और छठी वर्षसों दशवर्षकी आयुतक पौगण्ड फिर अगारी पन्द्रह वर्षतक किशोर अवस्था गिनी जाय है फिर अगारी युवा अवस्था मानी जाय है ॥ ये गोचारण लीला कार्तिक शुद्ध अष्टमी बुधवारके दिन भई है तामें प्रमाण । शुक्लाष्टमी बुधे ऊर्जे स्मृता गोपाष्टमी बुधैः । तद्दिनान्नंदपुत्रोऽभूद्गोपः पूर्वं तु वत्सपः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आवती भई ॥ ३ ॥ जहां तहां अरुण पल्लव निकसे हैं, तिनकी शोभा हैं, कली फल फूलनके बोझते झुकिके चरणनमें जिनकी शाखा लगें ऐसे वृक्षनकूं देखिके बडे आनन्दित हो मुसिकायके आदिपुरुष श्रीकृष्णचंद्र बडे भैया बलदेवजीते यह बोलत भये ॥ ४ ॥ श्रीभगवान् श्रीकृष्णचन्द्र कहे हैं हे देवतानमें श्रेष्ठ बलदेवजी ! बडो आश्चर्य है ये वृन्दावनके वृक्ष देवतानके पूजन योग्य तुम्हारे चरणारविंदनको फल फूल भेट लैलैके अपनी शाखानसों झुकिझुकिके प्रणाम करे हैं, काहेके लिये कि जा अज्ञानते हमारो वृक्षजन्म भयो है वह अज्ञान दूरि है जाय ॥ ५ ॥ हे आदिपुरुष ! सब लोकनको पवित्र करनवारो तुम्हारो यश है ताय भौंरा निरंतर गावत तुम्हारो भजन करे हैं, बहुधा ये भौंरा तुम्हारे मुख्य भक्तनमें मुनिजन हैं, हे पापरहित! या वनके विषे मनुष्यरूप धरे छिपे तुम देवकूं ये मुनिजन नहीं छोडे हैं, भौंरापनमें छिपिके तुम्हारो भजन करे हैं ॥ ६ ॥ हे स्तुति करिवेके योग्य ! आनन्दते ये वृन्दावनके मोर तुम्हारे आगे नृत्य करें हैं, और ये हरिणी गोपिनके तुल्य चितवनते तुमपै प्यार करे हैं, और ये कोकिलानके समूह इनको वृन्दावन घर है सो हमारे आयवेसो सुन्दर बोलीनसो सत्कार करे हैं, ये वृन्दावनवासी धन्य हैं, साधुनको यही स्वभाव है; बडे पुरुष अपने घर आये होय तो जो कछु अपने पास फूल फल होय सो उनकी भेट करें ॥ ७ ॥ यह पृथ्वी अब बडी धन्य है तुम्हारे चरणारविंदकूं स्पर्श करेहै, और ये तृणहू धन्य हैं तुम्हारे नखको स्पर्श करे हैं, और ये लता वृक्ष धन्य हैं, नदी पर्वत पक्षी वनके पशु धन्य हैं जो तुम्हारी दयापूर्वक चितवन करेहैं, और जा वक्षस्थलकी लक्ष्मी चाहना करे ताको स्पर्श गोपीनकूं होय है, यातें गोपीहू धन्य हैं ॥ ८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले या प्रकार शोभायमान वृन्दावनमें प्रसन्न मन श्रीकृष्णचंद्र पर्वतके समीप यमुनाजीके तीरमें गउनको चरावत ग्वालबालनको संग लेके खेलतभये ॥ ९ ॥ मन्दोन्मत्त भौंरा जा समय गुंजार करे हैं तब श्रीकृष्णचंद्र आप गामें हैं और ग्वालबाल जिनके चरित्रनको गामें हैं, वनमाला पहिरे हैं, बलदेवजी संग हैं ॥ १० ॥ कहूं राजहंसनमें कोई हंस बोले है ताके पीछे श्रीकृष्णचंद्र आप बोले हैं, कभऊ अपने संगके मित्रनको हँसायवेके लिये मोर नाचतो देखिके वाके सन्मुख आपहू जामा फैलायकै नाचै हैं[1] ॥ ११ ॥ कभऊ एक जब दूरि निकसि जाय है तब मेघ जैसे गरजे ऐसे गर्जके प्रसन्न होयके उनको नाम लैलैके बुलेमें हैं वह बोलनो गऊनको ग्वालबालकूं बहुत प्यारो लगै ॥ १२ ॥ चकई चकोर चकवा फडरिया मोर इनकीसी बोली बोलेहैं, कभऊ जैसे व्याघ्र सिंहते डरपिके और सब जनावर भाजेहैं तब आपहू भाजेहैं या प्रकार लीला करेहैं ॥ १३ ॥ काहू समय खेलत खेलत बलदेवजीको परिश्रम होयजायहै तब काहू गोपकी गोदको तकिया बनायकै सोइजाय हैं तब श्रीकृष्णचंद्र आय विनके चरण दाबिके पंखा करिके श्रम दूरि करेहैं ॥ १४ ॥ कभऊ एक समय ग्वालबाल नाचें गामें दौरे हैं, आपसमें कुस्ती लडें, तब विनके हाथ पकरिके हँसिके कृष्ण बलदेवजी दोनों भैया कहे हैं भले नाचे भले गाये या प्रकार बडाई करे हैं ॥ १५ ॥ काहू समय जब कुस्तीमें परिश्रम होय हैं तब श्रीकृष्णचंद्र वृक्षकी जरमें पत्तानकी शय्यापै गोपनकी गोदको तकिया करिके सोमें हैं ॥ १६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! कोई ग्वालबाल महात्मा श्रीकृष्णचन्द्रके चरण दाबतभये, पापरहित ग्वाल पत्तानके पंखानते बयारि करत भये ॥ १७ ॥ और स्नेहभरी बुद्धिसों महात्मा श्रीकृष्णचंद्रको नींद आयवेके प्यारे प्यारे मलारके पद हौले हौले गावत भये ॥ १८ ॥ या प्रकार अपनी

---

१ दोहा—कबहुँ बजावत बांसुरी, कबहुँ नचावत मोर ॥ कबहूं खेलत सखनसँग, मोहन नन्दकिशोर ॥

२ कारी कजर धोरी घूमर हीयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मायासूं अपनो ईश्वररूप छिपाये चरित्र करिके गोपबालकको अनुकरण करते लक्ष्मीसो सेवित चरण-वारे श्रीकृष्णचंद्र ग्रामके रहनवारे ब्रजवासीनके संग विनईकी तुल्य खेलत भये, बीच बीच कभऊ ईश्वरपनेकी चेष्टा दिखाय देइहै ॥ १९ ॥ ईश्वरपनेकी चेष्टा दिखायवेके लिये कहे हैं राम कृष्णके मित्र श्रीदामा नाम गोप सुबल स्तोक कृष्ण आदि लैके और गोपहू प्रेमते यह बोलत भये ॥ २० ॥ हे राम ! हे राम ! हे बडे भुजावारे ! हे दुष्टनके मारनवारे कृष्णचंद्र ! यहांते थोरीसी दूरिपै तालवन है ॥ २१ ॥ वा तालवनमें बहुतसे तालनके फल टूटे परेहैं औरहू टूटिके गिरेहैं परंतु दुष्ट धेनुकासुर वहां रहेहै ताने रोकि राखेहैं न वह आप खायहै न काहूकों खानदेयहै ॥२२॥ हे राम ! हे श्रीकृष्णचंद्र ! गधाको रूप धरे वह असुर बडो पराक्रमी है, और अपनी बराबर बल ज्ञाति भाईभी बहुत वाके संग हैं ॥२३॥ हे दुष्टनके मारनवारे ! कैसो वह दुष्ट है कि मनुष्यनकूं खाय जाय है, वाके भयते मनुष्य वहां नहीं जाय हैं पशुनके समूह और पक्षीनके समूह कोईहू वहां नहीं जाय है ॥ २४ ॥ वा वनके फल आजतक काहूने नहीं खाये है न मानो तो चारों ओर सुगंधि फैलि रहीहै ताकूं सूंघिलेउ ॥२५॥ हे श्रीकृष्णचंद्र ! सुगंधिसो हमारे चित्त लुभाय गये हैं हमकौ वे फल देउ, हमारी बडी वांछा है तुमकौं अच्छी लगे तो वा तालवनमें चलैं ॥ २६ ॥ या प्रकार मित्रनको वचन श्रवण करिके हँसिके मित्रनके प्रिय करिवेके लिये मित्रनको संग लैके समर्थ श्रीकृष्णचंद्र बलदेव दोनों भैया तालवनमें जात भये ॥ २७ ॥ वहां जायके बलदेवजीनें ताल बजायके भुजानते फल पटके, जैसे बलते मतवारो हाथी पटके है ॥ २८ ॥ पृथ्वीपै फल जो गिरे तिनको शब्द श्रवण करिके गर्दभरूप धेनुकासुर पर्वतन सहित पृथ्वीको कंपायमान करत दौरिके सन्मुख आवत भयो ॥ २९ ॥ बली जोरावर दुष्ट धेनुकासुर शीघ्रतासूं आयके पिछिले दोनों पांवनतें छातीमें लात मारिके शब्द करिके भाजत भयो ॥ ३० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! क्रोधमें भरोभयो धेनुकासुर फेरि आयके मुख फेरिके ठाढो भयो, और क्रोध करिके बलदेवजीकूं पिछले पांवनकी दुलत्ती फेंकत भयो ॥ ३१ ॥ बलदेवजी धेनुकासुरके दोनों पांव पकरिकै एक हाथते फिरायके वृक्षके ऊपर फेंकत भये फिरावतमें वाके प्राण निकसिगये ॥ ३२ ॥ धेनुकासुरको मारि वृक्षपै फेंक्यो तासूं बडो भारी तालवृक्ष टूटिके गिरचो तासूं दूसरो पासमें तालवृक्ष हो सो गिरो ताकी चपेटसूं और हलिके तालवृक्ष गिरे या प्रकार अनेक तालवृक्ष गिरत भये ॥ ३३॥ बलदेवजीसो खेल करिके फेंको भयो धेनुकके देहकी चपेट लगवेसो सगरे तालके वृक्ष हलत भये जैसे बडी आंधीमें हले हैं ॥ ३४ ॥ अनंत जगत्के ईश्वर भगवान् बलदेवजीमें यह कछु आश्चर्य नहीं है जिन बलदेवजीमें यह सब विश्व ओतप्रोत है रहो है, जैसे कपरा ताने बानेमें ओतप्रोत है ॥ ३५ ॥ जब धेनुकासुर गधानमें मुखिया मारचो गयो, तब धेनुकासुरकी जातिके संपूर्ण गधा क्रोधमें भरिके कृष्ण बलदेवके सन्मुख दौरिके आवत भये ॥ ३६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! कृष्ण बलदेव दोनों भैया जे जे गधा आये तिनके पांव पकरिके वृक्षनके ऊपर फेंकत भये ॥ ३७ ॥ लाल लाल फल टूटिके गिरेहैं, श्वेत श्वेत गधानके मारे देह परेहैं लीली लीली लता टूटी परी हैं तासों धरती बहुत शोभायमान लगति भई जैसे लाल सफेद लीली घटानसूं आकाश सुंदर लगेहैं ॥ ३८ ॥ देवता या प्रकार उत्कृष्ट कर्म श्रीकृष्ण बलदेवजीको देख प्रसन्न होयके फूल वर्षावत भये बडे २ नाना प्रकारके बाजे बाजत भये देवता स्तुति करत भये ॥ ३९॥ जब धेनुकासुर मारो गयो ताके पीछे भय

---

१ कृष्ण नामको एक बालकहू है ॥ २ तब तो दोउ भैया ठाढे है गये और जो गधा आवे है वाहीको पांव पकरके तालपै मारे है और कहत जाय है कि भैया कैसो अच्छो गधा मार दाउ हाथ आयो है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रहित होय बहुत मनुष्य तालके फल खात भये तब वा वनमें गऊ घासकूं चरत भई ॥ ४० ॥ अनुचर गोपनसो स्तुतिको प्राप्त कमलपत्रसे विशाल नेत्रवाले पवित्र जिनकी कथानको श्रवण हैं वे श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीसहित व्रजमें आवत भये ॥ ४१ ॥ गऊनके खुरनकी रज उडी तासों अलकै धूसरी होय रही हैं मोरपुच्छनके मुकुटनकूं पहिरे, वनके फूलनके तुर्रा टांगे, सुन्दर चितवन, मनोहर हँसन, बांसुरीकूं बजावते, ग्वालबाल जिनके यशको गायरहे, विन श्रीकृष्णचंद्रके देखिवेके लिये सब गोपी आवत भई ॥ ४२ ॥ व्रजकी योषिता नेत्ररूपी भौंरानसों श्रीकृष्णचंद्रके मुखकमलतें सुन्दरतारूपी अमृतकूं पीके दिनके श्रीकृष्णके विरहके तापकूं त्यागती भई, लाज-भरी मुसिकान, कटाक्षभरी चितवनसूं सत्कारको प्राप्त हैके व्रजमें जात भई ॥ ४३ ॥ पुत्रनको प्यार करनवारी यशोदा रोहिणी अपने पुत्रनकूं जैसी विनकी कामना होय जैसो देखे है तैसोई आशी-र्वाद देयहैं और सब पदार्थ बनाय राखें हैं ॥ ४४ ॥ व्रजमें आयके स्नान उबटनो इत्यादिकनसूं मार्गको परिश्रम दूर कर श्रीकृष्ण बलदेवजी सुन्दर पीतांबर पहिरे, माला गंध चंदन लगाय बडी शोभाको प्राप्त होत भये ॥ ४५ ॥ कृष्ण बलदेव दोनों भैयानकूं माता थार परोस लाई जो सुन्दर सामग्री हैं ताय भोजन करिके भैयाने लाड लडाये तब शय्यापै जायके व्रजमें सुखपूर्वक शयन करत भये ॥ ४६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार वृन्दावनविहारी श्रीकृष्णभगवान् कबऊ एक बलदेवजी विना आपही ग्वालबालनकूं संग लैके यमुनातीरपै जात भये ॥ ४७ ॥ गरमीकी धूपसों व्याकुल गऊ और ग्वाल-बाल प्याससूं पीडित होयके विषसों दूषित यमुनाजलकूं पीवत भये ॥ ४८ ॥ हे कुरवंशीनमें भये राजा परीक्षित् ! वा विषके जलको पीके दैवसो चित्त हरवेके कारण प्राणहीन होय समस्त ग्वालबाल गऊ किनारेपे गिरत भये ॥ ४९ ॥ योगेश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्र भगवान् अपने मित्र ग्वालबाल और गऊनको मरे देखिके अपनी अमृतवर्षिणी दृष्टिते देखिके सबको जिवावत भये ॥ ५० ॥ शीघ्रही स्मरणको प्राप्त होयके व्रजवासी जलके किनारेपैते उठिके बडो आश्चर्य मानते भये आपसमें देखन लगे ॥ ५१ ॥ विषको पीके प्राण निकसि गये फिरि जो जी उठे व्रजवासी वे वाय श्रीकृष्णचंद्रकी कृपादृष्टि मानते भये ॥ ५२ ॥

अन्वमंसत तद् राजन् गोविन्दानुग्रहेक्षितम् ॥
पीत्वा विषं परेतस्य पुनरुत्थानमात्मनः ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे धेनुकवधो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

श्रीशुक उवाच–विलोक्य दूषितां कृष्णां कृष्णः कृष्णाहिना विभुः ॥
तस्या विशुद्धिमन्विच्छन् सर्पं तमुदवासयत् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहेहैं कि हे राजन् परीक्षित् ! प्रभु श्रीकृष्णचंद्र काली सर्पसूं कालिंदी यमुनाको बिगरी देखिके शुद्ध करिवेके कारण वा कालीसर्पकूं निकासत भये ॥ १ ॥ अब राजा परीक्षित् पूछे है कि भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अगाध जलके भीतर कैसे कालीकूं दंड देत भये वह काली बहुत युगनते

१ कवित्त–मोरनके मुकुट माथे हाथमें लकुट राजे गुंजमाल गले ललित लरनतें । साजे सुन्दर कपोल श्रुति कुंडलकी झलक राजै जुलुफ अमोल भरे गोरज कनकतें ॥ गौअनके आछे पाछे कालेन काछनीको काछ राग गौरी गावत सखनतें । आनंदके कन्द व्रजलोचन चकोर चन्द मन्द आवत गोविंद वृन्दावनतें ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आयके वास करत भयो हे शुकदेवजी ! यह मेरे आगे कहिये ॥ २ ॥ राजा कहेहैं हे शुकदेवजी ! व्यापक अपनी इच्छापूर्वक लीला करनहारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्रजीको गौनके पालनादि बडे चरित्र अमृतरूपी श्रवण करिके कौन तृप्त होय ॥ ३ ॥ श्रीशुकदेवजी कहेहैं कि हे राजन् परीक्षित् ! कालिंदी यमुनामें कालीय नागको एक दह विषकी अग्निसूं वाको जल औटतो हो यासों आकाशके उडे पक्षी जामें गिरिपरेहै ॥ ४ ॥ छीटानकूं लिये लिये विषके जलसूं स्पर्श करि जो पवन चले हैं ताके स्पर्श करेते किनारेते वृक्ष शुष्क है गये और चराचर जीव दहके तटपे प्राप्त होतेही वाकी झलसे मरजाते हैं ॥ ५ ॥ बडे बली विषके अभिमानी काली सर्पकूं देखिके और ताते बिगरी यमुनाकूं देखिके दुष्टनको दंड देवेके लिये अवतारधारी श्रीकृष्णचंद्र कदंबपै चढिके खेंचिकरि पीतांबरते फेंट बांधिके ऊंचे कदंबते खंब ठोकिके विषके जलमें कूदत भये अब राजा कहै है कि हे महाराज ! अबहीं तो तुमने कही कि तटके समस्त वृक्ष सूखिगये अब कहो हो कि कदंबपै चढिकै कूदत भये कदंब कहांते आयो तहां कहे हैं या कदंबके भाग्यमें कृष्णचंद्रके चरणारविंदको स्पर्श लिखो हो याते यह नहीं सूखो अथवा और पुराणमें कथा है गरुडजीने स्वर्गते लायके अमृतको कलश एक समय याके ऊपर धर्‌यो हो सो अमृतकी बूंद परी याते यह अमर है गयो हो ॥ ६ ॥ पुरुषनमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचंद्र जा समय वामें कूदे तब उनके बोझते खेदको प्राप्त भये सर्पके विषसो जल बहुत ऊंचो उछलगयो और विषके प्रभावसो कषाय और भयानक लहरैं उठने लगीं और चारौं ओरसो यमुनाको जल सौ सौ धनुष फैलगयो अनंत बल भगवान्‌के या कार्यमें कोई आश्चर्य नहीं है ॥ ७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! श्रेष्ठ हाथीकेसे पराक्रमवारे जा समय कालीके दहमें परे ता समय श्रीकृष्णचंद्रके हाथनते भये जलशब्दकूं श्रवण करिके और तिन श्रीकृष्णचंद्रते अपने घरको नाश देखिके, ऐसो जोरावर कौन है जो मेरे घरमें आयके धूम करें यह जब वापे न सहारो गयो तब श्रीकृष्णचंद्रके सन्मुख आवत भयो ॥ ८ ॥ देखिवे योग्य सुकुमार मेघकी तुल्य निर्मल स्वरूपवान् भृगुलत्ताके चिह्नयुक्त पीतांबरको पहिरे मुसिकानते सुंदर मुख निर्भय खिले कमलसे चरणारविन्दवारे श्रीकृष्णचंद्रको जलमें क्रीडा करतो देख वह काली क्रोधसो मर्मस्थाननमें काटके वनमालीके अंगमें लिपटि गयो ॥ ९ ॥ सर्प देहमें लिपटि गयो श्रीकृष्णको चेष्टारहित देखिके तिनके प्यारे मित्र ग्वालबाल बहुत दुःखित होत भये श्रीकृष्णचंद्रमें देह मित्र धन स्त्री समस्त कामना अर्पण किये दुःख शोक भयसों सुधि बुधि बिसारे वे गोप पृथ्वीमें पछार खायके गिरतभये ॥ १० ॥ गौ बैल छोटी छोटी बछिया अतिदुःखित होयके रम्हावैं हैं कृष्णकी ओर टकटकी लगायके देखिरहे हैं डरके मारे रोवतसे ठाढे हैं ॥ ११ ॥ ताके पीछे व्रजमें बडे तीन तरहके उत्पात उठत भये धरती हाली, आकाशतें उल्कापात भये, पुरुषनकी बांई भुजा बांई आंखि फरकत भई यह उत्पात शीघ्र भयको जतामें हैं ॥ १२ ॥ नंद आदि मुख्य गोप उन उत्पातनकों देखिकै भयतें व्याकुल होत भये और यह जानकर कि बलदेवजी विना कृष्ण अकेलो आज गाय चरायवेको गयो है ॥ १३ ॥ बिन खोटे उत्पातनसूं कृष्णचंद्रको निधन मानिके श्रीकृष्णचंद्रके प्रभावको न जानकर और तिन श्रीकृष्णचंद्रमें प्राण और मन लगाये दुःख शोक भयके मारे अतिपीडित भये ॥ १४ ॥ बाल वृद्ध स्त्री समस्त पशुकी तुल्य महामोहवारे श्रीकृष्णचंद्रके देखिवेकों उत्कण्ठासो समस्त दीन हैकै गोकुलसों ढूंढिवेको निकसत भये ॥ १५ ॥ मधुवंशमें भये भगवान् बलदेवजी व्रजवासीनकूं व्याकुल देखिके हंसिके कछु न बोलत भये, काहेतें कि वे अपने छोटे भैया श्रीकृष्णचंद्रके प्रभावको जाने हैं, इनके हँसवेहीसों सबके प्राण बचें क्यों कि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाको बडो भैया हँसै है तो जानि परै है कि कछु कुशल है ॥ १६ ॥ ते संपूर्ण व्रजवासी प्यारे कृष्णको ढूंढत मार्गमें कृष्णचंद्रके चरणके खोज देखके यमुनाके किनारेपै जातभये ॥ १७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ते व्रजवासी गायनके रस्तामें औरनके पावनके बीचमें श्रीकृष्णचंद्र भगवान् प्रजापतिके पावनके चिह्न कमल यव अंकुश वज्र ध्वजकी रेखायुक्त चरणनकूं देखत देखत जलदीसों जात भये जिस प्रकार योगिजन वेदमार्गमें परत्वको ढूंढकर उसे प्राप्त होते हैं ॥ १८ ॥ वा दहके भीतर काली सर्प जिनके लिपट रह्यो चेष्टा जिनकी जातरही ऐसे श्रीकृष्णचंद्रकूं देखिके किनारेपें जड बुद्धि होय ग्वालबाल पछार खायके गिरे तिनकों देखिके और चारों ओर रह्मती डोलती गऊ बछियांकूं देखिके व्रजवासी अति कष्टकूं पावत भये ॥ १९ ॥ अंतरहित छः प्रकारके ऐश्वर्यकरि पूर्ण श्रीकृष्णचंद्रमें मन लगानेहारी गोपी तिन श्रीकृष्णचंद्रको प्यार मुसिकानि चितवनि बातनकी सुधि करिके अतिशय प्यारे श्रीकृष्णको सर्पने ग्रास लियो यह जानिके बहुत दुःखसों व्याकुल होयके प्यारे विना तीनों लोकनकूं सूनो देखत भई ॥ २० ॥ पुत्र श्रीकृष्णको दहमें गिरो देख यशोदा माता जलमें गिरन चली तब गोपियां उन्हें पकड अतिदुःखित होयके आंखिनमें आंसू वहाती यशोदाकी समान दुःख करती व्रजमें करीहुई भगवान्की प्यारी लीलाओंका वर्णन करती भगवान्के मुखकी ओर दृष्टि दिये गोपियां मृतकके समान होगईं[1] ॥ २१ ॥ श्रीकृष्णचंद्रमें प्राण लगाये कालीके दहमें पुत्रशोकके मारे नंद आदि व्रजवासिनकूं दहमें गिरतो देख श्रीकृष्णके प्रभावके जाननवारे भगवान् बलदेवजी रोकत भये ॥ २२ ॥ या प्रकार अपने गोकुलकूं अनन्यगति देख और कोई छुडावनवारो नहीं यह जानिके, तथा स्त्रीबालकन सहित गोकुलवासी जननको अपने निमित्त बहुत दुःखित विचारिके मनुष्यनकी तुल्य लीला करनहारे श्रीकृष्णचंद्र दो घडीपर्यंत वा सर्पकी कुंडलीमें रहिके फिर वाते बाहिर निकसत भये ॥ २३ ॥ श्रीकृष्णचंद्रने अपनो देह बढायो ताते सर्पके देहमें अतिदुःख भयो नस नस टूटनलगी, तब कृष्णको छोडिके क्रोधकरिकै अपने फणनकूं उठायके बडे बडे श्वासनकूं लैके स्थित होयके नकुअनमें विष आयवेसों क्रोधते आखिनके पलक न लगनेके कारण बरती लकरीकी तुल्य मुख करे श्रीकृष्णचंद्रकी ओर देखनलगो ॥ २४ ॥ दो फांकवारी जीभते दोनों ओठनको चाटते विषकी आगि भरि चितवनिवाले कालीकूं भगवान् खेलत खेलत फिरावते भये, जैसे गरुड सर्पकों फिरावै हैं, कालीहू श्रीकृष्णचंद्रके पकरिवेको अवसर देखत फिरैहै, श्रीकृष्ण अपनो दांउ विचारै, काली अपनो दांउ विचारै, श्रीकृष्णचंद्रको मन तौ यह है कि हमारो दांउ लगे तो याके फणनपै चढिके नृत्य करैं, कालीके मनमें यह है कि मेरो दांउ लगे तो मैं याके लिपटि जाउँ ऐसे अपनो २ दांउ विचारै हैं ॥ २५ ॥ ऐसे फिरेते जब कालीको बल घटि गयो तब कालीके ऊंचे फणनको नवायके ऊपर चढिके श्रीकृष्णचंद्र नाचत भये कालीके फणनमें जो मणि रत्न लगे हैं तिनसूं लगिके चरणारविंद अरुण होयगये, कदाचित् कहो कि चंचल सर्पके फणनपै कैसे नृत्य करत भये तहां कहे हैं ये श्रीकृष्णचंद्र समस्त कलानके आप गुरु हैं

१ दोहा—सुखदानी देखे विना, बिलखानी अति माय । रानी अरानी परै, पानीमें अकुलाय ॥ १ ॥ लोटत अति-व्याकुल धरणि, जात गिरत जल धाय । कहत श्याम तुम दियो दुख, मोको बैस बुढाय ॥ २ ॥ व्रजयुवती सुनि महरिके बचन प्रेम आधीर । अकुलानी रोवत सबै, भई कठिन उर पीर ॥ ३ ॥ २ व्रजवासी सब उठैं पुकारी । जलभीतर कहा करत मुरारी ॥ मात पिता अतिही दुख पावै । रोय रोय सब कृष्ण बुलावै ॥ दोहा—मोहि दुहाई नन्दकी, अबही आवत श्याम । नाग नाथ ले आवही, तौ कहियो बलराम ॥ ३ राग कान्हरो—जबही श्याम तनु अति विस्तारो । पटपटात टूटत अँग जान्यो शरण २ अहिराज पुकारो ॥ यह वाणी सुनतेहि करुणामय तबहि गये सकुचाये । यही बचन सुनि द्रुपदसुताके दीनो बसन बढाये । यही बचन गजराज सुनायो गरुड छांड तहँ धाये । यही बचन सुन लाक्षागृहमें पांडव जरत बचाये ॥ यह वाणी सह जात न प्रभुपै ऐसे परम कृपाल । सूरदास प्रभु अंग सकोरचो व्याकुल देख्यो व्याल ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कोई तरवारनकी धारपै नाचे, कोई बांसपै चढिके नाचे, हम देखो कालीके शिरपै नाचे हैं ॥ २६ ॥ श्रीकृष्णचंद्र कालीके फणनपै नृत्य करिवेको ठाढे भये तिनको देखिके ता समय गंधर्व सिद्ध सुरगण चारण देवांगना ये सब प्रसन्न होयके मृदंग ढोलक नगाडे लैलैके बजावत गावत भये, पुष्प वरषावत भेटे लेके स्तुति करत शीघ्र आवत भये एक सौ एक शिरवारे कालीको जो जो शिर ऊंचो उठे है, ताय ताय दुष्टनके दंड देनवारे श्रीकृष्णचंद्र पांवकी ठोकरतो नवावत भये, तब क्षीण अवस्थावारो इत उत भ्रमत डोलन लगो तब मुखते नासिकाते भयंकर रुधिर निकसो या प्रकार काली दुष्टसर्पको मर्दन करतभये तब कालीको महाकष्ट भयो ॥२७॥२८॥ नेत्रनते विष उगलतो और क्रोधकरिके बडे बडे श्वासनको लेते कालीको जो जो शिर ऊंचो उठेहै भगवान् ताके ऊपर नृत्य करिके चरणकी ठोकरसों नवायके दंड देतभये, या समय गंधर्व देवतानके आनंद जो भयो सो शेषनागकी शय्यापै शयन करनहारे नारायणकी तुल्य यशोदानंदन श्रीकृष्णचंद्रकी पुष्पन करिके पूजा करतभये, अथवा दूसरो अर्थ देवता गंधर्व अप्सरानने ता समय फूलनकरिके पूजन करो, और व्रजवासीननें नारायणकी तुल्य श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करो, अथवा याही पदको तीसरो अर्थ फूलनसों प्रसन्न करेसे प्रसन्न होयके कालीको दंड देत भये, यह वाको भलो करतभये ॥ २९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्णचंद्रने जो चित्रविचित्र ताण्डव नृत्य करो तासूं कालीके फणारूपी छत्र ढीले होयगये देहकी नश नश ढीली होयगई मुखते रुधिर वमन करत स्थावर जंगमके गुरु पुराणपुरुष नारायणकी सुधि करिके मनते नारायणकी शरण लेत भयो ॥ ३० ॥ ब्रह्मांड गर्भमें राखनवारे श्रीकृष्णके बोझते दबो एडीनकी ठोकरनके मारे फणरूपी छत्र ढीलो होयगयो तब कालीनागको देखिके गहने कपरेको अस्तव्यस्त होने केश खोले कालीकी स्त्री पीडित होयके श्रीकृष्णचंद्रकी शरण लेत भई ॥ ३१ ॥ अति व्याकुल मन छोटे छोटे अपने बच्चानको आगे करिके हाथ जोरिके नागकी पतिव्रता पत्नी साष्टांग धरतीमें गिरिके समस्त प्राणीनके पति श्रीकृष्णचंद्रकूं प्रणाम करत भई, पतिके पाप छुडवायवेके लिये श्रीकृष्णचंद्र भगवान्की शरण लेति भई ॥ ३२ ॥ नागपत्नी बोली या अपराधीको तुमने दण्ड दियो सो योग्य है तुम्हारो अवतार दुष्टनके दण्ड देवेकूं है वैरी और पुत्रनकूं बराबर देखोहो, दुष्ट विचारके दण्ड देउहो, और पुत्रनके ऊपर अनुग्रह करोहो, दुष्टनको दण्ड देवो यह तुम्हारे विषमता नहीं हैं ॥ ३३ ॥ या सर्पको तुमने दण्ड दीनो याके ऊपर बडो अनुग्रह कियो तुम्हारे दण्ड दियेते दुष्टनके समस्त पाप जात रहेहैं जा अपराधते याकी सर्पयोनी भई वह अपराध दूरि होयगयो तुम्हारो क्रोध है सो कृपारूप है ॥ ३४ ॥ या मानरहित औरनके मान दैनहारे हमारे पति कालीने पूर्व जन्ममें ऐसो कहा तप करो है अथवा समस्त जननके ऊपर कृपा करिके धर्म कहा करचो है जा कारणते संपूर्णके जिवावनवारे तुम कालीके ऊपर सन्तुष्ट भये ॥ ३५ ॥ हे प्रकाशमान ! यह सर्प तुम्हारे चरणारविंदकी रजके स्पर्श करिवेको अधिकारी भयो, सो कौन तपस्याको फल है वह हम नहीं जाने है; जिन चरणारविंदके स्पर्शके लिये लक्ष्मीसी उत्तम स्त्री कामनानको छोडिके व्रतको धारण करिकै बहुत दिन पर्यंत तप करत भई ॥ ३६ ॥ जिन पुरुषनने तुम्हारे चरणारविंदकी रजको शरण लियो है, वे पुरुष काहू वस्तुकी चाहना नहीं करे हैं, पृथ्वीको चक्रवर्ती राज्य नहीं चाहे हैं, अणिमादिक अष्टसिद्धिनकी चाह नहीं हैं, और मोक्षकूंभी नहीं चाहे हैं ॥ ३७ ॥ हे नाथ ! लक्ष्मीते आदि लैके बडे बडेनको दुर्लभ तुम्हारे चरणारविंदकी रज है, ताकूं तमोगुणसो उत्पन्न क्रोधके वश सर्पनको राजा काली विना उपाय पावत भयो, कारण कि अपने कर्मनके वशते संसारचक्रमें भ्रमते तुम्हारे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चरणारविंदके रजकी शरण चाहनहारे शरीरधारीको मनकी चाहती संपत्ति मिले है ॥३८॥ छः प्रकारके ऐश्वर्ययुक्त समस्त देहनमें अंतर्यामी रूप करिके रहित उनमें रहो हौ, तथापि उनमें ढकि नहीं जाओ हौ, पृथ्वी आप तेज वायु आकाशके आश्रय पंचभूतनते पहिले रहौ समस्तके कारण आप कारण करिके रहित तुमको नमस्कार है ॥ ३९ ॥ तुम ज्ञान विज्ञान अर्थात् चैतन्य शक्ति करिकै परिपूर्ण हौ व्यापक हौ अनंत शक्तिमान् निर्गुण निर्विकार मायाके प्रवर्तक तुमकूं नमस्कार है ॥ ४० ॥ कालरूप हौ कालशक्तिके आश्रय हौ कालके अंग तुम क्षण लवादिकके देखनवारे हौ, विश्वरूप हौ विश्वके देखनहारे हौ और विश्वके उत्पन्न करनवारे हौ विश्वके कारण हौ ॥ ४१ ॥ पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध और दश इन्द्रिय, प्राण, मन, बुद्धि, चित्तके रूप हौ और तीन प्रकारके अहंकारसूं अपने अंशरूप जीवोंके स्वरूपको आच्छादन करनेहारे आपको प्रणाम है ॥ ४२ ॥ अहंकारते आच्छादित न हैवेसौ अनंत हो, दृष्टिगोचर नहीं हैवेते सूक्ष्म हौ उपाधिके करे विकार नहीं हैवेते निर्विकार हौ, सर्वज्ञ हौ, कोई कहे हैं कोई कहे नहीं हैं, कोई कहे सर्वज्ञ है, कोई कहे अचिंतनीय है, कोई कहे बद्ध हौ, कोई कहे मुक्त हौ, कोई कहे एक है, कोई कहे अनेक हैं इत्यादिक जो अनेक नानाविध झगरे हैं, तिनमें मायातें जो जैसे कहे हैं तामें तैसेही होय जाय हैं, नाम नामी रूप शक्तिके भेद ताते अनेक रूप करिके प्रतीक्षा करिवे योग्य तुमकूं नमस्कार है ॥ ४३ ॥ तुम नेत्रनसों आदि लैके इंद्रियनके प्रकाशके करनेवारे हौ और उनके ज्ञानके विषयी हो, वेदरूप श्वासते भये प्रवृत्तिरूप निवृत्तरूप वेदरूप तुमको नमस्कार है ॥ ४४ ॥ शुद्ध अंतःकरण प्रकाश करनवारे भक्तनके रक्षक हौ और कृष्ण संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्धरूप तुमकूं नमस्कार है ॥ ४५ ॥ सत्वगुण रजोगुण तमोगुणके प्रकाश करनवारे, मन बुद्धि चित्त अहंकारके प्रकाश करनवारे, अर्थात् इनके अधिष्ठाता हो, ताहीते चार रूप हो, तीन गुणनसूं उपासनाकूं चित्र विचित्र फल दैवेके लिये अपने आत्माकूं ढकिके अनेक रूप करिके प्रकाशो हो, मन बुद्धि चित्त अहंकार करि चैतन्य निश्चयकूं आदि लेके वृत्तिसो जानिवेमें आओ हौ, मन बुद्धि चित्त अहंकारके साक्षी तुमकूं नमस्कार है ॥ ४६ ॥ तुम्हारी महिमा विचार करवेमें नहीं आती और सम्पूर्ण विश्वको उत्पत्ति प्रकाश करवेके कारणसौ जानिवेमें आवो हो, इंद्रियनके प्रेरक आत्मामें रमण करो हो सत्स्वभाव तुमको नमस्कार है ॥ ४७ ॥ स्थूल सूक्ष्म सबकी गतिके जाननहारे हो समस्त विश्वके साक्षी हो विश्व आपके स्वरूपमें नहीं, और विश्वके स्वरूपमें आप नहीं, तुम विश्वके निषेधकी अवधि हो, जैसे सर्पके प्रकाशको जेवरी आश्रय है तैसे आप

---

१ एक धनाढ्य ब्राह्मण बडे कृष्णके भोरे भक्त हे, लोगोंने सिखाय बुझाय द्रव्य ले इनका एक चांडालकी कन्याके संग विवाह करदिया एक दिन वह खिरकीमें बैठी ही सो उसकी पहचानके चांडाल आय निकले वह देखकै बोले अरी फलानेकी बेटी तू यहां कहां आई, लोगोंने पूछी तो वे बोले चांडालकन्या है अब वे ब्राह्मण बडे व्याकुल हुए, प्रायश्चित्त पूछो शास्त्रीने कही सूखे पीपरकी खखोडरमें जरो तौ पाप जाय, ब्राह्मण माला ले पीपरमें बैठे लोगोंने लकडी धरदीं आग लगायदी सब लकडी पीपरकी राख होगई ब्राह्मण माला जपते रहे, तब लोक प्रणाम कर बोले उठो प्रायश्चित्त होगयो, ब्राह्मण बोलै तौ अब स्त्रीको कहा डोल करे, वे बोले उसकी बिरादरीको दो. चांडाल बोले ब्राह्मणके यहां रही अब हमारे कौन कामकी है लोग बोले तुम्ही रहन दो ब्राह्मण बोले तुम मोतें फेर प्रायश्चित्त कराओगे वो बोले नहीं अलग कोठरीमें रखियो, दो रोटी डार दिये करियो, दैवयोगसे चांडालीको देह छुटगयो तब वे ब्राह्मण चांडालोंसे बोले इसे उठाओ चंडाल बोले इसे उठानैसै हमें बिरादरीमें रोटी देनी परैगी. हम नहीं उठावेंगे तुमही उठाओ, ब्राह्मण बोले मुझे प्रायश्चित्त करना पडैगा, ऐसे सन्देह करते २ दो घडी दिन रहा तब ब्राह्मणही उठानै चले वस्त्र उठाकै देखै तौ तहां पुष्प धरे है, वह सदेह वैकुंठको गई सत्संगतिकी ऐसी महिमा है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विश्व प्रकाशिवेके आश्रय हो, आरोप और निषेधके साक्षी हो, विश्वको आरोप और निषेधके ज्ञान अज्ञानसों कारण हो, यावत् पर्यंत अज्ञान है तावत् पर्यंत विश्वमानिवेमें आवै है अर्थात् विद्या और अविद्यासै अपवाद और अध्यासके हेतु आपको प्रणाम है या प्रकार नागपत्नी कालीके दंडकी प्रशंसा करिके कृष्णचंद्रको प्रसन्न करिके कहत भई, अब तुम्हारे आधीन प्राणी है तिनको कहा अपराध है, ऐसे मनमें विचारकै प्रार्थना करै है ॥ ४८ ॥ हे प्रभो ! तुम चेष्टाकरिके रहित हो कालशक्तिकूं धारण करिके सत्वगुण रजोगुण तमोगुणसूं या विश्वको उत्पन्न पालन प्रलय करोहो, हे अमोघविहार ! अर्थात् सफल विहार क्रीडावाले तुम उन उन संस्काररूपसों रहे घोर स्वभाववारेनको प्रति बोधन करते भए क्रीडा करौ हो ॥ ४९ ॥ त्रिलोकीमें शान्तस्वभाव घोरस्वभाव मूढस्वभाव या प्रकार सत रज तमोगुणकी प्रधानतासो तीन स्वभावके प्राणी तुम्हारे खेलिवेके खिलौना है, साधुनकी रक्षा करिवेके लिये कमर बांधिके अवतार धारण करोहो, तासूं अब तुमको शान्ति स्वभाव प्राणी प्यारे लगे हैं ॥ ५० ॥ हे भगवन् ! अब कृपा कीजिये नहीं तो अब यह कालीनाग प्राण त्यागन किये देयहै सत्पुरुषनके शोचनीय हम अबलानपै दया करिके पतिरूप प्राणदान कीजिये ॥ ५१ ॥ स्वामीको यह धर्म है कि एक वार अपनी प्रजापै अपराध बनिआवै ताको सह लैहै[1], हे शान्तस्वरूप! अनजान या मूढ कालीके अपराध क्षमा करो ॥ ५२ ॥ तुम्हारी हम दासी हैं, तुम्हारी आज्ञा करिवे लायक हैं, जो आप आज्ञा करैंगे ताइ हम श्रद्धापूर्वक करेंगी, तो संपूर्ण भयते छूट जांयगी, तुम आज्ञा करोगे तो प्राणीनकूं न काटेंगी तुम्हारी आज्ञाकूं श्रद्धासो पालन करनहारो सब भयसों छूट जाय है ॥ ५३ ॥ श्रीशुकदेवजी कहेहैं कि हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार नागपत्नीनने श्रीकृष्णचंद्रकी स्तुति करी तब भगवान्ने मूर्छाको प्राप्त चरणनकी ठोकरते भग्नमस्तक काली सर्पको छोडदियो ॥ ५४ ॥ इंद्रिनमें प्राणनमें चेत जब भयो तब काली सर्प होले होले बडे श्वास लेतभयो, बडो गरीब होयके हाथ जोरिके यह बोलो ॥ ५५ ॥ हे नाथ ! जबते हम उत्पन्न भये हैं तबतेही हम दुष्ट हैं, तामसी हमारो स्वभाव है, बडो हमारो क्रोध है, लोकनको खोटो आग्रहरूप स्वभाव नहीं छूटे है अथवा दूसरो अर्थ जा स्वभावते मिथ्या देहमें आग्रह है सो नहीं छूटै है ॥ ५६ ॥ हे संपूर्णके रचनवारे ! सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण अनेक प्रकारको विश्व तुमने रचो है; तामें सबके न्यारे न्यारे स्वभाव पराक्रम तेज योनिबीज आशयरूप हैं ॥ ५७ ॥ हे भगवन् ! ता विश्वमें हम सर्प बनाये, जन्मतेही हमारे बडो क्रोध भयो, मायाकरि मोहित होय रहे हैं, सो आपसों मोहित भए हम आपकी मायाकूं कैसे छोड सकैहैं ॥ ५८ ॥ संपूर्णके जाननवारे जगत्के ईश्वर तुम हो, सो तुमही मायाके छुडायवेके कारण हो, जो काम तुमने सौंपो तापे हम ऐसे दुष्ट रहे सो तुमहूसें न चूके, यह मानिके हमारे ऊपर कृपा करो, चाहो दंड देउ आप परमेश्वर सब करिवे योग्य हो ॥ ५९ ॥ पृथिवीको बोझ उतारिवेके लिये मनुष्यरूपधारी श्रीकृष्णचंद्र भगवान् या कालीसर्पको वचन

---

१ जैसे एक राजाने सह्यो एक राजा वेष बदले आधी रातमें निकला, चौकीदारने पूछा कोन राजाने जवाब न दियो तब चौकीदारनै रिझाय धोरे जाय पाग उतारली, और मुखकै बांध डंडा मारे, राजा तो बोले नहीं, और चौकीदारनै बांधकै चोर जान मार दीनी, कि ऐसी चोरी करिकै तू रोज लेजाय है; जब प्रातःकाल हुआ देखो तौ राजा है तब तौ पांयनमें गिर पडो खोल दियो राजा चुपकेसै उठ महलोंमें गये, न्हाय धोय वस्त्र पहर दरबारमें आये और जमादारसों कही रात अमुक स्थानके चौकीदारको बुलाओ सुनतेही सिपाही कांपनलगो, राजाने उसे सौ अशरफी और एक दुशाला इनाममें दियो, दिवानके बहुत पूछनेपर राजाने अपनी पीठ दिखाई दिवानने कही इसै सूली दैनीचाहिये राजा बोले तुमने समझी नहीं यह अपनै कामपै सावधान है, जब मुझसे नहीं चूको तौ चोरसै क्यौं चूकैगो, कामपै सावधान रहनेवारेको सुख होयहै ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रवण करिके बोलतभये हे सर्प ! तुम या दहमें मति रहो समुद्रको जाओ देर मति करो ॥६०॥ अपने जातिके सर्प बालक स्त्रीनकूं संग लै समुद्रको जाओ गरुड मनुष्य यमुना जल पिवेंगे जो मैंने तोको आज्ञा करी याहि जो कोई मनुष्य ध्यान करै अथवा संध्या प्रातःकाल या चरित्रको पाठ करै वाकों तोते भय नहीं होय हमारी आज्ञा है मेरे खेलिवेको ठिकानो यह दह है, यामें जो मनुष्य स्नान करैं पितृदेवताकूं तर्पण करे व्रतकरिके मेरे ध्यान करैं मेरो पूजन करे वह पुरुष समस्त पापनते छूटि जाय है ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ जा गरुडके भयते रमणकद्वीपकूं छोडिके तू या दहमें आयके रह्यौ है वह गरुड तोकूं न खायगो कारण कि तेरे माथेपै मेरे चरणनको चिह्न है ॥६३॥ ऋषीश्वर कहे हैं कि अद्भुतकर्मा भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने या प्रकार काली सर्पकूं कही तब काली सर्प बडे आनंदसूं श्रीकृष्णचंद्रकी पूजा करत भयो और कालीकी स्त्रीभी आनंदते पूजा करत भई ॥ ६४ ॥ दिव्य वस्त्र माला मणि और बडे मोलके गहने दिव्य सुगंधि केशरि कस्तूरी चंदन बडी बडी कमलनसूं ॥ ६५ ॥ गरुडध्वज जगत्के नाथ श्रीकृष्णचंद्रकी पूजा करि प्रसन्न करिके पीछे आज्ञा पाय वह काली सर्प प्रसन्न होयके परिक्रमा प्रणाम करिके अपनी स्त्री बालकनकूं संग लैके समुद्रके द्वीपमें जात भयो ॥ ६६ ॥ क्रीडा करिवेके निमित्त मनुष्यरूपधारी भगवान् श्रीकृष्णचंद्रकी कृपाते ताही समय यमुनाजीको विष दूरि होयके अमृतसो जल होतभयो ॥ ६७ ॥

तदैव साऽमृतजला यमुना निर्विषाऽभवत् ॥
अनुग्रहाद् भगवतः क्रीडामानुषरूपिणः ॥ ६७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषायां दशमस्कन्धे पू० कालियनिर्यापणो नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

राजोवाच—नागालयं रमणकं कस्मात् तत्याज कालियः ॥
कृतं किं वा सुपर्णस्य तेनैकेनासमञ्जसम् ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् प्रश्न करै हैं कि सर्पनके रहिवेको स्थान रमणकद्वीप है, ताकूं काली सर्प कौन कारणते छोडत भयो और गरुडको अकेले कालीनेही अपराध करो अथवा और सर्पननेहू करो यह कथा हमारे आगे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ हे महाबाहु राजा परीक्षित्! गरुड नित्यप्रति रमणकद्वीपमें सर्पनकूं भक्षण करिवेको आवै हो तब संपूर्ण सर्पनने आपुसमें विचार करि मास मासको अपनो दुःख निवृत्ति करिवेके लिये वृक्षकी जडमें एकान्त गरुडकी भेंट निश्चय करि दीनी ॥२॥ सो अपनी अपनी वारीसूं भेंट रखि आमें, और पर्व पर्वमें महात्मा गरुडको भेंट देय हैं ॥ ३ ॥ विषके पराक्रमको अभिमानी कद्रूको पुत्र काली गरुडको तुच्छ मानिके सर्पान्न गरुडके भोगको एक दिन आपही खातो भयो ॥ ४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! भगवान्के प्यारे भगवान् गरुडजी हमारो भोजन काली खाय गयो, यह बात श्रवण करिके क्रोध करि कालीकूं मारिवेके लिये दौरिके कालीके पास आवत भये ॥ ५ ॥ विषरूप शस्त्रवारो काली सर्प ऊंचे फणनकूं उठायके दौरिके आये गरुडजीके सन्मुख जातभयो, दंत आयुध, भयानक जीभ, पलकवारे भयानक आंखनवारो काली दांतनतें गरुडको काटतभयो ॥ ६ ॥ अतिक्रोधी शीघ्रगामी बडे पराक्रमी भगवान्के वाहन तार्क्ष्यके पुत्र गरुडजी सर्पकूं अपने अंगमेंते छुडायकै सुवर्णकेसे प्रकाशवारे बांये पंखसो कद्रूके पुत्र कालीकूं मारते भये ॥ ७ ॥ गरुडके पंख लगिवेसो वह कालीसर्प व्याकुल

१ यह सामग्री सब प्रभावसे प्राप्त होती हुई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होयके सौभरिऋषीश्वरके शापते गरुडजीको दुर्गम तथा बडो गेहरो ऐसे यमुनाजीके दह तामें आयके निवास करतभयो ॥ ८ ॥ ता दहमें एक समय गरुडजी मछरीनके खायवेकी इच्छा करिके आये तब सौभरिऋषिने मने करो तथापि क्षुधाके मारे जोरावरी खाय गयो ॥ ९ ॥ जब मच्छरीनको राजा एक बडो मच्छ मरिगयो, तब और मच्छरीनकूं दीन देखिके उनके बचिवेके लिये सौभरिऋषि यह कहत भये ॥ १० ॥ या दहमें गरुड आयके जो मच्छरीनकूं खाय तौ तुरत गरुडके प्राण निकसि जांय यह बात मैं सत्य कहूंहूं याप्रकार प्राणिमात्रकी रक्षामें तात्पर्यवारे सौभरिऋषि यह शाप देत भये ॥ ११ ॥ गरुडको सौभरिऋषिको शाप भयो यह बात कालीही जाने हो और कोई नहीं जानेहें यासों गरुडके भयते काली वास करतो हो, सो श्रीकृष्णचंद्रने निकासि दियो ॥ १२ ॥ सुंदर माला पहिरे चंदन केशरि लगाये वस्त्रनकूं पहिरे मणिनके जडाऊ सुवर्णके गहने पहिरे श्रीकृष्णचंद्र जब दहमेंते बाहर निकसे ॥ १३ ॥ तब उनको देखिके समस्त व्रजवासी ठाढे हैगये जैसे प्राण आयेते इंद्रिय चैतन्य है जाय है या प्रकार आनंदमें भरे व्रजवासी प्रसन्न होयके छाती लगाय आवै मिलत भये ॥ १४ ॥ हे कुरुवंशमें भये राजा परीक्षित् ! यशोदाजी रोहिणीजी नंदजी गोपी गोप समस्त श्रीकृष्णचंद्रकूं आये देखिके जैसे गये प्राण आवें ऐसे पूर्ण मनोरथ भये ॥ १५ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके प्रभावके जाननवारे बलदेवजी छातीते लगायके हँसत भये, वृक्ष गऊ बैल बछरा जे हैं वेहु इनको देखिके बडे प्रसन्न होत भये ॥ १६ ॥ स्त्रीनकूं संग लैकै गुरु पुरोहित ब्राह्मण नंदजीके पास आयके कहत भये कि कालीने तुम्हरो पुत्र श्रीकृष्ण डस्यौ वाते अब छुटो यह बडो मंगल भयो ॥ १७ ॥ इनके मंगलके निमित्त ब्राह्मणनको दान देउ तब जा समय श्रीकृष्णचंद्र नागते छूटिके आये ता समयकी बधाईमें नंदरायजी प्रसन्न होयके हे राजन् परीक्षित् ! गौ सुवर्ण दान ब्राह्मणनको देते भये ॥ १८ ॥ पतिव्रता श्रीयशोदाजी नष्ट भयेसे पुत्र श्रीकृष्णचंद्रकूं प्राप्त होयके छातीते लगाय गोदमें बैठार वेरि वेरि नेत्रनमेंते आंसू छोडतभई ॥ १९ ॥ हे राजन् ! नष्ट भये पुत्रकूं पायके भूख प्यास करिकै पीडित व्रजवासी गऊ संपूर्ण वा दिन रात्रकूं यमुनाजीके किनारे वास करत भये ॥ २० ॥ वाही दिन अर्द्धरात्र समय गरमीकी ऋतुमें शुष्कवनमें व्रजवासी सब सोय गये, तब चारों ओरते घेरके दैत्य वनकी ज्वालासौं जरायवेको उपाय करत भयो ॥ २१ ॥ तापीछे सब व्रजवासी जरन लगे तब उठिके हरबरान लगे मायाकरिके मनुष्यरूपधारी समर्थ श्रीकृष्णकी शरण लेतभये ॥ २२ ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे महाभाग ! हे राम बडे पराक्रमी ! तेरे हम व्रजवासीनको भयानक यह अग्नि जरावै है ॥ २३ ॥ हे समर्थ ! असह्य कालरूप अग्नि हम मित्रनकूं जरावै है यासों बचाओ भयरहित

---

१ सवैया—हरि वदनको लखि राशी सुखकी मुदित व्रजवासी भये । मनहु बूडत नाव पाई परम उर आनँद छये ॥ मातु पितु लखि जो भये सुखजात सो कापै कह्यो । पुलकि तन मन हराखि गद्गद प्रेमजल लोचन बह्यो ॥

२ एक राजाके पास एक वैद्य डिब्बा भरकै रस लायें और कही जो इस रसको शींक भरके हाथीको सुंघाओ तौ वहभी मरजाय आदमीकी तौ बातही कौन है यह डेढपाव रस १० हजारको है राजाने कही समय पर जानै कौन वस्तु काम आय जाय लेलियो, और अपने नौकरको सौंपदियो एक नये नौकरनै कही खिडकीमें राजपुत्री देखली, फिर बडे उपाय देखनैके किये, और वो न दीखी तौ उसके वियोगमें वह रस खालियो पर मरो नहीं एक वर्ष बीत गयो, राजानै एक दिन डिब्बा मंगाया देखै तौ उसमें उंगारिनको चिह्न है राजाने खिदमतगारसे पूछी तब उसने कही कि खायो तौ मैंने है पर मरो नहीं, राजाने वैद्य बुलाय समाचार कहे वैद्यने आय नौकरकूं एकान्तमें लेजाय सत्य २ समाचार पूछे तौ उसने सत्य कहदी वैद्य बोले राजन् ! रस सांचो है और एक शींक भरकै कुत्ताकूं सुंघाई वो तुरत मरगयो, तब राजानै कही नौकर क्यों न मरो वैद्य बोले राजकन्याको छन मात्रको खिडकीमें बैठाय दो और आपका यह नौकर ह्यां खडो रहै, राजानै वैसेही करी सो राजकन्याकी दृष्टि पडतेही नौकर मरगयो, कारण कि उसके प्राण राजकन्यामें अटकेहैं तौ ऐसेही व्रजवासियोंके मन जब कृष्णमेंसे निकसै तब उन्हैं भूख प्यास लगी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तुम्हारे चरण हमपै नहीं छोडे जायहै अग्निमें जरिवेतेहू हम नहीं डरपै हैं किंतु तुम्हारे चरणनके वियोगते डरपे हैं ॥ २४ ॥ या प्रकार विश्वके ईश्वर और अनंत शक्तिनकूं धारण करनहारे अनंत श्रीकृष्णचंद्र अपने ब्रजवासीनकी व्याकुलता देखिके भयानक अग्निकूं पान करत भये ॥ २५ ॥

इत्थं स्वजनवैक्लव्यं निरीक्ष्य जगदीश्वरः ॥
तमग्निमपिबत् तीव्रमनन्तोऽनन्तशक्तिधृक् ॥ २५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० पू० कालियदमनो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय १८.

श्रीशुक उवाच–अथ कृष्णः परिवृतो ज्ञातिभिर्मुदितात्मभिः ॥
अनुगीयमानो न्यविशद्व्रजं गोकुलमण्डितम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी राजापरीक्षित्तें कहेहैं कि हे राजन् ! प्रसन्नमनवारे जातिके ब्रजवासीनकूं संग लैके आगि पियेके पीछे ब्रजवासी जननके गाये अपने चरित्रकूं सुनते श्रीकृष्ण गऊनके समूहसूं शोभायमान ब्रजमें आवत भये ॥ १ ॥ गौनको चरावनवारे गोपाल वेशकी मिससों मायाकरिके या प्रकार ब्रजमें श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीको लीला करते २ गरमीकी ऋतु आवत भई, यह गरमीकी ऋतु देहधारीनकूं बहुत प्यारी नहीं लगेहै ॥ २ ॥ गरमीकी ऋतु वृन्दावनके गुणनसूं वसंत ऋतुकी तुल्य दिखाई देय हैं, जा वृन्दावनमें साक्षात् केशव भगवान् बलदेवजीकूं संग लैके रहे हैं ॥ ३ ॥ जा वृन्दावनमें झरनानके शब्दसूं झींगरकी बोली नहीं सुनाई देइहै, सदा झरना जो झरे है तिनके छीटानसों हरे वृक्षके समूहनसूं शोभायमान वृन्दावन होय रह्यो है ॥ ४ ॥ हरी २ घास जामें ह्वैरही वा वृन्दावनमें कह्लार कंज उत्पल कमलकी जातीनकी गंधयुक्त नदी सरोवर झरनानसूं स्पर्श करिके पवन चले है तासूं वृन्दावनवासीनकूं गरमीकी ऋतुमें अग्निकी तथा सूर्यकी गरमाई नहीं सतावैहै ॥ ५ ॥ बडे जलवारे सरोवरनके किनारेसूं लगिके जो लहरें उठे हैं तिनसूं टापूनकी तथा किनारेनकी पृथ्वीमें सजलताई आवै है, वा पृथ्वीकी सजलताईकूं और हरियालीकूं विषकी तुल्य भयानक सूर्यकी किरणें नहीं सुखावैहैं ॥ ६ ॥ पुष्प फूलि रहे अनेक जातिके जीव जन्तु पक्षीके शब्दनसों युक्त मोर भौंरा कोकिला सारस पक्षिनके शब्दनसों शोभायमान वृन्दावन है ॥७॥ तामें श्रीभगवान् कृष्णचंद्र बलदेवजीकूं संग लैके और गोप गोपीनकूं संग लैके बांसुरी बजायके खेलिवेकूं जातभये ॥ ८ ॥ पत्ता मोरपुच्छ फूलनके गुच्छा माला खरिया गेरु मनशिलसूं शृंगार करिके रामकृष्णसूं आदि लैके ब्रजवासी कभऊ नाचत भये कभऊ गावत भये कभऊ कुस्ती लडतभये ॥ ९ ॥ कृष्णचंद्र जब नृत्य करे हैं तब कोई ग्वालबाल गावतभये, ॥ और बांसुरी हथेरी सींगी बाजेनकूं बजावत भये, कोई भले नाचे या प्रकार बडाई करत भये ॥ १० ॥ हे राजन् परीक्षित्! गोपरूपमें छिपे देवता गोपालरूप श्रीकृष्णचंद्र बलदेवकी बडाई करत भये, जैसे नट नटकी बडाई करे हैं ॥ ११ ॥ मुंडन संस्कार अभी जिनको नहीं भयो ऐसे श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजी दोनों भैया कभऊ छाई मांई खेले है, कभऊ कूदे हैं कभऊ धक्काधक्की करे हैं कभऊ खंब ठोके हैं, कभू भ्रमण करैहैं कभू फलागे हैं कभऊ खेंचाखेंची करे हैं, या प्रकार क्रीडाकरिके खेलतभये ॥ १२ ॥ हे राजन् परीक्षित! कभऊ एक ग्वालबाल नाचे हैं, तब श्रीकृष्णचंद्र बलदेव दोनों भैया आप गामें हैं और बाजे बजायके भले नाचे भले नाचे या

---

१ अर्थात् वा समय बहुत देवता ग्वालरूप बनायके कृष्णके संग खेलते हैं ॥ २ काकपक्ष नाम बालनकी अलकावलीनको है जिनको कुल्ले कहै हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रकार बडाई करत भये ॥ १३ ॥ कभऊ बेलके फलनकूं फेंके हैं, कभऊ कुंभवृक्षके फलनकूं फेंके हैं, कभऊ आमले मुट्ठीनमें लैलैके फेंके हैं, कभऊ छुआछुई कभऊ आंखिमिचौनी आदि लेके खेल खेलत भये कभऊ एक पशु पच्छी बनिके खेले हैं ॥ १४ ॥ कभऊ एक मेंढककी तुल्य फुदकै हैं कभऊ टेढी पाग करिके भांडनकीसी नकल करै हैं, कभऊ वृक्षमें झूला डारिके झूले हैं, कभऊ श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजी राजा बने हैं, ग्वालबालनकों सिपाई बनामें हैं, ग्वालिन दही लेके आमें हैं तिनसूं कर लेय हैं ॥ १५ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजी दोनों भैया संसारमें प्रसिद्ध खेलनकूं करि करिके नदीनमें गोवर्द्धन पर्वतकी गुफानमें कुंजनमें बननमें सरोवरनमें विचरत भये ॥ १६ ॥ ता वृन्दावनमें गोपनकूं संग लैके गऊनकूं चरामनहारे श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीको हर लैवेके कारण प्रलंबासुर गोपको रूप धरिके आवत भयो ॥१७॥ दाशार्ह वंशमें प्रकट भये समस्त बातनके जाननवारे श्रीकृष्णचंद्र भगवान् मनमें जानें हैं कि यह असुर आयो तब वाके मारवेको विचार कर तथापि वाके न जानिवेके लिये बडाई करत भये भली भई भली भई मित्र तू अब जलदी आय गयो ॥ १८ ॥ खेलके जाननवारे श्रीकृष्णचंद्र ता समय ग्वालबालनकूं बुलायके कहत भये हैं, हे ग्वालबालो ! हम बराबरके दोनों मिलिके खेल खेलेंगे ॥ १९ ॥ ता समय ग्वाल श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजी दोनोंनको मुख्य बनावत भये, कोई ग्वाल श्रीकृष्णचंद्रकी ओर होतभये, और कोई ग्वाल बलदेवजीकी ओर होत भये ॥२०॥ पीठिपै चढिवो और चढायके ले चलिवो ऐसे अनेक प्रकारके खेल खेलत भये, या खेलमें जे बालक खेल जीते तौ पीठिपै चढे हैं, और जे हारे ते चढायके ले चलै हैं ॥ २१ ॥ चढत चढावत गायनकूं चरावत श्रीकृष्ण सहित वे ग्वाल भांडीरक वटको जात भये ॥ २२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! बलदेवजीकी ओरके श्रीदामा वृषभकूं आदि लैके बालक या समय खेलमें जीते, तब श्रीकृष्णचंद्रकूं आदि लैके बालक पीठिपै चढायके चलत भये ॥ २३ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र जब हारे तब श्रीदामा गोपकूं अपने ऊपर चढायके चलत भये, भद्रसेन ग्वाल वृषभको चढावत भयो, प्रलंबासुर रोहिणीपुत्र बलदेवजीकूं चढावत भयो ॥ २४ ॥ दानवनमें श्रेष्ठ प्रलंबासुर श्रीकृष्णकूं जोरावर मानिके बलदेवजीकूं पीठिपै चढायके शीघ्रताते दौरिके जहां उतरिवेको करार हो तहांते आगे जातभयो ॥२५॥ महा असुर पर्वतके समान भार करनहारे बलदेवजीको पीठिपै चढायके भाज्यो, तासूं वाको बल थकि गयो तब अपने असुररूपको धरिके सुवर्णके गहने पहिरे ऐसे सुन्दर लगतभयो जैसे चंद्रमा बिजली सहित मेघ सुंदर लगे है चंद्रमासमान बलदेवजी है, और मेघसमान असुर है, बिजुरी सदृश वाके गहने हैं ॥ २६ ॥ आकाश पर्यंत प्रकाशमान ऊंचे नेत्र (अथवा कराल भौंहें और भयानक जाकी डाढ हैं) भौंहनसूं लगी भयानक डाढवारो है लाल ताम्र वर्णसे बारबारो कडा कुंडल मुकुटकी शोभासों अद्भुत असुरको रूप देखिकै हलके धारण करनवारे बलदेवजी यह कैसो गोप ऐसे कुछ मनमें डरपत भये ॥ २७ ॥ पहिले तो किंचित् भय मानो तापीछे सुधि आयगई कि यह तो असुर है तब भयरहित होय बलदेवजी अपने गोपनते छुटायके आपकूं जोरावरीसे लेजाते असुरके मुंडमें क्रोधकरिके जोरते मुक्का मारत भये, जैसे देवतानमें मुख्य इंद्र वज्रतें पर्वतको मारे हैं ॥ २८ ॥ मुक्काके लागेते तुरत ताको माथो फटिगयो, सुधि जातरही तब प्रलम्बासुर बडो शब्द करत इंद्रके वज्रके मारे जैसे पहाड गिरे है तैसे मरिके गिरत भयो ॥२९॥ बडे बलवान् बलदेवजीसो मरे प्रलम्बासुरकूं देखिके ग्वालबालनने बडो आश्चर्य मानो, भली करी भली करी ऐसे कहत भए ॥ ३० ॥ चिरंजीव रहो ऐसे

१ सुनो यार तुम नित्य खेलवे आयो करो तुम हमारे यार भये इत्यादि ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बलदेवजीको गोप आशीर्वाद देत भये प्रशंसाके योग्य बलदेवजीकी प्रशंसा करत भये और जैसे कोई मरिके बगद आवै है, ऐसे बलदेवजीसों मिलिके प्रेमविह्वल मन होत भये ॥ ३१ ॥ पापी प्रलम्बासुर मरो देवतानके बडो आनंद होत भयो, बलदेवजीके ऊपर फूलनकी वर्षा करत भली करी भली करी ऐसे स्तुति करत भये ॥ ३२ ॥

पापे प्रलम्बे निहते देवाः परमनिर्वृताः ॥
अभ्यवर्षन् बलं माल्यैः शशंसुः साधु साध्विति ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० प्रलबवधो नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

श्रीशुक उवाच–क्रीडासक्तेषु गोपेषु तद्भावो दूरचारिणीः ॥
स्वैरं चरन्त्यो विविशुस्तृणलोभेन गह्वरम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहे हैं कि हे राजन् परीक्षित! ग्वालबाल समस्त खेलमें आसक्त भये, तब उनकी गौ दूरि अपनी इच्छासों चरती चरती घासके लोभसो सघनवनमें जात भई ॥ १ ॥ ओसेरें गऊ भैसि एक वनमें धसिके दूसरे वनमें धसिके मुंजके वनमें धसतभई और दाव लगवेसो प्यासी हो रम्हान लगी ॥ २ ॥ तासमय श्रीकृष्ण रामसूं आदि लैके ग्वाल गऊनके देखे विना व्याकुल होयके ढूंढनलगे, कहां गऊ चली गई यह न जानत भये ॥ ३ ॥ जीविकाके साधन खोय जायवेसों तिनके चित्त स्थिर नहीं रहे, तब ग्वालबाल गौनके खुरनते दांतनते काटी घासको और खुरनके खोजनकों देखत देखत जहां होयके गऊ गईही तहां आवत भये ॥ ४ ॥ मुंजके वनमें जाके खोज समायगये ऐसे दुःखित शब्द करत गऊनके समूहकूं देखिके प्यासे और ढूंढवेके खेदसों कातर होय व्रजवासी उन्हें घेर पीछे फिरे ॥ ५ ॥ मेघकीसी गरजनवारी वाणीसूं भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने जब बुलाई तब वे गऊ अपने अपने नामकूं श्रवण करिके हर्षित होयके रम्हात भई यामें यह जतामें हैं तुम्हारी बोली तो सुनी है परंतु मार्गमें अग्नि जो लगी रहि है तासूं आय नहीं सके हैं ॥ ६ ॥ ता पीछे वनमें धूमध्वजावारो बडो अग्नि अनायास वनवासी जीवनकूं जरायवेके लिये लगत भयो, और सारथी पवन चलवेसों भवक गयो सिलगती लकरियानसूं वृक्षनकूं स्थावर जंगम प्राणीनकूं जरामन लगो ॥ ७ ॥ गोप गऊ चारों ओरते लगी अग्निकूं देखिकै भयभीत होय बलदेवजीसहित श्रीकृष्णचंद्रकी शरण आयके बोलत भये, जैसे मृत्युके भयतें व्याकुल होयके प्राणी हरिको शरण लेइहैं ॥ ८ ॥ हे कृष्ण! हे कृष्ण! बडे पराक्रमी अप्रमाण पराक्रमवारे हे राम! वनकी अग्नि हमको जरावै है तुम्हारे शरण आये हैं हमारी रक्षा करो ॥ ९ ॥ हे कृष्ण! हे समस्त धर्मनके जाननवारे! हम तेरे मित्र कष्ट पायवे योग्य नहीं हैं निश्चय करिके तुमही हमारे नाथ हो तुमारोही हमको आसरो है ॥ १० ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहेहैं सबके दुःखनके हरनवारे भगवान् मित्रनको दीनवचन सुनिके कहतभये भय मति करो नेत्र अपने मूंदिलेऊ ॥ ११ ॥ ता प्रकार सब गोपनके नेत्र मूंदवायके योगके ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र भयानक अग्निकूं मुखतें पीके मित्रनकूं

१ प्र०–क्या श्रीकृष्ण बकरीभी चराते थे जो अजा लिखा. उ०– यहा अजाशब्दसे बछियाओंका ग्रहण करना उचित है अथवा जिसके सन्तान न होती हो वेभी अजाशब्दसे ग्रहण की है इस कारण बकरीका प्रसंग न जानना चाहिये और महिषी शब्दसो यहां बहुत वेरकी ब्याही वृद्ध गउही लेनी भैंस नहीं ॥ २ करि काजर धोरी धूम रहियो ॥
३ यहां ऐसो कथाभाग कहनो भगवान् बोले कि भैयाहो एक दिन बाबाके यहां एक सिद्ध बाबाजी आयो हो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कष्टते छुडावत भये ॥ १२ ॥ तापीछे वे गोप नेत्र खोल देखें तौ फिर भांडीरवनमें लायके बैठार दिये हैं अपनेकूं और गौउनकूं अग्नितें छूटे देखिके विस्मित होत भये ॥ १३ ॥ जामें योगमायाको प्रभाव प्रगट हैरहोहै ऐसे दावाग्निके छुडायवैसो श्रीकृष्णचंद्रके प्रभावकूं देखिके कृष्ण हममें मनुष्य नहीं है देवता है ऐसे सब गोप मानते भये ॥ १४ ॥ बलदेवजी सहित श्रीकृष्णचंद्र संध्यासमय वनते गौउनकों लेके बांसुरी बजावत गोपनसौं स्तुतिको प्राप्त होते व्रजमें आवतभये ॥ १५ ॥ कृष्णचंद्रके दर्शन करेते गोपीनको परम आनंद होतभयो उन्हें श्रीकृष्णके दर्शन विना एक क्षण सौ युगकी बराबर बीततभयो ॥ १६ ॥

गोपीनां परमानन्द आसीद्गोविन्ददर्शने ॥
क्षणं युगशतमिव यासां येन विनाऽभवत् ॥ १६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० दावाग्निमोक्षो नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अध्याय २०.

श्रीशुक उवाच-तयोस्तदद्भुतं कर्म दावाग्नेर्मोक्षमात्मनः ॥
गोपाः स्त्रीभ्यः समाचख्युः प्रलम्बवधमेव च ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले कि अग्नितें अपनेको छुडायो, श्रीकृष्ण बलरामके या अद्भुत कर्मकूं गोप स्त्रीनते कहतभये प्रलंबासुरको वधहू कहत भये ॥ १ ॥ वृद्ध वृद्ध गोप गोपी यह बात सुनके विस्मय मानिके व्रजमें आये श्रीकृष्ण बलदेवकूं मुख्यदेवता मानत भये ॥ २ ॥ गरमीकी ऋतुके पीछे वर्षाऋतु आवतभई ता वर्षाऋतुमें कितनेहू जीव उत्पन्न होयहै, और कितनेहू जीव नष्ट होयहैं और कितनेहू जीवनकी जीविका होयहै सूर्य चंद्रमाके मंडल प्रकाशित होयहैं, आकाशमें क्षोभ होयहै ऐसी वर्षाऋतु प्राप्तभई ॥ ३ ॥ बिजुरीके चमकेसो गर्जनवारे सघन नीले बादर छायरहेहैं सूर्य चंद्रमा तारागणको प्रकाश ढकजायवेसो आकाश वर्षाऋतुमें सुंदर लगत भयो, जैसे सतोगुण रजोगुण तमोगुणकी उपमा है, यह त्यागिवे योग्य दृष्टांत है जीवकौ ऐसो नहीं चाहिये जो गुणनकरि आवृत होइ जांय ॥ ४ ॥ आठ महीना पर्यंत जो सूर्यने अपनी किरणकरि पृथ्वीको जलरूप द्रव्य सोखो हो वाय वर्षाऋतुमें वर्षायवेको प्रारंभ करत भयो, या श्लोकमें राजाकी उपमा जताई जो अपनी प्रजासूं सुकालमें कर लेई है, अकालमें उनको अन्न देंके पालन करे, यह ग्रहण करिवे योग्य दृष्टान्त है राजाकूं ऐसोही करिवो उचित है ॥ ५ ॥ बडी पवनकरिके चलायमान किये बिजुलीकी चमकसो युक्त बडे मेघ या विश्वको पुष्ट करनवारे जीवन जलको वर्षावत भये, जैसे करुणावान् पुरुष दुःखीनको देखिके वाके ऊपर कृपा करि ताके सुखके लिये अपने प्राणतक देई है, तैसे बडे मेघ अपने बिजुली रूप नेत्रनते सन्तप्त विश्वको देखिके पवनसों चलायमान होयके जलकूं

सो मोकूं एक मंतुर बताय गयो हो पन वो यह कहि गयो हो कि आंख मिचवायके या मंत्रको जपेगो तब तो ये मंत्र चलैगो और नहीं चलेगो सो तुम सब अपनी २ आखें मीचलेउ जो कोउ आखें नहीं मीचैगो वोही जलजायगो तब सब छोरा बोले ले लाला हमने आंख मीचलीनी अब तू मंतुर जप परंतु कोई छोरा लुच्चा है विनने आंखें मीच तो लीनी परंतु छिद्रमेंसे देखते रहे विनने वो सब तमासो देखो ॥

१ यहाँ ऐसे कहनो । बिजुरी और गर्जना सहित जल भरे काले २ बादरनसों सूर्यादि प्रकाश रहित ढको भयो आकाश मालूम नहीं परो कि आकाश कहां है जैसे साकार स्वरूप करवेसों ब्रह्म मालूम नहीं परै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वर्षावें हैं, यह ग्राह्य दृष्टान्त है, कि महान् पुरुषनको ऐसोही चहिये ॥ ६ ॥ गरमीकी धूपसों दुर्बल हैवेसो इन्द्रसो वर्षाद्वारा सींची गई पृथ्वी वर्षाऋतुमें फूलत भई पुष्ट होतीभई यह वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टान्त है जैसो कोई पुरुष पुत्र अथवा धनकी इच्छा करिके तप करे है तब वाको देह सूख जाय है तपको फल मिले पीछे फिर देह जैसे पुष्ट होय है, यह त्याज्य दृष्टान्त है पुरुषको ऐसो उचित नहीं है जो सकाम तप करे ॥ ७ ॥ वर्षाऋतुमें सन्ध्यासमय पटवीजना प्रकाश करे हैं तारागण नहीं प्रकाश करे हैं यामें दृष्टान्त जैसे कलियुगमें पापसूं पाखण्डमार्ग चले है, वेदमार्ग अस्त होयहै, यह त्याज्य दृष्टान्त है पुरुषनकूं ऐसो उचित नहीं है जो पाखण्डमार्गमें प्रवृत्त होंय ॥ ८ ॥ वर्षाऋतुमें मेघकी गर्जन सुनिके मेढुक बोलत भये, यामें दृष्टान्त है जैसे विद्यार्थी पहले चुप बैठरहे हैं गुरु जब सन्ध्योपासन करचुके है तब पाठ लैके पढे हैं यह ग्राह्य दृष्टान्त है विद्यार्थीको यही उचित है गुरु जब बुलावो तब पाठलेय ॥ ९ ॥ शीघ्रही सूख जायवेवारी क्षुद्र नदी वर्षाऋतुमें जल वर्षवेसो मर्याद छोड छोडके उमड उमडके बहत भई जैसे इन्द्रीनके वशते पुरुषके देह द्रव्य सम्पत्ति खोटे मार्गमें लगे है कि यह त्याज्य दृष्टान्त है ऐसो न चाहिये जो कुमार्गमें धन लगामें ॥ १० ॥ वर्षाऋतुमें हरी हरी घास जामें उत्पन्न भयी जासों तो हरी है गई और जापें लाल लाल वीरबहोटी डोलन लगी छतोना फूलि आये ऐसी पृथ्वी शोभित होत भई, यह तो वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टान्त है जैसे राजनकी सैन्य डेरा तम्बूनसूं हरे लाल बनाती बिछोनानसूं सुन्दर लगे है यह ग्राह्य दृष्टान्त है राजानकूं ऐसोही चाहिये जो बनाती बिछोना बिछामें फटे टूटे न राखें ॥ ११ ॥ वर्षाऋतुमें हरे हरे अन्न जो उपजे हैं तिनकूं देखिके खेतवारेनकूं आनंद होय है, देवकी बातको नहीं जानिके जिन मनुष्यनने अन्नकी भरतीकरी तिनकूं दुःख होत भयो हम तो यह जानी ही कि एकके दो करेंगे पर यहां तो आधी जमा रहिगई, यह त्याज्य दृष्टान्त है ऐसो व्यवहार करनो न चाहिये जामें सबको बुरो विचारवो आवै ॥ १२ ॥ जल और स्थलके समस्त प्राणी वर्षाऋतुके नये जलको सेवन कर तासूं सुंदर रूप होतभये यह तो वर्षाऋतुको वर्णन है जैसे भगवान्को सेवन करेतें भक्त सुन्दर रूप होयजाय हैं, यह ग्राह्य दृष्टान्त है मनुष्यको ऐसाही उचित है ॥ १३ ॥ वर्षाऋतुमें नदिनके आयके मिलवेसो पवनद्वारा लहर उठिवेसो समुद्रको जल चलायमान होतभयो, यह तो वर्षाऋतुको वर्णन है जैसे अपक्वचित्त योगी मनुष्यको चित्त विषयमें चलायमान होय है यह त्याज्य दृष्टान्त है योगीनको ऐसो न चाहिये जो विषयनते चलायमान होय ॥ १४ ॥ वर्षाऋतुमें पर्वतनके ऊपर मेघ वर्षवेसो यत्किञ्चित्हू उनको खेद नहीं होय है, धुइ धुइके उनकी शिला स्वच्छ होयजांय हैं यह तो वर्षाऋतुको वर्णन यामें दृष्टान्त है जैसे जिन पुरुषनके चित्त भगवान्में लगे हैं उनके ऊपर कैसोहू कष्ट आवै अर्थात् पुत्र मरिजाय धन नष्ट होय जाय यामें कष्ट नहीं माने हैं

---

१ यहां ऐसें दृष्टांत घटामनो जैसे क्षुद्रमनुष्य किंचिद्धनादिक पायके उभरायके चले है कि मेरी बराबर कोई नहीं है ऐसेही ॥ २ एक बनियाको दो बेटा हे वाने विचार कियो कि बेटानके जुदे किया विना इनपै बोझ नहीं परैगो यह विचारके दोनोंको जुदो करदियो तब कुछ रुपया ले व्यौपार कर दोनौ परदेशमें जाय पांच पांचसै रुपैया कमाये अब घरकू चलती वेर विचार करी कि जो हुंडी करावें तौ दौनौंपै हुंडिया बनबरे यासे स्यानके मारे असरफी बंधाया वसनीमें धर कमरमें बांध चले जायके सुना कि रस्तामें लूट परै रहै अब कैसे चलैं बडे भैयानै तौ वाही सहरमें हलवाई बुलाय अच्छी सुंदर मिठाई बनवाय दूसरे दिन ब्राह्मण साधूनकी पंगत करदई दूसरे भैयानै कही यह तौ बावरो है सब रुपया लुटायदेयहै घरकनकूं कहां धुरि देयगो हम तौ ऐसे लै चलेंगे कि कोउ न जानै सो लंगोटीमें अशरफीकी बसनी धर ताके ऊपर धोती कस तापै पाजामा पहर अंगरखा सजाय ऊपरसै पटका कस्यो दौनों चले लूटनैहारोंने आय घेरे बडो भैया बोल्यो मैंने तो ब्राह्मण जिमाय दीन्है यह कपडा दिलाय अलग ठाडो है गयो वाकू छोड दीनो अब दूसरेकू

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यह ग्राह्य दृष्टांत है दुःखमें मनुष्य व्याकुल न होय ॥ १५ ॥ वर्षाऋतुमें तृण बढवेसो मार्ग ढकिगयो, संदिग्ध हे गये अर्थात् या ग्रामको कौन मार्ग है यह जानिवेमें नहीं आवे, यह वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे ब्राह्मण एकवेर वेद पढिके पोथी बांधिके धरिदेई हैं फिरि बहुत दिनमें खोलिके देखे तब उनको संदेह होयहै या श्रुतिको अर्थ कैसे है यह त्याज्य दृष्टांत है ब्राह्मणको ऐसो उचित नहीं है जो बहुत दिनमें पोथी खोलें किंतु खोलिके देखोकरें ॥ १६ ॥ लोकनके हितकारी मेघनमें चलायमान बिजुरी स्थिरता न करत भई कभऊ काहू बादरमें जाय चमके है कभऊ काहू बादरमें जाय चमके है यह वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे विवेकी पुरुषनमें व्यभिचारिणी स्त्री स्थिर नहीं रहै, यह ग्राह्य दृष्टांत है कि व्यभिचारिणी स्त्रीनको विश्वास न करे ॥ १७ ॥ वर्षाऋतुमें गर्जनके शब्दवारे आकाशमें प्रत्यंचा रोदा विना इंद्रको धनुष शोभाको प्राप्त होत भयो यह वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है गुणनके बने संसारमें निर्गुण पुरुष जैसे सुंदर लगे है अर्थात् जैसे गुणयुक्त प्रपंचमें निर्गुण आत्मा शोभा देय है ॥ १८ ॥ वर्षाऋतुमें अपनी चांदनीसूं प्रकाशमान बादरनसों आवृत होयके चन्द्रमा सुन्दर नहीं लगे है, यह तो वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे मैं पंडित हूं दाता हूं सर्वज्ञ हूं शूरवीर हूं ऐसे अभिमानतें पुरुष सुन्दर नहीं लगे है, अथवा जैसे आत्माहीसों प्रकाशित भए अहंकारसों आच्छादित आत्मा प्रकाशित नहीं होय है यह त्याज्य दृष्टांत है पुरुषको ऐसो उचित नहीं है ॥ १९ ॥ वर्षाऋतुमें मेघनके आयवेके आनंदसूं हर्षित होयके मोर शब्द करतभये. यह तो वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे घरनमें संतापित हुए वैराग्यमान पुरुष साधुनके आयेते हर्षित होय है यह ग्राह्य दृष्टांत है गृहस्थीनकूं यही चहिये जो अपने यहां साधु सज्जन आवे तो यह न कहे है कि हमही भूखे मरे हैं याकूं कहांते लामें ॥ २० ॥ वर्षा ऋतुमें वृक्ष अपनी जडनसूं जल पीके हरे हरे लाल लाल पत्तानसों शोभित भये यह वर्षाऋतुको वर्णन है, यामें दृष्टांत है तपके करेतें मनुष्यनके प्रथम देह दुर्बल है जाय हैं जब फिरि पुष्टिकारक भोजन मिलेते पुष्ट हैके लाल है जाय हैं, यह त्याज्य दृष्टांत है मनुष्य खाने पीनेके लिये तप न करे ॥ २१ ॥ वर्षाऋतुमें कांटे और कीचसो युक्त किनारेवारे सरोवरनमें चकवा चकवी वास करत भये यह वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे अनेक प्रकारके करवे योग्य धंधेनकी पीडासो घरनमें विषयी पुरुष वास करे हैं यह त्याज्य दृष्टांत है मनुष्यको ऐसो न चाहिये जो सर्वदा घरमें शिर दिये रहे कछु भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकोहू भजन करे जाय जामें याको कल्याण होय ॥ २२ ॥ वर्षाऋतुमें इंद्रके वर्षवेसो खेतीकी मर्यादा टूटि जातभई यह तौ वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है पाखंडिनके शब्द सुनिके जैसे कलियुगमें वेदमार्ग दूरि हे जाय हैं यह त्याज्य दृष्टांत है मनुष्य पाखंडिनके शब्द सुनिके वेदमार्गको त्याग न करै ॥ २३ ॥ वर्षाऋतुमें बादर पवनसूं चलायमान हैके प्राणीनको अमृत रूप जल वर्षावत भये, यह वर्षाऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे समय समयमें राजा पुरोहितके कहेतें दान पुण्य करे है तब वे ब्राह्मण आशीर्वादनकी वर्षा करै हैं यह ग्राह्य दृष्टांत है पुरोहितनकूं ऐसोही चाहिये जो कहिके राजाते दान करायकर दीननकूं दिवामें ॥ २४ ॥ जंबू फल और खजुरके पके वृक्षनसो श्रेष्ठ वृंदावनमें श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीकूं संग लैके और गऊ गोपनकूं संग लैके रमण करिवेको जातभये ॥ २५ ॥ बडे बडे ऐननके बोझसूं होले होले चलनहारी गऊ श्रीकृष्णचंद्र भगवान्ने प्रीति करिके नाम लैके बुलाई तब स्तननमेंते दूध टपकाती गऊ दौरि दौरिके आवति भई ॥ २६ ॥

पकरकै दो चार लात मारकै लंगोटी खुलवाय असरफी निकसवाय लीनी अब धन तौ दौनोंको गयो पर जाको धर्ममें गयो वाको चौगुनो भयो जाको चोर ले गये वाको वृथाही गयो लालाने बोझ डारौ वे घरकी जमाहू लुटाय आये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वननकी रहनवारी भीलनीनकूं श्रीकृष्णचन्द्र प्रसन्न देखतभये, मकरंद चुचामनहारी वृक्षनकी लतानकूं और गोवर्द्धन पर्वतमेंते झरना झरे हैं तिनकूं देखतभये, और झरनाके जलके शब्दको सुनतभये, निकट गुफाकूं देखतभये ॥ २७ ॥ कबऊ एक वर्षा होय है तब श्रीकृष्णचन्द्रकूं वृक्षकी खोतरिमें गिरिराजकी गुफामें जाय बैठे हैं, वनके कंद मूल फलनके भोजन करि करिके मित्रनके संग खेलत भये ॥ २८ ॥ इतनेमें यशोदाजीकी पठाई ग्वालिनी दही भात लेके आवतभई, ताही जलके समीप शिलाके ऊपर परोसिके भोजन करायवे योग्य गोपनकूं और बलदेवजीकूं संग लैके भोजन करतभये ॥ २९ ॥ वा समय पेटके भर जायसो बैल बछरा हरी हरी घासपै बैठे आंखें मीचके जुगालकर रहेहैं और गैया ऊधके ऐनके भारसो थकके बैठी जुगाल करतीही ऐसी गौउनकूं देखिके ॥ ३० ॥ सब प्राणीनकूं आनंदकी देनवारी वर्षाऋतुकी शोभा और अपनी शक्तिते युक्त वर्षाऋतुको देखिके श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् प्रशंसा करत भये, या वृन्दावनमें वर्षाऋतु कैसी सुंदर लगे है ॥ ३१ ॥ या प्रकार व्रजमें श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवजीके वास करते २ बदरानसो रहित निर्मल जलवारी मंद पवन वहामनहारी शरदऋतु प्राप्त होत भई ॥ ३२ ॥ कमल उपजवेसों शरदृतुमें जल निर्मल होत भये, जैसे विगरे योगिनके चित्त फिर योग करते शुद्ध है जाय है, यह ग्राह्य दृष्टांत है योगिनकूं यही चाहिये विगरे चित्तको योग करिके सुधारिलेय ॥ ३३ ॥ वर्षाऋतुमें आकाशमें बादर गर्जो करो हैं, शरदऋतुमें बादरनकी गर्जन जात रही वर्षाऋतुमें प्राणी मिलिके एक स्थानमें रहे हैं, शरदऋतुमें न्यारे न्यारे बिछुरि जांय हैं, पृथ्वीकी कीच शुष्क होय गई, जलनकों मैल दूरि होय गयो, यह तो शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी इन चारों आश्रमीनको भगवान्‌की भक्ति भयेसूं क्लेश जात रहे ब्रह्मचारी गुरुनके लिये जल जब ताईं भरो करै यावत्पर्यंत भक्ति उदय नहीं होय, भक्ति भये पीछे जल भरिवेको परिश्रम नहीं रहे हैं गुरुहू जब वाके भक्ति है जाय हैं तब वाकौं टहलकी आज्ञा नहीं करें है, ऐसे आकाशकी गर्जन शरदऋतुमें दूरि है गई, गृहस्थीको जब ताईं भक्ति उदय नहीं होय है तब ताईं अपने संतानादिकनमें रह्यो आमें हैं, भक्ति भये पीछे एकांत वास करिवेकी इच्छा होय है तब विनको संग छोडि देइ हैं ताही प्रकार प्राणीनको जो एक वास हैं सो छूटत भयो ऐसेही वानप्रस्थ जब ताईं भक्ति उदय नहीं होय है तब ताईं देह मलीन राखे हैं भक्ति भये पीछे जैसे वाकी मलीनता दूरि है जाय है, ऐसे पृथ्वीकी कीच शुष्क है जाय है, और जैसे संन्यासीनको कामवासनारूप मैल श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्‌में भक्ति भयेते दूरि होय है, ऐसे शरदऋतुमें जलको मैल दूरि होत भयो ॥ ३४ ॥ बादरमेंते जलकी वर्षा होय चुकी तब वे शरदऋतुमें श्वेत श्वेत रुईकेसे[1] पहल सुन्दर लगत भये, यह तो शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे द्रव्य पुत्र और लोक वासना और पाप दूरि हैवेसों शांत स्वभाव मुनीश्वर सुन्दर लगे हैं यह ग्राह्य दृष्टांत है मुनीश्वरनको यही उचित है जो वासनानकूं दूरि करें ॥ ३५ ॥ पर्वत कहूं मंगलरूप तोय झरनानसूं वहावे हैं और कहूं नहीं वहावे हैं यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे ज्ञानी पुरुष समय समय ज्ञानरूप अमृतके पात्रकूं देखिके उपदेश करें हैं सबकूं नहीं करे हैं, यह ग्राह्य दृष्टांत है विवेकिनकूं यही योग्य है पात्र देखिके उपदेश करे सबकूं नहीं करे ॥ ३६ ॥ शरदऋतुमें सरोवरनके थोरे जलके रहनवारे जीव नित्य नित्य घटतै जलकूं नहीं जानत भये यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे अज्ञानी कुटुंबी पुरुष घरनमें रहिके

---

१ या श्लोकको यह अर्थ करनो हो कि आकाशके बादर जीवनको बहुताई धरती कीच और जलके मैलको शरदऋतु हरलेती भई जैसे कृष्णमें भई भक्ति जीवके सब दोषनकूं हर लेय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नित्य आयुर्बल घटे है ताकूं नहीं जानै हैं यह त्याज्य दृष्टांत है पुरुषको ऐसी भूल न चाहिये जो आयुर्बलकी खबरि न राखे ॥३७॥ शरदऋतुमें थोरे जलके रहनवारे जीव सूर्यके तेजसो जल गरम है जायवेसों क्लेशित होत भये यह शरदऋतुको वर्णन है जैसे कुटुंबी पुरुष इंद्रीनके नहीं जीतवेसूं दरिद्री कृपणपनमें रहिकै क्लेशकूं पावैं हैं यह त्याज्य दृष्टांत है जो घरमें क्लेश होय तो निकसिजाय ॥३८॥ शरदऋतुमें स्थलनकी होले होले कीच शुष्क होतभई, लतानकी कचाई जातरही, यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे मिथ्या देह गृहमें विवेकी पुरुष मायाकृत अहंता ममताकूं त्यागि देइ है यह ग्राह्य दृष्टांत है विवेकीनकूं यही उचित है अभिमानकूं त्यागै ॥ ३९ ॥ शरदऋतु जब आई तब समुद्रको जल निर्मल भयो, और जो समुद्रमें शब्द होतो हो सोहू बंद है गयो यह तो शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे आत्मज्ञान भये पीछे मुनीश्वरनको पढिवो लिखिवो छूटिजाय है यह ग्राह्य दृष्टांत है आत्माके जाने पीछे पढिवे गुनिवेसूं कहां काम है ॥४०॥ शरदऋतुमें खेतवारे मनुष्य खेतकी जबर जबर मेंड बांधिके जलकूं रोकतभये यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे योगिराज इंद्रीनके रस्ता ज्ञानकूं रोक्यो करैहैं इंद्रीनकूं रोकिके मनको रोक्यो करैं हैं यह ग्राह्य दृष्टांत है योगीनकूं यही उचित है ज्ञानकूं निकसन न देई इंद्रीनकूं रोकिके राखैं ॥ ४१ ॥ शरदऋतुमें सूर्यकी किरणकी गरमीकूं रात्रिसमय चन्द्रमा उदय हैके हरतभयो, यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे देहके अभिमानरूप तापको ज्ञान दूर कर देय है और जैसे व्रजकी स्त्रीनके तापको मुकुंद भगवान् दूरि करैहै ॥४२॥ शरदृतुमें मेघ दूरि है गयो आकाश निर्मल है गयो तारागणसों आकाश शोभाकूं प्राप्त होतभयो, यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे वेदके अर्थको दिखामनहारे सत्त्वगुणी चित्त सुन्दर लगै हैं, यह ग्राह्य दृष्टांत है चित्त वही सुन्दर है जामें वेदके अर्थको ज्ञान होय ॥ ४३ ॥ शरदऋतुमें समस्त मंडलसों चंद्रमा आकाशमें तारागणसहित सुन्दर लगत भयो यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे पृथ्वीमें यादवनके पति श्रीकृष्णचन्द्र यादवनसहित सुन्दर लगै हैं ॥ ४४ ॥ शरदऋतुमें न ठंडो न गरम और पुष्पनको स्पर्श करिके जो पवन चले है ताके स्पर्शते मनुष्य तापको त्यागत भये, यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे गोपी श्रीकृष्णकूं आलिङ्गन करिके तापकूं त्यागत भई, यह ग्राह्य दृष्टांत है मनुष्यको यही उचित है भगवान्को स्पर्श करिके सांसारिक तापनको त्यागे ॥४५॥ शरदऋतुमें गऊ हरिणी पक्षिणी स्त्री पुष्पवती होत भई, यासों इनके वृष इनके पीछे लगे डोलै है, यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है जैसे ईश्वरकी प्रसन्नताके लिये पुरुष योग यज्ञ तप करे हैं, तिनको पीछे फल लगो डोलै हैं ॥ ४६ ॥ शरदऋतुमें कुमोदनी विना सरोवरनमें कमल फूलतभये यह शरदऋतुको वर्णन है यामें दृष्टांत है, हे राजन् परीक्षित् ! जैसे सुन्दर धर्मात्मा राजाके राज्यमें चोरन विना लोक निर्भय होयके आनंद पावै हैं ॥४७॥ शरदऋतुमें नवीन अन्नके भोजनकें वैदिक उत्सवसों और इंद्रिनके पुष्ट करिवेके विवाहादिक लौकिक उत्सवसों और अन्न पकवेसों और श्रीबलदेव कृष्णचंद्रजीके क्रीडा करवेसों पृथ्वी अतिही सुन्दर लगति भई ॥ ४८ ॥ वर्षाऋतुके रुके वणियां मुनीश्वर राजा ब्रह्मचारी ये शरदऋतुमें अपने अपने कर्मनमें लगतभये वणिया अपने व्यापारकूं गये, संन्यासी विचरिवेकूं गये राजा विजय करिवेकूं गये ब्रह्मचारी विद्या पढिवेकूं गये यामें दृष्टांत है जैसे मन्त्र और योगादिसे रुके सिद्ध महात्मा आयुके बन्धनसो रुके समय आयवेपें दिव्य शरीर पाते हैं ॥ ४९ ॥

---

१ जैसे सत्वगुणयुक्त और शब्द ब्रह्मके अर्थको दिखामनहारो चित्त शोभित होय है ॥ २ परंतु कृष्णने जिनके चित्त हरे ऐसी गोपी तायको नहीं त्यागती भई अर्थात् वो पवन गोपीनको अच्छो नहीं लगे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वणिङ्मुनिनृपस्नाता निर्गम्याऽर्थान् प्रपेदिरे ॥
वर्षरुद्धा यथा सिद्धाः स्वपिण्डान् काल आगते ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० प्रावृट्शरद्वर्णनं नाम विंशतितमोऽध्यायः ॥२०॥

अध्याय २१.

श्रीशुक उवाच-इत्थं शरत्स्वच्छजलं पद्माकरसुगन्धिना ॥
न्यविशद् वायुना वातं सगोगोपालकोऽच्युतः ॥ १ ॥

शरदऋतुमें निर्मल भये और कमलनकी सुगंधियुक्त पवनवारे वृन्दावनमें गौग्वालनकूं संग लेके श्रीकृष्णचंद्र जातभये ॥ १ ॥ फूली भई वनकी पंक्तिकी सुगंधिते मतवारे भौंरा पच्छीनके समूहनकी बोलीसूं सरोवर नदी पर्वत गूंज रहेहे ऐसे वृन्दावनमें ग्वालबाल बलदेवजीसहित श्रीकृष्णचन्द्र गउनकों चरावत बांसुरी बजावत भये ॥ २ ॥ प्रमादात्मक कामको उदय करनहारो वंशीको शब्द श्रवण करिके कई एक व्रजकी स्त्री कृष्णचन्द्रके पीछे अपनी सखीनके आगे कहति भई ॥ ३ ॥ जा समय कछु कहनको प्रारंभ करो ता समय श्रीकृष्णचन्द्रके रूपको स्मरण है आयो तासूं कामदेवके वेगसूं तिनके मन चलायमान है गये वे व्रजकी स्त्री हे राजन् परीक्षित! कहिवेकूं समर्थ न होत भई ॥४॥ मोरपुच्छको मुकुट धारण करिके काछनी पहिरके नटकी तुल्य श्रेष्ठरूपको धारण करके काननमें कचनारके फूल उरसिके सुवर्णकी तुल्य पीताम्बरको धारण करिके वैजयंती मालाको पहिरके बांसुरीके छेदनकूं अधरामृतसूं पूरण करत गोपनके समूह जिनके यशको गामें वे श्रीकृष्णचन्द्र अपने चरणाविंदके चिह्नसूं रमणीक वृन्दावनमें जात भये। "नटवरवपुः" को आशय यह कि तुम्हें नृत्य दिखायवेको यह वेष कियो है जब गोपिनकी वार्त्ता सुनाई न आवै तब काननको सन्ताप होय ताके शीतल करवेकूं याते कानमें कर्णिकार धरै प्यारीकी सुधि आयवेसों पीतवस्त्र या कारण करै हैं कि जब विनके शरीरकी सुधि आवैं तब गाय देखिकै जी शीतल होय है गोपीनके वियोगकी विरहाग्नि शान्त करवेकूं वैजयन्ती माला धारण करे हैं, गोपिनके पदचिह्नसों युक्त मनोहर वृन्दावन जानके प्रवेश करते कये ॥ ५ ॥ हे राजन् परीक्षित! या प्रकार सब प्राणीनके मनकी हरनवारी बांसुरीकी टेरकूं व्रजकी स्त्री सुनिके आपुसमें कहैं हैं और कहत कहत परम आनन्दरूप कृष्णको मनसूं आलिङ्गन करत भई ॥ ६ ॥ अब गोपी कहैं हैं हे सखी! नेत्रवान् पुरुषको यही फल है और फल हम नहीं जानैं हैं जो सखासहित गौनकूं वनमें चरावते कृष्ण बलदेवको मुखारविंद जिन पुरुषनने देख्यो है तिननेही वह फल सेवन कर्‌यो है, और कहै हैं हे सखी! गौर मुखकी तो शोभा है[1] परन्तु बांसुरीको बजावते स्नेह भरे कटाक्षवारे वा सांवरे मुखकी शोभा देखी चाहिये जिनने देखी है वे धन्य हैं ॥ ७ ॥ आमके पात मोरपुच्छ फूलनके गुच्छा उत्पल अब्ज अर्थात् कमलनकी

१ किसी साहूकारके कथ्थको बडो गुनी लडका नाचिवेकूं आयो, वाने अपने समधीको नाच देखिवेकूं बुलायो और पहलीही तानपै हजार रुपैयाको दुसाला उतार दियो कथ्थकने ले साजवारनकू दियो सो दूसरे भजनमें वाके गरीब नोकरने गुण देख फटो दमडीको दुपट्टा दियो सो कथ्थकने ले शिरसे लपेट लियो, लोग बोले साहूकारको दुपट्टा शिरसे बांधो नहीं और यह शिरसे कैसे लपेटो कथ्थक बोलो लालानै तौ सेखी दिखाई गुण नहीं जान्यो, और याने गुण जानो यासें शिरपै धारण कियो यातैं कृष्णने मोरपुच्छमें गुण देखके धारो है कृष्ण यह दिखावैं हैं जैसे यह मोरपुच्छ पलक नहीं मारैं हैं यह कहैं हैं ऐसे मेरे नेत्र होते तौ तुम्हारो रूप देखतो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

माला तिनसूं लगे भये पीताम्बरनसूं चित्र विचित्र देहधारे श्रीकृष्ण बलदेव दोनों भैया गान करत ग्वालमण्डलीमें बहुत सुन्दर लगत भये, रङ्गभूमि दो नटनसो सुन्दर लगे है ॥ ८ ॥ और गोपी कहें हैं हे गोपियो! ये बांसुरी कौन पुण्य करत भई जा पुण्यके प्रभावते हम गोपीनके पीवे योग्य अधरामृतके रसको यह आपुही इच्छापूर्वक पीवे है, जिन सरोवरनके जलते या बांसुरीनको बांस सींच्यो है, उन सरोवरनमें कमल नहीं फूले हैं, मानों आनन्दसूं रोमांच होय आमें हैं, और जिन वृक्षनके वंशमें या बांसुरीको वास भयो है उन वृक्षनके मद नहीं चुवे है मानों आनन्दके आंशू बहें हैं धन्य हमारे कुलको बांस जाकी बांसुरी कृष्णचंद्रके मुखते लगी है, जैसे श्रेष्ठ पुरुष अपने वंशमें पुत्रकूं भगवान्को भक्त देखिके आनन्द मानिके आंशू बहामें हैं ॥ ९ ॥ और गोपी कहें हैं यह वृन्दावन पृथ्वीके यशको बढावै है धन्य यह पृथ्वी है जामें वृन्दावन सदृश धाम है देवकीपुत्र श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविन्दसो अतिशय परम शोभा यानें पाई है और श्रीकृष्णचंद्र बांसुरीको बजामें हैं ताकी टेर श्रवण करिके वाय मन्द गर्जनहारी नीली घटा जानके मोर प्रसन्न हैके नाचें हैं तिनको नाच देखिके सब जीव जंतु निश्चल हैके बैठे हैं, यह आनन्द और लोकनमें नहीं है ॥ १० ॥ और गोपी कहें हैं मूर्ख पशुजाति ये हरिणी धन्य हैं जो ऐसे क्षुद्र हैं कि बांसुरीकी टेर श्रवण करिके अपने पतिको संग लिये विचित्र रूपधारे नन्दनन्दन श्रीकृष्णको स्नेहभरी चितवनसूं सन्मान करें हैं हमारे पति तो हमको देखनहू नहीं देइ हैं ॥ ११ ॥ और गोपी कहें हैं कि सखी ! आश्चर्यकी बात सुनो कि स्त्रियनको आनन्दको देनहारो श्रीकृष्णको मनोहर रूप निहार विनकी बजाई बांसुरीकी विचित्र ध्वनि सुन विमाननमें बैठके गमन करती भई देवतानकी स्त्रियें यद्यपि अपने स्वामिनके अंकमें बैठी हैं तोहू कामबाणके लगवेसो ऐसी व्याकुल हैगई हैं कि विनके बालनमेंसो पुष्प गिरे जायहैं, नीवी खुली जाय है, देवाङ्गना याके स्वरूपको देखिके मोहित होत भई और जो हम मोहित होय तो कहा आश्चर्य है ॥ १२ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके मुखते निकसे बांसुरीके गीतरूप अमृतकूं गौ कानरूपी दोनानसूं उठायके पीवत भई, और श्रीकृष्णचंद्रकूं दृष्टिसो आलिंगन करत प्रेमसो आंशू बहाती चित्रसी लिखी ठाढी होतभई, ताही प्रकार बछरा विनके चौंखत ठाडे होत भये वा समय बछरानके मुखमेंको दूध और गैयोंके घासको कवल ग्रास मुँहको मुहमेंही रह जाय है[२] ॥ १३ ॥ हे मैया ! या वृंदावनमें जे पक्षी हैं मुनीश्वर हैं जो मनोहर पातवारे वृक्षनकी शाखापै बैठिकै नेत्रनकूं मूंदिकै मौन होय प्यारे श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करै हैं और बांसुरीके मनोहर गीतकूं श्रवण करै हैं कारण कि मुनिभी भगवान्के दर्शनके निमित्त काम्य कर्मको त्याग वेदकी शाखानके आश्रित हो उनके किशलयरूप कर्मनको गुण ग्रहण कर सुखी हैकें मौनसो भगवान्के गुणा-

---

१ पद–कियो है कठिन तप आली मुरलिया ताहीसे हरिने मुख धारी । जन्मतही कीनी गति गाढी वनमें रही एक पग ठाडी वर्षा शीत अरु गरमीको दुख सह कीनो तप भारी प्यारी ॥१॥ मुरली निजतपके फल लीन्हे ब्रह्मा रुद्र इन्द्र वश कीन्हे चेतन व्है ते जड करिदीन्हे अधरन चढी विहारी प्यारी ॥ २ ॥ एक मंत्र विधि हरसों पावैं ताते इतनी सृष्टि उपावैं याको रि नित मंत्र सुनावैं अचरज भयो कहारी प्यारी ॥ ३ ॥ हरि ब्रजमें नित वेणु बजावैं तीन लोक धुनि सुनि सुख पावैं झब्बीलाल मनावैं ब्रजको वास मिलै वनवारी प्यारी ॥ ४ ॥

दोहा–वंसी वंसी नाम है, काहू धरयो प्रवीन । तान २ की डोरसौं, खैंचत है मन मीन ॥ अहो बांसकी बँसुरिया, तैं तप कीयो कौन । अधरसुधा पियको पियै, हम तरसत बिच मौन ॥ अरी क्षमा कर मुरलिया, पर हैं ते रे पाय । और सुखी सुन होत हैं, महादुखी हम आय ॥ अहो बांसकी बँसुरिया, निकसी पर्वत फोर । जो मैं ऐसा जानती, डारत तोर मरोर ॥

२ क०–बांसुरी बजे तो व्रज हम न वसैंगी वीर बांसुरी बजाओ लाल हमें विदा दीजिये । जेते राग तेते दाग जेते छेद तेते भेद जेती सुर तेती घोर रोम २ छीजिये ॥ तानके तिरछे बान लागत है मोहिं आन श्रवण सुनत जाय वनमें वसीजिये । वंशिको छोडो श्याम विनय करत व्रजकी वाम ऐसी कीनी सुर प्रभु ऐसीहू न कीजिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नुवाद श्रवण करैहैं याते विनकी साम्यवारे यह पक्षीहू मुनि होंयगे ॥१४॥ मुकुंद भगवान्‌की बांसुरीकी टेर श्रवण करिके नदीनमें भ्रमर परे हैं तासूं यह जतामें हैं कि ये भ्रमर नहीं परे हैं हमारी छातीमें कामदेवके गढेला परे हैं याते वह जैसे स्तंभित होय मानों आलिंगन करिके ढके लेंइगी ऐसे लहररूप हाथनते कमल भेंट लेके मुरारी श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविंदकूं पकरेहैं ॥ १५ ॥ भैया बलदेवजीकूं और गोपनकूं संग लैकै धूपमें ब्रजकी गऊनकूं चरावते बांसुरीकूं बजावते श्रीकृष्णचंद्रकूं देखिके मेघ प्रेमसूं बढिकै उदय होयके नाम आकाशमें छायके छत्र छाया करके अपने मित्र श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर छोटी छोटी बूंदनकी वर्षा करतभयो सांचो मित्र याको मेघ है यह सामरो है और वहू सामरो है याके पीतांबर वामें बिजुरी याके मोतीनके हार वाके बगुलानकी पंक्ति वह गर्जे याकी मुरली गर्जे वह जलकी वर्षा करे यह अमृतकी वर्षा करे, वाको सब लक्षण मिलेहैं ॥ १६ ॥ और ये वनकी भीलिनी धन्य हैं प्रियाके स्तनमें चर्चित कस्तूरी केशर जब रतिसमय कृष्ण चंद्रके चरणनमें लगी और वे चरण अरुणाई युक्त जब वनमें विहार करते घासमें लगे हैं विने देख कामातुर भीलनी वाकी केशरको घासपरसों ले अपने मुख और स्तननमें लगाय कामतापको शांत करैं हैं सखि! हमारे भागमें तौ यहहू नहीं है ॥ १७॥ हे अबला ! हे सखियो ! यह गोवर्धनपर्वत हरिके दासनमें अतिश्रेष्ठ दास है राम श्रीकृष्णचंद्रके चरण जे लगेहैं तिनसूं याके बडो आनंद होय है, गऊ गोपनकूं संग लैकै कृष्ण बलदेव आमें हैं तिनकूं जल हरी घास कंदरा अर्थात् गुफा कंदमूलको भेट धरिके उनको सत्कार करैहै ॥ १८ ॥ (हे सखियो ! गौ और गोपनकूं संग लैके कृष्णचंद्र बलदेवजीकी मनोहर बांसुरीको शब्द सुनिके यह आश्चर्य होय है कि वृक्षनकी जंगम गति अर्थात् विनके रोमांच हैजायहै और जलके जीवनकी वृक्षनकी तुल्य गति है जाय है अर्थात् वे एक स्थानपै ठाडे रहेहैं और गोदोहन समय गायनके बांधवेकी रस्सी शिरपे बांधवेसो और कंधापै धरवेसों कृष्ण बलरामकी बडी शोभा होय है) ॥१९॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! वृंदावनमें विहार करनहारे श्रीकृष्णचंद्रकी या प्रकार लीलानकूं गोपी आपुसमें वर्णन करत तन्मय होती भई॥२०॥

एवंविधा भगवतो या वृन्दावनचारिणः ॥
वर्णयन्तो मिथो गोप्यः क्रीडास्तन्मयतां ययुः ॥ २० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

---

१ चार भंगड नसामें कहन लागे राजाके आदमी कितने हैं एक बोलो फलाने परगनामें दश लाख हैं दूसरो बोलो फलाने परगनामें १५ लाख हैं तीसरो बोलो फलाने परगनामें २५ लाख हैं चौथो बोलो फलाने परगनामें ५० लाख हैं ऐसे करोड आदमी हैं अब याको खर्च विचारो कुछ खजानेमें बचे हैं कि नहीं एक बोलो ५० लाख फौजमें उठै है दूसरो बोलो २५ लाख महलमें उठै है तीसरो बोलो दश लाख इमारतमें उठे है चौथो बोलो १५ लाख गहने वस्त्रनमें उठे है खजानेमें कुछ नहीं परै है यह बात राजाके दूत सुनैं हे सो राजकाजकी बातें सुन राजाकौ परचा लिखदियो राजाने मंत्रीको बुलाय खर्चकी वही देखी तौ सब बात ठीक परी राजाने उन चारों आमलीनको बुलायो वे आये तब राजा बोले हमारे घरकी तुम्हें कैसे मालूम पडी, तुम हमारे मुत्सदीसे मिले हो अमली बोले न हम चोर न मुत्सदीसे मिले हम तौ भांगके अमलमें बातें करैं हैं सो आपही विध मिलगई देखो चार कौडीकी भांगके अमलमें राजाके घरको बंदोबस्त बांधदियो और गोपी तौ अमोल कृष्णको प्रेमामृत पीरही हैं जो कृष्णरूपको बंदोबस्त बांधी दियो तौ कौन बडी बात है ॥

२ छन्द—जबहि मुरली श्याम कर गहि अधर राखि बजावही । तरल तान तरंग अगणित अमित गति उपजावही ॥ रहत सुनि ध्वनि मगन जल थल जीव जह सोहत सही । कहत ब्रह्मानंद जासों पाय संग पूजत नहीं ॥ सब सयान समान ज्ञान गुमान तबहीलौं अहै । लोक वेद मर्याद पतिव्रत चार फल तबलौं चहै ॥ तबहिलों मन चपल बुद्धिबल सकल रुचि धन धामकी । सुनी सपनेहुँ नाहिं जबलों श्रवण मुरली श्यामकी ॥ ३ ऐसो अर्थ करनौ जिनने मूंडपें मुकुटके ऊपर लोआ लिपेट राखो और गोपन सहित वन वनमें गउ चरावते डोलैं तिनके उदारवेणुके शब्दनसौ हे सखिहो ! ये

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २२.

श्रीशुक उवाच–हेमन्ते प्रथमे मासि नन्दव्रजकुमारिकाः ॥
चेरुर्हविष्यं भुञ्जानाः कात्यान्यर्चनव्रतम् ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित! हेमन्तऋतुमें प्रथम मास अगहनके महीनामें नंदराजीके व्रजमें कुमारी कन्या मूंगभातको भोजन करिके कात्यायनीको व्रत करिवो प्रारम्भ कियो व्रत करिके अरुणोदयके समय यमुनाजीके जलमें स्नान करिके किनारेमें बैठिके वारूकी कात्यायनी देवीकी प्रतिमा बनायके चंदन सुगंधिके फूल धूप बलिनसूं और छोटी बडी सामग्रीनसूं प्रवालफल पत्रचावलनसूं पूजा करत भईं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ हे कात्यायनी हे महामाये हे महायोगिनी हे अधीश्वरी हे देवी! नंदगोपके पुत्रकोई हमारो पति करि तोकों नमस्कार है ॥ ४ ॥ या मंत्रकूं जपिके कुमारिका पूजा करति भईं या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रमें चित्त लगाये ये कन्या महीनाको व्रत करतभईं नंदको पुत्र हमारो पति होउ यह इच्छा करिके भद्रकालिदेवीकी पूजा करतभईं, प्रातःकालसमय उठिके अपने अपने नाम लैके आपुसमें परस्पर हाथ पकरिके नित्य नित्य यमुनाजीमें स्नान करिवेकूं जात ऊंचे स्वरसूं श्रीकृष्णचंद्रकूं गावत भईं यह गोपी यमुनाजीपै आइके कभऊ एक दिन पहिलेकीसी नाईं अपने वस्त्र ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ७ ॥ किनारेपै धरिके श्रीकृष्णचंद्रकूं गावत बडे आनंदपूर्वक जलमें विहार करतभईं योगेश्वरनके ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र तिनको मनोरथ जानिके ॥ ८ ॥ बराबरके मित्रनकूं संग लैके तिनके मनोरथ सिद्ध करिवेके लिये ता यमुनाके तीरपर जात भये कन्यानके वस्त्र लैके शीघ्र कदंबपे चढिकै ॥ ९ ॥ हँसत भये और संगके बालक हँसत भये हँसीकी बातें कहतभये और कहावतभये कि हे अबलाओ! यहां आयके अपने अपने वस्त्र लेजाओ ॥ १० ॥ मैं सत्य कहूंहूं तुम व्रत करेते दुर्बल हैरही हो याते हांसी नहीं करूं हूं पहिले मैं मिथ्या कभी नहीं बोल्यो हूं या बातको ये मेरे मित्र जानैं हैं ॥ ११ ॥ एक एक आयके लेजाओ अथवा हे सुमध्यमा अर्थात् सुंदर कटिवारी नारियो! एक संगही आयके लेजाओ यामें हमारे आग्रह नहीं है यह प्रकार श्रीकृष्णचंद्रकी हांसी देखिके गोपी प्रेममें मग्न होयके ॥ १२ ॥ लज्जासहित आपुसमें देखि देखिके हँसति भईं वस्त्रहीन हैं यातें जलके बाहिर नहीं निकसती भईं या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रकी कही हांसीकी जब बात सुनिके वस्त्र हर जायवेसों सरमीली गोपी थोरे जलके भीतर कंठताईं डूबरहीं, जाडेके मारे कांपत २ श्रीकृष्णचंद्रसूं बोलतभईं ॥ १३ ॥ हे कृष्णचंद्र! अनीति मति करो हे नंदगोपके पुत्र! व्रजमें प्रशंसाके योग्य हो मेरे प्यारे या शीतसूं कंपित हमें वस्त्र देउ ॥ १४ ॥ हे श्यामसुंदर! हम तुम्हारी दासी हैं जो तुम कहोगे सोई हम करैंगी हे धर्मके जाननवारे! हमारे वस्त्र देउ

हेजाय है कि चलनवारे जंगम जीवनको तौ चलनौ हलनौ बंद है जाय है और स्थावरजीव वृक्षनके रोमांच उत्पन्न है जाय है ये बडी विचित्र बात है याको तुम देखो ॥

१ सवैया–मज्जन करि यमुनाजलमें कात्यायनी देवीसे ध्यान लगायो। जिन वारूकी मूरति लीनी बनाय यथाविधिसों असनान करायो ॥ फूल अरु पान मिष्टान्न सभी चंदन अक्षतकर कर्पूर बरायो। कर जोर सबन वर मांगो यही पति होय हमारो यशोदाको जायो ॥ १ ॥ २ पद–यमुना न्हाने चलीं व्रजनारी। पहुँची जाय निकट यमुनाके सब मिल वस्त्र धरे हैं उतारी ॥ १ ॥ लागी करन कलोल परस्पर गावत गीत पुकार पुकारी ॥ २ ॥ ताही समय ग्वालबालन सँग तट यमुना पहुँच्यौ बनवारी ॥ ३ ॥ लेकर चीर सभी गोपिनके राखे जाय कदंबकी डारी ॥ ४ ॥ ले बुडकी उछरी जब जलतें देखत चीर निहार निहारी ॥ ५ ॥ कोई न दृष्टि परो काहूकी एक सखी लह सुनो मेरी प्यारी ॥ ६ ॥ देखी कौन चढ्यो तरुवरपर मांगो इनसे हाथ पसारी ॥ ७ ॥ हम तौ खडी नग्न जल भीतर लागत शीत हमैं अतिभारी ॥ ८ ॥ कृपाकर दासिनपर अपनी चीर हमारे देउ गिरिधारी ॥ ९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं देउ तो राजा नंदते अथवा कंसते हम कहेंगी ॥ १५ ॥ श्रीकृष्णचंद्र भगवान् कहैहैं जो तुम मेरी दासी हो तौ मेरो कह्यो करोहीगी हे शुचिस्मिता अर्थात् सुंदर मुसिकानिवारियो। तुम यहां आयके अपने वस्त्र लेजाओ ॥ १६ ॥ ताके पीछे शीतसूं कम्पित व्रतकरिके कर्षित समस्त कुमारिका हाथनते अपनी अपनी योनिकूं ढकिके जलके बाहर निकसति भई ॥ १७ ॥ विनके शुद्धभाव और सुन्दर प्रेमते प्रसन्न भये भगवान् श्रीकृष्णचंद्र विन शुद्ध कन्या कुमारिकानकूं आहत देखिकै उनके वस्त्र कंधापै धरिके प्रसन्न होयके मुसिकायके यह बोले ॥ १८ ॥ तुम जो व्रतकों करिके नङ्गी होयके यमुनाजलमें स्नान करत भई तासूं जलको देवता वरुणको अपराध भयो, ताके दूरि करिवेके लिये हाथ जोरि माथेते लगायके धरतीमें प्रणाम करिके वस्त्र पहिरो ॥ १९ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रने उनते कही तब व्रजबाला वस्त्र त्यागिके नग्न स्नान करिवेकूं व्रतके खण्डन करनवारो मानिके ता व्रतके पूरण करिवेके लिये व्रतके और समस्त कर्मनके फलके देनवारे श्रीकृष्णचंद्रकूं नमस्कार करत भई क्योंकि जा कारणते श्रीकृष्णचंद्रही सम्पूर्ण

---

१ पद–क्यौं श्याम करौ उत्पातैं । यह मनमें कैसी है ठानी यह सीख कौनकी मानी हम जानत तुमरी घातैं ॥ १ ॥ हम रावकंसपर जावैं तोहि बहुतिक मार दिवावैं तब भूल जाओ यह बातैं ॥ २ ॥ तब कहैगी यशोदा मैया अब कैसी भई मोरी दइया याको कौन छुडावैं ह्यां तैं ॥ ३ ॥ (कृष्णवचन) ऐसी क्यौं रिस कीन्ही सखियो। जो ऐसे हि मथुरा जाओ सब कुलके लोग हँसावो कछु ऊंच नीच मत लखियो ॥ १ ॥ मैंने घोरी अधिक मिठाई ऐसी तुम कबऊ नहिं खाई अपने नृपके संग चखियो ॥ २ ॥ दोहा ॥ गोपसुता कहे श्यामसौं, सुनिये चतुर सुजान ॥ राखो धर्म अधर्मकी, हृदयमें पहिचान ॥ १ ॥ (श्रीकृष्णवचन) तुम मोसैं कहो कि विचारो धर्मकूं अनीति कहा कछु मोतैं भई है । सब लोक और वेदमर्याद तजी कुलकान निरालीहि त्याग दई है । है दासी वही जो कहेकूं करै और ऐसीको देखिकै आवत हांसी । निज काजकूं दासी बने पतिकी पर काजको देखकै होत उदासी । (गोपीवचन) दोहा ॥ वस्त्र हमारे दीजिये, मनमोहन व्रजराज । तुम सन्मुख आवै नग्न, लागै हमको लाज ॥ (श्रीकृष्णवचन) भजन–अरी देऊं का विधि चीर तिहारे । मोहिं कदम चढायो ग्वाला मेरे निकट आय पट डाला, सब गौअनमाहिं सिधारे ॥ १ ॥ निजबल उतरो नहिं जाई नहीं देतो चीर गहाई, मेरे पग कंपत है भारे ॥ २ ॥ तुम कहना मेरा मानो निज निज वस्तर पहिचानो, जाने पीरे हैं या कारे ॥ ३ ॥ सब जलतैं बाहर आओ मत लज्जा जीमें लाओ, मैं डार देऊं पट सारे ॥ ४ ॥ भजन–जब हठ कीन्ही यह श्याम आन तज सब धाई लुक छिपकर दौउ करसै ढक अंग, झटपट पट धारन धाई ॥ १ ॥ कीन्हौ तुम अपराध वरुणको जो जलमाहिं नगन न्हाई ॥ २ ॥ भानुदेव सब पाप हरत हैं कर जोरी तिनके ताई ॥ ३ ॥ जोर युगलकर सुस्तुति कीन्ही तब हरिके ते पट मन भाई ॥ ४ ॥ कृपा कर दासिन पर अपनी चीर दिये विनके ताई ॥ ५ ॥

२ आहतको अर्थ श्रीधरजीने तो अविद्धयोनि कियो है अर्थात् जिनको पुरुषसंग नहीं भयो है ऐसी गोपीनको देखके और चक्रवर्तीने (आहता) को (आगता) अर्थ कियो है अर्थात् पास आई गोपिनको देखिके ऐसो अर्थ कियो है क्यों कि हन् धातुको गमनभी अर्थ होय है ॥

३ श्रीकृष्णने गोपियोंको नग्न देखा यह पराई स्त्रीका देखना शास्त्रविरुद्ध है. उत्तर–श्रीकृष्णकी अवस्था अभी छः वर्षकी है गोवर्द्धन उठाये समय सात वर्षकी होगी जैसा वहां लिखा है " क सप्तहायनो बालः " इस छः वर्षकी अवस्थामें स्त्रीजनोंसे कामकी दृष्टि नहीं होती, दूसरे ईश्वररूप होकर बाहर भीतर व्याप्त है जो अन्तरमें व्याप्त है वह बाह्यमें क्या देखेंगे वहां तौ वस्त्र और अंगमेंभी स्थित है दूसरे वह वेदकी ऋचा हैं भगवान्के साथ क्रीडा करनेको जन्म ले आई हैं जैसा लिखा है कि सम्पूर्ण वेद उसीका कथन करते हैं इस कारण उन मंत्रोंके उपाधि भेद दूर करके केवल अपने सन्मुख करते हैं, अथवा यह कथा चित्तकी वृत्ति जीव और परमात्माको सूचन करती है यथा संसाररूपी वृक्षपर परमात्माको कृष्णचन्द्र स्थित है गोपीरूप जीव उनके मिलनेकी इच्छासे भूमिके आवरण वस्त्रोंको त्याग ब्रह्मानन्दरूप जल विहार करता है परन्तु ध्यान छूटनेसे फिर संसारमें पडनेकी इच्छासे भूमिके आवरणमें वस्त्रको मांगता है परन्तु भगवान् जलसे छुडाकर वायुमें लानेको नग्नके व्याजसे बुलाते हैं, जब जल छोडकर वायुके स्पर्शमें आई तब अग्नितत्वसे शुद्ध करनेको सूर्यकी उपासना करनेको कहा कारण कि ' योसावादित्ये पुरुषः सोसावहन् ' जो पुरुष आदित्यमें है सो मैं हूं इस प्रकार निरंतर अपने रूपको प्राप्त होकर वे जीवन्मुक्त करदी फिर वस्त्र दे दिये कि जीवन्मुक्त होनेपर फिर संसारकी बाधा उनको नहीं सताती । अथवा इन्द्रियेंही गोपवधू हैं उनकी अज्ञानता हरनेवाले श्रीकृष्ण हैं यही चीरहरणका रहस्य है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पापनके दूर करनवारे हैं॥२०॥देवकीके पुत्र भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने आधीनता करनहारी कुमारिकानकूं देखिके और विनके भावसूं सन्तुष्ट हैके करुणा कर उनको वस्त्र दिये ॥ २१ ॥ बहुत ठगी गई लाज जिनकी छुटाई, हांसी जिनकी करी खिलौनाकीसी नाईं ठाढी करी वस्त्र जिनके लेलिये तथापि कुमारिका श्रीकृष्णके संग आनंद मानिके श्रीकृष्णकी निन्दा न करत भई ॥ २२ ॥ अपने अपने वस्त्र पहिरके प्यारेके सङ्ग वशसौ उनके चित्त हरिगये तिन श्रीकृष्णचंद्रकी ओर लाज करिके देखती देखती कुमारिका ऐसी विह्वल भई कि वा स्थानसौं चलिवेकूं सामर्थ्य नहीं भई ॥ २३ ॥ अपने चरणारविन्दके स्पर्शकी चाहना करिके व्रत करनहारी कुमारीनके मनोरथ जानिके दामोदर भगवान् अबलानसूं बोलत भये ॥ २४ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे सुशीलाओ ! जा कारण तुमने मेरो पूजन करो वह मनोरथ लाजके मारे तुमने नहीं कह्यो तथापि मैंने तुम्हारे मनोरथको अनुमोदन करो याते यह मनोरथ सत्य होयगो ॥२५॥ मोमें मन लगामनवारेनकी कामना विषयभोगके लिये नहीं होयं है, जैसे भुंजे रंधे अन्न बहुधा उपजिवेके योग्य नहीं होयहैं॥ २६ ॥ हे अबलाओ ! तुम व्रजको जाओ तुम्हारे मनोरथ पूरे भये हे पतिव्रताओ ! जाकों मनमें विचारिके तुम यह व्रत करति भई कात्यायनी देवीकी पूजा करत भई या कारण जब शरदऋतुकी रात्रि आमेंगी तिनमें मेरे संग रमण करोगी ॥ २७ ॥ या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णसो आज्ञा पाय पूर्णमनोरथ हैकै वे कुमारिका श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविन्दको ध्यान करत कष्टते व्रजको जात भई ॥ २८ ॥ याके पीछे देवकीके पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण गोपनकूं संग लैकै बलदेवजीको संग लैके गौनको चरावत वृन्दावनमेंते दूरि चले जात भये ॥ २९ ॥ बडी तीक्ष्ण गरमीकी धूपमें अपनी छायासूं छाया करनहारे वृक्षनकूं देखिके श्रीकृष्णचंद्र व्रजवासीनसूं कहत भये ॥ ३० ॥ हे बालक कृष्ण ! हे अंशो हे श्रीमन् हे अर्जुन हे विशाल हे ऋषभ हे तेजस्विन् हे देवप्रस्थ हे वरूथप ! ॥३१॥ इन बडभागी वृक्षनकूं तुम देखो तो ये बडे बडभागी हैं परोपकारके लिये एकांत वास करैं हैं, पवन वर्षा शीत धूप आप सहे हैं और हमें इनते बचामें हैं ॥ ३२ ॥ अहो इन वृक्षनको प्राणीनको उपकारको करनवारो जन्म धन्य है जैसे काहू दयावान् पुरुषके पास याचक मनुष्य विमुख नहीं जाय ऐसे इन वृक्षनके पास आयके प्राणी विमुख नहीं जाय है ॥ ३३ ॥ पात फूल फल छाया जड वल्कल लकडी सुगंध गोंद भस्म कोइला कोंपल इन करिके सब प्राणीनकी कामना पूरण करे हैं॥३४॥ या संसारमें देहधारिनको इतनोही जन्म सुफल है जो अपने प्राण धन बुद्धि वचन इनसूं सदा परायो भलोही करै ॥ ३५ ॥ या प्रकार पात गुच्छा फलन फूलन दलनके समूहनते शाखा झुके उन वृक्षनके बीचमें होयके श्रीकृष्णचंद्र यमुनातीरपै जात भये ॥ ३६ ॥ हे राजन् परीक्षित ! ता यमुनातीरपै गोप निर्मल शीतल मंगलरूप जल गौनकूं प्यायके आपहू स्वादसूं पीवत भये ॥ ३७ ॥ हे राजन् परीक्षित ! ता यमुनाजीके समीप बागमें इच्छापूर्वक गउनकूं चरावत गोपनकूं क्षुधा जब लगी तब श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीके पास आयके यह कहत भये ॥ ३८ ॥

तस्या उपवने कामं चारयन्तः पशून्नृप ॥
कृष्णरामावुपागम्य क्षुधार्ता इदमब्रुवन् ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

---

१ अर्थात् विनको कर्मनके फल नहीं भोगने परे है यानी विनके कर्म भोग नाश हैजाय है ॥ (प्रायः) ये यहां यथाके अर्थमें है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय २३.

गोपा ऊचुः—राम राम महावीर्य कृष्ण दुष्टनिबर्हण ॥
एषा वै बाधते क्षुन्नस्तच्छान्तिं कर्तुमर्हथः ॥ १ ॥

हे राम हे राम हे बडे पराक्रमी हे कृष्ण हे दुष्टनके मारनवारे ! यह क्षुधा दुष्टिनी हमें बहुत सतावै है याकी शांति करो ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार गोपनने जा समय प्रार्थना करी तब देवकीके पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण भक्तिवती ब्राह्मणनकी स्त्रीनके ऊपर प्रसन्न होयके यह बोलत भये ॥ २ ॥ हे सखाओ ! वेदके पढनवारे ब्राह्मण स्वर्गकी कामना करिके आंगिरसनाम यज्ञ करैं हैं देवतानको पूजन जहां होई है तहां जाओ ॥ ३ ॥ हे गोपो ! ता यज्ञमें जायके भात मांगो हमारे भेजे जाओ तुमें कहा लाज आवे है बडे भैया भगवान् बलदेवजीको नाम लीजो कि उनके भेजे हम आये हैं ॥ ४ ॥ या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णजीकी आज्ञा ग्रहण करिके वे गोप जायकै तैसेही मांगत भये और ब्राह्मणको हाथ जोरि पृथ्वीमें परिके दंडवत् करत भए ॥ ५ ॥ हे भूमिदेवहो ! तुम हमारी बात सुनो श्रीकृष्णचंद्रकी आज्ञाके करनवारे और बलदेवजीके भेजे हम गोप तिहारे पास आये हैं तिनकूं जानोहो तुम्हारो कल्याण होउ ॥ ६ ॥ श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजी दोनों भैया गौ चरावत समीप आयेहैं तुम्हारे भातकी चाहना करेहैं हे ब्राह्मणओ ! हे धर्मके जाननवारेनमें उत्तम ! तुम्हारे यहां भात है जो श्रद्धा होय तौ मांगनहारे कृष्ण बलदेवकूं देउ ॥ ७ ॥ हे श्रेष्ठओ ! दीक्षाते आरंभ लैके पशुसंस्थासो पहिले सौत्रामण्ययज्ञते और ठौर दीक्षावारेके अन्नके खाएते दोष नहीं लगे है यामें पशुकृत्य तुम्हारे होय चुको है सौत्रामण्य यज्ञ तुम्हारे है नहीं तुम्हारे अन्नभोजन करिवेको दोष नहीं ॥ ८ ॥ या प्रकार वे ब्राह्मण भगवान् श्रीकृष्णचंद्रकी याचनाकूं सुनिके अनसुनी करतभये कारण कि वे ब्राह्मण क्षुद्र फलवारे स्वर्गमें जायवेकी इच्छा कररहे हैं वे क्लेशकारी कर्म अपनी मूर्खतासौ करे है और अपनेको बडा ज्ञानी माने है ॥ ९ ॥ देशकाल न्यारो न्यारो चरु पुरोडाशादिक न्यारी न्यारी सामग्री मंत्र तंत्र ऋत्विज अग्नि देवता यजमान क्रतु यज्ञफल यह सब कृष्णमय है ॥ १० ॥ सो इन्द्रियनसौं परे परब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णचंद्रकों विन कुत्सित बुद्धियुक्त देहकोही आत्मा माननहारे ब्राह्मणनने अज्ञानवश मनुष्यही जानके अवज्ञा करी ॥ ११ ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हैं कि हे परंतप अर्थात् शत्रुनके ताप करनवारे राजा परीक्षित् ! वे ब्राह्मण देंयगे अथवा नहीं देंयगे ऐसीहू जब नहीं कहतभये गोप निराश हैके बगदिके रामकृष्णते तैसेही कहतभये कि भले ब्राह्मणनके पास भेजे जिनने देंयगे अथवा न देंयगे यहहू कछु न कही ॥ १२ ॥ जगत्के ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र गोपनकी बात सुनिकै लोककी रीति दिखायके हँसिके फेर गोपनते कहत भये अपनो काम करौ जिनको इच्छा है ते खेद नहीं माने है; कौन ऐसौ मांगनवारौ है जाको मानभंग नहीं होय है ॥ १३ ॥ अब तुम संकर्षण भय्या सहित कृष्णचंद्र आये हैं यह मेरी बात विन माथुर ब्राह्मणनकी स्त्रीनते जाय कहो जे कि तुमको बहुतसी सामग्री भोजनकूं देंइगी शरीरते वे घरनमें रहे हैं, मन तो उनको मेरे विषेही लगि गह्यो है याहीते मोमें उनको बडो प्यार है ॥ १४ ॥ श्रीकृष्णके कहे पीछे स्त्री जहां पत्नीशालामें शृंगार करै बैठीहीं तहां सभामें गोप जायके तिनकूं देखिके ब्राह्मणनकी सती स्त्रीनकूं नमस्कार करिके आधीनतापूर्वक यह बोलतभये ॥ १५ ॥ हे ब्राह्मणनकी स्त्रियो ! तुमको नमस्कार है हमारी बात सुनो यहांते समीप कृष्ण बैठे हैं तिनने हमें भेजे हैं ॥ १६ ॥ गोप और बलदेवजी भय्याको

१ (देयगे) यह तो यासो न कही कि जाने ब्राह्मण भोजन भये पीछे कछु बचो कि जाने न बचो तो न बचो तौ इने कहासो दैयगे यासूं तो देयगे यह न कही और नाहीं यासौ न करी कि यदि पीछे कछु बचेगो तौ ब्राह्मण भोजन भये पीछेतक ठाढे रहेंगे तो कछु इनकोहू दै दैयगे यासूं नाहीं न करी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

संग लैके गौ चरावत २ दूरि आयगये हैं, सो वे भूखे हैं वाके मित्र हम भूखे हैं तुम कछु भोजनकी सामग्री देउ ॥ १७ ॥ नित्य श्रीकृष्णचंद्रके दर्शनकी चाहना करनहारी और श्रीकृष्णकीही कथामें मन लगामनहारी वे ब्राह्मणनकी स्त्री श्रीकृष्णचंद्रकूं आयो सुनिके हर्षित होतीभई ॥ १८ ॥ वडे वडे पात्रमें सुंदर सुंगधियुक्त चार प्रकारकी सामग्री भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्य अर्थात् चना चवेना रोटी पुरी भक्ष्य दारि भात इत्यादिक भोज्य कढी क्षीर इत्यादिक लेह्य गांडो आम इत्यादिक चोष्यको लैके सब ब्राह्मणनकी स्त्री प्यारे श्रीकृष्णचंद्रके पास आवती भई, जैसे नदी समुंद्रके सन्मुख उमड उमडके जाय हैं ॥ १९ ॥ पति भैया बंधु पुत्रनने मने करी तथापि उत्तम यशवारे श्रीकृष्णचंद्र भगवान्में बहुत दिनते गुण सुनिके मन लगायो वे माथुर ब्राह्मणनकी स्त्री ॥ २० ॥ अशोकवृक्षके नये पल्लवनकारि शोभायमान यमुनाजीके समीप बागमें गोपनकूं और भैया बलदेवजीकूं संग लैके श्रीकृष्णचंद्र डोले हैं तिनकूं दृष्टि करिके देखत भई ॥ २१ ॥ जो श्रीकृष्णचंद्र श्यामसुंदर स्वरूप सुवर्णकी तुल्य रंगवारे पीतांबरकूं पहिरे वनके फूल माला मोरपुच्छ खरिया गेरू पातनसों अति शोभायमान नटकी तुल्य रूप बनाये मित्रके कंधापै एक हाथ धरे दूसरे हाथसूं कमल घुमाते काननमें कमलके फूल खुरसे अलके छुटिके कपोलनपै आयरहीं मंद मंद मुसिकानी युक्त श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करतीभई ॥ २२ ॥ कानके कृतार्थ करनहारे अतिप्रिय श्रीकृष्णके चरित्र श्रवण करवैसों विनके मन व्रजराजमें लग रहे हे सो अब विनको दर्शन कर वे ब्राह्मणनकी स्त्री पीछे तिन श्रीकृष्णचंद्रकूं नेत्रद्वारा अंतःकरणमें लेजायके बहुत वेरताईं आलिंगन करिके हे राजन् परीक्षित् ! अपने तापको त्यागत भई दृष्टांत जैसे अहंकार वृत्ति जे है वे सुषुप्ति अवस्थाके साक्षी प्राज्ञको प्राप्त हैके वामें लीन हैके तापको त्याग करदेयहै ॥ २३ ॥ पुत्रादिक गृहादिकनकी आशा छोड अपने दर्शन करिवेके लिये आई माथुरब्राह्मणनकी स्त्रीनको आई जानिके सबकी बुद्धि देखनवारे श्रीकृष्णचंद्र हँसिके बोलतभये ॥ २४ ॥ हे वडभागिनिओ ! तुम भले आई आओ हम तुमारो कहा सत्कार करैं जो हमारे दर्शन करिवेको आई हो यह तुमको योग्य है ॥ २५ ॥ अपने अर्थकूं देखनवारे विवेकी पुरुष आत्मा और प्रियरूप जो मैं हो ता मोमें फलकी अनिच्छा करिके निरंतर भक्ति करें हैं ॥ २६ ॥ प्राण बुद्धि मन अपनो देह धन स्त्रीपुत्रकूं आदि लैके सब वस्तु जा आत्माके संबंधते प्यारी लगे हैं, ता आत्माते परे और कौन प्रिय हैं ॥ २७ ॥ ता कारण हे सुशीलाओ ! तुम अपने यज्ञमें जाओ, गृहस्थी तुमारे पति ब्राह्मण तुम जाओगी तब अपने यज्ञको पूर्ण करेंगे ॥ २८ ॥ या प्रकार कृष्णचंद्रको वचन सुनिके ब्राह्मणकी पत्नी कहती भई हे महाराज ! आप ऐसो कठोर वचन कहिवेको योग्य नहीं हो (न मे भक्तः प्रणश्यति) अर्थात् मेरे भक्तको नाश नहीं होय है यह गीतामें लिखोहै (न स पुनरावर्तते) अर्थात् मोको प्राप्त होयके फेरि नहीं आवै है यह आपकी आज्ञा है ताको सत्य करौ, तुमने जो अपने चरणसो तुलसीकी माला तिरस्कार करदीहै वाकूंहू हम वडे आदरते शिरपै चढायवेके लिये सब भैया बंधूनकूं त्यागिके तुमारे चरणनके नीचे आई हैं ॥ २९ ॥ हम जायके कहा करैं हमारे पति माता पिता पुत्र भैया बंधु और अपने प्यारे हमें कोई अंगीकार नहीं करेंगे और क्योंकरि करेंगे ता कारणते तुमारे चरणारविंदमें हमारे देह परे हैं, स्वर्गादिकहूको सुख नहीं चाहे हैं, हे काम लोभ भयादिक शत्रुनके दंड देनवारे ! हमको अपनो दास्यभाव देउ ॥ ३० ॥ या प्रकार सुनिके श्रीकृष्णचंद्र भगवान् बोले पति तुमको दोष नहीं लगावेंगे, माता पिता भैया पुत्रादिकहूं दोष नहीं लगावेंगे, मेरी आज्ञा जिनको भई

१ समुद्रमें जायवेवारी नदी काहूसों रुके नहीं है यासो यह दृष्टांत दियो है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ऐसो लोकहू दोष नहीं लगावेंगो, आकाशमें देवताहू घरकूं जाऊ ऐसे कहतभये ॥ ३१ ॥ या संसारमें शरीरमें शरीरते स्पर्श भयेते प्रीति नहीं रहे है स्नेह नहीं बढै है या कारण तुम घरमें रहिके मन मोमें लगाओ शीघ्र मोको पाओगी ॥ ३२ ॥ मेरे स्मरण करेते दर्शन ध्यान करेते निरंतर कीर्तन करेते जैसे मोमें भाव होय है तैसो पास रहेते नहीं होय है, ताते तुम शीघ्र अपने घरको जाओ ॥ ३३ ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हैं या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रने कही तब वे यज्ञ करनवारे ब्राह्मणनकी स्त्री फेरि यज्ञ जहां होतहो तहां आंवती भई तब दोष लगाये विना वे ब्राह्मण अपनी स्त्रीको संग लेके यज्ञ पूरण करत भये ॥ ३४ ॥ तहां एक ब्राह्मणने अपनी स्त्री रोकी तब वह स्त्री जैसो श्रीकृष्ण भगवान्को रूप काननते सुनो तैसो ध्यान धरि हृदयमें आलिंगन करिके कर्मनके आधीन देहकूं छोडत भई ॥ ३५ ॥ गौनके पालन करनवारे समर्थ श्रीकृष्ण भगवान् भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्य चार प्रकारकी सामग्रीनकूं गोपनको भोजन करायके आपहू भोजन करतभये ॥ ३६ ॥ या प्रकार लीलासो मनुष्यरूपको धारे लोकनकेसो आचरण करिके गौ गोप गोपीनकूं रूप वाणी चरित्रनसूं आनन्द देत आपहूं रमण करतभये ॥ ३७ ॥ याके पीछे वे ब्राह्मण अपने भोजन न दैनेके अपराधकूं स्मरण करिके दुःख पावत भये, जो मनुष्य व्रत आचरण करनहारे श्रीकृष्ण बलदेवके मांगिवेको न सुनत भये ॥ ३८ ॥ वे भगवान् श्रीकृष्णचंद्रमें स्त्रीनकी अलौकिक भक्ति देखिके और अपनेको भक्तिरहित देखिके दुःखित होयके अपनी निन्दा करत भये ॥ ३९ ॥ शुद्ध माता पितासे सावित्री यज्ञोपवीत भयेते यज्ञकी दीक्षा लियेते यह तीन प्रकारको हमारो जन्म है ताकूं धिक्कार है और हमारो व्रत करिवेकूं बहुत शास्त्र पढिवेकूं हमारे कुलकूं हमारे कर्मनकी चतुराईकूं धिक्कार है, क्योंकि हम परमेश्वरते विमुख होय गये ॥ ४० ॥ निश्चय भगवान्की माया योगीनकौं भुलावनवारी है, या मायासूं मनुष्यनमें गुरु ब्राह्मण हमभी स्वार्थमें मोहित भये ॥ ४१ ॥ अहो बडो आश्चर्य है जगत्के गुरु श्रीकृष्णचंद्रमें स्त्रीनकी कैसी भक्ति भई है, जो भक्ति घरनामवारी मृत्युकी फांसीनकूं काटत भई ॥ ४२ ॥ इन स्त्रीनके यज्ञोपवीत नहीं भए गुरुकुलमें वासहू नहीं करो तप और आत्माको विचारहू नहीं करो पवित्रताहू नहीं करे न कुछ यह अनुष्ठानही करें हैं ॥ ४३ ॥ तथापि उत्तम यशवारे योगेश्वरके ईश्वर भगवान्में अखण्ड भक्ति होत भई, स्नान संध्या जप तप करनहारे हमको भक्ति न होत भई ॥ ४४ ॥ निश्चय करिके अपने अर्थको न जाननहारे घरके व्यापारमें भूले हमकूं साधुनकी गति श्रीकृष्णचंद्र गोपनके वचन सुनिके सुधि करावत भये ॥ ४५ ॥ पूर्ण मनोरथ मोक्षकूं आदि लेके सब मनोरथके पति श्रीकृष्ण हैं, तिनकूं कर्म वा प्रारब्धके वशीभूत हम जीवनसों कहा प्रयोजन है भातको मांगिवो यह तौ ईश्वरको खेल है ॥ ४६ ॥ लक्ष्मी ब्रह्मादिकनको छोडिके चरणारविंदके स्पर्शकी चाहना करिके आपनो चंचलता दोष दूर करिवेके लिये जिनको सदा भजन करे है तिन श्रीकृष्णचंद्रको मांगिवो जननके मोह करनवारो है ॥ ४७ ॥ देशकाल न्यारो न्यारो चरुपुरोडाशादिक द्रव्य मंत्र तंत्र ऋत्विज अग्नि देवता यजमान यज्ञ यह सब कृष्णको रूप है ॥ ४८ ॥ सो साक्षात् भगवान् विष्णु योगेश्वरनके ईश्वर यादवनमें आयके जन्मे हैं हमने यह बात सुनीही तौहू हम मूर्ख अज्ञानी नहीं जानते भये ॥ ४९ ॥ कोई ब्राह्मण कहन लगे अहो हम बडे धन्य हैं हमारे ऐसी भक्तिवती स्त्री हैं जिनकी भक्तिसूं हमारीहू

---

१ यहां ब्रह्मवैवर्त पुराणमें ऐसो लिखा है कि वे माथुरी यज्ञपत्नीनमेंसे साक्षात् बगदके अपने घरकूं एकहू नहीं आई गोलोकसों दिव्य अनेक रथ आये तिनमें बैठ २ के सब गोलोककूं गई तिनकी परछाई बगदके घरनकूं आई ॥

२ कहूं स्त्रीभी तार देय है—एक कोई बडो पापी सुरापी अपने स्त्रीको लेकर बनमें गयो एक बडे पुराने मंदिरकी भीतके नीचे दोनों जाय बैठे बातें करनलगे वाने वाकूं पान दिया सो बीडीमें चूना अधिक हो सो उंगलीसे निकाल दिवा-लपै लगाय दीनो दैवयोगसे तहां दोनोंके प्राण छूटगये भगवान्ने अपने पार्षदोंको आज्ञा दी कि उन दोनोंने मंदिरपै

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हरि भगवान्में भक्ति होती भई ॥ ५० ॥ अकुंठित बुद्धि भगवान् श्रीकृष्णचंद्रकूं नमस्कार है जिनकी मायासो मोहितबुद्धि हो हम कर्मनमें भटके हैं ॥ ५१ ॥ उनकी मायाकरि मोहित चित्त और उनके प्रभावको न जाननवारे हमारे अपराधको कृष्णचंद्र भगवान् क्षमा करेंगे ॥ ५२ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके अपराधी वे ब्राह्मण अपने अपराधकी सुधि करिके कृष्ण बलदेवके दर्शन करवेकी इच्छा करत भये तथापि कंसके भयते नहीं जात भये ॥ ५३ ॥

इति स्वाघमनुस्मृत्य कृष्णे ते कृतहेलनाः ॥
दिदृक्षवोऽप्यच्युतयोः कंसाद्भीता न चाऽचलन् ॥ ५३ ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे यज्ञपत्न्युद्धरणं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

श्रीशुक उवाच–भगवानपि तत्रैव बलदेवेन संयुतः ॥
अपश्यन्निवसन् गोपानिन्द्रयागकृतोद्यमान् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहैं हैं श्रीकृष्ण भगवान् भैया बलदेवजीसहित व्रजमें वास करत भये इंद्रके यज्ञ करिवेकी तयारी करते गोपनकूं देखत भये ॥ १ ॥ समस्त जीवनके आत्मा भगवान् अर्थात् सबमें व्यापक याहीते सब बातनको जाननहारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र इंद्रके यज्ञकी तयारी है रही है तथापि आधीनतासों नंदराय आदि वृद्ध गोपनसों पूछत भये ॥ २ ॥ श्रीभगवान् कहैं हैं हे पितः ! तुमको कहा संभ्रम है रह्यो है यह मेरे आगे कहो वृथा संभ्रम नहीं है यज्ञ होयगो ऐसे कदाचित् पिता कहैं ताको उत्तर श्रीकृष्णचंद्र देइंगे यज्ञको कहा फल है और कौन देवता है कौन याके करिवेको अधिकारी है कौन वस्तुनते यज्ञ होय है ॥ ३ ॥ यह तुम मोसूं कहो हे पितः ! मेरी सुनिवेकी इच्छा है, या संसारमें सबके आत्मा साधुनको कर्म छिपायवे योग्य नहीं होय है ॥ ४ ॥ साधुके अपने परायो यह दृष्टि नहीं है मित्र उदासीन वैरीहू जिनके नहीं है, उदासीन तो शत्रुकी तुल्य वर्जित है, सुहृद आत्माकी तुल्य कह्यो है आत्मातुल्य सुहृद है याते मंत्रनमें वर्जित नहीं है यासों कारण वाके विचार करवेमें संग लेनो चाहिये ॥ ५ ॥ यह प्राणी जानिके और विना जानिके कर्म करै है परन्तु जानिके जो कर्म करै है वाको जो फल मिले है तैसे विना जाने कर्म करनवारेको नहीं मिले है ॥ ६ ॥ तहां यहां जो तुम सब

सुपेदी करी है सो तुम शीघ्र दो विमान ले जाय उन्हें यहां लाओ ऐसीही भई सो धर्म कहूं बडो काम देई है कहीं स्त्रीभी तार दे है ॥

१ कोउ बोलो मेरे दो रुपया दो पेटिया रोजीना है कोउ बोलो मेरो एक रुपया एक पेटिया कोई बोलो मेरे चार रुपया छै पेटिया रोजीना है वे कंस सुनेगो तो बंद है जायगे इत्यादि विचारकरके रहि गये कृष्णके दर्शननको नहीं गये ॥

२ देखादेखी कार्यसे काम नहीं चलै शास्त्रसे चलै है । एक रसायनी बाबाजीके दो चेला हे सो वे बाबाजी वर्ष छः महीना पीछे हजार दो हजारको सोनो बनाय साधु ब्राह्मणनकूं खवायदे है और बडो चेला उनकी बहुत सेवा करे हैं और बाबाजीसे सब रसायन पूछकै सीखलीनी । छोटो चेला धूर्त हो सो देख्यो करै कि यह बूटी निचोडै है ऐसे आंच देइ हैं ऐसोही बनाय लैउंगो पूछौ कहेकूं बाबाजी तौ मरगये और दोनों चेला लडके जुदे हो गये, छोटे चेलाने दो हजार ब्राह्मण न्यौत दिये सब चीज बनियेसे मंगायकै ब्राह्मण जिमाय दिये दूसरे दिन बनियैको तगादो आयो इसै तौ निश्चय ही कि घडीभरमें सेरौं सोनो बनाऊंगो सो तांबेको गलाय दबाई निचोड दीनी सोनो न बन्यौ अब तौ बाबाजी कटारी बगलमें दाब आधी रातकूं गुरुभाईपै पहुँचे सब हाल कह्यो बडो चेला बोल्यो तैने गुरुसे सीखी नहीं उडायकै विद्या लीनी है, अब मेरे सामने सामग्री इकठी कर बना जब बूंटी निचोरन लगो तो हाथ पकरकै कही ऐसे नहीं ऐसै निचोर तुरंत सोनो होय गयो यासै उडाई विद्यासौं काम नहीं चले है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तयारी यज्ञकी करोहो सो शास्त्रकी रीतिते करोहो अथवा लोकरीतिते करोहो यह मैं पूछूं हूं मेरे आगे भले प्रकार कहो ॥ ७ ॥ पूर्व पुरुषनते चल्यो आयो है यह बात नंदरायजी कहे हैं मेघरूप भगवान् इंद्र है मेघ वाकी प्यारी मूर्ति है वे मेघ प्राणीनके करनवारे जीवन जलकूं वर्षामें हैं ॥ ८ ॥ हे पुत्र ! मेघनके राजा इंद्रकूं हम ईश्वर मानै हैं औरहू संपूर्ण पुरुष वाके जलते उत्पन्न भये अन्ननसूं अनेक यज्ञन करके यजन करे हैं ॥ ९ ॥ यज्ञ करे पीछे शेष अन्नसूं जीविका करिके धर्म करे हैं और धर्म अर्थ काम सेवन करे हैं उद्यम करनवारे पुरुषोंकूं फलदाता इंद्र है ॥ १० ॥ जे पुरुष ऐसी परंपराते चले आये धर्मकूं काम लोभ भय द्वेषके हेतुसो त्यागि देइ हैं, वे कल्याणकूं नहीं पावे हैं ॥ ११ ॥ श्रीशुकदेवजी कहे हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार नंदरायजीके वचन सुनिके और व्रजवासीनको वचन सुनिके इंद्रके ऊपर क्रोध करिके श्रीकृष्णचंद्र भगवान् पिताते बोलत भये ॥ १२ ॥ भगवान् कहैं हैं कर्मनते जीव जन्मे हैं और कर्मनतेही देह त्यागे है और सुख दुःख कल्याण भय क्षेम कर्मनतेही पावै हैं ॥ १३ ॥ कर्मनके फलको देवनारो जो कोई ईश्वर है औरहीहै वहहू कर्म करनहारे पुरुषकूं कर्मानुसारही फल देइ हैं और जो कर्म नहीं करे ताकूं फल नहीं देइहै यासो फल सिद्धि तो कर्मसोही होय है तो कर्म परतंत्र रहवेसों इन्द्रकी क्या आवश्यकता है[2] ॥ १४ ॥ अपने अपने कर्मनके अनुसार वर्तें प्राणीकूं या संसारमें इंद्रते कहा प्रयोजन है, क्योंकि मनुष्यनके पूर्वजन्मके संस्कारते रचे कर्मनकूं अन्यथा करिवेकूं इंद्रहू असमर्थ है ॥ १५ ॥ जीव स्वभावके वश है और स्वभावहीकूं वर्तें हैं देवता असुर मनुष्यनसहित यह समस्त विश्व स्वभावमें रहै है यासो कर्मकी वृत्ति संस्कारते आधीन है तो प्रवृत्तिमें अंतर्यामीकी कहा अपेक्षा है ॥ १६ ॥ यह जीव बडे छोटे देहनकूं कर्मनसोही पाइके फिर कर्मनसोही छोडे है कर्महीं शत्रु है और कर्महीं मित्र और कर्महीं उदासी है कर्महीं गुरु है कर्महीं ईश्वर है ॥ १७ ॥ ता कारणते स्वभावमें स्थित हैके अपने कर्मनकूं करे ऐसे पुरुष कर्मकी पूजा करे अनायासपूर्वक जासो या पुरुषको निर्वाह होय वही वाकी देवता है यदि देवताके निमित्त होम करनोही कर्म है और देवता विना सिद्धि न होयगी ऐसे मानो तो देवता कर्मके अंगभूत हैवेसो मुख्य नहीं हैं यदि ईश्वर कर्मफल दाता है तो वाय कर्ममें अंगत्व सिद्ध होय है वास्तवमें तो जाकी जासो निर्वाहता होय है वही वाकी देवता है ॥ १८ ॥ जे पुरुष एक पदार्थको सेवन करिके दूसरेको सेवन करैं वातें यह पुरुष कल्याणकों नहीं पावैं है दृष्टांत व्यभिचारिणी स्त्री परपुरुषको सेवन करिके कल्याणको नहीं पावै है ॥ १९ ॥ ब्राह्मण वेद पढिके जीविका करे क्षत्री पृथ्वीकी रक्षा करिके, और वैश्य व्यापार करिके, शूद्र ब्राह्मण क्षत्री वैश्यकी सेवा करे ॥ २० ॥ खेती और वाणिज्य गौकी रक्षा करनो व्याज लेनो यह चार प्रकारकी वैश्यकी जीविका इन चारोंनमेंसो हमारे तो सदा गौनकी जीविका होती रही है यासो हमारे तो गउही देवता है इनसों सिवाय और कोउ देवता नहीं है ॥ २१ ॥ सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण इन तीनोंनसूं विश्वको पालन उत्पत्ति नाश होय है रजोगुणसूं स्त्रीपुरुष मिलिके नाना प्रकारको जगत् उत्पन्न होइ है ॥ २२ ॥ रजोगुणके प्रेरे मेघ सर्वत्र जलको वर्षामें हैं तिन जलनसूं प्रजा जीवै है इंद्र कहा करै है और जो तुम कहो कि लाला तेनें यह ज्ञान कहांते सीखो है तो हे पिताजी ! जे ऋषि मुनि जगन्नाथजीसो पुष्करकूं जांय हैं और बद्रीनाथसो सेतुबन्धकूं

---

१ (कर्मणा जा०) इत्यादि १२ श्लोकसो जो कर्म प्रधान करके नास्तिकनको मत भगवान्ने स्थापन कियो है सो केवल इन्द्रके यज्ञ उडावेकेही अर्थ कह्यो है यासो ये मत ग्राह्य नहीं है ॥

२ अर्थात् जब ईश्वरहू कर्मानुसारही फल देई है तब मेरे जाने तो कर्महीं ईश्वर है तब फिर इन्द्रके पूजनसो कहा होय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जांय हैं तिन्हैं बीचमें वृन्दावन पडे है वे सब गोवर्धन हैके जाय हैं तहां ठहरे हैं मैं ग्वालन सहित तहां खेलो करूंहूं विनके मुखसो यह सब बातें सुनी हैं ॥ २३ ॥ हमारे पुर देश ग्राम घर कछु नहीं है हे पिता ! वन हमारे घर है और नित्य वननमें पर्वतनमें वसैं हैं ॥२४॥ ताते गौ ब्राह्मण गोवर्धनपर्वत इनके यज्ञको प्रारंभ करो यह इंद्रके यज्ञकी सामग्री है तिनसूंही यज्ञ करो ॥२५॥ खीरते आदि लेके दालपर्यंत अनेक प्रकारकी सामग्री करो, गेहूंकी पूरी पुआ कचोरी गोझा करौ संपूर्ण दूध इकट्ठो करो ॥ २६ ॥ वेदके पढनवारे ब्राह्मण भले प्रकार होम करें, तिन ब्राह्मणको बहुत प्रकारकी सामग्री गौ दक्षिणा तुम देउ ॥ २७ ॥ और जो अन्य चांडालसूं आदि लेके पतितपर्यंत हैं तिन सबको यथायोग्य भोजन कराओ गौअनको घास देके गोवर्द्धन पर्वतको बलि देउ ॥ २८ ॥ सुंदर आभूषण पहिरके शृंगार करिके भोजन करिके गौ ब्राह्मण अग्नि पर्वतकी परिक्रमा करो ॥ २९ ॥ हे पिता ! यह मेरो मत है जो तुमको अच्छो लगे तो तुम करो यह गौ ब्राह्मण गोवर्द्धनपर्वतको यज्ञ मोको अतिप्रिय है गोवर्द्धन पर्वत विष्णुस्वरूप है नंदको पर्वत नंदीश्वर है बरसानेको पर्वत ब्रह्मा है यह तीनों देवता ब्रजमें वास करे हैं ॥ ३० ॥ इंद्रको गर्व दूरि करिवेके लिये कालरूप भगवान्को कह्यो सुनिके नंदादिक समस्त ब्रजवासी तिनको वचन भले प्रकार मानते भये ॥ ३१ ॥ जैसे मधुसूदन भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने कह्यो तैसेही सब ब्रजवासी करत भये स्वस्तिवाचन बचायके संपूर्ण इंद्रके यज्ञकी सामग्री ॥ ३२ ॥ पर्वत द्विज ब्राह्मणनकूं यथाविधि देके आदरयुक्त ब्रजवासी गौनकूं आगे करिके गोवर्द्धनपर्वतकी परिक्रमा देत भये ॥ ३३ ॥ वे ब्रजवासी बनठनके बैल जुते गाडानमें चढिके और गोपीहू गाडानमें चढिके श्रीकृष्णचंद्रकी लीलानकूं गावत ब्राह्मणके आशीर्वाद लेती परिक्रमा करत भई ॥ ३४ ॥ श्रीकृष्णने गोपनके विश्वासके निमित्त बडो रूप धारण करके मैं पर्वत हूं यह कह बहुत सामग्री भक्षण कीनी ॥ ३५ ॥ और श्रीकृष्णचंद्र सब ब्रजवासीनसहित अपने रूपको आपही नमस्कार करत भये और यह कहत भये तुम देखो तो यह गोवर्द्धन पर्वतरूप धरिके हमारे ऊपर अनुग्रह करे है ॥ ३६ ॥ यह गोवर्द्धनपर्वत जो पुरुष वनमें रहिके इनकी अवज्ञा करे हैं तिनकूं सर्पादिकको रूप धारिके मारे है याते हमारो भलो होय गौनको सुख हो याते गोवर्द्धनपर्वतकूं नमस्कार करें हैं ॥ ३७ ॥ या प्रकार संपूर्ण गोप वासुदेव भगवान्की आज्ञाते गोवर्द्धनपर्वत गौ ब्राह्मणको यज्ञ भले प्रकार करिके श्रीकृष्णचंद्रकूं संग लैके ब्रजको आवत भये ॥ ३८ ॥

---

१ छंद—तुम्हीं कर्ता हो सबनके तुम्हीं सबके ईश हो ॥ कोटि कोटि ब्रह्माण्ड तुम्हारे रोमप्रति जगदीश हो ॥ श्याम हलधर दास तुम्हरे कुशल यह दोऊ रहैं ॥ करि कृपा यह देहु प्रभु हम और कछु नाहीं चहैं ॥ अब हमें डर कौनको प्रभु शरण तुम्हारी पायकै ॥ इन्द्र कहा करि है हमारो नाथ ब्रजपर आयकै ॥ सुतन ले दोउ डारि गिरिपद आप नंद चरण परे ॥ विहँसि गिरि लखि प्रीति पंकज पाणि दुहुँ माथे धरे ॥ २ यहां इतनो भाव और कहनो कि प्रभुने विचारी कि परचो दिखाये विना प्रीति नहीं होय है सो आप एक बडो भारी रूप अनेक बडी २ भुजानको बनायके गोवर्धनके ऊपर जाय बैठे और जितनो भोग हो वाय खायके आप पुकारे और आनो और आनो यासो गोवर्धनकी तरेटीमें अन्यौर नामको ग्राम विख्यात भयो सो आजतक वर्तमान है ॥ ३ सोरठा—सहसौं भुजा पसार, लागे भोजन करन गिरि । बढ्यो आनंद अपार, कह्यो जात केहि भांतिसों ॥ अब गोवर्द्धनजी हाथसे सबकूं बुलाने लगे ब्रजवासी भेंट धर पूजने लगे ब्राह्मणसे कहे मन्त्र पढो वे बोले हमारे दादेहूने यह यज्ञ नहीं करो, हम कहा जाने तब कृष्ण बोले हम पूजा करावे हैं स्नान कराय चंदन लगाय भोजनकी सामग्री खानेको दी वे सबकी वस्तु खाने लगे, गोपियें कहन लगीं यह कृष्णकोही कौतुक है गिरिराजको और इनको एकहीसो रूप दीख परे है केवल भुजानमें भेद है और जो गोपियें घूंघट काढे देखैहीं तिनके घूंघट खोल कृष्ण कहने लगे जो ऐसे बडे घरकी धीं घरसे काहेको आई हीं, जो भेंट लाई हो सो चढाओ गोपियोंने हीरा मोती भोजनकी सामग्री सब चढाई गिरिराज भोजन कर बोले वरदान मांगो नंदराज आदि बोले कृष्ण अच्छो रहैं, उनमें हमारी प्रीति होय गोवर्द्धनजीने तथास्तु कही ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इत्यद्रिगोद्विजमखं वासुदेवप्रणोदिताः ॥
यथा विधाय ते गोपाः सहकृष्णा व्रजं ययुः ॥ ३८ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे इन्द्रमखभङ्गश्चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अध्याय २५.

श्रीशुक उवाच–इन्द्रस्तदात्मनः पूजां विज्ञाय विहतां नृप ॥
गोपेभ्यः कृष्णनाथेभ्यो नन्दादिभ्यश्चुकोप सः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! वह इंद्र ता समय अपनी पूजाको लोप जानिके श्रीकृष्णचंद्रको प्रभु माननवारे नंदरायजीसूं आदि लैके गोपनपै कोप करत भयो ॥ १ ॥ प्रलय करनवारे सांवर्तक नाम मेघगणकूं भेजत भयो, मैं ईश्वर हूं यह जाके मनमें अभिमान है वह इंद्र यह वचन कहत भयो ॥ २ ॥ अहो बडो आश्चर्य है वनके रहनवारे गौनके चरामनवारे ग्वालजातिनके कैसो धनको मद भयो है, इन ग्वालनने मनुष्य कृष्णको आश्रय लैकै मो देवताको अपराध करचो ॥ ३ ॥ जैसे कल्याण करनहारी ब्रह्मविद्याको त्यागकर नाममात्रसेही नौकाकी समान दृढतारहित क्रियासों होनहारे यज्ञनसों संसारसागरके पार जायवेकी कोई इच्छा करे है ॥ ४ ॥ तैसेही यह वाचाल मूर्ख बालक अपनेको पंडित माननहारे मनुष्य श्रीकृष्णको आश्रय लेके मेरी अवज्ञा करतेभये ॥ ५ ॥ लक्ष्मीसे मतवारो कृष्णके बहकाये इन गोपनके धनको मद भयो है, ताय दूरि करिदेउ और इनके पशूनको नाश करिदेउ ॥ ६ ॥ मैंहू ऐरावत हाथीपै चढिके बडे पराक्रमी मरुद्गण देवतानकूं संग लैके नंदके व्रजका नाश करिवेके लिये व्रजमें तुम्हारे पीछेही आऊं हूं ॥ ७ ॥ ऋषीश्वर कहैं हैं या प्रकार इंद्रकी आज्ञा पाय मुक्तबंधन हो वे मेघ नंदरायके गोकुलमें बलते बडी वर्षा करिके पीडा देतभये ॥ ८ ॥ बिजली चमकन लगी कडकड शब्द होनै लगो, तीव्र मरुद्गणसो चलायमान होय बादर जलके कंकर और जलनकी वर्षा करत भये ॥ ९ ॥ स्तंभकी तुल्य स्थूल जलकी धारा वारंवार बादरनमेंते निकसन लगी तिनसूं पृथ्वी डूबिगई, ऊंचे नीचे गाढगढेला कछु न दिखाई देत भये ॥ १० ॥ अत्यन्त वर्षा और तीव्र वायुके चलवेसो सब गैयां कांपन लगी, और गोप गोपी जाडेसो दुःखी होय श्रीकृष्णकी शरण गई ॥ ११ ॥ जलधारासों पीडित होयकै गौ शिरनकूं नीचे करिकै और बछरानको छातीके नीचे करिके कांपत भगवान्के चरणके समीप जात भई ॥ १२ ॥ हे कृष्ण हे कृष्ण हे महाभाग हे समर्थ हे भक्तनके ऊपर हितके करनवारे ! तुमही जाके नाथ ऐसे गोकुलनकूं और हमकूं क्रोधी इंद्रसो रक्षित करो ॥ १३ ॥ बडी बडी शिला ओले वर्षवेसो पीडित और अचेतन गोकुलकूं देखिकै सबके दुःखनके हरनवारे श्रीकृष्णचंद्र भगवान् क्रोधी इन्द्रको कर्तव मानतभये ॥ १४ ॥ ऋतु विना भयानक शिलामय वर्षा भई और पवन चले सो हमने इन्द्रको यज्ञ मेटि दियो तासूं इन्द्र हमारे नाशके लिये वर्षावै है ॥ १५ ॥ ता वर्षाके दूरि करिवेके

---

१ प्रश्न–इन्द्रको मोह क्यौं हुआ ? उत्तर–ईश्वरकी मायामें सभी मोहित हो जाते हैं अहंकारके साथही माया प्रविष्ट हो जाती है मेरी पूजाका शब्द कहतेही माया लिपटी और इन्द्रका अभिमान दूर कराया जिससे यह शुद्ध हुआ ॥

२ दोहा–उमडि घुमडि घहरायकै, परन लगे जल जोर ॥ अररररर आकाशते, जल डारत झकजोर ॥ १ ॥
ग्वाल बाल सब डरपिकै, वनसै आये धाय ॥ भय व्याकुल सब व्रज भयो, शरण कौनकी जाय ॥ २ ॥

३ राग बिलावल–राख लेहु गोकुलके नायक ॥ भीजत ग्वाल गाय गोसुत सब विषम बूंद लागत जनु सायक ॥ १ ॥ बरषत मूसलधार सैनपति महामेघ मघवाके पायक ॥ तुम बिन ऐसो कौन नंदसुत यह दुख दुसह मेटवे लायक ॥ २ ॥ अघमर्दन बकबदन विदारन बकीविनाशन सब सुखदायक ॥ सूरदास तिनकौ काको डर जिनके तुमसे सदा सहायक ॥ ३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उपायको अपनी सामर्थ्यसूं रचूंगो और अज्ञानते अपनेको लोकनके ईश्वरको माननहारे इन्द्रादिक देवतानके मदते भये अज्ञानकूं दूरि करोंगो ॥ १६ ॥ मेरी भक्ति करनहारे अथवा सत्वगुणी देवतानको सामर्थ्यको अभिमान न होनो चाहिये, परन्तु अब इनमें अभिमान प्राप्त भयो यातें इन असाधुनको मानभंग कर इनको कल्याण करूंगो ॥ १७ ॥ ता कारणते मेरी शरण आयो, मेरेही आधिपत्यमें मेरो ग्रहण कियो यह व्रज है, ताकी अपने योगबलते रक्षा करूंगो शरणागत पालक मेरो बानोही है यह मैंने संकल्प करो है ॥ १८ ॥ ऐसे कहिके निकट जाय एक हाथते गोवर्धन पर्वतकूं उखारिके लीलाकरिके श्रीकृष्णचन्द्र वामहाथकी छुगली उंगलीपे उठावंत भये जैसे बालक छतोनाकूं उठामें हैं ॥ १९ ॥ पर्वत उठाये पीछे भगवान् श्रीकृष्ण गोपनते कहत भये हे मैया ! हे पिता ! हे व्रजवासियो ! गायनकूं लेलेके सुखसो पर्वतके नीचे आय जाओ ॥ २० ॥ मेरे हाथते पर्वत गिरि परेगो हम दबि जांयगे ऐसो भय तुम मति मानो पवन वर्षाके भयते डरपो मति, तुम्हारी मैंने रक्षा करी है ॥ २१ ॥ श्रीकृष्णने ढाढस बंधानेसै वे व्रजवासी गौ गाडा पुरोहितनकूं संग लैके आनन्दपूर्वक पर्वतके नीचे गढेलामें धसत भये ॥ २२ ॥ भूख प्यासको दुःख और सुखकी चाहना त्यागिके वे व्रजवासी ठाढे देखत रहे, सात दिन पर्यंत श्रीकृष्ण पर्वत धारण करत भये और जहां ठाढे हे तहांते तनकहूं न डिगत भये ॥ २३ ॥ जब सात दिन वर्षवेसो महाप्रलयको पानी सब निबड गयो तब बादरनने जाय इन्द्रसो कही कि महाराज ! जल सब ह्वै चुक्यो, पर व्रजमें बूंदहूं नहीं परी तब इंद्र श्रीकृष्णके प्रभावको सुनिके आश्चर्य मानिके गर्वको त्याग विफलमनोरथ होय अपने मेघनकूं मने करत भयो ॥ २४ ॥ बादर जायवेसो सूर्य उदय ह्वै आयो ऐसे आकाशकों देखिकै और भयानक पवन वर्षाको थम्यो देखिके गोवर्द्धनधारी श्रीकृष्ण गोपनते बोलत भये ॥ २५ ॥ हे गोपओ ! स्त्री धन बालकनकूं लैके तुम या पर्वतके नीचेते निकसो, भयको त्यागो अब पवन वर्षा थमि गई नदीनके जलहू उतरी गये ॥ २६ ॥ श्रीकृष्णने इतनी बात कही तब गोप अपने अपने गौनके समूहनकूं लैके और गाडानमें सब वस्तु धरिके स्त्री बालक वृद्ध सब डोले डोले निकसत भये ॥ २७ ॥ समर्थ भगवान् श्रीकृष्णचंद्रहू ता पर्वतकूं अपने ठिकानेपै पहिलेकी तुल्य समस्त प्राणीनके देखते २ लीला करिके धरत भयो ॥ २८ ॥ प्रेमते भरे व्रजवासी सन्मुख आयकै जैसो जाकूं उचित हों तैसो मिलत भये, और स्नेहभरी गोपी आनन्दसो दही अक्षत जलनसूं पूजा करत आशीर्वाद देत भई ॥ २९ ॥ यशोदाजी रोहिणीजी नंदरायजी और बलिनमें बलवान् श्रीबलदेवजी श्रीकृष्णचन्द्रकूं छातीते लगाय स्नेहते कायर होयके आशीर्वाद देत भये यशोदाजी बोली आज मेरो नाम सार्थक भयो जो काहूकी बछियाहू मरी जाती तो मेरो नाम यशोदा हो जातो ॥ ३० ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! स्वर्गमें देवतानके

---

१ क्योंजी वाम हाथकी छुगली उंगलीपे गोवर्धन उठायो याको प्रमाण कहा लिखो है ? उत्तर—ये बात हरिवंश पुराणमें लिखी है (स धृतः संगतो मेघैर्गिरिः सव्येन पाणिना ॥ गृहभावं गतस्तत्र गृहाकारेण वर्चसा ॥) वाम हाथसो उठायो गोवर्धन घर बने भयेके आकार प्राप्त भयो ॥ २ चौपाई—करी सहाय देव गिरि राया । आवहु तुम सब इनकी छाया ॥ सब व्रजवासी कृष्णचन्द्रके मुखको देख रहे थे जिससे किसीको भूख प्यास नहीं लगी बाहर जलकी वर्षा और भीतर आनंदामृतकी वर्षा होय रही सखा चरण दाब रहे हैं हास्यरसयुक्त गोपियां बोली हमारो माखन चुरायकै खायो ताके बलसो पर्वत धारण करो है यशोदा माखन खवावे है किशोरीजी सन्मुख खडी है । दाबत भुजा यशोदा मैया, बार बार मुख लेत बलैया, उहां नीलमेघ यहां श्यामवरण कृष्ण, उहां विद्युत यहां किशोरी, उहां जलकी वर्षा, यहां आनंदकी वर्षा, गोवर्द्धन उठानेके समय श्रीकृष्ण सीधेही ठाडे रहे टेढे होनेसे गोप जानते कि लालाको परिश्रम होय है ॥ ३ क्योंजी वो सब पानी कहां गयो ? उत्तर—वो सब पानी जो वर्षो हो वो सुदर्शनचक्रने ऊपरको ऊपरही सुखाय दियो व्रजकी धूरहू गीली नहीं भई यह सब श्रीकृष्णको प्रभाव समझनो चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गण साध्यगण सिद्ध गन्धर्व चारण संतुष्ट होयके फूलनकी वर्षा करतभये ॥ ३१ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! स्वर्गके देवता शंख नगारे बजावत भये और तुंबुरु आदि मुख्य गन्धर्वपति गावत भये ॥ ३२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! फिर बलदेवसहित श्रीकृष्णचंद्र प्यारे मित्रनकूं संग लैके व्रजमें आवत भये, और आनंदको प्राप्त होय गोपी हृदयकूं आनंद देनवारे श्रीकृष्णचंद्रके गोवर्द्धन उठायवेते आदि लेके चरित्रनकूं गावति भई, श्रीकृष्णने मेघनहीको निवारण क्यों न करदियो ता पै कहैहैं कि गिरिराज सैंकरन मन मिठाई खायगए और अनगिनत मिठाई जहां तहां गिर गई, अब गिरिराजके न्हवायवे आचमन करायवेकी किसे सामर्थ्य है तब श्रीकृष्णने कही ऐसो टहलुआ बुलावैं जो इन्हैं तृप्त करै यासों वर्षा भई और ग्वालबालनकों डरे देख कृष्णने कही तुमहू सहारो लगाओ तब सबने लाठी लगाय लीनी कृष्ण बोले अबकै भलो उचकायो ॥ ३३ ॥

ततोऽनुरक्तैः पशुपैः परिश्रितो राजन् स्वगोष्ठं सबलोऽव्रजद्धरिः ॥
तथाविधान्यस्य कृतानि गोपिका गायन्त्य ईयुर्मुदिता ह्यदिस्पृशः ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कंधे पू० गोवर्द्धनोद्धरणं नाम पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अध्याय २६.

श्रीशुक उवाच– एवंविधानि कर्माणि गोपाः कृष्णस्य वीक्ष्य ते ॥
अतद्वीर्यविदः प्रोचुः समभ्येत्य शुचिस्मिताः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! गोप गोवर्धन उठायवेकूं आदि लैके श्रीकृष्णचंद्रके कर्म देखि प्रभाव जानिके व्रजवासी बडो आश्चर्य मानके नंदरायजीके पास आयके बोलत भये ॥ १ ॥ या बालकके बडे अद्भुत चरित्र हैं इन्हें देखके हमें संदेह होयहै कि अपने स्वरूपके ए ग्रामके रहनहारे पुरुषनमें इनको जन्म होनों कैसे संभव है ॥ २ ॥ जो सात वर्षका बालक एक हाथते लीलाकरिके हाथी जैसे कमलकूं उठावै है तैसे पर्वतकूं उठायके कैसे ठाढो होत भयो ॥ ३ ॥ नेत्र मींचे भएही अति छोटी अवस्थामें यह बालक बडे वेगवारी पूतनाके स्तनको प्राणसहित पीवत भयो जैसे काल देह जीवन अथवा आयुर्बलकूं पीवे है ॥ ४ ॥ तीन महीनाके गाडानके नीचे पालनेमें सोवतेभये रोवत २ जो या बालकने ऊपरको चरण उठाये तो चरणकी ठोकर लगिकै गाडो उलटिकै कैसे गिरतभयो ॥ ५ ॥ एक वर्ष दिनको यह कृष्ण आंगनमें बैठ्यो हो तब दैत्य तृणावर्त आकाशमें हरिकै लैगयो ता दैत्यको गरो घोंटि कैसे मारतभयो ॥ ६ ॥ कबऊ एक माखन चुरायोहो तब माता यशोदाने उलूखलसों बांध्यो तब यमलार्जुन वृक्षके बीचमें आयके हाथनते उनको कैसे उखारिके डारत भयो ॥ ७ ॥ वनमें बलदेव सहित बछरा चरावत हे, ता समय बकासुर मारिवेको आयो ताको दोनों हाथनतें चोंचि पकरिके कैसे चीर डारत भयो ॥ ८ ॥ बछरानमें बछराको रूप धरिके मारवेकी इच्छा करिके आये वत्सासुरनकूं मारिके वाके देहको लीला करिके कैथके वृक्षपै कैसे पटकत भयो और लीलासेही वे वृक्ष गिराय दिये ॥ ९ ॥ बलदेव सहित धेनुकासुर दैत्यको मारिके और वाके संगके बंधूनको मारिके जामें पाके फलवारे तालवनकूं निर्भय करत भये ॥ १० ॥ बडे बलवान् बलदेवजीसो भयानक प्रलंबासुर दैत्यको मरायके वनमें आगि लगी ताते व्रजके पशूनकूं और गोपनकूं छुडावत भये ॥ ११ ॥ अति भयानक विषवारे कालीसर्पको दंड देके वाके मदकूं दूरि करिके जोरावरी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दहमेंते निकासिकै यह श्रीकृष्ण यमुनाकूं निर्विष करतभयो ॥ १२ ॥ हे नंद! हम सब ब्रजवासीनको इनमें बड़ो अनुराग है, अर्थात् ऐसो प्यार है कि छुडायेसो न छुटसके इन कृष्णहूकोहू हममें स्वाभाविक प्यार कैसो है अर्थात् यह कृष्ण सबको आत्मा है यह शंका होय है ॥ १३ ॥ सात वर्षको बालक कहा इतनो बडो पर्वत उठावै, ताते हे ब्रजनाथ! तेरे पुत्रमें हमकूं शंका होइ है, कदाचित् परमेश्वर न होइ, यासों हम याकी पंचायत करेंगे, कि यह तुम्हारे कैसे पुत्र भयो है ॥ १४ ॥ या प्रकार गोपनकी बातें सुनिके नंदरायजी बोले संदेह करवेकी कछू बात नाय है मैं या बालककी जन्मपत्री लाऊंहूं, जो गर्गाचार्यने बनाई है यह कह नंदरायजी जन्मपत्री लाये और बोले हे गोप! मेरी बात सुनो, जासूं या बालकमेंते तुम्हारी शंका जाय गर्गाचार्य या बालकको नाम धरिके मोको जे जे गुण बताय गये हैं ते ते श्रवण करो ॥ १५ ॥ या बालकके तीन रंग होतभये, और युगयुगमें देह धरै है पहिले जाको श्वेतवर्ण हो, फिर रक्तवर्ण हो, फिर पीतवर्ण हो, अब याने कृष्णरूप धरो है ॥ १६ ॥ यह तुम्हारो पुत्र पहिले कबहुँ वसुदेवके जन्मो है, याते जे कोई जाने ते श्रीमान् वासुदेव कहैं हैं ॥ १७ ॥ तुम्हारे पुत्रके नाम बहुत हैं, और रूप बहुत हैं, जैसे यामें गुण होंयगे, तैसे तैसे कर्म करोगो तिनके अनुसार नाम होंयगे ॥ १८ ॥ यह तुम्हारो कल्याण करोगो, और गोपनकूं गौनकूं आनंद देयगो या कृष्णकी सहायते तुम समस्त कष्टनते सहजमें छुटि जाओगे ॥ १९ ॥ हे ब्रजराज! पहिले तुम्हारे पुत्र कृष्णने राजारहित पृथ्वीमें चोरनसो सताये साधुनकी रक्षा करी, तब साधु वृद्धिकूं प्राप्त होयके चोरनकूं जीतत भये ॥ २० ॥ जे बडभागी पुरुष या कृष्णमें प्रीति करैं हैं तिनकूं वैरी नहीं सतामें हैं, जैसे विष्णुसो रक्षित देवतानकूं असुर नहीं सतावैं हैं ॥ २१ ॥ ता कारणते हे नंद! तुम्हारो यह पुत्र गुणनमें शोभामें कीर्ति प्रभाव करिके नारायणकी तुल्य है याके कर्मनमें आश्चर्य मति मानियो ॥ २२ ॥ या प्रकार साक्षात् गर्गाचार्य मोते कहिके अपने घरको चले गये, वा दिनते बडे २ कार्य करनहारे श्रीकृष्णको मैं नारायणको अंश मानूं हूं ॥ २३ ॥ या प्रकार ब्रजवासी गर्गाचार्यको कह्यो नंदजीको वचन सुनिके प्रसन्न होयके नंदजीको पूजन करत भये, और कृष्णमेंते शंका उनकी दूरि भई ॥ २४ ॥ यज्ञके नाशसैं क्रोध करिके इंद्रने वर्षा करी, ता समय ब्रज पत्थर पवनसूं पीडित ग्वालबाल पशु स्त्रीनकूं अपनी शरण आये देखिके दयायुक्त हो श्रीकृष्ण मुसुकायके बालक जैसे छतोनाकूं उखाडे हैं ऐसे एक हाथसों गोवर्द्धनपर्वतकूं उखारिके धारण करिके ब्रजकी रक्षा करत भये इंद्रके मदको दूरि करनवारे गौनके इंद्र श्रीकृष्ण हमारे ऊपर प्रसन्न होउ ॥ २५ ॥

देवे वर्षति यज्ञविप्लवरुषा वज्राश्मवर्षानिलैः सीदत्पालपशुस्त्रि आत्मशरणं दृष्ट्वानुकम्प्युत्स्मयम् ॥ उत्पाट्यैककरेण शैलमबलो लीलोच्छिलीन्ध्रं यथा बिभ्रद् गोष्ठमपान्महेन्द्रमदभित् प्रीयान्न इन्द्रो गवाम् ॥ २५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दश० पू० गोपसंशयनोदनं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अध्याय २७.

श्रीशुक उवाच–गोवर्धने धृते शैल आसाराद्रक्षिते व्रजे ॥
गोलोकादाव्रजत् कृष्णं सुरभिः शक्र एव च ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित्! श्रीकृष्णने गोवर्धन पर्वत उठायके ब्रजकी रक्षा करी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तब इन्द्रने जाय ब्रह्माजीको सब कथा सुनाई तब ब्रह्माजी बोले इन्द्र तैंने बडो अपराध कियो मैंहू वत्सहरनमें अपनी बूढी दाढीपै धूलि डार चुकोहूं तब स्वर्गलोकते सुरभी गौ और इन्द्रलोकते इन्द्र आवत भये ॥ १ ॥ अपराध करेते लज्जित होय इन्द्र एकान्तमें आयके सूर्यकी समान तेजवारे किरीटको श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविंदसूं लगावत भयो ॥ २ ॥ अमिततेजस्वी श्रीकृष्णचंद्रको प्रभाव जा प्रकार काननते श्रवण कऱ्यो हो, ताही प्रकार नेत्रनते देखो ता समय त्रिलोकीको ईश्वर मैं हूं यह मद जात रह्यो, तब वह इंद्र हाथ जोरिके बोलत भयो ॥ ३ ॥ इंद्र कहै है तुम्हारो स्वरूप शुद्ध सत्वगुणी है, अर्थात् एकरूप है शांत सर्वज्ञ है रजोगुण तमोगुणसे रहित है, मायाको जो कार्य अज्ञानसूं जीवनको लगि रह्यो है सो संसार है यह तुम्हारे स्वरूपमें नहीं है ॥ ४ ॥ हे ईश ! देहसम्बन्ध तुमको नहीं हैं, तो उस देहसंबन्धते करे भये और अन्य देहके कारण काम लोभादिक कहांते होयगे, ऐसे काम लोभादिक तो अज्ञानीको होइ है तुम्हारे काम लोभादिक तो नहीं हैं तथापि धर्मकी रक्षा करिवेके लिये और दुष्टनके मद दूरि करिवेके लिये तुम दंड देउ हौ ॥ ५ ॥ तुम जगत्के पिता हौ गुरु हो ईश्वर हो नाशरहित दंडके ग्रहण करनवारे कालरूप हो, जीवनके हित करिवेके लिये और अपनेकूं ईश्वर माननहारोंके मान दूरि करिवेके लिये अपनी इच्छासूं रूप धरिके लीला करोहो, तुम्हारी लीलाहीमें हमारे मान दूर होय जाय है, लोकनकी वाहवाहमें जीवको सत्यानाश होय है[१] ॥ ६ ॥ जो मो सारिखे अज्ञानी आपकूं जगत्के ईश्वर मानें हैं ते भयके समयहू निर्भय आपको दर्शन कर शीघ्रही ईश्वरत्वको मद त्यागें हैं और गर्वको छोडिके सत्पुरुषनकी और तुम्हारी भक्तिकूं करें हैं तुम्हारी सहजकी चेष्टा है सोई दुष्टनको दंडरूप है ॥ ७ ॥ हे समर्थ ! ऐश्वर्यके मदमें डूबि रह्यो तुम्हारे प्रभावकूं न जानिके तुम्हारे अपराध करनहारे मूढ चित्त मेरे ऊपर क्षमा करो हे ईश्वर ! फिरि मेरी ऐसी बुद्धि न हो यह मैं प्रार्थना करूंहूं ॥ ८ ॥ हे अधोक्षज ! अर्थात् इंद्रियनकरि जानिवेमें नहीं आओ हे देव ! अर्थात् प्रकाशमान या संसारमें तुम्हारे अवतार पृथ्वीको भार और बडो भार जिनते होय ऐसे सैन्यके पालन करनवारे मुख्यसेनापतिनके मारिवेके कारण और तुम्हारे चरणके सेवन करनवारे भक्तनके कल्याणके निमित्त है ॥ ९ ॥ तुम जो भगवान् महात्मा पुरुष हो तुम्हारे अर्थ नमस्कार है शुद्ध अंतःकरणके प्रकाश भक्तनके रक्षक वासुदेव भगवान् श्रीकृष्ण तुम्हारे अर्थ नमस्कार हैं ॥ १० ॥ अपने भक्तनके ऊपर कृपा करिवेके लिये देह धरनहारे और शुद्ध ज्ञानमूर्ति सर्वरूप सबके कारण प्राणिनके आत्मा तुमकूं नमस्कार है ॥ ११ ॥ हे भगवन् ! जब यज्ञ नाशकूं प्राप्त भयो तब बडो क्रोधकर मो अज्ञानी अभिमानीने व्रजके नाश करिवेके लिये वर्षाके निमित्त पवन चलायके करिवेके अयोग्य कार्य करे ॥ १२ ॥ तुमने मोपै अनुग्रह कियो, जो मेरो गर्व दूरि हैगयो, उद्यमहू वृथा भयो तुम सबके ईश्वर आत्मा हो, तुम्हारी मैं शरणमें प्राप्त भयोंहूं ॥ १३ ॥ या प्रकार इन्द्रने भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी स्तुति करी, तब

---

१ लोकनकी वाहवाहमें जीवको सत्यानाश होय है। एक नकली भांडको लारिका बाजारमें निकसो सो वाहि सर्पने डस लियो घुमेर आगई वह पुकारो अरे भाई ? मुझे सांपने काट्यो है मेरी दवा करो, अब यह तौ लहरमें घूमे है, लोग तमासा देखें और कहैं हैं भलो स्वांग भयो है वह " श्रीकृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः " यह कहै है, लहर ज्यादा बैढ है लोग कहैं खूब स्वांग भरो है, सत्यही स्वांग कर दिखायो अब वह मारे जहरके व्याकुल होय मरनेपर भयो कहन लगो अब-हू मेरी दवाई करो लोक बोले ऐसो स्वांग तौ याकें दादेहूंपै न भयो निदान वह गिर परयो और प्राण निकल गये लोक वाहवाह करत रहे लोकोंकी वाहवाहमें भूलनेसे अपनो सत्यानाश भयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हँसिके मेघकी तुल्य गंभीर वाणीसो इन्द्रते बोलत भये ॥ १४ ॥ भगवान् कहैं हैं हे इन्द्र ! मैंने तेरे ऊपर अनुग्रह करिवेके लियेही मखको भंग कियो है, तुम देवतानको राज्य पाय अचेत हैगये हे सो अपनो स्मरण करायवेके निमित्त यह मैंने कियो ॥ १५ ॥ ऐश्वर्यमद धममदसों अंधे भये पुरुष दंड हाथमें लिये मोय नहीं देखेहै, जाके ऊपर मैं कृपा करवेकी इच्छा करूंहूं, ता पुरुषकी संपत्ति हरिलेउहूं ॥ १६ ॥ हे इंद्र ! अब तुम जाओ तुम्हारो कल्याण हो, अहंकार त्यागिके मेरी आज्ञाकूं करियो, सावधान होयके अपने अधिकारपै रहो ॥ १७ ॥ इंद्र स्तुति करिचुको ताके पीछे उदारचित्त सुरभि गौ अपनी संतानसहित आयके गोपरूपी ईश्वर श्रीकृष्णचंद्रको नमस्कार करिके संबोधन देके बोलत भई ॥१८॥ हे कृष्ण ! हे महायोगिन् ! हे विश्वके आत्मा ! हे विश्वके उपजावनवारे ! हे अच्युत अर्थात् हे अखंडरूप ! इंद्रने तो हमें मारेही है परंतु हे लोकनके नाथ ! तुमने बचाये ॥ १९ ॥ हे जगत्के पति ! तुम हमारे श्रेष्ठ देवता हो, और तुमही गौ ब्राह्मणके देवता हो और जे साधु हैं तिनके कल्याणके लिये हमारे इंद्र होउ ॥ २० ॥ ब्रह्माजीकी हमें आज्ञा भई है सो इन्द्र पदवी देवेके निमित्त हम तुम्हारो अभिषेक करेंगे हे विश्वके आत्मा ! पृथ्वीको भार उतारिवेके लिये तुमने अवतार लियो है ॥ २१ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परिक्षित् ! या प्रकार कहिके श्रीकृष्णचंद्रको यह कामधेनु अपने दुग्धते अभिषेक करत भई और ऐरावत हाथीकी सूंडसों लाये आकाशगंगाके जलसों अभिषेक कियो ॥२२॥ और इंद्रनेहू देवमातानकी प्रेरणासो देवर्षिनके सहित भगवान्को अभिषेक कियो, और गोविन्द नाम धरो ॥ २३ ॥ और दाशार्हवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचंद्रको ता समय तुंबुरु नारदजीते आदि लेके गंधर्व विद्याधर सिद्ध चारण आयके लोकनके पापनको दूरि करिवेके लिये श्रीकृष्णचंद्रके यशको गावत भये, और अति आनंदित होयके देवांगना नृत्य करत भई ॥ २४ ॥ देवतानमें मुख्य देवता श्रीकृष्णचंद्रकी स्तुति करतभये, अद्भुत पुष्पनकी वर्षा करत भये, तीनों लोक परम आनंदकूं पावत भये, ता समय गौ धरतीकूं दूधते भिजोवत भई ॥ २५ ॥ श्रीकृष्णचंद्रको जा समय गोविंदाभिषेक भयो ता समय नदी अनेक तरहसो रसनकी वहनवारी होतीभई, और वृक्षनमेंते मदकी धारा चुवति हुई, विना जोते खेत आपही पकत भये, पर्वत अपनी गुफामेंते मणिनकूं बाहिर निकाशकरि धरतभये ॥ २६ ॥ हे कौरवनके आनंदके देनवारे ! श्रीकृष्णचंद्रको गोविन्दाभिषेक भयो ता समय क्रूर स्वभाव सिंहादिक जीवनके वैरभाव ! दूर होतभयो ॥ २७ ॥ या प्रकार गोकुलके रक्षा करनवारे श्रीकृष्णचंद्रकूं गोविंदाभिषेक करिके आज्ञा पाय वह इंद्र देवतानकूं संग लेके स्वर्गकूं जातभयो ॥ २८ ॥

इति गोगोकुलपतिं गोविन्दमभिषिच्य सः ॥
अनुज्ञातो ययौ शक्रो वृतो देवादिभिर्दिवम् ॥ २८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कंधे पूर्वार्धे गोविंदाभिषेको नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

अध्याय २८.

श्रीशुक उवाच-एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य जनार्दनम् ॥
स्नातुं नन्दस्तु कालिन्द्या द्वादश्यां जलमाविशत् ॥ १ ॥

---

१ प्रश्न-यहां गोविन्द और २६ अध्यके अन्तमें भगवान्को गौओंका इन्द्र क्यों कहा ? उत्तर-यहां और वहां इस कारण कहा कि गोवर्द्धन धारण कर भगवान्ने गौओंकी रक्षा की और इसी कारण कामधेनु आई थी और इन्द्रकी समान कार्य करनेसे यह नाम हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नंदजीने एकादशीके दिन निराहारव्रत करिके भगवान्‌को पूजन कियो, दूसरे दिन द्वादशी दो घरी ही, ता समय पारनो करिवेके लिये अरुणोदयते पहिले रात्रिमें धर्मसत्रके बलते स्नान करिवेके लिये यमुनाजलमें धसतभये ॥ १ ॥ नंदरायजी आसुरी वेलाको नहीं जानके जलमें प्रवेश करतभये, या कारण वरुणको एक दैत्य सेवक उन्हैं पकड वरुणके पास लेगयो ॥ २ ॥ नंदरायजीकूं न देखिके गोपसंग गये ते हे कृष्ण! हे राम! ऐसे पुकारतभये, ता समय भगवान् श्रीकृष्णचंद्र पिताकों वरुण हरिके लेगयो यह बात सुनिके हे परीक्षित्! अपने भक्तनकूं अभयके देनवारे समर्थ श्रीकृष्ण वरुणके पास जातभये ॥ ३ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके दर्शन करेते बडो आनंद पाय लोकनको पालनवारो वरुण इंद्रियनके ईश्वर कृष्णचंद्रको आयो देखि बडी पूजाकी सामग्रीनसूं पूजा करिके बोलतभयो ॥ ४ ॥ वरुण बोले आजही तुम्हारे दर्शन करेते मेरो जन्म सफल भयो है, हे समर्थ! आज मेरे मनोरथ सफल भये हे भगवन्! तुम्हारे चरणारविंदको जो भजन करैं हैं ते संसारके पार होय मोक्षकूं प्राप्त होय हैं ॥५॥ परिपूर्ण समस्त जीवनके साक्षी जिनकी बराबर काहूको ऐश्वर्य नहीं ऐसे भगवान्‌को नमस्कार है; और जिनके स्वरूपमें लोकनकी रचना करनहारी माया नहीं सुनी जाय है ॥ ६ ॥ धर्मकी महिमाकूं नहीं जाननहारो कार्यकूं नहीं जाननेहारो मूढ मेरो टहलुआ तुम्हारे पिताको लेआयो सो अपराध क्षमा करो ॥ ७ ॥ हे समस्त पदार्थनके देखनवारे कृष्ण! मेरे ऊपर तुम अनुग्रह करिवेके योग्य हो, हे गोविन्द अर्थात् गौनके इंद्र हे पितृवत्सल अर्थात् हे पिताके हितके करनवारे! अपने पिताकूं आप लेजाओ ॥८॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं या प्रकार ब्रह्मादिकनके ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको जब वरुणने प्रसन्न करे तब अपने पिताकूं ले और सब बंधूनकूं आनंद देत आवतभये ॥ ९ ॥ कबहू देखवेमें नहीं आयो ऐसो वरुणको ऐश्वर्य और श्रीकृष्णचंद्रमें उनकी अतिप्रीति देखिके नंदरायजी आश्चर्य मानिके अपनी जातिके गोपनसूं कहतभये मोको लेजायके एक कोनेमें बैठारिदियो; पश्चात् यह कृष्ण गयो तब याकूं देखिके वरुणने नमस्कार करि पूजा करी ॥ १० ॥ हे राजन् परीक्षित्! उत्कंठायुक्त बुद्धिसों ब्रजवासी श्रीकृष्णचंद्रकूं ईश्वर मानिके विचार कर कहत भये कि श्रीकृष्ण कहां हमकूं अपने वैकुंठधाममें प्राप्त करोगे, ब्रह्मादिकनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्र अपने ब्रह्मस्वरूपको दर्शन करामेंगे ॥ ११ ॥ या प्रकार सबके देखनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अपने ब्रजवासीनको मनोरथ जानिके उनके मनोरथ पूर्ण करिवेके लिये कृपा करिके यह विचारत भये ॥ १२ ॥ या संसारमें प्राणी देहमें अहंकार काम कर्म इनकरिके देवता पशु पक्षिनकी योनिनमें भटकत अपनो स्वरूप नहीं जानैं हैं ॥ १३ ॥ या प्रकार बडे करुणावान् समर्थ श्रीकृष्णचंद्र भगवान् विचारिके गोपनकूं ब्रह्मस्वरूप दिखावत भये, फेरि मायाते परे वैकुंठधामको दर्शन करावत भये ॥१४॥ अब ब्रह्मस्वरूपको वर्णन करे हैं सत्य अर्थात् बाधारहित ज्ञानस्वरूप अनंत अर्थात् देखिवेमें न आवै है ज्योति अर्थात् स्वयंप्रकाश गुणनके निषेधमें सावधान मुनीश्वर जा रूपकूं देखैं हैं ॥ १५ ॥ ते संपूर्ण ब्रजवासी ब्रह्मस्वरूपदेहमें प्राप्त होतेही मग्न हैगये, फिर भगवान् श्रीकृष्णने कृपाकर तहांसो निकास वैकुंठ लोक दिखायो, जहां पहले अक्रूरजी गये है यहां शंका हे ब्रह्ममें डूबेकूं वैकुंठको दर्शन नहीं बनै हैं तहां कहैं हैं जिन श्रीकृष्णचंद्रकी कृपाते पहिले अक्रूरजी देखत भये उन अचिन्त्य ऐश्वर्यवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्रमें कछु बात अनुचित नहीं है ॥ १६ ॥ तहां वेदनसों श्रीकृष्ण भगवान्‌की स्तुति होती देख नंदजीसूं आदि लेके ब्रजवासी वैकुंठधामको दर्शन परमानंददेहसूं सुखी होयके बडो आनंद मानत भये ॥ १७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नन्दादयस्तु तद्दृष्ट्वा परमानन्दनिर्वृताः ॥
कृष्णं च तत्र च्छन्दोभिः स्तूयमानं सुविस्मिताः ॥ १७ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे नन्दमोक्षो नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

अध्याय २९.

श्रीशुक उवाच–भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः ॥
वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! गोपकन्यानते जिन रात्रिनकी प्रतिज्ञा करीही वे शरदऋतुकी रात्रि प्राप्त होतभई जिनमें जहां तहां चमेली खिल रही है रात्रिनकूं देखिके योगमायाको आश्रय लेके भगवान् कृष्णचंद्र रमण करिवेको मनोरथ करत भये ॥ १ ॥ सुखदायक किरणसूं पूर्वदिशाके मुखको अरुण करत ता समय चंद्रमा उदय होत भयो, जैसे परदेशते बहुत दिनमें पुरुष आयके अपनी प्यारीके मुखपै केशरि लगाय अरुण करै है ॥ २ ॥ परिपूर्ण मंडल और लक्ष्मीके मुखकीसी कांति नवीन केशरिकी तुल्य अरुण चंद्रमाकूं देखिके और ताकी कोमल किरणसूं रंगे वृन्दावनकूं देखिके मनोहर दृष्टिवारी स्त्रीनके मनको हरनवारो मधुर गीत गावत भये या कलंमेसेही बीजमंत्र " क्लीं " निकरै है ॥ ३ ॥ प्रेमात्मक कामके बढावनवारे गीतकूं श्रवण करिके श्रीकृष्णचंद्रमें मन लगाये वे विश्वके पति कृष्णचंद्रके निकट तत्काल आवत भई, और अरी किशोरी चलैगी ऐसे आपुसमें कहत शीघ्रतासूं चलीं, तासूं काननके कुंडल जिनके हलत आये ॥ ४ ॥ उत्कंठासे कोई गोपी गौनको दुहावते दोहनीकूं पटकिके आवति भई कोई गोपी चूल्हेपै दूध औटिवेकूं धरिके आवति भई और कोई गोपी चूल्हैपै राबडी चढाय ताको विना उतारे आवति भई ॥५॥ कोई पातर परोसी जब कानमें वंशीकी टेर सुनी तब छोडिके आवति भई, और कोई गोपी अपने देवरजेठके बालकनकों दूध प्यामेही उनको छोडिके आवति भई, कोई गोपी अपने पतिनके सेवा करैही उनको छोडिके आवति भई, कोई भोजन करतेसे चली आई ॥ ६ ॥ कोई गोपी घरनकूं लीपती कोई नेत्रनमें अंजन लगावते और कोई पावनके गहने हाथनमें पहिरिके और हाथनके पांवनमें पहिरिके और लहंगा ओढिके ओढिनी पहरके श्रीकृष्णचंद्रके पास जात भई ॥ ७ ॥ पति पिता माता भ्राता ज्ञातिनने मनेभी करी परंतु श्रीकृष्णचंद्रने मन हरे हैवेसे वे गोपी नहीं मानती भई ॥ ८ ॥ कोई गोपी

---

१ 'योगाय मीयते वक्तानेन मायः शब्दो यस्यां सा योगमाया वंशी तां' समागमके लिये है माय नाम शब्द जामें वाको योगमाया वंशीको नाम है वाको आश्रय लेते भये कि हे वंशि ! आज तो तू ऐसी बज जासों केवल नवयुवतीनकोही शब्द मालूम परै और काहूको न मालूम परै इत्यादि ॥ २ सवैया–बाजी बौरानी बाजी देखवेको धाई बाजी २ अकुलानी सुनि वंशी वंशीधरकी । बाजी ना पहैं चीर बाजी ना धरै धीर बाजिनके उठी पीर विरहानलदवकी ॥ बाजी ना बोले बाजी संग लागी डोलैं बाजिनको बिसर गई सुधिबुधि घरकी । बाजी कहैं बाजी बाजी कहैं कहां बाजी बाजी कहैं बाजी वंशी बाजी श्याम सुन्दरकी ॥ ३ क्योंजी या रासलीलाके लिये आई गोपी जब अस्तव्यस्त कपरे गहने पहिरे आई तो यहां कहा शोभा भई होयगी ? उत्तर–योगमायाने सब योग्य कर दीनी याहीते " योगमायामुपाश्रितः " ऐसो कह्यो अथवा लिखो है " वल्लभप्राप्तिवेलायां " या श्लोकमें रसशास्त्रमें ऐसो कह्यो है कि अपने नायकके मिलवेके समय हरबराहटके मारे भूषण वस्त्रनको विपरीत धारण करनो याको विभ्रमालंकार कह्यो है सो यहां जाननो इत्यादि । अथवा यह प्रेमको स्वरूप दिखायो है क्यों कि यह प्रेम पत्तनमें लिखो है प्रेममें नहीं शृंगार करनोही शृंगार गिनो जाय है ॥ ४ यद्यपि गोपियोंके शृङ्गार उलट पुलट हे परन्तु योगमायाने सुधार दिये जैसे आठ छैला सैलकूं निकरे बागमें जायकै कही कि भांग बनाओ सो मीठी बनाइ मिठाईके लालचसौं तीन २ लोटा चढाय गये, एक मित्र वामें चतुर हो सो वानै विचार कियो अभ्यास

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

घरनमें मूंदि दीनी निकसिवेको रस्ता न मिलो ता समय वे गोपी पहिले ध्यान लगवेके कारण उनके स्मरणते आंखि मूंदिके फेरि श्रीकृष्णचंद्रको अंतःकरणमें ध्यान करत भई ॥ ९ ॥ सहारो न जाय ऐसे प्यारेके विरहरूप तापसों पाप जिनके दूर हैगये और ध्यानमें प्राप्त भये श्रीकृष्णचंद्रके आलिंगन करेके सुखके पुण्यसों बंधन उनके दूरि हैगये, ऐसे अत्यन्त विरहके दुःख और कृष्णकी अत्यन्त प्राप्तिके भोगसो एक संगही सब प्रारब्ध कर्म क्षीण है जायवेसों मुक्त भई ॥ १० ॥ वे गोपी जारबुद्धि करिके परमात्मा श्रीकृष्णचंद्रकूं पाइके बंधन कटवेसौं गुणनके बने देहकूं तत्कालही त्यागत भई और दिव्य देह धारण कर सबसों पहले कृष्णसो मिलत भई ॥ ११ ॥ राजा परीक्षित् प्रश्न करै है कि हे महाराज ! गोपी श्रीकृष्णचंद्रको अति सुन्दर जानतीही, ब्रह्मरूप करिके नहीं जानतीही, गुणमय बुद्धिवारी उन गोपीनके गुणनको प्रभाव संसार कैसे छूटिगयो ॥ १२ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! यह बात मैंने तोते पहलेही कही ही शिशुपाल श्रीकृष्णचंद्रसूं वैर करत जैसे मुक्ति पाइ गयो तैसे श्रीकृष्णचंद्रकी प्यारी गोपी उनकूं प्राप्त भई यामें कहा संदेह है, जब वैर करवेवारे तरगये तब प्यार करवेवारीके तरवेमें कहा संदेह है ॥ १३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! अविनाशी अप्रमेय अर्थात् प्रमाण करिवेमें न आवैं निर्गुण अर्थात् प्राकृत गुणरहित गुणनके आत्मा भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको मनुष्यनके कल्याण करिवेके लिये रूप प्रगट भयो है ॥ १४ ॥ काम क्रोध भय स्नेह एक भाव सौहृद जे पुरुष नित्य हरि भगवान्में करैं हैं वे पुरुष तन्मय है जाय हैं ॥ १५ ॥ हे राजन् ! अजन्मा योगेश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्र भगवान्में तुम आश्चर्य मति करो जिनमें प्रेम करेसों स्थावरहू संसारमेंते छुटिजाय हैं ॥ १६ ॥ बोलनवारेनमें श्रेष्ठ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र ब्रजकी स्त्रीनकूं अपने पास आई देखिके वाणीनके विलास करि मोहित करिके बोलत भये ॥ १७ ॥ श्रीभगवान् बोले हे बडभागिनिओ ! भले आई आओ मैं तुम्हारो कहा आदर करौं ब्रजमें कुशल है कैसे आई यह कारण कहो ॥ १८ ॥ यह भयानक रात्रि है सिंह व्याघ्र घोर प्राणी डोलैं हैं, याते तुम अपने घरनको जाओ हे सुमध्यमा ! अर्थात् सुंदर कटिवारियो स्त्रीजाति होयके यहां मति रहो ॥ १९ ॥ तुम्हारे माता पिता पुत्र भ्राता पति तुमकूं विना देखे ढूंढत डोलें है, बंधुनकूं हरबराहट मति करो ॥ २० ॥ फूलवार फूलो, चन्द्रमाकी किरणसो रंगे यमुनाते लगिके मंद पवनसों हलनहारे वृक्षनके पातसौ शोभायमान वन तुमने देखो ॥ २१ ॥ ताते तुम ब्रजमें जाओ ढील मत करो तुम पतिव्रता हो पतिनकी सेवा करो, बछरा रम्हाइ रहे होयगे बालक रोयरहे होयगे बालकनकूं दूध प्याओ गौनकूं दुहाओ ॥ २२ ॥ अथवा मेरे स्नेहते वशीभूत अंतःकरणसों तुम आईहो सो तुमको योग्यही है क्योंकि जीव सब मोमें प्यार करैं हैं ॥ २३ ॥ हे मंगलरूपिणिओ ! निष्कपट होयके पतिकी सेवा करो ससुर देवरानकी सेवा करो पुत्रनको पोषण करो यही स्त्रीनको परम धर्म है ॥ २४ ॥ जो कदाचित् अपनो पति खोटे स्वभावयुक्त होई, दुर्भाग्य होय, अथवा वृद्ध होइ मूर्ख होइ रोगी होई दरिद्री होइ तथापि स्वर्गकी जिनके

तौ है नहीं, और तीन २ लोटा चढाय गये हैं जब यह बेसुध हो जायँगे तौ इन्हैं कौन संभारैगो, वाने एक चुल्लूभरही पी, अब चढो जो नसा काहूकी पाग गिर गई काहूको पटका खुलिगयो, काहूकी धोती, जाको नसा नहीं हो वाने सबकूं सुधार दियो, ऐसेही योगमायाने सबकूं सुधार दियो ॥ १ प्रेमसे भावसहित नारायण कथा सुनलें ॥ कहूं भागवतकी कथा बैठीही काहुने कही लालाजी सुनवेको चलो, लालाजी बोले जब दशम प्रारम्भ होयगो तब चलैंगे फिर जब दशम होने लगो तौ लालाने कही भय्या पंचाध्यायीमें चलैंगे जहां कृष्णने लाखन गोपी बुलाय उनके संग विहार कियो हमहू वैसी करैं जैसे बीर कडके सुनकै आगे बढे हैं तैसे विषयी विषयसो और जगह जो भाव बिगरै तो ठिकानो लगहू जाय जो साक्षात् कृष्णकान्ता त्रैलोक्यजननीमें भाव बिगर्‍यो तौ याको सत्यानाश हो जाय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चाहना है ऐसी स्त्रीनकूं त्यागिवे योग्य नहीं है और जो पतित होवै तो त्यागिवे योग्य है'॥ २५॥ कुलकी स्त्रीनकूं जार पुरुषके सेवन करते स्वर्ग नहीं मिलै है और यश जाय है जार पुरुषको सेवन तुच्छ है दुःखको देनवारो है और भयको प्राप्त करनवारो है सर्वत्र निंदाके योग्य है॥२६॥ मेरी बातनके श्रवण करते ध्यान करते निरंतर कीर्तन करते जैसो मोमें भाव होइहै तैसो पास रहते नहीं होइ हैं ताते अपने घरकूं जाओ कृष्णने या कारणते गोपिनसों जाओ जाओ कही कि जो मैं इनसों कहूंगो तुम मेरे साथ विहार करो तौ यह गारी देइंगी और निकटहू न आवैंगी याते पहलेइ इनके मान खंडन करूं तौ फिर आप मेरो पल्लो पकरैंगी यातैं जाओ जाओ कही ॥ २७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले यां प्रकार गोपी गोविंदके वचन श्रवण करिके दुःखित भई, और मनोरथके सिद्ध न हैवेसों बडी चिंताकूं पावत भई ॥ २८ ॥ चिंताके श्वासते कुंदरूके फलके समान उनके अरुण ओष्ठ सूखगये, मुखनकूं नीचे करिके चरणके अंगूठासूं धरतीपै लिखनै लगी, तथा रुदनते नेत्रनसूं कज्जलसहित आंशू चलै हैं, जिनसूं कुचनकी केशरि धुइगई, अति दुःखके बोझते गोपी चुप हैके ठाढी होतिभई ॥ २९ ॥ जिनके निमित्त गोपिनने अपने सब घरवार छोड दीने विन अपने परम प्रीतम श्रीकृष्णके ऐसे कठोर वचन सुन प्रेमभरी गोपियें रोयवेके कारण आंसूआनसों पूर्ण नेत्रनको पोंछ कुछेक कोपसों गद्गदकंठ है बोलीं ॥ ३० ॥ गोपी कहैं हे समर्थ! 'जाउ जाउ' ऐसो कठोर वचन मति कहो हम सब विषयनकूं त्यागिके तुम्हारे चरण सेवन करति भई, हे दुराग्रही ! हमकूं मति त्यागो जैसे आदिपुरुष भगवान्की शरण सर्व त्याग करिके मुमुक्षु जाय हैं तो मुमुक्षु पुरुषकूं वह भजे हैं तैसे तुम्हारे लिये सर्वस्व त्यागिके हम आई हैं हमारो सेवन करो, त्यागो मति ॥ ३१ ॥ हे कृष्ण धर्मवेत्ता ! तुमने पति पुत्र सुतनकी सेवा करो यह स्त्रीनको परम धर्म जो कह्यो सो हमारे धर्म सुनिवेकी इच्छा नहीं है, काहेते हमें चाहना नहीं है तुम धर्मके उपदेश करनवारे नहीं हो तुम देहधारीनके प्यारे हो तुमने कही पत्यादि-

---

१ दो०—निजपति तज परपति भजै, ते न कुलीन कहाय। बुरा कहत जीवत जगत, अन्त नरकमें जाय ॥ २ देखो स्त्रियोंको पतिव्रताधर्म पालन करना चाहिये पतिव्रताओंकी बडी महिमा है, एक स्त्रीके गोदीमें उसका पति शिर धरे सोव हो उसका बालक खेलते २ अग्निमें जा पंडा स्त्रीने यह देख पतिकी निद्रा भंग न होय यह विचार अपना घुटवा न हटाया, अग्नि पतिव्रताके शापके भयसे शीतल हो गई ॥ श्लोक—सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके न बोधयामास पतिं पतिव्रता। अभूत्तदानीं व्रतभंगशङ्कया हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥ इस कारण हे सखियो ! अपने पतियोंपै जाओ॥ ३ परंतु वास्तवमें यह नाही नहीं ही (रजन्येषा) इत्यादि श्लोकनको भीतरसों ये अर्थ है कि ये रजनी (अघोररूपा) है नाम अति मनोहररूपा है और (अघोर) अघोर सत्व बडे सूधे प्राणिनकरके सेविता है यातो (व्रजं न प्रतियात) व्रजको बगदके मत जाओ (स्त्रीभिरिह स्थेयं) स्त्रीनको तुमको आज तो यहांही ठेरनो चाहिये क्योंकि तुम (सुमध्यमाः) नाम मनोहर कटिवारी हो आज मेरो तुमारो विहार होयगो ऐसेही सब वाक्यनमें विधि है निषेध नहीं है सो समझलेनो विस्तरभयसो नहीं लिखे है ॥ ४ कृष्णने बंशी फूंक तौ दई. जब लाख गोपीननै आयके घेर लियो, तब अक्कल भुला गई, जैसे काहूके बालक घरमें रुईको फोहा जलायो करै है, और प्रसन्न भयो करै है । सो बाजारमें काहू साहूकारके दुकानमें लाख रुपैयाकी रुईको ढेर लग्यो देख याने मनमें विचार कियो यामें बडो तमासो होयगो, सो ढेरमें आग लगायदई, जब थोडो थोडो जर्यो तब तो ताली बजावत रहे अब जो भभकी आग तब घबरायगये, ऐसेही कृष्णकी दशा भई जब एकाद गोपीको कहूं देख पाते तब तौ प्रसन्न होते अब लाखौ गोपिनको देख घर जानेको कही यह रहस्य बातों है ॥ ५ हे भूमि! जो तू फट जाय तो हम तोमें समाय जांय अथवा कहा हमारे कर्ममें विधाताने यही लिख दीनो हैं इत्यादि बहुतसे अभिप्राय धरती लिखवेके है मुख्य अभिप्राय तो यही है कि स्त्रीनको स्वभावही है जब अति शोकग्रस्त होय है तब अंगूठासों धरती लिखे है ॥ ६ कजरारे आंसूनकी जो धार वही सो यह मालूम परै है मानो शोकरूप बढईने गोपीनके अंगके चीरवेको सूतकी लकीर बांधी है और असुअनकी वर्षाने चाही कि विरहदावको बुझाय देउ पन जितने आसु बहे वे सब छातीमें आवतही सूखते चले गये इत्यादि अभिप्राय समझलेने ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कनकी सेवा करनो धर्म है सो आत्मासहित पत्यादि प्यारे लगैं हैं स्त्रीको पति प्यारो लगै है आत्मासों लगै है सो आत्मा निकसे पीछे देहको बांधिके लेजाय हैं जराय देय हैं सो सबके आत्मा तुम हो तुम्हारे सेवन करवेहीसों सब धर्म हमें प्राप्त है जायँगे कारण कि सब उपदेश वाक्य ईश्वरकी सेवा करनोही परम धर्म बतावैं हैं तुम सब जीवनके आत्मा हैवैसो परम बंधु ईश्वर हो तुमसों जो जीव बहिर्मुख है सो दग्ध हैवेके योग्य है ॥ ३२ ॥ अपने आत्मा नित्य प्यारे तुम हो तिनमें विवेकी पुरुष प्रीति करैं हैं दुःखके देन वारे पतिपुत्रादिकनसूं कहा प्रयोजन है, ताते तुम हमपै प्रसन्न होउ, हे ईश्वर ! हे कमलदललोचन ! बहुत दिनते तुममें आशारूपी लता लगाई है, ताकौं ' जाउ जाउ ' ऐसे कुठारीरूप वचनते कैसे काटौहो, देखो विषके वृक्षकोभी आप बढायके विवेकी नहीं काटिवेको समर्थ होय हैं ॥ ३३ ॥ तुमने कही जाउ सो कैसे जांय जो चित्त सुखपूर्वक घरनमें लगो हो सो तुमने हरिलियो, और जिन हाथनते घरको काम करैंही ते तुमने हरिलिये हे गोपियो! अब तुम जाओ परसोंके दिन तुम सबके चित्त विचार करिके देंइगे ऐसे श्रीकृष्णने कही तहां गोपी कहैं हैं तुमारे चरण छोडिके हमारे पांव एक पगहू नहीं चलैं हैं व्रजमें कैसे जीवेंगी जायके हम कहा करैं ॥ ३४ ॥ हे सखे! यामें कहा भली बुरी बात करे हैं जैसे दबी अग्निकों निकासिके सिलगामें हैं घीकी धारा परेते प्रज्वलित होयहै ऐसे हमारे हृदयमें कामकी अग्नि सोइरही है तेरी हँसनि चितवनी सुंदर गीतरूपी पवनसूं प्रज्वलित भई है ऐसे हमारे हृदयकी अग्नि अधरामृतके प्रभावसों बुझाय देउ, और जो न बुझाओगे तो एक अग्नि जरायवेको बहुत होय है यहां तो दो इकट्ठी भईहैं एक तौ कामकी दूसरी विरहकी तासों हमारे देहनकी जरिके ढेरी हैजायगी, याते अपनी हँसनि चितवनि अधरामृतरूपधारानसों बुझाय दो नहीं तौ जैसे योगिजन ज्ञानरूप अग्निक-

---

१ प्र०—गोपी श्रीकृष्णको देख ऐसी व्याकुल क्यों हो गई और श्रीकृष्णने उनका प्रत्याख्यान क्यों किया तथा रहस्य पंचाध्यायीका आशय क्या है ? उ०—यहभी गूढ कथा है गोपी वेदकी ऋचा हैं जैसा पूर्व वर्णन कर चुके हैं उनसै कृष्णका विहार है यह कामका युद्ध और मुमुक्षु जनोंको उपदेश है । कामदेवनै श्रीकृष्णसै युद्ध करनैको कहा भगवान्नै कहा कृष्णावतारमें हमारा तुम्हारा युद्ध होगा जिस समय शरदऋतुमें सब प्रकार कामका बल था उस समय कामदेवनें भगवान्सै युद्ध करनेको कहा उन्हौंने स्वीकार कर मुरली बजाई और महासुन्दर गोपीजनौंको एकान्तमें अभिलाषिणी होकरभी उनको घर जानेके निमित्त धर्मकथन करने लगे कामी पुरुष कभी स्त्रीको प्राप्त होकर त्यागकी इच्छा नहीं करते इसी प्रकार जीव जब भगवान्के सन्मुख होताहै तब सिद्धि उसको घररूपी संसारमें खैंचती है, कामदेवने कहा भगवन् ! यह युद्धकी बात नहीं है कि जब मेरी सेनाकोही आप टाले देते हो तब युद्ध क्या हुआ इनके साथ स्पर्शादि करकै जब मेरे वशीभूत नहीं हो तब मैं आपको जीता हुआ जानूं तब भगवान् उनके साथ विहार करते हुए स्पर्शादि करकैभी वशीभूत न हुए, वे गोपी भगवान्को प्राप्त हो आनन्दमें मग्न हो विचरने लगी ऐसेही जीव ईश्वरकी सामीप्यताको प्राप्त होकर प्रेमानन्दमें मग्न होकर विचरता है जब गोपियौंको अभिमान हुआ तभी भगवान् अन्तर्ध्यान हुए, उसी प्रकार भक्तोंके हृदयमें अभिमान होतेही ज्योति छिपती है, अपनी सहचारिणी प्रकृतिको लेकर चले गये कामके दिखानेको स्त्री साथ रक्खी और जब उसको अभिमान हुआ तब उसकोभी त्यागन कर दिया इससै यह दिखाया कि मैं असंग हूं मुझमें कोई विकार नहीं, न कोई विकार मुझको बाधा कर सकता है, इधर जब गोपी और भक्तजन उसको खोजने लगे तब बहुत खोजते हुए दोनौके चरणचिह्न अर्थात् प्रकृति पुरुष सांख्यमें प्रवृत्ति होती है उसमें पदार्थोंका ज्ञान होते २ प्रथम प्रकृतिका ज्ञान होताहै वही गोपियौंको प्रथम कृष्णके साथवाली गोपी प्राप्त हुई जिसके द्वारा ज्ञान हुआ कि परमात्मा प्रकृतिसैभी पृथक् है इस कारण उनके साथ फिर सब जगद्रूपी वनमें खोज करने लगी वृक्षोंसै पूछनै लगी जब ईश्वरकी समीपताका प्रेम होता है तब उन्मत्त अवस्था प्रगट होती है, इसी प्रकार गोपियौंको है ढूंढनेसै श्रीकृष्ण कहीं नहीं मिले कारण कि " आत्मास्य जन्तोर्निहितं गुहायाम् " वह तौ इसके हृदयमेंही स्थित है, इस कारण सब लोटकर उसी स्थानमें आय उनकी लीला गाने लगी, भक्तभी बैठकर फिर उन्हीके गुण गावे हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रिके शरीरनको जरायके ध्यान करिके समीपकूं प्राप्त होयहैं तैसे हम तन त्याग तुम्हें मिलैंगी' ॥३५॥ श्रीकृष्ण कहैं हैं तुम पतिनके पास जाओ वे कामदेवकी आगि बुझावेंगे तहां गोपी कहैं हैं हे कमलदललोचन ! तुम वनवासिनको प्यार करो हो वनवासी और लक्ष्मीको किसी समयभी तुम्हारी सेवा प्राप्त होय है ऐसे तुम्हारे चरणको तरुआ हम जबसो स्पर्श करत भई जा दिनते उनको सुख अनुभव कियो ता दिनते औरके सन्मुख ठाढीहू नहीं हैसकैं हैं ॥ ३६ ॥ लक्ष्मी सदा वक्षस्थलमें रहे हैं तथापि भक्तनसो सेवित तुम्हारे चरणकी रेणुकूं तुलसी सौत सहित चाहना करत भई जा लक्ष्मीकी चितवनिके लिये और देवता तपस्या करिके परिश्रम करैं हैं ता लक्ष्मीकी तुल्य हमहू तुम्हारे चरणकी रजकूं प्राप्त भई हैं अर्थात् शरण लीनी है ॥ ३७ ॥ हे दुःखके काटनवारे ! तुम्हारे भजिवेमें आशा लगाय हम घर छोडिके तुम्हारे चरणनके पास आई हैं तुम हमारे ऊपर प्रसन्न होउ तुम्हारी सुंदर मुसिकानी चितवनिसूं बढे कामदेवसूं तपित देह हमकूं हे पुरुषनके शोभा करनवारे ! अपनी दासी करिके राखिये ॥ ३८ ॥ अलकावली युक्त और कुंडलनकी कांतिसो युक्त कपोल अमृतभरे ओष्ठमें हाससहित चितवनिवारे तुम्हारे मुखको देखिके, और भक्तनकूं अभय दान देनहारे तुम्हारे दोनों भुजदंडनको देखिके, लक्ष्मीकूं एकही प्रीतिके उपजावनवारे तुम्हारे वक्षस्थलकूं देखिके हम तुम्हारी दासी भई हैं ॥ ३९ ॥ हे कृष्ण ! मनोहर पदवारे या वासुरीके गीतसों मोहित हैके त्रिलोकीमें ऐसी कौनसी स्त्री है जो अपने धर्मते चलायमान न होय, त्रिलोकीमें सुंदर यह तुम्हारे रूपकूं देखिके गौ पक्षी मृग यहहू रोमांचित हैजायहैं, फिर या मनमोहन रूपसों हम मोहित है गई तो यामें कहा आश्चर्य है, तुम्हारो प्रकाशक शब्द सुनकेहू अपनो धर्म त्यागनो उचित है, रूपके और तुम्हारे रूपके अनुभवसों त्याग करवेमें कहा आश्चर्य है ॥ ४० ॥ तुम निश्चय व्रजके भय पीडा दूरि करिवेके लिये जन्मे हो जैसे आदिपुरुष नारायण स्वर्गलोककी रक्षा करैं हैं ता कारणते हे दीननके बन्धु ! हम तेरी दासी हैं हमारे कामदेवते तप्त स्तन और शिरनपै अपने हस्तकमलकूं धरो ॥ ४१ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार योगीश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्र गोपिनको विलाप सुनके हँसिके दयाको प्राप्त हो आत्मारामहू है तथापि गोपिनके संग रमण करतभये ॥ ४२ ॥ प्यारे श्रीकृष्णचंद्रकी चितवनसूं प्रफुल्लित मुखवारी इकट्ठी भई गोपिनके सहित उदार चेष्टा और उदार हँसनि युक्त दंतनमें कुंदकलीकी तुल्य कांतिवारे श्रीकृष्णचंद्र ऐसे सुंदर लगत भये जैसे तारागण सहित चंद्रमा सुंदर लगै है ॥ ४३ ॥ गोपीजननसो गाये भये स्त्रीनके सैंकरान यूथनकूं पालन करनवाले श्रीकृष्णचंद्र

---

१ अर्थात् जो हम मर गई तो मरते समय तुमारे ध्यानके हेतुसो भूतनी होयगी तोहू तोकोही प्राप्त होयगी तेरे मोरमुकुटपेंही आयके बैठेंगी जो तुम जानो कि मेरो छूट है जाय सो प्यारे हम तोको नहीं छोडेंगी इत्यादि ॥ २ अर्थात् चतुरशिरोमणी लक्ष्मी जब तुमारे चरणनको सेवन करै है तब फिर हम तुमारे चरण सेवनको कैसे छोड देंय यह भाव है ॥ ३ राग यमन–वृन्दावन सघन कुंज माधुरी लतान तरे यमुनापुलिनमें मधुर बाजी बांसुरी । जबसै धुनि परी कान मानो लागे मयनबान प्राणनकी कहा चलै पीर होत बांसुरी ॥ व्यापो जो अनंग तामें अंग सुधि भूल गई कोई कछू कहो कोई करो उपहास री । ऐसे व्रजाधीशजीसौं प्रीति नई रीति बाढी जाके उर बसि गई प्रेम पुंज गांसरी ॥ ४ दोहा– अब तुमको यह उचित नहिं, सुनो श्याम सुखरास । मन हमरो अपनायकै, अब तुम करत निरास ॥ सोरठा–पाप पुण्य कहा नाथ, यह तौ हम जाने नहीं । विकीं तुम्हारे हाथ, अधरामृतके लोभते ॥ रच्यो वृन्दावन रास गोविन्द । चलो सखी देखन चलिये नवरास रंग । रासमें रसीलो प्यारो सखियन संग । यमुनाके नीरे तीरे शीतल सुगंध । महक पवन चलै अति गति मंद । बांसुरी सारंगी बाजै ताल मृदंग । विना उपंग मुरली मुहर मुचंग । वृन्दावन बीचि रचो रास । गुणगावै स्वामी माधुरी दास ॥ ५ (उः शिवः तस्य दारचेष्टा यस्मिन्) उकारवाचक शिवजीकी है दारचेष्टा जामें यहा यह पद है नन्दनंदन रचो रास आय त्रिपुरारी अर्थात् गोपीरूप बनायके रासलीलाके दर्शन करवेको शिवजी पधारे हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आप गावत वैजयंती माला पहिरिके वनकूं शोभायमान करत विहार करतभये ॥ ४४ ॥ शीतल वारूके बिछौनावारे यमुनाजीके पुलिनमें गोपिनसहित आयके रमण करत भये तहां यमुनाजीकी लहरीको आनंद और कमलनकी सुगन्ध मिली वायुसौं अत्यन्त प्रसन्न होतभई ॥ ४५ ॥ भुजानको पसारिवो आलिंगनको करिवो कर अलक ऊरु नीवी स्तनको स्पर्श करिवो, परिहासके वचन कहिवो, नखनके चिह्न क्रीडायुत चितवनि हांसीनसूं व्रजसुन्दरीनकूं भगवान् काम उद्दीपन करत रमण करतभये ॥ ४६ ॥ या प्रकार महात्मा श्रीकृष्णचंद्रते कोपायमान गोपी मानवती हैके पृथ्वीकी स्त्रीनमें अपनेकूं अधिक मानती भई ॥ ४७ ॥ ब्रह्मा और महादेवके वशके करनवारे श्रीकृष्णचंद्र तिन गोपिनकूं सौभाग्यके मदसूं अपने आधीन देखिके उनके गर्व दूरि करिवेके लिये और कृपा करिवेके लिये ता रासमंडलमेंही अंतर्धान होतभये श्रीकृष्णने विचारी कि अभी तो रासको नेक प्रारंभही भयो है सेरमें पौनीहूं नाहीं कती और इन्हें मान भयौ लाखन गोपीनके पांय परत डोलूं तौ बरसों लगजाय तब रास कैसे होय यासौं उनके मान भंग करवेको अंतर्धान भये अथवा जे प्यारीही उनको मान घटन लगो कि देखो हमहूंकूं कृष्ण सबकी बराबर देखैं हैं साधारणको मान बढ्यौ कि प्यारी गोपी हमारे आधीन है सो दोनोंको मान सम करिवेको अंतर्धान भये ॥ ४८ ॥

तासां तत्सौभगमदं वीक्ष्य मानं च केशवः ॥
प्रशमाय प्रसादाय तत्रैवान्तरधीयत ॥ ४८ ॥

इति श्रीमद्भा० भाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० रासक्रीडायां कृष्णान्तर्धानं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

अध्याय ३०.

श्रीशुक उवाच-अन्तर्हिते भगवति सहसैव व्रजाङ्गनाः ॥
अतप्यंस्तमचक्षाणाः करिण्य इव यूथपम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! जा समय श्रीकृष्णचंद्र रासमंडलमेंते अंतर्द्धान भये ता समय तत्कालही व्रजकी स्त्री गोपी उनके देखे विना व्याकुल होत भई जैसे हाथीके देखे विना हथिनी व्याकुल होय है श्रीकृष्णचंद्रकी चलनि स्नेहभरी मुसिकानि, विलासपूर्वक चितवनी मधुर बोलीनकी क्रीडानमें मन जिनके पकरे गये, ऐसे गोपी तन्मय होती भई उनकी लीलाको अनुकरण करन लगीं ॥ १ ॥ २ ॥ कृष्णचंद्रको गमन हासभरी चितवनि मधुरवाणीनके विहार करि प्यारेमें आरूढ होयके कृष्णरूप बनिके कहत भई कि मैं कृष्ण हूं मैं कृष्ण हूं या प्रकार चेष्टा करती भई ॥ ३ ॥ सब गोपी मिलिके श्रीकृष्णचंद्रकूं ऊंचो स्वर करिके गावति मतवारेकी तुल्य वन वन ढूंढति भई, सब प्राणीनमें

१ (तासां तत्सौ०) याको यह अर्थ करनौ मूलमें (मदं मानं च) ये जो दो कहे है यासो मद तौ देखौ गोपीनको और मान देखौ लाडिलीजीको तब भगवान्ने विचारी कि इन दोउनको युगपत् नाश कैसे होय तब प्रियाजीको संग लेके कि याते इनको मान शांत है जायगो गोपीनको छोडके कि यासौं इनको मदखंडन होयगो भगवान् अंतर्ध्यान है गये या अर्थमें (तासां) या पदमें एक शेष समास कर लेनौ (सा च ताश्चेति ताः तासां) सा राधिका और ताः गोपी प्रियाको मान और गोपीनको मद देखके युगपत् दोउ काम होते जब काहू तरहसो न दीखे तब भगवान् अंतर्धान होते भये ॥ २ अर्थात् इनकी वा समय ऐसी तदाकार वृत्ति है गई कि इनको अनुसंधान ये नहीं रह्यो कि हम तौ प्रभुके संग विहार करवेको आईहीं सो अब प्यारो अंतर्धान है गयो है ये बात भूलके ये भई कि हमहीं कृष्ण हैं ॥ ३ (उन्मत्तकवत्) यहा ईषदर्थमें कन् प्रत्यय है ईषदुन्मत्ताः उन्मत्तकाः तद्वत् नाम पूर्व जो पूर्ण उन्माद हो सो कछु कमती भयो होस आयो तब मालूम परी कि प्राणनाथ अंतर्धान है गये और कछु प्रमाद है सो लक्षण यह है कि खोये भये चेतन पुरुषको जो जड जाति वृक्षनते पूछन लगी है इत्यादि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आकाशकी तुल्य व्यापक श्रीकृष्णचंद्रको वृक्षनते पूछतभई ॥ ४ ॥ हे पीपरके वृक्ष ! हे प्लक्ष अर्थात् पाकरके वृक्ष ! हे वटके वृक्ष ! नंदको पुत्र श्रीकृष्ण प्रेमभरी चितवनी हांसी करिके हमारो चित्त चुरायके लेगयो तुमने देखो होय तो बताय देउ, कोई बोली अरी यह कहा बतावेगो, यह तौ अश्वत्थ है, याकी जो जड थोडीसी ऊपर रहीहै सो यह ऐसी चिंता कियो करेहै कि ऐसी पवन न आयजाय कि मोकौं उखारि डारै, और बोली अरी यह पीपर नारायणको रूप है, नारायण भक्तनके कार्यमें मग्न रहे हैं, सो हमें कहा बतावेंगे न्यग्रोध शिवको रूप है सो यह योगमें मग्न रहे हैं हमें कहा बतावेंगे ॥ ५ ॥ कहूं वनमें कुडाके वृक्ष हैं तिनसूं पूछेहैं, कहूं अशोकसे पूछे हैं कहूं नागकेशरिके वृक्ष कहूं चंपाके वृक्ष तिनसूं कहती हैं हे मालतीके वृक्ष ! गर्व हरनवारी मुस्किानिवारो रामको छोटो भैया कहूं तुमने जात देखो है रामको छोटो भैया यातें कह्यो कि कहूं बडे भैयाको प्रसाद इनहूको भयो जो हमारे यह दशा करत फिरेहै, कोई बोली अशोकसे कहा पूछोहो आप असोच है सो विराने सोचको कहा जाने ॥ ६ ॥ कहूं वनमें कहैं हैं हे तुलसी कल्याणरूपिणी ! गोविंदके चरणकी प्यारी भौंरानकी गुंजार युक्त तेरी मालाकूं पहिरे तेरो अति प्यारो श्रीकृष्णचंद्र कहूं देख्यो होय तो बताय देउ ॥ ७ ॥ हे मालति ! हे चमेली ! हे जाया ! हे जुही ! मधुवंशमें भये श्रीकृष्णचंद्र हस्तस्पर्श करिके तुमसूं प्रीति करिके कहां गये तुमने देखे होय तो बताय देउ ॥ ८ ॥ अब गोपी आपुसमें कहैहैं हे सखियो ! ये फलयुक्त वृक्ष हैं सब प्राणीनको तृप्त करैं हैं इनसों पूछो हे आमके वृक्ष हे चिरोंजीके वृक्ष हे कटहरके वृक्ष हे विजयसारके वृक्ष हे कचनारके वृक्ष हे जामनके वृक्ष हे बेलके वृक्ष हे मोरशिरीके वृक्ष हे सफरीके वृक्ष हे आम्रके वृक्ष हे लोटन कदंब ! तुम परोपकारी यमुनातीरवासी हो यातें हमें बताय देउ तुमने कहूं श्रीकृष्णचंद्रको जाते देखो है ॥ ९ ॥ कोई सखी कहै है कि या पृथ्वीकूं बूझो हे पृथ्वी ! तैंने कहा तप कियो है जो केशवभगवान्‌को चरणस्पर्श भयो तासूं तोकों आनंदसहित रोमांच भये हैं तासूं सुंदर लगे है यह आनंद प्यारेके चरण लग्यो है तासूं भयोहै अथवा वामनजीने पहिले तोकों तीन पैंड नापी है अथवा वाते पहिले वराहजी तोकूं डाढपै धरिके ले आये हैं तबको आनंद है परंतु वे आनंद तो पुराने परिगये अबही प्यारेकों चरणारविंद तैंने स्पर्श कीनो है तैंने निश्चय देख्यो है हमें बतायदे ॥ १० ॥ हे सखी हरिणकी स्त्री हरिणी ! अच्युत श्रीकृष्णचंद्र प्यारीकूं संग लैके अपने अंगनसूं तुम्हारी दृष्टिकूं आनंद देत यहां आयेहैं, प्यारीकूं संग लेके गयो ताको जतावनवारो यह लक्षण है कृष्णचंद्रको प्यारीते जो अंगसंग है तासूं कुचनकी केशरसूं रंगी गई कुंदकी मालाकी सुगंधि यहां आवेहै ॥ ११ ॥ प्यारीके कंधापै भुजाको धरे कमल फिरावत तुलसीकी मालाकी सुगंधसूं मतवारे भौंरा जाके पीछे चले जांय ऐसे रामके छोटे भैयाने हे वृक्षो ! स्नेहभरी चितवनिसूं तुमारी दंडवत यहां आयके लीनीहै ॥ १२ ॥ कोई बोली हे वीर ! यह लतायें श्रीकृष्णसो अवश्य मिली होंयगी कारण कि यह अपने पति वृक्षकी शाखारूप बाहुनको आश्रय कर रहीहैं अवश्य हमारे प्यारे श्रीकृष्णके नख इनमें लगे हैं, तासों रोमांच

---

१ हे अश्वत्थ ! कहीं नंदनंदन देखे होय तो बताओ जब कछु उत्तर न दियो तब गोपी बोली कि री ! तुमें यह खबर कियों कि याको नाम अश्वत्थ है न (स्वस्थः अश्वस्थः) जब ये आपही स्वस्थ नहीं है तब हमको कहा बतावेगो तब एक गोपी बोली कि री सखी ! न बतावेगो तौ हमहू याको साचो नाम करके दिखाय दैयगी (न श्वः स्थास्यतीति) देखो ये नपूतौ सबेरे वृंदावनमें कैसे रहिजाय है याको खोदके फेंक दैयगी इत्यादि और सब वृक्षनके द्वयर्थ हमारी बनाई पंचाध्यायीकी बृहद्व्याख्यामें देखलेनी ॥ २ (नंदसूनु) क्यों कह्यो कि ए वृक्ष हे पुराने जाने कृष्ण नाम सो जाने कि न जाने यासो बाबाके नाम समेत नाम लीनो है ऐसो समझ लेना ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होय आयेहैं, वृक्षनके समागममें ऐसे रोमांच नहीं होते ॥ १३ ॥ या प्रकार मतवारेकी समान बोलतीं श्रीकृष्णमें तन्मय होय श्रीकृष्णके ढूंढिवेमें विह्वल होयके गोपी श्रीकृष्णकी तिन तिन लीलानको अनुकरण करतभई ॥ १४ ॥ कोई गोपी पूतना बनी, ताको कोई गोपी कृष्ण बनिके स्तन पीवत भई; और गोपी बालक बनिके रुदन करत शकटासुर बनी, जो कोई गोपी है ताके पांवकी ठोकर मारती भई ॥ १५ ॥ एक गोपी तृणावर्त दैत्य बनिके कृष्णके बालकरूपको धरे, जो और गोपी है ताको हरत भई, कोई गोपी घुंघुरू बांधिके पांवनको घसीटत घोटुवनते चलत भई ॥ १६ ॥ दो गोपी कृष्ण बलदेव बनीं और कोई गोपी गोप बनी और कोई वत्सासुर बनी ताकूं मारत भई, एक गोपी बकासुर बनी ताय और गोपी मारत भई ॥ १७ ॥ जैसे श्रीकृष्णचंद्र बुलामें हैं तैसे दूर गई गऊनकूं बुलायके श्रीकृष्णको अनुकरण करे, बांसुरीको बजामें क्रीडा करे ऐसी गोपीकी और गोपी धन्य २ ऐसे बडाई करतभई ॥ १८ ॥ एक गोपी गोपीके कंधापै हाथ धरि चलिके और गोपीते कहत भई मेरी मनोहर नृत्यलीलाकूं तुम देखो, या प्रकार श्रीकृष्णमें तिनको मन जाय लगो ॥ १९ ॥ कोई गोपी पवनवर्षा भय मति करो मैं तुम्हारी रक्षा करूंगो यह कहिके एक हाथते यत्न करिकै जैसे गोवर्द्धन पर्वत श्रीकृष्णचंद्रने उठायो, तैसे अपनी ओढनीकूं ऊंची उठावति भई ॥ २० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! एक गोपी और गोपीके ऊपर चढिके पांव शिर ऊपर धरिके एक गोपीते कहत भई हे दुष्ट सर्प ! तू यहांसो निकसि जा मैं दुष्टनके दंड देनवारो जन्मोंहो ॥ २१ ॥ ता समय एक गोपी बोलत भई हे गोपियो ! यह वनमें भयानक दाव लगी है ताकूं देखो शीघ्र नेत्र मूंदि लेऊ मैं या अग्निकूं बुझाऊंगो, अनायास देखे विना कल्याण करूंगो ॥ २२ ॥ कोई एक दुर्बल अंगकी गोपी मालासूं उलूखलमें बांधिदीनी, तब वह डरपिके सुंदर नेत्रवारे मुखकूं ढकिके डरपेको अनुकरण करतिभई, जब लीला करते २ रासलीला करन लगीं, तब ज्योंही श्रीकृष्णके अन्तर्धान हैवेकी लीला आई कि श्रीकृष्णको स्मरण करत ढूंढन लगीं ॥ २३ ॥ या प्रकार वृन्दावनकी लता वृक्षनते पूंछत पूंछत आगे वनमें जायके परमात्मा श्रीकृष्णचंद्रके चरणके खोज देखत भई ॥ २४ ॥ ध्वजा कमल वज्र अंकुश आदि लेके इन चिह्नसूं महात्मा नंदके बेटाको यह चरण निश्चय होयहै या प्रकार खोज लखैं हैं ॥ २५ ॥ अबला गोपी चरणनके खोजसूं श्रीकृष्णचंद्रके जायवेके मार्गकूं ढूंढत भई, आगे जायके श्रीकृष्णके चरणनके खोजमें प्यारीके चरणनके खोज देखिके दुःखी होय यह बोलत भई ॥ २६ ॥ ये कौनके खोज हैं नंदको पुत्र काहूको अपने संग लै गयो है[3], और वाके कंधापै हाथ धरिलियो है, जैसे हाथी हथिनीके ऊपर सूंड धरिलेय है ॥ २७ ॥ निश्चय भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको याने आराधनही कीनो है, जा कारण हम सबको त्यागके प्रसन्न होयके प्यारो गोविंद याकूं एकांतमें लेगयो ॥ २८ ॥ हे सखियो ! यह गोविंदके चरणकी रेणुकूं ब्रह्मा महादेव लक्ष्मी संपूर्ण अपने पाप दूरि करिवेके लिये माथेपै चढामें हैं यह रज

---

१ एक बडो गवैया हो सो वह अपनी खुशीसै गावै काहूके कहेवतै नहीं गावै एक भले आदमीको मन वाके गायवेके सुननेको भयो, तौ वानै कहा चतुराई करी की वाहीकी तानमें गाऊं मोतें बनैगी है नहीं अपनी तान सुधारवेको यह आपही गावैगो, सो गानै लग्यो और वैसी न आई तब गवैयेने कही यह मेरी तान गावै है परन्तु बिगडी जाय है तब आपहू गावनलग्यो, और कही ऐसे गाओ सोई गोपियोंने विचारी कि हम श्रीकृष्णकी लीला करैं सो हमतै बनैगी तौ नहीं वाके बतायवेको कृष्ण आप आ जायँगे ॥ २ यहां दो तरहकी गोपी एक तो प्रिया सो सरूपभाववारी हैं विनके (कस्याः पदानि अनयाराधितः धन्या अहो) ये वाक्य है और दूसरी सापत्न्यभाववारी गोपी है विनके (तस्याः अमूनि) इत्यादिक वाक्य हैं वे प्रत्यक्ष दिखाई परे है ॥ ३ यही खोजनैवारेको प्रथम प्रकृति पुरुषका ज्ञान है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बडी धन्य है जो याको शिरपें धारण करोगी तौ भगवान् मिल जांयगे ॥ २९ ॥ ता प्यारीके पांवनके खोज हमको बहुत व्याकुल करैं हैं, देखो हम सबको त्यागिके अकेली एकांतमें लेजाय श्रीकृष्णचंद्रको अधरामृत भोग करै है ॥ ३० ॥ आगे चलिके कहैं यहां वाके पांवनके खोज नहीं दीखैं हैं सखि तुनिका अंकुरा लगिके कोमल चरणनमें खेद भयो है प्यारेने प्यारीको उठाय लियो है ॥ ३१ ॥ (हे वीर ! जा समय कृष्णने प्यारीको उठायो, तौ विनके बोझसो कामके रसिया कृष्णके चरण पृथ्वीमें धस गये हैं देखो यहां फूलनके निमित्त अवश्य हे सखी ! कांताको कंधापेसो उतारि है) हे सखि ! यह देखो यहां प्यारेने प्यारीके कारण फूल तोडे हैं, या स्थानमें चरणनके उचकके खडे हैवेसो थोडो चिह्न दिखाई देयहै ॥ ३२ ॥ कामी श्रीकृष्णचंद्रने कामिनीके या स्थानमें केश वाहिके सुधारे हैं, प्यारीकूं बैठायके केश गुहे प्यारे या स्थानमें निश्चय बैठत भयो ॥ ३३ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं आत्माराम अर्थात् अपने स्वरूपमें रमण करनहारे अखंडित अर्थात् स्त्रीनके कटाक्षके वश नहीं होनहारे श्रीकृष्णचंद्र ता प्यारीके संग रमण करतभये, कामी पुरुषनकूं दीनता दिखायवेके लिये कि कामी पुरुष ऐसे स्त्रीनके वशीभूत आधीन हैजाय हैं, जैसे तैसे तैसेही करै है, स्त्री ऐसी दुष्टा होय है जो इच्छामें आवै सोइ करामें हैं ॥ ३४ ॥ या प्रकार गोपी अचेत होय होयके खोजनकों देखत भई श्रीकृष्ण और स्त्रीनकूं छोडिके वनमें जा गोपीकूं अपने संग लेजात भये ॥ ३५ ॥ वह गोपी सब स्त्रीनमें अपनेकूं श्रेष्ठ मानत भई, कि देखो चाहना करनेवारी गोपिनको छोडके प्यारो मेरो सेवन करैं है ॥ ३६ ॥ ता पीछे वह गोपी गर्वित होयके केशव श्रीकृष्णचंद्रते बोलत भई मोपै चलो नहीं जाय है जहां तुम्हारो मन होय तहां लेचलो, कृष्णने कही प्यारी दस कदम और चलो किशोरीजी बोली हां जी जैसे तुम चार प्रहर गायनके पीछे फिरोहो तैसेही सबको जानो हो, हम तौ महलके बाहरहू नहीं निकली सो कैसें चलौ ॥ ३७ ॥ या प्रकार जब प्यारीनें कही तब श्रीकृष्णचंद्र प्यारीते कहैं हैं, मेरे कंधापै चढिलेऊ तब चढन लगी तबही श्रीकृष्णचंद्र अंतर्धान है गये प्यारीजीने विचारी कि सखी बडी व्याकुल होय रही हैं, सो मैं मानकरकै इहांही रहूं, उन्है मिल जाऊं तौ नेक उनके आंसू तौ पुछ जांयगे यासौ जानके मान कियो और श्रीकृष्ण या कारणतै छोडगये कि मैं याहि लाखनमेंते अकेलीकूं ले आयो हूं सो उनको दांत यापै होयगो सो वे याहि शापत होयगी सो मोहि विरह दुःख होय तौ भलेही होय पर मेरी प्यारीके ऊपर काहूको दांत न परै यासौं छोड गये वह गोपी विलाप करत भई ॥ ३८ ॥ हा नाथ ! हे रमावनवारे हे महाभुज ! तुम कहां हो कहां हो हे सखे ! तुम्हारी दासी कृपण मैं हूं ताको अपने समीप हैके दर्शन देऊ ॥ ३९ ॥ अब शुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! वे सब इकट्ठी गोपी श्रीकृष्णचंद्रको दूरते मार्ग ढूंढत ढूंढत प्यारेके वियोगमें मोहित और अति दुःखित वा सखीकूं देखत भई ॥ ४० ॥ ता प्यारीकी कही बातकूं सुनिके, और माधव भगवान् श्रीकृष्णचंद्रसौं प्यारीने सत्कार पायो और गर्व भयेते अपमान भयो सुनिके गोपी बडे आश्चर्यकूं प्राप्त होती भई ॥ ४१ ॥ चंद्रमाकी चांदनीको प्रकाश जहांतक हो तहां ताईं तो गोपी वनमें ढूंढती भई, आगे वृक्षनकी छायाकों अंधेरो देखिके बगदि आई ॥ ४२ ॥ तिन श्रीकृष्णमें मन लगाये कृष्णसंबंधी वार्ता करती उन्हींकी लीला करतीं

---

१ कवित्त—विरहानलदाहीं सब ठाढीसी गिरी भूमि गाढी पीर बाढी निज हाथ धुनै माथहीं । मोहनके हेतसे अचेत व्है पुकार उठीं अब सुधि लेत ना हमारी प्राणनाथहीं ॥ कैसी गति कीन दीन सुखद प्रवीन कान्ह कहै बलदेव मीन जैसे बिन पाथहीं । दुसह मोई दोऊ दीननते खोई अति विरहमें मोहि गोपी रोई एक साथहीं ॥ २ क्योंकि पूनोकी रातमें अंधेरेको कहा काम हो सोही विष्णुपुराणमें लिखो है (प्रविष्टो गहनं कृष्णपदमत्र न दृश्यते)

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तन्मय हो उन्हींके गुण गाय रहीही कि उन्हैं अपने घरकी कृष्णवियोगमेंहू सुधि न भई ॥ ४३ ॥ फेरि बगदिके यमुनाजीके पुलिनमें आयके श्रीकृष्णमें भावना लगाये उनके आयवेको पैंडो देखैं संपूर्ण जुरि मिलिके श्रीकृष्णचन्द्रकूं गावंत भई ॥ ४४ ॥

पुनः पुलिनमागत्य कालिन्द्याः कृष्णभावनाः ॥
समवेता जगुः कृष्णं तदागमनकाङ्क्षिताः ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटी० दशमस्कंधे पू० रासक्रीडायां भगवदन्वेषणं नाम त्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३० ॥

अध्याय ३१.

गोप्य ऊचुः—जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि ॥
दयित दृश्यतां दिक्षु तावकास्त्वयि धृतासवस्त्वां विचिन्वते ॥ १ ॥

अब संपूर्ण गोपी कहैं हैं हे प्रीतम ! तुम्हारे जन्म लियेते यह ब्रज अधिक सुन्दर लगे है, और याहीतें लक्ष्मीसो निरंतर शोभायमान रहे है या प्रकार सब व्रजमें आनन्द होय रह्यो है, हे प्यारे ! तोमें प्राणनकूं धरिके तेरी गोपी तोकूं दिशानमें ढूंढत डोलै हैं ॥ १ ॥ हे सम्भोगके पति ! हे मनोवांछित फलके देनवारे ! शरदऋतुके सरोवरनमें भली प्रकार उपजे श्रेष्ठ कमलके भीतरकी शोभाकूं चुरामनहारी तुम्हारी दृष्टिकी विना मोलकी हम दासी हैं तिनकूं तुम मारो हो ! जो तुम कहो कि हमने कहा मारो है तौ कहा शस्त्रहीते मरैं हैं, दृष्टिसूं नहीं मरैं हैं, कहा याते तुमने दृष्टिसूं नहीं हमारे प्राण हरिलीने हैं तिनके देवेके लिये दर्शन दो ॥ २ ॥ हे लाल ! आपने वारंवार मृत्युनते कृपा करिके रक्षा करी, अब क्यों कामदेवको भेजिके दृष्टिसूं मारोहो विषके जलते मृत्युते रक्षा करी, अघासुरसो, इंद्रने वर्षा करी पवन चलाई ताते, बिजुरीकी आगिते, वृषासुरते, मयके पुत्र व्योमासुर और सम्पूर्ण भयते बचायी हे श्रेष्ठ ! तुमने बेरबेरमें रक्षा करी है अब क्यों हमें छोडोहो ॥ ३ ॥ तुम यशोदाके पुत्र नहीं हो यशोदाके पुत्र होते तौ ' मापै पूत पिता पै थोडो । नहीं तौ थोरो थोरो ' कछु तौ अपनी जातिको पक्ष आतो सब देहधारीनकी बुद्धिके साक्षी हो ब्रह्माने विश्वकी रक्षा करिवेके लिये प्रार्थना करी तब हे सखे ! यादवनके कुलमें प्रगट भये जब ब्रह्माने आपकूं रक्षाके निमित्त कही तब यह कह दियो होयगो कि सबकी रक्षा करनी और गोपीनको जराय २ मारचो करनो सो ब्रह्मा तौ ब्राह्मण है वह ऐसो अधर्म काहेको बतावैगो ॥ ४ ॥ हे यादवमें श्रेष्ठ ! हे कांत ! संसारके भयते तुम्हारे चरणसेवन करनहारे जे पुरुष हैं तिनकूं अभयदाता कामनानके देनवारे लक्ष्मी हाथको पकरनवारो जो तुम्हारो हस्तकमल है ताकूं हमारे माथेपैं धरो ॥ ५ ॥ हे सखे हे वीर हे व्रजवासीनके दुःखके हरनवारे ! अपने

---

१ गान क्यों कियो? उ०—भगवान्ने नारदसो कही कि (नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न च । मद्भक्ता यत्र गायंति तत्र तिष्ठामि नारद) याकू याद करके गोपीनने गान कियो ॥ २ नाम वैकुंठकेहू ऊपर वर्ते है क्योंकि जा लक्ष्मीको वैकुंठमें सेवा करी जायहै वो लक्ष्मी ब्रजकी सेवा करैहै (श्रीयते श्रिञ्सेवायां) ॥ ३ एक चोर काहू साहूकारके घरमें चोरीकूं घुसो सो देखै कहा रुपयानके ढेर लगे हैं यानेहू रुपेयानकी गांठ बांधी, दूसरे कोठामें असर्फी देख रुपैयो छोड असर्फीकी गांठ बांधी तीसरेमें मोती बांधे चौथेमें हीरा जवाहर देख चकित होगयो विचारन लग्यो असरफी लूं कि मोती जवाहर या विचारतेही भोर होगयो मुसकें बंध गई सो प्यारे ऐसेही हमारे नेत्र चोर तेरी रूप माधुरीकी लूटमें परे हे पर आपही बन्धगये कपोलनको देखे फिर बाहुते सुन्दर नासिकामें लगे फिर अधर चिबुकमें गये, सब अंग एकते एक सुन्दर है हम आछे दखवेहू न पाई अब तो हमारे नेत्र तेरे रूपमें बन्धगये हैं अब छूट नाय सके हैं॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जननके गर्वको दूरि करनवारी तुम्हारी मुसिकानिकी हम दासी हैं, तिनकूं सेवन करो; पहिले स्त्री हम हैं तिनको अपनो मुखकमल दिखाओ ॥ ६ ॥ प्रणत अर्थात् नम्र देहधारिनके पापको दूरि करनवारे गौनके पीछे पीछे चलनहारे शोभाके स्थान कालीके फणपै नृत्य करनहारे अपने चरणकमल हमारे कुचनपै धरिके कामदेवकी व्यथाको दूरि करो ॥ ७ ॥ रे कमकदललोचन ! हे वीर ! सुन्दर वाक्यवारी गंभीर मधुरवाणीसों मोहित भई हम दासिनकों अधरामृत पिवायके जीवदान देउ ॥ ८ ॥ आपके विरहमें हमारे प्राण जाय चुके हैं, परन्तु तुम्हारे कथामृतको पान करते भए सुकृति जननने हमें बचाय लिये, कारण कि संसारमें तप्त पुरुषको जिवावनवारो ब्रह्मादिक जाकी स्तुति करै ऐसो पापनको दूरि करनवारे मंगलरूप शांत तुम्हारे कथारूप अमृतकूं जे पुरुष पृथ्वीमें कहैं हैं वे बडे दाता हैं, जब तुम्हारी कथा कहनहारे धन्य हैं तौ जो तुम्हारो दर्शन करैं हैं तिनका तो कहनोही कहा है यासों अब दया कर दर्शन देउ ॥ ९ ॥ हे सौम्य हे कपटी ! तेरो हंसी सहित मुख प्रेमभरी चितवनि ध्यानमें मंगलरूप तेरो विहार हृदयकूं स्पर्श करनवारी एकांतकी बातें हमारे मनकूं क्षोभ करै हैं ॥ १० ॥ हे नाथ ! जा समय गौ चरायवेकूं ब्रजते चलोहो तब तुम्हारे कमलकी तुल्य सुंदर चरण कांकरी तृण अंकुर लगिके कष्ट पावै हैं तासूं हे कांत ! हमारो मन चंचल होय है सो ऐसे प्रेम राखनहारी दासिनपेंहू आप दया नहीं करैहो ॥ ११ ॥ संध्या समय नील केशसूं ढके गोरजसो धूसरित कमलतुल्य मुखकूं

---

१ गोपी कृष्णके चरण अपने हृदयपर रखकर हृदय शीतल किया चाहती है विषयिणी तौ पुरुषके हाथका स्पर्श चाहती हैं गोपियोंका आशय यह कि इन चरणोंसे गंगाजी निकली हैं उनके स्पर्शमात्रसै हमारे ताप दूर हो जांयगे और जब भगवान्के गुणानुवाद गाते २ तन्मय हो गई तब उनको निरभिमान देखकर उन्हीके मध्यमें प्रगट हो गये इसी प्रकार ध्यान करनेसे भक्तोंके अन्तःकरणमें प्रगट होते हैं यह सब कामदेवको परास्त करनेको किया कि स्त्रियोंके साथ रहकरभी उनको त्यागा इनमें प्रमाण यही है कि ॥ तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः । पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः ॥ उनके मध्यमें शूरसेनके पोते प्रगट हुए जिनका मुखकमल हास्ययुक्त है पीताम्बर धारे माला पहरे साक्षात् कामके मान मथन करनेवाले हैं, यहां कामको जीतकर शूरता की है इसी कारण दादाका नाम उच्चारण किया और कामका जीतना प्रगटही है आगे फिर भगवान्ने योगमें स्थित हो इस प्रकार उनके साथ क्रीडा की जिस प्रकार कोई अपनै प्रतिबिम्बसै क्रीडा करता हो । गोपियोंने अपने वस्त्र बिछाये उसपर बैठे, इसका तात्पर्य यही है कि गोपियोंके निकट प्राप्त होनेपर सर्वस्व उन्हींके निमित्त दिया पीछे जलविहार करकेभी अच्युतही रहे जीवन्मुक्त होने-परभी संसारदुःख नहीं देता यही गोपियां जीवन्मुक्त हो कृष्णकी भक्ति प्रगट करनेको विचरती रही हैं, यह ज्ञानयुक्त जगत्में उपदेशरूप पंचाध्यायी है, बुद्धिमान् उसको विस्तार कर लैंगे मानुषी उन्नतिकी सब कला कौशल चरितार्थ करनेको भगवान् कृष्णका अवतार है सो सब कर दिखाया ॥ २ कलिं कलहं लाति असौ कलिलः कलिलस्य भावः कल्लि-लता गोपियोंने कही अरी यह मनको झगरो है मनने कही वनमें श्रीकृष्णके चरणनमें कांटे लागत होंगे, उनके तो बडे बडे नेत्र हैं, वे कांटे खोवरानमें क्यौं पग धरैंगे मनने कही अरी बावरी भई हो तुम एक एककूं कृष्णके वियोगमें देहकी सुधि नहीं रहै है, वह तौ हजारन गोपिनके विरहमें अचेत रहै है, कहीं वेसुधिमें चरण पडजात होयगो तब हम कहैं है अरे मन ! वे कोमल पृथ्वीपै चरण धरैं हैं मन कहै है अरी वह गैया चरायवेकूं जाय है, कछु दलाली कर-वेको नहीं जाय है, गैयाको स्वभाव है जहां बडी घास होय तहां कटे खोवरानमेंहू चली जांय हैं, तहां वेभी जाते होंयगे; तब गोपी कहै अरे मन ! क्यौं डरै है, हमारे ब्रजकी पृथ्वी बडी दयालु है जहां कृष्ण चरण धरे है, तहां वह अपनी जिह्वा पसार देहै, अथवा कृष्ण चरणकी संगततें कांकरीहू माखन समान होजाय हैं, मन कहै तुम तौ अपनी चित्रसारीनमें बैठी बातें बनाओहो मैं कृष्णके पासही जाऊंगो फिर गोपी बोली अरे तू क्यौं डरपै है कांटे तो वाके लगै है जो जूती न पहरेहोय वे तौ लाखन गोपियनके मनकी जूती पहरे हैं सो कांटे तौ हमारे मनमें लगैं हैं मनने कही मोपै तौ रह्यो नहीं जाय है मैं जाऊंगो, गोपी बोलीं अरे तू अकेलो जायगो मन कहै कि मैं तिहारे पंच प्राणनकूं संग लेतो जाऊंगो, प्यारे सारे दिन हमारे मनसे और हमसे ऐसी कलह होयहै; और संध्या भई सो तुम आते-ही मैयाकी गोदीमें घुसजाओहो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धारण करिके बेरबेर दिखाइकें हे वीर ! हमारे मनमें कामदेवको उत्पन्न करोहो, परन्तु संग नहीं देउ हो यही तुम्हारो निश्चय कपट है ॥ १२ ॥ नम्र देहधारीनकूं कामना देनवारे ब्रह्मासो पूजित पृथ्वीकी शोभाके करनवारे,आपत्तिमें ध्यानसेंही पीडा दूर करनहारे; सेवामें सुखरूप अपने चरणकमलकूं हे रमावनवारे हे कामदेवकी पीडाके दूर करनवारे ! हमारे कुचनपै धरो ॥ १३ ॥ हे वीर ! कामदेवकूं बढावनवारे शोककूं दूर करनहारा स्वरभरी बजतीभई बांसुरीसों भली प्रकार चुम्बित, मनुष्यनकूं चक्रवर्ती आदिके सुखको भुलामनवारो सुखदायक तुम्हारो अधरामृत है सो हमारे रोग शान्त करवेको दीजिये हे कृष्ण ! यह औषधि मिलवेसो हम अच्छी है जायंगी, और जो प्यारे तुम दवाको मोल मांगो तो दमडीकी बांसकी बंसी जो रातदिन मुखपर धरे रहोहो वह तुम्हें कहा मोल देयहै, और जो तुम कहो तुम कुपथ्य करोहो कुपथ्यीकूं दवा न देनी चाहिये अभी तुम गैया भैया घर पत्यादिकनकी वासनाको कुपथ्य करोहो, सो प्यारे तेरी औषधी यह सब दूर कर देगी नैक हमें औषधी पिवाओ तो सही ॥ १४ ॥ जब तुम दिनमें वनमें जाओ हो तब तुमारे देखे विना आधो क्षण युगकी तुल्य बीते यह विना देखेको दुःख कह्यो और जब घुमघुमारे केशनसो युक्त तुम्हारे मुखकमलको दर्शन करें हैं वा समय पलकनको बनावनवारो ब्रह्मा हमें मूर्ख विदित होय है पलकनसों दर्शनमें बाधा पडै हैं यह दर्शनमें दुःख है और छः वरसकी हमारी नंद अपनी मायासो जाय पुकारै है अरी देख री मा भाबी वा नंदकेकूं देखन गई है अब सास त्रास दिखाई है वापै ब्रह्मा वैर पडो है अपनी आठ आंखें बनाई हमारी दोंही और ताहूपै पलक लगाय दीने हैं ॥ १५ ॥ पति पुत्र वंशके भैया बंधूनकूं त्यागिके तेरे गीतसूं मोहित होयके हम तुम्हारे पास आई, गायवेकी गतिनकूं जाननहारे वा हमारे आगमनकूं जाननहारे हे अच्युत हम तुम्हारे निकट आई हैं हे कपटी ! रात्रिमें आई स्त्रीकूं तेरे विना ऐसो कौन है जो त्यागेगो ॥ १६ ॥ कामदेवको प्रगट करनहारे एकांतको संकेत देखिके हंसीसहित मुख और प्रेमकी चितवन देखिके, लक्ष्मीके रहिवेको स्थान तिहारो वक्षस्थल देखिके हमारे बडी चाहना भई है और हमारो मन मोहित होय है ॥ १७ ॥ अंग अर्थात् हे श्रीकृष्ण ! तुम्हारो प्रकट होनो ब्रजवासीनके वनवासीनके दुःखको दूर करनवारो है, अतिशय करि विश्वको मंगलरूप है या कारण तुम्हारे दर्शन विना व्याकुल हमें अपने भक्त जानके मनकी पीडा दूर करनहारी गुप्त औषधि देउ कृपणता मति करो या औषधीको तुम्ही जानोहो ॥ १८ ॥ कठोर स्तननपै तुम्हारे चरणकमलकूं भयते हम होले होले धरैं हैं क्यों कहूं कोमलचरणमें गडि न जाय, और तुम उन चरणको वनमें उठाय उठाय डोलो करोहो कहा चरणमें कांटे कांकरी लगिके खेद नहीं होय है, यह जब विचार करैं हैं तब तुम्हें अपनो जीवन धन माननेहारी हमारी बुद्धि मोहित हैजाय है,पर नेक पुकारके इतनी तो कहि देउ कि अरी गोपियो ! तुम कहां हो मैं तो पुलिनमें लताके नीचे आरामसो बैठोहूं इतनी तो कहदेउ ॥ १९ ॥

यत्ते सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ॥
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किं स्वित् कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ॥ १९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे रासक्रीडायामेकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

अध्याय ३२.

श्रीशुक उवाच—इति गोप्यः प्रगायन्त्यः प्रलपन्त्यश्च चित्रधा ॥
रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्णदर्शनलालसाः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार गोपी गावत चित्र विचित्र विलाप करत श्रीकृष्णचंद्रके दर्शनकी लालसासो वे गोपी वडे स्वरते रुदन करत भई ॥ १ ॥ मुसिकान युक्त मुखकमलवारे शूरवंशोत्पन्न पीतांवरकूं पहिरे वनमालाको धारण करे साक्षात् मन्मथ कामदेवके मनकूं मोहित करनहारे श्रीकृष्णचंद्र गोपीनके बीचमें प्रगट होत भये ॥ २ ॥ प्रीतिपूर्वक प्रसन्न होयके प्रफुल्लित नेत्र होय संपूर्ण अबला श्रीकृष्णचंद्रकूं आयो देखिके एक संग उठत भई जैसे देहमें प्राण आयेते हाथ पांव उठे हैं ॥ ३ ॥ कोई गोपी श्रीकृष्णचंद्रको हस्तकमल वडे आनंद-पूर्वक अपने हाथसूं पकरत भई, कोई गोपी चंदनसो शोभायमान भगवान्की भुजाकूं कंधापै धरत भई ॥ ४ ॥ कृश अंगवारी कोई गोपी श्रीकृष्णके मुखमेंते तांबूलको वीडा अपने हाथनमें लेत भई, और कामते तपायमान कोई गोपी श्रीकृष्णचंद्रको चरणकमल अपने स्तनपै धरत भई ॥ ५ ॥ एक गोपी अपनी भौंह चढायके कोपके आवेशसूं विकल होयके अपने ओष्ठकूं दांतनते दाबिके कटाक्षरूपी बाणनते मारतीसी देखत भई ॥ ६ ॥ और गोपी निमेषरहित दृष्टिसो श्रीकृष्णचन्द्रको मुखकमल भले प्रकार देख्योभी है परन्तु फेर फेर देखत नहीं तृप्त होत भई, जैसे साधुजन श्रीकृष्णके चरणारविंद देखते नहीं तृप्त होइ हैं ॥ ७ ॥ कोई गोपी नेत्रनके छिद्रद्वारा भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको हृदयमें लेजाय नेत्र मूंद भगवान् श्रीकृष्णचद्रकूं आलिंगन कर रोमांचित शरीर होय योगिजनके समान महा आनन्दमें मगन होगई ॥ ८ ॥ केशव श्रीकृष्णचंद्रके दर्शन करिके आनन्दसों सुखी होयके

---

१ शौरि शब्दके कहिवेसों ये दिखायो है कि आखिर तो क्षत्रिय जात वडे कठोर है इतनो दुःख देके दर्शन दियो हँसते २ यासो आये कि हँसते मेरे मुखको देखेगी तो सब राजी हे जायगी (पीताम्बरधरः) याते कह्यो कि दोउ हांथनसो पीताम्बरके दोउ कोने पकरे अपराधीकीसी नाई दोउ हाथ बांधे आये इत्यादि ॥ २ कवित्त—राखैंगी न प्राण यह जानिके कुमर कान्ह प्रगटे सुजान बीच तान बान मारे हैं । लखतही गोपिनके वृंदमें आनन्द बढो मन्द मुसकात व्रजचन्द यों निहारे हैं ॥ भने बलदेव यह बानी सुधा सानी सुनो सकल सयानी तुम सभै दुःख भारे हैं । गले माल डारे मुख पीतपट धारे पिया कहत पुकारे हम ऋनियां तुम्हारे हैं ॥ ३ ' काचित् कराम्बुजं ' यहां शुकदेवजीने काचित् कही नाम नहीं लियो याको कारण यह है कि नाम शुकदेवजीको परम इष्ट है, द्वै अक्षर मंत्ररूप हैं सो जप मंत्रका प्रकाश करना भला नहीं अथवा महादेवजीने शुकदेवजीसे तत्वज्ञान कह्यो परन्तु नामके दो अक्षर प्रकाशे नहीं रारा कह्यो करैं हैं, दूसरो अक्षर नहीं कहते कदाचित् कोई चुराय लेजाय एकबार तौ तत्वज्ञान खोयो यामें कथा है—एक समय नारदजीने कैलासमें आय कही कि यहां कछु आग लगानी चाहिये सो पार्वतीसैं कही कि तुम्हैं महादेवजी कछु प्यारभी करैं हैं, पार्वती बोली कछु अन्तर नहीं राखैं हैं तब नारदजी बोले तौ तुम यह पूछियो कि आपके गलेमें मुण्डोंकी माला कहा वस्तु है यह कह नारदजी चलेगये, जब वर्षभर पीछे महादेवजी समाधिसैं जागे तब पार्वती बोली महाराज ! यह मुंडनकी माला कहा वस्तु है, बताओ पार्वतीसै यह सुन शिवजी बोले जब तिहारे शरीर छुटजाय है तब तुम्हारी शिर धारण करलूंहूं पार्वती बोली मेरे तौ सैकडों जन्म भये और तुमने ऐसी कहा अमरोटी खाई है जो तुम अमर हो, शिवजीने कही काहूने भली आग लगाई फिर बोले मोहि तत्वज्ञान है पार्वतीने कही वह तत्व मोहि बताओ तब शिवजीने स्नेह हटाय एक चुटकी बजाई कि वा स्थानके सब पक्षी उडगये, फिर एक चुटकी बजाई बच्चनके पंख जमि आये; फिर बजाई सब बच्चा उडादिये ताहि समय शुकीके गर्भमें शुकदेवजी आये हैं सो एक चुटकीसैं बाहर आये दूसरीसैं अंडा फूटो तीसरीसैं पर निकसे सो एक वृक्षकी डालीपैं जाय बैठे तब महादेवजी पार्वतीसैं तत्वज्ञान कहन लगे, पार्वती हुंकारी देती सो गई, यह सुआ हूंहूं करन लगो, महादेव ब्रह्मानंदमें मग्न नेत्र मीचे सब कथा कहिगये, जब नेत्र खोल देखैं तौ पार्वती सोगई, और हूंहूं तोताने करी झट वाके मारनेको शूल चलायो, और पीछे भयो सुआ भाज्यो व्यासजीकी स्त्री कोठेपर ही बानैं जंभाई ली सूक्ष्मरूपसे वाके उदरमें प्रवेश करगये, शिवजीने व्याससे कही तुम्हारी स्त्रीके गर्भमें हमारो चोर है, निकासो व्यास बोले आपके पास कहा है जो यानैं चुरायो शिवजीने कही तत्वज्ञान जासैं अमर होय हैं सो याने चुरायो, व्यासजीने कही याहीतैं आप भोलानाथ कहाओ हो विचारो तौ जानै तत्वज्ञान सुनो, वह त्रिशूलसे कैसें मरैगो, महादेवजी हँसके कैलासको गये, वा दिनसै रारा रटै हैं पूरो नाम नहीं लै हैं शुकदेवजी संपूर्णही गुप्त राखैं हैं, यासौं राधाको कहूं नाम न लियो ॥ ४ यह अष्ट सखीनको कृत्य कह्यो है इनके नामहू तोषिणीमें लिखे हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सम्पूर्ण गोपी विरहके तापको त्यागत भई जैसे ईश्वरको पायके मुमुक्षुजन तापकूं छोडेहैं अथवा सुषुप्ति अवस्थाके साक्षीको पायके जाग्रतरूप अवस्थावान् जीव जैसे तापकूं छोडे हैं ॥ ९ ॥ हे परीक्षित् ! भगवान् श्रीकृष्णचंद्र उन दुःखरहित गोपिनके मध्यमें अधिक सुन्दर लगत भये जैसे परमात्मा सत्व आदि शक्तिनसो सुन्दर लगे हैं अथवा उपासक पुरुष ज्ञान बल वीर्यसूं आदि लेके शक्तिसूं सुन्दर लगैं है ॥ १० ॥ तिन गोपिनको संग लेके फूले भए कुंद और मंदारकी सुगन्धि पवनके कारण जहां भौंरा गुंजार कर रहे ऐसे यमुनाजीके पुलिनमें गये ॥ ११ ॥ कैसे पुलिन है शरद्ऋतुके चंद्रमाकी किरणके समूहते रात्रिको अन्धकार जामेंते दूर हैगये है यमुनाजीकी बाहुकी समान तरंगनसौं कोमल वारूके बिछौना जामें बिछ रहे हैं ॥ १२ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके दर्शनके आनन्दसूं हृदयके रोग दूर करके गोपी मनोरथके अंतकूं पावत भई अर्थात् मनोरथ उनको पूरो होतभयो जैसे ज्ञानकाण्डमें श्रुति परमेश्वरकूं देखिके आनन्दसूं पूर्ण होय कामके सम्पूर्ण बंधननकूं त्यागे है कुचनकी केशरियुक्त अपनी ओढनीनकूं उतार उतारके श्रीकृष्णचंद्रके बैठिवेको तकिया गद्दि बनावत भई ॥ १३ ॥ योगेश्वरनके भीतर जिनको कल्पित आसन है वे ईश्वर भगवान् श्रीकृष्ण तीन लोककी शोभाको एक एकही स्थान कहा तीन लोककी शोभा जामें आयरही ऐसे रूपको धरिके ता आसनपै बैठके गोपिनसो पूजित हैके गोपीनकी सभामें सुन्दर लगत भये ॥ १४ ॥ कामदेवके बढावनवारे श्रीकृष्णकी हासलीलापूर्वक चितवनिसों चलायमान भ्रुकुटीसूं सत्कार करिके गोदमें धरे भए श्रीकृष्णचन्द्रके चरणनकूं हाथनते दाबत स्तुति करिके कछुएक क्रोधते गोपी बोलत भई ॥ १५ ॥ सम्पूर्ण गोपी कहैं हैं कि हे महाराज ! एक पुरुष तो भजतेनको भजे हैं वे कौनसे हैं, और ऐसे हैं कि नहीं भजतेनको भजे हैं वे कौन हैं, और एक भजतेनको न भजतेनको दोनोंनको नहीं भजे हैं वे कोनसे हैं सो हे कृष्ण ! यह हमारे आगे भली प्रकार समझायके कहो ॥ १६ ॥ श्रीभगवान् कृष्णचंद्र बोले हे सखियो ! जे पुरुष परस्पर भजे हैं अर्थात् जितनो वे उनको चाहैं तितनो वे उनको चाहैं वे पुरुष तो आपस्वार्थी हैं वा भजनमें स्नेहसुख धर्म कछुभी नहीं हैं वह तो केवल अपनोही भजन है ॥ १७ ॥ और जे नहीं भजतेनकों भजें हैं वे पुरुष दो प्रकारके हैं एक करुणावान् दूसरे स्नेही जैसे माता पिताको पुत्र नहीं चाहै है परंतु वे वाके ऊपर कृपा करें हैं, और या भजननमें निर्दोष धर्म है हे सुमध्यमाओ अर्थात् सुंदर कटिवारी गोपियो ! दयालु हैकें भजनेमें सत्य धर्म और स्नेहसौं भजनेमें सत्य प्रेम है ॥ १८ ॥ कोई पुरुष भजतेनकूंहू नहीं भजे हैं तो अभजतेनको कहांते भजेंगे वे चार प्रकारके हैं एक तो आत्माहीमें रमण करें हैं और एक पूर्ण मनोरथ हैं जिनके कोई बातकी चाहना नहीं है, और एक अकृतज्ञ हैं, उपकारकूं समझे हैं, अर्थात् कृतघ्नी और

---

१ पर भजन विश्वाससे करना योग्य है तामें दृष्टान्त है विश्वासमेंही भगवान् हैं, और कहीं नहीं एक मनुष्य किसी कार्यवश भगवान्का पूजन करे था परन्तु मनमें यह कहता यह पाषाणमूर्ति हमारा कार्य कैसे साधन करसकैगी, उसका चल विश्वास होनेसे उसका कार्य नहीं हुआ, तब किसीने उससे कहा तू भगवती दुर्गादेवीका पूजन कर, तुरंत काम सिद्ध होगा वो मनुष्य आलेमें ठाकुरजीकी मूर्ति रख दुर्गादेवीका पूजन करनेलगा एक दिन धूप देती समय मनमें विचारा कि धूप सीधी ऊपरहीको जाती है सो नारायणहीको पहुँचती है इस कारण दुर्गादेवीको पीछे मिलनेसे वे प्रसन्न नहीं होतीं, इसका यत्न करूं यह विचार रुई ढूंढकर भगवान्की मूर्तिकी नाकमें भरनेलगा, जिससे कि सुगंध न जाय भगवान् तत्काल मूर्तिमेंही हँसकर बोले भाई ! रुई मत ठूंसे वर मांग क्या चहिये वोह बोला महाराज ! मुझे क्या खबर थी आप रुई ठूंसनेसे प्रसन्न होते हैं और यह विधि किसी पद्धतिमेंभी नहीं लिखी, भगवान् बोले पहले तुझे विश्वास नहीं था मूर्तिकूं पाषाण जाने था आज वोह बात जाती रही आज ईश्वरही जाना नहीं तो पत्थरमें सूंघनेकी शक्ति कहां आज तेरा विश्वास ईश्वररूपका था ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एक गुरुद्रोही हैं जो उपकार करें ताहिते द्रोह करें हैं ॥ १९ ॥ श्रीकृष्णचंद्र कहैं हैं हे सखियो ! मैं इनमेंसों कोउ नहीं हो केवल दयालु और स्नेही हूं जो कोई प्राणी मेरो भजन करै है तिनको अपनी ओर ध्यान लगायवेके लिये मैं उनकूं नहीं भजूं हूं, जैसे दरिद्री पुरुषको धन मिलै है और वह धन जातरहे है तब वाकी चिंताको मारो भूख प्यास नहीं जानै है ॥ २० ॥ हे अबलाओ! मेरे लियेही लोकमर्यादा, वेदमर्यादा पति पुत्र तुमने त्याग दिये सो तुम्हारी चित्तवृत्ति लगायवेके लिये तुमकू देखिवेको नहीं आयो तुम्हारे पासही छिपिके रहतभयो कहूं दूरि नहीं गयोहो यातें हे प्रियाओ ! यह कृष्ण बुरो है ऐसे मो प्यारेमें दोष मति लगाओ ॥ २१ ॥ तुम निर्दूषित तुम्हारे संग उपकारको बदलो मोपै देवतानकी बराबर अवस्था होती तौहू नहीं हैसके है क्योंकि दुस्त्यज घररूप बेडीनकूं काटिके मेरी सेवा करत भई यातें तुमही कहिदेउ कि कृष्ण हमारो ऋणिया नहीं है तो मेरो छुटिकारो है, मोपै तुम्हारे उपकारको बदलो नहीं होय सके है ॥ २२ ॥

न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः ॥
या माभजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना ॥ २२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे रासक्रीडायां द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

अध्याय ३३.

श्रीशुक उवाच–इत्थं भगवतो गोप्यः श्रुत्वा वाचः सुपेशलाः ॥
जहुर्विरहजं तापं तदङ्गोपचिताशिषः ॥ १ ॥

या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रके हस्तचरण आदि अंग स्पर्शकर मनोरथ पाय गोपी भगवान् श्रीकृष्णके अति कोमल वचन श्रवण करिके विरहतापकूं त्यागत भई ॥ १ ॥ तहां गोविंद श्रीकृष्ण अपनी आज्ञा करनवारी प्रसन्न मन आपुसमें हाथ पकरे खडी भई स्त्रीनमें रत्न गोपीनकूं संग लैके रासक्रीडाको आरम्भ करत भये ॥ रासमंडलकी शोभा ॥ जहां सहस्रकुंज लतानकी पाडरनके परिकोटा है, पोरहै, पनासहै, नैठे हैं, दाडिमनके दरवाजे हैं, देहरी है, दिवाल है, दास है, चंदनकी चौखट है, चोवारे है, चित्रसारी है, चिरोनीनकी चोक हैं, चांदनी हैं, चिक हैं, किरवारेनके किवार है, कंगूरा है, कलसा हैं कोटे हैं देवदारके दरहैं, दलीची हैं, भोजपत्रनके भवनहैं, भंडारहैं, बेलनकी बैठकहै, बिछावटहै, किरवारनकी कुरसी हैं, तुनकी शिखिरहै, श्रेणी है, कटहनके कटहराहै, पनसनके पताकाहै, जामुननकी जाजम है, पाकरेनके पलकापाये हैं, करकाये हैं, गहरनकी गद्दी है, गलिचाहै, गिलमहै, तामें तीनों तमालनके

---

१ यहां दृष्टांत है एक गमार जंगलमें शौच गयो हो सो धरती कुरेदन लगो सो वाको एक मोहरनको भरो कसेडा मिलो वामें काई लगी हो सो नदीपे जायके धोवन लगो हाथमेंसो छुट गयो सोई रोमत २ गाउमें आयो हाय मेरी धौमती गई हाय मेरी धौमती गई वो वाहीमें तन्मय है गयो जब वाते कोउ कछु कहे तब वो यही कहै कि हाय मेरी धौमती गई एक कोउ वाको मित्र हो वो वाय बुलायके इकेलेमें ले गयो और धमकायके जब पूछी तब वाने वाके अगारी मोहरन कसेडाको हाल कह्यो कि ऐसें मिल्यो हो सो ऐसें जातो रह्यो हाय मेरी धौमती गई तब वो तो बावरो होही पन वो दूसरोहू बावरो है गयो वो तो कहै हाय मेरी धौमती गई तब वो दूसरो कहे सारे पाई तो पाई पन धोई क्यों ऐसेही प्यारी-हो ! मैंहू तुमारी तन्मयवृत्ति करवेको तुमोरे पासते छिप गयो हो में कहीं गयो नहीं हो । २ कृष्णने ऋणिया कही याको कारण यह है कि काहूके एक मित्र दरिद्री हो गयो सो वह महादुःखी होय अपने करोरपति मित्रके पास गयो वाने इन्हे देखतेही हजामत बनवाय अच्छी पोशाक पहराय मोती गहने पहराय लाख रुपैया दे विदा कियो, अब जो यह दरिद्री अपने मित्रको बदलो उतारो चाहै तौ जब वह करोरपति दरिद्री होय तौ बदलो दियो जाय यासें वह बात कछु ना जामें मित्रको सत्यानाश हो जाय यातें ऋनियां रहनोही भलो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तकियाहैं अतरनते तरबतर होरहे है, जापै श्रीराधाकृष्ण विराजे हैं ॥ १ ॥ अथाष्ट कुंजपुष्पनकी मोतियानके महल, जाकी मालतीनकी मुडगेलि, मरुएहैं, मंदिरहैं, मरगोलहैं, कंनेरनके कटहराहैं, किवारहैं, कुरसी हैं, कलसाहैं, मोरसिरीनके मुतक्काहैं, चंपानके चोकहैं, चबूतराहैं, चांदनी हैं चिकहैं, चोवारे हैं, रायवेलनके रंगमहलहैं, राउठी हैं, रासस्थलसे हैं, केवरेनकी कुरसी है, कंगूराहैं, कोठे हैं, दुपहरियानकी दलीची हैं, दरहैं, दलानहैं, दिवालहै, चमेलीनके चोखटहैं, चोवारे हैं, जुहीनकी जाली है, जजीरहै, जीनाहै, जिमीनकी जाजम है, गैंदानके गली हैं, गलीच्याहै, गदाहैं, गिलमहैं, पाडरनके पोरहैं, परदाहैं, परकाएहैं, गुडरानकी गदि जिनपै चांदनैनकी चादरहै गुलचिमनके गेंदुवा धरे, गदीनपै न्यारे हैं ॥ कवित्त—केवरानके किवार जिनमें केतकीकी कुलुफजडी, वासेके बंगला, जामें मोंगलरानके मोखाहै ॥ रोसनमें रायवेल सुगंधनरानकी सिढी बनी कुंदनकी कुंजनमें गुलाबनके गोखाहै ॥ राते पीत फूल सब झूमरहे झाडनमें पद्मनकी पाखुरीके झूमके झुराखाहैं ॥ ऐसी कुंजमध्यमें विराजैं श्रीराधाकृष्ण गोपिनके मनभाई आई शरदनकी दोषाहै ॥२॥ पच्चीसकुंजनमें ललितादिकनकी गतिहै, ते मणीनकी कंचनकी कुंजहैं किवारहैं, कटहराहैं, कलशाहैं, चांदीके चबूतराहैं, चोकहैं, चोवारेहैं चोखटेहैं चांदनी हैं, चिकहैं, मूगानकी मुरगेली हैं, मरुवेली हैं पन्नानकी पारहै, परकोटाहैं, हीरानके हिंडोरे, पिरोजानकी पटली हैं, पद्मराग मणिनके पलकाहैं, परकाये है, ऐसी कुंजमें राधा कृष्ण विराजेहैं, योगमायाकूं आज्ञा दीनी सो सब रासकी साजकी समाजकी जुगति बनाई, वृंदादेवी तौ राधाजीको शृंगार करै है, योगमाया श्रीकृष्णको वनदेवी सर्व रीतिसौं सब सखिनको शृंगार करे है न्यारी २ नको।

श्रीकृष्णशृंगारवर्णनम्। रत्नजटित चौकीपै विराजे तब योगमायाने अंगमें केशरको उवटनो लगायो फेर केश सम्हारे फेर फुलेल लगायो, सोनेनके कलशानमें केशर घोर गुलाब जलतें समोये भयेसौं मसल २ ह्ववाये फेर अंगवस्त्र कीनो फेर केसरिया धोती कलाबतूनकी दीनी, सो आपने धारण कीनी, पीछे गुलाबके अंजुरनको लगाय अलकै संभार वो पंचरंगी चीरा धारन करायो, पीछे गुलबदनको घुटन्ना पहरायो उछरवे कूदवेमें फिरवे ढरवेमें, ढीले गीलेको काम नहीं, वो कलाबत्तुको नारो खेंच बांध्यो वामें रेशमी गुच्छानमें मोतिनके लच्छा लटक रहे हैं; फेर जरीको घेरदार घूमदार जामा पहरायो, जामें मोतिनकी लामन लगी, ताके ऊपर दुछोरमा पटुका खेंच बांध्यो पटुकामें रतन जडित मुरली खुरशी, पीछे माथेपै दुहरा मोतीनकी कंठी पागके नीचे बांधि ताके ऊपर बीच २ में मोरचंद्रिकान सहित मणि जडित मुकुट धारण कियो, ताके आगे जामें मोती सुराईदार पन्ना लटके ऐसौ जडाऊ शिरपेच बांध्यो वो जरीकी कलँगी लगाई मोतीनको तुर्रा दाईं ओर लटकायो पीछे वो केशरको तिलक लगायो, वो मृगमद रेखा व ऊंची सुवासारी नासिकापै भाल तिलक लगायो, वो बुलाक नासामें धारण कीनी, पीछे नेत्रनमें अंजन आंज्यो मुखमें पानको बीरा, चिबुकमें हीरा, माथेपै चीरा काननमें मकराकृति कुंडल धारण कीने. पीछे एक अलक कपोलनतें छिटकाई, अतरनसूं तरबतर भई, आरसीसे गोल कपोलनपै पत्रनकी रचना कीनी, पीछे श्रीकंठमैं मोतिनको गोप धारण कियो, ताके नीचे हीरानको कंठा पहरो; ताके नीचे दुलरी, ताके नीचे तिलरी, तापैं चोलरी ताके नीचे पचलरी ताके नीचे सतलरी ताके नीचे एक अमोलक चंद्रहार धारणकीनो मोतिनकी, ताके नीचे वैजयंतीमाला, दोहाकरी दरी अरु, सूकरी, कंठी स्वाती वाल। षट षट पदसौं पोहिये, सो वैजंतीमाल ॥ ताके आगे गुलाबके फूलनकी पागदार नंदलालने माला पहरी, बराबर २ कंठसूं कमर तलक धुक धुकी चली गई, करनमें जडाऊ कडला भुजानमें बाजू धारण कीने जिनमें मोतीनके झब्बा लटकै हैं, पीछे ऊंगरी अंगुठानमैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

छल्ला मुदरी धारण कीने पीछे कटिमें जडाऊ कोंधनी धारी पीछे चरणनमें नूपुर धारण किये तिनके ऊपर झांझन धारण कीने तिनके ऊपर सांकडा अमैठमा आंकडादार पहरे, ताके ऊपर कडा पहरे, ताकी शोभा राजा मैं कहा कहूं वो नूरपुरनकी पहरन, वो घेरदार जामाकी झमकन, तामैं मोतीकी लामनकी लगन, कोंधनीकी कसन, गजरा फूलनकी गसन, पटुकाके छोरनकी छुटन, वो घुटनाकी घटन, मालाकी पहन, वेहारनकी हरन, वे दुलरीकी दुलन, वो चौकीकी चकमन, वा धुकधुकीकी धुकन, वो बाजूकी कसन, कडानकी रुरमकन, वो छल्लानकी मुदरीनकी जडन, वो मुखारविंदकी हसन, वो कपोलनकी लसन, अलकनकी विथुरन, वो तिलकनकी लगन, वो पँचरंगी चीराकी बंधन, ताके नीचे मोती लडकी दमकन, वो मोर मुकुटकी सजन, वो शिरपेचकी चमकन, वा कलगीकी खिलन, वो तुर्रेकी लटकन, राजा वो व्रजेशसुतके वेशकी शोभाकूं अशेष विशेष शेष नहीं वर्णन करिसके, तौ मेरी कहा सामर्थ्य है, पीछे अलकनमें अतर मुखमें बीडा लियो, पीछे योगमायाने दर्पण दिखायो अपने रूप अनूपकूं कृष्ण भूप देखकैं आपही टूक २ हो गये, योगमायाने राई नोन उतारो, वहां राधाको शृंगार वृंदादेवीने कीनो, रतनजडित चौकी दै विराजमान करकै केशरको उबटनो कीनो, फेर कंघहीते पडे सटकारे कारे केश सम्हारे, फुलेल लगायो वेणी गुहि, फेर सोनेनके कलशानमें केशर घोर गुलाब जल भये समोये, जलसूं मसल २ न्हवायो, अंगवस्त्र कीनो, फिर चुहचुहातो कसुंभी दामन घूमदार, मोतीन लामनदार लामन पाटन पगोट घेरमें गोट कलाबतुको नारो; रेशमनके लच्छामें मोतीनके गुच्छा लटकैं ऊपर कारी जरीकी चूंदरी उढाई, हरी जरीकी कंचुकी रेशमनकी कस बांधि, कारचोबीनके कामकी कंचुकी पहराई (अथ भूषणानि) शिरके वेणी १ चंद्रिका २ बोरला ३ खुटला ४ मांगफूल ५ शीशफूल ६ चुटबंद ७ जडाऊ आटी ८ मस्तक फूल ९ मस्तककी खोर १० वेना ११ जडाऊ टीको १२ वेंदा १३ तिलक १४ तिसारे १५ कर्णनके कर्णफूल १६ झूमका १७ ढेढी १८ बंदिया १९ बाली २० पीपरपत्ता २१ झिवझिवी २२ विचकनी २३ नासिकाकी नथ २४ चमेलिया लटकन २५ नथ झलकादार २६ कलशादार २७ नोरदार २८ मोददार २९ गुमानी छोगादार ३० बिजलीदार ३१ कबूतरदार ३२ चांदनीके भलकादार ३३ जडाऊ ३४ जवाहरी ३५ केहरकीदार ३६ बुलाख ३७ पान ३८ बेसर ३९ दुर ४० मोती पान ४१ कंठके जंजीरा ४२ तिमनिया ४३ पतरीदार पचमनियां ४४ कंठा ४५ हांस ४६ हमेल ४७ लडलडी ४८ गरसोली ४९ टीक ५० झुमरी ५१ आड ५२ कंठश्री ५३ ढुलनी ५४ दुलरी ५५ तिलरी ५६ मोरली ५७ तखती ५८ सतलरी ५९ मुक्तामाला ६० चंपकली ६१ चंद्रहार ६२ तोमर ६३ चोसर ६४ पुतरीमाला ६५ सर ओसर ६६ बांहके बरा ६७ वांके ६८ बाजूबंद बच्चादार जंगदार ६९ दक्षिणी खएला ७० करनके हथफूल ७१ गूजरी ७२ दोहरी ७३ पछेली ७४ कंकण ७५ चूरण तारकसी ७६ नोगरी ७७ पहुँची ७८ दुआ ७९ बंगली ८० डार ८१ मिणी ८२ हाथनके हाथसांकडा ८३ हथफूल ८४ उँगरीनके मुदरी ८५ छल्ला ८६ गुस्ताना ८७ आरसी ८८ कमरके क्षुद्र घंटिका ८९ किंकिणी ९० थई ९१ गठबंध ९२ पायनके कडा ९३ पायजेब ९४ सांकरा ९५ सांट ९६ तोडा ९७ जेहर ९८ नूपुर ९९ पेजनी १०० घुंघरू १०१ बिछुवा १०२ चुटकी १०३ दुछल्ली १०४ मछिया १०५ अनवट १०६ पोला १०७ नहियां १०८ पगपान १०९ एडी भूषण ११० चोप १११ यह सब धारण करायो ॥ अथ गोपीनको शृंगार ॥ लाल, हरे, पीरे सोसनी, नील, पीत, कारे, आसमानी, गुलाबी, ककरेजिया, हवासी, कासनी, किरमिजी, नारंगी, नाफरमानी; जोजई, चंपई, पिस्ताई, दाखी, गुलाबी, गुलनार, कमलपत्री, सुनहरी, सपताल्लु, सरवती, ऊदो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गुमरदीनके दामन, भांति २ के दामन, कंचुकी, भांति २ की ऊपर ओढनी तरह २ की ऊपर छापेनकी जरीकी चूंदरीनकी लहरी पानकी, घनकनकी, आभरनकी शोभा ओढ २ सेलासालदुशाले, फूलनकी माला रूपकी आला रिझावनेकूं नंदलालाकूं ज्वालासी तैयार शृंगार वनदेवीने तैयार करी, मुख्य गोपी ललिता, विशाखा, चित्रा, चंपकलता (वल्लिका), तुंग, विद्या, इंदुलेखा, रंगदेवी, सुदेविका रही ऐसे शृंगार होचुक्यो तब श्रीराधाकृष्ण रासस्थलकी कुंजमें पधारे, तब सब गोपीजन जहांते तहांते ऊपरसों, नीचेसों, इतसों, उतसों, बाहरसों, भीतरसों, पूरवसों, पश्चिमसों, दक्षिणसों, उत्तरसों, भुमोक, चारों ओरतें आयके विराजी विजुरीसी उतरी गुजरी जोरे रूपनकी गुदरी, पहरे भये मुदरी धीरे २ रमकती मुखचंद्रसूं दमकती आय विराजी (कुंजस्थलवर्णनम्) कुंजको सोनेको परिकोटा बडो भारी योगमायाने सम्हारो सोनेको दर्वाजो है, स्फटिककी चोखट है, मूंगाकी देहरी है, पन्नाकी मेहराब है, लाल मणिनके मरगोल है, नील मणिनके टोडे हैं, वे पुखराज मणिनकी ऊपरकी कुरसी हैं, वे हीरानके कटहरा हैं, चुलीके मुक्ता है, वे सोनेनके किमार हैं, हीरानकी कीला लगी हैं, वे जडाऊ कडा लगे हैं, वे द्वारेनपै मोतीनकी वंदनवारें हैं, सुराई द्वारनकी, आमनके पत्ते आमकी वंदनवार हैं, वे फूलनकी वंदनवार है, जरीनकी थैलीनकी वंदनवार हैं, वो सुलतानी वनातको दरवज्जेमें पंखा बंध रह्यो है, वो जामें कलाबत्तुकी डोरी बंधी है, तामें मोतीनके गुच्छा लटके हैं, वे सुन्दर ऊपर गोखा हैं, तामें सुन्दर जालीनदार किवाड सोनेनके हैं, वे हरे लाल पीरे कारे सोसनी परदा परे हैं, ता दर्वाजेपै गोपी देवांगनासी ठाडी हैं, जिनके हाथनमें वेत्र है छडी है, फूलनकी छरी है, झुकी भई वे सुन्दर सूहो चह २ चये रंगके दामन है, हरी जरीकी कंचुकी सोसनी चोटीनमें फूलमाला तिनके गुथ रही है, मांग सिंदूरनते भरी है, मांगफूल सीसफूल झिवझिवी हार हमेल हाथनमें चूरी, सांकडा पावनमें पहरे, जूथनके जूथ टोलीनकी दरवाजेनपे ठाडी है, जामें कुंजके भीतर बडी भारी पोरी है, तामें कांचनकी भूमि है, वे स्फटिक मणिकी भीत है, नील मणिनके किवार हैं, वे सुन्दर, पन्नाकी, मोरकी नाडकी, तोताकी नाडकी हाथीके नाडकी सिंहके मुंहकी जडाउ टोले लग रहे हैं, वे सुन्दर सामई तीन दरवाजे हैं, मूंगानकी देहरी है, सोनेनके किवाड है, मरकत मणिनके चौखट है वे हरी जरी लालजरी सोसनी जरीके परदा पर रहे हैं, कोई बंध रहे हैं, कोई खुल रहे हैं काऊकी कलाबत्तुकी डोरी है, काऊकी रेशमीमें कलाबत्तुके गुच्छा लग रहे हैं, जरीनकेमें तो मोतीनके गुच्छा लटके हैं बडी २ कांचनकी भीतनमें जड रहे हैं, वे ऊपर सोंटनमें कांचनके काम हो रहे हैं, वे तने चंदोवा तन रहे हैं जालजरीके तो बीचके होद हैं हरी जरीके हांसियां हैं कारचोबीनकी मगजी लग रही हैं, वे सुराईदार मोतीनकी झालर लटके हैं, वे धरतीनमें टाटबाफीनके काम होय रहे हैं, ऐसे गलीचानकी फरस होय रही है, झाड लालटेन हांडियां दिवालगीरी न्यारी होय रही हैं, मानो दूसरे पूनोंके चंद्रमाकी चांदनी छिटक रही है, ऐसी तो कुंजनमें शोभा होय रही है, ताके भीतर बडो भारी चौक है, , चोखूंटीतामें नील मणि हीरानको जाल कढ रह्यो है, ताके चारो ओडी नरोयकेकी भीतें; लालमणिनके पन्नानकें कंगूरा हैं, तामें नीलमणि, ताके ऊपर चारों ओडी दरदल्लान तिनके मूंगानके तोडा हैं, हीरानके खंभ हैं पन्नानकी मेहराब हैं, पीत मणिनकी ऊपर कुरसी है, नीलमणिनके टोडे हैं पुखराजनके कटैरा है पिरोजानके मुक्ता हैं वे द्वारनपै परदा परे हैं, वे कलाबत्तुनकी डोरी तिनमें मोतीनके गुच्छा लटके हैं ऐसे चारों ओडी दल्लान है ऊपर चौवारे, तिवारे, अटारी, तिवारी, बारह द्वारी, दुखने, तिखने, चौखने, पचखने, सतखने, दुमैहला, तिम्हैला, चौम्हैला, पचम्हैला चले गये हैं, बराबर २ ऊपर सीसमहल, रंगमहल, मोतीमहल, मुकुटमहल, माणिकमहल बन रहे हैं, बराबर २ बँगलानपै सोनेनके जडाऊ कलश चढरहे हैं, वे ध्वजा पताका

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

फहराय रही हैं, तिन दलानकी धरतीनके ऊपर बैटाट वाफीनकी गलीचानकी ऊपर फरस होरही है, तिनके ऊपर मखमलनके गुदगुदे गद्दा बिछे हैं तिनपै वे सुपेदी खासानकी चद्दर बिछ रही है, ताके भीतर चलकर श्रीप्रिया प्रियतम श्रीराधा कृष्णकी रास समय शृंगार करि विराजवेकी रासस्थलकी निकुंजहै, ताकी चुन्नीनकी तौ धरती है, ताकी स्फटिककी भीतहै, नीलमणिनके फूल कढ रहे हैं द्वारेनमें पन्नानकी चौखट हैं, मरकत मणिनके सरदलहैं, मूगानकी देहरी है, पुखराजनकी सुहावटी है, सोनेनके किवाड हैं, हीरानकी कील हैं, पन्नानके फूल हैं, द्वारनमें कारचोवीनके कामके मखमलके परदापरे हैं वे सुपेदी बिछ रहे हैं, ऐसी कुंज झलमल २ कर रही है, तापै पश्चिम ओर भीतके नीचे, चार सोनेनके वांस ताके ऊपर एक बडो चंदोवा तन रह्यो है सुराईदार मोतीनकी झालर लटकै है, ताके नीचे बीचमें, जडाऊ सोनेनको कामको नाहरके मुँहको, बडो भारी सिंहासन है, ताको कांचको पीठका है, वोह सुन्दर जरीको वस्त्र है तामें जमुनी किरनकी झालरहै चारों ओर लग रही है, वे सुन्दर टाटवाके कामकी बडी भारी गद्दी बिछ रही है, ताके पीठको सुलग्यो है बडो भारी लाल मखमलकी बन्नात जामें लगरही है, वे सुन्दर कलाबत्तुकी डोरीमें जडाऊ झब्बा लटके है, ऐसो तकिया लगरह्यो है अगल बगलके तकिया न्यारे लगरहे हैं, गोपिनको समाजमें वा सिंहासनके अगाडी एक छोटी गोल मटोल बादामीसी राजकुमार पहरे मोतिनके हार, वहारसूं सजे नख शिखसूं विराजे हैं, बांई ओर नख शिखसूं बनीठनी श्रीवृषभानुनंदिनीजी विराजी हैं, एक चरण दांयकू श्रीकृष्णचंद्रने वा चौकीपै धर राख्यो है, जाकी शोभा तुम्हारे आगे कहा कहूं; मोको तौ मालूम परे है, चरण नहीं है, मानो नील चिह्न है, वो चोकी नहीं मानो चन्द्रमा हैं, वो सुपेदी नहीं मानो चांदनी हो रही है, वामें तो तारेनकी शोभा है, यहां कामदार सखीनकी शोभा है, अथवा कुंज नहीं मानो सरोवरहै, तामें गोल जडाऊ चौकी नहीं है, मानो कृष्णरूपी सूर्यके उदयते फूल्यो कमल है तापै कृष्णको श्याम चरण नहीं है मानो भौंरा बैठ्यो मकरंदको आस्वादान कर रह्यो है अथवा स्फटिक कटोरापै कस्तूरीके चंदनको गोला धरो है, अथवा मोकूं तौ ऐसो मालूम परै है, मानो उदयाचलपर नील मेघकी कोई घटा है, अथवा वृंदादेवी नायिकाकी नील मणिकी जडाऊ टीकी है, फेर वा सिंहासनके पीछे वो सुन्दर जडाऊ दंडी लगी, वो सुराईदार मोतीनकी झालरदार कलश झलमल करै, ऐसो श्वेत छत्र लिये ललिताजी ठाडी है, इत उतमें विशाखा १ चित्रा २ सोनेकी दंडीदार चमर लिये ठाढी हैं, चंपकलता ३ चरण दाब रही है, तुंगविद्या अनाडी लिये ठाडी है, इंदुलेखा खमासीमें ठाडी है. रंगदेवी सुदेवी दोनों ओर मोरछल लिये ठाडी है, और वृंदादेवी सोनेकी सोटी लिये द्वारसूं लगी ठाडी है, और रत्नप्रभा, रत्नकला, सुभद्रा, भद्ररेखा, सुमुखी, धनिष्ठा, कलहंसी, कलापिनी, माधवी, मालती, चंद्ररेखा, कुंजरी, हरिणी, चपला, कुरंगाक्षी, सुचरिता, मंथलीमणि, कुंडला, चंद्रिका, चंद्रतिलका, कंदुकाक्षी, सुमंदिरा, रसालिका, तिलकिनी, सौरसेनी, सुगंधिका, गमिला, कामनगरी, नागरी, चित्ररेखा, मंजुमेघा, सुमधुरा, सुमध्या, मधुरेक्षणा, तनुमध्या, मधुमंदा, गुणवती, सुसंगता, चित्रांगा, मोहिनी, मदनावंशा, कलकंठी, शशिकला, कमलमधुरा, राका, कंदर्पसुन्दरी, कमललालिता, प्रेममंजरी, कावेरी, चारुकवरी, सुकेशी, मंजुकेशिका ऐसी प्रकारकी गोपी वा समाजमें हजारन २ खवासीमें कोई अतरदान, कोई पानदान, कोई गंगाजली, कोई जलझारी, कोई चन्दनदान, कोई पीकदान अपने २ हाथमें लिये ठाडी हैं, ताके अगारी बिछावटपै बांई दांई ओर कोई माला गूंथ रही हैं, कोई बाजेनके सुर मिलाय रही हैं, कोई अलाप भर रही हैं, कोई पान लगाय रही हैं, कोई अतर लगाय रही हैं, कोई गायरही हैं, कोई कृष्णको रिझायरही हैं, तो सिंहासनके अगाडी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एक कल्पतरु है, ताकी अद्भुत छबि है, राजा मैं तेरे अगारी कहा अद्भुतता वा कल्पवृक्षकी वर्णन करूं हे राजा! तिनमें अधिक एक कल्पतरुकी जगमगाहट ज्योति लगरही है, पत्र फूल फलनसों हीरा मणि मोती लगरहे हैं, तिनके मध्य गन्धर्व, किन्नर, अप्सरा बलिहार करैं हैं श्रीकृष्णके श्रम दूर करवेकूं अमृतपुष्प गुंहीमुंही वरष्यो करैं हैं ऐसो कल्पतरुहै, वाकी शाखानमें दलनमें फूलनमें फलनमें राधा-कृष्णको प्रतिबिंब झलकै है, जाहि देखि २ सखीगणके मन ललकैं हैं, और यमुनाजलमें झलकै ताके नीचे कोमल मणिमय भूमि सोहैहै, सो भक्तनके मनको मोहै है वैकुंठ कहूं तौ ताहूसों अधिक सोहै, हे राजा! वा भूमिमें सब प्रतिबिंब दीखे हैं ऐसो मालूम पडे है, वा भूमिमें दूसरो वनहै, जब यह सब तयारी होचुकी तब श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद जगवंद यशोदानंद श्रीविहारी गिरधारीजीके पास आयकैं वृंदादेवीने अरज करी महाराजाधिराज अब सब सखीवृंद आयके मुखचंद्रको चकोरीसी निहार रही हैं कि कब महाराज रासविहारी रासकी तैयारी करैं, और हमारे मनोरथ भरैं, तब श्रीकृष्णचंद्रकी रासेश्वरी वृषभानुनंदनीकी ओर कटाक्ष कर पटको कटिसों कस, हंसते थेइ थेइकर छमाकदेसी कूद रासमंडलमें ठाडे भये, ता पीछे सब गोपीगण रासमंडलमें आय ठाडी भई, अब मंडलमें कृष्णकी भुजा तौ गोपीनके कंठमें, और गोपी श्रीकृष्णकी कटिके पीछे करसों कर मिलाय ठाडी भई, उनकी ऐसी शोभा भई मानो श्रीवृंदावनने अनेक रंगकी माला पहरी है, दोहा—वृंदावन वानक बन्यौ, भँवर करैं गुंजार । दुलहन प्यारीराधिका, दूलहनंदकुमार ॥ या प्रकारसों सहस्रों गोपियें यूथ बांध श्रीकृष्णको घेरि ठाढी भई, कृष्णकी कान्ति राधेपर और राधाकी कान्ति कृष्णपर पडी, ता दिनसों 'हरे कृष्ण' प्रसिद्ध भये, गुलाबी कृष्ण, धौरे कृष्ण, कोई नहीं कहै है, देवता कृष्णकी शोभा देख बोले देखो तौ प्यारेसो मुकुटकी लटक, पीत पटकी चटक, भौंहनकी मटक, तुर्राकी चमक, कलँगीकी दमक, कुंडलकी झमक, शीरपेचकी तमक, तब देवी राधाजूकी शोभा देख बोलीं, देखो नीलाम्बर चंद्रिकाकी चटक, भ्रुकुटीनकी मटक, नासामोतीकी लटक, हमारे मनरहे अटक, जासों मिटै भटक, देवता बोले हमें राधाजूकी छबि नहीं दीखै है, देवी बोली जो रासलीलाकूं सखीभावसों कहै सुनै वह रास पंचाध्यायीके श्रवण कीर्त्तनको अधिकारी है, जगत्पूज्य श्रीराधा कृष्णको विहार सब श्रुतीनको सार, आभूषणमें जैसे हार, यामें जो कोई उपजावै विकार, तौ बडो भारी होजाय विगार, तासों सखीभाव करिकै अधिकारी है, जो कोई कहै हम पुरुषनको स्त्री बनाओहो तौ सखी नाम तौ बडो सुन्दर है यामें आड कहाहै, प्रातही सौदागर साहूकार मालिन यह मनावै है, भाई कोई सखीके लालको हाथ लगियो, मंगता कहैं है, प्रभात कोई दाता सखीको भेंटियो, यासों सखीभावसों सुनैं, जासमय कृष्ण ठाडे भये आकाशसों पुष्प वर्षे, जड जे चैतन्य होयगये; डंका उछर उछर नौबत नगारेपै परनलगे, सारंगी, तंबूरासितार, बीन, करबीन आपही बजन लगे, नृत्य होन लगो वा समय वह चरणनकी धरण, भुजानकी कँपन, मुसुक्यानकी करण, ताननकी भरण, वह भ्रुकुटीनकी चढन, वह कटाक्षनकी करण, कमरनकी लचकन, कटाक्षनकी नचकन, अंगनकी चमकन, वह एडीनकी पटकन, भ्रुकुटीनकी मटकन, तालनकी चटकन, तानकी गटकन, मोतीनकी लटकन, चोटीनकी सटकन, पटकनकी झटकन, अलकनकी अटकन, पायलनकी खनकन, चित्तमनकी अटकन, देखि मिटे भटकन, कुचपटनकी उडन, कुंडलनकी डुलन, अलकनकी बिथुरन, पसीनानकी उलझन, फूलनकी बरसन, अंगनकी परसन, आनन्दकी सरसन, हृदयकी हरसन, देवतनकूं तरसन, रसिकनकूं सुख दरसन, हे परीक्षित्! वह रंगीली गोपिनके चरणनको चलायवो, भुजानको कंपायवो, दंतनको विकसायवो, मुखनको मुसिकायवो, भ्रुकुटीनको चढायवो, आनं-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दको बढायवो, मुखारविंदनको मटकायवो, चोटीनको छिटकायवो, अधिक शोभित ह्वै रह्यो है वासमय कृष्णकी शोभामें, भ्रुकुटीकी लटक, पीतपटकी चटक, भ्रुकुटीकी मटक, तुर्राकी चमक, अलकनकी हिलन, दंतनकी खिलन, मत्तगजराजकीसी चलन, केशरको तिलक भाल, कंठमें बनमाल, मस्तकमें वेंदालाल, मुकुटमें जडे हीरालाल, अधर बडे विंबलाल, वह वासमय गोपीनकी सजन, क्षुद्र घंटिकाकी बजन, मोती मालनकी हलन, पटुकाकी खिचन, भ्रुकुटीकी इचननचन, वीडाकी रचन पञ्चरंगी चीरा चिल्लेदार तामेंतै कारे सटकारें, समसुधारे छूटके घिटके छल्लादार, आरसीसें कपोलनपें छिटकरहे है, लटक रहेहै, घूमकै झोटा खाय रहे हैं जुटीदार भौंहनपें घूमरहे हैं याप्रकार गोपिनके संग नृत्यकर आप आय सिंहासन पर विराजे योगमाया वृंदादिकनने पवन करी, पानको वीडा खवाय नवीन माला पहराय चरण सहराय शिर नाय विनती की, जै हो ब्रजराज आज सब समाज आपकी शरण है, महाराज रास अकेलेको भयो, परन्तु यहां बडी बडी गुणिजन गोपी जुरी हैं रमायूथकी, माधवी यूथकी, विरजा यूथकी, ऊर्ध्व वैकुंठवासिनी यूथकी, लोकाचल वासिनी यूथकी, ललितादिक सब गोपी वाट देखें हैं, कि न्यारी न्यारी न्यारे न्यारे गुण दिखावैं; सो आप कोई पहले तान बोलो, तब सब बोलैं, तब कृष्णने कही मेरी या समाजमें कहा चलै ह्यां तौ प्रियाजीकी अधिकताई है, तब प्यारीजी बोलीं आपही बोलो, तब आपने वृंदासौं कही जब लहरदार बाजे बजे है, तब गुणियनको पांव उठै है, सो अब वासमय बाजे बजे, दोहा—जगमें सब सुरसात हैं, बाजे साढे तीन। खाल तार और फूक पुनि, अर्द्धताल सुरहीन॥ खाल नगारो ढोल ढफ, और पखावज जान॥ ताल तंबूरा बीन है, वोहरवाव बखान॥ फूक नफीरी बांसुरी, सुरनाई करनाय। ताल खंजरी झांझ सब, बाजे दिये बताय॥ तथा ढफ, मुरचंग, बीन, रवाव, मृदंग, डिमडिमि, दायरा, तबला, सारंगी, सितार, झालर, मजीरा, डमरू, मुरली, वंव, बांसुरी, बीन, करबीन, राग, जिहाज, महुवर, मृदंग, तम्बूरा, ढोलक, ढोल, सुरमंडल, सुरबीन, सहनाई, सुरनाई, सुरहीताल, अडवी, वजवी, दुंदुभी, नस्तरंग, नफीरी, खंजरी, खटताल, जलतरंग, जील, करनाई, कानूरकिन्नरी, सारंगी, नफीरी, चंग, उपंग, सुरनदी, धुनछाई, रुंज, ख्याल, पूंगी इत्यादिक अनेक बाजे एक स्वरसौं बजन लगे वा समय शंखनके शब्द डफनकी, घोर दुंदुभिनके शोर, मुरली मुरचंगकी घोर, सिताराम सहनाईको सुरन, नगारनकी घुरन, झांझ झालरनकी झंकार, और शंखनकी भंकार, मृदंगनकी परन, बीननकी बजन, खंजरीनकी घुमकन, तबलानकी गुमकन, डौरूनकी डमकन, मजीरानकी खमकन, करतालनकी कटकन, तानकी गटकन, सुरन मंडलके सुरन, सुरबीननकी झुरन, सितारकी इचन, सारंगीनकी खिचन, मुरलीकी बजन, गोपिनकी सजन, फूलनकी वर्षन, देवनकी हर्षन, आनंदनकी हरसन, सुरनकी सरसन, गंधर्वादिकनकी तरसन, तथेइ करकै चरणकी धरण, बाजेनकी परन, मुकुटनकी लटकन, अलकनकी छिटकन, पटुकाकी कसन, बाजुनकी फसन, गजानकी गसन, मनकी फसनसैं आनन्दसैं आप रासमण्डलमें आय अंगकूं झुकायकै तान बोले " आ आई आति आआ अति अइ अति आ आति आ आति आआ। आतिज्योत्स्नावलांनं नटदिव पुलिनं राधिके पश्य आरे। आ आई आति आ आ नटति च विपिनं मंदवातेरितं आ। आ आ आ एति कृष्णः पुनरिह निगदन् सालसांगं ननर्त॥" या प्रकार श्रीकृष्णनै गायकर ऐसी अद्भुतता करी कि सबही वस्तु तहां श्यामवर्ण दीखनै लगी वासमय दोहा—हंस हरन खंजनबका, सारस सरस विलास। सखी पुष्पवृंदा विपिन, भये श्याम सुखरास॥ ऐसी अधिकता कृष्णकी देख सबनै बलिहार बलिहार कर पुष्पनकी वृष्टि कीनी, राई नौन लीनौ, फिर आप विराजे, तब सखिनने राधेजीसौं विनती कीनी कि आप तौ यूथेश्वरी हो, हमकूं कृतार्थ करिवेकूं कछु श्रीमुखसौं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उच्चारण करो. तब प्रियाजी उठीं रासस्थलमें आय मुख मुसकाय चरण चलाय मेघ घटामेंसै विजुरी-कीसी छटा छूट छमाक उतारकै गान सहित संगीतकी गिटकिरीकी तान बोली "आई आइ अने प्रियहासश्चंद्रति कुंदति हंसति आरे। क्षीरति हीरति हारति हारे आइ अआ इति नृत्यति राधा ॥" वा समय प्रियाजीके शरीरसैं ऐसी कांति निकसी कि सब पीत होजाय दोहा—कोकिल भृंग कुरंग पिक, चातक वृक्ष सफूल। वृंदावन और मोर सब, श्वेत भये सुखमूल ॥ वा समय राग रागिनी अपनी देहधार आये भैरो राग, मालकोश, हिंडोल, मेघ, श्रीराग, दीपक, रागनी भैरवी बंगाली मधुमाधवी सिंधवी टोडी गौरी गुनकली खम्माच रामकली परमंजरी ललित देश बिलावल नट कान्हरो केदारो कामोद धनाश्री आसावरी मारू वसन्त मालसिरी भूपाली गुर्जर देसी मलार अथ राग जंगला सूहा अडानो सारंग सोरठ पूर्वी झंझोटी विहाग विभास विहागरो वरुवो सोहनी काफी इमनी देवगिरी देवगन्धार वसन्त कामीर सुखी जैजैवंती कारी कल्यान जेतश्री दोहा—कहै रागिनी कहांलों, जिनको नाहिंन पार। विरहमयी सब जानिये, इनको बहु विस्तार ॥ या प्रकारसों कृष्णचंद्र रासविलास करत भये तासमय गोपिनके समूहसों शोभायमान रासको उत्सव योगके ईश्वर श्रीकृष्ण रचत भये, मंडल रूप करिके ठाढी भई दोदो गोपीनके बीचमें अपने अनेक रूप धार कंठमें गलबांही डारि गान करत आपहू ठाडे भये ॥ ३ ॥ जिन श्रीकृष्णचंद्रको सब गोपी "प्यारो मेरे पास है" वह कहै हैं "प्यारो मेरे पास है" या प्रकार अपने अपने पास मानत भई रास देखिवेकी इच्छासो देवता अपनी स्त्रीनकूं लेके आये, तिनके विमानसूं आकाश छाइ रह्यो है ॥ ४ ॥ देवतानके आए पीछे नगारे बाजतभये, फूलनकी वर्षा होतभई मुख्य मुख्य गंधर्व अपनी अपनी स्त्रीनकों संग लैके श्रीकृष्णके निर्मल यशको गावत भये ॥ ५ ॥ प्यारे श्रीकृष्ण सहित जे स्त्री हैं तिनके कंकण नूपुर किंकिणीनको रासमंडलमें बडो झनकार शब्द होतभयो ॥ ६ ॥ जैसे दो दो सोनेके मनियानके बीचमें एक एक नीलमनि सुंदर लगै है तैसे वा रासमंडलमें दो दो गोपीनके बीचमें एक एक भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अति सुंदर लगतभये ॥ ७ ॥ पांवनकी धरनि, भुजानकी हलनि, मुसिकानिसहित भ्रुकुटीनकी चढनि, कमरनकी लचकनि, कुचनकी और वस्त्रनकी हलनि, कपोलनपै कुंडलनकी हलनि, तिनसूं पसीना मुँहपै आयगये चोटिनकी नारेनकी गांठि जिनकी खुलगई, ऐसो श्रीकृष्णचंद्रकी वधू गोपी श्रीकृष्णचंद्रकूं गावत जैसे मेघमंडलमें विजुरी लगै है तैसे सुंदर लगत भई ॥ ८ ॥ नाना रंगनसूं कंठ जिनके रंगिरहे रतिहीं जिनको प्यारी श्रीकृष्णको स्पर्श जिनको होय तासूं बडो जिनके आनंद वे गोपी नृत्य करत ऊंचे स्वरसो गावत भई जिनको गीत या विश्वमें छाय रह्यो ॥ ९ ॥ कोई गोपी मुकुंद श्रीकृष्णके संग उच्चस्वरनकी आलापनकी गतिनकूं उठावत भई, कैसे स्वरनकी जाति लीनी, श्रीकृष्णने जो स्वर उठायोहै तिनमें मिली हैं तब श्रीकृष्ण प्रसन्न होयके स्याबास २ ऐसे बडाई करतभये, ताते स्वरनकी जाति लीनीही तिनकूं ध्रुव तालमें बांधिके गावत गोपी प्रशंसा करत भई तब वा गोपीको श्रीकृष्ण बहुतमान देतभये ॥ १० ॥ कोई गोपी रासमें श्रमित हैके पासमें गदाके धारण करनवारे श्रीकृष्ण ठाढे हैं तिनके कंधाको हाथते पकरत भई, कंकण चूरी फूलनके हार जाके शिथिल हैगये, यहां गदा वंशीही जाननी काहेते गोपियोंके हृदयको चूरकरै है ॥ ११ ॥ तासमय रोमांचित है एक गोपी कमलके तुल्य सुगंधिवारी आय चंदनसों चर्चित श्रीकृष्णकी भुजाको अपने कंधापै धरिके चुंबन करत भई ॥ १२ ॥ नृत्यसूं चलायमान कपोलनकूं श्रीकृष्णके कपोलनते लगावती गोपीकूं श्रीकृष्ण बीरीकी जूंठन देतभये ॥ १३ ॥ नूपुर कन्धनीसै शब्दायमान कोई एक गोपी नृत्य

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करत गावत श्रमको पाय पास ठाढे श्रीकृष्णको मंगलरूप हस्तकमल अपने स्तनपै धरतिभई[1] ॥१४॥ लक्ष्मीकूं अत्यंत प्यारे अच्युत श्रीकृष्णचंद्रकूं सुंदर पति पाइके तिनकी भुजानसूं कंठमें गलबांहि डारिके गोपी श्रीकृष्णको गावती विहार करतभई ॥ १५ ॥ वा रासमंडलमें स्त्रिन सहित गंधर्व और किन्नरादिक जो बाजे बजाय रहेहे और गवैया बन गाय रहेहे वे सब रासरसमें मोहित होय नृत्य करन लगे वासमय कंकण और नूपुर बाजेको कार्य और भौंरा गवैयाको कार्य करै है रासमंडलमें व्रजवनिता कृष्णके संग नृत्य करती भई शोभा पाय रहीही तिनके काननके कमल अलकनसों युक्त कपोल और प्रस्वेदकी बूंदनकी शोभा मुखपै छायरही नृत्य समय जो फूलनकी माला गिरैंहीं तिनसौं ऐसी शोभा होयरही मानो तालनकी गतिसौं प्रसन्न होय केश हलाय चरणनपर फूलनकी वर्षा कररहे हैं ॥१६॥ या प्रकार लक्ष्मीके पति श्रीकृष्ण आलिंगन, हाथनको स्पर्श स्नेहभरी चितवनि बडे विलास हाससूं जैसे बालक अपनी परछांईसूं खेलै है, तैसे व्रजसुंदरीनके संग रमण करत भये ॥ १७ ॥ हे कुरूद्वह अर्थात् कौरवनके वंशको आनंदको देनवारे राजा परीक्षित ! तिन श्रीकृष्णके अंग स्पर्शके आनंदसूं विवश इंद्रिया, और खिसिली मालागहनेवारी व्रजकी स्त्री गोपी केशनकूं शरीनकूं कुचनकूं वस्त्रनकूं समारवेकूं न समर्थ होतीभई ॥ १८ ॥ श्रीकृष्णकी रासक्रीडा देखिके आकाशमें देवांगना कामसूं पीडित हैके मोहित होत भई, तारागण सहित चंद्रमा आश्चर्य मानके चलिवो भूलिगयो तब और ग्रहभी जहांके तहां रहत भये तासूं राति जो बढिगई याहीसो वो रात्रि छः महीनाकी होती भई तिनमें सुखपूर्वक विहार करतभये ॥ १९ ॥ जितनी गोपनकी स्त्री हीं तितनेही अपने रूप करिके आत्माराम भगवान् श्रीकृष्ण गोपिनके संग लीला करत भये ॥ २० ॥ अत्यंत विहारसूं श्रमको प्राप्त भई गोपीनके मुखपें पसीनाकों देखि करुणाकों प्राप्त हो श्रीकृष्ण प्रेमसो सुखके देनवारे अपने हाथसूं विनके मुख पोंछत भये ॥ २१ ॥ वे मानवती गोपी श्रीकृष्णचंद्रके हस्तकमल नखस्पर्शसौं महासुख पाय प्रकाशमान सुवर्णके कुंडलसो कान्तिमान् कपोल और रसभरी चितवन और मुसिकानि युक्त श्रेष्ठगुण भरे श्रीकृष्णकी वे पूजा करके सुंदर चरित्र गावति भई ॥ २२ ॥ मर्यादाको उल्लंघन करनहारे श्रीकृष्ण जब रास विलास करते २ थकित भये तब तिन गोपिनको संग लैके श्रम दूरि करिवेके लिये जलमें विहार करवेके लिये श्रीयमुनाजलमें प्रवेश करत भये कुचनकी केशर जामें लगी, अंगसंगसुं रिगडी मालाकी सुगंधिसूं मोहित भौंरा गंधर्वनकी तुल्य गावत पीछे २ चले जाय हैं, जैसे हाथिनीनकुं संग लैके हाथी जलविहार करिवेको जाय है ॥ २३ ॥ अंग अर्थात् हे राजन् परीक्षित् ! इत उतते जलमें स्त्रीनकुं छींटा

---

१ प्रश्न—स्तनोंपर श्रीकृष्णका हाथ गोपियोंने क्यों धारण किया ? उत्तर—इसका आशय यह कि जैसे भगवान्ने ध्रुवादि भक्तोंके ऊपर कृपाका कर स्पर्श रखकर जन्म मरण छुटाया, इसी प्रकार हमारे ऊपर हाथ रखकर जन्म मरणसै छुटा दैं पुरुषकी शिरपर और स्त्रीकी स्तनोंपर ममता अधिक होती है, इस कारण स्तनोंपर हाथ रक्खा ॥ २ जा समय जल विहार करते समय व्यंग वचन बोले कि " उत्तिष्ठारात्तरिमें तरुणि मम तरौ शक्तिरारोहणे का मुग्धे प्रस्तौमि चारुं तरणिमथ रवौ का वधूर्गन्तुमीष्टे । वार्तेयं नौप्रसंगे कथमपि भविता नावयोः सङ्गमायां वार्तापीति स्मितास्यं जितगिरमजितं राधयाराधयामि ॥ " हे तरुणि उत्तिष्ठारात् इत्यादि वाक्यको व्यंग्यार्थ सुनकै प्रसन्न मुख हो जित अजितकी वाणी राधाने जीतली है उनको मैं आराधन करूंहूं (आरात्) समीपमें (तरिः) नौका है (अस्मिन् तरौ) उसमें (आरोहणं कुरु) चढो यह तौ कृष्णने कही तब राधा बोली (तरौ आरोहणे मम का शक्तिः) वृक्षके चढवेमें मेरी कहा शक्ति है ? कृष्ण बोले हे मुग्धे (तरणिं प्रस्तौमि) तुम्हें तरणि कहूंहूं. राधा बोली तरणि नाम सूर्यको है सो (रवौ का वधूर्गन्तुमीष्टे) सूर्यमें कौनसी वधूके पास जायवेकी इच्छा है कृष्णने कही (वार्तेयं नौप्रसंगे) यह तौ नावप्रसंगको वार्ता है राधिका बोली (नावयोः संगमायां) हमारे आपके नूतन सङ्गकी वार्ता कैसे न भई, या प्रकार राधासौं जीतेभये कृष्णको आराधन करूं हूं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देय हैं, श्रीकृष्णकूं देखिके प्रेमते हँसे हैं; भगवान्‌को जलतें भिजोमें हैं विमानमें बैठे देवता स्तुति करैं, पुष्पनकी वर्षा करैं, हाथीकी तुल्य जिनकी लीला ऐसे आत्माराम श्रीकृष्ण जलमें अथवा गोपीनके मंडलमें विहार करत भये ॥ २४ ॥ जल विहार करे पीछे जलके स्थलके पुष्पनकी सुगंधी भरी पवन जिसके सब दिशाओंमें व्याप्त होरही है ऐसे जो यमुनाजीके बागमें भौंरा गोपिनके संग श्रीकृष्णचंद्र विहार करत भये जैसे मदस्रावी हाथी हथिनीके संग विहार करैं हैं ॥ २५ ॥ या प्रकारसैं सत्यसंकल्प भगवान् चंद्रमाकी किरणनसों शोभायमान वा शरदऋतुकी रात्रिमें साहित्य काव्यनमें जो करवेकी विधि लिखी है वह स्नेहभरी गोपिनके संग वीर्यको धारण कर करते भये जितनी गोपी तितनेही श्याम उतनेही कुंजनमें फूलनकी शय्यापर पौढे हँसते हँसाते कोमल बातें करत जांय हैं ॥ २६ ॥ राजा परीक्षित् प्रश्न करै है हे महाराज शुकदेवजी ! धर्मके स्थापन करिवेके लिये और अधर्मके नाश करिवेके लिये जगत्‌के ईश्वर श्रीकृष्ण भगवान् परिपूर्ण रूप करिके अवतरे हैं ॥ २७ ॥ और धर्मकी मर्यादानके करनवारे रक्षा करनवारे श्रीकृष्ण बिरानि स्त्रीनको स्पर्श करनो यह अधर्म कैसें करते भये ॥ २८ ॥ पूर्णकाम यादवनके पति श्रीकृष्ण निंदित कर्म कैसे करत भये याको कहा अभिप्राय है हे सुंदर व्रतवारे शुकदेवजी ! यह हमारो संदेह दूरि करो ॥ २९ ॥ यह वचन श्रवण करिके श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् ! सामर्थ्यमानकूं धर्मको उलांघिवो देख्यो है और सामर्थ्यमानकूं साहसहू देख्यो है जैसे अग्निमें बुरी भली वस्तु डारो ताकूं जरायदेइ वाकूं दोष नहीं लगै है ऐसे तेजस्वी पुरुषनकूं दोष नहीं लगै है ॥ ३० ॥ सामर्थ्यवान् पुरुषनके करे कर्मकूं मनसोहू न करे, और जो अज्ञानते करे तो मारो जाय, जैसे रुद्र विना और कोई समुद्रके विषकूं पीवे तो मारोजाय ॥ ३१ ॥ ईश्वरके वचनहीको सत्य माने, और विनके आचरणकूं कहूं सत्य मानै, जैसो उनने कह्यो है ताहिके अनुसार बुद्धिमान् पुरुष करे, राम कृष्ण दोऊ अवतार भये है, रामचंद्रने जैसो कह्यो तैसोही करो है याते विनको करनो कहनो दोनों करै, श्रीकृष्णने गीतामें जो कह्यो है ताय करै, और जो विनने लीला करी है तिनको न करे, किंतु ध्यान करै ॥ ३२ ॥ हे प्रभो अर्थात् राजन् परीक्षित् ! या संसारमें अहंकार जिनके नहीं ऐसो सामर्थ्यवान् पुरुष जो अच्छो कर्म करे तासूं विनको पुण्य नहीं होय है, और निकृष्ट कर्म करवेसूं पाप नहीं होय है, पुण्य पाप तो देहमें अहंकारके वशसूं लगै हैं अहंकाररहित पुरुषकूं कछु दोष नहीं है ॥ ३३ ॥ जब और महात्मानकोहू पाप पुण्य नहीं लगै हैं तब समस्त प्राणी पशु पच्छी मनुष्य देवता जीव इनके ईश्वर श्रीकृष्णकूं पुण्य पाप नहीं लगै है यामें कहा कहनो है ॥ ३४ ॥ जिनके चरणारविंदके पराग अर्थात् मक-

---

१ अर्थात् आपने तीनसें किरोड गोपीनके संग विहार कियो पन आपको विन गोपीनमें वीर्यपतन नहीं भयो है यामें आपको परमेश्वरपनो दिखायो है (भग बिच बिंदु अग्नि बिच पारो । जो राखें सो गुरू हमारो ॥) और यामें कामदेवको दिग्विजय दिखायो है कामदेवको डागके नीचे हैके निकास दियो ॥ २ बडोंकी रीति न करे उसमें पीछे पछताना पडे है, एक राजा रानीने संमति करी कि हमारे यहांभी अनेक युद्ध हुए हैं, ऐसो महाभारत बनवानी चाहिये यह विचार पंडितोंको बुलाकर कहा कि एक हमारे नामकाभी महाभारत बनाओ, परन्तु वोह व्यासजीके महाभारतसे किसी बातमें कमती न होय चाहै बढती होय, नहीं तो तुम्हें देशसे निकालूंगा ब्राह्मण आपसमें सम्मति कर राजाके पास जाय कहने लगे, महाराज ! महाभारत बनानेकी सामग्री सब प्रस्तुत है, सब बातें अधिकही करेंगी, पर एक बात आप बताइये राजाने कह्यो कहा ? ब्राह्मण बोले महाभारतमें द्रौपदीके पांच पति थे, आपकी रानीके उससे अधिक कितने लिखैं सो बताइये और उनके नामवर्णन कीजिये सुनतेही राजाकी बुद्धि लोप होगई, घबडाकर बोला महाराज ! क्षमा करो मुझे महाभारत लिखनेकी सामर्थ्य नहीं बडोंके चरित्रपै शंका नहीं करनी चाहिये ॥ समरथको नहिं दोष गुसाईं । रवि पावक सुरसरिकी नाईं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रंदको सेवन करेते तृप्त हैकै भक्त जन और योगके प्रभावसो संपूर्ण कर्म बन्धन दूर कर मुनीश्वर ज्ञानी बन्धनसूं रहित हैकै अपनी इच्छापूर्वक विचरें हैं, तौ इच्छाकरिके शरीर धारण करनहारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्रकूं बन्धन कहांते होय ॥ ३५ ॥ गोपी और तिनके पतिनके सम्पूर्ण देहधारीनके साक्षिरूप हैकै जो देहके भीतर रहैं हैं, तिन श्रीकृष्णने क्रीडा करिवेके लिये देह धारण करो है यासो श्रीकृष्णमें कछु दोष नहीं आवै है कारण कि सर्वत्र वही रमण कर रहैं हैं बाहर भीतर व्याप्त हैं ॥ ३६ ॥ प्राणीनके ऊपर अनुग्रह करिवेके लिये मनुष्यदेह धारण करिके ऐसी मनुष्यलीला करी है जिन लीलानके श्रवण करेते मनुष्य कृष्णपरायण है जाय ॥ ३७ ॥ ता श्रीकृष्णकी मायामें मोहित व्रजवासी श्रीकृष्णको दोष नहीं लगावत भये अपनी अपनी स्त्रीनको अपने अपने पास मानत भये ॥ ३८ ॥ ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् चार घडी रात्रि रहे श्रीकृष्णके कहेते घर आइवेकी इच्छा जिनके नहीं ऐसी प्यारी गोपी अपने अपने घरकूं आवतभईं ॥ ३९ ॥ श्रीकृष्णचंद्र भगवान्को परम कौतुक व्रजवधू गोपीनके संगकी रासलीलाकूं जो पुरुष श्रद्धापूर्वक श्रवण करैं और कथन करै, वह पुरुष भगवान्में परमभक्ति पायके थोरे दिनमें धीर होयके शीघ्रही हृदयके कामरूप रोगको त्यागै है ॥ ४० ॥

विक्रीडितं व्रजवधूभिरिदं च विष्णोः श्रद्धान्वितोनुशृणुयादथ वर्णयेद् यः ॥
भक्तिं परां भगवति प्रतिलभ्य कामं हृद्रोगमाश्वपहिनोत्यचिरेण धीरः ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे रासक्रीडावर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

अध्याय ३४.

श्रीशुक उवाच-एकदा देवयात्रायां गोपाला जातकौतुकाः ॥
अनोभिरनडुद्युक्तैः प्रययुस्तेऽम्बिकावनम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहैं है हे राजन् परीक्षित् ! एक समय बडे उत्साहसौं व्रजवासी देवीकी यात्रा करिवेके लिये बैलनको जोत गाडानमें बैठिके देवीके वनमें जात भये ॥ १ ॥ हे राजन्! ता वनमें सरस्वती नदीमें स्नान करिके पशुपति महादेवकी भक्तिपूर्वक पूजा करिके अंबिका देवीकी पूजा करतभये ॥ २ ॥ संपूर्ण व्रजवासी महादेव हमारे ऊपर प्रसन्न होय या कारण मधुयुक्त मधुर अन्न गौ ब्राह्मणकूं दान करत भये ॥ ३ ॥ बडे भाग्यवारे नंदसूं आदि लेके समस्त व्रजवासी वा दिन रात्रिकूं जलको आचमन करिके

---

१ मायाकल्पिततादृक्स्त्रीशीलनेनानुसूयिभिः । न जातु व्रजदेवीनां पतिभिः सह संगमः ॥ १ ॥ यह उज्ज्वलनीलमणि-ग्रंथमें प्रमाण है ॥ २ कृष्णचंद्रके ध्यान करिवेको भावनाकी कुंज, भक्तिकी भावना भूमि, ध्यानकी रज, मनके महल, भावनाकी भीत, दास्यताके द्वार दलान, दीनताकी देहरी दिवाल दीपक और दीवट, कीर्तनके किवाड कटहरा कील और कडा हैं, चाहके चबूतरा चौखट चौक चौबारे चित्रसारी, वंदनाकी वंदनवार आसन; आत्मनिवेदनके आरे, विह्वलताके बंगला बाजु और बारोठे बिछावट हैं, श्रवणकी सुबढा सीढी सोठ कंपकी कचहरी कलसा है, रागकी रावटी, रासस्थल तत्वनके तकिया, जिनपै राधी गद्गदताकी गली गलीचा गद्दी, गिलम, रोमाचोंकी रोसनी हैं, समाधिके सिंहासन सुख-सेज है जिनपै चित्तनकी सुपेद चद्दर है तत्वनके तकिया, जिनपै राधिका कृष्ण पैढे हैं चित्तकी चिक है जुगलनाम ड्योढीदार है जो इन दौनोंते ध्यान लगावै वह चित्तरूपी चित्तसूं दर्शन पावै, नहीं तो ना कीर्तन विना पछतावै ॥ ३ परमेश्वरके चरित्र बडे भाग्यसे सुननेको मिलें हैं, बुढिया कथा सुनैकूं बडी कहा सुनीसे गई, पीछेमें कटोरा जातो रहो, दूसरे दिन कथामें न आई लुगाइयोंने कही बुढिया तू कथा सुनने न आई बोली कि मै ना खर्च बहुत पडै है, पहले दिन गई तो कटोरा गया, और सुनूंगी तौ आठही दिनमें थाली लोटे परात सब खो बैठूंगी इस कारण मेरी तौ कथाको दूरसेही दंडवत् है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तीर्थ व्रत करते सरस्वतीके किनारे बसतेभये ॥ ४ ॥ वा वनमें कोई एक अत्यंत भूखो सर्प अकस्मात् आयके नंदरायजीको ग्रसतभयो ॥ ५ ॥ सर्पसे ग्रसित है नंदरायजी पुकारतभये हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! यह वडो सर्प है मोको निगले जाय है हे पुत्र ! मैं तेरी शरण आयो हूं मोको छुडाय ॥ ६ ॥ या प्रकार नंदजीकी पुकार सुनिके हरवराहटसो व्रजवासी शीघ्रही उठिके नंदजीकूं सर्प निगले है ऐसे देखिके सिलगती लकरियानसूं सर्पकूं मारत भये ॥ ७ ॥ सिलगती लकरियानसूं मारो तथापि नंदरायजीको न छोडतभयो, तब भक्तनकी रक्षा करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र वा सर्पके चरणनकी ठोकर मारत भये ॥ ८ ॥ भगवान् श्रीकृष्णके सुंदर चरण लगेसे पाप दूर होय वह सर्पदेहको त्यागिके विद्याधरनके स्वरूपको धारण करतभयो ॥ ९ ॥ प्रकाशमान रूपको धरिके सुवर्णकी माला पहिरे हाथ जोरि ठाढो पुरुषकूं श्रीकृष्ण पूंछतभये ॥ १० ॥ परमशोभायमान अद्भुत दर्शन तुम कौन हो विवश हैके यह निंदित सर्पकी योनि तुमको कैसे मिली है ॥ ११ ॥ यह सुनिके वह सर्प बोल्यो हे महाराज ! सुदर्शन नाम करिके विख्यात मैं कोई विद्याधर हों, संपत्ति और शरीरकी सुंदरतासो गर्वित हैके विमानमें बैठिके दिशानमें विचरत भयो ॥ १२ ॥ एक समय मैंने रूपके मदसों मत्त हैके कुरूप अंगिरादि ऋषिनकी हांसी करी तब विनने मोय शाप दियो तासों मेरी सर्पयोनि हैगई ॥ १३ ॥ करुणावान् ऋषीश्वरनने मेरे ऊपर कृपा करिवेके लिये मोको शाप दियो, जा कारणते त्रिलोकीके गुरु तुम हो तिनके चरणारविंदको स्पर्श करते पाप दूर भये, और जो वे शाप न देते तो तुम्हारे चरण मेरे कहांते लगते ॥ १४ ॥ संसारते डरपिके शरण आये पुरुषके भयके दूर करनवारे तुमको पूछों हौं, हे सब पापनके दूरि करनवारे ! तुम्हारे चरण स्पर्शसूं मेरे सब पाप दूरि है गये ॥ १५ ॥ हे महायोगिन् ! हे महापुरुष ! हे महासाधुनके पति ! हे प्रकाशमान ! हे समस्तलोकनके ईश्वर ! हे ईश्वरके ईश्वर ! तुम्हारी शरण आये मोको आज्ञा देउ ॥ १६ ॥ हे अच्युत अर्थात् अखंडरूप ! तुम्हारो दर्शन करते शीघ्रही ब्राह्मणके शापते छूटिगयो, जिनको नामोच्चारण करेते वक्ता श्रोतानकूं और अपनेनकूं पवित्र करैहै ॥ १७ ॥ तुम्हारे चरणस्पर्शते मैं पवित्र भयो यामें कहा कहिनो है या प्रकार दाशार्हवंशमें भये श्रीकृष्णकी आज्ञा लेके परिक्रमा दे प्रणाम करिके वह सुदर्शन स्वर्गकूं जातभयो, और नंदरायजी कष्टते छूटतभये ॥ १८ ॥ श्रीकृष्णचंद्रको वैभव देखिके आश्चर्यकूं प्राप्त है व्रजवासी तापीछे तीर्थमें नेमकूं पूरण करिके बडे आनंदते श्रीकृष्णचंद्रके चरित्रको कहते व्रजमें आवत भये ॥ १९ ॥ काहू समय एक यात्राके पीछे गोविंद और अद्भुत पराक्रमवारे बलराम दोनों भैया वनके विषे रात्रिमें व्रजकी स्त्रीनके बीचमें विहार करतभये ॥ २० ॥ स्नेहसो बद्ध हैवेके कारण ललित स्त्रियें श्रीकृष्णके चरित्र गाय रही ही और दोनों भैया सुंदर आभूषण पहिरे केशर चंदन लगाये वनमाल और निर्मल वस्त्र पहरे ॥ २१ ॥ रात्रिके प्रारम्भ हैवेसो तारागण और चंद्रमाको उदय है रह्यो है, चमेलीकी सुगंधिसों मत्त हैके भौंरा गुंजार करे हैं फूली कमोदनीसो लगके पवन चल रही है ॥ २२ ॥ ताकी सराहना करते सब प्राणिनके मन और काननको आनंददायक संग स्वरके मंडलनकी मूर्छना करते गान करनलगे ॥ २३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! कृष्ण बलदेवको गायवो सुनिके मूर्छाको प्राप्त हो गोपीनके वस्त्र ढीले है गये, चौटीनकी गांठ खुलि गई तिनसो फूलनकी माला गिरगई और अपनेकूं नहीं जानती भई ॥ २४ ॥ या प्रकार कृष्ण बलदेव दोनों भैया मतवारेकी तुल्य क्रीडा करत गान करत हे इतनेमें शंखचूड नाम कुबेरको टहलुआ आवत भयो ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! कृष्ण बलदेवके देखत निर्भय है शंखचूड विन गोपिनके समूहको जिनके स्वामी कृष्ण बलदेव हैं विनै लेकै उत्तरकी ओर चल्यो ता समय वे पुकारीं ॥ २६ ॥ जैसे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सिंहकी पकरी गौ पुकारै हैं तैसे हे कृष्ण! हे बलदेव! या प्रकार पुकार करती गोपिनको देखिके कृष्ण बलदेव दोनों भैया शंखचूडके पीछे दौरत भये ॥ २७ ॥ मन डरपो ऐसे भयके दूर करनवारे वचन कह शालके वृक्ष हाथमें लिये शीघ्रतासूं कृष्ण बलदेव दौरिके गुह्यकगणमें अधम शंखचूडके पीछे जातभये ॥ २८ ॥ काल मृत्युकी तुल्य पीछे दौरे चले आवते श्रीकृष्ण बलदेवकूं देखिके स्त्रीनकूं छोडिके मूढ शंखचूड अपने प्राण बचायवेके लिये भाजत भयो ॥२९॥ जहां जहां शंखचूड दौरके गयो तहां तहां गोविन्द श्रीकृष्णचंद्र वाके शिरकी मणि लेवेके लिये पीछे भाजत भये, और बलदेवजी स्त्रीनकी रक्षाके लिये ठाढे होत भये ॥ ३० ॥ हे राजन् परीक्षित्! थोरीसी दूर जायके श्रीकृष्णचंद्र दुष्ट मनवारे शंखचूडको मुष्टिसों मारिके शिर सहित माथेकी मणिकूं लेत भये ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्णचंद्र या प्रकार शंखचूड दैत्यको मारिके प्रकाशमान मणि लेके समस्त स्त्रीनके देखत बडे भैया बलदेवजीको प्रसन्नतासे देत भये ॥ ३२ ॥

शंखचूडं निहत्यैवं मणिमादाय भास्वरम् ॥
अग्रजायाददात् प्रीत्या पश्यन्तीनां च योषिताम् ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे शंखचूडवधो नाम चतुस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

अध्याय ३५.

श्रीशुक उवाच–गोप्यः कृष्णे वनं याते तमनुव्रतचेतसः ॥
कृष्णलीलाः प्रगायन्त्यो निन्युर्दुःखेन वासरान् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित्! श्रीकृष्णचंद्र जब वनमें गये तब श्रीकृष्णचंद्रमें मन लगाये गोपी विरहमें विनकी लीलानको गायगायके बडे कष्टते दिननकूं व्यतीत करत भई ॥ १ ॥ अब गोपी आपुसमें कहैं हैं हे गोपिहो! बांई भुजापै बांए कपोलको धरिके भ्रुकुटीनकों चढायके, मुकुंद श्रीकृष्णचंद्र अधरके ऊपर बांसुरीको धरिकै कोमल अंगूलीनसूं वाके छिद्रनकूं दाबिके जासमय बजामें हैं ॥ २ ॥ तासमय आकाशमें गमन करनहारी देवतानकी स्त्री अपने पतिन सहित बांसुरीको सुनिके प्रथम आश्चर्य मानिके लाजसहित कामदेवके बाणनसूं परवश हैकै मन हरजायवेके कारण नारेनकी सुधि विसारि मोहको प्राप्त होत भई ॥ ३ ॥ इंत अर्थात् हे अबलाओ! यह आश्चर्य सुनो हारकी तुल्य निर्मल हँसनिवारे अथवा हारमें जाकी हँसनकी दमक दमके है बांसुरीके बजावतसमय नीचो मुख करिके जो हँसे है ताकी हारनमें प्रकाशित हँसनि होय है अथवा हारकी तुल्य छातीमें शोभायमान जाकी हँसनि है और छातीमें बिजुरीकी तुल्य प्रकाशमान स्थिर लक्ष्मी जाके रहे पीडित जननको सुख देनवारो यह नंदको पुत्र जासमय बांसुरीकूं बजावै है ॥ ४ ॥ तब दूरिते बांसुरीको शब्द श्रवण करिके चित्त हरण है जायवेसों गौ बैल हिरणनके समूहके समूह दंतनके कौर काढिके वाहि पकरे भये काननसों ऊंचे करिके सोवतसे चित्र लिखेकी तुल्य ठाढे होत भये अज्ञानी पशु पच्छीनकी जब यह दशा है तब मनुष्यनकी ये दशा होयतौ कहा आश्चर्य है ॥ ५ ॥ अब अचेतन नदीनमें आश्चर्य है यह कहैं हैं हे सखी! मोरपुच्छ खरिया गेरू मनसिल पातनसूं मल्लकी तुल्य स्वरूप करिके कभऊ एक बलदेव भैया

१ आपने विचारी यदि या मणिको काहू एक गोपीको देऊंगो तो भाई तो मनमें बुरो न्यारो मानेंगे और सब गोपी अपने २ मनमें ये समझैगी कि प्यारेने याको मणि दीनी है सो ये सिवाय प्यारी है मेरे जान सब एकही है यासो बलदेवजीको दीनी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सहित गोपनसहित मुकुन्द सो जा समय बांसुरी बजायकें गौनको बुलामें हैं ता समय बांसुरी शब्द श्रवण करिके नदीनके प्रवाह वहितेसूं बन्द है जाय हैं और पवनसूं उडिके गई विनके चरणकी रजकूं हमारी तुल्य आकांक्षा करैं हैं और हमारी तुल्य विनके उत्कृष्ट पुण्य नहीं है यासो वह नदीनकूं मिले नहीं हैं प्रेमते लहर नहीं कँपती जल निश्चल है जांय हैं ॥ ६ ॥ ७ ॥ गोप ग्वालबाल देवता जिनके यशकूं गामें नारायणकी तुल्य सदा स्थिर लक्ष्मीवारे वनको विचरनवारे कृष्ण जा समय गोवर्द्धन पर्वतके शिखरपै चरती गौकूं बांसुरी बजायके बुलामें हैं, ता समय फूल फल लगवैके बोझते झुकी शाखावारे प्रेम करिके हर्षित चित्त वनके लता वृक्ष अपनपेंमें विष्णुको प्रगट करत मकरंदकी धारा बहावैं हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ सुंदरनमें अति सुंदर अथवा सुन्दर देखिवे लायक भगवान् श्याम ललाटमें केशरको तिलक लगाये वनमाला पहरे जिनकी दिव्य गंध और तुलसीके मकरन्दसों मत्त हैकै भौंरा विनके उच्च और अनुकूल गानको मान देय हैं ऐसे भगवान् अधरके बांसुरीकूं धरिके बजामें हैं ता समय सरोवरनमें सारस हंस और पच्छी गानसों मोहित चित्त हैकें वा स्थानमें आंखें मूंदे मौन धारण करे चित्त रोके कृष्णके निकट बैठे रहैं हैं ॥ १० ॥ ११ ॥ हे गोपियो ! मालानके काननमें कुंडलसूं शोभायमान, आनंदको प्राप्त बलदेव भैयासहित कृष्ण सब विश्वको आनंद देके बांसुरीके शब्दसों पूरण करैं ता समय या महान् कृष्णके अपराध न होय ऐसे मेघ मनमें शंका मानिके मुरलीके शब्दके पीछे मंद मंद गरजे हैं और अपने मित्र श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर फूल वर्षामे हैं, छत्र कारिके छाया करैं हैं सो वह मेघ याको सांचो मित्र है यह सामरो है वोहू सामरो ॥ १२ ॥ १३ ॥ हे यशोदा ! अनेक प्रकारके गोपनके खेलनमें निपुण तुम्हारो पुत्र अधरके ऊपर बांसुरीको धरिके आपसों आपही सीखे षड्ज निषाद ऋषभ गांधारकूं आदि लेके स्वरनके आलापवेके भेद उठावत भयो ॥ १४ ॥ ता समय इंद्र महादेव ब्रह्मा आदि मुख्य बुद्धिमान् देवता मंद मध्य तारसूं बांसुरीको शब्द सुनिके मोहित होत भये, नीचेको नारी लचायके कौन स्वरकूं गामें हैं ऐसे निश्चय नहीं करिसके हैं ॥ १५ ॥ ध्वजा वज्र अंकुश कमलके चित्र विचित्र चिह्नवारे, अपने चरणकमलसों व्रजभूमिको गौनके खुर परेते खेद शांति करत भये, मतवारे हाथीकी तुल्य चलनिवारे कृष्ण बांसुरीको बजायके जा समय चलै हैं ता समय विलासपूर्वक चितवनसूं कामदेवके वेगमें भरी हमें वृक्षनकी तुल्य जड हैकै चोटीकी और वस्त्रनकी सुधि न रहै है ॥ १६ ॥ १७ ॥ प्यारी सुगंधिवारी तुलसीकी मालाकूं पहिरे मणिनकी सुमिर्णी हाथमें लैके गौनको गिनत प्यारे मित्रके कंधापै हाथ धरिके जा समय गामें है, और बाजत हुई बांसुरीकी टेर सुनिके चित्त हरि जायवैसो हरिणनकी स्त्री हरिणी गुणनके समुद्र कृष्णचंद्रके पास आयके गोपीनकी तुल्य घरकी आशानकू त्यागिके सेवन करैं हैं ॥ १८ ॥ १९ ॥ हे यशोदे ! गोपिनके आनंद दैवेके लिये कुंदकी मालानसूं आनंदपूर्वक शृंगार किये स्नेहीनकूं आनंदको देनवारो यह तेरो पुत्र नन्दकुमार गोप गौनकूं संग लेके जा समय यमुनामें विहार करै है ता समय चंदनकीसी सुगंधिवारो शीतलस्पर्श पवन श्रीकृष्णचंद्रको सन्मान करत अनुकूल मन्द २ चलै है गंधर्वादिक बन्दीजननकीसी नाईं बाजे बजावत गायके फूलनकी वर्षा करिके सेवन करै है ॥ २० ॥ २१ ॥ व्रजको गौनके हितके करनवारे इन्द्रने जब वर्षा करी तब गोवर्द्धन उठायके रक्षा करी, बडे बडे ब्रह्मादिक आयके चरणनमें प्रणाम करैं संध्या समय सब गौनको एकत्र करिके मित्रसों गाये यशको सुनते ऐसे श्रीकृष्ण बांसुरीकूं बजावत श्रमभरी शोभासों आनंद देत गौनकी रजयुक्त माला पहिरे चंद्रमाकी तुल्य प्रकाशमान देवकीके उदरसो प्रगट भये कृष्ण हमारे मनोरथ देवेके लिये आवै है ॥ २२ ॥ २३ ॥ कछु एक मंद मंद नेत्र जिनके घूम रहे अपने

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्नेहीनको मान देनवारो, वनमालाकूं पहिरे पके बेरकीसी नाईं पांडुर वर्ण मुख कुंडलनकी कांतिसूं कोमल कपोलनकूं शोभायमान करते, मतवारे हाथीसमान विहार करनवारे प्रसन्नमुख यादवनको पति श्रीकृष्णचंद्र संध्या समय चंद्रमाकी समान उदय हैके गोपीरूप ब्रजकी गैयानके दिनके तापको दूर करें हैं ॥ २४ ॥ २५ ॥ जब श्रीकृष्ण वनकूं गऊ चरायवेकूं जाय तो गोपीनकूं एक एक क्षण कोटिन युगकी बराबर बीतै है, जब घरमें मन न लगै तौ कहैं अरी चारि घरी चलो ब्रजरानीकेही घर काटि आवैं, ऐसो कहि दस बीस गोपी मिल ब्रजरानीके यहां गईं, ब्रजरानीने सत्कार कियो, कहूं श्रीकृष्ण आइवेको जो समय भयो सो ब्रजरानी व्याकुल भई, अरी फलानी टहलनी मेरो कन्हैया नहीं आयो, देख तौ कहां देर लगी, अब गोपी बोलीं अरी मैया! तू सोच मत करै तेरो बेटा या समय अधरनमें धर वंशी बजावै है, और आनंदसो है, अरी तुम मेरे बेटाकी बात कहा जानों, तुम कहा देख आईहो, हम कहा जानें तिहारो बेटा कैसो है, हमारो देवर जेठनके बेटा वाके संग जायो करें हैं, वे हमते कह्यो करें हैं, कि कृष्ण वनमें ऐसे खेल खेलो करै है, ऐसे २ कर्म करे है, सो विनते सुन्यो करे हैं सो हम जानें, और कहा जाने तेरो बेटा कैसो है ऐसे कह गोपीनने अपनो शृंगार रसहू पुष्ट राख्यो, उनकी सत्यहू राख्यो, आप विरहमें कृष्ण चरित्र गामें है, और ब्रजरानीहूको समाधान करत जाय हैं, और आप अलगहू रहै हैं, इतनेहीमें गोपी बाहर निकस आई वोह टहलनी कृष्णकी खबर लैके जो न आई ब्रजरानी फेर घबरान लगी हाय बडी देर भई मेरो कान्हा नहीं आयो कछु वनमें विघ्न ह्वै गयो होयगो जब इन्हे व्याकुल देखी, तौ वेई गोपी फेर आई, मैया! तू चिंता मत करै, तेरो बेटा अच्छे है, तुम जानोहो मेरे कान्हाको हवाल, हम कहा जानै हमारे देवर जेठनके लरका आय सदा कह्यो करें हैं, सो हम सुनो करें हैं, या समय मेरो कान्हा कहा करत होयगो, या समय तुम्हारो लरिका यमुनाजीमें खेलै है ब्रजरानी बोली हे परमेश्वर! कहूं कालीदहकोसो अनर्थ न करवावे, जो हम सब जीवति मरजांय, वोह नंदरायको बेटा है ब्रजनारीजू तिहारे पुण्यते वाको बारहू बांको नहीं होयगो, तुम तौ निष्पाप हो गोपियो! वाहि देर काहेको लग जायो करै है? ब्रजरानीजू वोह यमुनामें न्हायके जलदी वस्त्र पहर लियो करै है, नंदरायके भाट हैं जगा हैं, बंदीजन ये वाके आगे स्तुति गान करन लगै हैं, जो ठाडो ह्वैके न सुनै तौ वे कहै हैं कि नंदरायको बेटा मूर्खसो है, हमारो गानो सुनै समझै नहीं, याके लिये सुनन लगै है देर ह्वै जायहै, अब कितनीक देरमें आवेगो जब नेक बंसीकी धुनि सुनि सब गोपी अपने २ छात छज्जा दुवारी चौबारी गोखा मोखा, झरोखानमेंते उझुकन लगीं अब श्रीकृष्णचंद्र जों ब्रजमें आये हैं तौ विन गोपिनकी ओर कटाक्ष करत जायहैं, काहूते कहत जायहैं आज हमारो तिहारो संगम वा कुंजमें होयगो, का फलानी कुंजमें वनमें होयगो, काहूते कहै हैं आज तौ तिहारी बैंदी खिली है का आज तुमने फलानी सारी न पहरी आज-काल तौ वाही रंगकी शोभा है ऐसे कहत सुनत आप ब्रजरानीजीके पास गये वे आगेहीते आरती लिये ठाडी हैं, आरती करी, यहां तौ कौतुक करत आये, मैया मैया! मोहि भूख लगी है अब ब्रजरानीने थाल आगे धरो, एक ग्रास तौ खायो मइया! मोहि तौ भूख नहीं तू खवायदे, अब रानी खवावत जांय मेरे राजा बेटा! एक ग्रासतौ और खा जैसे कोऊ सिंहके चीताकूं मनाय खवावै है, ऐसे दोऊ भैयानको खवायो है छने जलसों आचमन कराय महीन रूमालसों हाथ पोंछे हैं बीरी खवाई है, याद जो आय गई मैया मैया! तू तो बडी झूंठी है कहो बेटा कहा झूंठ कह्यो वा दिना कहीही कि तेरो व्याह कर देउंगी, जैसे तू सुंदर है तैसीही सुन्दर तोको छोटीसी दुलहिन आवेगी, सो तैंने व्याह न कियो, अब देख तेरो व्याह करूंहूं, मैया व्याहमें क्या होय है, बाजे बजैंगे, हाथी घोडा आमेंगे, तेरे साथ गठजोरो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होयगो, मैया मैं वातैंही गांठ बांधेही फिरो करूंगो, गैया चरायवेकूं तो जरूर जाउँगो, पर वनमें तौ वाहि बांधे बांधे नहीं फिरूंगो, ना बेटा वनमें काहेको बांधे फिरैगो, वो अपने महलनमें खेलौ करेगी. अब तो सोनेकी दोहनी ले दोऊ भैया गो दोहनको गये हैं, खिरकनमें नंदराय संग गये हैं, बेटा तेरे चाकर का थोरे हैं दुहनवारे, तेरी बलाय दुहै. बाबा बाबा मैं दुहुवौ सीख राखूं काहू बखत काम परजाय, जो हम गैयाही नहीं दुहेंगे तौ ग्वार काहेके, अरे कान्ह ! याहि मति दुहै यह लात बहुत मारै है बेटा, ना बाबा मोहि पहचान गई है. आज मैंने याहि गिरिराजकी तरहटीमें खुजाई बहुत है; जौनसी गैया कबहूं पैसाभर दूध नहीं देतीही, और हाल तौ काहू ग्वारियाहि नीचैही न बैठन दे और जो बैठनहू दे तौ ऐसी जोरकी दगामें लात मारै कि ग्वारियाको तौ मूड कटि जाय और दोहनी कोस भरेपै जायपरै. सो गइया श्रीकृष्णको हस्तकमल लगावतही दोहिनी भर देय और नीचे दूध बहि निकलै अब कृष्ण बलदेव तौ दुहत जांय और नंदराय लोटा भरि २ पहुंचावत जांय टहलवानके हाथ, अब दुहिके महलमें व्रजरानीजूने चांदीके कटोरामें सीरोकरि अधौटा दूध जामें मेवा मिश्री पडी है नारायणकी प्रसादी लाय बेटा कान्हा याहि पीलै, मैया मोकूं तौ भूख नहीं जब ये कहै है भूख नहीं, तबही इनके प्राण सूख जायहैं, माताकी बराबर दूसरो पोषण करनहारो नहीं, जन्मको सुख वाहीको है जाकी माता जीवै है ॥ दृष्टांत ॥ एक राजा हो वाके मंत्रीकूं अन्य राजाके मंत्रीने लिख्यो कि तुम्हारे राजाके घर फौजै कै लाख है, और खजानेमें रुपया कितनो है, और राजाकी उमर कितनी हैं और राजा खाय कितनो है, यह सब हमें लिख भेजो यह खत देखिकै या राजाके मंत्रिने उत्तर लिख्यो फौजनकी संख्या तौ यह है कि राजाके जितने भइया भतीजे काका ताऊ सब एक मन है जो जाको कुटुम्ब एक मन होय ताको वैरी जो देखतोहू होय तौ कछु न करि सकै एक खजानेको उत्तर लिख्यो, जितनी प्रजा है सब राजाते प्रसन्न है जो प्रजा भई प्रसन्न तौ सब द्रव्य प्रजाको राजाहीको है दूसरो भोजनको उत्तर लिख्यो कि खायवेको कौन प्रमाण है जाकी माता जीवै है ताके खायवेको प्रमाण कहा, तीसरो राजाकी उमरिको उत्तर लिख्यो, राजाको उमरिको जवाब यह है कि राजा हरिभक्त है, और पुण्यात्मा है, जो पुण्यात्मा होयहै तिनकी उमरिकी तौ सदा वृद्धि होती है, पापात्माकी आयु क्षीण है जाय है, यह चारों बातनको ज्वाब सुनि वह राजा शिथिल है गयो, कि वाको रसदको तगादो मत करो वो हमारे मानको नहीं है ॥ व्रजरानी श्रीकृष्णको माथे पर हाथ फेरति जाय है बेटा जो तू यह दूध पीलै तौ तेरी चोटी बढि जायगी; और जो तू याहि अवस्थामें दूध न पीवेगो तौ तेरो शरीर कैसे पुष्ट होयगो, अब इतनेमें पहर रात जो गई नंदराय अपनी कचहरीमें बैठे है गुनी लोग जो आये हैं अपनो २ न्यारो २ गुण दिखावन लगे हैं, नंदराय बोले भइया अभी मत गावो बजावो हम तो बहुत सुन चुके हैं, अब हमारो कान्हा नयो रसिक भयो है वाहि आय जान देउ खवासको भेजदियो है, कृष्ण बलदेवको लिवाय लावो व्रजरानीजी महाराजने कृष्ण बलदेवको बुलायो है इनके विना सब बैठे रहे हैं, विन्हैं तौ येही आवै है सारे दिनके हारे थके आये हैं, भोजन कियो है, नैक सोवनहू न देवै हैं यह कह देउ वे तौ सोयगये हैं, नहीं मैया हमैं तो नींद नहीं आवै है हम तौ बाबाके पास जांयगे, तब जिद करन लगे हैं तो तौ व्रजरानीजूने गहनेनको डिब्बा और कपरनको पिटारो मंगाय इनको विशेष शृंगार कियो है वनमैं तौ सामान्य गहने पहरामैं हैं चोरादिकनके डरके मारे सुन्दर चीरा तौ शिरपर बांध्यो हैं तामें हीरानकी कलँगी शिरपेंच बंध्यो है, जरीको जामा पहराय, गुलबदनको चूरीदार जामा कंठमें मोतिनकी माला तामें सिंहके नख सुवर्णमें मढे पुट रहे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं सो कठुला पहिरायो भुजानमें फलै मा बाजूबंद, हाथनमें इमठमा जडाउकडे पौंहची कंकण कमरमें कौंधनी, काननमें कुंडल चरणनमें नूपुर दुछोरमा पटका कमरमें बांध्यो है माथेपर केशरको ऊर्ध्व पुंड्र तिलक लगायो है बीरी खवाई, कपोलनपै नैक काजलको डठौना लगायदियो है कि मेरे बेटानकूं काहूकी नजर न लगजाय अब कृष्ण बलदेवकूं सुन्दर जुता पहराये हाथमें जडाऊ छडी लिये हैं हाथसों हाथ पकरे दोनों भइया आपसमें बातें करत जांय हैं तब कचैरीमें पहुँचे तब इन्हें देख सब उठ खडे भए, बाबाको हाथ जोर एकबांई ओर बैठि गये एक दाहनी ओर बैठि गये हैं. अब नंदरायने जो आज्ञा दई कोऊ पौराणिक तौ श्लोक पढै है, भाट कवित्त कहनलगे, गवैया गामें हैं, नाचनवाले साज मिलाय नाचनलगे, नंदरायने रुपया असरफीनके तोडा खोलदिये कान्हा बेटा इन्हें देतजाओ अब काहूको रुपैयानकी मुट्ठी देय है काहूको अशरफीकी मुठी जाकी जैसी इज्जत तैसोई देय हैं वाह वाह कहि सराहत चले जाय हैं, काहूको फरमायसकरैं है. तुम फलानी चीज गावो तुमते अच्छी बनै है वे इनकी बलैया लेतजाय हैं असीस देत जाय हैं, आधी रातको समय भयो नंदरायने हाथतैं मनै कर दई अब कालह रातको गामनो ऐसे कह कचहरी बरखास्त भई व्रजरानी बेटानकी वाट देखै है यह जो आये बाबा मोकूं तो निद्रा आई मैं तौ याहीको लिये मनै करतही सब शृंगार तौ उतार लियो है नीलांबर पीताम्बर धोती पहराय दई है दोउ भैया अपने २ पलंगनपैं पोढे हैं दासी पंखा करै हैं ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहैं है हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रमें जीवन धन मन लगाये बडे उत्सववारी महोदया व्रजकी स्त्री श्रीकृष्णकी लीलानको गायगायके दिननको बितावत भई ॥ २६ ॥

श्रीशुक उवाच-एवं व्रजस्त्रियो राजन् कृष्णलीलानुगायतीः ॥
रेमिरेऽहस्सु तच्चित्तास्तन्मनस्का महोदयाः ॥ २६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० गोपिकागीतं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

अध्याय ३६.

श्रीशुक उवाच-अथ तर्ह्यागतो गोष्ठमरिष्टो वृषभासुरः ॥
महीं महाककुत्कायः कम्पयन् खुरविक्षताम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहै हैं हे राजन् परीक्षित्! या प्रकार देवता गंधर्वादिकनसों गीयमान तथा विनके नृत्य और पुष्प वर्षाको देखते श्रीकृष्णको आये देखिके परम उत्सव भयो, याके पीछे ताही समय व्रजमें बैलको रूप धरिके अरिष्टासुर आवत भयो जो बडे पुट्ठनवारी देहसों पृथ्वीको खुरनसों विदीर्णकर कंपायमान करै है ॥ १ ॥ बहुत रम्हाय है, पांवनसूं धरतीकूं खोदत आवै है, पूछ उठायके खेतनकी मेंडनको खोदे है ॥ २ ॥ बीचबीचमें गोबर करत जाय मूत्र करत जाय है, भयानक जाकी आंखैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! अरिष्टासुरके रम्हायवेको कठोर शब्द सुनिके गौनके स्त्रीनके विना समय गर्भ गिरिपरे डरके मारे पतन है गये, जाकी कंधाकी ऊंचाईपैं मेघ पर्वत मानिके प्राप्त होते हैं ॥३॥४॥ तीक्ष्ण पैने सींगवारे अरिष्टासुरको देखिके संपूर्ण गोप और गोपी भयके मारे डरपतभये हैं हे राजन् परीक्षित् ! पशु खिरकनकूं छोडिके डरके मारे भाजत भये ॥ ५ ॥ हे कृष्ण! हे कृष्ण ! ऐसे पुकारते भये समस्त व्रजवासी गोविंदकी शरण आवत भये, याके पीछे गोकुलवासीनको भयके मारे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भजते देखिके मति भय करो या प्रकार सावधान करत अरिष्टासुरको अपने पास बुलावत भये ॥ ६ ॥ हे मूर्ख ! असाधु ! ग्वाल गौनके डरपाववेते तोकों कहा होयगो हे दुष्ट हे मतवारे ! तोसरीखे दुष्टनको बल और मद मैं दूरि करोंहों ॥ ७ ॥ या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णचंद्र खम्भ ठोंकिके अरिष्टासुरकूं क्रोध करायकै मित्रके कंधापै सर्पके आकार भुजा पसारिके ठाढे होत भये ॥ ८ ॥ या प्रकार क्रोध करायो अरिष्टासुर खुरनते धरतीकूं खोदत पूंछ उठायके बादरनकूं इत उत करिके क्रोध करिके श्रीकृष्णचंद्रके पास आवत भयो ॥ ९ ॥ आगेकूं सींग करे पलक विसारे लाल लाल आंखें करे अरिष्टासुर श्रीकृष्णकी ओर कटाक्षसूं तिरछो देखिके इंद्रके छोडे वज्रकी समान जलदीसो आवतभयो ॥ १० ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अरिष्टासुरके सींग पकरिके जैसे हाथीको हाथी धक्का देइहै ऐसे अठारह पैर उलटे पांवन धकावत भये ॥ ११ ॥ भगवान् श्रीकृष्णने अरिष्टासुरको ढकेलि दियो तब फेर उठिके पसीना अंगसों चुवाते मूर्छित हैके क्रोधमें भरिके बडे बडे श्वासनकूं लेत दौरिके आवतभयो ॥ १२ ॥ श्रीकृष्ण आवते भए अरिष्टासुरको सींग पकरिके पृथ्वीपै पछारत भये पांवते छाती दाबके जैसे गीले कपराको निचोरैं हैं तैसे उमेठिके सींग उखारिके मारतभये अरिष्टासुर गिरतभयो ॥ १३ ॥ तब वाके नेत्र चलायमान भये, तब अरिष्टासुर रुधिरको वमन करत मूत्र गोबर करत पांवनकूं पटकत कष्टते मरतभयो देवता श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर फूल वर्षायके स्तुति करतभए ॥ १४ ॥ या प्रकार अरिष्टासुरकूं मारिके जातिके मित्रनसो स्तुतिको प्राप्त होय गोपीनको नेत्रनकूं आनन्द देनवारे श्रीकृष्णचंद्र व्रजमें आवतभयो ॥ १५ ॥ अद्भुत कर्म करनवारे श्रीकृष्णने अरिष्टासुर मारो तब देवताकेसे दर्शनवारे भगवान् नारदजी कंसते जायके कहत भये ॥ १६ ॥ यशोदाके कन्या भई है और देवकीके कृष्ण भयो है बलदेव रोहिणीके पुत्र है तेरे भयके मारे वसुदेवजी ॥ १७ ॥ अपने मित्र नंदजीके घर रातोरात पहुँचाय आये हैं, और तैंने भेजे वे सब दैत्य कृष्णबलदेवने मारे । यह वचन नारदजीको श्रवण करिके कंस क्रोधसो विकल इंद्रिय होत भयो ॥ १८ ॥ तब कंस वसुदेवके मारिवेके लिये पैनी तरवार लेतभयो तब नारदजी मने करतभये और तिन वसुदेवजीके पुत्र कृष्णबलदेवते अपनी मृत्यु जानिके ॥ १९ ॥ देवकी सहित वसुदेवके पांवनमें बेडी डारत भयो और इतनी बात कहिके नारदजी जब गये तब कंस केशीकूं बुलायके ॥ २० ॥ भेजत भयो कि रामकृष्णको तू मारि आओ यह कहत भयो ता पीछे मुष्टिक चाणूर शल तोशल आदि मल्लकूं बुलायके ॥ २१ ॥ मंत्रीनकूं बुलायके हाथीनके महावतनकूं बुलायके, भोजवंशीनको राजा कंस बोलतभयो हे वीर ! हे चाणूर ! हे मुष्टिक ! यह मेरी बात श्रवण करौ ॥ २२ ॥ नंदके गोकुलमें वसुदेवके पुत्र कृष्ण बलदेव रहैं हैं उनते विधाता नारदजीने मेरी निश्चय मृत्यु बताई है ॥ २३ ॥ ये जब आमें तो समय पांवनसूं दाबिके मल्ललीला करिके मारिडारियो, और मल्लनकी रंगभूमिमें अनेक प्रकारके मंचाननकूं बनाओ ॥ २४ ॥ पुरवासी और देशवासी संपूर्ण तिनपै बैठिके मल्लनकी कुस्ती देखेंगे हे महावत ! मंगलरूप कुवलियापीड हाथीकूं रंगभूमिके दरवाजेपै ठाढो कर देउ ॥ २५ ॥ मेरे वैरी कृष्ण बलदेव आमें तब उन्हें कुवलियापीड हाथीपै मरवाय डारियो, और चतुर्दशीके दिन विधिपूर्वक धनुषयज्ञकी त्यारी करो और संपूर्ण कामनानके पूरण करनवारे महादेवजीके पूजनके लिये पवित्र पशु देओ ॥ २६ ॥ अपने अर्थके तत्वको जाननवारो कंस अपने टहलुआनकूं या प्रकार आज्ञा देके और यादवनमैं श्रेष्ठ अक्रूरको बुलायके हाथ पकरिके यह कहत भयो ॥ २७ ॥ हे दानपति अक्रूर ! तुम एक मेरो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मित्रताको कार्य करो, या समय भोजवंशी यादवनमें और कोई तुमते सिवाय आदरसहित अतिशय करिके हितको करनवारो नहीं है ॥ २८ ॥ हे बडे कार्यके करनवारे साधु अक्रूर ! तुम्हारो आश्रय लीनो है, जैसे इन्द्र विष्णुको आश्रय लैके अपने मनोरथकूं पायगयो ॥ २९ ॥ अब तुम नंदके व्रजको जाओ ता नंदके व्रजमें वसुदेवके पुत्र रहैं है तिन्हें या रथमें बैठारिके शीघ्रही ले जाओ ॥ ३० ॥ विष्णुको आश्रय लैके देवतानने मेरे मारिवेके लिये कृष्ण बलदेव प्रगट करे हैं, नन्दते आदि लैके संपूर्ण व्रजवासी सहित कृष्ण बलदेवको यहां लै आओ और कहियो कि राजा कंसको चलिके भेट देआओ ॥ ३१ ॥ यहां लिवायके लाओगे सब कालकी तुल्य कुवलयापीड हाथीपै घात कराऊंगो हाथीते कदाचित् छूटि जायगो तो विजुरी तुल्य मल्लपै घात कराऊंगो ॥ ३२ ॥ कृष्ण बलदेव जा समय हत हैजायंगे तब तिनके दुःखके मारे व्याकुल वसुदेवते लेके तिनके भैया बंधुनकूं मरवाऊंगा और वृष्णि भोज दाशार्ह वंशमें भये यादवनको मरवाऊंगो ॥ ३३ ॥ और उग्रसेन मेरो वृद्ध पिता है तौहू राज्यकी चाहना करनवारे याहूको मरवाऊंगो, और याके भैया देवकको और मेरे वैरी जितने हैं तिनको सबको मरवाऊंगो ॥ ३४ ॥ ताके पीछे हे मित्र अक्रूर ! यह पृथ्वी कंटकन रहित होयगी, जरासंध मेरो श्वशुर है द्विविद मेरो प्यारो मित्र है ॥ ३५ ॥ शंबरासुर नरकासुर बाणासुर इनने मोमें स्नेह कियो है, इनको संग लेके देवतानकी ओरके राजा मारिके पृथ्वीको भोग करूंगो ॥ ३६ ॥ यह बात अपने मनमें जानिके राम कृष्ण बालकनको यहां शीघ्र लिवाय आओ, वहां जायके यह कहियो मामा धनुषयज्ञ करे है ताकूं चलिके देखि आओ, यादवनको पुर मथुरा है ताकी शोभा देखि आओ ॥ ३७ ॥ यह वचन राजा कंसको श्रवण करिके अक्रूरजी बोले हे राजन् कंस ! तुमने भलो विचारो है, तुम्हारी मृत्युको दूर करनवारो यह उपाय है, परन्तु होने और न होनेमें मनुष्य समता करै दैव अर्थात् प्रारब्धही फलको दाता है ॥ ३८ ॥ यह पुरुष बडे बडे मनोरथ करै है, परन्तु जब दैव हत करदेय है तब दुःखी होयहै, जो मनोरथ पूर्ण हैजाय तब तो मनमें हर्ष माने हैं न होय तब शोक करै हैं यामें कहा ध्वनि निकसि कि तुम कहौ हौ कृष्णबलदेवको मरवाऊंगो न जाने वेई तुमको मारे तथापि तुम्हारी आज्ञा करूंगो ॥ ३९ ॥ या प्रकार राजा कंस अक्रूरको आज्ञा देके मंत्रिनको विदा कर महलमें जात भयो और अक्रूर अपने घर जात भये ॥ ४० ॥

एवमादिश्य चाक्रूरं मन्त्रिणश्च विसृज्य सः ॥
प्रविवेश गृहं कंसस्तथाक्रूरः स्वमालयम् ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० अक्रूरसंभाषणं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥

अध्याय ३७.

श्रीशुक उवाच-केशी तु कंसप्रहितः खुरैर्महीं महाहयो निर्जरयन् मनोजवः ॥
सटावधूताभ्रविमानसंकुलं कुर्वन् नभो हेषितभीषिताखिलः ॥ १ ॥

---

१ कोई शंका करै अक्रूर कंसके ढिग रहके महात्मा कैसे रहे तापर यह दृष्टांत है महात्मा कुसंगतमेंभी महात्मापन नहीं त्यागते एक बाबाजी आधी रातकूं कहीं जायथे मार्गमें चोर मिले चोर बोले कौन बाबाजी बोले जो तुम सो मैं चोर बोले कहां जाते हो बाबाजी बोले जहांकूं तुम जाते हो चोरोंने जाना यह चोर है संग ले लिया, बाबाजीनेभी जाना कि यह चोर हैं चोरोंने एकके घरकूं मल दिया, और चोरी करने लगे बाबाजीभी घुसे एक बरतन जो उघाडा तौ इमरती धरीही बाबाजी सारे दिनके भूखे थे, झट ठाकुरजीका बटवा निकाल ठाकुरजीके सामने भोग रख शंख बजाया शंख बजतेही घरके लोग जागे, और चोरोंके संग बाबाजीभी पकडे गये बाबाजी तौ वृत्तान्त सुनाय छूट गये, चोरोंको दंड हुआ, सो महात्माओंको कुसंगतका फल नहीं व्यापता, जैसें अक्रूरकूं कंसका संग न व्यापा चोरोंकी नाईं मरवायो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! मनहूते अधिक वेगवारो कंसको पठायो केशी दैत्य बडे घोडाको रूप धरिके टापनतै पृथ्वीकूं खोदत फुरहरी लैकै कंधाके ऊपर बारनसूं आकाशमें इत उत विमानकों चलायमान करत आवत भयो, हींसनेमेंही समस्त विश्वको डरामनलगो ॥ १ ॥ (बडे जिसके नेत्र, मुख बडी गुफासों, जाकी भयंकर नार, बडे नीलपर्वतकी समान वोह दुष्ट कंसके प्रिय करनेकूं नंदके गाममें पृथ्वी कंपावत आवतभयो ॥ १ ॥) कठोर हींसनसूं गौनके समूहनको भय देत पुच्छ हलाय बादर चलायमान करतो, युद्ध करिवेकूं श्रीकृष्णचंद्रकूं ढूंढतो आयो, तब केशी दैत्यको भगवान् श्रीकृष्ण आगे निकसिके अपने पास बुलावत भये, तब श्रीकृष्णकूं देखिके सिंहकी तुल्य शब्द करत भयो ॥ २ ॥ केशी श्रीकृष्णको देखिके मुखसूं मानो आकाशकूं पीजायगो, ऐसे मुखको फारिके सन्मुख दौरिके आवत भयो, कोई जाको जीति न सकै बडो वेगवारो महादुःखसों जीतवे योग्य केशी दैत्य कमलदललोचन भगवान् श्रीकृष्णचंद्रके पिछिले पांवनकी दुलत्ती मारत भयो ॥ ३ ॥ इंद्रियनकी जिनमें पहुँच नहीं ऐसे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ता दैत्यकी दुलत्ती बचायके क्रोधकरिके हाथनसों वाके दोनों पाव पकरिके घन्न फिरायके जैसे गरुड सर्पकूं फैंकि देय है ऐसे अवज्ञाकरिके सौ (१००) धनुष्यपर फैंकिके ठाढे होत भये ॥ ४ ॥ जब चेत भयो तब केशी दैत्य फेरि उठिके मुख फारिके क्रोधयुक्त दौरिके श्रीकृष्णके पास आवत भयो, तब श्रीकृष्णचंद्रहू हँसिके वा दैत्यके मुखमें अपनो बायो हात बिलेमें सर्पके तुल्य डारतभये ॥ ५ ॥ जैसे तप्त लोह लगेते करै है, ऐसे भगवान्की भुजा लगेते केशीके दांत उखरिके गिरत भये औषधिके न करवेसो जैसे जलंधर रोग उदरमें बढे है ऐसे केशीके उदरमें श्रीकृष्णचंद्रकी भुजा फूलत भई ॥ ६ ॥ केशीके उदरमें फूली श्रीकृष्णकी भुजासों श्वास रुकि गयो, अंगमें पसीना आयगये नेत्रनके तारे निकसि आये सो पापी केशी पांवनको पटकत लीद करत प्राणरहित होके पृथ्वीमें गिरतभयो ॥ ७ ॥ पकी ककरीकी तुल्य विदीर्ण और प्राणरहित केशीकी देहमेंते श्रीकृष्णने अपनी बडी भुजा निकास लीनी, यद्यपि शत्रुको अनायास मारो तौहू भगवान्ने कछु गर्व न करो, तब श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर पुष्पनकी वर्षा करिके आश्चर्य मानिके देवता स्तुति करत भये ॥ ८ ॥ श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! भक्तनमें श्रेष्ठ श्रीनारदजी क्लेशरहित कर्मवारे श्रीकृष्णचंद्रके पास आयके एकान्तमें यह कहत भये ॥ ९ ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे अप्रमेयात्मन् ! अर्थात् नहीं प्रमाण करिवेमें आवैहै स्वरूप जिनको ऐसे, हे योगके ईश ! हे जगत्के ईश्वर ! हे वासुदेव ! नहीं प्रमाण करिवेमें आवै है प्रभाव जिनको हे जगदीश्वर ! विश्वके साक्षी ! हे अखिलावास अर्थात् सबके आश्रय ! हे सात्वतां प्रवर ! अर्थात् सब यादवनमें श्रेष्ठ हे प्रभो ! ॥ १० ॥ जैसे काष्ठनमें ज्योति है तैसे तुम सब प्राणीनमें व्यापक गूढ अर्थात् सबमें रहोहौ, परन्तु विनको दिखाई नहीं देउहो क्यों कि बुद्धिसों परेहो, साक्षी हौ, आपको स्वरूप देखिवेमें नहीं आवे है, महापुरुष ईश्वर हौ ॥ ११ ॥ मैं ईश्वर हूं और सब मेरे वश है यह काहेते तहां नारदजी कहैं हैं अपने आधीन तुम प्रथम माया करिके सत्व रज तम इन गुणनकूं उत्पन्न करिके सम्पूर्ण विश्वको उत्पन्न करोहौ; और पालन रक्षा संहार करो हो और फेर तुम्हें सत्यसंकल्प अर्थात् काहू साधनकी अपेक्षा नहीं है, या कारण तुमही ईश्वर हौ ॥ १२ ॥ सो तुमने राजारूप दैत्य राक्षसनके नाश करिवेके लिये और धर्म मर्यादानकी रक्षा करिवेके लिये अवतार लियो है ॥ १३ ॥ घोडाके रूपको धरिके यह दैत्य आयों सो लीला करिके तुमने मार्यो यह बडो मंगल भयो, जाके हींसनको शब्द सुनिके भयके मारे देवता क्षणमें स्वर्गकूं त्यागि देई हैं ॥ १४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे विभो अर्थात् समर्थ! परसोंके दिन तुम निज हाथनते चाणूर मुष्टिक और मल्लनकूं तथा कुवलयापीड हाथीको और कंसको मारोगे सो देखोंगो ॥ १५ ॥ ता कंसके मरे पीछे शंखासुर कालयवन मुर दैत्य इनकी वध देखूंगो, स्वर्गमेंते इंद्रकूं जीतके कल्पवृक्षको लाओगे ताय देखूंगो ॥ १६ ॥ अपनो पराक्रम मोल देके राजनकी कन्यानको व्याहोगे, सो देखूंगो । हे जगत्के पति! द्वारकामें जायके नृगराजाको छुडाओगे सो देखूंगो ॥ १७ ॥ जाम्बवती स्त्री व्याहिके स्यमंतक मणिकूं दायजेमें लाओगे, सो देखूंगो सांदीपनगुरुके महाकालपुरते मरे पुत्र सजीव लायके देउगे सो देखूंगो ॥ १८ ॥ मिथ्यावासुदेवको मारिके काशीपुरीको जराओगे, दंतवक्रको मारोगे, राजा युधिष्ठिरके यज्ञमें शिशुपालको मारोगे ताय मैं देखूंगो ॥ १९ ॥ द्वारिकावास करिके जे जे लीला करोगे तिन लीलानको कवीश्वर पृथ्वीमें गामेंगे सो सब हम देखेंगे ॥ २० ॥ याके पीछे कालरूप तुम या पृथ्वीको बोझ उतारिवेके निमित्त अर्जुनके रथवान् होयके सैन्यानकूं मारोगे ताय देखेंगे ॥ २१ ॥ केवल ज्ञान मूर्ति अपनी पूर्णानंद स्थितिसो पूर्णकाम सत्य संकल्प और अपनी चैतन्य शक्ति अपने तेजते नित्य मायासूं निवृत्त और छः प्रकारके ऐश्वर्ययुक्त तुम्हारी शरण प्राप्त भयो हूं ॥ २२ ॥ तुम ईश्वर हो अपने आश्रय औरके वश नहीं हो अपने आधीन मायासूं महत्तत्त्व अहंकारते आदि लेके समस्त तत्वक्रीडा करिवेके लिये तुमने रचे हैं और क्रीडा करवेको अर्थ मनुष्यरूपधारी यदु वृष्णि सात्वतनमें श्रेष्ठ तुमकूं नमस्कार है ॥ २३ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित्! भक्तनमें श्रेष्ठ मननशील श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शनसों प्रसन्न होय नारदजी या प्रकार यादवनके पति श्रीकृष्णचंद्रकूं प्रणाम करि आज्ञा लेके जातभये ॥ २४ ॥ व्रजवासीनके सुखके करनवारे भगवान् गोविंद श्रीकृष्ण युद्धमें केशिको मारिके पशूनके पालन करनवारे ग्वाल सहित पशूनकूं पालन करत भये ॥ २५ ॥ एक समय गौनके पालनकर्त्ता ग्वालबाल गोवर्द्धनपर्वतके शिखरपै गौनको चरावत चौरपालनको मिसि करिके छिपाछिपीको खेल करत भये ॥ २६ ॥ हे राजन् परीक्षित्! ता खेलमें कितेकहू बालक चोर बने और कितेकहू रखवारे बने कितेकहू भेड बने ऐसे निर्भय होयके खेलत भये ॥ २७ ॥ इतनेमें बडो मायावी मय दैत्यको पुत्र व्योमासुर गोपालको रूप धरिके चोर बनिके जे बालक भेड बने हे तिनमेंते चुरायके लेजात भयो ॥ २८ ॥ व्योमासुर भेड बने बालकनको चुरायके पर्वतकी गुफामें धरिके शिलासो गुफाको द्वार मूंदत भयो जे बालक भेड बने हैं तिनमेंसो कोई पांच चार बाकी रहि गये ॥ २९ ॥ साधुनकों शरणके देनवारे श्रीकृष्णचंद्रने मनमें विचार करो कि हमने तौ खेल करो है, यह सांचोही चोर आय पहुँच्यौ ऐसे ता व्योमासुरकी चोरी जानिके गोपनकों लैके जाते व्योमासुरकूं जैसे सिंह बल करिके व्याघ्रकूं पकरे है ऐसे पकरत भये ॥ ३० ॥ बली व्योमासुर पर्वतकी बराबर अपनो रूप धरिके अपनेको छुडामन लगो परन्तु नहीं छूटत भयो श्रीकृष्णके पकरवेसो आतुर भयो ॥ ३१ ॥ अच्युत श्रीकृष्ण व्योमासुरकी दोनों भुजा पकरिके पृथ्वीमें पटकिके स्वर्गके देवतानके देखत देखत श्वास घोटिके मारत भये ॥ ३२ ॥ गुफाके ढकनाको फोरिके गोपनको कष्टते बाहिर निकासिके ऊपर देवता विमाननमें स्तुति करे पृथ्वीमें गोप जिनकी स्तुति करें ऐसे श्रीकृष्ण अपने गोकुलमें आवत भये ॥ ३३ ॥

१ आंखमिचौनी ॥ २ एक काहू बनियेको टीका आयो, सब लोक गये काहूको पैसा मिलो काहूको नारीयल काहूको लड्डुआ यह सुन कोई सूरदास काहूसै आधो साझो ठहराय वाके संग गये वहां सूरदासको बतासेही मिले अपने घर आय दोनों जने एक २ खान लगे, अंधो बेईमान होय है यातै विचार कियो जाहि सूझै है सो दो दो बतासे खात होयगे सो आंधो दो दो खाने लगो फिर हाथसैं टटोरे है तौ थोरे होत जांय विचारचो कि यह चार चार खातहोयगो सो आप चार २ खानलगो, ऐसेही हाथसैं टरोरे कमती दीखैं तौ दूने खातजाय तौ दूने चौगुने आठगुने कमती होत जांय हैं ऐसेही व्योमासुर बालकनको लेजाय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गुहापिधानं निर्भिद्य गोपान् निःसार्य कृच्छ्रतः ॥
स्तूयमानः सुरैर्गोपैः प्रविवेश स्वगोकुलम् ॥ ३३ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० व्योमासुरवधो नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अध्याय ३८.

श्रीशुक उवाच-अक्रूरोऽपि च तां रात्रिं मधुपुर्यां महामतिः ॥
उषित्वा रथमास्थाय प्रययौ नन्दगोकुलम् ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! बडी बुद्धिवारे अक्रूरजी वा दिन रात्रिकूं मधुपुरीमें वसिके प्रातःकाल रथमें बैठिके नंदजीके गोकुलमें जात भये ॥ १ ॥ बडे भाग्यवारे अक्रूरजी मार्गमें जाते कमलनेत्र श्रीकृष्णचंद्रमें परमभक्तिकूं पावतभये; और यह विचार करत भये ॥ २ ॥ मैंने कौन मंगल कर्म करो है अथवा तप करो है वा सत्पात्रनकूं दान करो है, जाके प्रभावते ब्रह्मा महादेवके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्र भगवान्को आज दर्शन करूंगो ॥३॥ मोको भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन होयगो, यह मैं दुर्लभ मानूंहूं, विषयनमें मन, शूद्रकुलमें जन्म ऐसे पुरुषको वेदको उच्चारण जैसे दुर्लभ है[1] ॥ ४ ॥ ऐसे मत कहौ कि श्रीकृष्णको दर्शन मोको न होयगो, किंतु मे अधमकूं श्रीकृष्णके दर्शन निश्चय होइगेई जैसे नदीनके प्रवाहमें बहे तृणनमें कोई किनारेपै लगे हैं, तैसे कामनके वश हैके जो जीव हैं तिनमें कोई तरैं हैं ॥ ५ ॥ मैं श्रीकृष्णके लिवायवेकूं चल्योहूं याते मेरो अब मंगलरूप भयो मेरो जन्म सफल भयो योगी जिनको ध्यान करैं ऐसे श्रीकृष्णचंद्र भगवान्के चरणकमलको नमस्कार करूंगो ॥ ६ ॥ बडो आश्चर्य है अत्यंत दुष्ट कंसने मेरे ऊपर बडो अनुग्रह करो है जो कंसको भेज्यो मैं आयो अवतारधारी भक्तनके मनके हरनवारे श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविंदको मैं दर्शन करूंगो प्रथम अंबरीषसूं आदि लैके जे राजा भये हैं ते जिन श्रीकृष्णके नखमंडलकी कांतिसूं तरिवेमें अशक्य संसाररूपी अंधकारकूं तरिजात भये ॥ ७ ॥ जो चरणारविंद ब्रह्मा महादेवसूं आदि लेके देवतानने और प्रकाशमान लक्ष्मीने मुनीश्वरनके भक्तनने पूजे हैं और गौनके चरायवेके लिये जो चरणारविंद ग्वालबालनके संग वनमें फिऱ्यो है और जा चरणारविंदमें गोपीनके कुचनकी केशरी लगी है वा चरणारविंदको दर्शन करूंगो ॥ ८ ॥ सुंदर कपोल नासिका और मुसिकानि भरी चितवनि अरुण डोरा जिनमें आयरहे ऐसे कमलनेत्र अलककारी सटकारी घूंघरवारीसो युक्त श्रीकृष्णचंद्रके मुखको निश्चय दर्शन करूंगो कारण कि हरिण मेरे दाहिने आये हैं ॥ ९ ॥ पृथ्वीको भार उतारिवेके लिये अपनी इच्छासूं अब मनुष्यरूप धारण करनहारे शोभाके धाम श्रीकृष्णचंद्रको सुंदररूप दर्शन करूंगो तब मेरे नेत्र सफल होयगे ॥ १० ॥ तहां कोई शंका करै है कि हमारी तुल्य कर्मनके करनवारो दिखाई देयहैं तुम कैसे भगवान् कहो हौ ताको उत्तर देयहैं तीन लोकके कार्यरूप जगत् और कारणरूप महदादिक तत्त्वनकूं श्रीकृष्णचंद्र चितवनिसूं करे हैं तथापि विनके अहंकार नहीं है अपने तेजसों अज्ञानके भेद भ्रमसों रहित हैं अपने आधीन माया मायाकी ओर चितवनि करिके अपनेमें रचे जीव वृंदावनके वृक्षनके नीचे और गोपिनके घरनमें लीला करिके बद्धसो दिखाई देय हैं ॥ ११ ॥ जिन श्रीकृष्णके अहंकार नहीं है तो आ-

१ प्र०-विषयी शूद्रोंको वेद उच्चारण दुर्लभ है तौ क्या विरक्त शूद्र वेद उच्चारण कर सकते हैं ? उ०-यहां अधिकता दिखाई है कि वैसेही शूद्रको वेद उच्चारण नहीं करना चाहिये और जो विषयी हैं उनका सत्कर्म न करनेसे परजन्ममेंभी वेदोक्त दुर्लभही होगा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्माराम हैं तिनकूं लीला करिवो कैसे बने है या शंकाको उत्तर कहैं हैं कि भक्तनके ऊपर कृपा करिवेके लिये लीला करे हैं सबके पापनके दूर करनवारे सुंदर मंगलरूप श्रीकृष्णचंद्रके गुण जन्म कर्मसूं मिली वाणी जगतकूं जिवावे हैं और शोभायमान करे हैं पवित्र करे हैं और जिन वाणीनमें श्रीकृष्णचंद्रके लीला गुण जन्म कर्म नहीं गाये हैं विनको जे कहे हैं और श्रवण करे हैं ते अपवित्र हैं जैसे मृत्यु भयो शरीर अपवित्र है ॥ १२ ॥ यादवनके कुलमें जिन श्रीकृष्णचंद्रने अवतार लियो है अपनी मर्यादानको पालन करनहारे लोकपालनके सुखके करनवारे श्रीकृष्णचंद्र ईश्वर लीला करिके यशको फैलावत व्रजमें रहे हैं सबके मंगलरूप विनके यशको देवता गावैं हैं ॥ १३ ॥ महत्पुरुषनको सुंदर गतिके देनवारे गुरु त्रिलोकीमें सुंदर नेत्रनवारे पुरुषनकूं आनंदके देनेवारो लक्ष्मीको वांछित रहिवेको ठिकानो अति सुंदर रूपकों धारण करें श्रीकृष्णचंद्रको आज मैं निश्चय दर्शन करूंगो, प्रातःकालके समय मोय श्रेष्ठ शकुन भये हैं ॥ १४ ॥ दर्शन करे पीछे शीघ्र रथमेंते उतरिके ईश्वर रामकृष्णको निश्चय प्रणाम करोंगो और इनसहित व्रजवासी सखानको प्रणाम करूंगो, जिन रामकृष्णके चरणारविंद योगीनने आत्मलाभके लिये केवल मनमें ध्यान किये है ताको मैं साक्षात् प्रणाम करूंगो ॥ १५ ॥ चरणमें परे मेरे शिरपै समर्थ श्रीकृष्णचंद्र अपने हाथको धरैंगे; जो हाथ कालरूप सर्पकी फुंकारसौं डरपिके शरणकूं चाहनहारे मनुष्यनकूं अभयदान दैनहारो है ॥ १६ ॥ जिन श्रीकृष्णके हाथमें इंद्र पूजा राखिके इंद्रता पावत भयो तैसेंही राजा बली संकल्प राखिके त्रिलोकीकी इंद्रता पावतभयो रासक्रीडामें व्रजकी स्त्री गोपीनके श्रमके पसीनाकूं जा हाथते पोंछत भये और कमलकीसी जा हाथमें सुगंधि आवै वा हाथको मेरे शिरपै धरेंगे ॥ १७ ॥ कंसको संदेशो लैके कंसको भेज्यो जाऊंहूं तथापि समस्त विश्वके जाननवारे श्रीकृष्णचंद्र वैरी कंसके पासते यह आयो है ऐसी बुद्धि नहीं करेंगे कारण कि वे अंतर्यामी श्रीकृष्ण मेरे चित्तकी बाहिर भीतरकी चेष्टाकूं नित्यज्ञान करिके देखे हैं ऊपरते कंसको भेज्यो जाऊंहो भीतरते श्रीकृष्णको ध्यान लगि रह्यो है जा बातको नित्यज्ञान करिके अंतर्यामी जाने हैं ॥ १८ ॥ चरणारविंदमैं गिरे हाथ जोरे मोकूं मुसिकाये श्रीकृष्णचंद्र करुणाभरी दृष्टिसों जा समय देखेंगे ता समय शीघ्रही पाप और भय दूर है जायवेसौं सब पापहीन भयरहित हैके मैं बडो आनंद पाऊंगो ॥ १९ ॥ जिनके अतिशयकरिके हितकारी श्रीकृष्णके विना और कोई देवता नहीं वह श्रीकृष्णचंद्र अपनी जाति और कुटुंबीकूं मोकू अपनी लंबी भुजा पसारिके छातीते लगावेंगे तासमय यह देह पवित्र है जायगो और कर्मरूप बन्धनहू या देहको छूटि जायगो ॥ २० ॥ श्रीकृष्णते मिलिके नारि झुकायके हाथ जोरिके जब ठाढो होऊंगो तब हे अक्रूर ! हे काका ! या प्रकार बडे यशस्वी श्रीकृष्ण मोते कहेंगे ता समय हम सफलजन्म होंयगे भगवान् जाको आदर नहीं करै वा पुरुषको धिक्कार है ॥ २१ ॥ तिन श्रीकृष्णके कोई प्यारो और अतिशय करिके हितकारीहू नहीं है कोई कुप्यारो नहीं और न कोई वैरी है न कोई छोडिवे योग्य है तथापि जो भक्त जैसे भजेहै ताको तैसेही भजे है जैसे कल्पवृक्ष जो सेवन करे है ताहीकों वह फल देइ है ॥ २२ ॥ यादवनमें श्रेष्ठ बडे भैया बलदेवजी नीचीं नारि करिके ठाढे मोय मुसिकायके आलिंगन करिके हाथ पकरिके घरमें लेजायके समस्त सत्कार करके मोसों अपने बन्धु

---

१ कृष्ण अंतर्यामी कपट प्रीति सबकी जाने है एक बडे भारी ठग थे सो एक दिन बडी ऐंठमा पाग बांधकै चले लोगनने कही कहां चले बोले सबकूं तो हमने ठग्यो परन्तु जो परमेश्वरकूं ठगकै लावैं तौ हमारो नाम ठग है ऐसा कह चले परन्तु थोरी दूर जाय बगदि आये लोक बोले क्यौं भाई कैसे बगदे तो यह बोले कहा कहैं ठगते तौ सही परन्तु वह तौ अन्तर्यामी है हमारे मनको कपट जान जायगो वातें हमारो दाव नहीं लगैगो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यादवनमें कंसके कर्तव्यको पूछेंगे ॥ २३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार श्वफल्कके पुत्र अक्रूर मार्गमें श्रीकृष्णचंद्रको चिंतवन करत रथमें बैठके गोकुल पहुँचे इतनेमें सूर्य अस्ताचलको प्राप्त हैगयो ॥ २४ ॥ सम्पूर्ण लोकनके पालन करनवारे ब्रह्मादिक देवता अपने मुकुटनके ऊपर जिनके चरणकी रेणुको धारण करें ऐसे श्रीकृष्णचंद्रके चरणनके खोज अक्रूरजी ब्रजमें देखत भये जो पृथ्वीके गहनेरूप हैं, कमल यव अंकुशके जिनमें चिह्न हैं ॥ २५ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके चरणचिह्नके दर्शनके आनंदते संभ्रम और प्रेमसों रोमांच है आये नेत्रनमें आंसू आयगये, सो अक्रूरजी रथते उतरिके अहो यह मेरे प्रभुके चरणनकी रज है ऐसे कहत कहत चरणनके खोजनमें लोटत भये ॥ २६ ॥ देहधारीनको इतनोही पुरुषार्थ है कंसके संदेश लेके दंभ भय सोच छोडके श्रीकृष्णके चरणनके चिह्न दर्शन श्रवणादिकसूं जो अक्रूरको प्रेम भयो ॥ २७ ॥ ब्रजमें गोशालामें गौ दुहिवेको गये श्रीकृष्ण और बलदेवजीको अक्रूरजी देखत भये जो पीताम्बर और नीलाम्बरकूं पहिरे हैं तथा जिनके शरदऋतुके कमलसे नेत्र हैं ॥ २८ ॥ किशोर अवस्था श्याम और गौर स्वरूप लक्ष्मीकी शोभाके स्थान लंबी भुजा, सुन्दर मुख, सुन्दरनमें अतिसुन्दर हाथीके छोनाके तुल्य पराक्रमवारे ॥ २९ ॥ ध्वजा वज्र अंकुश कमलके चिह्नवारे चरणसूं ब्रजको शोभायमान करैं हैं, महात्मा हैं, कृपाभरी मुसिकानि लिये जिनकी चितवनि है ॥ ३० ॥ उदार रुचिर क्रीडावारे मोतिनके हार और वनमाला पहिरे, पवित्र चंदन केशरि लगाये स्नान किये निर्मल वस्त्र पहरे ॥ ३१ ॥ प्रकृतिपुरुषरूप आदिकारण जगत्के पालन करनवारे, पृथ्वीको भार उतारिवेके लिये बलराम केशव दो रूप धरिके अवतार लिये ॥ ३२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! अपने तेजते दिशानके अंधकारको दूर करें हैं जैसे सुवर्ण करिके नीलमणिको पर्वत अथवा रूपेको पर्वत जगमगाय है ऐसे रामकृष्णके रूप निहार ॥ ३३ ॥ स्नेहमें विह्वल हैके अक्रूरजी शीघ्र रथमैंते उतरिके रामकृष्णके चरणनमें दंडवत् करत भये ॥ ३४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्णके दर्शनसूं आनंद भयो तासूं नेत्रनमें अश्रुपात भरि आए उत्कंठाते अंगमें रोमांच है आये मैं अक्रूर दंडवत् करूंहूं ऐसे कहिवेकोहू नहीं समर्थ होते भये ॥ ३५ ॥ हितके करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अक्रूर एतदर्थ आये हैं यह जानिके चक्रकी रेखावारे अपने हाथते पकरिके प्रसन्न होयके छातीसों लगायके मिलत भये मिलिवेको कारण यह है कि कंसके मारिवेकी सामर्थ्य श्रीकृष्णने जताई ॥ ३६ ॥ उदार मन संकर्षण बलदेवजी दंडवत् करते भए अक्रूरजीकों छातीसूं लगायकै अपने हाथते दोनों हाथ पकरिके घरमें श्रीकृष्णसहित लिवाय जातभये ॥ ३७ ॥ भले आये ऐसे कुशल पूछिके अक्रूरजीको आसन बिछायके विधिपूर्वक पावनकों धोयके मधुपर्क देकै पूजन करत भये ॥ ३८ ॥ विधिपूर्वक पूजा करिके गोदान अक्रूरजीको दीनो मार्गमें परिश्रम पाये अक्रूरजीके चरणारविंद आदरसों दाबिके गुणभरी पवित्र अन्नकी सामग्री भोजनार्थ अति श्रद्धासों अक्रूरजीके आगे निवेदन करतभये ॥ ३९ ॥ अक्रूरजी भोजन जब करिचुके तब परधर्मके जाननवारे बलदेवजी वीरी चंदन केशरि अतर फूलनके हार इत्यादिकनसूं प्रसन्न करतभये ॥ ४० ॥ सन्मान करके अक्रूरजीते नंदजी पूछतभये निर्दयी कंसके जीवत तुमारो कैसें जीवन होयहै, कसाईके घर रहती भेडकी समान तुम कैसे रहै हो ? ॥ ४१ ॥ प्राणनके पोषणवारे दुष्ट कंसने विलाप करती अपनी बहिनके पुत्र मारे ता कंसकी प्रजा तुम हो तुम्हारी कहा कुशल विचारे ॥ ४२ ॥ या प्रकार मधुर वचनते पूंछिके नन्दजीसों सत्कार पाय अक्रूरजी मार्गके परिश्रमको त्यागते भये ॥ ४३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इत्थं सूनृतया वाचा नन्देन सुसभाजितः ॥
अक्रूरः परिपृष्टेन जहावध्वपरिश्रमम् ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० अक्रूरागमनं नाम अष्टत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३८॥

अध्याय ३९.

श्रीशुक उवाच-सुखोपविष्टः पर्यंके रामकृष्णोरुमानितः ॥
लेभे मनोरथान् सर्वान् पथि यान् स चकार ह ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित! शय्याके ऊपर सुखपूर्वक बैठे कृष्ण बलदेवसो बडो सत्कार पाय अक्रूरजी मार्गमें जे जे मनोरथ करते भये हे ते २ समस्त पूरण भये ॥ १ ॥ छः प्रकारके ऐश्वर्य करि परिपूर्ण शोभाके स्थान श्रीकृष्ण जब प्रसन्न भये तब कौनसी वस्तुकी प्राप्ति न भई ? हे राजन् परीक्षित! कृष्णपरायण भक्तको कछु वस्तुकी चाहना नहीं है ॥ २ ॥ देवकीके पुत्र भगवान् श्रीकृष्णचंद्र संध्यासमय व्यारू करिके अपने यादवनसो कंसके वर्त्तावको अक्रूरजीसूं पूंछत भये और कछु करिवेको विचार है सो पूछत भये ॥ ३ ॥ श्रीभगवान् श्रीकृष्ण बूझैं हैं हे काका साधु! तुम भले आये, तुम्हारो कल्याण होउ, जातिके भैयाबंधुको सुख है आरोग्य है ? ॥ ४ ॥ अंग अर्थात् हे अक्रूर! मामा कंस तौ हमारे कुलको रोग बढो है तब अपने भैया बंधुनकी और कंसकी प्रजाकी कहा कुशल पूछों ॥ ५ ॥ हमारे निरपराध मातापिताकूं हमारे लिये बडो दुःख भयो हमारे लिये विनके पुत्र मरे हमारे लिये विनको बंधन भयो ॥ ६ ॥ हे साधो! बहुत दिनते तुम्हारे दर्शनकी अभिलाषा रहि, अब अपनेनको दर्शन भयो हे काका! तुम्हारो आयवो कैसे भयो यह हमते वर्णन करो ॥ ७ ॥ मधुवंशोद्भव अक्रूरजी श्रीकृष्णके पूछेते सम्पूर्ण वृत्तांत कहत भये कंस यादवनसूं वैर करै है और वसुदेवके मारिवेके उद्यम करै है धनुषयज्ञके देखिवेके तो मिस है चाणूरादिकनपै तुमें घात करायवेके लिये मोहि भेजो है वसुदेवते श्रीकृष्णको जन्म भयो है, यह बात नारदजी कंसते कहिआये हैं सो संपूर्ण अक्रूरजी श्रीकृष्णते कहतभये ॥ ८ ॥ ९ ॥ श्रीकृष्णचंद्र और बडे बडे शत्रुनके पराजय करनवारे श्रीबलदेवजी अक्रूरको वचन श्रवण करिके पिता नंदजीसूं हँसिके राजा कंसको संदेशो जतावते भये ॥ १० ॥ नंदजी गोपनको आज्ञा देतभये संपूर्ण दूध दही लैलेउ गाडानको जोतो ॥ ११ ॥ कल्लके दिन मथुरा जांयगे राजा कंसको रस देंयगे, यामें यह बोधन करो कि जब देहमें रोग वृद्धिकूं प्राप्त होयहैं तब रस देयहैं, ऐसे कंसरूपी रोग बढो है याको रस देंयगे, और देशवासीहू जांयगे ऐसे नंदरायजी अपने गोकुलके कोतवालको बुलायके दोंडी पिटावत भये ॥ १२ ॥ वे गोपी जा समय अपने जीवन श्रीकृष्ण बलरामको मथुरापुरीमें ले जायवेकूं ब्रजमें अक्रूरजी आये हैं, यह बात सुनतभई ता समय अत्यंत दुःखित होतभई ॥ १३ ॥ अब गोपीनके दुःखके लक्षण कहैं हैं श्रीकृष्ण मथुरा जांयगे यह बात सुनिकै हृदयके उत्पन्न भये तापसौं गोपिनके मुख कुमलागये, वस्त्र चूरी कंकण केशनकी ग्रंथि यह सब शिथिल होगई ॥ १४ ॥ श्रीकृष्णके ध्यान करके बहुत गोपिनकी यह दशा भई कि विनकी इन्द्रिनकी वृत्ति जाती रही नेत्रनते देखिवो काननते सुनिवो वाणीते बोलिवो नासिकाते सूंघिवो सब छूटि गयो और कोई गोपी मुक्त पुरुषनके समान या देहको नहीं जानत भई ॥ १५ ॥ कोई गोपी स्नेहते

१ प्र०-अक्रूरजीने कंसका भेद बताकर विश्वासघातता की ॥ उ०-भगवान् अन्तर्यामी हैं उनसै छिपा कुछ है ही नहीं, इस कारण कंसका भेद बतानेसे उनको कुछ दोष न लगा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुसिकायके हृदयको आनंददायक चित्रविचित्र बोलनिवारे श्रीकृष्णके वचननकी सुधि करिके मोहित होत भई ॥१६॥ कोई मुक्तिके देनवारे श्रीकृष्णचंद्रकी मनोहर चलनि स्नेहभरी चितवनि शोककी दूरि करनवारी बोलनि इत्यादिक चेष्टानकूं बडे चरित्रनकूं स्मरण करत भई ॥ १७ ॥ यह सत्यही जायेंगो या भयसों विरहमें कातर अश्रु मुखपै बहाती श्रीकृष्ण भगवान्में मन लगाये हजारन गोपिनके झुंड जुरिमिलिके समस्त आपुसमें यह कहत भई ॥१८॥गोपी कहैं हैं अहो विधाता ! तेरे कहूं दया नहीं हैं देहधारीनको मिलायके मित्रता करावै स्नेह लगावै फेरि उनके मनोरथ पूर्ण न होन पामें तबतक उनको ऐसो न्यारो न्यारो करिदेय है जैसे बालक खिलौनाको इकठौरे करिके फेरि न्यारो न्यारो करदेय है यह तेरो कर्तव्य व्यर्थ है ॥ १९ ॥ तेरो यह कर्म निंदित है अब यह कहैं हैं घूमघुमारी छल्लादार अलके जापैं छूटरही सुन्दर जामें कपोल ऊंची नासिका शोककी हरनवारी मंद मंद मुसिकानिसों सुन्दर प्यारे श्रीकृष्णचंद्रको मुख दिखायके हमारे नेत्रनसों न्यारो करै है यह तेरो कर्म बुरो है ॥ २० ॥ दान करिके लेइ है याते तू बडो कठोर है (अक्रूर ले जाय है मैं तौ नहीं लेजाऊंहूं कदाचित् ऐसे जो विधाता कहे तहां गोपी कहैं हैं) या महाक्रूरको अक्रूर नाम कोनने धरो है अथवा अरे विधाता निर्दयी ! अक्रूर नाम धरिके तुही आयो है, सो तैंने हमकौं कृष्णरूपनेत्र दिये हैं, तिनकूं अज्ञानीकी तुल्य हरिके ले जाय है कदाचित् कहो कि कृष्णको हरके लिये जाऊंहूं तुम्हारे नेत्रको तो नहीं हरोहों तहां कहे हैं हमारे नेत्रको तो हरैही है जो तैंने नेत्र दियो हैं तासूं श्रीकृष्णके एक अंगमें संपूर्ण विश्वकी चतुराई देखलेत भई कृष्णरूप विना आंधरी गोपी कौनको देखैंगी ॥ २१ ॥ क्षणभंग स्नेहवारे नंदके पुत्रकी मुसिकानिसों मोहित भई घरमें या बंधूनको त्यागिके और पुत्र पतिनको छोडिके साक्षात् जिनकी दासी भई, हाय हाय हमें देखेहू नांय है याकूं नये नये प्यारे लगै हैं ॥ २२ ॥ मथुराकी स्त्रीनकूं या रात्रिको सबेरो अच्छो होयगो, क्यों कि विनके मनोरथ निश्चय सांचे होयगे, जब मथुरामें जायगे तब कटाक्षनको लिये मुसिकानि रूप रसवारे मुखको वे आदरते देखैंगी, कदाचित् कहो दो तीन दिनको जाय हैं तुमते अधिक प्यार करनहारो बाबा संग जायहै लिवायके चल्यो आवेगौ ऐसी व्याकुल क्यों होउहौ, तहां गोपी कहैं हैं मथुराकी स्त्रीनकी मीठी मनोहर बातनसूं प्यारेको चित्त पकरो जायगो, उनकी लाजभरी मुसिकानि कटाक्षनसों मन चलायमान है जायगो । दोहा कवित्तनके अर्थ करनहारी चतुर स्त्रीनकी आंखि जब प्यारो देखैगो तब हे सखी ! अधीर्यवान् बाबाके आधीन है तथापि गामकी रहनवारी हम गँवारिनके पास फेरि काहेको आवैगो ॥ २३ ॥ २४ ॥ आज तौ मथुरामें दाशार्हवंशी भोजवंशी अंधकवंशी यादवनकी आंखिनको निश्चय आनंद होयगो लक्ष्मीके रमामनवारे समस्त गुण-युक्त देवकीके पुत्र श्रीकृष्णचंद्रकूं जे पुरुष मार्गमें देखेंगे तिनकी आंखिनको निश्चय बडो आनंद होयगो ॥ २५ ॥ ऐसे क्रूर कर्म करनेवाले निर्दयीको अक्रूर यह सुंदर नाम मति होऊ जो यह निर्दयी बहुत दुःखित हमारे विना पूछे प्राणनते प्यारे कृष्णकूं हमारी आंखिनते दूर लिये जाय है ॥ २६ ॥ देखो कठोर बुद्धि यह कृष्ण रथमें जाय बैठे हैं अभागे गोप जलदी गाडा हांको ऐसे श्रीकृष्णके पीछे उतावल करैं हैं और वृद्धहू याकूं नाहीं नहीं करैं हैं, अरी सखि ! और कौनको दोष देईं आज हमारो दैवही उलटो है गयो, दैव सूधो होतो तौ कोई विघ्न है जातो बुरो शकुन विचारके प्यारो यहांही रहितो, न जातो ॥ २७ ॥ गोपी कहैं हैं चलिके या श्रीकृष्णको मनें करैं याके रथके आगे आडी परिके कहैंगी जो जायहै तो हमारी छातीपै रथको पैया धरिके जा हमारो यह कुलके बडे बूढे कहा करेंगे जो आधे क्षणहू नहीं छुटसक्ते उन मुकुन्दको वियोग कर दैवने हमारे चित्त दीन कर दिये हैं ॥ २८ ॥ या श्रीकृ-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ष्णकी स्नेहभरी मनोहर मुसिकान, मनोहर लीलापूर्वक चितवनि आलिंगनसौ रासकी सभामें बडी बडी रात्री एक क्षणकी तुल्य विताई, हे गोपिओ ! या कृष्ण विना विरहरूपी दुःखके समुद्रको कैसे तरेंगी ॥ २९ ॥ बलदेवके सखा गौनके खुरनकी रजसूं धूसरी अलक किये और माला पहरे कृष्ण संध्यासमय ग्वालबालनको संग लैके बांसुरीको बजावत आवैं हैं मुसिकानि कटाक्षभरी चितवनिसों चित्तको चुरावै हैं, अब इन विना कैसे जीमेंगी ॥ ३० ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार अत्यन्त विरहमें व्याकुल श्रीकृष्णमें मन लगाय व्रजकी स्त्री गोपी लाज छोडिके हे गोविन्द ! हे दामोदर ! हे माधव ! ऐसे पुकार पुकारके रोवतभई ॥ ३१ ॥ या प्रकार स्त्री रुदन करेंही इतनेमें सूर्य उदय होइ आयो ता पीछे संध्योपासन कर अक्रूरजी रथको हांकत भये ॥ ३२ ॥ नंदादिक संपूर्ण गोप बडी भेंट लैके दूध दही माखनते भरे कलशनकूं लैके गाडानमें बैठिके पीछेते जातभये ॥ ३३ ॥ श्रीकृष्णमें आसक्त मनवारी गोपी श्रीकृष्णके पीछे जायके अभऊ प्यारो बगदिके आवै ऐसे श्रीकृष्णको बगदिको पैंडो देखत ठाढी भई ॥ ३४ ॥ यादवनमें उत्तम श्रीकृष्ण अपने चलिवेके समय गोपीनको व्याकुल देखिके जलदी आऊंगो ऐसे प्रेमसहित दूतनसो वचन कहिवायके शांत करत भये ॥ ३५ ॥ जहां ताईं रथकी ध्वजा दीख्यो करी जहां ताईं रथकी धूर उडती दीखी तब ताईं श्रीकृष्णमें चित्त लगाये गोपी अबहु बगदि आमें ऐसे विचार करत चित्रकी तुल्य लिखीसी ठाढी होतभईं ॥ ३६ ॥ तब श्रीकृष्णके बगदिवेकी आशा त्याग वे गोपी बगदिके आवति भईं, श्रीकृष्णकी लीलानको गायगायके शोक त्यागति दिननको बितावत भईं ॥ ३७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! पवनकी तुल्य वेगवारे रथमें बैठिके बलदेव अक्रूर सहित श्रीकृष्णचंद्र भगवान् पाप दूर करनवारी यमुनाके निकट प्राप्त होत भये ॥ ३८ ॥ ता यमुनामें हाथ पांव धोई आचमन करि मीठो निर्मल जल पीके बगीचामें आयके बलदेवसहित रथमें बैठत भये ॥ ३९ ॥ अक्रूरजी श्रीकृष्ण बलदेवकूं रथमें बैठारिके उनते आज्ञा मांगिके यमुनाके तीरपै आयके विधिपूर्वक स्नान करत भये ॥ ४० ॥ ता जलमें गोता मारिके गायत्रीको जप करत अक्रूरजी राम कृष्णको देखत भये ॥ ४१ ॥ वसुदेवके पुत्र राम कृष्ण रथमें बैठे हैं यहां कैसे आयगये कदाचित् रथमेंसो उतर तो न आये मैं निकसिके देखौं तो या प्रकार अक्रूरजी कहत भये ॥ ४२ ॥ फेर अक्रूरजी निकसिके देखें तो पहिलेकीसी नाईं रथमें बैठे हैं ता समय अक्रूरजी विस्मित होत भये कि जो जलके भीतर मोको दोनोनको दर्शन भयो सो कहा मिथ्या है ऐसे विचारिके फेरि गोता मारत भये तब सिद्ध चारण गन्धर्व देवता नर्तक सम्पूर्ण स्तुति करें हैं शेषजी विराजमान हैं ऐसे देखत भये ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ हजार शिरके मुकुटसहित हजार फण नील वस्त्रकूं धारण करे, कमलनके नालकी तुल्य श्वेत वर्ण कैलासकी तुल्य प्रकाशमान शेषजीको देखत भये ॥ ४५ ॥ कुंडली करिके विराज-

---

१ यशोदावचन ॥ चौपाई–मोहन इधर देख तो लीजे । बिछुरत लाल हमें कछु दीजे ॥ लेहु निहार जन्म व्रजखेरो । बहुरो व्रजमें होत अँधेरो ॥ सोरठ राग ॥ जसुमति बारबार यह भाखै । है कोइ व्रजमें हितू हमारो चलत गुपालहि राखै ॥ १ ॥ कहा काज मेरे छगन मगनको नृप मधुपुरी बुलाये । सुफलकसुत मेरे प्राण हरणको कालरूप होय आये ॥ २ ॥ वर यह गोधन कंस लेहि सब मोहि बंदिलेमेले । इतनो मांगत कमलनैन मेरी आंखन आगे खेले ॥ ३ ॥ को करकमल मथानी गहिकै को दधि माखन खै है । बहुरो इंद्र बरासिहै व्रजपर को गिरि नखपर लै है ॥ ४ ॥ बासररैन विलोकों जीओं संग लाग हुलराऊं । हरि बिसरत जो रहों कर्मवश तौ केहि कंठ लगाऊं ॥ ५ ॥ टेरटेर घर परत जसोदा अधरवदन बिलखानी । सूर सो दशा कहां लगि बरनों दुखित नंदकी रानी ॥ ६ ॥

२ क०–कुटिल बैरी काहू जन्मनको चेटकसो डार सरलेकै व्रज मूरिगो । व्याकुल बिहालबार वंशी धर श्यामबिन मीनसी तलफ मानो प्रेमरस झूरिगो ॥ चरण उठाय चकित चितवन ऊंचे धाम चढि चिन्तामणी चकित भयो चैन सब चूरिगो । बार बार कहत बिसूरि जल पूरि नैन धूरि ना उडत आली अब रथ दूरिगो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मान तिनके ऊपर श्याम और पीत वस्त्रनको धारण करे चार भुजा शांत स्वरूप पुरुष कमलके पत्तानकी तुल्य अरुण नेत्र ॥ ४६ ॥ सुंदर प्रसन्न मुख, सुंदर हासभरी चितवनि, सुंदर भ्रुकुटी और नासिका सुन्दर कर्ण सुन्दर कपोल और अरुण ओष्ठ ॥ ४७ ॥ लंबी मोटी भुजा, विशाल हृदयमें लक्ष्मी विराजमान, गोपालशंखसी ग्रीवा त्रिवलीयुक्त सुन्दर नाभी पीपरके पत्ताकी तुल्य चिकनो उदर ॥ ४८ ॥ पतली कमरि बृहत् श्रोणी करिके शोभायमान दोनों जंघा ॥ ४९ ॥ लंबी दोनों गुल्फ, लाल नख, प्रकाश करिकै सुन्दर कोमल अंगुली सुन्दर चरणकमल ॥ ५० ॥ बहुत मोलनके मणिनसों जडित किरीट, कडे, बाजूबंद और कमरमें कोंदनी यज्ञोपवीत मोतिनके हार चरणमें नूपुर काननमें कुण्डलनसूं प्रकाशमान ॥ ५१ ॥ कमल और शंख चक्र गदाकूं धारण किये भृगुलत्ताको चिह्न छातीमें प्रकाशमान, कौस्तुभमणिकी धुकधुकी ॥५२॥ सुनंदनंद मुख्य पार्षद सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार ब्रह्मा महादेवते आदि लैके देवता मरीचिको आदि लैके ब्राह्मण प्रह्लाद नारद वसु मुख्य उत्तम भक्त न्यारे न्यारे भावते निर्मलवचननते जिनकी स्तुति करे हैं ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ श्री, पुष्टि, वाणी, कांति, कीर्ति, तुष्टि, इला, ऊर्जा, विद्या, अविद्या, शक्ति, माया ये सब जाको निरंतर सेवन करैं हैं ॥ ५५ ॥ ऐसे परिपूर्ण श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करिके अत्यन्त प्रसन्न हैके परम भक्तिको पाय आनन्दते देहमें रोमांच भये, भक्तिसूं नेत्रनमें आंसूं भरि आये अक्रूरजी माथेसूं प्रणाम करिके सावधान हैके हाथ जोरिके हौलेसों सत्त्वगुणको आश्रय लैके गद्गद वाणीसूं स्तुति करत भये ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

गिरा गद्गदयाऽस्तौषीत् सत्त्वमालम्ब्य सात्त्वतः ॥
प्रणम्य मूर्धावहितः कृताञ्जलिपुटः शनैः ॥ ५७ ॥

इति श्रीमद्भागवत भाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे अक्रूरप्रतियाने एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥

अध्याय ४०.

अक्रूर उवाच–नतोऽस्म्यहं त्वाखिलहेतुहेतुं नारायणं पूरुषमाद्यमव्ययम् ॥
यन्नाभिजातादरविन्दकोशाद् ब्रह्माऽविरासीद्यत एष लोकः ॥ १ ॥

अक्रूरजी बोले समस्त कारणके कारण नारायण आदिपुरुष अविनाशी तुमकूं नमस्कार करूंहूं, जिनकी नाभिमें भये कमलसो ब्रह्मा होत भयो ता ब्रह्माते यह लोक उत्पन्न भयो ॥ १ ॥ पृथ्वी जल अग्नि पवन आकाश अहंकार महत्तत्त्व पुरुष मन इंद्रियनके अर्थ विषयसूं संपूर्ण देवता ये जगत्के कारण हैं ते तुम्हारे अंगते भये हैं ॥ २ ॥ ब्रह्माते आदि लैके जड जो संपूर्ण तत्त्व हैं ते अपने स्वरूपको नहीं जानैं हैं. जीव तत्त्वनको जानैं हैं, अपने स्वरूपको जानैं हैं, मायामें गुणनतैं बंध्यो जीव गुणनते न्यारो तुम्हारो स्वरूप नहीं जानै हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्माके उपास्य ईश्वर तुम होवो तुम्हारी पूजा करै हैं, इंद्रिय पंचभूत देवतानके साक्षी अंतर्यामी तुम हो साधु पूजा करे हैं[1] ॥ ४ ॥ कोई एक कर्मनमें निष्ठावारे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेदसों यज्ञनको विस्तार करिके अनेक रूप देवतानकों नाम लैलैके पूजन करैं हैं ॥ ५ ॥ कोई एक ज्ञानी पुरुष समस्त कर्मनको त्यागि समाधिमें आयके ज्ञानरूप तुमको पूजन करै हैं ॥ ६ ॥ और दूसरे पुरुष विष्णुकी दीक्षा लैके नारदपंचरात्रमें कही पूजाकी विधिसूं वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध चतुर्व्यूहमूर्तिनके भेदनकरिके बहुत रूप

१ ईश्वर महापुरुषकों तोको योगी जन साक्षात् अध्यात्म अधिभूत अधिरूपको तेरो यजन करै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और नारायणरूपकरिके एक रूप तुम्हारी पूजा करैं हैं ॥ ७ ॥ और दूसरे पुरुष शिवजीके कहे शैवमार्ग पाशुपत मार्गसौं शिवरूप तुमको पूजैं हैं, हे भगवन्! अनेक प्रकारसौं उपासना करैं हैं ॥८॥ हे सर्वदेवतारूप! हे समर्थ! जे पुरुष और देवतानके भक्त हैं और देवतानमें विनके मन लगिरहे हैं वे सबके ईश्वर तुम्हारीही पूजा करैं हैं, कारण कि आप सब देवतानके रूप हैं ॥ ९ ॥ हे प्रभो! जैसे पर्वतनतें निकसे जलसूं पूर्ण होय नदी चारों ओरते वहि वहिके समुद्रमें जाय मिलै हैं तैसे सब देवतानके मार्ग अंतमें तुमहीमें आय मिले हैं ॥ १० ॥ तुमारी प्रकृति मायाके सत्व रज तम ये तीनों गुण हैं तिन तीनों गुणनमें वृक्षते आदि लेके ब्रह्मापर्यन्त सब जीव प्रविष्ट भये हैं अर्थात् तीनों गुणनमें रहैं हैं, वे गुण मायामें रहे हैं या क्रमते जो उपाधिनका नाश हैं ताते सब जीव तुमहीमें प्रवेश करे हैं ॥११॥ संसारमें अलिप्त बुद्धि आत्मा सब प्राणीनके बुद्धिके साक्षी तुमको नमस्कार है, अविद्याको भयो गुणनको प्रवाह ये संसार देवता मनुष्य पशु पक्षीकी देहमेंही प्रवृत होय है यासौं इनमें और आपमें बडा अंतर है ॥ १२ ॥ अग्नि तुम्हारो मुख है पृथ्वी तुम्हारो चरण है, सूर्य नेत्र आकाश नाभि, दिशा कान है, स्वर्ग मस्तक है, देवता तुमारी भुजा है, और समुद्र कांखि हैं पवन प्राणरूप बलरूप कल्पना करो है ॥ १३ ॥ वृक्ष औषधि देहके रोम हैं, मेघ तुमारे केश है पर्वत तुम्हारे हाड और नख हैं, रात्रि दिन पलकनको खोलिवो मूंदिवो है, प्रजापति तुम्हारो मेढ्र है, वर्षा तुमारो वीर्य कहै है ॥ १४॥ ते अविनाशी पुरुषमेंही लोकपालनसहित लोक स्थित हैं और वे बहुत जीवनकरिके व्याप्त हैं जैसे जलमें छोटे कीरा चलै हैं गूलरमें भुनगा उडै हैं, ऐसे मनकी वृत्तितैं जानिवेमें आयवेवारे तुममें अनंत ब्रह्मांड फिरै हैं ॥ १५ ॥ या संसारमें खेलिवेके लिये अपने जो जो रूप धरे हैं तिनसौं शोक दूर कर लोक आनंदसूं तुम्हारे यशको गामैं हैं ॥ १६ ॥ सत्यव्रतको माया दिखायवेके लिये मत्स्यरूप धरिके प्रलयके समुद्रमें विचरनहारे तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, मधुकैटभ दैत्यको मारिवेके लिये हयग्रीवरूप धारनहारे तुमको नमस्कार है ॥ १७ ॥ मंदराचल पर्वतके धारण करनवारे बडे कच्छपरूप तुमकूं नमस्कार है, पृथ्वीके लायवेके लिये वराहरूप धारण करनवारे तुमकूं नमस्कार है ॥ १८॥ साधुनके भयके दूर करनवारे अद्भुत नृसिंहरूप धरनहारे तुमकूं नमस्कार है वामन है के तीनों लोक नापनहारे तुम्हें नमस्कार है ॥ १९ ॥ गर्वीले क्षत्रियरूप वनके काटनवारे भृगुवंशीनके पति परशुरामरूप तुमको नमस्कार है, रावणके मारनवारे रघुवंशीनमें श्रेष्ठ रामचंद्ररूप तुमको नमस्कार है ॥ २० ॥ वासुदेवरूप तुमको नमस्कार है संकर्षणरूप तुमको नमस्कार है, प्रद्युम्नरूप तुमको नमस्कार है अनिरुद्धरूप तुमको नमस्कार है भक्तनके पति तुमको नमस्कार है ॥ २१ ॥ दैत्य दानवनके मोहन करनवारे शुद्ध बुद्धरूप तुमको नमस्कार है म्लेच्छक्षत्रियनके मारनहारे कल्कीरूप तुमको नमस्कार है ॥ २२ ॥ हे भगवन्! यह जीव तुमारी मायामें भूलि रह्यो है, मैं मेरो ऐसे देहगेहादिकमें और कर्ममार्गनमें भ्रमण करे हैं ॥ २३ ॥ हे विभो! आत्मा देह पुत्र घर स्त्री धन भैया बंधु इत्यादिक जे स्वप्नकी तुल्य हैं तिनको सत्य मानिके भ्रमोहूं ॥ २४ ॥ अनित्य आत्मा दुःखरूप है, तिनकूं नित्य आत्मा सुखरूप जानूंहूं, सुखदुःखमें क्रीडा करनहारो अज्ञानसों भरो मैं अपने प्यारे तुमको नहिं जानूं हूं ॥ २५ ॥ जैसे अज्ञानी पुरुष शैवालसो ढके जलकौं छोडिके सूर्यकी किरणसौं वारू चमकते जलके लिये जायहैं तैसें मायासूं ढके तुमको त्यागिके देहादिकनमें मेरो मन लग रह्यो है ॥ २६ ॥ कृपणबुद्धि अर्थात् विषयनमें बुद्धि लगवेसों काम्य कर्मसौं क्षुभित भये मनकूं रोकवेमें

१ विषयेंद्रिय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समर्थ नहीं हूं जोरावर इंद्रिय मनकूं इत उत चलायमान करे है ॥ २७ ॥ जो मैं पराधीन हों सो तुमारे चरणकी शरण आयो हों तुमारे चरणकी शरण असाधुनको दुर्लभ है, हे अंतर्यामी ! तुमारे चरणनको स्पर्श तुमारी कृपाते भयो है यह मैं मानूं हूं, पुरुषको जब संसार छूटनवारो होयहै तब हे कमलनाभ ! साधुनकी सेवा करे हैं साधुनकी सेवाते तुममें आयके मति लगी हैं, तुमारी कृपा विना साधुनकी सेवाहू नहीं बने है तुममें मतिहू नहीं लगि सके है ॥ २८ ॥ विज्ञान मूर्ति समस्त ज्ञानके कारण पुरुष काल माया इनके रूप ब्रह्म तुम हो, और अनंत शक्ति तुमको मैं नमस्कार करूंहूं ॥ २९ ॥ हे समर्थ ! हे इंद्रियनके प्रेरणवारे ! चित्तके अधिष्ठाता सब प्राणीनके आश्रय तुमकूं मैं नमस्कार करूंहूं, आपके शरणमें आयो मेरी रक्षा करो ॥ ३० ॥

नमस्ते वासुदेवाय सर्वभूतक्षयाय च ॥
हृषीकेश नमस्तुभ्यं प्रपन्नं पाहि मां प्रभो ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे अक्रूरस्तुतिर्नाम चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥४०॥

अध्याय ४१.

श्रीशुक उवाच-स्तुवतस्तस्य भगवान् दर्शयित्वा जले वपुः ॥
भूयः समाहरत् कृष्णो नटो नाट्यमिवात्मनः ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! स्तुति करते भए अक्रूरको भगवान् जलके भीतर रूप दिखायके फेर समेटत भये, जैसे नट अपने स्वांगको दिखायके समेटे है ॥ १ ॥ अक्रूरजी श्रीकृष्णचंद्रको जलमेंते अंतर्द्धान भये देखिके उछरिके जल्दीसो सम्पूर्ण संध्योपासन करिके आश्चर्य मानिके रथमें आवत भये ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण अक्रूरजीसूं पूछत भये पृथ्वीमें जलमें आकाशमें तुमने आश्चर्यसों कहा देखो है कछु आश्चर्यरूप चकितसे तुम व्हैरहे हैं ॥ ३ ॥ तब अक्रूरजी बोले या संसारमें पृथ्वीमें आकाशमें जलमें जितने आश्चर्य हैं ते सब आश्चर्य विश्वरूप तुममें भरे हैं तुमारो दर्शन करो मैंने कहा आश्चर्य न देखो सब देखो या प्रकार अक्रूरजी कहत भये ॥ ४ ॥ जो तुममें सब आश्चर्य भरे हैं, तिन तुमारो दर्शन मैंने कियो है, हे परमश्वर ! पृथ्वीमें आकाशमें या संसारमें कहा आश्चर्य देखिवो बाकी रह्यो है ॥ ५ ॥ ऐसे कहिके गांदिनीके पुत्र अक्रूरजी रथको हांकत भये, तीसरे पहरके समय रामकृष्णकूं मथुरा पुरीमें लावत भये ॥ ६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! मार्गमें ग्राममें ग्रामके रहनेवारे पुरुष तहां तहां आयके वसुदेवके पुत्र श्रीकृष्ण बलदेवकों देखिके प्रसन्न हैके वा रूपमें दृष्टि लगायके नहीं निकासत भये अर्थात् देखतेही ठाढे रहिगये ॥ ७ ॥ तब ताई नंदगोपसूं आदि लेके सब ब्रजवासी आगे आयके मथुराके बागमें कृष्ण बलदेवके आयवेको पैंडो देखत ठाढे होत भये ॥ ८ ॥ जगत्के ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र तिन ब्रजवासीनके पास आयके नम्र अक्रूरको हाथते हाथ पकरिके मुसिकाते बोलत भये ॥ ९ ॥ हे काका ! तुम आगे रथकूं लिवाय पुरीमें जाओ अपने घर जाओ; हम यहां तनक विश्राम लैके पीछे मथुरापुरीकूं देखेंगे, या प्रकार श्रीकृष्ण भगवान् कहत भये ॥ १० ॥ अब अक्रूरजी कहे है हे प्रभो ! तुम विना अकेलो मथुरापुरीमें न जाऊंगो हे नाथ ! हे भक्तनके ऊपर हितके करनवारे ! तुमारो भक्त मैं हूं मोकों तुम त्यागो मत ॥ ११ ॥ आओ हम तुम घर चलें, हे अधोक्षज ! हे सुहृदनमें उत्तम ! अपने बलदेव भैयासहित और ग्वालबालन सहित

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हमारे घर चलिके हमें सनाथ करो ॥ १२ ॥ अपने चरणनकी रजसूं हम गृहस्थनके घरकूं पवित्र करो । तुमारे चरणनकी धोमनसूं पितृ अग्नि देवता तृप्त होंयगे ॥ १३ ॥ तुमारो चरणयुगल धोइके राजा बलिको बडो पवित्र यश होत भयो, बडे ऐश्वर्यकों प्राप्त भयो, अनन्य भक्तनकों जो गति मिलै है ताय पावत भयो ॥ १४ ॥ हे देवतानके देवता ! हे जगन्नाथ ! तुम्हारी कथा श्रवण और गुण कथनसो भक्त पवित्र व्है जाय है, ऐसे तुम पवित्र गुणयुक्त हो हे नारायण ! आपको नमस्कार है ॥१५॥ तुमारे चरणारविंदको धोमन जल गंगारूप होयके त्रिलोकीकूं पवित्र करे हैं, जिन जलनकूं शिवजी अपने शिरपै धारण करे हैं, जिन जलनके स्पर्शते साठि हजार राजा सगरके पुत्र स्वर्गकूं गये ॥१६॥ अब श्रीकृष्ण भगवान् बोले बडे भैया बलदेवजीको संग लैके मैं तुमारे घर आऊंगो, यादवनसों द्रोह करनहारे कंसकूं मारिके सुहृदनको प्रिय विस्तार करूंगो ॥ १७ ॥ या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णको वचन कह्यो सुनिके अक्रूरजी विमन होयके पुरीमें जाय रामकृष्णकूं ले आयो ऐसे कंसते कहिके अपने घरकूं जात भये ॥ १८ ॥ या पीछे तीसरे पहरके समय बलदेव भैयासहित भगवान् श्रीकृष्णचंद्र गोपनकूं संग लैके देखिवेके लिये मथुरापुरीमें जात भये ॥ १९ ॥ अब मथुरापुरीको कृष्णने देख्यो ताको वर्णन करे हैं स्फटिकमणिनके ऊंचे सहरपनाहके और घरनके द्वार बने हैं तिनमें बडे बडे सोनेके किवार चढे हैं और वन्दनवार बंधे हैं, तामेके पीतरके अन्न भरिवेके कोठे बने हैं, चारों ओर औडी खाई बनी है, उद्यान (दूरिके बाग) और रमणीय उपवन (निकटके बाग) तिनसो अतिशोभायमान पुरी है ॥ २० ॥ सुवर्णके चौरस्ता और साहूकारनके महल और बडे बडे कारीगर मनुष्यनके मकान तिनकरिके शोभायमान पुरी है, वैदूर्यमणि हीरा निर्मल नीलमणि मूंगा मोती पन्ना इनके काम जिनमें भये मणिनके छज्जे हैं ॥ २१ ॥ जाली झरोखानमें बैठे परेवा मोर बोले हैं, तिनको सोर है रह्यो है, छिरके भये राजमार्ग चौराये गली बने हैं, तिनमें पुष्पनकी माला अंकुराधानकी खीलें चामर रही मंगल द्रव्य फैलि रहे हैं ॥ २२ ॥ चंदन दहीसूं छिरके फूल धरे ऊपर दीवानकी पंक्ति धरी, तिनपै आमकी डार धरी ध्वजा फहराय दरियाईके कपरा जिनकी नारिसों बंधे गहिर सहित केराके वृक्ष सुपारीके वृक्ष जिनके पास लगे ऐसे जलके भरे कलश द्वारेनके ऊपर धरे हैं इनसों पुरी शोभायमान है ॥ २३ ॥ बराबरके मित्रनकूं संग लेके मथुरापुरीके बीच बजारमें हैके निकसे वसुदेवजीके पुत्र श्रीकृष्ण बलदेवके देखिवेको पुरीकी स्त्री दौरिके आवतीभई हे राजन् परीक्षित् ! जिनको देखिवेकी इच्छा भई वे स्त्री

१ कैसी मथुरा देखी सो कहै है कि जहां सब बातें अनोखी हैं वो जो सुनते हैं कि मथुरा तीन लोकसो न्यारी मथुरा तीन लोकको प्यारी सोइ लिखो है कि—अजन्मा यज्जातः स जनिरजनित्वं च भजते कपालीपालोऽस्यां सकलजगदेकाहुतिकरः । सहस्रं वत्सानामपहरति धाता त्रिजगतां अहो कां कां शंकां वितरति न धन्या मधुपुरी ॥ १ ॥ अन्यच्च—हरिरपि भजमानेभ्यः प्रायो मुक्तिं ददाति नतु भक्तिम् । विहिततदन्वितमन्त्रां मथुरे धन्यां नमामि त्वाम् ॥२॥ दोहा—तुलसी मथुरा राम है जो करि जाने दोय । दो अक्षरके बीचमें ताके मुखमें सोय ॥ १ ॥ जो कोई मनुष्य मथुराको और रामको अलग अलग जाने तो वाके मुखमें (थु) समझनो अर्थात् वाके मुखमें (थू) अर्थात् थूक देनो इत्यादिक बहुतसे प्रमाण तथा मथुराजीको वर्णन हमारे बनाये मथुराजीकी शोभावर्णनमें देख लेनो ॥

२ अरी एरी चतुर नारी रसिकनके हृदयकपाट खोलवेकी प्यारी अरी एदारी क्यों लगावे बहुत वारी चलेगी सवारी तो देखेगी विहारी वहा भिरके मारे फिरै है थारी चलैगी अवारी तौ न देखेगी विहारी वहा भिरके मारे फट जायगी तेरी सारी फिर खायगी गारी फिर वहा मारीमारी डोलेगी ऐसे ऐसे अपनी २ सखीनको बुलावती चली है मथुराकी बाला ओढे दुशाला गरै मोतिनकी माला नेत्र जिनके भाला बैठी चंद्रशाला करें विहाला देखे नंदलाला भई सब निहाला । एक मथुरावारी खडी सबसे वो निराली पहरेही रंगिनकी साडी ओढेही सेला भारी वाने देखे बनवारी वाने आरती उतारी एकने सुनी कि आये श्याम मनके अभिराम वाने छोडे सब काम गुणके धाम संगमें बलिराम वाने देखे घनश्याम इत्यादि॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

महलनपै चढति भई ॥ २४ ॥ कोई स्त्री उतावलके मारे ओढिनीनकों पहिरके लहंगानको ओढिके हाथनके गहने पांवनमें पहिरके आवतिभई, कोई एक स्त्री हाथमें एक पावमें गहनो पहिरके आवत भई, कोई एक स्त्री एक कानमें कर्णफूल एक पावमें पाइजेब पहिरके आवत भई और स्त्री एकही आंखिमें काजल लगायके आवत भई ॥ २५ ॥ कोई एक स्त्री भोजन करैंही ताकूं छोडिके आवतभई "कहूं व्याह है रह्यो हो जब कृष्ण बलदेव आये सुने तब देखिवेको दूलो आपको भाज्यो दुलहिन आपको भाजी बराती आपको भाजे" और कोई स्त्री आंगनमें तेल लगावेंही वे विना स्नान करेही आवतिभई, कोई सोवतसूं उठिके आवतिभई, कोई स्त्री अपने बालकनकों दूध प्यावेंही कृष्णबलदेव आये सुने तब उनकौं रोवते छोडिके आवति भई बालक यालिये रोमें हें तुम तौ दर्शन करिवेको चली हमें क्यौं छोडे जाओहो हमकोंहूं ले चलो ॥ २६ ॥ मतवारे हाथीकी तुल्य पराक्रमवारे कमलदललोचन श्रीकृष्णचंद्र ढिठाई लीलापूर्वक हँसनी चितवनिसूं तिन स्त्रीनके मन चुरावत भये, लक्ष्मीके रमावनहारे अपने रूपसूं तिन स्त्रीनकी आंखिनकों आनंद देतेभये ॥ २७ ॥ बेरबेर बातें सुनिके विन श्रीकृष्णमें चित्त लगाये और तिनकी चितवनि मुसिकानिरूपी अमृतके सींचिवेसों सत्कार पायवेसो रोमांच होय आये ऐसी स्त्री श्रीकृष्णकों देखिके नेत्रद्वारा हृदयमें लेजायके आनंदरूप श्रीकृष्णको आलिंगन करिके हे कामलोभादिकनको दंड देनवारे हे राजन् परीक्षित्! श्रीकृष्णके विना मिलेतै भई कामदेवकी पीडाकों त्यागत भई ॥ २८ ॥ महलनकी शिखरपै चढी प्रसन्नतासों प्रफुल्लित नेत्रवारी स्त्री बलदेव श्रीकृष्णके ऊपर फूल वर्षावत भई ॥ २९ ॥ दही अक्षत जलके भरे पात्र माला चंदन भेंट लैके ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य प्रसन्न हैके कृष्ण बलदेवको पूजन करत भये ॥ ३० ॥ समस्त मथुरावासी आश्चर्य मानिके यह कहत भये गोपीनते कहा उत्कृष्ट तप कियो है जे गोपी मनुष्य लोकके बडे उत्सवरूप श्रीकृष्ण बलदेवकूं देखे हैं ॥ ३१ ॥ वस्त्रनको धोवनवारे और रंगनवारे एक धोबीको मार्गमें सन्मुख आवतो देखिके वासों धुये अति उत्तम वस्त्रनकूं श्रीकृष्णचंद्र मांगत भये ॥ ३२ ॥ हे धोबी! पात्र हम हैं तिनके योग्य इन वस्त्रनकूं तू देय तौ तोको अभी कल्याण होयगो यामें संदेह नहीं है ॥ ३३ ॥ सब प्रकार परिपूर्ण भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने धोबीते वस्त्र मांगे तब कंसको टहलुआ बडो घमंडी वह धोबी क्रोधकरिके डाटिके बोलत भयो ॥ ३४ ॥ नित्य पर्वतनके वनमें फिरनवारे, ऐसेही कपरा पहिरनवारे हौ रे उद्धत! राजाके वस्त्रनपै क्यों मन चलाओहौ ॥ ३५ ॥ हे मूर्खो! तुम यहांते शीघ्रही निकसि जाओ जो अपनो जीवन चाहौ तो फेरि मति मांगिओ, राजा कंसके प्यादे बहुत फिरें हैं जो धूम करे है ताहि बांधें हैं लूटे हैं मारे हैं तुम तौ ये वस्त्र मांगो हौ मोहिं यह दीखे है कि तुमारेऊ कोई उतारि लेइगो ॥ ३६ ॥ या प्रकार बकते धोबीके शिरकों देवकीके पुत्र श्रीकृष्णचंद्र कोप करिके अपने हाथके थापसूं काटत भये ॥ ३७ ॥ जब मुख्य धोबी मारो गयो तब वाके टहलुआ धोबी वस्त्रनकी पोट पटकि पटकिके चारों ओरको भाजत भये, ता समय श्रीकृष्ण तथा बलदेवजी अपने मनमानते वस्त्रनको पहिरे बाकी जे रहे ते गोपनकों देत भये और जे रहे ते वहांही छोडत भये ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ वस्त्र पहिरके चले ताके पीछे प्रसन्नमन एक दर्जीने तिन रामकृष्णको लाल हरे पीरे रंगके वस्त्र माला चंपकली बाजूबंद अनेक प्रकारके आभूषण बनायके शोभायमान पोषाक बनाई ॥ ४० ॥ कृष्ण बलदेव दोनौं भैया अनेक प्रकारके दर्जीके बनाये वस्त्रनके आभूषणनसों शोभायमान भये जैसे पर्वमें सामरे गोरे शृंगार

१ दोहा—परी धूम मथुरा नगर, आवत नंदकुमार । जहँ तहँ धाये नारि नर, गृहको काज विसार ॥

२ चौपाई—एहि विधि जहां तहां खडि नारी । प्रभुहि बतावै हाथ पसारी ॥ नीलबसन गोरे बलराम । पीतांबर पहने घनश्याम ॥ सुनत हुतीं पुरुषारथ जिनको । देखहु रूप नैनभरि तिनको ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

किये हाथीके छोना सुन्दर लगेहैं ॥ ४१ ॥ ता दर्जीके ऊपर प्रसन्न है भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने अपनी सारूप्य मुक्ति दीनी या लोकमें सम्मति देतभये बल ऐश्वर्य स्मरण और हाथ पांव नाक कान आंखि अच्छे बने रहैं इनकी चतुराई देतभये ॥ ४२ ॥ ताके पीछे सुदामा मालीके घर कृष्ण बलदेव जात भये तब वह इनकों देखिके धरतीमें शिर लगाय प्रणाम करत भयो ॥ ४३ ॥ और तिन कृष्णबलदेवको आसन बिछायके बैठावत भयो, और पाद्य अर्घ इत्यादिक पूजाकी सामग्रीसूं पूजा करतभयो, पानकी बीरी चंदन इत्यादिक अर्पण करतभयो ॥ ४४ ॥ माली कहत भयो हे प्रभो! तुमारे आइवेसूं हमारो जन्म सार्थक भयो, कुल पवित्र भयो और हमारे पितर देवता ऋषि संतुष्ट भये ॥ ४५ ॥ तुम निश्चय या संसारके परम कारण हो, जगत्के कारण हो जगत्के कल्याणके निमित्त और वृद्धिके लिये अंश करिके तुमने अवतार लिये है ॥ ४६ ॥ जगत्के हितकारी आत्मा तुमही हो, तुम्हारी विषम दृष्टि नहीं है सब प्राणीनमें समवर्ती हो भजन करनवारेनकों भजौहो ॥ ४७ ॥ तुम मो भृत्यको आज्ञा करो मैं तुम्हारी कहा पूजा करौं, पुरुषकों जो तुमारो दर्शन होई बडो अनुग्रह है ॥ ४८ ॥ हे राजन् परीक्षित! या प्रकार प्रसन्न मन सुदामामाली सुंदर सुगंधिनके फूलनकी बनी माला निवेदन करत भयो ॥ ४९ ॥ ते माला पहिरके मित्रनसहित सुंदर प्रसन्न होय वरके देनवारे रामकृष्ण शरण आये सुदामाकूं वर देतभये ॥ ५० ॥ सुदामा मालीहू सबके आत्मा श्रीकृष्णसों भक्ति मांगत भयो कि भगवान्के भक्तनमें स्नेह रहे और जीवमात्रमें दया रहे यह वर मांगत भयो ॥ ५१ ॥ ता मालीको वर दैके और ताके वंशमें सर्वदा रहनहारी सम्पत्ति दैके बल आयु यश शोभा दैके बलदेवजीकों संग लैके ताके घरते निकसत भयो ॥ ५२ ॥

इति तस्मै वरान् दत्त्वा श्रियं चान्वयवर्धिनीम् ॥
बलमायुर्यशः कान्तिं निर्जगाम सहाग्रजः ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे मथुरापुरप्रवेशो नाम एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

अध्याय ४२.

श्रीशुक उवाच-अथ व्रजन् राजपथेन माधवः स्त्रियं गृहीताङ्गविलेपभाजाम् ॥
विलोक्य कुब्जां युवतीं वराननां प्रपच्छ यान्तीं प्रहसन् रसप्रदः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित! मालीके घरते निकसे पीछे, मधुवंशमें भयेनके सुखके देनवारे श्रीकृष्णचंद्र राजमार्ग बाजारमें आयके चंदनके पात्र ग्रहण किये सुंदर मुखवारी सन्मुख तरुण कुबरी स्त्रीकों देखिंके हँसिके पूछत भये ॥ १ ॥ सुंदर जंघावारी तू स्त्री कौनकी है, चंदन कौनको है हमारे आगे भले प्रकार कहो, यह उत्तम चंदन हमकों देई तो अभी तेरो कल्याण होयगो ॥ २ ॥ यह सुनिके कुबरी बोली हे सुंदर! मैं कंसकी दासी हों कुबरी मेरो नाम है चंदन घसिवो

१ प्र०-कंसके पहरे कपडे कृष्णचन्द्रने शास्त्रविरुद्ध क्यौं पहरे? उ०-अपने मामाके वस्त्र हैं तथा धूले हैं फिर दरजीने काट छांटके ठीक किये इस कारण यज्ञोपवीतरहित शरीरमें धारण करना अनुचित नहीं राजाकी वस्तु शुद्ध तथा अपने बडेकी वस्तु है कुटुम्बीकी वस्तु है इसमें उच्छिष्ट नहीं है ॥

२ प्र०-क्योंजी ये कूबरी ही चंदन क्यों घिसती ही? उ०-प्रयोजन यह है कि कमजोरसो जो चंदन घिसो जाय है वो चंदन बहुत बारीक उतरे है और चंदनकी यही तारीफ है कि जितना बारीक उतरें वितनोही अच्छो होय है क्योंकि वो लगायवेसो शरीरमें मिल जाय है चरराय नहीं है और फायदाहू चंदन लगायवेको वोही चंदन करे है सो कूबरके सबबसो ये अतिकमजोर ही यासो चंदन घिसवेके लिये कंसने राखीही ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यह मेरो काम है मेरो घिसो चंदन कंसको अच्छो लगे है, अब तुम विना और चंदन लगायवेको कौन पात्र है ॥ ३ ॥ सुंदररूप सुकुमारी और रसिकता हँसनि बोलनि चितवनसूं मोहित मन होय कुबरी कृष्णबलदेवको गाढिरो चंदन देत भई ॥ ४ ॥ केसरयुक्त चंदन सांवरे अंगमें श्रीकृष्णने लगायो, कस्तूरी मिलो चंदन गोरे अंगमें बलदेवजीने लगायो, नाभिते ऊपरके अंगमें चंदन लगायके दोनों भैया बहुत सुंदर लगत भये ॥ ५ ॥ श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्ने विचारि कि हमारे आगे या कुबरीको बांकोपन कैसे रहे, अथवा मोको मथुराको बांकोपन सीधो करनो है सो ह्यांईसे लग्गा लगाऊं सो अपने दर्शनको फल दिखायवेके लिये सुंदरमुखी तीन स्थानपे टेढी कुब्जाकूं सूधी करिवेको मन करत भये ॥ ६ ॥ कुब्जाके पांवनको अपने चरणते दाबिके दो अंगुली ऊंची कर हाथको ठोढीके नीचे लगायके श्रीकृष्ण कुब्जाके देहको सूंधो करत भये ॥ ७ ॥ ता समय सूधे बराबर अंग बडे नितम्ब और स्तनयुक्त कुब्जा श्रीकृष्णके स्पर्श करेतैं शीघ्र उत्तम स्त्री होत भई ॥ ८ ॥ सूधी होतेही रूप गुण उदारता ये सब कुब्जामें आयगये, तब कामदेवसों पीडित व्है वह कुब्जा दुपट्टाको छोर पकरिके श्रीकृष्णते बोलतभई ॥ ९ ॥ हे वीर ! तुम आओ घरको चलो तुम मोपै छोडै नहीं जाओ हौ हे पुरुषनमें श्रेष्ठ ! तुमने मेरो मन चलायमान कीनो है मेरे ऊपर प्रसन्न होउ ॥ १० ॥ या प्रकार स्त्रीने कही ता समय श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीको मुख देखिके, मित्रनको मुख देखिके मुसिकायके कुब्जाते बोलत भये ॥ ११ ॥ हे सुंदर भ्रुकुटीवारी ! तुम्हारी भ्रुकुटी हमारे मनको खैंचै है, हमारो उपरना काहेको खैंचेहो, कंसको मारिके अपने सुहृदनको कार्य सिद्ध करके पुरुषनके मनके दुःखको दूर करनवारे तुमारे घरमें आऊंगो, बाल ब्रह्मचारी काहूसों जानि नहीं पहिचानी नहीं हमारे घर नहीं परदेशी हैं तिनकूं तुमही आश्रय हौ तुम्हारे घर न आवेंगे तो जाइंगे कहां ॥ १२ ॥ ऐसे मीठे २ वचन कहिके कुब्जाको छोडिकै चले तब वणियानने अनेक भेंट पान माला चंदन लैके बलदेवजीसहित कृष्णको पूजन करयो ॥ १३ ॥ श्रीकृष्णके दर्शन करेतैं प्राप्त भये कामदेवके क्षोभतें वह स्त्री आपेकूं नहीं जानतभई, वस्त्र ढीले होगये चोटी खुलिगई चूरी खिसलआई चित्रसी लिखी ठाढी रहिगई ॥ १४ ॥ तापीछे अच्युत श्रीकृष्ण मथुरावासीनते धनुषको ठिकानो पूंछत पूंछत गये, धनुषकी शालामें इन्द्रके धनुषकी तुल्य धनुष धरो देखत भये ॥ १५ ॥ हे राजन् ! पुरुष जाकी रक्षा करे हैं पूजा होय रही है बडो शोभायमान है पुरुषनने मने करो तौभी श्रीकृष्ण जोरावरी धनुषको उठावतभये ॥ १६ ॥ खेल करत एक हाथते उठायके चिल्ला चढाइके पलभरमें मनुष्यनके देखत देखत बीचतें खैंचिके जैसे मतवारे हाथी गांडेकूं तोरडारे हैं तैसे तोरिके डारतभये ॥ १७ ॥ ता समय धनुष टूटो तब वाको शब्द आकाश स्वर्ग पृथ्वी दिशानमें व्याप्त होतभयो, ऐसे शब्दको सुनिके कंसको भय होतभयो ॥ १८ ॥ धनुषके रक्षक अपने अनुचरनसहित क्रोध करिके श्रीकृष्णके पकरिवेके लिये लेउ लेउ कहत चारों ओरते घेरत

---

१ (दर्शयन् दर्श०) प्रभुने ये जताई कि मामाजी अबतक तुमारी पुरीमें और सब तरहके कारीगर है पन टेढेनके सूधो करनवारो नहीं हो आज टेढेनको सूधो करनवारो आयो हों सो या तो अपनी टेढको छोडके सूधे है जैयो नहीं आजते मैंने कुबरी सूधी करी है कल तुमको सूधो करौंगो ॥

२ मारो झटका तब है गई सटका तब पकरो पटका तब मिट गयो खटका ॥

३ प्र०—क्या मथुराकी स्त्री धर्महीन थी जो ऐसी विह्वल हो गई ? उत्तर—अंश अंशीको देख प्रसन्न होता है और अंशीमें समानेको होता है तब अंग संकुचित होता है । कृष्णमें उनके चित्तकी वृत्ति प्रविष्ट होतेही अंग शिथिल हो गये विषयेच्छासे नहीं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये ॥ १९ ॥ घेर लेनेके पीछे श्रीकृष्ण बलदेव दोनों भैया मारिवेको पकरिवेकों आये पुरुषनकों देखिके क्रोध करिके धनुषको एक एक टूक लैके तिन पुरुषनको मारतभये ॥ २० ॥ कंसकी भेजी सेना मारिके धनुषशालाके बाहिर निकसिके मथुरापुरी कंपित देखि हर्षित हैके चितवतभये ॥ २१ ॥ मथुरापुरीके वासी स्त्रीपुरुष रामकृष्णको अद्भुत कर्म धृष्टता पराक्रम देखिके देवतानमें उत्तम मानत भये ॥ २२ ॥ विन श्रीकृष्ण बलदेवके अपनी इच्छापूर्वक विचरते सूर्य अस्त होत भयो, संध्यासमय भयो तब कृष्ण बलदेव दोनों भैया गोपनको संग लैके मथुरापुरीते बाहर गाडा छूटे स्थानमें आवत भये ॥ २३ ॥ श्रीकृष्णकूं व्रजमेंते निकसती वेर गोपीनने विरहमें व्याकुल होयके जे जे बातें कहीहीं ते सबही श्रीकृष्णके अंगकी शोभा देखिके मथुरावासीनकूं सांची होत भई, कारण कि लक्ष्मीहू अपने भजनहारे ब्रह्मादिकनको छोडिके वाही रूपकी चाहना करे है ॥ २४ ॥ चरण धोय श्रीकृष्ण बलदेवजी दूधभातको भोजन करिके कंसको विचार जानिके वा रात्रिको सुखते वसत भये ॥ २५ ॥ कंस धनुषको टूटनो वाके रखवारेनको मरनो और अपनी सैन्यको वध सुनके कि यह कृष्ण बलदेवको केवल खेल है पराक्रम नहीं है ॥ २६ ॥ यह विचार भयके मारे रात्रिको निद्रा नहीं आई, महा भयभीत भयो तब वह दुष्टबुद्धि कंस मृत्युके जतावनवारे जागते सोवतेमें बहुतसे खोटे अपसगुन देखत भयो ॥ २७ ॥ दर्पनमें जलमें मुख देखे तौ अपनो शिर नहीं दिखाई देय चन्द्रमा सूर्य दो दो रूप नहीं हैं परन्तु वाको दो दो दिखाई दिये ॥ २८ ॥ अपनी परछाईमें छिद्र दीखे, अंगुरी देके कानमें देखे तो घूंघूं शब्द नहीं सुनो जाय, वृक्ष सोनेके दिखाई दिये, कीचमें रेतमें अपने पांवनके खोज न दीखे ॥ २९ ॥ स्वप्नमें भूत प्रेत छातीसूं लगाय लगायके मिलेहैं, गधापै चढो गुडहरके फूलनकी माला पहिरे अकेलो तेलमें भीग्यो नग्नवेषको खातो दक्षिण दिशाको चल्यो जायहै यह स्वप्न देखत भयो ॥ ३० ॥ और ऐसे ऐसे स्वप्नमें जागतमें खोटे खोटे अपसगुन देखिके मृत्युसों डरप्यो कंस चिंताके मारे सोवत नहीं भयो अर्थात् वा रात्रिमें याको नींद नहीं आई सब रात जागते वीती ॥ ३१ ॥ हे कुरुवंशमें भये राजन् परीक्षित् ! जैसे तैसे करिके वह रात्री वीति सबेरो भयो जलमेंते सूर्य निकसो ता समय कंस मल्लनकी कुस्ती लडवायवेको बडो उत्सव करावत भयो ॥ ३२ ॥ पुरुष रंगभूमीकी अर्चा करत भये तुरतही भेरी बजत भई, माला पताका वस्त्रनकी वन्दनवारनते मंचान शोभायमान करे अखाडो खुदाके तैयार करवायो गुलाबके फूल अखाडेमें विखरवाये एक महावीरकी मूर्ति चोला चढायके अखाडेके ऊपर विराजमान करी इत्यादि ॥ ३३ ॥ तिन मंचाननके ऊपर ब्राह्मण क्षत्री आदि मुख्य पुरवासी देशवासी आयके सुखपूर्वक बैठत भये ॥ ३४ ॥ कंस अपने प्रधान दीवानकूं संग लैके खंडमंडलनके राजानके बीचमें एक राजमंचानके ऊपर बैठत भयो परन्तु भयके मारे हृदय कंपित है ॥ ३५ ॥ नगाडे बजे हैं मल्ल चटचट खंभ ठोके हैं, जांघियानकूं पहिरिके सिंदूरको बिंदा लगायके धूरि मलिके छोटी छोटी चुटिया बडो गर्व भरे उस्तादनको संग लैके आवत भये ॥ ३६ ॥ अब मल्लनके नाम लेई हैं चाणुर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशल ये अखाडेमें आवत भये, मनोहर बाजानकूं सुनिके हर्षित है रहे ॥ ३७ ॥ कंसके बुलाये नंद गोपसो आदि लैके गोपगण कंसको भेट दैके एक मंचानपै बैठत भये ॥ ३८ ॥

नन्दगोपादयो गोपा भोजराजसमाहुताः ॥
निवेदितोपायनास्ते एकस्मिन् मञ्च आविशन् ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे मल्लरंगोपवर्णनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४२॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ४३.

श्रीशुक उवाच-अथ कृष्णश्च रामश्च कृतशौचौ परन्तप ॥
मल्लदुन्दुभिनिर्घोषं श्रुत्वा द्रष्टुमुपेयतुः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे शत्रुनके तपावनवारे राजा परीक्षित्! धोबीको मारिके धनुषको तोरिके हमने अपनो ऐश्वर्य जतायो तथापि हमारे माता पिताको नहीं छोडे हैं और हमकूं मान्यो चाहै हैं यातें या मामाके मारिवेमें हमें कछु दोष नहीं है या प्रकार दोषके दूर करिवेको विचार कर कृष्ण बलदेव दोनों भैया शौचादि कर्मसों निवृत्त होके जहां मल्ल खंब ठोंकैं हैं नगाडे बजे हैं तिनको शब्द सुनिकै देखिवेको जात भये ॥ १ ॥ श्रीकृष्णचंद्र रंगभूमिके दरवाजेपै जायके देखें तो कुवलियापीड हाथी ठाडो है और महावत वाहि प्रेर रह्यो है ॥ २ ॥ शूरके वंशमें भये श्रीकृष्णचंद्र फेंटि बांधिके मुखपै छुटी कुटिल अलकनको सह्यारिके गलेकी लंबी मालाका जनऊकी तुल्य कंधानपै पहिरके मेघकी तुल्य गर्जकै बोलत भये ॥ ३ ॥ अरे महावत! हमको मार्ग दे, शीघ्र हाथीकूं हटायले, नहीं हटावेगो तो हाथीसहित तोकों यमलोकको पठाऊंगो ॥ ४ ॥ या प्रकार डाटिकै जब कही ता समय महावत कुपित हैके कालमृत्यु यमकी तुल्य क्रोध कर हाथीको श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर हूलत भयो ॥ ५ ॥ हाथी श्रीकृष्णके पास जायके जलदीसो अपनी सूंडमें पकरत भयो श्रीकृष्ण हाथीकी सूंडमेंते खिसिलके वाके मूडमें मुक्का मारिके पांवनमें छिप जात भये ॥ ६ ॥ श्रीकृष्णको देखिके क्रोधित होय सूंघासांघीकी दृष्टिवारे हाथीने जब सूंड पकरिवेकों चलाई ता समय सूंड पकरि पिछिले पांवनमें निकसिगये ॥ ७ ॥ बडे बली हाथीकी पूंछ पकरिके जैसे गरुड सर्पको घसीटै है या प्रकार पचीस धनुष पर्यन्त लीला करिके घसीटत भये ॥ ८ ॥ पूंछको पकरे श्रीकृष्णकूं पकरिवेको दाहिनी ओर हाथी आवै है तब बांई ओर भ्रमावै हैं, बांई ओर आवै है तब दाहिनी ओर भ्रमावैं हैं जैसे गौके बछराके संग बालक फिरै हैं ऐसे फिरै हैं ॥ ९ ॥ ता पीछे हाथीके सामुही आयके थाप मारिके दौरिके पटकतभये, और पद पदपै स्पर्शकर तेन्ने वाय गिराय दियो फिर श्रीकृष्ण तनिक दौरके क्रीडा करवेको धरतीमें गिरिके शीघ्रतासूं ठाडे है गये, तब श्रीकृष्णकूं गिर्‌यो मानिके वह हाथी दांतनसों पृथ्वीको खोदत भयो ॥ १० ॥ ११ ॥ अपनो बल जब घटि गयो तब हाथीको बडो क्रोध भयो; महावतने जब अंकुश मारिके हूल्यो तब क्रोध करिके श्रीकृष्णचंद्रजीके ऊपर दौरत भयो ॥ १२ ॥ मधुदैत्यके मारनवारे भगवान् श्रीकृष्ण सन्मुख आवतेही हाथीकी सूंड हाथसों पकरिके पृथ्वीमें पटकत भये ॥ १३ ॥ सिंहकी तुल्य गरजते हाथीकूं पांवके नीचे दाबिके लीला करिके वाके दांत उखारिके दांतसों महावतकूं श्रीकृष्णचंद्र मारत भये ॥ १४ ॥ जब हाथी मरि गयो तब वाको छोडिके हाथमें हाथीके दांत लैके कांधेपै धरिके जातभये वा समय रुधिर और मधुकी बूंद विनके लगि रही है ॥ १५ ॥ और पसीनानकी बूंद मुखकमलपै आइरही हैं, या प्रकार श्रीकृष्ण-ष्णचंद्र सुंदर लगते भये कितनेक गोप संग लिये हाथीके दांतही सुंदर शस्त्र धारण करे कृष्ण बलदेव दोनों भैया हे राजन् परीक्षित्! रंगभूमिमें जातभये ॥ १६ ॥ ता समय मल्लनको वज्रतुल्य दृष्टि आये, मनुष्यनको अतिसुंदर जानि परे, और स्त्रीनको साक्षात् कामदेव स्वरूप धरे जानि परे, दुष्ट

१ श्याम सुंदर तो मुख है तामें रुधिरकी बिंदु परी हैं और पसीनानकी बूंद बिच २ में मोतीसे झलक रहे हैं तिनसो ऐसी शोभा भई मानौ श्यामतमालपें रायमुनियाठी किलोल कर रही है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजनकों मृत्यु देनवारे जानि परे, अपने पिता माता वसुदेव देवकीकूं पुत्र जानिपरे भोजपति कंसकूं यह जानिपरी कि मेरी मृत्यु चली आवै है, अज्ञानीनको भयंकर रूप दृष्टि परे, और ज्ञानीनको परम तत्त्व-रूप दृष्टि परे, यादवनको परम देवतारूप जानि परे जैसी जाकी भावना ताको तैसेही जानी परे या प्रकार श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीकूं संग लेके रंगभूमिमें जात भये॥ १७॥ हे राजन् परीक्षित्! कुवलयापीड हाथीकूं मरचो देखिके जीतवेमें न आमें ऐसे श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीकूं देखिके धीरजमानहू कंस डरपत भयो॥१८॥ बडी भुजा विचित्र वेष आभूषण माला वस्त्रनकूं धारण करे कृष्ण बलदेव रंगभूमिमें जायके ऐसे सुंदर लगत भये जैसे उत्तम रूपको धारण करनवारो नट सुंदर लगै है; या प्रकार अपनी कांतिसों देख-नवारे पुरुषनके मनकूं चुरावते चले॥१९॥ हे राजन् परीक्षित्! मंचाननके ऊपर बैठे पुरवासी देशवासी जन पुरुषनमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण बलदेवको देखिके आनंदके वेगते डहडहे नेत्र मुखवारे हैगये नेत्रनकरिके मुखकी शोभा देखिके तृप्त नहीं होतेभये॥२०॥ नेत्र ऐसे चलामें हैं मानो रूपको पी जांयगे, जिह्वा ऐसी चलामें मानो चाटिजांयगे नासिका ऐसी चलामें मानों सूंघि लेइँगे, भुजा ऐसी चलामें हैं मानो लिपट जांयगे जैसे श्रीकृष्णको रूप काननते सुन्यो हो, तैसोही आंखिनते देखिके तिनके रूप गुण माधुर्य ढि-ठाईसूं बुद्धिकूं प्राप्त होय पुरुष जैसो सुनो वैसो आपुसमें कहतभये॥२१॥२२॥ ये श्रीकृष्ण बलदेव सा-क्षात् भगवान् हरि नारायण हैं, अंश करिके या संसारमें वसुदेवके घर अवतरे हैं॥२३॥ यह जो सामरो बालक है ताने देवकीके जन्म लियो है, अब ताईं छिप्यो रह्यो पिताने गोकुलमें पहुँचाय दियो हो, नंदरायके घरमें वृद्धिकूं प्राप्त भयो॥ २४॥ या कृष्णने पूतना मारी बभूरेके स्वरूप धारिके आये तृणा-वर्त दैत्यकूं मारो और यमलार्जुन वृक्ष उखारिके डारिदिये, धेनुकासुर मारो केशिदानव मारचो शंख-चूड मार्‌यो अघासुर आदि लैके और सब दानव जाने मारे वो कृष्ण यही है॥ २५॥ याही कृष्णने गौ और ग्वाल वनमें दावानलते छुडाये, कालीसर्पकों दंड दियो इंद्रको मद दूरि कियो॥ २६॥ सात दिन पर्यंत यह कृष्ण गोवर्द्धन पर्वतकूं हाथमें लिये रह्यो, वर्षा पवन वज्रपातते गोकुलकी रक्षा करी॥ २७॥ गोपीजन या कृष्णको नित्य प्रसन्न हँसनि चितवनि युक्त श्रमरहित मुख देखिके अनेक तापनकूं दूर करत भई॥ २८॥ और दूसरे या कृष्णते यह यदुवंश बहुत विख्यात हैके संपत्ति यश बढाईकूं पावैगो, और या कृष्णते रक्षा होयगी या प्रकार कहत भये॥ २९॥ कमलसे नेत्र सुंदर या कृष्णके बडे भैया बलरामने प्रलंबासुर धेनुकासुर मारे बकासुर मारे। क्योंजी मारे तौ कृष्णने, बलदेवको नाम क्यों कहे हैं देखी सुनी बातनमें भेद हैजाय है॥ ३०॥ सब मनुष्य या प्रकार कहते हैं नगाडे बाज रहेहैं इतनेमें चाणूर कृष्ण बलदेवको संबोधन देकै बोलत भयो॥ ३१॥ हे नंदके पुत्र! हे राम! तुममें बल अधिक है, कुस्ती अच्छी कर जानोहो यह श्रवण करिके कंसरायने देखिवेके लिये बुलाये हो॥ ३२॥ प्रजा मन कर्म वचन करिके राजाको प्रिय करै तो कल्याणको पामे हैं और जे विपरीत करै हैं वे नहीं पामे हैं॥ ३३॥ प्रतिदिन बछरानके चरावनवारे गोप प्रसन्न हैके वनमें कुस्तीको खेल करिके गौ चरामे हैं, यह बात प्रगट है॥ ३४॥ ता कारण हम तुम राजा कंसको प्रिय करें राजा प्रसन्न होयगो तो सब प्राणी हमारे ऊपर प्रसन्न होंयगे॥ ३५॥ चाणूरको वचन सुनिके श्रीकृष्णचंद्र कुस्ती करिवो आपको योग्य मानिके बढाई करिके वा समयके

---

१ चौपाई—यहि विधि रहा जाहि जस भाऊ। तेहि तस देखेउ यदुकुलराऊ॥ रहे असुर छल जो नृप वेषा। तिन प्रभु प्रगट कालसम देखा॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उचित वाक्य बोलत भये ॥ ३६ ॥ जा कंसकी तुम प्रजा हों वाकीही हम वनकी रहनवारी प्रजा हैं, राजा कंसको प्रिय नित्य करै याहीमें हमारो भलो है ॥ ३७ ॥ देखो हम बालक हैं अपनी बरावरके बालकनके संग कुस्ती लडैंगे, जैसे उचित होई तैसी कुस्ती करो, मल्लनकी सभामें अधर्म न होय ॥ ३८ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रको वचन सुनिके चाणूर बोले तुम बालक नहीं हो, और बलीनमें बलवान् बलदेव बालक नहीं हैं, किशोर नहीं हौं हजार हाथीको बलवारो कुवलयापीड हाथी खेलमेंही तुमने मारि लियो फिर कहो तुम बालक कैसे हो ॥ ३९ ॥ ताते हमारे संग कुस्ती तुम करो, यह अनीति नहीं है हे वृष्णिवंशमें भये कृष्ण ! मेरी तुम्हारी कुस्ती होय बलदेवके संग मुष्टिककी होय ॥ ४० ॥

तस्माद् भवद्भ्यां बलिभिर्योद्धव्यं नाऽनयोऽत्र वै ॥
मयि विक्रम वार्ष्णेय बलेन सह मुष्टिकः ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे कुवलयापीडवधो नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः४३॥

अध्याय ४४.

श्रीशुक उवाच–एवं चर्चितसङ्कल्पो भगवान् मधुसूदनः ॥
आससादाथ चाणूरं मुष्टिकं रोहिणीसुतः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार निश्चय संकल्प कर नीलाम्बर पीताम्बर कच्छै बांधि खंब ठोकिके ठाढे है गये, ऐसेही मधुदैत्यके मारनवारे भगवान् श्रीकृष्ण चाणूरसो जुटत भये रोहिणीनन्दन बलदेवजी मुष्टिकसो जुटत भये ॥ १ ॥ हाथनसूं हाथ पावनसूं पाव मिलायके आपुसमें जीतिवेकी इच्छा करिके परस्पर बलात्कारतें खेचत भये ॥ २ ॥ अरत्नीनसों अरत्नी मिलायके घोटूनसों घोटू मिलायके शिरसों शिर मिलायकै छातीसों छाती मिलायके कृष्ण चाणूर दोनों आपुसमें कुस्ती करत भये ॥ ३ ॥ अब जैसे जैसे परस्पर दाउ पेंच करे है परिभ्रमण अर्थात् फिरामनो विक्षेप अर्थात् धक्का देनो परिरम्भण अर्थात् हाथते विडारनो अवपातन अर्थात् नीचो पटकि देनो, उत्कर्षण अर्थात् छोडिके पीछेसों आगे आइ जानो अपसर्पण अर्थात् पीछे जायके ठाडे होनो, इन दावन करिकै लडत भयो ॥ ४ ॥ उत्थापन अर्थात् पांव और घोटू मिलिके गिरे उखार देनो, चालन अर्थात् बंधे दावकों दूर कर देनो स्थापन अर्थात् हाथ पांव पकरिके मिलाय देनो या प्रकार परस्पर देहको पीडा देतभये ॥ ५ ॥ स्त्रीनकै समूहके समूह इकठौरी होयके बैठी कहैं हैं देखो यह कृष्ण तौ निर्बल है, और चाणूर सबल है, यह विचारके दयाको प्राप्त होय स्त्री आपुसमें बोलत भई ॥ ६ ॥ इन राजसभाके बैठनवारेनकूं बडो अधर्म होयगो, राजाके देखते निर्बल सबलकी कुस्ती करामें हैं ॥ ७ ॥ देखो वज्रसे कठोर सब अंगवारे पर्वतसो ऊंचे ऊंचे मल्ल कहां, और श्रीकृष्णको स्वरूप अतिसुकुमार कोमल अंग यौवन अवस्थाकोहू प्राप्त न भए यह किशोर अवस्थावाले बालक कहां ॥ ८ ॥ या सभामें निश्चय धर्मनाश होय है, जहां अधर्म होय वा सभामें कदाचित्

---

१ दोहा–शिरसौ शिर भुजसौ भुजा, दृष्टि दृष्टिसौ जोर । निज निज जय इच्छा करत, बहु विधिसौ झक झोर ॥
२ अरनि–समुष्टिहस्त अर्थात् कोहनीसे नीचेकी अंगुलीतक ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

न बैठे ॥ ९ ॥ और स्त्री कहेहै विवेकी पुरुषको ऐसी सभामें जानो योग्य नहीं है, सभाके बैठनवारेनके दोषनकूं स्मरण करिके बातको जानिके चुप बैठ्यो रहै तो दोषभागी होय, काहूकी झूठी सांची कहै तो दोष लगे अथवा हम काहूकी न बुरी जाने न भली जाने ऐसे कानपै हाथ धरे तो दोषभागी होय या कारण सभामें जाय नहीं ॥१०॥ शत्रुके चारों ओर दौराधूपीते कृष्णके मुखकी शोभा देखो, कुस्तीमें जोर करवेसों इनके मुखके ऊपर पसीनानकी बूंद आयरही हैं, जैसे कमलकोशके ऊपर ओसकी बूंद परे हैं ॥ ११ ॥ और स्त्री कहें हैं अरुण नेत्र बलदेवजीके मुखकी शोभाकूं देखो मुष्टिकके ऊपर क्रोध आइरह्यो है तौहू हांसी सहित है, यासो सुन्दर लगे है ॥ १२ ॥ और गोपी कहे हैं वे व्रजभूमि बडी पवित्र है जिनके वनके चित्र विचित्र फूलनकूं धारण किये पुराणपुरुष श्रीकृष्ण बलदेव सहित मनुष्यरूपमें छिपिके गौनकूं चरावती समय बांसुरीकूं बजावत खेलत डोले हैं जिनके चरणनकूं महादेव और लक्ष्मीजीहूं पूजन करें हैं ॥ १३ ॥ और स्त्री कहै देखो गापी कहा तप करतभई जा कारण जिनसों श्रेष्ठ और कोई सुंदर नहीं और जिनकी बराबर कोई नहीं जात अधिक नहीं देखो जो आभूषण वस्त्र विनाही सुंदर लगेहैं, यश लक्ष्मी ऐश्वर्यके एकांतस्थान, अर्थात् सर्वदा ऐश्वर्ययुक्त प्यारेके स्वरूपकूं दृष्टिकरिके देखे हैं ॥ १४ ॥ सखिओ ! व्रजबाला धन्य हैं जो गोपी गाय दुहावतीवेर, धान्य छरतीवेर दधि फिरावतीवेर, बालकनकूं झुलावतसमय बालक जब रोमें तब विनकों राखतीवेर, घरनके काम काज करतीवेर, श्रीकृष्णमें आसक्त होय कृष्णगुण गामें हैं ता समय प्रेमानंदसूं आंशू तिनके नेत्रमें आयजाय हैं वा समय विनको चित्त कृष्णमेंही लगजायहै ॥ १५ ॥ प्रातःकाल जब व्रजते गौ चरायवेको जाइ हैं संध्यासमय गौनकूं लैके बासुरी बजावत जब आमें हैं, ता समय वे महाभाग्यवारी गोपी या कृष्णकी बांसुरी सुनिके शीघ्र अपने घरसूं निकसिकै मार्गमें आइके सुंदर मुसिकानि दयापूर्वक चितवनि युक्त कृष्णके मुखको दर्शन करैहैं वे गोपी बडभागिनी हैं ॥ १६ ॥ हे भरतवंशीनमें श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ! या प्रकार स्त्री आपुसमें कहे हैं ता समय योगिनके ईश्वर सबके दुःखके दूर करनवारे भगवान् शत्रुकूं मारिवेकूं मन करत भये ॥१७॥ भयसहित स्त्रीनकी बात सुनिके पुत्रनमें स्नेहके शोकसूं व्याकुल, पुत्रनकूं नहीं जाननहारे माता पिता देवकी वसुदेव दुःखित होतभये; और नंद पछितातभये, हाय हाय क्यों मैं अक्रूरके कहेते इन दोननको मथुरापुरीमें लायो, घरमें पकरिके कोठरीमें मूंदिके मैंने क्यों न राखे ऐसें नंदजी पछिताते भये ॥ १८ ॥ अनेक प्रकारके कुस्तीके दाउपेचनसूं श्रीकृष्ण चाणूर जैसें आपुसमें लडत भये, तैसेही बलदेव और मुष्टिक लडत भये ॥ १९ ॥ वज्रपातकी तुल्य कठोर भगवान्के अंगके प्रहारसों चाणूरके अंग

---

१ सत्य बोलनवालेकूं दुःख नहीं होत सत्ययुक्त पुरुषकूं कोई विघ्न नहीं सतासक्ते एक राजाने बाजार बनवाया और कही जो वस्तु यहां वेचनेको लावेगा और संध्या समयतक न विकैगी, उसे मैं लेलूंगा इस प्रकार वोह बाजार विख्यात होगया, एक दिन एक लुहार लोहेकी शनीचरकी मूर्ति बनाकरलाया, एक एक लाख रुपया उसका मोल मांगा, और कही जिसके यहां यह मूर्ति रहेगी उसके यहां द्रव्यादि कुछ न रहैगा, अब उस अनिष्टकारक मूर्तिको किसीने न लिया संध्यासमय राजाने देखा कि बडी भीड होरही है कारण पूछतेही राजाने विचारकर उस मूर्तिको लेलिया, और लक्ष रुपया उसे दे दिये जब राजाने घरमें मूर्ति रक्खी तौ पहले लक्ष्मी राजासे बोली महाराज मैं जाती हूं. राजा बोले क्यों लक्ष्मी बोली जहां शनिश्चर देव रहैं, तहां हमारा क्या काम ? राजाने कहा जाओ, इसी प्रकार नीति साम दाम दंड भेद सब रूप धरकै आये, और राजाने जाने दिया, पीछेसे जब सत्य देव आये, तौ राजासे कहकै जब जानैलगे तौ राजाने हाथ पकडकर कहा आपके रखनेको तौ शनिश्चर देवको लाये हैं, तुम कैसे जातेही, सत्यदेवसे कुछ उत्तर न आया और हरगये, सत्यके रहनेसे नीति लक्ष्मी आदि सब लौट आये, और सत्यके प्रभावसे शनिश्चर राजाका कुछ न करसके ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चुरकट है गये, तासूं अत्यंत दुःखित होत भयो ॥२०॥ शिकरेके वेगकी समान चाणूर दोनों हाथकी मुष्टि बांधिके क्रोधमें भरिके ऊपरकूं उछरिके भगवान् वासुदेवकी छातिमें मारतभयो ॥ २१ ॥ जैसे हाथी फूलनकी मालाकी चोटसो नहीं डिगेहै ऐसे श्रीकृष्णचंद्र चाणूरकी मुष्टिके मारे नहीं डिगत भये, हरि श्रीकृष्ण चाणूरके दोनों हाथ पकरिके बहुत घुमाइके वेग करिके पृथ्वीमें पटकतभये गिरतेही तुरत प्राण निकस गये गहने केश माला सब बिखर गई गिरते समय ऐसो विदित भयो मानो इन्द्र-ध्वज गिरो ॥ २२ ॥ २३ ॥ याही प्रकार मुष्टिकको जाने पहिले बलदेवजीके मुष्टि प्रहार कियो हो वा बलदेवजीने आप मारके गिराय दियो ॥ २४ ॥ मुष्टिक कंपित होय मुखते रुधिरकूं वमन करत पीडित हैके प्राण निकसि जायवेसो जैसे पवनको मारो वृक्ष उखरि परे है या प्रकार गिरतभयो ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित्! ता पीछे धावते कूटमल्लकूं मारनवारनमें श्रेष्ठ बलदेवजी लीला करिके वाई मुष्टिसूं अवज्ञा करिके मारत भये ॥ २६ ॥ शल तोशलने विचारी, दण्डवत्के मिषसूं पांव पकरिके पटकि देइंगे परन्तु भगवान् सबके बाहिर भीतरके जाननवारे हैं जा समय दण्डवत् करिवेको आये ता समय मारी जो लात तासूं शिर फटिगयो ऐसो शल तोशल दो टूक विदीर्ण होइकै दोनों पृथ्वीमें गिरतभये ॥ २७ ॥ चाणूर मुष्टिक कूट शल तोशल जे मुख्य मल्ल जब मरिचुके तापीछे और सब मल्ल अपने प्राण बचायवेके लिये भाजत भये और कहत भये यह मत मनभर दूध और दश दश शेर मलाईसो जो शरीर पोषण करो है सो सैंतमेंत प्राण देवैको नहीं कुस्ती चाहैं जैसी लडो पर कृष्ण बलदेव तौ मारे डारे है, ऐसो कहि बहानो कर निकसि गये ॥ २८ ॥ बराबरके गोपनको अखाडेमें खेंचिकें श्रीकृष्ण बलदेव गोपनके संग मिलिकै विहार करत भये वा समय बाजे बज रहे हैं और कृष्णके नूपुर नृत्य करनकेसे नृत्यकूं कर रहे ॥ २९ ॥ श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजीके चरित्र देखिके कंसके विना संपूर्ण जन प्रसन्न होत भये, ब्राह्मण आदि मुख्य सज्जन पुरुष भले भले ऐसे कहिके स्तुति करत भये ॥३०॥ बडे बडे मल्ल मरिगये कितनेऊ भाजिगये तब भोजवंशिनको राजा कंस नगाडे थमाय देत भयो ॥३१॥ और क्रोधकर बोल्यो कुटिलकर्मा वसुदेवके बेटानकूं पुरते बाहिर निकास देऊ, और इनको धन छिनाइ लेऊ कुटिल बुद्धि नंदको बांधिलेउ ॥ ३२ ॥ खोटी बुद्धिवारे वसुदेवकूं जलदी मारो, शत्रुनसो मिलन-हारे पिता उग्रसेनकूं टहलुआन सहित बांधिलेऊ ॥ ३३ ॥ या प्रकार कंस जब बकन लग्यो तब बडो क्रोधकर अव्यय भगवान् धीरेसूं उछरिके ऊंचे मंचानपै चढतभये ॥ ३४ ॥ धीरजवान कंस अपनी मृत्युकूं आवति देखिकै आसनसों उठिकै ढाल तरवार लेतभयो ॥ ३५ ॥ तरवार हाथमें लैके आका-शमें जैसे शिकरा पच्छी डोलै हैं तैसे दांई वांई ओर जलदी जलदी फिरनवारे कंसकूं असह्य और उग्रतेजवारे श्रीकृष्णचंद्रने तार्क्ष्यको पुत्र गरुड जैसे सर्पकूं पकरि लेइहै तैसे वाय पकर लियो ॥३६॥ वाको मुकुट फेंक केशनकों पकरिकैं ऊंचे मञ्चानपैंतै रंगभूमिमें पटक दियो, और याके ऊपर सर्व जग-त्को आश्रय और स्वतंत्र कमलनाभ भगवान् स्वयं कूदपरे, केश पकरवेको कारण यह कि कंसने देवकीके केश पकडे यासों वाको बदलो लियो ॥ ३७ ॥ सिंह जैसे हाथीकूं खेंचे हैं तैसे सब जगत्के

---

१ जब मल्ल सब भाज गये तब भगवान् अपने सखानते बोले कि भय्याहो! ए तो सारे सब गोबरगणेशही निकसे मेरे मामाके माल इन सारेनने योंही बिगारे मेरे तौ अभी शरीरहूं नहीं गरमायो है सो आओ अब तुम आओ सोही छोरा डरपे कि रे गजब भइयाहो! याको काम बडो गजब है जो कहू एकहू घोटू मार दियो तो गजब है जाइगो सोई सब छोरा आप आपको दबन लगे तब भगवान्ने पाव पकर पकरके अखारेमें खेंच लिये और बिनसों बराबर गदपद लडन लगे॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देखत मृतक भये कंसकूं पृथ्वीमें घसीटत भये, हे नरनके राजा परीक्षित् ! ता समय समस्त प्रजानको बडो हाहाकार शब्द होत भयो ॥ ३८ ॥ कंस प्रति दिन चलायमान चित्तसूं जल पीवत बात कहत मार्ग चलत, सोवत श्वास लेत चक्र आयुधवारे भगवान्कूंही शत्रुभावसो ध्यान करेहो, तासों श्रीकृष्णके स्वरूपकूं पावत भयो ॥ ३९ ॥ ता कंसके कंक न्यग्रोधसूं आदि लैके छोटे आठ भैया अत्यंत क्रोध समय क्रोध करिके भैया कंसको बदलो लैवेके लिये दौरिके आवत भये ॥ ४० ॥ रोहिणीके सुत बलदेवजी ताही समय क्रोध करिके हाथनमें शस्त्र लैके आये कंसके भैयानकूं सिंह जैसे पशुनकूं मारे तैसे परिघ उठायके मारत भये ॥ ४१ ॥ ता समय आकाशमें नगाडे बाजत भये, भगवान्की विभूति ब्रह्मा महादेवको आदि लै देवता प्रसन्न हैके श्रीकृष्णके ऊपर पुष्पनकी वर्षा करिके स्तुति करत भये स्वर्गकी स्त्री नृत्य करत भई ॥ ४२ ॥ हे महाराज ! पतिके मरणसूं अतिदुःखित आंसू आंखिनमें भरे कंसकी स्त्री शिरनकूं कूटत जहां विनकी लोथ परीही तहां आवति भई ॥ ४३ ॥ वीर-शय्यामें परे पतिकूं आलिंगन करिके शोकातुर स्त्री वारंवार आंखिनमेंते आंशू बहायके पुकार कर विलाप करती भई ॥ ४४ ॥ हा नाथ ! हे प्यारे ! हे धर्मके जाननवारे ! हे करुणानाथ ! हे वत्सल ! तुम आप मरिके घरवारसहित हमको क्यों मारिगये ? या प्रकार विलाप करतभई ॥ ४५ ॥ हे पुरुषनमें श्रेष्ठ ! जैसे तुम विना हम रंडा होइकैं सुंदर नहीं लगैं हैं, ऐसे तुम पति विना मथुरापुरीहू सुंदर नहीं लगै है संपूर्ण मंगल उत्सव यामेंतै दूर होइरहे हैं ॥ ४६ ॥ निरपराध प्राणीनते तुम बडो द्रोह करत भये, ताते तुम्हारी यह दशा भई है, जो मरेपडे हो, प्राणीनते वैर करिके कौन पुरुष सुख पावै है ॥ ४७ ॥ या संसारमें समस्त प्राणीनको उत्पत्तिकर्ता पालनकर्ता नाशकर्ता यह कृष्णही है, याकी जो पुरुष अवज्ञा करै वह सुख नहीं भोगै है ॥ ४८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! लोक-नके पालन करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र राजा कंसकी स्त्रीनको समाधान कर कंसकी दाहादिक क्रिया करावत भये ॥ ४९ ॥ माता पिता देवकी वसुदेवकूं कंसके बंदिखानेते छुटावतभये राम कृष्ण दोनों भैया माता पिताके चरणमें शिर लगायके प्रणाम करत भये ॥५०॥ देवकी वसुदेव प्रणाम करते पुत्रनकूं जगतके ईश्वर मानिकै भयभीत हैके नहीं मिलत भये क्योंकि इनके मन शंकित नहीं हैं ॥५१॥

देवकी वसुदेवश्च विज्ञाय जगदीश्वरौ ॥
कृतसंवन्दनौ पुत्रौ सस्वजाते न शङ्कितौ ॥ ५१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दश० पूर्वार्धे कंसवधो नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

---

१ कंसको घसीटो क्यौं ? उत्तर—आपने विचारी कि कहू ऐसी न होय जो कहू याके प्राण रहि गये होय जो कहू जीवत रहि गयो तो फिर मारवेको उपाय करवो मुसकिल परैगो यासों निश्चय करवेको घसीटो कि मरोहै कि नहीं यासो घसीटो अथवा पापी कंस हे यातें पाप बहुत कीने हैं सो याके रोम रोमके पाप दूर है जायगे यासों व्रजरजमें घसीटो ये अभिप्राय है ॥

२ दोहा—जब धरनीमें आयकै, परयो उतानो भूप । उरऊपर दर्शन दियो, श्याम चतुर्भुजरूप ॥ एक घसियारो नित्य घास बेचवेकूं लायो करै सो धेला पैसा मिल्योकरै वामें निर्वाह कियो करै रुपैयाकी तू सूरतहू कभी नहीं देखीही, दैवयोगसे वाय घास खुरचतेमें असरफीनको तोडा मिलगयो; घरमें ले आयो गिनके फिर वाहीमें धरदीनि धरी भर बाद फिर थैली खोली गिनन लग्यो फिर थैलीमें भर मोढो बांध दियो दिनभरमें हजारन वेर गिनो करै एक दिन रखकै भूलगयो वह थैली जातरही अब वाही निद्राहू नहीं आवै है बहुत व्याकुल भयो वा थैलीहीकी स्मरण करै है थैलीहीको स्वप्नमें देखै थैली-हीको खोजत फिरै संसारमें वाही दूसरो पदार्थहूं नहीं दरसै ऐसेही श्रीकृष्ण कंसकूं दीखै है ॥

३ भगवान्ने देखी कि ए मेरी मामी रोय रही है अब इने कौन समझावें तब आपही जायकें इनके पास ये बोले कि मामी मामी ! हाय ! देखो मेने पहाडसे पहलमान पछारे हैं मेरे मामाजी मोपै बडे राजी भये होयगे सो आओ मामासो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ४५.

श्रीशुक उवाच-पितरावुपलब्धार्थौ विदित्वा पुरुषोत्तमः ॥
माभूदिति निजां मायां ततान जनमोहिनीम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! पुरुषनमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचंद्र मातापितानकूं ज्ञान प्राप्त भए जान यह ज्ञान अभी ठीक नहीं यासों जननकी मोहन करनवारी अपनी मायाकूं फैलावत भये (हमको पुत्र मानिकै अभी संसारके सुख भोगे नहीं है पहिलेही ये परमेश्वर हैं यह ज्ञान इनकूं होइ आयो है मैं प्रसन्न भयो तब इनकों ज्ञान कहा दुर्लभ है मोमें पुत्रभाव करिकै जो प्रेम करनो है सो दुर्लभ है, याते अभी ये परमेश्वर हैं ये इनकों ज्ञान मोमें न होय या लिये अपनी माया फैलावतभये) ॥ १ ॥ यादवनमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण बलदेवजीकूं संग लैके मातापिताके पास आवत भये विनयपूर्वक नमिकै हे मातः ! हे पितः ! ऐसे आदरपूर्वक प्रसन्न हैके बोलतभये ॥ २ ॥ हे पितः ! सर्वदा तुम्हारे चाहनाई बनी रही हम पुत्रनते बाल्य अवस्था पौगंड अवस्था किशोर अवस्थाके सुख कभऊ तुमको नहीं होतभये ॥ ३ ॥ दैवके मारे हम तुमारे निकट वासहू न करिसके, पिताके घरमें बालक रहेहैं, लालन पालन होइ है आनंदकों पावेहैं सो हमको कछुहू प्राप्त न भयो ॥ ४ ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष सब पदार्थको साधक यह देह जिन मातापिताने उत्पन्न कियो विनकी यह मरणधर्मा मनुष्य सौ वर्ष सेवा करे तथापि विनते उऋण नहीं होइ है ॥ ५ ॥ जो पुत्र समर्थ होयके देहसूं अथवा धनते मातादिकूं जीविका नहीं देय है परलोकमें यमके दूत वाको मांस वाहीकूं काटि काटिके खवामें हैं ॥ ६ ॥ माता पिता वृद्ध, सुशीला स्त्री, पुत्र बालक, गुरु, ब्राह्मण और जो कोई शरण आयो है इनको मनुष्य भरण पोषण न करै तौ वह मरे तुल्य है ॥ ७ ॥ असमर्थ और कंसके भयके मारे नित्य चंचल मन हैवेके कारण तुम्हारी सेवा विना करे हमारे इतने दिन व्यर्थ बीत गये ॥ ८ ॥ हे पितः ! हे मातः ! पराये आधीन हैवेतें हमसों तुमारी सेवा न बनी और दुष्ट हृदय कंससूं अत्यन्त दुःखित रहे अब हमपें तुम क्षमा करिवेकूं योग्य हौ ॥ ९ ॥ या प्रकार माया करिके मनुष्यरूपधारी विश्वके आत्मा हरिके वचनसूं मोहित हैके देवकी वसुदेव पुत्रको गोदमें बैठायके आलिंगन करिके आनंदकूं पावत भये ॥ १० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! स्नेहके पाशसे बन्धे मोहित देवकी वसुदेव नेत्रनते आशुनकी धारनते कृष्णबलदेवकूं भिजोवत कछुहू न बोलते भये ॥ ११ ॥ देवकीके पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण या प्रकार मातापिताको समाधान करिके नाना उग्रसेनकों यदूनकों राजा करत भये ॥ १२ ॥ श्रीकृष्ण बोलते भये हे महाराज ! हम तुम्हारी प्रजा हैं तिनकूं तुम आज्ञा करिवेकों योग्य हौ ययातिकों शाप है याते यादवनकों सिंहासनपै बैठवो योग्य नहीं राज्य करिवो योग्य नहीं है तुमहूं यादव हौ मेरी आज्ञाते तुमकूं दोष नहीं है या प्रकार भगवान् कहत भये ॥ १३ ॥ मैं वृद्ध कहा अब राज्य करौंगो तहां

प्यार कर आउ मामाजी न जाने मोको कहा इनाम देयगे सो मैं तो बडी उमेदसों मामासो प्यार करिवेको कूदके मामाके पास गयो न जाने मामाके मनमें काहेकी शंका भई सोई मामाजीने मेरे मारिवेके लिये तलवार निकसवेको कबजेपे हाथ गेरो सोई मैं घबरायके जो कूदन लगो सो न जाने मेरो कंगन न जाने कहा मामाकी चुटियामें उरझ गयो मैं घबरायकें जो कूदो सो ऐसी भई कि मामाजी तो भये नीचे मैं भयो ऊपर दोउ अखाडेमें आय परे जो मैं नीचें होतो तो मैं मर जातो हाय मामाजी कहां गये ऐसे रोयके माईनको समझावत भये जासो मालूम भई कि इनको दोष नहीं है ॥

१ दोहा-सबै जीव सन्तानसों, सुख पावत दिन रैन । तुम्हें हमारे जन्मतें, बहुते भये कुचैन ॥ यद्यपि हम अवगुण भरे, प्रगटे महा असाध । तद्यपि सुत हित जानिकै, क्षमा करो अपराध ॥

२ चौपाई-जो न मानि है आन तुम्हारी । ताहि दण्ड करि हैं हम भारी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीकृष्ण कहे है कि मैं टहलुआ हैके तुमारे पास रहूंगो, बडे बडे देवादिक तुमकों भेंट देयगे, और राजा देयगे यामें कहा कहिनो है ॥ १४ ॥ कंसके डरके मारे भाजिगये अपनी जातिके नाते गोतेके सम्पूर्ण यदु वृष्णि अन्धक मधु दाशार्ह कुकुरादिकनको दिशानतें बुलायके और विदेशमें वसवेके कारण जो यादव कृश है रहे हैं विनको सत्कार करिके बहुतसे धन दैके तृप्ति करिके सब विश्वके करनवारे श्रीकृष्ण अपने अपने घरनमें बसावत भये ॥ १५ ॥ १६ ॥ कृष्ण बलदेव भुजानसों रक्षित हैकें मनोरथ पाय यादव श्रीकृष्ण बलदेवके दर्शन पाप दूर कर पूर्ण हैके घरमें रमण करत भये ॥ १७ ॥ नित्य आनन्दसों पूर्ण शोभायुक्त दयासहित मन्द हास्यपूर्वक चिवतनि युक्त श्रीकृष्णके मुखकमलको प्रतिदिन दर्शन करवेसों आनन्द होय है ॥ १८ ॥ मुकुन्दके मुखकमलके अमृतकूं पीकै ता समय वृद्धहू बडे बलयुक्त तरुण होत भये ॥ १९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! तब भगवान् देवकीके पुत्र और बलदेवजी नन्दरायके पास आयके मिलिके यह बोलत भये ॥ २० ॥ हे पिता ! तुम स्नेहीने हमारो पोषण करयो बहुत लाड कर्‌यो माता पिताको अपने पुत्रनमें अधिक प्यार होयहै सो तुमने वासोहूं जादा प्रीति करी ॥ २१ ॥ वही पिता है वही माता है जो अपने बालकनको पुत्रकी तुल्य पोषण करै पालन करिवेमें जिनकी सामर्थ्य न भई ऐसे हमारे माता पिताने हमको बालकपनेंतेही छोडदियो तुमने पालन कियो ॥ २२ ॥ हे पिता ! तुम व्रजकों जाओ, अपने सुहृदनकों सुख करिके स्नेहते दुःखित जातिके जननको समाधान कर विन्हें देख तुम्हारे देखिवेकों हम पीछे आवेंगे ॥ २३ ॥ या प्रकार अच्युत भगवान् श्रीकृष्ण ब्रजवासीन सहित नन्दरायजीकूं समझायकै वस्त्र आभूषण सोने चांदीके बासन दैकै बडे आदरते पूजन करत भये ॥ २४ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णको वचन सुनिकै नन्दरायजी श्रीकृष्ण बलदेवको छातीतै लगायकै प्रेममें व्याकुल होयके नेत्रनमें आंशु करि ब्रजवासीनको संग लैकै ब्रजकों जातभये ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! तब शूरके पुत्र वसुदेवजी ब्राह्मण पुरोहित बुलायकै पुत्रनको यथायोग्य द्विजन्मा संस्कार करावत भये ॥ २६ ॥ तिन ब्राह्मणनकों गौ शृंगार करिके दक्षिणामें देतभये, रेशमी झूल परी सोनेकी माला पहिरे बछरासहित गौ दान करत भये ॥ २७ ॥ बडे बुद्धिमान् वसुदेवजीने कृष्णरामके जन्मनक्षत्रके समय जिन गौनको मनते दान कियो हो, और कंसने अधर्म करिके हरिलीनीही उतनी गौ स्मरण करिके दान करत भये ॥ २८ ॥ ता पीछे सुव्रती कृष्णबलदेव द्विजन्मानको संस्कार पायकै यदुकुलके पुरोहित गर्गाचार्यसूं गायत्रीको उपदेश लैकै ब्रह्मचर्य व्रतमें रहत भये ॥ २९ ॥ समस्त विद्या जाननहारे सर्वज्ञ अर्थात् सब बातके जाननवारे सब जगत्के ईश्वर कृष्ण बलदेव स्वतः सिद्ध निर्मल ज्ञानकूं मनुष्यनकी तुल्य चेष्टा करवेके कारण गुप्त राखते हैं ॥ ३० ॥ यज्ञोपवीत भये पीछे गुरुकुलमें वसिवेकी इच्छासों कृष्णबलदेव कश्यपगोत्री उज्जैनपुरीके वासी सांदीपनी गुरुके पास जात भये जाको काश्य सांदीपिनी नाम हो ॥ ३१ ॥ जितेंद्रिय कृष्ण बलदेव भले प्रकार गुरुनके पास आयके बडे आदरते भक्तिपूर्वक नारायणके समान गुरुको सेवन करत भये ॥ ३२ ॥ शुद्धभावसूं सेवासो सन्तुष्ट भये द्विजन्मानमें श्रेष्ठ गुरुने श्रीकृष्णबलदेवकूं शिक्षादिक अंगनसहित उपनिषद सहित वेद पढाये ॥ ३३ ॥ मंत्र और देवताके ज्ञानसहित शस्त्र चलावेको धनुर्वेद और धर्मशास्त्र राजनीति, मीमांसादिक तर्कविद्या और शत्रुते मिलाप करनो, युद्ध करनो, वाके ऊपर चढजानो, समीप जायके रहनो, अपनी ओर फोरि लेनो, मिलाप

---

१ चौ०-मैयासों पालागन कहियो । हमपर प्रेम करो तुम रहियो ॥ होगी दुखित यशोमति मैया । मो बिन व्रज तिरिया सब गैया ॥ तातें वेग गमन व्रज कीजै । जाय सबनकौं धीरज दीजै ॥ मेरी सुरत न मनते टारो । मैं तुमसे कबहू नहिं न्यारो ॥ दोहा-निठुर वचन सुनि श्यामके, भये विकल अति नंद । उमगि नीर नैनन चले, पड गये दुखके फंद ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करनो, यह छः प्रकारकी राजनीति पढत भये ॥३४॥ सम्पूर्ण मनुष्यनमें उत्तमनमें उत्तम सब विद्यानके चलामनवारे सावधान कृष्ण बलदेव, हे राजन् परीक्षित् ! गुरुके विना बतायेही सब विद्यानकों पढत भये ॥ ३५ ॥ चौसठ रात्रिमें गायवों बजायवो नृत्य करिवेसूं आदि लैके चौसठ कला सीखत भये जब विद्या पढिचुके तब हे राजन् परीक्षित् ! कृष्णबलदेव दोनों भैया गुरुनते गुरुदक्षिणाके निमित्त कहत भये ॥ ३६ ॥ सांदीपनी ब्राह्मण कृष्ण बलदेवकी अद्भुत महिमा देखिके मनुष्यनसों परे चमत्कारी बुद्धि देखिकै स्त्रीसो सम्मत कर प्रभासक्षेत्रमें समुद्रमें डूबे अपने पुत्रको स्त्रीके कहेते वर मांगत भये ॥३७॥ तथास्तु ऐसे प्रणाम करिकै बडे पराक्रमी बडे रथी कृष्ण बलदेव रथमें बैठिके प्रभास क्षेत्रमें समुद्रके किनारेपै जायकै एक क्षणभर बैठत भये, तब समुद्र कृष्ण बलदेवकों आये जानिके तिनकी पूजा लावत भयो ॥ ३८ ॥ तब भगवान् श्रीकृष्ण ता समुद्रतै कहत भये, जो हमारे गुरुके बालक तैंने यहां बडी लहरनकरि डुबाये हैं वे गुरुके पुत्र लायकै देउ ॥ ३९ ॥ तब समुद्र बोल्यो हे देव ! अर्थात् प्रकाशमान कृष्ण ! मैंने तौ तुम्हारे गुरुकै पुत्र नहीं डुबाये हैं, मेरे भीतर रहनवारे शंखरूपकौं धरे एक बडो दैत्य है वह हरिलै गयो होयगो निश्चय वाके पास होयगो यह सुनिकै समर्थ श्रीकृष्णचन्द्र शीघ्रतासूं जलमें धसिकै पञ्चजन्य दैत्यकूं मारिके वाके पेटमें बालकनकूं नहीं देखतभये ॥४०॥४१॥ ता दैत्यके अंगमेंते शंखकूं लैके श्रीकृष्ण रथपै आवत भये, फिर यमराजकी अति प्यारी संयमनीपुरीमें आवत भये ॥ ४२ ॥ तहां जायकै बलदेवसहित श्रीकृष्णचंद्र शंख बजावत भये, प्रजाको दंड देनवारो धर्मराज शंखको शब्द सुनिकै ॥ ४३ ॥ कृष्ण बलदेवकी भक्तिपूर्वक पूजा करत भयो, सब प्राणीनके हृदयमें विराजमान कृष्णसों हाथ जोरिके यह बोलत भयो, हे विष्णु भगवन् ! लीलाकरिकै तुम मनुष्यरूप हो तुम्हारी कहा सेवा करौं ॥ ४४ ॥ अब श्रीभगवान् श्रीकृष्णचंद्र बोले हे महाराज ! यह गुरुके पुत्रको तू लेआयो है तिनकूं देउ तब यमराजने कही अपने कर्मनतै बंधेपरे हैं कैसे लाऊं तब श्रीकृष्ण कहे हैं मेरी आज्ञा भई है मेरी आज्ञाते कर्म जोरावर नहीं है ॥ ४५ ॥ जो आज्ञा ऐसे कहिकै यमराजने गुरुपुत्र लायदियो यादवनमें उत्तम कृष्ण बलदेव वाय लै अपने गुरुको देके बोले और वर मांगो ॥ ४६ ॥ तब गुरु कहत भये हे पुत्र ! तुमने गुरुसेवा भले प्रकार करी तुमसारिखेनको गुरु मैं भयो तौ मेरे कौन बातकी चाहना बाकी रही ॥ ४७ ॥ हे वीर ! तुम अब अपने घरकों जाओ या लोकमें और परलोकमें तुमारी पवित्रकीर्ति होऊ, तुमारे वेद नवीन पढे भये स्फुरण बने रहौ ॥ ४८ ॥ या प्रकार गुरुसो आज्ञा पाय श्रीकृष्ण बलदेव दोनों भैया पवनकी तुल्य शीघ्र चलनहारे मेघकी तुल्य गर्जनावारे रथमें बैठिकै हे राजन् परीक्षित् ! अपने घरकूं आवत भये ॥ ४९ ॥ रामकृष्ण भगवान् बहुत दिनते नहीं देखे अब तिनके दर्शन करिकै प्रजा बडे आनंदकौ प्राप्त होतभई जैसे गयो धन मिलवेसूं आनन्द होयहै ॥ ५० ॥

समनन्दन् प्रजाः सर्वा दृष्ट्वा रामजनार्दनौ ॥
अपश्यन्त्यो बहूहानि नष्टलब्धधना इव ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पू० गुरुकुलवासो नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥

अध्याय ४६.

श्रीशुक उवाच–वृष्णीनां प्रवरो मन्त्री कृष्णस्य दयितः सखा ॥
शिष्यो बृहस्पतेः साक्षादुद्धवो बुद्धिसत्तमः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! यादवनमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णके प्यारे मंत्री सखा साक्षात् बृहस्पतिके शिष्य बुद्धिमाननमें श्रेष्ठ उद्धवजी ॥ १ ॥ शरणागतनके दुःख दूर करनवारे मनोहर भगवान् श्रीकृष्ण प्यारे एकांती भक्त विन उद्धवजीसूं एकांतमें हाथ पकरिके बोलत भये ॥ २ ॥ हे उद्धव ! हे साधु ! तुम व्रजकों जाओ; हमारे मातापिताको प्रसन्न करो, और गोपिनको मेरे बिछुरिवेमें कष्ट भयो है ताय मेरो संदेशो लेजायके दूर करो ॥ ३ ॥ मेरे विषे जिनके मन और प्राण लगिरहे हैं, मेरे अर्थ पतिपुत्रादिको त्यागि दिये हैं मैंही प्यारो जिनको आत्मा हूं मोमें मनकरिकै रहेहैं मेरे लिये या लोक परलोकके सुखनके उपाय जिनने त्यागिदिये हैं तिनकूं मैं सुख देऊंहूं ॥ ४ ॥ हे उद्धव ! विनको प्यारो मैं जबते दूर आयोहों तबते वे गोकुलकी स्त्री मेरी सुधि करिकै विरहमें मेरी चाहसूं बेवश हैके मोहित हैजायं हैं ॥ ५ ॥ जब मैंने विनसों कह दीनीही कि मैं शीघ्र आऊंगो या कारणसों काहू प्रकार वे गोपियां प्राणधारण किये रहीं सोहू महाकष्टसों यदि विनको आत्मा विनके शरीरमें रहतो तौ दग्ध है जातो वह तौ मोमें लीन है या कारण गोपियें प्राण धारण कियेहैं ॥ ६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! या प्रकार सुन उद्धवजी बडे आदरसों स्वामी श्रीकृष्णचंद्रके संदेशकूं लैके रथमें बैठिके नंदरायजीके गोकुलकूं जातभये ॥ ७ ॥ सूर्यास्तसमय सुंदर नंदरायजीके व्रजमें प्राप्त होतभये, संध्यासमय आती गौवनकी खुरनकी रेणुसूं उद्धवजीको रथ ढकिगयो ॥ ८ ॥ पुष्पवती गौउनके लिये चारों ओरतें मतवारे बैलनके युद्धको वहां बहुत शब्द है रह्यो है, ऐननके बोछनतें व्याई गौ दौरि दौरिके अपने बछरानके पास आमें हैं शोभायमान व्रज है ॥ ९ ॥ जहां तहां सफेद गौनके बछरा फुदकत डोले है गौनके दुहिवेको शब्द जहां तहां होइ रह्यो है अर्थात् ता समय दोहा दोहनीकौ घोटनपैं धरिकै दुहै ता समय छुर छुर होय है जब आधीसी दोहनी होय आवै तब घर्र होय है, मुँहताईं भरि आवै तब धम्म धम्म होयहै और कोई कहैहै बछडा छोडो कोई कहे है दोहनी लायो, कोई कहे है लेउ, कोई कहे है देउ ऐसो शोर जहां है रह्योहै और बांसुरी बजवेको शब्द है रह्यो है तासूं वह व्रज शोभायमान है ॥ १० ॥ बलदेव श्रीकृष्णके मंगलरूप कर्मनकूं बनी ठनी गोप गोपी गायरही ही व्रज शोभायमान है ॥ ११ ॥ अग्नि सूर्य अभ्यागत गौ ब्राह्मण पितर देवतानके

---

१ ऊधोजी बोले, गोपिनकी प्रीति आपमें स्वार्थकी है वा और प्रकारकी ? स्वार्थकी तौ ऐसी होय है जैसे एक नचकैयाको लडका बडो सुंदर हो एक स्त्री वाय प्यारसों देखेई करै एक दिन वाय संग ले बागकी सैरको गई सो लरिकाके पांयके नीचे कंकर आयगयो सो लरिकानै भौंह संकोरकै सिसकारी लई वो अदा वाको प्यारी लगी सो वो अदा देखवेकूं हाथ पकरे पकरे जहां जहां कांटे कांकर होय तहां तहां लिये फिरै याके तौ कंकर चुभेहै और वह अदा देखत फिरै हैं ऐसी प्रीति पर धिक्कार है गोपिननैं सूर्यकुंडपैं देवीकी पूजा कर यही वरदान मांगो हो कि हम कृष्णकूं चाहै और वह हमें न चाहै नहीं तौ हमारे वियोगमें बडे दुःखी होंयगे हम काम धंधेमें लगी होंयगी तौ वे कहां कहां खोजत फिरैंगे ॥

२ प्र०—वृन्दावनसों मथुरा तौ चारही कोश थी, फिर गोपी आदि श्रीकृष्णके पास क्यों न आये ? उ०—नन्दजी और ग्वाल तौ जब तब आतेही रहते थे यशोदामी गई थी, ब्रह्मवैवर्तपुराणमें तथा हरिवंशपुराणमें यह कथा है पर गोपियैं इस कारण न आईं कि श्रीकृष्णने विचारा यदि गोपी यहां आवैंगी तौ बडे होनेसे मर्यादा भंग होगी, मथुरावासी अश्रद्धा करैंगे इस कारण उन पर माया डालदी जिससैं वह आ न सकीं केवल कुरुक्षेत्रमें मिलन हुआ ॥ ३ कवित्त-कामरी लकुट मोहि भूलत न एकौ पल घुंघची ना बिसरै जो पै लाल उर धारे हैं । जा दिनतैं छाकैं छूट गईं ग्वालनकी ता दिनते भोजन न पावत सकारे हैं ॥ भने यदुवंश यह नेह नंदवंशसों वंशी ना बिसारि जोपै वंश विस्तारे हैं । उद्धव व्रज जैयो मेरी लैओ चौवान गेंद मैयासे कहियो हम ऋनियां तुम्हारे हैं ॥ कौन विधि पावैं यह कर्म बलवान उद्धव छाछु छाकी व्रजभामिनिको भात है । मुक्तहू पदारथसों देचुके वाकी अब कहा दें जननीको याते पछतात हैं ॥ विधिने बनाई ब्याह कौन विधि मेटे ताई ऐसे करि शोचत रहत दिनरात हैं । ऊधो व्रज जैयो, मेरी कहियो समझाय मैया जाके रिन बाढे सो विदेश उठि जात हैं ॥ दोहा—कहा कहूं जा दिवसते, जननी बिछरयो तोहि । ता दिनसे कोऊ नहीं, कहत कन्हैया मोहि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पूजनकी सामग्री धरी है, धूप होयरही, दीवा बरे रहे फूल धरे गोपनके घरनसों वह व्रज मनोहर है ॥ १२ ॥ सब ओरतें फूलवारी फूल रही पक्षी बोल रहे भौंरा गुंजारैं, राजहंस कारंडपक्षी बैठे कमलनके समूहसों वह व्रज शोभायमान है ॥ १३ ॥ श्रीकृष्णके प्यारे उद्धवजीकों आये जानिकै नंदरायजी प्रसन्न हैके मिलत भये कृष्णके पासते आयो है यह जानिके ईश्वरबुद्धिसों पूजन करत भये ॥ १४ ॥ परम श्रेष्ठ सामग्रिनको भोजन करायकै शय्यापै सुखपूर्वक पौढायके, चरण दाबिकै मार्गको खेद मिटायकै उद्धवजीते नंदरायजी पूछत भये ॥ १५ ॥ कृष्णकी कुशल पूछिवेमें आंशूनसों कंठ रुकि जायगो यह शंका विचारिकै प्रथम वसुदेवजीकी कुशल पूछे हैं हे बडभागी उद्धव ! कहो शूरके पुत्र हमारे सखा वसुदेव लरिकावारेनसहित कुशलपूर्वक है कंसके बंदीखानेते छूटे हैं, भैया बंधु हितकारीसहित प्रसन्न हैं ॥ १६ ॥ पापी कंस संपूर्ण टहलुआन सहित अपने पापनते मरयो यह बडो मंगल भयो, वह कंस धर्मस्वभावी साधु यादवनसूं सर्वदा वैर करै हो ॥ १७ ॥ हे उद्धवजी ! वह कृष्ण कबऊ हमारी और अपनी माताकी सुधि करै है, सुहृद सखा गोपीनकी सुधि करे हैं, आपुही जाकी रक्षा करनवारो ऐसे या व्रजकी सुधि करें हैं, गौ वृन्दावन गोवर्द्धन पर्वतकी कबऊ सुधि करे है ॥ १८ ॥ गौनके हितको करनवारो कृष्ण जब कबऊ अपने भैया बन्धुनके देखिवेको आवैगो ता समय सुन्दर नासिका सुंदर मुसकानि चितवनि युक्त वाके मुखकूं हम देखेंगे ॥ १९ ॥ दावाग्नितै पवनतै इन्द्रकी वर्षातै विषसर्पतै अघासुरतै और बडी बडी मृत्युनते महात्मा कृष्णने हमारी रक्षा करी ॥ २० ॥ हे उद्धवजी ! श्रीकृष्णके पराक्रमनकी लीला-पूर्वक कटाक्षभरी चितवनिकी हँसनिकी बोलनिकी जब सुधि करे है तब हमारी सम्पूर्ण क्रिया शिथिल हैजाय है ॥ २१ ॥ मुकुन्दके चरणनके खोजके पर्वत नदी वनके स्थान और वाके खेलिवेके स्थाननको जब देखे हैं तब हमारो मन कृष्णमय हैजाय है ॥ २२ ॥ देवतानके कार्य करिवेके निमित्त या संसारमें कृष्ण अवतार ले आये हैं तिने देवतानमें उत्तम मानूं हूं मैंने बडो गम्भीर गर्गाचार्यको वचनहूं ऐसे सुनो हैं ॥ २३ ॥ दशहजार हाथीको बलवारो कंस और मल्लनकों, कुवलयापीड हाथीकों सिंह जैसे पशूनकूं मारे है ऐसे श्रीकृष्ण लीलाकरिके मारत भये ॥ २४ ॥ बडो भारी तीन तालकी बराबर धनुष एक हाथते उठायके जैसे हाथी लठियाकूं तोरे ऐसे तोरत भये और सात दिनपर्यंत गोवर्द्धन पर्वतकों धारण करत भये ॥ २५ ॥ प्रलंबासुर धेनुकासुर तृणावर्त्त बकासुरकों आदि लैके और जे सुर असुरनके जीतनवारे दैत्य हैं ते कृष्णने लीलाही करिके मारे ॥ २६ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! कृष्णमें प्रेमबुद्धिवारे नन्दरायजी या प्रकार सुधि करिके आंशू कंठमें भरि प्रेमके भावमें व्याकुल होयके चुप होत भये ॥ २७ ॥ यशोदाने जो ऐसे वर्णन किये जाते कृष्णके सुन्दर चरित्र श्रवण करे तौ स्नेहसूं स्तननमें दूध उमगि आयो नेत्रनमेंते आंशू वहातिभई ॥ २८ ॥ या प्रकार नन्दरायजी तथा यशोदाको भगवान् श्रीकृष्णमें परम अनुराग देखिके उद्धवजी नन्दजीते बोलत भये ॥ २९ ॥ उद्धवजी कहे हैं हे मानके देनेवारे नन्दराय ! या संसारमें देहधारीके मध्यमें निश्चय तुम प्रशंसाके योग्य हौं जो

---

१ दोहा—सुरत हमारी करत हैं, कछु उद्धव बलवीर । पुलकि गात लोचन सजल, पूंछत नन्द अधीर ॥ १ ॥ वोह ग्वालन सँग खेलवो, वोह गोपिन सँग हास । कबहुक लालन सुध करत, मात पितहि सुख रास ॥ २ ॥ बहु विधिसौं रक्षा करी, व्रजवासिनकी जौन । अब ऊधो उत्पात होय, तौ उद्धरै कौन ॥ ३ ॥

२ चौपाई—ऊधो कहो कुशल दोउ भैया । नीको है मेरो लाल कन्हैया ॥ फाटत नहीं वज्रकी छाती । अब यह समुझि हृदय पछिताती ॥ ऐसो भाग कभी अब पैहौं । बहुरि श्यामको गोद खिलैहौं ॥ दोहा—ग्वाल सखासंग जोरि अब, को गैयन ले जाय । को आवै संध्यासमय, वनतै गाय चराय ॥ उद्धव यद्यपि हमें सब, समुझावत व्रजलोग । उठत शूल तद्यपि निरख, माखन प्रभुमुख योग ॥ लाल लडायो विविध विधि, दूध पियाय पियाय । लालने ऐसी करी, छोडि बूढी मया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कि सबके गुरु नारायणमें ऐसी मति लगाई है ॥ ३० ॥ ये जो कृष्ण बलदेव हैं ते विश्वके निमित्त उपादान कारण हैं याहीते पुरुष प्रकृतिरूप हैं, सब प्राणीनमें प्रवेशकरिकै अनेक उपादान अनके प्रकारके ज्ञानके साक्षी हैं और अनादि हैं ॥ ३१ ॥ प्राणीनकी छुटती बिरिया यह पुरुष क्षणभर शुद्धमनकों जिन श्रीकृष्णमें लगायकै शीघ्रही कर्मनकी वासनानकूं छोडिकै सूर्यकी तुल्य प्रकाशमान ब्रह्मरूप होयके परमगतिकूं पावै है ॥ ३२ ॥ सबके आत्मा कार्य और कारण करिकै मनुष्यरूप धरे परिपूर्ण नारायणमें अतिशय करिकै भक्ति करौहो तुमकौ कहा करनो बाकी रह्यो ॥ ३३ ॥ अच्युत श्रीकृष्ण थोरेही दिनमें व्रजमें आमेंगे. भक्तनके पालन करनवारे भगवान् श्रीकृष्ण तुम्हें और यशोदाकूं आनंद देंइगे ॥ ३४ ॥ सब यादवनके वैरी कंसकूं रंगभूमीमें मारिके तुमारे पास आयकै श्रीकृष्ण जो कहत भये ताय सत्य करेंगे ॥ ३५ ॥ हे बडभागिओ ! तुम खेद मति करो, कृष्णकूं अपने पासही देखौगे, जैसे लकडीमें ज्योति रहे है ऐसे सब प्राणीनके हृदयमें रहे हैं ॥ ३६ ॥ या कृष्णके कोई प्यारो नहीं हैं, और कुप्यारो कोई नहीं हैं; कोई उत्तम नहीं, कोई अधम नहीं है, और कोई समान नहीं है, और वह विषम नहीं है, और वाके मान नहीं है वे समदृष्टि हैं ॥ ३७ ॥ न विनके माता है न पिता न स्त्री न पुत्रादिक है देहहू नहीं है और जन्महू नहीं है ॥ ३८ ॥ या कृष्णके कर्महू नहीं हैं, संसारमें देवादिकनकी मनुष्यादिकनकी नृसिंहादिकनकी जो योनि खेलिवेके लिये और साधुनकी रक्षा करिवेके लिये प्रकट होय है ॥ ३९ ॥ निर्गुण भगवान् सत्वगुण रजोगुण तमोगुण इन तीन मायाके गुणनकूं अंगीकार करे हैं गुणनसूं न्यारे अजन्मा भगवान् क्रीडा करिकै विश्वको उपजावै है पालन करै है संहार करे है ॥ ४० ॥ जैसे बालक झांईमांई फिरे हैं, तब वाकी दृष्टि फिरे है, तासों पृथ्वी फिरतीसी दिखाई देइहै, या प्रकार चित्त जो कर्त्ता है तामें अहंकार करिकै आत्माहू कर्त्तासौं दिखाई देहै ॥ ४१ ॥ भगवान् श्रीकृष्ण तुमारेही पुत्र नहीं है सबके पुत्र हैं, आत्मा है, पिता हैं, माता है और ईश्वरनके ईश्वर हैं ॥ ४२ ॥ जो कछु देखिवेमें आवै और जो कछु है चुको और जो होयहै और जो होइगो और जो कछु स्थावर जंगम जो कछु बडो छोटो है, सो सब श्रीकृष्ण विना अतिशय करिके कहिवेकूं योग्य नहीं है, परमार्थरूप श्रीकृष्ण हैं सोई सर्वरूप हैं ॥ ४३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! नन्दजी और श्रीकृष्णके अनुचर उद्धवजीकों याही प्रकार वार्त्ता करत करत सब रात्री बीति गई गोपी प्रातःकाल उठिके दियानकों बारिकै देहरीनको पूजन करिकै दही मथाति भई ॥ ४४ ॥ दियानकरिकै प्रकाशमान मणिनके जडाऊ गहननसों सुंदर लगत भई नेतीनको खेंचे हैं, तासूं भुजानमें चूरी कंकण हले हैं, नितंब हलतजाय हैं, स्तनपैं हारहू हलतजायहैं, कुंडलन करिके प्रकाशमान कपोल अरुण केशरीकी खोरि मुखपै लगी है ॥ ४५ ॥ कमलदललोचन श्रीकृष्णको चरित्र जब व्रजबालानने गायो तब वह गीत स्वर्ग पर्यंत जात भयो. दहीके मथिवेको शब्दहू गीतमें मिलि रह्यो हैं विन गोपीनके गीतसों दिशानको संपूर्ण अमंगल दूर होय है ॥ ४६ ॥ भगवान् सूर्यके उदय भयेपैं नंदरायजीके दरवाजेपै सुनहरी साजको रथ ठाडो देखिके यह कौनको रथ है या प्रकार व्रजवासी कहत भये ॥ ४७ ॥ कहां कंसके कार्यको साधक अक्रूर आयो है जो अक्रूर कमलदललोचन कृष्णकूं मथुरा लै गयोहो अपने स्वामी कंसको मरवायकै अब क्यों आयो है कहा हमें लेजायकै हमारे मांसके पिंड बनायके देयगो या प्रकार गोपी आपुसमें बात कर रहीहीं, इतनेमें उद्धवजी सन्ध्योपासनादिक नित्यकर्म करिकै आवत भये ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

किं साधयिष्यत्यस्माभिर्भर्तुः प्रेतस्य निष्कृतिम् ॥
इति स्त्रीणां वदन्तीनामुद्धवोऽगात् कृताह्निकः ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ४७.

श्रीशुक उवाच–तं वीक्ष्य कृष्णानुचरं व्रजस्त्रियः प्रलम्बबाहुं नवकञ्जलोचनम् ॥
पीताम्बरं पुष्करमालिनं लसन्मुखारविन्दं परिमृष्टकुण्डलम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित्! लंबी भुजा नवीन कमलसो नेत्र; पीतांबरको पहिरे कमलकी माला धारे प्रकाशमान मुखारविंद स्वच्छ काननमें कुंडल पहिरे कृष्णके अनुचर उद्धवजीको देखिके व्रजकी स्त्री बडो आश्चर्य मानत भई और परस्पर कहन लगीं ॥ १ ॥ सुंदर रूप यह कौन है, कहांते आयो है श्रीकृष्णचंद्रकोसो वेष है, वैसेही गहनेनको पहिरे हैं, ऐसी सब गोपी श्रीकृष्णके चरणारविंदको भक्त जान उद्धवजीकों चारों ओरते घेरत भई ॥ २ ॥ आधीनता करिके वे गोपी नम्र होय लाजभरी हँसनि चितवनि मीठी बोलनीसूं सत्कार कर एकांत आसनपै बैठे उद्धवजीको श्रीकृष्णके पासते संदेशो लैके आये जानिके पूछती भई ॥ ३ ॥ यादवनके पति श्रीकृष्णके तुम सेवक हो यह हम जाने हैं माता पिताके प्रसन्न करिवेके निमित्त तुम कृष्णके भेजे हो ॥ ४ ॥ या व्रजमें और ऐसो कोई नहीं हैं जो वाको स्मरण आवै, माता पिताके स्नेह बडे वैराग्यवान् पुरुषपैहू नहीं छूटे हैं ॥ ५ ॥ औरनसों अपने कार्यके निमित्त मित्रता यहां जताई, यावत् पर्यंत काम परो तावत् मित्रता राखी जैसे पुरुष स्त्रीनते प्यार करै है, और भौंरा फूलनसों प्यार करे है यह स्वार्थहीकी है ॥ ६ ॥ वा कृष्णने हमसो प्रीति करीही परन्तु दरिद्री पुरुषकूं जैसे वेश्या त्यागे है प्रजा असमर्थ राजाकूं त्यागे है और विद्यार्थी जैसे विद्या पढिकै गुरुकों त्यागे है, और दक्षिणा पायकै पुरोहित जैसे यजमानकौं त्यागेहै ॥ ७ ॥ पक्षी जैसे फलनिवृत्त वृक्षकों छोडे हैं अभ्यागत भोजन करिकै जैसे गृहकों त्यागे हैं, जार पुरुष भोग करिकै जैसे स्त्रीकौं त्यागे है, या प्रकार कृष्ण हमकौं त्यागि गयो ॥ ८ ॥ श्रीकृष्णके दूत उद्धवजी व्रजमें आये ता समय गोपीनकी वाणी, देह, मन, कृष्ण गोविंदमें जायलगे, लौकिक व्यवहार खान पानादिक सब छूटि गये ॥ ९ ॥ प्यारेके कर्मनकूं गावती श्रीकृष्णके बाल अवस्था और किशोर अवस्थाके जे चरित्र हैं तिनको स्मरण करिकै लाज त्यागिकै रुदन करत उद्धवजीते पूछतभई कोई एक गोपी उद्धवजीको स्वरूप देखिके श्रीकृष्णके संगको ध्यानकरिके प्यारे प्रसन्न करिवेके निमित्त दूत भेजो है ताय भ्रमर मानिकै एक भ्रमरको देखिकै ये बोलत भई ॥ १० ॥ ११ ॥ गोपी बोली हे मधुप! अर्थात् पुष्पनके रसके पीवनवारे हे कपटी कृष्णके मित्र! हमारे चरणकूं स्पर्श मत करैं; भोंराको देह तो कारो और मुख पीरो होय है वाकों देखिके कहे हैं, सौतिके कुचनसों मीठी पुष्पनकी मालाकी केशरि तेरी डाढी मूछनसों लगी है, जो तू स्पर्श करैगो तो स्नान करिवो होयगो, कदाचित् कहो कि मैं तुम्हारे प्रसन्न करिवेको कृष्णने भेजो हूं तहां गोपी कहैं है विन मथुराकी स्त्रीकूं प्रसन्न करो जैसे तू हमारे पास आयो है, ऐसेही यादवनकी स्त्रीनके पास जात होयगो परन्तु यादवनकी सभामें या बातकी हंसी होयगी कि कृष्णको दूत ऐसो निर्लज्ज है ॥ १२ ॥ हे गोपि! ऐसे तुम कृष्णको क्यों अनादर करोहो वाने तुमारो कहा अनादर करो हैं, तहां कहैं हैं; मोहन करनवारी अपनी अधरामृत एक वेर प्यायकै तू जैसे कमलनको छोडि देइहै, ऐसेही वह कृष्ण तुरत हमें छोडि देत भयो, लक्ष्मी कृष्णके चरणकमलकूं कैसे सेवन करैं हैं तहां कहे है मैंने जानिलीनी कृष्णके मीठे मीठे वचनसूं वाको चित्त हर्‌यो गयो है तासूं वह परी रहेहै ॥ १३ ॥ बहुत भूंभूं शब्द करते भौंरासों कहै है कि तू हमारे प्रसन्न करनेको कृष्णचरित्र गावै है हे छः पांवके भौंरा! देख पशु जितने हैं ते चार पांवके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है तू छः पांवको है याते तू डेढ पशु हैं, कैसें कहा गामे है सो तू नहीं जाने है यादवनके पति कृष्णकों हमारे आगे तू बहुत गावे है बहुत पुरानो है, हमारो देखे भारोहो, और सखी गायवो अपने घरमें बैठो होय ताकूं अच्छो लगें है, जा दिनतें कृष्ण मथुरा गये हैं, ता दिनते घर है न बाहर है हमपैतें तू कहा लियो चाहे है, जो तेरो गायवो सुने तोकूं रीझदेय, एक ठौर तोको बतामें हैं, वहां जा अर्जुनके सखा कृष्णकी सखी मथुराकी स्त्री हैं विनके आगे वाको प्रसंग तू गाय मथुराकी स्त्रीनके कुचनके रोग अब गये है, कृष्णकी प्यारी स्त्री तोकों रीझ देयगी ॥ १४ ॥ मातः! ऐसे मति कहो तेरी सुधि करिकै कामदेवते व्याकुल होयकें तोई प्रसन्न करिवेके लिये मैं भेजोहों तहां गोपी कहे हैं, कपटभरी रुचिर हासीवारे कृष्णकी भ्रुकुटीकी मरोर ऐसी है कि स्वर्ग पृथ्वी और पातालकीहू स्त्री विन्हें दुर्लभ नहीं हैं लक्ष्मी जाके चरणनकी रजको सेवन करे हैं तहां हमारी कहा चलै है, भौंरा वा कृष्णकों उत्तमश्लोक यह नाम सुनो है जब हम गरीबननकी सुधि लेयगो तब यह नाम रहेगो नहीं तो जात रहेगो ॥ १५ ॥ अपने पांवनपै भौंराकों पडतो देखो जो हमपै क्षमा करायवेकूं आयो है ऐसो मानिकै गोपी कहे है अपने शिरको मेरे पांवनसों उठाय लै पांवनमेंते नहीं उठै तब कहे हैं मुकुन्दते सीखके दूतकर्मन करिके प्यारे वचनकी रचना करिकै मनाईवेमें तू चतुर है तातै तेरी सम्पूर्ण बात मैं जानूंहूं, जब कभऊं रासमें मान करती तब अपनो मुकुट उतारिकै हमारे चरणनमें धरतो, बहुत खुशामद करतो, जैसे वाकी बातनको विश्वास नहीं आवै है, ऐसेही तेरी बातनको विश्वास नहीं आवे है क्योंजी ऐसो वाने कहा अपराध कियो है तहां गोपी कहे है, या संसारमें कृष्णके लिये पति पुत्र यह लोक परलोक सब हमने त्यागि दियो, जाके मनको ठिकानो नहीं ऐसो कृष्ण हमको त्यागिकै चलो गयो, अब वाते हमें कहा मिलाप करें, या प्रकार गोपी कहत भई ॥ १६ ॥ कृष्णके पहिले कर्मनकी सुधि करिकै हम या कृष्णते भय करे हैं, यह वर्णन करे है कारे रंगके जैसे तिनकी कथा हमने सुनि राखी है, पहिले अयोध्यामें दशरथको पुत्र राम भयो तानें सुग्रीवकी ओर हैके बधिककी तुल्य वालीको मार्यो व्याध मांस खायवेके कारण मारे है, याने तौ व्यर्थही मार्यो, बन्दरको कोई मांसहूं नहीं खाय है, दूर्वादल-श्यामके सुन्दर रूपपै रीझके रावणकी बहिनि शूर्पणखा आई सीताके वश होयकै लक्ष्मणकूं सिखायकै वाके नाक कान काटलिये, दूसरे कारे २ रंगको वामन रूप भयो वह राजा बलीपै तौ तीन पांव पृथ्वीके मिस सब पृथ्वी लैकै कांउ कांउ करिके जैसे कौआ घर घेर लेइहैं तैसे वाको बांधत भयो ताते हम कारेनकी मित्रतासूं अघाई पूरण भई अब कदाचित् भूलिकैं कारेनतें मित्रता न करेंगी उद्धवजी कहे हैं जबते मैं आयोहो तबते वाहीकी बातको कहोहो तहा गोपी कहे है जैसे वामें और गुण है तैसे यह अवगुण है वाकूं दुखदाई जानै हैं तथापि वाकी बात हमपै छूटे नहीं है ॥ १७ ॥ कछु गोपी और कहे हैं यह बात हम जानै हैं कृष्णकी कथा धर्म अर्थ कामकी जडकी उखारनवारी है तथापि हमपैं त्यागि नहीं जाय है देखो जा श्रीकृष्णके लीलाचरित्ररूपी अमृतको काननमें एक कणकाको स्वाद लै लियो वे राग द्वेष त्याग असत्यके तुल्य होय दुःखरूप पुत्र पौत्रादिकनकों त्यागिके भोगनकों छोडिके पच्छीकी तुल्य घरघर भीख मांगत डोले हैं ॥ १८ ॥ भौंरा कहे हैं ऐसे अब क्यों कहो हो पहिलेही

१ दोहा—कहत एक दृग नीर भर, कारे सब इकसार । इनकी प्रीति न कीजिये, पढे कपट चटसार ॥ सोरठा—देखो करि अनुमान, कारे आंहे कारे जलद । इनसों प्रीति न ठान, अरी मान मेरो कह्यो ॥ २ एक सेठजी बडे मोहमें पडेथे कहूं नेक सेठानीके शिरमें जो पीडा भई सो वैद्यको बुलायो उनने मोती कस्तूरी आदि लाखन रुपैयाको मसाला वाके मूडमें लगायो तब कहूं नैक आराम भयो जब कहूं नेक बेटाके मूंडामें दर्द होय तब आय वाकी पाटीपैं मूड धर बैठे कि मेरेहू शिरमें जो दर्द होयहै ऐसे तो कुटुम्बमें मोह करै परन्तु कहीं काहू वक्ताके मुखसै जो कृष्णकथा श्रवण करली तौ सब लरिका लरिकी छोड कोपीन लगाय वृंदावनमें भिक्षा करनलगे उनकी कथामें ऐसो जादू है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ता कृष्णके संग एकांतमें क्यों न कहति भई तापर गोपी कहे हैं जैसे अज्ञानिनी कृष्णसारहरिणकी स्त्री हरिणी वधिकके गीतसूं मोहित हैके घायल होय हैं, ऐसे हम वा कपटी कृष्णको वचन सत्य मानिके यह देखत भई, जाके नखनके स्पर्शते बडी हमेंहू कामदेवकी पीडा भई, हे उपमंत्रिन् अर्थात् दूत ! वा कपटीकी बात जानदेउ और बात कहो ॥ १९ ॥ इत उत फिरफिरायके फेरि आये भौंरासूं कहे हैं हे प्यारेके सखा! तू फेरि आयो तोकूं प्यारे कृष्णने भेज्यो है, हे दूत ! तू पूजा करिवे योग्य है जो तेरे इच्छा होय सो वर मांगिके कहा लक्ष्मीको संग न छोडनहारे कृष्णके पास हमें लेजाओ चाहै है; हे भौंरा वह लक्ष्मी सर्वदा संग रहे है तथापि छातीपै चढै है वाकूं दूरि करियो वह हम चलैंगी जबतक लक्ष्मी है तबतक हमारो कहा प्रयोजन है ॥ २० ॥ मथुरापुरीमें अब नंदको पुत्र सूधो रहे है हे भौंरा ! कभऊ वाकों अपने माता पिता नन्दको स्मरण आवै हैं; और अपने भैया बन्धूनकी सुधि करै है, और कभऊ गोपीनको स्मरण करे है कभऊ वह कृष्ण हम दासीनकी बात चलावै है, अगरकी तुल्य सुगन्धिवारी अपनी भुजाकूं हमारे शिरपै कभऊं आयके धरैगो ॥ २१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार उद्धवजी श्रीकृष्णचंद्रके दर्शनकी चाहना गोपीनकी सुनिकै प्यारे श्रीकृष्णके संदेशनकूं समझावतभये ॥ २२ ॥ उद्धवजी गोपीनसूं बोले तुमने वासुदेव भगवान् श्रीकृष्णमें मन लगायो है अहो गोपियो ! तुम निश्चय करिके कृतार्थ भईं, और लोकनमें तुम्हारो यश होयगो ॥ २३ ॥ दान व्रत तप होम जप यज्ञ वेदपाठ इन्द्रियनकों रोकिवो और अनेक प्रकारके कल्याणके उपाय सब करिवेको फल यही है जो कृष्णमें भक्ति होय ॥ २४ ॥ बडे मुनीश्वरनको दुर्लभ भक्ति तुमने उत्तमश्लोक भगवान् श्रीकृष्णमें करी यह बडो मंगल है ॥ २५ ॥ पति पुत्र देह भैया बंधु घरनकूं त्यागिके परमपुरुष भगवान् श्रीकृष्ण तुमने पति करे यह बडो मंगल भयो ॥ २६ ॥ हे बडभागिनियो! इन्द्रियनकी जिनमें गम नहीं ऐसे श्रीकृष्णचंद्रमें विरहसूं एकांत भक्ति तुमारे भई, यह तुमने मेरे ऊपर बडो अनुग्रह कियो ॥ २७ ॥ हे मंगलरूपिणियो ! तुम सुख देनवारो प्यारेको संदेशो सुनो, श्रीकृष्णके रहस्यकार्यके करनवारे संदेशकूं लैके मैं आयो हों ॥ २८ ॥ अब भगवान् गोपीनकूं उपदेश करे है सबको उपादान कारण मैं हूं मोसो तुम कभऊ दूर नहीं हो जैसे आकाश पवन जल पृथ्वी तेज ये पंचतत्त्व समस्त प्राणीनके देहमें रहे हैं ॥ २९ ॥ तैसे मन बुद्धि प्राण इंद्रिय और गुण इनको आश्रय मैं हूं, अपनेपै मैं अपने करिकै अपनेकूं उत्पन्न करूं हूं अपनी मायाके प्रभाव करिके पंचभूत इंद्रिय तीनों गुण रूपको अपनपो है, ता करिके सृष्टिकूं उत्पन्न पालन प्रलय करूं हूं ॥ ३० ॥ ३१ ॥ यहां एक शंका है आत्मा पंचभूतरूप होय तो वाकूं पंचभूतनके संग दोष लगे है तहां उत्तर कहे हैं आत्मा तौ शुद्ध है, काहेते मायाके गुणनमें जाय है सबतें न्यारो है ज्ञानरूप है अहंकारते जानिवेमें आवै आत्माकी न्यारी अवस्था है, शुद्धता कैसे तहां है सुषुप्ति स्वप्न जाग्रत् ये जो मनकी वृत्ति हैं तिनसूं प्रतीत होय है, आपसूं नहीं होय है ॥ ३२ ॥ अनेक अवस्थामान् प्रतीत होय है, मनके रुकिवेमें जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति अवस्था जाति रहे हैं, यह दिखायवेकूं मनको निरोधविधान करे है जागिकै जैसे मिथ्या स्वप्नेको ध्यान करे है, ऐसे मिथ्या विषयनकूं जा मनसूं विचार करिके इंद्रियनकूं पावै है ता मनकूं आलस्य छोडिकै रोको ॥ ३३ ॥ मन जब जाको रुकै है तब कृतार्थ होय है यह कहे हैं, वेद पढेको अष्टांग योग करिको आत्मा अनात्माके विचार करिको, त्याग तप इंद्रियनको जीतिवो सांच बोलिवो इत्यादि कर्मनसूं विवेकीनसो मन

१ प्र०—गोपियोंकी भक्ति मुनियोंको दुर्लभ है ऐसा क्यों कहा ? उ०—मुनिजनोंकी ऐसी भक्ति नहीं बन सकती यह न जानो, विशेषता यह कि मुनि ज्ञानी होकर ज्ञान योग साधते हैं भक्ति करते हैं परन्तु कभी २ शास्त्रविचारमें मन मोहित होही जाता है परन्तु गोपियोंने सर्वस्व श्रीकृष्णको अर्पण कर दिया और उस अनन्य प्रेमसे अनेक घरके विघ्न आनेपरभी चलायमान न हुई इसका कारण प्रेम लक्षण उत्तम मुनिजनोंको दुर्लभ भक्ति इन्हें मिली ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रुकैं है यही फल है जैसे नदीनको अंत समुद्रमें होय है ॥ ३४ ॥ तुम्हारो प्रियमें तुम्हारी दृष्टिसूं या कारण दूर रहूंहूं कि तुम्हारो मन मेरे विषें लग्यो रहैं और मेरो ध्यान करो ॥ ३५ ॥ जैसे दूर रहै प्यारेमें स्त्रीको मन लग्यो रहै है जो नेत्रनके आगे रहै तामें चित्त नहीं रहै है ॥ ३६ ॥ सम्पूर्ण वृत्ति त्याग मनको भी कृष्णमें लगायकै नित्य मेरो ध्यान करती रहोगी तौ शीघ्र मोकूं प्राप्त होउगी ॥ ३७ ॥ हे मंगलरूपिणि-यो जा समय मैंने रात्रिके समय वृन्दावनमें रासक्रीडा करी वा समय जिन गोपिनको विनके स्वामीने रोक लियो तासों वे रासक्रीडामें न आय सकी तब मेरी लीलानको ध्यान करिकै मोहीकूं पावत भयी ॥ ३८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार प्यारे श्रीकृष्णके उपदेशकूं श्रवण करिकै व्रज-की स्त्री गोपी प्रसन्न होयकै भगवान्को स्मरण कर उद्धवजीसूं बोलत भई ॥ ३९ ॥ अब संपूर्ण गोपी बोली यादवनके दुःखको देनवारो अपने भृत्यनसहित वैरी कंस मर्‌यो यह बडो मंगल भयो संपूर्ण मनोरथ पाय हितूनसहित श्रीकृष्णचंद्र प्रसन्न हैं यह बडो मंगल भयो ॥ ४० ॥ हे साधु उद्धव ! रामको छोटो भैया कृष्ण हमसूं जो प्रीति करै हो सो प्रीति कहा मथुराकी स्त्रीनसूं करै है वे सुंदर लाजभरी हँसनि उदारभरी चितवनिसूं वाको सत्कार करे हैं ॥ ४१ ॥ रतिविशेषको जाननवारो प्यारे कृष्ण मथुराकी स्त्रीनके वचनसूं विलासनसूं सत्कारसों कैसे न बँधेगो ॥ ४२ ॥ हे साधु उद्धव ! गोविंद कबऊ प्रसंग पायकै मथुराकी स्त्रीनकी सभामें बैठिकै जब बातें करै हैं, तब गांमकी स्त्री हमारी कबऊ बात स्मरण करे है ॥ ४३ ॥ हे उद्धवजी ! श्रीकृष्णको स्मरण आवै है जिनमें कुमोदनी कुंद फूल रहे, चंद्रमाकी चांदनीसो रमणीय वृन्दावनमें पावनमें झन्न २ नूपुर बजतजांय रासमें हमारे संग रमण करत भये और हमने विनकी स्तुति कीनी कदाचित् स्मरण करे है वा नहीं ॥ ४४ ॥ जैसे ग्रीष्मऋतुसों दग्ध वनके सिंचन करिवेकों इंद्र आवै है, तैसे उन कृष्णके दिये शोकसूं पजरीभई हमकूं हाथके स्पर्श करिकै जीवन करत दाशार्हवंशोत्पन्न श्रीकृष्ण कबऊ यहां आवैगो वा नहीं यह गोपी कहे हैं ॥ ४५ ॥ और गोपी कहे है आवैगो २ यह कहा लगाई है, कृष्ण यहां काहेकों आवैगो, अब वाकों राज्य मिलगयो है, शत्रु मारि लियो है, राजानकी कन्या व्याहिलीनी है, सब मित्र वाके पास हैं, प्रसन्न हैं अब यहां कहां करेगो ॥ ४६ ॥ और गोपी कहैं हैं वीर लक्ष्मीको पति सब वस्तु जाको प्राप्त याहिते परिपूर्ण कृष्णकूं वनकी रह-नवारी हमसूं वा और कन्यासों कहा प्रयोजन है ॥ ४७ ॥ आशाको त्यागनोही बडो सुख है यह पिंगला वेश्याने (एकादशस्कंधमें) कह्यो है निराशा बराबर सुख नहीं है यह जाने हैं तथापि हमारी कृष्णते आशा नहीं छूटे है ॥ ४८ ॥ कृष्णकी एकांतकी बात त्यागिवेकों कौन समर्थ होयगो, वाके राखिवेकी इच्छा नहीं तथापि लक्ष्मी अंगमेंते न्यारी नहीं होय है ॥ ४९ ॥ हे उद्धव ! ता कृष्णकूं हम भूलिजा-यँ तो दुःख न होय सो भूलनो हमकूं नहीं होय है यह गोपी कहे हैं हे प्रभु उद्धव ! हम बिचारी कहूं दोघरीकूं जांय परन्तु वाकूं भूले नहीं है, कदाचित् यमुनापै जांय तो वाकी कारी लहरमें हमें खायवेकों दौरे है, जब गोवर्धन पर्वतकूं देखे हैं तब सुधि आयजायहै, यह वही गोवर्धन है जाय सात दिन हाथपै राख्यो, फेर गौनमें जाय है तब सुधि आयजायहै इन्हें धौरी धूमरि कहिकै बुलावेहो फेरि बांसुरी श्रवण करे वाकी सुधि आयजाय है वाकों कैसे भूले जाने बलदेवजीकूं संग लैके ऐसे आचरण करे है ॥ ५० ॥ हे उद्धवजी ! नंदगोपके पुत्र कृष्णके सुन्दरशोभायमान चरणनके खोज देखिकै भूलिवेकूं समर्थ नहीं

१ सोरठ—छोड गये मधुवनमें श्याम वंसीवारो रे, विकल रहत हरि बिन दिनराती, दहत रहत उन बिन नित छाती, कर कमल पछताती नेह बिसारो रे ॥ १ ॥ व्याकुल हो सब रोवन लागी, हमारी प्रीति श्यामने त्यागी, अधिक नेह रस पागी नैन जल ढारो रे ॥ २ ॥ श्याम बिना एतो दुख पावैं, विरह अगिनिमें जर जर जावैं, यो दुख किसे सुनावैं कौन मेरो प्यारो रे ॥ ३ ॥ वृथा करत क्यों अरी परेखा, उनका देखा यही लेखा, कपटीसों कछु बुलबुल चलत न चारो रे ॥ ४ ॥ २ राग बडहंस—हो गये श्यामा दूजके चंदा, मधुवन जाय भये मधुवनियां हमपर डारो प्रेमको फंदा, मीराको प्रभु गिरिधरनागर अब तौ नेह परयो कछु मंदा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होय हैं विरहमें वारंवार स्मरण करामें है ॥ ५१ ॥ मनोहर चलनि, उदार हँसनि लीलापूर्वक चितवनि, मनोहर वचन, इनसूं हमारी बुद्धि हरि लीनी वा कृष्णकूं कैसे भूलें ॥ ५२ ॥ अब तौ मथुराकी ओर हाथ उठायके पुकारत भई हे रमानाथ! हे व्रजनाथ! हे गोविंद! हे दुःखनके दूर करनवारे! हे गोविंद! यह नाम तौ गौनको पालन करोगे तबही रहैगो नहीं तौ या नामको हाथ झारि बैठो, और जा समय इंद्र वर्षो तब यह संकल्प करचोहो कि अपने व्रजकी मैं रक्षा करूंगो सो अब तो तुम्हारेही विरहरूप समुद्रमें गोकुल डुब्यो जाय है शीघ्र आयकै याको उद्धार करो ॥ ५३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित्! श्रीकृष्णके संदेशनसूं विरह ताप मिटाय गोपी श्रीकृष्णको परमेश्वर जानिके और परमेश्वरको अपनो आत्मा निश्चय करिके उद्धवजीकी पूजा करत भई ॥ ५४ ॥ गोपीनके शोक दूरि करिवेके निमित्त कितनेहूं मास उद्धवजी व्रजमें वास करतभये, कृष्णचंद्रकी लीला कथा गायगायके व्रजवासीनकूं आनंद देत भये ॥ ५५ ॥ जितने दिन पर्यंत उद्धवजी नंदके व्रजमें बसे, उतने दिन व्रजवासीनको कृष्णकी बातनसूं क्षण समान बीतत भये ॥ ५६ ॥ नदी पर्वत वन गुफा पुष्पित वृक्ष इत्यादिकनकूं देखिकै हरिदास उद्धवजी व्रजवासिनको श्रीकृष्णको स्मरण करावतभये ॥ ५७ ॥ गोपीनके चित्तकूं या प्रकार श्रीकृष्णमें लीन हैवेसो व्याकुल देखिकै परम प्रसन्न होके उद्धवजी गोपिनकूं दंडवत् कर कहतभये ॥ ५८ ॥ इन गोपीनकी स्त्रीनको पृथ्वीपै जन्म सफल है, काहेसो कि सबके आत्मा गोविंदमें इनको परम प्रेम भयो है जा प्रेमकूं संसारते भयभीत मुमुक्षु पुरुष और मुक्त और हम भक्त इच्छा करे हैं अनंत श्रीकृष्णकी कथामें जा पुरुषको अनुराग है, वाकूं ब्रह्मजन्मसूं कहा प्रयोजन है, अथवा एक तो शुद्ध माता पितासूं द्वितीय गायत्रीउपदेशसूं तृतीय यज्ञदीक्षासूं ब्राह्मणके तीन जन्म है तिनसूं कहा प्रयोजन है ॥ ५९ ॥ वृन्दावनकी विचरनवारी व्यभिचारदृष्टि करिकै दूषित गोपी स्त्री कहां और परमात्मा श्रीकृष्णमें आरूढभावारे मन कहां? निरन्तर भगवान्को स्मरण कर अज्ञानी पुरुषहू कल्याण प्राप्त करे है, जैसे कोई मनुष्य अमृतको सेवन करे वह अमर होय है ॥ ६० ॥ सर्वकाल अंगमें रहनवारी लक्ष्मीपैहू यह प्रसन्नता न भई, और कमलके गंधकीसी कांतिवारी देवांगनानकूं जो प्रसाद नहीं मिल्यो, सो रासके उत्सवमें श्रीकृष्णमें भुजदंडनसूं गलबाहीं लगायके व्रजसुंदरीनकूं मिलतभयो ॥ ६१ ॥ इन गोपीनके चरणरजको सेवन करनवारो वृन्दावनमें गुल्म लता औषधिनमें कछु मेरो जन्म होय जे गोपी दुस्त्यज अपने भैया बंधु बडेनके मार्गको त्यागिकै वेदगम्य मुकुन्द श्रीकृष्णके मार्गकूं सेवन करतभई ॥ ६२ ॥ लक्ष्मी जिन चरणनको पूजन करती पूर्ण काम ब्रह्मादिक देवता और योगीश्वर जिनको अपने हृदयमें चिन्तमन करे है विन श्रीकृष्णभगवान्के चरणारविंदकूं राससभामें स्तननके ऊपर धरिके आलिंगन करिकै यह गोपी तापकों दूर करतभई ॥ ६३ ॥ नंदके व्रजकी स्त्रीनके चरणकी रजको वारंवार नमस्कार करूंहूं, जिन गोपीनकी गाई हरिकथा तीनों लोकनको पवित्र करे है ॥ ६४ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित्! याके पीछे गोपिनसूं यशोदाजीसूं नंदरायजीसूं गोपनसूं आज्ञा मांगिके दाशार्हवंशोत्पन्न उद्धवजी गमनसमय रथमें बैठत भये ॥ ६५ ॥ उद्धवजीके विदा हैवेके समय नन्दरायजीसूं आदि लेकै-

१ सारंग—बिन गोपाल बरन भई कुंजै। तब ऐ लता लगत अति शीतल अब भई विषमज्वालकी पुंजै ॥ वृथा बहत यमुना खग बोलत वृथा कमल फूले अलि गुंजै। सूरदास प्रभुको मग जोवत आंखियां भई बरन ज्यों गुंजै ॥ १ ॥ राग देस—नाथ अनाथनकी सुधि लीजै। तुम बिन दीन दुखित हैं गोपी बेगहि दर्शन दीजै ॥ नैन सकल भरि आये हरि बिन ऊधौको पतियां लिख दीजै। सूरदास प्रभु आश मिलनकी अबकी बेर हरि आवन कीजै ॥ २ ॥

२ जित देखें तित श्याममई है। श्याम कुंज वन यमुना श्यामा श्याम गगन घनघटा छई है ॥ सब रंगमें श्याम भरो है लोग कहत यह बात नई है। मैं बरैनके लोग नहीं की श्याम पुतरिया बदलगई है। चंद्रसार रविसार श्याम है मृगमद श्याम काम बिजई है। नीलकंठको कंठ श्याम है मनो श्यामता बेलि बई है। श्रुतिको अक्षर श्याम देखियत दीपशिखापर श्यामतई है। नरदेवनकी मोहर श्यामा अलख ब्रह्म छवि श्याम भई है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समस्त ब्रजवासी अनेक प्रकारकी भेटनको हाथमें लैके उद्धवजीके पास आयके स्नेहतै आंशू नेत्रमें भर ब्रजवासी बोलत भये ॥ ६६ ॥ हमारे मनकी वृत्ति श्रीकृष्णके चरणारविंदमें लगी हैं, और हमारी वाणी वा कृष्णको नाम लियो करे है, हमारो शरीर वा कृष्णकूं प्रणाम करे है ॥ ६७ ॥ अपने कर्मानुसार ईश्वरकी इच्छातै जा काहू योनिमें हम जायँ, तो जो कछु हमने मंगलरूप कर्म करे हैं अथवा दान करे हैं तिनको यही फल मांगे हैं कि कृष्णमें हमारी प्रीति रहै ॥ ६८ ॥ हे राजन् परीक्षित ! या प्रकार गोपीनने कृष्णसौ उद्धवजीको सत्कार कियो तब उद्धवजी विनसौ विदा हैकें कृष्णपालित मथुरापुरीमें आवत भये ॥ ६९ ॥ श्रीकृष्णको प्रणाम करिकै उद्धवजी ब्रजवासीनकी भक्तिकी अधिकता कहैत भये, और वसुदेवकौ प्रणाम करिके बलदेवजीकौ प्रणाम करिकै राजा उग्रसेनको भेट देत भये ॥ ७० ॥

कृष्णाय प्रणिपत्याह भक्त्युद्रेकं व्रजौकसाम् ॥
वसुदेवाय रामाय राज्ञे चोपायनान्यदात् ॥ ७० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे पूर्वार्धे उद्धवप्र० सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अध्याय ४८.

श्रीशुक उवाच–अथ विज्ञाय भगवान् सर्वात्मा सर्वदर्शनः ॥
सैरन्ध्र्याः कामतप्ताया प्रियमिच्छन् गृहं ययौ ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! उद्धवजी जब ब्रजतै आए ताके पीछे सबके आत्मा और सबके देखनवारे छः प्रकारके ऐश्वर्य करिके युक्त श्रीकृष्णचंद्र कामसूं तपायमान कुब्जाके प्रिय करिवेके लिये वाके घर जातभये ॥ १ ॥ कैसो घर है ताको वर्णन करे हैं बडे मोलकी अनेक तरहकी जामें वस्तु धरी हैं, कामके उद्दीपन करनवारे चित्र जामें लिखे हैं, मोतीनकी झालरी जिनमें लटकैं, ऐसी पताका फहराय हैं चंदोवा तनिरहे हैं, शय्या बिछरही हैं, सुंदर आसन बिछे हैं सुगंधिकी धूप लगि रही है दीवा प्रज्वलित हो रहे हैं माला अतर अरगजा धरे हैं, तिनसों शोभायमान घर है ॥ २ ॥ श्रीकृष्णको अपने घरमें आये देखिकै कुब्जा शीघ्रही आसनपैते उठिके हरषराइट पाय या प्रकार सखीनको संग लिये श्रीकृष्णके पास आवती भई, सुन्दर आसन बिछाय चरण धोइके सत्कार करत भई ॥ ३ ॥ तैसेही भले प्रकार पूजन पाय उद्धवजी आसनकूं हाथ लगायकै पृथ्वीमें बैठतभये, लौकिक लीलानकूं करनहारे श्रीकृष्ण शीघ्रही सुन्दर बिछी शय्यापै पौढतभये ॥ ४ ॥ स्नान करिके चंदन लगाय सुन्दर वस्त्र पहिर गहने माला अतर अरगजा ताम्बूल और अमृतकीसी नाईं मादक वस्तुसूं अपनेकूं बनाय ठनायकै लाजभरी लीलापूर्वक मुसिकानी कटाक्ष भरी चितवनिसूं मोहित भई कृष्णके पास आई ॥ ५ ॥ नवीन समागमकी लज्जासूं शंकासहित कुब्जाकूं बुलायके कंकणसों शोभायमान हाथको पकरिकै शय्यापै बैठायके चन्दन देवेके तनक पुण्य कियेसो वो कुब्जा स्त्रीके संग श्रीकृष्ण रमण करत भये ॥ ६ ॥ कामदेवसूं तप्त कुचनको छाती और नेत्रनके तापकूं दूर करिवेको

१ कवित्त–ता समय गोपी बोलीं ॥ ओढवेको कंथा अरु भस्म रमाइवेको काननके कुंडल कर टोपिनको बनावैंगी । हाथमें कमंडल अरु खप्पर बरायवेको आदेश २ कर शृंगिया बजावैंगी ॥ ऋद्धि दीनी कुबजाको सिद्धि दीनी गोपिनको फिरैंगी द्वार २ अलखहू जगावैंगी । एक बात ऊधोजी हरिसों यों कहियो जाय एती ब्रजबाला मृगछाला कहां पावैंगी ॥ चौपाई–जसोदा बोली–इतनी दया मातुपर कीजे । एकबार फिर दर्शन दीजे ॥ सोरठा–दर्द यशोमति माय, मुरली ललित गुपालकी । ऊधो दीजो जाय, प्यारी ही अतिलालकी ॥ दोहा–नन्द दोहनी भरि दई, कह्यो नैन भरि नीर । बावारीको दूध यह, भावति हो बलवीर ॥ २ शीर्ष्णां गोकुलमंडलीपशुकुलं सस्यायन स्पंदते मूकाः कोकिलपंक्तयः शिखिकुलं सव्याकुलं नृत्यते । कृष्णस्त्वद्विरहानलेन करुणा सर्वेऽपि दैन्यंगताः किंत्वेका यमुना कुरंगनयनानेत्रांबुभिर्वर्धते ॥ ये सब ब्रजको वृत्तांत कहिके सब गोपीनकी विरहदशा कहिके उद्धवजी घरको गये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अनन्त श्रीकृष्णके चरणारविंदसूं लगायकै और वा चरणारविंदकूं सूंघिकै स्तननके मध्यमें प्राप्त भये सुन्दर आनन्द मूर्ति श्रीकृष्णचन्द्रको भुजानसूं आलिंगन करिकै बहुत दिनसूं बढे तापकूं त्यागतभई ॥ ७ ॥ चन्दनके अर्पण करेते मोक्षके देनवारे दुर्लभ श्रीकृष्ण ईश्वरको पायके अभागिनी कुब्जा ये मांगती भई ॥ ८ ॥ अहो प्यारे! कोई दिन वसिके मेरे संग रमण करो हे कमलनेत्र! तुम मोपै त्यागे नहीं जाओ हो ॥ ९ ॥ एक वेर तेरे नित्य है जावो करूंगो ऐसे ता कुब्जाको कामवर दैके वाको सन्मान करिके मानके देनवारे ब्रह्मादिकनके ईश्वर श्रीकृष्ण उद्धवजीको संग लैके सुन्दर अपने घरमें आवतभये ॥ १० ॥ संपूर्ण ईश्वरनके ईश्वर दुःख करिकै आराधन करिवेमें आमनवारे विष्णुको प्रसन्न करिके पुरुष विषयनको वर मांगै वह बडो कुबुद्धि है क्योंकि विषय तुच्छ है ॥ ११ ॥ बलदेव उद्धवजीको संग लैके समर्थ श्रीकृष्ण कछु कार्य करायवेके लिये अक्रूरको भलो मनाइवेके निमित्त अक्रूरके घर जातभये ॥ १२ ॥ अक्रूरजी मनुष्यमें श्रेष्ठ अपने बंधु श्रीकृष्णबलदेवको दूरते देखिके प्रसन्न हैकै मिलिकै आनन्द पावत भये ॥ १३ ॥ कृष्ण बलदेव और उद्धवजीने विन्हें नमस्कार करी अक्रूरजीने पश्चात् कृष्ण बलदेवको प्रणाम कर और आसनपै बैठाय कृष्ण बलदेवकी पूजा करी ॥ १४ ॥ हे राजन् परीक्षित्! कृष्ण बलदेवके चरणनके धोमनके जलकूं शिरपै चढावत भये भेंट दिव्यवस्त्र चन्दन माला उत्तम गहनेनसूं पूजा करिके चरण धोइके प्रणाम करतभये, और गोदमें चरणनकूं धरिकै दाबत भये आधीनतापूर्वक नविकै अक्रूरजी कृष्ण बलदेवजीसूं बोलत भये ॥ १५ ॥ १६ ॥ मंत्रिन सहित पापी कंस मारो बडे कष्टते तुमने या अपने कुलको उद्धार कियो, और कुलको बढायो, यह बडो मंगल भयो ॥ १७ ॥ तुम प्रकृतिरूप हो जगत्के कारण हो जगन्मय तुमते पृथक् कछु कार्य कारण नहीं है ॥ १८ ॥ तुम अपने रचे विश्वमें अपनी शक्तिनसहित प्रवेश करिके हे ब्रह्मन् अर्थात् परमेश्वर! श्रवण करिवेमें देखिवेमें बहुत प्रकारके प्रतीत होउहो ॥ १९ ॥ जैसे स्थावर जंगम देहमें पृथ्वीको आदि लैके पंचभूत अनेक प्रकार करिकै प्रकाशो हो, ऐसे अपने आधीन अकेले तुम आपही अपने कार्य पंचभूत और पंचभूतनके बने देहमें बहुतरूप करिकै प्रकाशो हो ॥ २० ॥ रजोगुण तमोगुण सत्वगुण अपनी शक्ति है तिनसों विश्वको उत्पन्न पालन प्रलय करोहो गुण और उत्पत्त्यादिक कर्मनसों बंधे नहीं हो ज्ञानरूप तुमकूं बंधन करनवारी अविद्या नहीं है ॥ २१ ॥ देहादि उपाधि झूंठी सांच कहिवेमें नहीं आवै ताते आत्माको साक्षात् जन्म नहीं हैं, जन्मको कारण भेद नहीं है तुममें अविद्या नहीं है, याते बंधे नहीं हो छूटेभी नहीं हो ऐसे बंध मोक्ष दोनों तुमको नहीं हैं उलूखलमें मोको बंधो सुनो है, यमुनाके भीतर खुल्यो देखो है, बंधमोक्ष कैसे नहीं हैं हमारे अज्ञान करिके बंध मोक्षसे दिखाई देउहो तुम बंधे हो न छूटे हो ॥ २२ ॥ जगत्के कल्याण करिवेके निमित्त तुम्हारो कह्यो सनातन वेदमार्ग जासमय असाधुनके पाखंडमार्गसो बाधित होय है ता समय सत्त्वगुण रूपको धारण करोहो ॥ २३ ॥ हे प्रभो! तुम या संसारमें पृथ्वीको भार उतारिवेके लिये अपने अंश बलदेवसहित वसुदेवजीके घरमें जन्मैं हो देवतानते इतर असुर अंशनतै उत्पन्न भये राजानकी सेकरान अक्षोहिणीनको वध करोगे और यदुकुलके यशको बढाओगे ॥ २४ ॥ हे ईश! आज हमारो घर निश्चय बडभागी है, सब देवता पितृ मनुष्य प्राणी देवरूप तुम हो तुम्हारे चरणारविंदको धोमन जल गंगारूप तीनों लोकनकूं पवित्र करै है, सो तुम जगत्के गुरु अधोक्षज भगवान् हमारे घरमें आये हो याते हमारो घर बडभागी है ॥ २५ ॥ हे प्रभु! आप भक्तवत्सल सत्यवक्ता सबके हितकारी कृतके जाननवारे तिनकूं त्यागिकै

१ प्र०—श्रीकृष्ण कुब्जाके घर क्यों गये? उ०—रामावतारमें एक वेश्या कामविह्वल हो रामचंद्रके दर्शनको वन विहारके डेरेमें प्रविष्ट होकर रामचंद्रको इकटक देखने लगी, जानकीजीनें उसकी धृष्टतासै शाप दिया कि तू कुबडी होगी, वेश्याने कहा भक्तोंकी यह गति तब भगवान्नै कहा कृष्णावतारमें तेरे स्थानपर मैंही आऊंगा और अभिलाष पूर्ण करूंगा, यह भक्तिका प्रताप दिखानेको ऊधोजीको साथ लेगये। आनन्दरा० ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ऐसो बुद्धिमान् कौन है जो अन्यकी शरण लेई, भजन करनवारेनकूं तुम संपूर्ण कामनानको देउहो' और अपने आत्माकूंहू देउहो, और तुम्हारे यह उत्तम है यह भेद नहीं है ॥ २६ ॥ हे जनार्दन ! आपने घरमें आयकै दर्शन दीनों यह बडो मंगल भयो, योगेश्वर और देवता ये तुमारे स्वरूपकूं नहीं जाने हैं पुत्र स्त्री धन हितकारी घर देहादिकनमें मोहकी रस्सीरूप तुम्हारी माया हमको लगिरही है सो जलदी कांटो ॥ २७ ॥ भक्त अक्रूरनें जब या प्रकार पूजन और स्तुति करी तौ भगवान् श्रीकृष्ण वाणीनसूं मोहित करते मुसिकायके अक्रूरजीते बोलत भये ॥ २८ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् कहे है तुम हमारे गुरु हो, नित्य स्तुति करिवे योग्य हौ, बंधु हौ, हम तुमारे लरिकावारे हैं हमारी रक्षा करो पोषण करो हमपै कृपा करो ॥ २९ ॥ हे पूज्यनमें श्रेष्ठ ! तुम सदृश बडभागी कल्याणकी इच्छा करनेहारो मनुष्यनको नित्य सेवा करिवे लायक हौ, देवता आप स्वार्थी हैं साधु महात्मा आप स्वार्थी नहीं होय हैं ॥ ३० ॥ कहां जलमय तीर्थ नहीं हैं और मृत्तिका सिलानके बने देवता कहा नहीं हैं किंतु वे सब बहुत दिन पर्यंत सेवा करवेते पवित्र करे हैं, और साधु जो हैं ते दर्शनहीते पवित्र करे हैं[१] ॥ ३१ ॥ हे अक्रूरजी ! तुम हमारे सुहृदनमें उत्तम हो याते पांडवनके कल्याण करिवेके लिये हस्तिनापुरकूं जाओ ॥ ३२ ॥ पिता पांडुको मरण भये पीछे माता कुन्ती सहित दुःखित पांडव बालकनको धृतराष्ट्र अपने पुरमें लेआयो है, वाके पास रहे हैं यह हमने सुनी है ॥ ३३ ॥ लुब्ध बुद्धि अंबिकाको पुत्र राजा धृतराष्ट्र भयाके पुत्र पांडवनमें समता नहीं राखै है, दुष्टदुर्योधनकूं आदि लैके पुत्रनके आधीन है रह्यो है आंधरि जाकी दृष्टि है ॥ ३४ ॥ तुम अब हस्तिनापुरको जाओ, बुरी भली विनकी सब खबरी लाओ हम जानिकै पाण्डवनको जामें सुख होयगो वह उपाय करेंगे ॥ ३५ ॥ या प्रकार अक्रूरजीसों कहिकै छः प्रकारके ऐश्वर्ययुक्त हरि श्रीकृष्णचंद्र बलदेव और उद्धवजीको संग लैके अपने घर आवतभये ॥ ३६ ॥

इत्यक्रूरं समादिश्य भगवान् हरिरीश्वरः ॥
संकर्षणोद्धवाभ्यां वै ततः स्वभवनं ययौ ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दश० पू० अक्रूरप्रेषणं नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

---

१ यह संसार झूंठा है कोई किसीका नहीं है, एक सेठजीका लडका घरसे रूठकै एक बाबाजीपै चलागया और कही मुझे चेला करलो, बाबाजी बोले बच्चा चेला गुरु सब झूठी बात है वह बैठ रहा, बाबाजी बातें करने लगे, संध्याको जब गुस्सा उतर गया, तौ बोला बाबाजी मेरी मा मुझे बहुत प्यार करै है वह बडी दुःखी होगी, मैं जाऊंहूं, बाबाजी बोले बच्चा यह सब झूंठ है, जा फिरभी आइये वह घर गया माता पिताने प्रसन्न हो प्रसाद बटाया, और बाबाजीके पास आयो जायो करे, बाबाजीने उसे प्राणायामसमाधि सिखादी, और एक दिन बोले आज भोजन करके प्राण चढालीजो कौन किसीका है विदित होजायगा, उसने जायकै भोजन कर प्राण चढालिये जब चार बजे और वह न उठा तब उसकी माताने जाकै जगाया, देखो तौ प्राणही नहीं, लगी सिर पीटने पिता स्त्री सब प्राणप्यारा कह रोने लगे मित्रादि सब रोने लगे, प्राण देने लगे, सिर पटकने लगे, गुण कथन करने लगे, जब बडे व्याकुल हुए, एकने कही यह बाबाजी पै बहुत जायथा, एक मनुष्य बाबाजीको बुलाकै लाया, बाबाजी देखकै बोले यह तौ अब हो चुका, सब पैरोंपै गिरे कि महाराज चाहैं हम मर जांय, परन्तु यह पुत्र जी जाय, बाबाजी बोले तौ एक कटोरा दूध मिश्री डालकै ले आओ; कटोरा आतेही बाबाजीने सात बार उतारके पांयते धर दिया, और बोले जो इसे पीवेगा वह मरजायगा, और इसमें प्राण आयजायंगे, यह सुनतेही सब सुन्न होगये, अडौसी पडौसी बोले कहांकी आफत आगई, मित्रादि सब चलने लगे, कोई बोली लल्ला रोता होगा, किसीकूं लघुशंका किसीकूं दिशाने सताये, केवल माता पिता स्त्री रहगये, वे कहां जाय बाबाजी बालकके पितासे बोले तुमही पीलो, जब तौ प्राण खावे है, सेठजी बोले जो मैं जीऊंगो तौ और लल्ला हो रहैगा. फिर बाबाजी मातासे बोले तुम पीलो, जब तौ प्राण दिये देही, वह बोली लालाके चाचा जीते रहैंगे तौ और हो जांयगे फिर बाबाजी वा स्त्रीसे बोले तू पीले अर्द्धांगिनी है वोह बहुत कहनेसे बोली मुझे ह्यां रोटी न मिलेगी तो मावापकेयहां चली जाऊंगी, जब कोई सम्मत न हुए तौ बाबाजी बोले तौ हमही पीलें, तीनों हाथ जोडकै बोले महाराज इतनी कृपा आपही करो बाबाजीने हँसके पीलिया, और उसकी नाडी ज्यों दबाई, उठबैठा सेठजीके बडा मंगल हुआ, बाबाजी उस लडकेसे बोले, देख बच्चा संसार झूंठा है कि नहीं सब अपने २ स्वार्थहीके हैं ॥ २ यहां महात्मा साधुओंका उत्कर्ष दिखाया है निन्दा नहीं है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ४९.

श्रीशुक उवाच-स गत्वा हास्तिनपुरं पौरवेन्द्रयशोऽङ्कितम् ॥
ददर्श तत्राम्बिकेयं सभीष्मं विदुरं पृथाम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! पुरुवंशी राजानके यशते शोभायमान हस्तिनापुरमें जायकै अंबिकाके पुत्र धृतराष्ट्रकूं अक्रूरजी देखतभये, और भीष्मपितामह विदुर कुंती और सोमदत्त पुत्रसहित बाल्हीक भारद्वाज अर्थात् द्रोणाचार्य गौतम अर्थात् कृपाचार्य कर्ण दुर्योधन अश्वत्थामा पांचों पांडव और जे सुहृद हैं तिन सबकूं देखतभये ॥ १ ॥ २ ॥ गांदिनीके पुत्र अक्रूरजी बंधुनके संग यथायोग्य मिलिके, बंधु सुहृदनकी वार्त्ता अक्रूरजीते पूछतभये, और अक्रूरजी आप विनते कुशल क्षेम पूंछतभये ॥ ३ ॥ दुष्ट पुत्र और अल्प बुद्धि दुष्ट कर्णादिकनके कहेमें रहनहारे धीरतारहित राजा धृतराष्ट्रके वृत्तान्त जानिवेके कारण कितनेऊ मास पर्यंत अक्रूरजी वहां वास करतभये ॥ ४ ॥ तेज अर्थात् प्रभाव ओजोबल अर्थात् शस्त्र चलायवेकी निपुणता वीर्य अर्थात् शूरता पांडवनमें प्रजाको स्नेह वीरतासों आदि लैके जे अच्छे गुण हैं तिन्हें न सहारके धृतराष्ट्रके पुत्रनकी और जो कछु आगे करिवेकी इच्छा है वाय ॥ ५ ॥ और धृतराष्ट्रके पुत्रनके विषके दैवेसूं आदि लैके जो कछु अन्याय करचो है सो संपूर्ण वार्ता कुंती और विदुर अक्रूरजीके आगे कहतभये ॥ ६ ॥ कुंती भैया अक्रूरकूं आयो सुनिके तासूं मिलिकै और अपने जन्मस्थाननको स्मरण करिकै नेत्रनमें आंशू वहावती अक्रूरजीते बोलत भई ॥ ७ ॥ हे सौम्य अर्थात् साधु ! मेरे माता पिता कभऊ स्मरण करें हैं मेरे भैया बहिनी भैयाके पुत्र कुलकी स्त्री सखी ये सब कभऊ मेरी सुधि करे हैं, ॥ ८ ॥ शरणागतनको पालन भक्तनके ऊपर हितको करनवारो भैयाको पुत्र भगवान् श्रीकृष्णचंद्र कभऊ अपनी फूफूके पुत्रनकी सुधि करे हैं कमलकी तुल्य नेत्रवारे राम कभऊ हमारी सुधि करे है ॥ ९ ॥ ल्यारीनके बीचमें हरिणी जैसे घिरजाय ऐसे वैरीनके बीचमें घिरी भई मैं शोच करूं हूं सो कहा मोकूं और पिता-हीन मेरे बालकनको श्रीकृष्ण तुम्हारे वचनसों कहा समझावैंगे ॥ १० ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे महायोगिन् ! हे विश्वके आत्मन् ! हे सबके अंतर्यामिन् ! हे विश्वके पालनकर्ता ! हे गोविन्द ! बालकनके सहित दुःखित हैकै मैं तुमारी शरण आईहूं मेरी रक्षा करो ॥ ११ ॥ मृत्युरूपी संसारते भयभीत मनुष्यनके ईश्वर तुम हो, और मोक्षके देनवारे तुम्हारे चरणकमलके विना मोको और कोई शरण देनेहारो नहीं देखै है ॥ १२ ॥ शुद्ध अर्थात् धर्मात्मा ब्रह्म अपरिछिन्न अर्थात् ढकिवेमें नहीं आवे, परमात्मा अर्थात् जीवके सखा योगेश्वर अर्थात् अणिमादिक शक्तियुक्त योग अर्थात् ज्ञानरूप श्रीकृष्णचंद्रको नमस्कार है तुम्हारी मैंने शरण लीनी है ॥ १३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षत् ! या प्रकार जगत्के ईश्वर अपने भतीजे श्रीकृष्णकी सुधि करिके तुमारी परदादी कुन्ती दुःखित हैकै रुदन करत भई ॥ १४ ॥ बराबर सुख दुःखवारे अक्रूर और बडे यशी विदुरजी कुन्तीकूं समझावै है तुमारे पुत्र धर्म पवन इन्द्र इत्यादिकनके अंशते उत्पन्न भये, तुम इतनो शोच क्यों करोहो, या प्रकार कहत भये ॥ १५ ॥ चलते समय अपने पुत्रनमें स्नेह, और भतीजेनमें विषमता करनहारे राजा धृतराष्ट्रके पास जायके सुहृदनके मध्यमें रामकृष्णादि बंधुनके कहे वचन अक्रूरजी कहत भये ॥ १६ ॥ अक्रूरजी बोले हे विचित्रवीर्यज धृतराष्ट्र ! कौरवनकी कीर्तिके बढावनवारे भैया पांडु मरे तिनके पीछे अब तुम राजसिंहासनपै बैठे हो, अर्थात् राजापांडुके पुत्र युधिष्ठिरादिक बैठे हैं तुम राज्यपै

१ प्र०-कुन्तीको वसुदेवजीने बुलाया क्यों नहीं ? उ०-वसुदेवजीने अभी थोडे दिनोंसे संकटसें छूटे हैं इस कारण अक्रूरके द्वारा अभी समाचार पूछनैको भेज दिया दूसरे कुन्तीको इस समय पति वियोग सुनाथा इस कारणभी वृत्तान्त पूछनैको भेजा और बुलाया नहीं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बैठे हौ सो उचित नहीं है यह कटाक्ष करे है ॥ १७ ॥ अक्रूरजी बोले बहुत उत्तम राज्य करो परन्तु या प्रकार वर्तोगे तो कल्याण और यशको प्राप्त होउगे धर्मकरिके पृथ्वीको पालन करोगे और शीलकरिके प्रजाको आनंद देउगे, और भतीजेनमें और पुत्रनमें ममता राखोगे तब संसारमें कल्याण और यशको पावोगे ॥ १८ ॥ और जो विषमता राखौगे तौ संसारमें निंदा होयगी, और मरिके नरकमें जाओगे, ता कारण पांडवनमें और अपने पुत्रनमें समता राखो ॥ १९ ॥ हे राजन् धृतराष्ट्र ! या संसारमें काहूको सत्संग सर्वकाल नहीं रहै और अपनो देहहू सदा नहीं रहे है विचार करिकै देखो स्त्री पुत्र ये सर्वदा कहांते रहेंगे ॥ २० ॥ जीव अकेलोही जन्म लेइहै, और अकेलोही मृत्यु पावै है अकेलोही पुण्यके सुखकूं भोगे है; और अकेलोही पापको फल दुःख भोग करे है ॥ २१ ॥ अज्ञानी पुरुषने जो पाप करिके धन संचय करयो है ताकूं स्त्री पुत्र भैया बन्धु हैके लेई हैं जैसे जलकी रहनवारी मछरीनको जिवावनवारो जल है, ताकूं वाके पुत्र पीलेय है, तब वा कष्ट होय है ॥ २२ ॥ पाप करता पुरुष नरकमें पडै है यह कहे हैं अधर्मते अपने मानिके प्राण धन स्त्री पुत्रादिकको भरण पोषण करे है और जब वे भोग उनकूं नहीं मिलै हैं तब वा अज्ञानी पुरुषको त्याग देइहैं ॥२३॥ जब स्त्री पुत्रादिक याको त्यागि देइहै तब सांचे स्वार्थको नहीं जानके और प्रयोजन नष्ट हैवेसो निज धर्मसौ विमुख हैकें सबके पापको अपने शिरपै धरिकै वही पूर्ण नरकमें परे है ॥ २४ ॥ ता कारण हे समर्थ राजा धृतराष्ट्र ! जैसे स्वप्न और बाजीगरकी माया तथा मनको विचार ये सब तुमकूं मिथ्याभूत दिखाई देयहै, तैसेही या संसारकूं मिथ्याभूत समझिकै आपही अपने मनको रोकिकै समता राखौ, शांत होउ ॥२५॥ राजा धृतराष्ट्र कहे हे दाननके पति अक्रूर ! जे तुम कल्याणकारक श्रेष्ठ वचन कहो हौ तिनकूं श्रवण करत करत मेरो मन तृप्त नहीं होय है, जैसे मनुष्य अमृतकूं पान करत करत तृप्त नहीं होय है ॥ २६ ॥ तथापि हे अक्रूर ! मेरी चंचल पुत्रनमें स्नेह है, तासूं विषम हृदयमें तुमारी प्यारी बात ठहरै नहीं है जैसे स्फटिकमणिके सुदामापर्वतपैं बिजुरी चमकै स्थिर नहीं रहे है ॥ २७ ॥ ऐसौ तुम जानो हौ फेरि मोह क्यों करौ हौ जो या प्रकार कदाचित् अक्रूरजी कहौ ताको उत्तर धृतराष्ट्र देइहैं, ईश्वरकी मायाकूं कौन पुरुष अन्यथा करिसकै है, जो ईश्वरने पृथ्वीको भार उतारिवेके कारण यादवनके कुलमें आयकै अवतार लियो है ॥२८॥ जो ईश्वर विचारमें न आवै ऐसी अपनी मायासूं या विश्वकूं उत्पन्न करिके और तामें प्रवेश करिकै कर्म और कर्मनके फलनकूं न्यारे न्यारे करिकै जीवनको देइहै, जानिवेमें न आवै ऐसी लीलासौ रचेभये, संसारचक्रके घुमामनहारे वा परमेश्वरकूं मैं नमस्कार करूं हूं ॥२९॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार यदुवंशोत्पन्न अक्रूरजी धृतराष्ट्रको अभिप्राय जानिकै सुहृदनसूं आज्ञा मांगिकै फेरि मथुरापुरीमें आवत भये ॥ ३० ॥ हे कुरुवंशोत्पन्न राजन् परीक्षित् ! बलदेव श्रीकृष्णचंद्रने आप जा कारणसो अक्रूरजीको पांडवनके पास भेजोहौ सो सब धृतराष्ट्रकी कथित वार्ताको अभिप्राय आयकै श्रीबलदेवजी और श्रीकृष्णचंद्रसूं कहत भयो ॥ ३१ ॥

शशंस रामकृष्णाभ्यां धृतराष्ट्रविचेष्टितम् ॥
पाण्डवान् प्रति कौरव्य यदर्थं प्रेषितः स्वयम् ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० पूर्वार्धे एकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

इति दशमस्कन्धपूर्वार्धं समाप्तम् ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना, कल्याण—मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

दशमस्कन्धोत्तरार्धप्रारम्भः।

अध्याय ५०.

श्रीशुक उवाच–अस्तिः प्राप्तिश्च कंसस्य महिष्यौ भरतर्षभ ॥
मृते भर्तरि दुःखार्ते ईयतुः स्म पितुर्गृहान् ॥ १ ॥

श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥ जरासंधसों युद्ध कर, कृष्णचंद्र यदुराय । कालयवनको वध कियो, बसे द्वारका जाय ॥ भक्तनपालक जन सुखद, दीनबंधु भगवान । कृपादृष्टि नित कीजिये, भक्त परम सुखदान ॥ ततः पञ्चाशत्तमे तु जरासंधभयादिव ॥ कारयित्वाम्बुधौ दुर्गं तं निनाय निजं जनम् ॥ १ ॥ अब पूर्वार्द्ध कहे पीछे पचासके अध्यायकी कथाको वर्णन करे हैं, जरासंधके भयतेही मानो समुद्रमें किलो बनायके श्रीकृष्ण अपने सब यादवनको द्वारकाप्रति लेजात भये ॥ १ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे भरतवंशीनमें भये राजन् परीक्षित् ! अस्ति और प्राप्ति ये दोनों कंसकी रानी अपने पति कंसके मरणसूं दुःखित हैंकै पिता जरासंधके घरको जातीभई ॥ १ ॥ दुःखित अस्ति प्राप्ति अपने पिता मगधदेशके राजा जरासंधसों संपूर्ण अपने विधवापनेको कारण जतावति भई ॥ २ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ताही काल दुःखके भरे अप्रिय वचन सुनिके जरासंध जामाताको शोक नहीं सहिके यादवनसूं रहित पृथ्वीकूं करिवेकूं उपाय करत भयो ॥ ३ ॥ तेईस अक्षौहिणी सेनाकूं संग लैके जरासंध यादवकी राजधानी मथुराकूं संपूर्ण दिशानते घेरत भयो ॥ ४ ॥ मर्यादा त्यागिके मानों समुद्र उमड्यो चल्यो आवै है, या प्रकार जरासंधकी सैन्यकूं आवत देखिके और ता सैन्यसो आवृत मथुरापुरीको देखिके, और स्वजन अपने यादवनकूं व्याकुल देखिके ॥ ५ ॥ पृथ्वीको भार उतारिवेके कारण मनुष्यरूप धरनहारे सबके दुःखके हरनवारे, श्रीकृष्ण ता समय देशकालके योग्य अपने अवतारको प्रयोजन देखिके विचार करत भये ॥ ६ ॥ जरासंधकूं छोडके या सैन्यको वध करूं अथवा जरासंधको मारिके सैनाकूं ग्रहण करूं अथवा सैन्यसहित जरासंधकूं मारूं ऐसे तीन प्रकारके मनमें संकल्प विकल्प करिके प्रथम सैन्यवधको विचार निश्चय करत भये, क्योंकि पृथ्वीको भाररूप यह सैन्य है याहिकूं मारूंगो, सम्पूर्ण वंशनके राजानकी सैन्यकों जरासंध लैआयो है ऐसो समय वारंवार न मिलेगो ॥ ७ ॥ प्यादे अश्व रथ हस्ती यह चतुरंगिनी अनेक अक्षौहिणी सेनाकोही मारिवो योग्य है, जरासंधको मारिवो योग्य नहीं है, काहेसो यह कामको है संपूर्णनकूं

---

१ कि देख पितः ! तेरे विद्यमान होते कृष्णने हमारे पतिको मारके हमारो ये हवाल कियो है अब हम कहा करे हम विधवासंज्ञाको प्राप्त भई है ऐसें कहिके इननें बापके अगारी अपनी चूरी फोरी है ॥ २ जरासंधने विचारी कि जो मेरो नाम जरासंध जो यादवनके जन बच्चाकी कतल करो यादवनको कुत्ता न बचे ऐसो विचार कर ॥ ३ अक्षौहिणीका प्रमाण रथ २१८७०, गज २१८७०, अश्व ६५६१० पदाति १०९३५० सब मिलके २१८७०० यह अक्षौहिणीका प्रमाण है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समेटिके लै आवेगो, मैं कहां कहां फिरूंगो ॥ ८ ॥ भूमिको बोझ उतारिवेको और साधुनकी रक्षा करिवेको और दुष्टनके वध करिवेके निमित्त मैंने अवतार लियो है ॥ ९ ॥ कोई समय पायकै पृथ्वीपै बडे अधर्मके नष्ट करिवेके कारण, और धर्मकी रक्षा करिवेके कारण, देहको मैं धारण करूं हूं ॥ १० ॥ या प्रकार गोविंद श्रीकृष्णचन्द्रके विचार करतेही सूर्यकी तुल्य तेजवान् ध्वजा कवच युक्त, रथवान् सहित दो रथ शीघ्रही आकाशते उतरते भये ॥ ११ ॥ वाही समय अनायासपूर्वक आये दिव्य शस्त्र देखिके हृषीकेश श्रीकृष्णचंद्र बलदेवजीसों बोलते भये ॥ १२ ॥ हे आर्य अर्थात् श्रेष्ठ हे प्रभो ! तुमही जिनकी रक्षा करनवारे हो विन यादवनको दुःख आयके प्राप्त भयो है तुम देखो यह रथ आयो है, प्यारे शस्त्र आये हैं ॥ १३ ॥ रथमें बैठिके या सैन्यको मारो, अपने यादवनको कष्ट दूरि करो हे ईश ! साधूनके कल्याणके निमित्त या संसारमें हमारो तुमारो जन्म है ॥ १४ ॥ तेईस अक्षौहिणी सेना आयके प्राप्त भई है ताको पृथ्वीपें बोझ है, ताकूं दूरि करो या प्रकार दाशार्हवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजी विचार करिके कवचनकूं पहरिके सुंदर शस्त्रनकूं लैके रथमें बैठिके कछु थोरीसी सैन्य संग लैके पुरके बाहिर निकसके दारुक सारथीको लिये श्रीकृष्णचंद्र शंखकूं बजावत भये ॥ १५ ॥ १६ ॥ ताके पीछे जरासंधकी सेनाके हृदय भयभीत हैकें कंपित होतभये, कृष्णबलदेवकूं देखिके जरासंध बोलत भयो, हे कृष्ण अधम ! ॥ १७ ॥ तूं अकेलो बालक है तेरे संग युद्ध न करूंगो मोकूं लज्जा आवै है, हे बन्धुमामाके मारनवारे हे मूर्ख ! तू गुप्त रहनवारो है अर्थात् तेरी रक्षा करनवारे बोहत है ताते तेरे संग युद्ध न करूंगो ॥ १८ ॥ हे राम ! जो तेरी श्रद्धा होय तौ धीरज धरिके युद्ध करि, मेरे बाणनकरिकै कटे देहकू त्यागि स्वर्गकूं जा अथवा संग्रामके बीचमें मोहिं मारिले ॥ १९ ॥ श्रीभगवान् बोले शूरवीर बकै नहीं हैं, अपने पुरुषार्थकूं दिखावे हैं, हे राजन् जरासंध ! तुम्हारी मृत्यु निकट आय गई है यासों तुम्हारे वचनपें मैं ध्यान करूंहूं क्योंकि मरनहारको बोलवेके विचार नहीं रहै है सो मैं जानो हौं कि अब तुम मरोगे ॥ २० ॥ जैसे पवन, बादर और धूरिसों, सूर्य और अग्निकूं घेर लेइ है तैसे माधव श्रीकृष्ण और बलदेवको जरासंध अपनी बलवती सेना प्यादे रथ ध्वजा घोडा रथनसो घेरतो भयो ॥ २१ ॥ गरुडके और तालकी ध्वजाके चिह्नवारे कृष्णरामके रथ युद्धमें नहीं दीखे तब पुरके अटारी महल दरवाजेनपै ठाढी स्त्री शोकसूं व्याकुल हैके मोह करती भई ॥ २२ ॥ शत्रुकी सैन्यरूप बादरमेंसों वारवार बाणनकी भयंकर वर्षासों पीडित अपनी सैन्यकूं श्रीकृष्णचंद्र देखिके देवता असुरनसो पूजित उत्तम शार्ङ्ग धनुषको टंकारत भये ॥ २३ ॥ तरकसते तीर निकासिके शीघ्र प्रत्यंचामें लगायके प्रत्यंचाकूं खैंचिके तीक्ष्ण बाणनके समूहनसूं रथ घोडा हाथी प्यादेनकूं मारिके जैसे सुलगती लकडीके घुमायवेसूं चक्र बंधे है तैसे बाणनके पीछे बाण लगावत भये ॥ २४ ॥ मस्तक कटवेसों हजारन हाथी गिरत भये, बाणनसूं नार कटवेसों घोडा गिरते भये, रथनकी ध्वजा कटिके गिरत भई, और रथवान् गिरत भये, भुजा नार जंघानके कटवेसों हजारन प्यादे गिरते भये ॥ २५ ॥ युद्धमें प्यादे हाथी घोडानके अंग कटवेसों तिनके अगनमेंते निकसिके असंख्यात रुधिरनकी नदी वहती भई; रुधिरकी नदीनकी प्रसिद्ध नदीसों रूपक बांधिके वर्णन करे हैं, नदीनमें सर्प रहे हैं, रुधिरनकी नदीनमें मनुष्यनकी भुजा मानों सर्प हैं नदीनमें कछुवा रहे हैं,

---

१ अर्थात् जब आपने बाण चलाये वा समय आपको धनुष घूमती बनेंटीके आकार होतो भयो वा समय धनुषको तरो सिरो मालूम नहीं भयो कि कहा है यामें बाण चलायवेकी शीघ्रता दिखाई है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रुधिरकी नदीनमें मनुष्यनके शिर कटिके कछु अस्त्रके सदृश बहे हैं, नदीनमें टापू रहे हैं रुधिरकी नदीनमें मरे हाथी टापूनके समान परे हैं, नदीनमें ग्राह होय हैं, रुधिरकी नदीनमें घोडा ग्राहके सदृश मरे परे हैं, तिनसूं व्याप्त है रही हैं ॥ २६ ॥ नदीनमें मत्स्य होइ हैं, रुधिरकी नदीनमें हथेरी पिंडरी मत्स्यके तुल्य हैं, नदीनमें शिवार होय हैं, रुधिरकी नदीनमें मनुष्यनके केश शिवारके सदृश बहे डोले हैं, नदीनमें तरंग उठे हैं, रुधिरकी नदीनमें धनुषही तरंगके सदृश हैं, नदीनमें झार झंकाड होइहैं, रुधिरकी नदीनमें शस्त्र हैं ते झार झंकाडके सदृश हैं, नदीनमें भ्रमर परे हैं तिनसूं अति भयंकर होइ हैं, रुधिरकी नदीनमें ढाले मानो भयकर भ्रमर फिरे हैं नदीनमें कांकर पत्थर होय हैं, रुधिरकी नदीनमें मणि गहन कांकर पत्थरके तुल्य हैं ॥ २७ ॥ बडे तेजस्वी बलदेवजीने संग्राम विषे दुष्ट मदवारे शत्रुनकूं मूशलते मारिमारिके रुधिरकी नदी वहाई जो भयभीत मनुष्यनको भयकी देनवारी और शूर वीरनको आनंदकी दनवारी है ॥ २८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! दुर्मद वैरिनको मूसलसों मार सागरकी समान दुस्तर और भयंकर वा जरासंध पालित सेनाकों महापराक्रमी कृष्ण बलदेवने मारिमारके नाश करदीनो, वसुदेवके पुत्र जगत्के ईश्वर कृष्ण बलदेवको सेनाको नाश करिवो क्रीडामात्रही भयो यामें कछु पराक्रम नहीं है ॥ २९ ॥ अनंत गुण भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अपनी लीला करिके तीनों लोकनकूं उत्पन्न पालन संहार करे ह, तिन श्रीकृष्णकूं शत्रु जरासंधकी सैन्यको मारिवो कछु आश्चर्य नहीं है, तथापि मनुष्यनके अनुकरण करनहारे श्रीकृष्णके कर्म आश्चर्यसो कहिवमें आमें है ॥ ३० ॥ सेनाके नष्ट भयेसो और रथके टूट जायवेसो जब प्राणमात्रही अवशेष रहे तब बलवान् जरासंधकूं जैसे सिंह सिंहकूं पकरे हैं ता प्रकार बल करिके बलदेवजी पकरते भये ॥ ३१ ॥ शत्रुनके संहार करनहारे जरासंधकों वरुणपाश और मनुष्यपाशसों जब बलदेवजी बांधन लगे तब श्रीकृष्ण छुडावत भये क्योंकि जरासंधसो और कुछ काम करामनो है[1] ॥ ३२ ॥ शूरवीरनके माननीय जरासंधकूं त्रिलोकीके नाथ श्रीकृष्ण बलदेवनें जा समय छोड दियो तब ये लज्जित हैके मनमें विचारतो भयो कि घर जायके कहा करूंगा, वनमें जाके तप करूंगो, ता समय मार्गमें राजानन निवारण कर्यो ॥ ३३ ॥ धर्मके उपदेश करनवारे पदयुक्त नीतिक तुष्टिकारक वचननकूं कहिक जरासंधकूं समझायो, तुमारो कोई दुष्कर्म आयगयो, याते तुच्छ यादवनने तुमकूं जीतिलियो, अब तुम लाज मति करौ ॥ ३४ ॥ जा समय संपूर्ण सेना नष्ट हैगई, श्रीकृष्णने छोड दियो, ता समय बृहद्रथवंशोत्पन्न जरासंध उदासी हैके अपने मगधदेशकूं जातो भयो ॥ ३५ ॥ शत्रुकी सेनारूप सागरसो तरके और अपनी अक्षतसेना संग लिय श्रीकृष्णजीक ऊपर देवतानने पुष्पनकी वर्षा करी, और प्रशंसापूर्वक स्तुति करी ॥ ३६ ॥ तब श्रीकृष्णचंद्र अपनी मथुरापुरीमें आवत भये, खेदरहित प्रसन्नमन मथुरावासीनसूं मिले सूत मागध बंदीजन जिनकी विजयको गावतभये ॥ ३७ ॥ ऐस श्रीकृष्णचंद्र जासमय मथुरापुरीमें आये, सब शंख नगारे अनकन भेरी तुरही वीणा बांसुरी मृदंग ये सब बाजे बजावत भये ॥ ३८ ॥ मार्गमें छिरकाव है रहे प्रसन्न मनुष्यनसोहू पताकानसूं शोभायमान, वेदध्वनिसो युक्त श्रीकृष्णचंद्रके आगमनके आनंदसूं घर घर बंदनवारसो परिपूर्ण ऐसी मथुरापुरीकी शोभा होतभई ॥ ३९ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर स्त्रापुरुष पुष्प

---

१ अर्थात् जरासंधका पकरिके जो बलदेवजीने मारवेकों विचार कियो सोई तो श्रीकृष्णचंद्रजीने कही कि भैयाजी ! खबरदार अभी याको मारियो मती, छोड देउ सोही बलदेवजीने कही जा जे और तेरे हिमायती होय तिने ले आउ तोको सौगंद है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दधि अक्षत अङ्कुरनकी वर्षा करती भई, स्नेहते प्रफुल्लित नेत्रनसूं श्रीकृष्णकूं देखन लगीं ॥ ४० ॥ शूरवीर राजानकी शोभाके करनवारे रणभूमिमें परे बहुत धनकूं लायके श्रीकृष्णचंद्र राजा उग्रसेनकूं देते भये ॥ ४१ ॥ श्रीकृष्णचंद्रसो रक्षित यादवनसो, मगधदेशको राजा जरासंध याहीकीसी नाईं जैसें एक वेर हारो तैसेंही सतरह बेर तेईस तेईस अक्षौहिणी[1] सेना लेके युद्ध करत भयो और कृष्णबलदेवजीनें सतरह बेर बुरो हाल करके भगायो ॥ ४२ ॥ यादव श्रीकृष्णके तेजसों जरासंधकी सम्पूर्ण सैन्यको नाश करत भये, हे राजन् परीक्षित् ! सम्पूर्ण सेना जब कटिगई शत्रुनने छोड दियो, तब जरासंध अपने देशकूं जातो भयो ॥ ४३ ॥ अठारहवीं बेर फेरि युद्ध होनहार हो ताके बीचमेंही नारदजीको भेज्यो वीर कालयवन आयके दिखाई देत भयो ॥ ४४ ॥ संसारमें जाके तुल्य कोई योद्धा नहीं ऐसो कालयवन यादवनकूं अपनी बराबरीके मानिके तीन करोड म्लेच्छनकूं संग लैके मथुरापुरीको घेरत भयो, नारदजीने यासों कही यादव और श्रीकृष्ण तुम्हारी बराबरीके हैं विनसो संग्राम करो ॥ ४५ ॥ बलदेवजीकी सहाययुक्त श्रीकृष्णचंद्र कालयवनकूं आयो देखिके चिंता करत भये, बडो आश्चर्य है यादवनकूं दोनों ओरते बडो कष्ट आयो है ॥ ४६ ॥ अब तौ यह बडो बली कालयवन हमकूं घेरे है, फेर जरासंधहूं आज अथवा काल अथवा परसों पर्यंत आवेहीगो ॥ ४७ ॥ जो या समय हम याते युद्ध करेंगे, और बीचमें जरासंध आय गयो तौ हमारे बंधूनकूं मारेगो और जो न मारेगो तौ बलवान् है, बांधिकै अपने पुरमें लै जायगो ॥ ४८ ॥ याते मनुष्य जहां न जाय सके ऐसो एक किलो बनावेंगे तामें अपने ज्ञातिके यादवनकूं राखिके कालयवनकूं मरवाऊंगो ॥ ४९ ॥ या विधि भगवान् श्रीकृष्णचंद्र मनमें विचार करिकै अठतालीस कोसको समुद्रके बीचमें किलो और वा किलेके बीचमें आश्चर्य अद्भुत नगर रचिते भये ॥ ५० ॥ कैसो नगर है कि जा नगरमें सम्पूर्ण विश्वकर्माकी कारीगिरी दिखाई देय है, राजाके निकसवेके बडे बडे बाजार और गली और चौक वास्तुमें लिखेके अनुसार जामें बने हैं ॥ ५१ ॥ बीच बीचमें हवेली बनिवेकी जगह छिकी गई है कल्पवृक्ष और लतावारे बाग चित्र विचित्र फुलवारी बगीचा लगि रहे हैं, सुवर्णके शिखरनसों आकाशकूं स्पर्श करनहारे ऊंचे स्फटिकमणिनके अटा बनि रहे हैं, और ऊंचे ऊंचे किलेके द्वार बने हैं ॥ ५२ ॥ घोडानके बंधिवेके और अन्न भरिवेके लोहे पीतलके स्थान बने हैं, तिनके ऊपर सोनेके कलश धरे हैं तिनसूं सुन्दर लगे हैं, पद्मरागमणिके जिनके शिखर, और महामरकत मणिनकी जिनमें धरती, ऐसे सुवर्णके घर जहां बने हैं ॥ ५३ ॥ देवतानके मंदिर बने हैं, और चित्रसारी बनी हैं. ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र ये चार वर्ण जामें वसे हैं,

---

१ प्र०—इतनी सेना जरासंध पर कहांसे आई ? उत्तर—इसका महाराज्य था, तथा अपने आधीन सब राजाओंकी सैना ले आता था इससे शीघ्र सैना बटोर लाताथा ॥ २ एक दिन नारद बाबा वीणा बजावत हरिगुण गावत कहूं चले जाते हे कहूं कालयवनने देखे सोही नारदजी कतरायके चलन लगे कालयवनने देखे सोही कालयवनने कही नारद कहां जाय हैं और तू यां वीणामें कहा गावे हैं तब नारदने कही कि सिरकार कालयवनकेही गुण गाउ हों और ऐसो कौन है तब कालयवनने कही कि नारद कोउ ऐसोहू है जो मोसौं लडै होय तौ बताय तब नारदने याकी दो चार झूठी साची बडाई करके कही कि भाई वीर कालयवन ! और तो तेरी बराबर कोउ है नहीं एक कृष्ण मथुरावासी है सो हे तौ तेरी बराबर वोहू नहीं पन स्यायत घडी दो घडी लडे तौ वो है और तो कोई है नहीं सो तू मथुराको जा लडो चाहै है तौ॥ ३ अर्थात् वाही समय भगवान्ने विश्वकर्माको स्मरण कियो सोही विश्वकर्मा आयो और कही कि महाराज ! आज्ञा तब आपने सब हाल कह्यो विश्वाकर्माने मंजूरी करी फिर समुद्रके पास गये समुद्र आयो आपने समुद्रसो सब हाल कह्यो और कही कि जो थोरीसी जमीन तुम देउ तो नगर बनवाउ समुद्रने कही कि महाराजकी आज्ञा होय तो मैं सब सुख जाऊं तब आपने १२ योजन भूमि मांगी सोही समुद्रको जल १२ योजन सूख गयो वामें विश्वकर्माने पुरी रची ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यादवनके और देवराज उग्रसेनके महल शोभायमान हैं' ॥ ५४ ॥ जा नगरमें इन्द्र श्रीकृष्णके निमित्त सुधर्मा सभा और कल्पवृक्ष पठावत भयो, जा सभामें जो कोई मनुष्य रहै हैं, तिने भूख प्यास शीत गरमी शोक मोह नहीं सतामें हैं ॥ ५५ ॥ श्यामकर्ण श्वेतवर्ण मनकी तुल्य वेगवारे घोडानकूं वरुण भिजवावत भयो, लोकनके पालन करनवारे कुबेरने पद्म महापद्म मस्त्य कूर्म औदक नील मुकुंद शंख यह भगवान् आठ विभूती पठाई ॥ ५६ ॥ हे राजन् परीक्षित्! और जो सिद्धादिक हैं तिनने जिनको भगवान्ने आपकूं अधिकारकी सिद्धिके निमित्त जहां तहांको अधिकार दियोहो तहां तहांकी संपूर्ण वस्तु जा समय श्रीकृष्णचंद्र पृथ्वीमें आये ता समय लायके अर्पण करत भये ॥ ५७ ॥ ता द्वारका नगरमें योगके प्रभाव करिके सब जननकूं पहुंचायके श्रीकृष्णचंद्रने बलदेवजीसों कही कि तुम यहां मथुरामें रहिके शेष प्रजाकी रक्षा करो ऐसे बलदेवजीके संग विचारि करिके कमलनकी माला पहिरे शस्त्ररहित उवाहने पायन मथुरापुरीके बाहर दरवाजेके बाहर निकसत भये ॥ ५८ ॥

तत्र योगप्रभावेण नीत्वा सर्वजनं हरिः ॥
प्रजापालेन रामेण कृष्णः समनुमन्त्रितः ॥
निर्जगाम पुरद्वारात् पद्ममाली निरायुधः ॥ ५८ ॥

इति श्रीभा० भा० द० उ० दुर्गनिवेशनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

अध्याय ५१.

श्रीशुक उवाच–तं विलोक्य विनिष्क्रान्तमुज्जिहानमिवोडुपम् ॥
दर्शनीयतमं श्यामं पीतकौशेयवाससम् ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित्! जा समय श्रीकृष्णचंद्र पुरते बाहर निकसे मानो चंद्रमा उदय भयो, देखिवे लायक श्याम अंग पीत रेशमी वस्त्रनकूं पहिरे ॥ १ ॥ छातीमें भृगुलत्ताको जिनके चिह्न प्रकाशमान, कौस्तुभमणि कंठमें पहिरे पुष्ट लम्बी चार भुजा, नवीन कमलसे अरुण नेत्र ॥ २ ॥ नित्य प्रसन्न शोभायमान, और सुंदर मुसिकानसों प्रकाशमान मकराकृत कुंडलनसो शोभित मुखारविंदकूं धारण करे ॥ ३ ॥ भृगुलत्ताके चिह्नसे शोभायमान चार भुजा और वनमालाकूं पहिरे बहुत सुंदर श्रीकृष्णकूं देखिके कालयवन विचार करन लगो कि श्रीकृष्ण यही है ॥ ४ ॥ नारदने जे लक्षण बताये हैं ते यामें मिले है याते यही पुरुष वासुदेव है और नहीं है शस्त्ररहित पांव प्यादो जाय है याते मैंहू शस्त्ररहित पांवप्यादो हैके वाके संग युद्ध करूंगो ॥ ५ ॥ या प्रकार कालयवन निश्चय करिके पराङ्मुख हैके भागते भये योगी जननके हाथमें न आयवेहारे कृष्णके पकरिवेकूं पीछे भाजत भयो ॥ ६ ॥ पैंड पैंडपै अब पकरचौ अब पकरचौ ऐसे अपनेकूं दिखावत दिखावत म्लेच्छ

१ तब विश्वकर्माने पूछी कि शिरकारी महल रहायस कितनी बनाउ तब आपने हुकुम दियो कि रे बहुत नाय तो १६१०८ सोलह हजार एक सो आठ तो हमारे लिये रहायस बनैयो सोही विश्वकर्माने ऐसी कारीगरीसों वो महल आपके लिये बनायो जो बाहरसो एक महल एक दरवजो दीखें और भीतर जामें न्यारी न्यारी १६१०८ रहायस बन रही है॥

२ वा समय जब ये पुर बन गयो तब आपने अपनी आकर्षण शक्तिकूं आज्ञा दीनी सो मथुराजीके सोवते मनुष्यमात्रनकूं या नगरमें पहुँचाय दिये सो ये तो हे मथुरामें और सबेरे जागे सब वहां सोही सब कहन लगे द्वार कहा है याते द्वारका नाम भयो ॥ ३ प्र०–श्रीकृष्ण कालयवनके सामने क्यों भागे? उ०–एक समय गर्गमुनिको यादवोंने नपुंसक कहा तब गर्ग मुनिने शिवजीका तप कर वर मांगा कि मेरा पुत्र सब यादवोंको तिरस्कार करदे कोई उसके सन्मुख न ठहरै, शिवजीनें तथास्तु कहा तब काबुलमें गर्ग मुनि गये वहां एक अप्सरासे पुत्र उत्पन्न किया जिसको वहांके राजानें पुत्रवत् पाला वही राजा होकर कालयवन हुआ और कौशलसे भगवान्ने मारा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राज कालयवनकूं श्रीकृष्ण दूरि पर्वतकी गुफामें लेजाते भये ॥ ७ ॥ यादवनके कुलमें तेरो जन्म है तोको भाजिवो उचित नहीं है या प्रकार आक्षेप करत पीछे दौरचो चल्यो जाय है पापी परंतु हैवेसो श्रीकृष्णकूं नहीं पकरत भयो क्योंकि पाप गये विना श्रीकृष्णकी प्राप्ति नहीं होय है ॥ ८ ॥ या प्रकार आक्षेप करिके जा समय कालयवनने डाटे तब भगवान् श्रीकृष्णचंद्र पर्वतकी गुफामें धसिजात भये पश्चात् कालयवनहू गुफामें धस्यौ, वहां एक पुरुष और सोवतो हो ताकूं देखते भये ॥ ९ ॥ यह कृष्ण मोकूं इतनी दूर लायके यहां गरीब बनिके आप सोय रह्यो है या प्रकार मूर्ख कालयवन समझिके वा सोवते पुरुषकूं श्रीकृष्ण मानिके एक लात मारतो भयो ॥ १० ॥ बहुत दिननते सोयो सो पुरुष धीरे धीरे नेत्रनकूं खोलिके दिशानकूं देखिके पास ठाढे कालयवनकूं देखतभयो ॥ ११ ॥ हे भारतवंशी राजा परीक्षित् ! ताही समय क्रोधी मुचुकुन्दके देखवेते कालयवनके शरीरते अग्नि प्रगट होती भई तासूं क्षणभरमें जरिके भस्म है गयो ॥ १२ ॥ अब राजा परीक्षित् प्रश्न करे हैं हे ब्रह्मन् ! अर्थात् शुकदेवजी जाने कालयवन मारचो वाको नाम कहा है और वह कौन पुरुष है कौनके वंशमें उत्पन्न भयो है कहा वाको प्रभाव है कौनको पुत्र है क्यों गुफामें सोयोहो सो सम्पूर्ण मोसो वर्णन कीजिये ॥ १३ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! इक्ष्वाकुके कुलमें जन्म्यो मांधाताको पुत्र गुणवान् ब्राह्मणको भक्त सत्यवादी मुचुकुंद नाम हो ॥ १४ ॥ असुरसों भयभीत हैके इन्द्रादिक देवतानके समूहने अपनी रक्षा करवेके निमित्त राजा मुचुकुंदते प्रार्थना करी, तौ बहुतदिन पर्यंत देवतानकी रक्षा करत भयो ॥ १५ ॥ पीछे स्वर्गके पालन करनवारे स्वामी कार्तिककूं आये देखिके सब देवता मुचुकुंद राजाते बोलत भये हे राजन् मुचुकुंद ! हमारे पालन करिवेमें जो कछु कष्ट है तासूं निवृत्त हैके आराम करौ ॥ १६ ॥ हे वीर ! मनुष्यलोकके निष्कंटक राज्यकूं त्यागके हमारो पालन कर्यो तासूं तुमारे विषयनके भोग छूटे ॥ १७ ॥ और तुमारे पुत्र रानी ज्ञातिके भैया बन्धु दिवान प्रधान मंत्री राज्यकी प्रजा ये सम्पूर्ण अब काई नहीं बच्यो हैं सबको कालने नाश करि दियो ॥ १८ ॥ काल बलवाननमें बलवान् है भगवान्की शक्ति है, समर्थ अविनासी है, जैसे पशूनको पालन करनवारो ग्वालिया पशूनकूं चलावै है, ऐसे काल आप क्रीडा करिके समस्त प्रजाकूं इत उत चलावैहैं ॥ १९ ॥ सम्पूर्ण देवता कहे है, हे राजन् मुचुकुंद ! तुम्हारो कल्याण होय मोक्षके विना जो कोई वर चाहो सो मांगि लेउ, मोक्षको दाता तौ केवल एक अविनाशी विष्णु भगवान् ईश्वर है ॥ २० ॥ या प्रकार जब देवतानने कह्यो तब बडो यशस्वी राजा मुचुकुंद बहुत दिन देवतानकी रक्षा करवेसों अति श्रमित हैवेके कारण शयनके अर्थ निद्रा वर मांगत भयो, हे देवताओ ! जो कोई सोवतमें मेरी निद्राको भंग करै वह वाही समय भस्म हैजाय या विधिको वर मांग्यो, सोई देवतानने दियो तब राजा मुचुकुंद देवतानकी दीनी निद्रासूं पर्वतकी गुफामें जायके सोवत भयो ॥ २१ ॥ २२ ॥ देवतानने वर दियो कि जाओ तुम अचैतन्य सोओ, जो तुमें

---

१ अथवा (आहताशुभः) ऐसो पदच्छेद करनो अर्थात् श्रीकृष्णके दर्शन मात्रसोंही सब पाप जाके दूर है गये है बडो बडभागी कालयवन है जाके अगारी २ भगवान् भजे ॥ २ सवैया—काल उपावत काल खपावत काल मिलावत है गहि माटी । काल हलावत काल चलावत काल खिलावत है सब आटी ॥ काल बुलावत काल भुलावत काल हुलावत है वनघाटी । सुन्दर काल मिटै तबहीं पुनि ब्रह्म विचार पढै जब पाटी ॥ १ ॥ वे श्रवना रसना मुख वैसहि वैसही नासिका वैसहि अंखी । वे कर वे पग वे सब द्वारसु वे नख शीस हि रोम असंखी ॥ वैसहि देह परी पुनि दीसत एक विना सब लागत संखी । सुंदरको उन जान सके यह बोलत हो सो कहां गयो पंखी ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वीचमें जगावैगो वह तुम्हारी दृष्टि परेते तत्काल जरिके भस्म हैजायगो ॥ २३ ॥ जा समय कालयवन जरिके भस्म है गयो ता समय यादवनमें श्रेष्ठ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र बुद्धिमान् मुचुकुंदकूं अपनो दर्शन करावतभये ॥ २४ ॥ मेघकी तुल्य श्यामवर्ण पीतवस्त्र धारण करे हृदयमें भृगुलत्ताके चिह्नसो प्रकाशवान् कौस्तुभमणि धारण करवेसों शोभायमान हैं ॥ २५ ॥ चतुर्भुज वैजयन्ती मालासूं प्रकाशमान, सुन्दर मुख मकराकृत कुंडलनसूं शोभायमान हैं ॥ २६ ॥ मनुष्यनको देखिवे योग्य स्नेहभरी मुसिकान सहित चितवन, और नवीन अवस्थायुक्त मतवारे सिंहकी तुल्य पराक्रमी ॥ २७ ॥ श्रीकृष्णकूं देखिके बडे बुद्धिमान् श्रीकृष्णचन्द्रके तेजसूं पराभवकूं प्राप्त भये राजा मुचुकुन्द भय मानिक होले २ पूंछत भये ॥ २८ ॥ राजा मुचुकुन्द पूछे हैं या वनमें पर्वतकी गुफामें तुम कौन कहांसे आये हो, कमलसे कोमल तुम्हारे चरण हैं; बहुत कांटेनमें फिरोहो तुम कौन हो ॥ २९ ॥ तेजस्वीनकै तुम तेजस्वरूप हो, अथवा भगवान् अग्निरूप हो, अथवा सूर्य हो, किंवा चन्द्रमा हो अथवा इन्द्र हो, किंवा समस्त लोकनके पालनकर्ता हो, अथवा कोई देवता हो ॥ ३० ॥ ब्रह्मा विष्णु शिव इन तीनों देवतानमें सो विष्णु भगवान् हो यह मैं जानूंहूं दीपक जैसे अपने प्रकाशते अंधेरेकूं दूर करे है. ऐसे अपने तेजसूं या गुफाको अंधकार तुमने दूरि करो है ॥ ३१ ॥ हे मनुष्यनमें श्रेष्ठ ! हमारी सुनिवेकी इच्छा है, सो मेरे आगे निष्कपट हैके जो तुमे अच्छी लगै तौ अपनो जन्म कर्म नाम गोत्र बताओ ॥ ३२ ॥ हे पुरुषनमें श्रेष्ठ समर्थ ! मैं तो इक्ष्वाकुके वंशमें उत्पन्न भयो क्षत्रियनमें अधम मांधाताको पुत्र हूं मुचुकुन्द मेरो नाम है ॥ ३३ ॥ बहुत दिननते जो जाग्योहूं तासूं मोकूं खेद भयो, और नींदसूं मेरी इन्द्रिय चलायमान भई है, या उद्यान वनमें अपनी इच्छापूर्वक सोवै हौं अबहीं काहूने आयके उठायो है ॥ ३४ ॥ जाने मोय जगायो वह पुरुष अपने पापते जरिके भस्म है गयो वाके जरे पीछे हे शत्रुनके नाशक शोभायमान ! तुम देखे ॥ ३५ ॥ असह्य तुमारे तेजसो मेरो तेज दूर है गयो, बहुत देखवेकी सामर्थ्य नहीं है, हे महाभाग ! देहधारीनकूं तुम मानिवे योग्य हौ ॥ ३६ ॥ या प्रकार राजा मुचुकुन्दने कही तब प्राणीनके पालन करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र हँसिके मेघ जैसे गरजे है ता प्रकार गर्जिके बोलत भये ॥ ३७ ॥ श्रीभगवान् श्रीकृष्णचंद्र बोले हे मुचुकुन्द ! मेरे जन्म कर्म नामनको अंत नहीं है, असंख्यात हैं, यातैं मैं नहीं गिनसकूंहूं ॥ ३८ ॥ कदाचित् कोई पुरुष बहुत जन्मनमें पृथ्वीकी धूरिकूं तौ गिनिहू लेय परन्तु मेरे गुण कर्म्म जन्म नाम गिनतीनें नहीं आवै हैं ॥ ३९ ॥ हे राजन् मुचुकुंद ! भूत भविष्य वर्तमान तीनों कालमें विद्यमान मेरे जन्म कर्मनकी बडे बडे ऋषीश्वर संख्या करें हैं, तथापि अंत नहीं पावें हैं ॥ ४० ॥ तथापि हे मुचुकुन्द ! अबके जन्म कर्म नाम कहूंहूं मोते श्रवण करो धर्म्मकी रक्षा करिवेके कारण और पृथ्वीपै बोझ करनवारे असुरनके नाश करिवेके हेतु पहिले ब्रह्माने मेरी विनती करीही ॥ ४१ ॥ तासूं यादवनके कुलमें वसुदेवके घर प्रगट भयोहूं वसुदेवको पुत्र हूं याते मोहि वासुदेव कहैं हैं ॥ ४२ ॥ कालनेमि कंस मैंने मारचो साधुनके द्वेषि प्रलंबसो आदि लैके असुर मैंने मारे हे राजन् मुचुकुन्द ! यह जो कालयवन है सो तेरी तीक्ष्ण दृष्टिद्वारा दग्ध है गयो ॥ ४३ ॥ हे राजन् मुचुकुन्द ! पहिले तुमने मेरी बहुत प्रार्थना करीही और मैं भक्तवत्सल हूं या कारण तोपै अनुग्रह करिवेकूं या गुफामें आंयो हूं ॥ ४४ ॥ हे राजनमें ऋषि मुचुकुन्द ! मैं प्रसन्न हौं तुम मोपै वर

---

१ मनसुखदास परमात्माके बडे भक्त हुए जो कुछ पास था सो भक्तोंको भोजन करादिया, जब पास कुछ न रहा तौ कोई दिन महात्मा आये और लोगोंसे पूछने लगे कि यहां कोई भक्त रहे हैं, किसीने हंसीसे मनसुखदासका घर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मांगो मेरी शरण आये पीछे फेर प्राणीको शोच नहीं रहै है ॥ ४५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या भांति श्रीकृष्णन्द्रने जब कही तब राजा मुचुकुन्द प्रसन्न हैके वृद्ध गर्गाचार्यके कहे वचन स्मरण करिके इन्हें साक्षात् परिपूर्ण नारायणदेव जानिके प्रणाम करिके बोलत भयो ॥ ४६ ॥ राजा मुचुकुन्द आठ श्लोकन करके स्तुति करे है, हे ईश्वर ! तुम्हारी माया करिके यह मनुष्य मोहित हैगयो है याते मिथ्याभूत मायाकी दृष्टिसूं नहीं देखे है, याहीते तुम्हें नहीं भजे है, कहा स्त्री कहा पुरुष दोनों ठगि गये हैं, सुखके निमित्त दुःखके मूल घरनमें परे है ॥ ४७ ॥ कर्मभूमि या पृथ्वीमें आयके यह मनुष्य सुन्दर हाथ पांव आंखि नाक कान ऐसे मनुष्य देहकूं पायकै हे अनघ ! तुमारे चरणारविंदको भजन नहीं करे है, जैसे हरी घासके निमित्त पशु अंधकूपमें गिरे हैं ऐसे खोटी मतिवारे पुरुष विषयनके निमित्त अंधकूपरूप घरनमें परचो रहे है ॥ ४८ ॥ हे अजित ! अर्थात् जीतवेमें न आओ केवल यह प्राणीही भूलि रहे हैं सो बात नहीं, मेरी-हू यही गति है मोकूं इतने दिन निष्फलही बीत गये राज्यकी संपत्ति पायके मोकूं बडो गर्व है गयो मैं पृथ्वीको पालन करनवारो राजा हों मनुष्य देहम मेरी आत्मबुद्धि है अर्थात् देहकूं आत्मा मानेहूं स्त्री पुत्र खजाने पृथिवी इनकी बडी चिन्तामें आसक्त है रह्यो हों ॥ ४९ ॥ जैसे कच्चो घडा क्षणमें फूटि जाय वारूकी भीति जैसे क्षणम गिरपरे या प्रकार देहकोहू भरोसो नहीं है ता देहमें मैं राजा हूं यह अभिमान कर रथ घोडा हाथी प्यादौ सैनाकी और मुख्य सैनाध्यक्षनकूं संग लेके पृथ्वीपै भ्रमण करती रही काल रूप तुम्हारो कभू स्मरण न कियो मतवारो रह्यो यासौ मेरो इतनो काल व्यर्थ गयो ॥ ५० ॥ आज यह काम करनो कल यह काम करनो है या प्रकारकी चिन्तामें मतवारो है रह्यो, दश होय अब वीस होंय पचास होय हजार होंय लाख होंय या प्रकार लोभ बढत जाय है, विषयनमें चाहना करनहारे ऐसे पुरुषनकूं कालरूप तुम शीघ्र मारिलेऊ हौ जैसे क्षुधासों व्याकुल होट चावावतो सर्प मूसेकूं मारि लेय है ॥ ५१ ॥ मनुष्यको देव अर्थात् राजा यह नाम धारण कर जो सुवर्णके बने रथनपै बैठिके डोले है, सो देह दुरत्यय कालकरिके मेरे पीछे कुत्ता स्यार भक्षण करिजांय तौ विष्ठा है जाय, परचो रहै तौ कीरा परिजांय, वा अग्निसो भस्म है जाय है यह तीन नामकूं धारण करै है ॥ ५२ ॥ हे भगवन् ! जा पुरुषने सम्पूर्ण दिशामंडल जीतलीनी है जाको संग्राम करवेको कोई शत्रु शेष नहीं रह्यो जाको सब बराबरके राजा प्रणाम करै हैं ऐसो उत्तम सिंहासनपै विराजमान चक्रवर्ती राजाहू मैथुनके सुख निमित्त घरनमें क्रीडामृगके

बतादिया, वोह मनसुखदासपै आया और भोजन मांगा यह उसे बैठाय अपनी स्त्रीके पास जाय बोले कि तु अपनी नथ देते तो मैं इसमें थोडा सौना और डलवादूं स्त्री जानगई कि यह महात्माओंको खवानेकूं लिये जाय है, और कुछ न कही और नथ उतार दी, यह ले नथ बेच उस महात्माको भोजन कराय शेषधनसे और भक्तोंको भोजन करा दिया भगवान् यह देख बडे प्रसन्न हुए, और दूसरेही दिन उससे चौगुनी नथ ले स्त्रीके पास आय बोले कि यह मैं नथ बनवा लाया (रूप मनसुखदासका बनालिया था) स्त्री घरमें लीप रहेथी बोली तुम्ही पहरादो भगवान् अपने हाथसे नथ पहराय चले गये पीछे मनसुखदास आये और नथ देख आश्चर्यसे पूंछने लगे पीछे भगवान्की महिमा विचार प्रेममें मग्न होगये यह भक्तवत्सलता है कि भक्तोंका मानभंग नहीं होनेदेते ॥

१ चौ०—नारि विवस नर सकल गुसाई । नाचहिं नट मर्कटकी नाईं ॥ यामें दृष्टान्त है—एक पंडितजी कथा वाचै थे, एक साहूकारने कही मुझे अपना चेला करलो, पंडितजीने बहुत कहने सुननेसे अपना चेला कर लिया, चेला होने उपरान्त पंडितजीने कही अब तूं कृतार्थ हो गया, चेला उस दिनसे सुनने न आया एक दिन पंडितजीकूं मार्गमें मिला बोले कथा सुनने नहीं आते, चेलाने कही महाराज कृतार्थ होकर अब क्या सुननेकी इच्छा है, पंडितजीने कही भल, चेला करा दक्षिणाभी गई, वो चेला परदेशमें रोजगार करने चला गया, और बडा धनी हो गया पंडितजीको एक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समान स्त्रियनसो नाच नचाये जाय हैं ॥ ५३ ॥ जैसे बाजीगर बंदरको नचावे हैं प्रथम यह पुरुष सब विषयनके भोगकूं त्यागिके तपमें बडी श्रद्धा कर पृथ्वीमें सोवै ब्रह्मचर्यसूं रहे व्रतनकूं करै विषयनके भोगवेकूं दानपुण्य करै है, और विचारै है कि या जन्ममें तप करूंगो तब चक्रवर्ती राजा है जाऊंगो फिर तपस्या कर दूसरे जन्ममें जायके इंद्र होऊंगो, या प्रकार तृष्णाके बढवेसो वा पुरुषकूं कबहूं सुख नहीं होय है ॥ ५४ ॥ ऐसे आठ श्लोकन करिके ईश्वरसो बहिर्मुखनकूं संसार कहिके अब संसारकी निवृत्ति कहे है हे अच्युत ! या संसारमें जन्म मरणकूं प्राप्त भये जीवकूं जा समय तुम्हारी अनुग्रहसों संसारको अंत होयहै ता समय तुम्हारे भक्तनको संग होयहै ता समय सब संगकूं दूरि करि कार्य कारणके नियंता तुम ईश्वरमें भक्ति होय है, ता भक्तिते संसार छूटे है ॥ ५५ ॥ हे ईश्वर ! मेरो अनायासपूर्वक राज्यबन्धन छूटि गयो यह तुमने मेरे ऊपर बडो अनुग्रह करयो, यह मैं मानूंहूं, राज्यके छूटिवेके लिये अकेलो हैके वनमें जायवेकी इच्छा करनहारे चक्रवर्ती राजाहू प्रार्थना करे हैं, कि हमारो कोई तरह राज्य छूटिजाइ तो अकेलो हैके वनमें जाय बैठों ॥ ५६ ॥ हे समर्थ ! निष्किंचन साधुसौ पूजित तुमारे चरणारविंदके सेवनतें मैं और काहू वरकी चाहना नहीं करूंहूं, हे हरे ! मोक्षके देनेवारे तुम्हारो आराधन करिके ऐसो कौन विवेकी पुरुष है जो आत्माको बन्धनरूप वर मांगेगो ॥ ५७ ॥ हे ईश ! अर्थात् सबके प्रेरण करनवारे याहीसो सत्वगुण रजोगुण तमोगुणके बन्धन और ऐश्वर्य तथा शत्रुको मरण और धर्मादिक मनोरथ त्यागी ज्ञानघन निरंजन उपाधिसूं न्यारे निर्गुण अद्वैत अक्षर ईश्वर आपकी मैं शरण आयो हूं ॥ ५८ ॥ हे ईश ! या ससारमें बहुत दिननते कर्म फलनसो तपायमान हूं, और कर्मनकी वासनानसों अति पीडित हूं, और तृष्णासहित जे छः इन्द्रियरूपी शत्रु मेरे पीछे पडे हैं यासों कारण मोको काहू प्रकारसों शान्ति नहीं है, हे शरणके देनवारे ! हे परमात्मन् ईश्वर ! अब मैं ज्यों त्यों करिके शोकरहित भयके दूर करनवारे तुम्हारे चरणारविंदकी शरण आयोहूं मेरी रक्षा करो ॥ ५९ ॥ अब श्रीभगवान् कहे है हे चक्रवर्ती राजन् ! तुम्हारी बुद्धि बडी निर्मल और उदार है कि मैंने वर देन कहिके तुमकूं लोभ उत्पन्न कियो, तथापि कामना करिके तुमारी

समय द्रव्यका संकोच हुआ, स्त्रीके समझानेसे साहुकारके पास गये, उसने बडी खातिर करी, पंडितजी कई दिन रहे, एक दिन बोले अब जांयगे चेलेने कही अभी ठहरो, पंडितजीने जानी कुछ अधिक दक्षिणा देंगे ठहर रहे; इसी प्रकार दो महीनेसे अधिक हो गये जब जाने कहै, तब यही उत्तर दे कि ठहरो, एक दिन साहुकारकी स्त्रीने कही कि यह ब्राह्मण कौन है; दासीने कही यह लालाजीके गुरु है दो महीनेसे ठहरे हैं, कुछ दिया नहीं, उसने पंडितजीको बुलाकर कहा कि तुम कैसे आये, पंडीनजीने कही यह हमारा चेला है दो महीनेसे ठहरे हैं उसने कही यह तुम्हारा चेला है ? पंडितजी बोले हां. उस स्त्रीने अपनी नथ उतार पंडितजीको देदी, और कहा इसे छिपाकर रखलो पंडितजी तौ प्रसन्न हो कोठरीमें आगये और सेठानीजी आसन पाटी ले पडी, लालाजीने आनकर पूछा आज उदास क्यों हो भोजन क्यों नहीं करा वोह बोली नथ खो गई, जब दूसरी बनै तौ भोजन करूंगी, लालाजी बोले कि वो क्या उससे सवाई बनवा दूंगा स्त्रीने कही जब बनके आवैगी तौ भोजन करूंगी, लालाजीने तुरंत उससे सवाई बनवा दी जब सैठानीको दी तौ भोजन करा, पीछे सेठानीजीने पंडितजीको बुलाकर सब वृत्तान्त सुनाकर कहा कि अब कहो यह तुम्हारे चेले हैं या मेरे ? पंडितजी चुप रहे तब सेठाणीजी बोली जाओ अब घरकूं यह तौ रोजही टालैंगे, देंगे कुछ नहीं पंडितजी नथ ले अपने घर आये सो इस समय तौ स्त्रियोंके चेले हैं ॥

१ सवैया—नैननकी पहली पलमें क्षण आधि घरी घटिका हो गई है। याम गयो युग याम गयो पुनि सांझ गई तबरात भई है ॥ आज गई अरु काल गई परसों तरसों कछु और ठई है। सुन्दर ऐसहि आयु गई तृसना दिनही दिन होत नई है॥१॥ तूही भ्रमाय प्रदेश पठावत बूडत जाय समुद्र हि जाजा। तूही भ्रमाय पहाड चढावत वादि वृथा मरिजाय अकाजा ॥ तैं सब लोक भ्रमाय भली विधि भांड किये सब रंकहु राजा। सुन्दर तोही दिखाइ कहू अब हे तृष्णा तोहिं नेक न लाजा ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मति चलायमान न भई ॥ ६० ॥ मैंनें वर देन कहिके जो लोभ उत्पन्न कियो सो तोकूं सावधान करचो, यह तूं जानि मेरे भक्तनकूं कदाचित् वर आयके प्राप्ति होय तथापि विनकी बुद्धि चलायमान नहीं होय है ॥ ६१ ॥ हे राजन् मुचुकुंद ! जो मेरे भक्त नहीं है वे प्राणायामादि साधनसो मनको वश करै तोहू उनको मन विषयनके लालचमें आवतो दीखै है कारण कि विनकी वासना क्षीण नहीं भई है ॥ ६२ ॥ हे राजन् मुचुकुंद ! मेरे विषे मनकूं लगायके जहां इच्छा आवै तहां विचरो, तुमारी नित्य दृढ भक्ति मोमें होउ ॥ ६३ ॥ क्षात्र धर्ममें रहिके शिकार खेलिके जो तैंने जीवनकी हिंसा करी सो अब सावधान हैके मेरो आश्रय लैके तप करिके वा पापकूं दूर करो ॥ ६४ ॥ हे राजन् मुचुकुंद ! दूसरे जन्ममें सब प्राणीनके हितके करनवारे ब्राह्मण हैके मोकूं प्राप्त होयगो ॥ ६५ ॥

जन्मन्यनन्तरे राजन्सर्वभूतसुहृत्तमः ॥
भूत्वा द्विजवरस्त्वं वै मामुपैष्यसि केवलम् ॥ ६५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे मुचुकुन्दस्तुतिर्नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५१॥

अध्याय ५२.

श्रीशुक उवाच–इत्थं सोऽनुगृहीतोऽङ्ग कृष्णेनेक्ष्वाकुनन्दनः ॥
तं परिक्रम्य संनम्य निश्चक्राम गुहामुखात् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार श्रीकृष्णसो अनुगृहीत है इक्ष्वाकुनन्दन मुचुकुन्द श्रीकृष्णकी परिक्रमा दैके नमस्कार करिकै गुफामेंते बाहर निकसत भयो ॥ १ ॥ राजा मुचुकुन्द मनुष्यनकूं पशूनकूं लतानकूं और छोटे छोटे वृक्षनकूं देखके कलियुग आय गयो यह जानिके उत्तर दिशाकूं जाते भये ॥ २ ॥ तप करिवेमें श्रद्धा कर सब संग त्याग संदेहरहित है राजा मुचुकुन्द श्रीकृष्णमें मन लगायके गंधमादन पर्वतपै जात भयो ॥ ३ ॥ नरनारायणके स्थान बद्रिकाश्रममें जायके संपूर्ण द्वंद्व अर्थात् सुख दुःख भूख प्यास शीत उष्ण इनकूं सहिके शांत स्वरूप मुचुकुन्द तप करिके हरिको आराधत करत भयो ॥ ४ ॥ म्लेच्छनसों घिरी मथुरापुरीमें भगवान् श्रीकृष्ण फेरि आयके म्लेच्छनकी सेना मारिके और विनको धन लैके द्वारकामें पहुँचावत भये ॥ ५ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके कहेते मनुष्य बैलनके ऊपर धनकूं लादिके लेचले तब जरासंध तेईस अक्षौहिणी सेनाकूं संग लैकै आवत भयो ॥ ६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! माधव श्रीकृष्ण बलदेव शत्रुकी सेनाकूं बडी जोरसो आई देखिके मनुष्यलीलामें आयके शीघ्र भाजंत भये ॥ ७ ॥ भयरहित कृष्ण बलदेव बहुत धनकूं मार्गहीमें त्यागके बहुत भयभीतकी तुल्य कमलसो कोमल चरणनसूं बहुत दूरतक कितनेही योजनताई भाजत भये ॥ ८ ॥ ईश्वर श्रीकृष्ण बलदेवके बलकूं नहीं जानिके बली मगधदेशको राजा

---

१ श्रीभगवान्ने मुचुकुंदके ऊपर अनुग्रह करके मुकुंद बनाय दियो मुचुकुंद और मुकुंदमें एक 'चु' को फरक देखके आपनें पीतांबर न उढायो मानो 'चु' पै हरताल लगायके मुकुंद बनाय दियो सोही ग्रंथांतरमें लिखो है श्लो०–नवनीतहरस्यापि स्वभावो न गतः खलु । कृपया मुचुकुंदस्य हरिस्तं चुमचूचुरत । माखनचोरीको स्वभाव राजा है गये तोहू न गयो कृपाकरके हरिने मुचुकुंदकी 'चु' चुरायके मुकुंद करदियो ॥ २ प्र०–जरासंधके सामनेसै क्यौं भागे ? जरासंधनें महादेवकी घोर उपासना कर वर मांगा कि एक बार कैसेही कृष्ण मेरे सामनेसे भागैं तौभी मैं कृतार्थ हो जाऊं, दूसरे कृष्णने द्वारकापुरीका जाना इसी प्रकार निश्चित किया था बिना भयके यदुवंशी मथुरा छोडना नहीं चाहते थे, कारण कि जननी और जन्मभूमि स्वर्गसेभी अधिक प्यारी होती है ॥ ३ जरासंध बोल्यो–काहे डरके भाजे जात, ठाढे रहो करो कछु बात । परत उठत कंपत क्यौं भारी, आई है ढिग मीच तिहारी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जरासंध कृष्ण बलदेवकूं भाजे देखिके हँसिके बहुतसे रथनकूं संग लेके पीछे दौरत भयो ॥ ९ ॥ बहुत दूर भाजवेसों श्रम पाय कृष्ण बलदेव प्रवर्षणनामक पर्वतपै चढत भये, जा पर्वतपै इन्द्र नित्य वर्ष्यौ करे है ॥ १० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्ण बलदेवकूं पर्वतमें छिपे जानिके ता पर्वतमें ढूंढिके तिनके छिपेको स्थान न मिल्यो तब चारों ओरते आगि लगायके जरासंध जरावत भयो ॥ ११ ॥ शिखर जलवेसो चवालीस कोस ऊंचे पर्वतपैते कृष्ण बलदेव दोनों भैया उछरिके जरासंधके कटककूं उलांघिके नीचे पृथ्वीमें कूदत भये ॥ १२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! दहलुआन सहित वैरी जरासंधसो अलक्षित हो यादवनमें उत्तम कृष्ण बलदेव समुद्रकी खाईसो युक्त द्वारकापुरीमें आवत भये ॥ १३ ॥ मगधदेशको राजा जरासंधहू कृष्ण बलदेवकूं मिथ्या जरिगये मानिके बडे दलको संग लेके मगध देशकूं जातभयो ॥ १४ ॥ अब श्रीकृष्णके विवाह कहिवेके लिये प्रथम बलदेवको विवाह नवमस्कधमें कहि आये है तथापि फेर एक श्लोकमें कहेहै शोभायमान आनर्तदेशको राजा रैवत ब्रह्माके कहेते अपनी पुत्री रेवतीकू बलदेवजीको देतभयो, यह प्रथम कहिआये हैं ॥ १५ ॥ हे कौरवनके कुलकूं आनंदके दैनवारे राजन् परीक्षित् ! भगवान् गोविं स्वयंवरमें लक्ष्मीको अंश विदर्भ देशमें जन्मी भीष्मककी कन्याकूं व्याहत भये ॥ १६ ॥ शाल्वते आदि लेके शिशुपालकी ओरके राजानकूं शीघ्रतासो जीतिके सब लोकनके देखते जैसे देवतानकूं जीतिके गरुड अमृतकूं लावै हैं या प्रकार लावत भये ॥ १७ ॥ राजा परीक्षित् बोले सुंदरमुखी भीष्मकराजाकी पुत्री रुक्मीकूं युद्धमैंते हरिके श्रीकृष्णचंद्र राक्षस व्याहसो व्याहतभये, यह हमने तुमारेही मुखते सुनीहै ॥ १८ ॥ हे शुकदेवजी ! जरासंध शाल्व इत्यादिक राजनकूं जीतिके जैसे रुक्मिणीकू लावत भये, यह बडे तेजस्वी श्रीकृष्णचंद्रको चरित्र श्रवण करन्यो चाहूंहूं ॥ १९ ॥ हे ब्रह्मन् ! श्रीकृष्णचन्द्रकी कथा पवित्र है मनोहर है लोकनके पापनकूं दूर करै है नित्य नवीन है, सुनिवेके सारकूं जाननहारे कौन पुरुष हैं जो ऐसी कथानकूं सुनिके तृप्त होय ॥ २० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित् ! विदर्भदेशको पालन करनवारो भीष्मक नाम बडो राजा होत भयो, भीष्मक राजाके पांच पुत्र होतभये, और सुंदरमुखी एक कन्या होतभई ॥ २१ ॥ तिनमें बडो रुक्मी तासूं छोटो रुक्मरथ तासूं छोटो रुक्मबाहु तासूं छोटो रुक्मकेश, तासूं छोटो रुक्ममाली ये पांच पुत्र होतभये, इन पांचोंकी बहन पतिव्रता रुक्मिणी होतभई ॥ २२ ॥ घरमें आये नारदादिक मुनिनसो गाये मुक्तिके देनवारे श्रीकृष्णकी सुंदर रूप पराक्रम गुण शोभाकूं श्रवण करिके रुक्मिणी अपनी बराबर मानती भई ॥ २३ ॥ यहां सुन्दर बुद्धि उदारता रूप पराक्रम शोभायुक्त रुक्मिणीकू श्रवण करिके श्रीकृष्णचंद्र अपनी बराबरीकी स्त्री व्याहिवेकूं मनमें करतभये ॥ २४ ॥ माता पिता और भैया बंधुनकूं सबकी यह इच्छा ही कि रुक्मिणी श्रीकृष्णचंद्रकूं देवेंगे, परन्तु श्रीकृष्णको शत्रु रुक्मी हम अपनी बहिन कृष्णकूं न व्याहेंगे, ऐसे निषेध करिके या लायक वर शिशुपाल है या प्रकार मानत भयो ॥ २५ ॥ सुन्दरनीलकटाक्षवारी विदर्भदेशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी श्रीकृष्णके व्याहिवेकूं मेरो भैया मने करै है यह जानिके बहुत उदास मन होय कोई एक अपनो स्नेही ब्राह्मणकूं विचारके श्रीकृष्णके लिवायवेकूं भजति भई ॥ २६ ॥ यह ब्राह्मण जा समय द्वारिकापुरीमें प्राप्त भयो, तब द्वारपालने भीतर पहुंचायो, तहां सुवर्णके सिंहासनपै बैठे आदिपुरुष नारायणको दर्शन करतभयो ॥ २७ ॥

---

१ देख जरासंध कहे पुकारी, शिखर चढे बलभद्र मुरारी । अब किमि हमसों जाय पलाय, या पर्वतको देहुं जलाय ॥

२ श्लो०—छित्त्वा भित्त्वा च हत्वा च क्रोशंतीं रुदतीं बलात् । प्रसह्यकन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ब्राह्मणके माननेहार श्रीकृष्णचंद्र ता ब्राह्मणकूं देखिके आप सिंहासनपैते उतरिके ब्राह्मणकूं सिंहासनपै बैठायके जैसे अपने देवतानकी पूजा करैं हैं ऐसे वाको पूजन करतभये ॥२८॥ जब ब्राह्मण भोजन करचुके और मार्गको श्रम दूर हैगयो तब सत्पुरुषनकी गति भगवान् श्रीकृष्ण वाके निकट जाय अपने हाथते विनके चरणारविंदकूं सहरावत निर्विग्रह हैकें पूछते भये ॥ २९ ॥ हे द्विजनमें श्रेष्ठ ब्राह्मण ! वृद्धसंमत तुमरो धर्म बहुत कष्टते तौ नहीं चलै है, सर्वदा तुमारे मनमें संतोष तो रहैहै ॥ ३० ॥ जा काहू प्रकार करिकै ब्राह्मण संतुष्ट हैके वर्तै अर्थात् जो कछु वस्तु आयके प्राप्त होंय वाहीमें संतोष करिके रहे, अपने धर्मसूं च्युत न होय तौ वही वाको संपूर्ण फलको देनवारो है ॥ ३१ ॥ और जाके मनमें संतोष नहीं है वह ब्राह्मण इन्द्र हैजाउ तथापि लोकनते लोकनमें डोल्यौ करै है तृष्णाके मारे एक स्थानमें स्थिर हैके नहीं रहे और जाके पास कछुभी नहीं है और मनमें संतोष है वह ब्राह्मण सब अंगनके खेदनकूं दूर करिके आनंदपूर्वक सोवै है ॥ ३२ ॥ आपहीते विना मांगें प्राप्त भई वस्तुनमें संतोष और सब प्राणीनते हित करनहारे विद्यमान कुलीन अहंकाररहित शांत स्वभाव साधु ब्राह्मणनकूं शिर नवाइकै मैं प्रणाम करूंहूं ॥ ३३ ॥ हे ब्राह्मण ! जाकी तुम प्रजा हो ता राजाते तुमकूं कुशल है, जा राजाके देशमें ब्राह्मणनको पालन होय वह राजा मोकूं प्यारो लगे है ॥ ३४ ॥ समुद्रको उल्लंघन करिकै जा कार्यके करिवेकी इच्छा करिकै जा स्थानते तुम या किलेमें प्राप्त भये हो जो कथन योग्य बात होय तौ हमारे आगे संपूर्ण कहौ हम तुम्हारो कहा कार्य करें ॥ ३५ ॥ श्रेष्ठ आसनपै विराजमान हैकै लीला करिके मनुष्यदेह धारण करनहारे श्रीकृष्णचंद्रके पूछेपै वह ब्राह्मण श्रीकृष्णते वर्णन करत भयो ॥ ३६ ॥ हे भगवन् ! रुक्मिणीने आपको एकांतमें लिखिके पत्री दीनी है वा प्रेमके चिह्नवारी पत्रीको खोलके वह ब्राह्मण श्रीकृष्णकूं दिखायके विनकी आज्ञाते पैत्रीकूं

---

१ प्रारब्धही तौ मनुष्यको राजा रंक करती है, एक घोडोंके व्यापारीके घोडेसे राजाके पुत्रका कोई रोग जातारहा राजाने व्योपारीसे कहा घोडेकी कीमत लेलो व्योपारी बोला महाराज ! यह घोडा मैंने कुमारके चढनेको दिया और मुझे द्रव्यकी इच्छा नहीं राजाने उसे सन्मान कर विदा किया कि यहां आते जाते रहियो कुछ वर्ष उपरांत व्योपारीका प्रारब्ध बिगडा, धन सब चोरी होगया, घोडे मरगये, जब कुछ उपाय न चला तब राजाके पासकूं आया, जब राजाने यह समाचार सुने तौ उसे एक मकानमें टिका दिया, और कुछ दिन उपरान्त उससे भेटकर पूछा, तुम्हें क्या बनाना आताहै, व्योपारी बोला चाबक बनाना जानताहूं, राजाने पांच रुपये देकर कहा कि इसके चाबक बनाओ और बेचो हमारे यहां रहो, वोह बडा दुःखी हो बनानेलगो, कुछ दिन उपरान्त उनमेंभी घाटाहुआ पांचो रुपये जातेरहे, राजाने फिर पांच दिये, और फिर घटगये, इसी प्रकार सात वर्षतक राजाने दिये, और रुपये घटते गये, जब आठवां वर्ष प्रारम्भ हुआ तौ पांच रुपयेके छः रुपये हो गये तब राजाने १० रुपये दिये फिर और नफा हुआ, एवं द्रव्य बढनेलगा राजाने फिर घोडे लिवादिये उसमें अधिक द्रव्य उपार्जन किया, जब पूर्ववत् द्रव्य होगया तौ व्योपारीने विचारा जितना कुछ राजाका द्रव्य लियाहै, सब देदूं यह विचार मिलने गया उस दिन राजानै उसका अधिक सन्मान किया, और बोला कि मेरा आधा राज्य तू लेले. व्योपारी क्रोधकर बोला कि जब मेरे पास कुछ नहीं था तो पांच रुपयेसे अधिक न दिये न मुझसे अच्छी प्रकार मिले, अब आधा राज्य देते हो राजा बोले उस समय तेरी प्रारब्ध बिगड रही थी, यदि सारा राज्य दे देता तौभी तेरे पास कुछ न रहता, इस कारण थोडेही द्रव्यसे तेरी दुर्दशा टालदी प्रारब्धके बल होनेमें और बल हीन होजावै हैं ॥ २ पत्री—है सुरत तुमसे हरिजू लगाई, कृपा कीजे श्रीयदुराई । दासी प्यासी दरसकी है प्यारे, इच्छा है वे लखूं पद तुम्हारे, सिद्ध सनकादि जो मनमें धारे, चित्तकी तिनमें वृत्ति लगाई ॥ १ ॥ मुझको शिशुपाल वरनेको आया, मैंने तौ चित्त तुमसैं लगाया, जान दासी करो प्रभु दाया, लीजे राख शरण सुखदाई ॥ २ ॥ आनकरके दरश अपना दीजै, दूर संकट मेरा शीघ्र कीजै, लाज दासीकी अब राख लीजै, लीजे दुष्टोंसे मुझको छुडाई ॥ ३ ॥ जाओगे जो कृपाकरके मुझपर, भेंट दूं जीव तन श्यामसुन्दर, और नहीं तौ करूं जी निछावर, मेरे मनमें यही आसमाई ॥ ४ ॥ भेजी है ज्वाला द्विज हाथ पाती, दे दरश कीजिये ठंडी छाती, जोर कर तुमको विनती सुनाती, दुखहरण कीर्ति वेदोंने गाई ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वांचे हैं रुक्मिणी कहै हे त्रिलोकीमें सुन्दर! हे अच्युत! अखंडरूप जबसों श्रवण करनवाले पुरुषनके कर्णनके छिद्रनके द्वारा हृदयमें प्रवेश कर शोक संताप दूर करनहारे आपके गुण और दृष्टिवालेनकी दृष्टिके सकल मनोरथनको लाभ रूप श्रीमान्को रूप सुनो है तबसो मेरो मन आपमें लग रह्यो है ॥ ३७ ॥ हे मुकुन्द! हे पुरुषशार्दूल! कौन कुलवान् उदारगुणयुक्त धीरजवान् कन्या तुम्हें जो कि मनुष्यलोकके अतिप्रिय कुल शील रूप विद्या अवस्था धन घर इन सबमें तुम्हारीही समान हो तिन्हें विवाहके समयमें पति स्वीकार न करै ॥ ३८ ॥ हे समर्थ! ताकारण मैंने तुम पति करेहो तुमकूं अपनो देह अर्पण करचो है मोकूं अपनी स्त्री करो, हे कमललोचन! मैं जो आप वीरको भाग हूं वा सिंहके भागकूं स्यार नहीं स्पर्श कर सकै है तैसे शिशुपाल आयकें तुरत स्पर्श न करै ॥ ३९ ॥ बावरी कुआं तलाव बाग यज्ञ दान नियम तीर्थ देवता ब्राह्मण गुरु इनकी पूजा करिके ईश्वर भगवान् प्रसन्न करें हैं, तो श्रीकृष्णचंद्र हाथ पकरिके लैजाओ, दमघोषको पुत्र शिशुपालते आदि लैके राजा न आवैं ॥ ४० ॥ हे अजित! अर्थात् जीतिवेमें न आवो कालि विवाह होयगो तामें तुम छिपके विदर्भदेशमें आवो, और अकेलै मति आओ पीछेते सैन्याकूं लगाये आओ शिशुपाल और मगधदेशको राजा जरासंध इनकी सेनाको बलसों मथन कर पराक्रमके मोलवारी मो अपनी दासीके संग असुर विधिसों व्याह करो ॥ ४१ ॥ कदाचित् कहो कि तुम तौ रुक्मिणी पुरके भीतर हो तुमारे भैया बंधूनके मारे विना कैसे व्याहूं ऐसी मनमें शंका करो तौ उपाय बताऊंहूं विवाहते पूर्व दिन बडी कुलदेवी अंबिकाकी यात्रा होय है, ता यात्रा करिवेके लिये और देवकी पूजा करिवेको नववधू कन्या बाहर जांय है तहांते मेरो लेजायवो सुगम है जैसे पार्वतीको शिवजी लेगये ॥ ४२ ॥ जिनके चरणारविंदनकी रजसू स्नान करिवेकूं बडे बडे साधु महान् अपने अज्ञान दूरि करिवेके लिये इच्छा करें हैं हे कमलदललोचन! जो तुम मेरे ऊपर प्रसन्न न भये तौ व्रत करिवेते दुर्बल प्राणत्याग देऊंगी कदाचित् कहौ कि प्राण त्यागवेते कहा होयगो तहां रुक्मिणी कहैं हैं वारंवार प्राणत्याग करूंगी तौ सौ जन्ममें तौ प्रसन्न होउंगे ॥ ४३ ॥ ब्राह्मण बोले हे यादवनके देव! गुप्त संदेश लैकै मैं आयो हूं जो यहां करिवे योग्य काय होय ताय विचारिके शीघ्रतासों करो विलंब मति करो ॥ ४४ ॥

ब्राह्मण उवाच–इत्येते गुह्यसंदेशा यदुदेव मयाऽऽहृताः ॥
विमृश्य कर्तु यच्चात्र क्रियतां तदनन्तरम् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे रुक्मिण्युद्वाहे द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥

अध्याय ५३.

श्रीशुक उवाच–वैदर्भ्याः स तु संदेशं निशम्य यदुनन्दनः ॥
प्रगृह्य पाणिना पाणिं प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ १ ॥

श्रीशुकदवजी बोले हे राजन् परीक्षित्! यदुकुलकूं आनंदके देनवारे श्रीकृष्णचंद्र विदर्भदेशके

१ भूलि गये वेदनको शंखतै उधारवो धौ भूलि गये मंदर और अवनि उठायवो। हेमकश्यपैते प्रल्हाद दुख टारिवोहू भूलि गये वासवको बलितैं बचायवो ॥ धेनु हेतु अर्जुनको मारिवो धौ भूलि गये भूलो दशकंधरको ध्वंस सिखलायवो। काहे निठुराई यदुराई गहि बैठे आज भूलि गयो गैयन गुहारि पुनि धाइवो ॥ १ ॥ २ कवित्त-पद चाहैं चलन समीप रावरेके वेग कर दोऊ पद परसन अनुरोग हैं। शीश चाहै रावरेके चरण प्रणाम कीवो श्रोण सुनिवेको बैन चाहैं प्रेम पागे हैं ॥ सुनो रघुराज यदुराज रुक्मिणीके अंग रावरेसौं मिलन उमंगरंग जागे है। तन रावरेमें त्यौंही मन मन रावरेमें नाथ प्राण रावरेमें नैन रावरेसौं लागे हैं ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजाकी पुत्री रुक्मिणीको संदेशो सुनिके ब्राह्मणको अपने हाथमें हाथ पकरिके बोलत भये ॥ १ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र बोले हैं जैसो रुक्मिणीको मेरे विषै चित्त लग्यो है ऐसेही रुक्मिणीमें मेरोहू चित्त लग्यो है चिंताके मारे रात्रिमें नींद नहीं आवे हैं, मैं जानूंहूं रुक्मी द्वेष कारिके मेरे व्याहकूं मने करचो है ॥ २ ॥ दुष्ट राजनकूं जीतिके दोषरहित अंगवारी अनन्यगति रुक्मिणीकूं जैसे काष्ठ मथन करिके अग्नि निकास लेइहैं तैसे लै आऊंगो ॥ ३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे परीक्षित् ! मुरदैत्यके मारनवारे भगवान् रुक्मिणीके विवाहको नक्षत्र जानिके हे रथवान् ! रथकूं शीघ्र जोतो या प्रकार रथवानसूं कहतभये ॥ ४ ॥ शैव्य सुग्रीव मेघपुष्प बलाहक नामवारे घोडानकूं रथमें जोतिके सन्मुख लायके रथवान् हाथ जोरिके बोलत भयो कि रथ तैयार है विराजो ॥ ५ ॥ शूरवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचन्द्र रथमें बैठिके और ब्राह्मणकूं बैठारिके शीघ्रगामी घोडानसूं आनर्तदेशते चलिके एक रातिमेंही विदर्भदेशमें आवत भये ॥ ६ ॥ पुत्र रुक्मिके स्नेहवश हैके वाके कहेमें चलनहारो कुंडनपुरको राजा प्रजाको पालन करनवारो भीष्मक शिशुपालकूं अपनी कन्या दैवेके लिये पुरकी शोभा और पितृदेवतानके पूजनकूं आदि लेके कर्म करावत भयो ॥ ७ ॥ राजा भीष्मक अपने पुरकूं शोभायमान करावत भयो राजमार्गमें झार बुहारकै छिरकाव होत भयो चित्र विचित्र ध्वजा पताका वंदनवारनकरिके वह पुर शोभायमान कियो ॥ ८ ॥ माला चंदन फूलनके गहने स्वच्छ वस्त्रसूं शोभायमान स्त्री पुरुष डोले हैं अगरकी धूपसो शोभायमान घर हैं ॥ ९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! पितृदेवतानको पूजन करिके ब्राह्मणनको विधिपूर्वक भोजन करायके राजा भीष्मक रुक्मिणीको यथावत् स्वस्तिवाचन करावत भये ॥ १० ॥ सुन्दर कन्याको भली प्रकार स्थान कराय कौतुकसों ताके हाथमें विवाहको कंगन बांध उत्तम नवीन वस्त्र पहराय अलंकारनसों शोभित कर ॥ ११ ॥ द्विजोत्तम ब्राह्मण सामवेद ऋग्वेद यजुर्वेद मंत्रनकूं पढिके वधू रुक्मिणीकी रक्षा करत भये, अथर्ववेदके मंत्रनको जाननवारो पुरोहित सूर्यादिक ग्रहनकी शांति करिवेके लिये होम करत भयो ॥ १२ ॥ विधिके जाननवारेनमें श्रेष्ठ राजा भीष्मक ब्राह्मणनकूं सुवर्ण रूपो वस्त्र और गुड मिलायके तिल और दुग्धकी गौवनको दान करत भयो ॥ १३ ॥ यह तो रुक्मिणीके पिताकी बात कही अब लडिकाके पिताकी बात कहे हैं जैसे राजा भीष्मकने कन्याको मंगल करायो ऐसेही चंदेलीको पालन करनवारो राजा दमघोष अपने पुत्र शिशुपालको मंत्रके जाननवारे ब्राह्मणनसूं संपूर्ण विवाहके उचित मंगल कर्म करावत भयो ॥ १४ ॥ मद चुवाते सुवर्णकी माला पहरे हाथीनके समूह और रथ प्यादे घोडा इनकी चतुरंगिनी सैन्यकूं संग लैके राजा दमघोष कुंडिनपुरमें आवत भयो ॥ १५ ॥ विदर्भदेशको राजा भीष्मक शिशुपालके पास आयके पूजन करिके सजाये भये एक और स्थानमें प्रसन्न हैके विन्हैं वसावत भयो ॥ १६ ॥ तहां शाल्व जरासंध दंतवक्र विदूरथ शिशुपाल और पौंड्रक आदि लैके हजारन राजा शिशुपालकी ओरके आवत भये ॥ १७ ॥ राम कृष्णते वैर करकै बडे यत्नसो कन्याकू शिशुपालके विवाह करिवेके लिये उद्यम करकै आये हैं, मनमें निश्चय करो हो कि कदाचित् रामसूं आदि लैके यादवनकूं संग लैके कृष्ण आयके कन्याकूं चुरायके लै जायगो, तो वाके संग युद्ध करेंगे. ऐसे मनमें निश्चय करिके अच्छे अच्छे सिपाही घोडा हाथीनकूं

---

१ चौपाई-झारैं गली चौहटे छावैं । चोवा चंदनसो छिरकावैं ॥ पान सुपारी झोरा किये । बिच बिच कनक नारियल दिये ॥ १ ॥ हरे पात फल फूल अपार । ऐसी घर घर बंदनवार ॥ ध्वजा पताका तोरण तने । सुभग कलश कंचनके बने ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

संग लैके सम्पूर्ण राजा आवत भये ॥ १८ ॥ १९ ॥ भगवान् बलदेवजी शत्रु शिशुपालकी पक्षके राजानको उद्यम सुनिके और कन्या लेवेकूं श्रीकृष्ण अकेले गये हैं वहां कलह होयगो यह शंका मानिके भैया श्रीकृष्णके स्नेहसों बलदेवजी हाथी घोडा रथ प्यादेनकी चतुरंगिनी सेनाकूं लैके शीघ्र कुंडिनपुरमें आवतभये ॥ २० ॥ २१ ॥ श्रेष्ठजंबावारी भीष्मककी कन्या रुक्मिणी हरि श्रीकृष्णके आयवेको पैंडो देखत २ ब्राह्मण पत्री लैके गयोहै, वह लोटिके न आयो तब चिंता करतिभई ॥ २२ ॥ मो मंदभागिनीके विवाहमें अब एक रात्री बाकी रहीहै, परंतु कमलनेत्र श्रीकृष्णचंद्र नहीं आय पहुंचे, याको कारण मैं नहीं जानूंहूं, मेरो संदेशो ब्राह्मण लैके गयो सोहू नहीं आयो है[1] ॥ २३ ॥ निर्दोष श्रीकृष्णने मेरे पाणिग्रहणको निश्चय उपाय कियो होइगो, परंतु कन्या अभीते पाती लिखि लिखि भेजे यह दोष देखिके नहीं आये ॥ २४ ॥ मो अभागिनीकूं विधाता ईश्वर अनुकूल नहीं है और देवी गौरी रुद्राणी पार्वती ये अनुकूल नहीं हैं ॥ २५ ॥ भगवान्ने जाकी सुध बुध हरलीनी समयकी जाननहारी रुक्मिणी बाला असुआनसो व्याकुल भये नेत्रनको मूंदके बैठ गई ॥ २६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार गोविंद श्रीकृष्णके आइवेको पैंडो देखते २ रुक्मिणीकी बाई ऊरु भुजा नेत्र ये अंग फरकत भये स्त्रीनके बायें अंग फरकन शुभ होय हैं, प्यारी बातके जनावनवारे हैं ॥ २७ ॥ याके पीछे ब्राह्मण तुम आगे जायके खबर करौ या प्रकार श्रीकृष्णसो आज्ञा पाय ब्राह्मण अंतःपुरमें व्याकुलतासो डोलती राजपुत्री रुक्मिणीकूं देखत भयो ॥ २८ ॥ पतिव्रता रुक्मिणी प्रसन्नमुख और स्वस्थ रीतिसों चले आवते ब्राह्मणकूं दखिके कार्य करिके आयो है या लक्षणकूं जानिके पवित्र मुसिकानिवारी रुक्मिणी पूंछती भई ॥ २९ ॥ तब रुक्मिणीते श्रीकृष्णचंद्र आये हैं यह ब्राह्मण कहत भयो, और राजनकूं जीतिके रुक्मिणीकूं ले आऊंगो, यह सत्य वचन श्रीकृष्णचंद्रने कह्यो ताकूंभी कहत भयो ॥ ३० ॥ श्रीकृष्णकूं आयो जानिके हर्षित मनसों विदर्भ-देशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी विचार करे हैं, कि या समय ब्राह्मणकूं सर्वस्व देऊं सोहू थोरो है ऐसे ब्राह्मणके देवे योग्य कोई वस्तु नहीं देखिके प्रणामही करत भई पश्चात् धनहू देती भई[2] ॥ ३१ ॥ कन्याके विवाह देखिवेकी इच्छा करिके श्रीकृष्ण बलदेवकूं आये सुनिके राजा भीष्मक नगाडे बजावत पूजनकी सामग्री लैके सन्मुख जातभयो ॥ ३२ ॥ मधुपर्क लायके आगे धरत भयो, सुन्दर वस्त्र और अनेक प्रकारकी भेंटें निवेदन करिके विधिपूर्वक राजा भीष्मक श्रीकृष्ण बलदेवको पूजन करत भयो ॥ ३३ ॥ बडो बुद्धिमान् राजा भीष्मक कृष्ण बलदेवके लिये सुन्दर स्थान बनायके सैन्य टहलुआन सहित यथायोग्य आतिथ्य करत भयो॥३४॥ या प्रकार एक ठौर भये राजानमें जैसो जाको पराक्रम जैसी जाकी अवस्था और जैसो जाको बल, जितनो जाके धन है, ताको ताही प्रकार सम्पूर्ण वस्तुनकरिके राजा भीष्मक पूजन करत

---

१ चौपाई–बिलखि बदन चितवै चहुँ ओर । जैसे चंद मलिन भये भोर ॥ अति चिंता सुंदर जिय बाढी । देखे झूकि अटापर बाढी ॥ १ ॥ चढि चढि उझके खिरकी द्वार । नैननतै छांडत जलधार ॥ ले बरात आयो शिशुपाल । कैसे बिरमे दीनदयाल ॥ २ ॥ दोहा–बिलख बदन अति मलिन मन, लेत उसास निसास । व्याकुल बर्षा नयन जल, मोचति कहत उदास ॥ ३ ॥ २ दोहा–मेरे दोष विचारके, नहिं आये भगवान । जो न मिलैं मनभावते, तौ देहौं तजप्राण ॥ १ ॥ कहां जाउँ कैसी करौं, धरत नहीं चित धीर । दासी प्यासी दरसकी, कब ऐहैं यदुबीर ॥ २ ॥

३ प्र०–रुक्मिणीने ब्राह्मणको प्रणामही क्यों किया ? उ०–इसका आशय यह कि प्रणाम करने पर धन सम्पत्तिसे उसका घर भर दिया, प्रणाम कर यह दिखाया जो मुझे प्रणाम करते हैं, उसके घर लक्ष्मी होती है, फिर जिसको मैं प्रणाम करूं उसके यहां किस वस्तुकी कमी रहेगी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ ३५ ॥ विदर्भपुरके वासी श्रीकृष्णचंद्रकूं आयो सुनिके नेत्ररूप अंजलीनसूं श्रीकृष्णचन्द्रके मुखकमलकूं पीवत भये ॥ ३६ ॥ दोषरहित रुक्मिणी सो श्रीकृष्णचन्द्रकी स्त्री हैवेके योग्य है, ऐसेही श्रीकृष्णचन्द्र रुक्मिणीके पति हैवेके योग्य हैं ऐसे परस्पर कहत भये ॥ ३७ ॥ जो कछु हमने पुण्य करे हैं ताके प्रभाव करिके त्रिलोकीके करनवारो ईश्वर प्रसन्न हैके अनुग्रह करो और हम यही अनुग्रह चाहे है कि कृष्णचंद्र रुक्मिणीको पाणिग्रहण करो ॥ ३८ ॥ या प्रकार प्रेमबद्ध हैके संपूर्ण पुरवासी कहत भये, ता समय कन्या रुक्मिणी पुरते बाहिर निकसिके प्यादें और सेनासो रक्षित हैक देवी अम्बिकाके मंदिरमें जाति भई ॥ ३९ ॥ मुकुन्द श्रीकृष्णचंद्रके चरणकमलको भले प्रकार ध्यान करत अम्बिका भवानीके चरणारविंदके दर्शनके निमित्त पावनहींसो जाती भई ॥ ४० ॥ मौन धारण कियो पुरोहितानी संग और सखी सहेली संगमें चली, कवच पहिरि पहिरिके शस्त्र हाथनमें लैके पहरेदार राजाके सिपाई रक्षानिमित्त संग भये मृदंग, शंख, ढोल, तुरही, भेरी बाजे बजत भये ॥ ४१ ॥ उत्तम उत्तम हजारन वेश्या संगमें नाचत जात भई, माला चंदन वस्त्र गहनेनसूं शृंगार करिके और अनेक प्रकारकी सामग्री भेट लैके द्विजनकी स्त्री संग जाति भई ॥ ४२ ॥ गवैया और बाजेनके बजवैया और सूत जगा बंदीजन रुक्मिणीकूं बीचमें करिके गावत और स्तुति करत जात भये ॥ ४३ ॥ देवीके मंदिरमें जाय हाथ पांव धोई आचमन करि पवित्र हैके शांत स्वरूप रुक्मिणी अम्बिका देवीके पास जातभई ॥ ४४ ॥ विधिकी जाननवारी वृद्ध ब्राह्मणनकी स्त्री बालक रुक्मिणीपै महादेवसहित महादेवकी पत्नी भवानीकी पूजा करावतभई ॥ ४५ ॥ तब रुक्मिणी मनमें कहतभई हे अम्बिके पार्वति ! तुम्हारे संतानसहित मंगलरूपिणी तुमकूं वारंवार प्रणाम करूंहूं भगवान् श्रीकृष्ण मेरे पति होयँ, या प्रकार शिर नवायके रुक्मिणी प्रार्थना करत भई ॥ ४६ ॥ जल चंदन अक्षत धूप वस्त्र माला फल गहने और नाना प्रकारकी सामग्रीनकी भेटनसूं और न्यारी न्यारी दीवानकी पंक्तिसूं देवीकी पूजा करतिभई ॥ ४७ ॥ ताही प्रकार तिन सामग्रीनसूं और नोनके पूआ पान कलायँ सुपारी गांडे इनसूं सौभाग्यवती ब्राह्मणनकी स्त्रियनकी पूजा करत भई ॥ ४८ ॥ रुक्मिणी देवीकूं और ब्राह्मणनकी स्त्रीनकूं नमस्कार करत भई, और प्रसाद लेत भई, ब्राह्मणकी स्त्री आशीर्वाद देत भई ॥ ४९ ॥ ताके पीछे मौनकूं त्यागिके जडाऊ मुंदिरीसूं शोभायमान हाथसूं दासीको पकरिके मंदिरसूं बाहिर निकसत भई ॥ ५० ॥ ईश्वरकी मायाकी तुल्य बडे बडे शूरवीर राजानकी मोहनवारी सुन्दर कटिवारी कुंडलन करि शोभायमान मुखवाली रुक्मिणी रत्ननकी जडाऊ कौंधनी नितम्बनमें पहिरे स्तनकी प्रगटता और केशनकी शंकासो चलायमान नेत्रवारी ॥ ५१ ॥ सुंदर मुसिकान कुंदरूके फलकी तुल्य अव्रण ओष्ठनके कांतिसो कुंदकी कलीके समान दंत पांतिपर अरुणाई छाई हैं राजहंसकी समान गतिसो और झनकार शब्द करते नूपुरकी प्रभासो शोभित चरणनसों गमन करती रुक्मिणीको देख संगमें जो बडे २ यशस्वी शूरवीर योद्धा आये हे वे सब वाके दर्शनसो उत्पन्न भये कामदेवसो पीडित हो मोहकूं

---

१ दोहा—मकराकृत कुंडल श्रवण, उर भुज नैन विशाल । मंद हँसनि चितवनि सुभग, उर बैजयन्ती माल ॥ १ ॥ योग्य रुक्मिणीके यही, वर है अति सुकुमार । जहां तहां मिलि कहहिं सब, पुरके नर अरु नार ॥ २ ॥ हमरे पुण्य प्रभावते, रुक्मिणि ब्याहैं श्याम । यहै लालसामें मग्न, पुजि हैं विधि सब काम ॥ ३ ॥

२ दोहा—जो विधिसों पूजो तुम्हें, जगजननी मन लाय । तौ यह वर दीजे शिवे, वर पाऊं यदुराय ॥ १ ॥

चौपाई—मोपर गौरि कृपा तुम करो । यदुपति पति दे मम दुख हरो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राप्त भये ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ता रुक्मिणीकी उदार हँसनि और लज्जापूर्वक चितवनिसूं राजानके चित्त हर गयेते हथियारनकूं छोडिके रथ घोडा हाथीनपैते मूढ हैके पृथ्वीमें गिरत भये, रुक्मिणी यात्राके मिस करिके श्रीकृष्णचंद्रकूं अपनी शोभा दिखावै है ॥ ५४ ॥ या प्रकार चलायमान कमलकोशकी तुल्य कोमल चरण होले होले चलायके तासमय श्रीकृष्णके आयवेको पैंडो देखती रुक्मिणी वायें हाथके नखसूं अलकनकूं उठायके आयेभये राजानको लाजसूं देखती आगे ठाढे श्रीकृष्णकूं देखत भई ॥ ५५ ॥ भीष्मक राजाकी कन्या रुक्मिणी ज्योंही रथपै चढन लगी त्योंही भगवान् श्रीकृष्णचंद्र वाय हरणकर आप गरुडध्वजावारे रथमें बैठारिके क्षत्रीनकी सैन्याकूं तिरस्कार कर जात भये, जैसे स्यारनके बीचमेंते अपने भागकूं लेके सिंह चल्यो जाय है फिर रामआदि यादवन सहित रुक्मिणीकूं लैके गये श्रीकृष्णचंद्रके पीछे होले होले जात भये ॥ ५६ ॥ जरासंधादि अभिमानी राजा यशको नाशरूपी अपनो अपमान नहीं सहत भये, और बोले अहो हमको धिक्कार है जैसे सिंहनके यशकूं स्यार हरे है, ऐसे हम धनुषधारीनके यशकूं ग्वारियानने हरिलियो ॥ ५७ ॥

तं मानिनः स्वाभिभवं यशःक्षयं परे जरासंधवशा न सेहिरे ॥
अहो धिगस्मान्यश आत्तधन्वनां गोपैर्हृतं केसरिणां मृगैरिव ॥ ५७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्त० रुक्मिणीहरणं नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

अध्याय ५४.

श्रीशुक उवाच–इति सर्वे सुसंरब्धा वाहानारुह्य दंशिताः ॥
स्वैः स्वैर्बलैः परिक्रान्ता अन्वीयुर्धृतकार्मुकाः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेव बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार अत्यंत क्रोधकर कवचनकूं पहिरे सम्पूर्ण राजा अपनी अपनी सवारीपै चढिके सैनाकूं संग लैके धनुषनकूं उठायके पीछेते आवत भये ॥ १ ॥ हे परीक्षित् ! यादवनकी सैनानके यूथके पालन करनवारे मुख्य मुख्य यादव राजानकूं देखिके अपने धनुषनकूं टंकार करिके सन्मुख ठाढे होत भये ॥ २ ॥ युद्ध करवेमें निपुण राजा घोडानकी पीठपै, हाथीनके कंधापै, रथनके ऊपर बैठिके, जैसे पर्वतनके ऊपर मेघ जल वर्षामें है ऐसे बाणनकी वर्षा करत भये ॥ ३ ॥ सुंदर कटिवारी रुक्मिणी अपने पति श्रीकृष्णकी सैन्याकूं बाणसूं ढकी देखिके भयु करिके विह्वलनेत्र होय लाजसूं श्रीकृष्णको मुख देखत भई ॥ ४ ॥ तब भगवान् हँसिके बोलत भय हे वामलोचने अर्थात् मनोहर नेत्रवारी ! तू भय मति करै तुम्हारी ओरके यादव शत्रुनकी सैनाकूं अबही नाश करदेइगे ॥ ५ ॥ गद संकर्षणकूं आदि लैके शूर वीर तिन राजानके पराक्रमनकूं नहीं सहि सके घोडा हाथी रथनकूं बाणनसौं नाश करत भये ॥ ६ ॥ रथमें रथी घुडचढे और हाथिनपे बैठे भये योद्धानके पाग सहित हजारन शिर कटिके पृथ्वीपै गिरत भये ॥ ७ ॥ तर-

१ दोहा–पूजि गौरि जबही चली, एक कहत अकुलाय । सुनि सुन्दरि आये हरि, देख धरा फहराय ॥ १ ॥ चौपाई–कंपित गात सकुच मन भारी । छांड सबै हरि संग सिधारी ॥ ज्या वैरागी छाडे गेह । कृष्णचरणसों करे सनेह ॥ २ ॥

२ जो देवीके मढसो रुक्मिणी उतरी सोही आपने एक पाव धरो धरतीमें और पाव धरो रथकी पैंजनीपें तनक बढके एक हाथसों रुक्मिणी हाथ पकर एक हाथको सहारो कमरमें लगाय एक झटकाते रुक्मिणीको रथमें बठाय और दारुकको हुकम दियो सोही हाथी घोडा रथनको फलागतवे जाय वे जाय सूधे द्वारकाकी सडकपे है गये ॥ ३ दोहा–ज्यों बहु झुंडन स्यारके, पैरे सिंह विच आय । अपनो भक्षण लेइकै, चलै निडर घहराय ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वार गदा धनुष्यनसहित हाथ कटिके गिरत भये करभनके तुल्य जंघा कटिके गिरत भई घोडा खच्चर हाथी ऊंट गधा मनुष्य इनके शिर कटिके गिरत भये ॥ ८ ॥ जीतिवेकी इच्छा करनवारे यादवने जब ऐसैं शत्रुसेनाको संहार कियो तब जरासंधसूं आदि लैके राजा विमुख होके जात भये ॥ ९ ॥ स्त्री हर जायवेसो व्याकुल तेजहीन उत्साहरहित मलीनमुख शिशुपाल हैगयो तब सब राजा वाके पास आयके बोलत भये ॥ १० ॥ हे पुरुषनमें सिंह राजा शिशुपाल ! तुम अपने मनकी उदासीनताकूं त्यागो देहधारीनकूं सुख और दुःख सर्वदा नहीं रहे है ॥ ११ ॥ जैसे काठकी पुतरी नचावनवारेकी इच्छा करिके नाचे हैं ऐसेही ईश्वरके आधीन जीवकूं सुखदुःख होई है ॥ १२ ॥ कृष्णते सत्रह वार तेईस अक्षौहिणी सेना लेके युद्धमें हारचो केवल एक वेर जीत्यो तथापि मैं शोच नहीं करूंहूं कदाचित् हर्ष नहीं मानूंहूं दैवके वश कालने समस्त जगत् चलायमान कियो है यह मैं जानूंहूं ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ बडे बडे शूर वीरन यूथनाथनके पतिनकेहू हम पालन करनवारे हैं तथापि थोडे सेनवारे कृष्णपालित यदुवंशिनसो हारगये ॥ १५ ॥ या समय विनके दिन अच्छे हैं तासूं हम शत्रुनको जीतत भये जब हमारे दिन अच्छे आवेंगे तब हम जीतेंगे ॥ १६ ॥ या प्रकार मित्रनने समझायो तब शिशुपाल अपने चाकर टहलुआनकूं संग लेके अपने देशकूं जातभयो मरेनते बाकी बचे राजाहू अपने पुरनकूं जात भये ॥ १७ ॥ कृष्णको वैरी रुक्मी बहिनिको युद्धमेंते हारिके लैजायवेकूं नहीं सहिके एक अक्षौहिणी सेनाकूं संग लेके वही कृष्णके पीछे दौरतभयो ॥ १८ ॥ अमर्षनतासो क्रोधित हैके कवच पहिरलियो धनुष ग्रहण करिके सब राजानके श्रवण करत महाभुज रुक्मी प्रतिज्ञा करत भयो ॥ १९ ॥ युद्धमें कृष्णके मारे विना और रुक्मिणीके बगदाये विना कुंडिनपुरमें न आऊंगो यह मैं सत्य कहूंहूं ॥ २० ॥ रुक्मी या प्रकार कहिके रथमें बैठिके रथमानसूं कहत भयो कि जहां कृष्ण है तहां शीघ्र घोडानकूं हांकिके लै चलो वाके संग मेरो युद्ध होयगो ॥ २१ ॥ बडी दुष्ट बुद्धिवारे गौनको चरावनवारे कृष्णके पराक्रमके मदकूं पैने बाणनसो मारिके अब हरिलेउगो कृष्ण जोरावरी मेरी बहिनकूं केस हरि लेगयो ॥ २२ ॥ खोटी बुद्धिसो रुक्मी ईश्वर श्रीकृष्णचंद्रके बलकूं न जानिके कुत्सित शब्दकूं कहत अकेलो रथकूं दौरायके ठाडो रहि ठाडो रहि ऐसे गोविंद श्रीकृष्णकूं पुकारत भयो ॥ २३ ॥

---

१ दोहा—यादव असुरनसौं लरत, होत महासंग्राम ॥ ठाडे देखत कृष्ण है, युद्ध करत बलराम ॥ १ ॥
यहि प्रकार हुई ओरते, प्रगटचो युद्ध विशाल ॥ जीत भई नँदलालकी, हार गयो शिशुपाल ॥ २ ॥

२ एक पंडितजी एक स्थानमें ठहरे दो चार चेलेभी पास पडे हैं, किसीके यहांका भोजनभी नहीं करे हैं, एक दिन एक लालाके यहां विवाह था, सब पंडितोंको बुलाके जिमाया पीछेसे किसीने कही पीपलके मंदिरमें जो पंडितजी टिके हैं, उन्हें न बुलाया, लालाजी बोले भूल गये अच्छा, उनके यहां परोसे पहुँचा दो एक अच्छी बहंगीमें दो थाल पंचपकवानीसे भर, और हलुआ पुरी भरके लालाजी स्वयं गये पंडितजी बोले कि यह तुम क्या लाये, हम किसी यहांका भोजन नहीं करते, लालाजी बोले आप ले लीजिये, विद्यार्थियोंको दे देना, पंडितजी बोले नहीं विद्यार्थी मनमें दोसने लगे, भले पंडितजी हैं, न आप लें न औरोंको लेने दे, अन्तमें लालाजी परोसे उठा चल दिये, पीछेसे पंडितजी बोले, हलुआ तौ अच्छा भुना था, गरमागरम था, चेले बोले महाराज ! परोसे ले लेते तौ हलुआही खाते शेष हमें बांट देते पंडितजीने कही अच्छा तौ बुला लाओ एक चेला दौडा गया लालाजी नहीं मिले पंडितजीकूं बडा शोच हुआ पूछने लगे कि उसका घर कहां है, किसीने बता दिया संध्या समय जब रात हुई तौ पंडितजी भेष बदलके वैश्योंकी ज्योनारमें जा मिले, किसी वैश्यने पूछा आप कहां रहे हैं किसीके संग आये हैं बोले इकलेही हैं स्वयंही आये हैं उसने इन्हें उठा दिया यह झगडा करने लगे तकरार होनेमें लालाजी आये और पंडितजीको पहचान हाथ जोडकर बोले मैं तौ स्थानमेंही लेके गयाथा यहां कैसे आगये, पंडितजी बोले तृष्णा ले आई जो यह दशा कराई इससे कहे है तृष्णा बलवान् है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दृढ धनुषकूं खैंचिके श्रीकृष्णके तीनं बाण मारतभयो और हे यादवनके कुलकूं दोषके लगावनारे! यहां तू क्षणभर खडो रहि ऐसे कहत भयो ॥ २४ ॥ अरे जैसे होमकी सामग्रीकूं कोआ लै जाय है ऐसे मेरे बहिनकूं चुरायके कहां लिये जाय है बडे मायावी कपटकरिके युद्ध करनहारे तेरे मदको मैं अब हरि लेऊंगो ॥ २५ ॥ मेरे बाणनसूं पीडित हैके जब ताई युद्धमें न सोआ तबताई कन्याकूं त्यागिदो श्रीकृष्णचंद्र मुसिकायके वाके धनुषकूं काटिके छः बाणनसूं रुक्मीको वेधतभये ॥ २६ ॥ आठ बाणकरिके रथके चारों घोडानकूं और दो दो बाणनसूं रथमानकूं वेधतभये तीन बाणन करिके ध्वजा काटत भये इतनेमें रुक्मी और धनुषकूं लैके श्रीकृष्णचंद्रकूं पांच बाणनसूं वेधतभयो ॥ २७ ॥ बाणन करिके ताडित अच्युत श्रीकृष्ण रुक्मीको धनुष काटत भये तब फेर रुक्मी और धनुष लेतभयो ताहूकूं अविनाशी भगवान् काटतभये ॥ २८ ॥ परिघ अर्थात् बेंडो पट्टिश अर्थात् पट्टा, त्रिशूल, ढाल, तरवारि, बरछी, नेजा, और जो जो हथियार रुक्मी लेत भयो ते ते सब श्रीकृष्णचंद्र काटत भये ॥ २९ ॥ ता पीछे रुक्मी रथमेंते कूदिके हाथमें तरवार लैके मारिवेकी इच्छा करिके जैसे पतंग अग्निके सन्मुख जाय ऐसे श्रीकृष्णके सन्मुख जात भयो ॥ ३० ॥ धावमान होते रुक्मी ताकी ढाल तरवारिकूं बाणनते तिल तिल भर काटिके पैनी धारकी तरवारि लैके श्रीकृष्णचंद्र रुक्मीके मारिवेकूं उद्यत होत भये ॥ ३१ ॥ भैयाके मारिवेके उद्यमको देखिके भयसूं व्याकुल हैके पतिव्रता रुक्मिणी पति श्रीकृष्णचंद्रके चरणनमें गिरिके करुणाभरे वचनकूं बोलत भई ॥ ३२ ॥ हे योगके ईश्वर ! हे अप्रमेयात्मन् ! अर्थात् नहीं प्रमाण करवेमें आवै है स्वरूप जिनको हे दैवतानके देव ! हे जगत्के पालन करनवारे श्रीकृष्णचन्द्र ! हे महाभुज ! मेरे भयाकूं मति मारो याको मारिवो तुम्हें योग नहीं हैं ॥ ३३ ॥ श्रीशुकदेव बोले हे राजन् परीक्षित् ! त्राससो कंपायमान अंग शुष्कमुख गदगद कंठ कि जाकी व्याकुलतासो सुवर्णकी माला गिरी जाती ही ऐसी रुक्मिणीकूं श्रीकृष्ण अपने चरणनमें गिरी देखके दयापरवश हैके रुक्मीकूं नहीं मारत भये ॥ ३४ ॥ दुष्ट कर्मनकूं करनहारे रुक्मीकूं वस्त्रते बांधिके मोछन सहित मूंड मूंडिके अभद्ररूप करावत भये तब ताई यादव शूर वीर उद्यम रुक्मीकी सेनाकूं जैसे हाथी कमलिनीनकूं मर्दन करेहैं याप्रकार मर्दन करत भये ॥३५॥ बलदेवजी श्रीकृष्णचन्द्रके पास आयके रुक्मीकूं देखत भये कि रुक्मीको शिर मूंडि गयो मृतककी तुल्य बंध्यो देखिके करुणाकर सामर्थ्यवान् बलदेवजी रुक्मिकूं बन्धनते छोडिके कहत भये ॥ ३६ ॥ हे कृष्ण ! तुमने यह निंदित कर्म कर्यो, हमारी यामें निंदा होयगी शिर मूंछ डाढी मुंडायके विरूप करदेनो यही अपने नातेदारको मारनो है ॥३७॥ अब रुक्मिणीकूं समझावे हैं हे सुशीले ! भैयाके कुरूप है गयो या ईर्षात हमकूं दोष मति लगावै, यह पुरुष अपने कर्मनको फल भोगे है सुख दुःखको देनवारो और कोई नहीं है ॥ ३८ ॥ फेर श्रीकृष्णकूं समझावे हैं अपने नातेदारने मारवे योग्य अपराध करोभी होई तथापि न मारे वाकूं अपराधी करि त्यागि देनो यह पहिलेही अपने दोष करि मरि रह्यो है फेरि वाकूं कहा मारिये ॥ ३९ ॥ फेरि रुक्मिणीकूं समझावै है क्षत्रीनको यही धर्म विधाताने बनायो है जा धर्मसूं भैया भैयाकूं मारि डारे साले श्वशुरनकी कौन बात है यह बडो घोर कर्म है ताते हमारो कहा दोष है ॥४०॥ फेर श्रीकृष्णकूं

---

१ चौपाई—ब्रजवासी हम नहीं अहीर । ऐसे कहिके लीने तीर ॥ बिनके बुझे लिये उनवीन । खैंच धनुष शर छांडे तीन ॥
२ चौपाई-मारो मत भैया है मेरो । छांडो नाथ तुम्हारो चेरो ॥ बंधु भीख प्रभु मोको देऊ । इतनो यश तुम जगमें लेऊ ॥
३ चौ०—बांधो याहि करी बुधि थोरी । यह तुम कृष्ण सगाई तोरी ॥ अरु यदुकुलको लीक लगाई । अब हमसे को कैर सगाई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

समझावे हैं हे कृष्ण ! राज्यके निमित्त पृथ्वीके लिये धनके लिये स्त्रीके लिये प्रतिष्ठाके लिये तेजके लिये और वस्तुके लिये श्रीमदान्ध अभिमानी राजा लडे हैं यह हमकूं उचित नहीं है ॥ ४१ ॥ फोरि रुक्मिणीकूं समझावे हैं, सब प्राणीनमें दुष्ट हृदय अर्थात् सब बातको बुरो विचारनहारे जो शिशुपालादिकको बुरो चाहो हो और अपने भैयाको भलो चाहो हो रुक्मिणी तुमारी विषय बुद्धि है, अज्ञानी पुरुषनकूं जैसे होय अथवा तुम्हारो भ्राता जो सब जीवनको शत्रुरूप है वाको तुम अज्ञानी पुरुषकी समान भलो चाहो हो सो यह तुम्हारी बुद्धिकी भूल है कारण कि वाको भलो चाहवेसो और सम्बंधिनको बुरो होयगो ॥ ४२ ॥ यह हमारो मित्र है यह शत्रु है यह बराबर है, या प्रकार देहाभिमानी पुरुषनकूं देवमाया करिके एक मोह रच्यो है ॥ ४३ ॥ समस्त देहधारीनमें एकही शुद्ध आत्मा है वाहीकूं अज्ञानी पुरुष अनेक रूप कहिके माने हैं, जैसे जलके भरे घटमें एकही सूयको प्रतिबिंब अनेक हैके दीखे है जैसे एक आकाश घटादिकनमें बहुतरूपकरिके दीखे हैं ॥ ४४ ॥ तैसे द्रव्य अर्थात् अधिकभूत प्राण इंद्रिय अध्यात्म गुण आधिदैव इतने स्वरूप आत्मामें अविद्याने रचे हैं, वेही देहधारीनकूं संसारमें भटकावे हैं ॥ ४५ ॥ हे पतिव्रता रुक्मिणी ! मिथ्या देहसों आत्माको संयोग नहीं है, और या देहते वियोगहू नहीं है. देह मिथ्या काहेते है तहां कहे हैं देहकूं प्रकाशता आत्माते है, जैसे सूर्यते चक्षुइंद्रिय रूपकूं प्रकाशे है ॥ ४६ ॥ जन्ममरणादिक छः विकार देहकूं हैं, आत्माकूं कदाचित् नहीं हैं जैसे चंद्रमाकी कला घटे बढे हैं चंद्रमा कदाचित् घटे बढे नहीं है, जैसे अमावसके दिन कलानके घटवेते चंद्रमाको नाश कहिय है, तैसे या आत्माकूं देहके नाशते मरण कहिवेमें आवे है ॥ ४७ ॥ जैसे पुरुष सोवतमें स्वप्नमें अपनेकूं और विषयनके भोगिवेको और फलके सुखकूं मिथ्या भोग करेहै ॥ ताहि प्रकार अज्ञानी पुरुष संसारकूं पावे है ॥ ४८ ॥ हे सुहासिनी ! यातें कारण अज्ञानसों उत्पन्न भये आत्माको शोप और मोह देनहारे शोकको तत्त्वज्ञानसो त्यागन करो और स्वस्थ होउ ॥ ४९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! या प्रकार भगवान् बलदेवजीने समझाई तब सुकुमार रुक्मिणी मनकी उदासीनता त्यागिके बुद्धिते मनकूं सावधान करती भई ॥ ५० ॥ केवल प्राणही जाके बाकी रहे, शत्रुनते छुटो हतसैन्य, गतप्रभाव हीनमनोरथ मुंडितशिर दुष्ट बुद्धि अपनी कुरूपताको स्मरण कर रुक्मिणी श्रीकृष्णकू मारे विना और छोटी बहिनिके बगदाये विना या कुंडिनपुरमें न आऊंगो या प्रतिज्ञाके मारे वहां भोजकटपुर बसायके रहत भयो ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ हे कौरवनकूं आनंदके दैनवारे राजन् परीक्षित ! भगवान् श्रीकृष्ण या प्रकार राजानकूं जीतिक भीष्मककी पुत्री रुक्मिणीकूं द्वारकापुरीमें लायके विधिपूर्वक विवाह करते भये ॥ ५३ ॥ हे राजन् परीक्षित ! यादवनकी पुरी द्वारकामें यादवनके पालन करनवारे श्रीकृष्णमें अनन्यभाववारे मनुष्यनके घरमें मंगल होतेभये ॥ ५४ ॥ आनंदमें भरे उज्ज्वल मणिनके जडाऊ गहने पहरे स्त्री पुरुष चित्र विचित्र वस्त्र धारे दुलहै दुलहिन रुक्मिणी कृष्णके दैवेके लिये सुंदर सुंदर वस्तु लावत भये ॥ ५५ ॥ ऊंची ध्वजा और चित्र विचित्र माला वस्त्र रत्ननकी वंदनमालासूं और द्वारद्वारपै धानकी खीले अंकुर फूल और जलके भरे कलशा और अगरकी धूप दीप इत्यादिकनसूं

---

१ जायते १ अस्ति २ वर्धते ३ विपरिणमते ४ अपक्षीयते ५ नश्यति ६ ॥

२ दोहा-सुन सुंदरि मन समुझिकै, किये जेठकी लाज । सैन माहिं पियसों कहत, रथ हांकहु ब्रजराज ॥ १ ॥ चौपाई-घूंघट और वदनकी करै । मधुर वचन हरिसों उचरै ॥ सन्मुख ठाढे हैं बलदाऊ । अहो कंत रथ वेगि चलाऊ ॥ २ ॥

३ चौपाई-पंडित तहां वेद उच्चरैं । रुक्मिणि सँग हरि भावरि फिरैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वह यादवनकी पुरी द्वारिका सुंदर लगती भई ॥ ५६ ॥ छिरकाव हैगयो है और दरवाजेनपै केरा सुपारीनके जे वृक्ष लगे हैं और जो सुहृद् राजा बुलाये गये हैं तिनके मद झरते हाथिनसों ऊंचे उठाये सुपारी केलानके वृक्षनसों बडी शोभा हैरही है॥ ५७॥ खुशीके मारे दौरे दौरे फिरते द्वारकावासिनके बीचमें कुरुदेश सृंजयदेश कैकयदेश विदर्भदेशके वासी राजाहू विवाहमें मिलके आनंदकूं पावत भये ॥ ५८ ॥ जहां तहां रुक्मिणीको हरिके लै जायवेके चरित्रकूं गायो जातो श्रवण कर राजा और राजानकी कन्या बडो आश्चर्य मानती भई ॥ ५९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! द्वारकापुरीमें पुरवासीनको लक्ष्मीपति श्रीकृष्णचंद्रको रुक्मिणी लक्ष्मीसहित दर्शन करिके आनंद होत भयो ॥ ६० ॥

द्वारकायामभूद्राजन्महामोदः पुरौकसाम् ॥
रुक्मिण्या रमयोपेतं दृष्ट्वा कृष्णं श्रियः पतिम् ॥ ६० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामुत्तरार्धे रुक्मिणीविवाहोत्सवे चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

अध्याय ५५.

श्रीशुक उवाच-कामस्तु वासुदेवांशो दग्धः प्राग्रुद्रमन्युना ॥
देहोपपत्तये भूयस्तमेव प्रत्यपद्यत ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले राजन् परीक्षित् ! वासुदेवको अंश कामदेव रुद्रके क्रोध करिके भस्म है गयो हो वोही फेरि देह पाइवेके लिये वासुदेवमें आवत भयो ॥ १ ॥ वही कामदेव श्रीकृष्णके वीर्यमें है रुक्मिणीके जन्म लैके प्रद्युम्न नाम करिके विख्यात होत भयो जो प्रद्युम्न पिता श्रीकृष्णसों काहू प्रकारनसों न्यून नहीं हो ॥ २ ॥ इच्छापूर्वक रूपकूं धारण करे शंबरासुर अपनो शत्रु जानिके दश दिनके भीतर वा बालककूं हरिके समुद्रमें डारिके घरकूं आवत भयो ॥ ३ ॥ बडो बलवान् मत्स्य वा बालककूं निगलत भयो वा मत्स्यकूं मछरीनकी जीविका करनवारे धीमर बडो जाल डारिके और मछरीनके संग पकरत भये ॥ ४ ॥ वा बडे मत्स्यकूं लायके धीमर शंबरासुरके भेट करत भये शंबरासुरने रसोइयानकूं दियो वे रसोइये लायके छुरीते अद्भुत मत्स्यकूं विदीर्ण करते भये ॥ ५ ॥ ता मछरीके उदरमें बालककूं देखिके रसोइया मायावतीको देतभये, शंकितचित्त मायावतीसूं आयके सब वृत्तान्त नारदजी कहत भये यह बालकको स्वरूप तेरो पति कामदेव है श्रीकृष्णते रुक्मिणीमें उत्पन्न भयो है, या प्रकार उत्पत्ति और शंबरासुर समुद्रमें डारि आयो वहां याकूं मत्स्य निगलिगयो या प्रकार मत्स्यके उदरमें प्रवेश भयो सो सब कहतभये ॥ ६ ॥ वह जो कामदेवकी स्त्री ही रति वाको नाम बडी पतिव्रता ही पति कामदेवको देह दग्ध है गयो सो वाके देहके उत्पन्न हैवेकी प्रतीक्षा कर रही ही ॥ ७ ॥ वह मायावती कामदेवकी स्त्री शंबरासुरने मूंग भात करिवेके निमित्त अपने पास राखीही सो वा बालककूं कामदेव जानिके वा बालकमें स्नेह करती भई ॥ ८ ॥ थोरेसेही दिननमें यौवन अवस्थाको प्राप्त है श्रीकृष्णचंद्रके पुत्र प्रद्युम्न देखनवारी स्त्रीनकूं मोह

१ कि अब तौ विवाह होनौ बाबा काहूको कैसें निश्चय गिनो जाय अब तो जा कन्याको द्वारकानाथ नहीं लैनो विचारेंगे वाहीके विवाहादि होयगे औरनके नहीं ॥

२ शिवजीने जब कामदेवको भस्म किया था तब रतिके विलाप करनेपर उसे समझायकर कहा तू शंबरासुरके यहां जायकै रह वहां तेरा पति तुझे रसोई घरमें मिलैगा तू उसे पाल लीजौ मछलीके उदरमेंसे प्राप्त होगा तबसे रति रूप छिपाये वहां रहती थी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उत्पन्न करते भये ॥ ९ ॥ कमलसे बडे नेत्र, लम्बी भुजा, मनुष्यलोकमें सुंदर, ऐसे पति प्रद्युम्नकूं लाज भरी मुसिक्यानिसूं उठी भ्रुकुटीसूं देखिके, प्रीति करिके सुरतसंबंधी भाव करिके सेवन करती भई ॥ १० ॥ तब श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नजी रतिते बोलत भये हे मातः ! तुम्हारी मति और प्रकार भई है, मातृभावकूं त्यागिके अब स्त्रीकी तुल्य आचरण करो हो ॥ ११ ॥ रति बोली कि तुम नारायणके पुत्र हो, शंबरासुर तुमकूं चुरायके घरमैंतैं लैगयोहो, मैं तुमारी स्त्री हूं रति मेरो नाम है, तुम कामदेव हो ॥ १२ ॥ तुम जब दश दिनकेहू नहीं हे तब तुमकूं शंबरासुर समुद्रमें पटकत भयो, तब मत्स्य तुमकूं निगलत भयो, हे प्रभो ! तुम मत्स्यके पेटमेंते आये हो ॥ १३ ॥ तुम्हारो शत्रु शंबरासुर सैकरन मायानको जाननवारो है या कारणसों असह्य और दुर्जय है ताकूं मोहनादिक मायानसूं मारो ॥ १४ ॥ तुम्हारे खोयजायवेके कारण पुत्रके स्नेहसो अति व्याकुल दीन तुम्हारी माता कुररी अर्थात् टीहरीकी तुल्य शोच करै है, विना बछराकी गौकी तुल्य आतुर है ॥ १५ ॥ या प्रकार मायावती स्त्री कहिके सब मायानकी नाश करनवारी महामाया विद्या महात्मा प्रद्युम्नजीकूं देती भई ॥ १६ ॥ प्रद्युम्नजी शंबरासुरके पास आयके असह्य वचनसूं तिरस्कार करि कलह उत्पन्न करि युद्ध करिवेके अर्थ बुलावतभये ॥ १७ ॥ खोटे वाक्यनसूं तिरस्कार पाय शंबरासुर जैसे ठोकर लगते सर्प फुंकारे है या प्रकार क्रोध करिके लाल नेत्र कर गदा हाथमें लैके निकसत भयो ॥ १८ ॥ शंबरासुर गदाकूं फिरायके महात्मा प्रद्युम्नजीके ऊपर फेंकिके वज्रपातकी तुल्य कठोर शब्दसूं अधिक शब्द करत भयो ॥ १९ ॥ हे राजन् ! भगवान् प्रद्युम्नजी अपने ऊपर चली आवती गदाकूं गदासूं दूरि करिके वैरी शंबरासुरके ऊपर क्रोधकरिके अपनी गदा फैंकत भये ॥ २० ॥ शंबरासुर मयकारीगरके सिखाई दैत्यनकी मायाको आश्रय लैकै आकाशमें जायके श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नजीके ऊपर पत्थरनकी वर्षा करतभयो ॥ २१ ॥ पत्थरनकी वर्षासूं पीडित हैकें रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नजी समस्त मायानकी नाश करनवारी सत्वगुणी अपनी मायाकूं बुलावतभये ॥ २२ ॥ पीछे शंबरासुर, गुह्यक, गंधर्व, पिशाच, सर्प, राक्षसनकी सैकरान माया छोडत भयो, ता समय श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नजी सब मायानको नाश करत भये ॥ २३ ॥ प्रद्युम्नजी पैनी तरवार उठायके कुंडल और किरीट सहित और रक्त डाढी मोछन सहित शंबरासुरको शीश बलकरिके धडते काटतभये ॥ २४ ॥ तब स्तुति करके देवतानने पुष्प वर्षाये और आकाशकी विचरनवारी अपनी स्त्रीने आकाशमार्गमें हैके प्रद्युम्नजीको द्वारकापुरीमें पहुँचाय दियो ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! सैकरान स्त्रियनसों शोभित अंतःपुरमें आकाशते उतरिके जैसे बिजुरी सहित मेघ आवै या प्रकार आवत भये ॥ २६ ॥ वर्षाकी घटानकी तुल्य सांवरे, रेशमी पीले वस्त्रनकूं पहिरे, लम्बी भुजा, अरुण नेत्र, सुंदर मुसिकानि, मनोहर मुख, नीली टेढी अलकावलीसूं शोभायमान मुखारविंदवारे प्रद्युम्नजीकूं देखिके श्रीकृष्ण आये यह मानिके स्त्री लज्जित हैके जहां तहां छिपती भई ॥ २७ ॥ २८ ॥ कछु एक स्त्री कोई विलक्षणता देखिके श्रीकृष्ण नहीं हैं ऐसे जानिके प्रसन्न हैके आश्चर्य मानिक स्त्रीनमें श्रेष्ठ रतिसहित बेटे प्रद्युम्नजीके पास आवतभई ॥ २९ ॥ याके पीछे ता समय स्नेह करिके जाके स्तननमें दूध चुवै, ऐसी नीले कटाक्ष, मनोहर वचनवारी विदर्भ देशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी नष्ट भये अपने पुत्रको स्मरण करती भई ॥ ३० ॥ मनुष्यमें श्रेष्ठ कमलकी तुल्य नेत्रवारो यह बालक कौनको है, और कौनसी स्त्रीने याकू गर्भमें राख्यो है, और याकूं यह कौन स्त्री प्राप्त भई है ॥ ३१ ॥ मेरोहू पुत्र नष्ट है गयो है,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाको सूतिकागृहमेंते कोई लैगयो है, जो कदाचित कहूं जीवत होइगो तौ याहीकी बराबरी होइगो, ऐसोई वाको स्वरूप होयगो ॥ ३२ ॥ शार्ङ्गधनुधारी श्रीकृष्णकी तुल्य रूप याने कैसे पायो है, याको स्वरूप और हाथ पावनकी चालनि बोलनि हँसनि चितवनि सब श्रीकृष्णकी समान है ॥ ३३ ॥ जो बालक मैंने गर्भमें धारण करयो हो निश्चय वह यही है यामें मेरी प्रीति बढी है, और मेरी बांइ भुजाहू फरके है ॥ ३४ ॥ विदर्भदेशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी या प्रकार विचार कर रही ही कि इतनेमें उत्तम यशवारे देवकीके पुत्र श्रीकृष्णचंद्र देवकी वसुदेवजीकूं संग लैके आवत भये ॥ ३५ ॥ पत्नी सहित पुत्र आयो है या बातकूं जनार्दन श्रीकृष्णचंद्र जाने हैं तथापि चुप होत भये इतनेमें नारदजी आयके शंबरासुर हरिके लैगयो समुद्रमें पटकि आयो तब मछरी निगलिगई यासूं आदि लैके सब वृत्तान्त कहत भये ॥ ३६ ॥ कृष्णके अंतःपुरकी स्त्री बडो आश्चर्य श्रवण करिके बहुत कालके पीछे मृतक जैसे बगदके आवै या प्रकार आये प्रद्युम्नजीकी प्रशंसा करती भई ॥ ३७ ॥ देवकी वसुदेव और बलदेव श्रीकृष्ण तथा और स्त्री और रुक्मिणीजी स्त्रीपुरुष प्रद्युम्नसूं मिलिके आनंदकूं प्राप्त होतभये ॥ ३८ ॥ समस्त द्वारकावासी नष्ट भये प्रद्युम्नकूं आये सुनिके अहो बडो आश्चर्य है, मृतककी तुल्य यह बालक आवत भयो ऐसे कहत भये ॥ ३९ ॥ अपने पिता श्रीकृष्णकी समान स्वरूपवारे प्रद्युम्नजी हमारे पुत्र हैं, यह विचार एकांतमें अत्यन्त प्रेमसों प्रद्युम्नजीकी माता रुक्मिणीकूं आदि लैके श्रीकृष्णकी रानी भ्रांत हो प्रद्युम्नजीको सेवन करती भई, वह कछु आश्चर्य नहीं है, क्यों कि लक्ष्मीनिवास श्रीकृष्णके पुत्र कामदेवको स्मरण करतेही मन चलायमान होइ है, साक्षात् मूर्तिमानके दर्शन करते स्त्री सेवन करें तौ यामें कहा कहिनो है ॥ ४० ॥

यं वै मुहुः पितृसरूपनिजेशभावास्तन्मातरो यदभजन्नहरूढभावाः ॥
चित्रं न तत्खलु रमास्पदबिम्बबिम्बे कामे स्मरेऽक्षिविषये किमुतान्यनार्यः ॥ ४० ॥

इति श्रीमन्महाभागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥

अध्याय ५६.

श्रीशुक उवाच-सत्राजितः स्वतनयां कृष्णाय कृतकिल्बिषः ॥
स्यमन्तकेन मणिना स्वयमुद्यम्य दत्तवान् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित! प्रथम अपराध करिकै सत्राजितने अपने पापकी निवृत्तिके अर्थ अपनी कन्याकूं स्यमंतक नाम मणिके साथ श्रीकृष्णचंद्रकूं देवेको उपाय करिके देतभये ॥ १ ॥ राजा परीक्षित बोले हे शुकदेवजी! सत्राजितने श्रीकृष्णचंद्रको कहा अपराध करयो और स्यमंतकमणि कहांते आई, और कौन कारण अपनी कन्या श्रीकृष्णचंद्रकूं दीनी, यह सब हमारे आगे वर्णन करौ ॥ २ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले सत्राजित सूर्यको भक्त परम मित्र हो, तब सूर्य प्रसन्न और संतुष्ट हैके सत्राजितकूं स्यमंतकमणि देतभये ॥ ३ ॥ हे राजन्! सत्राजित मणिकूं कंठमें पहिरिके सूर्यके प्रकाशित तुल्य प्रकाशमान हैके द्वारकापुरीमें आयो तो समय वाके तेजकूं सत्राजित आवै है यह जानिवेमें नहीं आवत भयो ॥ ४ ॥ तेजकी चकाचौंधीसूं दृष्टि चौंध जायवेसों मनुष्य सत्राजितकूं दूरिते आवत देखिके राजा उग्रसेनकी सभामें चौपरि खेलते श्रीकृष्णसूं यह सूर्य आवै है ऐसे शंकित हैके कहते भये ॥ ५ ॥ हे नारायण! हे शंख

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चक्र गदा धारण करनवारे ! हे दामोदर ! हे कमलनेत्र ! हे गोविंद ! हे यादवनकूं आनंदके देनवारे ! तुमकूं नमस्कार है ॥ ६ ॥ हे जगत्के पति ! तुमारे दर्शनके लिये यह सूर्य आवै है, तीक्ष्ण किरणके समूहते मनुष्यनके नेत्रनकूं चुरावत आवै है ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! त्रिलोकीके देवतानमें श्रेष्ठ देवताहू तुम्हारे मार्गकूं ढूंढे है; यादवनमें तुमकूं छिप्यो जानिके देखिवेके लिये सूर्य आवै है ॥ ८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! कमलनेत्र श्रीकृष्णचंद्र अज्ञानी पुरुषनको वचन सुनिके हँसिके बोलत भये यह सूर्यदेव नहीं है मणिकरिके प्रकाशमान सत्राजित आवै है ॥ ९ ॥ फिर सत्राजित अपने घरमें मांगलिक कर्म करवाय देवताके मंदिरमें ब्राह्मणनसो पूजा कराय मणिकूं धरावत भयो ॥ १० ॥ हे प्रभो राजन् परीक्षित् ! वह मणि प्रतिदिन चार मनको भार आठ भार सुवर्ण उगलैही और जहां वह मणि होइ ता देशमें दुर्भिक्ष न परे; और अकाल मृत्यु तथा अरिष्ट अर्थात् अमंगल नहीं होइ सर्प नहीं काटे मनुष्यनके देहमें दुःख नहीं होय और अशुभ नहीं होय है मायावी पुरुष वा देशमें नहीं वसे है ॥ ११ ॥ एक समय यादवनके राजा उग्रसेनके लिये श्रीकृष्णचंद्रने मणि मांगी तौ सत्राजित लोभके वश है के मणिकूं नहीं देतो भयो श्रीकृष्णकूं नाहीं कैसे करूं यह न विचारत भयो ॥१२॥ बडी प्रकाशवारी मणिकूं एक समय सत्राजितको भैया प्रसेन कंठमें पहिरके घोडापै चढिकै वनमें शिकार खेलवेकूं जातभयो ॥१३॥ एक सिंह घोडा सहित प्रसेनकूं मारिके मणिकूं लैके पर्वतमें जान लगो वाही समय मणि लैवेकी इच्छा कर जाम्बवान् ऋच्छने वाको मारडारो ॥ १४ ॥ जाम्बवान् अपने बिलमें जायके मणिको पुत्रीको खिलौना करत भयो सत्राजित अपने भैया प्रसेनकूं शिकार खेलके वनमेंते नहीं आयो देखिके शोच करत भयो ॥१५॥ मणि कंठमें पहिरके मेरो भैया वनमें गयोहो और या मणिपै कृष्णको दांत हो याते बहुधा यह जान पडै है भैयाकूं कृष्णने मार्यो या प्रकार सत्राजितके मुखते श्रवण करिकै सम्पूर्ण मनुष्य कान कानमें कहतभये ॥ १६ ॥ भगवान् श्रीकृष्ण या दुर्यशरूप कलंकको लगो श्रवण करिके द्वारिकावासीनकूं संग लैके प्रसेनके खोज ढूंढिवेकूं जाते भये ॥ १७ ॥ वनमें सिंहसो मारे प्रसेन और घोडेकूं देखिके और आगे पर्वतके ऊपर रीछसो मारे सिंहकूं समस्त द्वारकावासी मनुष्य देखते भये ॥ १८ ॥ अंधेरी बडी भयानक ऋक्षराज जाम्बवान्की गुफामें सब प्रजाकूं बाहर ठाढे करिके श्रीकृष्णचंद्र आपही भीतर जातभये ॥ १९ ॥ तहां बिलमें बालकको खेलिवेकूं खिलौना करी मणिकूं देखके मणि लैवेके मनोरथसो बालकके पास ठाढे होते भये ॥ २० ॥ प्रथम कभू न देखवेके कारण मनुष्य श्रीकृष्णकूं देखिके डरपैकीसी नांई धाइ पुकारति भई, बलीनमें बली जाम्बवान् ऋक्ष धायकी पुकार श्रवण करिके क्रोधित होय सम्मुख दौरिके आवत भयो ॥ २१ ॥ क्रोधी जाम्बवान् श्रीकृष्णके प्रभावकूं नहीं जानिके और साधारण पुरुष मानिके अपने स्वामी श्रीकृष्णके संग युद्ध करत भयो ॥ २२ ॥ परस्पर जीतिवेकी इच्छासों श्रीकृष्ण और जाम्बवान्को शस्त्र पत्थर वृक्ष भुजासूं बडो भयानक युद्ध होत भयो जैसे मांसके लिये दो सिकरापक्षी लडे हैं ॥ २३ ॥ वज्रपातकी तुल्य कठोर मुष्टिसूं खेदरहित अट्ठाईस

---

१ सत्राजितने स्त्रीसें कही उसने सबसे कही, घरकी बात काहू स्त्रीसे नहीं कहै एक बनिया हो सो दिशा गये दोनों घोटीके बीचमें नीचे कौआकोपर परोहो देखके यह वहम भयो कि यह हमारे पेटमें निकस्यो है सो घर आय अपनी घरवारी तें कही कि आज हमारे पेटमेंसे कौआको पर निकस्यो, जानै कहा रोग भयो, वानै टहलनीसों कही टहलनी औरके घर जाय बोली कि फलानै साहजीके पेटमेंसें पांच कौआ निकसे यह हमने आखौं देखी, वा स्त्रीनै औरतें कहीं कि उनके पचास कौआ निकसो करै हैं, वानै पांच सौ कहे कहां ताई कहैं जब लाला बाहर निकसे तो लोग कहने लगे जब वह लाला दिशाको जायहै तो इनके पेटमेंसे दो २ हजार कौआ निकसै हैं स्त्रीसे बात कहेमें यह दोष है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दिनराति तक विनको परस्पर युद्ध होतो भयो ॥ २४ ॥ जब कृष्णचंद्रकी मुष्टिनके परिवेते वाके सब अंग शिथिल हैगये बल घटगयो पसीना आयगये तब जांबवान् बडो आश्चर्य मानिके बोलतो भयो ॥ २५ ॥ सम्पूर्ण प्राणीनके प्राणमें जो बल है, और सहोबल अर्थात् इन्द्रिय हृदय देह इत्यादिकनको बल तुम हो यह मैं जानूंहुं, विष्णु भगवान् पुराणपुरुष कृपालु सबके ईश्वर तुम हो ॥ २६ ॥ विश्वके सृजनवारे ब्रह्मादिकके तुम निश्चय निमित्तकारण हो, और उत्पत्तिके योग्य पदार्थके उपादानकारण हो और सबके प्रेरणावारेनके ईश्वर तुम कालरूप हो, तथा आत्मा जीवके उत्कृष्ट आत्मा हो ॥ २७ ॥ विष्णु पुराण हौ, याहीते मेरे इष्टदेव रघुनाथ हौ, जिन रघुनाथजीके कछु एक क्रोधसौं भूके कटाक्षपातसौं मगर और बडे बडे ग्राह दुःखित हैगये, तब समुद्रने मार्ग दियो, और जिन रामचन्द्रने अपनो यश प्रगट करिवेके लिये पुल बांध्यो, लंका जराई, बाणकरिके राक्षस रावणके शिर काटिके पृथ्वीमें डारे सो तुम मेरे स्वामी रघुनाथ हौ यह मैं जानूं हूं ॥ २८ ॥ जब ऐसे जाम्बवान्को ज्ञान भयो तब देवकीके पुत्र अच्युत भगवान् श्रीकृष्णचंद्र वासौं बोलतेभये ॥ २९ ॥ कमलनेत्र श्रीकृष्णचंद्र सुखके देनवारे अपने हाथको परम कृपा करिके भक्त जांबवान्के ऊपर धरिके प्रेमगर्भित वाणीसौं बोलते भये ॥ ३० ॥ हे ऋच्छनके राजा जांबवान् ! हम मणि लैवेके कारण तेरे यहां बिलमें आये हैं, मिथ्या कलंक हमकूं लग्यो है वा कलंकको ये मणि लैजायके दूरि करेंगे ॥ ३१ ॥ यह वचन सुनतेही जाम्बवान् बडे आनंदपूर्वक अपनी कन्या जांबवती मणिसहित पूजा करिवेके निमित्त श्रीकृष्णचंद्रकूं देतभयो ॥ ३२ ॥ जो द्वारकावासी मनुष्य प्रभुके संग गयेहे वे जांबवान्के बिलमें धसे श्रीकृष्णको निकसिवो नहीं देखिके बारह दिन प्रतीक्षा करिके दुःखित है द्वारकापुरीमें आवते भये ॥ ३३ ॥ बिलमेंते, श्रीकृष्णचंद्र नहीं निकसे यह बात श्रवण करिके देवकी रुक्मिणी वसुदेव और सुहृज्जन तथा ज्ञातिके मनुष्य सम्पूर्ण शोच करत भये ॥ ३४ ॥ संपूर्ण द्वारकावासी दुःखित हैके सत्राजितकूं गारी देते श्रीकृष्णचंद्रकी प्राप्तिके अर्थ माया दुर्गादेवीकी पूजा करतेभये ॥ ३५ ॥ देवीकी पूजा करिवेते श्रीकृष्णचंद्रकूं देखोगे या प्रकार द्वारकावासिनकूं देवीने आशीर्वाद दियो, तब सिद्धमनोरथ श्रीकृष्णचंद्र स्त्रीकूं लैके द्वारकावासीनकूं आनंद देते प्रगट होतेभये ॥ ३६ ॥ जैसे कोई मृतक पुरुष फेरि बगदके आवे हैं, ऐसे मणिकूं पहिरिके स्त्रीकूं संग लैके आये, श्रीकृष्णचंद्रकूं प्राप्त हैके समस्त द्वारकावासीनके बडो आनंद होत भयो ॥ ३७ ॥ सभामें राजा उग्रसेनके पास सत्राजितकूं बुलायके जाम्बवान् ऋच्छपैंते मणि लाये हैं यह कहिके भगवान् श्रीकृष्णचंद्र सत्राजितकूं मणि देते भये ॥ ३८ ॥ सत्राजित मणिकूं लैके अतिलज्जित हैकें मुख नीचो करिके अपने पापते पश्चात्ताप करत घरसूं जातभयो ॥ ३९ ॥ बलवान् श्रीकृष्णसूं विरोध परेसूं व्याकुल हैके सत्राजित अपने पूर्व अपराधकूं रात्र दिन स्मरण करत अपने पापकूं कैसे दूर करूं और कैसे अच्युत भगवान् प्रसन्न होय ऐसे विचार करत भयो ॥ ४० ॥ या कौन कर्म करेते मेरो भलो होई, मैंने विना विचारे श्रीकृष्णकूं दोष लगाय दीनो मैं कृपण मंदबुद्धि हूं द्रव्यको लोभी हूं, अब मोकूं प्राणी बुरो न कहै, ऐसो कोई कार्य करूंगो, यह विचार करत भयो ॥ ४१ ॥ या प्रकार विचार करिके अब उपाय निश्चय करे है, श्रीकृष्णचंद्रकूं मैं अपनी कन्या देउगो और पीछेते भेटमें मणि देऊंगो, यही सुंदर उपाय है, और तरह मेरो अपराध दूरि न होयगो ॥ ४२ ॥ या प्रकार बुद्धिसूं निश्चय करिके सत्राजित मंगलरूप अपनी कन्या और मणिकूं आपही उपाय करिके श्रीकृष्णकू देत भयो ॥ ४३ ॥ सुंदर स्वभाव रूप उदारतादि गुणयुक्त सत्यभामाकूं भगवान् श्रीकृष्णचंद्र विधिपूर्वक व्याहत भये जा सत्यभामाको पहले कृत-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वर्मादिक कहँ यादव मांग चुकेहे ॥ ४४ ॥ हे राजन् पराक्षित् ! तव श्रीकृष्णचंद्रने सत्राजितसों कही हमकूं मणि नहीं चाहिये, तुम सूर्यके भक्त हो तुम्हारेही पास मणि रहैगी, याको जो सुवर्ण होय ताय हमारे भिजवाय दियो करो, तुमारे पुत्र नहीं हैं तुमारो जो धन है सो हमारोही है यह भगवान्को गूढ अभिप्राय है ॥ ४५ ॥

भगवानाह न मणिं प्रतीच्छामो वयं नृप ॥
तवास्तां देवभक्तस्य वयं च फलभागिनः ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० उ० स्यमन्तकमणिहरणो नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

अध्याय ५७.

श्रीशुक उवाच-विज्ञातार्थोऽपि गोविन्दो दग्धानाकर्ण्य पाण्डवान् ॥
कुन्तीं च कुल्यकरणे सहरामो ययौ कुरून् ॥ १ ॥

पांडव लाक्षागृहते बिलमें होयके बाहर निकस गए या प्रकार जाने हैं तथापि पांडवनकूं जरे सुनिके और कुन्तिकूं जरी सुनिके कुलोचित व्यवहार करिवेके लिये अर्थात् मोकान दैवेके लिये बलदेवजीकूं संग लैके श्रीकृष्णचंद्र कुरुदेशनकूं जातेभये ॥ १ ॥ भीष्म पितामह विदुरसहित कृपाचार्य गांधारी द्रोणाचार्यसूं मिलिके समान दुःखसों कृष्ण बलदेव हाय ! पांडव जरिगये बडो कष्ट भयो या प्रकार दोउ भैया कहते भये ॥ २ ॥ हे राजन् ! कछु एक दिननके पश्चात् अक्रूर और कृतवर्मा ये दोनों अंतर पाय शतधन्वाते बोलत भये कि रे शतधन्वा तू सत्राजितते मणि क्यों न छुडाय लेय है ॥ ३ ॥ जा सत्राजितनें अपनी कन्यारत्न देनी स्वीकार करिके फिर हमकूं त्यागिके कृष्णकूं व्याहि दीनी. वह सत्राजित भैया प्रसेनके पीछे क्यो नहीं जाय अर्थात् मरे क्यों नहीं ॥ ४ ॥ या प्रकार अक्रूर और कृतवर्माके बहिकायवेसों बुद्धिहीन और क्षीण जीवन है पापी असाधु शतधन्वा शय्यापै सोवते सत्राजितको शिर काटतभयो ॥ ५ ॥ स्त्री अनाथकी तुल्य पुकारि पुकारिके रुदन करन लगी कसाई जैसे पशुनकूं मारे ऐसे शतधन्वा सत्राजितकूं मारिके जात भयो ॥ ६ ॥ अपने पिता सत्राजितकूं मरचो देखिके अहो पिता अहो पिता हा मरी या प्रकार मोहित हैके सत्यभामा विलाप करतभई ॥ ७ ॥ मृतक पिताकी देहकूं तेलकी कोठीमें राखिके सत्यभामा हस्तिनापुरकूं जाति भई सत्राजितकूं शतधन्वाने मारचो यह बात श्रीकृष्णचंद्रने जानिलीनी तथापि वह मेरो पिता शतधन्वाने मारचो यह बात दुःखित हैके कहंत भई ॥ ८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ईश्वर श्रीकृष्ण बलदेव सत्राजितको मरण श्रवण करिके मनुष्यलीलामें आयके अहो हमकूं बडो कष्ट है या प्रकार कहिके आंखिनमेंते आंशू लायके विलाप करतभये ॥ ९ ॥ सत्यभामा और भैया बलदेवजीकूं संग लैके श्रीकृष्णचंद्र हस्तिनापुरते द्वारकापुरीमें आयके शतधन्वाके मारिवेको और वाते मणि लैवेको प्रारंभ करतभये ॥ १० ॥ श्रीकृष्णने मेरे मारिवेको उपाय कियो है यह बात शतधन्वा जानिके प्राण बचायवेके लिये भयभीत हैके कृतवर्म्माते सहायके निमित्त कहत भयो तब वह कृतवर्म्मा बोलत भयो ॥ ११ ॥

---

१ चौ०-देखतेही उठि बोले हरि । घर है कुशल क्षेम सुन्दरि ॥ सतभामा कहि जोरो हाथ । तुम विन छुशल कहां यदुनाथ ॥ २ प्र०-कृष्ण क्यों रोये ? उत्तर-सत्यभामा जो कृष्णके पास आई ही सो ये समझके आईही कि मेरे गुरुपुत्रको जिवायो हो सो मेरे पिताकोहू जिवाय देयगे सोही भगवान् हाय ससुरजी ऐसे कहिके रोये सो ये जताई कि जाको जगत रोय लेय वाको तो में जिवाय दैउ और जाको में रोयचुकों वाको कोन जिवावे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ईश्वर श्रीकृष्ण बलदेवको अपराध मैं न करूंगो कृष्ण बलदेवकों अपराध करिके कौनको कल्याण होयगो ॥ १२ ॥ या कृष्णते द्वेष करिके कंस लक्ष्मीते भ्रष्ट हैके भैयानसहित मरिगयो और जरासंध सत्रहवार युद्धमें हारिके अन्तमें विरथ हैके गयो ॥ १३ ॥ कृतवर्माने शतधन्वाते मनैं करदीनी तब अक्रूरते सहाय करिवेके लिये कहत भयो तब अक्रूरहू बोलत भयो ईश्वर कृष्णके पराक्रमकूं जानिके कौन पुरुष उनते विरोध करैगो ॥ १४ ॥ जो ईश्वर लीला करिके या विश्वकी उत्पत्ति नाश करै है और मायासूं मोहित हैके वाकी चेष्टाकूं ब्रह्मादिक नहीं जाने है ॥ १५ ॥ जो सात वर्षकी अवस्थामें श्रीकृष्णचंद्र एक हाथसूं गोवर्धन पर्वतकूं उखारिके जैसे बालक छतोनाकूं उठाय लेय हैं ऐसे उठावत भये ॥१६॥ अद्भुतकर्मा भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके अर्थ नमस्कार है अनंत सबके आदिकारण निर्विकार सबके आत्माकूं नमस्कार है ॥ १७ ॥ या प्रकार अक्रूरने जब नाहीं करी तब शतधन्वा मणिकूं अक्रूरके पास धरिके चारसों कोस चलनहारे घोडापै चढिके भाजतो भयो ॥१८॥ हे राजन्! राम और श्रीकृष्ण गरुडध्वजावारे रथमें सवार हैके शीघ्रगामी घोडानकरिके श्वशुरके मारनवारे शतधन्वाके पीछे दौरते भये ॥ १९ ॥ शतयोजनते अधिक न चलनवारो घोडा मिथिलापुरीके बागमें गिरचों, तब वाय त्यागिके भयभीत हो पांवप्यादो भाजत भयो, और श्रीकृष्णहू क्रोधको करिके पीछे दौरतभये ॥ २० ॥ पांव प्यादे शतधन्वाके पीछे पांव प्यादे श्रीकृष्ण भगवान् दौरिके पकरिके तीक्ष्ण धारके चक्रसूं शतधन्वाको शिर काटिके वस्त्रनमें मणिकूं ढूंढत भये ॥ २१ ॥ मणिकूं न पाय श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवजीके पास आयके कहतभये देखो शतधन्वाकूं वृथाही मारचो वापै मणि नहीं निकसी ॥ २२ ॥ ताके पीछे बलदेवजी कहतभये शतधन्वा काहू पुरुषके पास मणिकूं धरि आयो है, वा पुरुषकूं ढूंढो, और तुम द्वारकाकूं जाओ ॥२३॥ (श्रीकृष्णचन्द्र सब बातकूं जाने हैं मणिकूं मोते छिपाव कियो है यह मानिके बलदेवजी मनमें क्रोधकरके बोलतभये, याको अभिप्राय यह है कि द्रव्य ऐसो निषिद्ध पदार्थ है याके लिए श्रीकृष्ण बलदेवजीको मन बिगर गयो, तौ मनुष्यनकी कहा कथा है) मेरो अतिप्रिय विदेह देशको राजा बहुलाश्व है ताय देखिवेकूं जाऊंगो हे राजन् परीक्षित्! या प्रकार श्रीकृष्णते कहिके यादवनकूं आनन्द देनवारे बलदेवजी मिथिलापुरीमें प्रवेश करत भये ॥ २४ ॥ प्रसन्नमन होय मिथिलापुरीको राजा बलदेवजीकूं आयो देखिके शीघ्र उठिके पूजन करिवे योग्य बलदेवजीकी पूजनकी सामग्रीनसूं पूजा करत भयो, मिथिलापुरीमें समर्थ बलदेवजी कितनेक वर्ष वास करतभये ॥ २५ ॥ प्रीतियुक्त महात्मा जनकसों सत्कार पाय धृतराष्ट्रको पुत्र दुर्योधन तहां आय बलदेवजीसूं गदा चलायवो सीखत भयो ॥ २६ ॥ प्रिय कार्यके करनवारे समर्थ केशव भगवान् द्वारकापुरीमें आयके शतधन्वाको नाश और मणिकी अप्राप्ति प्यारी सत्यभामासूं कहत भये ॥ २७ ॥ ताके पीछे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अपने सुहृदनकूं संग लैके मृतक सत्राजितकी परलोककी साधन क्रिया करावतभये ॥ २८ ॥ सत्राजिततें मणिके हरि लेवेमें शिक्षा करनवारे अक्रूर और कृतवर्मा शतधन्वाको मरण सुनिके श्रीकृष्णसूं भयभीत होके द्वारकापुरीते भजगये ॥ २९ ॥ द्वारकाते अक्रूरकूं भिजवाय दियो ता समय द्वारकावासीनकूं देवता और मनुष्यनकों शरीरके मनके ताप और अरिष्ट वारंवार द्वारकापुरीमें होतभये ॥३०॥ हे राजन् परीक्षित्! कितने एक ऋषि जिनने प्रथम श्रीकृष्णकी महिमा कही है वे श्रीकृष्णके माहात्म्यकूं भूलकरें ऐसो कहै हैं, कि मुनिनके निवास

---

१ देखो यह धन ऐसी बडी बलाय है जो बलदेवजीकेहू भीतर यह भ्रम भयो कि मणि कृष्णको मिली तो है पन मोसो छिपावे है सो मन बिगर गयो यासों ऐसे कही ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीकृष्णके विद्यमान रहते अरिष्ट कैसे है सके हैं ॥ ३१ ॥ या प्रकार दूषित कारिके फेर और ऋषिनको मत कहैं हैं कोई कोई कहन लगे कि एक समय जब इन्द्र न वर्षो तब काशीको राजा अपनी कन्या गांदिनीकूं पुरीमें प्राप्तभये श्वफल्ककूं देत भयो, तब काशीके देशनमें मेघ वर्षत भयो ॥ ३२ ॥ पिता श्वफल्ककी तुल्य प्रभाववारे अक्रूर जहां जहां रहे, तहां तहां इन्द्र वर्षा करे, और वा देशमें प्राणीनकूं खेद नहीं होय है, मरी नहीं परै हैं ॥ ३३ ॥ या प्रकार बूढेनको वचन सुनिके केवल अक्रूर रही यहांते गयो सो नहीं मणिहू गई यह बात श्रवण कारि निश्चय कारिके अक्रूरकूं काशीते बुलायके श्रीकृष्णचंद्र बोलत भये ॥ ३४ ॥ अक्रूरजीकी पूजा करिके हे काका अक्रूर ! या प्रकार सम्बोधन दै-के प्यारी प्यारी बात कहिके सब विश्वके जाननवारे श्रीकृष्णचन्द्र अक्रूरके मनकी जानिके मुसि-क्यायके बोलत भये ॥ ३५ ॥ हे दानपति अक्रूर! शतधन्वा स्यमन्तकमणि तुमारे पास धरिगयो है सो तुमारे पास है यह हम पहिलेतेही जाने हैं ॥ ३६ ॥ सत्राजितके पुत्र नहीं याते वाकूं पिंड जलदान देके ऋण चुकायके शेष धन रहेगो ताय वाकी कन्याके पुत्र लेयगे यह शास्त्रकी आज्ञा है ॥ ३७ ॥ हे अक्रूर ! तुम हमते कदाचित् न कहो तथापि हम जाने हैं मणि औरपें नहीं रहिसके तुम्हारे पास हे कारण कि तुम सुन्दर व्रत धारण करो हो तहां अक्रूरजी कहै हैं हमारे पास है तुमें कहा प्रयोजन है तब श्रीकृष्ण कहै हैं बडे भैया बलदेवजी या मणिके पीछे मेरो विश्वास नहीं करे हैं ॥ ३८ ॥ श्रीकृष्णचंद्र कहै हैं बडभागी अक्रूर ! तुम मणि दिखायके बंधुनकूं शांति करो मेरे पास मणि नहीं है यह मति कहो जो कदाचित् तुमारे पास मणि न होती तो सुवर्णकी वेदी बनाय बनायके अखण्ड यज्ञ कहांते काशीमें जायके करते ॥ ३९ ॥ या प्रकार साम भेदन करिके समझायवेसों श्वफल्कके पुत्र अक्रूर वस्त्रसे ढकी सूर्यके समान तेजवारी मणि लैके श्रीकृष्णचंद्रकूं देतभयो ॥ ४० ॥ श्रीकृष्ण-चन्द्र स्यमंतक मणि अक्रूरजीते लैके जातिके भैया बंधुनकूं दिखायके मणि कृष्णने लीनी यह अप-नेको मिथ्याकलंक लग्यो ताई दूर करिके फेर प्रभु श्रीकृष्णचन्द्र अक्रूरजीकूं वह मणि समर्पण करते भये ॥ ४१ ॥ ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रको कह्यो पुरुषनके दुःखको हरनवारो सुन्दर मंगलरूप स्यमन्तक मणिके प्रसंगकूं जो कोई पुरुष पढै श्रवण करै, स्मरण करै, वह कुत्सित पापकूं दूर करिके कल्याणकूं पावै है ॥ ४२ ॥

यस्त्वेतद्भगवत ईश्वरस्य विष्णोर्वीर्याढ्यं वृजिनहरं सुमङ्गलं च ॥
आख्यानं पठति शृणोत्यनुस्मरेद्वा दुष्कीर्तिं दुरितमपोह्य याति शान्तिम् ॥४२॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० उ० स्यमन्तकोपाख्याने सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

अध्याय ५८.

श्रीशुक उवाच-एकदा पाण्डवान् द्रष्टुं प्रतीतान् पुरुषोत्तमः ॥
इन्द्रप्रस्थं गतः श्रीमान्युयुधानादिभिर्वृतः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! पहिले लाक्षागृहमें जर गयो यह श्रवण करीही फेर द्रुपदके घरमें सबने देखे पाण्डवनकूं देखिवेके लिये श्रीकृष्णचन्द्र सात्यकी आदिके साथ इन्द्रप्रस्थमें

---

१ प्र०-अक्रूरजीका पिताकी समान माहात्म्य क्यौं था ? उ०-इनके पिता बडे तपस्वी थे पुत्र आत्माही होता है इस कारण गुण इनमें आये, दूसरे भक्त, तीसरे इनके पास मणि इससे इसका प्रभाव अधिक था ॥

२ दोहा-जो भादोंके चौथको, चांद निहारे कोय । मणिप्रसंग श्रवणन करै, ताहि कलंक न होय ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाते भये ॥ १ ॥ सबके ईश्वर श्रीकृष्णचन्द्रकूं आये देखिके जैसे प्राणके आयेते इंद्रिय चैतन्य होय है ऐसे वीर पाण्डव उठत भये ॥ २ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रके मिलिवेमें अंगसंग होवेसों पापरहित होके वीर पाण्डव स्नेहभरी मुसिक्यानसहित श्रीकृष्णचन्द्रको मुखारविंद देखिके आनन्दकूं प्राप्तभये ॥ ३ ॥ श्रीकृष्णचन्द्र बडे युधिष्ठिर और भीमसेनके चरणनमें नमस्कार करिके और बराबरीके अर्जुनसूं मिलतभये, पीछै छोटे नकुल और सहदेव श्रीकृष्णचन्द्रकूं प्रणाम करतभये ॥ ४ ॥ श्रेष्ठ आसनपै बैठे श्रीकृष्णचन्द्रकूं पांडवनकी स्त्री नई विवाहिता निंदारहित लज्जायमान द्रौपदी होले होले आयके प्रणाम करति भई ॥ ५ ॥ वैसेही सात्यकीकोहू पांडवनने आयके वंदन कियो और आसनपें बैठायो तथा और मनुष्यननेहू सन्मान कियो ॥ ६ ॥ फेरि श्रीकृष्णचंद्र कुंतीके पास आयके प्रणाम करते भये, कुंती स्नेहभरी चितवनसूं आलिंगन करती भई, श्रीकृष्णचन्द्र पिताकी बहिन कुंतीते कुशल पूछते भये श्रीकृष्णके बंधुनकी कुशल कुंतीने पूछी ॥ ७ ॥ प्रेमकी व्याकुलतासो गद्गद कंठ हैके नेत्रनमें आंशु भर कुंती कौरवनके दिये कष्टकी सुधि करिके भक्तनके क्लेश दूरि करनवारे श्रीकृष्णचन्द्रसूं बोलती भई ॥ ८ ॥ हे कृष्ण ! जातिके बन्धु हमको स्मरण करिके जा समय तुमने मेरे भैया अक्रूरकूं खबरिके लिये भेज्यो है ताही समय हमारी कुशल होत भई और तुमने हम सनाथ करे ॥ ९ ॥ समस्त विश्वके हितकारी आत्मा तुम यह अपनो है यह परायो है या भ्रमसों रहित तथापि जो कोई तुम्हारे सर्वदा स्मरण करे है तिनके हृदयमें स्थित हैके सब क्लेशनकूं दूरि करो हो ॥ १० ॥ राजा युधिष्ठिर बोले हैं हे ब्रह्मादिकनके ईश्वर ! हमने कहा कल्याण कियो यह मैं नहीं जानूं हूं जो तुम योगेश्वरनके देखिवेमें नहीं आओ सो हम विषयासक्तनकूं दिखाई दिये ॥ ११ ॥ या प्रकार राजा युधिष्ठिरके प्रार्थना करेपै श्रीकृष्णचन्द्र इन्द्रप्रस्थनिवासीनके नेत्रनकूं आनन्द देत वर्षाके महीना वास करते भये ॥ १२ ॥ एक समय शूरवीर शत्रुनके मारनवारो अर्जुन कपिध्वजावारे रथमें चढिके गांडिव धनुषकूं और बाणनसो भर्‌यो तरकस लैके कवच पहरिके बहुत सर्प और मृगवारे बडे वनमें श्रीकृष्णके संग शिकार खेलवेकूं जातभयो ॥ १३ ॥ १४ ॥ ता वनमें व्याघ्र शूकर भैंसा रुरु अर्थात् हरिण शरभ अर्थात् आठ पांवके जीव रौंज गेंडा मृग खरहा स्याही इनकूं बाणनते वेधते भये ॥ १५ ॥ अमावास्या पूर्णमासी ये पर्व जब आयके प्राप्त भये तब टहलुआ पवित्र पशु राजा युधिष्ठिरके पास लावत भये, शिकार खेलिवेमें श्रमसों प्यासो हैके अर्जुन यमुनापैं जातभयो ॥ १६ ॥ महारथी श्रीकृष्ण और अर्जुन यमुनाके तटपै आयके निर्मल जलको आचमन करिके पीके जब ठाढे भये तब सुन्दर एक कन्याको बैठी देखते भये ॥ १७ ॥ सुन्दर जंघा, दांत, मनोहर मुख, ऐसी प्रमदा कन्याके पास श्रीकृष्णको भेजो अर्जुन जायकै पूछत भयो ॥ १८ ॥ हे सुश्रोणि अर्थात् सुन्दर कटिवारी ! तुम कौन हो और कौनकी पुत्री हो कहांते आई हो, तुमारे मनमें कहा करिवेकी है, तुमारी पति करिवेकी इच्छा है, ऐसो मैं जानूं हूं हे सुन्दरी ! सब बात कहो ॥ १९ ॥ कालिन्दी कहे हैं मैं सूर्यदेवकी पुत्री हूं, वरके देनवारे विष्णुकूं पति करिवेकी इच्छा करिके बडो तप करूं हूं ॥ २० ॥ हे वीर ! सुन्दर श्रीकृष्णचन्द्रके विना औरकूं मैं पति नहीं करूंगी अनाथके आश्रय मुकुंद भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न होउ ॥ २१ ॥ मैं कालिंदी नाम करिके विख्यात हूं और मेरे पिता सूर्यने यमुना जलमें मेरो स्थान बनाय दियो यावत्पर्यंत श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन न होयगो तबतक वास करूंगी ॥ २२ ॥ निद्रा जीतनवारे अर्जुनने वासुदेव श्रीकृष्णचंद्रके पास आयके कालिंदीके वचन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहे कालिन्दी मेरे निमित्त तप करे है या बातकूं जानिके श्रीकृष्णचन्द्र कालिंदीको अपने रथमें बैठायके धर्मराजा युधिष्ठिरके पास आवत भये ॥ २३ ॥ ता समय पांडवनकी आज्ञासो श्रीकृष्णचन्द्र देवतानके कारीगर विश्वकर्मासूं कहिके पांडवनके लिये चित्र विचित्र अद्भुत नगर निर्माण करावत भये ॥ २४ ॥ अपने पांडवनके प्रिय करिवेके लिये इन्द्रप्रस्थमें वास करनहारे श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् इन्द्रको खांडववन अग्निकूं देवेके लिये अर्जुनके रथमान् होत भये ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! जब अग्निकूं खांडववन दियो तब अग्नि प्रसन्न हैके अर्जुनकूं धनुष और श्वेतरंगके घोडा तीरनके भरे तरकस, और हथ्यारनसूं भेदन न होय ऐसो कवच देत भयो ॥ २६ ॥ अग्निते बचायो मयनाम दत्य सभा बनायके अर्जुनको देत भयो, जा सभामें जलमें स्थल और स्थलमें जल या प्रकार दुर्योधनकी दृष्टिमें भ्रम होत भयो ॥ २७ ॥ राजा युधिष्ठिरसो आज्ञा पाय सुहृदनमें प्रशंसा पाय श्रीकृष्णचन्द्र सात्यकी आदि यादवनकूं संग लैके फेर द्वारकापुरीमें आवते भये ॥ २८ ॥ जाके पीछे सुंदर पवित्र ऋतु नक्षत्रमें कालिंदीकूं व्याहत भये, परम मंगलरूप श्रीकृष्णचंद्र अपने यादवनकूं परमानंद देतभये ॥ २९ ॥ उज्जैनपुरीके रहनहारे राजा विंद और अनुविंदकी बहननें श्रीकृष्णको स्वयम्वरमें वरवेकी इच्छा करी परन्तु विन दोनों भाइनने निषेध कियो क्योंकि वे दुर्योधनके वशमें है ॥ ३० ॥ हे राजन् ! वा वसुदेवकी बहिनि राजाधिदेवीकी पुत्री मित्रविंदाकूं श्रीकृष्णचंद्र सब राजानके देखत बल करिके हर लावत भये ॥ ३१ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! अयोध्यापुरीको पालन करनवारो बडो धर्मात्मा राजा नग्नजित् नामकरिके होत भयो, ता राजाके प्रकाशमान सत्या नामकी कन्या भई वाहीको नाग्नजितीहू कहे हैं ॥ ३२ ॥ राजाने ऐसी प्रतिज्ञा करी कि जे वीरपुरुषकी गंधकोहू नहीं सहसकै ऐसे दुर्धर्ष कठोर सींगवारे महाकठोर सात बलीवर्दनको एक साथही जीतलेय जाको मैं अपनी कन्या व्याहूंगो, अनेक राजा मार खाय फिरगये पर कोई जीत न सको ॥ ३३ ॥ भक्तनके पति भगवान् जो सात बैलनकूं एक संग नाथें, वह या कन्याकूं व्याहैं, यह बातकूं श्रवण करिके बडी सैन्यकूं संग लैके अयोध्यापुरीमें जातभये ॥ ३४ ॥ अयोध्यापुरीको राजा नग्नजित प्रसन्न हैके उठिक भले आये या प्रकार प्रशंसा करिके सुन्दर आसन बिछाय चरण धोइके बडी पूजाकी सामग्रीनसूं पूजन करत भयो ॥ ३५ ॥ राजा नग्नजितकी कन्या लक्ष्मीपति श्रीकृष्णको आयो देख अपने योग्य वर जान इनकी इच्छा करतीभई और कहती भई कि जो मैंने व्रतन करिक मनमें धार्‌यो तौ यह श्रीकृष्णचंद्र मेरो पति होऊ और मेरे मनोरथकूं सत्य करौ ॥ ३६ ॥ जिन भगवान्‌के चरणकमलकी रजकूं लक्ष्मी और कमलजन्मा ब्रह्मा तथा महादेव, और लोकपाल समस्त शिरपै धारण करे है और जो अपनी बांधी भई मर्यादा पालवेकी इच्छासों समयपें लीलासों नृसिंहादि शरीर धारण करै हैं वह भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न होउ ॥ ३७ ॥ पूजन करिके फिरि नग्नजित राजा कहत भये हे नारायण ! हे जगतके पति आत्माके आनंदकरिके पूर्ण ! तुम्हारो मैं तुच्छ कहा पूजन करूं ॥ ३८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे कौरवनके कुलकूं आनन्द देनवारे राजा परीक्षित् ! आसनपै बैठि करि भगवान् श्रीकृष्णचंद्र मेघकी तुल्य गंभीर वाणीसो मुसिकाते राजा नग्नजितते बोलते भये ॥ ३९ ॥ हे राजन् नग्नजित ! निजधर्मवर्ती क्षत्रीकूं याचना करिवो

---

१ प्र०—फूफीकी कन्या कृष्णने क्यों विवाही ? उत्तर—जितनी पटरानी कृष्णकी हैं यह सब लक्ष्मीका अंश हैं इस कारण दोष नहीं, दूसरे यह राज्यरीति है राज्यलक्ष्मी बलके आश्रित होती है, तीसरे दक्षिणको कुछ रीति है, चौथे अधिपतिका सब कुछ है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कविनने मने करचो है तथापि स्नेह करिके हम तुमारी कन्याकूं मांगे हैं, कछु मोलके देनवारे हम नहीं हैं ॥४०॥ राजा नग्नजित बोले हे नाथ ! समस्त गुण जिनमें रहें और लक्ष्मी सर्वदा जिनके अंगमें वास करे ऐसे तुमते अधिक या संसारमें कौन वर है जाकूं कन्या देउंगो ॥४१॥ हे यादवनमें श्रेष्ठ ! पुरुषनके पराक्रमकी परीक्षा लेवेके निमित्त और कन्याके वरकी परीक्षाके लिये हमने प्रथम एक प्रतिज्ञा करी है ॥ ४२ ॥ हे वीर कृष्ण ! इन शिक्षारहित और पकडवेमें न आवे ऐसे बैलनको जो जीतै वह कन्या वरे यह बात सुन बहुतसे राजपुत्र यहां आये और इनसों शरीर जरजरित करायके गये ॥४३॥ हे यदुनन्दन ! हे लक्ष्मीके पति ! जो तुम इन बैलनकूं अपने वश करि लेउ तो मेरी कन्याकूं सम्मत वर हो ॥ ४४ ॥ समथ श्रीकृष्णचंद्र या प्रकार राजा नग्नजितको वचन श्रवण करिके फेंटि बांधिके अपने सात रूप धरिके लीलाही करिके बैलनकूं अपने पकरंत भये ॥ ४५ ॥ गर्व और शक्ति नाश करिकै बिन बैलनकूं शूरवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचंद्र रस्सानते बांधिके जैसे बालक काष्टके बैलकूं खेंचे हैं ऐसे खेंचत भये ॥ ४६ ॥ ताके पीछे आश्चर्यमान राजा नग्नजित प्रसन्न हैकै श्रीकृष्णचंद्रकूं अपनी कन्या देत भयो, समर्थ भगवान् श्रीकृष्ण अपनी समान कन्याकूं विधिपूर्वक व्याहत भये ॥४७॥ राजा नग्नजितकी रानी अपनी कन्याकूं प्यारो पति पायक परमानंद पावत भई, और बडो उत्सव भयो ॥ ४८ ॥ शंख भेरी नगाडे बजत भये और गीत बाजे बजावत भये, ब्राह्मणनके आशीर्वाद होत भये, सुन्दर वस्त्र मालानसूं शोभायमान नरनारी प्रसन्न होत भये ॥ ४९ ॥ सामर्थ्यमान राजा नग्नजित दाइजेमें दश हजार गौ देत भयो, धुकधुकी कंठमें धारे सुन्दर वस्त्रनकूं पहिरे तीन हजार दासी देत भयो ॥ ५० ॥ नौ हजार हाथी देत भयो, और हाथीनसूं सौगुणे अर्थात् नौ लाख रथ और रथनसूं सौगुणे अर्थात् नौ करोड घोडा देत भयो और घोडानसूं सौगुणे अर्थात् एक अर्ब मनुष्य देत भयो ॥ ५१ ॥ स्नेहसो व्याप्त हृदय कोशलदेशको राजा नग्नजित अपनी कन्यासहित श्रीकृष्णचंद्रकूं रथमें बैठारिके बडी सैनाकूं संग लैके पहुँचावत भयो ॥ ५२ ॥ यादवनने और बैलनने पहिले राजानको मद दूर करदियो हो तथापि असहनतासो वे राजा कृष्ण या कन्याकूं लियो जाय है यह बात श्रवण करिके मार्गमें आयके रोकतभये ॥ ५३ ॥ बंधु कृष्णचंद्रके प्यारको करनवारो गांडीवधनुषधारी अर्जुन बाणनकूं चलामनवाले राजानकूं सिंह जैसे छोटे छोटे जानवर मृगनकूं भजावै ऐसे भजावत भयो ॥ ५४ ॥ यादवनमें श्रेष्ठ देवकीके पुत्र भगवान् दाइजेकूं लैके द्वारकापुरीमें आयके सत्या रानीके संग रमण करत भये ॥ ५५ ॥ वसुदेवकी बहिन श्रुतिकीर्तिकी पुत्री केकयदेशोत्पन्न भद्राकूं संतर्दनादि भैयानके देवेपें श्रीकृष्णचंद्र व्याहत भये ॥ ५६ ॥ सुन्दर लक्षणवाली मद्रदेशके राजाकी कन्या लक्ष्मणाकू गरुड जैसे अमृतकूं लावै है या प्रकार अकेले श्रीकृष्णचंद्र हरिके लावत भये ॥ ५७ ॥ भौमासुरके बंदीखानेमेंते छुडाई भई सुन्दर रूपवती हजारन स्त्री श्रीकृष्णचंद्रके औरहू होती भई ॥ ५८ ॥

अन्याश्चैवंविधा भार्याः कृष्णस्यासन्सहस्रशः ॥
भौमं हत्वा तन्निरोधादाहृताश्चारुदर्शनाः ॥ ५८ ॥

इति श्रीम० भा० टी० दशमस्कन्धे उत्तरार्धे अष्टमहिष्युद्वाहो नामाष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

१ दोहा-फेंट बांधि तहां हरि गये, सात रूप निज धार । श्रीयदुपति व्रजराजने, नाथे एकहि वार ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ५९.

राजोवाच-यथा हतो भगवता भौमो येन च ताः स्त्रियः ॥
निरुद्धा एतदाचक्ष्व विक्रमं शार्ङ्गधन्वनः ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले हे शुकदेवजी ! श्रीकृष्णचंद्र भौमासुरकूं मारचो और जैसे भौमासुरने वे स्त्री रोकीही यह समस्त कथा और शार्ङ्गधनुषधारी भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको पराक्रम हमारे आगे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! जब सुरनाथ इन्द्रने श्रीकृष्णसों आयके कहि हे भगवन् ! मेरो छत्र अदितिके कुंडल भौमासुर हरके लेगयोहै और अमराद्रि सुमेरुमें मणिपर्वत स्थानमें वानें अधिकार कर लियो है और हमें बडो दुःखी करदियो है यह इन्द्रकी वार्ता सुनिके श्रीकृष्णचन्द्र गरुडके ऊपर चढिके सत्यभामा रानीकूं संग लेके प्राग्ज्योतिष नामके भौमासुरके नगरमें जातेभये ॥ २ ॥ अब भौमासुरके नगरको वर्णन करे है जहां पर्वतके, शस्त्रनके, जलके, अग्निके और पवनके किले हैं, जिनमें कोई जाय न सकै ऐसो भयानक गढ मुरदैत्यकी हजारन दृढ भयानक फांसीनसूं चारों ओरसूं व्याप्त है ॥ ३ ॥ श्रीकृष्णचंद्र गदाते पर्वत तोरत भये, और बाणनसूं शस्त्रनके गढ काटतभये, चक्रसूं अग्निकूं बुझावत, जलकू शोषत, पवनकूं रोकत भये, ऐसेही खड्गसों मुरदैत्यके फांसनकूं काटतभये ॥ ४ ॥ और शंख बजायके शब्द करिके अनेक यंत्र काट गेरे और शूरनके मन हृदय थरथर कांपतभये, गदाके धारणवारे श्रीकृष्णचंद्र बडी गदासूं भौमासुरके नगरको कोट तोरतभये ॥ ५ ॥ प्रलयकालके वज्रके शब्दकी तुल्य भयंकर शब्दवारे पांचजन्यशंखके शब्द सुनिके पांच शिरवारो मुर दैत्य जो जलके भीतर सोवै हो सो उठतभयो ॥ ६ ॥ अति खोटी दृष्टि प्रलयकालके सूर्य और अग्निकी तुल्य तेज भयंकर रूपवारो मुर दैत्य त्रिशूल हाथमें लैके पाचों मुख फारिके त्रिलोकीकूं मानो निगलि जायगो ऐसो दौरिके श्रीकृष्णचन्द्रके सन्मुख आवतभयो, जैसे गरुड सर्पके सन्मुख जाय ॥ ७ ॥ मुर दैत्य त्रिशूलकूं फिरायके बडे जोरते गरुडके ऊपर चलायके पांचों मुख फारिके शब्द करत भयो, वो बडो शब्द अंतरिक्ष द्यावापृथिवी और समस्त दिशानमें फैलिके ब्रह्मांडकूं व्याप्त करत भयो ॥ ८ ॥ ता समय श्रीकृष्णचन्द्र गरुडके ऊपर त्रिशूल आवतो देखके बाणनत तीन टूक करतभये, और मुरदैत्यके पांचों मुखनमें पांच बाण मारतभये, तब मुर दैत्यहू क्रोधकरिके श्रीकृष्णचन्द्रके ऊपर गदा चलावतभयो ॥ ९ ॥ गदके बडे भैया श्रीकृष्ण युद्धमें चली आवती मुरदैत्यकी गदाकों अपनी गदासूं हजारन टूक करतभये, ता समय भुजानकूं उठायके दौरिके सन्मुख आये मुरदैत्यके शिरनकू श्रीकृष्णचंद्र लीलाही करिके चक्रसूं काटत भये ॥ १० ॥ शिरके कटवेसो जैसे इन्द्रके वज्रसों पर्वतको शृंग कटके गिरे है तैसे शिर कटवेसों प्राणरहित हैके वह दैत्य जलमें गिरगयो तब ताके सात पुत्र पिताके वधसो दुःखी हैके बदलो लैवेके निमित्त आये ॥ ११ ॥ ताम्र अंतरिक्ष श्रवण विभावसु वसु नभस्वान् अरुण यह सब पीठ नाम सेनापतिको आगे कर भौमासुरकी प्रेरणासों शस्त्र लेके रणभूमिमें आये ॥ १२ ॥ रोष करिके भयानक मुरदैत्यके पुत्र आयके श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर क्रोध करिके बाण तरवार गदा बर्छी गुर्ज त्रिशूल

---

१ सत्यभामाको संग लेके यासों गये कि भौमासुरको वरदान हो कि जब भूमि तेरी मैया जब अपने मुखसों तेरे मारवेकी आज्ञा देईगी तब तोको मारौंगो सो सत्यभामा भूदेवीको अवतार है इनके हुकुमसों भौमको मारौंगो अथवा स्वर्गसो पारिजातको वृक्ष लामनेहै सो इंद्रको छत्र अदितिके कुंडल देवे जानो है है तब सत्यभामा संग होयगी तो याद दिवाय देयगी तो पारिजातहू लेतो आउगो यासो सत्या संग लेगये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इत्यादिक शस्त्र चलावत भये तब बडे पराक्रमी भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अपने बाणनते तिनके चलाये भये शस्त्रनको तिल तिलकी बराबर टूक करिके काटत भये ॥ १३ ॥ पीठ आदिक विन मुरदैत्यके पुत्रनके शिर, ऊरु, भुजा, पांव, कवच काटिके मारिके यमलोक पहुँचावत भये, पृथ्वीको पुत्र नरकासुर श्रीकृष्णचन्द्रके चक्रबाणनसूं अपने सेनापतिनको नाश देख बडो क्रोधित हैके समुद्रसो प्रगट भये मद झरते हाथिनकी सैनाको लैके बाहर निकसो ॥ १४ ॥ सूर्यके ऊपर जैसे बिजली सहित मेघ होय ऐसे गरुडके ऊपर सत्यभामासहित श्रीकृष्णचन्द्रको बैठो देखिके भौमासुर बरछी चलावत भयो और सम्पूर्ण योधाहूं एक संग वेधत भये ॥ १५ ॥ गदके बडे भैया श्रीकृष्ण चित्र विचित्र पंखवारे बाणनसूं भौमासुरकी सैनाकूं काटतभये, क्षणमात्रमें तीखे बाणनसों भुजा ऊरु गर्दन व अंग काटे हाथी घोडानको मार छिन्न भिन्न कर दीनी ॥ १६ ॥ हे कुरुवंशकूं आनन्द देनेवारे राजा परीक्षित् ! जो जो शस्त्र योद्धानने चलाये, तिन सबकूं श्रीकृष्णचन्द्र तीक्ष्ण तीन तीन बाणनसूं एक एककों काटतभये ॥ १७ ॥ श्रीकृष्णको अपने ऊपर चढाये भये गरुडनेहू अपनी चोंच और पंखनसों हाथिनको मारके व्याकुल करदियो ॥ १८ ॥ और वे पीडित हो पुरमें प्रवेश करगये नरकासुर रणमें युद्ध करतभयो गरुडसो पीडित अपनी सैन्यकूं भाजी देखिके ॥ १९ ॥ भौमासुर गरुडके बरछी मारत भयो जा बर्छीने गरुडकी गति रोक दीनीही जैसें हाथी मालाके प्रहारको कछु नहीं गिनै है ऐसेही गरुडजी वाके प्रहारसो तनकहू व्यथित नहीं भये ॥ २० ॥ और भौमासुरने अपनो उद्यम वृथा देख श्रीकृष्णके मारवेकूं त्रिशूल लियो और वा शूलके छोडवेसो पहलेही श्रीकृष्णचन्द्रने अपने चक्रसो हाथीपें बैठेभये भौमासुरको शिर काटडारो ॥ २१ ॥ जब कुण्डलन सहित मनोहर किरीटसूं शोभायमान भौमासुरको शिर पृथ्वीपें गिरके शोभित भयो वा समय दैत्य हाहाकार और ऋषि देवता धन्य धन्य कहते श्रीकृष्णचन्द्रके ऊपर फूलनको वर्षा कर स्तुति करत भये ॥ २२ ॥ भौमासुरके मरे पीछे पृथ्वी श्रीकृष्णके पास आयके तपायमान सुवर्णमें जडे रत्ननसों प्रकाशमान कुण्डल वैजयंती माला और प्रचेताको छत्र तथा महामणि देत भई ॥ २३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वा समय पृथ्वी विश्वके ईश्वर देवतानमें श्रेष्ठ ब्रह्मादिकसो पूजित श्रीकृष्णचन्द्रको हाथ जोर नम्र हैके भक्तिपूर्वक बुद्धी लगायके स्तुति करतिभई ॥ २४ ॥ पृथ्वी बोली हे देवनके देव ईश्वर ! हे शंख चक्र गदाके धारण करनेवारे ! तुमकूं नमस्कार है, हे परमात्मन् ! भक्तनकी रक्षाके लिये साकार रूप धारण करनहारे तुमकूं नमस्कार है ॥ २५ ॥ कमल जिनकी नाभिमें है कमलकी माला धारण करनहारे, कमलनेत्र, और कमलकी तुल्य चरणवारे तुमकूं नमस्कार है ॥ २६ ॥ भगवान् वासुदेव अर्थात् समस्त प्राणी जिनमें वास करें विष्णु अर्थात् सबके हृदयमें व्यापक, संपूर्ण कार्यनके आदिकारण, पूर्णज्ञानस्वरूप तुमकूं नमस्कार है ॥२७॥ आप अजन्मा हौ, या विश्वके उत्पत्तिकर्त्ता हौ; ब्रह्म हौ, याहीते अजन्मा हौ, अनन्तशक्ति हौ, याहीते विश्वके उत्पत्तिकर्त्ता हौ, तहां शंका है क्योंजी पित्रादिक पुत्रादिकके उत्पत्ति कर्त्ता हैं, और पित्रादिकनके उत्पत्ति कर्त्ता विनके पूर्व पुरुष हैं, और पूर्व पुरुषनके उत्पत्तिकर्त्ता पंचभूत है, और पंचभूतनके अपने कर्मद्वारा जीव है, मैं कहा करूं हूं तहां पृथ्वी कहै है हे कार्यकारणरूप ! हे समस्त प्राणीनके आत्मा ! हे परमात्मा ! तुम सर्वरूप हौ तुमकूं नमस्कार है ॥ २८ ॥ यहां एक शंका है कि तीन गुणनकरिके विश्वको उत्पन्न पालन संहार करै है और तीनों गुण मायाके हैं और मायाको क्षोभ करनवारो पुरुष है, और काल निमित्त है यह बात

---

१ पृथिवीने पुत्रके निमित्त तपस्या करी थी तब देवताओंने प्रसन्न हो पुत्र होनेका वर दिया जब भौमासुर उत्पन्न हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रसिद्ध है मैं कहां करूं हूं तहां पृथ्वी कहै है तुम आवरणरहित हो, हे समर्थ ! जा समय विश्वकूं रच्यो चाहो हो तब तुम रजोगुणकूं धारण करो हो और जगत्के पति ! जगत्के पालन करिवेकूं सत्वगुणकूं धारण करो हो तथा नाश करिवेके निमित्त तमोगुणकूं धारण करोहो और कालरूप तुम हो. पुरुषरूप तुम हो. और सबते न्यारे हो याते सबके उत्पन्नकर्त्ता तुमही हो ॥ २९ ॥ हे ईश ! मैं (पृथ्वी) जल, ज्योति, पवन, आकाश, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, देवता, मन, इंद्रिय, अहंकार, तत्त्व, ये समस्त, स्थावर, जंगम आपके अद्वितीय स्वरूपमें भ्रमसे भासे है ॥ ३० ॥ हे शरणागतके दुःखनके हरनवारे ! भौमासुरको पुत्र भगदत्त भयभीत हैके तुमारे चरणकमलमें आयके परयो है तुम याको पालन करो और समस्त क्लेशनको हरनवारो अपनो हस्तकमल याके शिरपै राखो ॥ ३१ ॥ भक्तिपूर्वक नम्र हैके पृथ्वीने वाणीकरि या प्रकार स्तुति करी तब भगवान् अभय दैके सर्वसंपत्तियुक्त भौमासुरके घरमें जाते भये ॥ ३२ ॥ श्रीकृष्ण तहां जायके सोलह हजार कन्या भौमासुरके महलमें देखतभये जिन्हें भौमासुर पराक्रमसो हर लायो हो[1] ॥ ३३ ॥ वीर श्रीकृष्णचन्द्रको आये देखिके संपूर्ण स्त्री मोहित हैके दैवसो प्राप्त मनोवांछित पति श्रीकृष्णचन्द्रकूं मनसूं वर करतीभई ॥ ३४ ॥ यह मेरो पति होउ यह विधाता अनुमोदन करो या प्रकार समस्त कन्या भावकरिके श्रीकृष्णचन्द्रमें अपनो २ मन लगावतभई ॥ ३५ ॥ श्रीकृष्ण विन्हें सुन्दर वस्त्र पहराय पालकीनमें बैठाय द्वारकापुरीमें भिजवावत भये बडे खजाने और रथ घोडे द्रव्यहू भिजवावतभये ॥ ३६ ॥ चार चार दांतके श्वेत रंगके शीघ्रगामी चौंसठि ऐरावतकुलके हाथी श्रीकृष्णचन्द्र भिजवावतभये ॥ ३७ ॥ तब भगवान्ने इन्द्रलोकमें जायके अदितिकूं कुण्डल दिये, तब इन्द्राणीसहित इन्द्रने सत्यभामासहित श्रीकृष्णचन्द्रकी पूजा करी ॥ ३८ ॥ सत्यभामानें श्रीकृष्णचन्द्रसूं कही तब कल्पवृक्षकूं उखार गरुडके ऊपर धरिके इन्द्रसहित देवतानकूं जीतिके द्वारकापुरीमें लावतभये ॥३९॥ सत्यभामाके महलके बगीचाकूं शोभायमान करवेके अर्थ कल्पवृक्ष तहांके बगीचामें लगावत भये ताकी गन्ध सूंघिवेके निमित्त स्वर्गसूं चलिके भौंरा आवतभये ॥ ४० ॥ प्रथम तो इन्द्रने कार्यसिद्धिके निमित्त अपने किरीटनके अग्रभाग प्रभुके चरणमें लगायके नमस्कार करिके सम्पूर्ण अर्थके सिद्ध करनेवारे श्रीकृष्णचंद्रकी विनती करि और कार्यसिद्धि हैवेपें भगवान्के साथ विरोध कियो अहो देवतानपें बडो क्रोध आवै है धनिकताकोही धिक्कार है ॥ ४१ ॥ याके पीछे एकही मुहूर्तमें सोलह हजार एकसौ आठ महलनमें सर्वत्र परिपूर्ण भगवान् श्रीकृष्णचंद्र जितनी स्त्री हैं उतनेही स्वरूप धरिके सबनकूं यथायोग्य व्याहत भये ॥ ४२ ॥ जिनके घरकी समान अथवा अधिक कोईभी घर नहीं ऐसे विन रानिनके घरनमें सदा रहते और पूर्ण आनंदस्वरूप रहतेहू औरनकी समान गृहस्थ धर्म करते अचिंत्य कार्य कर्ता अविनाशी भगवान् लक्ष्मीकी अंशरूप स्त्रियनके साथ रमण करते हे ॥ ४३ ॥ ब्रह्मादिक देवता जिनके मार्गकूं नहीं जानते, विन लक्ष्मीपति श्रीकृष्णकूं पति पाय वे स्त्री विनको निरन्तर बढीभई प्रीति और स्नेहभरे हास्यपूर्वक अवलोकन करती हीं और आनंदपूर्वक नवीन संगम भाषण और लज्जाको

---

१ प्र०—नरकासुरने इन कन्याओंको भोगा क्यों नहीं ? उत्तर—बीस सहस्र एकत्र कर उनके संग विवाह करनेकी इच्छासे रख छोडा था इस कारण विवाह न किया था । और एक समय नारद मिले हे तब याने नारदसो पूछी कि नारद ! मैं परमेश्वर हैं जाउ ऐसो कोउ उपाय है, तब नारदने कही कि ये तो सूधो उपाय है कि जाके सोलह हजार एकसौ आठ १६१०८ रानी होय वोही भगवान् है जाय वाही दिनसों याने कन्यानको एकत्र कीनी सो १६१०० तो याने इकट्ठी करलीनीही और आठनकी फिकिरमें और हो सोही प्रभुने आठ व्याह और किये बाकी १६१०० याके यहांसो ले आये ये कथा पुराणांतरमें प्रसिद्ध है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सेवन करती हों ॥ ४४ ॥ एक एक रानीके पास सौ सौ दासी हाथ जोरे ठाडी हैं, तथापि सन्मुख जायके लिवाय लामनो आसन बिछायवो, सुन्दर पूजा करनी चरण धोइवो, वीरी लगावनो, चरण दाबनो, पंखा करनो, अत्तर अरगजा लगाइवो, पुष्प चढामने, केशनको सुधारिवो, शय्या बिछामनो, स्नान करवानो, भेटको धरिवो, इन करके श्रीकृष्णचन्द्रकी सेवा आपही करती भई ॥ ४५ ॥

प्रत्युद्गमासनवराहणपादशौचताम्बूलविश्रमणवीजनगन्धमाल्यैः ॥
केशप्रसारशयनस्नपनोपहार्यैर्दासीशता अपि विभोर्विदधुः स्म दास्यम् ॥४५॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उ० एकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

अध्याय ६०.

श्रीशुक उवाच–कर्हिचित्सुखमासीनं स्वतल्पस्थं जगद्गुरुम् ॥
पतिं पर्यचरद्भैष्मी व्यजनेन सखीजनैः ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! काहू समय एक शय्यापै सुखपूर्वक बैठे जगत्के गुरु अपने पति श्रीकृष्णचंद्रकूं भीष्मकराजाकी पुत्री रुक्मिणी सखिनसहित पंखा करिके सेवन करती भई ॥ १ ॥ जो अजन्मा भगवान् लीला करिके या विश्वकूं उत्पन्न पालन संहार करें हैं, वे भगवान् अपनी मर्यादानकी रक्षा करिवेके निमित्त यादवनमें आयके प्रकट होत भये ॥ २ ॥ अब घर और शय्याको वर्णन करे हैं, मंदिरमें प्रकाशमान मोतिनकी झालर लटकतीही शोभायमान छात बंधीही मणिनके दीपक जगमगाय रहेहे ॥ ३ ॥ चमेलीकी मालाके फूलनमें भौंरानके समूह गूंजें है, और झारी झरोकानमें हैके आई चन्द्रमाकी निर्मल किरणें आय रही हैं ॥ ४ ॥ कल्पवृक्षके वनकी सुगंधि लिये उद्यानसो सुगंधि सनी पवन आतीही हे महाराज ! झरोखा जालिनमें अगरके धूपको धुआं निकल रह्यो हो ॥ ५ ॥ ता महलके भीतर शय्या बिछी तापै दूधके फेनकी तुल्य कोमल श्वेत बिछौना बिछो है ताके ऊपर सुखपूर्वक बैठे जगत्के ईश्वर श्रीकृष्णचन्द्रको रुक्मिणी सेवन करती भई ॥ ६ ॥ हीराकी डांडीवारो चमर सखीके हाथमेंते लैके वासों पवन करती रुक्मिणी भगवान् श्रीकृष्णको सेवन करती भई ॥ ७ ॥ रुक्मिणी श्रीकृष्णके पास मणिनके जडाऊ नूपुरके झनकार शब्द करती सुन्दर लगती भई कैसी रुक्मिणी है ताको वर्णन करे हैं अंगुरीनमें मुंदरीनकूं पहिरे और पहुँचेमें चूरी कंकण, हाथमें जडाऊ डांडीको चमर लिये सारीके छोरसूं ढके कुचनकी केशरसो रंगे अरुण मोतीनको हार, और कटिमें पहिरे बडे मोलकी कोंधनीसूं शोभायमान ॥ ८ ॥ लीला करिके देह धारण करनहारे श्रीकृष्णचंद्रकेही योग्य जाको रूप है और कृष्णके विना जाको कोई आश्रय नहीं है ऐसी रूपवती लक्ष्मीकी समान रुक्मिणीको देखके कि जाके अलकें कुंडल धुकधुकीयुक्त कंठसो शोभायमान मुखमें मंद मुसकानरूप अमृत झलक रह्यो है वाके देख प्रसन्न होके श्रीकृष्ण बोले ॥ ९ ॥ श्रीभगवान् बोले हे राजपुत्री ! लोकपालकी समान ऐश्वर्यवारे महानुभाव लक्ष्मीमान रूप उदारता और बलसों बढे भए राजा तुम्हारी चाहना करते हे ॥ १० ॥ और कामदेवके मदसो व्याकुल शिशुपालादि राजा तुम्हें लैवेकूं आये जिन्हें तुम्हारे पिता भ्राता देहू चुके हे फिर तुमने कैसे विने छोडके हमें जो तुम्हारी बराबरके नहीं हैं विनको वरण कियो ॥ ११ ॥ हे सुंदर भ्रुकुटीवारी ! बहुधा राजानसो डरके हमने समुद्रकी शरण लीनी है

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और बलवान्के साथ विरोध हैवेसोही हमने राजगद्दी त्यागनकर राखी है ॥ १२ ॥ हे सुभ्रु ! जिनके आचरणकी खबर नहीं और जो स्त्रीनके कहेमें न चले ऐसे पुरुषनको जे स्त्री हाथ पकरे हैं वे स्त्री बहुधा दुःखित होय है ॥ १३ ॥ और हम निष्किंचन जनकूं प्यारे हैं ता कारण हे सुमध्यमे रुक्मिणी ! धनवारे पुरुष हम दरिद्री है जांयगे या भयते बहुधा मेरो भजन नहीं करैं है ॥ १४ ॥ जिनके बराबरको धन हैं बराबरको जन्म है बराबरिको ऐश्वर्य है और बराबरिकी रूप जाति है और सदा जिनको एकसो निर्वाह होय है तिनकोही विवाह और मित्रता होय है, छोटे बडेकी कदाचित् नहीं होय है ॥ १५ ॥ हे विदर्भदेशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी ! तुमने कछु विचार नहीं कियो और बराबरीकेनको व्याह होय है यह बात जाने विना गुणहीन हमको भिक्षुकनके सराहवेसो भूलके वर लियो ॥ १६ ॥ अबहूं तुम अपनी बराबरीके क्षत्री को हाथ पकरिलेउ, जा क्षत्रीते या लोक परलोकके मनोरथकूं पावोगी ॥ १७ ॥ रुक्मिणी कहे हैं कि तुम क्यों ले आये तहां श्रीकृष्णचंद्र कहे है हे वामोरू ! शिशुपाल शाल्व जरासंध दंतवक्र आदि राजा सब हमसों शत्रुता करै हैं, तेरो बडो भैया रुक्मीहू वैर करै है ॥ १८ ॥ हे मंगलरूपिणी ! पराक्रमके मदसो अंधे गर्वयंत राजानके गर्व दूरि करवेके निमित्त और दुष्टनको तेज हरण करवेके निमित्त तुमको हरके लाये हे ॥ १९ ॥ हम घरमें देहमें उदासीन हैं, हमारे स्त्रीकी पुत्रकी चाहना नहीं हैं, आत्माके आनंदसूं सदा पूर्ण रहे हैं, ज्योतिकी तुल्य साक्षी मात्र क्रियारहित वर्तें हैं ॥ २० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! रुक्मिणीके मनके हरनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र अपनेसो कबहूं न्यारी नहीं होवेवारी और अपनेकूं बहुत वल्लभा माननेहारी रुक्मिणीते इतनो कहिके चुप होत भये ॥ २१ ॥ या प्रकार त्रिलोकीके ईश्वरनके पालन करनवारे अपने प्यारे श्रीकृष्णचंद्रको कबहूं न सुन्यो ऐसो कुप्यारो वचन श्रवण करिके हृदयसों कंपित हैके रुक्मिणी देवी भयभीत हैके रुदन करत बडी चिंताकूं पावति भई ॥ २२ ॥ नख करिके अरुण कांतिवारे सुकुमार चरणसूं पृथ्वी लिखन लगी, अंजनसूं श्याम आंसूं आंखिनमेंतें वह चले तिनसूं केशरयुक्त स्तननकूं भिजोवती नीचेकूं मुख किये अत्यंत दुःखसूं वाणी रुकवेके कारण रुक्मिणी चुप है स्थितभई ॥ २३ ॥ अप्रिय वचन सुनवेके दुःख और त्यागि देवेकी शंकाके शोकसों बुद्धिरहित है रुक्मिणी व्याकुल है गई, तब विनके हाथसो पंखा गिरगयो, और कंकण शिथिल है गिरन लगे और महाव्याकुलतासो मोहित है पवनसो गिराई हुई कदलीके समान रुक्मिणी मूर्छित हो पृथ्वीमें गिरी, वा समय विनके केश खुल गये ॥ २४ ॥ हास्यकी गम्भीरताको नहीं जाननहारी प्यारी रुक्मिणीको प्रेमबन्धन देखिके करुणाकर श्रीकृष्णचन्द्र कृपा करत भये ॥ २५ ॥ चार भुजा धारण कर श्रीकृष्णचन्द्र पलंग-पैते शीघ्र नीचे उतरिके श्रीरुक्मिणीकूं उठाइके केशनकूं सम्हारके मुखकूं कमलकी तुल्य कोमल हाथसूं पोंछत भये ॥ २६ ॥ हे राजन् ! आंसूभरे नेत्रनकूं और शोक करिके ताडित स्तनकूं पोंछिके अनन्य आश्रय पतिव्रता रुक्मिणीकूं भुजासूं आलिंगन करके ॥ २७ ॥ हांसीसूं चलायमान चित्त और कठोर हांसीके अयोग्य दीन रुक्मिणीकूं साधुनकी गति समर्थ श्रीकृष्णचन्द्र समझावत भये ॥२८॥ श्रीभगवान् श्रीकृष्णचंद्र बोले हे विदर्भ देशके राजाकी पुत्री ! मोते ईर्षा मति करो, तू मेरे विना

---

१ प्र०–रुक्मिणीसे ऐसा क्यों कहा कोई और पति करलो । उत्तर–भगवान्ने स्त्रियोंको उपदेश किया कि यदि स्वामी हासमेंभी अन्य पतिकी बात कहे तौ रुक्मिणीकी समान स्त्रीको प्राण त्यागनेपर उतारू होना चाहिये यह नहीं कि अन्य पुरुषोंसे प्रेम करे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और काहूंकूं नहीं जानो हौं यह मैं जानूंहूं हे सुंदरी ! तू कहा कहेगी यह सुनिवेके लिये मैंने हांसी करीही ॥ २९ ॥ स्नेहके कोपसो फरकते अधरयुक्त और चलायमान अरुण कटाक्षसों टेढी भ्रुकुटीवारे मुखकी शोभा देखिवेके लिये हांसी करीही ॥ ३० ॥ हे डरपोकनी ! अपनी प्रियाके संग हँसी करके समय व्यतीत करनो गृहस्थीनकूं घरमें यही लाभ है ॥ ३१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णचंद्रने शांति करि तौ विदर्भदेशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी प्यारेने मोते हँसिके कही है यह जानिके प्यारे मोकूं त्याग देइंगे या मनके तापकूं त्यागती भई ॥ ३२ ॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजन् परीक्षित् ! लाजभरी हँसनि मनोहर स्निग्ध कटाक्षनसूं सुंदर मुख देखती पुरुषनमें श्रेष्ठ कृष्णचंद्रसूं बोलती भई ॥ ३३ ॥ श्रीकृष्णचंद्रने जो अपनेमें अवगुण कहे तिनकूं गुण करिके रुक्मिणी वर्णन करे हैं प्रथम श्रीकृष्णने कही तुम हमारी बराबरीकी नहीं हो हमारो हाथ कैसे पकरचो ताको उत्तर रुक्मिणी देइहै हे कमलदललोचन ! तुम्हारी बराबरीमें मैं नहीं हूं, छः प्रकारके ऐश्वर्ययुक्त आपकी बात सत्य है, अपनी महिमा करिके आप आवृत तीनों ब्रह्मादिकनके ईश्वर आप कहा, और सकाम पुरुषनसो सेवित चरणवारी सत्त्वगुणी तमोगुणी रूपवारी मैं माया कहां मोमें आपमें बडो अंतर है ॥ ३४ ॥ और जो कृष्णने कही कि राजानके भयके मारे समुद्रमें आयके रहे हैं ताको उत्तर रुक्मिणी देइ है हे उरुक्रम ! यह सत्य है सत रज तम तीन गुणही राजा हैं मानो विनके भयसेही सागरकी समान अगाध विषयनसो अक्षोभित हृदयमें चैतन्यघन तुम निश्चलता करिके प्रकाशो हो और जोरावरनते हमने वैर करचो है यह जो तुमने कही सोहू सत्य है, क्योंकि विषयनमें जिनकी इन्द्री लगी हैं, ऐसे पुरुषनने तुमते विरोध करचो है विनमें तुम्हारी अप्रीति है, और जो कृष्णने कही हमारे राज्य आसन नहीं है ताको उत्तर रुक्मिणी देइ है कि महाअविवेकको स्थान राज्य आसन है सो तुम्हारे सेवक छोडि देइ हैं, तुमने छोडचो यामें कहा कहिनो है ॥ ३५ ॥ और जो श्रीकृष्णने कही हमारो मार्ग जानिवेमें नहीं आवे हैं और स्त्रीनके आधीन मैं नहीं हूं, ताको उत्तर रुक्मिणी देइ है तुम्हारे चरणारविंदके मकरंदको सेवन करनहारे मुनि हैं तिनको मार्ग पशुरूप मनुष्यनको प्रकट नहीं होय है, और जानिवेमें नहीं आवे है, तुम्हारो मार्ग जानिवेमें न आवे यामें कहा आश्चर्य है हे व्यापक ! तुम्हारे अनुवर्ती भक्तनकी चेष्टा न्यारी है तुम्हारी न्यारी है यामें कहा आश्चर्य है ॥ ३६ ॥ और निष्किंचन पुरुषनको हम प्रिय लगे हैं, और धनिक पुरुष हम दरिद्री है जांयगे या डरके मारे हमारो भजन नहीं करै है यह श्रीकृष्णने कही ताको उत्तर रुक्मिणी देय है, आपसो भिन्न कछु नहीं है यासों तुम निष्किंचन हो दरिद्रतारूपी निष्किंचनता तुममें नहीं बनै है, प्रजानते भेंट लेनहारे ब्रह्मादिक देवता तुमकूं भेंट देई हैं, और जो तुमने कही हमें निष्किंचन जन प्यारे हैं और विनको मैं प्रिय हूं सोहू सत्य है क्योंकि जिनको किंचितहू देहाभिमान नहीं है ऐसे ब्रह्मवेत्ता और ब्रह्मादिकको आप प्यारे हो वे आपको प्यारे हैं, और आपने कही धनवान् हमारो भजन नहीं करें हैं यहहू सत्य है कारण कि धन पात्रताके अभिमानसो अंधे लोक काल स्वरूप आपको नहीं जानेहैं यासों वे इन्द्रियनको तृप्त करें हैं आपको भजन नहीं करे हैं ॥ ३७ ॥ जिनके बराबरि को जन्म है तिनको विवाह और मित्रता होय है यह जो श्रीकृष्णने कही ताको उत्तर रुक्मिणी देइ है तुम संपूर्ण पुरुषार्थ और परमानंदरूप हो, सुन्दर बुद्धिवारे पुरुष तुम्हारी प्राप्तिके लिये सब वस्तु त्यागि देइ हैं हे प्रभो ! विन पुरुषनको और तुम्हारो सेव्यसेवकभाव है, सुखदुःखसूं व्याकुल परस्पर स्त्री पुरुषके स्वामी सेवकभाव नहीं है ॥ ३८ ॥ और भिखारिनने झूंठी बडाई करी है यह जो श्रीकृष्णने

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कही ताको उत्तर रुक्मिणी देइ है सबको अभयदान देके संन्यासी जन मुनिजन आपकी सराहना करें हैं, और यह जो आपने कही तुमने विना जाने हमें वरो सो यह ऐसे नहीं है कारण कि आपको जाके निमित्त सब वस्तु प्रिय लगें है वा जगत्के आत्मरूप और अपनो स्वरूप देनेवारे आप हो यासों आपको वरो और भूलके वरो यहहू आपको कहनो ठीक नहीं है औरनकी तो बातही कहा है ब्रह्मा और इन्द्रादिक देवतानकोहू कि जिनको कि आप आपकी भ्रुकुटीसो प्रेरित कालके वेगसो सुखको नाश होयहै यह विचार मैंने विन्हें छोड आपको वरण कियो यासों जो आपने मोपें अविचारताको दोष दियो सो ठीक नहीं ॥ ३९ ॥ अपने अज्ञानसूं दूरि करिके और पुरुषनकी बडाईसो क्रोधित है श्रीकृष्णकी अज्ञानते रुक्मिणी कहे है, हे गदाग्रज ! तुमने शार्ङ्ग-धनुषके शब्दसो जरासंध आदि राजा भजायके, जैसे सिंह पशुनकूं भजायके अपनी बलीकूं लावै हैं ऐसेही आप अपनो भागरूप मोकूं लावत भये, यासो विन राजनके भयते हम समुद्रमें आयके रहे हैं यहहू तुम्हारो कहनो नहीं बने है ॥ ४० ॥ और मेरा भजन करें हैं ते दुःखी होय हैं यामें दुःख कह्यो सोहू नहीं बने हैं यह रुक्मिणी कहे है, हे कमलदललोचन ! तुमारे भजनकी इच्छा करिके राजानके मुकुटमणी राजा अंग, पृथु, भरत, ययाति और गय आदि राजा चक्रवर्ती राज्यकूं त्यागिके वनकूं जातभये, तुमारे भजन करनहारे राजानकूं कहां दुःख भयो है किंतु सुखही भयो है, तुम्हारे वैकुंठधामकी प्राप्ति भई है ॥ ४१ ॥ और जो कि श्रीकृष्णने कही रुक्मिणी ! और काहू बराबरीके क्षत्रीको हाथ पकरि लेउ ताको उत्तर रुक्मिणी देइ है साधुनसो वर्णित जननकूं मोक्षको देनवारो, लक्ष्मी जाको सेवन करै ऐसे गुणनकी खानि तुमारे चरणारविंदको सूंघिके फेरि त्यागिके मरणधर्मिणी कौन विवेकिनी स्त्री है जो सर्वदा मृत्युके भयवारे पुरुषको सेवन करैगी याही कारण तुमें भजो है ॥ ४२ ॥ हे जगत्के ईश्वर ! आत्मारूप भजन करनवारेनकूं या लोक परलोकमें कामनानके पूरण करनवारे अपने योग्य तुमको मैंने सेवन कियो है, चाहै अनेक प्रकारकी योनिनमें मेरो जन्म होय परन्तु उन जन्मनमेंहू मिथ्या संसारके भयका नाश करनहारे और भक्तनके अपना-यवेवारे तुम्हारे चरणनकी शरण मोय प्राप्त होउ यही प्रार्थना है ॥ ४३ ॥ श्रीकृष्णने राजानकी बहुत बडाई करी ही तामें ईर्षासहित गारी दैकैं अंगुरी चटकायके रुक्मिणी कहे है हे अखंडरूप ! हे शत्रु-नके मारनवारे ! तुम्हारे बनाये राजा घरनमें स्त्रीनके आगे गधानकी तुल्य भारके उठावनवारे, बैलकी समान क्लेश पामनवारे रोजी करिके दुःखित कुत्तानकी नांई स्त्रियनके ललकारे खानहारे बिलावकी नांई हत्या करनहारे भृत्यनकी तुल्य आधान रहनहारे ऐसे राजा जा स्त्रीके काननमें ब्रह्मा महादेवकी सभामें गाई तुम्हारी कथा नहीं परी है वा स्त्रीके पति होउ ॥ ४४ ॥ और जा स्त्रीने तुमारे चरणार-विंदकी सुगंधि नहीं सूंघी है वह मूढ स्त्री जीते भएही मृतक पुरुषको पति मानके भजै जो कि बाहर तौ चर्म रोम नख केश इनते ढक्यो है और भीतर मांस हाड रुधिर कीरा विष्ठा कफ वात पित्तसों भरोहै वाको अपने पति मानिके कौन सेवन करै ॥ ४५ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रजीने कहीही हम घर और देहमें उदासीन हैं ताको उत्तर रुक्मिणी कहे है हे कमलदललोचन ! तुम अपने स्वरूपमें रमण करो हो और मोमें आसक्त नहीं है दृष्टि जिनकी अर्थात् मेरी चाहना नहीं है तथापि तुम्हारे चरणारविंदमें मेरो स्नेह होउ तब श्रीकृष्णने कही स्नेह भयेते तोकूं कहा लाभ होयगो ताको उत्तर देई हैं तुम्हारे चरणारविंदमें अनुराग होनोही बडो लाभ है और जा समय या विश्वके बढायवेके लिये गुणकूं अंगी-कार करिके मे मायाकी ओर देखोगे वही बडो अनुग्रह है ॥ ४६ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रने जे जे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बातें कही तिनके उत्तर दैके प्रसन्नचित्त है रुक्मिणी कहे है हे मधुसूदन ! तुमने कही अपनी बराबरीके क्षत्रीको अभऊं हाथ पकरिके लेउ यह मैं मिथ्या नहीं मानूंहूं जैसे काशीके राजाकी पुत्री अंबा अम्बिका अम्बालिका इन तीनों कन्यानमेंते अम्बा कन्याकी शाल्व राजामें जैसी रति भई तैसे मेरी रति तौ तुम्हारेही विषे भई ॥ ४७ ॥ और हे अच्युत ! विवाहिता व्यभिचारिणी स्त्रीके मन नवीन पुरुषनमें जाय हैं ऐसी बहुत कथा है विवेकी पुरुष ऐसे खोटी स्त्रीनकूं राखे नहीं हैं कदाचित् राखे हैं तो या लोक और परलोकसों भ्रष्ट होय है ॥ ४८ ॥ श्रीकृष्णचंद्र बोले हे राजपुत्री रुक्मिणी ! तुम्हारी बात सुनिवेके लिये मैंने ऐसी कही हैं मेरे वचनको जो जो तुमने उत्तर कह्यो सो सब सत्य है ॥ ४९ ॥ हे भामिनि ! हे मंगलरूपिणि ! जो जो वस्तुकी तुम चाहना करोहो सो सो मोमें एकांत भक्ति हैवेसौ तुमको प्राप्तही हैं हे कल्याणी ! मुक्ति पर्यन्त तुम्हारे सब मनोरथ प्राप्त रहैंगे ॥ ५० ॥ हे निष्पाप रुक्मिणी ! तुमने पतिमें प्रेम पायो और पतिव्रताको धर्म तुमने पायो वचनन करिके डिगाई तथापि तुम्हारी बुद्धि मोमेंसों चलायमान न भई ॥ ५१ ॥ विषयनमें आत्मा और मन लगाये पुरुष तपस्या और ब्रह्मचर्य करिके स्त्री पुरुषके भोगके सुखके लिये मेरो भजन करे हैं, वे पुरुष मेरी मायाते मोहित हैं अर्थात् भूलि रहे हैं ॥ ५२ ॥ हे भामिनि ! मोक्षसहित संपूर्ण संपत्तिनको देनवारे मोको पायके जो विषयनकी चाहना करे हैं और मोको सुखके देनवारेकी चाहना नहीं करें हैं वे पुरुष अभागे हैं विषयसुख तौ मनुष्यनकूं कुत्तानकी सूकरनकी योनिमें हूं मिले है विषयनमें मन रहवेसों नरक होय है ॥ ५३ ॥ हे घरकी महारानी ! संसारकी छुडावनवारी चाहनारहित मनकी वृत्ति तैंने मोमें लगाई यह भली बात है खोटे अभिप्राय और अपने प्राणनको भरण पोषण कर दूसरेकूं ठगनहारी स्त्रीके मनकी वृत्ति मोमें नहीं लगे है ॥ ५४ ॥ हे भामिनि ! सोलह हजार एकसौ आठ महलमें तुम्हारी बराबरी प्यारकी करनवारी और स्त्री नहीं देखूंहूं, जो तुमने अपने विवाहके समय आये राजानकूं त्यागिके मेरी बात सुनके पाती लिखके मेरे पास ब्राह्मण भिजवायो ॥ ५५ ॥ युद्धमें तेरे भैया रुक्मीकूं जीति लियो, वाको शिर मूंडिके विरूप कर दियो हो और अनिरुद्धके विवाहमें चौपर खेलत वाकूं मारयो यह भैयाके मारवेको दुःख हमारे त्यागिवेके भयके मारे सह्यो और कछु न कही ऐसी तेरी बात नते हम वश करि राखे हैं ॥ ५६ ॥ मेरे बुलायवेको सबसो छिपायके दूतकूं मेरे पास भेज्यो, जब मोकूं आयवेमें विलंब भयो, तब या विश्वकूं शून्य मानिके, और राजा मेरे योग्य नहीं हैं यह निश्चय करिके देहके त्यागिवेकी इच्छा करती भई यह बात तेरे विना कौनपै बनै हैं, हम तेरी कहां प्रशंसा करें ॥ ५७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार आत्माराम जगत् ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र मनुष्यको अनुकरण करिके हास्यकी बातें करि करिके स्त्रीनके संग रमण करतभये ॥ ५८ ॥ समर्थ संपूर्ण लोकनके गुरु सबके दुःखके हरनवारे श्रीकृष्णचंद्र याही प्रकार और रानीनके महलनमें रहिके गृहस्थनकेस धर्म सिखावे हैं ॥ ५९ ॥

तथान्यासामपि विभुर्गृहेषु गृहवानिव ॥
आस्थितो गृहमेधीयान्धर्मान्लोकगुरुर्हरिः ॥ ५९ ॥

इति श्रीम० भा० टी० द० उ० कृष्णरुक्मिणीसंवादो नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

---

१ एक दिन जांबवतीसो भगवान् बोले कि अहो जांबवतीजू ! हमने तुमारे संग व्याह कहा कियो बडोही पाप बिसायो जहा कहा जाय है लुगाई देखें हैं तब सब हमसों यह कहे है यह आयो रीछनीको दूलह तब हमको बडी लाज आवे है तब जांबवतीने कही कि प्यारे ! ठीक है वा दिन लाज न आई जा दिन कंसकी दासी बीच बाजारमें पल्लो पकरके ठाडी है गई ही सोई तो अपने कही स्यावास २ इत्यादि ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ६१.

श्रीशुक उवाच-एकैकशस्ताः कृष्णस्य पुत्रान्दश दशाबलाः ॥
अजीजनन्नवमान्पितुः सर्वात्मसंपदा ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्णचन्द्रकी एक एक रानी श्रीकृष्णचन्द्रकी तुल्य रूप गुणवारे दश दश पुत्रनकूं उत्पन्न करती भई ॥ १ ॥ घरते कहूं बाहिर नहीं जांय अपने पास रहे ऐसे श्रीकृष्णचन्द्रकूं राजानकी पुत्री देखिके और श्रीकृष्ण आत्माराम हैं या बातकूं नहीं जानिके अपनो अपनो प्यारो मानती भई ॥ २ ॥ व्यापक श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्के कमलकोशकी तुल्य सुकुमार मुख बडी भुजा बडे नेत्र और प्रेमसहित हँसनि रसभरी चितवनि मनोहर बोलनि इत्यादिकसूं मोहित हैके जे स्त्री अपने २ अनेक विलासन करिके पूर्ण श्रीकृष्णचन्द्रको मन मोहित करिवेकूं नहीं समर्थ होती भई ॥ ३ ॥ गूढ हसनि पूर्वक कटाक्षनसूं जताये अभिप्रायसो मनके हरनवारे भ्रुकुटीरूप मंडलसो पठाये सुरतसंबंधी मंत्रसूं पैने कामदेवके बाण और जे कामके प्रसिद्ध साधन हैं तिनकरिके सोलह हजार रानी श्रीकृष्णचन्द्रके मनकूं चलायमान करिवेकूं समर्थ नहीं होती भई ॥ ४ ॥ ब्रह्मादिक जिनके मार्गकूं नहीं जाने ऐसे लक्ष्मीपति श्रीकृष्णचन्द्रकूं या प्रकार पति पायके यह स्त्री निरंतर बढ्यो आनंदसूं स्नेहभरी हँसनि चितवनि और हास्य चितवनिपूर्वक नवीन संगममें बोलन और लाजकूं सेवन करती भई ॥ ५ ॥ एक एक रानीके सन्मुख सौ सौ दासी हाथ जोरे ठाढी हैं तथापि सन्मुख जायके लिवाय लायवो, आसन बिछायवो, सुन्दर पूजन करिवो, चरण धोइवो, बीरा लगावनो, चरणको दाबनो, पंखा करिवो, अतर अरगजा लगाइवो, पुष्प चढामनो, केशनकूं सुधारिवो, शय्या बिछामनो, स्नान करावनो, भेंटकों धरिवो इन करिके श्रीकृष्णचन्द्रकी सेवा करति भई ॥ ६ ॥ दश दशपुत्रवारी श्रीकृष्णकी रानी हैं तिनमें आठ पटरानी प्रथम कहीं हैं तिनके प्रद्युम्न आदि पुत्रनके नाम तुमसों कहूं हूं ॥ ७ ॥ प्रद्युम्न, चारुदेष्ण, सुदेष्ण, बलवान्, चारुदेह, सुचारु, चारुगुप्त, तैसेही भद्रचारु ॥ ८ ॥ चारुचन्द्र, विचारु, चारु ये दशपुत्र श्रीकृष्णचन्द्रसूं रुक्मिणीमें उत्पन्न होतभये ॥ ९ ॥ भानु, सुभानु, स्वर्भानु, प्रभानु, भानुमान्, चन्द्रभानु, बृहद्भानु, तैसेही आठवो रतिभानु ॥ १० ॥ श्रीभानु, प्रतिभानु ये दश पुत्र सत्यभामाके उत्पन्न होतभये और साम्ब, सुमित्र, पुरुजित्, शतजित्, सहस्रजित् ॥ ११ ॥ विजय, चित्रकेतु, वसुमान्, द्रविड, क्रतु ये साम्बसूं आदि लेके श्रीकृष्णचन्द्रकी तुल्य गुणवारे दश पुत्र जाम्बवतीके होते भये ॥ १२ ॥ वीर, चन्द्र, अश्वसेन, चित्रगु, वेगवान्, वृष, आम, शंकु, तथा शोभायमान वसु और कुंति ये दश नाग्नजितीके पुत्र होत भये ॥ १३ ॥ श्रुत, कवि, वृष, वीर, सुबाहु और भद्र, शान्ति, दर्श, पूर्णमास और इन सबसूं छोटो सोमक ये दश पुत्र कालिंदीके होतभये ॥ १४ ॥ प्रघोष, गात्रवान्, सिंह, बल, प्रबल, ऊर्ध्वग, महाशक्ति, सह, ओज, अपराजित ये दश पुत्र लक्ष्मणाके होतभये ॥ १५ ॥ वृक, हर्ष, अनिल, गृध्र, वर्द्धन, अन्नाद, महाश, पावन, वह्नि, क्षुधि ये दश मित्रविंदाके पुत्र होत भये ॥ १६ ॥ संग्रामजित्, बृहत्सेन, शूर, प्रहरण, अरिजित्, जय, सुभद्र, वाम, आयु, सत्यक ये दश पुत्र भद्राके उत्पन्न होत भये, श्रीकृष्णचन्द्रकी आठ रानिनके पुत्र कहे अब बलदेवकी राणी रोहिणीके दीप्तिमान् आम्रतप्तकूं आदि लेके पुत्र होत भये जैसे रोहिणीके पुत्र कहे ऐसेही और सोलह हजार राणीनकेहू दश दश पुत्र जानि लीजे ॥ १७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! भोजकटपुरवाले रुक्मीकी पुत्री रुक्मवतीमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रद्युम्नजीते बलवान् अनिरुद्ध नाम पुत्र होत भये ॥१८॥ हे राजन् परीक्षित्! ये जो श्रीकृष्णचंद्रके पुत्र और तिनके पुत्र और नाति करोडन होत भये, और श्रीकृष्णके जन्मे पुत्रनकी सोलह हजार माता होती भई ॥ १९ ॥ अब राजा परीक्षित् बोले संग्रामके विषे श्रीकृष्णसो तिरस्कार पाय रुक्मी वैरी श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नजीकूं अपनी कन्या कैसे विवाहत भयो वह तो कृष्णके मारिवेको उपाय करे हो, हे विवेकी शुकदेवजी! शत्रुनको आपसमें विवाह कैसे भयो यह मेरे आगे वर्णन कीजिये ॥२०॥ जो कदाचित् कहो कि हम या बातनकूं कहा जाने ताको उत्तर राजा देई हैं योगीश्वर तो भूत भविष्य वर्तमान इन्द्रियनसो अगम्य दूर अथवा ओटकी सब वार्ताको अच्छी प्रकार जानै हैं ॥ २१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित्! रुक्मीकी पुत्री रुक्मवतीने साक्षात् मूर्तिमान् कामदेवकों स्वयंवरमें वर लियो तो वह युद्धमें इकट्ठे भये राजानको एकही रथसो जीत वाको हर ले गयो ॥२२॥ यद्यपि रुक्मी श्रीकृष्णचन्द्रके तिरस्कारके वैरको स्मरण करे है तथापि बहिनको भलो मनाइवेके लिये भांजे प्रद्युम्नकूं अपनी कन्या देतभयो ॥ २३ ॥ श्रीकृष्णकी सब राणीनके एक एक कन्या भई यह दिखाइवेके लिये बडी राणी रुक्मिणीकी कन्याको विवाह कहें है हे राजन् परीक्षित्! सुंदरबुद्धि विशाल नेत्रवारी रुक्मिणीकी चारुमती पुत्रीको बलवान् कृतवर्माको पुत्र बली विवाहत भयो ॥२४॥ यद्यपि वैर बंध रह्यो है तथापि रुक्मी अपनी बहिनीको भलो मनायवेके कारण श्रीकृष्णके नाती अपने दोहिते अनिरुद्धकूं अपनी रोचना नाम नातिनीकूं देत भयो, नातेमें विवाह करनो अधर्म है या बातकूं रुक्मी जानेहू हो परंतु स्नेहके पाशसो बन्धके विवाहि देत भयो ॥२५॥ हे राजन् परीक्षित्! ता विवाहमें रुक्मिणी श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवजी और सांब प्रद्युम्नकूं आदि लैके श्रीकृष्णचन्द्रके पुत्र रुक्मीके भोजकट नाम पुरमें जात भये ॥ २६ ॥ विवाह है चुक्यो ता पीछे कलिंगदेशके राजाकों आदि लै गर्ववंत राजा रुक्मीते बोलत भये, पांसेन करिके बलदेवजीकूं जीत लेउ ॥ २७ ॥ हे राजन् रुक्मी! यह बलदेव पांसे खेलि नहीं जाने हैं परंतु याकूं खेलिवेको व्यसन बडो है, या प्रकार सुनतेही रुक्मी बलदेवको बुलायके तिनके संग पांसेन करिके खेलत भयो ॥ २८ ॥ बलदेवजी सौ मोहरनको तापीछे हजार मोहरनको, फेर दशहजार मोहरनको दांव लगावत भये, वह दाव रुक्मी जीतत भयो ता समय कलिंगदेशको राजा दांत दिखायके बलदेवजीकी बहुत हांसी करतभयो, तब हलआयुधधारी बलदेवजी हांसीकूं नहीं सहारत भये ॥ २९ ॥ ता पीछे रुक्मी लाख मोहरनको दाव लगावत भयो ताकूं बलदेवजी जीते, वा समय कपट करिके मैंने जीत्यो है या प्रकार रुक्मी कहत भयो ॥ ३० ॥ तब अमावस पूर्णमासीकूं समुद्रमें जैसे क्षोभ होय है या प्रकार क्रोधसों क्षुभित हैगये और स्वाभाविक अरुणनेत्रवारे बलदेवजी अत्यंत रोष करिके दशकरोड मोहरनको दांव लगावत भये ॥ ३१ ॥ धर्मसों वह दांव बलदेवजी जीतत भये, तब रुक्मी छल करिकें कहत भयो कि मैं जीत्यों ये मेरे पासके राजा हैं इन्हें बुझि लेउ या प्रकार रुक्मी और बलदेवजीको विवाद है रह्योहो इतनेमेंही आकाशवाणी भई धर्मते बलदेवजी दाव जीते हैं रुक्मीको वचन मिथ्या है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ तासमय आकाशवाणीको अनादर करिके दुष्ट राजानको सिखायो विदर्भ देशको राजा रुक्मी बलदेवजीकी हांसी करत कालको प्रेरचो यह वचन बोलत भयो ॥ ३४ ॥ गौनके चरामनवारे वनवासी तुम पासे नहीं खेलि

---

१ तब सब पुत्र १६१०८० भये ॥ २ राजोंके यहांकी यह रीतिभी है कि जिस कुलमें कन्या देते हैं वहां देतेही रहते हैं ॥ ३ चौ०—आजु खेल पासेकी सारे। यह तुम जानौ कहा गँवार ॥ जुआ युद्ध गति भूपति जाने। ग्वाल गोप गैयन पहँचाने ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जानो हो, पासेनसूं और बाणनसूं राजा खेले हैं तुम सारिखे नहीं खेले हैं ॥३५॥ या प्रकार रुक्मीने अनादर करचो और राजानसों हांसी करी तब तौ बलदेवजी क्रोध करिके परिघ उठायके मंगलसभामें रुक्मीकूं मारत भये ॥ ३६ ॥ ता समय कालिंग देशको राजा भाजो तब बलरामजीने झपटके वाको दशमें कदमपें पकड लियो और जिन दांतनको दिखायके वाने हँसी करीही वेही दांत तोड दिये ॥ ३७ ॥ बलदेवजीने बेडासूं मारे याते हाथ जंघा शिरके टूटवेसौ रुधिरसूं भीजे और राजा भयभीत हैके भाजत भये ॥ ३८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! रुक्मी सारो मारचो गयो, ता समय रुक्मिणी और बलदेवके डरके मारे श्रीकृष्णचंद्र कछुहू भली बुरी नहीं कहत भये, भली भई यह कहते तौ रुक्मिणी बुरो मानती, बुरी करी यह कहते तौ बलदेवजी बुरो मानते याते चुपही होत भये ॥ ३९ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रके आश्रयसे वे सिद्धमनोरथ हैके रामसूं आदि लैके यादव नवीन वधूसहित अनिरुद्धकूं सुंदर रथमें बैठायके रुक्मीके भोजकट पुरते द्वारकापुरीमें आवत भये ॥ ४० ॥

ततोऽनिरुद्धं सह सूर्यया वरं रथं समारोप्य ययुः कुशस्थलीम् ॥
रामादयो भोजकटाद्दशार्हाः सिद्धाखिलार्था मधुसूदनाश्रयाः ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भा० भाषाटी० दशम० उ० अनिरुद्धविवाहे रुक्मिवधो नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥६१॥

अध्याय ६२.

राजोवाच–बाणस्य तनयामूषामुपयेमे यदूत्तमः ॥
तत्र युद्धमभूद् घोरं हरिशङ्करयोर्महत् ॥
एतत्सर्वं महायोगिन्समाख्यातुं त्वमर्हसि ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले हे शुकदेवजी ! यादवनमें उत्तम अनिरुद्धजी बाणासुरकी कन्या ऊषाकूं विवाहत भये, और विवाहमें श्रीकृष्णचन्द्र और महादेवको घोर युद्ध होतभयो, सो सम्पूर्ण मेरे सन्मुख कहिवेकूं योग्य हो ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! विष्णुने जब वामनरूप धारण करिके पृथ्वी मांगी तब सम्पूर्ण पृथ्वी जिनने दान करी ॥ २ ॥ ऐसे महात्मा राजा बलिके सौ १०० पुत्र होत भये, तिनमें ज्येष्ठपुत्र शिवको अत्यंत भक्त सबको मान्य ज्ञानवान् बुद्धिमान् सत्यसंकल्प दृढव्रत बाणासुर नाम करिके होत भयो शोणित नाम रमणीक पुरमें राज्य करत भयो ॥ ३ ॥ ता बाणासुरके शिवजीकी कृपासों सम्पूर्ण देवता टहलुआनकी तुल्य ठाढे रहतेहे एक समय तांडव नृत्यमें हजार हाथनसूं बाजेनकूं बजाय शिवजीकूं बाणासुरने प्रसन्न करे तब सब प्राणीनके ईश्वर भक्तवत्सल भगवान् शिवजी बाणासुरकूं वर देवेकी इच्छा करत भये, तब शिवजीते मेरे पुरकी तुम रक्षा करो यह वर मांगत भयो ॥ ४ ॥ ५ ॥ पराक्रमके दुर्मदसो बाणासुर अपने पास रहनवारे शिवजीके चरणारविंदकूं सूर्यकेसे तेजकी समान किरीटसूं स्पर्श करिके एक समय बोलत भयो ॥ ६ ॥ हे लोकनके गुरु ईश्वर महादेव ! जिनके मनोरथ पूर्ण नहीं भये हैं तुम विन पुरुषनके मनोरथ पूर्ण करनवारे कल्पवृक्षरूप हो तुमको नमस्कार है ॥ ७ ॥ और हे देव ! तुमने हजार भुजा मोकूं दीनी है, इनकूं अबतक केवल बोझही भयो है याते त्रिलोकीमें तुम्हारे विना और कोई मोकूं बराबरीको युद्ध करिवेकूं नहीं मिलै है ॥ ८ ॥ हे सम्पूर्णके कारण शिवजी ! जब मेरी

१ चौ०–करी सगाई वैर न छोडो । हमसे फेर कलह तुम मांडो ॥ मारा तोहिं अरे अन्याई। भलो बुरो मानै भौनाई॥ १॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भुजानमें खुजली चली तौ मैं युद्ध करवेको पर्वतकू चूर्ण करत दिग्गजनके हाथीनके पास जात भयो, तब मेरे भयके मारे वेहू दिग्गजनकूं छोडिके भाजत भये ॥ ९ ॥ या प्रकार बाणासुरको वचन सुनिके भगवान् शिवजी क्रोध करिके कहत भये हे मूढ ! जा समय तेरी ध्वजा टूटेंगी ता समय मेरी बराबरकेसूं तेरो युद्ध होयगो और तेरो गर्वभंग होयगो ॥ १० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! शिवजीने या प्रकार कही तौ कुबुद्धि बाणासुर अपने घरकूं जातभयो, और अपनो बलबुद्धि पराक्रमको नाश करनवारी शिवजीकी आज्ञाको पैंडो देखन लगो ॥ ११ ॥ ऊषानाम बाणासुरकी कन्या अपनी कन्या-पनकी अवस्थामें स्वप्नमें प्रद्युम्नजीके पुत्र अनिरुद्धके संग रति पावती भई, जिन अनिरुद्धकूं प्रथम कभू वाने देखो सुनो नहीं हो ॥ १२ ॥ पीछे ऊषा तहां अनिरुद्धकूं नहीं देखिके बडी लज्जित हैके हे कांत ! तुम कहां गये, या प्रकार पुकारती विह्वल हैके सखीनके बीचमें गिरती भई ॥ १३ ॥ बाणा-सुरके मन्त्री कुंभाण्डकी पुत्री चित्ररेखा सखी आश्चर्य मानिके अपनी सखी ऊषासूं पूंछती भई ॥ १४ ॥ हे सुभ्रु सुन्दर भ्रुकुटीवारी ! हे ऊषा ! तू कौनकूं ढूंढे है और तेरो कैसो मनोरथ है, हे राजाकी पुत्री ! तेर हाथको पकरनवारे पतिकूं अबतक मैं नहीं देखोहूं पति पति तू कैसे पुकारे है ॥ १५ ॥ या प्रकार चित्ररेखाको वचन सुनिके ऊषा बोलत भई सामरो स्वरूप, कमलसे नेत्र, पीता-म्बरको पहिरे, बडी भुजा, स्त्रीनकूं मनोहर ऐसो पुरुष स्वप्नमें मैंने देख्यो है ॥ १६ ॥ वा प्रीतमकूं मैं ढूंढ हूं, अपनो अधरामृत प्यायके मो अभिलाषिणीको दुःखके समुद्रमें पटकिके कहूं चल्यो गयोहै ॥ १७ ॥ यह वचन सुनिके चित्ररेखा बोली हे ऊषा ! तेरो दुःख मैं दूरि करूंगी, जा पुरुषने तेरो मन हरचो है, वह त्रिलोकीमें कहूं होइगो, तौ ले आऊंगी, परन्तु वाय बताय दे ॥ १८ ॥ चित्र-रेखा इतनो कहिके देवता गन्धर्व सिद्ध चारण पन्नगनके चित्र लिखत भई, दैत्य विद्याधर यक्ष मनुष्य इन सबकूं लिखती भई ॥ १९ ॥ चित्ररेखा मनुष्यनमें यादवनके चित्र लिखती भई और शूरसेनको चित्र तथा वसुदेवको बलदेवजीको तथा प्रद्युम्नजीको चित्र लिखती भई जब प्रद्युम्नजीको चित्र ऊषाने देख्यो तब तौ श्वशुर जानिके लज्जित होती भई ॥ २० ॥ शुकदेवजी बोले हे पृथ्वीपति राजा परी-क्षित् ! ऊषा अनिरुद्धकूं लिख्यो देखिके लाजसूं नीचेकूं मुख कर मेरे मनको हरनवारो पुरुष यही है ऐसे मुसिक्यायके सखीते कहती भई ॥ २१ ॥ हे परीक्षित् ! योगके बलवाली चित्ररेखा विन्हें श्रीकृष्णचन्द्रको नाती जानिके आकाशमार्ग हैके कृष्णपालित द्वारकापुरीमें जाती भई ॥ २२ ॥ योगको आश्रय लेके चित्ररेखा द्वारकापुरीमें पलंगके ऊपर सोते अनिरुद्धकूं शोणितपुरमें लायके सखी ऊषाको प्यारेकूं दिखावती भई ॥ २३ ॥ सुंदरवर अनिरुद्धकूं देखिके प्रसन्न मुख ऊषा पुरुष-नके देखिवेमें न आवै ऐसे अपने घरमें अनिरुद्धके संग रमण करती भई ॥ २४ ॥ बडे मोलके वस्त्र माला सुगंधि धूप दीप आसन इत्यादिकनसूं और पीवेकी सामग्री तथा भोजन और भक्षण वचनसूं पूजन करती भई ॥ २५ ॥ ऐसें अनिरुद्धजी कन्याके पुरमें छिपके निरंतर स्नेह बढायवेवारी ऊषासो इन्द्रिय हरवैसो अनिरुद्धजी मोहित हैके वास करत कितने रात्र दिन चले जांय है ऐसे नहीं जानत भये ॥ २६ ॥ यादवनमें वीर अनिरुद्धजीके भोग करवेसो जाको कन्यापनका व्रत दूर भयो तब वा अत्यंत प्रसन्न मन ऊषाको गुप्त न रहिवेवारे लक्षणसो पहरदारनने पहचान लियो और आयके बाणासुरसो कही ॥ २७ ॥ हे राजन् बाणासुर ! कन्याके कुलकूं दोष लगावनेवारे कुत्सित तुम्हारी कन्याके चलनकूं हम देखे हैं ॥ २८ ॥ हे समर्थ बाणासुर ! हमने सावधान हैके घरके भीतर हैके घरके भीतर कोई पुरुष वा कौन देखसकै या प्रकार रखवारी करी परन्तु कन्याको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दोष कैसे लगो यह नहीं जानें हैं ॥ २९ ॥ कन्याके दोषको सुनके बडो दुःखी हैके बाणासुर शीघ्रही कन्याके घरमें जायके यादवनमें उत्तम अनिरुद्धकूं देखतभयो ॥ ३० ॥ कामदेवके पुत्र त्रिभुवनमें एक सुन्दर श्यामस्वरूप पीताम्बरकूं पहिरे कमलसे नेत्र बडी भुजा, काननमें कुंडल और केशकी कांतिसूं और मुसिक्यानिपूर्वक चितवनिसूं शोभायमान मुख ॥ ३१ ॥ सब ओरते मंगलरूप प्यारीके संग पांसे खेलते ता प्यारीके अंगसंगमें स्तनकी केशर जामें लगी ऐसे वसंतऋतुकी चमेलीकी माला पहिरे अनिरुद्धको ऊषाके आगे बैठे देखिके आश्चर्य मानतोभयो ॥ ३२ ॥ शस्त्रनकूं लिये अनेक प्यादेन सहित आये बाणासुरकूं देखिके मधुवंशोत्पन्न अनिरुद्धजी लोहेको परिघ उठायके मारिवेके लिये दंडकूं धारण करके कालकी समान ठाढे होते भये ॥ ३३ ॥ पकरिवेके लिये चारयों ओरते चले आते प्यादेनकूं शूकरनके यूथको पालन करनवारो मुख्य शूकर जैसे कुत्तानकूं मारे है ऐसे मारत भये, मार खाय शिर हाथ पांव टूटवेसों वे प्यादे घरमैंसो निकसके भागगये ॥ ३४ ॥ राजा बलिको पुत्र बली बाणासुर क्रोध करिके अपनी सैन्यकूं मारते भये अनिरुद्धकूं नागफासके रस्सानते बांधतो भयो, ता समय अनिरुद्धकूं बंधो देखके अत्यंत शोक और खेदसूं व्याकुल नेत्रनमें आंसु भर ऊषा रोवती भई ॥ ३५ ॥

तं नागपाशैर्बलिनन्दनो बली बबन्ध सैन्यं कुपितो हनन्तं स्वं ।
ऊषा भृशं शोकविषादविह्वला बद्धं निशम्याश्रुकलाक्ष्यरोदीत् ॥ ३५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० उ० अनिरुद्धबन्धनो नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

अध्याय ६३.

श्रीशुक उवाच–अपश्यतां चानिरुद्धं तद्बन्धूनां च भारत ।
चत्वारो वार्षिका मासा व्यतीयुरनुशोचताम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे भरतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् ! अनिरुद्धके देखे विना भैया बंधुनकूं शोच करत वर्षाके चार महीना वीततभये ॥ १ ॥ ता समय नारदजीसों अनिरुद्धजीके बंधनको कर्म, और बात सब श्रवण करिके श्रीकृष्णचन्द्र यादव संग ले बाणासुरके शोणितपुरकूं जातभये ॥ २ ॥ प्रद्युम्न, युयुधान, गद, सांब, सारण, नंद, उपनंद और भद्र आदि रामकृष्णके आज्ञाकारी मुख्य मुख्य यादव संपूर्ण मिलिके बारह अक्षौहिणी सैन्यासूं बाणासुरके पुरकूं चारयों ओरते घेरते भये ॥ ३ ॥ ४ ॥ यादवनसों अपने पुरके बाग परकोटा अटारी दरवाजे टूटे देखके क्रोधमें भरिके बारह अक्षौहिणी सैना लैके बाणासुरहू निकसतो भयो ॥ ५ ॥ बाणासुरके लिये अपने पुत्र स्कन्दकूं और बडे गणनकूं संग लैके नांदियापै चढिके रामकृष्णते युद्ध करिवेके लिये भगवान् शिवजी प्राप्त होतभये ॥ ६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्णचंद्र और शिवजीको बडो भयानक रोमाञ्च ठाढे होनवारो आश्चर्य युद्ध होत भयो, और प्रद्युम्नको स्वामी कार्तिकको युद्ध होतो भयो ॥ ७ ॥ कुंभांड और कूपकर्णको युद्ध बलदेवजीके संग भयो श्रीकृष्णके पुत्र सांबको बाणासुरके पुत्रके संग युद्ध होतभयो ॥ ८ ॥ देवतानमें मुख्य ब्रह्मादिक और मुनि, सिद्ध, चारण, गंधर्व, अप्सरा, यक्ष ये सम्पूर्ण विमाननमें बैठिके युद्ध देखिवेकूं आवते भये ॥ ९ ॥ ता समय शंकर महादेवके अनुचर भूत प्रेत, गुह्यक, डाकिनी, यातुधान, वेताल, विनायक ॥ १० ॥ प्रेत, मातृ, पिशाच, कूष्मांड, ब्रह्मराक्षस इन सबकूं शूरवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचंद्र अपने शार्ङ्गधनुषमेंसों निकासके पैनी भालके बाणनसूं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भजावत भये ॥ ११ ॥ पिनाक नाम धनुषधारी शिवजी श्रीकृष्णचंद्रके ऊपर न्यारे न्यारे शस्त्र चलावत भये, आश्चर्यरहित श्रीकृष्णचंद्र शिवजीकूं बराबरिके शस्त्रनकूं शांति करते भये ॥ १२ ॥ शिवने ब्रह्मास्त्र चलायो ताकों ब्रह्मास्त्रते शांत करत भये, जब वायुदेवताको अस्त्र शिवजीने चलायो, तब श्रीकृष्णचंद्र पर्वत देवताको अस्त्रकूं चलावत भये, ता समय पर्वतसूं रुकिके पवन थमिगयो पश्चात् अग्निदेवताको अस्त्रकूं चलायके शिवजी अग्नि लगावत भये, ता समय श्रीकृष्णचंद्र मेघदेवताके अस्त्रकूं चलायके मेघ वर्षायके अग्निकूं शांत करत भये, फेर शिवजी अपनो पाशुपात अस्त्र चलावत भये, ताकूं श्रीकृष्णचंद्र अपने नारायणास्त्रसूं शांत करतभये ॥ १३ ॥ फेर श्रीकृष्णचंद्रने जृम्भणास्त्र चलायो, तासूं शिवजी जंभाई लेन लगे विन्हें मोहित करिके बाणासुरकी सैन्याकूं तरवार गदा बाणनते मारतेभये ॥ १४ ॥ प्रद्युम्नजी बाणनके समूहनते चारों ओरते पीडित हैके स्वामिकार्तिक अंगनमैंते रुधिर वहावते वाहन मोरकूं भजायके रणमैंते ॥ १५ ॥ कुंभांड और कूपकर्ण मुसलके मारे पृथ्वीमें गिरते भये, तब स्वामीके मरवेसें दिनकी सम्पूर्ण सैना भाजती भई ॥ १६ ॥ अपनी सैन्याकूं जहां तहां बिखरी देखिके बडी असहनतासों बाणासुर संग्राममें सात्यकी यादवकूं छोडिके श्रीकृष्णचन्द्रके सन्मुख आवतो भयो ॥ १७ ॥ रणमें बडे मदसों बाणसुर पंचशत धनुषकूं एक संग खैंचिके एक २ धनुषमें दो दो बाण लगावत भयो ॥ १८ ॥ ता समय भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र बाणासुरके पंचशत धनुषनकूं एक संग अपने धनुषसूं काटतभये, फिर बाणासुरके रथमानकूं घोडानकूं मारिके रथकूं तोरिके जीतको शंख बजावते भये ॥ १९ ॥ ता समय कोटरा नाम बाणासुरकी माता अपने केशनकूं खोलिके नंगी हैके पुत्रके प्राण बचायवेके लिये श्रीकृष्णचंद्रके सन्मुख ठाढी होती भई[1] ॥ २० ॥ नंगी स्त्रीकूं शास्त्रमें देखिवो मने है या कारण श्रीकृष्णचन्द्र मुख फेरके ठाढे होतेभये इतनेमें टूट्यो रथ कट्यो धनुषवारो बाणासुर रणमैंते भाजिके पुरमें जातभयो ॥ २१ ॥ भूतनके गण जा समय भाजिगये तब तीन शिर और तीन पांवको ज्वर दशों दिशानकूं जरावत दाशार्हवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचन्द्रके पास आवतभयो ॥ २२ ॥ तब नारायणदेव श्रीकृष्णचन्द्र शिवजीके ज्वरकूं आयो देखिके अपने शीतज्वरको छोडतेभये, शिवजीको ज्वर और भगवान्को ज्वर दोनों आपसमें युद्ध करत भये ॥ २३ ॥ विष्णुके शीतज्वरके बलसो पीडाकूं प्राप्त हैके शिवजीको तप्तज्वर रुदन करत भयभीत हैके अपनी रक्षाके अर्थ और कोई निर्भय स्थान न पायके हाथ जोरिके श्रीकृष्णचंद्रकी स्तुति करतो भयो ॥ २४ ॥ अब ज्वर कहे है अनंतशक्ति ब्रह्मादिकनके ईश्वर सबके आत्मा, शुद्धचैतन्यघन, विश्वके उत्पत्ति पालन संहार करनवारे तुमकूं नमस्कार करूं हूं, विश्वको उत्पादन पालन संहार ब्रह्मते होय है मोते नहीं जो ऐसे श्रीकृष्ण कहैं ताको उत्तर ज्वर देइ है वेद जाको वर्णन करें सो तुमहीं हो सर्वविकाररहित हो याते कहिवेमें नहीं आवो हो ॥ २५ ॥ काल दैव कर्म जीव स्वभाव द्रव्य स्पर्श रूप रस गंध शरीर प्राण अहंकार विकार अर्थात् ग्यारह इंद्रिय और पंच महाभूत अर्थात् पृथ्वी आप तेज वायु आकाश इन तत्त्वनको बनो यह देह जैसे बीजते अंकुर अंकुरते फेर बीज होय है या प्रकार कर्मनते देह फिर देहते कर्म, फिर कर्मते देह, ऐसे, जलकोसो प्रवाह चल्यो जाय है, यही तुम्हारी माया है तुम ताके निषेधके अवधि हो तुम्हारी शरण मैं आयोहूं ॥ २६ ॥ कदाचित् कहो कि मैं देवकीको पुत्र हौं ऐसो मोमें कैसे बनेहै ताको उत्तर कहै है लीला करिके मत्स्यादिक अवतारनकूं लैके

---

१ प्र०—कोटरा नंगी होकर क्यों खडी हो गई ? उत्तर—यह एक योगिनीरूप है, वीर पुरुषोंका स्त्रीको देखकर क्रोध शान्त हो जाता है इस कारण बाणासुरकी रक्षाके लिये वहां आनकर स्थित हो गई ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देवतानको पालन करो हो, तथा वर्णाश्रमके धर्मनकूं पालन करो हो और धर्मनके करनहारे साधुनको पालन करो हो हिंसासहित पापमार्गको नाश करो हो या कारण पृथ्वीको बोझ उतारिवेके लिये तुम्हारो जन्म है ॥ २७ ॥ शांति करिवेकूं आवै शीतल उग्र अत्यंत भयानक तुम्हारो तेजरूप ज्वरसूं मैं तपायमान भयोहूं देहधारीनकूं तबही तांई ताप है, जबलों आशा बांधिके तुम्हारे चरणके तरुआको सेवन न करें ॥ २८ ॥ श्रीभगवान् बोले हे तीन शिरके ज्वर ! तेरे ऊपर मैं प्रसन्न भयोहूं, मेरे ज्वरते तेरो भय जात रहे, और जो पुरुष तेरे हमारे संवादकूं कहै वाकूं तू भय मति दीजो ॥ २९ ॥ या प्रकार जब कही तौ माहेश्वर ज्वर श्रीकृष्णचंद्रकूं नमस्कार करिके जातभयो, पश्चात् बाणासुर रथमें बैठिके श्रीकृष्णचन्द्रते युद्ध करिवेके लिये आवतो भयो ॥ ३० ॥ हे राजन् ! हजार भुजानमें अनेक प्रकारके शस्त्रनकूं धारण कर बाणासुर बडो क्रोध करिके चक्रधारी श्रीकृष्णचन्द्रके ऊपर शस्त्रनकूं छोडतो भयो ॥ ३१ ॥ निरंतर शस्त्रनकूं चलावते बाणासुरकी भुजानकूं भगवान् श्रीकृष्णचंद्र छुरीकी तुल्य पैनी धारके चक्रसूं जैसे माली वृक्षको छाटै है ऐसे छांटतभये ॥ ३२ ॥ बाणासुरकी भुजा कटि गई, ता समय भक्त बाणासुरके ऊपर कृपा करनहारे भगवान् शिवजी आयके चक्रधारी श्रीकृष्णचन्द्रते बोलते भये ॥ ३३ ॥ अब शिवजी स्तुति करे है हे परब्रह्म ! तुमारे विना जाने यह बाणासुर युद्ध करै हो यामें आश्चर्य नहीं है, या कारण वाणीमय वेदमें तुम छिपे भये परब्रह्म हो, और ज्योति सूर्यादिकनके तुम प्रकाश करनवारे हो, याते काहूके जानिवेमें नहीं आओ हो, कदाचित् कहो तौ कैसे प्रतीत होय है तहां शिवजी कहे हैं, निर्मलमन ऐसे पुरुष आकाशकी तुल्य निर्लेप निर्गुण तुमें देखे हैं ॥ ३४ ॥ निर्गुण ज्ञानकी वात तौ एक और है परन्तु तुम्हारी लीलाको आश्रय ब्रह्मांडहू जानिवेमें नहीं आवै है जैसे गूलरके फलके भीतरके जीव गूलरके फलकूं नहीं जानैं है तैसे या अभिप्रायसूं ब्रह्मांडरूप करिके शिवजी स्तुति करे हैं, आकाश तुमारी नाभि है, अग्नि तुमारो मुख है, जल तुमारो वीर्य है, स्वर्ग तुमारो शिर है, दिशा तुमारे कान है, पृथ्वी तुमारो चरण है, चन्द्रमा तुमारो मन है, और सूर्य तुमारे नेत्र हैं, मैं शिव तुमारी आत्मा हूं, समुद्र तुमारो उदर है, इन्द्र तुमारी भुजा हैं ॥ ३५ ॥ वृक्ष रोम हैं, मेघ केश हैं, ब्रह्मा बुद्धि है, प्रजापति लिंग है, धर्म हृदय है, लोकनकी कल्पनासों विराट् पुरुष तुम हो ॥ ३६ ॥ सो हे अखंडरूप ! यह तुमारो अवतार धर्मकी रक्षा करिवेके कारण और जगत्के कल्याणके निमित्त है, और हम सब लोकपाल आपहीसो रक्षा पायके सप्तलोकनको पालन करें हैं ॥ ३७ ॥ जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तीन अवस्थानमें पुरुषके तुम कारण हो, और शुद्ध हो याहीते अद्वितीय पुरुष हो, और सब विश्वके कारण हो, आप कारण करिके रहित हो तथापि सम्पूर्ण विषयके प्रकाश करिवेके लिये अपनी माया करिके जैसो जो देह है तैसेही प्रतीत होउ हो ॥ ३८ ॥ जैसे सूर्य अपनी मेघरूपी छायासों ढको भयो हैवेपेंहू बादरकूं प्रकाशे है, और बादरनके बाहिरहू रूपकूं प्रकाशे है हे भूमन् ! ऐसेही स्वयंप्रकाश आप जीवकी दृष्टिमें अपने कार्यरूप अहंकारसों ढके भये प्रतीत होवेपेंहू सत्त्व रज तम गुणरूप उपाधि और तिनके जीवनकोहू प्रकाशित करो हो ॥ ३९ ॥ मायाकरिके मोहित बुद्धिवारे पुरुष पुत्रस्त्रीगृहादिकनमें अटकिके दुःखरूपी समुद्रमें उछरे डूबे हैं देवादिक योनिनकूं पामे हैं, यह उछरनो है और वृक्षादिक योनिनकूं पामें हैं यह डूबनो है ॥ ४० ॥ ईश्वरकी दीनी मनुष्ययोनिकूं प्राप्त हैके जाने इन्द्रिय नहीं जीती, और जो पुरुष तुम्हारे चरणको आदर नहीं करे हैं वह पुरुष शोच करिवेके योग्य हैं, और आत्माको ठगनवारो है ॥ ४१ ॥ प्यारे पुत्रादिकनके लिये जो पुरुष प्रिय आत्मा तुमकूं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्यागे हैं, वह पुरुष अमृतकूं त्यागिके विषकूं पीवै है ॥ ४२ ॥ मैं शिव, ब्रह्मा, देवता, निर्मल अंतःकरणवार मुनिहू प्रिय ईश्वर और आत्मरूप आपहीको भनें हैं ॥ ४३ ॥ जगत्के उत्पत्ति पालन नाशके कारण और सबमें समान शांतस्वरूप हितकारी आत्मा ईश्वर अनन्य और कोई बराबरी जिनकी नहीं, बडो कोई नहीं जगत्के आत्मा आश्रय देव तुम हो, तिने संसार त्यागिवेके लिये हम भजे हैं ॥ ४४ ॥ हे प्रकाशमान ! यह बाणासुर मोकूं वांछित है, मेरो प्यारो है आज्ञाकारी है, मैंने याकूं अभय दीनो है, याते जैसी तुम्हारी दैत्यके पति प्रह्लादके ऊपर कृपा है ऐसी यापें कृपा करौ ॥ ४५ ॥ भगवान् कहे हैं हे शिवजी ! तुम हमते कहौहौ सो तुमारो प्रिय करेंगे, तुमने जो निश्चय कऱ्यो सो हमने भले प्रकार मान्यो ॥ ४६ ॥ विरोचनके पुत्र राजा बलिको पुत्र यह बाणासुर है, सो मारिवे योग्य नहीं है काहेते मैंने प्रह्लादको वर दीनो है कि तेरे वंशमें जो होयगो ताकूं मैं नहीं मारूंगो ॥ ४७ ॥ गर्व दूरि करिवेके लिये मैंने याकी हजार भुजा काटी हैं और पृथ्वीपै जो बोझ है रह्यो हो सो मैंने दूरि करिदियो ॥ ४८ ॥ कटिवेते चारि भुजा बाकी रहीं वे अजर अमर होयगी, और वह दैत्य बाणासुर भयरहित तुम्हारे पार्षदनमें मुख्य होयगो ॥ ४९ ॥ या प्रकार अभय पायके बाणासुर श्रीकृष्णचन्द्रकूं वारंवार प्रणाम करिके ऊषासहित अनिरुद्धकूं रथमें बैठारि विदा करतोभयो ॥ ५० ॥ अक्षौहिणी सैना संग लिये सुंदर वस्त्रनसूं शोभायमान स्त्रीसहित अनिरुद्धकूं आगे करिके शिवजीसो अनुमोदन पाय श्रीकृष्णचन्द्र जाते भये ॥ ५१ ॥ तोरणसहित ध्वजासूं शोभायमान मार्गमें जहां चौराहेनमें छिरकाव हैरह्यो ऐसी अपनी द्वारावती राजधानीमें पुरवासी सुहृद ब्राह्मणनते सत्कार पाय श्रीकृष्णचन्द्र शंख ढोल नगाडेनसे शब्दसहित प्रवेश करते भये ॥ ५२ ॥ यह श्रीकृष्णचन्द्रकी जीत और श्रीकृष्णचन्द्रको शिवजीसो युद्ध जो पुरुष प्रातःसमय उठिके स्मरण करैंगे वाकी कभऊ हार नहीं होयगी ॥ ५३ ॥

य एवं कृष्णविजयं शंकरेण च संयुगम् ॥
संस्मरेत्प्रातरुत्थाय न तस्य स्यात्पराजयः ॥ ५३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द०उत्तरार्धे ऊषाचरित्रवर्णनं नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

अध्याय ६४.

श्रीशुक उवाच-एकदोपवनं राजन्जग्मुर्यदुकुमारकाः ॥
विहर्तुं साम्बप्रद्युम्नचारुभानुगदादयः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित ! सांब, प्रद्युम्न, चारुभानु, गद इत्यादिक यादवनके पुत्र विहार करिवेके निमित्त वनमें जाते भये ॥ १ ॥ ता वनमें बहुत देरताईं क्रीडा करिके प्यासे है यादवनके पुत्र जलकूं ढूंढत विना जलके कूपमें अद्भुत एक जीव परयो देखतेभये ॥ २ ॥ पर्वतकी समान करकेंटा देखिके आश्चर्ययुक्त मनसो कृपायुक्त है यादवनके बालक करकेंटाके निकासवेको उपाय करते भये ॥ ३ ॥ बालक करकेंटाकूं चामके और सूतके रस्सनासूं बांधिके निकासवेकूं नहीं समर्थ होते भये, तब उत्कण्ठायुक्त बालक श्रीकृष्णचंद्रते आयके कहतभये ॥४॥ विश्वके करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र तहां आयके करकेंटाकूं देखिके लीलाकरिके बांयें हाथते निकासत भये ॥ ५ ॥ उत्तम

१ चौपाई-यह संवाद सुनै जो कोय । ज्वरको भय ताको नहिं होय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

यज्ञ श्रीकृष्णचंद्रके हाथ लगेते शीघ्रही करकेंटाके रूपकूं त्यागिके तप्तसुवर्णकी तुल्य सुंदर वर्ण अद्भुत आभूषण वस्त्र मालानकूं धारण करे वह देवस्वरूप होतभयो ॥ ६ ॥ मुक्तिके देनवार श्रीकृष्णचन्द्र ता करकेंटा होवेके कारणकूं जानेहू है परंतु जननें विख्यात करिवेके निमित्त पूछतेभये हे बडभागी! श्रेष्ठ सुन्दररूपधारे तुम कौन हो मैं तुम्हें देवतानमें उत्तम देवता निश्चय मानूंहूं ॥ ७ ॥ हे मंगलरूप! या लायक तुम नहीं हो कौन कर्मते तुमकूं करकेंटाकी योनि प्राप्त भई, जो हमकूं कहवे योग्य समझो तौ हमारे आगे अपनो वृत्तान्त कहो ॥ ८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! अनंतमूर्ति श्रीकृष्णचन्द्रने या प्रकार पूछ्यो तब राजा नृग सूर्यकी तुल्य तेजवारे किरीटसूं श्रीकृष्णचन्द्रकूं प्रणाम करिके बोलतोभयो ॥ ९ ॥ राजा नृग कहे हैं हे समर्थ ! मैं इक्ष्वाकुको पुत्र नृगनाम राजा हूं, दानी राजानकी बात चलीहोगी तब मेरो नामहू आपके कानमें परो होयगो ॥ १० ॥ हे नाथ ! सब प्राणीनकी बुद्धिके साक्षी तुम हौ कहा सो नहीं जानोहौ, कालकरिके तुम्हारो ज्ञान नहीं होतो, तथापि तुमने बूझी है तौ तुम्हारी आज्ञाते कहूंगो ॥ ११ ॥ हे नाथ ! जितनी पृथ्वीकी रेणुका हैं और जितनी आकाशमें तारागण हैं तथा जितनी वर्षाकी बूंदे हैं तितनी गौनको मैंने दान करयो है ॥ १२ ॥ दूध देनेवारी तरुण अवस्था, शील स्वभाव रूप गुणसो भरी कपिला और नीतिपूर्वक संचय करी सुवर्णसूं सींग रूपेसूं खुर मढे, बछरा संग और वस्त्र माला गहने पहिराय ऐसी गौ मैं देतभयो ॥ १३ ॥ भले प्रकार शोभायमान गुण शीलयुक्त दूध विना दुःखित, कुटुम्बी पाखंडरहित आचारवाले तपस्या करिके प्रसिद्ध, वेदकूं पढावनहारे तरुण अवस्थावाले द्विजनमें श्रेष्ठ ब्राह्मणकूं दान करिके देतभयो ॥ १४ ॥ गौ पृथ्वी सुवर्ण महल घोडा हाथी इत्यादि दान करे, और दासीसहित कन्यादान करे तिल रूपी शय्या वस्त्र रत्न और आच्छादनके श्रेष्ठ वस्त्र रथनके दान करे, यज्ञ करे, कुआ तलाव बावरी बनवाये ॥ १५ ॥ ऐसो मैं हौं परंतु मोकूं एक संकट आयके प्राप्त भयो सो श्रवण करो, कोई एक याचक ब्राह्मणकी गौ भाजिके मेरी गौवनमें मिलि गई, वह गौ मैंने विना जाने दूसरे ब्राह्मणकूं दान करि दिनी ॥ १६ ॥ वा गौको मालिक गौकूं लै जाती देखिके यह गौ मेरी है या प्रकार कहत भयो, दूसरो ब्राह्मण कहत भयो कि यह गौ मोकूं राजा नृगने दान करिके दीनी है ॥ १७ ॥ या प्रकार आपसमें विवाद कर, अपने अपने प्रयोजनकूं सिद्धि करनहारे दोनों ब्राह्मण आयके कहत भये, जाकूं दान करिके दीनीही वह ब्राह्मण कहत भयो कि, राजा ! तूही याको दाता है और जाकी गौ ही ताने कही कहांको दाता है विरानी गौ पुण्य करै है यह वार्ता श्रवण करिके मोकूं भ्रम भयो ॥ १८ ॥ धर्मसो कष्टित मैंने दोनों ब्राह्मणकी विनती करी, कि महाराज ! या गौके बदले सुंदर सुंदर एक लक्ष गौ देऊंगो यह गौ दीजिये ॥ १९ ॥ मैं तुमारो दास हूं, मैंने जानी नहीं कि यह गौ तुमारी है, मेरे ऊपर अनुग्रह करो, घोरनरकमें गिरते भये मेरी कष्टते रक्षा करो ॥ २० ॥ हे राजन् नृग ! और तेरी लाख गौ मोकूं नहीं अपेक्षित है, जो दान करिके दीनी है सोई लेऊंगो यह कहिके जा ब्राह्मणकूं गौ दीनीही वह गौकूं त्यागिके घरकूं जात भयो ॥ २१ ॥ हे देवतानके देव जगत्के पालन करनवारे ! याके पीछे यमके दूत आयके धर्मराजके पास मोकूं लेगये तहां धर्मराजाने मोकूं पूछो ॥ २२ ॥ हे राजन् नृग ! तुमारे दान और धर्मको लोकके प्रकाशको मैं अंत नहीं देखूंहूं, परन्तु यत्किंचित् तुम्हारो पाप है, और सम्पूर्ण शुभ है सो

---

१ प्र०—नृगने गायोंकी अनन्त संख्या क्यों कही ? उत्तर—इसका आशय यही है जहांतक उसको गाय मिलीं, वहांतक प्रदान कीं इससे अधिक असंख्य कहा ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रथम तुम पाप भोगोगे अथवा शुभ ॥ २३ ॥ या प्रकार धर्मराजने कह्यो, तब प्रथम पाप भोगोंगो ऐसे मैंने कह्यो ताहीं समय धर्मराजने आज्ञा करी कि याकूं करकेंटाकी योनिमें गिराय देउ हे प्रभो ! तब मैं गिरतेही अपनो करकेंटाको रूप देखतभयो ॥ २४ ॥ हे केशव ! ब्राह्मणको भक्त दाता तुमारे दर्शनकी इच्छा अबतक मोको लगरही है आपकी कृपासो स्मृतिको नाश नहीं भयो है ॥ २५ ॥ हे प्रभो योगेश्वर ! वेदरूप नेत्र करिके निर्मल हृदयमें जिनकी भावना करे और इन्द्रियनकी जिनमें पहुंच नहीं ऐसे परमात्मा तुम अति दुःखन करिके आंधरी बुद्धिवारे मोको कैसे प्रत्यक्ष दिखाई दिये यह आश्चर्य है या संसारमें जा पुरुषको संसार छूटनेहारे होय हैं ताकूं तुमारो दर्शन होई है ॥ २६ ॥ हे देवनके देव ! हे जगत्के नाथ ! हे गोविन्द ! हे पुरुषनमें उत्तम ! हे नारायण ! हे इन्द्रियनके प्रेरणवारे ! हे पवित्रयशी श्रीकृष्णचन्द्र ! हे अखण्डरूप ! हे अविनाशी ! ॥२७॥ हे कृष्ण ! हे समर्थ ! अब मैं स्वर्गमें जाऊंहूं मोकूं आज्ञा देउ, जहां कहूं मैं रहूं तहां मेरो चित्त तुमारे चरणमें लग्यो रहे ॥२८॥ जिनतें सब कार्यको जन्म होय है विश्वके कर्त्ता तथापि आप विकाररहित हो, अनन्त माया शक्तिमान् वासुदेव अर्थात् सब प्राणीनके आश्रय कृष्ण अर्थात् सर्वदा आनन्दरूप वेदनके कहे जे यज्ञादिक कर्म, और स्मृतिनके कहे जे कुआ बावरी तलाव इत्यादिक कर्मनते फलदाता तुमकूं नमस्कार है ॥ २९ ॥ राजा नृग या प्रकार कहके श्रीकृष्णचंद्रकी परिक्रमा देके अपने मुकुटते चरणकूं स्पर्श करिके आज्ञा लैके सब प्राणीनके देखत विमानमें चढत भयो ॥ ३० ॥ ब्राह्मणके भक्त धर्मात्मा देवकीके पुत्र श्रीकृष्णचंद्र क्षत्रियनकी शिक्षाके लिये अपने परिवार यादवनसूं कहत भयो ॥ ३१ ॥ अग्निकी तुल्य तेजस्वी पुरुषनकोहू ब्रह्मअंश नहीं पचै है और अपनेकूं ईश्वर माननहारे राजानकी कौन कथा है ॥ ३२ ॥ मैं हालाहल विषकूं विष नहीं मानूंहूं वाके दूरि करिवेको औषधि है, परंच ब्रह्मअंश विष है या पृथ्वीमें ब्रह्मअंशके दूर करिवेके उपाय नहीं है ॥ ३३ ॥ विष खानवारेकूंही मारे है अग्निहू जलसूं शांति होय है और अग्निके जराइवेमें जड बाकी रहजातहै, परंतु ब्रह्मअंशरूप लकडीमेंते जन्मो अग्नि मूलसहित कुलकूं भस्म करे है ॥ ३४ ॥ शास्त्रनसों निषेध कर्यो ब्रह्मअंशको अनजाने भोगेते तीन पीढीनको नाश करै है, जो भोगे ताकूं वाके पुत्रकूं वाके पौत्रकूं और राजा बलसो अथवा छीनके जे ब्रह्मअंशको भोग करै, तौ दश अगिली और दश पीछली एक आप ऐसे इक्कीस पीढीनको नाश करै है यासो ब्राह्मणको पूजनहीं करै ॥ ३५ ॥ जो कि लक्ष्मीसूं आंधरे

---

१ यासो ब्राह्मणको पूजनही करै—एक राजा परदेशी ब्राह्मणको जो द्वारेपे आवे तो लाख रुपैया दियो करै, एक दरिद्री ब्राह्मणकी स्त्रीने बहुत कह सुनकर अपने पतिको उनके नगरमें भेजा, यह चले राजा सिकार खेले आवे है, मार्गमें ब्राह्मणसे भेंट भई, राजा बोले कहांते आयेहो कहां जाओगे, ब्राह्मण न बोले तब राजाने प्रार्थना कर पांव पकड पूछी कहा काम है कहो तौ तब यह बोले हम पंडित हैं काशीजीसे आये हैं इस राजाके मूंडपे पन्ही मार लाख रुपैया ले जांयगे राजाने कही ब्राह्मण बुरे जो लाख रुपैया लेजाय और पन्ही मारे सो महलोंमें जाय डयोढीवानसे कही किसी ब्राह्मणकूं भीतर मत आनेदो, अब वे पंडित थारी कटोरा लोटा बचके खागये पर भीतर न जान पावे, तब बगदके अपने घर जाय समाचार सुनाये यह राजा वैष्णव हो बलभद्र श्रीकृष्णका पूजन करैहो एक दिन बलदेवजी सिंहासनते गिरपरे देखकै राजा बडा भयभीत हुआ ब्राह्मणोंको बुलाय पूछा क्या उत्पात होगा कोई कुछ कोई कुछ कहने लगे सब राजानै ढंढोरा पिटवाया जो समाधान करैगा बडा द्रव्य मिलैगा, फिर उन ब्राह्मणकी स्त्रीने प्रार्थना करी तब वे पूर्व ब्राह्मण राजाके प्रश्नका उत्तर दैने आये और बोले राजा तू कुछ मत डरै कुछ उत्पात न होगा जगन्नाथजी गिरते तौ उत्पात होता बलदेवजी तौ नित्य वारुणी पिये मत्त रहे हे इनके गिरनेका क्या आश्चर्य ? तब राजाने प्रसन्न होय लाख रुपैया दिये, और कही ब्राह्मणको आनेसे कोई मत रोकियो, यह पन्हैया मारेही धन लेई ब्राह्मण बिना और प्रश्नका कौन उत्तर देता ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजा है, ते अपनो नरकमें गिरिवो नहीं देखे हैं जे मूर्ख पुरुष ब्रह्मअंशपै मन चलामें हैं वे पुरुष नरकमें जायवेकी इच्छा करे हैं ॥ ३६ ॥ कुटुंबी उदार जीविका हरजायवेसों जो ब्राह्मण रुदन करें हैं तिनके नेत्रनते आंसूनकी बूंद गिरिके जितनी पृथ्वीकी रेणु भीजे है. तितने वर्ष पर्यंत ब्राह्मणके धनके हरनवारे निरंकुश राजा और राजनके दीमान प्रधान टहलुआ कुम्भीपाक नरकमें पडे हैं ॥३७॥३८॥ जो पुरुष अपनी दीनी अथवा औरकी दीनी ब्राह्मणकी जीविका हरे वह पुरुष साठि हजार वर्ष पर्यंत विष्ठाको कीरा होय है ॥ ३९ ॥ मेरे घरमें ब्राह्मणको धन मति आओ, जे मनुष्य ब्राह्मणके धनकी चाहना करे है वे अल्पायु होइ हैं, पराजयकूं प्राप्ति होइहै, और राज्यके भ्रष्ट होके मनुष्यकूं भयके देनवारे सर्प होय हैं ॥ ४० ॥ अपराधकूं करे मार तौ आवे बहुत गारी देई ऐसे ब्राह्मणनेहू द्रोह मति करो नित्य नित्य नमस्कारही करो ॥ ४१ ॥ जैसे सावधान हैके समय समयते ब्राह्मणकूं मैं नमस्कार करूंहूं, तैसे तुमहूं नमस्कार करो और कोई मेरी आज्ञाकूं न मानेगो वह पुरुष मोसो दण्ड पावेगो ॥ ४२ ॥ ब्राह्मणको धन हरनवारेकूं नरकमें डारे हैं, या बातकूं कोई मिथ्या मति मानियो विना जाने नृगराजाने ब्राह्मणकी गौ ब्राह्मणकूं दीनीही तासूं यह जैसे नरकमें गिरयो ॥ ४३ ॥ समस्त लोकनके पवित्र करनवारे मुकुन्द भगवान् या प्रकार द्वारिकावासीनकूं सुनायके अपने मंदिरमें जाते भये॥४४॥

एवं विश्राव्य भगवान्मुकुन्दो द्वारकौकसः ॥
पावनः सर्वलोकानां विवेश निजमन्दिरम् ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभा० दश० उ० नृगोपाख्यानं नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

अध्याय ६५.

श्रीशुक उवाच-बलभद्रः कुरुश्रेष्ठ भगवान् रथमास्थितः ॥
सुहृद्दिदृक्षुरुत्कण्ठः प्रययौ नन्दगोकुलम् ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी बोले हे कुरुवंशीनमें श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ! एक समय इच्छासो भगवान् बलदेवजी रथमें बैठिके सुहृदनके देखिवेके लिये नन्दजीके गोकुलमें जाते भये ॥ १ ॥ बहुत दिननते उत्कंठा लगाये गोप गोपी मिलते भये, बलदेवजीने माता पिता नंद यशोदाकूं प्रणाम करी. तब उनने आशीर्वाद दीने ॥ २ ॥ हे दाशार्हवंशोत्पन्न जगत्के ईश्वर बलदेवजी ! छोटे भैया श्रीकृष्णसहित तुम हमारी बहुत दिन पर्यंत रक्षा करौ, या प्रकार गोदमें बैठारिके छातीते लगायके नेत्रनमेंते वहे आंसूनसूं बलदेवजीकूं भिजोवतभये ॥ ३ ॥ विधिपूर्वक वृद्ध गोपनकूं प्रणाम करके छोटे गोपनसो प्रणामको प्राप्त हैके बलदेवजी जैसा जाकी अवस्था और जैसी जाते मित्रता ही जैसो जाते संबंध हो ॥ ४ ॥ तैसेही तिनकूं प्राप्त होके हास्य और हाथको पकरिवो इत्यादिकनसूं मिलिके जब बलरामजी विश्राम लेचुके सुखपूर्वक बैठे और कुशल पूछी ॥५॥ वासमय गोप कि जिनने कमललोचन श्रीकृष्णचंद्रके निमित्त सब विषय त्याग दिये हैं वे सब बलरामजीके निकट आय चारों ओर बैठ गये और प्रेमसों गद्गद वचन हैके अपने बंधु यादवनकी कुशल पूछनलगे ॥ ६ ॥ हे राम ! सम्पूर्ण हमारे बंधु यादव प्रसन्न हैं अब तुमारे विवाह भये, तुमारे पुत्र भये तुम कछु हमारी सुधि करोहो ॥ ७ ॥ पापी कंस मरयो यह बडो मंगल भयो, और हमारे सुहृदजन बंदीखानेते छूटे यह बडो मंगल भयो, शत्रुनकूं मारिके तुम द्वारकापुरीमें किलो बनाइके रहे यह बडो मंगल भयो ॥ ८ ॥ रामके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दर्शनसो प्रसन्न हैके गोपी हँसिके पूछतिभई, पुरके स्त्रीजननकूं प्यार करनवारे कृष्ण सुखी हैं ॥ ९ ॥ यह कृष्ण कबऊ अपने बंधुनकीहू सुधि करेहै, अपनी माताकीहू सुधि करे है, कबऊ अपनी माताकूं एकवार देखवेकूं हूं आवेगो बडी भुजावारे श्रीकृष्ण कबऊ हमारी सेवाकीहू सुधि करे हैं ॥ १० ॥ हे दाशार्हवंशोत्पन्न समर्थ बलदेवजी ! या कृष्णके लिये माता पिता भैया पति पुत्र बहिनि स्वजन ये सब दुःख करिकेहू छोडे नहीं जायहै सो हमने छोडि दिये ॥ ११ ॥ तिन हमकूं छोडिके स्नेहकूं तोरिके कृष्ण जातभयो कदाचित् तुम कहो कि जब गयो हो तब क्यों नहीं रोक्यों, ताको जवाब देइ है वाके मनको विश्वास आयगयो, तासूं न रोक्यों, वाके वचनको विश्वास क्यों करो हो यह बलदेवजी कहै ताको उत्तर है कि वाको मीठे मीठे वचन स्त्रीनके मनमें कैसे न आमें कहनवारी बहुत हैं याते नाना प्रकारके वचन है ॥ १२ ॥ तहां और गोपी कहैं है चंचल चित्त कृष्णके वचन विवेकिनी पुरकी स्त्री कैसे सत्य माने हैं, और गोपी कहै है चित्रविचित्र कथावारे कृष्ण सुंदर मुसिक्यान चितवनिसूं वृद्धिसूं प्राप्त भये कामदेवकूं आतुर हैके सत्य माने है ॥ १३ ॥ और गोपी कहैं है हे गोपियो! वाकी बातसूं हमें कहा काम है और बात क्यों न कहो, हमारे विना जैसे वाको काल व्यतीत होय है तैसे वाके विना हमारोहू काल व्यतीत होय है, वाकूं सुखकूं बीते हैं हमकूं दुःखसूं बीते हैं इतनोही अंतर है ॥ १४ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णकी हँसनी बोलनी सुंदर चितवनि पांवनकी चलनि प्रेमपूर्वक आलिंगनकी सुधि करिके सब स्त्री रुदन करती भई ॥ १५ ॥ अनेक प्रकार समझायवेमें निपुण भगवान् संकर्षण मनोहर श्रीकृष्णके संदेशकूं कहिके समझावत भये ॥ १६ ॥ ता व्रजमें भगवान् श्रीबलदेवजी रात्रिनमें गोपीनकूं आनन्द देत चैत्र वैशाख दो महीना पर्यंत वास करतेभये ॥ १७ ॥ पूर्णचन्द्रमाकी कला करिके शोभायमान कुमोदनीनकी सुगंधियुक्त पवन जहां आवै ऐसे यमुनाजीके बागमें स्त्रीनकूं संग लैके रमण करतभये ॥ १८ ॥ वा समय वरुणकी भेजी वारुणी वृक्षनकी खोतरीनमेंते गिरिके समस्त वनकूं अपनी गंधते सुगंधित करती भई ॥ १९ ॥ पवनसो प्राप्त वारुणी धारकी सुगंधि सूंघिके बलदेवजी तहां आयके स्त्रीनकूं संग ले वारुणीपान करते भये ॥ २० ॥ स्त्री जिनके चरित्र गाय रहीं और हल शस्त्रके धारण करनहारे मतवारे अमलसो विह्वल नेत्र होके बलदेवजी वनमें विचरते भये ॥ २१ ॥ वनमाला और कानमें कुंडल पहिरे, मतवारे वैजयंती मालाकूं पहिरवेसो शोभायमान पसीनाके बिंदुन करिके शोभायमान मंद हास्ययुक्त कमलरूप मुख धारण करें ॥ २२ ॥ जलक्रीडा करिवेके लिये समर्थ बलदेवजी यमुनाकूं बुलावत भये यह मतवारो है या कारणते बलदेवजीके वचनको अनादर करिके यमुना नहीं आवती भई, तब क्रोध करिके हलके अग्रभागसूं खेंचते भये ॥ २३ ॥ और बोले हे पापिनी ! मैंने बुलाया और तू नहीं आई यासो स्वच्छंद

---

१ गोपियें आससे जीये हैं एक लालाने बिलैया पालीही वाको नित्य दूध मलाई खवायो करें, एक दिन कछु कामको ग्रामांतरमें गये, और बिलैयाको डोरीसै खंभमें बांध गये और वाकी सुधि भूल गये और कई दिन लगगये बिलैया भूखों मरनै लगी घरमें कहूं दलानके कौनेमें एक रुईको गाला धरे हो सो बिलैयाने जान्यो कि यह घीको लौंदा है सो उछर उछरके बिलैया वा रुईके गालापै जाय परे वह हाथ न आवै अब लियो २ याही आशामें अठारह दिन बीतगये इधर लाला अठारह दिनमें आय कहने लगे अरे राम बिलाई तौ मरगई होगी ताला खोलके देखैं तौभी अभी जीवै है ज्यों वाकी डोरी खोली कि वह झपटके रुईके गालापर गिरी सो वह तौ गालाई हो निरासा जो भई झट बिलैयाके प्राण निकल गये यासे जीवै आसा मरै निरासा यह सत्य है ॥ २ दोहा—करि करि सुधि श्रीकृष्णकी, व्याकुल भइ ब्रजबाल । कब आवेंगे कृष्णजू, सुखदायक नन्दलाल ॥ कहई श्याम अति निठुरता, करी हमारे संग । कहा यह दुख दिखावने, कहां रासरसरंग ॥

३ प्र०—बलरामजीने यमुनाको क्यौं खैंचा ? उत्तर—काली नागके निकट जानैसै यमुना अभिमत होकर वहन करतीथी ग्रीष्ममेंभी मार्ग नहीं देतीथी इस कारण अभिमान दूर किया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

फिरनहारीको तोको हलके अग्रभागसों मैं खंडित कर दैउगो ॥ २४ ॥ हे राजन् ! या प्रकार डराई यमुना भयभीत और चकित हैके चरणमें गिरके यदुनन्दन बलदेवजीकूं बोलती भई ॥ २५ ॥ हे राम ! हे राम ! हे महाबाहो ! तुमारे पराक्रमकूं मैं नहीं जानूं हूं, जिन तुमारे एक अंश शेषजीने समस्त पृथ्वीकूं सहस्र फणनमेंते एक फणपै धारण कोर राख्यों है ॥ २६ ॥ हे भगवन् ! तुमारे श्रेष्ठ प्रभावकूं नहीं जानेही अब शरण आई हूं हे विश्वके आत्मा भक्तनपै हितके करनवारे मोको छोडिवेकूं योग्य हो ॥ २७ ॥ ऐसें जब प्रार्थना करी तब भगवान् बलदेवजी यमुनाकूं छोडि देतभये, जैसे हाथी हथिनीनके संग विहार करें ऐसे यमुनामें गोपिनके संग विहार करतभये ॥ २८ ॥ इच्छापूर्वक विहार करिके जलमेंते निकसे बलदेवजीकूं लक्ष्मी नीलाम्बरकी धोती उपरना देती भई, बडे मोलके आभूषण और सुंदर माला देती भई ॥ २९ ॥ नीलाम्बरकी धोती और नीलाम्बरकेही उपरना और सुवर्णकी माला पहिरिके भले प्रकार शोभायमान चंदन लगाये बलदेवजी इन्द्रके हाथीकी समान शोभायमान होत भये ॥ ३० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! अबपर्यंतहू यमुनाजी खींची भई दिखाई देह है, अनंतपराक्रम बलदेवजी पराक्रमकूं यमुनाजी जतावे हैं ॥ ३१ ॥ ब्रजकी स्त्रीनके संग विलास करिके चलायमान चित बलदेवजीकूं ब्रजमें रमण करत एक रातिकी समान सम्पूर्ण राति बीतती भई ॥ ३२ ॥

एवं सर्वा निशा याता एकेव चरतो व्रजे ॥
रामस्याक्षिप्तचित्तस्य माधुर्यैर्व्रजयोषिताम् ॥ ३२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दश० उत्तरार्धे बलदेव० नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

अध्याय ६६.

श्रीशुक उवाच-नन्दव्रजं गते रामे करूषाधिपतिर्नृप ॥
वासुदेवोऽहमित्यज्ञो दूतं कृष्णाय प्राहिणोत् ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित ! जब बलरामजी नंदरायके ब्रजमें आये, तब अज्ञानी करूषदेशके राजा पौंड्रकने, मैं वासुदेव हूं या प्रकार मनमें विचारि करिके श्रीकृष्णचंद्रके पास दूत भेजो ॥ १ ॥ तू वासुदेव अवतर्‌यो है जगत्‌को पति है या प्रकार अज्ञानी पुरुषने जब तेरी प्रशंसा करी, तब तू अच्युत मानत भयो, सो तू अच्युत नहीं है ऐसे कहिके दूत भेजतो भयो ॥२॥ अचिंत्य मार्गवारे श्रीकृष्णचंद्रके पास द्वारकापुरीमें अज्ञानी पौंड्रक दूत भेजत भयो जैसे खेलमें बालक एक बालकको राजा बनायदेय है वह अपनेकूं राजा माने ऐसे अपनेकूं पौंड्रक वासुदेव मानतो भयो ॥ ३ ॥ कमलपत्रकी तुल्य नेत्रवारे श्रीकृष्णचंद्रकूं दूत जायके सभामें बैठे देखिके राजा पौंड्रकको संदेशो कहतभयो ॥ ४ ॥ प्राणीनके ऊपर कृपा करवेके लिये एकही मैं वासुदेव अवतर्‌यो हूं दूसरो नहीं है, तैंने मिथ्याही अपनो नाम वासुदेव धरि राख्यो है ताय त्यागि दे ॥ ५ ॥ हे यादव मूढ ! तू मेरे चिह्न गदापद्म धारण करे है, तिनकूं शीघ्र त्यागिकै मेरी शरण आऊ, और जो नहीं छोडे तो मोसो युद्ध करिवेकी तयारी कर ॥ ६ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! मंदबुधि पौंड्रकको संदेशो श्रवण करिके ता समय राजा उग्रसेनते आदि लैके सभासद असत्य जान हँसतभये ॥ ७ ॥ हँसिके भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र दूततें बोलतेभये हे

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मूढ ! कृत्रिम सुदर्शनादिक चिह्नसूं तू अपनी ऐसी बडाई करे है तिनकूं तापैसे छुडाय लेऊंगा ॥ ८ ॥ हे अज्ञानी ! जा समय तू अपन मुखकूं ढकिके और काक गीध बगुलानसो घिरो तू मरिके सोवेंगो ता समय कुत्तानकी शरण लेइगो अर्थात् वे तोकूं भक्षण करेंगे ॥ ९ ॥ वा समय जो श्रीकृष्णचद्रने अनादर करिके कह्यो सो तैसेही दूत अपने स्वामी मिथ्या वासुदेवकूं सब श्रवण करावत भयो, और श्रीकृष्णचंद्रहू रथमें बैठिके काशीपुरीमें जाते भये, क्योंकि वाही समय पौंड्रकहू अपने मित्र काशीके राजाके आयेहौ याते ता समय श्रीकृष्णचंद्रहूं प्राप्त होते भये ॥ १० ॥ ता समय महारथी पौंड्रकहू श्रीकृष्णचंद्रके युद्धको उद्यम जानिके दो अक्षौहिणी सैन्य संग लैके शीघ्रही काशीपुरीते बाहिर निकसत भयो ॥ ११ ॥ ता पौंड्रकको मित्र काशीकी रक्षा करनवारो राजा मित्रकी सहाय करिवेके लिये पीछेते आवतभयो, तब तीन अक्षौहिणी सेना संग लैके पौंड्रककूं भगवान् श्रीकृष्णचंद्र देखते भये ॥ १२ ॥ शंख चक्र तरवार गदा धनुष भृगुलत्तासूं आदि लैके चिह्नसूं युक्त और कौस्तुभ मणिकूं धारण करे वनमालाकूं पहिरके शोभायमान है ॥ १३ ॥ रेशमी पीरी धोती उपरनानकूं पहिरे गरुडकी ध्वजावारे बडे मोलके मुकुट और आभूषण पहरे मकराकृतकुंडलन करिके प्रकाशमान है ॥ १४ ॥ जैसे रंगभूमिमें वेश बनायके नट आवै तैसे अपनी बराबरीके बनाये भये रूपकूं धारण करें मिथ्या वासुदेवकूं देखिके श्रीकृष्णचन्द्र बहुत हँसते भये, क्योंकि नकलीने ज्योंकि त्यों नकल उतारी है ॥ १५ ॥ त्रिशूल, गदा, वेडे, बरछी, गुर्ज, पटा, बाण ये हथियार वैरी श्रीकृष्णचन्द्रके ऊपर चलावतोभयो ॥ १६ ॥ जैसे प्रलयकी अग्नि जरायु, स्वेदज, अंडज, उद्भिज्ज इन चार प्रकारके प्राणीकूं पीडा देइ है, ऐसेही श्रीकृष्णचन्द्र मिथ्या वासुदेवकूं और काशीके राजाकूं और तिनके हाथी घोडा प्यादेकी चतुरंगिणी सैन्यकूं गदा, तरवारी, चक्र, बाणसूं बहुत पीडा देते भये ॥ १७ ॥ चक्रसूं काटेभये रथ घोडा हाथी प्यादेनके मरवैसौं जैसै रणभूमि महादेवजीकी क्रीडाभूमिके समान भयंकर लगती भई शूर वीरनकूं देखिके आनंद होतो भयो ॥ १८ ॥ सेना मारे पीछे शूरवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचंद्र पौंड्रकते कहत भये भो भो पौंड्रक ! जो तैंने दूतसो कहवायो हो वह शस्त्र तोपें छोडूहूं ॥ १९ ॥ हे अज्ञानी ! मेरो नाम जो वासुदेव है सो तैंने अपनो नाम झूठोही धरि लीनो, यह तेरा नाम छूटि जायगो; और जो तेरे आगे युद्ध न करूंगो तौ तेरी शरण लेउंगो ॥ २० ॥ या प्रकार तिरस्कार कर पैंने बाणनसूं पौंड्रकको रथ तौरिके जैसे इन्द्र अपने वज्रते पर्वतकी शिखरको काटै है, तैसें चक्रते श्रीकृष्णचन्द्र पौंड्रकको शिर काटतभये ॥ २१ ॥ तैसेही काशीके राजाकों बाणनकरिके देहसो शिर उखारिके काशीपुरमें पटकत भये जैसे कमलकोशकूं पवन पटकै है ॥ २२ ॥ या प्रकार मित्रसहित पौंड्रककूं मारिके सिद्धनसों गाई अपनी कथाकूं श्रवण करते श्रीकृष्ण द्वारकापुरीमें आवतेभये ॥ २३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! सदा राजा पौंड्रक सदा भगवान्के ध्यानते कर्म बन्धन दूर हैवेसो हरि भगवान्को रूप धारे तद्रूप है गयो ॥ २४ ॥ काशीमें राजाके द्वारपै कुंडल सहित परे शिरकूं देखिके यह कहा है कौन मुख है या प्रकार मनुष्य संदेह करत भये ॥ २५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! पीछे काशीके राजाको शिर जानिके रानी और पुत्र भैया बंधु तथा पुरवासी हे नाथ ! हे नाथ ! हाय हाय मरे मरे या प्रकार कहि कहिके रुदन करत भये ॥ २६ ॥

१ एक बनियेने देखादेखी अपनी डंडी तोलनी छोड दीनी और चोरोंकी संगति कर तरवार बांध चोरी करनेलगो मनमें कही चोरीको भलो रुजगार है घरीभरमेंही हजारनको माल मिलजाय है सो कही किन्ही चोरोंके संग कूमलदे भीतरकूं घुसे तौ जाग होगई राजाके सिपाही दौरे सो वे चोर तौ संगके सब भागगये बनियेपै भाग्यो न गयो तब धोरे ही एक तालावमें तरवार डाल जलमें डुबक्यौ अब सिपाहीनकूं चोर तौ मिले नहीं प्यास लगी तौ सरोवरके तट आये सो वहा लालाकूं देखके पकर्‍यो कि तुम यहां कैसे आये बनिया बोला महाराज शौचके निमित्त ह्यां आयोहों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

काशीके राजाको सुदक्षिण नाम पुत्र अपने पिताकी परलोक क्रिया करिके पिताके मारनवारे कृष्णकूं मारिके पिताको ऋण चुकाऊंगो ॥ २७ ॥ या प्रकार बुद्धिसूं निश्चय करिके उपाध्यायन सहित सुदक्षिण परम समाधि लगायके शिवजीको पूजन करतभयो ॥ २८ ॥ विशेष करिके मुक्त भगवान् शिवजी प्रसन्न होके सुदक्षिणकूं तू वर मांग, या प्रकार कहत भये, तब सुदक्षिण पिताके मारनवारेके वधको उपाय बताओ यह वांछित वर मांगत भयो ॥ २९ ॥ तब शिवजी कहन लगे तू ब्राह्मणनके संग ऋत्विकके समान आज्ञाकारी दक्षिणाग्निको मारणकी विधिसो पूजन कर वह अग्नि प्रमथानके साथ तेरे मनोरथनको पूर्ण करेगी ॥ ३० ॥ परन्तु यह प्रयोग ब्राह्मणकी भक्तिसों रहित पुरुषपै चलावेगो तौ तेरो संकल्प सिद्ध होयगो, यामें कहा कह्यो ब्राह्मणकी भक्ति करनहारे श्रीकृष्णचन्द्रपै चलावेगो तौ उलटो परेगो, या प्रकार आज्ञा पाय नेम ग्रहण कर सुदक्षिण श्रीकृष्णकूं घातसूं मारिवेके लिये जैसे शिवजीने आज्ञा दीनी तैसेही करत भयो ॥ ३१ ॥ वह कुंडसूं अति भयानक मूर्तिमान् अग्नि उठत भयो, जाकी तप्ततामृकी तुल्य शिखा और दाढी मूछ है नेत्र और मुखसूं अंगारनकूं उगिलती है ॥ ३२ ॥ जिसका मुख दाढ और बडे तीक्ष्ण भ्रुकुटि दंडसे विकराल है, ऐसे अपनी जीभसे होठनको चाटती नग्न और देदीप्यमान त्रिशूलको घुमावती ॥ ३३ ॥ और बडे तालकी समान लंबे पांवसूं पृथ्वीकूं कंपावत और दशों दिशानकूं जरावत भूत प्रेतनकूं संग लैके वह अग्नि द्वारिकापुरीमें आवत भयी ॥ ३४ ॥ वनके जरिवेमें मृग जैसे त्रासकूं पामें हैं ऐसी कृत्याग्निकूं आती देखिके समस्त द्वारकावासी त्रासकूं पावत भये ॥ ३५ ॥ वे सब भयभीत है सभामें पांसेनसों खेलते श्रीकृष्णचंद्रसों जायके कहन लगे हे त्रिलोकीनाथ! अग्निसो सब पुरी जरीजाय है याकी रक्षा करो ॥ ३६ ॥ मनुष्यकी व्याकुलता सुनिके और अपने पुरके यादवनको हरबराहट देखिके शरणागतनके रक्षक श्रीकृष्णचंद्र हँसिके भय मति करो मैं रक्षा करूंगो या प्रकार कहते भये ॥ ३७ ॥ सबके भीतर बाहरके देखनवारे समर्थ श्रीकृष्णचंद्र वाकूं महादेवकी कृत्याग्नि जानिके ताके नाश करिवेके निमित्त पास ठाढे चक्रकूं आज्ञा करते भये ॥ ३८ ॥ किरोड सूर्यकी बराबरी तेजस्वी प्रलयकालकी अग्निकी तुल्य कांतिमान अपने तेजसों आकाश दिशा द्यावापृथ्वीको प्रकाश करतो मुकुंदको अस्त्र चक्र सुदर्शन ता अग्निकूं पीडा देतभयो ॥ ३९ ॥ हे राजन् परीक्षित्! श्रीकृष्णचंद्रके अस्त्रके तेजसों प्रतिहत और भग्नमुख है के वह अग्नि पीछे लोट गई, और काशीमें आयके यज्ञके करावनवारे ऋत्विग्जनसहित सुदक्षिणकूं जरावती भई क्योंकि अपनो करयो अभिचार है, यामें कहा द्योतन करयो कि जो शत्रुपै चलि जाय तौ चलिजाय नहीं तो चलावै ताकूं मारे ॥ ४० ॥ ता अग्निके पीछे आय श्रीकृष्णचंद्रके चक्रने मंचान सहित सभा, हवेली दुकान, पुरके दरवाजे और खजानो सहित अटारी कोठे हाथी घोडा अन्न इनकी शाला बारी काशीपुरी सब जराय दीनी ॥ ४१ ॥ सरलकर्मा भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको सुदर्शनचक्र सम्पूर्ण काशीकूं जरायके फेरि पास आयके ठाढो होतो भयो ॥ ४२ ॥ उत्तमयशी भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको यह पराक्रम जो मनुष्य सावधान है के श्रवण करै अथवा श्रवण करावे वह सम्पूर्ण पापनते छूटि जाय है ॥ ४३ ॥

सो चोरनको देख डरके मारे तालावमें डुबक्यो फिर आपसों डरप्यो कि कहीं चोर जानके मोकूं न पकर लेजाय चोरनकूं मैंने पहचान लीनी है उनके नाम यह है परसा हो, सेहु हो, रामसाहा हो, फकीरचंद है, उधामल है ऐसे बीस चोरनके नाम लिखायके पकरवाय दीने और वाहूके ऊपर मार पडी अपनो काम छोड परायो काम करनो भलो नहीं याही प्रकार पौंड्रक मरयो ।

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

य एनं श्रावयेन्मर्त्य उत्तमश्लोकविक्रमम् ॥
समाहितो वा शृणुयात्सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उ० पौंड्रकादिवधो नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥

अध्याय ६७.

राजोवाच-भूयोऽहं श्रोतुमिच्छामि रामस्याद्भुतकर्मणः ॥
अनन्तस्याप्रमेयस्य यदन्यत्कृतवान्प्रभुः ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले हे शुकदेवजी ! अद्भुतकर्मा अनन्त अप्रमेय राम बलदेवजी और जो चरित्र करत भये तिनकी मैं फेरि सुनिवेकी इच्छा करूं हूं सो मेरे आगे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ तब श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! नरकासुरको सुग्रीवको मंत्री मयंदको भैया बडो पराक्रमी कोई द्विविद नाम करिके वानर हो ॥ २ ॥ सो अपने मित्र नरकासुरको ऋण चुकायवेके निमित्त पुर ग्राम खानि खिरक छप्पर इनकूं जरावत देशनको नाश करत भयो ॥ ३ ॥ कभऊ वह वानर पर्वतनकूं उखारिके देशनके ऊपर पटकिके चूर्ण करत भयो, और विशेष करके आनर्त देशनको महाकष्ट देत भयो, क्योंकि नरकासुरके मारनवारे श्रीकृष्णचंद्र वहीं विराजते हैं ॥ ४ ॥ दशहजार हाथीके बलवारो द्विविध वानर समुद्रके बीचमें ठाढो हैके भुजानते जलकूं उछारिके समुद्रके तटके देशनकूं डुबावत भयो ॥ ५ ॥ वह दुष्ट वानर बडे बडे ऋषिनके आश्रमनते जायके वृक्षनकूं तोरिके मल मूत्र करिके यज्ञकी अग्निकूं दूषित करतो भयो ॥ ६ ॥ बडो गर्व करे वह बंदर पुरुष और स्त्रीनकूं पकरि पकरिके पर्वतकी गुफानमें कंदरानमें धरिके जैसे भृंगी कीरानकूं मूंदि देई तैसे मूंदत भयो ॥ ७ ॥ या प्रकार वह वानर देशनमें उपद्रव करत कुलकी स्त्रीनकू दोष लगायके मनोहर गीत सुनिके रैवत पर्वतमें जात भयो ॥ ८ ॥ ता रैवतपर्वतमें जायके यादवनके पालन करनवारे कमलकी माला पहिरे सुंदर अंग स्त्रीनके बीचमें बैठे राम बलदेवजीकूं देखतो भयो ॥ ९ ॥ वारुणीकूं पीके गान करते मदसों विह्वल नेत्र मतवारे हाथीकी तुल्य देहसों प्रकाशमान हैं ॥ १० ॥ दुष्ट शाखामृग बंदर वृक्षकी शाखानपै चढिके उनकूं हलावत आपेकूं दिखायके किचिरकिचिर शब्द करतो भयो ॥ ११ ॥ वा बंदरकी धृष्टता देखिके स्वभावते चंचल, हास्यप्रिय श्रीबलदेवजी संगकी स्त्रीहू हँसती भई ॥ १२ ॥ वह बंदर भृकुटी चढायके साह्मों घुडकिके स्त्रीनकूं अपनी गुदा दिखायके बलरामजीके देखत स्त्रीनकी अवज्ञा करतो भयो ॥ १३ ॥ प्रहार करनवारनमें श्रेष्ठ बलदेवजी क्रोध करिके बंदरके पत्थर मारत भये, वह धूर्त बन्दर पत्थरकूं बचायके वारुणीके कलशकूं फोरिके ॥ १४ ॥ वाकौं लैके हँसिके बलदेवजीकूं क्रोध करायके अवज्ञा करत भयो, धृष्ट बन्दर वारुणीके कलशकूं फोरिके स्त्रीनके वस्त्रनकूं खैंचिके फारत भयो, बडो बलवान् मदकरिके उद्धत बंदर बलदेवजीकी कदर्थना करिके दुःख देतभयो ॥ १५ ॥ ता बन्दरकी अनम्रता देखि और वाको कियो देशनमें उपद्रव देखि क्रोध करिके बलदेवजी ता वैरीके मारिवेकूं हल मूसल लेतभये ॥ १६ ॥ बडो पराक्रमी बन्दरहू हाथते शालवृक्षकूं उखारि शीघतासूं पास आयके ता वृक्षकी चोट बलदेवजीके माथेमें मारतो भयो ॥ १७ ॥ पर्वत तुल्य माथेपै पडते शालवृक्षको भगवान् बलदेवजी पकरत

---

१ प्र०-द्विविद वानर तौ रामावतारमें था उसकी बुद्धि क्यों बिगडी ? उ०-यह कुसंगका प्रभाव है असुरोंकी संगतिसे इसकी बुद्धि विपरीत हो गई थी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये और अपने मूसलकूं वा बन्दरके मारचो ॥ १८ ॥ मूसलसों वानरको शिर फूटगयो वामेंसों रुधिरकी धारा वहनलगी, जासो गेरू निकलते पर्वतकी समान शोभित भयो और वा प्रहारको नहीं विचार करके ॥ १९ ॥ बडे क्रोधसों बन्दर फेरि और वृक्षकूं बलते उखारिके और वाके सब पत्तानकूं साफ करिके बलदेवजीके मारतभयो, तब बलदेवजी वा वृक्षके टूक टूक करत भये ॥ २० ॥ ताके पीछे और वृक्षकूं उखारिके बलदेवजीके मारत भयो, तब वा वृक्षकेहू बलदेवजी सों टूक करत भये, या प्रकार भगवान् बलदेवजीके साथ युद्ध करिके जब वृक्ष कटिगये, तब चारों ओरसों वृक्षनकूं उखारिके निर्वृक्ष बन करत भयो ॥ २१ ॥ ताके पीछे असहनतासों वह बन्दर बलदेवजीके ऊपर पत्थर वर्षावत भयो मूसलधारी बलदेवजी बन्दरके वर्षाये पत्थर लीलाकरिके चूर्ण करते भये ॥२२॥ बन्दरनको स्वामी वह बन्दर ताल वृक्षकी बराबर बडी भुजाकी मुट्ठी बांधिके रोहिणीपुत्र बलदेवजीके पास जायके छातीमें मुष्टि मारतो भयो ॥ २३ ॥ यादवनके इन्द्र बलदेवजीहू हल मूसलकूं त्यागिके क्रोध करिके भुजानते बन्दरके कंठकूं मर्दन करत भये, ता समय वह बंदर रुधिरको वमन करि गिरतो मरतो भयो ॥ २४ ॥ हे कौरवनमें सिंहरूप राजा परीक्षित् ! जब वह वानर गिरो तब जैसे जलमें नाव कांपै है ऐसे टंक और वृक्षनसहित वह पर्वत कांपन लगो ॥ २५ ॥ आकाशमार्गमें देवता सिद्ध मुनीश्वर फूलनकी वर्षा करत जय शब्द और नमः शब्द और भले २ ये शब्द करते भये ॥ २६ ॥ या प्रकार जगत्के नाश करनवारे बन्दरकूं मारिके जननसों स्तुतिको प्राप्त है ऐसे भगवान् बलदेवजी द्वारकापुरीमें आवते भये ॥ २७ ॥

एवं निहत्य द्विविदं जगद्व्यतिकरावहम् ॥
संस्तूयमानो भगवाञ्जनैः स्वपुरमाविशत् ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कंधे उत्तरार्धे द्विविदवधो नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

अध्याय ६८.

श्रीशुक उवाच-दुर्योधनसुतां राजँल्लक्ष्मणां समितिञ्जयः ॥
स्वयंवरस्थामहरत्साम्बो जाम्बवतीसुतः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! युद्धमें जीतनवारो जांबवतीको पुत्र सांब दुर्योधनकी पुत्री लक्ष्मणाको स्वयंवरमेंते हरिके लावतभयो ॥ १ ॥ ता समय सम्पूर्ण कौरव क्रोध करके बोलत भये, यह बालक बडो अनम्र है हमारो अनादर करिके इच्छा नहीं हमारी कन्याकूं बलते हरत भयो ॥ २ ॥ अनम्र या बालककूं बांधि लेउ यादव हमारो कहा करेंगे, जे यादव हमारी प्रसन्नतासुं वृद्धिकूं प्राप्त भये हैं, हमारी दीनी भई पृथ्वीको भोग करें हैं ॥ ३ ॥ या बालककूं बंध्यो सुनिके जो यादव यहां आमेंगे प्राणायाम करेंतें जैसे इन्द्रिय शांति होय है ऐसे गर्व भंजन हेवेपै शांतिकू पावेंगे ॥ ४ ॥ या प्रकार भीष्मजीकी सम्मतिसों कर्ण, शल, भूरी, यज्ञकेतु, दुर्योधन यह बांधिवेको उपाय करते भये ॥ ५ ॥ महारथी सांब पीछे आते छः धृतराष्ट्रके अनुयायिनको देखिके सुन्दर धनुष हाथमें लैके सिंहकी तुल्य अकेलोही ठाढो होतो भयो ॥ ६ ॥ कर्ण आदि धनुषके धारण करनवारे वीर क्रोधमें भरिके सांबके पकरिवेके लिये ठाढो रह २ ऐसे कहत पास आयके बाणनकूं चलावतभये ॥ ७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! यादवनकूं आनंदके देनवारे अचिंत्य भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके पुत्र सांबके कौरवने बाण मारो, तब वह क्षुद्र जान वैरिनके पराक्रमकूं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सिंहकी समान नहीं सहारतो भयो ॥ ८ ॥ वीर सांब मनोहर धनुषकूं चढायके कर्णादिक छः वीरनको छः बाणनकरिके एक संग वेधतो भयो ॥ ९ ॥ चार बाणन करिके रथके चारों घोडानकूं और एक बाणकरिके रथमाननकूं वेधत भयो, बडे बडे धनुष्यधारी छः रथी सांबके पराक्रमकी प्रशंसा करत भये ॥ १० ॥ तिन कौरवनमेंसों चार जने तौ सांबके चारों घोडानकूं मारते भये और एक जनो रथमानकूं मारतभयो एक धनुषकूं तोरत भयो, या प्रकार सब मिलके सांबकूं विरथ करते भये ॥ ११ ॥ कौरव वीर युद्धमें बालक सांबकू विरथ करिके और बांधिके अपनी कन्याकूं लैके जीतिके अपने पुरमें जातभये ॥ १२ ॥ हे राजन् परीक्षित! नारदके कहेते सांबकूं बंध्यो सुनिके क्रोधित हैके यादवराजा उग्रसेनके कहेते कौरवनसूं लडिवेको उद्यम करते भये ॥ १३ ॥ कलियुगके पापनके नाश करनवारे बलदेवजी कौरव यादवनको परस्पर विरोध न होय यह विचारिके कवच पहिरे; हथियार बांधे यादवनको समझायके ॥ १४ ॥ सूर्यकी तुल्य कांतिवारे रथमें बैठिके ब्राह्मणकूं संग लिये, कुलमें वृद्धनकूं संग लैके, जैसे ग्रहन सहित चन्द्रमा गमन करै है ऐसे हस्तिनापुरकूं जात भये ॥ १५ ॥ बलदेवजी हस्तिनापुरमें जायके वस्तीके बाहिर बगीचामे ठहरिके कौरवनको अभिप्राय जानिवेके लिये धृतराष्ट्रके पास उद्धवजीकूं भेजते भये ॥ १६ ॥ उद्धवजी अंबिकाके पुत्र धृतराष्ट्रकूं प्रणाम करिके भीष्मजीकूं और बाह्लीकसहित द्रोणाचार्यकूं दुर्योधनकूं विधिपूर्वक प्रणाम करिके बलदेवजी आये हैं यह कहत भये ॥ १७ ॥ बडे हितकारी बलदेवजीकूं आये सुनिके अति प्रसन्न हैके सम्पूर्ण कौरव उद्धवजीको पूजन करिके भेटनकूं हाथमें लैके बलदेवजीके सन्मुख जात भये ॥ १८ ॥ ते कौरव रीतिपूर्वक बलदेवजीते मिलके गौ और धन देतभये, और तिन कौरवनमें बलदेवजीके प्रभावकूं जाननहारे इन्हें शिर नमायके प्रणाम करतभये ॥ १९ ॥ समस्त बंधुनकी कुशल श्रवण करि आपुसमें कुशल क्षेम पूछिके पीछे जाके श्रवण करेते व्याकुलता होय ऐसो वचन बलदेवजी कहत भये ॥ २० ॥ सामर्थ्यमान् पृथ्वीके ईश्वर राजा उग्रसेनने जो आज्ञा तुमकूं करी है वाको एकाग्र बुद्धिसूं श्रवण करिके शीघ्र करो ॥ २१ ॥ अब राजा उग्रसेनने कही है तुम बहुतनने अधर्म करिके धर्मात्मा बालककूं बांधिलियो यह तुमारो अपराध बंधुनकी आपुसमें एकता रहै विरोध न होय या कारण हमने सहारि लियो; अब तुम शीघ्र सांबकूं लायके अर्पण करो ॥ २२ ॥ पराक्रम शूरता बल युक्ति और अपनी सामर्थ्यके समान बलदेवजीके वचन श्रवण करिके कोपकरिके कौरव बोलते भये ॥ २३ ॥ अहो बडे आश्चर्यकी बात है देखो कालकी गति बडी दुरत्यय है, पावके पहिरवेके जूती मुकुट करिके सेवित शिरपै चढ्यो चाहे हैं ॥ २४ ॥ इनके यहांते जबते पृथाकूं व्याहिके लाये तबते यादवनते संबंध भयो है हमारे संग पलंगपै सोमे हैं संग बैठे हैं संग भोजन करे हैं, यादव हमने अपनी बराबरीके करि लिये और हमनेही इनकूं राज्यासन दियो है ॥ २५ ॥ चमर पंखा शंख श्वेतच्छत्र किरीट आसन शय्या ये वस्तु हमारी दीनी यादव भोग करें हैं ॥ २६ ॥ जैसे सर्पनकूं जो दूध पिवावै ताहीकूं काटे हैं, ऐसे इनने हमारे साथ बुरो कियो ऐसे यादव राज्यकी वस्तु छत्र चमरादिक देवेसूं पूरण भये, हमारी प्रसन्नतासूं बढे अब हमहीकूं आज्ञा करें हैं बडे कष्टकी बात है इनकूं लाजहू न आई, यादव बडे निर्लज्ज हैं ॥ २७ ॥ भीष्म द्रोण अर्जुन इत्यादि कौरवनके दिये विन वस्तुनकूं इन्द्रहू ग्रहण नहीं करसकेहै जैसे सिंहकी वस्तु वाके दिये विना भेड नहीं ग्रहण करसक्ते हैं ॥ २८ ॥ अब श्रीशुकदेवजी बोले हे भरतवंशीनमें श्रेष्ठ राजा परीक्षित! जन्मबंधु और लक्ष्मीसों मदोन्मत्त वे असभ्य कौरव बलदेवजीसों ऐसे दुर्वचन कह हास्त-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नापुरमें गये ॥ २९ ॥ कौरवनकी दुष्टता देखि और कहिवे अयोग्य वचन श्रवण करिके क्रोधमें भरिके असह्य तेजवारे श्री बलदेवजी वारंवार हँसिके बोलते भये ॥ ३० ॥ नाना प्रकारके मदसूं मर्य्यादारहित असाधु कौरव निश्चयही शांति नहीं चाहते हैं, पशु जैसे लाठीहीसों शान्त होय हैं ऐसेही दुष्टनके शांति करिवेकूं दंडही है ॥ ३१ ॥ बडे क्रोधी यादवनकूं हौले २ समझायके और क्रोधमें भरे श्रीकृष्णकूं समझायके इन कौरवनको मिलाप करायवेके निमित्त मैं यहां आयोहूं ॥ ३२ ॥ परंच मंदबुद्धि कलहप्रिय अभिमानी कौरव मेरी अवज्ञा करिके निंदित वचन कहतभये ॥ ३३ ॥ भोज वृष्णि अंधक कुलके ईश्वर उग्रसेनकी आज्ञामें इन्द्रते आदि लै बडे बडे लोकपाल देवताहू वरतें हैं, सो कहा कौरवनकूं आज्ञा करिवेकूं समर्थ नहीं है ॥ ३४ ॥ जिन श्रीकृष्णचंद्रने इन्द्रकी सभा पावनसूं खूदी, और देवतानको कल्पवृक्ष लायके अपने महलके बगीचामें लगायो ते कहा योग्य नहीं हैं ॥ ३५ ॥ ब्रह्मादिकनकी ईश्वरी लक्ष्मी साक्षात् जिनके चरणारविंदको सेवन करें वे श्रीकृष्णचन्द्र लक्ष्मीके पति कहा राजनकी वस्तुनके योग्य नहीं है ॥ ३६ ॥ जिन श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविंदकी रज समस्त लोकनके पालन करनवारे ब्रह्मादिक मुकुटन करिके युक्त माथेपै धारण करें हैं और जो गंगातीर्थहूकी पवित्र करनवारी है जिनके अंशके अंश ब्रह्मा महादेव लक्ष्मी और हम सम्पूर्ण बहुत दिन पर्यंत चरणारविंदकी रेणुकूं माथेपै धारण करे हैं इन श्रीकृष्णचन्द्रकूं राज्यासन कहा पदार्थ है ॥ ३७ ॥ कौरवनने पृथ्वीको टूक दियो है, ताय यादव भोगे है और हम पांवकी जूती ठहरे और कौरव ठहरे शिर ॥ ३८ ॥ अहो ऐश्वर्यकरिके मतवारेनकी तुल्य अभिमानी कौरवनके कर्कश टेढे वचनकूं सुनिके दंडको देनवारो कौन पुरुष सहिसकैगो ॥ ३९ ॥ अब इन कौरवनसो रहित पृथ्वीकूं करिदेउंगो या प्रकार बलदेवजी हलकूं ग्रहण करिके मानो त्रिलोकीकूं भस्म करदेइंगे ऐसे क्रोध करिके ठाढे होतभये ॥ ४० ॥ असहनतासो बलदेवजी हलके अग्रभागते हस्तिनापुरकूं उखारिके नाश करिवेके लिये गंगामेंकूं खेंचते भये ॥ ४१ ॥ नौकाकी तुल्य भ्रमण करत गंगाजीमें गिरते नगरकूं देखिके भ्रमकूं प्राप्त हैके कौरव लक्ष्मणासहित सांबकूं आगे करिके हाथ जोरिके कुटुंबसहित जीवनकी इच्छाकरिके समर्थ बलदेवजीकी शरण जातेभये ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ हे राम ! हे राम ! हे सबके आश्रय ! हे ईश्वर ! तुम्हारे प्रभावकूं हम मूढ कुबुद्धि नहीं जानेहै हमारे ऊपर तुम क्षमा करिवे योग्य हौ ॥ ४४ ॥ स्थिति उत्पत्ति नाशके तुम निराश्रय कारण हौ हे ईश ! यह लोक तुम्हारी क्रीडा करवेको खिलौना है ॥ ४५ ॥ हे अनंत ! हे सहस्रमूर्द्धन् अर्थात् हजार मस्तकवारे ! तुम या पृथ्वीमंडलकूं लीला करिके मस्तकपै धारण करो हौ, अंतसमय समस्त विश्वकूं उदरमें धरिके शेषशय्यापै शयन करोहौ तुम अद्वितीय ब्रह्म हौ ॥ ४६ ॥ हे भगवन् ! सत्त्वगुणकूं धारण करनहारे तुम्हारो कोप सबकी शिक्षा देवेके लिये है द्वेष और मत्सरता नहीं है, हे भगवन् ! विश्वकी स्थितिके निमित्त और पालन करिवेके लिये कोपको तात्पर्य है ॥ ४७ ॥ हे समस्त प्राणीनके आत्मा ! हे सम्पूर्ण शक्तिके धारण करनवारे ! तुमकूं नमस्कार है, हे विश्वके धारण करनवारे ! तुम्हारी हम शरण आये हैं ॥ ४८ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! उद्वेगयुक्त, शरण आये कौरवनने कि जिनको नगर कंपित है रह्योहो जब ऐसे बलदेवजीको प्रसन्न कियो तब वह प्रसन्न हैके मति भय करो या प्रकार अभयदान करते भये ॥ ४९ ॥ राजा दुर्योधन अपनी कन्याके दाइजेमें साठि साठि वर्षकी अवस्थाके बारह हजार हाथी और दश हजार घोडा देते भये ॥ ५० ॥ सुवर्णको साज जिनपै परो सूर्यकीसी चमचमाहट, ऐसे छः हजार रथ देतो भयो, और पुत्रीपै प्यार अधिक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैवेके कारण दुर्योधन धुकधुकी कण्ठमें पहरे हजार दासी देतो भयो ॥५१॥ यादवनमें श्रेष्ठ भगवान् बलदेवजी संपूर्ण दाइजकूं ग्रहण करिके बहू बेटाकूं संग लैके कौरवनको अभिवादन ग्रहण करिके आवते भये ॥ ५२ ॥ कौरवनसों बिदा हैके हलधारी बलदेवजी अपने पुरमें आयके स्नेहभरे चित्तसों बंधुनसू मिलिके, उत्तम यादवनकी सभामें बैठिके कौरवनते जे जे बातें करीं ते ते सब कहतभये ॥ ५३ ॥ अब पर्यंत हस्तिनापुर बलदेवजीके पराक्रमकूं सूचन करत दक्षिण दिशाकी ओरते गंगाजीमें झुक्यो दिखाई देय है ॥ ५४ ॥

अद्यापि च पुरं ह्येतत्सूचयद्रामविक्रमम् ॥
समुन्नतं दक्षिणतो गङ्गायामनु दृश्यते ॥ ५४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे संकर्षणविजयो नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः॥६८॥

अध्याय ६९.

श्रीशुक उवाच–नरकं निहतं श्रुत्वा तथोद्वाहं च योषिताम् ॥
कृष्णेनैकेन बह्वीनां तद्दिदृक्षुः स्म नारदः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले, हे राजन् परीक्षित् ! नरकासुरकूं मारयो सुनिके तैसेही श्रीकृष्णचंद्रने बहुत स्त्री व्याही यह बात सुनिके देखिवेकी इच्छासों नारदजी द्वारिकापुरीमें आवते भये ॥१॥ नारद विचारे हैं यह बडो आश्चर्य है कि एक देहते एक संग न्यारे घरनमें सोलह हजार स्त्रीनकूं एक संग व्याहते भये ॥ २ ॥ या प्रकार उत्कंठासो नारदजी द्वारकापुरीमें आये, जा द्वारकामें फूली फुलवाडी और बागनमें पक्षी तथा भौंरनके झुंड गुंजार करैहै ॥ ३ ॥ फूले भए इंदीवर, अंभोज, कल्हार, कुमुद उत्पलनकरिके सरोवर व्याप्त हैं, तिनमें उच्चस्वर करिके हंस सारस बोले हैं तिनको शोर है रह्यो है ॥ ४ ॥ स्फटिकमणि और महामणिनकरिके प्रकाशमान सुवर्णकी रत्नकी सामग्रीसो युक्त नौलाख महल बने हैं ॥ ५ ॥ न्यारे न्यारे राजमार्ग और गली कूची बजार शाला सभा और देवतानके मंदिर बने हैं, तिनसों शोभायमान है, मार्ग आंगन गली देहरीमें छिरकाव है रह्यो है छोटी छोटी पताका और बडी बडी ध्वजानके फहरायवेसों वहां धूप नहीं आवै है ॥ ६ ॥ द्वारकापुरीमें संपूर्ण लोकपालनसों पूजित श्रीकृष्णके अंतःपुरकी रचनामें विश्वकर्माने संपूर्ण अपनी चतुराई दिखाई है ॥ ७ ॥ सोलह हजार महलन करिके शोभायमान अंतःपुरसों श्रीकृष्णचन्द्रकी रानीके एक भवनमें नारद जातभये ॥ ८ ॥ कैसो भवन है जहा मूंगानके खंभ लगे हैं, और वैडूर्यमणिके फलकोत्तम अर्थात् खंभ धरवेकी चौकी बनी है, इन्द्रनीलमणिकी भीति बनी है महाशोभा भरी नई नीलमणिकी भूमि बनी है ॥ ९ ॥ मोतिनकी झालरि जिनमें लगी ऐसे विश्वकर्माने बनाये चंदोवासों वह भवन शोभायमान है मणिनसों शोभायमान हाथीदांतकी चौकी पलंग बिछे हैं तिनकी न्यारीही शोभा है ॥ १० ॥ धुकधुकी कंठमें पहरे सुंदर वस्त्रकूं धारे दासिन करिके शोभायमान जामा पगडी पटका मणिनके कुंडल पहिरे पुरुषनसों शोभायमान हैं ॥ ११ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! रत्ननके दीपनकी पंक्ति लगि रही हैं, तिनके प्रकाश करिके उन भवनमें अंधकार नहीं है और घरनके भीतर अगरकी धूपको धुआं जाली झरोकानमें हैके निकसे है ताय देखिके बादर आये जानिके मोर शब्दकूं करिके भवनके चित्र विचित्र छज्जनके ऊपर नृत्य करे हैं ॥ १२ ॥ ता महलमें रूप गुण अवस्थामें अपनी समान गहने

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पहरे हजार दासीनकूं संग लैके सर्वकाल सुवर्णकी डांडीको चमर पंखा लिये रुक्मिणी यादवनके पति श्रीकृष्णचन्द्रके ऊपर चँवर कररहीहीं या प्रकार कृष्णचंद्रको दर्शन नारदजीने कियो ॥ १३ ॥ समस्त धर्मके जाननवारेनमें श्रेष्ठ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र नारदजीकूं देखिके रुक्मिणीसहित पलंगपैंते शीघ्र उठिके किरीटयुक्त शोभायमान शिरसूं चरणनमें नमस्कार करि हाथ जोरिके अपने आसनपै बैठावते भये ॥ १४ ॥ जगत्के अतिशय गुरु साधुनके रक्षक श्रीकृष्णचन्द्र नारदजीके चरण धोइके चरणारविंदको धोमनजल अपने माथेपै चढावत भये जिन श्रीकृष्णचंद्रको चरणोदक गंगा सबकूं पवित्र करैहै, तिनमें ब्रह्मण्यदेव यह गुणयुक्त नाम ज्योंको त्यों बने हैं ॥ १५ ॥ नरके सखा ऋषिनमें श्रेष्ठ नारायण नारदजीकों शास्त्रोक्त विधिपूर्वक पूजन करि, अमृतकी तुल्य प्रमाणीभूत मधुर वाणीसो संभाषण करतेभये कि नारदजी ! आप आये बडो मंगल भयो, हे समर्थ भगवन् ! हम तुम्हारो कहा पूजन करें यह कहते भये ॥ १६ ॥ अब नारदजी कहैं हैं हे समर्थ ! हे उरुगाय ! सब जीवनते मित्रता करोहौ, और दुष्टनकूं दंड देउ हौ, समस्त लोकनके नाथ तुममें यह आश्चर्य नहीं है जगत्की स्थिति और रक्षा सहित कल्याण करिवेके लिये अपनी इच्छापूर्वक अवतार लेउ हौ, यह मैं भले प्रकार जानूं हूं, दुष्टनकूं दंड देनो और साधुनको सत्कार करनो यह तुमकूं योग्य है ॥ १७ ॥ जननकूं मोक्षको देनवारे और बडे ज्ञानी ब्रह्मादिकदेवता जिनको ध्यान हृदयमें धरें हैं जो संसाररूपी कूपमें पडे जीवनके निकासवेके आश्रयभूत तुम्हारे चरणारविंदनको मोकों दर्शन प्राप्तभयो अब ऐसी कृपा करो कि मोको सदा तुम्हारो स्मरण बनो रहे और तुम्हारे चरणनकों ध्यान करतो सुखसों विचरूं ॥ १८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! यह कह नारदजी योगेश्वर श्रीकृष्णचन्द्रकी योगमाया जानिवेके लिये श्रीकृष्णचन्द्रकी और रानीके महलमें जाते भये ॥ १९ ॥ ता महलमेंहू प्यारी सत्यभामाके संग और उद्धवजीके संग चौपरी खेलते श्रीकृष्णचन्द्र नारदजीको देखते भये, परम भक्तिपूर्वक उठिके आसन बिछायके अर्घ दैके पूजन करते भये ॥ २० ॥ तुम कब आये या प्रकार अज्ञानकी तुल्य श्रीकृष्णचन्द्र नारदजीते पूछते भये. पूर्ण तुमको हम अपूर्ण कहा पूजन करे ॥ २१ ॥ हे ब्रह्मन् ! हम पूर्ण नहीं हैं तथापि हमते कछु कहौ हमारो यह जन्म सार्थक करौ नारदजी आश्चर्य मानिके वहांते और मंदिरमें जाते भये ॥ २२ ॥ ता महलमेंभी छोटे छोटे बालकनकूं खिलाते श्रीकृष्णचन्द्रकूं देखते भये ता पीछे और महलमें जायके देखे तौ स्नानको उपाय करें हैं ॥ २३ ॥ काहू महलमें श्रीकृष्णचन्द्र अग्निहोत्र करें हैं, और महलमें पंचयज्ञ करे हैं, काहू महलमें ब्राह्मणकूं भोजन करायके ब्राह्मणको बच्यो प्रसाद आप भोजन करे हैं या प्रकार श्रीकृष्णचन्द्रको दर्शन करतेभये ॥ २४ ॥ काहू महलमें संध्योपासन करे हैं, और कहूं मौन हैके गायत्री जपै हैं एक महलमें ढाल तरवारि लैके फिरै हैं, या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करतो भयो ॥ २५ ॥ काहू महलमें घोडानपै हाथिनपै रथनपै चढिके डोले हैं और काहू महलमें पलंगपै सोमें बन्दीजन स्तुति करे ऐसे श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करतभये ॥ २६ ॥ काहू महलमें उद्धवादिक मंत्रीनके संग विहार करत देखे, और काहू महलमें मुख्य मुख्य वारांगना स्त्रीनके संग जलमें विहार करते श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करत भये ॥ २७ ॥ काहू महलमें शृंगार करिके गौनकूं ब्राह्मणनके अर्थ देई है और काहू महलमें इतिहास पुराण मंगलरूपी वाक्य श्रवण करते श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करत भये ॥ २८ ॥ काहू महलमें हांसीकी बात कहिके प्यारीके संग श्रीकृष्णचंद्र हँसे हैं, काहू महलमें अपने धर्मको सेवन करें हैं काहू महलमें अर्थ और कामकूं संपादन करें हैं ॥ २९ ॥ काहू महलमें मायासूं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अतीत परब्रह्मको एकासनपै बैठिके ध्यान करें हैं, और काहू महलमें काम भोग पूजन करिके गुरुकी शुश्रूषा करें हैं ॥३०॥ काहू महलमें विरोधकी वात करें हैं काहू महलमें मिलापकी वात करें हैं और काहू महलमें बलदेवजीके संग साधूनकूं सुख होय यह विचार करै हैं, ऐसे श्रीकृष्णचन्द्रको दर्शन करत भये ॥ ३१ ॥ काहू महलमें पुत्रनको समयपै सदृश स्त्रीनकूं देखिके विहार करें हैं, और काहूं महलमें अपनी कन्याकूं सदृश वर देखिके द्रव्यन करिके विवाह करेंहैं ॥ ३२ ॥ काहू महलमें कन्यानकूं जमाईनकूं विदा करेंहै, और काहू महलमें पुत्रनकूं सुसरारमें भेजिके विनकी स्त्रीनकूं बुलामें हैं या प्रकार योगेश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्रके संतानके बडे उत्सव देखिके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त होत भयो ॥ ३३ ॥ काहू महलमें बडे यज्ञनकरिके अपनी कला देवतानको पूजन करेंहै, और काहू महलमें अमुक रस्तामें कुआ बनवाओ बाग लगाओ नवीन मंदिर बनवाओ या प्रकार धर्मकूं करते श्रीकृष्णचंद्रकूं नारदजी देखते भये ॥ ३४ ॥ काहू महलमें सिंधुदेशके घोडापै चढिके यादवनकूं संग लैके शिकार खेलिवेके लिये जांय हैं, तहां विचित्र विचित्र पशूनकूं मारते श्रीकृष्णचन्द्रकूं देखते भये ॥ ३५ ॥ काहू महलमें अपनो रूप छिपायके अंतःपुरके भीतर गृहादिकमें प्रजाको अभिप्राय जानिवेके लिये विचरते योगेश्वर श्रीकृष्णचन्द्रकूं देखते भये ॥ ३६ ॥ मनुष्यकी जातिकूं प्राप्त भये श्रीकृचंद्रकी योगमायाको वैभव देखिके सम्पूर्ण लीलानके देखे पीछे नारदजी हँसिके बोलते भये ॥३७॥ हे योगेश्वर ! तुमारे चरणारविंदकी सेवा करिके मेरे मनमें प्रकासी तुमारी योगमायाही केवल हम जाने हैं और तुमारो सत्यरूप नहीं जाने हैं ॥ ३८ ॥ हे देव ! तुम्हारे यशसों व्याप्त लोकनमें समस्त लोकनकी पवित्र करनवारी तुम्हारी लीला मैं गावत विचरूं यह आज्ञा तुम मोकूं देऊ या प्रकार नारदजी कहत भये ॥ ३९ ॥ श्रीभगवान् कृष्णचंद्र बोले हे ब्रह्मन् ! मैं धर्मको करनवारो हूं औरकूं धर्मकर्ता देखिके प्रशंसा करूंहूं, ता कारण लोकनकूं सिखाइवेके लिये कर्म करूंहूं हे अंग ! तुम अपने मनमें खेद मत करो ॥ ४० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार गृहस्थ पुरुषनके पवित्र करनवारे श्रेष्ठ धर्मनकूं करनहारे अकेले श्रीकृष्णचंद्रकूं समस्त घरनमें नारदजी देखते भये ॥ ४१ ॥ अनंत पराक्रम श्रीकृष्णचन्द्रकी योगमायाको बडो उदय वारंवार देखिके कौतुकसो नारदजी आश्चर्य मानते भये ॥ ४२ ॥ या प्रकार धर्म अर्थ काम मोक्षमें श्रद्धायुक्त मन लगाये श्रीकृष्णचन्द्रसों भले प्रकार पूजन पाय नारदजी प्रसन्नतापूर्वक श्रीकृष्णचंद्रको मनमें स्मरण करते जातेभये ॥ ४३ ॥ या प्रकार मनुष्यके मार्गमें वर्तनहारे समस्त जीवनके कल्याण करिवेके निमित्त अनेक मूर्ति धारण करनहारे श्रीकृष्णचंद्र सोलह हजार श्रेष्ठ स्त्रीनके बीचमें लाजभरी स्नेहकी चितवनि हँसनिसूं सेवित हैके रमण करते भये ॥ ४४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! विश्वकी प्रलय और उत्पत्तिके कारण हरि भगवान्के दूसरेनको अगम्य असाधारण कर्म या संसारमें जे पुरुष गामें अथवा श्रवण करें, बडाई करें विन पुरुषकी मोक्षके देनवारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रमें भक्ति होय है ॥ ४५ ॥

यानीह विश्वविलयोद्भववृत्तिहेतुः कर्माण्यनन्यविषयाणि हरिश्चकार ॥
यस्त्वंग गायति शृणोत्यनुमोदते वा भक्तिर्भवेद्भगवति ह्यपवर्गमार्गे ॥४५॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ७०.

श्रीशुक उवाच-अथोषस्युपवृत्तायां कुक्कुटान्कूजतोऽशपन् ॥
गृहीतकण्ठ्यः पतिभिर्मांधव्यो विरहातुराः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! श्रीकृष्णचंद्रसो आलिंगन करी भई श्रीकृष्णकी रानी प्रातःकाल होत आयो तब मुरगा बोले, वाकों विरहसो व्याकुल हैके कोशति भई कि अरे अभागे ! अबहीते तू बोले है श्रीकृष्णचन्द्र प्रातःकाल जानिके उठेंगे ॥ १ ॥ प्रातःसमय नींदको त्याग पक्षी बोलते भये, और कल्पवृक्षकी पवन सूंघिके भौंरा गुंजतभये, सो मानों श्रीकृष्णचन्द्रकूं बंदीजन गामें हैं ॥२॥ प्यारे श्रीकृष्णचन्द्रकी भुजानके बीचमें प्राप्तभई विदर्भदेशके राजाकी पुत्री रुक्मिणी आलिंगनको वियोग देखिके अति सुंदर प्रातःकाल समयको नहीं सहती भई ॥ ३ ॥ प्रसन्नइन्द्रिय मधुवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचन्द्र ब्राह्ममुहूर्त अर्थात् सूर्योदयसो दो तीन घडी पहिले उठिके जलको आचमन करिके मायाते परे अपने स्वरूपको ध्यान करते भये ॥ ४ ॥ (कैसे स्वरूपको ध्यान करयो ताको वर्णन करें हैं) एक अखंड स्वयं ज्योतिःस्वरूप उपाधिरहित अविनाशी सर्वकाल अविद्यारहित ब्रह्म, विश्वकी उत्पत्ति और नाशको कारण अपनी शक्तिकरिके लखिवेमें आवै सत्तामात्र आनंदरूप ॥५॥ ध्यान करे पीछे निर्मल जलमें विधिपूर्वक स्नान कर श्रीकृष्णचंद्र धोती उपरनाकूं पहिरिके संध्योपासनादि कर्म और अग्निहोत्र करिके मौन हैके गायत्रीको जप करते भये ॥६॥ उदय भये सूर्यकूं अर्घ दैके अपने अंश देवता ऋषि पितरनको तर्पण करिके ज्ञानवान् श्रीकृष्णचंद्र ब्राह्मणनकों पूजन करतभये ॥७॥ सुवर्णसूं सींग मढे बढी सूधी, मोतिनकी माला परी, दुधारी एक वारकी ब्यानी सुन्दर बछरासहित सुन्दर वस्त्र उढाय ॥ ८ ॥ रूपेसूं खुरनके अग्रभाग मढे, ऐसी १३०८४ गौ एक एक महलमें प्रति दिन शोभायमान सत्पात्र ब्राह्मणनकूं रेशमी वस्त्र मृगछाला और तिलसहित दान करत भये ॥ ९ ॥ अपनी विभूति गौ ब्राह्मण देवता वृद्धनकूं नमस्कार करिके मंगलवस्तु कपिलाते आदि लैके गौ स्पर्श करतभये ॥ १० ॥ नरलोककूं भूषणरूप अपने शरीरकूं वस्त्रनसूं और अरगजा चंदन इत्यादिकनसूं शोभायमान करत भये ॥ ११ ॥ घृतमें मुखारविंदकूं देखिके तैसेही दर्पणमेंही देखिके गौ बैल ब्राह्मण देवताको दर्शन करिके अंतःपुरके रहनवारे सर्व वर्णकी मनोवांछित कामनाकूं दैके ॥ १२ ॥ और प्रधान दीमानकूं कामनानसूं संतुष्ट करिके आनंदकूं पावत भये और माला वीरी चंदन अरगजा इने प्रथम ब्राह्मणनकूं दैके सुहृदनकूं दैके प्रधान दीमानकूं दैके आप अंगीकार करत भये, यामें गृहस्थनको धर्म दिखायो अर्थात् गृहस्थनको ऐसी चाहिये जो सबकूं दैके आप अंगीकार करें ॥ १३ ॥ इतनेमें रथवान् सुग्रीवसूं आदि लैके घोडाकूं जोतिके परम अद्भुत रथकूं लायके प्रणाम करिके आगे ठाढो होतोभयो ॥ १४ ॥ रथवान्को हाथसूं हाथ पकरिकै सात्यकी उद्धवकूं संग लैके रथमें बैठते भये, जा प्रकार सूर्य सुमेरुपर्वतके ऊपर चढे हैं ॥ १५ ॥ लाजभरी प्रेमकी चितवनिसूं अंतःपुरकी स्त्रीनके देखवेसों मुस्कुराते श्रीकृष्णचन्द्र बडे कष्टते विनते विन स्त्रीनकूं छोडिके विनके मनकूं हरिके निकसत भये ॥ १६ ॥ या प्रकार सब घरनते न्यारे न्यारे निकसके पीछे सब एकरूप हैके सब यादवनकूं संग लैके श्रीकृष्णचन्द्र सुधर्मा सभामें जातभये, हे राजन् परीक्षित् ! सुधर्मा सभामें बैठे पुरुषनकूं क्षुधा पिपासा शीत गर्मी शोक मोह बाधा नहीं करें हैं ॥ १७ ॥ ता सभामें यादवनसो वेष्टित व्यापक श्रीकृष्णचन्द्र सिंहासनपर बैठे अपनी कांति करिके दिशानकूं प्रकाशमान करते भये,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जैसे आकाशमें तारागणके बीचमें चंद्रमा शोभाको प्राप्त होइ है ॥ १८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ता सभाके बीचमें भांड नाना प्रकारकी हांसीकी बातें करिके श्रीकृष्णचंद्रको सेवन करत भये, और नटनमें मुख्य और नृत्यकी करनवारी स्त्री अपनी न्यारे न्यारे गवैयानकूं संग लैके सन्मुख ठाढे होत भये ॥ १९ ॥ मृदंग वीणा मुरज बांसुरी झांझ शंख इनकूं बजायके नृत्य करते भये, गान करते भये, और सूत मागध बंदीजन श्रीकृष्णके सन्मुख स्तुति करते भये ॥ २० ॥ कोई बुद्धिमान् ब्राह्मण वेदकी ऋचा पढिके व्याख्या करते भये, कोई ब्राह्मण पवित्र यशवारे पहिले राजानकी कथानकूं कहते भये ॥ २१ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! वा समय एक अजान मनुष्य वा स्थानपें आवत भयो, जब ड्योढीवारेनने श्रीकृष्णचंद्रते जायके खबरि करी तब श्रीकृष्णचंद्रने कही जाओ लिवाय लाओ तब वाकूं सभाके भीतर पहुंचायदियो ॥ २२ ॥ ब्रह्मादिकनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्रकूं वह पुरुष हाथ जोरिके नमस्कार करिके जरासंधके रोके बीस हजार आठसौ राजानके दुःखकूं कहतो भयो ॥ २३ ॥ जरासंधके दिग्विजयके समय जिन राजानने आयके भेद नहीं दीनीही वे बीस हजार आठसौ राजा वाने पकरिकै गिरिव्रज नाम किलेमें रोकि दियेहे ॥ २४ ॥ हे कृष्ण हे कृष्ण हे अप्रमेयात्मन् अर्थात् अप्रमाण प्रभावारे हे शरणागतनके भय काटनवारे ! या संसारते भयभीत तुममें प्रेम करनहारे हम तुम्हारी शरण आये हैं ॥ २५ ॥ ये लोक अतिशय करिके पाप कर्ममें लगिरहे हैं, सो तुमारे बताये कल्याणरूप पूजन सेवनरूप कर्ममें भूलि रहे हैं या संसारमें जीवेकी आशाकूं काटनहारे समर्थ कालरूप तुमको नमस्कार है ॥ २६ ॥ जगत्के ईश्वर तुम या संसारमें साधूनकी रक्षा करिवेके लिये और दुष्टनकूं दंड दैवेके लिये अंश करिके अवतार ले आये हौ, कोई जरासंध सरीखो जोरावर तुम्हारी आज्ञाकूं नहीं माने हैं, आपकी रक्षामें रहे जीव अपने कर्मजनित दुःखनको प्राप्त होय हैं यह क्यौं होय है सो हम नहीं जाने है ॥ २७ ॥ हे ईश ! यह राज्यके सम्बन्धको सुख विषय साध्य है याहीसों परतंत्र है और याहीसों यह स्वप्न सुखकी समान है और यह शरीरहू सदैव भयसो युक्त मृतकके समान है तथापि हम या शरीरसों केवल भार्या सन्तानादिकी चिन्ता करते रहे हैं निष्काम भक्त जा स्वतः सुखको आपसो प्राप्त होय है वाको त्याग अति कृपण बने आपकी मायासो दुःख पावेहैं कारण कि पहले निष्काम हैके आपके चरणनकी शरण नहीं लीनी है यासों ॥ २८ ॥ यासों दुःखी पुरुषनके शोक हरनहारे जिनके चरणकमल हैं ऐसे आप हम बंधे भयेनकों जरासन्धरूपी कर्मबंधनसों छुडाओ दश हजार हाथिनको बल धारण करनहारे या जरासंधने सिंह जैसे भेडनको घेर लेय ऐसे अपने दुर्गमें हम राजानको रोक राखो है ॥ २९ ॥ हे चक्रधारी ! हे कृष्ण ! तुमसों अठारह वेर जरासंध लड्यो सत्रह वेर तुमने हेराय दियो, परन्तु अठारहवीं वेर संग्राममें आप मनुष्य लीलाकर रण छोड गये आपको यह एक वार जीत महागर्वको प्राप्त भयो है यासों आपकी प्रजा हमको बहुत दुःख देयहै जो आपको उचित होय सो करौ ॥ ३० ॥ दूतने कही या प्रकार जरासन्धके रोके आपके दर्शनकी अभिलाषा किये राजालोक आपके चरण शरणकी अभिलाषा करैं हैं इन दीननको उद्धार करनो चाहिये ॥ ३१ ॥ या प्रकार राजानको दूत कह रह्यो है इतनेमें श्रेष्ठ कांतिवारे पीरी जटानकूं धारण करें श्रीमन्नारदजी सूर्यकी समान प्रगट होत भये ॥ ३२ ॥ सम्पूर्ण लोकनके महान् ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र नारदजीकूं आये देखिके अपने सभासदन सहित शिर नवायके प्रणाम करते भये ॥ ३३ ॥ आसनपै बैठे नारदजीको विधिपूर्वक सत्कार करिके श्रद्धापूर्वक मधुर २ वचननकरिके भगवान् तृप्त करते भये ॥ ३४ ॥ श्रीकृष्णचन्द्र बोले नारदजी त्रिलोकीमें कहूं भय तो नहीं है तुम्हारे लोकनमें फिरवेसों हमें बडो लाभ है घर बैठेही

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सबरी खबर मिलि जाय है ॥ ३५ ॥ ईश्वरनके निर्माण करे लोकनमें ऐसी कोई बात नहीं है जो तुम न जानो, अब पांडवनकी कहा करिवेकी इच्छा है हम तुमते पूछे हैं ॥ ३६ ॥ नारदजी बोले हे समर्थ ! आप अपनी मायासो ब्रह्माकोहू मोहित करते और अपनी अचिन्तनीय शक्तिसों प्राणिनमें अन्तर्यामी रूपसो रहवेपेंहू काष्ठमें रहे अग्निकी समान गुप्त प्रकाशवारे हो, आपकी माया मैंने कई वर अवलोकन कीनीहै, यासो यह आपको चित्र कुछ अद्भुत विदित नहीं होय है ॥ ३७ ॥ यह संसार जो वास्तवमें मिथ्या है परन्तु आपकी मायासों विद्यमानसो प्रतीत होय है याके उत्पन्न पालन और संहार करनवारे आपके अभिप्रायकों कौन पुरुष भली भांतिसों जानसकै है कोईभी नहीं जानसके है अचिन्त्यस्वरूप आपको मैं प्रणाम करों हौं ॥ ३८ ॥ जिन आपने बहुत प्रकार जन्म मरण पाते और विविध अनर्थकारक शरीरसो मुक्त हैवेको उपाय नहीं जाननवारे जीवनको अज्ञानरूपी अंधकारको मिटावनहारो अपनो यशरूप दीप लीलासों अवतार धारणकर प्रगट कियो है ऐसे आपकी मैं शरणमें प्राप्त हूं ॥३९॥ तौहू हे ब्रह्मन् ! मनुष्यके अनुकरण करनहारे तुमसो तुम्हारी फूफीके पुत्र भक्त राजा युधिष्ठिर जो कछु करनो चाहेहै सो सुनाऊं हूं ॥ ४० ॥ पांडुको पुत्र चक्रवर्ती राज्य करिवेकी इच्छा करनहारे राजा युधिष्ठिर यज्ञराट् राजसूय यज्ञ करिके तुमारो पूजन करयो चाहै है, यह आप अनुमोदन करौं ॥ ४१ ॥ हे देव ! वा यज्ञमें तुम्हारे दर्शन करिवेके निमित्त इन्द्रादिक देवता आमेंगे, और बडे यशस्वी राजा आमेंगे ॥ ४२ ॥ हे ईश्वर ! ब्रह्मरूप तुम्हारी कथानके श्रवण करते तुमारो ध्यान करते चांडालहू पवित्र है जाय है, तुमारे दर्शन करते पवित्र होय यामें कहा कहिनो है ॥४३॥ हे त्रिलोकीके मंगलरूप ! तुमारो निर्मल यश स्वर्गमें रसातलमें पृथ्वीमें फैलि रह्यो है, और दिशानकूं चंद्रोवाकी तुल्य शोभायमान करे है स्वर्गमें मंदाकिनीरूप, पातालमें भोगवतीरूप और या संसारमें तुमारो चरणोदक गंगारूप हैके सम्पूर्ण विश्वकूं पवित्र करें हैं, या कारण तुमारे चलेते यज्ञमें बडो मंगल होयगो ॥ ४४ ॥ अब श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार नारदजीने कही तब या सभामें अपनी ओरके यादवनने जरासंधके जीतनेकी इच्छासों जब यज्ञमें जायवेकी अनुमति नहीं दीनी तब मनोहर वचनसूं मुसिक्याते अपने भक्त उद्धवजीसूं श्रीकृष्णचन्द्र बोलते भये ॥ ४५ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र बोले हैं हे उद्धवजी ! तुम हमारे परम मित्र हौ हितकारी हो, गुह्य बातनके अभिप्रायकूं जानो हो याते यहां योग्य होय ताय बताओ वाकूं हम श्रद्धापूर्वक करेंगे ॥ ४६ ॥ सब बातके जाननवारे श्रीकृष्णचन्द्र मानो कछु नहीं जाने ऐसे भोरेकी तुल्य हैके पूछने लगे तब उद्धवजी श्रीकृष्णचन्द्रकी आज्ञाकूं शिरपै धरिके बोलते भये ॥ ४७ ॥

इत्युपामन्त्रितो भर्त्रा सर्वज्ञेनापि मुग्धवत् ॥
निदेशं शिरसाऽऽधाय उद्धवः प्रत्यभाषत ॥ ४७॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

अध्याय ७१.

श्रीशुक उवाच–इत्युदीरितमाकर्ण्य देवर्षेरुद्धवोऽब्रवीत् ॥
सभ्यानां मतमाज्ञाय कृष्णस्य च महामतिः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार बडी बुद्धिवारे उद्धवजी श्रीकृष्णचंद्रको कह्यो वचन सुनिके और नारदजीको मत यज्ञमें जायवो जानिके, और सभाके बैठनवारे यादवनको मत राजानकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रक्षा करिवो जानिके और श्रीकृष्णचन्द्रको मत दोनों कार्य करनो जानिके बोलतेभये ॥१॥ उद्धवजी बोले हे प्रकाशमान श्रीकृष्णचन्द्र ! नारदजीने जो कह्यो कि राजा युधिष्ठिर तुम्हारो पूजन कियो चाहैं हैं ताकीऊ सहायता करिवो योग्य है, और शरणागत राजानकी रक्षा करवोहू योग्य है ॥२॥ हे समर्थ ! सम्पूर्ण दिशानके राजानकौ जीतनवारो राजसूय यज्ञ करिके पूजन होयगो याहीते जरासंधहू जीत्यो जायगो यामें दोनों कार्य सिद्ध होयगे यज्ञ और शरणागतकी रक्षा ॥ ३ ॥ यज्ञमें आप चलोगे याहीते हमारे बडे मनोरथ सिद्ध होयगे और हे गोविंद ! बंधे राजानकूं छुडाओगे यामें आपको बडो यश होयगो ॥ ४ ॥ बडी चाहनासौं जरासंधके मारिवेकी इच्छा करनेहारे यादवनकूं देखिके कहैं हैं, जरासंधकी समान बली भीमसेनके विना दश हजार हाथीके समान बली जरासंध बडे बली राजानके जीतवेमें नहीं आवे है, क्यों कि भीमसेनतेही विधाता वाकी मृत्यु रची है ॥५॥ द्वंद्वयुद्धमें जरासंध जीत्यो जायगो, और सैन्यनकूं संग लैके जो पुरुष जीत्यो चाहै तौ न जीतिसकैगो वह जरासंध ब्राह्मणको भक्त है याते वांके पास जायके युद्ध मांगे तौ कबहूं मने नहीं करेगो ॥ ६ ॥ वृक नामा अग्नि जाके उदरमें सो भीमसेन ब्राह्मणको भेष धरिके जरासंधते युद्धकी भिक्षा मांगे कि तुमारे निकट मैं द्वंद्वयुद्ध करूंगो तुम निकट रहो तौ भीमसेन जरासंधकूं मारेगो यामें कछु संदेह नहीं है ॥ ७ ॥ प्राकृतरूपरहित ! तुमही विश्वकूं उत्पन्न पालन संहार करो हो ब्रह्मा और महादेव तो नाममात्र हैं, ताते तुमही पास रहिके जरासंधको संहार करोगे, भीमसेनको तौ केवल नाम होयगो ॥ ८ ॥ बंदी भये राजानकी रानी अपने घरमें तुमारे निर्मल यशनकूं गामैहैं, और जब विनके बालक रोमें हैं तब कहैं हे पुत्र ! तुम काहेकूं रुदन करौ हौ जो कोई अनाथ होई सो रोवै, तुमारे शिरपै तो नाथ श्रीकृष्णचन्द्र हैं मति रोवो जैसे गोपी शंखचूडको मारिवो और अपनो छूटिवो गामें हैं; और जैसे शरण पामनवारे भक्तजन गजराजको छूटिवो ग्राहकी मृत्यु गामें है, और वाल्मीकि आदिमुनि जनकनंदिनी जानकीकौ छूटिवो रावणको मरिवो जैसे गामें हैं, और माता पिताको छूटिवो कंसको मरिवो जैसे हम भक्त गामें हैं, ऐसे जरासंधको मरिवो और अपने पतिनकौ छूटिवो गावे हैं अर्थात् गामेंगी ॥ ९ ॥ हे कृष्ण ! जरासंधके मरेते बडो कार्य सिद्ध होयगो शिशुपालादिकनको मारिवो सहजमें है जायगो राजानके पुण्यकौ फल उदय होयगो और यज्ञ होइ यह तुमकूं संमत है राजा युधिष्ठिरके पास गयेते सब बात बनेगी ॥१०॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! सब ओरते मंगलरूप बडी युक्तिसहित उद्धवजीको वचन सुन नारदजी बडाई करतभये, और यादवनमें मुख्यहू बडाई करतभये और श्रीकृष्णचंद्र बडाई करत भये ॥ ११ ॥ याके पीछे देवकीके पुत्र समर्थ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र चलिवेके निमित्त टहलुवा और दारुक रथवान् हाथीनके महावत आदिसौ और वसुदेवादिक यादवनको आज्ञा करतभये ॥ १२ ॥ हे राजन् ! सामिग्रीनसहित प्रथम स्त्रीनकूं चलायके संकर्षणजीते आज्ञा मांगिके यादवनके राजा उग्रसेनसो आज्ञा मांगिके सारथीके लाये गरुडध्वज रथमें चढतभये ॥ १३ ॥ तापीछे रथ हाथी प्यादे सवारनकी तीव्र अपनी सेनाकूं लैके मृदंग भेरी नगाडे शंख नरसिंघाके शब्दसौ शब्दायमान दिशानसों निकसत भये ॥ १४ ॥ सुन्दर वस्त्र गहने चंदन माला पहिरे ढाल तलवारि हाथमें लिये, दोनों ओर सिपाहिनसो रक्षित बग्घी और पालकीमें बैठिके पतिव्रता श्रीकृष्णचंद्रकी रानी अपने पुत्रकूं संग लैके अपने पति श्रीकृष्णचंद्रके पीछे जाती भई ॥ १५ ॥ चाकरनकी स्त्री और वेश्या शृंगार करिके चटाईनके बने घर तथा कंबलनके और बनातनके डेरा तम्बू इत्यादिक सम्पूर्ण वस्तुकूं मनुष्य ऊंट भैसा गधा खिच्चर गाडा हाथीपै लादिके जातेभये ॥ १६ ॥ बडे शब्दवाली सैना बडे बडे ध्वजानके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वस्त्र छत्र चमरसों और सुन्दर हथियार गहने किरीट इत्यादिकनकी चमकसों और सूर्यकी किरणसों दिवसमें सुन्दर लगतिभई जैसे क्षोभकूं प्राप्तभये ग्राह और लहरनसों समुद्र लगेहै ॥ १७ ॥ याके पीछे यादवनके पति श्रीकृष्णचंद्रसो सत्कार पाय पूजा ले श्रीकृष्णके दर्शनतें सुखी इंद्रिय होके मुनि नारद श्रीकृष्णचंद्रकूं प्रणाम करिके और श्रीकृष्णचंद्रके निश्चयको श्रवण करिके और विनके स्वरूपकूं हृदयमें ध्यान करिके आकाशमार्गमें हैके जातेभये ॥ १८ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र वाणीसों दूतकूं प्रसन्न करत भये हे दूत ! तुम राजानसूं जायके कहो कि तुम मति भय करो, तुमारो कल्याण होयगो जरासंधकूं मैं मारूंगो ॥ १९ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रने कही तब दूत वहांसूं चलिके राजानके पास आयके श्रीकृष्णचंद्र आमेंहैं या प्रकार कहतभयो, तब जरासंधके बंदीखानेके छूटिवेकी इच्छासो राजा श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन कब होयगो ऐसे पेंडो देखतभये ॥ २० ॥ ता पीछे आनर्त सौवीर मारवार कुरुक्षेत्र देशनकूं उल्लंघन करिके तथा पर्वतनकूं और पुर ग्राम व्रज इन सबनकूं उलांघिके ॥ २१ ॥ ताके पीछे दृषद्वती और सरस्वती नदीनकूं तरिके और पांचाल देशनकूं तथा मत्स्य देशनकूं उलांघिके मुकुंद श्रीकृष्णचंद्र इन्द्रप्रस्थमें आवते भये ॥ २२ ॥ मनुष्यनकूं दुर्लभ दर्शन श्रीकृष्णचंद्र आये हैं यह श्रवण करिके प्रसन्न हैके अजातशत्रु राजा युधिष्ठिर उपाध्यायनकूं संग लैके पुरके बाहिर निकसतेभये ॥ २३ ॥ गीत और बाजेनके शब्दसों और बडे वेदके शब्दसों[1] राजा युधिष्ठिर जैसे आदरयुक्त इन्द्रिय प्राणनके लैवेकूं आमें ऐसे श्रीकृष्णचंद्रके सन्मुख लिवाइवेकूं आवतेभये ॥ २४ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके दर्शन करिके आर्द्रहृदय पांडुको पुत्र राजा युधिष्ठिर बहुत दिननमें देखे अत्यंत प्यारे श्रीकृष्णचंद्रकूं वारंवार आलिंगन करते भये ॥ २५ ॥ लक्ष्मीके रहिवेको निर्मल स्थान श्रीकृष्णचंद्रके अंगकूं भुजानते आलिंगन करिके पापरहित हर्षिततनु नेत्रनमें अश्रुयुक्त, समस्त लौकिक व्यवहार विसार राजा युधिष्ठिर परम सुखकूं पावतो भयो ॥ २६ ॥ मामाके पुत्र श्रीकृष्णचंद्रकूं आलिंगन करिके प्रसन्न भीमसेन प्रेमके वेगसो आकुलइन्द्रिय होतभयो, बडे नेत्रनमें आशू भरे नकुल सहदेव और किरीटधारी अर्जुनते ये सब अत्यंत हितकारी श्रीकृष्णचंद्रकूं आनंदपूर्वक आलिंगन करतेभये ॥ २७ ॥ अर्जुन बराबरीको है याते श्रीकृष्णचंद्रकूं छातीते लगायके मिलत भयो, और नकुल सहदेवने नमस्कार करी यथायोग्य ब्राह्मणकूं और वृद्धनकूं नमस्कार करिके ॥ २८ ॥ मानिवेके योग्य कुरुदेश और सृंजयदेशके राजाको और सूत मागध गंधर्व भाट बंदीजनके सत्कार करतभये ॥ २९ ॥ मृदंग शंख ढोल वीणा नगाडे बांसुरीकूं बजायके ब्राह्मण स्तुति करतभये और नाचत गावतभये ॥ ३० ॥ या प्रकार सुहृदनकूं संग लैके पुण्ययश युधिष्ठिरादिकके मुकुटमणि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सबसों स्तुति सत्कार पाय शोभायमान युधिष्ठिरके पुरमें प्रवेश करते भये ॥ ३१ ॥ हाथीनके मद चुचायवेसूं और सुगंधियुक्त जलसूं जामें छिरकाव है रह्यो ऐसे मार्ग और चित्र विचित्र ध्वजासो सुवर्णके तोरण और जलके पूर्ण कलश तथा नवीन वस्त्र गहने माला केशरी अत्तर अरगजा लगाये स्त्री और पुरुष करिके शोभायमान कौरवनके राजा युधिष्ठिरके महल देखतभये ॥ ३२ ॥ (महलको वर्णन करें हैं) प्रकाशमान दीएनकी पंक्ति और महलके झरोकानमेंते निकसी धूपकी सुगंधिसो शोभायमान हैं, और प्रकाशमान पताका तथा रूपेके शिखरनके ऊपर सोनेके कलश संयुक्त कौरवनके राजा युधिष्ठिरके महल देखत भये ॥ ३३ ॥ मनुष्यनके नेत्रकूं आये सौंदर्यरूपी

१ प्र०—वेदध्वनि करते समय तो वह शब्द शूद्रोंनेभी सुना होगा ? उ०—बाडे बाजे गाजेसे लिवाने गयेथे उसमें ब्राह्मणोंका स्वस्ति वाचन शूद्रोंने न सुना कारण कि वे पृथक् थे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अमृतके पीवेके पात्र श्रीकृष्णचन्द्रकूं आये श्रवण करि उत्कंठासो जिनके केश और वस्त्रनके बंधन ढीले हैगये वे स्त्री घरनके कार्यनकूं शीघ्र त्यागिके और शय्यानके ऊपर पतिनकूं त्यागिके देखिवेके निमित्त राजमार्ग बजारमें आवतीभई ॥ ३४ ॥ हाथी घोडा रथ प्यादेकी भीरसो युक्त राजमार्गमें रानीनसहित श्रीकृष्णचंद्रको देखिके घरनके ऊपर चढी स्त्री फूलनकूं वर्षायके मनसूं आलिंगन करिके मुसकानि पूर्वक चितवनिसूं देखिके भले आये या प्रकार कहती भई ॥ ३५ ॥ जैसे चन्द्रमा सहित तारागण ऐसे श्रीकृष्णचंद्रकी रानीनको मार्गमें देखिके " इन रानीनमें कहा पुण्य करयो है जिनके नेत्रनकूं पुरुषनमें मुकुटतुल्य श्रीकृष्णचन्द्र उदारहास्य लीलापूर्वक चितवनिके लेशसूं आनंदकूं विस्तार करेहै " ऐसे सब स्त्री कहती भई ॥ ३६ ॥ पापरहित पुरवासी पान सुपारी बतासे नारियल सब मंगल वस्तुकूं हाथमें लैके श्रीकृष्णचन्द्रकी पूजा करते भये ॥ ३७ ॥ प्रफुल्लित नेत्रके खुशीके मारे हरबरा-हटसो अंतःपुरके वासिनने प्रीतिपूर्वक सन्मुख आयके सत्कार कियो तब मुकुंद श्रीकृष्णचन्द्र राजाके मन्दिरमें जात भये ॥ ३८ ॥ त्रिलोकीके ईश्वर अपने भैयाके पुत्र श्रीकृष्णचंद्रकूं देखिके प्रसन्न मन कुंती अपनी बहू द्रौपदी सहित पलंगपेते उठिके श्रीकृष्णचन्द्रसूं मिलती भई ॥ ३९ ॥ देवनके देव और ब्रह्मादिकनके ईश्वर गोविंद श्रीकृष्णचन्द्रकूं घरमें लायके आनंदसों सुधि विसार राजा युधिष्ठिर पूजा करिवेकी विधिहू नहीं जानते भये ॥ ४० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! द्रौपदी और बहिनी सुभद्राने प्रणाम कियो तब श्रीकृष्णचंद्र पिता वसुदेवकी बहिनी कुंतीकूं और बडेनकी स्त्रीकूं प्रणाम करते भये ॥ ४१ ॥ सास कुंतीकी आज्ञा पाय द्रौपदी सम्पूर्ण श्रीकृष्णचन्द्रकी रानी रुक्मिणी, सत्यभामा, भद्रा, जांबवतीको पूजन करती भई ॥ ४२ ॥ कालिंदी मित्रविंदा लक्ष्मणा पतिव्रता नाग्नजिती इनकूं और जे संग आई है तिनकूं वस्त्र माला अत्तर अरगजा चंदन इत्यादिनकरिके पूजा करती भई ॥४३॥ धर्मराज राजा युधिष्ठिर सैनासहित मंत्री तथा सेवक और रानीनसहित श्रीकृष्णचन्द्रको नित्य नये सुखसूं राखतभये ॥ ४४ ॥ अर्जुन सहित श्रीकृष्णचन्द्रने अग्निकूं खांडववनसूं तृप्ति करिकै मय नामा दैत्यको बचायो वाने राजा युधिष्ठिरकूं दिव्य सभा बनायके अर्पण कीनी ॥ ४५ ॥ रथमें सवार हैके अर्जुनकूं तथा और योद्धानकूं संग लैके विहार करते राजा युधिष्ठिरके प्रिय करिवेके निमित्त कितनेहू दिन पर्यंत वास करतेभये ॥ ४६ ॥

उवास कतिचिन्मासान्राज्ञः प्रियचिकीर्षया ॥
विहरन्रथमारुह्य फाल्गुनेन भटैर्वृतः ॥ ४६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे एकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

अध्याय ७२.

श्रीशुक उवाच–एकदा तु सभामध्य आस्थितो मुनिभिर्वृतः ॥
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैर्भ्रातृभिश्च युधिष्ठिरः ॥ १ ॥

१ उत्सव छोड छोड कृष्णके दर्शनको दौडे कहूं विवाहसे अधिक उत्सव तौ है ही नहीं एक कन्याको विवाह हो द्वारपै नोबत बजरही भाई बिरादरीके लोग बैठे हैं मंडपके नीचे वाकन्या बैठे हैं ब्राह्मण हवन कररहे हैं सो नोबतवा-रेननै सुनी कि कृष्ण बलदेव आये सो नगारे छोड भागे, जो भीतर नाई वाकी झगडा कर रहे है वेभी सुनतेही भजे पाधा पुरोहित पोथी पटक कृष्णदर्शनको धाये बरातीहू चलेगये दुलहनने सोची या चामके दूलहको क्या करनो जायके वा दुलहके दर्शन करूं सो आंचर छुडाय दुलहनहू पहुँच गई पाछे दूलहभी गयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अब श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! एक समय मुनीश्वर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य भैया आचार्य और कुलमें वृद्ध तथा ज्ञातिके संबंधी बांधव सहित सभाके बीच बैठे राजा युधिष्ठिर इन सबके श्रवण करते हे श्रीकृष्ण ! भो भक्तवत्सल ! या प्रकार संबोधन देके बोलत भये ॥ १ ॥ २ ॥ हे समर्थ ! यज्ञनको राजा राजसूय यज्ञ करिके पवित्र कर्मवारे तुम्हारे देवताको पूजन करूंगो यह कार्य आप सिद्ध करो ॥ ३ ॥ अभद्रकी नाश करनवारी तुम्हारी चरणपादुकाको जे पुरुष सेवन ध्यान और पवित्र हैके वाणीसूं नाम लेयहैं, हे कमलनाभ ! वेही पुरुष संसारतें छूटे हैं और जो चाहना करें हैं वे मनोरथ विनहीके सिद्ध होयहैं, और कैसोही चक्रवर्ती क्यों न होय विना भक्ति कछु नहीं होयहै ॥ ४ ॥ ता कारण हे देवनके देव ! यह लोक या संसारमें तुमारे चरणारविंदकी सेवाके प्रभावकूं देखे हे समर्थ ! कितनेही कुरु वा सृंजयवंशी लोग जो कर्मादिकको प्रधान मानके आपकी भक्तिको उत्तम नहीं मानेहैं विनको अज्ञान दूर करवेको जो आपको भजन करें हैं और जो नहीं करें हैं विन दोनों-नकी स्थिति दिखाओ ॥ ५ ॥ सबके आत्मा, समदर्शी, आत्मसुख अनुभवरूप ब्रह्म तुम हौ, तुम्हारे अपनो विरानो यह भेद बुद्धि नहीं है जैसे कल्पवृक्षको जो सेवन करें है ताहीकूं फल प्राप्त होय है, ऐसेही जे तुमारो सेवन करें हैं तिनहीपै प्रसन्न होउहौ, जैसी जो सेवा करै ताकूं तैसोही फल देउहौ, यामें विपरीति नहीं है ॥ ६ ॥ श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् बोले हे राजन् युधिष्ठिर ! हे शत्रुके नाश करनवारे ! तुमने यह भलो निश्चय करचो है, या यज्ञके करेते लोकनमें तुम्हारी मंगलरूप कीर्ति फैलेगी ॥ ७ ॥ हे समर्थ राजा युधिष्ठिर ! यह सब यज्ञनको राजा राजसूय यज्ञ तुमने करनो विचार करचो है सो ऋषीश्वर और पितृ तथा देवता और सुहृद तथा हम और समस्त प्राणीनकूं प्यारो है ॥ ८ ॥ समस्त राजानकूं जीतिके सम्पूर्ण पृथ्वीकूं वशमें करिके समस्त वस्तुनकूं इकठौरी करिके बडे यज्ञकूं तुम करौ ॥ ९ ॥ हे राजन् युधिष्ठिर ! ये तेरे भैया लोकनके पालन करनवारे देवतानके अंशते उत्पन्न भये हैं और दूसरेमेंहू जाको अजितेन्द्री पुरुष कभू वशमें नहीं करसके हैं तुम्हारे जितेन्द्रिय-पनसों तुम्हारे वशमें हूं यासो शीघ्र यज्ञ पूरो होयगो ॥ १० ॥ मेरे आश्रयवारे पुरुषकू लोकमें तेज वैभव, सैनाकरिके कोई देवताहू पराभव नहीं करिसकै हैं तो राजा कहांते करि सकैंगे ॥ ११ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित् ! भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको वचन सुनिके प्रसन्नतासूं प्रफुल्लित मुख राजा युधिष्ठिर भगवान्के तेजते बडे अपने भ्रातानके दिशानके जीतिवेके लिये भेजतभयो ॥ १२ ॥ सृंजय देशके राजानकूं संग करिके दक्षिण देशके राजानके जीतिवेके लिये सहदेवकूं आज्ञा देतभये, और मत्स्यदेशके राजानकूं संग करिके पश्चिम दिशाके राजानके जीतिवेकूं नकुलकूं आज्ञा देतभये, और केकयदेशके राजानकूं संग करिके उत्तर दिशाके राजानके जीतिवेकूं अर्जुनकूं आज्ञा देतभये, और मद्रदेशके राजानकूं संग करिके पूर्व दिशाके राजानके जीतिवेकूं भीमसेनकूं आज्ञा देतभये ॥ १३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! सहदेव नकुल अर्जुन भीमसेन वीर संपूर्ण दिशानते राजानकूं बल करिके जीतिके यज्ञ करवेकी इच्छावारे अजातशत्रु राजा युधिष्ठिरकूं बहुत द्रव्य लायके देतेभये ॥ १४ ॥ और सब दिशानते राजा जीतेगये परंच पूर्वदिशाको राजा जरासंध जीतवेमें नहीं आयो या बातकूं श्रवण करिके अतिचिंताकूं प्राप्त भये राजा युधिष्ठिरसों जो उपाय उद्धवजीने श्रीकृष्णचन्द्रकूं बतायो हो सो उपाय श्रीकृष्णचंद्र कहत भये ॥ १५ ॥ हे राजन् ! तब तो भीमसेन अर्जुन श्रीकृष्णचंद्र तीनों ब्राह्मण बनिके जहां बृहद्रथको पुत्र जरासंध गिरिव्रजनाम किलेमें रहतो हो तहां जातेभये ॥ १६ ॥ ब्राह्मणको भेष धारण करे इन क्षत्रिनने अभ्यागतनके आइवेके समय ब्रह्मभक्त गृहस्थ घरमें स्थित राजा जरासंधसों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भिक्षाकी प्रार्थना कीनी ॥ १७ ॥ हे राजन् जरासंध ! हम दूरिते आये हैं मांगनवारे अतिथि हैं सो तुम जानो, जो हम चाहना करैं हैं वह वस्तु तुम हमकूं देउ, तुमारो कल्याण होयगो, यह वस्तु मांगे हैं या प्रकार नाम लैके क्यों न कहो तहां कहैं हैं नाम लैके पुत्र मांगो तौ पुत्र कब दियो और मुकुटते आदि लैके आभूषण मांगे तौ भिखारीनकूं कैसे देउगे तथा रत्नजडित गहनों पुत्रादिकनके योग्य है सो दूसरेकूं कैसे दियो जाय ऐसे जरासंध कहै ताको उत्तर कहे हैं ॥ १८ ॥ सहनशील पुरुष कहा नहीं सहिसकेहै, और दातानकूं कौन वस्तु देवे योग्य नहीं है और समदर्शीनको कौन दूसरो शत्रु हैं यातें नाम लेवेते कहा है जो मांगो सोई देउ ॥ १९ ॥ साधुनसों गायवे योग्य नित्य यशकूं जो पुरुष अनित्य देहते आप समर्थ हैके नहीं करें वह पुरुष निंदा योग्य है और शोच करिवे योग्य है ॥ २० ॥ राजा हरिश्चंद्र तथा रंतिदेव और मुद्गलऋषि राजा शिवि तथा बलि वधिक और कपोत पक्षी और ऐसे बहुत महात्मा या अनित्य देह करिके ध्रुव यशकूं प्राप्त भये हैं ॥ २१ ॥ अब श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! जरासंध कर्कश बोलनि और स्वरूप तथा धनुषके प्रत्यंचाके गट्टेके चिह्नवारे पहुँचेनकूं देखिके ये क्षत्रिनमें नीच हैं यह जानिके द्रौपदीके स्वयंवरमें पहिले मैंने देखे हैं यह विचार करतोभयो ॥ २२ ॥ ये क्षत्रीनमें नीच हैं परन्तु ब्राह्मणको स्वांग धरे हैं या कारण अदेय अपनो आत्माहू यदि यह मांगे तौ इनको भिक्षा देऊंगो ॥ २३ ॥ विष्णुभगवान्ने ब्राह्मणको स्वरूप वामन अवतार धरिके राजा बलिको ऐश्वर्य भ्रष्ट कियो परन्तु वाकी निर्मलकीर्ति अब पर्यंत पृथ्वीपै सुनी जाय है ॥ २४ ॥ लक्ष्मी बलिसों हरण कर इन्द्रको देवेके लिये ब्राह्मणको रूप धरिके प्राप्त भये विष्णु भगवान्कूं जानतोहू हो कि मेरे छलिवेके लिये आयो हैं, और शुक्राचार्यने मनेहू करयो तथापि दैत्यनको राजा बलि वामनजीकूं पृथ्वीदान करतो भयो ॥ २५ ॥ एक दिन तौ यह देह पतन होयगी परंच जीवतहू क्षत्रीके देहसूं ब्राह्मणके अर्थ निर्मल यशकू न करे तौ या देहसूं कहा प्रयोजन है ॥ २६ ॥ या प्रकार निश्चय करिके उदारबुद्धि जरासन्ध श्रीकृष्ण अर्जुन भीमसेनसूं कहत भयो हे ब्राह्मणो ! तुम्हारी इच्छा होय सो वर मांगो, तब श्रीकृष्ण फेरि पक्की करें हैं जो मांगे सो देउगे, तब जरासन्ध कहे हैं वारम्वार कहा कहौ हौ शिरपर्यन्त मांगोगे तो देऊंगो ॥ २७ ॥ तब तो श्रीकृष्णचंद्र भगवान् बोले हे राजनके इंद्र राजन् जरासन्ध ! तुम्हारे मनमें आवे तो द्वंद्वयुद्ध देउ युद्धके निमित्त हम क्षत्री तुमारे पास आये हैं अन्नके लेनवारे ब्राह्मण हम नहीं हैं ॥ २८ ॥ तब जरासन्धने पूछ्यो तुम कौन हो श्रीकृष्णचन्द्र कहे हैं वृकनामा अग्नि जाके उदरमें ऐसो पृथाको पुत्र यह भीमसेन है और याको भैया यह अर्जुन है, और इनके मामाको पुत्र तेरो पहिलो वैरी मैं श्रीकृष्ण हूं यह जानिले ॥ २९ ॥ या प्रकार श्रवण करिके मगध देशको राजा जरासन्ध बहुत हँसत भयो, पीछे क्रोधमें भरिके

---

१ प्र०—भगवान्ने जरासंधसे मंगलको कहा वह तौ शीघ्रही मरगया ? उ०—क्षत्रियोंको युद्धमें प्राणत्याग करना मंगल है, इस कारण यह शब्द उचित ही था॥ २ एक साधू कहीं जंगलमें बैठे हैं सो चार धूर्त उनके निकट आये, एक बाबाजीकूं देख बोला कल तौ यह जुआ खेलरहेथे, आज बाबाजी बनिआये, बाबाजी बोले बचा सत्य कहै है, दूसरा बोला हमने इसे मद्य पीते देखाथा, तीसरा बोला हमने इसे चोरी करते देखा, चौथा बोला हमने इसे वेश्याके यहां देखाथा, बाबाजीने सबकूं यही उत्तर दिया कि, तूभी सत्य कहता है, एक भला मनुष्य यह सब कौतुक देखरहाथा जब वे चारों धूर्त चलेगये, तो बाबाजीके पास आय वो मनुष्य पूछने लगा कि महाराज ! सबकूं तुमने एकसाही उत्तर दिया, इसका क्या कारण है. बाबाजी बोले तूभी सत्य कहता है, बोला मैं ऐसे नहीं मानूंगा तब बाबाजी उसकी हठ देख बोले जो जैसा होय है, उसे वैसाही सूझै है जो मद्यपी था उसने मद्यप, चोरने चोर, जुआरीने जुआरी, वेश्यागामीने वेश्यागामी कहा, यह सुन भला मनुष्य प्रसन्न हो विदाहुआ ॥ दोहा—खूंदन तौ धरती सहै, बाट सहै बनराय । कुवचन तौ साधू सहै, औरपै सह्यो न जाय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे मूर्ख ! मैं तुमकूं युद्ध देऊंगो या प्रकार कहत भयो ॥ ३० ॥ अरे डरपोक कृष्ण व्याकुलचित्त तेरे संग मैं युद्ध नहीं करूंगो, मेरे डरतै तू अपनी मथुरापुरी त्यागिके समुद्रमें जायके वस्यो है ॥ ३१ ॥ अर्जुन मोसौ युद्धमें न्यून है, और न मेरी बराबरि बलवान् है, याते अर्जुन योद्धा नहीं है; हां भीमसेन मेरी बराबरि बलमें है, याके संग युद्ध करूंगो ॥ ३२ ॥ इतनी बात कहिके भीमसेनकूं बडी गदा देके और दूसरी गदा आप लैके पुरते बाहिर निकसत भयो ॥३३॥ ता पीछे बडे मदवारे वीर भीमसेन जरासन्ध परस्पर मिलिके रणभूमिमें वज्रकी तुल्य गदा करिके प्रहार करते भये ॥ ३४ ॥ रंगभूमिमें प्राप्त भए नटनके समान बायें दायें विचित्र मण्डलमें फिरते इन दोनौनको युद्ध सुन्दर लगतो भयो ॥३५॥ हे राजन् परीक्षित् ! दांतवारे हाथीनके दांतनको जैसे शब्द होय तैसें दोनों वीरनकी गदा चलवेको वज्र जैसे पिसे ऐसे चटाचट शब्द होतो भयो ॥ ३६ ॥ युद्ध करवैसौ क्रोध बढे हाथीनकी लडाईमें आकडी जैसे चूर्ण हैजाय है तैसे भुजानके वेगतें आपुसमें बडे क्रोध कर लडनवारे हाथिनके शरीरपै पछाडके जैसे आककी टहनियां टूट पडै ऐसेही बाहुनके वेगसौ चलायमान गदा, कंधा, कमर, पांव, हाथ, जंघा, जत्रु इनसूं लगिके चूर्ण होती भई ॥३७॥ या प्रकार जब दोनौंनकी गदा टूटि गई, तब क्रोधी मनुष्यनमें वीर भीमसेन जरासन्ध लोहेकी तुल्य स्पर्शवारे मुक्कीनकी मार शरीरमें मारत भये, हाथीनकी तुल्य आपुसमें मारते जरासन्ध भीमसेनके मुष्टिप्रहारसौं उठो शब्द जैसे विना बादर वज्रपातको शब्द होय ता प्रकार कठोर शब्द होतो भयो ॥३८॥ हे राजन् परीक्षित् ! नहीं घट्यो है बल जिनको और बराबरी है दांव पेंच बल प्रभाव जिनको मुक्कीकी मारसौं भीमसेन जरासन्धको बराबरीको युद्ध होतोभयो ॥ ३९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार दिनमें तौ युद्ध करैं और रातिमें मित्रकी तुल्य एक ठौर रहैं, ऐसे भीमसेन जरासन्ध दोनों वीरनकूं युद्ध करत सत्ताईस दिन वीतगये ॥ ४० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! एक समय भीमसेन मामाके पुत्र श्रीकृष्णचन्द्रसूं बोलतो भयो हे माधव ! युद्धमें जरासंधकूं मैं नहीं जीति सकूंहूं ॥ ४१ ॥ जरासंधको दो भाग हैकै जन्म भयो है जरा राक्षसीने विनको जोड दियो है यह दो खण्ड हैवेसोंही मरैगो या वार्ताके जाननहारे श्रीकृष्णचंद्रनै भीमसेनको अपने तेजसै बढायो और जरासंधके चीरवेको विचार कियो ॥४२॥ सफलज्ञान श्रीकृष्णचंद्र वैरी जरासंधके मारिवेके चिंतमन करिके युद्धके बीचमें तुनका चीरि सैनसों भीमसेनकूं दिखावत भये, जैसे मैंने यह तुनका चीर्यो है ऐसे तू याकूं चीरिडारि ॥४३॥ मारनवारेनमें श्रेष्ठ बडो बलवान् भीमसेन श्रीकृष्णचन्द्रके संकेतको जानिके वैरी जरासंधके पांव पकरिके पृथ्वीमें पटकतभयो ॥ ४४ ॥ जैसे बडो हाथी वृक्षकी शाखाकूं पकरिके चीरडारैहैं, तैसे पावसूं वाके एक पांवकूं दाबिके दूसरे पांवकूं भुजानते पकरिके गुदाके बीचते चीरके डारत भयो ॥ ४५ ॥ एक एक पांव, जंघा, अंडकोश, कमरि, पीठि, स्तन, कंधा, एक एक भ्रुकुटी, और कान ऐसे दो टूक करे तिने प्रजा देखती भई ॥ ४६ ॥ मगध देशको राजा जरासंध मर्‍यो ता समय बडो हाहाकार शब्द होतो भयो, और अर्जुन श्रीकृष्णचंद्र भीमसेनकूं आलिङ्गन करिके पूजन करते भये ॥४७॥ अप्रमेय स्वरूप, समर्थ सब प्राणीनके पालन करनवारे श्रीकृष्णचंद्र जरासंधके पुत्र सहदेवकूं मगधदेशको राजतिलक देतेभये, और जरासंधने जो वीस हजार आठ सौ राजा रोके है तिनें बंदीखानेते छुडावतभये ॥ ४८ ॥

सहदेवं ततस्तनयं भगवान्भूतभावनः ॥ अभ्यषिञ्चदमेयात्मा मगधानां
पतिं प्रभुः ॥ मोचयामास राजन्यान्संरुद्धा मागधेन ये ॥ ४८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे जरासंधवधो नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥७२॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ७३.

श्रीशुक उवाच-अयुते द्वे शतान्यष्टौ लीलया युधि निर्जिताः ॥
ते निर्गता गिरिद्रोण्या मलिना मलवाससः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले है हे राजन् परीक्षित् ! मलीनरूप, क्षुधा करिकै कृश, सूखे मुख वीस हजार आठसो राजा गिरीद्रोणी किलेमें रुकेहैं, तिनकूं लीला करिके छुटावत भये, ते समस्त राजा बंदीखानेते बाहर निकसिके मेघकी तुल्य श्यामरूप पीरे वस्त्रनकूं पहिरे, श्रीकृष्णचंद्रकूं देखतेभये ॥१॥२॥ अब जैसे स्वरूपको श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन कऱ्यो सो वर्णन करें हैं भृगुलत्ताको चिह्न और चार भुजा और कमलके गर्भकी तुल्य अरुण नेत्र, सुन्दर प्रसन्न मुख और प्रकाशमान मकराकृत कुंडलनकूं धारण करे कमल हाथमें लिये विराजमान, शंख, चक्र, गदाकूं धारण करे और किरीट हार कडा कोंधनी बाजूबंद पहिरे ॥ ३ ॥ ४ ॥ और प्रकाशमान सुन्दर मणि ग्रीवा तथा गलेसों पांवपर्यंत वनमालाकूं धारण करें; ऐसे रूपकूं देखिकै राजानकूं लूटिसि परिगई देखिकै नेत्र ऐसे चलामें मानो रूपकूं पीजांयगे ॥ ५ ॥ जीभ ऐसी चलामें मानो चाटिजांयगे, नाक ऐसी फुलामें मानो सुंघि जांयगे, भुजा ऐसी चलामें मानो स्वरूपको आलिंगन करिलेइंगे, पाप दूरि हैवेसों राजा शिरनसूं श्रीकृष्णचंद्रके चरणनमें प्रणाम करते भये ॥ ६ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके दर्शनते जो आनन्द भयो तासूं बंदीखानेके क्लेश मिटगये हाथ जोरे समस्त राजा हृषीकेश श्रीकृष्णचंद्र भगवान्के दर्शन करिके वाणीन करिकै स्तुति करत भये ॥ ७ ॥ इंद्रादिक देवतानके देव जो ब्रह्मादिक तिनके ईश्वर हे शरणागतके कष्ट हरनवारे ! हे अविनाशी ! हे कृष्ण ! या घोर संसारतै दुःखित भये तुमारी शरणमें आये हमारी रक्षा करो ॥ ८ ॥ हे नाथ ! जरासंधकूं दोष लगाइकै हम नहीं देखे है हे प्रभो ! हम राज्यभ्रष्ट हैवेसो आपके अनुग्रह माने हैं ॥ ९ ॥ राज्यऐश्वर्यके मदसों मर्यादा त्यागवेके कारण राजा कल्याणकूं नहीं प्राप्त होय है, और तुमारी मायासूं हैके अनित्य संपदाकूं अचल माने है ॥ १० ॥ जैसे अज्ञानी पुरुष सूर्यकी किरणनसूं चमकती वारूको जलको सरोवर माने है ऐसेही अज्ञानी पुरुष नानासृष्टि असद्रूपी मायाकूं सत्य माने हैं ॥ ११ ॥ हे समर्थ ! हम लक्ष्मीके मदसों अंधे हैके पृथ्वीके जीतवेकी इच्छासों परस्पर द्वेष करते और मृत्युकी समान शिरपर खडे कालरूप आपको नहीं गिनते है और मदसो मत्त हैके निर्दयीपनसों अपनी प्रजाकूं महाकष्ट देते है ॥ १२ ॥ हे कृष्ण ! गंभीर वेग और बडे पराक्रमवारी तुम्हारी काल मूर्तिने हम लक्ष्मीते भ्रष्ट करे, अब तुम्हारी कृपासों गर्वरहित हैके हम तुम्हारे चरणनको स्मरण करें हैं ॥ १३ ॥ याके पीछे नित्य आयु जाकी क्षीण होय, और रोग अर्थात् एक न एक रोग जामें उत्पन्न होय ऐसे देहसूं मृगतृष्णारूप मिथ्या राज्यकी इच्छा हम नहीं करें हैं, और कर्मनके फल स्वर्गादिककी इच्छा हम नहीं करें हैं ते केवल काननसूं श्रवण मात्र हैं ॥ १४ ॥ या संसारमें भूलें हम काहू योनिमेंहू तुमारे चरणारविंदको न भूलैं ऐसो उपाय बताओ ॥ १५ ॥ भक्तनके क्लेशनकूं दूरि करनवारे, शुद्ध अंतःकरणके प्रकाशक, हरि परमात्मा और अपने भक्तनके क्लेशके काटनेवारे हे गोविंद ! तुमकूं प्रणाम करें हैं ॥ १६ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! जरासंधके बंदीखानेते छूट राजाने स्तुति करी तौ शरणके योग्य करुणावान् भगवान् श्रीकृष्णचंद्र मनोहर वाणी करिके राजानते बोलतेभये ॥ १७ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र

---

१ जांहि कहां अपराध मरे । तुम माता तुम पिता जगद्गुरु तुमही सहोदर बंधु हरे ॥ वसन कुचील देह अति दुर्बल उमंगि प्रेम जल शिथिल भरे । राजा सबै बंदितैं छांडे आय कृष्णके पांय परे ॥ सावधान करि विदा दई हरि उठे कमलकर शीश धरे । सूरदास प्रभु तुमरि कृपातैं भवसागरके मांझ तरे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बोले हे राजाओ ! जैसे तुमने चाहना करी तैसे सबको ईश्वर आत्मा मोमें आजते निश्चय दृढ भक्ति भई ॥ १८ ॥ हे राजाओ ! सत्यवादी तुमने मेरो भजन करिवो यह भलो सत्य सङ्कल्प निश्चय कियो है मनुष्य धन और ऐश्वर्यके मदसों उन्मत्त हैके इच्छापूर्वक विचरते दीखे हैं ॥ १९ ॥ कृतवीर्यको पुत्र चक्रवर्ती राजा सहस्रबाहु एक समय जमदग्नि ऋषिकी गौ हरिके लै आयो, तब वाकूं परशुरामजीने पुत्रनसहित मार्‌यो, और राजा नहुष मदोन्मत्त हैके इन्द्राणीके पास जायवेके लिये ब्राह्मणनकूं पालकीमें लगायके चल्यो, तब ब्राह्मणनने वाकूं ऐश्वर्यभ्रष्ट करिके सर्प करि दियो, और राजा वेनने मतवारो हैके ब्राह्मणनको तिरस्कार कर्‌यो, तब ब्राह्मणनने हुंकारशब्द करिके मार्‌यो, और राक्षसनके राजा रावणने सीताकी आकांक्षा करी, तब रामचन्द्रने मार्‌यो, तथा दैत्यनको राजा नरकासुर अदितिके कुण्डल हरिलायो, तब मैंनेही मार्‌यो, और कितनेहू देवता और कितनेहू राजा धनके मदते स्थाननतें भ्रष्ट है गये ॥२०॥ और तुम सम्पूर्ण उत्पन्न करवे लायक जो देहादिक हैं वो नाश होयगो यह जानिके सावधान हैके यज्ञनकरिके मेरो पूजन और प्रजाकी रक्षा करो ॥२१॥ और पुत्रादिकनकूं उत्पन्न करो जन्म, मृत्यु, सुख, दुःख प्राप्त होय ताको सेवन करो, मोमें चित्तकूं लगायके विचरो ॥ २२ ॥ आत्मामें रमण करते व्रत धारण किये देह और घरमें उदासीन हैके भली प्रकार मोमें मन लगाओगे तो अंतमें मो ब्रह्मकूं पावोगे ॥ २३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! त्रिलोकीके ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचंद्र या प्रकार राजानकूं आज्ञा करिके तिनको उबटन स्नान क्षौरकर्मनके करायवेके निमित्त स्त्री पुरुषनकूं लगावते भये ॥२४॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजन् परीक्षित् ! राजानके स्नानकर चुकेपें जरासंधके पुत्र सहदेवसों राजानके योग्य वस्त्र आभूषण माला चंदन करिके पूजन करावते भये ॥ २५ ॥ सुन्दर स्नान करे वस्त्र आभूषणनसों शोभित, और नाना प्रकारके भोगन करिके युक्त राजानकूं श्रेष्ठ अन्न भोजन करायके राजानके योग्य तांबूलादिक देतभये ॥ २६ ॥ मुकुंद श्रीकृष्णसों पूजित और प्रकाशमान कुंडलनकूं पहिरे, बंदीखानेके क्लेशते छुडाये राजा वर्षाऋतुके पीछे आकाशमें तारागणनकी समान सुंदर लगते भये ॥ २७ ॥ मणि और सुवर्णके गहने करिके शोभायमान राजानको सुंदर घोडे जुते रथनमें बैठायके मनोहर वचनसूं प्रसन्न करिके श्रीकृष्णचन्द्र विनके देशनकूं भिजवावत भये ॥ २८ ॥ बडे महात्मा श्रीकृष्णचंद्र बंदीखानेके कष्टते छुडाये राजा जगत्‌के पति श्रीकृष्णको ध्यान और विनके कर्मनको ध्यान करत मार्गमें जातेभये ॥ २९ ॥ वे समस्त राजा जैसे महापुरुष श्रीकृष्णचंद्रने छुडाये, और जैसे पूजा कराई, वह सब वृत्तान्त अपनी प्रजाके आगे कहते, और जा प्रकार श्रीकृष्णने शिक्षा दीनी तैसेही आलस्य छोडिके करतभये ॥ ३० ॥ केशव भगवान् श्रीकृष्णचंद्र भीमसेनसों जरासंधको घात करायके, और सहदेवसूं अपनो पूजन करायके भीमसेन अर्जुनकूं संग लेके आवतभये ॥ ३१ ॥ दुष्टहृदय शत्रुनकूं दुःखके देनवारे और अपने सुहृदनकूं आनंदके देनवारे श्रीकृष्ण भीम अर्जुन ये सब वैरी जरासंधकूं मारिके इन्द्रप्रस्थमें जायके शंखनकूं बजावतेभये ॥ ३२ ॥ शंखको शब्द सुनिके प्रसन्न मन इन्द्रप्रस्थके निवासी जरासंधकी मृत्यु भई जानते भये और राजा युधिष्ठिरके मनोरथ पूर्ण होतेभये ॥३३॥ याके पीछे भीमसेन अर्जुन श्रीकृष्णचंद्र आयके राजा युधिष्ठिरकूं प्रणाम करिके आपने जो कुछ कर्‌योहो सो सुनावतेभये ॥ ३४ ॥ धर्मराजके पुत्र राजा युधिष्ठिर ब्रह्मा महादेवके वश करनवारे श्रीकृष्णचंद्रने जो कार्य करो वाकों श्रवण करिके नेत्रनसूं आनंदके आंशूनकी धार बहावते, प्रेममें विह्वल हैके कछु न बोलते भये ॥ ३५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निशम्य धर्मराजस्तत्केशवेनानुकम्पितम् ॥
आनन्दाश्रुकलां मुञ्चन्प्रेम्णा नोवाच किञ्चन ॥ ३९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥

अध्याय ७४.

श्रीशुक उवाच--एवं युधिष्ठिरो राजा जरासन्धवधं विभोः ॥
कृष्णस्य चानुभावं तं श्रुत्वा प्रीतस्तमब्रवीत् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार राजा युधिष्ठिर जरासंधको वध सुनिकै और श्रीकृष्णचंद्रको प्रभाव सुनिके प्रसन्न हैके श्रीकृष्णचंद्रसो बोलतो भयो ॥१॥ जे पुरुष त्रिलोकीके गुरु हैं सब लोकनके बडे ईश्वर हैं वेहू दुर्लभ पायके तुम्हारी आज्ञाकूं शिरपै धारण करें हैं ॥२॥ हे व्यापक ! हे कमलनयन ! आप हम दुःखी और सामर्थ्यपनेको अभिमान राखनेवारेनकी आज्ञाको शिरपें धारण करै हो यह विडम्बना मात्र है वास्तवमें आपको यह बात संभव नहीं है सकेहै ॥३॥ एक अद्वितीय अर्थात् कोई जिनकी बराबरी नहीं और कोई जिनते बडो नहीं ऐसे परमात्मा तुम हौ, आपको तेज परोपकारके लिये किये कर्मसूं न्यून नहीं होय है, जैसे सूर्यको उदय अस्तमें तेज घटै बढै नहीं हैं ॥४॥ कदाचित् कहौ कि मैं परमेश्वर हूं तो सबकी आज्ञा करनो यह मंद कर्म करनो योग्य नहीं है सो कहै हैं हे मधुवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचंद्र ! हे अजित ! अर्थात् काहूके जीतिवेमें न आओ, जैसे अज्ञानी पुरुषनके देहमें अहंकार और देहके संगीनमें समता रहे है ऐसे तुम्हारे भक्तनके मैं मेरो तू तेरो यह बुद्धि नहीं होय है ॥ ५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित् ! राजा युधिष्ठिर भगवान्सो यह वचन कह विनकी सम्मति लेके यज्ञ करिवे योग्य वसंतादि कालमें वेदके पढनवारे योग्य ब्राह्मणनकूं होता, उद्गाता, अध्वर्यु इत्यादिकमें वरण करतो भयो ॥६॥ द्वैपायन, भरद्वाज, सुमंत, गौतम, असित, वसिष्ठ, च्यवन, कण्व, मैत्रेय, कवष, त्रित ॥ ७ ॥ विश्वामित्र, वामदेव, सुमति, जैमिनि, ऋतु, पैल, पराशर, गर्ग, वैशंपायन ॥ ८ ॥ अथर्वा, कश्यप, धौम्य, परशुराम, भार्गव, आसुरि, वीतिहोत्र, मधुछन्द, वीरसेन, अकृतव्रण ॥ ९ ॥ तैसेही बुलाये भये द्रोणाचार्य, भीष्मजी कृपाचार्यते आदि लैके ऋषि आवत भये और पुत्रनसहित धृतराष्ट्र और बडे बुद्धिवान् विदुरजी आवते भये ॥ १० ॥ हे राजन् ! तथा यज्ञके देखिवेके निमित्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र और संपूर्ण राजा और विनके प्रधान दीमान हैं वेहू वा यज्ञमें सब आवते भये ॥ ११ ॥ ता पीछे ब्राह्मण यज्ञ करिवेकी भूमिमें सुवर्णके हल चलायके भूमि शोधन करके राजा युधिष्ठिरकूं यज्ञदीक्षा करत भये ॥ १२ ॥ जैसे पहिले वरुणके यज्ञमें सुवर्णकी सामग्री पात्र होत भये ऐसेही याहू यज्ञमें होतभये और ब्रह्मा महादेवकूं संग लैके तथा इन्द्रादिक देवतानकूं संग लैके लोकपाल आवतभये ॥ १३ ॥ गणनसहित सिद्ध गन्धर्व विद्याधर और बडे बडे सर्प और मुनीश्वर यक्ष राक्षस खग किन्नर चारण इनके समूह आवतभये ॥ १४ ॥ और आये राजानकी सम्पूर्ण स्त्रीहू पांडुके पुत्र राजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें आवतीभई ॥ १५ ॥ यह सब कोई आश्चर्य न करकै हरिभक्तकी सब वार्ता सिद्ध हैसकै है यासो युधिष्ठिरके यज्ञमें विस्मय नहीं करते भये जैसे देवतानने वरुणकूं यज्ञ करायो तैसेही देवतानकी कांतिवारे ऋत्विज राजसूय यज्ञ करिके विधिपूर्वक महाराज युधिष्ठिरसूं यजन करावते भये ॥ १६ ॥ अतिशय करिके सावधान पृथ्वीके पालन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करनवारे राजा युधिष्ठिरने जा दिन सोमवल्ली कूटी गई वा दिन यज्ञ करामनवारेनको तथा बडभागी जे सभामें मुख्यनको पूजन करचो ॥ १७ ॥ सभाके बैठनवारेनमें प्रथम पूजन योग्य कौन है यह विचार करत करत एककी अपेक्षा एक बडो है याते काहूको निश्चय जब न भयो तब युधिष्ठिरको भैया सहदेव बोलतो भयो ॥ १८ ॥ भक्तनके पालन करनवारे अखंडरूप समस्त देवता देशकाल धनादिकरूप श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् या यज्ञमें पूजा करिवेके पात्र है ॥ १९ ॥ यह समस्त विश्व श्रीकृष्णको रूप है और यज्ञादिकहू श्रीकृष्णरूप है अग्नि आहुति मंत्र ज्ञान उपासना ये सब श्रीकृष्णपरायण हैं ॥ २० ॥ हे सभाके बैठनवारे ! अजन्मा एक अद्वितीय यह श्रीकृष्ण है सो अपने स्वरूप किश्वकूं अपने आत्माही करिके दूसरेकी सहायता विना उत्पन्न पालना नाश करें हैं ॥ २१ ॥ सब जनके अनुग्रहते या संसारमें अनेक तरहके तप योगादिक कर्मकूं करिके धर्मादिक स्वरूप कल्याणकूं करें हैं, अनेक प्रकारके सम्पूर्ण कर्मनके फल ये सब श्रीकृष्णके आधीन हैं ॥ २२ ॥ ता कारण सबते बडे श्रीकृष्णचन्द्रकूं पूजा देउ, इनकूं देवेसो सब प्राणीनकी पूजा हैजायगी ॥ २३ ॥ और जो कोई पूजा योग्य होयगो ताहूकी हैजायगी जो पुरुष पूजाके अनन्त फलकी चाहना करें, वह पुरुष सब प्राणीनके आत्मा और भेदभावरहित शांतिपरिपूर्णरूप श्रीकृष्णचन्द्रकूं पूजा देइ ॥ २४ ॥ श्रीकृष्णके प्रभावकूं जाननहारो सहदेव इतनी कहिके चुप होतो भयो, ता समय सम्पूर्ण श्रेष्ठपुरुष सहदेवको वचन श्रवण करिके भले भले या प्रकार बडाई करतेभये ॥ २५ ॥ स्नेहसों विह्वल प्रसन्न हैके राजा युधिष्ठिर तिन ब्राह्मणनके कहे वचन सुनिकै और सभामें बैठे पुरुषनके हृदयको अभिप्राय जानिके इंद्रियनके प्रेरण करनवारे श्रीकृष्णचन्द्रको पूजन करतो भयो ॥ २६ ॥ स्त्री भैया मंत्री और सब कुटुम्बके पुरुषनसहित राजा युधिष्ठिर श्रीकृष्णचंद्रके चरण धोइके लोकनके पवित्र करनवारे चरणारविंदको धोवन जल आनन्दकरिके शिरपें चढावतभयो ॥ २७ ॥ पीरे वस्त्र और रेशमी वस्त्र और बहुत मोलके आभूषणसूं पूजन करिके आसूं भरे नेत्रनसों राजा युधिष्ठिर श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शन करिवेकूं नहीं समर्थ होतो भयो ॥ २८ ॥ या प्रकार राजा युधिष्ठिरने पूजा करि तब श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करिके संपूर्ण जन हाथ जोड 'नमो नमः' और 'जयजय' शब्द करिके श्रीकृष्णचंद्रकूं प्रणाम करिके फूलनकी वर्षा करतभये ॥२९॥ वा समय दमघोषको पुत्र शिशुपाल श्रीकृष्णचन्द्रके गुणनको वर्णन सुन क्रोधित हैके भुजाकूं ऊंची उठायके ईर्षा कर निर्भय हैके श्रीकृष्णकूं कठोर वचन सुनाके यह बोलतो भयो ॥ ३० ॥ नाशरहित श्लाघ्य सामर्थ्यमान काल बडो प्रबल है, यह वेदकी श्रुति सत्य है, कालसोही वृद्ध वृद्ध सभामें बैठनहारेनकी बुद्धि या बालक सहदेवके कहवेते चलायमान है गई है ॥३१॥ हे पात्रके जाननवारेनमें श्रेष्ठ सभाके पतिओ ! यह कृष्ण पूजाके योग्य है, या बालक सहदेवको वचन सब मति मानो ॥ ३२ ॥ तपस्या करनहारे, विद्यावान्, व्रती, ज्ञानी, पापरहित, ब्रह्मनिष्ठ लोकपालनसों पूजित ब्रह्मर्षि ॥ ३३ ॥ या सभामें विराजें है इन सबकूं त्यागिके गायनको चरामनवारो, कुलकूं दोष लगामनवारो पूजाके योग्य कैसे होय है, यज्ञमें देवतानके योग्य बलि कौआ कैसे ग्रहण करिवेके योग्य है ॥३४॥ न जाको कोई वर्ण है, न आश्रम है, और न कोई कुल है, सपूर्ण धर्मनसूं बहिष्कृत, जैसे मनमें आवै तैसेही करें गुणनकरिके हीन ऐसो कृष्ण कैसे पूजनयोग्य होय है ॥३५॥ राजा ययातिने इनके कुलकूं शाप दियो और सत्पुरुषनने जातिबहिष्कृत कियो, और सर्वदा वृथा मदिरापान करनहारो इनको कुल है या कुलमें कृष्ण कैसे पूजा योग्य होय है ॥ ३६ ॥ ब्रह्मर्षिसेवित देशनकूं त्यागिके ब्रह्मतेजरहित समुद्रके किलेको आश्रय लैके, यादव चोरनकी तुल्य प्रजाकूं बाधा करे हैं ॥ ३७ ॥ नष्टमंगल शिशुपाल ऐसे अमंगल वचन कहतभयो, जैसे सिंह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्यारकी बोलनपै मन नहीं देइ है तैसे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र कछु नहीं बोलतेभये ॥ ३८ ॥ सभाके बैठनवारे दुस्सह भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी निंदा श्रवण करिके काननकूं मूंदिके क्रोध करिके शिशुपालकूं गारी देतेभये ॥ ३९ ॥ भगवान्की निंदा सुनिके अथवा भगवत्परायण पुरुषनकी निंदा सुनिके जो पुरुष वा स्थानते न उठिजाय वह पुरुष अपने पुण्यते भ्रष्ट हैके नरकमें गिरे हैं ॥ ४० ॥ तापीछे क्रोधसों पांडुके पुत्र और मत्स्यदेशके सृंजयदेशके राजा शस्त्रनकूं उठायके शिशुपालके मारिवेके लिये ठाढे होतभये ॥ ४१ ॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् ! तापीछे हरबराहटरहित शिशुपाल श्रीकृष्णचन्द्रके पक्षी राजानके मारिवेकूं ढाल तलवारि लेतभयो ॥ ४२ ॥ यह मेरो पार्षद है मेरी बराबरी यामें बल है यह सबनकूं मारैगो, यातें मैंही याकूं मारूं, यह विचारिके ताहीसमय उठिके भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अपनी ओरके राजानकूं मने करिके सन्मुख आते वैरी शिशुपालको शिर क्षुराकी तुल्य पैनी धारवाले चक्रसूं काटतेभये ॥ ४३ ॥ ता समय बडो कोलाहल शब्द होत भयो, और शिशुपालके पिछलगू राजा जीवेकी इच्छा करिके भाजतभये ॥४४॥ ता समय शिशुपालके देहमेंते निकसी ज्योति सब प्राणीनके देखत श्रीकृष्णचन्द्रमें मिलती भई जैसे आकाशते गिरचो तारो पृथ्वीमें मिलिजाय है ॥ ४५ ॥ पहिले जन्ममें हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु भये, और दूसरे जन्ममें रावण कुंभकर्ण भये, तीसरे जन्ममें शिशुपाल दंतवक्र भये या प्रकार तीन जन्मसो चले आये वैरसूं तन्मय बुद्धिसो रूपको ध्यान करत २ वाही रूपकूं पावत भयो, अर्थात् पार्षद होत भयो, क्यों कि जैसी जो भावना करै तैसोही ताको जन्म होय हैं ॥ ४६ ॥ चक्रवर्ती राजा युधिष्ठिर यज्ञके करावनवारेनकूं और बडे सभामें बैठनवारे ब्राह्मणनकूं बडी दक्षिणा देतभये, विधिपूर्वक सबको पूजन करिके यज्ञांत स्नान करतभये ॥४७॥ योगेश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्णचन्द्र राजा युधिष्ठिरको यज्ञ सिद्ध करिके सुहृदनकी विनयसों कितनेहू मास पर्यंत वास करत भये ॥ ४८ ॥ ता पीछे जान देवेकी इच्छा नहीं करनहारे राजा युधिष्ठिरसूं आज्ञा मांगिके समर्थ देवकीके पुत्र अपनी स्त्रीनकूं संग लैके अपनी द्वारकापुरीमें आवते भये ॥ ४९ ॥ वैकुंठके वसनवारे जय विजय पार्षदनको सनकादिकनको शाप लग्यो ताते वारंवार जन्म भयो हे राजन् ! यह कथा तुम्हारे आगे विस्तारपूर्वक वर्णन करचुके ॥ ५० ॥ राजसूय यज्ञ करिके पश्चात् स्नान कर राजा युधिष्ठिर ब्राह्मण और क्षत्रीनके मध्यमें बैठे इन्द्रकी तुल्य सभामें सुन्दर लगत भये ॥५१॥ राजा युधिष्ठिरसो सत्कार पाय संपूर्ण देवता आकाशके विचरनवारे मानुष प्रमथगण श्रीकृष्णचन्द्र और सभा तथा यज्ञ इनकी प्रशंसा करत बडे आनंदसूं अपने २ लोकनकूं जातेभये ॥ ५२ ॥ कौरवनके कुलकूं कलियुगरूप कुलको नाशक धर्मद्वेषी दुर्योधन पांडुपुत्र महाराज युधिष्ठिरकी बडी शोभाकूं देखिके कुढतभयो ॥ ५३ ॥ शिशुपालके वधकूं आदि लैके जे श्रीकृष्णके कर्म वीस हजार राजा बांधते छुडाये युधिष्ठिरको यज्ञ करायो या प्रसंगकूं पुरुष कहै वह सब पापनते छुटि जाय है ॥ ५४ ॥

य इदं कीर्तयेद्विष्णोः कर्म चैद्यवधादिकम् ॥
राजमोक्षं वितानं च सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ५४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० उ० शिशुपालवधो नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥

अध्याय ७५.

राजोवाच-अजातशत्रोस्तं दृष्ट्वा राजसूयमहोदयम् ॥
सर्वे मुमुदिरे ब्रह्मन्नृदेवा ये समागताः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अब राजा परीक्षित् कहैं हैं हे शुकदेवजी ! अजातशत्रु राजा युधिष्ठिरके राजसूययज्ञकी बडी शोभा देखिवेको राजा आये हे वे संपूर्ण प्रसन्न होतेभये ॥ १ ॥ और सम्पूर्ण देवताहू दुर्योधनके विना आनन्दकूं पावतेभये, यह मैंने तुम्हारे मुखते सुनी सो दुर्योधनकों आनन्द क्यों न भयो, याको कारण मेरे आगे वर्णन करौ ॥ २ ॥ ऋषीश्वर कहैं हैं महात्मा तुम्हारे दादे राजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें सब भैया बंधु प्रेमवश हैके सबहीकी टहलमें युक्त होतेभये ॥ ३ ॥ कौन कौनने कौन कौन टहल लीनी सो कहै हैं, भीमसेनकूं रसोईको अधिष्ठाता, और दुर्योधन खरचको मालिक क्योंकि यह हमकूं शत्रु जानिके द्रव्य बहुत उठावेगो, तो यामें हमरो यश होयगो, और सहदेवकूं आयेगयेनकी पूजा करनो, नकुल सब सामग्रीनकूं लै आमें ॥ ४ ॥ साधुनकी टहल अर्जुन करत भये, श्रीकृष्णचन्द्र यज्ञमें आयवेवारे-नके पाव धोयकै पौंछ दैय परोसा परोसीमें द्रौपदी प्रवृत्त भई उदार मन कर्ण दान दैवेकी टहलमें लगत भयो ॥ ५ ॥ युयुधान विकर्ण हार्दिक्य और विदुर आदि और भूरिश्रवा आदि बाह्लीकके पुत्र और संतर्दन आदि वा बडे यज्ञमें अनेक प्रकारके कर्मनमें लगायदिये ता समय हे राजानके इन्द्र राजा परीक्षित् ! महाराज युधिष्ठिरके प्रिय करिवेके निमित्त समस्त प्रवृत्त होतेभये ॥६॥७॥ ऋत्विज और सभाके बैठनवारे तथा विवेकी सुहृद सुन्दर मनोहर वचन गहने दक्षिणासूं पूजित हैके शिशुपा-लकूं श्रीकृष्णचन्द्रके चरणकी प्राप्ति हैवेके उपरान्त स्वर्गनदी गंगामें यज्ञकी समाप्तिको स्नान करतभये ॥ ८ ॥ यज्ञकी समाप्तिके उत्सवमें मृदंग शंख ढोलक खंजिरी नगाडे नरसिंघा ये चित्र विचित्र बाजे बाजते भये ॥ ९ ॥ नाचनवारी नाचती भई आनंदसो गवैयानके झुंडके झुंड गावतभये तिनके वीणा वेणु हथेरीको शब्द स्वर्ग पर्यंत जातो भयो ॥ १० ॥ चित्र विचित्र ध्वजा पताका जिनके ऊपर ढकी ऐसे बडे हाथी और बडे घोडानपै बैठिके स्वर्णकी मालानकूं पहिरके प्यादेनकूं संग लैके राजा निकसते भये ॥ ११ ॥ राजा युधिष्ठिरकूं आगे किये सृंजय कांबोज कुरु केकय कोशल देशनके राजा सैनासहि-तकूं पृथ्वीको कंपावते जातेभये ॥ १२ ॥ सभाके बैठनवारे ऋत्विज तथा ब्राह्मण वेदकी ध्वनि करत जातेभये ऋषि पितृ गंधर्व पुष्पनकी वर्षा करिके स्तुति करतभये ॥ १३ ॥ चंदन माला गहने वस्त्रसूं शृंगार करें स्त्री पुरुष नाना प्रकारके रसनकूं लेपन और छिरकाव करतभये ॥१४॥ तेल और माखन सुगंधिके जल हरदी केसर इत्यादिकनकूं वेश्या और पुरुष लेपन करत और छिरकत परस्पर विहार करतेभये ॥ १५ ॥ या उत्सवके निमित्त जैसे उत्तम विमानमें बैठिके देवांगना आई होंय या प्रकार प्यादेनसों रक्षित हैके राजा युधिष्ठिरकी रानी रथनमें पालकीनमें बैठिके निकसती भई, वे रानियें मामाके पुत्रनसों और सखिनसों भिजोती लाजभरी मुस्कानसों खिले मुखसों शोभित है रहीहीं ॥१६॥ भीजवेसों और शरीरमें चिपटवैसो विन स्त्रियनके अंग कुच जंघा और मध्य भाग स्पष्ट दीखते हैं उत्सुकतासों चोटि शिथिल हैवेके कारण वासों फूल विखर रहे हैं देवर और सखीजन विन्हैं डोलचि-वेसों भिजोय रहे हैं उनकी लीला देखके मलीनमन कामी जनके चित्त क्षुभित होते हे ॥ १७ ॥ सुवर्णकी माला पहिरे, सुंदर घोडा जुते रथमें बैठे राजा युधिष्ठिर जैसे क्रियासहित यज्ञ सुंदर लगै है या प्रकार स्त्रीनसहित सुंदर लगते भये ॥ १८ ॥ ऋत्विज वे पत्नी संयाज और आवभृथ्य नाम दो यज्ञांग करिके गंगामें द्रौपदी सहित आचमन करें राजा युधिष्ठिरकूं स्नान करावत भये ॥ १९ ॥ देव-तानके नगारे, तथा मनुष्यनके नगारे बाजते भये, देवता ऋषि पितृ मनुष्य फूलनकी वर्षा करत

१ अथवा या दुर्योधनके हाथमें पद्मको चिह्न हो वाको यह फल हो कि जा काउ द्रव्य आदि वस्तुमें ये अपनो हाथ गेरे वो वो वस्तु कभू कमती न होय यासों दुर्योधनकों धनाध्यक्षपनेको काम दियो हो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये ॥२०॥ वर्णयुक्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र ये चारों वर्ण ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी ये चार आश्रम गंगामें सब स्नान करत भये, बडे पापी पुरुषहू जामें स्नान करिके शीघ्र पापते छूटि जाय हैं ॥ २१ ॥ स्नान करे पीछे राजा युधिष्ठिर नवीन रेशमी धोती उपरना पहिरिके भले प्रकार शोभायमान हैके ऋत्विज और सभाके बैठनवारे और ब्राह्मणादिकनकूं वस्त्रनसहित पूजन करत भये ॥ २२ ॥ नारायणके आश्रयी राजा युधिष्ठिर भैया बंधु जातिके राजा मित्र सुहृद औरहू संपूर्ण मनुष्यनको वारंवार पूजन करतभये ॥ २३ ॥ देवतानकी तुल्य कांतिवारे मणिनके जडाऊ कुण्डल माला पगडी जामा पटुका बडे मोलके हार पहिरे पुरुष, और दोनों कुण्डल अलकनके समूह करिके शोभायमान मुखवारे स्त्री सुवर्णकी कोंधनी पहिरिके सब सुन्दर लगतीभई ॥ २४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! स्नान करे पीछे राजा युधिष्ठिरसों पूजित हैके शील स्वभाववारे ऋत्विज और सभाके बैठनवारे तथा वेदके पढनवारे, और ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र और राजा ॥ २५ ॥ देवता, ऋषि, पितर, समस्त प्राणी, तथा टहलुआन सहित लोकपाल राजा युधिष्ठिरते पूजन करायके आज्ञा मांगिके अपने अपने घरनकूं जाते भये ॥ २६ ॥ हरि भगवान्के भक्तनमें राजर्षि राजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञकी बडी शोभाकी प्रशंसा करत करत नहीं तृप्त होतेभये, जैसे मनुष्य अमृत पीवत पीवत नहीं तृप्त होय है ॥ २७ ॥ सुहृदसंबंधी बन्धु और श्रीकृष्णचन्द्रके बिछुरिवेमें कायर मन हैके राजा युधिष्ठिर प्रेमकरिके राखतेभये ॥ २८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! तिन राजा युधिष्ठिरको प्रिय करिवेकूं सांब आदि पुत्र और यादवनमें शूरवीरनको द्वारिकामें भिजवायके आप श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थमें रहते भये ॥२९॥ धर्मके पुत्र युधिष्ठिर राजा दुस्तर मनोरथरूपी बडो समुद्र श्रीकृष्णचंद्रकी सहायताते तरिके सब खेद दूरि करतेभये ॥ ३० ॥ एक समय पुरके मध्यमें राजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञकी शोभा देखिके और श्रीकृष्णचंद्रमें मन लगामनहारे राजा युधिष्ठिरकी महत्त्वता देखिके ॥ ३१ ॥ और राजा युधिष्ठिरके अन्तःपुरमें मयकारीगरने बनाई अनेक प्रकारकी राजानकी असुरनकी, देवतानकी, विभूति और द्रुपदराजाकी पुत्री द्रौपदीकी अपने पतिनकी सेवा, वाको देख दुर्योधनको मन अत्यन्त तापको प्राप्त भयो ॥ ३२ ॥ राजा युधिष्ठिरके अन्तःपुरमें ता समय मधुपति श्रीकृष्णचन्द्रकी राणीनके समूह नितम्बनके भारसों धीरे २ चलवेमें बजते नूपुरुनसों शोभित चरण कुचानकी केशरसों अरुण हार धारण किये चंचल कुंडल और केशपाशसों युक्त सुन्दर मुख रमणीय कटिसों युक्त श्रीकृष्णकी सहस्रनारी तहां फिरतीही ॥ ३३ ॥ मय दैत्यकी निर्माण करी सभामें काहू समय अपने आज्ञाकारी भैया बंधूनसहित और हित अहितके जाननवारे श्रीकृष्णसहित धर्मपुत्र राजा चक्रवर्ती युधिष्ठिर ॥ ३४ ॥ साक्षात् सिंहासनपै जैसे इन्द्र विराजमान होय ऐसे सुवर्णके सिंहासनपै विराजमान हैके राज्यकी शोभासो सेवित और बंदीजनसों स्तुति पाय शोभायमान होतेभये ॥३५॥ हे राजन् परीक्षित् ! जासमय भैयानकूं संग लैके किरीट धारण करे माला पहिरे हाथमें तरवारि लिये क्रोध करिके द्वारपालगणनकूं डाटतो अभिमानी दुर्योधन आवतभयो ॥ ३६ ॥ मयदैत्यकी बनाई सभामें सूखेमें जल दीखै, और जलमें सूखो दीखै, ऐसी मयरचित सभामें मयदैत्यकी मायासूं मोहित हैके दुर्योधन भ्रमसूं सूखेमें जल मानिके जामा उठावत भयो, और सूखो जानि जलमें गिरतभयो ॥ ३७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! दुर्योधनकूं देखके भीमसेन हँसत भयो स्त्री हँसतिभई और राजा युधिष्ठिरने मने करे, तथापि श्रीकृष्णचन्द्रने सैन करदिये तासूं औरहू सब राजा हँसतेभये ॥ ३८ ॥ हास्य देखिके लज्जित दुर्योधन क्रोधकरिके सभामेंते निकसिके चुपचुपातो हस्तिनापुरकूं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जातो भयो, साधुनको बडो हाहाकार शब्द होतभयो और अजातशत्रु राजा युधिष्ठिर उदास होतभये जिनकी दृष्टिसो सब जगत् भ्रमण करे है वे भगवान् तौ चुप हैके बैठ गये कारण कि विनकी इच्छा पृथ्वीको भार उतारनेकी है यही भारतको बीज है ॥ ३९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! राजसूय बडे यज्ञमें दुर्योधनकूं कुढन कैसे भयो, यह तुमनें प्रश्न करचो ताको उत्तर तुम्हारे सन्मुख वर्णन करो ॥ ४० ॥

एतत्तेऽभिहितं राजन्यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ॥
सुयोधनस्य दौरात्म्यं राजसूये महाक्रतौ ॥ ४० ॥

इतिश्रीमन्महाभा० द० उ० दुर्योधनमानभंगो नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

अध्याय ७६.

श्रीशुक उवाच–अथान्यदपि कृष्णस्य शृणु कर्माद्भुतं नृप ॥
क्रीडानरशरीरस्य यथा सौभपतिर्हतः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! याके पीछे क्रीडाकरिके मनुष्यशरीर धारण करनहारे श्रीकृष्णचन्द्रके औरहूं अद्भुत कर्म जैसे सौभविमानको पति शाल्व मार्‌यो सो श्रवण करो ॥ १ ॥ शिशुपालको मित्र शाल्व रुक्मिणीके विवाहमें आयोहो तब संग्राममें यादवननें जीति लियोहो ताही प्रकार जरासंधादिक राजा जीतिलिये ॥ २ ॥ सब राजानके श्रवण करत राजा शाल्व प्रतिज्ञा करतो भयो, कि समस्त पृथ्वीकूं यादवकुल रहित करूंगो, अब तुम सब मेरे पराक्रमकूं देखौ ॥ ३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार मूढ शाल्व प्रतिज्ञा करिके पशुपति शिवजीको नित्य नित्य धूलिकी मुट्ठी फांकिके आराधन करतो भयो ॥ ४ ॥ शीघ्र तुष्ट होनहारे शिवजी श्रीकृष्णके द्वेषी शाल्वकूं वर देवो निष्फल मानिके शीघ्र प्रकट न भये, किंतु शरण आये शाल्वसूं एक वर्षके पश्चात् यह कहतभये कि तूं वर मांग ॥ ५ ॥ ता समय देवता असुर मनुष्य गंधर्व सर्प राक्षस इनसूं भेदन न होय और जहांकूं इच्छा होय तहां पहुँचावै यादवनकूं भयको देनवारो ऐसो विमान देउ यह वर मांगतभयो ॥ ६ ॥ तैसोही होयगो ऐसे प्रतिज्ञा करिके शिवजीने मय दानवको आज्ञा दीनी वाने वैरीनके पुरकूं जीतनवारो सौभ नाम लोहेको बनो विमान शाल्वकूं दियो ॥ ७ ॥ मन चाहे तहां चल्यो जाय, अंधकारसों युक्त अलक्षित विमान पायके वैरको स्मरण करिके द्वारकामें जातो भयो ॥ ८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! शाल्व बडी सैन्यकरिके द्वारिकापुरीको घेरिके सम्पूर्ण फूलनके बाग उद्यान तोरतो भयो ॥ ९ ॥ और पुरके दरवाजेनसहित दरवाजे और महल अट्टा अटारी भीति स्थान सबकूं तोरत भयो. और विमानमेंते शस्त्रनकी वर्षा होती भई ॥ १० ॥ और शिला वृक्ष विजुरी सर्प ओले बरसन लगे प्रचण्डवायुके चलवेसों धूरि उडवेके कारण संपूर्ण दिशा आच्छादन हैगई ॥ ११ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार सौभ विमानसूं पीडित श्रीकृष्णचंद्रकी द्वारकापुरी जैसे त्रिपुर दैत्यसों पृथ्वी दुःखी भईही याप्रकार सुखनकूं नहीं पावती भई ॥ १२ ॥ बडे यशी महारथी भगवान् प्रद्युम्न अपनी प्रजाकूं दुःखित देखिके मति भय करो या प्रकार कहिके सन्मुख आवते भये ॥ १३ ॥ और सात्यकी, चारुदेष्ण, सांब और छोटे भैया अक्रूर तथा हार्दिक्य, भानुविंद, गद, शुक, सारण ॥ १४ ॥ बडे धनुषधारी महारथी योद्धा कवच पहिरिके रथ हाथी घोडा प्यादेनकूं संग लैके निकसतभये ॥ १५ ॥ ताके पीछे असुरनकों जैसे देवतानके संग युद्ध होत भयो तैसे रोमाञ्चकारक महाभयानक युद्ध शाल्वकी सैनाको यादवनके संग होतोभयो ॥ १६ ॥ जैसे रात्रीके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अंधकारकूं सूर्य दूर करि देइहै, ऐसे रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नजी सौभविमानके पति शाल्वकी मायानकूं क्षणभरिमें नाश करतेभये ॥ १७ ॥ सोनेके पंख, लोहेकी भाली, छोटी छोटी गांठिवारे पच्चीस बाणनसौं शाल्वके सैनापतिको शीघ्र वेधतभये ॥ १८ ॥ प्रद्युम्नजी सौ १०० बाण शाल्वके और एक एक बाण प्यादेनके तथा दश दश बाण सारथी और तीन तीन बाण घोडा हाथीनके मारतेभये ॥ १९ ॥ महात्मा प्रद्युम्नको बडो अद्भुत पराक्रम देखिके अपनी पराई सैन्यके योद्धा प्रद्युम्नजीकी प्रशंसा करते भये ॥ २० ॥ मयदैत्यको करचो मायामय विमान कभऊ बहुत रूप है जायहै कभऊ एकरूप है जायहै कभऊ दीखे और कभऊ नहीं दिखाई देय या प्रकार शत्रुनके विचारमें नहीं आवतो भयो ॥ २१ ॥ कभऊ वह विमान पृथ्वीमें आय जाय है कभऊ आकाशमें जाय है कभऊ पर्वतके ऊपर जाय है कभऊ जलमें जाय है ऐसे सुलगती लकडीकी तुल्य विमान चलायमान होतभयो ॥ २२ ॥ विमानसहित सेनासहित जहां जहां शाल्व दिखाई देयहै तहां तहां यादवनमें मुख्य वीर प्रद्युम्न बाणनकूं छोडत भयो ॥ २३ ॥ अग्नि सूर्यकी तुल्य गरम स्पर्शवारे विषकी तुल्य असह्य वैरीनके चलाये बाणसौं शाल्वकी सैना पीडित हैगई और बहुत व्याकुल भयो ॥ २४ ॥ शाल्वकी सैन्यके शस्त्रनके समूहनते अत्यंत पीडित हैकेहू लोक परलोकके जीतिवेकी इच्छावारे यादव शूरवीर अपनी अपनी युद्धभूमिकूं नहीं त्यागते भये ॥ २५ ॥ प्रद्युम्नके पहिले गदा प्रहारसौं पीडित भयो शाल्वको बली नाम मंत्री लोहेकी बडी गदा छातीमें मारिके पुकारत भयो ॥ २६ ॥ धर्मके जाननवारो श्रीकृष्णचंद्रके दारुक रथमानको पुत्र प्रद्युम्नजीको सारथी गदाके प्रहारसो भग्नवक्षस्थल वैरीनके दंड देनवारे प्रद्युम्नकूं रणमेंते दूर ले जातो भयो ॥ २७ ॥ दो घरीमें चेत पाय श्रीकृष्णचंद्रके पुत्र प्रद्युम्न रथमानते बोलतभयो अहो रथमान ! तू रणमेंते मोकूं भजायके लैआयो यह बुरो कर्म कियो ॥ २८ ॥ व्याकुल चित्तवारे ते रथमाननै मोको कलंक लगायो मो विना यादवनके कुलमें जन्म लेके रणमेंते भाज्यो कोउ नहीं सुन्यो है, पर मेरो कहा दोष है यह कलंक तौ सारथीनै लगायो ॥ २९ ॥ धर्मरूप रणमेंते भाजिगयो कुशल पूंछवेसै मैं पिता श्रीकृष्ण बलदेवके पास जायके कहा अपनी कुशल कहूंगो ॥ ३० ॥ भैयानकी स्त्री भाभी हे वीर ! युद्धमेंते शत्रुनके सन्मुखते नपुंसक हैके कैसे आज भाग आये हमसूं तौ कहो, ऐसे हँसिके मोसूं कहेंगी ॥ ३१ ॥ ऐसे श्रवण करिके रथमान बोल्यो हे चिरंजीव ! हे समर्थ ! धर्मको ज्ञाता मैं तुमकूं रणमेंते निकासि लायो, धर्ममेंही कह्यो है कि रथके बैठनवारेकूं कष्ट आयके उपस्थित होय तौ सारथी अर्थात् रथमान रक्षा करे, और सारथीके ऊपर आयके कष्ट होय तौ बैठनवारो रक्षा करै ॥ ३२ ॥ शत्रुने गदा जो मारी तासूं तुमकूं पीडा और मूर्च्छा आयगई. यासूं धर्म जानिके तुमकूं रणमेंते निकासि लायो ॥ ३३ ॥

एतद्विदित्वा तु भवान्मयापोवाहितो रणात् ॥
उपसृष्टः परेणेति मूर्च्छितो गदया हतः ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

अध्याय ७७.

श्रीशुक उवाच-स उपस्पृश्य सलिलं दंशितो धृतकार्मुकः ॥
नय मां द्युमतः पार्श्वं वीरस्येत्याह सारथिम् ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अब श्रीशुकदेवजी कहैहैं हे राजन् परीक्षित् ! प्रद्युम्नजी हाथ पांव धोयके कवचकूं पहिरिके धनुषकूं हाथमें लैके वीर द्युमान्के पास मोकूं लेचल यह रथमानते कहतेभये ॥ १ ॥ रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नजी मुसिक्यायके अपनी सैनाके योद्धानकूं मारते द्युमान्कूं घेरिके आठ बाणनसूं मारतेभये ॥ २ ॥ अब आठ बाणनकूं पृथक् पृथक् कहै हैं चार बाणनसूं चारों घोडानकूं, और एक बाणसूं रथमानकूं मारतभये दो बाणसो धनुष्य और ध्वजाकूं काटते भये, और एक बाणसूं द्युमान्को शिर काटतभये ॥ ३ ॥ गद सात्यकी सांबसूं आदि लैके यादव विमानके पालन करनेवारे शाल्वकी सैन्यकूं मारते भये शिर कटवेसौ संपूर्ण विमानके बैठनवारे समुद्रमें गिरतभये ॥ ४ ॥ या प्रकार यादवनको और शाल्वकी सैनाको महाभयानक युद्ध सत्ताईस दिन होतो भयो ॥५॥ अब श्रीशुकदेवजी कहै है हे राजन् परीक्षित् ! धर्मके पुत्र राजा युधिष्ठिरके बुलाये श्रीकृष्णचंद्र इन्द्रप्रस्थमें गये हे राजसूय यज्ञ है चुको, और शिशुपाल मरचुक्यो ॥ ६ ॥ ता पीछे कौरवनमें युद्धनसूं आज्ञा मांगिके और मुनिनसूं आज्ञा मांगिके, मार्गमें कुत्सित शकुन देखिके द्वारकापुरीमें आवते भये ॥७॥ खोटे शकुननकूं देखिके कहत भये कि बडे भैया बलदेवजी सहित मैं यहां यज्ञमें आयोहूं शिशुपालकी ओरके राजा निश्चय मेरी पुरीको नाश करते होंयगे ॥ ८ ॥ अपने यादवनके कष्टको देखिके बलदेवजीकूं द्वारकापुरीकी रक्षा करिवेको कहिके विमान और शाल्वकूं देखिके केशव भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र रथमानते बोलते भये ॥ ९ ॥ हे रथवान् ! शीघ्र मेरे रथकूं शाल्वके समीप प्राप्त कर, या विमानको राजा बडो मायावी है तू संभ्रम मति करै ॥ १० ॥ या प्रकार सुन रथमान रथपैं बैठिके हांकतभयो अपनी पराई सैन्याके लोगोंने रथकी ध्वजामें गरुडको आवतो देखो ॥ ११ ॥ बहुतसी सैन्याको मरी देख राजा शाल्व श्रीकृष्णचंद्रकूं देखिके विनके रथमानके ऊपर भयानक शब्दवारी बरछीकूं फेंकतो भयो ॥ १२ ॥ श्रीकृष्णचंद्र दिशानकूं प्रकाश करत बडे तारेकी तुल्य आकाशमें चली आवती बरछीकों बाणनकरिके सौ खण्ड करते भये ॥ १३ ॥ शाल्वकूं सोलह बाणनसूं वेधिके आकाशमार्गमें भ्रमण करनहारे विमानकूं सूर्यकी किरणनसौं विंधेभये आकाशकी समान बाणनके समूहसौं वेध दियो ॥ १४ ॥ शार्ङ्गधनुषधारी शौरी श्रीकृष्णचंद्रकी धनुषसहित वाम भुजाकूं शाल्व वेधतो भयो तब श्रीकृष्णके हाथते धनुष गिरतो भयो, यह बडो आश्चर्य होतो भयो ॥ १५ ॥ हाथमेंते धनुषकूं गिर्यो देखिके प्राणीनके बडो हाहाकार शब्द होतो भयो, और विमानको राजा शाल्व ऊंचे स्वरसूं गर्जिके श्रीकृष्णचंद्रते कहतभयो ॥ १६ ॥ सखा भैया शिशुपालकी स्त्रीकूं तू देखतही हरिलायो, और सभाके बीच असावधान मेरो सखा शिशुपाल तैंने मार्यो ॥ १७ ॥ अपनेको अजित माननहारे तुम्हैं जो मेरे सन्मुख ठाढे रहेंगे तौ मृत्युकूं पहुँचाय देउँगो ॥ १८ ॥ श्रीकृष्ण बोले हे मूर्ख ! तू वृथा बकैहै, निकट आई मृत्युकूं नहीं देखे है; शूरवीर अपनो पुरुषार्थ दिखावे हैं; और जे बहुत बोलेहै ते कछु पराक्रम नहीं करे हैं ॥ १९ ॥ या प्रकार कहिके श्रीकृष्णचंद्र भगवान् बडे वेगकी गदा क्रोधकरिके कण्ठके नीचेके हाडमें मारतेभये तब शाल्व रुधिरको वमन करत कांपतो भयो ॥ २० ॥ और तत्कालही शाल्व अंतर्ध्यान भयो ताके दो घडी पीछे एक पुरुष आयके शिर झुकायके श्रीकृष्णचंद्रकूं नमस्कार करिके रुदनकरिके देवकीने भेज्योहूं यह वचन कहतो भयो ॥२१॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे महाबाहो ! हे पिताके हित करनवारे ! जैसे कसाई पशुकूं बांधिके लै जाय ऐसे शाल्व तुम्हारे पिताकूं बांधिके लैगयो है ॥२२॥ ऐसो अप्रिय वचन श्रवण करिके मनुष्यस्वभावमें प्राप्त मन दयावान् श्रीकृष्णचंद्र विमन हैके प्राकृतमनुष्यकी समान कहते भये ॥ २३ ॥ संभ्रमरहित देवता असुरनके अजेय

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बलदेवजीकूं जीतिके तुच्छ शाल्व मेरे पिताकूं कैसे लैगयो, विधाता बलवान् है कदाचित् लैगयो होयगो ॥ २४ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णचन्द्र कहैं हैं इतनेमें विमानको राजा शाल्व आयो, मायारूपी वसुदेव निर्माण करि लायके श्रीकृष्णते बोलतो भयो ॥ २५ ॥ यह तेरो उत्पन्न करनवारो पिता है जाके लिये तू यहां जीवैहै तेरे देखत याकूं मारूंगो हे मूर्ख ! तेरी सामर्थ्य होय तौ याकी रक्षा करि ॥ २६ ॥ मायावी शाल्व या प्रकार डरपायके मायाको वसुदेव जो बनायके लायो हो वाको तरवारिते शिर काटिके हाथमें लैके आकाशमें कूद विमानमें जातभयो ॥ २७ ॥ स्वतःसिद्ध ज्ञानवारे श्रीकृष्णचंद्र अपने जननके संग दो घडी पर्यंत मनुष्यनके स्वभावसौ शोकमें डूबतेभये ताके पीछे बडे प्रभाववारे श्रीकृष्णचंद्र मयदैत्यकी प्रकट करी शाल्वकी चलाई आसुरी मायाको जानते भये ॥२८॥ ज्ञान प्राप्त हैवेसों अच्युत श्रीकृष्णचंद्र वा संग्राममें दूतकूं नहीं देखते भये और वा वसुदेवके देहकूंहू नहीं देखते भये जैसे जागे पीछे स्वप्नकी वस्तुकूं नहीं देखे हैं, तब विमानमें बैठे आकाशमें विचरते वैरी शाल्वको देखिके मारिवेको उद्यम करते भये ॥ २९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजानमें ऋषि राजा परीक्षित् ! पूर्वापर प्रसंगको विचार कोई ऋषि या प्रकार कहैं हैं जो अपने कथनते विरोध परै ताको स्मरण नहीं करें जैसो प्रथम तौ कहो कि बलरामकी आज्ञा ले हस्तिनापुरको श्रीकृष्ण गये फिर कहो कि बलदेवजीको रक्षा करवेके लिये द्वारिकाको भेजो, शुकदेवजी कहैं हैं हे राजा ! यह हमारो मत नहीं है और ऋषिनको मत है ॥ ३० ॥ श्रीशुकदेवजी अपनो मत कहैं हैं अज्ञानसूं भये शोक मोह स्नेह भय ये कहां और अखंड विज्ञान ऐश्वर्य देवता जिनकी स्तुति करें ऐसे श्रीकृष्णचंद्र कहां ॥३१॥ जिनके चरणारविंदकी सेवासौ पुष्ट भई आत्मविद्याके प्रभावसौ सज्जन पुरुष अनादि कालकी देहात्मबुद्धिको त्याग अनंत ईश्वर सम्बंधी पद आत्माको पावैं हैं विन सर्वोत्तम शरणागतपालक श्रीकृष्णचंद्रमें कदाचित् मोह नहीं हैसकैहै ॥ ३२ ॥ यही यथार्थ है कि बडे पराक्रमी शूरवंशोत्पन्न श्रीकृष्णचन्द्रने बलकरिके शस्त्रनके प्रहारसौ शाल्वको वेधि वाको कवच धनुष और वाके शिरकी मणि काटके शत्रुके विमानकूं गदासौ तोरते भये ॥ ३३ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रके हाथकी चलाई भई गदासूं हजारन टूक हैके वह विमान चूर्णीभूत हैके पृथ्वीमें गिरतो भयो, ता समय शाल्व विमानकूं त्यागिके पृथ्वीपे ठाढो हैके गदा हाथमें उठायके श्रीकृष्णके ऊपर दौरत भयो ॥ ३४ ॥ गदासहित दौडते आते शाल्वके गदासहित हाथकूं बाण करिके काटते भये, और शाल्वके मारिवेके लिये प्रलयकालके सूर्यकी तुल्य तेजवारे अद्भुत चक्रकूं धारण करिके उदयाचल पर्वतमें सूर्यकी समान श्रीकृष्णचन्द्र शोभाकूं पावतेभये ॥ ३५ ॥ जैसे इन्द्र वज्रसौ वृत्रासुरको शिर काटे तैसे बडे मायावी शाल्वको कुंडलन सहित शिर श्रीकृष्णचंद्र वाही चक्रसूं काटते भये, ता समय मनुष्यनको हाहाकार शब्द होतो भयो ॥ ३६ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ता समय गदासौ विमान टूट्यो, और पापी शाल्व पृथ्वीमें गिरिपरयो, तब स्वर्गमें देवतानके नगाडे बजतभये, ताके पीछे मित्र शिशुपाल और शाल्व तथा पौंड्रक इनको ऋण चुकायवेके निमित्त क्रोध करिके दंतवक्र आवत भयो ॥ ३७ ॥

नेदुर्दुन्दुभयो राजन्दिवि देवगणेरिताः ॥
सखीनामपचितिं कुर्वन्दन्तवक्त्रो रुषाऽभ्ययात् ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उ० शाल्ववधो नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ७८.

श्रीशुक उवाच-शिशुपालस्य शाल्वस्य पौण्ड्रकस्यापि दुर्मतिः ॥
परलोकगतानां च कुर्वन् पारोक्ष्यसौहृदम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! परलोकमें प्राप्त भये शिशुपाल और शाल्व तथा पौंड्रकके परोक्षमें मित्रताकूं जाननहारो दुष्टबुद्धि दंतवक्त्र क्रोधकरिके अकेलो पांवप्यादो बडो बलवान् गदा हाथमें लैके पृथ्वीकूं कंपावत शीघ्रतासूं आवत दिखाई देतो भयो ॥ १ ॥ २ ॥ या प्रकार आवते दंतवक्त्रकूं देखिके श्रीकृष्णचन्द्र गदा हाथमें लैके रथमेंते उतरिके समुद्रकूं जैसे किनारो रोके ऐसे रोकतेभये ॥ ३ ॥ दुर्मद करूषदेशको राजा दंतवक्त्र मुक्तिके देनवारे श्रीकृष्णचन्द्रते बोलतो भयो, तू मेरी आंखिनके आगे आयो यह बडो मंगल भयो ॥ ४ ॥ हे कृष्ण ! तू हमारे मामाको पुत्र भयो है और हमारे मित्रनको मारनवारो है, और मोहूंकूं मारचो चाहै है याते हे मूर्ख ! वज्रकी तुल्य या गदासों तोकू मारूंगो ॥ ५ ॥ हे अज्ञानी ! मित्रनके हितको करनवारो मैं बंधुरूप वैरीकूं मारिके मित्रनको ऋण चुकाऊंगो, जैसे देहोत्पन्न रोगकूं दूरि करकै मनुष्य सुखी होयहै ॥ ६ ॥ या प्रकार कठोर वाक्य कहिकै श्रीकृष्णचन्द्रके माथेमें गदा मारिकै सिंहकी तुल्य दंतवक्त्र गर्जतभयो, जैसे हाथीके अंकुश लगै ऐसेही सो गदा लगती भई ॥ ७ ॥ संग्राममें गदा लगवेसोहू श्रीकृष्णचन्द्र न डिगतभये, पश्चात् श्रीकृष्णचन्द्रहू कौमोदकी बडी गदाकूं दंतवक्त्रकी छातीमें मारतेभये ॥ ८ ॥ गदासौं हृदय विदीर्ण हैवेसो दंतवक्त्र मुखते रुधिरकूं वमन करत प्राणनकूं त्यागिके केश हाथ पांव फैलायके पृथ्वीमें गिरतोभयो ॥ ९ ॥ हे परीक्षित् ! तापीछे दंतवक्त्रके शरीरते अद्भुत सूक्ष्म ज्योति निकसिके सब प्राणीनके देखत शिशुपालके वधकी समान श्रीकृष्णचन्द्रमें प्रवेश करती भई ॥ १० ॥ भैया दंतवक्त्रके शोक करिके व्याकुल विदूरथ ढाल तरवारि लेके श्रीकृष्णचन्द्रके मारिवेके लिये बडे बडे श्वासनकूं लेतो आवतो भयो ॥ ११ ॥ हे राजानके इन्द्र परीक्षित् ! विदूरथको आते देख मुकुट और कुंडलन सहित वाके शिरकूं क्षुराकी तुल्य धारवारे चक्रसूं श्रीकृष्णचन्द्र काटतेभये ॥ १२ ॥ ऐसे सौभ विमान और शाल्व तथा भैयान सहित दंतवक्त्रकूं मारिचुके, तब देवता और मनुष्य सब स्तुति करते भये ॥ १३ ॥ मुनीश्वर, सिद्ध, गंधर्व, विद्याधर और बडे सर्प, अप्सरा, पितृनके गण, यक्ष, किन्नर, चारण ॥ १४ ॥ यह सब कोई श्रीकृष्णकी विजय गाय फूल वर्षाय चले गये तब श्रीकृष्णचन्द्र यादवनकूं संग लैके शोभायमान द्वारकापुरीमें जातेभये ॥ १५ ॥ या प्रकार योगके और जगत्के ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सदा जयकोही प्राप्त करते हैं पशुनकी तुल्य दृष्टिवारे अज्ञानी पुरुषनकूं जरासंधसों हारे जीते प्रतीत होय हैं ॥ १६ ॥ पांडव कौरवनकूं एक तुल्य माननेहारे बलदेवजी विनके युद्धको उद्यम श्रवण करिके तीर्थस्नानको मिस करिके यात्रा करतेभये, क्योंकि यहां रहोगो तो जाकी ओर न होऊंगे सोई बुरो मानेगो ॥ १७ ॥ प्रभासतीर्थमें स्नान करिके देवता, ऋषि, पितर मनुष्यनको तर्पण करिके ब्राह्मणनकूं संग लैके, सरस्वतीके प्रवाहके सन्मुख बलदेवजी जातभये ॥ १८ ॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् ! पृथूदक बिंदुसरोवर, त्रितकूप, सुदर्शनतीर्थ, विशाल, ब्रह्मतीर्थ, चक्रतीर्थ और पूर्ववाहिनी सरस्वती और यमुनाके तीर्थ, गंगाके तीर्थ और जहां ऋषि यज्ञ करें वा नैमिषारण्यमें बलदेवजी जातेभये ॥ १९ ॥ २० ॥ बडे यज्ञवारे मुनि बलदेवजीकूं आयो जानिके प्रशंसा करि उठिके प्रणाम करिके यथायोग्य पूजन करतेभये ॥ २१ ॥ ब्राह्मणसहित पूजा पाय आसनकूं अंगीकार करिके बलदेवजी वेदव्यासके शिष्य रोमहर्षणको बैठो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देखते भये ॥ २२ ॥ वह बलदेवजीकूं देखिके उठ्यो नहीं और न प्रणाम अंजली करी तब ब्राह्मणते ऊंचे बैठे सूतकूं मधुवंशोत्पन्न बलदेवजी देखिके क्रोध करतेभये ॥ २३ ॥ प्रतिलोमज अर्थात् ब्राह्मणी माता और पिता क्षत्रिय तो यह सूत है, सो ब्राह्मणनते कैसे ऊंचो बैठ्यो है, तैसेही धर्मके पालन करनवारे हमते ऊंच्यो बैठ्यो है, ता कारण यह दुष्टबुद्धि सूत मारिवेके योग्य है ॥ २४ ॥ कदाचित् कहो कि विना जाने ऊंचो बैठ्यो है सो नहीं भगवान् वेदव्यासको शिष्य है, और महाभारत सहित पुराणकूं पढिके और समस्त धर्मशास्त्रनकूं पढिके ॥ २५ ॥ अजितेन्द्री नम्रतारहित वृथा अपनेकूं पंडित माननहारेकूं शास्त्र गुणके लिये नहीं होयहै, जैसे मनके नहीं जीतनेवारे नटकी विद्या वाकूं गुणके लिये नहीं है ॥ २६ ॥ एतदर्थही या लोकमें अवतार मैंने लियो है धर्मध्वजी अर्थात् जातिमें छोटे उत्तम स्वरूप धरे पापी पाखंडी पुरुष मारिवेके योग्य हैं ॥ २७ ॥ समर्थ भगवान् बलदेव इतनो कहिके असत्के वधसों निवृत्तहू हैं गयेहै परन्तु होनहारहीसूं हाथमें जो कुशा ही तासूं सूतकूं मारतेभये ॥ २८ ॥ खेदयुक्तमनसों सम्पूर्ण मुनि हाहाकार शब्द करिके हे समर्थ ! यह कहा कर्‍यो ऐसे बलदेवजीते कहते भये ॥ २९ ॥ हे यादवनकूं आनंदके दैनवारे ! हमने या सूतकूं ब्रह्मासन दियो है, और यावत्पर्यंत हमारो यज्ञ पूर्ण न होयगो तावत्पर्यंत शरीरकूं खेद न होय ऐसी अवस्था दीनीही, विना जाने ब्राह्मणकी समान या सूतको वध तुमने करचो है ॥ ३० ॥ हे योगीश्वर ! हे लोकनके पवित्र करनहारे ! आपको वेदमें कहा ब्रह्महत्याको निषेध नहीं लगेहैं तौहू आप स्वयं या ब्रह्महत्याको प्रायश्चित्त करोगे तौ लोकनकूं शिक्षा होयगी, और जो न करोगे तौ आगे कोऊ ब्राह्मणकूं मारिके हाथहू न धोवैगो ॥ ३१ ॥ अब श्रीभगवान् बलदेवजी बोले लोकनके अनुग्रह करिवेके निमित्त मैं सूतके वधको प्रायश्चित्त करूंगो, प्रायश्चित्तनमें मुख्य प्रकार होय सो मोकूं बताओ ॥ ३२ ॥ हे मुनीश्वर ! या सूतकूं तुमने बडी अवस्था दीनीही, और इन्द्रिय भली बनी रहे यह वर दीनों हो अब तुमारी इच्छा होय सो सब कहो मैं अपनी योगमायाके बलते सिद्ध करि देउंगो ॥ ३३ ॥ सब ऋषीश्वर बोले हे राम ! जैसे तुम्हारे अस्त्रके पराक्रमको मृत्युको और हमारो वचन ये सब सत्य होय सो विचार करो ॥ ३४ ॥ बलदेवजी बोले आपुही पुत्ररूप हैके पिता उत्पन्न होय है, यह वेदकी आज्ञा है याते या रोमहर्षणको पुत्र उग्रश्रवा तुमारे अगारी पुराणको वक्ता होउ या उग्रश्रवाकी बडी आयु होय और इन्द्रिय अच्छी बनी रहै बलवान् होय साक्षात् याकूं न जिवायो याते मृत्यु अस्त्रकी सत्यता भई, और पुत्ररूपकरिके आयु बल इन्द्रिय सिद्ध भई याते तुम्हारो वचन सिद्ध भयो ॥ ३५ ॥ हे मुनिनमें श्रेष्ठो ! तुमारे कौन वस्तुकी चाहना है, सो मोतें कहो, मैं करूंगो हे विवेकियो ! हम प्रायश्चित्तको नहीं जानवेसों हमारो भली प्रकार प्रायश्चित्त विचारो ॥ ३६ ॥ ऋषीश्वर बोले घोररूप इल्वलको पुत्र बल्वलनाम दानव अमावस पूनो आयके हमारे यज्ञकूं भ्रष्ट करे है ॥ ३७ ॥ हे दाशार्हवंशोत्पन्न बलदेवजी ! पीव रुधिर मूत्र विष्ठा मदिरा मांसकी वर्षा करनहारे पापी बल्वलकूं मारो यही हमारी बडी सेवा है ॥ ३८ ॥ ता पीछे अत्यंत सावधान हैके कामक्रोधादिकनकूं त्यागिके भारतखंडकी परिक्रमा करिके एक वर्षपर्यंत तीर्थनमें स्नान करोगे तब शुद्ध होउगे ॥ ३९ ॥

ततश्च भारतं वर्षं परीत्य सुसमाहितः ॥
चरित्वा द्वादशान्मासांस्तीर्थस्नायी विशुध्यसे ॥ ३९ ॥

इति श्रीम० भा० दशम० उत्तरार्धे बलदेवचरित्रे बल्वलवधोपक्रमो नामाष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ७९.

श्रीशुक उवाच-ततः पर्वण्युपावृत्ते प्रचण्डः पांसुवर्षणः ॥
भीमो वायुरभूद्राजन्पूयगन्धस्तु सर्वशः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित्! ता पीछे अमावास्या पूर्णमासी पर्व आयो, तब धूरि वर्षा-नहारी बडी भयानक पवन चलतीभई, और चारों ओरते राधकी दुर्गंधि आवतीभई ॥ १ ॥ ता पीछे बल्वलदैत्यकी करी विष्ठा मूत्रकी वर्षा यज्ञशालामें होतीभई, और त्रिशूल लिये बल्वलहू दृष्टि आवतो भयो ॥ २ ॥ टूटे भये अंजनके ढेरकी समान बडे शरीरवारो तपे तांबेकेसी लाल शिखा और डाढी मूछवारो डाढ और भ्रुकुटीसो डरावने मुखवारे वा दैत्यको देख ॥ ३ ॥ शत्रुकी सैनाके विदीर्ण करनवारे मूशलको स्मरण करिके दैत्यनके मारनवारे हलको स्मरण करतेभये, ता समय पार्षदरूप हल मूशल जल्दी आवतेभये ॥ ४ ॥ आकाशमें विचरनवारे बल्वलकूं हलके अग्रभागसूं खैंचिके क्रोधयुक्त बलदेवजी ब्रह्मद्रोही बल्वलके माथेमें मूसल मारतेभये ॥ ५ ॥ माथेके फूट्वेसो बल्वल रुधिरको वमन करत वज्रके मारे गेरूके पर्वतकी समान पृथ्वीमें गिरतोभयो ॥ ६ ॥ मुनीश्वर बलदेवजीकी स्तुति करिके सफल आशीर्वादनकूं देके जैसे बडभागी देवता वृत्रासुरके मारनवारे इंद्रको अभिषेक करै ऐसे अभिषेक करते भए ॥ ७ ॥ लक्ष्मीके वसिवेके स्थान कोमल कमलनकी वैजयंती माला और दिव्य नीलांबर धोती उपरना और अनेक प्रकारके आभूषण बलदेवजीकूं देते भये ॥ ८ ॥ याके पीछे मुनिनकी आज्ञा पाय बलदेवजी ब्राह्मणनकूं संग लेके कौशिकी नदीमें आयकै स्नान करिके जा सरोवरमेंते सरयू निकसी तहां आवते भये ॥ ९ ॥ सरयूके प्रवाहके किनारे २ हैके प्रयागमें आय स्नान करिके देवादिकनको तर्पण करिके पुलहऋषिको आश्रम हरिक्षेत्रमें जातेभये ॥ १० ॥ वहांते गोमती और गंडकी तथा विपाशामें स्नान करिके शोणनदीमें स्नान कर बलदेवजी गयातीर्थमें जायके पितरनको पूजन करिके गंगा और समुद्रके संगममें जातेभये ॥ ११ ॥ तापीछे महेंद्राचल पर्वतमें परशुरामजीको दर्शन प्रणाम करिके सप्त गोदावरी तथा वेणा तथा पंपामें जायके भीमरथीमें जातेभये ॥ १२ ॥ तापीछे स्वामी कार्तिकेयको दर्शन करिके महादेवजी जहां विराजे ऐसो श्रीशैलपर्वतमें जातभये और द्रविड देशनमें बडे पुनीत वेंकट पर्वतको दर्शन करिके कामकोष्णी पुरीमें जातभये, और नदीनमें श्रेष्ठ कावेरीमें स्नान करिके बडे पवित्र और जहां नित्य हरि विराजमान रहैं ऐसे श्रीरंग नाम विख्यात स्थानमें जातभये ॥ १३ ॥ १४ ॥ वहांते ऋषभाद्रिपर्वत हरिक्षेत्रमें जायके दक्षिण मथुरामें जायके फिर बडे पापनके नाश करनवारे सेतुबंध रामेश्वरमें जाते भये ॥ १५ ॥ वहां जायके हलायुध बलदेवजी दश हजार गौ ब्राह्मणनकूं देतभये, पश्चात् कृतमालानदी और ताम्रपर्णी नदीमें हैके मलयाचल कुलाचल पर्वतमें जातेभये ॥ १६ ॥ तहां विराजमान अगस्त्यमुनिकूं नमस्कारपूर्वक स्तुति करते भये, अगस्त्यजीसों आशीर्वाद और आज्ञा पाय बलदेवजी दक्षिणदेशमें समुद्रके तट जायके कन्या नाम दुर्गादेवीको दर्शन करते भये ॥ १७ ॥ ता पीछे फाल्गुन अनंत पुर जाय जहां विष्णु भगवान् सदा विराजे हैं ऐसो श्रेष्ठ पंचाप्सरस नाम सरमें स्नान करिके दश हजार गौनको संकल्प करते भये ॥ १८ ॥ वहांते चलिके भगवान् बलदेवजी केरल और त्रिगर्त देशमें हैके धूर्जटी शिवजीसो नित्य सन्निहित गोकर्णनाम शिवक्षेत्रमें जातेभये ॥ १९ ॥ वहांते आर्याद्वीपवासिनी देवीको दर्शन करिके शूर्पारक क्षेत्रमें आवतभये वहांते तापी और पयोष्णी नदीमें होके दंडकारण्यमें आवते भये ॥ २० ॥ जहां माहिष्मती पुरी है वा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रेवा नदीपै जात भये फिर मनुतीर्थमें आचमन करिके प्रभास क्षेत्रमें आवतभये ॥ २१ ॥ तब कौरव और पांडवनके संग्राममें सब क्षत्रीनको नाश भयो यह ब्राह्मणनको वचन श्रवण करिके पृथिवीको बोझ उतार्‌यो यह मानतेभये ॥ २२ ॥ यादवनकूं आनंदके देनवारे बलदेवजी संग्राममें गदानसूं युद्ध करते भीमसेन दुर्योधनकूं मने करिवेकूं कुरुक्षेत्रमें जाते भये ॥ २३ ॥ राजा युधिष्ठिर नकुल सहदेव और कृष्णचंद्र और अर्जुन बलदेवजीकूं पेखिके प्रणाम करिके कहा विचारिके यहां आये हैं ता भयके मारे चुप होते भये ॥ २४ ॥ क्रोधमें भरे एकको एक जीत्यो चाहै, चित्र विचित्र मंडलनमें फिरते भीमसेन दुर्योधनको देखिके बलदेवजी बोलते भये ॥ २५ ॥ हे राजन् दुर्योधन! और भीमसेन! तुम दोनों शूर वीर हो, तुल्य तुमारो बल है, एक भीमसेनमें कुछ बल अधिक है दुर्योधनमें दावपेच अधिक हैं वह मैं जानूंहूं ॥ २६ ॥ ता कारण बराबरि पराक्रमवारे तुम दोनोंनके बीचमें एकहूकी जीति हार न होयगी याते निष्फल युद्धकूं शांत करो ॥ २७ ॥ हे राजन् परीक्षित्! परस्पर कुत्सित वचनकूं स्मरण करिके वैरमें भरे भीमसेन दुर्योधन बलरामजीके प्रयोजन भरे वाक्य नहीं मानते भये ॥ २८ ॥ भीमसेन दुर्योधनको ऐसोही पिछलो कर्म है यह मानिके बलदेवजी द्वारकापुरीमें आवतेभये, तहां उग्रसेनसूं आदि लैके प्रसन्न यादवनसूं मिलते भये ॥ २९ ॥ समस्त विरुद्ध रहित यज्ञमूर्ति भगवान् बलदेवजी फिर नैमिषारण्यमें आये तब विन्हें आनंदपूर्वक सब ऋषीश्वर यज्ञनकरिके यजन करावते भये ॥ ३० ॥ समर्थ भगवान् बलदेवजी तिन ब्राह्मणनकूं विशुद्ध ज्ञान देत भये, जा ज्ञानकरिके आत्मामें विश्व और विश्वमें आत्माकूं जाने है ॥ ३१ ॥ यज्ञ करे पीछे स्नान कर सुंदर वस्त्र आभूषणसों अलंकृत ज्ञाति बंधु सुहृदकूं संग लैके अपनी चांदनीसों शोभित चन्द्रमाकी समान बलदेवजी अपनी स्त्रीनसहित शोभाकूं प्राप्त होते भये ॥ ३२ ॥ बलवान् अनंत अप्रमेय अर्थात् प्रमाण करिवेमें न आमें, माया करिके मनुष्यरूप धारे बलदेवजीके अनेक अनेक लीला चरित्र हैं ॥ ३३ ॥ अद्भुतकर्मा अनंत बलदेवजीके कर्मनकूं जो पुरुष सायंकाल प्रातःकालसमय स्मरण करे वह श्रीकृष्णचंद्रको प्यारो होयहै ॥ ३४ ॥

योऽनुस्मरेत रामस्य कर्माण्यद्भुतकर्मणः ॥
सायंप्रातरनन्तस्य विष्णोः स दयितो भवेत् ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कंधे उत्तरार्धे एकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

अध्याय ८०.

राजोवाच-भगवन्यानि चान्यानि मुकुन्दस्य महात्मनः ॥
वीर्य्याण्यनन्तवीर्यस्य श्रोतुमिच्छामहे प्रभो ॥ १ ॥

श्रीपरीक्षित् बोले हे शुकदेवजी! समर्थ अनंत पराक्रम मुक्तिके देनवारे महात्मा श्रीकृष्णचन्द्रके पराक्रमनकूं मेरी श्रवण करिवेकी इच्छा है ॥ १ ॥ हे शुकदेवजी! उत्तमयशी श्रीकृष्णचन्द्रके विषयनमें वैराग्यकी उत्पन्न करनवारी मनोहर कथा निरंतर सुनिके कामके बाणनते खेदित त्रास पाये सारके जाननवारे कौन पुरुष हैं जो श्रवण न करैं ॥ २ ॥ जा वाणीमें भगवान्‌के नाम गुण निकसे वही वाणी सफल है, और जिन हाथनते भगवान्‌की सेवा पूजाकर्म बने वेही हाथ सफल हैं, स्थावर जंगम जीवनमें अंतर्यामिरूप हैके वसे भगवान्‌को जो स्मरण करे वही मन सफल है, और जिन काननसूं भगवान्‌की पवित्र कथा सुने वही कान सफल हैं ॥ ३ ॥ स्थावर जंगम सब भगवान्‌के रूप हैं; यह मानि-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

के जो पुरुष शिरसूं प्रणाम करें वही शिर धन्य हैं, स्थावर जंगम भगवान्के रूप जानिके जिन नेत्रनसूं देखे वे नेत्र धन्य हैं, और भगवान् अथवा भक्तजननके चरणनको धोवन जल नित्य जिन अंगनमें लगे वेही अंग सफल हैं ॥ ४ ॥ श्रीसूतजी शौनकादिकनसूं कहे हैं विष्णुरात राजा परीक्षित्के यह प्रश्न करेपें वासुदेव भगवान्में निमग्नहृदय हैके वेदव्यासके पुत्र शुकदेवजी बोलते भये ॥ ५ ॥ श्रीशुकदेवजी कहे है हे राजन् परीक्षित्! कोई एक ब्राह्मण ब्रह्मके जाननवारेनमें उत्तम विषयनमें वैराग्यमान शांतमन जितेंद्रिय श्रीकृष्णचन्द्रको मित्र हो ॥६॥ गृहस्थाश्रमकूं वर्तै जो कछु अनायासपूर्वक प्राप्त होय ताहीसों अपनो देहनिर्वाह करै, जीर्ण वस्त्रनकूं धारण करे तैसेही स्त्रीहू क्षुधासूं पीडित हैवेसो समस्त अंगनकरि कृशित और अन्न प्राप्त होइ वाय पतिकूं परोसि देइ आप भूखी रहिजाय ॥ ७ ॥ एक समय बहुत दुःखित और भयके मारे थरथर कांपती पतिव्रता स्त्री दरिद्री पतिके समीप आयके बोलती भई ॥ ८ ॥ हे ब्राह्मण ! साक्षात् लक्ष्मीके पति ब्रह्मभक्त शरणागतके पालक यादवनमें श्रेष्ठ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र तुमारे सखा सुने हैं ॥ ९ ॥ अहो बडभागी ब्राह्मण साधुनके परम आश्रय श्रीकृष्णचन्द्रके पास तुम जाओ दुःखित कुटुम्बी तुमको वे बहुतसो द्रव्य देयंगे ॥ १० ॥ भोज वृष्णि अंधक ये यादवनके गोत्र हैं तिनके ईश्वर श्रीकृष्णचंद्र अब द्वारकापुरीमें हैं वे अपने चरणकमलके स्मरण करनहारेकूं आत्मा पर्यंत देवेकूं समर्थ हैं ॥ ११ ॥ जगत्के गुरु श्रीकृष्णचन्द्रको भजन करनवारे अपने भक्तनकूं परिणाममें दुःखरूप धन और विषयको देनो कछु बहुत नहीं है या प्रकार कोमल वचनसूं स्त्रीने बहुत प्रार्थना करी ॥ १२ ॥ तब तौ सुदामा ब्राह्मण उत्तम यशवारे श्रीकृष्णचन्द्रको दर्शन होयगो यह बडो लाभ है या प्रकार मनमें विचार करिके जायवेकी इच्छा करतो भयो कि हे मंगलरूपिणी ! तेरे घरमें कछु भेट देवेकूं होय तो दे, खाली हाथ कैसे जाऊं ॥ १३ ॥ सुदामाकी स्त्री काहू परोसी ब्राह्मणके घरते चारि मुट्ठी चावल मांगिके कपराकी चीरमें बांधिके सुदामाकूं श्रीकृष्णके लिये भेट देतीभई ॥ १४ ॥ ब्राह्मणमें श्रेष्ठ सुदामा चावलनकूं लैके श्रीकृष्णजीको दर्शन मोकूं कैसे होयगो ऐसे विचार करत द्वारकापुरीमें जातो भयो ॥ १५ ॥ सुदामा ब्राह्मण तीन चौकी और तीन ड्यौढिनकूं उल्लंघन करिके कृष्णके धर्मधारी और अगम्य अंधक और वृष्णिनके घरनके बीचमें हो ॥ १६ ॥ तिन घरनके बीचमें सोलह हजार श्रीकृष्णचन्द्रकी रानीनके घरमेंसूं एक सुन्दर घरमें सुदामा प्रवेश करतोभयो ता समय ब्रह्मकी प्राप्तिकी समान आनंदकूं पावतभयो ॥ १७ ॥ प्यारी रुक्मिणीकी शय्याके ऊपर विराजमान श्रीकृष्णचंद्र दूरिते देखिके शीघ्र उठिके आयके भुजा पसारिके सुदामाजीसूं मिलतेभये ॥ १८ ॥ प्यारे सखा सुदामा ब्राह्मणके मिलेते अति आनन्दपूर्वक प्रसन्न भये कमलदललोचन श्रीकृष्णचन्द्रके नेत्रनसूं आंशूनकी बूंदें टपकती भई ॥ १९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! लोकनके पवित्र करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सुदामासूं मिलिके पलंगके ऊपर बैठायके सखा सुदामाकूं भेट दैके चरण धोयके धोवन जल अपने शिरपै चढावते भये, और दिव्य गंध अत्तर चन्दन केशरि

---

१ कहि न सकत सकुचत इक बात ॥ केतिक दूर द्वारिका नगरी काहे न द्विज यदुपतिपहँ जात । जाके सखा श्याम सुन्दरसे श्रीपति सक न सुखनके दात ॥ उनके आछत आपनै आलस काहे कंत रहत कृश गात । कहियत परम उदार कृपानिधि अन्तर्यामी त्रिभुवनतात ॥ छांडो सकुच बांधि पट तंदुल सूरज संग चलो उठि प्रात । लोचन सफल करो प्रभु अपने हरि मुखकमल देख विलसात ॥

२ सवैया—ऐसे विहाल विवाइनतें पग कंटकजाल गडे पुनि जोये । हाय महादुख पाये सखा तुम आये इतै न कितै दिन खोये ॥ देख सुदामाकी दीनदशा करुणा करिकै करुणामय रोये । पानी परातको हाथ छुओ नहीं नैननके जलते पग धोये ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इनकूं सुदामाजीके लगावतभये ॥ २० ॥ २१ ॥ श्रेष्ठगंधयुक्त धूप दीनी, और बरावरि दीपक बरायके धरिदिये बडे आनन्दते मित्र सुदामाकी पूजा करिके तांबूलबीरि दैके सन्मुख ठाढे हैके मित्र भले आये ऐसे कहत भये ॥ २२ ॥ फटे मलीन वस्त्र पहिरे और कृशित अंगनमेंसौं निकसि रहीं, ऐसे सुदामा ब्राह्मणकी साक्षात् देवी रुक्मिणी चमर ढोरि पंखा करिके सेवा करतीभई ॥ २३ ॥ निर्मल कीर्तिवारे श्रीकृष्णचन्द्रने प्रसन्नतापूर्वक सत्कार कऱ्यो तब अवधूत सुदामाको देखिके अंतःपुरके वासी जन आश्चर्य मानत भये ॥ २४ ॥ भिक्षाको मांगनवारो, दरिद्री, निंदित, अधम, फटे वस्त्र या सुदामाने कौन पुण्य करें हैं ॥ २५ ॥ जैसे बडे भैया बलदेवजीते मिलै तैसे त्रिलोकीके गुरु लक्ष्मी-निवास श्रीकृष्णचंद्र शय्याके ऊपर बैठि रुक्मिणीकूं त्यागिके यासूं आयके मिले ॥ २६ ॥ हे राजन् परीक्षित ! सुदामा और श्रीकृष्णचन्द्र दोनों परस्पर हाथ पकरिके गुरुकुलमें जब वास कऱ्यो हो तबकी बात कहतभये ॥ २७ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र बोले हे धर्मके जाननवारे ! हे ब्राह्मण ! दक्षिणा देके श्रीगुरुके पासते जब तुम विद्या पढिके आये, तबते तुमने घर आय अपने योग्य स्त्रीके साथ विवाह कियो या नहीं ॥ २८ ॥ हे विवेक मित्र सुदामा ! मैं जानूंहूं तुमारो चित्त विषयनकरिके बहुधा चलायमान नहीं है, घरनमें वस्त्रादिकनमें तुम प्रसन्न नहीं हो, विवेकी हो, तुमकूं ऐसोही योग्य है ॥ २९ ॥ जो कदाचित् कहो कि चाहना नहीं तो घरमें रहिवेते कहा प्रयोजन है ताको उत्तर श्रीकृष्णचंद्र कहैं हैं, जैसे मैं ईश्वर तैसेही ईश्वरकी मायाते रची विषयवासना त्यागिके कितने एक मनुष्य मेरी समान लोकमर्यादाके निमित्त विषयनमें आसक्त नहीं हैवैपैहू कर्म करै हैं ॥ ३० ॥ हे ब्राह्मण ! हम तुम जब गुरुके घरमें जायके रहैं तबको कबहूं स्मरण करो हो कि नहीं जिन गुरुते ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जानिवे योग्य आत्माको स्वरूप जानिके पुरुष संसारते छुटिजाय है ॥ ३१ ॥ या संसारमें तीन गुरु हैं जन्मदाता पिता दूसरो यज्ञोपवीत करि वेद पढावे संध्या गायत्री सुन्दर कर्म सिखामनहारो, और तीसरो ब्रह्मचारी गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी, इन चार्‌यो आश्रमीकूं ज्ञान दैन-वारो गुरु है इनमेंसौं प्रथम गुरु पूज्य और दूसरो मेरी बराबर पूज्य है और तीसरो गुरु साक्षात् मेरोही स्वरूप है ॥ ३२ ॥ जे पुरुष मनुष्यजन्म धारण करिके गुरुरूप मेरे उपदेशते संसाररूपी समुद्रके पार लगैं हैं, हे ब्राह्मण सुदामा ! वे पुरुष ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र इन चारि वर्णनमें और ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी इन चारों आश्रमनमें चतुर हैं ॥ ३३ ॥ ज्ञानके देनवारे गुरुसूं अधिक और सेवा लायक कोई नहीं हैं, याहीते तिन गुरुनके भजनते और कोई अधिक धर्म नहीं हैं, सब प्राणिनको आत्मा मैं जैसो गुरुकी सेवासौं प्रसन्न होउ हूं ऐसो ब्रह्मचर्य, यज्ञ, गृहस्थ, वानप्रस्थ, और संन्यास धर्मसौं प्रसन्न नहीं होउ हूं ॥ ३४ ॥ हे ब्राह्मण ! जब गुरुनके समीप जायके वसेहे तबको स्मरण आवैहै इंधन लायवेके निमित्त एक समय गुरुमाताने कही ही तब हम तुम एक बडे वनमें गयेहे ॥ ३५ ॥ ता समय ऋतुके विना बडी भयंकर पवन चलीही, मेघ वर्षों कठोर गर्जनि भई ॥ ३६ ॥ तब तांई सूर्य अस्त है गयो, चारों ओर अंधकार छायरह्यो, जलही जल दृष्टि परै, ऊंचो नीचो कछु न दिखाई दियो ॥ ३७ ॥ पवन बार बार चली, जल वर्षासूं अति दुःखित भये, दिशानकूं भूल गये चारों ओर जलही जल है गयो, ऐसे वनमें आपुसमें हाथ पकरिकै आतुर हैके लकडीके बोझनकूं शिरपै धरे डोलतेभये ॥ ३८ ॥ सांदीपनी गुरु आचार्य बालक शिष्य इंधन लैवेकूं गये हैं, यह बात जानिके प्रातःकाल जब सूर्य उदय भयो तब हम शिष्यनकूं ढूंढत ढूंढत वनमें गये, ता समय लक-डीनके भोझ शिरपै धरे वस्त्र भीजे दुःखित हमको देखते भये ॥ ३९ ॥ ता समय कृपा करिके तीनि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्लोक कहे तिनसूं हम कृतार्थ है गये पुत्रो ! तुम तुम्हारे लिये बहुत दुःखित भये प्राणीनकूं देह बहुत प्यारो है, ताकों निरादर करिके हमारी सेवा करी ॥ ४० ॥ सत्पात्र शिष्यनकूं याही प्रकार गुरुनकी सेवा करनी योग्य है, शुद्ध भावना करिके धर्म अर्थ काम मोक्ष ये चारों पदार्थ जासूं प्राप्त होइ, ऐसे देहकूं गुरुके अर्पण करिदेय ॥ ४१ ॥ हे द्विजनमें श्रेष्ठ ! तुम्हारे ऊपर मैं प्रसन्न भयो हूं, तुमारे मनोरथ सत्य होउ, तुमने मोते जो वेद पढेहैं, ते या लोक और परलोकमें सार भरे नवीन पढे याद बने रहो ॥ ४२ ॥ गुरुके घरमें जब हम रहतेहे तबके ऐसे अनेक चरित्र हैं, गुरुनकी कृपासों पुरुष पूर्णमनोरथ हैके शांत होय है ॥ ४३ ॥ अब ब्राह्मण सुदामा बोले, हे देवनके देव ! हे जगत्के गुरु ! सत्यसंकल्प तुम्हारे संग हमारो गुरुके पास वास भयो तब हमकूं कौन वस्तुकी प्राप्ति न भई अर्थात् सम्पूर्ण वस्तु पाय चुके ॥ ४४ ॥ हे समर्थ ! संपूर्ण कल्याणदायक छंदोमय वेद आपकी मूर्ति है, तुम्हारो गुरुके पास वास लीलामात्र है ॥ ४५ ॥

यस्य छन्दोमयं ब्रह्म देह आवपनं विभो ॥
श्रेयसां तस्य गुरुषु वासोऽत्यन्तविडम्बनम् ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे अशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

अध्याय ८१.

श्रीशुक उवाच-स इत्थं द्विजमुख्येन सह संकथयन्हरिः ॥
सर्वभूतमयोऽभिज्ञः स्मयमान उवाच तम् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! सब प्राणीनके मनकी जाननवारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र द्विजनमें मुख्य सुदामाके संग बातें करत मुसिकायके बोलतेभये ॥ १ ॥ ब्राह्मणनकी भक्ति करनहारे साधुनकी गति श्रीकृष्णचंद्र प्रेमसहित चितवनिसूं देखत हँसत ब्राह्मण प्यारे सुदामासूं बोलतेभये ॥ २ ॥ श्रीकृष्णचंद्र बोले हे ब्राह्मण ! तुम मेरे लिये कहा भेट लायेहो, भक्ति प्रेमपूर्वक मोकूं थोरीसी भेट देई है सोउ बहुत हो जाय है और जो भक्ति विना मोकूं बहुतहू देईहै परंतु वह मेरे संतोषके लिये नहीं होयहै ॥ ३ ॥ जो पुरुष भक्ति करिके पत्र पुष्प फल मोकूं देई हैं अथवा सावधान मनसों

---

१ कलियुगमें चेले गुरु दोनों लोभी लालची होहैं, एक चेलो गुरुजीके पास आया और सेवा करने लगा, सेवा करनी पडेही पर मालभी बहुत मिले है, नया जानके पुराने चेलोंने सब काम धंधा उसीपर डाल दिया, एक दिन उसने गुरुजीसे कही महाराज ! एक बात कहूं हूं, गुरुजी बोले कह, चेलेने कही महाराज ! कोई ऐसीभी जुगत है, जो मैं गुरु होजाऊं और तुम्हारी नाईं गद्दीपै बैठ हलुआ पूरी उडाऊं चेलोंसे काम कराऊँ, गुरुजीने सुनतेही क्रोधकर उसे निकाल दिया, और फिर अपने यहां न आने दिया, चेलेकूं तौ चाट लगी ही एक दिन एक पल्लेदारको बुला दो पैसे दे, उसने कहा कि रेता पल्लेमें भरकै चलो उसने पल्ला भरलिया, यह गुरुजीके दरवाजेपर पहुँचे खबर दी कि चेला आयो है गुरुजी बोले हम दर्शन नहीं देंगे चेलेंने कही महाराज ! एक पल्लेमें कुछ लाया भी है, हम जाने बूरा या खांड है बुला लो फिर भगा दीजो गुरुजी बोले तो तौ बुलालो चेला सुनतेही बुलाने गया उसने आतेही आंगनमें पल्ला गिरवाया, और गुरुजीकी ओर चरण कर पल्लेकूं डंडौत करी गुरुजी बोले मूर्ख ! यह क्या करै है चेलेने कही महाराज ! मुझे तौ यह पल्लाही लाया है, यह कह भागगया गुरुजी रेता देख बडे लज्जित हुए, कलियुगमें गुरु चेले बहुधा कुपात्र हो हैं ॥

२ चौपाई-विविधभांति मिष्टान्न जो लावै । प्रीति विना मो कहँ नहिं भावै ॥ दुर्योधन बहु पाक बनाये । प्रीति विना मो कहँ नहिं भाये ॥ विदुरभक्तिकी प्रीतिजू जानी । बासी साग बहुत रुचि मानी ॥

दोहा-साग पातभी प्रीतिसें, हमको देइजु कोय । तिहि समान तिहुँ लोकमें, और वस्तु नहिं होय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुरुषने भक्ति करिके जो मोकूं दियो है ताय मैं भोजन करूंहूं ॥ ४ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार सुनतेही नीचेकूं मुख कर सुदामा लाजके मारे लक्ष्मीके पति श्रीकृष्णचंद्रकूं चावलनकूं नहीं देतो भयो ॥ ५ ॥ साक्षात् सब प्राणीनके साक्षी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सुदामाके आगमनको विचार करतभये कि धनकी चाहना करिके या सुदामाने मेरी भक्ति नहीं करी है ॥६॥ पतिव्रता या सुदामाकी स्त्री है ताके प्रिय करिवेके लिये मित्र सुदामा मेरे पास आयो याते देवतानकूं दुर्लभ संपत्ति याको मैं देउंगो ॥७॥ या प्रकार विचारिके चीरमें बंधे चावलनकूं यह कहा है ऐसे कहिके सुदामाके वस्त्रमेंते आपही खेंचते लेते भये ॥८॥ हे मित्र सुदामा ! तुम चावल लाये सो मोकूं बहुत प्यारे लगे हैं, इनकूं थोरे मति जानो ये चावल सर्व मेरे विश्वको पेट भरि देयगे ॥ ९ ॥ ऐसे कहिके एक मुट्ठी चावलनको भोजन करिके और दूसरी मुट्ठी जब खान लगे तबही श्रीकृष्णपरायण रुक्मिणी परमेष्ठी श्रीकृष्णको हाथ पकरिके कहतभई कि मित्रके घरकी वस्तु आपुही भोजन करि जाउगे, कछु हमकूंभी रहन देउगे, एक तो याते आयके हाथ पकऱ्यो दूसरी कारण आगे कहे हैं ॥ १० ॥ हे विश्वके आत्मा ! एक मुट्ठी चावल भोजन करिके सम्पूर्ण विश्वकी संपत्ति तौ याकूं दे चुके, दूसरी मुट्ठी भोजन करिके कहा मोकूं दे चुकोगे, यह लोक और परलोकमें तुमारे संतुष्ट भयेतेही पुरुषकूं संपत्ति प्राप्त होय है ॥ ११ ॥ ब्राह्मण सुदामा वा रात्रीकूं श्रीकृष्णचंद्रके मन्दिरमें रहिके भोजन करिके जल पीके मानो स्वर्गमें आयोहू ऐसे अपनेकूं मानिके सुख मानतो भयो ॥ १२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! प्रातःकाल जब भयो तब विश्वके पालन करनवारे आत्माके आनन्दमें मग्न श्रीकृष्णचंद्र सुदामाकूं प्रणाम करिके मार्गमें पहुँचावनकूं पीछे पीछे संग आवत भये. और मित्र सुदामा तुमने भलो दर्शन दियो, ऐसे आधीनताके वचनसूं आनंदित भयो सुदामा अपने घरकूं आवतभयो ॥ १३ ॥ सुदामाकूं जब धन नहीं मिल्यो, तब मोकूं धन देउ ऐसो श्रीकृष्णते नहीं कहतो भयो, बडे श्रीकृष्णके दर्शनते आनन्द पाय सुदामा लज्जित हैके अपने घरकूं जातेभये ॥ १४ ॥ अहो बडो आश्चर्य है ब्राह्मणकी भक्ति करनवारेनके दैवत श्रीकृष्णचन्द्रकी ब्रह्मभक्ति मैंने देखी, लक्ष्मीकूं छातीमें धारण करनवारे श्रीकृष्ण दरिद्री मो सुदामाकूं छातीसों लगाय-के मिले ॥ १५ ॥ दरिद्री पापी ब्राह्मण मैं कहां, और लक्ष्मी जिनके अंगमें वास करे ऐसे श्रीकृष्णचंद्र कहां, मोमें उनमें बडो अंतर है, सो भुजा पसारके मोसूं मिले ॥ १६ ॥ जैसे बलदेवजीकूं बैठामें ऐसे रुक्मिणीके पलंगके ऊपर मोकूं बैठाय लियो, मेरे मार्गको परिश्रम निवृत्त हैवेको चमर हाथमें दे रुक्मिणीपै पंखा ढुरवायो ॥ १७ ॥ बडी सेवा करिके पावनको दाबनो, धोमनो पोछनो इत्यादिक सत्कार करिके देवनके देव ब्रह्मण्यदेव श्रीकृष्णचन्द्रने देवतानकी समान मेरी पूजा करी ॥ १८ ॥ यद्यपि श्रीकृष्णचन्द्रके चरणनकी सेवा मनुष्यनको स्वर्ग मोक्ष और पाताल पृथ्वीकी संपत्ति तथा सब सिद्धिनको कारण है तौहूं ॥ १९ ॥ दरिद्री सुदामा धनकूं पायके बहुत मतवारो हैके मोकूं भूलि जायगो, या कारण करुणावान् श्रीकृष्ण मोकूं यत्किंचितहू धन नहीं देते भये ॥ २० ॥ या प्रकार सुदामाजी मनमें विचार करत अपने घरके पास आवत भये, तौ देखन लगे कि सूर्य

---

१ सवैया—हाथ गहे प्रभुको कमला कह नाथ कहा तुमने चितधारी । तंदुल खाय मुठी दुइ दीन कियो तुमने दुइ लोकविहारी ॥ खाय मुठी तिसरी अब नाथ कहां निज वासकि आस विचारी । विप्र हि आप समान कियो तुम चाहत आपहि हौन भिकारी ॥ १ ॥ श्रीकृष्णवचन ॥ क्यों रसमें विष वाम कियो अब और न खानदियो एक फंका । विप्रहि लोक तृतीयक देत करी तुम क्यों अपने मन शंका ॥ भामिनी मोहि जिवाय भली विधि कौन रह्यो जगमें नर रंका । लोग कहै हरि मित्र दुखी हमसे न सह्यो यह जात कलंका ॥ २ ॥

२ चौपाई—मैं कब आवत हो हरि तेरे । पाछे परी ब्राह्मणी मेरे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अग्नि चन्द्रमाकी तुल्य प्रकाशमान चारों ओर विमान शोभित है रहे हैं ॥ २१ ॥ चित्र विचित्र बगीचा लगी रहे हैं तिनमें पक्षीनके झुंडके झुंड बोलि रहे हैं, कुमुद, अंभोज, कह्लार, उत्पलनसो शोभायमान सरोवर भरे हैं ॥ २२ ॥ और शृंगार करे पुरुष और हिरनकेसे नेत्रवारी स्त्री जहां तहां डोले हैं, ऐसी शोभा देखिके और विमानको प्रकाश देखिके आश्चर्य मानिके यह कहा है कौनको स्थान है, फिर विचारत भये कि यह तौ हमारोही रहिवेको स्थान है कैसो है गयो ॥ २३ ॥ या प्रकार बडभागी सुदामाकूं देवतानकी तुल्य शोभावारे स्त्री पुरुष गावत बजावत सन्मुख लिवायवेकूं आवते भये ॥ २४ ॥ पतिकूं आये सुनिके आनंद और हरबराहटसो सुदामाकी स्त्री साक्षात् कमलवनमेंते रूप धरे निकसी लक्ष्मीकी समान जल्दीसो घरते बाहर निकसती भई, श्रीकृष्णचंद्र स्वर्गकूं सुदामाके महलमें लाये याते सुदामा और सुदामाकी स्त्री दोनों देवस्वरूप हैगये ॥ २५ ॥ प्रेम और उत्कंठासो नेत्रनमें आंशू भरे पतिव्रता सुदामाकी स्त्री पतिकूं आये देखिके नेत्र मूंदिके बुद्धिसो विचार कर मनसूं आलिंगन करती नमस्कार करतीभई ॥ २६ ॥ जैसे विमानमें बैठी देवी प्रकाशै है ऐसे धुकधुकी कंठमें पहरे दासीनके मध्यमें प्रकाशमान अपनी स्त्रीकूं देखिके सुदामाजी आश्चर्य मानते भये ॥ २७ ॥ प्रसन्न हैके वा स्त्रीकूं संग लैके अपने मंदिरमें धसत भये, जहां हजारन मणिनके खंभ लगे हैं मानो इन्द्रको भवन है ॥ २८ ॥ दूधके श्वेत छागनकी तुल्य कोमल श्वेत बिछौना बिछे हाथीदांतके स्वर्णके पलंग जा मंदिरमें बिछे हैं, और सुवर्णकी डांडीके चमर पंखा धरे हैं ॥ २९ ॥ कोमल बिछौना युक्त सुवर्णकी चौकी बिछी है, मोतिनकी झालर लगे प्रकाशमान चंदोवा तनि रहे हैं ॥ ३० ॥ निर्मल स्फटिक मणिनकी भीतनमें और महामरकतमणिनकी भीतें स्त्री रत्नसहित मंदिरनमें रत्ननके दीवा प्रकाशित हैं ॥ ३१ ॥ ता मंदिरमें संपत्तिनकी वृद्धि देखिके स्थिर हैके अकस्मात् भई अपनी संपत्ति कहांते आई ऐसे सुदामा विचार करतेभये ॥ ३२ ॥ सदाको दरिद्री भाग्यहीन मोको बडे ऐश्वर्यवान् यादवनमें उत्तम श्रीकृष्णचंद्रकी चितवनि विना निश्चय और कोई या संपत्तिको कारण नहीं हैं ॥ ३३ ॥ जो श्रीकृष्णने चितवनि करिकै बडी संपत्ति दीनी है सो मैं तोकूं देउहूं यह क्यों न कहि दीनी तहां सुदामा कहै हैं पूर्णमनोरथ लक्ष्मीके पति दाशार्हवंशोत्पन्न श्रेष्ठ मेरे सखा श्रीकृष्णचंद्र मांगनवारे पुरुषनकूं कहे विनाही बहुतसो धन देइ हैं, आप देवेके लायक वस्तुको मेघकी तुल्य देखे हैं यामें तात्पर्य कहा निकस्यो जैसे सम्पूर्णकूं भरि देनहारो उदार मेघ कभऊं बहुतसो वर्षाकूं थोरी मानिके लाजके मारे दिनमें नहीं वर्षै किन्तु रातिमें वर्षा करिके वाके खेतकूं डुबाय देइ हैं ऐसे श्रीकृष्णहूं भोग वैभवके आगे ता भक्तके देवेलायक इन्द्रादिक पदकूं तुच्छ मानिके और ता भक्तके भजनकूं बहुत मानिके वाके विना कहेही बहुतसी संपत्ति देइ हैं ३४ ॥ आप बहुत देई ताय थोरो मानें, और सुहृदनके थोरो दियेकोहू बहुत माने हैं मैं चावलनकी एक मुट्ठी ले गयो, ताय महात्मा श्रीकृष्णचन्द्र प्रसन्न हैके लेते भये ॥ ३५ ॥ श्रीकृष्णको भक्तनपै हित देखिके तिनकी भक्तिकूं मांगै, है, श्रीकृष्णसो प्रेमभाव सख्यभाव मित्रता दास्यभाव जन्म जन्ममें होय, और मोकूं कछु धन दौलत नहीं चाहिये बडे भाव और सम्पूर्ण गुणयुक्त श्रीकृष्णको और तिनके भक्तनको सत्संग होय ॥ ३६ ॥ धनी पुरुषनके अभिमानसौं नीच जन्म होते देखिके विवेकसौं श्रीकृष्णचन्द्र अपने अज्ञानी भोरे भक्तनको विचित्र सम्पदा राज्यके ऐश्वर्य नहीं प्रदान करे है किन्तु दृढ भक्ति देय हैं, मोको भक्ति नहीं ही यासौं सम्पदाको सुख मिलो परन्तु अब भक्तिहीकी प्रार्थना करौं हूं ॥ ३७ ॥ या प्रकार बुद्धिते निश्चय कर श्रीकृष्णको अत्यन्त भक्त सुदामा विषयनकूं सहजमें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्यागिवेको अभ्यास करत स्त्रीके संग भोग करतो भयो, विषयनमें अति आसक्त नहीं होतो भयो ॥ ३८ ॥ श्रीकृष्णचन्द्र ब्रह्मभक्त हैं यामें कछु आश्चर्य नहीं यह कहैं हैं, देवनके देव पापके हरनवारे यज्ञके प्रतिपालन करनवारे समर्थ जो श्रीकृष्णचन्द्रके ब्राह्मणनको भाव है, तिन ब्राह्मणनसों परे और कोई देवता नहीं हैं ॥ ३९ ॥ या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रको मित्र सुदामा ब्राह्मण औरनपै अजित और भक्तनके वशीभूत श्रीकृष्णचन्द्रकूं देखिके तिनके ध्यानते अहंकार दूर कर श्रीकृष्णके धामको शीघ्र पावत भयो ॥ ४० ॥ जो पुरुष ब्रह्मण्यदेव श्रीकृष्णचन्द्रकी ब्राह्मणकी गौरवता प्रतिपादन करनहारी यह लीला सुने हैं[1] वे भगवान्में भक्तिकूं पायके कर्मनको बंधन संसारसूं छुटि जाय है ॥ ४१ ॥

एतद्ब्रह्मण्यदेवस्य श्रुत्वा ब्रह्मण्यतां नरः ॥
लब्धभावो भगवति कर्मबन्धाद्विमुच्यते ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे एकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

अध्याय ८२.

श्रीशुक उवाच–अथैकदा द्वारवत्यां वसतो रामकृष्णयोः ।
सूर्योपरागः सुमहानासीत्कल्पक्षये यथा ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! याके पीछे द्वारकापुरीमें वास करते रामकृष्णकूं एक समय प्रलयकी समान सर्वग्रास युक्त बडो सूर्यको ग्रहण आवतो भयो ॥ १ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ज्योतिषीनते वा ग्रहणकूं पहिलेही जानिके मनुष्य सब ओरते दान पुण्य स्नान करिवेके निमित्त कुरुक्षेत्रकूं जाते भये ॥ २ ॥ जहां शस्त्रनके धारण करनवारेनमें श्रेष्ठ परशुरामजीने पृथ्वीको इक्कीसवार निःक्षत्री करकै राजानके रुधिरसमूहसो कुंड भरे हैं ॥ ३ ॥ यद्यपि पापरहित है तथापि समर्थ भगवान् परशुरामजी अपने अपने पाप दूरि करिवेकूं अज्ञानी पुरुषकी समान लोकनके सिखायवेके लिये जा कुरुक्षेत्रमें यज्ञ करते भये ॥ ४ ॥ वा बडी तीर्थयात्रामें भरतखंडकी प्रजा आवतिभई तैसेही वृष्णि, अक्रूर, वसुदेव, राजा उग्रसेनकूं आदि लैक यादव ॥ ५ ॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् ! अपने अपने पाप दूरि करिवेके लिये ता कुरुक्षेत्रमें आवते भये,

---

१ एक महाकृपण धनी लालाजी बहुत कहने सुननेसै कथा सुनने गये, उस दिन कथामें यह बात आई कि कथा सुनकर भेंट अवश्य चढानी चाहिये लाला यह सुनकर बडे दुःखी हुए और पूछने लगे कथामें कहा भेंट चढे है लोग बोले आप ऐसी बात पूछो हो आपको हजार दो हजार चढावने कुछ कठिन बात नहीं है, लालाजीनै कानमें उंगरी दीनि हाय यह तौ मेरो धन लुटायवेको फिरै है, सब वस्तीमें पूछते फिरे पर काहूने इनके मनकीसी न कही, रस्तामें इन्हैं कोई पुरुष मिलो वह इनसेभी अधिककृपण हो वाने कही एक श्रीफल चढाय दीजौ, तुम्हारे बागमेंही बहुत लगे हैं, यह सुनतेही बागमें पहुँचै मालीसै कही नारियल तौ लेआ वह बोला लालाजी दुपहरीको वखत है ठंडके समय तोड दूंगा सेठजी आपही पेडपर चढ गये और नारियल पकडकर जो तोडिवेकी इच्छा करी तो इनके पांव डुगेसे अलग होगये, अब नारियल पकरे लटकनेलगे वाहीं समय हाथीवारेको आते देख बोले जो हमें हौदामें उतार लेगो तौ २०० रुपैया दैंगे, जैसेही वह हाथीको लायो और सेठजीके पांव पकरे वैसेही हाथी आगेको बढि गयो दोनों लटकने लगे महावतने कही लालाजी नारियलकी डुग्गी मत छोड दीजो मैंने दोसौ रुपैया छोडे फिर एक ऊंटवारेको चारसौ दैने कर बुलायो वाने ज्योंही पांव पकरे कि ऊंट आगे बढगयो अब तीनोंके बोझसै डुग्गा टूट परो तीनोंके चोट लगी लाला कई हजार रुपया हकीमको देकर अच्छे भये पर कथामें पांचभी भेंट न करसकै ॥ २ यह सुदामाचरित्र क्या आशय रखता है ? इसमें दो वार्ता हैं एक कथा उपदेश, दूसरे जीव ब्रह्मका विचार, कि ईश्वरसे विमुख होकर जीव कितने दुःख पाता है, और फिर उसके सन्मुख होकर सम्पूर्ण ऐश्वर्यका भोग करता है, यह आख्यान इस कथामें भली प्रकार निरूपण किया है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गद, प्रद्युम्न, सांबकूं आदि लैके श्रीकृष्णचंद्रके पुत्र जात भये और सुचन्द्र शुक सारण सहित अनिरुद्ध और कृतवर्मा ये दोनों द्वारकापुरीकी रक्षा करिवेके लिये रहतेभये ॥ ६ ॥ बडे तेजस्वी सुवर्णकी माला और दिव्य फूलनकी माला वस्त्र कवच धारण करें यादव देवतानके विमाननकी तुल्य प्रकाशमान और जलकी तरंगकी समान चंचल घोडे और बादरनकीसी कांतिवारे हाथीनके ऊपर विद्याधरनकीसी कांतिवारे सिपाहीन सहित यादव मार्गमें जाते देवांगनासहित देवतानकी समान शोभित भये ॥ ७ ॥ ८ ॥ बडे भाग्यमान बहुत सावधान यादव कुरुक्षेत्रमें व्रतस्नान करके वस्त्र और फूलनकी माला सुवर्णकी मालानकूं पहिराय गौ ब्राह्मणनकूं दान करिके देतेभये ॥ ९ ॥ यादव परशुरामजीके सरोवरनमें स्नान करिके श्रीकृष्णचन्द्रमें हमारी भक्ति होय यह संकल्प करिके ब्राह्मणनकूं सुंदर अन्नदान करते भये ॥ १० ॥ तिन ब्राह्मणनसों आज्ञा पाय यादव आप यथेच्छ भोजन करिके शीतलछायायुक्त वृक्षनके नीचे बैठते भये ॥ ११ ॥ ता कुरुक्षेत्रमें आये सुहृद संबंधी प्यारे और नाते गोतेके राजाकों देखते भये कौन कौन राजा हैं मत्स्यदेश, उशीनर, कोशल, विदर्भ, कुरु, सृंजय ॥ १२ ॥ हे राजन् ! कांबोज, केकय, मद्र, कुंती, आनर्त, केरल इन देशनके राजानसूं और अपनी ओरके राजानकूं और सैकरान राजानकूं सम्पूर्ण यादव देखते भये, और नंदजीसूं आदि लैके हितकारी गोप और बहुत दिनते कृष्णदर्शनकी चाहनवारी गोपिनको देखते भये ॥ १३ ॥ परस्पर दर्शनसैं उत्पन्न भये आनंदके वेगसों प्रफुल्लित हृदय और कमलमुखसौं शोभायमान पुलकित शरीर प्रेमसौं रुद्धकंठ नेत्रनसौं जल वहावते परस्पर आलिंगन करते यादव और दूसरे लोक बडे आनंदमें मग्न हैगये ॥ १४ ॥ अत्यंत स्नेहभरी मुसिकानि निर्मल कटाक्षयुक्त दृष्टि और स्नेहके आशू नेत्रनमें भरे स्त्री स्त्रीनकूं देखिके केशर लगे स्तनकूं स्तननते लगाय भुजानते आपुसमें मिलती भई ॥ १५ ॥ जो छोटी अवस्थावारे बडेनको प्रणाम कर चुके तब वे यादव वृद्धनकूं प्रणाम करिके भले आये प्रसन्न हैके ऐसे कुशल पूछिके आपुसमें कृष्णकथानकूं पूंछतेभये ॥ १६ ॥ कुंती भैया बहिनि भतीजे माता पिता और भैयानकी स्त्रीनकूं देखिके और मुकुंद श्रीकृष्णचंद्रकूं देखिके आपुसमें प्रेमकी बात चीत करिके नेत्रनते आंशूनकूं छोडती भई ॥ १७ ॥ तब कुन्ती बोली हे श्रेष्ठ भैया ! मैं अपनेको अपूर्ण मनोरथ मानती हूं क्यों जब मोपें विपत्ति पडती है तब हे श्रेष्ठ ! मेरी बातको स्मरणहू नहीं करो हो ॥ १८ ॥ जाको दैव सूधो नहीं होय है वाको सुहृद और जातिके पुत्र भैया माता पिता ये स्मरण नहीं करेहैं ॥ १९ ॥ श्रीवसुदेवजी बोले हे बहिनि ! दैवके खिलोना ऐसे हम मनुष्यनको दोष मति लगावै लोक ईश्वरके आधीन हैके कर्म करें हैं और ईश्वरही कर्म करावै है ॥ २० ॥ हे बहिनि ! कंसके सताये हम सब दिशानमें चले गये, अबही फेरि दैवने घरमें वसाये हैं ॥ २१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित ! वसुदेव उग्रसेनादिक यादवनसो पूजित हो राजा श्रीकृष्णचन्द्रको दर्शन करिके सुखपूर्वक परमानन्दकूं पावते भये ॥ २२ ॥ भीष्म पितामह द्रोणाचार्य अंबिकाको पुत्र धृतराष्ट्र तैसेही पुत्रन सहित गांधारी स्त्रीनसहित पाण्डव कुन्ती संजय विदुर कृपाचार्य ॥ २३ ॥ कुन्तिभोज, राजाविराट्, भीष्मक और बडो नग्नजित, पुरुजित, द्रुपद, शल्य, काशीके राजा सहित धृष्टकेतु, बडे नेत्रवारो राजा दमघोष, मिथिलापुरीको राजा मद्रदेशको राजा और कैकयदेशको राजा युधामन्यु, सुशर्म्मा और पुत्रनसहित बाह्लीकादिक राजानके इन्द्र राजा परीक्षित् ! महाराज युधिष्ठिरके आज्ञाधारी राजा सम्पूर्ण रानीन सहित सुन्दर श्रीकृष्णचंद्रको रूप देखिके आश्चर्य मानते भये ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ दर्शन करे पीछे राम कृष्ण भले प्रकार सत्कार

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पाय राजा श्रीकृष्णचंद्रादि यादवनकी सब प्रशंसा करतेभये ॥ २७ ॥ योगी जननकूं दुर्लभ दर्शन श्रीकृष्णचंद्रको सर्वदा तुम दर्शन करोहो, याहीते भोजवंशीनके पालन करनवारे राजा उग्रसेन संसारके मनुष्यनमें सफलजन्म हो ॥ २८ ॥ वेद जिनकी स्तुति कीर्ति वर्णन करेहैं विन श्रीकृष्णके चरणारविंदको धोवन गंगाजल और मुखारविंदको वचनरूप वेद या विश्वकूं अत्यंत पवित्र करेहैं, और कालसों दग्ध माहात्म्य जाननवारी पृथ्वीहू श्रीकृष्णचंद्रके चरणकमलके स्पर्शते शक्तिमान हैके हमकूं चारों ओरते सम्पूर्ण कामनानकूं पूर्ण करें हैं ॥ २९ ॥ तिन श्रीकृष्णचंद्रके तुम दर्शन करोहो, पीछे चलोहो, बात चीत करोहो, संग सोवोहो, भोजन करोहो और श्रीकृष्णचंद्रके संग तुमारे विवाहादि संबंध होय है, और देहसंबंध होय है, प्रवृत्तिमार्गमें रहनहारेहू तुम हो परन्तु तुम्हारे घरनमें स्वर्ग मोक्ष दोनोंनकी चाहनाकूं दूरि करनहारे श्रीकृष्ण तुमारे घरनमें आप विराजमान हैं याहीते तुम सफलजन्मा हो ॥ ३० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! नंदरायजी कुरुक्षेत्रमें श्रीकृष्ण आदि यादवनकूं आये जानिके गोपनसहित और गाडानमें लादी वस्तु सहित देखिवेके लिये यादवनके पास आवते भये ॥ ३१ ॥ बहुत दिननते दर्शन नहीं हैवेसों कायरचित्त यादव नन्दरायजीको देख महाप्रसन्न हैके जैसे प्राणनके आयवेसों इन्द्रियें उठके सन्मुख होती हैं ऐसेही सन्मुख जाय चिरकालसो दर्शन नहीं पायवेसों उत्कंठित हैके गाढालिंगन कर परस्पर मिले ॥ ३२ ॥ वसुदेवजी नंदरायजीसूं मिलिके प्रसन्न हैके प्रेममें विह्वल होत भये, और कंसके दिये कष्टकूं और गोकुलमें जायके श्रीकृष्णचन्द्रकूं पहुँचाय आये ताको स्मरण करते भये ॥ ३३ ॥ हे कौरवनकूं आनंदके दैनवारे राजा परीक्षित् ! कृष्ण बलदेव माता पिता नन्द यशोदासूं मिलिके प्रणाम करिके प्रेमविह्वल भये आंशूनते कण्ठ रुकि गये ताते कछुहू नहीं बोलते भये ॥ ३४ ॥ महाभागा यशोदा और नंदजी पुत्र कृष्ण बलदेवकूं अपने आसनपै बैठायके भुजानते आलिंगन करिके नेत्रनते आंशू वहावते भये ॥ ३५ ॥ पीछे रोहिणी और देवकी व्रजकी रानी यशोदासूं मिलिके और यशोदाकी करी मित्रताकौ स्मरण करिके आंशू कण्ठमें भरिके यह कहती भई ॥ ३६ ॥ हे व्रजकी महारानी ! जाको बदलो न है सकैं ऐसी तुमारी मित्रताकूं कौन भूलै इन्द्रको ऐश्वर्य पायके या संसारमें तुमारी मित्रताको बदलौ नहीं है सकै है, हे यशोदे ! जिनने अपने माता पिताको नेत्रनसों नहीं देखो ऐसे कृष्ण बलदेवके तुम माता पिताके पास राखे, तब तुमसूं प्यार करिके बढिवो पोषण पालन लालन पायके निर्भय तुमारे पास वास करते भये, जैसे पलक नेत्रनकी रक्षा करें ऐसे तुमने इनकी रक्षा करी. यह तुमकूं योग्यही है क्योंकि साधूनकूं यह अपनो विरानो एतादृश बुद्धि नहीं होयहै ॥३७॥ ॥३८॥श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! श्रीकृष्णचंद्रके देखते समय आखिनम पलक लगायवेमें अंतराय करै है यासो विधाताकूं गोपी गारी दैय है, बहुत दिनते आशा लगाये श्रीकृष्णकूं पायके गोपी नेत्रनकी रस्ता हृदयमें ले जायके अति आलिंगन करिके योगारूढ योगी जननकूं दुर्लभ श्रीकृष्णचंद्रके भाव अर्थात् श्रीकृष्णरूपकूं पावती भई ॥ ३९ ॥ या प्रकार प्रेमभरी गोपीनके पास एकांतमें भगवान् श्रीकृष्णचंद्र जाय आलिंगन करि कुशल पूछि मुसिक्यायके यह बोलते भये ॥४०॥ हे सखियो ! हम अपने जननके कार्य करिवेकूं गयेहे परंतु शत्रुनके मारिवेकी चिंतासों वहांहीं बहुत विलम्ब भयो सो हमको तुम कदाचित् स्मरण करोहो ॥४१॥ यह कृष्ण कृतघ्नी है यह शंका मानिके

---

१ दोहा—नंदराय अतिप्रेमसो, मिले श्यामसौं धाय ॥ माय यशोदा दौरकै, लीने कंठ लगाय ॥ १ ॥ अतिहित गदगद कंठ है, बैठे श्रीयदुवीर ॥ नंदयशोदा दृगनतै, चलो उमडिकै नीर ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहा गोपियो ! तुम हमारी अवज्ञा करोहो, मैं कछुहूं नहीं करूंहूं होनहारकू करनहारे भगवान् प्राणीनको संयोग और वियोग करेहै ॥ ४२ ॥ जैसे वायु बादरनके समूहकूं तृणनकूं रुईकूं धूलिकूं उडायके संयोग करे हैं, फेर वियोग करेहै तैसेही समस्त प्राणीनको उत्पत्तिकर्ता ईश्वर सबकूं मिलावे है, फेरि न्यारो न्यारो करि देय है यामें मोकूं कहा दोष है ॥ ४३ ॥ प्राणीनकी मोमें भक्तिही जन्म और मृत्युसों छुडावे है, तुम्हारो मोमें स्नेह भयो है याते मोकूं प्राप्त होउगी यह बडो मंगल है ॥ ४४ ॥ कैसे तुम हो जिन्हें स्नेह करिके हम पावैंगी ऐसी इच्छा जब गोपिनको भई तौ अपने रूपको कहै हैं हे गोपियो ! जैसे पंचभूतनके बने घटादिकके पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ये आदिमेंहू है और अंतमेंहू हैं, याही प्रकार जरायुज, मनुष्य और पशुते आदि लैके और अण्डानते जन्मवारे पक्षी इत्यादिक, और पसीनाते जन्मवारे खटमल जूंआं इत्यादिक, और उद्भिज्ज अर्थात् वृक्षादिक चार प्रकारनके आदिमेंहू मैंई हूं और अंतमेंहू हूं, भीतर बाहिर हूं, याते व्यापक हूं मोकूं तुम प्राप्त भई हो ॥ ४५ ॥ यहां एक शंका है चारि प्रकारके प्राणीको भोक्ता आत्मा आदि अंतमें हैं, और व्यापक आत्मामें सम्पूर्ण प्राणी वास करें है, तुमारी प्राप्ति हमें कैसे भई तहां कहै है जैसे मृत्तिका घटादिकनके आदिमेंहू है और अन्तमेंहू है ऐसे चारि प्रकारके प्राणी अपने कारणते भूतनमें वर्तें हैं; भोक्ता आत्मामें नहीं रहे है आत्मा देहनमें भोक्तृरूप करिके व्यापक है, पंचभूत रूप देहरूप भोग करिवे योग्य पदार्थ और भोगको करनवारो आत्मा परिपूर्ण मोमें प्रकाशित देखो ॥४६॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार श्रीकृष्णचंद्रने अपने अपने स्वरूपको उपदेश करिके गोपी समझाई तब श्रीकृष्णचंद्रके स्मरणते विनके लिंगदेह छूट गये तब वे श्रीकृष्णचन्द्रकूं पावतीभई ॥ ४७ ॥ गोपी बोलति भई हे कमलनाभ श्रीकृष्ण ! बडे ज्ञानी योगीश्वरनके ध्यान करवे योग्य और संसाररूपी कूपमें गिरे प्राणिनके निकसिवेको आश्रय तुमारो चरणकमल घरमें रहनेपेहू हमारे मनमें सदा बन्यो रहै यह मांगे हैं ॥ ४८ ॥

आहुश्च ते नलिननाभपदारविन्दं योगेश्वरैर्हृदि विचिन्त्यमगाधबोधैः ॥
संसारकूपपतितोत्तरणावलम्बं गेहंजुषामपि मनस्युदियात्सदा नः ॥ ४८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उ० वृष्णिगोपसंगमो नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥८२॥

अध्याय ८३.

श्रीशुक उवाच–तथानुगृह्य भगवान्गोपीनां स गुरुर्गतिः ॥
युधिष्ठिरमथापृच्छत्सर्वांश्च सुहृदोऽव्ययम् ॥ १ ॥

अब श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! गोपिनके गुरु और शरणदायक भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र गोपीनपै अनुग्रह करिके पीछे राजा युधिष्ठिरते और सब सुहृदनते खबर पूछते भये ॥ १ ॥ या प्रकार लोकनके नाथ श्रीकृष्णचंद्रके कुशल पूछने और सत्कार करवेसों श्रीकृष्णके चरणारविन्दके दर्शनते पापरहित हैके वे सब कोई प्रसन्नमन हैके कहते भये ॥ २ ॥ महत् पुरुषनके मनते मुखद्वारा निकसे तुम्हारे चरणारविंदको मकरंद कानरूपी दोनानमें भरिके जे देहधारी पुरुष अतिशय करिके पीमें हैं वे देहकी करनवारी अविद्याकूं काटें हैं ॥ ३ ॥ स्वरूपके प्रकाशसों बुद्धिकृत जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्थाके दूर हैवेके कारणसों संपूर्ण आनन्दके समूहरूप आवरणरहित अकुण्ठ चैतन्य शक्तिमान कालसे नष्ट भये वेदकी रक्षा करिवेके लिये योगमायाकूं अंगीकार करिके मनुष्यदेह धारण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करनेहारे और परमहंसकी प्राप्तिके योग्य तुमको हम प्रणाम करे हैं ॥ ४ ॥ ऋषीश्वर कहैं हैं या प्रकार उत्तम यशस्वी पुरुषनके मुकुटमणि श्रीकृष्णचन्द्रकी प्रशंसा करे हैं, इतनेमें अंधक और कौरवनकी स्त्री आपुसमें गोविंदकी कथा कहती भई हे राजन् परीक्षित् ! त्रिलोकीमें गावे कथा तुमारे आगे वर्णन करें हैं तुम श्रवण करो ॥ ५ ॥ द्रौपदी बोली हे विदर्भदेशकी पुत्री रुक्मिणी ! हे भद्रे ! हे जाम्बवती ! हे कोशलदेशके राजाकी पुत्री ! हे सत्यभामे ! हे कालिन्दी ! हे शैव्ये अर्थात् मित्रविंदे ! हे रोहिणी ! हे लक्ष्मणे ! हे सोलह हजार श्रीकृष्णचन्द्रकी रानिओ ! स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अपनी मायासों मनुष्यलीला कर तुम्हें जैसे विवाहते भये, तैसे अपने विवाहकी बात हमारे आगे कहो ॥ ६ ॥ ७ ॥ अब रुक्मिणी अपने विवाहकी बात कहै है जरासंधादिक राजानके संग मोहि शिशुपाल विवाहिके लिये धनुषकूं उठायके जब आयो ता समय अजीति योद्धानके शिरपै चरण धरिके श्रीकृष्णचन्द्र जैसे भेड बकरीनके समूहमेंते सिंह अपनी बलिकूं लै आवै ऐसे लावतभये, तिन श्रीकृष्णके लक्ष्मीके निवास चरणनकी मैं पूजा करूंहूं ॥८॥ सत्यभामा अपने विवाहकी बात कहैहै, भैया प्रसेनकूं सिंहने मार्‌यो तासूं दुःखितहृदय मेरे पिता सत्राजितने मिथ्या कलंक लगायो वाको मिटायवेकों भगवान्‌नै ऋक्षराजको जीत मणि लाय मेरे पिताकों दीनी, तब मिथ्या कलंक लगायवेसो भयभीत होके मेरे पिताने अक्रूरादिककूं देनो स्वीकार करकेहू मोको श्रीकृष्णचन्द्रहीकूं दियो ॥९॥ अब जांबवती अपने विवाहकी बात कहै है देहके उत्पन्न करनवारो मेरो पिता श्रीकृष्णचन्द्रकूं अपनो स्वामी ईश्वर सीताको पति नहीं जानिके सत्ताईस दिन पर्यंत श्रीकृष्णचन्द्रके संग युद्ध करे पीछे इन्हें निश्चयसों सीतापति इष्टदेव जानि चरण पकरिके स्यमंतकमणि सहित मोकूं श्रीकृष्णचन्द्रकी सेवा करिवेके लिये देतभयो, यह श्रवण करिके द्रौपदीने कही तुम बडी श्रेष्ठ हौ, तहां जांबवती कहै है मैं तो इनकी दासीहूं ॥१०॥ अब कालिंदी अपने विवाहकी बात कहै है, श्रीकृष्णचन्द्रके चरणस्पर्शकी आशा करिके तप करती मोकूं अर्जुनसहित जायके हाथ पकरतभये, मैं तिन श्रीकृष्णचन्द्रके घरकी बुहारी देनवारी हौं ॥ ११ ॥ अब मित्रविंदा अपने विवाहकी बात कहै है लक्ष्मीके वक्षनिवास श्रीकृष्णचन्द्र स्वयंवरमें जायके राजानकूं जीतिके और तिरस्कार करते मेरे भैयानकोहू जीतिके हाथीनको शत्रु सिंह जैसे कुत्तानके बीचमेंसों अपनी बलिकूं लैआवै ऐसे मोकूं अपने पुरमें लावते भये तिन श्रीकृष्णचन्द्रके चरण धोइवेकी सेवा मोकूं जन्म जन्म भयो करै यह मेरी प्रार्थना है ॥ १२ ॥ अब सत्या अपने विवाहको कहै है बडे बली पराक्रमी बडे पैने सींगवारे और शूर वीरनके बडे मदकूं दूरि करनवारे राजानके पराक्रमकी परीक्षा लैवेके कारण मेरे पिताके पाले सात बैलनकों पकरिके जैसे बालक काष्ठकी बकरीनके बच्चानकूं बांधे हैं ऐसे सहजमें श्रीकृष्णचन्द्र बांधि लेतेभये ॥ १३ ॥ पराक्रमहीकी मोलवारी मोको हाथी घोडा प्यादेनसहित दासीनसहित मार्गमें क्षत्रीनकूं जीतिके श्रीकृष्णचन्द्र या प्रकार लावत भये तिनको मोकूं दास्यभाव होउ यह मेरी प्रार्थना है ॥ १४ ॥ अब भद्रा अपने विवाहकी बात कहैहै हे द्रोपदी ! मेरो मन श्रीकृष्णचन्द्रमें आसक्त जानकै मेरे पितानै मेरे मामाके पुत्र श्रीकृष्णचन्द्रको बुलायके मोको अक्षौहिणी सेनासहित दियो ॥१५॥ अनेक कर्मनकरिके भटकनहारी मोकूं जन्म जन्ममें श्रीकृष्णचन्द्रके चरणकमलको दर्शन होय, जा चरणारविंदके स्पर्शते मोक्ष नाम कल्याण मोकूं प्राप्त होय यह मेरी प्रार्थना है ॥१६॥ अब लक्ष्मणा अपने विवाहकी बात कहैहै हे रानी द्रौपदी ! वारम्वार नारदजीके गाये श्रीकृष्णचंद्रके जन्म कर्म श्रवण करिके जैसे मित्रविंदाको चित्त लग्योहो ऐसे मेरोहू चित्त श्रीकृष्णचन्द्रमेंही लगत भयो कमल हाथमें लिये लक्ष्मी देवतानकूं त्यागि-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

के तिन्हें वरे हैं याहीते मेरो चित्त श्रीकृष्णचन्द्रमें लगतभयो ॥ १७ ॥ हे सुशीले द्रौपदी ! पुत्रीपै हित करनहारे बृहत्सेन नाम विख्यात मेरे पिता मेरे मनकी बात जानिके श्रीकृष्णचन्द्रके आयवेके लिये उपाय करत भयो ॥ १८ ॥ हे रानी द्रौपदी ! तेरे स्वयंवरमें अर्जुनके आयवेके लिये मत्स्य रच्यो हो, ऐसे मेरोहू पिता मत्स्य रचावत भयो, यह सुनिके द्रौपदी कहे है फेरि अर्जुनही क्यों न वेधत भयो तहां लक्ष्मणा कहे हैं तेरे स्वयंवरकी मछली बाहिर ढकीही भीतरतै नहीं ढकीही, याते खंभमें लगायकै ऊपरकूं दृष्टि करिके देखेते दिखाई देयही, और मेरे स्वयम्वरकी मछरी ऐसी नहीं ही किन्तु खंभकी जडमें धरे कलशके जलमें केवल परछाई दिखाई देयही, देखिवो तो नीचे जलमें और वेधिवो ऊपर ऐसी मछरीकूं श्रीकृष्णचन्द्रके विना कौन वेधि सकै ॥ १९ ॥ स्वयंवर रच्यो है यह बात श्रवण करिके संपूर्ण अस्त्र शस्त्रनके जाननवारे उपाध्याय अर्थात् शिखामनवारेनकूं संग लैके हजारन राजा मेरे पिताके पुरमें आवते भये ॥ २० ॥ ता समय जैसो जाको पराक्रम और जैसी जाकी अवस्था ही तैसोही ताको पूजन मेरो पिता करत भयो, मोमें मन लगवेके कारण राजा हाथमें धनुष उठाय मत्स्यके वेधिवेकूं सभामें समर्थ न होतभये ॥ २१ ॥ कोई एक राजा धनुषकूं चढायकेही पटकत भये, और कोई एक प्रत्यंचाकूं खैंचिके धनुषकी चपेटतेही गिरतभये ॥ २२ ॥ और जे शूर वीर जरासंध अंबष्ठ चन्देलीको राजा भीम दुर्योधन कर्ण ये अपने अपने धनुषपै प्रत्यंचा चढायके कैसे मछरी लगी है यहहु जानिवेकूं नहीं समर्थ होते भये ॥ २३ ॥ जलमें मछरीकी परछाई देखिके या विधि मछरी लगीही सो जानिके उपायको करनवारो अर्जुन बाण चलावत भयो, बाण मछरीके स्पर्श तौ भयो, परंच मछरी कटी नहीं ॥ २४ ॥ संपूर्ण क्षत्री हारिकै बैठि रहे, अभिमानीनके अभिमान दूरि भये, ता समय भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र धनुषकूं लैके लीलाही करिके प्रत्यंचा चढायके धनुषमें बाण लगायके एकही वार मछरीकूं जलमें देखिके मध्याह्नसमय अभिजित् नक्षत्र जब आयो अर्थात् सब कार्यनके सिद्ध करनवारे मुहूर्त्तमें मछरीकूं बाणसूं काटिके पटकते भये ॥ २५ ॥ २६ ॥ स्वर्गमें देवतानके नगारे बजतेभये पृथ्वीमें जय जय शब्द होत भयो, देवता आनंदमें विह्वल हैके बहुत पुष्पनकी वर्षा करते भये ॥ २७ ॥ हे द्रौपदी ! लाज हँसनि युक्त मुख और चोटीमें माला गुहे नवीन रेशमी सुंदर धोती पहिर चदर ओढिके सुवर्णमें जडी रत्नकी माला हाथमें लैके और मनोहर नूपुरवारे चरणनसो मैं रंगभूमिमें जाती भई ॥ २८ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रमें आसक्त हृदय मैं बडे केश और कुण्डल करि शोभायमान कपोलवारे मुखकूं उठायके संतापको दूरि करनवारे हास कटाक्षपूर्वक चितवनि करिके राजानकूं चारों ओरते देखिके हौले हौले जायके मुरारी श्रीकृष्णचन्द्रके कंधापै माला धरती भई ॥ २९ ॥ ता समय मृदंग, ढोल, शंख, भेरी, नगारे आदि लैके बाजे बाजतभये, नट और नृत्यकारी नाचत भये, और गवैया गावत भये ॥ ३० ॥ हे यज्ञसेनकी पुत्री द्रौपदी ! या प्रकार मैंने भगवान् श्रीकृष्णचंद्र वश करे तब ईर्षा और काम करिके आतुर राजानके यूथ नहीं सहारते भये ॥ ३१ ॥ सुंदर चार घोडा जुते रथमें वा समय बैठायके शार्ङ्गधनुषकूं उठायके कवच पहिरके चारि भुजायुक्त श्रीकृष्णचंद्र संग्राममें ठाढे होते भये ॥ ३२ ॥ हे रानी द्रौपदी ! रथमान सुनहरी साजको रथ हांकि देत भयो और जैसे मृगनके देखत सिंह चल्यो जाय ऐसे राजानके बीचमें राजानके देखतेई जात भये ॥ ३३ ॥ बडे बडे क्षत्री राजा पीछेसूं श्रीकृष्णचंद्रकूं पकरिवेके लिये दौरत भये, कोई राजा श्रीकृष्णचंद्रके रोकिवेकूं आगे जायके धनुषकूं ऊंचे उठायके जैसे सिंहके रोकिवेकूं कुत्ता ठाढो होय ऐसे मार्गमें सावधान हैके ठाढे होतेभये ॥ ३४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शार्ङ्गधनुषमेंते निकसे बाणनके समूहसूं भुजा पांव गर्दन कटवेसों क्षत्री युद्धमें गिरते भये और कोई एक संग्रामकूं छोडिके भाजतेभये ॥ ३५ ॥ ता पीछे यादवनके पति श्रीकृष्णचंद्र अत्यंत शोभायमान सूर्यकी आवरण करनहारी ध्वजाके वस्त्रनसों शोभित और चित्र विचित्र वंदनवारी माला बंधी, स्वर्ग और पृथ्वीमें स्तुति पामनवारी द्वारकापुरीमें अस्ताचलमें सूर्यकी समान प्रवेश करतेभये ॥ ३६ ॥ मेरो पिता सुहृदतातें मोती और बंधुकूं बडे मोलके वस्त्र गहने शय्या और साजसूं पूजन करतो भयो ॥ ३७ ॥ सम्पूर्ण संपत्तिमान् दासी और प्यादे रथ हाथी घोडानसहित और बहुत मोलके हथियारनसहित मोकूं मेरो पिता परिपूर्ण श्रीकृष्णचंद्रकूं देतो भयो ॥ ३८ ॥ ये आठों हम आत्मामें रमण करनवारे श्रीकृष्णचन्द्रकी सब संग त्यागिके अपने धर्म करिके साक्षात् घरकी दासी भई हैं ॥ ३९ ॥ सोलह हजार रानी एकसो व्याही है याते एकसंग अपने व्याहकी बात कहैं हैं. सैन्य-सहित भौमासुरकूं मारिके पीछे पृथ्वीकूं जीतिती विरिया जीते राजनकी कन्या हमकूं भौमासुरसों रोकी जानिके संसारते छुडामनवारे चरणारविंदकूं स्मरण करती हमको बंदीखानेते छुडायवेको कारण पूर्णकाम श्रीकृष्णचन्द्र विवाहते भये ॥ ४० ॥ हे द्रौपदी ! हम चक्रवर्ती राज्यकूं नहीं चाहैं, चक्रवर्ती राज्य और इन्द्रपदके भोगनको भोगिवो हम नहीं चाहैं, अणिमादिक सिद्धिनकूं नहीं चाहैं, और ब्रह्मलोक, मोक्ष तथा वैकुंठधामकी चाहना नहीं करैं हैं, गदाके धारण करनवारे श्रीकृष्णके लक्ष्मीके कुचनकी केशरी लगे सुन्दर चरणकी रज माथेके ऊपर चढायवेकी चाहना करैंहैं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ क्योंजी वह तौ बडी दुर्लभ है वाय क्यों चाहौ हौ तहां कहैं हैं जैसे व्रजकी स्त्री वा रजकी चाहना करैंहैं, भीलिनी चाहना करैं हैं, वृंदावनके तृण लता चाहना करैं हैं, गौनकूं चरामनहारे महात्मा श्रीकृष्णचंद्रके चरणस्पर्शकूं चाहना करे हैं, ऐसे हमहूं चाहना करे है, श्रीकृष्णको जिनने आश्रय लियो तिनकूं वह रज सहज है ॥ ४३ ॥

व्रजस्त्रियो यद्वाञ्छन्ति पुलिन्द्यस्तृणवीरुधः ॥
गावश्चारयतो गोपाः पादस्पर्शं महात्मनः ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

अध्याय ८४.

श्रीशुक उवाच-श्रुत्वा पृथा सुबलपुत्र्यथ याज्ञसेनी माधव्यथ क्षितिपपत्न्य
उत स्वगोप्याः ॥ कृष्णेऽखिलात्मनि हरौ प्रणयानुबन्धं
सर्वा बिसिस्म्युरलमश्रुकलाकुलाक्ष्यः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! कुंती सुबलकी पुत्री गांधारीके पीछे यज्ञसेनकी पुत्री द्रौपदी सुभद्रा याके पीछे राजानकी स्त्री और श्रीकृष्णचन्द्रकी भक्त सम्पूर्ण गोपीनके महात्मा श्री-कृष्णचन्द्रनें रानीनको प्रेम सुनिके नेत्रनमें आंसू भरिके बडो आश्चर्य मानती भई ॥ १ ॥ ता कुरु-क्षेत्रमें या प्रकार स्त्रीनके संग स्त्री, पुरुषनके संग पुरुष बात करैंहै इतनेमें श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवजीके दर्शन करिवेके लिये मुनि आवत भये ॥२॥ अब जो ऋषि आये तिन्हें कहैं हैं वेदव्यास, नारद, च्यवन, देवल, असित, विश्वामित्र, शतानंद, भरद्वाज, गौतम ॥३॥ शिष्यनसहित भगवान् परशुराम, वसिष्ठ, गालव, भृगु, पुलस्त्य, कश्यप, अत्रि, मार्कण्डेय, बृहस्पति॥ ४ ॥ द्वित, त्रित, एकत तैसेही ब्रह्माके पुत्र अंगिरा, अगस्त्य, याज्ञवल्क्य तथा वामदेवते आदि लैके और मुनि संपूर्ण आवते भये ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विश्वपूजित ऐसे मुनिनकूं आये देखिके राजानते आदि लैके जो प्रथम बैठें और पांडव अर्थात् राजा युधिष्ठिरादिक तथा श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवजी ये सम्पूर्ण शीघ्रही उठके प्रणाम करतेभये ॥ ६ ॥ तिन मुनिनको यथायोग्य सम्पूर्ण पूजन करतेभये, और बलदेवजीसहित श्रीकृष्णचन्द्र भले आये ऐसे मुनिनसो कहिके आसन दैके पाद्य अर्घ्य पुष्प धूप दीप चन्दन करिके पूजन करतेभये ॥ ७ ॥ चुप हैके सम्पूर्ण जामें बैठे ऐसी सभामें धर्मकी रक्षा करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सुखपूर्वक बैठे ब्राह्मणनसूं बोलतेभये ॥ ८ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र बोले हैं अहो बडो आश्चर्य है, हम सफलजन्म भये, सब जन्मको साफल्य हमकूं प्राप्त भयो, देवतानकूं दुर्लभ ऐसो योगीश्वरनको दर्शन भयो ॥ ९ ॥ तीर्थ स्नान करनो याहीकूं तप जानें, केवल प्रतिमाहीकूं देवता देखें, ऐसे मनुष्यकूं योगीश्वरनको दर्शन स्पर्शन और वार्ताको प्रश्न चरणनको पूजन करिवो यह कहां मिलें हैं ॥ १० ॥ जलमयीही तीर्थ नहीं है, मृत्तिका और शिलानमेंही देवता नहीं है विशेष कर महात्मानमें है बहुत दिन देवतानकूं पूजा करे, तब पवित्र करे और साधु महात्मा दर्शनहींते पवित्र करे है ॥ ११ ॥ अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, तारागण, पृथ्वी, जल, आकाश, पवन, वाणी, मन इनकी उपासना कीनी जाय तौ भेदबुद्धिके कर्ता हैवेसौ पुरुषके अज्ञानकूं दूरि नहीं करे हैं और विवेकी पुरुष दो घडी सेवा करेतेही अज्ञानकूं दूरि करि देइ है ॥ १२ ॥ वात पित्त श्लेष्म इन तिन धातुनके रचे देहकूं जो आत्मा जानेहै और स्त्रीपुत्रादिकनमें आत्मबुद्धि माने तथा पृथ्वीके विकार प्रतिमामें जा पुरुषकी यह पूजा करिवे योग्य देवता है ऐसी बुद्धि है और जलकूं तीर्थ माने और विवेकी पुरुषनमें भाव नहीं राखे ऐसे पुरुष गौके चारों ढोमनवारे गंधा हैं ॥ १३ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् परीक्षित् ! तीक्ष्ण बुद्धि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रको वचन श्रवण करिके चकितबुद्धि हैके वे ब्राह्मण चुप होते भये ॥ १४ ॥ ईश्वर श्रीकृष्णचन्द्रको कर्मनमें अधिकार बहुत देरपर्यंत विचारिके कि जननकी शिक्षाके लिये हमारी स्तुति करें हैं या प्रकार मुनीश्वर मुसिक्यायके जगत्के गुरु श्रीकृष्णचंद्रसूं बोलतेभये ॥ १५ ॥ तत्वके जाननवारेनमें श्रेष्ठ हम और विश्वके रचनवारे ब्रह्मादिक जिनकी माया करिके मोहित भये हैं, कारण कि जा मायासौं आप मनुष्यलीला करवेको गूढ रहिके अनीश्वरके समान चेष्टा करें हौ आपकी लीला बडी विचित्र है ॥ १६ ॥ चेष्टारहित और एक हैकेहू तुम अपने आत्मा करिके या विश्वकूं बहुत प्रकार पालन उत्पत्ति रक्षा करोहो जैसे पृथ्वी घटादि विकारनकरिके बहुत नामकी होय है, कदाचित् कहो कि मैं कैसे उत्पत्ति पालन संहार करूं हूं मैं तो वसुदेवको पुत्र हूं तहां कहे हैं परिपूर्ण तुम वसुदेवके घर जन्मेहो यह विचित्र लीला मात्र है सत्य नहीं ॥ १७ ॥ समयपै अपने भक्तनकी रक्षा करिवेके लिये, और दुष्टनके दंड देवेकूं

---

१ यहां साधुओंकी महिमा दिखानेका तात्पर्य है, मूर्ति तथा तीर्थका विषेध नहीं है और विशेष करके यह दिखाया है कि तीर्थकूं जानेमें बहुतेरा द्रव्य उठावै पूजामें घंटो बैठे परन्तु महात्मा हरिभक्तको देखतेही दुर्वाक्य कहैं उन्हैं अन्न तौ क्या जलभी न दै ऐसे भेदबुद्धिवारेनके प्रति यह वाक्य है ज्ञानी तौ सबमेंही उसका प्रकाश देखते हैं ॥ प्र०— इस वाक्यसै तौ पूजन और तीर्थ सबकी निन्दा हुई ? उ०—वाक्यका प्रसंग देखकर अर्थ किया जाता है, भगवान्ने महात्माओंकी संगतिका वर्णन किया है, निन्दा निन्दा करनेको प्रवृत्त नहीं हुई है, किन्तु सत्संगतिकी विशेषताको प्रवृत्त हुई है, अर्थात् जो पुरुष देवार्चन करते समय मूर्तिमें देवबुद्धिकर सर्वव्यापकतासै उनका पूजन करते हैं जो जल तीर्थरूप नहीं वहां तीर्थोंका आवाहन कर उनमें तीर्थ मानकर स्नान करते हैं, और मेरे भक्त महात्माओंमें मेरा चमत्कार नहीं जानते, तथा उनका सत्कार नहीं करते उनकी बुद्धि विचारशून्य है, और इसी कारण मनुष्यसमाजमें वह गर्दभ गिने जाते हैं यह आशय है. तीर्थ और विग्रहकी निन्दा नहीं है । भक्तोंको मेरा रूप नहीं मानते यह दोष है मेरा एक वाक्य मानते हैं, एक नहीं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शुद्ध सतोगुणरूपकूं धारण करोहो, और आप अपनी लीला करिके सनातन वेदमार्गको प्रवृत्त करो हो जो तुम काहूके पुत्र नहीं हो तोहू चारि वर्ण और चारि आश्रमके आत्मा परमपुरुष तुम हो याहीते ब्राह्मणनको बहुत सत्कार करो हो ॥ १८ ॥ शुद्ध वेद तुमारो भीतरको रूप है, तप करिवो वेदको पढिवो इन्द्रियनको रोकिवो इन करिके कार्य और कारण दोनोंनते परे ब्रह्मकी प्राप्ति होय है ॥ १९ ॥ हे ब्रह्मन् ! वेदके कारण आत्मा तुम हो तिनको बतामनवारे ब्रह्मकुलको पूजो हो ताही कारणते ब्राह्मणकी भक्ति करनवारे पुरुषनमें श्रेष्ठ हो ॥ २० ॥ ताते ईश्वर हैके तुम हमारो सत्कार करोहो सो पुरुषनके शिक्षा करिवेके लिये है और हम तुमारे संगते कृतार्थ भये साधुनकी गति आपको संग भयो तासूं हमारो जन्म विद्या तप दृष्टि ये सम्पूर्ण सफल भये, कि तुम समस्त कल्याणकी अवधि हो ॥ २१ ॥ अकुंठित बुद्धि और अपनी योगमायासों मूढ महिमावारे परमात्मा भगवान् श्रीकृष्णचंद्रकूं नमस्कार है ॥ २२ ॥ मायारूपी चित्रसूं ढके सृष्ट्यादिकनके कारण ईश्वर आत्मा तुमको आपके साथ एकही स्थानमें रहनहारे यह यादव और ये राजा नहीं जाने हैं ॥ २३ ॥ जैसे पुरुष सोवतमें स्वप्नदृष्ट मिथ्यापदार्थको सत्य माने है मनते सिंह व्याघ्रादिरूप आप बनि जाय है, और स्वरूपकूं नहीं जाने है ॥ २४ ॥ याही प्रकार स्वप्नादितुल्य विषय पदार्थमें इन्द्रियनकी प्रवृत्तिरूप माया करिके चलायमानचित्त पुरुष विवेकके नाशते तुम्हें नहीं जाने हैं ॥ २५ ॥ पापनके समूहनकूं दूरि करनहारे गंगारूपी तीर्थ जामेंते प्रगट भयो, पक्कयोगवारे योगिजनहू जिनको केवल हृदयमें ध्यान करेहै परंतु विनकूंहू दिखाई नहीं दिये तुमारे चरणारविंदको हम प्रत्यक्ष दर्शन करते भये याते हमें भक्ति करिके अनुग्रह करो, कदाचित् कहो कि भक्ति करिके कहा करोगे, पहिलेकी तुल्य तप करे जाओ तहां कहे हैं वृद्धिको प्राप्त भई भक्तिसों जिनके लिंगशरीरको नाश हैगयो है वेही तुम्हारे स्वरूपको प्राप्त भये हैं और नहीं ॥ २६ ॥ शुकदेवजी बोले हे राजनमें ऋषि राजा परीक्षित् ! या प्रकार मुनीश्वर श्रीकृष्णचंद्र और राजा धृतराष्ट्र तथा युधिष्ठिरसूं आज्ञा मांगिके अपने अपने आश्रमनमें जायवेकी इच्छा करतेभये ॥ २७ ॥ तब बडे यशस्वी वसुदेवजी तिन मुनिनकूं जाते देखिके विनके समीप जायके सावधान हैके यह कहते भये ॥ २८ ॥ अब वसुदेवजी कहे हैं सम्पूर्ण देवतारूप तुम हो तिनकूं प्रणाम है हे ऋषीश्वर ! मेरी एक वार्ता तुम श्रवण करो जैसे कर्म करिके कर्मको नाश होय सो हमें बताओ ॥ २९ ॥ श्रीकृष्णचंद्रकूं छोडिके हमसूं कल्याण पूछे हैं या प्रकार आश्चर्य मानके नारदजी ब्राह्मणते कहे हैं हे ब्राह्मण ! जो वसुदेवजी श्रीकृष्णचंद्रकूं अपनो पुत्र मानिके जानिवेके लिये अपनो कल्याण हमसूं पूछे हैं यह आश्चर्य नहीं हैं ॥ ३० ॥ श्रीकृष्णचंद्रकूं बालक माननो अविद्याकरिके हैं यह कहे हैं या संसारमें मनुष्यनके पास रहेते अनादर होय है, जैसे गंगातीरको रहनवारो पुरुष गंगा छोडिके शुद्ध होवेके लिये और जलमें स्नान

---

१ विना गुण जाने वस्तुकी महिमा प्रगट नहीं होय, एक महात्माने कृष्णनामकी बडी बढाई की कि एकवार नाम लेनेसे अनेक पाप दूर होजायहैं चेले बोले महाराज ! फिर यह मनुष्य तौ दिनरात नामका स्मरण करै हैं यह क्यों दुःख पावै हैं, गुरुजी बोले महिमा नहीं जाननेसे यह दशा है चेला मनमें संदेह करने लगा तौ बाबाजीने अपने पाससे एक अमूल्य रत्न दे चेलेसे कही कौंजडीसे पूछ इसका कितना शाक देंगी, चेलेने जा पूछा उसने सेरभर शाक देने कहा फिर गुरुजीने सराफपर भेजा उसने बीस रुपये कहे फिर गुरुजीने जौहारीके पास भेजा उसने क्रोड रुपये कहे फिर गुरुजीने सबसे बडे जौहारीके पास रत्न लैके भेजा तब उसने कही मेरी यहां असंख्यात द्रव्य है परंतु वोह तौ इसके द्रव्यके व्याजमें है मेरे यहां इसकी कीमत देनेको द्रव्य नहीं चेलेने गुरुजीसे कही वोह बोले ऐसेही कृष्णनामकी महिमा है जो जानते हैं वोह संसारके पार होते हैं जो नहीं जानते वे कर्म भोगते हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करिवेकूं जाय है ॥ ३१ ॥ जिन श्रीकृष्णचन्द्रको ज्ञान काहू कारणते नहीं नष्ट होय है, सोई कहे हैं, जैसे कालकरिके काकरी फटि जाय है, और या विश्वको उत्पत्ति करि पालन और नाश करिके इनसूं-हू तुमारो ज्ञान नहीं जाय है, और जैसे बिजुली चमकके विलाय जाय है, और जैसे गुणकरिके पूर्व-रूपको नाश होय है और रूपान्तरकी प्राप्ति होय है ऐसेहू नहीं जाय है ॥ ३२ ॥ ऐसे जो कृष्ण अद्वि-तीय ईश्वर और अखंडितज्ञानस्वरूप हैं विन्हें और मनुष्य जैसे रविमंडलको बालक राहू वा हिमसौ आच्छादित मानै ऐसेही क्लेश कर्म सुख दुःखगुणनको प्रवाह और अपने कार्यरूप प्राणादिकसौ आच्छादित मानै तौ यह कोई अचंभेकी वार्ता नहीं है ॥ ३३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! याके उपरान्त वे मुनि सब राजानके श्रवण करत, और तैसेही श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजी श्रवण करत वसुदेवजीकूं बोधन करत बोलते भये ॥ ३४ ॥ कर्म करेते कर्म कटै यह भलो पूंछ्यो, श्रद्धापूर्वक यज्ञन करिके सब यज्ञनके ईश्वर भगवान्को पूजन करो ॥ ३५ ॥ ज्ञानी कविननें शास्त्ररूप नेत्रनकरिके चित्तके शांति करनवारे आत्माकूं आनंदको प्राप्ति करनवारा धर्मरूप यज्ञकरिके पूजन करिवोही उपाय दिखायो है ॥ ३६ ॥ गृहस्थी ब्राह्मण क्षत्री वैश्यकूं यही कल्याणको मार्ग है, निष्काम होयके प्राप्त भय शुद्ध द्रव्यसे ईश्वरको पूजन करै महात्मानके द्रव्य यज्ञादिमें लगे हैं, सूमनके वृथा जाय हैं ॥ ३७ ॥ हे वसुदेवजी ! यज्ञ करिके दानकरि विवेकी पुरुष धनकी चाहनाकूं त्यागे, और घरमें उचित भोगनकूं भोगिके स्त्रीपुत्रनकी चाहनाकूं त्यागे और या देहके मरे पीछे स्वर्गलोका-दिकनकी प्राप्तिकूं नाशमान समझिके तिनकी चाहनाकूं त्यागै ॥ ३८ ॥ ग्राममें चाहना त्यागकर समस्त वीरपुरुष तप करिवेके लिये वनमें जात भये हे समर्थ वसुदेवजी ! ब्राह्मण क्षत्री वैश्य देव ऋषि पितृ इन तीनों ऋणसे या जन्ममें उद्धार होय यज्ञ करिके देवतानको ऋण और विद्या पढिके ऋषिनको ऋण, तथा पुत्र उत्पन्न करिके पितृनको ऋण चुकावै, इन ऋणनके चुकायवे विना जो कर्मनको त्याग करे तो वह पुरुष नरकमें गिरे ॥ ३९ ॥ हे मतिमान् वसुदेव ! अब तुम दो ऋणते तौ छूटिगये, विद्या पढे याते ऋषिनके ऋणसूं उद्धार भये और पुत्र भये याते पितरनके ऋणसूं उद्धार भये अब यज्ञ करिके देवतानके ऋणते उद्धार होयके गृहकूं त्यागि संन्यास ग्रहण करौ ॥ ४० ॥ हे वसुदेवजी ! तुमने बडी भक्ति करिके जगत्के ईश्वर हरि भगवान्को पूजन करो यासे वेई हरि भगवान् आयके तुमारे पुत्र होतभये ॥ ४१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! उदारमन वसुदेवजी या प्रकार ब्राह्मणनको वचन सुनिके

---

१ एक पोपलसाहके छप्पनकोट द्रव्य हो सो बडे सूम हे बेटे कहैं पिताजी गंगापुष्कर स्नानको चलो पुण्य करो यह कहैं पुण्य करेसै कछु नहीं होय है और जो हम चले तौ पीछे चोर घर लूट लेजांयगे रस्तामें लूटेजाओगे इनके बेटानै कही हम तौ जांयगे संतौंके दर्शन करेंगे यह बोले तुम मेरो घर लुटायवेको फिरो हो, तब यह बोले हम भीख मांगते चले जांयगे यह बोले तौ नाम ले जांयगे एक काम करो गहना कपडा सब उतार धरो मैले कपडा पहरो उन्हौंने वैसेही करी सो इन्हौंने भोजन मात्र खर्च दीनो कहदीनी पुण्य मति करियो जल्दी आइयो वे सब स्त्री बालक गये पीछे इन्हौंने गढा खोद सब गहना द्रव्य गाड दियो जब वे स्नान कर आये तब यह बोले तुम न्हाने गये पीछे चोरी होगई अब बनियेसै उधार लैके खायें हैं, हमारे पास कुछ नहीं रह्यो ऐसा कह बागमें जाय बैठे अब यह रोमन लगे परमेश्वर भले तीर्थस्नानको गये भोजनसे ही बैठ रहे सन्ध्यासमयतक रोते रहे वा समय महादेवजी सैलकू आये हे इन्हें देख बोले कि द्रव्य तौ कोठेमें दबो है यह कह गये और उन्हौंने गढा खोद सब धन निकास्यो और बांटन लगे पीछेतै पोपलसाह बोले अरे दुष्टो ! जल्दी किवार खोलो नहीं तौ इहांही मूंड फोर मरजाऊंगो इन्हौंने किवार खोलनेमें देर करी इन्हौंने जानी सब धन लूटगया सो मूंड फोर मरगये ॥

दोहा—पोपलसाह अपार जग, जोडे छप्पन क्रोड । एक प्रभूके नाम बिन, मरे भीत शिर फोड ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मस्तक नवायके नमस्कार करिके तिन ऋषिनकूं यज्ञके करनवारे ऋत्विज जनको वर्णन करत भये ॥ ४२ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! धर्मसै वरणनको प्राप्त होय ऋषि धर्मात्मा वसुदेवजीकूं कुरुक्षेत्रमें उत्तम सामग्री करिके यजन करावत भये ॥ ४३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! जा समय वसुदेवजीकूं यज्ञदीक्षा भई ता समय कमलनकी माला पहिरके यादव और स्नान करि सुन्दर वस्त्रनकूं पहिर शृंगार करिके राजा आवतभये ॥ ४४ ॥ और धुकधुकी कण्ठमें धारे सुन्दर वस्त्रनकूं पहिरे केशरि चन्दन लगाये राजनकी स्त्री पूजाकी सामग्रीकूं हाथमें लैके जहां यज्ञशाला ही तहां आवती भई ॥ ४५ ॥ मृदंग, ढोल, शंख, भेरि, नगारेकूं आदि लैके बाजे बाजतभये, नट और नृत्य करनवारी नाचत भई, सूत और जगा स्तुति करतभये, सुन्दरकण्ठवारी गन्धर्वपत्नी अपने पतिनसहित सुन्दर गीतनकूं गावती भई ॥ ४६ ॥ नेत्रनमें अंजन लगाये शरीरमें मक्खन मले वसुदेवजीको विधिपूर्वक अठारह स्त्रीनसहित ऋत्विज अभिषेक करते भये जैसे तारागणसहित चन्द्रमाको करे है ॥ ४७ ॥ वस्त्र कंकण हार नूपुर कुंडल आभूषणकरिके शोभायमान स्त्रीसहित दीक्षा लिये मृगछाला ओढे वसुदेवजी सुन्दर लगतेभये ॥ ४८ ॥ हे महाराज परीक्षित् ! रत्ननके गहने और रेशमी वस्त्रनकूं पहिरे वसुदेवजी यज्ञके करनवारे और सभामें बैठे पुरुषनसहित वृत्रासुरके मारनवारे इन्द्रकी समान यज्ञमें सुन्दर लगते भये ॥ ४९ ॥ सम्पूर्ण जीवनके ईश्वर राम कृष्ण अपने अपने बंधूनकूं संग लिये और अपने अपने पुत्रस्त्रीनसहित अपने ऐश्वर्यसों सुन्दर लगतेभये ॥ ५० ॥ यज्ञमें विधिपूर्वक अग्निहोत्रकूं आदि लैके प्रकृति और विकृतिरूप यज्ञ अर्थात् समस्त अंगके ज्योतिष्टोम दर्शपौर्णमास आदि यज्ञ और थोरे अंगवारे सौर्यसत्रादिक द्रव्य अर्थात् साकल्य मंत्र कर्मसौ ईश्वर भगवान्को पूजन करते भये ॥ ५१ ॥ यज्ञ करे पीछे वसुदेवजी समयपें आभूषण करिके शोभायमान यज्ञ करनवारे ऋषिकूं आभूषणनसूं शोभायमान करिके गौ पृथ्वी कन्या और बडे धनकी बडी दक्षिणा वेदविधिसूं देतभये ॥ ५२ ॥ पत्नीसंयाजावभृत्य इत्यादिक यज्ञांग करायके बडे ऋषि ब्राह्मण यजमान वसुदेवकूं आगे करिके रामह्रदमें स्नान करतेभये ॥ ५३ ॥ स्नान कर वसुदेवजी और तैसेही तिनकी स्त्री सब बन्दीजनकूं अपने अंगके आभूषण गहने देती भई, तापीछे वसुदेवजी और आभूषण पहिर चाऱ्यो वर्णनकूं दान करिके पूजतेभये और जीवनमें श्वानतककोहू अन्न दियो ॥ ५४ ॥ स्त्रीपुत्रन सहित बंधुनको प्रीतिपूर्वक बहुतसे द्रव्यसै पूजन करते भये (अब कौन बंधु हैं तिनको नाम लैय हैं) विदर्भ, कोशल, कुरु, कैकय, सृंजय इन देशनके राजानको और सभाके बैठनवारे तथा यज्ञके करावनवारे देवतागणनको तथा मनुष्य भूत पितर चारण गणको पूजन करते भये, सब राजा श्रीकृष्णकूं बोधन करिके यज्ञकी प्रशंसा करते अपने अपने देशनकूं जावेकी इच्छा करते भये ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ धृतराष्ट्र, विदुर, पृथाके पुत्र युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, भीष्मजी, द्रोणाचार्य, कुंती, नकुल, सहदेव, नारद, भगवान् व्यासजी, और सुहृद तिनसूं तथा नाती पोतेवारे बंधु यादव सबसूं मिलिके स्नेहकरिके खेदितचित्त विरहके कष्ट करिके

---

१ आज कलसे अज्ञानी पुरुषोंके प्रशंसा करनैसै ऐसे आशीर्वाद मिले हैं जैसे एक लालाको मिले, एक बनियांके श्राद्ध हो वाने अनेक प्रकार भोजन कराय ब्राह्मणोंको जिमायो पीछेसे कुटुम्ब जीम्यो, तबहू सामग्री बचरही तब यानै अपने मुलाकाती म्लेच्छादिकनको बुलाय और खूब जिमायो वे बोले लालाजी आपके घर आज क्या था, लाला बोले आज हमारे श्राद्ध हो. वे बोले श्राद्ध ऐसी वस्तु है दाता करे आपके नित श्राद्ध होय छोटे बडेको श्राद्ध होय स्त्रीपुरुषको श्राद्ध हो, रोज रोज श्राद्ध होय ऐसा कहते चले गये नीचोंके जिमानेमें ऐसे आशीर्वाद मिले हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अपने अपने देशनकूं जाते भये, और जे मनुष्य हैं वेहू अपने अपने देशनकूं जातेभये ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ रामकृष्ण उग्रसेनादिक यादवनसों बडी पूजा सत्कार पाय गोपालनसहित नंदरायजी बंधु यादवनके निकट स्नेहके कारण कछु दिन पर्यन्त वसतेभये ॥ ५९ ॥ वसुदेवजी सहजमें यज्ञरूपी मनोरथसमुद्रकूं पारि उतरिके, अर्थात् यज्ञकूं पूरण करिके सब सुहृदनकूं संग लैके प्रसन्नमन नंदरायजीको हाथ पकरिके यह कहत भये ॥ ६० ॥ वसुदेवजी बोले हे भैया नंदरायजी ! मनुष्यनकूं स्नेहरूपी फासी ईश्वरने करी है इसे शूरवीर बलसूं और ज्ञानी ज्ञानसूं नहीं काटि सके हैं ॥ ६१ ॥ तुमसे महात्माने जो अकृतज्ञ हमारे साथ मित्रता करी है उसका पलटा हम किसी प्रकार नहीं दै सक्ते तौभी वह सदा एकरूप बनी रहे है कभी निवृत्त नहीं होती ॥ ६२ ॥ वसुदेवजी कहैं हैं हे भैया नंदरायजी ! पहलै तो हम असमर्थ हैं, याते कछु तुमारो उपकार नहीं करिसकें, और अब धनकरिकें आंधरे होय सन्मुख बैठे तुम महात्माओंकोभी नहीं देखते ॥ ६३ ॥ हे मानके दैनवारे भैया नंदजी ! जो अपनो भलो चाहैं ता पुरुषकूं राज्य संपत्ति कदाचित् मति होउ, सम्पत्तिसूं आंधरी दृष्टि होय जाय है, तब यह पुरुष अपने नाते गोतेवारेनकूं नहीं देखें हैं ॥ ६४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार स्नेह करिके शिथिलचित्त आशू नेत्रनमें भरे वसुदवजी नंदजीकी करी मित्रताको स्मरण करिके रुदन करतेभये ॥ ६५ ॥ यादवनसें सत्कार पाय नंदरायजी अपने सखा वसुदेवजीको प्रसन्न कर कृष्ण बलदेवके प्रेमसों जभी जायवेको कहैं तब श्रीकृष्ण आयके कहैं बाबा भोजन करिके जाइयो, और भोजन करिके चलें तब कहें दिन थोरो रह्यो है, अब कहां रात्रिमें बसौगे ऐसे आज काल करत करत तीन महीना वास करावतभये ॥ ६६ ॥ ताके पीछे बडे मोलके आभूषण और रेशमी वस्त्र अनेक भांतिके बडे मोलकी वस्तूनसूं ब्रजवासीनसहित नंदरायजी पूर्ण करिदिये ॥ ६७ ॥ और वसुदेव उग्रसेन तथा कृष्ण बलदेवजी आदि यादवनकी प्रीति करिके दीनी सामग्रीकूं ग्रहण करिके नन्दरायजी विदा भये, वा समय यादवनने इनके संग बडी सैना कर दीनी ही ॥ ६८ ॥ नन्द गोपी गोविन्द श्रीकृष्णचन्द्रके चरण कमलमें लगे मनकूं फेरि निकासिवेकूं असमर्थ हैके मथुरा देशनमें आवते भये ॥ ६९ ॥ कुरुक्षेत्रमेंते सब बन्धु चले गये, तब श्रीकृष्णचंद्रकूं इष्ट देवता मानवेवारे यादव वर्षाऋतुकूं समीप आई देखिके फेरि द्वारकापुरीकूं आवते भये ॥ ७० ॥ सब यादव वसुदेवजीके यज्ञ भयो और कुरुक्षेत्रकी यात्रामें सुहृदनको मिलाप भयो यह प्रजानते कहते भये ॥ ७१ ॥

जनेभ्यः कथयाञ्चक्रुर्यदुदेवमहोत्सवम् ॥
यदासीत्तीर्थयात्रायां सुहृत्संदर्शनादिकम् ॥ ७१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥

---

१ हम तौ इतनौही सचुपायो । सुन्दर श्याम कमलदललोचन बहुरो दरश दिखायो ॥ कहा भयो जो लोग कहत हैं कृष्ण द्वारिका छायो । सुन यह दशा विरही लोगनकी उठि आतुर होय धायो ॥ रजक धेनु गज कंस मारकै कियो आपनो भायो । महाराज होय मातु पिता मिलित ऊन ब्रज बिसरायो ॥ गोपी गोप और नंद चले मिलि प्रेम समुद्र बढायो । येते मान कृपाल निरन्तर नैन नीर ढरि आयो ॥ यद्यपि राज बहुत प्रभुता सुनि हरिहित अधिक जनायो । वैसेहि सूरि बहुरि नँदनंदन घर २ माखन खायो ॥ १ ॥

२ दो०—प्रेममग्न नित नंदहू, और यशोदा माय । कृष्ण दरशतैं सुख लहैं, सकल दुःख बिसराय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ८९.

श्रीबादरायणिरुवाच–अथैकदात्मजौ प्राप्तौ कृतपादाभिवन्दनौ ॥
वसुदेवोऽभिनन्द्याह प्रीत्या संकर्षणाच्युतौ ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! कुरुक्षेत्रकी यात्रा करे पीछे एक समय आयके चरणनमें प्रणाम कर श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवजीकी प्रशंसा करिके प्रीतिपूर्वक वसुदेवजी बोलते भये ॥ १ ॥ पुत्रनके प्रभावको जनावनवारो मुनिनको कह्यो वचन कि तुमारे पुत्र परमेश्वर हैं सुनिकै श्रीकृष्ण बलदेवके पराक्रम देखिके विश्वासयुक्त वसुदेवजी सम्बोधन देके बोलतेभये ॥ २ ॥ हे कृष्ण हे कृष्ण हे राम हे महायोगिन् हे संकर्षण हे सनातन ! या विश्वके कारण प्रकृति पुरुषकेहू कारण साक्षात् ईश्वर तुम हो यह मैं जानूंहूं ॥ ३ ॥ जामें, जाकरिके, जाते, जाको सम्बंधी, जाके अर्थ जो जैसे जासमय यह विश्व होय है सो समस्त प्रकृति पुरुषके साक्षात् ईश्वर तुम हो ॥ ४ ॥ हे अधोक्षज ! नेत्रनते देखिवेमें न आयो काननते सुनिवेमें न आयो, वाणीते कहिवेमें न आयो, कोई इन्द्रिय जामें पहुँचे नहीं, सबके आत्मा आपको रच्यो यह नाना प्रकारको विश्व है, तामें आपही प्रवेश हैके प्राणरूप हैके अजन्मा तुम क्रिया शक्ति और ज्ञानशक्तिकूं धारण करौ हौ ॥ ५ ॥ पृथक् पृथक् शक्तिवारे प्राणादिक या विश्वके कारण जानिवेमें आमें हैं परमेश्वरकूं कारण रूप करिके सर्वरूप कैसे कहो हो वह शंका जब भई ताको समाधान यह है प्राणादिकनमें जे शक्ति हैं ते ईश्वरकी करनवारे प्राण आदि तत्वमें जे शक्ति हैं ते परम कारण ईश्वरकीही हैं काहेतें प्राणादिक ईश्वरके आधीन हैं और जैसे तीरमें वेधिवेकी स्वतंत्र शक्ति नहीं है, किंतु पुरुषकी शक्तिसूं वेधे हैं ऐसे प्राणादिकनमें ईश्वर शक्ति है, प्राणादिक जड है और ईश्वर चैतन्य हैं, जड पदार्थकूं चैतन्यके आधीनता योग्य है, तहां कहै है प्राणादिकमें शक्ति नहीं है तो क्रिया कैसे करेहै ताको उत्तर कहे हैं, चेष्टा करनहारे प्राणादिककी चेष्टा यहां कछु शक्ति नहीं है, जैसे पवनकी शक्ति करिकै तृण हले है ऐसे क्रिया करे हैं ॥ ६ ॥ अब पराधीनता कहै है चन्द्रमामें जो प्रकाश है और अग्निमें जो तेज है और सूर्यमें जो प्रकाश है तथा नक्षत्रमें बिजुलीमें जो चमक है सो सब तुमही हो, और पर्वतमें जो स्थिरता है सो तुम्हारोही गुण है तथा पृथ्वीमें सबको भार धारण करिवो, और सुगंधि ये सब तुमही हो, तुमारी शक्ति है ॥ ७ ॥ हे देव ! जल पियेते तृप्ति है जाय प्राण बचिजाय यह जलनमें तुम्हारीही शक्ति है, वे जल और जलमें रसगुण है सो तुमही हो और हे ईश्वर ! पवनमें जो ओज अर्थात् मनको बल और इंद्रियनको बल और देहको बल चेष्टा चलनो यह सब तुम्हारोही रूप है ॥ ८ ॥ दिशानमें जो खालीपन, और दिशा सब तुम्हारेही रूप है और आकाश तथा आकाशमें शब्दरूप गुण सब तुम्हारोही रूप है वाणी आकार और नाम रूप कहिवेमें आवै सो सब तुमही हो ॥ ९ ॥ नेत्रनमें दर्शनशक्ति, और काननमें श्रवणशक्ति, तथा जिह्वामें रसकी ग्रहणशक्ति इत्यादिक इंद्रियनमें विषयनके ग्रहण करिवेकी शक्ति तुमही हो, और इन्द्रियनके अधिष्ठाता देवता तुमही हो देवता इन्द्रियनकूं प्रेरे हैं, यह तुमारीही शक्ति है बुद्धिमें निश्चय करिवेकी शक्ति तुमही हो, और जीवनकूं श्रेष्ठ वार्ता स्मरण रहैं यह तुमारीही शक्ति है ॥ १० ॥ पृथ्वी जल तेज वायु आकाश इन पञ्चभूतको कारण तामस अहंकार तुमही हो, और इंद्रियनको उत्पादक राजस अहंकार तुमही हो, और इंद्रिय जाते भई ऐसे सात्विक अहंकार तुमही हो तथा जीवनकूं संसार जाते होई ऐसी माया तुमही हो ॥ ११ ॥ नाशमान

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पदार्थमें जो शेष रहै अर्थात् जाको नाश नहीं होय सो तुमही हो, जैसे मृत्तिका सुवर्णके बने घडा मूदरी कडा इत्यादिक सब नाशमान हैं मृत्तिका सुवर्णको नाश नहीं होय है ॥ १२ ॥ सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुणकी वृत्ति साक्षात् परब्रह्ममें योगमाया करिकै कल्पित हैं ॥ १३ ॥ जाते कल्पित है ताही कारणतें तीनों गुणनसूं आदि लैके पदार्थ सब तुमारेही विषे कल्पित हैं तौ कैसे प्रतीत होयहैं तहां कहैं, कल्पना करिवेके समय प्रतीत मात्रही तुममें होय हैं और तुम विन पदार्थनमें कारणरूप करिके रहोहौ और समय व्यवहार तथा भेदरहित हैवेसों जब इन तत्त्वनको नाश हो जाय है तब तुमही शेष रहौहौ ॥ १४ ॥ यह जो गुणनको प्रवाहरूप संसार है तामें सबके आत्मा तुम्हारी संसारते न्यारी गतिकूं नहीं जाननेवारे अज्ञानी पुरुष देहमें अभिमानसूं करे कर्मसो या संसारमें जन्मैं हैं ॥ १५ ॥ हे ईश्वर ! सुंदर हाथ पांव नाक कान सब इन्द्रिययुक्त बहुत दुर्लभ देहकूं या संसारमें कोई एक पुण्यके फलसूं पायके स्वार्थमें भूलिके मैंने अपनी अवस्था तुम्हारी मायाकरिके वृथाही गमाई ॥ १६ ॥ मैं ब्राह्मण हूं क्षत्री हूं या प्रकार देहमें अभिमान और या देहके संबंधी स्त्री पुत्रादिक मेरे हैं या अभिमानसो स्नेहके रस्सानमें यह जगत् तुमने बांधि राख्यो है ॥ १७ ॥ हम तुमारे पुत्र हैं तुम कहा हमारी स्तुति करौहो, तहां वसुदेवजी कहै हैं तुम हमारे पुत्र नहीं हो किन्तु प्रधान पुरुष ईश्वर हो और पृथ्वीके भाररूप क्षत्रियनको नाश करवेको आपने अवतार धारण कियो है, कारण कि आप ऐसेही हो ॥ १८ ॥ हे दीनबंधु ! शरण प्राप्त भये पुरुषके संसारके भयको दूरि करनवारे तुमारे चरणारविंदकी मैं शरण प्राप्त भयो हूं " तुम तौ बडे सुखी हौ वृथा क्यों खेद करोहो ऐसै जो कदाचित् श्रीकृष्ण कहै तहां वसुदेवजी कहैं है " विषयकी लालसा इतनीही है कि मरणधर्मा शरीरकूं आत्मा मान्यो और तुम परमेश्वरकूं पुत्र मान्यो ॥ १९ ॥ प्रथम जन्ममें तुमही सुतपा पृश्नि भये, फेरि कश्यप अदिति भये अब वसुदेव देवकी भये, इन तीनके तीन वार आपने धर्मकी रक्षा करिवेके लिये मैं अजन्मा आयके जन्म्यो हूं यह आपने सूतिकागृहमें हमसूं कहीही " तुमारे आयके जाने जन्म लियो है वह चतुर्भुज देह है ऐसो जो कदाचित् श्रीकृष्ण कहै तहां वसुदेवजी कहैं हैं " आकाशकी तुल्य निर्मल तुम अनेक रूपनकूं धारण करो हौ; हे उरुगाय ! बहुत प्रकार गायवेमें आओ व्यापक हौ आपकी वैभवरूप माया कौन जाने हैं ॥ २० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हैं हे राजन् परीक्षित् ! यादवनमें श्रेष्ठ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र या प्रकार पिताको वचन सुनिके आधीनतापूर्वक नम्र हैके मनोहर वाणीसूं बोलत भये ॥ २१ ॥ श्रीकृष्णभगवान् बोले हे पिता ! हम पुत्रनके ऊपर धरिके सब तत्त्व कहि दीनो यह तुमारो वचन हम सत्य जानै है ॥ २२ ॥ हे यादवनमें श्रेष्ठ पिता वसुदेव ! तुम और बडे भैया बलदेवजी तथा सब द्वारकावासी यादव और स्थावर जंगम जगत्कूं ब्रह्मरूप जानो ॥ २३ ॥ यहां एक शंका है, नाना विकारवान्कूं ब्रह्मरूपता कैसे बने ताको उत्तर दृष्टांतसूं कहैं हैं आत्मा एक स्वयंप्रकाश नित्य सबते पृथक् निर्गुण है, अपने रचे सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण करिके उत्पन्न देहमें बहुत प्रकार प्रतीत होय है फेरि जैसी देह तामें तैसोही प्रतीत होयहै, जैसे आकाश पवन ज्योति जल पृथ्वी ये पंचभूत घट पटादि पदार्थनमें कहूं प्रकट कहूं अंतर्धान कहूं थोरे कहूं बहुत प्रतीत होयहै, ऐसे एक आत्मा ब्रह्मस्वरूप अनेकरूप करिके प्रतीत होयहै ॥ २४ ॥ २५ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार भगवान् श्रीकृष्णचंद्रको कह्यो वचन सुनिके भेदभाव त्याग प्रसन्न मन हैके वसुदेवजी चुप होगये ॥ २६ ॥ हे राजन् ! वसुदेवजी स्तुति कर चुके ताके पीछे सर्व देवतारूप देवकीपुत्र श्रीकृष्ण बलदेवने

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सांदीपिनी गुरुके मरे पुत्र लाय दिये यह सुनिके आश्चर्य मानिके कंसके मारे पुत्रनकी सुधि करिके व्याकुल होके नेत्रनमें आंशू भर कृपणकी तुल्य होके बोलतीभई ॥ २७ ॥ २८ ॥ देवकी कहैं हे हे राम ! हे राम ! हे अप्रमेय आत्मन् ! अर्थात् नहीं प्रमाण करिवेमें आवै हैं स्वरूप जिनको हे कृष्ण ! हे योगेश्वरनके ईश्वर ! विश्वके रचनवारे ब्रह्मादिकनके ईश्वर आदिपुरुष तुमको मैं जानूं हूं ॥ २९ ॥ कालसों सत्त्वगुणको नाश हैवेपें शास्त्रकी मर्यादा त्यागनवाले पृथ्वीपै भाररूप राजानके नाश करिवेके लिये तुम मेरे आयके प्रकट भयेहो ॥ ३० ॥ हे सबके कारण ! हे विश्वके आत्मा ! तुमारो अंश पुरुष हैं, ताको अंश माया, ता मायाके अंश सत्त्व रज तम इन तीनों गुणनके परमाणु मात्र ले करिके या विश्वके उत्पत्ति पालन प्रलय होय है ऐसे तुम हो तुमारी मैं शरण प्राप्त भईहूं ॥ ३१ ॥ हे योगेश्वर ! बहुत दिननके मरे पुत्रनके लायवेकूं गुरुने आज्ञा दीनी तब तुम यमलोकते गुरुके मरे पुत्र लायके दक्षिणामें देतेभये ॥ ३२ ॥ ताही प्रकार कंसके मारे पुत्रनकी मैं देखनेकी इच्छा करूं हूं, विन्हें तुम लायके मेरे मनोरथकूं पूरो करो ॥ ३३ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे भरतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् ! माता देवकीने याप्रकार कही तब रामकृष्ण योगमायाको आश्रय लैके सुतललोकमें जात भये ॥ ३४ ॥ तहां दैत्यनको राजा बलि विश्वके आत्मा देवता अपने इष्टदेव कृष्ण बलदेवको सुतललोकमें आये देखिके दर्शनसूं आनंद हैके परिपूर्ण अंतःकरण परिवारसहित शीघ्र उठिके नमस्कार करतो भयो ॥ ३५ ॥ राजा बलि बडे आनंदपूर्वक सुन्दर आसन बिछावतो भयो, ता आसनपै बैठे महात्मा श्रीकृष्णचन्द्र बलदेवके चरणारविंदको धोवन जल कुटुंबसहित अपने माथेंपै चढावत भयो, जिन चरणारविंदको धोवन गंगा ब्रह्मादि समस्त जगत्कूं पवित्र करेहैं ॥ ३६ ॥ राजा बलि बहुत मोलके वस्त्र आभूषण चन्दन अतर अरगजा वीरा दीपक अमृतकी तुल्य स्वादिष्ठ भोजनादिक और पूजनकी वस्तु करिके तथा अपनो गोत्र द्रव्य देहकूं अर्पण करिके बडे वैभवसूं श्रीकृष्ण बलदेवको पूजन करतो भयो ॥ ३७ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! बलि राजा भगवान्के चरणारविंदकूं वारम्वार मस्तकपै धरिके प्रेमसो द्रव भई बुद्धिसों आनन्दके आंशू नेत्रनमें भरे पुलकित शरीर हैके याप्रकार कहने लगे ॥ ३८ ॥ राजा बलि बोले समस्त विश्व फणके धारण करनहारे शेषरूप तुमकूं प्रणाम है; और सब जगत्के रचनवारे तुमकूं नमस्कार है, सांख्य शास्त्रके विस्तार करनवारे ब्रह्म परमात्मा तुमकूं प्रणाम है ॥ ३९ ॥ योगीश्वरनकूंहू तुम्हारो दर्शन दुर्लभ है सो हमकूं भयो यह आश्चर्य नहीं है, यद्यपि प्राणीनकूं तुम्हारो दर्शन दुर्लभ है तथापि तुम्हारी कृपा करिके काहूं काहूंकूं सुलभ है जाय है, याते रजोगुणी तमोगुणी स्वभाववारे हम असुरनकूं अनायासपूर्वक आपने दर्शन दियो ॥ ४० ॥ बडो आश्चर्य है हम शत्रु सत्वगुणी भक्तनतेहू बडभागी है यह कहेहैं, दैत्य, दानव, गंधर्व, सिद्ध, विद्याधर, चारण, यक्ष, राक्षस, पिशाच, भूत, प्रमथनमें मुख्य है ॥ ४१ ॥ हम और हमसो दूसरे लोगनके शास्त्रके रक्षा करनवारे सत्त्वगुणी स्वभाव तुमसो नित्य शत्रुता कर राखीहै विन्हेहू आपको दर्शन प्राप्त है जाय है ॥ ४२ ॥ कोई एक शिशुपालादिक वैर भक्तिसूं तुमकूं जैसे पायगये, और गोपी आदि कामभक्ति करिके जैसे तुमकूं पायगई तैसे सत्त्वगुणी देवता तुमकूं प्राप्त भये ॥ ४३ ॥ हे योगेश्वरनके ईश्वर ! याप्रकार तुम्हारी योगमायाकूं योगेश्वरहू नहीं जानते हैं तौ हम असुर कहां जाने ॥ ४४ ॥ ताते हमपै आप ऐसी दया करो कि जासौ निष्काम पुरुषनके ढूंढवे योग्य तुम्हारे चरणारविंदको आश्रय लेके चरणारविंदते न्यारे घररूप कूपते निकासिके विश्वकी रक्षा करनवारे वृक्षकी जडनमें आपही गिरे फलफूलको भोजन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कर मैं शांति हैके अकेलो विचरूं, अथवा सबके सहाय करनवारे महात्मा पुरुषके संग विचरूं ॥ ४५ ॥ थोरे पुण्यवारे पुरुषकूं ऐसो भाव कैसे होय ऐसे जो कदाचित् भगवान् कहैं तहां राजा बलि कहेहैं हे सब प्राणिनके स्वामी ! जैसे ऐसो भाव होय तैसे हमकूं शिक्षा देउ और हमारे पापनकूं दूरि करो, जो पुरुष श्रद्धा करिके तुमारी आज्ञाकूं करै वह विधिते मुक्त है जाय है ॥ ४६ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र बोले या स्वायंभुव मन्वंतरमें मरीचि प्रजापतिके ऊर्णास्त्रीमें छः पुत्र होते भये, एक समय देवतारूप छैओ पुत्र अपनी कन्याके पीछे भाजे ब्रह्माको देखिके हँसते भये ॥ ४७ ॥ या पापकर्मसूं असुरयोनीकूं पावत भये, ताही समय हिरण्यकश्यपके जन्म लेते भये तेई छओ हिरण्यकश्यपके यहांते योगमायाके प्रेरे ॥ ४८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! देवकीके उदरमें जन्म लेत भये तेई कंसने मारे सो अब तुमारे पास है इने देवकी अपने पुत्र मानिके शोक करै है ॥ ४९ ॥ माता देवकीके शोक दूरि करिवेके निमित्त यहांते इन छओ पुत्रनकूं लेजायगे, ता पीछे शापते छूटिके खेदरहित हैके देवलोकमें जांयगे ॥ ५० ॥ स्मर उद्गीथ परिष्वंग पतंग क्षुद्रभुक् घृणी जे छः पुत्र हैं ते मेरे प्रसादकरिके मुक्त हैजायगे ॥ ५१ ॥ ऐसे जब कही तब राजा बलिसों पूजित हैके श्रीकृष्ण बलदेव तिन पुत्रनकूं संग लैके द्वारकापुरीमें आयके माता देवकीकूं पुत्र देतेभये ॥ ५२ ॥ पुत्रनके स्नेहसों स्तननमें दुग्ध चुवै ऐसी देवकी तिन बालकनकूं देखिके गोदमें बैठायके छातीते लगायके बेरबेर माथो सूंघती भई ॥ ५३ ॥ सृष्टिकी उत्पन्न करनवारी विष्णुभगवान्की मायासूं मोहित और पुत्रनको छातीसों लगायवो तामें मग्न देवकी प्रसन्न हैके पुत्रनकूं स्तन प्यावती भई ॥ ५४ ॥ गदाके धारण करनवारे श्रीकृष्णचन्द्रके पीवेते बच्यो अर्थात् भगवान्को प्रसाद वह अमृतरूप देवकीको दुग्धपान करिके और नारायण श्रीकृष्णचन्द्रके अंगके स्पर्श करेते हम देवता है यह ज्ञान हैवेसो वे देवता गोविन्द श्रीकृष्णचंद्रकूं और देवकी तथा वसुदेवकूं नमस्कार करिके सब प्राणीनके देखत देवतानके धाम देवलोकमें जाते भये ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजा परीक्षित् अनन्त पराक्रम परमात्मा श्रीकृष्णचन्द्रके पराक्रमको अन्त नहीं. तिनके या प्रकारके अद्भुत चरित्र हैं ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ श्रीसूतजी बोले हे ऋषीश्वरो ! व्यासनंदन शुकदेवजीने वर्णन करे और समस्त जगत्के पापनके दूरि करनवारे भक्तनके काननकूं आनन्ददायक अमृतरूपा कीर्ति मुरारि श्रीकृष्ण भगवान्के चरित्रनकूं भगवान्में चित्त लगायके जो पुरुष श्रवण करे अथवा श्रवण करावै वह पुरुष काल और मायासों रहित भगवान्को धाम पावै है ॥ ५९ ॥

सूत उवाच–य इदमनुशृणोति श्रावयेद्वा मुरारेश्चरितममृतकीर्तेर्वर्णितं व्यासपुत्रैः॥
जगदघभिदलं तद्भक्तसत्कर्णपूरं भगवति कृतचित्तो याति तत्क्षेमधाम ॥ ५९ ॥

इति श्रीमद्भा० पाटीकायां दशमस्कंधे उत्तरार्धे मृताग्रजानयनं नाम पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥

अध्याय ८६.

राजोवाच–ब्रह्मन्वेदितुमिच्छामः स्वसारं रामकृष्णयोः ॥
यथोपयेमे विजयो या ममासीत्पितामही ॥ १ ॥

अब राजा परीक्षित् बोले हे शुकदेवजी ! रामकृष्णकी बहिनि सुभद्राको अर्जुन जैसे व्याहत भये जो सुभद्रा हमारी दादी होती भई यह हम श्रवण करचो चाहें हैं ॥ १ ॥ यह प्रश्न सुनिके श्रीशुक-

१ प्र०–भगवान्ने देवकीका दूध कहां पिया जो वहां लिखा कि उनसै बचा हुआ पिया । उ०–जब नंदके स्थानको गये थे तब देवकीने पिला दिया था, तथा जब कंसको मारकर आये तब प्रेमसे देवकीके स्तनोंसे दुग्ध भगवान्के ऊपर चुवा यही पीना है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

देवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! एक समय समर्थ अर्जुन तीर्थयात्रा करिवेकूं पृथ्वीमें फिरत फिरत प्रभासतीर्थमें जातोभयो ॥ २ ॥ तहां जायके अपने मामाकी पुत्री सुभद्रा बलदेवजी दुर्योधनकूं व्याहि देंयगे और वसुदेवादिककी यामें सम्मति नहीं है यह बात सुनिके ता सुभद्राके लेवेकी इच्छासों अर्जुन संन्यासी बनिके तीनि दण्ड धारण करिके द्वारकापुरीमें आवतो भयो ॥ ३ ॥ अपने कार्यकूं सिद्ध करवेकी इच्छासो अर्जुन चार महीना वर्षाके द्वारकामें बितावतो भयो द्वारकावासी मनुष्यननें आयके वारंवार अर्जुनको सन्मान कऱ्यो और संन्यासी बनिके अर्जुन आयो है यह नहीं जाननेवारे बलदेवजीनेहू सत्कार कऱ्यो ॥ ४ ॥ एक दिन संन्यासीभावसूं अर्जुनको निमंत्रण करिके घरमें बुलायके श्रद्धापूर्वक बलदेवजीने जो भोजन परोस्यो, ताय अर्जुन भोजन करतो भयो ॥ ५ ॥ द्वारकामें शूर वीरनके मनकूं हरनहारी सुन्दर कन्याको अर्जुन देखत भयो, प्रसन्नता करिके प्रफुल्लित नेत्र अर्जुन रतिके अभिप्रायसो चलायमान मन सुभद्रामें लगावतो भयो ॥ ६ ॥ स्त्रीनके मन हरनहारे अर्जुनको देख सुभद्रानेहू अर्जुनमें मन लगायो और लाजभरे नेत्रनसो कटाक्षसहित वाकी ओर देखन लगी ॥७॥ बडे भगवान् कामदेवसें। चलायमानचित्त अर्जुन केवल सुभद्राको ध्यान करत हरण करिवेको अवसर देखत बलदेवजीके लिये सन्मानको सुख नहीं पावतो भयो ॥ ८ ॥ बडी देवीकी यात्रामें रथमें बैठिके निकसी सुभद्राकूं माता पिता देवकी वसुदेव और श्रीकृष्णकी सम्मतिसूं महारथी अर्जुन हरतो भयो ॥ ९ ॥ रथमें बैठिके धनुषकूं लैके अर्जुन चारचों ओरते रोके प्यादनको भजायके विनके पुकारतेही जैसे सिंह अपने भागकूं लैजाय है ऐसे लैजातभयो ॥ १० ॥ अर्जुन सुभद्राकूं लैगयो यह बात श्रवण करिके जैसे पूर्णमासीकूं समुद्र उमडे तैसे क्रोधित भये बलदेवजीकूं सुहृदन सहित श्रीकृष्णचन्द्रने चरण पकरिके शांत कियो ॥ ११ ॥ बलदेवजी बडे आंनदसूं बहिन बहिनेऊको दहेज पीछेते भिजवावत भये, बहुतसों धन और वस्त्र वासन इत्यादिक सामग्री हाथी घोडा रथ वस्त्र पुरुष इन सबकूं भिजवावत भये ॥ १२ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले श्रीकृष्णचन्द्रकी एक भक्तिसों सम्पूर्ण मनोरथ शांतस्वभाव, विवेकी, विषयनमें अनासक्त एक श्रुतदेव नाम प्रसिद्ध ब्राह्मण श्रीकृष्णचन्द्रको भक्त होतो भयो ॥ १३ ॥ विना उपाय कर मिल भोजनहीसों निर्वाह करिके अपने कर्मनकूं करै, ऐसे गृहस्थी ब्राह्मण विदेहदेशकी मिथिलापुरीमें वास करत भयो ॥ १४ ॥ जितनेमें शरीरको निर्वाह होइ उतनो भोजन प्रतिदिन अनायासपूर्वक आयो करे, और अधिक नहीं परंच वितने हीमें संतोष करिके यथायोग्य संध्योपासनादिक कर्मनकूं करो करै ॥ १५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! जैसो श्रुतदेव ब्राह्मण भक्त हो तैसोही मिथिलादेशको पालन करनवारो जनकके वंशमें भयो निरभिमान बहुलाश्व नाम करिके विख्यात राजा श्रीकृष्णचन्द्रको भक्त होत भयो, ब्राह्मण और राजा ये दोनों श्रीकृष्णचन्द्रके प्यारे हैं ॥ १६ ॥ तिन दोनों भक्तनके ऊपर प्रसन्न भये समर्थ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र रथमानके लाये रथमें बैठिके मुनिनकूं संग लैके विदेहदेशकूं जाते भये ॥ १७ ॥ कौन कौन मुनि संग लिये तिनको नाम लेई हैं, नारदजी, वामदेव, अत्रिऋषि, वेदव्यासजी, परशुरामजीको संग लिये शुकदेवजी बोले हैं मेंहू संग गयो, और बृहस्पति, कण्व, मैत्रेय, च्यवन ऋषिकूं आदि लैके औरहू संग गये ॥ १८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! मार्गमें मुनीनकूं संग लैके श्रीकृष्णचंद्र जहां जहां गये तहां तहां विनके लिये पुरवासी जन हाथमें अर्घ लैके स्तुति करत भये जैसे ग्रहनके उदय भये सूर्यकूं अर्घ देइ हैं ॥ १९ ॥ आनर्तदेश धन्व कुरु जांगल कंक मत्स्य पांचाल कुंती मधु केकय कोशल अर्ण इन देशनके वासी स्त्री पुरुष उदार हँसनियुक्त स्नेहभरी चितवनिवारे श्रीकृष्णचंद्रको मुखारविंद दृष्टि भरिके देखते

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भये ॥ २० ॥ अपनी कृपादृष्टिसों अज्ञान दूर कर पुरुषनकी दृष्टिकूं कल्याण देत, और तत्त्वज्ञान देत दिशानके अंत पर्यंत व्याप्त पापनाशक देवता और मनुष्यनसों गाये अपने यशकूं श्रवण करत त्रिलोकीके गुरु श्रीकृष्णचंद्र हौले हौले विदेहादिक देशनमें जातभये ॥ २१ ॥ हे राजन् परीक्षित्! ते सम्पूर्ण पुरवासी देशवासी जन श्रीकृष्णचंद्रकूं आये सुनिके हर्षित हैके पूजाके योग्य सामग्रीनकूं हाथमें लैके सन्मुख आवतेभये ॥ २२ ॥ उत्तमयश श्रीकृष्णचंद्रको दर्शन करिके प्रफुल्लित मुख और अंतःकरणवारे पुरुष हाथनकूं जोरिके शिरसूं लगायके नमस्कार करतभये, तैसेही पहिले सुने विख्यात नामवारे मुनिनकों प्रणाम करतभये ॥ २३ ॥ जगत्के गुरु श्रीकृष्णचंद्र हमारे अनुग्रह करिवेके लिये आये हैं या प्रकार मानिके मिथिलापुरीको राजा बहुलाश्व और श्रुतदेव ब्राह्मण दोनों श्रीकृष्णके चरणनमें परतेभये ॥ २४ ॥ मिथिलापुरीको राजा बहुलाश्व और श्रुतदेवजी ये दोनों एक संग हाथ जोरिके ब्राह्मणनसहित श्रीकृष्णचंद्रको आतिथ्यभाव करिके निमंत्रण करतेभये ॥ २५ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र दोनोंनको निमंत्रण मानिके दोनोंनके प्रिय करिवेके लिये ब्राह्मणनसहित दो रूप धरिके दोनोंनके घर जातभये तासमय राजा और ब्राह्मण यह नहीं जाने है कि ये दो रूप करे हैं ॥ २६ ॥ उदार मन बडी भक्तिसों हृदयमें हर्ष, नेत्रनमें आंसू भरे जनक वंशी राजा बहुलाश्व असत् पुरुषके सुनिवेमेंहू नहीं आवनवारे भगवान्को अपने घरकूं लायके बिछाये आसनपै सुखते बैठावत भये और वे सुखसों यथायोग्य आसनपै बैठे ॥ २७ ॥ याही प्रकार मुनिनको नमस्कार करिके तिनके चरणकूं धोयके लोकनको पवित्र करनवारो चरणनको जल ॥ २८ ॥ कुटुंबसहित राजा बहुलाश्व अपने माथेपै चढायके ईश्वर और ईश्वरकी बराबरि ब्राह्मणनको गंध पुष्प माला वस्त्र आभूषण दीप अर्घ गौ बैल इन सामग्रीनसूं पूजन करते भये ॥ २९ ॥ और मधुर वाणीनसूं प्रसन्न करत गोदमें धरे श्रीकृष्णके चरण हौले हौले दाबत आनंद करिके तृप्त भये तिनसों यह कहतभये ॥ ३० ॥ अब राजा बहुलाश्व बोले हे समर्थ सब प्राणीनके आत्मा साक्षी! स्वयंप्रकाश तुमही हौ, याही कारणते तुमारे चरणारविंदको स्मरण करनवारे मोको तुमने दर्शन दियो है ॥ ३१ ॥ जैसे मोकूं एकांती भक्त प्यारे हैं ऐसे भैयाके संबंधते बलदेवजी प्यारे नहीं, स्त्रीके संबंधते लक्ष्मी प्रिय नहीं है, पुत्रनके संबंधते ब्रह्मा प्यारो नहीं है, यह अपने वचन सत्य करिवेके लिये आपने हमकूं दर्शन दियो है ॥ ३२ ॥ भक्त तुमें प्रिय हैं या प्रकार जानके कौन पुरुष तुमारे चरणारविंदकूं त्यागैगो निष्किंचन अर्थात् कछु जिनके पास नहीं, शांतशील स्वभाव मुनिनकूं तुम अपनो पद दे चुकेहो ॥ ३३ ॥ ऐसे तुम यदुवंशमें अवतार लैके संसारमें भ्रमे प्राणीनके संसार छुडायवेके लिये त्रिलोकीको दुःख दूरि करनहारे यशको विस्तार करतेभये ॥ ३४ ॥ अकुंठबुद्धि शांततप करनहारे नारायण ऋषि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकूं नमस्कार है ॥ ३५ ॥ हे व्यापक! सब ब्राह्मण सहित कोई दिन हमारे घरमें वसिके अपने चरणकमलकी रजसूं यह निमिराजाको कुल पवित्र करो ॥ ३६ ॥ राजा बहुलाश्वने याप्रकार बहुत कही तब लोकनके पवित्र करनवारे भगवान् श्रीकृष्णचंद्र मिथिलापुरीके पुरुष स्त्रीनके कल्याण करिवेके लिये कितने दिन पर्यंत वास करतभये ॥ ३७ ॥ जैसे जनकवंशोत्पन्न बहुलाश्व राजाकूं प्राप्त भये ऐसे श्रुतदेव ब्राह्मणहू आये श्रीकृष्णचन्द्र और मुनिको नमस्कार करिके अत्यंत हर्षित हैके नाचतभयो ॥ ३८ ॥ तृण पट्टा लायके बिछाय कुशके आसनपै ब्राह्मणनसहित श्रीकृष्णचंद्रकूं बैठायके भले आये ऐसे बढाई करिके स्त्रीसहित श्रुतदेव ब्राह्मण विनके चरण धोवत भयो ॥ ३९ ॥ अतिप्रसन्नतासो पूर्णमनोरथ हैके बडभागी श्रुतदेव ब्राह्मण चरणारविंदके धोमन जलसूं आत्मा सहित समस्त कुलकूं पवित्र करतो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ ४० ॥ आमरे आदि फल करिके और मंगलरूप अमृतकी तुल्य मधुर जलसों तथा सुगंधी युक्त मृत्तिका तुलसी कुश और अनायास लभ्य पूजाकी सामग्रीसों और सत्त्वगुणकूं बढामनवारे शुद्ध अन्न करिके श्रुतदेव ब्राह्मण भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रको पूजन करिके आराधन करत भयो ॥ ४१ ॥ जिनकी चरणरेणु सब तीर्थकूं पवित्र करनहारी है और श्रीकृष्णके वसिवेके स्थान ब्राह्मणको संग घररूप कूपमें परे मोकूं कौन कारणते प्राप्त भयो, या प्रकार ब्राह्मण तर्क करतभयो ॥ ४२ ॥ स्त्री भैया पुत्र बंधु इन सबकूं संग लैके पास आयके बैठो श्रुतदेव भगवान्सूं कहतेभये ॥ ४३ ॥ श्रुतदेव बोले जा समय शक्तिनकरिके या विश्वकूं रचिके अपनी सत्तासों यामें प्रविष्ट भये, ताहि समय तुम परम पुरुष हमकूं प्राप्त भये, परंतु या सामरे स्वरूपको दर्शन अबही प्राप्त भयो है ॥ ४४ ॥ जैसे सोवत समय पुरुष मन करिके तुमारी मायासूं स्वप्नमें और देहकूं रचिके वामें प्रकाश करैहै ॥ ४५ ॥ तुमारी कथानकूं सुनें तुमारे नामकूं कहे, सर्वदा तुमारी पूजा करें तुमकूं प्रणाम करें, तुमारी कथानकूं कहे विन निर्मल आत्मा पुरुषनके हृदयके भीतर प्रकाशौ हौ ॥ ४६ ॥ कर्मन करिके चलायमान चित्त पुरुषनके हृदयमेंहू स्थित हो परंतु अति दूर हौ और तुमारी कथाको सुनने और तुमारे नाम लैवेसूं निर्मल अंतःकरण जिनके हैगये हैं विन पुरुषनके तुम सर्वदा पास रहौ हौ ॥ ४७ ॥ देह और गेहमें अभिमानरहित पुरुषनकूं मोक्षके देनवारो, और देह गेहमें अभिमान करनहारे पुरुषकूं आप संसार देउहौ, कार्य महदादिक कारण माया जो दोनो उपाधि हैं तिने सेवन करोहौ, अपनी माया करिके आप ढके नहीं हो, और जीवनको ज्ञान मायासो आच्छादन करनवारे आपकूं मैं प्रणाम करो हूं तुम हम भक्तनकूं शिक्षा देउ, हे देव अर्थात् प्रकाशमान ! तुमारो कहा हम पूजन करें जबतक तुम नेत्रके आगे नहीं आओ हो तबतक मनुष्यकूं क्लेश रहैं है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ अब श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार श्रुतदेव ब्राह्मणको कह्यो वचन सुनिके शरणागतके दुःखके हरनवारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अपने हाथसूं ब्राह्मणको हाथ पकरिके हँसिके यह बोलते भये ॥ ५० ॥ मेरो आदर बहुत और ब्राह्मणको थोरो कियो यह देखिके लोकनके शिक्षक भगवान् मोतेहू ब्राह्मणमें श्रद्धा बहुत करनी चाहिये या प्रकार श्रुतदेवकूं सिखाये हैं, हे ब्राह्मण ! तुमारो भलो करिवेके लिये जो यह मुनि आये हैं यह तुम जानों हौ, अपने चरणनकी रेणुसों लोकनके पवित्र करिवेके लिये यह मो सहित विचरे हैं ॥ ५१ ॥ देवता क्षेत्र तीर्थ इनके दर्शन स्पर्शन अर्चन करते बहुत कालमें होले होले पवित्र होय है सोहू महात्मानकी इच्छा होय तो और ब्राह्मण तो शीघ्रही पवित्र करैं है ॥ ५२ ॥ या संसारमें समस्त प्राणीनकी अपेक्षा करिके ब्राह्मण जन्महीते श्रेष्ठ हैं, और जो तप करिके श्रेष्ठ होय तो यामें कहा कहिनो है ॥ ५३ ॥ जो ब्राह्मण मोकूं प्यारे हैं, सो चतुर्भुज रूप प्यारो नहीं सम्पूर्ण वेदमय ब्राह्मण हैं, और देवतारूप मैं हूं ॥ ५४ ॥ खोटीबुद्धि गुण-नमें दोषनकूं देखनहारे पुरुषहू ब्राह्मण वेदमय हैं यह नहीं जानिके गुरुरूप ब्राह्मणरूप सबके आत्मा मेरो अनादर करें हैं ॥ ५५ ॥ स्थावर जंगम यह विश्व और या विश्वके कारण महदादिका पदार्थ सब ईश्वरही रूप हैं या प्रकारसों ब्राह्मण सब ओर अपनी दृष्टिसों जाने हैं ॥ ५६ ॥ हे ब्राह्मण श्रुतदेव ! जैसी श्रद्धा मोमें है ऐसी श्रद्धा करिके ब्रह्मऋषिनको पूजन करो मोमें इनमें एकसों भाव करोगे तौ मेरी साक्षात् पूजा है जायगी, भेदभावकरिके मेरी बहुतसी सम्मत्ति करिकेहू पूजा करोगे तो मैं प्रसन्न नहीं होउंगो ॥ ५७ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! ऐसे श्रीकृष्णचन्द्रसो आज्ञा पाय श्रुतदेव ब्राह्मण श्रीकृष्णचन्द्रसहित सब ब्राह्मणनको एक भावसूं आराधन करिके सुंदर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गतिकूं पाय गयो, और मिथिलापुरीको राजाहू सुन्दर गतिकूं पावतभये ॥ ५८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार भक्तनपें प्रीति करनहारे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अपने भक्त बहुलाश्व और श्रुतदेवके यहां वास करिके सन्मार्ग अर्थात् उपासनाकाण्ड ज्ञानकाण्ड कर्मकाण्ड इन तीनों काण्डनको उपदेश करिके फेरि द्वारकापुरीमें आवतेभये ॥ ५९ ॥

एवं स्वभक्तयो राजन्भगवान्भक्तभक्तिमान् ॥
उषित्वाऽऽदिश्य सन्मार्गं पुनर्द्वारवतीमगात् ॥ ५९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कधे उत्तरार्द्धे षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥

अध्याय ८७.

परीक्षिदुवाच–ब्रह्मन्ब्रह्मण्यनिर्देश्ये निर्गुणे गुणवृत्तयः ॥
कथं चरन्ति श्रुतयः साक्षात्सदसतः परे ॥ १ ॥

पहिले अध्यायके अन्तमें भगवान् वेदको मार्ग ब्रह्मपर है ऐसो उपदेश करिके द्वारका पधारे ये यहां कह्यो, तहां शब्दरूप वेदनकूं ब्रह्मपरत्व नहीं बने हैं, कारण कि मुख्या लक्षणा और गौणी इन तीन प्रकारकी वृत्तिनसों शब्दकी प्रवृत्ति होय है मुख्या वृत्तिहू दो प्रकारकी है रूढि और योगा जो वस्तुस्वरूप जाति अथवा क्रियासो वा गुणसे निर्देश करी जाय वामें रूढिकी प्रवृत्ति होय है जाको स्वरूप जाति क्रिया गुणसों निर्देश न होय वामें यह संभव नहीं है सकै है सो ब्रह्म तौ जाति गुण क्रिया अथवा स्वरूपसों निर्देश नहीं होयहै यासों ब्रह्ममें रूढिकी प्रवृत्ति नहीं है सकै और कार्य कारणसों परे और असंग हैवेसों योगवृत्तिकोहू संभव नहीं है सके है और लक्षणामें संबंधकी आवश्यकता है ब्रह्म सब संबंधसो रहित है यासो लक्षणावृत्तिकोहू संभव नहीं है सकै है और जो श्रुति गुणको निरूपण करैं ब्रह्म स्वयं निर्गुण है यासों गौणी वृत्तिसों ब्रह्मको निरूपण नहीं है सकै है फिर ब्रह्मको श्रुति कोन प्रकारसों प्रतिपादन करै है ॥ १ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! नित्यमुक्त सर्वशक्तिवान् ईश्वरने प्रलय कालमें अपनेमें लीनभए जीवनके विषय भोगरूप अर्थ जन्मसो कर्मपर्यन्तरूप धर्म परलोकमें विनके सुख भोगरूप काम, और कल्पना निवृत्तिरूप मोक्ष पुरुषार्थ देवेके निमित्त बुद्धि इंद्रिय मन और प्राण इनकी रचना कीनी है, यदि यह नहीं होय तौ अर्थ धर्म कामकी प्राप्ति नहीं है सकै है और स्वरूपको विचार नहीं होय तौ मोक्षहू नहीं मिलसकै है " यः सर्वज्ञः सर्वशक्तिमान् " या लक्षणके निरूपण करनेहारी श्रुति सगुण ब्रह्मको निरूपण करै है और जीवनको संसार निवृत्तिके अर्थ (तत्वमसि–वह तू है) यह वाक्य ईश्वरकी ईश्वरता प्रतिपादन करै हैं यामें नित्यमुक्त ईश्वरको वाचक (तत्) शब्द संसारी जीवको वाचक (त्वं) पदको सामानधिकरण्य प्रतीत होय है सो यह जहदजहत्स्वार्था लक्षणासों अथवा भागत्याग लक्षणासों बनसकै है, तत् पद तौ सर्वज्ञादि गुणवारे ईश्वरको और त्वं पद अल्पज्ञादि गुणवारे पदार्थको वाचक है इन परस्परविरुद्ध गुणवारे शब्दनमेंसो परस्पर विरुद्धरूप अंशको त्यागन करवेसों दोनोंमें प्राप्त चैतन्यरूपको समान अंश ग्रहण करके (तत् त्वं) यह दोनों पद ब्रह्मरूप एक अर्थके प्रतिपादक हैके एकताको निरूपण कर शुद्ध ब्रह्मको कथन करै है और (अस्थूलमनण्वहस्वं इत्यादि निषेधको निरूपण करनहारी श्रुति तत्पदार्थके शोधन करवेमें चरितार्थ होयहै उपाधिकेही निषेधसों साक्षात् निर्गुण ब्रह्ममें पर्यवसान होय है, उत्पत्ति पालन और प्रलयकी प्रतिपादक श्रुतिहू आवागमनरूप सृष्टिको निरू-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पण कर वासे वैराग्यरूप ज्ञानके साधनको उपदेश करती ज्ञानके परंपरा संबंधसो ब्रह्मकोही प्रतिपादन करैं हैं उपासनाको निरूपण करनहारी श्रुति उपासनाद्वारा अन्तःकरण शुद्ध करकै ज्ञान साधनको उपदेश देती ज्ञानद्वारा ब्रह्मकोही प्रतिपादन करैं है, यासों सर्वथा श्रुति ब्रह्मकोही प्रतिपादन करैं हैं यह अभिप्राय है ॥ २ ॥ यह जो ब्रह्मपर उपनिषद हैं सो पहिले भये सनकादिकने प्रथम धारण करी है, जो पुरुष निष्किंचन हैके श्रद्धापूर्वक याको धारण करें सो मोक्षकूं प्राप्त होय है ॥३॥ यहां तुम्हैं नारायणसम्बंधी गाथा हम सुनावे हैं, जा गाथामें नारदजी और ऋषि नारायणजीको संवाद है ॥ ४ ॥ एक समय भगवान्के प्यारे नारदजी सम्पूर्ण लोकनमें फिरत फिरत सनातन ऋषिकूं देखिवेके निमित्त नारायणके आश्रममें अर्थात् बदरिकाश्रममें आवते भये ॥ ५ ॥ जो नारायण भरतखंडमें लोकनके लिये क्षेमके और मंगलके लिये धर्म ज्ञान करिके युक्त तपकूं कल्पपर्यंत करे हैं ॥ ६ ॥ तहां कलापग्रामके वासी ऋषिन सहित बैठे नारायणकूं नम्र हैके यह पूछते भये ॥ ७ ॥ ता समय ब्रह्मविचार जनलोकनिवासी सनकादिकनमें जो संवाद भयो हो सोही भगवान् नव ऋषिनके श्रवण करते नारदके अर्थ कहत भये ॥ ८ ॥ भगवान् कहैं हैं हे नारदजी ! पहिले जनलोकमें ब्रह्माके मनते उत्पन्न भये नैष्ठिक ब्रह्मचारी सनकादिक मुनिनको ब्रह्मसत्र अर्थात् ब्रह्मविद्याको विचार होत भयो ॥ ९ ॥ अहो यह ब्रह्मसत्र मोको ज्ञात नहीं यातें कहै हैं हे नारद ! वा समय श्वेतद्वीपके ईश्वर अनिरुद्धकी मूर्ति देखिवेके लिये श्वेतद्वीपमें तुम गये हे तब पीछे ब्रह्मवाद होतभयो ब्रह्मवादमें श्रुति भगवान्को प्रतिपादन करें हैं, तहां यही प्रश्न होतभयो जो तुम हमसों पूछो हो ॥ १० ॥ यद्यपि श्रवण तपशील शास्त्राभ्यास मित्र शत्रु मध्यम इन सबमें सनकादिक समान हैं तथापि एककूं वक्ता बनायके संपूर्ण श्रोता होतभये ॥ ११ ॥ सनंदनजी बोले अपने निर्माण किये या संसारको नाश करिके अपनी शक्तिसहित सोए भगवान्को प्रलयके अंत समयमें ब्रह्मके प्रतिपादन वचनसों श्रुति जगावती भई ॥ १२ ॥ जैसे रात्रिके सोये चक्रवर्ती राजाकूं प्रातःकाल राजोपजीवी बंदीजन उठिके वाके पराक्रमके सुन्दर यशकूं वर्णन करिके जगामें हैं ॥ १३ ॥ श्रुतिनने कह्यो हे अजित ! अर्थात् जीतिवेमें न आओ ऐसे तुम अपनी उत्कृष्टताकूं प्रकट करो, कदाचित् कहो कि कौन कारण प्रकट करूं ताको उत्तर देइ हैं, दोषके निमित्त गुणग्रहण करनहारे स्थावर जंगम शरीराश्रित जीवनकी अविद्याको नाश करो, तुम्हारे वशमें माया है यासों तुम्हैं सम्पूर्ण ऐश्वर्य प्राप्त हैं अविद्या तुम्हें काहू प्रकार दोष नहीं लगाय सकें है सबके अन्तर्यामी और सम्पूर्ण शक्तिनके जगामनहारे तुमही हो तुम अखण्ड ऐश्वर्य और ज्ञान शक्तिसों जीवनको अज्ञान दूर करोहो या विषयमें हम श्रुतिही प्रमाण हैं ॥ १४ ॥ यदि कहो कि मंत्रनमें अग्नि आदि देवतानको प्रतिपादन देखवेमें आवै है वेहू सब तुम्हारेही रूपको हैं ऐसो ज्ञानी जानते हैं कारण कि यह जो कुछ दृश्यमान है याके न हैवेपै आपही अवशेष रहो हो या सब जगत्की उत्पत्ति नाश आपहीमें होय जैसे घटादिकनको उदय अस्त मृत्तिकामें होई है मंत्रद्रष्टा ऋषिनके मन और वचनको तात्पर्य तुम्हारे विषे है अन्यमें नहीं जैसे मनुष्य अपने चरण मृत्तिका पाषाण ईंट इनके ऊपर धरे है परन्तु भूमिते पृथक् नहीं है ऐसे जो कछु विचार है सो सब तुमसूंही भयो है, सर्व कारण परमार्थरूप तुम हो या प्रकार वेद प्रतिपादन करै हैं॥१५॥ हे त्रिगुणमाया मृगीके नचामनवारे ! विवेकी पुरुष तुमारे अखिल लोकनके मल नाश करनवारे कथारूपी अमृतके समुद्रकूं सेवन करिके पाप और दुःखनकूं त्यागे हैं, जब तुमारी कथामात्र करिके पापनको त्याग होइहै तब स्वरूपके स्मरण करिके अन्तःकरणके गुण रागादिक और कालके गुण

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जरादिक जिनके निवृत्त हैगये है यामें कहा और तुम्हारो परम अखण्ड आनन्द अनुभव स्वरूपको भजन करिके दुःखनकूं त्यागे तो यामें कहा कहिनो है ॥ १६ ॥ अब जो पुरुष तुम्हारो भजन नहीं करै है तिनकी निंदा और जे प्राणधारी तुमारो भजन करें है तिनको सफल जीवन है याप्रकार स्तुति करें हैं, जे प्राणधारी तुमारो भजन करिके श्वासनकूं पूरी करें हैं वे सफलजन्मा हैं, और जो विना भजन करे श्वास लेइहैं वे लुहारकी धोंकनीकी तुल्य वृथा श्वास लेइ हैं; तुमारे भजनके विना कृतघ्ननकूं फल सिद्ध नहीं होइहै, अब याप्रकार कहैं हैं जाके अनुग्रह करिके महत्तत्त्व अहंकारादिक तत्त्व या देहकूं सृजै है ता देहमें अन्नमय प्रायमय मनोमय विज्ञानमय और आनन्दमय कोश जो देह प्राण मन बुद्धि और ज्ञान कहावे हैं तिनमें प्रवेश करिके ता ता आकार करिके चेतन करनहारे तुमही हो, ऐसो वेदने अन्तमें वर्णन कियो है अन्नमयादिकनकोसो आकारवारो पुरुष अन्नमयादिकनमें मिलि रह्यो है यद्यपि ऐसे हो तथापि तुम्हारो असंगत्व नहीं मिटै है तो अन्नमयादिकनके अंतमें हो याते पुच्छ करिके वर्णन करेंहैं, स्थूल सूक्ष्मसों परें हो और इनमें अविशेषरूप हों याते सत्य हो, शाखाचन्द्रकी तुल्य शुद्धरूप दिखायवेके लिये अन्नमयादिकनमें सम्बन्ध कह्यो है जैसे शुद्ध चंद्रमाको दिखावेको वृक्षकी शाखाको अवलम्बन करै हैं ऐसेही ब्रह्मके दिखायवेको कोशादिको अवलम्बन है ॥ १७ ॥ हे अनन्त ! जो मनुष्य ऋषिवर्त्म अर्थात् वेदोक्त कर्ममार्गमें स्थित हैके वेदके उदररूपी कर्मकी उपासना करै है अर्थात् अग्निहोत्र याग करै भगवद्दर्शनमें रुचि नहीं करें हैं वे कूर्पदृश अर्थात् विनके नेत्रनमें रज पडी है यासों सूक्ष्म वस्तुको दर्शन नहीं करसके हैं " यज्ञो वै विष्णुः " या श्रुतिके अनुसार वेहू भगवदुपासकही हैं और योगीजन नाडिनके द्वारा हृदयमें भगवदुपासना करै हैं यासों वे आरुणी अर्थात् अरुणोदयमें थोरो प्रकाश है जाय है ऐसेही इनकी उपासना है और आपकी प्राप्तिको स्थान सुषुम्ना नाडी जो मूलाधारसों हृदयमें हैके ब्रह्मरंध्रतक गई है जाको पायके फिर प्राणी संसारमें नहीं आवे है याहीको नाम मुक्ति है ॥ १८ ॥ तुम सबके उपादान कारण हो यासों प्रथमही सबमें वर्तमान हो यासों तुम्हारे निर्मित किये ऊंच नीच मध्यम देहनमें तुम्हारो प्रवेश होनो संभव नहीं है सकैहै तौहू जैसे विनमें प्रवेश कियो है ऐसेही देहादिकनको अनुकरण करते न्यूनाधिक प्रतीत होउहो जैसे अग्नि तारतम्यरहित है परन्तु काष्ठमें व्याप्त हैवेसो वैसीही प्रतीत होयहै ऐसोही प्रकार आपको सब उपाधिसों रहित समान एक रस जानके दोनों लोकके कर्म फल रहित उज्ज्वल बुद्धिवारे मनुष्य असत्य देहादिमें आपकोही सत्य मानके तुम्हारी उपासना करै हैं ॥ १९ ॥ अपने कर्मन करिके प्राप्तभये नरादिकदेहमें यह जीव भोक्तृत्वकरिके वर्तमान है वह जीव भीतर बाहिर आवरणरहित समस्त शक्तिनके धारण करनवारे तुम्हारो अंशही है या प्रकार पंडित जीवकी गतिकूं विचारिके वेदनके उत्पत्तिस्थान, और संसारते छुडामनहारे तुमारे चरणकी उपासना करें हैं, याप्रकार विश्वासपूर्वक अर्चन वंदन करनो यही मर्त्यलोकमें उचित है ॥ २० ॥ हे ईश्वर ! दुर्बोध आत्मतत्वके जनाइवेके निमित्त अवतार धारण करनहारे तुम्हारे चरित्ररूपी अमृत समुद्रमें अवगाहन करिके श्रमरहित जो कोई एक तुमारो भक्त मोक्षकीहू इच्छा नहीं करै हैं, और तुमारे चरण कमलमें अवगाहन कर हंसकी तुल्य रमण करै है, ऐसे भक्तनके संगके निमत्त घरहू विननें त्याग दिये जब गृहादिको त्यागन कर दियो तब परलोकके सुखकी कहा कथा है, यासों आपकी भक्ति मुक्तिसोहू अधिक है ॥ २१ ॥ तुमारी सेवाको साधक यह शरीर जब आत्मा सुहृद और प्रियके समान स्वाधीन है तथापि सन्मुख स्थित हितकारी प्यारे आत्मारूप तुममें साक्षात् भाव करिके नहीं भजन करै हैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और देहादिके लालन पालन करवेमें पडे रहे है यही बडे कष्टकी बात है मिथ्याभूत देहादिकनके सेवनते असत् उपासनामें वासनावारे नीच देहकूं धारण करनवारे बडे भयरूप संसारमें भ्रमण करें हैं याते वे आत्मघाती हैं ॥ २२ ॥ प्राण मन इन्द्रिय जीतके दृढ योगके करनवारे मुनि हृदयमें जाकी उपासना करें हैं वह जा तत्वको योगद्वारा प्राप्त भए हैं वैसेही शत्रुभी तुमारे स्मरणते तुमकूं प्राप्त भये हैं, तथा शेषके शरीरकी तुल्य तुमारे भुजदंडमें आसक्त बुद्धिहू तुमको प्राप्त भई हैं यासों हम कहे हैं कि आपकी कृपादृष्टि सबपै समान है और हम तुम्हें देश काल परिच्छेदरहित देखेहैं तुम्हारी प्रताप ऐसो है कि जो जा भावसों आपको ध्यान करै विन सबको तुम्हारे स्वरूपकी प्राप्ति होय है ॥ २३ ॥ हे भगवन् ! या संसारमें पूर्वसिद्ध तुमकूं आधुनिक उत्पत्ति विनाश करिके युक्त पुरुष कैसे जानेंगे अर्थात् नहीं जानेंगे तुमते ब्रह्मा उत्पन्न भयो है ब्रह्माके पीछे अध्यात्मक आधिदैविक देवतानके गण उत्पन्न भये, जा समय तुम सबको संहार करिके सोवोहो ता समय जीवनकूं ज्ञान साधन नहीं है, याते प्रलयके समय स्थूल आकाशादिक नहीं है, और सूक्ष्म मदहादिकहू नहीं हैं, तथा स्थूल सूक्ष्म करिके आरब्ध शरीरहू नहीं हैं, और शरीरको कारणरूप कालको विषम भावहू नहीं है ता समय इन्द्रियप्राणादिक कछु नहीं हैं, और सबको जाननवारो पुरुषहू नहीं है तात्पर्य यह है कि पूर्वकालके पुरुष अपने पीछे भयेनके वृत्तान्तको जानें हैं पीछेके पूर्वजानको चरित्र नहीं जानेहैं याही प्रकार आपके पश्चात् भए सब प्राणी आपको नहीं जान सकेहैं यासों आपको भजनही करनो उचित है ॥ २४ ॥ मिथ्याभूत जगत्की उत्पत्ति है अर्थात् यह पहले कछु नहीं हो या प्रकार वैशेषिकादिक आचार्य कहे हैं और जीवनमें ब्रह्मत्व नहीं है परन्तु योगसाधनसों होय जाय है यह योगशास्त्रवारे कहे हैं और इक्कीस प्रकारके दुःखनको नाश मोक्ष है ऐसे नैयायिक माने हैं, और सांख्याचार्य आत्मामें भेदभाव माने हैं, तथा कर्मफलके व्यवहारकूं मीमांसक सत्य कहे हैं ते सम्पूर्ण आरोपित भ्रम करिकेही उपदेश करें हैं तत्त्वदृष्टि करिके नहीं करें है, वास्तविकते पुरुष त्रिगुणमय होय तो इनको कहनो सत्य होय सो है नहीं त्रिगुणमय पुरुष यह भेद तुम्हारे विषे अज्ञान करिके कियो है, तुम अज्ञानते परे संगरहित ज्ञानघन हो याते तुममें अज्ञान नहीं संभव है ॥ २५ ॥ जो असत् नहीं उपजे और त्रिगुणमय पुरुष नहीं है तो यह प्रपंच और पुरुष सम्पूर्णतः तुमसो भिन्न नहीं है सो विनके स्वरूपसो सत्यकी प्रतीति कैसे संभव है मनोमात्र विलसित त्रिगुणात्मक प्रपंच मिथ्याही है, तो सत्य कैसे प्रतीत होयहै तहां कहे है, तुम अधिष्ठान हो याते तुमारी सत्ता करिके सत्यसो प्रतीत होय है, यह केवल निषेध करिके प्रतीत होय है, अर्थात् अभिप्राय करिके मनुष्यते पुरुषकी न्यारी जो सत्त्व प्रतीति होई है सो मनमात्रको विलास है, आत्माके जाननेवारे या भोक्ता और भोग्यरूप जगत्को स्थित भये आत्माकी सत्तासोंही सत्तावारो कहे हैं आत्मासों भिन्न सत्तावारो नहीं मानेहैं आत्माको कार्य है याते न्यारो नहीं है जैसे स्वर्णके विकार कुण्डलादिक आभूषणनकूं स्वर्णके लैनवारे त्याग नहीं करे हैं, किंतु स्वर्णही जानिके ग्रहण करे हैं, या कारणसों अपने किये विश्वमें प्रविष्ट पुरुषरूप जीवहू आत्माही है यह निश्चय है ॥ २६ ॥ परमात्माको सर्वत्र जानलेनो और भक्ति नहीं करनो यह बात नहीं परन्तु वाकी सदा भक्ति करनी क्यों कि जो आपको सकल पदार्थनमें स्थित जानके तुम्हारी सेवा करे हैं वे संसारकूं तिरस्कार करिके मृत्युके माथेपै पांव धरिके मुक्त होयहैं और जे तुमते विमुख हैं तुमारे अभक्त हैं तिनें पशूनकी तुल्य वाणी करिके तुम बांधोहो और जिनने तुमतों प्रेम कर्योहै ते निश्चय करिके आपकूं और दूसरेनकूं पवित्र करे है ॥ २७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे प्रभो ! तुम इंद्रियनके संबंध करिके रहित हौ समस्त प्राणीनकी इन्द्रियनकी शक्तिनकूं प्रवृत्ति करोहो अपने स्वरूप करिकेही प्रकाशोहो, स्वतःसिद्ध ज्ञानशक्ति हैवेसो तुमकूं इन्द्रियनकी अपेक्षा नहीं है, या कारणते विश्वके सृजनवारे ब्रह्मादिक और इन्द्रादिक देवता सम्पूर्ण मायासहित तुमारी पूजा करे हैं, और मनुष्यनको दियो हव्यकव्यादिक बलि भक्षण करै हैं, जैसे समस्त पृथ्वीके ईश्वर चक्रवर्ती राजाकूं खंड मंडलके राजा भेंट देई हैं, और आप अपनी प्रजासूं भेट लेइहैं तैसे ब्रह्मादिक तुमकूं भेट देई हैं और जा अधिकारपै तुमने राखे हैं ताही अधिकारकूं तुमारे भयते पूर्ण करे हैं ॥ २८ ॥ हे नित्यमुक्त ! जा समय मायाकरिके तुमारो विहार होय है, वाही समय आपकी दृष्टिसों प्रगट भये कर्म अथवा कर्मयुक्त लिंगशरीरसों स्थावर जंगम जातिके जीव उत्पन्न होय है यदि उत्तम मध्यम अधम सृष्टि हैवेमें विन जीवनके पूर्वकर्मनिमित्त न मानै तौ मन वाणीसो परें शून्यभावसों बराबरीके करनवारे आकाशकी सदृश सम्पूर्णमें सब भाव और परमदयालु आपमें विषमताको लेशहू नहीं है क्यों कि तुम्हारी दृष्टिमें कोई अपनो परायो नहीं है यासों आपको भजन मुख्य है ॥ २९ ॥ जो जीव अनंत और रूप करिके नित्य हैं, और सर्वव्यापी हैं, तो यह पक्ष हमारो नहीं कारण कि यदि जीव वास्तवमें अनंत नित्य और वाही रूपसों व्यापक हो तौ वे व्यापकादि गुणनसों आपकी समान हैगये जब समान भये तौ आप विनके नियन्ता नहीं हैसकैहै जो यह न मानै तौ आपसों विनको नियम संभव न हो कारण कि जो वस्तु उपाधिसों जा पदार्थको विकाररूप है वह पदार्थ वा वस्तुको निश्चय नियन्ता होयगो कारण कि वामें अनुस्यूत रह्यौ वह पदार्थ कारणतासों वा वस्तुको त्याग नहीं करै तुम्हारे स्वरूपमें 'यत्' 'तत्' शब्दके सिवाय कुछभी कहाजाय ऐसे नहीं है कारण कि हम ब्रह्मको जानतेहैं या प्रकार जो कहै हैं वे ब्रह्मस्वरूपको कुछभी नहीं जानो हो कारण कि ब्रह्म काहूको विषय नहीं और जो जानवेमें आवैहै वह अनात्म पदार्थ है ॥ ३० ॥ प्रकृति और पुरुषका जन्मसंभव नहीं क्यों कि प्रकृति पुरुष अजन्मा है या कारण प्रकृति पुरुषके संबंध करिके जीव जन्म लेइहैं जैसे बबूला केवल जल करिके नहीं उत्पन्न होइहैं और केवल पवनकरिकेहू नहीं उत्पन्न होइ है, किंतु दोनोनसो उत्पन्न होइहै, तुम कारणरूप ईश्वर हौ, तुम्हारे विषे अनेक नाम रूप गुण करिके सहित जीव लीन होइहैं जैसे सहतमें सम्पूर्ण वनस्पतीनके रस लीन होइहै, और जैसे समुद्रमें संपूर्ण नदी लीन होयहै ॥ ३१ ॥ जीवनके विषे तुमारी मायासों वारंवार जन्ममरणरूप यह भ्रमण हैरह्यो है यह जानिके सुबुद्धि पुरुष संसारके निवृत्ति करनवारे तुम्हारे विषे भावना करे हैं और जे तुमारे शरण हैके भजन करै हैं तिनकूं संसारको भय नहीं होइहै, कारण कि शीत उष्ण वर्षानवारो संवत्सररूपी काल तुमारो भ्रूभंगरूप है, और जे तुमारे शरण नहीं है, तिनके रक्षक नहीं किन्तु भयकारक हो, याते बुद्धिमान् तुमारेविषे भाव करे हैं ॥ ३२ ॥ हे अजित ! मनके निग्रह करवेसों ऐसो सेवन बनसके है परमदेव गुरुके चरणकी शरण लिये विना जो इंद्रिय प्राणनको जीतिके अतिचंचल दुर्जय मनरूपी घोडेके जीतवेको यत्न करै हैं वह उपायसों खेदकूं पाते और विघ्नसो व्याकुल होय हैं, कारण कि मनको जीतनो गुरुकी कृपासोही होय है जैसे जो व्यापारी मल्लाहको नहीं राखें वे समुद्रमें पडे दुःख पावें हैं ॥ ३३ ॥ तुमारो जो पुरुष आश्रय लेइ है, विनको सर्व सुखके स्थान आत्मरूप आपके होते सुजन पुत्र देह घर पृथ्वी प्राण रथ इनसूं कहा प्रयोजन हैं, जो पुरुष आत्माको सेवन करै ताकूं इन तुच्छ पदार्थनसूं कहा प्रयोजन है, सत्य परमार्थ सुखकूं नहीं जानिके स्त्री पुरुष मिलिके रतिके लिये विचरे है, तिनकूं या संसारमें तुम्हारे सिवाय कौन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुख है अर्थात् कोई नहीं यह संसार आपते मिथ्याभूत और साररहित है याते तुमारोही भजन करिवो उचित है ॥ ३४ ॥ अहंकारकूं त्यागिके तुमारे चरणारविंदकूं हृदयमें धारण करनो तुम्हारे भक्त ऋषि मुनि कि जिनके चरणको जल स्वतःही पापनाशक है तथापि या पृथ्वीमें आपको भजनरूप महापुण्य करनहारे महात्मा जननके आश्रमनको और अतिपावन तीर्थक्षेत्रनको सेवन करे हैं और पुरुषनके ज्ञान वैराग्यके नाश करनवारे गृहादिकनको सेवन नहीं करे हैं जिन्हें गुरुकी कृपासो तत्वज्ञानकी प्राप्ति और संसारकी मिथ्या प्रतीति हैगई है वे महात्मानकी संगति करें हैं कारण कि जाको एकवेरहू आत्माके सुखको अनुभव भयो है, वह कदाचित् गृहमें आसक्त नहीं होयहै तब उत्तम पुरुष कैसे घरमें आसक्त हौ ॥ ३५ ॥ यह जगत् सत्यसूं उत्पन्न भयो है याते सत्य है, जैसे सुवर्णते उत्पन्न भये कुंडलादिक सुवर्णही हैं याप्रकार मानोगे तो व्यभिचार प्राप्त होइगो, जैसे पिताते पुत्र होइहै सो प्रथम क्यों मरिजाय है, तथा पृथ्वीते भये घटादिक क्यों फूटि जाइहैं ताते यह जगत् मिथ्या है, तहां कहै हैं, उत्पन्न नाम उपादान कारण नहीं निमित्त कारण है इससे कुछ दोष नहीं यामें दोष दैके समाधान करै हैं कि जो वस्तु जा उपादानसो भईहो वह वस्तु वा उपादानसों भिन्न नहीं होयहै यहहू नियत नहीं कारण कि रज्जुरूप उपादानसो भयो सर्प रज्जुसों पृथक् होयहैं रज्जु सत्य और सर्प मिथ्या होयहै, जो सर्प सत्य होय तो जा प्रकार कुंडलको बाध नहीं होयहै इसी प्रकार सर्पकाभी बाध न हो (शंका) रज्जुमें भये सर्पमें केवल रज्जुही उपादान कारण नहीं किन्तु अज्ञानहू उपादान कारण है ऐसे उपादान कारणसो भई वस्तुको मिथ्यापन बनसकेहै और जो केवल सत्य उपादान कारणसों उत्पन्न होय वाको मिथ्यापन सिद्ध नहीं हैसकै है यासो कारण द्वैत असत्य नहीं (उत्तर) यह द्वैतहू सत्यरूप ब्रह्म और वाके साथ अज्ञानरूप उपादान कारणसो भयोहै (शंका) जो या प्रकार जग नित्य कह्योहै तो मिथ्या कैसें है (समाधान) कर्म फलको नित्य कहनो वेदको तात्पर्य नहीं किन्तु विन वाक्यनसों कर्मकी स्तुति कीनीहै यदि वेद कर्मफलको नित्य मानतो तौ जैसे यहां परिश्रमसों उत्पन्न किये पदार्थ कालान्तरमें क्षीण हैजायहैं ऐसेही परलोकमें पुण्यको सुख कालान्तरमें नष्ट हैजायहै, 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति' यासो कर्म श्रद्धाके भारसों जिनकी बुद्धि मंद हैगई है विन्हें वेद वाणी गौणी और लक्षणावृत्तिमें डारके भ्रमयुक्त कर देयहै यासो वे यथार्थ वेदके तात्पर्यको नहीं जानके कर्मफलको नित्य मानेहै कर्मसों अन्तःकरण शुद्ध होय है या बातको नहीं जानेहै आशय यह है जैसे मकरी अपनेमेंसों तन्तु निकाल फिर आपही ग्रहण कर लेयहै याही प्रकार ईश्वर जगत्को उत्पन्न कर अपनेमें लय कर लेयहै वास्तवमें शुद्ध है या कारण अद्वैत सत्य है मिथ्यासों द्वैत भासे है ॥ ३६ ॥ हम और कारण करिके सत्य करेंगे जगत् सत्य है क्योंकि अर्थ क्रियाको करनवारो है, जो न होइ तौ सीपीमें रूपेकी प्रतीति कैसे होइहै तहां कहै हैं व्यवहारके लिये अर्थ क्रियाके लिये भ्रम इष्ट है, जैसे खोटे रुपैया करिके व्यवहार खाजाता है तहां कहेहैं जो एक ठौर सत्य है ताको और ठौर भ्रम होइ है यह प्रसिद्ध है, अत्यंत झूठो प्रपंच होय तौ भ्रम न होय, याते सत्य है, तहां कहे हैं सत्य नहीं है किंतु अंधपरंपराकरिके भ्रम कियोहै, याते सत्य नहीं है तहां वेद कर्मफलकी सत्यताको प्रतिपादन करेहै चातुरमासको पूजन करनवारेनकूं अक्षयपुण्य होयहै, और अमृतपान करेंगे इत्यादिक वचन करिके कर्मफलकूं यह द्वैत सृष्टिसो पहलेहू नहीं हो और आगेकोहू न होयगो मध्यमें आपके शुद्ध अद्वैतरूपमें मिथ्याही प्रतीत होयहै यह निश्चित है या कारण मृत्तिका सुवर्ण लोह आदि पदा-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

थैनके घट कुंडल परशु आदि निर्माण किये भये आकारसों नाममात्रही हैं, विनको कारण मृत्तिका सुवर्ण लोहादि सत्य हैं यासों पृथ्वी आप तेज वायु आकाशादि कार्य नाममात्र हैं विनको कारण ब्रह्म सत्य है या प्रकार द्वैतकी सत्यतामें कछु प्रमाण नहीं या कारण मनके विलाससो मिथ्याभूत द्वैतकों सत्य मानें हैं वे अज्ञानी हैं ॥ ३७ ॥ जब द्वैत कोई वस्तु नहीं है तौ यामें चैतन्यको सम्बन्ध लेशमात्रहू न होनो चाहिये फिर जीव कौनसे अपराधसों जन्म मरण सुख दुःखकी प्राप्ति करे हैं और ईश्वर नित्यमुक्त कैसे है कर्मकाण्ड काहेके निमित्त है यापें कहै कि यह जीव मायामें पडे अविद्याको आलिंगन करें हैं या कारण देह इन्द्रियादिको सेवन करते विन्हे अपनोही स्वरूप माने हैं याहीसों देह और इन्द्रिनके धर्मसो युक्त हैके आनंदादि गुणनके आवरणसों जन्म मरणकी प्राप्ति करें हैं यह सब कर्मकाण्ड अविद्यायुक्त जीवमें है और आप तौ मायाकी असत्यता जानै हो जैसे सर्प कैंचलीको सत्य नहीं समझेहै और वाको त्यागे है तैसे आप मायाको त्यागोहो यासों तुम नित्य अखण्ड ऐश्वर्ययुक्त अप्रमेय अणिमादि अष्ट ऐश्वर्यमान् अपनेमें आपही विराजे हो ॥ ३८ ॥ हे भगवन् ! जो संन्यासी यति अपने हृदयमें स्थित कामकी वासनानको नहीं उन्मूलित करेहैं विन असाधुनके हृदयमें तुम स्थित हैकैहू नहीं मिलैहै जैसे स्मृति न रहवेपै कंठस्थित मणि नहीं मिलती या प्रकार विन दुष्टसाधुनको आपकी प्राप्ति नहीं होती इतनोही नहीं किन्तु जो इन्द्रियनके तृप्त करनहारे हैं विनको या लोक तथा परलोकमें दुःखही होयहै कारण कि लोकनको प्रसन्न करनो धन संचय करनो भोग करनो गुप्त कार्य करनो इत्यादिमें यहां दुःख होय है और आपकी प्राप्तिके निमित्त संन्यास लेवेपैं यदि आपकी प्राप्ति न भई और धर्मको अतिक्रमण कियो तौ तुम्हारे दंडरूप नरककी प्राप्ति भई यासो परलोकमेंहू सुख नहीं वे दोनों लोकनसो भ्रष्ट भए ॥ ३९ ॥ हे भगवन् ! जिन भक्तनको तुम्हारो ज्ञान हैगयो है वे आपसो प्रगट भये अपने प्राचीन पुण्य पापनके फलरूप दुःख सुखके सम्बंधको कछु नहीं समझैहै और देहाभिमानिनके सम्बंधी प्रवृत्ति निवृत्तिके करनवारे विधिनिषेधके वचननको नहीं सुनते देहाभिमानरहित हो जानवेसों कार्याकार्यको संबंध नहीं रहै हे ऐश्वर्यमान् ! आप प्रत्येक युगमें अवतार धारण करके सत् मार्गमें चलनहारे मनुष्यनको जो प्रतिदिन तुम्हारे चरित्र श्रवणकर हृदयमें धारण करते श्रेष्ठ गति देते हौ जब ऐसे पुरुषनकोहू काहू प्रकारकी बाधा नहीं रहती तौ तत्त्ववेत्तानको मर्मकी शंकाहू नहीं हैसकैहै और जो पुरुष कपटप्रबंध कर इंद्रिनको भोगसों पूजै हैं वे या लोकमें दुःख पावे वैं ॥ ४० ॥ हे भगवन् ! स्वर्गलोकादिके पति ब्रह्मादिक आपके प्रतापके अन्तको नहीं पाते और आपहू अपने अन्तकूं नहीं पाते तौ ब्रह्मादिक आपके अन्तको नहीं जानेहै यामें क्या आश्चर्य है अपने अन्तकूं नहीं जानवेसों आपकी सर्वज्ञता सर्वशक्तिमत्ता नष्ट नहीं होती जैसे शशकके सींग न मिलवेसो सर्वज्ञका सर्वज्ञपन नहीं जायहै क्योंकि शशकके सींग हैंही नहीं फिर मिलैं कहांसों याही प्रकार आपको अन्त है ही नहीं कोई जाने कहांसो क्योंकि तुम्हारे स्वरूपमें आकाशमें रजके कणके सदृश दश दश गुण उत्तर २ अधिक सात आवरणनसों युक्त ब्रह्माण्डनके समूह कालचक्रसों भ्रमण करें हैं, या कारण श्रुति तात्पर्यसों आपकोही प्रतिपादन करै है साक्षात् नहीं कहसकैहै सगुण स्वरूपको तौ गुण अपार है और निर्गुणमें वाणीकी गति नहीं यासों तुम्हारो सम्पूर्ण और साक्षात् निरूपण नहीं होय है अनात्मपदार्थनको निषेध कर अन्तमें श्रुति आपकोही वर्णन करै है कारण कि अवधिके विना निषेध नहीं है सकै है यासो निषेधके अवधिरूप आपमेंही वेदनको तात्पर्य निकसै है ॥ ४१ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नारायण नारदसूं कहे हैं, याप्रकार ब्रह्माके पुत्र सनकादिक वेदनकी स्तुति श्रवण करिके आत्माकी गति जानिके सनंदनजीको पूजन करतभये ॥ ४२ ॥ याप्रकार आकाशमें गमन करनहार सृष्टिमें प्रथम उत्पन्न भये ऐसे महात्मा सनकादिकनने समस्त वेद पुराण उपनिषदको रस उद्धार कियो है ॥ ४३ ॥ हे ब्रह्माके पुत्र नारद ! तुम श्रद्धासों आत्माके अनुशासनकूं धारण करिके पृथ्वीमें यथेच्छ विचरो यह आत्मानुशासन मनुष्यनकी विषयवासनाको नाश करनवारे है ॥ ४४ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! ऐसे नारायणके किये उपदेशको श्रवण करिके कृतार्थ नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्रुतिनके धारण करनवारे नारद मुनि बोलतेभये ॥ ४५ ॥ श्रीनारदजी बोले जो श्रीकृष्णचन्द्र समस्त भूतनके कल्याणके निमित्त सुन्दर अवतार धारण करे हैं, विन निर्मलकीर्ति भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके अर्थ नमस्कार है ॥ ४६ ॥ उदारमना नारद आदि ऋषि नारायणकूं और विनके शिष्यनकूं नमस्कार करिके मेरे पिता साक्षात् व्यासदेवके आश्रममें जातभये ॥ ४७ ॥ व्यासदेवजीने सन्मान कर आसन दियो, ताय ग्रहण करिके नारदजी नारायणके मुखतें जो श्रवण कऱ्यो सो व्यासदेवजीके अर्थ वर्णन करतभये ॥४८॥ हे राजन् परीक्षित् ! जो तुमने प्रश्न कियो सो हमने वर्णन कियो जैसे अनिर्देश्य और निर्गुण ब्रह्म श्रुति प्रवृत्ति होयहैं ॥ ४९ ॥ मायाके दूर करनहारे भक्तनके भयनाशक नारायण जो कि अपने स्वरूपमें शयन करते जीवनके पुरुषार्थ सिद्ध करवेके निमित्त सृष्टि स्थिति संहार करें हैं जो या संसारके आदि मध्य और अंतमेंहू रहे है जो प्रकृति पुरुषकेहू उपादान कारणहैं और या जगत्को उत्पन्न करके जीवके साथही प्रवेश कर रहैं जिनने जीवनको भोग देवेके निमित्त पृथक् २ शरीर बनाये हैं, जो जीवको अनेक भोग देते शरीरनको पालन करें हैं और प्रणामादिकसों भक्ति करनवारे जीव विन्हें प्राप्त हैके जैसे सुषुप्तिमें सोवतोभयो शरीरके संबंधरहित होय है वैसे देहादिरूप अविद्याको वे भक्त त्यागनकर देते हैं विन नारायणको भजन करनो चाहिये ॥ ५० ॥

योऽस्योत्प्रेक्षक आदिमध्यनिधने योऽव्यक्तजीवेश्वरो यः सृष्ट्वेदमनुप्रविश्य ऋषिणा चक्रे पुरः शास्ति ताः ॥ यं संपद्य जहात्यजामनुशयी सुप्तः कुलायं यथा तं कैवल्यनिरस्तयोनिमभयं ध्यायेदजस्रं हरिम् ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भा० भाषाटी० द० उ० नारायणनारदसंवादे वेदस्तुतिर्नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥८७॥

अध्याय ८८.

राजोवाच-देवासुरमनुष्येषु ये भजन्त्यशिवं शिवम् ॥
प्रायस्ते धनिनो भोजा नतु लक्ष्म्याः पतिं हरिम् ॥ १ ॥

राजा परीक्षित् बोले हे महाराज शुकदेवजी ! देवता असुर मनुष्यनमें जो भोगसुखके तिरस्कार करनहारे शिवको भजन करें है वे धनी होय हैं, और लक्ष्मीके पति श्रीकृष्णचंद्रके भजन करनहारे धनी नहीं यह जानके हमारी इच्छा है शिव और विष्णुके भजन करनहारेनको सम्पूर्णतः विरुद्धफल मिलै हैं क्योंकि जो शिवजी विभूति लगामें श्मशानमें वास करनहारे अमंगलरूप शिवजीके कछु नहीं तिनको जे भजन करे है वे लक्ष्मीवान् होइहैं, और भोग भोगें हैं, और लक्ष्मीपति अच्छे भोग भोगें सुन्दर वस्त्र पहिरे ऐसे श्रीकृष्णचंद्रकूं जे भजे है ते बहुधा दरिद्री होइहै यह स्वामीनकी गति और है; सेवकनकी गति और है उचित तौ यह है जसो स्वामी होय तैसोही सेवक

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होय ॥ १ ॥ २ ॥ शुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! शिवजीमें शक्ति रहै है गुनणके परस्पर जो आपुसमें संघर्षणसूं तमोगुण तीन प्रकारको है सात्विक अहंकार राजस अहंकार; और तामस अहंकार ऐसे तीन प्रकारके अहंकारसों अधिष्ठानसों विष्णु ब्रह्मा शिव यह तीन रूप धारण करै हैं ॥३॥ ता अहंकारते पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ये पंच भूत और दश इन्द्रिय तथा एक मन सोलह विकार भये, इन विकारनमें कोई एक विकारवान् उपाधिरूप विकारके भजन करेते संपत्ति मिले है, उपाधिवारेके भजन करेते उपाधि होइ हैं ॥ ४ ॥ निर्गुण साक्षात् मायाते परे सबके देखनवारे साक्षीभूत हरि भगवान्को जो पुरुष भजन करे वह निर्गुण होइ हैं ॥ ५ ॥ अश्वमेध यज्ञ जब पूर्ण होय चुक्यो तब तुमारे दादे राजा युधिष्ठिर वैष्णव धर्मनकूं श्रवण करिके पीछे श्रीकृष्णचंद्रते यही बात पूछतेभये ॥ ६ ॥ तब मनुष्यनके कल्याण करिवेके लिये यदुकुलमें आप अवतारधारी समर्थ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र प्रसन्न हैके राजा युधिष्ठिरते यह कहत भये ॥ ७ ॥ भगवान् श्रीकृष्णचंद्र बोले जा पुरुषके ऊपर मैं कृपा करूंहूं, ता पुरुषको धन हौले हौले हरण करिलेउहूं ता पीछे जब दरिद्री है जाइ है, तब वाको दुःखीकी तुल्य और निर्धनी जानके वाको वाके भैया बंधु सब त्यागि देइ हैं ॥ ८ ॥ भैया बंधुनके हठते फेरि कमाईमें लगे तब मेरे अनुग्रहते निष्फल उद्यम होइ है तब धनके कमाइवेतेहू वैराग्य आय जाय है, ता समय वह मत्परायण साधुसूं मित्रता करे हैं, तब वा पुरुषके ऊपर मैं असाधारण अनुग्रह करूं हूं ॥ ९ ॥ मेरी कृपासों विन्हें परब्रह्म सूक्ष्म चैतन्य सर्वव्यापी नाशरहित आत्माको ज्ञान होय है याहीसो मेरो आराधन बहुत कठिन है याहीसों मोकूं त्यागिके वह पुरुष और देवतानकूं भजे हैं ॥ १० ॥ सेवन करवेसों शीघ्र प्रसन्न होनहारे देवतानको राज्य और धन प्राप्त हैवेसो उद्धत मतवारे उन्मत्त हैके वे प्राणी वरके दैनवारे देवतानको भूलके अवज्ञा करे हैं ॥ ११ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! ब्रह्मा विष्णु शिव इत्यादिक देव शाप और अनुग्रह करवेमें समर्थ हैं शिव ब्रह्मा दोनों शीघ्रही प्रसन्न होइ हैं, और शीघ्रही शाप देइ है और श्रीकृष्णचंद्र शीघ्रही प्रसन्न नहीं होइ हैं और जापै प्रसन्न होइ ताकूं शाप नहीं देय हैं ॥ १२ ॥ यामें एक प्राचीन इतिहास वर्णन करें हैं जैसे शिवजी वृकासुरकूं वर दैके कष्ट पावत भये ॥ १३ ॥ दुष्टबुद्धि शकुनीको पुत्र वृकासुर मार्गमें नारदजीकूं देखिके ब्रह्मा विष्णु महादेव इन तीनों देवतानमें जल्दी कौन प्रसन्न होइ है यह पूंछत भयो ॥ १४ ॥ तब नारदजी कहत भये कि तू महादेवको सेवन करि, शीघ्र तेरो मनोरथ सिद्ध होयगो, जो शिवजी थोरे गुणनसूं शीघ्र प्रसन्न और थोरे दोष करिके क्रोध होय है ॥ १५ ॥ बंदीजनकी तुल्य स्तुति करनहारे रावण और बाणासुरके ऊपर प्रसन्न हैके शिवजी बडो ऐश्वर्य दैके तिन असुरनते आपही कष्ट पावत भये, रावणने तो कैलास उखारि लियो, और बाणासुरने कही कि मेरे पुरकी रक्षा करो ॥ १६ ॥ या प्रकार नारदजीने कही ता समय वृकासुर अपने देहते शिवजीको सेवन करत भयो, केदार तीर्थमें शिवजीके अर्थ अपने शरीरको मांस काटिके अग्निमें हवन करत भयो ॥ १७ ॥ जब महादेवकी प्राप्ति न भई, तब निर्वेद आयगयो; ताते सप्तम दिन तीर्थमें स्नान करवेसों भीजे वारवार शिरकूं छुरी लैके काटन लग्यो ॥ १८ ॥ तासमय बडे करुणावान् शिवजी हमारे सरीखे मूर्तिमान् अग्निकी तुल्य प्रकाशयुक्त अग्निकुंडमेंते निकसिके हाथनते असुरकी भुजा पकरिके जैसे कोई दुःखके मारे मरिवेकूं आवे ताय मने करे हैं ऐसे मने करतभये शिवजीके हाथके स्पर्शते वाको देह ज्योंको त्यों होगयो ॥ १९ ॥ वृकासुरसूं शिवजी कहतभये कि हे वृकासुर ! तू तप करिके पूर्ण भयो, अब वर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मांग जो तेरी इच्छा होइ सोही वर देउंगो, जे मेरी शरण मनुष्य आमें है, तिनके ऊपर जलमात्रके चढायेतेंही मैं प्रसन्न है जाऊंहूं, बडो आश्चर्य हैं तैंने वृथाही अपने देहकूं दुःख दियो ॥ २० ॥ तब वृकासुर जा जा पुरुषके शिरमें हाथ धरूं वह पुरुष मरि जाय याप्रकार सम्पूर्ण प्राणीनको भयको देनवारो वर मांगतभयो ॥ २१ ॥ हे भरतवंशोत्पन्न राजन् परीक्षित् ! याप्रकार वृकासुरको वचन श्रवण करिके उदासीनसे हैके अच्छी बात है, ऐसे मुसिक्यायके सर्पकूं दूध प्यायवेकी समान वृकासुरकूं वर देतभये ॥ २२ ॥ याप्रकार सुनतेही पार्वतीके हरिवेकी चाहनासो वह असुर वर मिथ्या है या सत्य यह परीक्षा लैवेके लिये महादेवजीके माथेपै हाथ धरिवेको उपाय करत भयो तासमय अपने कर्तव्यते भयभीत हैके शिवजी भागतेभये ॥ २३ ॥ असुर पीछे पडवेसो शिवजी व्याकुलतासो स्वर्ग पर्यंत गये और पृथ्वीको जहां पर्यंत अंत हो तहां ताईं गये फेरि उत्तर दिशामें गये ॥ २४ ॥ तासमय उपायकूं नहीं जानिके सम्पूर्ण देवता चुप होतभये ता पीछे प्रकाशमान मायाते परे वैकुंठधाममें शिवजी गये ॥ २५ ॥ जा वैकुण्ठधाममें शांतस्वभाव और कालको दंडरहित संन्यासीनकूं परम गति अर्थात् प्राप्त हैवे योग्य नारायण विराजमान हैं ॥ २६ ॥ दुःखनके दूरि करनवारे भगवान् नारायण शिवजीके पीछे दौरे चले आवते वृकासुरको दूरितेही देखिके अपनी योगमाया करिके ॥ २७ ॥ ब्रह्मचारीको वेष धर मूंजकी कोंधनी, मृगछाला, दंड, मालाकूं पहिरिके तेजसूं अग्निकी तुल्य प्रकाशमान कुशा हाथमें लिये भगवान्ने नम्र हैके अभिवादन कर वासों कह्यौ ॥ २८ ॥ श्रीभगवान् बोले हे शकुनिके पुत्र ! तोकूं निश्चय खेद है, दूरि काहेकूं आयो, क्षण विश्राम ले पुरुषकूं समस्त कामनानके देनवारो यह देह है ताकूं पीडा मति देय ॥ २९ ॥ हे समर्थ ! जो तुमारो अभिप्राय हमारे आगे सुनायवे योग्य होय तौ कहो क्योंकि बहुधा दूसरेनकी सहायतासो पुरुष अपनो कार्य सिद्ध करसकै है ॥ ३० ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार अमृतरूप वचन करिके भगवान्ने पूंछ्यो तब खेदरहित हैके वृकासुर अपनो सब वृत्तान्त सुनावत भयो ॥ ३१ ॥ श्रीभगवान् बोले शिवने तुमकूं वर दियो है तौ याके वचनकूं हम सत्य नहीं माने हैं यह शिव दक्षके शाप करिके पिशाचनकी दशाकूं प्राप्त भयो है और प्रेतपिशाचनको राजा है ॥ ३२ ॥ हे दानवनके इन्द्र ! वृकासुर ! महादेवके वचनमें तोकूं विश्वास है तौ तू शीघ्र अपने शिरपै हाथ धरिके परीक्षा लै ॥ ३३ ॥ हे दानवनमें श्रेष्ठ ! या महादेवको वचन कैसे सत्य होयगो, यह तौ मिथ्यावादी है पीछे जो काहू प्रकार महादेवको वचन असत्य दीखै तौ महादेवकूं मारि जो फेरि कबऊ मिथ्या न बोलेगो ॥ ३४ ॥ याप्रकार मनोहर विचित्र विचित्र भगवान्के वचनसौं भ्रष्टबुद्धि है कुबुद्धि वृकासुर भूलिके अपने शिरपै अपनो हाथ धरत भयो ॥ ३५ ॥ शिरपै हाथ धरे पीछे वज्रके मारेकी समान क्षणभरमें शिर फटवेसों गिरत भयो, तासमय स्वर्गमें जय जय और नमः नमः तथा साधुशब्द होतभयो ॥ ३६ ॥ पापात्मा वृकासुर मरयो तासमय देवता पितृ ऋषि गंधर्व फूलनकी वर्षा करतभये, और शिवजीकूं कष्टते छुडावतभये ॥ ३७ ॥ जब शिवजी कष्टते छूटे, तब पुरुषोत्तम भगवान् कहत भये अहो देव महादेव ! यह वृकासुर पापी अपने पाप करिके मरयोहै ॥ ३८ ॥ ईश्वर बडेनको अपराध करेते कौन पुरुष कल्याणकूं प्राप्त होई है, देखो विश्वके ईश्वर जगत्के गुरु तुम्हारो अपराध करेते भलो कदापि नहीं होई है ॥ ३९ ॥ या प्रकार मन वाणीके अगोचर अनन्तशक्ति सबके कारण साक्षात् परमेश्वर श्रीकृष्णचन्द्र शिवजीकूं कष्टते छुडावते भये यह चरित्र पुरुष कहै, और सुने, वह संसारते और वैरिनते छूटि जायहैं ॥ ४० ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

य एवमव्याकृतशक्त्युदन्वतः परस्य साक्षात्परमात्मनो हरेः ॥
गिरित्रमोक्षं कथयेच्छृणोति वा विमुच्यते संस्मृतिभिस्तथारिभिः ॥ ४० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द० उ० अष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

अध्याय ८९.

श्रीशुक उवाच–सरस्वत्यास्तटे राजन्नृषयः सत्रमासत ॥
वितर्कः समभूत्तेषां त्रिष्वधीशेषु को महान् ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! एक समय सरस्वतीनदीके तटपैं ऋषि यज्ञ करेहैं तहां ब्रह्मा विष्णु शिव इन तीनों देवतानमें कौन बडो है ऐसे आपुसमें झगरो होतो भयो ॥ १ ॥ हे राजन् ! इनमें कौन बडो है याकी परीक्षाके लिये ब्रह्माके पुत्र भृगुकूं पठावत भये सो भृगु परीक्षा करिवेके निमित्त ब्रह्माकी सभामें जात भये ॥ २ ॥ भृगुजी ब्रह्माके स्वभावकी परीक्षाके लिये ब्रह्माकी स्तुति प्रणाम कछुहू न करते भये ब्रह्माजी अपने क्रोधसों प्रज्वलित हैके भृगुके ऊपर क्रोध करतभये ॥३॥ परन्तु ब्रह्मा अपने पुत्रके अर्थ चित्तमें उठे क्रोधकूं आपुही शांत करत भये, जैसे अपने कारण जलसूं अग्नि शांत होइ है अग्निके शान्त करवेमें जैसे अग्निसो उत्पन्न जल काम आवै है ऐसेही ब्रह्माके क्रोध शान्त करवेमें विन्हीसो उत्पन्न भए भृगुजी काम आये ॥ ४ ॥ वहांसो भृगुजी कैलास पर्वतपै शिवजीके पास जातभये, तासमय शिवजी भैया भृगुसों उठिके मिलिवेकूं प्रीतिसों उद्यत भये ॥ ५ ॥ भृगुजी महादेवजीसूं मिलिवेकी इच्छा नहीं करते भये, और कही तुम कुमार्गमें चलै हो हम तुमसों नहीं मिलैंगे यह सुनिके महादेवजी क्रोधसो लाल नेत्र करिके हाथमें त्रिशूल लै मारवेको प्रारंभ करतभये ॥ ६ ॥ तासमय पार्वती महादेवजीके पांवनमें पकरिके कहति भई कि हे महाराज ! आपको भ्राता है याकूं कैसे मारो हो, ऐसी वाणी करिके शांत करति भई, ताके पीछे भृगु वैकुंठमें जात भये, जहां जनार्दन भगवान् वास करे हैं ॥ ७ ॥ लक्ष्मीकी गोदमें सोवते विष्णुके हृदयमें भृगुने जायके लात मारी तदनंतर साधुनकी गति विष्णु भगवान् लक्ष्मी सहित पलंगपैते उठिके पृथ्वीमें मस्तक धरिके भृगुजीकूं प्रणाम करतभये ॥ ८ ॥ और कहत भये कि हे ब्रह्मन् ! तुम भले आये, नेक आसनपै बैठिजाओ, हे समर्थ ! आपके आयवेकूं हमने नहीं जानों सो अपराध क्षमा करो ॥९॥ हे तात ! हे महामुनि ! तुमारे चरण कोमल है, और मेरी छाती कठोर है, तुमारे चरणनमें चोट लगी होयगी, याप्रकार कहिके अपने हाथते ब्राह्मणके चरणकूं सहरावन लगे ॥ १० ॥ गंगादिक तीर्थनको पवित्र करनवारे अपने चरणनके जलसों मोको और मोमें अधिष्ठित लोक और लोकपालनको पवित्र करो ॥ ११ ॥ हे ब्राह्मण ! अब मैं

---

१ इसमें अलंकारिक ध्वनि है कि ब्राह्मण भृगुजीने हरिभगवान्के लक्ष्मीरूप हृदयका तिरस्कार करके यह बात दिखाई कि हम लक्ष्मीकी किंचित् इच्छा नहीं करते । प्र०–भृगुजीने भगवान्के लात मारी यह बडा अनुचित कार्य है । उत्तर–इस कथाका बडा गूढ अभिप्राय है कि भगवान्के चरण सदा भृगु आदि मुनि ध्यान करते हैं, परन्तु वह एक ब्राह्मणहीका कुल था कि जिसने भगवान्के हृदयमें निवास करनेवाली लक्ष्मीका तिरस्कार किया, आशय यह कि भृगुजीने यह जताया कि लक्ष्मी आपकी परिग्रह है, इसको हम स्वीकार नहीं करते, और लक्ष्मी हृदयमें निवास करती है, उसको न चाहकर तपही श्रेष्ठ है ऐसा केवल भगवान्केही चरणोंका ध्यान करनाहीं मानो लक्ष्मीके निवासस्थान भगवान्के हृदयमें चरण प्रहार करना है, और पूर्वसमय धनके लोभी न होनेसेही ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ हुए जबसे लक्ष्मीके रूपमें मुक्त हुए तभीसे दशा बिगडी बुद्धिमान् इसका विचार कर लेंगे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लक्ष्मीके वास करिवेको अत्यंत पात्र भयो, तुमारे चरणस्पर्शते पाप दूरि भये, मेरी छातीमें लक्ष्मी सदा वास करैंगी ॥ १२ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार नारायणकी कही मनोहर वाणीसों तृप्त हैके भक्तिसों आनंदमें मग्न हो नेत्रनमें आसूं भरे चुप होत भये ॥ १३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! भृगुजी फेरि अपने यज्ञमें आयके वेदके पढनवारे मुनिनसूं तीनोंनकी जो बात देखि आये सो कहतभये ॥ १४ ॥ भृगुकी बात सुन आश्चर्यको प्राप्त हो संदेहको त्याग मुनिनने कही कि इतनों अपनो अपराध कियो, परन्तु क्रोध न आयो, विष्णु भगवान्मेंही शांति है, और काहू देवतामें नहीं है, यातें सबते बडे विष्णु भगवान् हैं यही निश्चय है ॥ १५ ॥ साक्षात् धर्म और धर्मके लिये ज्ञान तथा वैराग्य और आठ प्रकारके ऐश्वर्य और आत्माके मलनको दूरि करनवारो यश ये सम्पूर्ण भगवान्के विषेही हैं ॥ १६ ॥ कालदंडके भयरहित शांतस्वभाव और समानचित्त, निष्किंचन (अर्थात् काहू वस्तुकी जिनमें चाहना नहीं) साधु मुनिकूं जिन भगवान्को परम गति कहे हैं ॥ १७ ॥ सत्त्वगुण भगवान्को प्यारो रूप है, और ब्राह्मण भगवान्के इष्ट देवता है, शांत और निष्काम बडी बुद्धिवारे जिनको भजन करै हैं, वही सबसों श्रेष्ठ हैं ॥ १८ ॥ तिन भगवान्ने अपनी मायासो सत्त्वगुणी रजोगुणी तमोगुणी तीन प्रकारके देवता असुर राक्षस रचे हैं, सबही विनको रूप है परंतु तिनमें सत्त्वगुणी रूप कल्याणको देनवारो है ॥ १९ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या प्रकार सरस्वतीके तीरवासी ब्राह्मण मनुष्यनके संदेह दूरि करिवेके लिये श्रीकृष्णचंद्रके चरणारविंदकी सेवा करिके श्रीकृष्णचन्द्रकीही गतिकूं पावतेभये ॥ २० ॥ सूतजी बोले हे ऋषीश्वरो ! व्यासदेवमुनिके पुत्र श्रीशुकदेवजीके मुखकमलकी सुगंधि मिलो अमृततुल्य संसारके भयके काटनवारे श्रेष्ठ पुरुष श्रीकृष्णचंद्रको यश कानरूपी दोनानमें भरिके जो पान करैगो, वह संसारके आवागमनके परिश्रमसूं छूटिजायगो ॥ २१ ॥ श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! या चरित्रमें श्रीकृष्णचन्द्रको उत्कर्ष कह्यो, अब श्रीकृष्णचन्द्रकोही उत्कर्ष कहनहारो और चरित्र वर्णन करे हैं हे राजन् ! एक समय द्वारिकामें एक स्त्रीको पुत्र जन्म होत पृथ्वीको स्पर्श करतेही मरत भयो ॥ २२ ॥ वह ब्राह्मण मरे पुत्रकूं लैके राजा उग्रसेनकी ड्योढीपै धरिके विलाप कर आतुर दीनमन हैके यह कहत भयो ॥ २३ ॥ ब्राह्मणनको द्वेषी शठबुद्धि लोभी विषयनमें आसक्तमन क्षत्रियनमें अधम या राजाके दोषतेही मेरो पुत्र मरचो है मेरो कछु दोष नहीं है ॥ २४ ॥ हिंसा करनहारे दुःस्वभाव अजितेन्द्रिय राजाके सेवन करवेसों प्रजा दुःखी और दरिद्री होयहै ॥ २५ ॥ याही प्रकार वह ब्राह्मण दूसरे पुत्रकूं, फेरि तीसरे पुत्रकूं लेके राजाके द्वारपै धरिके यही कहत भयो, कि मेरो कछु दोष नहीं है या राजाके दोषते ये सब मेरे पुत्र मरेहैं ॥ २६ ॥ काहू एक समय अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्रके निकट ब्राह्मणकी बात श्रवण करिके नवम बालक जब मरि चुक्यो तब ब्राह्मणते बोलतभयो ॥ २७ ॥ हे ब्राह्मण ! तू काहेके निमित्त रुदन करे हैं तेरे रहवेके स्थान द्वारकामें धनुषको धारण करनवारो कोई क्षत्री नहीं है धन स्त्री और पुत्रनमें आसक्त यह यादव तौ यज्ञमें भोजनको आये भए ब्राह्मणनकी समान बैठे हैं ॥ २८ ॥ क्षत्रियनके जीत हैवेपैहू धन स्त्री पुत्र संयुत ब्राह्मण जहां शोच करे हैं वे उदरपोषक क्षत्रिय और विनके वेषसों नटही जीवे हैं ऐसो जाननो चाहिये ॥ २९ ॥ हे ब्राह्मण ! तुम दीन हो तुम्हारे पुत्रनकी मैं रक्षा करूंगो, और जो मोपै रक्षा न होयगी अर्थात् मेरी प्रतिज्ञा पूरण न होयगी तो ब्राह्मणकी प्रीतिसो पापरहित हैकै मैं अग्निमें प्रवेश कर जाऊंगो ॥ ३० ॥ ब्राह्मण बोलो संकर्षण वासुदेव और धनुषधारीनमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नजी तथा जाकी बराबरिको योद्धा कोई नहीं ऐसे अनिरुद्ध ये सब मेरे बालककी रक्षा करिवेकूं समर्थ नहीं होत भये ॥ ३१ ॥ जगत्के ईश्वर भगवान् श्रीकृष्ण-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चन्द्रहू जा कर्मकूं न करिसके, वा कर्मकूं तू अर्जुन कैसे करिसकेगो तूं अज्ञानते करयो चाहै है तेरी बातमें मोय विश्वास नहीं होय है ॥ ३२ ॥ अर्जुन बोलो हे ब्राह्मण ! मैं संकर्षण नहीं हूं कृष्ण नहीं हूं कृष्णको पुत्र प्रद्युम्न नहीं हूं गांडीवधनुषधारी अर्जुन नामी क्षत्री हूं ॥ ३३ ॥ हे ब्राह्मण ! तू मेरो अपमान मति करि, महादेवके प्रसन्न करनवारो मेरो पराक्रम है हे समर्थ ब्राह्मण ! संग्रामविषे मृत्युकूं जीतिके तेरे पुत्र लाय देऊंगो ॥३४॥ हे शत्रुनके तापके दूरि करनवारे राजा परीक्षित् ! या प्रकार धृष्टताके वचनसों विश्वासकूं प्राप्त हैके वह ब्राह्मण अर्जुनके पराक्रमकूं श्रवण करिके प्रसन्न हैके अपने घरकूं आवतभयो ॥ ३५ ॥ जब स्त्रीकूं प्रसूतिकालको समय आयो, तब ब्राह्मण मृत्युते "पुत्रकी रक्षा करि" या प्रकार वारंवार आतुर हैके अर्जुनते कहतभये ॥३६॥ ता समय अर्जुन पवित्र जलको स्पर्श करिके, हाथ पांव धोइ आचमन करि शिवजीकूं नमस्कार करिके दिव्य शस्त्रनको स्मरण करि प्रत्यंचा चढाय गांडीवधनुषकूं हाथमें लेतभयो ॥३७॥ अनेक अस्त्रनमें मिलाये बाण करिके सोवरके घरको पिंजरा बांधत भयो, तिरछे बाण चलाये, ऊपरकूं चलाये नीचेकूं चलायके घरके ऊपर बाणनको पिंजरा करतभयो ॥३८॥ ता पीछे ब्राह्मणकी स्त्रीके जन्म्यो बालक वारंवार रुदन करिके शीघ्रही शरीरसहित आकाशमार्ग हैकें जातभयो ॥ ३९ ॥ ता समय ब्राह्मण श्रीकृष्णचंद्रके निकटही अर्जुनकी निंदा करत यह कहत भयो मेरी मूढता देखो मैंने या नपुंसक अर्जुनको कह्यो सत्य मानो ॥ ४० ॥ प्रद्युम्नजी और अनिरुद्ध तथा बलदेवजी और श्रीकृष्णचन्द्र ये सम्पूर्ण मिलिके जाकी रक्षा न करिसके, ताकी रक्षा करिवेकूं और कौन समर्थ है ॥ ४१ ॥ मिथ्यावादी अर्जुनको धिक्कार है या अपनी श्लाघा करनवारे अर्जुनके धनुषको धिक्कार है यह दुर्बुद्धि दैवके विनाश किये पदार्थको मूर्खतासो बचायवो चाहैहै ॥ ४२ ॥ या प्रकार जब ब्राह्मणने खोटो वचन कह्यो, तब अर्जुन विद्याकूं धारण करिके यमराज भगवान्की संयमनी पुरीमें शीघ्र जातभयो ॥ ४३ ॥ तहां यमराजकी पुरीमें पुत्रकूं न देख्यो, तब वहांते अर्जुन इन्द्रकी पुरीमें जातभयो फेरि अग्निकी पुरीमें जातभयो, कुबेरकी पुरीमें जातभयो वायुकी पुरीमें जातभयो, वरुणकी पुरीमें जातभयो याके पीछे रसातलमें जातभयो, और स्वर्गमें जातभयो धनुषकूं उठाये और स्थाननमें जातभयो ॥ ४४ ॥ सर्वत्र ढूंढि आयो परन्तु कहीं ब्राह्मणनको पुत्र न मिलो तब प्रतिज्ञासो अर्जुन अग्निमें प्रवेश करवेकी इच्छा करन लगो तब श्रीकृष्ण वाको निषेध करतेभए बोले ॥ ४५ ॥ ब्राह्मणके पुत्रकूं मैं लाय देउंगो, तू अग्निमें जर मति यासो जो तेरी निंदा करे हैं वेही तुम्हारे निर्मल कीर्तिको हमारे साथ पृथ्वीमें निरन्तर गावैंगे, कि अन्तमें श्रीकृष्णके साथ अर्जुनने ब्राह्मणके पुत्रनको लायही दियो ॥ ४६ ॥ समर्थ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र या प्रकार कहिके अर्जुनकूं संग लै अलौकिक अपने रथमें चढिके पश्चिम दिशाकूं जात भये ॥ ४७ ॥ सात सात पर्वतके सात द्वीप उल्लंघन करिके, तथा सात समुद्रनकूं और लोकालोक पर्वतकूं उल्लंघन करिके बडे अंधकारमें धसतभये ॥ ४८ ॥ हे भरतवंशीनमें श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ! ता अंधकारमें शैव्य सुग्रीव मेघपुष्प बलाहक इन रथके घोडानकी गति शिथिल होतभई ॥४९॥ महायोगेश्वरनके ईश्वर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र घोडानकी शिथिल गतिकूं देखिके हजार सूर्यके तेजवारे अपने सुदर्शनचक्रकूं रथके आगे चलिवेकी आज्ञा देतभये ॥ ५० ॥ अतिघोर सघन प्रकृतिके परिणामरूप अंधकारकूं अपनी उत्कृष्ट कांतिसो विदीर्ण कर मनके तुल्यवेगवारो सुदर्शन चक्र प्रत्यंचाते सेनापें रामचन्द्रके बाणकी समान प्रवेश करतभयो ॥ ५१ ॥ चक्रके पीछे गमन करिके वा अंधकारते परे वर्तमान श्रेष्ठ व्याप्त भगवान्को प्रकाशरूप देखिके चकचौंधीसो अर्जुन दोनों नेत्रनकूं मूंदत भयो ॥ ५२ ॥ तापीछे बडी पवन चलवेसों उठी

१ अर्थात् जैसे पहले देह रहि जातो हो और प्राण चले जाते हैं ऐसे अबके वा बालकको शरीरहू उडगयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लहरनसों शोभायमान जलमें वह रथ जात भयो, ता जलमें प्रकाशमान वस्तुमें श्रेष्ठ और दीप्यमान हजारन मणिनके खंभ लगे हैं, तिनसूं शोभायमान अद्भुत भवन देखतभये ॥ ५३ ॥ ता भवनमें बडे देहवारे अद्भुत सहस्र मस्तकनमें मणिकी कांति करिके प्रकाशमान, दो हजार नेत्रनकरिके शोभायमान स्फटिक मणिके श्वेत पर्वतकी तुल्य कांति और श्यामकंठ तथा जिह्वा संयुक्त शेषनागकूं अर्जुन देखत भयो ॥ ५४ ॥ विन शेषनागके देहको सुखदायक आसन बनाये बडे प्रभाववारे पुरुषनमें श्रेष्ठ उत्तम भूमा पुरुषकूं शयन करते अर्जुन देखत भयो, जिनकी वर्षाउ मेघकी तुल्य कांति सुंदर पीत वस्त्रनकूं धारण करे प्रसन्नमुख मनोहर बडे नेत्र हैं ॥५५॥ जिनके केश बडी मणिनसो जटित किरीट और कुंडलकी कांति करिके शोभायमान लंबी सुंदर आठ भुजा, कौस्तुभमणिकूं धारण करे भृगुलत्ताके चिह्न संयुक्त वनमाला पहिरेहैं ॥ ५६ ॥ सुनंद नंद मुख्य अपने पार्षद और मूर्तिमान् चक्रते आदि लै अपने शस्त्र और पुष्टि श्री कीर्ति माया तथा समस्त अणिमादिक विभूतिनसों सेवित ब्रह्मादिदिकनके पालन करनवारे ॥ ५७ ॥ या प्रकार अनन्त भूमा भगवान्के दर्शन कर सब लोकनके पति श्रीकृष्णने अपने स्वरूपको प्रणाम कियो और भयभीत अर्जुननेहू प्रणाम कियो पीछे श्रीकृष्ण और अर्जुनकूं हाथ जोडे ठाडे देख वह पुरुष गंभीर वाणीसो मुसिकातो बोलो ॥ ५८ ॥ तुमारे देखिवेके लिये ब्राह्मणके पुत्रनकूं मैं लै आयो हूं पृथ्वीमें मेरी कलासो अवतीर्ण भये तुम पृथ्वीके ऊपर बोझरूप असुरनको मारिके शीघ्र मेरे पास आयजाओ ॥ ५९ ॥ तुम दोनों पूर्ण मनोरथ महाश्रेष्ठ नर नारायण ऋषि हो, तोहू लोकनके शिक्षा करिवेके लिये धर्म करोहो ॥ ६० ॥ श्रेष्ठ आसनपै विराजमान भगवान् भूमा पुरुषने याप्रकार आज्ञा दीनी तौ श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुन धर्म भूमा पुरुषकूं प्रणाम करि ब्राह्मणके बालकनकूं संग लैके अपने धाम द्वारकापुरीमें आयके श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन ब्राह्मणको वाही अवस्था और रूपवाले पुत्र देतभये ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रको प्रभाव देखिके अर्जुन बडो आश्चर्य मानिके पुरुषमें जो कछु पराक्रम है सो श्रीकृष्णचंद्रकी कृपाते है यह मानतभयो ॥ ६३ ॥ याप्रकार अनेक पराक्रम या संसारमें दिखायके श्रीकृष्णचन्द्र जगत्के विषयनको भोग करतभये, और बडे यज्ञनकरिके यजन करतभये ॥ ६४ ॥ समयके अनुसार धर्ममार्गमें स्थित है भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ब्राह्मणते आदि लै सम्पूर्ण प्रजाके मनोरथनकूं जैसे इन्द्र वर्षा करिके पृथ्वीकूं पूर्ण करे हैं ऐसे पूर्ण करतभये ॥ ६५ ॥ अधर्मी राजानकूं मारिके और कितनेनकूं अर्जुन भीमसेनादिकनके द्वारा घात करायके धर्मपुत्र युधिष्ठिरादि धार्मिक राजानके द्वारा अनायास संसारमें धर्म प्रवृत्त कियो ॥ ६६ ॥

हत्वा नृपानधर्मिष्ठान्घातयित्वाजुनादिभिः ॥
अञ्जसा वर्तयामास धर्मं धर्मसुतादिभिः ॥ ६६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धे उत्तरार्धे एकोननवतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥

अध्याय ९०.

श्रीशुक उवाच-सुखं स्वपुर्यां निवसन्द्वारकायां श्रियः पतिः ॥
सर्वसंपत्समृद्धायां जुष्टायां वृष्णिपुङ्गवैः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजन् परीक्षित् ! सम्पूर्ण सम्पत्तिनसों भरी और श्रेष्ठ यादवनसो सेवित द्वारकापुरीमें ॥ १ ॥ तथा जहां कि नव यौवनकी शोभासो शोभायमान और बिजरीसी कांतिवारी स्त्रियें महलमें गेंदकी क्रीडा कर रही हैं, और शृंगारसों मनोहर वेष धारण कर रही हैं ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जहांके मार्गनमें मद चुचावते हाथी और उत्तम वेष किये योधा, घोडे और सुवर्णसों दीप्तिमान रथनकी सदा भीड बनी रहतीही ॥ ३ ॥ जहां फूल फल संयुक्त बगीचा लगरहे हैं, और फूले भये वृक्षनकी पंक्तिनमें चारों ओरसों भौंरा और पक्षी निरंतर गुंजार कर रहेहैं ॥ ४ ॥ ऐसी द्वारकापुरीमें सोलह सहस्र पत्निनके प्यारे श्रीकृष्णचन्द्र जितनी स्त्रीनके जितने संपन्न महल हैं, तिनमें वितनेही विचित्र रूप धरिके विनके संग रमण करतभये ॥ ५ ॥ इन घरनमें फूलेभए उत्पल, कल्हार, कुमुद, अंभोज परागकी सुगंधियुक्त निर्मल जलवारे सरोवरनमें पक्षीनके समूह शब्द करि रहेहै ॥ ६ ॥ स्त्रीनके आलिंगनसूं कुचनकी केशरि जिनके लगि रही, ऐसे महाप्रतापी श्रीकृष्णचन्द्र सरोवरनके भीतर विहार करते भये ॥ ७ ॥ मृदंग ढोलक आदि बाजे और वीणाकूं गंधर्व बजाय रहे हैं, और सूत मागध बंदीजन स्तुति कररहेहैं ॥ ८ ॥ हँसती भई स्त्री अपनी अपनी पिचकारीनसूं भिजोती और श्रीकृष्णचन्द्रहू स्त्रीनकूं छिरकते यक्षनके राजा कुबेरकी समान क्रीडा करतभये ॥ ९ ॥ भीजे वस्त्रनकूं ऊरू, कुच प्रगट होते और ढीली चोटिनमेंते फूल गिरवेसो स्त्रीयें पिचकारीसों बचवेके कारण भगवान् श्रीकृष्णको आलिंगन करतेही कामदेवके उत्सवसो प्रकाशमान मुखवारी हैगई और भगवान्को भिजोवती शोभा पायवेलगीं ॥ १० ॥ स्त्रियनके स्तननकी केशरसो श्रीकृष्णचन्द्रकी माला भरगई, और क्रीडा करवेके कारण विनके केशबंधन शिथिल हैरहेहे श्रीकृष्ण और विनकी रानि परस्पर एक दूसरेको भिजोवतीही वा समय श्रीकृष्णचंद्र हाथिनिनके संग विहार करनहारे हाथीकी समान शोभा पावतेहै ॥ ११ ॥ नटकूं और नाचनवारी गीत गायके तथा बाजे बजायके जीविका करनहारेनकूं श्रीकृष्णचंद्र और विनकी स्त्री क्रीडा करिवेके अलंकार और वस्त्र देतभये ॥ १२ ॥ याप्रकार विहार करते श्रीकृष्णचद्रकी चलनि बोलनि मुसुकानि और हास्यकी वार्ता, क्रीडा आलिंगन करिके स्त्रीनकी बुद्धि हरिगई ॥ १३ ॥ मुकुंद श्रीकृष्णचंद्रमें एक बुद्धिवारी स्त्री प्रथम चुप हैके फेरि श्रीकृष्णचन्द्रकी ध्यान करत उन्मत्त हैके जडकी तुल्य जो वचन कहति भई तिन वचनकूं मैं कहूंहूं ॥ १४ ॥ श्रीकृष्णचंद्रके प्रेमकरिके स्त्रीनकी यह दशा है गई मानों हमारे पासते प्यारो दूरि गयो हैं, याते मतवारीकी तुल्य वार्ता कहन लगी, हे टटीहरी ! तोकूं नींद नहीं आवेहै विलाप करे हैं, सोवै नहीं हैं गुप्तचोर श्रीकृष्णचन्द्र रात्रिमें सोमेहैं तू बोलिके सोमन नहीं देइहै यह तोकूं उचित नहीं हे सखी ! कहा हमारीसी नाईं कमलनेत्र श्रीकृष्णचन्द्रकी हास्य लीलापूर्वक चितवनिसूं तेरो चित्त बंधिगयो है याहीते पुकारे हैं ॥ १५ ॥ हे चकवी ! तैंने क्यों नेत्र मूंदलिये हैं रात्रीमें पतिको न देखवेसों करुणाके मारे रोवेहैं अथवा दास्यभावमें प्राप्त भई हमारी तुल्य श्रीकृष्णचन्द्रके चरणकी प्रसादी माला अपनी चोटीपै चढाइवेकी इच्छा करेहै याहीते रोवें हैं ॥ १६ ॥ हे समुद्र ! निद्राके न आयवेसो कहा तोकोहू प्रजागर हैगयो जो सदा चिल्लायो करे है अथवा हमारीसी दशा तेरीहू है जैसे भोग करिके मुकुन्दने हमारे कुचनकी केशरि लीनी है ऐसे तोकूंहू मथिके लक्ष्मी कौस्तुभमणि निकासी लीनी हैं ॥ १७ ॥ हे चन्द्रमा ! तोकूं बलिष्ठ क्षयीके रोगने ग्रहण करिलियो है, याहीते तू क्षीणताकूं प्राप्त भयो है, अपनी किरणनकरिके अंधकारकूं नहीं दूरिकरे हैं, हमारीसी नाईं मुकुंदकी रहस्य वार्तानकूं भूलिके ताही चिन्ताके मारे क्षीण हैगयो है, हम जानै है तेरी वाणीहू हमारी नाईं बंद हैगई है ॥ १८ ॥ हे मलयाचलके पवन ! हमने तेरो कहा अप्रिय

---

१ श्रीकृष्णने कामी पुरुषोंकी समान अपनी स्त्रियोंसे क्यों विहार किया ? उत्तर—श्रीकृष्णने कलियुगी पुरुषोंकी दशा जानकर उनको उपदेश दिया कि तुम अपनीही स्त्रियोंसे लाड प्यार भरण पोषणादि करो इन्हीको सब प्रकार सुख दो तौ यह सब प्रकार तुम्हारे मनोरथोंको पूर्ण करेंगी अन्यस्त्रियोंमें मन नहीं लगाना चाहिये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करो है, जो तू गोविंदके अंगमें लगिके हमारे हृदयमें कामदेवकी अग्निकूं प्रकट करे हैं ॥ १९ ॥ हे मेघ ! हे श्रीमन् ! तू यादवनके इंद्र श्रीकृष्णचंद्रको प्यारो मित्र है, याहीते जो ताप दूर करवेके भगवान्में गुण है सो तोहूमें है सो हमारी नाईं भगवान्के प्रेममें बंधके तूहु नारायणको चिन्तवन करै है कारण कि तेरे हृदयमें जो अति उत्कंठा है यासों भृगुलताके चिह्नवारे श्रीकृष्णको स्मरण कर हमारी समान अश्रुकी धारा वहावै है तेरो हृदयहू श्याम है तैंने विनके संग सरुयता क्यौं करी विनका संग तौ दुःखदायीही है ॥ २० ॥ हे शोभायमान कंठवारे कोकिल ! मृतककूं जिवावनहारी कोमल वाणीसों प्यारी बात कहनहारे श्रीकृष्णचंद्रकेसे वचन कहै हैं तेरो मैं कहा प्रिय करूं तू मोते कहि ॥ २१ ॥ हे उदारबुद्धे ! हे पर्वत ! तू चलेहू नहीं है और बोलेहू नहीं है बडी चिन्ता करें है जैसे वसुदेवनंदनके चरणनकूं हम अपने हृदयमें धरिवेकी चाहना करे है, ऐसे तूहु अपने शिखरपै धरिवेकी इच्छा करै है जो धरेगो तौ हमारीसी दशा तेरीहू होयगी ॥ २२ ॥ हे समुद्रकी स्त्री नदिओ ! या समय ग्रीष्मके आयवेसो मेघद्वारा समुद्रको जल न पायवेसो दुर्बल सूखे ह्रद और कमलनकी हीन शोभासों हैगईहो धारा वर्षायके तुम नहीं आनंद देइ है बडो कष्ट है याहीते तुम हृदय सूखिके लटि गई, जैसे वांछित पति यदुपति श्रीकृष्णचन्द्रकी स्नेहभरी चितवनिके परे विना हमारे हृदय चुराये जायवेसो हम दुर्बल हैगई है ॥ २३ ॥ तासमय अकस्मात् आये हंसकूं दूत कल्पना करिके कहै हैं हे हंस ! तू भलो आयो, बैठ दूध पी, हे मित्र श्रीकृष्णचन्द्रकी कथा कह तू दूत हैके आयो है यह हंस जानेहैं चलायमान हृदय श्रीकृष्णचन्द्रने एकांतमें जो हमसूं कह्यो ताको स्मरण कभऊ करे हैं कि नहीं जो स्मरण करतो तौ हमकूं पास टिकाउतो हे कपटीके दूत । हमारो विनसौं कहा प्रयोजन जो हमें कामसुखके निमित्त बुलावै है तो वे यहीं क्यों ना चले आवै और जो विन्हे लावैं तो लक्ष्मीके विना इकलेही बुलायके लावनो कारण कि वह लक्ष्मी हमैं वंचित कर इकलीही भगवान्को सेवन करेहैं, जो कहो कि वे लक्ष्मीको त्याग कैसे आवैंगे तौ कहा लक्ष्मीही निष्ठावारी है हम नहीं है ॥ २४ ॥ योगेश्वरनके ईश्वर श्रीकृष्णचन्द्रमें ऐसे भाव करिके श्रीकृष्णचन्द्रकी स्त्री वैष्णवकी गतिकूं पावती भई ॥ २५ ॥ जो श्रीकृष्ण कीर्तन करवे गायवे और श्रवण करवेसो स्त्रियनके मनको हरलेइहैं और जो दर्शन करनवारिनके मनको हर लैय तौ कहा आश्चर्य है ॥ २६ ॥ हे राजन् ! जो स्त्री जगत्के गुरु श्रीकृष्णचन्द्रकूं अपनो पति मान प्रेमपूर्वक विनकी चरण आदि सेवा करत भई विनको तप और भाग्य कहांतक वर्णन करें ॥ २७ ॥ याप्रकार साधुनकी गति श्रीकृष्णचंद्र वेदविहित धर्मको अनुष्ठान करिके घरमें रहिके धर्म अर्थ विषय सेवन संसारी पुरुषनकूं वारंवार दिखावत भये ॥ २८ ॥ गृहस्थनको उत्कृष्ट धर्म पालन करते श्रीकृष्णचन्द्रके सोलह हजार एक सौ आठ रानी होतीभई ॥ २९ ॥ हे राजन्! स्त्रीनमें रत्नकी तुल्य सोलह हजार एक सौ आठ रानीमें रुक्मिणीते आदि लै आठ रानी हीं विनके पुत्रनके नामहू पहले वर्णन करचुके हैं ॥ ३० ॥ अप्रमेयगति श्रीकृष्णचंद्र जितनी भार्या हीं तिनमें एक एक भार्यामें दश दश पुत्रनकूं उत्पन्न करतभये वे सब मिलके एक लाख इकसठ सहस्र और अस्सी भए ॥ ३१ ॥ हे राजन्! विनके बडे पराक्रमी उदार यशस्वी अठारह महारथी होतभये तिनके नामनकूं मोते श्रवण करो ॥ ३२ ॥ प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, दीप्तिमान्, भानु, सांब, मधु, बृहद्भानु, चित्रभानु, वृक, अरुण ॥ ३३ ॥ पुष्कर, वेदबाहु, श्रुतदेव, सुनंदन, चित्रबाहु, विरूप, कवि, न्यग्रोध ॥ ३४ ॥ हे राजेन्द्र परीक्षित् ! मधु दैत्यके मारनवारे श्रीकृष्णचंद्रके सब पुत्रनमें रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नजी श्रीकृष्णचंद्रकी तुल्य गुणनमें होत भये ॥ ३५ ॥ महारथी प्रद्युम्न रुक्मिकी पुत्रीकूं विवाहत भये, तिन प्रद्युम्नजीते रुक्मिकी पुत्रीमें दश हजार हाथीके बलवारो अनिरुद्ध पुत्र होतभयो ॥ ३६ ॥ अनिरुद्ध रुक्मीकी पोती रोचनाकूं विवाहतभये, ता रोचनामें अनिरुद्धके वज्रनाभ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुत्र होतभयो, जो वज्रनाम प्रभासक्षेत्रको मुसललीलामें बाकी रह्यो ॥ ३७ ॥ ता वज्रनामके प्रतिबाहु पुत्र भयो, प्रतिबाहुके सुबाहु पुत्र भयो, सुबाहुके शांतसेन भयो शांतसेनके शतसेन भयो ॥ ३८ ॥ या यदुकुलमें धनहीन प्रजाहीन कोई नहीं जन्मत भयो, और थोरी आयु पराक्रमरहित ब्राह्मणको भक्तिहीन ऐसो कोई नहीं उत्पन्न होत भयो ॥ ३९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! यदुवंशमें जन्मे विख्यातकर्मा पुरुषनकी संख्या दश हजार वर्षमेंहू कहवेकूं समर्थ नहीं है सके हैं ॥ ४० ॥ तीन करोड अट्ठासी सो यदुकुलके बालकनके पढामनवारे आचार्य होतभये यह मैंने श्रवण करयो है ॥ ४१ ॥ महात्मा यादवनकी संख्या कौन करिसकेहै, जा कुलमें हजारनको दश हजार तिनके लाख इतने यादवनकूं द्वारकामें उग्रसेन वास करतभयो ॥ ४२ ॥ देवता असुरनके युद्धमें मरे दारुण दैत्यही मनुष्यनमें उत्पन्न हैके गर्ववंत है प्रजाकूं बाधा देतभये ॥ ४३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! तिन असुरनके दंड देवेके लिये हरि भगवान्की आज्ञा पाय देवता यदुकुलमें अवतार लेतभये ॥ ४४ ॥ तिन यादवनकी प्रभुतामें भगवान्ही प्रमाण होत भये, तिन श्रीकृष्णचन्द्रके आज्ञानुवर्ती सब यादव हैके वृद्धिकूं प्राप्त होत भये ॥ ४५ ॥ सोते बैठते बोलते क्रीडा स्नान भोजनादि कर्म करते श्रीकृष्णचन्द्रमें चित्त लगाये यादव अपने आत्माकूं नहीं जानतभये ॥ ४६ ॥ तासूं प्रथम श्रीगंगाजी ही अधिक तीर्थ हो जब यादवनमें श्रीकृष्णचन्द्रको यशरूपी तीर्थ प्रगट भयो तबसूं अपनो चरणोदकरूप गंगातीर्थकूंहू न्यून करत भयो, आपुही समस्त तीर्थनके ऊपर विराजनहारे श्रीकृष्णचन्द्रसूं जिन पुरुषनने वैर करयो, और जिनने स्नेह करयो वेहू तद्रूपकूं प्राप्त भये, देखो जा लक्ष्मीके निमित्त ब्रह्मादिक उपाय करें हैं काहूकूं प्राप्त न भई वह लक्ष्मीहू श्रीकृष्णचन्द्रकूं त्याग कर कहीं नहीं जाती जिन श्रीकृष्णचन्द्रको नाम श्रवण करेते, कथन करेते समस्त पापनको नाश करेहै फिर विनके स्वरूपको कहा कहनो और ऋषिनके वंशमें धर्म चलायो कालचक्र आयुधधारी श्रीकृष्णचन्द्रकूं दुष्टनको मारिवो पृथ्वीको बोझ उतारिवो वह कछु आश्चर्य नहीं है ॥ ४७ ॥ सब जीवनके अंतर्यामी रूप हैके वसनहारे श्रीकृष्णचन्द्र सर्वदा उत्कर्षतापूर्वक विराजमान है, देवकीतें जन्म भयो यह कथनमात्र है श्रेष्ठ यदुवंशीनसों सेवित इच्छा मात्रसो अधर्मके नाश करिवेमें समर्थ है तथापि क्रीडाके निमित्त अपनी भुजानसे अधर्मकूं दूरि करिके स्थावर जंगम सब जीवनको दुःख दूरि कर सुंदर मुसिकानि युक्त अपने श्रीमुखसूं व्रजकी स्त्री गोपिका और मथुरा द्वारकाकी स्त्रियनकूं कामदेव बढामनहारे सर्वदा विराजमान रहें हैं ऐसे सर्वोत्तम भगवान् कृष्णचंद्रकी जय हो ॥ ४८ ॥ अपने धर्मकी रक्षा करिवेके लिये मत्स्य कूर्मादिक अवतार धारण करनहारे यादवनमें उत्तम श्रीकृष्णचन्द्रने जो जो रूप धरिके योग्य कर्म करे हैं, तिनकूं श्रवण करिके पुरुष पाप कर्मते छुटि जाय है ॥ ४९ ॥ तीनों कालमें बडी मुक्तिके देनवारे श्रीकृष्णचंद्रकी शोभायमान कथाको श्रवण कीर्तन विचार करिके पुरुष कालकी गतिरहित भगवान्के धामकूं प्राप्त होईहै, यह श्रवण करिके चक्रवर्ती राजाहू अपनो राज्य त्यागिके श्रीकृष्णचन्द्रकी प्राप्तिके अर्थ ग्रामके बाहिर वनमें जात भये ॥ ५० ॥

मर्त्यस्तयानुसवमेधितया मुकुन्द श्रीमत्कथा श्रवणकीर्तनचिन्तयैति ॥
तद्धाम दुस्तरकृतान्तजवापवर्गं ग्रामाद्वनं क्षितिभुजोऽपि ययुर्यदर्थाः ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां दशमस्कन्धोत्तरार्धे श्रीकृष्णचरित्रवर्णनं नाम नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

दशमस्कंधभाषा समाप्त ।

दोहा—शान्त शुद्ध चैतन्यघन, कृष्ण कमलदलनैन । तिन्हैं स्मरण करत नित, तौ पावहु सुख चैन ॥ कृष्णदासके पुत्रश्री, गंगाविष्णु सुजान । अतिउदार उपकारप्रिय, सज्जनजन सुखदान ॥ तिन आज्ञासों शोधिकै, अरु दृष्टान्त मिलाय । अर्पित है सो आपको, पढैं सुजन मन लाय ॥ वसत रामगंगानिकट, नगर मुरादाबाद । नंदनंदन सुमिरन करत, नित ज्वालाप्रसाद ॥ कृष्णचन्द्रको ध्यान जो, करहिं सदा मन लाय । ते पावहिं सुख संपदा, नितप्रति सुख अधिकाय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हिन्दुस्थानी भाषाके ग्रन्थ।

८८० वाल्मीकीभाषा मूल पुस्तकके प्रत्येक श्लोकसे मिलाकर बनाई गई है .... खे १०-० १-८

८८१ शुकसागर अर्थात् श्रीमद्भागवतका ब्रजभाषामें सुललित परमोत्तम सर्व दृष्टान्तों सहित, सार्वदेशिक भाषा और नीचे टिप्पणमें श्रुति, स्मृति, इतिहास पुराण प्रमाण, राग, रागिनी, ठुमरी, पद, नित्यकीर्तन, समय समयके पद, प्रसंगानुकूल कवित्त, इत्यादि विषय इसमें बहुतही उमत्त हैं. जिल्दबंद, कागज मोटा चिकना .... क ७-० १-८

८८२ वही रफ कागज .... क ६-० १-८

८८३ तुलसीकृतरामायण सटीक लवकुशकांडसहित प्रत्येक दोहा चौपाईका अर्थ पंडित-ज्वालाप्रसादजी कृत भाषाटीका अतिउत्तम संपूर्ण क्षेपकोंके अर्थ और माहात्म्य तुलसीदासजीका जीवनचरित्र व गूढार्थ व रामवनवासतिथिपत्र कोश और हनुमानजीका चित्र तथा सूर्यवंशके वृक्ष सहित विलायती सोनहरी नाम चित्रित जिल्दकी .... क ८ ० १-८

८८४ तथा बुटीदार रेशमी जिल्द.... .... क ९-० ०-०

८८५ तथा रफू (रूखा) कागजकी .... क ७-० १-६

८८६ तुलसीकृत रामायण सटीक ऊपरके सर्व अलंकारों समेत सुन्दर मध्यम अक्षरमें क ९-० ०-१२

८८७ तथा-रफू कागद .... क ४-० ०-१०

८८८ तुलसीकृत रामायण बडे टाइपका अतिउत्तम मये (श्लोकार्थ, गूढार्थ, प्रसङ्गार्थ, छन्दार्थ, व अष्टम लवकुशकाण्ड व इतिहास तुलसीदासजीका जीवन चरित्र और पञ्चीकरण, रामचन्द्रजीके वनवासका तिथिपत्र व छत्रबंधादि कठिन शब्दोंका कोष बरवारामायणसहित ३८०० टिप्पणीके जिसमें संपूर्ण क्षेपक हैं) ग्लेज .... क ९-० १-०

८८९ और रफू कागजका .... क ४-० १-०

८९० तुलसीकृतरामायण उपरोक्त अलंकारोसमेत संजीवनी टीकासहित बारीक गुटका मुसाफिरीमें संग रखने योग्य इसकी शोभा देखनेही लायक है २-४ ०-६

८९१ तुलसीकृत रामायण क्षेपकसह मझले टाईपका अतिउत्तम मये (श्लोकार्थ, गूढार्थ, छन्दार्थ, प्रसंगार्थ, अष्टम लवकुशकाण्ड, इतिहास, दृष्टान्त, रामवनवास तिथिपत्र, तुलसीदासका जीवनचरित्र, बरवारामायणमाहात्म्य, हनुमानजीका बडा चित्र व सूर्यवंशका वृक्षसहित ३८०० टिप्पणीके जिसमें संपूर्ण क्षेपक हैं) ग्लेज .... क २-० ०-८

८९२ और रफू कागजका .... क १-८ ०-६

८९३ तुलसीकृतरामायण बारीक गुटका श्लोकार्थ, प्रसंगार्थ, छन्दार्थ, अष्टम लवकुशकांड, इतिहास रामवनवास, तिथिपत्र, बरवारामायण, माहात्म्यसहित ३८०० टिप्पणीके जिसमें संपूर्ण क्षेपक हैं देशाटन करनेवालेको अत्यन्त उपयोगी ग्लेज कागजका .... क १-० ०-४

८९४ तथा रफू कागज .... क ०-१२ ०-४

८९५ श्रीरामचरितमानस उत्तम छोटा गुटका [पाकिटबुक] सुनेहरी जिल्दका .... क ०-१० ०-६

८९६ श्रीरामचरितमानस मध्यम अक्षर .... क १-८ ०-२

८९७ तुलसीकृतरामायणका सुन्दरकाण्ड .... क ०-३ ०-॥

८९८ ,, किष्किन्धाकाण्ड .... क ०-३ ०-॥

८९९ तुलसीकृत रामायण सुंदरकांड सटीक पं० ज्वालाप्रसादकृत .... क ०-६ ०-१

९०० तुलसीकृत रामायण किष्किन्धाकांड सटीक पं० ज्वालाप्रसादकृत .... क ०-६ ०-१

९०१ तुलसीदासकृत षोडश रामायण .... खे २-० ०-४

९०२ दोहावलीरामायण तुलसीदासकृत.... क ०-३ ०-॥

९०३ ब्रजविलास मोटा अक्षर .... क ६-० १-०

९०४ तथा रफू .... क ४-० ०-१०

९०५ ब्रजविलास मध्यम अक्षरका ग्लेज.... क २-० ०-८

९०६ तथा रेशमी जिल्दका .... क २-० ०-८

९०७ तथा रफूकागज .... क १-८ ०-६

९०८ ब्रजविलास गुटका .... मु ०-१२ ०-२

९०९ श्रीमहाभारतभाषा सचित्र (सबलसिंह चौहानविरचित) जिसमें आदि, सभा, वन, विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, गदा, आदि अठारहों पर्व अत्युत्तम दोहा चौपाइयोंमें वर्णित समय समयका उत्तम चित्र दिया है ३-८ ०-१२

९१० महाभारतभाषा पंचपर्वी (जिसमें भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, गदा ये युद्धके पांच पर्व दोहा चौपाईमें वर्णित हैं) ०-१४ ०-४

९११ श्रीगहिरगंभीर सुखागर ४ भाग (१ विष्णुविलास २ ब्राह्मणस्वदर्पण ३ भजनावली ४ सेवक शब्दावली) .... क ४-० ०-८

९१२ श्रीरामलक्ष्मानहछू वैराग्यसंदीपिनी पार्वतीमंगलक०-२ ०-॥

९१३ श्रीकविकालीदासकृत जंजीरा .... क ०-२ ०-॥

९१४ श्रीकृष्णराधामंगल और हनुमानस्तुति क ०-१ ०-॥

९१५ श्रीकृष्णगीतावली .... क ०-२ ०-॥

९१६ श्रीवंशीविलास मथुराका .... क ०-१२ ०-२

९१७ श्रीरामजनम भाषामें .... क ०-२ ०-॥

९१८ अनेकसंग्रह भाषा (दो भाग) .... क २-० ०-६

९१९ अमृतकी बूंद .... क ०-१ ०-॥

९२० अर्जुनगीता भाषा.... .... क ०-४ ०-॥

९२१ अमृतधारावेदान्त .... मु ०-१२ ०-२

९२२ अनुरागरसभाषा नारायणस्वामिकृत पद्योंमें क ०-३ ०-॥

९२३ अहिरावणलीला भाषा पद्योंमें .... क ०-३ ०-॥

९२४ आनंदबहार .... क ०-१ ०-॥

९२५ अद्भुत रामलीला .... क ०-२ ०-॥

९२६ अभिलाखसागर वेदांत .... क १-८ ०-४

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

९२७ अन्वयप्रबोध .... क ०-२ ०-॥
९२८ अग्निवेश रामायण भा० टी०.... .... क ०-४ ०-१
९२९ अनुरागप्रकाश .... क ० १० ० २
९३० आल्हारामायण सातों कांड.... .... क ०-१० ०-२
९३१ आल्हारामायण (आरण्यकांड) .... क ०-६ ०-॥
९३२ आल्हारामायण (सुंदरकांड) .... क ०-४ ०-॥
९३३ आल्हारामायण (लंकाकांड) .... क ०-८ ०-१
९३४ आल्हखण्ड-आल्हाऊदल पृथ्वीराज कनौजी आदि क्षत्रियोंका उद्भट युद्ध ५२लड़ाईमें क २-४ ०-१
९३५ आनंदसागर .... क ०-७ ० ६
९३६ आनंदसरोवर-जिसमें ईश्वरस्तुति, प्रार्थना, धर्मविषयक अनेक रागरागिनियोंमें कवित्त, भजन, ठुमरी, दादरा, गजल, सावन, चौमासा, बारामासी, होरी, ख्याल, शैर, लावणी आदि संग्रह है .... क ०-७ ०-१
९३७ आरती संग्रह २९ आरतीका बड़ा.... क ०-२॥ ०-॥
९३८ अभ्यारम्भप्रकाश .... श्री ०-३ -०॥
९३९ इतिहासकथा सत्यनारायण तथा ख्याल अष्टपदी कवितामें.... .... क ०-२ ०-॥
९४० उषाचरित्र भाषापद्योंमें .... क ०-४ ०-॥
९४१ उपदेशचंद्रिका .... क ०-२ ०-॥
९४२ एकादशस्कन्ध भाषाटीकासहित नूतन छपा है जिल्द बंद ग्लेज .... क १-८ ०-३
९४३ ,, तथा रफ़ कागज .... क १-४ ०-३
९४४ कवित्तरामायण .... क ०-४ ०-॥
९४५ कवित्तरामायण सटीक .... खे ०-१४ ०-२
९४६ कबीरकसौटी (श्रीकबीरजीकी साखी और उनका दृष्टांतोंसे प्रतिपादन है).... क ०-४ ०-१
९४७ कलिप्रपंचपच्चीसी .... क ०-१ ०-॥
९४८ कजरीरागसंग्रह .... क ०-२ ०-॥
९४९ कान्यकुब्ज चिंतामणि भा०टी० क ०-८ ०-१॥
९५० कान्यकुब्जवंशावली भाषाटीका .... क ०-१० ०-१॥
९५१ कुण्डलिया गिरधररायकृत (सामयिकनीति वेदान्त संयुक्त) .... क ०-४ ०-॥
९५२ केदारनाथका नकशा .... क ०-१ ०-॥
९५३ गजलसंग्रह .... क ०-४ ०-॥
९५४ गजेन्द्रमोक्ष भाषाटीका .... क ०-४ ०-॥
९५५ गणपतिशतक भाषा .... क ०-२ ०-॥
९५६ गंगाविष्णुमंडन .... क ०-२ ०-॥
९५७ गंगाविष्णुमण्डनका उत्संगपत्र .... क ०-१ ०-॥
९५८ गीतामृतधारा भाषा .... क ०-८ ०-१
९५९ गीतामाहात्म्य (भाषा) चौपाई, दोहा, सोरठा, छंद इत्यादिकोंमें .... क ०-१॥ ०-॥
९६० गीतावली रामायण भाषाटीका .... क २-० ०-४
९६१ गीता गुजरातीभाषाभिश्रित .... मु ०-१० ०-२
९६२ गीतामाहात्म्य भा० टी० १८ अध्याय श्री ०-१२ ०-२
९६३ गुरुगीताभाषाव्याख्या .... क ०-२ ०-॥
९६४ गुरुचरितामृतभाषा .... मु ०-६ ०-१
९६५ गुलबकावली.... .... क ०-१० ०-१
९६६ गूजरगीत मंगल .... क ०-४ ०-१
९६७ गोविंदगुणवृन्दाकर जिसमें दोहा सवैया आदि छन्दोंमें भगवान्का वर्णन लिखके उसके नीचे स्पष्ट भाषामें अर्थ लिखा गया है.... क ०-१२ ०-२
९६८ गोपीवियोगकी बारहखडी [लालाशालिग्राम कृत दत्तलालकी बाराखडी सहित] .... खे ०-२ ०-॥
९६९ गोपदेशचंद्रिका .... क ०-१॥ ०-॥
९७० गोपीनके प्रेमकी उन्मत्त अवस्थालीला. क ०-३ ०-॥
९७१ गोवर्द्धन लीला .... क ०-४ ०-॥
९७२ गोदोहनलीला .... क ० २ ०-॥
९७३ गोविन्दाष्टक तथा कृष्णाष्टक छन्दबद्ध क ०-१ ०-॥
९७४ गोपालइकतीसी .... क ०-१ ०-॥
९७५ गोपीचंद्भरतरी .... क ०-२ ०-॥
९७६ जोगभरथरी चरित्र .... क ०-१॥ ०-॥
९७७ गोविन्दशतक जिसमें भक्तमनानन्ददायक सर्वजगनायक श्रीराधारमणबिहारी मायामनुजतनुधारी करुणावरुणालयके निकट पूर्वार्द्धमें विनय तथा उत्तरार्द्धमें सुललित लीला वर्णित है .... क ० ३ ०-१
९७८ गौरीस्वयंवर मंजरी .... क ०-३ ०-॥
९७९ गौका चित्र .... क ०-१ ०-॥
९८० घरमासा .... क ०-१ ०-॥
९८१ चान्द्रायणव्रतकथा .... श्री ०-१ ०-॥
९८२ चाणक्यनीति भाषाटीका श्लोक दोहासहित क ०-८ ०-१
९८३ चेतावनी अर्थात् ज्ञानसुरसरी (संग्रह किये ५०० दोहे हुए है) .... क ०-६ ०-॥
९८४ चीरहरण लीला .... क ०-२ ०-॥
९८५ चौतालचंद्रिका .... क ०-४ ०-॥
९८६ चिट्ठीदोहाप्रकाश (चिट्ठी लिखनेकी) क ०-४ ०-॥
९८७ छप्पयरामायण .... क ०-१॥ ०-॥
९८८ जलोत्सर्गप्रकाश वापी, कूप, तडागादिका खे १-१२ ०-४
९८९ जगन्नाथशतक-इसमें रघुराज सिंह रीवाँधिपतिके बनायेहुये १००कवित्त विनयके हैं क ०-४ ०-॥
९९० जगद्विनोद [पद्माकरकृत नायकाभेद] .... खे ०-८ ०-१
९९१ जादूबंगाला भाषामें.... .... क ०-१ ० ॥
९९२ जानकीमंगल .... क ०-१ ०-॥
९९३ जानकी सरसई इसमें नायक नायिका लक्षण चेट विट विदूषक आदिकोंका लक्षण शृंगारादि सब रसोंका निरूपण स्थायि भावोंका वर्णन दश अवस्थाओंका बयान स्त्रीका नखशिख वर्णन इत्यादि साहित्यके बहुत विषय हैं कुल दोहे ७०० हैं.... क ०-६ ०-॥
९९४ जीवनचरित्र तुलसीदासजीका नवीन बड़ा(श्रीराणी कमलकुँवरीकृत).... क ०-८ ०-१
९९५ ताजीरात हिंद (नूतन आवृत्ति) .... क १-१२ ०-४
९९६ तीर्थमाला (अर्थात् तीर्थदर्पण और पवित्र स्थाननिरूपण) .... क ०-५ ०-॥

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना-गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
' लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर ' छापाखाना, कल्याण-मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

एकादशस्कन्धप्रारम्भः।

अध्याय १.

ब्रह्म सच्चिदानंदघन, व्यापक हरि सब ठौर ॥ धरिये ताका ध्यान जो, मायाको शिर मौर ॥ १ ॥

ॐनमो भगवते वासुदेवाय ॥

श्रीबादरायणिरुवाच-कृत्वा दैत्यवधं कृष्णः सरामो यदुभिर्वृतः ॥
भुवोऽवतारयद्भारं जविष्ठं जनयन्कलिम् ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ पहिले दशमस्कंधमें भक्तनके उद्धारिवेको भूभार हरणको प्रगट भये श्रीकृष्णचंद्रकी लीला कही, अब एकादशस्कंधमें भक्तनको उपदेश और पूजामार्ग भक्तिमार्गको फल निर्णय करि कहैंगे, और सब भक्तनको अपने स्थानकों प्राप्त करैंगे, ऐसी भांति या एकादशस्कंधमें मुक्तिलीला कहैं जे तहां पहिले कुरुक्षेत्रमें वसुदेव नारदसो कर्मयोग पूंछत भये, तब नारद कर्मयोग सब कहत भये, ताते चित्त शुद्ध भयो, जब वसुदेवजीको ज्ञान उत्पन्न भयो अर्थात् श्रीकृष्ण राम ये दोऊ साक्षात् ईश्वर हैं सो फिर वह ज्ञान रह्यो नहीं, तातें फेरि ब्रह्मज्ञान नारदसौं पूछेंगे तब नारद पांच अध्याय करि वर्णन करैंगे, तहां पहिले अध्यायमें वैराग्य उपजायवेके कारण यदुकुलको ब्रह्मशापके मिष करिकै विषयसुखको अनित्य कहैं हैं पीछे चारि अध्यायन करि राजा जनकको और नव योगीश्वरनको संवाद कहैंगे, तामें परमतत्व निरूपण करैंगे, छठे अध्यायमें श्रीकृष्ण उद्धवको संगम कहैंगे, पीछे तेईस अध्यायन करि उद्धवको श्रीकृष्ण परमतत्व निरूपण करैंगे, पीछे द्वै अध्यायकरि यादवनको संहार कहैंगे, या भांति इकतीस अध्याय करि एकादशस्कंध कहैंगे, तहां पहिले पूर्वस्कंधकी कथा सुधि करिकै शुकदेवजी आरंभ करैं हैं, दैत्यनको वध करि श्रीकृष्ण बलदेवजी मिलि करिकै यादवसहित कौरव पांडवनमें शीघ्र कलह उत्पन्न करि पृथ्वीको भार उतारत भये ॥ १ ॥ जे पांडुके पुत्र शत्रुनसो बहुत कोपित कराये गये, कपटयुक्त जूआ खेल जिनको राज्य लियो अवज्ञा करि द्रौपदीके केश ग्रहण किये, तिनहीको निमित्त करि दोउ पक्षमें मिले राजानको मारिकै पृथिवीको भार उतारते भये ॥ २ ॥ अप्रमेय भगवान् श्रीकृष्ण फिर विचारनै लगे कि यद्यपि मैंने भूमिको भाररूप राजसेना अपने बाहुसौं पालित यादवनसौं नाश कराई तोहू भूमिको भार न गयो, क्यों कि जो अभी यदुकुल बडो अनंत बाकी है, यह बडो भार है यासो या गये भारको नहीं गयेकी तरह मानौं हौं ॥ ३ ॥ जाके मैं आश्रय हौं ताको पराजय तो औरतें न होइ और ये तो सब यादव वैभव करि उद्धत भये हैं तातें इनमें आपुसमें कलह उपजाइकै जैसे बांसनके वनमें रगडसौं

दोहा ॥ मंगलमूरति सुखकरन, दुःखहरन यदुवीर ॥ कृपा करहु जन जान निज, सुंदर श्यामशरीर ॥ १ ॥ एकादशस्कंध यह, ज्ञानकाण्डको सार ॥ शुद्ध कियो कल्याणहित, कछु निजमति अनुसार ॥ २ ॥ कहत प्रथम अध्यायमें, यादवकुलको शाप ॥ मुसल भयो जिमि सांबके, प्रजहि भयो परिताप ॥ ३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उपजी आगि बांसनको जलायके शांत होय है ऐसेही यादवनमें क्लेश उत्पन्न कर इनको संहार करके शांतिको प्राप्त हेके अपने धामको पधारूंगो ॥ ४ ॥ हे राजन् ! या प्रकार बुद्धिसों निश्चय करि सत्य संकल्प ईश्वर श्रीकृष्ण ब्रह्मशापके मिषसों अपनो कुलसंहार करत भये ॥५॥ जाके समान लोकमें कोई सुंदर नहीं जाके निमित्तसों लोक शोभाको प्राप्त होय हैं ऐसे अपने शरीरसों भक्तजननके नेत्रनको अपनेमें आसक्त कर तथा अपने मनोहर वचनसों विन वचननके स्मरण करनवारे लोकनको चित्त आकर्षण कर रजसो चिह्नित अपने पदकमलनके अवलोकन करनवारे प्राणिनकी अन्य स्थाननमें जायवेकी चेष्टाको रोककर समयमें उत्पन्न होनवारे प्राणी याही अवम्बलसों संसारके पार हैजायगे ऐसो विचार कर पुण्यात्मानमें धारण करी जाय ऐसी अपनी कीर्तिको पृथ्वीमें फैलायके श्रीकृष्ण अपने धामको पधारे ॥६॥७॥ परीक्षित् बोले हे शुकदेवजी ! हे प्रभो ! जे यादव अतिब्रह्मण्य अतिदांत सत्यवक्ता नित्य वृद्धनकी सेवा करनवारे सदा कृष्णमें मन लगाये रहैं हैं विनको ब्राह्मणनको शाप कैसे भयो ॥ ८ ॥ जिनको मन श्रीकृष्णमें लगो हो विनकों ब्राह्मणनको कोप होय तोहू शाप लगानो नहीं चाहिये तो यह यादवनको शाप कैसे लगो हे शुकदेवजी ! यह शाप जा कारणसों भयो और सम्मतिसों रहनेवाले यादवनमें भेद कैसे भयो सो हमसों कहो ॥ ९ ॥ शुकदेवजी बोले पहिले भक्तनके सुख देवेके अर्थ भगवान्नै सकल सुंदरतानिधान स्वरूप धर अत्यंत मंगलकर्म भूमिमें किये, यद्यपि आप पूर्णकाम हैं तथापि फेरि द्वारकामें धाम करि क्रीडा करते सब भक्तनको सुख दियो, पहिले जीवनके उद्धारको उदार कीर्ति विस्तारी, आगे अपने कुल संहारकी इच्छा करतभये कारण कि इतनोही कृत्य बाकी रह्यो है ॥ १० ॥ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जो कार्य करतेहे वे कर्म केवल कीर्तन करवेसोही पुण्यके बढानेवारे सुखरूप और कीर्तन करवेवारेनके पाप दूर करनवारे हे ऐसे कर्म करवेके निमित्त बुलाये ब्राह्मणनको इन सब करमनसों निश्चिन्त हो श्रीकृष्णनै पिंडारक नाम स्थानपर जायवेको कही तब मुनि तहां जातभये भगवान् श्रीकृष्ण कालरूप हैवेसो वसुदेवजीके घरमें रहकर अपने कुलको निर्मूल करनो चाहतेहे याही कारण ऋषिनको पिंडारक स्थानमें भेजो सो वे सब पिंडारकनाम तीर्थमें वे ऋषि चलेगये ॥ ११ ॥ तिन मुनिनके नाम कहैं हैं विश्वामित्र, असित, कण्व, दुर्वासा, भृगु, अंगिरा, कश्यप, वामदेव, अत्रि, वसिष्ठ, नारद आदि लेकरि औरहू मुनि हैं ॥ १२ ॥ इन ऋषीश्वरनके पास सब यदुकुमार खेलत २ जाइकरिकैं पाय परि परि नमस्कार करि पूछत भये, परन्तु विनके मनमें कपट भरो हो ॥ १३ ॥ अब उन सब बालकनको प्रश्न हैं ते सब बालक जांबवतीके पुत्र सांबको स्त्रीवेष बनाई पूछत भये, अहो मुनीश्वर ! तुम सर्वज्ञ हो यह गर्भवती है याके पुत्रकामना है, और प्रसव होनहार है, तुमसो साक्षात् पूछत लज्जा करे है, याके कहा होइगो पुत्र या कन्या यों पूछतभये ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ या भांति छलसो यादवनके बालक पूछत भये, तिनपै कुपित होइ मुनि बोले हे मूर्खो ! यह तुम्हारे कुलनाशक मूशलको जनेंगी ॥ १६ ॥ यह सुनि अति भयभीत भये बालक उतावलसों सांबके उदरको खोलकरि लोहेको मूशल देख त्रासित होत भये ॥ १७ ॥ परस्पर बोले मंदभागी हमनें यह कहा कीनो, हमसों मनुष्य कहा कहैंगे, या भांति विह्वल भये मूशलको ले आवतभये ॥ १८ ॥ उनके मुखकी शोभा अतिमलीन भई, सब बालक वा मूशलकों सभाबीच लायके सब यादवनके निकट राजा उग्रसेनसों कहतभये, परन्तु श्रीकृष्णसूं नहीं कहतभये ॥ १९ ॥ सफल नाम

---

१ दोहा—अहो भाग्यकी बात जब, होत समै विपरीत । ताकी यह पहचान है, करत सो उलटी रीत ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

खाली न जाय ऐसे शापको सुनिकै और मुशल देखिकै द्वारकाके वासी अचरज मानतभये और भयभीत भये ॥ २० ॥ श्रीकृष्णके विना पूछे वह यादवनको राजा उग्रसेन ता मूशलको चूर्ण कराइ समुद्रके जलमें वहावत भये रेतवेते शेष जो लोहो रह्योहो सोऊ समुद्रमें डारत भये ॥ २१ ॥ कोउ मत्स्य वा लोहको निगलि गयो, और चूर्ण सब तरंगनिसों समुद्रनें तीरपै डारि दीनो, तेई सब पटेरे उपजत भए ॥ २२ ॥ वह मत्स्य समुद्रमें और मत्स्यनके संग धीमरने जालमें पकरयो, वाके उदरतें लोह निकस्यो, ताकी वधिकने तीरकी भाल करी ॥ २३ ॥ भगवान् ईश्वर सकल अर्थके ज्ञाता हैं, तौहू निवारणकी इच्छा नहीं करक विप्रशापहीको मुख्य करतभये कारण कि या समे आपु कालरूप हैं ॥ २४ ॥

भगवान्ज्ञातसर्वार्थ ईश्वरोऽपि तदन्यथा ॥
कर्तुं नैच्छद्विप्रशापं कालरूप्यन्वमोदत ॥ २४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच-गोविन्दभुजगुप्तायां द्वारवत्यां कुरूद्वह ॥
अवात्सीन्नारदोऽभीक्ष्णं कृष्णोपासनलालसः ॥ १ ॥

दूसरे अध्यायमें भक्तिसों पूछे वसुदेवजीकों नारद जनक और नवयोगीनके संवादकरि शुद्ध वैष्णव धर्म कहैंगे ॥ तहां श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् ! गोविंदकी भुजनसों पालित द्वारकामें श्रीकृष्णकी उपासनामें प्रेम करवेवारे नारदजी निरंतर वसतभये ॥ १ ॥ जा श्रीकृष्णकी उपासनामें मुक्तनहूकी उत्कंठा होइ, ताको कौन न भजे, यह कहैं हैं सर्वत्र मृत्युसों त्रासित कौन इन्द्रियवंत भगवान्के चरणकमल न भजे जिन चरणकमलनको देवतानमें श्रेष्ठ ब्रह्मादिक सेवा करैं हैं ॥ २ ॥ एक दिन नारद वसुदेवके घर आये, तब वसुदेवजी उत्तम आसनपर बैठारि पूजा नमस्कार करि पूछतभये ॥३॥ हे भगवन् ! जैसे हरिकी प्राप्तिको मार्गरूप महत् पुरुष हैं, तिनको आइवो दीननकै कल्याणके निमित्त है और जैसे माता पिताको आइवो पुत्रादिकनके सुखके निमित्त है, तैसे तुमारो आगमन सब देहधारीनके कल्याणको है ॥ ४ ॥ महात्मानकों देवताहूंकी उपमा अनुचित है, यह कहैं हैं, प्राणीनको देवतानको चरित बहुतवृष्टि आदिकरि दुःखहू करै सुखहू करैहै परन्तु साधुनको चरित तो सदा सुखही करैहै या कारण तुम सारिखे अच्युतरूपनको आगमन तो सुखहीके निमित्त है ॥ ५ ॥ और देवता सुखहू देहैं तौ भजन करिवेके अनुसार देहैं, तैसे साधु तो नहीं देहैं सो कहैं हैं, जैसे छाया पुरुषकी चेष्टाके अनुसार होय है तैसे देवता कर्मानुसार फल दैयहैं परन्तु आपसे साधु तौ दीननको देखतेई कृपालु होय हैं ॥ ६ ॥ हे नारद ! हम यद्यपि तुमारे आइवेसोंही कृतार्थ भये तथापि तुमको जिन धर्मनसों भगवान् प्रसन्न होय वे वैष्णवधर्म पूछैहैं जिन धर्मनको श्रद्धातें सुनेते मनुष्य संसारते

१ यहां दृष्टांत है कि एक देवीके भगतने देवीके जाय फूट्यो नारियल भेट धर्यो और कही है हे देवी मैया ! मेरे बेटा होय तब वाके बेटा भया परंतु काणो भयो तब वह देवीकों भगत देवीते जायके बोल्यो कि क्यौंरी देवी ! तैंने मेरे काणो बेटा क्यों दीनो तब देवी बोली कि जैसी तेरी कौमरी तैसे मेरे गति जैसो फूट्यो नारियल तैंने भेट कर्यो ऐसो काणो बेटा मैंने तोकूं दीनो, याते देवतानको चरित्र सुखदुःख दोनो देयहै, परंतु हमारे महात्मानको संग तो सदैव सुखही देयहै ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

छूटैहैं ॥ ७ ॥ कदाचित् तुम कहो भगवान्के प्रसन्नताके पात्र तुमतें परे और कोई नहीं है तहां वसुदेवजी कहैं हैं हे नारद ! मुक्तिदाता अनंत भगवान्को मैंने पुत्र कामनाकरि प्रथम आराधन कीनो, देवमाया करि मोहित होय मोक्षप्राप्तिके अर्थ आराधन नहीं कियो यह बात सूतिकागृहमें श्रीकृष्णने कही सो मोको स्मरण है ॥ ८ ॥ हे नारद ! ताते अनेकदुःखसंयुक्त सब ओरतें भयवारे संसारसों जैसे श्रम विना में छूटों तैसी हमको तुम शिक्षा देउ ॥ ९ ॥ हे राजन् ! बुद्धिवंत वसुदेवजीने जब ऐसे कह्यो, तब हरिके गुणनकी सुधि दिवाएते प्रसन्न भये देवऋषि नारद वसुदेवजीसों कहत भए ॥ १० ॥ हे यादवनमें श्रेष्ठ वसुदेव ! तुमने यह भलो निश्चय उत्तम प्रश्न कीनो, जातें तुम संपूर्णके चित्त शुद्ध करनवारे वैष्णवधर्मनको पूछौहो ॥ ११ ॥ ये धर्म सुननो स्मरण करनो श्रद्धा करि आदरतें ध्यान करवेसो सम्मति दैवेसो सम्पूर्ण विश्वके पातकी जननकोहू शीघ्र पवित्र करदेय है कारण कि यह भगवत्सम्बन्धी धर्म है ॥ १२ ॥ हे वसुदेव ! तुमने परमकल्याणरूप पुण्यश्रवणकीर्तन देव नारायणको स्मरण करायके मोको पवित्र कियो जो विनकी सुध तुमने दिवाई ॥ १३ ॥ अब यहां मैं तुमसों प्राचीन कथा कहूंहूं; उदारचित्त राजा जनक और ऋषभदेवके पुत्र नव योगीश्वरनको संवाद हैं ॥ १४ ॥ स्वायंभुवमनुको प्रियव्रत नाम पुत्र भयो, ताको पुत्र आग्नीध्र भयो, ताको नाभि भयो, ताके ऋषभदेव भये ॥ १५ ॥ तिनके मध्य नवयोगीश्वरनको चरित्र कह्यो चाहैहैं तातें औरनको चरित्र न्यारो कहेहै, विन ऋषभदेवकों वासुदेवकों अंश कहैहैं विननें मोक्षधर्म कहिवेकों अवतार लियो तिनके १०० पुत्र भये ते सिगरे वेदपारंगत भये ॥ १६ ॥ तिनमें नारायणपरायण भरतजी श्रेष्ठ भये, यह अजनाभखंडही जिनके नामसै भरतखंड प्रसिद्ध भयो ॥ १७ ॥ सो राजा भरत पृथिवीकों भोग करि याकों छोडिकरिकै तपस्याको निकसे, हरिकी उपासना करते तीनि जन्ममें हरिकी पदवीकों प्राप्तभये जिनको चरित्र पहले पंचमस्कंधमें कहिआये हैं ॥ १८ ॥ या भरतखंडके चारों ओर विनके नौ पुत्र नौऊ द्वीपके पति भये, इक्यासी पुत्र कर्ममार्गके प्रवर्त्तक ब्राह्मण भये ॥ १९ ॥ और जे नव पुत्र महाभागवत मुनि भये वे परमार्थके उपदेश कर्ता आत्मज्ञानके अभ्यासमें तत्पर, दिगंबरवेष आत्मविद्यामें पारंगत भये ॥ २० ॥ तिनके नाम कहैं हैं, कवि, हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस, करभाजन ॥ २१ ॥ वे सब या विश्वको भगवद्रूप करिकै देखतभये, स्थूल सूक्ष्मको आत्मातें भिन्न देखतभये, वे सब आत्मरूपहीकों देखते संपूर्ण पृथिवीमें फिरत भये ॥ २२ ॥ अप्रतिहतगतिसौ आसक्तिरहित यह योगीश्वर देवता, सिद्ध, साध्य, गंधर्व, यक्ष, मनुष्य, किंन्नर, नाग, मुनि, चारण, भूतनाथ, विद्याधर, ब्राह्मण, गोलोकनमें अपनी इच्छासौ विचरते हैं ॥ २३ ॥ वे सब स्वेच्छासो एक दिन अजनाभखंडमें ऋषिन करि विस्तृत उदारचित्त राजा जनकके यज्ञमें आवत भये ॥ २४ ॥ सूर्य्य समान तेजस्वी परमभागवतनकों देखि यजमान अग्नि ब्राह्मण सब उठि ठाढे भये ॥ २५ ॥ तब राजा जनक विनकों नारायण जानि प्रसन्न भये आसन दे यथायोग्य पूजा करत भये ॥ २६ ॥ अपनी कांतिकरि शोभासंयुक्त सनकादिकनके समान विन नौऊनको देखि प्रसन्न बहुत भये विनयकरि नम्र ह्वैकै पूछत भये ॥ २७ ॥ पहिले उनकी स्तुति करी कि तुम साक्षात् मधुदैत्यके द्वेषी भगवान्के पारषद हो, जो तुम विष्णुभक्त हौ लोकनकों पवित्र करवेकों सब ठौर विचरो हो ॥ २८ ॥ मैंने दुर्लभवस्तु पाई हैं, ताते मेरो बडो भाग्य है, यह कहैहैं देहधारीनको जो क्षणभंगुरहू शरीर है तोहू मनुष्यदेह दुर्लभ है, ताहूमें भगवान्के प्रिय भक्तनको दर्शन अति दुर्लभ हैं ॥ २९ ॥ हे निष्पापो ! याते मैं तुमसों अत्यंत कल्याण पूछूं हूं, या संसारमें अर्द्ध क्षणहूं सत्संग मनुष्यनको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बडी निधि है ॥ ३० ॥ ताते हमें सुनिवेको अधिकारी जानों तौ मोसों वैष्णवधर्म कही जिन धर्मनकरि प्रसन्न भये भगवान् भक्तनको अपनो आत्माहूको देय है ॥ ३१ ॥ नारदजी बोले हे वसुदेव ! ऐसे राजा जनकके पूछें वे "अति बडे महंत" ऋत्विज और सभासदसहित राजा जनककी स्तुति प्रीतिपूर्वक करत भये ॥ ३२ ॥ जनकने नौ प्रश्न कीनें प्रथम वैष्णवधर्म, दूसरो परमेश्वरकी भक्ति, तीसरे माया, चौथो मायाको तरणो, पांचवें ब्रह्म, छठ्यो कर्म, सातवों अवतारचरित्र, आठ्यो भक्तिप्राप्ति, नौयों युग; इन एक एक प्रश्नको उत्तर नौहू मुनीश्वर देत भये, तहां प्रथमही अति कल्याणरूप धर्म कवि योगीश्वर बोले कि हे राजन् ! मैं तौ ऐसो मानों हौं हरिके चरणारविंदनकी उपासनाही सब प्रकारके भय दूर करै है जाके करवेसों देहादि भिन्न पदार्थनके गर्वसौ सदा उद्वेगको प्राप्त हेकै यह पुरुष संसारके भयसौ छुटजाय है ॥ ३३ ॥ वैष्णव धर्मके लक्षण कहे है प्रथम मनु आदि ऋषिनके मुखसों वर्ण आश्रम धर्म सब कहैं हैं, पीछे अति रहस्यतें अपने मुखसै भगवान्ने अज्ञानियनकों सुखपूर्वक आत्मज्ञान पाइवेके जो उपाय कहे हैं वे सब वैष्णवधर्म हैं ॥ ३४ ॥ विन धर्मनकों आश्रय कर मनुष्य कबहूं विघ्नसौं नहीं पीडित होयहैं हे राजन् ! नेत्र मूंदिके दौरे तौहू नहीं गिरै ता कदाचित् वर्ण आश्रम धर्म न बन पडे तौहू प्रतिवादी नहीं होय है और न फलतें भ्रष्ट होय है ॥ ३५ ॥ जे विधिसौं बताये शास्त्रोक्त किये कर्मही नारायणके अर्पण करै यह नियम नहीं है किन्तु शरीर वाणी मन बुद्धि अहंकार और अध्याससौ माने भए ब्राह्मणत्वादि सौहू जो कछु कर्म करवेमें आवै वे सब परमेश्वरके अर्पण करवेसौ शारीरिकी क्रिया सब नारायणसम्बधी धर्मरूप हो जाय हैं ॥ ३६ ॥ परमेश्वरसों विमुखको विनकी मायासो भगवत्स्वरूपको ज्ञान नहीं होयहै तातें अहंदेह अभिमान होइहै तब दूसरेके अभिनिवेशतें भय होय है जाकारण कि जिनकी मायासो भंय होयहै यातें गुरुको देवता और इष्ट माननेवारे बुद्धिवंत निश्चयकरि भक्तिसे ईश्वरहीकों भजें, तहां पूर्वपक्षमें कहैं हैं कि चित्त विषयनसो चंचल होइ विनकों निश्चल भक्ति कैसे होई, और भक्ति न होई तो भय कैसे जाइ ताको उत्तर है कि विषय कछु वस्तु नहीं हैं केवल मनको विलास मात्र है, यातें मनकों निग्रह करिके जो भजन करै तौ अभय होइ, यद्यपि यह प्रपंच सब ब्रह्मरूपही है दूसरो कोऊ नहीं हैं ॥ ३७ ॥ तथापि अविद्यासौं द्वैत भासै है जैसे ध्यानकर्ता पुरुषकों मनसो स्वप्न और मनोरथ दीखै है तातें संकल्प विकल्पके कर्ता मनकों बुद्धिवंत रोकै, तब निश्चल भक्ति करिकै भजनतें अभय होइ ॥ ३८ ॥ जे जगदीशके शुभ कर्म जन्म हैं और जे जन्म कर्म करिकै भये नाम लोकमें प्रसिद्ध हैं तिनकों लज्जा छोडिके निस्पृही ह्वैकै गावतफिरे ॥ ३९ ॥ ऐसे भजन करवेसौ प्रेमलक्षणा भक्तियोगकों प्राप्त हैवेसौ वाकी संसारतें न्यारी गति कहैं हैं, ऐसो जाको आचरण है और हरिके नाम कीर्तनसो अनुराग बढवेसौ और चित्त अतिकोमल हैवेसौ वह भक्त भगवान्को जीत लेय हैं तब विनकी यह दशा हैजायहै कभी भगवान्को अपने वशमें जानकै हंसते इतनो काल व्यर्थ गयो यह जानिकर रोते कबहूं अति उत्कंठाते पुकारते कबहू आनंद मानिकै ऊंचे स्वरसों गाते कभी नाचते या प्रकार अलौकिक उन्मत्तनकीसी चेष्टा करन लगे हैं ॥ ४० ॥ आकाश वायु अग्नि जल पृथ्वी ज्योति सब प्राणीमात्र दिशा वृक्ष नदी समुद्र सबकों हरिहीको शरीर जानें अनन्य-

१ कवित्त—काम जब जागै तब गिनत न कोऊ शंक जाने सब जोई करि देखे तन माधी है । कोध जब जागै तब नेकन संभारि सकै ऐसी विधि मूलकी अविद्या जिन साधी है ॥ लोभ जब जागै तब तृप्ति न कयोंहू होय सुंदर कहत इन ऐसेहीमें खाधी है । मोह मतवारो निशदिनही फिरत रहत मनसों न कोऊ हम देख्यो अपराधी है ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चित्त व्हैकै प्रणाम करे यह वैष्णवनके लक्षण हैं ॥ ४१ ॥ यदि कोई कहैं यह धर्म तो योगेश्वरहूकों दुर्लभ है, अनेक जन्महूं करिकै अलभ्य है, सो एक नाम कीर्त्तनमात्रतें एकही जन्ममें कैसे होइहै तहां कहै हैं प्रेमलक्षणाभक्ति और प्रेमाश्रय भगवत्स्वरूपकी स्फूर्ति और गृहादिकनमें वैराग्य ए तीनों हरिके भजनकर्त्ता पुरुषको एकही समय होय है जैसें भोजन करे ताको सुख पुष्टि पेटको भरवो भूखकी निवृत्ति ये तीनों एकही कालमें ग्रास विषें होय हैं ॥ ४२ ॥ पीछें भगवान्के प्रसादतें कृतार्थ होइ सो कहैं हैं, या प्रकार हरिचरणारविंदको नित्य भजन करे ताकों प्रेमलक्षणाभक्ति और वैराग्य और साक्षात् भगवत्स्वरूप ज्ञान तीनों होइहै तब परमशांतिको पावै है ॥ ४३ ॥ अब राजा जनक पूछे हैं वैष्णव मनुष्यनके मध्यमें कैसे होय हैं कौन धर्मके विषें स्थित, कैसो स्वभाव कैसो आचरण कैसों बोलिवो, कैसे चिह्न हैं जिनसों भगवान्को प्रिय होय है, सो सब मोसों कहो ॥ ४४ ॥ याको उत्तर हरिनामा योगीश्वर तीनि श्लोकनसो देय हैं जो अपनपेको सब प्राणीमात्रमें ब्रह्मरूपकरि स्थिति देखें, ब्रह्मरूप आपविषें प्राणीमात्रकों देखें, सो उत्तम भागवत है ॥ ४५ ॥ ईश्वरके विषें प्रेम करै, भगवान्के भक्तनसों मैत्री करै, मूर्खनपै कृपा करे, शत्रुनकी उपेक्षा करै, वह मध्यम वैष्णव है ॥ ४६ ॥ जो भक्त भेदबुद्धिसों केवल प्रतिमाहीमें श्रद्धा राखै है और जीवनमें तथा भक्तनमें जाकी श्रद्धा नहीं वो प्राकृत भक्त हैं ॥ ४७ ॥ अब आठ श्लोकनकरिकै उत्तम वैष्णवनके लक्षण कहैं हैं जो इन्द्रियनकरिकें विषयनकों भोग करैं हैं पर काहूसों न द्वेष है न प्रीति है सब वस्तुमात्रको ईश्वरकी मायाकरि जानै हैं, सो भक्तनमें उत्तम हैं ॥ ४८ ॥ देहके संसारी धर्म, जन्म, मरण, इंद्रियनको कष्ट, प्राणनकों भूख, मनकों भय, बुद्धिकों तृष्णा, इन संसारके धर्मनतें जो मोह न पावे निरंतर हरिको स्मरण करे सो वैष्णव भक्तनमें मुख्य हैं ॥ ४९ ॥ जाके मनमें काम कर्मनकी वासनाहू न उपजे, चित्त एक श्रीकृष्णस्वरूपमें बसै सो वैष्णवनमें उत्तम हैं, इन तीनि श्लोकन करि भक्तनके आचरणको उत्तम कह्यो ॥ ५० ॥ जाकें या देहमें कुल तप वर्ण आश्रम जातिको अभिमान नहीं सो भगवान् अतिप्रिय भक्त है ॥ ५१ ॥ जाकों वित्तमें अर्थात् धनमें और आत्मामें अपनी पराई बुद्धि नहीं सब प्राणिमात्रमें समान दृष्टि होई शांत होई सो वैष्णवनमें उत्तम है ॥ ५२ ॥ त्रिलोकीके राज्यके लिये हारिही विषें जिनको चित्त है जो देवतानसों दुर्लभ भगवान्के चरणकमलके भजन विना आधेहू छिन लवमात्रहू नहीं वितावे सो वैष्णवनमें श्रेष्ठ हैं कारण कि इनके हरिके चरणनतें और सार कछु नहीं ऐसो दृढ ज्ञान है ॥ ५३ ॥ यदि विषयके संगतें कामसो संतापित भये भक्तनहूके मन चंचल होइ तो क्या तापै कहै हैं हरिसेवामें सुख माननेवारेको तौ मन नहीं चलायमान होय अनंत पराक्रम भगवान्के चरणकी शाखारूप अंगुरियानके नखरूप मणिकी चंद्रिकासो सब कामादि ताप दूर हैवेसों भक्तके हृदयमें ताप नहीं उपजै, जैसे चद्रमाके उदय भयेते सूर्य्यको ताप दूरि होय हैं औरहू मुख्य लक्षण कहैं हैं ॥ ५४ ॥ केवल नाममात्रके लेतही संपूर्ण पापनको समूहनकौ नाश करनेवारो साक्षात् भगवान् हरिकों हृदयमेंते न त्यागे सो वैष्णवनमें उत्तम है कारण कि याने प्रेमडोरीसो हरिके चरणकमल हृदयमें बांधि राखे हैं ॥ ५५ ॥

विसृजति हृदयं न यस्य साक्षाद्धरिरवशाभिहितोऽप्यघौघनाशः ॥
प्रणयरशनया धृताङ्घ्रिपद्मः स भवति भागवतप्रधान उक्तः ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ३.

राजोवाच-परस्य विष्णोरीशस्य मायिनामपि मोहिनीम् ॥
मायां वेदितुमिच्छामि भगवन्तो ब्रुवन्तु नः ॥ १ ॥

माया और मायाको तरण और ब्रह्म कर्म इन चारि प्रश्नको उत्तर चारि ऋषभदेवके पुत्र मुनि तीसरे अध्यायमें कहैंगे ॥ जनक बोले परमात्मा ईश्वर विष्णुकी मायाकूं मैं जान्यो चाहूंहूं, हे भगवत्परायण ! तुम कहो, जो माया बडे मायावीनकोहू मोहैहौ ॥ १ ॥ कदाचित् तुम कहो उक्त लक्षणवारो भक्त ह्वैकै कृतार्थ होय तो बहुत परिश्रम करिकै कहां करेंगे, तहां कहै हैं, मरणधर्ममें संसारके तापसौं अत्यंत ताप होयहै ता तापको औषध हरिकथारूप अमृतकूं तुम्हारे वचननसो पीवते मोको तृप्ति नहीं होयहै ॥ २ ॥ तब अंतरिक्षनामा योगीश्वर बोले हे राजन् ! आदिपुरुष भगवान् सब प्राणीमात्रके कारण अपने अंशभूत जीवनके मोक्षके अर्थ पंचमहाभूतनसो शक्तिकरिकैं बुद्धि इंद्रिय मन प्राण शरीर उत्पन्न करै हैं सो शक्ति मायाको रूप है ॥ ३ ॥ या भांति पंचमहाभूतनसूं सृष्टि बनाय सकल प्राणीनके मध्यमें भगवान् अंतर्यामी रूपसौं प्रविष्ट ह्वैकरि एक प्रकार मन और दशइंद्रीरूपसौं जीवनको न्यारे न्यारे विषयभोग करावेहैं ॥ ४ ॥ तब जीवात्मा अंतर्यामीसौं प्रकाशित इंद्रियनसो विषयभोग करते मायारचित शरीरको आत्मा मानिकै वाही शरीरमें आसक्त होयहैं ॥ ५ ॥ यह जीव कर्मेंद्रियनसो वासनासहित कर्म करै है, विन कर्मनसूं सुखदुःखरूप फलको भोग करतो संसारमें भ्रमै हैं ॥ ६ ॥ या भांति अनेक क्लेशयुक्त कर्ममार्गमें चलते जीवात्मा परवश होकै महाप्रलय पर्यंत जन्म मरणको प्राप्त होयहै ॥ ७ ॥ अब प्रलय कहैं हैं पंच महाभूतनके नाशको काल जब निकट आवेहै, तब आदि अंतरहित जो काल है सो लीन करिवेको या स्थूल सूक्ष्म प्रपंचको खेचेहै ॥ ८ ॥ अब नाशके कारण कहैं हैं पहिले पृथ्वीमें सौ बरस ताईं अति दारुण अनावृष्टि होइगी, पीछें वा कालमें बडी उष्णतासो सूर्य्य तीनि लोकनमें तपेगो ॥ ९ ॥ पातालतलतें आरंभ करिकै जरावत ऊंचैंको शिखा कियो अग्नि वायु करि प्रेरचो चारों दिशानमें बढैगो ॥ १० ॥ पीछे सांवर्तक नाम प्रलय कालको मेघगण सौ बरस ताईं हाथीकी सूंडिके प्रमाण धारानसों वर्षैंगो, तब वा जलमें यह ब्रह्मांड लीन होइगो ॥ ११ ॥ हे राजन् ! जैसे अग्नि ईंधन न होइ तब शुद्ध अग्निमें मिलिजाय है ऐसेही ब्रह्माण्डरूप शरीरवारो विराट् पुरुष ब्रह्माण्डरूप अपने शरीरको छोडके सूक्ष्म परब्रह्ममें प्रवेश करजायहै ॥ १२ ॥ पृथ्वीके गुण गंधको प्रलयकालको पवन हरि लेहै, तब पृथ्वी गुणरहित हो जलमें लीन होय हैं, पीछे जलके गुण रसको वही पवन सोखि लेइहै, तब जल तेजमें लीन होयहै ॥ १३ ॥ प्रलयकालके अंधकारसे रूपरहित हैवेसौ तेज वायुमें लीन होयहैं पीछे आकाशसे स्पर्शगुण हर जायवेसो वायु आकाशमें लीन होय है, पीछे आकाशके शब्द गुणको कालरूप ईश्वर हरिलेहैं तब आकाश तामसाहंकारमें लीन होय है ॥ १४ ॥ पीछे इंद्री बुद्धि राजसाहंकारमें लीन होयहै, मन इंद्रियनके देवतान सहित सात्त्विक अहंकारमें लीन होयहै, हे राजन् ! याही भांति तामस राजस सात्विक ए तीनों गुणको कार्य्य इंद्रियादिकसहित अहंकार महत्तत्त्वमें लीन होय है, वह महतत्व प्रकृतिमें लीन होय है ॥ १५ ॥ सात्विक राजस तामस तीनों गुणयुक्त उत्पत्ति पालन प्रलय करनहारी यह माया भगवान्की है, मैंने तुमसो याको रूप कह्यो, अब और कहा सुनिवेकी इच्छा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है ॥ १६ ॥ या भांति अतिदयायुक्त मुनिकों देखिकै या संसारकी माया तरिवेको उपाय जनक पूछे हैं, यह ईश्वरकी माया अजितेन्द्रियनको अतिदुस्तर है; तातें देहाभिमानीहू जा प्रकार वाकू सुखसों तरसकै याकों सुखसों तरेहैं हे महाऋषि ! सो उपाय तुम मोकूं बताओ ॥ १७ ॥ तब प्रबुद्ध नाम चौथे योगीश्वर बोले हे राजन् ! भगवान्‌की भक्ति विना मायाके तरिवेको और उपाय नहीं है, यह जानि साधनासहित भक्तिको वर्णन करते पहलें वैराग्यकरि गुरुनके निकट जाई सो चारि श्लोकनसैं कहैं हैं, हे राजन् ! स्त्री पुरुष मिलिके अपने सुखकों और दुःख दूरि करिवेको कर्मनको आरंभ करैं हैं तिन कर्मनके फलमें विपरीत देखे कहा सुखके लिये किये तिनमें दुःख देखै ॥ १८ ॥ कर्मके साधनसौं धनादिक मिलकैहू सुखको नहीं दैय है यापै कहैं हैं नित्य दुःखदाई तापै दुर्लभ अपनी मृत्युकारक धन गृह पुत्र बंधु पशुनिके पायेते कहा सिद्धि हैं ये तो सब मिथ्या हैं ॥ १९ ॥ या भांति कर्मनसो उपजे परलोकहूको मिथ्या जाने, जामें अपने समानसौं ईर्षा, अधिककी निंदा, स्वर्गतें गिरिवेको भय, इतनें दुःख स्वर्गहूविषे हैं जैसे थोरी भूमिके राजानको तुल्य देखकै ईर्षा, अधिककी निंदा और चक्रवर्ती राजातें भय इत्यादि दुःख होयहैं ॥ २० ॥ तातें अपनो उत्तम कल्याण चाहें तो भक्ति करिकैं गुरूनकी सेवा करे गुरुके लक्षण कहे हैं, मुख्य तो वेदको अर्थ अतिश्रेष्ठ जानतहोइ, जातें सब संदेह दूरि करिसकें और परब्रह्म भगवान्‌के स्वरूपको जानें, जो आप ब्रह्मको न जाने तो औरकों कैसे ज्ञान देइगो अतिशांतरूप होइ कारण कि ब्रह्मज्ञान ताहीकों होयगो जो शांत होइगो ॥ २१ ॥ भक्तनको आत्माके देनहारे परमात्मा हरि जिन वैष्णव धर्मनकरिकै संतुष्ट होयहैं, विन धर्मनकों गुरुकों आत्मा और इष्ट जानिकें भक्तजन गुरुमें निष्कपट सेवा करिकैं सीखे ॥ २२ ॥ पहिले तो संपूर्ण वस्तुनविषें मनको चलायमान न करे पीछे सत्संग करे सब प्राणीनविषें दीननपै मन वचनसौं दयायुक्त चित्तमें सबसों मैत्री करे उत्तमनविषे नम्रता सीखे ॥ २३ ॥ बाह्य शौच सीखे (मृत्तिका ले हाथ पाय आदि धोवे), अनंतर शौच सीखे (मनमें दंभ अहंकार न राखे), धर्मको आचरण, क्षमा, यथायोग अध्ययन ब्रह्मचर्य सीखे वृथा वार्त्ता न करे कुटिल न रहै, द्रोह न करे, सुख, दुःखमें समबुद्धि राखे ॥२४॥ सब प्राणीमात्रमें समान चैतन्य आनंदरूप करि ब्रह्मको विचारे, नियंताकरि ईश्वरकों विचारे, एकांतमें रहे, गृहादिकनमें अभिमान न राखे, निर्जन मार्गमें परें वस्त्र अथवा वल्कलको पहरे, जो वस्तु प्राप्त होइ ताहीसों संतोष राखे औरकी इच्छा न राखे ॥ २५ ॥ जे शास्त्र केवल भगवान्‌हीकों बतावेहैं, ते भागवत शास्त्र हैं, तिन्हें सुनिवेकी श्रद्धा राखे, औरकी निंदाहू न करें, मन वचन कर्म इन तीनोंनको दंड देय मनको तो प्राणायामकरिकैं रोकैं वाचानको दंड झूठे वचन न कहे, कर्मको दंड चेष्टा न करे सत्यवचन सीखे, अंतःकरण और सब इंद्रियनको निग्रह करे ॥ २६ ॥ अद्भुत कर्मनके कर्त्ता हरिके जन्म कर्म गुणको श्रवण कीर्त्तन ध्यान करे, और कर्म जो करे सो सब हरिके निमित्त करे ॥ २७ ॥ यज्ञ दान तप

---

१ परन्तु मूर्ख चेला न करें क्यों कि मूर्ख चेलनसो गुरुनको दुःखही होताहै । एक बाबाजी अपने चेलाको संग लेकर स्नानको गये तौ जब ये स्नान कर चुके, और किनारेपर आयकर ध्यान करते समय जब अंगन्यास करन्यास करनेलगे, तब वा शिष्यने विचारी कि गुरुजीको कछु ह्वैगयो, सो बोल नहीं सकते तासे हाथनसो इसारा करे हैं, सो झट अरने उपलों याने बटोर चीमटा गरम कर जहां जहां गुरुजीने अंगन्यासमें हाथ लगायो हो तहां तहां याने दाग दियो गुरुजी आंखैं मींचे बैठेथे शरीरमें तप्तलोहा लगतेही चौंकपरे, आंखें खोलकै देखे तौ चेला गरम दाग लगारह्यो है जप करेहै बोले तौ नहीं पर अपने हाथसों माथा ठोक्यो, कि तेरो दोष नहीं प्रारब्धका दोष है चेलाने जानी कि यूं कहैं हैं कि माथेपरहू दाग दे, सो गरम चीमटा माथेपर लगादिया, यासे मूर्ख चेलासेभी दुःख होयहै ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सदाचार और आपुको जो प्रियवस्तु होइ सो सब गंध पुष्पादिक और स्त्री पुत्र गृह प्राण ये सब परमपुरुष भगवान्‌के निवेदन करे ये धर्म सब गुरूनके पासते सीखें ॥ २८ ॥ या प्रकार श्रीकृष्णको आत्मा माननेवारे मनुष्यनसो मैत्री और स्थावर जंगम प्राणीनमें सेवा विशेषकरकै मनुष्यनकी और उनमेंहू महात्मानकी सेवा करे साधुनकी सेवा करै ॥ २९ ॥ तिन साधुनसो संगकरिकै भगवान्‌के पवित्र यशको परस्पर कहिवो सीखे फेरि ईर्षा छोडि परस्पर प्रीति, सबते संतोष परस्पर सुख समस्त दुःखनकी निवृत्ति सीखे ॥ ३० ॥ संपूर्ण पापनके समूहके नाशकर्त्ता हरि भगवान्‌को आपु निरंतर स्मरण करे, औरनको स्मरण करावे, तब स्मरण कीर्तन रूप भक्तिके करेते प्रेमलक्षणा भक्तिकरिकै रोमांचयुक्त शरीर है जाय है ॥ ३१ ॥ ऐसे भगवान्‌को चिंतवन करत कबहूं रोवे कबहूं हँसे, कबहूं आनंदको प्राप्त होइ, कबहूं बाह्यलोकनकी भांति वचन कहै कबहूं नाचे कबहूं गावे कबहूं भगवान्‌के स्वरूपकी लीला करे, कबहूं परमसुखमें मग्न होइ, कभी चुप्प रहे ॥ ३२ ॥ ये वैष्णवधर्म सीखि करि प्राप्त भई भक्तिसौं नारायणपरायण ह्वैके सुखही करि दुस्तर मायाकों तरे ॥३३॥ यह सुनिकै राजा जनक पूछे है हे महाराज ! तुमनें कही कि नारायणपरायण होइ सो मायाको तरे सो नारायणके तौ तीनि नाम सुने हैं एक तौ नारायण, एक ब्रह्म, एक परमात्मा, तहां इन तीन नामनकरि निर्विशेष वस्तु कहिये अथवा इनमें कछु भेद है सो विशेषकरिकैं मोसूं कहो तुम ब्रह्मको अच्छीतरे जानौ हो ॥ ३४ ॥ तब पांचवें ऋषि पिप्पलायन उत्तर देय हैं हे राजन् जनक ! जो या विश्वके उत्पत्ति पालन प्रलयको कारण हैं और आपु कारणरहित हैं सो नारायण हैं वही परमतत्व है, जो स्वरूप स्वप्नमें जाग्रत्‌में सुषुप्तिमें साक्षीरूपसो तौ वर्तमान है और वास्तवसौं देखौ तो इन अवस्थानसो रहित है सो ब्रह्म है, वही परमतत्व है समाधिमें जाकों मुनीश्वर देखे हैं, ताहूकों ब्रह्म कहैं हैं वही परमतत्व है, और जासो देह इंद्रिय मन प्राण ये सब चैतन्य भये ही कार्यकों समर्थ होय है सो परमात्मा है वही भगवान् स्वरूप है, या भांति तीनों नामके भेदकरिकैं एकही तत्व जानिये ॥ ३५ ॥ जो तुम कहो कि यासौं ब्रह्मकों विषयतत्वता प्राप्त भई ताको निषेध कहैं हैं जो ब्रह्मप्रति मन नहीं प्रवेश करै है या ब्रह्मकों वाणी नेत्र बुद्धि प्राण और सब इंद्रिय स्पर्श नहीं करि सके हैं जैसे छोटी चिनगारी महाभूत अग्निकों नहीं प्रकाश कर सकै है न जराय सकै है तैसे मन आदि जड इंद्रिय सृष्टिनकै प्रकाशक ब्रह्मकों जड इंद्रिय क्यों करि प्रकाश करसकैगी तहां पूर्वपक्ष करे है, अहो वेद तो ब्रह्मकों बतामें हैं तहां कहै हैं कि वेदहू प्रगट नहीं कहै हैं कारण यह है कि वेद स्वयंही कहै है कि वाणी मन आदिसौं जे पदार्थ जाने जाय हैं जो इनके बोध न करनेवारे हैं वे ब्रह्मको नहीं प्राप्त है सके है यासौं ये न जानिये कि वेद ब्रह्मको नहीं कहते किन्तु वेद कहते हैं कि स्थूलहू ब्रह्म नहीं हैं अणुहू ब्रह्म नहीं जो वाणीसै कहो जाय सोहू ब्रह्म नहीं इत्यादि या निषेधकी जो अवधि हैं वही ब्रह्म है विना अवधिके निषेध नहीं है सके है ॥ ३६ ॥ फेरि कहैं है जो सबको प्रमाण वेदहूकों गम्य नहीं तो ब्रह्मही न होइगो, ताको उत्तर देइ हैं ब्रह्म नहीं ये नहीं कह्यौ जाय जो कुछ स्थूल सूक्ष्म देखो जाय है सो सब ब्रह्मही भासे है यातें सब विश्वके कारण भगवान्‌ही है (तहां पूछेहै) एक ब्रह्म बहुविधि विश्वको कारण क्यों है (तहां कहै हैं) ब्रह्मकी शक्ति अनंत सामर्थ्य करिकै अनंतरूप हैं (सो कहैं हैं) पहिले एकरूप व्है पीछें सत्व रज तम मायाके रूप भये, पीछे क्रियाशक्ति करि प्राणरूप भये फेरि ज्ञानशक्ति करि महतत्त्व भये पीछे अहंकार रूप भये जासों जीव बंध्यो हैं ता पीछें इंद्रिय रूप भये, इंद्रियनके देवतारूप भये, कर्मनके फल सुख दुःख रूप भये या भांति सब

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रूप ब्रह्मही हैं, सर्वरूप करि आपतें प्रकाशमान ब्रह्मकी स्थापनाविषें प्रमाणकी अपेक्षा नहीं ॥ ३७ ॥ तहां पूर्वपक्ष करैं है, संपूर्णरूप आपुही है तो यह विश्व तो सब मरेहै फेरि उपजे है यातें ब्रह्महूको जन्म मरण होयहै (तहां कहै हैं) यह आत्मा न जन्मे हैं, न मरे है, न बढै है, न क्षीण होय है, जातें आगमापाई बाल युवादिक देहनकी अवस्थाको साक्षी है साक्षीकों ये अवस्था नहीं लगे हैं केवल ज्ञानरूप है, तहां कदाचित् कोऊ कहैं कि ज्ञान तो एक क्षणमें उपजे है, एकलक्षण रहै है, एक क्षणमें नाश पावे है, (तहां कहैं हैं) यह सदा रहै है जो कोऊ करै नीलज्ञान उपज्यो पीतज्ञान गयो, ऐसें ज्ञानहूकी उत्पत्ति नाश सुनिये है, तहां कहैं हैं नील पीत इंद्रियनकों वृत्ति उपजे है, वृत्तिनहीको नाश होय है, ज्ञान तो एकरूप है यह प्राणके दृष्टांत कहैं हैं ॥ ३८ ॥ इन्द्रियादि केवल हरिहीको दिखावेहैं, जैसे पक्षी पशु स्वेदज वृक्षादिकनमें सर्वत्र जहां जहां जीव जाइहै तहां तहां याके संग प्राणहूं जाइ है, पर प्राण निर्विकार हैं जैसे आत्माहूं निर्विकार रहै हैं (तहां पूछेहै) मनुष्यादिक देहनमें आत्मा क्यौं सब विकारसो दीखै है (तहां कहैं है) जाग्रत्में इंद्रियगणके दोषते स्वप्नमें अहंकारते सब विकारसो दीखै है सुषुप्तिमें तौ इंद्रियगण और अहंकारके लयते निर्विकार आत्मा है, जाते विकारके हेतु लिंग शरीरकी उपाधिको अभाव है (तहां पूछे है) सब नष्ट भयोसो आत्मा रहै है यह कैसे जानै (सो कहै है) जब जागे है तब जो सुषुप्तिमें आत्माको सुख अनुभव भयो है ताको स्मरण होय है, आजु मैं बहुत सुखसों सोयो, यह ज्ञान अनुभवके स्मरण विना न होइ ताते सुषुप्तिमें आत्माको अनुभव निर्विकार होयहै पर विषयको संबंध नहीं याते वह अनुभव प्रकट नहीं होयहै ॥ ३९ ॥ फिरि संदेहते पूंछैं हैं, याकों सुस्वप्नमें निर्विकार अनुभव होइ तो संसार फेरि क्यों होयहै जो कहो कि याकी अविद्या नहीं गई, ताकी वासनातें संसार होयहै तो अविद्या क्यों जाइ (तहां कहै है) जब गृह पुत्र धनादिकनकी वासना छोडिकै केवल भगवान्के चरणारविंदनकी इच्छा करे तातें भक्ति बढै है ता भक्तिकरि चित्तसो गुण कर्मसो उपजे सब पाप दूरि होयहैं तब चित्त शुद्ध हैके प्रकट आत्मतत्व पावे जैसें निर्मल दृष्टिक भये सूर्य्यमंडलको प्रकाश दीखै हैं ॥ ४० ॥ राजा जनक बोले भक्ति तौ कर्मयोगके आधीन हैं, ताते प्रथम मोसों कर्मयोग कहो, जा कर्मके कियेतें शुद्ध होइ फेरि कर्मकों वेग दूरि करिकै पुरुष निष्कर्म श्रेष्ठ ज्ञान पावे, जातें सब कर्म निवृत्ति होइ सो कर्मयोग कहो ॥ ४१ ॥ हे महाराज ! यही प्रश्न मैंने पिताके आगे सनकादिक ऋषि जब आये हे तब पूछ्यो हो, उनने मोसों न कह्यो याको कहा कारण सो मोसूं कहो ॥ ४२ ॥ तब आविर्होत्र बोले हे राजन् ! वेदमें जाके करवेकी आज्ञा है वह कर्म है जाको निषेध है वह अकर्म है और जाके करवेकी आज्ञा है वह न करैं तो विकर्म कह्यो जाय है ये तीनों भेद वेदहीको गम्य है, याको निर्णय मनुष्यनको अशक्य है, जातें वेद साक्षात् ईश्वररूप है, पुरुषके वचनमें वक्ताको अर्थ जाननो अति कठिन है, तहां पंडितहू मोह पावे है, तब तुम बालक हे याते तुमसों न कह्यो ॥ ४३ ॥ वेदको तात्पर्य काहेते न जान्यो जाय सो कहे है, यह वेद सब परोक्षवाद है, अर्थ और भांति होइ ताके दूरावनेकों और भांति कहै सो परोक्षवाद कहिये. तैसे वेदमें कर्म छुटामनकों कर्म कहै है, मूर्ख वाही कर्मकों कर्म जानें हैं, तहां पूछैं है कर्मको तो स्वर्गादिक फल सुनो जाय है कर्मकों त्याग फल कैसे जानो (तहां कहै हैं) यह जो कर्म करण कहे है, सो मूरखकी शिक्षाको है, नहीं तो धर्ममें काहूकी प्रवृत्ति न होइ जैसें बालककों औषधी खवानी चाहिये, तब लड्डू दिखाईये, और दीजिये ता लोभतें औषधी पीवे. तब औषधिको यह फल नहीं जो लड्डुआ खाय, औषधको तो आरोग्य फल

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है, तैसें जीव सब विषयी हैं, लोभी है, तिनको लोभ स्वर्गादिकको दिखाय कर्ममें प्रवृत्त करें है पीछें याहूते निवृत्तिको फल उत्तम है, या ज्ञानकरि उन कर्मनको छुडावे है यह वेदको तात्पर्य है ॥ ४४ ॥ जो कर्म त्यागही मुख्य है तो पहिलेई कर्म त्याग कीजे (तहां कहै) कि आपु अज्ञ होइ अजितेंद्रिय होइ जो वेदोक्त कर्म न करे तो कर्मके विना करे अधर्मसों मरके फेरि मृत्युहीकों पावे सर्वदा कालहीकें मुखमें रहें ॥ ४५ ॥ तातें कर्म वेदोक्तही करे, निषिद्ध कर्म न करे; फेरि कर्मके फलकी इच्छा न राखे, जो कछु करे सो सब ईश्वरविषे समर्पण करे तब मोक्षरूप सिद्धि पावे (तहां पूर्वपक्ष कहै हैं) अहो वेदविषें फल सुनें जाय है जैसे औषधि पिवाइवेको बालकको लडुआ देनों ताते कर्म कियेते फल अवश्य होइगो (तहां कहै है) यह मति कहो कर्मनमें प्रीति उपजाइवेको फल सुनाइवो है जैसे औषधि देवेके समय बालकको मीठी चीज दिखावे हैं, अब वैदिककर्म कहिकै आगमकी विधि कहै हैं ॥ ४६ ॥ जो कोई निर्विकार जीवकी अहंकारकी गांठि छुडायो चाहें सो आगम और वेदोक्तके प्रकार करिकै सबकी पूजा करे ॥ ४७ ॥ सो पूजाप्रकार कहैं है जब याको ईश्वर अनुग्रह करे तब सद्गुरु मिले है वा गुरूनते पूजाकी विधि जाने तब आपुको जैसी मूर्त्ति रुचे तैसेही मूर्त्ति करिकै भगवान्‌को पूजन करे ॥ ४८ ॥ (सो प्रकार कहै है) पहिले तौ आपु स्नानादिक करिकै पवित्र होइ, वा मूर्तिके सन्मुख बैठ प्राणायाम और भूतशुद्धि करि देहको शुद्धि करे, पीछें उत्तम न्यासन करि अपनी रक्षा करिकैं हरिकी पूजा करे ॥ ४९ ॥ पुष्पादिक द्रव्यको जंतु आदि शोधन करि भूमिको संमार्जन करि मनको सावधान करि मूर्तिकों स्नानादिक कराय आसनका प्रोक्षण करि प्रतिमादिक विषें अथवा हृदय मध्य यथाप्राप्त उपचारनसों पूजा करे ॥ ५० ॥ पाद्य अर्घ्य सब विधि किये पीछें पहिले अपने हृदयमें पूजित हरि भगवान्‌कों संनिधापन मुद्राकरि दृढ धरि सावधान होइ ध्यान करै, पीछें हृदय शिर शिखा कवच नेत्र अस्त्रमंत्र और मूलमंत्र करि पूजे ॥ ५१ ॥ पीछें अंग हृदयादिक उपांग सुदर्शन आदि पार्षद, परिवार, देवतानसहित ता मूर्तिको पाद्य अर्घ आचमन स्नान वस्त्र भूषण उपचारनकरि ॥ ५२ ॥ गंध पुष्प अक्षत माला धूप दीप नैवेद्यन करि पूजे, तब स्तुति करि स्तोत्रनसों पीछें हरिको नमस्कार करे, अक्षतसों वा मूर्तिविषें तिलक करिवेमें पूजे और समय न पूजें अक्षतसों हरिकी पूजा और केतकीसों महादेवकी पूजा निषिद्ध है ॥ ५३ ॥ आपकों वा मूर्तिरूप ध्यान करते हरिकी मूर्तिको पूजे पीछे वाको निर्माल्य माथे धरि देवताको स्वरूप हृदयमें धरिकैं पूजी मूर्तिको विसर्जन करि अपने स्थानमें राखे ॥ ५४ ॥ या भांति अग्नि सूर्य्य जल आदि विषें अतिथिमें हृदयमें आत्मरूप ईश्वरको जो पूजे, सो थोरे कालमें मुक्त होइ, यह आगमकी विधि कही ॥ ५५ ॥

एवमग्न्यर्कतोयादावतिथौ हृदये च यः ॥
यजतीश्वरमात्मानमचिरान्मुच्यते च सः ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कंधे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

राजोवाच-यानि यानीह कर्माणि यैर्यैः स्वच्छन्दजन्मभिः ॥
चक्रे करोति कर्ता वा हरिस्तानि ब्रुवन्तु नः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चौथे अध्यायमें अवतारकी चेष्टाके प्रश्नको उत्तर जयंतीनंदन द्रुमिलनाम सातयों योगीश्वर कहत भये सो वर्णन करै हैं ॥ १ ॥ राजा जनक बोले तुमने पहिले कही कि हरिकी मूर्ति जैसी मन-माने तैसी मूर्तिकूं पूजे और स्तुति करे, सो हमकूं न मूर्तिको ज्ञान हैं, न गुणकर्मको ज्ञान हैं, जो स्तुति करे तातें तुम तिनके अवतार और गुण कर्म कहो, अपनी इच्छा करिकैं हरिने जो जन्म लिये हैं जो कर्म किये हैं अब करै हैं, आगें करैंगे, ते सब कहो ॥ १ ॥ तब द्रुमिल योगीश्वर अनंत-रूप भगवान्के अनंत गुणनकों गिन्यो चाहै सो अज्ञानी हैं, पृथ्वीके परमाणुनको बहुत काल करिकैं कोई एक बुद्धिवंत क्योंहू करि गिनिसकैं पर अनंत शक्तिको आश्रय भगवान्के गुणनकों कदाचित् नहीं गिनिसके ॥ २ ॥ तोऊ संक्षेपतें कितनेक गुण कहूंगो पहिले पुरुषावतार कहै हैं, जब आपु हरि पंचमहाभूत उत्पन्न कर ब्रह्मांडरूप नगर उपजाय तामें लीलाकरि प्रविष्ट भये तातें आदिदेव नारायण पुरुषनामकों पावत भये ॥ ३ ॥ अब याके गुण कर्म कहै हैं, यह तीनि लोककी स्थापना जा पुरुषको देइ है, और जाकी इन्द्रियनते देहधारीनकी सब इंद्री होय है; जाके स्वरूपतें भूत सत्वगुणतें ज्ञान होय हैं; प्राणतें देहशक्ति और इंद्रियशक्ति और चेष्टा ये सब होय हैं अकर्त्ता हैं या करि सूचन कियो विश्वकूं कर्त्ताहू है ॥ ४ ॥ प्रथम या विश्वके उपजायवेको रजोगुण करि ब्रह्मा भयो; सतोगुण करि यज्ञके फलदाता ब्राह्मण और धर्मके रक्षक विष्णु पालक भये, तमोगुण करि संहारको रुद्र भये, या भांति प्रजानविषे जाते निरंतर जन्म पालन नाश होयहैं सो आदिपुरुष हैं ॥ ५ ॥ अब पुरुषावतार करि नरनारायणको अवतार कहै है, तेई आदिदेव दक्षकी बेटी मूर्ति नाम धर्मकी स्त्री विषे ऋषिनमें श्रेष्ठ अति शांत नारायणरूप भये, जाते कर्म नष्ट न होय हैं, ऐसो निष्कर्म ज्ञान बतावत भये और आपहू वैसोई कर्म करत भये श्रेष्ठ ऋषिनकरि सेवितचरण नरनारायण आजताईं बद्रिकाश्रममें विराजे हैं ॥ ६ ॥ भगवान्को अवतारको बतावनहारो परम शांतिको दिखावत एक इतिहास कहै हैं एक समय नरनारायणको परम शांत तपस्या करते देखि इंद्रने जान्यो मेरो स्थान तप करिकै लियो चाहे हैं, तब तपस्यामें विघ्न करणको परिवारसहित कामकों पठवावत भयो, तब अप्सरानके गण वसंतऋतु शीतल मंद सुगंध पवनसहित तहां जाइकरिकै स्त्रीनके नेत्र कटाक्षरूप बाणन करि मारतभयो पर उनकी महिमाको न जान्यो ॥ ७ ॥ तब गर्वरहित नरनारायण इंद्रको कियो अपराध जानि शापके भयकरिकै कांपत कामादिक देवतानसों हँसि करि बोलत भये, हे कामदेव ! हे देवांगनाओ ! भय मति करो, हमारो आतिथ्य लेउ, हमारे आश्रमको सुवास करो ॥८॥ हे राजन् जनक ! अभयके दाता श्रीहरिकों या भांति कहते लज्जासहित और नम्र शिर होयके कामादिक देवता दयासंयुक्त श्रीनारायणसों बोलत भये हे प्रभो ! तुमकों यह आश्चर्य नहीं तुम मायाते परे हो निर्विकार हो, आत्माराम धीर मुनिनके समूह तुम्हारे चरणकमलको नमस्कार करैं हैं ॥ ९ ॥ हमारोहूं अपराधको आचरण कछु अचरज नहीं, हमारो ऐसोई स्वभाव है (यह कहैं हैं) स्वर्गकों उल्लंघनकरि तुमारे परमपद वैकुण्ठको जे तुम्हारे सेवक जाइहैं; तिनको इंद्रादिक देवता बहुत विघ्न करै हैं, और जो यज्ञमें देवतानके भाग बलिनकों देइहैं ताको विघ्न नहीं करैं है, पर जाके तुम रक्षक हो सो तुम्हारो भक्त निश्चय करि विघ्ननके माथेपर पाय देइहै ॥ १० ॥ अभक्तनकों काम क्रोध सब वश करें जो हमारे वश होय भोगहू करैं हैं, जे क्रोधके वश हैं ते अतिमूर्ख है (यह कहैं हैं) क्षुधा तृषा शीत उष्ण वर्षा वायु और जिह्वाके भोग गुह्य इंद्रियनके भोगरूपी अपार समुद्रकों कोई एक अभाग्यवंत तपस्यासों उतरिके निष्फल क्रोधके वश हैके गाइके खुरमें बूडे है, अतिकठिन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तपस्याकों वृथा छोडें है न तो मोक्षके अर्थ न भोगके अर्थ है ॥ ११ ॥ जा भांति कामादिकनकी विनति सुनि प्रभु अपने योगबलसो उत्पन्न अद्भुतरूपवारी सेवाकों करती आभूषणसहित स्त्री कामादिकनकों दिखावतभये ॥ १२ ॥ ते देवतानके सेवक मूर्तिवंत लक्ष्मीकी समान विन स्त्रीनको देखि तिनके गंधसों मोहित हो विनके रूप गुण उदारतासों इनकी शोभा दर्प सब जात भयो ॥ १३ ॥ तब देवदेवनहूंके प्रभु भगवान् हास्य कर नम्र भये कामादिक देवतानसो बोले इन स्त्रीनके मध्य काहू एककों तुम वरो, तब देवताननें कही हम तुच्छ हैं, कहां ऐसी स्त्री, कहां हम, तब नारायण बोले तुम्हारे समान जो कोऊ होइ ताइ लेउ तहां कामादिकनने फेरि कही हे महाराज ! इनमें हमारे समान एकहू नहीं है, तब भगवान्‌नें कही कि एक तुम लेउ तुम्हारे स्वर्गकों तो भूषण होइगी ॥ १४ ॥ तब कामादिक आज्ञाको लेकरि प्रभुको नमस्कार करि अप्सरानमें श्रेष्ठ उर्वसीकों आगे करि स्वर्गको जातभये ॥ १५ ॥ स्वर्गमें जाइ इंद्रको प्रणाम करि सभामें सब देवतानके सुनत नारायणको बल कहत भये, तब इंद्र अति अचरज पावतभये, और भयको प्राप्त भयो ॥ १६ ॥ अब औरहू अवतार और विनको चरित्र कहैं हैं, तेई प्रभु हंसरूप अवतार ले आत्मयोग सब कहत भयें फेरि एक दत्तात्रेय एक सनकादिक, एक भगवान् ऋषभदेव हमारे पिता ये सब विष्णुरूपही अपने अंशकरि जगत्‌के कल्याणको प्रकट हैं, तेई विष्णु एक समय हयग्रीव अवतार ले मधुदैत्यको मारिके वेद ले आये ॥ १७ ॥ एक समय प्रलय समुद्रमें मत्स्यरूप धरि मनुकी और पृथ्वीकी औषधिनकी रक्षा करी वाराहावतार ले हिरण्याक्षकों मारि जलते पृथिवी उद्धारी कूर्मावतार ले अमृत मथिवेकों अपनी पीठपर मंदराचल राख्यो दुःखित व्हैकें शरण आये गजेंद्रको ग्राहते छुडावतभये ॥ १८ ॥ एक समय वालखिल्य ऋषि कश्यपजूके लिये काष्ठ लेन गयेहे, वे गायके खुरमें पानी भरचोहो तामें बूडनलगे, तब स्तुति कीनी वहांते आत्मविद्यामें तत्पर ऋषिनको उद्धार कियो, और वृत्रासुरके मारेतें जो ब्रह्महत्या भई तातें इंद्रको छुडायो अनाथ देवतानकी स्त्री असुरनने घरमें रुकीही, ते सब अनेक अवतारनकरि छुटाई, नृसिंहरूप धरि भक्तनको अभयदान निमित्तके लिये हिरण्यकश्यप मारचो ॥ १९ ॥ और मन्वंतरनविषें देवता और दैत्यनके संग्राममें देवतानके लिये अपनी कलानकरिकै दैत्यपति मारे, संपूर्ण लोकनकी रक्षा करी, वामनरूप ले बलितें भीखके छलकरि या पृथिवीकों लेकरि देवतानको देतभये ॥ २० ॥ परशुरामको अवतार ले इक्कीसवार निःक्षत्री पृथ्वी कीनी हैहयकुलके नाशकों भृगुवंशमें अग्निरूप प्रगटभयें, तेई फेरि, रामावतार ले समुद्र बांधत भये, लंकाविषे स्थित रावणको मारत भये, जिनकी कीर्ति संसारके पाप नाश करतीहै, सो रघुनाथजू अब होनहार विद्यमान हैं ॥ २१ ॥ अब बलदेव और कृष्णको अवतार कहे हैं, भूमिको भार उतारिवेकों अजन्मा आपु यादवनमें जन्म ले देवतानसो न करे जाइ ऐसे कर्म करेंगे पीछे जे यज्ञादिक करवेके अयोग्य दैत्यनको बौद्धरूप धरि मोहैंगे, पीछे कलियुगके अन्तमें कल्कि अवतार धर शूद्रजातिके राजानको मारेंगे ॥ २२ ॥ ऐसे श्रीहरिके जन्म और कर्म अनंत हैं, हे महाभुज ! बडे यशके मैंने तोसो संक्षेपते कह्यो ॥ २३ ॥

एवंविधानि कर्माणि जन्मानि च जगत्पतेः ॥
भूरीणि भूरियशसो वर्णितानि महाभुज ॥ २३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कंधे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ५.

राजोवाच--भगवन्तं हरिं प्रायो न भजन्त्यात्मवित्तमाः ॥
तेषामशान्तकामानां का निष्ठाऽविजितात्मनाम् ॥ १ ॥

अब भक्तिरहितनकी कहा गति है फेरि युगयुगमें कौन पूजाविधि है ये द्वै प्रश्नको उत्तर पांचवें अध्यायके विषे कहैंगे ॥ १ ॥ राजा बोले जिनकी कामना नहीं छूटी वे बहुधा भगवान् हरिको नहीं भजेहैं, तिनकी कौन गति है सो कहो ॥ १ ॥ तब आठयो चमसऋषि उत्तर देइहैं; प्रथम परम पुरुषके मुखतें सतोगुण करि ब्राह्मण उपजे; भुजानते सत्व रजकरि क्षत्री भये, ऊरूते रजो-तमोगुण करि वैश्य भये, चरणनते केवल तमोगुण करि शूद्र भये, आश्रमसहित न्यारे २ वर्ण भये ॥ २ ॥ अपने जन्मदाता पुरुष ईश्वरकों इन वर्णनके मध्यमें उत्पन्न भये जे नहीं भजेहैं, और जानिकरिकैं निरादर करै हैं, वे वर्ण आश्रमते भ्रष्ट भये पुरुष अधोगतिको जाइहैं ॥ ३ ॥ कोऊ एक ऐसे हैं जिनको हरिकथा श्रवण बहुत दूरि है, किनहूंको हरिकीर्तन अति दूरि है, जे स्त्री है शूद्रादि-क हैं तिनके ऊपर तुम सारिखे महात्मा कृपालु होयहै ॥ ४ ॥ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य ये यज्ञोपवीत रूप दूसरे जन्मसों और वेदाध्ययनकरि हरिभजनके उत्तम अधिकारी है तथापि वेदोक्त कर्मनके फल सुनि वा फलमें आसक्त है यह भूलेहैं जे अल्पज्ञानते आपुको ज्ञानी माने हैं ते असाध्यहैं, तिनको त्याग योग्य है ॥ ५ ॥ कर्म करनेमें अकुशल मूर्ख अपनेको पंडित माननेवारे अनभ्र ऐसी मनोहर बातें कहै हैं जासों मोह उत्पन्न होय वह यह है कि यज्ञादिकनको फल अक्षय होइगो न स्वर्गमें शीत है, न उष्ण है, न मलीनता है, न पराजय है, ऐसे वचनसो उत्कंठित ह्वैकरिके कहै है हम अप्सरानसो विहार करेंगे यह कहते कर्ममें बंधे रहै हैं ॥ ६ ॥ उनको वा फलके भ्रमतें कर्महीमें आदर होयहै ताते काम क्रोध मादक बढे हैं (यह कहे हैं) रजोगुणते राग द्वेष उपजे हैं ताते अभिचारके कर्मनपर मन होयहै तब वे घोर संकल्पी महातृष्णावारे सर्पकी समान क्रोधी महाअभिमानी दुष्ट स्वभावसों अधजरे लोग नारायणके भक्तनको हँसै हैं ॥ ७ ॥ जो स्त्रीनहीकी सेवा करते कभी वृद्धनकी सेवा नहीं करते केवल मैथुनमेंही सुख माननेवाले अतिथिकी पूजारहित घरनमें रहिकै मनके मनोरथवारे लोग कह्यो करै हैं आज मैंने यह पायो, यह मनोरथ आगें पाऊंगो, और जो काहू देवताकों पूजें तो अपनें स्वार्थकों पशुकी हिंसा करैं है न कछू विधि न दक्षिणा न अन्नदान करे ऐसे अज्ञ हैं; जे हिंसादोषको नहीं जाने हैं ॥ ८ ॥ धन ऐश्वर्य कुल विद्या दान रूप बल कर्म करकै विनकें गर्व होय हैं तासे मंदबुद्धि दुष्ट, ईश्वरसहित साधु परमेश्वरके भक्तनको निरादर करैं हैं ॥ ९ ॥ वे दुष्ट प्रगट वेदार्थको नहीं जानै हैं, जो वेद कहै ह सब देहधारीनमें यह अभीष्ट ईश्वर आत्मा सदा आकाशकी भांति व्यापि रह्यो है, और अपने प्रिय ईश्वरकों फेरि वेद प्रगट बतावे हैं, तोहू ये मूर्ख नहीं सुने हैं, मनोरथनकी वार्त्ता न करिके विवाद करैं हैं ॥ १० ॥ (तहां पूर्वपक्ष कहेहै) अहो स्त्रीसंग तो कह्यो है कि ऋतुदान करे, देवताको शेष भोजन करै, वह विषयभोग तो कह्योहै तुम क्यों निंदा करोहो (तहां कहै है) लोकमें स्त्रीसंग मांसभक्षण मदिराको सेवन नित्य है विषयासक्तनकों अनुराग स्वभावहीतें प्राप्त है, कछु विधि नहीं जो एक यही चहिये, जहां विधि कहीहै तहां ऋतुके दिन स्त्रीसंग करे, यज्ञमें मांस भक्षण करे सौत्रामणिमें मद्य लेइ यह इनके छुडाववेकों नियम करै हैं जो ऋतुहीके दिन स्त्रीसंग करें यज्ञहीमें मांस मद्य लेइ और न लेइ यह नेम करि और दिनको निषेध कियो है, या

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

बातकूं विषयी मूर्ख नहीं समझे हैं, जे कामी अरुचि करि अथवा द्वेषकरि स्त्रीसंगादिक करेहैं, तिनको यह नेम है, जिनके कामना नहीं तिनको यह नेम नहीं, वेदको तो अभिप्राय सब दिन छुडाववेको है वाकौ मूर्ख नहीं समझे है ॥ ११ ॥ धर्म करनौही धर्मको फल है कारण कि धर्मानुष्ठान करवेसौ परोक्षज्ञान और तत्काल शांतिदायक अपरोक्ष ज्ञान दोनों प्राप्त है जायहै फिर पीछी शांतिप्राप्ति होयहै ऐसे सुखदायक धनकों यह पुरुष देहादिके निमित्त घरनमें वृथा खोय देयहैं न तौ याकौ विचार करेहैं और न शिरपर घूमती भई दुरंतवीर्य मृत्युकूंही देखेहैं ॥ १२ ॥ और-हू वेदको तात्पर्य नहीं जाने हैं कि ऋतुके दिनहूं स्त्रीसंग गर्भाधानहीको कह्यो है यथेष्ट कामभोगको नहीं कह्यो है, और सुराहूको पान नहीं कह्यो है, आघ्राण कह्यो है, पशुहीकी हिंसा देवतानके निमित्त करे अपने लोभते हिंसा न करे, ऐसे शुद्ध धर्मको विषयकी आसक्ति करि नहीं करै या सिद्धांत-को ये मूर्ख नहीं जाने है ॥ १३ ॥ जे या धर्मको नहीं जाने हैं असाधु हैं अनम्र हैं अपनेकूं साधुकरि मानलेय हैं विश्वासकरि पशुनको मारे हैं, याके करेसूं मनोरथ होइगो ऐसौ कहेहैं या जन्ममें वाको मांस यह खाइ है, अगिले जन्ममें याको मांस वह खाइगो, याहीते मांस याको नाम हैं ॥ १४ ॥ मृतक समान अपने और पुत्रादिकमें स्नेह करि बद्ध होइ परायेहू देहनमें विद्यमान अपने आत्मा ईश्वर हरिसौ द्वेष करै हैं वे नरकमें परेहैं ॥ १५ ॥ जे अज्ञ हैं वे ज्ञानीनकी कृपाते तरे हैं जे मध्यवर्ती हैं नरकमें परे हैं, जे जे तत्वज्ञानको नहीं प्राप्त भये; जो मूढताको प्राप्त भये स्वार्थनिमित्त धर्म अर्थ काम करै है वे वारंवार जन्म मरण पावे हैं जे कैवल्यको तौ प्राप्त नहीं भयेहै और मूढताको अतीत है गयेहै ऐसे जे अक्षणिक त्रैवर्गिक है वे अपने आत्माकूं हनन करामैहै ॥ १६ ॥ जे प्राणी आत्मघाती अशांत हैं अज्ञानहीको ज्ञान करि माने हैं, जे कृतकृत्य नहीं भये ते कालकरि नष्ट मनोरथ होइ दुःखही पावे है ॥ १७ ॥ जे भगवान्‌ते विमुख हैं, अतिश्रमसो गृह पुत्र मित्र धन सबकों प्राप्त हैंके इच्छा नहीं रहिवेपैहू नीच योनि अंधतममें परे हैं ॥ १८ ॥ राजा जनक बोले आपने जो सब त्याग नारा-यणकी भक्ति करनी कही सो कौनसे समयमें कैसे वर्णके कैसी आकृतिके कौनसे नामसो कौनसी विधिसों लोकमें पूजे जाय हैं सो कहिये ॥ १९ ॥ तब करभाजन योगीश्वर नौमे प्रश्नको उत्तर देय हैं सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग इन चारि युगनमें नानावर्ण नाम आकार युक्त केशव अनेक विधिसों पूजिये हैं ॥ २० ॥ सतयुगमें शुक्लवर्ण चतुर्भुज जटा धरे वल्कल वस्त्र धरे कारे मृगको चर्म यज्ञोप-वीत रुद्राक्ष दंड कमंडलु धरें ब्रह्मचारीके रूपसों दर्शन देय हैं, तैसेई पूजियें हैं ॥ २१ ॥ ता युगमें मनुष्य सब शांतरूप निर्वैर सुहृद समदृष्टि शम दम और ध्यान करिकैं देवकों पूजे हैं ॥ २२ ॥ ता कालमें इन नामन करिकैं हरि गाये हैं, हंस, सुपर्ण, वैकुण्ठ, धर्म, योगेश्वर, मनु, अमल, ईश्वर, पुरुष अव्यक्त, परमात्मा इति ॥ २३ ॥ त्रेतामें रक्तवर्ण चारि भुजा तीनि मेखला धरें, सुवर्णवर्ण केश, वेदत्रयीमयमूर्ति, स्रुक्स्रुवा यज्ञके साधनकों धरे ॥ २४ ॥ जे अतिधर्मात्मा वेदके ज्ञाता मनुष्य हैं वे सर्व वेदरूप हरिको तीनिहूं वेदनके कर्मनकरि त्रेतामें पूजे हैं ॥ २५ ॥ विष्णुयज्ञ, पृश्निगर्भ, सर्वदेव, उरुक्रम, वृषाकपि, जयंत, उरुगाय ये नाम गाये जाय हैं ॥ २६ ॥

---

१ प्रयोजन यह है कि मैथुन मांस और मद्य इनमें प्रवृत्ति मनुष्यनकी है परंतु वेदवाक्यनसौं विधि नहीं पावेहै कोई कहै कि (ऋतौ भार्यामुपेयात् सौत्रामण्यां सुरां पिबेत्) इत्यादि वाक्यनसौं विधि पावै है सो वो विधि नहीं है किंतु परि-संख्याविधिसो निषेधही है कि जो मैथुन करे तौ भार्याहीमें और फिर ऋतुमेंही करै तब वास्तवसौं रागप्राप्त नित्यमैथुनको निषेधही भयौ विधि नहीं ऐसेही सब विधिवाक्यनसे निषेध पायो यासौं निवृत्तही वेदाभिप्राय है इति ॥ २ अत्र मनुः । मां स भक्षयितामुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहम् ॥ एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

द्वापरमें भगवान् श्याममूर्ति पीतांबर धरें, शंख चक्रादि श्रीवत्सआदि चिह्न और कौस्तुभादिक लक्षण धरें हैं ॥ २७ ॥ हे राजन् ! जो मनुष्य ईश्वरके जानवेकी इच्छा राखे हैं वे वा समयमें महाराजनके लक्षण संयुक्त वा महापुरुषकों वेद मंत्र और आगमनके मंत्रनसों पूजे हैं ॥ २८ ॥ अब नाम कहैहैं वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्धरूप भगवान् तुमको नमस्कार है ॥ २९ ॥ नारायणऋषि पुरुष महात्मा विश्वेश्वर विश्वरूप सर्वभूतनके आत्माको नमस्कार है ॥ ३० ॥ हे राजन् ! ऐसी भांति द्वापरमें परमेश्वरकी स्तुति करै है, नाना आगम मार्गनकरिकै कलियुगमेंहूं जैसे पूजे है सो सुनिये ॥ ३१ ॥ कलियुगमें कृष्णवर्ण है, कांति करिकै अतिनिर्मल है, जैसी नीलमणि होयहै ऐसे अंग हृदयादि उपांग कौस्तुभ और सुदर्शनादिक अस्त्र पार्षद सुनंदनादिक समेत नामको कथन और स्तुति प्रधान पूजासों अति बुद्धिवंत अर्चन पूजन करे हैं ॥ ३२ ॥ पीछें स्तुति करै हैं हे प्राणिनके रक्षक ! हे महापुरुष ! तुम्हारे चरणारविंदको नमस्कार है जो चरणारविंद सदा ध्यान करिवेकों योग्य है, इंद्रिय कुटुंबके संगते अनिष्टको दूरि करै है, मनके अभिलाष पूर्ण करै है; गंगादिक तीर्थके स्थान भूत हे शिव ब्रह्मासो स्तुति किये भए हैं जे दीन ह्वैकै विन चरणनकी शरण जायहैं तिन सबनके रक्षक हैं सेवककी पीडाको हरे हैं संसारसमुद्र तरिवेको नावरूप है ॥ ३३ ॥ हे धर्मात्मन् हे ! श्रीरामचन्द्रजी ! आप देवतानसोंहू न त्यागी जाय जाकी अभिलाषामेंहीं अमर रहैं हैं ऐसी राज्यलक्ष्मी पिताकी आज्ञासों छोडकै धर्मकी रक्षाके निमित्त वनको गये और प्रिया सीताके प्रेम और वचनसों मायामृगके पीछे धाये विन भक्तप्रिय आपके चरणारविंदनको हम प्रणाम करै हैं ॥ ३४ ॥ हे राजन् जनक ! या भांति चारोंहूं युगके नाम रूप भेद करि वा वा युगके मनुष्यनकरि कल्याणके दाता हरि भगवान् पूजे जाय हैं ॥ ३५ ॥ अब चारोंहू युगनमें कलियुग श्रेष्ठ है यह कहै हैं जे श्रेष्ठ गुणज्ञ सारग्राही हैं, वे कलियुगकी स्तुति करें हैं, और युगनमें ध्यान यज्ञ पूजा करि जो फल होय है, सो सब स्वार्थ कलियुगमें भगवान्के भजन कीर्तन मात्रतेंई प्राप्त होयहै[2] ॥ ३६ ॥ प्राणी देहके अभिमान करि संसारमें भ्रमें हैं तिनको याते और परम लाभ नहीं जो संसार नष्ट होइ, परमसुख शांति पावे, ताते कलियुगमें हरिकीर्तनते परे और लाभ नहीं ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! सतयुगादिककी प्रजा कलियुगमें जन्म पामें ऐसे इच्छा करे है, जाते निश्चय करि कलियुगमें सर्व जीव नारायणपरायण होईगे ॥ ३८ ॥ हे महाराज ! कहूं कहूं महाराष्ट्रदेशमें भक्त होइगे, द्राविडदेशमें बहुत होइगे, जहां ताम्रपर्णी नदी कृतमाला और पयस्विनी हैं ॥ ३९ ॥ कावेरी परम पवित्र नदी हैं इन नदीनको जल पीमें हैं हे मनुजेश्वर ! वे मनुष्य निर्मलचित्त ह्वैकै श्रीभगवान् वासुदेव विषे बहुधा भक्त हैं ॥ ४० ॥ जे मनुष्य सर्वथा भेद छोडिकै केवल शरणदाता मुकुंद भगवान्के शरण जाय हैं विनपै देवता ऋषि भूत कुटुंबी मनुष्य पितरको ऋण नहीं रहै है हे राजन् ! इनके अर्थ पंचयज्ञादिकनके करवेकीहू प्रबल विधि नहीं जो सर्वत्र एक हरिको देखे हैं ॥ ४१ ॥ यदि यह संदेह करो कि सम्पूर्ण कर्म छोडिकै भजन करै तो कर्म छोडवेको पाप लगैगो याको समाधान यह है कि जो सब देवादिकनको छोडिकै एक हरिहीके चरण भजे हैं, ताको विकर्म सर्वथा न होइहै जो कदाचित्प्रमादते होइ तो वाके

---

१ सोई जब ऋषिनने कलियुग आयो देखो तब वेदव्यासजीके पास जायके बोले कि महाराज ! कलियुग आय गयो है अब कहा करें तब श्रीवेदव्यासजी सालिगरामको हाथमें लेके गंगाजीमें कमर २ जलमें खडे ह्वैके ऋषिन प्रति बोले (हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम् । कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ॥) तब सब ऋषिनने कीर्तनको ही कलियुगमें प्रधान मान्यो ॥

२ दोहा—सतयुत त्रेता द्वापर, पूजा मख अरु योग ॥ जो गति होय सो नामजप, कलिमह पावहिं लोग ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हृदयमें हरि बैठे हैं, वे यमादिकनहूके नियंता हैं, वाकेहू कर्म सब नाश करैं हैं ताते हरिको भक्त प्यारो है ॥ ४२ ॥ इन नौ योगीश्वरनको संवाद कहिकै श्रीनारदजी बोले हे वसुदेव ! ऐसे भगवत धर्म सुनिके राजा जनक संतुष्ट हैकै अपने गुरुनसहित जयंतीपुत्र योगीश्वरनकी पूजा करतभये ॥ ४३ ॥ ता पीछे वे योगीश्वर सम्पूर्ण मुनि सिद्ध लोकनके देखतेही अंतर्द्धान होत भये, राजा जनक वे धर्म करते परमगति पावत भये ॥ ४४ ॥ अब नारदजी वसुदेवसो कहै हैं हे महाभाग वसुदेव ! तुमहूं ये वैष्णवधर्म करो; सुनकर श्रद्धा करवेसो निःसंग होइ परम मंगल पाओगे ॥ ४५ ॥ यह तो मैंने शास्त्रादिकनकी रीति करी सब तुमसों कह्यो है तुम तो वसुदेवजी विनाही शास्त्रके क्रम कृतार्थ हो तुम दोऊ स्त्री पुरुष परम भागवत हो जिनके यश करि सब जगत् पूर्ण होई रह्यो है, जाते तुम्हारे भगवान् ईश्वर पुत्र भये ॥ ४६ ॥ तुमको और लोकनकी भ्रांति सर्व कर्म समर्पण आदि वैष्णव धर्मन करि चित्त शुद्ध करनो नहीं, दर्शन आलिंगन आलाप शयन आसन भोजन करि श्रीकृष्ण विषे पुत्रस्नेह करते तुम्हारे भगवान् ईश्वर आत्मा पवित्र भयो है ॥ ४७ ॥ जे शिशुपाल पौंड्र शाल्वादिक शय्या आसन आदिविषे जाको वैरसोहू ध्यान कर, श्रीकृष्णकी गति विलास चितवन आदि करि तदाकार भई बुद्धिसों सारूप्यमुक्ति पावत भये तौ जे स्नेहसों चित्त इनके स्वरूपमें राखे हैं, वे सारूप्य गति पावें तो यामें कौन अचरज हैं ॥ ४८ ॥ अहो जो पुत्रस्नेह मुक्तिको कारण है तो सबही मुक्त होने चाहिये तहां कहैं हैं, हे वसुदेवजी ! तुम इनपर पुत्रबुद्धि मति राखो, ये तो सर्वात्मा ईश्वर हैं मायाकरि मनुष्यसे दीखेहैं, अलौकिक ऐश्वर्य इनको गुप्त है, ये श्रीकृष्ण अविनाशी परम पुरुष है ॥ ४९ ॥ पृथ्वीको भाररूप असुरराजानके मारवेको साधूनकी रक्षा करिवेको मोक्ष देवेको अवतार लियो है, लोकनमें यश विस्तार करै है ॥ ५० ॥ अब श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित्सो कहै हैं हे राजन् ! यह सुनि महाभाग वसुदेवजी और देवकी आश्चर्य पाइ अपने आपको मोह स्नेह छोडत भये ॥ ५१ ॥ यह इतिहास अतिपुण्य है जो याको नेमसो मनमें धरैहै सो याही देहविषें मोह दूरि कर ब्रह्मभावकों प्राप्त होइहै ॥ ५२ ॥

इतिहासमिमं पुण्यं धारयेद्यः समाहितः ॥
स विधूयेह शमलं ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

श्रीशुक उवाच--अथ ब्रह्मात्मजैर्देवैः प्रजेशैरावृतोऽभ्यगात् ॥
भवश्च भूतभव्येशो ययौ भूतगणैर्वृतः ॥ १ ॥

छठे अध्यायमें ब्रह्मादिक जब स्तुतिकर चले गये, तब उद्धवने विनंति करी कि मोहूको अपनें धाम लेचलो, यह प्रार्थना उद्धवजी करैंगे ॥ शुकदेवजी राजा परीक्षित्सों कहैं हैं या प्रकार वसुदेवजीसों नारद कहिगये, ता पीछे द्वारकामें ब्रह्मा सनकादिक और संपूर्ण देवता ऋषि मिलिकै आवत भये, भूतनके ईश्वर महादेव भूतगणनसों सहित आवतभये ॥ १ ॥ देवतानसो सहित भगवान् इंद्र आये आदित्य वसु अश्विनीकुमार ऋभु अंगिरा रुद्र एकादश विश्वेदेवा साध्य ॥ २ ॥ गंधर्व अप्सरा नाग सिद्ध चारण गुह्यक ऋषि पितर विद्याधर किन्नर ये सब श्रीकृष्णके दर्शनकों द्वारकामें आवत भये तहां पूछे हैं स्वर्गमें उपेंद्ररूप भगवान्को नित्य देखें हैं यहां कहा विशेष है जो देवता आवतभये ॥ ३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तहां कहैं हैं जा देहसों भगवान् मनुष्यलोकमें परमसुंदर मूर्तिसों सब लोकनके पाप दूरि करवेवारे यशको विस्तार करत भये ता अतिसुंदर मूर्ति देखिवेकों आवत भये ॥ ४ ॥ परम शोभा करि धनी पुरुषनसों अतिसमृद्ध, द्वारकामें आइ अतृप्त नेत्र देवता अद्भुतरूप श्रीकृष्णको देखतभये ॥ ५ ॥ पीछे नंदनवनके फूलनसों श्रीकृष्णको पूजतभये विचित्र पद और अर्थयुक्त वाणीनकरि जगदीश्वरकी स्तुति करतभये ॥ ६ ॥ सो संपूर्ण स्तुति कहैं हैं, हे नाथ ! हम तुम्हारे चरणारविंदको नमस्कार करैं हैं, जे जीव कर्मरूप बडे पाशतें छुट्यो चाहे हैं, वे बुद्धि प्राण इन्द्रिय मन वचनसों भावयुक्त होइके जिनको हृदयमें सदा चिंतवन करैं हैं परन्तु तौहू दर्शन नहीं पावे हैं हम तुमारो प्रगट दर्शन करैं हैं यह बडो हमारो भाग्य है ॥ ७ ॥ तहां एक तर्क करैं हैं मोक्षके लिये मेरे चरणको चिंतवन काहेको करोहो, मैं तो अनेक दुष्टकर्म करोहों, मेरो तो कर्म छूटेहीं नहीं तो विनके कर्म क्यों छुडाऊंगो (तहां कहैं हैं) हे अजित ! तुम ऐसी बात मति कहो औरनपै मनहूंकरि जान्यो न जाई ऐसे महत्तत्त्वआदि प्रपंचकों त्रिगुण अपनी माया करि आपुहीमें उपजावोहो पालोहो, संहारोहो, तुम मायाके गुणनमें नियंता करि स्थित हो और इन कर्मनकरि लिप्त नहीं होउ हो जातें रागादिरहित हो, और नित्य अपने अव्यवहित आनंदस्वरूप विषें मगन हो याहीसों जितने दोष हो तिनसों रहित हो ॥८॥ तो मोकों कर्म करिवेको कहा प्रयोजन है मैं तो आत्माराम हों (तहां कहैं हैं) हे स्तुतियोग्य ! हे परम श्रेष्ठ देव ! विषयिनकी चित्त विद्या श्रवण अध्ययन दान तप कर्मनकरि तैसे नहीं शुद्धि होय है जैसी साधुनके चित्त तुम्हारे यश श्रवण करि शुद्धि होय है ॥९॥ अब प्रार्थना करैं हैं तुम्हारे चरण हमारे अशुभवासना जराइवेको अग्नि होउ जा चरणको सब मुनि प्रेमकरि कोमल हृदय होइ मोक्षके अर्थ ध्यान करैं हैं, और भक्तजन सारूप्यमुक्तिकी इच्छा करि वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध इन चतुर्व्यूह करि तीन कालमें पूजे है, और तिनहु विषे जे ज्ञानी हैं वे इन्हीसों स्वर्गको उल्लंघन करिकै वैकुंठ जाइवेंके अर्थ पूजिये हैं ॥ १० ॥ हे ईश ! जिन तुमको यज्ञ करनेवाले कर्ममार्गमें हाथ जोरि यज्ञकी अग्निमें तीनों वेदकी विधि करिकै हविको लेकरि चिंतवन करैं हैं, और योगिराज अध्यात्मयोगकरि तुम्हारी माया अणिमादिक ऐश्वर्य्य जानिवेकों चिंतवन करैहै, और परम भक्त सर्वत्र पूजे हैं ॥११॥ हे विभो ! तुम्हारे सब अंगनमें व्याप्त वनमालासों भगवती लक्ष्मीसी सौतिकीसी ईर्षा राखे हैं, यह वनमाला भक्तनने अर्पण करी है या हेतुतें जो तुम धारण करोहो औरहू कहै है कौन विनको मालानकरिकैं पूजाको ग्रहण करोहो तुम्हारे चरण हमारी विषयवासना जराइवेको अग्नि होउ ॥१२॥ जब तुम त्रिविक्रमरूप भये तब तुमने बलिराजा बांध्यो, तब तुम्हारो एक चरण सत्यलोकमें रह्यो, सो जैसे विजयपताका होइ तैसे लगे हैं चरणते गंगाजूके तीनि प्रवाह छूटे, ते पताका भई चरणध्वज दंड भयो, सो सुर असुर सबनकी सेनाको भय अभयको दाता भयो; देवतानकों और साधुनको अभयको दाता स्वर्ग दीनों, असुरकों और दुष्टनको भयदायक अधोगति दीनी, हे सर्वव्यापक ! तुम्हारे चरण हम भक्तनकों पापतें रक्षा करे ॥ १३ ॥ कदाचित् कहो युद्धमें देवता दैत्य परस्पर जीते हैं, हारे हैं मेरो तहां कहा निमित्त है तहां कहै हैं, ब्रह्मा आदि ले देहधारी सब जगत् परस्पर युद्ध करि पीडित होय हैं तब तुम्हारे वश होय हैं, जाते कालरूप तुम हो कालके आधीन सब है जय पराजय आपके आधीनही है, जैसे नाथके आधीन बैल है तैसे सब तुम्हारे आधीन हैं, तुम या प्रकृति पुरुषहूते परे हो, पुरुषोत्तम हो, तुम्हारे चरण हमको सुख करे ॥ १४ ॥ अब पुरुषोत्तमकों कहै हैं तुम या जगत्के उत्पत्ति पालन प्रलयके कारण हो, प्रकृति पुरुष महत्तत्त्वहूके नियंता हो, यह काल संवत्सररूप है,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो चक्ररूप हैं, ताके ग्रीष्म वर्षा शरद तीनों नाम हैं सबके नाशकों प्रवृत्त है, गंभीर याको वेग है सो काल तुम्हारो रूप है, तातें तुम उत्तमपुरुष हो ॥ १५ ॥ अब सृष्टिको प्रकार कहे हैं, प्रथम तुमते सफलवीर्य एक पुरुष होय है सो पुरुष तुमतें शक्तिको पाइ मायासों मिलि विश्वको गर्भरूप महत्तत्त्व उपजावे है सो महत्तत्त्व मायासों मिलि आत्मातें यह स्वर्णमय अंडकोश बाहरके सात आवरण संयुक्त सृजे हैं ॥ १६ ॥ जातें सब तुमतें प्रगट भयो है याही कारणसो या स्थावरजंगम विश्वके अधीश तुम हो हे संपूर्ण इंद्रीनके पति ! मायाकरि उपजी इंद्रियवृत्ति करिकै विषयभोग करतेहू तुम निर्लेप रहो हो जे योगीश्वर योग करि विषय छोडे हैं तोहू डरपेहैं कि कदाचित् हमको विषयवासना न उपजे, तुम प्रपंचसों मिलि रहे हो और विषयसंबंध नहीं यह तुम्हारो विशेषधर्म हैं ॥ १७ ॥ सोलह सहस्र स्त्री अपने मंदहास सहित चितवनिके कटाक्ष करि दिखाये अभिप्रायसो विनके मनको हरवेवारे भ्रूमंडलसो प्रेरे संभोग मंत्रनविषें निपुण, कामके बाण और कामकी कलासेहू जो तुम्हारे मनको वश न करिसकी, तौ तुम विषयनसो निर्लिप्तही हो ॥ १८ ॥ तातें तुम्हारी अमृतरूप कथाजल भरी कीर्तिरूप नदी, और तुम्हारे चरणोदक रूप गंगा ये दोऊ त्रिलोकीके पाप दूरि करिवेको समर्थ हैं, श्रवणेंद्रियनकरि वेदमें गाये तुम्हारे यशके सुनेतें सब पाप नष्ट होय हैं, गंगाके स्नान करते पाप सब जाय हैं, ताते धर्म जानें हैं ते ये दोऊ तीर्थ सेवे हैं ॥ १९ ॥ याप्रकार ब्रह्मा महादेव सहित देवतानसों मिलि स्तुति करि नमस्कार कर आकाशहीमें ठाढे श्रीकृष्णजीसों बोलत भये ॥ २० ॥ हे प्रभो ! हे सबके अंतर्यामी ! हमने भूमिके भार दूरि करिवेके लिये पहिले तुमसो विनती करीही सो भार तुमनें तैसेई दूरि कियो ॥ २१ ॥ संतनमें धर्म स्थापन कियो, साधुनमें सत्य राख्यो, सबनके पाप दूरि कर कीर्ति दशो दिशानमें विस्तारी ॥ २२ ॥ यदुवंशमें अवतार ले उत्तम रूप धरि जगत्के हितके अर्थ अति उदारचरित्र कर्म करत भये ॥ २३ ॥ हे ईश ! जिन कर्मनको कलियुगमें साधुजन श्रवण कीर्त्तन करते सुखपूर्वक संसारको तरेंगे ॥ २४ ॥ हे विभो ! हे पुरुषोत्तम ! यदुवंशमें अवतार लिये तुमको एकसौ पचीस वर्ष बीते है ॥ २५ ॥ हे सर्वाश्रय ! अब तुमको कोऊ देवकार्य्य करनो नाहिं रह्यो, और यह तुम्हारो कुलहू विप्रशापते नष्ट होवे रह्यो है ॥ २६ ॥ ताते जो तुम्हारे मनमें आवे तो अपने वैकुंठ धामको पधारो, हे वैकुंठनाथ ! हम तुम्हारे किंकर हैं, लोकसहित लोकपालनकी रक्षा करो ॥ २७ ॥ तब भगवान् बोले हे देवतानके ईश्वर ! तुमने कही सो मैंने मनमें धारी तुम्हारो संपूर्ण कार्य कियो, भूमिको भार उतारचो ॥ २८ ॥ परंतु यह यादवकुल बल शूरता श्रीकरि अति उद्धत , लोकको ग्रस्यो चाहे है, परि मैं रोकूहूं जैसे मर्यादाकरि समुद्र रोक्यो है ॥ २९ ॥ जो मैं ऐसे गर्वसो उद्धत या यादवनके विशाल कुलको संहार किये विना जाउ तो यह लोकमर्यादारहित या यदुकुल करि नष्ट होइगो ॥ ३० ॥ सो विप्रशापतें या कुलके नाशको अब आरंभ कियो है, हे ब्रह्मन् ! इनको संहार करिकै वैकुंठ जाउगो, हे निष्पाप ! तुम्हारे घर आऊँगो ॥ ३१ ॥ लोकनके नाथ श्रीकृष्णकी ऐसी वाणी सुनि स्वयंभु देव ब्रह्मा श्रीकृष्णको नमस्कार करि देवतानसों मिलि अपने धामकों जात भये ॥ ३२ ॥ पीछे वा द्वारकामें उठे बडे उत्पातनकों देखि मिलिकरि भये यदुवृद्धनसों भगवान् बोले ॥ ३३ ॥ सब ओरते यहां बडे उत्पात उठे हैं हमारे कुलकों निवारणके अयोग्य ब्राह्मणकौं शापहू भयो है ॥ ३४ ॥ हे यादवहो ! जो जीवेकी इच्छा है तो हमकों यहां वसिवो नहीं चहिये अतिपुण्य प्रभासतीर्थको आगही चलो, विलंब मति करो ॥ ३५ ॥ जा तीर्थमें स्नान करिकै दक्षके शापतें क्षयरोग करि ग्रस्यो चंद्रमा पापते छूटो, और तत्काल फेरि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कलानकी वृद्धि पाई ॥ ३६ ॥ हमहू तहां स्नान करि देवता पितरनकों तर्पण करि अनेक गुणसंयुक्त अन्नकरि उत्तम ब्राह्मणनकों भोजन करवाई ॥ ३७ ॥ श्रद्धा करि महान् सत्पात्रनविषें बीज बोइ, तिन दाननकरिकै पापनको तरैंगे, जैसे नावकरि समुद्र तरै है ॥ ३८ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! या भांति जब श्रीभगवान्नें आज्ञा दीनी तब यादव चलिवेकों उद्यम करत भये. तीर्थके लिये रथ जोरि सिद्ध कीने ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! ता समय यादवनकों प्रभासयात्राको उद्यम देख और श्रीकृष्णके वचन सुनि और घोर उत्पातनको देखि नित्य श्रीकृष्णकों समीप रहिवेवारे उद्धवजी ॥ ४० ॥ एकांत विषें निकट जाइ जगत्के ईश्वरनके ईश्वरके पायनकों माथेसों नमस्कार करिकै हाथ जोरि बोलत भये ॥ ४१ ॥ हे देवदेवेश हे योगेश हे पुण्यश्रवणकीर्तन ! तुम्हारी ऐसी इच्छा जानी जाईहै कि या कुलकों संहार करिके निश्चय करि भूलोककों छोडचो चाहोहो, जातें तुम ईश्वर संपूर्ण कार्य्य करवेकों समर्थ हो पर विप्रशाप न निवारचो ॥ ४२ ॥ हे केशव हे नाथ ! मैं तुम्हारे चरणकमल छोडिवेकों अर्द्धक्षणहू उत्साह नहीं करोंहों, मोहूको तुम अपने धामको ले चलो ॥४३॥ हे कृष्ण ! तुम्हारी लीला मनुष्यनकों परम मंगलदायक हैं श्रवणेन्द्रियको अमृतरूप है, ताकों आस्वाद लेके मनुष्य औरकी इच्छाकों छोडै है, हम तुम्हारे दिन रात्रिके सेवक हैं ॥४४॥ शयन आसन गमन स्नान क्रीडा भोजनकों आदि ले औरहू क्रियानमें सदा संग रहैं हैं; ते हम भक्तप्रिय आत्मारूप तुमकों कैसे छोडिसकें ॥ ४५ ॥ तुम्हारे समीप तुम्हारे प्रसादकी माला सुगंध चंदन प्रसादी वस्त्रसों चर्चित होइकै बाह्य शुद्ध होयहै, पीछें तुम्हारो उच्छिष्ट महाप्रसाद भोजनकरि अंतरशुद्धि करिकैं तुम्हारी मायाकों जीते हैं ॥ ४६ ॥ जे वायु भक्षण करि रहे हैं, दिगंबर हैं शमयुक्त हैं जितेन्द्रिय हैं, संन्यासी हैं, निर्मलचित्त हैं, आत्मविद्यामें जिनने श्रम कियोहै, वे ऋषि अनेक क्लेश करि तुम्हारे वैकुंठधामको पावे हैं ॥ ४७ ॥ हे महायोगीश्वर ! हम तो तुम्हारे भक्तनके संग तुम्हारी वार्त्ता करते सकल कर्मनमें श्रमतेहू दुस्तर तुम्हारी मायाको तरैंगे ॥ ४८ ॥ मनुष्यलोकनकों आश्चर्यदायक तुम्हारे कर्म वचन गावते हास्य चितवनि हास्यकी वार्ता और जो कछु मनुष्यलोकमें लीला करी है वाको स्मरण कीर्तन करैंगे यासोंही तरजायेगे मैं यह मायाके भयसों प्रार्थना नहीं करूंहूं परन्तु आपको संग छोडो नहीं जाय है ॥ ४९ ॥ हे राजन् ! या भांति उद्धवजीकी विनती सुनि भगवान् श्रीकृष्ण सदा निकटवर्ती परम प्रिय भक्त उद्धवसों बोलतभये ॥ ५० ॥

श्रीशुक उवाच–एवं विज्ञापितो राजन् भगवान् देवकीसुतः ॥
एकान्तिनं प्रियं भृत्यमुद्धवं समभाषत ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

श्रीभगवानुवाच–यदात्थ मां महाभाग तच्चिकीर्षितमेव मे ॥
ब्रह्मा भवो लोकपालाः स्वर्वासं मेऽभिकांक्षिणः ॥ १ ॥

उद्धवके ज्ञानकी सिद्धिकों हरि आपु अवधूतके इतिहास करि कहैं हैं; गुरुनविषे आठ गुननकों सातवें अध्यायमें वर्णन करगे ॥ श्रीकृष्ण उद्धवसों कहैं हैं हे महाभाग उद्धव ! तुमने जो मोसो कह्यो सो सब मोको करनोइ है, ब्रह्मा महादेव लोकपाल ये सब स्वर्ग जाइवेके अर्थ मेरी प्रार्थना करि गये

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं ॥१॥ मैंने यहां वह सब देवकार्य सिद्धि कियो, जाके अर्थ ब्रह्माकी प्रार्थनासों बलदेवसहित मैं अवतरयो हो ॥ २ ॥ हमारो कुल रह्यो है सो शाप करि जरि रह्यो है, तातें निश्चयकर परस्पर विग्रहनतें नष्ट होइगो, और आजुतें सातवें दिन या पुरीको समुद्र डुबावेगो ॥३॥ जा दिन मैं या लोकको छोडोंगों, तादिन यह नष्टमंगल होइगो, हे उद्धव ! फेरि कलियुगहू प्रवृत्त होइ करि सब धर्म दूरि करैगो, थोरेही कालमें या लोकको निरादर करैगो ॥ ४ ॥ मेरे त्याग किये महीतल विषें तुम मति वसिवो हे उद्धव ! कलियुगमें मनुष्यनकी प्रीति अधर्ममें होइगी ॥ ५ ॥ हे उद्धव ! तुम तो स्वजन बंधु कुटुंबमें सब स्नेह छोडि मेरे स्वरूपमें चित्त राखि समदृष्टि ह्वैकैं पृथिवीमें फिरो ॥ ६ ॥ या संसारमें दृष्टि मति राखियो, वचन नेत्र श्रवणादिक करिके जो ग्रहण कियो है सो सब झूंठो मायाकों रच्यो यह मनहू मिथ्या है यह जानो ॥ ७ ॥ विक्षिप्त चित्तवारे पुरुषको वेदार्थ अनेक भांति दीखे है सो भ्रमे हैं, गुणदोषसंयुक्त हो कर्म अकर्म विकर्म भेद गुणदोष बुद्धिवारेको है समदृष्टि आत्मज्ञानवंतको यह भेद नहीं ॥ ८ ॥ तातें तुम तो उद्धवजी सब इंद्रियवश करि चित्त अपने वश करि या विशाल जगत्को अपनपेमें देखो, आपुको परमेश्वरमें ब्रह्मरूप करि देखो ॥ ९ ॥ जो कहो कि विघ्न बहुत हैं कैसें देखो ताको उत्तर है, वेदके अभिप्रायको निश्चय और वाके अर्थको अनुभव मिलाय आत्माके ज्ञानसोंही संतुष्ट और देवता आदिहू आत्मरूप जानोगे तब कोई विघ्न नहीं करैगो जबतक आत्मज्ञानकी प्राप्ति न होय तबतक वर्णके अनुसार कर्म करै अनुभव प्राप्त ह्वैवेपै विघ्ननसों कछु नहीं होयहै ॥ १० ॥ गुण दोष बुद्धिते रहित भयो यह पहिले कर्मनके संस्कारतें निषिद्ध कर्मनते विवर्त होयहै, किन्तु न दोष बुद्धिसो बहुधा विहित कर्मको करैहैं न गुण बुद्धिसो जैसे बालक गुण दोष विचारिकै कर्म विकर्ममें प्रवृत्त निवृत्त नहीं होय है ॥ ११ ॥ सब प्राणीनको मित्र होइ, ज्ञान विज्ञानको निश्चय होइ सब विश्वको मेरो रूप करि देखे, तब फेरि संसार न पावे ॥ १२ ॥ शुकदेवजी राजा परीक्षित्सों कहै हैं हे राजन् ! भगवान्नें ऐसे समझायो परम भागवत उद्धव प्रणाम करि तत्वज्ञानकी इच्छा करि श्रीकृष्णसों बोलत भये ॥ १३ ॥ उद्धवजी बोले हे योगके फलदाता, हे योगके आधार, हे योगरूप, हे योगके कारण ! मेरे मोक्षके अर्थ यह संन्यासरूप त्याग मोसों कह्यो सो अपनी सहज दयातें कह्यो, मैं तो ऐसो अधिकारी नहीं हूं ॥ १४ ॥ हे सर्वव्यापक ! हे सबके आत्मा ! यह विषयनको त्याग सकामी पुरुषनको अशक्य है और जो तुम्हारे भक्त नहीं है विनको विशेष करि अति कठिन है मेरी बुद्धि तो यह कहैहै ॥ १५ ॥ जो मोसों तुम त्याग कहो हो महाराज मैं तो अहंता ममता करि मूढमति हों तुम्हारी माया करि उपजे पुत्र कलत्र देह आदिमें मग्न हो हे भगवन् ! तातें जैसे यह सब तुम्हारो कह्यो मैं विना परिश्रम सदा करिसको तैसी मोको तुम शिक्षा देउ ॥ १६ ॥ तुम समानरूप हो स्वप्रकाश हो आत्मा हो, हे ईश ! तातें मोको और ऐसो वक्ता देवतानमेंहू कोऊ नहीं देखिपडें है, ये ब्रह्मादिक देहधारी तो तुम्हारी माया करि मोहितबुद्धि हैं, बाहरके विषयनमें इनकी अर्थ बुद्धि है ॥ १७ ॥ कोई एक प्रभु दुष्टशील है कोऊ एक ऐसे है जो सेवा करवेसों फल काल विषें नष्ट होय है कोऊ अज्ञानी हैं कोऊ रक्षाविषें असमर्थ हैं कोई स्थानभ्रष्ट है तातें संसारदुःखते अतीत नहीं मैं अतिविरक्तचित्त हों तुम्हारी शरण आयोहूं तुम तो निंदारहित हो तुम्हारो कालतें अंत देशतें पार नहीं, सर्वज्ञ हो, ईश्वर हो, तुम्हारे नाशरहित वैकुंठस्थान है, तुम सब जीवनको आश्रय हो, जीवके सखा हो ॥ १८ ॥ तब श्रीभगवान् बोलते भये जे लोक तत्वको अतिश्रेष्ठ जाने हैं, मनुष्य बहुधा गुरु विना आपही अपने आत्माको संसारसों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उद्धार करते हैं गुरुके उपदेशकी अपेक्षा नहीं करते ॥ १९ ॥ अपनों गुरु आपही है, विशेषकर पुरुष जो यह प्रत्यक्षकरि अथवा अनुमान करि विचारे तो आपहीतें सुख पावे सहजसों अपने स्वरूपकी प्राप्ति होय पशुनकों अपने हितज्ञानकों कौन गुरु है आपुहीतें अपने हितमें प्रवृत्त होय है, तातें आपकों आपुही गुरु है तहां प्रत्यक्षज्ञान दिखामें हैं जब जीव पुरुष जन्म पावे हैं तब यह ज्ञानमार्गमें निपुण होय है ॥ २० ॥ मनुष्य शरीरमें आत्मा अधिक प्रत्यक्ष है यह सांख्ययोगमें चतुर बुद्धिवारे धीर पुरुषनको निश्चय है ॥२१॥ वे शक्तियुक्त मोकों प्रत्यक्ष देखे हैं मेरे उपजाये बहुतरूप शरीर ह कोऊ एक चरण है, कोऊ अर्द्ध चरण है, कोऊ नीचे चरण हैं, कोऊ चारि चरण है कोऊ बहुत चरण है, कोऊ चरणरहित है, तिन सबनमें जो पुरुषरूप देह है सो मोकों प्रिय है ॥ २२ ॥ या पुरुष देहमें जे सावधान है ते अहंकारादिकनतें रहित मोको प्रगट ढूंढे हैं बुद्धि आदि यत्ननकों एक स्वप्रकाश आत्मा विना प्रकाश नहीं होसकै है ऐसो अनुमान करि ढूंढेहैं ॥ २३ ॥ या विषयमें बडे तेजस्वी राजा यदुको और अवधूतको यह संवादरूप प्राचीन इतिहास कहै है ॥ २४ ॥ एक ब्राह्मण पंडित तरुण वेष फिरते २ सर्वत्र निर्भय रहे ताको देखिके धर्मके ज्ञाता यदु पूछत भये ॥ २५ ॥ हे ब्रह्मन् ! अकर्त्ता तुमकों ऐसी निपुण मति कहांतें भई है, जाको पाइकरि अवधूत पंडित तुम बालककी भांति या लोकमें विचरे हो ॥ २६ ॥ बहुधा मनुष्य अर्थ धर्म कामना विषें और आत्माके विचार विषें आयुर्दाय कीर्ति श्रीकी कामनाकरि प्रवृत्त होयहैं ॥ २७ ॥ तुम कछु नहीं चाहो हो, न कोऊ कर्म करोहो, जड उन्मत्त पिशाचकी भांति हो, और सब कार्य कारणकों समर्थ पूरण ज्ञानवान् हो, अति प्रवीण हो सुंदर हो, उत्तम मधुर वाणी है ॥ २८ ॥ मनुष्य काम लोभ रूप दावानल करि जरे हैं, तामें तुम वा तापसों संतप्त नहीं हो जैसे अग्नितें छूट्यो गंगामें ठाढो हाथी वा तापसों तप्त नहीं होइ हैं ॥ २९॥ हे ब्रह्मन् ! तुम विषयभोगरहित हो कलत्र आदिकर शून्य हो, आनंदरूप हो, हम तुमको पूछे हैं तुम्हारे आनंदको कारण कहाहै, सो हमसों कहो ॥३०॥ तब श्रीकृष्ण उद्धवजीसो कहे ह हे उद्धव ! अति ब्रह्मण्य सुबुद्धि राजा यदुने विनयपूर्वक पूजा करि पूछे तब महाभाग अवधूतजी यदु राजासो बोलते भये ॥ ३१ ॥ हे राजन् ! मैंने अपनी बुद्धि करिकै बनाये ऐसे मेरे बहुत गुरु हैं, जिनते मैं बुद्धि पाइकरि मुक्त भयो हौं, या लोकमें फिरोहो तिनको सुनो ॥ ३२ ॥ पृथ्वी १ वायु २ आकाश ३ जल ४ अग्नि ५ चंद्रमा ६ सूर्य ७ कपोत ८ अजगर ९ सिंधु १० पतंग ११ मधुकृत् १२ गज १३ ॥ ३३ ॥ मधुहा १४ मृग १५ मीन १६ पिंगला १७ कुररपक्षी १८ बालक १९ कुमारी २० कडेंडो २१ सांप २२ मकरी २३ भृंगी २४ ॥ ३४ ॥ हे यदुराज ! मैंने चौबीस गुरु सेवन किये हैं, इनके आचरण करिके आपकों सीखिवे योग्य अर्थ सीखत भयो ॥ ३५ ॥ हे ययातिके बेटा हे पुरुषसिंह ! जहां जातें जो जैसी शिक्षा लीनी ह सो तैसी कहोंहों तुम सुनो ॥३६॥ तहां पहिले भूमितें क्षमा सीखी है सो कहें हैं पृथ्वीकों सब प्राणी खूंदते हैं तोहू यह अपने नियमसे चलायमान नहीं होय है ऐसोही देवके वशीभूत प्राणी धीर पुरुषको कष्ट देय है तोहू विनके दैवाधीनपनको जानवेवारे वा पुरुषको अपने नियमसों चलायमान होनो उचित नहीं यह पृथ्वीतें सीख्यो है ॥ ३७ ॥ पृथिवी दो भांतिकी है एक तो पर्वतरूप एक वृक्षरूप तहांते जो सीख्यो है सो कहें है पर्वतकी जो वस्तु है वृक्ष तृण झिरणा फूल फल वे सदा पराये अर्थ हैं और पर्वतको केवल जन्महूं पराये ही अर्थ है, अपने स्वार्थ कछु नहीं, तैसे अपनी वस्तु सब देह परोपकारार्थ करिये यह पर्वतरूप

१ सुहारकी साखी ॥ २ मोंरा ॥ ३ चीज ॥ ४ बाण सुधे। करनवारो कारीगर ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भूमितें सीखो हैं, और वृक्षहू पराये आधीन है जो कोऊ काटे उखारे तोहू वे वृक्ष सहै है वैसें साधुहू जो कोउ अपने संग भलो बुरो करै वाको सहैं ॥ ३८ ॥ अब वायुको कहै हैं पवनहू दो भांतिकी है एक तौ प्राणरूप है दूसरी बाहर फिरें हैं तहां प्राण जैसे आहारमात्र करि संतुष्ट रहे हैं, और इंद्रियनके भोग नहीं चाहैं है, तैसे मुनीश्वरहू रहैं आहार जो न मिले तो मन वचन विक्षित ह्वैकै ज्ञान सिद्धि न होइ तातें एक आहारमात्रतें संतोष मानिलेइ, यातें अधिक न चाहैं, यह विद्या प्राणवायुतें सीखी हैं ॥३९॥ जैसें पवन सर्वत्र चलेहैं पर कहूं आसक्त नहीं होयहै ऐसें योगिराजहू शीत उष्ण आदि नाना धर्मवारे विषयभोग सेवन करतोहू आसक्त न होइ सबमें गुणदोषरहित मन होइ, यह बाहिरकी वायुतें सीखो है ॥ ४० ॥ औरहू एक बात पवनतें सीखीहै सो कहै है वायु सुगंधसों मिलीही चले है, ऐसे जानी जाइहैं परंतु वायु गंधसो मिल्यो नहीं, गंध कछू वायुको गुण नहीं, पृथिवीको गुण है, तैसे अत्मा पृथिवीके विकार देहमें प्रविष्ट है देहके धर्मको आश्रय है, पर मिल्यो नहीं, देहनतें न्यारो है ऐसें समझे सब ठौर आत्माहीको देखे यह विद्याहू पवनतें सीखी तातें वायु गुरु भयो ॥ ४१ ॥ अब आकाशतें सीखी विद्या कहैहैं जैसें आकाश सर्वत्र व्यापक है बडो है, और घटमें छोटो देखियेहै परि घटसौ आकाशको संबंध नहीं, वह निर्विकार है तैसें आत्मा या देहमें है, और यह देहसों मिल्योंहै तातें इतनोइ है, और ठौर नहीं ऐसे न समझे; जो आत्मा देहमें है सोइ सर्वत्र है, जैसे आकाश सब ठौर है तैसे स्थावर जंगम विषें ब्रह्म व्यापक है और घडाके फूटवेमें आकाश नहीं फूटै ऐसेही देहके नाशमें आत्माको नाश नहीं होयहै आकाशतें यह एक विद्या सीखीहै॥ ४२ ॥ द्वितीय वायु कहै जैसें पवनके प्रेरेतें तेज जल पृथिवीमय मेघादिक आकाशमें व्याप्त होयहैं पर मेघादिकनसों आकाशको स्पर्श नहीं वह निर्लेप है तैसें यह पुरुष कालकरि सृजे पंचभूत रूप या देहसों संयुक्त है, विनको विनके संगस्पर्श नहीं है ये धर्म आकाशते सीख्यो ॥ ४३ ॥ जलते सीख्यो सो कहैहैं, जैसें स्वभावहीतें जल अति निर्मल है तैसें मुनिहूं निर्मल होइ, सबके ऊपर स्नेह करे, मीठो बोले जलहू मधुर है जैसें जल तीर्थ स्नान है मनुष्यनकों पापतें छुडावेहै तैसें मुनीश्वरहू दर्शन स्पर्शन कीर्तन करि सबनको पवित्र करैं ये गुण जलते सीखो है ॥ ४४ ॥ अब अग्निकी शिक्षा कहैहैं जैसे अग्नि अति तेजस्वी है, तेजकरि दीप्त है, अति दुःसह है, और वाको उदरही पात्र है जो होम करेहैं सो अग्निके उदरहीमें डारे है तातें वही पात्र है, संपूर्ण वस्तुको भखेहै, तोहू पवित्र करनवारी है तैसे मुनीश्वरहू होई ॥ ४५ ॥ और अग्निको धर्म कहैं जैसें अग्नि कहूं गुप्त है कहूं प्रगट है जे अपनो कल्याण चाहेहैं तिनकों उपास्य हैं, दाताकी इच्छासौ सर्वत्र हविष्य लेइहै, विनके भूत भावी वर्त्तमान पाप सब दूरि करै है तैसे मुनि रहै ॥४६॥ औरहू अग्नितें सीख्यो है जैसे अग्नि एक रूप है बहुत ईंधनसै बहुतभांति बडी दीखेहै, थोरे भये छोटी दीखेही है ऐसेही जीवात्मा एकरूप है, न छोटो है, न बडो है, अपनी अविद्या करि उपजाये ऊंच नीच भेद संयुक्त देहमें प्रविष्ट भयो ऊंच रूपसों दीखेहै ॥ ४७ ॥ जन्मकों आदि लेकै मरणपर्यंत धर्म देहीके हैं, आत्माके नहीं सो दृष्टांत कहैहैं, जैसे चंद्रमाकों मंडल सदा पूर्ण एकरूप है, नित्य वृद्धि और क्षय जो देखो जाय है सो कलानको है जितनो सूर्यमंडलतें नित्त न्यारो परेहै, तितनो दीखेहै ज्यों ज्यों मंडलके नीचें दबेहै, त्यों त्यों घटेहै, तैसो आत्मा एकरूप है, अप्रगट गति कालकरि जन्म मरणादिक भाव देहकों होयहैं, आत्माको नहीं यह ज्ञान चंद्रमातें पायोहै, यातें चंद्रमा गुरु है ॥ ४८ ॥ अब वैराग्यमें अग्नितें सीख्यो हैं सो कहै जैसो अग्निको स्वरूपसों नाश कभू नहीं होयहै अग्निकी ज्वालाको नाश होयहै

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

परि दीखै नहीं तैसे कालनदीके वेगसों जन्म मरण या देहहीको है आत्माको नहीं आत्मा तो नित्य है ॥ ४९ ॥ अब सूर्यते जो जो सीख्यो सो कहैहैं, जैसें सूर्य अपनी किरणनसो जल सोखेहैं, फेरी वर्षा समय वही जल छोडेहै, परि वामें आसक्त नहीं है तैसें योगी इंद्रिय अपेक्षित पदार्थनकों ग्रहण करै और कोई याचना करै तो तत्काल दे देय ममता न रखै और बुरी भली सब जगे सूर्यकी घाम परैहै पन कहूं सूर्य आसक्त नहीं होय और दूषित नहीं होयहै ऐसीही योगी रहै ॥ ५० ॥ जैसे सूर्य आकाशमें अपने स्वरूपमें रहै है एकही हैं परन्तु जलादिमें प्रतिबिम्ब पडवैसो अनेक रूपी दीखै है याही प्रकार आत्मा स्वरूपसों भिन्न नहीं है देहादिकमें प्राप्त हैवेसो स्थूल बुद्धिवारनको अनेक रूपको प्रतीत होयहै ॥ ५१ ॥ कपोतते सीख्यो सो कहैहै कहूं काहूसो अधिक स्नेह न करे काहूमें आसक्त न होइ, जो संग करैहै वो संताप पावेहै दीन मति होइहै जैसें कपोतकों भयो ॥ ५२ ॥ सो कपोतकी कथा कहे है, एक कपोत वनमें वृक्षपै अपनों घर बनाइ कपोतिनी अपनी स्त्रीसों मिलिकै कितनेऊ वर्षतक दोनों बसतभये ॥ ५३ ॥ वे दोऊ स्त्री पुरुष कपोत कपोतिनी परम स्नेहसों बंधे भये दृष्टि दृष्टिसो बंधि हृदय हृदयसो बंध्यो अंग अंगसो बंधे बुद्धि बुद्धिसै बंधी ॥ ५४ ॥ शयन आसन गमन स्थान वार्ता क्रीडा भोजन एक ठौर बैठिकै करें, न्यारे न्यारे ह्वैकै न करे, या प्रकार वे वननकी पंगतमें निःशंक भये फिरे ॥ ५५ ॥ वह कपोतिनी अपने हावभाव लावण्य मधुर भाषणसों प्रसन्नकर कपोतसों दीन ह्वैकै जो जो वस्तु मांगे सो सो वस्तु अति कष्टहू करि लेआवे, या भांति अजितेंद्रिय वाके आधीन भयो रहै ॥ ५६ ॥ एक समय प्रथमही गर्भवती भई पतिव्रता कपोतिनीने अपने समयके आये पतिके समीपही अपने घरमें अंडा दिये ॥५७॥ कछु समयपै विन अंडानमें अचिन्तनीय हरिकी शक्तिन करि हाथ पाउ आदि युक्त बच्चा भये और तिनके कोमल अंगमें रोम भये ॥ ५८ ॥ पीछें ये दोऊ कपोत कपोतनी प्रसन्न भये, अपनें बच्चानको पालत भयै, पुत्रनमें स्नेह बहुत भयो, विनके मधुर वचन सुनते अपनें बच्चानतें संतोष बहुत पावत भये ॥५९॥ विनके पंखनसों जब आपको स्पर्श होइ, तब बहुत सुख पावें, प्रसन्न होजाय अपने पुत्रनकें मुखकी सुंदर चेष्टा विनके वचन अपनें निकट आइवो सो परम सुख मानि लेतभये ॥ ६० ॥ वा स्नेहसो बद्ध हृदय होइ हरिकी माया करि परस्पर मोहित भये अतिदीनबुद्धि ये स्त्रीपुरुष बच्चानकों पालत भये ॥ ६१ ॥ एक दिन ये दोऊ कुटुंबी कपोत वनमें चारों ओर बालकनके अन्नके अर्थ बडी वेर अभिलाषासों फिरतभये ॥ ६२ ॥ अपनी इच्छातें वनमें फिरत कोऊ एक क्रूर वधिक अपनें घोसुवाके निकट चुगत बालकनकों देखि जाल रोपिकै पकरत भयो ॥ ६३ ॥ पीछे ये दोउ कपोत कपोतनी सदा हर्षसंयुक्त प्रजाको चुगो चारो लेवेको गये ले अपने घरमें आये ॥ ६४ ॥ तब वह कपोतिनी अपने बालकनकों जालमें अति दुःखित पुकारत देखि आपहू पुकारती दौरी ॥ ६५ ॥ वह कपोतिनी बहुत स्नेहकरि बंधी दुःखित चित्त जालमें बंधे बालकनकों देखि तहां हरिकी माया करि ज्ञानरहित भई जालमें आपुहू बंधतिभई ॥ ६६ ॥ पीछें वह कपोतहू आपते अधिक प्यारे बच्चानको देखि और अपनें समान स्त्रीहूको बंधी देखि अति दुःखी भयो विलाप करत भयो ॥ ६७ ॥ अहो देखो मैं अल्प पुण्यहूं मूर्ख हूं इन भोगनमें अबहू तृप्त नहीं भयो, देखो मैंने कछू पुण्य नहीं कियो, धर्म अर्थ कामको साधक मेरो घर नष्ट भयो है ॥ ६८ ॥ यह स्त्री मोकों योग्य अनुकूल और पतिव्रता ही, सो आज मोकों सूनें घरमें छोडिकै साधु पुत्रन समेत स्वर्गको जायहै ॥ ६९ ॥ मेरी स्त्री पुत्र सब मरे सो मैं दीन भयो, विधुर भयो, दुःखी भयो, या सूनें घरमें कौन अर्थ जीवेकी इच्छा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करो मेरो जीवन दुःखरूप है ॥ ७० ॥ वह कपोत या भांति विलाप करत विन बालकनकों और अपनी प्रियाकों मृत्युकरि ग्रसे जालमें चेष्टा करत देखि दीन भयो आपुहू वा पुरुषके देखतही जालमें परत भयो ॥ ७१ ॥ वा गृहस्थ कपोतको और कपोतनीकों वाके बालकनकों पाइ कार्य्यसिद्ध भयो, तब वह क्रूर वधिक अपने घरको जातभयो ॥ ७२ ॥ अवधूत यदुसों कहैं हैं ऐसी भांति कुटुंबी कपोत अशांतचित्त भयो याही प्रकार यह पुरुष सुखदुःखहीमें राति मान दीन होइ कुटुंबको भरण पोषण करते कुटुंबसहित दुःखही पावे हैं सुख कबहूं न पावेहै कपोतकी भांति बंधे हैं ॥ ७३ ॥ जो मुक्तिको खुल्यो द्वाररूप या मनुष्यलोककों पाइकरि कपोतकी भांति गृहनमें आसक्त होइ, सो उत्तम गति पाइकर अधोगतिमें परे है, गृहमें आसक्ति पक्षीनहूको अनर्थ करै हैं तौ मनुष्यको तौ अतिही निंदित है, यह विद्या कपोततें सीखी यातें कपोत गुरु भयो ॥ ७४ ॥

यः प्राप्य मानुषं लोकं मुक्तिद्वारमपावृतम् ॥
गृहेषु खगवत्सक्तस्तमारूढच्युतं विदुः ॥ ७४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे अवधूतोपाख्याने सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

ब्राह्मण उवाच–सुखमैन्द्रियकं राजन्स्वर्गे नरक एव च ॥
देहिनां यद्यथा दुःखं तस्मान्नेच्छेत तद्बुधः ॥ १ ॥

आठये अध्यायके विषें कि अजगर आदि नौ गुरुनतें अवधूतकी वाणिसो विवेकके अर्थ उद्धवसों हरि कहै हैं ॥ प्रारब्ध कर्मनको भोग अवश्य कियेही छूटे हैं, तातें कर्मनके उद्यमकरि वृथा आयु न खोवे, तहां अजगरकी सीख अवधूत कहैं हैं हे राजन् ! जिनको देहको अभिमान है, विनकों इंद्रियनको सुख नरकहूमें होयहै, जैसे दुःख विना इच्छाकेहू होयहै, तैसें सुखहू होतहै, तातें बुद्धिवंत सुख न चाहैं ॥ १ ॥ उद्यम विना अनायासतें प्राप्त होइ अथवा विरस होइ थोरो होइ बहुत होइ ऐसे ग्रासकों लेइ सबतें उदासीन रहै शरीर निर्वाह मात्रही ग्रहण करे यह अजगरकी रहनि है ॥ २ ॥ जा दिन कछू न पावे ता दिन निराहारही सोयरहे, अजगरकी भांति ईश्वर देइगो उद्यम न करे ऐसें धीर्य्यसों रहे ॥ ३ ॥ यद्यपि इन्द्री समर्थ होइ मन पुष्ट होइ शरीर पुष्ट होइ तथापि कर्म कछु न करे, जागतही परचो रहै, काहू वस्तुकी अपेक्षा होइ तऊ यत्न न करे ऐसी भांति निरपेक्ष होइ रहे ॥ ४ ॥ अब समुद्रते सीख्यो सो कहे हैं जैसें समुद्रको निश्चल जल है, तैसें अंतःकरणमें प्रसन्न रहै; समुद्र महागंभीर है ताको पार और अंत नहीं जाकों कोऊ लांघि न सकै, जाकों कोऊ गोहि न सकै, क्षोभ करि न सके, ए सब गुण समुद्रतें सीखे ऐसेही महात्मानको उचित है ॥ ५ ॥ जैसे समुद्र चौमासेमें नदीनके जलसो चढे नहीं आतपमें नहीं सूखे न घटे तैसे योगीराज जो कछू पावे ताहीमें संतोष करे न पावे तो खेद न करे, एक नारायण विषें तत्पर होई विषयनतें दूरि रहे ॥६॥ इंद्रियनके पांच विषय हैं, रूप गंध स्पर्श शब्द रस इनमें आसक्त भयेते यह जीव नष्ट होयहै, जैसे पतंग भ्रमर गज हरिणमीन ये नाशको पावे है तातें ये पांच विषयन विषें आसक्त न होइ, यह बात इन पांचोनके पासतें सीखी है. तहां

१ कुरंगमातंगपतंगभृंगमीना हताः पंचभिरेव पंच ॥ एकः प्रमाथी स कथं न हन्यते यः सेवते पंचभिरेव पंच ॥ १ ॥ मतलब यह है कि जब ये एक एक विषय एक एक जीवके प्राणघातक हैं तब फिर जो पांच इंद्रियनसो पांचौनके सेवन करै है कहो वो कैसो न मारो जाय सो कहै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पहले पतंगते जो सीखी है सो कहैं हैं जैसें पतंग अग्निको रूप तेज देखि भ्रमतें वामें जाइ परै है ॥ ७ ॥ तैसे यह स्त्री देवमाया है, ताकों देखि वाके सुवर्णके आभरण वस्त्र मायाविलास देखि वाके हावभाव करि मोहित अजितेंद्रिय लोभी भोगकी बुद्धि करि अंध कूपमें परेहै, याकी दृष्टि नष्ट भई है अंधकूपकों जानें नहीं हैं, रूप देखि भ्रमकरि नष्ट होयहैं, यह पतंगतें सीखी जैसे पतंग दीपककी लोइ देखके नौछावर हैंकै वाईमें जरके मरजायहै पन दीपकके भाये नहीं होय है ऐसेही ये पुरुष स्त्रीरूप अग्निमें पतंगकी तरह मरेहै पन इनके भाये नहीं होयहै ॥ ८ ॥ अब भ्रमरते जो सीखी सों कहैं है जो मुनि होइ सो थोरो ग्रासमात्र मांगिलेइ. जितने करि देह रहै एकही घरमें सब न मांगे, जातें गृहस्थको पीडा होइ, जैसे भ्रमर सुगंधके लोभ करि एक कमलहीमें बसे तो वामें बंधेहै तैसें यह एक ठौर मांगवेसों बँधे हैं ॥ ९ ॥ जो चतुर मनुष्य होइ तो सब शास्त्रनतें सार वस्तु लेइ, शास्त्र छोटे होइ अथवा बडे होइ सार सब लेइ, और जैसे वृक्षके कीच काटे आदिको छोड गंधमात्र ग्रहण करैहै ऐसेही शास्त्रनके अनेक दोषनको छोडके सारांशमात्र अपनो प्रयोजन ग्रहण करै जैसे भ्रमर पुष्पनतें सार मकरंदको लेई है, यह बात भ्रमरते सीखी हैं ॥ १० ॥ भ्रमरको दूसरो नाम मधुकर है, सो मधुकर मधुमाखीनहूमें रहेहैं. ता मधुमाखीते जो सीखी सो कहैं है मुनि भिक्षाको ले आवे, सांझको अथवा दूसरे दिनको संग्रह न राखे, पाणिपात्रमें लेकर उदरपात्र पूर्ण करे, मधुमाखीकीसी भांति संग्रह न करे ॥ ११ ॥ जो संग्रह करे तौ नष्ट होइ, जैसे मधुमाखी मधुसहित नष्ट होयहै ॥ १२ ॥ अब हाथीकी सीख कहै हैं, भिक्षुक काष्ठकी स्त्री पूतरीको पांवसोहू न छीवै स्पर्श करे तो बधे जैसे हाथी हथिनीके अंगसंगते बधेहै यह मैं हाथीहूते सीखी ॥ १३ ॥ जो बुद्धिमान् होइ तो कबहू स्त्रीके निकट न जाइ. जाइ तो अवलंबन करिके पिटे, स्त्री आत्माको मृत्यु है, जैसे और बलवंत हाथिनसों हाथी मारोजाय है ॥ १४ ॥ जो कोऊ मधुमाखीनके पासते छुडाइकै मधु हरिके ले आवे सो मधुहा कहावे, जो मनुष्य लोभी है अनेक दुःखोंसे धनसंचय करें हैं न दान करै है न आप भोग करै है तो वा धनको भोग औरही करैगो, जैसे माखी ठौर ठौरते मधु ले संग्रह करे है, भोग और कोऊ करैहै, ये धनके उपाइ जानै ॥ १५ ॥ अति दुःख करि संचय धन करि ग्रहण करे मनोरथको चाहिवेवारे गृहस्थनके पहिले संन्यासी भोजन करे हैं जैसे मधुहा माखीनतें प्रथम भोजन करे है, संन्यासी और ब्रह्मचारी रांधे अन्नके स्वामी हैं, तिनको दिये विना जो भोजन करे तो चांद्रायण व्रत करि शुद्ध होइ ॥ १६ ॥ संन्यासी वनमें फिरै गामके गीत प्राकृत कबहू न सुनें सुनें तो बंधनमें परै जैसे मृग वधिकके गीत सुनि मरें हैं यह विद्या हरिणतें सीखी ॥ १७ ॥ गामके गीत नृत्य वादित्र सुनिके वश होइके बंधन पावें है जैसे शृंगीऋषि मृगीको पुत्र स्त्रीनके वश होई इनको खिलोना भयो ॥ १८ ॥ मीनतें जो सीखी सो कहैहै यह मूर्ख मनुष्य अतिबलवं जीभके वश होइके मृत्युको पावै है जैसे बंशीके लोहमें मांस लगावे है, ताके स्वादतें मछरी वशीको पकरे है तब फेरि मरे हैं ॥ १९ ॥ पंडित आहारकों छोडिक शीघ्र इंद्रिनकों जीतें हैं एक रसनेंद्रियनकों नहीं जीतिसकै है कारण कि आहार त्यागवेसों जिह्वाको लोभ बढै है ॥ २० ॥ जो पुरुषनें और इंद्रिय जीतीहै पर वो तोलौं जितेंद्रिय नहीं होइ है जोलों जिह्वा न जीते जो जीभ जीते तो जानो सब जीते, तहां यह आभिप्राय जो आहार छोडिये तो केवल और इंद्रियको जय होय रसनेंद्रिय बढे और भोजन करे तो रसकी आसक्तिकरि सब इंद्रियनको लोभ होइ यातें रसकी आसक्ति छोडिकै औषधिकी भांति अन्न

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लेइ ॥ २१ ॥ अब पिंगलाकों उपाख्यान कहेहै अवधूतजी राजा यदुसों कहेहै पिंगलानाम वेश्या पहलें विदेहनगरमें ही ताते मैंने कछु सीख्योहै ॥ २२ ॥ हे राजन् यदो ! सो तुम सुनो एक दिन वह कामचारिणी वेश्या द्वारेपै नगाडो धरके यह संकेत करचौ कि जो पुरुष या नगाडेपर जितने डंका मारे वह रात्रिमें मेरे पास आयके उतने हजार रुपा देयगो ऐसी समस्या बनाई इतनेहीमें हमने जाय वा नगाडे पर दसबीस डंका लगायदीने और सामने जो दुकान खाली परी ही तापै जाय बैठे तब तो वह कांतको रतिस्थानमें लेजायवेकी इच्छासो अतिउत्तम रूपकौ धरे सायंकाल द्वार-पर स्थितभई ॥ २३ ॥ वह वेश्या मार्गमें आवते धनवंत मोलके दाता पुरुषनकौ भोगयोग्य मानती भई कारणकी वाके अर्थकीही कामना ही ॥ २४ ॥ विनको आयो और गये देखिकरि और कोऊ धनवंत मोको बडो दाता प्राप्ति होइगो या आशा करि सो संकेतकी जीवनहारी वेश्या द्वारपै बैठी रही ॥ २५ ॥ ऐसे दुराशाकरि जागती द्वारपै आवे फिरी भीतर जाइ ऐसी भांति अर्धरात्रि गई ॥ २६ ॥ वाको धनकी आशाकरि चित्त दीन भयो मुख सूखनलग्यो चिंतासौ परमवैराग्य उपज्यो वानें वैराग्यकरिके जो कह्यो सो सुनो ॥ २७ ॥ वाकों धनकी आशाकरि चित्त दीन भयो मुख सूखन लग्यो निर्वेद भये चित्तसौ कामकंदलाने जो गायो सो मैं कहूंहूं तुम सुनो वह मनमें विचार करे है कि वैराग्य पुरुषके दुराशा पाशा काटनको खड्ग हैं हे राजन् ! जाको वैराग्य नहीं ताके देहके बंधन नहीं छुटेहैं ॥ २८ ॥ अहो देखो मेरे मोहको विस्तार मैंने मन अपनो न जीत्यो मैं विवेक-रहित हूं जो ऐसे दुष्टनको प्रियकरि अपनो अभिलाष पूर्ण कियो चाहूंहूं यासौ मैं मूर्खा हूं ॥ २९ ॥ अपनो अतिप्रिय निकटही सदा रहैं हैं अति सुखकारी रतिको दाता धनदाता नित्य प्रियको छोडि दुःखित भई चिंता शोक मोहके देनवारे तुच्छ मनुष्यको मैं सेवन करती भई न तो विनसौ मेरो काम पूर्ण होयहै न सुख होयहै मैं मूढ हूं ॥ ३० ॥ अहो मैंने यह आत्मा वृथा सतायो जानें अतिनिंदा संयुक्त शोकसो ग्रसे धन और रतिकी इच्छाकरि मेरी देह विकी और अतिनिंदित यह संकेत वृत्ति करी धनमें तृष्णावारे कामी पुरुषनसौ मैंने रतिकी चाहना करके अपनो शरीर बेचो मोकू धिक् है ॥ ३१ ॥ हाथ पांयके हाड थूनी पांसुरीनके हाड बांस और पीठिको हाड जहां बरेंडा है, ऐसो शरीररूप घर त्वचा रोम नखसों ढक्योहै जाके नौ द्वार स्रवै हैं विष्ठामूत्रसों पूर्ण नरक-रूप कांतकों मेरे विना कौन स्त्री सेवैगी ॥ ३२ ॥ या विदेहराजाके नगरमें एक मही अति मूढ हों जो मैं असाध्वी साक्षात् अच्युत परमात्माकों छोडि तुच्छ कामभोगको इच्छा करती भई ॥ ३३ ॥ यह ईश्वर सब देहीनको आत्मा है, सुहृद है, परम प्रियनाथ है आपेको देके वासौ मोल लेके वाहीसों लक्ष्मीकी समान रमण करूंगी ॥ ३४ ॥ विषय और कामके दाता मनुष्य और देवता ये सब उत्पत्ति मरण संयुक्त हैं, कालकरि ग्रसे हैं, वे स्त्रीकी कामना कहा करेंगे ॥ ३५ ॥ अब अपने भाग्यकी सराहना करै है, निश्चय करिके मोपै भगवान् विष्णु काहू कर्म करि प्रसन्न भये हैं, जातें दुष्ट आशा संयुक्त मोकों सुखदायक ऐसो वैराग्य उपज्यो ॥ ३६ ॥ कदाचित् कहो धनकी प्राप्ति न भई ताको खेद भयो विष्णु कहा प्रसन्न भये, (तहां कहे है) मंद भागिनीको ऐसे क्लेश वैराग्यके कारण नहीं होते कारण कि याही प्रकार औरहू पहले दिन है गये है जब धनकी प्राप्ति न भईही

---

१ मुखं श्लेष्मागारं तदपि च शशांकेन तुलितं कुचौ मांसग्रंथी कनककलशावित्युपमितौ ॥ स्रवन्मूत्रक्लिन्नं करिवरकर-स्पर्धि जघनं अहो निंद्यं रूपं कविजनविशेषैर्गुरु कृतम् ॥ १ ॥ खकारको घर मुख मासकी गांठ दोऊ स्तन और बहते मूत्र युत जाकी योनि ऐसे गये बीते या स्त्रीके शरीरकों कविनने अनेक चंद्रमुखआदि उपमानसौ श्रेष्ठ कीनौ है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

न कोई पुरुष आयो हौ आज मोको क्लेशसों वह वैराग्य भयो है जा वैराग्यसों यह पुरुष गृहादिक बंधन छोडिकै शांति पावे ॥ ३७ ॥ ईश्वरनें मेरो यह बडो उपकार कियो है जा उपकारकों मैं माथें चढाइ लियो, जो मैं ग्राम्य नीचनसों मिलीही ताके संगकी दुराशा छोडि एक जगदीशकी शरण आवत भई ॥ ३८ ॥ अब मैं संतुष्ट होय परमेश्वरमें श्रद्धा करती यथा लाभसों जीविका करती निश्चय करि आत्माहीको रमण करि आनंदसों विहार करोंगी ॥ ३९ ॥ जो संसारकूपमें परयो है, विषयनकरि अंधदृष्टि है, कालस्वरूपकरि ग्रस्यों हैं, ऐसे आत्माको रक्षा करिवेकों या आत्मस्वरूप भगवान् विना और कौन समर्थ हैं ॥ ४० ॥ जब सबतें यह आत्मा विरक्त भयो, तब अपनी आपुही रक्षा करवेमें सावधान भयो या जगत्कों जो कि कालसर्पसों ग्रसित है अप्रमत्त हैके देखे ॥ ४१ ॥ अवधूत बोले या भांति निश्चय मतिसों धन और विषयभोगकी आशा छोडि शांतिको पाइ वह वेश्या शय्यापर सोवती भई ॥ ४२ ॥ आशा परम दुःखरूप है, आशा छोडि बैठिनो परम सुख है, जैसे पिंगला कांतकी आशा छोडि सुखसों सोवतभई ॥ ४३ ॥

आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम् ॥
यथा सञ्छिद्य कान्ताशां सुखं सुष्वाप पिङ्गला ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे पिङ्गलोपगीतेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

ब्राह्मण उवाच-परिग्रहो हि दुखाय यद्यत्प्रियतमं नृणाम् ॥
अनन्तं सुखमाप्नोति तद्विद्वान्यस्त्वकिञ्चनः ॥ १ ॥

नौके अध्यायमें कुरर पक्षीतें ले और देहतें जो बुद्धि सीखी ताको सुन यदु कृतार्थ भये यह श्रीकृष्ण उद्धवतें वर्णन करत भये ॥ अब कुरर पक्षीतें जो सीख्यौ हैं सो कहैं है, मनुष्यनको जो जो वस्तु प्रिय हैं, सो सो मोकूं दुःखदायी है, यह जानि जो संग्रह छोडे सो अनंत सुख पावे ॥ १ ॥ तहां एक दृष्टांत बतावे हैं, एक कुरर पक्षीने मांस पायो, तब वाते बलवंत मांसरहित और पक्षी आये, ते वाको मारन लगे जब याने वह मांस डारिदियो, तब वे वाको छोडि मांसको लैगये यह छोडिके सुखी भयो ॥ २ ॥ अब बालककी सीख है सो कहैं हे राजन्! न तो मोको मान अपमानको सुख दुःख है, न घरकी चिंता है, न पुत्रनकी चिंता है एक आत्माहीसों क्रीडा

१ साधुनको संग्रह करनो उचित नहीं है, यासों दुःख होय है, एक बाबाजीने बडे कष्टसों पचीस असरफी संग्रह करीं जबतक निकारी है चुटियामें धराकरते थे, एक दिन काऊने देखे लीनी सो बाबाजीसे आनके बोल्यो महाराज! आपको आज मेरे यहां निमंत्रण हैं, बाबाजी बोले अच्छा, तब वोह घर लिवायगयो और इतनो हलुआ पूरी खवायो कि बाबाजीसे उठ्यो न गयो तब वाने खाट बिछायदीनी और अपनी स्त्रीते कहा कि इनके चरण खूब दाबियो और मैं जाउंहूं यह तौ सेवा करनेलगी, और वोह पुरुष थोडी देरमें व्याकुलतासे घरमें आय आलेमें ढुंढनेलगो, स्त्रीने कही क्या ढुंढोहो तब वाने कही यां पचास असरफी धरी सो कहां गई, अब बाबाजी सकुचाये वोह स्त्रीको मारनेलगो कि तैंने कही बाबाजीको देदी होगी बाबाजी बोले हमरे कपडे देख लेउ, दो चार आदमी इकट्ठे भये, तब यह बाबाजीका चुटिया देखो, वामें असरफी निकली, बाबाजी बडे लज्जित भये, धनको धन गवायो चोरके चोर बने, जब बाबाजी चले तौ याने हाथ जोर कही महाराज! फिरभी आइयो, तौ बाबाजी बोले जब पचीस और कर लेऊंगो तब आऊंगो ॥ २ यह ज्ञान दत्तात्रेयके दर्शनसे पिंगलाको प्राप्त भयो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करत यहां फिरो हों, जैसे बालक चिन्तातें छुटो परम आनंदमें मग्न होइ हैं ॥ ३ ॥ हे राजन्! द्वै मनुष्यही चिंतारहित हैं परमानंदमें मग्न होय हैं एक तो उद्यमतें रहित अज्ञबालक दूसरो गुणरहित ईश्वरको प्राप्त होवेवारो ॥ ४ ॥ कुमारीतें जो सीख सीखी सो कहैं हैं, कहूं एक कन्या ही वाके भाई बंधु पिता सब कहूं गये हे, कन्याको विदा करामन वाके घर पाहुनें आये तब विनको आतिथ्यभाव वह आपुही करती भई ॥ ५ ॥ हे राजन्! कन्या विनके भोजन कराइवेको एकांतमें बैठिके धान कूटनलगी, तब वाकी चुडिनको बडो शब्द होन लग्यो ॥ ६ ॥ वह कन्या आपु धान कूटिवो निंदित दरिद्रको कर्म मानिकैं क्रमसो एक एक चूरी फोरती भई हाथनमें द्वै द्वै राखी ॥ ७ ॥ धान कूटत द्वैद्वैहू चूरीनको शब्द होत भयो, तिनहूमेंतें एक एक दूरि करत भई, तब एकते शब्द नहीं होतो भयो ॥ ८ ॥ हे शत्रुनाशक! लोकनकों तत्त्व जानिवेकी इच्छाकरि सर्वत्र फिरते मैंने एक दिन कुमारी या भांति धान कूटंति देखी तब यह उपदेश वातें सीखत भयो ॥ ९ ॥ बहुतनको जहां वास होइ तहां अवश्य कलह होइ, जो द्वै होय तो आपुसमें बात तोहूं करे, ताते अकेलोई विचरै, जैसे कुमारीको कंकण ॥ १० ॥ अब बाण बनामनवारेते जो सीख्यो सो कहैं हैं मनको ईश्वर विषे स्थिर कर प्राणनको वश करै आसन जीते वैराग्यको अभ्यासकरि मन स्थिर करै सावधान रहे ॥ ११ ॥ गुण और तिनके कार्य्यरहित यह मन परमानंदरूप भगवान् विषें जब स्थान पावे, तब शनैः शनैः कर्मवासना छोडै, जब याको सतोगुण बढे तब रजोगुण तमोगुणको दूरि करिके ब्रह्ममें लीनहोइ, तब ब्रह्म विना और कुछ दृष्टिमें नहीं आवै है ॥ १२ ॥ या भांति आत्मासों जब चित्त मिलिजाई तब बाहर भीतरको भेद नहीं रहै है सब एकरूप करि देखेहे जैसे बाण बनायवेवारेको चित्त बाण बनायवेमें ऐसो लगो हो कि निकट ह्वैके सेना समेत राजा चल्यो गयो वाने न जान्यो ऐसेही साधुनको चाहिये कि ईश्वरमें ऐसो मन लगावें जो और कछु सुधि न रहैं ॥ १३ ॥ सर्पतें सीखी सो कहैं हैं सर्पकी नाईं सब लोकनतें डरपत अकेलोई रहै, एकही ठौर घर करि न रहै, सदा सावधान रहै, एकांतहीमें वसे, दूसरेको सहाय न चाहैं, अपनी गति दूसरेसों छिपाये रखें और विष निर्विष जाननेमें नहीं आवै है ऐसे रहै है थोडो बोलै है ऐसेही मुनिनको रहनो चाहिये ॥ १४ ॥ यह देह अनित्य है याके लिये घर न कीजे घर दुःखको रूप है और फल कछू नहीं हैं, जैसे सांप पराये घरमें प्रविष्ट व्हैकै सुखसों बैठे वैसे आपु घर न करे ॥ १५ ॥ एक नारायणदेव ईश्वर आपु या विश्वको अपनी माया करि सृजे है, फेरि प्रलयमें कालशक्ति करि संहार करिके आपुहीमें राखे हैं ॥ १६ ॥ तब एक अद्वितीय आत्मा आधार समस्तनको आश्रय होइ आपुही एक रहै है, वे अपनें या समतारूप कालसों सतोगुण आदिशक्ति मायामें लीन करे है वही आदिपुरुष माया और पुरुषको ईश्वर हैं ॥ १७ ॥ ब्रह्मादिक और युक्त पुरुषनकों पाइवेको योग्य है मोक्षके रूप केवल अनुभव आनंदके पात्र निरुपाधि अनन्त है ॥ १८ ॥ हे शत्रुनाशक! जब सृष्टि करेहै तब केवल अपने प्रभावकरि त्रिगुण अपनी मायाकों क्षोभ उपजाइ वा माया करि पहिले सूत्ररूप महत्तत्त्व उपजावेहै ॥ १९ ॥ वाते त्रिगुण रूप विश्व अहंकारद्वारा होयहैं, जा महत्तत्त्वमें यह विश्व ग्रंथ्योंहै, जा प्राणरूप सूत्र करि पुरुष संसारकूं पामें हैं ॥ २० ॥ मकरीकी शिक्षाको दृष्टान्त कहै हैं जैसे मकरी अपने हृदयतें उगलिकै तागा मुखतें काढि फैलायकरि तासों क्रीडाकर फिर निगल जायहै ऐसेही ईश्वर स्वयं या जगत्को बनायके फिर संहार करेहै ॥ २१ ॥ यह जीव स्नेहतें द्वेषतें अथवा भयतें बुद्धि करि जहां जहां एकाग्र मन धरे है वा वा रूपको पावे हैं तातें जो ईश्वरको ध्यान करें तो ईश्वरको रूप होइ यामें कौन अचरज है ॥ २२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे राजन् ! जैसे भृंगीनें भीतिमें राख्यो कीट भृंगीको ध्यान करते वाही देहकरि वा भृंगीके रूपकों पावेहै ॥ २३ ॥ या प्रकार इतने गुरुनतें यह मति सीखी; हे राजन् ! एक बुद्धि अपनी देहतें सीखीहै सो मैं कहूं ताको सुनो ॥२४॥ देह मेरो गुरु है या देहतें मोको वैराग्य विवेक उपज्यो यह देह पीडा-सहित सदा जन्म मरणकों धरें है, या देहसों यथार्थ करि तत्वनको विचार करवेसों मोको वैराग्य भयोहै तोहू में यापै प्रीति नहीं करौहौं क्योंकि यह कुत्ता और स्यारनको भक्ष्य है यह निश्चय कर सर्वसंगरहित हो विचरौहूं ॥ २५ ॥ जा देहकी प्रसन्न करवेकी इच्छाकरि स्त्री पुत्र धन पशु दास गृहबंधुके समूहनकों पोखे हैं, बहुत दुःखसों धन जोरें हैं, इतने परहू अन्तमें यह आपही नाश है जायहै देहके गयेहूं दुःख नहीं जाइ हैं, दूसरे देहको कर्म बीज उपजाये जाइहै ता कर्मतें फिरि दुःख रूप देह या प्रकार उत्पन्न है जायहै जा प्रकार रूख अपनो बीज छोडेहै तातें फेरि रूख होयहै ॥ २६ ॥ और या देहीकों एक ओरतें जिह्वा रसके लिये खेंचे है, कबहू तृषा जलके लिये खेंचेहै, शिश्न स्त्रीसंगके लिये खेचेहैं, त्वगिंद्रिय एक ओरतें स्पर्शके लिये खेचेहै, श्रवण शब्दके लिये खेंचेहैं, और घ्राण गंधके लिये खेचेहै, चंचल दृष्टि रूपके लिये खेचेहै, कहूं कहूं कर्म शक्ति अपने विषय-के लिये खेचेहै, जैसे बहुत सौति गृहस्थकों लूटें हैं तैसे ये सब इंद्रिय देहकों लूटें हैं ॥ २७ ॥ हे देव ! अपनी शक्ति मायासों वृक्ष सर्प पशु पक्षी डांस मांछर नानाविध शरीरनको उपजाइ करि ब्रह्मा संतुष्ट हृदय न भयो परन्तु ब्रह्मज्ञानकी बुद्धि राखनवाले मनुष्यनकी देह रचकै आनन्दको प्राप्त भये ॥ २८ ॥ ताते यह अति दुर्लभ मनुष्य देह अनेक जन्मन पीछे पायो है पुरुषार्थको दाता है, पर अनित्य है, यह जानिकै शीघ्र मोक्षके निमित्त जौलों मृत्यु न होइ शीघ्र यत्न करै क्योंकि विषय तो याकूं सब योनिनमें होइगे ॥ २९ ॥ या भांति मोको वैराग्य उपज्यो ज्ञानको प्रकाश भयो, तब आत्मनिष्ठ भयो, यासों संग और अहंकार छोडिकै मैं पृथिवीमें फिरूंहूं ॥ ३० ॥ जो कहो कि तुमने बहुत गुरु काहेको कीने गुरु तो एकही करनो चाहिये तहां कहैं हैं एक गुरुते अति निश्चल ज्ञान विस्तार नहीं पावे है ताते अद्वितीय ब्रह्मको ऋषि निश्चल बहुत भांति कहैं हैं, कोई कहैं है वह प्रपंचरहित है कोई कहै है सप्रपंच है जाते भ्रम होयहै, सो भ्रम इन गुरुनते निवृत्त होयहै परमगुरु मुख्य ज्ञानको दाता एकही है परन्तु ज्ञानके लिये पीछे अपनी बुद्धिसों उपदेशके अनुकूल दृष्टान्त लेवेसों वह ज्ञान दृढ है जायहै ॥ ३१ ॥ इतनो वृत्तांत कहि यदुकी आज्ञा ले गंभीर बुद्धि राजासो प्रणामको प्राप्त हैके वाको स्वीकार कर प्रसन्न हो अवधूत अपनी इच्छा करि जैसे आये हैं तैसेई जात भये ॥ ३२ ॥ ये अवधूत दत्तात्रेय है, तिनके वचन सुनि हमारे बडेनहूंके बडे राजा यदु सब संग छोडि समचित्त होत भये, यह सब श्रीभगवान् उद्धवजीसो कहत भये, कपोत मत्स्य मृग कुमारी हाथी सर्प पतंग कुरर ये आठ तो त्यागके अर्थ गुरु कीनें, भ्रमर मधुहा पिंगला ये तीनों त्याज्य, और ग्राह्य अर्थके लिये गुरु किये ॥ ३३ ॥

अवधूतवचः श्रुत्वा पूर्वेषां नः स पूर्वजः ॥
सर्वसङ्गविनिर्मुक्तः समचित्तो बभूव ह ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कन्धे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १०.

श्रीभगवानुवाच-मयोदितेष्ववहितः स्वधर्मेषु मदाश्रयः ॥
वर्णाश्रमकुलाचारमकामात्मा समाचरेत् ॥ १ ॥

चोवीश गुरुनतें स्थिर ज्ञानकी भूमिका पाये उद्धवको आत्मज्ञान पाइवेके अर्थ इनते अगिले अध्यायनमें साधन कहैंगे अब दशयें अध्यायनमें आत्माको संसार देहसंबंधते हैं आपुतें नहीं; और-नके मतको खंडन करिकै भगवान् यह वर्णन करेंगे ॥ मेरे कहे स्वधर्मनमें सावधान ह्वैके मेरो आश्रय करे वर्ण आश्रम कुलको आचरण निष्काम ह्वैके करे ॥ १ ॥ जब अन्तःकरण शुद्ध है जाय तब पुरुषको उचित है कि विषयनमें लगे भये प्राणी जो विषयनको निश्चल मानकै उद्योग करै हैं विनके कार्यनके फल विपरीत होतेहैं विनको विचार तौ रहै यासौ निष्कामता प्राप्त होयहै ॥ २ ॥ जे विषय इंद्रियनसौ जाने जाय है वे सदा नहीं रहै है यासो वे अनेक प्रकारके प्रतीत होय हैं और जो अनेक प्रकारके हैं वे अध्रुव है जा प्रकार मनसौ उत्पन्न भए स्वप्न और मनोरथ अनेक हेवेसो चल है ऐसे अनुमान करवेसो निष्कामता होय ॥ ३ ॥ निष्काम कर्म करे सकामको त्याग करे, मेरे विषे तत्पर होइ, आत्माके विचारमें रहै, कर्मकी विधिमें आदर न करे ॥ ४ ॥ जो मो विषें तत्पर ह्वैकै आद-रसों संयमनकों सेवे जब सामर्थ होइ तौ शौचादिक नेमनकों सेवे, याहूतें विशेष धर्म कहे हैं सहन-शील होइ और मेरे स्वरूपको जानता होइ, शांत होइ, सो मेरोही रूप है ऐसें गुरुकी सेवा करे ॥५॥ ऐसी भांति गुरुकी न सेवा करे, सो कहै हैं अभिमान न राखे, आलस्य न करे असहनता न करे, स्त्रीपुत्रादिकमें ममता न करे, गुरुनके विषे सुहृदता राखे, कर्ममें व्यग्रचित्त न करे, परमार्थ जानि-वेकी इच्छा करे काहूकी निंदा न करे, व्यर्थ बातें न करे ॥ ६ ॥ स्त्री संपत्ति घर खेत स्वजन धन सबतें उदासीन रहे, सबनमें एकही आत्मा है, याते अपनी भांति सबनमें सुखादिक समान देखे ॥७॥ यह आत्मा स्थूल सूक्ष्म देहतें भिन्न हैं, सबको द्रष्टा है व्यापक है स्वयं ज्ञानवान् हैं, आकाशवत् हैं जैसे अग्नि दाह्य काष्ठके मध्यही रहैहै, परन्तु काष्ठतें भिन्न हैं प्रकाशक हैं और काष्ठको दाहकर्त्ता है ऐसेही आत्माको जाने ॥ ८ ॥ जैसे काष्ठमें प्रविष्ट अग्नि काष्ठ संग करि उत्पत्ति नाश अल्पता महत्त्व नानात्व गुणको धरे हैं ऐसे यह आत्माहूं या देहके संगकरि देहके गुणनको धरे हैं, परंतु देहते आत्मा भिन्न हैं नित्य है ॥९॥ और कहै हैं जो आत्मा देहते भिन्न है तो देहके गुण क्यों धरे हैं तहां कहे है ईश्वरके आधीन मायाके गुणसो पुरुषको यह सूक्ष्मस्थूल शरीर उपजायो भयो है वा देहमें अहं यह अभिमान करवेसों संसारमें गिरेहैं मेरो यह संसार या मायाके काटवेकों आत्मविद्या उपाय हैं ॥१०॥ तातें आपुहीमें स्थित देहके भिन्न आत्माके ज्ञानकी इच्छा करिकै आत्मामें चित्तको मिलाइ क्रम करिके स्थूलसूक्ष्म देहादिकनमें आत्मबुद्धिकों छोडे ॥११॥ यह ज्ञान कैसे प्राप्त होयहै सो कहै हैं आचार्यरूप नीचेकी अरणी शिष्यरूप ऊपरकी अरणी तथा उपदेशरूप मंथनका काष्ठनसौ ब्रह्म-विद्यारूप परम सुखदायक अग्नि उत्पन्न होयहै ॥ १२ ॥ जा बुद्धिमान गुरुसौ चतुर बुद्धिवारो शिष्य यह विद्या पावैहै तब यह विद्या गुणनके कार्यरूप संसारको और जिनसौ निर्मित हैके यह जगत् जीवके संसारको निमित्त होयहै विन गुणनकों भस्म कर काष्ठरहित अग्निकी समान आपहू शांत है जायहै याही प्रकार कार्य कारण और विद्याकी एकता हैवेसो परमानन्द रूप होयहै ॥ १३ ॥ हे उद्धव ! आत्मा स्वयंप्रकाश ज्ञानस्वरूप नित्य और एक है यामें कर्ता भोक्ता धर्म देहकी उपाधिसो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राप्त होयहै आत्माके सिवाय और सब पदार्थ मायारचित है यासों विरक्त हैके पुरुष मुक्तिको प्राप्त होयहै परन्तु मीमांसक कहै है कि मैं हूं ऐसी प्रतीत करवेवारो आत्मा प्रत्येक शरीरमें भिन्न है वही कर्मकर्ता और सुख दुःख भोक्ता है याको स्वरूप भूत कोई दूसरो निर्विकार परमात्मा नहीं है भोगके स्थान रूप लोक भोगको काल भोगरूप कर्मनको बतायवेवारो वेद भोगके साधन और भोग भोगनेवारो आत्मा यह अनित्य होय तो वैराग्य होनो संभव है परन्तु वे सब नित्य हैं यासों वैराग्य होनो संभव नहीं भोग्य पदार्थ बीचमें नष्ट है जाय हैं अथवा मायामय होय तोहू वैराग्य होनो संभव है ॥ १४ ॥ माला चंदन आदि भोगनकी स्थिति प्रवाहरूपसों नित्य है और यथार्थ है यासों वैराग्य होनो असंभव है जा दशामें यह संसार देखो जाय है या दशामें पहलेंहू हो या कारणसों जगको कर्ता कोई ईश्वर नहीं आत्मा स्वयं नित्य ज्ञानमय नहीं है वामें अनेक ज्ञाननको विपर्यास होय है एक क्षणमें घटको ज्ञान नष्ट हैके पटको ज्ञान होय है या प्रकार अनेक ज्ञान उत्पन्न होते रहै हैं, पूर्व ज्ञानसों पृथक् है जाय है यासों आत्मा नित्य ज्ञानमय नहीं सो कहै है ज्ञानके विपर्यास हैवेसों कहा आत्मा अनित्य है जाय है नहीं आशय यह है कि ज्ञानरूप विकार आत्मामें कछु बाधा नहीं करसकै है मुक्तिमें आत्मा इन्द्रियरहित है यासों वामें ज्ञानको परिणाम नहीं हैवेके कारणसों जडता है जायगी यासों मुक्तिकी प्राप्ति होनो पुरुषार्थ रूप नहीं प्रवृत्ति मार्गही है यासों श्रेयस्कर है निवृत्ति नहीं ॥ १५ ॥ हे उद्धव ! सत्य प्रवृत्ति मार्ग ऐसोही है परंतु आगे अनर्थको हेतु है इन देहीनकूं देहके संयोगतें संवत्सररूप कालते जन्म मरणादिभाव वारंवार होय है ॥ १६ ॥ तुम्हारे मतही विषें कर्मनके कर्तानको और सुख दुःखके भोक्ताहूको पराधीनता देखी जाय है याते ऐसे परवशको भजे यह कौन सिद्धि है और जीव स्वतंत्र होतो तो वाय दुष्ट कर्म वा दुःखकी प्राप्ति संभव नहीं अभिप्राय यह है कि दुःखसुख भोगवेमेंहू स्वतंत्र नहीं है और कर्म करवेमेंहू जब ये स्वतंत्र नहीं है तब कहो याको कौनसो अर्थ प्रयोजन सिद्धि है सकेहै ॥ १७ ॥ या भांति या लोकमें तो सुख कहूं नहीं, और लोकमेंहू सुख नहीं सो कहेंहै इर्ष्या निंदा नाश हानिसों स्वर्गादिकमेंहू कर्मनकी विधिके जाननेवारे विद्वान् अभिमानीको किंचित् सुख प्राप्त नहीं होयहै याही प्रकार मूर्खनको दुःख देखवेमें नहीं आवैहै जे कहै है हम कर्ममें निपुण हैं यासों सुखी हैं यह विनको वृथा अहंकार है यासों अच्छे कर्म करवेसों सुख मिलै यह नियमहू न रह्यो ॥ १८ ॥ और जो कदाचित् सुख दुखकी प्राप्ति और विघात अर्थात् नाशकूं जाने है परंतु या उपायको वेहू नहीं जानते जासों साक्षात् मृत्यु न होय ॥ १९ ॥ जब मृत्यु अपने निकट है तो अर्थ अथवा कामके प्राप्त हैवेसो कौन सुखी हैसकैहै, जैसे अपराधीको मारवेको लैजायमें वा पुरुषको अर्थ काम सुख नहीं देय ॥ २० ॥ या प्रकार जैसे यहां सुख नहीं ऐसेही परलोकमेंहू नहीं है स्वर्गादिकमेंहू पराये सुखकी असहनता ईर्षादिक रहै है यासों यह कि समान वहांहू दोष है जैसे कृषिके सफल हैवेमें अनेक विघ्न होयहै ऐसेही यजनसों मिले स्वर्गमेंहू भूलचूकके अनेक विघ्न होय हैं ॥ २१ ॥ इतनेपै विघ्नको निवारणकरि जो

---

१ मूर्ख गुणकी कदर नांय जाने है, एक सेठ बीमार भये हकीमने कस्तूरी बताइ, सो रुपैया लेकै नौकरको बजारमें भेजो, वाने जाकै अतारसों बूझी कि कस्तूरी है अतार बोलो है तब याने कही एक रुपैयाकी लाओ याने चार रत्ती बांधकै एक पुडियामें देदी, याने जानी बांनगी दी है, सो पुडिया खोल सब फांकगयो, और फिर चद्दर बिछायकै बोलो तोल दो अच्छी है, अतारने रुपैया फेर दियो, और कही जाओ रुपयासेही बीची, यासे मूर्ख गुण नहीं जाने हैं तासो समान रहै ह ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धर्म अच्छी भांति करे विन धर्मनसो पाये स्थानमें जैसे यह प्राणी जाँयहैं सो सुनो ॥ २२ ॥ या लोकमें देवतानको यज्ञकरि संतुष्ट करि यज्ञके कर्ता स्वर्गमें जायहै, देवतानकीसी भांति आपुकरि उपजे दिव्य भोग करै हैं ॥ २३ ॥ और तहां अपने पुण्यकरि पाये उत्तम विमानमें बैठ सुंदर भेष धरें अप्सरानके विषें विहार करते फिरे हैं गंधर्व विनकी बडाई करै हैं ॥ २४ ॥ स्वेच्छाचारी क्षुद्र घंटिकानके समूहकरि शोभित विमानमें चढ्यो सुखी भयो देवतानके भोगनमें देवस्त्रीनसों विहार करते फिरे हैं परन्तु आत्मपातकों नहीं जाने है नंदनादि वननमें विहार करते आनंदमें मग्न होयहै ॥ २५ ॥ स्वर्गमें तहांलों सुख करें हैं जहां ताईं पुण्य पूर्ण होई, जब पुण्य क्षीण होई तब कालकरि अनचाहत नीचे डारि दिये जायहै ॥ २६ ॥ यह फल सकाम कर्म करे ताको है तहांऊं जो निषिद्ध प्रकार न करे जब होइ और जो असत संग करि अधर्मी होई इंद्रिय जीती न होइ, स्त्रीलंपट होई कामहीमें चित्त होइ, प्राणीनकों दुःख देतहोइ, लोभी होइ कृपण होइ प्राणीनकी हिंसा करनवारै होय ॥२७॥ और जो अविधिसों पशुनको मारिकरि भूत प्रेतगणनको पूजते है ऐसे जीव परवश होइ नरकमें परे स्थावरके भावको प्राप्त होयहैं ॥ २८ ॥ विन कर्मनमें दुःखही फल हैं, ऐसे कर्मनकों देहसों करते मरे पीछे फेरि उन कर्मनकरि दुःख भोगकों वैसीही देह धरेहैं, तातें जो मरेंगो ताको कौन सुख हैं ॥ २९ ॥ लोकपाल कल्पपर्य्यंत जीवेहैं, तोहू विनकों विनके लोकनकों मोतें भय रहै है, मेरे भयतें ये सब देवता अपनो अपनो काम करैहैं, ब्रह्माकी आयु दोइ परार्द्ध है तौहू वाहूको मोतें भय है ॥ ३० ॥ और कहैं हैं कर्म कछू ईश्वर नहीं, ईश्वर नियंता फलको दाता मैं हों, पर मोसों विन कर्मनसों संबंध नहीं, कर्मको संबंध या देहको है, सो प्रकार बतामें हैं, प्रथम सब इंद्रिय कर्मनसों सृजीहै, गुण सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये इंद्रियनकों सृजे है, आत्मा कछू नहीं करैहैं, परि यह जीव तो इंद्रियनके संग करि अहंकर्त्ता अभिमान धरेहैं, तातें कर्मनके फल भोगेहै ॥ ३१ ॥ जो कहो यह आत्मा अनेक क्यों दीखे हैं आत्मा तौ एकही सुनी है तहां कहैहै कि इन गुणनके धर्मसों जबतक अहंभाव हैं, तबतक अनेक प्रतीत होयहैं, जब ये मायाके गुण छूटि जाइगे तब आत्मा एकही दीखेगो और जहांलों ताकों आत्मा अनेक लगेहैं, तबहीलों पराधीनहू हैं ॥ ३२ ॥ जबलों याकू पराधीनता है, तबलों ईश्वरके भय है यह प्रवृत्तिमार्गमें ऐसो दोष है ताकों जे सेवन करै है वे मोहमें परे शोकहीसे युक्त हैं ॥ ३३ ॥ काल आत्मा शास्त्र लोक स्वभाव धर्म यह नाम गुण संबंधते कहैहै. गुणसंबंध छूटे यह मेरेही स्वरूप है सबमेंही हो, मायासंबंधतें अनेकरूप दीखै हैं तातें निवृत्ति मार्गही उत्तम मुक्तिको कारण है ॥ ३४ ॥ उद्धवजी बोले हे भगवन् ! यह आत्मा गुणनसों मिल्योहै, तोहू गुणकों कार्य्य सुख दुःख कर्मसों बद्ध नहीं हैं, यातें आकाशकी भांति सर्वत्र व्यापक हैं, और निर्लेप है आवरणरहित जब तुम्हारे मतमें आत्मा एकही है तौ वह कैसे बंधनमें आवैहै कि जासों वाको मुक्तिकी अपेक्षा होय है यह कहिये ॥ ३५ ॥ और बंधे पीछें कौन भांति रहै है मुक्ति होइ तब कैसें रहे सो कहो, कौन भांति रहै, कैसें विहार आहार करे, कौन लक्षणसों जान्यो जाइ, कहां भोजन करे, कहां छोडे, कहां सोवे, कैसें बैठे कहां जाइ, यह दोनो बद्धमुक्त कौन लक्षणनसों दूसरनको जाननेमें आवे हैं ॥ ३६ ॥ हे अच्युत ! हे विद्वांवर ! ये मेरो जो प्रश्न है सो सब मोसों कहो, यह एक नित्यही बद्ध है नित्यमुक्त है सो मोकों भ्रम है ॥ ३७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

एतदच्युत मे ब्रूहि प्रश्नं प्रश्नविदां वर ॥
नित्यबद्धो नित्यमुक्त एक एवेति मे भ्रमः ॥ ३७ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

श्रीभगवानुवाच–बद्धो मुक्त इति व्याख्या गुणतो मे न वस्तुतः ॥
गुणस्य मायामूलत्वान्न मे मोक्षो न बन्धनम् ॥ १ ॥

ग्यारहैं अध्यायमें बद्ध और मुक्त और साधु भक्तिके लक्षण हरिने कहैहैं तहां पहिले यह बद्ध और मुक्त जैसे होय हैं सो कहैं हैं ॥ आत्मा बद्ध है, मुक्त है, यह कथन मेरे गुणसंबंधते है, सांचो नहीं गुणको मूल माया है, मैं तो मायाको नियंता हों तातें मोको न बंधन हैं न मोक्ष हैं ॥ १ ॥ बंधन गये पीछे धर्म कहैं हैं, मोको मोह सुख दुःख देहकी प्राप्ति ये सब संसारके धर्म मायाकरि होय है, जैसे स्वप्नसौं बुद्धिको विवर्त है तैसे संसार हैं सांचो नहीं है ॥ २ ॥ हे उद्धव ! एक विद्या दूसरी अविद्या ये दोऊ मेरी मायाकरि रचीहै, मेरी देहरूपशक्ति है, अनादि देहधारीनकों मोक्ष और बंधन करें हैं ॥ ३ ॥ हे महाबुद्धिवंत उद्धव ! ये सब मेरोही एक अंश जीव है ताको अविद्याकरि अनादि बंध है विद्याकरि मोक्ष हैं, मोकों न बंध है, न मोक्ष हैं ॥ ४ ॥ अब याको भेद बतावे हैं परस्पर आत्मा परमात्मा विरुद्धधर्मा हैंकै एकही देहमें स्थित हैं इनमें एक तौ जीव ईश्वरको भेद द्वितीय जीवकौ जीवसौं भेद यह दो भेद है एक शरीरमें स्थित जीव ईश्वरमें ईश्वरकौ धर्म आनंद और जीवकौ धर्म दुःख है एक नियंता ईश्वर एक जीव है देहाभिमान धरे बद्ध हैं इन दोऊनको भेद दृष्टांतसो कहोहों ॥ ५ ॥ दोऊ पक्षी है चैतन्यरूप करि समान है, दोऊ मित्र है, अपनी इच्छा करि एक देहरूप वृक्षऊपर आइ बैठे हैं तिनमें एक या देहके फलको भोग करे है दूसरो साक्षी भयो देखे है भोग नहीं करें तथापि ज्ञान शक्ति करि अति बलिष्ट है या भांति एकही रूपके दोऊ विरुद्ध कर्म करे है ॥ ६ ॥ जो परमात्मा ईश्वर साक्षी ज्ञाता है वह अपने स्वरूपको और जीवके स्वरूपकोहू जाने हैं, और जो जीवात्मा हैं सो न आपकों जाने हैं न ईश्वरकों जाने हैं, वह अज्ञ है, तातें जो अविद्यासों मिल्यो है सो नित्य बद्ध है जो विद्यासों संयुक्त है सो नित्य मुक्त है ॥ ७ ॥ ज्ञानकों विलक्षणता कहिकै स्थितिकी विलक्षणता कहैं हैं, वही पंडित हैं जो अपने स्वरूप और परमात्माको जाने हैं, सो यद्यपि देहहीमें हैं पर देहते न्यारे हैं, देहके धर्म वाको व्याप्त नहीं जैसे स्वप्नतें उठेको स्वप्नकी देहके धर्म नहीं लगे है जो अज्ञानी हैं सो यद्यपि वस्तुतें देहतें न्यारोई है पर देहके अभिमानसौं देहमें स्थित हैं, सुख दुःखको भोग करे हैं, जैसे स्वप्नके देहमें स्थित स्वप्नके सुख दुःख भोगे है ॥ ८ ॥ औरहू विलक्षणता कहैं हैं इंद्रिय अपने विषयनकों ग्रहण करें हैं तौ रागद्वेषादिरहित मुक्त पुरुषमें इन विषयनको भोगताहूं ऐसे नहीं माने है कारण यही है कि विषयनको जो इन्द्री स्वीकार करे है वह गुणनके कार्यको गुणही ग्रहण करेहै हे ज्ञानी ! वासौं आपको निर्लेप माने हैं ॥ ९ ॥ यह देह पूर्व कर्मके आधीन हैं, वा देहमें स्थित इंद्री अपने विषयनमें प्रवृत्त होय हैं तहां मैं कर्त्ता हों या अभिमान करि यह आत्मा बंधे हैं, यह अज्ञ हैं शयन आसन गमन स्नान दर्शन स्पर्श आघ्राण भोजन श्रवण ये सब इंद्रियनके धर्म है, मेरे धर्म नहीं, वृथा अभिमान करिके बंधे हैं ॥ १० ॥ ऐसे वैराग्य और विवेक जाकौ होइ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सो बद्ध नहीं होइ है क्योंकि इंद्रियनको विषयभोग करावे हैं; आपु नहीं करैं हैं यातें बंधनको पावे है ॥ ११ ॥ तहां दृष्टांत है जैसे आकाश सर्वत्र व्याप्त है पर सबतें निर्लेप है, जैसे सूर्य जलादिकनमें प्रतिबिंबित है तोऊ कंपरूप जलके धर्मते न्यारो है, जैसे वायु सर्वत्र फिरें हैं तोऊ निर्लेप है तैसे आत्मा या देहमें स्थित है इंद्रियनके स्वभावकरि तिन तिन विषयनकों ग्रहण करै है पर तिनते भिन्न है ॥ १२ ॥ वैराग्य द्वारा तीक्ष्ण निर्मल ज्ञानसों सकल संशय काटि नानाविधिके या प्रपंचतें निवृत्त होइ, जैसे स्वप्नते जागिके स्वप्नके धर्मनतें निवृत्त होइहै ॥ १३ ॥ जाके प्राण इंद्रिय मन बुद्धिकी वृत्ति संकल्प विकल्परहित होय सो देहमें स्थित हैं तौहू देहके धर्मनते मुक्त है ॥ १४ ॥ जाको देह स्वेच्छासों दुर्जनकरि पीडित होई वा काहूसों पूजित होइ तो जाको यामें सुख दुःख न होय कछु विकार न उपजे वही ज्ञानवान् है ॥ १५ ॥ कोई भलो करै अथवा बुरो अच्छो कहे वा बुरो आप काहूकी निन्दा स्तुति न करै लौकिक व्यवहारते न्यारो रहै गुणदोषनकरके वर्जित जो मुनि है वो समान दृष्टि ह्वैके रहै वही मुक्त हैं ॥ १६ ॥ कर्मादिकनमें उदासीन रहै न कछु करे, न कछु विचारे भलो बुरो मनमें न धरे, एक आत्माहीसो रमतरहै, या वृत्तिकरि जडकीसी भांति मुनि फिरै ॥ १७ ॥ मुक्त पुरुषके जो लक्षण है वही मुमुक्षुके साधन है जो पुरुष वेदार्थमें निपुण है वह प्रथम कहे साधनसों वेदमें निष्ठा राखके ईश्वरको ध्यानादिक करै तो विनको शास्त्र पढो भयो जैसे बहुत दिनकी प्रसूता गोसों फिर दूध मिलनो संभव न होय तो वाके दूधकी आशावाले पुरुषको श्रमको फल केवल श्रमही होय है ऐसेही क्रिया न करनेसो शास्त्राभ्यास व्यर्थ है मतलब यह है कि जो वेदमें निष्णात हैके परब्रह्ममें पारंगत न होय तब वाको वेद पढवेको श्रमको श्रमही फल है जैसे वृद्ध गउकी रक्षा करनवारेको श्रमही फल है ॥ १८ ॥ हे उद्धव ! जो कोई दूध दही गौ दुष्टनी स्त्री, पराधीन देह, और संगति, पात्र विषे न दियो धन, मेरे नामरहित वचन, इतनी बातैंवारे सदा दुःखी रहै हैं और आगेहू दुःख पावेंगे अर्थात् वे पुरुष दुःखीसो दुःखी है नाम महादुःखी है ॥ १९ ॥ मेरो नाम जा वाणीमें न होई तैसी बात न कहे या विश्वकी मर्यादा जन्म पालन नाशरूप पावन मेरे कर्म और लीला अवतारन विषे जगत्को प्रिय श्रीरामकृष्णादिक जन्म जा वाणी विषें न होइ वा वाणीकूं बुद्धिमान नहीं धारण करै ॥ २० ॥ या भांति ज्ञानमार्ग कहि समाप्ति करैं है, जिज्ञासामार्गसो ऐसे निश्चय करि आत्मा विषें नाना प्रकारको भ्रम दूरि कर विचारसों निर्मल मन मो अंतर्यामी विषे स्थिर करि निवृत्त होइ ॥ २१ ॥ जो मेरे विषे मन निश्चल करि धरिवेकों समर्थ न होइ तौ सब कर्म मेरे विषे अर्पण करे, निरपेक्ष होइ कर्म करे ॥ २२ ॥ ज्ञानमार्ग कठिन है, भक्तिमागही करि कृतार्थ होइगो यह कहै हैं, प्रथम तो श्रद्धासंयुक्त होइ, पीछे अतिसुंदर लोकनको पवित्र करनेकों समर्थ मेरी कथा सुने, मेरे जन्म कर्म गावे, स्मरण करे, वारंवार वैसीई लीला करे ॥ २३ ॥ धर्म अर्थ काम मेरे निमत्तही करे, विषयभोगार्थ न करे, मेरोही आश्रय करे, हे उद्धव ! तब सनातन स्वरूप मेरे विषे निश्चल भक्तिकों पावे ॥ २४ ॥ ऐसे सत्संगकरि प्राप्त भई भक्तिसों मोको सेवन करे, सो मेरे स्थानको निश्चय प्राप्त होयगो यह मेरे पाइवेको मार्ग साधन करि दिखायो है तब वो अनायास मेरे पदको पावे है ॥ २५ ॥ तब उद्धवजी साधुके और भक्तिके लक्षण पूछे हैं, हे उत्तमश्लोक ! हे प्रभो ! साधु कैसे होइहैं उनके चिह्न कैसे है और उनकी करी भई भक्ति कैसी होइहै जा भक्तिको तुम मानो हो और साधु आदर करैं है ॥ २६ ॥ हे पुरुषके नियंता ! हे जगत्पते ! मैं तुमारे विषे प्रणाम करौं हौं, अनुरक्त हूं, शरण आयो हूं, तातें यह मोसों कहिये ॥ २७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे भगवन् ! तुम साक्षात् परब्रह्म प्रगट भयेहो, प्रकृतिहूते परे हो, पुरुष हो, आकाशकी भांति निर्लेप हो, भक्तनकी इच्छाकरि रूप धरोहो ॥ २८ ॥ श्रीकृष्ण बोले जो परायो दुःख न देखिसके, और काहूसों द्रोह न करे, क्षमावंत होइ, सत्यही बोलैं निंदा आदि दोषरहित होइ समदृष्टि होइ सुख दुःखमें समान होइ; यथाशक्ति सबको उपकार करे; सब प्राणिनको अपराध सहे ॥ २९ ॥ काम करकैं बुद्धि चंचल न होइ, बाहिरकी इंद्रिय जीतिहोई कोमल शुद्ध चित होइ, परिग्रही न होइ, व्यर्थ कार्य न करे भोजन अल्प करे, शांत होइ स्वधर्ममें स्थित होई, मेरोही एक आश्रय करे मेरोई स्मरण करे ॥ ३० ॥ सावधान रहे, निर्विकार रहे, धैर्यवंत होइ, क्षुधा, प्यास, शोक, मोह, जरा, मृत्यु ये सब जीतें होइ, अभिमानी न होइ, दूसरेकों मान देइ, औरके प्रबोधकों समर्थ होइ, मित्र होइ, सबको भलो चाहें, दयावंत होइ, पूर्ण ज्ञानवान होइ ॥ ३१ ॥ ऐसेही पुरुष साधु कहातें हैं मेरे स्वरूपभूत वेदके धर्म करवेमें अन्तःकरण शुद्ध होय है नहीं करवेमें दोष है यह जानेपैहू यह धर्म स्वामीके ध्यानमें विक्षेप करनवारे हैं और जो यह धर्म मैं न करूं तौ भक्तिसोही सिद्ध है जांयगे ऐसें भक्तिकी दृढताके निमित्त दृढ निश्चय करके अपने धर्मको अधिकार रुद्ध हैजाय वैसो विन धर्मनको छोंडके जो प्राणी मेरो भजन करैं वोहू महात्मा हैं ॥ ३२ ॥ तब जैसें मेरे चरित्र है तैसें मोकों जानि, अथवा विना जानेहूं जैसे होय तैसे जे कोऊ अनन्यभाव करि मोकों भजें हैं, वे मेरे परमभक्त हैं ॥ ३३ ॥ साधुनके लक्षण कहि अब भक्तिके लक्षण कहैं हैं मेरे चिह्न प्रतिमा आदि ले अनेक भांतिके और मेरे भक्तजनको दर्शन स्पर्शन पूजा सेवा स्तुति प्रणाम गुण कर्म कीर्तन ॥ ३४ ॥ हे उद्धव ! मेरी कथा श्रवण करवेमें श्रद्धा मेरो ध्यान करे जो कछू मिले सो सब मोकों समर्पण करे, दास्यभावकरि, अपनी आत्मा निवेदन करे ॥ ३५ ॥ मेरे जन्म कर्म गावे, मेरे जन्माष्टमी आदि पर्व विषे फूल नैवेद्य आदि कर पूजे, गीत नृत्य वादित्र गोष्ठीकरि मेरे मंदिरमें उत्सव करे ॥ ३६ ॥ मेरे निमित्त यात्रा करे, पुष्पादिकनकरि पूजा करे, भेट समर्पे, वर्ष प्रतिवर्ष उत्सव करे, वैदिक तांत्रिक दीक्षा लेइ, मेरे व्रत करे ॥ ३७ ॥ और मेरी प्रतिमा स्थापनमें श्रद्धा राखे, आपुतें अथवा औरसों मिलिकै मेरे निमित्त फूलनको बाग मंदिर क्रीडा स्थल नगर गामके करिवेविषे उद्यम करे ॥ ३८ ॥ मेरे मंदिरमें बुहारी देनों, लीपनों, छिरकाउ करनो, चौक पूरे और रंगवल्ली आदि चित्राम करनो, ऐसें मेरे गृहकी सेवा करे दासकी भांति निष्कपट सेवा करे ॥ ३९ ॥ आपु अभिमान न करे, दंभ न करे जो करे सो कहे नहीं, मेरे निवेदित दीपादि वस्तुसों अपनो गृहकार्य न करे ॥ ४० ॥ " और ग्रंथनमें कह्यो है छै मासके उपवासन करि जो फल होइ सो कलियुगमें विष्णुके नैवेद्यके शेषसों पुण्य होई जाके हृदयमें हरिको रूप होइ मुखमें हरिनाम होइ उदरमें हरिको प्रसादी नैवेद्य होइ माथेमें प्रसादी पुष्पादिक होइ सो हरिको रूप है, अथवा और देवताको समर्पी वस्तु मोकों न अर्पण करे " यह अर्थ और ग्रंथनमें हैं, " विष्णुके नैवेद्य अन्नकरि और देवतानकों पूजिये, फेरि वह प्रसादी नैवेद्य पितरनकों दीजिये, तो अनंत पुण्य होइ, पितरनको शेष जो हरिको देइ तो पितर वीर्य्य खानहारे होयहैं, फेरि क्लेश पावे, दीपक पर्यंत मेरे मंदिरमें निवेदन कियो होइ ताके प्रकाशसों अपनों कार्य न करे " जो वस्तु या लोकमें आपुकों अति प्रिय होइ

---

१ जब तृष्णा बढती है फिर शांति नहीं होती ॥ सवैया—तीनहुँ लोक अहार किया सब सात समुद्र पिया पुनि पानी। और जहां तहां ताकत डोलत काढत आंख डरावत प्रानी ॥ दांत दिखावत जीभ हलावत याहीते मैं यह डांकिनि जानी। सुंदर खात भये कितनो दिन ये तृष्णा अजहूं न अघानी ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निषिद्ध न होइ सो मोकों अर्पणकरे तो वह वस्तु अनंत फलकों करें ॥ ४१ ॥ अब ये ग्यारे ठौर पूजनकों कहेहैं हे उद्धव ! सूर्य्य अग्नि ब्राह्मण गौ वैष्णव आकाश वायु जल भूमि आत्मा सब प्राणिमात्र मेरी पूजाके स्थल हैं ॥ ४२ ॥ तहां जाकी पूजा जैसें कीजे सो कहे हैं, वेदोक्त विद्याकरि सूर्य्यमें मेरी पूजा करे, अग्निमें घृत होमकरि मोकों पूजे, ब्राह्मणमें आतिथ्य अभ्यागतकरि पूजे, गायमें अच्छे सुन्दर तृणादिक करि सेवा करे ॥ ४३ ॥ वैष्णवमें अपने बंधुकी भांति आदर करि मेरी पूजा करे हृदयआकाशमें ध्यानकरि पूजे वायुमें प्राण बुद्धिकरि पूजे जलमें तर्पण आदि द्रव्यकरि पूजे ॥ ४४ ॥ भूमिमें गोपमंत्र न्यासकरि मेरी पूजा करे अपनपेमें आत्माकी पूजा भोग करिकैं जो भोग करे सो सब आत्माकों समर्पे, सब प्राणि मात्रमें समदृष्टि करि मेरी पूजा करे, मैं अंतर्यामी हो ॥ ४५ ॥ एकाग्र मन हो इन स्थलनमें शंख चक्र गदा पद्म धरे चतुर्भुज शांतिरूपकों ध्यान कर मेरी पूजा करे जो निश्चयमन ह्वैकरि यज्ञ वापी कूप तडाग बागसों मेरी पूजा कर साधुकी ॥ ४६ ॥ सेवा करि मेरो स्मरण करते २ मोमें परम भक्ति प्राप्त करे हैं ॥ ४७ ॥ या प्रकार ज्ञानमार्ग और भक्तिमार्ग कहकर विशेषतें भक्तिमार्गकों श्रेष्ठ कहें हैं, हे उद्धव ! पहेले सत्संग होइ तातें भक्ति होइ, संसार तरणकों यातें और उपाय उत्तम नहीं है जातें साधुनको एक मैंही आश्रय हो तातें अतिश्रेष्ठ उत्तम वैष्णवनको सत्संग अति श्रेष्ठ है ॥ ४८ ॥ हे उद्धव ! तुम सब ओरतें मेरे हो सुहृद सखा हो तातें तुमसों कह्यो हैं यह जो भक्तियोग गुप्त है सो तुम्हारे सुनाइवेको मैं कहूंगो ॥ ४९ ॥

अथैतत्परमं गुह्यं शृण्वतो यदुनन्दन ॥
सुगोप्यमपि वक्ष्यामि त्वं मे भृत्यः सुहृत् सखा ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

श्रीभगवानुवाच-न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म एव च ॥
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा ॥ १ ॥

बारहें अध्यायमें पहलें सत्संगकी महिमा और कर्मनकों करिवो कहकर तातें आगे तिनके त्यागकी अवस्था कहें हैं ॥ १ ॥ श्रीभगवान् बोले ॥ हे उद्धव ! योग और तत्वनको विवेक और अहिंसा आदि धर्म विद्याको अध्ययन तप त्याग अग्निहोत्रादिक वापी कूप तडाग दक्षिणा ॥ १ ॥ व्रत यज्ञ वेद तीर्थ नेम संयम ये सब मोको ऐसे वश नहीं करि सकेहै जैसे श्रेष्ठ विष्णुभक्तको सत्संग मोको वश करे हैं कारण कि सत्संग सब कुसंगनकों छुडायवेवारो है ॥ २ ॥ दैत्य राक्षस पक्षी मृग गंधर्व अप्सरा नाग सिद्ध चारण गुह्यक ॥ ३ ॥ विद्याधर और मनुष्यनमें वैश्य शूद्र स्त्री ये सब नीच जाति राजस तामस स्वभावयुक्तहू विन विन युगनमें ॥ ४ ॥ मेरे पदको प्राप्त भयेहै, औरहू बहुत हैं, वे वृत्रासुर प्रह्लाद वृषपर्वा बलि बाणासुर मय विभीषण ॥ ५ ॥ सुग्रीव हनुमान् जाम्बवान् गजेंद्र जटायु तुलाधार वैश्य व्याध कुब्जा गोपी व्रजविषें यज्ञपत्नी ऐसें और अनेक मोकों प्राप्त भये ॥ ६ ॥ ये कोऊ वेदार्थ नहीं पढें हैं; महत्पुरुषकी उपासना नहीं करी, व्रत, दान तप कछु न करेहे, एक मेरे संगते मोकों प्राप्त भये ॥ ७ ॥ गोपी गाय यमलार्जुन मृग ये और मूढ बुद्धि कालीतें लेके नाग सिद्ध अनायास मोकों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्राप्त होतभये ॥ ८ ॥ सांख्य योग दान व्रत तप यज्ञ व्याख्यान अध्ययन संन्यास इतने जानतहू करि जो मोकू न पावतभये, ताकों एकभावमात्रकरि पावतभये ॥ ९ ॥ अब मुख्य उत्तम भाव गोपीनको कहैं हैं, तातें पहिले गोपीनके भावकी स्तुति करें हैं, हे उद्धव ! जब अक्रूर आइकै बलदेव-सहित हमको मथुरा लेगये, तब दृढ प्रीति करि मोविषें आसक्त चित्तवारी वियोग करि दुःसह चित्त गोपी सुखके अर्थ मोमें औरको न देखत भई ॥ १० ॥ हे उद्धव ! वृंदावनमें फिरते विनकों अति-प्रिय मेरे संग जे जे रात्रि एकक्षणकी समान बीती वे वे रात्रि मो विना विन गोपीनको कल्प समान भई ॥ ११ ॥ मेरेमें गोपियनकी बुद्धि अधिक आसक्त हैगईही विन्हे पति पुत्रादिक तथा देहकौ तथा लोक परलोककौ कछु ध्यान न रह्यौ जैसे समाधिमें मुनियनको नाम स्वरूपकौ ध्यान नहीं रहैहै वा जैसे नदी समुद्रमें मिल जाय हैं तैसे गोपी मेरे स्वरूपमें लीन होगई ॥ १२ ॥ या प्रकार केवल मेरी इच्छावारी सहस्रशः स्त्री यद्यपि मेरे स्वरूपकों नहीं जानतीही तौहू जारबुद्धिसौ जाने भए मोपै ब्रह्मके सत्संगकी महिमासौ मुक्त हैगई ॥ १३ ॥ हे उद्धव ! मेरे भजनकों ऐसो प्रभाव है, जो जारबुद्धिसौ भजन करकेंहू मोकों प्राप्त भई, तातें तुम श्रुति स्मृतिके विधि निषेध छोडि प्रवृ-त्तिनिवृत्तिधर्म छोडि सुनोसुनायो छोड ॥ १४ ॥ सब देहधारीनकी आत्मा मैं हूं, तातें सबनमें मेरो भाव राखि मेरी एक शरणकों प्राप्त हैकै तुम निर्भय होउगे ॥ १५ ॥ तहां उद्धव पूछेहै, हे योगे-श्वरनके ईश्वर ! तुम्हारी बात सुनकर आत्मा विषे मेरो संदेह निवर्त नहीं होयहै ताते मन भ्रमे है, प्रथम तुमने कह्यो मेरो भजन करो अब कहोहो सब धर्म छोडि मेरे शरण आओ, तहां अब कहा कीजे त्याग करिये अथवा भजन करिये, यह भ्रम तुम दूरि करो, तब श्रीकृष्ण कहेहै ॥ १६ ॥ हे उद्धव ! पहिलें तो यह जीव ईश्वर है, ब्रह्म है, सो अविद्याके संग करि अपनो धर्म भूलिगयोहै, अवि-द्याके धर्महीकों अपने धर्म समझि अहंकर्त्ता अभिमानकरि बंधे है, जब अविद्याके धर्म दूरि होई, तब चित्त शुद्ध होइ, ताके निमित्त निष्काम कर्म करनो कह्यो, जब चित्त शुद्ध भयो तब कर्मको त्याग कह्यो वाको विवेक भयो तब विवेक करि सर्वत्र वह मेरो रूप जानें है अब कर्मको अधिकार भयो ज्ञानको अधिकार भयो ताते सब कर्म तजिके मेरी शरण आउ यह उपदेश देतभये, अब ईश्वरतें वाणी इंद्रियद्वारा जीवके संसारको कारण भूतप्रपंचकी उत्पत्ति कहैं हैं सो ईश्वर आधारादि चक्रनमें प्रगट होय हैं वा प्रकटताकों कहैं हैं, सो ईश्वर नादवंत पर नाम प्राणसहित आधार चक्रनमें प्रविष्ट होइकरि मनोमय सूक्ष्म रूप देखें, और मध्यमा नाम मणिपूरक और विशुद्धचक्र विषें आइकरि मुखमेंहू स्वरादिक मात्रा उदात्तादिक स्वर अकारादि अक्षररूप वैखरी नाम अतिस्थूल नानाविधि रूप होयहैं ॥ १७ ॥ तहां दृष्टांत कहैहैं जैसे आकाशमें गर्मीरूप, अग्निरूप अप्रकट है, बलकरि काष्ठमें मथेतें वायुके सहाइकरि पहिलें सूक्ष्मरूप निकसे, पीछें हविष्य करि बढैहै, तैसे यह वाणी मेरे प्रगट होवेको स्थान है ॥ १८ ॥ हाथनको धर्म क्रिया, चरणको धर्म गमन, और गुह्येंद्रियको धर्म मलादिविसर्जन, आघ्राण रस दर्शन श्रवण ये सब ज्ञानेंद्रियके धर्म संकल्प मनको धर्म, विज्ञान और बुद्धि चित्तको धर्म, अभिमान अहंकारको धर्म, सूत्र मायाको धर्म सत्त्व रज तम इन तीनि गुणकों विकार अधिदैव अध्यात्म अधिभूत ये सब मेरे प्रकट होयवेके स्थान हैं ॥ १९ ॥ यह आत्मा ब्रह्म है एकही है अप्रगट है कालकरि न्यारी करी वाणीरूप इंद्रियकी शक्ति याको अनेक भांति प्रकाशे है जाते आदि है तीन गुणनको आश्रय हैं सृष्टिकमलको कारण भूत है जैसे बीज खेतकों पाइ अनेक भांति प्रकाशे है ऐसेही यह आदि कारण ईश्वरभी कालकी

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गतिसौ मायाको अंगीकार कर प्रपंचरूप है जाय है ॥ २० ॥ तहां दृष्टांत कहे हैं, तंतुके विस्तारमें स्थितिमान पट जैसें तंतुनमें ओत प्रोत है और तंतुनसौ पृथक् नहीं है याही प्रकार यह सब जगत् ब्रह्ममें है वासौ भिन्न नहीं है या प्रकार समष्टि व्यष्टिरूप अविद्यासौ आत्मामें अध्यास कियो भयो प्रपंचरूप वृक्षही जीवके कर्ता भोक्ता आदि संसारको कारण है यासौ जब यथार्थ रीतिसौ आत्माकी सत्यता और प्रपंचकी अनित्यता जाननेमें आवै वा समय कामादि सबको त्याग करनौ कहे है यह अनादि कालसो प्रवृत्तिवारो प्रपंचरूप वृक्ष अपने भोगादिरूप पुष्पफलनको उत्पन्न करै है ॥ २१ ॥ द्वै पुण्य पाप याके बीज हैं अनेक भांतिकी वासना याकी जर है, तीनों गुण (रजोगुण तमोगुण सतोगुण) याकी पीडि हैं, पांच रूप रस गंध स्पर्श शब्द ये रस होय हैं, पांच महाभूत याके स्कंध है, एकादश इन्द्रिय शाखा हैं, दो पक्षी जीव और परमात्माको घर हैं, वात पित्त कफ तीनी वल्कल है, दो फल सुख दुःख हैं, सूर्य्यमंडलपर्यंत यह वृक्ष है तातें आगें संसार नहीं ॥ २२ ॥ याके फलके भोक्तानको कहैं हैं, याके एक फल दुःख रूपको गृहस्थ ग्रामचारी कामी समान गीदड भोग करै है दूसरो फल सुख अरण्यवासी परमहंस संन्यासी भोग करै हैं तातें यह एकही परमात्मा मायामय अनंत रूप हैं इतनों तत्वार्थ गुरुद्वारा जानें जानो तातें सब देह जान्यो ॥ २३ ॥ या भांति धीर सावधान तुमहू गुरुकी सेवा करियो एकांत भक्त करिकै तीक्ष्ण ज्ञानरूप कुठारसों त्रिगुणमय या लिंगशरीरको काटि परमात्माको मिलि पीछें सब साधन छोडि दीजो ॥ २४ ॥

एवं गुरूपासनयैव भक्त्या विद्याकुठारेण शितेन धीरः ॥
विवृश्च्य जीवाशयमप्रमत्तः संपद्य चात्मानमथ त्यजास्त्रम् ॥ २४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

श्रीभगवानुवाच-सत्त्वं रजस्तम इति गुणा बुद्धेर्न चात्मनः ॥
सत्त्वेनान्यतमौ हन्यात्सत्त्वं सत्त्वेन चैव हि ॥ १ ॥

तेरहें अध्यायमें सतोगुणकी बुद्धिकरि विद्याको उदय होयहैं तातें गुणबंधन छूटे सो प्रकार हंसकी कथाकरि श्रीकृष्ण कहैंहैं श्रीभगवान् बोले सुनो उद्धवजी जब सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये तीनों गुण प्रकृतिके हैं आत्माके नहीं या कारण सत्वगुणकी वृद्धि कर रजोगुण तमोगुणकी वृत्तिनको नाश करै और सत्वदथादि रूप सत्वगुणको उपशमरूप सत्वगुणसौ नाश करनौ ॥ १ ॥ अब कहे हैं रजोगुण तमोगुणके आगे सतोगुण कैसें बढे, जब सतोगुण बढे, तब मेरी भक्ति लक्षण धर्म होइ, वातें रज तम दूरि होइ ॥ २ ॥ सत्त्वकी वृद्धि यातें होयहैं यातें भक्ति अतिश्रेष्ठ है रज तमके दूरि भये रज तम मूलवारो अधर्म निश्चय करि शीघ्र दूरि होय हैं ॥ ३ ॥ शास्त्र जल प्रजा देश काल कर्म जन्म ध्यान मंत्र संस्कार ये सब गुणके हेतु हैं ॥ ४ ॥ येऊ दश सात्विक राजस तामस हैं, इनके मध्ये जाकी वृद्धपुरुष बडाई करें हैं सो सात्विक हैं, जाकी निंदा करें हैं सो तामस हैं, न जाकी स्तुति करें हैं न निंदा करें हैं सो राजस हैं ॥ ५ ॥ सतोगुण बढायवेकों पुरुष सात्विक निवृत्ति शास्त्र सेवे, प्रवृत्ति मार्गके पाखण्डीनके शास्त्र न देखे, जल तीर्थहीको सेवे, और सुगंध जल न सेवे, संग निवृत्तिमार्गनकोही करे, दुराचारिनको न करे देश एकांतही सेवे चोर ठग जूआ खेलनवारेनको संग न करे, ध्यानको काल ब्रह्म

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुहूर्त आदि सेवे अर्धरात्र प्रदोष काल न सेवे कर्म नित्यही करे काम्यकर्म अभिचार कर्म न करे वैदिक तांत्रिक दीक्षारूप जन्म लेय, क्षुद्र देवतानकी दीक्षा न लेइ; श्रीकृष्णहीको गुरु करे, अन्यनकों शत्रुनकों ध्यान न करे, जब प्रणवआदि उत्तम मंत्रको जपे, काम्यमंत्र क्षुद्र मंत्र न जपै, जो संसारसों आत्माको शोधक होइ सो करे देह गृहकों न करे या प्रकार सब सात्विक सेवे तब सतोगुणकी वृद्धि होइ राजस तामस छूटे, तब भक्तिरूपी तप धर्म होइ, तातें मेरे स्वरूपकों ज्ञान होइ ॥ ६ ॥ जैसें बांसनके वनकी अग्नि आपुसमें घिसिकै उठ सब अरण्यकों जारि ईंधन घटे पर आपुही शांत होइ है तैसें गुणके क्षोभतें उपज्यो देह आपुही शांत होइहैं ॥ ७ ॥ तब उद्धवजी पूछें हैं हे श्रीकृष्णजी ! बहुधा सब मनुष्य कहैं है विषय दुःखरूप है, तातें दुःख पावे हैं, तऊ क्यों वाहीको यह पुरुष कूकर गर्दभ बकराकी समान निर्लज्ज होय वाहीमें प्रवृत्त होय है ॥ ८ ॥ श्रीकृष्ण बोले हे उद्धव ! जब यह विवेककरि रहित होय है, तब याके हृदयमें अहंभाव बुद्धि सांचीसी होयहैं, तब सात्विकहू पन दुःखरूप राजस धर्मसों व्याप्त होयहैं ॥ ९ ॥ जब रजोगुणसों व्याप्त होइ, तब मनमें संकल्प उपजें, संकल्पतें विषयको ध्यान करे, तातें या दुष्टबुद्धि पुरुषकों काम उपजे ॥ १० ॥ पीछें तिनके वश होइ रजोगुण वेगकरि मोहित भयो यह अजितेंद्रिय दुःखही फलवारे कर्मनको करे ॥ ११ ॥ याहूमें जो विवेकी होइ सो यद्यपि रजोगुण तमोगुण करि विक्षिप्त मन है सावधान है तौहू मनकूं खेचि खेचि करि राखे, तब वह दोष जानिकै विषयमें आसक्ति न होइ ॥ १२ ॥ जो विवेकी सनेहतें मेरे विषें मन लगावे आलस्य छोडि श्वास रोंकि आसन दृढकरि मेरे विषें मन स्थिर करे ॥ १३ ॥ हे उद्धव ! मेरे शिष्य सनकादिकनने इतनोही योग बतायो है कि यह जीव सबतें मन खैंचि प्रत्यक्ष मोविषें राखे ॥ १४ ॥ उद्धवजी बोले हे केशव ! सनकादिकनको जा रूपसों जा समय यह योग तुमने कह्यो, सो तुम्हारो रूप और वह समय जानवेकी इच्छा है सो कहिये ॥ १५ ॥ श्रीकृष्ण बोले एक समय ब्रह्माके मानसी पुत्र सनकादिक योगकी सूक्ष्म गति ब्रह्मदेवसों पूछतभये ॥ १६ ॥ यह चित्त विषय धर्ममें प्रविष्ट है और विषय चित्तमें प्रविष्ट है हे प्रभो ! तातें जो कोऊ मोक्ष चाहे, संसारपार भयो चाहें वाको चित्तको विषय संबंध क्योंकर छूटेहै ॥ १७ ॥ पुत्रनके पूछेतें ब्रह्मा जो कहतभये सो श्रीकृष्ण उद्धवसों कहेहै या प्रकार पूछेतें स्वयंभू ब्रह्मा बडे देव विश्वके पालक विचारनलगे, परंतु प्रश्नको पार न पावतभये जाते कर्म करि विनकी विक्षिप्त बुद्धि ही ॥ १८ ॥ तब प्रश्नके उत्तरके निमित्त ब्रह्माने मेरो चिंतवन कियो तब मैं हंसरूप होइ ब्रह्माके निकट आवतभयो ॥ १९ ॥ ता मोकों देखिके सब प्रणाम करि ब्रह्माको आगे सनकादिक मेरे निकट आइकै तुम कौन हो ऐसे पूछतभये ॥ २० ॥ हे उद्धव ! तत्वके जानिवेकी इच्छाकरि मुनिने जब या भांति मोसों पूछो तब मैं जो विनसो कहत भयो सो तुम सुनो ॥ २१ ॥ हंसरूप भगवान् सनकादिकनसूं कहैहैं तुम आत्माको आगे कर प्रश्न करौ हो वा आत्माके उपाधिरूप भूतसमूहको लेकै प्रश्न करौहो जो आत्माको अधिकार कर प्रश्न करौ हो तौ परमार्थसों आत्मामें अभेद होवेके कारण तुम कौन हो यह प्रश्न करनो कि जो अनेकनमें एकको निश्चय करवेके लिये है संभव नहीं हो सकैहै और मैं तुम्हे कौनविषे लैके उत्तर देउँ आत्मा कोई जाति वा गुणादि रूप होयतौ उत्तर दिये जाय कि मेरी यह जाति और मोमें यह गुण है परन्तु आत्मामें कोई बात नहीं यासों तुम्हारा प्रश्न नहीं बन सक्ता ॥ २२ ॥ और जो पंचभूत संघात रूपको प्रश्न है अनर्थ रूप है देव मनुष्य आदि देह सब पंचभूतात्मक है वस्तुते सब समान हैं अपने कारणते न्यारे नहीं, वे सब कारणरूप एकही है, ब्रह्मरूपही है, ये नाम रूप न्यारे न्यारे धर लिये है सो अज्ञान हैं ताते याके मैं उत्तर कहा देउँ ॥ २३ ॥ मन करि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वचनकरि दृष्टिकरि और इंद्रिनकरि जो ग्रहण कियोजाय हैं सो मैं हूं और मोते न्यारो नहीं, यह तत्वके विचार करिजानो ॥२४॥ या प्रकार विनके प्रश्नके खंडनके मिसकरि आत्माको स्वरूप कह्यो अब ब्रह्माहूको जो अशक्य उत्तर हो ताको उत्तर देइहै ये विषय और चित्त दोऊ गुथेहैं ब्रह्मरूप जीवको देह है सो उपाधि है सांचो नहीं आपको ब्रह्मरूप करि जानें विषयनकों मिथ्या करि जानें वैराग्यकरि भगवान्को भजनकरे तब उपाधि छोंडि मुक्त होइ ॥ २५ ॥ तातें वारंवार विषयनकी सेवा करत विनकी वासनातें विषयनमें चित्त प्रविष्ट होयहै ताते विषय और चित्त ये दोऊ मेरो रूप जाने तब छूटे ॥ २६ ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति ये तीनि अवस्थाकरि रहित जीव शुद्ध आत्मरूप कैसे होई तहां कहैहै ये अवस्था तीनि गुण करिके होयहै सो बुद्धिहीकी वृत्ति अवस्था हैं जीव इन अवस्थानते न्यारो हैं यह निश्चय कीनोहै याते जीव इन सबनको साक्षी है ॥ २७ ॥ जो यह साक्षी भयो तो न्यारो क्यों है तो मैं सोयो जाग्यो ऐसे क्यों कहै है जब अहंकारके धर्मकरि संसारको बंधन है तब मैं जागतहूं सोवतहूं यह बुद्धि है जब अहंकार देहते छूटे आत्माविषे दृष्टि हो तब ये अवस्थाहू सब जातरहैं विषय और चित्तको परस्पर त्याग होइ ॥ २८ ॥ यह बंधन देहके अभिमानतें हैं, याहीतें आत्माहूकी अनर्थ लगै है, ऐसें समझि वैराग्य करि आत्मामें चित्त राखि संसारकी सब चिन्ता छोडे ॥ २९ ॥ जहांलों याकी भेद बुद्धि युक्तिन करि न निवृत्त होइ, तहांलो यह अज्ञानी कर्मादिकमें जागतों अर्थात् जानकैहू स्वप्नमें अपनेको जाग्रत मानते भये मनुष्यकी भांति स्वप्नकोही देखै है कारण कि वासौ यथार्थ ज्ञान नहीं हैं ॥ ३० ॥ ये सब देह और देहको कियो सबनसों भेद वर्ण आश्रम स्वर्ग आदि फल कर्म सब आत्माके धर्म नहीं; ये देहके हैं, अविद्यातें होय हैं, तातें मिथ्या हैं उत्तम नहीं जैसें स्वप्नके देखनवारेके सब मिथ्या मनोरथ हैं ॥ ३१ ॥ यह जीव जगत्में विषयभोग करै हैं, सो भोग एक क्षण है, नित्य नहीं जैसे बाल्य और तारुण्य आये और गये जाग्रत्के समान स्वप्नमें भोग करे हैं, और सुषुप्तिमें ये सब धर्म लीन होय हैं, एकही आत्मा रहै हैं, मैंने पहिले स्वप्न देख्यो पीछे मैं सुखसों सोयो, कछु होस न रह्यो, या अनुभवके स्मरणते तीनिहू अवस्था बुद्धिकी हैं, तिनको साक्षी एक आत्मा रहै है, और सब लीन होय है आत्मा सब इंद्रियनको ईश्वर है ॥३२॥ या प्रकार ये तीनों अवस्था मनके वश हैं, आत्माको नहीं, सो मेरी शक्ति अविद्या करि आपकों मानलेय है ऐसो निश्चय करि सब संदेहके स्थान अहंकारको विवेक अनुमान प्रमाण वचनसौ उपजे ज्ञानरूप खड्गसौ काटिके हृदयमें सदा स्थिति मोको भजन करे ॥ ३३ ॥ अनुमान कौन प्रकारको हैं सो कहै हैं यह जगत् जो दीखै है सो सब मनको विलास हैं भ्रम और मिथ्या है यह द्वैतहू भ्रांतिरूप है कारण यह कि अति चंचल है जो चंचल हो वह अलातचक्रकी समान भ्रांतिरूप है ब्रह्ममें द्वैतकी अनेक भ्रांति होय है यासौ भ्रांतिकौ अधिष्ठानरूप एक ब्रह्मही अनेक प्रकारसौ दिखाइपरै है और जो यथार्थ विचारसौ देखै हैं तौ यह त्रिगुणात्मक मायाकौ भ्रम स्वप्नकी समान है ॥ ३४ ॥ तातें हे उद्धव ! ऐसे प्रपंचते दृष्टि फेरि तृष्णा छोडि आत्मसुखके विचारमें तत्पर होय इंद्रियनके धर्म सब छोडि देई, कदाचित् कहो देहवंतकों देहकी चेष्टा कैसे छुट सकैहै और न छुटवैसों द्वैतही है जायगो तहां कहैं हैं जो कदाचित् कहूं वैसेही देहकी चेष्टा देखी जायहै परि वह चेष्टा अहंकाररहित हैं, सांची नहीं जातें प्रपंचमें विनकी मिथ्या बुद्धि है जो मिथ्या जानिकै छोड दियो जाय है वह फिर मोह उत्पन्न नहीं करैहै यह निश्चय हैं देहपर्यंत कर्मनके संस्कार हैं ॥ ३५ ॥ जीवन्मुक्त ज्ञानी पुरुष या विनाशी देहको देवगतिसो आसन उठा वा आसनमें स्थित उठकर खडौ भयो बाहरको गयो अथवा देवगतिसो फिर आयोभयो नहीं देखै है जैसे मदिराके पानसौ मत्तभयो पुरुष पहरे वस्त्रको नहीं जाने याही प्रकार ज्ञानी ब्रह्मको प्राप्त हो चुकौ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हो ॥३६॥ तहां तर्क करे हैं जो देहको न जानें तो देह क्यों नहीं गिरे तहां कहैहैं देहहू यह दैवके आधीन हैं जबलों याको प्रारब्ध कर्म है तहांलों प्राण इंद्रिय समेत देह रहैहै ताते जो समाधि योगमें आरूढ हैं परमार्थ वस्तु आत्मस्वरूपकों जानें हैं सो प्रपंचसहित स्वप्नसमान या देहको नहीं भजे है ॥ ३७ ॥ हे ब्राह्मणो ! मैं यह मैंने तुमसो आत्मदेहको विवेक सांख्ययोगको रहस्य कह्यो, तुमसो धर्म और ज्ञान कहिवेकूं मैं यज्ञरूप विष्णु आयोहूं सो जानो ॥ ३८ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! योगसांख्य, सत्यऋत अर्थात् शास्त्रोक्त धर्म तेज श्री कीर्ति धर्मनको मैंही परमस्थान हों ये सब मोहिमें रहेहै ॥ ३९ ॥ सब गुण मेरे आश्रय रहे हैं, मैं निरपेक्ष हूं सुहृद परम प्रिय हूं सबकों आत्मा सब मोकों समान हैं, संग काहूसो नहीं ऐसे गुण मोहीमें हैं ॥ ४० ॥ ऐसे मेरे वचन सुनि संदेह निवर्त्तकरि सनकादिकमुनि अतिभक्तिसों मेरो आदर करत भये ॥ ४१ ॥ जब विन ऋषीननें भली भांति स्तुति कीनी और पूजा करी तब ब्रह्माके देखतेही मैं अपने धामको आवतभयो ॥ ४२ ॥

तैरहं पूजितः सम्यक्संस्तुतः परमर्षिभिः ॥
प्रत्येयाय स्वकं धाम पश्यतः परमेष्ठिनः ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४.

उद्धव उवाच-वदन्ति कृष्ण श्रेयांसि बहूनि ब्रह्मवादिनः ॥
तेषां विकल्पप्राधान्यमुताहो एकमुख्यता ॥ १ ॥

अब चौदहके अध्यायमें परम श्रेष्ठ भक्ति है यह कहैंगे, और साधन समेत ध्यान कहैंगे ॥ उद्धव बोले हे श्रीकृष्ण महाराज ! जो ब्रह्मको विचार करें हैं, वे ब्रह्मकी प्राप्तिके साधन बहुत बतामें हैं, विन सबनमें जो मुख्य एक साधन है, सो कहो ॥ १ ॥ हे ईश्वर ! तुमने निरपेक्ष भक्तिही एक मुख्य साधन कह्योहो कि सब संग छोडि भक्ति योगकरि तुमारे विषे चित्त राखे ॥ २ ॥ श्रीकृष्णजी बोले हे उद्धव ! भक्तिही सबसे श्रेष्ठ है यह मेरी वेदरूप वाणी प्रलय कालमें नष्ट हैगईही यह वह वाणी है जासों प्राणीको मन मोमें लगजाय यह पहले मैंने ब्रह्माजीसो कहीही ॥ ३ ॥ ब्रह्माने अपने बडे पुत्र मनुसो वह वाणी कही, मनुने महर्षि भृगु मरीचि अंगिरा पुलस्त्य पुलह क्रतु ए सात ब्रह्माके पुत्र वे वाणीको ग्रहण करतभये ॥ ४ ॥ विनसों विनके पुत्र दैत्य देवता गुह्यक मनुष्य सिद्ध गंधर्व विद्याधर ॥ ५ ॥ चारण किंदेव (मनुष्य जातिमें देवतुल्य) किन्नर नाग राक्षस किंपुरुषादिक ये सब वह वाणी ग्रहण करतभये जिनकी वासना रजोगुण तमोगुण आदिसो अनेक प्रकारकी हैं ॥ ६ ॥ जिन वासनानसो देव दैत्य मनुष्यादिक प्राणिनके शरीर भिन्न भिन्न होय हैं और विनकी बुद्धिनमेंहू भेद पडै है इन सबनने अपनी वासनाके अनुसार भिन्न २ वेदको व्याख्यान कियो है ॥ ७ ॥ या भांति प्रकृतिकी विचित्रतासे मनुष्यनकी बुद्धि विचित्र भई और मतिनमें भेद पडगये काहू प्राणीके उपदेशकी परंपराते वेदविरुद्ध पाखंड बुद्धि भई ॥ ८ ॥ हे पुरुषनमें श्रेष्ठ ! मेरी मायाकरि मोहितबुद्धि पुरुष अनेक प्रकार इच्छा अनुसार कल्याणके साधन कहै हैं ॥ ९ ॥ कोऊ धर्महीको मुख्य कहै है, कोऊ यशको, कोऊ कामको, कोऊ सत्यको, कोऊ शमदमको, कोई ऐश्वर्यकों, स्वार्थको कहैं हैं कोऊ दान दीजे भोग कीजे यही कहैं हैं कोऊ यज्ञ तप दान व्रत नेम संयम ये सब साधना कहैं है ॥ १० ॥ इन प्राणिनको अपने कर्मानुसार लोक कर्मफलसो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मिलै हैं वे सब परिणाममें दुःखसो पूर्ण किंचित् आनन्दयुक्त शोकसो व्याप्त आदि अन्तवारे नाशवान् हैं ॥ ११ ॥ हे सौम्य ! मेरे विषें जिनने आत्मा समर्पण कियोहै, जे सबसों निरपेक्ष हैं विनकों मेरे परमानन्द स्वरूपकी प्राप्तिसों सुख मिल रहैहै वह सुख विषयनमें लगे पुरुषनको प्राप्त नहीं होयहै जो भक्तनको सुख है वह विषयी पुरुषनकों कहां ? ॥ १२ ॥ जो अकिंचन दांत सम चित्त वाहीसे संतुष्ट मन हैं तिनको सब दिशा सुखरूप हैं ॥ १३ ॥ जिनने मेरे विषें आत्मा समर्प्यो है विनको मो विना और कछु न चाहिये, एक मैंही वाको प्रिय हो ब्रह्मलोक, इंद्रकी समस्त राज्य भूमिको राज्य पातालको राज्य अणिमा महिमादिक योगसिद्धि मोक्ष पर्यंतहू विनको वांछित नहीं ॥ १४ ॥ तातें भक्तनके समान मोकों कोऊ प्यारो नहीं, हे उद्धव ! अब मैं तेरे आगे अधिक कहा कहूं, मेरी आत्माहू मोको प्रिय नहीं, हे उद्धव ! जैसे तुम मोको प्यारे हो तैसें मेरो पुत्र ब्रह्मा महादेव संकर्षण लक्ष्मीहू मोको प्रिय नहीं, यह अतिसंतोषसों श्रीकृष्ण कहत भये ॥ १५ ॥ जो मेरो भक्त निरपेक्ष शांत निर्वैर समदृष्टि होइ ताके संग मैं नित्य रहोंहों, जहां वह जाइ तहां वाके संग जाऊहूं विनके चरणरेणुसों मैं अपनेमें रहनेवारे सब ब्रह्माण्डनकों पवित्र करैहूं ॥ १६ ॥ जे महांत निरभिमान मोविषें अनुरक्तचित्त शांत सब जीवनपर परमस्नेह संयुक्त निष्काम निष्किंचन हैं, जिन्हें मेरे विना और कछु इच्छा नहीं जिनको चित्त विषयनसों पृथक् है ऐसे भक्त मोय प्रसन्न राखे ह वेही निरपेक्ष हैवेके सुखको जानते है दूसरे नहीं ॥ १७ ॥ उत्तमभक्तनकी कथा रहो जे सामान्यहू मेरे भक्त हैं वेऊ कृतार्थ हैं जे मेरे भक्त विषयनसों पीडित अजितेंद्रिय हैं विनकोहू दृढ भक्ति हैवेके कारण विषय पराभव नहीं कर सकें ॥ १८ ॥ हे उद्धव ! जैसे प्रचण्ड अग्नि काष्ठको भस्म कर देयहै यही प्रकार मेरी दृढ भक्ति सब पापनको नाश कर देय है ॥ १९ ॥ तातें भक्तिविना और कछु उपाय नहीं है, हे उद्धव ! योग सांख्य धर्म पाठ तप त्याग ये कोऊ मोको वश नहीं करिसकें है जैसी एक दृढभक्ति मोको वश करै है ॥ २० ॥ भक्तनको प्रिय आत्मा रूपमें श्रद्धासों उत्पन्न भई भक्तिसोंही महात्मानके वश है जाउहूं मेरी भक्ति चांडालहू करै तौ वाके जाति दोष पवित्र है जाय हैं ॥ २१ ॥ सत्य और दया संयुक्त धर्म और तपसों संयुक्त विद्याहू वा पुरुषको पवित्र नहीं कर सकैहै जाके चित्तमें मेरी भक्ति नहींहै ॥ २२ ॥ जाके रोमांच न होइ, द्रवीभूत चित्त न होइ आनंदाश्रु न चले, ताके भक्ति कैसे जानीजाइ और भक्तिविना हृदय कैसें शुद्ध होइ ॥ २३ ॥ अब भक्तिको लक्षण कहैहै जाकी वाणी गद्गद होइ, चित्त द्रवीभूत कोमल होइ, नेत्रनतें वारंवार आंशू चले, कबहूं हँसे कबहूं लज्जा छोडि ऊंचे स्वरते गावे नाचे या भांति मेरी भक्तिसों युक्त होइ सो लोकनकों पवित्र करै ॥ २४ ॥ जैसे सोनो अग्निमें तपानेसों श्यामता छोडि निर्मल हो अपने रूपको पावै है तैसे यह आत्मा मेरे भक्तियोगसे कर्म वासना त्यागकर मेरे रूपको पावै है ॥ २५ ॥ ज्ञान विना अविद्या नहीं जायहै अविद्याके गये विना तुम नहीं मिलैहै सो कहै हैं यह पुरुष जैसे जैसे मेरी पुण्य कथा श्रवण कीर्तन

---

१ यापर एक दृष्टांत है । तिलोक सुनार बडे साधुसेवी थे, जो कुछ वस्तु पास होती सब साधुसेवामें व्यय करदेते थे, एकसमय राजाके यहांके कुछ भूषण बनने आये, सो इनके घर बहुत साधु आगये, इन्होंने उस राजाके द्रव्यकी भोजन सामग्री मंगाकर साधुओंको खवायदी और आप टाल बाल करतेरहे, जब राजाके यहां व्याहका दिन आया, तौ यह जंगलको भागगये भगवान्ने भक्तकी रक्षा करी और तिलोकका रूप बना गहना लेकर राजाके घरगये वहांसे अच्छे भूषण बनानेके कारण बहुत कुछ पुरस्कार पाया और गहना लिया, भगवान् वोह पुरस्कारका द्रव्य तिलोकके घर दे जंगलमें जाकर उससे कहनेलगे घरको जा राजाने बहुत द्रव्य दिया है, तिलोक सुनतेही घर आय बडे प्रसन्न हुए ईश्वरके भक्त कभी नष्ट नहीं होते ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करैं हैं तैसें तैसेंई चित्त शुद्ध होइ है नेत्र जैसें जैसें अंजनसों शुद्ध होयहैं तैसें तैसें सूक्ष्म पदार्थ देखनेमें आवै है ॥ २६ ॥ विषयके ध्यानतें मन विषयमें रहै है, मेरे ध्यानसों चित्त शुद्ध हैकै मेरे स्वरूपको प्राप्त होजाय है भाव यह है मेरी भक्ति विना ज्ञान नहीं होयहै और मेरे स्वरूपकी प्राप्ति होनी यही ज्ञान है ॥ २७ ॥ हे उद्धव ! तातें स्वप्न मनोरथकी समान मिथ्या वस्तुको ध्यान छोडि मेरी भावना करि चित्त शुद्ध करि मेरे स्वरूपमें राखे ॥ २८ ॥ स्त्रीनको संग स्त्रीसंगीनकों संग दूरितें छोडि, आत्माकों जानि धीर होई एकांत बैठके परम कल्याणरूप मेरो चिंतवन करै ॥ २९ ॥ जैसे स्त्रीके संगसो और स्त्रीसंगीनके संगतें याको क्लेशबंध होइ तैसो औरके संगते नहीं होइ है ॥ ३० ॥ उद्धव बोले हे कमलनयन ! जो मोक्ष चाहे सो तुम्हारो ध्यान कैसो करे, कौन स्वरूपको करे, यह मोसों कहो कारण कि मैं तो आपके दासभावके पुरुषार्थको प्राप्त है चुकौ हूं ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्ण बोले हे उद्धव ! समान आसन करै बैठे अपनी देह सम राखे जैसें सुख होइ तैसें बैठे, अपने दोनों हाथ गोदपर राखे, नासिकाके अग्रपर दृष्टि राखे ॥ ३२ ॥ ऐसें बैठि प्राणके मार्ग पूरक कुंभक रेचक करके शुद्ध होइ जितेंद्रिय होइ शनैः शनैः प्राणायामको अभ्यास कर रेचक पूरक कुंभक क्रमसों अभ्यास करै चाहे तौ पूरक कुंभक रेचक या क्रमसों प्राणायाम करै अथवा रेचक कुंभक पूरक या विपरीत क्रमसों करै दोउ तरह प्रभुकी आज्ञा है ॥ ३३ ॥ प्राणायाम दो प्रकारसों है एक तो प्रणवसहित है, एक प्रणवरहित है यहां प्रणवसहित प्राणायाम करै, सो मूलाधार चक्रसों ब्रह्मरंध्रतक कमलनालके तन्तुकी नांई सूक्ष्म अवच्छिन्न है वाको मनमें प्राणसों प्रगट करकै ॐकारमें घंटाके शब्दकी समान उदात्तनाद स्थित करै ॥ ३४ ॥ या प्रकार प्रणवसंयुक्त प्राणको अभ्यास करि प्रगट करै और प्रणवमें घटामनो बढामनो संधानकों स्थित अभ्यास करै दश प्राणायाम तीनों काल करे या प्रकार अभ्यास करवेसों एक महीनामें प्राणवायु वशमें है जाय है ॥ ३५ ॥ या देहके भीतर हृदयकमल अधोमुख है डांडी वाकी ऊपर रहै है जैसें केराकी फरी होय हैं, तैसी कमलकी कली है ताको ध्यान ऐसो करै कि वह नीचें नालवारो और ऊपर मुखवारो खिलोहू भयो आठ पखुरीसों युक्त है कर्णिकासहित मनमें चिंतवन करै ॥ ३६ ॥ वामें सूर्य चंद्र और अग्निको क्रमसों ध्यान करै वामें प्रथम अग्निके बीचमें आगे कहे ध्यानके मंगलविषयरूप मेरे स्वरूपको ध्यान करनो ॥ ३७ ॥ सम अतिशांत सुंदरमुख दीर्घ सुंदर चारिभुजा धारण करे, अति सुंदर ग्रीवा, उत्तम गोल कपोल, अति उज्ज्वल मंद मुसिक्यानि युक्त ॥ ३८ ॥ समान काननमें प्रकाशमान मकराकृत कुंडल धारे पीतांबर धरे मेघकीसी भांति श्यामसुंदर श्रीवत्ससंयुक्त लक्ष्मीको वक्षःस्थलमें धरै ॥ ३९ ॥ शंख, चक्र, गदा, पद्म, वनमालासों भूषित नूपुरनसों शोभित चरणकमल कौस्तुभमणिकी कांतिकरि संयुक्त ॥ ४० ॥ प्रभासों दीप्त मुकुट कंकण कटि मेखला बाजूबंद धारे सर्वांग सुंदर

१ एक तौ यह प्रयोजन है कि जो आंखनको बिलकुल मीचैगो तो निद्रा आय जायगी और जो खुली राखैगो तो मन चलायमान रहेगो यासों नाकके अग्रभागको देखत रहै । अथवा लोकमें नाककीही बडी लाज होय है नेकसी कछु बात भई और हाई हमारी नाक कटजायगी ऐसें कहै है सो बात विचारे कि जो मैं कही अब भ्रष्ट भयो तो मेरी नाक कट जायगी क्योंकि अब मेरी योगिनमें गिनती हैगई है यासूं भगवान्नेहू कही है कि नाकके माउ देखत रहे जैसै नाक रहे सो करै ऐसो न करै जासो नाक जाति रहै ॥ २ नाकके दहिने नथुनाको दहिने हाथके अंगूठासों दाबके श्वासको ऊपर खेचवेको नाम पूरक कहै है फिर मध्यतर्जनी दोनों अंगुलीनके विन अनामिका कनिष्ठिका दोनों अंगुलीनसों नाकके बायें नथुनाको बंद करके जितने देर वायु रुक सके वितनी देर वायुको रोके वाकू कुंभक कहै है फिर दहिने नथुनाके मार्गसो अंगूठाको हटायके धीरे २ पवनको निकासें एकदमसों न निकासै याको रेचक कहै है यह प्राणायाम कहावे है सो करै ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनोहर प्रसन्नताके कारण अति सुन्दर शोभित मुख और नेत्र अति सुकुमार रूपको ध्यान करै सब अंगनमें मन देई ॥ ४१ ॥ प्रथम इंद्रियनकों विषयतें खेंचि मनमें मिलावे, मनको बुद्धि सारथी करि विषयनतें काढि मेरे स्वरूपमें मिलावे ॥ ४२ ॥ यह चित्त सर्वत्र व्याप्त है अंग अंगमें फिरे हैं, ताको विन २ अंगनते काढि मेरे मुखकी भावनामें राखे मंदहास्य संयुक्त मेरे मुखको बहुत काल चिंतवन करे और कुछ मनमें न धारै ॥ ४३ ॥ जब मुखमें मन स्थिर हैजाय तब मुखहूंते खेंचकर सबके मूलभूत साक्षात् मेरे स्वरूपमें राखे फिर वाकों वहांते छुडाइ साक्षात् शुद्ध ब्रह्मरूप मेरे संपूर्ण स्वरूपमें संलग्न होई तब और कछु चिंतवन न करे ॥ ४४ ॥ या प्रकार समाधिमें दृढ मति होइ, अपने आत्मामें आत्मरूप मोहीकूं देखे, जैसे ज्योतिमें ज्योति मिलि जाइ तैसें सर्वात्मरूप मेरे रूपमें आपनो आत्माकों मिलो देखे ॥ ४५ ॥ या प्रकार सुदृढ तीक्ष्ण ध्यान करि योगी मो विषें मन संयुक्त करे, तब वह द्रव्य ज्ञान क्रियारूप भ्रम शीघ्रही निवृत्त हैवेसो शांतिको प्राप्त होयहै ॥ ४६ ॥

ध्यानेनेत्थं सुतीव्रेण युञ्जतो योगिनो मनः ॥
संयास्यत्याशु निर्वाणं द्रव्यज्ञानक्रियाभ्रमः ॥ ४६ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५.

श्रीभगवानुवाच-जितेन्द्रियस्य युक्तस्य जितश्वासस्य योगिनः ॥
मयि धारयतश्चेत उपतिष्ठन्ति सिद्धयः ॥ १ ॥

पंद्रहके अध्यायमें जे धारणासहित सिद्धि सब कही वे सिद्धि भगवान्‌की प्राप्तिकों अंतराय है, तातें इनको छोडि परमेश्वरसो तत्पर होइ सो कहैं हैं ॥ श्रीभगवान् बोले कि जो जितेंद्रिय होई श्वास जीते चित्त मेरे विषे राखै होइ योगी होइ, स्थिरचित्त होइ, ताकों ये सिद्धि अपने आप विनाही चाहै प्राप्त होय हैं ॥ १ ॥ तब उद्धवजी बोले हे श्रीकृष्ण ! कैसी धारणासों ये सिद्धि होय हैं, सिद्धि कितनी हैं इनको रूप कहाहै, सो सब मोसो कहो, क्योंकि तुम योगीनहूको सिद्धिके दाता हो ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण बोले धारणा और योगके पारंगतनने अठारह सिद्धि कही हैं, तामें आठ मेरे आश्रय रहैं है, ते मोहीकों होयहैं कि, तथा जो मेरे सारूप्यको प्राप्त होइहै वाकों होय हैं, पर कछु न्यून होयहैं और दश सिद्धि गुणनको कार्य्य है सतोगुणको उत्कर्ष बढामें हैं ॥ ३ ॥ तिनकूं कहै हैं अणिमा महिमा लघिमा ये तीन्यो देहकी सिद्धि हैं प्राप्ति सिद्धि इंद्रियनकी है इंद्रियनसो मिलि इंद्रियनके देवतानसो संग होनो परलोक और या लोकके विषयनकै भोग देखवेकी सामर्थ्य तथा भूमिके गुप्त पदार्थनको ज्ञान होनो प्राकाम्य सिद्धि है ईश्वरमें मायाकी और दूसरेनमें मायाके अंशनकी प्रेरणा करवेको सामर्थ्यको ईशतासिद्धि कहै हैं ॥ ४ ॥ गुणमें असंग होई विषयभोग करें और संग दोष न लगे सो वशिता सिद्धि कहिये, जाको कामना करे ताकों पावे यह प्राकाम्य सिद्धि है हे उद्धव ! ये आठ सिद्धि मेरे आश्रय रहैहैं ॥ ५ ॥ क्षुधा पिपासा आदि धर्म शरीरमें न व्यापै यह अनूर्मि सिद्धि है दूरिकी

१ ऊधो क्रोध लोभ अरु काम । इनसे बचे सोई ज्ञानी नर और एक माया वाम ॥ जप तप नियम समाधी व्रतको देत न यह रिपु ठाम ॥ इन तीनोंको तज मुख पावे भज मोहिं आठौं जाम ॥ धन दारा सुत अटा अटारी नगर धरणि पुर ग्राम ॥ यह सारे मायासे भासत त्याग जपो मम नाम ॥ वस ज्वालाप्रसाद यही एक तारेंगे सुखधाम ॥ २ बडे शरीरको छोटा बना लेना अणिमा छोटेको बडा बना लेना महिमा, भारी शरीरको हलका बना लेना लघिमा सिद्धि है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वस्तु सुने और देखे ए दोई सिद्धि हैं, मनके वेगकरि देहकी गति होइ यह मनोवेग नाम सिद्धि है जैसो रूप कियो चाहैं तैसो होइ यह कामरूप सिद्धि हैं, परकाया प्रवेश करे एक यह सिद्धि हैं ॥ ६ ॥ स्वेच्छामृत्यु होइ यह एक सिद्धि है अप्सरानके संग देवता हैके क्रीडा करै हैं तिनकों देखवेकी सिद्धि है जो मनमें चाहे सों पावे अप्रतिहत गति होइ और आज्ञाभंग न होइ यह दश सिद्धि सतोगुणकी वृद्धिसो मिलती है ॥ ७ ॥ पांच सिद्धि तुच्छ है ते कहैं हैं त्रिकालको ज्ञान होइ १ शीत, उष्ण, कछु न लगे २ पराये चित्तको धर्म जानें ३ अग्नि, सूर्य, जल, विषकों रोके; इनको दोष होने न देइ ४ पराजय कहूं न होई ५ ॥ ८ ॥ हे उद्धव ! ये सब योग धारणकी सिद्धि मात्र कही अब ज्ञान धारणाते जो सिद्धि होइ और जैसे होई सो मोते सुनो ॥ ९ ॥ मनको भूत सूक्ष्म अर्थात् शब्द स्पर्श रूप रस गंध सूक्ष्म तन्मात्राके आकार करकै या भूत सूक्ष्म उपाधिमान मेरे स्वरूपमें धारण करवैसो सूक्ष्म रूपको उपासक पुरुष अणिमा सिद्धिको प्राप्त होय है ॥ १० ॥ ज्ञानशक्ति महत्तत्त्वरूपमें महत्तत्त्व-रूप मन धरे तो महिमा सिद्धि पावै और न्यारे न्यारे आकाश आदि भूतनहीकी रूपमें मन धरे तो भूतनकी महिमा सिद्धि पावे ॥ ११ ॥ पंचभूतनके परमाणु अतिसूक्ष्म हैं सो मेरो रूप है तामें चित्त अनुरक्त करे तब योगी मरमाणु कालके रूपको प्राप्ति होइ, सो लघिमा सिद्धि कहिये ॥ १२ ॥ सात्विक अहंकार तत्वरूप मोविषे एकाग्र मन धरे तो सब इंद्रियनको अधिष्ठाता होई मोमेंही मन राखवेके प्रभावसों यह प्राप्ति सिद्धि होयहै ॥ १३ ॥ प्रकृतिते क्रियाशक्तिरूप महत्त्व होयहै, सो रूप है तामें मन धरे तब सबते उत्तम मायाते उपजे प्रकामको पावे सो प्राकाम्य सिद्धि कहिये ॥ १४ ॥ त्रिगुणमायाके नियंता अतर्यामी कालरूपी व्यापक मेरे स्वरूपमें मन धरे तो सब जीव और चर अचर शरीरकों नियंता होइ सो ईशिता सिद्धिकों पावे ॥ १५ ॥ विराट् हिरण्यगर्भ और कारणते चौथे तुरीयब्रह्म भगवान् नारायणमें मन धरैं तो योगी मेरे धर्मकों पावें, तब वशितासिद्धि-कों पावे ॥ १६ ॥ निर्गुण ब्रह्मके विषें निर्मल मन राखे तौ परमानंद पावे, जहां सब कामना समाप्त होयहै ॥ १७ ॥ अब गुण हेतु सिद्धि कहैं हैं, श्वेत द्वीपके पति शुद्ध धर्ममय मेरे रूपमें मन धरे तो मनुष्य शुद्धताकों प्राप्तहोइ वासों क्षुधा प्यास आदि ले जे छैः ऊर्मी लहरी है वे नहीं व्यापें हैं ॥ १८ ॥ आकाशरूप प्राण हैं सो मेरो रूप है, तामें मनकरिके शब्दको चिंतवन करे तब वह आकाशमें भूतनकी वाणी प्रकट दूरिहीतें सुने है ॥ १९ ॥ यह नेत्र सूर्यमें मिलावै मन करिकै मेरो ध्यान धरे; तब सूक्ष्म दृष्टि होइ, दूरिते विश्वकों देखे ॥ २० ॥ मन वायुके संग देहको मेरे विषें संयुक्त करिकै जो मेरी धारणा करे तौ या धारणाके प्रतापसो जहां मन करे तहां देह जाई ॥ २१ ॥ जब मन मेरे विषें मनकी धारणाकरि धरे तब मेरे प्रभावकरि जैसो रूप कियो चाहैं हैं तैसो रूप करे, कारण कि विन्हैं मेरे योगबलको आश्रय है ॥ २२ ॥ जो सिद्ध परकायामें प्रवेश कियो चाहैं सो आत्माकों चिंतवन करे, तब अपनी देह छोडि प्राणरूप होइ बाहिरकी वायुमें प्रविष्ट होइ वायुके संग परकायामें प्रविष्ट होयहैं जैसें भ्रमर पुष्पतें दूसरे पुष्पमें अनायास चले जायहैं ॥ २३ ॥ अब स्वच्छंद मृत्युको प्रकार कहैं हैं, योगधारणा करते प्रथम एडीसों गुदद्वार दाबकर रोके पीछें प्राणको हृदयमें लेआवे. पीछें हृदयमें उर वक्षःस्थलमें मिलावे, पीछें कंठमें ले आवे कंठते माथेमें लावे, तब ब्रह्मरंध्र द्वारा या देह-को छोडे जा स्थानमें जायो चाहें तहां जाइ ॥ २४ ॥ जब देवतानके क्रीडास्थलमें विहार कियो चाहें तब मेरे सतोगुणरूपी मूर्तिको ध्यान धरे, तब सतोगुणके अंशते तहांई विमान समेत देवांगना आइ ठाढी होयहैं ॥ २५ ॥ पुरुष मोविषें विश्वासकरि बुद्धिसो मनोरथ करे तब सत्य संकल्प-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रूप मेरे रूपमें मन संयुक्त कर तैसोही मनोरथ पावे है ॥ २६ ॥ मैं सबनको ईश्वर नियंता हौं, स्वतंत्र हौं, मेरे भावकों प्राप्तभयो पुरुष कहूं प्रतिहत नहीं होयहै जैसे मेरी आज्ञा सब मानेहै तैसे वाहूकी आज्ञा सब मानें उल्लंघन न करिसके, ये सब गुणहेतु सिद्धि कही ॥ २७ ॥ अब तुच्छ सिद्धि कहैं हैं मेरी भक्ति करि शुद्ध सत्वरूपमय होइ योगी त्रिकालके ज्ञाता ईश्वर मेरी धारणा करे, तब जन्म मृत्यु सहित तीनों कालको ज्ञान होइ और यही दूसरेके चित्तकी सब बात जानी जायहै ॥ २८ ॥ मेरे योग करिकै जाको चित्त युक्त होइ ताकी देह भोगमय होइ सो अग्नि करकै और अनेक उपाधिसो उपहत नहीं होइहै जैसे जलजंतुको जल बाधा नहीं करैहै तैसें याकों कोई बाधा नहीं करिसकैंहै ॥ २९ ॥ श्रीवत्स, अब्ज, ध्वज, छत्र चमर युक्त मेरी विभूति अवतारको ध्यान करे तब याको पराजय कबहू न होई ॥ ३० ॥ या प्रकार मेरी उपासना कर तब मेरी योगधारणा करवेसौ पहले कही सब सिद्धि वाके आगे हाथ जोरे ठाढी रहैं हैं ॥ ३१ ॥ अनेक भांतिकी धारणामें कष्ट बहुत हैं याते एकही धारणा ऐसी करे जाते सब सिद्धि होइ सो कहैं हैं जितेंद्रिय दांत जितश्वास हो मन जीत तुरीय ब्रह्म नारायणस्वरूपमें मेरी धारणा धरनवारे गुणिनको कौन सिद्धि दुर्लभ है ॥ ३२ ॥ जो मेरे साक्षात् स्वरूपकी धारणा करैं हैं ताकों मेरी प्रीतिमें ये सिद्धि विघ्न करैहै तातें इन सिद्धिनसों व्यर्थ काल न खोवे इन सिद्धिनको न चाहना करे ॥ ३३ ॥ एक सिद्धि जन्महीतें होयहै जैसे देवतानको सिद्धि समेतही जन्म होयहै सहजही सिद्धिहै एक मंत्रिकरि औषधी करि तपकरि जितनी सिद्धि होयहै वे सब सिद्धि योगकरि पावे पर इन करिके सालोक्यादिक मुक्तिको नहीं पावेहै ॥ ३४ ॥ यातें हे उद्धव! सब सिद्धिनको एक मैंही प्रभु हूं कारण पालक हों मैं मोक्ष सांख्य ज्ञान धर्म और ब्रह्मके ज्ञातानकों पालक हों ॥ ३५ ॥ मैं सब देही जीवनको आत्मा हों अंतर्यामी हों सर्वत्र व्यापक हों जैसे भूतनमें महाभूत सर्वत्र व्याप्त है और आवरणरहित है याकों ऐसेही जानो ॥ ३६ ॥

अहमात्मान्तरो बाह्योऽनावृतः सर्वदेहिनाम् ॥
यथा भूतानि भूतेषु बहिरन्तः स्वयं यथा ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अध्याय १६.

उद्धव उवाच-त्वं ब्रह्म परमं साक्षादनाद्यन्तमपावृतम् ॥
सर्वेषामपि भावानां प्राणस्थित्यप्ययोद्भवः ॥ १ ॥

अब सोलहें अध्यायमें प्रकटतासंयुक्त हरिकी विभूतिज्ञान वीर्य प्रभावसहित विशेष करिकै कहैंगे उद्धव बोले हे श्रीकृष्ण! तुम साक्षात् परब्रह्म निरावरण हो स्वतंत्र हो जिनमें सब भूतमात्रकी उत्पत्ति प्रलय रक्षा जीवन होयहै, ते तुम हो सबके कारण हो, आदि अंतसों रहित हो ॥ १ ॥ हे भगवन्! जे वेदके तत्वको जाने हैं वे सर्वत्र ऊंचे नीचे पदार्थनमें कारणरूप तुमको जानि तुम्हारी उपासना करेहै ॥ २ ॥ जे आत्मतत्व नहीं जाने हैं तुम तिनको जानिवेकों अशक्य हौ जिन जिन भावनाविषे ऋषीश्वर भक्ति करिकै तुमकों उपासना करते सिद्धिकों पावेहै मोको विन पदार्थनके नाम कहो ॥ ३ ॥ सब प्राणीनके मध्यमें गुप्त तुम अंतर्यामी हो, प्राणीनको कार्य कारण सामर्थ्यके दाता तुम्हें सब भूत तुम्हारी माया करिकै मोहित होइ देखैहै ॥ ४ ॥ जिनमें गुप्त रहोहो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तिन विभूतिनको पूछेहै, हे महाविभूतिके पति ! जे तुम्हारी विभूति भूमिसों स्वर्ग पाताल दिशानमें निश्चय करीहै, और जे विभूति तुम्हारे प्रतापसंयुक्त हैं ते मोसूं कहो तुम्हारे तीर्थरूप चरणारविंदनको नमस्कार करोंहों ॥ ५ ॥ या प्रकार उद्धवको प्रश्न सुनिके संतुष्ट होई श्रीकृष्ण बोले हे प्रश्नके ज्ञातानमें श्रेष्ठ ! याही भांति शत्रुनसों युद्ध करवेकी इच्छावारे अर्जुनने युद्धके समय कुरुक्षेत्रमें मोसों प्रश्न कियोहो ॥ ६ ॥ कदादित् कहो युद्धके समयमें या प्रश्नको कौन प्रसंग हो तापै कहे है राज्यके निमित्त अपने जातिवारेनके वधको करनो अनुचित अतिनिन्दित और अधर्मरूप जानकै कि मैं इन्हें मारूंगो यह मारेंगे यासों करुणाव्याप्त बुद्धि हैवेसों पुरुषश्रेष्ठ अर्जुन युद्ध करवेसों निवृत्त हेकै स्थित भयो ॥ ७ ॥ तब मैंने युक्ति करिकै पुरुषसिंह अर्जुनको समझायो तब यही प्रश्न रणभूमिमें कियोहो अब तुमहूं तैसेंई पूछोहो मैं तुमहूंसो वही कहूंगो ॥ ८ ॥ हे उद्धव ! इन प्राणिमात्रको आत्मा मैं हों सुहृद मित्र ईश्वर नियंता मैं हों और सब प्राणिमात्रहू मैं हों सबको जन्म पालन प्रलयको कर्ताहू मैं हों ॥ ९ ॥ गतिमंत जे चलें फिरें है तिनहूंको योग मन कर्म मैं हों जे सबको वश करे है तिनमें मेरो रूप है अनंतगुण है तिनमें समता गुण मेरो रूप है गुणसंयुक्त पुरुषको स्वाभाविक गुण मैं हूं ॥ १० ॥ गुणीनको प्रथम कार्य्य हों जे बडे पदार्थ हैं तिनमें महत्तम मैं हो सूक्ष्मनमें प्रथम जीव मैं हो दुर्जयोंमें मन मैं हो ॥ ११ ॥ देवनको अध्यापक मैं हो मंत्रनमें प्रणव मैं हो अक्षरनमें आकार मैं हो छंदनमें गायत्री मैं हौं ॥ १२ ॥ सब देवतानमें इन्द्र मैं हो आदित्यनमें विष्णु मैं हो रुद्रनमें नीललोहित मैं हो ॥ १३ ॥ ब्रह्मऋषिनमें भृगु मैं हो, राजऋषिनमें मनु मैं हो, देवऋषिनमें नारद मैं हो, धेनुनमें कामधेनु मैं हो ॥ १४ ॥ सिद्धेश्वरनमें कपिलदेव मैं हो, पक्षीनमें गरुड मैं हो, प्रजापतिनमें दक्षप्रजापति मैं हो, पितरनमें अर्यमा मैं हो ॥ १५ ॥ हे उद्धव ! दैत्यनमें दैत्यनको राजा प्रह्लाद मैं हो, नक्षत्र औषधीनको पति प्रभु चंद्रमा मैं हो, यक्ष राक्षसनको प्रभु कुबेर मैंई हूं ॥ १६ ॥ गजेंद्रनमें ऐरावत, जलजंतुनमें प्रभुवरुण, प्रतापवंतनमें दीप्तमंतनमें सूर्य्य, मनुष्यनमें नराधिप राजा मैं हों ॥ १७ ॥ घोडानमें उच्चैःश्रवा, धातुनमें सुवर्ण, दंडकर्त्तानमें यम, सर्पनमें वासुकी मैं हो ॥ १८ ॥ नागेंद्रनमें अनंत शेषनाग मैं हो, शृंगीनमें और डाढवारेनमें प्रभु सिंह मैं हो, आश्रमनमें संन्यास मैं हो, हे निष्पाप ! वर्णनमें ब्राह्मण मैं हो ॥ १९ ॥ तीर्थनमें और प्रवाहनमें गंगा मैं हो, स्थिर जलनमें समुद्र मैं हूं, आयुधनमें धनुष मैं हूं, धनुषधारीनमें त्रिपुरके घाती महारुद्र मैं हो ॥ २० ॥ निवासस्थानमें सुमेरु, दुर्गम स्थलनमें हिमालय, वनस्पतीनमें अश्वत्थ, औषधिनमें जव मैं हौं ॥ २१ ॥ पुरोहितनमें वशिष्ठ, वेदार्थज्ञातानमें बृहस्पति मैं हों, सेनापतिनमें स्वामिकार्तिकेय, उत्तम मार्ग प्रवर्तकमें ब्रह्मा मैं हों ॥ २२ ॥ यज्ञमें ब्रह्मज्ञय व्रतमें हिंसारहित व्रत मैं हों, शोधकनमें वायु अग्नि सूर्य जल वाणी रूप शोधक मैं हों, ये सदा पवित्रकारी है ॥ २३ ॥ योगीनमें समाधि मैं हो जयको चाहेहै तिनमें नीति मोहिकू जानि, विवेकीनमें आत्मा अनात्माके विवेककारी विद्या मेरो रूप है पांच प्रकारके ख्यातिवादी है तिनमें यह यों होयहै अथवा यों है ऐसो विकल्प मैंही हो ॥ २४ ॥ स्त्रीनमें शतरूपा मैं हो पुरुषनमें स्वायंभुव मनु मैं हो मुनिनमें नारायण मुनि मैं हों ब्रह्मचारीनमें सनत्कुमार मैंहों ॥ २५ ॥ धर्मनमें अभयदान मेरो रूप है निर्भयस्थाननमें आत्मनिष्ठा मैं हों अतिरहस्यनमें प्रियवचन और मौन मैं हो मिथुन स्त्रीपुरुषनमें ब्रह्मा मैं हौं, जाके अर्धदेहते स्त्री और पुरुष भयेहैं ॥ २६ ॥ जे धर्ममें सावधान हैं तिनको संवत्सररूपी काल मैं हो, ऋतुनमें वसंत मैं हो, महीनानमें मार्गशीर मैं हो संपूर्ण नक्षत्रमें अभिजित मैं हो ॥ २७ ॥ युगनमें सतयुग,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धीरनमें असितदेवल मैं हो वेदके विभागकर्त्तानमें द्वैपायन व्यास मैं हो कविनमें काव्य शुक्र मेरो रूप है ॥ २८ ॥ प्राणीनकी उत्पत्ति प्रलयगति आगति विद्याअविद्याको जाननेवारे भयमान्के मध्य वासुदेव मैं हो, हे उद्धव ! वैष्णवनमें तुम मेरो रूप हो, किंपुरुषमें हनुमान् मैं हो विद्याधरनमें सुदर्शन मैंही हो ॥ २९ ॥ रत्नमें पद्मरागपुखराज मैं हो, अति सुंदर वस्तुनमें पद्मकोश मैं हो, दर्भ-जातिनमें कुश मैं हो, घृतनमें गौको घृत मैं हो ॥ ३० ॥ उद्यमवंतनमें लक्ष्मी मेरो रूप है, धूर्तनमें छल करिकै जो ग्रहण करिवो है सो मैं हूं, क्षमावंतनमें क्षमा मैं हो सत्यवंतनमें सत्य मैं हो ॥ ३१ ॥ बलवंतनमें इंद्रिय बल और उछाहबल मैं हो, भक्तनमें भक्तिरूप कर्म मैं हो नव मूर्ति भक्तनकी पूजाको प्रगट है तिन वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध नारायण हयग्रीव वाराह नृसिंह ब्रह्मामें आदिमूर्ति वासुदेव मैं हो ॥ ३२ ॥ गंधर्वनमें विश्वावसु मैं हो अप्सरानमें पूर्वचिती मैं हो पर्वतनमें स्थैर्य हिमालय मैं हो ॥ ३३ ॥ जलनमें उत्तम माधुर्य्यरस मेरो रूप है तेजस्वीनमें अग्नि मैं हो सूर्य्य चंद्र तारानमें कांति मैं हो आकाशमें परानाम शब्द मैं हो ॥ ३४ ॥ ब्रह्मण्यनमें बलि मैं हो वीरनमें अर्जुन मैं हूं हे उद्धव ! निश्चय करिके संपूर्ण भूतमात्रनकी स्थिति उत्पत्ति प्रलय मैं हों ॥ ३५ ॥ चरण वाणी गुदा हस्त लिंग इन पांच कर्मेंद्रियनके गमन वचन मलत्याग लेवो आनंद कर्म मैं हों, त्वचा नेत्र जिह्वा श्रवण नासिका ज्ञानेंद्रियनके स्पर्श चितवनि आस्वाद सुनिवो आघ्राण कर्म मैं हों, तिन तिन अर्थ ग्रहण करिवेकी शक्तिहू मैं हों ॥ ३६ ॥ विशेष कहिके अब सामान्यते सब विभूति कहे हैं शब्द स्पर्श रूप रस गंध ये पांच सूक्ष्ममात्रा हैं, अहंकार महत्तत्त्व ए सात प्रकृतिके विकार है पंच महाभूत और एकादश इंद्रिय ये सोलहे तत्त्व भये, एक पुरुष और प्रकृति दो ये भये, या भांति सब पचीस तत्त्व भये, रजोगुण सतोगुण तमोगुण ये तीन गुण इनतें आगे परब्रह्म सो सब मैंही हों, इनकी संख्या इनको लक्षणसहित ज्ञान और ताको फल तत्त्वको निश्चय सब मैंही हों ॥ ३७ ॥ मैंही सबको ईश्वर हों, सब जीवरूपहू मैं हों गुणीरूपहू मैं हों क्षेत्ररूप और क्षेत्रज्ञरूप मैंही हों, तातें मो विना जीव ईश्वर गुणी क्षेत्र क्षेत्रज्ञ इत्यादिक भाव कहूं नहीं है ॥ ३८ ॥ अहो तुम ऐसें संक्षेपतें कहा कहो हों अच्छी तरह विस्तारसों समझाइके कहो, ताकों उत्तर देयहैं कि पृथिवीके परमाणुकी संख्या कितनेउ कालकरिके मैंही करो हों यासों कहिवेको समर्थ हों, परन्तु मेरी विभूतिनकी संख्या न करीजाइ हैं, मैं अनेक कोटि ब्रह्मांडनकों सृजोहौं, जब ब्रह्माण्डनकी संख्या नहीं तब विनमें स्थित मेरी विभूतिनकी संख्या कौन करसकै है ॥ ३९ ॥ तथापि संक्षेपतें विशेष करि विभूति कहोहौं, जहां जहां तेज श्री कीर्ति ऐश्वर्य लज्जा दान मान और नेत्रनको आनंद भाग्य वीर्य क्षमा विज्ञान ये धर्म हैं, सो सब मेरो अंश है ॥ ४० ॥ ए विभूति संक्षेपतें मैंने तोसों कही हैं परि ये सब मनको विकार है परमार्थ रूप नहीं जैसे आकाशके फूल आदि वाणीमात्र करिके कहिये हैं वे तिनके तुल्य हैं ॥ ४१ ॥ सतोगुणयुक्त बुद्धि करिके वाणीको रोको मनको नेम करो प्राणनको रोको इंद्रियनकों निरोध करिके बुद्धिको रोको, तब फिरि संसार-मार्गमें न परोगे ॥ ४२ ॥ जो यह इंद्रियनको बुद्धिको नहीं संयम करे, तो दोष उपजे सो कहें हैं, जो बुद्धि करिकै भली भांति वाणी और मनको संयम नहीं करै तो ताको व्रत ज्ञान सब क्षीण होइ, जैसे कच्चे घडाको जल क्षणक्षणमें क्षीण होयहै ॥ ४३ ॥ तातें वचन मन प्राणकों जीते मेरे विषे तत्पर होई, बुद्धि मेरे विषें युक्त करे तब कृतकृत्य होई ॥ ४४ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तस्मान्मनोवचःप्राणान्नियच्छेन्मत्परायणः ॥
मद्भक्तियुक्तया बुद्ध्या ततः परिसमाप्यते ॥ ४४ ॥
इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कन्धे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय १७.

उद्धव उवाच-यस्त्वयाभिहितः पूर्वं धर्मस्त्वद्भक्तिलक्षणः ॥
वर्णाश्रमाचारवतां सर्वेषां द्विपदामपि ॥ १ ॥

अब सत्रहें अध्यायमें भक्ति लक्षण स्वधर्म पूछेंगे, तब हंसावतार करिके ब्रह्मचारी और गृहस्थीनके धर्म कहेंगे ॥ १ ॥ उद्धवजी पूछेहैं हे कमलदललोचन ! भक्तिलक्षण धर्म तुमने कह्यो पहिले तो स्वधर्म वर्णाश्रम आचारवंतनको और आचाररहित मनुष्यनको स्वधर्म करते जैसे तुम्हारे विषे भक्ति होइ सिद्धि होइ सो प्रकार मोसों तुम कहो ॥ १ ॥ २ ॥ हे प्रभो ! हे महाभुज ! हे श्रीमाधव ! पहिले तुमने जो धर्म हंसरूपकरि ब्रह्मासो कह्यो सो परम सुखरूप धर्म निश्चय करिके मोसों कहो ॥ ३ ॥ हे श नाशक ! बहुधा पहिले सिखायोहू धर्म बहुत कालकरि अब मनुष्य लोकमें नहीं होइगो ॥ ४ ॥ या धर्मको वक्ता कर्त्ता रक्षक तुम बिना और दूसरो भूमि विषे नहीं हैं, हे अच्युत ! हे प्रभो ! ब्रह्माहूकी सभामें तुम बिना और नहीं जहां मूर्तिवंत वेदादिक है ॥ ५ ॥ हे मधुसूदन ! सब धर्मके कार्यकर्त्ता सब धर्मके वक्ता रक्षक जब तुम या पृथिवीको छोडोंगे, तब नष्ट भये धर्मको कौन कहैगो ॥ ६ ॥ सो सब धर्मके ज्ञाता तुम हो, ताते हे प्रभो ! तुम्हारी भक्ति जा प्रकार करे सो धर्म जैसे जाको कर्त्तव्य है तैसे मोको कहो ॥ ७ ॥ शुकदेवजी राजा परीक्षित्सो कहैहैं हे राजन् ! या प्रकार भक्तनमें मुख्य उद्धवजीके पूछेते हरि अतिसंतुष्ट होई मनुष्यनको मरणधर्म दूरि करवेवारो सनातन धर्म कहत भये ॥ ८ ॥ भगवान् बोले हे उद्धव ! यह तुम्हारो प्रश्न धर्मरूप है, वर्णाश्रमनके आचारवंत पुरुषनको भक्ति आनंदकारी है, ताको मोते सुनो ॥ ९ ॥ पहिले सतयुगमें मनुष्यनको वर्ण हंसरूप हो, तब प्रजा सब जन्मही करिकै कृतकृत्य ही ताते कृतयुग नाम भयो, और कर्महूं कछु कर्त्तव्य हो सो कहै है ॥ १० ॥ तासमय प्रणव ओंकारही वेद हो, चारयो पाइनसो धर्म वृषभरूप धरे मैं हो, ये यज्ञादिक कर्म नहीं हे, एक तपस्याही ही सो इंद्रियनको स्थिरकरि एकाग्रचित्त करिके हंसरूप शुद्ध मेरो ध्यान करते हे ॥ ११ ॥ हे महाभाग ! जब त्रेतायुग भयो तब विराट् मेरे प्राणतें और हृदयते वेदत्रयी विद्या प्रगट भई, ताते होता अध्वर्यु उद्गाता सहित त्रिरूप यज्ञ प्रगट भयो, सो यज्ञ मेरो रूप है ॥ १२ ॥ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र ये चारों वर्ण विराट्स्वरूपके मुख बाहु जंघा चरणते प्रगट भये, और जो जाको स्वधर्म हो सो प्रगट भयो ॥ १३ ॥ गृहस्थको आश्रम जंघाते प्रगट भयो ब्रह्मचर्य्यको धर्म हृदयते भयो, वानप्रस्थ वक्षःस्थलतें भयो, संन्यास मस्तकतें प्रकट भयो ॥ १४ ॥ और सब वर्ण आश्रमके स्वभाव न्यारे न्यारे भये जिननें नीच भूमिमें जन्म पायो ताको नीच स्वभाव भयो जिननें उत्तम भूमिमें जन्म पायो ताको उत्तम स्वभाव भयो ॥ १५ ॥ शम दम तप शौच संतोष क्षमा शुद्धभाव मेरी भक्ति दया सत्य ये सब ब्राह्मणको स्वभाव है ॥ १६ ॥ तेज बल धैर्य्य शौर्य्य क्षमा उदारता उद्यम स्थैर्य ब्रह्मण्यता ऐश्वर्य यह क्षत्रियको स्वभाव है ॥ १७ ॥ आस्तिकता दान निर्दंभ ब्राह्मणकी सेवा द्रव्यसंग्रहमें अतृप्ति यह वैश्यको स्वभाव है ॥ १८ ॥ गऊनकी ब्राह्मणनकी देवतानकी सेवा निष्कपट करे, तातें जो पावें ताहीमें संतोष राखे यह शूद्रको

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्वभाव है ॥ १९ ॥ अशौच मिथ्यावाणी चोरी नास्तिकता वृथाकलह काम क्रोध तृष्णा ये सब नीच जातिके स्वभाव हैं ॥ २० ॥ हिंसा न करे सत्य बोले चोरी न करें काम क्रोध लोभी न ह्वेइ सबनको भलो चाहै यह सब जातिनको धर्म है ॥ २१ ॥ अब पहिले आश्रमधर्म कहैं हैं, तहां ब्रह्मचारी धर्म कहैं हैं, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यके गर्भतें ले सब संस्कार भये होय पीछें दूसरो जन्म गायत्री उपदेश होइ ता पीछें गुरुनके घर जाइ वसे, इंद्रियनको दम करे जब गुरु बुलावे तब वेद पढै ॥ २२ ॥ मेखला मृगचर्म दंड रुद्राक्षमाला यज्ञोपवीत कमंडलु जटा सब धारेरहैं, तेलस्नान न करे दंतधावन न करे वस्त्र क्षारसों न धोवे कुशनको धरे अरक्त आसन धरे ॥ २३ ॥ स्नान भोजन होम जप मूत्र पुरीष जब करे तब मौन रहे नख रोम और क्षौरकर्म न करावे और कांखके उपस्थके रोम दूरी न करावे ॥ २४ ॥ वीर्यस्खलन न करे आपु ब्रह्मचर्यको धरेरहैं, जो प्रमादतें स्वप्नमें वीर्य स्खलित भयो होइ तो जलविषें स्नान करिकै प्राणायाम करि गायत्रीको जप करे ॥ २५ ॥ अग्नि सूर्य आचार्य गौ विप्र गुरु वृद्ध देवतानको पवित्र और एकाग्रचित्तकरि उपासना करे और यतवाक् होके जप करे ॥ २६ ॥ गुरुनको मनुष्यबुद्धिकरिके न सेवे, मेरो रूप जानिके सेवन करे, कबहूं अवज्ञा न करे, क्यों कि संपूर्ण देवता गुरुनमें वसैहैं ॥ २७ ॥ सांझ सबेरे भिक्षा लेआवे, सो गुरुके आगे धरे औरहू जो पावे सो सब गुरुनको समर्पै, गुरुकी आज्ञा होय तो संयमकरि भोजन करे ॥ २८ ॥ जब गुरु कहूं चले तब संग चले जब सोमें तब पांव दाबे, जब बैठे तब सावधान अंजलि जोरि बहुत दूरि न बैठे आचार्यकी शुश्रूषा करे, अच्छी भांति सदा उपासना करे ॥ २९ ॥ या प्रकार गुरुकुलमें वसे विषयभोगरहित होइ, जब विद्या पूर्ण होइ तहां ताईं अखंडित व्रत धारे रहैं ॥ ३० ॥ यह तो ब्रह्मचारीके आश्रमको सामान्य धर्म कह्यो अब जो ब्रह्मलोककी जाइवेकी इच्छा करे, सो मेरी निष्ठासों ब्रह्मचर्य्य व्रत करे सो कहे हैं जो यह ब्रह्मचारी जहां मूर्ति धरें वेद रहेहैं ऐसें ब्रह्मलोकमें गयो चाहैं तौ गुरुहीके पास रहै वेदाध्ययन करे निष्काम ब्रह्मचर्य्य व्रत धरें अपनी देह गुरुनको समर्पै ॥ ३१ ॥ पूजाके स्थल कहे हैं अग्नि गुरु आत्मा सब प्राणिमात्रमें मेरी बुद्धि राखे मोते न्यारे करी न जाने ऐसी भांति ब्रह्मतेजयुक्त निष्पाप मेरी उपासना करे ॥ ३२ ॥ स्त्रीनको दर्शन, विनसों भाषण, परिहास न करे, जो कोई स्त्री पुरुष एकत्र संयुक्त व्हैके बैठे होंय तिनको न देखे, आपु गृहमें न रहे ॥ ३३ ॥ ये धर्म सब आश्रमनकों करनोहैं, शौच माटी करि हाथ पाउ धोवे, आचमन करे, स्नान, संध्या, शुद्धभाव तीर्थसेवन, तप भिक्षा करे पर स्पर्श काहूको न करे, जे असंभाष्य हैं तिन नीचनको त्याग करे ॥ ३४ ॥ हे कुलनंदन ! सब प्राणिमात्रमें मेरो भाव राखे, मन वचन इंद्रियनकों संयुक्त करे, यह नेम सब आश्रमनको है ॥ ३५ ॥ ऐसी भांति जो व्रत राखे सो अग्निकी भांति तेजस्वी होइ, सब कर्म दग्धकरि निर्मल होइ मेरो भक्त होइ ॥ ३६ ॥ यह निष्काम ब्रह्मचारीको मोक्षको प्रकार कह्यो जो सकाम होइ सो वेदार्थ विचारिकै ब्रह्मचर्य छोडी गृहस्थके आश्रममें आयो चाहैं तब गुरुकों दक्षिणा दे आज्ञा लेय तब अभ्यंगादिक करिकै मेखला दंड मौंजी छोडे (या कर्मको नाम समावर्त्तन कहै है) ॥ ३७ ॥ तहां दोऊ पक्ष कहै है जो विवाहकी इच्छा होय तौ गृहस्थ है जाय निष्काम होइ तौ वानप्रस्थ आश्रम लेय, अथवा संन्यास लेइ आश्रमतें आश्रममें जाइ आश्रम विना रहै ब्राह्मणमें श्रेष्ठ वा आश्रममें मेरी भक्ति करतो भयो विचरै पिछले आश्रमसों पूर्वमें न आवै अर्थात् संन्यासी गृहस्थी न हो ॥ ३८ ॥ जो गृहस्थ भयो चाहे सो समावर्त्तनकर्म करि विवाह करे गृहस्थी होइ लक्षणवंत अपने कुल समान कुलकी कन्या विवाहै,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रथम तो अपने वर्णकी व्याहे पीछे औरहू कियो चाहें तो अनुक्रमते और व्याहे ॥ ३९ ॥ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ये तीनि धर्म समान हैं, यज्ञ अध्ययन दान ये तीनों वर्णको समान है, परि प्रतिग्रह अध्यापन यज्ञ करामनो ये तीनों कर्म ब्राह्मणकोही करने उचित है ॥ ४० ॥ तहांऊ विशेषतः ब्राह्मणनको कहै है प्रतिग्रह लेवेमें जप यज्ञ तप तेज यशको नाश जाने और कृपणता आदि दोष देखे तब स्वामीते छोडे खेतमें परे कनसो आजीविका करे, अथवा और करिके आजीविका करै, यज्ञ करे करावे, अथवा पढावे ये दो वृत्ति करै जो इनहूमें हीनता दोष देखे तो ऊंछवृत्तिही करे ॥ ४१ ॥ ब्राह्मणको यह देह निश्चयकरिकै तपस्याके कष्ट सहनको कर्‌यो हैं, क्षुद्र कामको न करे तो परलोकमें अनंत सुख ब्राह्मणको प्राप्त होय है ॥ ४२ ॥ जो हाटमें अथवा क्षेत्रनमें अन्न पर्‌यो रहै, ताको बीनि लेकै निर्वाह करे ताहिकरि संतोष माने उत्तम निष्काम धर्म करे मेरे विषें चित्त राखे घरमें तो रहे पर कछु आसक्त न होइ, या प्रकार शांतिको पावे ॥ ४३ ॥ दरिद्रीको यह निर्वाह प्रकार कह्यो जो सद्रव्य है ताको प्रकार कहै है, जो ब्राह्मण दरिद्री होइ मेरी भक्ति विषे तत्पर होइ ताकों जे आपदाते उद्धार करें हे उद्धव ! तिन मनुष्यनको मैं थोरेही कालमें उद्धार करूंगो जैसे समुद्रमें बूडनेकों नाव पार लगावेहै, तैसे वे मनुष्य वा ब्राह्मणको निर्वाह करै है मैं संसाररूपी समुद्रते विन मनुष्यनकूं निश्चय पार करूंगो ॥ ४४ ॥ राजा होइ सो सब प्रजाको दुःखते उद्धार करे जैसे पिता पुत्रकों कष्टसै छुडावै है जैसे कीचडमें पडें हाथीको हाथी निकालेहै ऐसेंही धीर पुरुष राजाको विपत्तिनसैं अपनी आप रक्षा करनी उचित है ॥ ४५ ॥ या प्रकार राजा या लोकमें सब पाप दूरि करि सूर्य्यसम प्रकाशित विमानमें इंद्रके संग आनंद करे है ॥ ४६ ॥ यदि ब्राह्मण दरिद्रसौ दुःख पावता होइ सो वाणिज्य वृत्तिकरि आपदाको तरे, पर मदिरा और रसादिक न बेचे, तहांऊं जो निर्वाह न होइ तो क्षत्रिय वृत्ति करे, परंतु नीच सेवाकी वृत्ति कबहूं न करे, यह ब्राह्मणको धर्म कह्यो ॥ ४७ ॥ अब क्षत्रियको धर्म कहै हैं जो आपत्ति होइ तौ वैश्यवृत्ति करि जीवे, कै मृगया करिकै जीवे, वा ब्राह्मणको रूपकरि अध्यापन करि जीविका करे, पर नीच सेवन न करे ॥ ४८ ॥ वैश्यकूं जो आपदा होय तो शूद्रकी वृत्ति करैं तामेंऊ आपदा होवे तो कारीगरीक्रिया करि जीवे, जब अपनी आपदा निवृत्ति होइ तब नीच वृत्ति छोडिदेइ ॥ ४९ ॥ या प्रकार सबनकी वृत्ति कही फेरि गृहस्थकों आवश्यक पंचयज्ञ कर्तव्य कहैहैं ब्रह्मयज्ञ करिकै तौ ऋषिनको संतुष्ट करे, श्राद्धमें स्वधाकरि पितृयज्ञ करे होममें स्वाहाकरिकै देवतानको यज्ञ करें बलिदानकरि भूतयज्ञ करे अन्न जलसौ मनुष्यनकों तृप्त करे, यथाशक्ति करे सबनमें मेरी बुद्धि राखे, ये कर्म सब अवश्य कर्त्तव्य है ॥ ५० ॥ शक्तिके अनुसार कर्तव्यकर्म कहै हैं विना उद्यम अथवा उद्यमते पायो होइ, शुद्ध होइ वा धनकरके जैसे कुटुंबको पीडा न होइ तैसें न्याय करि यज्ञनकों करै ॥ ५१ ॥ कुटुंबमें आसक्त न होइ, तऊ मेरे भजनमें सावधान रहै, या संसार प्रपंचकों मिथ्या जाने स्वर्गहूको मिथ्या जाने आत्माहीकों एक सत्य करि जाने ॥ ५२ ॥ पुत्र स्त्री कुटुंबी बंधुको संग यात्रा करनवारेनके संगकी समान है जैसें निद्रामें स्वप्न देखेहै जागेते नष्ट होय है तैसे देहके नष्ट हैवेपै यह सब चले जाय हैं ॥ ५३ ॥ या प्रकार गृहमें विचारते अतिथिकी भांति रहे, यह मेरो घर है ऐसो अहंकार न राखे अहंता ममता छोडे तौ न बंधे ॥ ५४ ॥ गृहस्थके जो कर्म कहेहैं तिन करिकै मेरी पूजा करे मेरे विषें भक्ति करे, और गृहस्थाश्रममें रहे पीछे वानप्रस्थ ह्वैकै जो संतान हो तौ संन्यास लेइ ॥ ५५ ॥ जे केवल गृहमेंई आसक्त है, पुत्र वित्तमें प्रीतिकर स्त्रीके वश हैं, महादीन है, मूर्ख हैं सो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अहंता ममतासों बंधे हैं ॥ ५६ ॥ मेरी माता मेरो पिता वृद्ध है स्त्री छोटी है बालक हैं ये मोविना कैसे जीवेंगे दीन अनाथ दुःखी होइगे या प्रकार जो शोचैहैं ॥ ५७ ॥ सो ऐसी गृहकी आशा करिकै विक्षिप्त मन होइ मति बुद्धि मूढ होवेसों स्त्री पुत्रनको ध्यान करैहैं सो कबहूं तृप्त न हैकै मरेतें अति तामसी योनिमें परें हैं ॥ ५८ ॥

एवं गृहाशयाक्षिप्तहृदयो मूढधीरयम् ॥
अतृप्तस्ताननुध्यायन्मृतोऽन्धं विशते तमः ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कन्धे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय १८.

श्रीभगवानुवाच–वनं विविक्षुः पुत्रेषु भार्यां न्यस्य सहैव वा ॥
वन एव वसेच्छान्तस्तृतीयं भागमायुषः ॥ १ ॥

अब अठारहें अध्यायमें वानप्रस्थ और संन्यासीके धर्म कहैंगे, जो धर्मको अधिकारी है ताकों और अधिकारीनको विशेष कहेंगे ॥ पहिले वानप्रस्थके धर्म कहैं हैं जब आयुर्दाको तीसरों भाग आवे, पचास वर्ष उपरांत पिछत्तरि वर्ष पर्यंत तीसरो भाग है, तब पुत्रनको घर सौंपिके वनमें जाइरहे, स्त्री अपने संग आवे तो वनमें राखे नहीं तो पुत्रके पास रहे वनमें शांत होइ रहे ॥ १ ॥ वनमें कंद मूल फलनसों आत्माको जीवन करे वल्कलवस्त्र पहिरे, तृण और पत्ता मृगचर्मकों पहिरे, ये सब वनकी वस्तु अति पवित्र है ॥ २ ॥ केश रोम नख डाढी मूछ दूरि न करावे, इनको धोवेहू नहीं, और दंतनको न धोवे जलमें तीन काल स्नान करै भूमिमें शयन करे ॥ ३ ॥ ग्रीष्म ऋतुमें पंचाग्नि साधे, वर्षामें जलवृष्टि सहै, जाडेमें कंठ पर्यंत जलमें मग्न रहे, या प्रकार तप करै ॥ ४ ॥ अग्निसे पक्व होइ सो खाइ, समय करिकै पक्वफलादि खाइ, ओखरीमें कूटीहोइ पत्थरसों कूटी होइ सो खाइ दांतसो कुटी वस्तु खाइ ॥ ५ ॥ अपनी सब आजीविकाकी वस्तु आपु लेआवे, दूसरेने काउने लायके दीने फलादि वस्तुको लेइ नहीं और देशकालको बल देखे पहलो संग्रह न राखे, नयो अन्न पावै तब पुराणो त्याग करे ॥ ६ ॥ वनकी वस्तुके चरु पुरोडाशनकरि देवतानको यज्ञ करै, वनमें आश्रय करि रहे, परन्तु वेदोक्तपशुकरि मेरो यजन न करे ॥ ७ ॥ पूर्ववत् नाम गृहस्थाश्रमसरीखे अग्निहोत्र दर्शपूर्णमासेष्टि चातुर्मास्य यज्ञ इतनोही वेदने वनाश्रमीकूं अनुष्ठान कह्यो है ॥ ८ ॥ या प्रकार तपस्या करके क्लेशसों नाडी मात्र जाके शरीरमें बाकी रही नाम अतिही दुर्बल शरीर जाको है गयो ऐसे तपोमय मोको आराधन करि प्रथम ऋषिलोकते महर्लोक जाइ, पीछे क्रम करिकै मोको पावेगो ॥ ९ ॥ इतने कष्टकरि प्राप्त करि मोक्षफलदायक तपस्या तुच्छ काममें न लगावे, जो लगावे तो वातें मूर्ख कौन है ॥ १० ॥ या प्रकार सर्व धर्म निष्काम करे, तो अत्यंत मोक्ष होइ, आयुर्दाके तीसरे भागमें वैराग्य थोरोसो उपजे तो संन्यास लेइ जो शरीरकी सामर्थ पहेलेही घटे तब विरक्त होइरहे, संन्यास लेइ, जो विरक्तहू न होइसके ताको कहा करनो सो कहैंहैं जब यह धर्मके नेम करनको असमर्थ होइ वृद्ध अवस्था होइ तहां अग्निहोत्रकी

१ रे मन क्या अजहूं न विचारै ॥ जीवन जात छिनहिं छिन बीतो ज्ञान हिये नहिं धारै ॥ काम क्रोध लोभादिक शत्रु क्यों नहिं इन्हैं विसारै ॥ सुत वित नारि जिन्हैं जानत नित क्यों अस जन्म बिगारै ॥ धर्म भजन हरि काम अन्तमें आवै संकट टारै ॥ नित ज्वालाप्रसाद ध्यान धर बिगरी यही सुधारै ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अग्नि आपमें राखि चित्त मेरे विषें राखे अग्निमें प्रविष्ट होइ शरीर छोडे अर्थात् जब धर्माचरणकी असामर्थ्य होय तब जीवते शरीरको अग्निमें जरायदेय ॥ ११ ॥ विरक्तको कृत्य कहे हैं, जो विरक्त होइ सो कर्मनको फल और देवतानके लोकनको नरक करिजाने, जो जाने कि पूर्णवैराग्य है गयो है तब ये सब अग्निहोत्रादिक कर्म छोडि अच्छी भांति संन्यास लेय ॥ १२ ॥ संन्यासके आरंभके उपदेशके अनुसार मेरो पूजन करे, ऋत्विजनको सर्वस्व देकरि अग्निहोत्रको अपने प्राण विषें प्रविष्टकरि आपु निरपेक्ष होके संन्यास लेइ ॥ १३ ॥ ब्राह्मण जब संन्यास लेइ तब देवता स्त्री पुत्र रूप होइ वाको या कारण विघ्न करें हैं कि यह हमारी अवज्ञा करि आगे चल्यो चाहे है, तातें विघ्न करें हैं तथापि यह विन विघ्नको लांघिकरि संन्यास लेइ उनके विघ्न न मानें ॥ १४ ॥ अब संन्यास कहे हैं जो संन्यासी वस्त्र धारचो चाहे तो जितनेंसो कौपीन और एक वा कोपीनके ऊपर एक बिलाद चौरो वस्त्र ढकै इतनो वस्त्र धरे और कछु न धरे एक दण्ड धरे एक जलपात्र धरे और कछु न राखे ॥ १५ ॥ पृथ्वीमें देखिकरि पाँउ धरे, वस्त्रसों जल छानि पीवे, वचन सत्य बोले, और आचरण मनमें विचारि शुद्ध मन होइ सब करे ॥ १६ ॥ संन्यासीको तीनि दंड कहे हैं ते करे, वचनको दंड मौन रहनो, देहको दंड सकाम कर्म न करे, चित्तको दंड प्राणायामकरि स्थिर करे, हे उद्धव ! जाकें ये दंड नहीं सो बांसके तीन दंडनसो संन्यासी नहीं कहावौहै ॥ १७ ॥ आजीविका करिकै ब्राह्मण प्रतिग्रह याजन अध्ययन शिलौंछ वृत्ति यह चारी वर्ण होयहै तिनके घर भिक्षा करे निंदित होइ ताके घर भिक्षा न करे अर्थात् जबतक उत्तमवर्णकी भिक्षा मिले तबतक निकृष्ट वर्णके घरकी भिक्षा न करै यहां मोकों यह अलभ्य लाभ होइगो या उद्वेगते रहित सात घर भिक्षा करे, जो कछु पावें तामें संतोष मानें ॥ १८ ॥ भिक्षा लेके जहां जलाशय होइ तहां जाइ पांय धोवे आचमन करें मौन होइ मार्ज्जन करे, मार्गके दोषकी शुद्धि करे पीछे विभाग करी विष्णु ब्रह्मा सूर्य्य भूतनकों समर्पै, थोरो थोरो न्यारो न्यारो करिकै धरे बाकी सब भोजन करे ॥ १९ ॥ अब एक दूसरी क्रिया औरहू है कि सम्पूर्ण पृथ्वीमें फिरे संग काहूको न करे, जितेंद्रिय रहे, आत्माहीमें संतुष्ट धीर और समदृष्टि होइ ॥ २० ॥ एकांत निर्भयस्थलमें रहे मेरी भावना करि चित्त निर्मल राखे, आत्मामें मोमें भेद न देखे, अभेदसों एक आत्मा विचारे, विचारशील होइ ॥ २१ ॥ ज्ञाननिष्ठाकरि अपने बंध मोक्षको विचार करे (इंद्रियनके विक्षेपको बंध कहे हैं और इन्द्रियनके संयमको मोक्ष कहे हैं) ॥ २२ ॥ तातें इंद्रियनको निग्रह करिके मेरे विषे चित्त राखे, तुच्छ कामनानतें विरक्त रहे, तब मुनि अति उत्तम आत्मसुख पाइ सर्वत्र स्वेच्छापूर्वक विचरे ॥ २३ ॥ नगर ग्राम व्रजमें भिक्षाकों जाइ जहां कहूं बहुतसे मनुष्यनको संग आयो होइ जा यात्रीनकों संग हो तहां भिक्षाकों जाइ जे पुण्यदेश नदी पर्वत वन आश्रम हैं तहां पृथ्वीमें फिरे ॥ २४ ॥ वानप्रस्थके आश्रममें जाइ, नित्य भिक्षा करे वाको अन्न शुद्ध है, ताकरि सत्व शुद्ध होइ, तब वेगि सिद्धिकों पावे मोह घटे है ॥ २५ ॥ या दृश्यमान प्रपंचकौ सत्य न जानै क्योंकि दृश्यमान जो है सो सब नाशवान् है यासे उभय लोकके कर्तव्यको त्याग करै वामें चित्तकी आसक्ति न करै ॥ २६ ॥ जो यह जगत् और शरीर मन वचन प्राणसों युक्त है, अहंता ममताके धर्म यह आत्मा विषे सब मायामात्र है यथार्थ नहीं ऐसें युक्तिनकरि आत्मनिष्ठ होइ फिरि देहादिकको स्मरण न करे स्मरणसै वैराग्यमें प्रतिबंध होयहै ॥ २७ ॥ अब परमहंसधर्म कहे है, एक वैराग्यसों मुक्तिकी इच्छा राखनवारे पूर्ण ज्ञानी अथवा मुक्तिहू न चाहवेवारे मेरी दृढ भक्ति करवेवारे भक्त दंडादिककी आवश्यकतावारे आश्रम

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धर्मनकी आसक्ति त्यागकै जितनौ अपनेसौ है सकै वितनौ आश्रमसंबंधी धर्म कहै अत्यन्त वामें लिप्त न होय ॥ २८ ॥ विवेकी हैवेपैहू बालककी भांति फिरै मान अपमानसौ शून्य रहै अति चतुर हैं परन्तु जडकीसी भांति रहै, फलको अनुसंधान न राखें बुद्धिवान् हैं पर उन्मत्तकीसी भांति बोलै वेदके धर्मनमें निष्ठा है परन्तु कछु आचारको नेम लेय किंतु वृषकी तरह विचरे ॥२९॥ कर्महीं करनो यह मुख्य है ऐसें वेदके वादमें आसक्त न होइ, पाषंडी न होई केवल तर्कही सर्वत्र न करे, जहां प्रयोजन विना वाद होइ तहां काऊ पक्षको आश्रय न करै ॥ ३० ॥ यह धीर मनुष्य-नको उद्वेग न करे न मनुष्यतें आपु उद्विग्न होई, अपमान काहूको न करे, आपु अपमान सहे, या देहके लिये पशुकी भांति काहूसों न वैर करे ॥ ३१ ॥ सबनमें आत्मा एकही है, वैर कौनसों कीजे ऐसे समझिके निवृत्ति होइ, जैसें जलके पात्र अनेक होयहैं, तिनमें अनेक चंद्र प्रतिबिंब देखिये, पर चंद्रमा एकही है, तैसें आत्मा एकही है, अनंतरूप करिके भासे है ॥ ३२ ॥ और कदाचित् समय समयमें भक्ष न पावे तो खेद न करै पावे तौ हर्ष न करै, धैर्य राखै, प्राप्ति अप्राप्ति दैवाधीन है ॥ ३३ ॥ एक केवल आहारमात्रके लिये चेष्टा करै क्योंकि आहार तो अवश्य चाहिये जातें प्राण रहैं प्राणधारणको तौ प्रयोजन यह है तो तत्त्वको विचारै तौ मुक्त होइ ॥ ३४ ॥ ईश्वरइच्छासो जो कछु पावे सोइ भक्षण करे, भलो होइ अथवा बुरो होइ तैसेंही मुनिवस्त्र शय्या जैसी पावे तैसी लेइ ॥ ३५ ॥ जैसें मोकों कछु न चाहिये और जैसे मैं लीला करिकै सब धर्म करै हूं तैसें ज्ञानीहू आसक्ति छोडि शौच आचमन स्नान औरहू नेम करे विधिके वश ह्वैके न करे ज्ञान-दृष्टि राखिकै करे ॥ ३६ ॥ ज्ञानीको भेदकी प्रतीति नहीं होय है जो होय है वह पहलेही मेरे ज्ञानसो नष्ट है जाय है यद्यपि देह गिरवेतक कभू २ आहारादिकमें भेद प्रतीति देखि जाय है तौहू वह अयथार्थ रूप जानी भई देहके गिरवेपै मुक्ति है जाय है ॥ ३७ ॥ अब केवल वैराग्ययुक्त होइ ज्ञानकी इच्छा राखे ताको कर्त्तव्य कहैं हैं जो यह गृह पुत्र आदि सबकों दुःखरूप जानिकै वैराग्य-युक्त होइ, और ज्ञानकी इच्छा करतो होइ, मेरे धर्म कछु जानतो होइ सो उतम गुरुकों सेवे ॥ ३८ ॥ तहां ताई भक्ति करिकै गुरुनकी सेवा करे, जो श्रद्धायुक्त ह्वैके करे जो मोपर कृपा थोरी करैं हैं और परपै विशेष कृपा करैं है ऐसी मनमें न करे इन धर्मनसों आदरपूर्वक मोसों अभेद जानि गुरुकों भजे, जहां ताईं ब्रह्मज्ञान अतिशय करिकै दृढ होइ ॥ ३९ ॥ अब अधिकार विना संन्यास लेइ ताकी निंदा करे हैं जो इंद्रियनकों निग्रह न कियो होइ बुद्धि अति आसक्त होइ, ज्ञान वैराग्य करि रहित होइ, ऐसो जो संन्यास लेइ तो वह संन्यास जीविकाके अर्थ होइ तातें निंदित है ॥ ४० ॥ वह अधर्मी संन्यासी है, देवतानकी वंचना करी है जो गृहस्थ धर्ममें देवता अतिथि पूजन हो सो छोडिदियो, संन्यास धर्महू नहीं करै है तातें सबनकी अवज्ञाही करै है, ताकी वासना दग्ध नहीं भई, और आत्मरूप हृदयमें स्थित मेरीहू वंचना करै है; तातें या लोक परलोकसो नष्ट होयहैं ॥ ४१ ॥ चारोंहू आश्रमनके मुख्य धर्म कहे हैं संन्यासीको मुख्य धर्म शम और अहिंसा है वानप्रस्थको मुख्य धर्म तपस्या और विचार गृहस्थको मुख्य धर्म प्राणीमात्रकी दया रक्षा और देवतानको यज्ञ ब्रह्मचा-रीको मुख्यधर्म गुरुनकी सेवा है ॥ ४२ ॥ तहां गृहस्थको औरहू धर्म कहैं हैं ब्रह्मचर्य तप शौच संतोष प्राणिमात्रसों सुहृदताई और ऋतुके दिन स्त्री संग करे ये गृहस्थके धर्म हैं मेरी सेवा करनी यह सबको धर्म है ॥ ४३ ॥ हे उद्धव ! या प्रकारके स्वधर्म करिकै मेरो नित्य भजन करे अनन्य होइ भजे भाव राखे सो मेरी दृढ भक्ति शीघ्रही पावे ॥ ४४ ॥ हे उद्धव ! ऐसी अव्यभिचारिणी भक्तिकरि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सब लोकके महेश्वरको सबकी उत्पत्ति पालन प्रलयको कारण ब्रह्मरूप मोको प्राप्त हैजायहैं ॥ ४५ ॥ या भांति स्वधर्मकरि शुद्धचित्त हैवेसौ मेरो स्वरूप जाननेमें आवै है विज्ञान और वैराग्य युक्त हैकै शीघ्र मोकूं पावे है ॥ ४६ ॥ अब सबको निर्धार तात्पर्य कहैं हैं वर्ण आश्रमवंतको यह आचाररूप धर्मको फल पितृलोककी प्राप्ति करायवेवारो है यही धर्म मेरी भक्तिनसौं मोकों समर्पण करेगो परम फल मोक्षानंदकों पावे ॥ ४७ ॥ हे साधो ! यह सब धर्म मैंने तुमसों कह्यो जो तुमने मोसौं पूछो जो भक्त स्वधर्म संयुक्त होई करे तो परब्रह्म मोकों प्राप्त होय है ॥ ४८ ॥

एतत्तेऽभिहितं साधो भवान्पृच्छति यच्च माम् ॥
यथा स्वधर्मसंयुक्तो भक्तो मां समियात्परम् ॥ ४८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

श्रीभगवानुवाच—यो विद्याश्रुतसंपन्न आत्मवान्नानुमानिकः ॥
मायामात्रमिदं ज्ञात्वा ज्ञानं च मयि संन्यसेत् ॥ १ ॥

अब उन्नीसके अध्यायमें विरक्त होई, जाको आत्माको अनुभव होइ, ताकों ज्ञानादि कर्तव्य नहीं यह कहैं हैं ॥ जाको विद्या श्रवण करिकै आत्मतत्त्वको अनुभव पर्यंत ज्ञान प्राप्त भयो हैं, सो प्रपंचकी निवृत्तिको साधन मो विषें मायामात्र जानें तो और ज्ञानके साधन सब तजे, ताको विद्वान् संन्यास कहे हैं ॥ १ ॥ ज्ञानीको आत्मरूप मैंही प्रिय हों, वाकें और स्वार्थकौ हेतु कछु न होइ परस्वार्थको हेतु मोहिको चाहें तातें स्वर्ग अरु मोक्ष औरहू अर्थ मो विना वाको प्रिय नहीं, तातें वाकों न कछु कर्तव्य है पाइवो है ॥ २ ॥ तहां ज्ञानीको अनुभव प्रमाण बतामें हैं ज्ञान विज्ञान करिके जे सिद्धिकों प्राप्त भये हैं ते मेरे श्रेष्ठ स्थाननको जानें हैं तातें मोकों ज्ञानी अतिप्रिय है वे ज्ञानही करिकै मोको हृदयमें धरे हैं ॥३॥ तप तीर्थ जप दान और पवित्र साधन वा सिद्धिकौ नहीं करैं है जो सिद्धि ज्ञानके लेशकरिकै होय है ॥ ४ ॥ हे उद्धव ! तातें तुम ज्ञानरूपकों जानि ज्ञान विज्ञान युक्त होइ भक्ति करिकै मेरो भजन करो ॥५॥ ऐसी भांति मोकों अनेक प्राप्त भये सो कहैं हैं ज्ञान विज्ञान यज्ञ करिकै आप विषें मेरी पूजाकरि समस्त यज्ञनको पति उत्तम स्वरूप मोकों मुनि पावत भये ॥ ६ ॥ तातें तुमहू याही ज्ञानसों धर्ममें प्रवृत्त होउ यह कहैहैं हे उद्धव ! यह जो देह और इंद्रियनको विकार है यह सब माया हैं कछु परमार्थ वस्तु नहीं है, ये विकार देहते पहिलेहूं आत्माको नहीं हैं, पीछेहू नहीं मध्यमें है सो भ्रम जानिये, आत्मा शुद्ध है, जन्मादिकहू जो देखें जायहै यह देहहीको है कछु आत्माको नहीं है देहको जन्म मरण नहीं, देहहू मायारूप है, देहके आदि अंत जो ब्रह्म हैं सो मध्यमें रहैहैं जब देहही नहीं तब सब ब्रह्म होय हैं, तौ देहके जन्म मरण कहांसे होसक्ते हैं जब यथार्थसौं देहकेहू जन्म मरणादिक नहीं सब ब्रह्मरूप है तो ब्रह्म न जन्मे हैं न मरेहैं निर्विकार ब्रह्मही

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है यामें कहा कहनौ ॥ ७ ॥ उद्धवजी विशेषज्ञान पूछेहैं हे विश्वेश्वर ! हे विश्वमूर्ते ! निश्चय जैसे होइ तैसे वैराग्ययुक्त और विज्ञानयुक्त पुरातन विशुद्ध ज्ञान तुम कहो और जाको ब्रह्मादिकहू खोजेंहै ऐसे भक्तियोगको कहो ॥ ८ ॥ हे ईश्वर ! या घोर संसारमार्गमें तीनि संताप करि तप्त भयो मोको तुम्हारे चरणद्वंद्वरूप छत्रते और शरण नहीं दीखै है यह छत्र केवल छाया नहीं करेहै सब ओरतें अमृत वरसे है ॥ ९ ॥ हे महानुभाव ! कालसर्प करिकै कट्योहै या संसारकूपमें परयोहै क्षुद्र सुखनमें बहुत तृष्णा है ऐसे या जनकों कृपा करिकै उद्धार करो और मोक्षकों कहो, ऐसे अपने वचनरूपी अमृतसों सीचो ॥ १० ॥ जब इतनी विनती सुनी तब श्रीकृष्ण कहत भये हे उद्धव ! याही भांति पहिले राजायुधिष्ठिर हमारे सबनके सुनत धर्मात्मामें श्रेष्ठ भीष्म पितामहसों पूछतभये ॥ ११ ॥ भारतयुद्धके निवृत्तभये बंधुवधसों व्याकुल है राजा युधिष्ठिर पूछतभये ॥ १२ ॥ बहुत धर्मनकों सुन पीछे मोक्षधर्मनकों पूछते भीष्मके मुखते सुनें धर्म तुमसों कहोंहो, जो ज्ञान विज्ञान वैराग्य श्रद्धा भक्ति संयुक्त हैं ॥ १३ ॥ तहां प्रथम तौ ज्ञान कहें हैं प्रकृति और पुरुष और महत्तत्त्व अहंकार शब्द स्पर्श रूप रस गंध ये नौ तत्त्व भये और एकादश इंद्रिय पंचमहाभूत तीनि गुण ये अट्ठाईस सब मिलिकै तत्त्व भये वे सब प्राणीनमें व्याप्त हैं ज्ञानकरि देखै और इनहूं तत्त्वनमें एक परमात्माकों जो ज्ञान करिके व्याप्त देखे सो निश्चय मेरो ज्ञान है ॥ १४ ॥ जैसे ज्ञानके समय सब पदार्थ देखवेमें आवे हैं वैसे यह पदार्थ देखवेमें नहीं आवै केवल एक परमब्रह्म देखवेमें आवै वही ज्ञान विज्ञान कह्यो जायहै और उत्पत्ति प्रलय स्थिति हैंवैसो पदार्थ त्रिगुणात्मक नाशवान् है ऐसो देखै ॥ १५ ॥ तहां पूछेहैं जो सब ब्रह्मरूपही है तो जन्मादि क्यों होय हैं उत्पत्ति तथा दूसरे रूपकी प्राप्तिमें मध्यमें सबको आश्रय कारण हैंवैसो जो कार्य और कार्यांतरमें रहै है जो उत्पत्ति विषे व्याप्त होयहैं और इनके प्रलय विषें जो अवशेष रहैहै सो ब्रह्म है याहि देखै ॥ १६ ॥ अब विज्ञान कहिके वैराग्य कहेंहै, वेद, प्रत्यक्ष, परंपराकी प्रसिद्धि और अनुमानसों यह प्रपंच मिथ्या है अद्वैतही सत्य है जैसे यह दृश्य ब्रह्मसों भिन्न नहीं है कारण कि ब्रह्मसों उत्पन्न है जो जासों उत्पन्न है वह वासों भिन्न नहीं जैसे मिट्टीसों बनें घट मृत्तिकासो भिन्न नहीं या प्रकार भ्रमरूप द्वैत जानकै विकल्पसो विरक्त होनो चाहिये ॥ १७ ॥ कदाचित् स्वर्गादिकमें सुखभोग है तहांकी इच्छा होइ तो विरक्त कैसें होइ तहां कहेंहै ब्रह्मलोकपर्यंत स्वर्गादिकहूको सुख या लोककी भांति जो पंडित है सो दुःखरूप मिथ्या देखै क्यों कि यह विनाशी कर्मनके फल हैं यासों जिनको नाश नहीं देखो ऐसेहू जे स्वर्गादिक है तिने देखे जे ये लोक मनुष्यादि है तिनके समान झूठे देखै ॥ १८ ॥ अब वैराग्य कहिकै भक्ति कहेंहै हे निष्पाप उद्धव ! मैंने भक्तियोग पहिलेंहू तुमसो कह्यो, अब फिरि अपनी भक्तिको परम कारण प्रीतियुक्त तुमसों कहों हों ॥ १९ ॥ हे उद्धव ! प्रथम अमृतरूप मेरी कथामें श्रद्धा होइ कथाके श्रवणको आदर होइ सुनें पीछे निरंतर मेरो कीर्तन करे ॥ २० ॥ मेरी पूजामें तत्पर होइ सर्वांगकरिके नमस्कार करे आदर करिके मेरे भक्तकी अधिक पूजा करे सब प्राणीमात्रमें मेरी बुद्धि राखे ॥ २१ ॥

---

१ अपनी समान और बातोंमें तौ यह पुरुष देखे है पर आत्माके विचारमें नाय देखै, एक जिमीदार एक गांवके जिमीदार थे, सो कुछ घरमें खटपट भई तौ एक तोंबा लेकर बाबाजी बनकर चले गये मार्गमें कोई और साधू मिले, तब यह देखकर पूछने लगे क्योंजी तुम दो गांवके जिमीदार दीखोहो कबसे बाबाजी भये, तब वोह साधू बोले तुमने कैसे जानी, हम दो गांवके जिमीदार हैं तब इन्होंने अपना सब वृतान्त सुनाया तब साधूने कही कि यामें तो समानता देखि पर अब आत्मामें क्यों नहीं एकत्व देखते तब यह चुप हो चले गये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लौकिक कार्यनको मेरे निमित्त करे वचन करिकै मेरे गुणनको कहै मन मेरे रूपहीमें अर्पण करे सब कामनाकों त्यागकरे ॥ २२ ॥ मेरे निमित्त अर्थको त्यागकरे भोग और सुखको त्याग करे विषयभोग न करे यज्ञ दान होम जप तप मेरे लिये करे ॥ २३ ॥ हे उद्धव ! या प्रकार धर्मसहित जो मनुष्य मेरे विषें आत्मा निवेदन करे है, विन मनुष्यनको प्रेमलक्षणा भक्ति उपजे है तब विनको करनो कछु नहीं रहै ॥ २४ ॥ जब शांत सतोगुण करिके बढ्यो चित्त मो विषें लगायो, तब और सब ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य आपुहीतें प्रगट होय है ॥ २५ ॥ और यही चित्त जब गृहकुटुम्बादिमें आसक्त होयहै तब इंद्रियनके द्वारा विषयनमें भ्रमण करै है जासों अधर्म अज्ञान अनुरक्तता कुभाग्यता प्राप्त होय हैं ॥ २६ ॥ धर्म सोई जो मेरी भक्ति करे, ज्ञान सोई जासों आत्मरूप दीखैं इंद्रियनके धर्मनमें आसक्त न होनो वैराग्य और अणिमादिककौ होनो ऐश्वर्य है ॥ २७ ॥ उद्धवजी बोले हे शत्रुनाशक ! हे कृष्ण ! हे प्रभो ! संयम नेम कितने प्रकारके हैं, शम दम किनको कहते हैं क्षमा धैर्य्य कहाहै ॥ २८ ॥ दान, तप, शौर्य, सत्य, ऋत, त्याग, धन, इष्ट, यज्ञ, दक्षिणा कहा है ॥ २९ ॥ हे श्रीमंत ! पुरुषको बहुत भाग्य लाभ कहा है, परम विद्या कहाहै, लज्जा, श्री, दुःख, सुख कहाहै ॥ ३० ॥ पंडित कौन है, मूर्ख कौन हैं, मार्ग उन्मार्ग कौन हैं, स्वर्ग नरक कौन, बंधु, गृह कौन ॥ ३१ ॥ धनी, दरिद्री कौन, कृपण, ईश्वर कौन हे साधुनके पति ! यह प्रश्न मोसों कहो ॥ ३२ ॥ श्रीकृष्ण उत्तर देय हैं हे उद्धव ! जीवमात्रकी हिंसा न करे सत्य बोले मनहूं करिकै पराई वस्तुको न चुरावे आसक्ति कहूं न राखे लज्जा असंचय धर्ममें विश्वास ब्रह्मचर्य्य मौन स्थैर्य क्षमा अभय ये बारहू संयम है ॥ ३३ ॥ शौच दो भांतिके हैं अन्तःकरणकी शुद्धि और बाह्यशुद्धि शौच तप जप होम श्रद्धा अतिथि और मेरी पूजा तीर्थयात्रा परोपकार संतोष आचार्यसेवा ये बारह नेम हैं ॥ ३४ ॥ जो ये संयम नेम नित्य करै तौ जो कछु चाहे सो सब पूर्ण होइहै ॥ ३५ ॥ अब शम दम कहैं है मो विषे बुद्धि स्थिर होइ सो शम है केवल शांतिही शम नहीं कहावै है इंद्रियनको संयम दम है चोर दुष्टको मारनो दम नहीं, दुःखको सहिवो क्षमा है भार बहुत सहनो क्षमा नहीं जिह्वा और उपस्थ वेग सहे सो धैर्य उद्वेग मनको न उपजे इतनोई धीर्ज नहीं ॥ ३६ ॥ प्राणीमात्रसों द्रोह त्यागनेकों दान कहै हैं धनको त्याग दान नहीं कामको त्याग तप कहावै है कृच्छ्र चांद्रायण तप नहीं स्वभावकों जीते सो शूर, पराक्रम शौर्य नहीं, ब्रह्मको दर्शन सत्य है ॥ ३७ ॥ पंडितननें सत्य और प्रिय वाणीको ऋत कहो है कर्मनकी अनासक्तिको शौच और त्यागको संन्यास कह्यौ हैं ॥ ३८ ॥ मनुष्यकों श्रेष्ठ धन धर्म है, पशु पुत्रादिक धन नहीं, परमेश्वरही यज्ञ है मेरी बुद्धि करि यज्ञ करै कर्म बुद्धि करि न करे, मेरे ज्ञानको उपदेशही वा यज्ञकी दक्षिणा है सुवर्ण आदि धन दक्षिणा नहीं, प्राणायामकरि मनकों वश करे सोई परमबल है ॥ ३९ ॥ मेरो ऐश्वर्य्य सौभाग्य है, कछु लौकिक संपत्ति सौभाग्य नहीं मेरी भक्ति पावे सोई परमलाभ है धनको लाभ लाभ नहीं, आत्मामें भेदबुद्धि दूरि होइ सो विद्या है, केवल ज्ञानमात्र विद्या नहीं, कुत्सित कर्मनको त्याग लज्जा है सो लज्जा है केवल लाज लज्जा नहीं ॥ ४० ॥ गुण भले होइ सो शोभा है कछु आभूषण शोभा नहीं दुःख सुखको स्मरण करे सोई सुख है, भोग सुख नहीं, बंधुमोक्षको जानें सो पंडित, केवल शास्त्र पढे होइ सो पंडित नहीं भोग सुखकी इच्छा दुःख है, अग्निदाहादिक दुःख नहीं ॥ ४१ ॥ देहादिकमें जाके अहंकार है सो मूर्ख है, जा मार्ग करि मोकों पावे वह उत्तममार्ग है, कांटेनतें रहित सन्मार्ग नहीं, जहां मन चंचल होइ संसारमें फिरि प्रवृत्त होइ सोऊ मार्ग कुत्सित मार्ग कहिये चोरादिकन करि व्याप्त उत्पथ मार्ग

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं सत्व गुण अधिक होइ राजस तामस गुण न होइ सोइ स्वर्ग है, इंद्रलोक स्वर्ग नहीं ॥ ४२ ॥ तमोगुण अधिक होइ सोई नरक है, और नरक नहीं, और बंधु सब बंधु नहीं परमबंधु गुरु है, सो गुरु मैं हौं मनुष्योंको शरीर गृह है और घर नहीं जो गुणकरि संपन्न सो धनी और धनी नहीं ॥४३॥ जो सदा असंतोष राखे सो दरिद्री है, धनहीन दरिद्री नहीं, जो इंद्रिय जीति न सके सो कृपण है दीन कृपण नहीं विषयनमें आसक्त नहीं हैकै जो स्वाधीन है सो ईश्वर है राजा स्वाधीन नहीं जो गुणमें आसक्त है सो परवश है ॥ ४४ ॥ हे उद्धव ! ये तुम्हारे प्रश्न सब तुमको अच्छी तरह समझाये अब बहुत कहा वर्णन करें गुण दोषको लक्षण इतनोही है जो सबनके गुण दोष विचारते रहै यही दोष है और न गुण देखे न दोष देखे सो गुण है ॥ ४५ ॥

एत उद्धव ते प्रश्नाः सर्वे साधु निरूपिताः ॥
किं वर्णितेन बहुना लक्षणं गुणदोषयोः ॥
गुणदोषदृशिर्दोषो गुणस्तूभयवर्जितः ॥ ४५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायामेकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे एकोनविंशतितमोऽध्यायः १९॥

अध्याय २०.

उद्धव उवाच–विधिश्च प्रतिषेधश्च निगमो हीश्वरस्य ते ॥
अवेक्षतेऽरविन्दाक्ष गुणदोषं च कर्मणाम् ॥ १ ॥

वीसके अध्यायमें भक्तिज्ञानक्रिया तीनि योग कहैंगे अधिकारीनके विभागतें गुण दोषनकी व्यवस्था करेंगे ॥ उद्धव पूछेहैं हे श्रीकृष्ण ! विधिनिषेध वेद कहैहै सो वे तुम्हारी आज्ञा है तुम सबनके ईश्वर हो आपकी आज्ञासौं वेद कर्मनके पुण्य पापनकों देखें हैं ॥ १ ॥ विन धर्मनके अधिकारी उत्तम मध्यम दीन तीनि प्रकारके हैं, वे वर्ण आश्रय न्यारे हैं, तिनको गुण दोष सब वेद देखे है ॥ २ ॥ अब तुम कहो हो के गुण छोडिकै धर्ममें प्रवृत्त होइ सो गुण दोष भेददृष्टि विना विधिनिषेध तुम्हारो वचन मनुष्यनकों कैसें फलदायक होइ ॥ ३ ॥ हे ईश्वर ! पितर देवता मनुष्यनकों तुम्हारो वेदही मोक्ष और स्वर्गादिकनमें श्रेष्ठ प्रमाण है और साध्य साधन विषें प्रमाण है ॥ ४ ॥ और गुणदोषके भेदको ज्ञान तुम्हारे वेदही है आपुते नहीं मानी है गुण दोष दृष्टि न राखे, यह अब तुमही कहोहो, तातें भ्रम होयहै ॥ ५ ॥ श्रीकृष्ण बोले हे उद्धव ! मनुष्यनके कल्याणकों वेदमें भेदसो तीनि योग मैंनें कहेहैं ज्ञान, कर्म, भक्ति इनतें परें और उपाय कहूं नहीं ॥ ६ ॥ इनके अधिकारी न्यारे न्यारे है एकही नहीं, सो कहैं हैं इनमें जो कर्मनते विरक्त है फल कछु न चाहें ताको ज्ञान योग कह्यो है ॥ ७ ॥ यदृच्छा करि मेरी कथामें जाकों श्रद्धा भई होई अति विरक्तहूं न होइ, अति आसक्तहूं न होइ ताकूं भक्तियोग सिद्धिदाता होइ ॥ ८ ॥ प्रथम कर्म योगकों कहें हैं, कर्म तहां ताईं करें जहां ताईं वैराग्य न उपजै, और मेरी कथा श्रवणादिकमें श्रद्धा न उपजै ॥ ९ ॥ अब वैराग्य करिकै जैसें ज्ञान होइ सोई

---

१ यामें यह प्रश्न है कि हे प्रभो ! जो तुमने कही कि गुणमें गुण और दोषमें दोष माननो याको दोष कहै है और इन गुणदोषनमें गुणदोष बुद्धि न राखनो ये गुण है सो उद्धव कहै है कि जब आपने यह कही तब फिर सब विधिनिषेध शास्त्र व्यर्थ भयो जायहै और वो विधि निषेध वेदमें कही है और वेद तुमारो मुख है गुणदोष दृष्टिके विना वेद व्यर्थ होयहै और वेद तुमारो मुख है फिर आप ये कैसे कहै है सो या मेरे संदेहको दूर करो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रकार कहे हैं, हे उद्धव ! अपने स्वधर्ममें स्थित होइ, फलकी इच्छा छोडि निष्काम यज्ञ करे तब वाको न तो स्वर्ग होइ न नरक होइ जो और आचरण न करै ॥१०॥ या लोकमें स्वधर्ममें स्थित होइ; निषेधको त्याग करै, तब मन शुद्ध होइ तब विशुद्ध ज्ञानको पावे अथवा यदृच्छा करि मेरी भक्ति पावे ॥ ११ ॥ ज्ञान भक्तिको यह मनुष्यदेह करेहैं ताते मनुष्यदेह उत्तम है, सो कहे हैं ज्यो स्वर्गमें हैं और नरकमें है वेहू या मनुष्यदेहकी बांछा करे हैं जा देहते ज्ञान भक्ति करिके मोक्ष होयहै, और नरकहूमें शरीर हैते मोक्षसाधक नहीं ॥ १२ ॥ चतुर मनुष्य होइ तौ स्वर्गकी गति न चाहे, जैसें नरककी गति न चाहे है; और यह लोकहू न चाहे, जाते देहके आवेशते प्रमाद होइ है ॥ १३ ॥ मरणाधर्माहू या देहको अर्थ सिद्धिको दाता जानिकै मृत्युतें पहिले सावधान मनुष्य मोक्षको यतन करे ॥ १४ ॥ यहां दृष्टांत कहेहैं जैसें पक्षीने एक रूखपे घर कियों ताको निर्दयी पुरुष आइके वृक्षकूं काटे ताकों काटत जानिकै अनासक्त हो करिके घर छोडिदेई तो जीवे ॥ १५ ॥ तैसें अहोरात्र करिके काल आयुर्बलको काटै है यह जानि भय करिकै कांपते या देहकी आसक्ति छोडि आत्माकों जानिकै सब कृत्य छोडि शांतचित्त होइ रहै ॥ १६ ॥ ऐसी देहहूकों जानिकै जो सावधान नहीं होइ तिनकी निंदा करैं हैं, यह मनुष्यदेह अत्यंत दुर्लभ है, अनेक जन्मनके पुण्य करिकै पाई है, साधन करिवेकों समर्थ है संसारसमुद्र तरणको नाव है, गुरु नाव चलामनहारे हैं, मैंने अनुकूल पवन करिकै प्रेरित करी है ऐसो साधनको पाय जो यह प्राणी संसारसमुद्रकों न तरे सो आत्मघाती है ॥ १७ ॥ यह कर्मयोग जो विरक्त न होइ ताकों कह्यो अब जो विरक्त होइ ताकों ज्ञान उपजे पहिले जो कछु कर्त्तव्य है सो प्रकार कहे है, जब कर्मनमें उद्वेग होइ वैराग्य उपजै, तब इंद्रियनकों निग्रह करे, स्थिरतासो आत्माके अभ्यास करिकै मनको निग्रह करे तब यह योगी होइ ॥ १८ ॥ मनकों निग्रह करे तोहू जब चंचल होइ तब सावधान होइ कछु मनकी कांक्षा पूर्ण करिकै फेरि मनकों वश करे ॥ १९ ॥ मनकी धारणा छोडे नहीं, प्राणवायु जीतें, इंद्रिय जीतें बुद्धि सतोगुणी करिकै मन अपने वश करे ॥ २० ॥ यह मनको निग्रह निश्चय उत्तम योग है जैसे सवार दमन करने योग्य घोडेकी गतिको अपनी इच्छानुसार चाहतौभयौ पहलै वाकों इच्छानुसार जान देयहै पीछे लगामको थामकै चलाव है ऐसेही शनैः मनको वश करै ॥ २१ ॥ सब तत्त्वनकों विवेक करी प्रकृतिते उत्पत्तिको क्रम विचारै, यह पृथिवी आदि क्रमसों प्रतिलोमतें लीन होय हैं ऐसो ध्यान करतौ रहै, जहांलों चित्त प्रसन्न होइ ॥ २२ ॥ जब चित्तमें वैराग्य उपजे, तब गुरुके बताये धर्मकों विचार करै, तब क्रमसों यह चित्त देहको अभिमान छोडे है ॥ २३ ॥ संयम नेम आदि योग धारण, आत्मविचार और मेरी प्रतिमाकी सेवा, इन उपायन करिकै योग्य परमात्माकों मनतें स्मरण करे, और मेरे स्मरणकौ करै यासों अधिक और उपाय नहीं हैं ॥ २४ ॥ जो प्रमादतें योगी कछु निंदित कर्म करैं, वह योगी योगाभ्यासही करि अपनें पाप दूरि करे, याको कछु और प्रायश्चित्त नहीं ॥ २५ ॥ अपने अधिकारमें रहनोही गुण हैं, प्रवृत्तिमार्ग स्वभावहीते अशुद्ध है, तथापि जो सहसा न छोड्यो जाइ तौ प्रवृत्ति संगके छुडाइवेकी इच्छा करिकै गुण दोष कहि इन कर्मनके संकोचद्वारा निवृत्ति कीजे योगीको स्वाभाविक वृत्ति न होवेसों प्रायश्चित्तकी आवश्यकता नहीं ॥ २६ ॥ मेरी कथामें श्रद्धा कर्मनमें वैराग्य होवेपै और काम्य कर्मनकों दुःखरूप जानेपैहू विनको परित्यागन है सकै तौ ॥ २७ ॥ तब श्रद्धायुक्त होकै दृढनिश्चयसों प्रीतिसों मेरा भजन करै, विषयभोग करै तौ आसक्त न होइ विनकी निंदा करतौ रहै अब भजनप्रकार कहे हैं ॥ २८ ॥ पहिले मैंने भक्तियोग तुमसों कह्यो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं ता रीतिसों निरंतर मुनि मेरो भजन करें, तब वाके हृदयमें मेरो वास हैवेसों वाकी सब कामना नष्ट है जाय है ॥ २९ ॥ सबके आत्मरूप जब मोको देखै है तब उसके हृदयकी गांठि छूटिजाय है सब संदेह मिटकै सब कर्म क्षीण हैजाय है ॥ ३० ॥ तातें मेरी भक्ति संयुक्त मेरे विषें चित्त युक्त करवेवारे योगीको न तौ ज्ञान न वैराग्य कल्याणको साधन हैं किन्तु भक्तियोगही कल्याणको साधन हैं ॥ ३१ ॥ जो फल कर्म तप ज्ञान वैराग्य योग दान धर्म और तीर्थ यात्रादिके साधनसौ होय है ॥ ३२ ॥ सो सब मेरी भक्तिही करिकै होय है, मेरो भक्त सुखसों स्वर्ग और वैकुंठ मेरो धामकों पावै हैं, मेरो भक्त कछु चाहना नहीं करे हैं ॥ ३३ ॥ हे उद्धव ! जे बुद्धिवंत ह तिनकी मेरेई विषें प्रीति है, वे परम साधु हैं तिनकों मैं अनेक विभव देउहूं, और वे कछुक नहीं चाहें ॥ ३४ ॥ मेरी निरपेक्ष भक्तिही परम कल्याणरूप है, तामें मेरी निष्कामकी भक्ति निष्काम भक्तकों होय है ॥ ३५ ॥ जे मेरे विषें एकांत भक्त राग द्वेषरहित समचित्त हैं, बुद्धिसौ परे ईश्वरकों प्राप्त है, तिनकों विधि निषेधके गुण दोषसौ उत्पन्न भए पुण्यपाप नहीं लगे ॥ ३६ ॥ याप्रकार मेरे कहे मार्गमें जे रहेहैं, वे परम कल्याणरूप मेरे धामकों प्राप्त होंय है मेरे धामको परब्रह्म कहै है ॥ ३७ ॥

एवमेतान्मयादिष्टाननुतिष्ठन्ति मे पथः ॥
क्षेमं विन्दन्ति मत्स्थानं यद्ब्रह्म परमं विदुः ॥ ३७ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय २१.

श्रीभगवानुवाच-य एतान्मत्पथो हित्वा भक्तिज्ञानक्रियात्मकान् ॥
क्षुद्रान्कामांश्चलैः प्राणैर्जुषन्तः संसरन्ति ते ॥ १ ॥

इकीसके अध्यायमें क्रिया ज्ञान भक्ति अधिकारतें रहित सकाम बहिर्मुखनकी निंदा करें हैं ॥ श्रीकृष्ण कहहैं हे उद्धव ! जो मेरे बताये मार्ग भक्ति ज्ञान निष्कामकर्मकों छोडि चंचल प्राणनसौ तुच्छ कामनानकों सेवन करैहै वे संसारको प्राप्त होयहै ॥ १ ॥ जा प्रकार अग्निकौ किसीको ताप होना और किसीकों न होना संभव नहीं उन्ही कर्मोंसै किसीके गुण और किसीके दोष होना संभव नहीं यह संदेह करनेकी आवश्यकता नहीं कारण कि निज निज अधिकारमें निष्ठा राखवेको गुण और निष्ठा न राखवेको दोष कहते हैं गुण दोषके विचारकौ यही निश्चय है ॥ २ ॥ यह शुद्ध है लीजिये यह अशुद्ध है न लीजिये, ऐसे संदेहसौ स्वाभाविक प्रवृत्तिकों निवृत्ति करनेके निमित्त समान वस्तुनमेंहू वेदमें शुद्धि और अशुद्धिको विधान कियोहै और याहीके निमित्त विनमें गुण दोष मानेहैं इन्हीसौ शुभ पुण्य और पाप माने हैं ॥ ३ ॥ हे निष्पाप ! धर्मके धारण करनेवारे पुरुषनकों मैंनेही मनु आदि रूपसौ यह आचार दिखायो है यह शुद्धि और अशुद्धि धर्म व्यवहार और निर्वाहके निमित्त गुण और दोष रूपसौ प्रतिपादन करी है धर्मके निमित्त शुद्धिसौ धर्म अशुद्धिसौ अधर्म व्यवहारमें आशौचादिसौं अशुद्धहू राजा व्यवहारमें न्याय करवेको शुद्ध और दूसरे कार्यनमें

---

१ ऊधो भज मोहि सकल विहाय ॥ या जगको सुपना करि जानो प्रलय माहिं नस जाय ॥ आदि अन्त और मध्य एकरस रहे सो सत्य कहाय ॥ सोई भजन योग्य भक्तनके ताहि जपे चितलाय ॥ एक अखंडरूप अविनाशी पालत जग उपजाय ॥ नरतन पाय न सुमिरे जिन हरि सो पाछे पछिताय ॥ भजन होसकै तौ अबही करि पल छिन बीतो जाय ॥ नित ज्वालाप्रसाद भक्तकी करते रहैं सहाय ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अशुद्ध है आपदामें निर्वाह मात्र पदार्थ लैवेसौ शुद्ध और अधिक लेवेसौ अशुद्ध होय है ॥ ४ ॥ यद्यपि यह सब वस्तु समान हैं क्यौं कि पृथिवी जल वायु आकाश ब्रह्मा आदि जड पर्यंत सबनके शरीरके कारण पंच महाभूत हैं और आत्माहू सर्व एकही है ॥ ५ ॥ हे उद्धव ! समानहूं देह विषें वेदनें नाम रूप वर्ण आश्रम सब इन जीवनके स्वार्थ सिद्धिके निमित्त पृथक् कियेहै ॥ ६ ॥ केवल देहमेंही विभाग नहीं है किन्तु देश काल आदि संपूर्ण वस्तुनमें कर्मके संकोच निमित्त गुण दोषको विधान कियो हैं अब शुद्धिअशुद्धिको विषय कहै है ॥ ७ ॥ जा देशमें कारो मृग न होइ सो देश अशुद्ध हैं और सत्पात्ररहित देश, मार्जनरहित देश ऊसरदेश ये अशुद्ध ह, जहां ब्राह्मणमें भक्ति न होइ सो परम अशुद्ध है, अंग वंग कलिंगादिकहू देश अशुद्ध हैं जहां कारो मृग होय सत्पात्र होय सो अशुद्धहू देश शुभ है देशकी शुद्धि अशुद्धि कहि काल समयकी शुद्धि कहैं हैं ॥ ८ ॥ जो काल द्रव्यकी संपत्तिसौ कर्मके योग्य है और जो स्वतःही प्रातः पूर्वाह्न मध्याह्न काल कर्मके योग्य है सो काल तो कर्मकों शुद्ध है, जो सूतकादिक काल कर्मके योग्य नहीं हैं, यद्यपि काल सब एक है तथापि यह भेद कियो है कर्मके अयोग्यकाल अशुद्ध है ॥ ९ ॥ अब द्रव्यकी शुद्धि कहेहैं द्रव्यकी शुद्धि अशुद्धि द्रव्य वचन संस्कार बडेपन और छोटेपनसौ मानी जाय है द्रव्यकों शुद्ध जल करै है, मूत्रादिक अशुद्ध करैहै कि ब्राह्मणको वचन प्रमाण है वे कहें यह वस्तु शुद्ध है तो वह शुद्धही है अशुद्ध कहै तो अशुद्धही है, पुष्प सूंघिलेइ तो अशुद्ध होजाइ, प्रोक्षणादिक संस्कारकरि शुद्धि होइ, कालसौ जलकी शुद्धता दश दिन है जायवेसौ नये जलकी शुद्धि चातुर्मास्यमें तीन दिनसो शुद्धता बडेपनसौ चांडालादिकके स्पर्शतें तलाउको जल बहुत भरचो होइ तौ चाहें कोऊ भरो वह जल शुद्ध है, छोटेपनसें घटादिको जल चाण्डालादिके स्पर्शसै अशुद्ध है जायहै ॥ १० ॥ अब शक्ति अशक्तिसो शुद्धाशुद्धि कहै है सूर्यग्रहणमें जाकों शक्ति होइ ताकों सूतक लगें, स्नान दानकरि शुद्धि होइ, और जो अशक्त है ताको नहीं बुद्धिसे पुत्र जन्मादि आशौचकी दश दिनके भीतर जायवेसो अशुद्धि उपरान्त शुद्धि समृद्धि हैवेके कारण जीर्णवस्त्र मलिन वस्त्र श्रीमंतकों अशुद्ध हैं दरिद्रीको शुद्ध है सूतकको अन्न समर्थको तो अशुद्ध है, असमर्थकों शुद्ध है यह द्रव्य वचन आदि द्रव्यकी अशुद्धिसो आत्माको पातक लगावें हैं सो देशकाल अवस्थाके अनुसारही लगाते हैं निर्भय देशमें यही पापदायक चौरादिके उपद्रवयुक्त देशमें नहीं युवा अवस्थामैं यही पापदायक वृद्धावस्थामें और बालकपनमें शुद्ध हैं ॥ ११ ॥ याप्रकार द्रव्यकी शुद्धि द्रव्यसों कही वचन शुद्धि एकही भांति है, द्रव्यकी शुद्धि बहुत प्रकार है सो कहें हैं, अन्न, काष्ठ, हाथीदांत, सूत्र, रस तेल घृत आदि, सुवर्ण और मार्गकी कीच कलस ईंट यह सब काल वायु अग्नि जलसे यथायोग्य शुद्ध हैं, अर्थात् धान्यकी शुद्धि वायुसो यज्ञपात्र तथा काष्ठकी जलसो हाथीदांत आदिकी कालसो तेल घृत सुवर्णादिकी अग्निसो तंतुनकी जलसों चामकी काल और रंगसो पार्थिव विकार ईंट आदिको कालसो शुद्धि होयहै कहूं ये सब मिलिकैं शुद्धि करे, और कबहूं अकेले करैं, तहांऊं जो काक और चांडाल आदि नीचजातिको स्पर्श भयो होइ ताके देश अवस्था देखिकरि विचार करे तब शुद्ध होई ॥ १२ ॥ औरहू शुद्धि कहैं हैं पीढा पात्र वस्त्र आदिमें जो अपवित्र वस्तु लेपकी लगजाय तौ काष्ठ छिलायेतें शुद्ध होइ, द्रव्यकी शुद्धि राखे और खटाईसे धोवे तब शुद्धि होइ वस्त्र खारसों गंध और लेप छूटवेतक धोवे तौ शुद्ध होय जब दुर्गंध न रहै स्वच्छ है जाय तब शुद्ध है ॥ १३ ॥ कर्ताकी शुद्धि कहैं हैं स्नान दान तप अवस्था बाल्य कौमार वीर्यसंस्कार गायत्री उपदेश कर्मसंध्या दीक्षादिकसा कर्मसों

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ब्राह्मण शुद्ध होइ तब कर्म करे, और आत्माकी शुद्धि मेरे स्मरणसो होयहै, और प्रकारसो नहीं ब्राह्मणादिके देहकी शुद्धि इन संस्कारनते होइहै और प्रकार नहीं देहकी शुद्धि इन संस्कारनतें होइ सोऊ व्यवहारके निमित्तही है वाके निमित्त विहित कर्म करे ॥ १४ ॥ अब मंत्रकी शुद्धि कहैं हैं, श्रेष्ठ गुरुके मुखते सुने तापीछे ता मंत्रको अच्छी तरह ज्ञान होइ तौ मंत्रको शुद्धि होइ जो कछु कर्म भले या बुरे करै सो सब मोको समर्पे, यह कर्म शुद्धि है, देश काल द्रव्य कर्त्ता मंत्र कर्म इन छे पदार्थनके शुद्ध हैवेसो धर्म शुद्धि होय है यही अशुद्ध होय तौ अधर्म होय है ॥ १५ ॥ यह गुण दोषको विभाग यथार्थ नहीं है कहीं आपदामें प्रतिग्रह लेवेसो दोष गुण है जाय है धन हेवेसो निषेध होनेके कारण कहीं दोष है और कहीं दोषहू विधिसो गुण होयहै जैसे कुटुम्ब त्याग दोष है परन्तु विरक्तको कुटुम्ब त्याग दोष नहीं गुणदोषके कहवेवारे शास्त्र गुणदोषके बाधक है ॥ १६ ॥ दोषभी कहूं दोष नहीं होय तहां दृष्टांत बतामें हैं जो सुरापानसो पतित नहीं है विन पतिनको सुरापान दोष नहीं होता क्योंकि वे जातिकर्मसे पहलेही पतित हैं; तिनको सुरापान अधिक पातक कहा करेगो, और जे धर्मशील हैं तिनको वाको संसर्गही पातक है, संन्यासीकों संग बांधेहै, सोई गृहस्थको गुण है, कारण कि गृहस्थीनको संग करनो होय है जैसो कि वेदमें कह्यो है "ऋतुके दिन स्त्रीसंग करे" परन्तु जो पहलेही पृथ्वीपर सोयोहै वह नीचे नहीं गिरें हे ॥ १७ ॥ या प्रकार गुणदोषको विचार प्रवृत्ति मार्गमें है निवृत्त भये कछु नहीं सो कहें है, वेदको यही तात्पर्य्य नहीं है कि जो सदा प्रवृत्तिमेंही रहैं वेद प्रवृत्ति छुडायकै निवृत्ति बतामेंहै तातें जा जा विषयते निवृत्त भयो ता ताते मुक्त होइ, यह धर्म मनुष्यनकों शुभकारी है, शोक मोह भयको दूरिकरे हैं ॥ १८ ॥ प्रवृत्ति मार्ग अनर्थ रूप है सो कहै है, मनुष्यकों विषयमें इंद्रिनको अभ्यास होइ, तब आसक्ति उपजैं, आसक्तिते काम होइ कामहीते कलह होइ ॥ १९ ॥ कलहतें अति असह्य क्रोध होइ क्रोधसो तम अज्ञान होयहै, अज्ञानसों पुरुषकी चेतना जो सब देहमें व्यापिरही है सो शीघ्र नष्ट हो जाय है ॥ २० ॥ हे साधो ! जब वह चेतनासो रहित भयो तब यह जीव असाधुके तुल्य हैके मूर्च्छित होय है मूर्च्छाके भये मृतक समान हेवेसो याके पुरुषार्थकी हानि होय हैं ॥ २१ ॥ जो मृतक समान है ताको स्वरूप कहै ह, जो विषयनमें आसक्त हैवेके कारण आत्माको तथा औरकोहू नहीं जाने है सो वृक्षनके जीविकाकी नाईं वृथा जीवे है, धोंकनीकी भांति श्वास लेतेही मृतक समान हैं ॥ २२ ॥ यह जो प्रवृत्तिमार्गकी आज्ञा है, सो वेदने यह कर्मनके फल रुचि दिखानेके निमित्त वर्णन किये हैं जैसे रोगीको औषधी रुचि उपजायकै पिवावे है, तात्पर्य आरोग्यतासो है, सदा औषधी सेवनसो नहीं यही प्रकार जबतक ज्ञान होय तबतक कर्म करवेकी वेद आज्ञा करै है, सब काल कर्म करवेसों तात्पर्य नहीं ॥ २३ ॥ मनुष्य स्वभावहीतें पशुआदि विषें और इंद्रिय बल वीर्यनके विषें पुत्रादिकनविषें आसक्तचित्त होय है सो सब आपकों अनर्थकों हेतु है ॥ २४ ॥ तातें स्वार्थ अर्थात् परमसुखको जो नहीं जाने हैं वे अनेक पापरूप मार्गनकी तिन तिन योनिनमें भ्रमें हैं पीछे जडरूप वृक्ष आदि योनीमें प्रविष्ट होतेहैं विनको फिर वेदउ नहीं धर्मनमें क्यों प्रवृत्त करे जाते अनिष्ट होइ, ताहीमें वेद प्रवृत्त करे तौ हितकारी होइ ॥ २५ ॥ कर्ममार्गी कैसे फल बतावें हैं तहां कहें है, या प्रकार वेदको अभिप्राय जाने विना कुबद्धिही यह फल बतामें हैं, और जे वेदके तात्पर्यको जानेहै वे व्यास आदि ऋषि ऐसो नहीं कहै है ॥ २६ ॥ कामी, कृपण, लोभी पुष्परूपी स्वर्गादि सुखरूप अवान्तर फलको मुख्य मानने-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वारे अग्निहोत्रादिसो मुग्ध धूम्रयुक्त चित्तवारे अपने सुखदायक लोकको नहीं जाते हैं ॥ २७ ॥ हे उद्धव ! जासो यह जगत् प्रगट है, और जो जगद्रूप है ऐसे मो परमात्माको वे हृदयमें स्थित नहीं जाने है कर्मरूप शस्त्रनसों पशुहिंसा करके प्राण कष्ट करें हैं जैसे कुहरेसों कछु नहीं दिखै है तैसे अज्ञानसो विनके नेत्र व्याप्त है जो समीप स्थित मोको नहीं जाने है ॥ २८ ॥ याही कारणते मेरे वाक्यरूप वेदके गूढ तात्पर्यको विषयी नहीं जानते हैं मेरो मत यह है कि यदि मांस भक्षणके अर्थ हिंसाकी विधिमें वेदकी प्रीति होती तो वेद यज्ञमेंही मांस भक्षणकी विधि नहीं करतो किन्तु सदाके निमित्त आज्ञा देय मनुष्यनकी मांसमें अधिक प्रवृत्ति देख विनको यासो छुडायवेके निमित्त कि एक संग तो छुट नहीं सकैहै याही कारण छुडायवेको उपाय प्रतिपादन करै है कि पशुको यज्ञमेंही मारनो अन्यस्थलमें नहीं वामेंहू अमुक पशु मारनो यासो वेदको अभिप्राय पशुहिंसासो निवृत्तही करवेको है ॥ २९ ॥ हिंसा विषें जिनके व्यवहार हैं, अपने विषय भोग निमित्त पशुनकी हिंसा करिकै देवता, पितर भूतपतिनकों जो पूजे हैं वे दुष्ट हैं ॥ ३० ॥ स्वप्नके समान काननको सुखदायक परलोककी और या लोककी कामनानकों मनमें संकल्प करिकै अपने धनको सकाम कर्मनमें व्यय करें हैं और दोनों लोकसो भ्रष्ट है जायहैं जैसे बनियां दुस्तर समुद्रके लंघन करवेमें बहुत धन प्राप्तिकी इच्छा कर अपने संचित किये धनको छोड दोउ ठोरतें भ्रष्ट होयहै ॥ ३१ ॥ वे रजोगुण सतोगुण तमोगुणतें युक्त हैके जैसे इन्द्रादिक देवनकी सेवा करैहै तैसे मेरी सेवा नहीं करेहैं ॥ ३२ ॥ मनमें अनेक मनोरथ करें हैं कि यहां यज्ञ करि देवतानकों संतोष करिकै स्वर्गमें जाइ विहार करेंगे और फिर ये भोगिकै अंतमें यहां आइ बडे बडे गृह बडे कुलमें स्थित्त होंइगे ॥ ३३ ॥ या भांति फूली बातनतें चंचलचित्त मनुष्य मान अहंकार भरे गृहमें अनम्र रहै हैं, तिनको मेरी वार्ता नहीं रुचती है ॥ ३४ ॥ तातें वेदको तात्पर्य ब्रह्मविषें है निवृत्तिहीको बतावे हैं यद्यपि कर्ममार्ग ज्ञानमार्ग उपासनामार्ग भिन्न भिन्न कहै हैं तथापि तात्पर्य ब्रह्महीमें है मंत्र और मंत्रनके द्रष्टा ऋषि परोक्षरीतिसोही पदार्थको प्रतिपादन करै हैं यासो ब्रह्म आत्मविषय गूढ हैवेके कारण प्रकाशित नहीं होय है, परोक्षरीतिसो कहिवेको कारण यह है मोको परोक्ष प्रिय है जिनके अन्तःकरण शुद्ध है वेही ये जान सके है दूसरे नहीं दूसरोंके जाननेमें हित तो दूर रहें किंतु कर्मभ्रष्ट हैवेकी आपत्ति आयपडै हैं ॥३५॥ तहां कहै हैं जैमिनी आदि ऋषि वेदके ज्ञाता है, ये ऐसें क्यों नहीं कहै हैं ताते कहै हैं, हे उद्धव ! वेदको तत्त्व मों विना कोउ नहीं जानें है, शब्दब्रह्म अतिदुर्ज्ञेय है, वही सूक्ष्म और स्थूल भेदसो दो प्रकारको है सूक्ष्मको तो स्वरूप जाननोहू अति कठिन है कारण कि प्रथम तो वह परा नामक प्राणमय है दूसरो पश्यंती नाम मनोमय है तीसरो मध्यमें नाम इन्द्रियमय है देहमें यह तीनों स्वरूप देहमें सूक्ष्मरूपसो रहै है या कारण इनको जाननो कठिन है चौथो वैखरी स्वरूप है जासो मनुष्य बोलै हैं समष्टि प्राणमय वेद ब्रह्मको देशकालसो परिच्छेद न हैवेके कारण वाके पारको अन्त नहीं हैं जा प्रकार यह वेद ब्रह्म शब्दसो जाननो कठिन है वही प्रकार अर्थसोहू यह महागंभीर समुद्रकी समान अवगाह करवेको दुःसाध्य है ॥ ३६ ॥ अनंत शक्ति व्यापकरूप अंतर्यामी ब्रह्मसो यह नादवंत वाणी रूप कमलनालमें तंतुकी समान सब प्राणीमात्रमें प्रतीत होय है या स्वरूपको विद्वान् विचार करते हैं ॥ ३७ ॥ जैसें मकरी हृदयसो निकासि मुखद्वारते जालको प्रकट करेहै प्राणोपाधि हिरण्यगर्भ प्रभु भगवान् वेदमूर्ति अमृतमय नादवंत स्पर्शादिकनको कर्त्ता मंता करिके हृदयाकाशते वैखरी नाम वाणीको उपजायकै जाय हैं जो बृहती वा वखरी नामक वाणी हृदयमें प्राप्त अति

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सूक्ष्म प्रणवते प्रकटभये स्पर्श स्वर ऊष्मा अंतस्थ करिकै शोभित ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ अनेक वैदिक लौकिक भाषानकरिकैं फैली उत्तरोत्तर चारि चारि अक्षर जिनमें बढे ऐसे गायत्री आदि छंदनकरि युक्त पारावाररहित है वह प्राण वासों आपही प्रगट करके उपसंहार करैं हैं ॥४०॥ तिन विषें कितेक छंदनको दिखामें है गायत्री उष्णिक् अनुष्टुप् बृहती पंक्ति त्रिष्टुप् जगती अत्यष्टि अतिजगती अतिविराट् इत्यादिक छंद हैं ॥ ४१ ॥ चार चार अक्षर बढायवैसों बनै हैं यह वेदवाणी कर्मकाण्डोंमें विधिवाक्यौंसै क्या प्रतिपादन करती है और मंत्रवाक्यौंसै देवताकाण्डमें किसका प्रकाश करती है ज्ञानकाण्डमें यही वेदवाणी काहेको अनुवाद करकै विकल्प बतावे हैं या प्रकार वेदवाणीके तात्पर्यको मेरे सिवाय जानवेकी कहीकी सामर्थ्य नहीं ॥ ४२ ॥ वेदवाणी देवतारूप मेरोही प्रतिपादन करै है यज्ञरूप मेरोही प्रतिपादन करै है और (वासो आकाश उत्पन्न भयो) इत्यादि वाक्यनसों विकल्प कथन कर पीछे निराकरण करै हैं सोहू मेरोही स्वरूप है सब वेदको तात्पर्य यही है कि परमेश्वर परमार्थ रूप है भेद मायामात्र है या प्रकार जो ओंकारमें अर्थ है वही सब काण्डनमें है जैसे अंकुराकार सशाखा प्रशाखा फलपुष्पादि सबमें आजाय हैं ॥ ४३ ॥

मां विधत्तेऽभिधत्ते मां विकल्प्यापोह्यते त्वहम् ॥
एतावान्सर्ववेदार्थः शब्द आस्थाय मां भिदाम् ॥
मायामात्रमनूद्यान्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति ॥ ४३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अध्याय २२.

उद्धव उवाच-कति तत्त्वानि विश्वेश संख्यातान्यृषिभिः प्रभो ॥
नवैकादश पञ्च त्रीण्यात्थ त्वमिह शुश्रुम ॥ १ ॥

बाईसके अध्यायमें तत्त्वनकी संख्याके अविरोधको और प्रकृतिपुरुषको विवेक और जन्ममरणको प्रकार कहैहैं ॥ उद्धव पूछे हैं हे विश्वेश्वर ! हे प्रभो ! कितने एक महात्मा तत्वनकी संख्यामें विवाद करै है विनने अपने शास्त्रनमें तत्वनकी संख्या पृथक् २ करीहै आप सब मिलायकै तत्वनकी संख्या अट्ठाइस कहै हैं यह आपके मुखसों सुनो है ॥ १॥ कोऊ छब्बीस कहेहैं, कोऊ सात कहेहैं, कोऊ नौ कहेहैं, कोऊ छै कहेहैं, कोऊ चारि कहेहैं, कोई ग्यारह कहेहैं, कोई सत्रह कहै हैं, कोई सोलहे कहेहैं, कोऊ तेरह कहैहैं ॥ २ ॥ ऋषीश्वर जा प्रयोजनके अर्थ इतनी संख्या भिन्न भिन्न कहैहैं हे चिरंजीव ! यह मोय समझाकै कहो ॥ ३ ॥ श्रीकृष्णजी बोले ब्राह्मण जैसे कहैहै सो युक्त है, ये तत्त्व सर्वत्र है मेरी मायाको अंगीकार करिकैं कहै हैं, जा मायामें काहू प्रकारको कहनो अशक्य नहीं है ॥ ४ ॥ तुम जैसे कहो यह तैसैं नहीं जो मैं कहोंहों सत्य है या प्रकार विन तत्वनके मूल कारणमें जो ब्राह्मणनको विवाद है वह यथार्थ रूपसो देखो जाय तो अपने २ स्वभावके अनुसार परिणत हैवेवारे मायाके सत्वादिगुणही विवादमें कारण हैं ॥ ५ ॥ जिन शक्तिनके क्षोभते विवाद कर्तानको भेद आश्रय भयो है जब शम प्राप्त होवे सो भेद दूरि होतो भेद जायवेके पीछे विवाद शांत है जायहै ॥ ६ ॥ हे पुरुषनमें श्रेष्ठ ! तत्वनके परस्पर अनुप्रवेशतें कार्य्यकारणरूप तत्वनकी संख्या वक्ताकी इच्छानुसार हो सके है ॥७॥ अब अनुप्रवेशको

१ कसे मपर्यन्त स्पर्श वर्ण हैं, स्वर अकारादि सोलह हैं, यरलव अन्तस्थ हैं, शषसह ऊष्माण हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहे हैं एकही तत्त्वमें सब तत्त्व कारणमें अथवा कार्यमें प्रविष्ट दीखे है जैसे मृत्तिकामें घट घटमें मृत्तिका अन्योन्य प्रविष्ट है ॥ ८ ॥ इन तत्वनको कार्य्यकारण भाव और न्यून आदिक संख्याको वादीनके मध्य जैसें कहिवेकी इच्छासो जैसे कि जिह्वा जा प्रकार प्रवृत्त होयहै वह वैसेही सिद्ध करसकै है हम या सबको संभव जानें हैं ॥ ९ ॥ जीव ईश्वर जो चैतन्यरूप हैं विनको भेद अभेद मानवेके कारणकूं कहो हूं जो जीव अनादि कालसो अविद्यासो संयुक्त है वाको अपने स्वरूपको ज्ञान स्वयं नहीं है सकै है वाको ज्ञान दाता सर्वज्ञ ईश्वर पृथक् है ऐसो जानकै जीव ईश्वरमें भेद मानवेवारेनके मतमें चौवीस तत्व पच्चीसवो जीव और छव्वीसवो ईश्वर तत्व है ॥ १० ॥ तत्वसंख्या विषें भेद कल्पना व्यर्थ है, क्योंकि जीव ईश्वर दोनोंनके चैतन्य हैंवेसो विनमें कुछ भेद नहीं और ऐसो मानवेवारे पच्चीस तत्व कहे हैं ज्ञान प्रकृतिको गुण हैं तातें प्रकृतिमें गिनो है यह एक पक्ष है ॥ ११ ॥ अहो ज्ञान तो जीवको धर्म है प्रकृतिको गुण कैसें हैं (तहां कहैं है) तीनो गुणनकी समान अवस्था प्रकृति है, गुण प्रकृतिहीके है आत्माके नहीं, सत्व रज तम गुण उत्पत्ति पालन प्रलयके कारण हैं ॥ १२ ॥ सत्वमय ज्ञान प्रकृतिको गुण है, कर्म रजोगुणको गुण है अज्ञान तमोगुणको गुण है, और स्वभाव ये महत्तत्वको स्वरूप है काल ईश्वरको स्वरूप यासो काल स्वभाव भिन्न तत्व नहीं है मैंने जो अट्ठाईस तत्व कहे हैं विनमें पूर्वोक्त पच्चीस और तीन गुण यह सब मिलायके अट्ठाईस होय हैं ॥ १३ ॥ पुरुष, प्रकृति, महत्तत्व, अहंकार, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथिवी ये मैंने नौ तत्व कहे हैं ॥ १४ ॥ कर्ण, त्वचा, नेत्र, नासिका, जिह्वा, ये पांच ज्ञानेन्द्रिय हैं वाणी, हाथ, पांव, उपस्थ, गुदा, ये पांच कर्मेंद्रिय हैं हे उद्धव ! ज्ञान और कर्म रूप मन यह ग्यारह तत्व है ॥ १५ ॥ शब्द, स्पर्श, रस, गंध, रूप ये पांच ज्ञानेन्द्रियके विषय हैं, गति वचन मलत्याग ग्रहण आनंद ये पांच कर्मेन्द्रियके फल हैं, ये सब इंद्रिनके फल हैं, भिन्न नहीं यासो अट्ठाईसके भीतर हैं तत्व नहीं हैं ॥ १६ ॥ या विश्वकी आदि विषें कार्य्य कारणरूपिणी प्रकृति सत्वादि गुणसो या विश्वकी उत्पत्ति अंत आदि अवस्था धरेहै, निर्विकार पुरुष केवल साक्षी भयो देखेहै, यातें विकारयुक्त प्रकृतितें पुरुष न्यारो है ॥ १७ ॥ प्रकृतितें उपजे महत्तत्वादिक धातु विकारकों पायके पुरुषके चितवनसों बल पाय महत्तत्वादिक परस्पर मिलि प्रकृतिकों आश्रय करि ब्रह्मांडरूप कार्य्यकों उपजामें है यासो संघातकों प्राप्त हैकै विनके उत्पन्न किये देहादिक पदार्थ विन्हीके अन्तर्भूत है जाय हैं यासो देहादिक पृथक् तत्व नहीं है ॥ १८ ॥ किन्हीके मतमें आकाश, वायु, तेज, जल, पृथिवी ये पांच पदार्थ और द्रष्टा जीव, आकाशादि पदार्थकों और जीवकों आधार आत्मा, ये सात तत्व हैं या मतमें प्रकृति महत्तत्व और अहंकार इन कारण तत्वनको आकाशादिमें अन्तर्भाव मानोहै इन्ही सातोनसो देह इन्द्रियादिकी उत्पत्ति मानीहै ॥ १९ ॥ जिनके मतमें छः तत्व हैं वे पांच तो पंचमहाभूत और छठे परमात्माको माने हैं या मतमें परमात्मा अपनेसों उत्पन्न भये भूतनसो जगत्को रचकै वामें प्रविष्ट है यासो सब पदार्थनको परमात्मामें अंतर्भाव है ॥ २० ॥ जिनके मतमें चार तत्व हैं विनमें आत्मा और आत्मासो प्रादुर्भूत भये तेज जल पृथ्वी यही चार तत्व हैं इनसो सब जगत् उत्पन्न भयो है सब कार्यको वामें अन्तर्भाव है ॥ २१ ॥ सत्रह तत्वके मत विषेमें पंच महाभूत पांच शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध पांच ज्ञानेंद्रिय एक मन सत्रहों आत्मा ॥ २२ ॥ सोलह तत्वके मत विषे आत्माही मन कह्यो है और तेरहके मतविषे पंचमहाभूत और पांच ज्ञानेंद्रिय एक मन जीवात्मा और परमात्मा ये तेरह है ॥ २३ ॥ ग्यारहेंके मत विषें पंचमहाभूत और पांच ज्ञानेंद्रिय एक आत्मा नौके पक्षमें पांच

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

महाभूत प्रकृति महत्तत्व अहंकार और पुरुष ये कहे है ॥ २४ ॥ या प्रकार ऋषियननें तत्वनकी पृथक् २ संख्या कही है यह सब प्रकृतिसों पुरुषको भिन्न जतायवेंको है यह सब यथार्थ है कारण कि विद्वान्को कह्यो और न्यायसिद्ध है विद्वान् कहा नहीं कहसकैहैं ॥ २५ ॥ उद्धवजी बोले हे कृष्ण ! प्रकृति और पुरुष जिनमें एक जड और एक चैतन्य है यद्यपि यह स्वभावसोंही भिन्न हैं तथापि परस्परको त्याग करते विनकी प्रीति नहीं होय है यासों भेद नहीं देखो जायहै ॥ २६ ॥ हे पंकजलोचन ! आत्मा देहमें भासै है देह आत्माको ग्रहणकरके प्रतीत होयहैं में हू या प्रकार दोनोनको अभेद प्रकाशवैसो देहको आत्मासों भेद नहीं देखो जायहै हे सर्वज्ञ ! मेरे या संदेहको युक्तिके वचननसों दूर करो ॥ २७ ॥ तुम्हारी कृपासोंही संसारी जीवनको ज्ञान होयहैं तुम्हारी मायासोंही अज्ञान भयो है आपके सिवाय आपकी मायाकी गति कोई नहीं जाने हैं ॥ २८ ॥ श्रीभगवान् बोले देह और आत्मामें बहुत विलक्षणता है गुणनके क्षोभसों होवेवारो यह देह तो विकारी है आत्मा विकाररहित है ॥ २९ ॥ हे उद्धव ! मेरी गुणमयी मायाने अनेक भांति भेद और भेदके ज्ञान रचे है यद्यपि या देहमें अनेक भेद है तथापि तीनि प्रकारके कहे हैं, एक अध्यात्मरूप एक अधिदैवरूप एक अधिभूतरूप ॥३०॥ दृष्टि अध्यात्म है और दर्शन अधिभूत नेत्रगोलक विषे प्रविष्ट सूर्य्यको अंश अधिदैव है नेत्रनकरिकै रूप जानिये सो नेत्रनकी प्रवृत्ति प्रेरणावारे देवता विना नहीं होय है याते अधिष्ठात्री देवतासों नेत्रनकी प्रवृत्ति, तातें रूपज्ञान होय हैं, ये ऐसे तीनों २ परस्पर सिद्ध होय हैं, जो आकाश विषे सूर्य है, सो आपुतें सिद्ध है, यातें आत्मा अध्यात्मादिकनको कारण है, याते भिन्न हैं, अपनें आपतें सिद्ध प्रकाश करिकै परस्पर प्रकाश करवेवारेनकेहू प्रकाशक है जैसें नेत्रमें तीनि प्रकार हैं, ऐसे त्वचा अध्यात्म स्पर्श अधिभूत वायु अधिदैव, श्रवण अध्यात्म, शब्द अधिभूत दिशा अधिदैव, जिह्वा अध्यात्म रस अधिभूत, वरुण अधिदैव श्रवण अध्यात्म, गंध अधिभूत, अश्विनीकुमार अधिदैव, चित्त अध्यात्म, जाको चित्त करि जानियें ऐसों अधिभूत वासुदेव अधिदैव, मन अध्यात्म जाकों मन कीजे सो अधिभूत चंद्रमा अधिदैव, बुद्धि अध्यात्म जो जानिये ऐसेही अधिभूत ब्रह्मा, अधिदैव अहंकार, अध्यात्म अहंकार करिके जो कीजे सो अधिभूत रुद्र अधिदैव ॥ ३१ ॥ अहंकार तीनि प्रकारको है, सात्विक राजस तामस गुणके क्षोभकर्त्ता कालतें और प्रकृतिके मूल महत्तत्वतें उत्पन्न भये विकार हैं यही अधिदैव अध्यात्म अधिभूतरूपी मोहसों देहादिके विकल्पको कारण है जब देहादि अहंकार मिटजाय तब आत्माकी प्रतीति होसकै है ॥३२॥ आत्माको न जानिवो याको रूप है, यह है यह नहीं ऐसो विवाद, भेदके अर्थमें निष्ठा और यह विवाद व्यर्थहू है तथापि स्वरूपभूत मोतें विमुख जिनकी बुद्धि है विनको निवर्त्त नहीं होयहै, परंतु विवादकरि किये कर्मनकरि ऊंच नीच देह विषें जन्म मरण पावे है ॥ ३३ ॥ उद्धवजी बोले हे प्रभो ! तुमते जिनकी बुद्धि विमुख है वे आपुही करि करे कर्मनसें नीच देहनको ग्रहण करें है, व्यापक आत्माको देहते और देहमें जाइवो, अकर्ताको कर्म नित्यको जन्म मरण क्यों संभवे हैं ॥ ३४ ॥ हे गोविंद ! अजितेंद्रियनकों जानने अयोग्य यह मोसों कहो लोकविषें बहुधा याके जाननवारे नहीं हैं क्यों कि वे माया करिकै मोहित हैं ॥ ३५ ॥ श्रीभगवान् बोले कर्ममय मनुष्यनको मन पांच इंद्रियन करिकै सहित या लोकतें और लोकमें जाय हैं और मनमें भिन्न आत्मा अहंता ममता करिकै मनके पीछे जाय है लिंगदेहसों यह सब बनसकै है ॥ ३६ ॥ कर्मनके आधीन मन या लोकके और परलोकके विषें ध्यान करतो विन विषयन विषें प्रकट होय हैं, और पहिले विषयन

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विषें लीन होय हैं ता पीछे वाको पहिले पिछलेको स्मरण जातो रहे हैं ॥ ३७ ॥ कर्मनके द्वारा दूसरे देहमें अत्यन्त अभिनिवेश हेवेपें वह देवतादिकको देह हो तौ हर्षसो अथम हो तौ शोक भयसौ जीवको प्रथम देहको विस्मरण होनौ और वाय देहको अहंकार नष्ट होनौ यही आत्माको मरण है कुछ देहकी समान वाको मरण नहीं होय है ॥ ३८ ॥ हे दानी ! मनको दूसरे देहके साथ सबन्ध होवेपें उसमें अत्यंत अहंकार प्रादुर्भूत होय है मनके अध्याससो आत्मामें ता देहको ममत्व होय है यही आत्माको जन्म है ॥ ३९ ॥ जैसे एक स्वप्न देखनेके अनन्तर दूसरो स्वप्न होय है तथा एक मनोरथके उपरान्त दूसरो होय है तब पहलो मनोरथ और स्वप्न विस्मृत हो जाय है ऐसही आत्मा मनके अभ्याससो अपनेमें नवीन उत्पन्न मानो है या प्रकारकी दशा हैवेसो मनके अध्यासके कारण एक देहको अभिमान नष्ट हैवेपें दूसरे देहको तीव्र अभिमान हैवेपें यह अपने पूर्व जन्मको नहीं जानै है ॥ ४० ॥ इन्द्रियनको आश्रय मनके और देहके अभिनिवेशसो उत्पत्तिद्वारा आत्मविषें उत्तम मध्यम नीचता मिथ्या होवेपेहू प्रकाशित होय हैं उन्हीके द्वारा आत्मा बाह्यविषयनको और अंतरविषय सुखादिकनको देखे हैं, जैसे जीव स्वप्नमें झूठे बहुत देहनको करतो देखतो बहुत रूप भासे है अथवा जैसे दुष्ट पुत्रको पिता पुत्रके प्रेमसो पुत्रके शत्रु मित्रनको अपनो शत्रु मित्र मान लेय है ऐसे आत्मा मनके अभिनिवेशसो देहको अपनो जानो है ॥ ४१ ॥ जाकी तीव्र गति जाननेमें नहीं आवे ऐसे कालके निमित्तसो यह शरीर क्षण क्षणमें उत्पन्न होवे और मरे हैं परन्तु कालकी सूक्ष्मताके कारण अज्ञानी या जन्ममरणको नहीं जानें ॥ ४२ ॥ नित्य जन्म मरण होय है ताको प्रमाण कहूं यद्यपि देखिवेमें नहीं आवें है, तौहू अनुमान करिकै जन्म बतामें हैं, जैसे ज्योति पहिले कोमल होयहैं, पीछे कछुक अधिक होयहै; पीछे अति तीक्ष्ण होयहै, जैसे वृक्षको फल पहिले कच्ची भयो पीछे कछु पीरो भयो; पीछें परिपक्व भयो, जैसे क्रमतें भिन्न अवस्था काल करिकै होयहैं परि जानी नहीं जाय तैसें याही अनुमानसो शरीरकीहू कालसो नित्य वय अवस्थादिक होयहैं, परन्तु जानी नहीं जाइ है प्रथम अवस्थाको त्याग दूसरेको ग्रहण यही जन्म मरण नित्य होय है यह जगत् अवस्थाके भेदवारो है याहीसो क्षणक्षणमें उत्पत्ति नाशको प्राप्त होयहै अवस्थाके भेदवारेनकी यही दशा है[1] ॥ ४३ ॥ यहां तर्क करें हैं; नित्त अवस्था भेदसो जन्म मरण होवेवारेनकों ऐसो ज्ञान क्यों होय है कि यह वही देह है तहां दृष्टांत करिकै कहै हैं जैसे जातिनके सादृश्य करिकै यह वही दीप है ऐसो ज्ञान होयहै जा प्रकार जल क्षणक्षणमें बदलै है परन्तु नयो जल आयवेपेहू विन्है वही जल है यह भ्रांति होय है याही प्रकार शरीर क्षणक्षणमें परिवर्तित होय हैं परन्तु यह वही शरीर है ऐसी अज्ञानी पुरुष भांतिसो वाणी कह्यो करै हैं ॥ ४४ ॥ अहो जाको देहाभ्यास है ताको कर्म जन्म मरण सब है, औरनको नहीं सो क्यों कर संभव है तहां कहै है वस्तुते देहाध्यासवंतहूको जन्म मरण नहीं अध्यासवंत पुरुष अपनें कर्म बीज करिकै न उत्पन्न होय है न जन्म लेय है भ्रांतिसो अजन्मा होवेपें हू जन्मतोसो और हैवेपें हू मरतोसो प्रतीत होयहै जैसे महाभूत ये

---

१ प्रयोजन यह है कि जैसे दरियावको जल और दीपकका लोइ ये निरंतर बदलते रहै है ऐसेही देहहू क्षणमें अन्य २ होतो रहै है फिर जो कोई कहै कि वही जल है यह वही दीपककी लोय है यह वही पुरुष है वे सब मूरख है या भाष्यमें लिखोहै कि (नहि कश्चित् स्वस्मिन् नात्मनि क्षणमवतिष्ठते वर्द्धते यावदनेन वर्द्धितव्यमपचयेन युज्यते) कोई एक क्षणहू अपने स्वरूपमें स्थिर नहीं होयहै या बढैहै या घटै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तेजरूप अग्नि प्रलयकालपर्यंत नहीं स्थित है तोहू काष्ठके संयोग वियोग करि जन्म नाशको पाउ तैसो प्रतीत होय है ॥ ४५ ॥ अब देहकी अवस्थानकों कहैं हैं देहको प्रथम तो उदरमें प्रवेश पीछें गर्भवास होई पीछे जन्म फेरि बाल्य कौमार यौवन पैंतालीस वर्षपर्यंत पीछें साठि तांई मध्यम वय उपरांत जरा पीछें मृत्यु ये तो देहकी नौ अवस्था है ॥ ४६ ॥ ये मनोरथमयी अवस्था ऊंच नीच देहकों हैं सत्व तज तम गुणके संगतें आपुकों मानिलेइहै तामें कोइक ईश्वरके अनुग्रहतें भक्त इन अवस्थानकों बहुत विवेक ज्ञानकरिकैं छोडे हैं ॥ ४७ ॥ यदि कहो कि देहके जन्म मरणमें तो यह मूर्च्छित रहै हैं यासो इतनौ ज्ञान कैसे है सकै तौ सुनो, पिता मरेहै वाकी क्रिया करै है, तब देहको नाश देखे है पुत्र जन्म होवे है तब जातकर्म करै है, तहां देहको जन्म देखेहै, ता अनुमान करिकै अपने देहहूको जन्म मरन जानेहैं, परन्तु, जन्म मरणवंत देहको द्रष्टाके जन्म मरण नहीं होते ॥ ४८ ॥ जैसे धानादिके बीजसे जन्मको और पक जानेसे मरणको जानवेवारौ जो द्रष्टा है वह वृक्ष और फलसौ भिन्न है याही प्रकार देहके जन्म मरण जानवेवारौ द्रष्टा देहसो पृथक् है ॥ ४९ ॥ या भांति शरीरादिसो आत्माको यथार्थ विचार करनौ चाहिये यदि यह विचार न कियो जाय तौ विषयमोहमें गिरवेके कारण यह मूढ प्राणी संसारमें गिरै है ॥ ५० ॥ गुण भेद करिकै त्रिविध संसार कहैं हैं, तहां एकएकके दो दो भेद है सो कहै हैं सतोगुणके संगते ऋषि देवता होय हैं, रजोगुण करिकैं असुर और मनुष्य होयहैं, तमोगुण करिकैं भूत पशु पक्षी सब होयहैं, सो अपनें कर्मन करिकै भ्रमें हैं वा वा योनिनविषें परे है ॥ ५१ ॥ अहो आत्मा तो कर्ता नहीं तो कर्मन करिकैं क्यों भ्रमण होय है यापै कहै हैं जैसे नाचते और गाते पुरुषनको देखकै यह पुरुष विनमें स्थित गति और तालको अपने मनमें अनुवर्तन करै है याही प्रकार बुद्धिके गुणनके अवलोकनसो गुणनकी सामर्थ्यसो अकर्ता पुरुष विन्हैं अपनेमें मान लेयहै ॥ ५२ ॥ द्रष्टाहूमें यह धर्म होयहै तहां दृष्टांत कहैं हैं जैसे जल करिकै तीरके वृक्ष दौरते दीखे हैं जैसे दृष्टिके भ्रमसे पृथ्वीहू भ्रमतसी लगेहै तो ये धर्म वृक्षमें भूमिमें नहीं यह अपने दोषतें दीखे हैं याही प्रकार दृश्यको धर्म द्रष्टामें स्फुरायमान होय है और आनंदादि आत्माके लक्षण हैवेपैभी हू विषयनके गुणसो प्रतीत होयहैं ॥ ५३ ॥ कोऊ कहै कि आत्मा भोग करेहै सोहू मिथ्या है, तहां दृष्टांत कहै हैं जैसे मनोरथकी बुद्धि मिथ्या है, और स्वप्नमें देखि बुद्धि सब मिथ्या है याही प्रकार आत्मामें प्रतीत होतौ भयौ विषयनको अनुभवरूप संसारहू असत है ॥ ५४ ॥ तो निवृत्तिके उपायको प्रयोजन कहाहै, यापै कहतेहैं यद्यपि स्वप्न असत्य है परंतु विन विषयनको ध्यान करनेवारे पुरुषके वा अवस्थामें स्वप्नके दुःख नहीं जाते याही प्रकार संसारके मिथ्या होवेपैं विषयनको ध्यान करवेवारे पुरुषके जन्ममरण नहीं जाते ॥५५॥ हे उद्धव ! तातें तुम ये दुष्ट इंद्रियन करिकै विषयभोग मति करो आत्माके ज्ञान विना यह संसारको भ्रम भयौहै ॥ ५६ ॥ कोऊ निंदा करो कोऊ अपमान करो कोऊ उपहास करो कोऊ वंचना करो कोऊ ताडन करो कोऊ रोक राखो वृत्ति छिनायलेहु ॥ ५७ ॥ कोऊ मूत्र डारो जूठिन डारो ब्रह्मनिष्ठा बिगारैं तथापि अपनो कल्याण चाहे सो इतनो कष्ट सहै आत्मा करिके आत्माको उद्धार करे क्रोध करिकै अपनो धर्म न खोवे ॥ ५८ ॥ अब यहां उद्धव पूछेहैं हे वक्तानमें श्रेष्ठ ! जैसे तुम्हारो वचन हम अच्छी तरह समझें तैसें कहो नीच अधम पुरुष या प्रकार पीडित करैं तौ वाको सहन करनौ महाकठिन है ॥ ५९ ॥ हे विश्वके आत्मरूप ! जो तुम्हारे चरणके आश्रय हैं तुम्हारे धर्ममें तत्पर है शांत है तिनको छोडिकै

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अतिपंडितकोहू ऐसे अपराधकौ सहन होनौ अति कठिन है यह मैं मानूंहूं कारण कि कि स्वभाव बडौ वली होय है ॥ ६० ॥

विदुषामपि विश्वात्मन् प्रकृतिर्हि बलीयसी ॥
ऋते त्वद्धर्मनिरताञ्छान्तांस्ते चरणालयान् ॥ ६० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अध्याय २३.

बादरायणिरुवाच-स एवमाशंसित उद्धवेन भागवतमुख्येन दाशार्हमुख्यः ॥
सभाजयन् भृत्यवचो मुकुन्दस्तमाबभाषे श्रवणीयवीर्यः ॥ १ ॥

अब तेईसके अध्यायमें तिरस्कार सहनको उपाय और भिक्षुगीतके प्रकार करिकैं बुद्धिनसों मनको संयम कहैं हैं और दुर्जननको अपराध सहनको उपाय चारि अध्यायन करिकैं कहैं हैं ॥ शुकदेवजी राजा परीक्षित्सों कहैं हैं भक्तनमें मुख्य, यादवनमें श्रेष्ठ ऐसें उद्धवके पूछवेते श्रीकृष्ण मुकुंद अपने सेवकको वचन सराहते उत्तर देतभये जिन भगवान्के चरित्र श्रवण करिवेकों परम-सुखकारी हैं ॥ १ ॥ हे बृहस्पतिके शिष्य ! या लोक विषें वह साधु नहीं हैं जो दुष्ट वचन करिके खेदयुक्त मनकों समाधान न करि सकैं ॥ २ ॥ मर्मस्थानमें लगे बाणनसों विद्ध पुरुष तैसें ताप नहीं पावेहै जैसे मर्ममें लगे दुष्ट वचन करिकैं व्यथा पावेहै ॥३॥ तथापि मेरे कहे उपाय करै ते उपाय कहूंहूं हे उद्धव ! या विषयसे एक अति पवित्र इतिहास है सो मैं तोसूं कहुंहूं उद्धव ! तुम भले प्रकार सावधान ह्वैके सुनो ॥ ४ ॥ कोई एक भिक्षुक हो सो दुर्जन करिकैं पीडित हो धैर्य धारण कर अपने प्रारब्ध कर्मनको भोग मानिके ये कहन लगो ॥ ५ ॥ उज्जैनके देशमें एक ब्राह्मण लक्ष्मी करिकै अति संपन्न खेती और वाणिज्य करे कामी लोभी महाक्रोधी महाकदर्य्य रहै, कदर्य्यको लक्षण स्मृतिमें कह्योहै आत्माको, धर्मकार्य्यको, पुत्र स्त्री देवता अतिथि सेवकनको दुःख दे सो कदर्य है ॥ ६ ॥ बांधव और अतिथिको वचनसोभीहू न पूजे धर्मको काम करिके हीन शून्यदेहरूप घरमें भोगनसों कभी आत्माहूं न पूज्यो ॥ ७ ॥ ऐसो दुःशील कदर्यके पुत्र बांधव स्त्री बेटी सेवक सब दुःख पामें कोऊ वाकों भलो न कहै ॥ ८ ॥ फेरि वह या प्रकार दाऊ लोकतें भ्रष्ट भयो धर्म काम करिकै हीन केवल भूतकीसी नाईं द्रव्यकी रक्षा करतो रहै ऐसे पुरुष पर नित्य कर्तव्य पांच महायज्ञनके अंशके भागी देवता क्रोध करतभये ॥ ९ ॥ विन देवतानके तिरस्कार करिकै पुण्यको विस्तार सब क्षीण होतभयो, तब अनेक परिश्रम करिकै युक्त खेती आदि परिश्रम करिकै कमायो द्रव्यहू नष्ट

---

१ एक स्त्री पुरुष बडे लोभी थे, किसी त्योहारको स्त्रीने दस पूरी करीं और स्वामीसे कहा चार तुम खाओ दो मैं करनेकी और चार अपने भागकी छः खाऊंगी, पतिने कही मैं द्रव्य लाऊहू इससे मैं छः खाऊंगा, जब झगडा हुआ तब यह हुई कि जो पहले बोले सो चार खाय, इसी प्रकार दोनों सो रहे, जब दूसरे बहुत दिन चढगया, लोग आये, देखै तौ चुप पडे हैं उन्होंने जाना कि यह मरगये आंखैं खुली रह गईं तब बांधकै लेचले और जाके चितामें धर दिया, ज्यों अग्नि संस्कार करने लगे तब वोह अपनी स्त्रीसे बोले अरी ! हमही चार खालेंगे घरकू तौ चल, बहुत फजीतो होगयो और लोग भूत समझकै भाजे यासे वहैं हैं कि कृपण दुःख सहै, पर खर्च न करै, लोभके मारे अधिक पूरी तौ न कराई परन्तु चुपके पडे रहे बोले नहीं, और मनुष्योंने दश रुपयेका ईंधन इन्हींके रुपयोंसे मंगाया तासे लोभीको धन वृथाही जाय है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भयो ॥ १० ॥ श्रीकृष्ण कहैं हैं हे उद्धव ! कछुक द्रव्य वाके घरके बांधव लेगये, कितनेऊ द्रव्य चोर ले गये कछुक द्रव्य गृहदाह करि गयो कितनोऊ जहां गाड्योहो तहांतें गयो कछु द्रव्य अधर्मी ब्राह्मण और मनुष्य लेगये, कितनो द्रव्य राज्यद्वारमें गयो ॥ ११ ॥ सो फेरि या प्रकार द्रव्य नष्ट भयेते धर्मकाम करिकै रहितभयो, स्वजन कुटुंबी अनादर करतभये, तब अपार चिंताको प्राप्त भयो ॥ १२ ॥ द्रव्य जायेवेसो वह ब्राह्मण अतिचिंता करिकै वा धनकों बहुत ध्यान करत संतप्त भयो, गद्गद कंठ ह्वैके वाकों बहुत वैराग्य होतभयो ॥ १३ ॥ तब यह कहत भयो अहो यह देखो बडोई कष्ट है इतनो बडो भारी मेरो द्रव्यको परिश्रम वृथाही गयो जो यह आत्मा संतप्त कियो न तो धर्मके अर्थ न कामके अर्थ भयो सब वृथाही गयो ॥ १४ ॥ बहुधा जे कदर्य है विनके सुख कबहू नहीं होय, जीवत या लोकमें आपको संताप होयहै, मरेतें नरक होय है ॥ १५ ॥ जे यशस्वी हैं तिनको यश अत्यंत निर्मल है और गुणीनको गुण है, वे सराहिवे लाइक है, परंतु जो थोरोहू लोभ होइ तो सब गुण यशको दूरि करें, जैसे उत्तमरूपको थोडो सफेदहू कोढ दूर कर देय है ॥ १६ ॥ यातें द्रव्य सब दुःखरूप है, प्रथम तो साधनमें कष्ट है, पीछे सिद्धहू भये वह द्रव्य बढायो चाहै तामेंहू कष्ट है पीछे वाकी रक्षा करी चाहिये, भोगमें खर्च होय नाश होयहै, या प्रकार आदिते अंत पर्यंत श्रम भय चिंता श्रम मनुष्यनको रहे है, तातें कबहूं अर्थ सुखकारी नहीं है ॥ १७ ॥ औरहू दोष कहे है चोरी हिंसा झूठ दंभ काम क्रोधके साधनमें है, गर्व अहंकार भेद वैर अविश्वास स्पर्धा ये छै अनर्थ अर्थ पाये पीछे होय है, और तीनि व्यसन स्त्री मद्य जुआ याही धनकरके होयहै ॥ १८ ॥ या प्रकार पंद्रह अनर्थ अर्थतें (द्रव्यतें) होय हैं सुनो उद्धवजी याको नाम तो अर्थ है, पर अनर्थरूप है, ताते जो अपनो भलो चाहे तो दूरिहीतें छोडे ॥ १९ ॥ दोष यह हैं कि माता पिता भ्राता स्त्री सम्बन्धी जो स्नेहको कारण एक चित्त हैके मिलै रहै हैं वेहू धनके निमित्त पृथक् है जाय है और बीस कोडीके ऊपर तत्काल वैरी हो जाय है ॥ २० ॥ यह प्राणी थोडेही द्रव्यके निमित्त क्षेमको प्राप्त हो महा क्रोधकर स्पर्धासों एक साथ सुहृदता और स्नेह छोडकर परस्पर मारवे लगै हैं ॥ २१ ॥ या लोकमें जो अनर्थ उठेहै, परलोकहूमें अनर्थ होंइगे, सो कहे हैं देवतानके प्रार्थनीय मनुष्य जन्मको पायकैहू उत्तम ब्राह्मण जन्म पाइ वा जन्मको अनादर कर अपनो स्वार्थ खोमेहै ते अधमगतिको पावे ॥ २२ ॥ ताते स्वर्ग और मोक्षको द्वार यह देह पाई या अनर्थके घर द्रव्यमें कौन मरणधर्मा पुरुष आसक्त होइ ॥ २३ ॥ देवता ऋषि पितर भूत जाति बंधु और जे अंशभागी हैं इनको और अपनी आत्माको जो न देइ सो अधम गतिमें जाइ तातें वह भूतकी नाईं द्रव्यके रक्षक है ॥ २४ ॥ अब अपनी अवस्था कहै हैं मैं व्यर्थ अर्थकी क्रिया करिकै सदा असावधान रह्यो मेरो द्रव्य व्यर्थही गयो और वयःक्रमहू व्यर्थ गयो, जे विवेकी हैं ते अर्थ करिकै मोक्षके अधिकारी होंइ है, और मेरो बलहू व्यर्थ गयो अब मैं वृद्ध भयो, हाय

---

१ बैरसे बडो अनर्थ होयहै, एक कोई लाला अपने पडोसीसे बडी ईर्षा वैर राखे है सो वैर निकासवेकू काहू देवताकी पूजा करवे लगे वाने प्रसन्न हो एक शंख दीनो और कही कि जो वस्तु यासे मांगोगे सो मिलैगी, पर पडोसीके उससे दूनी होगी, यह बोले पडौसीने कहा पूजा करी है देवताने कही यही बात है तब यह बोले अच्छा शंख देउ मैं देख लेउगो, जातेही घर कही ला हजार वोह बोलो पडौसीके दो हजार, और ऐसेही भई तब इन्होंने झुझलाके कही हमारो एक पैर टूट जाय शंख बोलो पडौसीके दोनौं पाव टूटेंगे और ऐसेही भई यादी प्रकार इन्होंने ईर्षासे अपनी और पडोसियोंकी मिट्टी खराब करी ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

में कछु न करि सक्यो ॥ २५ ॥ यह अर्थकी चेष्टा व्यर्थ है वेपैहू जान पूछकै याकी तृष्णासों ज्ञानीहू क्यों क्लेश पावे हैं यासों विदित होय है काउकी मायासों यह प्राणी अत्यन्त मोहित है रह्यो हैं ॥ २६ ॥ यद्यपि धनसों संसारी भोगनको भोगै है परन्तु जब कि या प्राणीके निकट प्रति दिन मृत्यु चली आवै है तब याको धनसों धनके दैनेवारेसों सुखसों सुख दैनेवारेसों तथा वारंवार जन्मदाता कर्मनसों कहा सिद्धि है ॥ २७ ॥ मोपै निश्चय करिकै सर्व देवरूप भगवान् संतुष्ट भये, जो भगवान् करिकै मैं या दशाको प्राप्त भयो मोको वैराग्य उपज्यो वैराग्य संसारसमुद्र तरणकों नौका है ॥ २८ ॥ अब मेरो जितनो समय बाकी रह्यो हैं ता काल करिकै तपस्यासों मैं अपने अंगको क्षीण करूंगो, आत्माहीसों संतोष मानि समस्त धर्मनमें सावधान होइकै रहूंगो ॥ २९ ॥ मोको त्रिलोकीमें ईश्वर देवता अनुग्रह करै है कदाचित् कहो देवतानके अनुग्रह कियेते वृद्ध भयो सो समय थोरो रह्यो, अब कहाकरि सकूंगो ! तहां कहै हैं खट्वांग राजा एक मुहूर्तमें ब्रह्मलोकको साधत भयो ॥ ३० ॥ श्रीकृष्ण उद्धवसों कहैहैं, जब अवंतीनगरीको ब्राह्मण या प्रकार मनमें निश्चयकरि हृदयकी गांठि अहंता ममताको खोलि शांत मन होई भिक्षुक होत भयो ॥ ३१ ॥ इंद्रियवायु मनको स्थिर करिके पृथ्वीमें फिरत भयो, एक भिक्षाके निमित्त नगर गाममें आवत भयो ॥ ३२ ॥ तहांऊ कहूं आसक्ति नहीं, और काहूको अपनी श्रेष्ठता न लखावे, विचारतो रहै, कल्याणरूप वह ब्राह्मण अति वृद्ध भिक्षुक अवधूत वेष रहे, ताको देखि करिकै दुष्टजन अनेक प्रकारके तिरस्कार करिके दुःख देत भये ॥ ३३ ॥ अब सात श्लोकन करिकै वाके तिरस्कार कहै हैं, कितनेऊ तो वाकें त्रिदंडको लेत भये, कोऊ आसन पीढा लेले जात भये ॥३४॥ हे महापुरुष ! यह लेहु ऐसे दिखाइकै मुनिको दे करिकै फेर लेतभये, और जब भिक्षा मांगिकै अन्न लेके नदीके तीर भोजन करे ॥ ३५ ॥ तब पापी याके माथेपर मूत्र करैं फेरि वह जो मौन रहै तो बुलामें, न बोले तब मारे, एक डरपामें यह चोर है ऐसे वचन कहैं ॥ ३६ ॥ कितेक कहें याकों ले रज्जुसो बांधो, मारो मारो कितनेऊं निंदा करे अवज्ञा करें ॥ ३७ ॥ यह पाषंडी है धूर्त है अब द्रव्य तो सब गयो, स्वजनने सबनने छोडि दियो अब यह वृत्ति ग्रहण करत भयो ॥ ३८ ॥ अहो देखो यह बडो ढीठ अति बली है, पर्वतकी नाईं धैयवान् मौन करि बकध्यानी होइकरि अपनो स्वार्थ साधे है याको दृढ निश्चय है ॥ ३९ ॥ या प्रकार एक तो हँसे, एक वाके ऊपर अधोवायु छोडे, एक बांधे एक रोकि राखे, जैसे सूवा सारोको रोकि राखे ताकीसी नाईं रोकतभये ॥ ४० ॥ याप्रकार भौतिकदुःख दुर्जननको कियो, देहको दुःखज्वरादिकनको कियो, दैवके दुःख शीतउष्ण " ये सब अपनो प्रारब्ध भोग है " दुःख पाइके, वह ऐसे समझत भयो ॥४१॥ या प्रकार नराधम दुर्जन करिके तिरस्कृत भयो, तथापि सात्विक धैर्यकरिकै अपने धर्ममें रहिकै यह कथा गावत भयो ॥ ४२ ॥ ब्राह्मण बोले यह जन देवता आत्मा ग्रह कर्म और काल कोउ मेरे सुख दुःखके कारण नहीं है मनही केवल कारण है जो यह संसारचक्रको फिरावे है ॥ ४३ ॥ सोई कारण कहै है, बलवंत मनहीं गुणकी वृत्ति सृजैं हैं, पीछे तिन गुणनहींते सात्त्विक राजस तामस न्यारे न्यारे कर्म होइ हैं तिन कर्मनते सात्विक राजस तामस देवता मनुष्य पक्षीनकी जाति होय हैं ॥ ४४ ॥ अब कहे हैं तो मनहीको संसार होई आत्माको काहेतें संसार होवे हैं, तहां कहें हैं अविद्या करिकै अनेक अभ्यास करिकै आत्माको संसार है, आपुतें संसार नहीं जाते वासनासहित मन है ताके संग नियंता ह्वैके रहे है, तथापि आत्माको संग नहीं, कर्महूं नहीं क्योंकि वह ज्ञानरूप है जीवको सखा है यह जो जीव है सो मनके धर्मनको ग्रहण करि अहंकार और गुणके संगसों विषयनके सेवन करवेसो बंध्यो है ॥ ४५ ॥ मनको विग्रह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करे विना सब व्यर्थ है (सो कहे हैं) दान स्वधर्म नेम आचार विद्याध्ययन कर्म उत्तम व्रत आदि यह सब एक मनके निग्रह करिवेको उपाय है तातें निश्चयकरिके परमयोग मनको निग्रहही है ॥४६॥ अब जाके मनको निग्रह है सो, कृत्य करे हैं सो कहेहैं, जाको मन स्थिर शांत भयो, ताको दान आदिकर्म करके कहा प्रयोजन है, मन तो समाधिमें स्थिर भयो है, और जाको मन विक्षिप्त है आलस्ययुक्त है सो ताको दानादिकनसो और कहा होइगो ॥ ४७ ॥ कदाचित् कहो दान आदि धर्म करिकै और इंद्रियको तो जय होइगो तहां तिनको जय तो नहीं होयहै यह कहे हैं और जे देवता इंद्रिय ये सब मनके कश हैं, मन कछु उनहूंके वश नहीं हैं, यह मन आपही देव हैं, महाबलिष्ठ है योगीनहूंको महाभयंकर है याको जो वश करे हैं वो देवहूको देखे हैं ॥ ४८ ॥ मनरूप शत्रु दुर्जय है, याको वेग सह्यो नहीं जाइहै, सबको पीडा करेहै, ऐसेको जीते विना और मनुष्यनसो युद्ध करें हैं यामें औरहू अनुकूल प्रतिकूल मित्र उदासीन शत्रु करिलेइहैं, वे मूर्ख हैं ॥ ४९ ॥ तातें संसारमें भ्रमें हैं सो कहें हैं, यह देही एक मनकी वासनासों या देहको ग्रहण करिकै यह मेरी देह है या ममतासों अहंकार करिके अंधबुद्धि मनुष्य यह मैं यह तू या भ्रम करिकै अंत पारते रहित संसारमें भ्रमें है ॥ ५० ॥ तातें सुख दुःखको कारण एक मन है, और कोऊ नहीं है, यह कहैं है, सुख दुःखको कारण मन है तो आत्माको कहा है दोऊ देह माटीके विकार हैं तिनको सुख दुःखही कारणता है, आत्माको कछु न लगेहै, जीव तो देहके अभिमान करिकै मानिलेयहै, आत्माके मूर्ति नहीं, क्रिया नहीं कौनको मारे; कौनकों सुख देइ, (तोहू दुःख सुख आत्माकों दीखैहै तहां कहेहैं) परमात्मा दोऊ ठौर एक है, वाकों कछु न लगेहै (तहां दृष्टांत कहेहैं) जैसे अपनी जीभ आपु काटे तो कोप कौनसों करे, तैसे देहसो देहको दुःखसुख मानि लेइ तो आत्मा कहा करे ॥५१॥ जो सुख दुःखकों हेतु देवता है तो यह आत्माकों कहा, दुःखको कारण तो देवतानकों हैं देवता विकारी हैं जैसें अंगसों अंग मारिये तो पुरुष अपनी देहमें कौनपै कोप करे तैसें एकके मुखमें हाथ डाल वह काटिखाइ, तो मुखको देवता अग्नि है, हाथको देवता इंद्र है, तिनको कियो दुःख है अविकारी अहंकाररहित आत्माको कछु नहीं लगे ॥ ५२ ॥ जो आत्माहीको सुख दुःखको कारण मानो तौ औरते कहाहै जाके ऊपर कोप करे, या पक्षहूमें औरतें दुःख भयो यह कहनो नहीं संभव है कारण कि वह अपनोही स्वभाव है, आत्मा तो सर्वत्र एकही है आत्मातें और दूसरो नहीं, कदाचित् कहो कि जो कुछ यह दीखै है सो मिथ्या है जब अपनो आत्मा और दूसरेको आत्मा एकही है तब कौनसों कोप करे जातें निमित्त नहीं दुःखहू नहीं ॥ ५३ ॥ जो कहो ग्रह सुख दुःखको निमित्त हैं तोहू आत्माको कहा, ग्रह तो लगेहैं जाकों जन्म है, जन्म तो देहको है आत्माको नहीं, आत्मा तो अजन्मा है, जा लग्नमें देह जन्म लेइहै ता लग्नमें जैसे ग्रह होइ तैसे सुख दुःखको निमित्त है, जाको देह अभिमान है तहां ग्रह है, तातें ग्रह तो अंतरिक्षमें हैं ग्रह परस्पर दृष्टि पडवेसो ग्रहकों पीडा देय है ऐसो ज्योतिषी कहै है परन्तु आत्माकों कहा, आत्मा ग्रहतै देहते न्यारो है तातें पुरुष कोप कौनसों करे ॥ ५४ ॥ जो कर्महीं सुख दुःखको हेतु है यों कहिये तोहू आत्माकों कहा, आत्मा तो कर्मतें न्यारो है सो कर्म होई तो दुःख होइ कर्महीं नहीं तो दुःखको हेतु कहांतें होइ सो कहें हैं, कर्म तब होइ जब एक देहीहीकों जडरूपता और अजडरूपता होइ, जडरूप करिकै तो विकारी होइ, अजडरूप करिकै हितकारी पन यह दोनों धर्म आने चाहिये विनमें विकारता जडतावारेनको हो और हितको अनुसन्धान जडतारहितनको हो और जो कहैं देह कर्म करै है तो देह जड हवेसो वामें अपने हितको अनुसंधान नहीं और आत्माकोहू कर्म करनो

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नहीं बन सकै क्योंकि वह शुद्धज्ञान स्वरूप है जब सुख दुःखको कारणरूप कर्म सिद्ध नहीं तौ फिर पुरुष कोनपै क्रोध करै ॥ ५५ ॥ जो काल सुख दुःखको हेतु है तोहू आत्माकों कहा क्योंकि आत्माहू कालरूपही है, कालहू ब्रह्मांश हैं, आत्मा ब्रह्महीं है अपने अंशकों आपुतें भय पैदा नहीं होय हैं जा प्रकार अग्निकी ज्वालाकौ ताप अग्निको नहीं व्यापै है और हिमकण तुषारकौ सीत हिमको नहीं व्यापै है ऐसेही कालके किये सुखदुःखसौ आत्माको सुखदुःख नहीं होय है आत्मा असंग है या कारण वामें दुःखसुखकौ द्वंद्व नहीं व्यापै वा दुःखसुखकौ कारण अज्ञान है आत्मा नहीं ॥ ५६ ॥ इन छः दुःखसुखके कारण विना जो कोऊ और हेतु कहैं सोऊ ईश्वरकी महिमा जानि करिकै संभव नहीं यह कहैं है, जो प्रकृतिहूतें परेहै ताको काहू भांति सुख दुःख संबंध नहीं जैसै अहंकार संसाररूपी है ताही करिकै सुख दुःख होय है जो या भांति समझे तो काहूते न डरपे वाको डर नहीं या प्रकार मैं परमात्माके विषें चित्त राखिकै संसारसमुद्र तरूंगो ॥ ५७ ॥ पूर्व महर्षिनकी यह जो परमात्माकी निष्ठा है ता निष्ठाकों धरिके साक्षात् मोक्षके दाता भगवान्के चरणारविंदनकी सेवा करिकै पारते रहित संसारसमुद्र पार जाऊंगो ॥ ५८ ॥ श्रीकृष्ण उद्धवसों बोले या प्रकार द्रव्य नष्ट हैवेसौ द्रव्यको लेश दूरि करि संन्यास लेके वह ब्राह्मण भूमिमें फिरो दुष्टनते यद्यपि वाको बहुत अपमान कियौ तथापि अपने स्वधर्मतें न चलत भयो तब यह गाथा गाई ॥ ५९ ॥ पुरुषको सुख दुःखको दाता मनके भ्रम विना और दूसरो कोऊ नहीं है मित्र उदासीन शत्रु यह जो संसार है सो अज्ञानतें होय तत्त्व विचारेतें कछु नहीं ॥ ६० ॥ हे उद्धव ! ताते तुम सब भाव करिकै मेरे विषें बुद्धि राखिकै मनको निग्रह करो इतनोही योगकों तात्पर्य है ॥ ६१ ॥ जो कोई यह भिक्षुककी गाई ब्रह्मनिष्ठाको सावधान होई धारे सुने सुनावे वह सुख दुःख आदि द्वंद्व धर्मनकरिके पराभव न पावेगो ॥ ६२ ॥

य एतां भिक्षुणा गीतां ब्रह्मनिष्ठां समाहितः ॥
धारयञ्छ्रावयन् शृण्वन् द्वन्द्वैर्नैवाभिभूयते ॥ ६२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

श्रीभगवानुवाच—अथ ते संप्रवक्ष्यामि सांख्यं पूर्वैर्विनिश्चितम् ॥
यद्विज्ञाय पुमान् सद्यो जह्याद्वैकल्पिकभ्रमम् ॥ १ ॥

अब चौवीसके अध्यायमें श्रीकृष्ण फिरि सांख्यज्ञान करि मनकों मोह निवारैहैं, अब जो सांख्य प्रथम बडेनने निश्चय कियोहै ताकों तुमसों कहोंगो जाके जानेंते तत्काल पुरुषकों भेद करिकैं कियौ भ्रम जातरहै है ॥ १ ॥ महाप्रलयमें द्रष्टा और दृश्य भेदरहित एक ब्रह्ममें लीन होतभयो, पीछें प्रथम सतयुगमें जब सब प्राणी विवेकसौ निपुण है तबहू कुछ भेद न हैवेसौ सब ईश्वररूपही जानौ जायहो भेद नहीं है ॥ २ ॥ पीछें जब बहुत सृष्टिकी इच्छा भई तब वह अक्षरब्रह्म भेदरहित केवल आनंदमय एकरूप अपने रूपके द्रष्टा और दृश्य दो रूप करत भयो एक मायाको फलरूप वाणी मनकों गम्य प्रपंचरूप करतभयो एक सत्यरूप दो भये ॥ ३ ॥ ब्रह्मसौ भये तिनके मध्य एक कार्य्य कारण रूपिणी प्रकृति भई दूसरे भावसों ज्ञानरूप पुरुष भयो, जो प्रकृति पुरुष कहामें हैं ॥ ४ ॥ पुरुष रूप मेरे देखिवे करिकैं क्षोभित भई प्रकृति द्वारा सतोगुण रजोगुण तमोगुण प्रकटे ॥ ५ ॥ प्रथम तिन तीनों गुणनतें सूत्र क्रिया शक्ति रूप भयो ता पीछें वह सूत्र ज्ञानशक्ति

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रूप तत्त्व प्रकट भयो एकही तत्त्वज्ञान क्रिया भेद करिकै दोऊ रूप भयो ता महत्तत्वतें अहंकार भयो जो सबकों मोह करैहैं जीवकों भ्रमाय रह्यो है ॥ ६ ॥ सो अहंकार तीनी प्रकारको है, सात्विक अहंकार राजस अहंकार तामस अहंकार यही अहंकार शब्द स्पर्श रूप रस गंध इंद्रिय मन देवतानकों कारण है जीव और देहको ग्रंथिरूप यही है ॥ ७ ॥ अब या त्रिविध अहंकारतें त्रिविध प्रपंचकी उत्पत्ति भईहै सो दिखामें हैं तहां तामस अहंकारते पहिले सूक्ष्मभूत प्रकट भये ॥ ८ ॥ पीछें पंचमहाभूत प्रगट होतभये प्राणीनके आवरणरूप दश अहंकार भये, प्रवृत्ति स्वभावरूप सात्विक अहंकारते देवता दश इंद्रियनके अधिष्ठाता दिशा वायु सूर्य वरुण अश्विनीकुमार अग्नि इंद्र विष्णु प्रजापति चंद्रमा मिलिकै ग्यारह देवता भये एक मनहूं भयो मन विना इंद्रियकों प्रकाश न होइ वह प्रकाशक हैं या प्रकार सब तत्त्व न्यारे न्यारे भये ॥ ९ ॥ पीछें एक अंड उत्पन्न कियो सो ब्रह्मांड विराट् पुरुषके अंतर्यामी मेरो उत्तम घर है जलमें अंड भयो ता अंडमें श्रीनारायणरूप लीलाशरीर करिकै मैं स्थित भयो, तहां मेरी नाभिमें एक कमल भयो, सो पद्म जगतरूप तत्वात्मक लोकनको कारणभूत है कमलमेंसों ब्रह्मा प्रकट भयो ॥ १० ॥ सो ब्रह्मा विश्वरूप तपस्या करिकै गुणसों युक्त मेरे अनुग्रहतें लोकपाल समेत तीनि लोक भूमि अंतरिक्ष स्वर्ग इनको सृजत भयो तिन लोकनहीमें चौदह लोक समझनें, तहां भूमि कहेते पाताललोक नीचेके आये, भुवर कहेतें अंतरिक्ष कह्यो, और स्वर्ग कहेतें महर्लोकतें लेके सत्यलोक ताईं सब कहें ॥ ११ ॥ लोकसृष्टिको प्रयोजन कहैं हैं, देवतानकों लोकस्थान स्वर्ग भयो भूत प्राणीनकों स्थान अंतरिक्ष भयो, मनुष्यनको लोक भूमि भई, जे सिद्ध हैं योगसाधन करें हैं तिनकों स्थान महर्लोकतें आदि लोक जानने ॥ १२ ॥ भूमितें नीचे लोकनमें असुर नागको स्थान प्रभु सृजत भये या प्रकार लोक न्यारे न्यारे करें हैं ताको कारण कहें हैं जे त्रिगुणात्मक कर्म हैं तिनकी गति त्रिलोकीमें है ॥ १३ ॥ महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोकमें योग संन्यास ज्ञान करिकैं निर्मल गति होयहै वैकुंठकी गति मेरी भक्ति विना नहीं होयहै सो भक्तियोगही करिकै होइ हैं वैकुंठकी गति विना और सब स्थान चंचल है स्थिर तो मेरी गति है, तातें और ठौर वैराग्य राखनो उचित है मैं कालरूप परमेश्वर हों यह जगत् सब कर्म युक्त कियो है सो माया गुण प्रवाहमें सब विश्व बूढ उछरे हैं, या लोकते और लोकमें जाइके फिरि गिरे है तातें यामें चित्त न लगावे ॥ १४ ॥ याको ब्रह्मरूप कहैं हैं, जो पदार्थ सूक्ष्म हैं जो बडो है जो स्थूल है दुर्बल है सो प्रकृति और पुरुष इन दोनोनसों युक्त है ॥ १५ ॥ जा कार्य्यको जो आदि कारण है और जो पीछेहू रहिवेको स्थान है सोई ताके मध्यमें है, तो वह ताहीको रूप है बीच व्यवहारमें और प्रकार भासे है जे सुवर्णके भूषण हैं माटीके घडा सरैयां हैं नाम न्यारे हैं वस्तुते सब सुवर्ण और माटी है, या प्रकार सब समुझि करिकै नाम भेद करि जो व्यवहार है सोई विकार है, सो मिथ्या है इतनोही समझनो चाहिये ॥ १६ ॥ यहां तर्क करें हैं जो तुम या प्रकार कार्यको एकरूप कहिके सत्यरूप कहोहो तो अपने अपने कार्य्यमें महत्तत्त्व आदि लेकै सब तत्त्व आदि अंत मध्यमें संयुक्त हैं, तो महत्तत्त्वनको सत्यता होसकै है तहां कहै है कि वे कारणरूप ब्रह्म भावरूपको अंगीकार करिकै कार्यको सृजे हैं. मृत्तिकाके पिंड निमित्त कारण घटको सृजे हैं आदि अन्तमें उसके मृत्तिकाही है जो जाको आदि अन्त है सो सत्य है ताते सबको आदि सो मृत्तिकाको लेकरही सृजे है अंत ब्रह्मही सत्य है ॥ १७ ॥ प्रकृति या जगत्को उपादान कारण हैं, उत्पत्तिस्थान है, पुरुष आधार अधिष्ठाता है, और काल गुणनके क्षोभ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करिकै वाकों प्रकट करनहारो है, सो ये तीनों ब्रह्मरूप मही हों, मोते ये भिन्न नहीं हैं प्रकृति मेरी शक्ति है, पुरुष और काल मेरी अवस्था है मेरो रूप होवेसों मेंही अद्वितीय स्वरूप हूं ॥ १८ ॥ अब या सृष्टिकी अवधि कहें हैं जीवके भोग दैवेके निमित्त प्रगट भई यह मेरी सृष्टि जबलों याको अंत आवे तबतक पिता पुत्र रूपसो निरन्तर चलै है और जबतक परमात्माको ईक्षण होयहै तबतक रहै है ता पीछे प्रलय होयहै सो कहें हैं ॥ १९ ॥ यह ब्रह्मांड विराट्रूप जामें लोकनकी कल्पना है जब याके निकट मेरो स्वरूपभूत काल पहुँचवे लगे है तब मुझसों पीड्यमान हैके सब लोक नाशको पामें हैं जैसे उत्पन्न भयेहैं ताही क्रमसों तत्त्व न्यारे न्यारे ह्वैके अपने कारणसों मिलिके नष्ट होयहैं ॥ २० ॥ यह शरीर अन्नते भयो है ताते शतवर्ष अनावृष्टिके भयेते क्षीण होय ता अन्नमें लीन होय है, अन्न बीजमें लीन होवे हैं, बीज भूमिमें लीन होय है जब बोयेतें न उपजे, भूमि गंधमें महाप्रलयकी अग्नि करिकै दग्ध होयहै गंधमात्र रहैहै ॥ २१ ॥ गंध जलमें लीन होय है जल अपने गुणमें लीन होय है रस ज्योतिमें लीन होवे है ज्योति रूपमें लीन होयहै ॥ २२ ॥ रूप वायुमें लीन होयहै वायु स्पर्शमें लीन होइ स्पर्श आकाशमें लीन होइ आकाश शब्दमें लीन होइ ॥ २३ ॥ शब्द अहंकारमें लीन होइ, ऐसे पंचभूतनकी प्रलय कहिकै इंद्रियनकी प्रलय कहैहै, इंद्रिय अपने प्रवर्तकमें लीन होयहै, जा इंद्रियनको जो देवता है ता देवतामें लीन होयहै ॥ २४ ॥ वे देव सब मनके वश हैं ताते मनमें लीन होयहैं, मन सब इंद्रियनको ईश्वर है, तामें प्रविष्ट होयहै, मन अपने सब देवतासहित सात्विक अहंकारमें लीन होइ शब्द तामस अहंकारमें लीन होय है, जाते कालके आधीन है ॥ २५ ॥ काल ज्ञानरूप महापुरुषमें लीन होयहै, पुरुष आत्मारूप जन्मरहित मोमें लीन होयहै, तब आत्मा एक शुद्ध विकल्प संकल्परहित अपनेई आनंदमें स्थित होइ रहैहै, या प्रकार सब सृष्टिको प्रकार कह्योहै ताको प्रयोजन कहें हैं ॥ २६ ॥ जब या प्रकार ज्ञानकरिकै देखे वाके मनको किधो भ्रम क्यों होइ, और भयोहू भ्रम हृदयमें क्यों रहे, जैसे आकाशमें सूर्योदय भयेतें अंधकार नहीं रहै ॥ २७ ॥ उद्धवसों श्रीकृष्ण कहें है यह सांख्यज्ञान विधि मैंने तुमसों कही, याके जानेते संदेहकी गांठि छूटि जाइ, उत्पत्ति प्रलयके प्रकार कहि समझाय कह्यो है, मोको सब ज्ञान पूर्ण हैं ॥ २८ ॥

एष सांख्यविधिः प्रोक्तः संशयग्रन्थिभेदनः ॥
प्रतिलोमानुलोमाभ्यां परावरदृशा मया ॥ २८ ॥

इति श्रीभागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अध्याय २५.

श्रीभगवानुवाच-गुणानामसमिश्राणां पुमान्येन यथा भवेत् ॥
तन्मे पुरुषवर्यैदमुपधारय शंसतः ॥ १ ॥

पचीसके अध्यायमें मोक्षकी सिद्धिके अर्थ अनेक प्रकार चित्तेंं उपजे सत्व आदि गुणनकी वृद्धि कहिये हैं ॥ श्रीभगवान् बोले जबतक प्रकृतिपुरुषको ज्ञान न होय जबतक तीन्यो गुणके स्वभाव न जीते होंइ तबतक सुख दुःख आदि द्वंद्व धर्म नहीं जायहै तातें जैसें गुणके स्वभाव जानेजाइ हैं ता उपाय करिवेको प्रथम गुणके स्वभाव कहें हैं हे उद्धव पुरुषनमें श्रेष्ठ तीन्यो गुण न्यारे न्यारे होयहैं, जब जा गुणसो जैसो पुरुष होइ सो यह तुमें मैं कहूंहूं ॥ १ ॥ तहां प्रथम सत्त्व-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

गुणको स्वभाव कहैं हैं सतोगुणको स्वभाव जाको होइ ताके ए धर्म होयहै शम, दम, क्षमा, विवेक, तप, सत्य, दया, पहलो और पिछिलो स्मरण, संतोष, त्याग, वैराग्य, आस्तिक बुद्धि, अनुचित्त कर्ममें लज्जा, दान, आत्मासूं रति ये सतोगुणकी वृत्ति कही ॥ २ ॥ रजोगुणकी वृत्ति कहे हैं कामना, चेष्टा, दर्प, तृष्णा, गर्व, देवतानके सुखकी आकांक्षा, विषयभोग, युद्धादिकनको उत्साह, जगमें प्रीति, हास्य, वीर्य्य, बलको उद्यम ये सब रजोगुणकी वृत्ति कही ॥ ३ ॥ तमोगुणकी कहें हैं क्रोध, लोभ, मिथ्या हिंसा, याच्ञा, दंभ, अनुद्यम, श्रम, कलह, शोक, मोह, विषाद, दुःख, हीनता, निद्रा, आशा, भय ये तमोगुणकी वृत्ति न्यारी न्यारी कही; अब एकसों एक मिली हैं ते वृत्ति सुनो ॥ ४ ॥ ५ ॥ हे उद्धव ! अहं मम यह जो बुद्धि है, तामें मन शब्द स्पर्श रूप रस गंध इंद्रिय प्राण ये सात्विक राजस तामस हैं, इन करिके जो कार्य्य है सो संनिपातजनित कार्य कहिये, तीनों गुणनके मिले कार्य हैं मैं शांत हौं मैं कामी हौं, क्रोधी हौं, मोको शांति है, काम है, क्रोध है, ऐसो व्यवहार तीनो गुणनको सन्निपात कार्य कहा है ॥ ६ ॥ जब यह पुरुष धर्म अर्थ काममें स्थित भयो तब जानियें तीनों गुणनकी एकता है, धर्म सात्विक, अर्थ राजस, काम तामस, धर्ममें श्रद्धा होई अर्थमें रति होइ काममें धन होइ ॥ ७ ॥ प्रवृत्ति सकाम धर्ममें निष्ठा राखे गृहाश्रम धर्ममें निष्ठा राखे यहहू गुणनके सन्निपातसों होय है कारण कि सकाम धर्म रजोगुणमय है घरमें आसक्ति तमोगुणमय है नित्यनैमित्तिक धर्ममें निष्ठा है सो सत्व गुणमय है ॥ ८ ॥ या प्रकार भिन्न भिन्न और मिले गुणनकी व्यवस्था कहि जा गुणसों जैसो पुरुष होइ सो कहे है, पुरुषके जो शम दम क्षमा दया ये धर्म होयहैं तो सात्विक जानियें, काम अनुराग करिकै राजस समझि लेइ, क्रोध आदि करिकै तामस जानिये ॥ ९ ॥ और जो भक्ति करिकैं निरपेक्ष होइ सो स्वकर्म करिकैं मेरो भजन करे सो पुरुष होउ अथवा स्त्री होउ वाको सतोगुणरूपी स्वभाव जाननो ॥ १० ॥ जो स्वकर्म कर्म करिके मेरो भजन करै है, और मोते कछु चाहना करै सो रजोगुण स्वभाव जाननो, और जो काहूके मारवेको मेरो भजन करें सो तामस जानिये ॥ ११ ॥ अब कहैं हैं इन गुणनके वश तो तुमहूं देखे जा हैं तो तुम सेव्य क्यों भये, और जीव सेवक क्यों भयो, सो कहो ताको उत्तर देयहैं ए तीनों गुण जीवकों हैं मोको नहीं हैं, ये सब चित्तके विकारते होयहैं जा करिकै प्राणी आसक्त होइकें बंधे है, मैं तो आसक्त नहीं हूं, नियंता होइ और द्रष्टा होइ रहों हौं, तातें बंधनमें नहीं याहीसों अपना भजन करनेके वास्ते वारंवार कहताहूं ॥ १२ ॥ जब एक गुणनको आधिक्य होई ताको कार्य्य दिखामें हैं, जब प्रकाशरूपमें निर्मल शांत सतोगुण बढिकै रजोगुणकों जीते तब पुरुष धर्म ज्ञानकरिकै परमसुखयुक्त होयहै, जब रजोगुण सतोगुण तमोगुणको जीते, तब पुरुष धर्म ज्ञान करिकै परम सुखयुक्त होइ ॥ १३ ॥ जब रजोगुण सत्व और तमकों जीते तब रजोगुण करिकै संग होइ ता करिकै भेद बुद्धि सर्वत्र होइ ता करिकै प्रवृत्ति मार्गको स्वभाव होइ कर्म यश श्री और दुःख करिकै युक्त होई ॥ १४ ॥ जब तमोगुण सतोगुण और रजोगुणकों जीते तब अवज्ञा करिकै मोहकों प्राप्त होइ, शोक मोह निद्रा हिंसा आशा करियुक्त होई विवेक जाइ अनुद्यमरूप जडता होइ रहै, और लय होइ ॥ १५ ॥ जब चित्त निर्मल होइ और इंद्रियनके विषयनके निवृत्ति होइ देहमें अभय होइ मनकी आसक्ति कहूं न होइ वह सतोगुण मेरी प्राप्तिको स्थान जाननो ॥ १६ ॥ जब क्रिया करिकै विकारकों प्राप्त होइ, बुद्धिकों विक्षेप होइ, ज्ञानेंद्रियनको शांति न होइ, कर्मेंद्रियनको निश्चलता न होइ, मन भ्रमें तब जानियें रजोगुण बहुत बढ्यो है ॥ १७ ॥ जब चित अंतर्द्धान होइ

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लीन होइ ज्ञान करि पदार्थ ग्रहणकों असमर्थ होइ मनहूंमें संकल्प विकल्प उपजते रहै हैं सो नष्ट ह्वैकै शून्यसों रहें, अज्ञान ग्लानि दुःख होइ तब जानियें तमोगुण बढ्यो है ॥ १८ ॥ हे उद्धव! सतोगुण बढे तब देवतानको बल बढे तब असुरनको बल बढे, तमोगुण बढे, तमोगुण बढे तब राक्षसनको बल बढेहै ॥ १९ ॥ सतोगुणतें जागरण होइ रजोगुणतें स्वप्न होइ तमोगुण करिकै सुषुप्तिकी अवस्था होइ इन तीनोंहू अवस्थामें व्याप्त एक चतुर्थ अवस्थारूप आत्मतत्त्व है, सो वह तुरीय निर्गुण अवस्था है ॥ २० ॥ गुणके उत्कर्षसे कर्मफलको दिखावेहैं सतोगुणके उत्कर्ष करिकैं ब्राह्मण वेदोक्त कर्म कर्त्ता ऊपर ब्रह्मलोक पर्यंत जायहै, तमोगुण करिकैं नीचेके लोकनमें जाय, रजोगुण करिकैं मनुष्य होयहैं ॥ २१ ॥ अब जा गुणकी आधिक्यतामें मरनेते जो गति होइ सो कहें हैं सतोगुणमें मरे तो स्वर्गमें जाइ, रजोगुणमें मरे तो मनुष्यलोकमें जाइ, तमोगुणमें मरे तो नरकमें जाइ और निर्गुण होई तो मोहिको प्राप्ति होवे है ॥ २२ ॥ जो स्वकर्म करे फल न चाहें अथवा मोकों अर्पण करे सो सात्विककर्म है जा कर्ममें फलकी याचना सो राजस, जामें हिंसा अधिक सो तामसकर्म है ॥ २३ ॥ अब सब गुण निर्गुण भेदकरिकैं ज्ञान और भक्तिहू चारि प्रकारकी है सो कहें हैं, केवल आत्मनिष्ठ ज्ञान सात्विक है, जो ज्ञान देह इंद्रियनके संबंधसो लीन होइ सो राजस जानिये जो बालक गुंगेको ज्ञान सो तामस जानिये, केवल शुद्ध पुरुषोत्तमनिष्ठ ज्ञान होइ सो निर्गुण जानिये ॥ २४ ॥ वनमें वास है सो सात्विक है, ग्रामको वास राजस है, जुवाके गृहमें वास तामस है, भगवन्मंदिरमें निर्गुण वास है ॥ २५ ॥ आसक्ति विना कर्मको कर्त्ता सात्विक कहिये आसक्तिसे अंध होकै कर्म करनौ राजस है, स्मरणते रहित कर्त्ता तामस है, मेरे एक शरण आई अहंकार छोडिकै कर्म करे सो निर्गुण है ॥ २६ ॥ आत्माकी श्रद्धा सात्विकी, कर्मकी श्रद्धा राजसी, अधर्ममें श्रद्धा तामसी, मेरी सेवामें श्रद्धा निर्गुण है ॥ २७ ॥ जो आहार भक्ष्य भोज्य वस्तु होई पवित्र होइ विना श्रम प्राप्ति होइ सो सात्विक जानिये, जो इंद्रियनको परमप्रिय मधुर कटु अम्ल लवण ये सब राजस है, जातें पीडा होइ अशुद्ध होइ सो तामस जानिये, जो वस्तु मोकूं निवेदन करी होइ सो निर्गुण जानिये ॥ २८ ॥ आत्माके अनुभवतें भयो सुख सतोगुणरूपी है विषयानुभवतें भयो सुख राजस है, मोह दीनतातें सुख होइ सो तमोगुणी है, मेरे आश्रय करिकैं सुख निर्गुण है ॥ २९ ॥ ये जितेक पदार्थ कहि आये हैं द्रव्य, पवित्र वस्तु, देश, वन, ग्राम, फल, काल, ज्ञान, कर्म, कर्त्ता, श्रद्धा, अवस्था, आकृति, स्थिति ये सब त्रिगुणमय हैं ॥ ३० ॥ हे श्रेष्ठ पुरुष! ये सब प्रपंचरूप भाव गुणमय जाननो, पुरुष और प्रकृति करिकैं अधिष्ठित है, जितनो देखोहो सुन्योहो बुद्धि करिकैं ध्यानमें रहै है सो सब गुणमय है ॥ ३१ ॥ ये सब गुण कर्म करिकै बांधी अर्थात् गुण और कर्मनके अनुसार पुरुषकों संसारकी गति है, हे सौम्य! जो जीव चित्तते उपजे गुण जीते सो भक्तियोग करिकैं निष्ठासो मेरे भावको प्राप्ति होइ हैं ॥ ३२ ॥ ताते विवेकी तातें जीतिवेहीको उपाय करै है सो कहै हैं ताते ज्ञानविज्ञानकी देनहारी या मनुष्यदेहको पाइकें गुणसंगको दूरि करिकै निपुण मेरो भजन करै है ॥ ३३ ॥ ज्ञानवान् सावधान जितेंद्रिय सब संग छोडिके निःसंग होइ मेरो भजन करे ॥ ३४ ॥ सतोगुणकी सेवा करिकै रजोगुण तमोगुणकों जीते, पीछे निरपेक्ष होई शांत बुद्धि होइ मेरे विषें चित्त राखिकैं सतोगुणकोहूं जीते ॥ ३५ ॥ या प्रकार मोकों प्राप्ति होइ सो कहें हैं यह जीव जब गुणन करिकैं छूटे तब अपने वासना देहकों छोडिके मोकों प्राप्त होइ जब मोकों प्राप्त भयो तब फेरी संसारी नहीं होइ, जीव लिंगशरीर करिकैं और चित्ततें उपजे गुण करिकैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुक्तभये पीछे मोसों मिलिकै ब्रह्म होइकै रहे, विषयभोग न करे, और विषयभोगनको स्मरणहू न करे ॥ ३६ ॥

जीवो जीवविनिर्मुक्तो गुणैश्चाशयसंभवैः ॥
मयैव ब्रह्मणा पूर्णो न बहिर्नान्तरश्चरेत् ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्भागवते भाषाटीकायां एकादशस्कन्धे पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अध्याय २६.

श्रीभगवानुवाच-मल्लक्षणमिमं कायं लब्ध्वा मद्धर्म आस्थितः ॥
आनन्दं परमात्मानमात्मस्थं समुपैति माम् ॥ १ ॥

अब छब्बीसके अध्यायमें दुष्ट संगमें भ्रष्ट होइ, साधुसंगते योग, उत्तम सिद्धताके लिये पुरूरवा राजाकी कथा श्रीकृष्ण कहते हैं ॥ हे उद्धव ! यह जीव जातें मेरो रूप जान्यो जाइ ऐसे मनुष्य-देहकों पाइकै मेरे धर्ममें स्थित होइ सो अपनें आत्मामें स्थित आनंदरूप परमात्मारूपकों प्राप्ति होइ है ज्ञाननिष्ठाके प्रभावके कारण गुणमय लिंगशरीरसों मुक्त भयो पुरुष गुण कि जो माया-मात्र और वास्तविक रीतिसो प्रतीत है रहे है विनमें निवास करवेपेहू इन मिथ्या गुणनकैं संगको प्राप्त नहीं होयहै ॥ १ ॥ २ ॥ यद्यपि वाकों सर्वत्र वस्तुकी इच्छा नहीं तथापि दुष्ट संग न करे जो केवल उपस्थ इंद्रिय और उदरकों तृप्ति करवेवारे हैं ऐसे दुष्टनको कबहूं संग न करे क्योंकि एकहू दुष्टजनको जो संग होइ तोहू महाघोर अंधतम नरकमें परे हैं जैसे एक अंधके पीछे दूसरो अंधो गिरै है बहुतनकों संग बाधा करै है, यामें कहा कहनो ॥ ३ ॥ इलाकों पुत्र बडो यशस्वी राजा पुरूरवा जब प्रथम उर्वशीके विरहसों मोहित भयो हो तब और दुखसो कातर हैकै कुरु-क्षेत्रमें पहुंचो और वहां उर्वशीको देख प्रार्थना कीनी वानें गन्धर्वनकी उपासना बताई विनके द्वारा राजा गन्धर्वलोकनमें प्राप्त भयो जब वहां वाको शोक निवृत्त भयो तब वाने यह गाथा गाई ॥ ४ ॥ पुरूरवा राजाकों छोडिकै जब उर्वशी चलीगई, तब उन्मत्तकीसी नाई नग्न ताके पीछे विलाप करतो जाय, यह कहत भयो हे घोरे ! हे जाये ! तिष्ठ तिष्ठ या प्रकार विह्वल हैकै कहत चल्यो ॥ ५ ॥ पुरूरवा राजा अपनी पहिली अवस्था कहै है, तुच्छकामनाको सेवत मैं तृप्त न भयो अनेकन वर्षनकी रात्रि आई और बीती पर विनमें जानत न भयो, चित्त उर्वशी करिकै हरयो है जब ज्ञान भयो तब जैसे वचन कहे सो कहें हैं ॥ ६ ॥ पहिलें आठ श्लोकन करिकै वा राजाको पश्चात्ताप कहै हैं, अहो देखो मेरे मोहको विस्तार मैंने इतनो विषय कीनो; तोऊ काम करिकै मलीन चितमें उर्वशी करिकै कंठ ग्रहण सहित रहत भयो, सो इतनी आयु मेरी व्यर्थ गई मैंने कछु जानी नहीं ॥ ७ ॥ अब अति खेद करिकै कहैं हैं देखो या उर्वशी करिकैं मैं वंचित भयो, सूर्य्य उदित भयो कै अस्त भयो यह मैंने न जान्यो बहुत वर्षनके इतनें दिन बीत गये मैंने कछू न जाने ॥ ८ ॥ हे उद्धव ! अब और कहै हैं अहो मेरे मनको देखो जो मेरो आत्मा इन स्त्रीनके खेलिवेको हरिण

१ दोनो एकहि रूप हमारे ॥ चाहै भजन करो निर्गुणसे चाहै सगुण सुधारे ॥ चाहे योग साध अभ्यन्तर रहो ध्यान उर धारे ॥ चाहे करो मूर्तिपूजन मंदिर बैठ सुखारे ॥ उत मन मंदिर सबके राजत इत लख नैन उघारे ॥ उत एक प्रणव अलख उच्चारण इत श्रीकृष्ण मुरारे ॥ यह दोनो वोहित तारण हित मन रुचिके अनुसारे ॥ जहां ज्वालाप्रसाद रति उपजै सेवहु कपट विसारे ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कियो मैं राजानको राजा हों, सो मैं ऐसो पराधीन भयो ॥ ९ ॥ राज्यादि सहित चक्रवर्ती मोकों देखो, जो तृणकीसी भांति मोय छोडिकै उठि जाति भई, ता स्त्रीके पीछे नग्न उन्मत्तकीसी भांति मैं हूं उठि चल्यो ॥ १० ॥ ऐसे मोको प्रताप तेज ऐश्वर्य कहांते होइ जो मैं चली जाति स्त्रीके पीछेई लग्यो चल्यो आयो जैसें गधैयाकी भांति वह तो पाइनसों मारति जायहै और गदहा वाके पीछें जैसें चल्यो जायहै तैसें मैं चल्यो गयो ॥ ११ ॥ जाको मन स्त्रीन करिकैं हरयोहै, ताको विद्या तप दान अध्ययन एकांतवास मौन इन साधनन करिकै कहा होइहै ॥ १२ ॥ विचार करो तातें मैंने अपनो स्वार्थ न जान्यो और आपुकों पंडित मानि लीनो मूर्ख हो मोकों धिक्कार है, जो मैं ऐश्वर्यकों पाइकैहू स्त्री करिकैं बैल गदहाकी भांति आधीन भयो ॥ १३ ॥ अनेक वर्षनके समूह मैं उर्वशीको अधरमधु पीवतभयो, तथापि यह काम अबहूं तृप्त नहीं होयहै, जैसें आहुतिनसो अग्नि तृप्त नहीं होइ ॥ १४ ॥ या प्रकार आठ श्लोकन करिकै वैराग्य कह्यो अब विवेक दश श्लोकन करिके कहें है, जिनके चित्त वेश्याननें हरे हैं, तिन्है छुडाइवेकों आत्माराम ईश्वर अधोक्षज भगवान् विना और कौन समर्थ है तातें एक परमेश्वरहीको भजन कीजे, बहुतेरे यज्ञन करिके देवता प्रसन्न किये पर अंतसमयमें दुःखही पायो ॥ १५ ॥ ईश्वर प्रसाद विना मोह निवर्त नहीं होयहै तातें विनहीको भजन करिये, देखो उर्वशीनें उत्तम वाक्यन करिकैं मोकों समझायोहो, तोहू मेरे मनको मोह न गयो मैं अजितेन्द्रिय महामूढ हों ॥ १६ ॥ उर्वशीको अपराध नहीं यह मेरोही अपराध है कारण कि मैं अपने अजितेन्द्रीपनसोही दुःखी भयो हूं वाने मेरो कहा अपराध कियोहै जेवरीकों न जान जैसें जेवरीमें सर्पको भ्रम करे तो विद्यमान जेवरीको कहा अपराध है, ॥ १७ ॥ कदाचित् कहो याने अपने रूप गुण करिकैं मोह उपजायो यह दोष याहीकों है, दोनों ये दोष मनमें रचे हैं अज्ञानतें हैं सो कहें हैं यह अति मलीन दुर्गंधादिसों भरी देह कहां और पुष्पकी सुगंधके तुल्य आत्माके गुण कहां, सब ठौर ममत्व अविद्याको कियोहै वस्तुतें विचारेतें सर्व मिथ्या है ॥ १८ ॥ यह देह माताकी कहिये स्त्रीकी है कै स्वामीकी है कै अग्निकी है कै कूकर गीधनकी है कै आत्माकी है कै मित्रनकी है कौनकी कहिये इतनो तो याको निश्चय होयही नहीं है ॥ १९ ॥ ऐसे अपवित्र तुच्छदेहमें आसक्त होय हैं सो कहें हैं देखो तो कैसो सुंदर मुख है कैसी सुंदर नाक है कैसो सुंदर हँसिवो है यों भूलें हैं और यह तो सब कृमि विष्ठा भस्मरूप हैं ॥ २० ॥ त्वचा मांस रुधिर आंतें मेद मज्जा हाड संघातरूप देहमें जे आसक्त हैं तिनमें और विष्ठा मूत्र पीवमें जे रमे हैं तिनमें कहां अंतर कछू नहीं जैसे कृमि तैसे वे मनुष्य हैं ॥ २१ ॥ यद्यपि या प्रकार स्त्री कदर्यमयी जानेहैं तोहू विन स्त्रीलंपटनके निकट जो विवेकी होइ तौं न जाय विषय असत इंद्रियनके संगतें मन सर्वथा विकारको प्राप्त होइ है संग न होइ तो न होइ तातें दूर रहे ॥ २२ ॥ जो वस्तु देखी सुनी नहीं है वामें मनकी इच्छा नहीं होय है या कारण जो पुरुष इन्द्रियनको रोकै है वा पुरुषकौ मन निश्चय हैकै शांत है जाय है ॥ २३ ॥ तातें इंद्रियनसौ स्त्रीनसो और स्त्रीलंपटनकौ संग करे जे विवेकी ज्ञानवंत हैं तिनहूंकों इन इंद्रियनको विश्वास कर्त्तव्य नहीं मो सरीखेनकी तो बातही कहा कहिये ॥ २४ ॥ अब श्रीकृष्ण उद्धवतें कहैं है या प्रकार गावत राजाधिराज वह राजा उर्वशी लोकको छोडि अपनेमें आत्मरूपको जानि ज्ञानसों मोह निवृत्ति करिकैं निवृत्त होत भयो ॥ २५ ॥ तातें दुःखसंगको छोडि बुद्धिवंत हैकै साधुसों संग करै वे अपने वचनसौ याके मनकी गांठि काटेहै ॥ २६ ॥ साधु कछु चाहे नहीं हैं निरपेक्ष है, उनके चित्त मेरे विषें हैं, समदृष्टि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

है ममतारहित है, अहंकाररहित शांत हैं, सुख दुःख परिग्रहही नहीं है तातें विनको संगही या मनुष्यको तारेहै ॥ २७ ॥ हे महाभाग ! वे बडे भाग्यवंत है जो निरंतर मेरी कथानको श्रवण करे है वे कथा मनुष्यके मनके संपूर्ण पाप दूरि करेहै ॥ २८ ॥ जे कोऊ कथा सुनेहैं गामें है स्तुति करें है आदर करे है ते मो विषें तत्पर ह्वैके श्रद्धासों मेरी भक्तिकों पामेंगे ॥ २९ ॥ अनंत गुण पूर्ण आनंदरूप अनुभवरूप मो विषें जा साधुने भक्ति पाई फेरि वाकों और कहा बाकी रह्यो ॥ ३० ॥ जैसें भगवान् अग्निकी सेवातें शीत अंधकार जाय है तैसें साधुसेवातें संसारभय जाय है ॥ ३१ ॥ प्राणी घोर संसार समुद्रमें बूडते उछरतेहैं तिनको ब्रह्मके ज्ञाता साधु शांतही परम गति हैं जैसे जलमें बूडतेंको दृढ नाव परम गति होय है ॥ ३२ ॥ प्राणीनको जैसे अन्न प्राण है तैसें आर्त्तनको शरण मैं हो मनुष्यकों परलोकको धर्मही धन है तैसे संसारते डरे पुरुषकों शरणके देनवारे साधु है ॥ ३३ ॥ साधु नेत्र देइ है जैसे नेत्रनतें सब ज्ञान होइ तैसें साधुनतें सब गुण निर्गुणज्ञान होई सूर्य्य बाहिर प्रकाशक है साधु ईश्वरको ज्ञान प्रकाश करे है देवता बांधव साधु है, आत्मा है, सो संत जननमेंही हैं ॥ ३४ ॥ प्रथम याको पिता शुद्धमनसों स्त्रीरूप ह्वैके पार्वतीके वनमें गयोहो तातें ताके बेटा पुरूरवाको नाम वैतसेन कह्यो सो ता उर्वशी लोकतें ऐसें निस्पृह ह्वैके संग छोडि आत्माराम होइ या पृथ्वीमें विचरत भयो ॥ ३५ ॥

वैतसेनस्ततोऽप्येवमुर्वश्या लोकनिस्पृहः ॥
मुक्तसंगो महीमेतामात्मारामश्चचार ह ॥ ३५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अध्याय २७.

उद्धव उवाच-क्रियायोगं समाचक्ष्व भवदाराधनं प्रभो ॥
यस्मात्त्वां ये यथार्चन्ति सात्वताः सात्वतर्षभ ॥ १ ॥

अब सत्ताईसके अध्यायमें संक्षेपतें सांख्यकर्म योग कहैं हैं जातें चित्त प्रसन्न होइ सब कामकी प्राप्ति होय है ॥ तहां उद्धवजी पूछेहै हे प्रभो ! हे यादवनमें श्रेष्ठ ! अपनो आराधनरूपक्रियायोग मोसों कहो तातें तुम्हारे भक्त जैसें तुम्हारी पूजा करेहै सो कहो ॥ १ ॥ यह योग फिरि पूछतभये ताको कारण कहा तहां कहैं हैं तुम्हारो यह पूजन मनुष्यनकों परमश्रेयदायक है नारद भगवान् व्यास अंगिराके पुत्र बृहस्पति ये सब मुनीश्वर वारंवार कहें हैं ॥ २ ॥ जो वाणी तुम्हारे मुखकमलतें निकसी सोई भगवान् अजन्मा ब्रह्मा अपने पुत्र भृगु आदि सबनसों कहत भये, जो महादेवने पार्वतीसों कह्योहो सो तुम हमसों कह्योहो ॥ ३ ॥ हे मानके दाता ! यह सब वर्ण आश्रमनकों संमत है, स्त्री शूद्रकों परम कल्याण करेहै ॥ ४ ॥ हे कमलदलनेत्र ! हे विश्वेश्वरनके ईश्वर ! यह कर्मबंधनको छुडा मनहारो पूजाविधान मोसो कहो, मैं तुम्हारो भक्त हों तुम विषें अनुरक्त हो ॥ ५ ॥ तब श्रीकृष्ण कहे है हे उद्धव ! यह कर्मकांड अनंत हैं, याको पार नहीं, तातें जैसे है तैसे क्रम करिकै संक्षेपते कहूंहूं ॥ ६ ॥ वैदिक तांत्रिक मिश्रित तप यह तीनि प्रकारको मेरो पूजन है इन तीनोंनमें जाकी जैसी इच्छा होइ ता विधिसों भक्ति करिकै मोको पूजे ॥ ७ ॥ जब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तीनि वर्ण अपनी विधिसों भक्ति करिकै मोकों पूज्यो चाहें ताको प्रकार सुनि, प्रथम गर्भतें अष्टमके एकादशके द्वादशके वर्षमें अपने वेदमें कह्यो गायत्री उपदेश पाइकै पुरुष जैसे भक्ति करिकै मोकों भजे सो मोतें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुनो ॥ ८ ॥ प्रतिमामें पूजा योग्य, भूमिमें अग्निमें अपनें हृदयमें सूर्य्यमें जलमें ब्राह्मणमें द्रव्य करिकै भक्तिसों निष्कपट ह्वैकें अपने गुरुनको पूजे ॥ ९ ॥ आपु प्रथम तो दंतधावन करे, माटी ले अंगशुद्धिके लिये स्नान करे पीछे वैदिक तांत्रिक विधिसों स्नान करे ॥ १० ॥ पीछें वेदविहित संध्योपासनादि कर्म सब करे, पीछें तिन करिकैं कर्मकी दूर करनहारी मेरी पूजा करे, मनकों संकल्प मेरे विषें राखे ॥ ११ ॥ अब प्रतिमाके भेद कहैं हैं काष्ठकी, लोहेकी, माटीकी, चित्रकी, रेतकी, मानसी, मणिजटित होइ ये आठ प्रतिमा कहे हैं ॥ १२ ॥ अब प्रतिमाके भेद कहिके विशेष कहैं हैं हे प्यारे उद्धव ! भगवान्‌की मानसी पूजा करनी हो तौ हृदयमें मनोमयी मूर्तिकी पूजा करनी प्रतिमा दो प्रकारकी है एक तो चर और अचर तहां स्थिर मूर्तिकी पूजामें आवाहन विसर्जन नहीं है ॥ १३ ॥ शालग्राममें आवाहन विसर्जन न करे और ठौर करे अस्थिर प्रतिमाहूमें आवाहन विसर्जन है कहूं नहीं हैं; माटी चंदनकी प्रतिमामें और चित्रकीमें मार्जन मात्र करे, स्नान नहीं करावें ॥ १४ ॥ अब सकाम निष्काम भेद करिकैं विशेष कहैं हैं, सकामको प्रसिद्ध द्रव्य पूजामें कहे हैं तिन करिकैं मेरी प्रतिमामें पूजा करे, जो भक्त निष्काम होइ सो जो सामग्री यथालाभ पावै सो सब मोको समर्पण करै न पावे तब वह हृदयमें भावना करिकैं पूजा करे, तो मैं वाके भावही करिकै सब मानिलेउहूं ॥ १५ ॥ स्नान अलंकार ये सब प्रतिमाहीमें मोको प्रिय है, हे उद्धव ! स्थंडिलमें मंत्रही करिकै अपने स्थानमें तिन तिन देवतानको स्थापन है, अग्निमें घृतसंयुक्त हविकरिकै होम करे ॥ १६ ॥ सूर्य्यमें अर्घ उपस्थान करे, जलमें तर्पणादि करै, भक्तनकों श्रद्धा करिकै दियो जलमात्रहू मोको अति प्रिय है ॥ १७ ॥ सुगंध फूल धूप दीप अन्नादिक समर्पण करे तो वाको कहा कहनो है, मेरो भक्ति न होइ और बहुत समर्पे तो मैं वासों संतुष्ट नहीं होउहूं ॥ १८ ॥ अब पूजाको प्रकार कहै है, प्रथम तो आपु स्नानादिक शौच करिकै शुद्ध होइ, पीछे पूजाकी सामग्री सब शुद्ध करिकै राखे, फेरि पूर्वमुख वा उत्तरमुख बैठे पूर्वमुखको अग्र करिकैं दर्भनसो आसन करिकैं स्थिर प्रतिमामें सन्मुख ह्वैकें पूजा करें ॥ १९ ॥ पहिले तो न्यास करे, पीछें मूलमंत्रनकरिकैं न्यास कृत मेरी प्रतिमाको हाथसों स्पर्श करे, रातिके निर्माल्य फूल पत्र जो कछु होइ सो दूरि करे आगे जल भरयो कलश राखे और प्रोक्षणीपात्र राखे ताकों चंदन तुलसीपत्र पुष्प करिकैं शोधन करे ॥ २० ॥ पीछें प्रोक्षणीके जलसों पूजनकों स्थान शुद्ध करे, ताहीसों द्रव्यकों और अपनपेको प्रोक्षण करे, पीछे पाद्यके लिये ता कलशके जलसों तीनि पात्र भरराखे, तिनहूकों इन वस्तुनते शोधन करे, पाद्यको सामा दूब कमल विष्णुक्रांता ये चाहिये, गंध पुष्प अक्षत यव कुश तिल सरसों दूर्वा ये अर्घ्यको आठ द्रव्य चाहियें, जावित्री लौंग कंकोल ये आचमनको चाहिये ॥ २१ ॥ पाद्य अर्घ्य आचमनके तीन पात्रनको हृदय मस्तक शिखा मंत्र करिकैं और गायत्री करिके अभिमंत्रण ॥ २२ ॥ करे पीछें देहको कोष्ठगत वायु करिकै शोधे, मूलाधारविषें स्थित अग्नि करिकै जरावे, फेरि ललाट विषें स्थित चंद्रमामंडल है तहां अमृत प्रवाह करिकै अमृतमय करे तहां हृदयकमलमें स्थित सूक्ष्म जीव कला नारायण मूर्ति है, ताकों ध्यानकरकें प्रणव अक्षरके आकार उकार मकार कि जाकौ सिद्ध ध्यान करैं हैं ध्यान करै ॥ २३ ॥ दीपकके प्रकाशसों घरकी समान अपने स्वरूपकी भावनासो जब देह व्याप्त होइ प्रथम वा देहहीमें पूजा करिकै आपु तन्मय होय, पीछें आवाहन करिकैं प्रतिमामें स्थापन करे, फिर न्यास करिकैं मोको पूजे ॥ २४ ॥ सो प्रकार कहै हैं फेरि आवाहन करि प्रतिमामें पाद्य आचमन अर्घ्यादि सब उपचार करे धर्मादिक नव शक्ति है तिन करिकैं मोकों आसन देइ ॥ २५ ॥ अष्टदल कमल बनावै,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

केशरिसो उज्ज्वल सुंदर कर्णिकामें वेद आगममें कथित मुक्ति पाइवेके फलकी सिद्धि निमित्त वैदिक तांत्रिक मार्ग करिकै मेरी पूजा करे, वह आसन सुखशय्या है, ताके चारि कोण हैं, चार पाउ हैं तहां धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य आग्नेय नैर्ऋत्य वायव्य ईशान्य इन चारिहू कोनमें राखे ॥ २६ ॥ आयुधनकी पूजा करे सुदर्शनचक्र पांचजन्य शंख गदा खड्ग बाण धनुष हल मूसल कौस्तुभ माला श्रीवत्सकी पूजा करे ॥ २७ ॥ नंद सुनंद गरुड चंड प्रचंड महाबल कुमुद कुमुदेक्षण ये आठ पार्षद हैं, तिनकी आठों दिशानमें पूजा करे ॥ २८ ॥ दुर्गा विनायक व्यास विष्वक्सेनकों कोनेनमें राखे, गुरुको वाम भागमें राखे, देवता इंद्र आदि लोकपालनको पूर्वतें लेकें अपनी अपनी दिशानमें ईश्वरके सन्मुख राखे, अर्घ्य-पाद्य करिकैं पूजा करे ॥ २९ ॥ चंदन उशीर कपूर कुंकुम अगर इन सुगंधन करिकै राखे, जलसों मंत्रण करिकै स्नान करावे, जो वैभव होइ तो ये सामग्री करे न होइ तो जो होइ तासों करे ॥ ३० ॥ सुवर्णघर्मानुवाक और महापुरुषविद्या और सहस्रशीर्षा और राजानकीसी सामग्रीन करिके पूजा करे ॥ ३१ ॥ स्नानपीछे वस्त्र जनेऊ आभूषण मकराकृत कुंडल माला सुगंध लेपन करिकै शृंगार करे, प्रेमसहित मेरो भक्त यथोचित या प्रकार मेरो पूजन करे ॥ ३२ ॥ पाद्य आचमन गंध पुष्प अक्षत धूप दीप नैवेद्य ये सब श्रद्धा करिकै भक्त देई ॥ ३३ ॥ वैभव होई तो नैवेद्यकी अनेक प्रकारकी सामग्री करे, गुड मिश्री खीर आदिक घृत पुरी पुआ लड्डवा गेहूंकी खीर दही दालि ये सब करे ॥ ३४ ॥ पर्वमें उत्सवमें अथवा नित्य फुलेलसों अभ्यंग उबटनो दर्पण दंतधावन स्नान अन्नादि पाक सामग्री गीत नृत्य ये सब करने यदि सदा न हो सकै तौ पर्वमें वा उत्सवके दिन अवश्य करै ॥ ३५ ॥ या प्रकार प्रतिमामें पूजा कही है अब अग्निमें पूजा कहें हैं विधिसों कुंड बनावे, मेखला गर्त्त और वेदी कर तामें अग्नि राखे प्रथम हाथसों एकत्र करे तब कुंडमें राखे ॥ ३६ ॥ पीछे कुशा बिछावे चारोहूं दिशा छिरके अन्वाधान नामकर्म समिधसों होम करिकै जल फेरि छिरके मेरो ध्यान करे ॥ ३७ ॥ ऐसो रूप मेरो ध्यान करे, तप्त सुवर्ण जैसो लाल होइ तैसो रूप पीताम्बर पहिरे शांत रूप शंख चक्र गदा पद्मसो चारों भुजा शोभित है ॥ ३८ ॥ प्रकाशित मुकुट कंकण मेखला बाजूबंद श्रीवत्सको वक्षःस्थलमें चिह्न शोभायुक्त कौस्तुभमणि वनमाला धरे हैं ॥ ३९ ॥ ऐसे रूपको ध्यान कर घृत मिलाइ समिधसों होम करे, आज्य भाग और आघार नाम होम करे और घृतसों बूडी हविष्य लेइ ॥ ४० ॥ मूलमंत्रसों सहस्रशीर्षाकी ऋचासो होम करे धर्मादिक देवतानके निमित्त यथायोग्य होम करे ॥ ४१ ॥ पार्षदनको बलि देइ, नारायणरूप ब्रह्मको स्मरण करते देवतानके समीप बैठिके मूलमंत्र जपे, फेरि नैवेद्य करिकै भोजनकी सामग्रीको ध्यान करे ॥ ४२ ॥ पीछे आचमन देइ, वह शेष उच्छिष्टभाग विष्वक्सेनके आगे रख उनकी आज्ञाते आप लेइ पीछे मुखवासार्थ सुगंध तांबूल सब देइ ॥ ४३ ॥ ता पीछे मेरे चरित्र गावैं, नृत्य करे मेरे कर्मनको अभिनय दिखावे, मेरी कथा मोकूं सुनावे, आपुहू सुनें, एक मुहूर्त्त निश्चल चित्त ह्वैकें रहै ॥ ४४ ॥ वेद पुराणके तथा प्राकृत भाषाके स्तोत्रन करिकै स्तुति करे, हे भगवन् ! प्रसन्न होउ, यह कहिकै दंडवत् प्रणाम करे ॥ ४५ ॥ प्रणाम या प्रकार करे शिर मेरे पाउ ऊपर राखे दोऊ हाथ बांधि पीठिपर राखे अपराधीकीसी नाईं हैं तुम्हारे शरण हों हे प्रभो ! मोकों राखिलेउ मृत्युरूप जहां ग्राह है ऐसे संसारसमुद्रते भयभीत हों ॥ ४६ ॥ या प्रकार पूजा करिकैं शेष प्रसाद पुष्प तुलसी मोइ देउ ऐसो ध्यान करे ताको लेकें माथे धरे, आदरपूर्वक विसर्जन कर ज्योति ज्योतिसों जाइ मिलावे ॥ ४७ ॥ इतने स्थलमें प्रतिमादिकनमें, कौन मुख्य है यापै कहे हैं जाकों जहां श्रद्धा हो सो तहां पूजा करे,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जाते सर्व भूतनमें सर्वरूप मेंही स्थित हों और सर्व भूत मोमें निवास करै हैं ॥ ४८ ॥ या प्रकार क्रिया योगके मार्ग वैदिक तांत्रिकके प्रकारसों पूजा करते पुरुष या लोक परलोककी वांछित सिद्धि मोते पावे है ॥ ४९ ॥ मेरी प्रतिमाकी स्थापना करिकैं दृढ मंदिर बनावे, पीछे फूलनको उत्तम बाग बनवावें, जहां मेरी यात्रा उत्सव होय हैं ॥ ५० ॥ नित्य अथवा बडे पर्वन विषे पूजा सदा चली जाइ, ताके निमित्त क्षेत्र वा पुर ग्राम लगाय देई, तब मेरे समान ऐश्वर्य्यकों पावे ॥ ५१ ॥ प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करे तो सब पृथ्वीको राजा होय, मंदिर बनवावनवारो त्रिलोकीको राज्य पावे, पूजा आदि ये सब कृत्य करे तो ब्रह्मलोक पावें, तीनों प्रकार करे तो मेरी सायुज्य मुक्तिको पावे ॥ ५२ ॥ या प्रकार पूजाको फल मुक्तिपर्यंत कह्यो, अब निष्काम होइ ताकों भक्तिको फल कहै है, निरपेक्ष भक्तियोग करिकैं मोहीकों पावे सो भक्ति कैसें होइ तहां कहैं हैं भक्ति तब होइ जब ऐसी भांति मेरी पूजा करे ॥ ५३ ॥ दाताको फल कह्यो, अब दै करिकैं छीड लेइ ताकों निंदित कर्म कहै हैं जो अपनी दीनि तथा पराई दीनि ब्राह्मण देवताकी वृत्तिको हरण करलेइ सो अयुत वर्षपर्यंत विष्ठाको भोजन करै है ॥ ५४ ॥ जो फल कर्त्ताकों सोइ फल सहाइकारिको होइ प्रेरक अनुमोदनकर्त्ता इन सबनको परलोकमें एकसो फल होइ कारण यह कि यह सब कर्मके विभागी हैं जिनसे जितनो अधिक कियो, वाकू वितनोही अधिक फल मिलै है सहाइ आदि कर्म बहुत कियो होइ तो बहुत फल होय है ॥ ५५ ॥

कर्तुश्च सारथेर्हेतोरनुमोदितुरेव च ॥
कर्मणां भागिनः प्रेत्य भूयो भूयसि तत्फलम् ॥ ५५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे श्रीभगवदुद्धवसंवादे पुरुषार्चनविधिर्नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अध्याय २८.

श्रीभगवानुवाच–परस्वभावकर्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत् ॥
विश्वमेकात्मकं पश्यन्प्रकृत्या पुरुषेण च ॥ १ ॥

अब अट्ठाईसके अध्यायमें पहिलें जो विस्तारसों ज्ञानयोग कह्यो हो सो अब फिर संक्षेपतें कहैं हैं ॥ श्रीकृष्ण कहैं हैं हे उद्धव ! जो मेरी भक्तिमें पूजामें रहे सो यह ज्ञाननिष्ठा करै पराये स्वभाव कर्मनकी स्तुति और निंदा न करै, सो संपूर्ण विश्वकों प्रकृति पुरुष करिकैं एक रूप जानें मोतें भिन्न न जाने ॥ १ ॥ जो पराये स्वभाव कर्मकी निंदा करे सराहना करे जाके मिथ्याभूत प्रपंचदृष्टि होइ सो शीघ्र ज्ञानते भ्रष्ट होइ ॥ २ ॥ जब इंद्रियगण निद्रा करिकै व्याप्त होय हैं, तब मन करिकै यह जीव स्वप्न देखे है, मायारूप स्वप्न है, पीछें मनहूं लीन होयहैं, तब चेतना नष्ट होय है तब मृत्युसमान सुषुप्ति दशा होयहैं, तैसें जाकी बुद्धि या विश्वको नानाप्रकार करिकैं जाने हैं, सो विक्षेप लयको पावे हैं स्वप्नमें जो होयहै सोई भ्रमरूप यह है ॥ ३ ॥ जो वस्तु नहीं, भ्रम है तामें यह भलो भयो यह बुरो भयो इतनो भलो इतनो बुरो यह कहा कहनो याको नाम धर्यो सो सब मिथ्या है मन करिकै ध्यान करै है, नेत्रन करिकै जो देखे हैं सो सब मिथ्या हैं, तहां भलो बुरो कहे तो सब अपनो अज्ञान भ्रम है ॥ ४ ॥ तहां दृष्टांत कहैं हैं प्रतिबिंब झांई सीपीमें रूपकी बुद्धि ये सब जैसें मिथ्या है कार्यकों करते, तैसें ये देहादिकभाव मरणताई भय देइ है ॥ ५ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वेदमें जो सृष्टि कही है सो आपुही ब्रह्म विश्वरूप व्हैकें प्रकट होय है आपुही उत्पत्ति होइ आपुही सृजे है आपुही रक्षा कराइलेइ ईश्वर आपही संहार करै है और जाको संहार करता यह भावही है ॥ ६ ॥ आत्मा जो सबसों पृथक् निरूपण कियो है वासों कोई पदार्थ पृथक् नहीं यह अध्यात्म अधिदैव और अधिभूत रूप जो प्रतीत होय है यह सब मायारचित हैवेसों निर्मल है यह अध्यात्मादि तीन प्रकारको गुणयुक्त संसार आत्मामें मायाके द्वारा भासे है ॥ ७ ॥ यह मेरी कही ज्ञान विज्ञानकी चेष्टाकों जानें सो काहूकी न निंदा करे न स्तुति करे, सूर्य्यकी भांति सम होइ लोकमें फिरे ॥ ८ ॥ वह कैसें होइ सो प्रकार कहें हैं, जो वस्तु आदिअंतयुक्त है सो मिथ्या है, यह जानि करि प्रत्यक्ष उपजे और नष्ट भये जगत्कूं अनुमान वेद और अपने अनुभव करिकै यों जानें, जो दीखै है सो सब मिथ्या है, यह दृढज्ञान जब होइ तब निःसंग विचरे ॥ ९ ॥ तहां तर्क करि उद्धव पूछे हैं आत्मा स्वयंप्रकाश है ज्ञानरूप है देह तो जड है, तो यह संसार कौनकों लगै है, हे प्रभो! आत्माकों है या देहकों संसार है इनहीकों आत्मा द्रष्टा है वह देखे है देह तो जड है आत्मा जड नहीं पर देखनवारो है ॥ १० ॥ आत्मा अव्यय अगुण शुद्ध स्वयंज्योति आवरणरहित है, और देह तो जड है परि इनको संयोग काष्ठ और अग्निसों है अग्नि और काष्ठ भिन्न नहीं जानिये तैसे देह आत्मामें एकता है, इन दोऊनमें संसार काहूकों नहीं संभव है तोहूं अग्नि प्रकाशक है काष्ठ प्रकाश है ॥ ११ ॥ यह सत्य है तोऊ संसारकों अविवेक कारण है तहां श्रीकृष्ण कहैं हैं जहांलों देह इन्द्रिय प्राणसों आत्माकों संबंध है तहांतांई मिथ्याहू संसार भासे है, यद्यपि आत्माको और इंद्रियनको संबंध नहीं पर अविवेक करिकै मानि लेइ है ॥ १२ ॥ तहां पूछें हैं देह तो असत्य है ताकों संसार क्यों भासे, तो कहतेहैं यद्यपि विषयभोगकी वस्तु पास नहीं तोउ संसार जाय नहीं है जाते याको ध्यान विषयनकों रहैहै ताते संसार होय है जैसे स्वप्नमें अनर्थको देखै है ॥ १३ ॥ अब तर्क करै हैं ध्यानते जो विषयकी स्फूर्ति है सो तो जीवन्मुक्तहूसे निवारण नहीं होय है तो मोक्ष काहूको होइ नहीं तहां कहें हैं जैसें शोचनहारेनको स्वप्नहूं अनर्थ करे सोइ जो जागत रहै तो वो अनर्थ याको न होंइ या जीवन्मुक्तनके विषयकी स्फूर्ति अनर्थ नहीं करसके है ॥ १४ ॥ शोक हर्ष भय क्रोध लोभ मोह काम जन्म और मृत्यु ये सब अहंकारते हैं आत्माकों ये कछु नहीं लगे हैं ॥ १५ ॥ देह इंद्रिय प्राण मनको अभिमान कर यह आत्माही विनके मध्य स्थित जीव है, याहीतें गुण कर्ममय मूर्ति हैं इन गुणकर्म करिकैं बंध्यो है, तातें ईश्वरके आधीन होंइ सब संसारमें दौरत फिरै है सूत्र और महत्त्व इत्यादि नानारूप करिकैं अनेक प्रकार यही कह्यो हैं ॥ १६ ॥ या प्रकार अहंकार करिकैं जीव बंध्यो है ज्ञान करिके याकी मुक्ति होइ सो कहै है वचन मन प्राणविषें अहंकार निर्मूल है अज्ञानमें बहुत रूप प्रकाशे है तातें गुरुनकी सेवा करिकै तीक्ष्ण ज्ञानरूप खड्ग लेकै या अहंकार बंधनको काटिकै संग छोडिकै पृथिवीमें फिरे याके कारणको यह उपाय है ॥ १७ ॥ अब सोई ज्ञान कहें हैं सो विवेकज्ञान ता ज्ञानको साधन करनवारो वेद है, सो वेदके कहे धर्म करै तब विवेक उपजे, तप स्वधर्म अपनो अनुभव उपदेश तर्क इतने साधना करिकें ज्ञान उपजे, ज्ञानको फल कहें हैं योग तप है कारण और जगत्के आदि अन्त मध्यमें वही है ॥ १८ ॥ नानाभेदको व्यवहारहू एकब्रह्म मध्यमेंही होय है सो कहै हैं, जैसे सुवर्णके अनेक आभूषण करे तिनकी उत्पत्तिते प्रथम और पीछेहू सुवर्णही है अनेक नाम भये पीछेहू सुवर्णही रहै है सुवर्णतें और वस्तु तो वह नहीं तैसे यह विश्व

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अनेक रूप करिकै दीखै है सोहू मैंही हूं ऐसे जानिये ॥ १९ ॥ या प्रकार विश्वको रूप कहिकै या देह इंद्रियनमें जातें प्रकाशक होयहै ताको तद्रूपता कहै हैं, या मनकी तीनि अवस्था कारण हैं, सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये गुण हैं जे सब कार्य्य कारण कर्त्ता रूप हैं अध्यात्म कारण कार्य अधिभूत कर्ता अधिदैव या प्रकार त्रिगुणरूप जगत् है ऐसोहू जाते होय है और जाके अनुप्रवेशतें प्रकाशे है, सो चतुर्थस्थान ब्रह्म है, इंद्रियादिकके ज्ञान विना जो समाधि आदि विषै है सोई सत्य है ॥ २० ॥ या प्रकार ज्योतिनहूमें और भांति न होइ सो सत्य है यह कही अब जो और प्रकार होयहै सो असत्य है यह कहै हैं जो वस्तु प्रथम नहीं और पीछेहूं न होइगी मध्यहूमें नहीं केवल नाममात्रही कहनेकों है जाते प्रगट भई और प्रकाशी सो वही है मेरी यह बुद्धि है ॥ २१ ॥ प्रपंचको ब्रह्मसो अभेद कहैं हैं यद्यपि प्रथम मैंही हों, यह रजोगुणतें उत्पत्ति भयो विकारको समूह ब्रह्मको कार्य है तथापि ब्रह्मके प्रकाश करिके भासेहै, ब्रह्म आपु स्वयं ज्योति है ताते इंद्रिय विषय आत्मा देवता पंचभूत ये सब तत्व ब्रह्मरूप ह्वैकै भासे हैं यह विचित्रता ब्रह्महीको कार्य है ॥ २२ ॥ या प्रकार ब्रह्मके विवेकके हेतु करिके और देहादिकमें आत्माबुद्धिके त्याग करिकै गुरुद्वारा अपनो संदेह काटि सब कामनते निवर्त होइ आत्माके आनंद करि संतुष्ट होइ रहै ॥ २३ ॥ जे छोडे चहियें तिनको स्वरूप कहैं हैं, यह देह आत्मा नहीं यह पृथ्वीको विकार है इंद्रियनके अधिष्ठाता देवता प्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार ये सब आत्मा नहीं है जाते अन्नमात्रके आश्रय करिकै रहे है तातें विकारयुक्त हैं और वायु जल अग्नि आकाश पृथ्वी ये पंचभूत शब्द स्पर्श रूप रस गंध प्रकृति येऊ सब आत्मा नहीं क्यों कि जड है ॥ २४ ॥ या प्रकारके विवेक ज्ञानवंत मुक्तकों इंद्रियनको कियो गुण दोष न होइ सो कहैं हैं जो विवेकी ज्ञानवंत हैं, जीवन्मुक्त दशाको प्राप्त हैं, तिन्हननें गुण रूप इन इंद्रियनको निग्रह कियो होइकै न कियो होइ तौहू ताकों न तो गुण हैं न दोष है जैसे मेघ आकाशमें आये सूर्य्यको कछु दोष नहीं लगे हैं और मेघ गये कछु गुण नहीं लगैहैं ॥ २५ ॥ जो निःसंग हैं ब्रह्मरूप होइ रह्यो है ताको काहूसों गुण दोष न लगे तहां दृष्टांत कहे हैं, जैसे आकाश भूमिमें आवत जात ऋतुके गुण शीत उष्णादिक और वायु अग्नि जलसों बंध होते नहीं, तैसे अक्षयब्रह्म सत्व रज तम ये गुण अहंकारके हैं संसारको हेतु कारण-सो मिले नहीं है तिनतें न्यारे न्यारे हैं ॥ २६ ॥ तथापि तौलौं मायाके गुणनको संगम करे, जहांलों मेरे दृढभक्ति योग करिकैं यह मनकी विषयनमें आसक्ति न जाइ ॥ २७ ॥ जैसे रागको भले उपचारनसों दूरि न कियो होइ तो फिरि फिरि वह रोग उपजिकैं दुःख देई है तैसें रागादिक

---

१ परन्तु नाममात्रके ब्रह्मज्ञानी बननेसे मुक्ति नहीं होती । एक नगरमें सबही ब्रह्मज्ञानी थे हकीमजी सारेमें फिरे परन्तु उनकी किसीने बात न बूझी सब कहैं हम तौ ब्रह्मज्ञानी हैं प्रारब्धसे राजाने हकीमजीको बुलायो राजाकी नाडी देख हकीमजीने कही कि आराम तौ हो जायगो पर दवा मिलनी कठिन है राजा बोले सो क्या हकीमजी बोले एक ब्रह्मज्ञानीको तेल चहिये राजाने कही यामें कहाहै हमारे नगरमें बहुत ब्रह्मज्ञानी हैं अभी हम आदमीको भेजकै बुलाते हैं और चौकीदारको भेजदियो सो वाने जाके एक मनुष्यसों कही क्योंजी तुम ब्रह्मज्ञानी हो क्या ? वोह बोल्यो हां तौ कही चलो राजा बुलावे हैं इनने कही कहा होयगो चौकीदार बोलो एक ब्रह्मज्ञानीको तेल चहिये यह सुनतेही सुन्न ह्वैगयो और कही भैया मैंने तौ हंसीसे कह दीथी न मैं न मेरे बाप न मेरे दादा ब्रह्मज्ञानी और यह बात सारे नगरमें फैलगई सब नगर ब्रह्मज्ञानते रहित ह्वै गयो तब राजाने कही कि अब कैसी होय हकीमजी बोले मैंने तौ इनकी परीक्षा दृढ निष्ठाकी लीथी कि वह नामके ब्रह्मज्ञानी हैं या सत्य आप दवा खाओ आराम होयगो और राजाका रोग निवर्त्त होगया यासे साधनासहित ज्ञान फलदायक है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और कर्म जाके दग्ध नहीं भये तौ और सब विषयनमें आसक्त मनहू योगीको फेरि बाधा करे है ॥ २८ ॥ जो योगतें भ्रष्ट भयो होइ तो फिरि वाको उपाय कहा तहां कहे हैं, जो योगीको देवतान करिकै प्रेरे बंधुरूप विघ्न करेहैं योगतें भ्रष्ट भयेते फेरि पूर्व अभ्यास बल करिकै योग करे पर कर्ममार्गके धर्म न करे, केवल धर्मकीही साधना करे ॥ २९ ॥ जो काहू करिकै प्रेरित होइ तो मरण-पर्यंत कर्म करिकै सुख दुःख जाइहै, विकारको पावे जो विवेकी होइ सो देहमें स्थितहू आत्म-सुखके अनुभव करिकै तृष्णाते निवर्त्त भयो विकार न पावे ॥ ३० ॥ जाकी मति बुद्धि आत्मामें स्थित है सो ठाढे होते, बैठते, चलते, सोवते, मूत्र करते, अन्न भोजन करते, औरहू स्वभावतें दर्शन आदिक करते देहकों नहीं जानें है ॥ ३१ ॥ जो इंद्रियवंत है सो विना देखें क्यों रहे तहां कहें है जो विवेकयुक्त है सो यद्यपि इन इंद्रियनके विषयनकों देखें हैं, तथापि अनुमान करि विरुद्ध जानि आत्मातें औरकों वस्तु करिकैं नहीं मानें वह स्वप्नकी भांति सब मिथ्या जाने है जैसें जागनेपर स्वप्नके विषय सब आपुही अंतर्द्धान ह्वै जाइहैं ॥ ३२ ॥ आत्मामें मुक्तावस्थादिमेंहू विकार नहीं होयहै कारण कि बद्धावस्थामें गुण और करमनसों विचित्र आज्ञाके कार्यरूप करो देहेन्द्रियादि अध्याससों अपने स्वरूपमें मिलेभये मानेगये हैं वेही देहेन्द्रियादिक मुक्तावस्थामें ज्ञानसों निवृत्त है जायहैं आत्माको काऊसो त्याग और ग्रहण कियो नहीं जानतेहै यदि मुक्तिको क्रियाको फल मानें तौ आत्मामें विकार होय यासों मायिक पदार्थनकी निवृत्तिकौ होनोही मोक्ष है बंधमोक्ष आत्माकौ स्पर्श नहीं करेहै या कारण आत्मा निर्विकार है ॥ ३३ ॥ परन्तु प्रथमसोंही विद्यमान घटादिक पदार्थनमें कछु विकार नहीं करै है या प्रकार मेरी अधात्मविद्या मनुष्यनके मनके अन्धकारको दूर करेहै परन्तु आत्मामें कछु विकार नहीं होयहै आत्मा जा स्थितिमें रहेहै वाहीमें रहेहै ॥ ३४ ॥ यह स्वयं प्रकाश जन्मरहित ज्ञान विज्ञानतेहू जानो नहीं जायहै महान् प्रतापयुक्त काहू विकार करिकै न घटे न बढे सदा एक-रूप रहै, और सबनमें प्रकाश एक है दूसरेतें रहित है जामें वचनकी गति नहीं श्रुतिहू कहती है जब आगे गम्य नहीं तहांते मन समेत वाणी फिरि आवे है, जाके प्रेरे वाणी और प्राण कार्य करे हैं ॥ ३५ ॥ केवल भेदरहित आत्मा है तामें भेद देखनो इतनोई भ्रम मनको है अपने आत्मा विना या भेदकों आश्रय हैई नहीं ॥ ३६ ॥ जे भेद माने है तिनकौ मत दूषित है, रूप और नाम करिकै जो वस्तु कही जायहै सो पंचभूत रूप है, देह इंद्रिय, दूसरो पदार्थ, यह मति पंडितमानिनकों वाद है तत्वके ज्ञातानके लेखे वस्तु विचारिकै देखो तो सब मिथ्या है ॥ ३७ ॥ जो अपक्व योगी योग साधे हैं जाको देहतें उठे रोगादिक उपद्रव करिके योगभ्रष्ट होय हैं ताको मैंने यह आगे लिखी विधि कही है ॥ ३८ ॥ सो कहें हैं योगकी धारणासों चंद्रमा सूर्य्यके तापको जीते आसन करिकै प्राण वायु धारणा वायु करिकै वातरोग जीते, तप मंत्र औषधि करिकै पापग्रह सर्वादिकृत अशुभ दूरि करे ॥ ३९ ॥ चित्तको दोष मेरे ध्यान करिकै दूरि करे, मेरे नाम कीर्त्तन आदि करिकै काम क्रोधादिकनकों दूरि करें, कितनेऊं योगेश्वरनकी सेवा करिकै सब दंड अहंकारादिक अशुभनकों शनैः शनैः दूरि करे ॥ ४० ॥ कितनेहू योगीश्वर याही देहकों समर्थ तरुणतामें अनेक उपा-यनसों स्थिर करिकै परकायाप्रवेशकी सिद्धि निमित्त योग करें हैं ज्ञानकी निष्ठा नहीं करें हैं ॥ ४१ ॥ कुशल ज्ञाता जे हैं ते वाको आदर नहीं करें हैं, देह अनित्य है यातें निश्चय करि योग करिकै याके राखवेको श्रम निरर्थक हैं, जैसें वटवृक्षके फल मिथ्या हैं ॥ ४२ ॥ योगको नित्य सेवन करते २ प्राणायामादिकके प्रभावसों शरीरमें सामर्थ्य है जाय तौ तौहू मेरे भक्त बुद्धिमान् पुरुषको समाधि

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

त्यागनकरै या शरीरकी सिद्धिपर विश्वास करनो युक्त नहीं हैं ॥ ४३ ॥ योगी मेरो आश्रय करिकै यह योग करे तब विघ्न न होई, निस्पृह ह्वैकै आत्माकों अनुभव होइ मेरे आश्रयतें विघ्न सब निवृत्त होइहै तब आनंदसों पूर्ण होइ है ॥ ४४ ॥

योगचर्यामिमां योगी विचरन् मदपाश्रयः ॥
नान्तरायैर्विहन्येत निःस्पृहः स्वसुखानुभूः ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

अध्याय २९.

उद्धव उवाच-सुदुष्करामिमां मन्ये योगचर्यामनात्मनः ॥
यथाऽञ्जसा पुमान् सिद्धयेत्तन्मे ब्रूह्यञ्जसाऽच्युत ॥ १ ॥

उंतीसके अध्यायमें जो प्रथम विस्तारपूर्वक भक्तियोग कह्योहो सोई भक्तियोग अपने भक्त उद्धवकों संक्षेपतें कहैं हैं उद्धवजी प्रश्न करै हैं हे श्रीकृष्ण ! यह तुमने योगकी क्रिया कही सो जाको मन वश नहीं ताकों अतिकठिन लगैहैं, याको चित्त वश नहीं यह अज्ञानी हैं याकों जैसें शीघ्र सिद्धि होइ सुगम होइ सो उपाय मोसों कहो ॥ १ ॥ हे कमलनेत्र ! बहुधा जो योग करें हैं ते मनको निग्रह करतेमें क्लेश बहुत पावे हैं तौभी मन निग्रह नहीं होयहै तब थकित हो विषादयुक्त होय हैं ॥ २ ॥ योगमें अति क्लेश है जे परमहंस हैं वे सार असारकों जानें हैं हे कमललोचन ! जो तुम्हारे चरणारविंदनकों आश्रय करें हैं ये चरणारविंद विनके आनंदहीकों पूर्ण करैहैं हे कमललोचन ! आप भक्तनकों सुखरूप है, जे तुम्हारी माया करिके मोहित योगेश्वर योग कर्म करिके अभिमानकों धरेहैं ते सिद्धि नहीं है ॥ ३ ॥ हे श्रीकृष्ण ! हे सबनके बंधु ! जो अनन्य शरण तुम्हारे दास हैं तिनके तुमही वश हौ यह कहा आश्चर्य है जैसे नंद यशोदाके घर खेलत फिरे रामरूप धरिकै बंदरनसों मैत्री करी ब्रह्माआदि देवतानके शोभासंयुक्त मुकुटनके अग्रने तुम्हारे चरणारविंदनको सिंहासन पीडित कियोहै ऐसे तुम हो ॥ ४ ॥ जे तुम भक्तनकी सेवा जानोहो, सबनके आत्मा हो, याहीतें अतिप्रिय हो, ईश्वर हो, ये जे तुम्हारे आश्रय हैं तिनको सब अर्थ देउहो, प्रह्लादआदि भक्तनमें कियो उपकार जान कौन तुमकों छोडे, तो कहा फलके निमित्त मोको सेवे तहां कहे हैं नहीं, और देवता अथवा और धर्म ज्ञानादि साधन तौ ऐश्वर्यके अर्थ हैं, और मोक्षके अर्थ कौन भजे तौ कहे हैं, साधना विना भोग मोक्षफल कैसे होइ तौ तुम्हारे चरणरेणुको जो सेवे हैं तिनको कहा फल नहीं होइहै जो चाहै सो फल होइ है ॥ ५ ॥ अब कहैं अन्य भजनकी बातही रहन देऊ तुम्हारे किये उपकारको जो तुम्हारे विषे आत्मनिवेदन करे तोही प्रत्युपकार होइ और प्रकारते न होइ सो कहैं हैं आनंदवृद्ध ब्रह्मके ज्ञाता तुम्हारे उपकारको स्मरण करते ब्रह्माकी आयु करिकै तुम्हारे उपकारते अनृण नहीं होय हैं उपकारको कहें हैं, जो तुम बाहिर गुरुरूप हो भीतर अंतर्यामिरूप प्राणीनकी विषयवासना दूरि करोहो, अपनो आनंदस्वरूप प्रगट करोहो याको प्रत्युपकार कहा करे ॥ ६ ॥ शुकदेवजी बोले जब अनुरक्त चित्त उद्धवने या प्रकार पूछै तब ईश्वरनकेहू ईश्वर भगवान् प्रेमसहित अतिमनोहर हँसि करिकै कहत भये जे भगवान् सत्त्व, रज, तम इन तीनि शक्ति करिके तीनि मूर्ति ब्रह्मादि धारण करैं हैं और जगत् जिनको खिलौना है ॥ ७ ॥ अब बडे आनंदसूं हर्षि करिकै कहैं हैं हे उद्धव ! मैं सुमंगल अपने धर्म तोसो कहूंगो जिन धर्मनकों श्रद्धा करिकै करते यह मनुष्य

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दुर्जय मृत्युको जीते ॥ ८ ॥ ते धर्म कहें हैं, मेरो स्मरण करते शनैः शनैः सब कर्म करे ये सब कर्म मेरे निमित्त करे मेरेई विषैं मन बुद्धि अर्पित करे धर्मनहीमें आत्माकी मनकी प्रीति राखे ॥ ९ ॥ जहां मेरे भक्त साधु रहते होंइ तिन पुण्य देशनमें जाइ रहै देव असुर मनुष्यनमें जे मेरे भक्त हैं तिनको कर्मनको आश्रय करे ॥ १० ॥ विन भक्तनसों मिलिकैं उत्सव करैं, अथवा न्यारे आपुही सबकी यात्रा उत्सव करै, नृत्य गीत सब करावे महाराजके छत्र चामरादि उपचारसों सब करावे ॥ ११ ॥ निर्मलचित्त पुरुष सब भूतमात्रमें और अपनेमेंहू बाहिर अंतर मोहीकों देखे मैं आकाशकी नाईं असंग हैवेके कारण सबमें स्थित हौंकैहू आवरणरहित और बाहर भीतर सदा पूर्ण हूं ॥ १२ ॥ या प्रकार ज्ञानमें स्थित हो सब प्राणीमात्रकों मेरे भाव करिकैं मानिकै पूजे सो पंडित है ॥ १३ ॥ ब्राह्मण नीच जाति चोर ब्रह्मण्य सूर्य्य अग्निके कणिका ये क्रूर होइ अथवा क्रूर न होइ इनमें जो समदृष्टि होइ सो पंडित है ॥ १४ ॥ मनुष्यनमें मेरे भावकी भावना राखे तो वेगिही पुरुषके ईर्षा निंदा तिरस्कार अहंकार ये सब निश्चय करिकैं नष्ट होयहैं ॥ १५ ॥ तातें अंतर्यामी ईश्वरकी दृष्टिसों सबनकों प्रणाम करे हास्य करत अपनें मित्रनकों छोडिकैं अपनी ऊंच नीच दृष्टि लज्जा छोडिकें भूमिको दंडवत् करे कूकर चांडाल बैल खर ऐसें नीचनहूंकों मेरी बुद्धि करिकें प्रणाम करें ॥ १६ ॥ जहांलों सब भूतमात्रनमें मेरो भाव न उपजेगो तहांताईं वाणी मन देहीकी प्रवृत्तिमें मेरी उपासना करे ॥ १७ ॥ या प्रकार उपासना करेते वाकों सब विश्व ब्रह्मरूपही भासेहै, आत्मविद्या करिकैं सर्वत्र ब्रह्मही देखते २ सब संदेह दूरि होयहैं, और सबतें विरक्त होइ ॥ १८ ॥ यह सब पक्षनतें मेरो मत निश्चय करिकैं मेरो उत्तम पक्ष है, जो देह वाणी मन करिकैं सब प्राणीनमें मेरो भाव होइ ॥ १९ ॥ हे उद्धव ! निष्काम मेरे धर्म करते करते भूलचूक है जाय तौहू कछु हानि नहीं कारण कि यह उत्तम धर्म निर्गुणपनके निमित्त मैंने निश्चय कियो है ॥ २० ॥ हे साधुनमें श्रेष्ठ ! जो जो व्यर्थहू लौकिक परिश्रम करें हैं, सोऊ जो मोकों समर्पे फल वांछा विना मेरे तो हे उद्धव ! विन कर्मनको परिश्रम अर्थ है जाय अर्थात् वे अशुभ कर्महू अपने अशुभ फल देवेको समर्थ नहीं होय है निमित्त करे जैसें भय शोकादितें दौरिवो रोइवो क्लेश व्यर्थ हैं सोहू मोको समर्पण कर देवेसो धर्म है जाय हैं ॥ २१ ॥ यही बडे बुद्धिमाननकी बुद्धि चतुरनकी चातुरी है, जो असत्यरूप या मनुष्यदेहसो सत्यरूप मोकों या जन्ममें प्राप्त होइ ॥ २२ ॥ यह ब्रह्मवादकों संपूर्ण संग्रह मैंने तोसों कह्योहै, संक्षेपतें और विस्तारहूसों कह्यो, हे उद्धव ! यह देवतानहूंको दुर्लभ है ॥ २३ ॥ वारंवार मैंने तोसो प्रकट करिकै युक्तिनसो यह ज्ञान कह्योहै. यह ब्रह्मवाद रीतिको ज्ञान जानि करिकै पुरुष संदेहतें रहित मुक्त होइहै ॥ २४ ॥ जो याको स्मरण राखे कहे सुने पढेहैं तोहूं यह फल होइ सो कहें है, हे उद्धव ! मैंने यह तुम्हारे प्रश्नको उत्तर दियो है याको जो कोऊ चित्तमें धरे सो नित्य वेदहूमें गोप्य परब्रह्मको प्राप्तहोइ ॥ २५ ॥ जो कोऊ मेरे भक्तसों विस्तारसों यह कहैं ताको मैं अपनी आत्माकों देउं जाते वह भक्तनको दाता है ॥ २६ ॥ जो कोऊ परम पवित्र मेरे कहे शास्त्रको पढै साधकनकों या ज्ञान दीपक करिकैं मोकों दिखावै सो दिन दिन शुद्ध होइ ॥ २७ ॥ जो मनुष्य याकों श्रद्धापूर्वक नित्य साव-

---

१ ऊधो भक्त हमारे प्रान ॥ होत न न्यारो तिनसो कबहूं यह तू निश्चय जान ॥ जिमि छोटे बालकके पाछे माता फिरत लुभान ॥ तैसे तिनकी पल छिन रक्षा राखत सुन मतिमान ॥ ज्ञान वृक्ष ज्ञानिनकी चिन्ता इतनी होत न आन ॥ जैसे बडे भये बालकके मात पिताको ध्यान ॥ तासे भक्ति करो सब कुछ तज यह सिद्धान्त महान ॥ यह ज्वालाप्रसाद सार है भगवद्वचन प्रमाण ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

धान व्हैकै सुने मो विषे परमभक्ति करै सो कर्मनसों बद्ध न होइ ॥ २८ ॥ हे उद्धव ! हे मित्र ! तैंने यह ज्ञान नीके मनमें धार्यो है तेरे मनको मोह शोक गयो कहा ॥ २९ ॥ यह ज्ञान जो दंभी होइ नास्तिक होइ धूर्त होइ जाके सुनवेकी इच्छा न होइ मेरो भक्त न होइ ताकों मति सुनैयो ॥ ३० ॥ सुन उद्धव जो इन दोषन करिकै रहित होइ ब्रह्मण्य होइ अति प्रिय साधु होइ शुचि होइ तासों कहियों जो भक्ति होइ तो स्त्री शूद्रनसोंहू कहै ॥ ३१ ॥ जाननहारेकों याकें जाने पीछें फिरि कछु जाननो अवशिष्ट नहीं जैसे सुस्वाद अमृत पिये पीछें और पीवेकों योग्य नहीं रहै ॥ ३२ ॥ भक्तनकों और साधना कछु नहीं चाहिये भक्तकों सब मैंही हों, ज्ञान करिकैं मोक्ष होयहै, विहित कर्म करे धर्म होइ, योग करे अणिमादि सिद्धि होइ सहजके कर्म करे काम होइ, खेती करे अर्थ होइ, दंड नीति करे ऐश्वर्य होइ और इन साधनान करिकैं चार्यो पुरुषार्थ होयहै, हे उद्धव ! सब पुरुषार्थरूप तुमकों मैं हो, तातें तुमकों और कुछ करनो नहीं एक मेरी शरण रहो ॥ ३३ ॥ जब यह मनुष्य सब कर्मनकों छोडिकैं मोकों आत्मा निवेदन करे, तब मोको श्रेष्ठ करिवेकों योग्य भयो, तातें वह मोक्षकों पावे निश्चय करिके मेरे समान ऐश्वर्य्यको योग्य होइ ॥ ३४ ॥ या प्रकार भगवान्ने सफल योगमार्गकों स्वरूप दिखायो, तब उत्तमयश श्रीकृष्णको यह वचन सुनिके अंजलि जोरि प्रीति करिकें कंठ गद्गद होइ नेत्रनते अश्रुपात परते कछु बोलत न भये ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! अरे प्यारे परीक्षित् ! अतिस्नेह करिकैं विह्वल चित्तकों धीर्जकरि थामिकैं आपकों कृतार्थकरि मानतभये, तब हाथ जोरि माथेकरि प्रभुके चरणारविंदकों स्पर्श करिकैं उद्धव श्रीकृष्णसों बोलत भये ॥ ३६ ॥ हे ब्रह्म दिकके उत्पन्न करनवारे ! जो मैंने मोहरूप महा अंधकार आश्रय कियोहो सो तुम्हारे समीपते गयो, सूर्यके समीप अंधकार शीत भये कहा है सकेहै ॥ ३७ ॥ तुमने अति दयाकरिकैं मोको अपने सेवककों विज्ञानदीपक दियो कौन तुम्हारो उपकारको ज्ञाता हैं अब तुम्हारे चरणारविंदमूलकों छोडिकैं औरके शरण कौन जाइ ॥ ३८ ॥ उद्धवजी कहैं हैं हे प्रभो ! जो सृष्टिकी बुद्धि निमित्त तुमने अपनी मायासो मेरो स्नेहरूप पाश दाशार्ह वृष्णि अंधक सात्वतनमें बढायो हो सो आत्मज्ञान शस्त्र करिकैं तुमहीनें काटिकैं दूरि कियो ॥ ३९ ॥ हे महायोगिन् ! तुमकों प्रणाम है, मैं शरण हो, मोको इतनी शिक्षा देउ, जाते तुम्हारे चरणारविंद विषे दृढ प्रीति होइ ॥४०॥ यह बात उद्धवजीकी अंगीकार करिकैं लोकसंग्रह निमित्त श्रीकृष्णने यह आज्ञा दीनी हे उद्धव ! तुम बद्रिकाश्रमको जाउ मेरी आज्ञा है मेरे चरणतीर्थ गंगाके जलसों स्नान आचमन करिकै शुद्ध होंउगे ॥ ४१ ॥ हे उद्धव ! अलकनंदाके दरशन करिकै सकल पाप दूरि करके वल्कल वस्त्र पहिरि वनके फल खाते सुखमें निष्ठ होउ ॥ ४२ ॥ तहां सब इंद्रियनको निग्रह करि शीत उष्ण सहि सुशील शांत होइ ज्ञान विज्ञानकर संयुक्त समाधिमें बुद्धि स्थिर करौ ॥ ४३ ॥ मोतें जो जो रहस्य सीख्यो है और अच्छी तरह विचार्यो है, ताकी भावना करते मेरे आवेशयुक्तवचन चित्तकरिकैं मेरे धर्ममें तत्पर होहु इन तीन गुणनकी गतिनको अतिक्रम करिकै आगे मोको प्राप्त होउगे ॥ ४४ ॥ शुकदेवजी बोले संसारके हरवेवारे श्रीकृष्णके या प्रकार कहेते उद्धवजी प्रदक्षिणा करि माथो पांउनपर धरिकै अश्रुपातके जलसो भगवान्के चरणको अभिषेक करतभये, यद्यपि सुखदुःखरहित भयेहै तथापि चलिवेके स्नेह करि कोमल बुद्धि होतभये ॥ ४५ ॥ अत्यंत दुस्त्यज स्नेहके वियोग करिकैं अति अधीर होइ श्रीकृष्ण अपने प्रभुको छोडवेको समर्थ न भये आर्त्त होइ अति कष्ट पायो फिरि अपनें भर्त्ताके पादुका माथे धरि प्रणाम करिकैं चलतभये, या प्रकार वारंवार प्रणाम करि चले ॥ ४६ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

तापीछें अंतःकरणमें श्रीकृष्णकों धरिकैं परमभागवत उद्धव बद्रिकाश्रमकूं जातभये, जगत्के एक बंधु श्रीकृष्णकरिकैं या भांति उपदेशको पाय ताही भांति तपस्याकों साधि करि हरिकी गतिकों पावत भये ॥ ४७ ॥ योगेश्वर जिनके चरणनको सेवे, विन श्रीकृष्णने यह ज्ञानरूप अमृत आनंद-समुद्र परम भागवत उद्धवजीसो कह्यो जो मनुष्य याको श्रद्धापूर्वक सेवन करैं सो संसारते मुक्त होयहैं ॥ ४८ ॥ अब जगद्गुरु भगवान्कों प्रणाम करेहैं, जिन वेदकर्त्ता भगवान्नें संसारकों भय दूरि करवेकों एक ज्ञानरूप वेदसार अमृत भ्रमरकी भांति उद्धरयो " एक अमृत तो समुद्रतें काढ्योहो सो तौ देवतानकोही प्यायोहो " यह वाणीरूपी अमृत अपनें सेवक भक्तनको प्यायो, ऐसे श्रीकृष्णकों प्रणाम करूंहूं ॥ ४९ ॥

भवभयमपहन्तुं ज्ञानविज्ञानसारं निगमकृदुपजह्रे भृङ्गवद्वेदसारम् ॥
अमृतमुदधितश्चापाययद्भृत्यवर्गान् पुरुषमृषभमाद्यं कृष्णसंज्ञंनतोऽस्मि ॥४९॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

अध्याय ३०.

राजोवाच–ततो महाभागवत उद्धवे निर्गते वनम् ॥
द्वारवत्यां किमकरोद्भगवान्भूतभावनः ॥ १ ॥

तीसके अध्यायमें श्रीकृष्ण अपनें लोक पधारो चाहें हैं सो पहलें कह्यो है, मुशलयुद्धके मिषकरिकैं अपनें कुलकों संहार करतभये यह कथा कहेंगे ॥ राजा पूछेहैं परमभागवत उद्धवके वन गये पीछें विश्वके रक्षक भगवान् द्वारकामें कहा करत भये ॥ १ ॥ अपने कुलको ब्रह्मशापसों व्याप्त देख सब नेत्रनके परम प्रिय शरीरको यादवनमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण कैसें छोडतभये ॥ २ ॥ जा रूपमें लगे नेत्रनकों स्त्री छुडायवेको समर्थ न भई जो स्वरूप कर्णद्वारा हृदयमें प्रविष्ट भयो, साधुनके मनविषें लिख्योसो रहेहै, जा रूपकी शोभा वर्णन करेतें पंडितनकी वाणीकी प्रीति उपजेहै, अर्जुनके रथ ऊपर स्थित जा स्वरूपको देखिकै भारतमें मेरे युद्धविषें जो योद्धा है ते सारूप्य मुक्तिको पावतभये ॥३॥ श्रीशुकदेवजी कहेहैं श्रीकृष्ण स्वर्गविषें सूर्यके मंडल आदि, भूमिमें कंपादि, अंतरिक्षमें दिशानके दाहादिक, उठे बडे उत्पातनको देखिकै सुधर्मा सभा विषें बैठे यादवनसों यह कहत भये ॥४॥ श्रीकृष्ण कहें हे हे यादवनमें श्रेष्ठ ! ये घोर बडे मृत्युको बतामनहारे उत्पात उठ रहे हैं अब या द्वारका विष दो घडीहू हमकों रहिवेकों योग्य नहीं ॥ ५ ॥ यात स्त्री और बालक और वृद्ध शंखोद्धारकों जाहु हम तो प्रभासक्षेत्रकों जांइगे जहां पश्चिम वाहिनी सरस्वती है ॥ ६ ॥ तहां स्नान करिकैं पवित्र हो उपवास करि भली भांति सावधानतासों स्नान कराइ चंदन और पूजाकी सामग्री करिकैं देवतानकों पूजेंगे ॥ ७ ॥ बडे भाग्यवंत ब्राह्मणनकों गौ भूमि सुवर्ण वस्त्रन करिकै और हाथी घोडा रथनसों पूजेंगे ॥ ८ ॥ निश्चय करिकैं यह विधि अरिष्टकी नाशक है, और उत्तम मंगलकी आश्रय है प्राणीनविषें देवता ब्राह्मण गाकी पूजा कल्याणको हेतु है ॥ ९ ॥ यादवन विषें सब वृद्ध यह श्रीकृष्णको वचन सुनिकै तैसेही है यों स्तुति करिकै नावन करिकैं समुद्रको उतरिकै रथन करिकैं प्रभास क्षेत्रकों जात भये ॥ १० ॥ यादवनके देव भगवान्के उपदेशको सब यादव मंगलन सहित परमभक्ति करिकैं प्रभासक्षेत्रविषे करतभये ॥ ११ ॥ ता पीछें प्रभासक्षेत्रके विषे दैव करि हतबुद्धि यादव अति सुरस मदिरा महापान पीवत भये, जा मदिराके रस करिकैं बुद्धि भ्रष्ट होय है ॥ १२ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीकृष्णकी माया करिकै मोहित मद्यपान करिकै अतिगर्वयुक्त चित्त यादवनको अतिबडो कोलाहल होत भयो ॥ १३ ॥ ता पीछे क्रोध करिकै संयुक्त वधको उद्यत यादव समुद्रतट विषें धनुष खड्ग गदा तोमर रिष्टीन करि युद्ध करत भये ॥ १४ ॥ दुर्मद यादव चलायमान ध्वजावारे रथ हाथी खच्चर ऊंट बैल गधा भैंसानहूं करि परस्पर मिलिकै बाणनकरि मारत भये जैसें वनमें हाथी दंतनकरि हाथीनको आपुसमें मारे हैं ॥ १५ ॥ असहनताको प्राप्त हो प्रद्युम्न और सांब अक्रूर और भोज अनिरुद्ध और सात्यकि सुभद्र और संग्रामजित् अति दारुण ह्वैके गद श्रीकृष्णको भैया एक श्रीकृष्णको पुत्र सुमित्र और सुरथ यह अति क्रूर स्वभाववारे मत्सरसों व्याप्त ह्वैके परस्पर घोर युद्ध करन लगे ॥ १६ ॥ याही प्रकार औरहू निशठ उल्मुक सहस्रजित् शतजित् भानु आदि यादव जो भगवान्की इच्छासों मोहित है गये हे वे वारुणीके पानसो मत्त और अंधप्राय हो परस्पर युद्ध करते लडने लगे ॥ १७ ॥ दाशार्ह वृष्णि अंधक भोज सात्वत मधुके वंशके और अर्बुद मथुरा शूरसेन देशके विसर्ज्जन कुकुर कुंति देशके स्नेहको तोरि परस्पर मारत भये ॥ १८ ॥ पुत्र पितानसों और भैयानसों भानजेनसो धेवतेनसो काकनसों मित्रनसों सुहृदनसों युद्ध करत भये, मूरख ज्ञातीही ज्ञातीनको मारत भये ॥ १९ ॥ बाणनके हीन भये पीछें धनुषके टूटेतें शस्त्रनके छीन भयेते हाथनसों पटेरानको ग्रहण करत भये ॥ २० ॥ वे पटेरे यादवनके हाथमें लेतेही वज्रके समान दुधारा खांडे होत भये, तिन करिकै यादव वैरिनकों मारत भये जब श्रीकृष्णनें विन्है वरजो ॥ २१ ॥ हे परीक्षित् ! तब श्रीकृष्णकों और बलदेवजीकों वैरी मानि मारिवेकी बुद्धिकर यादव मोहित ह्वैके शस्त्र ले सन्मुख आवत भये ॥ २२ ॥ हे कुरुनंदन ! ता पीछें ते दोऊ भैया क्रोधयुक्त खड्गरूप पटेरेनको हाथमें लेकर युद्धमें विचार मारते भये ॥ २३ ॥ ब्रह्मशापसों व्याप्त श्रीकृष्णकी मायासो मोहित आत्मा यादवनको स्पर्द्धातें उपज्यो क्रोध, क्षय करतभयो जैसे वांसकी आगि वनको क्षय करे ॥ २४ ॥ या प्रकार अपने सब कुलके नाश भये पीछे एक श्रीकृष्णही बाकी रहिगये, तब भूमिको भार उतारचो मानतभये ॥ २५ ॥ बलदेवजू समुद्रतट विषे परमपुरुषके ध्यानरूप योग करि आपुको आप विषे युक्तकरि मनुष्यलोकको छोडतभये ॥ २६ ॥ श्रीदेवकीजीके पुत्र भगवान् बलदेवजीको चलिवो देखिकै पीपरको आश्रय लेकरिकै मौन भये भूमितलमें बैठतभये ॥ २७ ॥ शोभायुक्त चतुर्भुजरूपको धरे अपनी कांति करिकै दिशानको अंधकार दूरि करते निर्धूम अग्निसे दीखतेभये ॥ २८ ॥ अब चतुर्भुज रूपको वर्णन करे है, श्रीवत्सको चिह्न मेघसों श्याम, सुवर्णकीसी कांतिवारे पीताम्बर पहिरे परममंगल ॥ २९ ॥ सुंदर हास्ययुक्त मुख कमल, नील केश करिकै शोभित कमलसे सुंदर नेत्र देदीप्यमान मकराकृतकुंडल ॥ ३० ॥ कटिसूत्र जनेऊ मुकुट कंकण विराजमान हार नूपुर मुद्रिका कौस्तुभसों शोभित ॥ ३१ ॥ वनमालासों व्याप्त अंग, मूर्तिवंत अपने आयुधन करिकै युक्त लाल कमलकीसी शोभावारो वामचरण दाहिनी जांघपर धरिकै बैठे ॥ ३२ ॥ मूसलके अवशेष लोहेके खंडसो जिनसो बाण बनायो हो वोह जरा-नाम वधिक मृगके आकार वा चरणकों मृगकी शंका करि वेधत भयो ॥ ३३ ॥ फिर भगवान्के समीप आय चतुर्भुज ता पुरुषकों देखिकरि भयभीत भयो, अपराधी वधिक माथे करि दैत्यनके शत्रु श्रीकृष्णके चरणनविषें परतभयो ॥ ३४ ॥ हे मधुसूदन ! पापी मैंने ये अपराध अज्ञानतें

---

१ यह व्याधा कुछ बहुत समयका नहीं था यह उसी समय स्वर्गसे भगवान्की इच्छानुसार अंगद व्याधेके रूपमें आया और मोहित हो बाण मार पिताके ऋणसे मुक्त हुआ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कियो है, हे उत्तमयश निष्पाप ! पापी मोपे क्षमा करो ॥ ३५ ॥ हे प्रभो ! जाको स्मरण मनुष्यको अज्ञानतमको नाश करेहैं, ता तुम विष्णुकों मैं अपराधी भयो ॥ ३६ ॥ हे वैकुंठनाथ ! तातें मृगलोभी मो पापीकों शीघ्र मारो जैसें फेरि साधुनको ऐसो अपराध न करों ॥ ३७ ॥ जा तुम्हारी स्वाधीन माया करि रचनाकों ब्रह्मा और या ब्रह्माके रुद्रादिक पुत्र और वेदके द्रष्टाहू नहीं जानते हैं विनके ब्राह्मणनको शापको लगनो हम मायासों अंधे भये पापी पुरुषनसों कैसे कह्यो जाय सकै है यासों यह बात चाहैं कछु होउ आप मोकू मार डारो ॥ ३८ ॥ तब श्रीभगवान् कहेहैं हे जरा ! तू भय मति करे तू उठि ठाढोहो, यह तो मेरी कामनाही कीनीहैं, तू मेरी आज्ञातें पुण्यवाननके स्थान स्वर्गको जाउ ॥ ३९ ॥ इच्छा करिकै शरीरी भगवान् कृष्णते आज्ञा पाय वधिक श्रीकृष्णकी तीनि परिक्रमा दे नमस्कार करिकै विमानमें बैठ स्वर्गको जातभयो ॥ ४० ॥ दारुक श्रीकृष्णके मार्गको विना पाये तुलसी चंदनकी गंध मिली वायुको सूंघते श्रीकृष्णके सन्मुख जातभयो ॥ ४१ ॥ ता पीपरके मूल विषे मैं तीक्ष्ण कांतियुक्त आयुधन करिकै व्याप्त अपने पति श्रीकृष्णको बैठो देखि स्नेहसो मग्न आत्मा नेत्रनमें जल भर दारुक रथतें उतरिके चरणन विषें परतभयो ॥ ४२ ॥ हे प्रभो ! तुम्हारे चरणारविंदकों विना देखें मेरो ज्ञान नाश भयों, मोहमें प्रविष्ट भयोहो मैं दिशानको नहीं जानूंहूं और शांतिको नहीं पाऊंहूं जैसें रात्रिमें चंद्रमाके गये पीछें दिशा नहीं जानी जाय हैं ॥ ४३ ॥ हे राजन् ! जब ऐसें दारुक सारथि कहतभयो तब सारथिके देखतेही गरुड़चिह्नयुक्त रथ घोडा ध्वजासहित आकाशकों उडतभयो ॥ ४४ ॥ ता पीछें विष्णुके दिव्य आयुध जातभये, या करिकैं विस्मितमन सारथिसों भगवान् जनार्दन कहतभये ॥ ४५ ॥ हे सूत ! तुम द्वारका जाहु बांधवनसों परस्पर ज्ञातिको मरण, योगमार्ग करिके बलदेवजूको प्रस्थान और मेरी दशा कहो ॥ ४६ ॥ तुम बांधवसहित द्वारका विषें मति रहो मो करिकैं छोडी द्वारकाकों समुद्र बोरेगो ॥ ४७ ॥ अपनी अपनी सामग्री ले सब तुम्हारे हमारे माता पिताकों लेकरिकै अर्जुन करिकै रक्षित हैके इंद्रप्रस्थ जाओ ऐसें बांधवनसो कहो ॥ ४८ ॥ तुम ज्ञाननिष्ठ निस्पृह हो मेरे धर्मकों करि और यह मेरी मायाकी रचना जानिकैं शांतिको प्राप्तहोउ ॥ ४९ ॥ ऐसें जब कह्यो तब दारुक श्रीकृष्णजीको वारंवार परिक्रमा करिकैं श्रीकृष्णको पाइ माथेपर धरिकैं कुलके नाशतें मलीनचित्त होइके द्वारका जातभयो ॥ ५० ॥

इत्युक्तस्तं परिक्रम्य नमस्कृत्य पुनः पुनः ॥
तत्पादौ शीर्ष्ण्युपाधाय दुर्मनाः प्रययौ पुरीम् ॥ ५० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां एकादशस्कन्धे त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

अध्याय ३१.

श्रीशुक उवाच–अथ तत्रागमद्ब्रह्मा भवान्या च समं भवः ॥
महेन्द्रप्रमुखा देवा मुनयः सप्रजेश्वराः ॥ १ ॥

इकतीसके अध्यायमें भगवान् मनुष्यलोकतें अपनें धामको पधारते भये पीछें वसुदेवादिक प्रीतिसों श्रीकृष्णके पीछें जातभये श्रीकृष्ण स्वेच्छापूर्वक अपनें शरीरहीसों अपने धामको पधारतभये यह कथा कहैंगे ॥ श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसों कहैं हैं दारुकके गये पीछें तहां ब्रह्मा पार्वतीसहित महादेव इंद्रादिक देवता सनकादिक मुनि मरीचि आदि प्रजापति ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पितर गंधर्व विद्याधर महानाग चारण यक्ष राक्षस किंनर अप्सरा पक्षी ॥ २ ॥ भगवान्के प्रस्थानके देखिवेकी इच्छासों परम उत्कंठित श्रीकृष्णके जन्म कर्म गावते और कहते तहां आवतभये ॥ ३ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! फूलनकी वर्षा करतभये परमभक्ति करिकै युक्त विमाननकी पंक्ति करिकैं आकाशको संकुल करतभये ॥ ४ ॥ प्रभु व्यापक भगवान् ब्रह्माकों और इंद्रादिक अपनी विभूतिकों देखिकैं आपुविषें आपकों संयुक्त करिकैं अपने लोक ले जाइवेकों आये बहुत देवतानकों देखिकैं समाधि करकैं नेत्रकमल मूंदतभये ॥ ५ ॥ जैसे स्वेच्छामृत्युवाले योगी अपने शरीरको अग्निकी योग धारणा करिकैं जराइ लोकमें प्रवेश करेहैं श्रीकृष्ण तैसें न करतभये सब लोकनकी स्थिति वा देहविषें हैं जगत्के आश्रय भगवान्के शरीरके दाहतें जगत्हूको दाह होइ और वह शरीर धारण और ध्यानको विषय है जो दाह मानिये तो धारणा ध्यान कैसे होइ और अबहूं उपासकनको तैसेंही वह रूप साक्षात्कार दीखै है यासों इच्छाको शरीर बनाइकैं ताकों योग धारणा करिकैं जराये विना अंतर्धान करि जातभये ॥ ६ ॥ तहां देवलोकमें नगाडे बाजतभये, आकाशते फूलनकी वृष्टि होतभई, श्रीकृष्णके पीछें भूमिते सत्य धर्म धैर्य कीर्ति लक्ष्मी ये सब जातभये ॥ ७ ॥ ब्रह्मादिक देवता श्रीकृष्णकों स्वधाम विषें प्रवेश करते न देखत भये तातें अति विस्मित भये, जातें श्रीकृष्णकी गति काहूनें न जानी ॥ ८ ॥ सोई दृष्टांत करिकैं कहैं हैं जैसे मेघमंडलकों छोडि आकाश विषें जाती वीजरीकी गति मनुष्यन करिकैं नहीं लखी जाय है तैसे देवतान करिकैं श्रीकृष्णकी गति न लखी गई विनकी गति विनके पार्षदही जाने हैं ॥ ९ ॥ ते ब्रह्मा रुद्रादिक देवता श्रीकृष्णकी योगगति देखिकै विस्मय पावतभये ता गतिकी स्तुति करत अपनें अपनें लोकनमें जातभये ॥ १० ॥ हे राजन् परीक्षित् ! यादवनके विषें श्रीकृष्णको जन्म धारण करनो माया करिकैं अनुकरण मात्र जानो, जैसे नट निर्विकार है नाना रूपन करिकैं जन्मादिकको अनुकरण करै या प्रकार आपुही यह जगत् उपजाई अंतर्यामी भावसो जगत्में आवेश करिकैं अंतकालमें संहार करै हैं परंतु आप अपनी महिमासों निर्विकार हैं ॥ ११ ॥ तुम और मूर्ति मति जानो, याही अवतारमें श्रीकृष्णको प्रताप बहुत बडो देख्यो है जिनने परलोकतें सांदीपनको पुत्र प्राप्तकियो, और वाकूंही शरीरसों शरणागतरक्षक श्रीकृष्ण ले आवतभये ब्रह्मास्त्र करिकैं दग्ध तुमकों रक्षा करतभये, कालनके काल महारुद्रकों बाणासुरके संग्राममें जीतत भये, और जरानाम वधिककों देहसहित स्वर्गकों प्राप्त कियो, श्रीकृष्ण कहा अपनी रक्षामें असमर्थ हैं ॥ १२ ॥ अहो जो श्रीकृष्ण समर्थ है तो कोऊ काल यह शरीर यहांही क्यों न रहे, तहां कहेहैं संपूर्ण जगत्के सृष्टि प्रतिपालन संहार विषें आपुही कारण हैं औरकी आकांक्षा नहीं राखे हैं अनेक शक्तिनको धरेहै, यद्यपि ऐसे हैं तोहू यादवनकों संहार करिकैं अपनें देहकों या लोकमें राखिवेको न इच्छा करत भये, आपुहूं निज धाम विषें अपने देहको प्राप्त करतभये तहां हेतु कहेहैं अब या देहको यहां कहा कार्य्य है स्वधर्मी आत्मनिष्ठनको दिव्यरीतिहीसो दिखावत भये, और भांति वे आत्मनिष्ठ दिव्यगतिको अनादर करि योगबलकरिकै देह सिद्धिको करि कहूं यहांहीं क्रीडा करिवेकों मन न करे याके अर्थ प्रभु आपुहू सिधारे हैं प्रयोजन यामें यह है कि अपने शरीरके अंतर्धान करिवेमें यह उपदेश किया कि जब अखिलकोटिब्रह्मांडनायक मेंहू या लोकमें स्थिर न रह्यो तब फिर और कौन रहेगो ऐसे या जगत्की अनित्यता दिखाई ॥ १३ ॥ जो प्रातःकाल उठि करिकैं सावधान होइ या श्रीकृष्णकी परमगतिकों भक्तितें कहै, सो परम उत्तम गतिको पावे ॥ १४ ॥ वसुदेव आदिकनकी गति कहें हैं, दारुक सारथि श्रीकृष्णतें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विछुरचो द्वारकामें आइकै वसुदेव उग्रसेनके चरणमें परिकै आंसून करिकै तिनके चरणनकों सींचत भयो ॥ १५ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! और सब यादवनको नाश कहत भयो, यह सुनिकै वसुदेवादिक जन हृदयमें उद्वेग पावतभये शोक करिकैं मूर्च्छित हो ॥ १६ ॥ मुखकों कूटते श्रीकृष्णके वियोगसे विह्वल उतावले तहांई आवतभये जहां बांधव प्राणरहित सोयेहैं ॥ १७ ॥ देवकी और रोहिणी और वसुदेवजी श्रीकृष्ण और बलदेव पुत्रको विना देखे शोक करिकै आतुर हो सुधिरहित होत भये ॥ १८ ॥ भगवान्के विरहसो आतुर हो तहांही प्राण छोड दिये अपने अपने पतिकों मिलिकरिकैं स्त्री चितामें प्रवेश करत भई ॥ १९ ॥ और बलदेवजीकी स्त्री बलदेवजीके देहकों आलिंगन करकै अग्निमें प्रवेश करत भई, और वसुदेवकी स्त्री वसुदेवके देह करिकै श्रीकृष्णकी पुत्रवधू प्रद्युम्न आदि अपनें अपनें पतिनकों मिलिकै रुक्मिणी आदि श्रीकृष्णकी स्त्री श्रीकृष्णमय होत अग्निमें प्रवेश करतीभई ॥ २० ॥ परमप्रिय सखा श्रीकृष्णके विरहसो आतुर हो अर्जुन श्रीकृष्णकथित गीता शास्त्रसो आपकोंही समुझावतभयो " मैं योगमाया करिकै आवृत हों सबकों प्रकट नहीं जन्मरहित अविनाशी हों यह मूढलोक मोकों नहीं जानते " इत्यादिक श्रीकृष्णके वाक्य है ॥२१॥ जिनकी संपत्ति नाशकों प्राप्तभई और आयु नाशकों प्राप्तभये, तिन बांधवनकों अर्जुन पिंडदान तर्पण आदि कार्य विधिपूर्वक क्रम करिकै करावत भये ॥ २२ ॥ हे महाराज ! श्रीयुत भगवान्के मंदिरको वर्जिकैं श्रीकृष्ण करिकैं त्यागी द्वारकाको क्षणमात्रमें समुद्र डुबावतभयो ॥२३॥ स्मरण मात्र करिकेंई सब अशुभकों हरवेहारे सब मंगलके मंगल भगवान् मधुसूदन ता मंदिरविषें नित्य विराजै हैं ॥२४॥ मरततें उबारे स्त्री बालक वृद्धको अर्जुन लेकरिक इंद्रप्रस्थमें प्रवेश कराइ तहां वज्रनाभकों अभिषेक करतभये ॥ २५ ॥ अब श्रीशुकदेवजी कहैं हैं हे राजन् परीक्षित् ! तुम्हारे पितामह पांडव अर्जुनतें सुहृदनको वध सुनिकै तुमकों वंशधारी करिकै महाप्रस्थानकों चले गये ॥ २६ ॥ जो मनुष्य श्रद्धाकरिकैं देवनके देव विष्णुके जन्म और कर्मनकों सुनैंगे कहैंगे सो सब पापनतें छूटैंगे ॥ २७ ॥ या प्रकार या ग्रंथमें और दूसरे ग्रंथनमें वर्णन किये भये परम मंगल भगवान् हरिके सुंदर अवतारनके चरित्र जो मनुष्य कहैंगे सो परमहंसनकें शरणदायक श्रीकृष्णविषें परम भक्ति पावेंगे ॥ २८ ॥

इत्थं हरेर्भगवतो रुचिरावतारवीर्याणि बालचरितानि च शंतमानि ॥
अन्यत्र चेह च श्रुतानि गृणन्मनुष्यो भक्तिं परां परमहंसगतौ लभेत ॥ २८ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रसंशोधितायां
एकादशस्कन्धे एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥
एकादशस्कन्धः संपूर्णः ॥

अज अव्यक्त अनादि श्रीकृष्णचरण मन लाय । कियो शुद्ध हरिकृपातें यदुपति रहैं सहाय ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रणयिमाधवउपन्यास.

इस सर्वोपयोगी उपन्यासकी प्रशंसा हम स्वयं न लिख इसके विषयमें गतवर्षकी सरस्वतीकी बारहवीं संख्याके ३९३ पृष्ठमें जो कुछ लिखा गया है उसेही नीचे अविकल रूपसे प्रकाशित कर इस ग्रन्थकी उपयोगिताके निर्णयका भार हम अपने विद्याविलासी एवं पठन पाठन प्रिय पाठकोंहीपर अर्पित करते हैं।

" * * हिन्दीमें आजकल उपन्यास विशेषरूपसे निकल रहे हैं, परंतु यह उनमेंका नहीं है। आजकलके साधारण उपन्यासोंमें तिलस्मकीही भरमार रहती है, और वे इस प्रकारकी भाषामें लिखे जाते हैं कि कोई पढालिखा विचारवान् मनुष्य उन्हें अपनी माता, स्त्री, अथवा कन्याके हाथतक पहुंचानेमेंभी पाप समझेगा। + +

मालतीका चरित्र जैसा इस उपन्यासमें लिखागया है, वह आदर्श बनाने योग्य है। सुअवसर मिलनेपरभी अपनी इच्छा होनेपर सहवर्गियोंकी सम्मति होनेपर जिस कन्याने अपने माता पिताकी आज्ञा विना अपना परिणय नहीं किया, और उसके बदले असह्य मानसिक व्यथा सहन की, वह कन्या यदि आदर्श स्वरूप न मानी जायगी तो और कौन ऐसी हो सकती है जिसे हम ऐसा समझ सकते हैं। हमारी सम्मतिमें यह पुस्तक बालिकाओंके पढने योग्य है।"

ऐसेही प्रशंसा पत्र बहुत हैं, पर उनके छापनेकी कोई तादृश आवश्यकता बोध नहीं होती। सुन्दर सुथरे कागजपर सुपाठ्य, अक्षरोंमें छपेहुए इस २३० पृष्ठवाले पुस्तकका मूल्य केवल १ रु० है। डाकव्यय अलग देना पडता है।

विवाहवृंदावन

भाषाटीकासहित.

इस पुस्तकमें नक्षत्रशुद्धि, कालमीमांसा, मेलक, नवांश, लग्नबल, चंद्रबल, राहुसत्ता, षड्वर्ग, ग्रहयोग, ग्रहभाव आदि विवाहसंबंधी सब बातोंका वर्णन विशेष रीतिसे किया है, हिंदी टीकासमेत यह ग्रंथ आजतक कहींभी नहीं छपा. कीमत १ रु.

इंग्लिश टीचर.

आजतक धनी साहूकार और व्यापारियोंका कार्य बहुतायतसे अंग्रेजोंके साथ रहताहै परन्तु अंग्रेजी न पढे रहनेके कारण उनके साथ वार्तालापादिमें मुँह ताकते रहजाते हैं और घरके कामोंकी अधिकतासे वे अपने बालकोंको पाठशालामें भेजकर अंग्रेजीकी उचित शिक्षाभी नहीं दे सकते हैं इसलिये यह पुस्तक उन्हींके लाभार्थ बनाई है कि घरमेंही विना शिक्षककी तकियेके सहारे पडे पडे यदि एक एक शब्दभी प्रतिदिन याद कर लियाकरें तो बिलकुल पराधीनही न रहे। इस पुस्तकके याद करलेनेसे बातचीत करना तार लिखना पढना आदि आवश्यकीय बातें आसकती हैं जिल्दकी बंधीहुई पुस्तकका दाम १। रु. है.

रामरसोदधि.

(सुन्दरकांड)

अर्थात्

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणका हिन्दीपद्यमें भावानुवाद।

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणके अमृतमयी कथाका रसास्वादन संस्कृतज्ञ विद्वानोंहीको सुखसाध्य था परंतु रामरसौदधिके तैयार होनेसे वह अनुपम चरित्र अब हिन्दी जाननेवाले कथारसिक सज्जनोंकोभी सुगम होयगा है। इसकी रचना दोहा चौपाई आदि छंदोंमें अत्यंत सरलता और सरसतापूर्वक हुई है। किसीभी अध्यायका पढना आरंभ कर उसे समाप्त कियेविना छोडनेकोभी जी नहीं चाहता। इसमें महर्षि वाल्मीकजीने हनूमानजीका लंका निरीक्षण बहुतही विलक्षणताके साथ वर्णन किया है। इसलिये हम हिन्दी प्रेमी पाठकोंसे आग्रह पूर्वक निवेदन करते हैं कि वे एकबार इस अनुपम ग्रंथका अवश्यही अवलोकन करें फिर तो आपही प्रशंसा करने लगेंगे! सर्व साधारणके सुभीतेके लिये मूल्यभी केवल १ रुपैया मात्र लिया जाता है।

अनेकसंग्रह।

यच्च गीतरसैर्भिन्नं तन्मुखं विवरं विदुः।

प्यारे पाठको! गाने बजानेके अनेकों राग रागिनी छन्द कवित्त और भजनोंका संग्रह देखो तौ इसे पढो इस पोथीमें अनेकों स्तोत्र व गानेकी चीजें एकत्रित करी गई हैं। यदि आशिकोंकी चुटाहल आहभरी बातें और बेवफाओंकी बेवफाईकी पूरी बहार देखनी हो तौ इसमें मिलेगी। एक २ गजल व ठुमरी ऐसी दिलचस्प लिखी गई है पढनेवाले लाहालोट हो जाते हैं। और यदि भक्तिमार्गपर चलना हो, संसारके सुखोंसे मुख मोड नारीसे नाता तोड मुमुक्षु बनना चाहो तो इसी ग्रन्थका दूसरा खण्ड पढो। विशेष प्रशंसा करना मानो सूर्यको दीपकसे दिखाना है। यह ग्रन्थ दो खण्डोंमें परिपूर्ण हुआ है। मू० २॥ रु०।

भागवतसार.

हिन्दीभाषावार्तिक.

यह पुस्तक तो ऐसा उत्तम हुवा है कि, संपूर्ण भागवतका सार थोरेसेमें ऐसा झलकाया है कि, बालसे वृद्धपर्यन्त सबोंके समझनेमें शीघ्र आसक्ता है. देखो! यह पुस्तक सुंदर मनोहर अक्षरोंमें चिकने कागजपर सर्वोपरि उत्तम छपा है और इसका मूल्यभी केवल १ रु० रक्खा है.

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना

कल्याण—मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीमद्भागवतभाषा

द्वादशस्कन्धप्रारम्भः।

अध्याय १.

कृष्णचरणपंकज सुमरि, भक्तन सुखदातार। शोधन द्वादशको करत, जो दायक फल चार ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

राजोवाच-स्वधामानुगते कृष्णे यदुवंशविभूषणे ॥
कस्य वंशोऽभवत्पृथ्व्यामेतदाचक्ष्व मे मुने ॥ १ ॥

॥ श्रीगणाधिपतये नमः ॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥ अथ द्वादशस्कंधो लिख्यते ॥ अब द्वादशस्कंधमें तेरह अध्यायनकरके परमात्माके आश्रय लक्षणको वर्णन करते हैं तहां अधिष्ठान और अवधि करके ईश्वरको आश्रय कह्यो है ॥ १ ॥ लयकी अवधिकरके प्राकृत और आत्यंतिक लय कही और अधिष्ठानता करके महापुरुषलक्षण कहे, तहां द्वादशस्कंधकी प्रथमाध्यायमें होनहार मागधवंशके राजा कलियुगके प्रतापसौ वर्णसंकरताको प्राप्त भये तिनको वर्णन करेंगे ॥ राजा परीक्षित् प्रश्न करें हैं, हे मुने! यदुवंशके भूषणरूप ऐसे श्रीकृष्ण जब अपनें निज धाममें गये, तब पृथ्वीमें कौनको वंश होतोभयो यह हमसों कहो ॥ १ ॥ तब श्रीशुकदेवजी कहें हैं, हे राजन्! बृहद्रथके वंशके अंतमें पुरंजय नाम राजा होतभयो ताको मंत्री शुनक वो वा पुरंजयको मारिकैं प्रद्योत नाम अपनें पुत्रको राजा करेगो, ताके पालक पुत्र होइगो ॥२॥ ताके विशाखयूप पुत्र होइगो, ताको राजक पुत्र होइगो, ता राजकके नंदिवर्द्धन पुत्र होइगो, ये पांच प्रद्योत नाम राजा ॥ ३॥ अडतीस ऊपर सौ वर्षताईं पृथ्वीको भोग करेंगे. तिनके पीछें शिशुनाग नाम राजा होइगो, ताके काकवर्ण पुत्र होइगो, ताकें क्षेमधर्मा पुत्र होइगो ताकें क्षेत्रज्ञ पुत्र होइगो ॥ ४ ॥ ताके विधिसार पुत्र होइगो ताकें अजातशत्रु पुत्र होइगो ताके दर्भक पुत्र होइगो ताकें अजय पुत्र होइगो ॥ ५ ॥ ताकें नंदिवर्द्धन पुत्र होइगो, ताकें महानंदि पुत्र होइगो हे कुरुवंशमें श्रेष्ठ! ये शिशुनागादि दश राजा साठि ऊपर तीनसौ वर्षताईं पृथ्वीको कलियुगमें भोग करेंगे ॥ ६ ॥ हे राजन्! महानंदिको पुत्र शूद्रीके गर्भमें भयो बडो पराक्रमी ॥ ७ ॥ बली नाम होयगो वो महापद्म सेनाको पति नंदिनाम क्षत्रियनको नाश करनहारो होइगो ता नंदते शूद्रप्राय अधर्मी राजा होंइगे ॥८॥ सो नंद पृथ्वीमें एकही छत्रधारी होइगो कोऊ ताकी आज्ञाको उल्लंघन न करे ऐसो होयगो मानो दूसरो परशुराम है ॥९॥ ता नंदके सुमाल्यादि करिकैं आठ पुत्र होइंगे, वे सब राजा ह्वैकैं सौ वर्षताईं या पृथ्वीको भोग करेंगे ॥ १० ॥ अपनी शरण आये विन नवनंदनको कोई एक चाणक्य नाम ब्राह्मण मारेगो, तिनकें मरे पीछें कलियुगमें मौर्य नाम राजा पृथ्वीको भोग करेंगे ॥ ११ ॥ नवनंदनको मारनहारो सो ब्राह्मण चंद्रगुप्त मौर्यकों राज्यविषैं अभिषेक करेगो ता चन्द्रगुप्तके वारिसार पुत्र होइगो ताकें अशो-

१ दोहा-विश्वभरणपोषण करण, भक्तन सुखदातार। रसिकशिरोमणि सांवरे, द्रवहु सो नंदकुमार ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कवर्द्धन पुत्र होइगो ॥ १२ ॥ ताकें सुयशा पुत्र होइगो, ताकें संगत पुत्र होइगो, ताकें शालिशूक पुत्र होइगो, ताके सोमशर्मा पुत्र होइगो ॥ १३ ॥ ताके शतधन्वा पुत्र होइगो ताकें बृहद्रथ पुत्र होइगो, ये दश मौर्य राजा कलियुगमें सैंतीस ऊपर सौ वर्षताईं पृथ्वीको भोग करेंगे, हे कौरवनमें श्रेष्ठ ! इन सब मौर्यनमें पहिले एकादश बृहद्रथनाम मौर्य होत भयो यह जानिवे योग्य हो ॥ १४ ॥ तदनंतर अग्निमित्रराजा होइगो ताकें सुज्येष्ठ पुत्र होइगो ताके वसुमित्र ताकें भद्रक पुत्र होइगो ताकें पुलिंद पुत्र होइगो ॥ १५ ॥ ताकें घोष पुत्र होइगो, ताकें वज्रमित्र पुत्र होइगो ताके भागवत पुत्र होइगो ताकें देवभूति पुत्र होइगो ॥ १६ ॥ यह दश शुंग नामके राजा कहे, ये दश ऊपर सौ वर्षताईं पृथ्वीको भोग करेंगे, हे कौरवनमें श्रेष्ठ ! इन सबमें शुंग राजा पहिले भयो तदनंतर हे नृप ! अल्प गुणवाले कण्वजातिके पृथ्वीके राजा होंइगे ॥ १७ ॥ देवभूति नाम शुंग राजाको मंत्री बडो बुद्धिमान् वसुदेव परस्त्रीगामी देवभूति शुंगको मारिकैं आपुही राज्य करेगो ॥ १८ ॥ ताकें भूमित्र पुत्र होइगो; ताके नारायण पुत्र होइगो ताकें सुशर्मा पुत्र होइगो ये सब कण्वही कहाय पैंतालीस ऊपर तीनसौ वर्षताईं कलियुगमें पृथ्वीको भोग अर्थात् राज्य करेंगे ॥ १९ ॥ सुशर्मा कण्वको कोई एक भृत्य शूद्रनमें नीच असत्तम बलीनाम सुशर्म्मा कण्वकों मारिकैं कछु वर्षताईं पृथ्वीकों भोग करेगो ॥ २० ॥ तदनंतर ता बलीको भैया कृष्णनाम पृथ्वीकों पति होइगो ताकें शांतिकर्ण पुत्र होइगो ताके पौर्णमास पुत्र होइगो ॥ २१ ॥ ताकें लंबोदरपुत्र होइगो ताकें चिबिलक पुत्र राजा होइगो ताके मेघस्वाति पुत्र होइगो ताकें अटमान पुत्र होइगो ॥ २२ ॥ ताकें अनिष्टकर्मा पुत्र होइगो, ताकें हालेय पुत्र होइगो ताकें तलक पुत्र होइगो ताकें पुरीषभीरु पुत्र होइगो ताकें सुनंदन पुत्र होइगो ॥ २३ ॥ ताकें चकोर पुत्र होइगो, वो नौमो होयगो ताके वटक पुत्र होइगो ताके शिवस्वाति पुत्र होइगो, हे अरिंदम ! ताके गोमती पुत्र होइगो, ताके पुरीमान् पुत्र होइगो ॥ २४ ॥ ताकें मेदशिरा पुत्र होइगो, ताकें शिवस्कंद पुत्र होइगो ताकें यज्ञश्री पुत्र होइगो, ताके विजय पुत्र होइगो, ताके चंद्रभाव्य पुत्र होइगो ताकें सलोमधी पुत्र होइगो ॥ २५ ॥ हे कुरुनंदन ! ये तीस राजा छप्पन ऊपर चारसौ वर्षताईं पृथ्वीको भोग करेंगे ॥ २६ ॥ तदनंतर आवभृत्यनगरमें सात अभीर राजा होंइगे, तदनंतर दश गर्दभी राजा होंयगे सोलहे कंक राजा लोलुप होंयगे ॥ २७ ॥ तदनंतर आठ यवन राजा होंयगे, तातें पीछें चौदह तुरुष्क[1] राजा होंइगे फेरि दश गुरंड अँगरेज राजा होंइगे ग्यारह मौन राजा होइगे ॥ २८ ॥ ये सब राजा एक वर्ष घाटि ग्यारहसौ वर्ष ताईं पृथ्वी भोग करेंगे ॥ २९ ॥ ते मौन तीनसौ वर्ष ताईं पृथ्वीको भोग करेंगे, तदनंतर किलकिलानगरमें भूतनंद राजा होयगो वाके उपरान्त वंगिरि ॥ ३० ॥ फिर वाके भाई शिशुनंदि और तिनके भैया यशोनंदी प्रवीरक ये सब छे ऊपर सौ वर्षताईं पृथिवीको भोग करेंगे ॥ ३१ ॥ तिन शिशुनंदीनके तेरह पुत्र होंइगे; ते सब बाह्लीकही कहांमेंगे, और एक पुष्पमित्र नाम राजा होइगो, ताकें दुर्मित्र पुत्र होइगो ॥ ३२ ॥ सात तो अंध्र सात कौशल और एक वैदूर्यनगरको पति नैषध ये सब खंडमंडलेश्वर राजा एकही कालमें होंइगे ॥ ३३ ॥ फेरि मागधदेशमें विश्वस्फूर्जि पुरंजय नाम राजा होइगो सो बडो पराक्रमी विदुर्मति होइगो पुलिंद यदु मद्रक ये म्लेच्छप्राय वर्णनकों करेगो ॥ ३४ ॥ औरहू अब्रह्मण्य प्रजानकों स्थापन करेगो, क्षत्रीनको नाश करिकैं पद्मावती नाम पुरीमें बसिकै हरद्वार और प्रयागताईं पृथ्वीको भोग करैगो ॥ ३५ ॥ सौराष्ट्रदेश उज्जैन आभीर शूर अर्बुद मालवा इन सब देशनके वासी जनेऊ क्रियान करिकैं हीन ब्राह्मण है जायगे और शूद्रप्राय राजा होंइगे ॥ ३६ ॥ सिंधुचंद्र-

१ अर्थात् तुरक ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भागाके तीर काश्मीर आदि सब देशनमें शूद्र क्रियासों हीन म्लेच्छ प्राय वेदमर्यादाके छोडनहारे राजा होंइगे ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! ये सब एकही कालमें म्लेच्छप्राय अधर्मी असत्यपरायण अल्प दाता बडे क्रोधी ॥ ३८ ॥ स्त्री बाल गौ ब्राह्मणको मारनहारे, परस्त्री और पराये धनके हरनवारे उपजेंगे, और मरेंगे, अल्प पराक्रम अल्पआयुर्बलवारे होइगे वे राजा ऐसे होइगे कि सूर्योदयके समय जिनको राज्य आयो और संध्याको जिनको राज्य चलो जायगो ॥ ३९ ॥ वे सब संस्कार क्रियान करिकैं हीन रजोगुण तमोगुण करिकैं आवृत, म्लेच्छ राजानको रूप धरें प्रजानके भक्षक अर्थात् दुःखदायी होंइगे ॥ ४० ॥ जब वे दुष्ट राजा होयगे तब दुष्ट राजा जिनके स्वामी ऐसे जितने देश हैं वे सब देश तिनहीं राजानके भाव और आचरणकों अनुसरिके आपुसमें और राजान करिकैं पीडित क्षयको प्राप्त होंइगे ॥ ४१ ॥

तन्नाथास्ते जनपदास्तच्छीलाचारवादिनः ॥
अन्योन्यतो राजभिश्च क्षयं यास्यन्ति पीडिताः ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २.

श्रीशुक उवाच-ततश्चानुदिनं धर्मः सत्यं शौचं क्षमा दया ॥
कालेन बलिना राजन्नङ्क्ष्यन्त्यायुर्बलं स्मृतिः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहेहैं हे राजन् ! ताके अनंतर दिन दिन बलवान् कलियुग करिकैं धर्म सत्य शौच क्षमा दया आयुर्बल स्मरण आदि ये सब घट जायगे ॥ १ ॥ कलियुग विषें मनुष्यनके जन्म आचार और गुण एक धनहीं कहावेगो धर्मन्यायविषें जो बली होयगो वही जीतेगो ॥ २ ॥ स्त्रीपुरुष बनवेमें अभिरुचिही हेतु होयगी अर्थात् जिन २को मन मिलजायगो वही स्त्रीपुरुष होयगे कपटको व्यवहार रहिजायगो स्त्रीपुरुष होयवेमें प्यारही हेतु होयगो, कछु जातिको विचार नहीं ब्राह्मणकें जनेऊ मात्रही हेतु होयगो कछु आचार नहीं ॥ ३ ॥ आश्रम चिह्नमात्रहीं करिकैं जानें जाइगे आपुसमें प्यार कहूं नहीं धनहीन न्यायमें हारेंगे, बहुत बोले सोई पंडित कहावेगो ॥ ४ ॥ धन आदि हीन असाधु कहावेंगे, दंभवानहीं साधु है, व्याह स्वीकारमात्रही है और मूडके वारनको धोयवोही स्नान होवेगो ॥ ५ ॥ दूरिके जलहीकों तीर्थ मानेंगे, गुरुसेवनमें रुचि नहीं, केश धारणही सुंदरता कहावेगी, उदर भरिवोही सब स्वार्थनको सिद्धता होयगी ढीठही सत्यवादी कहावेंगे ॥ ६ ॥ कुटुंबके भरनहीमें चतुराई कहावेगी, यशके लिये धर्मको करैंगे, याप्रकार दुष्टप्रजान करिकै जब पृथ्वीमंडल व्याप्त होइगो ॥ ७ ॥ तब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रनमें जो बली सोइ राजा होइगो लोभी निर्दयी लुटेरनसे जब राजा है जायगे ॥ ८ ॥ बिन राजन करके अपनी स्त्री धन छीडजायवेसो प्रजा पर्वतमें जायके शाक, मूल, फल, मांस, मधु, पुष्प, बीज इनसों उदर भरन करेंगो ॥ ९ ॥ अनावृष्टि अकाल राजा और शीत हवा धूप वर्षा कोहल इन सबन करिकै पीडित आपुसमें बहुत क्लेशकर प्रजा नष्ट होयगी ॥ १० ॥ भूख प्यास रोग संताप चिंतासे युक्त होंइगे, मनुष्यनकी अंत कलियुगविषे बीस अथवा तीस वर्षकी बडी आयुर्दा होइगी ॥ ११ ॥ जब कलियुगके दूषण करिकै मनुष्यनको देह क्षीण होइगो, और वर्णाश्रमयुक्त मनुष्यनको वेदमार्ग धर्म नष्ट होइगो ॥ १२ ॥ केवल पाषंडधर्महीं बढेंगे, राजा लुटेरिया होइगे झूठ वृथाहिंसा नानावृत्तिको करैंगे ऐसे मनुष्य होयगे ॥ १३ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

वर्णाश्रम सब शूद्र प्राय होंइगे गाय बकरियाके समान होइगीं, चारों आश्रम गृहस्थ प्राय होंइगे स्त्रीके भैया बंधुनसो अति प्यार करेंगे और सब आश्रम गृहस्थ प्राय होंइगे ॥ १४ ॥ अन्न सब क्षीण होगो वृक्ष सब छौकरंसे, मेघ वृष्टिमें बीजुरी बहुत चमकेगी वर्षा थोरी होइगी गृहस्थनके घर शून्यप्राय होंइगे ॥ १५ ॥ या प्रकार कलियुगमें मनुष्य मघासे होंइगे, तब धर्मकी रक्षाके लिये भगवान् शुद्ध सतोगुण मूर्ति करिकैं अवतीर्ण होंइगे ॥ १६ ॥ चराचरके गुरु सबनके आत्मा ईश्वर विष्णुको जन्म साधुनकै धर्मकी रक्षाको और कर्मनके प्रचारके लिये ॥ १७ ॥ शंभल ग्राममें मुख्य महात्मा विष्णुयशा ब्राह्मणके गृहमें कल्की भगवान् प्रकट होंइगे ॥ १८ ॥ देवतान करिकैं दिये शीघ्रगामी घोडापै चढिकै खड्ग लेकै असाधुनके दमन कर्त्ता अणिमादि अष्टसिद्धिन करिकै युक्त ॥ १९ ॥ जगत्पति निरुपम कांत भगवान् ता घोडाको दौरावते पृथिवीमें विचरते राजानके चिह्न धरनहारे ऐसे कोटिन चोरनको मारेंगे ॥ २० ॥ तदनंतर वासुदेवके अंगरागकी अति पुण्यरूप सुगंधयुक्त पवनके स्पर्शसो तिन मनुष्यनके मन उज्ज्वल होइगे जब नगर देशनमें सब चोर भगवान् करिकैं मारे जांइगे ॥ २१ ॥ और तिन नगर देशवासीनके हृदयमें शुद्ध सत्वमूर्ति भगवान् वासुदेव स्थित होंइगे, तब तिन प्रजानके पुत्रादि उत्तम पुष्ट होंइगे ॥ २२ ॥ जब धर्मके पालक कल्की भगवान् हरि अवतीर्ण होइगो, तब सत युग होइगो, और प्रजानकी संतान सात्विकी होइगी ॥ २३ ॥ जब चंद्र सूर्य बृहस्पति ये सब पुष्यनक्षत्रके योग करिकैं एक राशिमें प्राप्त होइगे तब सतयुग होइगो ॥ २४ ॥ जो चंद्रसूर्यवंशी राजा है चुके हैं और जे अब हैं जे आगे होइगे ते सब संक्षेपते तुमसों कहे ॥ २५ ॥ तुम्हारे जन्मते लेके नंदके राज्य ताईं पंद्रेसौ वर्ष कहे ॥ २६ ॥ आकाश विषें सप्तऋषिनके मध्यमें जो द्वै पहिलें तारे दीखें हैं तिन दोनोंनके मध्यमें रात्रिमें तिन दोऊनकों बराबरही जो दीखै है ॥ २७ ॥ वाही करके युक्त मनुष्यनके सौ वर्ष ताईं सप्तऋषि रहैं हैं अरुंधतीके नक्षत्र सहित सातों ऋषि मनुष्यनके सौ वर्ष प्रत्येक नक्षत्रपर रहैं हैं ये सप्तऋषि अब तुम्हारे होत्संतें मघानक्षत्रपर स्थित हैं ॥ २८ ॥ जब तेजस्वी सत्यमूर्ति भगवान् श्रीकृष्ण अपने परम धाममें गये तबहीं कलियुगने या लोकमें प्रवेश कियो, जा कलियुगके प्रवेश होतेंही जननकी पापमें रुचि भई ॥ २९ ॥ हे राजन् ! जब ताईं रमापति भगवान् चरणकमलनसे पृथ्वी स्पर्श करते विराजमान रहे, तब ताईं कलियुग पृथ्वीमें अपनो पराक्रम न करिसक्यो ॥ ३० ॥ जब मघामें सातों ऋषि वर्तें हैं तबहीसे कलियुग प्रवृत्त ह्वैकै देवतानके बारेसौ वर्षताईं रहैहैं ॥ ३१ ॥ जब सातों ऋषि मघातें निकसिकै पूर्वाषाढ नक्षत्रमें जाहिगे तब नंदके राजते आरंभ करिकैं कलियुग बढैगो ॥ ३२ ॥ जा दिन श्रीकृष्ण अपने परम धामको पधारे ताई दिन कलियुग या लोकमें प्रविष्ट भयो ऐसे पहिले ऋषि कहेहैं ॥ ३३ ॥ देवतानके ४ हजार वर्ष संध्यानमें गये भये पीछे फिरि सतयुग होइगो, तब मनुष्यनके मनमें आत्माको प्रकाश होइगो ॥ ३४ ॥ हे राजन् ! या प्रकार मनुको वंशी पृथिवीमें होत भयो, सो हमने कह्यो ऐसेही ब्राह्मण वैश्य शूद्रनको वंश युगयुगमें जानिवेको योग्यही है ॥ ३५ ॥ नाम मात्र जिनके चिह्न विनकी कथा मात्र कहवेको रहगई ऐसे महात्मा पुरुषनकी कीर्तिही पृथिवीमें रही वे न रहे ॥ ३६ ॥ चंद्रवंशी शंतनुको भैया देवापी और इक्ष्वाकुवंशी मरु ये दोउ बडे

---

१ दोहा-संतनके सुख करनको, हरन भूमिको भार । हुइहै कलियुग अन्तमें, निष्कलंक अवतार ॥ २ क्योंजी सूर्य चंद्रमा बृहस्पति तीनों ग्रह तो बारह वर्षमें एक राशि पुष्यपे सदाही आय जायहै फिर सतयुग क्यों नहीं होय है ताको उत्तर यह है कि जब कभू उक्त तीनों ग्रह जब एककालावछिन्न पुष्यनक्षत्रके प्रथमचरण एक संग आमेंगे तब सत्य युग होयगो यह समझनो ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

योगबल करिकैं कलापग्राममें वास करै हैं ॥ ३७ ॥ ते दोऊ कलियुगके अंतमें यहां आइके भगवान्तें शिक्षा पाइकै पहलेसे सब वर्णाश्रमके धर्मनकों विस्तारेंगे ॥ ३८ ॥ सत्युग त्रेता द्वापर कलियुग ये चारों युग या क्रम करिकैं पृथिवी विषैं प्राणीनमें वर्तै हैं ॥ ३९ ॥ हे राजन् परीक्षित् ! ये जे संपूर्ण राजा मैंने तेरे आगे वर्णन करे औरहू जे भये ते सब या भूमिसों ममता करिकैं वा भूमिको छोडिकैं आपु नाशको प्राप्त भये ॥ ४० ॥ जा शरीरको राजा नाम है ता शरीरको हू अंतमें कृमिविष्ठा राख ये नाम होयहै ऐसे शरीरके लिये जो कोउ प्राणीनसों द्रोह करै हैं सो स्वार्थको नहीं जानहैं जा द्रोहते नरक होइहै ॥ ४१ ॥ कैसें यह सब भूमि हमारे पुरुखानने पालीही अब कैसी भांति हमारे पुत्रपौत्र वंशीनको होइगी यह मनोरथ करतेरहे ॥ ४२ ॥ ते अज्ञानी पंचभूतमय या शरीरकों अपनो मानिकैं पृथिवीसों ममता करिकैं अंतमें दोउनको छोडिकैं आप जातभये ॥ ४३ ॥ हे राजन् ! जे जे पृथिवीपति भये वे अपने पराक्रमसों भोग करत भये या कालनें तिन सबनकी कथाही मात्र कहवेको राखी और खोज-निसान विनको कछु न रह्यो ॥ ४४ ॥

ये ये भूपतयो राजन्भुञ्जन्ति भुवमोजसा ॥
कालेन ते कृताः सर्वे कथामात्राः कथासु च ॥ ४४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३.

श्रीशुक उवाच-दृष्ट्वात्मनि जये व्यग्रान्नृपान्हसति भूरियम् ॥
अहो मां विजिगीषन्ति मृत्योः क्रीडनका नृपाः ॥ १ ॥

श्रीशुकदेवजी कहे हैं हे राजन् ! अपने जीतिवेके लिये अति आग्रहयुक्त राजानकों देखिकैं यह पृथ्वी हंसेहैं कैसे हंसेहै अहो ये सब मृत्युके खिलौना राजा मोको जीत्यो चाहेहैं ॥ १ ॥ जा कामनाकरिकैं बुदबुदतुल्य या शरीरविषें जिन राजानको विश्वास उपजायो तिन विद्वान् राजानहूकी कामना निष्फल है ॥ २ ॥ पहलें पांच इन्द्रियन सहित छठे मनकों जीतेंगे तदनंतर मंत्री और सचिव और पुरवासी और मत्तगज कुटुंबादिक महाव्रत इन सबनको वश करिकैं तदनंतर सेनान सहित वैरीनको जीतेंगे ॥ ३ ॥ या क्रम करिकैं समुद्र मेखला पर्यंत पृथिवीको जीतेंगे ऐसी आशावेष्टितचित्तहृदयवारे सब राजा अपने निकट रहनवारे कालको नहीं देखेहैं ॥ ४ ॥ समुद्र करिकैं आवृत मोको पराक्रमसों जीतिकै अतितृष्णासों समुद्रके देशनमें प्रवेश करै हैं इन्द्रिय और मनके जीतेपै राज्यसाधनकी इच्छा करनी मूर्खता है आत्मजयको फल तौ मुक्तिही है ॥ ५ ॥ जा मोको छोडिकैं मनु और मनुके पुत्र जैसे आये वैसेही जाते भये, ता मोको कुबुद्धि युद्धमें जीत्यो चाहे हैं हे कौरवनमें श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ! ऐसे पृथ्वी कहेहैं ॥ ६ ॥ राज्यविषे ममतासों बंधे असतराजा, मेरे लिये पिता पुत्र भैया ये सब आपुसमें कलह करे है ॥ ७ ॥ हे मूढ ! यह सब पृथ्वी मेरी है तेरी नहीं है, यह कहते आपुसमें स्पर्द्धा करते मेरे लिये राजा मरे हैं ॥ ८ ॥ पृथु, पुरूरवा, गाधि, नहुष, अर्जुन, भरत, मांधाता, सगर, राम, खट्वांग, धुंधुमार, रघु ॥ ९ ॥ तृणबिंदु, ययाति, शर्याति, शंतनु, गय, भगीरथ, कुवलयाश्व, ककुत्स्थ, नैषध, नृग ॥ १० ॥ हिरण्यकशिपु, वृत्रासुर, लोकको रुवावनवारो रावण, नमुचि, नरकासुर, शंबर, भौमासुर, हिरण्याक्ष, तारक ॥ ११ ॥ औरहू बहुत दैत्य राजा बडे बली और महेश्वर हे वे सबही सबके जाननहारे बडे शूर

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सबही सबके जीतनहारे हे पन वे सब ऐसे हे कि जे काहीकरकें नहीं जीतेहे ॥ १२ ॥ वे मरणधर्मा मेरे विषें बडी ममता करिकै वे सब मनोरथ पूर्ण भये विनाहीं कालके गालमें गये ॥ तिन सबनकी एक कथाही मात्र रहिगई हे समर्थ ! ॥ १३ ॥ या प्रकार पृथ्वी हाँसि करिकैं कहत भई, हे विभो ! लोक विषें यशको विस्तार करिकैं आपु परलोककों जातभये, ऐसे बडे बडे राजानकी कथा मैंने तुमसों विज्ञान वैराग्यके लिये कही सो केवल वाणीको विलासही है कछु परमार्थ नहीं है ॥ १४ ॥ अमंगलनाशक उत्तम श्लोक भगवान्के गुणनकों कवि सदा गामें है, जो कोई श्रीकृष्ण विषें निर्मल भक्तिकों चाहें सो निरंतर विन गुणनको सुनें ॥ १५ ॥ राजा प्रश्न करें हैं हे भगवन् ! हे मुने ! कलियुगके बडे दोषनको कलियुगके मनुष्य कौनसे उपायन करिकैं दूरि करे सो तुम हमसूं कहो ॥ १६ ॥ युग कहौ कि युगनाम काहेको है और युगनको धर्म कहो और प्रलय कल्पको प्रमाण कहो फेरि महात्मा कालरूप विष्णु भगवान्की गति कहो ॥ १७ ॥ श्रीशुकदेवजी कहें हैं हे नृप ! सतयुगमें सतयुगके जननको धारण कियो धर्म चारि चरण करिकैं वर्त्तें है, एक तो सत्य, दया, तप, दान ये चारि धर्म चरण हैं ॥ १८ ॥ सदा संतुष्ट करुणावान मित्रता करिकैं युक्त शांत दांत सहनशील आत्माराम समदृष्टि परमार्थमें निरालसता युक्त संन्यासको प्रधान माननवारे सतयुगके मनुष्य होत भये ॥ १९ ॥ त्रेतायुग विषें झूठ हिंसा तृष्णा विग्रह इन अधर्मके पांयन करिकैं सत्य दया तप दान ये धर्मके चरण इनमेंसे शनैः २ चौथो भाग क्षीण होय है ॥ २० ॥ हे नृप ! क्रिया तपमें निपुण अति हिंसक और लंपट नहीं, धर्म अर्थ काममें निष्ठा वेदत्रयी धर्मपरायण ब्राह्मण मुख्य वा युगकी प्रजा होती भई ॥ २१ ॥ द्वापरयुग विषें हिंसा तृष्णा झूठ द्वेष इन चार अधर्मके पायन करिकैं दया तप सत्य दान ये धर्म पांय आधे आधे घटत भये ॥ २२ ॥ यशस्वी बडे शीलवान् अध्ययन विषें निपुण संपत्ति करिकैं युक्त कुटुंबी हर्षित ब्राह्मण क्षत्रिय मुख्य प्रजा वा द्वापरयुगविषें होती भई ॥ २३ ॥ अब कलियुग विषे बडे अधर्मके पायन करिकैं धर्मको एकही पांइ रहैगो सोऊ अंतमें नष्ट होइगो ॥ २४ ॥ ता कलियुगमें लोभी, दुराचारी, निर्दयी, सूखी लडाई लरनवारे, दुर्भागी बडी तृष्णायुक्त शूद्र और दास मुख्य ऐसी प्रजा होइगी ॥ २५ ॥ सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये तीनों गुण ईश्वरके आधीन है, काल करिकैं प्रेरित हैं जीवन विषें फिरते दीखते हैं ॥ २६ ॥ जब मन बुद्धि इंद्रिय सतोगुणमें स्थित होइ तब सतोगुण जाननो जा सतोगुण करिकैं ज्ञान और तपमें रुचि होइ है ॥ २७ ॥ बुद्धिवान् जब सकाम कर्मन विषें देहधारीनकी श्रद्धा होय, तब रजोगुण युक्त त्रेतायुग जानिये ॥ २८ ॥ जब लोभ तृष्णा गर्व दंभ मत्सरता सकामकर्मन विषें प्रीति होय तब रजोगुण तमोगुण मुख्य द्वापर जानिये ॥ २९ ॥ जब कपट झूठ आलस निद्रा हिंसा दुःख शोक मोह भय दीनता ये होइ तब तमोगुण मुख्य कलियुग जानिये ॥ ३० ॥ जा कलियुगके हेतुकों पायकैं जन क्षुद्रदृष्टि मंदबुद्धि मंदभागी बडे आहारी कामी धनहीन होइगे; और स्त्री असाध्वी स्वेच्छाचारिणी होइगी ॥ ३१ ॥ जा कलियुगमें चौरनसों देश व्याप्त होइगे वेद पाखंड करिकैं दूषित होंइगे राजा प्रजानके लूटनवारे होइगे ब्राह्मण स्त्रीलंपट उदरपरायण होंइगे ॥ ३२ ॥ ब्रह्मचारी व्रत आचार हीन होंइगे भिखारी जे संन्यासी आदि हैं वे कलियुगमें कुटुंबी होइगे तपस्वी ग्रामवासी

---

१ कवित्त–माधान्ता वा दिलीप दशरथ दधीचि भये रावन सो कंचनकी लंकमें परचो रहो । बलि वेणु चक्रवे विदेह राजा भृगु राजा अवनिसुत धरा महिमंडलसों भरचो रहो ॥ कहत पृथ्वीराज दुर्योधनसे जरासंध करणसों दानी जो कछो सो करचो रहो । जेते देहधारी तेते बखत बजाय गये केते उठगये यहां जमाखर्च धरचो रहो ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होंइगे; संन्यासी धनकी लोभी होंइगे ॥ ३३ ॥ ठिंगने शरीरकी बहुत भोजन करनवारी बहुत संतान उपजावनहारी लज्जाहीन सदा कटुक बोलनहारी चोर ठीठ कपटनी बडी साहसिनी स्त्री वा कलियुगमें होंइगी ॥ ३४ ॥ तुच्छ किरातादि कपटी व्यापारी होंइगे आपदा विनाही निंदित जीविकाकों उत्तम मानेंगे ॥३५॥ धनहीन उत्तम पतिको स्त्री त्याग करैंगी और भृत्य सर्वोत्तम स्वामीनको त्याग करेगो; रोगी भयेते सदाके भृत्यकों स्वामी छोडे देंइगे, विना दूधकी गायको छोडि देंइगे ॥ ३६ ॥ पिता भैया सुहृद ज्ञाति इनकों छोडिकै स्त्रीके नातेवारे सारे सुसरेनसों प्यार करैंगे; और स्त्रीकी बहनिसों भैयानसों मतो करेंगे दीन स्त्रीलंपट नर कलिमें होंइगे ॥ ३७ ॥ शूद्र तपस्वीको भेष धरिकै जीविका करते प्रतिग्रह लेंयगे और बडे अधर्मी वे शूद्र उत्तम आसनपै बैठिकै औरनकों धर्मको उपदेश करैंगे ॥ ३८ ॥ हे राजन्! नित्य उद्विग्न जिनके मन, अकाल और राजानके कर करिकै पीडित अन्नहीन पृथ्वीमें अनावृष्टिके भयेते आतुर ॥ ३९ ॥ वस्त्र भूषण खान पान स्नान स्त्रीसंग इन सुखन करिकै हीन पिशाचसे दीखें ऐसी प्रजा कलियुगमें होंयगी ॥ ४० ॥ ता कलियुगमें वीस कौडीनके लियें सौहृद छोडिकैं लराई करिकैं आपुसमें मरैंगे और अपनेनकौ मारैंगे ॥ ४१ ॥ वा कलियुगके जन वृद्ध माता पिताकों पालन न करेंगे और सब अर्थनमें निपुण पुत्रनकी रक्षा न करैंगे, केवल स्त्रीसंगके वश उदरपरायण क्षुद्र प्रजा होंइगी ॥४२॥ हे राजन्! सब जगत्के परमगुरु और त्रिलोकीके नाथ ब्रह्मादिकन करिकै पूज्य चरणकमलवारे भगवान् अच्युतकों कलियुगमें मरणधर्मी जन पाषंडन करिकैं दूषित हो बहुत पूजन न करैंगे ॥४३॥ मरती विरियां आतुर ह्वैकै अथवा ऊंचेते गिरेते, मार्गमें खिसलते विवश ह्वैकें जिनको नाम लेतही पुरुष कर्मबंधनतें छूटिकैं उत्तम गतिको प्राप्त होइ है ऐसे भगवान्कों कलियुगमें मनुष्य पूजन न करैंगे ॥ ४४ ॥ द्रव्य देश शरीरतें भये कलियुगके सब दोषनकों पुरुषोत्तम भगवान् पुरुषके चित्तमें स्थित ह्वैकैं हरि लेय हैं ॥ ४५ ॥ श्रवण कीर्तन पूजन ध्यान आदर करते मात्रही भगवान् जननके हृदयमें स्थित ह्वैकें दशहजार जन्मके अशुभनकों दूरि करै हैं ॥ ४६ ॥ जैसें सुवर्ण अग्निमें स्थित ह्वैकें और धातुनके मिले बुरे वर्णकों दूरि करें ऐसेंही विष्णु भगवान् हृदयमें स्थित ह्वैकें सब अशुभ वासनानकों कलियुगमें दूरि करेंगे ॥ ४७ ॥ विद्या अर्थात् आन देवकी उपासना, तप, प्राणायाम, मित्रता, तीर्थस्नान, व्रत, दान, जप इन सबन

---

१ चौपाई–नारि मुई गृहसंपति नासी । मूंड मुडाय भये संन्यासी ॥ ते विप्रन सन पांव पुजावहिं । उभयलोक निज हाथ नशावहिं ॥ दोहा–वादें शूद्र द्विजनसन, हम तुमतें कछु घाटि । जानें ब्रह्म सो विप्रवर, आंख दिखावहिं डाटि ॥ २ तुम सुनो परीक्षित तुमसों कहैं पुकारी ॥ कलियुग अवैगा घोर अनर्थ भारी ॥ राजन् कलियुगमें शूद्र विप्रके ऊपर ॥ देखैंगे करके क्रोध महानिंदाकर ॥ नहीं वेदशास्त्रका मानेंगे वे कुछ डर ॥ जो मन मानेंगा चलैंगे उस रस्तेपर ॥ होवैंगे भ्रष्टाचार सभी नरनारी ॥ १ ॥ फिर होंगे नाना पंथ प्रगट सुन राजा ॥ जिनके वर्णन करेते लगती है लाजा ॥ नहीं मात पिता गुरुसों रक्खैंगे काजा ॥ जिनके पग धरते मात्र धर्म सब भाजा ॥ जहां तहां होगे बहुतेरे अत्याचारी ॥ २ ॥ कोई मूर्ति पूजन झूठा है बोलैंगे ॥ कोइ करकै घात अमृतमें विष घोलैंगे ॥ कोई छल करिके बहुत न्यून तोलैंगे ॥ अपने सुखहित क्षणकों साथी होलैंगे ॥ गंगाको पानी कहैंगे कोई अनारी ॥ ३ ॥ कोइ कहैंगे हरिका नाम काम नहीं आवै ॥ कोइ कहैंगे मुक्ति भये जन्म फिर पावै ॥ कोइ जीवित निज पितरोंका श्राद्ध बतावै ॥ मृत पितरोंको जलके हित कोइ तरसावैं ॥ कोइ कहैंगे ईश्वर धर तन तन अविकारी ॥ ४ ॥ कोइ रामकृष्णकों मनुजवत बखानैंगे ॥ नहिं ईश्वरके अवतार बाद ठानैंगे ॥ कोइ एक नारीके ग्यारह पति मानैंगे ॥ कोइ करना विधवाव्याह भला जानैंगे ॥ सब फैल जायगी जगत अविद्या सारी ॥ ५ ॥ कोइ कहैंगे झूंठे पुराण हैं यह सार ॥ फैलैंगे कलिमें बहुमते न्यारे न्यारे ॥ तब पडैंगे बहु दुर्भिक्ष बडे हत्यारे ॥ पूजा और सुमिरन ध्यान अजान विसारे ॥ तब मिश्र करैंगे तिनपर क्रोध खरारी ॥ ६ ॥ तुम० ॥

३ चौपाई–शूद्र कराहिं जप तप व्रत दाना । बैठि वरासन कहहिं पुराना ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करिकैं तैसो मन शुद्ध न होइ जैसो कछु अनंत भगवान् हृदयमें स्थित होयँ तब शुद्ध होइहै ॥ ४८ ॥ तातें हे राजन्! म्रियमाण तुम सावधान होइकैं सर्व प्रकार करिकैं केशवकों हृदयमें धरो तब तुम परमगतिकों प्राप्त होउगे ॥४९॥ परमेश्वर भगवान् म्रियमाण मनुष्यनकरके भली भांति ध्यान करवे योग्य है अंग भो राजन्! सर्वात्मा सर्वसंग्रह भगवान् वा ध्यान करनवारे पुरुषको अपने समान श्यामसुंदर चतुर्भुजकर लेंयहैं ॥५०॥ हे राजन्! कलि दोषनकी खानि है परंतु तामें एक बडो गुण है जाते श्रीकृष्णको कीर्त्तन करतही संपूर्ण बंधनते छूटिके विनही श्रीकृष्णकों जाय प्राप्त होइहै ॥ ५१ ॥ सतयुगमें विष्णुको ध्यान करते जो फल होय, त्रेतामें यज्ञ करिकैं यजन करेतें जो फल होइ, द्वापरमें परिचर्या करिकै जो फल होइ, सो फल कलियुगमें हरिको कीर्त्तनहीं करिकै प्राप्त होयहै ॥ ५२ ॥

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ॥
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्त्तनात् ॥ ५२ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

श्रीकृष्ण उवाच-कालस्ते परमाण्वादिर्द्विपरार्द्धावधिर्नृप ॥
कथितो युगमानं च शृणु कल्पलयावपि ॥ १ ॥

हे नृप! परमाणुतें ले द्विपरार्द्धतांई काल तुमसों कहि आये हैं युगनकी परिमाणहूं कहि आये अब कल्प प्रलयको प्रमाण सुनो ॥ १ ॥ हे प्रजाके पालक! हजार चौकडी युगकों ब्रह्माको दिन है; सोई कल्प कहावेहै, जा कल्पमें चौदह मनु होयहैं ॥ २ ॥ तदनंतर प्रलयहू हजार चौकरीको होय है, सो ब्रह्माकी रात्रि है, जा रात्रिविषें या लोककी प्रलय ह्वैजाइहै ॥ ३ ॥ यह नैमित्तिक प्रलय कहियो जा प्रलयमें विश्वस्रष्टा हरि ब्रह्मा सहित या विश्वकों आपमैं लेकैं अनंत शय्यामें सोवे हैं ॥ ४ ॥ परमेष्ठी ब्रह्माके द्विपरार्द्धको जब अंत होयहै तब महत्तत्व अहंकार पांच तन्मात्रा इन सातों प्रकृतिनको प्रलय होयहै ॥ ५ ॥ हे राजन्! यह प्राकृत प्रलय कहो जा प्रलयमें नाशको कारण प्राप्त होनेसों सात प्रकृति उनको कार्य रूप सब ब्रह्मांड लीन होइ है ॥६॥ हे राजन्! वा समय मेघ सौ वर्षतांइ नहीं वर्षैं, तब अन्नहीन पृथिवी भयेते क्षुधासों पीडित परस्पर भक्षण कर कालाधीन प्रजा हौले हौले क्षयकों प्राप्त होइगी ॥७॥ फेरि प्रलयकालको सूर्य्य घोर किरणिन करिकैं समुद्र, देह और भूमिके रसकों खैंचिलयहै और छोडै नहीं है ॥ ८ ॥ ताके अनंतर संकर्षणके मुखसों निकसी प्रलयकी अग्नि पवनके वेगसो तीव्र भई या शून्य भूमंडलको सात पातालन सहित जरावे है ॥ ९ ॥ फेरि ऊपर नीचे सब ओर अग्नि और सूर्य्यकी ज्वालासो जरिकैं यह ब्रह्मांड शोभित होइगो, जैसें जरतो ऊपरा शोभित होइहै ॥ १० ॥ ताके पीछे प्रलयकालको प्रचंड पवन कछुक अधिक सौ वर्षतांइ चलेगी, ता समय रज करिकैं आवृत आकाश धूम्र वरन होइगो ॥ ११ ॥ हे अंग! तदनंतर विचित्र वर्ण अनेक मेघ तीव्र गर्जन शब्द करते सौ वर्षताईं वर्षैंगे, ता पीछे यह ब्रह्मांड फूटि टूटिके सब विश्व जलमय होइ जाइगो ॥ १२ ॥ तासमय भूमिके गंध गुणको जल ग्रस लेय है तब यह भूमि गंधहीन ह्वैके प्रलयको प्राप्त होइ है ॥ १३ ॥ जलके रस गुणको तेज ग्रस्त है तब वो जल निरस ह्वैके प्रलयको प्राप्त होइगो तेजको रूप गुण वायु ग्रसि

१ पृथ्वीमें क्षमा गुण है और क्षमाके १०० गुण है जिस कारण पृथ्वी जलपर स्थित है एक वर्षकी निरंतर वर्षतें एक गुण नष्ट होताहै इस कारण १०० वर्षकी वर्षामें पृथ्वी जलमें मग्न होती है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

लेइगो सो तेज रूपहीन ह्वैके ॥ १४ ॥ पवनमें लीन होइगो, पवनको स्पर्श गुण आकाश ग्रसि लेइगो सो पवन गुणहीन होइकै आकाशमें लीन होइगो ॥ १५ ॥ हे राजन् ! फेरि आकाशको शब्द गुण है ताकों तामस अहंकार ग्रस लेइगो, सो आकाश गुणहीन ह्वैके अहंकारमें लीन होइगो राजस अहंकार वृत्तिन सहित इंद्रियनको ग्रस लेइगो, सात्विक अहंकार इंद्रियनके देवतानकों ग्रस लेइगो ॥ १६ ॥ हे राजन् ! अहंकारको महत्तत्व ग्रसे है फिर वा महत्तत्वको सत्वादि तीनों गुण ग्रसे है तिन गुणनको काल करिकैं प्रेरित माया ग्रसेगी ॥ १७ ॥ राति दिना कालके वेगसों वा मायाके परिणामादि गुण कभू नहीं होय है याहीसो वो कभू घटबढ नहीं होय है सो माया आदि अंत करिकैं रहित है क्योंकि वो अव्यक्त है नित्य है, एक रस है, जगत्को कारण है ॥ १८ ॥ जहां वाणी मन सत रज तम तीनों गुण महत्तत्वादि नहीं हैं, और प्राण बुद्धि इंद्रियनके देवता विश्वकी रचना यह नहीं हैं ॥ १९ ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आकाश पवन अग्नि जल भूमि सूर्य्य येहू तहां नहीं हैं, सुषुप्ति शून्यकी नाईं है वाको कवि अतर्क्य मूल पद कहैहैं ॥ २० ॥ प्राकृत प्रलय यह कह्यौ जा प्रलयमें पुरुष प्रकृतिकी शक्ति सब काल करिकैं प्रेरित ह्वैके लीन होय हैं ॥ २१ ॥ अब आत्यंतिक प्रलय कहें हैं बुद्धि इंद्रिय विषय रूप करिके इन सबनको आश्रयज्ञानही भासेहै, जातें अन्वय व्यतिरेक करिकैं जो आदि अंतवान हैं सो सब अवस्तु है ॥ २२ ॥ जैसे दिया, नेत्र, रूप यह सब ज्योतितें न्यारे नहीं है, ऐसेही बुद्धि इंद्रिय तन्मात्र ब्रह्मते न्यारे नहीं है पन वो इनसो सबसो पृथक् है ॥ २३ ॥ हे राजन् ! जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति ये तीनों बुद्धिहीकी वृत्ति है शुद्ध ब्रह्म विषें यह सब नाना माया मात्रही है ॥ २४ ॥ जैसें मेघ आकाश विषें होय है और नहीं होइ है ऐसेंही ब्रह्मविषें यह जगत् कबहूं होय है नहीं होइ है क्योंकि ये विश्व अवयवी मानो है याहीसों मिथ्या है क्योंकि अवयवीको उदय और अप्यय होय है सो विश्वमेंहू उदय अप्यय विद्यमान है यातें नश्वर है ॥ २५ ॥ याहीसो ये निश्चय कियो है कि जितने अवयवी है तिनको अनयव सत्य कह्यो हैं क्योंकि अवयवीके विनाहू अवयव प्रतीत होयहै और अवयवके विना अवयवी नहीं होय है ऐसेही अवयवी जगत्को अवयव एक कारण ब्रह्म सत्य है जातें अवयवी जगत् विनाहूं अवयव ब्रह्म विराजमान है, जैसें पट विनाहूं तंतु विराजमान है ॥ २६ ॥ कार्य कारण मिलिकैं जो कछु होई सो भ्रम है, ताते परस्पर आश्रयसों आदि अंतवान् जो कछु है सो सब अवस्तु है ॥ २७ ॥ विकारमय यह सब जगत् प्रकाशमानहूं है; परंतु ब्रह्मके विना ये सब किंचित् एक अणुमात्रहू निरूपण करवेके लायक नहीं है अर्थात् जितने कछु विकारवारो है सो ब्रह्मसंबंध विन नहीं है ब्रह्मही है जो ब्रह्म विना प्रकाश होई तो फिर वहहू चैतन्यके समानही होय और वह फिर आत्माकी तरह होय ॥ २८ ॥ एक सत्य ब्रह्मको नानात्व नहीं जो अज्ञ कोई अनेकत्व माने तो जैसे बृहत् आकाश और घटाकाश और जैसे आकाशको सूर्य और घटस्थ सूर्य और आंतरवायु और बाह्यवायु इनको नानात्व है ऐसेही नानात्व है यासों जो नानात्व प्रतीत है सो ये सब उपाधिही करिकैं हैं ॥ २९ ॥ जैसें सुवर्णमनुष्यनके व्यवहारादिमें चूराकुंडलादिरूपन करिकैं अनेक प्रकार भासें है ऐसेही भगवान् अधोक्षज जननकी लौकिकवैदिक वाणीनकरिकै अनेक प्रकार भासे हैं ॥ ३० ॥ जैसे सूर्यतें उपजे और सूर्यही करके प्रकाश भये मेघ सूर्यके अंशरूप चक्षुनको आवरण कर्त्ता होय है ऐसेही ब्रह्मते उपज्यो और ब्रह्मही करिकै प्रकाइयो अहंकार ब्रह्मके अंश जीवको वा ब्रह्मके दर्शनको आवरण करे है ॥ ३१ ॥ सूर्यतें उपजे मेघ जब विदीर्ण होइ तब चक्षु सूर्यकों देखें; ऐसेंही अहंकाररूप उपाधि जब तत्त्वविचार करिकै नष्ट होई, तब यह जीव अपने ब्रह्मस्वरूपकों देखे ॥ ३२ ॥ या प्रकार विवेकरूप खड्ग करिकैं मायामय अहंकार आत्माके बंधको काटिकै जब शुद्धब्रह्मको अनुभव करिकैं

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्थित होइ तब वाको कवि सब आत्यंतिक प्रलय कहै हैं ॥ ३३ ॥ हे वैरीनके ताप देनहारे ! सूक्ष्मवेत्ता कोई एक विद्वान् कहै हैं ब्रह्मादिक सब प्राणीनकी उत्पत्ति प्रलय क्षण २ में होती है ॥ ३४ ॥ काल-रूपी नदीके प्रवाह वेग करिकैं नित्य आयुर्बल हरिजायवेसो देहादिकनकी अवस्था नित्य जन्म मरणके कारणको प्राप्त होय है, जैसें नदीको प्रवाह और दियाके ज्वालाकी अवस्था है ॥ ३५ ॥ आदि अंत करिकैं हीन ईश्वरकी मूर्ति काल करिकैं प्राणीनकी सूक्ष्म अवस्था नहीं जानी जाय है जैसें आकाशमें नक्षत्रादिकनकी चाल लखी नहीं जाती ॥ ३६ ॥ नित्य नैमित्तिक प्राकृत आत्यंतिक ये चारों प्रलय तुमसों कहे और कालकी गतिहू कही ॥३७॥ हे कौरवनमें श्रेष्ठ ! जगत्कर्त्ता सब प्राणीनके आश्रय नारायणकी यह लीला कथा संक्षेप करिकैं तुमसों कही है सम्पूर्ण कहिवेको तो ब्रह्महू समर्थ नहीं है ॥३८॥ जे अनेक दुःखरूपी अग्नि करिकैं पीडित मनुष्य या दुस्तर संसार समुद्रको तरचो चाहें, तिनको भगवान् पुरुषोत्तमकी लीला कथा रसके सेवन विना और कोई नौका नहीं है ॥३९॥ अव्यय श्रीनारायण ऋषि यह पुराण संहिता पहले नारदजीको कहत भये, सो श्रीनारदजी श्रीव्यासदेवजूको कहत भये ॥ ४० ॥ हे महाराज ! सो भगवान् व्यासजू प्रीतियुक्त ह्वैकै सब वेदनकी तुल्य यह भागवतसंहिता मोसों कहत भये ॥ ४१ ॥ हे कौरवनमें श्रेष्ठ ! नैमिषारण्यवनके विषे बडे यज्ञके करनवारे शौनकादि ऋषि जब पूछेंगे तब ये सूतजी विन ऋषिनको अगारी यह भागवत पुराण कहैंगे ॥ ४२ ॥

एतां वक्ष्यत्यसौ सूत ऋषिभ्यो नैमिषालये ॥
दीर्घसत्रे कुरुश्रेष्ठ संपृष्टः शौनकादिभिः ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्भागवते भाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५.

श्रीशुक उवाच-अत्रानुवर्ण्यतेऽभीक्ष्णं विश्वात्मा भगवान्हरिः ॥
यस्य प्रसादजो ब्रह्मा रुद्रः क्रोधसमुद्भवः ॥ १ ॥

या भागवत विषें निरंतर भगवान् विश्व आत्माहीको वर्णन है, जा हरिके प्रसाद रजोगुणतें ब्रह्मा भयो तमोगुणसे रुद्र भयो ॥ १ ॥ हे राजन् ! हम मरेंगे यह पशुबुद्धि छोडि देउ, या देहसो न तो तुम पहले उपजे और न तुम देहकी तरह नष्ट होउगे ॥ २ ॥ हैके तू पुत्र पौत्र रूप पुनि न होउगे, बीज अंकुरवत् जातें तुम देहादिकनते न्यारे हो, जैसे अग्नि काष्ठतें न्यारी है ॥ ३ ॥ जैसे कोऊ स्वप्न विषें अपनो मूंड

१ विश्वाससे संसारके पार होयहै, यापर एक दृष्टान्त है एक गूजरी कहीं पंडितजीकी कथा सुनने गई, पंडितजी उस समय यह कह रहेथे कि परमेश्वरके नाम लेनेसे मनुष्य संसारसमुद्रके पार होजाता है, गूजरी सुनतेही प्रसन्न होगई, उसे प्रतिदिन यमुनाजी उतरनेमें पैसा देना पडता था वोह सोचने लगी जब कि श्रीकृष्णके नामसे समुद्र तर जाय हैं, तो क्या यमुनाजी न तरी जायगी, बस वोह नाम लेकर प्रतिदिन यमुना तर जाने लगी, तब एक दिन मनमें विचार किया कि पंडितजीने बडा उपकार किया है, सो निमंत्रण देना चाहिये सो पंडितजीको निमंत्रण दिया और बुलाकर साथ ले चली, पंडितजी उसे यमुनाजीमें जाती देख आपभी पीछे पीछे चलने लगे और जाना कि घाट थाया होगा, जब छातीतक पानी आया और फिर पैर न लगा गूजरीके घुटुएभी न भीजे तब पंडितजीने पुकारा अरी तू किधरको ले आई मैं डूबा मुझे बचाव तब उसने कहा क्या तुमने श्रीकृष्णका नाम नहीं लिया एक नाम स्मरण करलो कथाकी बात भूलगये नामसे तौ समुद्रके पार होजाय हैं, पंडितजी बोले क्या यह नदीभी नाम लेनेसे तरी जाती है और अविश्वासके कारण डूबने लगे तब गूजरीने उन्हैं हाथ पकड निकाला, और घर लेजाकर जिमा दिया, इसीसे कहते हैं कि विश्वाससे भक्ति करनेसे पार होजाता है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कत्यो देखे ऐसेंही जागतमें देहके मरिवेको देखे, तातें ये सब आत्माविषें भ्रम है क्यों कि आत्मा तौ अजन्मा और अमर है ॥ ४ ॥ जैसें घटके फूटेते घटको आकाश पहले बडे आकाशमें जाय मिलैहै ऐसे-ही देहके नष्ट भयेते जीव फेरि ब्रह्मको जाय प्राप्त होय है ॥ ५ ॥ आत्माके देहगुण कर्मनको मनही सृजे है, वा मनको माया सृजेहै, ताहीतें जीवको संसार है ॥ ६ ॥ जब तांई तेल सरवा बाती अग्नि इनको संयोग रहै तबही तांई दीपक कहावे ऐसेही जब तांई कर्म मन चैतन्य संसार इनको या देहको संयोग है तबही तांई संसार हैं ॥ ७ ॥ यह देहही सत रज तम गुणन करिकै जन्मे मरेहै, आत्मा जन्मे न मरे, क्यों कि वो आत्मा स्वयंज्योति है याते स्थूल सूक्ष्म दोऊ देहनतें मरें स्वयंप्रकाश देहादिकके आकाशकी नाई आश्रय है, नित्य है निर्विकार है अनंत निरुपम है ॥ ८ ॥ हे प्रभो ! अनुमान युक्त बुद्धि करिकै वासुदेवको चिंतवन करते शरीरमें स्थित शुद्ध आत्माको मन करिकै विचार करो ॥ ९ ॥ मृत्युके ईश्वर तुमको तब ब्राह्मणके वाणी करिके प्रेरितहू तक्षक न जरावेगो, क्योंकि आत्मा जो है सो मृत्युकोहू मृत्यु है और ईश्वर है यासों मृत्युहू न जरावेगी ॥ १० ॥ जो हम हैं सो परम धाम ब्रह्म हैं; और मैंही परंपद ब्रह्म हूं यह विचार करते निरुपाधि ब्रह्मविषें तुम अपनपेको राखिके ॥ ११ ॥ विषयुक्त मुखसे अपनें चरणमें काटते तक्षक सर्पको न देखोगे न या शरीरको देखोगे, और आत्माते न्यारे विश्वकोहू न देखोगे ॥ १२ ॥ हे तात ! हे नृप ! ! विश्वके आत्मा हरिको चरित्र तुमनें जो कछु पूछ्यो सो हमने तुमसों कह्यो, अब तुम और कहा सुन्यो चाहौहो सो कहो ॥ १३ ॥

एतत्ते कथितं तात यथात्मा पृष्टवान्नृप ॥
हरेर्विश्वात्मनश्चेष्टां किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १३ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

सूत उ.-एतन्निशम्य मुनिनाभिहितं परीक्षिद्व्यासात्मजेन निखिलात्मदृशा समेन॥
तत्पादपद्ममुपसृत्य नतेन मूर्ध्ना बद्धाञ्जलिस्तमिदमाह स विष्णुरातः ॥ १ ॥

सूतजी कहे हैं हे शौनकहो ! सबकी बुद्धिके जाननवारे निवृत्त परायण व्यासके पुत्र मुनिको वचन सुनिकै विष्णुरात परीक्षित् नम्र माथो करिके तिन मुनिके चरणकमलनको स्पर्श करिकैं हाथ जोरिके बोलत भयो ॥ १ ॥ हे मुने ! करुणावान् आपने हमको बडो अनुग्रह कियो, जातें आदि अंत करिकैं हीन साक्षात् हरिको चरित्र हमें सुनायो, तातें हम सिद्ध भये ॥ २ ॥ तापनसे तप्त प्राणीनको अच्युतमें मन लगावनवारे महात्मानको अनुग्रह करिवो हम अद्भुत नहीं माने हैं, क्योंकि महात्मा कृपालु होयहैं ॥ ३ ॥ यह पुराणसंहिता तुमतें हमने सुनी या संहिता विषें उत्तमश्लोक भगवान्को निरंतर वर्णन है ॥ ४ ॥ हे भगवन् ! तक्षकादि मृत्युनतें हम नहीं डरपेहै तुम्हारे दिखाये निर्भय परमानंदरूप ब्रह्मको हम प्राप्त भये ॥ ५ ॥ हे ब्रह्मन् ! अब मोकों आज्ञा देहु तो वाणीको रोकिकैं निष्काम चित्तको अधोक्षज विषें राखिकै प्राणकों छोडों ॥ ६ ॥ ज्ञान विज्ञानकी नेष्ठा करिकैं हमारो अज्ञान गयो, जातें मंगलरूप भगवान्को परमपद आपने हमको दिखायो ॥ ७ ॥ तब परीक्षित्को यह वचन सुनिकैं भगवान् बादरायणि राजासे पूजित हो आज्ञा मांगिके मुनिनसहित पधारते भये ॥ ८ ॥ ताकें अनंतर राजऋषि बुद्धिसो

१ मतलब याको यह है कि जब यह लिंगाभिमानी जाग्रत्के दृष्ट श्रुतसंस्कारवशसों अपनोही शिर कटनो और देहको मरनो देखे है तब कहो आत्माको जन्ममरण कैसे संभव हैं सके है क्योंकि जो मरही गयो होय तो फिर देखै कौन यासों आत्मा अजन्मा है और जन्मा है तब मरनोहू नहीं हैं सकै है ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनको भगवान्में राखिकै विन श्रीकृष्णहीको ध्यान करत निश्चल इन्द्रिय करिकै ठूंठ वृक्षकीसी नाईं रहतभयो ॥९॥ गंगाके कूलमें पूर्व अग्र कुशासन विषें उत्तरको मुख करिकै बैठिके संशयछिन्न निःसंग महायोगी परब्रह्म विषे तदाकार होतभयो ॥ १० ॥ हे ब्राह्मणो ! क्रोधी ब्राह्मणके पुत्रसो प्रेरित तक्षक राजाके काटिवेकी इच्छा करिकैं चलतो मार्गमें कश्यपको देखत भयो ॥ ११ ॥ विष दूरि करनहारे कश्यपको धनसों तृप्त करि निवृत्त करिकै इच्छारूपी तक्षक ब्राह्मणको रूप धरिकैं आपको छिपायकैं राजा परीक्षित्को काटत भये ॥ १२ ॥ ब्रह्मस्वरूप राजाऋषिकी देह विषकी अग्निसे सबनके देखते वेगिही भस्म होतिभई ॥ १३ ॥ ता समय पृथ्वी आकाश दिशानमें सब ओरते बडो हाहाकार शब्द होतभयो, देवता असुर मनुष्यादिक सब आश्चर्ययुक्त होत भये ॥ १४ ॥ आकाशमें देवतानकी दुंदुभी बजतिभई, गंधर्व अप्सरा गावतभये, धन्य धन्य कहत देवता फूलनकी वर्षा करतभये ॥ १५ ॥ जन्मेजय तक्षकसो अपनो पिता मरचो सुनिकैं क्रोधयुक्त ह्वैकैं ब्राह्मणको बुलायकै ता सर्पसत्रयज्ञ विषें सर्पनकों होम करावतभयो ॥ १६ ॥ ता यज्ञकी प्रज्वलित अग्निमें बडे बडे सर्पनको जरते देखिकैं तक्षक भयसों व्याकुल ह्वैकै इंद्रके शरण जातभयो ॥ १७ ॥ परीक्षित्को पुत्र राजा जनमेजय तहां वा तक्षकको न देखिकै ब्राह्मणनसो बोलत भयो सर्पनमें अधम तक्षक यहां आयके क्यों नहीं जरे है ॥ १८ ॥ तब ब्राह्मण बोले हे नरेंद्र ! शरण गये तक्षककी इंद्र रक्षा करैहै, इंद्रने वाको राख्यो हैं ताते सो तक्षक अग्निमें नहीं परै है ॥ १९ ॥ ब्राह्मणनको यह वचन सुनिकैं उदार बुद्धि राजा तिन ब्राह्मणनसों बोल्यो हे ब्राह्मण ! इंद्रसहित वा तक्षककों क्यों नहीं अग्निमें डारि देउहो, कहा इतनी सामर्थ्य तुमको नहीं है ॥ २० ॥ यह सुनिकैं सब ब्राह्मण इंद्रसहित ता तक्षकको होम करवेको प्रारंभ करतभये तक्षक इंद्रसहित वेगीही या अग्निमें आय परे ऐसो आहुति मंत्र पढतभये ॥ २१ ॥ ब्राह्मणनके इन आक्षेप वचनकरि इंद्र स्थानते चलायमान ह्वैकैं विमान और तक्षकसहित भ्रमत भयो ॥ २२ ॥ विमान और तक्षकसहित आकाशतें गिरते वा इंद्रको देखिकैं अंगिराके पुत्र बृहस्पति वहां आयके राजासों बोलतभये ॥ २३ ॥ हे मनुषनके इंद्र ! यह सर्पराज तुम करिकै वधको योग्य नहीं है; यानें अमृत पान कियोहै, तातें अजर अमर है[२] ॥ २४ ॥

---

१ जिस समय तक्षक ब्राह्मणका वेष धर राजाको काटने चला, तौ मार्गमें कश्यपजीसे बोला, कहां जातेहो कश्यपजी बोले राजाको आज तक्षक डसेगा हम उसे अच्छा करदेंगे, तक्षकने कहा कि तक्षकके काटेको आरोग्य करनेकी आपमें सामर्थ्य नहीं है, कश्यपजी बोले यदि वोह होता तो हम उसे अपना कर्तव्य दिखाते, तक्षक बोला मैंही तक्षक हूं और इस वृक्षको काटता हूं तुम इसे अच्छा करो, जैसेही वृक्षको डसा कि वोह एक बढई जो उसपर बैठाथा उस समेत जलकर राख होगया, तब कश्यपजीने संजीवनी मंत्र पढकर दो घडीमें बढई समेत उस वृक्षको यथापूर्व कर दिया तब तक्षक आश्चर्यसे बोला आपको कुछ ज्योतिषभी आती है यह बोले हां तब कहा कि विचारो तौ, राजाकी अवस्था कितनी शेष है, कश्यपजी बोले विचारनेसे विदित होता है कि राजाकी अवस्था दो घडीकी शेष है, तब तक्षक बोला मंत्र अकाल मृत्युवारेको जीवा सकैं हैं, जाकी मृत्यु आई होय ताको उपचार नहीं होय, किन्तु वृथा यत्न होनेसे मान-हानि होय है, यदि तुम्हें धनकी इच्छा होय तौ इसी वृक्षके नीचेसे खोदकर लेजाओ कश्यपजी उसके वाक्योंसे मोहित होय सोच विचार धन खोदकर लेगये, तब तक्षकने राजाके समीप जाय एक पुष्पमें कीडेको रूप बनाय प्रवेश किये ब्राह्मणरूप धरे तक्षक पुत्रोंने वोह पुष्प राजाको दिया राजा फूल देख कहने लगे संध्या हो गई तक्षक नहीं आया जिससे ब्राह्मणका वचन झूंठा न होय, इस कारण इस कीडेहीसे माथेमें कटवा लें जैसे राजा कटवाने लगे, तिसी समय तक्षकने अपना रूप धार राजाको डसा, कि वोह तुरंत भस्म होगया, तक्षक उसी समय उडगया, उस बढईने जब सब वृत्तान्त कहा, तब जन्मेजयने तक्षकका अपराध विचार सर्पसत्र यज्ञ किया ॥ २ तक्षक और इन्द्र जब दोनोंही चलितहुए तब तक्षकका अमृत पीना और अमर होना कहा जाय तौ क्या इन्द्र अमर नहीं हैं इसपर उत्तर यह है कि तक्षकने व्याकुल हो इन्द्रभवनमें हे राम ! हे नारायण ! ऐसा कहा इसी नामके प्रभावसे अमर हुआ उसने नारायण नामामृत पिया ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हे राजन् ! प्राणीनको जीवो मरिवो परलोक अपने कर्मनहीं करिकै है तातें सुखदुःखको दाता और कोई नहीं है कर्महीं सुखदुःखको दैनवारो है ॥ २५ ॥ हे नृप ! सर्प चोर और अग्नि बीजरी भूख प्यास रोगादिकन करिकै प्राणी मृत्युकों प्राप्त होय है सो प्रारब्धकर्महीसो होयहैं ॥ २६ ॥ हे राजन् ! जातें यह जन मनुष्य अपनो अदृष्टहीको भोग करेहै तातें या अभिचार यज्ञते निवर्त्त होउ, जा यज्ञ विषें निरपराधी अनेक सर्प जरे हैं ॥ २७ ॥ वाणीके पतिको वचन यह सुनिकें राजा ताही भांति विन महा-ऋषिके वचनकों सन्मान करिकै अभिचारयज्ञतें निवर्त हूँकैं विन बृहस्पतिजूको पूजन करतभयो ॥ २८ ॥ विष्णु भगवान्‌को अलक्षित माया काहू भांति काहूसो निवारण न होय है जा मायासे विनही विष्णुको अंश जीव अपनी देहमें तीनो गुणनकी वृत्ति क्रोधादिसों मोहित संसारमें भ्रमत रहैं ॥ २९ ॥ तत्त्वादीनसों जाको तत्त्व विचार करिये, विष्णुके पद विषें लोकनकी वंचना करनहारे मायातें निर्भय विराजमान होई, जहां माया कारणके अनेक विवाद नहीं हैं और संकल्प विकल्प वृत्तिनयुक्त मनहूं जहां नहीं हैं ॥ ३० ॥ सृष्टिके करनवारे सब कारण और कर्मसो सिद्ध भये फल इन तीनों सहित अहंकार-युक्त जीव जा विष्णुपदविषें पीडा देनहारो और पीडित यह विषे दोनो जहां नहीं, अहंकारादि उर्मी-नके छोडनहारे मुनि ताही विष्णुपदविषें करिकैं रमण करै हैं ॥ ३१ ॥ और ठौर सौहृद त्याग विवे-कीजन दुष्टताकों छोडि नेति कहिकैं आत्मा और सबके त्यागनहारे सुनि सब ता विष्णुको परमपद कहैहैं ध्यानादिक सावधान जन जाकों हृदयमें धारण करै है ॥ ३२ ॥ विष्णुके परमपदको वे जन जाय हैं जिनके देह गेह विषें अहंता ममतारूप दुर्जनता नहीं हैं ॥ ३३ ॥ और जे अतिवादको सहे काहूकी अवज्ञा न करैं, और देह गेहके निमित्त काहूसो छेड छाड नकरे ॥ ३४ ॥ अकुंठित बुद्धि व्यासजूकों हमारी नमस्कार है जिनके चरणकमलके ध्यानतें हमनें यह संहिता पढी है ॥ ३५ ॥ शौनक ऋषि प्रश्न करें हैं, हे साधो ! व्यासजूकें शिष्य वेदनके आचार्य महात्मा पैलादिकन करिकैं वेदनके कितेक विभाग किये यह वृत्तांत हमसों कहो ॥ ३६ ॥ श्रीसूतजी कहें हैं हे ब्रह्मन् ! एकाग्र मन परमेष्ठी ब्रह्माके हृदय आकाशते नाद प्रगट भयो जो नाद शब्द काननके मुंदनेतें सुनाई परे है ॥ ३७ ॥ हे ब्रह्मन् ! जा नादकी उपासना करिकैं योगी सब अध्यात्म अधिभूत अधिदैव मनके इन तीनों मलनको दूरि करिकै मुक्तिको प्राप्त होयहैं ॥ ३८ ॥ वा नादतें स्वप्रकाश अव्यक्त तीन मात्रा युक्त ॐकार भयो, जो ॐकार भगवान् पर-मात्मा ब्रह्मकों जतावनवारो है ॥ ३९ ॥ और श्रोत्र इंद्रियके सोयेपे जो शून्यहक् या स्फोटको सुने है और जासौ बारहखरी रूपवाणी व्यंजित होय है और जा ओंकाररूप आत्माकी आकाशव्यक्ति (खंब्र-ह्म) कही है ॥ ४० ॥ अपने आश्रय परमात्मा ब्रह्मको साक्षात् बतामनहारो सब मंत्रनको रहस्य वेद-नको बीज सनातन ॐकार है ॥ ४१ ॥ हे भृगुवंशीनमें श्रेष्ठ ! ता ॐकारके अकार उकार मकार हे तीनि वर्ण भये जिन तीनि वर्णनसो सत्वादि तीनों गुण, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, ये तीनि वेद, भूचर अंतरिक्ष स्वर्ग ये तीनों लोक, जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति ये तीनों अवस्था भई ॥ ४२ ॥ भगवान् ब्रह्माजू तिनही वर्णनते अक्षरनके समूह सृजत भये, सोलहे तो स्वर, पचीस स्पर्श, चारि अंतस्थ, चारि ऊष्माण ये सब ह्रस्व दीर्घ जिह्वामूली करिकैं युक्त हैं ॥ ४३ ॥ भगवान् ब्रह्माजू विन अक्षरनकरिकैं चारों मुखनतें ॐकार सहित चारि वेदनको सृजत भये चातुरहोत्र कर्मनके लिये अथर्वण, यजुर्वेदी उद-गाथा, सामवेदी होता ऋग्वेदी ब्रह्मा आहुति डारनेवारे ॥ ४४ ॥ ताके अनंतर ब्रह्माजू वेदनके उच्चारा-दिकनमें चतुर ब्रह्मऋषि अपनें पुत्रनकों ते वेद पढावतभये, वे सर्व धर्मनके उपदेष्टा अपनें पुत्रनको पढावतभये ॥ ४५ ॥ विन सब देवनके धरनहारे व्रतधारी शिष्यनकी परंपरा चारो युगनमें चली

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आयी है, द्वापरके अंतमें महाऋषि विन वेदनके विभाग करतभये ॥ ४६ ॥ हृदयमें स्थित अच्युतसो प्रेरित वे सब ब्रह्मऋषि कालसो क्षीण आयुर्बल शक्ति और अल्पबुद्धि मनुष्यनको देखिकैं विभाग करतभयो ॥ ४७ ॥ हे ब्रह्मन् ! या मन्वंतर विषें लोकनके पालन करनहारे भगवान् धर्मकी रक्षाके लिये ब्रह्म शिवादि लोकपालन करिकैं जब प्रार्थित होतभये ॥ ४८ ॥ हे महाभाग ! तब सो विभु भगवान् अंशकला करिकैं पराशरते सत्यवती विषें अवतीर्ण ह्वैकैं वेदके चारि विभाग करत भये ॥ ४९ ॥ ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्वणवेद इनतें मंत्रनको उद्धारके तिन मंत्रन करिकैं चार संहिता करतभये, जैसे अनेक मणिनतें उद्धारकरिकै पद्मरागादि मणिनकी रचना करीहै ॥ ५० ॥ हे ब्रह्मन् ! सो महामति व्यासजू चारि शिष्यनकों बुलायकैं एक एक ऋषिको एक एक संहिता देत भये ॥ ५१ ॥ पैलनाम शिष्यको बहुत ऋचा होवेसो बह्वृच नाम ऋग्वेदकी संहिता देतभये, निगदानाम यजुर्वेदकी संहिता वैशंपायनको देतभये ॥ ५२ ॥ सामवेदकी छंदोगनाम संहिता जैमिनीको पढावतभये, अंगिरसनाम अथर्वण वेदकी संहिता सुमंतकों पढावतभये ॥ ५३ ॥ पैलमुनि अपनी संहिता इंद्रप्रमित अरु बाष्कल इन दोऊनको देत भयो ॥ ५४ ॥ सो बाष्कल अपनी संहिताके चारि विभाग करिकै बोध्य याज्ञवल्क्य पराशर अग्निमित्र इन चारनकौ देतभये, बुद्धिमान् इंद्रप्रमित अपनी संहिताकूं कविमंडूक ऋषिकों देतभये ॥ ५५ ॥ सो मंडूक देवमित्रको पढावत भये देवमित्र सौभर्यादि ऋषिनकों देतभयो ॥ ५६ ॥ मंडूकको पुत्र शाकल्य अपनी संहिताके पांच विभाग करिकै वात्स्य मुद्गल मालीय गोखल्य शिशिर इन पांचनको देतभयो ॥ ५७ ॥ तिन शाकल्यको शिष्य जातूकर्ण मुनि निरुक्त नाम अपनी संहिताकों बलाक, पैज, वैताल, विरज इन चारोंनको देतभयो ॥ ५८ ॥ बाष्कलिकों पुत्र सब संहितानतें लेके बालखिल्य नाम संहिता करिकै बालायनि, भज्य, कासार इन तीनि शिष्यनकों देतभये ॥ ५९ ॥ ये सब ब्रह्मर्षि ऋग्वेदकी बह्वृचीनाम संहिताको धारण करत भये जो कोई या वेदके विस्तारकों सुनेगो सो सब पापनतें छूटि जायगो ॥ ६० ॥ वैशंपायनके शिष्य चरकाध्वर्यु होतभये जाते वे सब अपनें गुरुकी ब्रह्महत्या पापके दूरि करनवारे व्रतको आचरण करतभये ताते चरकाध्वर्यु नाम होतभयो ॥ ६१ ॥ तिन वैशंपायनको याज्ञवल्क्य शिष्य बोलत भयो, हे भगवन् ! अल्प धैर्यवारे इन सबनते व्रत कहा बनि आवेगो, या दुष्कर व्रतको मैं करूंगो ॥ ६२ ॥ यह वचन सुनिकै गुरु कुपित ह्वै बोले ब्राह्मणकी अवज्ञा करनहारे शिष्य तू हमतें जो कछु पढ्योहै ताकों वेगही छोडिकै यहांते चले जाओ में तो चेलाते धायो पूरो भयो ॥ ६३ ॥ देवरातको पुत्र याज्ञवल्क्य यजुर्गणको उगिलि करिकै जात भयो ताही समय मुनिगण तिन यजुर्गणनको देखतभये ॥ ६४ ॥ ताके अनंतर ते सब मुनीश्वर लोभसे तीतुर ह्वैकै तिन यजुर्गणकों ग्रहण करत भये, ताते ता यजुर्वेदकी तित्तरीनाम सुंदर शाखा होतीभई ॥ ६५ ॥ हे ब्रह्मन् ! सो याज्ञवल्क्य गुरुहूते अधिक वेदके पाइवेको ईश्वर सूर्यकी उपासना करतभयो ॥ ६६ ॥ याज्ञवल्क्य श्रीसूर्यदेवकी स्तुति करनलगे गुरुहूतें अधिक वेदके देनवारे आदित्य तुमकों नमस्कार है तुम ब्रह्मतें लेकें तृणपर्यंत चारि प्रकारके प्राणीनके समूह युक्त या जगत्के हृदय विषें निरुपाधि अंतर्यामीरूप हो, और बाहर लव निमेष क्षणके अवयववारे वर्षनके समूहवारे कालरूपसौ आकाशकी नाईं उपाधिसौ आच्छादित नहीं होते प्रत्येक वर्षमें जलके सोखने और वरसायवेसो एकही आप या जगत्की यात्रा करौ हौ आपको मैं प्रणाम करौहूं ॥ ६७ ॥ नित्य त्रिकाल वेद विधि करिकै उपासना करनवारे जननके अखिल पापनके फलरूप दुःख बीजनके जरामनहारे देवतानमें श्रेष्ठ हे सविताजू भगवन् ! तुम्हारो मंडल सब लोकनको प्रकाश करनवारेको हम ध्यान करै है ॥ ६८ ॥ तुम्हारे रहिवेके स्थान

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्थावर, जंगमनके समूहके जडरूप मन इंद्रिय प्राणगणनको जो तुम आपुही आत्मा अंतर्यामी हो प्रेरण करोहो ॥ ६९ ॥ अतिभयानक मुखवारे अंधकाररूप अजगरसों ग्रसे, मृतकसे अचेतन लोकनकों देखिकै परम करुणावंत तुम कृपादृष्टिसो विनको उठायके नित्य समयसमयमें स्वधर्मरूप कल्याण विषें प्रवृत्त करोहो, और पृथ्वीपतिसे असाधुनको भय देते सब ओर फिरोहो, जहां तहां दिशानके पतिनकी कमलयुक्त अंजलिन करिकैं पूजित हो आपको मैं प्रणाम करोंहूं ॥ ७० ॥ ७१ ॥ हे भगवन्! त्रिलोकीके गुरुन करिकैं वंदित तुम्हारे चरणकमलकी हम उत्तम यजुर्वेदकी कामना करिकैं शरण आये है ॥ ७२ ॥ श्रीसूतजी कहे हैं हे शौनको ! या प्रकार स्तुति करवेसो भगवान् सूर्य्यनारायण प्रसन्न हैकैं सुंदर यजुर्वेदकी संहिता याज्ञवल्क्य मुनिको देतभये ॥ ७३ ॥ तदनंतर सो समर्थ मुनि ता यजुर्गणकी पंद्रह सौ १५०० शाखा करतभयो, वाजसनेयि नाम विन शाखानको कण्व माध्यंदिनादि ग्रहण करत भये ॥ ७४ ॥ सामवेदको वेत्ता जैमिनीको पुत्र सुमंतमुनि होतभयो, तिनको पुत्र सुन्वान तिनको नाती और पुत्रनकों एक एक संहिता देतभयो ॥ ७५ ॥ ता जैमिनिको शिष्य सुकर्मा नाम द्विज बडो बुद्धिमान सामवेद वृक्षकी हजार संहिताके भेद करतभयो ॥ ७६ ॥ हिरण्यनाभ कौशल्य पौष्यंजि और वेदवेत्ता आवंत्य, ये तीनि शिष्य सुकर्माके होतभये ॥ ७७ ॥ तिन तीनिनके सामवेदके गावनहारे उदीच्यानाम पांच सौ शिष्य होतभये तिनमें कोइ एक प्राच्यहू कहाये ॥ ७८ ॥ लौगाक्षि मांगलि कुल्य कुसीद कुक्षी ये सब पौष्यंजिके शिष्य होइके संहितानको ग्रहण करतभये ॥ ७९ ॥ हिरण्यनाभको कृत नाम शिष्य अपने शिष्यनको चौवीस संहिता कहतभयो, और ज्ञानमान आवंत्य अपने शिष्यनको अनेक शाखा पढावतभयो ॥ ८० ॥

कृतो हिरण्यनाभस्य चतुर्विंशतिसंहिताः ॥
शिष्य ऊचे स्वशिष्येभ्यः शेषा आवन्त्य आत्मवान् ॥ ८० ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

सूत उवाच-अथर्ववित्सुमन्तुश्च शिष्यमध्यापयत्स्वकाम् ॥
संहितां सोऽपि पथ्याय वेददर्शाय चोक्तवान् ॥ १ ॥

श्रीसूतजी कहें हैं अथर्वण वेदके वेत्ता सुमंतुमुनि अपनी संहिता कबंध नाम शिष्यकों देतभये, सो कबंध अपनी संहिताके द्वै विभाग करिकैं पथ्य और वेददर्शको कहतभयो ॥ १ ॥ हे ब्राह्मणो! शुक्लायन ब्रह्मबलि मोदोष पिप्पलायनि ये चारि वेददर्शके शिष्य होतभये, अब पथ्यके शिष्य सुनो, कुमुद, सुनक, जाजलि हे ब्रह्मन्! तीनों अथर्वण वेदके वेत्ता भये ॥ २ ॥ शुनकके शिष्य बभ्रु सैंधवायन ये दोऊ द्वै संहिता पढतभये, बभ्रु सैंधवायनादिकनके नक्षत्र, कल्प, कश्यप, अंगिरसादि शिष्य होत भये ॥ ३ ॥ औरहू सावर्णि आदि होतभये, ये सब अथर्वण वेदके आचार्य्य तुमसो कहे, अब हे मुने! पुराणके आचार्य्य सुनो ॥ ४ ॥ त्रय्यारुणि कश्यप सावर्णि अकृतव्रण वैशंपायन हारीत ये छै पुराणके आचार्य होतभये ॥ ५ ॥ व्यासके शिष्य हमारे पिताते ए सब एक एक संहिता पढतभये, इन सबनको शिष्य होइकै मैं सब संहितानकों पढतभयो ॥ ६ ॥ कश्यप, सावर्णि और रामको शिष्य अकृतव्रण और

१ व्यासजीने सूतको वर देकर ब्राह्मण सदृश किया इससे वे पुराणके वक्ता हुए और ब्राह्मणोंको पुराण पढाये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हम ये चारो व्यासके शिष्यते चार मूल संहिता पावतभये ॥ ७॥ हे ब्रह्मन्! ब्रह्मऋषिनने जो पुराणके लक्षण वर्णन किये हैं, वेद शास्त्रके अनुसार हम कहैं हैं ताकों तुम चित्त लगायके सुनो॥ ८ ॥ सर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, मन्वंतर, राजानकों वंश, विनके वंशी राजानको चरित्र, निरोध हेतु अपाश्रय ॥९॥ हे ब्रह्मन्! इन दश लक्षण करिकैं युक्त ग्रंथको पंडित महापुराण कहे हैं और कोई आचार्य पांच लक्षण (सर्ग प्रतिसर्ग वंश मन्वन्तर वंशानुचरित) वारे ग्रंथको पुराण कहै हैं यह केवल छोटे बडेकी व्यवस्थासौ है जामें दशहू लक्षण कहै होय वो महापुराण और जामें पांचही लक्षण कहे होय वो पुराण कहावे है ॥ १० ॥ या मायाके गुणक्षोभते महत्तत्त्व वासौ तीन प्रकारको अहंकार वासौ पंचमहाभूत और इंद्रियगणकी उत्पत्तिको सर्ग कहैं हैं ॥ ११ ॥ ईश्वरके अनुग्रहसौ महत्तत्त्व आदिसौ प्रगट होतेभये और बीजमेंसौ बीजकी समान होतेभये बीजकी नाईं प्रवाहरूपसौ चलते भये स्थावर जंगमरूप प्रपंचको विसर्ग कहै हैं ॥ १२ ॥ जंगम प्राणिनके स्थावर आहार हैं और जंगमनकी मांसमेंहू साधारण प्रीति है वनमें मनुष्यनके निमित्त रागसौ अथवा शास्त्रवचनसौ जो आजीविकाका विधान है वह वृत्ति कहावे हैं॥१३॥ तिर्य्यक् मनुष्य ऋषि देवता इन सबनके विषें युगयुगमें भगवान् अवतीर्ण ह्वैकैं जो जो लीला और या विश्वकी रक्षा करें हैं जिन जिन अवतार करिकैं वेदके द्रोहीनकों मारे हैं वह रक्षा कहावे हैं॥ १४ ॥ मनु और मनुके पुत्र देवता इंद्र ऋषि हरिके अवतार यह छै मिल करि मन्वंतर कहावे हैं॥ १५ ॥ ब्रह्मातें उपजे शुद्ध राजानके वंशिनकों वंश कहिये, विन राजानके तथा उनके वंशमें भये चरित्रको वंशानुचरित्र कहते हैं॥ १६ ॥ नित्य नैमित्तिक प्राकृत आत्यंतिक चारि प्रकारकी प्रलयको कविजन संस्था कहै हैं॥ १७ ॥ अविद्याके कारण कर्म कर्त्ता जीव जासौ मुख्य वेत्ता अनुशयी और उपाधिवेत्ता अव्याकृत कहै है वाकी वासना या जगकी सृष्टि हैवेमें निमित्त है या कारण वह ऊति कहावे है॥ १८ ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिमें जीव रूपसौ वर्त्तनवारे ईश्वर मायामें विश्व तैजस और प्राज्ञमय प्रविष्ट है और समाधिमें उनसैं पृथक् है या कारण वह अपाश्रय कहावे है ॥ १९ ॥ जैसे घटादिक पदार्थनविषें मृत्तिकादि प्रविष्ट हैं और न्यारीहू है तिनके नामरूपविषें सत्तामात्रही है ऐसेही जन्मते लैकैं मरण पर्यंत तिन अवस्थान विषें ब्रह्म युक्तहू हैं और न्यारोहू है ॥ २० ॥ जब मायामय विचारिकै इन तीनि वृत्तिनतें पुरुषको चित्त निवर्त्त होइ अथवा योगाभ्यास करिकैं निवर्त्त होइ तब यह पुरुष अपनें शुद्धरूपकों जानिकैं संसारचेष्टातें छूटें इन लक्षणके छोटे बडे अठारह पुराण कविननें सब कहेहैं ॥ २१ ॥ २२ ॥ ब्रह्मपुराण पद्मपुराण विष्णुपुराण शिवपुराण लिंगपुराण गरुडपुराण नारदीयपुराण भागवतपुराण अग्निपुराण स्कंदपुराण ॥ २३ ॥ भविष्योत्तरपुराण ब्रह्मवैवर्तपुराण मार्कंडेयपुराण वामनपुराण वाराहपुराण मत्स्यपुराण कूर्म्मपुराण ब्रह्मांडपुराण ये अठारह पुराण कहेहैं ॥ २४ ॥ ब्रह्मन्! व्यासके शिष्य, तिनके शिष्यन करिकैं वेदनकी शाखानको विस्तार ब्रह्मतेजको बढामनहारो यह तुमसों कह्यो है ॥ २५ ॥

ब्रह्मन्निदं समाख्यातं शाखाप्रणयनं मुनेः ॥
शिष्यशिष्यप्रशिष्याणां ब्रह्मतेजोविवर्धनम् ॥ २५ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय ८.

शौनक उवाच-सूत जीव चिरं साधो वद नो वदतां वर ॥
तमस्यपारे भ्रमतां नृणां त्वं पारदर्शनः ॥ १ ॥

अब शौनकादिक मुनि पूछे हैं हे साधो ! श्रीसूतजी महाराज वक्तानमें श्रेष्ठ ! या अपार संसारसमुद्रमें भ्रमनहारे मनुष्यनके पार दिखामनहारे तुम बहुत दिन जीओ ॥ १ ॥ महात्मागण मृकंडऋषिके पुत्र मार्कंडेयको चिरंजीवी कहे हैं क्यों जा प्रलयमें सब जगत् ग्रस्त भयो तौहू वह बच रहे है ॥ २ ॥ जो भृगुवंशीनमें श्रेष्ठ याही कल्पमें हमारेही वंशमें उपजे तबतें लैकें अबताईं प्राणीनकी कोई प्रलय नहीं भयी ॥ ३ ॥ सो वह इकलोही प्रलयके समुद्रमें भ्रमतो वटके पत्रमें सोवत एक अद्भुत बालक पुरुषकों देखत भयो ॥ ४ ॥ हे सूत ! हे महायोगी ! यह हमारे बडो संशय है, सो तुम संपूर्ण पुराणनके वेत्ता या संशयकों दूरि करो ॥ ५ ॥ तहां श्रीसूतजी कहें हैं हे महाऋषियो ! तुम्हारो प्रश्न संपूर्ण लोकनके पापनको नाशक है, जा प्रश्नमें श्रीनारायणकी कथा कलियुगके दोषनकी दूरि करनहारी है ॥ ६ ॥ क्रम करिकैं पितातें द्विजन्म संस्कार पाय मार्कंडेय विद्याध्ययनयुक्त धर्मपूर्वक वेदनकों पढत भयो ॥ ७ ॥ नैष्ठिक, बाल ब्रह्मचारी शांत वल्कल वस्त्र पहिरें जटा दंड कमंडलु जनेउकों धरे ॥ ८ ॥ मृगचर्म कमलाक्षकी माला नित्य नैमित्तिक सिद्धिके लिये कुशनकों धरें, अग्नि सूर्य्य गुरु ब्राह्मण और आत्मामें दोऊ संध्यानमें हरिको अर्चन करते ॥ ९ ॥ सांझ सबेरे भिक्षा लायकें गुरुनको निवेदन करिकैं तिनकी आज्ञा पायकें मौन ह्वैकैं एकवेर भोजन करे कबहूं तिनकी आज्ञा पाये विना न खाय व्रतही करे ॥ १० ॥ या प्रकार तप और विद्याध्ययनपरायण ह्वैकैं मार्कंडेयजी अयुतनके अयुत वर्षताईं हृषीकेशको आराधन करते अतिदुर्जय मृत्युकों जीतत भयो ॥ ११ ॥ ब्रह्मा, शिव, भृगु, दक्ष औरहू ब्रह्माके अनेक पुत्र, मनुष्य, देवता, पितर भूत ताको देखिकैं बडो अंचभो करत भये ॥ १२ ॥ या भांति नैष्ठिक ब्रह्मचारी व्रत धरे मार्कंडेय योगी तप अध्ययन संयमन करिकैं क्लेशरहित मन करिकैं अधोक्षजको ध्यान करतभयो ॥ १३ ॥ या प्रकार भगवान्में चित्त लगाये ता महायोगी मार्कंडेयको छै मन्वंतर व्यतीत भये ॥ १४ ॥ हे ब्रह्मन् ! यह जानिकै इंद्र सातवें मन्वंतरमें ताके तपसों शंकायुक्त ह्वै ताके तपके विघ्न करिवेकों आरंभ करतभयो ॥ १५ ॥ गंधर्व, अप्सरा, काम, वसंत, मलयपवन, रजोगुणके प्यारे पुत्र लोभ मद इन सबनको ता मुनिके पास पठावत भयो ॥ १६ ॥ हे विभो ! वे सब हिमालयके उत्तर ओर वा मुनिके आश्रममें जात भये जहां पुष्पभद्रा नदी है और चित्रा नाम शिला है ॥ १७ ॥ सो आश्रम अतिपवित्र सुंदरवृक्ष लतानकरिकै शोभित है, और सुंदर पक्षीनके शब्द करिकैं व्याप्त है, और सुंदर निर्मल जलके सरोवरयुक्त हैं ॥ १८ ॥ जहां मत्त भ्रमरनको गुंजार है, और मत्त कोकिलनको शब्द हैं, मत्त मोरनको नृत्य है और मत्त पक्षीनके समूह हैं ॥ १९ ॥ जहां शीतल जलके झरनानके किनकानको लैकै वनपवन प्रवेश करती और पुष्पनको स्पर्शिकै कंदर्पको उपजावत वहै है ॥ २० ॥ चंद्रमाके उदय सहित संध्याके समय सुंदर नवीन पल्लव और फूलनके गुच्छनके समूह अनेक शाखा और वृक्षलतान करिकैं युक्त वसंत तहां प्रकट भयो ॥ २१ ॥ गीत और वादित्रन सहित गंधर्व, और अप्सरानके यूथपतिन करिकैं युक्त काम धनुष बाणको हाथनमें लैकैं तहां दिखाई देत भयो ॥ २२ ॥ ता आश्रममें अग्निहोत्र करिकैं बैठे आंखिनकों मूंदे मूर्तिमान् अग्नि समान बडो तेजस्वी मार्कंडेयजूकों इंद्रके किंकर सब देखतभये ॥ २३ ॥ पुनि तिन मुनिके आगे अप्सरा

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

नाचतीभई गायक गावत भये, मृदंगी वीणा ढोलादिकन करिकैं मनोहर बाजे बजावतभये ॥ २४ ॥ तो समय पांच मुखवारे बाणको कामदेव अपने धनुषमें जोरतभयो, और वसंत मधु मन रजस्तोक आदि वे सब इंद्रके भृत्य मुनिके मनको कंपावतभये ॥ २५ ॥ स्तननके भारसों लचकती कटिसों युक्त पुंजिकस्थलीनाम अप्सरा कि जाके केशपाशसों शिथिल हैवेके कारण फूल गिरे रहे हैं ॥ २६ ॥ गेंद हाथमें लिये चारों ओर दृष्टि डारती जब वह चली तब कटिमेखला टूट जायवेसों वाको वस्त्र छूटो पीछे वायुनै वाको सूक्ष्मवस्त्रहू हरण कियो ॥ २७ ॥ वासमय अपनें वश विन मुनिकों मानिकै बाण छोडत भयो परन्तु ताके सब उद्यम व्यर्थ भये जैसें भाग्यहीनको उद्यम व्यर्थ होई ॥२८॥ हे मुने ! या प्रकार मुनिके अपकार करनहारे कामादि तिन मुनिके तेज करिकें जरते तहांतें भाजतभये, जैसे बालक सांपकों जगायके भाजे हैं ॥२९॥ हे ब्रह्मन् ! या प्रकार इंद्रके अनुचरनके किये उद्यमकों वृथा देखिकैं महामुनिके अहंकार न उपज्यो,सो कछु महात्मानविषें आश्चर्य नहीं है ॥ ३० ॥ गणन समेत कामको निस्तेज देखिकै और ब्रह्मऋषिको प्रभाव मुनिकैं भगवान् इंद्र अति विस्मित होत भयो ॥३१॥ या प्रकार तप अध्ययन संयमन करिकैं भगवान् विषें चित्त लगाये मार्कंडेयपैं अनुग्रह करिवेको नर नारायण हरि तहां आवत भये ॥ ३२ ॥ शुक्ल श्याम नवीन कमलसे सुन्दर नेत्र, चतुर्भुज मृगचर्म वल्कलनके वस्त्र, हाथनमें कमंडलु, जनेऊ, सूधे कांसके दंडकों धरे ॥ ३३ ॥ कमलाक्षकी माला, आसन सम्हारिवेकों पंजौ, वेदकों धरे प्रकाशमान बीजुरीसे गौर तेज करिकै साक्षात् मूर्तिमान् तपरूप शरीर श्रेष्ठ देवतानके पूज्य दोऊ ऋषि आवतभये ॥ ३४ ॥ भगवान्के स्वरूप तिन दोऊ नरनारायण ऋषिनकों देखिकैं मार्कंडेयजू बहुत आदरपूर्वक उठिकैं दंडसे गिरिकै अष्टांग दंडवत् करत भये ॥ ३५ ॥ तिन दोऊनके दर्शनके आनंद करिकै बुद्धि इंद्रिय मनसो शान्त हो और अंगमें प्रफुल्लित रोमाच हो नेत्रनमें जल भरिलायवेसो मार्कंडेय विन दोऊनके देखिवेकों समर्थ न भयो ॥ ३६ ॥ फेरि सम्हारिके हाथ जोरिकें नम्र ह्वैकैं उत्कंठासों आलिंगन करते विन दोऊ ईश्वरनकों गद्गद् वाणी करिकैं नमो नमो यह बोलत भयो ॥ ३७ ॥ ताके अनंतर विन दोऊनकों आसनपै बैठारिकैं चरणनको धोइकैं अर्घ्य चंदन धूप माला इन करिकैं पूजन करत भयो ॥ ३८ ॥ सुखपूर्वक आसनपै बैठे प्रसन्नमुख विन दोऊ मुनिनके चरणनविषें पुनि दंडवत् करिकै विन श्रेष्ठनसों बोलत भयो ॥३९॥ हे प्रभो ! मैं तुम्हारी कहां स्तुति करों,जा तुम्हारे प्रेरणातें ब्रह्मा शिव और सब जगत्के हमारे हू प्राण चेष्टा करैं हैं विन प्राणनके पीछें वाणी मन इंद्रियें चेष्टा करैं तथापि तुम भजन करनहारेनके आत्मा बंधु हो ॥ ४० ॥ हे भगवन् ! ये तुम्हारी दोऊ मूर्ति त्रिलोकीके मंगलको और तापनके दूरि करिवेको और मृत्युके जीतिवेके लिये हैं, ऐसेंही या विश्वके रक्षाकों औरहू अनेक मूर्तिनकों धरोहो जैसे या विश्वकों मकरीकी समान उत्पन्न कर सृजोहो पुनि संहार करोहो ॥ ४१ ॥ स्थावर जंगमके ईश्वर पालक तुम्हारे चरणकमलकों हम भजन करैं हैं, जिन चरणकमलके आश्रयतें जननको कालकर्म गुणनके मान्य तापादिक कोई न स्पर्श करि सके वेदवेत्ता मुनि सब जिन चरणनकी स्तुति नमस्कार करैं जिन चरणनकी प्राप्तिकों निमित्त यजन और नित्य ध्यान करै हैं ॥ ४२ ॥ ईश अपवर्ग मूर्ति, सब ओरनतें भय युक्त जननकों तुम्हारे चरणकमलनकी प्राप्तितें और अधिक मंगल हम नहीं जानें हैं द्विपरार्धकी आयुबलवारो ब्रह्मा तुम्हारी भ्रुकुटीरूप कालतें अतिशय करिके डरपेहै तिनके सृजे प्राणी डरपें तामें कहा आश्चर्य है ॥४३॥ आत्माके आवरण करनवारे तुच्छ, नश्वर, निष्फलहू है परंतु सत्यसो

१ शोषण दीपन संमोहन संतापन उन्मादन यह पांच मुखवाले बाण हैं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भासे हे ऐसे देहादिकके भजनकों छोडिके सत्यज्ञान स्वरूप सब जीवनके नियंता सबनतें परें तुम्हारे तिन चरणकमलकों हम भजन करें हैं तिन चरणनके भजनवारे तुमतें सब मनोरथनको प्राप्त होयहैं ॥ ४४ ॥ हे ईश ! सतोगुण रजोगुण तमोगुण ये तीनों गुण मायामय पालन उत्पत्ति संहारको हेतु विष्णुआदि सब तुम्हारीही लीलामूर्ति हैं, तथापि सत्यही मूर्ति हैं मनुष्यनके शांतिक लिये हैं रजोगुण तमोगुण मूर्ति नहीं विन रजोगुण तमोगुणमेंते दुःख मोह भय आदि ये सब होयहैं ॥ ४५ ॥ हे भगवन् ! ताते चतुरजन तुम्हारे भक्तनको प्यारी तुम्हारी शुद्ध सत्व मूर्तिको भजेहैं, तातें संत सब सत्वको पुरुष स्वरूप करिकैं कहे हैं, जा सतोगुणतें जन निर्भय सुखी ह्वैकें तुम्हारे लोकको प्राप्त होय हैं, रजोगुण तमोगुणतें नहीं ॥ ४६ ॥ विश्वके गुरु, विश्वरूप सबनते श्रेष्ठ पुरुषदेव, शुद्धस्वरूप, वाणीके नियंता वेदनके प्रवर्तक भगवान् नर नारायण ऋषि तुमको नमस्कार है ॥ ४७ ॥ कपट इंद्रियनके मार्ग करिकैं विक्षिप्त बुद्धिवारे और तुम्हारी मायासो आवृतमतिवारे जन अपनें हृदय आकाशमें और नेत्रनके पेटेमें विराजमानहू तुमको न जाने सो जन अखिलके गुरु तुम्हारे प्रकाशे वेदनको पायक तुमको साक्षात् जाने हैं ॥ ४८ ॥ रहस्य तत्त्वको प्रकाशक तुम्हारो दर्शन एक वेदहीमें है याहीतें सांख्य योगादिकन करिकैं जतनके करनहारे ब्रह्मादिक कवि सब तुम्हारे दर्शनकों न पामेंहैं, निर्गुण सगुणादिक सबनके वचननके अनुकूल स्वभाव, और देहादिकनके अभिनिवेश करिकै गूढ तत्वज्ञानयुक्त महापुरुष तुमको नमस्कार है ॥ ४९ ॥

यद्दर्शनं निगम आत्मरहःप्रकाशं मुह्यन्ति यत्र कवयोऽजपरा यतन्तः ॥
तं सर्ववादविषयप्रतिरूपशीलं वन्दे महापुरुषमात्मनि गूढबोधम् ॥ ४९ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

सूत उवाच–संस्तुतो भगवानित्थं मार्कण्डेयेन धीमता ॥
नारायणो नरसखः प्रीत आह भृगूद्वहम् ॥ १ ॥

श्रीसूतजी कहें हे बुद्धिमान् मार्कंडेयके या प्रकार स्तुति करनेसो भगवान् श्रीनरनायणजू प्रीतियुक्त ह्वैकैं तिनसों बोलतभये ॥ १ ॥ हे ब्रह्मऋषीनमें श्रेष्ठ ! मनकी एकाग्रता करिकै और तप अध्ययन संयमन करिकैं अनपायनी हमारी भक्ति करिकैं तुम सिद्ध भये ॥ २ ॥ तुम्हारो मंगल होउ तुम्हारे नैष्ठिक ब्रह्मचर्यसे हम बहुत संतुष्ट भये, ताते वरदातानके ईश्वर हमते तुम मनवांछित वर मांगो, जो तुम्हारी इच्छा होई ॥ ३ ॥ श्रीमार्कंडेयजी बोले हे देव, हे ईश, हे भक्तनके दुःखनाशक, हे अच्युत, हे सदाजययुक्त ! तुमने जो साक्षात् दर्शन दियो यही हमकों बडो वर है ॥ ४ ॥ योगसो पक्व भये, मन करिकैं तुम्हारे स्वभावयुक्त चरणकमलनके दर्शन पाइकैं प्राकृतहू जन ब्रह्मादि होइ जाइ सो तुमही हमारे नेत्रनके आगे साक्षात् भये ॥ ५ ॥ हे कमलदललोचन ! हे पुण्यश्लोकशिखामणि ! तथापि जो वर दियो चाहो तो यह वर देउ कि अपनी माया हमको दिखाओ, जा माया करिकैं लोकनसहित लोकपाल सब मोहित होयहैं ॥ ६ ॥ श्रीसूतजी कहे हैं, हे मुनियो ! या प्रकार ऋषिकी स्तुति सुन भगवान् ईश्वर तिन मुनिसे पूजित हो मुसिक्याइकै सोई वर दैके बद्रिकाश्रमको जातभये ॥ ७ ॥ ताके अनंतर सो ऋषि ता वरको

१ नारायण ऋषि इस कारण मुसकाकर गये कि इस मार्कण्डेयने अपने मनमें यह अहंकार किया कि हमने माया जीतली इस कारण उसका कौतुक देखा चाहते हैं सो इन्हें मायाका ऐसा मोह करें जो कभी भूलें नहीं ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

चिंतवन करते अपने आश्रममें बैठिक अग्नि सूर्य चंद्रमा जल भूमि पवन आकाश मन सबन विषें ॥८॥ सब जगे भगवान्‌को ध्यान करतो भावनारूपी द्रव्य करिकै हरिको पूजन करतो भयो, कबहू एक भक्तिके आवेश करिकै प्रेमके दर्यावमें डूबे मार्कंडेय पूजाहूकूं भूलिजाय हैं॥ ९ ॥ श्रीसूतजी शौनकादिकनसों कहेहैं, हे भृगुवंशीनमें श्रेष्ठ ! हे मुने! हे ब्रह्मन्! एक दिन संध्यासमयमें पुष्पभद्रानदीके तट विषें बैठे विन मुनीश्वरके आगे बडी पवन चलति भई ॥ १० ॥ महावेगवान् भयंकर शब्दपूर्वक पवनके पीछे बीजरीन सहित भयानक मेघ प्रगट ह्वैके अतिगर्वते रथके पैय्यानसी मोटी धारा सब ओरनते छोडतभये ॥ ११ ॥ उग्र ग्राह महाभयानक भ्रमरसहित बडे गंभीर शब्द करते चारों समुद्र पवनके वेगतै तरंगन करिकैं सब ओरनते पृथ्वीकों बोरतसो दिखाई देत भये ॥ १२ ॥ आकाशके अतिक्रम कर-नहारे जल करिकैं और तीक्ष्ण पवन करिकैं वीजुरीन करिकैं चार प्रकारके जगत्‌कों बाहर भीतरते पीडित देखि और पृथ्वीकों जलसों बूडती देखिकैं मुनि विमन हो विस्मय करि भयको प्राप्त होतभयो ॥ १३ ॥ ता मुनिके देखतेही तरंग उठवेसों भयानक पवनसो चलायमान जलवारो और वर्षते भये मेघनसों पूर्ण हो समुद्र सब ओरतें द्वीपखंड, पर्वतन समेत पृथ्वीको डुबावत भयो ॥ १४ ॥ भूमि अंतरिक्ष स्वर्ग नक्षत्र दिशानसहित त्रिलोकी जलमय होतिभई वे जलमें इकलोई सो महामुनि बडी जटानकों फैलाये जडअंधसो ह्वैके भ्रमतभयो ॥ १५ ॥ भूख प्यास करिक पीडित मकर तिमिंगिलन करिकैं भयभीत पवनकी झकोरनतै और तरंगनते ताडित अपार अंधकारमें परचो श्रम करिकैं व्याप्त हों दिशा आकाशभूमिको न जानतभयो ॥ १६ ॥ कबहूं तौ बडे भमरनमें परते कबहूं तरंगन करिके ताडित होते कभी खाइवेके निमित्त आपुसमें लरवेवारे जलजंतुन करिकैं भक्षित होइहै ॥ १७ ॥ कबहूं शोक कबहूं मोह कबहूं दुःख कबहूं सुख कबहूं रोष कबहूं रोगादि कबहूं भय और कबहूं मृत्यु करिकैं पीडित होइहै ॥ १८ ॥ हरिकी मायासे आवृत चित्त मुनिको जलमें भ्रमते अयुतायुत हजारन सैंकरान वर्ष वीततभये॥ १९ ॥ सो द्विज एक समय ता जलमें भ्रमते २ पृथ्वीके एक टापूमें फल पल्लवन करिकैं शोभित एक वटको वृक्ष देखत भयो ॥ २० ॥ ता वृक्षके पूर्व उत्तरके बीचकी शाखाके पत्रमें सोवते अपनी कांति करिकैं अंधकारको ग्रासते एक बालकको यह देखत भये ॥ २१ ॥ महामरकत मणिसे श्याम शोभायुक्त मुख शंखकीसी तीनि रेखन करिकै युक्त ग्रीवा विशाल वक्षःस्थल सुंदर नासिका सुंदर भ्रुकुटीयुक्त है ॥ २२ ॥ श्वासनते हलती अलकन करिकैं शोभित मुखारविंद, शंख-कीसी रेखान करि शोभित कर्णविषें अनारके फूलकों धरे, मूंगाकीसी अधर होठनकी अरुण कांति अमृतसी मंद मुसिक्यानि॥२३॥ कमलके बीच दलकेसे अरुण नेत्रनके कोये, सुंदर हास्ययुक्त चितवनि, श्वास लेवेमें चलायमान त्रिवली करिकैं शोभित, गंभीर नाभी करिकैं युक्त, पीपरके पातसों उदर॥२४॥ मनोहर अंगुरीवारे दोऊ हाथनसे उठाइकै अपनें चरणकमलके अंगूठाको मुखमें राखिकै पान करते ता बालकको देखिके विप्रेंद्र विस्मित होतभयो ॥ २५ ॥ तिनके दर्शनके आनंदसो विगत श्रम; और प्रफुल्लित हृदय कमल और नेत्रकमल रोमांचन करिकैं युक्त अंग अद्भुतभावसों शंकायुक्त ह्वैकें पूछिवेके लियें ता बालकके पास जात भयो ॥ २६ ॥ ता समय सो भृगुवंशी मुनि ताके श्वास करिकै माछरकीसी नाईं श्वासके संग ता बालकके भीतर प्रवेश ह्वैजात भयो, तहां या विश्वकों पहिलेकीसी नाईं देखिके अति विस्मित ह्वै मोहित होतभयो॥ २७ ॥ आकाश, भूमि, स्वर्ग, वृक्ष, भगण अर्थात् नक्षत्र, पर्वत, समुद्र, द्वीप, खंड, दिशा, देवता, असुर, वन, देश, नदी, पुर, खान, किसाननके ग्राम, गौवनके खिरक, वर्णाश्रमकी जीविका इन सबनकों देखत भयो॥ २८॥ पंचमहाभूतनके रचे प्राणी, युग कल्पादि रूप

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

काल, औरहू व्यवहारके कारणको विश्व जो बालककी सत्तासो सत्यसो प्रतीत होतो मुनि देखतो भयो ॥ २९ ॥ हिमालय पुष्पभद्रानदी अपनो आश्रम वा आश्रममें जे ऋषि इन सबनको देखत भयो या प्रकार विश्वको देखतो मार्कंडेयजू फेरि ता बालकके श्वासतें बाहर निकसिकै समुद्रमें परतभयो ॥ ३० ॥ तहां पृथ्वीके एक देशमें वटके एक पातमें सोवते बालकको मुनि देखत भयो सो बालकहू प्रेमरूप अमृत मुसिक्यान नेत्रनकी कोर करिकैं मार्कंडेयको देखतभये ॥ ३१ ॥ तदनंतर हृदयमें चुभनहारे ता बालककों दोऊ नेत्रसों देखकै अति क्लेशयुक्त मार्कंडेयजू तिन अधोक्षजके आलिंगन करिवेको सन्मुख जातभयो ॥ ३२ ॥ तबतांई योगके ईश्वर सबनके हृदयमें रहनेवारे साक्षात् भगवान् ता ऋषिके देखते वेगिही अतर्द्धान होतभये, जैसैं हरिसों विमुखकी क्रिया लोप होय है ॥ ३३ ॥ हे ब्रह्मन् ! तदनन्तर सो वट वृक्ष और प्रलयको जल लोकनको बूडिवो क्षणमेंही सब जातरह्यो, सो ऋषि पहिलेकी तरह अपने आश्रममें स्थिर होत भये ॥ ३४ ॥

तमन्वथ वटो ब्रह्मन् सलिलं लोकसंप्लवः ॥
तिरोधायि क्षणादस्य स्वाश्रमे पूर्ववत्स्थितः ॥ ३४ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अध्याय १०.

सूत उवाच-स एवमनुभूयेदं नारायणविनिर्मितम् ॥
वैभवं योगमायायास्तमेव शरणं ययौ ॥ १ ॥

श्रीसूतजी कहेहैं सो मुनि नारायणसे निर्मित योगमायाको वैभव देखिकैं तिन हरिके शरण जात भयो ॥ १ ॥ मार्कंडेयजी बोले अहो देखो ज्ञानसी प्रकाशमान जिनकी मायासों बडे पंडित ज्ञानीहू मोहित होय हैं विन शरण आवनवारेनके अभयदाता हरिके चरणकमलके हम शरण हैं ॥ २ ॥ श्रीसूतजी कहें हैं एकाग्र चित्त बैठे मुनिकों वृषपें चढे भवानीसहित भगवान् रुद्र आकाशमें गणनसों वेष्टित पर्यटन करते देखतभये ॥ ३ ॥ पार्वती वा ऋषिकों देखिकैं शिवजीसों बोलतभई, हे भगवन् ! एकाग्र मन चित्त इंद्रिय, विना पवनको निश्चल जलजंतुयुक्त समुद्रकी नाईं या विप्रकों देखो, या मुनिको तपकों फल देहु, क्योंकि तुम सिद्धिनके दाता हो ॥ ४ ॥ ५ ॥ श्रीमहादेवजी बोले हे पार्वति ! अव्यक्त पुरुष भगवान् विषें प्रेमलक्षणा भक्ति हैवेसो यह ब्रह्मऋषि मुक्ति पर्यंत कामनाकोहू कभी चाहना नहीं करै ॥ ६ ॥ हे भवानीजू ! तथापि या साधुसों संवाद करेंगे, जाते साधुनकों संग मनुष्यनको परम लाभदायक है ॥ ७ ॥ सो मुनि साधुनकी गति सब विद्यानके और सब देहधारीनके ईश्वर भगवान् शिवजू देवीसों यह कहिकैं ता मुनिके निकट जातभये ॥ ८ ॥ बुद्धि वृत्ति रोकनेके कारण मार्कंडेयजू जगत्के आत्मा ईश्वर दोऊनकों साक्षात् आयवो न जानतभयो, आपनपेकों और विश्वहूकों न जानत भयो ॥ ९ ॥ वा ऋषिकों समाधिनिष्ठ जानिकैं कैलासवासी ईश्वर भगवान् योगमाया करिकैं ताके हृदय आकाशमें प्रवेश करतभये जैसे पवन छिद्रमें प्रवेश करे ॥ १० ॥ तीनि नेत्र दश भुजा ऊंचो शरीर बीजुरीसी पीतजटानकों धरें प्रातःसमयके सूर्यसे सुंहावने व्याघ्रचर्मके वस्त्र शूल धनुष बाण खड्ग ढाल डोरू रुद्राक्ष और कपालनकी मालानकी माला फरसाको धरें शिवजूकों अकस्मात्ही हृदयमें आये प्रकाशमान देखिकैं आश्चर्ययुक्त हो ॥ ११ ॥ १२ ॥ यह कहा है कहांतें आइ प्राप्त भये, यह

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विचारतो मुनि समाधितें निवर्त्त ह्वैकै नेत्रनको खोलिकैं पार्वती और गणन सहित आये शिवजूको देखत भयो ॥ १३ ॥ त्रिलोकके एकही गुरु रुद्रजूकों सो मुनि माथेसों नमस्कार करिकैं, भले आये महाराज यह कहिके आसन चरण धोइवेंको जल अर्घ्य सुगंध माला धूप, दीप इन सबन करिकैं देवीगणसहित तिनकी पूजा करत भयो ॥ १४ ॥ अनंतर सो मुनि तिनसो बोलतभयो; हे विभो ! हे ईश ! अपने प्रभाव करिकैं पूर्णकाम तुमकों हम कहा पूजन करैं, जिन तुम करिकैं यह सब जगत् सुखी है ॥ १५ ॥ आप निर्गुण शांत सत्वके अधिष्ठाता सबके परमसुखदाता रजोगुण तमोगुणके धारण करनेवारे होकैहू अघोर हो मैं आपको प्रणाम करूंहूं ॥ १६ ॥ श्रीसूतजी कहैं हैं या प्रकार स्तुति करेंपै भगवान् साधुनकी गति आदिदेव संतुष्ट और प्रसन्न ह्वैकैं हास्यपूर्वक मुनिसो बोलत भये ॥ १७ ॥ श्रीमहादेवजी बोले हे मुने ! हमतें मनवांछित वर मांगो हम तीनों वरदातानके ईश्वर हैं सुफल दर्शन हैवेसो मरणधर्मा मनुष्यनके अमृतरूप हैं ॥ १८ ॥ जो ब्राह्मण साधु शांतचित्त रागरहित सब प्राणिनपैं दया राखनवारे वैरभावरहित समदर्शी हमारे विषे एकान्त भक्ति करवेवारे हैं ॥ १९ ॥ उनको लोकसहित लोकपाल देवता वंदन करते पूजते और सबके ईश्वर विष्णुहू सेवन करते हैं ॥ २० ॥ आपकी समान ब्राह्मण हममें विष्णुमें ब्रह्मामें अपनें आत्मा और लोकनमें किंचित्हू भेददृष्टि नहीं राखै है याही कारण हम आपकौ भजन करतेहैं ॥ २१ ॥ जलमय कहां तीर्थ पवित्र नहीं करैं है और प्रतिमारूप कहां देवता नहीं पवित्र करै हैं, किंतु पवित्र करै हैं परन्तु वे बहुत काल करिकैं पवित्र करे हैं और हे महाराज ! तुम सरीखे महात्मा दर्शनहीतें पवित्र करोहो ॥ २२ ॥ चित्तकी एंकाग्रता तप स्वाध्याय संयमसौ वेदत्रयीमय हमारे रूपको जो ब्राह्मण धारण करे तिनको हम सब नमस्कार करे हैं ॥ २३ ॥ तुम्हारे श्रवणते अथवा दर्शनतें महापातकी और अंत्यजहू शुद्ध होइ फिर तुम्हारें संभाषण करिकैं शुद्ध होय यामें कहा कहनौ है ॥ २४ ॥ श्रीसूतजी कहैं हैं या भांति चंद्रभाल शिवजीके गुह्य धर्ममय अमृतरूप वचननको कर्णद्वारा पान करते ऋषि तृप्त न होतभये ॥ २५ ॥ विश्वकी माया करिकैं बहुत दिनन ताईं भ्रमतो दुःखित मुनि शिवजूके अमृत वचनन करिकैं संपूर्ण क्लेशनते निवृत्त ह्वैकैं विन शिवजूसों बोलतभयो ॥ २६ ॥ मार्कंडेयजी कहैं हैं, अहो ईश्वरको चरित्र देहधारीनको अतर्क्य है जो जगत्के ईश्वर ह्वैकेंहू अपनें आधीन प्रजानकी स्तुति करेहै और तिनको नमस्कार करैं ॥ २७ ॥ अथवा धर्मके उपदेष्टा ईश्वरहूं ह्वैकैं धर्मके ग्रहण कराइवेको देहधारीनके क्रियानकी स्तुति करें अनुमोदन करें और आपुहू तिन क्रियानको करें हैं ॥२८॥ अपनी मायामयवृत्ति नमस्कारादिनसौ भगवान्को प्रभाव दूषित नहीं होयहै जैसे मायावी अपनी मायाकी क्रियान करिकै दूषित नहीं होइ है ॥ २९ ॥ जो ईश्वर आपुही मन करिकैं गुणनके द्वारा या जगत्को सृजके तामें प्रवेश ह्वैकें कर्त्तासो भासे है, जैसें स्वप्नमें कोऊ नगर बनायके तामें प्रवेश ह्वैके कर्त्तासो भासे हैं ॥ ३० ॥ ऐसे त्रिगुणनके नियंता शुद्धरूप अद्वितीय सबनके गुरु ब्रह्ममूर्ति भगवान् तुमको नमस्कार हैं ॥ ३१ ॥ हे सबनमें श्रेष्ठ ! तुम्हारे दर्शनते परे और कहा वर है जाते तुम्हारे दर्शनते पुरुष सत्यकाम और पूर्णकाम होइहैं ॥ ३२ ॥ तथापि सब कामनानके वर्षनहारे पूर्ण तुमते एक वर हम मांगे हैं, कि भगवान् विषे और तिनके भक्तनविषे तैसेही तुम विषे अचल भक्ति देउ ॥ ३३ ॥ श्रीसूतजी कहैं हैं या प्रकार ता मुनिकी स्तुति और पूजासो भगवान् शिवजू देवीसहित प्रसन्न हो तिन मुनिसो बोलत भये ॥ ३४ ॥ हे महर्षि ! तुम्हारी कामना पूर्ण होऊ अधोक्षज विषे तुम्हारी भक्ति तो पहिलेही है, और कल्पपर्यंत तुमारो पुण्य यश होऊ, और अजर अमर होहु ॥ ३५ ॥ हे ब्रह्मन् ! और तुमको त्रिकालज्ञान होऊ और विज्ञानसहित वैराग्य होऊ पूर्ण ब्रह्मतेज होहु, पुराणके आचार्य्य

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होऊ ॥ ३६ ॥ श्रीसूतजी कहे हैं या प्रकार मुनिको वर देकैं त्रिलोचन ईश्वर वा मुनिको पहिलो वृत्तांत देवीसों कहते जातभये ॥ ३७ ॥ महायोगकी महिमा पाय हरिकी एकांतभक्तिसो भृगुवंशीनमें श्रेष्ठ वह मुनि अबहूं ताई पृथ्वीपै विचरै हैं ॥ ३८ ॥ बुद्धिमान् मार्कंडेयने भगवान्की माया वैभवादि अद्भुत जो देख्यो सो चरित्र तुमसों वर्णन कियो ॥ ३९ मार्कंडेयके माया अनुभवको जो हरिकी मायाके लक्षणको नहीं जाने है सो बहुत कालको कहैं हैं और जे मायाके वेत्ता है वे वा कालकों क्षणमात्र कहैं हैं अर्थात् मार्कंडेयने जो मायाकी कौतुक देखो हो वह सब एक क्षणमात्रको हो ॥ ४० ॥ हे भृगुवंशीनमें श्रेष्ठ ! भगवान्के प्रभावयुक्त मार्कंडेयको यह चरित्र जो कोई सुने सुनावे तिन दोऊनको कर्मवासनामय संसार न होइ ॥ ४१ ॥

य एवमेतद्भृगुवर्य वर्णितं रथाङ्गपाणेरनुभावभावितम् ॥
संश्रावयेत्संशृणुयादुतावुभौ तयोर्न कर्माशयसंसृतिर्भवेत् ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११.

शौनक उवाच-अथेममर्थं पृच्छामो भवन्तं बहुवित्तमम् ॥
समस्ततन्त्रराद्धान्ते भवान्भागवततत्त्ववित् ॥ १ ॥

शौनकादिक मुनि श्रीसूतजीसों प्रश्न करें हैं हे भागवतमें श्रेष्ठ ! बहु वेत्तानमें उत्तम तुमसो कछु प्रश्न करे हैं, जाते तुम सब तंत्रनकें तत्त्ववेत्ता हो ॥ १ ॥ सर्व तंत्रनके उपासक केवल हरिकी परिचर्या विषे अंग अर्थात् पादादिक, उपांग गरुडादिक, आकल्प चक्रादिक, अलंकार कौस्तुभादिकी रचना जा जा भांति कल्पना करैं हैं ॥ २ ॥ वह सब क्रियायोग जानवेकी इच्छा करवेवारे हमसौं कहो तुमारो मंगल होऊ जा क्रियायोगकी निपुणतासौ मरणधर्मा जन अमरताको प्राप्त होइ है ॥ ३ ॥ श्रीसूतजी कहें हैं गुरुनको नमस्कार करके विष्णु भगवान्की विभूतिनकों वर्णन करूंगो जाको वर्णन ब्रह्मादिकनेहू वेद और तंत्रनमें कियोहै ॥ ४ ॥ मायारूप महत्तत्व अहंकार पांच तन्मात्रा इन नौ तत्वनसौं ग्यारह इन्द्रिय पंचमहाभूतरूप यह विराट् शरीर ब्रह्माण्ड उत्पन्न भयो जा चैतन्यसो अधिष्ठित ब्रह्माण्डमें पृथ्वी आदि सब लोक देखो जाय हैं इन्ही पृथ्वी आदिसौ भगवान्के अंगकी पूजा करवेमें आवै है ॥ ५ ॥ यह विराट्पुरुषके यह रूप हैं, पृथ्वी सो चरण है, स्वर्ग माथो है, अंतरिक्ष नाभि है, सूर्य नेत्र है, पवन नासिका है, दिशा कर्ण है ॥ ६ ॥ प्रजापति शिश्नेंद्रिय हैं मृत्यु गुदेन्द्रिय है लोकपाल भुजा हैं चंद्रमा मन है यमराज भ्रुकुटी हैं ॥ ७ ॥ लज्जा ऊपरलो होठ है, लोभ नीचलो होठ है, चांदनी दंत है, भ्रम हास्य है, वनस्पति रोम हैं, मेघ केश हैं ॥ ८ ॥ ब्रह्माण्डरूप पुरुषकौ जो प्रमाण है जैसी स्थिति है वह प्रमाण और स्थिति भगवान्की लघुमूर्तिमेंहू मानी जाय है यासौ मूर्तिमें पूजन करैं हैं ॥ ९ ॥ मूर्तिमें जो अजन्मा विभुने कौस्तुभ मणि धारण की है यही शुद्ध चैतन्य अपनी आत्मज्योति धारण कियो है ऐसो मानो है और वक्षस्थलमें श्रीचिह्न विनकी प्रभासौ व्याप्त जीव है ॥ १० ॥ उनकी मायाही नानागुणमयी वनमाला है वेदही पीतांबर है; त्रिमात्रा ॐकारही यज्ञोपवीत है ॥ ११ ॥ सांख्ययोग और योग दोऊ मकराकृत कुंडल हैं, सब लोकनसौ नमस्कृत ब्रह्मलोक मुकुटमणि हैं ॥ १२ ॥ अव्याकृत जो माया है सो अनंत आसन है, धर्मज्ञानादिसहित सतोगुण कमल हो ॥ १३ ॥ इंद्रियनकी निपुणता

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मनको उत्साह शरीरके बलसहित प्राणही विराट् पुरुषकी गदा है, और जलको तत्त्वही शंख है तेजको तत्त्वही सुदर्शन चक्र है ॥ १४ ॥ आकाशही खड्ग है तमोगुण ढाल है कालही शार्ङ्गधनुष है कर्महीं तरकस है ॥ १५ ॥ इंद्रियही बाण है, मनही रथ है, तन्मात्रा इस रथकी चाल हैं अभय वर देवो क्रियाही विराट्पुरुषकी मुद्रा है ॥ १६ ॥ सूर्य अग्नि चंद्रमाको मंडल पुरुषके पूजाको स्थान है गुरु- दीक्षा पूजा करनहारेको संस्कार है भगवान्की परिचर्याही आत्माके पापनकी नाशक है ॥ १७ ॥ छै प्रकार भगवत् शब्दको अर्थ लीलाकमल है, धर्म और यश दोऊ चमर और वीजना है ॥ १८ ॥ हे द्विजो ! निर्भय धाम वैकुंठ छत्र है ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेदही ये यज्ञ पुरुषको वाहन गरुड है जो भगवान् यज्ञरूपको ॥ १९ ॥ साक्षात् भगवती लक्ष्मी हरिकी अनपायिनी शक्ति है, पार्षदनमें मुख्य विष्वक्सेन तंत्र मूर्ति है अणिमादि अष्टसिद्धि सुनंदादिक हरिके द्वारपालक हैं ॥ २० ॥ हे ब्रह्मन् ! वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध ये चारि पुरुषकी मूर्ति हैं ॥ २१ ॥ जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तुरीय इन चारि अवस्था करिकैं और इनके कारण विषें मन अज्ञान और ज्ञानसैं भगवान् जानें जायहै यही भावना ईश्वरसंबंधी है ॥ २२ ॥ अंग पादादिक उपांग गरुडादिक आयुध आकल्प अलंकार इन चारनसौं युक्त चतुर्मूर्ति भगवान् हरि ईश्वर जाग्रतादि चारों अवस्थानकों धारण करे है ॥ २३ ॥ हे द्विजनमें श्रेष्ठ! वेदनके कार- णरूप स्वप्रकाश, अपनी मायासो या जगत्की उत्पत्ति पालन और संहारके निमित्त ब्रह्मा विष्णु महा- देव इन नामनसौं पृथक् पृथक् वर्णन किये जाय है यह परमात्मा यद्यपि एक स्वरूप हैं तथापि विनको शास्त्रनने मानों भिन्नसा कहाहो ऐसा वर्णन कियो है या कारण भक्तियुक्त पुरुष विन्हे आत्मस्वरूप- सोंही प्राप्त होय हैं ॥२४॥ हे श्रीकृष्ण ! हे अर्जुनके सखा ! हे यादवनमें श्रेष्ठ ! हे पृथ्वीके द्रोही राजाके वंश जरावनहारे अग्निरूप एकरस पराक्रमी ! हे गोविंद ! हे श्रवणमंगल ! हे गोपवनितानके समूहन और नारद भृत्यादिकनसे पवित्र यश गाये भये ! तुम अपने भृत्यनकी रक्षा करो ॥ २५ ॥ प्रातःकाल उठिकैं जो कोई एकाग्र ह्वैकैं महापुरुषके लक्षणकों तिनमें चित्त राखिकैं जपैगो, सो सबके हृदयमें रहनवारे भगवा- नूकों जानेगो ॥ २६ ॥ शौनकादिक पूछेहैं सुननहारे विष्णुरातकों भगवान् शुकदेवजीने महीना महीना विषें नानाभांति जो सूर्यके सात गण कहे, ईश्वर करिकैं कार्यमें लगाये तिन गणके नाम और कर्म श्रद्धा- वान् हम सबनसों कहो ॥ २७ ॥ २८ ॥ सूतजी कहे हैं देहधारीनकी अनादी अविद्या विष्णुकी माया करिकैं निमित्त सब लोकनकों क्रियामें प्रवृत्त करामनहारे ये सूर्य लोकनमें फिरो करेहैं ॥२९॥ सब लोक- नको आत्मा आदि कर्त्ता एकही सूर्यरूप हरिको सब वेद क्रिया और तिन क्रियानके कारणकों करिकैं बहुत प्रकार ऋषि कहेहैं ॥ ३० ॥ हे ब्रह्मन् ! काल देश क्रिया कर्त्ता कारण कार्य मंत्र हविष्य ये और फल नौ प्रकार हरिकी मायासो ऐसें कवि कहे ॥ ३१ ॥ चैत्रादि बारह महीनान विषें सूर्यरूप भग- वान्ही लोकनको कर्मनविषें प्रवृत्त करिवेको गणनसहित न्यारे न्यारे ह्वैकैं विचरे हैं ॥ ३२ ॥ धाता सूर्य पुलस्त्यमुनि रथकृतयक्ष हेतिराक्षस वासुकीनाग तुंबरुगंधर्व कृतस्थली अप्सरा ये सब मिलिकैं चैत्रमहीनाकों व्यतीत करेहैं ॥ ३३ ॥ अर्यमासूर्य पुलस्त्यमुनि अथौजा यक्ष प्रहेति राक्षस कच्छनीरनाग नारद गंधर्व पुंजिकस्थली अप्सरा ये सब मिलिकैं वैशाखमहीनाको व्यतीत करें हैं ॥ ३४ ॥ मित्रसूर्य, अत्रिमुनि, रथस्वनयक्ष, पौरुषेयराक्षस, तक्षक नाग हाहागंधर्व मेनका अप्सरा ये सब मिलिकैं जेठ महीनाकों व्यतीत करें हैं ॥ ३५ ॥ वरुणसूर्य वसिष्ठमुनि सहजन्ययक्ष चित्रस्वनराक्षस शुक्र नाग हूहूगंधर्व रंभा अप्सरा ये सब मिलिकैं आषाढ महीनाकों व्यतीत करेहैं ॥ ३६ ॥ इंद्रसूर्य अंगिरामुनि श्रोतायक्ष वर्यराक्षस एलापत्रनाग विश्वावसुगंधर्व प्रम्लोचा अप्सरा ये सब मिलिकैं श्रावणकें

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

महीनाकों व्यतीत करें हैं ॥ ३७ ॥ विवस्वान् सूर्य भृगु मुनि आसारणयक्ष व्याघ्रराक्षस शंखपाल नाग उग्रसेन गंधर्व अनुम्लोचा अप्सरा ये सब मिलिकै भादोंके महीनाको व्यतीत करेहैं ॥ ३८ ॥ पूषा सूर्य गौतममुनि सुरुचि यक्ष वात राक्षस धनंजय सुषेण गंधर्व घृताची अप्सरा ये सब मिलिकैं आश्विन महीना क्वारकों व्यतीत करेहैं ॥ ३९ ॥ पर्जन्यसूर्य भरद्वाज मुनि क्रतुयक्ष ऐरावत नाग विश्व गंधर्व सेनजित् अप्सरा ये सब मिलिकैं कार्तिकमहीनाको व्यतीतकरें ॥ ४० ॥ अंशु सूर्य कश्यप मुनि तार्क्ष्ययक्ष विद्युच्छत्रु राक्षस महाशंख नाग, ऋतसेन गंधर्व, उर्वशी अप्सरा ये सब मिलिकैं अगहनके महीनाको व्यतीत करें हैं ॥ ४१ ॥ भग सूर्य आयु मुनि ऊर्ण यक्ष, स्फूर्ज राक्षस, कर्कोटक नाग अरिष्टनेमि गन्धर्व पूर्वचित्ति अप्सरा ये सब मिलिकैं पूषके महीनाको व्यतीत करेहैं ॥ ४२ ॥ त्वष्टा सूर्य जमदग्नि मुनि शतजित् यक्ष ब्रह्मापेत राक्षस कंबल नाग, धृतराष्ट्र गंधर्व, तिलोत्तमा अप्सरा ये सब मिलिकैं माघके महीनाको व्यतीत करेहैं ॥ ४३ ॥ विष्णु सूर्य विश्वामित्र मुनि सत्यजित यक्ष मखापेत राक्षस अश्वतर नाग सूर्यवर्चा गंधर्व रंभा अप्सरा ये सब मिलिके फाल्गुनको व्यतीत करेहैं ॥ ४४ ॥ ये सब सूर्यरूप विष्णुकी विभूति दिन दिनकी दोऊ संध्यान विषे स्मरण करनेवारे जननकें संपूर्ण पापनकों हरे हैं ॥ ४५ ॥ यह सूर्यदेव इन छहों सहित बारह महीनानविषे सब ओर विचरते संपूर्ण जननको या लोक परलोककी उत्तम मति देहै ॥ ४६ ॥ ऋषीश्वर तो ऋग्यजु सामवेदके मंत्रनसों श्रीसूर्यनारायणकी स्तुति करेहैं गंधर्व गामेंहैं अप्सरा नाचैहैं ॥ ४७ ॥ नाग सब रथको बांधे हैं, यक्ष रथको जोरेहैं, बलवान् राक्षस रथकों पीछेते ढकेलें हैं ॥ ४८ ॥ साठिहजार निर्मल बालखिल्य ब्रह्मऋषि अंगूठाके प्रमाण मात्रस्वरूप सब मिलिकै स्तोत्रनसों विभुके सन्मुख ह्वैकें पीछिले पायन चलते श्रीसूर्य्य नारायणकी स्तुति करें हैं ॥ ४९ ॥ आदि अंतरहित अजन्मा भगवान् हरि ईश्वर या प्रकार कल्प कल्पविषें आपको सूर्यरूप विभाग करिकै संपूर्ण लोकनकी रक्षा करेहैं ॥ ५० ॥

एवं ह्यनादिनिधनो भगवान्हरिरीश्वरः ॥
कल्पे कल्पे स्वमात्मानं व्यूह्य लोकानवत्यजः ॥ ५० ॥

इति श्रीभागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अध्याय १२.

सूत उवाच–नमो धर्माय महते नमः कृष्णाय वेधसे ॥
ब्राह्मणेभ्यो नमस्कृत्य धर्मान्वक्ष्ये सनातनान् ॥ १ ॥

श्रीसूतजी महाराज कहेहैं श्रेष्ठधर्मको नमस्कार है और सृष्टिकर्त्ता श्रीकृष्णजूको नमस्कार है अब तुम सब ब्राह्मणनको नमस्कार करिकै सनातनधर्म कहोंहों ॥ १ ॥ हे ब्राह्मणो! संपूर्ण नरनके श्रवणनकों योग्य यह विष्णुको अद्भुत चरित्र तुमसों कह्यो है जो तुम हमसो पूछोहो ॥ २ ॥ या पुराण विषे सब पापनके नाशक भक्तनके पालक हृषीकेश भगवान् नारायण हरि साक्षात् गाये हैं ॥ ३ ॥ अब यहांते आगे कही भई बारहों स्कंधकी कथाको श्रीसूतजी शौनकादिकनको फिर याद दिवामें हैं कि जिनते जगत्की उत्पत्ति पालन नाश होइ ऐसे गुह्य परब्रह्म इहां गाये, और तिन परब्रह्मको प्रकाशक विज्ञान वह सहित ज्ञान कह्यो है ॥ ४ ॥ भक्तियोग और भक्तिसहित वैराग्य परीक्षित्को आख्यान और नारदको आख्यान कह्यो ॥ ५ ॥ ब्राह्मणके शापके राजऋषि परीक्षित्को अनशन व्रत लेवो, तिन राजऋषिके

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सहित ब्रह्मऋषि श्रीशुकदेवजी महाराजको संवाद यह सब प्रथम स्कंधमें कथा भई ॥ ६ ॥ योगधारण करिकैं प्राणनको छोडिवो ब्रह्मा नारदको संवाद, और अवतारनको वर्णन विराट्पुरुषकी उत्पत्ति ये सब द्वितीयस्कंधमें कथा भई ॥ ७ ॥ विदुर उद्धवको संवाद फेरि विदुर मैत्रेयको संवाद, तहां पुराण संहिताको पूछिवो विराट् पुरुषकी रचना ॥ ८ ॥ पहिले मायाते महत्तत्त्वादिक सात प्रकारकी सृष्टि होती भई, तिनसो फेरि या ब्राह्मण्डकी उत्पत्ति हैं, सोई पुरुषके रहिवेको स्थान है ॥ ९ ॥ स्थूल सूक्ष्म कालकी गति नाभितें कमलकी उत्पत्ति समुद्रतें पृथ्वीको उद्धार, हिरण्याक्षको वध ॥ १० ॥ वृक्ष पशु पक्षी मनुष्य इन तीनोंनकी सृष्टि रुद्रकी सृष्टि ब्रह्माके आधे अंगतें नर मनुष्य आधे अंगते नारी स्त्री भई, तिनमें नर तो स्वायंभुव मनु और स्त्रीनमें श्रेष्ठ नारी शतरूपा भई कर्दम प्रजापतितें धर्मपत्नीनकी संतान कही ॥ ११ ॥ १२ ॥ जा प्रजापति कर्दमते महात्मा भगवान् श्रीकपिलदेवजी अवतार और तिन बुद्धिमान् कपिलदेवसौं देवहूतीको संवाद यह तृतीयस्कन्धकी कथा भई ॥ १३ ॥ मरीच्यादिक ब्राह्मणनकी संतानकी उत्पत्ति, दक्षके यज्ञको विनाश ध्रुवको चरित्र पृथु और प्राचीनबर्हिराजाको चरित्र यह चतुर्थ स्कंधकी कथा कही ॥ १४ ॥ हे द्विजहो ! नारद प्रियव्रतको संवाद, फेरि प्रियव्रतको चरित्र, नाभिराजाको चरित्र, ऋषभदेवको चरित्र भरतको चरित्र ॥ १५ ॥ द्वीप समुद्र पर्वत खंड नदीको वर्णन करचो पुनि ज्योतिश्चक्रकों वर्णन पातालकी रचना नरकनकी वर्णन, यह पंचमस्कंधमें कथा भई ॥ १६ ॥ प्रचेतानतें दक्षको जन्म फेरि ता दक्षकी बेटीनकी संतानिकों वर्णन जा संतानतें देवता असुर नर तिर्यग् वृक्ष पर्वत पक्षी आदि होतभये ॥ १७ ॥ हे द्विजो! वृत्रासुरको जन्म और नाश दितिके दोउ पुत्रनको उत्पत्ति, हिरण्यकश्यपको और महात्मा प्रह्लादको वर्णन करचो, यह षष्ठ अरु सप्तममें कथा कही ॥ १८ ॥ मन्वंतरको वर्णन गजेंद्रको छुटायवो, मन्वन्तरनमें विष्णुके हयशिरादि अवतारनको वर्णन कह्यो ॥ १९ ॥ तिन विष्णुके अवतार कूर्म मत्स्य नरहरि वामनको वर्णन देवतानकों अमृतके लिये क्षीरसमुद्रको मथन कह्यो ॥ २० ॥ देवता असुरनको महायुद्ध यह अष्टम स्कंधकी कथा कही राजानके वंशनको वर्णन और इक्ष्वाकुको जन्म और ताके वंशको वर्णन और महात्मा सुद्युम्नको चरित्र कह्यो ॥ २१ ॥ इला और ताराको उपाख्यान, शशादि नृगादि सूर्यवंशी राजानको वर्णन कह्यो ॥ २२ ॥ सुकन्याको चरित्र शर्य्यातिको चरित्र बुद्धिवान् ककुत्स्थको चरित्र, खट्वांग मान्धाता सौभरि सगरको चरित्र कह्यो ॥ २३ ॥ कोसलेंद्र श्रीरामचंद्रजीको चरित्र सब पापनकी नाशक निमिके शरीरको त्याग, जनकवंशीनकी उत्पत्ति कही ॥ २४ ॥ भृगुवंशी परशुरामजू करिकैं क्षत्रीनको नाश, चंद्रवंशी ऐलादि ययाति नहुषराजाको चरित्र कह्यो ॥ २५ ॥ दुष्यंतको पुत्र भरत शंतनु ता शंतनुके पुत्र इन सबनको चरित्र कह्यो, और राजा ययातिके ज्येष्ठपुत्र यदुराजाके वंशको वर्णन कह्यो, यह नवमस्कंधमें कथा भई ॥ २६ ॥ जा यदुके वंशमें भगवान् कृष्ण जगदीश्वर अवतीर्ण भये, वसुदेवके घरमें अवतीर्ण व्हैकें गोकुलमें जायकें बढत भये ॥ २७ ॥ असुरनके वैरी श्रीकृष्णजीके अपार चरित्र हम कहि आये हैं बालअवस्थानमें पूतनाके प्राणसमेत स्तननको पान करिवो और शकटको डारिदेवो ॥ २८ ॥ तृणावर्त्त और वत्सको मारिवो कह्यो, अघासुरको वध, ब्रह्मा करिकैं वत्सनको हरन धेनुक प्रलंबको वध ॥ २९ ॥ सब ओर फैली दावाग्नितें गोपनकी रक्षा करनी कालीको दमन, महासर्पतें नंदजीकों छुटायवो कह्यो ॥ ३० ॥ व्रजकन्याको व्रत करिवो, ता व्रत करिकैं अच्युतको संतुष्ट होइवो कह्यो, द्विजपत्नीनपै प्रसन्न व्हैवो ब्राह्मणनको पश्चात्ताप करिवो ॥ ३१ ॥ गोवर्द्धनको धरिवो, सुरभीनसहित इंद्र करिकैं श्रीकृष्णको अभिषेक रात्रि विषें स्त्रीन-

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सहित श्रीकृष्णकी क्रीडा ॥ ३२ ॥ दुर्बुद्धि शंखचूडको वध और अरिष्टकेशीको वध तदनंतर अक्रूरको व्रजमें आइवो, फेरि रामकृष्णको मथुराको प्रस्थान ॥ ३३ ॥ ता समय व्रजसुंदरीनको विलाप, ताके अनंतर मथुरा देखिवो कह्यो, और मुष्टिक चाणूर कंसादिकनको वध ॥ ३४ ॥ सांदीपनि गुरुकों मरे पुत्रनको फेरि लाइ देवो; मथुरामें वसिकै उद्धव बलदेवसहित मिलिकैं यादवनके प्रिय करिवो ॥ ३५ ॥ हे द्विजो ! जरासंध करिकैं वेरवेर लडाई, बडी सेनाको वेरवेर वध करनो और मुचुकुंददृद्वारा कालयवनको मारिवो, और द्वारकामें हरिकों प्रवेश होवो कह्यो ॥ ३६ ॥ इंद्रलोकसों पारिजात और सुधर्मा सभाको लाइवो, और युद्धमें वैरीनको जीतिकै रुक्मिणीकों हरि लाइवो ॥ ३७ ॥ युद्ध विषें जृंभास्त्र करिकै शिवको जंभाइ लेवो; बाणासुरकी भुजानकों काटिवो नरकासुरकों मारिकै सोल्हे हजार एकसौ आठ कन्यानकों लाइवो ॥ ३८ ॥ शिशुपाल मिथ्या वासुदेव शाल्व दुर्बुद्धि दंतवक्र शंबर द्विविद पीठ मुर पंचजनकों मारिकैं कृतार्थ करिवो और काशीको जरावो, पांडवनकों निमित्तमात्र करिकैं पृथ्वीको बोझ उतारिवो, यह दशमस्कंधमें कथा भई ॥ ३९ ॥ ४० ॥ द्विजनके शापको मिषकरिकै अपनें कुलको संहारवो, वासुदेव उद्धवको अद्भुत संवाद भयो ॥ ४१ ॥ जा संवाद विषें आत्मतत्वको निर्णय और धर्मको निर्णय कह्यो, फेरि अपनी योगमायाके प्रभाव करिकै मनुष्यलोकको छोडिवो यह एकादशमें कह्यो ॥ ४२ ॥ युगनको लक्षण तिन युगनमें जीविकाको वर्णन कलियुगमें प्राणीनको उपद्रव और चारि प्रकारकी प्रलय मायातें और ब्रह्मातें उत्पन्न होनेसी तीन प्रकारकी उत्पत्ति कही ॥ ४३ ॥ बुद्धिमान् राजऋषि विष्णुरातकी देहको त्यागिवो व्यासजू करिकै वेदकी शाखानको विस्तार कह्यो, मार्कंडेय ऋषिकी सुंदरकथा कही ॥ ४४ ॥ द्विजनमें श्रेष्ठ ! जगत्के आत्मा सूर्यको महीना महीनानको वर्णन करयो या प्रकार तुमनें जो कछु हमसों पूछ्यो सो सब कह्यो; या भागवत पुराण विषें हरिकी लीला अवतार कर्मनकों गायो है ॥४५॥ गिरते, परते आर्तसमय छींक लेते विवशतामें ऊंचो स्वरसों जो हरिको उच्चारण करे सो सब पापनतें छूटि जायहै ॥ ४६ ॥ जो भगवान्को कीर्त्तन करेहै अथवा तिनके गुणनकों सुनें तो अनंत भगवान् तिनके चित्तमें प्रवेश ह्वै ।।।।।। कों दूरि करैं हैं, जैसे सूर्य अंधकारकों; पवन मेघको दूरि करेहैं ॥ ४७ ॥ वह असत् और मिथ्या वाणी हैं, जा वाणीमें असत् कथा है, नारायणको गुणवर्णन नहीं है भगवान् अधोक्षजके गुणनको गाइवोही सत्य मंगलरूप पवित्र वाणी है ॥ ४८ ॥ सोई वाणी रमणीक रुचिर सदा नई नित्य मनको महा उत्सवरूप मनुष्यनके शोकसमुद्रनकी सुखावनहारी है जा वाणीमें उत्तमश्लोकको यश गायो जायहै ॥ ४९ ॥ जा वाणीविषै चित्रपद रचनाहू हैं परंतु जगत्के पवित्र करनहारे हरिको यश कछु नहीं हैं तो वा वाणी विषें कौआकी तुल्य विषयी रमण करेंगे हंसकी तुल्य साधु जन वामें रमेंगे जा वाणीविषें अच्युतको वर्णन हैं, ताही वाणी विषें निर्मल चित्त साधु रमण करें ह ॥ ५० ॥ जा वाणी विषें श्लोकश्लोकनमें अच्छी पदचरना नहीं, केवल हरियश और नामही वर्णन है सो वाणीसमूह जननके पापनकी नाशक है, ता वाणीकों साधु सब सुने गामें कहें है ॥ ५१ ॥ ब्रह्मको प्रकाशक निर्मलहू ज्ञान जो अच्युतके भावयुक्त नहीं तो शोभित नहीं होय है, उत्तमहू कर्म ईश्वरके अर्थ विना सदा अमंगलरूप है सो कैसें शोभित होंइगो ॥ ५२ ॥ वर्णाश्रमके आचार तप वेद अध्ययनादि विषें बडे श्रम करिकैं केवल यश और संपत्तिही प्राप्त होय हैं परन्तु और हरिके गुणको कथन और श्रवणादि करवेसों श्रीकृष्णजूके चरणकमलको सदा सुमिरन होय है ॥ ५३ ॥ श्रीकृष्णके चरणकमलको स्मरण सदा अमंगलको विनाशक मंगलको विस्तारक अंतःकरणको शुद्ध करे हैं, परमात्मा विषें प्रेमको बढावै,

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विज्ञान वैराग्ययुक्त ज्ञान उपजावे है ॥ ५४ ॥ हे द्विजनमें श्रेष्ठहो ! तुम सब बडे भाग्यवान् हो जाते अखिलके आत्मा नारायण देव देवनमें श्रेष्ठ ईश्वरको निरंतर हृदयमें प्रीतिपूर्वक राखिकैं सदा भावयुक्त ह्वैकैं भजोहो ॥ ५५ ॥ जो भगवान्को तत्त्व राजा परीक्षित्के अनशन व्रत लेवेमें बडे ऋषिनकी सभा विषें तिनके सुनते परम ऋषि श्रीशुकदेवजूके मुखतें हमनें पहिले सुन्योहो सो भगवत्तत्त्व अब तुमने हमपै स्मरण करायो ॥ ५६ ॥ हे विप्रहो ! कहिवेके योग्य सुन्दर कर्मवारे वासुदेवको माहात्म्य सब अशुभनको नाशक हमने तुम सबनकों कह्यो ॥ ५७ ॥ जो कोई अनन्यबुद्धि ह्वैकैं नित्य एक प्रहर वा एक क्षण या माहात्म्यकों सुनावें, और जो कोई श्रद्धावान् ह्वैकैं सुनें, वे अपनपेकों पवित्र करै हैं ॥ ५८ ॥ जो कोई एकादशी विषे सुने सो बडी आयुर्बलयुक्त होइ और जो कोई विना भोजन कियें एकाग्रचित्त ह्वैकैं याकों पढें ह सो निष्पाप होई ॥ ५९ ॥ पुष्कर मथुरा द्वारकामें रहिकैं एकाग्रचित्त ह्वैकैं जो या संहिताकों पढे हैं सो सब भयनतें छूटे हैं ॥ ६० ॥ जो कोई या संहिताकों कहें सुने कीर्त्तन करें हैं, ताकों देवता मुनि सिद्ध पितर मनुष्य नृप ये सब मनोवांछित मनोरथनकों देय हैं ॥ ६१ ॥ ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेदके पढेतें द्विज जो फल पावै, और सहतकी नदी घृतकी नदी दूधकी नदीके पान कियेतें जो फल होइ, सो सब फल या पुराण संहिताके पढेते होइ, हे द्विजवरहो ! जो जन शुद्ध ह्वैकैं या पुराण संहिताको पढे हैं सो भगवान्केही परमपदको प्राप्त होवे हैं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ या संहिताकों ब्राह्मण पढिकै उत्तम बुद्धिको प्राप्त होई, क्षत्रिय पढे तो वाकों समुद्र पर्यंत पृथ्वीको राज्य होइ. वैश्य पढे तो निधिपति होइ शूद्र पढिकैं पापनतें छूटे ॥ ६४ ॥ कलिके मल समूहनके नाशक अखिलैश्वर्य हरि और शास्त्रनमें या प्रकार निरंतर नहीं गाय हैं, और या पुराणकें कथा प्रसंगन करिकै पद पद विषें अशेष मूर्ति भगवान्ही गाये हैं ॥ ६५ ॥ जगत्की उत्पत्ति पालन संहार करनवारी जिनकी शक्ति है, और ब्रह्मा इन्द्र शिवादि देवतानको जिनकी स्तुति दुर्गम है ऐसे अजन्मा अनंत आत्मतत्त्व अच्युतको नमस्कार है ॥ ६६ ॥ वृद्धिको प्राप्त भई प्रकृति आदि जो शक्तिनसो जानै अपने स्वरूप स्थावर जंगम रचे है ऐसे सबमें व्यापक देवतानमें श्रेष्ठ अनादि ज्ञानमात्र स्वरूप भगवान्को मैं प्रणाम करूंहूं ॥ ६७ ॥ अपने आत्मासो सुखसो पूर्ण चित्त होवेसो अन्य पदार्थनमें भाव न रखनेहारे कि जिनने अपनो मन नारायणकी सुन्दर लीलानमें आकर्षित होजावेसो नारायणकें तत्वकों प्रकाशक यह महापुराण संसारके उपकार निमित्त दया कर प्रगट कियो है विन सब जगत्के पाप मिटामनवारे व्यासपुत्र शुकदेवजीको प्रणाम करौहूं ॥ ६८ ॥

स्वसुखनिभृतचेतास्तद्व्युदस्तान्यभावोऽप्यजितरुचिरलीलाकृष्टसारस्तदीयम् ॥
व्यतनुत कृपया यस्तत्त्वदीपं पुराणं तमखिलवृजिनघ्नं व्याससूनुं नतोऽस्मि ॥६८॥

इति श्रीमद्भागवतभाषाटीकायां द्वादशस्कन्धे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

---

१ पर ऐसे ना सुने सुनावै जैसे एक बुढिया और पंडितने कथा सुनी कही ॥ एक बुढिया एक पंडितजीकी कथामें जाया करतीथी और अत्यंत रोवे पंडितजीने जानी कि यह बुढिया बडी प्रेमिन हैं कछु अधिक दक्षिणा चढावैंगी जब कथा सम्पूर्ण होनेको दिन आयो तौ बुढिया न आई पंडितजीने कथामें कछु विलम्ब करी तबहूं न आई और पूरी व्है चुकी पंडितजीने दूसरे दिन कही कि बुढिया कछु अनमनी ह्वै गई नहीं जानते कैसे न आई वाके घर होते चले कछु दक्षिणा मिलजायगी यह विचार वाके द्वारपै जाय पुकारा बुढिया चरखा काततीथी बोली आओ पंडितजी बैठो कैसे आये पंडितजी बोले डोकरी कल कथा सम्पूर्ण ह्वैगई तू न आई तोकूं तौ बडी प्रेम रह्यो घंटन कथामें रोयो करैही बुढिया बोली मैं कथाके कारण रोवेही का पंडितजी बोले तौ कैसे रोवेही बुढियाने कही जैसो तुम्हारी पोथी बांधनेकी बसनो हो तैसा मेरी लल्लीमोहिनीके लालाको पैंजामो ही सो उनकी याद आय जायही तासों रोवेही पंडितजी सुनतेही सुन्न ह्वै गये और विदा होय चले गये ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अध्याय १३.

सूत उवाच–यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैःस्तवै-
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः॥
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः॥ १॥

श्रीसूतजी कहें हैं ब्रह्मा वरुण इंद्र रुद्र मरुद्गण ये सब दिव्य स्तवन करिकैं जिन भगवान्‌की स्तुति करे हैं, और सांगोपांग पदक्रम उपनिषद् सहित वेदन करिकैं सामवेदके गामनहारे जिनकों गावें हैं, और ध्यान विषें स्थित चित्त हरिसों मन लगाय योगी जिनकों देखेहैं, देवता असुरगण जिनको अंत नहीं जानें है तिन देवकों नमस्कार है॥ १॥ पीठिपै भ्रमत श्रेष्ठ मंदराचलकी शिलानके अग्रन करिकैं खुजानेकी समान निद्राको अनुभव करते कच्छपरूप भगवान्‌के श्वासनकी पवन तुम सबनकी रक्षा करो; जा पवन संस्कारके लेश अनुवर्त्तनके वशते समुद्रके क्षोभके मिसकरिकैं निरंतर घटे बढे है, अबताईं विश्राम नहीं लेय है[1]॥ २॥ पुराणकी संख्याको निरूपण और श्रीभागवतको आश्रय प्रयोजन दान और दानको माहात्म्य और पाठादिकनको माहात्म्य अब हमते सुनो॥ ३॥ ब्रह्मपुराण दश हजार हैं, पद्मपुराण पचपनहजार, विष्णुपुराण तेईस हजार, शिवपुराण चौवीसहजार॥ ४॥ श्रीभागवतपुराण अठारह हजार, नारदपुराण पचीसहजार, मार्कंडेय पुराण नौ हजार, अग्निपुराण पंद्रह हजार चारसौ॥५॥ भविष्योत्तरपुराण चौदह हजार पांचसौ, ब्रह्मवैवर्त्त पुराण अठारहहजार, लिंगपुराण ग्यारहहजार॥ ६॥ वाराहपुराण चौवीसहजार, स्कंदपुराण इक्यासी हजार एकसौ, वामनपुराण दशहजार॥ ७॥ कूर्मपुराण सत्रहहजार, मत्स्यपुराण चौदहहजार, गरुडपुराण उन्नीसहजार, ब्रह्मांडपुराण बारह हजार॥ ८॥ या प्रकार सब पुराण मिलिकैं चारिलाख कवीश्वर कहें है जिनमें श्रीभागवत अठारह हजार है॥ ९॥ अपनी नाभिकमलमें स्थित संसारते डरे ब्रह्माको पहले यह पुराण भगवान् कृपा करिके कहत भये॥ १०॥ आदि मध्य अंतविषे जामें वैराग्य कह्यो, और हरिकी लीला कथानके समूह अमृतसे जाने साधुरूप देवतानको आनंदित कियो है, ऐसो यह भागवतपुराण है॥ ११॥ सम्पूर्ण वेदांतकी सारभूत ईश्वर जीवकी एकतासो जानने योग्य अद्वितीय वस्तु ब्रह्म तो या पुराणको विषय है और मुख्य प्रयोजन या पुराणको कैवल्य अर्थात् मुक्ति है॥ १२॥ भादोंसुदी पूर्णमासी विषें सोनेके सिंहासन सहित जो कोई या श्रीमद्भागवतकों दान करे सो परमश्रेष्ठ गतिको पावे॥ १३॥ तबतांई और पुराण साधुगणनमें विराजमान हैं जबतांई अमृतको समुद्र यह श्रीभागवत नहीं सुन्योहै॥ १४॥ सब वेदांतनको सार श्रीभागवतके अमृतरस करिकैं जे तृप्ति भयेहैं तिनकी रति प्रीति और ठौर नहीं हुई है॥ १५॥ जैसे नदीनमें गंगा देवतानमें अच्युत वैष्णवनमें शंभु, तैसे पुराणनमें श्रीभागवत है॥ १६॥ हे द्विज! जैसे सब क्षेत्रनमें काशी श्रेष्ठ है, तैसें सब पुराणनमें यह श्रीभागवत श्रेष्ठ है॥ १७॥ परमहंसनको प्यारो निर्मल श्रेष्ठ ज्ञानही जामें गायोहै, और जाके विषें वैष्णवनको अतिप्यारो ज्ञान वैराग्य भक्तिसहित भगवत्तत्त्वहीको प्रकाश हैं, ऐसे श्रीमद्भागवतपुराणको जो कोई जन भक्ति करिक सुने पढै विचारे सो जन संसारते छूटे॥ १८॥ जो भगवान् पहिले अतुल यह ज्ञान

---

१ कच्छप भगवान्‌को अन्तमें इस कारण किया कि जैसे उनकी कृपासे देवतोंको अमृत मिला और मनोरथ सिद्ध हुए इसी प्रकार यहांभी पुराणरूपी अमृतसे आपके मनोरथ सिद्ध करै॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

रूप दीपक ब्रह्माकों प्रकाश करत भये जो ब्रह्मरूप ह्वैकै नारदमुनिको प्रकाशतभये, और जो नारदरूप ह्वैकै व्यासजूको प्रकाश करत भये जो व्यासजू श्रीशुकदेवजूको प्रकाश करतभये जो जो ब्रह्मरूप ह्वैकें करुणा करिकै विष्णुरात राजा परीक्षित्को प्रकाशतभये शुद्धसत्व निर्मल सदा आनंदमय निरुपाधि सबनते श्रेष्ठ तिन भगवान्कों हम ध्यान करें ॥ १९ ॥ सबनके साक्षी वासुदेव जो कृपा करिकें यह भागवत पुराण संसारते मुक्ति चाहनवारे ब्रह्माको कहतभये तिन भगवान्को नमस्कार है ॥ २० ॥ संसाररूपी सर्प करिकै डसे विष्णुरातकों जो छुडावत भये तिन ब्रह्मरूप योगींद्र शुकदेवकों नमस्कार है ॥ २१ ॥ हे योगेश ! हे प्रभो ! या प्रकार जन्म जन्ममें तुम्हारे चरणविषे भक्ति होइ सो करो जातें तुम हमारे नाथ हो ॥ २२ ॥ जिन हरिकों नामसंकीर्तन सब पापनको नाशक है जिनको करी दण्डवत् सब दुःखनकी नाशक है तिन श्रेष्ठ हरिको नमस्कार है' ॥ २३ ॥

नामसंकीर्तनं यस्य सर्वपापप्रणाशनम् ॥
प्रणामो दुःखशमनस्तं नमामि हरिं परम् ॥ २३ ॥

इति श्रीमद्भागवते द्वादशस्कन्धे वृन्दावननिवासिसुप्रसिद्धविद्वद्वरगौडब्राह्मणश्रीनारायणशास्त्रिविरचितपदार्थमुक्तावल्याख्यभाषाटीकायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ समाप्ता भाषाटीका ॥

दोहा—व्यासतनय शुकदेवको, हितसों करी प्रणाम । शुद्ध भागवतको तिलक, कियो सुमरि घनश्याम ॥ १ ॥
व्रजवासिनके हेत प्रभु, विहरे व्रजमें जाय । विविध भांति उत्पातसे, तिनकी करी सहाय ॥ २ ॥
तैसे अब कीजे कृपा, हे श्रीकृष्ण मुरारि । द्विज ज्वालाप्रसाद शिर, नावत वारंवार ॥ ३ ॥
श्रीकृष्णदासतनय यह, गङ्गाविष्णु हरिभक्त । तिनके हित यह ग्रंथ है, जिनको जानत जक्त ॥ ४ ॥
शुद्ध यथामति सब कियो, मूल अरु पाठ मिलाय । देखहि सज्जन विमल उर, पढहिं याहि चित लाय ॥ ५ ॥
व्योम बाण और अंक शशि, मार्गशीर्ष बुधवार । शुक्लपक्षको शुद्ध कर, पूरण कियो विचार ॥ ६ ॥
राधा माधव सुख करन, मंगल मय सुखदान । नित ज्वालप्रसादपै, कृपा करहु भगवान ॥ ७ ॥

कवित्त—श्रीमत्पुराण भागवत मुक्तिखान सर्व शास्त्र औ पुराणमें महान विधि गायो है ।
प्रणव जाको अंकुर और ब्रह्म जाकी भूमि लसै द्वादशस्कंध जाके गुद्दे ठहरायो है ॥
प्रेम लक्षणा सुभक्ति धाम ये विराजमान तीन शत पैंतिस अध्याय मन भायो है ।
सहस अठारा श्लोक जामें वर्तमान ऐसो कल्पवृक्ष निजयंत्रमें छपायो है ॥ १ ॥

दोहा—कृष्णचरणमकरंदके, मधुकर कहिये जोय । कृष्णदास तिनकै भये, कुलदीपकसुत सोय ॥ १ ॥
गुणिगणगाहकश्रीयुत, गंगाविष्णुहरिदास । वैश्यवंशमें जन्म लै, कीन्हे ग्रंथप्रकाश ॥ २ ॥
कल्पवृक्षभागवतको, भाषाअर्थ कराय । लक्ष्मीवेंकटयंत्रमें, छाप्यो मन हर्षाय ॥ ३ ॥
नागवेदशशीन्दु शुभ, जेठवदी रवि जानि । या भागवतपुराणको, पूरण करि हित मानि ॥ ४ ॥

सोरठा—विनय करौं कर जोरि, विद्वज्जन सुनि लीजिये । भूल चूक जो मोरि, क्षमा सर्व मिलि कीजिये ॥ १ ॥

---

१ ऋषियो सुनो कथाको सार । हरिको भजन मुख्य कर जानो सकल विवाद विसार ॥ पंचतत्वको फैल रह्यो ह यह असत्य विस्तार । जो उत्पन्न नाशसों निश्चय करिये यही विचार ॥ जग असत्यमें सत्य नाम एक यह जानो निरधार । यह परलोक लोकको साधक करत दुःखते पार ॥ मात पिता और बंधु यही है देत सकल दुख टार । अष्टादश सहस्रमें हरिको लीजे नाम निकार ॥ यही प्रधान महाकलियुगमें जपिये वारंवार । सब ज्वालाप्रसाद दुख कटै श्रीहरि कृपागार ॥ १ ॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

श्रीमद्भागवतं नाम भाषाटीकायुतं परम् ॥ ज्वालाप्रसादमिश्रेण शोधितं प्रेमपूर्वकम् ॥ १ ॥
माघकृष्णे वैक्रमाब्दे भूर्वाणाङ्केन्दुपूरणे ॥ श्रीकृष्णदासजो गंगाविष्णुः प्रीत्या ह्यमुद्रयत् ॥ २ ॥

आसीच्छ्रीकृष्णदासः सुकृतिवरनरैः पूजितस्तस्य सूनुः
श्रीगङ्गाविष्णुसंज्ञो विशदगुणयुतो राजते सांप्रतं यः ॥
कल्याणाख्ये मनोज्ञे धनिकततितते पत्तने ह्यङ्कनेश-
स्तेनाहं प्रेरितोऽभूवमतिमहति वै शास्त्रगुम्फे त्विदानीम् ॥ १ ॥
पूर्वं ज्वालाप्रसादाभिधवरविदुषा शोधिते चाष्टमादीन्
स्कंधान्वै वेदसंख्यान् शुकमुनिकथितान् पंक्तिसंख्यं विहाय ॥
नागेष्वङ्केन्दुसंख्ये सुरगुरुनृपतौ वत्सरे राधमासे
सम्यक् शुद्धिं चकार त्वितथवचसा मानुरामस्य पुत्रः ॥ २ ॥
दृष्ट्वा ग्रंथाननेकान् पटुतरवनमालीचतुर्वेदसंज्ञो
मूलार्थं चानुरुध्य प्रकटितयशसं श्रीधरस्वामिटीकाम् ॥
येयं पूर्वं हि टीका प्रथितगुणवता भाषया निर्मिता सा
युक्ता नारायणाख्यैर्न यदि पुनरिह स्यात्तदा स्याद्यशो वः ॥ ३ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-गङ्गाविष्णुश्रीकृष्णदास
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अभिनव विश्रामसागर.

यह पुस्तक इतिहासायन, रामायण और कृष्णायन तीन भागोंमें विभक्त है। इतिहासायनमें विविध प्रकारकी मनोहर कथायें तथा हरिश्चन्द्र, ध्रुव, अम्बरीष, शिबि, अलर्क आदि प्रसिद्ध भगवद्भक्त महात्माओंकी अनुपम उदारता सहनशीलता धर्मपटुता आचारनिष्ठता नीतिनिपुणतादि सद्गुणोंका सविस्तर वर्णन है तथा रामायणमें श्रीरामचन्द्र आनन्दकन्द कोशलेन्द्र भगवान्के चरित्र और कृष्णायनमें श्रीकृष्णचन्द रसिकशिरोमणि परमात्मा नारायण ललितकी लीला भाषाछन्दोंमें वर्णन है। कोईभी अध्याय आरम्भ करनेपर जबतक समाप्त न हो छोडनेको जी नहीं चाहता। इसमें जराभी सन्देह नहीं कि भगवद्भक्त कथा रसिक सज्जनोंको यह ग्रन्थ परम प्रिय और आदरणीय होगा। यद्यपि कई कवियोंने विश्रामसागर बनाया है वह कतिपय यंत्रालयोंमें मुद्रित होकर प्रसिद्ध हो रहा है किन्तु इस नये ग्रन्थकी सरसता एवं रमणीयताकी बराबरी उनमें कोईभी नहीं कर सकते। हाथ कंगनको आरसी क्या ? एकबार आप हमारे कहनेसे इस पवित्र ग्रन्थको मंगाकर अवलोकन कीजिये फिर आपही मुक्तकंठसे प्रशंसा कीजियेगा। काव्यरसज्ञ एवं कथाप्रेमी सज्जनोंको एक एक प्रति अवश्यही खरीदना चाहिये मूल्यभी सर्व साधारणके सुभीतार्थ इतने बडे ग्रन्थका केवल १॥॥ रु. मात्र रक्खा गया है।

अनर्घनलचरित्र.

महानाटक.

महाशय ! इस अनर्घनलचरित्रनाटकमें महाभारतोक्त नलदमयंतीकी समग्र कथा लिखीगई है. नलदमयंतीकी कथा जैसी कुछ सारगर्भित तथा अनेक प्रकारसे शिक्षाप्रद है उसको समग्र संसार जानता है और सभी लोग इस कथाके जानने तथा सुननेमें रुचि रखते हैं। ऐसा किसका हृदय पत्थर होगा जो नलदमयंतीकी करुणकथाको पढसुनकर पिघल न जाय। और भाषामें आजतक महानाटक नहीं बना यह महा नाटक है। और आजकलहके नाटकोंमें मनमाने गर्भांक दिये जातेहैं इसमें संस्कृतके नाटचशास्त्रकी रीतिसे गर्भांक दियागयाहै। संस्कृतनाटचशास्त्रसे अनभिज्ञलोग इस अनर्घनलचरित्रनाटकको पढकर संस्कृतके नाटचशास्त्रकी मर्यादाको तथा गर्भांककी मर्यादाको भलीभांति जानसकतेहैं, क्योंकि यह नाटक संस्कृतनाटचशास्त्रकी मर्यादासे बतायागयाहै। और इस ग्रंथके पढनेसे संस्कृतभाषाका बोधभीबहुत कुछ होसकताहै।

महाशय ! आजदिन साहित्यशास्त्रके परमाचार्य काशीके महामहोपाध्याय सी. आई. ई. विद्वद्वरश्री ७ श्रीगंगाधरशास्त्रीजी महाराजही हैं ऐसा कौन पुरुष है जो उक्त श्रीशास्त्रीजीमहाराजको विद्यासमुद्र न जानताहो यह नाटक उक्त श्रीशास्त्रीजी महाराजके एकवात्सल्यपात्र छात्र पंजाबी पंडितसुदर्शनाचार्यशास्त्रीने बनाया है और क्या लिखें आप एक वेर देखिये तभी आप कविके चातुर्यको जानसकते हैं। कविने औरभी अनेक ग्रंथ संस्कृतमें तथा भाषामें लिखकर विद्वत्समाजमें नाम पाया है। कविने भूमिकामें नलदमयंतीकी मूलकथाभी समग्र लिखदी है। सभकी सुलभताके कारण इसका दाम केवल १ एकही मुद्रा नियत कियाहै। जिसके हाथमें यह ग्रंथ गया उसने फिर छोडा नहीं।

स्मृतिरत्नाकर।

इसमें केवल आह्निक प्रकरणही नहीं, द्विजाति मात्रके नित्य पालनीय आचार वर्णित हैं। शौचाशौच, वृत्ति. भक्षाभक्षविचार आदिका सम्पूर्ण वर्णन है। इसमें अनेक श्रुति, स्मृति, पुराण आदिसे संग्रह करके अनेक सदाचार दर्शाया गया है। अनेक इतिहास-ग्रन्थोंसे बहु मन्त्र आदिकर विस्तृत निरूपण है। ग्रन्थ वैष्णवोंके लिये विशेष उपकारी है। साथही यहभी जान लेना उचित है, कि केवल वैष्णवधर्मही इस पुस्तकका लक्ष्य नहीं है। इसमें किसी विशेष सम्प्रदायका पक्ष नहीं और दूसरे उपासकोंकी निन्दा नहीं। एक इस गुणसे भारतवर्षके स्मार्त्तमात्रके उपकारी है। द्विजगण इसे सादर ग्रहण करें। ग्रन्थ संस्कृतमें है। जिल्द समेत पूरे २२५ पृष्ठकी पोथी है। की० २ रु.

छन्दार्णवपिंगल.

यह ग्रंथ श्रीमत्सकलकविकुलसरसिजवनप्रकाशनदिवाकरश्रीरामचन्द्रभक्तिप्रकाशितान्तःकरण प्रतापगडदेशीय टयौंगा ग्रामवासी भिखारीदासने बनाया है. इसमें मात्रावृत्त वर्णवृत्त मेरु मर्कटी पताका और प्रति छन्द लघु गुरु गणस्थापनरीति और अति रमणीय छन्दोंके उदाहरणसे हिन्दी भाषाकवित्वरसिकोंके उपकारार्थ अति सुगमता र्णीत हैं की० १२ आना,

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना

कल्याण-मुंबई.॥१॥

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

Galaxy Phase 2
Site Layout Plan

In Public Domain. Chambal Archives, Etawah

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

In Public Domain, Chambal Archives, Etawah

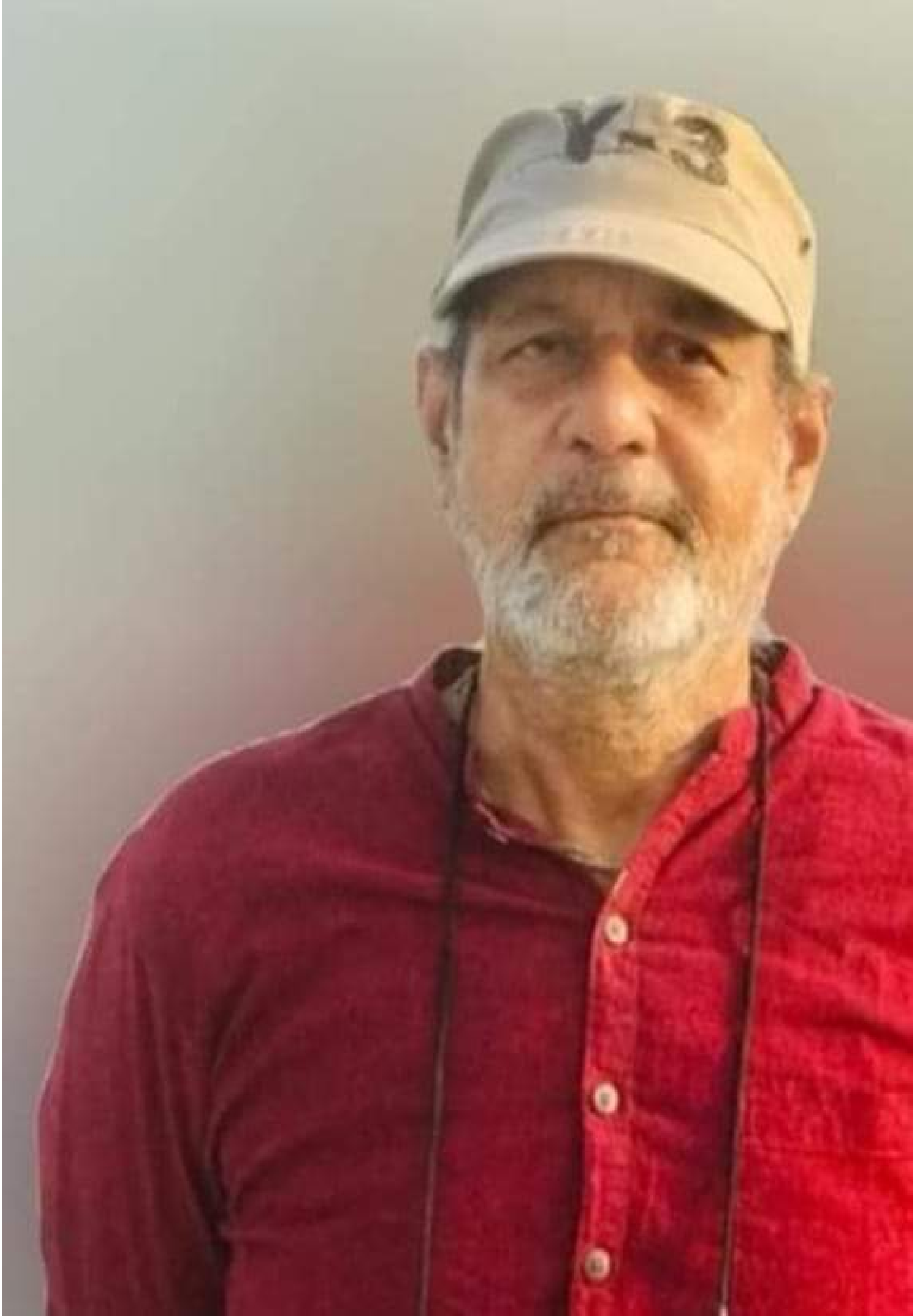

This PDF you are browsing is in a series of several scanned documents from the Chambal Archives Collection in Etawah, UP

The Archive was collected over a lifetime through the efforts of Shri Krishna Porwal ji (b. 27 July 1951) s/o Shri Jamuna Prasad, Hindi Poet. Archivist and Knowledge Aficianado

The Archives contains around 80,000 books including old newspapers and pre-Independence Journals predominantly in Hindi and Urdu.

Several Books are from the 17th Century. Atleast two manuscripts are also in the Archives - 1786 Copy of Rama Charit Manas and another Bengali Manuscript.Also included are antique painitings, antique maps, coins, and stamps from all over the World.

Chambal Archives also has old cameras, typewriters, TVs, VCR/VCPs, Video Cassettes, Lanterns and several other Cultural and Technological Paraphernelia

Collectors and Art/Literature Lovers can contact him if they wish through his facebook page

Scanning and uploading by eGangotri Digital Preservation Trust and Sarayu Trust Foundation.